GYANODAYA JAN-NOV 1965 G.K.U.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

०२२७१९५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

077995

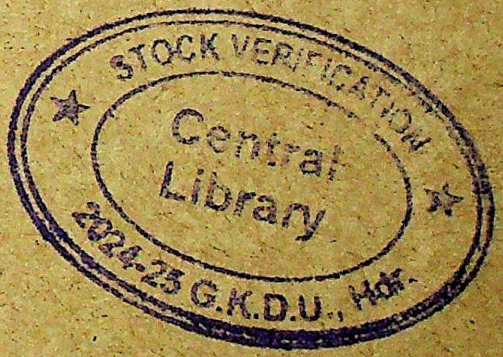

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

077995

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

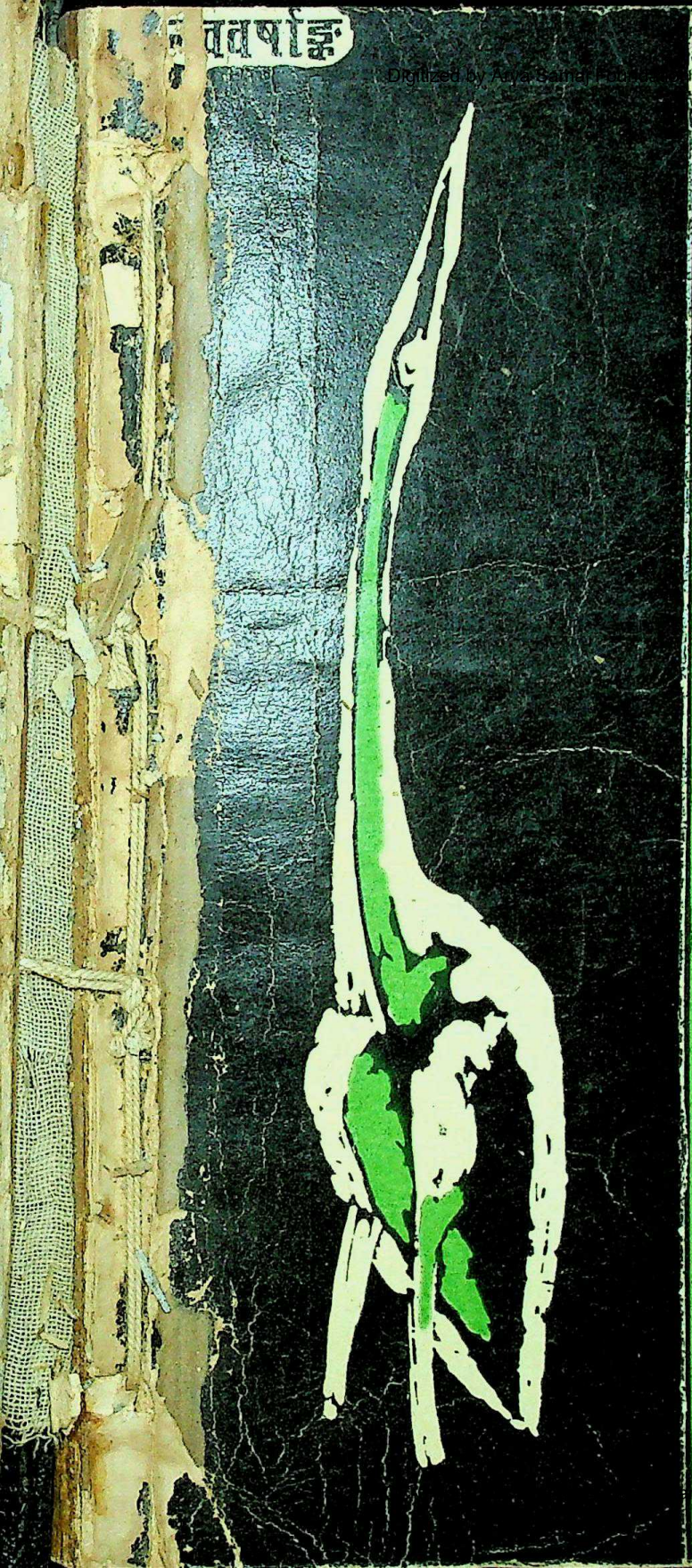

ज्ञानोदय

Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

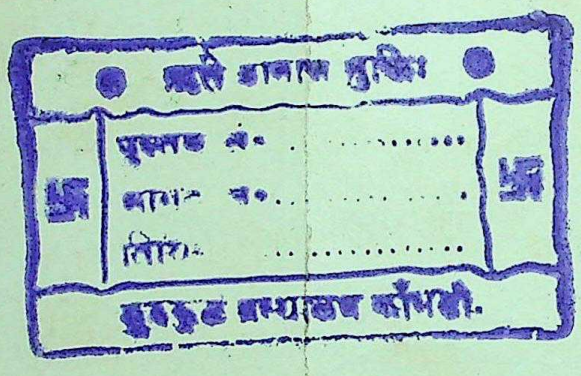

साहित्यिक विकास-उन्नयन
सांस्कृतिक अनुसन्धान-प्रकाशन
राष्ट्रीय एकता एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी

साधिका
विशिष्ट संस्था

भारतीय ज्ञानपीठ

[स्थापित सन् १९४४]

संस्थापक
श्री शान्तिप्रसाद जैन

अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

जनवरी १९६५ ज्ञानोदय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

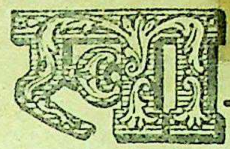

077995

गुरुकुल कांगड़ी

स्वादिष्ट स्वास्थ्यप्रद रूचिकर

तृप्तिपूर्ण भोजन के लिये

हनुमान वनस्पति व्यवहार कीजिये।

विटामिनों से परिपूर्ण हनुमान
वनस्पति सुरूचिपूर्ण एवम्
सुस्वादपूर्ण व्यंजन
बनाने में सहायक है।

STOCK VERIFICATION
Central Library

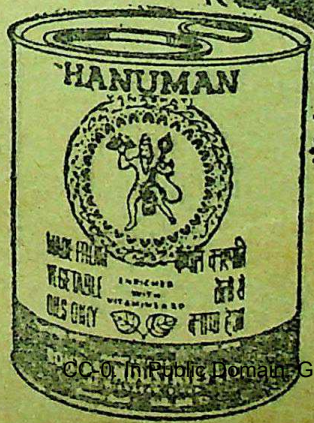

हमेशा हनुमान वनस्पति ही खरीदें

हनुमान

निर्माणकर्ता

रोहतास इन्डस्ट्रीज लिमिटेड

डालमियानगर (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Phone : 25-2227

Universal Fire & General Insurance Company Limited

Transact :

Fire, Motor, Marine, Personal Accident, Fidelity, Guarantee, Burglary and all other forms of Miscellaneous Insurance Business.

Universal Insurance Building,
Sir P.M. Road, Bombay-1.
Chairman & Managing Director :
P.U. PATEL, B.A., B.COM. (Lond).

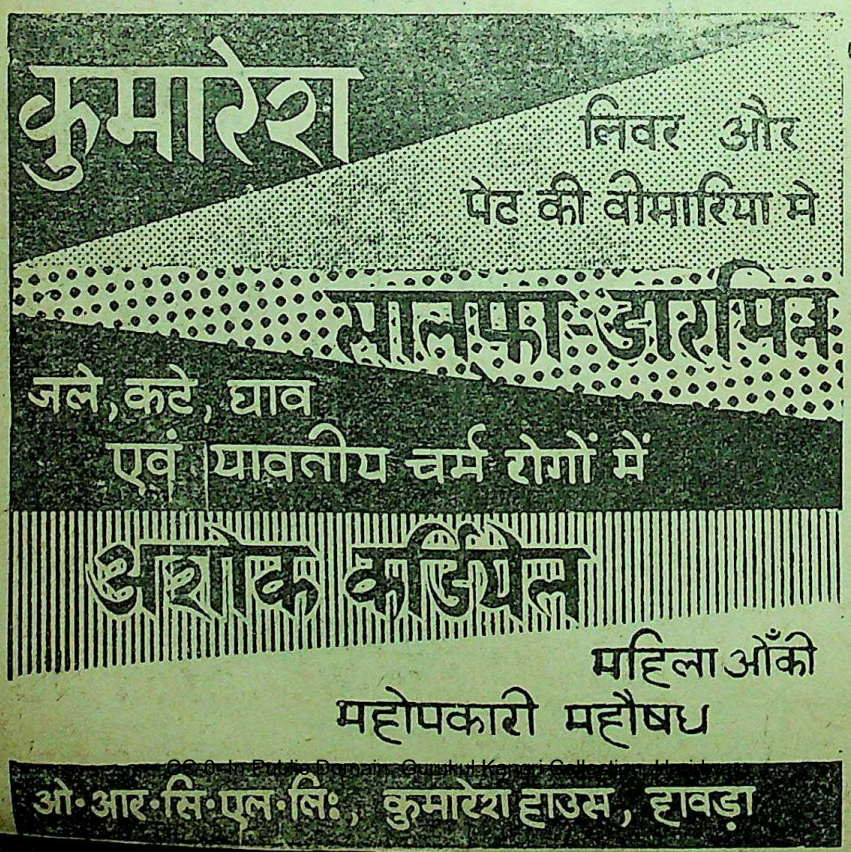

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजपाल एण्ड सन्ज़
द्वारा प्रकाशित -

दिल, दौलत और दुनिया	कृश्नचन्दर	२.५०
बाहर भीतर	आचार्य चतुरसेन	४.००
दुखवा मैं कासे कहूँ	,,	४.००
धरती और आसमान	,,	४.००
सोया हुआ शहर	,,	४.००
कहानी खत्म हो गयी	,,	४.००

नए कहानीकार पुस्तकमाला
सं० राजेन्द्र यादव

मोहन राकेश की श्रेष्ठ कहानियाँ		२.५०
मन्नू भण्डारी	,, ,,	२.५०
कमलेश्वर	,, ,,	२.५०
फनीश्वरनाथ रेणु	,, ,,	२.५०
राजेन्द्र यादव	,, ,,	२.५०

कुछ उत्कृष्ट कहानी-संग्रह

छोटे-छोटे ताजमहल	राजेन्द्र यादव	३.५०
ये तेरे प्रतिरूप	अज्ञेय	२.५०
पाँच गधे	रांगेय राघव	३.००
धरती अब भी घूम रही है	विष्णु प्रभाकर	३.००
वापसी	चन्द्रगुप्त विद्यालंकार	३.५०
किनारे से किनारे तक	राजेन्द्र यादव	४.००
एक चेहरा	रामकुमार	२.५०
जहाँ फूल खिलते हैं	प्रकाश पण्डित	३.५०
आँखें	मन्मथनाथ गुप्त	२.५०
नारी हृदयकी साध :	सत्यवती मलिक	२.००

राजपाल एन्ड सन्ज़
कश्मीरी गेट, दिल्ली-६

फरवरी-अंक

ज्ञानोदय

"....वस्तुतः जिन दिनों मैं इस उपन्यासको लिख रहा था, उन दिनों इसका नाम दिया था – 'एक चुम्बन'। लेकिन हमेशा एक डर बना रहता था कि यह नाम उपन्यासको एक अवांछनीय धरातल दे देगा। 'टीन-एजर्स' को चुम्बन शब्दमें ही एक थ्रिल और गोपनीयताकी गन्ध मिलती है; उनके लिए एक ओर जहाँ यह काग़ज़ चढ़ाकर एकान्तमें पारायण करनेवाली मनोरंजक रचना हो जायेगी, वहीं संस्कारी पाठक चुम्बन नामक क्रियाको ही उपन्यासकी धुरी मानकर पढ़ेगा..."

ज्ञानोदय

वह उपन्यास कौन-सा है और वह लेखक कौन है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रकवि की याद के साथ याद आती पंक्तियाँ—

कर बार-बार क्षमार्थना होते विदा अब हम यहीं,
सुख के समय दुख की कथा अच्छी नहीं लगती कहीं ।।

– जयद्रथ-वध

री ! लेखनी ! बस बहुत है, अब और बढ़ना व्यर्थ है,
है यह अनन्त कथा तथा तू सर्वथा असमर्थ है ।।

– भारत-भारती

"वह वर्षा की बाढ़, गयी, उसको जाने दो,
शुचि – गम्भीरता प्रिये, शरद् की यह आने दो ।
धरा – धाम की राम राज्य की जय गाने दो,
लाता है जो समय, प्रेमपूर्वक लाने दो ।।"

– साकेत

वह जन्म-मरण का अमण – भाण,
मैं देख सका हूँ अपरिणाम ।
निर्वाण – हेतु मेरा प्रणाम,
क्या वात – वृष्टि, क्या शीत – घाम ।
जो क्षणभंगुर भव राम – राम !

– यशोधरा

'पूरी हो तुम्हारी अभिलाषा और क्या कहूँ ?
किन्तु रह सकता यहाँ नहीं मैं जाता हूँ ।"

– जयभारत

— मैथिलीशरण गुप्त —

जन्म : ३ अगस्त १८८६ • मृत्यु : १२ दिसम्बर १९६४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

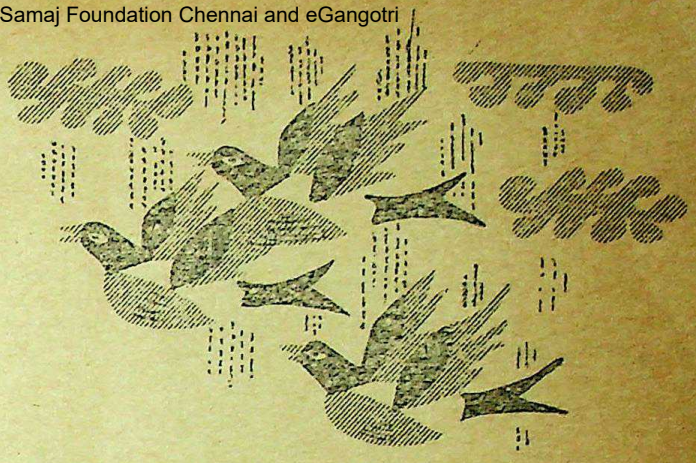

दक :
ीचन्द्र जैन, रमेश बक्षी

आधुनिकतम भावबोध, कला-संचेतना
और नवीनताका
प्रतिनिधि मासिक

ज्ञानोदय

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

सम्पादकीय कार्यालय :
९, अलीपुर पार्क प्लेस,
कलकत्ता-२७

वितरण-कार्यालय :
भारतीय ज्ञानपीठ,
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

वितरक :
नेट कोलमैन एण्ड कं० लि०,
बम्बई-१

यह अंक : १.००
वार्षिक : १०.००
त्रैवार्षिक : २५.००
आजन्म : १५१.००

इस अंकमें :

पिकासो, कुवेरनाथ राय, 'अंचल',
लक्ष्मीचन्द्र जैन, अमृता प्रीतम, कौशल्या अश्क, नागार्जुन, बच्चन,
सुमन, वीरेन्द्र मिश्र, दूधनाथ सिंह, देवेन गुप्त, कान्ता, नईम,
कैलाश वाजपेयी, स्वरूप ढौंडियाल, मेरिलिन मुनरो

- व्यक्तित्व पूजावाद···'मौन-विज्ञान'
- मायावी शिखरोंके प्रेक्षागृह
- नाटककारकी समस्याएँ
- नागपाशमें इच्छा
- ···एण्टीथियेटर तक
- पावेलकी बहनका देश
- औसान न खता होने दो
- हर चीज आश्चर्यजनक
- आगे हुए···
- निरालाके चारित्र्यकी पेशक़दमी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

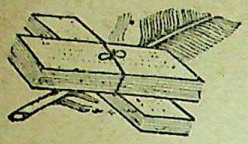

जनवरी १९६९

• अनुक्रम

■ **विशेष स्तम्भ :**

- **अनुचिन्तन : व्यक्तित्व-पूजावाद···· :** 'अंचल' ३
- **किसी एक की उलझन : मायावी शिखरोंके प्रेक्षा-गृह :** कुबेरनाथ राय ११
- **सापेक्ष डायरी : बर्फ़के टुकड़े :** दूधनाथ सिंह ५१
- **कला-चर्चा : नयन बोले :** महेन्द्रनाथ सिंह ९०
- **'सात सफ़र' – १ : औसान न ख़ता होने दो :** कौशल्या अश्क ७४

■ **नाट्य-शास्त्रका नया अध्याय :**

- **नाटककारकी समस्याएँ :** लक्ष्मीचन्द्र जैन २३
- **नागपाशमें इच्छा (नाटक) :** पाब्लो पिकासो ३१
- **रससिद्धान्तसे एण्टीथियेटर तक : लक्ष्मीनारायण लालसे एक भेंट-वार्ता :** आलोक शर्मा ४६

■ **कहानी, यात्रा, रिपोर्ताज :**

- **परदेसी :** अमृता प्रीतम ६३
- **नयी ताक़त :** देवेन गुप्त ८५
- **आठवाँ आश्चर्य :** कैलाश भारद्वाज ९५
- **भागे हुए :** स्वरूप ढौंडियाल १०३
- **पावेलकी बहनका देश :** अशोक महाजन ६९

■ **कविताएँ :**

धूप और छाया : एक चतुष्कोण : नईम, कान्ता, अमृता भारती, स्नेहमयी चौधरी १९

हज़ार बाँहोंवाली । गुनहगार । तुम : एक त्रिकोण : नागार्जुन, 'सुमन', वीरेन्द्र मिश्र ६०

ओ समानधर्मा । आ मेरे अग्रजो : एक समानान्तर : बच्चन, कैलाश वाजपेयी ८०

■ **अन्य स्तम्भ :**

सोये हुए पृष्ठ : हर चीज़ आश्चर्यजनक : मेरिलिन मुनरो १०१

सहचिन्तन : कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' १०९

प्रतिक्रिया : क्या 'रामकी शक्ति-पूजा' 'सरोज-स्मृति'का रूपान्तर है ? : देवेन्द्र-कुमार, बुद्धिचन्द वर्मा, विश्वनाथप्रसाद तिवारी ११४

समीक्षा : दस तसवीरें : तीन नयी पुस्तकें : मधुरेश, रंगनाथ राकेश १२४

■ **अंक-सज्जा :**

पिकासो, वीरेश्वर बनर्जी, सन्तूदास गुप्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

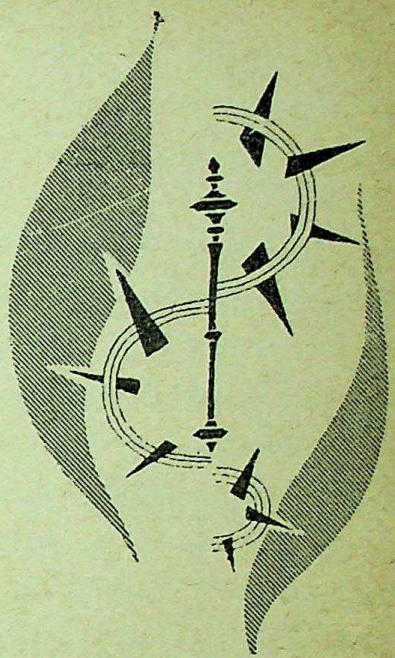

अनुचिन्तन

रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'

व्यक्तित्व-पूजावाद, साहित्यकार और 'मौन-विज्ञान'

•

साहित्यकी आरतीमें कविता-कहानीके
कुंकुम-अक्षत रखकर
शासनके व्यक्तित्वकी पूजा की
जाये
या युग और समयकी
धूपमें तपा जाये ?

जिस स्टेलिन-युगको मार्क्सवादी साहित्यकारों और प्रगतिशील आन्दोलकों-द्वारा उस प्रतापी डिक्टेटरके जीवन-कालमें मानवताके लिए वरदान और साहित्य-सृजन एवं प्रेरणाके लिए अविरल स्रोत माना जाता था उसे स्टेलिनकी मृत्युके बादसे व्यक्तित्व-पूजा (या परसनल्टी कल्ट) के नामसे पुकारा जाने लगा है । यह सत्य है कि जहाँ अधिकांश डिक्टेटरोंको अपने जीवनकाल-में ही अपना करुण अन्त देखना पड़ा है वहाँ स्टेलिनके भयसे उसके उत्तराधिकारी भी आजी-वन उसके सामने काँपते रहे हैं । कम्युनिस्ट पार्टीकी बीसवीं कान्फ्रेंसमें निकिता ख्रुश्चेवने स्टेलिन द्वारा अपने प्रिय मित्र बुलगेनिन सहित आमन्त्रित किये जानेकी घटनाका उल्लेख उसके कन्धोंपर अपना अश्रुपूर्ण मुख रखकर करते हुए कहा था – "हम नहीं जानते थे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि हम जीवित लौट पायेंगे या नहीं।" अब तो यह कहा जाने लगा है कि स्टेलिनके व्यक्तित्व-पूजावादके जबरदस्त बोझसे मुक्त होकर सोवियत-कला आश्वस्त रूपसे समाजवादी यथार्थवादके पथपर बढ़ रही है। (साथ ही एब्स्ट्रेक्ट कलाकी एक प्रदर्शनी देखकर ख्रुश्चेवने क्या-क्या कहा था वह स्मरण होगा ही आपको। – सं०) यद्यपि स्टेलिनका व्यक्तित्व-पूजावाद सोवियत-समाज और कलाकी प्रगतिको रोक नहीं सका पर सोवियत-जीवन और सोवियत-साहित्य दोनों-पर इसका गहरा प्रभाव रहा। इस कालमें लिखी गयी बहुत-सी कला-कृतियाँ समसामयिक जीवनके स्थानपर सुदूर अतीतके जन-जीवन और घटनाओंको लेकर रची गयीं। स्टेलिनके व्यक्तित्व-पूजावादी युगके 'अन्धभ्रम-जालों'के अतिरिक्त मध्यकालीन युग, उसके नृपतियों और योद्धाओंका औदात्त्यीकरण और आदर्शीकरण भी एक था। यद्यपि आज भी 'निम्न आदर्शात्मक और कलात्मक स्तर' की कृतियाँ यदा-कदा प्रकाशित हो जाती हैं पर सोवियत साहित्य-कलाकी पूरी चेतना अब बदल चुकी है। "आज उसके प्रमुख पात्र ऐतिहासिक स्मारक न होकर अपनी निजी आकांक्षाओं और संघर्षों तथा रागात्मक संवेगोंवाले जीवित जनमानव होते हैं।"

कम्युनिस्ट पार्टीकी बीसवीं कान्फ्रेन्स (१९५६) के बाद तीन प्रमुख सोवियत लेखकोंका एक संयुक्त वक्तव्य छपा था जिसमें विभिन्न साहित्यिक प्रश्नोंका विश्लेषण करते हुए कहा गया था कि इस व्यक्तित्व-पूजावादके प्रभावान्तर्गत समस्त सामाजिक विज्ञानों और साहित्यालोचनोंमें यह मत बद्धमूल हो

● सियासत : ३ सुर्खियाँ :

● मास्को, १० अक्तूबर १९५४ – सोवियत साम्यवादी दलके सेक्रटरी निकिता ख्रुश्चेवने यह स्पष्ट कहा कि भूतपूर्व सोवियत प्रधान स्टेलिन क्रूर तानाशाह थे। व्यक्तित्व-पूजावाद, आतंक, लौह दीवार तथा संकुचित साम्यवाद उनके कार्यकलापके प्रमुख स्वर थे।

● मास्को १४ अक्तूबर १९६४ – साम्यवादी समाचार, रायटर तथा ए० पी० के अनुसार सोवियत प्रधान निकिता ख्रुश्चेव-पर ४० पृष्ठोंकी रिपोर्टमें २९ आरोप लगाये गये और उन्हें मजबूर किया गया कि वे त्यागपत्र दे दें। आरोपोंमें क्यूबा समस्या, तानाशाही, एक व्यक्तीय नाटक, अपने सम्बन्धियोंको नौकरी दिलाना (नेपोटिज़्म) तथा व्यक्ति-पूजावाद (पर-सनल्टी कल्ट) प्रमुख थे।

● हांगकांग, १ नवम्बर १९६४ – विश्वस्त तथा साइनोलाजिस्ट सूत्रोंका कहना है : जैसे ख्रुश्चेवको अपना पद त्याग करना पड़ा वैसे ही माओ-त्से-तुंगको भी अलग हटना पड़ेगा। माओ चाहे जैसे व्यक्ति-पूजावादी हों लेकिन के० उनके सामने मिसाल हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया था कि केवल स्टेलिन ही नये सिद्धान्तों, नये विचारों और पद्धतिविज्ञानके नये मूल्यों-की उद्घोषणा कर सकते हैं। परिणाम-स्वरूप एक ही ढाँचेपर समस्त सर्जनात्मक विचारोंका शरीरीकरण, स्थिर मतवाद, स्टेलिनके उद्धरणोंकी भरमार, तथ्यों और जीवन-प्रक्रियाओंके स्टेलिनके मतोंके साथ यान्त्रिक अनुरूपीकरणका चारों ओर बोल-बाला रहा। कहनेको तो कहा जाता है कि यह सब निष्कपट गहरे विश्वासके साथ होता था और पूरी आस्थाके साथ सच्ची वैज्ञानिक प्रगतिकी यही दिशा उस समय स्वीकार कर ली गयी थी। यदि स्टेलिन-कालमें विद्वान् लेखक शासकीय आदेशोंपर रचे गये निरर्थ, निष्प्राण, निष्प्रेरित साहित्यको आत्मानुभूत और वास्तविक मानते रहे तो वे बुद्धिहीन थे। लेकिन सच्ची यथार्थता कुछ और थी। जैसा एक रूसी लेखकने अत्यन्त उग्र शब्दोंमें लिखा है – "साहित्यकारकी सचाईका प्रश्न सैद्धान्तिक होता है। वर्ष-प्रतिवर्ष नक़द 'स्टेलिन'-पुरस्कार पानेवालोंकी ये उप-लब्धियाँ किसी आन्तरिक मान्यतासे प्रेरित न थीं। उन साहित्यकारोंका यह मौसमी परि-वर्तन, राजनैतिक सुविधावादी दुराचारमें उनका यह सहयोग उनके द्वारा फैलाये गये बौद्धिक उपदंशको संक्रामक बनाता रहा।"

'इलिया एहरेनबुर्ग'के नामसे भारतीय पाठक भली भाँति परिचित हैं। पिछले विश्वयुद्धमें फ्रांसके पतनके उपरान्त लिखा गया उनका उपन्यास 'फ़ॉल आफ़ पेरिस' अपनी जलती-उबलती 'रिपोर्ताज' शैलीके कारण बड़ा लोकप्रिय हुआ था। उसकी लिखी अनेक सशक्त कृतियाँ हैं। अपने संस्मरण ग्रन्थ 'मनुष्य, वर्ष और जीवन'

अस्वीकार– १

"जो भी दण्ड दें, मैं नतशिर होकर सभी स्वीकार करूँगा; किन्तु कामरेड, मुझे इस देशसे निर्वासित नहीं करें। सोवियत-भूमिसे अपने भाग्यको विच्छिन्न करनेपर अपने अस्तित्वकी कोई कल्पना तक मैं नहीं कर सकता। रूससे बाहर मेरे जीवनका अर्थ है– मृत्यु।"

– बोरिस पास्तरनेक

(सन्दर्भ : सोवियत-प्रधान ख्रुश्चेवका यह पत्र कि नोबल पुरस्कार स्वीकार करनेपर सोवियत भूमिसे निष्कासित होना पड़ेगा, पास्तरनेकका प्रत्युत्तर।)

अस्वीकार–२

ज्याँ पाल सार्त्रने अपने नाम नोबल पुरस्कार घोषित किये जानेपर दोस्तोंसे कहा : "मैंने हमेशा ऐसे शासकीय सम्मा-नोंको अस्वीकारा है। मेरा दृष्टिकोण लेखकके अपने सिद्धान्तोंके आधारपर बना है। लेखक राजनीतिक, सामाजिक और साहित्यिक स्थितियोंमें भी केवल लिखकर और अपने लेखन-माध्यमसे ही काम कर सकता है। दोनों ही हस्ताक्षर एक नहीं हैं : 'ज्याँ पाल सार्त्र' और 'नोबल-पुरस्कार-विजेता ज्याँ पाल सार्त्र'।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अनेक परिच्छेदोंमें उसने स्पष्टतापूर्वक लिखा है कि १९३० के बादसे सोवियत-शासन और दलकी 'खूनी गृहनीति' अपने कुत्सिततम रूपमें प्रकट हो चली थी। उसने स्वीकार किया है कि अपने चारों ओर स्टेलिन-के खूनी अपराधोंको देखकर भी वह चुप रहा और दाँतोंको कसकर बाँधे हुए जीवित रहा। यहाँ यह बताना आवश्यक है कि लेखकके इस आत्मस्वीकरणके बाद उसे इतना सताया गया कि दिलकी बीमारीके दौरे होने लगे। शासनने उसे यह अच्छी तरह समझा दिया कि 'मौन-विज्ञान'-को उसने पूरा-पूरा आत्मसात् नहीं किया और फलस्वरूप उसे शासकीय यातनाएँ झेलनी पड़ीं। 'इलिया एहरेनबुर्ग'ने स्वीकार किया है कि यह विज्ञान सबसे कठिन विज्ञानोंमें एक है जिसके नियम उसके लिए अत्यन्त जटिल रहे हैं और जिन्हें वह पूरे तौरपर समझ नहीं पाया। 'एहरेनबुर्ग'ने लिखा है कि जो लोग (१९३० से लेकर विश्वयुद्धके शुरू होने तक) देखते और जानते थे कि कैसा जुल्मी निज़ाम उनके देशमें फैला है वे चुप रहनेके लिए बाध्य थे। 'एहरेनबुर्ग'-का इतना लिख देना भी शासकोंको क्रोधोन्मत्त कर देनेके लिए काफ़ी था। स्वेच्छाचारी डिक्टेटर कभी किसी प्रकारके स्वाधीन साहित्यिक या वैचारिक प्रकाशनको सहन नहीं कर पाता। तय किया गया कि लेखक-

फ़ाल ऑफ़ पेरिस :

जब आप किसी गगनचुम्बी अट्टालिकाकी छतसे न्यूयार्क नगरको देखते हैं तो जो दृश्य आपको दिखाई देता है वह उतना ही नीरस और मनहूस होता है, जितना किसी प्रबन्ध-ग्रन्थका संख्याओं और आँकड़ोंसे भरा पृष्ठ, अथवा कोई नक्शा या चार्ट। सभी सड़कें और रास्ते सीधी रेखाओंकी तरह बिछे हैं, निश्चित फ़ासलेपर एक-दूसरेको काटते हुए, और ऐसा प्रतीत होता है जैसे वहाँ आदमीकी ज़िन्दगी भी सीधी और सपाट रेखाओंपर चलती है। लेकिन नोत्रदामकी छतसे पेरिस नगर ऐसा नहीं लगता। उलझे हुए जाल-जैसी सड़कों और किसी अज्ञात शक्तिसे आपसमें सम्बद्ध-सी, विभिन्न युगोंका प्रतिनिधित्व करती हुई इमारतों, विस्मय-विमुग्ध कर देनेवाली वृक्षावलियों और खुले मैदानों तथा मानवीय भावनाओं और उद्वेगोंकी विस्मयकारी गुत्थियोंसे भरा पेरिस जैसे रंग-विरंगे पत्थरों और चट्टानोंके जंगलकी याद दिलाता है, जैसे वह सदियोंका वन-प्रान्तर हो।

"मुझे ऐसा लगता है कि उपन्यासको न्यूयार्कके बजाय पेरिसकी तरह होना चाहिए : उपन्यास लिखनेके लिए एक सुस्पष्ट योजना, अथवा ढाँचा तैयार करनेके लिए आवश्यक साधन-सामग्री मात्र ही यथेष्ट नहीं होती – उसके लिए सूक्ष्म निरीक्षण एवं गम्भीर विचार ही पर्याप्त नहीं। उपन्यास लिखना प्रारम्भ करनेसे पहले लेखकको स्वयं अपने

(शेष अगले पृष्ठपर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का चिन्तन और होश दुरुस्त किया जाये। वी० एरमिलोवको आदेश मिला कि वे 'इजवेस्तिया'के लिए इसके विरोधमें लेख लिखें। एरमिलोवने बड़ी तबीयतसे दलका आदेश माना। कुछ ही हफ़्ते बाद 'एहरेनबुर्ग'के विरोधमें लिखे गये इस लेखकी मुख्य बातोंको केन्द्रीय समितिके सांस्कृतिक (आदर्शवान्) आयोगके अध्यक्ष इलीचेव और प्रथम अध्यक्ष स्वयं ख्रुश्चेव-द्वारा उनके भाषणोंमें उभारा गया और 'एहरेनबुर्ग'को 'स्लेण्डरस' झूठा ठहराया गया। ख्रुश्चेव जैसे दलीय नेता स्टेलिनपर वास्तविक या अवास्तविक विश्वास होनेके कारण भले न जान पाते रहे हों कि साहित्यिक स्वाधीनताके दावेदार निरपराध बुद्धिजीवियोंको किस प्रकार नष्ट किया जा रहा था। पर 'एहरेनबुर्ग' दलीय नेता नहीं वरन् साहित्यकार था। उसने अनुभव किया (और दबी ज़बानसे व्यक्त भी) कि निरपराध लोग दमन-दण्डके निर्मम शिकार हो रहे हैं।

सचमुच उस बीते हुए लौह-युगमें 'एहरेनबुर्ग' और उसके अन्य मौनी साथियोंकी स्थिति बड़ी दयनीय थी। चारों ओर वैचारिक स्वाधीनतापर किये जानेवाले निरंकुश-निर्दय दमनको देखना, केवल मौन रहनेके लिए ही मजबूर न किये जाकर स्टेलिनकी प्रशंसामें कविताएँ और भाषण लिखनेके लिए विवश होना बड़ा दुखदायी रहा होगा। इन अत्याचारोंका विरोध करना मूर्खताके पागलपनकी इतिश्री मानी जाती थी। इसलिए उस समय अनेक बुद्धिजीवियों-द्वारा की जानेवाली आत्महत्याएँ

फ़ाल ऑफ़ पेरिस

(शेषांश)

उपन्यासको जीना चाहिए, उसमें घुल-मिल जाना चाहिए, उसे अपने समकालीनोंके दुःख और सुखको, वेदना और आनन्दको स्वयं अनुभव करना चाहिए, उसे अपने बीच उन गुत्थियोंको, यहाँतक कि उन अन्तर्विरोधोंको भी ढूँढ़ना चाहिए जिनके बिना वास्तविक जीवन असम्भव है।

"मैं स्वयं यह निर्णय नहीं दे सकता कि 'फ़ाल आफ़ पेरिस' एक अच्छा उपन्यास है या नहीं। सम्भवतः वह एक साधारण उपन्यास है। लेकिन मैं अपने पाठकोंको यह विश्वास दिला सकता हूँ कि अगर इसका लेखक फ़ान्सकी उस दुःखद घटनाका स्वयं शिकार न बना होता, अगर उसने फ़ान्सकी 'ट्रेजेडी' को स्वयं न सहा होता, तो यह उपन्यास कभी न लिखा जाता। मैं युद्धके पहले पेरिसमें रहा हूँ, मैंने फ़ासिस्ट आक्रामकोंको नगरमें अभियान करते हुए अपनी आँखों देखा है। इस उपन्यासमें मात्र वे लोग हैं जिन्हें मैं अच्छी तरह जानता हूँ और जो मुझे बहुत प्रिय रहे हैं।"

—इलिया एहरेनबुर्ग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अन्य सबका सकारण मौन समझा जा सकता है। उस समय स्टेलिन अपनी शासकीय शक्तिकी पराकाष्ठापर थे। पार्टीकी केन्द्रीय समितिके 'व्यक्तित्व-पूजावादकी समाप्ति और उसके परिणाम' शीर्षक प्रस्ताव (१९५६ में प्रकाशित) में कहा गया है – "स्टेलिनकी मृत्युके उपरान्त तुरन्त केन्द्रीय समितिके 'लेनिन-दल'ने व्यक्तित्वपूजा और उसके दुःखद दुष्परिणामोंके विरुद्ध अभियान छेड़नेकी सुनिश्चित योजना बनायी। प्रश्न किया जा सकता है कि स्टेलिनके जीवन-कालमें इन लोगोंने स्टेलिनका विरोध करके उसे पदच्युत क्यों नहीं कर दिया? कहा जाता है – उन स्थितियोंमें यह असम्भव था। इस समय कोई भी ऐसा क़दम जन-विरोधी समझा जाता और जनता साथ न देती।" दूसरे शब्दोंमें स्टेलिनके जीवन-कालमें न्याय और सत्यके आग्रहको लेकर यदि कोई सिर उठानेका साहस करता तो कुचल दिया जाता।

१९५६ के ये कथन आज झुठलाये जा रहे हैं और साहित्यिक-सांस्कृतिक तथा पार्टीकी दलगत घोषणाओंमें कहा जाने लगा है कि उस समय जो कुछ किया गया स्टेलिनके प्रति विश्वासके वशीभूत होकर किया गया। स्पष्ट है कि निरंकुश तानाशाहका दमन कैसा भयकारी होता है और जनतापर उसके प्रभावकी सच्ची या झूठी आड़में उसके निन्दनीय कार्योंकी कैसी स्तुति गायी जाती है – खूनी हुक्मोंकी तामील की जाती है। ऐसे ही तानाशाहोंको लक्ष्य कर फ़ैसिस्ट विरोधी अर्न्स्ट टोलर ने अपने एक नाटक-की भूमिकामें आत्मविश्वासपूर्ण स्वरमें लिखा है – "तानाशाहोंकी शक्ति भी एक हदसे बँधी है। एक विशेष फलके लिए और विशेष देश तक वे मनका खून कर सकते हैं, परन्तु सीमासे परे उनका बलैब्य साफ़ नज़र आता है। राज्य-सीमाओंसे परे शब्दोंकी शक्ति स्वरक्षण कर सकती है और बसा करती है। वही शब्द काल-विशेषके बाद एक तानाशाह-से भी अधिक शक्तिमान सिद्ध हो सकता है और वह एक तानाशाहसे कहीं अधिक काल तक जीता रह सकता है।" बड़ेसे बड़े तानाशाह भी साहित्यकी अन्तरात्माके चीत्कारको दबानेमें सफलता नहीं पाते। फ़ैसिस्ट शासन-तन्त्र-द्वारा लगाये गये राजनैतिक या शासकीय प्रतिबन्ध अधिक समय तक कलाकारको नपे-तुले 'पैटर्न' पर जड़ीभूत नहीं कर पाते। किसी भी देशकी राजनीति फ़ैसिज़्मसे परिचालित होते ही वहाँकी प्रबुद्ध जनताका सांस्कृतिक शोषण आरम्भ कर देती है। एक विशेष परिस्थिति, जलवायुमें बँधकर ऐसा समाज साहित्य और कला-सम्बन्धी अपनी अलग एकछत्रतावादी नीति पैदा कर लेता है। स्वतन्त्र विचारधारा, सरस, उज्ज्वल जीवनदायिनी सार्थकता, तृप्तिकी आकांक्षा, काव्य, साहित्य, दर्शन, कला, सत्य, सुन्दर और मंगल साधनाका मार्ग बन्द हो जाता है। 'टालर'-जैसे लेखक इसका विरोध करते हैं – जेल और निर्वासन झेलते हैं। "मेरे नाटक मानवीय यातनाओं और उन यातनाओंका विध्वंस करनेवाले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूक्ष्म किन्तु असफल प्रयत्नके गवाह हैं। ये यातनाएँ अविवेक और अनुचित शासन-व्यवस्थासे निर्मित होती हैं। डिक्टेटरके अमानुषिक उपदेशोंको सिरपर लेकर नाचनेवाले, आजीवन गुलाम बने रहकर कुत्तों-जैसे उसकी आज्ञाका पालन करनेवाले लेखकोंको छोड़कर अन्य लेखक इसे सहन नहीं कर पाते।" कलाकार यदि गुलाम है तो वह स्वामीकी रुचि और आदेशानुसार रचना करने और करवानेके लिए बाध्य है।

इसमें सन्देह नहीं कि स्टेलिन-युगके उन अनेक साहित्यकारों और बुद्धिजीवियोंकी अन्तरात्मा आज पीड़ित है – हृदय अशान्त और दाहित है, जिन्होंने सांस्कृतिक सुधारके नामपर शासनके आदेशोंका पालन करते हुए न जाने कितनोंको बधा और सताया है। इस सम्बन्धमें चर्चाएँ चलनेपर अधिकांश अनभिज्ञताका बहाना करते हैं। पर जिनके भीतर साहित्यिक और मानसिक ईमान बचा है वे अनभिज्ञताका रूपक नहीं रच पाते। दूसरी ओर जानकारी होनेका इज़हार भी वे नहीं करते क्योंकि उस दशामें सम्भव है उन्हें कठोर दण्ड-परिणामोंका भागी बनना पड़े। इसलिए 'सिमोनोव' के नाटक फ़ोर्थ (चौथा) की आलोचनामें बराबर कहा जा रहा है कि उसमें अमेरिकन पात्रोंके माध्यमसे व्यक्त आत्माकी छटपटाहट सोवियत बुद्धिजीवियोंकी अपराधी और अर्ध-अपराधी आत्माकी छटपटाहट है। अतीतके कठोर परीक्षण और गम्भीर निमम आलोचनके बिना साहित्य, कला, सामाजिक विज्ञान कोई भी अपना सम्यक् विकास नहीं कर सकते और न साधारण स्वस्थ सामाजिक मानवीय सम्बन्ध और मूल्य अपनी प्रकृतावस्थाको प्राप्त हो सकते हैं। रूसके बुद्धिजीवियोंमें यह धारणा अभी-तक घर किये है कि उनपर मिथ्या और झूठका शासन है और गुज़रे हुए सत्यको छिपानेवाला एक झूठ अनेक झूठोंको जन्म देता है। दलके स्वार्थके सम्मुख साहित्यिक सचाईको सदैव दबाया गया। साहित्यिक चेतनाकी ईमानदारीको आदर्शवादी अस्पष्टता और दिग्भ्रान्तिका एक उपादान मानकर तिरस्कृत किया गया है। दलके वैज्ञानिक आदेशोंको न माननेपर जेलके दरवाज़े खुले रहे हैं। आज तो यह भी नहीं मालूम है कि १९३६ के स्पेनके गृहयुद्धमें समाजवादी प्रजातन्त्रकी रक्षाके लिए लड़नेवाले कितने व्यक्ति स्टेलिनके जेलोंमें खत्म हो गये। मार्क्सवादी लेनिनवादके नामपर शासकों-द्वारा अपेक्षित एकताके लिए कितनोंको ही अपना मत परिवर्तन कर शासनका 'हिज मास्टर्स वायस' बनना पड़ा। स्टेलिनका विरोध करनेवाले जनताके शत्रु माने जाते थे (जिस प्रकार पाकिस्तानमें सदर-ए-अय्यूबका विरोध करनेवाले इसलामके शत्रु और पाकिस्तानके शत्रुओंके समर्थक या सहायक घोषित किये जाते हैं) और इन्हें दूसरे लोककी यात्रा करनी पड़ती थी क्योंकि वे सोवियत-व्यवस्थाके शत्रुओंके साथ थे।

स्टेलिनके बाद ख्रुश्चेव भी वैसी ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लौह एकछत्रता और निरंकुश दमनके उद्घोषक बन गये हैं। (यह लेख जनवरी १९६४ में लिखा गया था।–सं०) जून १९६३की केन्द्रीय समितिकी बैठकमें उन्होंने कहा कि जो लोग इस झण्डेके (ख्रुश्चेवके) नीचे चलकर हमें पीछे घसीटते हैं या हमारी प्रगतिके पहियेमें 'स्पोक' घुसेड़ते हैं, जब हम एक कठोर संघर्षमें संलग्न हैं, वे सावधान हो जायें और अपनी गतिविधि बन्द कर दें। वे हमारे श्रेणी-शत्रुओंका साथ दे रहे हैं। 'बुरी तरह सज़ा पायेंगे', 'कठोरतापूर्वक रोके जायेंगे', 'पूरी तरह दण्डित होंगे' (पीटे जायेंगे) आदि वाक्यांशोंका अर्थ सोवियत बुद्धिजीवी स्टेलिनके जेल-शिवरोंमें घुटते-घुटते भली भाँति जान चुके हैं। प्रश्न है, क्या 'इलिया एहरेनबुर्ग'-द्वारा बताये गये 'मौन-विज्ञान' का पारंगत बनकर सब-कुछ सहन किया जाये और साहित्यका शासकीय संचालन होने दिया जाये?

■ ■

राजनीति और साहित्य

पश्चिमी युरॅपमें युद्धके बाद अधिकांश साहित्यकार यही कहते पाये गये: "अब साहित्यके लिए वक़्त नहीं रहा।" उन्होंने कहा, "हर चीज़ तो समाप्त होती जा रही है – लिखनेका स्टेण्डर्ड गिर गया, पुस्तकोंका आधार बदल गया और साहित्यसे जनताकी रुचि भी उठ गयी। यह वक़्त मिलिटरीवालोंके लिए, कूटनीतिज्ञों और राजनीति करनेवालोंके लिए अधिक उपयुक्त है। इन लोगोंके सामने यह स्पष्ट है कि उन्हें क्या करना है लेकिन साहित्यकारके सामने कुछ स्पष्ट नहीं है।...."

'इस्कस' से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी एककी तलाश – ३

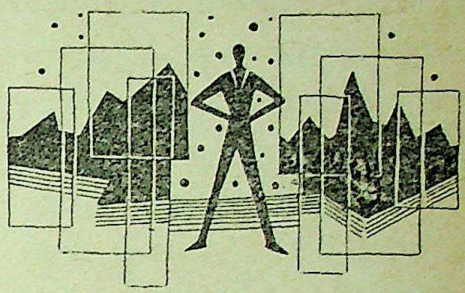

कुबेरनाथ राय

मायावी शिखरोंके प्रेक्षागृह

कामूने सार्त्रकी एक पुस्तकके बारेमें कहा था : यह तो काफ़्का है, हेमिंग्वेके द्वारा लिखा गया। और टॉमस मानके 'मैजिक माउण्टेन्स'का यह ट्रेलर कुबेरनाथ रायकी क़लम-से ऐसा लगता है जैसे कादम्बरीको मेघदूतकारने लिखा हो।

घोर व्यक्तिवाद अपने चरम उत्कर्षके क्षणोंमें पथभ्रष्ट मसीहा बन जाता है। वह अपने ऐबनार्मल मनकी स्वाद-रुचियोंपर दार्शनिक मुखौटा चढ़ाता है। वह पीड़ा रस एवं व्याधि-भोगका आदर्श स्थापित करता है। उसके पैग़म्बरी फ़तवेके अनुसार व्याधि ही ऋत है, व्याधि ही अमृत है, व्याधि ही नयी भूमा है – नयी 'डोलोरसा' है। टॉमस मानके प्रसिद्ध उपन्यास 'मैजिक माउण्टेन्स' में इस नयी भूमाको पान करके दिन काटनेवालोंकी मिथ प्रस्तुत की गयी है। इस उपन्यासमें 'कथा' नहीं बल्कि एक 'स्थिति' व्यक्त की गयी है। स्विस शैलमालाओंके बीच 'देवास' की भूमिपर स्थित स्वास्थ्यकेन्द्र—जो बाह्य ज़गत्से सामाजिक, मानसिक, भौगोलिक एवं आत्मिक दृष्टिसे बिलकुल अलग कटा हुआ है। इस द्वीपनुमा एकान्त स्थितिके जीव अपने अन्तरालकी रिक्तताको भरनेके लिए जब कुछ नहीं पाते हैं, तो व्याधिको ही अद्वितीय रस मानकर पान करने लगते हैं और तृप्त रहते हैं।

हैन्स कास्तार्प जहाज़ी इंजीनियरिंग पास करके सिर्फ़ तीन हफ़्तेके लिए इन मायावी 'देवास'-शिखरोंपर आता है। पर वह अपनी सारी छटपटाहट एवं अन्तर्द्वन्द्वके बावजूद भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कजरीबनमें फँसे तपभ्रष्ट योगीकी तरह इस ऊर्णनाभ-जालसे बाहर नहीं जा पाता है। निकलता है सिर्फ़ मरनेके लिए, जब महायुद्ध-के वज्रनिपातसे मायावी शिखरोंकी दीवारें फटकर धराशायी हो जाती हैं। सारा जादू खत्म हो जाता है। प्रारम्भमें जब युवा रक्त-में व्याधिरसके कीट नहीं घुस पाये हैं, वह सोचता है : सिर्फ़ तीन हफ़्तोंकी ही तो बात है। पर सप्ताह बीतते वह इन रस संस्कारों-की दीक्षा पा जाता है। ज़बानके नीचे थर्मा-मीटर, मनपर किसी काल्पनिक रोगका आरो-पित भय, दिलमें किसी रुग्ण, पर लावण्यमयी छोकरीकी तस्वीर। रुग्ण मन, रुग्ण सौन्दर्य, रुग्ण प्यार। ग्रीकों-जैसा मुक्त पंजाबी चुम्बन नहीं केवल छिपा-छिपा दृष्टि-स्पर्श। फिर अन्तर्हित आत्माका विखण्डन। प्रेम-ज्वर। और अन्तमें टूटा हुआ व्यक्तित्व एवं ठण्डी मृत्यु। यह एक ऐसा सलीब है कि एक बार अति हल्का स्पर्श हो जानेपर भी यह फैली बाँहोंमें हमें समेट लेता है। क्रूर, पर खूब-सूरत, आक्टोपस !

हैन्स कास्तार्पसे मानववादी सेतेम्ब्रिनी कहता है : "ओ हो; ऐसा ? तब तुम हम-लोगोंमें नहीं हो ? केवल मेहमान हो, तीन सप्ताहके लिए? जैसे ओदेसियस मृतात्माओंके देशमें उतरा था। पर हो बहादुर कि मृता-त्माओंके इस अन्धकारमय लोकमें आनेका साहस कर लिया !"

सेतेम्ब्रिनी इस समग्र स्थितिमें मानव-वादी दृष्टिकोणका प्रतिनिधित्व करता है। वह एक जागरूक आत्मा है जो देवासके जालमें आकर पस्त हो गयी है। वह कास्तार्पसे वर्जिल और काफ़्काकी चर्चा करता है, शैतानकी महिमा गाता है और स्वास्थ्यकेन्द्रके अधिकारियोंके बारेमें बताता है। एक तो है होफ़ात बेह्रीन जिसे वह 'अश्वमुख चित्रगुप्त'* कहता है। यह हयग्रीव अपनी अँधेरी चिकित्साशालामें बैठकर एक्स-रे मशीनके सामने सभीको व्याधिमन्त्रकी दीक्षा देता है। दूसरा है क्रोकव्हस्की जो मनो-विश्लेषक है। इस प्रकार शरीर और मन दोनोंकी चिकित्सा होती है जिससे आत्मा नामकी वस्तु न तो शरीरकी श्री-कान्तिमें रहे और न मनके किसी कोनेमें छिपी रह जाये। अपनी आत्मा, अपने पौरुषके गुण एवं अपना हृदय सब-कुछ इन्हें बेचकर शून्य अन्तराल और पस्त-हिम्मत व्यक्ति इसीको अपना 'घर' मान बैठता है। व्याधिके प्रति घोर आकर्षण यहाँके वातावरणमें ऐसा व्याप्त है कि कई लोग यहाँसे छूट जानेपर भी दूसरा बहाना बनाकर फिर आ जाते हैं।

मुश्किलसे एक दिन बीतता है। पहले दिन ही मदाम शोशासे उसकी भेंट हो जाती है। साधारण चेहरे-मोहरेकी महिला—जिसकी आँखें अवश्य जानी-पहचानी लगती हैं। कहाँ मिली थीं ? हाँ, बचपनमें उसका दोस्त हिप्पी याद आया। ठीक ऐसी ही खिरगीज

*रादामान्थस : जो ग्रीक मिथकोंके अनुसार यम-लोकके अन्दर प्रत्येक मृतात्माके कर्मोंका लेखा-जोखा रखता है और उसके अनुसार उनकी व्यवस्था करता है। यह ज्यूपीटर और यूरोपाका पुत्र है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आँखोंवाला हिप्पी जिसके आकर्षणमें वह बुरी तरह फँसा था। पर सब-कुछ अव्यक्त रहा – दमित वासना मात्र। सिर्फ़ एक बार काँपते स्वरमें महज़ पेन्सिल माँगी थी। वे ही आँखें हैं। इस तरह एक दिन बीता। कास्तार्प कहता है : "ओ ईश्वर, ऐसा लगता है कि एक दिन नहीं एक युग बीता।" सेतेम्ब्रिनी समझाता है : 'देवासमें काल चक्र बँधा कैद पड़ा है। वह प्रवाहशील नहीं। हम समयको दिन हफ़्तों नहीं वर्षोंमें गिनते हैं।"

आठवें दिन कास्तार्पकी बेह्‌रीन द्वारा शरीर-परीक्षा होती है और दूसरे दिन थर्मामीटरका क्रॉस उसे पकड़ा दिया जाता है। दीक्षा समाप्त। शय्यामें हफ़्तों पड़े रहनेका आदेश। उठना नहीं, घूमना-फिरना नहीं। फिर सेतेम्ब्रिनी 'मान न मान तेरा मेहमान' बनकर शय्याके पास उपदेश कर जाता है कि 'भागो यहाँसे, तोड़ो यह मानसिक इन्द्रजाल'। वह कहता है, "तुम्हारी ही तरह सभी नौजवान यहाँ एकाध हफ़्तेके लिए आते हैं पर छह मास बाद ज़िन्दगी उन्हें भुला देती है···वे इसीको घर मानने लगते हैं।" आगे चलकर सेतेम्ब्रिनी अपनी मृत्युकी फिलासफ़ी प्रस्तुत करता है – "इंजीनियर, मृत्यु केवल एक ही अर्थमें श्रद्धाकी वस्तु है। एक ही रूपमें वह उदास लगती है, वह है मृत्युको जीवनसे संयुक्त मानकर देखना। मृत्यु जो भावी जीवनका आधार बनती है, नमन और उपासनाकी पात्र है। पर जीवनसे रहित यह प्रेत है, ऊल-जलूल है, भद्दी और कुरूप है।" मानववादी दर्शनमें मृत्युके इसी उदात्त रूपकी पूजा की गयी है। पर व्याधिरसकी बूर्ज़्वा संस्कृतिके गलित स्तरमें यह कैसे अनुभूत होगी!

शय्यासे प्रथम बार निकलनेपर भी सेतेम्ब्रिनी नायकको इस सर्सीके देशसे भाग जानेको कहता है। ओदेसियस* सर्सीके माया देशमें गया था। वह 'हीरोइक' युगका व्यक्ति था। बूर्ज़्वा-युगकी सन्तान तो सर्सीका शिकार-भर बनेगी। "आत्मा पहले कोंचती है। फिर हारकर चुप हो जाती है। और शरीरके दावेके सामने परास्त हो जाती है। इंजीनियर क्या तुम्हारी आत्मामें वह कोंच, वह शक्ति अब भी बाक़ी है?"

इसके बाद मृत्युका नृत्य। लोगपर लोग मरते हैं। फिर क्रिस्मसका त्यौहार। आश्चर्य, मरण किसको चोट नहीं पहुँचाता। चेतना-हीन संवेदनहीन जड़ीभूत मनपर मृत्युकी कोई चाँप, कोई छाप नहीं उभर पाती है। फिर प्रकाश-रात्रिका त्यौहार आता है। प्रकाश-सज्जा और लालसापूर्ण नृत्य। पर सब-कुछपर एक पीत ज़र्द-ज़र्द आभा छायी हुई है। लालसाका मुँह उदास है, पर आँखें

*ओदेसी'की कथाका एक प्रसंग। ओदेसियस समुद्रमार्गमें पथ भूलकर सर्सीके मायालोकमें चला गया, जहाँ यह अप्सरा प्रत्येक नवागन्तुकको अपनी कामलिप्साकी पूर्तिके लिए किसी पशुमें परिवर्तित-कर देती थी। ओदेसियस (युलीसिस) ने इस मायाका प्रतिकार करके सर्सीको प्रेम-दान दिया, फिर उसके बताये मार्गपर यात्रा प्रारम्भ की, मृतात्माओंके लोककी ओर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चढ़ी हैं।

इसी रातको नृत्यशालाके एक कोनेमें नायक मदाम क्लावदिया शोशासे प्रथम सम्भाषण करता है। अबतक वह छिप-छिपकर देखता रहा। आँखसे आँख मिलती रही। क्रोकव्हस्कीके भाषणके दौरानमें वह सामने बैठी शोशाके कन्धों, उँगलियों और अंग-प्रत्यंगपर मनकी सारी भाव-कला बरसाता रहा। आज पहली बार काँपती आवाज़में पेंसिल माँगता है। बन्धन खुलता है और प्रणय-निवेदन व्यक्त होता है। मदाम सोवियत महिला है। वह हँसकर इसे 'बूर्ज़्वा प्यार' कहती है। ऐसे प्यारमें नवयुगकी झलक नहीं। इसमें एक व्यक्ति दूसरेको अपनी 'स्व'-की परिधिमें जन्म-क़ैद देनेकी चेष्टा करता है। नायकके बालोंको मदाम एक बार सहलाती है। और इससे अधिक कुछ नहीं। दूसरे दिन मदाम चली जाती है। नायकको अपनी एक एक्सरे-छवि देकर। मदामका पति किसी सोवियत प्रान्तमें अफ़सर है, और वह कभी-कभी उससे भेंट करने जाती है। शेष जीवन युरॅपके स्वास्थ्य-केन्द्रों और होटलोंमें। पति-पत्नी एक-दूसरेसे सहानुभूति और 'सोवियत प्यार' रखते हैं! इतना काफ़ी है।

इसी बीचमें एक अन्य व्यक्ति आता है। यह जेसुइट ईसाई दार्शनिक नेफथा है जो सेतेम्ब्रिनीका प्रतिद्वन्द्वी बन जाता है। कास्तार्पकी आत्माको दीक्षित करनेके लिए अब त्रिकोणात्मक संघर्ष चलता है। बेहरीन और स्वास्थ्य-केन्द्रका वातावरण, मानववादी सेतेम्ब्रिनी और ईसाई फासिस्ट नेफथा; और बीचमें युवक कास्तार्पकी अधपकी कच्ची आत्मा। सेतेम्ब्रिनी रिनैसाँका पुजारी है, तो नेफथा चर्च-फ़ादर्सके फ़ार्मूलेपर आधारित 'सिटी ऑफ़ गॉड'के मॉडलपर भरोसा करता है। पर नेफथाके विचार उलझे, गड्ड-मड्ड हैं। वह कम्युनिस्ट क्रान्तिको ईसाई सत्यका एक रूप मानता है। उसका रक्तपातमें विश्वास है। वह प्रोलेतारियत क्रान्तिमें ग्रेगरी द ग्रेट (पोप) की आत्मा देखता है। ग्रेगरीने कहा था, "सत्यप्रेरित हाथकी तलवार नहीं रुक सकती!" ईसाई फ़ासिज्म!

बेचारे कास्तार्पकी नन्ही-मुन्ही आत्मापर ईश्वर-शैतानकी तरह संघर्षशील सेतेम्ब्रिनी और नेफथा दोनोंका प्रभाव पड़ता है। उसका मन और चिन्तन दोनों विस्तृत और स्फीत होने लगते हैं। थर्मामीटर शोशाकी खिरगीज़ आँखोंके बाद यह बूर्ज़्वा बौद्धिकता! अन्तर्मनकी रिक्तता भरनेके लिए तीसरा साधन जो पहले दोनोंकी ही तरह अर्थहीन और-मूल्यहीन है। अपने एक उपन्यास 'पतन' (द फ़ाल) में कामका कथन है कि आधुनिक व्यक्तिकी दो ही लालसाएँ हैं: बौद्धिकता और नग्न कामुकता। एक दिन नेफथा सेतेम्ब्रिनीको द्वन्द्वके लिए ललकारता है। सेतेम्ब्रिनीकी बारी पहले आती है। उसका मानववाद उसे हवामें फ़ायर करनेके लिए प्रेरित करता है। निर्लक्ष्य फ़ायरके बाद सेतेम्ब्रिनी छाती तानकर खड़ा हो जाता है। नेफथाका अन्तर्मन पराजित-सा हो जाता है और वह मारे लज्जाके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मघात कर लेता है। मानववादी विश्वास जीत जाता है।

दुबारा शोशा आती है। इस बार एक नये वृद्ध प्रेमीके साथ। मरनेसे पहले वृद्ध और कास्तार्पमें घोर मित्रता स्थापित हो जाती है और ग्रन्थि बनती है शोशाके प्रति दोनोंका प्यार। इस बार शोशासे कास्तार्पको एक गहरा चुम्बन मिलता है। वृद्ध मर जाता है। शोशा फिर कास्तार्पको प्यार करती हुई उसके बालोंको सहलाकर उसके प्यारको 'बूर्ज्वा' 'हीरोइक' 'व्यक्तिमुखी' कहकर चली जाती है। जर्मन युवक और रूसी संस्कारोंवाली खिरगीज प्रेमिका। बात इससे आगे कैसे बढ़े ?

देवासमें कभी प्लैन्चेट, कभी प्रेत-आह्वान कभी रुग्ण प्यार और समय-समयपर मृत्यु, यही क्रम नीरस ढंगसे चलता रहता है। अचानक रणसिंघे गरज उठते हैं। जर्मनीका मुँह तमतमा उठता है और जर्मन युवक कास्तार्प इस मायावी शिखरकी मायाको काटकर युद्धमें भरती होता है तथा एक मोरचेपर, गोली खाकर नहीं, कमज़ोर फेफड़ेसे खून फेंककर मर जाता एक स्वस्थ युवा, एक हँसमुख युवक एक इंजीनियर हलका-हलका मौसमी बुख़ार लेकर आता है, (जो बाहरी जगत्के कर्मशील जीवनमें एक हफ़्ते बाद ही ठीक हो जाता) और व्याधि-विलासके चक्रमें ऐसा फँस जाता है! और इस प्रकार उसका अन्त होता है – 'अन-हीरोइक', साधारण अन्त !

■

उपन्यासमें तीन विन्दु-युग्मोंको स्पष्ट रूपसे उपस्थित किया गया है : प्रेम बनाम व्याधि, मृत्यु बनाम जीवन और मानववाद बनाम ईसाई फासिज़्म। बूर्ज्वा-मध्यवर्गीय संस्कृतिमें प्रेमका आदर्श क्लासिकी (हेलेन) या रूमानी (बीट्रिस) आदर्शसे भिन्न रहता है। यहाँ प्रेम मूलतः काम-ईहा है। प्रेममें ईहामृग – भेड़ियेके संस्कार रहते हैं। वह या तो 'सिडक्शन' है नहीं तो 'रेप'। इसकी अतल गहराइयोंका व्याख्याता आधुनिक मनोविज्ञान है। मनोविश्लेषक क्रोकव्हस्की कहता है : "दमित वासना या अज्ञात प्रेम किस तरहकी नक़ाब पहनकर सामते आता है ? व्याधिकी। व्याधिके लक्षण ही प्रेमकी महाशक्तिके प्रस्फुटन हैं। प्रेम ही रूप परिवर्तित करके व्याधि बन जाता है!" कास्तार्पके अतल मनमें किशोर – 'ब्याँय'-प्रेमिका (!) हिप्पीकी आँखें गड़ी हैं। शोशाकी आँखें देखकर वही संस्कार व्याधिके रूपमें फूटता है। प्रकाश-रात्रिकी नृत्यशालामें सम्भाषणसे पूर्व उसी प्रातःको वह शोशाकी नग्न भुजलताको देखता है और उनकी श्वेत लुनाई तथा आकर्षणको देखकर क्षण मात्रके लिए संज्ञा खोता हुआ-सा ज्ञात होता है। इन बाँहोंकी वह कल्पना महीनोंसे कर रहा है। दोनों एक ही मेज़के अन्तरपर बैठते हैं, पर दोनोंमें कोई वार्तालाप नहीं। कास्तार्पका प्यार यदि स्वस्थ होता तो वह आँखोंसे ही अपनी कथा कहकर शान्त नहीं होता। वह निर्भीक होकर मिलता। पर यह प्यार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं व्याधि था, जो क्षयकीटकी तरह उसके अन्दर घुस आया था।

व्याधि दैहिक उत्तेजना है! उत्तेजना अर्थात् दर्द। सारा दैहिक सुख ही 'दर्द' है! यह दर्द काम-प्रेरित होता है। या यों कहें यह काम-भावनाका ही बिगड़ा वीभत्स रूप है। व्याधि मात्र मौतिक कभी नहीं होती है। यह मानसिक प्रक्रियाका दैहिक प्रस्फुटन है। (साथ ही कभी-कभी उलटी प्रक्रिया भी होती है! पर प्रायः अदैहिक (कामना, वासना) से दैहिक (व्याधि या स्वास्थ्य) में परिवर्तन ही देखा गया है।) टॉमस मान-की एक प्रसिद्ध कहानी है 'ब्लैक स्वान' (काला हंस)। उसमें भी इसी विन्दु-युग्म-को उपस्थित किया गया है। एक अधेड़ महिला एक नवयुवकसे प्यार करती है। वह अपनेको सृजनमें असमर्थ पाती है। पर कामनाकी तीव्रताके कारण ढली उम्रमें भी उसमें 'पुष्पिता' होनेके लक्षण रक्तस्राव आदि प्रकट होते हैं। पर तीव्र कामनाको बरदाश्त करने लायक शरीर न होनेकी वजहसे वे लक्षण सृजन-सामर्थ्यके न होकर भयंकर व्याधिके सिद्ध होते हैं। यह क्रिया नहीं बल्कि प्रतिक्रिया है। स्वस्थ नवयुवतीमें क्रियारूप व्यक्त होकर यह 'पुष्पिता'के लक्षण होते, पर अधेड़में यह कामना अपने प्रतिक्रियात्मक रूप, व्याधि, में प्रकट होती है।

कामवृत्ति और शरीर दोनोंपर टॉमस मानने अपनी मानववादी दृष्टिको सेतेम्ब्रिनी-द्वारा व्यक्त करवाया है। एक बार सेतेम्ब्रिनी 'शरीर' की निन्दामें कहता है: "मालूम है, इंजीनियर, प्लाटिनस कहा करता था कि वह सिर्फ़ आत्मा ही आत्मा है और उसे शरीरके इस खोलको देखकर शर्म लगती है। एक बार मेरी आत्माने भी रुग्ण शरीरकी माँगोंके ख़िलाफ़ प्रतिवाद किया था, पर मैंने ध्यान नहीं दिया। यदि तुममें यह प्रतिवाद जीवित है, तो जल्दी भागो इस देवाससे।" रिनैसाँको जिसमें शरीरको प्यार एवं श्रद्धाकी वस्तु बताया गया है, आदर्श माननेवाले सेतेम्ब्रिनीके मुँहसे शरीरकी निन्दा सुनकर कास्तार्पको आश्चर्य होता है। सेतेम्ब्रिनी अपनी बात आगे चलकर साफ करता है: "हम मानववादी शरीरकी प्रतिष्ठा या आराधना तभी करते हैं जब शरीरमें मुक्ति, विचारस्वातन्त्र्य, सौन्दर्य एवं आनन्दकी महिमा पाते हैं। पर जब शरीर प्रकाशकी गति अवरुद्ध करने लगे – व्याधि, मृत्यु, ह्रास एवं गलित जीवन, लज्जा और काम-ईहाका स्रोत बन जाता है तो बुद्धि इसे अस्वीकार कर देती है और मानववादी इससे घृणा करने लगता है।" (ऐसे स्थलोंपर लगता है कि टॉमस मानके अन्दरका उपन्यासकार नहीं बल्कि महाकाव्यकार बोल रहा है।)

मृत्यु और जीवनका विन्दु-युग्म प्रेम-व्याधि-युग्मसे सम्बन्धित है क्योंकि दोनोंका माध्यम शरीर है। सेतेम्ब्रिनी देवासके स्वास्थ्य-केन्द्रकी तुलना सदैव मृतात्माके अन्धकारमय लोकसे करता है जहाँ जीवनकी मृत छायाएँ ही रहती हैं। उसके अनुसार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केवल 'हीरोइक' युगके मानव हेराक्लीज़, युलीसिस (ओदेसियस) या एनीयड ही वहाँसे जाकर लौट सकते हैं। क्षुद्र बूर्ज़्वा संस्कृतिकी क्षुद्रसन्तान इतना दुस्साहस कैसे कर सकती है? उन्हें तो एक बार इसके सिंहद्वारसे घुसनेपर फिर सारी आशाओंको त्याग देना है!

स्वामी विवेकानन्दने कहा था: "मृत्यु-की उपासना करो। घोर शिवसे एकाकार हो जाओ। खड्गको कण्ठसे लगा लो।" यदि मृत्युकी उपासना जीवनकी किसी बड़ी बाज़ीको जीतनेके लिए हो तो वह 'हीरोइक' है। ऐसी मृत्यु हमारी उपासनाका पात्र है। इसकी करालताके भीतर ही जीवनका सगर्व शक्तिमान् अंकुर फूटेगा। पर व्याधि-रसका आस्वादन करनेवाले अन-हीरोइक, बूर्ज़्वा मनुपुत्रोंकी मृत्युकी उपासना जीवनसे अलग, कटी हुई, एक प्रेतपूजा मात्र है। अतः कुत्सित है, हेय है, अशुभ है, गलित है। पीड़ा और मृत्यु दोनोंको जीवनकी महिमाका साधन बनाया जाये, तो वह उपास्य है। जैसे मसीहा या चन्द्रशेखर आज़ादके केसमें। पर जो पीड़ा जीवनको महिमान्वित नहीं करती, जिसके द्वारा जीवनका तेज जनम नहीं लेता, वह गर्भपात-सुख है! पीड़ा जीवनका सबसे बड़ा सत्य है। इसी पीड़ाकी इनसाइक्लोपीडिया तैयार करनेका प्रयत्न मानववादी पण्डितों द्वारा हो रहा है (सेतेम्ब्रिनी भी उसका एक सम्पादक है) जिससे पीड़ाके विविध रूपोंको ऊर्ध्वकामी संस्कारोंकी जननी बनाया जा सके।

सारे उपन्यासके बौद्धिक ढाँचेमें मानव-वादी जीवनदर्शनकी ही स्थापना की गयी है। टॉमस मान स्वतः मानववादी – 'ह्यूमनिस्ट' है। मानववादके साथ दो मानव-विरोधी पक्ष उपस्थित किये गये हैं। एक तो है व्यक्तिप्रधान संस्कृतिका गलित जीवनधर्म। दूसरा है ईसाई आतंकवाद। जेसुइट फादर नेफथा इसी ईसाई आतंकवादका प्रतीक है जो अन्तमें अपने अन्तःकरणकी पराजयके कारण आत्मग्लानिसे स्वतः मर जायेगा। नेफथा मसीहाकी उस आवाज़का समर्थक है जो बोलती है "मैं पड़ोसीके लिए प्यार नहीं लाया हूँ, तलवार लाया हूँ। मैं बापको बेटेसे, पतिको पत्नीसे, भाईको भाईसे अलग करा दूँगा।" नेफथाका आदर्श है पोप ग्रेगरी द ग्रेट जिसने शस्त्रबलसे राजशक्तिको दबाकर चर्चका आतंक ऊँचा किया। (फल हुआ, ईसाई चर्चका रोमन साम्राज्यके एक ज़र्द शुष्क संस्करणमें बदल जाना – वस्तुतः यह ईसाई रहा ही नहीं।) नेफथाको ग्रेगरीकी आत्मा प्रोलेतारियत क्रान्तिमें दिखाई देती है और प्रोलेतारियत समाजवादमें वह ईश्वरराज्यकी स्थापनाका स्वप्न देखता है। यह एक प्रकारका फ़ासिस्ट समाजवाद है, जो मध्ययुगीन क्रिश्चियन आदर्शोंपर आधा-रित है। नेफथाका यह 'कमिटमेण्ट' एक भयंकर फैनेटिसिज़्मपर खड़ा है जिसके लिए हिब्रू-शाखासे उत्पन्न सारे धर्म बदनाम हैं। उपन्यासके अन्तमें इस जीवनदृष्टिकी पराजय नेफथाके ग्लानिमय आत्मघात द्वारा प्रदर्शित की गयी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टॉमस मानने इस उपन्यासकी रचना-प्रक्रियापर स्वतः प्रकाश डाला है। वह अपनी बीमार पत्नीसे मिलने एक ऐसे ही टी० बी० हास्पिटलमें गया। डॉक्टरोंने उसकी भी परीक्षा करके छह मासके लिए ठहरनेको कहा। पर वह तीन सप्ताह रहकर वहाँसे भागा और इन तीन सप्ताहकी अनुभतियोंके आधारपर इस उपन्यास 'मैजिक माउण्टेन्स' को लिख मारा।

टॉमस मासने एक कहानी लिखी है 'डेथ इन वेनिस'। इसमें प्लाट नहीं है। एक अधेड़ उम्रका लेखक पहले-पहल अपने नगरसे बाहर जाता है पर्यटन-रसके लिए। वेनिसमें एक खूबसूरत लड़केपर, जिसकी माँ बग़लके कमरेमें ठहरी है, आसक्त हो जाता है। यह आसक्ति आँखोंकी सक्रियतासे अधिक नहीं जाती, पर अन्तरालको मथती रहती है। वह लड़केका हर जगह पीछा करता है, पर एक शब्द भी मारे भीरुताके कहता नहीं। समुद्रतटपर खेलमें दूसरे लड़के उसके शरीरको निर्दयतापूर्वक मरोड़ते हैं, इसे देखकर (जो बालक्रीड़ाकी स्वाभाविक-सी घटना है) उस लेखकका दिल तड़प जाता है और वह 'शॉक'को बरदाश्त नहीं कर पाता है। वहीं मृत्यु हो जाती है। मानने स्वतः कहा है—"Death in Venice' portrays the fascination of Death-idea, the triumph of drunken disorder over the forces of life consecrated to rule & discipline. In 'Magic Mountains' the same theme is humoursly treated. 'डेथ इन वेनिस' की कथा तो कुछ नहीं है—फिर भी प्रक्रियाओं और अनुभावोंका 'डिटेल' इसे पचास-साठ पृष्ठोंकी कहानी बना देता है। इसी प्रकार 'मैजिक माउण्टेन्स'में भी कोई विशिष्ट कथा नहीं। प्रेम निष्क्रिय और अव्यक्त तथा एकांकी रहता है। कोई घटना ही नहीं घटित होती। केवल एक 'स्थिति'का चित्र है। भावात्मक और बौद्धिक संघातोंका चित्र है। इससे अधिक नहीं। पर टॉमस मान विस्तार देनेकी कलाका माहिर है। 'जोज़ेफ़'की कथा बाइबिलके एक दर्जन पृष्ठोंमें है, पर टॉमस मानने विशाल-विशाल चार भागोंमें महाकाय उपन्यास तैयार किया है। इसी तरह 'मैजिक माउण्टेन्स' भी सात सौ पृष्ठोंका उपन्यास है। आधुनिक दर्शन, विज्ञान एवं साहित्यकी बौद्धिक पृष्ठभूमिमें मानसिक संघात बड़ी ही बारीकीसे व्यक्त किये गये हैं।

समस्त उपन्यासमें सेतेम्ब्रिनी एक जागरूक आत्मा है। पर यह जागरण निगड़बद्ध है। प्रेतका जागरण है। जब वह मानववादी चिन्तन और जीवनकी महिमाका व्याख्याता बनता है तो टॉमस मानका अपना स्वर उसमें बोलता है। अन्यथा वह भी उसी उर्णनाभ-शृंखलासे बद्ध एक दीन प्राणी है जिसके खण्डनमें वह अपनी समूची तर्क-शक्ति लगा देता है। यह शायद सेतेम्ब्रिनी-का ही प्रभाव है कि कास्तार्प मृत्यु और व्याधिका प्रशिक्षण लेते हुए भी मृत्यु और

[शेष पृष्ठ २९ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

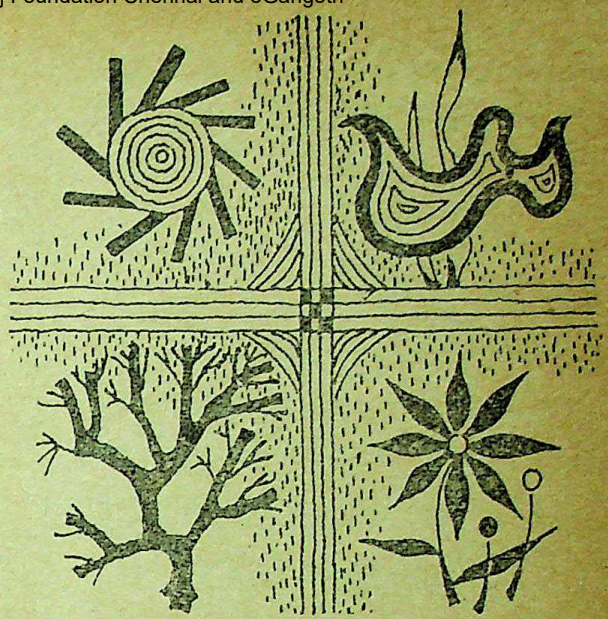

धूप और छाया

१—हरियारी घाटियों पर युद्धरत

: सूरज

ताम्रवर्णी कवच
ख़ाली तूणीर
कन्धे पर टँगा हुआ धनुष
उतर रहा
हरियारी घाटियों पर
युद्धरत
आकाश पुरुष,
वादियाँ सुनसान····।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाथों में एक का
खण्डित पहिया,
बादल महारथियों से घिरा हुआ
धरती पर गिरा हुआ
बालक सूर्य
लहूलुहान।
श्रम से तमतमाया चेहरा
कन्धे पर टूटे हलबखर रखे,
चितकबरे बैलों बीच
धरती को ख़ून से सींच
घर लौटता हुआ मालवी किसान।

समय बहेलिये के
तीखे तीर से आहत
जीवन के सान्ध्य क्षितिज पर
ख़ून से तर-बतर
परनुचा लक्का कबूतर
प्रगति का प्रतिमान,
खो रहा है प्रान।

— *नईम*

२— मौलसिरी-सा झरता
सर्वव्यापी प्यार···

अपनी नियति से टकराना
समूची वत्सलता का :
इससे ज़्यादा निर्मम नहीं
कोई टकराव। —
शायद, इसीलिए,
मन—अथाह पीडा,
नहीं बिखराव।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

....और वत्सलता : एक रंग :
अनुभूति से भी परे – गहरा –
इतना, बस, इतना करना अनुभव
बार - बार
आत्मीय वातावरण में ।
और लगातार –
रात की तरह जो केवल अपना –
अपने उस जीवन - क्षण में ।–
– यह भी, यह भी,
नहीं, यातना तो नहीं, – जाने क्या ! –
किन्तु, पीड़ा भी, पीड़ा नहीं भी ।
बस, एक निरन्तर नमी,
एक अडूब डूबन ।
देह – उदास भी, प्रसन्न भी ।
और बे-मौसम फूली गुलछरी की गन्ध-सा
ज़्यादा और ज़्यादा फैलता,
मौलसिरी-सा झरता
सर्वव्यापी प्यार । –

कुहासे-सा छा लेता धरती
आँखों से होता हुआ कोई आकाश ।
धूप और छाया
फिर भी आस-पास ।...

....मन, नहीं, अब मन कहाँ – जीवन –
टूटने - जुड़ने की सीमासे बाहर,
केवल – भीतर - भीतर –
नदी की तरह निरपेक्ष ।
जो, टकराते हैं तट वत्सलताओं के ।

इस टकराव में किन्तु, खो जाता
नियति-नियति का अलगाव ।
मन भले केवल पीड़ा हो;
या कि नहीं भी हो –
जीवन : सवरँग - घिराव ।

अपनी निर्ममता में
इससे ज़्यादा वत्सल नहीं कोई टकराव ।

– कान्ति

पुस्तकालय 077995 गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार

३– फ्लॉवरवाज़के अन्तिम फूल...

पीली शाम :
कमरे में छूटी हँसी
चाय के प्याले, प्लेटें नाश्ते की
नये-पुराने फिलॉसफ़रों के कोटेड फिकरे
कविता-कला-संगीत
– इन्ट्लेक्चुएलिटी –

आधी रात :
अँधेरे में खो गयीं
किताबों की शेल्फ़, कुर्सियाँ
बेड, टेपेस्ट्री, रंगबिरंगी चादर, गद्दियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(हैंगर में लटकी इन्द्रलेक्चुएलिटी)

बस, कोने में –
फ्लॉवरवाज़ के अन्तिम फूल में
झुकी खड़ी है हँसी –
डर है :
अँधेरा इसे भी न ग्रस ले कहीं !

– अमृता भारती

४– ···बरफ़ परत-दर-परत

सुबह किसी ने कह दिया –
आज बसन्त है
सारा दिन बसन्ती रंग
हवा में, पत्तों में
जीवन में,
खोजती ही रही;
कहीं भी नहीं दिखा।

सरसों की एक डाल,
बौरों की एक गाछ
किसी ने भी नहीं दी मुझे।

अविदित, अनाहूत दर्द एक
संगीत की कड़ी-सा
मथता रहा अन्तर को।

पीली सूखी कँटीली
पत्तियाँ नीम की
पराये-से तन पर
मँडराती रहीं :
खड़ – खड़ – खड़।

दूर कहीं
किसी पहाड़ी गुफ़ा पर
गिर-गिर कर बरफ़
परत - दर - परत
जमती रही।

– स्नेहमयी चौधरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचार-गोष्ठी : सूत्र-प्रस्तुति

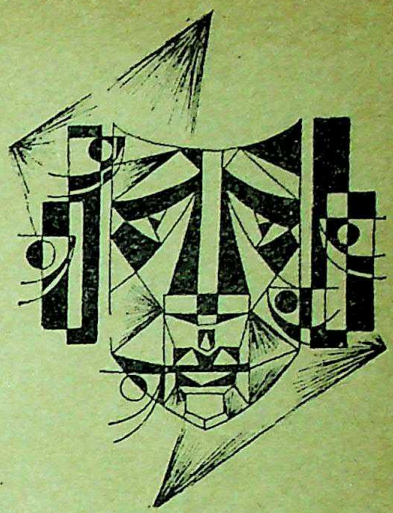

लक्ष्मीचन्द्र जैन

नाटककारकी समस्याएँ

(उपलब्धियोंके परिप्रेक्ष्यमें)

●

यम-यमी संवादसे, 'एब्सर्ड' धारा तक नाटकने बहुत बड़ा फ़ासला तय किया है और विकासके इस बिन्दुपर हिन्दी मंचका कहना है : अच्छे अभिनेय नाटक उपलब्ध नहीं है । इसी स्थितिका संयुक्त पहलू नाटककारकी वे समस्याएँ हैं जो विश्लेषण और समाधान चाहती हैं। 'अनामिका' द्वारा कलकत्तामें (२५ दिसम्बर १९६४से १ जनवरी१९६५ तक) आयोजित अखिल भारतीय नाट्य-समारोहकी एक विचार-गोष्ठीका विषय-प्रारंभ, नाटककारकी समस्याओंका विचारणीय विश्लेषण।

आजके हिन्दी नाटककारकी समस्याओंपर विचार करनेसे पहले यह देख लेना आवश्यक लगता है कि नाटककार जिन परम्पराओंसे बँधा हुआ है या जो उपलब्धियाँ उसे प्राप्त हैं उनके उद्भव और विकासकी पृष्ठभूमि क्या है और वे किस प्रकारकी हैं।

यों तो हिन्दी नाटकके उद्भवकी पृष्ठभूमिमें ऋग्वेदके यम-यमी संवाद तथा पुरुरवा और ऊर्वशीके नाटकीय आख्यान; सामवेदका समवेत गान जिसमें उदात्त-अनुदात्त स्वर-संघातोंका प्रदर्शन हस्तमुद्राओंसे होता था; और यजुर्वेदके रंगभूमीय क्रिया-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलाप (जो रंगस्थली आजके 'एरीना' मंच-का प्राचीनतम रूप भी मानी जा सकती है) से लेकर अश्वघोष, भास, कालिदास, शूद्रक, भवभूति, विशाखदत्त आदिके संस्कृत नाटकों-की अक्षय सम्पदा, वैष्णव सम्प्रदायके भक्ति-मूलक नाटकोंका राज-मंच तथा जात्रा-अभिनयों तकका उल्लेख किया जाता है; किन्तु आधुनिक हिन्दी नाटक और मंचके प्रथम सर्जक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हैं जिन्होंने अपने ३६ वर्षीय अल्प जीवनके बहुमूल्य १८ वर्ष (१८६७ से १८८५ तक) नाटक-लेखनमें और हिन्दीको परिष्कृत रंगमंच देनेमें व्यतीत किये। यह हिन्दीका सौभाग्य है कि भारतेन्दु बाबूने जहाँ विधाकी दृष्टिसे विविध प्रकारके सर्वांगीण नाटकों, एकांकियों, प्रहसनों और अनुवादोंके प्रभावपूर्ण नमूने प्रस्तुत किये, वहाँ विषय-वस्तुकी दृष्टिसे प्राचीन आदर्शोंकी प्रतिष्ठापनाके साथ-साथ नवजागरण, राष्ट्रीय चेतना और सामाजिक अभ्युत्थानके लक्ष्यको अपनी नाट्य कृतियोंमें केन्द्रित किया। भारतेन्दु मात्र लेखक और रंगमंच व्यवस्थापक ही नहीं थे, वे कुशल अभिनेता भी थे। अतः नाटकोंमें प्रयुक्त भाषा और साहित्यिक भंगिमाको उन्होंने नाटकीय कथ्य और प्रस्तुतिकरणके साथ इस प्रकार नियोजित किया कि समकालीन व्यावसायिक पारसी थ्येटरकी प्रचलित कुरुचियोंका हिन्दीके मंचपर प्रवेश न हो, जन-रुचिका परिष्कार भी हो और दर्शकोंको पूरा भाव-बोध और रस-बोध भी प्राप्त हो। जन रुचिको सांस्कृतिक परम्परासे सम्बद्ध करनेके लिए उन्होंने नाटकोंका शैली-संयोजन और अंक-विधान आदि प्रायः संस्कृत नाटकों-की परिपाटीके अनुरूप रखा। भारतेन्दु बाबू-की परम्पराको बद्रीनाथ भट्ट, बालकृष्ण भट्ट, राधाचरण गोस्वामी और माधव शुक्ल आदि-ने बढ़ाया – स्वयं नाटक लिखकर; कानपुर, काशी, प्रयाग आदिमें नाटक-मण्डलियाँ स्थापित करके, और रंगमंचपर पात्रोंकी भूमिकाका स्वयं निर्वाह करके। इस सन्दर्भमें विशेष रूपसे उल्लेखनीय है कलकत्तेकी हिन्दी नाट्य परिषद् जिसे पण्डित माधव शुक्लने अपने सहयोगियोंके प्रयत्नसे स्थापित किया और जिसने पारसी मंचको वास्तविक चुनौती देकर सुरुचिपूर्ण साहित्यिक नाटक प्रस्तुत किये। सफल नाटक-लेखनकी दृष्टिसे श्री-माखनलालजी चतुर्वेदीके 'कृष्णार्जुन युद्ध' को उस कालकी अन्तिम कड़ी माना जा सकता है।

बादमें, हिन्दी मंचके प्रति इस प्रकारका समर्पण भाव रखनेवाले व्यक्तियोंके अभावमें तथा समाजके निरपेक्ष भावके कारण हिन्दीके अव्यावसायिक मंचकी परम्परा जौर धारा विच्छिन्न हो गयी। जगदीशचन्द्र माथुरके अनुसार, एक कारण यह भी हुआ कि खड़ी बोलीने तबतक नया निखार पा लिया था। अतः लेखकोंके सामने कविता, कहानी, उपन्यास आदि लेखनके नये क्षितिज खुले और नाटक-लेखनमें शिथिलता आयी। इस सबका परि-णाम यह हुआ कि व्यावसायिक पारसी मंच ज़ोर पकड़ रहा।

कुछ नाटककार ऐसे भी हुए हैं जिन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पारसी मंचके मालिकोंकी भीड़लगाऊ आवश्यकताओं – अर्थात् भड़कीली साज-सज्जा, चमत्कारी दृश्य, ऊँचे स्वर और विशेष लहज़ेके भावुक वार्तालाप, खिचड़ी भाषा, बीच-बीचमें शेर और दोहेकी चासनी, समानान्तरगामी घटिया रूमानी प्रहसन आदि–का निर्वाह करते हुए भी पौराणिक और ऐतिहासिक कथानकोंको आकर्षक नाटकोंका रूप दिया। इनमें प्रमुख हैं 'हश्र' (आगाहश्र कश्मीरी), 'बेताब' (नारायण प्रसाद), 'शैदा' (तुलसीदत्त) और 'जौहर' (हरिकृष्ण)। इस प्रसंगमें राधेश्याम कथा-वाचकका कृतित्व इस दृष्टिसे विशिष्ट है कि पारसी मंचको उन्होंने कुछ ऐसे नाटक दिये जो उक्त दो प्रकारके मंचोंकी दूरीको कम करनेमें सहायक हुए; और पारसी मंच परिष्कारकी ओर उन्मुख हुआ।

यहाँतक आजके सन्दर्भमें हिन्दी नाटककी भूमिका एक परम्पराकी भूमिका है।

सन् १९२५ के लगभग जयशंकर प्रसाद-ने हिन्दी नाटकको एक नया मोड़ दिया और उसे अपेक्षाकृत आधुनिक बनाया। प्रसाद नाटकको शुद्ध साहित्यका अंग मान कर चले। उन्होंने कथानकोंको सांस्कृतिक आधार दिया, पात्रोंमें अन्तर्द्वन्द्व अवतरित किया, नाटकीय पात्रोंकी प्रेरणाओं और क्रिया-कलापोंके दार्शनिक आधारको व्यक्त किया और प्रयत्न किया कि नाटक रंगमंचके जटिल विधानसे मुक्त होकर साहित्यिक संवेदना, भाव-आलोड़न और चरित्रोंकी क्रिया-प्रति-क्रियाके निदर्शनसे दर्शकोंको प्रभावित करे। साहित्यमें जो छायावादी धारा परिलक्षित थी वह प्रसादके नाटकोंमें भी आयी। सभी दर्शक प्रसादके साहित्यिक नाटकोंके रसबोध-की क्षमता नहीं रखते थे अतः दुर्गापूजा आदि सार्वजनिक उत्सवोंमें जिन बँगला नाटकोंकी जनप्रियता प्रमाणित हो जाती थी उनका अनुवाद हिन्दीमें आया। इनमें द्विजेन्द्रलाल रायके नाटक प्रमुख थे।

किन्तु, इस बीच जीवनमें, विशेषकर बौद्धिक वर्गके जीवनमें, और साहित्यमें भी, पश्चिमकी विचारधाराका प्रवाह कुछ क्षिप्रताके साथ प्रविष्ट हुआ। विश्वविद्यालयों और नगरोंमें शौक़िया नाटक खेलनेवालोंको नये नाटकोंकी आवश्यकता पड़ी। लेखक नाटककी आधुनिक विधाकी ओर आकृष्ट हुए। एक ओर हरिकृष्ण प्रेमी, सेठ गोविन्द दास, गोविन्दबल्लभ पन्त, जगन्नाथ प्रसाद मिलिन्द आदि प्रसादकी परम्परामें, अपने-अपने ढंगसे, आदर्शवादी ऐतिहासिक और सामाजिक नाटक लिखते रहे। दूसरी ओर डॉ० रामकुमार वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क, लक्ष्मीनारायण मिश्र, रामवृक्ष बेनीपुरी, भगवतीचरण वर्मा, विष्णु प्रभाकर, जगदीश चन्द्र माथुर आदिने नाटक-लेखनमें विधागत और शैलीगत नये प्रयोग किये, नाटकको नयी संवेदनाओंका वाहक बनाया तथा इब्सन, शॉ, चेखव, ओ' नील आदिके प्रभावों-को रूपान्तरित किया।

पश्चिमने जिस 'सामाजिक यथार्थ' को साहित्यमें प्रतिपादित किया उसकी प्रतीति हिन्दीके नाटक-साहित्यमें दो रूपोंमें आयी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। अश्क, लक्ष्मीनारायण लाल, और भुवनेश्वर आदिने इस यथार्थको भारतीय सामाजिक जीवनसे सीधा पकड़ा और सम्बन्धित समस्याओंको नाटकोंमें प्रस्तुत किया। दूसरी ओर जगदीशचन्द्र माथुर, उदयशंकर भट्ट, मोहन राकेश और धर्मवीर भारती आदिने ऐतिहासिक तथा पौराणिक कथानकोंके माध्यमसे (वास्तवमें प्रसादने इस दिशामें भी मार्गदर्शन किया) आधुनिक जीवनके सामाजिक यथार्थको अभिव्यक्ति दी। सामाजिक यथार्थको नाटकोंमें अभिव्यक्ति देनेवाले और भी नाटककार हैं जो नाट्यकृतिकी सफलताके लिए साहित्यिकतासे अधिक ऐसे फ़ार्मूलोंमें विश्वास रखते हैं जो जन-रुचिकी दृष्टिसे आकर्षक हों। व्यंग्यात्मकताकी दृष्टिसे ये नाटक सफल होते हुए भी साहित्यिक कृतित्वका स्तर प्राप्त नहीं कर पाते। और इसी प्रयत्नमें, किन्तु एक जटिल बौद्धिक धरातलपर, सम्मिलित हैं वे विदेशी प्रयोग जो नाटककी अधुनातन प्रवृत्तिके परिचायक हैं—सांकेतिक, देश-काल-पात्रके अन्तःसामंजस्यसे मुक्त, प्रवाहवादी, अमूर्तवादी और 'ऊलजलूल' 'ऐब्स्ट्रैक्ट' तथा 'एब्सर्ड' धाराके नाटक जो आज लिखे जा रहे हैं, और जिनके सामने पाठक, श्रोता और दर्शक प्रश्न-चिह्न लगाये जा रहे हैं। यहाँ, नाटककार जनतासे कट गया है और नाटकके कथ्य तथा शिल्पका अन्तर पुराने नाटकोंकी तुलनामें इतना बड़ा हो गया है जैसा साइकिल और अन्तरिक्षयानका।

यहाँसे उठती हैं आजके नाटककारकी अनेक समस्याएँ :

१—नाटककारकी पहली समस्या यह है कि उसके सामने विश्वके नाट्यसाहित्य और मंचका ऊँचा स्तर है जिसतक उसे पहुँचना है किन्तु उसके दर्शकोंकी ग्रहणशीलता सीमित है तथा विविध-स्तरीय है। देशमें एक ओर ठेठ देहात है जहाँ पुराने ढंगके नाटक थोड़े-से आधुनिक तत्त्वोंके मिश्रणके साथ खेले जा रहे हैं और दूसरी ओर शहरोंके आधुनिक मंच हैं जहाँ पिरेण्डेलो, सैमुअल बैकेट, ब्रेख्ट, मिलर और टेनिसि विलियम्स आदिकी शैली और स्तरके नाटक लिखने और खेलनेका प्रयत्न हो रहा है। एक ओर नाटककारके सामने परम्परागत तत्त्वों और साधनोंको आधुनिक परिवेशमें प्रयोग करके उनसे काम निकालनेका मोह है और दूसरी ओर परम्परासे विच्छिन्न आधुनिक भाव-बोध और शैली-शिल्पको अपने कृतित्वमें उतारनेका आकर्षण है।

समस्या यह है कि भारतके अपने निजी आधुनिक मंचकी कल्पना नाटककारके मनमें क्या हो? उसके दर्शकोंमें हैं रूढ़िवादी पल्ली समाज, परम्परासे चिपटे भी और कटे भी देहात तथा उपनगर, आधुनिक औद्योगिक जीवनसे प्रभावित और विदेशी भाषाओंके नयेसे नये रंगमंचीय प्रयोगोंको देखनेवाले दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता-जैसे महानगर! इस विविधवर्गीय जनसमूहतक नाटककार किन माध्यमों और विधाओं-द्वारा पहुँचे कि साहित्यकारिताका श्रेय भी वह पाये और जन-प्रिय नाटककार भी बने। क्या इन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विविध स्तरीय दर्शकोंके लिए नाटक-लेखनके कुछ सामान्य सूत्र बाँध सकते हैं ? या नाटक-लेखनके क्षेत्रमें भी विशेषज्ञोंके वर्ग बनें ?

२–प्रश्नके इसी पहलूसे मिलती-जुलती दूसरी समस्या यह है कि हिन्दीका नाटककार अपनी बौद्धिकता और साहित्यिकताको नाट्य-कृतिका माध्यम बनाये या अपनी सफलता इस बातमें माने कि उसके नाटकको अधिकसे अधिक दर्शकोंने समझा और सराहा। यह सराहना नाटककारको तभी प्राप्त होगी जब नाटकमें भावनाओंका उतार-चढ़ाव हो, संवेदनाएँ रसोद्रेक कर सकें और नाटककी कथावस्तु तथा अभिनयकी भावपूर्ण भंगिमाएँ दर्शकको तल्लीन कर सकें। साथ ही यदि नाटकको साहित्यिक लेखनकी कोटि-में परिगणित होना है तो नाटककारके सामने भाषाका प्रश्न एक विशेष समस्याके रूपमें आता है। जो दर्शक-वर्ग भारतेन्दुके 'सत्य-हरिश्चन्द्र' से लेकर रमेश मेहताके 'अण्डर सेक्रेटरी' तक ही भाषाकी अभिव्यक्तिको ग्राह्य मानता है, उसे ध्रुवस्वामिनी, मत्स्य-गन्धा, चारुमित्रा, कोणार्क, अन्धायुग और आषाढ़का एक दिन, कथोपकथनकी दृष्टिसे यदि भारी पड़ते हैं तो पड़ें, इस कारण प्रसाद, रामकुमार वर्मा, जगदीशचन्द्र माथुर, धर्मवीर भारती और मोहन राकेश अपनी भाषा और संवेदनाको ऐसे दर्शक-वर्गके भावबोधके स्तर तक कैसे ले जाते ? समस्या नाटककारकी है अवश्य, किन्तु, मुझे लगता है, समाधान पाठक और दर्शकके पास ही है कि वह नाटककारके स्तरतक उठे। फिर भी आत्मतोषी बौद्धिकता बनाम जनतोषी भावप्रवणताकी युगपत् सिद्धि नाटककारके लिए बड़ी चुनौती है।

३–परिचालकों और नाट्य दलोंकी आम शिकायत है कि हिन्दीमें अभिनेय नाटक बहुत कम हैं। दूसरी ओर कुछ नाटककार हैं जो समझते हैं कि हिन्दीमें मंचकी दृष्टिसे या नयी उपलब्धियोंकी दृष्टिसे अनेक सफल नाटक लिखे जा रहे हैं किन्तु परिचालकों और निर्देशकोंको इतना धीरज नहीं कि नये नाटकोंको मंचपर उतारकर परखें। शिकायतें दोनों ही अपनी-अपनी जगह ठीक हैं। न तो सफल नाटकोंके सृजनकी क्षमता और समु-चित प्रशिक्षण रखनेवाले नाटककार बहुतायत-से हैं और न ही हिन्दीमें प्रयोगधर्मा मंच हैं।

इस स्थितिमें हिन्दी मंचके सामने यह मार्ग खुलता है कि जबतक अच्छे अभिनेय नाटक उपलब्ध नहीं तबतक, विशेष रूपसे सफल और चुने हुए विदेशी तथा भारतीय नाटकोंके अनुवाद प्रस्तुत किये जायें, अथवा आवश्यकतानुसार उन्हें इस प्रकार अपने साँचेमें ढाल दिया जाये कि मूलका सौन्दर्य और प्रभाव अधिकसे अधिक मात्रामें प्राप्त हो सके तथा कथावस्तुके माध्यमसे दर्शक अपनी ही भावनाओं तथा समस्याओंको प्रस्तुत हुआ देखे। उदाहरणके लिए शम्भू मित्र-द्वारा प्रस्तुत 'पुतुल खेला' इब्सनके 'डाल्स हाउस' का इतना सजीव रूपान्तरण है कि लगता है ही नहीं कि लेखक या वातावरण या प्रस्तुत समस्या विदेशी है।

४–कल्पनाशील नाटककार प्रायः पाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि परिचालक नये टेकनीक और नयी सूझ-बूझके लिए तैयार नहीं तथा उसके अनुभव और उसकी कल्पना अत्यन्त सीमित है। नाटककार बाध्य होता है कि वह परिचालक बने किन्तु यह सबके लिए सहज नहीं। दूसरी ओर परिचालकोंको ऐसे नाटककारोंसे वास्ता पड़ता है जो अनेक दृष्टियोंसे नाटक तो अच्छा लिख लेते हैं किन्तु अपने लेखनमें किसी भी प्रकारका संशोधन करनेके लिए तैयार नहीं, निर्देशक और परिचालक उन्हें चाहे जितना आवश्यक समझें। आवश्यकता नाटककार और परिचालकके इस प्रकारके सहयोगकी है कि नाटक सहलेखन-सा लगे।

५–विज्ञानने ध्वनि, आलोक और मंचबन्धके जो नये साधन दिये हैं उनका ज्ञान रखना नाटककारके लिए आवश्यक है किन्तु बहुत-से नाटककारोंकी इस ओर या तो अभिरुचि नहीं या उन्हें साधन नहीं प्राप्त कि इन सब आधुनिकताओंका प्रत्यक्ष परिचय प्राप्त कर सकें। नाटककार कहीं-कहीं इस बातसे भी हताश है कि वैज्ञानिक करिश्मोंने नाटककी आत्माको हा समाप्त कर दिया है। बँगालके व्यावसायिक मंचकी एक यह 'विशेषता' भी हो गयी है कि जिस दर्शकको नाटकके कथ्यसे प्रभावित होकर प्रेक्षागृहसे बाहर आना चाहिए वहाँ वह दृश्योंके करिश्मोंकी वाहवाही करता हुआ निकलता है।

६–हिन्दीमें अच्छे समीक्षकोंका अभाव है जो नाटककारका मार्ग-दर्शन कर सकें। या जिनका प्रोत्साहन वह मूल्यवान् समझे। आज नाटककी समीक्षा लिखनेके लिए मात्र रस-सिद्धान्तकी शास्त्रीय बारीकियोंसे काम नहीं चलता; आज तो समीक्षकको रसज्ञ होनेके साथ-साथ युगचेतनाका प्रवक्ता होना होगा; उसे नाटकके आधुनिक उपकरणोंके सन्तुलित प्रयोग और प्रभावको परखना होगा; लेखन और परिचालन, अभिनय और मंचविधान, कथ्यका व्यंगार्थ और दर्शककी ग्रहणशीलता आदिको समूचे प्रस्तुतीकरणका अन्तरंग अंग बनकर समझना होगा और तब समीक्षाके निकष प्रस्तुत करने होंगे।

७–नाटककारके लिए प्रत्येक पात्र सजीव होता है जो नाटकमें उठायी [illegible] समस्या या भाव-स्थितिकी अभिव्यक्तिक [illegible]ाध्यम है। नाटककारको अभिनेता औ अभिनेत्रियाँ नहीं मिलतीं कि उसके कथ्यको और उसकी साहित्यिक भंगिमाओंको वे सफलतापूर्वक अभिनयमें उतार सकें। नाटककार जानता है कि अभिनेता और परिचालक नाटककारके प्रति न्याय नहीं कर रहे हैं किन्तु वह असहाय है क्योंकि वह स्वयं निर्देशन नहीं कर सकता, वह प्रशिक्षित नहीं।

८–नाटककार बराबर सुनता है कि हिन्दीको अच्छे नाटक चाहिए, हिन्दीमें अव्यावसायिक प्रयोगधर्मा मंच होना चाहिए। अव्यावसायिक मंचका अभाव हिन्दीकी बहुत बड़ी कमी है, अच्छे प्रेक्षागृह हों, अधुनातन वैज्ञानिक साधनोंसे सम्पन्न रंगस्थली उपलब्ध नहीं; जब कि बँगलामें यह है, गुजरातीमें वह और मराठीमें अमुक····किन्तु मूलमें जो सबसे बड़ी समस्या है वह है अर्थाभावकी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका समाधान क्या ? पृथ्वीराज कपूरको हिन्दी मंचकी दुकान क्यों उठा देनी पड़ी ? दर्शकोंने उन्हें ऐसा करने ही क्यों दिया ? हिन्दीमें जिस प्रकार पैसा ख़र्च करके पत्रिकाएँ-पुस्तकें पढ़नेवाले पाठक कम हैं, उसी प्रकार ऐसे संस्कारशील दर्शकोंकी कमी है जो अव्यावसायिक मंचके लिए पैसा इसलिए ख़र्चें कि प्रयोगोंको प्रश्रय देना है और व्यावसायिक मंचको इसलिए प्रोत्साहित करें कि उसे आत्मनिर्भर बनाना है। ऊँचा साहित्यकार यदि नाटक-लेखनको दूसरे दर्जेकी साहित्यकारिता माने, परिचालक और निर्देशक यदि नाटककारकी क्षमताओंके साथ न्याय न करें, अकुशल समीक्षक मर्मको समझें नहीं, समाज उसे प्रयोगधर्मा मंच न दे, पाठक नाटक ख़रीदकर पढ़ें नहीं, दर्शक नाटककी अपेक्षा सिनेमापर ख़र्च करना अधिक लाभका सौदा मानें, तो फिर किस प्रतिष्ठित साहित्यकारको ग़र्ज़ पड़ी कि वह उपन्यास और कहानीका धन्धा छोड़कर नाटक लिखे ?

हिन्दीके नाटककारके सामने ये सब समस्याएँ हैं जिनपर विचार करना और जिनका समाधान खोजना आवश्यक है। ■ ■

[पृष्ठ १८ का शेष : मायावी शिखरोंके प्रेक्षागृह]

व्याधिको अपना मन सम्पूर्णतः नहीं बेचता। 'डेथ इन वेनिस'का नायक, जिसकी आसक्ति मृत्यु-वृत्तिका ही प्रतिरूप है, इस मृत्यु-वृत्तिको अपना मन और अपनी आत्मा बेच देता है। पर कास्तार्प अन्ततक इस आसक्तिको (जो हिप्पी, शोशा और व्याधि तीनोंके आलम्बनसे प्रस्फुटित होती हुई भी एक ही है) अपनी आत्मा नहीं बेचता। महायुद्धका वज्रनिनाद सुनकर वह घेरा तोड़कर बाहर आ जाता है वीरगतिकी आकांक्षासे। घेरेके भीतर भी उसकी प्रज्ञा सत्य पा जाती है। शोशा जो व्याधि और मृत्यु-वृत्तिका आलम्बन थी, गुरु बनकर एक्स-रे चित्रको देकर सत्य व्यक्त कर जाती है। रह जाता है मनमें एक आभास, एक कोमल स्पर्श – टेण्डरनेस ! इस तरह कास्तार्प एक 'अनबिकी आत्मा' अन्ततक रह जाता है, जब कि 'डेथ इन वेनिस'के नायक-लेखककी आत्मा शैतान ख़रीद लेता है।

वास्तवमें कास्तार्प 'फ़ास्ट'का ही एक रूप है। रूप नहीं प्रतिरूप – 'ऐण्टी-फ़ास्ट'। यह मृत्यु और व्याधिके मार्गसे उच्चतर प्रज्ञाके अनुसन्धानमें जाता है। यह चिरन्तन सत्य-खोजी आत्माका प्रतीक है। 'मैजिक माउण्टेन्स'की मिथका यह अन्य पक्ष है जिसपर जर्मन प्राध्यापक निमरोवने अपने प्रबन्ध 'अन्वेषण-मिथ : मानकी रचनाओंका विश्व-प्रतीक'में प्रकाश डाला है। मध्ययुगकी अन्वेषण कथाओं यथा 'होली ग्रेल' आदिके साथ इसकी तुलना की गयी है। देवासके मायाशिखरोंपर अवस्थित प्रेक्षागृहके तहखानोंका अतल गहराइयोंमें मृत्यु-जीवन, प्रेम-व्याधि, मानववाद और ईसाई आतंकवाद आदिकी जाँच इस उपन्यासका प्रथम पक्ष है। साथ ही इन प्रेक्षागृहोंमें एक अबोध अपना पथ टटोलता हुआ जा रहा है। यह एक अन्वेषण-'मिथ' है। यह और बात है कि अनुसन्धानकी मणि पाकर भी बच्चेका अन्त हो जाता है। पर इससे क्या ? साठ हज़ार सगरसुवनोंके भस्म होनेके बाद कोई अंशुमान तो आयेगा ही, एक दिन। ■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदयकी ओरसे
लेखकोंके लिए विशेष निवेदन :

- कृपया अपनी रचनाओंकी टंकित अथवा साफ़ लिखी प्रति भेजिये और उसकी प्रतिलिपि अपने पास अवश्य रख लीजिए।

- लेख, निबन्ध, कहानी और हमारे स्तम्भोंके अन्तर्गत यदि आप सामग्री भेजें तो ज्ञानोदयके अधिकसे अधिक आठ पृष्ठोंसे रचना लम्बी न हो। यदि कोई लम्बी रचना भेजना ही चाहें तो सम्पादकसे पहले पूछ लें।

- हमारा प्रयत्न यही रहेगा कि अधिकसे अधिक एक मासके अन्दर ही निर्णय की सूचना आप तक पहुँच जाये। रचना भेजनेके बाद एक मास तक आपको कोई सूचना न मिले तो ही हमें लिखिए। स्वीकृत रचनाओंकी सूचना पाते ही कृपया यह अवश्य लिख भेजिये कि रचना अप्रकाशित-अप्रसारित है और ज्ञानोदयमें प्रकाशित होने तक अप्रकाशित-अप्रसारित ही रहेगी। टिकट-लगा लिफ़ाफ़ा रचनाके साथ हुआ तो ही अप्रकाशनीय रचनाएँ लौटाई जा सकेंगी, अन्यथा नहीं। स्वीकृति-सूचनाकी सम्पुष्टि भेजनेके बाद तथा अस्वीकृतिकी सूचना प्राप्त होनेके बाद कृपया उस रचनाके सम्बन्धमें पत्र-व्यवहार न कीजिए। क्षमा करें, उन रचनाओंको लौटाना हमारे लिए असुविधाजनक होगा जिनके लिए वापसी-टिकट आप निर्णय की सूचना पानेके बाद भेजते हैं।

- लेखकोंको, उनकी रचना जिस अंकमें प्रकाशित होगी, वह अंक अवश्य भेज दिया जायेगा, साथ ही दो-दो ऑफ़-प्रिन्ट्स भी।

- हमेशा पारिश्रमिक यथासम्भव अग्रिम और रचना प्रकाशित होनेके एक सप्ताह बाद भेज दिया जाता है।

- सारे सम्पादकीय पत्रव्यवहार केवल इस पते कीजिए.

सम्पादक : ज्ञानोदय; ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता–२७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

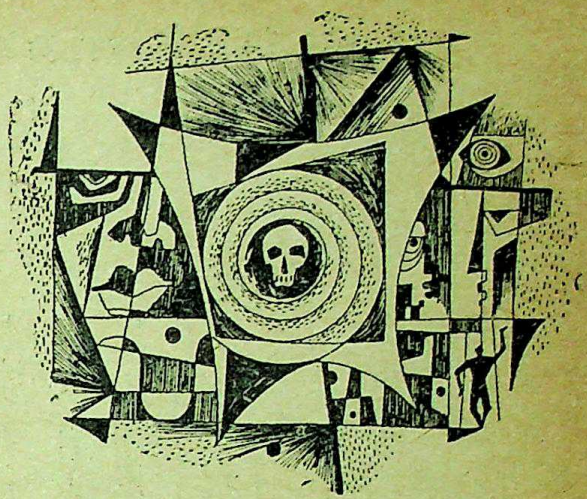

विसंगत रंगमंचका
अद्भुत नाटक

पाब्लो पिकासो

नागपाशमें इच्छा

०० ●

पेरिसमें सर्दीकी एक सुबह घनवादी चित्रकलाके प्रतिष्ठापक पाब्लो पिकासोने अगले तीन दिनके लिए अपने ब्रश अलग कमरेमें बन्द कर दिये और क़लम हाथमें ले वह नाटक लिखने लगा : "ला देज़ि अत्रप पार ला क्यू' यानी 'नागपाशमें इच्छा'। यह कहना मुश्किल है कि नाटक खाद्य-संकटके समय फ़ान्सीसी पाकशास्त्रका पतन है या जर्मन अधिकारके प्रति नाराज़ी या 'गुएर्निका'-तर्ज़की चित्रकला। यह नाटक फ़ान्समें 'एण्टी-थियेटर'का प्रारम्भ और विसंगतियोंवाली नाट्यकलाका एक अद्भुत उदाहरण है। नाटक फ़ान्सीसी संस्कृति मन्त्री आन्द्रे मॅलारे द्वारा १९ मार्च १९४४की रात पहली बार प्रदर्शित किया गया था। निर्देशन था कामूका और अभिनय ज्याँ पाल सार्त्र, सिमोंद बबुआ, मिशेल लेरी तथा रेमा क्वीन्यो का।

नाटकमें न मनुष्यकी नियति चित्रित है न ही विश्वकी स्थिति। यह समीक्षासे परे है, इसकी पंक्ति-पंक्ति प्रयोग है, इसकी शिरा-उपशिरा तक विवादास्पद है। यह नाटक जॉन गेसनरके शब्दोंमें विच्छिन्न, असंगत तथा विसंगतियोंसे भरा है। जर्ट्रूड स्टीनने नाटक देखकर कहा था : "लाबसर्द पाक्सलाँ" (विसंगत और उत्कृष्ट)। ज्यों बिफ़ोके अनुसार : "यह नाटक पहली दृष्टिमें जितना फूहड़ प्रतीत होता है, उतना है नहीं। यह तो १९४२-४४के पेरिसका दर्पण है।" मार्टिन एसलिनका कहना है : "कथावस्तुका अभाव होते भी नाटकमें एक संगत क्रियाशीलता है। विच्छिन्न अंगोंको पात्र रूपमें मंचपर प्रस्तुत करना 'एब्सर्ड थियेटर'की विशेषता है जो इस नाटकमें सफ़ल रूपसे नियोजित है।" ००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

LE DÉSIR ATTRAPÉ PAR LA QUEUE

ACTE Ier

Scène I

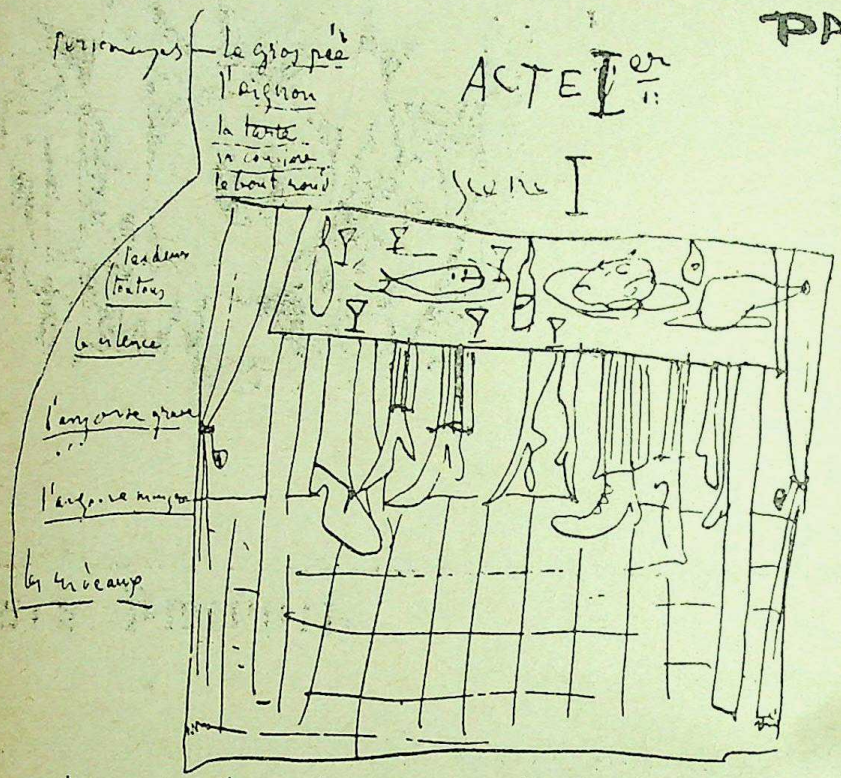

(पिकासोके नाटकका हस्तलिखित और स्वयं चित्रित एक पृष्ठ । इस फ्रेन्च पाण्डुलिपिका हिन्दी अनुवाद सामनेवाले पृष्ठ पर दीखेगा । पहलीसे अन्तिम पंक्ति तक ज्योंका-त्यों उत्थापित है ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागपाशमें इच्छा

पात्र : १. विशाल पाद (Big Foot) २. प्याज़ (Onion) ३. छिनाल (Tart)
४. चचेरी बहन (The Cousin) ५. गोल पिण्डली (Round end)
६. दो भौं-भौं (Two Bow-Wows) ७. ख़ामोशी (Silence)
८. स्थूल वेदना (Fat Anguish) ९. क्षीण वेदना (Skimmy Anguish)
१० पर्दे (The Curtains)

■

विशाल पाद : बस, गप्पें बन्द, प्याज़ ! इस समय सभी जोशमें हैं, और काम करनेको तैयार। चचेरी बहनके साथ कुछ खरी-खरी बातें कर लें। उन्हें अच्छी तरह समझा दें कि आखिर हमारे इन अवैध विवाहोंके कारण क्या हैं और इनके नतीजे क्या निकलेंगे। भद्र काम-भोगी महाराजसे यह छुपाना ठीक नहीं कि उनके चेहरेपर झुर्रियाँ कितनी हैं या कि उनके पैरोंमें मिट्टी कितनी लगी है। क्यों ? अगर वह सज्जन चौंकते हैं तो चौंक जाने दो !

गोल पिण्डली : सुनिये ! ज़रा एक मिनट सुनिए तो सही !

विशाल पाद : चुप रहो जी, बोलनेसे कोई लाभ नहीं।

छिनाल : हाँ, हाँ। चुप रहो ! जो मैं कह रही हूँ वह सुनो !

विशाल पाद : ठीक है।

गोल पिण्डली : ठीक है, ठीक है।

दोनों भौं-भौं : हाँ-हाँ। सुनो।

विशाल पाद : मैं यह कहना चाहता हूँ कि अगर हमें फ़र्नीचर और मकानके बारेमें किसी फ़ैसलेपर पहुँचना है, तो सबसे पहले 'ख़ामोशी' को फँसाना चाहिए, क्यों ? आप लोगोंका क्या खयाल है ? मेरी राय तो यह है कि उसे नंगा करके गर्मागर्म शोरबेमें डाल दिया जाये···शोरबा ? अरे शोरबा तो ठण्डा होता जा रहा है !

स्थूल वेदना : मुझे भी कुछ कहना है।

क्षीण वेदना : मुझे भी, मुझे भी।

ख़ामोशी : बकवास बन्द कीजिए !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्याज़ : देखिए ! यह मकान अभी ऐसे सार्वजनिक स्थानके रूपमें नहीं चुन लिया गया है कि जहाँ आप यों अलग-अलग बैठ-कर करते रहें खुफ़िया मुलाक़ात। सबसे पहले हमें इस झमेलेके बारीकसे बारीक सूत्रको किसी खुर्दबीनमें-से देखकर और एक-एकको पेखकर सोच-विचार करना चाहिए।

विशाल पाद : बस, बकवास बन्द। इस तरह चालाकीसे इस गम्भीर मसलेको शब्द-जालमें उलझानेकी कोशिश मत करो। यह समस्या जितनी रोचक है, उतनी ही उलझी हुई भी। अबतक गवाहोंके नाम चुन लिये गये हैं, और अच्छी तरह चुन लिये गये हैं। अब हम सबको चाहिए कि मकान-मालिक द्वारा किरायेके बिलपर डाली गयी छायाके रूपाकारोंको एक पैटर्न-में आँकनेकी कोशिश करें।

ख़ामोशी : हे प्रभु ! हे मेरे प्रभु ! कितनी गरमी है !

बहन जी : अभी-अभी मैंने अँगीठीमें कोयले डाले थे। लेकिन जाने क्या हो गया है, सुलग ही नहीं रही। क्या मसीबत है !

प्याज़ : कल चिमनी ज़रूर साफ़ कर लेंगे। धुआँ भर रहा है।

गोल पिण्डली : क्यों न अगले साल एक नयी चिमनी लगवा लें। वह इसकी बच्ची होगी, और फिर उसमें चूहे, कबूतर भी नहीं फँस सकते।

छिनाल : मुझे तो 'सेण्ट्रल हीटिंग सिस्टम' पसन्द है। उसमें सफ़ाई बहुत है।

क्षीण वेदना : ओह, ऊब गयी मैं तो !

स्थूल वेदना : चुप रहो, तुम सभ्य समाजमें बैठी हो !

गोल पिण्डली : वा वा···वु···ववा···व···वा···वावा···कुछ पता है, वक़्त क्या हो गया ? सवा दो बज चुके हैं !

दृश्य २

[प्रकाश-परिवर्तन। तूफ़ानका दृश्य]

पर्दे : (फड़फड़ाते हुए) यह कैसा तूफ़ान है ! यह कैसी रात है ! सत्य ही यथार्थको मसल रही रात ! काली स्याही-जैसी रात ! चीनी मिट्टीके बर्तनोंवाली महामारीकी रात, मेरे पेटमें एक तूफ़ानी रात !

[आतिशबाज़ी और पटाखों-जैसी हँसी]

[साँ सेन संगीत : 'ला दा मेकाब्र'। मूसलाधार बारिश। फ़र्शपर गिरती बूँदें, और दृश्य-पटलपर सरक रही छली प्रकाश-रेखाएँ – सुबहे-काजिब]

परदा गिरता है

अंक : २ : : दृश्य : १

[होतेल सोर्दीका एक बरामदा। प्रत्येक कमरेकी देहरीपर एक-एक जोड़ा पाँव दर्दसे एड़ियाँ रगड़ रहे हैं।]

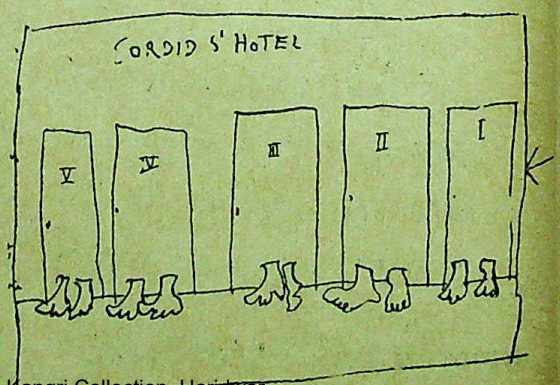

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३ नम्बर कमरेके पाँव : कातें ! हाय, मेरी कातें ! मेरी कातें ! हाय, मेरी कातें ! (ठण्ड अधिक होने या पानीमें अधिक रहनेसे हो जानेवाला एक चर्मरोग। बिवाई कह सकते हैं। इंगलिशमें chilblains कहते हैं।)

५ नम्बर कमरेके पाँव : कातें ! हाय, मेरी कातें ! मेरी कातें ! हाय, मेरी कातें !

४ नम्बर कमरेके पाँव : कातें ! हाय, मेरी कातें ! मेरी कातें ! हाय, मेरी कातें !

२ नम्बर कमरेके पाँव : कातें ! हाय, मेरी कातें ! मेरी कातें ! हाय, मेरी कातें !

[पारदर्शी द्वार धीरे-धीरे प्रकाशित होने लगते हैं, और अन्दर पाँच बन्दर गाजरें खाते हुए, उछलते-कूदते दिखाई देते हैं। पूर्ण अन्धकार।]

दृश्य २

[वही दृश्य ! लबादे ओढ़े हुए दो अ ला कु क्लाक्स क्लेन (एक अमरीकी समुदाय)। पुरुष साबुनके झागसे भरी एक टब मंचपर लाकर बरामदेमें रख देते हैं। कुछ देरतक बायलिनपर 'लाँ तोस्का'की एक धुन बजती है और फिर टबके अन्दरसे 'विशाल पाद', 'छिनाल', 'चचेरी बहन', 'गोल पिण्डलियाँ', 'दोनों भौं-भौं', 'ख़ामोशी,' 'क्षीण वेदना' और 'स्थूल वेदना' तथा 'पदों'के सिर उभरते दिखाई देने लगते हैं।]

छिनाल : देखो, हम कितने साफ़ हो गये हैं ! बदन कैसे धुल गये हैं। साफ़-सुथरे इतने कि अपने दर्पण आप हो गये हैं ! आज, और फिर कल, और फिर परसों, और फिर इसके बाद, और फिर हर रोज़ यही दिनचर्या होनी चाहिए।

विशाल पाद : देख रहा हूँ तुम्हें, देख रहा हूँ।

गोल पिण्डली : देख रही हूँ, तुम्हें देख रही हूँ।

विशाल पाद : (छिनालसे) तुम्हारे पाँवों का अनुपात अनुपम है। गरदन, वाह, क्या बात है ! कमर तो तुम्हारी बहुत पतली है ही, और उरोज तो आदर्श ही हैं, और यह मुँह तो गुलाब है, गुलाब ! नितम्ब तो सोफ़ेको भी मात करते हैं। और पेट तो यों है कि जैसे निम्स (Nimes) साँडोंकी लड़ाईवाले स्टेडियमकी सीट हो, और नितम्बोंको देखकर तो उबली सेम फलियों-से भरी तश्तरियाँ याद आ जाती हैं।··· प्रिये, प्यारी, मेरी जान, मैं तुमपर फ़िदा हूँ !

प्याज़ : पतुरिया ! छिनाल !

गोल पिण्डली : क्या खयाल है प्यारे ! घरमें हो या किसी वेश्याघरमें ?

बहनजी : तुम इसी तरह बक-बक करते रहे तो मैं अब कभी स्नान नहीं करूँगी। यही हरकतें करते रहे तो छोड़कर चली जाऊँगी। समझे ?

छिनाल : मेरा साबुन ! हाय, मेरा साबुन ! हाय, मेरा साबुन कहाँ गया रे···

विशाल पाद : पातुर !

प्याज़ : बेहया !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छिनाल : इस साबुनकी गन्ध कितनी भीनी है। हाय, कितनी भीनी है मेरे इस साबुन-की गन्ध !

गोल पिण्डली : भाड़में जाये तुम्हारा यह भीना-भीना साबुन !

विशाल पाद : कहो तो अभी चेहरेपर रगड़ दूँ, क्यों ?

गोल पिण्डली : कुतिया !

[दोनो भौं भौं साबुनके झागसे सने उनके शरीरोंको चाटने लगते हैं। वे सब एक साथ टबसे बाहर कूद पड़ते हैं। सब देश और समयके अनुसार वस्त्र पहने हुए हैं; केवल छिनाल निर्वसना है। वे अपने चारों ओर बिखरी हुई फलोंकी टोकरियाँ, काँटे और छुरियाँ उठाकर उत्साहसे पिकनिक मनाने लगते हैं। तभी कुछ सिपाही आते हैं। उन्हें पकड़कर ताबूतोंमें ठूँस देते हैं। ताबूतोंके ढक्कनों-पर अच्छी तरह कील ठोकते हैं। उठाकर ले जाते हैं।]

परदा गिरता है।

अंक ३ : दृश्य १

[काली पृष्ठभूमि, काले पंख और काली चटाई]

विशाल पाद : उबले हुए गोश्तका जवाब नहीं। लेकिन गायके भुने माँसका क्या कहना ! और अगर बोटियाँ कुछ करारी भुनी हों तो बात ही क्या ! कभी-कभी जब मैं अकारण ही उल्लसित होता हूँ और बाहर बर्फ़ पड़ रही होती है, तो ऐसेमें मेरे स्लाव-हिस्पानो-मूर गुलाम बड़े मज़े-मज़ेमें बोटियाँ भून रखते हैं और उनमें मेरे नौकर-के पसीनेकी गन्ध और मेरी नौकरानीकी अधमुँदी आँखों और तारपीन-भीगी उँग-लियोंकी बास और रसोईके चूनेकी ख़ुशबू मिली होती है; और फिर वह कितने क्रोधसे ईर्ष्याकी भरी-भरी प्लेटें मेज़पर सजाकर रखती है और उसके बदन-से महक रही ख़ुशबू और वे चोटके निशान जो उसने मेरी देहको अर्पित किये हैं, जिनके कारण मैं कभी भी आठ पैंतालीसकी बस नहीं पकड़ पाता, और फिर उसके बालोंमें बसी हुई बेसिनकी वह दुर्गन्ध, और उसका वह···

दृश्य : २

[दरवाज़ा खटखटानेकी आवाज़]

गोल पिण्डली : (बाहरसे) : कोई है ?

विशाल पाद : अन्दर आ जाओ !

गोल पिण्डली : वाह ! वाह ! क्या आरामदेह जगह पायी है। ओह···यह भुने हुए माँस-की गन्ध, वाह ! वाह ! लेकिन मैं रुकूँगी नहीं। मैं इधर पुलपर-से जा रही थी तो तुम्हारे कमरेमें रोशनी देखकर यहाँ आ गयी। तुम्हें बताने आयी थी कि लॉटरीका नतीजा कल खुलेगा···

विशाल पाद : शुक्रिया ! यह लीजिए पैसे। सुनो, आज सुबह जब मैं नाश्ता कर रहा था, तो मुझे लगा, आज मेरी तक़दीर और दिनोंसे कुछ अच्छी है, और फिर कल तो मेरे जीवनका महान् दिवस है ही !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोल पिण्डली : हे मेरे प्रभु! यहाँ तो बहुत ठण्ड है।

विशाल पाद : पानी पिओगी? एक गिलास पी लोगी तो आँतें गरम हो जायेंगी। मैं तो इस मकानके मामलेमें फँसा हुआ हूँ। क्या बताऊँ, बहुत परेशानी है। मकान-मालिक तो मान गया है···तुम जानते हो न मकान-मालिकको···अरे, वही वह हरामी जूल्स···हाँ, तो, वह तो किरायेके बारेमें राज़ी हो गया है। लेकिन अब एक और मुसीबत खड़ी हो गयी है···मेरी एक पड़ोसन है, उसे देखकर मुझे मितली आने लगती है, कुतिया! उस छिनालने एक बड़ी-सी काली बिल्ली पाल रखी है। वह हमेशा मेरे पालतू चूहेके पिंजड़ेके चारों ओर मँडराती रहती है। मुझे डर लगता है कहीं वह काली भूतनी मेरी मछलीको भी चट न कर जाये। हाँ, मेरे मेढक थे न, वह ठीक चल रहे हैं। लेकिन मैंने जो तेक्विल बनाये थे उनमें कुछ खटास आ गयी है। मैं सोच रहा हूँ कहीं साल खत्म होते-होते अकाल ही न पड़ जाये!

गोल पिण्डली : मेरी मानो तो एक तरीका है। किसी मरे हुए चूहेको मछलीके काँटेमें फँसाकर डाल दो, वह साली खायेगी तो तो खुद ही मर जायेगी। बस, फिर क्या है! खाल उतार कर उसे भले-भले रंग-बिरंगे पंखोसे सजाओ, गाना-बजाना और घड़ीसाज़ी सिखाओ और अगर कभी मन करे तो अँगीठीमें भून कर उसकी चाय बना लेना।

विशाल पाद : सब्रका फल मीठा होता है। तुम्हें नहीं पता, उसके मरते ही यहाँ कितना ऊधम मच जायेगा। वह काली भूतनी बिल्ली और उसकी वह मालकिन, जिसको मन-ही-मन मैं पूजता रहता हूँ, दोनों ही नये सालकी मुबारकबाद देने यहाँ आ धमकेंगी और मेरा घर लालटेनकी बत्तीकी तरह जलने लगेगा। बायलिनों और गिटारोंके सभी तार टूट जायेंगे।

गोल पिण्डली : पागलपन! पागलपन! पागलपन! मनुष्य पागल है! परदेका स्काफ़ सेब-रंग दर्पनपरसे पीले बादलोंको साफ़ कर रहा है और वह दर्पनका आकाश तुम्हारी खिड़कीके सामने है। कल शाम तकके लिए सुबहका अभिवादन।

[प्रस्थान]

दृश्य : २

[विशाल पाद मंचके बीचों-बीच फ़र्शपर सोया खर्राटे ले रहा है। मंचके एक ओरसे क्षीण वेदना और स्थूल वेदना, तथा दूसरी ओरसे चचेरी बहन और छिनाल विशाल पाद-की ओर बढ़ती हुई आती हैं। पास पहुँचनेपर चारों उसे घेरकर खड़ी हो जाती हैं।]

क्षीण वेदना : उसकी देह नक्षत्रोंकी तरह उज्ज्वल है – मोतीपर जलीय रंगोंसे पुनः-स्मृत एक स्वप्न! इसके केश-विन्यासमें अल्हाम्ब्राके महलोंके अरबी चित्रोंकी उलझन है। उसके चेहरेके रंगमें गिरजेकी उस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घण्टीका रुपहला स्वर है जो हर रोज़ प्रिय-प्रतीक्षारत मेरे कानोंमें शामका गीत गुन-गुनाती है। उसके शरीरमें हज़ारों बिजलीके बल्बोंका प्रकाश है, कपड़ोंमें अरबी खुशबुएँ बसी हैं और उसके हाथ पिस्तों और आड़ुओंसे बनी आइसक्रीमकी तरह पार-दर्शी हैं····

स्थूल वेदना : जी चाहता है किसी तरह उसे जगाये बिना उसपर टूट पड़ूं।

छिनाल : मैं उसे प्यार करती हूँ।

बहनजी : एक युवक था। शैत्योमें आर्कि-टेक्ट था वह। मुझे हमेशा फैशनके मुताबिक रखनेकी कोशिश करता था। सच, बहुत भद्र था, बहुत पैसेवाला। उसने कभी भी मुझे अपने डिनरका बिल नहीं देने दिया। हर रोज़ शामको सातसे आठ बजेके दर-मियान वह उस बड़ी सड़कके नुक्कड़पर जो गली है उसके एक छोटे-से रेस्तराँमें शराब पिया करता था। एक गिलास, बस। मुझे 'लैमन सोल कार्व' करना उसीने सिखाया था। बादमें वह अपने गाँव वापस चला गया था। वहाँपर उसका अपना क़िला है, बहुत पुराना। इतिहासमें उसका ज़िक्र आता है। अब वह हमेशा वहींपर रहेगा। हाँ, तो मैं कह रही थी यहाँ फ़र्शपर सोये हुए विशाल पादकी सूरत उससे मिलती-जुलती है।

छिनाल : (चचेरी बहनके ऊपर गिरती हुई।) मैं उसे प्यार करती हूँ! सच! बहुत प्यार करती हूँ।

[छिनाल, चचेरी बहन और दोनों वेदनाएं अपनी-अपनी जेबोंसे कैंचियाँ निकालकर विशाल पादके सिरके बाल काटने लगती हैं। उसका सिर धीरे-धीरे फैलने और गंजा होने लगता है। थोड़ी ही देरमें सिर फैलकर विशाल गेंदकी तरह हो जाता है। खिड़कीके रंगीन काँचसे छनकर आ रही शहतीरों-जैसी मोटी प्रकाश-किरणें विशाल पादके चारों ओर रेंगने लगती हैं।]

छिनाल : (रोती, सिसकती हुई।) एँ··· एँ···एँ···

चचेरी बहन : (रोती, सिसकती हुई।) ओं···ओं···ओं···ओं···ओं···

क्षीण वेदना : (रोती, सिसकती हुई) ऐं···ऐं···ऐं···

स्थूल वेदना : (रोती, सिसकती हुई) आ···आ···आ···

[पन्द्रह मिन्टतक यही चलता रहता है।]

विशाल पाद : (जैसे स्वप्न देख रहा हो।) रीढ़की हड्डीमें आइसिक्लस फँस गये हैं।

बहनजी : कितना सुन्दर है···एँ···एँ···एँ··· एँ···कौन···एँ···एँ···एँ···एँ···कौन···एँ···ऐं ···कौन (सिसकती है।)

क्षीण वेदना : ओं···ओं···ओं···ओं (सिस-कती है।)

स्थूल वेदना : ऐं···ऐं···ऐं···ऐं···(सिसकती है।)

छिनाल : अई-अई, मैं उसे प्यार करती हूँ अई····अई····अई····अई प्यार····

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[अचानक ही वे चारों खूनसे लथ-पथ हो बेहोश हो फ़र्शपर गिर जाती हैं। 'परदे' अपनी परतें खोलते हुए परदोंके पीछे जा छिपते हैं।]

परदा गिरता है।

अंक : ४ : : दृश्य : १

[पगध्वनियाँ]

छिनाल : जानती हूँ जीत मेरी होगी। मुझे पता है जीत मेरी होगी। मुझे पता है जीत मेरी होगी!

बहनजी : मेरी भी होगी···मेरी भी होगी··· मेरी भी होगी···जी···

स्थूल वेदना : पहले मेरी होगी····पहले मेरी····

विशाल पाद : पहला इनाम तो मैं जीतूँ-गा···मैं···

गोल पिण्डली : अजी, पहला इनाम मैं जीतूगी, मैं····

प्याज़ : पहला इनाम तो मैं जीतूँगा···मैं···

खामोशी : देख लेना कौन जीतता है···मैं जीतूँगी···मैं···

क्षीण वेदना : अभी एक पंछी उड़ता हुआ आया था मेरे पास, वह बोला – जीत तुम्हारी ही होगी····

[लाटरीका चक्र घूमता है।]

बहनजी : ७ वाह, क्या तक़दीर है। पहला इनाम मेरा ही निकला।

गोल पिण्डली : २४ और ००.१०४२ ठीक है। मेरा भी पहला ही इनाम है। इसका मतलब है २४१ हजार ००.८९।

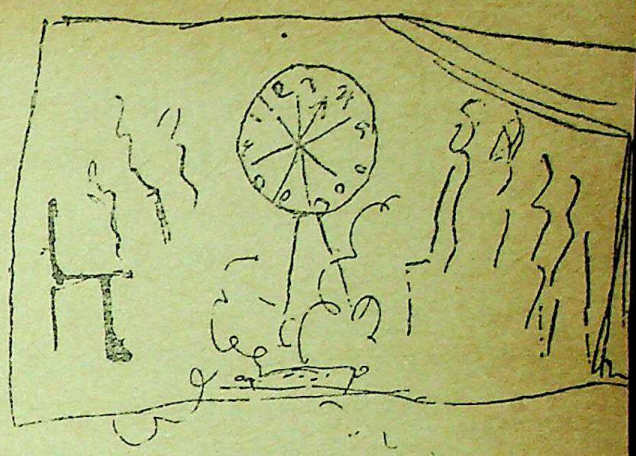

क्षीण वेदना : ९···मेरा नम्बर है। मेरा भी पहला इनाम।

छिनाल : ६० जमा २०० और एक हज़ार और ००७। मेरा भी पहला इनाम है। मैं तो हमेशा ही बड़े भागवाली रही हूँ।

विशाल पाद : ४४४१ वा ऽऽऽऽ···ह··· वाह···हे भगवान मैं तो लखपती, करोड़-पती हो गया। सबसे अमीर! वाह रे मैं!

खामोशी : बाय···बाय···ग़रीबी··· बाय··· बाय। दूध, अण्डे और अण्डे, दूध। दूध और अण्डे और अण्डे और दूध। वाह, क्या खूब इनाम पाया है मैने!

गोल पिण्डली : ४२५४···पहला ही इनाम ···वाह। वाह, रे मन, शाबासी दे मुझे।

बहनजी : ०००.९ मैं जीती! मैं जीती! पहला इनाम मैं जीती!

प्याज़ : ३१२४ न्याय तो कभी-न-कभी होता ही है। मुझे भी पहला इनाम मिल ही गया। हे भगवान!

क्षीण वेदना : ११ मेरा नम्बर! पहला इनाम!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थूल वेदना : १ ७२१५ ओ···हो···मैं सभी जगह पहला इनाम जीत रही हूँ।

पर्दे : १२३४ उबाऽह··· वाह···हम जीते हैं पहला इनाम ! हम हैं विजेता ! विजेता हम हैं !

परदा गिरता है।

अंक : ५ : : दृश्य १

विशाल पाद : (एक चारपाईपर अधलेटा कुछ लिख रहा है।) : "क्रोध और प्यार-के अचानक पड़ जानेवाले दौरेका भय, अचानक ही मेरी चारपाईपर प्रकट होने-वाली युवतीके घावोंसे बह रही पीपकी धाराओंके सूख जानेसे सख्त हो गये मांसकी झाड़ियोंसे कढ़े उस सुन्दर चोगेसे ढकी हुई समुन्दरी घासोंमें-से रिस रही नील-वर्णी नील धाराओंके···" शायद कोई प्रेम-पत्र है। जल्दी ही लिखा गया और जल्दी ही फाड़ दिया गया। कल या शामको या बीत गयी कलकी दुपहरीमें मेरे प्यारे दोस्त इसे पोस्ट कर देंगे। सिगरेट १, सिगरेट २, सिगरेट ३····एक····दो····तीन····एक जमा दो जमा तीन बराबर छह सिगरेट। एक पी ली, एक चबा ली और तीसरी अंगीठी-की आँचमें तपा ली···सबसे पुष्ट तर्क यह है, विनाश, भय, इच्छाओंका प्रबल प्रवाह जो उद्वेलित करता रहता है मनको और धो देता है प्रत्येक वर्तमान क्षणके उदास विनन्दित आनन्दोंको कि जो आरामसे सोफ़ेपर लेटनेको कहते हैं कि जिसका हरा रंग आशावान् होनेका प्रतीक है।

छिनाल : (दौड़ते हुए अन्दर आती है।) प्यार ! मेरे प्यार ! प्रणाम, मेरे प्यार ! उद्यत मदनोत्सवी कन्याके रूपमें आयी हूँ तुम्हारे पास ! मैं निर्वसन हूँ और प्यासी भी। मेरे लिए जल्दीसे एक प्याला चाय और मक्खन और शहद लगा एक टोस्ट बना लाओ। मेरे पेटमें चूहे कूद रहे हैं। मेरा बदन तप रहा है। मुझे जरा आरामसे बैठने दो। अरे, हाँ, पहले एक बार मेरे होंठ चूम लो। चूमो ! हाँ, इस ओर भी, इधर भी, हाँ, इधर भी ! ओह, प्रिय ! मैं तुम्हें प्यार नहीं करती तो इतनी सुबह ही यों निर्वसन और नंगे पाँव क्यों चली आयी, कहो ? मैं तुम्हें यह बताने आयी हूँ कि तुम मुझे प्यार करते हो, मेरे आग़ोशमें खो जाना चाहते हो।····और, और, हज़ारो चुम्बन लो प्रिय ! अच्छा, अब जाओ और मेरे लिए एक कप चाय बना लाओ। और हाँ टोस्ट भी। तबतक मैं अपनी एड़ीमें चुभा हुआ काँटा निकाल लेती हूँ।

(विशाल पाद उसे अपनी बाँहोंमें भर लेता है। दोनों फ़र्शपर गिर पड़ते हैं।)

छिनाल : (**उसके आलिंगनसे छूटनेका प्रयत्न करती हुई**) तुम कितने अच्छे हो, प्रिय ! मुझे इसी तरह बाँहोंमें भर लिया जाना पसन्द है। इस समय मैं बर्फ़से ढँकी हुई हूँ। मेरा बदन कँपकँपा रहा है। मेरे पाँव गरम करनेके लिए थोड़ा-सा गरम पानी तो लाओ। **(वह दर्शकोंकी ओर मुँह करके प्राम्पटर बाक्सपर बैठ जाती है। यों ही बैठी हुई दस मिनटतक मुँह**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिढ़ाती रहती है।) ओ····हो····अब कुछ आराम हुआ है। (हाँफती है, हाँफती रहती है, फिर कंघीसे बाल काढ़ने लगती है। थोड़ी देरमें उतरकर फ़र्शपर बैठ जाती है और अपने पंजोंको खींचती रहती है।) (विशाल पाद प्रवेश करता है उसकी बग़लमें एक मोटी हिसाब-किताबकी बही दबी हुई है।)

विशाल पाद : तुम्हारे लिए भोजन लाया हूँ, प्रिये ! नलमें पानी तो है नहीं, सो चाय भी नहीं है। चीनी भी नहीं है, प्याला भी नहीं; प्लेटें भी नहीं, चम्मच भी नहीं और गिलास भी नहीं। रोटी भी नहीं और जैम भी नहीं। लेकिन फिर भी एक चीज़ है, चौंकना नहीं। यह है – मेरा नया उपन्यास। मैं अभी इसमें-से कुछ बोटियाँ काटकर तुम्हारे भेजेमें भरता हूँ। तुम्हारी इच्छा हो तो ध्यानसे सुनो। यों दुखकी यह काली-लम्बी रात आज सुबह दुपहर होने तक कट जायेगी। यह ३८,००० वाँ पृष्ठ है। इसमें गम्भीरता कुछ अधिक है, तुम्हें रोचक लगेगा। (पढ़ने लगता है)

"इन घटनाओंके आधारपर पूर्व-निर्धारित ठोस तथ्योंसे उठ रही दुर्गन्ध इस महान् कार्य करनेवाले व्यक्तिपर किसी प्रकारकी ऐसी कृपा नहीं करती कि वह अपनेको संयमित रख सके। खैर, हम लोग, जिन्हें लोग उत्तरदायी व्यक्ति समझते हैं और और जिनके विषयमें लोग यह सोचते हैं कि वे इस कथाके सम्माननीय लेखक हैं, मैजिस्ट्रेट और उसकी पत्नीको स्पष्ट कर देंगे कि हम पूरा-पूरा उत्तरदायित्व अपने-पर लेनेको तत्पर नहीं हैं···"

"बाल-रूमके चारों ओर थीं सैनिकोंकी टोलियाँ और अन्दर भरी थीं चीनीकी बोरियाँ। प्रियतमाके उरोजोंकी गन्धसे भरी थी हवा और बैठे थे लोग आमने और सामने और जो थे बच्चे, वे थे ऐसे अभद्र कि जैसे आँखोंकी कोरोंपर देरसे छलछलाया हो कोई आँसू···सिलाईकी मशीन इतनी धीरे-धीरे चल रही थी कि बटन कस नहीं रहे थे। इस सबका और इस तटस्थताका वातावरण-पर यह प्रभाव पड़ा कि कौओंकी उड़ानकी सीधमें घास उग आयी और उनके पंखोंकी परछाइयाँ गिरजेकी दीवारोंपर न ठहर सकीं, बल्कि बाहर मैदानपर फैल गयीं। यहीं, मेरे पाठको, वे ठोस होकर इस अनन्त कथाका अखण्डित चिह्न बन जायेंगी।"

प्याज़ और बहनजी : (अन्दर आते हुए) सुनो, अरे सुनो ! हम तुम्हारे लिए कुछ केंकड़े लाये हैं। अरे भई केंकड़े लाये हैं।

विशाल पाद : वाह, क्या ही मज़ेदार है ! अब यहाँ बहुत ही रोचक प्रसंग है···अबे ओ, प्याज़। ओ···बहनजी, भागो यहाँसे, यह गन्द नहीं चाहिए हमें। चलो भागो। हमें तंग मत करो।

बहनजी : ओह ! हमारे ये स्वर्गीय केंकड़े। इनका यह अपमान। तुम इन्हें गन्द कह रहे हो। मैं समझती थी, विशाल पाद, तुम भले आदमी हो···लेकिन तुम तो कुत्ते-की तरह गुर्रा रहे हो। नीच !

प्याज़ : मैं तो तुम्हारे इस व्यवहारसे एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात सीखा हूँ, विशाल पाद ! अब जब कभी भी तुम्हें मिलना हो तो केंकड़े लेकर आया करूँ।

विशाल पाद : अरे, नहीं। ज़रा मेरी भी तो सुनो !

बहनजी : अच्छा तो यह मज़े आ रहे हैं, छिनाल ! अभी तुम्हारी माँसे जाकर कहती हूँ। वाह, क्या रूप बनाया है। एक लेखक और कविके सामने इस तरह नंगी··· और नंगी भी तो ऐसी कि जुराबें पहनी हुई हैं। शायद यह तुम्हें बहुत कामुक लगता होगा, लेकिन यह बता दूँ, ऐसेमें तुम न वीनस लग रही हो और न कोई फिल्म-स्टार। तुम्हारी माँ देखेगी तो मज़ा आयेगा। ज़रा वह भी जान जाये कि तुम सस्ती वेश्याओंकी तरह विशाल पादके इस गटर-जैसे स्टूडियोमें कैसे मज़ेसे लेटी रहती हो।

छिनाल : बहन, यह तो बुरी बात है।··· सुनो, धागा है तुम्हारे पास। न हो तो अपना रूमाल दे दो···मैं घर जा रही हूँ। यह विशाल पाद सूअर है ! साला ! लम्पट ! बदमाश ! कामुक ! (ग़ुसल-खानेमें चली जाती है।)

विशाल पाद : गयी ! अब सुनो इसका क़िस्सा। यह लड़की पागल है और हमें भी पागल कर देना चाहती है। मैं उसे प्यार करता हूँ – समझी ? मुझे वह पसन्द है। लेकिन उसे वीनस या देवी समझना तो सरासर बेवक़ूफ़ी है। मुझे उसका व्यवहार क़तई पसन्द नहीं है। जिस बेहूदगीसे वह कपड़े पहनती है, उससे तो मुझे बहुत चिढ़ है। यह मेरा विचार है। अब तुम बताओ, बहन, तुम्हारा क्या खयाल है !

बहनजी : मैं उसे ख़ूब जानती हूँ। स्कूलमें हम दोनों एक ही डेस्कपर बैठते थे। तुम मानोगे नहीं, क्लासमें उसका नाम लेकर लड़कियाँ एक-दूसरेको सीख दिया करती थीं। मुझे याद है, उसका चेहरा फुन्सियों-से भरा रहता था, शरीर गन्दा और बाल जैसे कौवेका घोंसला हो। मुँहसे हमेशा बू आती रहती थी, लेकिन इसमें उस बेचारीका क्या क़सूर था ?

प्याज़ : उन दिनों इसे देखकर मुँहमें हरे अंजेलिया फूलोंका स्वाद आने लगता था।

बहन : कुछ भी कहो, छिनाल लड़की भली है।

विशाल पाद : उसका शरीर तारों-भरी रातकी तरह जगमगाता हुआ है। उसके बदनसे जैसिम फूलोंकी गन्ध महकती है।

प्याज़ : ठीक है। तुम्हें वह पसन्द है, विशाल पाद, तो हम क्या कर सकते हैं। सुख हो या दुःख, तुम्हारा ही है। हम जा रहे हैं। हमारी शुभ कामनाएँ तुम्हारे साथ हैं।··· अरे, हाँ, केंकड़ोंमें सूअरकी चॉपका एक भुना हुआ टुकड़ा डालकर उबाल लेना, और थोड़ा-सा गधीका दूध मिलाना भी न भूलना।

बहनजी : विदा। विशाल पाद ! [वे चले जाते हैं।]

विशाल पाद : (बिस्तरपर लेटकर फिर लिखने लगता है) "प्रियतमाओंके कटाक्षों-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने उनके शरीरोंपर घाव कर दिये थे जिनसे अब रह-रहकर ख़ूनकी बूँदें रिस रही थीं। वे जो के खेतोंमें घायल पड़े थे और उनके चारों ओर गुलाब पाँखुरियोंके परदोंसे ढँके हुए नीलवर्णी…"

विशाल : (ग़ुसलखानेसे निकलते हुए। अब वस्त्र पहने हुए हैं। सिरपर नयी फ़ैशनका हैट है) क्या हुआ ? सभी चले गये ? वाह ! तुम तो जानते हो, मुझे इन लोगों-से बहुत चिढ़ है। फिर भी तुमसे तो मैं प्यार करती हूँ, लेकिन हमें होशियार रहना चाहिए। अब सुनो, मैं बिलकुल क्वाँरी हूँ न, इसलिए मैं अपने उरोजोंपर चन्दन अर्चित करूँगी। प्रकाशमें झिलमिलाते हुए उरोजोंको सभी लोग देख पायेंगे और शायद इससे उन्हें बाज़ारमें अच्छी नौकरियाँ मिल जायें।

विशाल पाद : (चारपाईके नीचे पड़े चैम्बर पाटको टटोलते हुए) मैं अपनी फटी हुई जेबोंमें सूर्यके अँधेरे प्रकाशके देवदूतोंके लिए शुगर-केण्डी छायाछत्र ले रहा हूँ।

परदा गिरता है।

अंक : ६ : : दृश्य : १

[दृश्य : वेदना-विलाका सीवर-शय-नागार-रसोई और स्नानागार।]

क्षीण वेदना : मेरे अतृप्त रोगी आवेगोंकी जलन काते (Chilblains) के दर्दको दुगुना कर देती है। मेरी काते जो इन्द्र धनुषके काँसेके कोणोंपर लगाये गये प्रिज़्म-के प्रति स्नेहिल भावोंसे भरी डबाडबा रही हैं, जो वर-वधुओंपर बिखेरे जानेवाले रंगीन काग़ज़ोंके टुकड़ोंकी तरह सूर्यकी क़िरणोंको बिखेर देती हैं। मैं तो एक आत्मा हूँ जो अग्निपुंजोंकी खिड़कियोंके शीशोंपर जम गयी है। मैं अपना माथा अपने ही चित्रसे टकराती हूँ और वेदनासे कातर हो उन खिड़कियोंके नीचे बैठी सिसकती रहती हूँ, जो अब कभी नहीं खुलेंगी, जिनसे अब कभी दया नहीं मिलेगी।…अच्छा ! चलो, शोरबा बनायें। **('पाक-शास्त्र' खोलकर पढ़ने लगती है।)** स्पेनी नीबूकी एक फाँक, गरीका तेल थोड़ा-सा, नीबूका रस, सूखी सेम-फलियाँ, नमक, सिरका, रोटीके टुकड़े। हलकी आँच-में पकाइए। थोड़ी-थोड़ी देर बाद नरककी यातनासे ग्रस्त एक आत्माको कड़छीसे हिलाते रहिए। ठण्डा होने दीजिए। जापानी साम्राज्यकी एक सहस्र प्रतियाँ छपवाइए और बर्फ़में ठण्ठा करनेके बाद समयानुसार दुष्ट आत्माओंको परोसिए… **(बिस्तरके नीचे सीवरमें-से चीखते हुए)** दीदी ! दीदी ! जल्दी आओ, दीदी ! मेज़ लगाने और ख़ूनसे रँगे इस रेशमी मेज़पोशको हटानेमें मेरी मदद करो ! जल्दी आओ दीदी ! सूप ठण्डा हो रहा है और आइनेदार वार्डरोबके आईनेमें फटा पड़ रहा हैं। मैं आज सारे दिन-भर इस शोरबेमें कितनी ही कथाएँ काढ़ती रही हूँ। तुम आओगी तो यह धीरे-धीरे सभी कथाएँ तुम्हारे कानोंमें गुनगुनायेगा। तुम अगर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हड्डियोंके इस ढाँचेके नीचे फूलोंकी कोमलता की वास्तुकलाको आखिर तक बनाये रखना चाहती हो···

स्थूल वेदना : (बाल बिखरे हुए हैं। चेहरा स्याह हो रहा है। हाथमें कढ़ाई है।) अभी आयी ! मैं बहुत स्तब्ध हूँ। बहुत दूरसे आ रही हूँ। उस मोटे ड्राइक्लीनरने, जो अपना हिसाब-किताब बहुत ध्यानसे रखता है, कुछ ऊल-जलूल कलाबाज़ियोंकी तहमें मुझे जो यातनाएँ बख्शी थीं, मैं उनसे स्तम्भित हूँ।

क्षीण वेदना : सूर्य !

स्थूल वेदना : प्यार !

क्षीण वेदना : तुम कितनी सुन्दर हो !

स्थूल वेदना : आज सुबह मैं अपने घरके सीवरमें-से निकली, अँगीठीसे दो क़दम दूर ही थी अभी, मैंने अपने पंखोंपर-से भारी ऊँची एड़ियोंवाले जूते उतार दिये और अवसादके गहरे समुद्रमें छलांग लगा दी। अपनेको लहरोंके हवाले छोड़ दिया मैंने। पीठके बल लेटी हुई मैं उस कीचड़में आराम करती रही। मेरा मुँह खुला हुआ था कि जिससे आँसू उसमें टपक सकें। मेरी बन्द आँखोंमें उस शहीदका ताज चमकता रहा।

क्षीण वेदना : डिनर तैयार है।

स्थूल वेदना : खुशी ! प्यार और वसन्त ऋतुके स्वागतमें झूम-झूम रे मन !

क्षीण वेदना : आ जाओ ! बतख पक चुकी। स्वांगको ठीकसे सजाकर पेश करो। अन्त समीप है। वेदना और भय पहले ही हाथ हिला रहे हैं···टा···टा···टा। मछलियाँ क्या बड़बड़ा रही हैं। ऊबके बर्फ़ीले कानोंके नीचे कौन भयभीत है ? (रोटीका टुकड़ा लेकर माँसमें डुबोती है) इस झोलमें न नमक है, न मसाले। मेरी मौसीके पास एक कैनेरी थी जो सारी रात शराब पीनेके गीत गाती रहती थी···

स्थूल वेदना : थोड़ी-सी रोहू मछली और लूँगी। इसकी कामुक दुर्गन्धसे मेरे मुँहका अनैतिक मसालेदार स्वाद दब जाता है।

क्षीण वेदना : मेरा वह झालरदार स्कर्ट था न, जो मैंने अपने जन्मदिनकी शामको पहना था, उसी दिन तो हमने बाल-डान्सके निमन्त्रण भेजे थे सब लोगोंके लिए। मैंने अभी देखा, वही स्कर्ट ग़ुसलखानेकी अल-मारीके सबसे ऊपरवाले खानेमें घड़ीकी टिक-टिककी गर्दके नीचे दबा क्रोधसे सिसक रहा था। जगह-जगह कीड़ोंने छेद कर दिये थे। धब्बे भी लग गये थे कई। यह हमारी नौकरानीकी शरारत हो सकती है। वह साली ज़रूर कल इसे पहनकर अपने प्रेमीसे मिलने गयी होगी।

स्थूल वेदना : देखो। दरवाज़ा इस ओर दौड़ रहा है। कोई आ रहा है शायद। डाकिया है ? नहीं, छिनाल है। (छिनाल-से) आओ छिनाल ! आओ ! खाना खाओ ! क्या बात है ? बहुत खुश दीख रही हो। विशाल पाद कैसा है ? ठीक तो है, न ! प्याज़ आया था आज सुबह। पेशाबसे भीगा हुआ, घायल, घबराया हुआ। उसके माथेपर मछलीका काँटा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुभनेसे गहरा घाव हो गया था। ददसे चीख रहा था वह। हमने उसे चुप करनेकी लाख कोशिशें कीं, लेकिन वह तो बेवक़ूफ़ोंकी तरह अपने बेसुरे रागमें चीखता चला गया।

क्षीण वेदना : तुम्हें यह सुनकर खुशी होगी कि कल मेरे घर बिल्लीने पिल्ला जन्मा है।

स्थूल वेदना : हमने उन्हें एक सख़्त पत्थरमें डुबो दिया, एक ख़ूबसूरत-से हीरेमें। बहुत भली सुबह थी, कुछ ठण्ड थी, लेकिन गरमी वैसी ही थी।

छिनाल : तुम्हें बता ही दूँ : प्यार मिला था आज सुबह। उसके घुटनोंपर खरोंचें लगी हुई थीं। द्वार-द्वार घूमता हुआ भीख माँग रहा था। नौकरीकी फ़िराकमें है। चाहता है, कहीं, किसी क़स्बेमें बस-कण्डक्टरी मिल जाये। तुम अगर उसकी मदद करनेकी कोशिश करो तो पलटकर हमला-कर देता है। कुछ पता है, घायल ही कर दे। विशाल पाद मुझे पानेके चक्करमें उसके जालमें फँस गया। देखो तो, मैं देर तक धूपमें खड़ी रही और अब सारे बदनमें घुमौरियाँ हो गयी हैं। प्यार! प्यार! यह लो, एक हज़ार सूका नोट है। इसे डॉलरोंमें भुनवाकर अपने पास रख लेना। मैं चली। प्रणाम, बन्धुओ! तुम्हारा जीवन सुखी हो, दोस्तो! नया साल मुबारक हो। अलबिदा! **[पीठ दर्शकोंकी ओर किये स्कर्टका छोर कमर तक उठाती है और हँसती हुई खिड़की-के काँचको तोड़कर बाहर कूद जाती है।]**

स्थूल वेदना : बेचारी! बहुत प्यारी लगती है मुझे। समझदार तो है, लेकिन है कुछ अजीब। मेरी भविष्यवाणीपर ध्यान दो : इसका बुरा होगा!

क्षीण वेदना : चलो, लोगोंको बुलायें। **(वह एक तुरही बजाती है। सभी पात्र भागे-भागे आते हैं।)** प्याज़, आगे आओ। तुम्हें हालमें छह कुरसियोंपर बैठनेका हक़ है। ये रहीं छह कुरसियाँ।

प्याज़ : धन्यवाद मादाम!

स्थूल वेदना : विशाल पाद, अगर तुमने मेरे सवालोंका सही-सही जवाब दिया तो मैं तुम्हें डाइनिंग-हॉलमें एक शमादान दूँगी। अच्छा, बताओ, चार जमा चार कितने होते हैं?

विशाल पाद : काफ़ी होते हैं, लेकिन बहुत तो नहीं होते।

क्षीण वेदना : बहुत ख़ूब!

स्थूल वेदना : शाबाश!

क्षीण वेदना : **(एक फ्लास्कका कार्क खोलकर गोल पिण्डलीकी नाकके नीचे लगाती है।)** पिण्डली, इसकी ख़ुशबू कैसी है। **(वह हँसती है)** बहुत ख़ूब। तुम समझदार हो। यह लो, यह फाउण्टेन पेनोंका डिब्बा तुम्हारे लिए है। शाबाश!

स्थूल वेदना : छिनाल, हिसाब लगाओ।

छिनाल : मेरे स्तनोंमें ६००० आउन्स दूध है। हैम है, पुडिंग है, चटनी है, सॉस है और मेरे बालोंमें खाज है। मेरे पास

[शेष पृष्ठ ५० पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ० लक्ष्मीनारायण लालसे
एक भेंट-वार्ता

आलोक शर्मा

रस-सिद्धान्तसे एण्टी-थियेटर तक

●

– विदेशी और भारतीय नाटकोंमें क्या बुनियादी अन्तर है ? इनके विकासकी सीमाओंकी तुलनात्मक विवेचना, इनके वर्तमान ट्रेण्ड्स ?

लक्ष्मीनारायण लाल : भारतीय और विदेशी नाटकोंके यदि दो हिस्से कर लिये जायँ, तो अधिक सुविधा रहेगी। एक तो प्राचीन हिन्दू नाटक, जिसे हम हिन्दू-थियेटर कहते हैं, और दूसरा आधुनिक नाटक। प्राचीन हिन्दू-थियेटर, जिसे हम संस्कृत थियेटर कहते हैं, उसमें तथा पश्चिमके प्राचीन ग्रीक एवं एलिजाबेथियन थियेटरमें एक बड़ा भारी मौलिक अन्तर यह है कि जहाँ संस्कृत थियेटरकी आत्मा रस मानी गयी है वहीं प्राचीन ग्रीक तथा एलिजाबेथियन थियेटरकी आत्माको द्वन्द्व माना गया है, इसलिए जो अन्तर रस और द्वन्द्वमें हो सकता है, वही मौलिक अन्तर इन दोनोंमें है। दूसरा पक्ष है आधुनिकताका। हमारी विरासतमें यह जो रस-सिद्धान्त उपस्थित रहा, उसमें पारसी थियेटरके आनेसे बड़ा अजीब घाल-मेल हुआ। १९४० के बाद हिन्दी नाट्य-लेखनमें जो एक पढ़ा-लिखा तबक़ा आया वह निश्चित रूपसे पश्चिमसे प्रभावित था। इसलिए उसके सामने यह बहुत-बड़ा प्रश्न था कि क्या वह अपने प्राचीनको सम्पूर्णतया त्याग दे अथवा पश्चिम-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की विधाको ही सम्पूर्णतया अपना ले। इस प्रश्नको लेकर जो संघर्ष छिड़ा था, वह आज भी वर्तमान है; क्योंकि थियेटर एक ऐसी वस्तु है, जिसमें अपनी विरासत तथा परम्परा-को त्यागना बड़ा ही कठिन है। परम्परा नहीं छोड़ी जा सकती, क्योंकि दर्शक समाज उससे जुड़ा हुआ है, उसका सौन्दर्य-बोध उससे जुड़ा हुआ है। यह सत्य है कि इधर हमारे जीवनमें द्वन्द्व और संघर्ष दोनों खुलकर आये हैं, और रंगमंच इसीका दर्पण है। परन्तु पश्चिमी और भारतीय रंगमंचमें मौलिक अन्तर यही है कि पश्चिमके आधुनिक रंगमंच-को जीवनका यर्थाथ प्रस्तुत करनेकी छूट है। उसके लिए उसके पास अबाध परम्परा है जब कि भारतीय रंगमंचके पास न वह परम्परा है और न ही उसका सृजन करने-वाला मन उतना खुल पाया है। इसका कारण है हमारी पलायनवादी (स्केप) प्रवृत्ति। हम यथार्थसे थोड़ा दूर भागते हैं। उदाहरणार्थ, हमारे चलचित्रोंको ही ले लीजिए। शायद हा किसी चलचित्रमें (बँगला चलचित्रोंको छोड़कर) हमारे जीवनका यथार्थ चित्रण आता हो। जीवनमें हम खुद ही यथार्थसे साक्षात्कार नहीं कर पाते, हमेशा 'एवायड' करते हैं, और, इस 'एवायड' करनेमें जो वस्तुएँ हमारी सहायता करती हैं वे हैं हमारा धर्म, हमारा ईश्वर और हमारी अतीतोन्मुख चेतना। हम किसी चीज़को 'एनकाउण्टर' नहीं कर पाते यही विकासकी सीमा है। उनके विकासमें कोई गतिरोध नहीं था, गतिरोध अब आया है, क्योंकि अब वे लोग 'टेकनिकली', 'प्रोफ़ेशनली' और 'कार्मशियली' अपने रंगमंचके विकासकी चरम सीमापर पहुंच चुके हैं। अब उनके सामने प्रश्न है कि इसके बाद क्या हो? यही उनकी सीमा है, और हमारी सीमा यह है कि उस यथार्थवादको लेकर हमारे यहाँ नाटक लिखना आरम्भ ही नहीं हुआ। डी० एल० राय, प्रसाद, रामकुमार और अश्क ये सबके सब लोग मेलोड्रामिटिक प्ले राइट थे। अश्क एक यथार्थवादी एकांकीकार भले ही मान लिये जायें, पर उनका वह सब-कुछ इब्सन और चेख़ॅवकी नक़ल मात्र है। रंगमंचमें जीवन और समाज प्रतिबिम्बत होने चाहिए तभी नाटक सफल होता है। यहाँ तो लगता है (एनकाउण्टर न कर पानेके कारण) नाटककार अपने यथार्थ और जीवनसे एन्वाल्ण्ड ही नहीं है। वह यहाँतक नहीं जानता कि कैसा नाटक किसके लिए लिख कर दे। वह ज़िन्दगीसे कटा हुआ है, उसमें कोई समझ नहीं है। वह सिर्फ़ टैक्स्ट-बुक और साहित्यकारोंके लिए नाटक लिखता है। मुझे तो इस तरहके लिखनेवालोंका कोई भविष्य दिखाई नहीं पड़ता।

—और वहाँकी शिल्प-शैली ?

लक्ष्मीनारायण लाल : जहाँतक टेकनिकका प्रश्न उठता है, पाश्चात्य देशोंकी टेकनिक रियलिस्टिक है, नॉनरियलिस्टिक है, इम्प्रे-सनिस्ट तथा सिम्बोलिक है। आज फ्रान्समें जो 'लेटेस्ट' प्रयोग हो रहे हैं वे एण्टी-थियेटरके प्रयोग हैं। पुरातन रंगमंचके समस्त सिद्धान्तों-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को उन्होंने तोड़कर रख दिया है। जैसे 'वेटिंग फार गोदो' के सुप्रसिद्ध फ्रेंच नाटककार सैम्युअल बैकेट युनिटीमें तथा नाटकके अधिक विस्तारमें विश्वास ही नहीं रखते। वे तो सीधे-सादे ढंगसे चीज़ोंको उठाकर रख देना चाहते हैं, वे उसे सजाने और उसे कृत्रिम बनानेकी आवश्यकता नहीं समझते। दृष्टान्तके तौरपर रोमानियाके प्ले राइट एनेस्कोको ही ले लीजिए, उनके नाटकमें केवल कुछ कुर्सियाँ ही रखी रहती हैं जो कभी घरको और कभी किसी आनेवाले अतिथिको प्रस्तुत करती हैं। वे बहुत बड़ी भिन्नता और हिम्मतके साथ इस तरहके प्रयोग कर रहे हैं। हमारे यहाँ प्रयोग भी नहीं हो रहे हैं, जब कि होने चाहिए थे। प्रयोगके रास्तेमें सबसे बड़ी दो दिक़्क़तें हैं। एक तो हमारा अतीत हमें बाँधे हुए है और दूसरे हम पश्चिमकी इन्फ़िरियरीमें पड़े हुए हैं। पश्चिममें तो इतना कुछ किया ही जा चुका है, हम और क्या कर सकते हैं? इस भावनाको देखकर ऐसा लगता है, जैसे हम एपरेण्टिसशिप पीरियडमें पड़े इन्तज़ार कर रहे हों। वहाँ मुझे ऐसा अनुभव हुआ, जैसे वहाँकी टेकनिकके हर फ़ॉर्म अपनी चरम सीमापर हैं जब कि हमारे यहाँ अभी उसकी शुरुआत ही नहीं हुई है।

– महाकवि भाससे लेकर आजतकके साहित्यकारोंके प्रति वहाँके लोगोंकी कितनी पहुँच एवं आस्था है? इस प्रसंगमें किस सीमातक हम या हमारी सरकार उत्तरदायी है?

लक्ष्मीनारायण लाल : पश्चिमके तीन देश रूस, इंगलैण्ड और अमेरिकाको अलग कर लिया जाये, तो ज़्यादा अच्छा रहे; क्योंकि इन तीनों देशोंसे हमारे राजनैतिक सम्बन्ध कुछ दूसरे प्रकारके हैं, इसलिए जब ये देश हमारे साहित्य और संस्कृतिकी बातें करते हैं, तो दिखाना चाहते हैं कि वे हमारे देशको बहुत प्यार करते हैं, लेकिन यह बात झूठी है। इसका असली पता हमें फ्रान्स, जर्मनी, इटली, हंगरी, चेकोस्लोवाकिया तथा रोमानियामें चलता है, जहाँ संस्कृतिके वर्कशॉप खुले हुए हैं। ये सारेके सारे देश संस्कृतिके मेरुदण्ड हैं। यहाँ उसका निर्माण होता है। यहाँका आदमी वस्तुतः ईमानदारीसे काम कर रहा है और वह बिलकुल नहीं जानता कि भास, कालिदास और टैगोर कौन हैं। आपका प्रश्न है कि इसका ज़िम्मेदार कौन है। व्यावहारिक रूपसे इसकी ज़िम्मेदारी हमारे दूतावासोंके उन लोगोंपर आती है, जो वहाँ सुखके नशेमें अपना दायित्व भूले हुए हैं।

विदेशोंमें तरह-तरहकी भ्रान्तियाँ भारतके सम्बन्धमें फैली हुई हैं। कइयोंने मुझसे पूछा– 'क्या आपके यहाँ परियाँ होती हैं? क्या आपके यहाँ सड़कोंपर साँप घूमते रहते हैं?' भारत भले ही पिछड़ा हुआ देश हो, पर इतना पिछड़ा हुआ नहीं है कि यहाँ परियाँ उड़ती हों और सड़कोंपर साँप घूमते हों। मुझे ये सब प्रश्न बड़े अपमानजनक लगे। मुझे ऐसा लगा, जैसे ब्रिटिश राज्यकालमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किये गये हमारे विरुद्ध प्रापगण्डाका यह कुफल है। लेकिन उसको काटने तथा उचित चित्र प्रस्तुत करनेका हमारे दूतावासों द्वारा ज़रा भी प्रयत्न नहीं किया गया है! हम कैसे रहते हैं, हमारे गीत कैसे हैं, हमारे पहनावे और नृत्यका ढंग क्या है। इससे सम्बन्धित कोई भी पोस्टर मैंने विदेशोंमें नहीं देखा। वहाँ हमारी एम्बेसीवालोंको इन बातोंमें कोई रुचि नहीं है, जब कि उनका कार्यक्षेत्र और कर्तव्य यही है। सब कुछ एक रोगग्रस्त व्यक्तिकी जो डिलेरियमकी स्थिति होती है वैसा ही चल रहा है, जिसके लिए हमारी एम्बेसी, हमारी सरकार और हम समानरूपमें उत्तरदायी हैं।

जबतक हमारे यहाँ काम करनेवाले लोगोंको यह सिक्योरिटी नहीं मिल जाती कि यदि यह असफल होगा, तो उसके खाने, पहनने और बच्चोंकी पढ़ाईकी उचित व्यवस्था हो जायेगी, जबतक जीवनकी यह प्रारम्भिक बातें पूरी नहीं हो जातीं, तबतक वह कमल नहीं खिल सकता, जिससे कि सौन्दर्य फूटता है।

– भारतीयोंके प्रति विदेशियोंकी भावनाएँ एवं दृष्टिकोण, आर्थिक, राजनैतिक तथा सामाजिक जीवन और उसका साहित्यपर प्रभाव।

लक्ष्मीनारायण लाल : पश्चिमका आदमी भारतकी तरह राजनीतिकी बात नहीं करता। वह ज़िन्दगीकी बात करता है। भारतमें राजनीतिकी बात अधिक इसलिए होती है कि यहाँ कुण्ठा है। एक हॉलोनैस है। और जब आदमी भीतरसे रिक्त होता है तो वह राजनीतिकी बात करता है। ईश्वर और धर्मकी बात करता है। यह उसके खालीपनका प्रमाण है। वहाँका आदमी शराब पीकर दिन आरम्भ करता है और शराब पीकर ही उसे समाप्त करता है। उसके पास समय नहीं है इन विषयोंपर बातें करनेका। वह ज़िन्दगीमें 'इनवाल्ड' है। साहित्य और रंगमंच खाने और पहननेकी तरह ही उसके लिए सहज हैं। भारतमें दोस्ती नामकी कोई चीज़ नहीं है – न स्त्री दोस्त है, न पुरुष दोस्त है। बिना प्यारके कोई चीज़ रची नहीं जा सकती, इसीलिए हमारे साहित्यका जो स्वर है, उसमें कड़वाहट है, कुण्ठा है। असली चीज़ तो शायद बादमें लिखी जायेगी – कालिदासके साहित्यमें जो सत्य, शिव, सुन्दर था, इसका कारण यह था कि उन्होंने अपना जीवन मूल ज़रूरतोंसे ऊपर उठकर बिताया था। जब इस तरहकी सुविधाएँ मनुष्यको मिल जाती हैं, तो वह एक दूसरे ही धरातलपर रचना करता है। लेकिन उस धरातलके लिए हम हाथपर हाथ तो धरे नहीं बैठे रह सकते। हमें क़दम तो बढ़ाना ही चाहिए, शुरुआत तो करनी ही चाहिए उस स्थिति तक पहुँचनेके लिए।

लक्ष्यहीनता और शून्य हीनताका प्रभाव जो व्यक्ति, समाज और साहित्यपर पड़ता है, वह हमारे यहाँ पड़ा हुआ है। हम भले ही यहाँ किसी विदेशीकी ओर आकर्षित हो जायें, पर विदेशमें कोई हमारी ओर आक-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

षित नहीं होता; क्योंकि देशका महत्त्व नहीं है, इसलिए हमारा महत्त्व नहीं है। विदेशी जानता है कि भारतीय अपनी कुण्ठाओंसे घिरा हुआ है। वह हिपोक्रेट है इसीलिए वहाँके लोग इसे अपने साथ नहीं पाते। अब आप ही बताइए कि कुल छह 'परसेण्ट' लोग भारतमें हैं, जिनकी आय सौ रुपया या इससे ऊपर है। ऐसी दरिद्रतामें हमारा साहित्य क्या होगा ?

■ ■

[पृष्ठ ४५ का शेष : नागपाशमें इच्छा]

पायोरिया है। मेरे हाथोंकी गँठियेकी गाँठों-में जर्दी भरी हुई है। मेरे पास फोड़े, फुन्सियाँ हैं, पीप है। मेरे होंठोंमें मधुर और निःस्वाद मिठास है। मैं फूहड़ वस्त्रोंको पहनकर भद्र युवती लगती हूँ। मैं माँ हूँ और वेश्या भी। मैं रम्बा भी नाच सकती हूँ।

स्थूल वेदना : तुम्हें गैसोलिनका एक पीपा और मछली मारनेकी एक बंसी दी जायेगी, लेकिन उससे पहले तुम्हें हमारे साथ एक नाच नाचना होगा – शुरू करो, विशाल पाद !

[संगीतकी मधुर धुनपर नृत्य आरम्भ। एक-एक मिनिट बाद जोड़े बदले जाते हैं।]

विशाल पाद : देवदूतोंके चावलोंका बूरा घिसी हुई पुरानी चादरोंपर मल लें और गद्दोंमें हवा भर लें। घरकी सब लालटेनें जला लें। अपनी पूरी ताक़तसे गोलियोंके विरुद्ध कबूतरोंकी उड़ान भरें···

[सभी पात्र मंचपर सीधे, स्थिर खड़े हो जाते हैं। मंचकी पिछली ओर एक खिड़की धीरे-से खुलती है और एक विशाल मानवाकार सोनेकी गेंद आ गिरती है। उसकी चमकसे चुँधियाकर सभी पात्र अपने-अपने रूमालोंसे आँखें ढँक लेते हैं। सब एक साथ एक-दूसरेकी ओर अपना दाँया हाथ उठा-उठाकर ज़ोर-ज़ोरसे चीखने लगते हैं।]

तुम ! तुम !! तुम !!!

[विशाल सोनेकी गेंदपर धीरे-धीरे कुछ अक्षर प्रकाशित होने लगते हैं]

कोई नहीं !

परदा गिरता है।

(मूल फ़्रान्सीसीसे अनुवाद : बाफ़ा यूनियल और रजनी खोसला)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

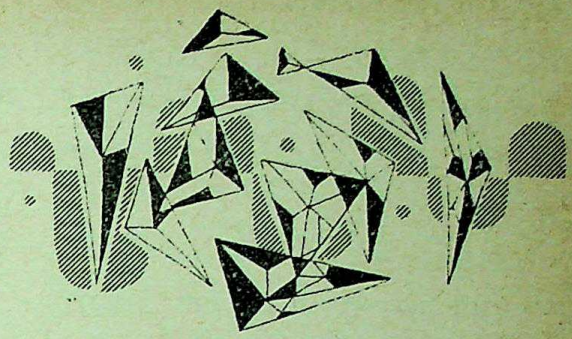

दूधनाथसिंह

बर्फ़के टुकड़े

७ नवम्बर' ६३ (सुबह) : नया वर्ष शुरू हो गया। और उसकी शुरुआत भी किस ढंगसे हुई है। सुबह-सुबह कमरेमें धूप आ गयी है। बस और कुछ भी नहीं। इस धूपसे कभी कित्ता लगाव था। शहरों और छतों और नदियोंको छाती हुई धूप···। अब जैसे कुछ भी नहीं है। धूप न भी आये तो रह रहूँगा। कहीं भी किसी भी स्थितिमें डाल दो – रह रहूँगा। एक निश्चिन्तता-सी है कि कहीं कुछ भी नहीं है। – यह कित्ती भयावह चिन्ता है। कितना भयावह 'केआॅस' !

कुछ भी महसूस होता है क्या ? चेहरोंपर स्वार्थके चिह्न हैं। सभी लीन हैं। मेरा अपरिचय और भी घना हो रहा है। मैं जैसे धीरे-धीरे अपनी स्मरण-शक्तिसे घायल हो रहा हूँ। लेकिन न तो मुक्त, न निस्पृह। फिर ?···शायद अन्तहीन नरक।

यह सब लिखते वक़्त मुझे कई लोगोंके चेहरे याद आ रहे हैं जो मुझे निराशावादी कहेंगे। क्यों है ऐसा ? क्यों है कि कुछ भी अच्छा नहीं लगता। और न इसके पीछे कोई नैराश्य है, न पश्चात्ताप, न ग्लानि, न दुख। एक भागमभाग है। मनकी यह गति···साइक्लोन। समुद्रकी याद आती है। वह समुद्र, जो धीरे-धीरे डुबा रहा था। गंगासागर।

मुझे लेखनकी निरर्थकता मालूम है। कलाकार कितना नीरस होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौन जानता है कि हमने किस तरह अपनेको यन्त्रणा दे-देकर उस नीरसतासे एक छोटा-सा शब्द निकाला है। हम अपनेपर जो अत्याचार करते हैं···वह ? उसकी कोई परिभाषा नहीं है।

रात-भर मुझे नींद नहीं आयी है। किस बेताबीके साथ मैं सुबहका इन्तज़ार करता रहा हूँ ! सिर्फ़ इसलिए कि यह नींद-का न आना भूल जाये। नींद न आनेसे सन्नाटेमें लहरें उठने लगती हैं और उन लहरोंके सन्नाटे सहना कितना भयावह होता है ! फिर ऐसा लगता है जैसे कभी भी नींद नहीं आयेगी। यदि ऐसा हो जाये तो ? यदि कभी नींद ही न आये तो ? क्या ऐसी स्थितिमें भी जीवित रहा जा सकता है कि इनसान अपनेको एक पलके लिए भी भुला न सके ?

मुझमें बहुत-सी कमज़ोरियाँ हैं जो धीरे-धीरे खुल रही हैं। अपने-आप, समय, अनुभव और व्यवहारके अन्तरालमें बहुत-सी बातें साफ़ दिख रही हैं। – जैसे कि उपलब्धिकी निरर्थकता मुझे कुछ भी पानेसे रोक देती है। 'क्या होगा ? इसका मूल्य ही क्या है ? अरे, यह तो वही है, ठीक वैसी ही।' इत्यादि प्रश्न मेरे मनको एक अजीब-सी उदासीसे भर देते हैं और सब-कुछ मेरे लिए निरर्थक पड़ जाता है। फिर एक दूरी, एक अन्तहीन कटाव, पार्थक्य और अपना-सबका-अवमूल्यन। यदि यह सच भी हो तो भी क्या ! एक कमज़ोरी तो है ही, जो मुझे सभीके ढंगसे जीने नहीं देती।

न मुझे करुणा होती है, न दया। फिर मुझे दूसरोंके छोटेसे छोटे कष्टोंको देखकर भी अपार वेदना होती है। अपनी इस मानसिक स्थितिका सामंजस्य मैं नहीं ढूँढ़ पाता। यह कहाँतक वांछनीय है ? फिर मुझे अपनी 'नर्व्स'पर शक होने लगता है। इस क़िस्मका आध्यात्मिक पागलपन भी मुझे नहीं रुचता। क्षणके अन्तरालमें मेरे व्यवहारके कितने अनजाने कोप प्रकट होकर बुझ जाते हैं ! एक क्षणके भीतर मैं सम्पूर्ण तल्लीनताके साथ वस्तु या स्नेहको बाँध लेना चाहता हूँ। दूसरेमें तुरत मुझे यह अपनी स्थिति ही अग्राह्य लगने लगती है। सहसा मेरे मनमें एक अजीब-सी ग्लानि और उदासी भर जाती है। सामनेवाला इतने तीव्र, संवेद्य परिवर्तनोंको पकड़नेके लिए ठहरनेका भी अवकाश नहीं पाता कि मेरे भीतर सभी कुछ घटित होकर समाप्त हो जाता है। उसके बाद एक मूर्खकी तरह मैं उसके सामने खड़ा-खड़ा मुँह ताकता रह जाता हूँ।

खोजता हूँ तो पाता हूँ कि वह 'उपलब्धिकी निरर्थकता' भी अकारण नहीं है। एक बार किसी चीज़को नष्ट होना ही पड़ता है। अन्यथा यह धारणा कैसे बनती ? यदि कोई वस्तु या व्यवहार, या स्थिति, या संवेदना अपनेको किन्हीं कारणों और स्थितियोंमें निरर्थक प्रमाणित हो जानेके लिए प्रस्तुत नहीं करती तो फिर ऐसा बद्धमूल विचार क्यों बनता या इस तरहके भयका आभास ही बार-बार क्यों लगता। तब शायद सार्थकता होती या कोई दूसरा ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप होता। मैं कहता हूँ धीरज। मैं कहता हूँ श्रद्धा। मैं कहता हूँ चिन्तन, मैं कहता हूँ स्वास्थ्य। कुछ भी। कोई एक बार खेल-खेलमें ही इसे नष्ट कर देता है और फिर दूसरा उसके लिए लगातार जीवन-भर टीसता रहता है। ऐसे लोगोंके प्रति अन्तमें खीझ भी नहीं आती। आक्रोश, ग्लानि, उदासी सब बह जाते हैं। केवल एक अविस्मरणीय-सा भाव कि 'सब-कुछ ख़त्म हो गया है' रह जाता है। इसमें एक ऐसी समग्रता होती है जो कभी नहीं मिटती। उस समग्रताको खोकर नये सिरेसे जीवन प्रारम्भ – शायद नहीं किया जा सकता।

लेकिन सब ऐसे नहीं होते। अधिकांश लोग भूल जाते हैं; अपनेको परिस्थितिकी अनिवार्यताके अनुकूल 'ऐडजस्ट' कर लेते हैं। या, यों कहें कि सभीमें स्मरणको अंगीकार करके उसकी तीव्र नीरसता और अविश्वसनीय आत्यन्तिकताको भोगने और झेलनेकी शक्ति नहीं होती। मनुष्य स्वभावसे ही सुखी और सन्तुष्ट होना चाहता है। हर वस्तु और स्थितिको अपने अनुकूल बनानेका प्रयत्न करता है। जहाँतक वह सफल होता है – होता है। जहाँ उसे असफल होनेकी सम्भावना दीख पड़ती है, उस वस्तु या परिस्थितिको वह त्याग देता है; या उसपर अपनी झूठी मनोरंजकताका आरोप करके उसमें-से केवल सहज और आसानीसे प्राप्य सुखको चूसता रहता है। शेष, जो वास्तव भी है किन्तु कष्टकर है उसे छोड़नेका प्रयत्न करता है।

यदि मैं किसी अनजानी विवशतावश मनुष्य स्वभावकी यथार्थताके विरुद्ध आचरण करता हूँ; यदि मैं भूल नहीं पाता। यदि मैं 'ऐडजस्ट' नहीं कर पाता; यदि मैं घटित होनेवाली घटनाओंमें-से केवल सुखकर या प्रीतिकरको ही नहीं चुन पाता तो क्या यह मेरी कमज़ोरी नहीं है? है। लेकिन बस 'है'।

मेरी वह विवशता क्या है? – मेरे संस्कार। मेरी तीव्र संवेदनशीलता। मेरे भीतरका 'कुछ अतिरिक्त' – जो मुझे नष्ट करनेपर तुला हुआ है। इसे कौन समझ सकेगा?

■

एक नुमायश जो हर साल लगती है। उसमें कुछ दूकानोंपर 'बेबी सूट' टँगे होते हैं। लेकिन वह तीव्रता कहाँ! या कि आँखें हैं लेकिन उनमें वह भाव कहाँ। तो फिर क्यों···एकाकीपन। मैं अपनेमें खड़ा अपने 'बेचारे'को जाते देखता रहता हूँ। वह भी निरर्थक भावसे। मैं जानता हूँ कि मेरा वह 'बेचारा' फिर लौटेगा नहीं। अतः उसे आवाज़ देना बेकार है। फिर वह ओझल हो जाता है। मैं चट्टानकी तरह अचल खड़ा रहता हूँ।

यह एक चट्टान है। यह चलती-फिरती है। घिसती है और बस अजर-अमर है। इसमें एक भावरूप सत्य सिसकारियाँ भरता है।

उसे कहना व्यर्थ है।

रात ११ बजे : सभीको विदा कर दिया है। एक बार ऐसा महसूस हुआ कि जेलसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छूटा हूँ। गाड़ी खुल गयी तो जैसे राहतकी साँस ली।

मैं शायद कहीं भी बँधकर नहीं रह सकता। अब अपनेपर शक होने लगा है। यह मेरे बरबाद होते जानेकी समयातीत रूपरेखा है। यह एक नंगा सच है। यदि किसीके साथ रह सकूँगा तो वह, वह होगी जो मुझपर विश्वास कर सके। मेरे जीवनको सम्पूर्णतः आत्मसात् कर ले।....जो विश्वास नहीं कर सकता वह स्वतन्त्र कैसे रख सकता है। मैं जानता हूँ वह कौन है।

विजय, गाड़ी छूटते ही, दूसरी ओर देखने लगा था। शायद वह मेरी आँखोंका सामना नहीं कर सकता था। शायद हम दोनों एक-दूसरेकी आँखोंका सामना नहीं कर सकते थे। उन आँखोंका जिनमें यह भाव था कि हम एक-दूसरेसे अलग हो रहे हैं। वह मुझसे कितना छोटा है लेकिन किस तरह हम दोनोंके मनमें एक ही भाव था। फिर जब गाड़ी हल्की-सी तेज़ हो गयी तो उसने झपटकर मेरा हाथ चूमा और शरमा गया। गाड़ीकी थरथराहटके साथ उन आँखों-में दो बूंदें थरथरा रही थीं जो न जाने कहाँ टपक पड़ी होंगी।

लौटनेपर कितना सन्नाटा है। दरवाज़े-पर एकाएक इस तरह लगता है जैसे अन्दर कोई है। अजीब-सी जड़ता व्याप जाती है। जानता हूँ कोई नहीं है। बाहरसे दरवाज़ा बन्द है। पूरे बगीचेमें, बाहर अँधेरा है। बत्ती जलानेपर कंधीपर दो तिलचट्टे दिखाई पड़ते हैं और रौशनीसे बचनेके लिए कंधीके नीचे चले जाते हैं।

स्टेशनसे बाहर निकलते ही एक बात मनमें आयी थी – 'कौन जाने अब इनमें-से किसीसे भेंट होगी या नहीं।' हर विदाके बाद मुझे ऐसा ही लगता है। और मेरी उठी हुई बाँहोंमें एक झुनझुनी दौड़ जाती है।

घर कित्ता सूना है! मैंने बिस्तर अपने-भरके लिए समेट लिया है।

■

११ नवम्बर '६३ (रात) : मुझे सब कुछ भूलनेके लिए अपनेको भूलना होगा। यदि ऐसा नहीं होता तो कुछ भी कर सकना असम्भव है। इतने भयावने मानसिक और शारीरिक तनावमें जीना भी कितने दिन हो सकता है। लेकिन जीना तो है ही क्योंकि कुछ करना है। उस 'करने' के लिए मुझे अपनेको भूलना होगा।

यद्यपि कर्मकी व्यर्थता और परिश्रमका अनर्थ मुझे मालूम है। शायद यह जानना ही आदमीको और अधिक व्यर्थ हो जाने, तूफ़ानमें पूर्ण रूपसे घिर जानेको उत्साहित करता है। कर्म और परिश्रमकी नीरस व्यर्थताका नरक सहनेके लिए जीवित रहना है। कलाकारके लिए यह कितना बड़ा व्यंग्य है।

इन दस वर्षोंमें क्या-कुछ घटित नहीं हो गया है!

सुख और शान्ति और निश्चिन्तता – ये भी अंगीकार भाव हैं मानव-मनके। अब यदि कोई इन्हें न अंगीकार करे तो?

फिर भी कितनी अमूर्त मुद्राएँ दीखती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं ! एक स्वप्न है। एक आशा है। एक सान्त्वनाकी-सी धूप-छाँह है – कि कोई आयेगा।

यह मृग-मरीचिका कित्ती सच है !

मैं खो-सा गया हूँ। मेरे मनमें कुछ नहीं ठहरता। मैं किसीसे नहीं बोलता। मैं बुतों-से बात करता हूँ। मैं कभी बाहर नहीं आता। मुझे इधर छह वर्षोंसे किसीने नहीं देखा। मैं तिरोहित हो गया हूँ। मेरे शरीरपर दीमक लग गये हैं। मैं उन बल्मीकियोंमें छिप गया हूँ।···अन्दरसे मैं सो गया हूँ। मेरा लोहेका कवच (शरीर) लड़ रहा है। दुश्मनी और मित्रताएँ कर रहा है। 'बोर' हो रहा है। फ़ोनपर लोगोंके ग़ुस्से बरदाश्त कर रहा है। कहीं समयपर पहुँच रहा है, कहीं देरसे। कितनोंका स्वार्थसाधन बन रहा है। लोग उसे छूते हैं; करुणा, दया, दुख या गुस्से या प्यारसे पागल हो जाते हैं।

■

खाना खानेके बाद थालीमें-से प्याली निकालकर नीचे रखी तो उसे आश्चर्य हुआ। हाथ धोते देखा तो मुस्करायी, "अच्छा, मतलब खाटपर ही सब कुछ हो जाये। बाहर न जाना पड़े।" उसने कहा। मुझे इस बात-का अहसास नहीं था। उसने नहीं जाना कि उसने मुझे कहाँ, स्मृतिके किस अन्तरतममें पीड़ा पहुँचायी।

मेरी आदतोंको कोई इतने ध्यानसे देखे, यह मुझे सह्य नहीं है।

१० दिसम्बर, ६३ (रात) : धीरे-धीरे यन्त्रणाके रूप कितने प्रखर होते जा रहे हैं। और कितनी छोटी-छोटी बातोंके लिए हम दुख पा रहे हैं। और जो चीज़ें अपनी थीं वे सपना होती जा रही हैं। यह जानकर कितनी पीड़ा होती है कि ये चीज़ें भी किसी दिन परायी हो जायेंगी।

पैर काले पड़ गये हैं। कभी कोई इन्हें प्यार करता था। कितने उजले थे ये ! और इनके सौन्दर्यका अहसास भी किसीके द्वारा कराया गया था।···कितनी भयंकर ठण्ड है ! कोट-पैण्ट पहने ही सोना पड़ता है। लोग फिर भी कित्ते मेहरबान हैं। मुझे भुवनेश्वर (हिन्दी नाटककार) की याद आती है।···यह सब क्या है ? मैं अपनेको खाकर इस तरह और कितने दिनों ज़िन्दा रहूँगा। रहूँगा।

किसका 'ह्यूमिलियेशन' बड़ा है ? कौन ज़्यादा 'ह्यूमिलियेटेड' है ? मैं, जिसने कहीं सिर नहीं झुकाया है अपने आदर्शोंके लिए (बशर्ते कि मेरे आदर्शोंको ही पहले समझा जाये) या वह जिसने दुनियावी सुखोंके लिए अपना शरीर बेच दिया। (ऐसे लोगों-को आत्मापर विश्वास नहीं होता।) ऐसे लोग कित्ते स्वस्थ दीखते हैं और दूसरोंको आदर्श-च्युत करनेमें अपनी सारी शक्ति लगा देते हैं।

यह दुनिया इतनी पागल क्यों है ? लगा-तार हाय-हाय करते जाते हैं लेकिन इस नरकसे उबरना नहीं चाहते। इस सुनहली सँड़ाधमें कितनी भयावह आस्था है हमारी। न मैं साधु हो सकता हूँ, न धर्म-परिवर्तन कर सकता हूँ, न तन बेच सकता हूँ न मन। और फिर इन सबकी रक्षा करते हुए भूख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और बीमारीसे बिलबिलाते हुए, घर-विहीन, परिवार-विहीन, मित्र-बिहीन, स्नेही-स्वजन-अन्तरंग-विहीन खुश रहना कितना अजीब लगता है। और लोग कहते हैं, हमारी पीढ़ीमें विश्वास नहीं है। उनका यह कहना कितना दुःख देता है। वे हमें बन्द कमरोंमें ले जाते हैं और बिजलीके कोड़ोंसे पीटते हैं।

■

मुझे एक दिनकी घटना याद आती है। ···छतपर वैसी ही धूप फैली हुई थी – जैसे वहाँ होती थी। कुछ कपड़े सूख रहे थे। एक चटाई बिछी थी। ऊपर चौंधियाता हुआ आसमान था – इतना नीला कि आँख न ठहरे। वह बाहर खड़ी थी।···कहीं कुछ नहीं था। सन्दर्भ दूसरा था, दिन दूसरे थे, मनकी स्थिति दूसरी थी। उस तरहकी कोई बात नहीं थी, जो उसके संग होती थी। तब मैं छतपर-से कमरेमें जाता था तो वह भी आ जाती थी। यहाँ मैं एक कर्तव्यवश आया था। उसके पीछे कोई स्वार्थ या अनुशोचना नहीं थी। सिर्फ़ वक्त काटना था।

"मै अभी नीचेसे आयी", उसने कहा, "आप कमरेमें चलकर बैठिए।"

कि एकाएक सब कुछ बदल गया। कमरेके अन्दर प्रवेश करते ही मैं काँप गया। मैं चुप देखता रह गया। जैसे वहीं पहुँच गया होऊँ।

चारपाईपर बैठना ही चाहता था कि निगाह गयी। ठीक बीचोबीच चारपाईमें एक नन्हीं-सी बच्ची चादरमें लिपटी, गहरी नीदमें सो रही थी। निश्चिन्त, निरीह, निर्द्वन्द्व। उसके होंठ उसी तरह तनिक खुले हुए थे जैसे कि उसके होते थे। वैसी ही गोरी थी गो कि वैसी नहीं। लेकिन वह बचपनेका शाश्वत भाव, अनाकुल नींद, वह अन-जानापन। कमरेकी सारी शान्ति, स्निग्धता और स्वच्छतामें वह नन्हीं-सी जान। मैं चुपचाप खड़ा देखता रह गया।

"बैठिए न! खड़े क्यों हैं?" तभी वह आ गयी।

मन नहीं लगा।

■

"प्लीज़, नहीं। प्लीज़, जाग जायेगी।" वह मुझे कन्धेसे पकड़ लेती थी। और मैं उस नन्हीं-सी जानके तनिक खुले हुए होंठ झुककर इतने सादे और हल्के ढंगसे चूम लेता कि वह जागे भी नहीं और मैं वह सुख ले लूँ। बच्ची हलके-से कुनमुनाती। वह डरके मारे मुझे हटा लेती। हम लोग पास ही पलंगपर बैठ जाते और नींदमें, उसे देखते रहते।

"तुम तो इसके पीछे पागल हो।" वह कहती···

फिर···?

वह सब कुछ बीत गया है। सब जैसे नहीं है। सबमें से मैं ही नहीं हूँ।

■

२३ दिसम्बर, ६३ (रात; स्टेशन) : एकाएक सारी आवाज़ें दूर-दूर लगने लगती हैं जैसा कि शराबके नशेमें होता है। ठण्डक कितनी वीरानगी लाती है। हर चीज़पर भारी सन्नाटा घिर आता है। भीड़ कठपुतली-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की तरह लगती है। गाड़ी जैसे किसी भारी ख़तरेसे बचकर निकली चली जाती है।

मेरे युगका सत्य क्या है? आतंक, दृढ़ता, निष्ठा और एक असम्भावित ट्रेजेडी और नाशके अनन्त भयके बीच ठहाके लगाना।

मैं भेड़ियोंसे भरे एक जंगलमें रह रहा हूँ। चारों ओर काली ओवर कोटोंके कॉलर उठाये, चेहरेकी शालीनताके नीचे ख़ूँख़ार दिल और अफ़साने छिपाये वे मुझे घूर रहे हैं। मुझसे हँसते हैं, बोलते हैं, क्षण-क्षण मेरी गतिविधिका सूँघते चलते हैं। वे समय और अवसरकी ताकमें हैं और कुढ़ रहे हैं। मैं हर बार उनका वार खाली चला जाने देता हूँ।

लेकिन ऐसा कबतक चल सकता है। मैं इतने सारे ख़ूँख़ारोंसे कबतक लड़ता रहूँगा? क्या मुझे कभी नींद नहीं आ जायेगी? क्या मैं ग़ाफ़िल नहीं पड़ जाऊँगा। उस क्षणकी तलाशमें ये जानवर कितने धैर्यवान बने घूम रहे हैं। कितना जब्त कर रहे हैं।

■

७ जनवरी '६४ (रात) : नया वर्ष शुरू हो गया। और इसकी शुरुआत ही किस ढंगसे हुई। जैसे कोई सोया हुआ ख़तरा शेर-की तरह जमुहाइयाँ लेता हुआ, गुर्राता हुआ जाग उठे। और कितनी बातें। झगड़ोंकी शुरुआत···अविश्वास, विश्वासघात···दुरभि-सन्धियोंका खुलना···जिनपर स्वप्नमें भी विश्वास नहीं किया जा सकता था।

जैसे पत्रोंका 'कन्सल्टेशन'। ईश्वर, क्या प्रेमके इतिहासमें यह सर्वथा अनहोनी घटना नहीं है!

जो संस्कारहीन होते हैं वे कितने अजीब लगते हैं जब वे संस्कारोंकी दुहाई देते हैं। ऐसे व्यक्तियोंकी भयंकरताका अन्दाज़ा लगाना कठिन होता है। और उनकी झूठी नैतिकताका दम्भ···और उनकी अवसरवादिता और उनकी 'कैलकुलेटिवनेस' और उनकी कायरता···। हे प्रभु, जीवन-भर अकेला रखना लेकिन ऐसे व्यक्तिके निकट आनेसे बचाना। संस्कारहीन होकर संस्कारवान होनेकी दुहाई देना···ऐसे ही लोग दुनियाका हर पाप करते हैं और उसपर नैतिकता और स्थितिकी विवशताका तर्क देते हैं।

ऐसे लोगोंकी महत्त्वाकांक्षा और तानाशाहोंकी महत्त्वाकांक्षामें कोई फ़र्क़ नहीं होता। दोनों ही अपनी इच्छाओंकी पूर्तिके लिए बेखटके हत्याएँ कर सकते हैं।

इतिहासमें कभी-कभी संस्कारवान और सचमुच सभ्य परिवारका व्यक्ति तानाशाह होता हुआ नहीं देखा गया है। क्योंकि संस्कारवान व्यक्ति 'शक्ति'की निरर्थकतासे परिचित होता है और 'मनुष्य'का मूल्य समझता है।

■

९ फ़रवरी' ६४ (दिन) : एकाएक हवा जैसे होशमें लाती है मुझे और तूफ़ानका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बन्द मुँह खोलकर केवल एक शब्द निकलता है – वसन्त ।

कितनी बेबस-सी पहचान है इस हवाकी । या इस पहचानमें कैसी बेबसी है ! जैसे कुछके होनेमें कुछ दूसरा होता है और यादोंमें दूसरी यादें याद आती हैं ।

पत्तियाँ झरझराकर टूटती हैं । हवामें जाड़ेका चौंधियाता आकाश धुमैला हो गया है और सूखती हुई चिड़ियोंकी उड़ान सन्नाटा बनकर गिरजेके शिखरके पार तक दिखती है । इस तरह मौसमका बदलना कितना-कुछ ला देता है ! और कितना-कुछ ले जाता है । इसे कौन जानेगा कि हवामें जो खुमार है वह मेरा कितना अपना है ! ··· सन्नाटेमें लुटे हुए घर और घरोंके आन्तरिक सन्नाटे और फिर वर्षोंके बीतनेका बीतना !

ऐसे ही दिनोंमें कवि – यह कवि– व्याकुल-सा सड़कोंकी पहचान किया करता था । और···फिर शब्दोंका एक तारतम्य रह-रहकर तूफ़ानी हवाओंकी तरह सरसराता हुआ निकल आता था । कौन था वह जिसके लिए यह सब···इतनी व्याकुलता थी ? केवल एक शब्द था; केवल एक नशेका स्पर्श था – वसन्त । इन्हीं दिनों अतीतके गुमनाम परदेको छूती हुई वह हवा आती है । किस तरह इस मौसमके स्मृतिका एक सम्बन्ध तार-तार होकर भी लिपटा है । जैसे कोई धीरेसे हाथ छूकर कहता है, "ए, पहचाना ?"

"नहीं ।"

"फिरसे देखो ।

'ओह ! हाँ ।" और अन्दर जैसे कुछ टूटता है । कुछ और बीत जाता है ।

ऐसे ही दिनोंमें यमुना-पार मैंने ····से कहा था कि क्या वह मुझसे ब्याह करेगी ? वह आज भी मेरी व्याकुलताको नहीं समझ पाती । किस तरह अपने ही निरीह, खौफ़नाक पापोंके समक्ष मैं अपनी नंगी देहपर कोड़े खाता रहूँ । इस छोटी-सी धरती और छोटे-से जीवनमें मैं उसके लिए किस तरह व्याकुल रहा हूँ ।···ऐसे ही दिनोंमें किसी मैदानकी चौंधियाती आँखोंमें धूल झोंककर हमने एक-दूसरेको चूम लिया है । कितनी बार सपनोंके क्रममें खोये-खोये हमें प्यास लग आयी है । कितनी बार पैसे-पैसेके लिए मोहताज, चेहरेके शिकंजोंमें भूख और आदिम प्रतारणा छिपाये इस हवाके पीछे पागलोंकी तरह भागता रहा हूँ ।

■

१७ फ़रवरी '६४ (सुबह) : एक यह हमारी पीढ़ी है ! हर आदमी सोचता है कि आजका दिन कैसे बीत जाये ! 'कल' कैसे, कितनी जल्दी आ जाये । क्योंकि उसे 'कल'के सुखमय शान्तिपूर्ण और शुभ होनेकी आशा है । लेकिन जब वह 'कल' आता है तो उसे वह अगले 'कल'पर डाल देता है । हर 'कल' उसके लिए उतना ही अवांछित होता है । आखिर इस पीढ़ीका वह 'कल' कभी आयेगा कि नहीं ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूरीकी पूरी पीढ़ी एक दिन देखेगी कि वह वृद्ध हो गयी है। और वह 'कल' नहीं आया है। नहीं ही आया है। जिसका इन्तज़ार उसे था वह 'कल' उसके बच्चोंको मिला है और वे किसी दूसरे 'कल' की प्रतीक्षामें उसे ज़मा कर रहे हैं। सारी दुनियाका यह क्रम हो सकता है आज लेकिन हमारा देश तो इसी प्रवृत्तिकी विवशतामें गर्द हो रहा है।

कोई भूखा है कि उसे 'कल' खाना मिलेगा। कोई प्यार कर रहा है कि वे 'कल' पति-पत्नी होकर दुनियाके इतिहासको बदल देंगे। कोई अनुभव और यन्त्रणाके मध्य यह सोच रहा है कि आज रहने दो। 'कल' इसी अनुभव और इसी यन्त्रणासे दुनिया और कलामें क्रान्ति पैदा करनेवाली चीज़ रचकर मैं अमर हो जाऊँगा।

पहली बार जब सिरके बालोंमें एक सफ़ेद तार दिखा था तो हमने उसे उखड़वा दिया था। अब···? क्या सचमें उमरका अहसास हमारे ऊपर लादा जा रहा है। एक दिन हमने पाया कि मूँछोंमें सिर्फ़ एक बाल चाँदीके तारकी तरह निकल आया है।···

इस सारे बीतनेके बीच वह कौन-सी चीज है जो हमें थामे रहती है? वह सारा दुःख-बोध जो हमें समयके एक-एक पलके बीतनेके साथ गूँथा गया है। वह सारा एकान्त जिसमें हमारी चौंधियाती हुई आँखें, खोयी हुई आँखें – बार-बार किसी एक चेहरेकी खोजमें झाँकती हैं; वह सारी व्यर्थता जिसमें हम अपनी उपलब्धिको तौलते हैं – ठीक उसी तरह जैसे पतझरके टूटे पत्तोंको कोई व्यक्ति गिनता रहे।

क्या स्मरण कभी धँधला नहीं पड़ता? क्या जीवनसे जो कुछ भी जाता है वह हमें तेज़ाबकी तरह जलाता ही रहता है? क्या मनपर पड़ा हुई छापकी आकृतिमें-के बालोंमें कभी चाँदीके तार नहीं निकलते!

■

जैसे एक तूफ़ान-सा है। और उस तूफ़ानके कितने चेहरे हैं! अन्दर-बाहर, ऊपर-नीचे—चारों ओर एक आग जल रही है।····मुझे नरककी ऊँचाईयाँ छूनेके लिए इतना सोचना पड़ रहा है?···मुझे बार-बार लगता है कि मैं अपना दिल चीर दूँ तो एक नयी भाषा निकल आयेगी। बार-बार लगता है कि अगर सिरपर एक भारी-सा पत्थर मार दूँ तो मेरे लिए वह कहना सम्भव हो जायेगा जो मैं कहना चाहता हूँ। यदि मैं पागल हो जाऊँ तो मेरे सामने भाषाका वह छिपा हुआ खज़ाना खुल जायेगा। मैं चाहता हूँ कि अपनेको गोली मार दूँ, फाँसीपर लटका दूँ और उसके बाद बैठकर रचूँ।

इन कितनी क्रूरताओं और असहनीयताओंके बीच मैं खुश हूँ।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

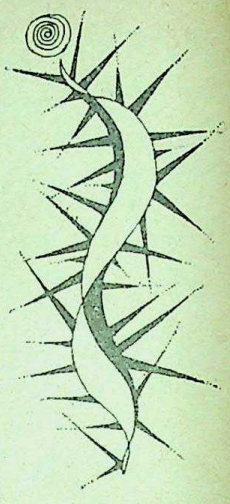

• • •

हज़ार बाँहोंवाली । गुनहगार । तुम

१ – हज़ार बाँहोंवाली शिशिर···

हज़ार बाँहोंवाली शिशिर-विष-कन्या
उतरी लेकर साँसों में प्रलय की वन्या
हिमदग्ध होंठों के प्राणशोषी चुम्बन
तन-मन पर लेप गये ज्वालामय चन्दन
एक-एक शिरा में सौ-सौ सुइयों की चुभन
अद्‌भुत यह भुजपाश अद्‌भुत आलिंगन
तृण-तरु झुलस गये, पड़ा है ओसमय तुषार
किया है महाकाल ने हिमानी का शृंगार
आज है गरल धन्य, कल थी सुधा धन्या
हज़ार बाँहोंवाली शिशिर-विष-कन्या
उतरी लेकर साँसों में प्रलय की वन्या

— नागार्जुन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२ – मैं हूँ वह गुनहगार

मैं हूँ वह गुनहगार
जिससे भयभीत त्रस्त
भादोंका अन्धकार ।

अविरल झड़ीमें खड़ी
भीज रही पुण्य परी
कर्दम पर दुर्दमनीय
जीवन ज्वलन्त ज्वार,
मैं हूँ वह गुनहगार ।

धानों के खेत रोप
वासना बिगोती-सी
लज्जा की सज्जा
अप्रतिहत चुनौती-सी
लहरों का लख उभार
बरबस चढ़ता बुखार,
मैं हूँ वह गुनहगार।

व्योम-नाभि-नाल-मुक्त
जाग्रत कुण्डलिनी-सी
निशा पड़ी मुक्तकेश
मसली कमलिनी-सी
पल-पल ललकार रहा
वन्ध्या का रुद्ध प्यार,
मैं हूँ वह गुनहगार ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आँख मीच, होंठ भींच
मँझा-मँझा खेतों में
चहल-चहल कीच बीच
रेतस्-सा रेतों में,
सिन्धु का विलोल बीज
बोता जो बार-बार,
मैं हूँ वह गुनहगार।

— शिवमंगलसिंह 'सुमन'

३ — राशि-राशि ज्वारों के बीच
एक नाव तुम

राशि-राशि ज्वारोंके बीच
एक नाव तुम,
धूपके तनावोंके बीच
एक छाँव तुम।

बीते सम्मोहनको पीछे ही छोड़कर
अपने ही प्रश्नोंके मनचाहे मोड़ पर
उत्तरमें माँग रहीं
दक्षिणी बहाव तुम;

"पर्वतकी सर्प-नदी नहीं सदानीरा है"
कहती हो क्यों मुझसे — "सर्जना अधीरा है
अनमने पहाड़ोंके बीच
एक गाँव तुम;"

टूटता अहम उदास सपनोंकी राहमें
देख रहा हूँ तुमको प्यारके उछाहमें
क्य करतीं अश्रु-फूल
निश्चयके भाव तुम।

— वीरेन्द्र मिश्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

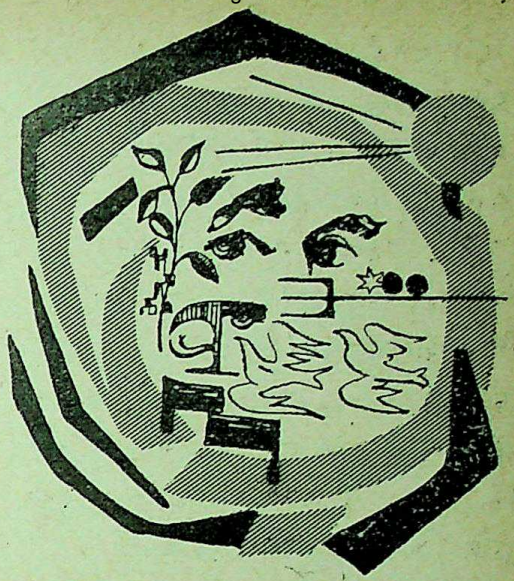

अमृता प्रीतम

परदेसी

मेरे देव चाचाजी कौशीके देव पिताजी थे। कल यही सन्ध्याका समय था जब अचानक उनके दिलकी धड़कन बन्द हो गयी। आख़िरी वक़्त उन्होंने कुछ भी नहीं कहा, पर मुझे भी मालूम था और कौशीको भी पता था कि उन्होंने एक बार नहीं कई बार हमें चेतावनी दी थी, "भई, इस तुम्हारे देशमें लोग हंगामा बहुत करते हैं! कोई इस दुनियामें आये या इस दुनियासे चला जाये, इसमें हंगामा मचानेकी क्या बात है? चाहता तो हूँ कि जब मैं इस दुनियासे जाऊँ, कुछ इस तरह जाऊँ कि आप लोगोंको कुछ न करना पड़े, यही कि कहीं एयर-क्रैश में मर जाऊँ, बर्फ़की किसी घाटी-वाटीमें ख़ुद ही एक क़ब्र बन जाये। हवा एक कफ़न डाल देगी। मगर यह अपने बसकी बात नहीं। मजबूरी है। फिर भी तुम लोग याद रखना, जो कुछ भी करना हो, जल्दीसे कर देना। बस उसके बाद कुछ नहीं। किसीको कुछ कहनेकी या किसीको बुलानेकी ज़रूरत नहीं।" इसलिए आज सवेरे चुपचाप हम लोगोंने उनके शरीरको बिदा कर दिया।···सन्ध्याका समय है। कौशीका मुख उतरा हुआ है, शायद मेरा भी उतरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ होगा, क्योंकि कौशी मुझे चायका एक प्याला लेनेके लिए ज़ोर दे रही है। चायका घूंट मेरे अन्दर भी नहीं उतर रहा और कौशीके अन्दर भी नहीं। क्योंकि जिस तरह मेरे अन्दर देव चाचाजीकी बातें उतरी हुई हैं उसी तरह कौशीके अन्दर भी देव पिताजी-का प्यार समाया हुआ है। बातोंको प्यारमें और प्यारको बातोंमें मिलानेके लिए कौशी मुझसे पूछ रही है, "देव चाचाजी हमेशा पंजाबीमें बातें करते थे, पर जब कभी उन्हें कोई ख़ास बात करनी होती तो वे उर्दू बोलते थे। दीदी, वे उर्दू क्यों बोलते थे?"

"नहीं कौशी, वे उर्दू तब नहीं बोलते थे जब उन्हें कोई ख़ास बात कहनी होती थी, वे उर्दू तब बोलते थे जब वे बड़े उदास होते थे। पंजाबी शायद उनकी उदासीके मापमें नहीं आती थी; या शायद इसलिए कि उदासी उनके लिए बड़ी बेगानी-सी चीज़ थी और उसके लिए उन्हें ज़बान भी कोई बेगानी ही चाहिए थी।"

"पर दीदी,..." कौशी जाने मुझसे क्या पूछने चली थी, पूछते-पूछते चुपिया गयी है। यह आजकी बात नहीं, कौशीकी शुरूसे ही आदत है। वह ज़िन्दगीको हमेशा चुप-चाप देखती रहती है, उससे पूछती कुछ नहीं। अगर वह पूछ सकती तो शायद ज़िन्दगीसे सबसे पहला यह सवाल पूछती कि उसके कौन-से पुण्यसे देव पिताजी उसके पिताजी बन गये? कोई भी सगा पिता इतना सगा पिता नहीं हो सकता जितना देव कौशीका सगा पिता था। धरती कौशी-की मां थी और देव कौशीका पिता था। कौशीकी उमर तब पूरे चौबीस घण्टेकी भी नहीं थी जब उसके देव पिताजीने नदीके किनारेपर उसका रोना सुना था। इतने घण्टे धरतीने उस बच्चीको अपने आँचलमें अमन-अमानतसे रखा था। कौशी धरतीके इस रहमको तभीसे देख रही है, बीस सालोंसे देख रही है। बड़े अच्छे स्कूलमें और बड़े अच्छे कालेजमें वह पढ़ती रही है, बड़े अच्छे खाविन्दसे उसकी शादी हुई है, और देव पिताजीसे उसे एक बड़ा अच्छा घर विरासत-में मिला है। इसलिए वह चुपचाप एक इनसानके रूपमें एक ख़ुदाकी नेमतोंको देखती रहती है। पूछती कुछ नहीं।

यह सिर्फ़ मैं सोच रही हूँ कि कौशीको देव पिताजी कैसे मिल गये और कौशीकी तरह मुझे देव चाचाजी कैसे मिल गये। देव मेरे पिताजीके साथ पढ़ते थे। एक बार फ़ीस देनेके लिए दोनोंके पास पैसे नहीं थे। देवने अपने हाथकी मुँदरी बेंच दी थी, जिससे देवने भी और मेरे पिताजीने भी इम्तहानकी फ़ीस चुकायी थी। उस दिनसे वे दोस्त बन गये थे। दोस्त ही क्यों, भाई बन गये थे। यह मेरे जन्मसे कई साल पहलेकी बात है। इस तरह वे मेरे जन्मसे पहले ही मेरे चाचाजी बन गये थे। पिताजी सुनाया करते थे कि जिस दिन उनके इम्तहानका नतीजा निकला था, चाचाजी सारे कालेजमें अव्वल आये थे और वे दूसरे दर्ज़ेमें आये थे। पर आगे उन्हें भी और देव चाचाजीको भी पढ़ाई छोड़नी पड़ी थी, क्योंकि दोनोंके पास आगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पढ़नेके लिए पैसे नहीं थे। उस दिन उन्होंने पहली बार देव चाचाजीको उर्दू बोलते हुए सुना था, "भई, यह क्या है तुम्हारे देशमें? जिनके पास क़ाबलियत है, जिनके पास ख़्वाब हैं, वह आगे नहीं पढ़ सकते, क्योंकि उसके पास चाँदीके थोड़े-से रुपये नहीं हैं।"

मेरे पिताजी अख़बारके एक दफ़्तरमें काम करने लगे और देव चाचाजी एक स्कूलमें छोटी-सी मास्टरी। पिताजीने एक नहीं, अख़बारोंके कई दफ़्तर बदले, और देव चाचाजीने भी एक नहीं, कई स्कूलोंकी मास्टरी बदली। एक-दूसरेकी फ़ाक़ाकशीमें एक-दूसरेकी रोटी हमेशा साझी होती थी।

मेरे होश सँभालनेसे काफ़ी पहलेकी बात है, जब अमृतसर जलियाँवाले बाग़में गोलियाँ चली थीं और अमन-अमानसे बैठे हुए लोग हाकिम-गोलियोंसे बिंध गये थे। पर यह बात मैं पिताजीसे इतनी बार सुन चुकी हूँ कि मुझे महसूस होने लगा है जैसे मैंने इस घटनाको अपनी आँखोंसे देखा है। देव चाचाजी कई रातें चारपाईपर सो नहीं पाये थे। वे सारी-सारी रात मकानकी ऊपरी छतपर पत्थरकी तरह बैठे रहते। सिर्फ़ बैठे-बैठे उनकी आँखोंसे आँसू बहने लगते। और वे अकेले बैठे-बैठे जाने किसे मुख़ातिब करके कहने लगते थे, "यह क्या है तुम्हारे देशमें? साले ग़ुलाम बने रहेंगे और गोलियाँ खाते रहेंगे……।"

भगतसिंहको जब फाँसी लगी थी, मैं तब बिलकुल छोटी-सी थी। पर यह बात मुझे अच्छी तरह याद है कि देव चाचाजीको उनके सरकारी स्कूलमें-से निकाल दिया गया था। शायद वे स्कूलके कमरेमें विद्यार्थियोंके सामने रो पड़े थे। वे जब घर आये थे तो कह रहे थे, "यह क्या है तुम्हारे देशमें? भगतसिंह मर जाये और हम लोग रो भी नहीं सकते?……"

यह बात किसीको मालूम नहीं थी कि देव चाचाजी और मेरे पिताजी सगे भाई नहीं थे। मेरे पिताजी सिक्ख थे। इसलिए एक बार ऐसा हुआ कि पंजाबके घटिया सिक्ख-अख़बार देव चाचाजीके पीछे पड़ गये कि एक सिक्ख ख़ानदानके नौजवानने अपने बाल कटा दिये थे और वह सिगरेट पीता था। सिक्ख-अख़बारोंने ख़ुद अटकल-पच्चूसे देव चाचाजीका एक सिक्ख नाम घड़ लिया था – 'देविन्द्रसिंह'। देव चाचाजी एक दिन हाथमें एक अख़बार लिये हुए आये। अख़बार उन्होंने चुपचाप मेज़पर रख दिया। सिर्फ़ चाय पीते हुए उन्होंने एक बार सरसरी तौर-पर कहा, "समझमें नहीं आता कि यह तुम्हारे देशमें क्या है? सिगरेट मैं पीता हूँ और इसका धुआँ हमारे मज़हबके फेफड़ोंमें चला जाता है…"

मेरी छोटी-सी उमर थी, जब मेरे पिताजी गुज़र गये। मेरी माँ उनसे भी पहले गुज़र चुकी थी। मैं खोये हुए बछड़ेकी तरह अपनी नानीके पास रहती थी। देव चाचाजी उसी तरह शामको नियमसे आते थे और चले जाते थे। मुझे याद है, मैं कई बार देव चाचाजीकी क़मीज़के बटनोंको बार-बार खोलती और बार-बार बन्द करती हुई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्हें कहा करती थी, "चाचाजी ! अब आप एक चाची ले आयें।" ऐसे जसे मैं एक चाची नहीं, एक खिलौना माँग रही होऊँ। मालूम नहीं, यह मैं अपने अकेलेपनसे घबरा कर कहती थी कि या देव चाचाजी-के अकेलेपनसे। पर वे हमेशा मेरे बालोंकी लटको सँवारते हुए हँस पड़ते थे, "बिटिया ! यह तुम्हारा देश इतना बड़ा है, जाने तुम्हारी चाची कहाँ खो गयी है इसमें ! कहाँसे लाऊँ उसे…?"

देव चाचाजीको अपनी खोयी हुई बीवी तो न मिली, जाने किस जन्मसे खोयी हुई थी, पर अपनी बच्ची ज़रूर मिल गयी। वे रोज़ सवेरे नदीके किनारे सैर करनेके लिए जाया करते थे। एक दिन उन्होंने नदीके किनारे उगे हुए झाड़-झंखाड़ोंमें रोनेकी आवाज़ सुनी। बच्चीको बाँहोंमें उठा लिया। आस-पासके लोगोंसे कई बार पूछा कि अगर कोई उसका वारिस बनना चाहे तो बन सकता था। पर किसीके पास भी उस बच्ची-को देनेके लिए कोई रिश्ता नहीं था। देव चाचाजीको लगा कि वह बच्ची धरतीकी एक चिप्पी थी, एक कासा, एक कशकौल जो इस दुनियासे एक रिश्तेकी माँग कर रही थी। जब आस-पासके सारे लोग इनकार कर गये तो देव चाचाजीने उस चिप्पीमें अपना दिल डाल दिया। मुहब्बतका वह मासूम रिश्ता डाल दिया जो एक बाप और बेटीमें होता है। इसलिए उन्होंने उस बच्ची-का नाम 'कशकौल' रख दिया – कौशी। बच्चीको बाँहोंमें उठाये वे कई दिन कहते रहे, "पता नहीं यह क्या है तुम्हारे देशमें ? कोई माँ-बाप अगर शादी नहीं करते तो इसमें बच्चेका क्या क़सूर है ? नाजायज़ हर-कत तो माँ-बाप करते हैं, पर समझा जाता है बच्चा नाजायज़…"

इन्हीं दिनोंकी बात है जब हिन्दू-मुसलमानोंके फ़साद शुरू हो गये। हमारे देशका कोई गाँव या कोई शहर ऐसा नहीं था जो चीख़ोंसे न भर गया हो। देव चाचा-जीके कानोंमें-से गुज़र कर उनके दिलमें हिन्दू-चीख़ें भी उसी तरह बिंध रही थीं जिस तरह मुसलमान-चीख़ें। न मैं गिनकर बता सकती हूँ, न देव चाचाजी कि उन्होंने कितनी औरतोंको और कितने मर्दोंको अपने हाथोंसे ढँक-ढँककर रखा। वे ज़रूर सोचते होंगे कि अगर कभी उनके दो छोटे-छोटे हाथ वामन-अवतारके क़दमोंकी तरह बन जायें तो वे देशके हज़ारों गाँवोंको और हज़ारों शहरोंको अपने हाथोंसे ढँक दें। किसी-के बदनपर भी किसीका छुरा कभी न छू सके। पर छोटे हाथोंकी मजबूरीके कारण वे हर किसीकी चीख़से तड़प सकते थे, और कुछ नहीं कर सकते थे। तड़प-तड़पकर कहते थे, "यह तुम्हारे मज़हब क्या हैं ? हर मज़हबके होंठोंपर इनसानका ख़ून लगा हुआ है। यह तुम्हारे मन्दिर और ये तुम्हारी मस्जिदें ईंटोंसे नहीं बनी हैं, इनसानोंकी लाशोंसे बनी हैं…"

देशकी स्वतन्त्रताने देव चाचाको कितनी ही देर उर्दू बोलनेका मौक़ा न दिया। हमें ऐसा लगने लगा कि देव चाचाजी उर्दू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोलना भूल गये थे। इन दिनों वे सिर्फ़ दो काम करते थे। रोटी कमानेके लिए सारा दिन सरकारी दफ़्तरमें नौकरी करते थे और रातको अख़बार ले-लेकर देशके सारे नेताओं-की तक़रीरें पढ़ते थे। इन तक़रीरोंकी कतरनोंको जोड़-जोड़कर वे शायद देशके भविष्यके लिए कोई सपना सीते रहते थे। फिर धीरे-धीरे उन्हें महसूस होने लगा कि सपनेका कपड़ा जाने किस तरह इतना घिस चुका था कि एक जगहसे सीते थे तो दूसरी जगहसे फट जाता था। एक दिन उन्होंने बेहद निराश होकर उम्मीदोंके सारे सुई-धागे फेंक दिये। उस दिन वे ज़ोर-ज़ोरसे बोल रहे थे, "इस तुम्हारे देशका क्या होगा? जिन लोगोंने देशके लिए क़ुर्बानियाँ कीं, अब वे उन क़ुर्बानियोंको बाज़ारमें बेच रहे हैं। ग़रीब लोग और ग़रीब होते चले जा रहे हैं। और अमीर लोग और अमीर होते चले जा रहे हैं। क्या करूँ? इस तुम्हारे देशको प्यार करता हूँ। इसके लोगों-को प्यार करता हूँ। इसलिए दुःख होता है...."

देशकी तरक़्क़ीके लिए अख़बारोंमें छपी हुई किसी तक़रीरकी तरह देव चाचाजीकी ज़िन्दगीमें वह मुहब्बत भी आयी जिसका कोई अर्थ नहीं था। एक बड़ी ख़ूबसूरत औरतने अचानक देव चाचाजीसे विवाह कर लिया। यह औरत उनके दफ़्तरमें काम करती थी। मालूम हुआ कि वह एक नाका-मयाब मुहब्बतसे इतनी परेशान थी कि उसे देव चाचाजीकी इनसानी ख़ूबसूरती एक रहमतकी-सी दिखाई देने लगी थी। पर छह महीनोंके छोटेसे अरसेमें उसकी पहली मुहब्बत उसपर फिर ग़ालिब हो गयी। उसका पहला प्रेमी उसके पास लौट आया था और उससे अपनी ख़ताकी माँफ़ी माँग रहा था। उस औरतने जितनी आज़िज़ीसे देव चाचाजीसे तलाक़की माँग की, चाचाजीने उतनी ही हलीमीसे उसकी स्वतन्त्रता उसे दे दी। कुछ घटिया और निकम्मे अख़बारों-को जाने चाचाजीसे क्या हमदर्दी हुई कि उन्होंने एक औरतके तलाक़को सारे समाजके सुधारका विषय बना दिया। यहाँतक कि एक घटिया शायरने एक घटिया नज़्म लिख-कर एक अख़बारमें छपवायी – "भाग गयी, भाग गयी, वह भाग गयी!" चाचाजी अख़बारोंको देखते, हाथोंमें मरोड़ते और रुआँसे होकर कहते, "यह तुम्हारा देश कैसा है? किसी इनसानकी मुहब्बत या शादी उसकी अपनी मुहब्बत या शादी नहीं। किसीसे मिलनेका हक़ भी उसका हक़ नहीं, और किसीसे बिछुड़नेका हक़ भी उसका हक़ नहीं। वह बेचारी औरत कहाँ भाग गयी है, इन लोगोंकी अक़्ल भाग गयी है। इन लोगोंकी इनसानियत भाग गयी है...."

इन दिनों चाचाजी दफ़्तरके कामके अलावा कुछ किताबोंका तर्जुमा करनेका काम भी करते थे। उनकी आमदनी बढ़ गयी थी। उनकी बच्ची दिनोंदिन जवान होती जा रही थी। इसलिए वे अपनी बच्चीके लिए एक छोटा-सा घर बना रहे थे, और उन्हें खयाल आया कि एक ईमानदार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शहरीकी तरह उन्हें अब ज़्यादा टैक्स देना चाहिए था। उन्होंने अपनी आमदनीका ब्योरा लिखकर सरकारको भेज दिया। मुझे अच्छी तरह याद है, जिस दिन वे बड़े उत्साहसे इन्कमटैक्सकी तारीख़ भुगतनेके लिए गये, उस दिन शामको वे अपने कमरेमें अपना सिर पकड़कर बैठे हुए थे : "यह तुम्हारा देश कैसा है? हम लोग शरीफ़ नागरिक हैं या चोर हैं? जो भी हम लोग कमाते हैं उसमेंसे सरकारका हक़ देना हम लोग अपना फ़र्ज़ समझते हैं। हम ख़ुशीसे देते हैं, ईमानदारीसे देते हैं। पर हमारे साथ यह कैसा सलूक है? हमें ऐसी नज़रोंसे देखा जाता है जैसे हम क्या, हमारे बाप-दादा भी चोर हों!..." बात यह हुई थी कि चाचाजी मकान बनवा रहे थे। कई बार एक ही हफ़्तेमें ज़्यादा ख़र्च आ पड़ता था। बैंकमें उनका सेविंग एकाउण्ट था जिसमें-से वे हफ़्तेमें सिर्फ़ पाँच सौ रुपया निकलवा सकते थे। इसलिए उन्होंने एक बैंककी जगह दो बैंकोंमें एकाउण्ट खुलवा लिया था। ज़रूरत पड़ती तो दोनों बैंकोंसे रुपया निकलवा सकते थे। कभी एक बैंकमें रुपया कम होता तो किसी खाली हफ़्तेमें दूसरे बैंकसे निकलवाकर उसमें जमा करा देते, ताकि ज़रूरत पड़नेपर मुश्किल न हो। उन्हें ज़िन्दगीका कोई हेर-फेर नहीं आता था, इसलिए उन्हें कोई बात याद रखकर नहीं करनी पड़ती थी। इन्कमटैक्सके अफ़सरने एक बैंककी पासबुकको देखते हुए कहा कि इसमें बतायी हुई आमदनीसे ज़्यादा रुपया जमा था। यह रुपया चाहे दूसरे बैंकसे निकलवाकर जमा किया गया था, पर चाचाजीको उसके रूखे और शक्की सवालोंसे इतनी घबराहट हुई कि उनकी सारी स्मरणशक्ति जाती रही। उस दिन वे बड़े दुःखी थे। बड़े ही दुःखी थे। उन्हें किसी जाँचका दुःख नहीं था, उन्हें दुःख था कि उनकी नीयतपर शक किया गया था और उनके साथ ग़ैर-इनसानी सलूक किया गया था।

कितनी ही बातें याद आ रही हैं। कौशीके विवाहकी बात भी याद आ रही है। कई शरीफ़ घरानोंमें कौशीके विवाहकी बात चली थी। कौशी बहुत ख़ूबसूरत लड़की है। बड़े प्यारे स्वभावकी और पढ़ी-लिखी। किसीके लिए भी कौशीसे विवाह करना एक फख़रकी बात हो सकती थी। पर अकसर ऐसा हुआ कि जो भी कौशीके रूप-पर या उसके गुणोंपर रीझ जाता उसे जब कौशीके जन्मकी बात मालूम होती, वह विवाहसे इस तरह इनकार कर जाता जैसे उसकी शराफ़तपर कौशीके साथ विवाह करनेसे एक दाग़ पड़ जायेगा! "यह कैसे शरीफ़ लोग हैं तुम्हारे देशमें? इनके पास आँखें तो बहुत बड़ी-बड़ी हैं, पर उनमें नज़र बिलकुल नहीं है..." देव चाचाजी उन दिनों अकसर बैठे-बैठे बोल पड़ते थे।

अब जिससे कौशीका विवाह हुआ है इसने जब चाचाजीके सामने कौशीके साथ विवाहका प्रस्ताव किया था तो चाचाजी इतने दुःखी हुए थे कि उसे देखते ही बोल पड़े थे,

[शेष पृष्ठ ७३ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रंग-भेद

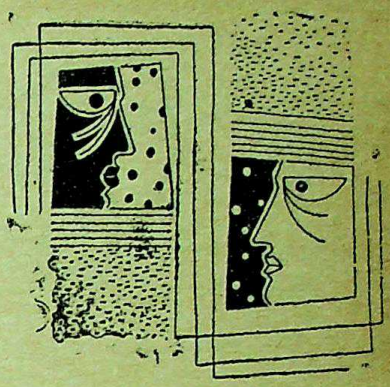

अशोक महाजन

पावेलकी बहनका देश

पावेलने गुस्सेसे पूछा : 'गोरे लोग हमपर जुल्म क्यों ढाते हैं ?' उत्तर था गोरे लेफ़्टिनेण्ट थामस गिलिगनके रिवाल्वरसे निकली तीन गोलियाँ। किताबें ख़ूनसे तर-बतर हो गयीं। कुछ क्षण और पावेल शहीद हो गया। क़िस्सा उसी पावेलकी बहनके काले देशका है –

पढ़ा होगा आपने : पेरिसके पैलेस-द-शेलियोमें संयुक्त राष्ट्र संघकी महासभा-द्वारा १० दिसम्बर सन् १९४८ को स्वीकृत 'मानवीय अधिकारोंके अन्तर्राष्ट्रीय घोषणापत्र' में कहा गया है – "स्वतन्त्रता, न्याय और शान्तिकी स्थापना दुनियामें तभी हो सकती है, जब हम यह स्वीकार कर लें कि प्रत्येक मनुष्यकी अपनी प्रतिष्ठा है, हर व्यक्ति पूर्णरूपेण स्वतन्त्र है और उसके अपने अधिकार हैं।...सभी मनुष्य समान हैं। मानव जातिको चमड़ेके रंगपर या जातिके आधारपर अलग-अलग टुकड़ोंमें बाँटा नहीं जा सकता। रंगभेद-सम्बन्धी समस्त विचार पुराने हो गये हैं।" परन्तु खेदकी बात है कि विश्वके अनेक देशोंमें आज भी गोरे-कालेकी विद्वेषपूर्ण भावना व्याप्त है। कौन नहीं जानता कि दक्षिण अफ़्रीकामें जितने गोरे हैं उससे तिगुने मूल अफ़्रीका-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

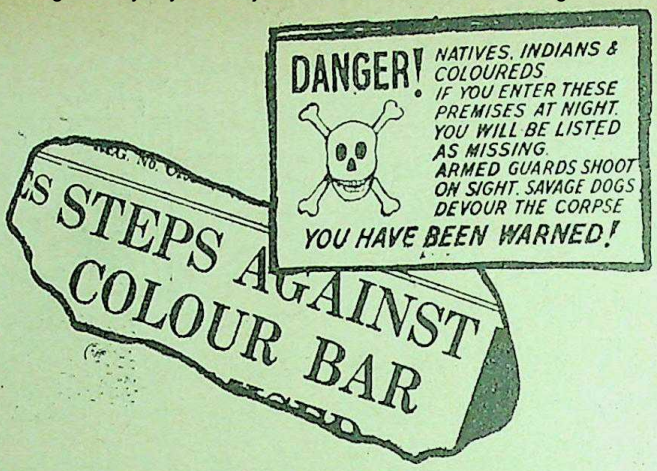

एक समाचार : रंगभेद मिटानेके लिए प्रयत्न ।
काले लोगोंके लिए एक सूचना : ख़तरा । अगर इस सीमामें
पाँव रखा तो गोली मार दी जायेगी ।

निवासी नीग्रो लोग हैं। समयकी कितनी बड़ी बिडम्बना – देश कालोंका, राज गोरोंका। बहुमतपर अल्पमतके शासनका अर्थ है अन्धेर – सरासर अन्धेर, जिसे कोई भी बर्दाश्त नहीं कर सकता।

दक्षिण अफ्रीकाकी सड़कोंपर हज़ारों ऐसे सूचना-बोर्ड लगे मिलेंगे जिनपर यह चेतावनी अंकित होगी – "अगर इस सीमामें पाँव रखा तो गोली मार दी जायेगी और शव जंगली कुत्तोंको खिला दिया जायेगा।" अकसर देखा गया है कि यदि कोई अ-गोरा, भारतीय या अफ्रीकी पब्लिक-पार्कमें पड़ी ऐसी बेंचपर बैठ जाये, जो गोरोंके लिए रखी है, तो उसपर १५०० रुपये तकका जुर्माना या तीन सालकी क़ैद या दस कोड़े लगाये जा सकते हैं। दक्षिण अफ्रीकामें बिना परमिटके किसी भी गोरे और काले व्यक्तिका एक साथ बैठकर चाय पीना जुर्म है। हर पुलिसमैनको अधिकार है कि हर अफ्रीकीसे, जिसकी उम्र सोलह वर्ष या इससे अधिक है, उसका प्रमाण-पत्र देखनेको माँगे। प्रमाण-पत्रके अभावमें एक मास तककी सज़ा दी जा सकती है। कितना बड़ा दुर्भाग्य है कि इन काले क़ानूनोंके कारण ये अफ्रीकी अपनी धरतीपर ही ग़ुलाम हो गये हैं। वे अपने देशकी सड़कोंपर स्वच्छन्द रूपसे घूम नहीं सकते, चुनाव नहीं लड़ सकते, गिरजाघरोंमें जाकर प्रार्थना नहीं कर सकते।

यही दशा अफ्रीकामें रहनेवाले मिश्रित वर्णके लोगोंकी भी है। हाल ही की घटना है : एक दिन एक नागरिकको केपटाउनके पापुलेशन-आँफ़िसमें पूछताछके लिए बुलाया गया। ज्यों ही वह वहाँ पहुँचा, उससे कहा गया कि दफ़्तरको खबर मिली है कि उसकी वल्दियत मिश्रित है, शुद्ध नहीं। सुनकर उसके नीचेकी ज़मीन खिसक गयी। वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़िन्दगी-भर अपनेको शुद्ध-वर्णीय मानता रहा, शिक्षा-संस्कार भी वैसे ही पड़े, शादी-ब्याह भी उसी प्रकार हुआ और बीस वर्षकी नौकरीके बाद अब अचानक उसको यह बताया गया कि वह मिश्रित वर्णका है। नौकरीसे उसको अलग कर दिया। उसकी गोरी पत्नीने तो अपना सिर ही पीट लिया। "तुमने मेरे साथ दग़ा किया!" पत्नीने कई बार कहा और फिर तलाक़के लिए अदालतमें अरज़ी दे दी। परिणामस्वरूप उसको अपनी पत्नीसे अलग हो जाना पड़ा। क्षुब्ध होकर उसने 'ज़हर' खा लिया। दुर्भाग्यसे वह मरा नहीं, बीमार हो गया। और तबसे वह उपेक्षित जीवन जिये जा रहा है।

ऐसा ही एक और उदाहरण है। एक शत-प्रतिशत गोरी औरतने फ़ैशनके कारण अपने रंगको वैज्ञानिक विधिसे कुछ तामिया कर लिया। एक दिन अचानक उसे मिश्रित वर्णकी समझकर युरॅपियनोंके सिनेमा-हाउस-में गिरफ़्तार कर लिया गया। उसके पतिने अदालतमें जाकर उसकी शुद्धताके पक्षमें लाख कहा परन्तु अधिकारियोंने एक भी न सुनी।

इंग्लैण्डमें रहनेवाले अश्वेतोंका भी बड़ा विचित्र हाल है। अभी हालमें एक भारतीय विद्वान्को लन्दन जाना पड़ा। वहाँ पहुँचकर निवास और रोज़ीकी व्यवस्था करनेके लिए उन हज़रतको ख़ूब भटकना पड़ा, कई मकान-मालकिनोंके पास वह गये परन्तु सबने उनके काले होनेके कारण मुँह बिचकाकर 'सॉरी' कहा और उनको सड़कका रास्ता दिखा दिया।

सबसे ज़्यादा दुःखकी बात तो यह है कि यहाँ अश्वेतोंके साधारणसे साधारण अपराधों और दोषोंको इतना बढ़ा-चढ़ाकर विज्ञापित किया जाता है जिससे गोरोंमें कालोंके प्रति उत्तेजना पैदा हो। उदाहरणके लिए हम १४ सितम्बर सन् ६० के 'न्यू स्टेट्समैन' में प्रकाशित जे० पी० डब्ल्यू० मेलाल्यूके एक लेखका यह अंश प्रस्तुत करते हैं – "एक दिन यह अफ़वाह फैली कि वेस्ट-इण्डियनोंने उल्वर्थके सब बड़े चाक़ू ख़रीद लिये हैं और शनिवारको वे बाज़ारपर धावा करेंगे। पर एक शनिवार बीता, दूसरा बीता, पर कुछ न हुआ। तब कुछ गोरे कहने लगे कि ये निगर (काले आदमी) अगले हफ़्तेमें ज़रूर बाज़ारपर हमला करेंगे।" पर यह हमला आज तक नहीं हुआ।

जे० पी० डब्ल्यू० मेलाल्यूने एक और घटनाका उल्लेख किया है – "मुझसे कहा गया कि एक बेचारी गोरी बुढ़िया तो अपने ऊपरकी मंज़िलमें रहनेवाले एक वेस्ट-इण्डियन परिवार-द्वारा तेज़ीसे रेडियो और ग्रामोफ़ोन बजाये जानेके शोरके कारण पागल-सी हो गयी है। इस बातपर सारे पड़ोसियों-ने वेस्ट-इण्डियनोंके प्रति बड़ा क्षोभ प्रकट किया। लेकिन जब मैं पता लगाकर इस बातकी जाँचके लिए वहाँ पहुँचा तो देखा, वहाँ कोई गोरी बुढ़िया नहीं रहती। एक प्रौढ़ व्यक्ति वहाँ ज़रूर था पर वह इतना बहरा था कि मुझे अपना प्रश्न कई बार ज़ोर-ज़ोरसे दोहराना पड़ा, तब कहीं वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुन पाया।"

कितनी हास्यास्पद लगती हैं ये बातें; परन्तु हैं ये शत-प्रतिशत शरारत और गुण्डेपनसे भरी हुईं। ब्रिटेनके बड़ेसे बड़े गोरे अफ़सरसे लेकर अदनासे अदना टामी तकका जो व्यवहार अश्वेतोंके प्रति रहा है वह इस बातका अकाट्य प्रमाण है कि वर्ण-भेद या वर्ण-द्वेष गोरोंके रुखका एक स्थायी अंग-सा बन गया है।

अमेरिकाके गोरे लोगों-द्वारा अकसर यह तर्क दिया जाता है कि नीग्रो लोग बड़े असभ्य और हिंसक प्रवृत्तिके होते हैं, परन्तु यह पूर्णतया ग़लत है। अहिंसाप्रिय नेता डॉक्टर मार्टिन लूथर किंगसे कौन नहीं परिचित है? परन्तु श्री किंगके अहिंसात्मक प्रयासोंको पसन्द न करनेवाले उनपर सदा नज़र लगाये रहते हैं। उनके घरमें तीन बार बम फट चुके हैं, उनपर चार बार असफल हमले हुए हैं और वह पन्द्रह बार खामखाह, बिना अपराधके जेलमें ठूँसे गये हैं। सन् १९६४ के जनवरीसे लेकर अगस्त मास तक हुए जुलूसों और प्रदर्शनोंमें गोरी पुलिस-ने कई हज़ार राउण्ड गोलियाँ चलायीं जिससे १३ नीग्रोकी हत्या हुई; लगभग ८५० बुरी तरह घायल हुए और ४५०० से अधिक गिरफ़्तार हुए।

जब कभी अमेरिकाके उदारवादी या नीग्रो-नेता प्रदर्शनकारियोंकी रक्षाकी माँग करते हैं तो राज्य-सरकारोंके अधिकारी अपनी असमर्थता प्रकट करते हैं। एटार्नी जनरल राबर्ट कैनेडी और 'फेडरल ब्यूरो' के इन्वेस्टिगेशन-डाइरेक्टर श्री एडगर हूवरने स्वीकार किया है – "अमेरिकी संविधानकी धारा ४ के भाग ४ और अमेरिकी क़ानून संहिताके शीर्षक १० और १८ के अधीन कई भागोंके अनुसार राज्य-सरकारें क़ानूनी शक्तियोंके अभावमें, प्रदर्शनकारियोंकी रक्षा करनेमें असमर्थ हैं।"

स्पष्टतया अमेरिकाके नीग्रो लोगोंका जीवन बड़ा असुरक्षित है।

हार्लेमकी घटना है – एक नीग्रो विधवा-का होनहार लड़का स्कूल जा रहा था। जेम्स पावेल उसका नाम था। जब वह स्कूलके पास पहुँचा तो वह पेट्रिक लिच नामक एक गोरेको देखकर न जाने क्यों हँस पड़ा। लिचका ख़ून तेज़ाबकी तरह खौल उठा। मुक्का दिखाते हुए उसने कहा, "गन्दे नीग्रो, मैं तेरी काली चमड़ी उधेड़कर रख दूँगा।" सुनकर पावेलके नीग्रो दोस्त चिढ़ाने-की मुद्रासे ठहाका मार हँस पड़े। पावेल होंठोंमें ही बुदबुदाया – "ओ मसीहा, गोरे लोग हमपर ज़ुल्म क्यों ढाते हैं, वे हम लोगों-से नफ़रत क्यों करते हैं?..." इतनेमें ही गोरे लेफ़्टिनेण्ट थामस गिलिगनकी रिवाल्वर-से निकली तीन गोलियोंसे पावेल छटपटा उठा। उसकी किताबें ख़ूनसे तर-बतर हो गयीं और वह कराहते-कराहते शहीद हो गया।

क्षण-भरमें वहाँ सैकड़ों नीग्रो छात्र इकट्ठा हो गये और उत्तेजनामें नारे लगाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगे। पूरे दो घण्टे बाद पुलिस शान्तिकी स्थापना कर सकी। परन्तु शान्ति-स्थापनाके बाद भी एक नीग्रो-लड़कीका क्रन्दन सुनाई पड़ता ही रहा – "ऐ गोरी चमड़ीवाले लोगो! मैं पावेलकी बहन हूँ, मेरा भी क़त्ल करो!"

कितना मर्मस्पर्शी है उस नीग्रो-लड़की-का यह आवाहन! स्पष्टतया यदि गोरोंने अश्वेतोंपर अत्याचार करने बन्द न किये तो हालकी गतिविधियोंको देखकर यह स्पष्ट हो गया है कि वह दिन अब दूर नहीं जब विद्रोहका ज्वालामुखी विस्फोट करेगा और रंग-भेद, जाति-भेदको जलाकर राख कर देगा। ■ ■

[पृष्ठ ६८ का शेष : परदेसी]

"क्यों नौजवान! अपनी शराफ़तका सौदा करने आये हो?" यह बात चाचाजीने इसलिए कही थी कि उन दिनों कौशीको विरासतमें मिलनेवाला चाचाजीका बड़ा सुन्दर घर देखकर कई लोगोंका मन ललचाया हुआ था।

"शराफ़त बेचने नहीं आया, शराफ़त-की क़ीमत देकर शराफ़त ख़रीदनेके लिए आया हूँ।" उसने जब चाचाजीको बड़ी हलीमी और आदरसे जवाब दिया तो चाचाजी एकदम उसके साथ पंजाबीमें बातें करने लगे।

इस समय कौशी मेरे पास बैठी हुई मेरी तरफ़ देख रही है। वही सवाल, जो कुछ देर पहले उसके होंठोंपर आकर रुक गया था, वह मुझसे पूछ रही है, "पर दीदी, देव पिताजी रहनेवाले तो इसी देशके थे। यह उनका अपना देश था। फिर वे हमेशा यह क्यों कहते थे कि 'यह तुम्हारा देश....'?"

मुझे कौशीके इस सवालपर हँसी आ गयी है। कह रही हूँ, "हाँ कौशी, यह देश उनका अपना देश था!" पर साथ ही मेरी हँसीकी आँखोंमें आँसू आ गये हैं और मैं समझ नहीं पा रही हूँ कि कौशीको कैसे बताऊँ कि इस देशका नाम चाहे भारत हो, चाहे रूस और चाहे अमेरिका – यह देश देव चाचाजीका देश नहीं था। कोई भी देश उनका देश नहीं था। क्योंकि हमारे किसी भी देशका ढाँचा अभीतक ऐसा नहीं बना जो इनसानको जीनेका हक़ दे सके और जीनेका फ़ख़र दे सके। मैं कौशीको कैसे बताऊँ कि देव चाचाजी चाहे किसी भी देशमें जन्म लेते और किसी भी देशमें रहते, उन्हें हर देशमें परदेसी ही होना था।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

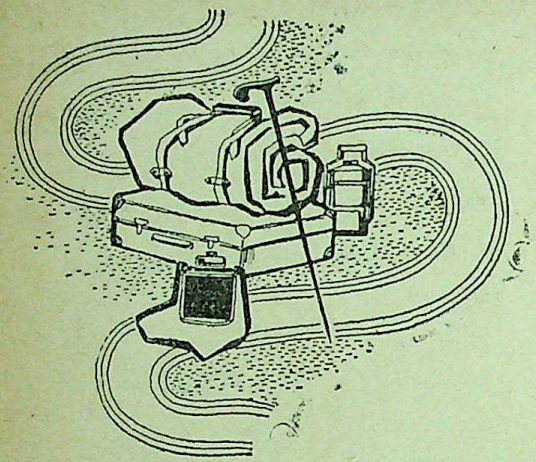

कौशल्या अश्क

औसान न ख़ता होने दो

•

एक था हातिम–नेकदिल और हर आदमीका मददगार। उसकी मुलाक़ात हुई यमनके जंगलमें, शिकार खेलते मुनीरशामीसे। मुनीरशामी, जो ख्वारेज़्मका शहज़ादा था और दीवाना बना घूम रहा था। कारण थी हुस्नबानो। तब हातिमने हुस्नबानोके सवालोंके जवाब ढूँढ़नेके लिए 'सात सफ़र' किये थे मुनीरकी खातिर। पहला सवाल था – उस आदमी-का पता बता जो कहता है 'एक बार देखा है दुबारा देखनेकी हविस है।'...इस क़िस्सेमें-से हमने केवल शीर्षक लिया है। पहला सफ़र सामने है।

०

कैसी भी बड़ी मुसीबत आ पड़े, कितनी भी उलझी समस्या सामने आ खड़ी हो, अश्कजीका सीधा-सादा नारा होता है – 'औसान न खता होने दो।' और ये दसियों क़िस्से सुनाकर अपना यह नारा हमपर लादते रहते हैं और समझाते हैं कि औसान बहाल रखके किस तरह कमज़ोरने शक्तिशालीको पछाड़ दिया था, किस तरह आदमी औसान बहाल रखे तो बड़ीसे बड़ी मुसीबत दुम दबाकर भाग जाती है; कष्ट-साध्य और असम्भव लगनेवाले काम सरल होकर सम्पन्न हो जाते हैं; दुर्घटनाएँ होते-होते बच जाती हैं – यानी क्या-क्या नहीं हो जाता ? और ये बचपनमें सुना या पढ़ा क़िस्सा दोहराना नहीं भूलते कि किस प्रकार शिमलाको जानेवाली पैसेंजर गाड़ीके ड्राइवरने औसान क़ायम रखके एक बड़ी भारी दुर्घटना-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को घटनेसे बचा लिया। रहता उसने बचे रखो, फिर काममें समय नहीं मिलेगा सामने निगाह डाली थी तो उसने देखा था और चलते समय भगदड़ मचेगी।" – और कि ऊपर चार-पाँच मोड़ आगे मालगाड़ीके मैं कह देती हूँ – 'हाँ, कर लूँगी।" अब दो डिब्बे बिना इंजनके पूरी तेज़ीसे रिढ़े आ बताइए, भला छह आठ दिन पहले कोई रहे थे। पसेंजर गाड़ीका मामला, ड्राइवर बिस्तर बाँधकर रखेगा ? फिर ज़रूरी कपड़े घबड़ा जाता तो जाने कितनी जानें चली धोबीसे मँगाने होते हैं, इस्तरी कराने होते जातीं, लेकिन ड्राइवरने औसान नहीं ख़ता हैं, पर इन्हें कौन समझाये ? समझाया जाये होने दिये। उसने तत्काल गाड़ी रोककर तो कहेंगे कि इतने दिन इन्हीं कपड़ोंसे काम इंजनको गाड़ीसे अलग किया और उसे पूरी चलायेंगे और बिस्तर तुम दूसरे निकाल लो। रफ़्तारपर छोड़कर सफ़ाईसे कूद गया। कुछ

तैयारी कर लेनेकी बात ये रोज़ आते-ही क्षणों बाद बड़े ज़ोरका धमाका हुआ जाते दोहरा देंगे और फिर काममें जा और मालगाड़ीके डिब्बे और इंजन टकराकर लगेंगे। मैं धोबीको कहला देती हूँ कि अमुक चूर-चूर हो गये···

दिन कपड़े तैयार रखे, मैं मँगा लूँगी या वह दे जाये। साथ ले जानेवाले कपड़े निकालती हूँ, सूई-धागा लेकर बैठती हूँ कि कोई बटन टूटा हो तो टाँक दूँ कि ये उधर आ निकलते हैं – "अब बटन टाँकने बैठी हो, इस तरह हो गयी तैयारी !" ये बड़बड़ाते हैं।

अश्कजी अपना यह नारा हमींपर लादते हों और स्वयं उसपर न चलते हों, ऐसी बात नहीं। बड़ीसे बड़ी मुसीबतमें मैंने इन्हें ठण्डे दिमाग़से सोचते और बड़ेसे बड़े झगड़ेमें औसान बहाल रखकर प्रतिपक्षी-का हर वार ख़ाली करते देखा है, लेकिन एक स्थिति ऐसी भी है, जब अपना यह नारा ये भूल ही नहीं जाते, इनके औसान भी बेतरह ख़ता हो जाते हैं। ऐसा तब होता है जब इन्हें कहीं यात्रा करनी होती है।

■

इन्हें कहीं जाना होता है तो प्रोग्राम निश्चित हो जानेपर लगता है कि ये निश्चिन्त हो गये हैं। लेकिन इनकी असली चिन्ता और घबराहट तभी शुरू होती है। कई दिन पहलेसे ही शोर मचाना शुरू कर देते हैं – "अब तुम सामान ठीक कर लो, ऐन वक़्तपर चीज़ें भूल जाती हैं। बिस्तर भी

"आप देख लीजिए, आपके कौन-कौनसे कपड़े साथ ले जाने हैं तो मैं बक्समें रख दूँ।" मैं कहती हूँ।

इन्हें और भी घबराहट होने लगती है – "तुम सब सामान निकालकर एक जगह रख लो, फिर मैं देख लूँगा।" और जैसे आये थे, उसी तरह अपने कमरेकी ओर भाग जाते हैं।

इसी बीच कोई आ जाता है। ये घण्टों बातें करते रहते हैं, बल्कि कभी मुझे भी उधर बुला लेते हैं कि 'भई, अमुकजी आये हैं, चाय-वाय नहीं पिलाओगी ?' चाय पी जाती है। मित्र चले जाते हैं तो कोई काम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ पड़ता है, ये उसमें लग जाते हैं या कहीं बाहर चले जाते हैं। आकर कपड़े देखते हैं तो फिर झल्लाते हैं कि अभीतक कपड़े रखे नहीं।···"आपने देखे ही नहीं।" मैं कहती हूँ।···"मैं तो थक गया हूँ। और फिर मुझे क्या देखना है? जो ले जाना है जल्दी पैक करो और छुट्टी हो!"···और ये मेज़पर निढाल जा बैठते हैं!···दो-चार दिन चीज़ें फैली रहती हैं, लेकिन कभी ये मिलनेवालोंसे उलझे रहते हैं, कभी काममें। और कुछ नहीं तो फ़ोन ही करते रहेंगे और फ़ोनपर ज़रूरी बात ही नहीं करते, दुनिया-जहानकी बातें डिसकस करते हैं, पत्र सुनते और सुनाते हैं और कहानी तक सुना डालते हैं। मैं टोकती हूँ तो चिढ़ जाते हैं – "तुम मुझे बात भी नहीं करने देतीं!" ये अपने इसी तरहके कार्यक्रममें लगे रहते हैं, लेकिन तैयारी कर लेनेकी बात कहना भी नहीं भूलते।

जिस दिन चलना होता है, उस दिन या उससे एक दिन पहले धोबीसे कपड़े मँगाकर, बाज़ारसे ज़रूरी सामान खरीदकर मैं सचमुच तैयारी शुरू कर देती हूँ। मैं सामान पैक कर रही होती हूँ कि ये उधर आ निकलते हैं – "अभीतक तैयारी नहीं हुई, मैं इतने दिनोंसे कह रहा था। तुम्हारी आदत ऐन वक़्तपर सामान बाँधकर भागनेकी है और मेरा जी घबराने लगता है।···" मैं कहती हूँ – "शामकी गाड़ीसे जाना है, अभी सारा दिन पड़ा है, आप क्यों परेशान हो रहे हैं?"····इनकी घबराहट फिर भी कम नहीं होती। अगर कभी मैं कोई कपड़ा सिलनेको दे दूँ कि सिल जायेगा तो साथ ले जायेंगे और मैं किसीको उसे लाने भेजूँ या दर्ज़ी उसी दिन आ जाये तो इनकी घबराहट और बेचैनी कई गुना बढ़ जाती है – "पहले जाने तुम कहाँ सोयी रहती हो, ऐन चलते वक़्त तुम्हें सब काम याद आते हैं, जल्दीमें भला कोई काम ठीक हो भी सकता है? जल्दीका काम शैतानका होता है···" और दर्ज़ीके सामने ही डाँटना शुरू कर देते हैं। मुझे बड़ा बुरा लगता है कि बेचारा समयसे कपड़े सिल लाया है और ये झल्लाये जा रहे हैं।

दर्ज़ीके आनेसे यात्रामें बाधा पड़ेगी, सामान पैक नहीं होगा, टिकट खो जायेंगे, घड़ी तेज़ चलने लगेगी, समयपर रिक्शा नहीं मिलेगा, गाड़ी नहीं पकड़ पायेंगे – कुछ ऐसी ही आशंका और बेचैनी इन्हें घेरे रहती है। और जैसे सफ़रकी बात भूलनेको ये कहीं बाहर चले जायेंगे या चिट्ठियाँ निबटाने लगेंगे या काई दूसरा काम करने लगेंगे, लेकिन वहाँ भी इन्हें चैन नहीं। थोड़ी देर बाद फिर आ जायेंगे, कहेंगे – "गाड़ीका समय तो तुमने पूछ लिया है न?"

"हाँ-हाँ, पूछ लिया है।" मैं इन्हें आश्वस्त करना चाहती हूँ। ये छोटे बेटेको आवाज़ देंगे – "गुड्डे, ओ गुड्डे!" वह भागा-भागा आयेगा कि जाने क्या हो गया जो पापाजी इतना चिल्ला रहे हैं – "क्या टाइम है तुम्हारी घड़ीमें?" ये डाँट कर पूछेंगे। वह बतायेगा कि दो बजे हैं या ढाईका वक़्त है तो उससे कहेंगे कि फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी तुम फ़ोन करके ठीक वक़्त पूछ लो। वह लाख कहेगा कि आज सुबह ही मैंने वक़्त मिलाया है, ये नहीं मानेंगे – "तुम स्टेशनकी घड़ीसे भी मिला लो।" फिर बहूसे पूछेंगे कि उमेश कितने बजे दफ़्तरसे आनेको कह गया था ? वह कहेगी कि चार बजे तो, कहेंगे, "तुम उसे फ़ोन करो, जल्दी आ जाये !"

घर-भरको चार घण्टे पहलेसे इकट्ठा कर लेंगे। जल्दी मचाकर मुझे भी घबरा देंगे और दो घण्टे पहलेसे ही स्टेशन चलना चाहेंगे। मैं खीज उठती हूँ कि इतनी देर पहले जाकर क्या होगा ?

'वहीं बैठकर बातें करेंगे।' (मानो हमारे पहले जानेसे गाड़ी जल्दी आ जायेगी।)

अपनी घबराहटमें ये इतनी अफ़रा-तफ़री मचाते हैं कि चलते-चलते मुझे प्रायः देर हो जाती है – ये शोर मचाने लगते हैं, मैं जल्दी करती हूँ, पर ये 'सामान बाहर रख दो।'···'रिक्शा जल्दी लाओ।'··· 'पानीकी सुराही न भूल जाना।'···· 'बिस्कुट-का डिब्बा रख देना, मुझे भूख लग आयेगी !'···'टिकट सँभालकर रख लेना'··· आदि-आदि चिल्लाते हुए शोर मचाते जायेंगे। मार-धाड़, उठा-पटकसे ये और भी घबरा देते हैं और उस घबराहटमें और भी देर हो जाती है।

पहले चले जायें तो ये वेटिंग रूममें नहीं, प्लेटफ़ॉर्मपर ही बैठना पसन्द करते हैं। उमेशको आदेश देंगे, गुड्डेको समझायेंगे, बातें करेंगे, चाय पियेंगे। (अच्छेसे अच्छे रिफ़्रेशमेण्ट-रूमसे चाय मँगायेंगे, पर पियेंगे प्लेटफ़ॉर्मपर बैठकर ही।) लगता है ये इधर-उधर हुए नहीं कि गाड़ी आकर भागी नहीं। प्लेटफ़ॉर्मकी भीड़-भाड़, खोंचेवालोंके शोर और इधर-उधरकी बातोंमें ये अपनी घबराहटको भूल जाना चाहते हैं। इनके मित्र-परिचित वहाँ हों तो इन्हें कुछ राहत मिलती है, पर भीतरसे फिर भी घबराहट बनी रहती है। आख़िरकार गाड़ी आ जाती है। सामान रखवाकर अपनी लिस्टसे मिलाते हैं, (और लिस्टमें सिरकी टोपीसे लेकर छड़ी या छाता तक नोट होता है।) फिर बिस्तर बिछवाकर ये सीटपर जा बैठते हैं और गाड़ीके चलते ही बिस्तरपर ऐसे थककर लेट जाते हैं, जैसे बहुत लम्बा सफ़र तय करके आये हों।

■

यह हाल तो साधारण यात्राओंका है जब दस-बीस दिनके लिए दिल्ली, लखनऊ, कलकत्ता या बम्बई जाना हो, लेकिन विशिष्ट यात्राएँ भी होती हैं, जैसे पहाड़ आदिपर तीन-चार महीनेके लिए जाना और रास्तेमें लखनऊ या फिर उधर दिल्ली-जालन्धर या दिल्ली चण्डीगढ़ रुकते हुए जाना। तब उसी अनुपातमें ये घबराते हैं, इनके औसान खता होते हैं और ये मेरे औसान खता करनेपर तुल जाते हैं।

सामान प्रायः ज़्यादा हो जाता है। मौसमके अनुसार तो कपड़े होने ही चाहिए, यदि वर्षा हो गयी, हवामें खुनकी आ गयी, रातमें ज़्यादा गरमी हो गयी या फिर ठण्डी हवा चलने लगी – बाहरका तापमान और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर तबीयतका तापमान – इस सबकी व्यवस्था होनी ही चाहिए। सर्दी हो या गरमी – दोहरे-दोहरे, बल्कि तिहरे-तिहरे कपड़े और बिस्तर! पहाड़पर इतनी देर रहना हो तो लिखना-पढ़ना भी होता है। फिर जाने किस-किस चीज़की ज़रूरत पड़ जाये। पुस्तकें, फ़ाइलें, लिखनेकी मेज़का पूरा सामान, ठण्डे-गरम कपड़ोंके बक्स, गरमी-सर्दीके बिस्तर, अटैचीकेस, खाने-पीने और दवाइयों-की टोकरियाँ, सुराही या जग, छाता, छड़ी, रेन-कोट···छोटा मोटा घर ही उठाकर ले जाना पड़ता है और इस सबकी तैयारीमें समय भी उतना ही लगता है। यह सारा समय घबराहट और बेचैनीमें बीतता है।

अगर सच पूछिए तो सर्दियोंमें ही ये पूछने लगते हैं – "इस बार मुझे किस पहाड़पर भेजोगी?" मैं कहती हूँ – "जहाँ आप जाना चाहें।" और हम नैनीताल, मसूरी, रानीखेतसे शुरू करके हलहौज़ी, शिमला, कश्मीर और ऊटी तक घूम लेते हैं, लेकिन ये निश्चय नहीं कर पाते। 'यह भी अच्छा, वह भी ठीक'में बात फिर वहीं आ जाती है। 'तुम तय कर दो!' ये कहते हैं। मैं जानती हूँ, जब खुद तय करके जाते हैं और वहाँ किसी तरहकी असुविधा होती है तो शिकायत मुझीको सुननी पड़ती है कि तुमने रोका क्यों नहीं। अब अगर मैं तय कर दूँ तो जाने शिकायतोंकी ही पुस्तक लिखें वहाँ बैठकर। मैं टाल जाती हूँ कि अच्छा, सोच कर बताऊँगी। लेकिन हर सातवें-आठवें यह चर्चा चलती रहती है और सर्दियोंके महीने योजनाएँ बनाते-बनाते बीत जाते हैं।

अब? अब तो कुछ तय करना ही होगा। और मैं गम्भीरतासे सोचने लगती हूँ। हालाँ कि मैं जानती हूँ, मेरे सोचने और तय करनेसे कुछ नहीं होगा।····एक बार शिमला जानेका प्रोग्राम बनाया था, वहाँ एक मित्रको लिख भी दिया कि हमारे रहने-की व्यवस्था कर दें। प्रोग्राम पक्का करके तार भी भेज दिया कि अमुक दिन पहुँचेंगे, लेकिन दो दिन पहले प्रोग्राम बदल गया। शिमला दूसरा तार भेजा कि हम नहीं आ रहे···और हम कश्मीर पहुँच गये। लोगोंका प्रोग्राम नहीं बदलता, न बदले, लेकिन कलाकारको नैनीतालसे डलहौज़ी, मसूरीसे कसौली, शिमलासे कश्मीर ज़्यादा अच्छा लगे और वह भी चलनेसे दो दिन पहले तो इसमें उसका क्या कसूर? कलाकार बेचारे-की यही तो मुसीबत है कि वह प्रोग्राम बनाकर बँध नहीं सकता। बीवीके साथ बँध जाये, यही क्या कम है।···

बहरहाल कहीं भी जायें, तैयारी तो करनी ही होती है। मैं सामान निकालती, खरीदती, बाँधती रहती हूँ और बदलते प्रोग्रामके अनुसार उसमें तबतक परिवर्तन होता रहता है, जबतक कि गाड़ीमें न बैठ जायें। इस बीच ये खोये-खोये-से, परेशान और बेचैन डोलते रहते हैं जैसे कोई बड़ी भारी मुसीबत आ पड़ी हो और उसका सामना किये बिना चारा न हो। बात-बात पर चिढ़ जाते हैं, अकारण झीखते हैं, बच्चों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को डाँटते हैं, मुझसे उलझते हैं और अगली-पिछली शिकायतोंका पोथा ले बैठते हैं। सामानका काफ़िला तैयार हो जाता है और तब ये और भी घबराते हैं कि अब तो यह सब लेकर सफ़र करना ही पड़ेगा – 'तुम मुझे छोड़ आओ और वहाँ सब ठीक-ठाक कर आओ।' तान इस बातपर टूटती है।

कोई पुस्तक छप रही हो या दफ़्तरमें काम ज़्यादा हो तो मेरा जाना मुश्किल होता है। तब ये मुझे समझाते हैं कि तीन-चार दिनमें लौट आना, फिर यहाँका काम निबटाकर कुछ दिनके लिए चली आना और मुझे ले आना। यानी सामान पैक करके इन्हें कोई पहुँचा दे, वहाँ सब व्यवस्थित कर दे और फिर वहाँसे पैक करके इन्हें ले आये। एक तो सफ़र, उसपर इतना सामान! सामान ही पहले पहुँच जाये तो बेचैनी कुछ कम हो।···और बेचैनी कम करनेके लिए गत वर्ष इन्होंने सामान पहले ही भेज दिया। यह दूसरी बात है कि बेचैनी और परेशानी कई गुना बढ़ गयी।

■

पिछले ही वर्षकी बात है। इनके पहाड़ जानेका प्रोग्राम अभी निश्चित न हुआ था। घर बैठे हम देशका तूल-अर्ज़ नापते हुए विभिन्न पहाड़ोंकी सैर कर रहे थे कि एक स्नेही मिलने आ पहुँचे। उन्होंने बताया कि चम्बासे चार-पाँच मील परे राजपुरामें फलों-के बगीचे हैं, वहीं वे रहते हैं। निकट ही रावी नदी बहती है – मौसम बड़ा खुशगवार होता है और बड़े आग्रहसे उन्होंने वहाँ आने-का निमन्त्रण दिया। बस, इन्होंने निश्चय कर लिया कि इस बार राजपुरामें ही डेरे डाले जायें और मन-ही-मन फलोंके बगीचों-का आनन्द लेते और रावी-तटकी सैर करते अपना सामान उनके साथ ही भेज दिया।··· सामान उनके साथ भेज दिया और स्वयं कसौली पहुँच गये। फिर किन परिस्थितियों-में, कितनी मंज़िलें तय करके सामान इन्हें मिला और कितनी परेशानी हुई, यह एक लम्बी कहानी है।

■

सफ़र करनेकी घबराहट तो होती है, उसके बाद भी इन्हें चैन नहीं। छोटी-छोटी बातें इन्हें परेशान करती रहती हैं····डलहौज़ी उपन्यास लिखनेकी सोच कर गये थे। बँगला अच्छा मिल गया, सामने धौलाधारके हिम-मण्डित शिखर····नौकर भी मिल गया था। मैं सब ठीक कर आयी थी, लेकिन कुछ दिन बाद इनका पत्र मिला कि यहाँके सौन्दर्यको देखकर कविता लिखी है, उपन्यासका मूड ही नहीं बनता, मन उदास है···अब बताइए यह भी कोई परेशानीकी बात हुई···जबतक रहते हैं पत्रोंमें ऐसी ही बातें होती हैं – यह तुमने नहीं भेजा, यह क्यों भेज दिया? एक पत्रमें लिखेंगे – यह चीज़ जल्दी भेज दो, मुझे बहुत ज़रूरत है। मैं सब काम छोड़कर पहले वह चीज़ भेजती हूँ, दूसरे दिन पत्र मिलता है, "मैंने अमुक चीज़ भेजनेको लिखा था, न भेजो।"

यह बेचैनी और घबराहट जाने इनके

[शेष पृष्ठ ८४ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

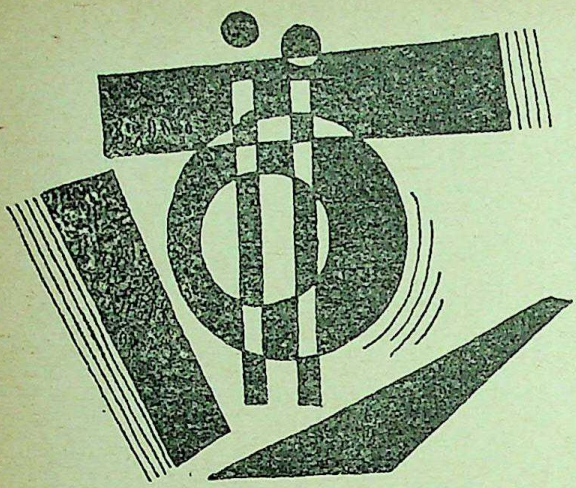

ओ समानधर्मा । ओ मेरे अग्रजो

१ – ओ समानधर्मा !

"छिपकलियों, बीछियों, कंचुओं, बर्रों में रम,
जीवन की कल्पना सिसकती"
वाणी । सुमित्रानंदन पन्त

ओ समानधर्मा !
मेरे इस सम्बोधन से
चौंक ठिठक मत ।

समय आ गया है
यथार्थ को
खुली आँख देखने,
पूर्ण भोगने,
निडर स्वीकृत करने का,
सपने को पाषाणों के अन्दर सेने का

उन्नत पर्वत जहाँ कभी थे
वहाँ टेकरी, टीले, ढीहे
नद-नदियों की सन्तानें
नाले-नाली हैं,
जल-प्रपात का नाती है
नलके का पानी !
यानी,
अब यह नहीं किसी से छिपा हुआ
युग लघु लोगों का —
काश, इसे आकार-प्रकारों तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीमित रक्खा जा सकता —
नहीं, साथ ही, यह युग
लघुता का, छोटेपन, ओछेपन का,
जिसका सब से हीन रूप यह –
बड़े बड़ा कर औरों को
खुद बड़े हुए थे ।
छोटे औरों को अपने से छोटा रखने में
छोटे से छोटे,
छोटे-से-छोटे होते जाते हैं ।
अविरत क्रम है,
किसको ग़म है ?

पूर्वज तेरे
आसमान में सिर ऊँचा रखकर चलते थे,
इन्द्रधनुष की पगड़ी बाँधे;
सूरज, चाँद, सितारे उनसे
आँख मिलाते शरमाते थे ।
जब गाते थे
दिग्-दिगन्त उनकी कड़ियों को दुहराते थे,
मरु से थी रसधार निकलती,
अन्धकार में सपनों के दीपक जलते थे ।

बोल, तुझे इस महानगर में कौन जानता ?
तेरी भी कोई हस्ती है, कौन मानता ?
सीढ़ी-दर-सीढ़ी पद-क्रम की लगी हुई जो
उसपर तेरा स्थान कहाँ है ?
तुझे निम्नतम से भी धक्के देनेवाले ।
किसको फ़ुरसत है तेरी वाणी सुनने की ?
जीवन-यापन के उपकरण जुटा सकने में—
और उसी के लिए यहाँ सब जद्दोजहद है—
तेरे शब्द मदद क्या देंगे ?

इस जन-वन में तू मुझ-सा
केंचुआ नहीं है तो फिर क्या है ? —
फिर मेरे समानधर्मा कहने से
क्यों तू चौंक उठा है ?
तू जितना कुण्ठित, आशाहत
हीन-ग्रन्थियाँ-ग्रस्त, पस्त है,
उससे तो समानधर्मा तुझको कहकर मैं
कुछ उदारता ही दिखलाता ।

मुझे देख,
क्या दिया प्रकृति ने ?
झिल्ली की यह नली,
प्राण का कण-भर स्पन्दन !
सब प्रकार असमर्थ
और अपदार्थ, अशोभन ।
माटी डासन, माटी भोजन ।
किन्तु व्यर्थ क्या मेरा जीवन ?

चौमासे में जा जल बादल बरसाते हैं
वह बह जाता, सूर्य सोख लेता,
फिर धरती
आठ मास तक सूखी, प्यासी, जलती रहती,
संकट सहती ।
मैं धरती में एक लगन से
छिद्र बनाता,
छिद्र बनाता, छिद्र बनाता,
जो जल ऊपर बरसा करता
लक्ष-लक्ष छिद्रों से मैं नीचे ले जाकर
संचित करता,
जो कि अनल-आतप में भी
धरती की छाती ठण्डी रखता....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भू रहती उर्वरा, मरकताम्बरा,
स्निग्ध, शीतल तरुवर-छाया प्रदायिनी,
चिर-सुहासिनी !

ओ समानधर्मा,
समानकर्मा भी बन तू ।
जीवन की धरती पर अब भी
जहाँ कहीं रस लहराता है,
एक लगन से
अल्प, नगण्य, अजाने रहकर,
जा, कर उसकी खोज
और शब्दों की सतहें छेद-भेद अपने छन्दों के
अन्तराल में, अन्तस्तल में
संचित कर ले;
वह भविष्य-आशा का सम्बल ।

तू देखेगा,
जब आयेगा ग्रीष्म
सूर्य अंगार झरेगा,
लूका लेकर पवन चलेगा
गर्म धूलि नासिका-रन्ध्र में
और कण्ठ में भर जायेगी,
दग्ध प्राण चीत्कार उठेगा
पानी ! पानी !
तब प्रत्युत्तर देगी
संचित रस की वाणी —
ज्वाल उठी है,
दूर नहीं है
घन जलदानी !
तब अपने को नहीं कहेगा
व्यर्थ, निरर्थक और प्रयोजन-वंचित प्राणी!

— अज्ञेय

२—ओ मेरे अग्रजो !

अपने ही होंठों से अपना ही रक्त चूसते हुए
मैंने एक उम्र राख कर दी है
भर ली है विस्मृति से छलनी अस्मिता
किसी देवदारु की छाँह तले बैठकर
उसका ही तना छीलते हुए

कभी नहीं सोचा
मेरे वातायन को चूमता
आकाश सभी देशों का एक दिन विमुख भी हो सकता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन खण्ड-खण्ड होकर –

सूर्य भी मिट्टी के घर में सो सकता है।

और अब

द्वारहीन भित्तियाँ
लँगड़ाते यन्त्र चक्र
अधबने सेतु

प्रतीक्षारत बच्चे निर्वाक हैं।

मुझसे इस ठहरे 'नास्तित्व' की स्याह छटपटाहट सही नहीं जाती,
उदय होने दो मुझे
अब जन्म लेने दो

मैं हताश देशका अस्त संस्कार हूँ !

(पहले भी था फिर उभरा हूँ आज मैं)

एक लकड़हारे की लाश लिये घूमी है
यम की तलाश में

मेरी विकल्पहीन वेदना

जनमत के लिए आह
निष्कासित तक कर डाली है मैंने अँगना

ओ मेरे देश के अनाश्वस्त अग्रजो,
धो डालो यह विकृत दृष्टि और सोचो
वह सान्द्रासक्ति वह
सपाट न्यायनिष्ठता क्या पागलपन भर थी या और कुछ ?
यह नहीं कि मोह है अतीत का
या पश्चात्ताप है
सिर्फ़ यह कि 'नास्तित्व' पाप है
उदय होने दो मुझे
अब जन्म लेने दो
मैं विषण्ण देश का ध्वस्त संस्कार हूँ !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यों मुझको ज्ञात है
यह सुविधा भ्रष्ट देश –
लकड़ी की तरह पड़े साँपों
हरियाली ओढ़े चोरों
परजीवी लचकदार बेलों से भरा हुआ वन है
धूप जहाँ पानी की तरह सूख जाती है
सत्य की तलाश में भटकते शहजादे की देह संगमरमर की प्रतिमा बन जाती है ।

किन्तु क्योंकि
पौरुष परास्त नहीं होता
धैर्य आत्मघात नहीं करता

ओ मेरे अग्रजो
मुझको फिर मेरा स्थान दो !
नहीं मुझे ढको नहीं फटे भोजपत्रों से
कहकर इतिहास नहीं टालो यों
बन्द मत करो किसी चमत्कारगृह में
मैं फिर प्रारम्भ से निरर्थक हो जाऊँगा ।

— कैलाश वाजपेयी

[पृष्ठ ७९ का शेष : औसान न खता होने दो]

स्वभावकी ही होती है या फिर घर आनेके लिए दो महीने बाद जो सफ़र करना होगा उसके खयालसे, लेकिन होती ज़रूर है ।

पहले-पहले मैं झुँझला जाया करती थी, कई बार परेशान भी हो जाती थी, घबरा जाती थी, लेकिन अब जान गयी हूँ कि इस घबराहट, बेचैनी और परेशानीसे पार पाना इनके बसका नहीं । अब इनके सफ़र करने या इनके ऐसे पत्र पाकर मैं इनके औसान खता होते देखती हूँ तो अपने औसान खता नहीं होने देती ।

■ ■

['सात सफ़र'की अगली क़िस्तके लेखक हैं श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क']

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी कहानी

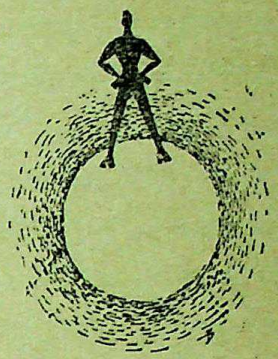

देवेन मुंशी

नयी ताक़त

जूनका महीना और दिल्ली ! मतलब जब दिल्लीमें जूनका महीना आता है तो सड़कोंका कोलतार पिघलने लगता है। नहा-धोकर आदमी नये कपड़े पहने तपती सड़क-पर मुश्किलसे दस मिनिट भी नहीं चल पाता कि उसका सारा वदन पसीनेसे चिंपचिपा जाता है। अच्छेसे अच्छे 'ऐरेस्ट्रोक्रेट' के कपड़े भी मैले नज़र आते हैं। फिर वह तो एक मामूली-सा वलर्क है। उसे इस बातका कोई ग़म नहीं कि वह सुबह धुले कपड़े पहन-कर निकला था, और अब उसके कपड़े मैले हो गये हैं।

इतवारकी सुबह ! आजके दिन हर नौकरीपेशा आदमी आराम करता है। लेकिन उसे एक बहुत ज़रूरी कामसे अपने एक दोस्तके पास 'खैबर पास मेस' जाना पड़ा। लौटते समय वह कुछ देरके लिए काश्मीरी गेटपर रुका। दिनके ठीक बारह बजे हैं, और सड़कोंका कोलतार पिघलकर चिपचिपा हो गया है। उसकी चप्पलें पहले सड़कसे चिपक जाती हैं और फिर एड़ीसे लगकर एक अजीब तरहकी आवाज़ करती हैं। उसने रूमालसे माथेपर आया पसीना पोंछा और बसस्टैण्डपर लगी लम्बी लाईनमें जाकर खड़ा हो गया। इतवारको दिल्लीकी बसोंमें बेहद भीड़ हो जाती है। हर आदमी एक रुपयेका टिकिट लेकर सुबहसे ही घूमने निकल जाता है। उसे ताज्जुब होता है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आखिर इतनी गरमीमें लोग कैसे घूमने निकलनेका साहस करते हैं।

उसे रमेशनगर जाना है, और वहाँसे उसका घर पूरे डेढ़ मील दूर पड़ता है। इस कड़ी धूपमें डेढ़ मील दूर पैदल चलना पड़ेगा··· सोच-सोचकर वह बार-बार हिम्मत हार जाता है। और फिर यहाँ भी बसका इन्तज़ार! बसें ठसाठस भरी हुई आती हैं और बग़ैर रुके ही चली जाती हैं। उसे अपना गला सूखता हुआ-सा महसूस हुआ। बग़लमें ही रिट्ज सिनेमा है। उसने अपनी ज़ेबसे पैसे निकालकर गिने, सवा रुपयेका टिकट खरीदनेके बावजूद उसके पास इतने पैसे बचते हैं कि वह बसमें बैठकर रमेशनगरतक जा सके। साढ़े तीन बजेतक शो समाप्त होगा और तब धूप भी इतनी तेज़ नहीं होगी। आरामसे वह रमेशनगर बस-स्टापपर उतरकर अपने घर डेढ़ मील दूर पैदल जा सकेगा।

·· तो क्यों न दोपहरके तीन घण्टे सिनेमा हॉलके पंखेके नीचे बैठकर गुज़ार दिये जायें। और फिर बग़ैर ज़्यादा सोचे-समझे वह सिनेमा-हॉलकी तरफ़ बढ़ गया। लाईनमें लगकर उसने टिकट खरीदा और हॉलके अन्दर जाकर बैठ गया। हॉलमें भी बेहद गरमी थी। लोगोंकी घुटी-घुटी साँसें और बीड़ी-सिगरेटका धुआँ। उसे लगा कि उसका दम घुट रहा है। बात आजसे लगभग ढाई साल पुरानी है जब रिट्ज सिनेमा-हॉल अपनी पुरानी हालतमें था। अब तो और सिनेमा-हॉलोंकी तरह रिट्जने भी अपना रूप बदल लिया है। पिक्चर अच्छी थी, लेकिन उसे बुरी तरह घबराहट महसूस हो रही थी। एक तो तेज़ धूपमें पिघलती सड़कपर चलना और फिर बस-स्टैण्डपर बसका इन्तज़ार! उसे अपना गला सूखता हुआ-सा मालूम पड़ा। उसे लगा, कि उसे काफ़ी देरसे प्यास लगी हुई है। पिक्चर शुरू होनेमें अभी तीन-चार मिनट बाक़ी थे। वह उठा और पानीकी तलाशमें हॉलके बाहर आ गया। हॉलके बायीं तरफ़ कोनेमें दो नये पैसे फ़ी गिलास ठण्डा पानी देनेवाली टंकीकी तरफ़ बढ़ गया। लकड़ीके खम्भोंमें गिलास रखते हुए पूरबी आदमीसे उसने पानी माँगा – "एक गिलास पानी देना भाई!"

"पानी ख़तम हो गया बाबू।" और पूरबी आदमी ठेलेको एक तरफ़ घसीट ले गया।

उसने अपनी कलाई-घड़ीकी तरफ़ देखा। पिक्चर शुरू हो गयी थी। सामने पानवालेकी दूकान थी जहाँ सोडा, लेमन, आरेंज, और कोकाकोलाकी बोतलें सजी थीं। उसने अपनी ज़ेबसे पैसे निकालकर फिर गिने। सिर्फ़ बसके किरायेके तीस नये पैसे उसकी हथेलीपर चमक रहे थे। उसने बेबसीसे इधर-उधर देखा और फिर हॉलके अन्दर जाकर बैठ गया।

परदेपर पहले कुछ 'स्लाईड्स' दिखायी गयीं जिनमें एक स्लाईड रूह-अफ़ज़ाकी भी थी। सेहतके लिए गरमियोंका शीतल पेय। उसे और भी ज़्यादा प्यास महसूस होने लगी। फिर उसके बाद न्यूज़रील और पिक्चर शुरू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो गयी। उसे अपनी बेवक़ूफ़ीपर बार-बार झुँझलाहट होने लगी। न वह पिक्चरका टिकट खरीदता और न यह परेशानी उसके सामने आती। आरामसे वह बसमें बैठकर रमेशनगर चला जाता। वहाँ उतरकर एक कोकाकोलाकी बोतल पीता और घर जाकर आराम करता। डेढ़ मील कोई ज़्यादा दूरी नहीं होती, रोज़ ही तो चलता है। उसने परेशानीसे अपनी प्यासपर क़ाबू पानेकी कोशिश की। लेकिन रिट्ज़ सिनेमाका घुटा-घुटा माहौल! उसे लगा कि उसकी प्यास बढ़ती ही जा रही है!

पिक्चर अच्छी होनेके बावजूद उसे कोई मज़ा नहीं आ रहा था। उसकी इच्छा हो रही थी कि किसी खुले पार्कमें जाकर पेड़के नीचे लेट जाये। लेकिन वह सवा रुपयेका मोह नहीं छोड़ पा रहा था। वह बार-बार थूक निगलकर अपने गलेको तर कर रहा था। हर बार वह अपना ध्यान पिक्चरमें लगानेकी कोशिश कर रहा था। लेकिन गलेमें चुभते काँटे बार-बार उसका ध्यान बढ़ती हुई प्यासकी तरफ़ ले जा रहे थे।

किसी तरह 'इण्टरवल' हुआ और वह सबसे पहले हॉलके बाहर निकल आया। वह सिनेमा हॉलके पीछे लगे सरकारी नलकी तरफ़ चला गया। और पानी गरम होनेके बावजूद उसने भरपेट पी लिया। गला भीगते ही उसे लगा कि उसकी प्यास बुझ गयी है। उसकी आँखोंके सामने छाता हुआ अँधेरा रोशनीमें बदल गया। उसने जेबसे चार-मीनारका पैकेट निकाला और सीढ़ियों-पर खड़े होकर वह सिगरेट पीने लगा। पिक्चर शुरू हुई तो वह सिगरेट फेंककर वापस हॉलके अन्दर अपनी सीटपर जाकर बैठ गया। वह चाहता तो सिगरेट हॉलके अन्दर भी पी सकता था। तमाम लोग पी रहे थे। लेकिन जाने क्यों उसे यह बात ठीक नहीं लगी। सबसे पहले परदेपर यही लाईन आयी थी कि, 'हॉलके अन्दर सिगरेट पीना मना है।' लेकिन इसके बावजूद लोग सिगरेट पी रहे थे।

सरके ऊपरसे जाती पंखेकी गरम हवा, पेटके अन्दर भरा सरकारी नलका गरम पानी और फिर ऊपरसे चार-मीनार सिगरेटका धुआँ! पाँच मिनटमें ही उसका गला फिर सूख गया और उसने पहलेसे कहीं ज़्यादा प्यास महसूस की। हॉलमें बेयरा आवाज़ लगाता घूम रहा था, कोकाकोला, कैप्टो आरेंज, जे. बी. रोज़। लोग बोतलें ले-लेकर पी रहे थे और उसकी प्यास बढ़ती जा रही थी। उसकी इच्छा हुई कि वह भी एक बोतल लेकर पी ले। लेकिन फिर यहाँसे रमेशनगर छह मील दूर पैदल जाना पड़ेगा और इस तेज़ धूपमें पिघलती सड़कपर दस क़दम पैदल चलना भी उसके लिए दूभर था। लेकिन गला था कि सूखता ही चला जा रहा था। आँखोंके आगे फिरसे अँधेरा छाता जा रहा था। परदेपर उसे अभिनेताओंकी सूरतें पहचानना भी मुश्किल नज़र आ रहा था। एक भी डायॅलाग वह नहीं समझ पा रहा था।

और···

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और फिर जाने कब उसने बेयरेको आवाज़ दी और बेयरा उसके हाथोंमें कोका-कोलाकी बोतल पकड़ा गया, उसे नहीं मालूम। एक ही घूँटमें आधीसे ज़्यादा बोतल पीनेके बाद उसकी आँखें खुलीं। धीरे-धीरे उसके सामने अभिनेताओंकी सूरतें स्पष्ट होती गयीं। डायलॉग उसकी समझमें आने लगे। उसने अपने अन्दर एक ताज़गी महसूस की। और फिर वह उस आधी बोतल कोकाकोला-को आरामसे धीरे-धीरे पीने लगा। बीचमें प्यासके दौरानमें छूट गयी कहानीको समझने-की कोशिश करने लगा। उसे इस बातकी चिन्ता ज़रूर थी कि अब उसे डेढ़ मील चलनेके बजाय पूरे साढ़े तीन मील पैदल चलना पड़ेगा। लेकिन अब कोई चारा नहीं। यहाँसे साढ़े तीन मील दूर उसके एक दोस्तका घर पड़ता है। उससे पैसे माँगकर फिर बस या स्कूटरसे चला जायेगा। चार आने तो उसकी जेबसे निकल ही चुके हैं। लेकिन जो होना था सो हो गया। उसके बारेमें अब ज़्यादा सोचनेकी आवश्यकता नहीं। अब पिक्चरमें मज़ा लेना चाहिए।

और वह सारी बातें भूलकर परदेपर नाचती तस्वीरोंको देखने लगा।

लेकिन बेयरा अभीतक नहीं आया और पिक्चर समाप्त होनेकी पहली घण्टी बज चुकी है। ख़ैर! आता होगा। वह पिक्चर देखता रहा।

दूसरी घण्टी बजी। बेयरा आया और दूसरे लोगोंसे पैसे इकट्ठा करके और बोतलें लेकर वापस चला गया। उसने सोचा, शायद थोड़ी देरमें आये। अभी पिक्चर समाप्त होने-में दो-तीन मिनट बाक़ी हैं। लेकिन पिक्चर ख़त्म हो गया और बेयरा नहीं आया। वह यह भूल चुका था कि अभी हॉलमें उसे एक आदमीसे बोतल और पैसे लेने हैं।

बोतल उसके पैरोंके पास रखी हुई थी और लोग अपनी सीटोंसे उठ चुके थे। अचा-नक उसके दिलमें ख़याल आया, अगर मैं किसी तरह इस बोतलको छुपाकर अपने साथ ले जाऊँ तो मेरे चार आने पैसे तो बचेंगे ही साथ ही यह बोतल···कोकाकोलाकी बोतल···आसानीसे कहीं भी ढाई-तीन आनेमें बिक सकती है। और इस तरह वह धूपमें साढ़े तीन मील पैदल चलनेसे बच सकता है। और फिर उसने निर्णय कर लिया कि वह ऐसा ही करेगा। वह अपने आस-पासके लोगोंका ज़रा दूर होनेतक इन्तज़ार करता रहा। और जब वे लोग थोड़ी दूर चले गये तो उसने धीरेसे उठाकर बोतल अपनी पैण्ट-की जेबमें डाल ली। जेबके सिरेपर रूमाल कुछ इस तरहसे रखा कि बोतलका मुँह न दिखाई पड़े।

और फिर वह भीड़के पीछे-पीछे हॉलसे निकल आया।

लेकिन सड़कपर आते ही उसे लगा कि कुछ ग़लत हो गया है।

सूरजकी गरमी बढ़ती जा रही है। उसे लगा कि उसके मुँहपर कोलतार पुता हुआ है। सड़क कोलतारकी नदी बन गयी है और उसमें बाढ़ आती जा रही है। पिघला हुआ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोलतार उसके घुटनोंसे ऊपर कमर और कमरसे ऊपर गलेतक आ गया है। और थोड़ी ही देरमें वह इस कोलतारकी नदीमें डूब जायेगा। उसे लगा कि उसकी जेबमें कोकाकोलाकी बोतल नहीं एक बम रखा हुआ है जो दस क़दम आगे चलते ही फट जायेगा। उसके जिस्मकी चिन्दी-चिन्दी उड़ जायेगी और उसके अस्तित्वका कहीं पता भी नहीं चलेगा। उसे लगा कि बेयरेकी दो आँखें उसका पीछा कर रही हैं जिसे बोतल और कोकाकोलाका दाम अपनी जेबसे चुकाना पड़ेगा।

उसे लगा, सड़कपर हर चलता आदमी उसकी फूली हुई जेबकी तरफ़ देख रहा है। उसे लगा कि उसके पैरोंमें किसीने मन-मन-भरके पत्थर बाँध दिये हैं। एक क़दम भी उसके लिए आगे बढ़ना मुश्किल होता जा रहा था। और फिर उसे अपने-आपसे नफ़रत होने लगी।

अचानक वह वापस मुड़ा और सिनेमा हॉलकी सीढ़ियाँ चढ़कर मैनेजरके काउण्टर-पर खड़ा हो गया। उसने पैण्टकी जेबसे बोतल निकाली और काउण्टरपर रख दी। फिर कमीज़की जेबसे चार आने निकालकर रख दिये। मैनेजरने उसकी तरफ़ हैरत-से देखा।

"देखिए! मैंने हॉलमें बेयरेसे यह कोकाकोलाकी बोतल लेकर पी थी। वह बोतल और पैसे ले जाना भूल गया है। आप उसे दे दीजिएगा।"

"ओह, थैंक्यू।" मैनेजरने कहा।

वह सीढ़ियाँ उतरकर वापस सड़कपर आ गया। उसे जूनकी तपती धूप दिसम्बर-की धूप-सी लगी। हलकी, प्यारी और कुन-मुनी-सी धूप। ■ ■

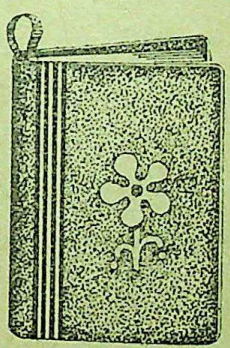

नये वर्षकी ख़ूबसूरत डायरी :

●

जिन पाठकोंने विशेषांकमें प्रकाशित प्रश्नावलीके उत्तर भेजे हैं तथा जिन्होंने 'ज्ञानोदय' एक वर्षके लिए अपने मित्र-परिचितोंको उपहारमें दिया है, उन्हें ही जनवरीके प्रथम सप्ताहतक ज्ञानोदयकी ओरसे नये वर्षकी डायरी पहुँच जायेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

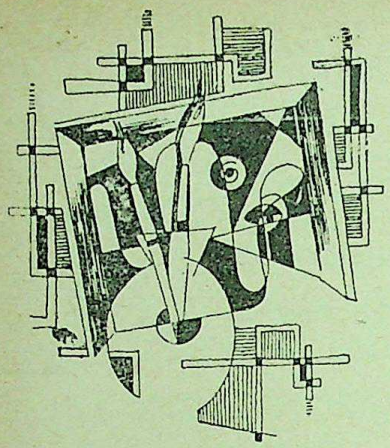

महेन्द्रनाथ सिंह

नयन बोले

मनुष्यकी व्यावहारिक भाषाओंमें-से वाक्शक्तिके अतिरिक्त भी उसकी एक भाषा है जिसे हम आँखोंकी भाषा कह सकते हैं। हमारे जीवनमें इस भाषाकी क्या उपयोगिता है यह किसीसे छिपा नहीं है। हृदयके जिन भाव और परिस्थितियोंको वाक्शक्ति व्यक्त करनेमें हार मान बैठती है उसकी पूर्णाहुति आँखों-द्वारा ही होती है। वाक्शक्तिमें यदि अमृतका असर है तो आँखोंकी भाषामें चुम्बकका आकर्षण। मनुष्यकी वाक्शक्ति पर्याप्त समर्थ होती हुई भी सभी रसोंको अच्छी तरह नहीं प्रकट कर पाती, लेकिन ये आँखें अपनी विभिन्न मुद्राओंसे देखते-देखते उनका सचित्र स्वरूप हमारे सामने खड़ा कर देती हैं, और तब हमें सहसा ही यह स्वीकार करना पड़ता है कि आँखोंकी भाषा वाक्शक्तिकी भाषासे अधिक सरल, सरस और भावमय होती है। जीवनमें प्रायः ऐसा मौक़ा आता है जब हम मौन हो जाते हैं या कर दिये जाते हैं तब हमारी आँखें ही बोलती हैं, भीतरका, बहुत भीतरका भी सारा कुछ कह देती हैं। शायद कोई हो ऐसा जिसने आँखोंकी भाषा न गुनी हो, उसकी बातका रस न लिया हो। जब मैं इतनी सारी बातें कह रहा हूँ तो केवल भाव-सत्यके सहारे नहीं, बहुत कुछ और भी है जिसमें सभी समाहित हैं।

नेत्रोंकी मूक वाक्पटुताके चित्र भारतीय काव्योंमें पाये जाते हैं। विभिन्न कवियोंने विभिन्न ढंगसे आँखोंका मूल्यांकन किया है। इन्होंने नयनोंके रूप-रंग और रसकी त्रिवेणी प्रवाहित कर भारतीय समाजको अवगाहनका अवसर तो दिया ही, उन काव्योंको भी अमर बना दिया है। आँखोंके वर्णनमें प्रधानता कमलनयन, खंजन-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमल-नयन
(अजन्ता शैली)

मीन-नयन
(पहाड़ी शैली)

मृग-नयन
(जयपुर शैली)

खंजन-नयन
(किशनगढ़ शैली)

नयन, मृगनयन और मीननयनको ही अधिक दी गयी है। भारतीय चित्रकलामें भी इन्हीं आँखोंसे रस और भावकी एक नैसर्गिक चित्र-सृष्टि की गयी है। आँखोंके चित्रणमें भारतीय चित्रकारोंने काफ़ी सहृदयता और सूक्ष्म-दर्शिताका परिचय दिया है। और परिचय ही क्यों, यदि अधिक खुलकर कहें तो आँखोंका ऐसा मनोवैज्ञानिक अंकन संसार-की किसी कलामें शायद ही दीख पड़े। वास्तवमें नेत्र-चित्रणमें ही हमें भारतीय चित्रकारोंकी प्रतिभाका सच्चा दर्शन होता है। रसोत्पत्ति मुँहकी अपेक्षा आँखोंसे अधिक होती है इसे वे ख़ब जानते थे। इसीलिए उन्होंने शरीरके अन्य अवययोंके चित्रणमें तो आनुपातिक सौन्दर्यका सृजन किया है, पर आँखोंको इन सारे आवश्यक बन्धनोंसे मुक्त कर उन्हें निःसीम सौन्दर्यकी एक अभिनव-कला-दृष्टि दी है। यद्यपि अधुनातन समाज उन आँखोंको देखकर एक बार चौंक जाता है और उन चित्रोंकी बड़ी-बड़ी आँखोंको अपनी छोटी-छोटी आँखोंसे तुलनाकर उन चित्र-कारोंके प्रति ग़लत धारणा अपने दिलमें बैठा लेता है। मैं उसे दृष्टि-दोष कैसे कहूँ! सच तो यह है कि शरीरमें आँख-जैसी छोटी चीज़-का सम्मान साधारण व्यक्ति नहीं एक कलाकार-हृदय ही कर सकता है। कलाकार छोटीसे छोटी जगहसे भी अपने मतलबकी चीज़ चुनता है और अपनी महानताका परिचय उस छोटी वस्तु-द्वारा ही देता है।

चित्र-रचनामें चित्रकारके कुछ उद्देश्य होते हैं जिनके चित्रणकी ओर उसका ध्यान पहले जाता है। अपने यहाँके छोटे चित्रोंमें यदि उसके अनुपातसे हम आँखोंका चित्रण करें तो उन आँखोंमें इतना स्थान कहाँ मिलेगा कि उनके विभिन्न भाव और रसोंको अच्छी तरहसे व्यक्त कर सकें जिन चित्रोंकी वाक्शक्तिका एकमात्र मुखस्रोत उनके नेत्र ही हैं। इसीलिए भारतीय चित्रोंमें आँखोंका चित्रण और अन्य अंगोंके अनुपातसे बढ़ा-चढ़ाकर अंकित करनेकी प्रथा रही है। अन्यथा आजकी हमारी छोटी आँखें चित्रों-की उन छोटी-छोटी आँखोंको साफ़-साफ़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखने और उनकी भाव-भंगिमाको समझनेमें धोखा उठा सकती हैं। चित्रोंके भाव उनकी मुखाकृतिसे भी समझे जा सकते हैं पर भारतके कुशल चित्रकारोंने मुहको आँख-जैसी लम्बी-चौड़ी सीमामें चित्रबद्ध करनेकी आवश्यकता नहीं समझी क्योंकि मुँहका सौन्दर्य उसकी गोलाई और छोटाईमें भला लगता है और आँखोंकी शोभा उसकी बड़ी आकृतिमें। भारतीय चित्र भी रूप-रस-भावका संगम है। यहाँके चित्रोंका रूप-सौन्दर्य संसारके चित्रोंके रूप-सौन्दर्यमें अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। भारतीय चित्रकारोंके रूप-विन्यासके अपने आदर्श और अपनी मान्यताएँ हैं जिसे चित्रित पात्रोंकी मुखाकृतियोंमें स्पष्ट रूपसे देखा जा सकता है। आँखके चित्रण-जैसी स्वतन्त्रता यदि वे मुँहके चित्रणमें दिखाते तो इसमें सन्देह नहीं कि उन चित्रोंकी मुखाकृति अफ्रीकाके हब्शियों-जैसी ही होती। अतः यह स्वाभाविक है कि उनका झुकाव आँखके चित्रणकी ओर ही हुआ। फलस्वरूप रस और भावकी अभिव्यक्तिके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि मानवमात्रसे लेकर पशु-पक्षी आदिकी आकृतियोंमें आँखको महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाये। इस प्रकार भारतीय चित्रकारोंने अपनी इस दूरदर्शितासे नेत्र-चित्रणका द्वार प्रशस्त कर हमारी आँखोंका तो परदा खोल ही दिया।

भारतीय चित्रोंकी वे आँखें जो अपने रूप, रंग और रससे विश्वके कलारसिकोंको तृप्त करनेमें पूर्ण सक्षम रही हैं वे हैं कमल, खंजन, मृग और मीन नयन। गुप्तकालमें बुद्धकी जीवन-सम्बन्धी घटनाओंको चित्रबद्ध करनेका अवसर जब अजन्ताके चित्रकारोंको मिला था तब कमलपुष्पसे प्रेरणा प्राप्तकर तथागतके अंग-प्रत्यंगको इन चित्रकारोंने विभिन्न कलाकृतियोंसे रूपायित कर दिया था। उनके नेत्र-चित्रणमें कमलपुष्पका सम्पूर्ण इतिहास (विकसित होनेकी अवस्थासे लेकर उसके बन्द होने तकका) भरा है जिसमें करुणा, दया, दुःख, ममता-मोह, विरक्ति आदि मनोभावोंका चित्रण कमलनेत्रोंमें बोल उठा है। अजन्ताके चित्र साक्षी हैं इस बातके। उनमें कमलनयनोंकी भरमार है।

गुप्तकालके बाद चित्रकलाके क्षेत्रमें पुनः एक नये अध्यायका आरम्भ होता है जहाँ एकचश्म चेहरे (साइडफेसेज़) ही देखनेमें आते हैं। तत्कालीन चित्रोंको देखनेसे स्पष्ट यह लगता है कि तब चित्रकारोंका उत्तरदायित्व और भी बढ़ गया। एक ही आँखसे दोनों आँखोंकी भाव-भाषाको व्यक्त करनेका प्रश्न सामने खड़ा हुआ। यही कारण है कि जैन-चित्रकारोंने दोनों आँखोंके भाव और भाषाकी अभिव्यक्ति एक आँखके माध्यमसे ही की है। उन्होंने आँखोंकी आकृतियोंको सरल और सुविस्तृत कर दिया है। नेत्रोंका स्वरूप परवलकी कटी फाँक-जैसा हो गया। यद्यपि उन चित्रकारोंने एकमुखाकृतिवाले चित्रोंमें भी प्रायः दो आँखें बना दी हैं दूसरी आँख मुखाकृतिसे बाहर ही चित्रित हुई मालूम होती है, जैसे वह अलगसे जोड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दी गयी हो। दूसरी आँखको इस प्रकारसे बनानेका कारण यह भी हो सकता है कि चित्रित पात्रके पूरे भाव एक ही आँखसे न व्यक्त किये जा सकते हों। और यहीं हम फिर इसी सचाईको दुहराना चाहेंगे कि हमारे शरीरमें अन्य अवयवोंकी अपेक्षा आँखका महत्त्व अधिक है।

बाद इसके राजपूत-कलाके व्यापक क्षेत्रमें आँखोंके चित्रणका इतिहास बदलता हुआसा नज़र आता है। नेत्र-चित्रणकी अनेकरूपताके कारण भी राजपूत चित्रकला स्मरणीय है। इसी शैलीने आँखोंको खुलकर बोलनेका अवसर दिया। राजस्थानी तथा बसोहली शैलियोंमें आँखोंकी आकृति मृगकी आँखों-जैसी भोली-भाली और बड़ी बनायी गयी है। इन शैलियोंमें वंशी-नादपर रीझनेवाली सरसचित्त गोपिकाएँ अपनी मृगनयनों-जैसी भोली चितवनोंसे तरह-तरहके स्वाँग भरती हुई चित्रित की गयी हैं। इनकी बड़ी-बड़ी आँखोंकी व्याकुलता और चपलता मृगियोंकी रहनी एवं व्यापारका स्मरण करा देती हैं। सचमुच राजस्थानी चित्रोंकी जान तो उनकी आँखें ही हैं। इन चित्रोंमें यदि आँखोंका स्वरूप छोटा कर दिया जाये तो मुखाकृतिका रूप-सौन्दर्य नष्ट होनेकी सम्भावना है। अतः यह कहा जा सकता है कि राजस्थानी चित्रोंकी बड़ी-बड़ी आँखें ही राजस्थानी चित्र हैं।

आँखोंके इससे भी अधिक आकर्षक चित्र हमें किशनगढ़ चित्रशैलीमें देखनेको मिलते हैं जहाँ कटारदार आँखोंका साम्राज्य है। ये वही आँखें हैं जिनकी प्रशंसामें लोकगीतकी इस पंक्ति 'तोरी मदभरी अँखिया कटारी मारे ना' को रसिक ग्रामवासी गुनगुनाते हुए आत्मविभोर-से हो जाया करते हैं। इन बाँकी चितवनोंकी आकृतिको चित्रकारोंने खंजन-पक्षीसे लिया है। इसलिए इन्हें खंजननयन कहते हैं। इन आँखोंकी रूपसीमामें खंजनका पूरा स्वरूप झलकता है जिनमें चंचलता भरी चाल एवं क्रीड़ायुत व्यापारकी प्रतिछाया स्पष्ट रूपसे विद्यमान रहती है। किन्तु मुग़ल चित्रोंमें आँखोंका यह सौन्दर्य प्रायः लुप्त हो जाता है। हाँ, बादके हिन्दू चित्रकारोंके बनाये गये चित्रोंमें आँखोंका अपना पूर्वरूप यथावत् प्राप्त होने लगता है। इसी बीच इतिहास बदलता है और पहाड़ी चित्रकारोंके हाथों इन्हीं चित्रोंको मीननयनका उपहार मिलता है। इन आँखोंकी स्वाभाविकता, कोमलता, चपलता, और चमकती हुई छोटी-छोटी पुतलियोंकी हरकतें जीवित मछलियोंका प्रतिनिधित्व करती हैं। नेत्र धारण करनेका रहस्य सौन्दर्यपान करना होता है इसकी वास्तविकता तब सामने आती है जब इन नयनोंसे सुशोभित चित्रोंको हम अपनी आँखोंसे निहारते हैं।

भारतीय चित्रोंमें आँखोंके विकासक्रमका इतिहास पुनः करवट लेता है जब भारतका शासन-सूत्र अँगरेजोंके हाथ आ जाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। भारतीय कला तब पाश्चात्त्य ताना-बाना धारण करती है। जल-रंगोंकी जगह तैल-रंग ले लेते हैं। बस, बड़े-बड़े 'कैनवस'पर 'पोर्ट्रेटपेण्टिंग' आने लगती है। प्रतिछवि (पोर्ट्रेट) में ज़रा भी फ़र्क़ न आने पाये इसके लिए उस व्यक्तिको कला स्टडियोंमें घण्टों तक मुरदेकी स्थितिमें रख छोड़ा जाता है, परन्तु इसके ठीक विपरीत अपने यहाँ प्रतिछवि अंकित करनेकी निराली शैली है जहाँ व्यक्तिके परोक्षमें उसके स्वरूपके साथ-साथ स्वभावका भी मर्मस्पर्शी अंकन होता है, जो विश्वके अन्यतम किसी कला-शैलीमें नहीं मिलता। उसे हमें हठात् आत्मविस्मृत कराकर 'पोर्ट्रेटर' का व्यापार करनेको बाध्य किया जाता है। इस साधनामें भारतीय कलाका सौन्दर्य-बिन्दु खो जाता है और आँखोंकी तसवीर फिर बदलती हुई-सी नज़र आने लगती है। इधर 'वाश' शैली 'रोमाण्टिसिज़्म' की रिक्त प्यालीमें रंगोंकी नयी-नयी सौगात लेकर बंगालमें उतरती है और देखते-देखते भारतके एक कोनेसे दूसरे कोने तक सौदामिनी-सी उदीप्त होकर कुछ समयमें ही ठण्डी पड़ जाती है। केवल इसके झलमलाते रंगोंमें हमें उन चित्रोंकी मायावी आँखें ही आज याद आ रही हैं। यहाँतक कि घासवाली भी इन्हीं रहस्यदर्शी नेत्रोंसे घास काटनेका काम तमाम करती हुई चित्रित होती है। आँखोंका इस प्रकारका चित्रण उस समयकी सबसे बड़ी उपलब्धि समझी जाती है। सम्भवतः यह अतिशयोक्ति मान ली जाये फिर भी इस प्रकारकी आत्मप्रवंचना अधिक दिनों तक नहीं टिक पाती। 'वाश' पद्धतिमें निरन्तर स्नान करते-करते इन आँखोंकी रहस्यदर्शिता भी घुलकर सदाके लिए साफ़ हो जाती है। और यही नहीं, अबतककी सारी अर्जित चित्र-परम्परापर एकदम पानी भी फिर जाता है।

भारतीय चित्रोंमें दर्पण तो उनके नेत्र ही हैं। उनकी एक परम्परा है। एक इतिहास उनमें झाँकता है। हज़ारहा मुखौटा लगाकर भी हम उनसे असम्पृक्त नहीं रह सकते। हाँ, अपनेको सीमित करनेपर तो वही परिणति होगी जो यथार्थवादी शैलीसे आदर्शवादी शैलीका गठबन्धन होनेसे बंगाल-शैलीकी हुई। उसके प्रगतिपथपर अनायास रोड़ा ढुलक आया। यद्यपि इस शैलीके भी कुछ प्रबुद्ध चित्रकार शैलियोंके व्यामोह-परिधिसे बाहर आकर अपनी कलाका विकास भारतीय आदर्श और मान्यताओंके आधार-पर करके अपनी भूली-बिसरी परम्परासे निकटतमका सम्बन्ध स्थापित करते ही हैं उसे पुनर्जीवन भी प्रदान करते हैं। समीचीन होगा यह कहना कि शैली और तकनीक दोनों ही दृष्टियोंसे कलाकार यामिनी रायकी देन चित्रकलाके क्षेत्रमें विशेष महत्त्व रखती है। आधुनिक चित्रोंको उनकी विरासतसे मिली हुई आँखोंको लौटानेवाले प्रथम चित्रकार यामिनीजी ही हैं।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

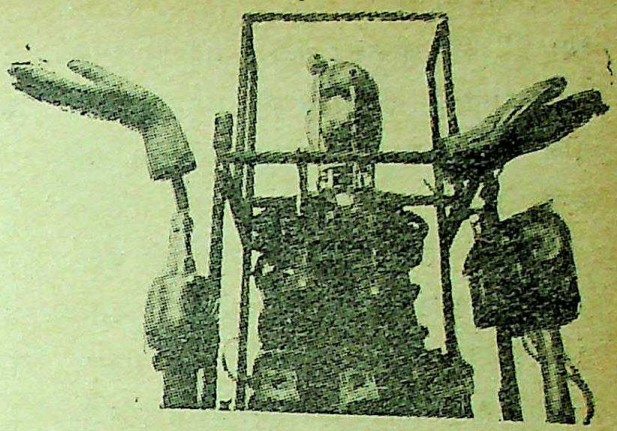

विज्ञान-कथा

कैलाश भारद्वाज

आठवाँ आश्चर्य

●

दुनियाके आठवें आश्चर्य, अबू सिम्बल, के मन्दिरोंके दर्शनार्थ सूडानकी राजधानी खारतूमसे होकर जाना पड़ता है – यह तथ्य हमें पहले ही ज्ञात था। सम्भवतः हम लोग उन मन्दिरोंसे पूर्व खजुराहो और कोणार्क देखना अधिक पसन्द करते किन्तु हमारे पुरातत्त्वज्ञ मित्र प्रोफ़ेसर रामजीदासकी अपनी ही योजना थी। खजुराहो जानेसे लगभग एक माह पूर्व सुबह-ही-सुबह बिना किसी सूचनाके वे आ धमके और बिना किसी भूमिकाके कहने लगे, "विभाष भाई! खजुराहोका प्रोग्राम कैन्सल करना पड़ेगा।"

मैंने सुना तो मन-ही-मन सिर धुन लिया। सोचा था, खजुराहोकी यात्रापर एक उपन्यासनुमा वृत्तान्त लिखूँगा और उन अनुपम एवं अपूर्व मन्दिरोंके चित्रोंसे उसे और भी अधिक विश्वसनीय बना दूँगा। इस प्रकार जब वह वृत्तान्त हमारे साप्ताहिकमें सिलसिलेवार छपेगा तो अन्य पत्रोंको कमसे कम कुछ दिनोंके लिए तो साँप सूँघ जाना निश्चित ही है।

"क्यों, क्या हुआ? कोई मक्खी छींक गयी क्या?" मैंने झुँझलाहटको थोड़ा दबाकर पूछा।

"मक्खी तो नहीं, हाँ, नील नदी अवश्य छींक गयी है और छींक भी ऐसी जो अबू-सिम्बलके तमाम मन्दिरोंको फूँकसे ही उड़ा दे।" उन्होंने शान्त-गम्भीर स्वरमें उत्तर दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपयुक्त चुना है।" मैंने पिरामिडकी काली दीवारोंकी ओर ताका।

"हाँ, हो गया।" उसने उन स्वचालित पेंसिलोंकी ओर संकेत किया जो अब निर्जीव-सी होकर इधर-उधर लुढ़क गयी थीं – "यह मेरे प्रस्थानका इशारा है।" फिर ऊपरकी ओर देखता हुआ बोला, "देवी हेथर मुझे वापस भेजना चाहती है। और वे····लगता है···वे मुझे वापस बुलाना चाहते हैं।"

"देवी हेथर कौन है ? और आपको वापस कौन बुलाना चाहते हैं ?" मैंने आश्चर्यसे चकराकर पूछा।"

"देवी हेथर फ़ैराओ सम्राटोंकी अधिष्ठात्री है। अबू सिम्बलके ये मन्दिर उसीको समर्पित हैं। और वे····मेरी पृथ्वीके वासी, मेरी दुनियाके नियन्ता !" उसने उसी प्रकार ऊपरकी ओर ताकते हुए कहा।

"तो आपकी कोई भिन्न पृथ्वी है ? भिन्न दुनिया है ?" मैंने अधीर होकर पूछा।

"हाँ, सूर्य-मण्डलका सबसे उज्ज्वल-सितारा शुक्र वही है मेरा देश।"

उसकी वाणीमें अकथनीय गौरव था।

"तो आप शुक्रसे आये हैं – इस पृथ्वीपर ?" जैसे विस्मय मेरे मुखसे फूट निकला।

"हाँ," उसने स्वप्नमें डूबे हुए-से प्राणीके स्वरमें कहा, "एक ज़माना गुज़र गया जब मुझे यहाँ आनेका आदेश मिला था। आपके हिसाबमें तो शायद वह लाखों वर्षोंमें फैले किन्तु हमारा हिसाब प्रकाश-वर्षोंसे चलता हैं इसलिए मेरे देशवासियोंके लिए यह अभी कलकी ही बात है।"

"लेकिन आप इतना अपरिमित मार्ग तय करके केवल इन मन्दिरोंको···नहीं, नहीं, आपको आये तो बहुत समय हो गया है।"

वृद्धने मेरा उद्देश्य समझते हुए उत्तर दिया : "मैं अपने देशकी विज्ञानशालाका एक अदना-सा अधिकारी हूँ। मानवकी अपार शक्तिका हमें एक अरससे ज्ञान है। वह हनुमानकी तरह सूर्यको गालमें दबा सकता है। इसीलिए मुझे यहाँ भेजा गया था।"

कौतूहलकी चरम सीमासे सटे मैंने विस्मयाभिभत होकर पूछा, "लेकिन इतनी लम्बी अवधिमें आप यहाँ करते क्या रहे ?" उसने उसी तन्द्रालु स्वरमें उत्तर दिया : "मैं क्या करता रहा ! आप यह पूछिए कि मैं क्या नहीं करता रहा। पृथ्वीपर हिंसाका शिलान्यास मेरे ही हाथों तो हुआ है।" और उसने कुछ ऐसी दृष्टिसे मेरी ओर देखा जैसे कोई बड़ा महान् कार्य किया हो। फिर बोला, "यह उस युगकी बात है, जब मानवको पत्थर तकका ज्ञान नहीं था।"

"शायद आप पाषाण-युगकी बात कर रहे हैं ?"

"नहीं, उससे पूर्वकी। क्योंकि पाषाण-युग मैंने ही आरम्भ किया था।"

"आपने ! पाषाण-युग आपने आरम्भ किया था ?"

"हाँ, मैंने। उस समय मानव अत्यन्त सदय तथा स्नेही था। ईर्ष्या-द्वेष तो जैसे उसे छू तक नहीं गये थे। एक दिन एक मानवने दूसरे मानवका माँस उठाकर खा लिया।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तब ?"

"मैंने सोचा – यही अवसर है। मैंने पत्थरका टुकड़ा उठाकर उस मानवको पकड़ा दिया जिसका माँस खाया गया था और कहा कि वह उसे माँस खा जानेवाले मानवके मस्तकमें मारकर देखे। आप जानते हैं, इसका परिणाम क्या हुआ ?"

"क्या हुआ ?" मैंने दुगुनी जिज्ञासा प्रकट की।

"मानवको पत्थरकी शक्तिका ज्ञान हो गया और धरतीका हरियाला आँचल पहली बार मानवके खूनसे भींगा – उस खूनसे जो मानवने ही गिराया था" फिर कुछ याद करता हुआ वह बोला, "आपने इन्द्र और वृत्तका वृत्तान्त सुना है ?"

"हाँ"

"वह अस्थि-युगकी बात है। उस समय तक पहला पत्थर अपना पूरा प्रभाव दिखला चुका था और एक मानव जाति सुर और असुर दो उपजातियोंमें बँट चुकी थी। क्योंकि असुर पत्थरको अधिक तेज शस्त्रका रूप देनेमें सफल हो गये थे इसलिए सुरोंके नायक इन्द्रको उनसे मुँहकी खानी पड़ती थी। आखिर हारे-थके इन्द्रका पथ-प्रदर्शन मैंने किया और इस प्रकार हड्डीका वह हथियार बना जिसे आप लोग वज्र कहते हैं। इसी वज्रसे असुर-नायक वृत्र और उसकी माताका संहार कराके मैंने हिंसा तथा वैमनस्यके बीजोंको और गहरा बोया।"

"और आपने कौन-कौन-से महान् कार्य किये मानवके लिए ?" मैंने व्यंग्य-भरे स्वरमें पूछा।

"बहुत-से।" उसने उसी अलसायी वाणीमें उत्तर दिया। बारूद बनानेका तरीक़ा चीनको मैंने ही बताया था। प्रथम बम बनानेका यश भी वस्तुतः मुझे ही मिलना चाहिए। और वी-टू-रॉकेटका राज़ जर्मनीको किसने दिया था।"

फिर थोड़ा रुककर, जैसे अतीतके अन्धकारमें टटोल रहा हो, बच्चेकी तरह वह बोला, "मैं क्यों बताऊँ कि एटम बमका नुस्ख़ा शोपेन प्राइमर मुझसे ही पूछ गया था। फिर भी यदि यक़ीन न हो तो डॉक्टर फ़ैलरसे पूछ लो कि हाइड्रोजन उसने किसकी सहायतासे बनाया ?"

मेरा पूछनेका मन हुआ कि आप शुक्रके साइण्टिस्ट हैं या शैतानके अवतार ? मगर अपने प्रश्नको दबाकर मैंने कहा, "आपके विज्ञानने तो कल्पनातीत तरक़्क़ी कर ली लगती है। संहारकी यह मौलिक प्रेरणा शुक्रकी ओरसे पृथ्वीको दिया गया उपहार है, इसका तो यहाँ शायद ही कोई अनुमान लगा सके।"

लगता है, मेरी बातपर उसने कोई ध्यान नहीं दिया क्योंकि मेरी इस कटु उक्तिके बावजूद भी उसका चेहरा उसी प्रकार विकारहीन बना रहा। फिर उसने एक दीर्घ अँगड़ाई ली और तनिक स्वस्थ होकर बोला, "अब मेरा कार्य समाप्त हो गया है।"

"कैसे ?" मैंने पूछा।

"आखिर न्यूट्रॉन बमके लिए मुझे एक उपयुक्त पात्र मिल गया है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"न्यूट्रॉन बम !" मैंने आतंकपूर्ण स्वरमें पुनरावृत्ति की, "यह कोई शुक्रकी नवीन प्रणय-भेंट है क्या ?"

किन्तु वृद्ध उसी स्वप्निल-से स्वरमें बोलता रहा : "आपने नारायणास्त्रका नाम तो सुना होगा जिसे महाभारतमें प्रयुक्त करानेकी मेरी योजना अन्तिम क्षणोंमें असफल हो गयी थी। वह एक अस्त्र सम्पूर्ण पृथ्वीके लिए पर्याप्त था।"

"और न्यूट्रॉन बम ?"

"न्यूट्रॉन बम नारायणास्त्रका ही आधुनिक संस्करण है। उसका मन्त्र मैंने एक बड़े प्रबल वैज्ञानिकके कानमें फूँका है अतः इस बार मुझे अपनी सफलतामें कोई सन्देह नहीं है।"

"वह कैसे ?" मैंने पूछा, "कौन जाने बड़ी शक्तियोंके बीच समझौता हो जानेके कारण आपका न्यूट्रॉन बम फिर धराका धरा ही रह जाये।"

"नहीं, इस बार ऐसे अनिष्टकी सम्भावना नहीं है। नारायणास्त्र धर्म-भीरु प्राणियोंके हाथमें था और न्यूट्रॉन मैंने अनीश्वरवादियोंको सौंपा है।"

यह कहते-न-कहते सामने एक बल्ब सर्च लाइटकी तरह जलकर गहरी लाल रोशनी विकीर्ण करने लगा और उसके साथ ही वह वृद्ध भी तेजीसे उठ खड़ा हुआ। बोला, "क्षमा करिएगा, मैं अपनी ही धुनमें न जाने क्या बक-झककर आपको बोर करता रहा। इतना शिष्टाचार भी मैं न निभा सका कि आपको भी बोलनेका अवसर देता।" फिर खेद-भरे स्वरमें बोला, "मेरे वापस जानेका क्षण आ गया है। आपसे भविष्यमें मुलाक़ात नहीं हो सकेगी।"

उधर उस कुरसीने जैसे मुझे उचकाकर ऊपर उठा दिया और बाहर आनेवाली सीढ़ियां मुझे उछालकर दरवाज़े तक ले आयीं।

मैंने पाँव बाहर रखा ही था कि वह अनहोना प्रकाश न जाने कहाँ ग़ायब हो गया और अन्दर फिर वही हाथको हाथ न सूझनेवाला सूचीभेद्य अन्धकार छा गया। जब मैंने घूमकर देखा तो वह द्वार भी सर्वथा अदृश्य हो चुका था जिससे मैं एक क्षण पूर्व बाहर निकला था।

विश्वास-अविश्वासके ज्वार-भाटेमें डूबता-उतराता मैं कुछ ही क़दम आगे गया था कि मेरी मित्र-मण्डली वापस आती दिखाई दी। प्रोफ़ेसर रामजीदासने दूर ही से चीखकर कहा, "अरे यार, तुम कहाँ रह गये थे। हम तो तुम्हें ढूँढ़ते-ढूँढ़ते मर गये – मील-भर भटककर आ रहे हैं।"

फिर निकट आकर मेरे हवाइयाँ-उड़े चेहरेको देखकर प्रोफ़ेसर साहब बोले, "अमाँ, मामला क्या है ? इतनी देर तुम कहाँ अटके रह गये ?"

मैंने घमकर उस पिरामिडकी ओर संकेत करते हुए कहा, "इस पिरामिडमें···"

"किस पिरामिडमें ?" उनके क़हक़होंके बीच मैंने सुना। और मैं ख़ुद ही भौंचक्का-सा रह गया जब मैंने देखा कि वहाँ किसी पिरामिडका नामो-निशान तक नहीं है।

[शेष पृष्ठ १०८ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोये हुए पृष्ठ

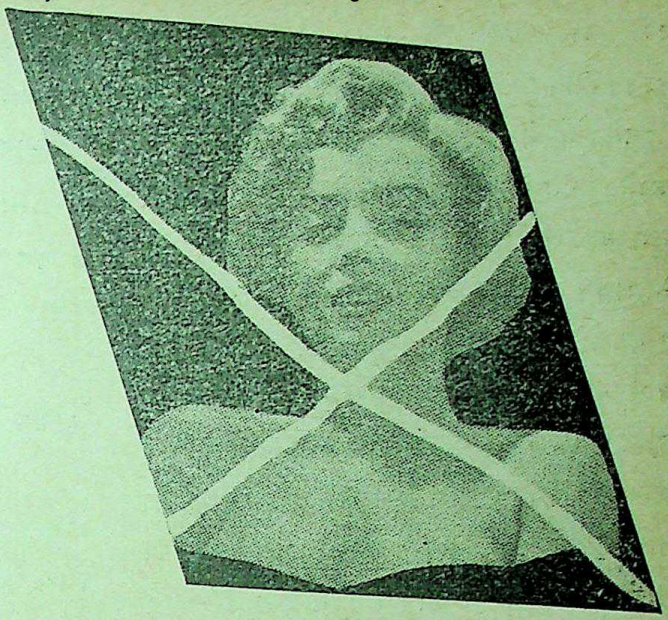

मेरिलिन मुनरो

हर चीज़ आश्चर्यजनक

"हर चीज़ आश्चर्यजनक। लोग सभी कितने-कितने अच्छे हैं। लेकिन मुझे यूँ महसूस होता है जैसे यह सब मेरे ठीक दाहिने खड़े किसी व्यक्तिके साथ घटित हो रहा है। मैं उसके एकदम नज़दीक हूँ – मैं उसे महसूस कर रही हूँ, मैं उसे सुन रही हूँ लेकिन हक़ीक़तमें मैं वही नहीं हूँ।

"मुझे यह लगता है जैसे मैं असुरक्षित हूँ और रास्तेमें हूँ और इससे भी अधिक यह लगता है कि मैं भयाक्रान्त हूँ···सच, मैं सोचती हूँ दुनियाकी किसी भी चीज़से अधिक मुझे प्यार चाहिए···।

"जब मैं १२ की थी। एक सुबह, स्कूल जानेसे पहले मैंने लिपस्टिक लगायी, भौंहें बनायीं, एक चुस्त नीला स्वेटर उधार लिया। मेरे स्कूल पहुँचनेने एक सनसनी-सी पैदा कर दी – लड़के चिल्लाने लगे, मुझे घूरने लगे।···इतना ही नहीं, सारी लड़कियोंने भी एक नज़र मुझे देखा। तब मैं निर्मित हो रही थी, किसीके द्वारा तराशी जा रही थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं कहती हूँ विवाहके बारेमें एक तरहसे मेरा मन खट्टा हो गया है, यह इस जानकारीके कारण कि पति पत्नियोंके सामने क़समें खाते हैं और जो पिता हैं वे कभी अपने बच्चोंके साथ नहीं खेलते। मुझे याद है, बचपनसे अबतक कि हर पति नियमित रूपसे शराब पीता है और हरेक पत्नी औरतसे ज़्यादा वेश्या है जिसे कोई वक़्त नहीं मिलता कि वह ठीकसे कपड़े पहने, ठीकसे सजे-सँवरे या कहीं मनोरंजनके लिए जा सके। मेरा यही चिन्तन गम्भीर होता गया है और मैं अब सोचती हूँ 'यदि इसीका नाम विवाह है तो कौन इसे चाहेगा ?'

"जी। मुझे विवाह करते हुए (आर्थर मिलरके साथ) ख़ुशी है। सारी ज़िन्दगी मैंने अकेले काटी है। अब और आज पहली बार – सच ही पहली बार – मुझे यह लग रहा है कि मैं अकेली नहीं हूँ। पहली बार मैं सुरक्षित अनुभव कर रही हूँ। जैसे···जैसे कि मैं किसी सीली और सर्द जगहसे चली आ रही हूँ···एक युग्म-भाव जैसे रूप ले रहा है – उष्ण और सुखद भी। मेरा मतलब किसी तरहके प्रेम या किसी ऐसी ही चीज़के प्रदर्शनसे नहीं है। मेरा मतलब तो महज़ एकसे दो हो जानेसे है।···

"जब मैं छोटी-सी बच्ची थी – छह या सात वर्षकी, मैं तब सपने देखा करती थी चर्चमें निर्वसन नग्न खड़े रहनेके – बिना किसी पाप-भावनाके। मैं अपने वस्त्र उतार फेंकना चाहती थी क्योंकि उन वस्त्रोंसे मुझे लज्जा आती थी। वे अनाथालयके वस्त्र जो थे। मैं जब निर्वसन होती किसी भी दूसरी लड़कीके समान ही होती।

"पुरुष और हर पुरुष मुझे ऐसा लगता है जैसे वे सारी-सारी रातें मेरे ही साथ गुज़ार देना चाहते हैं।

"मैं तो एक मज़ाक़ हूँ, एक लतीफ़ा – लेकिन उससे रुपया बनता है।

"ख्याति तो चलती रहेगी, मैं रहूँ या नहीं। ख्याति···एक ऐसी कोई चीज़ है जिसे मैंने महसूस तो किया लेकिन वही सब कुछ नहीं है जिसे मैं जीनेका कारण कह सकूँ।

"ये मेरे अपने विचार हैं कि वासना केवल प्राकृतिक रूपमें ही आकर्षक लगती है···आभार प्रभुका कि हम सभी जन्मतः विलासी जीव हैं लेकिन लोग हैं कि इस नैसर्गिक देनकी भर्त्सना करते हैं, इस शक्तिको दबा देते हैं। कला, सच्ची कला उसी भोग-में-से जन्म लेती है। मैं कभी नहीं समझ पायी सेक्स-सिम्बलको। मैं हमेशा प्रतीक उन चीज़ोंको समझे थी जिनके साथ हमें संघर्ष करना होता है। मुश्किल यही है कि 'सेक्स प्रतीक' तो अपने आपमें एक चीज़ है और मैं कोई चीज़ बनना नहीं चाहती। लेकिन यह भी सच है कि यदि मुझे किसी चीज़का प्रतीक बनना ही है तो मैं उपभोगकी ही प्रतीक बन सकूँगी।···"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी कहानी

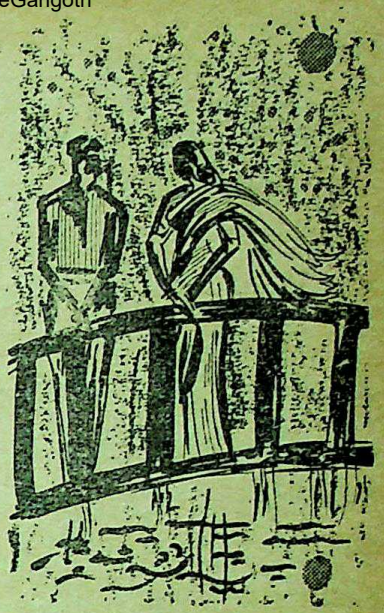

स्वरूप ढौंडियाल

भागे हुए....

●

सूटकेस देखकर अगल-बग़लके घरोंके लोग आ जमा हुए। वे दोनों बुझे-से लेम्प-पोस्टकी तरह मुहल्लेके लोगोंके मध्य खड़े थे। उनके चेहरोंपर हवाइयाँ उड़ रही थीं, और काफ़ी थके हुए, वो अब बैठना चाहते थे। स्टेशनसे ताँगा करनेके बाद उन्होंने सोचा था, निरंजनके कमरेमें पहुँचकर वे सफ़रकी सारी थकान और भय दूर कर लेंगे। कुछ क्षण विश्राम करनेके बाद ही निरंजनको कुछ बतायेंगे। वैसे मुकुलके साथ एक जवान लड़की देखकर शायद वह स्वतः ही स्थिति समझ जाये और पूछने-बतानेकी ज़रूरत न आये। पर उनकी वह मधुर कल्पना मुहल्लेमें ताँगेके प्रविष्ट होते ही, बाहर सड़कपर ही ढेर हो गयी थी, ऐसे, जैसे ताँगेके पीछे लटका हुआ कोई शरारती बच्चा ताँगेकी पाटी छोड़कर नीचे उतर गया हो। मुहल्लेमें पहुँचनेपर कुछ और ही सामने था। सत्ताईस-बटा चालीस नम्बरके मकानमें कोई सरदार-दम्पति रह रहे थे।

"किनू खोजदे हो जी?" भारी-भरकम सरदारजी पूछ रहे थे। उनकी तोंद आगे बढ़ आयी थी और तोंदकी वजहसे उनका कच्छा भी ठीकसे दिखाई नहीं देता था।

"यहाँ निरंजन रहता था न?" मुकुलने पूछा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"केड़ा निरंजन, जी ?"

सरस्वती भयभीत-सी मुकुलके पीछे आ खड़ी हुई। उससे सटकर लग गयी। उसकी नज़र ज़मीनपर बिछी थी, और पाँव रह-रहकर काँप रहे थे। ट्रेनकी धुकधुकी उसके मनमें फिरसे शुरू हो गयी, जो ताँगेपर बैठते वक्त़ कम थी। क्षण-भर पहले स्टेशनसे भागता ताँगा खेतोंके बीचसे गुज़र रहा था, और ताँगेवाला ताँगेकी 'ठक-ठक-ठक' की लयके साथ अपने एक पंजाबी गीतके बोल हवामें बिखेर रहा था। सरस्वतीको तब अच्छा लगता था। खेतोंकी पीली सरसों उसके मनमें आह्लाद पैदा कर गयी थी, और वह भविष्यमें आ सकनेवाले किसी भयसे बेफ़िक्र-सी थी। मगर सामने खड़े सरदारजी, और उनके आस-पास फैले हुए गन्दे-से मुहल्ले-में पहुँचकर वह अब फिर सिहर गयी। आशंकाकी एक झीनी-सी चादर उसके शरीर-के ऊपर एक परतकी तरह बिछ गयी थी। मुहल्लेके सामने खड़े पेड़के नीचे चारपाइयाँ बिछाये दो तीन गँवार आदमी हुक़्क़ेपर उलझे हुए थे, और उनके साथ ही एक बच्चा ज़मीनपर रेंग रहा था।

"वे करतारा !" सरदारजी चिल्लाये, "इत्थे कोई निरंजन रैंदा सी ?"

पड़ोसके घरसे सम्मुख खड़े सरदारजीके ठीक विपरीत, एक दुबला-पतला सरदार बाहर आ गया। उसके दोनों पैरोंमें एक-सी फटी चप्पलें थीं।

"निरंजन··· ?" तीसरे घरसे, एक अधेड़ उम्रकी मज़दूरनी निरंजन नाम सुनकर बाहर आयी, और बोली, "सरदारजी एक छोकरा इधर रहता था। आपसे पहले। मगर नाम मालूम नहीं। सुनिन्दीको मालूम होगा। ठेकेदारके पास दोनों काम करते थे।"

उस मैली-कुचैली मज़दूरनीने हाँक लगायी—'अरी सुनिन्दी ! ओ सुनिन्दी···!"

एक मकानसे सुनिन्दी तो निकली नहीं, पर दो-तीन बच्चे, एक बुढ़िया और एक लम्बा-सा छोकरा खड़ी लँगोटी पहने, बाहर आये।

उनमें-से छोकरेने कहा, "सुनिन्दी अभी नहीं आयी।"

चारपाइयोंपर बैठे तीनों गँवार व्यक्ति भी भीड़में शामिल हो गये। पल-भरमें वहाँ, प्रत्येक घरका कोई-न-कोई नुमायन्दा खड़ा था। दोनों बीचमें जैसे घिर गये थे। निकल चलने तकको रास्ता नहीं था। शाम गहरा गयी थी, और घिरते अँधेरेमें तमाम चेहरे झिलमिलाते लग रहे थे। सरस्वतीकी टाँगों-का कम्पन यथावत् जारी था, और वह कहीं बैठना चाहती हुई भी, कुछ कह नहीं पा रही थी। उसी तरह मुकुलसे सटकर, वह रोनेको हो आयी।

"मुहल्लेको छोड़े उसे छह महीने हो गये हैं।" भीड़में किसीने कहा, "कहाँसे आये हैं ये लोग ?"

सरस्वतीका दिल सहसा उछल-सा गया। मुकुलने रूमाल निकालकर मुँह पोंछा। वह अपनी बातें समझानेकी कोशिशमें था। सरस्वती उसीके सहारे खड़ी थी। वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

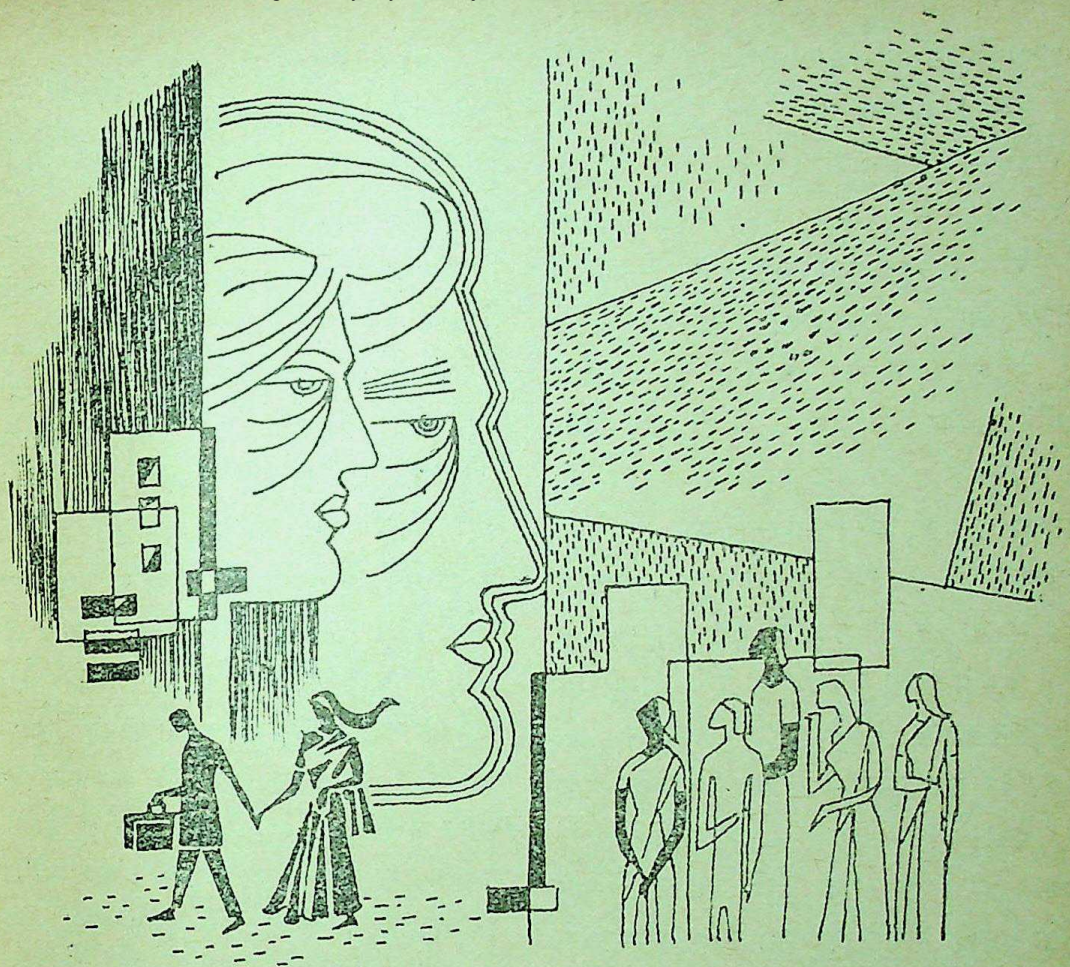

भयभीत अवश्य था, पर सरस्वतीके प्रति दायित्व उसे साहस बँधा रहा था। वह यदि स्वयं घबरा गया, सरस्वती तो अधिक देर तक ठहर नहीं पायेगी। दोनों जैसे एक-दूसरेके सहारे खड़े थे।

"कौन हैं ये लोग ?" एक और प्रश्न दूसरी तरफ़से आया।

मुकुल भी जैसे ढहने लगा। थकावटसे बदन चूर था और टाँगोंके जोड़-जोड़में दर्द समा गया था। हवा भी कमबख़्त बन्द थी। सामनेके मकानका दरवाज़ा खुल गया, और रोशनीका एक बड़ा-सा त्रिकोण उसके आगे खड़े तीन व्यक्तियोंके कन्धोंपर झूल गया।

सरदारजी आधी हिन्दी, आधी पंजाबी-की खिचड़ीमें बोले, "निरंजन नू खोज रहे हैं। असी तो जानदे नी, कि निरंजन कौन है। सुमुखी कैंदी है, इत्थे पैले रैंदा-सी इक छोकरा।"

दो-चार आदमियोंको ठेलता साफ़-सुथरा सफ़ेद पायजामा पहने एक व्यक्ति आगे बढ़ आया, "भैया, निरंजन तो यह मुहल्ला छोड़ गया है। किसीको उसका पता-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठिकाना मालूम नहीं। वैसे छोटा-सा शहर है। आसानीसे पता चल जायेगा। पर···।"

उसका मतलब था, रात हो गयी है, और इस सुनसान-से शहरमें इस वक़्त किसीके द्वार जाकर निरंजनका पता नहीं लगाया जा सकता। मुकुल अब भीड़में-से निकलना चाहता था। सरस्वतीका हाथ पकड़कर वह सड़कपर निकल आयेगा। सड़कके किनारे क्षण-भर आराम करके ही कुछ सोचा जा सकता है। निरंजन यदि न मिला···? आशंका उसे भी थी। सरस्वतीको बतानेका मतलब होता, उसके मानसिक ऊहापोहोंमें वृद्धि करना। स्टेशनसे आते वक्त सरस्वतीसे उसने अपनी शंका प्रकट कर देनी चाही थी पर सरस्वतीके हँसते हुए चेहरेपर, जो काफ़ी देर तक मुरझानेके बाद खिल-सा गया था, वह रुदनकी वक्र रेखाएँ नहीं देखना चाहता था। दूर तक फैले लम्बे हरे-भरे गेहूँके खेतोंके बीचसे गुज़रता ताँगा और सूर्य-के डूबते समयकी लालिमा उसे सुख नहीं दे पायी थी। निरंजन नहीं मिला, तो····? और वह ताँगेवालेके आलापको भी नहीं सुन पा रहा था। उनके समीप ही कहीं उनका इन्तज़ार करता वह भविष्य, जो कभी अतिकी सीमा तक सुखद लगा था, अब जैसे बेहद घिनौना और डरावना हो गया।

"हम पति-पत्नी हैं।" मुकुल बोला, "दिल्लीसे आ रहे हैं। मित्र है निरंजन। कुछ दिन इधरका इलाक़ा देखनेकी इच्छा थी।"

"पति-पत्नी।" एक बूढ़ी-सी औरत हँस दी।

सबकी पैनी दृष्टि उनके शरीरोंको तोल लगी। वे दोनों जैसे घूमते हुए चाककी धुरी पर बैठे, स्थिर थे, मगर चारों तरफ़ वातावरण तेज़ीसे चक्कर खा रहा था स्थिति अभीतक सामान्य थी, मगर शाम धुँधलके-जैसा एक अस्पष्ट-सा आतंक उन शरीर, उनके अस्तित्वके हर अंगको दबो हुए था। बिगड़ते क्या देर लगती है निकलकर अलग हट जानेका अवसर भ नहीं मिल रहा था। खड़े-खड़े टाँगें जवाब देने लगी थीं और जीभ तालूसे ल गयी थी। अगल-बगल खड़े व्यक्ति जैसे उन्हें खा जानेके लिए खड़े थे। और किस वक़्तकी बात होती, मुकुल नाक-भौं सिकोड़ कर ऐसे उजड्ड व्यक्तियोंकी अक़्लपर दय करने लगता, न बोलनेका शऊर है इन्हें मेहमानोंके साथ कैसा सलूक होना चाहिए इस बातका। अभी तो इच्छा थी, किस तरह निकल जाये इनके चंगुलसे।

ज़मीनमें रखा सूटकेस उठाकर व लोगोंके चेहरोंके बीचसे अपनेको हटाता हुआ निकलने लगा। सरस्वतीने क़दम बढ़ाये सामने मकानका दरवाज़ा बन्द हो गया और कमरेसे निकलती रौशनी कमरेमें ही दुबकी रह गयी। पर किनारेके मकान बाहर किसीने अलाव जला दिया था, और धीमी रौशनी वातावरणको उजागर कि थी। मुकुलने अहातेसे बाहर सड़ककी तर देखा और जड़-सा हो गया। अँधेरेका ए ढेर-सा वहाँ जैसे उन्हें अपने नीचे दबोच ले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिए खड़ा था। सरदार-भाई अपने घरों को चले गये थे, और वहाँ पाँच-छह व्यक्ति रह गये थे। व्यक्तियोंकी कमीने उनकी सिहरन कम ज़रूर कर दी थी, मगर अथाह थकावट शरीरमें अभी उसी तरह पसरी हुई थी। यों अब उसे कुछ साहस बँध आया था, और ऐसी गन्दी बस्तीमें आना अब उसे हितकर लगा। बड़े शहरके किसी मुहल्लेमें होता…।

"रुकना भाई !" पीछेसे एक क्षीण आवाज़ उनपर आकर लिपट गयी और वे यकायक जड़-से हो गये। मुकुलकी इच्छा हुई, सरस्वतीका हाथ थामे भागता चला जाये, पर टाँगें जैसे एक-दूसरेसे उलझनेको थीं। उसे लग रहा था, कि वह आवाज़ किसी बुढ़ियाकी है। वह गरदन घुमाकर पीछे नहीं देख पाया। सरस्वतीने मुकुलका हाथ कसकर पकड़ लिया।

"सुनिन्दी आ गयी है।" एक छोकरा भागता हुआ उनके पास आया।

सिहरते शरीरकी कँपकँपी कम हो गयी और वह खीज उठा। पर विवशता-भरी एक उसाँस लेकर वह मुड़ गया, एक जवान-सी औरत उसकी तरफ़ बढ़ रही थी। उसके हाथोंके सफ़ेद चाँदीके मोटे-मोटे कंगन हलके उजालेमें चमक रहे थे।

"बाबू, निरंजनको खोजते हो ?" वह बोली, "कुँवर सिंह ठेकेदार है न। चौंफलेमें एक बिल्डिंग बन रही है। निरंजन वहीं काम करता है, उसीके पास।"

वह सोचनी लगी।

"वह इस वक़्त वहाँ नहीं मिलेगा।" फिर वह चिल्लायी, "अरे, सगुनियाँ ! सगुनियाँ रे !"

बारह-तेरह वर्षका एक लड़का सामने आ खड़ा हुआ। मुकुलने देखा, पेड़के नीचे जहाँ हलका अँधेरा था, और जहाँ कुछ क्षण पहले चारपाईमें तीन गँवार व्यक्ति बैठे थे, दो व्यक्ति आपसमें खुसर-खुसर कर रहे थे। सामने खड़ी औरत और लड़केसे उसका ध्यान हटकर, उन लोगोंपर जा जमा। सन्देहकी एक हलकी-सी छाया उसके मानसमें कौंध गयी। उसे अधिक हैरानी तब हुई, जब उसने देखा, सरस्वती भी वहीं देख रही है। इस औरतने बेकार उलझा दिया, नहीं तो अबतक वे स्टेशनके क़रीब पहुँच गये होते, वह सोचने लगा।

"सगुनियाँ, इन्हें चौंफले ले जाना। वहाँ भजनियाकी चा'की दुकानके साथकी झुग्गीमें केदार रहता है। याद कर ले नाम। केदार नाम पूछना। वह बतायेगा फिर कुँवर सिंह ठेकेदारका घर। तब तू चले आना। बाबू ख़ुद ठेकेदारके घर चले जायेंगे। तब ठेकेदारसे पता चलेगा कि निरंजनका घर कहाँ है। समझा।"

लड़केने समझनेकी स्वीकृति दी। दोनों थककर गिर पड़नेको थे। मुकुलने महसूस किया, कि उसके जिस्ममें कहीं भी जान नहीं है। वह जैसे ठूँठ-सा सूखे पेड़की तरह बस खड़ा-भर है। भाड़में जाये निरंजन ! कुछ क्षण विश्राम कर पाते, तो…।

पेड़के नीचेके दो व्यक्ति अभी भी कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्रणा-सी कर रहे थे। उसका मन हुआ, ज़ोरसे उसाँस लेकर अपनी थकावट दूर कर ले, मगर सरस्वती कहीं सुन न ले। वह, उसे हैरानी थी, किस तरह उनके सामने अभी-तक खड़ी रह पायी है। रात अँधेरी और काली थी। मुहल्लेके मुहानेपर खड़े अन्धकारके ढेरमें घुसकर वे मरी हुई चालसे लड़केके पीछे-पीछे सड़कपर निकल आये।

[पृष्ठ १०० का शेष : आठवाँ आश्चर्य]

"वह ज़रूर उस शुक्रके शैतानका यान रहा होगा।" फैली हुई रेतको देखकर मैंने कहा।

"कौन शक्रका शैतान?" एक मित्रने पूछा।

और मैंने संक्षेपमें सारी कहानी सुना दी। सुनकर प्रोफ़ेसर रामजीदास बोले, "यह बड़ा लेखककी दुम बनता है न! सो व्यर्थके दिवा सपनोंमें खोया रहा, या फिर कोई कहानी गढ़ ली होगी अपने उस टुट-पूँजिये साप्ताहिकमें छापनेके लिए।" फिर मेरी ओर मुड़ते हुए बोले, 'व्यासजी महाराज! यह पहला अध्याय है क्या आपके नये महाभारतका?"

और इसपर फिर चारों ओर क़हक़हे फैल गये।

साहित्य की सभी विधाओं में

कहानी-लेखन

ने नवोदित साहित्यकारों और पाठकों की नयी पीढ़ी का ध्यान सबसे अधिक आकर्षित किया है। किन्तु नवोदित लेखक इस क्षेत्र में प्रवेश करने पर प्रायः निराशा और असफलता ही पाता है। कारण है—आवश्यक प्रशिक्षण एवं मार्ग-दर्शन का सर्वथा अभाव।

इसी अभाव की पूर्ति लिये कुछ अनुभवी विद्वानों के सहयोग से **कहानी-लेखन महाविद्यालय** की स्थापना की गयी है। यह संस्थान नवोदित लेखकों को डाक द्वारा कहानी-लेखन के शिल्प का व्यावहारिक एवं सर्वांगपूर्ण प्रशिक्षण देता है। तथा उनकी रचनाओं के प्रकाशन में भी सहायता करता है। यह अपने ढंग का प्रथम व एकमात्र भारतीय संस्थान है तथा अनेक प्रमुख लेखकों और सम्पादकों ने इसकी प्रशंसा की है।

पूर्ण विवरण के लिए आज ही निःशुल्क विवरण-पत्रिका मँगाइये।

कहानी-लेखन महाविद्यालय
ग्रीन पार्क, नई दिल्ली–१६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

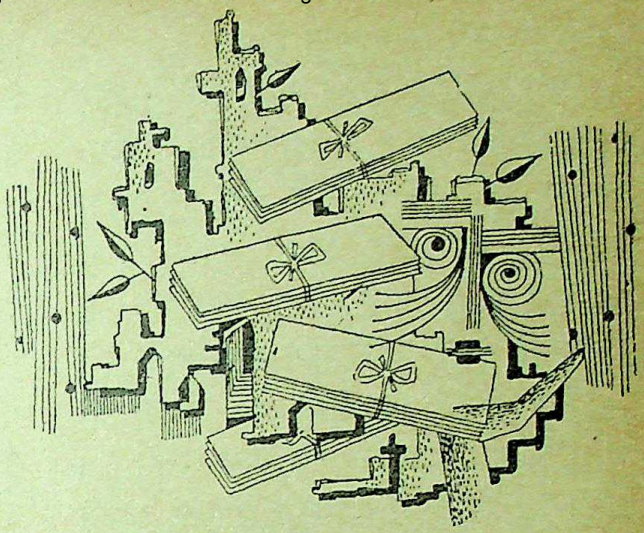

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

सहचिन्तन

▪ अस्तित्व और व्यक्तित्व

रोमसे एक मज़ेदार समाचार आया है कि इटली-सरकारके दो मन्त्रालय आपसमें लड़ रहे हैं। एक मन्त्रीका विभाग तो खूबसूरतीके पक्षमें है और दूसरे मन्त्रीका विभाग है मृत्युके पक्षमें, यानी लड़ाई खूबसूरती और मृत्युके कारण है। खूबसूरतीके पक्षमें है पर्यटन-मन्त्रालय और मृत्युके पक्षमें है सार्वजनिक निर्माण-मन्त्रालय। पहला कहता है – हमें खूबसूरतीको नम्बर एक महत्त्व देना चाहिए और दूसरा कहता है – हमें मृत्युको नम्बर एक महत्त्व देना चाहिए। दोनों अपनी बातपर इतने दृढ़ हैं कि बात मन्त्रालयोंके कक्षोंसे उछलकर बाहर समाचार-पत्रोंमें आ गयी है।

मोटी भाषामें बात यह है कि इटली सौन्दर्यका देश है और उसे और भी अधिक सुन्दर बनानेके प्रयत्न योजनापूर्वक होते रहे हैं। वहाँकी सड़कोंके दोनों ओर पले-पनपे वृक्षोंकी पंक्तियाँ हैं, जिनसे सड़कका सौन्दर्य बहुत अधिक बढ़ गया है और वातावरण मनमोहक; पर इस मनमोहक वातावरणका एक कुफल इस युगमें यह हुआ है कि मोटर चलानेवाले नागरिक कभी उसके सौन्दर्यसे मुग्ध होकर और कभी उसकी सघनतासे भ्रान्त होकर पेड़से मोटर टकरा देते हैं। इस तरह सड़कोंका सौन्दर्य मृत्युका मित्र बन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया है और नागरिकोंको उसके जालमें फँसानेका काम करने लगा है।

जब किसी दुर्घटनामें मृत्यु होती है और उससे हल्ला मचता है, तो सार्वजनिक निर्माण-विभाग उस दुर्घटना-क्षेत्रके कुछ पेड़ कटवा देता है। इस तरह पिछले वर्षोंमें हज़ारों पेड़ काट डाले गये हैं। और स्वाभाविक है कि इससे सड़कोंके सौन्दर्यमें कमी आयी है। 'इटेलियानोस्ट्रा' इटलीकी वह संस्था है, जो राष्ट्रीय इमारतोंकी देख-भाल करती है। उसने इस पेड़-कटाईके विरुद्ध आवाज़ उठायी है और नारा दिया है कि इससे देशका सौन्दर्य कम हो जायेगा और विदेशी पर्यटकों-की संख्या घट जायेगी, जो देशके सौन्दर्यसे आकर्षित होकर आते हैं। देशको उनसे आर्थिक लाभ तो होता ही है, देशका यश भी संसारमें फैलता है। सरकारका पर्यटन-मन्त्रालय उसका समर्थक हो गया है और इस तरह यह पेड़-कटाईका कार्य सरकारके दो मन्त्रालयोंके विवादका विषय बन गया है।

उस विवादको इटलीके सुयोग्य मन्त्रियों और उनके निपुण सलाहकारोंपर छोड़ दें और हम उसे जीवनके विचार-पटपर ले लें, तो वह व्यापक होकर, सड़कोंके पेड़ काटने न काटनेके दायरेसे निकलकर जीवनके अस्तित्व और व्यक्तित्वका प्रश्न बन जाता है। तब प्रश्नका स्वरूप यह नहीं रहता कि पेड़ काटें या नहीं? यह हो जाता है कि मुख्य बात जीवनका अस्तित्व है या व्यक्तित्व?

अस्तित्व न हो, तो व्यक्तित्व नहीं हो सकता; क्योंकि व्यक्तित्वका कलश टिकता है अस्तित्वके गुम्बदपर ही। तभी तो, और किसी डरपोक साधारण मनुष्यकी नहीं, ऋषिवर विश्वामित्रकी कथा है कि उन्होंने अस्तित्वके लिए कुत्तेका मांस खा लिया था।

इसके साथ ही यह भी ठीक है कि भगतसिंहका अस्तित्व सुरक्षित था, उसमें योग्यता थी, स्वास्थ्य था। वह अच्छी तरह चार पैसे कमाकर एक सुन्दर पारिवारिक जीवन बिता सकता था, पर उसने अपना अस्तित्व मिटाकर व्यक्तित्व पा लिया।

मन कुछ उलझता-सा है, पर उलझन है नहीं; क्योंकि अस्तित्वसे ही व्यक्तित्व है- 'शस्त्रेण रक्षिते देशे, शास्त्रचिन्ता प्रवर्तते'- शस्त्रसे देशकी रक्षा कर लें, तो शास्त्रकी, जीवनकी पूर्णताकी चिन्तना करें।

इस विचारको राष्ट्रनिर्माणके पटपर उतारें, तो सूत्र बनता है कि जो निर्माणबुद्धि राजधानीमें पार्कोंके निर्माणमें भरपूर धन देकर हज़ारों ठण्डमें ठिठुरते लोगोंके लिए बननेवाले रैन-बसेरोंके लिए पैसोंका अभाव घोषित करती है, वह वांछनीय नहीं है।

● दुर्लभ प्रशंसा

आस्ट्रेलिया और भारतकी क्रिकेट टीमों के बीच बम्बईमें जो दूसरा मैच हुआ, उसमें भारत जीत गया। पराजित टीमके कप्तान श्री बौबी सिम्पसनने भारतीय टीमके कप्तान श्री नवाब पटौदीके बारेमें कहा – "नवाबने अपनी टीमका नेतृत्व अच्छी तरह किया और उनकी बल्लेबाज़ी (बैटिंग) सबसे शानदार रही। इस खेलमें फ़ील्डरों और बॉलरोंने सिरोंसे और बीचसे उछलकर नवाबने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शॉट मारना प्रशंसनीय तो था ही, नायाब-अनुपम भी था। सचमुच नवाब भारतके महानतम कप्तान हैं।"

यह एक विरोधीके द्वारा विरोधीकी प्रशंसा है। इसे पढ़कर मुझे याद आ गयी पहलवान गामा और जेबिस्कोकी कुश्ती। गामाने कुछ ही मिनटोंमें जेबिस्कोको पछाड़कर विश्वविजयीकी उपाधि प्राप्त कर ली। इस घटनाके थोड़ी ही देर बाद मैंने जेबिस्कोसे पूछा – "गामासे हारकर आपको कैसा लग रहा है?" उनका उत्तर था – "गामा आदमी नहीं शेर है। मैं इसे अपना सौभाग्य समझता हूँ, कि मुझे गामासे कुश्ती लड़नेका अवसर मिला।"

जनरल ह्यूरोजने महारानी लक्ष्मीबाईके रण-कौशलकी भूरि-भूरि प्रशंसा की थी और सम्राट् अकबरने वीरवर फत्ताकी मूर्ति उनके मरनेके बाद दुर्गके द्वारपर स्थापित की थी।

यह सब क्या है? क्या यह केवल शिष्टाचार है? नहीं, यह जीवनकी गुण-दर्शिनी दृष्टिका शुभ प्रदर्शन है। यदि हम अपने विरोधियोंके भी गुण देख सकते हैं और प्रसन्न होकर उनका बखान कर सकते हैं, तो फिर अपनोंके गुण देखना और उनका बखान करना तो हमारे लिए सुगमसे भी सुगम होगा ही। इसका अर्थ है – समाजमें गुणदर्शी स्वभाव-का, दृष्टिकोणका विस्तार और यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि जिस समाजमें गुण-दर्शी दृष्टिकोणकी प्रमुखता होती है, उसमें गुणोंकी खेती और जिस समाजमें दोषदर्शी दृष्टिकोणकी प्रमुखता होती है, उसमें दोषोंकी खेती होती है।

फिर इस प्रशंसाको एक और दृष्टिकोणसे भी देखना आवश्यक है–कि जय-पराजय खेल-में भी होती है, युद्धमें भी और जीवनके दैनिक संघर्षमें भी। मानसिक सन्तुलनको जय भी बिगाड़ती है और पराजय भी। एक अहंकार-की माता है, तो दूसरी प्रतिहिंसाकी और अहंकार-प्रतिहिंसा मिलकर जिस सन्तानको जन्म देते हैं, वह है द्वेष, जो स्थायी क्रोधके सिंहासनपर बैठ ईर्ष्या और घृणाकी सेनाओं-का संचालन करता है। परस्पर गुणदर्शिनी प्रशंसा जय-पराजयसे उपजे उस घोर मान-सिक असन्तुलनको रोकती है और इस प्रकार समाजकी संरक्षिका शक्ति है। नीतिकारने कहा था – 'शत्रोरपि गुणाः वाच्याः'–शत्रुके भी गुणोंका बखान करना चाहिए। तो उचित है कि हम प्रशंसामें कभी कृपण न हों।

● यह गुलामी!

१९२२ की बात है। देशभक्त स्वामी प्रकाशानन्दजी गंगाके किनारे-किनारे हरद्वारसे कनखल जा रहे थे। वहाँ उन्हें एक सभामें भाषण देना था। रास्तेमें एक लम्बे-से मकान-पर उन्होंने अँगरेजीमें लिखा डॉक्टर पन्तका नाम देखा। संयोगकी बात, वर्षामें नाम धुँधला पड़ गया था और 'पण्ट' पूरी तरह चमक रहा था। देखकर स्वामीजी खड़े हो गये और भीतरसे डॉक्टर साहबको बुलवाया।

डॉक्टर साहब आये, तो स्वामीजीने पूछा, "इस इतने बड़े मकानमें किस साहबकी पैण्ट'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(पतलून) है ?" डॉक्टर साहब स्वामीजी-का मज़ाक़ नहीं समझे, तो उन्होंने इशारेसे दिखाया वह अँगरेज़ीमें लिखा –'पण्ट'। हँसीकी बात थी, सब हँस पड़े, पर स्वामीजीने अपने भाषणमें भी इसका ज़िक्र किया और कहा – "हम अँगरेज़से ज़्यादा अँगरेज़ियतकी ग़ुलामी-में फँसे हुए हैं।"

युग बीत गये, इस बातको और अँगरेज़-की ग़ुलामीको समाप्त हुए भी युग बीत गया, पर अँगरेज़ियतकी ग़ुलामी आज भी किस तरह हमपर छायी है, एक शब्दने इसका बड़ा ही कड़वा प्रदर्शन कर दिया है। नागा-लैण्डके विद्रोही नेताओंसे शान्ति-मिशनकी जो बातचीत हुई है, उसके समाचारोंमें भारत सरकारके विदेश-विभागके प्रमुख सचिव श्री गुणदेवियाका नाम पढ़ा, तो मनमें आया कि बड़ा भावपूर्ण नाम है। कुछ दिन बाद हिन्दीके ही एक दैनिकके शीर्षकमें पढ़ा – श्री गुण्डेविया।

पढ़कर बड़ा अजीब-सा लगा और सोचा कि यह कैसा नाम है, पर समाचार पढ़ा, तो यह श्री गुणदेवियाका ही नाम था। बात यह कि अँगरेज़ी लिपिमें 'ण' नहीं है और 'द' भी नहीं, इसलिए अँगरेज़ीसे समाचारका अनु-वाद करते समय गुणदेवियाजी गुण्डेविया हो गये। इसके कई दिन बाद एक ऊँचे दरजेके हिन्दी दैनिकमें गुण्डेवियाजीने गण्डेवियाजीके रूपमें दर्शन दिये; क्योंकि अँगरेज़ी लिपिका 'यू' अक्षर 'उ' की आवाज़ भी देता है और 'अ' की भी, तो अपनी-अपनी रुचि है कि एकने 'उ' माना, तो दूसरेने 'अ' मान लिया। ग़नीमत है कि किसीने उन बेचारोंकी गंडे-रिया बनाकर नहीं बेची !

मुझे फिर स्वामी प्रकाशानन्द याद आ गये, जिन्होंने १९२२ में दुःखभरे शब्दोंमें कहा था – "हम अँगरेज़से ज़्यादा अँगरेज़ियतकी ग़ुलामीमें फँसे हुए हैं।" इसी ग़ुलामीकी माया है कि इस देशमें ऐसे लोग भी नेता शब्दसे सम्बोधित होकर मंचोंपर माला पहनते हैं, जो गुणदेवियाको गण्डेविया बना देनेवाली लिपिको भारतीय भाषाओंकी लिपि बनानेकी निर्लज्ज बात खुले आम कहते हैं।

• यहींतक नहीं

अँगरेज़ियतकी यह ग़ुलामी यहींतक नहीं, इससे भी बहुत गहरी है, इसका पता हिन्दीके सैलानी लेखक श्री ब्रजकिशोर नारायणकी यात्रा-पुस्तक 'सात समन्दर पार' पढ़-कर चलता है। उसमें एक जगह लिखा है कि लन्दनमें मिलनेपर प्रोफ़ेसर परमानन्दने नारायणसे कहा – "मेरी समझमें अभीतक यह बात नहीं आ रही है कि हिन्दी, संस्कृत, बँगला या दूसरे ऐसे कई विषयोंकी पढ़ाईके लिए हमारी सरकार और विश्वविद्यालय अपने विद्यार्थियोंको लन्दन क्यों भेजते हैं, जिनकी पढ़ाई वे अपने यहाँ ही, यहाँसे करोड़ दरजे अच्छी करा सकते हैं ! अगर भारतीय विश्वविद्यालयोंसे डॉक्टरेट पानेपर हमें उतनी वेतन-वृद्धि मिले, जितनी कि विदेशी विश्व-विद्यालयोंसे डॉक्टरेट पानेपर मिलती है, तो मैं आपसे शपथपूर्वक कहता हूँ कि हम लोग हरगिज़ भी विलायतका मुँह न देखें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाल-बच्चोंको अनाथकी तरह छोड़कर और यहाँ व्यर्थमें अपना सब-कुछ बरबाद कर हम क्या प्राप्त करते हैं, मेरी तो समझमें कुछ भी नहीं आता। यहाँके प्रोफ़ेसर भी हम लोगोंकी इस नीतिका मखौल उड़ाते हैं।"

और यह कूटनैतिक पहलू भी देखिए – "अब लन्दनमें आनेवाले विद्यार्थी भी लन्दनकी आमदनीका एक ज़रिया हैं। पौण्डोंकी वृद्धि विद्यार्थियोंकी संख्या और उनके लन्दन-निवासकी अवधिपर निर्भर है, इसलिए भारतीय विद्यार्थी, दो वर्षकी जगह जिस कोर्सको अपनी योग्यतासे डेढ़ वर्षमें ही पूरा कर लेते हैं, उन्हें चार-चार वर्ष उन्हीं परीक्षाओंमें फेल करके बरबाद किया जाता है।"

और यह है एक शर्मनाक पहलू इसी ग़ुलामीका – "एक अँगरेज़ विशेषज्ञने तो यहाँतक कहा कि हिन्दीके डॉक्टर हम बनायें, संस्कृतके डॉक्टर हम बनायें, और तो और भारतके बड़े-बड़े विद्वानोंको वहाँकी सरकार और विश्वविद्यालय जनपदीय भाषाओंपर भी डॉक्टरेट लेनेको यहाँ भेजे, और यहाँसे जानेपर रातोंरात उन्हें सर्वश्रेष्ठ विद्वान् मान ले, यह अँगरेज़ोंके लिए भले ही गौरवकी बात हो, भारतके लिए तो हास्यास्पद भी है और हानिप्रद भी !!"

क्या हमारी मानसिक ग़ुलामी इतनी सघन है कि स्वतन्त्र होकर भी हास्यास्पद और हानिप्रद बातोंमें भी हम गौरव अनुभव करते रहें और गुणदेवियाको गण्डेविया पढ़कर लज्जित न हों, सिर्फ़ मुसकरायें ?

● यह सिद्ध कर दिया है

दिल्लीमें काँग्रेसके अध्यक्ष श्री कामराज नाडारको जो अभिनन्दन-पत्र दिया गया, उसमें कहा – "आपने यह सिद्ध कर दिया है कि बिना अँगरेज़ी पढ़े राजनैतिक और प्रशासनिक समस्याओंको समझा तथा सुलझाया जा सकता है। यह भारतकी राजनीतिमें एक नये युगका सूत्रपात है।"

अँगरेज़ोंने १८५७ के विप्लवके बाद भारतकी जनताकी तेजस्विता नष्ट करनेके लिए एक साथ दो उपाय किये थे। पहला भयंकर दमन और दूसरा मानसिक हीनताका प्रसार। भारतकी जनतामें मानसिक हीनता उत्पन्न करनेके लिए इतिहासको भ्रष्ट किया गया और अँगरेज़ीको इतना महत्त्व दिया गया कि जो अँगरेज़ी नहीं जानता, वह कुछ भी नहीं जानता। कितना राष्ट्रीय दुर्भाग्य है यह कि स्वतन्त्रताके सत्तरह वर्ष बाद भी हम उस भ्रमसे नहीं निकल पा रहे हैं। यह सौभाग्यका चमत्कार है कि सबसे बड़े राजनैतिक दलके अध्यक्ष श्री कामराज और केन्द्रीय शासनके प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री, दोनों ही विश्वविद्यालयोंका निर्माण नहीं हैं। आज देशकी शिक्षाको नया रूप देनेसे लिए गहरे प्रयत्न हो रहे हैं। इन प्रयत्नोंके कर्णधार इस बातसे प्रेरणा लें, तो वे शिक्षाको राष्ट्रीय शिक्षा बनानेमें निश्चय ही सफल होंगे।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

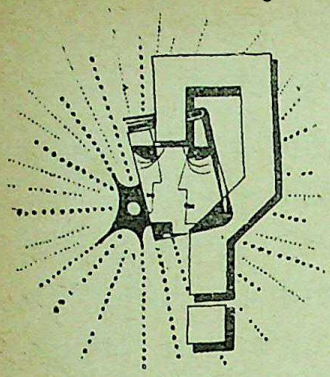

क्या 'रामकी शक्तिपूजा' 'सरोज-स्मृति' का रूपान्तर है ?

१ – निरालाके चारित्र्यकी एक पेशक़दमी ?

ज्ञानोदयके सितम्बर १९६४ अंकमें प्रकाशित डॉ० रमेश कुन्तल मेघके समूचे लेखको पढ़नेपर, किसी भी पाठकको यह स्पष्ट हो जायेगा कि डॉ० मेघकी सारी थीसिस, मनोविज्ञानके पूर्व आग्रहोंसे पीड़ित है। अपनी चौंका देनेवाली शैलीमें वह लिखते हैं – "सिगमण्ड फ्रॉयडने लियोनार्दो विंशीके चित्रोंके आधारपर उसके शैशवकी जीवनी और सम्पूर्ण चरित्रको उद्घाटित कर दिया।" और यहाँ मैं लिखना चाहता हूँ कि "डॉ० मेघने 'रामकी शक्तिपूजा' और 'सरोज-स्मृति' को लेकर निरालाके चरित्रकी परतोंको खोलनेका साहसी प्रयास किया है। अन्तर ? इतना ही है कि फ्रॉयड सम्पूर्ण चित्रोंको लेता है और डॉ० मेघ दो कविताओंको। पूरा लेख फ्रॉयडवादी चेतनासे आक्रान्त है। डॉ० मेघ चौंकें नहीं यदि मैं शुरू में ही बता दूँ कि सरोज-स्मृति और 'रामकी शक्तिपूजा' सर्वथा दो स्वतन्त्र रचनाएँ हैं। स्वतन्त्र रचनाओंके लिए प्रेरणा, शिल्प, भाव, और कथ्यकी जो भिन्नता चाहिए वह इनमें है। इनमें वही समानता है जो एक कविकी किन्हीं दो रचनाओंमें सम्भव हो सकती है।

डॉ० मेघके लेखके तीन भाग हैं, उपलब्धियाँ, तर्क और समानान्तरताएँ। उप-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लब्धियाँ हैं – आत्मकथाके किसी कोने प्रसार-की खोज, 'चिरन्तन नारीशक्तिका प्रसार', 'सरोज-स्मृति' की चेतनाका 'रामकी शक्ति-पूजा' में रूपायन, कविका जीवन-भर राम-वृत्तसे तादात्म्यीकरण और 'सरोज-स्मृतिके शोकका 'शक्तिपूजा'के उत्साहमें उदासीकरण। इन उपलब्धियोंको प्रस्तुत करनेवाले जो तर्क दिये गये हैं, हैं वे : (१) 'स्मृति' के कविके वातावरणकी शक्तिपूजाके रामके पौराणिक वातावरणसे समानता। (२) सरोजकी मृत्युसे राम-रावण-युद्धकी समानता। (३) छायावादी कवि होनेके नाते निरालाका अपना चरितनायकके पारदर्शी हासियेमें लिखनेका आदी होना। (४) रामकी शक्तिपूजाकी रचना सरोज-स्मृतिके एक साल बाद होना। इन तर्कोंको प्रतिफलित करने-वाली समानान्तरताएँ निम्न हैं। इनमें कुछ समानान्तरताएँ मानसिक हैं और कुछ प्राकृतिक। सरोज-मृत्युसे निराला निराश हैं, राम भी युद्धके बाद निराश हैं। निरालामें उनका कवि प्रबुद्ध है, रामके लिए हनुमान् प्रबुद्ध हैं। यहाँ श्रावण नभका अन्धकार है, वहाँ नैशगगन अन्धकार उगल रहा है। यहाँ निरालाकी सायकिक है और वहाँ मशाल जल रही है। निरालाको सरोजकी याद आती है और रामको सीताकी। निरालाको उनकी पुत्री मार्ग-दर्शन देती है, और रामको जाम्बवान्। यहाँ विवाहकी मौलिक कल्पना है और वहाँ शक्तिपूजाकी। कान्यकुब्जको कन्या देना, कविके लिए वैसा ही है जैसे सीताका रावणके यहाँ जाना। सामाजिक मूल्योंके लिए संघर्ष और असत् जयकी आशंका दोनोंमें है।

थोड़ी देरके लिए हम मनोविज्ञानके नज़रियेको दूर कर दें और तब देखें कि आलोच्य रचनाओंका कथ्य क्या है। 'सरोज-स्मृति' निरालाने अपनी बच्चीकी मृत्युपर लिखी है। यह तथ्य है। परन्तु उसे शोकगीत मान लेना ठीक नहीं। वह एक लम्बी प्रबन्ध-धर्मा कविता है, जो आत्मकथन-शैलीमें लिखित है। अतः यह उस अर्थमें शोकगीत नहीं है, जिस अर्थमें रोमाण्टिक कवियोंके गीत प्रसिद्ध हैं। सरोज-स्मृतिमें विद्रोह, उत्साह और संकल्पका स्वर अधिक प्रबल है। अपनी १८ वर्षीय पुत्रीके निधनपर कविको दुख है, परन्तु उससे अधिक दुख उसे इस बातका है कि वह पुत्रीके सुखके लिए कुछ नहीं कर सका। इसके लिए वह खुदको दोष देता है। आर्थिक पथमें अनर्थकी आशंका-के कारण कवि अर्थोपार्जनसे विरत रहता है, इसका फल उसकी पुत्रीको भोगना पड़ता है। परन्तु कविको सन्तोष है कि उसने किसी-का शोषण नहीं किया, वह अनवरत काव्य-साधनामें लगा रहा। वह जो कुण्डली फाड़ता है या विवाहका प्रस्ताव ठुकराता है, वह केवल सरोजके प्रति ममताके कारण। पुत्री तरुण होती है कवि रूढियाँ तोड़कर उसका विवाह कर देता है, पुत्री लौटकर आती है और उसकी मृत्यु हो जाती है। अन्तिम पंक्तियोंमें कवि कहता है –

"दुख ही जीवन की कथा रही
क्या कहूँ आज, जो नहीं कही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो इसी कर्म पर वज्रपात
यदि धर्म, रहे नत सदा माथ"

इस प्रकार 'सरोज-स्मृति' में शोक ही नहीं है अपितु सौन्दर्य-बोध, सामाजिक संवेदना और विद्रोह भी है। वह, कवि आत्मचरितका खुला आँगन है। उन्होंने अपने चरितका एक भी कोना अछूता नहीं छोड़ा जिसका प्रसार रामकी शक्तिपूजामें दिखाया जा सके। निरालाका काव्य जीवनके सत्यके प्रयोगोंका है। एक बार आत्मचरित लिखनेके अनुरोधपर उन्होंने कहा था – "मैंने अपनी कृतियोंमें अपने जीवनका सत्य लिख दिया है, जाकर मेरी सभी कृतियोंको खरीदकर पढ़ो स्वयं मालूम हो जायेगा कि मैं क्या हूँ।" निरालाके कविने जीवनके सत्यको देखा ही नहीं उसे स्पष्ट स्वरमें अभिव्यक्ति भी दी है, वह कुण्ठाओं और वर्जनाओंका कवि नहीं है, वह जीवनकी संघर्षशील चेतनाका कवि है। उसने काव्यके पूरे पृष्ठपर, अपना चरित अंकित किया है न कि पारदर्शी हाशियेमें।

'रामकी शक्तिपूजा' वर्णनात्मक प्रबन्ध-धर्मा कृति है जो कविकी प्रबन्ध-प्रतिभाका सुन्दरतम निदर्शन है। रचनाकी मूल प्रेरणा है, राम-द्वारा शक्तिकी आराधना। 'सरोज-स्मृति' की विवाह-कल्पना और 'शक्तिपूजा' में मौलिकता अवश्य है परन्तु दोनोंके दृष्टि-कोणमें अन्तर है। एकमें अ-समझौतावादी क्रान्तिवादी दृष्टिकोण है जब कि दूसरेमें समझौतावादी समर्पण। चाहे एक बैठककी देन हो या कई, शक्तिपूजाके कथ्यमें एक अन्विति है। 'रामकी शक्तिपूजा' एक पौराणिक सन्दर्भ है और उसे इसी परिप्रेक्ष्यमें देखना चाहिए। शिवभक्त रावणसे जीतनेके लिए रामके सम्मुख शक्तिकी आराधना ही एकमात्र विकल्प था। जाम्बवान् जो आराधनाका उत्तर आराधनासे देनेके लिए कहता है उसका अर्थ यही है कि जब अदृश्य सत्ता अन्यायका पक्ष लेती है तो अन्यायको केवल भौतिक शक्तिसे पराजित नहीं किया जा सकता, उसके लिए आराधना करना अनिवार्य है। राम यही करते हैं। शक्ति एक कमल उठा लेती है यह देखकर राम हताश होते हैं, फिर अपनी आँख चढ़ानेको तत्पर हो जाते हैं, शक्ति अन्तमें उनका वरण कर लेती है। इसमें उदात्तीकरणका प्रश्न ही नहीं उठता। इसी प्रकार जीवनकी प्रथम हारसे खिन्न रामके मनमें प्रेम और युद्धके जो स्मृति-चित्र उभरते हैं वे भी स्वाभाविक हैं। साहित्यकी दृष्टिसे ये शृंगार-स्मृति संचारी बनकर वीररसको उद्दीप्त करते हैं। शक्तिपूजाके राम मनुष्य हैं ईश्वर नहीं। कविका उन्हें इसी रूपमें चित्रित करनेका प्रयास है। यह आवश्यक नहीं कि उसका कविके जीवनसे सम्बन्ध हो। राम केवल एक प्रसंगमें हार मानते हैं, न कि पूरे जीवनमें।

डॉ० मेघने जिन समानान्तरताओंका उल्लेख किया है वे असमानान्तरताएँ अधिक हैं। सरोजकी मृत्युका राम-रावण-युद्धसे कोई साम्य नहीं। दोनोंकी परिस्थितियाँ भिन्न हैं। सरोजको कान्यकुब्ज समाजको देना और रावण-द्वारा सीताका अपहरण एक बात नहीं। व्यक्तिगत जीवनमें निराला कर्म

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं हारे। उन्होंने स्वयं सरोजका एक सत्साहित्यिक युवकसे क्रान्तिकारी विवाह कर दिया था। इसे उनकी हार कहना ग़लत है। यह विवाह मौलिक कल्पना नहीं बल्कि एक क्रान्तिकारी घटना है। 'सरोज-स्मृति'का कवि अपनी पुत्रीके निधनसे दुःखी है, परन्तु इससे अधिक दुःखी इस बातसे है कि वह उसे सुख नहीं दे सका। एक तो वह अनर्थ आर्थिक पदपर नहीं चला, और दूसरे काव्य-साधनामें लगा रहा। लेकिन इसके बदले, उन्होंने अपनी कन्याको जो प्रेम दिया है वह बहुत कम पिता दे सके हैं। पुत्रीको देखकर कुण्डली फेंक देना, पुत्रीकी कुण्डलीके टुकड़े-टुकड़े कर देना, कविका विवाहके प्रस्तावको ठुकरा देना, उस ममताकी जीती-जागती कहानी है जो निरालाने अपनी पुत्रीको दी। कमसे कम, वह अपने पिताके दूसरे विवाहकी भूल नहीं दुहराता। निराला भी 'भाग्यांक' मिटानेका संकल्प करते हैं, और राम भी। परन्तु दोनोंके भाग्यांकका अर्थ अलग-अलग है। एक ईश्वरीय विधानको समस्त शक्तिसे अस्वीकार करता है, जब कि दूसरा उसके सम्मुख माथा टेक देता है। एक मर्यादा तोड़ता है, दूसरा मर्यादावादी है। राम पुरुषोत्तम नवीन इसलिए नहीं हैं कि वे क्रान्तिकारी हैं, वरन् इसलिए कि शक्तिकी प्रसन्नताके लिए वह एक मौलिक त्याग करते हैं। 'सरोज-स्मृति'का कवि न तो किसीकी आराधना करता है और न 'शक्तिपूजा'के तथाकथित उदात्तीकरणके बाद, उसके दृष्टिकोणमें अन्तर आया। राम, जाम्बवन्तकी बात मान लेते हैं, निरालाका कवि अपनी सासकी बात नहीं मानता। यह तथ्य है कि सरोजकी मृत्यु सावन सुदी एकमको हुई थी। यह भी तथ्य है कि मध्यनिशामें मन्त्रणाके समय, रामके पास मशाल जल रही थी, यह एक तथ्यात्मक समानता है। मशाल यहाँ सायकिककी प्रतीक नहीं है। 'स्मृति'में उसके कविके 'वात्सल्य'की भूख इतनी मिट चुकी है कि 'शक्ति'के हनुमानसे वह तृप्तिकी अपेक्षा नहीं रखता। हनुमान भी वात्सल्यके नहीं, सेवाभावके प्रतीक हैं। यदि कविको वात्सल्यकी भूख थी भी, तो उसका पुत्र तो जीवित था। यह कल्पना भी ग़लत है कि "कविको उसे (सरोज) साथ लेकर गंगा-विहार करना याद आता है।" वास्तवमें सरोज और उसका भाई, सैकत विहार करने जाते हैं, कवि नहीं।

कविके जीवनका दुःख यह है कि उसने सृजनके लिए घर-गृहस्थीकी उपेक्षा की, फिर भी उसके सृजनका महत्त्व नहीं आँका गया।

इस प्रकार हम पाते हैं कि डॉ० मेघकी सारी समानान्तरताएँ काल्पनिक और तथ्योंसे दूर हैं। अतः उनपर टिके तर्क और उपलब्धियाँ, स्वयमेव ढह जाती हैं। न तो 'स्मृति'की चेतनाका 'शक्ति'में रूपायन है, न सरोजका विश्व मातृ-शक्तिके रूपमें उदात्तीकरण है, और न निरालाका राममें। सोचनेकी बात है कि उदात्तीकरणके बाद रह ही क्या जाता? डॉ० मेघकी यह धारणा ही भ्रान्त है कि निराला छायावादी कवि हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और यह कि वे राम-जीवनसे तादात्म्यीकरण करते रहे। अपनी ग़लत धारणापर उन्हें ताज्जुब भी है। निराला छायावादी कवि नहीं हैं। उनमें एक नहीं, कई रंग हैं, निरालाका कवि सामाजिक संवेदनाका कवि है, वह जीवनको जीवनके माध्यमसे व्यक्त करता है। उसकी अनुभूति यथार्थपर आधारित है, कल्पनापर नहीं। वह सुख-दुःखका समन्वय नहीं करता, वह वेदनाकी गहराईको जीवनका केन्द्र नहीं बनाता, और न आनन्दकी ऊँचाईको छूनेका प्रयास करता है। उसमें करुणा है परन्तु विद्रोहके साथ, उसमें व्यंग्य है क्योंकि जीवनके आघातोंको उसने वज्रकी क्षमतासे सहा है। निराला जीवनकी शक्तिका कवि है, न कि मनोविज्ञानकी दरिद्र अस्मिताओंका कवि। 'सरोज-स्मृति' उसके जीवनकी एक घटना है, न कि समूचे काव्यकी चेतना। काव्य, उसका खुला जीवनचरित है। और वह अपने आपमें इतना उजागर है कि किसी पारदर्शी हाशियेकी आवश्यकता नहीं है? जब वह लिखता है तो कुछ भी 'अनकही' नहीं छोड़ता।

"क्या कहूँ आज, जो नहीं कही"

ऐसी कोई बात ही नहीं, जो उसने न कही हो, जिसे वह आज कहे। 'स्मृति'के बाद ही 'मरणदृश्य'में इसी बातको वह कहता है, 'कहा जो, न कहो'। अतः 'जो नहीं कही' को अनकही समझकर उसकी प्रतिध्वनि, 'शक्तिकी पूजा'में ढूँढ़ना निरर्थक है। 'सरोजकी मृत्यु' न भी होती तब भी 'रामकी शक्तिपूजा' वह लिखते, क्योंकि कवि उस बंगालमें जन्मा था जहाँ शक्ति-पूजा जनजीवनका अंग है। निरालाका कवि और जीवन, मनुष्यकी सामाजिक चेतना, संघर्ष और निर्माणका कवि है, वह मानवताका अविकार स्वप्नद्रष्टा रहा है, और इसी दृष्टिसे उसके कविका मूल्यांकन होना चाहिए।

— देवेन्द्रकुमार

२ – संकीर्ण सीमाएँ और असंगति

डॉ० रमेश कुन्तल मेघके लेखके सम्बन्धमें कहे ये सम्पादकीय शब्द "महाकवि निरालाकी दो प्रसिद्ध रचनाओंके आधारपर यह लेख आत्म-चरितके उद्घाटनकी एक सम्भावना है," मात्र सम्भावना ही है, फ्रॉयडकी सम्भावनाकी सम्भावना क्योंकि 'लियोनार्डो द विंशीके चित्रोंके आधारपर उसकी शैशवकी जीवनी और सम्पूर्ण चरित्रको उद्घाटित' करनेमें फ्रॉयडने मात्र एक या दो चित्रोंका आधार नहीं लिया था, जब कि महामानव 'निराला' के व्यक्तित्वकी परिधि प्रेमी-कलाकार विंशीसे कई गुनी अधिक विस्तृत है। फलतः केवल 'इन दो रचनाओंका मुक़ाबला करके निरालाके चारित्र्यकी पेशक़दमी' करना एकांगी दुराग्रह है और है निरालाके व्याप्त चारित्र्य-क्षितिजको संकीर्ण सीमाओंमें खोजनेका प्रयास!

डॉ० मेघकी स्थापना है: "निरालाकी 'रामकी शक्तिपूजा' बेशक 'सरोज-स्मृति'का रूपान्तर तथा विस्तार है।" वस्तुतः ऐसा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न होकर कविकी दो विभिन्न मनोदशा और चेतना-विकासका परिणाम है। 'स्मृति' निरालाके वेदनासम्पृक्त आकुल हृदयकी भावपूर्ण अनुभूतियोंकी सहज अभिव्यक्ति है जब कि 'शक्तिपूजा' बौद्धिकतासे आवृत चिन्तनके परिपूर्ण क्षणोंकी वाणी है। एकमें भावोंका उन्मुक्त प्रवाह है तो दूसरी रचना सायास प्रौढ़ शैलीका उच्चतम निदर्शन।

यद्यपि कवियोंका आत्मचरित नायकोंमें प्रतिबिम्बित हो उठता है – 'आत्मचरित पारदर्शी हाशियों'में खोजा जा सकता है लेकिन महाकवि निरालाके निस्संग व्यक्तित्व-की 'आत्मकथाके किसी कोनेका प्रसार' खोजनेमें यह ढूँढ़ निकालना कि " 'रामकी शक्तिपूजा' 'सरोज-स्मृति' का रूपान्तर तथा विस्तार है" बेशक 'बेजा' है। विचारणीय यह है कि 'क्या यह सम्भव है ?' निरालाका जीवन, व्यक्तित्व और संघर्ष – उनका आत्म-चरित सर्वविदित है फिर केवल इन दो रचनाओंमें ही उनका आत्मचरित देखना और एक दूसरेको रूपान्तर कहना, कहाँतक ठीक है ? आखिर इस लेखसे डॉ० मेघने किन नवीन अज्ञात सम्भावनाओंको प्रकाशमें लानेका कष्ट उठाया है ? वस्तुतः निराला-का व्यक्तित्व – आत्मचरित – उनके काव्यमें सम्पूर्ण रूपमें ही समाहित है। उसे खण्डोंमें – 'कोनोंके प्रसार' में – नहीं देखा जा सकता। श्मशानमें आधी रातके समय 'जूहीकी कली' लिखनेवाले निरालाकी मनोदशा (मूड) किस 'मनोवैज्ञानिक नज़रिये' से परखी जा सकती है यह सुधी समीक्षक समझ ले फिर खोजे कि 'स्मृतिकी चेतनाका शक्तिपूजा' में 'आद्यन्त रूपायन' कहाँतक हुआ है। वस्तुतः उनकी काव्य-चेतनाका विकास और प्रसार कुछ साम्य या घटनासे ही नहीं बाँधा जा सकता है, उनकी चेतना सतत ऊर्ध्वगामी रही। 'रामके व्याजसे निरालाके युद्धके वर्णन' में, कुटिल सामाजिक द्वन्द्वोंसे चेतना कभी आक्रान्त नहीं हुई। चेतनागत पक्षसे भी देखा जाये तो स्पष्ट ही 'स्मृति' और 'शक्ति-पूजा' दो पृथक् मनोदशा और चेतनाकी उद्धरणी प्रस्तुत करती हैं। एकमें हृदय मुखरित हुआ था तो दूसरेमें संघर्षशील अजेय पौरुषकी साधना और दृढ़ता, अपनी सम्पूर्ण चिन्तनाके साथ।

सरोजको 'अपने पिताको दुस्तरतम गहकर तारनेकी चिरन्तन' नारी-शक्ति (ईटर्नल फ़ेमिनीन) कहना मात्र शब्दा-डम्बर है, भावसंकुल वेदना-प्रवण शोकगीतमें स्नेही पुत्रीके लिए इस रूपकी सम्भावना शायद निरालाके हृदयमें भी न थी। क्योंकि शोक-सम्पृक्त कवि सम्पूर्ण कविताको एक श्रद्धातर्पणके रूपमें समर्पित करता है।

खण्डकाव्य 'तुलसीदास' को 'नाटक' कहा गया है यह भ्रान्तिपूर्ण है।

डॉ० मेघका कथन "सरोज-स्मृतिमें पहली बार त्रासदी और त्रासद नायकका जो जन्म हुआ····उत्तर-निराला-चरितम् है यह" भी भ्रान्त है, 'मैं पिता निरर्थक था' और 'दुःख ही जीवनकी कथा रही···' में पिताका शोकविह्वल हृदय अवश्य है लेकिन संघर्षोंमें भी निरालाका कलाकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहीं भी आक्रान्त नहीं हुआ। 'आत्म-कथाके किसी कोनेका प्रसार' ढूँढ़ निकालने-वाले समीक्षक महोदय जिसे 'दर्द-भरा उत्तर निराला चरितम्' कह रहे हैं वह उनकी चेतना और जीवन-संघर्षका मात्र एक सोपान है, यहाँतक निरालाकी सजग चेतना संघर्ष और उसके परिणाम दर्दमें खो नहीं जाती वरन् यहींसे अधिक प्रखर हो सामाजिक चेतनाका रूप धारण करती है। 'कुकुरमुत्ता' 'नये पत्ते' उनकी चेतना विकासके वे परि-पार्श्व हैं जिनमें उनकी ऊर्ध्वगामी चेतनाको समझा जा सकता है, केवल दो रचनाओंमें सीमित करके नहीं। 'उत्तर निराला चरितम्' का प्रसार वस्तुतः उनके अन्तिम विनय और भक्तिगीतों (अर्चना, आराधना, गीतगुंज) तक है। आत्मचरितका दर्द-भरा प्रसार वहाँ-तक है, शक्ति-पूजा' 'और 'स्मृति' मात्र एक झलक है, उनका आत्मचरित तो अव्यक्त रूपसे उनके सम्पूर्ण साहित्यमें एकतार अनुस्यूत है। दोनों रचनाओंकी घटनाओंमें दूरागत सम्बन्धका तालमेल बैठाना कलाबाजी मात्र है।

इसके अलावा भी निरालाके व्यक्तित्वका प्रसार और आत्मचरितका कोना खोजनेमें उनके सबसे प्रिय माध्यम 'बादल'को विस्मृत नहीं करना चाहिए, उनका सम्पूर्ण जीवन बादलके माध्यमसे भी तो ध्वनित है, वही उनके आत्मचरितका ऐसा प्रतीक और कोना है जहाँसे सबका छोर प्राप्त किया जा सकता है। उसीमें 'स्मृति'की करुणा और 'शक्तिपूजा' की शक्ति, ओज और परुषताका समाहार है।

इसलिए एक संकीर्ण सम्भावनाके आधार-पर 'शक्तिपूजा' को 'स्मृति' का रूपान्तर और विस्तार कहना असंगत है।

— बुद्धिचन्द्र वक्त

३ — दोनों रचनाओंमें बहुत दूर तक साम्य है

रचनामें जो कुछ भी आता है रचना-कारसे होकर आता है। अतः वह अपने साथ ही रचना करनेवाले प्राणीका भी एक धुँधला-सा परिचय दे जाता है। गुलाबका पुष्प भेंट करनेवाला व्यक्ति कुछ न कहते हुए भी इतना तो कह ही देता है कि काँटा वह नहीं दे रहा। आधुनिक मनोविज्ञानके प्रकाशमें संसार-साहित्यको सामने रखकर 'साहित्यकार' को ढूँढ़नेकी स्पृहा सचमुच बहुत आनन्दप्रद होगी। अस्तु, रचनामें रचनाकारका जीवन भी आ जाता है। रचनाकारका सम्पूर्ण कृतित्व उसीकी चेतनाका विस्तार है। तभी तो फ्रॉयडने लियोनार्दो-द-विंशीके चित्रोंके आधारपर उनकी शैशवकी जीवनी और सम्पूर्ण चरित्र उद्घाटित कर दिया था।

अब रही एक ही लेखककी दो रचनाओं के साम्य-वैषम्यकी बात। इस सम्बन्धमें मेरी मान्यता है कि रचनाकारके सम्पूर्ण अस्तित्व को परिचालित करनेवाला कोई एक ही केन्द्रबिन्दु होता है और नामुमकिन नहीं कि कोई समर्थ विश्लेषणकर्ता रचनाकारकी प्रत्येक अभिव्यक्तिकी रेखा उस बिन्दुसे मिल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दे। इतना ही नहीं, मेरा तो यह विचार है कि परस्परविरोधी दीख पड़नेवाली अभिव्यक्तियोंमें भी प्रायः एक ही सूत्र होता है जो कारणवश विरोधी दिशा ग्रहण कर लेता है। अवश्य ही इस उद्घाटनके लिए रचनाके सन्दर्भ और रचनाकारके परिवेशका सूक्ष्म ज्ञान अनिवार्य है, और बाह्य विरोधकी आन्तरिक संगति बैठाना तो बहुत बूतेकी बात है। इसे मनका कोई समर्थ अन्वेषी ही कर सकता है।

पूर्ण विश्लेषण तक पहुँचनेके पूर्व भूमिकाके तौरपर एक बात और रह जाती है। वह यह कि रचनाकारके सम्पूर्ण कृतित्वको निरपवाद रूपसे उपर्युक्त कसौटीपर नहीं कसा जा सकता। एक लेखककी सभी रचनाओंके पारस्परिक सम्बन्धसूत्र नहीं जोड़े जा सकते। रचनाकार जिन सन्दर्भोंमें अभिव्यक्ति देनेको बाध्य होता है उन्हींके अनुसार दोनोंमें अन्तर भी स्वाभाविक है। अतः एक लेखककी सभी रचनाओंमें समानान्तरताएँ नहीं ढूँढ़ी जा सकतीं।

यह कहनेमें कोई आपत्ति नहीं कि निरालाका सम्पूर्ण कृतित्व उन्हींकी चेतनाका विस्तार है। उनकी एकाधिक रचनाएँ एक ही मनोभूमिकी उपज हैं। निरालाजीके निकट सम्पर्कमें रहनेवाले लोग कविके व्यक्तिगत जीवनसे पूर्ण परिचित हैं। कवि—जो जीवन-भर सामाजिक शोषण और निरर्थक परम्पराओंका विरोध करता आया, जो उम्र-भर अन्धकारकी भीषण शक्तियोंसे जूझता रहा, लेकिन जिसे अन्ततक यह सब-कुछ सहना पड़ा। निम्नलिखित पंक्तियोंमें कविका यह संघर्ष और हार व्यक्त है :

"धिक् जीवन जो पाता ही आया है विरोध,
धिक् साधन जिसके लिए सदा ही किया
शोध !
जानकी ! हाय उद्धार प्रिया का हो न सका।"
(रामकी शक्तिपूजा)

०

"दुख ही जीवनकी कथा रही,
क्या कहूँ आज जो नहीं कही।"
(सरोज-स्मृति)

०

"हो गया व्यर्थ जीवन
मैं रण में गया हार"
(बनबेला)

०

"तिमिर ही तिमिर रहा कर पार
लक्ष-वक्षस्थलार्गलित द्वार !"
(स्मृति)

चार रचनाओंके उपर्युक्त चार स्थलोंमें अद्भुत साम्य है। नीचेकी पंक्तियोंमें हारे-थके कविका समान स्वर सुनिए, सिर्फ़ रचनाएँ दो हैं :

"मैं अकेला;
देखता हूँ, आ रही
मेरे दिवस की सान्ध्य बेला।"
(मैं अकेला)

०

"हुए क्रमशः दुर्बल ये हाथ
दूसरे और न कोई साथ" (स्मृति)

किन्तु निराला-साहित्यके जानकार यह जानते हैं कि उस नर-केहरीने कभी भूलकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी अपनी साधनाओंपर अविश्वास नहीं किया, अपनी स्थिति को तुच्छ दृष्टिसे नहीं देखा, हीनता नहीं महसूस की और स्वाभिमान नहीं खोया। कविकी यह विशेषता आश्चर्यजनक रूपसे उसकी निराशावादी समझी जानेवाली पंक्तियोंमें भी प्राप्त होती है। 'बनबेला'का करुण प्रस्थान प्रिय-चरणोंपर अर्पित होनेकी सार्थकताके गौरवसे मण्डित है। 'मैं अकेला'का वृद्ध 'अपने दिवसकी सान्ध्य बेला' देखते हुए भी पूर्ण आश्वस्त है कि वह अपना कर्तव्य कर चुका है।

इसी प्रकार 'रामकी शक्तिपूजा'में भी दुखी और निराश रामके बदनमें महाशक्ति 'होगी जय, होगी जय, हे पुरुषोत्तम नवीन' कहते हुए लीन होती है। जिस सामाजिक शोषण और दुख-विषादकी अभिधात्मक अभिव्यक्ति 'सरोज-स्मृति'के आत्मीय-प्रसंगोंमें हुई है वही 'बनबेला'के व्यंग्यमें भी है। दोनोंका मूल उद्गम एक ही है। वहाँ कविको सामयिक समर्थन न मिला और यहाँ राजपुत्रकी चापलूसीमें कीर्तिगान चलता है। 'बनबेला'की इन पंक्तियों और कविके जीवनमें अनूठा साम्य है। जग-ज़ाहिर है कि लक्षपतिके कुमारको विदेश-शिक्षा, ऐश्वर्य, स्वार्थियों द्वारा हिमायत तथा प्रशंसात्मक विज्ञापनोंकी जो सुविधाएँ प्राप्त थीं वे कविको कभी नसीब न हुईं। किन्तु यहाँ भी कविने अपनी साधना, अपने स्वाभिमान और अपनी दयनीय भौतिक परिस्थितिको तुच्छ नहीं समझा है। 'बेला'का यह कथन :

"यह जीवनका मेला
चमकता सुघर बाहरी वस्तुओंको लेक
त्यों-त्यों आत्माकी निधि पावन, बनते
पत्थर।
(बनबेला)

कविके व्यक्तिगत तेज और अहम्‌की सशक्त अभिव्यक्ति है। कविका यह अहम् कहीं-कहीं एक ही शब्दमें भी व्यंग्य द्वारा मुखरित हुआ है। नीचेकी पंक्तियोंमें 'स्वार्थ-समर' शब्द इसका उदाहरण है :

"लखकर अनर्थ आर्थिक पथपर
हारता रहा मैं स्वार्थ-समर"
(सरोज-स्मृति)

इसी प्रकार कविकी अन्य रचनाओंमें भी उसका रूप स्पष्ट झलकता रहता है। 'वह तोड़ती पत्थर'की कर्मरत 'श्याम' यौवना नर-केहरी निरालाकी उपेक्षित कर्मठताका रूप प्रस्तुत करती है। इसी प्रकार 'जूहीकी कली'में जिस दो-तरफ़े अल्हड़पन और यौवनकी स्वच्छन्दता चित्रित है वह स्वयं निरालाकी निर्भयता और स्वच्छन्दतासे किसी मानेमें अधिक नहीं है।

'सरोज'के विवाह-आयोजनमें समाजकी औपचारिकताकी जो अवहेलना हुई है, उसे क्रान्तिकारी क़दम उठाया गया है, वह क्रान्तिका स्वर निरालाकी एकाधिक रचनाओंमें प्राप्त है। छन्दोंके बन्धनकी अस्वीकृतिमें भी विद्रोहका यही स्वर है। इसी प्रकार 'स्मृति' और 'यमुनाके प्रति' इन दोनों रचनाओंको एक ही चाहकी अभिव्यक्तिके रूपमें ग्रहण किया जा सकता है। दोनोंमें अतीतके वैभवपूर्ण स्वच्छन्द वातावरणके सहसा बीत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानेका पश्चात्ताप है, जो कविके असन्तुष्ट वर्तमानकी देन या एक प्रतिक्रिया है – वर्तमानसे उद्‌भूत और अतीतकी ओर उन्मुख।

डॉ० रमेश कुन्तल मेघने 'ज्ञानोदय'के सितम्बर (१९६४) अंकमें 'सरोज-स्मृति' और 'रामकी शक्तिपूजा' – इन दो रचनाओं-के आधारपर कवि निरालाके आत्मचरितका उद्‌घाटन किया है जो सर्वथा स्वाभाविक और उचित है। 'सरोज-स्मृति'के नर निराला और 'शक्तिपूजा'के नरोत्तम राममें निश्चय ही अनूठा साम्य है। दोनों ही नायक विषाद-की छायासे घिरे हैं और अन्धकारकी भीषणतासें टक्कर लेते हैं। दोनों ही कुछ काल-के लिए अतीतकी स्मृतियोंमें डूबते-उतराते हैं। वीरता और उदात्तता दोनोंमें है। किन्तु एक (रामकी शक्तिपूजा) में शक्ति, तेज और विश्वास दूसरेकी अपेक्षा अधिक है। 'सरोज-स्मृति'में कविका विषाद टिकाऊ है जो एक प्रकारसे हारकी सीमातक पहुँचा है है किन्तु 'शक्तिपूजा'के राम बादमें वर और शक्ति प्राप्तकर जयके अधिकारी हो जाते हैं। ऐसा इसलिए हुआ है कि 'सरोज-स्मृति' सब-कुछ होते हुए एक 'एलजी' है जब कि 'शक्तिपूजा'में उत्साह-भाव प्रधान है। श्री रमेश कुन्तल मेघने 'शक्ति-पूजा'में रामके भक्त और हठयोगी होनेका जो दूसरा 'सार्थक' कारण सुझाया है : [**"दूसरा कारण यह हो सकता है कि सरोजकी मृत्युके त्रास और भयके कारण निराला धार्मिक साधनाओंकी ओर ज़्यादा मुड़ गये हों। दोनों सार्थक कारण हैं।"**] वह निरर्थक है। इसका समर्थन न तो मनोविज्ञान करता है और न कविका उत्तरचरित। उनकी बात मान लेनेपर परवर्ती रचनाओंमें भी इसका विकास ढूँढ़ना पड़ेगा। पुनः उन्होंने 'रामकी शक्ति-पूजा'को 'सरोज-स्मृति'का रूपान्तर कहा है जो आत्यन्तिक रूपसे सत्य नहीं है। परिवेश और घटनामें जिस अदल-बदलका संकेत उन्होंने किया है उसका प्रभाव दोनों रचनाओं-पर पड़ा है। यदि भोगनेवाले प्राणी और रचना करनेवाले मनमें एक अन्तर माना जाये तो यह अन्तर 'शक्तिपूजा'में अधिक है। यहाँ मतवैभिन्यकी बात हो सकती है कि श्रेष्ठताका निर्धारण किस आधारपर हो।

मेरे विचारसे 'शक्ति-पूजा' रामके व्याज-से निरालाके युद्धका वर्णन तो है ही, एक प्रकारसे उनका सम्पूर्ण साहित्य उन्हींके जीवन-संघर्षोंकी तो अभिव्यक्ति है। फिर 'सरोज-स्मृति' और 'शक्तिपूजा' का समय-साम्य देकर एक-सी मनोदशा सिद्ध करना तो स्वयंसिद्ध है। दोनोंका उद्‌गम ही एक है। और उद्‌गम एक होनेसे दो रचनाओंमें पर्याप्त साम्यका होना आकस्मिक नहीं है। पिछले अनुच्छेदोंमें इसके दो-चार उदाहरण देकर संकेत मात्र किया गया है। किन्तु 'रामकी शक्तिपूजा' को 'सरोज-स्मृति' का रूपान्तर कहना ठीक नहीं है। एक रचनाको दूसरीका रूपान्तर और क्रमिक विकास मान लेनेपर कई एक कठिनाइयाँ उपस्थित हो जायेंगी।

– विश्वनाथ प्रसाद तिवारी

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

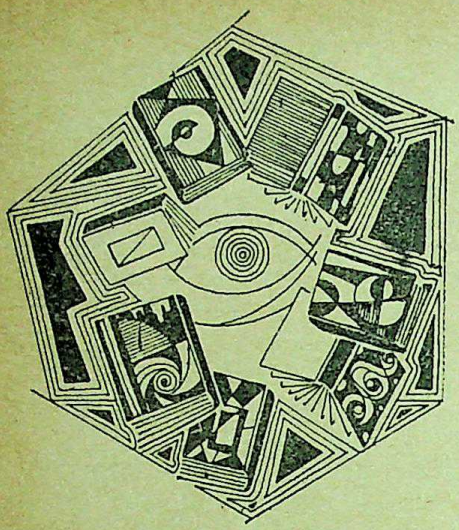

दस तसवीरें : तीन नयी पुस्तकें

दस तसवीरें
लेखक : जगदीशचन्द्र माथुर
प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन (प्रा०) लि०;
पृष्ठ-संख्या : १६१; मूल्य : छह रुपये।

हिन्दी-जगत जगदीशचन्द्र माथुरको प्रायः 'कोणार्क' के लेखकके रूपमें ही जानता रहा है। उनकी नवीन कृति 'दस तसवीरें' साहित्य-के क्षेत्रमें उनके एक नवीन – और बहुत अंशों तक मौलिक – रूपको उद्घाटित करती है । ये तसवीरें ऐसे दस व्यक्तियोंसे सम्ब-न्धित हैं जिनसे समाज और कलाके बहुत-से क्षेत्र धनी हुए हैं और बक़ौल लेखकके 'उनके जीवनमें मानव-जातिका अस्तित्व सार्थक होकर मुखरित हुआ था....'

यदि विश्लेषण और वस्तुको सूक्ष्म रूपमें परखनेकी ओर आपकी प्रवृत्ति नहीं है तो निहायत ऊपरी तौरपर विभिन्न व्यक्तियोंसे सम्बन्धित ये लेख संस्मरण-जैसे ही जान पड़ेंगे । लेकिन संस्मरण ये नहीं हैं – और पुस्तककी भूमिकामें लेखकका सारा आग्रह भी इसीको लेकर रहा है । संस्मरणके लि वस्तुके प्रति जिस सम्पर्क-सान्निध्य और अन्तरंगताकी आवश्यकता होती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिकांशमें वह नहीं है क्योंकि इनमें-से कुछ लेख तो महज एक या दो भेंटोंके आधारपर ही लिखे गये हैं – जैसे शिशिर भादुड़ी, एफ० जी० पियर्स और सुधीन्द्रनाथ दत्त आदि पर। लेखकने भूमिकामें पाठकोंको गुमराह होनेसे रोकनेकी पूरी कोशिश की है और कदाचित् इसीलिए संस्मरण-जैसी लगनेवाली इस रचनाओंके लिए उसने एक नया शब्द गढ़ा है – चरित-लेख। संस्मरण और चरित-लेखका अन्तर भी उसने स्पष्ट किया है : "चरित-लेख ललित और गम्भीर साहित्यका अंग है, संस्मरण उत्कृष्ट पत्रकारिताकी एक वैयक्तिक और मनोरंजक विधा है।" यहाँ हमें संस्मरण और चरित-लेखके तुलनात्मक महत्त्वकी विवेचना अभीष्ट नहीं है और न इससे ही कोई विशेष सरोकार है कि चूँकि संस्मरण पत्रवाहितासे सम्बन्धित है इसलिए वह अनिवार्यतः ही अपेक्षाकृत एक हीन साहित्यिक रूप है। यह चरित-लेख भी आधुनिक वैज्ञानिक संस्मरण-लेखनकी एक महत्त्वपूर्ण अनिवार्यतासे सम्पन्न है – वह है वस्तुके प्रति एक तटस्थ-निर्वैयक्तिक, पूर्ण निरपेक्ष और निस्संग दृष्टि – कुछ-कुछ वैसी ही जैसी यह भ्रम भी उत्पन्न करती है कि गोया वह संस्मरण दोस्त पर न लिखा जाकर दुश्मन पर लिखा गया है। अपने प्रस्तुत चरित-लेखोंकी शैली और तकनीकको लेकर लेखक-आग्रह है : "मेरे ये लेख-प्रायः सभी संस्मरणके-से वातावरणसे प्रारम्भ होते हैं। 'आलाप' मैंने संस्मरणोंकी तरह ही उठाये हैं किन्तु उसके बाद रागिनीके विस्तार, तान, मुरकियाँ, बोलतान – इन सब अलंकारों और गहराइयोंके लिए संस्मरणका वाहन अनुपयुक्त पाया मैंने।" ऐसी रचनाओंमें घटनाओंके चुनाव और प्रस्तुतीकरणको लेकर लेखकको विशेष सतर्क रहना पड़ता है क्योंकि यहाँ उसका आग्रह असम्पूर्णसे पूर्णका आभास और बोध देनेका होता है। लेखकका ध्यान घटनाओंके क्रम और चयनकी ओर उतना नहीं होता जितना कि अपने विषयके आन्तरिक विश्लेषणकी ओर जिससे कि कुछ संकेतोंसे ही वह अपनी तसवीरको पूर्णता दे सके।

'दस तसवीरें' में जिन दस व्यक्तियोंके चरित-लेख हैं वे निश्चय ही यह प्रमाणित करते हैं कि लेखकका क्षेत्र व्यापक है और उसकी रुचिको लेकर कोई सीमा-बन्धन नहीं है। जहाँ एक ओर डॉ० अमरनाथ झा और एफ० जी० पियर्स-जैसे अध्यापकोंको उसने लिया है वहीं पुरुषोत्तम मंगेशलाड, अनन्त सदाशिव अल्टेकर और पन्नालाल घोष-जैसे व्यक्तियोंपर भी उसने लिखा है जो क्रमशः उच्च पदाधिकारी, इतिहास और पुरातत्त्व-वेता और संगीतज्ञ रहे हैं। दूसरी ओर श्रीराम वाजपेयी और अपने पिता (लक्ष्मी-नारायण माथुर) पर भी उसने लिखा है क्योंकि पद और स्तरके खयालसे उतना महत्त्वपूर्ण न होने पर भी वे उसके विकासका दिशा-निर्देशन करते रहे हैं। इन सारे व्यक्तियोंके जीवनकी छोटी-छोटी सहज-सामान्य घटनाओंको उसने नाटकीय कौतुकके साथ प्रस्तुत किया है और कुछ साधारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकेतोंसे ही उनके अन्तर्बाह्यको आश्चर्य-जनक सम्पूर्णतामें उभारा है। और यही ऐसी चीज़ है जो उसके चरित-लेखोंकी सफलता-असफलताका निकष बन गयी है। जिन व्यक्तियोंके जीवनमें वह विस्तारसे गया है, जैसे डॉ० अमरनाथ झा और श्री-राम वाजपेयी, स्वभावतः ही उसकी प्रवृति इतिवृत्तात्मकताकी ओर झुक गयी है। इतने विस्तार और वर्णन-प्राचुर्यके बाद भी जो डॉ० झाका व्यक्तित्व इतनी पूर्णतामें उभर सका है उसका बहुत कुछ कारण लेखक का कौशल इतना नहीं है जितना कि उनका निजी व्यक्तित्व। यही कारण है कि स्तर और कलात्मकताकी दृष्टिसे डॉ० अमरनाथ झा और श्रीराम वाजपेयीसे सम्बोधित लेखोंमें गहरा अन्तर है। इस दृष्टिसे लेखक का सर्वश्रेष्ठ और सर्वाधिक प्रभावशाली लेख शिशिर भादुड़ी पर है – जो बहुत संक्षिप्त होने पर भी प्रभावकी दृष्टिसे बहुत पैना और नुकीला है; कारण यह है कि उनके व्यक्तित्वको, उनके जीवनको घटनाओंके नाटकीय चयन और प्रस्तुतीकरणके आधार पर महज़ कुछ संकेतोंके बलपर ही वह पूर्णता दे सका है। सम्भव है उसके इस हद तक प्रभावशाली बन सकनेका दूसरा कारण यह भी हो कि किसी-न-किसी रूपमें शिशिर भादुड़ीका क्षेत्र ही लेखकका अपना भी निजी और विशेष क्षेत्र है और वहाँ उसकी सफलता अपेक्षाकृत अधिक स्वाभाविक और सहज है।

पुस्तक इस दृष्टिसे भी महत्त्वपूर्ण है कि वह हिन्दीमें एक नयी विधाका सूत्रपात करती है और कदाचित् इसलिए भी कि उसके माध्यमसे जगदीशचन्द्र माथुरका एक और रूप भी उभरता है जिसमें उनके विशाल अनुभव और व्यापक क्षेत्रके सार्थक उपयोगकी सारी सम्भावनाएँ निहित हैं।

– मधुरेश

■

"एइ गल्प संग्रहेर तिनटि काहिनी एके बारे अपरूप सुन्दर, सांघातिक भालो – 'कला-कृति', 'दैनन्दिन' आर 'चोख' (आँखें)..." यदि मैं बँगलामें समीक्षा करता तो कदाचित् पहली पंक्ति यही लिखता। (बँगला ही मातृभाषा है श्री गुप्तकी) अब चूँकि उपर्युक्त गल्प-संग्रह 'आँखें'[1] और उपन्यास 'जागरण'[2] हिन्दीमें है, अस्तु···'कहानियोंके सम्बन्धमें (आँखेंकी भूमिका) काफ़ी दिलचस्प और विचारोत्तेजक है। कुछ वैचारिक-सूत्र वाक़ई पढ़ने क़ाबिल हैं :

"···कुछ भी हो, अँगरेज़ी साहित्यमें जेम्स जायस एक हद तक सराहे गये और कुछ लोगोंमें उनकी धूम मची रही, पर उनकी कोई स्थायी शिष्य-मण्डली या अनु

१. आँखें (कहानी संग्रह)
लेखक : मन्मथनाथ गुप्त; प्रकाशक राजपाल ऐण्ड सन्ज़, दिल्ली; मूल्य : २·५ सजिल्द, पृष्ठ : १२८

२. जागरण (उपन्यास)
लेखक-प्रकाशक : उपर्युक्त; पृष्ठ : १९ मूल्य : ३·५०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यायी-वर्ग नहीं बन सका। नतीजा यह है कि उनकी मथुरा न्यारी ही रह गयी और न्यारी इस मानेमें भी कि वह बसी ही नहीं। फिर भी जायससे अँगरेज़ी साहित्यको उसी प्रकारसे लाभ हुआ जिस प्रकार खादसे खेत-को होता है, विशेष करके नये तरीक़ेकी खादसे। और कुछ नहीं हुआ।" (पृ० ५) तात्पर्य टा कि आपनार? शायद गुप्तजी यह कहना चाहते हैं कि ज़मीनकी उर्वरा-शक्तिको ही झिंझोड़कर खाद बाहर करती है, यह कोई मौलिक चीज़ नहीं। तो अज्ञेयसे मार्कण्डेय और राजेन्द्र यादवसे रमेश बक्षी और कमलेश्वर तक क्या हिन्दी कथा-क्षेत्रमें नये तरीक़ेकी खाद ही आती रही? ऐं! प्रश्नस्तुऽतीव गभीरम्! ख़ैर। अलमति विस्तरेण। तर्हि संक्षिपामि।

गुप्तजी कहानी कहना जानते हैं, उसे लिखनेमें ईमानदार भी हैं वे। 'अल्पज्ञात शक्तियोंसे कलाकारका परिचालन होता है' (पृ० ९) ऐसी मान्यता स्वीकार कर इण्ट्-यूँशनके प्रति आस्था व्यक्त की है शायद गुप्तजीने। 'खलनायक' कहानीका पुलिस कप्तान गजपत सिंह बड़ा सहृदय और तरल सहानुभूतिवाला व्यक्ति है। कलाकार बनने-की महत्त्वाकांक्षाके दर्दको वह बड़ी मानवीय संवेदनासे देखता है। 'अफ़सोस'का अन्त बड़ा चौंका देनेवाला है। आत्महत्याके बहाने युवती ललुआकी माँको अपने आलिंगनमें भर यौन-पिपासाकी शान्तिका उपाय पण्डित गजानन पाण्डे-जैसे कर्मकाण्डी नैष्ठिक ब्राह्मणों-द्वारा ही किया जाता है। पृष्ठ २८ पर मुद्राराक्षसकी भूल है – बजते, यह ग़लत है, होगा – व्रजेत्। पृष्ठ ७३ पर भी (२१वीं पांतमें) छपा है खेप्य – यह ग़लत है, होना चाहिए – रौप्य (चाँदी)। प्रकाशकीय प्रतिष्ठाके आयाममें यह दुर्गुण ही स्वीकृत होगा। मैं कम्बख़्त अपनी नज़रको क्या कहूँ? गुण-दोष समान रूपसे परखती है जो।

इक़बालकी एक फ़ारसी उक्ति याद आ गयी है मुझे: 'बिरहना हुर्फ़ न गुफ़्तन कमाले गोया ईश्त' – नंगी बात कहनेमें कला नहीं है, कहा जाकर भी अनकहा रह जानेके भासमें कला है। ऐसी क़िस्सागोई कहीं-कहीं मन्मथजीमें गाहे-ब-गाहे दीख पड़ती है, जो वाक़ई मनको मथ देती है – मस्लन्, 'नीयत' कहानी। ज़ख़्मी यक़ीन और गुमशुदा आस्था वाले खण्डित व्यक्तित्वका प्रतीक है शिवनाथ। इस कहानीके मर्मान्तक प्राणांश शिवनाथका पौरुष और आर्थिक नपुंसकत्व हैं, मैं कुछ पंक्त्यंश दूँ तो वाजिब होगा—"...मेरा उससे कोई ताल्लुक़ नहीं, पर मैं ग़ुस्सेसे भरा खड़ा रहा।...वह लड़की तो भाग्यशाली है कि वह भूख मिटानेके लिए फिर भी कुछ दे सकती है (अपना जिस्म), पर यहाँ मर्द होनेके नाते..." (पृ० ९०) कहानी बड़ी धारदार और पैनी है। विदेशी ब्लेड-सी चार देती है वह हमारे संस्कारको। अपने जिस्मकी फ़रोख़्त उस लड़कीने पहले चूँकि शिवनाथको करना चाहा था तब भला वह – उसके भीतरका आदिम, बर्बर, हिंस्र मर्द – चुप कैसे रहता? लेकिन बदला उस फिटन-वाले अमीरसे न लेकर उसी वर्गके कपूर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहबसे लेता है, बड़े वहशी तरीक़ेसे, लोहेके रॉडसे उनकी कपाल-क्रिया करके।

स्व० मानिक बन्द्योपाध्यायके 'प्रागैतिहासिक'की याद हो आयी मुझे। बहुत दमदार कहानी है अपने कथ्यमें, अपने केन्द्रवर्ती कथात्मक तन्मयीकरणमें। 'ग्रन्थियोंकी क्रिया' बड़ी तेज़-तर्रार कहानी है अपने फॉर्ममें, औरतकी अक़्ल वाक़ई उसकी एँड़ीमें रहती है – मुझे ऐसा विश्वास हो आया है सरलाकी सरलता, अहमकपना देखकर। 'वकालत' में वकील उमानाथके हथकण्डे नज़र आते हैं। 'दैनन्दिन' पुलिस-विभागकी व्यर्थता और मौर्ख्यका उदाहरण पेश करती है। और कहानियाँ भी जायक़ेदार हैं। मन्मथनाथ गुप्तके कथाकारका रूप उनके उपन्यासकारसे कम नहीं है।

'जागरण'की भूमिकाका पहला वाक्य ही सचेत प्रतिभाके सम्पृक्त रूपको आत्मालोचनके आयाममें रख छोड़ता है : 'यों उपन्यासोंकी भूमिका एक प्रकारकी विलासिता ही है।' गुप्त इस फ़ैशनेबिल 'लक्ज़री'से बचकर बेदाग़, बेलौस अपने कथा-सूत्रको पकड़कर, चरित्रोंके पुतले-पुतलियोंको नचानेमें सिद्धहस्त हैं।

मन्मथनाथ गुप्त काकोरी-षड्यन्त्रके क्रान्तिकारियोंमें-से हैं, बारह वर्षकी सख्त सज़ा उन्होंने झेली। राजेन्द्रके चरित्रमें मन्मथजीका अपना स्वानुभव स्थान-स्थानपर उभरता है। काशीके स्वनामधन्य स्वकीर्ति-धवल टुकड़खोर देशद्रोही पद्मनाभ शास्त्रीकी औलादें आज भी गणतन्त्र भारतमें ख़ुदाके फ़ज़लसे आबाद हैं, अपने कण्ठको बेचनेवाले प्रचारक (प्रोपेगैण्डिस्ट) आज भी जश्न कर रहे हैं। कौन इनपर उँगली उठाये? चलनी तो सूपकी शिकायत नहीं कर सकती! दोनों ही सच्छिद्र हैं। छिद्रेष्वनर्थाः भवन्ति। पृ० ७६पर-के पाँचों श्लोक साहित्यके इतरीकरणके प्रमाण हैं, चाहे गौरांग सत्ता हो चाहे सफ़ेद बकुलपंखी टोपी, अगर चापलूसी ही पदोन्नतिके लिए गुण-स्वीकृति है तो यह इतरीकरण सदैव होता रहेगा। जो साहित्यको शव बना देगा, शिव नहीं।

आनन्द कुमारमें नैतिक रीढ़ है, वह रीढ़ स्टीलकी है। जॉनसनके सामने वे नहीं झुकते (पृ० १११) ऐसे लोग ही समाजको कुछ सबक़ दे सकते हैं। अँगरेज़ोंका भी मानसिक सन्तुलन सत्याग्रह-आन्दोलनसे उद्वेलित हो गया था, वे बुरी तरह डरे हुए थे। स्मिथ और जॉनसनकी गुफ़्तगूसे (पृ० १४६) इस बातका पता चलता है। उपन्यास रोचक तो है ही, ऐतिहासिक सांकेतिकता भी सर्वत्र व्याप्त है। स्त्रियोंमें, श्यामाका, लाजवाब चरित्र देखकर, इक़बालकी चन्द सतरें दिमाग़में आ रही हैं :

इश्क़ अब पैरवी-ए-अक़्ले ख़ुदा-दाद करे,
आबरू कूच-ए-जाना में न बर्बाद करे।
कुहना पैकर में नयी रूह को आबाद करे,
या कुहन-रूह को तक़लीद से आज़ाद करे।

– रंगनाथ राकेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांस्कृतिक जागरण, साहित्यिक विकास-उन्नयन और
राष्ट्रीय ऐक्य एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी साधिका

तथा

भारतीय भाषाओंकी सर्वोत्कृष्ट
सर्जनात्मक साहित्यिक कृतिपर
प्रतिवर्ष एक लाख रुपये
पुरस्कार योजना प्रवर्तिका

भारतीय ज्ञानपीठ

उद्देश्य

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध
और अप्रकाशित सामग्रीका
अनुसन्धान और प्रकाशन

तथा

लोक-हितकारी मौलिक
साहित्यका निर्माण

संस्थापक : श्री शान्तिप्रसाद जैन
अध्यक्षा : श्रीमती रमा जैन

प्रधान एवं सम्पादकीय कार्यालय : ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता–२७
विक्रय केन्द्र : ३६२०/२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, दिल्ली–६
प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी–५

ज्ञानोदय

जनवरी १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने ढंगके अनूठे और अनमोल

भारतीय ज्ञानपीठ

के

अभिनव, महत्त्वपूर्ण एवं संग्रहणीय प्रकाशन

● **भारतीय संस्कृतिका विकास (वैदिक धारा) :** डॉ० मंगलदेव शास्त्री

यह प्रवृत्ति रही है कि अपनी भारतीय संस्कृतिके अंगभूत तत्त्वोंको पूर्वापर परिस्थितियोंसे असम्बद्ध इकाइयोंके रूपमें देखें। ऐसा भी हुआ है कि सारी संस्कृतिको अन्धविश्वास तक कह दिया गया। किन्तु जहाँ यह आधुनिकताके नामपर प्रतिक्रियावादिता हुई उस प्रवृत्तिका परिणाम यह हुआ कि समष्टि जीवनमें भेद-बिलगावकी संकीर्ण भावनाएँ पैठ गयीं। व्यक्ति, समाज, और देश, सभीके लिए यह जितना अहितकर रहा उसका इतिहास साक्षी है।

इन दोनोंसे भिन्न एक और दृष्टि, समन्वयात्मक ऐतिहासिक दृष्टि, भी है। इसके अनुसार देशकी विभिन्न धार्मिक और साम्प्रदायिक धाराएँ एक ही व्यापक प्रगतिशील भारतीय संस्कृतिकी पूरक और पोषक हैं। वास्तवमें यही दृष्टि स्वाभाविक और वैज्ञानिक भी है। इसके मूल दिशासूत्र प्राचीन कालतक पहुँचे हुए हैं। इसी इतिहास-मूलक समन्वयात्मक दृष्टिके सहारे साम्प्रदायिक विरोध-विषमताओंके स्थानपर एक सूत्रता लाकर नव्य भारतके निर्माणको एक दृढ़ आधार दिया जा सकता है।

प्रस्तुत लेखकने इसी विशिष्ट दृष्टिसे भारतीय संस्कृतिके सम्पूर्ण विकासका अध्ययन किया है। यह प्रथम खण्ड वैदिक धाराका अध्ययन उपस्थित करता है। अध्ययन सर्वथा प्रमाणोंपर आधारित है और साथ ही सरस और रोचक भी है। आचार्य नरेन्द्रदेवजीके शब्दोंमें "यह कार्य इस लेखक-जैसे अधिकारी विद्वान्-द्वारा ही हो सकता था और यह कृति भारतीय संस्कृतिके अध्ययनमें पथ-निर्देशका काम करेगी।"

मूल्य : सात रुपये

जनवरी १९६५ ज्ञानो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• **चाँद का मुँह टेढ़ा है** : स्व० गजानन माधव मुक्तिबोध

"मुक्तिबोधकी लम्बी कविताओंका पैटर्न विस्तृत होता है। एक विशाल म्योरल पेण्टिंग – आधुनिक प्रयोगवादी; अत्याधुनिक । जिसमें सब चीज़ें ठोस और स्थिर होती हैं; किसी बहुत ट्रैजिक सम्बन्धके जालमें कसी हुई।....मुक्तिबोधकी कविता जो कथानक होती है, इसमें विद्रूप और क्रूर भाव रूपकको भरपूर नाटकीय बनानेके लिए आवश्यक होता है। चित्रोंमें जो खुरदरी स्पष्टता आँखोंमें चोट-सा करती है, वह पूरी कवितामें, अपने विस्तार-क्रमके कारण, रूपक भावको कुछ बिखरा देती है। फिर भी कविकी बेपनाह नर्वस शक्तिका आभास पद-पदमें मिलता है।

"एक चट्टानी कड़ापन, एक खुर्री नग्नता, हिंस्र चाँदनी, अपशकुनोंसे भरा मानवलोक, रातका या दिनका।....ज़िन्दगी जो विद्रूप और क्रूर व्यंग्य है।....

"अगर किसीने स्वयं मुक्तिबोधकी ज़बानी उनकी कोई रचना सुनी हो, तो....कविता समाप्त होनेपर ऐसा लगता है जैसे हम कोई आतंकित करनेवाला फ़िल्म देखनेके बाद एकाएक होशमें आये हों।....

".....चूँकि वह पेण्टर और मूर्तिकार हैं अपनी कविताओंमें – और उनकी शैली बड़ी शक्तिशाली, कुछ यथार्थवादी मेक्सिकन भित्तिचित्रोंकी-सी है।

"वह एक-एक चित्रको मेहनतसे तैयार करता है, और फिर उसके अम्बार लगाता चलता है। एक तारतम्य। जैसे किसी ट्रैजिक नाट्य-मंचपर एक उभरती भीड़का दृश्य – पूर्व-नियोजित प्रभावके साथ खड़ी।....

"इनके प्रतीक प्राचीन गाथाओंके टुकड़े जान पड़ते हैं। मगर इन टुकड़ोंमें सन्दर्भ आधुनिक होता है। यह आधुनिक यथार्थ कथाका भयानकतम अंश होता है।.... मुक्तिबोधका वास्तविक मूल्यांकन अगली, यानी अब आगेकी पीढ़ी निश्चय ही करेगी; क्योंकि उसकी करुण अनुभूतियोंको, उसकी व्यर्थता और खोखलेपनको पूरी शक्तिके साथ मुक्तिबोधने ही अभिव्यक्त किया है। इस पीढ़ीके लिए शायद यही अपना खास महान् कवि हो।"

मूल्य : आठ रुपये

• **नाटक बहुरूपी** : डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल

"नाटकोंकी भीड़ और नाटक नहीं", शॉ चुटकी लिया करते। "आधुनिक नाटक अभी लिखा नहीं गया", आल्बेर्तो मोराविया कहते सुने जाते हैं। अब इनसे कौन उलझे। उनसे कहना निरर्थक होता, इनसे कहनेमें संगति क्या। फिर, ऐसा कुछ है भी तो! अच्छे नाटक कम हैं, आधुनिक नाटक और भी कम।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी सन्दर्भमें यह छोटा-सा संकलन 'नाटक बहुरूपी' प्रस्तुत है। इसके द्वारा भी कहना यह नहीं है कि ये नाटक अच्छाईका आदर्श हैं; कहना यह उपयुक्त होगा कि ये अच्छाईका एक नमूना हैं और अनेक दृष्टियोंसे आधुनिक तो हैं ही। डॉ० लाल समकालीन हिन्दी नाटक-लेखनमें पहले ही कुशल कलाकार थे, अब तो सागर-पार जाकर वहाँका भी बहुत-कुछ देख और गुन आये हैं।

इतनी सहज-सच्ची और मर्म-छूती रचनाएँ हैं ये कि पढ़ी जायें तो पाठकको अपनी ही बात कही जाती मिले, और रंगमंचपर आयें तो दर्शक अपने ही सत्यों और सपनोंको सामने देखता हो। ऐसे नाटक हिन्दीमें सचमुच बहुत नहीं जिन्हें ईज़ीचेयरपर पढ़ते अच्छा लगे और स्टेजपर देखकर प्रेरणा मिले। **मूल्य : तीन रुपये पचास पैसे**

- **अपने-अपने अनजबी** : अज्ञेय

भारतीय साहित्योंमें अपने ढंगका अद्वितीय उपन्यास। मृत्युसे साक्षात्कारको विषय बनाकर जीवन और नियतिका सरल मार्मिक विवेचन। मृत्यु-विषयक पूर्व और पश्चिमकी दृष्टियोंकी टकराहट, दोनोंके मिलन-द्वारा मानव-जीवनके एक नये आयामका उन्मेष।

मूल्य : तीन रुपये

- **ज़िन्दगी और गुलाब के फूल** : उषा प्रियंवदा

कहानियाँ और कहानियाँ! मगर ये कहानियाँ बिलकुल भिन्न हैं। न भाषाका उलझाव है यहाँ न शैली-शिल्पके गोरखधन्धे, और संग्रह-भरमें एक जो कहानी हो जिसे पढ़ें और दिनों अपने भीतर मँडराता हुआ न पायें! अतिरिक्त विशेषता और यह कि नयी कहानी इन्हें अपना कहेगी तो औरोंके लिए ये परायी न हो सकेंगी। **मूल्य : दो रुपये पचास पैसे**

- **खोयी हुई दिशाएँ** : कमलेश्वर

ग्यारह कहानियाँ जो एक विशेष दृष्टिको लेकर चुनी गयीं। जीवनमें महत्तम मूल्योंके प्रति आस्थाका स्वर इनका कथ्य है और घुटन तथा पराजयमें जीनेकी विवशताको नियति न मानकर नये सन्तुलन और अर्थोंकी खोज इनकी दिशा। इनमें जीवनका अध्ययन आया है, मात्र सर्वेक्षण नहीं। असम्भव होगा कि संग्रहकी कोई भी कहानी पढ़ें और मनपर प्रभाव न छोड़े।

मूल्य : दो रुपये पचास पैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• **प्रतिनिधि रचनाएँ : पंजाबी : कतारसिंह दुग्गल**

किसी साहित्यिक व्यक्तित्वको पहचानने-समझनेके लिए आवश्यक है कि उसका विभिन्न विधाओंका लेखन कहीं एक-साथ देखें और पढ़ें। प्रस्तुत पुस्तकमें श्री कर्तार-सिंह दुग्गलका एक समूचा नाटक, दो एकांकी, दो उपन्यासोंके अंश, संस्मरण और निबन्ध तो हैं ही, कहानी और कविताएँ तक संकलित हैं। कभी पंजाबी और उर्दूके और अब तो उतने ही हिन्दीके भी, इस चहीते साहित्यकारकी ये सभी रचनाएँ उसकी प्रतिनिधि रचनाएँ हैं : उसके साहित्यिक व्यक्तित्वसे परिचित होनेके लिए बिलकुल अनिवार्य।

मूल्य : तीन रुपये पचास पैसे

• **एक साहित्यिक की डायरी : स्व० गजानन माधव मुक्तिबोध**

ऐसी कृतियाँ बहुत नहीं होतीं जो अपने समकालीन साहित्यका श्री-वर्द्धन कर सकें। 'एक साहित्यिककी डायरी' ऐसी एक कृति है। अपने शैलीगुण और विचारतत्त्व दोनोंकी विशेषताके कारण यह ध्यान आकर्षित करेगी और आदर-मान पायेगी। डायरी विधाका यह रूप तो इसीमें देखनेको मिलेगा। जैसे निबन्धात्मक कहानी वैसे यह निबन्धात्मक डायरी। निबन्ध पढ़े न जायें, इन्हें पढ़नेकी सहज ललक हो। सीधा-सादा प्रारम्भ, फिर कहीं एकालाप, कहीं एक काल्पनिक पात्रसे वार्तालाप, पर आदिसे अन्ततक भाव और स्वर डायरीका। ये कविता, आत्माख्यानके विविध स्तरोंपर एक साथ चलती हैं; या यों कहें कि इन सबको एकमें समन्वित करके एक नयी ही विधा-सम्भावनाकी ओर इंगित करती है।

मूल्य : ढाई रुपये

• **सूरज का सातवाँ घोड़ा : डॉ० धर्मवीर भारती**

'गुनाहोंका देवता' के बाद लेखकके औपन्यासिक कृतित्वका एक दूसरा पहलू जो जितना महत्त्वपूर्ण है उतना ही आकर्षक। दावेके साथ कहा जा सकता है कि हिन्दीमें अभीतक ऐसी कथा-शैलीका प्रयोग नहीं किया गया। किन्तु कृतिका महत्त्व केवल साहित्यिक ही नहीं है, वास्तवमें उससे कहीं अधिक व्यापक और गम्भीर है : हमारे समूचे मध्यवर्गीय समाजके सांस्कृतिक पुनर्निर्माणसे सम्बद्ध होनेके कारण है।

मूल्य : दो रुपये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● **मेज़ पर टिकी हुई कुहनियाँ** : रमेश बक्षी

इन कहानियोंको देखकर कोई कहे तो अत्युक्ति न होगी कि आधुनिक कथाशिल्प और आधुनिक जीवन-दृष्टि दोनोंको एक साथ स्वाभाविक रूपमें सजा हुआ यहाँ पाया। कभी पढ़ते-पढ़ते लग सकता है कि ये कहानियाँ नहीं हैं, पर फिर अगले ही क्षण बरबस लगेगा कि ये ही तो सचमुच कहानियाँ हैं : आजकी !

मूल्य : तीन रुपये पचास पैसे

● **नये रंग नये ढंग** : लक्ष्मीचन्द्र जैन

हिन्दी गद्य-शैलीकी सर्वथा नयी रचना जिसके हर पृष्ठपर युगकी छाप और प्रतिभाकी चमक अंकित है। सम्भव नहीं कि पुस्तक हाथमें लें और पढ़कर समाप्त किये बिना रख दें।

मूल्य : दो रुपये

● **सूखा सरोवर** : डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल

एक ऐसा स्पष्ट, जीवन्त और हृदयग्राही नाटचरूप जो लोक-गाथाकी मनोभूमि और रंगशैलीसे यहाँ अवतरित है – विशुद्ध लोक-गाथा-परक रससिक्त नाटच-शिल्प-में। इस रंगमंचका सर्वथा एक अभिनव स्वरूप और आधुनिक रंगमंच अन्वेषणका एक नया उदाहरण।

मूल्य : दो रुपये

● **शिखरों का सेतु** : डॉ० शिवप्रसाद सिंह

शैल-शिखर रमणीक होते हैं। जो चिर-प्रेरक भी हों, ऐसे शिखर विश्व-साहित्यके महाप्राण व्यक्तित्व होते हैं या फिर अतीतके जीवन और प्राणोंकी वे मार्मिक कथाएँ-व्यथाएँ होती हैं जो उन्हें 'अतीत' कभी नहीं बनने देंगे। प्रस्तुत पुस्तक-द्वारा अनेक ऐसे ही शैल शिखरोंसे साक्षात्कार होगा जिसे पाकर 'लघु मानव' को बरबस लगे कि वह लघु ही रहनेके लिए नहीं। जीवन-यात्रामें कभी अपनेको थकता देखें तो भी एक क्षण इन शिखरोंका सहारा लें, फिर चरण आगे पथपर आप बढ़ चलेंगे।

मूल्य : तीन रुपये पचास पैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• **चीड़ों पर चाँदनी** : निर्मल वर्मा

बीसवीं शतीके स्मारक-चिह्नोंकी खोजमें एक भारतीय लेखकके यह संस्मरण अपने-आपको खोजनेका प्रयास हैं – अपनेसे बाहर निकलकर स्वयं अपनेको गवाह बनाने-का प्रयत्न – और इसीलिए ये संस्मरण एक व्यक्तिका निजी 'टेस्टामेण्ट' भी हैं। स्मृतिके ये अंक निर्मल वर्मा युरॅप प्रवासकी लम्बी अवधिमें समय-समयपर सँजोते रहे हैं। बादमें जोड़नेपर जो मिला, वे न कहानियाँ थीं न डायरी – बल्कि कुछ ऐसे अनुभव-खण्ड जिनमें एककी निरपेक्षता दूसरेकी आत्मीयतासे घुल-मिल गयी है।

मूल्य : तीन रुपये

• **जो** : डॉ० प्रभाकर माचवे

'जो' एक उपन्यास है; अर्थात् उपन्यासमें जो होना चाहिए वह इसमें है। युगकी दृष्टिका उजाला और युगके लिए अभीष्ट दिशाका निर्देश दोनों इसमें हैं। कथानक आजके अमेरिकी काले-गोरे संघर्षकी एक यथार्थ जीवनपर आधारित मार्मिक छवि-का निरूपण प्रस्तुत करता है। रोचक और पठनीय तो है ही।

मूल्य : तीन रुपये

• **प्रतिनिधि रचनाएँ : मराठी** : व्यं० दि० माडगूलकर

मराठीकी नयी पीढ़ीके अग्रणी लेखक श्री माडगूलकरके बहुप्रशंसित, और चर्चित उपन्यास 'बनगरवाड़ी' उनकी चुनी-चुनी प्रतिनिधि कहानियों तथा उत्कृष्ट व्यक्ति निबन्धोंका संकलन है यह। आधुनिकतासे सम्बद्ध अनेक अबूझ प्रश्नोंको सचाईसे उकेरती ये रचनाएँ अधुनातन संवेदनाको सहज ही छू लेती हैं।

मूल्य : चार रुपये

• **हरी घाटी** : डॉ० रघुवंश

हिन्दी गद्य लेखनमें एक अभिनव-प्रयोग : यात्रा-डायरी-संस्मरण तीनोंके तत्त्वोंका सुखद सामंजस्य। एक ओर गहरे चिन्तनसे अभिभूत क्षणोंका अंकन किया गया है, तो वहीं सामान्य दैनन्दिन घटनाएँ भी मानवीय संगतिमें पहचानी गयी हैं।

मूल्य : चार रुपये पचास पैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● **झाड़ी** : श्रीकान्त वर्मा

हिन्दीकी समकालीन कहानीके समानान्तर नये कवियोंने जो कहानियाँ लिखी हैं वे भाषा, संगठन और अवधारणाकी दृष्टिसे लोकप्रिय कहानीकारोंकी कहानियोंसे भिन्न हैं।

संशय, अनिर्णय और अमूर्तता आजकी प्रतीक मनःस्थितियाँ हैं और इसे बड़ी तीव्रताके साथ प्रस्तुत संग्रहकी कहानियोंमें देखा जा सकता है। मात्र इतना ही नहीं, ये कहानियाँ प्रभाव, अभिव्यक्ति और नये आयामोंकी अभिव्यंजनाके कारण भी पठनीय हैं, आकर्षक हैं।

मूल्य : तीन रुपये

● **काठ की घण्टियाँ** : सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

अज्ञेय-द्वारा सम्पादित इस एक पुस्तकमें एक समूचा उपन्यास, बीस कहानियाँ और इकहत्तर कविताएँ संकलित हैं। इसके माध्यमसे न केवल लेखककी बहुमुखी एवं प्राणवती प्रतिभाका परिचय मिल जाता है बल्कि पुस्तकके आस्था-स्वरोंसे जीवनमें विश्वास और स्फूर्तिका स्पन्दन भी होता है।

मूल्य : सात रुपये

● **जैसे उनके दिन फिरे** : हरिशंकर परसाई

परसाईजीकी उन्नीस विशिष्ट हास्य-कथाओंका संकलन। ये मात्र हास्य कहानियाँ नहीं हैं। यों हँसी इन्हें पढ़ते-पढ़ते अवश्य आ जायेगी, पर पीछे जो मनमें बचेगी वह गुदगुदी नहीं, चुभन होगी।

मनोरंजन प्रासंगिक है, वह लेखकका उद्देश्य नहीं। उद्देश्य है : युगके समाजका, उसकी बहुविध विसंगतियों, अन्तर्विरोधों, विकृतियों और मिथ्याचारोंका उद्घाटन। इन सभी कहानियोंमें हँसीसे बढ़कर जीवनकी तीखी आलोचना है। चेतनाको झकझोर देनेवाला व्यंग्य और मनको तिलमिला देनेवाली व्यंजना पाठकको इन कहानियोंमें तो मिलेगी ही, साथ ही वे सब दृश्य, चेहरे और स्थितियाँ, जो बहुत पास होकर भी अदेखे रह जाते हैं, उसके सामने प्रकट होंगे।

मूल्य : ढाई रुपये

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैकलियॅड एण्ड कम्पनी लिमिटेड

मैकलियॅड हाउस,

३, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता-१

मैनेजिंग एजेण्ट्स, सेक्रेटरी और कोषाध्यक्ष

जूट मिल्स

- अलेक्जेण्डर जूट मिल्स कं० लि०
- एलायन्स जूट मिल्स कं० लि०
- नेल्लीमारला जूट मिल्स कं० लि०
- चितावलसाह जूट मिल्स कं० लि०
- ईस्टर्न मैन्यूफैक्चरिंग कं० लि०
- एम्पायर जूट मिल्स कं० लि०
- केलविन जूट कं० लि०
- प्रेसिडेंसी जूट मिल्स कं० लि०
- वेवरली जूट मिल्स कं० लि०

चाय के बगीचे

- अमलुकी टी कं० लि०
- बागमारी टी कं० लि०
- भतकावा टी कं० लि०
- बोरमाह जान टी कं० (१९३६) लि०
- डिब्रूगढ़ कं० लि०
- बैजू वेली कं० लि०
- मार्गरेटस होप टी कं० लि०
- राजभात टी कं० लि०
- रानीचेरा टी० कं० लि०
- रूपचेरा टी कं० लि०
- सुंगमा टी कं० लि०
- तेलोईजान टी कं० लि०
- तिंगामीरा टी सीड कं० लि०
- तिरींहन्ना कं० लि०
- तीयरून टी कं० लि०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Price Annual Rs.10/- per copy Re.1/- for abroad postage extra 18 nP. This Copy Re.

License No. 51. Licensed to post without prepayment of postage. REGD. No. L-2036

सोडा ऐश यूनिट

धांगध्रा
गुजरात राज्य

●

तार :
केमिकल्स
धांगध्रा

●

टेलीफोन :
३१ और ६७

★

तार :
साहू जैन, बम्बई

टेलीफोन :
२५१२१८–१९

धांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

प्रसिद्ध 'हार्स शू' छाप हेवी केमिकल्स
के उत्पादन में अग्रसर निर्माता

- सोडा ऐश
- सोडा बाइकार्ब
- कैल्शियम क्लोराइड
- नमक और

हाइ रेयॅन ग्रेड
इलेक्ट्रोलिटिक कॉस्टिक सोडा
(९८–९९ प्रतिशत शुद्धता)

कॉस्टिक सोडा यू

साहूपुरम
पोस्ट–आरूमुगमे
तिरुनुवेली डिस्ट्रि
मद्रास राज्य

●

तार :
केमिकल्स
आरूमुगनेरी

●

टेलीफोन :
कायलपटनम : ३

★

मैनेजिंग एजेण्ट्स :

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लि०

१५ ए, हर्निमैन सर्किल
फोर्ट, बम्बई–१.

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Varanasi

भारतीय ज्ञानपीठ काशी की ओर से बाबूलाल जैन फागुल्ल द्वारा प्रकाशित और
सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी में मुद्रित।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदय

फ़रवरी १९६९

2-2-64

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक विकास-उन्नयन
सांस्कृतिक अनुसन्धान-प्रकाशन
राष्ट्रीय एकता एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी

साधिका
विशिष्ट संस्था

भारतीय ज्ञानपीठ

[स्थापित सन् १९४४]

संस्थापक
श्री शान्तिप्रसाद जैन

अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

फ़रवरी १९६५ ज्ञानोदय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ़रवरी १९६७

सम्पादक :
लक्ष्मीचन्द्र जैन, रमेश बक्षी

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

आधुनिक भावबोध, कला-संचेतना
और नवीनताका
प्रतिनिधि मासिक

ज्ञानोदय

सम्पादकीय कार्यालय :
९, अलीपुर पार्क प्लेस,
कलकत्ता-२७

वितरण-कार्यालय :
भारतीय ज्ञानपीठ,
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

वितरक :
बैनेट कोलमैन एण्ड कं० लि०,
बम्बई-१

यह अंक	:	१.००
वार्षिक	:	१०.००
त्रैवार्षिक	:	२५.००
शतवार्षिक	:	५८.००

इस अंकमें :

यूज़ीन-इयोनेस्को, राजेन्द्र यादव, अख्तर मुहीउद्दीन, नन्ददुलारे वाजपेयी, उपेन्द्रनाथ अश्क, सूर्यदेव पाण्डेय, शचीरानी गुर्टू, 'प्रभाकर', बच्चन, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, विजयदेव नारायण साही, वीरेन्द्रकुमार जैन, श्रीराम वर्मा, आनन्दप्रकाश जैन, रामनारायण शुक्ल, सुकीर्ति गुप्ता, ममता अग्रवाल, राजा दुबे, श्रीलाल शुक्ल, विनोद रस्तोगी, महेन्द्र पाल

- एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्व
- पुल : अनदेखे अनजान
- 'लिखना', 'होना' और अन्धकार
- रूबाईके रंगवाला चित्रकार
- नया काव्य, कमिटमेण्ट और संघर्ष
- जब आतिश जवान था···
- शासन और 'राक्षसी पाबन्दियाँ'
- क्रुद्ध युवा बनाम क्रुद्ध वृद्ध
- शोकगीत : मेरे शहरकी सरहद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ़रवरी १

■ शोकगीत :

- नये शहरकी सरहद : रमेश बक्षी १३५

■ विशेष स्तम्भ :

- दर्शन-अनुचिन्तन : एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्व : सूर्यदेव पाण्डेय ३
- किसी एककी उलझन : पुल : अनदेखे अनजान : १–उतरती सीढ़ियोंपर कुरूपताकी ग्रन्थि : ममता अग्रवाल; २–'···केवल एक सेतु' : राजेन्द्र यादव १२
- सापेक्ष डायरी : 'लिखना', 'होना' और अन्धकार : यूज़ीन इयोनेस्को (प्रस्तुति : परेश) ३१
- कला-चर्चा : रूबाईके रंगवाला चित्रकार : शचीरानी गुर्टू ४९
- सात सफ़र – २ : जब आतिश जवान था : उपेन्द्रनाथ अश्क ३८

■ कहानी-व्यंग्य-एकांकी :

- दाँताकिलकिल : अख्तर मुहीउद्दीन ५५
- कथांजलि ७०
- संशयका युग : आनन्दप्रकाश जैन ७१
- अतीत : रामनारायण शुक्ल ८०
- धागे : सुकीर्ति गुप्ता ८६
- मृत्यु-रस : राजा दुबे ९५
- मनीषीजीकी एक रात : श्रीलाल शुक्ल ९८
- [illegible] : विनोद रस्तोगी १०५

■ चर्चार्थ :

- नया काव्य, कमिटमेण्ट और
  प्र० : विजयबह
  उ० : नन्ददुलारे वाज
- शासन और राक्षसी पाबन्दियाँ :
  मिश्र 'प्रभाक

■ कविताएँ :

- क्रुद्ध युवा बनाम क्रुद्ध वृद्ध : ब
- दो-दो कविताएँ : सर्वेश्वरदयाल
  विजयदेव नारायण साही, वी
  जैन, श्रीराम

■ अन्य सामग्री :

- प्रतिक्रिया : हिन्दी नाट्य-महो
  दृष्टि : महेन्द्र प
- डॉ० लालका वक्तव्य : ए
  मधु
- समीक्षा : संस्कृतके लक्षण-ग्रन्थ
  पृथ्वीनाथ शा

■ अंक-सज्जा :

अजितकुमार हाल्दार, भा
वीरेश्वर बनर्जी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

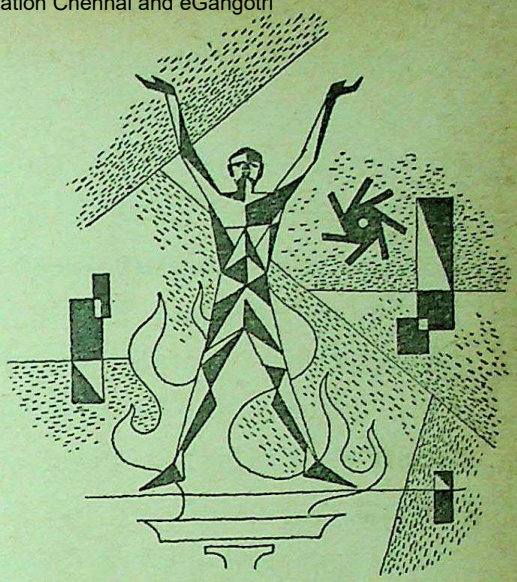

सूर्यदेव पाण्डेय

एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्व

एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्वके 'अस्तित्वगत' होनेका भाव नितान्त बौद्धिक व विशुद्ध बुद्धिसे सम्बन्धित है। सभी युगोंमें एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्वके 'अस्तित्वगत' होनेकी बात मिलती है। यह सर्वथा आवश्यक अस्तित्व अस्तित्वगत होते हुए भी एक भाव है, अस्तित्वगत होनेका प्रमाण देना सम्भव नहीं।

ढाई अक्षरों (प्रेम)की समस्या जितनी मौलिक है उतनी ही महत्त्वपूर्ण समस्या है साढ़े तीन अक्षरोंकी (ईश्वर)।

अठारहवीं शतीके प्रमुख विज्ञानवादी दार्शनिक इमैनुअल काण्ट कहते हैं कि ईश्वरके अस्तित्वको अनुमानपर आधारित विवेकके माध्यमसे प्रमाणित करनेके तीन आधार हैं—सत्वविद्या, ब्रह्माण्डविद्या और परमार्थविद्या। इनके अतिरिक्त और आधार यदि हैं, तो उनका होना कठिन प्रतीत होता है।

एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्वके अस्तित्वगत होनेके प्रमाणसे उपयोगी है इस बातकी धारणा कि वह है। सत्वविद्याके अनुसार बीजको देखकर वृक्ष न होनेकी बात कोई अर्थ नहीं रखती। बीज है तो वृक्ष है, यहाँ वृक्ष अनुभवकी सीमासे पृथक् रहता है। उसके बोधके लिए बीज देखकर इस सिद्धान्तका सहारा लेना पड़ता है कि बीज है, इसलिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृक्ष भी है। इस स्थलपर बीजका अस्तित्व अनिवार्य आवश्यक होना' जितना सत्य है, उतना ही वृक्षका भी। इस 'अन्यतम यथार्थ'के मध्य समन्वय स्था बातसे यह भी सिद्ध हो जाता है कि किसी किया जा सकता है। वस्तुका ज्ञान प्राप्त करनेके लिए सिद्धान्त उसका तर्क इस तरह है – यदि वि आवश्यक है। और इस बातपर कि सिद्धान्त वस्तुका अस्तित्व है तो एक सर्वथा आवश्य निर्णयका परिणाम है, अपवादकी बात नहीं अस्तित्वका अस्तित्वगत होना स्वाभाविक उठनी चाहिए। निर्णय मुख्य है, वस्तु गौण। मेरा अस्तित्व है इसलिए सर्वथा आवश्य तो क्यों नहीं निर्णयके सम्बन्धमें वस्तु एक अस्तित्व अस्तित्वगत है। अतः प्रमाण सन्दर्भ है? वस्तु वृक्ष है तो निर्णय है कि आरम्भ अनुभवसे होता है। सभी सम्भ बीज अवश्य है, और इसीलिए बीज है तो अनुभवोंका विषय विश्व है। इस विश्व वृक्ष भी अवश्य है। अतिरिक्त यदि कोई अन्य विश्व भी है अनुभवके प्रसंगमें प्रमाण उन विशेष गुणों

एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्वके अस्ति- प्रभावसे पृथक् होगा जिनके कारण यह वि त्वगत होनेके प्रकरणमें भी एक सिद्धान्त है, उस दूसरे विश्वसे भिन्न है। और वस्तु भी। वस्तु है उस सर्वथा आवश्यक अस्तित्वका अस्तित्वगत होना और सिद्धान्त इस तरह एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्व काण्टके शब्दोंमें निम्न प्रकार हैं : के अस्तित्वगत होनेके प्रमाणका एक प्रका निर्धारित हो जाता है। वह सम्भव स्थाप

"ईश्वर वह अस्तित्व है जो उन सबका जो किसी वस्तुके अस्तित्वगत होनेका निर्ण अस्तित्व अपनेमें निहित रखता है जो करती है, 'स्वयं सिद्ध' है – वह है अस्तित्वक मनुष्यको ज्ञानगत होनेकी स्थितिमें लाते हैं; सर्वथा आवश्यक होना तथा अन्यतम यथार्थ ईश्वर वह अस्तित्व है जो लौकिक अस्तित्वों- मध्य समन्वय स्थापित करना। दूसरे शब्दों का कारण है। यह कारण उसका स्वभाव यह कि ईश्वर अस्तित्वगत है। नहीं है, प्रत्युत सम्बन्ध है जिसे हम बाधा- विहीन इच्छाशक्तिके रूपमें समझ सकते यह स्वीकार्य है, काण्टके लिए, हैं।" (क्रिटिक ऑव प्योर रीजन-ए ५९७ : परमार्थविद्याकी समालोचना विवेकके बी ६२५) सिद्धान्तोंपर आधारित है जो अनुमानज

काण्ट कहता है : हैं। विवेकका, मात्र, अनुमानजन्य प्रयो

"ईश्वरके अस्तित्वकी स्थापना कई ईश्वरको एक आदर्शके रूपमें ही प्रस्तु दृष्टिकोणोंसे एक बहुत ही उपयुक्त भाव है।" करता है, और यह आदर्श सर्वगुणसम्प

ईश्वरके अस्तित्वगत होनेकी बातको एक है – सर्वथा दोषरहित। यह स्थापना मानव आधारपर अवस्थित करनेके लिए काण्टने समग्र ज्ञानपर शासन करती है। इसक माना है कि ब्रह्माण्डविद्या द्वारा 'ईश्वरके विषयगत (विश्वगत) यथार्थता प्रमाणि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं की जा सकती किन्तु अनुमानजन्य विवेक-के आधारपर अप्रमाणित भी नहीं की जा सकती। इस सन्दर्भमें काण्ट सुझाता है – आवश्यकता, अनन्त, इकाई, विश्वकी सीमासे पृथक्का अस्तित्व, नित्यता, सर्वशक्तिमानता और सर्वव्यापकता विशुद्ध रूपसे सर्वातिरिक्त हैं। इसलिए परामर्थविद्याकी विशुद्ध स्थापनाएँ विवेचनाके लिए अपर्याप्त ठहरती हैं – क्योंकि उनका आधार होता है सर्वातिरिक्त परमार्थविद्या।

यदि वस्तुओंके सिद्धान्त या अस्तित्वोंके अनुभव प्रमाणके लिए पर्याप्त हैं, तो भी ईश्वरके अस्तित्वको प्रमाणित करनेके लिए ये अपर्याप्त हैं....

इस विश्वमें हर स्थलपर एक नियमितता प्राप्त होती है जो किसी संकल्पित उद्देश्यसे है। यह नियमितता विश्वकी वस्तुओंसे संयोजित है। अतः नियमितता और वस्तुओंके पीछे एक महान् तथा विवेकपूर्ण कारण अनिवार्य है। यह विश्वका भी कारण है। यह कारण अनजान, अचेतन नहीं, प्रत्युत समग्र चेतना व सम्पूर्ण विवेकके साथ कार्यरत है।

अतः परमार्थविद्याका तर्क ब्रह्माण्डविद्यापर आश्रित है और ब्रह्माण्डविद्याका सत्वविद्यापर। एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्वके अस्तित्वगत होनेका प्रमाण उपलब्ध करनेके लिए प्रमाणके इन तीन आधारोंके अतिरिक्त अन्य नहीं है। इन तीन आधारोंमें सत्वविद्याकी तार्किक विवेचना सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि वह विवेकजन्य स्थापनाओंसे सुलभ है।

विश्वके दार्शनिकोंमें काण्ट ही ऐसा है जिसे समझकर भी समझा नहीं जा सकता। हर बातको वह तर्कके माध्यमसे प्रस्तुत करता है। उक्त पंक्तियोंमें उसने यह प्रमाणित कर दिया कि एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्वके अस्तित्वगत होनेकी बात प्रमाणित नहीं की जा सकती। अब हम दर्शनकी अन्य मान्यताओं, स्थापनाओंपर विचार करेंगे।

अमेरिकाके दार्शनिकोंमें विलियम जेम्स दो भिन्न प्रकारकी विचारधाराओंको एक प्रसंगमें प्रकाशित करनेके लिए सदियों तक याद किया जायेगा। नास्तिक दर्शनको आस्तिक दर्शनमें आवृत्त करके वह निश्चिन्त हो गया – इस प्रकार – ज्ञान जीवनके लिए एक साधन है, विपरीत प्रयोजन नहीं। वास्तविक ज्ञान वह है जो यथार्थ प्रमाणित कर पाता है और परीक्षित होता है। जो 'बुद्धिपूर्वक' (rational) है' वही 'वस्तु-सत्' (thing-in-itself) नहीं है। प्रयोग और अनुभवमें सिद्ध ही 'वस्तु-सत्' है। प्रत्यक्षके पीछे भी कोई वस्तु है (other than perceptive reality), वस्तुसार (Objective reality), परमतत्त्व (absolute), अज्ञेय (agnostic) आदि कल्पना हैं।

ईश्वर विश्वका एक अंग है। वह हमारे स्वभावका एक चेतन, व्यक्तित्वयुक्त सत्ता है। पर ईश्वरवादी मान्यताएँ पूर्णरूपसे प्रमाणित नहीं की जा सकतीं।

प्रागमेटिज़्म (मनुष्यमापवाद) के जन्मदाता विलियम जेम्सने दो प्रकारके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दार्शनिकोंकी चर्चा की है – कठिन मस्तिष्कीय व सरल मस्तिष्कीय। कठिन मस्तिष्कीय प्रयोगवादी व अधार्मिक होते हैं। सरल मस्तिष्कीय ठीक इसके विपरीत होते हैं।

विलियम जेम्सके अनुसार प्रागमेटिज़्म एक ऐसा सिद्धान्त है जो दोनों कोटिके दार्शनिकोंके लिए यथेष्ट है। और सम्भवतः इसीलिए अमेरिकाके इस दार्शनिकने किसी वक्तव्यका अर्थ निकालनेके लिए दो सिद्धान्त स्थापित किये हैं :

प्रथम सिद्धान्त – किसी भी वक्तव्यका अर्थ सम्भव अनुभवके प्रभाव द्वारा ज्ञात होता है। यदि प्रभाव अनुपस्थित है तो वक्तव्य अर्थहीन होगा, किन्तु यह (सिद्धान्त) पूर्ण नहीं है। क्योंकि ईश्वरमें विश्वास, विश्वास करनेवालेके जीवनमें परिवर्तन ला देता है, इसलिए यह परिवर्तन यद्यपि महत्त्व-पूर्ण है, तथापि इस स्थलपर वक्तव्य अनुभवके प्रभावका कारण नहीं है, प्रत्युत कारण है वक्तव्यपर विश्वास। अतः यह ज्ञान होता है कि ईश्वरका 'अस्तित्व' विश्वास करनेवालेमें परिवर्तन नहीं लाता बल्कि परिवर्तनका कारण है 'विश्वास'।

द्वितीय सिद्धान्त – कल्पना करें कि ईश्वरमें विश्वास व्यक्तिकी भावात्मक अभि-व्यक्तिको प्रभावित करता है, और क्योंकि व्यक्ति विश्वास करता है इसलिए ईश्वर अस्तित्वगत है। इस स्थितिमें ईश्वरके अस्तित्वगत होनेके बोधका कारण वह विश्वास है जिसे व्यक्ति धारण करता है। अतः यदि कोई व्यक्ति धैर्यका अनुभव करता है क्योंकि वह जानता है, ईश्वर है, तो धैर्य है, इसलिए ईश्वर अस्तित्वगत है।

द्वितीय सिद्धान्त भी वक्तव्यका स्पष्ट करनेमें अक्षम है, क्योंकि, इस भी, ईश्वरके अस्तित्वका बोध विश्वास परिणाम है। प्रथम सिद्धान्त द्वारा भी अर्थ नहीं प्राप्त होता। अतः इन सिद्धान्तोंकी परीक्षा करके हम इस निष्क पर पहुँचते हैं कि ईश्वरके अस्तित्व प्रमाणित करनेके लिए प्रयोग अपर्याप्त या है नहीं। किन्तु ईश्वर है, यह द्वितीय सिद्धान्तके अनुसार अर्थपूर्ण है, जेम मानता है।

विलियम जेम्स पुनः एक अन्य सिद्धा स्थापित करता है – किसी वक्तव्यका अ तब होता है जब या तो वह अनुभव प्रभाव प्रत्यक्ष करता है या उसमें विश्वा अनुभवके प्रभाव प्रत्यक्ष करता है। इ सिद्धान्तका प्रथम भाग कठिन मस्तिष्कीय और द्वितीय भाग सरल मस्तिष्कीय।

डॉक्टर राधाकृष्णन स्वतन्त्र-मत प्रचा नहीं हैं पर वह उससे भी ऊँचा स्थान र हैं। पश्चिमके तर्कसे प्रभावित होकर उन्हों पूर्वकी मान्यताओंका खण्डन नहीं कि बल्कि उसे एक नये प्रकाशमें प्रस्तुत किया यद्यपि राहुल सांकृत्यायनने अपने ग्रन्थ 'दर्श दिग्दर्शन' में स्थान-स्थानपर उनकी आल चना की है पर कदाचित् उनके ध्यानमें न था कि राधाकृष्णनने कोई नया प्रचारित नहीं किया है, प्रत्युत सर्वमा विज्ञानवादी परम्पराके परिपार्श्वमें भारत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गौरवको पश्चिमके 'बुद्धिवादी' (rational) तर्कसे सजाकर, एक नये दृष्टिकोणकी ओर संकेत किया है। निम्न पंक्तियोंमें हम उनके 'हब्बर्ट लेक्चर्स' के एक अंशका अध्ययन कर उनसे परिचय प्राप्त करेंगे।

"पूर्ण मस्तिष्ककी तरह ईश्वर चेतनाकी स्थितिमें है, वह विश्वका आरम्भ है, इसकी नियमितताका रचयिता है, इसके विकासका सिद्धान्त है, और विकासका लक्ष्य है। जबतक हम धार्मिक चेतनाको ध्यानमें नहीं रखते तबतक यह 'धर्म' (of religion) का ईश्वर नहीं है। हमारा नैतिक जीवन साक्षी है कि ईश्वर मात्र लक्ष्य नहीं है, किन्तु नैतिक प्रयत्नोंका यह उद्गम है, रक्षक है। हमारा आध्यात्मिक अनुभव यह बताता है कि 'परम' (The Supreme) विस्तारपूर्वक है। विश्व और मनुष्यके मस्तिष्ककी रचनामें अन्यतम एकरूपता है। हमारे इन्द्रियगत प्रत्यक्ष, हमारी तार्किक स्थापनाएँ, हमारी आत्मानुभूतिगत विस्तृत विवेचनाएँ वास्तविकताके प्रति विस्तारका प्रकार नहीं हैं, बल्कि स्वयं वास्तविकताके व्यवस्थित प्रकार हैं। आरम्भसे ही हम 'कुछ दिये हुए' (givenness) की उपस्थितिमें हैं, 'कुछ अनुभूत' (something experienced) की उपस्थितिमें हैं। क्योंकि विषयोंका प्रत्यक्ष तभी होता है जब हमारे मस्तिष्क दक्ष हों, यह नहीं है कि विषय 'स्वचेतन' (objects are subjective) होते हों। एक गुलाबके फूलको देखनेके लिए हमें अपनी आँख उधर मोड़नी पड़ेंगी। सर्वोच्च सत्ताको अनुभूत करनेके लिए मस्तिष्कका शुद्धीकरण आवश्यक है। सत्यकी यथार्थता यह कहकर नहीं टाली जा सकती कि यह उन्हीं द्वारा देखा जाता है जिनके हृदय पवित्र हैं। (ऐन आइडियलिस्ट वियु ऑव लाइफ़, पृष्ठ २६४-६५)

आपके सामने है : काण्टका
सिद्धान्त, विलियम
जेम्सकी मान्यता,
राधाकृष्णनका मत,
रूसी दार्शनिकोंके विचार,
सन्त आगस्टीनका चिन्तन,
जैन-दर्शनका दृष्टिकोण,
'ईश्वर'की व्याख्या।
क्या साढ़े तीन अक्षरोंकी
इस समस्यापर आपके
भी अपने विचार हैं?
प्रतिक्रिया भेजेंगे तो मूल्यांकन-
की परम्परा आगे बढ़ेगी।

यहाँ रूसी दार्शनिकोंका उल्लेख अप्रासंगिक न होगा। रूसमें दर्शन एक दृष्टिकोणको लेकर चलता है। पिछले सौ वर्षोंमें रूसके दार्शनिकोंने किसी दार्शनिक उपलब्धिसे हमें परिचित नहीं कराया बल्कि वही कुछ कहते रहे जो मार्क्स, एंजिलस और लेनिन कह गये हैं। यहाँ दर्शनके इतिहासकी एक घटनाका उल्लेख करूँगा। सन् १८७० में काण्टवादी दार्शनिकोंने जर्मनामें 'काण्टकी ओर' नारा प्रचारित किया। यह आकस्मिक ही है कि मार्क्सवादी दार्शनिकोंके लिए भी काण्ट उपयोगी है। काण्टका दर्शन पदार्थवाद (Materialism - as suggested by Karl Marx) और आदर्शवाद (Idealism)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के द्वन्द्वको एक सन्धि द्वारा शान्त करता है। जब वह कहता है कि हमारी सत्तासे पृथक्, 'वस्तु अपनेमें', (thing-in-itself) हमारे विचारों (बुद्धि) से सम्बन्ध स्थापित करती है, तब वह पदार्थवादी है। और जब वह कहता है कि 'वस्तु अपनेमें' अज्ञेय है, अनुमानजन्य सीमापारी (transcendental) है तब वह आदर्शवादी है। अतः जब जर्मनीमें 'काण्टकी ओर' नारा प्रबल हुआ तो मार्क्सवादियोंने इसे दर्शनका प्रतिक्रियावादी स्वरूप कहा। रूसके कुछ मार्क्सवादी भी इस प्रतिक्रियावादी दर्शनसे प्रभावित थे। उन्हीं दिनों लेनिनने 'वन्स मोर आन द क्वेश्चन ऑव रियलाइजेशन' (कलेक्टेड वर्क्स, खण्ड ४, पृष्ठ ५९-७७) तथा 'मार्क्सिज़्म एण्ड रिविजनिज़्म' (मार्क्स-एंजिल्स-मार्क्सिज़्म, पृष्ठ, २४८-५८) शीर्षकोंके अन्तर्गत प्रतिक्रियावादी दर्शनकी आलोचना की। और तबसे ही एक पिटी-पिटायी लीकपर चलनेवाला दर्शन – मार्क्सवादी दर्शन – रूसमें दोहराया जाता रहा। पर मार्क्सके सन्दर्भमें, एक विशिष्ट विचारधाराको, मार्क्सवादी दर्शन कहना, जान पड़ता है उचित नहीं है। एक ओर जहाँ विज्ञानवादी दर्शन ईश्वर, परमतत्त्व, अज्ञेयकी विवेचना करके सत्वके अन्वेषणकी एक नयी परम्परा स्थापित करता है, वहाँ मार्क्सका भौतिकवादी दर्शन इनके सम्बन्धमें विरोधी बातें कहकर सत्वके मार्गसे हट जाता है, लगता है यह कहने कि समाज क्षण-क्षणमें परिवर्तित होता है। इसीलिए वह समाजमें दखल देने लगता है – एक नियम निर्धारित करके कि व्यक्तिक स्वतन्त्रता न रहे। इसलिए क्षण-क्ष बदलनेवाले मार्क्सवादी समाजमें व्यक्ति स्वतन्त्रता सम्भव नहीं हो पाती।

अब हम आधुनिक दर्शनसे हटकर म युगीन दर्शनकी ओर चलेंगे और सन्त अ स्टीन (जन्म ३५४, मृत्यु ४३०) विचारोंसे परिचित होंगे।

ईश्वरकी सत्ता प्रतिपादित करते सन्त अगस्टीनने कहा है :

"जब मैं अपने ईश्वरसे प्रेम करता हूँ किस वस्तुसे प्रेम करता हूँ ? वह कौन है मेरी आत्माके मस्तकसे ऊँचा है ? मैं आत्मा द्वारा उसतक पहुँचूँगा। मैं शक्तिसे, जिसके कारण 'मैं' शरीरके रू आ पाया हूँ, और इस ढाँचेमें जीवन पाया हूँ, आगे निकल जाऊँगा।" (द ऑव बिलीफ—कमेण्टेटर : एनी फ्रीमैण्टल पृष्ठ २७)

उक्त अंशमें हम यह पाते हैं कि ईश्वर और उस तक पहुँचनेके लिए जीवात्म (आत्मा) का सहारा ज़रूरी है। अ कहा है :

"बहुत देर बाद मैंने तुम्हें प्यार किय ओ, प्राचीनकालके सौन्दर्य, आज भी तु हो ! और देखो, तुम मेरे अन्दर थे, और दूर, वहाँ, तुम्हें ढूँढ़ता रहा···।" (द कनफेश ऑव सन्त अगस्टीन – अनुवादक : एड बी० पसे)

सन्त अगस्टीनने ईश्वरकी सत्ता भीतर स्वीकार की है। किन्तु व्यक्तिके भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वरका निवास स्पष्ट नहीं करता कि वह क्या है ? इस प्रश्नका उत्तर मैं इस तरह सुलभ करता हूँ :

माया और सत्यमें भेद कर पाना कठिन है। हम रोज़ स्वप्न देखते हैं, या प्रायः देखते रहते हैं, और स्वप्नमें उन्हीं विषयोंका साक्षात्कार करते हैं जो इस विश्वमें विद्यमान हैं, किसी-न-किसी रूपमें। कुछ विशेष स्वप्न भी, जो कार्ल गुस्ताव युंगके अनुसार संयुक्त अचेतन (कलेक्टिव अनकॉन्शस) की रचना हैं, इसी चेतन जगत्से अपने प्रतीक सम्बद्ध रखते हैं (देखिए 'द प्रैक्टिस ऑव साइको-थेरैपी'—डॉ० सी० जी० युंग; अध्याय : द प्रैक्टिकल यूज ऑव ड्रीम-एनेलसिस, पृष्ठ १५४-५५)। अतः जब हम उन्हीं विषयोंका साक्षात्कार करते हैं जो इस विश्वमें हैं तो फिर यह तर्क अनुचित प्रतीत होता है कि स्वप्न स्वप्न है और विश्व विश्व। क्यों नहीं स्वप्न विश्व है और विश्व स्वप्न ? क्यों न यह मान लें कि निद्रावस्थामें ही हम विश्वमें रहते हैं, अन्यथा स्वप्नलोकमें ? इन प्रश्नोंके उत्तरमें कहेंगे कि जब वस्तुएँ ज्ञानेन्द्रियोंके सम्पर्कमें आय तो वह यथार्थ हैं, अन्यथा स्वप्न। पर यह भी तो उचित है कि ज्ञानेन्द्रियों और वस्तुओंके सन्निकर्षसे उत्पन्न ज्ञान भी कभी-कभी भ्रम हो सकता है।

यदि यह अस्वीकार कर दूँ कि ईश्वर अस्तित्वगत है तो क्यों न यह अस्वीकार कर दूँ कि मैं अस्तित्वगत हूँ। यहाँ एक अवरोध उत्पन्न हो जाता है – मैं हूँ, तभी सोचता हूँ, अन्यथा कैसे ? अस्वीकार सब किया जा सकता है पर यह नहीं कि मैं हूँ। मैं हूँ, क्योंकि सोचता हूँ। और यदि नहीं सोचता तो ?

कोई सर्वोच्च सत्ता यदि हस्तक्षेप करके मेरा न होना प्रमाणित करनेका प्रयास करती है तो वह तबतक नहीं कर सकती, जबतक मैं सोचता हूँ। क्योंकि मैं सोचता हूँ, इसलिए मैं हूँ। 'मैं नहीं हूँ' का अभिप्राय है कि मेरी सोचनेकी प्रणाली ग़लत है।

यह भी सम्भव है कि कोई अस्तित्व अस्तित्वगत नहीं है – मैं भी नहीं हूँ, ईश्वर भी नहीं है – किन्तु अस्तित्वोंके अस्तित्वगत न होनेका बोध किसे है ? और इस सोचनेका अस्तित्व कैसे ? तो यह मान लें कि सभी अस्तित्व भ्रम हैं। किन्तु सोचना कैसे भ्रम हो सकता है, क्योंकि 'कोई अस्तित्व नहीं है' का अभिप्राय है, अस्तित्वोंको अस्वीकार करनेवालेका अस्तित्व है, अन्यथा अस्वीकार करनेकी बातका अस्तित्व नहीं है। सम्पूर्ण चेतना छिन्न-भिन्न हो सकती है, चेतनाका स्वरूप भी और अस्वीकार करनेका भाव भी, पर सोचनेवालेका अस्तित्व नहीं। इसलिए मैं अस्वीकार करता हूँ, अर्थात् मैं सोचता हूँ। मैं अस्वीकारकर्ता अर्थात् सोचनेवाला अस्तित्वगत हूँ। यह महान् सत्य है।

इस तरह हम एक सिद्धान्त स्थापित कर सकते हैं – मैं सोचता हूँ, इसलिए हूँ। इसी सिद्धान्तका एक और रूप है – जो सोचता है, वह है। अब हम एक निष्कर्ष-पर पहुँचते हैं – सोचना और अस्तित्व (मेरा) ऐसे अस्तित्व हैं जो हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब यदि मेरा अस्तित्व सोचनसे प्रमाणित होता है तो मैं वह अस्तित्व हूँ जो सोचनेमें अस्तित्वगत है। अतः मेरे अस्तित्व-से सम्बन्धित कोई क्रिया, सोचनेके अतिरिक्त, मेरे अस्तित्वका निर्धारण नहीं कर सकती। इस तरह हम एक स्थापना तक पहुँच गये कि सभी अस्तित्वोंमें सर्वाधिक सत्य है मस्तिष्कका अस्तित्व।

इच्छाशक्ति और निर्णय, यद्यपि दोनों प्रकृतिमें पृथक्-पृथक् हैं, किन्तु सोचनेके कारण ही। अब हम मान लें कि निर्णय दो प्रकारका होता है – नित्य और अनित्य। (यहाँ नित्यका अर्थ है अस्वाभाविकसे और अनित्यका स्वाभाविकसे।) यह भी मान लें कि ईश्वरके अस्तित्वगत होनेका भाव एक सर्वथा विशुद्ध नित्य निर्णय है····फिर, इस निर्णयका सूत्रपात कैसे हुआ ?

कोई भी निर्णय कारणविहीन नहीं हो सकता, क्योंकि कुछ नहींसे कुछ नहींकी उत्पति नहीं हो सकती। यदि कारण है तो वह उतना ही यथार्थ होना चाहिए जितना अस्तित्वगत अस्तित्व (कार्य या निर्णय)। ईश्वरका अनन्त होना, स्वतन्त्र होना, सर्व-शक्तिमान् तथा सर्वव्यापी होना भाव हैं। इन भावोंमें हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ प्रयोजित नहीं हैं, ये भाव 'स्वतः उत्पन्न' भी नहीं हैं, किसी-द्वारा हैं। तो फिर इन भावोंकी उत्पत्ति तथा इस भावका अस्तित्वगत होना कि 'स्व' ('my' existence—The conception of 'self' in western philosophy – to us it is 'atman') से भी परिष्कृत अस्तित्व अस्तित्वगत उस 'परिष्कृत' अस्तित्वके कारण ही परिमितसे अधिक परिष्कृत यथार्थ अपरि है, पर इसका यह अर्थ नहीं कि परिमि अपरिमितका भाव उत्पन्न हुआ है, आत्मि दर्शनका यह तर्क भी स्वीकार्य है क्यों लगता भी है, अपरिमितसे परिमितका उत्पन्न होता है। कदाचित् इसीलिए परिमि अस्तित्व (मेरा) का बोध अपरिमि तुलनाका परिणाम है। अतः 'मेरा' भा निश्चित रूपसे ईश्वर-द्वारा मुझमें आ चाहिए – मस्तिष्कके अभावमें भी। प ऐसा नहीं होता, इसलिए ईश्वर नहीं है यह कथ्य जितना सत्य है, उतना ही स भी कि मैं सोचूँ या न सोचूँ, हूँ अवश्य।

उक्त पंक्तियोंमें निहित तर्कके बाद क जैन-दर्शनकी ईश्वर-सम्बन्धी मान्यताओं व्याख्या करेंगे और एक सर्वथा आवश्य अस्तित्वके अस्तित्वगत होनेके सम्बन्ध अन्तिम निश्चय लेंगे।

जैन-दर्शन सिर्फ़ दो तत्त्वों, जीव और अजीव, की सत्ता स्वीकार करता है। जी अनन्त तथा नित्य है। अजीवसे इस उत्पत्ति नहीं होती। यह अभौतिक है···क ईश्वर ? वह नहीं है। जगत् स्वयम्भू और शाश्वत है।

लेकिन ईश्वर क्यों नहीं है ?

मान लिया जाये कि ईश्वर जगत् निमित्त कारण है तो क्या वह शरीर-द्वा इसकी रचना करता है, या शरीरके बिना शरीरके बिना रचना सम्भव नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्योंकि रचनाकी क्रिया गतिकी अपेक्षा करती है। शरीरके अभावमें गति सम्भव नहीं है।

और यदि ईश्वरका शरीर है तो वह दृश्य है या अदृश्य ? दृश्य नहीं है, क्योंकि हम रचनाओंमें, या साथ, उसका प्रत्यक्ष नहीं करते। और यदि अदृश्य है तो क्यों ?... मान लिया जाये कि है, बस, तो फिर सृष्टि-का उसका क्या प्रयोजन है, क्योंकि वह जगत्का स्रष्टा है।

चेतन प्राणीके कार्य स्वार्थ या करुणासे प्रेरित होते हैं, पर ईश्वर स्वार्थसे प्रेरित नहीं हो सकता क्योंकि वह नित्य तृप्त है, ऐसा मानते हैं, और करुणा भी नहीं कर सकता क्योंकि करुणा करनेमें भाव है—दुःख दूर करना। सृष्टिके आरम्भके पूर्व दुःख थे ही नहीं, अतः कौन-सा दुःख दूर करता ? इसलिए सृष्टिके पीछे ईश्वर नहीं है।

अगर यह कि ईश्वर खेलके लिए सृष्टि करता है तो फिर उसकी सृष्टिका कोई प्रयोजन नहीं होना चाहिए। शायद यह कि सृष्टिकी उत्पत्ति ईश्वरके स्वभावसे हुई है तो यह क्यों न मानें कि कार्य अपने कारणोंके स्वभावसे होते हैं। अतः ईश्वर नहीं है। (स्याद्-वादमंजरी – पृष्ठ २०-४०)

इसके अतिरिक्त, उपसंहारकी पंक्तियोंमें यह स्पष्ट करना चाहूँगा कि ईश्वर अस्तित्व-गत है, किन्तु भाव-रूपमें।

ईश्वरको भाव-रूपमें स्वीकार कर लेनेके बाद भी जैन-दर्शनके निम्न निष्कर्ष सर्वथा स्वीकार्य हैं :

(१) ईश्वर जगत्का निमित्त कारण नहीं है।

(२) सृष्टिसे उसका कोई प्रयोजन नहीं है। और

(३) वह भाव-रूप है, इसलिए 'कोई कार्य नहीं कर सकता'।

जैन-धर्ममें 'ईश्वरत्व' या 'परमात्म पद' की मान्यता है जो आत्माकी अन्तिम विकास-पूर्ण स्थितिका नाम है।

ईश्वरके अस्तित्वको, भाव-रूपके अति-रिक्त किसी अन्य रूपमें, प्रमाणित नहीं किया जा सकता; हाँ, उसके भाव-रूप अस्तित्वके सम्बन्धमें प्रमाण उपलब्ध किया जा सकता है। मैंने यह माना है – "परिमित अस्तित्व (मेरा) का बोध अपरिमितसे तुलनाका परिणाम है। अतः 'मेरा' भाव निश्चित रूपसे ईश्वर-द्वारा मुझमें आना चाहिए" – पर यह 'मेरा' भाव मस्तिष्ककी उपस्थितिमें ही मेरे अन्दर आता है। अब यह मान लें कि यह भाव मुझमें ईश्वर-द्वारा आता है तो इस स्थलपर यह मानना ही पड़ेगा कि ईश्वर मस्तिष्क-सापेक्ष है।

यह परिणाम तर्कसंगत प्रतीत होता है कि ईश्वर मस्तिष्कके विवेकपूर्ण चिन्तनकी परिकल्पित अभियोजना है। इसलिए यह उनके लिए अस्तित्वगत नहीं है जो मस्तिष्क रखते हैं पर उनका मस्तिष्क विवेकपूर्ण चिन्तनमें अक्षम है। तात्पर्य यह है कि इस पृथ्वीपर ईश्वर मनुष्यके अतिरिक्त अन्य जीवोंके लिए महत्त्वहीन है – है नहीं (अस्तित्वमें)। ■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

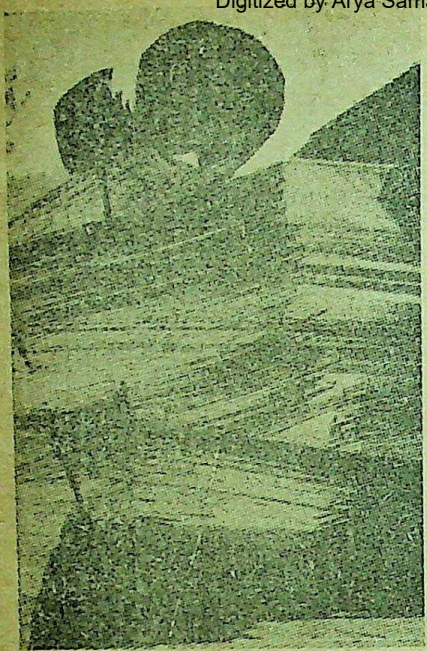

किसी एकको उलाहना—४

ममता अग्रवाल
राजेन्द्र यादव

पुल : अनदेखे अनजान

■

राजेन्द्रजी,

हाथ पड़ गया तो 'अनदेखे अनजान पुल' पढ़ ही गयी। स्वयंके प्रति करुणासे मन भीग उठा। आपको मेरी कथा सुन इतनी सहानुभूति, दुलार और प्यार उमड़ा था, इसकी मैंने कल्पना भी नहीं की थी। पहाड़के उस सूने माहौलमें अपरचित-से अन्तरंग हो उठना शायद उतना सम्भव नहीं था। वास्तवमें उस समय मैंने आपको 'गवाह बनाकर' विगतको फिर जिया था।

उतरती सीढ़ियों पर कुरूपता की ग्रंथि

इतने सहज आप कैसे लिख गये सब ? मैंने आपको महज़ प्रारूप दिया था, आपने उसमें घटनाएँ, स्थितियाँ इस तरह फ्रेम कर दीं मानो 'परबीती' नहीं यह 'आपबीती' हो।

पर राजेन्द्रजी, सच कहूँ, मैं तो स्वयंको पहचान ही नहीं पायी। पढ़ना शुरू किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था मैंने आत्मसाक्षात्कारका साहस समेटकर पर उसकी विशेष ज़रूरत नहीं पड़ी। हाँ, मन करुणासे द्रवित होता रहा यह महसूस कर कि 'निन्नी' अवश्य पिछले जनममें मेरी सगी बहन रही होगी।

अरे हाँ, प्रारम्भमें आपने मेरे दोनों आग्रहोंको क्यों बताया है? इलियटने एक जगह कहा है—लेखककी कृतिकी आधार-भूमि यथार्थमें हो, पर उसके आगे उस कृतिका अपना संसार, अपना अर्थ, अपना सन्दर्भ और अपनी सार्थकता होना ही उचित है। लेखकका प्रेरणा-स्रोत 'नितान्त निजी' होता है। संयत पाठकको उसके प्रति अनन्य जिज्ञासा भी प्रायः नहीं होती। आपने मेरे-आपके मध्य हुए उस आग्रहको घोषित कर 'दुराग्रह' नहीं बना दिया क्या? हो सकता है. आपने 'निहायत ईमानदारी' की भावनासे प्रेरित हो ऐसा किया हो पर उसमें खामखाह पाठकको लेखकके 'ग्रीन-रूम' का दृश्य दिखाई दे जाता है।

उन दिनोंका मेरा दर्द, विवशता साकार हो उठी है उपन्यासमें। घटनाएँ तो बुननेमें आपका सानी नहीं। छोटी-सी काल-अवधिके क्षणांशको भी आपकी क़लम कुशलतासे पकड़ लेती है। मैं तो उपन्यासकी सहजतापर मुग्ध हो गयी। कविताके सम्बन्धमें कीट्सकी परिभाषा आपकी कलापर ठीक बैठती है यानी—"कलाका जन्म उतने ही सहज रूपमें होना चाहिए जितने सहज, पेड़में पत्तियाँ।"

यह कहनेमें शायद मैं कृतघ्न लगूँ पर आप मुझे पूरी तरह समझ नहीं पाये। मेरे चरित्रके साथ इसलिए न्याय नहीं हो सका। मैंने चाहा था आप मेरे मनके गड़े दर्दको मूर्त करें। आपने किया, पर उसका बहुत वृहद् संस्करण। मेरे चरित्रपर आपकी सहानुभूति बहुत ज़्यादा हावी हो गयी। कहाँ मैं, कहाँ आपकी निन्नी, जैसे दीपककी लौ, भय-आशंकासे काँपती-थरथराती। मैं मानती हूँ, उम्रमें आपको मुझे आठ-दस साल पीछे ले जाना पड़ा पर मानसिक उम्रमें आप मुझे बीस साल पीछे ले गये। यह कच्चापन, यह 'सिलीनेस' सुन लीजिए, क़तई मेरी न थी। निन्नी मेरी अतिरंजित तसवीर है। बहरहाल, निन्नीको मैं 'अलग व्यक्ति' के रूपमें देखना चाहती थी, इसलिए बेहतर हो कि तृतीय पुरुषमें ही मैं उसका विश्लेषण करूँ।

निन्नी एम० ए०में पढ़नेवाली मध्यमवर्गकी लड़की, एक विस्तृत परिवारकी इकाई है। दादाका दुलार उसे पर्याप्त मिला है। उनके साथ दिल्ली-यात्राके दौरान उसका परिचय दादाके मित्र दर्शनसे हो जाता है। दर्शनके खुले, सहज, सौजन्यपूर्ण व्यवहारमें उसका प्यासा मन सान्त्वनाके कुछ बिम्ब ढूँढ़ लेता है। जी, भूली नहीं हूँ, निन्नी कुरूप है (थी), 'काली, चमकते दाँत, आँखोंमें सफ़ेदी, ज़रूरतसे ज़्यादा लाल मसूड़े और साँवले होंठ'। स्वाभाविक है, निन्नीमें इससे उत्पन्न हीन-भाव, आत्म-अविश्वास, आशंका, भय और अवसादका समावेश। यह भय 'उलटे पड़े तिलचट्टेकी तरह हाथ-पाँव मारता रहता है'। उसकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लालसा दर्शनकी सहजतामें से [illegible] अनुबन्ध खोज निकालना चाहती है। उसके भी अन्तरमें 'एक सपना है जो मकड़ीके तने जालेकी तरह फैला है'। निन्नीका व्यक्तित्व बस इसी भय और सपनेका असन्तुलित पर्याय है। दर्शन निन्नीको व्यक्तिके रूपमें चाहता आया और चाहता रहता है। मनके संक्रमण-कालसे गुज़र निन्नीको अन्ततः दर्शन-द्वारा ही बोध होता है कि सम्बन्धोंमें कुछ है जिसे संज्ञा नहीं दी जा सकती पर जो मनुष्यके सर्वांगको बदल डालता है। तन-मनकी रोगी निन्नीके सामने पहली बार दर्शन यह विश्वास प्रकट करता है कि सुन्दरता 'अनुपात'का नहीं 'प्राणोंके उल्लास', अनुपातके पीछे उद्भासित होनेवाले प्रभाव, प्रसन्न आस्था और उत्साहका दूसरा नाम है।

यह सब अपने आपमें नितान्त स्वाभाविक है। ऐसा 'अनुभव' आदमीको हिला जाता है पर साथ ही कहीं बहुत मज़बूत भी कर जाता है। पर राजेन्द्रजी, आपकी निन्नीका मनोविज्ञान इससे हट 'अनबूझ'की श्रेणीमें आ जाता है। जैसा मैंने आपको तब बताया था, रूपका अभाव नारीके जीवनमें बहुत-सी सीमाएँ बना देता है। रूपहीनाकी कल्पना प्रखर होते हुए भी सदा निराशाकी गहरी धुन्धसे घिरी होती है। आपकी निन्नीमें इस दुविधाका कोई लक्षण नहीं दीखता! जब सपनोंकी मकड़ी जाल बुनना शुरू करती है तो क्यों नहीं भय कभी आकर उसे कुरेदता? क्यों वह दर्शनके सब मनोभाव 'फॉर ग्राण्टेड' ले लेती है? कैसे वह इतने नगण्य [illegible] लेती है। ऐसी स्थितिमें तो व्यक्ति [illegible] ज़मीनपर भी पाँव रखते डरता है क्यों आशंका उसका स्वभाव बन जाती है। [illegible] निन्नीको दर्शनके हर सहज स्पर्शमें इतने [illegible] इंगित मिल जाते हैं? भयके तिलचट्टे क्या हुआ?

यह तो हुई 'नुमायश और नुमायश' 'उतरती सीढ़ियोंके अँधेरे मोड़'पर तो मैं वास्तव में भटक गयी। निन्नीकी मनःस्थिति अजीब घुमाव ले लेती है। आप सोचेंगे, मैं बड़ी सफ़ाईसे अपना बचाव कर रही हूँ या अपने कहेको झुठला रही हूँ। पर निन्नीके [illegible] अनबूझ घुमावोंपर खीझ आती है, अजीब किचकिचाहट मनमें भर जाती है। उद्धरणके लिए, यह जानते हुए भी कि दर्शनका मन कहीं और केन्द्रित है, कि वह दुलमुल क़िस्मका व्यक्ति नहीं है, कि उसका प्रण है कि शादी करेगा तो उसी लड़कीसे, निन्नी उस अनजान-अपरिचित 'शक्ति'से लोहा लेनेकी ठान लेती है। यानी सतर्कता, भय आशंका, आत्मविश्वास सब ताक़पर रख दिये जाते हैं और निन्नीजी समर-भूमि कूद पड़ती हैं। दर्शनके पत्रोंकी टोन भी अपनी लालसाके रंगमें रंग लेती है। अप सीमाओंसे उपजा हीन-भाव हवा हो जा है। निन्नी एक 'अलौकिक परिणति' प्रतीक्षामें बैठी रहती है, परिकल्पनाएँ कर रहती है। निन्नीकी यह घोर अयथार्थवा तसवीर स्वयं उसीके मनोभावोंको नक देती है। इसलिए जब दर्शनका पत्र आ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि 'उसने एक सुबह अचानक अपनेको विवाहित पाया है' तो पाठक निन्नी-जैसा संज्ञाशून्य नहीं होता। निन्नीको लगता है, इस बार उसके रंग-रूपके अतिरिक्त किसीने उसकी भावना, उसकी आत्मा, उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्वको अस्वीकार कर दिया है। निन्नी-का यह निष्कर्ष और उसकी प्रतिक्रिया दोनों ही 'अनबूझ' हैं। निन्नीके 'अन्तर्बाह्य व्यक्तित्व'को दर्शनने कभी अपमानित नहीं किया। यदि 'सम्पूर्ण'का अर्थ व्यक्तित्वके 'पूरेपन'से है तो दर्शनने उसे बराबर चाहा-सराहा। निन्नीके उपचेतनको दर्शनसे इसके परे पुरुष-नारीके एक अन्य सम्बन्ध अर्थात् प्राकृतिक सम्बन्धकी अपेक्षा थी। दर्शनका अन्यसे विवाह इसी अपेक्षाकी अस्वीकृति है। कहानीके इस मोड़पर मेरा मन विद्रोह कर उठा। निन्नीके 'क्राइसिस'को इस बिन्दु-पर लाते ही उसके चरित्रमें एक हल्कापन आ जाता है, एक सस्तापन जो इस उपन्यास-को साधारण प्रेम-कहानीके स्तरपर ले आता यदि आपने इतनी कुशलतासे उसे उबार न लिया होता। पर यह 'उबारना' निन्नीकी ऊँचाई नहीं, महज़ आपकी क़लमका चातुर्य है। इस सबसे लोगोंको सिर्फ़ एक आभास मिलता है, कि निन्नी 'सेक्स ऑब्सेस्ड' है। उसका मन सहज आत्मीयताके लिए इतना नहीं वरन् एक और ही सम्बन्धके लिए छटपटा रहा है। मेरे मनमें, राजेन्द्रजी, कुरूपताकी ग्रन्थि भले रही हो, कभी 'भूख'-की ग्रन्थि नहीं बनी। लोगोंके चेहरेपर निन्नीके प्रति व्यंग्य-दया-तरसका जो मिला-जुला भाव आता है वह, सच, असहनीय है।

निन्नीकी अपेक्षाओं, कुण्ठाओं और प्रतिक्रियाओंमें इतना घोर बचकानापन क्यों है? मसलन सागरको वह थोड़ी-बहुत छेड़-छाड़का साधन समझती है पर जब वह भी उसे 'साधन'से अधिक नहीं मानता तो वह फूट-फूटकर रो पड़ती है। उपन्यासमें वह एम० ए० की छात्रा बतायी गयी है पर उसकी उम्र चौदह वर्षसे अधिक नहीं मालूम होती। आप उसकी संवेदनाओंको उतनी ही प्रखर रखते हुए भी उसे कुछ सन्तुलन, कुछ स्थिरता दे सकते थे। अगर दर्शनसे उसके परिचयका परिणाम है वह 'उद्भास जो उसके आन्तरिक व्यक्तित्वकी एक-एक भीतरी परतको आलोकित, शीतल करता हुआ निरन्तर ऊपर उठता चला जा रहा है', तो दर्शनका 'विवाह' मात्र क्यों इतना बड़ा विभ्रम बन उसे बदहवास कर देता है?

इसी विभ्रमको जीना निन्नीकी दिनचर्या बन जाता है। फिर उसकी बीमारीकी हालतमें दर्शनका आना, उसी अकुण्ठित ढंग-से मिलना, बात करना, निन्नीके अन्तरकी सर्द परतें उचाल देता है। फिर आती है सौन्दर्यकी परिभाषा, निन्नीका सहमकर आता नया विश्वास और उसका 'कॅथार्सिस'। हाँ, 'बीमार पगडण्डी' आपका सबसे सुलझा, संयत और मँजा हुआ भाग है। दर्शनके सम्भाषणमें हल्की-सी 'अति' है पर वह ज़रूरी था शायद। निन्नीके परिवर्तनमें चुम्बन प्रतीक बनकर आता है, एक जो 'निषिद्धि'में-से ढूँढ़ा 'वर्जित फल' था और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरा जो व्यक्तिका व्यक्तिके प्रति उमड़ते विश्वास, आस्था और सहज अनुरागका प्रमाण। यदि आप पूरे उपन्यासमें इसी प्रतीकात्मकताको 'परिणति'की धुरी बनाते तो 'अनदेखे अनजान पुल' सम्भवतः ज़्यादा प्रभाव छोड़ता। पर शायद लेखककी आँख कभी-कभी 'फ़ाइन फ्रेन्ज़ी' में उलझ सकती है।

कुछ भी हो, आपकी इस निन्नीमें मेरा कुछ अंश तो है ही, इसलिए मेरा इससे प्यार होना स्वाभाविक है। जो भी 'अति' इस चरित्रके साथ हो गयी है वह शायद आपके सहानुभूति, सहृदयता और दुलारका प्रमाण है।

– ममता अग्रवाल

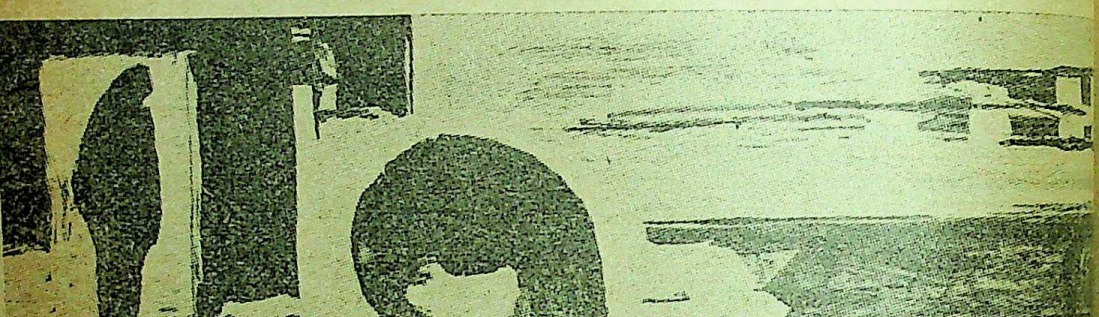

प्रिय ममताजी,

आपकी मार्फ़त निन्नीका पत्र पाकर कहीं हल्का-सा सन्तोष ही हुआ : निन्नी पुरानी आदत है कि वह किसी-न-किसीको गवाह बनाकर अपनी बात कहे। इस बा उसने आपको चुना। मैं भी कभी उसकी 'अन्तर्यात्रा'का गवाह रहा हूँ, अतः यह अ सर और अधिकार मुझे सहज ही मिल जाता है कि सीधे आपको ही पत्र लिखूँ, दूसरे धर्म-संकटसे भी कहीं मुक्ति मिल जाती है जो उससे सीधे सामना करनेपर होती शायद बहुत-सी बातें मैं पत्रसे ही लगता है कि इतना खुलकर उससे कह ....केवल एक सेतु' बातें उसे स्वीकार्य भी नहीं पाता, क्योंकि इस हैं। यानी हमेशा एक निन्नी है, जिसे वह अस्वीकार – डिस-ऑनर करती रही है।

ख़ैर, यह मैं मान लेता हूँ कि 'अनदेखे अनजान पुल'की निन्नी एक स्वतन्त्र सृ है और उसमें वास्तविक निन्नीसे कहीं-कहीं ही साम्य है। निन्नी – विधु – की मैं उदारता ही मानूँगा कि उसने उन असमानताओंको व्यक्तिगत लांछन न मानकर,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नामकी औपन्यासिक नायिकाकी कुछ स्वतन्त्र प्रवृत्तियाँ ही माना है और उसे दूसरे व्यक्ति-की तटस्थतासे देखा है। वर्ना अपने इन औपन्यासिक पात्रोंको लेकर मेरे अनुभव बड़े विचित्र हैं। इन पात्रोंके माध्यमसे जहाँ मैंने देशबन्धु, सूरज, जया, पद्मा, मिसेज़ तेजपाल, सुजाता, अमला और इस निन्नीको पाया है और इनके व्यक्तित्वसे खिंचे देशी-विदेशी पाठकोंकी आत्मीयता प्राप्त की है, वहीं इन्हीं पात्रोंने मेरे कुछ अत्यन्त निकटके मित्रों-स्नेहियोंको भी मुझसे दूर ठेल दिया है। बड़ी अजीब प्रक्रिया है कि व्यक्तिगत जीवनके मेरे आत्मीय पहले तो कुछ समानताएँ खोजकर अपनेको किसी पात्रके साथ एकात्म कर लेते हैं, और जहाँतक अच्छा-अच्छा चलता है वहाँ 'अपनेको पाकर' खुश होते हैं, फिर जहाँ पात्र उनकी अपनी आशाओं और आकांक्षाओंके दायरे तोड़कर दूसरे मोड़ लेने लगता है तो उन्हें महसूस होता है जैसे लेखक और पात्र दोनों मिलकर उनके साथ विश्वासघात कर रहे हैं; कि उनके 'व्यक्तित्व'में उन बातोंका समावेश किया जा रहा है जो उनमें हैं ही नहीं; यही नहीं उनका होना उनके लिए सम्मान-घातक है। यानी यह उनका अपमान है। इस प्रकार अपनेको इन दो 'क्षुद्रताओं' – विश्वासघात और अपमान–का शिकार समझकर वे लेखकसे मित्रता तोड़ लेनेका अधिकार पा लेते हैं और अपने इन काग़ज़ी पात्रोंसे घिरा लेखक अपने हर 'सशक्त' पात्रके निर्माणके साथ अकेला होता जाता है, कुछ आत्मीयोंको खो देता है। "तुम्हारी अमलाकी ये-ये बातें तो ठीक हैं, लेकिन वो-वो बातें तो कभी हुई ही नहीं। सोचो, जो लोग अमलामें मुझे देखेंगे वे उन बातोंको पढ़कर क्या सोचेंगे? इस प्रकार मेरी हँसी उड़ानेका तुम्हें क्या अधिकार है?" –जैसे आरोपोंका दूसरा पक्ष भी है। जहाँ अत्यन्त निकटके आत्मीय दूर होते जाते हैं वहीं अत्यन्त दूर और अपरिचयके क्षेत्रसे चलकर सहसा ही कोई बहुत निकट आ जाता है: "बिना मुझे और मेरी परिस्थितियाँ जाने कैसे आपने हू-ब-हू समरके रूपमें मेरा चित्रण कर दिया, यह देखकर आश्चर्य होता है!" या "अकसर लोग कहते हैं कि मिसेज़ तेजपालमें मेरी तसवीर उतारी गयी है।", 'रंजना मुझे इतनी अपनी लगती है कि भ्रम होता है…", "निन्नीकी समस्या कहीं हर नारीकी समस्या है…"

पात्रोंके साथ तादात्म्य कर लेनेवालोंके स्वीकार-अस्वीकारके बीच निन्नीका यह पत्र मुझे विलक्षण राहत देता है। लेखककी मनः-प्रयोगशालामें पात्र-निर्माण-प्रक्रिया क्या होती है, वह उन्हें गढ़नेके लिए कितना-कुछ कहाँसे लेता है – इस जटिल विश्लेषणमें न पड़कर मैं निन्नीकी इस तटस्थता और अपनेसे ऊपर उठ सकनेकी क्षमताके प्रति नत हूँ, जहाँ उसने पात्रको पात्रकी निगाहसे देखनेका आग्रह दिखाया है। वस्तुतः यही वह सही दृष्टि है जिससे किसी पात्र या लेखकके मन्तव्य-को समझा जा सकता है। वास्तविक जीवनमें किसीका व्यक्तित्व बनाने-बिगाड़नेवाले क्या तत्त्व – फ़ैक्टर्स – हैं, वहाँ घटनाओं और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकल्पका कितना महत्त्व है, इसे मनोवैज्ञानिक-समाजशास्त्रीसे लेकर ज्योतिषी तक – सब अपने-अपने ढंगसे समझाते हैं, वर्तमान-क्षण तक उसके 'तर्क' और कारण खोज निकालते हैं, लेकिन इस क्षणके बाद अनुमान और कल्पनाका क्षेत्र है। वहाँ सारे ज्ञान और तार्किक युक्तियोंके बावजूद कोई तर्क और कोई युक्ति काम नहीं देती। औपन्यासिक पात्रोंके साथ ऐसा नहीं होता : वहाँ हर घटना और व्यक्तिके विकासकी कोई-न-कोई युक्ति लेखकके बहुत भीतर काम करती है। "जीवन जैसा है वैसा ही चित्रित किया जाये" की महत्त्वाकांक्षावाले लेखकोंने भी जहाँ घटनाओं और संयोगोंमें कैसी भी संगति और चरित्रके विकासमें किसी भी युक्तिको माननेसे इनकार किया है वहाँ भी इन असंगतियों और तर्क-हीनताओंका अपना एक तर्क ज़रूर मनमें रखा है। इसलिए औपन्यासिक पात्रोंका विश्लेषण इस तरह नहीं कि उसमें कितना वास्तविक और अवास्तविक है, वैसा किसीके साथ हुआ था या नहीं; बल्कि इस आधारपर होता है कि पात्रोंके विकास और निर्माणके लिए लेखकने जो युक्ति या तर्क निर्धारित किये हैं वे कितने स्वीकार्य और अस्वीकार्य हैं। कभी ये युक्ति और तर्क केवल कृतिमें होते हैं और कभी लेखकीय व्यक्तित्वमें – कभी इन दोनोंमें न होकर उस युग और माहौलमें इनके रेशोंको महसूस करना होता है जिसमें लेखक साँस लेता है। मॉम, हैमिंग्वे और काफ़्काके चरित्रोंको क्रमशः इन तीनोंके उदाहरण-स्वरूप रखा जा सकता है।

लेकिन मैं निन्नीकी बात कर रहा 'अनदेखे अनजान पुल'की निन्नीको उ दृष्टिसे देखना होगा, आपको पत्र लि वाली निन्नीसे हटाकर। इसके लिए सुविधाजनक यह होगा कि जिस निग मैं निन्नीको देखता हूँ उसे, इस पत्रके माध्य से समझनेकी कोशिश करूँ, शायद यह आ और स्वयं उस निन्नीको एक दूसरे आया देखनेका अवसर देगा।

वस्तुतः जिन दिनों मैं उपन्यासको लि रहा था उन दिनों इसका नाम दिया था 'एक चुम्बन'। लेकिन हमेशा एक डर रहता था कि यह नाम उपन्यासको अवांछनीय धरातल दे देगा। 'टीन-एजर्स' 'चुम्बन' शब्दमें ही एक थ्रिल और गोपनीय की गन्ध मिलती है; उनके लिए एक जहाँ यह काग़ज़ चढ़ाकर एकान्तमें पारा करनेवाली मनोरंजक रचना हो जायेगी वहीं संस्कारी पाठक चुम्बन-नामक क्रिया ही उपन्यासकी धुरी मानकर पढ़ेगा तरह चेख़वकी कहानी 'द किस'को पढ़ता इस प्रकार दोनों ही कथ्यसे भटक जायेंगे यों चेख़वकी कहानी मेरे ध्यानमें ज़रूर लेकिन मैं उससे नितान्त अलग एक दू ही बात कहना चाहता था, सम्भव हो उस कहानीके आसंगको नकारकर क चाहता था। उन दिनों मुझे नीत्शे पढ़ने धुन सवार थी 'दस स्पेक ज़रथुस्त्र'में सु मैनके सिलसिलेमें पढ़ते हुए, (जैसा सन् ३०के भारतीय बुद्धिजीवीको पागल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की हद तक लगता था) मुझे भी आभास होता कि मैं सुपरमैनके अवतारका माध्यम भी हूँ और स्वयं सुपरमैन भी हूँ। साथ ही इस बातकी चेतना भी थी कि नीत्शे तत्त्व-द्रष्टा दार्शनिक नहीं, राष्ट्र और रक्तार्थ दार्शनिक है – हाँ, सिर्फ़ लहजा वह ज़रूर मैटाफ़िज़िकल दार्शनिकोंका बनाये रखता है। जर्मन-राष्ट्र और आर्य-रक्तकी कड़वी गन्धके बावजूद विशेषकर इस कृतिकी कविता मुझे मुग्ध किये थी। एक जगह पढ़ा : 'मनुष्यकी महानता यही है कि वह अपनेमें अपना लक्ष्य और ध्रुव नहीं है, वह केवल एक सेतु है।' उपन्यास समाप्त किये मुझे चार-पाँच महीने हो चुके थे, लेकिन लगा कि इन्हीं पंक्तियोंमें-से अपनी कहानीके कथ्यको अभिव्यक्त कर सकनेवाला शीर्षक लिया जा सकता है। मनुष्य सेतु है और अपने पार जा सकता है, अपनेसे उठ सकता है – जाने कितने हैं जो अपने भीतरकी खाइयों और गड्ढोंको लाँघकर 'अपने पार' आये हैं, शायद कहीं-न-कहीं हर आदमी आता है – वर्ना वह उन्हींमें डूब गया होता। उठनेका प्रयत्न ही इस कहानीका मूल कथ्य है। जिजीविषाके दो रूप हैं : जीनेकी विवशता और जीवनके प्रति निष्ठा। अमर-कान्तकी कहानी 'ज़िन्दगी और जोंक'में जीनेकी वह मजबूरी है जो आदमीको जीवनसे या जीवनको आदमीसे जोंककी तरह चिपकाये रखती है, दूसरी ओर मैं अपनी इस कहानीको रखना चाहूँगा, जहाँ बिना अपनी निष्ठाके प्रति सचेत हुए भी व्यक्ति अपनी सीमाओंसे उठनेका प्रयत्न करता है। 'ट्रान्सैण्डैन्स' बहुत बड़ा शब्द है, लेकिन अपने मूल-अर्थमें वह जिस प्रवृत्तिको व्यंजित करता है शायद वही इस कहानीका स्पन्दन है। 'निन्नी आज कहीं ज़िम्मेदार पदपर है' वाक्य ही यह बतानेको काफ़ी है कि अनेक उतरती सीढ़ियोंके अँधेरे मोड़ों-वाली बीमार पगडण्डियाँ पार कर आयी है वह। टूटने और भटकनेके एक निर्णयात्मक मोड़पर दर्शनका आत्मीय समस्तरीय सम्बोधन उसे आहिस्तेसे सँभाल गया है। उस सम्बोधनका रूप या भाषा क्या थी यह इस सन्दर्भमें महत्त्वपूर्ण नहीं है, वह चुम्बन न होकर वास्तविक सम्भोग भी हो सकता था। और वस्तुतः यह बात एक बार मेरे मनमें आयी भी थी, लेकिन उससे मेरा एक और उपन्यास ख़राब होता था इसलिए टाल गया। महत्त्व वहाँ निन्नीको एक जीवित प्राणी, या नारी होनेकी स्वीकृतिका है, उस धरातलपर दिये गये विश्वासका है। अपने-आपको पार करनेके दौरानमें और लोग इस विश्वासको और भी न जाने किस-किस बहाने प्राप्त कर लेते हैं, कभी कोई पुस्तक होती है कभी कोई और सम्पर्क।

प्रकृति जड़ है और पुरुष चेतन, नारी शरीर है और पुरुष आत्मा – ऐसी वेदान्ती भाषा बोलनेका साहस तो मैं नहीं कर सकता लेकिन 'सिमौं द बुवा' की तरह यह ज़रूर लगता है कि शरीरके पार जाना शायद नारीके लिए पुरुषकी अपेक्षा अधिक यातना-मय प्रक्रिया है। वह सुन्दर हो या असुन्दर,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों ही स्थितियोंमें शरीरको लेकर अत्यधिक परेशान है। बहुत सुन्दर शरीर पाया है तो दुनियाको कुछ नहीं समझती, और असुन्दर है तो अपनेको कुछ नहीं मानती। मगर जिस केन्द्रके आस-पास घूमती है, सजाती-सँवारती, अहंकार और खीझ अनुभव करती है वह शरीर ही है। इसको यों भी कह सकते है कि अपनेको वह अपनी नहीं, दूसरोंकी क़ीमत-लगाती आँखोंसे देखकर अस्तित्वकी सार्थकता-निरर्थकता मानती है। अपने दूसरे उपन्यास 'कुलटा' में मैंने अत्यन्त चुम्बकीय सौन्दर्य-महिमासे मण्डित नारीके माध्यमसे इस सत्यको जाना है तो इस उपन्यासमें अपनी ही रूपहीनतासे संकुचित निन्नीके माध्यमसे – और इस दौरान दोनोंके भीतरी वास्तविक अहम्को उकेरनेका प्रयत्न किया है। मिसेज़ तेजपाल और निन्नी, दोनों ही जब अपनेको अपनी निगाहसे देखती हैं तो अपनी सीमाओं और परिवेशसे विद्रोह कर उठती हैं। विद्रोह दोनों हैं, मिसेज़ तेजपालका बहुत घोषित हो गया है, लेकिन निन्नीका विद्रोह किसी भी हालतमें छोटा नहीं है।

मैं समझता हूँ कि यहाँतक आपको और आपकी निन्नीको कोई आपत्ति नहीं है। आप दोनोंकी असहमति बीमार पगडण्डीके मोड़ों और घुमावोंसे है। यही बात है न ? जो निन्नी ऐसी 'अच्छी' है वह सागरके सम्पर्कमें ऐसा कुत्सित सन्तोष खोजे और बैजलके चुम्बनको यों मनमें दुहराये, अर्थात् इतनी 'गिर' जाये, यह बात गले नहीं उतरती। इन जगहोंपर आपको ही नहीं, बहुतोंको आपत्ति है। शायद औपन्यासिक नायिकाओंको इतना गिरा हुआ देखनेके अभ्यस्त नहीं हैं। वे तो बहुत ही महान ज़िन्दगी जीती हैं और अत्यन्त उदात्त धरातल से मधुर-मधुर प्रेम बरसाती हैं या अच्छी-अच्छी इण्टलैक्चुअल बातें करती हैं। 'नर्मदा द्वीप' की रेखाकी तरह उनका गर्भपात भी जीवनकी एक घटना नहीं, प्यारकी एक क्रिया बनकर आता है। ऐसी नायिका-संस्कारी रहनेवाली आपको तो निन्नीका 'गिरना' बहुत ही सुरुचि-विहीन लगा होगा। अक्सर वहाँ तो विभाजन बड़ा साफ़ होता है, गिरी हुई नायिकाएँ अलग उपन्यासोंमें आयेंगी उठी हुई अलगमें। 'उठी-हुइयों' के सं कुछ आपत्तिजनक और सुरुचिहीन होगा तो दूसरों-द्वारा किया गया होगा, वे स्वयं न करेंगी – इस प्रकार और भी अधिक जायेंगी। 'गिरी-हुइयों' का और भी गिर समाज, परिस्थितियों और व्यक्तियोंके हाथों उनके शहीद होनेको और गरिमा देग इस प्रकारके नायिका-संस्कारी पाठकों निन्नीसे बहुत शिकायतें हैं। रवीन्द्रनाथ 'सुभाषिणी' रजनी-पन्निकरकी 'काली लड़' और मोहनसिंह सेंगरकी 'अँधियारे त की नायिकाएँ जिस तरह प्रकृति और सम के हाथों पिसती नारियोंके प्रति क जगाती हैं, निन्नी उस करुणाको भी अस्वीक करती है। उसका व्यक्तित्व और अहम् सबसे अलग है – उसकी कुण्ठा एक दू तरहकी चुनौती है। इसलिए उ आन्तरिक बुनावट-बनावट भी इतनी स

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरल नहीं है। मैं उसे उतार सकनेमें असफल हो गया हूँ, यह बिलकुल ही दूसरी बात है।

देखिए न, कितनी मोटी-सी बात 'आपकी निन्नी' की निगाहोंसे चूक गयी है कि बैजल और सागरवाली दोनों घटनाएँ दर्शनकी मुलाक़ातसे पहलेकी हैं और सिर्फ़ उसे तब याद हो आती हैं जब लगता है कि दर्शनने उसे 'अस्वीकार' कर दिया है। शायद यह मेरे लेखनकी ही उलझन है कि ये दोनों बातें, या कमसे कम एक बात, दर्शनकी ओरसे 'निराश' हो जानेकी प्रतिक्रिया लगती है। वह शायद कहीं कहती भी है कि सागरके सम्पर्कने उसे जिस रास्तेपर डाल दिया था उसीकी परितृप्तिकी खोज उसे दिल्ली ले आयी थी। इसी तरह अलौकिक परिणतिकी अपेक्षा और प्रत्याशा तो और भी बचपनकी है। यह आपका आरोप ही नहीं, सचाई ही है कि वह निन्नी तब अपरिपक्व किशोरी ही थी। इस प्रकारकी अनेक घटनाएँ विधुने अपने पर्वत-प्रवासके साथमें मुझे सुनायी थीं और उनमें-से मैंने केवल इन दोको चुन लिया है। उसे शायद आपत्ति इस चुनावपर ही है, घटनाओंकी वास्तविकतापर नहीं। यों यह सचाई भी कम सार्वभौमिक नहीं है कि अपरिपक्व दिनोंकी जाने कितनी बातें प्रौढ़ हो जानेपर या तो इतनी महत्त्वहीन लगती हैं कि हम उन्हें याद नहीं करते या इतनी लज्जास्पद कि याद नहीं करना चाहते। शायद आपने उपन्यासके संयोजनपर ध्यान दिया होगा जहाँ आगे-पीछेके अध्याय 'वर्तमान' हैं और बीचमें अतीत वर्तमानकी वे गहराइयाँ हैं जिनपर सेतु बनाकर निन्नी पार आती है।

रूपके हैण्डीकैपने मुझे निन्नीके मनोविज्ञानको दुहरे-तिहरे स्तरोंपर समझनेमें सहायता दी है। एक तो यह हैण्डीकैप उसके मानसिक-विकासका भी है, अरेस्टेड या रिटॉर्टेड ग्रोथ (कुण्ठित-विकास) का कारण भी है; इसलिए आत्म-केन्द्रित होकर वह अपने बचकाने सपनों और कृत्योंमें अपेक्षाकृत बड़ी उम्र तक भी डूबी रहे, यह बहुत अस्वाभाविक नहीं है, दूसरे इसी हैण्डीकैपने उसे अतिरिक्त आत्म-सजग बना दिया है। हर नयी धरतीपर क़दम रखते ही तिलचट्टेकी सूँड़ें उसे हिलती महसूस होती हैं: एक सामाजिक इकाई, व्यक्ति-नारीकी स्वाभाविक-प्राकृतिक माँगोंके सन्दर्भमें इन दो विरोधी भावनाओंका द्वन्द्व, निन्नीके मनोजगत्को समझनेमें अधिक सहायता देता है। दर्शनके सम्पर्कके क्षणोंमें उस तिलचट्टेको पीछे ठेलते रहनेमें उसे कम श्रम और प्रयत्न करना पड़ा था, यह तो आप भी नहीं कह सकतीं। इसीलिए यह भी अस्वाभाविक नहीं था कि उस तिलचट्टेसे लड़ते हुए जो भी 'सुख' वह उससे छीन ले, उसे ही अतिरिक्त आशा और उत्साहसे ग्रहण, आत्मसात् करे। उसकी कल्पना-प्रवणता और स्वप्नजीवी-वृत्ति दर्शनके सामान्य सम्पर्कको भी अनेक रंगीन इन्द्र-धनुषोंसे सजा लेती है। यहाँ अगर निन्नीकी जगह मिसेज तेजपाल

(शेष पृष्ठ ३० पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

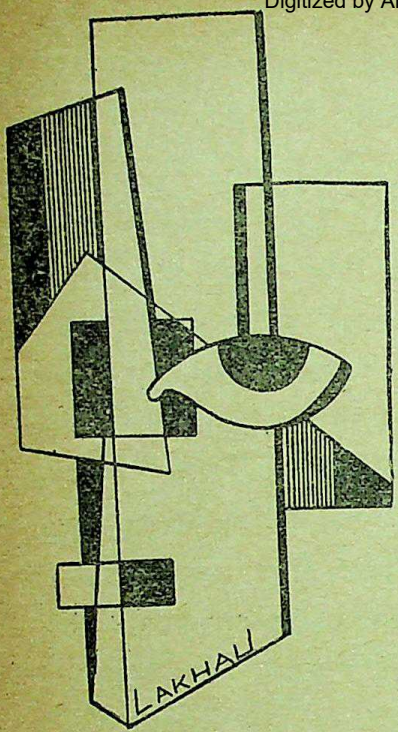

सर्वेश्वरदयाल सक्से
विजयदेव नारायण सा
वीरेन्द्र कुमार ज
श्रीराम व

दो-दो कविताएँ

१– रात में वर्षा

मेरी साँसों पर मेघ उतरने लगे हैं,
आकाश पलकों पर झुक आया है,
क्षितिज मेरी भुजाओं से टकराता है,
आज रात वर्षा होगी।
कहाँ हो तुम ?

मैंने शीशे का एक बहुत बड़ा एक्वेरियम
बादलों के ऊपर आकाश में बनाया है,
जिसमें रंग-बिरंगी असख्य मछलियाँ डाल दी हैं,
सारा सागर भर दिया है।
आज रात वह एक्वेरियम टूटेगा –
बौछारों की एक-एक बूँद के साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रंगीन मछलियाँ गिरेंगी,
कहाँ हो तुम ?

मैं तुम्हें बूँदों पर उड़ती
धारों पर चढ़ती-उतरती
झकोरों में दौड़ती, हाँफती
उन असंख्य रंगीन मछलियों को दिखाना चाहता हूँ
जिन्हें मैंने अपने रोम-रोम की पुलक से आकार दिया है,
प्यार के आदिम आवेगों से
नाना रूप और रंग,
जिनकी आँखें मैंने अपने प्यास से बनायी हैं,
तैरने के लिए जिनके
नन्हें-नन्हें रुपहले सुनहरे डैने
मेरी कामनाओं के हैं।
कहाँ हो तुम ?

रात में यह वर्षा
मैं तुम्हें देना चाहता हूँ।

ऐसा न हो
कि कल सुबह
टूटे शीशों और मरी मछलियों के बीच
भीगी धरती पर
खड़ी होकर तुम पूछो
क्या रात में वर्षा हुई थी !

२ – हवाएँ

मुझको जगाती हैं ये चंचल हवाएँ।
डाल-सा हिलाती हैं, गन्ध-सा डुलाती हैं,
लहर-सा उठाकर मुझको दूर छोड़ जाती हैं,
कथा-सी घुमाती हैं ये चंचल हवाएँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छातों का पहाड़ मेरा क्षण में उड़ाती हैं,
लिपट-लिपट जाती हैं, अंक में जुड़ाती हैं,
बीन-सा बजाती हैं ये चंचल हवाएँ।
झीने बादलों से मेरी दृष्टि बाँध जाती हैं,
रोम-रोम गाती हैं, तालियाँ बजाती हैं,
अधरों पर सुलाती हैं ये चंचल हवाएँ।
पाल-सा फुलाती हैं, धूल-सा नचाती हैं,
चित्र-सा हिलाती हैं, द्वार-सा झुलाती हैं,
गति भर जाती हैं ये चंचल हवाएँ।
पुस्तक-सा फड़फड़ उलटती चली जाती हैं,
अनपढ़े नहीं तुम रहे ऐसा जतलाती हैं,
अर्थ ले जाती हैं ये चंचल हवाएँ।
'तुम वह कहाँ रहे' कान में कह जाती है,
नये-नये शब्दों में मुझको दोहराती हैं,
कहाँ लिये जाती हैं ये चंचल हवाएँ।
कुछ नहीं बताती हैं ये चंचल हवाएँ।

— *सर्वेश्वरदयाल सक्सेना*

१ – अर्ध-भस्म देवदारु

बिजली की तरह वह आया
और तुम्हें पुराने देवदारु की तरह
बीच से चीरता हुआ
भूमि में समा गया।
तुम उस विशाल आलोक को देखते रहे
जो सहसा चारों ओर छा गया था
तुम्हें ध्यान ही नहीं रहा
कि तुम दो टुकड़े हो गये हो।
और अब तुम्हारे पास
वे शब्द भी नहीं हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिनसे तुम
उस कथा की आवृत्ति कर सको
जो तुम्हारा जला हुआ कलेवर माँगता है।

क्या तुम्हारा यह दावा है
कि तुमने झेल लिया
ताकि शेष हरे रह सकें,
कि जो समर्थ हैं
वे हवा में अनगिनत हाथ फैलाते रहें,
और जो शिशु हैं
वे कल्ले फोड़ते रहें ?
लेकिन तुम इसे किन शब्दों में कहोगे,
तुम जो अवाक् आत्मविस्मृत चकाचौंध
रह गये थे ?

क्या तुम इस अर्ध-भस्म कलेवर से
वह गाथा गाओगे
कि किस तरह एक दिन प्रकाश आता है
और सारे जंगल को
नंगा करके चला जाता है,
कैसे छिपने के लिए
कोई गुल्म, कोई कुञ्ज, कोई कोटर नहीं बचता
कोई चारा नहीं रहता
और हमारे स्तूप-से शरीर पर
घनसार आलोक-बारिश होती रहती है ?

गा सको तो गाओ
लेकिन क्या तुम्हारे पास
अब भी वह बचा हुआ है
जो आक्षितिज छा जाने वाली
तुम्हारी आवाज़ का निर्माण कर सके ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह जो तुम्हारी चिटखी हुई अस्थियों में
बाँसुरी की तरह बजता है
कुछ नहीं, केवल हवा है
जो न जाने किन-किन हिमशीतल प्रदेशों का सन्देश लिये
तुम्हारे पास से गुज़र रही है।
उस घटना के बाद
तुम बिलकुल निष्कवच हो गये हो
सृष्टि का हर एक कम्पन
तुम्हें इसी तरह बजा कर चला जाया करेगा
और इस अयाचित संगीत को
तुम कभी भी
पहचान नहीं सकोगे।

गा सको तो गाओ !
क्या तुमने हज़ारों बार
उस गाथा का आरम्भ नहीं किया
जो तुम्हारे हाथ से छूट कर
विश्वव्यापी प्रतिध्वनियों में बदल जाती रही ?
और तुम आज तक नहीं जान सके
कि उसका मध्य कैसा है
और अन्त कहाँ है ?
क्या हर बार कह चुकने के बाद
तुम्हें आश्चर्य नहीं हुआ
कि यह वह बिलकुल नहीं है
जिसकी शुरुआत तुमने करनी चाही थी ?
गा सको तो गाओ !

■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२ – वही देवदारु

मैंने निर्जन तिलिस्म के उद्यान में
निरन्तर चलते हुए फ़ौवारे को देखा है
जो बराबर अपने को
अपने कृत्रिम आकाश की ओर फेंकता रहता है
और उसकी छलछलाती हुई बूँदें
लौट-लौट कर उसे ही नहलाती रहती हैं—
नीले आसमान को
जो उसके थाले में अंजन की तरह प्रतिबिम्बित होता रहता है
वह कभी भी छू नहीं पाता....
और मुझे कभी-कभी लगा है
कि तुम शिखर पर उसी फ़ौवारे की तरह निश्चल खड़े हो
और तुम्हारे चारों ओर पारदर्शी तिलिस्म है।

मैंने वे क्षण भी देखे हैं
जब यह सारा का सारा वन-प्रदेश
अदृश्य हो जाता है
और उस अटूट सन्नाटे में
चमकती हुई मधुमक्खियों की तरह
तुम्हारे भीतर से हज़ारों पत्तियाँ निकलती हैं
मैं तुम्हारी शाखों को एक-एक कर फैलते देखता हूँ
और तुम एक विभोर वैभव की तरह
उमड़ने लगते हो।
उस महारास को मेरे सिवा कोई नहीं जानता।

मैंने यह सब
खिड़की के निर्मल काँच के उस पार
घटित होते देखा है,
और यह भी
कि इस महोत्सव को समेट लेने के बाद
कई दिनों तक तुम्हारा कलेवर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रह-रह कर थरथराता रहता है,
और लताएँ, पेड़, शिलाएँ, पर्वत-श्रेणियाँ
आश्चर्य और भय के साथ
तुम्हारी ओर देखती हैं।

— विजयदेव नारायण साही

१ – निजातीत : मूल्यातीत

सीपी के भीतर
सागर के अनन्त ने
आत्मघात कर लिया ?....
कौन जाने....
पर मोती अवतरित हुआ :
अगोचर आभाएँ
गोचर हुईं :
सीमातीत
सीमा में मूर्त होने को
विवश हुआ :

इतिहास में हुईं अनेक क्रान्तियाँ :
मानव में हुईं अनेक अतिक्रान्तियाँ :
मूल्य सब बदल गये
आज मूल्य खो गये
दिशाएँ खो गयीं....
जापान के तटों में
मोती कल्चर हुआ :
पर मोती का मूल्य
क्या सचमुच ही बदल गया...?

लहरावलियाँ...दिगन्तवाहिनी
अनन्त लहरावलियाँ :
उन पर मुँह खोले, सीपियों की
अन्तहीन पंक्तियाँ :
आभाएँ...दूर-दूर जा रही आभाएँ
दूरातिदूरियों में आ रहीं...नयी-नयी आभाएँ

सागर ओ, निजातीत
मोती ओ, मूल्यातीत

२ – संगीत का पुल : मिट्टी की गाड़ियाँ

नींद खुलते ही देखा :
द्वार-खिड़कियों में
समा नहीं रही है नीलास :
सामने के आँगन में
फूली है अमलतास :
सारे सबेरे में
भर आयी है पीली उजास...
आकाश की नाड़ी में बह रहा है
रेडियो संगीत...
संगीत, जो पुल बन गया है अन्तहीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुल के उस दिगन्तलीन छोर पर
खुल रही हैं
नर्गिस फूलों की सीढ़ियाँ :
हर सीढ़ी पर उतरता-सा
एक चरण-युगल :
चरणों में आँखें :
आँखों में चरण···

सीढ़ियों के एक ओर
नील धुन्ध में खोता
धरती का छोर :
उस छोर पर
धरती के अन्तिम वृक्ष-तले
खड़ा है एक अश्व :
उसके गले में झूल रहा है
दिगन्तों का हालरा:
उगा है उसके माथे पर
अश्वत्थ :
अश्वारोही कहाँ है
नहीं मालूम···

आकाश-नाड़ी में
अविरल बह रहा है
रेडियो संगीत :
संगीत, जो बन गया है पुल छोरहीन :
पुल के इस ओर से
आ रही हैं मिट्टी की गाड़ियाँ :
उस मिट्टी के भीतर छुपी हैं
अलंघ्य पर्वतमालाएँ :
पर्वतमालाओं में छुपी हैं
अभेद्य अन्धकार गुहाएँ···
मिट्टी की गाड़ियाँ चली जा रही हैं
संगीत-पुल पर चुपचाप :
जाने कौन···यह बींध रहा है
माटी के भीतर की अगम अन्ध गुहाएँ···!
और लो, पुल के इस छोर पर
पीले कोहरे में से खुलती
हरी धरती की कोर पर
फूट रही हैं
लवेण्डर किरणों की
नयी ही तृणालियाँ···

— वीरेन्द्रकुमार जैन

१ – प्रकृतिस्थ

फुटकी-फुटकी बादल में
चुटकी-चुटकी भर आसमान
रुकती-रुकती हवा में
कुछ तुर्शी, कुछ महक
कुछ रोशनी, कुछ ठण्ड
कुछ-कुछ प्यार बेतरतीब

फुटकी-फुटकी बादल में
चुटकी-चुटकी भर आसमान :
काठी पर तरबूज़ धरे
रेती में ऊँटों का चलना

समय कितना उदार है
आओ ना, हम-तुम
कुछ देर यहीं बैठें

■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२ – धूप में वर्षा

पानी की कौंद ज्यों
सड़कें।
बादल पर बादल पर बादल :
सवारियाँ।
पानी में धूप
जैसे आइने में बिजलियाँ।

गधे भीगे हुए
जैसे हिरन।
वृक्ष धुलते हुए
ज्यों कम्पित उरोज।

सन्नाटा
सुनता-सा
भोलेपन से
चुप चेहरे पर हँसना।

चुप-चुप
चुप-चुप
चुप-चुप
सन्नाटा
सुनता-सा
चुप-चुप

– श्रीराम वर्मा

■ ■

[पृष्ठ २१ का शेष : पुल : अनदेखे अनजान]

होतीं तो शायद उन्हें दर्शनका यह व्यवहार अपने रूपके जादूमें बँधे एक युवकका विशिष्ट व्यवहार लगता। सामान्य उसे दोनों ही नहीं स्वीकारतीं। यह पहली स्थिति है। दूसरी स्थितिमें मिसेज़ तेजपाल स्वयं अपने प्रश्न करतीं कि दर्शनका व्यवहार एक स्वाभाविक मैत्रीकी अभिव्यक्ति था या सिर्फ़ उनके रूपका जादू उसे विवश कर बैठा था···निन्नी सोचती है कि मैत्री थी या दया, उसके रूप-हीन होनेके प्रति एक विशिष्ट सहानुभूति ? उस व्यवहारकी सचाईको तो वह झुठला नहीं सकती, लेकिन अपने प्रति दया और सहानुभूतिको उसका अहम् स्वीकार नहीं करता, उनसे उसे डर भी है और वितृष्णा भी। अतः बार-बार अपने म समझाती है कि वह दया और सहानु नहीं है, कुछ और है और इस 'कुछ अ अनेक सम्भावनाएँ उसे भरमाने लगती उसका पुराना स्वप्न-जीवी स्वभाव उसे अपने साथ बहा ले जाता है, जहाँ वह रीझती, मान करती और लड़ती है।

जिस चीज़से वह शुरूसे लड़ती है दया है। (आपको 'ज़िवग'का उपन्याह वेयर ऑफ़ पिटी' याद आ रहा है न ?

मैं समझता हूँ इतना कथन इस उपन्यासके लिए काफ़ी है। मेरी बात निन्नी तक पहुँचानेकी कृपा करेंगी आभार होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

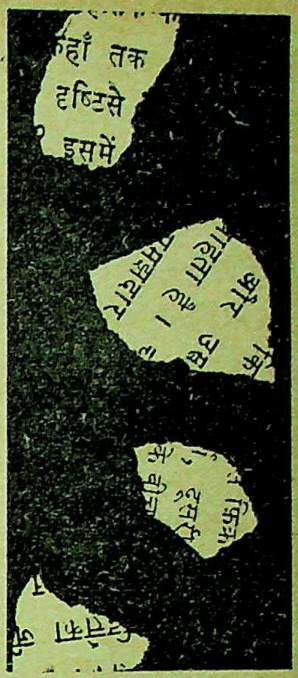

यूज़ीन इयोनेस्को
(प्रस्तुति : परेश)

'लिखना', 'होना' और अन्धकार

सृजनकी समसामयिक समस्याओंपर विवाद खड़ी करनेवाली इयोनेस्कोकी यह सबसे ताज़ा, लम्बी और गम्भीर रचना है।

– स्टीफेन स्पेण्डर, सम्पादक 'एनकाउण्टर'

[लेखक – फ्रेंच, (पिता रूमानियन) कलाकारोंके नगर पेरिसमें निवास, फ्रेंचमें ही अधिक लिखते हैं, प्रस्तुत रचनाके अँगरेज़ी अनुवादक 'जॉन वेटमैन'। फिलिप टायन्बी, केनेथ तीनानके साथ इयोनेस्कोकी नाटक पर १९५८में हुई प्रसिद्ध परिचर्चा फिरसे अमेरिकी संस्करणमें 'रायटिंग ऑन द थियेटर' नामसे ग्रोव प्रेस न्यूयार्कने छापी है। नाटकों और साहित्यिक परिचर्चाओं, लेखमालाओंके कारण अधिक प्रसिद्ध]

"आप क्यों लिखते हैं ?" यह प्रश्न प्रायः लेखकोंसे पूछा जाता है। पूछनेवालोंको लेखक लोग शायद यह उत्तर दें कि "आपको जानना चाहिए"।

"आपको जानना चाहिए क्योंकि आप हमारी रचनाएँ पढ़ते हैं – उनमें-से आपको अवश्य ऐसा कुछ मिलता है जिसकी आपको ज़रूरत होती है। क्या मैं पूछ सकता हूँ कि आपको यह ज़रूरत क्यों होती है ? और किस प्रकारका खाद्य आपको हमारी रचनाओंसे मिलता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। ठीक है जनाब, मैं एक लेखक हूं परन्तु आप क्यों मेरे पाठक हैं? आप जो प्रश्न मुझसे पूछ रहे हैं – दरअसल उसका जवाब आपके ही पास है।" सिनेमा जानेवाले दर्शक इसका जवाब सरलतासे दे सकते हैं कि वे मनोरंजन या नसीहतोंके लिए जाते हैं।

प्रस्तुत प्रश्नके ये ही दो सम्भाव्य उत्तर हो सकते हैं। नसीहत – माने जो कुछ लेखक अपने अनुभव देना चाहता है। मनोरंजन ढूंढनेवाले दर्शकके लिए ये नसीहतें सरदर्द भी हो सकती हैं – क्योंकि वह केवल अपनी दैनिक चिन्ताओंसे मुक्तिके लिए ही पुस्तक पढ़ता है या नाटक देखने जाता है। जो व्यक्ति केवल नसीहतें चाहता है – वह मनोरंजनप्रधान रचनाओंके कारण लेखकको दोषी ठहरायेगा – कि उसे उसकी मुश्किलोंका हल नहीं दिया जा रहा है।

"जन्म और मृत्युके बारेमें आप क्या सोचते हैं?" एक दक्षिण अमेरिकन पत्रकारने एक बार मुझसे पूछा। दोनों हाथोंमें सूटकेस लिये उस वक़्त मैं नावपर-से उतर रहा था। मैंने दोनों सूटकेस ज़मीनपर रखे, माथेका पसीना पोंछा और कहा कि इस सवालका जवाब देनेके लिए मुझे कमसे कम बीस साल चाहिए और फिर भी मैं इस सवालका जवाब दे पाऊँगा यह कोई निश्चित बात नहीं है। मैंने उससे कहा कि यही सवाल मैं अपने आपसे भी करता हूँ और मेरा सारा लेखक खुदसे यही सवाल करनेकी प्रक्रियामें आ जाता है। कहकर सूटकेस वापस हाथोंमें उठा लिये – ज़रूर वे सज्जन निराश हुए होंगे। दुनियाकी चाबी क्या किसीके सूट में बन्द है! यदि कोई लेखक मुझसे सवाल करे कि मैं क्यों पढ़ता हूँ या कि क्यों जाता हूँ तो मेरा जवाब यही होगा मैं सवालोंके जवाब ढूँढनेके लिए ऐसा करता हूँ बल्कि कुछ और सवाल खो ज्ञान-प्राप्तिके लिए, बल्कि केवल कुछ चीं परिचित हो जानेके लिए। किसी विदे आर्टगैलरी या पुस्तकोंकी दुकानमें जा जिज्ञासा ज्ञान-प्राप्तिकी जिज्ञासासे प्रश्न नितान्त भिन्न है।

पाठकोंके इस प्रश्नसे लेखक कुछ सी अवश्य है – क्योंकि उनके साथ यही वह स्वयं भी अपने आपसे करता है। सन्देह बना रहता है कि अभी और सवाल हैं जो उसे अपने आपसे करने और ऐसा वह तभी कर पायेगा जब कि जवाब देनेकी कोशिश वह कमसे कम क

लेखक या कोई भी साँस लेनेके स्वतन्त्र है। चाहे वह स्वयंसे यह प्रश्न क न करे कि वह साँस क्यों लेता है–साँस उसे ही पड़ता है। लेखकके बारेमें भी यही है। लेखक इसलिए लिखता है कि वह है। लिखना शुरू करनेके बाद ये सवाल हैं कि वह क्यों लिखता है। 'क्या मैं दू से ज़्यादा जानता हूँ? या अपने अस्ति औचित्य सिद्ध कर रहा हूँ? क्या इ कि मैं मृत्युसे डरता हूँ और मरनेके बा जीवित रहना चाहता हूँ? क्या दुनि बचानेके लिए लिखता हूँ या ईश्वरकी प्र करनेके लिए? क्या यह आत्माका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्धान है ? क्या यह मेरा अज्ञान है और दूसरोंसे मैं अपने बारेमें ज्ञान चाहता हूँ ? क्या यह अकेलेपनको तोड़नेका प्रयास है ? या यह कोई साँस लेनेकी तरह ही सहज और आवश्यक व्यापार है ?"

क्या लेखकको यह पूरा पता रहता है कि वह क्या कर रहा है ? मेरा ख़याल है – नहीं, वह केवल अपने आपको धोखा देता है। शुरूमें अवश्य उसके मनमें एक उद्देश्य रहता है – परन्तु समाप्ति तक अनुभव यह होता है कि उद्देश्य पीछे छूट गया है और रचनाकी अपनी मौलिकता प्रधान हो गयी है। वास्तुशिल्पीकी दशा भी लेखकसे भिन्न नहीं होती। शिल्पके सिद्धान्तोंका स्थूल रूपायन ही तो उसका उद्देश्य रहता है। उदाहरणके लिए एक ख़ाली चर्चको हास्पीटल या पुलिस स्टेशन बनाया जा सकता है – पर मूलतः तो वह एक इमारत ही है, दर-असल चर्च भी वह कभी नहीं था ? था तो शिल्पका रूपायन ही, उसे केवल चर्च बना दिया गया था जैसे कि किसी काव्य और नाटकका उपयोग किसी प्रचार, शिक्षा या राजनीतिके लिए अस्थायी रूपसे कर लिया जाये – लेकिन मूलतः वह एक रचना और कृति है, इस 'होने'की शाश्वतिसे उसे कोई नहीं रोक सकता। अवश्य लेखकके मनमें परिवेशके प्रति एक आक्रोश रहता है और उसे लग सकता है कि वह अपने बारेमें नहीं कह रहा है – परन्तु पश्चात्का अनुभव यह होता है कि अपने आप वह स्वयंको भी रचनामें बुन गया है। 'आत्मस्वीकरण'की यह प्रक्रिया स्वयमेव चलती है।

इन प्रश्नोंपर विचार करनेवाला मैं पहला लेखक नहीं हूँ – इस दृष्टिसे सम्भवतः सर्वथा कुछ नया कहनेका उद्देश्य मेरा नहीं है। व्यक्तिगत रूपसे कई चीज़ें ऐसी हैं जो मुझे लिखनेको बाध्य करती हैं – मसलन मेरा अहम्, प्रभुत्वेच्छा, घृणा, मुक्तीच्छा, प्यार, आक्रोश, ममता, घुटन, आश्चर्य, विश्वास, अविश्वास, औचित्यका निश्चय, अनिश्चय, स्वयंको और दूसरोंको हल्का करनेकी इच्छा, आह्लादन (परन्तु यह तो बिना लेखन भी हो सकता है) आदि। लिखनेसे कहीं अधिक शक्तिशाली रूपमें ये सारी स्थितियाँ साबित हैं।

तो क्या लिखनेसे स्वयंको रोकना चाहिए ?···इस प्रश्नके साथ कई और बातें खड़ी हो जाती हैं – करने और न करनेका विवाद, जीवित रहने और न रहनेका प्रश्न, कर्म और अकर्मका दर्शन···क्योंकि लिखना अपने आपमें एक जीवन्त कर्मण्यता है।

क्या मेरी आवाज़ नितान्त व्यक्तिगत है ? क्या लोगोंको मेरी ज़रूरत है या मैं ज़बरदस्ती अपने आपको पाठकोंपर थोप रहा हूँ ? मेरी ही स्थितिमें क्या और लोग नहीं होंगे ? यह तो स्पष्ट है कि लेखकको जाँचा, स्वीकारा या नकारा जाता है। लेकिन नकार भी तो उसके अस्तित्वको सिद्ध करती है। जो चीज़ 'एक्जिस्ट' नहीं करती उसे अवश्य ही नकारा नहीं जा सकता। अतः लेखक यदि दूसरोंकी बात कहता है तो अपनेसे अधिक उनका है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अपनेसे अधिक मैं 'वह' हूँ।" परन्तु यह 'होना' है क्या? क्या मैं कोई केन्द्र हूँ – मध्यबिन्दु जहाँ बहुत-सी ताक़तें इकट्ठी हों और संघर्ष करें? यह स्वयंका 'आत्म' – निरपेक्ष है या सापेक्ष? स्वयंके अस्तित्वके बारेमें सोचनेवाला 'मैं' कौन है? जो हो, निष्कर्ष क्या यह नहीं निकलता कि यदि लेखन अहम्का ही रूपायन है तो न लिखनेकी क्रिया या प्रयत्न भी तो उसी अहम्का परिणाम है।

यह बात मैं शुरूमें ही स्पष्ट कर देता हूँ कि मुझे अपने अस्तित्वकी वर्तमानताके बारेमें धर्मशास्त्र या दर्शनशास्त्र कोई भी सन्तोषप्रद उत्तर नहीं दे सका है, और न ही वे यह बता सके हैं कि हमारे ज़िन्दा रहनेका कोई अर्थ भी है। मुझे यह लगता रहता है कि मैं इस दुनिया'का' नहीं हूँ। यह भी नहीं जानता कि यह दुनिया किस'की' है। फिर भी यह दुनिया या मैं – किसी'के' भी होने नहीं चाहिए। ज़िन्दा रहनेकी एक आदत पड़ गयी है – केवल इसलिए 'कहीं' हूँ। मगर यह 'कहीं' कहाँ है – इसका जवाब मेरे पास नहीं है, फिर भी यह विश्वास अवश्य है कि यह 'कहीं' कहीं-न-कहीं है अवश्य। वह मेरे आसपास भी हो सकता है, पर मिलता नहीं है। जिनको मिल गया है – वे धन्यवादके पात्र हैं। यह जो 'मैं' मुश्किल है, इसीको अभिव्यक्ति देनेका प्रयास मैं करता हूँ – केवल इतना निश्चित है। शेष, पेरिस या दुनियामें कहीं भी घूमते हुए – जैसे कुछ सन्देश साथ रहते हैं या नहीं रहते, या बदलते रहते हुए खत्म जाते हैं, सभी कुछ अनिश्चित और समाप्त धर्मा है।

यह तो ख़ैर साफ़ है कि मैं विरोधाभासोंमें उलझा हुआ हूँ परन्तु चेतनाके जितने उलझे हुए धरातलों व्यक्ति जीता है – यह स्थिति सकारण सब-कुछ करते हुए भी अन्तमें सभी व्यर्थ लगता है और अकेलेमें यही प्र उठता है कि यह सब क्यों किया जा है? इसी प्रश्नमय स्थितिमें लेखक लिख है – इसे मैं दूसरा निश्चित बिन्दु मान हूँ जिसे पाठकोंको उत्तरस्वरूप दिया सकता है।

जो कुछ स्थापित है उसको उसी न मानने या बिलकुल न माननेकी प्रवृ बहुत-से आदमियोंकी तरह मुझमें भी प्रत्येकके जीवनमें कुछका स्वीकार कुछका इनकार चलता ही रहता है। कालेकी अपेक्षा नीला रंग पसन्द करता यूज़ीन स्यूकी अपेक्षा बालज़ाकको फीदियूकी अपेक्षा शेक्सपीयरको – ये कुछ मानदण्ड हैं और प्रत्येककी पस होते हैं।

ये साहित्यिक इस मानेमें हो सकते कि फ्रान्सके हास्य-लेखनमें वह गाम्भ नहीं है जो शेक्सपीयरके प्रश्नोंमें है। शेक्स पीयरके समाधान नहीं, बल्कि स्वा समस्याएँ मैं अधिक पसन्द करता हूँ। प यह एकदम प्रश्नसे बचनेकी स्थितिसे अ है। प्रश्न होने चाहिएँ–समाधान चाहे ना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिद्धान्तकी पुस्तकोंमें अवश्य हर प्रश्नके कुछ जवाब दिये हुए हैं परन्तु वे आदर्शपरक और वायवी हैं – जिन्हें दूसरे सिद्धान्तोंसे कभी भी बदला जा सकता है। अतः प्रश्नका उत्तर अन्ततः किताबसे नहीं, अपने आपसे ही मिलता है।

मैं तो इस निष्कर्षपर हूँ कि किसी भी चीज़का कोई कारण नहीं है, परन्तु कोई ताक़त अवश्य है जो यह सब करवाती है। मुझे अपने ही स्पष्टीकरण झूठे और अस्थायी लगते हैं। जीवनके उद्देश्यसे मैं परिचित नहीं हूँ – अतः निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता कि मैं क्यों लिखता हूँ। तो भी जैसे कि मैं जीवित हूँ – लेखक भी हूँ और जीवन-के अर्थको लेकर आश्चर्यमें रहता हूँ। अपने चारों ओरका देखा हुआ मैं वर्णन करता हूँ – अपने आपसे सवाल करता हूँ और ज़िन्दा रहता हूँ। इस सन्दर्भमें ये बहुत छोटी बातें हैं कि मैं नैतिकताका समर्थन करूँ या पापका विरोध। मेरी धारणाओंका निश्चयन मेरी अपनी व्यक्तिगत अनुभूतियाँ करती हैं। मैं अपनी उन रचनाओंमें अधिक सही हूँ जिनमें केवल आश्चर्य है या मेरा अज्ञान। इसी आश्चर्यमें मैं जीवनकी जड़ें मानता हूँ। अपने 'होने'की अन्तिम गहराइयोंमें जो मिलता है वह केवल अन्धकार होता है या अन्धाकर देनेवाली रोशनी।

कुछ भी लिखा जाये – वह 'सिनसीयर' होना चाहिए। ईमानदार होनेकी एक शर्त है नवीनता या मौलिकता। जो मौलिक है वही सही होता है। मेरे लेखे सही या सच

लेखक –
जिसे पूरी देर यह विश्वास
रहता है कि रचना उसके
कहे के अनुसार चल
रही है, ख़त्म होनेके बाद देखता
है कि उसका
अपना स्वतन्त्र अस्तित्व
है और वह उसके
अधिकार से बाहर है।
दूसरी तरफ़ आलोचक, जो
वस्तुपरक होने का दावा
करते हैं प्रायः केवल
अपनी ही बात
कहते रहते हैं।

वह है जो ख़ुद खोजा गया है – न कि तोते-की तरह पढ़ा गया है। तोतेको मैं 'सिन-सीयर' नहीं मानता। जो कुछ वह बोलता है उसका सम्बन्ध उससे नहीं होता। कोई रचना सचमुच क़ीमती है कि नहीं इसका आधार उसकी मौलिकता ही होगी। लेखक कितना भी आत्मपरक हो, वस्तु-निरपेक्ष नहीं हो सकता। यही बात आलोचकके बारेमें भी लागू होती है। जो आलोचक अपने आपको लेखकसे ऊँचा मानता है वह उस रचनाका आलोचक नहीं हो सकता। यह प्रवृत्ति स्कूल मास्टरकी होती है। अच्छा आलोचक वह है जो रचनाके सम्मुख स्वयं-को शिष्य या छात्रकी तरह खड़ा करे।

लेखन रचनात्मक इस अर्थमें है कि इसका कुछ हिस्सा लेखक बनाता है, कुछ आलोचक। कवि चलनेका काम करता है तो आलोचकका काम हाथमें दीपकको थामे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखना है। छतकी कड़ियाँ टूटनेवाली हैं या सीढ़ियाँ टूट गयी हैं – इन बातोंकी खबर आलोचकको रखनी चाहिए। कविको लिखते समय वे सारी बातें भूल जानी चाहिए जो वह जान सकता है, और आलोचकको अपने कार्यके वक़्त उन सब बातोंको याद रखना चाहिए जो वह जान सकता है। रचनाको अच्छा या बुरा कहना आलोचना नहीं कहलाती है – यह तो अपने व्यक्तिगत रुचि-बोधकी बात हुई और व्यक्तिगत रुचि-बोधोंपर कोई क्या विवाद कर सकता है। उसका निर्णय वर्णनात्मक हो सकता है। आलोचना केवल किसी रचनाके अस्तित्वका पंजीकरण होता है।

रचनेके बाद रचनाका अपना अलग व्यक्तित्व हो जाता है। जो लोग रचनामें कोई उद्देश्य ढूंढ़ते हैं वे उद्देश्य देखते हैं, रचना नहीं। किसीकी ओर पीठ कर लेनेसे उसका अस्तित्व नहीं मिट जाता। रचनाका नकारना उसी तरह असम्भव है जैसे किसी जीवित व्यक्तिको नकारना। किसी व्यक्तिको पसन्द किया जा सकता है या नहीं किया जा सकता – इस दृष्टिकोणसे उसके 'होने'में कोई फ़र्क नहीं पड़ता। उसके होनेके बाद उनकी आँखोंमें वह रजिस्टर्ड हो जाता है कि हाँ यह आदमीका बच्चा ही है किसी बिल्ली या मछलीका नहीं। उसके साथ क्या करना है – यह सवाल अलग है।

चलती आलोचना रचनाको ऊपर-ऊपर-से छूती है और उसकी मौलिकताकी गहराइयोंमें कम जा पाती है। आजकी आलोचना रचनाविशेषपर कम और सृजनके पूरे परिवेशपर अधिक बोलती है। मसलन लेखक और रचनाके नाम बदलकर उन्हीं बातोंको किसी दूसरेकी रचनाके साथ रख दिया जा सकता है। सामान्य समाज या दर्शनकी बातोंको ढूँढ़कर आलोचक बाक़ी तथ्योंको दरकिनार कर देता है। जहाँतक मैं समझता हूँ, अच्छे आलोचकके पास अच्छी याददाश्त भी होनी चाहिए, जिससे कि कोई रचना कहाँतक नयी है – इस प्रकारकी घोषणा वह पीछेकी रचनाओंको स्मृतिमें रखकर कर सके। प्रत्येक नयी रचनाके पीछे पूरे सृजनकी एक वंश-परम्परा होती है अर्थात् प्रत्येक नया सृजन अपने पूर्वजोंकी सन्तान होता है न कि स्वयं ही पूर्वज। वह सद्य होता है।

यह सच है कि व्यवहारमें आलोचना करना बहुत सरल नहीं होता। उसमें बहुत-सी बातें मिली होती हैं। अकसर आलोचना आलोचना नहीं होती – केवल बहुत-सी बातोंका मिश्रण होती है। लेखक, जिसे पूरी देर यह विश्वास रहता है कि रचना उसके कहेके अनुसार चल रही है, ख़त्म होनेके बाद देखता है कि उसका अपना स्वतन्त्र अस्तित्व है और वह उसके अधिकारसे बाहर है। दूसरी तरफ़ आलोचक जो वस्तुपरक होनेका दावा करते हैं प्रायः केवल अपनी ही बात कहते रहते हैं।

नाटककार कुछ लिखता है – अभिनेता जो होता है वह कुछ और होता है और वह कुछ दर्शकको दीखता है वह नाटककार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कल्पनासे काफ़ी भिन्न होता है। एक रचनाके स्वयंके तथ्य कुछ इस तरह एक दूसरेके विरोधाभासी होते हैं कि कोई एक संगठित प्रभाव वे नहीं दे पाते। सच यह भी है कि रचनाको यदि केवल शास्त्रीय अर्थ दे दिया जाये तो वह मर जाती है। फिरसे उसे जीवित करनेके लिए उसे एक नया अर्थ देना होता है। रचना अपने आपमें कुछ नहीं होती। वह वह होती है जो लोग समझते हैं। यही कारण है कि रचनापर बोलते हुए आलोचक केवल अपनेपर बोलता है, अपने अहंकारसे ग्रस्त रहता है। रचना जितना लेखकको प्रतिबिम्बित करती है उससे अधिक आलोचना अपने आलोचककी तसवीर पेश करती है। आलोचक संक्षेपमें लेखक या रचनाकी बजाय आलोचकका दस्तावेज़ अधिक होती है।

दरअसल आलोचक अपने ही घेरेमें बन्द रहता है। वह अपनी या अपने समयकी अनुभूतियाँ, पूर्वाग्रह और धाराएँ ही प्रकट करता है। प्रत्येक रचनामें अपने ही विचारों और आदर्शोंका प्रतिपादन देखना चाहता है। और इन्हीं मानदण्डों पर किसी रचनाको स्वीकारता या नकारता है। सारी आलोचनाएँ एक विषयगत रूढ़ ढाँचेमें विश्वास करती हैं, इस मानेमें आलोचना आजकल आलोचना न रहकर पत्रकारिता रह गयी है। चाहिए तो यह कि आलोचक अपने मानदण्डोंको किसी नयी रचनाके द्वारा परखे – होता यह है कि वह रचनाको अपने पुराने निकषोंपर कसता है। उसके ये निकष सौन्दर्यशास्त्रीय, नैतिक या दार्शनिक होते हैं। यदि उस रचनामें धर्मशास्त्रीय, नैतिक या राजनैतिक पक्षोंका समर्थन होता है तो उसे अच्छा कह दिया जाता है, अथवा ख़राब।

इस स्थितिको मेरे एक अभिनय निर्देशक मित्र इस ढंगसे बयान करते हैं – "मेरे पास एक अच्छी मशीनगन है जो मेरे दोस्तोंपर फ़ायर करती है – लेकिन दोस्तोंपर फ़ायर करनेकी वजहसे वह ख़राब नहीं कही जा सकती। दूसरी ओर एक बहुत रद्दी मशीनगन है जो दुश्मनोंपर फ़ायर करती है – मगर दुश्मनोंपर फ़ायर करनेकी वजहसे ही उसे एक अच्छी गन कैसे कहा जा सकता है। निशानेपर कितना अच्छा और बुरा चलती है – यह निर्णय करनेका काम आलोचकका होता है।"

जैसे किसी परिवारमें छोटी-छोटी बातोंके लिए एक दूसरेका विरोध होता रहता है। लेखन-जगत्में भी वैसी ही छींटाकशी चलती रहती है। बजाय इसके कि उस छींटेको धोया जाये – वे उसे बाहर दीवारपर, दुनियाके हँसनेके लिए, लटका देते हैं। साधारण जनताको इन अन्दरूनी कमज़ोरियोंका पता चल जाता है और दूरके आलोचक, रिसर्चर, प्रोफ़ेसर भी इस गन्दगीसे अवगत हो जाते हैं। बहुत कम व्यक्ति अपने ढंगसे किसी रचनाका सही मूल्यांकन कर पाते हैं – शेष तो आलोचनाओंके माध्यमसे ही उसकी क़ीमत आँकते हैं – और इस ढंगसे मूल्यांकन-

(शेष पृष्ठ ४८ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

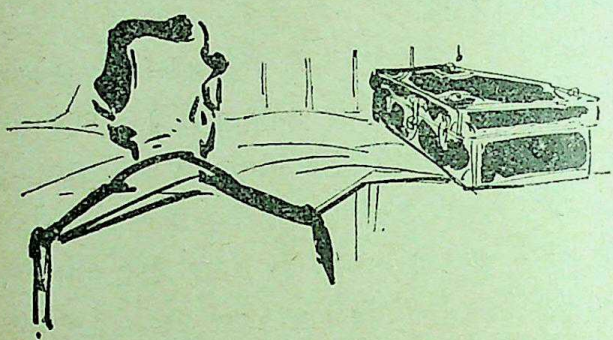

उपेन्द्रनाथ अश्क

जब आतिश जवान था

■

कौशल्याके साथ शादी करनेके बाद जब भी किसी यात्रापर गया हूँ और उसे सफ़रकी तैयारी करते देखा है, मेरी आँखोंमें पच्चीस वर्ष पहलेकी एक घटना घूम गयी है :

शादीसे लगभग साल-भर पहले मैं कुछ दिनको अपने बड़े लड़केके साथ (जो उस वक़्त छह-सात वर्षका था) कौशल्याके यहाँ रेनाला खुर्द गया।

रेनाला मिण्टगुमरी ज़िलेमें छोटा-सा क़स्बा है और पंजाबके प्रसिद्ध इंजीनियर रायबहादुर सर गंगारामके फार्मों, नहरके बाँध, बिजलीघर, ऊँची ज़मीनपर चढ़ाये गये रजबहों और सात मील लम्बे माल्टाके बाग़ोंके लिए प्रसिद्ध है। कौशल्या जब आती थी, उनके क़िस्से सुनाती थी – कैसे सर गंगारामने नहरों बाँध लगाकर बिजली निकाली, कैसे उन्होंने नहरके पानीको ऊँची ज़मीनोंपर चढ़ाया और कैसे वह ऊसर हरी-भरी खेतियोंसे लहलहा उठा, कैसे माल्टों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाग़में ख़ूनी रंगके लाल-लाल माल्टे हैं और कैसे अजवाइनको साल-साल भर नीबूका पुट देकर पेटके हर रोगके लिए तैयार किया जाता है····और इस सबका ज़िक्र करते हुए वह मुझे कुछ दिन रेनाला चलकर रहनेका निमन्त्रण देती। जब दो बार वादा करके भी मैं नहीं गया तो इस बार जब वह आयी, हमें तैयार करके साथ ही ले गयी।

मैं उन दिनों कुछ अस्वस्थ था और छुट्टीपर लाहौर गया हुआ था। सोचकर यही गया था कि दो-तीन दिनमें लौट आऊँगा लेकिन रेनालाके इन्हीं दर्शनीय स्थानोंको देखने और वहाँके लोगोंसे मिलने-मिलानेमें छह दिन लग गये। सातवें दिन मैं वापस चलनेको तैयार हो गया। मैंने एक दिन पहले ही से कहना शुरू किया कि मैं कल चला जाऊँगा। (मैं और कौशल्या साल भरसे एक-दूसरेको जानते थे और हफ़्ते-पखवारे चन्द घण्टे साथ ही गुज़ारते थे। वह रेनालासे लाहौर आ जाती और मैं प्रीतनगरसे वहाँ पहुँच जाता। तो भी हमारे सम्बन्ध काफ़ी औपचारिक थे।) एक-आध बार दबी ज़बानसे कौशल्याने हमें रुकनेको कहा, पर जब मेरे स्वरमें कुछ कड़ाई आ गयी तो वह बोली, "आप घबराइए नहीं, मैं आपको शामकी गाड़ी चढ़ा दूँगी।"

रेनालासे एक ही गाड़ी शामको पाँच बजे लाहौर आती थी। जब तीन बजे तक कहीं सुन-गुन न लगी कि हमारे जानेकी तैयारी हो रही है तो मैं घबराया – 'मैं अपना बिस्तर बाँध लूँ," मैंने कहा, "मुझे पहले ही बहुत दिन हो गये हैं, मेरी नौकरी छूट जायेगी।"

"हाँ-हाँ, बँध जाता है आपका बिस्तर, पाँच मिनिटका काम है, अभी तो दो घण्टे पड़े हैं।"

और तब उसने चपरासीको बाग़से माल्टे लानेके लिए भेजा और दाईसे कहा कि वह बच्चेके लिए मीठे पराँठे पका दे।

"अरे भाई, शामको नौ बजे गाड़ी पहुँच जाती है। तुम बेकार परेशान होती हो। घर जाकर खा लेगा।"

"आपके लिए तो नहीं बनवा रही हूँ। बच्चा है, अगर भूख लग आयी तो? चार घण्टेका समय है, क्या कीजिएगा?" और वह दाईके साथ पराँठोंमें जा लगी। उसका ख़याल था कि चपरासी बाहरसे आयेगा तो मेरा बिस्तर बाँधेगा। जब गाड़ीके आनेमें पन्द्रह मिनिट रह गये और स्टेशन निकट होनेके कारण दूसरे स्टेशनसे गाड़ी चलनेकी सूचना देनेवाली घण्टीकी टन-टन सुनायी दी तो उसने मेरे साथ बिस्तरा बधवाया। दाई-से कहा कि पराँठे डिब्बेमें बन्द कर, चाय-की ट्रे मेज़पर रख दे और स्टेशन भाग जाये और बाबूसे कहे कि बड़ी बहनजीके मेहमान जायेंगे।···इस बीच चपरासी आ गया। उसे सब सामान नीचे उतार, स्टेशन पहुँचानेका आदेश देकर, कौशल्या तैयार होने लगी। चाय उसने पी नहीं थी। दाई चायकी ट्रे लगाकर स्टेशन भाग गयी थी। साड़ी पहनते-पहनते वह चायकी चुस्की भी लेती रही।····हम घरसे नीचे उतरे ही थे कि गाड़ी स्टेशनपर आ गयी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छोटा-सा स्टेशन, गाड़ी केवल तीन मिनिट रुकती थी। कौशल्याका घर स्टेशनसे फर्लांग भरके फ़ासलेपर होगा। मैं अपने लड़केकी उँगली पकड़कर भागने ही वाला था कि कौशल्याने रोक दिया -- "घबराइए नहीं, आपको लिये बिना गाड़ी नहीं जायेगी।"

हम लोग तेज़ चलने लगे। मेरी चाल भागनेसे कुछ ही कम थी। कौशल्याके लिए मेरा साथ देना मुश्किल था। यों मैंने लाहौरमें उसे सीना ताने, खट्-खट्, जैसे हवाको चीरते हुए, चलते देखा था। लेकिन रेनाला खुर्दमें अपने पदके अनुरूप ही वह सिर ढके लेकिन तेज़ चालसे मेरे पीछे-पीछे आ रही थी।

हम आधे रास्ते ही में होंगे कि स्टेशन-का पानीवाला भागता आया : "बहनजी, चलिए, गाड़ी आपके लिए रुकी है।" वह दूर ही से चिल्लाया।...हम किंचित् और तेज़ बढ़े। स्टेशनपर पहुँचे तो स्टेशन-मास्टरने 'बहनजी'को हाथ जोड़कर नमस्कार किया और कौशल्याके हाथसे रोटीका डिब्बा लेकर हमारे आगे-आगे बढ़ा। सामान हमारा रखवा दिया गया था। हम चढ़े कि गार्डने सीटी दी।

बादमें मुझे मालूम हुआ कि स्टेशन-मास्टरकी लड़की उसके स्कूलमें पढ़ती थी और कौशल्याकी स्थिति उस छोटे-से क़स्बेमें किसी गज़टेड अफ़सरसे कम नहीं थी। इस बार तो हम आधे रास्तेमें थे, पर कई बार ऐसा भी हुआ कि वह घरसे नहीं निकली और गाड़ी स्टेशनपर आ गयी और स्टेशन-मास्टरने उसे घरसे बुलवाया।

कौशल्या सालभर बाद ही रेना चली आयी। वह छोटे-से क़स्बेकी मिस्ट्रेस नहीं रही कि स्टेशन-मास्टर लड़कीकी बड़ी बहनजीके लिए गाड़ी दे, लेकिन अब भी कहीं यात्रापर जाना तो कौशल्या वैसे ही तैयार होती है।

मेरे अपने पिता स्टेशन-मास्टर थे अपने स्टेशनपर ही नहीं, पूरे डिवीज़न दबंग मशहूर थे। गार्डों, ड्राइवरों, टि कलेक्टरों और अफ़सरोंको सदा खि पिलाते रहते थे, लेकिन जाने प्रतिक्रि फलस्वरूप अथवा अपनी माँके नैतिक प्र कारण या फिर अपने नन्हें-से अहम्के मैंने कभी स्टेशन-मास्टरके बेटेकी तरह टिकिट यात्रा करना अथवा गाड़ीके आ जानेपर ही घरसे निकलना नहीं किया।

जब हम पिताजीके पास न होते अपने घर जालन्धर होते और कहीं पर जाना पड़ता तो घण्टा-डेढ़-घण्टा घरसे चलना अनिवार्य हो जाता।

हमारा घर जालन्धरमें था और जा फ़िरोजपुर डिवीज़नमें नहीं था कि मेरे का कोई मित्र हमारी खातिर गाड़ी ले लेता। इसके अतिरिक्त हमारा घ स्टेशनके निकट नहीं था, पूरे डेढ़ अन्तरपर शहरके एक गुंजान मुहल्लेमें घरमें कोई घड़ी नहीं थी। टाइम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए मुहल्लेके सिरेपर बाज़ारमें चचा गोपालदास पन्सारीकी दुकानपर जाना होता और उनकी घड़ी भी स्टेशनकी घड़ीसे मिली हुई हो, ऐसी बात न थी। उसके लिए पन्द्रह-बीस मिनिट आगे या पीछे होना सहज बात थी। इसलिए जब रेलगाड़ीसे कहीं यात्रा करनेकी बात होती तो हमें कम-से कम डेढ़ घण्टा पहले घरसे रवाना होना पड़ता। सामान साथमें न हो तो हम प्राय: यह रास्ता भी पैदल ही तय करते। सामान साथ हो तो और भी पहले तैयारी करनी पड़ती। क्योंकि ताँगा आध मीलपर सैदाँ गेटमें ही मिलता था और घरसे एक-डेढ़ फ़र्लांगपर चौक कादेशाहमें रुक जाता था। कुली या नौकरोंकी कोई व्यवस्था न थी। सामान अपने कन्धोंपर ही लादकर वहाँ पहुंचना होता। मुझे ऐसी कई घटनाएँ याद हैं, जब घरसे तड़के चले, ताँगा मिल नहीं पाया और सामान कभी सिरपर या कभी इस कन्धे और कभी उस कन्धे उठाये हम स्टेशन पहुँचे। स्टेशनपर भले ही घण्टा-आध-घण्टा गाड़ीकी प्रतीक्षा करनी पड़ी हो, लेकिन एक भी ऐसी घटना याद नहीं जब हम देरसे पहुँचे हों और गाड़ी न मिली हो।

कौशल्याकी स्थिति मुझसे एकदम भिन्न रही है। वह अपने अमरीका-पलट मामाके यहाँ पली है। उसके मामाका मकान लाहौर-में बीडन रोडपर था। नीचे ही डेयरीमें फ़ोन लगा था, जहाँसे गाड़ीका ठीक टाइम पूछा जा सकता था और बॉलकनीसे आवाज़ देनेपर ताँगा रोका जा सकता था और

एक था हातिम –
नेकदिल और हर आदमी का मददगार।
उसकी मुलाक़ात हुई यमनके
जंगलमें, शिकार खेलते मुनीरशामी-
से। मुनीरशामी,
जो ख्वारेज्मका शहज़ादा था और दीवाना
बना घूम रहा था। कारण थी
हुस्नबानो। तब हातिमने हुस्नबानोके
सवालोंके जबाव ढूँढ़नेके
लिए 'सात सफ़र' किये थे मुनीरकी
खातिर। इस क़िस्सेमें-से
हमने केवल शीर्षक लिया है। पहले
सफ़रके बाद दसरा सामने है।

कौशल्याके मामा घड़ी देखकर वक़्तसे तैयार होते और पाँच-सात मिनिट पहले स्टेशन पहुँच जाते। रोज़-रोज़ सफ़र करनेके कारण उन्हें किसी तरहकी घबराहट भी नहीं होती। उनके साथ रहनेसे कौशल्या भी ऐन-मैन वैसी हो गयी।....अपने वैवाहिक जीवनके पिछले बाईस-तेईस वर्षोंपर दृष्टि डालता हूँ तो उसके साथ गाड़ीपर सवार होने अथवा उसे सवार करानेके कई दृश्य मेरी आँखोंमें कौंध जाते हैं।

...१९४५ की एक शामकी याद आती है। मैं 'फ़िल्मिस्तान' बम्बईमें काम करता था। कम्पनीका स्टूडियो गोरेगाँव में था और मैं एक स्टेशन परे मलाडमें रहता था। मैंने कौशल्यासे कहा था कि वह शामको समयसे आ जाये तो हम स्टूडियोसे सीधे ही दादर जायेंगे। दादरमें उसकी बहन रहती थी। उनका घर कैडिल कोर्ट, कैडिल रोड-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर था, जहाँसे कुछ ही क़दम आगे दादरका सागर-तट था। वहाँ शामको ज्वार अथवा भाटेका बड़ा ही सुन्दर दृश्य दिखाई देता था। इरादा यह था कि कौशल्याकी बहन और बहनोईको लेकर हम लोग वहाँ जायेंगे, खायें-पियेंगे और सागरका नज़ारा करेंगे।

कौशल्या कुछ देरसे पहुँची। जब हम स्टूडियोसे स्टेशनकी ओर चले तो अभी हम आधे रास्तेमें ही थे कि दूर मलाडकी ओरसे लोकल ट्रेनके आनेकी आवाज़ सुनाई दी। कुछ लोग गाड़ीकी आवाज़ सुनकर भागने लगे। मैंने कहा, "यह गाड़ी तो गयी। अब आध घण्टा, कमसे कम, इन्तज़ार करना पड़ेगा। देर हो जायेगी! मैं सोचता हूँ, अब घर चलें। दादर कल जायेंगे।"

"कल क्यों जायेंगे? चलिए, भागकर पकड़ लेते हैं।" कौशल्याने कहा।

और हम दोनों भागने लगे।

रास्ता काफ़ी था। लेकिन हम लगातार भागते गये। ज्यों-ज्यों गाड़ीकी आवाज़ निकट आती गयी हमारे भागनेकी गति भी तेज़ होती गयी। हमारे आगे-आगे भागनेवाले कई लोग पीछे रह गये। कुछने यह सोचकर दम छोड़ दिया कि अब वे गाड़ी न पकड़ पायेंगे। लेकिन हम निरन्तर भागते रहे। स्टेशनसे कुछ दूर ही थे, जब गाड़ी स्टेशनमें दाखिल हो गयी। चर्चगेटको जानेवाली गाड़ी नं० २ प्लैटफ़ार्मपर रुकती थी और पुल पार करके उसे पकड़ा जा सकता है। हमने भागते हुए स्टेशनमें प्रवेश किया तो गाड़ी लाइनोंके पार सामने ही खड़ी थी, चलने ही वाली थी और हमारे आगे पहुँचने वाले स्टूडियोके दो-तीन साथी हसरत-भरी नज़रोंसे उसे देख रहे थे।

कौशल्याने कहा, "चलिए, लाइनें क्रास करके चढ़ जायें।"...और निमिष भरमें यह देखकर कि कोई दूसरी गाड़ी तो नहीं आ रही, हम दोनों कूद गये। गाड़ी हरकतमें आ गयी थी जब हम पिछली ओरसे एक डिब्बेमें चढ़ गये। और खिड़कीमें खड़े-खड़े हमने कुछ अजीब-से विजयोल्लाससे अपने साथ भागनेवाले साथियोंको हसरत-भरी आँखें लिये स्टेशनपर खड़े देखा।

लेकिन दादर आया तो हमारी विजय पराजयमें बदल गयी। हमने देखा कि गाड़ी वहाँ बिना रुके उसी तेज़ीसे बढ़ती चली गयी – हम अपनी तेज़ी और जल्दीमें फ़ास्ट पैसेंजरमें चढ़ गये थे जो सीधी ग्राण्टरोड जाकर रुकी।....

...मलाडमें हमारा घर स्टेशनके बिलकुल निकट था। स्टेशनपर आनेवाली गाड़ी हमारी बॉलकनीसे दिखाई दे जाती थी और हम गाड़ीके स्टेशनपर आ जानेके बावजूद कई बार भागकर जा चढ़ते थे। लेकिन धीरे-धीरे गाड़ियोंके टाइमका पता चल गया। कौशल्या भी बच्चेसे हो गयी। मैंने भाग-दौड़पर बन्दिश लगा दी और अपनी आदतके अनुसार मैं चाहने लगा कि हम लोग वक़्तसे स्टेशनपर जायें और इत्मीनानसे गाड़ीमें सवार हों।

कौशल्याका नाम मैंने सेण्डहर्स्टके प्रसिद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेटर्निटी होम – डॉ० एजिन्क्रियाज़ क्लीनिक – में रजिस्टर करा दिया था और मैं उसे लेकर हर हफ़्ते वहाँ जाता था। वह आठवें महीनेसे होगी। एक दिन हम स्टेशनके बाहर ही थे, जब गाड़ी दूसरे नम्बरपर आकर खड़ी हो गयी। भाग हम सकते नहीं थे। इसलिए कोई उम्मीद नहीं थी कि चढ़ जायेंगे। शामके वक़्त चूँकि मलाडकी ओरसे रश नहीं रहता, इसलिए मलाडसे चर्चगेट-की ओरको गाड़ी घण्टे-पौन घण्टे बाद जाती थी और उधरसे हर पन्द्रह मिनिट बाद आती थी। मैं बड़बड़ाने और कौशल्याको डाँटने लगा कि जब उसे पता है, डॉक्टरके यहाँ जाना है, तो क्यों वक़्तसे तैयार नहीं होती? अब इतनी देर स्टेशनपर क्या बैठेंगे, घर वापस चलें।

लेकिन कौशल्या विचलित नहीं हुई। उसने कहा, गाड़ी निकल जायेगी, तो वहीं बैठे इन्तज़ार कर लेंगे। अब वापस कौन जाये, सीढ़ियाँ चढ़े-उतरे। यह उससे नहीं होगा।····उसकी उस अवस्थामें हम पुलपर-से नहीं जाते थे। एक नम्बरका प्लैटफ़ार्म पूरा पार करके मलाड बाज़ारके रेलवे फाटकसे होकर दूसरे प्लैटफ़ार्मपर चढ़ते थे। तेज़-तेज़ चलते हुए उसी तरफ़से हम दूसरे प्लैटफ़ार्मपर गये। गाड़ीके पिछली ओर गार्डके डिब्बेसे केवल दो क़दमके फ़ासलेपर थे कि गाड़ी सरकने लगी। कौशल्याने चाहा दो क़दम भागकर ब्रेक-वैन ही में सवार हो जाये। सहसा गार्डकी नज़र हमपर पड़ गयी। भला आदमी था। उसने हाथ पकड़कर ब्रेक-वैनमें उसे चढ़ा लिया। मैं भी वहीं सवार हो गया। जीमें बेहद ग़ुस्सा था इसलिए सारे रास्ते मन-ही-मन भुनभुनाता रहा।····'पैर फिसल जाता तो'····'पायदान-पर ठीकसे न रखा जाता तो'···'यह क्या मज़ाक़ है कि समयसे दस मिनिट पहले स्टेशनपर न पहुँचा जाये'···आदि आदि····

लेकिन कौशल्याके चेहरेपर न कोई घबराहट थी, न अफ़सोस···परम शान्ति और सन्तोषके साथ वह गार्डसे बतिया रही थी।

····इलाहाबादके शुरूके दिनोंकी बात है, हम रेलवे स्टेशनके निकट ही ५, खुसरो बाग़ रोड, में आ गये थे। ए० पी० लेना यद्यपि मैंने बन्द कर दिया था, पर मेरा दायाँ फेफड़ा काम न करता था और तेज़ चलने और भागनेमें मुझे कठिनाई होती थी। कौशल्याने यू० पी० सरकारसे ऋणके लिए आवेदन-पत्र दे रखा था और उसी सिलसिले-में उसे लखनऊ जाना था। मेरा छोटा लड़का नीलाभ तब चारेक सालका था।

यूँ तो लखनऊको सुबह भी गाड़ी जाती है और रातको भी, लेकिन सबेरेवाली नौ बजे इलाहाबादसे छूटती है और रातवाली सुबह पाँच बजे लखनऊ पहुँचाती है और कौशल्या चूँकि सुबह साढ़े आठ बजे तक सोनेकी आदी है, अतः उसके लिए दोनों गाड़ियाँ सुविधाजनक नहीं। वह शाम चार बजेवाली पैसेंजरसे जाना पसन्द करती है। गाड़ी तो वह रातको दस बजे लखनऊ पहुँचाती है, लेकिन कौशल्याके मामा वहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहते हैं, तार दे दिया जाता है और किसी तरहकी असुविधा नहीं होती।

मैं भी उस गाड़ीसे दो-तीन बार गया हूँ, लेकिन चूँकि वह गाड़ी सात नम्बरके प्लैटफ़ार्मसे छूटती है, जो मेन गेटसे काफ़ी दूर है, इसलिए मैं हमेशा समयसे पहले पहुँचा हूँ और मुझे कभी कठिनाई नहीं हुई। ··· कौशल्या चली, तो अपनी आदतके अनुसार उसने देर कर दी। हम पुलपर ही थे जब दूर सात नम्बरपर खड़ी गाड़ीने सीटी दे दी। कौशल्या हसब-आदत सरपट भागी। गुड्डा (नीलाभ) मेरी उँगली पकड़े तेज़-तेज़ चल रहा था। चन्द क़दम वह मेरे साथ भागा, फिर रोने लगा। उसे मैंने गोदमें उठा लिया और कौशल्याके पीछे भागा – और मेरी यादके परदेपर वह दृश्य सदाके लिए अंकित हो गया – दूर गाड़ी सीटी दे रही है। कौशल्या आगे-आगे भाग रही है। उसके पीछे क़ुली बिस्तर और अटैची लिये भाग रहा है और मैं रोते हुए बच्चेको उठाये उनके पीछे भाग रहा हूँ···उसी तेज़ीसे हम पुलकी सीढ़ियाँ उतरते हैं और उसी क्रमसे प्लैट-फ़ार्म-दर-प्लैटफ़ार्म भागते चले जाते हैं।···· गाड़ी सरकने लगती है जब कौशल्या पिछले डिब्बेमें सवार हो जाती है। क़ुली भागकर बिस्तरा और अटैची उसे दे देता है। वह बिस्तर पीछे खींच लेती है और गुड्डेके लिए हाथ बढ़ाती है। क़ुली गुड्डेको मुझसे लेकर भागता हुआ उसकी बाँहोंमें दे देता है और वह छातीसे लगाकर चूमती हुई उसे पापाको 'टा-टा' करनेके लिए कहती है। हाथ हिलाते हुए दोनों नज़रोंसे ओझल हो जाते हैं। क्रोधके मारे चुपचाप उन्हें कुछ क्षण देखता हाथ हिलाता रहता हूँ फिर गाड़ीके निक जानेपर क़ुलीको पैसे देकर वहीं (अप कपड़ोंकी परवाह किये बिना) प्लैटफ़ार्म फ़र्शपर बैठ जाता हूँ।

कुछ ऐसे विशेष अवसरोंको छोड़ जब कहीं मुझे अकेले जाना हुआ और बहुत पहलेसे शोर मचाकर घण्टा-आध घ पहले स्टेशनपर जा बैठा, मुझे एक भी ऐ मौक़ा याद नहीं जब कौशल्या कहीं अके गयी और ऐसे अफ़रा-तफ़रीमें नहीं चढ़ी जबसे ख़ुसरो बाग़ रोडके इस बँगलेमें आ हैं, वह और भी बे-परवाह हो गयी है क्योंकि यहाँ टेलीफ़ोनकी सुविधा भी है और यहाँसे स्टेशन भी बिलकुल नज़दीक है गाड़ी स्टेशनपर आ गयी हो तो भी हम घर चलकर सवार हो सकते हैं और इस बात उसे और भी बेपरवाह बना दिया है। अप बन्द फेफड़ेके बावजूद पुलपरसे सात नम्बर उस प्लैटफ़ार्मपर भागते हुए जानेकी घटनाके बाद, मैंने उसकी लाख इच्छा बावजूद, उसके साथ जाना छोड़ दिया है उसे कहीं अकेले जाना हो तो मैं अपने लड़ अथवा कौशल्याके भाइयों या फिर दफ़्तर मुलाज़िमोंको उसे गाड़ीपर सवार कराने भे देता हूँ और बादमें आकर वे सविस्त बताते हैं कि कैसे उन्होंने 'मम्मी' या 'बहू जी' या 'बहूजी' को गाड़ीमें चढ़ाया। मे समझमें कभी नहीं आता कि इस त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अफ़रा-तफ़रीमें चढ़नेके बजाय पाँच-दस मिनिट पहले स्टेशनपर पहुँच जानेमें क्या हर्ज है।··· गाड़ीमें कौशल्या सदा ऐसे ही सवार हुई है, लेकिन उपरोक्त तीन दृश्य इसलिए मुझे याद रह गये हैं कि उन तीनोंमें काफ़ी खतरेकी सम्भावना थी। और अब भी जब मुझे उनकी याद आती है तो वे खतरे जो नहीं पेश आये, पर आ सकते थे, मेरी कल्पना-में कौंध जाते हैं और मेरा खून खौल उठता है।

लेकिन कौशल्याके यात्रापर रवाना होनेका केवल यही एक पहलू नहीं। कई बार ऐसा भी हुआ है कि स्टेशनके रास्तेमें सहसा उसे याद आया है कि वह ताशका पैकेट या पानकी डिबिया या बाथरूम-स्लीपर या सुराही या कोई और ऐसी ही मामूली चीज़ घरपर भूल आयी है और उसने वहींसे अपने बेटे या भाई या माली या नौकरको दौड़ा दिया है। मुझे दो-एक ऐसे भी मौक़े याद हैं, जब उसने स्टेशनपर पहुँचकर या गाड़ीमें सवार होकर किसी मामूली-सी चीज़-के लिए आदमीको घर दौड़ाया है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि घर स्टेशनके नज़दीक होनेसे चीज़ प्रायः आ भी गयी है, लेकिन मुझे सदा निहायत कोफ़्त हुई है और मैं कभी समझ नहीं पाया कि क्यों सब चीज़ें पहलेसे सम्हालकर नहीं रख ली जातीं? इस तरह अफ़रा-तफ़रीमें चलनेसे किसी-न-किसी चीज़का छूट जाना नितान्त स्वाभाविक है। लेकिन मेरे लिए जो बात असाधारण है, कौशल्याके लिए वही सहज है।···उसके मामा सदा फ़र्स्टमें यात्रा करते हैं। सीट पहलेसे सुरक्षित होती है और वे गाड़ीके रवाना होनेसे एक मिनिट भी पहले पहुँच जायें तो सवार हो सकते हैं। बीमारीके कुछ वर्षोंको छोड़कर हमने प्रायः थर्ड ही में यात्रा की है, लेकिन कौशल्या थर्डमें भी फ़र्स्टवालों-की तरह यात्रा करती है जब कि मैं फ़र्स्टमें भी थर्डवालोंकी तरह यात्रा करता हूँ और हमेशा समयसे कुछ पहले स्टेशनपर पहुँचता हूँ। यही हममें अन्तर है।

कौशल्याके साथ यात्रा करनेका एक और पहलू भी है और उसकी याद आ जाने-से मुझे कम खिझलाहट या घबराहट नहीं होती।

मुझे जनतासे दिल्ली जाना है। चूँकि कामके आधिक्यके कारण दिन और तारीख-का निश्चय नहीं हो सका, इसलिए सीट रिज़र्व नहीं करायी जा सकी। कौशल्या स्वयं स्टेशन जाती है। वहाँ हमारे एक परिचित बाबू हैं। ज़रा-सी भी गुंजाइश हो तो सीट दिलवा देते हैं। वे कहते हैं, "आपने देर कर दी। इलाहाबादके लिए सुरक्षित सभी सीटें बुक हो चुकी हैं। आप गाड़ीपर ज़रा पहले आ जाइएगा तो कोशिश कर देखेंगे।" कौशल्याका परम विश्वास है कि सीट ज़रूर मिल जायेगी और वह यही तय करती है कि गाड़ीपर चान्स लेंगे।

लेकिन मैं गाड़ीपर चान्स लेनेका ज़रा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी क़ायल नहीं हूँ। मैं कहता हूँ, "भगवान्‌के लिए तुम इतना करो कि बीस मिनिट-आध घण्टा पहले स्टेशनपर पहुँचा दो। सीट मैं अपने-आप ले लूंगा।"

और मैं सुबहसे ही शोर मचाना शुरू कर देता हूँ। घण्टाभर पहले तैयार हो जाता हूँ। कौशल्याने चाय नहीं पी। मैं स्टेशनपर उसे बढ़िया चाय पिलानेका वादा करता हूँ। और गाड़ीके आगमनसे काफ़ी पहले स्टेशनपर पहुँच जाता हूँ, क़ुलीको उस जगह सामान ले जाकर रखनेका आदेश देता हूँ, जहाँ अगले डिब्बे आकर रुकते हैं। वहीं बिस्तर और ट्रंकपर बैठे हम मज़ेसे चाय पीते हैं। गप लगाते हैं। ज्योंही गाड़ी दूर स्टेशनमें दाखिल होती दिखाई देती है और एकदम सब लोग उठ खड़े होते हैं मैं भी उठता हूँ। क़ुलीसे केवल बिस्तर उठानेको कहता हूँ और आदेश देता हूँ कि मेरी ओर ध्यान रखे और मैं जिस डिब्बेमें सवार होऊँ, भागकर वहीं मुझे बिस्तर पकड़ा दे। और यह कहकर मैं अगली पंक्तिमें जा खड़ा होता हूँ। गाड़ी अभी हरकतमें होती है कि मैं उचककर एक डिब्बेमें सवार हो जाता हूँ और उतरनेवालोंकी भीड़को चीरता हुआ एक खाली सीटपर जा क़ब्ज़ा जमाता हूँ यानी अपना बैग वहाँ रख देता हूँ। क़ुली बिस्तर ले आता है और इससे पहले कि कोई सीटपर अधिकार करे, मैं बिस्तर बिछा लेता हूँ और तकिये निकालकर आरामसे लेट जाता हूँ – प्रतीक्षा करता हूँ कि क़ुली दूसरा सामान ले आये। जब काफ़ी देर तक कोई नहीं आता तो मैं ज़रा चिन्तित होकर उठता हूँ, खिड़कीसे झाँकता हूँ, और देखता हूँ कि पुषी – कौशल्याका छोटा भाई – भागा आ रहा है।

"जीजाजी, उधर बहनजीने स्लीपरमें सीट ले ली है।"

और वह गाड़ीके डिब्बेमें आ जाता है। "उठिए, उठिए, गाड़ी चलनेवाली है।"

"मुझे नहीं जाना स्लीपरमें, देखो कितनी अच्छी सीट मिल गयी है। तुम जाकर सामान यहीं ले आओ।"

लेकिन दूसरे क्षण क़ुलीके पीछे-पीछे कौशल्या स्वयं दाखिल होती हैं – "उठिए, उठिए, उधर स्लीपरमें सीट मिल गयी है।"

मैं भुनभुनाता रह जाता हूँ। मेरी कोई नहीं सुनता। बिस्तर फिर गोल किया जाता है और क़ुलीके सिरपर लदवाये भागम-भाग हम गाड़ीके लगभग दूसरे सिरेपर लगे स्लीपर-डिब्बेमें पहुँचते हैं। डिब्बा ठसमठ्ठ भरा है, साँस तक लेनी मुश्किल है। बड़ी कठिनाईसे सीट तक पहुँचते हैं, मिडिलकी सीट मिली है। उस वक़्त बिस्तर बिछानेका सवाल ही नहीं पैदा होता। मुश्किलसे बैठते हैं कि गाड़ी सीटी दे देती है।

सब उतरनेको भागते हैं। कोई बात नहीं हो पाती। बेटे गाड़ीके साथ भागते हुए खिड़कीमें-से हाथ मिलाते हैं, पुषी दूरसे नमस्ते कहता है, कौशल्या साथ-साथ चलती हाथ मिलाती है और अपनी विजयपर मुग्ध करती है····रातको जब एक बार उठता हूँ तो भूल जाता हूँ कि मिडिलकी सीटपर लेटे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हूँ। माथा ऊपरकी सीटसे फूट जाता है और मैं कौशल्याकी इस तत्परताको दुआएँ देता हूँ...

लेकिन यह उन दिनोंकी बात है जब आतिश जवान था और चलती गाड़ीके डिब्बेमें चढ़कर सीटपर अधिकार जमानेकी शक्ति रखता था। धीरे-धीरे उमर और बीमारीने मुझे इस क़ाबिल नहीं रखा और मैंने सीट लेकर देनेका काम बीवी-बच्चोंपर छोड़ दिया है। और वे लोग जैसे सीट लेकर देते हैं, उससे मुझे यात्राके नाम ही से वहशत होने लगती है।

इसी सिलसिलेमें वर्षों पहलेका एक सफ़र मेरी आँखोंमें घूम जाता है :

मुझे अकेले ही दिल्ली जाना है। सीट हसब-दस्तूर अनिश्चयके कारण बुक नहीं करायी जा सकी और गाड़ीपर चान्स लेने ही की बात है। बावजूद मेरे शोर मचानेके कोई पहले तैयार नहीं हुआ। गाड़ीके आनेमें कुछ ही मिनिट शेष हैं। इधर रिक्शोंपर सामान लद रहा है उधर कौशल्या चाय पी रही है और मुझपर ज़ोर दे रही है कि मैं भी एक गरम-गरम प्याला पी लूँ। ऐसेमें चायकी इच्छा तो दूर रही, खानेका समय हो तो मेरी भूख तक सूख जाये।... गाड़ी स्टेशनमें दाखिल हो रही होती है जब हम प्लैटफ़ार्मपर पहुँचते हैं। अगले या पिछले डिब्बेमें जाकर सीट लेनेका सवाल ही नहीं उठता। मैं बड़े लड़केसे कहता हूँ कि जो भी डिब्बा सामने पड़े, उसीमें सामान रख दे। कौशल्या परिचित बाबूके फ़िराक़में चली जाती है। मेरा लड़का डिब्बेमें दाखिल भी हो जाता है, लेकिन इस डरसे कि सामान फिर उतरवाना न पड़े, पुषी मुझे जानेसे रोक देता है। कौशल्याका कहीं पता नहीं चलता। सब उसकी प्रतीक्षा करते हैं और सामान वहीं पड़ा रहता है। कुछ देर बाद वह दूरसे बाबूके साथ आती दिखाई देती है और हमारे पाससे तेज़-तेज़ निकल जाती है। हम लोग क़ुलीके साथ उसके पीछे-पीछे स्लीपर-डिब्बे तक जाते हैं। हमारा परिचित बाबू कण्डक्टरके साथ काफ़ी देर बहस करता है और कौशल्या भी आगे बढ़कर उससे अनुरोध करती है लेकिन कुछ नहीं हो पाता। हमें देर हो गयी है। इलाहाबादमें ख़ाली होने-वाली सीटें भर चुकी हैं। गार्डकी सीटी सुनाई देती है। मेरा लड़का सीट छोड़कर आ चुका है। हम सामानके साथ डिब्बोंके आगेसे गुज़रते जाते हैं, लेकिन कहीं जगह दिखाई नहीं देती। तभी इंजिन चीख मारता है और मैं जो भी डिब्बा सामने पड़ता है, उसीमें सवार हो जाता हूँ। डिब्बा ठसाठस भरा है। कहीं सीट ख़ाली दिखाई नहीं देती। वहीं दरवाज़ेमें ट्रंक-बिस्तर रखवाता हूँ कि गाड़ी हरकतमें आ जाती है – सामान कौशल्या सदा काफ़ी साथ कर देती है। चलती गाड़ीमें सामान आये जाता है और मैं एकके ऊपर एक वहीं अम्बार लगाये जाता हूँ। बात करना तो दूर, 'टा-टा' करनेका भी अवसर नहीं मिलता। मैं किसी तरह सामान-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को वहीं ठीक-ठाक जमाकर ट्रंक और बिस्तर-के ऊपर चढ़कर टाँगें नीचे लटकाये जा बैठता हूँ।....कानपुरमें सिर्फ़ इतना होता है कि बैठनेकी एक सीट मिल जाती है और छोटा-मोटा सामान सीटोंके बीचमें कर लेता हूँ, लेकिन ट्रंक-बिस्तर उधर लानेकी सुविधा नहीं मिलती। सर्दियोंके दिन हैं। मफ़लरसे सिर-कान लपेटे, उसपर हैट-लगाये, ओवर-कोटसे शरीरको अच्छी तरह ढके बैठे-बैठे रात गुज़ार देता हूँ – यह भी डर है कि कहीं आँख लग गयी और कोई दरवाज़ेसे बिस्तर-ट्रंक लेकर ही चम्पत हो गया तो क्या होगा।

और यों धीरे-धीरे मेरा यात्राप निकलना कम हो गया है। कहीं जानेक नाम ही से मुझे वहशत होने लगी है। क जाना होता है तो दिनों पहले मेरी नी हराम हो जाती है। कौशल्या मेरा मज़ा उड़ाती है, मैं कुछ नहीं कह पाता ग़ालिबका शेर दुहराना चाहता हूँ 'या रब न वो समझे हैं न समझें मेरी बात' लेकिन नहीं दोहराता, इसलि कि ग़ालिब कौशल्याको भी याद है। मैं प पंक्ति पढ़ूँगा तो वह दूसरी पढ़ देगी औ बात वहींकी वहीं रह जायेगी।

['लिखना', 'होना' और अन्धकार : पृष्ठ ३७ का शेष]

के क्षेत्रमें यह घोर धाँधली चली हुई है। इस धाँधलीको पत्रकारिता अवश्य कहा जा सकता है या रिपोर्टिंग।

कृति-साहित्यकार अवश्य 'सिनसीयर' या सही होता है। उसकी रचना स्वयंकी खोजी और बनायी हुई होती है – बननेके बाद किसी भी जीवित जीवकी तरह उसका अस्तित्व होता है। और इस अस्तित्वमें वह कलाकार अपने आपको खोजता है। फ्लाबे कहा था – "मादाम बोवारी – यह मैं हूँ यद्यपि बोवारी वह ख़ुद नहीं – उ रचना या बच्ची थी और जन्म लेनेके उसके क़ब्ज़ेसे बाहर निकल गयी थी।

रचना ज़िन्दा रहती है, दृष्टिकोण लते रहते हैं और ख़त्म होते रहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चीरानी मूर्ति
चित्र : असितकुमार हाल्दार)

रूबाईके रंगवाला चित्रकार

इस युगके युगान्तरकारी कलाकार श्री अवनीन्द्रनाथ ठाकुरकी छत्रच्छायामें असितकुमार हाल्दारको भी अपने सहयोगी नन्दलाल बसु और सुरेन गांगुली-जैसे अनेक वरिष्ठ कलाकारोंके साथ चित्रकला सीखनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था और आधुनिक भारतीय कलाके प्रणयन एवं अनुशीलनमें उन्हें उतनी ही एकनिष्ठ तपःसाधना भी करनी पड़ी थी। कलाके बीहड़ पथमें भटकते हुए एक सुनिश्चित दिशा अपनानेमें उन्होंने जो अनुभव संचय किये वे अधिकाधिक उनकी कलाकी परिपक्वता और गहरी पैठमें समाविष्ट होते गये। अनुभवजन्य गरिमा उनके सृजनको काल-निरपेक्ष चित्रात्मकता प्रदान करती गयी जो पूर्वाग्रहोंसे सर्वथा मुक्त थी। यों कलाकी प्रगतिमें अपने समकालिक सहयोगियोंके समान ही इनका हाथ रहा और इनके सृजनके महत्त्वको आँके बिना कलाके क्रम-विकासके सूत्रोंका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्धान कदाचित् कठिन ही नहीं, न्यायोचित भी न होगा।

सन् १८९० में जोड़ासाँको स्थित टैगोर-भवनके विचित्र कलामय वातावरणमें इनका जन्म हुआ। अल्पावस्थामें ही ग्रामीणोंके पट-चित्रणसे इनका बाल-औत्सुक्य जगा और बादमें अपने दादा राखाल दाससे, जो उस समय लन्दन यूनिवर्सिटीमें संस्कृतके अध्यापक थे, इन्हें अपनी कलाभिरुचियोंको विकसित करनेमें विशेष प्रेरणा एवं प्रोत्साहन मिला। पन्द्रह वर्षकी आयुमें इन्हें कलकत्ता-के गवर्नमेण्ट स्कूल ऑव आर्टमें दाखिल करा दिया गया। उस समय ई० बी० हेवेल और आनन्दकुमार स्वामी-जैसे कला-मनीषियोंके सान्निध्यमें कलाके पुनरुत्थानकी गतिविधियोंपर इन्होंने दृष्टिपात किया और उन्हींके क़दमोंका अनुसरण करते हुए अन्तरमें सँजोये संस्कार ही इनके परवर्ती जीवनमें सृजन-प्रक्रियाकी मूल अन्तःप्रेरणा बनकर उजागर हुए।

सन् १९१० में आंग्ल महिला लेडी हेरिंगहमके आमन्त्रणपर नन्दलाल बसुके साथ हाल्दार भी अजन्ताके चित्रोंकी प्रति-कृतियाँ तैयार करनेके लिए भेजे गये। तत्पश्चात् १९१४ में भारत सरकारके पुरातत्त्व-विभाग-द्वारा, समरेन्द्रनाथ गुप्तके साथ, मध्यप्रदेश स्थित रामगढ़ पहाड़ी स्टेटमें जोगीमारा-गुफाओंका चित्रांकन करनेका इन्हें आदेश हुआ। पुनः १९१७ में ग्वालियर स्टेटने बाघ-गुफाओंकी जाँच-परखके लिए इन्हें आमन्त्रित किया। १९२१ में नन्दलाल बसु और सुरेन्द्र कारके साथ बाघ-गुफ़ा चित्रोंकी प्रतिलिपियाँ इन्होंने तैयार आज भी इनके द्वारा चित्रांकित अजन्ता प्रतिलिपियाँ साउथ केन्सिंगटन म्यूज़ि भारतीय विभागमें, जोगीमाराकी लिपियाँ भारत सरकारके पुरातत्त्व-वि और बाघ-गुफाओंके चित्रोंकी प्रतिलि ग्वालियरके पुरातत्त्व संग्रहालयमें सु रखी हैं। किन्तु अनुकृतिमें इन्होंने समय नष्ट नहीं किया। शीघ्र ही ये मौ सर्जनाकी ओर प्रवृत्त हुए।

१९१२ में आर्ट-स्कूलकी शिक्षा स होते ही विश्वकवि टैगोर इन्हें शान्तिनि ले आये थे। उस समय अवनीन्द्रनाथ ने, जो इनके मामा होते थे, आश्वासन था, "इसको मैं भली भाँति तैयार दूँगा।···कलाकार होनेके लिए पर्यवेक्षण-क्षमता ही तो चाहिए।" १९१२ से १९२३ तक शान्तिनिके 'कला-भवन'में ये विश्वकविके स रहे। चित्रकलाके क्षेत्रमें ये अबतक प्रख्यात हो चुके थे। इसी बीच जब म गान्धी शान्तिनिकेतन पधारे तो अपना 'बन्दिनी' चित्र उपहारमें देकर अभिनन्दन किया।

जोड़ासाँको-भवनमें रवीन्द्रनाथ नन्दलाल बसु, मुकुल दे और असित इन तीनोंके सहयोगसे 'विचित्रा'की की थी। इसमें अवनीन्द्रनाथ ठाकुर, नाथ ठाकुर, समरेन्द्रनाथ गुप्त और कविके सुपुत्र रथीन्द्रनाथ ठाकुर भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिलचस्पी रखते थे। उनकी उत्कृष्ट कला-कृतियोंने कला-साधकोंका पथ प्रशस्त कर दिया था। असित हाल्दारमें अद्भुत रूप-कल्पना थी, साथ ही चित्रण-सामर्थ्य और रंगोंके नियोजनकी जीवन्त प्रतिभा भी। वे कलाकार साधक और शिल्पी दोनों थे, फलतः उनके चित्र प्राणोंके रसमें डूबकर उतरने लगे। 'विचित्रा'में यदा-कदा उनके चित्रोंकी प्रदर्शनी तो होती ही थी, विश्व-कविकी प्रशंसा और प्रोत्साहन भी उन्हें आगे बढ़नेकी प्रेरणा देते रहे। उस समयके अपने हृद्गत उद्गार व्यक्त करते हुए असित हाल्दारने लिखा है :

"मुझे कभी-कभी एक प्रकारके अहंकार-का अनुभव होता जब मैं देखता कि मेरी चित्रकलाको देखकर गुरुदेव मुग्ध हो जाते हैं। मेरे आँके हुए रेखाचित्रोंपर उन्होंने कई गीतोंकी रचना भी की थी। 'चित्र-विचित्र' शीर्षकसे वे मेरे चित्रोंके साथ उन कविताओंको प्रकाशित भी करना चाहते थे, पर उनकी यह इच्छा कुछ कारणोंसे पूरी न हो सकी।

जब कभी गुरुदेव मेरी प्रशंसा करते थे तो साथ ही सावधान भी कर देते थे — 'देख, तेरी बड़ाई तो कर रहा हूँ, पर पतन-का मूल अहंकार ही होता है। समझ गया न ?' अनेक बार अनेक विषयोंमें मेरे ज्ञानकी परीक्षा लेनेके लिए प्रश्नादि भी किया करते थे।"

असित हाल्दारकी असाधारण प्रतिभा हर प्रकारकी परिस्थितियोंमें व्यंजित होती गयी। यद्यपि प्रारम्भमें 'बंगाल स्कूल'की प्रचलित पद्धतिपर ही उनकी कलाका विकास हुआ, तथापि शनैः-शनैः इनका रूमानी मानस चित्र-विचित्र रंगोंके संयोगसे रेखाओंमें ढलकर उसी भाँति उभरा जैसे भीतर आनन्दका ज्वार उमड़कर कविताकी पंक्तियोंमें फूट पड़ता है। उनके स्वप्न, उनके अन्तर्भाव, अद्भुत रूप और अभिनव रंगोंमें गुंजरित हो चित्रोंकी तन्द्रामें खो गये। हाल्दारने प्रकृति और विराट् मानवताको कविकी भावुक, उल्लसित दृष्टिसे निहारा। उनके चित्रोंमें सूक्ष्म अनुभूतियाँ और संगीत-का-सा मार्दव व्यंजित हुआ। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, उनकी सहजात सर्जक वृत्ति फ़ारसी और मुग़ल शैलीकी नफ़ासत लिये रूबाइयोंके ढंगकी-सी चित्रात्मक कोमलता और काव्यके सौन्दर्यमें प्रस्फुटित हुई। विश्वकविने अपने एक पत्रमें इन्हें लिखा था, "तुम केवल चित्रकार ही नहीं हो, कवि भी हो। यही कारण है तुम्हारी तूलीसे रसधारा झरती है।"

असित हाल्दारके चित्रोंमें पार्श्वसे ऊपर-की ओर उठनेवाली धूमिल-सी रेखाएँ और कोमल मृदु रंग कविताकी तरह फैल जाते हैं। 'उसकी बपौती' चित्रमें छिपते हुए सूर्यके सघन होते अन्धकारमें एकाकी साधुकी प्रतिच्छवि अंकित है। 'नये-पुराने' और 'बसन्त-बहार' में उत्फुल्ल बाल्यावस्थाके साथ जर्जर वृद्धावस्थाका बड़ा ही कचोटता हुआ तुलनात्मक दिग्दर्शन है। 'ताल और प्रकाश', 'नववधू', 'संगीत', 'असीम जीवन' आदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्रोंमें आत्माकी गहराई उँड़ेल दी गयी है और मुसीबतके दिनोंमें एक हताश माँ, जो निर्धनताके कारण कलंकित जीवन बितानेको बाध्य हुई है, अपने असहाय बालकको अंकमें चिपकाये बैठी है। उनके पौराणिक चित्र 'हर-पार्वती', 'शिव', 'लक्ष्मी', 'कच-देवयानी' आदिमें जीवनकी आधार-भूमि बहुत क्षीण है, वह रूढ़िवादितासे प्रेरित हुई है, फिर भी उनकी रेखाएं और रंग-विधानमें सादगी, सरलता और चारु भव्यता है।

अपनी विशिष्ट शैलीसे हटकर असित हाल्दारने भावात्मक विषयोंको भी भौतिकवादी पद्धतिसे निरूपित किया। 'प्रारब्ध' शीर्षक चित्रमें कितने ही अमूर्त्त भाव मूर्त्त हो उठे हैं। सूक्ष्म कल्पना भावात्मक शैथिल्यमें

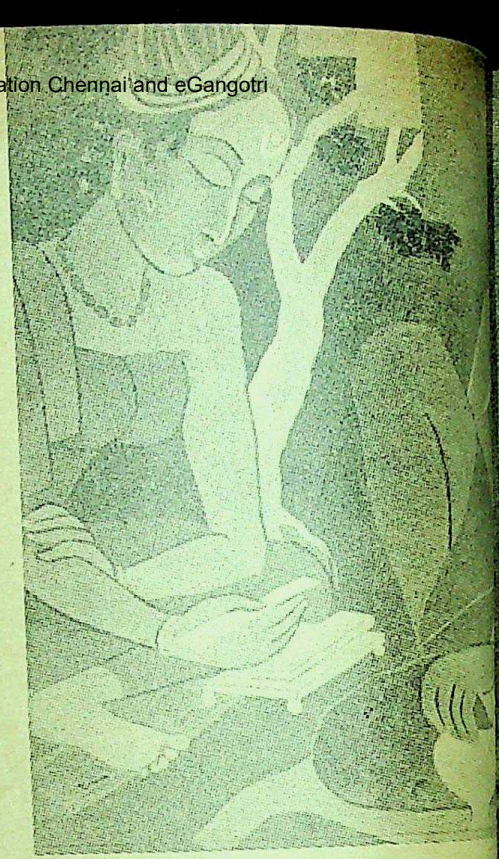

मंगल यात्रा

खोकर ऐसे अज्ञात एवं भिन्न तत्त्वोंके श्रणसे सर्वथा मौलिक कल्पित रू विकास-प्रक्रियाको लेकर उभरी है।

प्रारम्भमें असित कुमार हाल्दारने चित्रकारके रूपमें ख्याति प्राप्त सम्राट् जार्ज पंचम जब कलकत्ता तो उनके स्वागतमें लगाये गये नन्दलाल बसु और वेंकटप्पाके साथ चित्रोंसे सुसज्जित किया था। समयके बड़े-बड़े चित्र भित्ति-चि एवं उसी टेकनीकको लेकर निर्मित

इनके विषयोंकी तन्मय एका गाम्भीर्यमें अजन्ताकी कलाका प्रभा है। अनेक चित्रोंमें ग्रामीण बाल काओं, सन्थाल और उनके सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

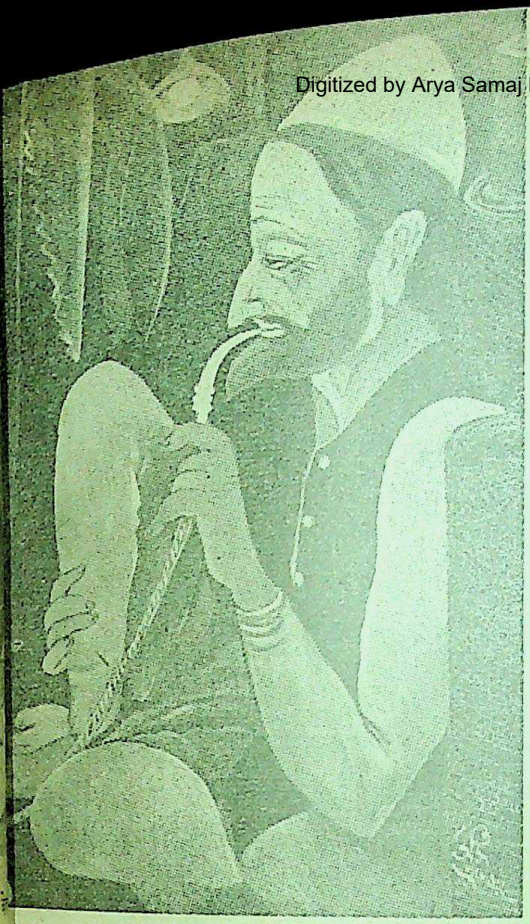

सन् १९२३ में विलायतसे लौटकर इन्होंने जयपुर और लखनऊके शिल्प-विद्यालयोंके अध्यक्ष-पदपर कार्य किया। ये पहले भारतीय कलाकार थे जिन्हें अँगरेज़ी साम्राज्यशाहीके उस ठेठ ज़मानेमें लखनऊके गवर्नमेण्ट स्कूल ऑव आर्टके प्रिंसिपलके गौरवपूर्ण पदपर नियुक्त किया गया था। भारतीयतापर गर्व करनेवाले कितने ही विशिष्ट एवं सम्भ्रान्त व्यक्तियोंकी नज़र उस समय इनपर थी कि किस नैपुण्य और कौशलसे सरकारके मातहत तत्कालीन कला-को भारतीय तत्त्वोंसे सम्पुष्ट एवं समृद्ध बनाया गया। सुदूर अतीतकी कला-प्रणालियों-को नयी दृष्टिभंगीसे उस समय भारतकी अपनी निजी परम्पराके अनुसार शिक्षा देनेकी

ताज़ी उम्र

तत्त्वोंके ...का मज़ा

...सलीला और गोप-गोपियोंको मुग्ध, ...क्ति-विह्वल भावसे सिरजा गया है। ...शोक-पुत्र कुणाल', 'राम और गुह', 'चन्द्रमा ...र कमल' आदि चित्रोंमें बड़ी ही कोमल ...जना है, चित्रकार होनेके साथ-साथ ये ...पठित साहित्यिक मनोवृत्तिके व्यक्ति थे। ...होंने प्रारम्भमें जब बंगला और अँगरेज़ीमें ...न्ध और एकांकी नाटक भी लिखे तो ...के समानान्तर स्केच और खेल-खेलमें ...ने ही रंगोंपर प्रयोग किया। किन्तु ...ज्यों समय बीतता गया इनकी दिलकी ...नी रगोंमें अधिक ढलती गयी। साहित्य-...न्तरंग साधनाने इनकी कलामें दुहरी सब-...भर दी और निजी मनकी सर्जना चित्रों-...म्भीरतामें लय होकर आविर्भूत हुई।

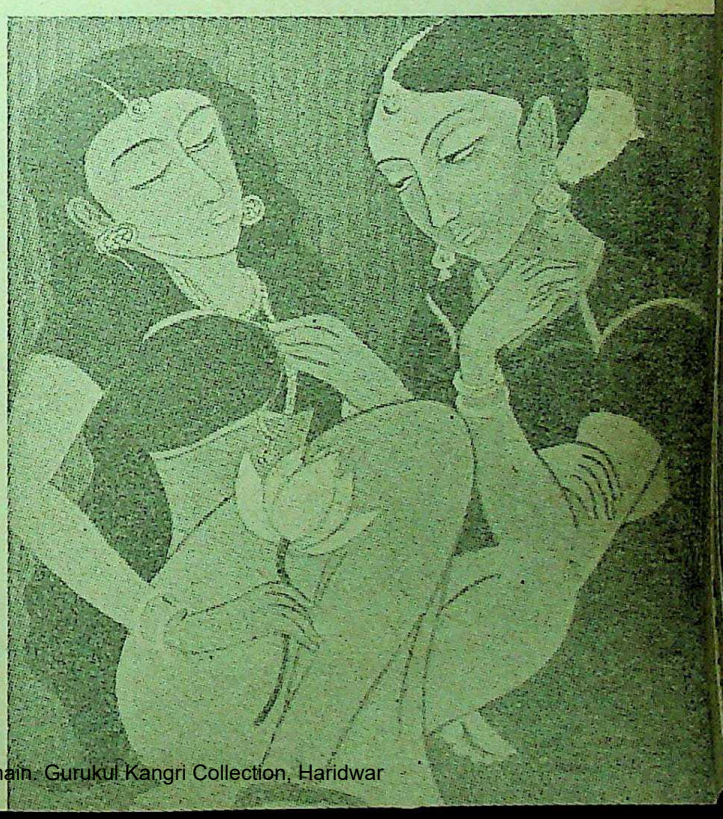

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और इनकी विशेष रुचि थी। जयपुरमें 'राजपूती क़लम' की उन सभी विशेषताओंके पुनरुद्धारका इन्होंने घोर प्रयत्न किया जो अबतक विस्मृतिके गर्तमें विलुप्त हुई-सी लगती थीं। इन्होंने लिखा—"पाश्चात्य आदर्श-के अनुसार साउथ केन्सिंगटनमें अँगरेज़ शिक्षकों द्वारा दी जानेवाली कला-शिक्षाका अनुकरण करते हुए हमारे यहाँ भी प्रादेशिक कला-विद्यालयोंमें कलाकी शिक्षा दी जाती थी। इसके स्थानपर भारतीय परम्पराके अनुसार शिक्षा देनेके लिए मैं प्रयत्नशील हुआ। मैंने यह भी देखा कि युरॅपीय कला-शिक्षा-पद्धतिका भी हमारे देशपर विशेष प्रभाव था। डेढ़ सौ वर्षके अँगरेज़ोंके राज्य-कालमें हमने दो सहस्र वर्ष पुराने अपने-को सर्वथा भुला दिया था। जब देशवासियों-को यह ज्ञान हो जायेगा कि कलाके क्षेत्रमें हमारा निजी आदर्श सक्रिय रहा और दो हज़ार वर्ष तक सारे एशिया-खण्डमें उस कलाका विस्तार रहा, तभी देशकी कलाके प्रति वे सच्चे श्रद्धावान बनेंगे। युरॅपकी कलाने हमारे देशकी कलापर अपनी छाप डाली, पर इस देशकी कलाके आदर्शको ग्रहण करनेमें वह असमर्थ रही है। इस देश-की कला और साहित्यकी नींव रही है—धर्म और दर्शन। वैज्ञानिकोंके मनमें यह आदर्श जम नहीं पाता। भारतकी कला मानव-जीवन और धर्मके साथ ओतप्रोत रही है, केवल ड्राइंग रूम सजानेकी वस्तु ही नहीं रही है।"

देशी रचना-प्रक्रियाको प्रोत्साहन देनेके साथ-साथ उन्होंने विदेशी कलाकी अच्छाइ को भी आत्मसात् किया। काउण्ट ओकाकु की प्रेरणासे जापानकी राष्ट्रीय चेतना पनपी चित्रकलाको हृदयंगम कर वह अनुभवोंसे इन्होंने पर्याप्त लाभ उठा शनैः-शनैः इनकी दृष्टिमें इतनी व्यापक आ गयी कि बहुविध जीवन-तत्त्वों, विश्वास भावनाओं और आदर्शोंको इन्होंने कल माध्यमसे अभिव्यंजित किया। काँसे प पकी मिट्टीपर इन्होंने मूर्त्तियाँ गढ़ीं, जल एवं तैल-चित्रोंका निर्माण किया तथा रेखे दफ़्ती और हाथके बने काग़जको भी उपयो में लाये। हाल्दारकी कितनी ही उत्त कलाकृतियाँ आज व्यक्तिगत और सार्वजनि संग्रहालयोंमें सुरक्षित हैं। इलाहा म्युनिसिपल म्यूज़ियमके 'हाल्दारभवन' उनके प्रतिनिधि चित्र तो संगृहीत हैं इसके अलावा बोस्टन म्यूज़ियम, विक्टोरि एण्ड एलबर्ट म्यूज़ियम—लन्दन, इण्डि म्यूज़ियम—कलकत्ता, श्रीचित्रालयम्-त्रिवे और रामास्वामी मुदालियर संग्रहालयमें उनकी महत्त्वपूर्ण कृतियाँ रखी गयी हैं।

असित हाल्दारने भारतीय क विशाल सेतुके एक और स्तम्भको सम किया था जिसके सुदृढ़ आधारपर अडिग रूपसे स्थित है। उन्होंने अ कलाकारोंके पदचिह्नोंका अनुसरण करके उतने ही श्रम और साधनासे अवनीन्द्र ठाकुर और नन्दलाल वसुके साथ प्रारम्भि कलाकी नींवको परिपक्व और सबल बन योगदान दिया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

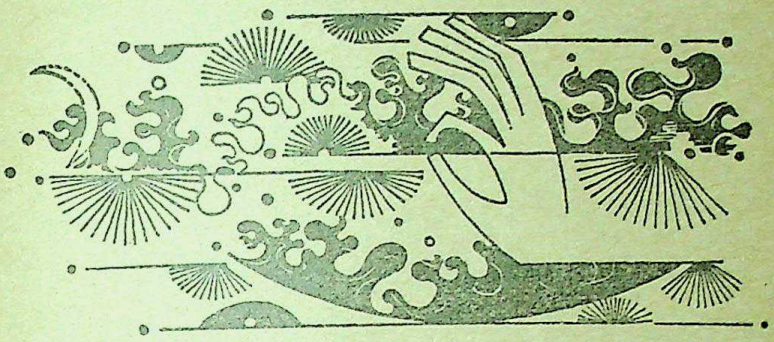

अख्तर मुहीउद्दीन

दाँताकिलकिल

ब्रीस्तू चमारने आव देखा न ताव, झट खड़े होकर जूता हाथमें लिया और अश्मीके सिरपर दो-चार जड़ दिये। इतना ही नहीं, चुटिया पकड़कर उसे सारे कमरेमें घसीट भी लिया। यह तो खुदाकी मेहर हुई कि चूल्हेकी लपटोंसे अश्मीके कपड़ोंको आग नहीं लगी, अन्यथा वह सिरसे पैर तक आगसे झुलस गयी होती। चूल्हेपर पायोंसे* भरी हँडिया पक चुकी थी और खूब-खूब उबल रही थी।

अश्मीके सहसा चीख निकल गयी, "अरे, कहीं कोई है! मुझे बचाओ! यह मुझे जानसे ही मारे डाल रहा है। इसका सर्वनाश हो जाय!"

"सर्वनाश हो उन सबका, जो तेरे हैं और जहाँ हैं;" ब्रीस्तू चमार दायें-बायें थूकते हुए बोला, "तूने मुझे कोई मुरदा समझा है क्या? तूने…!"

"उन्हें क्यों कोस रहा है?" अश्मी पहलेसे भी ऊँचे स्वरमें चीखने लगी, "वे क्या तेरा चूल्हा फोड़ने आते हैं।"

---

* भेड़-बकरीकी टाँगें। लोग इनको उबालकर शोरबा बनाते हैं। मांसकी अपेक्षा सस्ते दामों मिलती हैं इसलिए निम्न वर्गमें इसका प्रयोग अधिक किया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चूल्हेका नाम सुनते ही ब्रीस्तूको पायों-भरी हँडिया याद आ गयी और उसका मन डाँवाडोल हो गया। सोचने लगा, 'देखो तो कितने दिनों बाद आज शोरबा पीने-खानेको मिला था सो वह भी इस डायनने राहतसे पचने न दिया।' तब वह झुँझलाकर अश्मी-पर और भी बरसा – "तू देखना, सवेरा होते ही जो तुम्हें तलाक़ न दिया तो अपने बापका न हूँगा।"

"जा-जा, मेरी जूतीके सदक़े!" अश्मी भवें तरेरकर और हाथ हिला-हिलाकर बोली, "मैं लोगोंकी पायगिरी करके अपना पेट पालूंगी। मैं कोई लूली-लँगड़ी थोड़ी हूँ?"

यह कोलाहल सुनकर मुहल्लेका मुहल्ला वहाँ उमड़ आया। इनमें सलाम डूम, गुल बदमाश, नूरकमाल और अन्य मुहल्लोंके बच्चे-बूढ़े सभी शामिल थे। खोरशी छाती पीटती हुई आयी और कहने लगी, "अरे ब्रीस्तू! तुझे क्या हो गया! देखो तो, बेचारीकी चुटियासे खूनकी धार कैसे फूट रही है। अबे, तनिक दया भी तुझे नहीं आयी!"

अश्मीका साहस बढ़ गया और वह बोली, "इसका तो दिमाग़ ही सातवें आसमान-पर चढ़ गया है। भला पच्चीस रुपल्ले भी कोई कमाई है क्या? समझता है फँस गयी है यह बेबस नार। मगर भोर होने दे, अपने भाइयोंसे दिमाग़ इसका ठिकाने न लगवाया तो कहना। सात भाइयोंकी बहन हूँ सात भाइयोंकी....!"

"हूँ...फ़र्र...।" ब्रीस्तूके मनमें अश्मीकी यह घुड़की न समायी और वह मुँह बना-क़ कर और उँगलियाँ नचा-नचाकर उसे चि लगा।

"अरे भई! आख़िर बात क्या है नूरकमाल बड़ी अकलमन्दीसे पूछताछ क लगा, "भला हमें भी कुछ कहोगे या ल ही जाओगे? अरी अश्मी, तू ही त चुप रह।"

"मैं....मैं चुप रहूँ! मैं तो इसको दुनि जहानमें ज़लील करके छोड़ूँगी।"

"अरी, किसको...!" ब्रीस्तू चमार ग़ुस्सा हुआ और उसे पीटनेके लिए जूता हाथमें उठाने लगा। इसपर नूरक और गुल बदमाशने बीच-बचाव करके क्रोध ठण्डा किया।

ब्रीस्तू हाँफ रहा था। उसका चे केसरकी तरह पीला पड़ गया। रोम-से पसीना फूट पड़ा। उसके हाथ लगे। क्रोधातिरेकसे वह भीतर-ही-कुढ़ रहा था। दीया अगर ऊपरी आ न होता तो वह भी सम्भवतः पैरोंके नीचे गया होता। हुक़्क़ेकी नय (नली) चिलम टूटकर चकनाचूर हो गयी। छोटे-छोटे बच्चोंने तूफ़ानका शोर मचा था। कोई किसीकी बात तक सुन नहीं था। सुननेमें अगर कोई शब्द आते तो वे थे ब्रीस्तूके मुखसे गालियाँ और के मुखसे अपशब्दोंकी बौछार!

आख़िर ब्रीस्तू नूरकमालसे सम्बो हुआ, "भई, तुम ही मेरे मुँहपर थू और कह दो कि अबे नामुसलमान,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहता है झूठ बकता है !"

"अरे भई, कुछ कहोगे भी या नहीं ?" गुल बदमाश मूँछोंको ताव देते हुए कहने लगा। वह सम्भवतः खड़े-खड़े ही आलेपर-के दीयेकी चिकनाहट उँगलियोंपर मलता और मूँछोंको ताव देता रहा। हाँ, शायद वह यही कुछ कर रहा था, नहीं तो वह दीये-के पास ही खड़ा क्यों रहता। जैसे और सब लोग बैठे थे, वह भी बैठा होता।

"अरे, क्या कहूँ !" ब्रीस्तू हसरत-भरी हँसी हँसकर कहने लगा, "थोड़ी देर पहले जब हमने पगार ले ली, मैंने तुमसे नहीं कहा कि सुलतान कसाईसे मैंने पाये माँगे हैं ? अभी···अभी भई····?"

"हाँ भई, हाँ, याद है !" गुल बदमाशने गवाही दी।

"अच्छा तो तेरी जानकी ख़ैर हो, रुपये मिले पच्चीस। वहींपर जमादार साहब था, उसको दो रुपये दे दिये। सोचा था, कमेटीके पिछवाड़ेसे निकल जाऊँ और पुलिस लाइनके अहातेसे होते-होते तहसीलके पीछेसे घर पहुँच जाऊँ। वहाँपर गफ़ार बानीके दस रुपये चुकाने थे सौदा-सलफ़के ! महीना-भर उधार जो लेते रहे···!"

"अरे यार, सच पूछो तो", नूरकमाल बोला, "मैंने सोचा था, इस महीने मैं भी उसे कुछ न दूँ और पिछवाड़ेसे ही भाग आऊँ। देख लेते, महीना भर फिर क्या करते····।"

"हाँ···तो यह कही ना बात ! खुदाकी तुमपर मेहर हो।"

"लेकिन यार, वह सूअर तो कमेटीके अहातेमें ही मौजूद था। ज्यों ही मैंने पगार ली, उसने पीछेसे हाँक लगायी, "कमाल, अरे ओ नूरकमाल ! ला मेरा हिसाब चुकता कर दे।"

अश्मीका साहस बढ़ गया और वह बोली, "इसका तो दिमाग़ ही सातवें आसमानपर चढ़ गया है। भला पच्चीस रुपल्ले भी कोई कमाई है क्या ? समझता है फँस गयी है यह बेबस नार ! मगर भोर होने दे, अपने भाइयोंसे दिमाग़ इसका ठिकाने न लगवाया तो कहना। सात भाइयोंकी बहन हूँ सात भाइयोंकी···!"

"ख़ुदा तुम्हारा भला करे !" ब्रीस्तू चमारकी एक-एक बात सत्य सिद्ध हो रही थी और वह ख़ुश हो रहा था।

"अच्छा तो अब मैं अपनी आँखें फोड़ता जो उससे मुकर जाता। मैंने कहा, ले लो जी।"

"हाँ तो अल्लाह मेहर करे तुमपर।" ब्रीस्तूने उसकी बात काटते हुए कहा, "ख़ुदा रसूलकी क़सम, ऐसे ही मुझे भी उसने धर लिया। मैंने रुपये दस निकाले और उसकी हथेलीपर थमा दिये। भई, सच पूछो तो महीना-भर उसीसे माँगते रहना है। उस बेचारेने भी कौन-सी चोरी की !"

सबने हामी भरी; पर अश्मीका दिल बुरी तरह जल रहा था। उसकी चलती तो वह उस समय ब्रीस्तूका कलेजा बाहर निकाल लेती और उसको तल-भुन लेती। उसका सिर दुख रहा था। फिरन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(चोग़ा-सा कश्मीरी पहरावा) की आस्तीन सिरहाने रखकर वह लेटी रही। वह बिलख-बिलखकर रो रही थी। उसकी आँखोंसे सावनकी झड़ी-सी लग गयी थी।

"हाँ तो यह हुए दस।" ब्रीस्तू फिर ऊँचे-ऊँचे बोलने लगा, "सात रुपये नूर गल्लादार-के पिछले महीनेके देने थे।"

"अरे, मुझीसे क्या कहता है! पर भई, वह आदमी नेक है। मैंने कहा, 'हाजी साहब, इस महीने मुझे पैसोंकी दरकार है।' बस, दो-चार गालियाँ सुनायीं और कह दिया, अच्छा जा, अगले महीने ज़रूर चुकाना।"

"पर यार, मेरे तो पीछे ही पड़ गया! न जाने क्या बात हुई। वैसे तो आदमी है भला! और फिर चोरी भी क्या की! सात रुपये लिये हुए भी तो दो महीने बीत गये।"

अचानक आलेपर से दीया गिर पड़ा और कमरेमें अन्धकार छा गया। कुछ लोग उठ खड़े हुए और कुछ नीचे बैठ गये। सब लोग अश्मीसे पूछने लगे, "अरे, दियासलाईकी डिबिया कहाँ है!" वह बोली न चाली, बस रोती रही। आखिर खोरशी उठी और उसने काँगड़ी (सिगड़ी) पर दो-चार कोयले फूँककर दीया जला दिया।

"अरे, गुल बदमाश कहाँ गया?" अन्ना-यास नबिर शेखके बेटे रसूलके मुखसे ये शब्द निकल गये; परन्तु इसपर किसीका ध्यान नहीं गया। और ब्रीस्तू फिर अपनी बात कहने लगा, 'ये हो गये सत्रह! ना-ना-उन्नीस, दो जमादारके दस गफ़ार बानीके और सात किसके···।"

"नूर गल्लादारके!" रसूलने य दिलायी।

"सदक़े जाऊँ ख़ुदाके।" ब्रीस्तू बोल "तो हो गये ना उन्नीस। अच्छा तो ये उन्नी (रुपये) ऊपरसे ही चुक गये। अब बताइ मैंने अगर खाया तो क्या! बस, इसक लड़कीके लिए मैं एक जोड़ा फिरन नहीं आया।"

"हमारी बारी जब आयी तभी तु टोटा पड़ गया।" लेटे-ही-लेटे अश्मी बो उठी, "तुझे तो जूआ खेलनेको पैसे चाहिए जा, साबिर टुण्डा आया होगा···!"

"अरे भई बताओ, लोगोंका नाम लेने इसे क्या वास्ता!" ब्रीस्तू क्रुद्ध होकर कहने लगा, "इससे कह दो, जबानको लगाम लगाये मैं सबेरे ही इसका फ़ैसला कर लूँगा।"

"अरे, बाक़ी छह रुपये कहाँ गये?" नूरकमाल पूछ बैठा। इतनेमें बाहरसे सुल तान डूम हुक्का गुड़गुड़ाते हुए आया।

"ख़ुदा तुम्हारी उमर बढ़ाये!" नूर कमालके मुखसे स्वतः यह आशीर्वचन निकला। सुलतान डूमने हुक़्क़ा ब्रीस्तूके सामने रख और कहने लगा, "अरे, ले तम्बाकू पी ले आज मैं यह (तम्बाकू) अमीराकदलसे लाया हूँ, उसी जबार तमाकूसे यार—बाखुदा उसके तम्बाकूका कहीं जोड़ नहीं!"

ब्रीस्तूने हुक़्क़ा थामकर एक कश लग लिया और बोलता गया, "रह गये पाँच तीन इसीने थोड़ी देर पहले खोरशीको दे दिये। उससे उधार लिये थे।"

"हाँ-हाँ!" खोरशी वहीं पास बैठ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थी। उसने हामी भरी, "सच है। मैं कैसे ना करूँ, आख़िर मरना है। थोड़ी देर पहले ही मुझे तीन रुपये दे आयी।"

"समझा भई!" ब्रीस्तू खोरशीके हामी भरनेसे प्रसन्न हुआ और कहने लगा, "बाक़ी बचे थे दो रुपये। उनमें-से एक रुपयेके पाये लाया था···।" यह कहते ही उसने चूल्हेकी ओर देखा और उसके मुँहसे हठात् चीख़ निकल गयी, "अरे, हँडिया कहाँ गयी?"

अश्मी चीख़ सुनकर झट उठ खड़ी हुई। लगी चूल्हेके आगे-पीछे ढूँढ़ने। आले देखे, देहरी देखी। घरका कोना-कोना छान मारा, जैसे कोई सूई खो गयी थी। सब मुहल्लेवाले लज्जित हुए। कई तो इसलिए हक्के-बक्के-से रह गये कि कहीं उनपर ही सन्देह न किया जाये!

ब्रीस्तू चमार इसी सोचमें डूब गया कि कौन अदृष्ट चूल्हेपर-से हँडिया उठाकर ले गया। वह सब तक़रार भूल गया और अश्मीसे पूछने लगा, "अरी! चूल्हेपर ही तो थी ना?"

अश्मी ढूँढ़-खोजकर थक-हार गयी थी, "देखी नहीं, वहीं तो थी। अरे, यह कौन खड़े-खड़े ही झड़ गया, जो शोरबेकी भरी हँड़िया ले भागा। हाय, उसका सत्यानाश हो जाय!"

नूरकमाल भी सोचमें पड़ गया कि यह ठगी किसने की। भला ऐसी कुचेष्टा कौन करेगा? तभी वह चीख पड़ा, "अरे, ज़रा इस गुल बदमाशको तो ढूँढ़ निकालो।"

नबिर शेखका रसूल बोला, "मेरा तो तभी माथा ठनका था····।"

उनका इनना ही कहना था कि सब गुल बदमाशके घर दौड़े और बाहर होहल्ला मचाने लगे। गुल बदमाशकी माँ खिककीसे झाँकते हुए क़समपर क़सम खाने लगी कि हँड़िया गुलने नहीं चुरायी। परन्तु अश्मी भला कैसे विश्वास करती! उसने भरे चौकमें अपशब्दोंका तूमार बाँधा, "अरी जो तू हमारी पायों-भरी हँड़िया खाये तो समझना, अपने अकेले पुत्रको ही खाया!"

गुल बदमाश भीतर चुप साधे बैठा रहा और ब्रीस्तू चमार बाहरसे चीख़ते, अनापसनाप गालियाँ देते-देते फेन उगलने लगा। उसको रह-रहकर शोरबेकी तरी और मज्जाका स्वाद याद आ रहा था। अन्तमें जब वह थक-हार गया तो उसने अश्मीकी बाँह थाम ली और उसे अपने घरकी ओर ले जाने लगा—

"चल चलें! खाने दें इन्हींको। हमपर तो उसकी फिर मेहर होगी; पर इनका ही दीन-ईमान नहीं रहा।"

—देर बाद जब सब लोग अपने-अपने घरोंमें सोये पड़े थे, ब्रीस्तू चमार अश्मीके सिरपर गरम-गरम हल्दीका सेक दे रहा था और कह रहा था, "री! मैं कोई झूठ कह रहा था, घरमें दाँताकिलकिल नहीं होनी चाहिए। इससे दुर्गत हो जाती है।"

अश्मी बोली, "अरे, यह गुल बदमाश कैसे शोरबेकी हँडिया चट कर गया। मेरा बस चले तो बलिके बकरेके स्थानपर मैं इसीको तुमपर कुरबान करती!" ■ ■

(अनुवाद : शम्भुनाथ भट्ट 'हलीम')

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदयकी ओरसे
लेखकोंके लिए विशेष निवेदन :

- कृपया अपनी रचनाओंकी टंकित अथवा साफ़ लिखी प्रति भेजिए और उसकी प्रतिलिपि अपने पास अवश्य रख लीजिए।

- लेख, निबन्ध, कहानी और हमारे स्तम्भोंके अन्तर्गत यदि आप सामग्री भेजें तो ज्ञानोदयके अधिकसे अधिक आठ पृष्ठोंसे रचना लम्बी न हो। यदि कोई लम्बी रचना भेजना ही चाहें तो सम्पादकसे पहले पूछ लें।

- हमारा प्रयत्न यही रहेगा कि अधिकसे अधिक एक मासके अन्दर ही निर्णय-की सूचना आप तक पहुँच जाये। रचना भेजनेके बाद एक मास तक आपको कोई सूचना न मिले तो ही हमें लिखिए। स्वीकृत रचनाओंकी सूचना पाते ही कृपया यह अवश्य लिख भेजिए कि रचना अप्रकाशित-अप्रसारित है और ज्ञानोदयमें प्रकाशित होने तक अप्रकाशित-अप्रसारित ही रहेगी। टिकिट-लगा लिफ़ाफ़ा रचनाके साथ हुआ तो ही अप्रकाशनीय रचनाएँ लौटायी जा सकेंगी, अन्यथा नहीं। स्वीकृति-सूचनाकी सम्पुष्टि भेजनेके बाद तथा अस्वीकृतिकी सूचना प्राप्त होनेके बाद कृपया उस रचनाके सम्बन्धमें पत्र-व्यवहार न कीजिए। क्षमा करें, उन रचनाओंको लौटाना हमारे लिए असुविधाजनक होगा जिनके लिए वापसी-टिकट आप निर्णय-की सूचना पानेके बाद भेजते हैं।

- लेखकोंको, उनकी रचना जिस अंकमें प्रकाशित होगी, वह अंक अवश्य भेज दिया जायेगा, साथ ही दो-दो ऑफ़-प्रिण्ट्स भी।

- हमेशा पारिश्रमिक यथासम्भव अग्रिम और रचना प्रकाशित होनेके एक सप्ताह बाद भेज दिया जाता है।

- सारे सम्पादकीय पत्रव्यवहार केवल इस पतेपर कीजिए :

सम्पादक : ज्ञानोदय; ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता–२७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

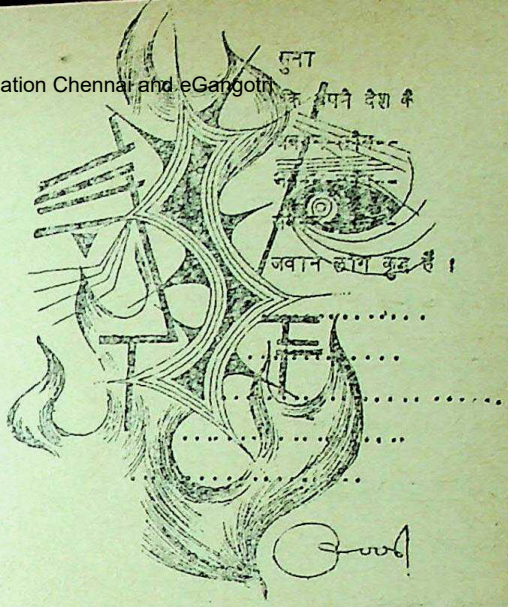

बच्चन

वृ
क्रु — द्ध

सुना
कि अपने देश के
जवान लोग क्रुद्ध हैं;
सुना
कि देश की जो है
परम्परा, परिस्थिति,
वे उससे
असन्तुष्ट और रुष्ट हैं,
सुना
कि बोलते हैं ऐसी बात
ख़ामख़ाह जो बुरी लगे,
औ' करते ऐसे काम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखकर जिन्हें
अवाम आँख फाड़ दे,
ठिठक रहे।
किसी जगह,
किसी तरह,
वे दब के चलने के
बहुत ख़िलाफ़ हैं;
वे खुलके रहने,
खुलके चलने
खुलके खेलने के
पैरोकार हैं।
वे कहते हैं,
पुरानी रस्म-रीतियों के
हम नहीं ग़ुलाम हैं,
जहान में
नयी फ़िज़ाएँ लाने को
बिकल हैं,
बेक़रार हैं!

क्रुद्ध
युवा क्या होंगे,
हम जो वृद्ध क्रुद्ध हैं।
परम्पराओं को
हममें वे मूर्त्त न समझें,
अपने यौवन में
हम भी इनसे झगड़े हैं।

उखड़ गये हम,
खड़ी हुईं ये,
कमबख़्तों की
कितनी पायेदार
और मज़बूत जड़े हैं।
ख़ून-पसीने से
जो कर न सके हम
बातों से कर लेंगे;
बरख़ुरदार बड़े भोले हैं।
ठोस क़दम क्या वे रक्खेंगे,
जो कि खोखले हैं, पोले हैं।
व्यंग्य सुगम है,
चुहल सरल है,
कर लें, देखें, क्या बनता है?
दम जिनमें है नहीं
नपुंसक-दल से कोई रन ठनता है?
तोड़-फोड़ आसान,
सृजन के लिए रक्त देना पड़ता है;
अपनी,
वृद्ध नसों से हम दें?
दे सकते हैं।
हम अब भी कुछ कर सकने का साहस रखें
हम सरोष, त्यक्ताश,
आज कुछ कर गुज़रेंगे।
हट जायें, हम बहुत गरम हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पन्द्रह प्रश्न

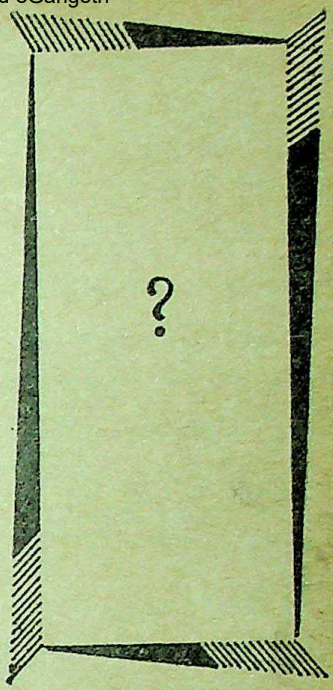

प्र०—विजयबहादुर सिंह
उ०—मन्ददुलारे वाजपेयी

नया काव्य, कमिटमेण्ट और संघर्ष

नये साहित्यकारोंके बीच उठनेवाली यह तथाकथित आम धारणा क्या सच है कि छायावादके पश्चात् आनेवाले नये साहित्य – विशेषतः नये काव्यके प्रति आपकी दृष्टि असहानुभूतिपूर्ण है ?

मैं किसी वादका समर्थक या विरोधी नहीं हूँ। काव्य-विवेचनमें मैं एकमात्र कविताको ही देखता हूँ। उसकी भावात्मक निष्पत्ति और रूपात्मक सौन्दर्य ही मेरे समीक्षणके विषय होते हैं। वादोंका लेबेल लगाना मुझे अभीष्ट नहीं क्योंकि वैसा करनेसे कविताकी अपनी मर्यादाएँ बाधित होती हैं। छायावाद अभी कलकी वस्तु है। कालिदास, जयदेव, सूर और तुलसी तो बहुत पुराने हैं। इन महान् कवियोंके प्रति मेरी उतनी ही आस्था है जितनी किसी छायावादी कविके प्रति। प्रसाद और निराला मेरे लिए छायावादी कविका बाना पहनकर नहीं आते, वे प्रसाद और निरालाके रूपमें आते हैं। इस दृष्टिसे देखनेपर मेरे साहित्यिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचार और समीक्षा-कार्यपर अधिक न्याय किया जा सकता है। वाद कोई भी हो, कविताकी संवेदनाएँ कैसी हैं, किस कोटिकी हैं, उसका बाह्य और अन्तरंग सौन्दर्य हमारी चेतना और सौन्दर्य-दृष्टिको किस रूपमें और किस कारण प्रभावित करती है, मेरे लिए इतना ही ज्ञातव्य है। इतना कहनेके पश्चात् आप यह समझ सकते हैं कि प्रश्न मेरी सहानुभूति या असहानुभूतिका नहीं है, प्रश्न है कविताकी उन विशेषताओंका जो सहानुभूति या असहानुभूतिकी सृष्टि करती हैं।

क्या वस्तुतः आजका नया रचनाकार अपने आस-पास वैसी ही कुण्ठा, घुटन-भरी स्थितियोंका अनुभव करता है जिनका चित्रण उसके काव्यमें मिलता है ?

यह प्रश्न मूलतः कवि व्यक्तित्वका है। समान-सी परिस्थितियोंमें कोई व्यक्ति अपराजित रह सकता है और कोई अन्य व्यक्ति पराजित हो जाता है। पराजयके कारण ही कुण्ठाओंका आविर्भाव होता है और काव्यमें अन्तर्मुखता आती है। कॉडवेलने अँगरेज़ी साहित्यमें क्रमशः अन्तर्मुखी होते हुए कवियोंकी अनास्था-दृष्टिका जो विवरण दिया है मैं उससे बहुत-कुछ सहमत हूँ। कॉडवेलके विचारोंसे मेरा अन्तर यह है कि मैं यह माननेको बाध्य नहीं हूँ कि विशेष सामाजिक परिस्थितियोंमें कवि किसी विशेष भाव-प्रणालीको अपनानेको विवश होता है। मेरा अपना विचार यह है कि कवि परिस्थितियोंसे ऊपर उठ सकता है और देश और जातिके लिए आस्थाका सन्देश दे सकता है।

आधुनिकता और नये युगबोधको लेकर रचे जानेवाले तथाकथित नये सहित्य प्रति आपका क्या विचार है ?

आधुनिकता और नये युगबोधको मैं महत्व देता हूँ क्योंकि यह प्रगति और विकासका परिचायक तत्त्व है। सभी आधुनिकता सापेक्षिक होती हैं। आत्यन्तिक आधुनिकता नामकी कोई वस्तु नहीं होती। आधुनिकता और युगबोधके नामपर किन्हीं ह्रासोन्मुख और पराजयशील भावनाओंका शिकार होना न तो अभीष्ट है न अनिवार्य। आज कवि जिस मात्रामें सामाजिक जीवनसंघर्षसे दूर होकर आत्मलीन हो गये हैं और मानवीय जीवनकी भूमिकाको छोड़कर नितान्त वैयक्तिक भूमिपर पहुँच गये हैं उन्हें मैं आधुनिकता और युगबोधसे संपृक्त मानता हूँ।

नये काव्य विकासके प्रति आपकी क्या मान्यता है ? क्या निरालाके पश्चात् हिन्दी कविता कोई महत्त्वपूर्ण देय दे सकी है ?

बड़े कवि प्रत्येक दशकमें उत्पन्न नहीं होते, कभी-कभी तो अर्धशताब्दी या पूरी शताब्दीमें किसी महान् कविका आविर्भाव होता है। प्रसाद और निराला ऐसे ही कवि हैं। प्रसादमें सांस्कृतिक समाहार और निरालामें विद्रोहकी वाणी मुखरित है। आधुनिक नयी कवितामें इस प्रकारका समाहार और विद्रोह किसी कविमें नहीं पाया जाता। राष्ट्रीय चेतनाका प्रतिफलन कोई नया कवि नहीं कर सका है। जिस चेतनाका प्रतिफल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो रहा है वह खण्ड चेतना है जिसे मार्क्सवादी पूँजीवादी युगकी एक विशेष अवसरकी चेतना कहते हैं। खण्डचेतनासम्पन्न कोई भी कवि महान् नहीं हो सकता। नयी कविताकी यही विवशता है। यों शैली प्रसाधनके स्तरपर तथा भाव-स्थितियोंके प्रौढ़तर विकासके स्तरपर मैं अज्ञेयजीको विशिष्ट कवि मानता हूँ।

आपकी प्रारम्भिक समीक्षाओंमें सामाजिक दृष्टिकोणकी सघनता है जब कि परवर्ती समीक्षाओंमें लगता है आपका झुकाव कला-मूल्योंकी ओर कुछ अधिक हो गया है। अब भी क्या [illegible] साहित्य और सामाजिक जीवनके ब[illegible] वही सम्बन्ध स्वीकार करते हैं जिसके अभावमें आपने छायावादका समर्थन करते हुए भी महादेवी वर्माकी कविताको उसकी मूल धारासे पृथक् माना है ?

साहित्यकी सामाजिक सापेक्षताके सम्बन्धमें मेरे विचार क्षीण नहीं हुए बल्कि अधिक मज़बूत हुए हैं। इधर मैं साहित्यकी राष्ट्रीयताकी जो चर्चा कर रहा हूँ वह इस बातका प्रमाण है। यों मैं सामाजिक जीवन सापेक्ष ही नहीं राष्ट्रीय और जातीय भूमिकाके साहित्यका भी आकांक्षी हूँ। हालके निबन्धोंमें जहाँ कहीं मैंने साहित्यपर बढ़ते हुए विदेशी प्रभावोंका उल्लेख किया है वहाँ भी मेरा दृष्टिकोण देशकी मिट्टीसे सुवासित साहित्यके समर्थनका है। केवल कलापक्षपर मैं कभी आग्रहान्वित नहीं रहा। यदि वैसा होता तो मैं नयी कविताको शायद अधिक सराहता

शेष लेखक जो अपने अनुभवों, अपने वैयक्तिक और सामाजिक संस्कारों, अपनी स्वतन्त्र विचार-दृष्टिको प्रमुखता देते हैं वे कमिटेड नहीं हैं। नयी कविताके प्रति कमिटमेण्टका प्रश्न ही नहीं उपस्थित होता क्योंकि यह कविता आरम्भसे ही नॉन-कमिटेड है। जो नये कवि क्रमशः सामाजिक जीवन-भूमिकापर आ रहे हैं वे अवश्य इस प्रश्नको उठा सकते हैं।

क्योंकि नयी कविता एक कला और शैलीका आन्दोलन बनकर ही उपस्थित हुई थी। प्रयोगवाद शब्द भी तो शैली वाचक ही है।

आपकी समीक्षाके लिए प्रयुक्त अनेक विशेषणों – छायावादी, स्वच्छन्दतावादी, सौष्ठववादी, प्रगतिशील स्वच्छन्दतावादी, रसवादी तथा अध्यात्मवादी – में-से आप किसे अधिक उपयुक्त मानते हैं ?

जिन अनेक शब्दोंका प्रयोग विशेषणके रूपमें मेरी समीक्षाको लेकर किया गया है उनकी ज़िम्मेदारी मुझपर नहीं है। हिन्दीके समीक्षकोंने समय-समयपर मुझे छायावादी, स्वच्छन्दतावादी, सौष्ठववादी, रसवादी, प्रगतिशील स्वच्छन्दतावादी, सृजनशील और न जाने क्या-क्या विशेषण दिये हैं। इन विशेषणोंकी अधिकतासे मुझे केवल एक तथ्यका आभास होता है और वह मुझे प्रिय भी है। वह तथ्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह है कि मेरी समीक्षामें किसी एक वादका अधिकार नहीं। यदि अधिकार होता तो इतने नाम कहाँसे आते कोई भी समीक्षक अपनेको संकीर्ण सीमामें रखना पसन्द नहीं करेगा। इसलिए यदि इन विशेषणोंके द्वारा सीमाका विस्तार हो रहा है, तो मुझे क्या आपत्ति हो सकती है! यदि विशेषणोंको निकालकर केवल साहित्य समीक्षक कहा जाये तो मुझे सर्वाधिक प्रसन्नता होगी।

आपकी समीक्षामें यह आध्यात्मिक साँचा क्या है?

साहित्यकी रचना और संवेदना एक मानसिक पदार्थ है, जो जितनी गम्भीर होगी उतनी ही आध्यात्मिक कही जायेगी। इस दृष्टिसे आप मुझे गम्भीर संवेदनाओंका प्रेमी कह सकते हैं। यदि अध्यात्मसे आशय कुछ और हो और आध्यात्मिक साँचेसे मुझे किसी मतवादकी सीमामें रखनेका प्रयत्न किया जा रहा हो तो मैं इसे स्वीकार नहीं कर सकता। उत्कृष्ट काव्यके स्रष्टा मानव चेतनाके सम्बर्द्धक होते हैं। वे किसी मतवादको चाहे वह भौतिकवादी हो या अध्यात्मवादी, एकान्ततः पकड़ नहीं सकते। मैंने भी किसी अध्यात्मवादको एकान्ततः नहीं पकड़ा है।

लेखकके 'कमिटमेण्ट'के प्रश्नपर आपका क्या विचार है? क्या कोई साहित्यकार पूर्णतः नॉन-कमिटेड रह सकता है? यदि नहीं तो युग-जीवनके सन्दर्भमें आजका साहित्यकार किसके प्रति कमिटेड हो?

'कमिटमेण्ट' शब्द प्रगतिवादी साहित्यके सन्दर्भमें प्रयुक्त हुआ था। जो लेखक अपनेको कम्यूनिस्ट पार्टीके सिद्धान्तोंमें बाँध चुके वे ही कमिटेड कहलाते हैं। शेष लेखक अपने अनुभवों, अपने वैयक्तिक और सामाजिक संस्कारों, अपनी स्वतन्त्र विचार-दृष्टि को प्रमुखता देते हैं वे कमिटेड नहीं हैं। कविताके प्रति कमिटमेण्टका प्रश्न ही उपस्थित होता क्योंकि यह कविता आरम्भ ही नॉन-कमिटेड है। जो नये कवि सामाजिक जीवन-भूमिकापर आ रहे वे अवश्य इस प्रश्नको उठा सकते यदि वे कम्यूनिस्ट विचारधारासे अपने कमिटेड नहीं मानते तो उनके सा प्रजातन्त्र, समाजवाद, राष्ट्रीयता मानववादके द्वार खुले हैं। वे इनमें किसी या सभी द्वारोंसे साहित्यके रंगमंच आ सकते हैं।

नये साहित्यकारों-द्वारा उठाया गया व्यक्ति स्वातन्त्र्यका प्रश्न कहाँतक औचित्य पूर्ण है? आजके भारतीय साहित्यकार यह माँग काव्य-कला तथा सामाजिक जीवन के लिए कहाँतक हितकर है?

नये कवियोंने स्वातन्त्र्यकी चर्चा एक वि प्रसंगमें की थी। भारतवर्षके चारों ओ तानाशाही शासन-पद्धतियाँ क़ायम हो हैं। ऐसी शासन-पद्धतिमें कलाकारके तन्त्र्यका प्रश्न विशेष अर्थ रखने लगता वहाँ उसका अर्थ होता है राजनीतिक बन्धोंसे मुक्त होनेका प्रयत्न। इस प्रका प्रयत्न सर्वथा उचित है। मैं इसका सर्व समर्थन करता हूँ। भारतवर्षमें वि नियन्त्रणकी वह स्थिति नहीं आयी है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखकोंके सामने अनेकानेक कठिनाइयाँ उपस्थित हैं। इन कठिनाइयोंके विरुद्ध स्वातन्त्र्यकी माँग करना सर्वथा उचित है, यद्यपि इसकी पूर्ति निकट भविष्यमें हो सकेगी यह सन्दिग्ध है। लेखकके वैयक्तिक स्वातन्त्र्यका प्रश्न उपर्युक्त दोनों स्थितियोंसे भिन्न कोई सार्थकता नहीं रखता। भारतीय साहित्यकी परम्परा इतनी समृद्ध है और कवियोंकी ज़िम्मेदारियाँ इतनी स्पष्ट हैं कि उन्हें लेखन सम्बन्धी वैयक्तिक स्वातन्त्र्यका दूसरा कोई अर्थ अभीष्ट भी नहीं हो सकता। आधुनिक कविताकी व्यक्तिवादी प्रवृत्तियाँ और कुण्ठाएं लेखन-स्वातन्त्र्यकी पर्याय नहीं हैं क्योंकि स्वातन्त्र्य शब्द बन्धन-मुक्तिका द्योतक है जब कि नयी कविता अपने लिए नये बन्धन—वैचारिक और मानसिक—बनाती रही है। जबतक कुण्ठा और अनास्थाका कवियोंपर अधिकार है तबतक स्वातन्त्र्यका प्रश्न ही कहाँ है? यदि कवि सच्चे अर्थोंमें स्वातन्त्र्य-प्रेमी हैं तो अधिकाधिक सामाजिकता ही उनकी सहायक हो सकती है। हम ऊपर कह चुके हैं कि आत्मशक्तिकी प्रखरता कवि व्यक्तित्वका अंग होनी चाहिए। कुण्ठाएं तो पराजयकी सूचिका है।

पूर्व और पश्चिममें आज कहाँ पार्थक्य किया जा सकता है? जीवन और साहित्य दोनोंके आधारपर यह भेद कैसे समझा जा सकता है?

पूर्वी और पश्चिमी देश विकासकी भिन्न स्थितियोंपर हैं। पश्चिममें राष्ट्रीय स्वतन्त्रता शताब्दियोंसे क़ायम है जब कि पूर्वके अधिकांश देश अभी-अभी स्वतन्त्र हो रहे हैं। स्वतन्त्रताके साथ समृद्धिका प्रश्न भी जुड़ा हुआ है। पश्चिमकी मूलभूत समस्याएँ वे नहीं हैं जो पूर्वकी हैं और ख़ासकर हिन्दुस्तानकी। आर्थिक और भौतिक स्तरपर वहाँके प्रतिमान यहाँसे ऊँचे हैं और इस कारण पश्चिममें जीवन-निर्वाहकी वे समस्याएँ नहीं हैं जो हमारे देशमें हैं। साहित्य और कलाकी भूमिपर भी इन स्थितियोंका प्रतिफलन होना स्वाभाविक है। जो लोग वास्तविक स्थितियोंसे प्रेरणा न लेकर सीधे पश्चिमी साहित्यकी ओर आस्फालन करते हैं उन्हें स्वाभाविक साहित्यकार नहीं जा सकता। पूर्वी देशोंकी संस्कृति और इतिहास अधिक पुराना है। फलतः हमारा सांस्कृतिक और ऐतिहासिक बोध अधिक प्रशस्त है। हम चाहें तो इसका उपयोग नये साहित्यके सृजनमें कर सकते हैं। सच तो यह है कि पूर्व-पश्चिमका सारा परिवेश ही एक-दूसरेसे पृथक् है। पिछले विश्वयुद्धने पश्चिमी राष्ट्रोंको जिस विभीषिकामें डाला था और फलतः जो अस्तित्ववादी समस्याएँ पैदा की थीं, सौभाग्यवश हमारा देश उस विभीषिकासे बचा रहा है। परन्तु हमारा नवलेखन ऐसा हो रहा है जैसे हमने युरॅपीय विभीषिकाओंको स्वयं झेला है। यह एक आरोपित विभीषिका है। कला-शैली सदैव वस्तुसापेक्ष्य होती है। जब हमारी वस्तु, हमारी समस्याएँ भिन्न हैं तब कला-शैलीमें पश्चिमकी अनुकृति हमारे अनुरूप कैसे होगी? नवीनता आकांक्षित वस्तु है परन्तु हम पूर्वी नवीनताके प्रयासी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं न कि पश्चिमी अनुकृतिके।

साहित्यमें गतिरोधका नारा क्यों उठाया जा रहा है? क्या वस्तुतः हमारे साहित्यमें गतिरुद्धता आ गयी है?

किसी भी प्रगतिशील राष्ट्रमें साहित्यिक गतिरोधकी कल्पना करना एक विडम्बना है। हाँ, जिस प्रकार मनुष्य-कृत दुर्भिक्ष उत्पन्न होते हैं उसी प्रकार कभी-कभी कवि-कृत गतिरोध भी आ जाता है। हिन्दी-साहित्यमें अनेक विधाओंके माध्यमसे प्रगतिशील साहित्यकी सृष्टि हो रही है, केवल काव्यमें कुछ समय पूर्व एक ऐसा खेमा बना था जो सीधे पश्चिमसे अपनी प्रेरणाएँ लेता था। वह खेमा आज टूट रहा है और कवि राष्ट्रीय इतिहास और परिस्थितियोंसे प्रेरणा ले रहे हैं। फिर यह खेमा किसी प्रतिनिधि साहित्यधाराका स्थानापन्न भी नहीं है। हिन्दी-कविता अनेक धाराओंमें प्रवाहित हो रही है अतएव कृत्रिम गतिरोध उत्पन्न करनेवालोंको भी आत्मनिरीक्षण करना होगा।

नये साहित्य-सृजनको देखते हुए हमारे साहित्यका भविष्य कैसा है?

आपके इस प्रश्नका उत्तर पिछले अनुच्छेदमें किया गया है। भारतीय राष्ट्र गान्धी और नेहरूकी परम्परापर अग्रसर है। कठिनाइयाँ आयें परन्तु उनके अतिक्रमणका संकल्प कम शक्तिशाली नहीं है। हमारे साहित्यिकों और कलाकारोंको इन कठिनाइयों और अवरोधोंके प्रति संघर्ष करना है। यह क्षेत्र इतना प्रशस्त और उर्वर है कि आश्चर्य होता है कि हमारे कविगण उस दिशामें अपनी शक्तिका उपयोग क्यों नहीं करते करते हैं पर साहित्यके अन्य रूपोंमें हमें प्रयत्न अधिक स्पष्ट दिखाई देता है कवितामें भी है पर अपेक्षाकृत कम। हिन्दी साहित्यके भविष्यके बारेमें पूर्ण आश्वस्त हूँ।

प्रेमचन्दोत्तर कथा-साहित्यके विषयमें आप क्या सोचते हैं? क्या प्रेमचन्दके पश्चात् की महत्त्वपूर्ण कड़ी जुड़ी है?

नया कथा-साहित्य दो मुख्य वर्गोंमें रखा देखा जा सकता है। एक मध्यवर्गीय नागरिक जीवनके चित्रणका है। दूसरा समग्र राष्ट्रीय जीवनोल्लेखका है। प्रेमचन्द इसी दूसरे वर्गके लेखक थे। उनकी परम्परा को आगे बढ़ानेवाले यशपाल, नागार्जुन और रेणु-जैसे लेखक हैं। दूसरा वर्ग जो नागरिक जीवन-स्थितियोंको अंकित करता है, अधिक कलाप्रेमी है और मनोवैज्ञानिक सूक्ष्मताओं को अभिव्यक्त करता है। परन्तु व्यक्तिगत रूपसे इस मध्यवर्गीय यथार्थवादके प्रति मेरी अधिक आस्था नहीं है।

विविध प्रकारके दृष्टिकोणोंको लेकर अनेक धाराओंमें गतिशील होनेवाली नयी समीक्षा-प्रणालियोंमें आप किसे अधिक मान्यता देते हैं? क्या नया चिन्तन पश्चिम से एकबारगी आक्रान्त है?

सबसे पहले प्रगतिवादी लेखकोंने मार्क्सवादी चिन्तनका अनुसरण किया परन्तु क्रमशः वे हिन्दी साहित्यकी अपनी परम्पराको महत्त्व देने लगे हैं। आरम्भमें कोई विदेशी विचारधारा हमपर छापा मार सकती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर संयत होनेपर हम उसे अपनी परम्पराके अनुरूप बनाते हैं। विदेशी अनुकरणका यह स्वरूप कोई अपवाद नहीं। परन्तु यदि पश्चिमी विचारधारा अथवा किसी विशेष प्रकारकी काव्य-शैलीको ज्योंका त्यों अपना लिया जायेगा तो इस प्रणालीसे किसी श्रेष्ठ कविकी सृष्टि नहीं हो सकेगी। यह मेरा अपना मत है। इस प्रश्नका दूसरा पहलू भी है। हम यह सोचें कि हम विदेशोंसे कितना और क्या ले रहे हैं और उन्हें अपनी ओरसे कितना और क्या दे रहे हैं? यदि हम लेते ही लेते रहेंगे, देंगे कुछ नहीं, तो विदेशोंमें हमारे काव्य साहित्यका क्या सम्मान होगा? केवल अनुकर्ता बनकर जो ख्याति प्राप्त की जा सकती है वह प्रायः विदेशी काव्यसे अपरिचित लोगोंमें ही प्राप्त होगी। जिन्हें इस पश्चिमी काव्य-वस्तुका ज्ञान है, वे तो अनुकरणको अनुकरण और मौलिक वस्तुको मौलिक मानेंगे। पूर्व और पश्चिमके काव्यमें अनुरूपता हो सकती है, तद्रूपता नहीं। नये समीक्षक अधिकतर नवीनतम काव्य और विचारोंपर ही अधिक ध्यान दे रहे हैं। उनकी दृष्टिमें विस्तार और व्यापकता नहीं है। उनमें-से अधिकांश भारतीय समीक्षाकी अपनी प्रणालियोंसे परिचित भी नहीं हैं। कुछ व्यक्तित्व उभर रहे हैं परन्तु जबतक उनकी दृष्टिमें पूरा भारतीय साहित्य नहीं आता केवल समकालीन कविता आती है, तबतक उनकी समीक्षा भी वास्तविक अर्थोंमें सार्वजनिक नहीं बन सकती। भाषागत प्रयोगोंके सम्बन्धमें कुछ सूक्ष्म और तथ्यपूर्ण बातें कही गयी हैं। ये हिन्दी समीक्षाको आगे बढ़ाती हैं। इससे अधिक नये समीक्षकोंके सम्बन्धमें मुझे कुछ नहीं कहना है।

नये-पुरानेका संघर्ष क्या स्वाभाविक तथा परम्परागत है अथवा आजकी तथाकथित बौद्धिकताकी उपज है?

नये और पुरानेका संघर्ष कुछ तो स्वाभाविक होता है और कुछ अस्वाभाविक। प्रत्येक पीढ़ीकी अपनी समस्याएँ होती हैं, अपना परिवेश होता है। यह स्वाभाविक विकास है। परन्तु इस स्वाभाविक विकासकी गति साहित्यके मूल उद्देश्योंको विघटित करके निर्मित नहीं होती। प्रेमचन्दसे आगे बढ़नेके लिए नयी पीढ़ीको प्रेमचन्दकी जीवन-चेतनासे भी प्रौढ़तर चेतनाकी आवश्यकता है और साथ ही कलाकी भूमिकापर अधिक समुन्नत प्रयोग आवश्यक है। जब हम नवीनताके नामपर आगे बढ़ना छोड़ देते हैं और नये-नये अभिधानोंकी ओट लेकर सन्दिग्ध प्रकारकी निर्मितियोंमें लग जाते हैं तब यह अस्वाभाविक विकास बन जाता है। हमें क्रमागत परम्पराके श्रेष्ठतम अंशको आत्मसात् कर आगेका रास्ता तय करना होगा। जो साहित्यिक इस प्रकारकी मनोभावना रखते हैं वे पूर्ववर्ती साहित्यिक कार्यका आँख मूंदकर विरोध नहीं कर सकते। किसी लेखककी ईमानदारीकी पहचान इस बातसे होगी कि वह अपनी साहित्यिक परम्पराके प्रति कितना सद्भाव और सम्मान रखता है। जो लोग शून्यमें नयी इमारत खड़ी करना चाहते हैं या चाहेंगे वे शायद कुछ भी मूल्यवान नहीं दे सकेंगे। ■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

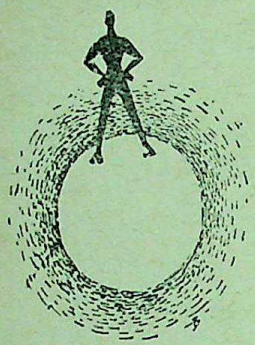

जन्म : सम्भवतः १९४०.
मृत्यु : २० दिसम्बर १९६४.

देवेन गु

नयी ताक़त

•

जूनका महीना और दिल्ली ! मतलब जब दिल्लीमें जूनका महीना आता है तो सड़कोंका कोलतार पिघलने लगता है। नहा-धोकर आदमी नये कपड़े पहने तपती सड़क-पर मुश्किलसे दस मिनिट भी नहीं चल पाता लेकिन उसे एक बहुत ज़रूरी कामसे एक दोस्तके पास 'खैबर पास मेस' जा पड़ा। लौटते समय वह कुछ देरके लि काश्मीरी गेटपर रुका। दिनके ठीक बा बजे हैं, और सड़कोंका कोलतार पिघल

यह सोचना भी मन भारी कर जाता है कि 'ज्ञानोदय' का जनवरी अंक और 'नयी ताक़त' का यह खुला पृष्ठ जब देवेनके पते पहुँचा होगा तब उसको गहरी नींदमें सोये एक सप्ताह बीत चुका होगा। 'नयी ताक़त' 'पहला प्यार' 'अजनबी समयकी गति' जैसी कहानियाँ, ५–६ महीनोंकी चर्चा, केवल २४ वर्षकी उम्र और मृत्यु ! असामयिक, अनचाही, अकाल··· देवेन गुप्तकी मृत्युके लिए सारे विशेषण छोटे हैं क्योंकि उसके लेखनकी सम्भावनाने गिनती-के कथा-चरणोंसे लम्बे वर्ष नाप डाले थे। फ़ेनीको लिखा कीट्सका ख़त याद आता है: 'फ्रेण्ड्स, वी आल शैल डाई यंग'।···फिर दिल्लीमें जूनके दिनों पिघलता कोलतार याद आता है – उन्हीं दिनों गुलमोहर भी पूरी बत्तमीज़ीसे खिलता है···। अगले पृष्ठोंकी कथाजंलि उस सम्भावनाको जो पिघले कोलतारपर खिले गुलमोहर-सी थी।

– ज्ञानोदय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

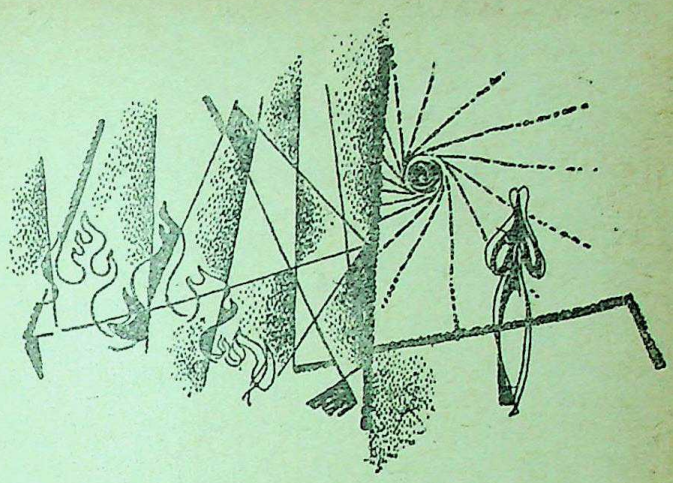

आनन्दप्रकाश जैन

संशयका युग

साहनीके मनमें यह संशय अचानक ही उठ खड़ा हुआ था या इसका कोई सूत्र पीछेसे चला आ रहा था – यह वह निश्चित नहीं कर पा रहा था। मगर यह निश्चित था कि उसके चेतन मनको इसका आभास नहीं था। उसके मानसके किसी अँधेरे कोनेमें वह साँपकी तरह कुण्डली मारे बैठा होगा और पिछले हफ़्ते, शनिवारकी सुबहके सात बजकर तेईस मिनिटपर, उसने उसकी बेख़बरीमें वार कर, विषकी थैली ताज़ ज़ख्ममें उँडेल दी थी। सिरसे लेकर पैरोंतक एक बिजली-सी कौंध गयी थी और एकबारगी ही अपनी पत्नीसे, बच्चेसे, भाईसे उसके रिश्ते बदल गये थे। जैसे एक फ्लैश हुआ हो, और एक-एकका चित्र विशेष मुद्राओंमें उसके कैमरेके भीतर अंकित हो गया हो। सिरको झटका देनेकी उसे आदत थी और वह बहुत पुरानी आदत थी। दिमाग़में उठनेवाली ऊहापोहोंसे जब वह बहुत परेशान होता था, तो इसी तरह सिरको झटका देकर वह उस अज्ञात बोझको परे फेंक देना चाहता था, किन्तु इसमें कभी सफल नहीं हुआ था। वह सफलता उसे तभी मिलती थी, जब वह समस्याको सुलझा लेता था, यानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका एक तर्कसम्मत हल निकाल लेता था।

कल ही अँगरेज़ीके प्रोफ़ेसर मिस्टर अग्रवालसे उसकी गरमागरम बहस हुई थी। सहयोगीके नाते वह अग्रवालका उतना भक्त नहीं था, जितना बुद्धिवादी होनेके नाते। प्रोफ़ेसर अग्रवालकी सिफ़ारिशसे लायब्रेरीमें आयी हालकी पुस्तकोंमें नताली सरौतकी 'संशयका युग' – 'द एज ऑव सस्पिशन' – भी थी। यह नाम उसे बड़ा अजीब लगा था। पहली ही दृष्टिमें उसे पसन्द भी नहीं आया था। निर्माण और संहारके बीच ऊँची-से ऊँची पेंगोंके साथ झूला झूलते हुए आजके संसारके लिए अनिश्चितताका हर विचार उसे संहारके महा अनलमें धक्का देता प्रतीत होता है। उसने तर्क दिया था कि संशय मनुष्यका सबसे बड़ा शत्रु है – और अगर कोई सिरफिरा कथाकार इस युगको ही संशयका युग बताने लगे, तो संसारके साथ इससे बड़ी ग़द्दारी और क्या हो सकती है?

प्रोफ़ेसर अग्रवालके साथ साहनीकी घनिष्ठताका सबसे बड़ा कारण था कि वह निर्लिप्त बहस करते थे। वह कभी गरम नहीं होते थे और हमेशा बहसको उस स्तर तक रखते थे, जिसमें दो बुद्धिवादी वाद-प्रतिवादके द्वारा किसी सुनिश्चित संवाद तक पहुँच जाना चाहते हों और फिर उस संवादको एक वाद मानकर चल पड़ते हों। यह उन दोनोंकी जमी-जमायी हॉबी थी, जो कभी-कभी उन्हें शतरंजके खेलसे भी ज़्यादा लपेट लेती थी। 'संशयका युग'के सिलसिलेमें ही प्रोफ़ेसर अग्रवालने नताली सरौतकी दूसरी पुस्तक 'ट्रौपिज़्म्स'की चर्चा की थी। 'ट्रौपि-ज़्म' ? – जीवोंपर उद्दीपनकी प्रतिक्रिया इसका युगके संशयसे क्या सम्बन्ध ?

एक लम्बी बहस इसपर चली थी, वह-सी बातें साफ़ हुई थीं, और कुछ देरको ल-था कि उनके चारों ओर चलते-फिर बोलते-चालते सभी प्राणी एक विशेष प्रका संशयकी जेलीसे लिपट गये थे। मँगानेव कक्षामें पानीका गिलास दे जानेवाले दीनही पाण्डेको सब लोग 'पानीपाण्डे' कहकर क्य बुलाते हैं ? क्या पानी पिलानेवाले स-पाण्डे होते हैं ? क्या पाण्डे लोगोंका क-सिर्फ़ पानी पिलाना होता है ? क्या इस भीतर सामन्ती युगका वह अन्धविश्व निहित नहीं है कि पानी सिर्फ़ सजा अथवा ब्राह्मणके हाथका पीना चाहिए क्या यह शब्द उस बूर्ज्वा भावनाका बो नहीं है कि छोटी जातके लोग तिरस्का पात्र हैं ? क्या पानी पिलानेवाला, बड़ी-म मूँछोंवाला वह ब्राह्मण ऐसा ही कोई वि स्कार प्रकट करनेवाला नया सम्बोधन सृ कर सकता है ? लेकिन फिर भी वह सम्बोधनको बड़े मज़ेसे, मुसकराकर स्व करता है। यह परम्पराका एक अंग गया है। लेकिन यह झूठा है, सामाजि दुरभिसन्धियोंसे पूर्ण है। इससे उस ब्राह्म का आन्तरिक व्यक्तित्व प्रकट नहीं होत इससे उस जीवपर एक मिथ्या उद्दीपन प्रतिक्रिया होती है और यह प्रतिक्रिया ऊपरी है। इसका उसके वास्तविक व्यक्ति से कोई सम्बन्ध नहीं है। सारा जगत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकारके, 'ट्रौपिज़्म्स'से भरा है, और इनके भीतर जो वास्तविक व्यक्तित्व छिपे पड़े हैं, उनकी ओर हमारी कभी दृष्टि तक नहीं जाती। हर व्यक्ति वह नहीं है, जिस रूपमें आप उसे लेते हैं। वह भिन्न है और उस भिन्नताकी विशिष्टताको केवल वही अनुभव-कर सकता है। आपके लिए रह जाता है केवल संशय। पानीपाण्डे पानीपाण्डे नहीं है। वह क्या है यह आप नहीं जानते। आप केवल उससे अपना काम चला लेते हैं और उसके व्यक्तित्वसे अपने व्यक्तित्वका यथार्थ सम्बन्ध स्थापित नहीं कर सकते···और वह क्या है, क्या नहीं है, इसी संशयमें आप हैं और आपको रहना है।

सुधा प्रोफ़ेसर साहनीकी पत्नी नहीं है। वह केवल एक परिवर्तनशील 'ट्रौपिज़्म'की प्रतिमूर्ति है। अविनाश साहनीका बेटा नहीं है। सुधाकर उसका भाई नहीं है, जो सेण्ट ज़ेवियर्समें बी० ए० के अन्तिम वर्षका छात्र है। इन सबको पत्नी, बेटा, भाई कहनेसे दुनियाके कुछ कार-व्यवहार चलते हैं और इनके व्यक्तित्वोंसे प्रोफ़ेसर साहनीके व्यक्तित्व-का कोई यथार्थ सम्बन्ध नहीं जुड़ सकता। वे सब अन्दरसे क्या हैं, यह साहनी नहीं जानता, नहीं जान सकता। हमने अपनी सुविधाके लिए कुछ ढाँचे बना लिये हैं। ये ढाँचे जब सामने आते हैं, तो प्रत्येकका स्वत्व दूसरेके वस्तुत्वसे परस्पर सम्बद्ध होता रहता है। इन स्वत्वों तथा वस्तुत्वोंकी परिवर्तनशीलता निरन्तर गतिमान रहती है – और···और···

यही कारण था
कि जब गौनेकी रस्म अदा करा,
पत्नीको बैलगाड़ीमें
बैठाये, वह गाँवमें स्थित ससुरालसे शहर
आने लगा, तो उसे
विदाके समयसे ही चिढ़ पैदा होनी
शुरू हो गयी थी।
उसका ख़याल था कि यह दिखावा
गाँवसे बाहर जाने तक
ख़त्म हो जायेगा। लेकिन वह
नहीं हुआ। फिर
एक मील गुज़रा, दो मील गुज़रा
– सुधाका रोना ख़त्म
नहीं हुआ।

साहनीका दिमाग़ भन्नाने लगा। कुछ भी तो निश्चित नहीं लगता। हर बात एक भयंकर अनिश्चितामें खो जाती है। एक कठोर संशय, जो अचानक उठ खड़ा हुआ था, शमित होनेमें नहीं आ रहा है। उसके व्यक्तित्वका रोयाँ-रोयाँ संशयसे ग्रस्त हो गया है। उसके मनमें जो उदारता, करुणा, सहानुभूतिके तत्त्व थे, सब अचानक उस एक संशयसे लोप हो गये हैं।

हफ़्ते-भर तक वह अपने मनकी इस मर्मान्तिक पीड़ाको अग्रवालसे छिपाये रहा है। सोचता रहा है कि यह महज़ उसके मनका वहम है – समझ जाना चाहता है कि यह मात्र उसकी बौद्धिकताका अतिरेक है। मदमॅसेल सरौतकी पुस्तकसे इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। 'संशय का युग' केवल वाद-विवाद तक सीमित है। फिर भी बिना अग्रवालको बताये नहीं रहा जायेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे बताना ही होगा। बिना बताये उसका समस्त अस्तित्व लुप्त हुआ जा रहा है। और इसी उद्दीपनमें वह पैरोंमें बाथरूम स्लीपर डाले-डाले ही अग्रवालके घरकी ओर लपका जा रहा है। न जाने क्यों उसके दिमाग़में यह बात आ गयी थी कि इस समय जूता नहीं पहनना है। जूतेमें कभी-कभी बिच्छू छिपकर बैठ जाते हैं।

आज वह बात बड़ी कॉमेडी-सी लगती है। मूर्खताकी सीमा मालूम होती है। लेकिन कितनी आसानीसे वह घटना घट गयी थी। जब उसका विवाह हुआ था वह छब्बीसके लगभग था। वह स्त्रियोंको रोते नहीं देख सकता था। इससे उसे बेहद चिढ़ थी। उसे क्रोध हो आता था। बादमें मनोविज्ञानका विद्यार्थी होनेके कारण वह कुछ-कुछ समझ चला था कि यह चिढ़ उसे क्यों थी। अपने बचपनमें उसने औरतोंको अकसर ही बेकार रोते देखा था। जब उसके बाबा गुज़रे थे, तो रोनेके लिए किरायेपर औरतें बुलायी गयी थीं। वे छाती पीट-पीटकर रोती थीं। फिर कुछ देर ठहरकर आराम करती थीं और आपसमें हँस-हँसकर इधर-उधरकी बातें करती थीं। फिर तय करके आपसमें एक इशारा करती थीं और दुर्दान्त रुदन आरम्भ हो जाता था। आँखोंसे टपाटप आँसू ढुलकते थे, छातियाँ सूज जाती थीं और रोते-रोते वे किन्हीं विशेष तुकोंके साथ गीत गाती जाती थीं। और ताऊके मरनेपर भी ऐसा ही हुआ था। फिर उसकी माँसे जब कोई मिलने आती थी और मिलने आनेवालीका शहर दूर होता था, तो वे आ मिलकर रोती थीं। रोते-रोते अचानक होकर बातें करने लगती थीं। माँको देखकर उसका भी रोनेको जी चाहता लेकिन कोशिश करनेपर भी आँखोंमें नहीं आते थे। तब उसे इस सारे व्या एक चिढ़ हो गयी थी।

यही कारण था कि जब गौनेकी अदा करा, पत्नीको बैलगाड़ीमें बैठाये, गाँवमें स्थित ससुरालसे शहर आने तो उसे बिदाके समयसे ही चिढ़ पैदा शुरू हो गयी थी। उसका ख़याल था यह दिखावा गाँवसे बाहर जाने तक हो जायेगा। लेकिन वह नहीं फिर एक मील गुज़रा, दो गुज़रा – सुधाका रोना ख़त्म नहीं हुआ। वह उस समय इतना सहनशील नहीं उसने कड़े स्वरमें पत्नीको रोनेसे रो चाहा। इसपर उसका रोना और गया – और वह चुपचाप बैठा अपने गुस्से पीता जा रहा था। गाड़ीवालेने कहा बाबूजी, बीरबानियाँ रोती ही हैं। क्यों फिकर करते हैं ? बाली-नन्ही है, आप चुप हो जायेगी। लेकिन वह समझ पाया था कि औरतें रोती ही हैं। आख़िर, सारी ज़िन्दगी जिस आदमी साथ बितानी है वह इस बेमतलबके रो कबतक बरदाश्त कर सकता है। डाँटकर पत्नीको रोनेसे मना किया पत्नी गाँवकी ज़िद्दी लड़की थी, वह ही जा रही थी, रोती ही जा रही थी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके साथ-साथ न जाने क्या-क्या बड़बड़ाती जा रही थी। तब साहनीने गाड़ीवालेको बीच रास्ते रोककर वापस चलनेको कहा था। वह वापस नहीं आना चाहता था। लेकिन उसकी लाल-पीली आँखें देखकर डर गया था। गाड़ी फिर लौटकर उसकी ससुरालके दरवाज़ेपर खड़ी हो गयी थी। उसने सब लोगोंके जुट जानेपर कहा था – इसका जी अभी मायकेसे नहीं भरा है। कुछ दिनों और रह लेगी। छोड़ रहा है? नहीं, छोड़नेका कोई सवाल नहीं उठता। सामान? हाँ, सामान वह सब ले जायेगा और यह इस बातका सबूत होगा कि कोई बेजा हरकत नहीं है। लेकिन पत्नीको वह अभी नहीं ले जायेगा।

गौना हो ही चुका था। ससुरालवालोंने मनपर पत्थर रखा और ज़माईकी इस अजीब ज़िदको पूरा किया। वह अकेला ही अपने घरके दरवाज़ेपर आ खड़ा हुआ। बहूको साथ न देखकर माँने अचकचाकर उसका मुँह देखा था। बापने डाँटकर पूछा था – बहूको कहाँ छोड़ आया? और जब उसके मुँहसे सारी बात घरवालोंको मालूम हुई थी, तो बापने कहा था – दुनियामें कुछ लोग मूर्ख होते हैं, तू महामूर्ख है! – माँने माथा पीट लिया था। लेकिन वह अपने कमरेमें बन्द होकर दो दिन तक नहीं निकला था। तीसरे दिन माँने उसकी खुशामद कर-करके उसे निकाला था, खिलाया-पिलाया था, और बताया था कि कितनी बड़ी बदनामी फैलनेका डर था। इसीलिए, परसों उसके छोटे भाई सुधाकरको उसकी ससुराल, बिदा करा लानेके लिए भेज दिया गया था। और अगले ही दिन सुधा आ गयी थी। चुपचाप, गम्भीर, डरी-सहमी-सी।

सुधाकरको पकड़कर वह पूछना चाहता था कि वह रोयी थी या नहीं। लेकिन तीन दिन तक उसका पता ही नहीं मिला। वह स्कूलकी हाकी-टीमका कप्तान, मैट्रिकुलेशनमें तीन सालका फ़ेल्योर। उसका पता न ताशके पत्ते बता सकें, न शतरंज, न कबड्डी। और तीन दिन बाद जब वह सहसा ही सामने पड़ गया, तो उसके कान पकड़कर वह कमरेमें ले आया था! तब उसने बताया था कि भाभी बिलकुल भी नहीं रोयी। उलटे सारे रास्ते हँसते-हँसते भाभीका दम फूल गया था। और न हँसाने-के लिए उसने देवरकी खुशामद भी की थी। दिक़्क़त? नहीं, रास्तेमें कोई दिक़्क़त नहीं हुई थी। फ़र्स्ट क्लासमें दो सीटका कम्पार्ट-मेण्ट था। साथमें ज़ेवर-पत्ता कुछ भी नहीं। कोई फ़िकर नहीं थी। ठाटसे सोते आये थे।

सुनकर उसे सुख हुआ था। फिर उसका जी चाहा था कि सुधा उसके सामने भी हँसे। लेकिन जब उसने उसे हँसनेकी आज्ञा दी, तो वह दाँत दिखाकर हँस दी। होंठ फैल गये, आँखें संकुचित हो गयीं। दाँत दीख गये, हँसी पूरी हो गयी। नहीं, सुधा इन आठ वर्षोंमें उसके सामने नहीं हँसी। न ही रोयी। जानवरोंकी सुहागरात होती होगी, तो उनकी भी हुई। फिर नौ महीने बाद ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो अविनाशका अस्तित्व प्रकट हो गया। गोरा-चिट्टा रंग, कोई कहे माँपर गया है, कोई कहे बाबापर गया है – तो कोई-कोई यह भी कहे कि देवरपर गया है। लेकिन साहनीके मनमें कभी यह बात नहीं आयी कि उसीका बेटा उसके ऊपर क्यों नहीं गया है।

इस बीच बापने इस दुनियासे मुँह मोड़ लिया। पीछे-पीछे माँ भी गयी। सुधाकर नियमानुसार इण्टरमें एक-एक साल फ़ेल हुआ। थर्ड इयरमें तीन साल फ़ेल हुआ और अब वह फ़ेल होगा या पास – कोई नहीं बता सकता। लेकिन भाभी-देवरमें कभी मन-मुटाव नहीं हुआ। नहीं, सुधा सुधाकरको देखकर खिल जाती थी। अनेक बार जब दोनों ठहाके लगाते होते थे, और वह अचानक बाहरसे आ धमकता था, तो सुधाको साँप सूँघ जाता था। तिसपर भी उसे सन्तोष था कि चलो, निखट्टू होते हुए भी सुधाकर अपनी भाभीके द्वेषका कारण नहीं बना।

पर, आठ साल बाद, पिछले हफ़्ते शनिवारके दिन अचानक ही साहनी ठगा-सा खड़ा रह गया। उसके सामने उसका बेटा खड़ा था। वह चाचाकी नक़लपर बापको भैया कहता था और वह चाचाकी नक़लपर ही "छाती तानकर, भौंहोंमें आशंका भरकर, आँखों ही आँखोंमें मुसकराते हुए कह रहा था : "ए रुपी प्लीज़!"

रुपया देते ही संशयके साँपने उसे डस लिया।

पाँच दिन बाद अग्रवालने उसके सामने 'संशयका युग' खोल दिया।

साहनीको लगा कि उसके जैसा कम आदमी इस दुनियामें और कोई नहीं अविनाश उसका बेटा नहीं है, सुधा उ पत्नी नहीं है, सुधाकर उसका भाई नहीं ये सब ढाँचे हैं, जिनके वस्तु-रूपोंके उसका स्वत्व निरन्तर उद्दीपनकी प्रक्रि गतिमान रहता है – और उनके स्वत साथ उसके स्वत्वका कोई तादात्म्य नहीं यह युग संशयोंसे पूर्ण हो, न हो, उसके यह सम्पूर्ण युग संशयका युग है और युगोंका संशय उसके मनके भीतर केन्द्री हो गया है। उसके मानसिक जीवकोष साथ 'ट्रौपिज़्म'का एक खेल चल रहा है चारों ओर सिवा 'ट्रौपिज़्म्स'के और नहीं है। वह अपने आश्रितोंके पेटकी ज्व शान्त करता है, ब्राह्मण प्रौढ़की भाँति पानी पिलाता है। वह पानीपाण्डे गया है।

उसे याद नहीं वह कितनी देरसे प्रोफ़ अग्रवालके दरवाज़ेकी घण्टीका बटन दबाये खड़ा रहा, क्योंकि अग्रवालने दरवाज़ा खोला था। फिर उसकी देखकर वह बोले थे, "अरे, क्या हो तुम्हें? यह चेहरेपर हवाइयाँ कैसी रही हैं?"

उसने झटकेके साथ सिर उठाकर प्रोफ़ अग्रवालकी ओर देखा। फिर सहसा उसे भास हुआ कि मित्रके नाते अग्रवाल कुछ कहेगा वह सब-कुछ वह पहलेसे जानता है। वह लाख बुद्धिवादी हो, मित्रके नाते उसे व्यर्थके वहम न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सलाह देगा। कहेगा कि 'संशयके युग'के ये अर्थ नहीं हैं कि वह अपने रिश्तोंपर शक करने लगे। बौद्धिकता पर्यवेक्षणकी जो सूक्ष्मता मनुष्यको प्रदान करती है, वह स्थूल वस्तुस्थितियोंपर घटानेके लिए नहीं होती। और सूक्ष्मताका अर्थ है उन लघुतम सम्भावनाओंको खोजते रहना, जो किसी भी वस्तुस्थितिके नयेसे नये पहलू, नयेसे नये डिज़ाइन प्रकट करती रहती हैं – बिलकुल केलिडोस्कोपके डिज़ाइनोंकी तरह। किस नमूनेपर टिककर तुम कहना चाहोगे कि यह है इस खिलौनेका वास्तविक डिज़ाइन ? जब उसकी पत्नी मायकेसे बिदा होकर बैलगाड़ीपर रोती आ रही थी, तो वह उसका वास्तविक स्वरूप नहीं था। जब वह उसके छोटे और खिलंदड़े भाईके साथ रेलके दो सीटवाले फ़र्स्ट क्लासमें सफ़र करती, हँसते-हँसते पागल हुई जा रही थी, तो वह उसके व्यक्तित्वके केलिडोस्कोपका कोई दूसरा ही डिज़ाइन रहा होगा, और आगे बननेवाले अन्तहीन डिज़ाइनोंमें उस तरहका डिज़ाइन फिर कभी बना होगा कि नहीं, कौन कह सकता है ?

प्रोफ़ेसर अग्रवालसे उसने इस अचानक उपस्थितिका क्या बहाना बनाया था, अब उसे याद नहीं रहा। वह बाथरूम स्लीपर घसीटता हुआ, संशयकी उसी स्थितिमें घर लौट रहा है, जो मनुष्यके लिए आधुनिक बुद्धिवादका सबसे बड़ा अभिशाप है। इन आठ वर्षोंमें, एक ज़िद्दी व क्रोधी अधकचरे युवकके स्थानपर नयेसे नये 'ट्रौपिज़्म' बनते और मिटते चले गये हैं, और वह सहसा ही अपनेको बुद्धिवादियोंकी श्रेणीमें खड़ा पाता है। और उस नितान्त हास्यजनक घटनाके फलस्वरूप आज जो एक विषम संशय मनमें नोच-खसोट कर रहा है, उसे लेकर किसी हिंसक प्रतिक्रियाको प्रकट करनेका अधिकार उसे नहीं रह गया है। वह सामान्य जनोंकी तरह पत्नीपर व्यभिचारिणी होनेका दोष नहीं लगा सकता। वह भाईकी बेवफ़ाईपर उसका कान पकड़कर घरसे नहीं निकाल सकता। वह बेटेको ज़हर देकर नहीं मार सकता। कौन स्वीकार करेगा अपने अतिचारको ? किसीके स्वीकार न करनेपर फिर एक संशयकी स्थिति बनी रह जायेगी। वह कभी निश्चिन्त नहीं हो सकेगा कि उसने सुधा व सुधाकरके व्यक्तित्वोंके स्वत्वोंकी उन ड्योढ़ियोंको लाँघ लिया है, जिनके भीतर पहुँचकर ही यथार्थके दर्शन हो सकते हैं।

अविनाश उसका पुत्र है। अविनाश उसका पुत्र नहीं है। इन दोनों ही स्थितियोंको संशयके भूलते हुए पेण्डुलमकी तरह उसे स्वीकार करके जीना होगा। इसके सहारे उसके स्वत्वकी घड़ी समय बतायेगी।

पीछेसे आती हुई एक कार कें-कें करती, उसे लगभग धक्का देती हुई निकल गयी। उसके शरीरका कोई अंग-भंग नहीं हुआ। वह सही-सालिम बना रहा। पल-भरमें उसे लगा कि इस संशयने भी उसे इस कारकी तरह ही झकझोर दिया है। किन्तु वह अब भी साहनी है और सही-सालिम है। उसका कुछ भी नहीं बिगड़ा है। वह जैसे रहता चला आया था, वैसे ही रहता चला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जायेगा। वह मूर्खोंकी तरह अपने संशयको प्रकट करके अपने जीवनको नरक नहीं बनायेगा। कोई नहीं जानता उसके मनमें क्या है। जैसे वह दूसरोंकी स्वत्वोंकी ड्योढ़ियाँ नहीं लाँघ सकता, वैसे ही उसके स्वत्वके पार भी कोई नहीं आ सकता। क्षण-भरको, केवल क्षण-भरको उसे लगा कि उसके मानसके जैविक तन्तुओंसे दूसरोंके वस्तुत्वका परिवर्तनशील उद्दीपन जिस प्रतिक्रियाको जन्म दे रहा है, वह मिथ्या नहीं है। ये 'ट्रौपिज़्म' ही सही हैं, क्योंकि इनके पार मनुष्यकी बिसात नहीं है। संशय ही उसके लिए सबसे बड़ा सत्य है और संशयके युगमें जीवित रहना ही उसके लिए जीवन-संघर्ष है।

लेकिन यह स्थिति बहुत थोड़ी देर रही। समस्या सुलझाये बिना उसे चैन कहाँ? अब तो उसे लगने लगा कि यह पीड़ा तो और भी अधिक मर्मान्तिक हो उठी है। उसे लगा कि उसका पौरुष बलात् उससे छीन लिया गया है। अपने निजत्वसे उसका विश्वास पलकें झपकाते-झपकाते उखड़ गया है। अगले दिन ही तो जीवन-बीमा एजेण्टसे उसका अपाइण्टमेण्ट है। हाँ, वह परिवारकी सुरक्षाके लिए, उनकी भावी निश्चिन्तताके लिए भी अपने वर्तमान उपार्जनसे कुछ बचाकर जीवन-बीमा-निगम-को कुछ सौंपते रहना चाहता था। एक बार पॉलिसी ले लेनेपर उसे बराबर प्रीमियम भरते ही रहना होगा। उसमें कोई संशय नहीं होगा। वह एक निश्चितता हो जायेगी। एक निश्चितता एक अनिश्चि[तता] के लिए। एक असंशय संशयजनित स्थि[ति] लिए। अविनाशके लिए, सुधाके लिए [या] सम्भवतः सुधाकरके लिए भी। अपना [ख] पसीना दूसरोंके ठहाकोंके लिए। क्या बीमा एजेण्टको साफ़ मना कर दे? ले[किन] वे यदि सचमुच निर्दोष हों?

उसे स्पष्ट रूपसे लगा कि एक नि[ष्ठुर] प्रकारकी नीचता उसके भीतर घर क[र] जा रही है। कहीं उदारताका नाम-नि[शान] नहीं है। वह दुनियाका सबसे कम[ज़ोर] आदमी हो गया है। क्यों यह नि[श्चित] होना ज़रूरी है कि अविनाश उसका पु[त्र] कि नहीं? क्या इससे अविनाशका स्वत्व बदल जायेगा, जो उसका यथार्थ [है] लेकिन···लेकिन क्या सुधा अब भी [पति]चारिणी है? कौन बताये उसे? [कौन] बतायेगा?

क्यों बताये कोई? यह कोई आव[श्यक] नहीं है। यह कोई अनिवार्यता नहीं है। सुधाके वस्तुत्वका स्वामी है। उसके स्व[त्व] उसका कोई अधिकार नहीं है। कि स्वत्वपर स्वामित्वका अधिकार समझना आत्म-प्रवंचना है। तुमने केलिडो[स्कोप] ख़रीदा है। उसका कोई डिज़ाइन तुम्हें नहीं। ठीक है। क्षण-भर प्रतीक्षा करो। घुमाओ, या स्वचालित हो तो अपने घूमने दो। देखो डिज़ाइन बदल रहे आया कोई पसन्द? जो पसन्द आ[ये] उसे थोड़ी देरके लिए ठहरा लो। [फिर] सुख ले लो। ज़रा-सा झटका लगते [ही]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर बदल जानेवाला है। फिर तुम्हें पसन्द आये कि न आये। उसके पुराने डिज़ाइनों-को भूलते जाओ। वे कभी लौटकर नहीं आयेंगे – और उसके अन्तहीन डिज़ाइनोंके भीतर जो उसके स्वत्वका अगम विस्तार छिपा है, उसपर अधिकार माननेका दम्भ न करो। वह विस्तार तुम्हारे हाथ कभी नहीं आयेगा।

सचमुच उसकी दृष्टि अपने दायें हाथकी बन्द मुट्ठीकी ओर चली गयी। नहीं, उसमें कोई केलिडोस्कोप नहीं था। वह केवल एक परिवर्तनशील 'ट्रौपिज़्म' था। हाँ, उसका घर नज़दीक आ गया था। सीढ़ियाँ चढ़कर वह अपने फ़्लैट तक आया और गैलरीके अंधेरेमें, दरवाज़ेपर लगी अपने नामकी प्लेटको पढ़नेकी चेष्टा करता रहा। वह अपने नामको जानता था, इसीलिए उसे जल्दीसे नहीं पढ़ जाना चाहता था। वह उस नामके हिज्जे करके पढ़ना चाहता था, जैसे यह नाम उसके सामने आज पहले-पहल आया हो और वह उसका अर्थ न समझता हो। लेकिन 'ट्रौपिज़्म्स' बहुत चालाक होते हैं। वे परम्पराओंके नक्शे लिये दिमाग़के जीव-कोषोंमें छिपे बैठे रहते हैं। किसी वस्तुको कितनी भी नवीनतासे देखना चाहो, वे झटसे तन्तुओंकी परतोंसे निकलकर दूरदेश गुलामोंकी तरह सामने आ जायेंगे और नक़्शे खोल देंगे – आप अपना नाम बड़ी आसानीसे पढ़ सकते हैं, बड़ी आसानी-से। हिज्जे करनेकी कोई ज़रूरत नहीं – दिवाकर साहनी।

उसने बड़े ज़ोरसे घण्टी बजायी। किसी-ने झटकेसे दरवाज़ा खोला। ओह! वह ग़लत फ़्लैटपर चला आया है, यह फ़्लैट उसके फ़्लैटसे ठीक नीचे है। वह क्षमा माँगकर वापस लौटा और अपनी मंज़िलपर आया। हाँ, यही उसका फ़्लैट है। भीतरसे ज़ोर-ज़ोरसे ठहाकोंकी आवाज़ें आ रही हैं। उनमें सुधा, सुधाकर और अविनाश सबकी आवाज़ें शामिल हैं।

सारे तर्क-वितर्क भूलकर संशयका युग फिर एक बार उसके सामने नग्न रूपमें खड़ा हो गया – बिलकुल अश्लीलताके साथ।

उसने ज़ोर-ज़ोरसे घण्टी बजाकर दर-वाज़ा खुलवाया। खुलते ही सुधाकर उसके सामने हँसता हुआ आया।

"ओह, भाई साहब, मैं आप ही की वेट कर रहा था। मुझे सिनेमा जाना है। ए रुपी प्लीज़!"

और अचकचाकर साहनी अपने छोटे भाईकी ओर देख रहा है। वह नहीं जानता कि उसे रुपया देना है कि नहीं···कि नहीं··· कि नहीं।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

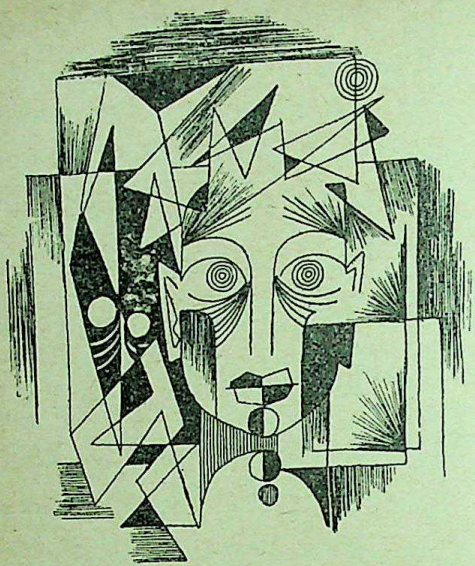

रामनारायण शुक्ल

अतीत

बाहर आया तो वह मेरी टेबुलके पास बैठा था।

मुझे देखते ही वह उठकर खड़ा हो गया। क्षण-भर दिमाग़पर ज़ोर डालनेके बाद भी मुझे यह याद नहीं आया कि मैंने उसे पहले कहाँ देखा है। हर क्षण लगता जैसे सब-कुछ मुझे याद आ जायेगा लेकिन हर दूसरे क्षण सब-कुछ खो जाता।

इसमे पहले कि मैं अपनी ओरसे कुछ कहूँ उसने स्वयं ही कहा कि उसका नाम राजेन्द्र 'रत्न' है और ढाई साल पहले वह मुझसे यहीं मिला था।

मुझे सब-कुछ याद हो आया। जो कुछ घटित हुआ था उससे कुछ अधिक ही।

"आप काफ़ी बदल गये हैं। पिछली बार आये थे तो आपकी हेल्थ काफ़ी अच्छी थी। यद्यपि बहुत अच्छी तब भी नहीं थी। कहाँ थे इतने दिनों तक? शुरू-शुरूमें आपकी याद मुझे अकसर आती थी। फिर...."

वह बहुत ही दुबला और कमज़ोर हो गया था। आँखोंके अतिरिक्त उसके शरीरमें कहीं भी जीवन नहीं था। आँखें शरीरसे बिलकुल अलग दिखती थीं और पिछली शताब्दीके किसी व्यक्तिकी-सी लगती थीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह किसी ऐसी बीमारीसे ग्रस्त लगता था जिससे जीवन बराबर परास्त ही होता है। बहुत कमज़ोर आदमियोंके पास बैठकर मुझे बहुत असुविधा-सी होती है। लगता है किसी भी क्षण कोलाप्स कर सकते हैं।

तभी चपरासीने आकर कहा कि आपका फ़ोन आया है।

मुझे राहत-सी मिली। फ़ोन मैनेजरके कमरेमें रहता है। थोड़ी देरके लिए उसके पाससे हट पानेका सुयोग बहुत अच्छा लगा।

फ़ोन अनिलका था। वह जानना चाहता था कि क्या मैं यू० पी० और राजस्थानके बीच होनेवाला रंजी ट्रॉफ़ी मैच देखना पसन्द करूँगा।

यू० पी० और राजस्थानका क्रिकेट मैच! मुझे उन्नीसवीं सदीकी आँखें याद आ रही थीं। अच्छा था कि वे उस समय मेरी ओर नहीं देख रही थीं।

लेकिन बिना सोचे ही मैंने उत्तरमें 'नहीं' कह दिया।

मैनेजर साहब कुछ लिख रहे थे। शायद कोई ड्राफ़्ट तैयार कर रहे थे। मुझे थोड़ी देर और यहाँ बैठना था – 'रत्न'के पास अभी ही नहीं लौट सकूँगा। बातोंका सिलसिला शुरू करनेके खयालसे मैंने कहा, "आप रंजी ट्राफ़ी मैचेजमें इण्टरेस्टेड तो नहीं हैं?"

क्यों? पाण्डेजीने आँखोंसे ही कहा। फिर बोले, "इतवारको देखना चाहता हूँ। आप भी देखेंगे न?"

मैंने मुसकरानेकी चेष्टा की और दयनीय हो उठा। मुझे 'रत्न'का खयाल आया। और मेरे दिमाग़में एक अजीब-सी इमेज आयी – वेस्ट इण्डीज़के बॉलरोंके सामने 'रत्न'को बैटिंग करनेके लिए खड़ा कर दिया जाये तो?

डोण्ट बी सिली! मैंने अपनेसे ही कहा और फ़ोनकी घण्टी फिर बज उठी। फ़ोन मैंने ही उठाया लेकिन इस बार वह पाण्डेजी-का था। उन्हें फ़ोन देते हुए मैं उठकर चला आया।

लौटा तो वह सिगरेट पी रहा था। सामने चारमीनारका पैकेट और माचिस थी।

"किसका फ़ोन था?" तभी उसने कहा।

मुझे खीझ-भरा आश्चर्य हुआ। यहाँके मेरे परिचितोंमें शायद ही वह किसीको जानता हो। फिर भी···

"मेरे एक मित्रका!"

"अब आप यहाँ जम गये?"

"यह कैसे सोचा आपने?"

"दोस्त-मित्र बनने लगे हैं।"

पैकेटसे एक सिगरेट निकाल मैं पीने लगा।

"मैंने आपको एक पत्र लिखा था। जवाब नहीं मिला।"

मुझे उसके किसी पत्रका ध्यान नहीं था। याद करनेके लिए मैंने बहुत दूर पीछेकी ओर देखा। कुछ भी वहाँ नहीं था।

"कब?"

"जब आपसे मिलकर गया था उसके दस-पाँच दिन बाद ही। एक वार्षिक संकलन निकालनेकी बात थी न! उसके लिए आपकी कहानी चाहिए थी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे हलकी-सी याद आयी। ज़रूर ऐसा कोई पत्र आया था।

पिछली बार वह क़रीब ग्यारह बजे आया था और ढाई बजे तक अपनी महत्त्व-पूर्ण योजनाओंके बारेमें चर्चा करता रहा था। वार्षिक संकलन, फिर उसके लाभसे प्रकाशन·····उसे पूरा विश्वास था कि एक बार बम्बई या कलकत्ता जानेसे पाँच-छह हजारका विज्ञापन ज़रूर मिल जायेगा।

···बस अब यहाँसे मैं सीधे आगरा जाऊँगा। महीने डेढ़-महीने वहीं रहूँगा। इस बीच आप सब लोगोंकी रचनाएँ मिल ही जायेंगी। सामग्री इकट्ठी हो जानेके बाद विज्ञापनके लिए बम्बई···

उसके चेहरेकी ओर देखते हुए मुझे सब कुछ याद आ रहा था और लग रहा था जैसे हम लोग पहली बार ही मिल रहे हों और समय ढाई साल पीछे चला गया हो।

"क्या संकलन निकला था ?"

"कहाँ निकला ! वैसे सामग्री बहुत इकट्ठी हो गयी थी। विज्ञापनके लिए मैं बम्बई गया था और वहाँ बीमार पड़ गया। छह महीने तक अस्पतालमें पड़ा रहा। वापस लौटा तो शरीरमें कुछ भी नहीं था। गाँवमें यह सोचते हुए पड़ा रहता था कि जीवन एक किनारे आ गया है। लेकिन····

लेकिन···

स्वास्थ्य धीरे-धीरे सुधरने लगा और अन्दरसे लिखने-पढ़नेकी प्रेरणा मिलने लगी। पिछले एक सालमें मैंने एक उपन्यास और दस-बारह कहानियाँ लिखी हैं। मेरा खयाल है कि काफ़ी सशक्त चीजें हैं।"

"आपने कहीं प्रकाशनके लिए भेजा है ?"

"नहीं ! मुझे इस बातपर यक़ीन नहीं होता कि दूसरे मेरी भावनाओंकी क़द्र कर सकेंगे। संकलनसे जो आय होगी उससे मैं स्वयम् सब-कुछ प्रकाशित करनेकी योजना बना रहा हूँ।"

उसके स्वरमें दृढ़ता थी। नासमझी और अक्षमताकी दृढ़ता। मैंने किसी समझदार और समर्थ आदमीको कभी इतनी दृढ़तासे बातें करते नहीं देखा।

"इस बार संकलनके लिए आपकी एक कहानी चाहिए ही। हम नये लोगोंको आगे बढ़कर अब सब-कुछ करना है।"

"देखूँगा !" और मैंने फिर एक सिगरेट जला ली।

चपरासी आकर खिड़कियाँ बन्द करने लगा। आफ़िस बन्द हो रहा था।

"अब हम लोग चलें। आफ़िस बन्द हो रहा है।" मैंने कुछ सोचते हुए उसका ध्यान भंग कर दिया।

सीढ़ियाँ उतरकर हम नीचे आये। जाड़ेके दिन थे और शाम गहराती जा रही थी। तभी पहली बार मैंने महसूस किया कि आज जाड़ा अधिक है। और अनायास ही ध्यान उसकी ओर चला गया।

पायजामा-कुरता और एक हलकी-सी चादर !

"आपका क्या प्रोग्राम है ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले कि वह पूछे, मैंने पूछ लिया।

"कोई खास नहीं! आपसे मिलना था, वह तो हो ही गया। बस अब रेडियोके श्री धीरजीसे मिलना है। वे मेरे रिश्तेदार भी हैं। उनके यहाँ रातको जाऊँगा।"

"आइए, कहीं बैठें!" और मुझे 'मुरारी'की याद आयी।

'मुरारी'में भीड़ अधिक नहीं थी। मेरे एक परिचित बैठे चाय पी रहे थे और उन्होंने हाथके इशारेसे मुझे बुलाया। उसकी ओर इशारा कर हम लोग दूसरी टेबुलपर बैठ गये।

पासके टेबुलमें बैठे कुछ लोग फूलपुरमें होनेवाले एलेक्शनके बारेमें बातें कर रहे थे।

"किसके जीतनेकी उम्मीद अधिक है?" हठात् उसने मेरे चेहरेकी ओर देखते हुए कहा।

'क्यों न हम लोग कोई दूसरी बात करें।" न जाने क्यों मेरे मुँहसे निकल गया।

"आप ठीक कह रहे हैं। इन सब बातों-में क्या रखा है। रचनाकारको इस पचड़ेमें नहीं पड़ना चाहिए।"

तभी एक साथ सात-आठ लड़के अन्दर आये। वे किसी लोकल क्रिकेट टीमके खिलाड़ी लग रहे थे। दो-एकको चेहरेसे मैं पहचानता भी था। मुझे फिर वेस्ट इण्डीजके बॉलरोंके सामने बैटिंगके लिए खड़े हुए रत्नकी याद आयी।

सीढ़ियाँ उतरकर हम नीचे आये। जाड़ेके दिन थे और शाम गहराती जा रही थी। तभी पहली बार मैंने महसूस किया कि आज जाड़ा अधिक है। और अनायास ही ध्यान उसकी ओर चला गया।

चाय पीते हुए हम चुप बैठे रहे। बाहर हवा चल रही थी और उसका प्रभाव अन्दर तक आ रहा था।

"तो आपने क्या सोचा?" तभी उसने कहा।

"किस बारेमें?"

"मुझे सहयोग देनेके?"

"मैंने न कब कहा।"

वह मुसकराया। मेरे मनमें एक इमेज आयी। चाँदनीके आलोकसे आलोकित एक खण्डहर!

लेकिन अन्दर बहुत गहरे कहीं जाकर मुझे उससे सहानुभूति हो आयी। पहले भी थी।

एकाएक पहली बार मेरा ध्यान एक बातकी ओर गया। वह काफ़ी एजेड था। चालीससे अधिक तो रहा ही होगा। मैं इस बातकी कल्पना नहीं कर पा रहा था कि यह आदमी शुरूकी अपनी जिन्दगीमें क्या रहा होगा।

"आगरामें आपके परिवारके और कौन-कौन लोग हैं?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"सभी हैं! लेकिन आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि घरवालोंके साथ रहते हुए भी मैं नहीं रहता। घरमें कोई मुझे पसन्द नहीं करता।" कहते-कहते वह दयनीय हो उठा, "दुनिया ही ऐसी है।"

"आप पहले क्या करते थे?"

उसका चेहरा आहत-सा लगा। शायद पिछली बार उसने मुझे सब-कुछ बताया हो और उसे यह बात याद हो।

"मैं सत्रह-अठारह सालकी उम्रसे ही इसी लाइनमें हूँ। कदाचित् आपको पता नहीं, मैं दो-दो साप्ताहिक पत्र निकाल चुका हूँ। 'देशदूत' तो अच्छी तरह चलने भी लगा था लेकिन कण्टेम्प्ट ऑव कोर्टके एक केसमें···फिर शुरू-शुरूके उत्साहमें मैंने कुछ भूलें भी की थीं। किसी भी तरहका विज्ञापन स्वीकार नहीं करता था।"

सामने एक फ़िल्मी साप्ताहिक पड़ा था। मैं अनजाने ही उसकी हेडिंग्स पढ़ने लगा था। और मेरा ध्यान उसकी बातोंसे खिच-सा गया था।

सहसा उसने पूछा, "आप तो बहुत दिन कलकत्ते रहे हैं, न?"

"हाँ!"

"मुझे वहाँके बारेमें कुछ बताइए। मैं यहाँसे पटना जाऊँगा, फिर कलकत्ता। पटना तो खैर एक-दो बार पहले भी हो आया हूँ लेकिन कलकत्ता मेरे लिए बिलकुल नया है।"

"कलकत्तेमें आप ठहरेंगे कहाँ?"

मैंने उसके प्रश्नका उत्तर न देते हुए प्रश्न किया।

"रणधीरजीके पास। आप शायद उन्हें जानते होंगे। 'विश्वमित्र'में सह-एडीटर हैं।"

"परिचय नहीं है। वैसे कलकत्ते कभी-कभी उनका नाम सुननेमें आता था। आपका क्या बहुत अच्छा परिचय है?"

"नहीं, बस पत्र-व्यवहार है।"

"तभी मैंने मार्क किया – कि रेस्तरां उस समय हम लोगोंके अतिरिक्त और कोई नहीं था। निखिल बाबू काउण्टरमें से हमी लोगोंकी ओर देख रहे थे। वे वंगाली थे और अकसर हम लोग बँगलामें ही बात किया करते थे।

"आज जाड़ा कुछ अधिक है।" मैंने उनकी ओर देखते हुए कहा, "हम लोगोंके लिए ज़रा और एक-एक कप चाय भिजवाइए। अच्छी! पहलेवाली ज़रा ठण्डी और फ़ीकी थी।"

"यहाँ लोग फ़ीकी ही पसन्द करते हैं। यह कलकत्ता नहीं है।" निखिलने हँसी करते हुए कहा, "क्या आप कलकत्तेसे आ रहे हैं?"

"नहीं! भाई साहब जा रहे हैं।" मैंने रत्नकी ओर इशारा करते हुए कहा।

तभी काउण्टरके पास आ किसी ने कहा, "बाबू, चीनी बिलकुल नहीं है।"

मैं फिर 'रत्न'के चेहरेकी ओर देखने लगा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आप मेरे बारेमें क्या सोचते हैं ?" एकाएक उसने कहा।

"किस बारेमें ?"

"कलकत्तेमें पाँच-छह हज़ारका विज्ञापन पानेमें मैं सफल होऊँगा या नहीं।"

"मुश्किल है !"

"आप मुश्किल कह रहे हैं ! लेकिन क्यों ?"

"मैं आपको निरुत्साहित करना नहीं चाहता। लेकिन सच तो यह है कि समय बहुत बदल गया है। बिना किसी आधारके विज्ञापन प्राप्त करना अब उतना आसान नहीं रहा।"

"आधार ! मैं इन्हीं कपड़ोंमें और इसी तरह बड़े-बड़े पूँजीपतियोंके पास जाऊँगा और उन्हें मजबूर कर दूँगा कि वे 'साहित्य' के लिए विज्ञापन दें। यह मेरी ज़िन्दगीका आख़िरी ऐडवेञ्चर है। इसमें सफल न होनेपर नहीं जानता कि मैं क्या करूंगा।"

मुझे सिहरन-सी हुई। यह ठण्डके कारण नहीं थी। मैं आख़िरी ऐडवेञ्चरकी असफलताके बारेमें सोच रहा था।

"आप आज रातकी किसी गाड़ीसे जा रहे हैं क्या ?" मैंने बात बदलते हुए कहा।

"नहीं, कल जाऊँगा। आज बहुत थका हुआ हूँ। जिन चीज़ोंका कोई आधार नहीं होता उनके बारेमें समझाना बहुत कठिन होता है। मैंने सोचा था कि सारी बातें सुननेके बाद कमसे कम आपको तो मेरी सफलतामें सन्देह नहीं रहेगा, लेकिन देखता हूँ कि है ?"

मैंने कोई जवाब नहीं दिया। मेरा ध्यान फिर उसकी आँखोंकी ओर था, बढ़ती हुई रातके साथ जिनकी चमक कम होती जा रही थी।

"साहित्य निकलेगा ! उसका प्रकाशन कोई नहीं रोक सकता।" वह किसी उन्माद-ग्रस्त रोगीकी तरह बोला।

"अब चलूँगा। अचानक मुझे एक काम याद आ गया।" मैंने खड़े होते हुए कहा।

उसके चेहरेका सारा उत्साह फिर कहीं चला गया था। उसके चेहरेकी ओर देखते हुए क्षण-भरको लगा कि मुझे झूठ बोलते हुए उसकी सफलतापर विश्वास प्रकट करना चाहिए था और दूसरे ही क्षण मैं रिक्शे-पर था।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुकीर्ति गुप्ता

धागे

■

इतनी नाराज़गी ?····

मेरा मन खिन्न हो उठा। कमरेकी उमसमें जैसे दम घुटा जा रहा हो। धीरेसे मैंने खिड़कियाँ खोल दीं। जाड़ेकी ठण्डी रात – पूरे चन्द्रमाको देखकर अनायास बिना भावके काफ़ी देर तक देखती रही।····प्रतीक्षा करती रही, कि अब रोमांसका अनुभव होगा – वियोगकी भावना तड़पायेगी, किसीकी बाँहोंमें बँधनेके लिए मन अकुलायेगा।

किन्तु कहाँ, कुछ नहीं! फिर भी पुरवैयाके झोंकेने गरमाहटका बोध दिया। शालको अच्छी तरहसे अपने चारों ओर लपेटकर भी जैसे शरीरकी जड़ता हटी नहीं। एक छोटा-सा आँसू गालपर जबरदस्ती लुढ़क आया – मैं जल्दीसे पोंछकर मुसकरा दी। काश! मैं प्यार कर पाती!!

वही स्वर गूँज रहे हैं····

"आज मन नहीं लग रहा है, तुम्हारी छुट्टी भी है····आओ न!"

"नहीं, इस तरह आना अच्छा नहीं लगता, फिर तुम तो बिलकुल अकेले हो!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"क्या मुझसे डर लगता है ?···।"

मैं कुछ नहीं बोली । तुम्हारी कमज़ोरी-को बढ़ावा देना नहीं चाहती थी ।

"सुनो, दोस्तीको यह रूप तो मत दो ।"

"मैं तुमसे उपदेश नहीं सुनना चाहता । क्या तुम मेरे लिए इतना भी नहीं कर सकतीं ?···बोलो आओगी या नहीं ?"

रिसीवर रख दिया ।

तुम्हारे इस असमय निमन्त्रणका अर्थ जानती हूँ । कैसे स्वीकार करूँ । क्या सम्बन्धोंकी परिणति इसीमें है ?

मेज़पर रखी पुस्तक उठा ली । पन्ने उलटते सहसा दृष्टि गयी – 'मुझे न सपनोंसे बहलाओ' । बड़ी प्रिय कविता है ।

एम० ए०में हम लोग साथ ही पढ़ते थे । फाइनल इयरकी फेयरवेल पार्टीके समय मैं इसी गीतको गा रही थी । तुमने स्वर और भावोंमें विभोर होकर अपनी आँखें बन्द कर ली थीं । सब लड़के तुम्हारी ओर बुरे संकेत कर रहे थे – मैं संकुचित हो उठी । बीचमें ही गाना बन्द कर दिया । तुमने अपनी आँखें खोलकर आस-पासकी दुनियाका एहसास किया । मैं तुम्हारी ओर देखकर बरबस हँस पड़ी । तुम्हें सहारा मिला ।

प्रशंसकोंका 'हेलो' बनाये रखना प्रत्येक आधुनिक नारीकी अन्तर्मनकी इच्छा होती है । तुम मेरे सिर्फ़ 'हेलो'के कण ही नहीं कुछ और भी थे । सच, तुम बेहद तहे दिलसे मेरी प्रशंसा करते – मैं सन्तुष्ट होती । तुम्हें घण्टों फ़ोनपर ही सुन्दर गीत गाकर सुनाती । तुमसे मुझे किसी भी प्रकारका संकोच न होता । तुम्हारे नामके अलावा तुम्हारे व्यक्तित्वमें इतनी कोमलता थी कि मैं तुम्हें स्वयंसे भिन्न न समझती । छोटा क़द, दुबले-पतले, लड़कियोंकी-सी संकोचशीलता, और तुम्हें चिढ़ाती बाला प्रसन्न !

याद है ? हम लोग जब यूनिवर्सिटीसे पिकनिक गये थे – छोटा-सा ग्रूप, तुम मेरे कितने पास थे । कई फ़ोटो तुमने मेरे लिये थे । हम लड़कियोंको ही खाना बनाना पड़ा था । मेरे पाककी प्रशंसा, क्या कहूँ, मेरे प्रोफ़ेसर भी कर रहे थे । मैं क्या करती, सच, इस कलामें यदि अनजानी रह गयी तो क्या करूँ – माँका लाड़-प्यार ही कुछ ऐसा था । मुझे सबको परोसना पड़ रहा था । शरमसे चीज़ें हाथसे छलक-छलक जाती थीं । लड़के मज़ाक़ उड़ा रहे थे । तुम मेरे कष्टको समझ रहे थे – तुमने मेरा काम सँभाला । यहाँतक कि फिर तुमने ही छोटी-छोटी अच्छी पूरियाँ सेंककर खिलायीं – तुमने कहा कि हाई स्कूलमें 'होम साइन्स' ली थी ! बिलासपुरके लड़कियोंके कॉलेजमें तब अकेला छात्र था ! मैं अपने बन्धुपर रीझ उठी ।

विपरीतसे बन्धुत्वका अनोखा आकर्षण होता है न ? तुम्हारे साथ मैं सिनेमा जाती और रेस्तराँओंमें चाय पीती, नाश्ता करती, किन्तु और लड़के-लड़कियोंकी तरह कभी कुछ और सोचने-समझनेका मौक़ा ही नहीं मिलता । मेरी निर्भीकता और स्वच्छ खिल-खिलाहटसे तुम कभी बहक नहीं पाते ।

हालकी बत्तियाँ सब धीरे-धीरे बुझ जातीं । शो शुरू हो जाता, कुछ देर बाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रजत-पटपर रूमानी नज़ारोके चलचित्र नज़र पड़ते। तुम अचानक मेरी ओर सरक आते, जैसे तुम्हें सहसा याद आया हो कि तुम्हें भी यहाँ कुछ करना चाहिए! फ़िल्म-संगीतकी धुनपर थिरकती तुम्हारी उँगलियाँ तुम्हारे कोटकी जेबमें जातीं – धीरेसे सावधान होकर तुम अपना रूमाल निकालते और करीनेके साथ अपनी गोदपर बिछा लेते। फिर सकुचाते तुम मेरा बायाँ हाथ पकड़ते किन्तु तुम्हारे गरम पसीनेसे लिजलिजे हाथको एक-बारगी तो मैं अनजाने ही झिड़क देती।....

"अरे, क्या हो गया है···सिर्फ़ हाथ ही तो छू रहा हूँ तुम्हारा·····?"

शायद आस-पासके लोगोंकी निगाहोंसे बचनेके लिए हाथ दे देती – तुम बड़े प्यारसे मेरा बायाँ हाथ अपनी गोदमें बिछे रूमालपर रखकर सहलाते। मेरी पतली कोमल उँगलियोंको धीरे-धीरे सहलाते और मैं किसी तरह अपनी आँखें फ़िल्म देखनेमें ही लगाती। कभी-कभी अँगूठी होनेके कारण तुम्हारे इस अनवरत दुलारकी प्रक्रियासे पीड़ा होने लगती। मैं हाथ हटा लेती। किन्तु मोटे चश्मेके भीतरसे तुम्हारी मासूम आँखें दिखाई देतीं – और फिर अपना हाथ जैसे काटकर तुम्हें दे देती। और मैं सोचने लगती कि मैं ऐसा क्यों सोचने लगती हूँ···

■

अचानक मुझे काफ़ी दूर जाना पड़ा। तुम स्टेशन तक छोड़ने आये। भेंटमें पुस्तकें दीं। मैं अपनी सहेलियों और तुमसे काफ़ी देर तक बात करती रही। गाड़ी छूट चली थी – तुम न जाने कहाँ चले गये थे! उत्सुकतासे चारों ओर देखना शुरू दि देखा, तुम दौड़ते-हाँफते हाथोंमें ढेर सन्तरे लिये चले आ रहे हो।

"लो, तुमको बहुत पसन्द हैं न! काम देंगे।"

"बड़े पागल हो!" कहकर शब्द ओठोंमें अटक गये।

तुमने मुझे हाथ पकड़कर विदा काफ़ी देर मेरे डिब्बेके साथ दौड़ते रहे। सब-कुछ ओझल। मैंने एक लम्बी साँस पता नहीं थकानकी थी या मुक्तिकी।

पासमें एक बुढ़ियाने थोड़ा हटकर बैठा लिया। पान खाते बोली,

"बिटिया, तेरी शादी हो गयी? दे आदमी है क्या? लगता है, नयी शादी तभी बेचारो कित्ती दूर तक आयो है?"

"नहीं नहीं, मेरी शादी नहीं हुई।" वक्र-दृष्टिसे उस बुढ़ियाकी ओर दे आदमी? कच्चा चबा जाऊँगी! मेरी की कड़ाईमें बेचारी पान चबाना भी भूल गयी।

फिर माह-वर्षकी घड़ियोंमें जैसे सब भूल गयी। नयी समस्याएँ, नये वातावर जैसे अपना शिकंजा इतना कस लि अतीतकी ओर गरदन ही फेर नहीं पाय

एक जॉबके सिलसिलेमें फिर आयी। पुराने परिचित न जाने कहाँ गये, अकेला महसूस हो रहा था। महीना, सब जगह सूखा पतझड़, अभी शुरू नहीं हुआ था। सूखी हवा धूलके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उड़ी जा रही थी। सड़कपर एक टैक्सी धूलका गुब्बार छोड़कर अचानक मेरे सामने रुक गयी। मैं चौंक पड़ी।

तुम काफ़ी बदल-से गये थे। छोटी-सी गुड़ियाकी तरह पत्नी बगलमें बैठी मुझे निहार रही थी। फिर छात्रावासकी चंचलता जैसे उभर आयी। घर ले आयी। गप्पोंमें अच्छी शाम बीती। तुम्हारी पत्नी कुसुम, बड़ी हिल-मिल गयी।

तुम प्रायः मेरे घर आते। अब तुममें कुछ "बोल्डनेस" आ गयी थी। स्त्रियोंके प्रति इतनी झिझक न थी। कवि, आलोचक, कहानीकार, उपन्यासकार सभीका अंश समेटे तुम 'सम्पादक परब्रह्म' हो गये थे। तुम्हारी आवभगत कैसे न करती, मुझे भी तो लिखने और लेखिका बननेका शौक़ था!

तुम्हारा मासूम चेहरा, जहाँसे कभी-कभी सम्पादकीका भाव हट-सा जाता। तुम्हारा हसरत-भरी निगाहोंसे देखना अच्छा लगता। तुम्हारी रचनाओंका सुनना भी अच्छा लगता, लेकिन प्रायः सुनाना भी पड़ता, महज़ औपचारिकतावश। तुम थके-थकाये आफ़िससे अपने घर न जाकर मेरे पास ही आना पसन्द करते – इतनी औपचारिकता न बरतूँ!

माँको बड़ी सभ्यतासे प्रणाम करते। माँ खुश होकर नाश्तेका प्रबन्ध करतीं।

वे जानती थीं कि तुम मेरे क्लास-फेलो हो। कभी-कभी अपनी रचनाओंको तुम मुझसे सुनना चाहते—मेरे स्वरमें जैसे तुम किसी और लोकमें डूब जाते। माँ दूर है – शायद आस पासके लोगोंकी निगाहोंसे बचनेके लिए हाथ दे देती – तुम बड़े प्यारसे मेरा वायाँ हाथ अपनी गोदमें बिछे रूमालपर रखकर सहलाते। मेरी पतली कोमल उँगलियोंको धीरे-धीरे सहलाते और मैं किसी तरह अपनी आँखें फ़िल्म देखनेमें ही लगाती। कभी-कभी अँगूठी होनेके कारण तुम्हारे इस अनवरत दुलार-की प्रक्रियासे पीड़ा होने लगती। मैं हाथ हटा लेती।

तुम मेरी गोदमें लेटना चाहते, थके-हारे-से, लेकिन मैं चहकती हुई दूसरी बातें करने लगती जिससे तुम्हारा ध्यान इस कमज़ोरीसे हट जाये। मेरी इस शैतानीको तुम समझ लेते और उदास-से बैठ जाते। मैं कुसुमके हाल-चाल पूछकर उसकी बड़ाई करने लगती। तुम बुझे-बुझे स्वरोंमें कहते, "मैंने नाहक़ शादी की। वह मेरे अभावको पूर्ण नहीं कर पाती। कुछ भी लिखता-पढ़ता हूँ, वह उसके महत्त्वको नहीं समझ पाती। जहाँ मानसिक लगाव नहीं वहाँ शारीरिक लगाव बड़ा अधूरा-सा लगता है। और तुम मेरे जीवनके अभावको ज़रा भी दूर नहीं करना चाहतीं।" अपनी पुरानी आदतके अनुसार तुम मेरा हाथ थाम लेते, रूमाल बिछाते, उँगलियोंसे खेलते। मैं दयासे भर आती।

"तुमने जीवनके पचीस वसन्त देखे हैं – क्या कभी तुम्हारे मनमें किसी पुरुषकी कामना नहीं हुई? क्या कभी तुम्हारा मन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकान्तमें तड़पता नहीं ? मैं तुमको कितने दिनोंसे जानता हूँ, तुम कभी पसीजी नहीं – क्यों ?"

मैं खिलखिलाकर हँस पड़ती। तुमको मेरा खिलखिलाना बड़ा अच्छा लगता। निरीह आँखोंसे देखते रहते। इस बातको तरह नहीं देना चाहती थी।

"अरे नहीं, बिलकुल नहीं, देखते नहीं मेरे कितने संगी-साथी हैं – किताबें, लिखना-पढ़ना, वह देखो, – मेरे बाग़के सुन्दर खिलते फूल – ये हरी-हरी घास और यह मेरी छोटी-सी बिल्ली जो रातमें मेरे ही बिस्तर-पर सोती है। और जो मेरे साथ नहीं हैं उनको मैं अपनी तूलिकासे आँककर ज़बर-दस्ती फ्रेममें जड़कर रखती हूँ। देखते हो न, दीवालोंपर कितनी 'पेण्टिंग्स' लगी हैं ! जब यह चार तारोंवाला तानपूरा लेकर गाती हूँ तो सिर्फ़ मैं रहती हूँ और मेरे गीत।"

तुम मन्त्रमुग्ध-से मेरी बातें सुनते रहते। याद है न, शायद उस दिन भी तो ग़ुस्सेमें कुछ हारे कुछ क्षुब्ध होकर गये थे ? क्या स्त्री-पुरुषमें सहज बन्धुत्व नहीं हो सकता ? पर तुम हविसके पुजारी कभी सोच नहीं पाते यह !

छुट्टीका दिन था। भरी दुपहरीमें तुम आये। आधुनिक कथा-साहित्यपर बात करते रहे। किन्तु तुम और कहीं थे। मुखका भाव उड़ा हुआ था। तुम काँप-से रहे थे। मैंने डरते पूछा, "क्या हुआ ? तुम्हें – ।"

और अचानक तुमने उठकर मुझे अपनी बाँहोंमें इतने ज़ोरोंसे कस लिया कि मैं भी नहीं ले पायी – तुम्हारा मुख मेरे की ओर बढ़ा। एक असहनीय दुर्गन्ध सर भन्ना उठा। तड़पकर सारा ज़ोर छिटक गयी।

पायरियासे भरे दाँत ! संवेद व्यवहार ! क्रोधसे आँखोंमें आँसू आ कुछ कहनेसे पूर्व तुम दरवाज़ा खोल गये। मैं रात-भर सो नहीं पायी।

दिन यों ही गुज़रते गये। खयाल उतर-सा गया। एक दिन फ़ोन आया – "दीदी, बहुत दिनों नहीं ?"

"हाँ···कुछ काममें लगी रही।"

"आप नाराज़ हैं क्या ? आती

उस पगलीसे क्या कहती, झ उठी, "नाराज़ी क्यों ?"

"इनकी तबीयत खराब है। कमज़ोर हो गये हैं। आजकल आ जाते – कभी-कभी आपकी याद आप आयेंगी नहीं ?"

"हाँ, फ़ुरसत मिलते ही आऊँगी।

कितनी घटाएँ उठीं और और मैं गयी नहीं।

कई दिनों बाद तुम आये। कई लाये – "लो, इनकी आलोचना तो लि मुझे इसी मास देनी हैं। हाँ, तुम्हारी पूरी हुई ?"

मैं अवाक् देखती रही, कितने ढंगसे तुम बात कर रहे थे। जैसे कु ही नहीं। मैं चुप रही। तुम सहसा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो उठे – काफ़ी दुबले हो गये थे।

"तुमने माफ़ नहीं किया ? क्यों, अभी तक मनमें पाल रही हो ?" तुम्हारी आँखें भर आयीं। आँसू छिपानेके लिए तुमने दूसरी ओर मुँह फेर लिया।

कुछ क्षण तो जड़ बैठी रही, फिर सहसा उठी, तुम्हारा हाथ पकड़कर बोली, "उठो, हम लोग थोड़ा बाहर घूम आयें !"

तुमने मुसकराकर मेरी ओर देखकर आभार प्रकट किया।

तुम अपनी कविता सुना रहे थे – बाहर चाँदनी बिखरी थी। सौन्दर्यको पी जाना चाहती थी मैं, ताकि मनकी सारी छलना, कपट, समाप्त हो जाये। पुराना बन्धुत्व जैसे लौट आया हो। टहलते-टहलते हम काफ़ी दूर निकल आये – विक्टोरिया मेमोरियलका मैदान···नम घासपर हम लोग बैठ गये। तुमने गानेका अनुरोध किया। मैं मना नहीं कर पायी। चाँदनीकी शीतलता न जाने किसीकी स्मृति कुरेद रही थी। किसीका ध्यान आ रहा था। मैं अचानक प्रसादका गीत गुनगुना उठी – "ओ मेरी जीवनकी स्मृति, ओ अन्तरके आतुर अनुराग !"

तुम न जाने कब बिलकुल मेरे पास खिसक आये। फिर तुम बहकना ही चाहते थे कि एक कड़कती आवाज़ सुनाई पड़ी। देखा तो दो पुलिसमैन सादी पोशाकमें सामने खड़े हैं।

"चलिये आप लोग वैनमें।"

"क्यों।" मैं चीख उठी।

"इतने एकान्त स्थलमें बैठकर आप-लोग।"

"बिलकुल झूठ है, इस तरहकी कोई हरक़त नहीं की थी।" मेरे सामने चाँदनी छिपती-सी नज़र आ रही थी। सौन्दर्यके प्रति तीव्र वितृष्णा हो रही थी।···और तुम जड़ हुए खड़े थे। मनाते हुए उनसे बोले, "अरे साब, अभी हम लोग चले जायेंगे। आप भी –।"

"नहीं, आप लोगोंको पुलिसकी गाड़ीमें चलना होगा।"

"मैं नहीं जा सकती ! देखें, आप क्या करते हैं ! मज़ाक़ है, ज़बरदस्ती करिए तो···।" ग़ुस्सेमें काँप उठी।

तुम उन्हें जेबसे निकालकर रुपये देना चाह रहे थे। रुपये शायद कम थे तो तुमने अपनी घड़ी निकाल ली थी।

मैंने हाथ पकड़ लिया – "कुछ मत दो। ये लोग यों ही तंग करते हैं ! बदतमीज़ीका इन्हें मज़ा मिलेगा।"

अब पुलिसका आदमी भी ज़रा बिगड़ गया। पास आकर उसने मुझसे पता पूछा। मेरे अभिभावकका नाम सुनते ही उसके मुँहपर हवाइयाँ उड़ने लगीं। अरे ! ये तो उन्हींके विभागके एक बड़े अफ़सर हैं।···

"सुनिए, आप लोग इतने एकान्तमें न बैठा करें। यहाँ डर है।" और वह महाशय चलते बने। तुम चकित-से हाथमें घड़ी और रुपये लिये खड़े रहे। मैं तुम्हारे वणिक्-पौरुषसे खीझ उठी थी। तभासे···

आगे : सुकीर्ति गुप्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाँ, तुम्हारा मनुहारोंसे भरा चेहरा बड़ा दयनीय दिखाई दिया। इस पुरुषकी छाँह कोई कैसे क्षण-भर भी टिक पायेगी। वितृष्णासे भरी मुँह मोड़कर चल दी। तुम भी मेरे पीछे-पीछे आये। टैक्सीमें घर तक छोड़ गये किन्तु एक भी बात नहीं हुई जैसे अघटन घटना घटी हो।

तुम्हीं बताओ न। मेरा क्या दोष है? मैं तुम-जसे पुरुषको आत्मसमर्पण नहीं कर पाती हूँ। फिर भी तुम्हारे साथकी अधिक उपेक्षा भी नहीं कर पायी। मैं क्या चाहती हूँ…? नारी और पुरुषके सम्बन्धकी अजीब रूपरेखा है तुम्हारे विचारमें। दया, माया, ममता, स्नेह – सब-कुछ ले लो! किन्तु शरीर क्या इससे भी बड़ा है? छिः! तुम पशु-पुरुष हो, सिर्फ़ इसी लक्ष्यको लेकर आगे चलते हो। मेरा कोई कुछ व्यक्तित्व तुम्हारे सामने नहीं आता…सिर्फ़ नारीका ढाँचा-मात्र। जैसा मेडिकल कॉलेजमें टँगा रहता है – चेतना-संवेदनाशून्य! नौसिखिया चिकित्सक उसकी चीर-फाड़ करते हैं।

इसी आत्मसमर्पणकी विह्वल आशामें रमकर तुमने कहा था, "चलो, हम लोग कुछ दिन पहाड़पर रह आयें। साथ-साथ उपन्यास समाप्त करेंगे! और तुम्हारा मन कुछ तो झुकेगा, ओ पाषाणी!"

अनायास लरजता हाथ मेरे कन्धोंपर टिक गया। सहसा पूछ बैठी, "सच? एक बात पूछूं?…क्या तुम मुझसे शादी करोगे?"

तुम्हारा हाथ झटके-से उठ गया। हो गया मुँह भदरंग! जेबसे रूमाल निकालकर मुँह पोंछा। न जाने कितनी स्याही पुं गयी थी वहाँ।

मैं चुपचाप निर्निमेष भावसे तुम्हा मुद्राएँ देख रही थी, जो अब भी बन-बि रही थीं। तुमने सप्रयास हँसकर क "तुम ऐसा कह रही हो? जो कि परम्परामें विश्वास नहीं करतीं। बँधोगी काश, तुमने ऐसा पहले कहा होता! मैं कितना सुखी होता!"

ओह! तुम कितना झूठ बोल रहे दहेजके नक़द रुपयोंके लोभमें और जाति-परिवारकी मर्यादाओंके फेरमें पड़ तुमने शादी की थी। कुसुमको भी स्वयं दो बार देखने गये थे। और बौद्धिकताकी असमानताका ढोंग रचकर धोखा देना चाहते हो!…

"क्यों, तलाक दे सकते हो! कम 'जुडीशियल सेपरेशन' ले सकते हो!

तीक्ष्ण दृष्टिसे मैंने फिर देखा। अभ परीक्षकका कौतूहली मन अब खेल कर था। बेचारी कुसुम!…

एक लम्बी साँस लेते हुए तुमने क "तुम नहीं जानतीं, पुरुष विवाह क कितनी ज़िम्मेदारियोंमें बँध जाता है। इतनी पढ़ी-लिखी नहीं है, जो नौकरी खुद जीवन पालन कर सके। उसे हमें एक सहारेकी ज़रूरत है…।" तुमने मोटा चश्मा उतार साफ़ करते कहा, तो वह दुनियामें टूट जायेगी…जड़-से उखड़ जायेगी। शादी होनेके बाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नातेसे कमसे कम इतना कर्तव्य तो शेष रह ही जाता है।"

मैं तुम्हारी उन छोटी आँखोंमें अपने भाव ढूंढ़ रही थी···मुझे उनमें उन्मादके अलावा कुछ दिखाई नहीं दिया···तुम और भी अपरिचित-से लगे मुझे।

"और मेरे प्रति ?" अचानक, अनायास मेरे मुँहसे निकल आया।

मैं तुम्हें छल रही थी – फिर भी तुम मौन ही रहे, जैसे कुछ सुना ही न हो। तुम एक हारी उदास हँसी बिखेरते बोले, "आधुनिक नारी चाहे कितनी ही बौद्धिकता-का दम क्यों न भरे, किन्तु रहेगी औरत ही – उसे भी वही पत्नीत्वका बन्धन चाहिए, वही सिन्दूर-भरी माँग – वही पराधीनता ! तुम्हें मेरे ऊपर क्या इतना भी विश्वास नहीं ?···एक वह थी साइमन द ब्यूवो, जो सार्त्रके साथ बरसों रही किन्तु बिना किसी सामाजिक बन्धनके, और बड़े आनन्दकी ज़िन्दगी उनकी थी ! अरे, कर्तव्य और उत्तरदायित्वका भार मनुष्यको पंगु बना देता है ! क्या वहाँ भी वह इतना स्वच्छन्द, सीमारहित, सृष्टिसे होड़ लगाता प्रेम-सुख भोग सकता है।···तुम क्या बन्धुत्वको संसारी सीमाओंमें बाँधना चाहती हो ?···" तुम्हारी बड़ी गम्भीर-सी मुखमुद्रा थी। पर मुझे ज़ोरोंसे हँसी छूट रही थी ! कायर कहींके !···

और मुझे बड़े ज़ोरोंसे जँभाई और उबकाई-सी आयी। न जाने कैसी गन्ध कमरेमें आ रही थी – शायद कहीं पासकी नाली साफ़ हो रही हो ! अपने ऊपर संयम रखते हुए बोली, "बन्धुतामें सहृदय स्नेहकी भावना ही अधिक रहती है, प्रतिदानकी भी, पर सकाम प्रेमकी नहीं – वहाँ 'सेक्स' की भिन्नताका बोध भी नहीं रह जाता, न ही उसके प्रति इतना लगाव ही होता है !···· इसलिए उसमें मानसिक मिलन-विचार, भावोंका मेल ही अनावश्यक होता है। सार्त्र और साइमन द ब्यूवो दोनों अविवाहित थे और आज भी हैं। तुम एकको धोखा देकर दूसरीको ठगना चाहते हो ! पर··· नहीं, शारीरिक मिलन मित्रको प्रेमी बना देता है····जहाँ स्त्री और पुरुषके पार्टकी अदायगी भी होती है।"

मेरे वाक्यको काटते हुए तुम बोले, "तुम समझती क्यों नहीं ! आजकल बन्धुत्व-का यह घिसा-पिटा अर्थ नहीं है बल्कि एक दूसरेके प्रति 'कम्प्लीट सरेण्डर' (पूर्ण समर्पण) ही बन्धुत्व है।"

"फिर भी इसके अधिकारी व्यक्ति तुम नहीं हो !" मैं स्वयंको ज़ब्त न कर पायी। कोई कितना 'पोज़' कर सकता है ! अपने अभिनयको झूठे तर्कोंसे मान्यता देना चाहता है, जिससे मुझे ख़ास नफ़रत है। मैं घड़ी देखती हुई बोली, "सॉरी, मुझे अपनी एक सहेलीके घर जाना है ! ज़रूरी काम है।"

तुम देखते रहे गये अधूरे, कटे-ठगे, क्षुब्ध-से।

थोड़े दिन रुककर फिर वही रवैया, किन्तु संयमित !

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदयकी ओरसे
आपके लिए निश्शुल्क उपहार :

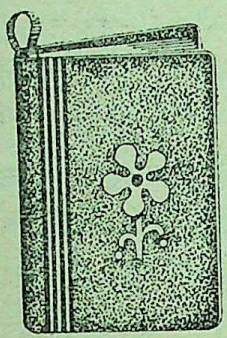

● नये वर्षकी एक ख़ूबसूरत डायरी–

अतिरिक्त मूल्य दिये बिना आप यह डायरी प्राप्त कर सकते हैं,

–यदि वर्ष-भरके लिए ज्ञानोदय किसीको उपहारमें दें।

–यदि विशेषांकमें प्रकाशित प्रश्नावलीका उत्तर भेजें।

–आपकी ओरसे यह उपहार कार्ड ●

आपके मित्र-परिचितको, जिसे आप वर्ष-भरके लिए ज्ञानोदय उपहारमें देना चाहें।

● ज्ञानोदयके संग्रहणीय विशेषांक –

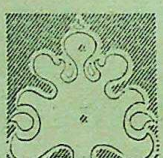

ग्राहक बनते ही कोई एक उपलब्ध विशेषांक आपके हाथों होगा :

★ समकालीन भारतीय कहानी विशेषांक : १९६४ ★ पत्र-विशेषांक : १९६३ ★ हास्य-व्यंग्य विशेषांक : १९६२ ★ नवोदित लेखिका विशेषांक १९६२ ★ भारतीय परिवार विशेषांक : १९६१ ★ भारतीय इतिहास कथा विशेषांक : १९६० ★ विज्ञान विशेषांक : १९५९ ★ प्रणय विशेषांक : १९५८ ★ संस्मरण विशेषांक : १९५७ ★ नैतिकता विशेषांक : १९५७ ★ आधुनिकता विशेषांक १९५६ ★ एशिया विशेषांक : १९५५

● ज्ञानपीठ पत्रिका

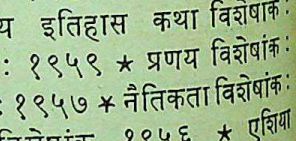

लेखन-प्रकाशनकी अधुनातन दिशा-प्रवृत्ति और उपलब्धि परिचायिनी मासिकी, वर्ष-भर आपको मिलेगी, यदि ज्ञानोदयके आप दो ग्राहक बना दें।

● भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

यदि आप तीन ग्राहक बना दें तो ५ रु० मूल्यकी और पाँच ग्राहक बना दें तो १० रु० मूल्यकी मनपसन्द पुस्तकें उपहारमें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुकान्त कहानी

राजा दुबे

मृत्यु-रस

उस दिन उत्सवमें, उनसे भेंट होनेपर, उन्होंने मुझे कतराते देखकर पकड़ लिया, "लेखकजी महाराज, मैंने तुम्हारी कहानी ('ज्ञानोदय' जुलाई '६३के अंकमें प्रकाशित लेखक-की 'उपन्यास' नामक कहानी, जो अब वास्तवमें उपन्यास हो गयी है। लेखककी इस मजबूरीको पाठक क्षमा करेंगे, और उत्पन्न असुविधाको भी) पढ़ ली है।"

मैं अचकचाकर कुछ बोलनेको ही था कि उन्होंने तपाकसे अपनी बात आगे बढ़ायी, "मेरे पिताकी मृत्युमें, तुमने बड़ा रस लिया ? क्या मेरे मरनेपर भी कोई कहानी कह सकोगे ? और कह सको तो कहानीका शीर्षक देना : मृत्यु-रस।"

अन्तिमसे पहलेका वाक्य मेरे भीतर उतर गया। ऐसे अप्रत्याशित गम्भीर वाक्यके बाद भी आदमी शान्त रह सकता है, और, अपनी मुद्रासे, बुद्धकी कभी देखी हुई, एक मूर्ति मुझे याद दिला सकती है, यह इन पंक्तियोंके लेखकको आज भी आश्चर्यका विषय है।

मैं उन्हें, अबतक, पूरी तरह पी गया था और आश्वस्त होकर अपने बचाव पक्षमें ज़ोर-दार दलील देनेकी सोच ही रहा था कि उत्सवमय औरतें, जो देखनेमें लड़कियाँ अधिक मालूम देती थीं, हमारे पास इकट्ठी हो गयी थीं। ऐसा नहीं कि मैं उनमें किसीको जानता न होऊँ। लेकिन उस वक़्त मैंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनके परिचयका निरादर इस सीमा तक किया कि कुछके कुछ भी पूछनेपर मैं सिर्फ़ हाँ-हूँ में उत्तर देता गया। मर्दकी दिलचस्पी-से खारिज औरत, लेखकके अस्तित्वको भी नकार सकती है, यह मैंने उस दिन जान लिया था, जब कि उन औरतोंमें-से कुछका तो प्रिय लेखक आज तक भी मैं बना हुआ हूँ।

वे औरतें उनसे पता नहीं क्या-क्या बातें करती रहीं। मैं पास होकर भी कुछ नहीं सुन सका। कभी-कभी हम अपनेसे कितने अजनबी हो जाते हैं? शब्दकी उच्चा-रित ध्वनि कहाँपर जाती है? कान होते हुए भी श्रवण-गन्धसे प्राण इतने क्यों वंचित रहना चाहते हैं? गो, वे औरतें अनुपातमें, मुझे देख ज़्यादा रही थीं और उनसे बातें कम कर रही थीं।

तभी बीचमें-से टूटकर उन्होंने मुझे मुखा-तिब होकर कहा, "चलो, जब तुम मिल ही गये हो तो मौक़ेसे फ़ायदा क्यों न उठा लूं? घर तक तुम्हारा साथ रहेगा, तो लगेगा यह छोटा-सा सफ़र मैंने काटा नहीं, बल्कि कट गया। और यह भी क्या कम उप-लब्धि है?"

मैं और वे भीड़-भरी सड़कोंपर किनारे-किनारे चलने लगे। मुझे लगा कि उनके भीतर कुछ है, जो अभी-अभी चमकने लग जायेगा और वे उसे कहेंगी और कहते-कहते उनका घर आ जायेगा और वे घरतक साथ देनेके लिए, धन्यवाद कहकर, दोनों हाथ जोड़कर, निर्लिप्त भावसे अपने घरकी सीढ़ियाँ चढ़ जायेंगी। लेकिन फर्लांग गुज़र के बाद भी, वे निःशब्द चलती रहेंगी, ऐ आशा मुझे नहीं थी।

मैंने उनको उनसे तोड़ते, बल्कि, छी हुए कहा, "...और आपके क्या हाल हैं?"

उन्होंने मुझे इस तरह पलटकर दे कि जैसे वे मुझे खा जायेंगी – कुछ भावसे जैसे कह रही हों, 'तुम यह पूछने कौन होते हो।' लेकिन उन्होंने बड़ी नर उत्तर दिया, "सब ठीक ही चल होगा।"

वे मेरे अस्तित्व मात्रको इतना अ श्यक कर देंगी – यह किसको पता यह सही है कि वे रास्तेको काट रही लेकिन मुझे रास्ता काटने लगा है, उनके ज्ञान और अनुभवमें उस सम रहा हो, यह बात मैं आज भी मानने तैयार नहीं हूँ।

"हाँ, तुम्हारी पत्नी कैसी है? बाबा, देखो न, कितने दिन हो गये तु घर गये हुए! लेकिन, तुमने भी चाहा: मैं आऊँ? आहूत आनेमें मेरे की सार्थकता भी क्या है। अनिमन्त्रित जानेका मजा भोगकर ही तो आ अतिथि-जैसे शब्दको गढ़ा होगा।" वे यह कहकर मेरी तरफ़ इस तरहसे जैसे, हँसनेका छूठा अभ्यास दुहरा रही

सड़कोंपर आते-जाते लोगोंके भी हम इतने गम्भीर हैं, यह मेरे सुखकर प्रतीत हुआ। आजकी इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शित भेंटके लिए मैंने काल-खण्डकी सत्ताको मन-ही-मन प्रणाम कर लिया।

वे चलते-चलते रुक गयीं, और बोलीं, "अगर मैं फाहशा होती तो तुम, लेखक, फिर भी मुझे इसी तरह जीते क्या?" अभी क्षण-भर पहले जो हँसमुख अनुभव उन्होंने मुझे सौंपा था, उसका खण्डन इस तरह हो जायेगा, इसका आभास तक मुझे न था। और मैंने सोचा कि वह अनुभव अब मेरी निधि नहीं रह सकेगा। क्यों, आखिर क्यों, वे स्वयं इतना भारवाही रह-कर मुझे रिक्त देखना-छोड़ना चाहती हैं?

मेरे पास इसका उत्तर न हो, सो बात नहीं। लेकिन मैंने उस क्षणको सब-कुछ समर्पित कर दिया, शब्द, अभिव्यंजना, सब-कुछ। और, यों ही अपनेको अनुत्तरित छोड़ दिया कि जहाँतक वे पानीकी तरह मुझ काठको बहा ले जायें, अवश्य बहाकर ले जायें। मैं भी तट नहीं चाहूँगा। तटपर-की पराजय तो और भी नहीं।

मेरी चुप्पी, निर्जीव चुप्पी देखकर वे तिल-भर तिलमिलायीं। नाकपर अपनी अँगुलिया फेरते हुए उन्होंने वहाँ शायद, हलके गुस्सेकी एक मक्खीको बिठाल लिया था। मैंने नतमस्तक होकर उस मक्खीकी जी-भर आराधना की थी, यह मुझे आज भी याद है।

मैं, यानी, उनका लेखक, 'नग्न हूँ परन्तु निर्लज्ज नहीं' (शायद कविवर बच्चनजीका संस्मरण पुस्तकका कुछ ऐसा ही नाम है, इसलिए उनका आभार मानता हुआ····) का भाव दिखाते हुए चुप रह गया। वे सुदूर पश्चिममें उड़ते हुए एक काल्पनिक पक्षी, एक बादल और एक सूर्यास्तको जीने लग गयी थीं।

उनका घर कब आ गया, यह उनसे पहले मैंने जान लिया था। वे बिना कुछ कहे भीतर चली गयी थीं।

मैं भीड़-भरी सड़कोंपर फिर अकेला था, इतना अकेला कि उनके सवालका जवाब स्वयंको देता हुआ। वे नहीं थीं, अगर होतीं तो सुनतीं कि मैं कह रहा था कि उन्हें वेश्या होना चाहिए था, वेश्या, जिसे सब भोग सकते और एक ऐसी अभूत-पूर्व सुन्दर चीज़का अधिकारी सिर्फ़ एक व्यक्ति कैसे हो सकता है, आज भी मेरे लिए यह प्रश्न विचारणीय बना हुआ है। पर मेरी यह ग्रन्थि अमर हो, ऐसी कामना मन बार-बार आज भी कर लेना चाहता है:

आह मेरा श्वास है उत्तप्त
धमनियों में लहू की धार –
प्यार है अभिशप्त –
तुम कहाँ हो नारि?

'अज्ञेय'

(इन काव्य पंक्तियोंका यहाँ क्या तुक है मैं नहीं जानता। फिर भी जब याद आ गयी, तो इनको उद्धृत करना लेखक अपना फ़र्ज़ मानता है। पाठक, यदि ज़रूरत समझें तो इन्हें जोड़ लें, अन्यथा छोड़कर भी पूराका पूरा रसास्वादन ले सकते हैं।)

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

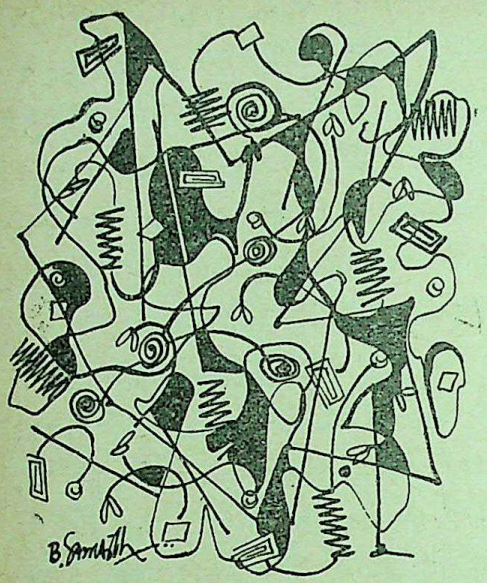

श्रीलाल शुक्ल

मनीषीजीकी एक रात

■

हो सकता है व्यंग्य समझमें आ जाये और भाऊ समर्थका ऊपरवाला चित्र समझमें न आये लेकिन यह रचना यदि एक व्यक्तिपर व्यंग्य है तो चित्र सारे समाजपर···

पूर्वार्द्ध :

खुदाने कहा, रोशनी हो, और देखो रोशनी हो गयी।

आज वे इस शहरमें इतिहास-समितिकी वार्षिक बैठकके अवसरपर आये हुए थे। हर सालकी भाँति इस साल भी उनसे आशा की गयी थी कि वे किसी सनसनीखेज़ तथ्यका उद्घाटन करेंगे। और देखो, उन्होंने ऐसा ही किया।

पर साल उन्होंने भावात्मक समन्व हिसाबसे सिद्ध किया था कि औरंगज़ेब शिवाजी बड़े गहरे दोस्त थे। उनके अबतक लिखे गये इतिहासको उन्होंने बताया था; उनके इतिहासकारोंको कुछ ज़्यादा न कहकर सिर्फ़ पेशेवर भावुक – इन दो चुटकियोंमें उड़ा दिया इस साल उनके सामने एक दूसरी चुनौती थी।

आँखसे चश्मा उतारकर उन्होंने से चेहरा पोंछा। बड़ी-बड़ी नंगी उन्हें हॉलमें मधुमक्खियों-जैसे लगभग हज़ार अस्पष्ट, अधूरे चेहरे दिखाई उनके मनमें एक विशेषण बिना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्ष्य किये गुब्बारे-जैसा फूलकर फूटा 'टुच्चे'।

अब उन्हें अपनी बात बिना किसी झिझकके कहनेमें आसानी हो गयी। इस सालकी सामयिक चुनौती मंजूर करते हुए उन्होंने कहा, "भारतवासी कभी किसीसे नहीं हारे। विदेशी इतिहासकारोंने हमें एक गिरी हुई, कई बारकी पराजित जाति बताने-की कोशिश की है। वे···पर जाने दीजिए। मैं उनके बारेमें नहीं, पहले एक घटनाके बारेमें अपना पर्चा पढ़ूँगा।

मेरा मतलब भारतपर सिकन्दरके आक्रमणसे है।"

लोगोंने तालियाँ पीटीं। उन्हें यक़ीन हो गया, अब ये बिना समझे हुए मेरी बात सुनेंगे, तालियाँ पीटेंगे। उन्होंने तालियोंके बुझनेका इन्तज़ार किया। फिर मौक़ा देखकर वे श्रोताओंपर सिकन्दरकी तरह हमला करनेको तैयार हुए। इतमीनानसे माइकके नज़दीक आकर वे अपना गाल बड़े प्यारसे सहलाने लगे। उसे एक ऐतिहासिक तथ्य बनाकर उन्होंने कहना शुरू किया, "पुराने पेशेवर इतिहासकारोंने हमें बताया है – और यही हम सब बचपनमें पढ़ते हैं – कि हम आपसकी फूटके कारण सिकन्दरसे हार गये। पर मैंने, आप देखेंगे, इस पर्चेमें साबित करनेकी कोशिश की है···"

सामनेकी कुरसियोंपर उन्हें संस्कृति और अनुसन्धान-जैसे कड़े-कड़े लफ़्ज़ोंसे जूझनेवाले कई बड़े-बड़े अफ़सर दिखाई दिये। उनके लाभके लिए उन्होंने उसी दम देसी भाषा छोड़कर विलायतीमें कहा, "·····मैंने साबित करनेकी कोशिश की है कि, नम्बर एक, हममें आपसमें फूट नहीं थी, आजकी तरह हम तब भी एक थे, और, नम्बर दो, कि हम यूनानियोंसे कभी नहीं हारे। हमने मिलकर सिकन्दरका मुक़ाबला किया था, उसे हराया था।"

एक जगह उन्हें काफ़ी धुआँ-सा उठता दिखाई दिया, किसीने शायद सिगारका ज़ोरदार कश लिया हो। एक रूईदार आवाज़ आयी, "और पोरस? पोरस कैसे पकड़ा गया था?"

"पोरस कैसे पकड़ा गया था?" उन्होंने मज़ाकमें यह सवाल दोहराया। दूसरेकी बातकी दुमको अपनी बातकी नकेल बनाने-वाली आदत उन्होंने प्रागैतिहासिक कालमें, जब लोग उन्हें भौतिक द्वन्द्ववादी समझते थे, सीखी थी। प्रागैतिहासिक-काल अब अनुप-योगी था, ख़त्म हो चुका था, पर उस आदतकी उपयोगिता अब भी थी।

वे कहते गये: "पोरस तो पेशेवर इतिहासकारोंकी क़लमकी नोकसे पकड़ा गया था।" वे असरके लिए सके, – "उसे भूल जाइए। इस पर्चेमें मैंने बताया है कि पोरसके दरबारमें ख़ुद सिकन्दरको गिरफ़्तार करके लाया गया था। चौंकिए नहीं, यह तर्ककी, प्रमाणकी बात है।···"

वे अपना नया माल बेचते गये, "····· पर सिकन्दरके पक्षमें यह बताना आवश्यक है कि मौतका सामना होनेपर भी वह हिचका नहीं। वह टूट गया, पर झुका नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पोरसने उससे पूछा, 'बोलो, तुम्हारे साथ कैसा सुलूक किया जाय ?' इसपर सिकन्दर-ने वही प्रसिद्ध जुमला कहा, 'जैसा एक राजा दूसरे राजाके साथ करता है'।

लोग एक क्षण चुपचाप बैठे रहे। फिर अचानक सभीको कुछ याद आया। तालियाँ।

वे अपना चश्मा पोंछने लगे। बीचसे एक दुबला-पतला, धोती-कुरतेवाला आदमी सिगार फूँकता हुआ उनके सामनेसे निकला। उनके मुँहपर धुआँ छोड़ता हुआ चला गया। वे मज़ेसे मुसकराये।

उन्होंने अँगरेज़ी मुहाविरेमें सोचा कि ईश्वर अपने स्वर्गमें है और दुनियामें सब-कुछ ठीक है। इतमीनानसे उन्होंने अपना पर्चा पढ़ डाला। पर्चा, कहनेकी ज़रूरत नहीं, अँगरेजीमें था। उसमें सैकड़ों इतिहास-कारोंके नामोंका उल्लेख था। हज़ारों उद्धरण थे। मनीषी लोग जैसा लिखते हैं, बिलकुल उसी मॉडलपर था। उसमें कहीं भी कोई सूराख़ नज़र नहीं आता था।

लोग कुछ देर पर्चेकी विद्वत्तासे सहमे बैठे रहे। फिर तालियाँ बजाते रहे।

"सवाल ? किसीको सवाल पूछने हैं ?"

अध्यक्षके इस सवालपर एक बुज़ुर्ग एक जगह खड़ा हो गया। बोला, "पहले अपना परिचय दे दूँ। मैं एक पेशेवर इतिहास-कार हूँ।"

वे मुसकराये, "मैं जानता हूँ।"

अध्यक्षने कहा, "आप सवाल पूछिए।"

"इस निबन्धमें हम लोगोंको गहरा धक्का लगा है।"

उन्होंने कहा, "यही ! इस निबन्ध यही उद्देश्य था।"

अध्यक्षने बुज़ुर्गको कुछ और बोल पहले टोका, "सवाल ? सिर्फ़ सवाल पूछि समीक्षा नहीं होनी चाहिए।"

"क्यों नहीं होनी चाहिए ?"

"सवाल ! सवाल पूछिए। सम नहीं।"

"मैंने सवाल ही पूछा है। मेरा है, समीक्षा क्यों नहीं होनी चाहिए ?"

अध्यक्षके कुछ बोलनेके पहले ही माइकके नज़दीक मुँह लाकर बोले, इसलिए, मेरे दोस्त, कि सवाल अभी मौजूदगी ही में हो सकता है। समीक्ष बादमें, मेरी पीठ पीछे भी हो सकती है कि लोग पिछले बीस सालसे करते रहे हैं।"

फिर सवाल नहीं हुए। सिर्फ़ ता हुईं। लोग यह जानकर कि वे हमेशा थे और कभी किसीसे नहीं हारे थे, हु हुए, बच्चोंको पीटने, पड़ोसियोंके वि झूठी गवाही देने, रिश्वतख़ोरोंके सामने निकालनेकी घटनाएँ भूलकर अपने घरोंकी ओर चल दिये।

उत्तरार्द्ध :

रात शहरके सभी प्रमुख मनी उन्हें शहरके सबसे प्रमुख होटलमें दा थी। मनीषी लोग मनीषापूर्ण मज़ाक रहे और मनीषापूर्वक शराब पीते रहे शराब और मनीषा अपने वज़न और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में इतनी घुलमिल गयी कि किस बातके नीचे मनीषा है और किसके नीचे शराब, यह जानना कठिन हो गया, तब उन्होंने तय किया कि इस भावात्मक समन्वयके बाद खाना खाया जाये।

वे प्रायः सभी सफल मनीषी थे और ऊँची मनीषाकी जहाँ जहाँ दरकार थी वहाँ वे उसे सालोंसे, थोक और ख़ुदरा – ठेकेपर, और कभी-कभी सीधे, सभी तरहसे पहुँचाते चले आ रहे थे। ज़रूरत पड़नेपर, बिना विदेशी मुद्राकी दिक़्क़त महसूस किये, वे विदेशी मनीषाका आयात भी कर लेते थे। इससे वे सभी क़रीब-क़रीब अन्तर्राष्ट्रीय हो गये थे और इस वक़्त उनके मज़ाक़, उनकी महत्त्वाकांक्षाएँ और उनके खानेका चिट्ठा – सभी कुछ अन्तर्राष्ट्रीय हो रहा था।

खानेके बीचसे ही मनीषीजीके पेटमें एक हलकी-सी चुभन होने लगी थी, पर उसका बुरा अनुभव उन्हें खानेके बाद लाउंज-रूममें हुआ। ज़्यादातर लोग कॉफ़ी पी रहे थे। जो कॉफ़ी पी रहे थे वे मामूली मनीषी लोग थे, वे ज़्यादासे ज़्यादा सिकन्दर और पोरसकी कुश्ती बराबरीपर छुड़ा सकते थे। मनीषीजीने सिकन्दरको पोरससे हरा दिया था। वे खानेके बाद ब्राण्डी पी रहे थे।

धोती-कुरतेमें एक दुबला जिस्म दिखाई दिया। एक क्षणके लिए उनकी भौंहें चढ़ गयीं। फिर उन्होंने मुसकराते हुए कहा, "प्रोफ़ेसर राय, मैं यहाँ हूँ। आइए, जी भरकर धुआँ छोड़ लीजिए। शामवाला धुआँ मुझे मिला नहीं था।"

प्रोफ़ेसर राय सिगार पीते हुए उनके आगे आकर खड़े हो गये। बोले, "तुम्हारी आजवाली थ्योरी ताशका महल है। उसे गिरानेके लिए धुएँसे ज़्यादा किसी वज़नी चीज़की ज़रूरत नहीं है।"

"मुझपर अपने लफ़्ज़ नहीं, अपना धुआँ फेंकिए। आपने लीकॉकका वह मज़मून नहीं पढ़ा, 'आक्सफ़ोर्ड ऐज़ आई सी इट'?"

उनके पास कोई महिला आकर खड़ी हो गयी थी। उन्होंने समझाया, "लीकॉकने कहा है, आक्सफ़ोर्डमें विद्यार्थीपर पुराने प्रोफ़ेसर जितना ही धुँआ फेंकते हैं, विद्यार्थी जितना ही धुआँता है, उतना ही क़ाबिल होता है।"

महिला हँसी।

"मैं वहाँका धुआँ पहले खा चुका हूँ। अब प्रोफ़ेसर रायके सिगारका धुआँ खाना चाहता हूँ।"

प्रोफ़ेसर राय चलनेको हुए। बोले, "तुम्हें अब धुएँकी और ज़रूरत नहीं है। अपना चेहरा ग़ौरसे देखना।"

उन्हें बिलकुल बुरा नहीं लगा। जब वे यूनिवर्सिटीमें थे, तब कई बार विदेश जा चुके थे। बादमें इस इतिहास-समितिमें आये। यहाँ रहते हुए उन्होंने भूगोलके फिर कई चक्कर लगाये। कई जगहोंपर वे कई तरह-के आदमियोंसे मिले थे और उनका अनुभव था कि जानवरोंकी बात और है, पर आदमियोंकी बातका कभी बुरा नहीं मानना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राय महाशयके टलते ही वे उस अधेड़ महिलाके साथ गुम हो गये। उनकी ज़िन्दगी कितनी वीरान और आवारा रही, इस मज़मूनपर वे उसे एक सारगर्भित व्याख्यान सुनाने लगे। तभी जिस चुभनका पहले ज़िक्र आया है उसका एक तीखा-सा अनुभव उनके पेटमें हुआ।

कोई भी डॉक्टर उस चुभनका मतलब या इलाज नहीं बता सकता था, पर यह उनकी पुरानी तकलीफ़ थी और अभ्यासके सहारे वे इसे अच्छी तरह पहचानते थे। उन्होंने महिलासे माफ़ी माँग ली। वे बची हुई ब्राण्डी एक साँसमें निगल गये और जल्दी-जल्दी फिरसे बधाइयाँ लेने और धन्यवाद देनेके लिए मेज़बानोंकी ओर चल दिये। उनके पेटकी चुभन अब फैलकर एक शाख़-जैसी, फेफड़ेकी ओर बढ़ रही थी और दूसरी ओर घूमकर रीढ़की हड्डी तक जा रही थी। उनके पैरोंकी नसें तनी-सी जा रही थीं।

मेज़बानोंने कहा, "अभीसे ?"

"गुडनाइट, गुडनाइट। मुझे ज़रूरी, बहुत ज़रूरी काम है।"

किसीने उन्हें उनके होटल तक पहुँचाने-के लिए कहा। उन्होंने टूटती आवाज़में माफ़ी माँगी। बोले, "मैं एक दोस्तकी कार लाया हूँ।" चलते-चलते उन्होंने महसूस किया, उनके पाँवोंकी पिण्डलियाँ पत्थर-जैसी हुई जा रही हैं।

जाड़ा था। चेस्टरसे अपने जिस्मको ढके वे कारको तेज़ीसे चलाकर एक वीरान सड़कपर लाये। सड़क छायादार थी [illegible] बत्तियाँ दूर-दूर थीं। वे सीटी बजाने लगे पर सीटी ठीकसे नहीं निकली। एक जगह उन्होंने गाड़ी रोकी, फिर थोड़ा आगे बढ़े। आख़िर, एक पेड़के नीचे गाड़ी खड़ी करके वे उतर पड़े। उन्होंने सिगरेट जलायी, एक हाथ पैण्टकी जेबमें डाले हुए, दूसरेसे वे अपना गाल सहलाने लगे। फिर फ़ुटपाथ पर लम्बे-लम्बे डगोंमें टहलने लगे। भर्रा गलेसे उन्होंने एक गाना भी निकाला। वह उन्हें कुछ बेगाना-सा जान पड़ा। चुप हो गये। उन्हें लगा कि ब्राण्डी कुछ ज़्यादा चढ़ गयी है। लापरवाहीसे उन्होंने कहा, "उँह !" कुछ दूरपर बिजलीके खम्भेको देखकर आँखें सिकोड़ीं। अचानक उनकी पिण्डलियाँ और कस गयीं। उनका पूरा जिस्म एक चुभन बन गया।

ढीले सैण्डिलोंकी अस्वाभाविक-सी आवाज़ निकालती हुई एक लड़की उनके पाससे निकली। उन्होंने अँगरेज़ीमें कहा, "इतनी देर बाद !"

लड़की ठिठकी, फिर फुसफुसाकर बोली···"चुप् ! पुलिस् !"

वे कुछ सहम-से गये। उन्हें अचानक प्रोफ़ेसर राय याद आ गये। लड़कीको अन्दर लेनेके लिए उन्होंने तेज़ीसे कारका दरवाज़ा खोला। वे प्रौढ़ अवस्थाके एक महापुरुष थे और उन्हें जो कुछ सुन्दर मिली थी, शरीरकी नहीं, मनीषाकी माँ मिली थी। किसी लकीरके आगे बड़ी लकीर खींचकर पहली लकीरको छोटा कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जा सकता है। इसी हिसाबसे यह लड़की कम-उम्र और खूबसूरत थी।

गाड़ी साबुनदानी-जैसी थी और छोटी थी। वे सड़कपर कुछ आगे निकल आये, जहाँ बिजलियोंके खम्भे और भी दूर-दूर हो गये थे। उन्होंने गाड़ीको सड़कसे उतारकर एक पेड़के नीचे खड़ा कर दिया।

लम्बा-चौड़ा मैदान था और अँधेरी रात थी। इस वक़्त उसमें बॉयरन, शेली और कीट्सकी आत्माएँ चिरन्तन रहस्य और आनन्दकी मुद्रामें विचर रही थीं। दिनको मैदानका एक दूसरा उपयोगितावादी पहलू सामने आता था, जब वहाँ खच्चर और गधे घास चरनेकी कोशिश करते थे, लड़के क्रिकेट खेलते थे। अपने समूचेपनमें मैदान कलाकी आनन्दपूर्ण व्यर्थता और उपयोगिता—इन दोनों पहलुओंकी खानापूरी करता था।

मनीषीजी चेस्टर ज़मीनपर बिछाये लेटे हुए थे। उनके जिस्मकी चुभन ख़त्म हो गयी थी। लड़की अर्नेस्ट हेमिंग्वेकी किसी नायिकाकी तरह थी। उनकी सभी ऐतिहासिक गवेषणाओंमें यही एक ऐसी थी, जिसे वे इस वक़्त मुसकराकर एकदमसे 'हम्बग' नहीं बता सकते थे। उन्हें अब अपनेसे बड़ा प्यार छूट रहा था और जम्हाइयाँ आने लगी थीं। उन्होंने प्रेमोत्तरकालीन बातचीत शुरू की।

"तुम्हारा क्या नाम है?"

"कुछ नहीं।" वह खिलखिलाकर, पर धीरेसे हँसी।

"मेरा नाम नहीं जानती हो?"

"नहीं।"

उन्होंने अपना नाम बताया, पर लड़कीने कुछ ऐसा नहीं दिखाया जिससे पता चले कि उनसे सटकर लेटने-भरसे उसका मनुष्य-जन्म सफल हो गया है। वे तेज़ीसे बोले, "जानती हो मैं कौन हूँ?"

"नहीं।"

"मैं गुण्डा हूँ।"

लड़कीने थककर साँस ली। बोली, "तब तुम वकील हो। ज़्यादातर वही लोग मेरे पास आकर अपने लिए ऐसा कहते हैं।"

वे नाराज़ होने लगे थे। बोले, "मैं वकील नहीं हूँ। मैं एक इण्टेलेक्चुअल हूँ। अफ़सोस, तुम यह बात नहीं समझ पाओगी।"

लड़की खिसककर उनके और पास आ गयी और फुसफुसाकर बोली, "क्या तुम भी पुलिससे डरते हो?"

अपने देशके गिरे हुए बौद्धिक-स्तरपर उन्हें अफ़सोस हुआ। पोर्ट सईदके एक चकलेमें उन्होंने एक बार मिस्रके पिरामिडोंकी बात की थी। वहाँ उस लड़कीने उनकी बात समझ ली थी और जवाबमें उसने एक शब्द कहा था, "क्लियोपैट्रा।"

उनकी ब्राण्डी बोलती गयी, "तुम कुछ नहीं समझीं। अच्छा, कोशिश करो, समझो। मैंने आज साबित किया था···तुम नहीं समझोगी। मैं···तुम···इतिहासकारका मतलब जानती हो?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लड़कीने जम्हाई लेते हुए कहा, "मैं सिर्फ़ इतना जानती हूँ कि तुम चिड़ीके ग़ुलाम हो। सिर्फ़ बकबक करना जानते हो।"

तब वे ख़ुद ज़ोरसे हँसे। लड़कीने घबराकर कहा, "चुप्! पुलिस्!" उसकी घबराहटसे वे ख़ुद घबरा गये। उन्हें फिर प्रोफ़ेसर रॉयकी याद आ गयी। वे उठकर बैठ गये।

उन्होंने धीरेसे कहा, "तुम नहीं समझोगी।"

अँधेरा था। उन्होंने चारों ओर निगाह घुमायी। लड़की भी उठकर खड़ी हो गयी थी। वे ख़ुश हुए सोच रहे थे: सेक्स और धर्म और युद्ध – इन सबके साथ यों ही होता है। इनका कोई तर्क नहीं, इसीलिए इनमें कहीं-न-कहीं कुछ रह जाता है। जैसा भी हो, मनीषियोंकी यही निर्बुद्धिक लीलाएँ हैं। उन्होंने सोचा, इसपर एक टिप्पणी लिखी जा सकती है।

पर मनमें उन्हें कुछ खटक-सा रहा था। कन्धेपर चेस्टर डाले, कुछ लँगड़ाते-से वे कारकी ओर लौटे। उन्होंने लड़कीको अपराधी बताते हुए कहा, "तुम मुझे बिलकुल नहीं समझ पाती।"

"सभी शराब पीकर इस तरहकी बात करते हैं।"

अचानक उन्हें यह सम्भावना ठीक न पड़ी। वे चुप हो गये। कारके पास उन्होंने लड़कीसे पूछा, "तुम्हें कहाँ छोड़ दूँ।"

"यहीं। मैदानके उस पार मेरा घर है।"

"वेरी गुड।"

वे बटुएसे अन्दाज़ लगाकर नोट निकालने लगे।

पर अचानक नोटोंको हाथसे छूते ही उनके दिमाग़से ब्राण्डी और ग़ैर-ज़िम्मेदारी का सारा असर ख़त्म हो गया। उन्हें आज पर्चा याद आ गया।

एक मरियल कुत्ता प्रभावहीन ढंगसे छींकता हुआ उनके पास आया और दुलकी चाल चलता हुआ आगे निकल आया।

"फिर कहाँ मिलोगे?" लड़कीने पूछा। सरसराते नोटोंका स्पर्श उनकी उँगलियोंपर अब भी ताज़ा था।

कल उन्हें सबेरेसे ही ख़ुद ग्राहकोंसे मिलना होगा। यह याद आते ही उन्हें थकानने घेर लिया। गाड़ी स्टार्ट कर लड़कीके सरपर एक होनहार बापकी तरह उन्होंने प्यारसे हाथ फेरा, और सोचने लगे कि कलके कामके लिए उन्हें अब जल्दी जल्दी आराम करना चाहिए, क्योंकि आराम हराम नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

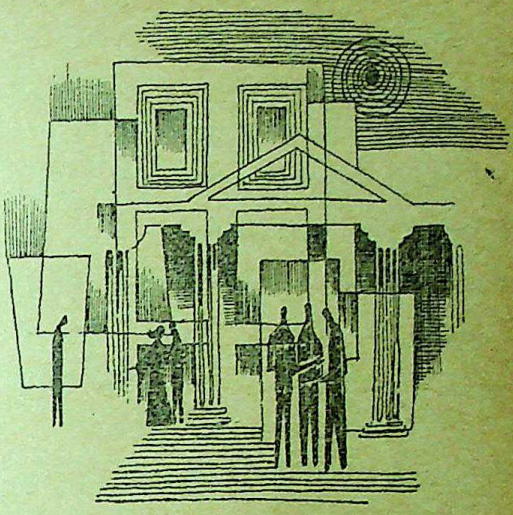

विनोद रस्तोगी

गूँगी दीवारें : बहरे दरवाज़े

पात्र : (१) वाइसचान्सलर (२) प्राक्टर (३) पुलिस अधिकारी (४) छात्र-संघका अध्यक्ष (५) छात्रा-संघका मन्त्री (६) छात्रा (७) अभिभावक

स्थान : किसी भी ऐसे नगरमें, जहाँ विश्वविद्यालय है, वाइसचान्सलरके बँगलेकी बैठक।

समय : सितम्बरके अन्तिम सप्ताहका एक दिन

[बैठककी सजावट आधुनिक और सुरुचिपूर्ण है। बहुमूल्य फ़र्नीचर है। कमरेमें तीन द्वार हैं। सामनेवाला द्वार अध्ययन-कक्षमें खुलता है; बायीं ओरका द्वार अन्दर जानेके लिए है; दायीं ओरका द्वार बाहरी बरामदेमें खुलता है। इस द्वारके पास ही एक खिड़की है जिसके पास खड़ा हुआ व्यक्ति बँगलेके गेटको देख सकता है।

पर्दा उठता है। कक्षमें केवल तीन व्यक्ति हैं। वाइसचान्सलर महोदय दर्शकोंकी ओर मुँह किये सोफ़ेपर बैठे हैं, प्राक्टर साहब बेचैनीसे चहलक़दमी कर रहे हैं और पुलिस अधिकारीजी अपना पाइप सुलगा रहे हैं। तीनोंके चेहरोंपर चिन्ताकी रेखाएँ हैं।]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाइसचान्सलर : ग्यारह बज गये। वे लोग अभीतक नहीं आये।

प्राक्टर : हम कबतक उनकी राह देखेंगे ? हमें फ़ौरन कोई फ़ैसला करना चाहिए।

अधिकारी : जल्दबाज़ी करना ठीक नहीं। वी मस्ट वेट फ़ॉर देम।

प्राक्टर : लेकिन वे हमारी बात मानेंगे नहीं।

वाइसचान्सलर : और हम उनकी माँगें पूरी नहीं कर सकते।

अधिकारी : फिर भी जब हमने यूनियनके प्रेज़ीडेण्ट और सेक्रेटरीको बुलाया है तो एक बार समझौतेकी कोशिश तो करनी ही चाहिए।

प्राक्टर : समझौता बराबरकी पार्टियोंमें होता है। यह तो वक़्तकी बात है साहब कि हम उन आवारा छोकरोंसे बात करनेके लिए मजबूर हुए हैं।

अधिकारी : यह मजबूरी इसीलिए है न कि यूनियन पावरफ़ुल है; उसका यहाँके स्टूडेण्ट्सपर होल्ड है !

वाइसचान्सलर : अगर मेरा बस चले तो यूनियन बनानेका सिस्टम ही ख़त्म कर दूँ ! यूनियन ही ख़ुराफ़ातकी जड़ है।

प्राक्टर : यू आर राइट, सर ! यूनियनकी क्या ज़रूरत है ? हुँ····विद्यार्थी नहीं गोया मज़दूर हो गये जो ट्रेड यूनियन बनाकर अपनी माँगें रखते हैं, हड़तालकी धमकी देते हैं जूलूस निकालते हैं। नान्सेन्स !

[फ़ोनकी घण्टी बजती है। अधिकारी महोदय आगे बढ़ फ़ोन उठाते हैं। वाइसचान्सलर और प्राक्टर उत्सुकतासे उस ओर देखते हैं।]

अधिकारी : हलो·····! मैं वाइसचान्सलर के यहाँसे बोल रहा हूँ ! कौन···क्यों ख़ैर तो है···? हाँ···हाँ···! क्या भीड़ बढ़ती जा रही है ? ठीक है अभी शान्त रहो ! और देखो, यूनियनके प्रेज़ीडेण्ट और सेक्रेटरी वहाँ तो फ़ौरन वी० सी० साहबके बंगले भेज दो ! हम उनका इन्तज़ार रहे हैं ! ऐं···! हाँ····हाँ, फ़ौरन भेज

[चोंगा रखकर सोफ़ेकी बढ़ते हैं।]

वाइसचान्सलर : स्थिति गम्भीर नहीं है ?

अधिकारी : (**बैठकर**) सीरियस तो ही। लड़कोंकी भीड़ बढ़ती जा रही जुलूसकी तैयारी हो रही है।

प्राक्टर : प्रोसेशन इधर भी आ सक्ता क्या ?

अधिकारी : आना तो नहीं चाहिए लोग और कॉलेजोंमें जाकर हड़ करानेकी कोशिश करेंगे।

वाइसचान्सलर : लेकिन अगर यहाँ तो·····! प्रोसेशन कभी-कभी वायो भी हो जाता है।

अधिकारी : डरकी कोई बात कोठीके बाहर सुरक्षाका पूरा प्रबन्ध डोण्ट वरी, सर !

वाइसचान्सलर : मैं यूनिवर्सिटी लड़कोंको समझाऊँ ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राक्टर : आपका वहाँ जाना ख़तरेसे ख़ाली नहीं है, सर ! मॉब साइकोलॉजीका क्या भरोसा ?

अधिकारी : मेरी भी यही राय है। लीव देम टु देमसेल्व्ज़। थोड़ी देर बाद अपने-आप डिस्पर्स हो जायेंगे। लेकिन अगर हमने छेड़ा तो हो सकता है कि शहदकी मक्खियोंकी तरह काटने लगें !

प्राक्टर : यह भी वक़्तकी बात है, साहब ! वरना इसी हिन्दोस्तानमें कितना आदर होता था गुरुजनोंका। अब तो गुरु-शिष्य-की वह परम्परा लुप्त ही हो गयी है।

[**एक कुरसीपर बैठ जाते हैं।**]

अधिकारी : मेरी समझमें नहीं आता आख़िर हमारा यूथ जा किधर रहा है ! लगता है, विद्यार्थी स्कूल-कॉलेजोंमें पढ़ने नहीं, लोफ़री करने आते हैं। राह चलती लड़कियोंको छेड़ना, दूकानदारोंसे झगड़ना, टीचरोंके छुरे मारना, बाज़ारोंमें हुल्लड़-बाज़ी करना, सिनेमाघरोंमें शोर मचाना ! यह सब क्या है, क्यों है ?

वाइसचान्सलर : लैक आफ़ मिशन इन लाइफ़ !

प्राक्टर : यू आर करेक्ट, सर ! लोग कहते हैं कि हमारी शिक्षा-पद्धति सिर्फ़ क्लर्क बनाती है, मगर साहब आजकल ज़्यादातर लड़के या तो अभिनेता बननेके चक्करमें रहते हैं या फिर नेता ! क्लास-की पढ़ाईमें तो किसीका मन लगता ही नहीं !

अधिकारी : (हँसकर) रोमियो और जूलियटके क़िस्से भी तो दोहराये जाते हैं !

प्राक्टर : आग-फूस एक साथ रहेगी तो क्या होगा ? आप मुझे पुराने ख़यालोंका आदमी कह सकते हैं साहब, लेकिन सच बात तो यह है कि मुझे को-एजूकेशनका सिस्टम बिलकुल पसन्द नहीं।

अधिकारी : आई एग्री विद यू ! लैला और मजनूँका रोमान्स मकतब, आई मीन स्कूलमें ही हुआ था।

वाइसचान्सलर : सारा दोष तो सस्ती रोमाण्टिक फ़िल्मोंका है। माई गॉड, ऐसे बेहूदे दृश्य, ऐसे गन्दे संवाद, ऐसे अश्लील गाने और नाच कि कोई शरीफ़ आदमी उन्हें परिवारके साथ देख ही नहीं सकता !

प्राक्टर : और हमारे छात्र ऐसी ही फ़िल्मों-के लिए क्लास गोल कर देते हैं। बाप गाढ़ी कमाईसे रुपये भेजते हैं फ़ीस और किताबोंके लिए, मगर साहबज़ादे बहाते हैं सिनेमामें।

वाइसचान्सलर : ज़रा-ज़रासे बच्चे इश्क और मोहब्बतके ऐसे फ़ोश गीत गाते हैं कि सुनकर गरदन शर्मसे झुक जाती है।

प्राक्टर : फ़ैशनपरस्ती भी फ़िल्में ही सिखाती हैं। कैसी बेहूदा और चुस्त पोशाकें चली हैं आजकल ! भला बताइए, अंगोंकी यह नुमाइश क्या भारतीय परम्पराके अनुकूल है ?

अधिकारी : मैं मानता हूँ, लड़कों और लड़कियोंको बिगाड़नेमें फ़िल्मोंका काफ़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाथ है। लेकिन क्या और फ़ैक्टर्स इसके लिए ज़िम्मेदार नहीं हैं ?

प्राक्टर : हैं क्यों नहीं ? आजकी शहरी सभ्यता ही ऐसी है कि गाँवके सीधे-साधे लड़कोंको भी अपने रंगमें रँग लेती है। मेरी राय तो यह है कि स्कूल-कॉलेजोंको शहरके बाहर ही रखना चाहिए। लड़कोंको शहर आनेकी आज्ञा ही न हो।

अधिकारी : क्या ऐसा मुमकिन है ?

प्राक्टर : क्यों नहीं ? पुराने ज़मानेमें आश्रम जंगलोंमें होते थे। विद्यार्थी वहीं रहकर पढ़ते थे और शिक्षा पूरी करके ही वापस आते थे। तब गुरु-शिष्यका नाता ऐसा था कि गुरुके इशारेपर शिष्य जान दे सकते थे, मगर आजकल तो यह नौबत है कि अगर किसी टीचरने क्लासमें किसी लड़केको डाँट भर दिया तो समझिए उसकी खैर नहीं।

वाइसचान्सलर : इन्वेजीलेटर्सके छुरा भोंकनेके समाचार आप हर साल अखबार-में पढ़ते ही होंगे।

अधिकारी : समझमें नहीं आता यह क्या पागलपन है ! क़ानूनका भी डर नहीं रहा इन छोकरोंको।

प्राक्टर : और अगर किसी लड़केके खिलाफ़ एक्शन लिया जाता है तो हड़तालें करते हैं, प्रोसेशन निकालते हैं।

वाइसचान्सलर : और साहब, कुछ पोली-टिकल पार्टीज़ उन्हें शह देती हैं। हर पार्टी स्टूडेण्ट फ्रण्टपर अपना प्रभाव रखना चाहती है क्योंकि वहींसे उसे लिखे यंग वर्कर्स मिलते हैं।

प्राक्टर : इसीलिए यूनियनके चुनावमें पार्टीज़ काफ़ी दिलचस्पी लेती यूनियनका चुनाव गोया असेम्बली चुनाव हो गया।

[बाहरसे छात्र-संघके अध्यक्ष मन्त्रीका प्रवेश।]

अधिकारी : (उठकर) आइए, आइए हम लोग आपका ही इन्तज़ार रहे थे।

अध्यक्ष : यह तो हम बँगलेके बाहर पुलिसको देखकर ही समझ गये (वाइसचान्सलरसे) आपने पुलिस बुलाकर अच्छा नहीं किया, सर !

वाइसचान्सलर : पुलिसका काम और व्यवस्था क़ायम रखना ही इसलिए अगर···

मन्त्री : (बीचमें ही) शान्ति और व्यवस्था भंग करनेका हमारा कोई इरादा नहीं है। हम शान्तिपूर्ण प्रदर्शन करेंगे।

अधिकारी : आप बैठिए तो, मिस्टर खड़े-खड़े इतमीनानसे बातें हो सकतीं।

[दोनों खड़े रहते हैं।]

प्राक्टर : (व्यंग्यसे) क्यों, हम लोगोंके सामने बैठनेमें संकाच हो रहा है अरे जनाब, आदर और इज़्ज़त और भी तरीक़े हैं !

अध्यक्ष : आप हमें ग़लत समझ रहे हैं।

वाइसचान्सलर : प्लीज़ सिट डाउन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अध्यक्ष : थैंक यू, सर !

[अध्यक्ष, मन्त्री और अधिकारी बैठते हैं।]

मन्त्री : यूनीवर्सिटी कम्पाउण्डमें भी लाठी-बन्द पुलिस तैनात है। पुलिसको देखकर अगर लड़के उत्तेजित हो जायें और कोई अप्रिय घटना घटित हो जाये तो उसकी ज़िम्मेदारी आप लोगोंपर ही होगी।

अधिकारी : (पाइप सुलगाकर) उन लोगोंको आदेश दे दिया गया है कि जब-तक स्टूडेण्टसकी तरफ़से पहल न हो, वे खामोश रहें।

अध्यक्ष : (उत्तेजित होकर) आप चाहते हैं कि हम पहल करें और फिर आप निहत्थे लड़के-लड़कियोंपर लाठी बरसायें ?

अधिकारी : (शान्त स्वरमें) जोशमें आने-की ज़रूरत नहीं है, मिस्टर ! हम तो यह चाहते हैं कि शान्तिपूर्ण ढंगसे समझौता हो जाये। इसीलिए आप लोगों-को बुलाया गया है।

मन्त्री : हम भी इसीलिए आये हैं, श्रीमान् जी !

अध्यक्ष : और अपने साथियोंसे कहते आये हैं कि जबतक हम लौटकर न आयें, वे विद्यार्थियोंको शान्त रखें।

प्राक्टर : इस कृपाके लिए हम आभारी हैं।

मन्त्री : आपकी यह व्यंग्य-शैली घातक सिद्ध हो सकती है।

वाइसचान्सलर : बेकार बातोंमें समय नष्ट करनेसे कोई फ़ायदा नहीं। मतलबकी····

प्राक्टर : (बीचमें ही) आइ एम सॉरी, सर !

अधिकारी : (अध्यक्षसे) मेरा आपसे अनुरोध है कि स्ट्राइककी नोटिस वापस ले लें। स्ट्राइकसे आप लोगोंकी पढ़ाई ही सफ़र करती है।

अध्यक्ष : नोटिस तभी वापस होगी जब हमारी माँगें मान ली जायेंगी। यही हमारा आख़िरी फ़ैसला है।

प्राक्टर : आपकी पहली माँग यह है कि जिन चार लड़कोंको रेस्टीकेट किया गया है उन्हें फिर दाख़िला दे दिया जाये।

मन्त्री : जी हाँ ! औरोंकी तरह उन्हें भी शिक्षा प्राप्त करनेका अधिकार है।

वाइसचान्सलर : अगर शिक्षा पानेमें ही उनकी रुचि होती तो भला रेस्टीकेशनकी नौबत ही क्यों आती ? (अधिकारीसे) जनाब, वे लड़के पूरे लोफ़र हैं, आवारा। वे पढ़नेके लिए नहीं, तफ़रीहके लिए दाख़िला चाहते हैं।

अध्यक्ष : इसमें उनका क्या दोष है ? आज-कल शिक्षा-संस्थाएँ लोफ़र और आवारा ढालनेवाली फैक्ट्रीज़ बन गयी हैं।

प्राक्टर : हम आवारा बनाते हैं ?

मन्त्री : आफ़ कोर्स ! आजकी शिक्षा-पद्धति और परीक्षा-प्रणाली न तो अच्छे नाग-रिक बनाती है और न अच्छे क्लर्क ! मैकालेकी पद्धति कमसे कम बाबू तो तैयार करती थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राक्टर : पहले अभिनेता और नेता बननेसे फ़ुरसत तो मिले !

अध्यक्ष : इसके लिए भी दोषी हम नहीं हैं।

वाइसचान्सलर : शिक्षा-पद्धति और परीक्षा-प्रणालीके लिए हम लोगोंको क्यों कोसते हैं आप ? सरकारसे कहिए !

अधिकारी : सरकारको बीचमें घसीटना ठीक नहीं। सरकार जो कुछ निर्णय करती है, वह शिक्षाविदोंके सुझावसे ही करती है।

मन्त्री : आप तो ऐसा कहेंगे ही; सरकारी कर्मचारी जो ठहरे। ख़ैर, दोष चाहे जिसका हो, हमारा नहीं है।

प्राक्टर : दूसरोंको दोषी ठहराना बहुत आसान है।

अध्यक्ष : हमपर अनुशासनहीनताका आरोप लगाया जाता है। लेकिन हमें अनुशासन भंग करनेके लिए विवश कौन करता है ? (क्रमशः तीनोंकी ओर उँगली उठाकर) आप, आप और आप !

वाइसचान्सलर : हम अनुशासनहीनता सिखाते हैं ?

प्राक्टर : हम यही शिक्षा देते हैं ?

अधिकारी : सरकार कहती है कि अनुशासन भंग करो ?

अध्यक्ष : हम तो बड़ोंका अनुगमन करते हैं ! आज अनुशासन है कहाँ ? कौन मानता है अनुशासनको ? पद और सत्ताके लिए संघर्ष, अपने स्वार्थ और हितके लिए संघर्ष कहाँ नहीं होता ? राजनीति, साहित्य, शिक्षा, हर क्षेत्रमें अनुशासनहीनताका बोलबाला है !

वाइसचान्सलर : लेकिन इसका यह मतल नहीं कि आप लोग···

मन्त्री : (बीचमें ही) गुरुजनोंके आचरण प्रभाव शिष्योंपर पड़ना स्वाभाविक यदि हमारे प्रोफ़ेसर लड़कियोंसे हँस-ह कर बातें करते हैं, उन्हें अपने घर बु हैं, उनके साथ सिनेमा देखते हैं तो उँगली तक नहीं उठाता और अगर लोग किसीकी तरफ़ आँख उठाकर भी लेते हैं तो हमें आवारा और लोफ़ की संज्ञा दे दी जाती है।

प्राक्टर : प्रोफ़ेसरोंके चरित्रपर इस कीचड़ उछालना ठीक नहीं, मिस्टर !

अध्यक्ष : क्यों, क्या प्रोफ़सर मनुष्य हैं ? (अधिकारीसे) हमारे शिक्षकों चरित्र कितना गिर गया है इसे नहीं जानते। सुन्दर छात्राओंको ले मनचले प्रोफ़ेसरोंमें गाली-गलौज त नौबत आ जाती है।

वाइसचान्सलर : यह ग़लत आरोप हमारे प्रोफ़ेसर····

मन्त्री : पिछले हफ़्ते स्टाफ़-रूममें जो हुआ था, क्या उसके बारेमें इन अधिक महोदयको बता दूँ ?

अधिकारी : अजीब बात है ! टीचर्स नेशन बिल्डर्स होते हैं – राष्ट्रका नि करते हैं वे !

अध्यक्ष : (व्यंग्यपूर्ण हँसीके सा राष्ट्रका निर्माण ! इन राष्ट्र-नि ताओंको न तो राष्ट्रके नि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का खयाल है और न छात्रोंके चरित्र-निर्माणका ! वे तो अपना भविष्य बनानेके लिए चिन्तित रहते हैं। अपने कैरियरके लिए वे ऐसी गन्दी दलबन्दी करते हैं, अपने प्रतिद्वन्द्वियोंपर ऐसी कीचड़ उछालते हैं, कि हम विद्यार्थियों-को भी शर्म आती है।

वाइसचान्सलर : यह बकवास है।

प्राक्टर : नान्सेन्स !

मन्त्री : सचाईपर कबतक झूठका परदा पड़ा रह सकता है ? हम छात्रोंको उद्दण्ड बनानेका श्रेय ऐसे ही शिक्षकोंपर है। जिन छात्रोंको रेस्टीकेट किया गया है उनका यही अपराध है न कि उन्होंने यूनीवर्सिटी कम्पाउण्डमें एक प्रोफ़ेसरका अपमान किया ?

प्राक्टर : यह मामूली अपराध है ?

अध्यक्ष : कभी आपने यह जाननेकी कोशिश की कि आख़िर लड़कोंने ऐसा क्यों किया ? उन्हें पागल कुत्तेने तो काटा नहीं था जो यूँ ही उलझ पड़े !

वाइसचान्सलर : आप कहना क्या चाहते हैं ?

अध्यक्ष : आपको यह बताना चाहता हूँ कि उस काण्डके पीछे किसी औरका हाथ था ?

प्राक्टर : किसका ?

मन्त्री : एक दूसरे प्रोफ़ेसरका।

वाइसचान्सलर : यह असम्भव है।

मन्त्री : आज-कल कोई बात असम्भव नहीं है, श्रीमान्‌जी !

प्राक्टर : क्या आपके पास इस आरोपका कोई प्रमाण है ? उस प्रोफ़ेसरका नाम बताइए।

अध्यक्ष : नाम बतानेकी भी ज़रूरत है ? क्या आप नहीं जानते कि अपमानित होनेवाले प्रोफ़ेसरके प्रतियोगी कौन सज्जन हैं ?

[प्राक्टर और वाइसचान्सलर एक-दूसरेकी ओर देखते हैं। अधिकारी महोदय खिड़कीके पास जाकर पाइप सुलगाने लगते हैं।]

मन्त्री : छात्रोंने उन प्रोफ़ेसरको सही बात बताकर क्षमा माँग ली है। प्रोफ़ेसर साहबने उन्हें तो क्षमा कर दिया है लेकिन वे अपने अपमानका बदला दूसरे प्रोफ़ेसरसे ज़रूर लेंगे ! यह हम सूचनार्थ निवेदन कर रहे हैं।

अधिकारी : (सोफ़ेकी ओर बढ़ते हुए) दिस इज़ मोस्ट शार्किंग···!

अध्यक्ष : अब आप ही बताइए श्रीमान्‌जी, जहाँ विश्वविद्यालयके प्रोफ़ेसरोंका यह हाल हो, स्कूल-कॉलेजके शिक्षक छात्रों-को पढ़ानेसे अधिक मैनेजमेण्टको प्रसन्न करनेमें रुचि लेते हों, प्रायमरी स्कूलोंके मास्टर बच्चोंको पाठ रटनेका आदेश देकर मेज़पर पैर फैलाकर सोते हों, वहाँके छात्र कैसे होंगे ?

मन्त्री : आज स्कूल-कॉलेज सरस्वतीके पावन मन्दिर नहीं, पैसा कमानेके व्याव-सायिक संस्थान बन गये हैं श्रीमान्‌जी !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ़ीस दो, खेलो-कूदो और घर जाओ। न शिक्षक छात्रोंको पहचानते हैं और न छात्र शिक्षकोंको !

प्राक्टर : एण्ड ह्वाट अबाउट योर होम्स ? बिगड़ते तो आप लोग घरसे ही हैं ।

मन्त्री : आजका छात्र घर तो सिर्फ़ सोनेके लिए ही जाता है ।

अध्यक्ष : हमसे यह आशा की जाती है कि हम शिक्षकोंको वही आदर, सम्मान और श्रद्धा दें जो पुराने ज़मानेमें शिष्य अपने गुरुजनोंको देते थे। पहले हमारे शिक्षक आदर, सम्मान और श्रद्धाके पात्र तो बनें !

वाइसचान्सलर : (अधिकारीसे) सुन रहे हैं आप इन लोगोंकी बातें ? सिर फिर गया है; भाषण देते हैं; नेतागीरी-का शौक़ चर्राया है ! यही सीखा है इन लोगोंने !

[अधिकारी अपने स्थानपर बैठ जाते हैं। कुछ बोलते नहीं।]

मन्त्री : नेतागीरीका शौक़ पैदा किसने किया ? जब आज़ादीकी लड़ाई चल रही थी, तब हमारे नेताओंने छात्रोंका आवा-हन किया और हमारे छात्र स्वतन्त्रता-संग्राममें कूद पड़े। उन्होंने संघर्ष किया, लाठियाँ खायीं, जेल गये, गोलियाँ झेलीं।

अध्यक्ष : और जब भारत आज़ाद हो गया तो हमें राजनीतिसे दूर रहनेका उपदेश दिया जाता है ! क्यों ? हमारी राज-नैतिक जागरूकता, शक्ति और प्रतिभा निष्क्रिय कैसे रह सकती है ? नदीकी धाराको बहनेके लिए राह चाहि उसे सही दिशा दो, नहीं तो वह दिशामें बहकर सर्वनाश करेगी ।

मन्त्री : अगर हमारी शक्तिको सृजन-का लगाया जाता, हमें सैनिक शिक्षा जाती, सेवा-कार्यके लिए गाँवोंमें भे जाता तो देशका भी कल्याण होता हमारी शक्तिको भी प्रापर चैनेल मिलत हमने बड़ी-बड़ी योजनाएँ तो ब लेकिन अच्छे इन्सान बनानेकी कोशि नहीं की ।

वाइसचान्सलर : इसके लिए हम नहीं हैं ।

मन्त्री : आप पहले भी यही बात चुके हैं ।

[फ़ोनकी घण्टी बजती है। अधि कारी लपककर चोंगा उठाते हैं शेष लोग उनकी ओर व्यग्रता देखते रहते हैं।]

अधिकारी : हलो····! यस···! स्पीकिं ·····क्या ? हूँ···कितने ?···आई सी यस···यस···! डिस्पर्स देम···! है···! (चोंगा रखकर सोफ़ेकी बढ़ते हुए) भीड़ने ईंट-पत्थर च कुछ सिपाहियोंको घायल कर दिया

प्राक्टर : (अध्यक्षसे) यह शान्ति प्रदर्शन है !

अध्यक्ष : मैंने पहले ही कह दिया पुलिसको देखकर छात्रोंका उत्तेजित स्वाभाविक है ।

अधिकारी : (गम्भीर स्वरमें)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रक्षाके लिए पुलिसको डण्डे चलानेके लिए मजबूर होना पड़ा।

[मन्त्री और अध्यक्ष उठकर खड़े हो जाते हैं।]

मन्त्री : लेकिन भीड़में लड़कियाँ भी हैं!

अधिकारी : क़ानून अन्धा होता है, मिस्टर! भीड़को ग़ैरक़ानूनी घोषित करके डिस्पर्स किया जा रहा है।

अध्यक्ष : ठीक है। अब समझौतेकी कोई ज़रूरत नहीं। जब आप लोग लाठी-डण्डे-को ही समस्याका हल समझते हैं तो यही सही! हमें जानेकी आज्ञा दीजिए।

अधिकारी : आप नहीं जा सकते।

मन्त्री : आर वी अण्डर अरेस्ट?

[प्राक्टर और वाइसचान्सलर भी खड़े हो जाते हैं। वातावरणमें तनाव आ गया है।]

अधिकारी : नहीं भाई! पूरी बात तो सुन लीजिए! कुछ स्टूडेण्ट्स नारे लगाते हुए इधर ही आ रहे हैं। मैं नहीं चाहता कोई अप्रिय घटना यहाँ घटे। आप लोग रहेंगे तो……

अध्यक्ष : (**बीचमें ही**) अगर हमें बाहर न जाने दिया गया तो छात्र समझ सकते हैं कि हम क़ैद कर लिये गये हैं और तब जो अप्रिय घटना घटेगी उसकी कल्पना भी आप नहीं कर सकते।

अधिकारी : मुझे अफ़सोस है कि पुलिसको डण्डे चलाने पड़े। मैं चाहता था कि स्टूडेण्ट्स पीसफ़ुली डिस्पर्स हो जाते और हम लोग यहाँ समस्याका कोई ऐसा हल……

मन्त्री : समस्याकी जड़ें बहुत गहरी हैं, श्रीमान्‌जी! आँसूगैस, डण्डा, लाठी और गोलीसे समस्या हल नहीं होगी।

[दूरपर नारोंका शोर। – 'वी० सी० साहब हाय-हाय!' 'हमारी माँगें पूरी हों!']

वाइसचान्सलर : (घबराकर) भीड़ इधर ही आ रही है!

अधिकारी : घबराइए नहीं! कोई अन्दर नहीं आ सकता।

मन्त्री : इस भीड़में आपके छात्र ही हैं, वी० सी० साहब! उनसे कैसा डर!

प्राक्टर : भीड़ पागल होती है, पागल! (**खिड़कीसे बाहर झाँककर**) डरकी कोई बात नहीं, सर! सिपाही गेटपर तैयार खड़े हैं। एकदम रेडी।

[नारोंका शोर बढ़ता है। 'वी० सी० साहब, बाहर आयें', 'हमारी माँगें पूरी हों!' 'हमारे नेता छोड़े जायें।']

अध्यक्ष : देखिए, हमें बाहर जाने दीजिए। अन्यथा……

प्राक्टर : भीड़ गेटपर आ गयी! ओह… माई गॉड! (**आकर धम्मसे सोफ़ेपर बैठ जाते हैं।**)

वाइसचान्सलर : शुड आई गो आउट-साइड?

अधिकारी : नहीं! भीड़ डिस्पर्स कर दी जायेगी! डोण्ट वरी!

[सहसा एक छात्राका बाहरसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रवेश। उसके सिरपर ख़ूनसे सनी पट्टी बँधी है। साड़ीमें भी ख़ूनके दाग़ हैं।]

प्राक्टर : (डाँटकर) हू आर यू ! अन्दर कैसे आयीं ! **(खड़े हो जाते हैं।)**

अधिकारी : बेटी·····तुम···?

छात्रा : हाँ पिताजी, मैं ! आपको अपने ख़ूनकी लाली दिखाने आयी हूँ और यह भी कहने आयी हूँ कि निहत्थे लड़के-लड़कियोंपर डण्डे बरसाना वीरता नहीं है।

अधिकारी : ओह·····! तुम वहाँ गयीं ही क्यों ! मैंने मना कर दिया था। भीड़में तुम्हें किसीने पहचाना न होगा·····!

छात्रा : (रूखी हँसी हँसकर) नहीं, ऐसी बात नहीं है, पिताजी ! सब मुझे पहचानते थे, लेकिन मैंने एक कमज़ोर लड़कीको बचानेके लिए डण्डेका वार अपने सिर-पर ले लिया।

[नारे अब भी आ रहे हैं।]

मन्त्री : मुझे तुमपर गर्व है, बहन ! तुम्हारे ख़ूनकी बूँद-बूँदका प्रतिशोध लिया जायेगा। **(आवेशसे काँपने लगता है।)**

छात्रा : ख़ूनका बदला ख़ून नहीं है, भाई ! हमारा डिमान्स्ट्रेशन पीसफ़ुल ही रहेगा। चलो, पब्लिक पार्कमें विशाल सभा है। हमारा संघर्ष चलता रहेगा··चलता रहेगा। हम अपनी माँगें मनवाकर ही रहेंगे।

[नारोंका शोर थम जाता है।]

वाइसचान्सलर : (प्राक्टरसे) कलसे यूनीवर्सिटी अनिश्चित कालके लिए बन्द चौबीस घण्टेके अन्दर सब हॉस्टेल ख़ा हो जायें।

प्राक्टर : ओ के, सर !

अधिकारी : सब स्कूल-कॉलेज बन्द क दिये जायेंगे। शान्ति और व्यवस्था लिए यह ज़रूरी हो गया है। यूनीवर्सि एरियामें धारा १४४ लगा दी जायेगी

अध्यक्ष : बस, यही हल समझमें आया !

[बाहरसे 'मेरा बेटा', 'मेरा बे कहता हुआ एक प्रौढ़ अभिभा अन्दर आता है।]

अधिकारी : कौन हो तुम ? अन्दर कि आने दिया ?

अभिभावक : मुझे मेरा बेटा चाहि मैं बाप हूँ – एक बेटेका बाप ! कह मेरा बेटा ? कहाँ है मेरा लाल ?

प्राक्टर : पागल हुए हैं आप ? अगर आ का बेटा खो गया है तो थानेपर जाइ यहाँ क्यों आये हैं ?

अभिभावक : मेरा बेटा विद्यार्थी सुबहसे निकला है, अभीतक नहीं लौ

अधिकारी : तो हम क्या करें ? कृपा क यहाँसे जाइए। हमारा वक़्त ख़ न कीजिए।

[अध्यक्ष कुछ बोलना चाहता किन्तु छात्रा उसे मौन रह संकेत करती है। तबतक खिड़कीके पास जाकर नीचे खड़े विद्यार्थियोंको शान्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्वस्त रहनेका संकेत कर देता है।]

अभिभावक : (दुःखी होकर) तीन साल पहले एक जवान बेटेको खो चुका हूँ। वह भी पढ़ता था। उसके गोली लगी···· (सीनेपर हाथ रखकर) यहाँ···और वह मर गया! यह दूसरा बेटा है! बताइए, उसे कहाँ खोजूँ? आपने उसे जेल तो नहीं भेज दिया? सुना है लाठी चार्ज हुआ है! घायल तो नहीं हो गया मेरा लाल?

वाइसचान्सलर : हम कुछ नहीं जानते! अपने बेटेके बारेमें (छात्रोंकी ओर संकेत करके) इन लोगोंसे पूछिए, जो हड़ताल करवाते हैं, विद्यार्थियोंको भड़काते हैं! इनसे जवाब माँगिए···। आपके बड़े बेटेके खूनके लिए भी यही नेता ज़िम्मेदार हैं।

[अभिभावक पहली बार उनकी ओर देखता है। अभीतक जैसे उनकी उपस्थितिका भान ही नहीं था। छात्राके सिरपर खूनसे सनी पट्टी बँधी देखकर चौंकता है।]

अभिभावक : अरे, तुम तो घायल हो गयी हो, बेटी! तुम्हारा बाप भी तुम्हारे लिए परेशान हो रहा होगा। जल्दी घर जाओ, बेटी! चलो, मैं तुम्हें पहुँचा दूँ।

[अधिकारीका सिर झुक जाता है।]

छात्रा : मेरे ऐसे भाग्य कहाँ बापू कि मेरा बाप मेरे लिए चिन्तित हो।

अभिभावक : हाय····यह क्या हो रहा है! जो खून देशका निर्माण कर सकता है, वह इस तरह बहाया जा रहा है! क्यों? (वाइसचान्सलर आदिकी ओर मुड़कर) मुझे भी यह जाननेका हक़ है। मैं अविभावक हूँ···बच्चोंकी फ़ीस भरता हूँ, सरकारको टैक्स देता हूँ···!

प्राक्टर : तो हम क्या करें। जाइए, हमें ज़रूरी समस्याएँ हल करनी हैं। यूनीवर्सिटी बन्द हो गयी है। अब अपने बेटेको घरसे बाहर न निकलने दें।

अभिभावक : आप यूनीवर्सिटी, स्कूल, कॉलेज बन्द कर सकते हैं, लेकिन हम अपने घरके द्वार कैसे बन्द कर दें? आप लोग भी पिता हैं, बोलिए···क्या मेरे प्रश्नका उत्तर···

मन्त्री : दीवारोंसे सिर टकराना बेकार है! ये लोग जीवित इनसान नहीं, क़ायदे-क़ानूनके दायरेमें क़ैद मुरदा दीवारें हैं — अन्धी, गूँगी और बहरी! आपके प्रश्नका उत्तर यहाँ नहीं मिलेगा।

अध्यक्ष : चलो बाबा! हम तुम्हारे बेटेको खोजेंगे।

अभिभावक : अरे···मेरी बात कोई नहीं समझता! मुझे एक बेटेकी चिन्ता नहीं, मैं तो अपने करोड़ों बेटे-बेटियोंके लिए चिन्तित हूँ। उनके भविष्यके प्रति···

छात्रा : (बीचमें ही) उनका भविष्य हमेशा अन्धकारमें नहीं रहेगा, बापू! व्यवस्था बदलेगी, ज़रूर बदलेगी! हमारे बलिदान व्यर्थ नहीं जायेंगे। चलो

गूँगी दीवारें : बहरे दरवाज़े : मिलोगे रास्तोंमें

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बापू, तुम्हारे अनगिन बेटे-बेटियाँ तुम्हारी राह देख रहे हैं।

अधिकारी : बेटो···!

[छात्रा अभिभावकको धीरे-धीरे बाहर ले जाती है। अध्यक्ष और मन्त्री भी द्वारकी ओर बढ़ते हैं।]

प्राक्टर : यह न भूलिएगा कि यूनीवर्सिटी कलसे बन्द है!

मन्त्री : (मुड़कर) और धारा १४४ लग गयी है।

अध्यक्ष : और आप लोग भी यह न भूलें कि कभी-न-कभी तो यूनीवर्सिटी खुलेगी ही। देन वी शैल मीट अगेन!

[दोनों तेज़ीसे बाहर जाते हैं।]

अधिकारी : (वाइसचान्सलरसे) क्या समस्याका यही हल है!

वाइसचान्सलर : मैं नहीं जानता। थक गया हूँ···बहुत थक गया हूँ!

[बाहरसे नारोंकी आवाज़ आती जो क्रमशः दूर होती जाती प्राक्टर खिड़कीके पास जाते वाइसचान्सलर शिथिलसे अध्य कक्षकी ओर बढ़ते हैं। अधि फ़ोनका चोंगा उठाकर कोई न मिलाने लगते हैं और धीरे-धी परदा गिरता है।]

लोकप्रिय कवि 'बच्चन' की

१९२९ से लेकर १९६३ तक, पूरे पैंतीस बरसों

चुनी हुई श्रेष्ठतम कविताओंका अपूर्व संकलन

अभिनव सोपान

इस बृहत् काव्य-संकलनमें 'बच्चन'की सभी चुनिन्दा न नाएँ स्थान पा गयी हैं। कवि 'बच्चन'के समग्र साहि को एक साथ देखने, अथवा उनकी कविताओंका रस करनेके इच्छुक पाठकोंके लिए यह ऐतिहासिक संक बहुत उपयोगी है।

हिन्दीके सुप्रसिद्ध कवि श्री सुमित्रानन्दन पन्तने 'बच्च एवं उनके काव्यपर एक गहरा विश्लेषण भी प्र किया है।

ग्रन्थ पुस्तकालयोंके लिए संग्रहणीय है।

मूल्य : पन्द्रह रुपये

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

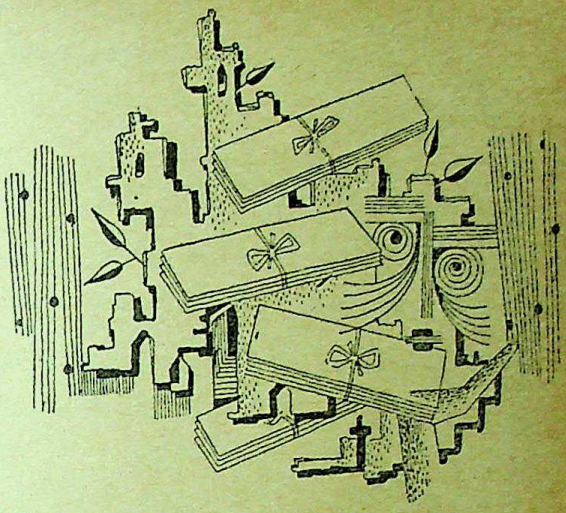

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

लेखक और 'राक्षसी पाबन्दी'

लेखकको उन्मुक्त होना चाहिए, यह प्रजातन्त्रकी घोषणा है। इस घोषणाका अर्थ साधारण राजनैतिक घोषणाओंसे अधिक गहरा है और उस देशमें, जहाँ प्रजातन्त्र अभी पनप ही रहा है, इस घोषणाको भली प्रकार समझा जाना चाहिए।

प्रजातन्त्रमें प्रजा ही मूल सत्ता है और राजसत्ता उसकी अनुगामिनी है, जैसे राजतन्त्रमें राजा ही मूल सत्ता है और प्रजासत्ता उसकी आज्ञाकारिणी है। दोनोंमें ही सत्ता रहती है राजतन्त्रके हाथमें, पर अन्तर यह है कि राजतन्त्रमें उस सत्तापर कोई नियन्त्रण नहीं है और राजा उसका दुरुपयोग कर सकता है, पर प्रजातन्त्रमें उसपर नियन्त्रण है प्रजाका जिसके प्रवक्ता हैं, लेखक, पत्रकार और विचारक। इसीलिए विचार-स्वातन्त्र्य ही प्रजातन्त्रकी आत्मा है, कुंजी है।

प्रजातन्त्रमें प्रजाको यह अधिकार है कि वह राजसत्ताके भ्रष्ट होनेपर उसे हटा सके और नये लोगोंको वह सत्ता सौंप सके, इसलिए राजसत्ता जिनके हाथमें है, वे भी लेखक, पत्रकार और विचारकका सहारा-सहयोग चाहते हैं कि प्रजा उनके दृष्टिकोणको, कार्यको जाने, उससे सहमत रहे, प्रभावित भी रहे। इस तरह प्रजातन्त्रमें लेखक, पत्रकार, विचारक राजसत्ता और जनसत्ताके बीच सम्पर्क अधिकारी भी है और सचेतक भी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Extracts of the Chief Secretary's Order

..

In future no employee of the Publicity Department should publish an article in a non-official magazine unless D.I.P. (Director of Information and Publicity) has seen and ensured that there is nothing objectionable.

Sd. R.P.Norohona
20-1-64

Endt.No. 2888 Dt. 24 Jan.

Copy to all.

मध्यप्रदेश शासनका अंकुश :
पिछली जनवरीमें इस प्रपत्रपर हस्ताक्षर किये गये थे।

इस स्थितिमें मध्यप्रदेश-सरकारका अपने शासनके सूचना-प्रसारण विभागमें नियुक्त लेखकोंको यह आदेश देना कि वे कहीं भी कुछ छपनेको भेजें, तो पहले अपने विभागके निर्देशकको दिखाकर उनकी स्वीकृति ले लें, एक चिन्तनीय आदेश है और निश्चय ही यह लेखकको सम्पर्क अधिकारी और लेखकके पदसे गिराकर उसे 'हिज़ मास्टर्स वायस'के पदपर प्रतिष्ठित करनेका उपक्रम है।

अधिनायक-शासित देशोंमें लेखक, पत्रकार और विचारक 'शासनके भोंपू' बन जाते हैं। कुछ तो भयके कारण शासनकी पसन्द तृप्त न हुई कि जेलका खुला, पुलिसके डण्डे पड़े, प्रकाशन अस्त हुआ और काली सूचीमें चढ़े – बस अ त्रास और यों ही सर्वनाश। कुछ इस कि अधिनायकी ढंगके शासक अपनी इतने ऊँचे स्वरसे, इतने विविध रू इतनी बार कहते हैं कि दूसरी बातके द्वार बन्द हो जाते हैं और वही बात लेख पत्रकारों-विचारकोंको सही-सच्ची दि देने लगती है और वे उसे ही अपनी मानकर कहने लगते हैं। दोनों ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राक्षसी हैं, पर मानना पड़ेगा कि पहले लोगोंसे – भयके कारण राजपरस्ती करनेवालोंसे – वे दूसरे अच्छे हैं, जो बेईमान होकर भी अपनी जगह तो ईमानदार हैं !

हाँ, प्रजातन्त्री देशमें कोई शासन इन दोनोंमें-से कोई तरीक़ा काममें लानेका प्रयत्न करे, तो यह अनुचित है, असहनीय है और इसी दृष्टिसे मध्यप्रदेश-सरकारका अपने लेखकोंको बाँधनेवाला वह आदेश निश्चित रूपसे निन्दनीय है। प्रार्थना है कि मध्यप्रदेश-सरकार अपने उस आदेशको सहृदयता-सद्भावके साथ वापस ले ले और अधिनायकताकी इस निन्दनीयतासे बचे और कामना है कि वह ऐसा न करे, तो उसे ऐसा करनेके लिए विवश किया जाये।*

यहीं यह प्रश्न भी कि क्या लेखक, पत्रकार और विचारक कोई ऐसा जीव है कि वह चाहे जो कहे-लिखे, चाहे उचित हो या अनुचित, और उसपर कोई पाबन्दी लगाना प्रजातन्त्रताके विरुद्ध है ?

इस प्रश्नपर हाँ कहना सम्भव नहीं है। इसे हम यों समझें कि एक धर्म-निरपेक्ष यानी सैकुलर शासनमें काम करनेवाला लेखक यदि दूसरे पत्रोंमें साम्प्रदायिकताको भड़कानेवाले लेख लिखता है, तो क्या शासन उसपर तब भी पाबन्दी न लगाये ? असली बात यह है कि जीवनमें पाबन्दीसे बचना सम्भव ही नहीं है, पर प्रजातन्त्रकी प्रेरणा है कि हम अपने ऊपर स्वयं पाबन्दी लगायें – यदि सैकुलर शासनमें काम करनेवाला लेखक समझता-कहता है कि उसके मूल विचार वे ही हैं, जो उसने लिखे हैं और जिन्हें शासन साम्प्रदायिक समझता है, तो यह उचित मार्ग है कि वह अपने विचारोंकी स्वतन्त्रताका मूल्य दे और त्यागपत्र दे दे। यह सम्भव न हो, तो वह अपनेपर पाबन्दी लगाये।

शासनके कर्णधारोंपर भी एक स्वेच्छा मर्यादा है कि वे लेखकके विचार पढ़ते ही अपना दण्डास्त्र न उठा लें, लेखकसे बात करें, उसकी परिस्थितियोंको समझें, और अपने सिद्धान्तकी विशिष्टता उसे समझायें कि लेखक स्वयं ही अपनी भूल मान ले। यह न हो, तो वे उसे चेतावनी द, वह न सँभले, तो पाबन्दी लगायें।

हमारे यहाँ अधूरी सूचनाएँ मिलती हैं। संक्षेपमें पूरी बात कहनेकी गान्धी-पद्धति अभी हमने नहीं अपनायी। जो सूचना मिली है उससे यह पता नहीं चलता कि मध्यप्रदेश-शासनके इस आदेशपर वहाँके लेखकोंने क्या किया ? क्या वे सिर झुकाकर चुप रहे ? क्या उन्होंने अपने बड़ोंसे अपनी बात कही ? यदि इन प्रश्नोंमें पहलेका उत्तर हाँ और दूसरेका नहीं है, तो यह चिन्ताकी बात है। इस मौनसे प्रजातन्त्रकी कुसेवा हुई है। आज जो चारों ओर, छात्रोंमें, कर्मचारियोंमें, राजनैतिक दलोंमें नारेबाज़ी और आन्दोलनात्मकता है, उसका विरोध करते हुए भी यह कहना है कि असत्यके

* और, अगर उनके पास कोई अपने तर्क हैं, कारण और विचार हैं तो वे इस चर्चामें आयें, हमारा निमन्त्रण है। —सं०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामने ख़ामोश होंठों और झुके सिरोंका प्रदर्शन प्रजातन्त्रका पोषण नहीं करता। अपनी मर्यादाको बिना भंग किये उन्हें सत्य-का उद्घोष करना चाहिए। यह तो सम्भव है कि आदेशकी जड़में कोई ग़लतफ़हमी हो और वह बातचीतसे दूर हो जाये। लोक-सभाके जीवनमें ध्यानाकर्षण प्रस्तावका महत्त्व काम रोको प्रस्तावसे कम तो नहीं होता।

यह प्रश्न असलमें मध्यप्रदेश शासन या किसी अन्य शासनका नहीं, शुद्ध राष्ट्रीय प्रश्न है कि लेखक, पत्रकार और विचारककी स्वतन्त्रताके लिए मर्यादा क्या है? इस प्रश्नका महत्त्व यह है कि बहुत-से पत्र-प्रकाशन-संस्थानोंमें यह नियम है कि उनके पत्रोंमें काम करनेवाले पत्रकार किसी दूसरे पत्रमें कभी कोई लेख नहीं लिख सकते। * इस पाबन्दीका आजतक कहीं विरोध नहीं हुआ, हालाँ कि यह एक राक्षसी पाबन्दी है।

इतना कड़वा और कठोर शब्द मैं बहुत सोच-विचारके बाद ही प्रयोगमें ला रहा हूँ। हरेक पत्रमें एक प्रधान सम्पादक होता है। उसका नाम छपता है और इस तरह उसका समाजमें अपना व्यक्तित्व बन जाता है, पर प्रधान सम्पादकके साथ जो कई सहकारी सम्पादक होते हैं और जो सचमुच उस पत्रको बनाते-चलाते हैं, उनकी दशा पुराने राजाओंके महलोंमें रहनेवाली बाँदियोंसे भी बदतर होती है। वे जो काम करते हैं, उनका लिखा जो कुछ पत्रमें छपता है, वह सब उनके नामसे नहीं छपता और वाहर कहीं लिख नहीं पाते। इसी दशामें २०-वर्ष काम करके जब कभी उनके मरने छोटी-सी सूचना किसी दैनिकमें छपती तो पाठक अर्धमूर्च्छित-सा सोचता है – अ ये भी कोई थे! क्या इस स्थितिमें पर लगी इस पाबन्दीको कि वे कहीं कभी कुछ नहीं लिख सकते, राक्षसी अनुचित है?

स्कूल-कॉलेजोंके अध्यापकोंपर पाबन्दी है कि वे अपने प्रधानाध्यापक आज्ञा बिना कोई 'ट्यूशन' नहीं कर सकें उद्देश्य यह है कि वे स्कूल-कॉलेजसे इतना परिश्रम न करें कि संस्थामें पूरी ताज़गी और ताक़तसे काम न सकें। इस पाबन्दीमें कहीं शिथिलता है, तो पत्रोंमें ही नहीं, विधानसभाओं उसकी निन्दा होती है। तो स्पष्ट है पाबन्दी स्वयं अपनेमें निन्दनीय नहीं है, प्रश्न उसकी मर्यादाका है।

यदि आवश्यकता हो तो इस प्रश्नको कुछ संस्मरणोंके शीशेमें भी देख सकते हैं

आशा है शासनोंके कर्णधार और विचारक इस प्रश्नपर उचित विमर्श कर निर्णयात्मक रूप लेनेकी ध्यान देंगे और इसकी उपेक्षा न करेंगे।

[बँगला नवलेखनके प्रतिनिधि कारोंके पत्र हमें लगातार प्राप्त हो रहे उनकी परेशानी इसी समस्याकी कड़ी है। अगले अंकोंमें उनके स्वर आप तक पहुँचेंगे। – सं०]

* सम्भवतया ऐसी स्थिति कहीं नहीं है – सं०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्र
ति
क्रि
या

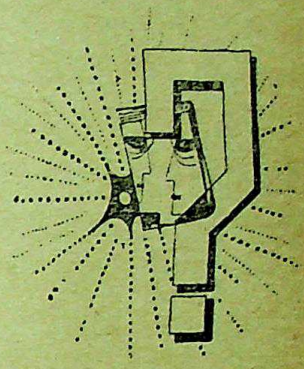

• •

हिन्दी नाट्य महोत्सव : एक दृष्टि

■

[अनामिका (समारोहके रूपायनमें जो दिन-रात लगे रहे उन सबका नाम देनेको मन होता है) द्वारा कलकत्तामें २५ दिसम्बरसे १ जनवरी १९६५ तक हिन्दी नाट्य-महोत्सव आयोजित था, एक ऐसा आयोजन जो रंगमंचके लिए अनिवार्य था और जिसका महत्त्व उद्देश्योंको देखते ऐतिहासिक भी है। उद्घाटन पृथ्वीराजने किया, समावर्तन सूचना-प्रसार-मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गान्धीने। प्रदर्शक नाट्यदल थे : थियेटर यूनिट – बम्बई, नेशनल स्कूल ऑफ़ ड्रामा – नयी दिल्ली, अनामिका – कलकत्ता, मूनलाइट – कलकत्ता, रामलीला – काशी, थ्री आर्ट्स क्लब – दिल्ली, नौटंकी – हाथरस, श्रीनाट्यम् – काशी। तीन संगोष्ठियाँ हुईं : नाटक लेखक-संगोष्ठी, नाटक-परिचालक संगोष्ठी, दर्शक-समीक्षक-संगोष्ठी। अध्यक्ष थे क्रमशः – जगदीशचन्द्र माथुर, ई० अलकाज़ी, डॉ० नगेन्द्र। प्रधान वक्ता थे : डॉ० धर्मवीर भारती, बलराज साहनी, डॉ० सुरेश अवस्थी। प्रधान अतिथि थे : आद्य रंगाचार्य, शम्भू मित्र, सी० सी० शाह। अन्य प्रमुख वक्ताओंमें थे : पं० लक्ष्मीनारायण मिश्र, पं० सीताराम चतुर्वेदी, बालकृष्ण राव, उमा राव, नेमिचन्द्र जैन, विष्णुप्रभाकर, डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल, सन्तोषकुमार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नौटियाल, विनोद रस्तोगी, सत्यदेव दूबे, भँवरमल सिंघी, लक्ष्मीचन्द्र जैन, विष्णुकान्त शास्त्री, प्रतिभा अग्रवाल, श्यामानन्द जालान आदि। स्मारिका-ग्रन्थ और हिन्दी नाट्य-संग्रहोंके ग्रन्थपुटी-प्रारूपका प्रकाशन भी इस अवसरकी विशेषताएँ हैं।...संगोष्ठियों और प्रदर्शनोंको लेकर अनेक सवाल उठे। 'ज्ञानोदय'ने यह सोचा कि रंगमंचपर परिचर्चाका यह उपयुक्त अवसर है। प्रतिक्रियाकी पहली किस्त प्रस्तुत है, जो समारोहमें उपस्थित-अनुपस्थित सभी मित्रोंके लिए इस परिचर्चाका निमन्त्रण है। – सम्पादक]

महोत्सवके आयोजनमें अनामिकाका मुख्य उद्देश्य था हिन्दी रंगमंचकी प्रगतिपर विचार, इसकी समस्याओंको समझकर भावी हिन्दी रंगमंचकी दिशाओंको स्पष्ट करना। इसी इसमें एक ओर विभिन्न तरहके प्रदर्शनोंका आयोजन किया गया था, दूसरी ओर संगोष्ठि आयोजन भी। साथ ही यह चेष्टा भी की गयी थी कि विभिन्न दलोंसे सम्बन्धित कलाक हिन्दीके क्षेत्रमें काम करनेवाले नाटककार, आलोचक, प्रबुद्ध दर्शक एवं परिचालक महोत्सवकी अवधि तक रहकर सभी प्रदर्शनोंको देखें, उसकी प्रक्रियाको समझें।

अन्धा युग

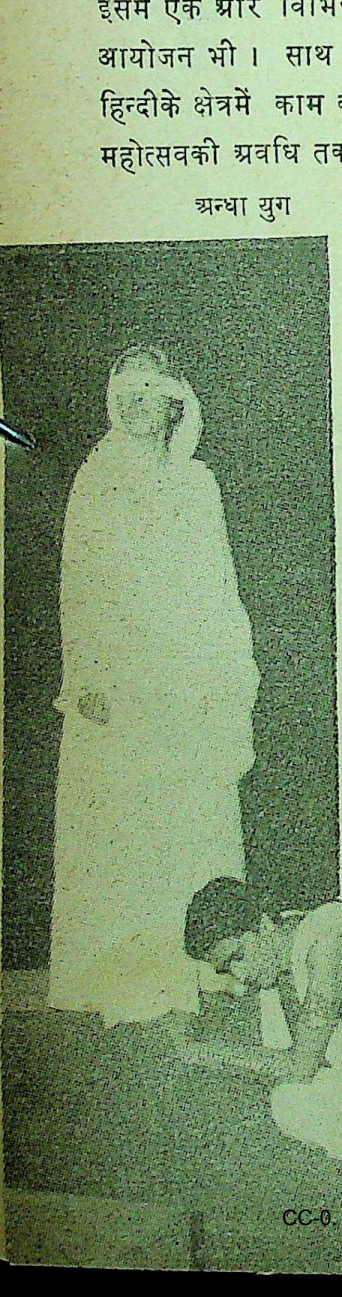

महोत्सवमें जो संगोष्ठियाँ आयोजित हुई थीं वे काफ़ी रहीं। गम्भीर विचार-विमर्श भी हुआ, पर बहुत-कुछ हो सकता था, नहीं हो पाया। शायद व्यवस्थाका तरीक़ा ही ग़लत था जैसा कि नाट्यकार-संगोष्ठीके अध्यक्ष श्री जगदीश माथुरने बताया भी कि यदि सारे आमन्त्रित व्यक्ति और नाट्यकार-परिचालक-समीक्षक आदि एक बड़ी मेजके चारों बैठकर बहस करते तो अधिक उपयुक्त होता। जिस तरहसे आयो हुआ उसमें भाषणबाज़ी तो हो गयी, गरमी भी रही, दिलचस्पी पर कामकी बात कुछ कम ही हो पायी। विशेष स्थितियों समस्याओं तथा उनके निदानपर कोई गम्भीर विचार नहीं हो परन्तु जो कुछ हुआ वह भी कम नहीं था। रंगमंचके गम्भीर भावसे काम करनेवाले एक स्थानपर मिले, विचारोंका आदान-प्रदान किया, एक-दूसरेको समझा।

संगोष्ठियों और महोत्सवके आयोजनोंके बीचमें जो भाषण हुए कई बातें स्पष्ट हुईं। एक तो यह कि मंचके बारेमें सोचा बहुत जा रहा है काफ़ी गम्भीरतासे। विभिन्न विषयोंपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मतभेद हैं पर साथ ही सत्य दोनों ही पक्षों-की बातोंमें है और लोग ईमानदारीसे रंग-मंचकी, नाटकोंकी बात करते हैं। आशा की जाती थी कि महोत्सवका उद्घाटन करते समय आधुनिक हिन्दी रंगमंचके बुजुर्ग श्री पृथ्वीराज कुछ मतलबकी बात कह सकेंगे। श्री पृथ्वीराजका हिन्दी रंगमंचके इतिहासमें अपना एक निराला स्थान रहा है। सोलह वर्षों तक यह कलाकार तन-मन-धनसे रंगमंचकी सेवा करता रहा था और इसके पीछे दीवाना था। अनेकानेक विशिष्ट प्रतिभाओंको इसने जन्म दिया था और उनका पोषण किया था। पर आश्चर्य हुआ यह देखकर कि इस सारे संघर्षको श्री पृथ्वी-राजने एक बहुत ही ऊपरके स्तरपर छूकर टाल दिया। उद्घाटन-दिन अपने भाषणमें श्यामानन्द जालानने इस बातपर ज़ोर दिया था कि हिन्दी रंगमंचकी दिशामें प्रयास तो बहुत-से हो रहे हैं, स्वतन्त्रता पानेके पहलेसे ही होते रहे हैं पर फिर भी निकट भविष्यमें इसकी सबल स्थापनाके कोई चिह्न नहीं दिखाई दे रहे हैं। जब अन्य भाषाओंमें अनेकानेक शक्तिशाली दलोंका उदय हो रहा है, हिन्दीका एकमात्र व्यावसायिक रंगमंच पृथ्वी-थियेटर सोलह वर्षों तक साँसें गिनकर सन् १९६० में बन्द हो गया। यह स्थिति कुछ उन विषम गतिरोधोंकी ओर संकेत करती है जो हमारे रंगमंचके साथ हैं, जिसे हमें पहचानना है, जिसका निराकरण हमें पाना है पर श्री पृथ्वीराजने 'हिन्दी'को 'भारतीय'का पर्याय मानते हुए सारे मूल

शाहंशाह ईडिपस और जोकॅस्टा

प्रश्नको ही एक ओर रख दिया।

पृथ्वीराजने जो कहा उसे मान लिया जा सकता है यदि 'हिन्दी' केवल 'भारतीय'का ही पर्याय है तो। परन्तु यदि हम वास्तवमें हिन्दी कही जानेवाली भाषाके, (चाहे उसमें उर्दू या हिन्दुस्तानी भी मिला लें) रंगमंचकी बात करें, तथा-कथित हिन्दीभाषी प्रान्तोंके, समाजोंके रंगमंचकी चर्चा उठायें तो यह मानना पड़ेगा कि हिन्दीके अपने रंगमंचकी उन्नतिका प्रश्न विचारणीय है क्योंकि अन्य भारतीय भाषाओंमें, समाजमें रंगमंचकी स्थापना हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रही है, उनमें प्रगति हो रही है।

महोत्सवके अन्तर्गत नाट्यलेखक-संगोष्ठी-में कई महत्त्वपूर्ण विचार सामने आये। जहाँ एक ओर श्री लक्ष्मीनारायण मिश्र और आचार्य सीताराम चतुर्वेदीने भारतीय संस्कृतिपर ज़ोर दिया, अपनी विरासतकी ओर ध्यान आकृष्ट किया वहाँ प्रधान वक्ता डॉ० धर्मवीर भारतीने समसामयिक युग-बोधको नाटकका मुख्य अंग कहा। डॉ० भारतीका भाषण रोचक, विश्लेषक, विचारोत्तेजक और तेजाबी एक साथ था। शायद पहली बार किसी लेखक-समीक्षकने हिन्दी नाटक और रंगमंचके निकट सम्बन्धों-का विश्लेषण किया है। पुराने असाहित्यिक अनाटकोंको भारतीजीने बेमानी बतलाया, पृथ्वीराजके व्यक्ति-केन्द्रित प्रयासोंको दुर्भाग्य कहा और हिन्दी रंगमंचके समर्थ भविष्यके प्रति विश्वास प्रकट किया। श्री विष्णु प्रभाकर, डॉ० लाल, श्री विनोद रस्तोगी और श्री सन्तोषनारायण नौटियाल-ने इस बातपर ज़ोर दिया कि नाटक चूँकि दर्शकोंके समक्ष उपस्थित किया जाता है इसलिए उसमें दर्शकोंकी रुचिका ध्यान रखना ही होगा। अन्तमें सभापति श्री जगदीशचन्द्र माथुरने सुलझे हुए ढंगसे इन विभिन्न विचारोंका समन्वय करते हुए कहा कि आवश्यकता है साहित्य और रंगमंचके बीचकी खाईको पाटनेकी। उन्होंने कई सुझाव दिये जिनमें प्रमुख थे नाट्यकार और परिचालकका एक साथ मिलकर विविध शैलियोंमें प्रयोग करना और हिन्दी रंगमंचके विकासके लिए संरक्षणका आवश्यक होना, चाहे वह [illegible] सरकारी या समाजके किसी वर्गविशे[illegible] हो। संगोष्ठीके प्रधान अतिथि [illegible] नाट्यकार श्री आद्यरंगाचार्यने सारे [illegible] को अपनी लेखकीय दृष्टिसे छूकर [illegible] दिया था वहाँ डॉ० भारती, श्री वि[illegible] रस्तोगी और श्री लक्ष्मीनारायण मि[illegible] भाषणोंमें कई मूल समस्याओंकी ओर [illegible] था। इन पहलुओंपर विभिन्न वि[illegible] धाराओंका प्रतिनिधित्व था और श्री मा[illegible] वक्तव्यमें उन समस्याओंके निदानके ह[illegible] चेष्टा। श्री आद्यरंगाचार्यने विशेष [illegible] दिया कि नाटक लिखना अच्छा लग[illegible] तो लिखो, अपने लिए लिखो, जो [illegible] अच्छा लगता है वह लिखो। खेलना [illegible] लगता है तो खेलो, खेलते जाओ, [illegible] अपने-आप पैदा हो जायेंगे। इसे [illegible] गम्भीर दृष्टि नहीं मानना मुश्किल [illegible] नाटक साहित्यकी अन्य विधासे भि[illegible] बशर्ते कि वह रंगमंचके लिए लिखा [illegible] हो। नाटकमें उद्देश्य रहता है, नाट्य [illegible] अपनी पृष्ठभूमि होती है। उसका [illegible] होता है दर्शकोंमें एक विशेष अनुभू[illegible] प्रादुर्भाव और उसकी पृष्ठभूमि हो[illegible] मंच, परिचालक एवं अन्य कलाकार। [illegible] मुद्रित रूप पाकर ही सम्पूर्ण नहीं होता। [illegible] सम्पूर्ण होता है – मंचपर दर्शकोंके [illegible] प्रस्तुत होकर और उसका प्रत्येक [illegible] पूर्णत्व, अन्य बारके पूर्णत्वसे भिन्न [illegible] है। डॉ० भारती और डॉ० लालके [illegible] ठीक लगते हैं, जहाँतक समसामयिक [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

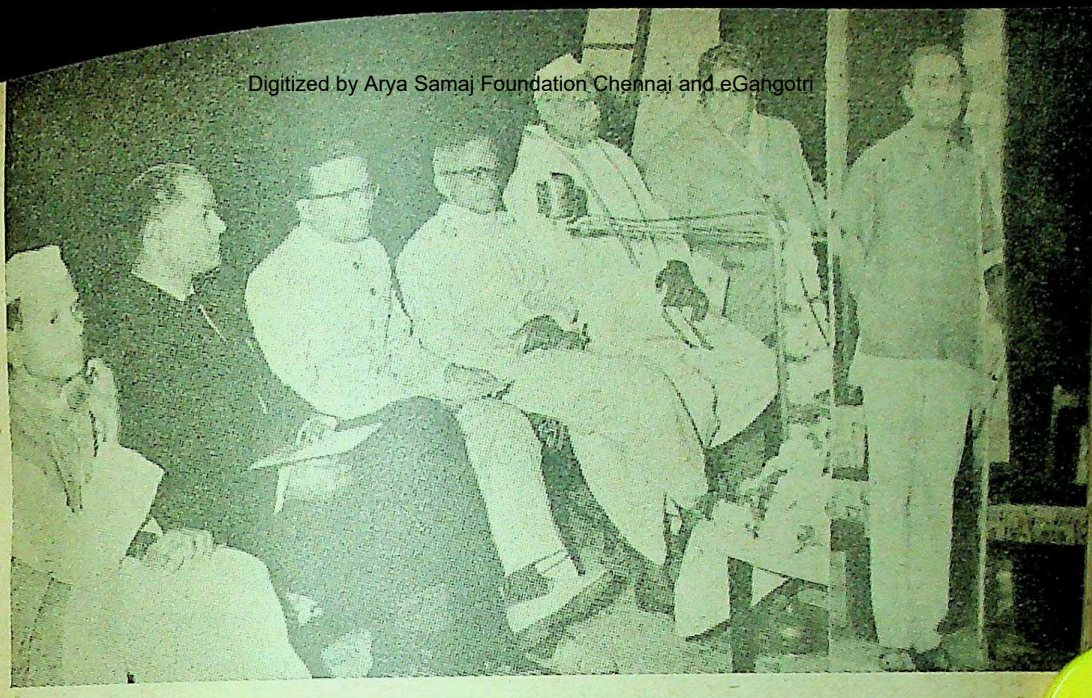

नाटककार संगोष्ठी : (बाँयेसे–) विष्णु प्रभाकर, डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल, जगदीशचन्द्र माथुर, पं० लक्ष्मीनारायण मिश्र, पं० सीताराम चतुर्वेदी, पृथ्वीराज कपूर और हिन्दी नाटक तथा रंगमंचका विश्लेषण करते डॉ० धर्मवीर भारती।

बोधका नाटकमें समावेशका प्रश्न है, साहित्यका प्रश्न है और श्री विनोद रस्तोगीका भी कहना उचित लगता है जहाँतक कि दर्शक, समाजकी मनःस्थिति, बौद्धिक जागरूकताको ध्यानमें रखकर नाटकके लेखन एवं प्रस्तुतीकरणका प्रश्न है।

सारी बात हो जानेपर भी वे कई प्रश्न जो श्री लक्ष्मीचन्द्र जैनने अपने विषय प्रवर्तनमें उठाये थे अछूते ही रह गये। नाट्यक्षेत्रके कई मूलभूत प्रश्न उन्होंने संक्षेपमें प्रस्तुत किये थे जो कि नाट्यलेखनके प्रायः सारे क्षेत्रको अपनेमें समेटे हुए थे। अनुवादोंकी समस्या, भाषाकी समस्या आदि कई प्रश्नोंपर संगोष्ठीमें कोई विशेष प्रकाश नहीं डाला गया।

महोत्सवकी दूसरी संगोष्ठी थी परिचालकोंकी। इसमें अनामिकाकी ओरसे विषय प्रवर्तन करते हुए श्री श्यामानन्द जालानने कुछ विशेष समस्याओं और स्थितियोंकी ओर ध्यान आकर्षित किया। वे थीं साधनोंका अभाव, सहयोगी कलाकारों, नाटकों, प्रेक्षागृहों और परिचालककी अपनी शिक्षा, परिचालकके निर्माणका प्रश्न। इसके साथ ही ये प्रश्न भी उठाये गये थे कि किस तरहके नाटक चुने जायें, किस शैलीमें प्रस्तुत किये जायें। प्रवर्तनमें संकेत कुछ ऐसा था कि नाट्यप्रस्तुतीकरण एक स्वतन्त्र कला है, एक अलग सृजन क्षेत्र है। इसमें साहित्य एवं अन्य ललित कलाओंकी सहायता लेकर एक कलाकृतिका निर्माण, अभिनेताओंकी सहायता लेकर परिचालक करता है। वह केवल नाट्यलेखकका भाष्यकर्ता या माध्यम ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं रहता। दर्शक भी नाटकका अभिन्न अंग है और उसकी रुचिको समझकर, उसकी भावात्मक एवं बौद्धिक स्थितिको पहचानकर, उसी परिप्रेक्ष्यमें प्रस्तुतीकरण करना होगा। पर इन समस्याओंपर, इनके निदानपर कोई गम्भीर विचार संगोष्ठीमें नहीं हो पाया। कुछ वक्ताओंने कई महत्त्वपूर्ण बातें कहीं पर सारे विचारमें गठनका, सन्दर्भ और सन्तुलन-का अभाव-सा था। प्रधान वक्ता बलराज साहनी और पृथ्वीराज केवल परिचालक-को ढारस ही बँधाते रह गये। श्री सत्यदेव दुबेने भी इसी स्वरमें अपना स्वर मिलाकर बड़े जोशसे कहा कि उन्हें तो नाटक प्रस्तुत करना है आपत्तियाँ आयें तो आयें। कोई समस्याओंकी बात सोचे तो अपने घर बैठे, परिचालनके क्षेत्रमें आये ही नहीं। इन वक्तव्योंमें मूल बात एक ओर ही रह गयी। प्रश्न निराश होने या हारकर बैठनेका नहीं था; स्थितिको समझनेका था, कठिनाइयोंको पहचानकर उनसे जूझनेका था। इस संगोष्ठीके प्रधान अतिथि श्री शम्भू मित्रने अपने संक्षिप्त लेकिन सारगर्भित भाषणमें कई उठाये गये प्रश्नोंपर विचार व्यक्त करते हुए कहा कि सच्ची परम्परा वही है जो हमें स्वतः बाँध ले। बाह्य प्रभावसे हम घबरायें नहीं, न उसके सामने आँख मूँद-कर घुटने ही टेक दें वरन् उसे अपने अनुकूल बनाकर आत्मसात् कर लें। अध्यक्ष पदसे बोलते हुए श्री अलकाजीने अपने प्रभावशाली और चुस्त वक्तव्यमें अपनी संस्था नेशनल स्कूल ऑफ़ ड्रामाकी नीतिकी व्याख्या की और यह कहा कि परिचालक केवल माध्यम है जो नाटककारकी कृतिको व्याख्या सहित प्रस्तुत करता है। परिचा का उद्देश्य है कलात्मक अभिव्यक्ति, सौ नुभूति और परम्पराओंकी नवीन बनाते हुए आगे बढ़ना। उन्होंने यह कहा कि सामान्य दर्शक बुद्धिमान् है वह कलाके उच्च स्तरपर किये गये प्रयो समझ सकता है। श्री अलकाजीके विचारोंसे सहमत होते हुए भी यह कुछ कठिन लगता है कि कोई भी समाज एक साथ ही पश्चिमकी कि शैलीमें ढले किसी कला-प्रस्तुतीक समझ पायेगा। प्रत्येक युग नयी पर बनाता है पर वह निर्माण पुरानी परम्प के सन्दर्भमें ही होता है।

महोत्सवके अन्तर्गत तीसरी संगोष्ठ दर्शक-समीक्षक संगोष्ठी। अध्यक्ष पदसे देते हुए डॉ० नगेन्द्रने साहित्यिक समी सिद्धान्तोंकी ही विशेष बात कही, हाल रंगमंच-समीक्षकके पहलुओंको भी छुआ। श्री भँवरमल सिंघीने विषय करते हुए जिन प्रश्नोंको उठाया और और महोत्सव-स्मारिकामें प्रकाशित संगोष्ठीके प्रारम्भिक वक्तव्यके सभी पह पर सन्तुलित विचार नहीं हो पाया। अतिथि श्री सी० सी० मेहताने नाटक सम्बन्धी, रंगमंचके विकासके निमित्त योजनाओंको प्रस्तुत तो किया पर वे संगोष्ठीके आलोच्य विषयपर कोई प्रकाश नहीं डाल पाये। उसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहलुओंको यदि किसीने छुआ तो वे थे प्रधान वक्ता डॉ० सुरेश अवस्थी, श्री नेमिचन्द्र जैन, श्री बालकृष्ण राव एवं श्रीमती उमा राव। डॉ० अवस्थीने रंगमंच-समीक्षककी दृष्टिकी व्याख्या और उसके अपेक्षित गुणोंकी चर्चा की। श्री रावने इस बातपर ज़ोर दिया कि दर्शक जो नाटक चाहता है, जैसे नाटक स्वीकार कर सकता है, उन्हें लेकर ही फ़िलहाल काम शुरू कर दिया जाये। एक बार दर्शकोंमें नाटक देखनेकी रुचिका जन्म हो जाये फिर धीरे-धीरे हम उन्हें कला और साहित्यके उच्च स्तरपर ले जानेकी चेष्टा करें। श्री नेमिचन्द्रने श्री रावके इस सुझाव के ख़तरेकी ओर संकेत करते हुए कहा कि यदि केवल दर्शकवर्गकी रुचिका ध्यान रखकर निम्नस्तरके नाटक प्रस्तुत किये जायें तो जनताको ऐसे ही नाटकोंको देखनेकी आदत पड़ जायेगी और यही रंगमंचका स्तर भी हो जायेगा। कहीं ऐसा हो गया तो नाटक अपना मूल उद्देश्य, अपनी सारी-विशेषता ही खो बैठेगा। दोनोंकी ही बातोंमें आंशिक सत्य है। और सही उत्तर शायद नाटकके मूल उद्देश्यमें मिल सकता है। नाटक केवल मनोरंजनके लिए नहीं है। इसका उद्देश्य है सौन्दर्यानुभूति, रसबोध।

महोत्सवमें कई प्रदर्शन आयोजित किये गये थे और उनमें-से प्रत्येक हिन्दी रंगमंचकी किसी-न-किसी विशेष धाराके प्रतिनिधि थे। पारम्परिक और मरणासन्न हिन्दी रंगमंचका प्रतिनिधित्व कर रहा था मूनलाइट थियेटर, पारसी शैलीमें श्री आग़ा हश्र लिखित 'सीता वनवास'को लेकर। इसे देखकर हिन्दी चलचित्रोंकी सारी पृष्ठभूमि स्पष्ट हो उठी। साथ ही केवल भावुकताके बलपर, दर्शकोंकी छिछली भावनाओंको छूकर, उन्हें विभिन्न रसोंका आस्वादन कराते हुए, मनोरंजनके विभिन्न साधनोंका प्रयोग कर नाटक खेलनेका प्रयास स्पष्ट झलकता था। इसे देखते हुए एक ओर कुछ वयोवृद्ध बड़ी तन्मयतासे गुज़रे हुए ज़मानेकी यादें ताज़ा कर रहे थे, कुछ धर्मभीरु वृद्ध महिलाएँ माला लेकर श्रीराम और जानकीजीको बार-बार नमस्कार कर रही थीं वहीं दूसरी ओर आजका युवक एक कौतूहल-भरी दृष्टिसे ऐसे देखता था मानो अजायबघरके किसी नमूनेको पेश किया गया हो। आधुनिक युवककी दृष्टि कुछ विचित्र-सी लग रही थी क्योंकि यही युवक हिन्दी चलचित्रोंको बड़े चावसे देखता है जो गठन और शैलीकी दृष्टिसे इस रंगमंचके बहुत ही नज़दीक हैं। वही मैलोड्रामा, वही नाच, वही गाना, वही प्रहसन, वे ही छिछली भावनाओंको छूनेका प्रयास। फ़र्क था तो केवल संवाद बोलने या अभिनयकी शैलीमें।

पारम्परिक लोक-नाट्योंके प्रतिनिधि-रूप रामलीला और नौटंकी प्रदर्शित किये गये थे। जब कि रामलीला-दल बनारसका होते हुए भी काफ़ी कमज़ोर था, श्री गिरिराजका हाथरससे आया हुआ नौटंकी-दल बहुत शक्तिमान् था। आजका शहरी दर्शक इस रंगमंचको नहीं समझ पाता। देहातों-क़स्बोंका दर्शक इसे बहुत प्रश्रय देता हो ऐसा भी नहीं लगता। लगभग ५०-६० वर्ष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले इस विधाका निर्माण हुआ और वहीं यह खड़ी रह गयी। युगमें समाजमें और व्यक्तिमें जो परिवर्तन आये वे किसी भी तरह इसे छू नहीं पाये और यह जीवनसे जैसे दूर हो गयी। नौटंकी-दलके कार्यको देखकर लगा कि इतना उत्साह, लगन, इतना अच्छा गला और अभिनय सब कहीं कुछ फीका-सा पड़ गया है और यह भी लगा कि नाटक जन-जीवनसे किस भाँति गुँथा हुआ है। अन्य कला-कृतियाँ पुस्तकालयों, संग्रहालयों और अजायबघरमें रखी जा सकती हैं – फ़ुरसतसे देखने-पढ़नेके लिए, पर नाटक एक ऐसी कलाकृति है जो केवल कुछ घण्टे जीवित रहती है, कुछ थोड़े-से व्यक्तियोंके सम्मुख और इसीलिए उन व्यक्तियोंसे, उस समयसे इसका बहुत गहरा सम्बन्ध होता है। नाटक तभी शक्तिशाली हो सकता है जब कि हम उस सम्बन्धको समझें-पहचानें।

आधुनिक काव्यात्मक शैलीमें लिखी गयी हिन्दी साहित्यकी शक्तिशाली कृति 'अन्धायुग' को सत्यदेव दुबेने बम्बईके 'थियेटर यूनिट' की ओरसे प्रस्तुत किया। प्रदर्शन बहुत ही प्रभावशाली और अभिनय उच्च कोटिका था। दुबेकी आवाज़, गान्धारीका चीत्कार और धृतराष्ट्रकी आँखें, काफ़ी अरसे तक लोगोंके दिलोंमें ताज़ा रहेंगी। पर साथ ही इसमें भी सन्देह है कि नाटकके मूल कथ्यको या इसके प्रतीकको कितने व्यक्तियोंने समझा? यह नाटक आम दर्शकोंके लिए नहीं था। न तो इसमें तड़क-भड़क थी। न साज-सज्जा! इसमें केवल काव्य था। इसको देखकर कुछ प्रश्न उभरकर सामने आ दो-एक प्रश्न तो रंगमंचके मूल प्रश्न हैं। उनमें-से एक है काव्य और रंगमंचके सम्ब का। इसी सन्दर्भमें श्री अलकाज़ीके निर्दे में स्कूल ऑफ़ ड्रामा द्वारा परिवेशित ग्रीक नाटक 'राजा ईडिपस' की चर्चा समीचीन होगी। नाट्यलेखनमें तो बौद्धि नहीं थी, पर प्रस्तुतीकरणमें थी। नाटक में भावनाओंका ऊहापोह, उनका उद्वेल उभरकर आता था। श्री अलकाज़ीने बड़ी दक्षतासे आधुनिक पाश्चात्य प्र करणकी शैलीमें परिवेशित किया मुखौटोंका सहारा लेकर बहुत ही कम पर इसे बड़े ही प्रभावशाली ढंगसे प्र किया गया। यह कुछ विचित्र-सा लग इतने प्रभावशाली प्रदर्शनके बावजू नाट्यकृति, जो संसारकी सर्वश्रेष्ठ कही जाती है, दर्शकोंको छू नहीं पायी वही भावना जाग्रत् हुई जो एक कला हालयमें रखी कलाकृतिको देखकर होती क्या रंगमंच भी एक कला-संग्रहालय अजायबघर है? क्या वास्तविक सौन्द भूतिके लिए इतनी तटस्थता अपेक्षित क्या हिन्दीका दर्शक इस कलाकृतिको अपेक्षित सौन्दर्यानुभूतिकी प्राप्ति कर या केवल प्रभावित होकर मुग्ध-सा उ एक अच्छा तमाशा समझकर ही कर लेता है?

इनके अलावा, आधुनिक अनामिकाने एक नया प्रयोग एरिना के रूपमें किया। इसमें ८०० दर्श

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फुट लम्बी और २० फुट चौड़ी रंगभूमिके चारों ओर बैठे थे; दर्शक ऊँचे और अभिनेता नीची भूमिपर। यह एक नया प्रयोग था। नाटक सेवेस्शियनका 'छपते-छपते' था जो एक तीव्र सामाजिक व्यंग्य है और लगा कि इस तरहकी रंगशाला नाटकको दर्शकके बहुत समीप ला देती है। इतना सामीप्य अपेक्षित है या नहीं, यह विद्वानोंकी आलोचनाका विषय हो सकता है। पर यह इस तरहके मंचीकरणकी अपनी विशेषता है, इसमें कोई सन्देह नहीं। अभिनेताओंको भी इस शैलीमें बहुत उत्साह मिलता है। नाट्याभिनयमें दर्शकों और अभिनेताओंके बीच भावनाओंका आदान-प्रदान निरन्तर चलता रहता है और यह जितना उभरकर इस शैलीमें आता है, अन्यत्र नहीं।

और अन्तमें मैं उन दो नाटकोंकी चर्चा करूंगा जो बहुत ही जनप्रिय हुए। दोनोंमें समानताएँ थीं पर फिर भी दोनों ही बहुत भिन्न भी थे। उनमें-से एक था रमेश मेहता द्वारा लिखित एवं निर्देशित 'अण्डर सेक्रेटरी' जिसे दिल्लीके थ्री आर्ट्स क्लबने प्रदर्शित किया था। यह एक प्रहसन था और इसमें रमेश मेहताने स्वयं भी अभिनय किया था, जिसे बहुत ही सराहा गया। यथार्थवादी शैलीमें प्रस्तुत यह प्रहसन सशक्त था, इसके कलाकार मंजे हुए थे, यह निःसन्देह कहा जा सकता है। जनरंजन भी बहुत हुआ। दर्शक आरम्भसे अन्त तक हँसते ही रहे पर यह कोई छाप नहीं छोड़ पाया।

रंगमंच सम्बन्धी एक और प्रश्न उभरा और यह लगा कितना कठिन कार्य है नाट्याभिनय-का! और कितना महत्त्वपूर्ण स्थान है इसमें दर्शकोंका। एक विशेष समाजके लिए यह नाटक बहुत उपयुक्त था क्योंकि उसीके इर्द-गिर्द, उसीके जीवनको प्रतिबिम्बित करनेकी इसमें चेष्टा की गयी थी। दूसरा नाटक, जिसको कि जनताने बहुत अधिक पसन्द किया, वह था प्रेमचन्दकी अमर कृति गोदान-के नाट्यरूपान्तरका बनारसके श्रीनाट्यम्-द्वारा प्रदर्शन। यह प्रस्तुतीकरण नितान्त यथार्थवादी शैलीमें प्रस्तुत किया गया था। कलकत्ता महानगरीके गतिशील जीवनमें साढ़े तीन घण्टे तक दर्शक इसको मन्त्रमुग्ध होकर देखते रह गये, उन्होंने बहुत प्रशंसा की, बहुत सराहा भी बावजूद इसके कि नाटककी गति बहुत ही धीमी थी, अभिनय साधारण था और निर्देशनमें भी कोई विशेषता परलक्षित नहीं होती थी।

इस अभिनयके प्रदर्शनने दो चीजें काफ़ी स्पष्ट कर दीं। एक तो यह कि हिन्दीका आजका दर्शक साहित्यको रंगमंचमें स्वीकार कर सकता है, गम्भीर साहित्यिक कृतिको सराह सकता है बशर्ते कि वह बौद्धिकतासे भरी न रहकर भावुकताके धरातलपर सबल हो और दूसरे यह कि रंगमंचकी शैलीका चुनाव दर्शकको ध्यानमें ही रखकर करना होगा।

—महेन्द्र पाल
(कलकत्ता)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• डॉ० लालका वक्तव्य : एक पत्र

जनवरीके 'ज्ञानोदय' में डॉ० लक्ष्मी-नारायण लालका इण्टरव्यू देखा। उसमें डॉ० लालका जो वक्तव्य, प्रासंगिक रूपसे ही सही, 'अश्क'को लेकर है वह ग़लत और प्रति-क्रियावादी है। ग़लत इसलिए कि उसमें वह 'अश्क' को एक मेलोड्रैमेटिक नाटककार क़रार देते हैं। अपने उपन्यास और कहा-नियोंकी तरह नाटकोंमें भी 'अश्क'जीने एक लम्बा रास्ता तय किया है। वह रोमानी आदर्शपरकतासे यथार्थकी ओर बढ़े हैं और बहुत-सी सामाजिक विसंगतियों-को यथार्थके धरातलपर उजागर करनेमें अपने ढंगके अकेले और मौलिक नाटककार हैं। 'अंजो दीदी', 'क़ैद और उड़ान' और दर्जनों एकांकियोंमें इस सत्यको देखा जा सकता है। उन्हें 'इब्सन' और 'चेखॅव' की नक़ल मात्र कहना 'अश्क'के प्रति अन्यायपूर्ण नहीं है, इससे डॉ० लालकी समझदारीपर सवालिया निशान लगता है। उनका वक्तव्य मूलतः 'अश्क' के प्रति एक औज़ारके तौरपर व्यक्त किया गया 'अश्क' के उस वक्तव्यकी प्रतिक्रियामें 'हिन्दी कहानियाँ और फ़ैशन' में डॉ० लालकी 'धर्मयुग' में कथा-अन्तर्गत प्रकाशित कहानीके साथ कुछ कहानियोंकी भी आलोचना की है। प्रकारके वक्तव्यों और फ़तवोंसे पाठकों आलोचनाके भी गुमराह होनेकी सम्भावना है।

—

(दिल्ली

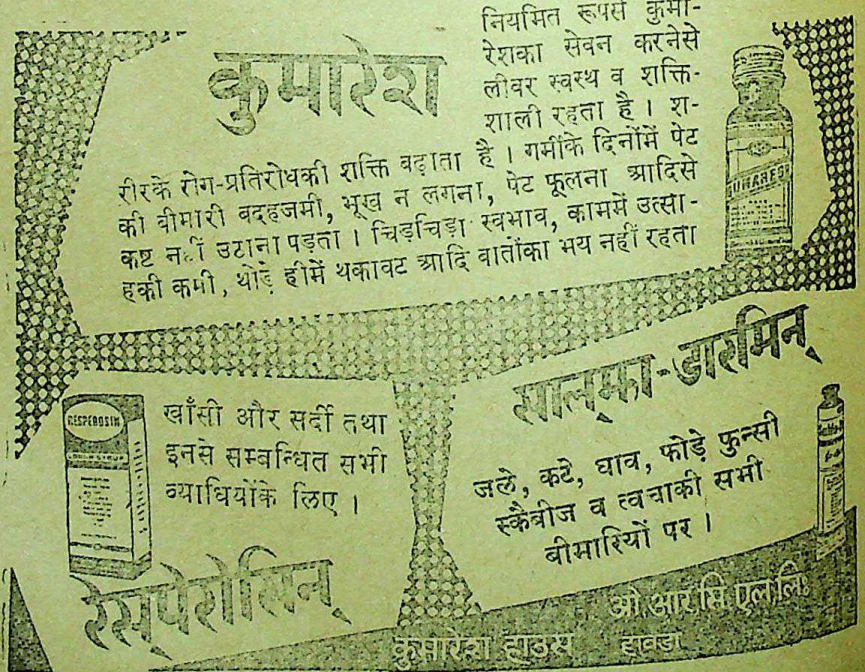

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

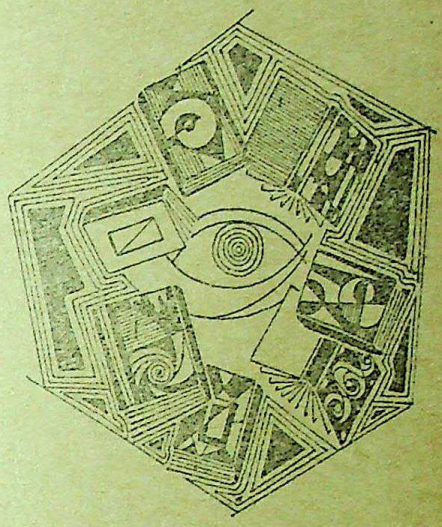

संस्कृतके लक्षण-ग्रन्थ : हिन्दीमें

संस्कृत साहित्यालोचन और साहित्य-सर्जनकी विवेचना और शिक्षा लक्षण-ग्रन्थोंमें मिलती हैं। हिन्दीमें इन ग्रन्थोंके अनुवाद और व्याख्याकी परम्परा भी एकदम नयी नहीं है। शालग्राम शास्त्री (लखनऊ) और डॉ० नगेन्द्र (दिल्ली) के नाम इस प्रसंगमें अनायास याद आ जाते हैं। डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी और उनके अनुज पृथ्वीनाथजीके नाम भी सामने आते हैं। लक्षण-ग्रन्थोंकी उपलब्धियोंका हिन्दीके माध्यमसे परिवेषण कितना आवश्यक है, यह इन प्रयत्नोंकी प्रगतिसे स्पष्ट होता जा रहा है।

ध्वन्यालोक आजसे सम्भवतः साढ़े ग्यारह सौ वर्ष पहले लिखा गया था। इसके कारिकाभाग और व्याख्याभाग (जिसे ध्वन्यालोक, सहृदयालोक और काव्यालोक कहते हैं) के प्रणेता एक ही व्यक्ति (श्री आनन्दवर्धनाचार्य) हैं, अथवा कारिकाभागके प्रणेता कोई दूसरे आचार्य हैं – यह अन्तिम रूपसे निश्चित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं हुआ अभी। मूल लक्षण-ग्रन्थपर दो टीकाएँ भी प्रसिद्ध रही हैं – चन्द्रिका और लोचन। पहलीका दूसरीमें उल्लेख-भर है, दूसरीके रचयिता – अभिनवगुप्त – एक प्रकारसे संस्कृत साहित्यशास्त्रके महाभाष्य-कार माने जाते हैं। कहना न होगा कि पहली सहस्राब्दीके बादसे संस्कृतमें प्रायः टीकाग्रन्थोंकी ही भरमार मिलती है। दूसरी सहस्राब्दीके अधिकांश सर्जक और विचारक प्रायः परम्परागत प्रसिद्ध विचार-पद्धतियों, सिद्धान्तों और सम्मानित कृतियोंपर टीकाके माध्यमसे ही अपने स्वतन्त्र विचार सहृदय पाठकवर्गके समक्ष रखते रहे और आगे चलकर यह परिपाटी भी समाप्त हो गयी। अब इसका नवीन सूत्रपात हिन्दीमें शुरू हुआ है। डॉ० रामसागर त्रिपाठीने ध्वन्या-लोक[1]को दो ज़िल्दोंमें – पूर्वार्द्ध और उत्तरार्धके रूपमें – अपनी नयी टीका 'तारावती'के साथ मोतीलाल बनारसीदास-द्वारा प्रकाशित कराया है। मूल और लोचन टीकाके सम्पूर्ण हिन्दी अनुवाद भी इन दोनोंमें सम्मिलित हैं। भूमिका और अनु-क्रमणिकाके अंश छोड़कर गिनें तो डिमाई (अठपेजी) १४१६ पृष्ठोंमें यह सारी सामग्री पचीस रुपयेमें उपलब्ध है।

मैंने यत्र-तत्र दोनों भाग पढ़े, लगा जैसे किसी गुरुके मुखसे 'ध्वन्यालोक' (लोचन-सहित) पढ़ रहा हूँ! डॉ० त्रिपाठीने संस्कृत विद्यालयोंकी गुरु-परम्पराको ग्रन्थ-बद्ध कर दिया है। शायद इसीलिए विस्तार-से समझाने और विवेचना करनेको वे सर्वथा प्रस्तुत रहे हैं। निःसन्देह वे स्वयं इसे इसी प्रकार पढ़ चुके हैं। मैंने सं क़रीब बारह वर्ष तक गुरुमुखसे पढ़ी इसलिए मुझको इसमें विशेष 'अरुचि' हुई। किन्तु आधुनिक पाठक – विशे हिन्दी पाठक – इस शैलीको कहाँतक पायेगा, यह कैसे कहूँ?...

नये हिन्दी टीकाकारके कृतित्वके आमुखसे डॉ० नगेन्द्रके शब्दोंको दुहरा ही ठीक होगा : ध्वन्यालोक भारतीय का शास्त्रका युगप्रवर्तक ग्रन्थ है। इसमें प्रा काव्यतत्त्वोंकी परीक्षा कर सबका समा नवीन ध्वनि-कल्पनामें किया गया समस्त वस्तुतत्त्वकी दार्शनिक प 'लोचन'में ही पूर्ण हुई है अतः 'लोचन विचारधाराका हिन्दी जगत्में प्र आवश्यक भी है और उपादेय भी।...

"डॉ० त्रिपाठीने हिन्दीके साथ संस्कृ भी, प्राच्य तथा नव्य दोनों शैलियोंसे ग अध्ययन किया है....काव्यशास्त्र और उ आधार-भूमि निर्भ्रान्त ज्ञान होनेके का ध्वन्यालोकके सूक्ष्म गहन विवेचनमें लेख दृष्टि उलझी नहीं है और प्राक्तन और प त्तन काव्यतत्त्वोंके परिप्रेक्ष्यमें 'ध्वन्यालो सिद्धान्तोंकी समीक्षा करनेमें उसे निश्च अभीष्ट सफलता मिली है।"

■

इस सिलसिलेमें दूसरी चर्च्य पु है – 'भरतका नाट्यशास्त्र' (डॉ० रघुवं जिसका यह पहला भाग (अध्याय मूल, पाठान्तर, अनुवाद तथा व्याख्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डिमाई, अठपेजी ५०३ पृष्ठोंमें) १५ रु०में उपलब्ध है। प्रकाशक हैं – मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, वाराणसी, पटना।....

डॉ० रघुवंशने इसमें ४५ पृष्ठोंकी एक भूमिका भी दी है जो अपने आपमें संग्रहणीय और अवश्यपठनीय है। समूचे नाट्यशास्त्रका प्रकाशन चार भागोंमें आयोजित है और सम्भावित पाँचवें भागमें नाट्यशास्त्रके अध्ययनसे सम्बन्धित सामग्री और विवेचना रहेगी। अनुवादकी भाषा और अपनी व्याख्यामें डॉ० रघुवंशने हिन्दीके आधुनिक पाठकों और विद्यार्थियोंका पूरा ध्यान रखा है। मुझे यह शैली बहुत अच्छी लगी। इसमें सन्देह नहीं कि जो इस प्रथम भागको पढ़ेंगे वे अगले भागोंकी तीव्र प्रतीक्षा करेंगे। हिन्दीमें संस्कृत नाट्यशास्त्रका अध्ययन इस प्रयत्नसे सचमुच सरल हो जायेगा और डॉ० रघुवंशको लोग हमेशा याद करेंगे। इन पृष्ठोंमें उनके इस कृतित्वकी समीक्षा पूरे ग्रन्थके प्रकाशनोपरान्त ही हो सकेगी।....

■

तीसरी पुस्तकके[3] लेखक ४० वर्षतक संस्कृत साहित्य पढ़ाते रहे हैं। अपने सारे नोट्सको पुस्तकाकार देकर वे छात्रोंका हित कर पाये हैं। कालिदासके कालनिर्णय, जन्मस्थान-विनिश्चय, तात्कालिक युग-वर्णन, कविकी शृंगार-सौन्दर्यभावना, प्रतिभा, प्रेम-कल्पना आदिका इसमें विवेचन है। कालिदासको राष्ट्रकवि और विश्वकवि-जैसी आधुनिक संज्ञाओंसे विभूषित करनेको उनके महाकाव्यों और नाटकोंकी उत्कृष्टता प्रमाणित कर लेखकने उनकी मानवीय भावनापर प्रकाश डाला है। कुमारसम्भव और रघुवंशको महाकाव्य क्यों माना जाये – यह भी बताया है। किन्तु हाशियेमें विचार-विन्दुवाली पद्धतिको अपनाकर वे शायद स्वयं भी यह मानते हैं कि यह कृति विद्यार्थियोंके लिए ही है। अँगरेजी कविताके दो चार उदाहरण भी इसीलिए खप जाते हैं और अन्य संस्कृत ग्रन्थोंके टिप्पणोक्त उद्धरण भी। अपनी बातकी विवृतिमें विद्यालंकारजीने टिप्पणीमें कालिदासकी कृतियोंसे अनेक उदाहरण उद्धृत किये हैं, जो नवीन पाठकोंको भी उपयोगी लगेंगे। पुस्तक छात्रोंके लिए उपयोगी है। उन्हें यह परिश्रमके लिए उद्बुद्ध करेगी और मार्ग-प्रदर्शन भी।

– *पृथ्वीनाथ शास्त्री*

मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, पटना, वाराणसी-द्वारा प्रकाशित :

१. आनन्दवर्धनाचार्य-कृत ध्वन्यालोक अभिनवगुप्त कृत लोचन टीका सहित भाग १-२ : डॉ० रामसागर त्रिपाठी – तारावती टीकाकार।

२. भरतका नाटचशास्त्र : डॉ० रघुवंश।

३. कालिदास और उसकी काव्यकला : वागीश्वर विद्यालंकार।

■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राकेश के जीवन का नया अध्याय

शाम का समय था। मोहन और उसकी पत्नी दोनों चाय पी रहे थे। बाहर राकेश दूसरे लड़कों के साथ खेल रहा था।

अचानक मोटर के ब्रेक की आवाज़ सुनाई दी। उसके बाद खामोशी-सी छा गई। एक लड़का भागते हुए अंदर आया और हाँफते हुए कहने लगा, "राकेश को...टक्कर...लग ..." चाय की ट्रे फर्श पर गिरकर चकनाचूर हो गई। "कहाँ है वह? ...हाय, यह क्या हो गया?" राकेश की माँ ने रोते हुए कहा। राकेश को लोग उठाकर घर ले आये। उसकी आँखें बंद थीं और सिकुड़ी हुई देह खून से सनी हुई थी।

अस्पताल में सन्नाटा छाया हुआ था। लड़का अभी बेहोश था। मोहन और उसकी पत्नी ने तीन दिन और तीन रातें उसके सिरहाने गुज़ार दीं। वे निरंतर जागते रहे और भगवान से प्रार्थना करते रहे। मोहन ने मनौती मानी कि यदि राकेश ठीक हो जाए वह ग़रीबों को कम्बल बाँटेगा।

चौथे दिन राकेश ने आँखें खोलीं। भगवान ने मोहन की विनती सुन ली। अब उसे अपनी मनौती पूरी करनी थी। लेकिन ग़रीबी उसके आड़े आई। मोहन कुछ हिचकिचा रहा था कि— किसी पुरस्कार की तरह उसे प्रत्याशित मियादी बीमे से २००० रुपये की पहली किश्त मिली।

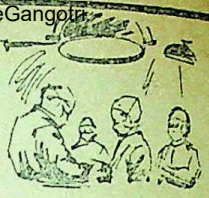

पाँच वर्षों तक राकेश अर्धंग अवस्था में रहा। अब डाक्टर उसके पैर का आपरेशन करनेवाले थे। यह वक्त बहुत ही नाज़ुक था क्योंकि अस्पताल के खर्चे के लिए पैसों की सख्त ज़रूरत थी। सौभाग्य से उसी समय मोहन की २००० रुपये की दूसरी किश्त मिल गई।

फिर भी मोहन की समस्या ज्यों-की-त्यों रही। दुर्घटना के कारण राकेश लंगड़ा हुआ। इसलिए चार मील पैदल चलकर कालेज जाना उसके लिए मुश्किल था। वह अपनी पढ़ाई भी आधी न रख सका। ऐसा मालूम हुआ कि राकेश का भविष्य अंधकारमय है। किन्तु उसी समय मोहन को पालिसी की आखिरी किश्त के और ६००० रुपये मिल गये। मोहन ने इस रकम से राकेश को आटे की चक्की खोलकर दी। आज राकेश चक्की का मालिक है और तन-मन-धन से माँ-बाप की सेवा कर रहा है।

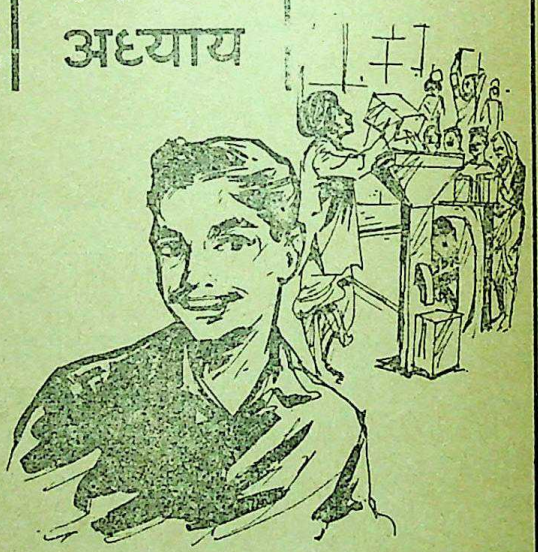

लाइफ़ इन्श्योरेन्स कारपोरेशन आफ़ इन्डिया

ASP/LIC/2 - 25 HIN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शोकगीत

नये शहरकी सरहद

मेरे इन शब्दोंके ठीक बाँये एक ध्वनि-लिपि है और जितनी ही बार मेरी दृष्टि आवाज़की इस काँपती हुई लकीरपर जाती है, लगता है जैसे मैं सामरसेटके टूटे हुए चर्चमें खड़ा हूँ और मेरी आँखोंके सामने एक मज़ार बन रहा है, मुट्ठी-दर-मुट्ठी धूल एक शरीरको ढँक रही है, चर्चकी मृत्यु-ध्वनिके बीच एक आवाज उठती है, 'मर्डर इन द केथड्रल'* में चहलक़दमी करते बिशॅपके ऊपर-ऊपर : "शाब्बास टॉमस ! तुम्हारी इच्छाको झुकाना सरल नहीं····और फिर तुम्हारे साथ जब मैं हूँ, तुम्हें दोस्तका अभाव कैसा ?" – शब्द फोर्थ टेम्प्टरके, आवाज़ टी० एस० इलियटकी ।

वह आवाज़ अब नहीं रही, जैसे वेस्ट लैण्डकी ४३० वीं पंक्ति सारे चर्चमें गूंज रही हो। पता नहीं इतनी सारी कविताओंमें-से इलियट स्वयं अपने क़ब्र-लेखके लिए कौन-सी पंक्ति चुनते । मुझे उनकी हर कवितामें ऐसे रेखांकन मिलते हैं जो किसी-न-किसीकी क़ब्रके लिए उपयुक्त हो सकते हैं । कारण केवल यही है न कि कविने प्रारम्भ और अन्त दोनोंको एक साथ देखा था, कितनी-कितनी बार उसने दोहराया है : "इन माई एण्ड इज़ माई बिगिनिंग ।" इलियटके चर्चमें 'न्यू ईयर' और 'नेल'की घण्टियाँ एक-जैसी ही बजती हैं ।···

१० जनवरी, रविवार शामको कलकत्ताके सेण्ट पॉल केथड्रलमें इलियटके लिए स्मृति-सभा आयोजित थी । उस सभासे सिर झुकाये लौटते मुझे ऐसा लगा था जैसे किसी कविकी नहीं किसी पादरीकी मृत्यु हो गयी है ।···

---

* 'मर्डर इन द केथड्रल' फ़िल्मका वह टुकड़ा जिसमें फोर्थ टेम्प्टरकी ये पंक्तियाँ स्वयं कवि टी० एस० इलियटने बोली थीं – 'वेल डन टॉमस, योर विल इज़ हार्ड टु बेण्ड । एण्ड विद मी, बिसाइड यू, यू शैल नॉट लैक ए फ्रेण्ड ।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उससे दो दिन पहले कॉलेज स्ट्रीट कॉफ़ी-हाऊसमें बँगलाके नये कवि इलियट की मृत्युसे दुःखी थे। विष्णु डे, सुधीन दत्त, बुद्धदेव बसु पर दिवंगत कविके दिशा-प्रभावकी चर्चा थी। बँगलाका आधुनिक काव्य इलियटका ऋण स्वीकार कर रहा था। लौटतेमें मुझे लगा था मेरे किसी दोस्तके पिताकी मृत्यु हो गयी है।

उस दिन सहसा लन्दनसे आयी ख़बरसे मेरी मेज़पर रखे कई सारे पन्ने उड़ गये थे। कॉलेजके दिनों जब कीट्सको पढ़ते थे, पचास वर्षकी उम्रके बदले गरमीकी तीन तितलीपंखी सुबहें माँगते थे और हफ़्तों शेव नहीं करते थे और उदास दिखते थे। जब वड्र्सवर्थको पढ़ते थे, ज़बरन गम्भीर नज़र आनेकी चेष्टा करते थे और बाग़में जा बैठते थे और खिले हुए फूलोंमें डूब जाते थे। जब बायरनको पढ़ते थे, अच्छे-भले पैरोंसे लँगड़ाकर चलते थे और कपड़ोंपर सल डाल लेते थे और पाँयचे उलट लेते थे। लेकिन जिस दिनसे इलियटको पढ़ना शुरू किया, रोज़ शेव करने लगे, कपड़ोंपर तमीज़की क्रीज़ आ गयी, टाईकी नाट ठीक-ठीक लगने लगी, हम लोग कॉफ़ी-हाऊसमें बैठने लगे – 'हेव नोन द इवनिंग्स, मार्निंग्स आफ्टरनून्स, आई हेव मेज़र्ड आऊट लाइफ़ विद कॉफ़ी-स्पून्स……' यह इलियट का प्रभाव था कि सुबहको रंगीन, दोपहरको उदास-भूरी, शामको धुँधली-मनहूस मेज़पर सोये मरीज़-जैसी, रातको शान्त और शव कहने लगे। इलियटकी कविताएँ सिरचढ़ी थीं कि अप्रैलके सूर्यास्त 'क्रुएलेस्ट' लगते, अक्तूबरकी रातें संवेदनमयी नज़र आतीं, अगस्तकी दुपहरियाएँ टूटे हुए वायलिन-सी दिखतीं…… ओरांग उटांग, हिप्पोपोटोमस और ज़ेब्रा मैंने पहले इलियटकी कविताओंमें देखे हैं, बाद चिड़ियाघरमें। अपने घरमें कैक्टसें उगाकर स्वयंको 'हालो मेन' समझा है। बेकारीके दिनों एक सिगरेटको दो दोस्तोंने पिया है और 'द रॉक' का कोरस गाया है। रीडिंग रूममें 'ईस्ट कोकर' के गायक बनकर अपनी प्रेमिका की यादमें उदास हुए हैं: 'आई सेड टु माई सोल, बी स्टिल, एण्ड वेट विदाउट होप…फार लव वुड बी लव आफ़ द रांग थिंग…।' और मेरे कथा-संग्रहका शीर्षक अल्फ्रेड प्रुफ़ॉकका 'लव साँग' ही तो है…'आर्म्स देट लाई अलांग ए टेबिल…… मेज़पर टिकी हुई कुहनियाँ! उसने १९०९ में वह गीत लिखा था, मैंने १९५२ में यह शीर्षक दिया, अन्तर पचास सालका लेकिन सापेक्ष है कि उन वर्षोंमें रहा की उम्र समान थी। सहसा मुझे लगता है मेरे नज़दीक रिश्तेका कोई बन्धु नहीं रहा।…मृत्यु हवाकी तरह गुज़र ही जाती है लेकिन पत्ते-पत्तेको कँपा जाती है। कल तीसरे पहर मैं अपनी पीढ़ीके एक दोस्तसे कह रहा था: 'इलियट नहीं रहे।' उत्तर मेरे शब्दोंपर चला आ रहा था: 'तो वे ज़िन्दा भी थे अबतक?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तर भारी पड़ा लेकिन दोस्त कहता गया : 'उनकी मृत्यु बीस साल पहले भी हो सकती थी···।' आगेके शब्दोंको मैं छोड़ रहा हूँ लेकिन ऊपरके वाक्योंसे जो लग रहा है वह स्पष्ट है : कविका प्रभाव ऐसा था कि प्रभाव-ही-प्रभाव दिख पड़ता है, उसका व्यक्तित्व तक ग़ायब हो गया। इलियट चाहते भी थे यही : 'इट (पोयट्री) इज़ नाट द एक्सप्रेशन आफ़ पर्सनालिटी बट एन एस्केप फ्राम पर्सनालिटी·····।' ("सीक्रेड वुड' से)

■

और इस व्यक्तित्व-पलायनी पंक्तिके साथ इलियटके कई सारे रूप छाँहोंकी तरह तैरने लगते हैं :

- एक ७६ वर्षकी उम्रका समर्थ व्यक्ति—गम्भीर चिन्तन, दार्शनिक परिकल्पना और प्रतीक-दिशा जिसकी वसीयत है। जो हमेशा 'जन' नामकी चीज़से दूर रहा है, लिखा भी तो यह : 'अण्डर द ब्राऊन फाग आफ़ ए विण्टर डॉन ए क्राउड फ्लोड ओवर लन्दन-ब्रिज, सो मेनी, आई हेड नॉट थॉट डेथ हैड अनडन सो मेनी।···· '
- एक ख्यातनाम कवि – १९४८ में जिसे नोबुल प्राइज़ मिला। सम्मानमें 'आर्डर ऑफ़ लिजियन' प्राप्त हुआ। टेनीसनके बाद जिसका नाम, कुछ लोग न चाहें फिर भी, सबसे ऊपर आ जाता है। वह 'पोएट आफ़ पोएट्स' कहा जाता था। १९२० से १९५० तक तीन कविता - दशक उसकी अपनी ज़मीनपर फले - फूले हैं, – पैंजीकी क्यारीके बीच वह सबसे ऊपर हालीहुक्सकी तरह सिर उठाये है।
- समयके दरियामें बहते हुए क्षण-सा था वह। किसी उम्रको उसने अस्वीकार नहीं किया, किसी समयके प्रति नमकहरामी नहीं की। २१ की उम्रमें उसने प्रुफ़ाँकका प्रेमगीत लिखा, २२ की उम्रमें 'पोर्ट्रेट आँफ़ ए लेडी' बनाया, २८ की उम्रमें गाया 'आई ऑब्ज़र्व – आवर सेण्टिमेण्टल फ्रेण्ड द मून !' जब वह ३० का था उसने 'वृद्धतन्त्र' पर एक कविता लिखी – 'हीयर आई एम, एन ओल्ड मैन इन ए ड्राय मन्थ···!' ३२ की उम्रमें 'द वेस्टलैण्ड' - जैसी वह प्रतीक कविता उसने लिखी है जिसका सारा अन्दाज़ महाकाव्य-जैसा है, तन्त्र है 'होली ग्रैल' का मिथ – कविता है ४३० पंक्तियोंकी, नोट्स ७ पृष्ठोंमें, जिसमें ३५ लेखकोंके सन्दर्भ-उद्धरण और ६ विदेशी भाषाओंके सकेत हैं (जिनमें संस्कृत भी सम्मिलित है)। ३६ की उम्र में 'हॉलो मेन', ३८ की उम्रमें 'जर्नी ऑफ़ द मेजाई' (रवि बाबूने जिसका बँगला में अनुवाद किया है), ४५ की उम्रमें 'द रॉक', ४६ से ५३ की उम्रमें 'फोर क्वार्टेट्स···।' इलियट हर अगली कवितामें एक बार आगे न बढ़ा हो, उसने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर अगली कवितामें स्वयंको पिछली कवितासे तोड़ा ज़रूर है। अपनी पहली पुस्तकमें (१९१७ में प्रकाशित) जूल्स ल' – फॉर्ग और जेकोबियन मंच-काव्यका शिल्प लेकर जो सामने आया था 'द वेस्टलैण्ड' (१९२२ में काशित) तक पहुँचते-पहुँचते वह उस पहलेवाले शिल्पसे सैकड़ों मील दूर चला गया। 'द वेस्टलैण्ड' में लगता है प्रतीकों और विशेषण-विपर्ययोंके बादल-पर बादल घिरे चले आ रहे हैं और 'एश वेन्सडे' (१९३० में प्रकाशित) में लगता है यह कवि है या कोई दिवालिया आदमी : 'बिकाज़ आई डू नॉट होप टु टर्न अगेन···बिकाज़ आई डू नॉट होप···बिकाज़ आई डू नॉट होप टु टर्न···।' वह हमेशा लकीरसे हटकर चला। बने-बनाये रास्ते उसे कभी रास न आये। २०की उम्रमें जब उसने लिखना शुरू किया तभी छन्द और अलंकारोंके सारे सिद्धान्त ताक़में रख दिये थे। परम्परासे हमेशा वह लड़ता रहा, 'ट्रेडिशन' शब्दसे उसे सख़्त चिढ़ थी, मान्य सिद्धान्तोंको स्वीकारना वह अपमान समझता था, उसकी समीक्षाएँ सर्वथा मौलिक हैं और कविताकी तरह ही चिन्तनकी दिशा भी हैं। उसकी भावनाने विचारोंका रूप नहीं लिया था, उसकी भावना विचारों-की प्रतिक्रिया थी। उदासी हो तो, ख़ुशी हो तो, प्रेम हो तो, घृणा हो तो जैसे नाराज़ रहने, इन्कार करनेके लिए उसने किसीको वचन दिया हो। एडमण्ड विलसनके अनुसार - 'वह किसी एक बिन्दुपर चिपका हुआ नहीं रहा····'। एल० जी० सालिंगरके शब्दोंमें – 'अपनी इतनी समर्थ प्रतिभा और शक्तिका दुरुपयोग उसने केवल निगेशन (अस्वीकार) में किया है।' यीट्सने लिखा : 'उसकी कविताका सारा प्रभाव सुप्रसिद्ध रोमेण्टिक्स द्वारा उपयोगमें लाये गये छन्दों और अलंकारोंकी अस्वीकृतिसे उत्पन्न है, उसके अपने अन्वेषणसे उत्पन्न नहीं। इन अस्वीकृतियोंसे उसके लेखनमें एक अनतिशयोक्त सहजता आ गयी है जो नवीनताका प्रभाव देती है।' जो हो, उसके इन शब्दोंमें नयी पीढ़ीके लिए ग्रहण करनेको बहुत-कुछ है : 'मच टु कास्ट डाऊन, मच टु बिल्ड, मच टु रिस्टोअर···।' उसके नाटक (पहलेको छोड़कर) नाटक कम व्यंग्य ज़्यादा हैं, तुर्श व्यंग्य, कि समाजमें जितनी भी बक़वास क़िस्मकी चीज़ें विद्यमान हैं उनकी वह खिल्ली उड़ा सके। 'द फेमिली रियूनियन'में हेरीकी वापसी हो या 'द काकटेल पार्टी'में असफल विवाहकी परिणति, वह समाज और ढोंगको नश्तर लगाये बिना नहीं रहता। 'फाइव फिंगर एक्सरसाइज़ेज'में तो वह ख़ुदपर हँसता है, 'हाऊ अनप्लेज़ेण्ट टु मीट मि० इलियट', 'न्यूयार्क टाइम्स'ने इस कविताको कविकी मृत्युके सन्दर्भमें उद्धृत भी किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• एक और भी रूप है जहाँ इलियट प्रतिक्रियावादी और धार्मिक एक साथ लगता है। जैसे वह सारी पीढ़ीको 'सण्डे मार्निंग सर्विस'में भाषण दे रहा हो : "सभ्यता ! सभ्यताके गर यही मानी हैं कि हम भौतिक समृद्धि पा लें, सम्पन्न बन जायें, हमारे पास रुपया-पैसा हो जाये तो मुझे कुछ नहीं कहना लेकिन सभ्यताका मतलब यदि आध्यात्मिक ऊँचाईको छूना भी है तो वह बिना धर्मके नहीं पायी जा सकती और धर्म 'चर्च'के बिना टिक नहीं सकता···।" मुझे धर्मतल्लामें बाइबिलके पर्चे बाँटनेवाले ईसाई याद आने लगते हैं। 'मर्डर इन द केथड्रल' ऐसा लगता है जैसे वह धार्मिक करुणाका प्रचार-ग्रन्थ हो। लेकिन नहीं, अगर उसने एंग्लो केथोलिसिज़्मकी दलील दी है तो उसने गीता भी पढ़ी है – अर्जुनकी उदासीके सामने उसने कृष्णके बोध (गीता : अध्याय २, श्लोक ४७) को महत्तर माना है :

"एण्ड डू नॉट थिंक ऑफ़ द फ्रुट ऑफ़ एक्शन।
फेग्रर फारवर्ड।
ओ वायेज़र्स, ओ सीमेन···'
सो कृष्ण, एज़ व्हेन ही एडमोनिश्ड अर्जुन
ऑन द फ़ील्ड ऑफ़ बेटल।"

फिर, कविताको वह स्वरूप कैसे देंगे जिसमें व्यक्तित्वों और भावुकताओंसे मुक्ति होगी ? उत्तर ख़ुद इलियटने दिया था : जो भावना और व्यक्तित्वसे सम्पन्न है, वही इनसे 'एस्केप'की बात भी सोच सकेगा···जैसे घोर करुणामें डूबा व्यक्ति आँसुओंसे नजात चाहे या जैसे अतल जलमें तैरती मछली साँस लेने लहरके ऊपर आ जाये। इलियटको अपनी समझसे ठीक-ठीक समझ लेनेपर मुझे लगता है वह एक सोख्तेकी तरह था। स्थितियोंकी भीगी हुई जगहोंपर जहाँ-तहाँ अनुभूतिको साधे देखा जा सकता है। हुआ यह कि स्थितियाँ सूख गयीं और कवि उन्हें सुखानेमें तर-बतर हो गया। जगहोंका सूखना महत्त्वपूर्ण नहीं, सोख्तेका भीगना महत्त्वपूर्ण है। अफ्रीकामें काम आये भारतीयोंपर लिखी कवितामें कवि दिवंगतोंसे कहता है : "यह तुम्हारी ज़मीन नहीं है, यह मिडलैण्डका एक गाँव है, वैसा ही जैसा पंजाबमें होगा···।" युद्ध उसके लिए जीवन नहीं एक स्थिति था, भावनाएँ घटनाएँ थीं। ख़ूब घना हरियाया पेड़ हो या नन्हा-सा गुलाब, दोनोंकी अवधि उसकी दृष्टिमें बराबर थी। आस्था जैसे क़लमकी नोंकपर आ बैठी थी :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"किसी बुज़ुर्गकी आस्तीन पर जमी हुई राख
जैसे जले हुए गुलाबों की राख हो।
हवामें तैरती हुई धूल
वह बिन्दु जहाँ कहानी खत्म हुई।..."

कितने ही कवि-समीक्षक इलियटसे नाराज़ थे केवल इसलिए नाराज़ कि उसने पीढ़ीकी पीढ़ीको प्रभावित कर रखा था – किसीको बेतरतीब अभिव्यक्तिसे, किसीको सुव्यवस्थित प्रतीकोंसे, किसीको अपनी मूल्यगत अस्वीकृतियोंसे, किसीको नयी दिशाकी स्वीकृतियोंसे, किसीको अपने पैने व्यंग्यसे, किसीको अपनी बेमानी चुपसे। जी० एस० फ्रेंज़रने इलियटसे अकारण नाराज़ कवि यीट्सको उत्तरमें कहा था : "इलियटमें युग और स्थितिकी ऐसी तात्कालिकता है जिससे इनकार नहीं किया जा सकता। भावी पीढ़ी, विशेषकर वे लोग जो १९६० और १९७० के आस-पास लिखना शुरू करेंगे, निश्चित ही इस प्रवृत्तिपर अपनी प्रतिक्रिया ज़ाहिर करेंगे।..." और इलियटके लेखनका सही अध्ययन इसी बिन्दुसे शुरू होता है कि '६०-'७० के कवि – वे सर्वेश्वर, रघुबीर सहाय, श्रीकान्त हों या कान्ता, नईम, चन्द्रकान्त देवताले हों – इलियटकी व्यक्तित्व-हीनताके प्रभावको रोशनदान ज़रूर समझते हैं, सूरज नहीं।

..."द रॉक' जैसी स्थिति हिन्दी कविताके सामने भी है : जेरुसलेमका टूटा हुआ शहर, भग्न मन्दिर, ध्वस्त सीढ़ियाँ, लुटे हुए बाग़, उदास तालाब, छीना हुआ प्यार, राख हुए गुलाब, प्यासे चुम्बन और रोम-रोम दुश्मन। लेकिन शहरकी दीवार फिरसे बननी है – 'विथ द स्वार्ड इन वन हैण्ड एण्ड द ट्रावेल इन द अदर।' विज्ञानयुगके मेरे कविर्मनीषीकी तसवीर यही है : एक हाथमें तलवार और दूसरेमें ईंट-चूना जोड़नेवाली करनी; – ग़लत चीज़को समाप्त कर देनेकी ताक़त और नये जेरुसलेमके निर्माणकी सामर्थ्य।

ठीक है, कविताके तीन ही स्वर होते होंगे लेकिन युगके चार स्वर होते हैं: तुम्हारे तीन भौतिक आयाम सामरसेटमें दफ़न हो गये होंगे लेकिन चौथा स्वर समयका है उसने तुम्हारा नाम किसी सफ़ेपर दर्ज़ कर लिया है...

मुझे इसी ध्वनि-लिपिके पास श्रद्धांजलि लिये खड़े हुए ऐसा लगने लगता है जैसे किसी नये शहरकी सरहदपर खड़ा होऊँ।

– रमेश बक्षी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिष्ट
स्वास्थ्यप्रद
रुचिकर

तृप्तिपूर्ण भोजन के लिये
हनुमान वनस्पति व्यवहार कीजिये।

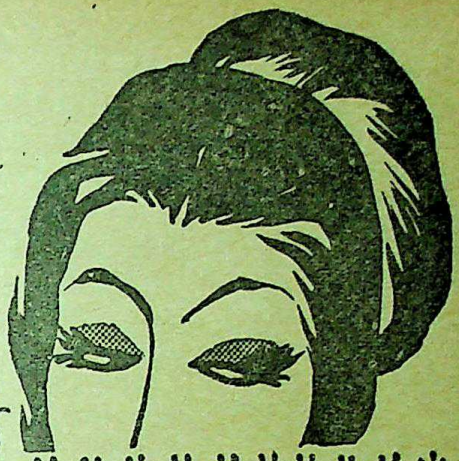

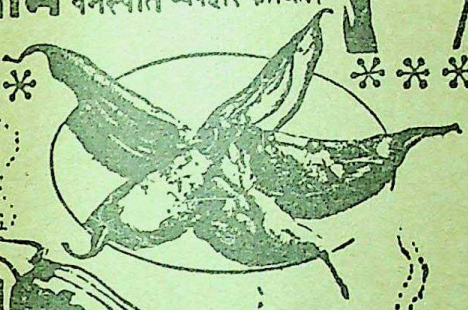

विटामिनों से परिपूर्ण हनुमान
वनस्पति सुरुचिपूर्ण एवम्
सुस्वादपूर्ण व्यंजन
बनाने में सहायक है।

हमेशा हनुमान वनस्पति ही खरीदें

हनुमान

निर्माणकर्त्ता
रोहतास इन्डस्ट्रीज लिमिटेड
डालमियानगर (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

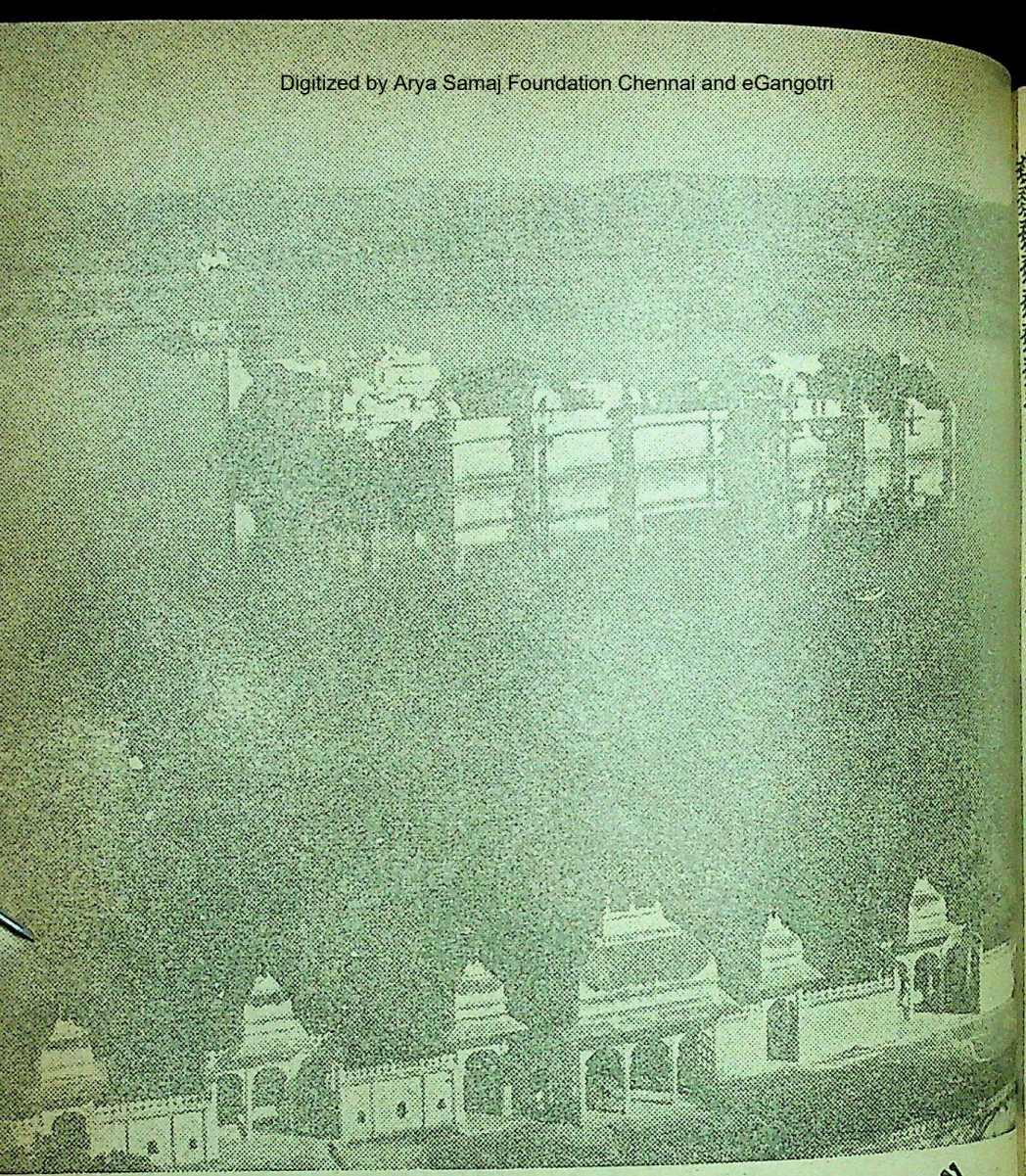

राजस्थान आपकी राह देख रहा है

गौरवपूर्ण अतीत के स्मारक, अलबेले वीरों और रंग-बिरंगी वेषभूषा की भूमि राजस्थान, एक उज्ज्वल भविष्य के निर्माण में रत।

स्वदेश घूमिये • जन-जीवन देखिये

यदि आपको सलाह-मशविरे की जरूरत हो तो पास के भारत सरकार के पर्यटन कार्यालय से निम्न स्थानों पर सम्पर्क कीजिए :

दिल्ली * बम्बई * कलकत्ता * मद्रास * आगरा * जयपुर * वाराणसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माध्यम

हिन्दी साहित्य सम्मेलनका मासिक

सम्पादक : बालकृष्ण राव

- 'माध्यम' हर अंकमें 'सहवर्ती साहित्य' के स्तम्भमें किसी एक हिन्दीतर भारतीय भाषाकी चुनी हुई समसामयिक रचनाएँ प्रस्तुत करता है।
- 'विवेचना' में प्रकाशित 'चारुचन्द्रलेख', 'समय और हम', 'अपने-अपने अजनबी', शमशेरका काव्य, 'यह पथ बन्धु था', 'एक साहित्यिककी डायरी' तथा 'हम विषपायी जनमके' की समवीत विवेचना और अन्य स्तरीय समीक्षाओंकी चर्चा आपतक पहुँची ही होगी।
- 'माध्यम' के विचार-प्रधान और विचारोत्तेजक लेखोंको आपने पढ़ा ही होगा।
- कविताओं, कहानियों, टिप्पणियोंके चयनमें 'माध्यम' की रुचि और स्तरसे आपका परिचय हो ही चुका है।
- 'माध्यम' का आग्रह है, न केवल आप इसे अवश्य पढ़ें, इसपर अपनी राय भी अवश्य भेजें।

मूल्य : एक प्रति १.०० वार्षिक १०.००

सम्पादकीय कार्यालय : पो० बॉ० सं० ६०, इलाहाबाद।

व्यवस्थापकीय कार्यालय : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Phone : 25-2221

Universal Fire & General Insurance Company Limited

Transact :

Fire, Motor, Marine, Personal Accident, Fidelity, Guarantee, Burglary and all other forms of Miscellaneous Insurance Business.

Universal Insurance Building,
Sir P.M. Road, Bombay-1.
Chairman & Managing Director :
P.U. PATEL, B.A., B.COM. (Lond).

यह न पूछिये

कि कितने किलो का एक मन होता है ?

सेर और मन के बाट अब कानूनी नहीं रहे। खरीदारी और लेन-देन अब केवल किलो और क्विण्टल में ही कीजिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांस्कृतिक जागरण, साहित्यिक विकास-उन्नयन और
राष्ट्रीय ऐक्य एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी साधिका

तथा

भारतीय भाषाओंकी सर्वोत्कृष्ट
सर्जनात्मक साहित्यिक कृतिपर
प्रतिवर्ष एक लाख रुपये
पुरस्कार योजना प्रवर्तिका

भारतीय ज्ञानपीठ

उद्देश्य

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध
और अप्रकाशित सामग्रीका
अनुसन्धान और प्रकाशन

तथा

लोक-हितकारी मौलिक
साहित्यका निर्माण

संस्थापक : श्री शान्तिप्रसाद जैन
अध्यक्षा : श्रीमती रमा जैन

प्रधान एवं सम्पादकीय कार्यालय : ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता–२७
विक्रय केन्द्र : ३६२०/२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, दिल्ली–६
प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी–५

ज्ञानोदय

फ़रवरी १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने ढंगके अनूठे और अनमोल

भारतीय ज्ञानपीठ

के

अभिनव, महत्त्वपूर्ण एवं संग्रहणीय प्रकाशन

● **दर्शन-अनुचिन्तन** : म० म० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी

दर्शनोंका विषय-क्षेत्र ऐसा है कि सामान्य बुद्धिका मानव इधर देखता ही नहीं। जो विद्वान् और पण्डित हैं वे भी बहुतेरे इसे गहन कहते हुए कतराकर निकल जाते हैं। इस पृष्ठभूमिमें प्रस्तुत कृति सहज ही विशेष उपयोगी और महत्त्वकी हो उठती है।

चुने-चुने चौदह निबन्धोंका यह एक सुसम्बद्ध संकलन है जो भारतीय दर्शनोंके समूचे स्वरूप और प्रमुख सिद्धान्तोंका सुन्दर परिचय देता है। और ऐसी सरल और सुबोध भाषामें सारा विचार-विवरण उपस्थित करता है कि सामान्य जन इसे अपने ही लिए लिखा गया मानें और सुधी-विशेषज्ञ देखें कि सब-कुछ ज्ञातव्य और नया चिन्तन भी सुबोध ढंगसे लिखा जा सकता है।

मनीषी विद्वानोंके लिए यह कृति एक और दृष्टिसे भी विचारणीय होती है। बहुतोंका मत है कि भारतीय दर्शनोंमें एक विसंगति-जैसी दिखाई पड़ती है। महामहोपाध्यायजीने प्रस्तुत कृति-द्वारा बड़े तर्कके साथ सिद्ध किया है कि इनमें परस्पर विरोधभाव कोई नहीं है बल्कि ज्ञानका एक क्रम है : ऐसा क्रम जो बुद्धिको स्थूलसे उत्तरोत्तर गहनतम सूक्ष्म तक ले चले। महामहोपाध्यायजी 'भारतीय षड्दर्शन' संज्ञा भी 'चार्वाक, बौद्ध, जैन, वैशेषिक, सांख्य, वेदान्त' इन छह दर्शनों को देते हैं।

पुस्तक सभी दृष्टियोंसे सबके लिए पठनीय और मननीय है। इसके चौदह निबन्ध जैसे चौदह बीजवट हैं, भारतीय दर्शनशास्त्रोंका सार-सर्वस्व एक अंजुलिमें!

मूल्य : तीन रुपये

ज्ञानो

फ़रवरी १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• **भारतीय संस्कृतिका विकास (वैदिक धारा) : डॉ० मंगलदेव शास्त्री**

यह प्रवृत्ति रही है कि अपनी भारतीय संस्कृतिके अंगभूत तत्त्वोंको पूर्वापर परिस्थितियोंसे असम्बद्ध इकाइयोंके रूपमें देखें। ऐसा भी हुआ है कि सारी संस्कृतिको अन्धविश्वास तक कह दिया गया। किन्तु जहाँ यह आधुनिकताके नामपर प्रतिक्रियावादिता हुई उस प्रवृत्तिका परिणाम यह हुआ कि समष्टि जीवनमें भेद-बिलगावकी संकीर्ण भावनाएँ पैठ गयीं। व्यक्ति, समाज, और देश, सभीके लिए यह जितना अहितकर रहा उसका इतिहास साक्षी है।

इन दोनोंसे भिन्न एक और दृष्टि, समन्वयात्मक ऐतिहासिक दृष्टि, भी है। इसके अनुसार देशकी विभिन्न धार्मिक और साम्प्रदायिक धाराएँ एक ही व्यापक प्रगतिशील भारतीय संस्कृतिकी पूरक और पोषक हैं। वास्तवमें यही दृष्टि स्वाभाविक और वैज्ञानिक भी है। इसके मूल दिशासूत्र प्राचीन कालतक पहुँचे हुए हैं। इसी इतिहास-मूलक समन्वयात्मक दृष्टिके सहारे साम्प्रदायिक विरोध-विषमताओंके स्थानपर एकसूत्रता लाकर नव्य भारतके निर्माणको एक दृढ़ आधार दिया जा सकता है।

प्रस्तुत लेखकने इसी विशिष्ट दृष्टिसे भारतीय संस्कृतिके सम्पूर्ण विकासका अध्ययन किया है। यह प्रथम खण्ड वैदिक धाराका अध्ययन उपस्थित करता है। अध्ययन सर्वथा प्रमाणोंपर आधारित है और साथ ही सरस और रोचक भी है। आचार्य नरेन्द्रदेवजीके शब्दोंमें "यह कार्य इस लेखक-जैसे अधिकारी विद्वान्-द्वारा ही हो सकता था और यह कृति भारतीय संस्कृतिके अध्ययनमें पथ-निर्देशका काम करेगी।"

मूल्य : सात रुपये

• **चाँद का मुँह टेढ़ा है : स्व० गजानन माधव मुक्तिबोध**

"मुक्तिबोधकी लम्बी कविताओंका पैटर्न विस्तृत होता है। एक विशाल म्योरल पेण्टिंग – आधुनिक प्रयोगवादी; अत्याधुनिक। जिसमें सब चीज़ें ठोस और स्थिर होती हैं; किसी बहुत ट्रैजिक सम्बन्धके जालमें कसी हुई।....मुक्तिबोधकी कविता जो कथानक होती है, इसमें विद्रूप और क्रूर भाव रूपकको भरपूर नाटकीय बनानेके लिए आवश्यक होता है। चित्रोंमें जो खुरदरी स्पष्टता आँखोंमें चोट-सा करती है, वह पूरी कवितामें, अपने विस्तार-क्रमके कारण, रूपक भावको कुछ बिखरा देती है। फिर भी कविकी बेपनाह नर्वस शक्तिका आभास पद-पदमें मिलता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"एक चट्टानी कड़ापन, एक खुर्री नग्नता, हिंस्र चाँदनी, अपशकुनोंसे भरा मानवलोक, रातका या दिनका।····ज़िन्दगी जो विद्रूप और क्रूर व्यंग्य है।····

"अगर किसीने स्वयं मुक्तिबोधकी ज़बानी उनकी कोई रचना सुनी हो, तो····कविता समाप्त होनेपर ऐसा लगता है जैसे हम कोई आतंकित करनेवाला फ़िल्म देखनेके बाद एकाएक होशमें आये हों।····

"·····चूँकि वह पेण्टर और मूर्तिकार हैं अपनी कविताओंमें – और उनकी शैली बड़ी शक्तिशाली, कुछ यथार्थवादी मेक्सिकन भित्तिचित्रोंकी-सी है।

"वह एक-एक चित्रको मेहनतसे तैयार करता है, और फिर उसके अम्बार लगाता चलता है। एक तारतम्य। जैसे किसी ट्रैजिक नाट्य-मंचपर एक उभरती भीड़का दृश्य – पूर्व-नियोजित प्रभावके साथ खड़ी।····

"इनके प्रतीक प्राचीन गाथाओंके टुकड़े जान पड़ते हैं। मगर इन टुकड़ोंमें सन्दर्भ आधुनिक होता है। यह आधुनिक यथार्थ कथाका भयानकतम अंश होता है।···· मुक्तिबोधका वास्तविक मूल्यांकन अगली, यानी अब आगेकी पीढ़ी निश्चय ही करेगी; क्योंकि उसकी करुण अनुभूतियोंको, उसकी व्यर्थता और खोखलेपनको पूरी शक्तिके साथ मुक्तिबोधने ही अभिव्यक्त किया है। इस पीढ़ीके लिए शायद यही अपना ख़ास महान् कवि हो।"

मूल्य : आठ रुपये

- **नाटक बहुरूपी** : डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल

"नाटकोंकी भीड़ और नाटक नहीं", शॉ चुटकी लिया करते। "आधुनिक नाटक अभी लिखा नहीं गया", आल्बेर्तो मोराविया कहते सुने जाते हैं। अब इनसे कौन उलझे। उनसे कहना निरर्थक होता, इनसे कहनेमें संगति क्या। फिर, ऐसा कुछ है भी तो! अच्छे नाटक कम हैं, आधुनिक नाटक और भी कम।

इसी सन्दर्भमें यह छोटा-सा संकलन 'नाटक बहुरूपी' प्रस्तुत है। इसके द्वारा भी कहना यह नहीं है कि ये नाटक अच्छाईका आदर्श हैं; कहना यह उपयुक्त होगा कि ये अच्छाईका एक नमूना हैं और अनेक दृष्टियोंसे आधुनिक तो हैं ही। डॉ० लाल समकालीन हिन्दी नाटक-लेखनमें पहले ही कुशल कलाकार थे, अब तो सागर-पार जाकर वहाँका भी बहुत-कुछ देख और गुन आये हैं।

इतनी सहज-सच्ची और मर्म-छूती रचनाएँ हैं ये कि पढ़ी जायें तो पाठकको अपनी ही बात कही जाती मिले, और रंगमंचपर आयें तो दर्शक अपने ही सत्यों और सपनोंको सामने देखता हो। ऐसे नाटक हिन्दीमें सचमुच बहुत नहीं जिन्हें ईज़ीचेयरपर पढ़ते अच्छा लगे और स्टेजपर देखकर प्रेरणा मिले।

मूल्य : तीन रुपये पचास पैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• **अपने-अपने अजनबी** : अज्ञेय

भारतीय साहित्योंमें अपने ढंगका अद्वितीय उपन्यास। मृत्युसे साक्षात्कारको विषय बनाकर जीवन और नियतिका सरल मार्मिक विवेचन। मृत्यु-विषयक पूर्व और पश्चिमकी दृष्टियोंकी टकराहट, दोनोंके मिलन-द्वारा मानव-जीवनके एक नये आयामका उन्मेष।

मूल्य : तीन रुपये

• **ज़िन्दगी और गुलाब के फूल** : उषा प्रियंवदा

कहानियाँ और कहानियाँ! मगर ये कहानियाँ बिलकुल भिन्न हैं। न भाषाका उलझाव है यहाँ न शैली-शिल्पके गोरखधन्धे, और संग्रह-भरमें एक जो कहानी हो जिसे पढ़ें और दिनों अपने भीतर मँडराता हुआ न पायें! अतिरिक्त विशेषता और यह कि नयी कहानी इन्हें अपना कहेगी तो औरोंके लिए ये परायी न हो सकेंगी।

मूल्य : दो रुपये पचास पैसे

• **खोयी हुई दिशाएँ** : कमलेश्वर

ग्यारह कहानियाँ जो एक विशेष दृष्टिको लेकर चुनी गयीं। जीवनमें महत्तम मूल्योंके प्रति आस्थाका स्वर इनका कथ्य है और घुटन तथा पराजयमें जीनेकी विवशताको नियति न मानकर नये सन्तुलन और अर्थोंकी खोज इनकी दिशा। इनमें जीवनका अध्ययन आया है, मात्र सर्वेक्षण नहीं। असम्भव होगा कि संग्रहकी कोई भी कहानी पढ़ें और मनपर प्रभाव न छोड़े।

मूल्य : दो रुपये पचास पैसे

• **प्रतिनिधि रचनाएँ : पंजाबी** : कर्तारसिंह दुग्गल

किसी साहित्यिक व्यक्तित्वको पहचानने-समझनेके लिए आवश्यक है कि उसका विभिन्न विधाओंका लेखन कहीं एक-साथ देखें और पढ़ें। प्रस्तुत पुस्तकमें श्री कर्तारसिंह दुग्गलका एक समूचा नाटक, दो एकांकी, दो उपन्यासोंके अंश, संस्मरण और निबन्ध तो हैं ही, कहानी और कविताएँ तक संकलित हैं। कभी पंजाबी और उर्दूके और अब तो उतने ही हिन्दीके भी, इस चहीते साहित्यकारकी ये सभी रचनाएँ उसकी प्रतिनिधि रचनाएँ हैं : उसके साहित्यिक व्यक्तित्वसे परिचित होनेके लिए बिलकुल अनिवार्य।

मूल्य : तीन रुपये पचास पैसे

ज्ञानोदय

फ़रवरी १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● **एक साहित्यिक की डायरी** : स्व० गजानन माधव मुक्तिबोध

ऐसी कृतियाँ बहुत नहीं होतीं जो अपने समकालीन साहित्यका श्री-वर्द्धन कर सकें। 'एक साहित्यिककी डायरी' ऐसी एक कृति है। अपने शैलीगुण और विचारतत्त्व दोनोंकी विशेषताके कारण यह ध्यान आकर्षित करेगी और आदर-मान पायेगी। डायरी विधाका यह रूप तो इसीमें देखनेको मिलेगा। जैसे निबन्धात्मक कहानी वैसे यह निबन्धात्मक डायरी। निबन्ध पढ़े न जायें, इन्हें पढ़नेकी सहज ललक हो। सीधा-सादा प्रारम्भ, फिर कहीं एकालाप, कहीं एक काल्पनिक पात्रसे वार्तालाप, पर आदिसे अन्ततक भाव और स्वर डायरीका। ये कविता, आत्माख्यानके विविध स्तरोंपर एक साथ चलती हैं; या यों कहें कि इन सबको एकमें समन्वित करके एक नयी ही विधा-सम्भावनाकी ओर इंगित करती है।

मूल्य : ढाई रुपये

● **सूरज का सातवाँ घोड़ा** : डॉ० धर्मवीर भारती

'गुनाहोंका देवता' के बाद लेखकके औपन्यासिक कृतित्वका एक दूसरा पहलू जो जितना महत्त्वपूर्ण है उतना ही आकर्षक। दावेके साथ कहा जा सकता है कि हिन्दीमें अभीतक ऐसी कथा-शैलीका प्रयोग नहीं किया गया। किन्तु कृतिका महत्त्व केवल साहित्यिक ही नहीं है, वास्तवमें उससे कहीं अधिक व्यापक और गम्भीर है : हमारे समूचे मध्यवर्गीय समाजके सांस्कृतिक पुनर्निर्माणसे सम्बद्ध होनेके कारण है।

मूल्य : दो रुपये

● **मेज़ पर टिकी हुई कुहनियाँ** : रमेश बक्षी

इन कहानियोंको देखकर कोई कहे तो अत्युक्ति न होगी कि आधुनिक कथाशिल्प और आधुनिक जीवन-दृष्टि दोनोंको एक साथ स्वाभाविक रूपमें सजा हुआ यहाँ पाया। कभी पढ़ते-पढ़ते लग सकता है कि ये कहानियाँ नहीं हैं, पर फिर अगले ही क्षण बरबस लगेगा कि ये ही तो सचमुच कहानियाँ हैं : आजकी!

मूल्य : तीन रुपये पचास पैसे

● **नये रंग नये ढंग** : लक्ष्मीचन्द्र जैन

हिन्दी गद्य-शैलीकी सर्वथा नयी रचना जिसके हर पृष्ठपर युगकी छाप और प्रतिभाकी चमक अंकित है। सम्भव नहीं कि पुस्तक हाथमें लें और पढ़कर समाप्त किये बिना रख दें।

मूल्य : दो रुपये

ज्ञानोद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• **सूखा सरोवर** : डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल

एक ऐसा स्पष्ट, जीवन्त और हृदयग्राही नाट्यरूप जो लोक-गाथाकी मनोभूमि और रंगशैलीसे यहाँ अवतरित है – विशुद्ध लोक-गाथा-परक रससिक्त नाट्य-शिल्प-में। इस रंगमंचका सर्वथा एक अभिनव स्वरूप और आधुनिक रंगमंच अन्वेषणका एक नया उदाहरण।

मूल्य : दो रुपये

• **शिखरों का सेतु** : डॉ० शिवप्रसाद सिंह

शैल-शिखर रमणीक होते हैं। जो चिर-प्रेरक भी हों, ऐसे शिखर विश्व-साहित्यके महाप्राण व्यक्तित्व होते हैं या फिर अतीतके जीवन और प्राणोंकी वे मार्मिक कथाएँ-व्यथाएँ होती हैं जो उन्हें 'अतीत' कभी नहीं बनने देंगे। प्रस्तुत पुस्तक-द्वारा अनेक ऐसे ही शैल शिखरोंसे साक्षात्कार होगा जिसे पाकर 'लघु मानव' को बरबस लगे कि वह लघु ही रहनेके लिए नहीं। जीवन-यात्रामें कभी अपनेको थकता देखें तो भी एक क्षण इन शिखरोंका सहारा लें, फिर चरण आगे पथपर आप बढ़ चलेंगे।

मूल्य : तीन रुपये पचास पैसे

• **चीड़ों पर चाँदनी** : निर्मल वर्मा

बीसवीं शतीके स्मारक-चिह्नोंकी खोजमें एक भारतीय लेखकके यह संस्मरण अपने-आपको खोजनेका प्रयास हैं – अपनेसे बाहर निकलकर स्वयं अपनेको गवाह बनाने-का प्रयत्न – और इसीलिए ये संस्मरण एक व्यक्तिका निजी 'टेस्टामेण्ट' भी हैं। स्मृतिके ये अंक निर्मल वर्मा युरॅप प्रवासकी लम्बी अवधिमें समय-समयपर सँजोते रहे हैं। बादमें जोड़नेपर जो मिला, वे न कहानियाँ थीं न डायरी – बल्कि कुछ ऐसे अनुभव-खण्ड जिनमें एककी निरपेक्षता दूसरेकी आत्मीयतासे घुल-मिल गयी है।

मूल्य : तीन रुपये

• **जो** : डॉ० प्रभाकर माचवे

'जो' एक उपन्यास है; अर्थात् उपन्यासमें जो होना चाहिए वह इसमें है। युगकी दृष्टिका उजाला और युगके लिए अभीष्ट दिशाका निर्देश दोनों इसमें हैं। कथानक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आजके अमेरिकी काले-गोरे संघर्षकी एक यथार्थ जीवनपर आधारित मार्मिक छवि-का निरूपण प्रस्तुत करता है। रोचक और पठनीय तो है ही।

मूल्य : तीन रुपये

• प्रतिनिधि रचनाएँ : मराठी : व्यं० दि० माडगूलकर

मराठीकी नयी पीढ़ीके अग्रणी लेखक श्री माडगूलकरके बहुप्रशंसित, और चर्चित उपन्यास 'बनगरवाड़ी' उनकी चुनी-चुनी प्रतिनिधि कहानियों तथा उत्कृष्ट व्यक्ति निबन्धोंका संकलन है यह। आधुनिकतासे सम्बद्ध अनेक अबूझ प्रश्नोंको सचाईसे उकेरती ये रचनाएँ अधुनातन संवेदनाको सहज ही छू लेती हैं।

मूल्य : चार रुपये

• हरी घाटी : डॉ० रघुवंश

हिन्दी गद्य लेखनमें एक अभिनव-प्रयोग : यात्रा-डायरी-संस्मरण तीनोंके तत्त्वोंका सुखद सामंजस्य। एक ओर गहरे चिन्तनसे अभिभूत क्षणोंका अंकन किया गया है, तो वहीं सामान्य दैनन्दिन घटनाएँ भी मानवीय संगतिमें पहचानी गयी हैं।

मूल्य : चार रुपये पचास पैसे

• झाड़ी : श्रीकान्त वर्मा

हिन्दीकी समकालीन कहानीके समानान्तर नये कवियोंने जो कहानियाँ लिखी हैं वे भाषा, संगठन और अवधारणाकी दृष्टिसे लोकप्रिय कहानीकारोंकी कहानियोंसे भिन्न हैं।

संशय, अनिर्णय और अमूर्तता आजकी प्रतीक मनःस्थितियाँ हैं और इसे बड़ी तीव्रताके साथ प्रस्तुत संग्रहकी कहानियोंमें देखा जा सकता है। मात्र इतना ही नहीं, ये कहानियाँ प्रभाव, अभिव्यक्ति और नये आयामोंकी अभिव्यंजनाके कारण भी पठनीय हैं, आकर्षक हैं।

मूल्य : तीन रुपये

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैकलियॅड एण्ड कम्पनी लिमिटेड

मैकलियॅड हाउस,

३, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता-१

मैनेजिंग एजेण्ट्स, सेक्रेटरी और कोषाध्यक्ष

जूट मिल्स

- अलेक्जेण्डर जूट मिल्स कं० लि०
- एलायन्स जूट मिल्स कं० लि०
- नेल्लीमारला जूट मिल्स कं० लि०
- चितावलसाह जूट मिल्स कं० लि०
- ईस्टर्न मैन्यूफैक्चरिंग कं० लि०
- एम्पायर जूट मिल्स कं० लि०
- केलविन जूट कं० लि०
- प्रेसिडेंसी जूट मिल्स कं० लि०
- वेवरली जूट मिल्स कं० लि०

चाय के बगीचे

- असलुकी टी कं० लि०
- बागमारी टी कं० लि०
- भतकावा टी कं० लि०
- बोरमाह जान टी कं० (१९३६) लि०
- डिब्रूगढ़ कं० लि०
- बैजू वेली कं० लि०
- मार्गरेटस होप टी कं० लि०
- राजभात टी कं० लि०
- रानीचेरा टी० कं० लि०
- रूपचेरा टी कं० लि०
- सुंगमा टी कं० लि०
- तेलोईजान टी कं० लि०
- तिंगामीरा टी सीड कं० लि०
- तिरींहन्ना कं० लि०
- तीयरून टी कं० लि०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

4 FEB 1965 4 FEB 1965
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
GYANODAY Feb. 1965
Price Annual Rs.10/- per copy Re.1/- for abroad postage extra 18 nP. This Copy R

17 JAN 1966

सोडा ऐश यूनिट

धांगध्रा
गुजरात राज्य

•

तार :
केमिकल्स
धांगध्रा

•

टेलीफोन :
३१ और ६७

*

तार :
साहू जैन, बम्बई

टेलीफोन :
२५१२१८–१९

धांगध्रा केमिकल्स वर्क्स लिमिटेड

प्रसिद्ध 'हार्स शू' छाप हेवी केमिकल्स
के उत्पादन में अग्रसर निर्माता

- सोडा ऐश
- सोडा बाइकार्ब
- कैल्शियम क्लोराइड
- नमक और

हाइ रेयॅन ग्रेड
इलेक्ट्रोलिटिक कॉस्टिक सोडा
(९८–९९ प्रतिशत शुद्धता)

कॉस्टिक सोडा यू

साहूपुरम
पोस्ट–आरूमुगनेरी
तिरुनुवेली डिस्ट्रि
मद्रास राज्य

•

तार :
केमिकल्स
आरूमुगनेरी

•

टेलीफोन :
कायलपटनम :

*

मैनेजिंग एजेण्ट्स :

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लि०

१५ ए, हॉर्निमैन सर्किल
फोर्ट, बम्बई–१.

License No. 51. Licensed to post without prepayment of postage. REGD. No. L-2036

भारतीय ज्ञानपीठ काशी की ओर से बाबूलाल जैन फागुल्ल द्वारा प्रकाशित और
सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी में मुद्रित।
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शान्तिदूत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक विकास-उन्नयन
सांस्कृतिक अनुसन्धान-प्रकाशन
राष्ट्रीय एकता एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी

साधिका
विशिष्ट संस्था

भारतीय ज्ञानपीठ

[स्थापित सन् १९४४]

संस्थापक
श्री शान्तिप्रसाद जैन

अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

मार्च १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

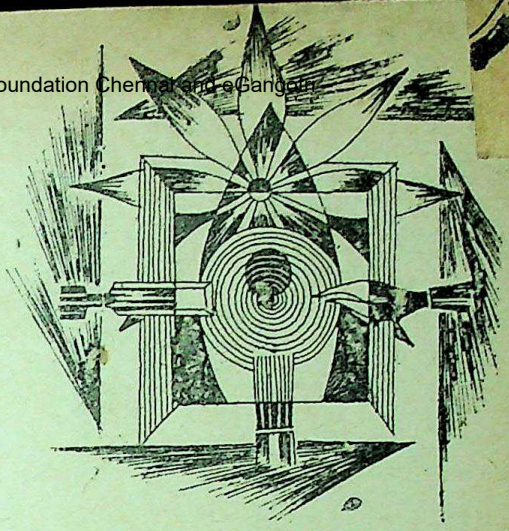

सर्वे प्रिये चारुतरं वसन्ते...

सम्पादक :
लक्ष्मीचन्द्र जैन, रमेश बक्षी

तीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

आधुनिक भावबोध, कला-संचेतना
और नवीनताका प्रतिनिधि मासिक

ज्ञानोदय

सम्पादकीय कार्यालय :
९, अलीपुर पार्क प्लेस,
कलकत्ता-२७

वितरण-कार्यालय :
भारतीय ज्ञानपीठ,
कुण्ड रोड, वाराणसी-५

वितरक :
कोलमैन एण्ड कं० लि०,
बम्बई-१

यह अंक : १.००
वार्षिक : १०.००
त्रैवार्षिक : २५.००
आजन्म : १५१.००

इस अंकमें :

आन्द्र पियेर द मान्दियार्ग, एडिथ सिटवेल, लक्ष्मीचन्द्र जैन, हरिशंकर परसाई, लक्ष्मीकान्त वर्मा, कमलेश्वर, रामनाथ सुमन, कौशल्या अश्क, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', इन्दु जैन, ज्ञानरंजन, ममता अग्रवाल, कुंकुम जोशी, शानी, परेश, देवेन गुप्त, हरिकृष्ण देवसरे, पुरुशिव रेगे, भ्रमरानन्द आदि.

- रूखीरी, यह डाल वसन वासन्ती लेगी
- हम, वे और भीड़
- हिन्दीका प्रश्न और विदेशी प्रश्नकर्त्ता
- भयंकर इवानका चेहरा
- ६३ के ३६ कवि
- बाल कहानी : पिछला दशक
- हिन्दी-विरोध और राष्ट्रद्रोह
- याद मिरजा की
- आधुनिकता और चित्रकला

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

■ रूखी री यह डाल वसन वासन्ती लेगी :

- यह वसन्त है : एडिथ सिटवेल ३
- सुनो सुनो द्वारेपर : देवेन गुप्त ४
- भारी क़दम बसन्त-पंचमी : रणजीत ५
- वसन्त-सन्ध्या : शलभ ६

■ होली है !

- ६३ के ३६ कवि : भ्रमरानन्द १२६

■ विशेष :

- अनुचिन्तन : हिन्दीका प्रश्न और विदेशी प्रश्नकर्त्ता : लक्ष्मीचन्द्र जैन ७
- सापेक्ष डायरी : हम, वे और भीड़ : हरिशंकर परसाई १४
- किसी एककी उलझन : ग्रीकट्रेजेडी, असाध्य साधनके बीच : परेश २५
- कला-चर्चा : आधुनिकता और चित्रकला : मिर्ज़ा इस्माईल बेग़ ७६
- सातसफ़र-३ : आशिक फिरें निगोड़े : कौशल्या अश्क १२३

■ कहानियाँ :

- अपने देशके लोग : कमलेश्वर २०
- हीरा : आन्द्र पियेर द मान्दियार्ग (अनु० : महेन्द्र कुलश्रेष्ठ) ३८
- नीली झीलका सपना : लक्ष्मीकान्त वर्मा ५७
- एक नमूना सार्थक दिन : ज्ञानरंजन ६५
- आँखें : शानी ७२

■ धारावाहिक उपन्यास :

- सावित्री : (सात पहाड़ियों (अनु० : माधव मो

■ छोटी कविताएँ :

- इन्दु जैन ५३; ममता

■ परिचर्चा :

- परी-चर्चा : बाल कहानी :

■ रहस्य :

- भयंकर ईवानका चेहरा

■ अन्य स्तम्भ :

- याद निरालाकी : नागेश्वर रमेश कु
- सोये हुए पृष्ठ : 'तरल
- सहचिन्तन : हिन्दी-विरोध कन्हैयालाल मिश्र
- प्रतिक्रिया : हिन्दी नाट्य और दृष्टि : कुन्था जैन १३८ शासकीय पाबन्दी : क परसाई, हरिकृष्ण देवसरे, १४३; शोक-गीत : दिनकर
- समीक्षा : डॉ० रणवीर आंजनेयु

■ अंक-सज्जा :

पीटर लेविस, बाघेला,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

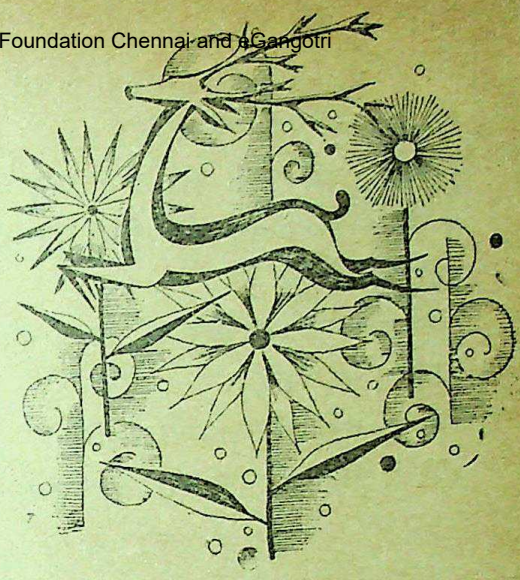

एडिथ सिटवेल
देवेन गुप्त
रणजीत
शलभ

१–'यह वसन्त है'

बीमार सूरज के लम्बे और अशुभ ग्रहण के बाद
अचानक वसन्त शुरू हुआ
अण्डों में बन्द चिड़ियों की चिरिप् और उस भाग्य के साथ
जो सृष्टि के ज्वर की तरह कलियों में मज्जागत है—
लेकिन वे नन्हें चिरिप्-गीत–इनका शोर––अवश्य
किसी तूफ़ान के शोर से कम है
और वह आवाज़ जो कलियों के चटखने के समय होती है,
वह भी सृष्टि के टूटने की आवाज़ से कमज़ोर है,
फिर भी विश्व के यौवन और प्रेमियों ने कहा—
'यह वसन्त है
और हम लोग जो ठण्ड की छाया से काले और
बूढ़े हो गये थे, देख रहे हैं—डालियों पर
गुंचे लटक आये हैं—वह चिरिप्-उल्लास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी नसों में दौड़ने लगा है
और उन मणियों में बदल गया है जो
दूब के चेहरे पर रिस आयी हैं।
विश्व की इस लम्बी और ठण्डी ऋतु में
वे दार्शनिक-जानवर जो खेतों में छुप गये थे
और चुप हो गये थे
अब वसन्त के शुरू होने का भेद खोलेंगे
इसलिए मेरे प्यार !
कि तुम मेरी जवान-वसन्त-धरती हो
और मैं तुम्हारा स्याह और झुका हुआ स्वर्ग।

—एडिथ सिटवेल (१८८७-१९६४)

२—सुनो-सुनो, द्वारे पर

होली की रात,
मीठी-सी बात,
चुपके से, छुप-छुप के, कानों में कह गया।
कौन ? कौन ? कौन ?

हवा छुई-मुई,
चलने को हुई,
झोंकों की बातों में तन-मन तक बह गया।

देखें क्या हो,
एक बार तो,
कहने को ही मन की बात कोई कह गया।

जैसा है यहाँ,
वैसा ही वहाँ,
अन्तर बस, रहने भर को ही तो रह गया :

कभी नहीं क्या
अभी नहीं, हाँ !
सुनो-सुनो, द्वारे पर बिछुआ क्या कह गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय विकट है,
भोर निकट है।
सागर-मन, चन्दा-तन छूने से रह गया।

बीत रही रात,
मीठी-सी बात!
कहने को था मन, अब सहने को रह गया।
मौन! मौन! मौन!!

—देवेन्द्र गुप्त (१९४०-१९६४)

३—भारी क़दम वसन्त-पंचमी

तेज़ी से बढ़ रहा समय है
और कलेण्डर पिछड़ रहे हैं
काफ़ी आगे निकल गया है
जल्दी-जल्दी क़दम उठानेवाला नया वसन्त
और अब पीछे-पीछे हाँफ रही है भारी क़दम वसन्त-पंचमी।
आँक नहीं पाता यह तारीख़ों-माहों-बरसों का ढाँचा
समय-चाल को ठीक-ठीक से
सोमवार को अभी कलेण्डर सत्रह ही तारीख़ बताता
लेकिन वह अट्ठारह, बीस, तीस तक पहुँच रही है।
ऊपर से ज्यों का त्यों दिखता अण्डे का यह खोल
कि जिसके भीतर का वह जीवन-अंकुर
अपनी गति में
खोल की सारी जड़-सीमाएँ पीछे छोड़ चुका है।
और खोल जो अबतक उसका कवच था
अब ज़ंजीर बन गया।
लेकिन देख रहे जो केवल मात्र खोल की मज़बूती को
और नहीं जो बूझ रहे हैं उसके भीतर उगती एक नयी ताक़त को
जिस दिन वह टूटेगा
बहुत चौंक जायेंगे
घबराकर पूछेंगे :
"एकाएक अचानक यह भूकम्प कहाँ से आया?"

—रणजोत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४—वसन्त-सन्ध्या

बाँसुरी बजने लगी है फिर
आज कल सूने सिवानों में !
अब किसी से भी रहा जाता नहीं है मन मसोसे-ऊँघते-गुमसुम मकानों में !
बाँसुरी बजने लगी है फिर……!

जो, जहाँ भी है—वहीं पर एक चर्चा चली :
दृष्टियों पर टँगी—होंठों पर बरसती—बाँहमें भरती हुई है साँझ कितनी भली!
यह साँझ कितनी भली!

लोकगीतों के नगर की जवाँ शहज़ादी
सैर को निकली फ़सल के परिस्तानों में !
बाँसुरी बजने लगी है फिर…!

लोकगीतों के नगर की जवाँ शहज़ादी
जिसके मुसकराने की ख़बर पाकर—
खड़ी हैं गुलिस्तानों में—गुलाबों की लचीली डालियाँ गरदन झुकाकर !
चुराकर सन्दली साँसें उसी की
हवा भागी जा रही है—बस्तियों से दूर—उजड़े बियाबानों में !
बाँसुरी बजने लगी है फिर…!

ख़यालों की सतह पर उभरते हैं ताज !
इस मौसम : किसी परदेश में बसते हुए शाहेजहाँ को
समर्पित हो रही है—याद में डूबी हुई मुमताज !
और वह शाहेजहाँ ऐसा कि जिसने—
कर दिये हैं दफ़न अपनी ज़िन्दगी के धड़कते सपने
हथौड़ों—आग की लपटों—मशीनों—कारख़ानों में !
बाँसुरी बजने लगी है फिर…!

— शलभ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

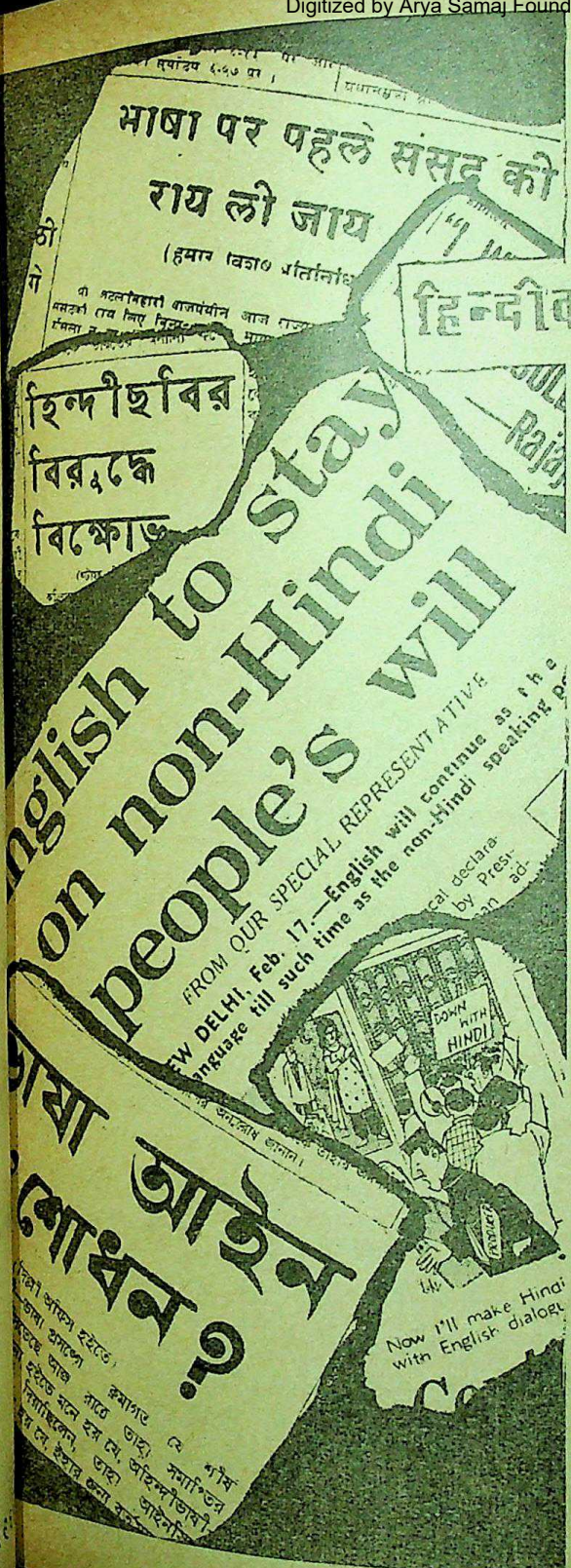

हिन्दीका प्रश्न और विदेशी प्रश्नकर्ता

—लक्ष्मीचन्द्र जैन

■

कलकत्ता
१७ फ़रवरी १९६५

प्रिय ओगासुकू,

क्योतो युनिवर्सिटीसे अशोकने समय-समयपर जो पत्र यहाँ लिखे हैं उनमें-से अनेकोंमें तुम्हारा ज़िक्र है और तुम्हारी जो छवि हमारे मनपर अंकित है वह यह है कि तुम्हें भारतवासियोंसे प्यार है, भारतीय सभ्यता और संस्कृतिके इतिहासके अध्ययनमें तुम्हारी रुचि रही है और तुम उसकी विश्व-बन्धुत्वकी भावनासे प्रभावित हो; महात्मा बुद्धके उपदेशोंको पढ़ते समय और अपने यहाँके भिक्खुओं और मठों और मूर्त्तियोंको देखते समय तुम भूल जाते हो कि तुम जापानी हो, तुम्हें लगता है कि जैसे तुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वयं भारतीय हो, तुमने हिन्दी स्वयं सीखी ही नहीं दूसरोंको सीखनेके लिए प्रेरित भी किया है आदि। इन सब बातोंके कारण हमलोग भी मनमें यह मानते रहे हैं कि अशोक विदेशमें अकेला नहीं है, वहाँ वह अपने एक भारत-प्रेमी भाईके साथ रह रहा है।

सुकू, (मालूम नहीं जापानी भाषामें यह अर्ध-सम्बोधन प्रचलित है या नहीं) आज तुम्हारा यह पहला पत्र पाकर मैं प्रसन्न तो हूँ, किन्तु उद्विग्न भी कम नहीं हूँ। तुमने बड़े दुःखसे और बड़े भोलेपनसे पूछा है : "भारतवर्षमें यह भाषाका विवाद क्या है, क्यों है ? क्या हिन्दी राष्ट्रभाषा नहीं थी जो अब बन रही है ? कुछ लोग उसे बनने क्यों नहीं देना चाहते ? अँगरेज़ी तो भारतवर्षकी मातृभाषा नहीं है, न कदाचित् हो सकती है, फिर जो लोग अँगरेज़ीको चाहते हैं वे क्या उसे मातृभाषाका पद देना चाहते हैं ? ऐसी बात कोई कह भी सकता है यह तो मैं साच नहीं सकता हूँ। हिन्दीमें श्रेष्ठ साहित्य भी है और नये लेखनमें हिन्दी बहुत अग्रणी है। अशोक भ्राताने कई पुस्तकें मुझे पठनार्थ दी हैं जिनके कारण मुझे लगता है कि हिन्दीके विरोधमें कोई तर्क नहीं है। भारतके संविधानमें हिन्दीको राष्ट्रभाषा माना गया है। अब क्या मद्रासी भाई संविधानको त्याग देना चाहते हैं ? अथवा संविधानने हिन्दीको माना नहीं है ? आप पूरी वार्ताका विवरण देकर मेरी शंकाओंका समाधान करें। जिन लोगोंने आत्महत्या की है उन्हें क्या वास्तवमें विदित है कि राष्ट्रभाषाकी समस्या क्या है दक्षिणकी भाषा तमिल है तो हिन्दी भाषाका विरोध करती है क्या ? मुझे दुःख है, इसलिए सब बातें सुनना चाहता आपका विदेश-मन्त्रालय किस भाषाको भाषा मानता है ? हम जापानी लोग मातृभाषामें ही सब कार्य करते हैं। भ्राताने आपको बताया होगा कि वह तम अणुविज्ञानकी शिक्षा प्रोफ़ेसर हयाप्राप्त करते हैं--हयाशी महोदय जाप विद्यार्थियोंको जापानी भाषामें पढ़ाते क्या हिन्दी उतनी समर्थ नहीं जितनी जा भाषा···?"

प्रिय सुकु, तुमने एकके बाद एक प्रश्न कर दिये और इस रूपमें कि यदि उत्तर कोई भी भारतीय सच्चे हृदयसे अथवा इन प्रश्नोंके प्रकाशमें हिन्दीकी समको सोचे तो भाषाका प्रश्न बड़ा सीधा सरल दिखाई देगा। हिन्दीका विरोध नि:सार, तर्कहीन और आत्मघाती है तुम्हें वहाँ जापानमें बैठे-बैठे दिखाई रहा है।

तुम्हारे प्रश्नोंका उत्तर देते समय अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते समय मैं हिन्दीके प्रति 'मोहग्रस्त' न हो जाऊँ इस समस्याको स्वार्थ या भ्रमके रंगीन से न देखूँ, यह मेरा कर्त्तव्य हो जाता भाषाके प्रश्नसे सम्बन्धित वैधानिक और हालके उपद्रवोंकी प्रकृति तथा उत्पन्न प्रतिक्रियाके बारेमें मैं जो कुछ कह रहा हूँ, आशा है उसमें तुम्हारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न समाविष्ट हो जायेंगे। न हो पायें तो अपने अगले पत्रमें पुनः पूछ लेना। मैं प्रयत्न करूँगा कि तटस्थ भावसे ठीक-ठीक उत्तर तुम्हें दूँ। अपने क्रमसे तुम्हारे प्रश्न लेता हूँ:

१. क्या हिन्दी राष्ट्र-भाषा नहीं थी जो अब बनायी जा रही है ?

व्यावहारिक रूपमें इस देशकी राष्ट्र-भाषा हिन्दी उस दिनसे प्रतिष्ठित है जिस दिनसे हिन्दी अपने विकासकी ऐतिहासिक सीढ़ियाँ पार करती हुई संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश रूपोंमें-से गुज़रती हुई, अवधी, भोजपुरी, मगही, राजस्थानी, बुन्देलखण्डी आदिके प्राचीन-अर्वाचीन रूपोंमें व्यक्त होती हुई—बोली जा रही है। पिछले एक हज़ार वर्षमें विभिन्न अंचलोंके व्यापारिक कारबार, भारतके चारों छोरोंको घेरते हुए तीर्थ-स्थानोंपर इकट्ठे होनेवाले यात्रियोंका वार्तालाप यदि किसी एक सार्वदेशिक भाषा-द्वारा संचालित होता रहा है या प्रयासित होता है तो वह हिन्दीके ही किसी-न-किसी रूप-द्वारा। विदेशी सत्तासे मुक्तिका आन्दोलन चलानेवालोंने, या नवजागरणके सन्देशको देशके कोने-कोनेमें फैलानेवाले नेताओंने हिन्दीको ही राष्ट्रभाषाके रूपमें कल्पित किया, घोषित किया। इनमें बंगालके राममोहनराय और रवीन्द्रनाथ ठाकुरसे लेकर नेताजी सुभाष बोस तक सम्मिलित हैं। दक्षिण भारतमें हिन्दी, भारतीय संस्कृतिके मूल रूपकी एकताकी वाहक होनेके कारण, संस्कृतके शब्द-साम्यके कारण, राष्ट्रीय चेतनाके अनुरूप एक राष्ट्रीय भाषाकी माँगको पूरा करनेकी क्षमताके कारण राष्ट्रभाषाके रूपमें मानी गयी थी। महात्मा गान्धीके नेतृत्वमें दक्षिण भारतमें हिन्दी-शिक्षाका कार्य इतने वेगसे और इतनी सफलताके साथ चला कि पिछले २५-३० वर्षोंमें लाखों व्यक्तियोंने हिन्दी सीख ली, हिन्दीकी परीक्षाएं उत्तीर्ण कीं, वहाँ हिन्दीकी पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हुईं और इस प्रकार हिन्दीको समूचे दक्षिणने मन-वचन-कर्मसे राष्ट्रभाषाके रूपमें स्वीकार कर लिया। चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, जो आज हिन्दीके प्रबलतम विरोधियोंमें हैं, वह प्रबलतम समर्थकोंमें रहे हैं। सन् १९३७में, जब वह मद्रास प्रान्तके मुख्य मन्त्री थे, उन्होंने प्रान्तमें हिन्दी-शिक्षाको अनिवार्य बनाया था।

२. तब फिर, दक्षिणमें हिन्दीका विरोध क्यों ? राजाजी हिन्दीके शत्रु क्यों हो गये ?

इस प्रश्नका ठीक-ठीक और सम्पूर्ण उत्तर देनेके लिए कुछ विस्तारमें जाना पड़ेगा, किन्तु हो सकता है कि विस्तार अपेक्षित न हो और जो बात मैं संक्षेपमें कहूँ उसकी पृष्ठभूमिसे परिचित होनेके कारण तुम्हें बात समझनेमें कठिनाई न हो।

समस्याको सूत्र-रूपमें यदि रखूँ तो कहूँगा—दक्षिणमें हिन्दीका विरोध इसलिए नहीं कि 'हिन्दी' विरोधनीय है बल्कि इसलिए कि हिन्दीकी ओटमें राजनैतिक स्वार्थों और प्रपंचोंको साधा जा रहा है। हिन्दीके कन्धेपर बन्दूक़ रखकर ये राजनैतिक नेता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और दल काँग्रेसके केन्द्रीय शासनके वर्तमान गठनकी हत्या करना चाहते हैं या उसे संत्रस्त और आतंकित रखकर अपने प्रभुत्वकी प्रतिष्ठा करना चाहते हैं। क्यों, इसमें राजनैतिक स्वार्थ क्या है ? सुनो—

● हमारे देशमें प्रजातन्त्रीय शासन है, अतः बहुमतके आधारपर केन्द्रीय सरकारका गठन होता है—राज्य सरकारोंका भी। दिल्ली, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, मध्यप्रदेश, और बिहार, इन हिन्दीभाषा-भाषी राज्योंकी जन-संख्या लगभग २० करोड़ है जो देशकी आबादीका लगभग ४० प्रतिशत है। हिन्दी बोलनेवाले इस देशमें ४६ प्रतिशत हैं। अतः केन्द्रीय मन्त्रिमण्डलमें हिन्दी भाषा-भाषियोंका प्राबल्य है। प्रधानमन्त्री पहले भी उत्तर प्रदेशके थे (नेहरू) और अब भी उत्तर प्रदेशके हैं (लालबहादुर शास्त्री)। राज्योंके मुख्य मन्त्रियोंकी बैठकोंमें भी हिन्दी भाषा-भाषी राज्योंके मन्त्रियोंकी आवाज़का विशेष महत्त्व है क्योंकि उसके पीछे देशकी बहुत बड़ी जनसंख्याका प्रतिनिधित्व है। वर्तमान स्थितिमें बहु-संख्यक जनताका प्रतिनिधि यह दल भाषाके आधारपर अलग नज़र आता है, यद्यपि भाषाके आधारपर दल नहीं बना, और न ही भाषाके आधारपर राजनीति चल रही है। सब मन्त्री काँग्रेसकी नीतिके अधीन हैं, फिर भी यदि एक ही संगठनमें 'शासकीय प्रभुत्वकी इकाई' दलके रूपमें व्यक्त हो रही है तो उसे भाषाके आधारपर अलग अभिहित किया जा रहा है। इसी स्थितिने 'हिन्दी इम्पीरियलिज़्म या हिन्दी साम्राज्यवाद'के नारेको जन्म दिया।

● जब राज-भाषाके रूपमें हिन्दीको ग्रहण करनेकी बात उठायी जाती है तो इससे दक्षिणवालोंको राष्ट्रीय एकताके आधारको दृढ़ करनेका प्रयास तो दिखाई नहीं देता, उलटा यही प्रमाणित होने लगता है कि हिन्दी साम्राज्यवादको पुष्ट किया जा रहा है। जबतक देशमें अँगरेज़ोंका राज था, अंगरेज़ी सीखनेवालोंमें अगुआ मद्रासी और बंगाली अपनी दक्षताके कारण सरकारी दफ़्तरोंमें प्रवेश पा गये और अँगरेज़ी राज्यकी बढ़ोतरीके साथ-साथ ये संख्यामें और पदोंमें बढ़ते रहे। मद्रास-बंगाल प्रान्तोंके वाहरे बाबू लोग और सरकारी अधिकारीगण अंगरेज़ीमें अभ्यस्त हो गये, अब यह इतना बड़ा दल चाहता है कि सीखी-सिखायी अंगरेज़ी न छोड़नी पड़े और हिन्दीके साथ माथापच्ची करनेसे जान बच जाये। विरोधियोंकी पंक्तिमें सबसे आगे ये लोग आये और इसलिए राष्ट्रीय नीतिके आधारपर पिछले १५ वर्षोंमें हिन्दीके लिए जो सरकारी कार्यक्रम बने इन लोगोंने प्रायः ठप्प कर दिये।

● प्रश्न केवल तत्काल उदासीन बाबुओं और शासकीय अधिकारियोंका ही नहीं रहा, उन्हें यह भी दिखाई देने लगा कि परम्परागत जिन परिवारोंका पेशा सरकारी दफ़्तरोंमें काम करता रहा और इस उद्देश्यसे जो अपने बच्चोंको अँगरेज़ी पढ़ाते रहे और जो बच्चे अब वयस्क हो गये, उन्हें यदि हिन्दीके माध्यम-मुक्त-द्वारसे नौकरियोंमें प्रवेश पाना हुआ तो इतनी बड़ी भीड़में वह कैसे घुस पायेंगे,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घुसें भी तो पदोन्नतिकी दौड़में उन प्रतियोगी युवकोंको कैसे मात देंगे जिनकी मातृ-भाषा हिन्दी है और जिन्हें प्रतियोगिताओंमें अच्छे परिणाम दिखानेकी स्वाभाविक सुगमता है।

प्रिय सुकू, तुम प्रश्नके इस रूपको देखकर शायद चकित होओगे कि यह क्या गोरखधन्धा है और सोचोगे कि वास्तवमें अहिन्दी भाषा-भाषियोंकी ये शंकाएँ निराधार नहीं। मैं तुम्हींसे पूछता हूँ कि, यदि तुम्हारे यहाँ विदेशी चीनियोंने राज्य करके चीनी भाषाको सरकारी कामकाजमें प्रचलित कर दिया होता और चीनी बन्धनोंसे मुक्त होनेके उपरान्त यदि तुमसे कोई देशवासी कहता कि हम तो अभी भी जापानमें चीनी भाषाको जारी रखेंगे क्योंकि··· (वह सब तर्क जो अब अँगरेज़ीके पक्षमें भारतमें दिये जा रहे हैं···) तो क्या सचमुच तुम्हारा आत्मसम्मान यह गवारा करता कि चीनी भाषाको सिरपर लादे रखा जाये, जापानी भाषाको घटिया और असमर्थ कहकर उसे चीनी भाषाके चरणोंमें बैठाया जाये? कोई भी जापानी इस कल्पना-मात्रसे सिहर उठेगा।

इस शंकाका समाधान यह है कि जो लोग विदेशी अँगरेज़ीको घोटकर पी गये, वह क्या अपने देशकी भाषा, हिन्दीको, नहीं सीख पायेंगे और सीखकर इतनी दक्षता नहीं प्राप्त कर पायेंगे कि तथाकथित हिन्दी वालोंको चकित कर दें, उनसे आगे बढ़ जायें? प्रतिभाके पैरोंमें कोई बेड़ियाँ डाल सकता है?

इस बातको क्या दक्षिणवाले नहीं समझते? क्या राजाजी (राजगोपालाचारी) नहीं जानते? जानते हैं। वास्तवमें तो वह इससे अधिक जानते हैं, अर्थात् यह कि हिन्दीका विरोध बड़े प्रयत्नसे खड़ा किया गया है, केन्द्रीय शासनका बदनाम करनेके लिए, मद्रास सरकारके काँग्रेसी शासनको गिरानेके लिए। कम्यूनिस्टोंकी नीति ही है कि देशमें जगह-जगह कारण-अकारण उपद्रव हों और उन्हें जनतामें घुसकर अपना राजनैतिक स्वार्थ साधनेका अवसर मिले। दक्षिणमें एक विरोधी दल ज़ोर पकड़ गया है—द्रविड़ मुन्नेत्र कज़गम। वह काँग्रेस शासनको ही समाप्त नहीं करना चाहता, देशके दो टुकड़े चाहता है कि दक्षिण अलग देश बने जहाँ उसका राज्य हो। ये वे लोग हैं जो भारतीय संविधानको जलाते हैं, जो प्रधान मन्त्रीकी अरथी निकालते हैं, जो आर्य-अनार्य सभ्यताके नामपर तमिल भाषामें घुले-मिले संस्कृत शब्दोंको अछूत क़रार देकर उन्हें कोषों और मूलपाठोंमें-से निकालकर समानार्थक द्रविड़ पर्यायवाची शब्द ठूँस रहे हैं और नये पाठ तैयार कर रहे हैं; जो ब्राह्मणोंको दक्षिणमें नहीं रहने देना चाहते, जो रामायण और महाभारतको साहित्यका लांछन मानते हैं! तुम पूछोगे, "और, राजाजी?" उत्तर है: राजाजी एक ऐसे चाणक्य हैं जो किसी दिन स्वयं राजसिंहासनपर बैठे थे और जो अब पदच्युत हैं, पथ-भ्रष्ट हैं; एक ऐसे ब्राह्मण जो कज़गम-नेताओंको इसलिए प्रसन्न रखना चाहते हैं कि वे ब्राह्मणोंको अछत क़रार देकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तमिल देशसे निकाल बाहर न करें; एक ऐसे कूटनीतिज्ञ जिनका अब हर राजनैतिक वार खाली जा रहा है लेकिन जो अदम्य साहसके साथ हर उस डण्डेको हथियानेके लिए हाथ-पाँव मारते रहते हैं जिससे काँग्रेसकी कमर सीधी की जा सके। वह विचक्षण प्रतिभाका धनी सब कुछ ठीक-ठीक सोच सकता है, किन्तु वह कूटनीतिज्ञ भी है—विशुद्ध चाणक्य—इसलिए वह क्या कहकर क्या करना चाहता है इसे समझनेके लिए अनुमानोंपर ही चला जा सकता है। मान लेता हूँ, उनकी बात समझना मेरी सामर्थ्यसे बाहर है····

उल्लेखनीय यह, कि हिन्दीके विरोधमें दक्षिणकी जनता उतना नहीं जितने वहाँके राजनैतिक विपक्षी नेता। जनताने तो हिन्दी सीखी है और हिन्दी सीख रही है। कजगम दलके सर्वोच्च नेताके परिवारके बालक हिन्दी पढ़ रहे हैं, यह बात मैंने कई जानकार व्यक्तियोंसे सुनी है···तब ? तब फिर यह कि यहाँ हम लोगोंको भाषाके प्रश्नको राजनैतिक स्वार्थोंसे बचाकर--चाहे वे स्वार्थ वर्तमान सत्ताधिकारियोंके हों, चाहे उनके जो सत्ताको हथियाना चाहते हैं या वर्तमान शासनको नष्ट करना चाहते हैं--शुद्ध राष्ट्रीय दृष्टिसे हल करना होगा। देशकी वह बहुसंख्यक जनता जो हिन्दीकी वर्तमान स्थितिके बारेमें अनभिज्ञ है, जो सचमुच समझ रही है कि हिन्दी उसके ऊपर लादी जा रही है, उसके सामने और भारतकी समस्याओंमें रुचि रखनेवाले तुम-जैसे हितैषियोंके सामने, यह स्पष्ट करना होगा कि--

३. हिन्दीके सम्बन्धमें वैधानिक स्थिति क्या है ?

(१) देशके संविधानका जो प्राक्ष्य [illegible] उसमें १४ दिसम्बर १९४९ को यह निर्णय किया गया कि देवनागरी लिपिमें लिखी हिन्दी भारतकी राष्ट्रभाषा मानी जायेगी। यह ठीक है कि यह निर्णय सब प्रकारकी समझौतोंके प्रयत्नके बाद हुआ और [illegible] प्रकारके मतभेद थे, किन्तु इस एक बातपर सब सहमत थे कि राष्ट्रकी एक भाषा [illegible] सार्वदेशिक अवश्य होनी चाहिए और वह हिन्दी ही हो सकती है। (हिन्दीका [illegible] क्या हो, 'हिन्दुस्तानी'के रूपमें वह प्रचलित हो या नहीं, कितने वर्षोंमें उसे प्रचलित [illegible] लिया जाये, अँगरेजीको राजभाषाके रूपमें कबतक रखनेके बाद उसे हटा दिया जाये आदि-आदि बातोंमें मत-भेद था किन्तु मूल निर्णयमें मत-भेद कहीं नहीं था कि हिन्दीको सार्वदेशिक मातृभाषाके रूपमें अपनाना ही है।

(२) छह वर्ष बाद, जून सन् १९४८ में, भाषा-आयोग गठित हुआ।

(३) एक वर्ष बाद, सन् १९४९ में आयोगकी रिपोर्ट प्रकाशित हुई।

(४) एक वर्ष बाद, सन् १९५० में संसद्के ३० सदस्योंकी एक समिति बनी कि वह रिपोर्टपर विचार करके निर्णय दे कि संविधानकी भाषा-सम्बन्धी धारणाओंको किस प्रकार क्रियान्वित किया जाये।

(५) प्रायः दो वर्ष बाद, फरवरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन् १९५९ में, संसद् सदस्योंकी समितिने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी।

(६) लगभग एक वर्ष बाद, सन् १९६० में, राष्ट्रपतिने आदेश जारी किया कि रिपोर्टके निष्कर्ष क्या हैं और क्या कार्यवाही की जायेगी।

(७) संसद्में जब इस आदेशसे सम्बन्धित विषयोंपर चर्चा हुई तो पण्डित नेहरूने सदस्योंको आश्वासन दिया कि यद्यपि हिन्दी राजभाषा निश्चय बनेगी अँगरेज़ीको सहभाषाके रूपमें तबतक बनाये रखेंगे जबतक हिन्दी पूर्ण रूपसे लागू नहीं होती।

(८) तीन वर्ष बाद, १३ अप्रैल, १९६३ को संसद्में भाषाके सम्बन्धमें सरकारकी ओरसे बिल प्रस्तुत हुआ। यह बिल १७ अप्रैल १९६३ को स्वीकृत हो गया और ऐक्ट बन गया।

(९) इस स्वीकृत ऐक्टके अनुसार स्वदेश-मन्त्रालयने आदेश जारी किये कि २६ जनवरी १९६५ से हिन्दीको राष्ट्रभाषाके रूपमें चालू किया जायेगा। अँगरेज़ीका व्यवहार वर्जित नहीं है। सहभाषाके रूपमें अँगरेज़ी भी चालू रहेगी, किन्तु प्रयत्न वांछनीय है कि धीरे-धीरे अँगरेज़ीपर निर्भर होना छोड़ दिया जाये और सम्पूर्ण रूपसे हिन्दी राजभाषा बन जाये।

(१०) २६ जनवरी १९६५ जब आयी, तो गत १६-१७ वर्षके इतिहासको और प्रयत्नोंको तिलांजलि देकर हिन्दीके विरुद्ध आन्दोलन खड़ा कर दिया गया। इसका औचित्य क्या?

४. क्या हिन्दी इस योग्य है कि वह अँगरेज़ी-का स्थान ले ले?

भाषामें यदि आन्तरिक क्षमता है तो उसके विकासमें कहीं कोई बाधा हो ही नहीं सकती और उसे सब प्रकारके व्यवहारोंके योग्य बनाया जा सकता है। तुमने हिन्दी पढ़ी है, जापानमें हिन्दीका जो आधुनिक साहित्य अशोकके द्वारा तुम्हारे हाथों पहुँचा है, उससे तुम प्रभावित हो। हिन्दीकी क्षमता और वर्तमान सामर्थ्यके विषयमें शंकालु वे लोग हैं जिन्होंने हिन्दीकी दो-चार पुस्तकें भी नहीं पढ़ीं, जो अहम्मन्य हैं और जो कूप-मण्डूक बने रहना चाहते हैं। ये लोग हिन्दीके बारेमें बेहूदा व्यंग्य करते हैं। शब्द-रचनाके वैज्ञानिक आधारको नहीं जानते, समसामयिक साहित्यको पढ़ते नहीं; यदि पढ़ें तो अवश्य अपना भ्रम दूर करें।

एक दिन हमने राष्ट्रप्रेमकी भावनासे प्रेरित होकर लंकाशायरकी मुलायम मलमल-को जलाकर मोटे-झोटे खद्दरको अपनाया था कि उसमें आत्म-सम्मान है, पराश्रयता नहीं है। आज हम जो ढाकाकी मलमल बनाते थे, फिर हाथसे और अपनी मशीनोंसे अच्छे-से अच्छा सुकोमल वस्त्र बनाने लगे हैं। यदि हिन्दी आज सम्पूर्ण रूपसे अँगरेज़ी क्षमताके समकक्ष नहीं तो अपने वैभवपूर्ण संस्कृत शब्दकोषके आधारपर वह सब प्रकारसे सक्षम हो सकती है। ठीक है कि शब्दकोषोंसे भाषा नहीं बनती, किन्तु वैज्ञानिक आधारपर शब्द बनते हैं और शब्दोंके प्रयोगसे भाषा बनती है।

[शेष पृष्ठ १९ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

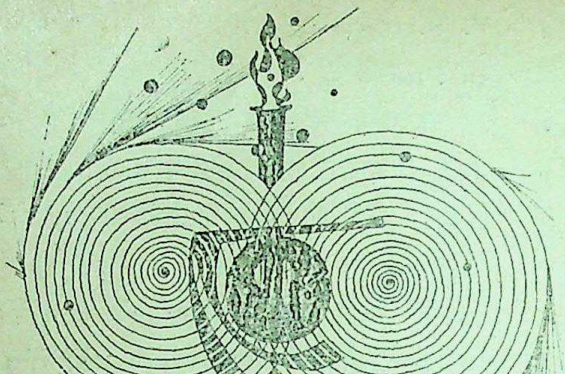

हरिशंकर परसाई

हम, वे और भीड़

जनवरीके नोट्स :

एक केलेण्डर और बेकार हो गया। पन्ना-पन्ना मैला हो गया और हर तसवीरका रंग उड़ गया। हर साल ऐसा होता है--जनवरीमें दीवारपर चमकीली तसवीरों-का एक केलेण्डर टँग जाता है और दिसम्बर तक तसवीरकी चमक उड़ जाती है। हर तसवीर बारह महीनोंमें बदरंग हो जाती है।

पुराने केलेण्डरकी तसवीर बच्चे काट लेते हैं और उसे कहीं चिपका देते हैं। हम सोचते हैं, बच्चोंका मन बहलता है, पर यह उनके साथ कितना बड़ा धोखा है। साल-दर-साल हम उनसे कहते हैं, लो बेटो, जो साल हमने बिगाड़ दिया, उसे लो; उसकी तसवीरसे मन बहलाओ। बीते हुएकी बदरंग मुरझायी तसवीरें हैं ये। आगतकी कोई चमकीली तसवीर हम तुम्हें नहीं दे सकते। हम उसमें खुद धोखा खा चुके हैं और खाते जा रहे हैं। देनेवाले हमें भी तो हर साल-के शुरूमें रंगीन तसवीर देते हैं कि लो अभागो, रोओ मत। आगामी सालकी यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रंगीन तसवीर है। मगर वह कच्चे रंगकी होती है। साल बीतते वह भद्दी हो जाती है। धोखेकी लम्बी परम्परा है। धोखा, जो हमें विरासतमें मिला, हम तुम्हें देते हैं। किसी दिन तुम इन बदरंग तसवीरोंको हमारे सामने ही फाड़कर फेंक दोगे और हमारे मुँहपर थूकोगे।

नया साल आ गया। पहले मैं १५ अगस्तसे नया साल गिनता था। अब वैसा करते डर लगता है। मनमें दर्द उठता है कि हाय, इतने साल हो गये फिर भी! जवाब मिलता है—कोई जादू थोड़े ही है। पर तरह-तरहके जादू तो हो रहे हैं। यही क्यों नहीं होता? अफ़सरके इतने बड़े मकान बन जाते हैं कि वह राष्ट्रपतिको किरायेपर देनेका हौसला रखता है। किस जादूसे गोदाममें रखे गेहूँका हर दाना सोनेका हो गया? इसे वो दिया जायेगा, तो फिर सोनेकी फ़सल कट जायेगी।

जनवरीसे साल बदलनेमें न दर्द उठता, न हाय होती और न 'फिर भी' का सवाल उठता। आखिरी हफ़्तेमें कुछ यादें ज़रूर होती हैं। २३ जनवरी याद दिलाती है कि सुभाष बाबूने कहा था—'तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आज़ादी दूँगा। खून तो हमने दे दिया, मगर आज़ादी किन्हें दे दी गयी? फिर २४ या २५ तारीखको लाल क़िलेपर सर्व-भाषा कवि-सम्मेलन होता है जिसमें बड़े कवि मेहनत करके घटिया कविता लिखकर लाते हैं और छोटे कवि मेहनतसे और घटिया अनुवाद करते हैं। हिन्दी और उर्दू कवि खास तौरसे उचक्कापन और 'ओवर एक्टिंग' करते हैं: यों इन भाषाओंकी सारी समकालीन कविता घटिया हीरोकी ओवर-एक्टिंग है। फिर २६ जनवरीको गणतन्त्र-दिवस होता है और हम संविधानकी प्रति निकालकर गणतन्त्रके निर्देशक सिद्धान्त और बुनियादी अधिकारोंका पाठ करते हैं। इसी वक़्त गुरु गोलवलकरकी वाणी सुनाई देती है कि राष्ट्र तो यह सिर्फ़ हिन्दुओंका है—मुसलमान, पारसी, ईसाई वग़ैरह विदेशी हैं और खासकर मुसलमान तो देश-द्रोही हैं। मगर जो सुरक्षा सम्बन्धी गुप्त बातें पाकिस्तानको बताते हुए पकड़े गये, वे शुद्ध ब्राह्मण हैं। यह भी जादू है।

फिर ३० जनवरी--

■

हमारे बापोंसे तब कहा जाता था कि आज़ादीकी घास गुलामीके घीसे अच्छी होती है। हम तब बच्चे थे, मगर हमने भी इसे सुना, समझा और स्वीकारा।

आज़ाद हो गये, तो हमने कहा—अच्छा, अब हम गौरवके साथ घास भी खा लेंगे।

नारा लगवानेवालोंसे पूछना भूल गये कि कबतक खायेंगे।

मगर हमने देखा कि कुछ लोगोंने अपनी काली-काली भैंसें आज़ादीकी घासपर छोड़ दीं और घास उनके पेटमें जाने लगी। तब भैंसवालोंने उन्हें दुह लिया और दूधका घी बनाकर हमारे सामने ही पीने लगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरा एक मित्र सही कहता है—
परसाई, तुमपर भीड़ हावी
है। तुम हमेशा भीड़-
की बात भीड़के लिए
लिखते हो। देखते नहीं, अच्छे लेखकों-
की सबसे बड़ी चिन्ता यह है
कि भीड़के दबावसे कैसे
बचा जाये।

धोखा ही हुआ न ! हमें और हमारे बापोंको बताया ही नहीं गया था कि आज़ादीकी घास तो होगी, पर कुछके पास कभी-कभी भैंसें भी होंगी।

अब हम उससे कहते हैं—यारो तुम भी आज़ादीकी घास खाओ न !

वे जवाब देते हैं—खा तो रहे हैं। तुम घास सीधे खा लेते हो और हम भैंसोंके मारफ़त खाते हैं। वह अगर घी बन जाती है, तो हम क्या करें ?

और हम अपने बापको कोसते हैं कि तुमने तभी इस बारेमें साफ़ बातें क्यों नहीं कर लीं। यह काली भैंसोंवाली शर्त क्यों मान ली ? क्या हक़ था तुम्हें हमारी तरफ़से घाटेका सौदा करनेका ?

सोशलिस्ट अर्थशास्त्रीसे पूछते हैं तो वह अपनी उलझी दाढ़ीपर हाथ फेरकर कहता है—कम्पल्शंस ऑफ़ ए बेकवर्ड इकानमी ! पिछड़ी आर्थिकताकी बाध्यचताएँ हैं ये।

हैं तो। घरसे दूकान तक पहुँचते भाव बढ़ जाते हैं।

देश एक क़तारमें बदल गया है। चलती-फिरती क़तार है—कभी चावलकी दूकान-पर खड़ी होती है फिर सरककर [illegible] दूकानपर चली जाती है। आधी ज़िन्दगी क़तारमें खड़े-खड़े बीत रही है।

'शस्य श्यामला' भूमिके वासी 'भाग्य विधाता'से प्रार्थना करते हैं कि [illegible] साल अमेरिकामें गेहूँ खूब पैदा हो और जापानमें चावल।

हम 'मदरलैण्ड' न कहकर 'फ़ादरलैण्ड' कहने लगें तो ठीक रहेगा। रोटी माँसे माँगी जाती है बापसे नहीं। 'फ़ादरलैण्ड' कहने लगेंगे, तो ये माँगें और शिकायतें नहीं होंगी।

■

मैं फिर 'भीड़' के चक्करमें पड़ गया।

मेरा एक मित्र सही कहता है—परसाई तुमपर भीड़ हावी है। तुम हमेशा भीड़ की बात भीड़के लिए लिखते हो। देखते नहीं अच्छे लेखकोंकी सबसे बड़ी चिन्ता यह है कि भीड़के दबावसे कैसे बचा जाये।

छोटा आदमी हमेशा भीड़से कतराता है। एक तो उसे अपने वैशिष्ट्यके लोप हो जानेका डर रहता है दूसरे कुचल जानेका। जो छोटा है और अपनी विशिष्टताको हमेशा उजागर रखना चाहता है, उसे सचमुच भीड़में नहीं घुसना चाहिए। लघुताको बड़े लोग इस गौरवसे धारण करते हैं, जैसे छोटे होनेके लिए उन्हें बड़ी तपस्या करनी पड़ी है। उन्हें भीड़में खो जानेका डर बना रहता है।

एक तरकीब है, जिससे छोटा आदमी भी भीड़में विशिष्ट और सबके ध्यानका केन्द्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बन सकता है—उसे बकरेकी या कुत्तेकी बोली बोलने लगना चाहिए। भीड़का उद्देश्य जब सस्ता अनाज लेनेका हो, वह इसके लिए आगे बढ़ रही हो, उसका एक ध्येय, एक मनस्थिति और एक गति हो—तब यदि छोटा आदमी बकरेकी बोली बोल उठे, तो वह एकदम विशिष्ट हो जायेगा और सबका ध्यान खींच लेगा।

लोग मुझसे कहीं होशियार हैं। मेरे बताये बिना भी वे यह तरक़ीब जानते हैं और भूखोंकी भीड़में बकरेकी बोली बोल रहे हैं।

बड़ा डर है कि भीड़ हमें याने स्वतन्त्र चिन्तकों और लेखकोंको दबोच रही है।

वे नहीं जानते या छिपाते हैं कि भीड़से अलग करके भी किसी एकान्तमें दबोचे जाते हैं। लेखकोंकी चोरी करनेवाले कई गिरोह हैं। वे भीड़में शिकारको ताड़ते रहते हैं और किसी बहाने उसे भीड़से अलग करके, अपने साथ किसी अँधेरी कोठरीमें ले जाते हैं। वहाँ उसके हाथ-पाँव बाँधकर मुँहमें कपड़ा ठूँस देते हैं। तब स्वतन्त्र चिन्तक सिर्फ़ 'घोंघों' की आवाज़ निकाल सकता है। गिरोहवाले उस 'घोंघों'में सौन्दर्यशास्त्रीय मूल्य ढूँढ़कर बता देते हैं। उसे तत्त्व-ज्ञान सिद्ध कर देते हैं।

जिसकी अनाजकी थैली लेकर कोई दूसरा क़तारमें खड़ा है, वह भीड़से घृणा कर सकता है। जिसका थैला अपने ही हाथमें है, वह क्या करे ?

भीड़से बचनेका एक तरीक़ा और है। एक मीनार खड़ी करो। उसपर बैठ जाओ। एक लम्बी रस्सीमें खानेका डिब्बा बाँधकर नीचे लटकाओ और ऊपरसे रोओ। कोई दया करके डिब्बेमें रोटी-दाल रख देगा। डिब्बा ऊपर खींचकर रोटी खा लो और ऊपरसे भीड़पर थूको।

लेखककी हालत खस्ता है। वह सोचता है, कि मेरा अलगसे कुछ हो जाये। सबके साथ होनेमें विशिष्टता मारी जाती है। दिन-भर पेट भरनेके लिए उसके जूते घिसते हैं और शामको वह कॉफ़ी-हाउसमें बैठकर कहता है कि कोई हमें भीड़से बचाओ।

उधर भीड़ कहती है कि कोई हमें इनसे बचाओ !

■

राजनीतिकी बू आती है, इन बातोंसे। है न ?

लेखकको तो मनुष्यसे मतलब है, राजनीति वग़ैरहसे क्या ?

मगर मनुष्यकी नियति तय करनेवाली एक राजनीति भी है।

लेखक दम्भसे कहता है, पहली बार हमने जीवनको उसके पूर्ण और यथार्थ रूपमें स्वीकारा है।

तूने भाई, किसका जीवन स्वीकारा है ? जीवन तो अर्थमन्त्रीके बदलनेसे भी प्रभावित हो रहा है और अमेरिकी चुनावसे भी।

कल अगर फ़ासिस्ट तानाशाही आ गयी, तो हे स्वतन्त्र चिन्तक, हे भीड़-द्वेषी, तेरे स्वतन्त्र चिन्तन और लेखनका क्या होगा ? फिर तो तेरा गला दबाया जायेगा और तूने अपनी इच्छासे कोई आवाज़ निकालनेकी कोशिश की तो गला ही कट जायेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज तू यह सोचनेमें झेंपता है और ऊपरसे कहता है--आज हम जीवनसे सम्पृक्त हैं।

■

भीड़की बात छोड़ें। लेखकोंकी बातें करें।

'अज्ञेय'को 'आँगनके पार द्वार'पर अकादमी-पुरस्कार मिल गया।

पहले क्यों नहीं मिला? उम्र कम थी।

आम मत है कि 'आंगनके पार द्वार'से पहलेके संग्रहोंकी कविताएँ अच्छी हैं।

फिर उनपर क्यों पुरस्कार नहीं मिला? तब उम्र कम थी और अच्छी रचनाको पुरस्कृत करनेकी कोई परम्परा नहीं है।

पं० माखनलाल चतुर्वेदीका सम्मान हुआ और थैली भेंट की गयी।

पहले क्यों नहीं यह हुआ? उम्र उनकी भी कम थी।

जानसनने लार्ड चेस्टरफ़ील्डको चिट्ठीमें लिखा था कि माई लार्ड, क्या 'पेट्रन' वह होता है जो किनारेपर खड़ा-खड़ा आदमीको पानीमें डूबते देखता रहे और जब वह किसी तरह बचकर निकल आये, तो उसे गले लगा ले।

पुरस्कार और आर्थिक सहायता रचना करनेके लिए मिलते हैं या रचना बन्द करनेके लिए?

मैं देनेवालोंके पास जाऊँ और कहूँ--सर, मैं लिखना बन्द कर रहा हूँ--इस उपलक्षमें मुझे आप क्या देते हैं?

सर पूछेगा--कबसे बन्द कर रहे हो?

--अगला पहली तारीखसे।

सर कहेगा--तुम कल ही से बन्द कर दो तो मैं कल ही से तुम्हारी मासिक सहायता बाँध देता हूँ। खबरदार, लिखा तो बन्द कर दूँगा।

मैं कहूँगा--ऐसा है तो आजसे ही बन्द कर दूँगा। आजसे ही तनखा बाँध दीजिए।

एक वृद्ध ग़रीब लेखक बेचारा इस शहरमें घूम रहा है। उसे दो 'प्रतिष्ठित' आदमियोंसे दरिद्रताके सर्टिफ़िकेट चाहिए। उसने सहायताके लिए दरख्वास्त दी है। उसमें नत्थी करेगा। तब कलेक्टरके चक्कर लगायेगा और कलेक्टर जाँच करके सिफ़ारिश करेगा कि हाँ, यह लेखक सचमुच दरिद्र है, दीन है। जो दीन नहीं हैं, ऐसे दो बेईमान कसम खानेवालोंने इसकी दरिद्रता प्रमाणित की है।

क्या मतलब है इन शब्दोंका--स्वतन्त्र-चेता, द्रष्टा, विशिष्ट, आत्माके प्रति प्रतिबद्ध, आत्माका अन्वेषी?

■

जिसने हमें क्रान्ति सिखायी थी और जो कहता है कि मेरी आत्मामें हिमालय घर कर गया है, उसे मैंने अभी देखा।

जिसने ज्वाला धधकानेकी बात की थी उसे भी अभी देखा।

जो सन्त कवियोंकी 'स्पिरिट' को आत्मसात् किये हैं, उसे भी देखा।

कहाँ देखा?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुख्यमन्त्रीके आसपास। तीनोंमें स्पर्धा चल रही थी कि कौन किस जेबमें घुस जाये। कोटकी दो जेबोंमें दो घुस गये।

तीसरेने कहा, हाय, अगर मुख्यमन्त्री पतलून पहने होते, तो मैं उसकी जेबमें घुस जाता।

तीनों 'एम्प्लायमेण्ट एक्सचेंज' से कार्ड बनवाकर जेबमें रखे हैं। किसीको कुछ होना है, किसीको कुछ!

■

कहानीपर बात करना व्यर्थ है। मैं पिछले दो महीनेसे व्यूह-रचनाके सम्पर्कमें नहीं हूँ। उसे जाने बिना मूल्योंकी बात नहीं हो सकती। दिल्ली जाकर चार तरहके लेखकोंसे मिलूँगा। वे चार तरहके कौन? कॉफ़ी-हाउसवाले, टी-हाउसवाले, शालीमार-वाले और फ़ोनपर हेलोवाले!

साहित्यकी सबसे बड़ी समस्या इस समय यह है कि डॉ० नामवर सिंहने एक लेखमें श्रीकान्त वर्माको 'कोट' किया है और तारीफ़ तथा सहमतिके साथ किया है। यह चकित कर देनेवाली बात है।

हम सबके लिए आगामी माहका साहि-त्यिक 'असाइनमेण्ट' यही है कि हम इस रहस्यका पता लगायें। तब कुछ लिखें-पढ़ें।

■ ■

[पृष्ठ १३ का शेष : हिन्दीका प्रश्न और विदेशी प्रश्नकर्त्ता]

हमारी केन्द्रीय सरकार दोषी है, घोर अपराधी है कि उसने हिन्दीके मामलेमें इतनी ढील बरती जाने दी। इन १६-१७ वर्षोंमें तो एक नयी पीढ़ी हिन्दीमें इतनी निष्णात हो जाती कि वह हिन्दीमें फर्राटेसे किये गये राजकीय कामकाजमें अँगरेज़ीसे अपना लोहा मनवा लेती!

६. अब सम्भावना क्या है?

यह तो स्पष्ट है कि भारतीय भाषाएँ समृद्ध होंगी, आत्म-निर्भर होंगी और हिन्दी निश्चित रूपसे राष्ट्रभाषा-राजभाषा बनेगी। प्रश्न इतना ही है कि अड़ंगा लगानेवाले कब-तक अपने स्वार्थोंकी सिद्धि केन्द्रीय शासनको डरा-धमकाकर कर सकते हैं या जो वास्तवमें भ्रमग्रस्त हैं उनका भ्रम कबतक तोड़ दिया जाता है।

प्रधान मन्त्रीने मुख्य-मन्त्रियोंकी बैठक बुलायी है। निर्णय यह होना है कि अँगरेज़ीका क्या हो। हिन्दी-विरोधी चाहते हैं—अँगरेज़ी सदा-सदाके लिए क़ायम रहे और हिन्दीको संविधानमें सर्वथा निष्क्रिय बना दिया जाये। हिन्दीके समर्थक अभी चुप हैं। तूफ़ान थमेगा तो स्पष्ट नज़र आयेगा कि क्षितिजपर क्या है।

तबतक, सायोनार!—प्रिय ओगासुकु!

शुभेच्छु

लक्ष्मीचन्द्र जैन

पुनश्च : पत्र लम्बा हो गया है, और पाता हूँ कि तुम्हारे कई प्रश्न अभी भी निरुत्त-रित रह गये! अच्छा, फिर कभी। तुम्हें और अशोकको बहुत प्यार।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

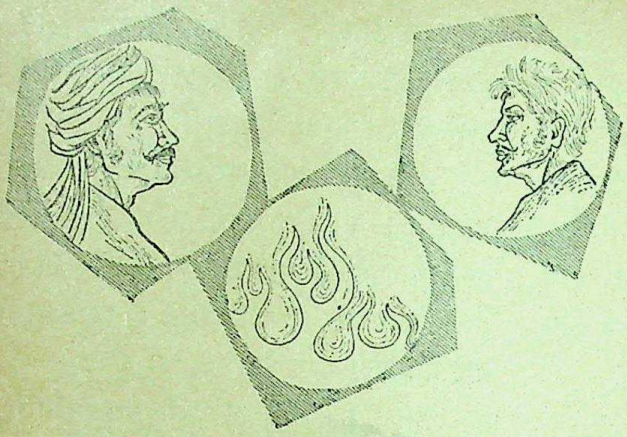

कमलेश्वर

अपने देशके लोग

वहाँपर बहुत-से आदमी इकट्ठे थे। सबकी गरदनोंमें पट्टे पड़े हुए थे। उन पट्टोंपर उनके नाम, उम्र व मर्ज़ लिखे हुए थे।

दीनदयाल : उम्र ४० साल, मर्ज़ : ज़्यादा तनख़्वाह माँगता है। सलाम नहीं करता।

सदानन्द : उम्र २५ साल, मर्ज़ : दफ्तरकी स्टेशनरी चुराता है।

इब्राहीम : उम्र ३० साल, मर्ज़ : सही बात कहनेसे नहीं डरता।

एस० सुब्रमण्यम : उम्र २८ साल, मर्ज़ : अपने अफ़सरसे ज़्यादा क़ाबिल है।

सुब्रतो घोष : उम्र २६ साल, मर्ज़ : ग़लत बात नहीं मानता।

सुबोध पकड़ासी : उम्र २५ साल, मर्ज़ : लिख-लिख कर अफ़सरकी शिकायत करता है।

सभीकी गरदनोंमें पड़े हुए पट्टोंपर नाम और तरह-तरहके मर्ज़ लिखे हुए थे। वे सब चुपचाप लाइनमें खड़े थे। एक सेक्शन-आफ़ीसरनुमा कम्पाउण्डर दस-ग्यारह फ़ाइलें पकड़े हुए हर आदमीकी जाँच कर रहा था। साथ ही जेबसे एक-एक गोली निकालकर सबको देता जा रहा था। जो गोली खा चुके थे, वे चुपचाप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खड़े थे। बाक़ी शोर मचा रहे थे।

कुछ-कुछ अस्पतालकी तरहका वातावरण था। बहुत-से अफ़सर लोग डॉक्टरोंकी तरह सफ़ेद लम्बा कोट पहने हुए फ़ुर्तीसे इधर-उधर जा रहे थे। वे व्यस्त थे। उनके साथ कुछ विदेशी विशेषज्ञ भी घूम रहे थे, जो उन डॉक्टरनुमा अफ़सरोंको चलते-चलते हिदायतें और राय दे रहे थे। बरामदोंमें फ़ाइलोंके ढेर थे। फ़र्शसे छत तक वे ढेर लगे हुए थे। उनकी वजहसे आम-दरफ़्तमें बड़ी कठिनाई हो रही थी। नर्सोंकी जगह बीड़ी पीते हुए चपरासी थे, जो अपने डॉक्टर-अफ़सरको देखकर बीड़ी छुपा लेते थे, दूसरे अफ़सरोंके सामने पीते रहते थे।

वहाँ सरगरमी बहुत थी। मैं जनसम्पर्क-अधिकारीके कमरेमें घुस गया। वे पत्थरकी मूर्तिकी तरह चुपचाप बैठे हुए थे। मुझे देखते ही पास खड़े चपरासीने धीरेसे उनके पलक खोल दिये और वे मुझे देखने लगे। चपरासीने फिर धीरेसे उनका दाहिना गाल खींच दिया, जिससे उनके होंठ लम्बे हो गये और उनपर मुसकराहट नज़र आने लगी।

मैंने शालीनतासे पूछा, "यह कौन-सा विभाग है और क्या काम करता है?"

जनसम्पर्क-अधिकारीने चपरासीकी तरफ़ देखा, चपरासीने उनकी ठोढ़ीके नीचे लगे एक बटनको दाबा और आवाज़ निकलने लगी: "भारतमें जनतन्त्रको स्थापित करनेके लिए ऐसे नये आदमियोंकी ज़रूरत है, जो सिर्फ़ मन लगाकर अपना काम करें···अनु-

दिलके आस-पासका हिस्सा उसने काट लिया था। उन्हें उम्मीद थी कि एक धड़कता हुआ दिल वहाँ होगा···पर कुछ नज़र नहीं आ रहा था। झाँककर दोनों सर्जनोंने देखा, तो वहाँ जाला लगा हुआ नज़र आया। सर्जनने खुकरीकी नोकसे जालेकी एक पर्त हटायी। जाला फिर भी लगा हुआ था। खुकरीकी नोकसे उसने पूरा जाला साफ़ किया, तो उसके साथ एक ज़िन्दा मकड़ी भी निकली।

शासनको समझें। जो सपने न देखा करें। अपनी बुद्धिका ज़्यादा इस्तेमाल न करें। खाना, कपड़ा और रहनेकी जगह न माँगें। बढ़ती हुई क़ीमतोंसे परेशान और नाराज़ न हों। प्रदर्शनों और आन्दोलनोंमें भाग न लें क्योंकि इससे प्रगतिमें बाधा पड़ती है। यह विभाग कर्मचारियोंके सुधारके लिए खोला गया है ताकि वे मन लगाकर सिर्फ़ अपना काम करें।" इतना बोलकर जन-सम्पर्क-अधिकारी चुप रह गये। चपरासीने बटन बन्द कर दिया था।

मैंने फिर पूछा, "लेकिन सरकार और कुछ अच्छी ग़ैर-सरकारी संस्थाएँ भी जनताके लिए तमाम काम कर रही हैं। देशमें आर्थिक समानता और नये समाजकी स्थापनाके लिए क़दम उठा रही हैं, फिर आपका विभाग इस तरहके कर्मचारी क्यों पैदा करना चाहता है?

इस बार चपरासीने उनके कानके ऊपर लगे बटनको दबा दिया और वे बोलने लगे, "असलमें बात यह है कि सरकार या अच्छी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग़ैर-सरकारी संस्थाओंके हाथोंमें कुछ नहीं है। वे हाथीके दाँत हैं, जिन्हें देखकर जनता खुश होती है। असली दाँत मुँहके अन्दर हैं। उन्हींके किये सब होता है···ये जितने समाज सेवक और राजनीतिज्ञ हैं, सब बिके हुए हैं।···" वे कुछ और कहने जा रहे थे कि चपरासीने दिमाग़का बटन बन्द कर दिया। जनसम्पर्क अधिकारी एकाएक चुप हो गये। चपरासीने उनके होंठोंको दबा दिया। होठ चिपक गये और वे मेरी ओर टुकुर-टुकुर ताकते रह गये।

मैं उनके कमरेसे निकल आया। बरामदेसे होता हुआ भीतर पहुँचा। वहाँ बहुत-से अफ़सरनुमा डॉक्टर एक ऑपरेशनकी मेज़के चारों ओर खड़े थे। कुछ विदेशी विशेषज्ञ भी थे। एक कोनेमें फ़ाइलोंका अम्बार लगा हुआ था और एक क्लर्क कुछ लिखनेमें चुपचाप व्यस्त था। मेज़के पास ही खुकरी लिये हुए दो सर्जन खड़े थे। हाथोंमें दस्ताने थे।

तभी कोनेवाले क्लर्कने आवाज़ लगायी—"दीनदयाल, उम्र ४० साल, मर्ज़—ज़्यादा तनख्वाह माँगता है। सलाम नहीं करता!"

दीनदयाल अन्दर आया। वह घबराया हुआ था। चेहरेका रंग उड़ा हुआ था। जैसे ही वह भीतर घुसा, उन अफ़सरनुमा डॉक्टरोंने उसे पकड़ लिया। उसने सबको देखा—कुछ अफ़सरोंका उसने पहचाना। तभी खुकरी लेकर खड़े हुए दोनों सर्जन आगे बढ़े।

एक सर्जनने उसे टटोला और दूसरेसे कहा, "पहले इसकी परछाईं निकाल लीजिए।"

सर्जन नम्बर दो ने पासकी मेज़से [illegible] दवा उठाकर दीनदयालको सुँघायी और [illegible] मुँहमें हाथ डालकर एक आत्मानुमा चीज़ [illegible] ली। उस चीज़को मेज़की बग़लवाली [illegible] रख दिया गया।

पहले सर्जनने इशारा किया और [illegible] सर्जनने खुकरीके एक झटकेसे दीनदया[illegible] खोपड़ीकी हड्डी उतार दी। खोपड़ी [illegible] हड्डी उतरते ही एक छोटी-सी डायरी [illegible] कर तकियेपर गिर पड़ी। पास खड़े अफ़[illegible] नुमा डॉक्टरोंने दौड़कर दीनदयालकी खोप[illegible] में झाँका—वह खाली थी। एक डॉक्[illegible] डायरी उठाकर देखनी शुरू की। [illegible] बहुत-सी बातें नोट थीं—

जितना कर्ज़ा उसने लिया था, [illegible] ब्योरेसे उसपर लिखा हुआ था। डॉक्[illegible] हिसाब जोड़ा, तो कर्ज़ा पाँच हज़ार निक[illegible] उसी डायरीमें वे दिन भी टँके हुए थे, [illegible] जब उसकी तनख्वाहमें बढ़ोतरी हुई थी [illegible] डॉक्टरोंने हिसाब लगाया, बाईस बरस [illegible] नौकरीमें उसका कुल एक सौ दस रुपया [illegible] था। पचासी रुपयेसे उसने नौकरी शुरू [illegible] थी और अब एक सौ पंचानबे पा रहा था।

इसके अलावा डायरीमें वे रक़में भी [illegible] थीं, जो वह अपने बेटेको पढ़ानेके लिए [illegible] महीने भेजता रहा था और वक़्त-बक़्त पर [illegible] सहायता आदि कोषोंमें उसने दी थीं। [illegible] उन घरवालों और अस्पतालोंके नाम भी [illegible] थे, जिनमें उनकी मृत्युएँ हुई थीं, या [illegible] हुए थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभी डॉक्टर लोग वह डायरी पढ़ ही रहे थे कि सर्जनने फिर इशारा किया। उस दूसरे सर्जनने खुकरी डाल-डालकर उसकी दोनों आँखें काटीं। पुतलियाँ निकालीं, तो उनके साथ कैमरेकी रीलकी तरह लम्बी रीलें निकलती चली आयीं। दोनों सर्जन मिलकर रीलोंको खींचते रहे, पर वे रीलें खत्म ही नहीं होती थीं। अन्तमें हारकर उन्होंने खुकरीसे वे रीलें काट लीं।

उन रीलोंपर हज़ारों तसवीरें थीं—लेकिन बहुत अजीब। उनमें कुछ तसवीरें मकानोंकी थीं! अच्छे साफ़-सुथरे मकानोंकी। कुछ तसवीरोंमें सजी हुई दूकानोंके अक्स थे, जिनके शो-केसेज़में सुन्दर-सुन्दर साड़ियाँ लटक रही थीं। कुछ तसवीरें क़मीज़ों, पैण्टों और कोटोंकी थीं। जूतोंकी थीं। अच्छे होटलोंकी थीं। सेहतमन्द बच्चों और उनकी मुसकराहटोंकी थीं। खिलौनों और राशनकी थीं। बनारस और हरिद्वारकी थीं। मन्दिरों और तीर्थस्थानोंकी थीं। दवाइयों और फलोंकी थीं। बच्चोंकी रंग-बिरंगी पोशाकों और खिलौनोंकी थीं।

उन तसवीरोंको देखते-देखते सभी लोग ऊब उठे। उन्होंने वे रीलें लपेटकर रख दीं। फिर सर्जनने इशारा किया और दूसरे सर्जनने खुकरी मारकर उसके पेटको चीर लिया—उसके खुलते ही धुएँका एक गुबार-सा निकला और चारों तरफ़ बीड़ीकी गन्ध फैल गयी। धुआँ जब साफ़ हुआ, तो पेटसे एक राशन-कार्ड और किरानीकी कुछ पर्चियाँ निकल आयीं। बीड़ीके कुछ टुकड़े और चायकी पत्तियाँ भी निकलीं।

उन सब चीज़ोंको निकालकर प्लेटमें रख दिया गया। एक क्लर्क वहीं खड़ा-खड़ा उनकी सूची बनाता जा रहा था।

इसके बाद पहले सर्जनने इशारा किया और दूसरे सर्जनने उसका सीना चाक किया। दिलके आस-पासका हिस्सा उसने काट लिया था। उन्हें उम्मीद थी कि एक धड़कता हुआ दिल वहाँ होगा···पर कुछ नज़र नहीं आ रहा था। झाँककर दोनों सर्जनोंने देखा, तो वहाँ जाला लगा हुआ नज़र आया। सर्जनने खुकरीकी नोकसे जालेकी एक पर्त हटायी। जाला फिर भी लगा हुआ था। खुकरीकी नोकसे उसने पूरा जाला साफ़ किया, तो उसके साथ एक ज़िन्दा मकड़ी भी निकली।

दोनों सर्जनोंने मिलकर दीनदयालकी खोपड़ी, आँखें, पेट और दिलवाली जगह अच्छी तरह साफ़ कर दी। साफ़ करनेके बाद उनमें पाउडर छिड़का।

तभी एक प्लेटमें कुछ चीज़ें लिये हुए एक कम्पाउण्डर हाज़िर हुआ। दूसरा सर्जन एक ओर हट गया। पहलेवाले सर्जनने कम्पाउण्डरकी प्लेटसे फ़ाइलोंका एक छोटा-सा चना हुआ गट्ठर उठाया और उसकी खोपड़ीमें रखकर कटोरेदार हड्डी चढ़ा दी।

उसके बाद प्लेटसे उसने दीनदयालके सब अफ़सरोंकी तसवीरें उठायीं और उन्हें लपेट-लपेटकर आँखोंके गड्ढोंमें भर दिया। आँखोंके कोटर भर गये, तो उसने बहुत एहतियातसे पुतलियाँ जड़ दीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर प्लेटसे उसने अखबारोंकी वे कतरनें उठायीं, जिनमें मँहगाई भत्ता बढ़ने और क़ीमतोंके कम होनेकी खबरें छपी थीं—उन कतरनोंको उसने एक आलपीनसे नत्थी किया और पेटमें रखकर सिलाई कर दी।

इसके बाद उसने पत्थरका एक छोटा-सा टुकड़ा उठाया और दिलकी जगह रखकर सीनेपर भी टाँके लगा दिये। अन्तमें उसने वह परछाईंनुमा आत्मा उठायी और दीन-दयालका मुंह खोलकर उसे भीतर घुसेड़ दिया। उसे मेजसे उठानेके पहले उसने जल्दीसे दो टाँके उसकी ज़बानमें भी लगा दिये और पीठ थपथपाकर उसे बैठा दिया।

दीनदयाल चुस्तीसे खड़ा हो गया। उसने झुक-झुककर अपने सब अफ़सरोंको सलाम किया और बाहर निकल गया।

उसके जाते ही क्लर्कने आवाज़ लगाई—"सदानन्द···उम्र पच्चीस साल···मर्ज़···"

महिलोपयोगी एकमात्र उत्कृष्ट मासिक

'शृङ्गार'

प्रबन्ध सम्पादक : देवेन्द्र अग्रवाल ● सम्पादिका : लावण्यप्रभा

- विचारपूर्ण व उपयोगी लेख
- स्त्रियोपयोगी रुचिकर सामग्री
- रोचक मनोवैज्ञानिक कहानियाँ
- कविताएँ तथा सुन्दर गीत
- महिलाओंके इण्टरव्यू
- गृह-सज्जा, प्रसाधन समस्याएँ, विचार, मंच आदि अनेक रोचक स्थायी स्तम्भ।

मूल्य : वार्षिक : ५ रुपये, मासिक : ५० पैसे

१३।३७, शक्तिनगर, दिल्ली–७

फ़ोन नं० : २२७३००

३१ मार्च, १९६५ तक ग्राहक बननेपर १२ के बदले १५ अंक भेंट किये जायेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी एक की उलझन :
'चारुचन्द्रलेख'

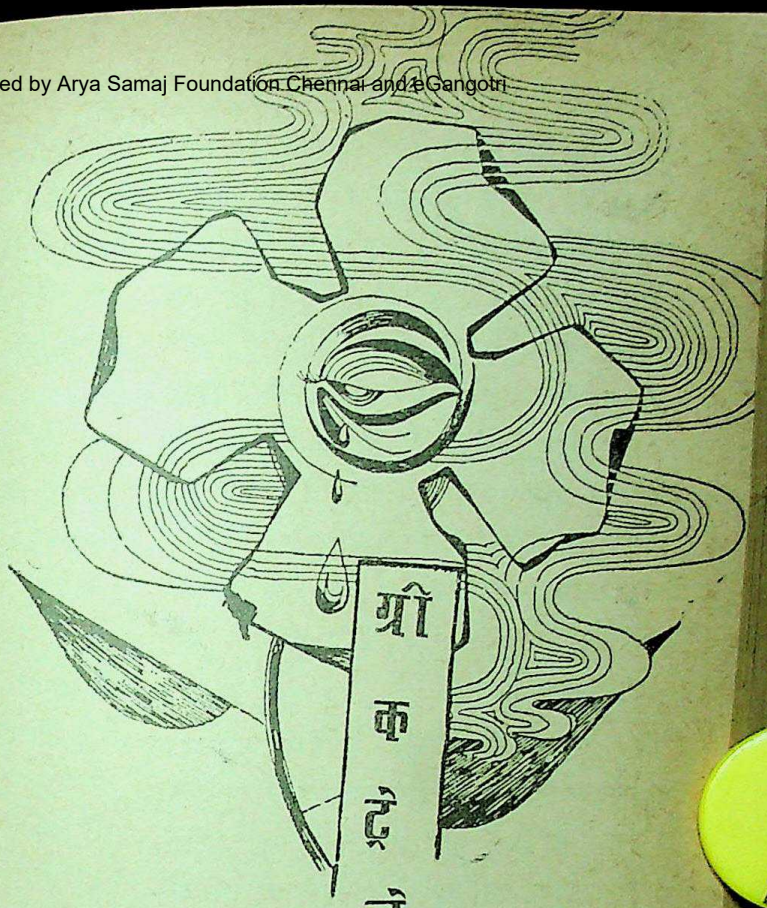

ग्रीक ट्रैजडी

असाध्य साधनके बीच

■

परेश

प्रेक्षागृहमें उदास, अकेला बैठा हूँ सीमेण्टकी ठण्डी सीढ़ीपर···नाटक खत्म हो गया है और स्टेजपर पटाक्षेपवाला भारी परदा झूल आया है। उसे थोड़ा-सा सरकाकर देखना चाहता हूँ – सम्भवतः अन्तिम दृश्य वहाँ अब भी टिका हो····कैसा भ्रम है! इस परदेके पीछे अब कोई नहीं है।

आसमानी रंगके इस परदेपर अब 'काले बादलोंके परतपर परत इकट्ठे हो रहे हैं। शिवकी जटाके समान फैली हुई शिवालक-गिरिश्रृंखला अब और भी काली हो गयी है। घनघोर वर्षा होनेवाली है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हवा भी तेज़ हो गयी है। पटाक्षेपवाला भारी परदा विशेष नहीं काँपता – मगर विगके हलके परदे फड़फड़ाकर बाहर निकल रहे हैं जिनपर ये उद्‌बोधक वाक्य लिखे हुए हैं·····"सूर्य, चन्द्र और अग्निके पुत्रो ! क्या बेख़बर सो रहे हो ? धरती कसमसा उठी है, नगाधिराजकी पथरीली धरतीमें दरार पड़ती दिखाई दे रही है, गंगा-जमुनाकी शीतल धारा सूखती नज़र आ रही है। किस दिन तुम्हारा तेज काम आयेगा ? किस दिनके लिए इस पवित्र धरतीने अन्न उड़ेल-उड़ेलकर तुम्हारा पालन किया था ? उठो, जागो, एक हो जाओ ··"

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदीके उपन्यास चारुचन्द्रलेखके भीतरी कवरपर ये पंक्तियाँ लिखी हुई हैं। कवि जल्हणकी यह कविता शिवालककी दर्रा-गुहाओंमें एकत्र हुए सैनिकों-की नसोंमें रक्तका संचार कर रही है। देशके दूसरे भागमें सिद्ध गोरक्षनाथकी वाणी गूँज रही है·····"हमारी आँखके सामने लाख-लाख निरीह प्राणियोंका वध हो रहा है, दुर्दान्त म्लेच्छ-सेना नगरों और शस्य क्षेत्रों-को भस्म कर रही है। जब अधमरे युवकों, परित्यक्त शिशुओं, और लांछित बन्धुओंके क्रन्दन और आहसे वायुमण्डल व्याप्त है – उस समय क्या सहज समाधि सम्भव है ? योगियो ! आज सब कुछ भूलकर संगठित होनेकी आवश्यकता है। ध्यान-धारणाका प्रयोग रुक सकता है। मारण-मोहनकी विधियाँ स्थगित रखी जा सकती हैं। मोक्ष-की चिन्तामें भटकनेका व्यवसाय तबतक बन्द किया जा सकता है। वेतनभोगी सैनिक[illegible] के वीर्यकी परीक्षा हो चुकी है। [illegible] सोमेश्वर तीर्थका भविष्य संकटमें [illegible] पार्श्वनाथकी रत्नमूर्तिपर लुब्ध-भेड़िये[illegible] दृष्टि पड़ चुकी है, ओदन्तपुरी और नालन्द[illegible] विहारकी बहुमूल्य बौद्ध-मूर्तियोंका भविष्य अन्धकाराच्छन्न है। आज क्या सम्प्रदाय बादको बहुमान देकर परस्पर विच्छिन्न होनेकी आवश्यकता है ? क्या शैव, क्या वैष्णव, क्या जैन, क्या बौद्ध सभीपर विनाश की घोर घटा छायी हुई है। यदि हम अन्तर्बाह्य विभेदोंपर अब भी अड़े रहेंगे तो विनाश निश्चित है। एक प्रकारकी विनाश की साधना इन दिनों समूचे भारतको [illegible] किये जा रही है। सिद्धियोंके नामपर अत्यन्त निचली श्रेणीकी कामुकताको उत्तेजना दी जा रही है। यह जो हर सम्प्रदायमें चतुश्चन्द्र, पंचपवित्र और पंचमकारकी शाखा घर किये जा रही है, वह हमारे समूचे समाजको निर्वीय और आलसी बना देगी। नर-देह दुर्लभ वस्तु है, परम तत्त्व इससे बाहर नहीं है। जो लोग इस महावाक्यमें विश्वास रखते हैं – उन्हें मैं गुरुके दिये हुए त्रिशूलके नामपर पुकारता हूँ···

···मैं ब्राह्मणों और श्रमणोंके नामपर देव-मन्दिरों और विहारोंके नामपर, स्त्रियों और बालकोंके नामपर, विद्वानों और [illegible] स्वियोंके नामपर भूमिके निवासियों आवेदित करता हूँ – भाइयो, प्रत्यन्त [illegible] फिर आ रहे हैं···

अपरंच मैं अशीतिपर वृद्ध हूँ ···"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोरक्षनाथकी झनझनाती हुई वक्तृता समाप्त भी नहीं हुई थी कि दूसरी विगसे 'बाणभट्टकी आत्मकथा'के इस अस्सी वर्षीय कान्यकुब्ज ब्राह्मणका स्वर गूँजने लगा····

"आज आततायीके खंगाघातसे सिद्धियों-का सारा खिलवाड़ टूटकर गिर गया है। जानते हो अमोघ! आज मेरी नस-नसमें एक अद्भुत विद्रोहकी आँधी बह रही है। आज भी हमारे विहारके ढोंगी साधक मन्त्र-बलसे तुर्कोंकी सेना उड़ा देनेकी गप्पोंपर विश्वास रखते हैं और फिर जलेपर नमक यह कि इसिपत्तन (सारनाथ) के भयंकर पतनकी बात सुनकर कोई पीपलकी डालपर डाकिनी बैठाकर हाँकनेके लिए हिमालयकी ओर चल पड़ा है तो कोई तूँबेके अभिमन्त्रित जलसे प्रलयपूरका दृश्य उपस्थित करनेके लिए झारखण्डके भैरवकी ओर निकल पड़ा है। आकर देखो अमोघ! सारा विहार खाली हो गया है! सिद्धोंकी सेनाका ऐसा मिथ्याभाषी ढोंगी रूप फिर कभी देखनेको नहीं मिलेगा···"

इस नवागत तपस्वीका नाम भिसिल-पाद है।

शान्तिनिकेतनमें इस रचनाकी सामग्री इकट्ठी हुई थी। ठाकुरकी एक कविताको विद्याधर भट्ट नेपथ्यमें कहीं पढ़ रहे हैं··· "मेरे गुरुने बताया था कि विद्याधर! यदि कोई तेरा साथ न दे तो भी तू उस लक्ष्य तक बढ़नेमें हिचकिचा मत – जिसे तूने ठीक समझ लिया है। निकल पड़ अकेला, निहत्था, निरस्त्र। रास्ता न सूझता हो तो अपनी पसलियोंकी ही मशाल जला ले। मगर रुकना नहीं, झुकना नहीं। बहुत दिनों तक मैंने गुरुकी इस महावाणीकी उपेक्षा की है। मृत्युके द्वारपर आकर मैं इसकी उपेक्षा नहीं कर सकता। मैं धधक रहा हूँ महाराज, मैं जल रहा हूँ।"

"आचार्यजी! मैं आपके पात्रों और प्रसंगोंकी रचना-प्रक्रिया जानना चाहता हूँ। या तो ये पात्र आपको वास्तविक जगत्में मिले हैं या इनके पीछेका जो संचित अध्ययन है – वही पात्रोंके रूपमें ढला है, मेरा सवाल यह है कि यह कृति अस्तित्वमें क्यों आयी?"

आचार्यजी अपने किसी विषयमें उलझे हुए थे – भड़क उठे, "मैं इस प्रकार किसी प्रश्नके घेरेमें उलझने-को तैयार नहीं हूँ।"

(निपुणिका भी उत्तेजनामें ऐसे ही बोला करती थी।)

"उनकी इस बातसे मेरी (सातवाहन) शिराओंका रक्त झनझना उठा था। मैं वृद्धके महासंकल्पसे प्रभावित हुआ। ऐसा कि सहस्रों विद्युल्लेखाएँ रक्तमें एकाएक घुस गयी हैं। मैंने उन्हें वचन दिया कि मैं उत्तरकी ओरसे आक्रमणकी व्यवस्था करनेके लिए अशोक चल्लके साथ व्यूह-रचनाकी तैयारी करने जा रहा हूँ···

तबसे मैं दौड़ता आ रहा हूँ, थका नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हूँ, क्लान्त नहीं हूँ। असाध्य साधनका संकल्प लेकर चला हूँ। कोई महत्तर आदर्श चाहिए – कोई विराट् परिकल्पना। केवल प्रतिक्रिया कितनी दूर साथ देगी ? हे मेरे महान् देशकी मिट्टी ! शक्ति दो, शक्ति दो कि मैं इस देशकी आत्मघाती मूढताको कस-कर आघात दे सकूँ, शक्ति दो कि मैं उस महान् 'एक'के मन्त्रका साधन जुटा सकूँ। 'कहाँ है वह मन्त्र, कहाँ है वह शक्ति ?' अमोघवज्रकी वाणी कानोंके परदेपर बार-बार टकरा रही है····'अहिंसा और मैत्रीके सिद्धान्त ताकपर रख दिये जायेंगे, अद्वैत और सर्वात्म-बोधके मनमोहक सिद्धान्त ताकपर रख दिये जायेंगे। समाजकी जड़में घुन लग गया है। अजयमेरुका अभेद्य दुर्ग ढह गया, कान्यकुब्जकी दलपंगुर सेना कपूर-की भाँति हवामें मिल गयी, कालिंजरकी मदगर्वित वाहिनी बिखर गयी। गौड़ कूल-द्रुमकी भाँति एक ही धक्केमें भहरा गया। मिथ्या तपस्याका खोखलापन मैं जानता हूँ महाराज ! उससे सावधान रहो। विद्याधर भट्ट इन ढोंगी साधुओंकी सेना सजाकर देशका उद्धार करना चाहते हैं ! नहीं महाराज, वे डुबो देंगे, उनसे बचो !"

विद्याधर भट्ट विन्ध्यमेखलासे आक्रमण करनेको कृतसंकल्प हैं। अमोघवज्रकी बातें सुनकर क्रुद्ध व्याघ्रकी तरह तन गये – "ये बौद्ध सदासे इस देशका कोढ़ बने जी रहे हैं। ये सदा विदेशियोंको अपना त्राता मानते रहे हैं। हार-जीतकी बात कायर सोचते हैं महाराज ! हमें इस देशकी रक्षा करनी है – इसके समस्त गुण-दोषोंके साथ····इस मोह झिझक छोड़ो। इन निठल्ले तत्त्ववादियों क्लीव विचारोंके शिकार न बनो। कमर लोहा लेना है। लोहा लेना ही धर्म है क्या होगा इसकी चिन्ता करनेके लिए कायरों और क्लीवोंकी संख्या प्रचुर है हम इस प्रकार सोचनेके अभ्यस्त नहीं हैं कसकर आघात करो ! प्रत्येक चोट शत्रुको क्षीण बनाती है। प्रत्येक चोटका मूल्य है कायर हिसाब किया करते हैं, वीर प्राणोंकी आहुति देते हैं। तुम अगर अनुमति देते हो तो बहुत अच्छा – नहीं देते हो तो विद्रोह करूँगा·····"

"उन्हें वचन देकर दौड़ता आया हूँ विन्ध्यमेखलाके घने जंगलोंके भीतरसे नदियों और जलमग्न कान्तारोंको पार करता हुआ। नालन्दा, राजगृह और विक्रमशिलाको पार करके संकीर्ण गिरिवर्त्मके पास उपत्यका गंगा पार की है – मिथिलाके जलाप्लुत मैदानोंको पार करके हिमालयके पाददेश तक पहुँचा हूँ, वहाँसे विकट पार्वत्य प्रान्तोंको लाँघता हुआ व्यास सरोवरपर आ रहा हुआ हूँ।

आकाश घुमड़ा हुआ है। पर्वतभूमिकी इस घनघुम्मर छटाका क्या कहना ! बरसने लगता है तो ऐसा जान पड़ता है, जैसे आकाशरूपी महासरोवरका परदा ही फट गया है। गरजने लगता है तो ऐसा लगता पड़ता है – दिशाएँ ही टूटकर चकनाचूर हो गयी हैं। नीचेसे ऊपर तक काले बादलोंके परतपर परत जमते जा रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जमकर बरसेगा, मेरा मन उदास हो गया है, रह-रहकर दो मूर्तियाँ मेरे मानस-पटलपर अनामन्त्रित आ जाती थीं – रानी और मैना…"

■

पकड़ा!…यही वह दिशा है, कवचका कमज़ोर हिस्सा, जिसे तोड़कर मैं लेखकके हृदयमें झाँकना चाहता हूँ (मगर यह महा-कुशल मायिक यों ही पकड़ थोड़ी देगा।)

"आचार्यजी! मैं आपके पात्रों और प्रसंगोंकी रचना प्रक्रिया जानना चाहता हूँ। या तो ये पात्र आपको वास्तविक जगत्में मिले हैं या इनके पीछेका जो संचित अध्ययन है – वही पात्रोंके रूपमें ढला है, मेरा सवाल यह है कि यह कृति अस्तित्वमें क्यों आयी?"

आचार्यजी अपने किसी विषयमें उलझे हुए थे – भड़क उठे, "मैं इस प्रकार किसी प्रश्नके घेरेमें उलझनेको तैयार नहीं हूँ।"

'क्लिओपेट्रा'के रिलीज होनेके बाद 'लाइफ़'के प्रतिनिधि पत्रकार 'मिस टेलर'के पीछे कारों, होटलों और शराबखानोंमें भागते रहे और क़रीब छह घण्टे कुल मिलाकर टेप'का टाइमिंग रहा – अन्तमें लिज़ा भड़क उठी। न्यूयार्कके किसी सबर्ब-थियेटरमें शो छूटनेका वक़्त होता है – लोगोंकी भीड़ इन्तज़ार करती है कि अपने पति बर्टनको लेनेके लिए लिज़ाकी कार आ रही होगी। "यह सब ख्यातिकी विडम्बना है।"

वार्ताके अन्तमें, मेरे यह पूछनेपर कि आपकी सिसृक्षाकी छटपटाहट वर्तमानमें किस रूपमें अभिव्यक्त हो रही है वे बोले थे, "यह सब ख्यातिकी विडम्बना है…देखते नहीं हो, दिनमें एक हज़ार बार अपने नामके दस्तख़त करने पड़ते हैं!" आचार्यजी युनिवर्सिटीके 'डीन-ऑव-इन्स्ट्रक्शन्स' हैं, मगर उनके अध्ययन-कक्षमें उनको देखकर विश्वास ही नहीं होता कि यह व्यक्ति लेखकके अतिरिक्त कुछ और भी है। "तुम्हें याद है, निपुणिकाने एक जगह कहा था – सब अभिनय है, जो वास्तव है उसको दबाना और जो अवास्तव है, उसका आचरण करना, यही तो अभिनय है।"

यह प्रसंग तो वार्तालापके बीच आया था, दिनमें तो बातचीतके लिए तैयार ही नहीं हुए। बोले, "जो कुछ कहना था 'उसमें' कह दिया गया है, अब और क्या कहना है। अलगसे कुछ कहूँगा तो वह कमिटमेण्ट नहीं होगा?"

'मगर आप अपनी कृतिके प्रति कमिटमेण्टसे बचते क्यों हैं – क्या अपनी कृतिसे आपका मोह नहीं है?"

"नहीं है।"

"फिर भी ऐसे प्रसंगोंका स्मरण करें जहाँ आपका मन अब भी रमता है, या जो निभ नहीं पाये…कुछ पात्रोंकी कमज़ोरियाँ, कुछ प्रसंगोंकी ख़ूबियाँ…उद्देश्यकी पूर्ति, अथवा नहीं……"

'क्लिक्'…फ़ोटोग्राफ़रने उखाड़ दिया।

■

रात्रिको उनके अध्ययन-कक्षमें बैठा तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले ही प्रश्नपर भड़क गये। अस्सी हज़ार शब्द जब टेप कर लिये गये तो लिज़ा भड़क गयी, "मगर आप यह सब पूछ क्यों रहे हैं और मैं भी ऐसे बोल रही हूँ जैसे कोई 'एक्स-प्लेनेशन' दे रही हूँ या 'जस्टीफिकेशन'—मैंने पाँचवाँ विवाह किया है तो....."

पत्रकार कम चालाक थोड़े ही होते हैं, मैंने अपनी फ़ाइल उठाकर एक ओर रख दी तो उन्हें सन्तोष हो गया। सुखासन छोड़कर पलथी मार ली और बोले, "तो सुनो, मगर नोट कैसे करोगे ?"

मैंने उनको टेप करनेके लिए दो-दो रिकार्डर तैयार किये थे—मगर वे अधिक सतर्क न रहें और मुझे वार्तालापका सुख मिल सके इसलिए ऐन वक़्तपर टेप करनेका इरादा एकदम बदल दिया। मैं उनसे 'डिक्टेशन' नहीं, 'इम्प्रेशन' लेना चाहता था।

पिछले सितम्बरमें बुडापेस्टमें लुकाचसे स्टीफ़ेन स्पेण्डर मिलकर लौटने लगे तो उन्होंने क्षमा माँगी कि वे बातचीतके नोट्स नहीं ले सके।

"यह बहुत अच्छा रहा, टेप-रिकार्डर इण्टरव्यूकी हत्या कर देता है। बातचीतका मज़ा फिर उससे नहीं रहता।" लुकाचने कहा था।

मैंने भी आचार्यजीसे, विनीत भावसे कहा था कि "मैं आपको सतर्क नहीं करना चाहता था। 'ज्ञानोदय' के सम्पादकोंकी भी यही प्रार्थना थी कि मैं बातों-ही-बातोंमें 'चारु-चन्द्रलेख'पर आपसे कुछ जान लूँ।"

"मगर मैं बँधे-बँधाये ढंगसे उत्तर देनेको तैयार नहीं हूँ। हिन्दीका आलोचक यह मान कर चलता है कि यह उपन्यास है फिर उसी बँधी-बँधायी धारणाओंके अनुसार वह इसमें नायक, घटना, कथानक, काल, भाषा, देश पता नहीं क्या-क्या खोजता है। ('हेल विद क्रिटिक्स'—मैंने मन-ही-मन कहा) मैं तो कहता हूँ, यह 'गप्प' है। 'गप्प' का कोई नायक होता है ? 'रेणु'की रचनाओंमें जैसे एक पूरा 'अंचल' ही नायक होता है, उसी प्रकार मेरी इस 'गप्प' का नायक 'सातवाहन' नहीं समय या काल है..."

गप्प.....मुझे पीड़ा होती है...नश्तरसे कुछ तीखी कर उनके चेहरेकी परतोंको चीर कर भीतर धँस जानेकी चेष्टा करता हूँ...अवश्य आलोचकोंने पीड़ा पहुँचायी है, मगर तुरन्त ही वे सँभल जाते हैं तो भी पीड़ाकी एकदम भूमिकापर आ जानेसे कुछ तरल हो जाते हैं—स्नेहिल। सुखासन मुद्रा छोड़ देते हैं—"तो सुनो, मगर कैसे नोट करोगे...?"

'मुझे सब याद रहेगा। आप विलम्बका बन्धन नहीं मानें...एकदम निर्बन्ध। जहाँ कोई प्रसंग याद आये, आप मुझे सुनाइए जैसे वर्षके शुरूमें मेघदूतकी अपनी व्याख्या सुनाया करते थे या 'ललिता स्तवराज'में लालित्यकी मीमांसा..."

■

कालिदासका कितना डिवोटेड—भक्त यह व्यक्ति ! उसका गुणगान करते थकता नहीं। लालित्यका जैसे एक अमृत निर्झर इसके आत्माके गह्वरोंमें निरन्तर स्रवित और ध्वनित है। मैं धेर-धारकर इन्हें मैना और रानीके पास लाना चाहता हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'''''आज व्यास मुनिके आश्रममें जबकि काले बादलोंने धरती और आकाशको एक कर दिया है, रानीकी याद आ रही है। पर रानी कहाँ है? इतने विकट मार्गोंसे भागता आ रहा हूँ, रानी कहीं नहीं दीखी। हाय देवि, तुमने जो महान् संकल्प किया था वह क्या समाप्त हो गया? कहाँ पड़ा रह गया वह कोटि-कोटि जीवोंको जरा-मरण और रोग-शोकसे मुक्त करनेका महान् संकल्प!

अचानक आसमान काला हो गया है। मैंने रानीकी मूर्ति आकाशमें देखी। काले मेघोंमें ध्यानसे देखा (इस वक्त मेरा पूरा कमरा, और मेज थर्रा गयी है'''चण्डीगढ़के चारों ओर युद्धकी तैयारियाँ चल रही हैं धमाकेकी एक आवाज़ लेखनके प्रति मेरी गम्भीरताको व्यर्थ कर जाती है'''ख़ैर!) हाय, वसन्तके पुष्पोंकी लक्ष्मी आज नील अवगुण्ठनमें ढक गयी है (युद्धकी छायाके नीचे निर्वासित यक्षका यह विरह-प्रलाप – वाह, क्या अनुभव है!) रानी ही तो है, रानी, रानी! रानी स्पष्ट उड़ती हुई दिखाई पड़ी। उसका आकाश विलुण्ठित श्यामल अंचल पश्चिम तक फैला है। अस्त-व्यस्त चिकुर-जाल मेघोंमें विचित्र भावसे उलझ गया है। रानीकी कान्ति क्या छिपाये छिप सकती है! नील अवगुण्ठनके घन मेदुर आवरणको भेद करके विद्युत्-शिखा-की भाँति वह चमक रही है। देख रहा हूँ, पा नहीं रहा हूँ। रानी उड़ी जा रही है उद्दाम वेगसे। मैं चकित हूँ, मुग्ध हूँ। सुन रहा हूँ, 'महाराज! आँधीकी तरह बहो, वज्रकी भाँति टूटो, दावानलकी भाँति जलो'''

जल रही हूँ देवि! जल रहा हूँ! बड़वानलकी भाँति जल रहा हूँ। अन्तरिक्ष और धरतीके अवकाशको छोपकर घनघोर वर्षाके बीच महासमुद्र ही खड़ा हो गया है, उसके भीतर जल रहा हूँ! कहाँ जा रही हो देवि! थोड़ा रुको, थोड़ी देर बात करो, असहाय हो गया हूँ।'

'आओ देवि, द्वैपायन मुनिके इस आश्रममें आओ!' रानी उड़ी जा रही है– नील मेदुर अंचल और भी फैल गया है। घन-मेचक चिकुर-जाल और भी विस्रस्त हो गया है। रानी ही तो है—क्या कहा था देवि, 'पिंजड़ा भी तुम्हारा, चिड़िया भी तुम्हारी! आज यह क्या देख रहा हूँ, पिंजड़ा भी गया, चिड़िया भी गयी!'

लहाछेह वर्षा हो रही है। व्यास सरोवर छककर रस पी रहा है। रानी सर्वत्र दीख रही है – खण्ड-खण्ड होकर'''

पीछेसे किसीके हाथोंका स्पर्श हुआ – 'भीग क्यों रहे हो महाराज! चलो कुटियामें।'

पीछे घूमकर देखता हूँ – सीदी मौला है। आपादमस्तक कम्बलसे लिपटे हुए सीदी मौला।''

■

बताइए कहाँ एकदम मेघदूत चल रहा था और बलात् मनको रोककर सीदी मौला-को ला पटका—दुनिया-भरके पात्रोंको कठपुतली-सा नचानेवाला यह मायिक—मैं जानता हूँ, यों ही पकड़ नहीं देगा।

"आचार्यजी! यह कौन-सी शताब्दीकी कौन-सी कथा है? इन तन्त्र-मन्त्रके चक्करमें कोई स्पष्ट इतिहास नहीं उभरता! आप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संक्षेपमें बता सकेंगे, ये युद्धस्थल कौन-कौन-से हैं—गुहा, अटवी, कान्तार—ये कौन-से देशोंमें हैं ?" उनके नाथसिद्धोंके रसमें मैंने रस लेते हुए पूछा।

"सीदी मौलाका सन्दर्भ तो इतिहास-ग्रन्थोंमें मिलता है। दिल्लीके राजाने इसे हाथीके पैरोंसे कुचलवाया था।"

लेखकने इसे तिब्बत, मंगोल तक घुमाया है और नाथसिद्धोंके, जितने जादू जाननेके मिथ इस देशमें प्रचलित हैं, वे सब इसमें चरितार्थ किये हैं। मगर मैनाने इसके सारे जादू तोड़ दिये थे।

मैनाने कड़ककर सीदी मौलाकी ज्ञान गम्भीर वार्ताको बकवास कहा था। कहा था, "इन निठल्लोंकी बातमें समय नष्ट करना व्यर्थ है।" जो नहीं कही थी वह बात उसकी कुटिल भृकुटियोंसे चू पड़ी थी—ठीक सीदी मौलाके मस्तकपर—"तुम दायित्वहीन भगोड़े ठूँठ लोग समाजका नाश कर रहे हो...."

बिजलीकी तरह खपसे आकर प्रकट होनेवाला मैनसिंह—आगुल्फ लम्बित कंचुक, कसा हुआ कटित्राण, गुलाबी पाग, कन्धेपर टिका हुआ विशाल कुन्त, वक्षस्थलपर चिपका हुआ कठोर कवच, कमरमें झूलती हुई कोशबद्ध तलवार, पीठपर झूलता हुआ ढाल। उसकी आँखोंसे स्फुलिंग झड़ रहे थे—"उठो आर्य ! इन बकवादी निठल्लोंके चक्करमें मत पड़ो, ये बिगाड़ना जानते हैं, सँवारना नहीं। जगत्-प्रवाहसे विच्छिन्न होकर व्यक्तिगत साधनाके कंचुकसे निरन्तर संकुचित होते रहनेवाले इन सिद्धोंने सत्यको खण्डित किया है। ये क्या जानते हैं कि देश-रक्षाका अर्थ है व्यक्तिका बलिदान। हम मरणव्रतमें दीक्षित हैं, हम निठल्ले साधकों की आत्मवंचनावाली दुनियाके जीव नहीं हैं। हम प्रतिक्षण तिल-तिलकर आहुति देनेवाले गृहस्थ हैं। ये सिद्ध इस वीर-साधनाको क्या समझते...."

मैना जिस तरह आयी थी उसी तरह झमाकसे चली गयी। देर तक उसके रास्ते पर प्रकाशकी एक वक्र रेखा खिंची रही।

उपन्यासका यह इतना तेजस्वी पात्र नाटकके अन्तमें रक्तसे भीगा हुआ एक क्षण तेजस्विनी महिलाकी गोदमें पड़ा है। मैंने अपने भालेसे अपनेको ही भोंक दिया था। यह महिला कौन है जिसकी गोदमें मैं पड़ी है। दुर्भाग्यका परिहास बड़ा ही विकट था। यह रानी चन्द्रलेखा थी !

■

चन्द्रलेखा...हवाकी हूह नेपथ्यमें चली गयी है—बिंगके परदे भी कुछ देरको खिंच गये हैं। ग़ौरसे पटाक्षेपवाले भारी परदेको देखता हूँ—उसपर बत्तीस लक्षणोंसे युक्त एक नारीका चित्र खिंचा है। पुस्तकके कवर पर भी यह छपा है। यह चित्रित नारी चन्द्रलेखा है जो मेरे लेखे नारी नहीं, चन्द्रलेखा है और महाराज सातवाहनकी है। दर्शक तक सामान्यीकृत होकर नहीं पहुँचती, असामान्य है। शुरू-शुरूमें अवश्य शकुन्तलाकी तरह सरल होकर मन छूनेका प्रयत्न करती है और दुष्यन्तका शिकार-वर्णन वहाँ हुआ है भी—मगर अचानक खलनायककी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकर एक तरुण तापस उसे सामान्य नहीं बने रहने देता—"कौन कहता है देवि, तुम सामान्य कृषीवल-किशोरिका हो? यह उन्नत ललाट, यह कुंचित केशराशि, यह दक्षिणावर्त रोमराजि और यह तिलपुष्पके समान नासिका और घनी भृकुटियोंके नीचे सघन अराल लेखा—ये तुम्हें सामान्य नहीं रहने देंगी। तुममें रानीके सब लक्षण हैं, यह गंगा-प्रवाहके समान सीमन्त-रेखा और किसीको भले ही धोखा दे ले, मुझे नहीं दे सकती। तुम रानीसे भी बड़ी होनेके लिए पैदा हुई हो। सिद्ध योगिनीके सभी लक्षण तुममें प्रकट हैं।"

बस यहींसे यह रूपवती रानी अरूप होना शुरू हो जाती है। एक समय था जब इसके प्रत्येक कटाक्षसे दिशाएं विद्ध होती थीं और इसके घूमनेसे सारा दिक्चक्रवाल घूम जाता था मगर कोटिवंधी रसकी साधनामें फिर कभी यह पात्र मंचपर नहीं आया। चर्म-क्षतीके कछारोंमें भटके हुए राजाको अपनी 'रिसर्चके नोट्स' अवश्य भिजवाये थे। एक बार मैनासिंहके हाथों – स्वयं भी उस वक्त वहींसे केवल दस कोसकी दूरीपर प्रवसित थी।

इस बीच उस युगके सारे जादू भरे मिथ इन्हें पंख लगाकर उड़ाते रहते हैं – मगर इस पागलपनके पंख जब कट जाते हैं तो वह गिरकर नाटी माताकी गोदमें विश्राम और उपचार कर रही होती है। कुछ क्षणोंको अवश्य यह छत्तीस लक्षणोंसे युक्त नारी – सामान्य नारी बनती है और यह द्विधा विभक्त व्यक्तित्व एक होकर फफककर रो पड़ती है अपनी मृणाल-कोमल भुजाओंसे राजाके गलेको कसकर पकड़ लेता है।

इस कोमल प्रसंगको भी लेखकने एक भक्तिभावसे ढँक रखा है। इस आश्रममें पूरी देर जैसे यह पंक्ति और इसका संगीत पार्श्व भूमिका बनाये रखते हैं :

'जयत्वङ्के गृह्णन् पटुनटकलः कोऽपि चपलः···' यह सांगीतिक पृष्ठभूमि 'बाणभट्ट'में भी पूरी देर बनी रही थी – 'जलौघमग्ना सचराचरा धरा···स मे स्वयंभूर्भगवान् प्रसीदतु।'

■

अन्तिम बार यह स्तुति सुनकर भट्टिनी महावराहके पादप्रान्तमें ढुलक गयी थी। निपुणिका पहले ही राख हो गयी थी। यही अवसान 'चन्द्रलेख'का है। ऊपर-ऊपर अवश्य एक असाध्य साधन चलता है – देशको सुगठित करनेका नाथसिद्धोंके चक्करसे सामान्य जनको छुड़ानेका – उसके बीच ही यह रानी और मैनाकी ट्रेजेडी घटती है जो रानीकी कम और मैनाकी अधिक है।

"आचार्यजी! आपने ताराशंकर बन्द्योपाध्यायकी 'राधा' पढ़ी है?" मैं मैनाके प्रसंगपर आनेको उत्तेजित हो रहा था। दिमाग़में गोंसाई मठपर हुए घुंडकोंके आक्रमणकी भी छाया थी – उत्तेजना कहीं असंस्कृत ढंगसे न फूट पड़े इसलिए मैंने पहले यह एक और प्रश्न किया। उन्होंने 'राधा' पढ़ी होती तो वे मेरा संकेत पहचान जाते।

"नहीं।" उनका उत्तर था।

अब मेरे पास सीध मैदानमें आनेके अतिरिक्त कोई चारा नहीं था। रोकते-रोकते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी आवेश प्रकट हो ही गया – "आचार्यजी, मैं कैसे मान लूँ कि यह कृति 'गप्प' है···· इतना भीतर तक उतरकर छूनेवाले पात्र केवल नाथसिद्धोंके अध्ययनके नोट्स हैं··· राष्ट्रको जगानेवाले ऐसे-ऐसे उद्बोधक प्रसंग, ऐसी ओजस्विनी वक्तृता – नोट्स या गप्प नहीं हैं। आप मैनाके बारेमें कुछ भी कमिट नहीं कर रहे हैं। आपके लिए रानी और मैना केवल इच्छा और क्रिया-शक्ति है जिनके बीचमें सातवाहनको रखकर इस त्रिकोणके आधारपर समस्त सम्प्रदायोंकी आराधनाओं और शाक्त तन्त्रको समझानेका प्रयत्न किया है। इस कृतिको पढ़नेवाला कैसे आपकी बातपर विश्वास कर लेगा कि आपके मनमें केवल इस खोखले मिथ्याचारको लेकर उत्तेजना थी और आपने केवल उसी उद्देश्य-को दृष्टिमें रखा है। ठीक है चन्द्रलेखाको आपने उसके मिशनमें बुरी तरह असफल कर दिया है, मगर मैना·····"

गत वर्ष आचार्यजीके बाल-ब्लेडरका ऑपरेशन हुआ था। दो-एक दिनकी 'सीरियस-कण्डीशन'के आगे-पीछे मुझे उनसे कुछ-कुछ बातचीत करनेका अवकाश मिलता रहा। बेहोशीमें भी उनका कोई-न-कोई पैर हिलता ही रहता। अकसर रात्रिको नौ-साढ़े नौ बजेके एकान्तमें उनके पास पहुँचता और सुनता – "मैं अपने-आपको 'बाणभट्ट'से अधिक सफल मानता हूँ इस उपन्यासमें। तुम्हें कैसा लग रहा है? आज कौन-सा अध्याय पढ़ रहे हो?"

उपन्यास उस समय प्रकाशित हुआ ही था।

"आचार्यजी! मैं तो मैनसिंहके अद्भुत करतब देख रहा हूँ। आँखें इसी 'नेटुरे लौण्डे'के पीछे भागती रहती हैं।

तब तक मुझे यह नहीं पता था कि मैनसिंह – मैनामें बदल जायेगा। एक शक हुआ था – 'मैनसिंहकी कान तक फैली हुई कोमल मसृण भ्रूलताओंके नीचे किंचित् अरुणायित नयन-कोरकोंमें एक अद्भुत लावण्य-धारा लहरा रही थी। उसने एक साथ ही बरौनियोंकी कुटिल अनीकनी बघेलापन दौड़ा दी'···और जिस क्षण यह भेद खुला उस वक़्त सब कुछ बदल गया। मगर हमारे सातवाहनकी यह हालत थी कि उन्होंने आशीर्वाद भी दूरसे ही दिया – पीठ थपथपानेकी हिम्मत नहीं हुई। रोज़ाना पैर दबानेवाली मैना भी स्त्रीवेशमें मस्तक भूमिपर टेककर ही नमस्कार करती है। महाराज हैं कि असहाय भावसे ताकते रहते हैं। इसी प्रकारकी असहायता 'बाणभट्टकी आत्म-कथा'में आदिसे लेकर अन्त तक चलती है।

आखिर आचार्यजी सातवाहन और मैनाका एक अनुराग-प्रसंग समझानेके लिए 'चारुचन्द्रलेख'के पन्ने पलटने लगे। एक जगह मैंने पेंसिलसे लिख रखा था – 'इस जगह बाणभट्टकी नपुंसकता····' आचार्यजीने इसे पढ़ा तो ठठाकर हँस पड़े।

"एक और पाठकने भी बाणभट्टको नपुंसक कहा था।" वे बोले।

मेरा गुस्सा भी स्वाभाविक था। चण्डीवतीके एक ढूहसे पचास हाथ नीचे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खड्डमें मैनाके गिर जानेसे जनाब महाराज पहले तो अपनेको धिक्कारते रहे और फिर हाय-हाय करते हुए खुद भी खड्डमें गिर पड़े। प्रसंग कितना नाजुक है इसे भूलकर दो मिनिट पहले ये जनाब मैनाके घुँघराले बालोंमें उलझे हुए थे···"मैनसिंहकी पाग खिसक गयी – भौंरेके समान काले घुँघराले केश लहरा उठे। उसने एक हाथसे उसे समेटा। कदाचित् यह मुग्धा अब भी अपनेको छिपाना चाहती है। सब छिप जाये मगर यह अपूर्व देह-प्रभा कहाँ छिपेगी ?···"

इस प्रसंगका अन्त वास्तवमें लेखकने बड़ा सांकेतिक और अर्थ-भरा किया है। आचार्यजीने यही दो पृष्ठ पढ़कर भी सुनाये··· हाँ एक मिनिट और, मैं ज़रा सातवाहन साहबकी हालत बयाँ कर दूं – गिरनेके बाद भी इनके सिरसे कालिदासका भूत नहीं उतरता – वहाँ भी, यानी पड़े-पड़े भी उपमाओंके ढेर मुँहसे निकल रहे हैं – "मैना ही है लावण्यकी पुत्तलिका, शोभाकी विश्रामभूमि, कान्तिकी मूर्ति, आलोककी अकम्पित शिखा! अहा, किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्!···"

खैर···रस्सी बाँधकर मैनसिंह बोला, "ऊपर उठ सकेंगे महाराज ?"

"ऊपर उठूं ? उठ सकूंगा ?"

"मैना – मैनसिंह···" श्रद्धातिरेकसे मेरी वाणी रुद्ध हो गयी। इतना उल्लासकर अनुग्रह हो तो ऊपर उठना कठिन नहीं है।

ऊपर उठ सकता हूँ – बहुत ऊपर! सारा सत्त्व उमड़ आया है –

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्थाः!

■

'चारुचन्द्रलेख'में सारा संघर्ष इस सत्त्व-तत्त्वको प्रतिष्ठित रखनेका है। ऊपर-ऊपर एक छायायुद्ध चलता रहता है। शत्रुओंको विफल करनेकी चेष्टामें लीन मैनसिंह जब महाराजके सम्मुख आता है, दोनों ओर अनुरागकी विचित्र लीला क्रियमाण हो उठती है। अन्तिम दृश्यके पहले इस असाध्य साधनके बीच मैनाका विग्रह आगे आने लगता है। वह कहती है – "दीदीके धनपर मैं कभी लोभ कर सकती हूँ प्रधान! पर लाचारी इस विग्रहकी है। तुमसे कातर प्रार्थना करती हूँ प्रधान! मेरी सेवाको निर्मल बनाओ। इसे राजस दोषसे मुक्त करो···!"

"मुझे भय लगता है उसकी सेवामें मोह है, प्रतिदिनकी आकांक्षा है – इसीलिए उसमें झिझक है, कुण्ठा है। व्रीड़ा तक तो ठीक है मगर कुण्ठा क्यों होगी ?" नाटी माताने कहा था।

मैं चुप।

"है न महाराज ?"

"यह तो वही कह सकता है माताजी, जिसमें मोह न हो, कुण्ठा न हो, झिझक न हो।"

नाटी माताने घूमकर देखा, बोली कुछ नहीं।

मेरे लेखे लेखकका यह 'बोल्डेस्ट कन्फेशन' है। मैनाके प्रति अनुराग इससे दृढ़ शब्दोंमें यह नपुंसक नायक और कहीं नहीं कर पाता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"....जानते हो प्रधान, जब पहले-पहल मैंने महाराजको देखा था तो रक्तके प्रत्येक कण-से ध्वनि निकली थी – यही तेरी चरितार्थता है। सहस्र-सहस्र जन्मोंमें भटकती हुई तू इसी निधिकी खोजमें थी। ऐसा जान पड़ा जैसे समूचा अस्तित्व विचलित हो उठा है। ऐसा क्यों हुआ ? यह क्या तमोगुणका प्रभाव था ? सच मानो प्रधान, यदि यह तमोगुण है तो संसारमें सत्त्वगुण नामका पदार्थ कहीं है ही नहीं...भगवान्‌ने मुझे नारी विग्रह दिया है – एकदम मुलायम, दुर्बल, भंगुर, तुम्हें भगवान्‌ने पुरुष विग्रह दिया है। सत्य कहती हूँ प्रधान, मनमें जो भाव था वह लोभ नहीं था, पा लूँ ऐसी लालसा नहीं थी। केवल यही भाव था कि अपनेको निःशेष भावसे उँड़ेलकर दे दूँ। तुमने भी अपनेको दिया, परन्तु तुम्हारा दान अनायास सात्त्विक हो जाता है। उसमें विग्रह बाधक नहीं होता। मैं देती हूँ तो विग्रह ही ढरक आना चाहता है। तुम्हारा अर्घ्य शुद्ध गंगाजलकी धार है। मेरे गंगा-जलमें फूल भी तैरता रहता है (आय हाय ! इससे मीठे संकेत और प्रेमकी व्यंजना मेरी दृष्टिमें दूसरी नहीं है।)

...देना चाहती हूँ गंगाजलकी धार – आगे उतरकर बह जाना चाहता है फूल। यही अन्तर है। शपथपूर्वक कहती हूँ, इसमें केवल सत्त्वोद्रेक है। फूलको रोकना चाहते हो तो रोक लो..."

मेरे लेखे यही वह ट्रेजेडी है जो मेरे हृदयको मथती रहती है – यही वह अन्तर्द्वन्द्व है जो पूरी असाध्य साधनाके बीच रहता है.....और वह फूल रोक गया। पुरुषोत्तम क्षेत्रका प्रसाद – मैना बोधा प्रधानको ही मिला। महाराज वाहनने एक बार आकाशकी ओर देखा – मालूम हुआ, वनस्पतियोंको निहारा – जान पड़े, पर्वत-शिखरोंकी तरफ़ दृष्टि फेरी – बेहोश लग रहे थे...

सहसा जगत् जड़ हो गया।

मेरी दृष्टिमें नाटकका यहीं पटाक्षेप गया।

अगले दिन बोधा और मैनाने साथ प्रणाम किया, "पुरुषोत्तम क्षेत्रमें प्रभु देवताके अयाचित प्रसादको शिरसा स्वीकार करनेकी अनुज्ञा हो धर्मावतार!" उनकी ऊपर नहीं उठीं। मैंने दोनोंके सिर पर हाथ फेरकर आशीर्वाद दिया – पर मैनाका वह व्रीड़ा-मनोहर मुख जो हृदय देशपर आया सो चिपक ही गया। वह मूर्ति जो चिपकी है। सो जम ही गयी है पीड़ा होती है, चाहता हूँ वहाँसे हटा दूँ न मूर्ति ही हटा पाया हूँ और न पीड़ा मुक्ति ही मिली है। कुछ पीड़ाएँ बेहिसाब मीठी होती हैं...

"मैं कुछ कमिट करना नहीं चाहता।" आचार्यजीने कहा था।

"कृति वया स्वयंमें ही एक कमिटमेंट नहीं है ?" मैं मन-ही-मन हँसा था।

"आचार्यजी, मुझे वह गंगाजल फूलवाली बात समझाइए..."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तुम लोगोंका तो ये ही बातें अच्छी लगेंगी।" उन्होंने स्नेहसे डाँटा था।

■

इस ट्रेजेडीके बाद तो बस नाटकका औपचारिक अन्त करना था, अतः जैसे हाँका लगाकर जानवर इकट्ठे किये जाते हैं शिकारके लिए वैसे ही लेखकने एक हाँका लगाया है और अन्तिम दृश्यमें सब बचे-खुचे प्रसंग और पात्र इकट्ठे हो जाते हैं। भद्रकालीका सन्धान मिल जाता है। दिल्लीसे मैनसिंह जिस शाहको छुड़ाकर लाया है – उसीकी यह हिन्दू पत्नी है – मगर अक्षोभ्य भैरव अपनी इस बहनको शाहके चंगुलमें समझकर मैनसिंहको इशारा करते हैं और मैनसिंहके कुन्तकी एक ही भारसे शाह ढेर हो जाता है। बोधाके साथ छिपे हुए महाराजके मुँहसे निकल पड़ता है, "हाय मैना, तेरे ही हाथसे मित्रघात हुआ...."

इतनी बड़ी ग्लानिको न झेल पानेके कारण मैना खुदको कुन्तसे ढेर करनेकी कोशिश करती है।

इस दृश्यमें दर्शक घर जानेके लिए अपने जूते सँभालने लगते हैं। दुश्मनके खतरेसे सारे पात्र किसी सुरक्षित स्थानमें छिपनेके लिए मुख्यमंच छोड़ देते हैं और आसमानी रंगका कुहरा पूरे शिवालकपर छा जाता है।

■

शामके गहरानेसे यह परदा काला पड़ गया। दिसम्बरका अन्त है। '६४ की आखिरी शाम – पूरी युनिवर्सिटी उजाड़ है – छुट्टियाँ। केवल पॉप्लारका एक उगाया हुआ जंगल खड़खड़ा रहा है। रातके नौ बजे आचार्यजी और मैं उस शताब्दीके कुहकसे निकलकर नीचे उतरे तो ठहाके लगा रहे थे – कठपुतलियोंको नचानेवाला कितना निर्भय हो सकता है – मैंने जाना। दर्शक जिस समय आँसू पोंछ रहा होता है, सूत्रधार मेकअप उतारनेकी सोच रहा होता है।

...तो फिर क्या था चन्द्रलेख ?....

असाध्य साधनके बीच एक ग्रीक ट्रेजेडी ?....पुस्तक पढ़कर तो यही इम्प्रेशन बना था। मगर लेखकसे मिलकर पता चला – ट्रेजेडी तो अभी होनी है – वे शूद्रक और कालिदासके समय पर दो गप्प और सुनानेके लिए छटपटा रहे हैं।

उस अगली ट्रेजेडीकी यह एक भूमिका थी।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

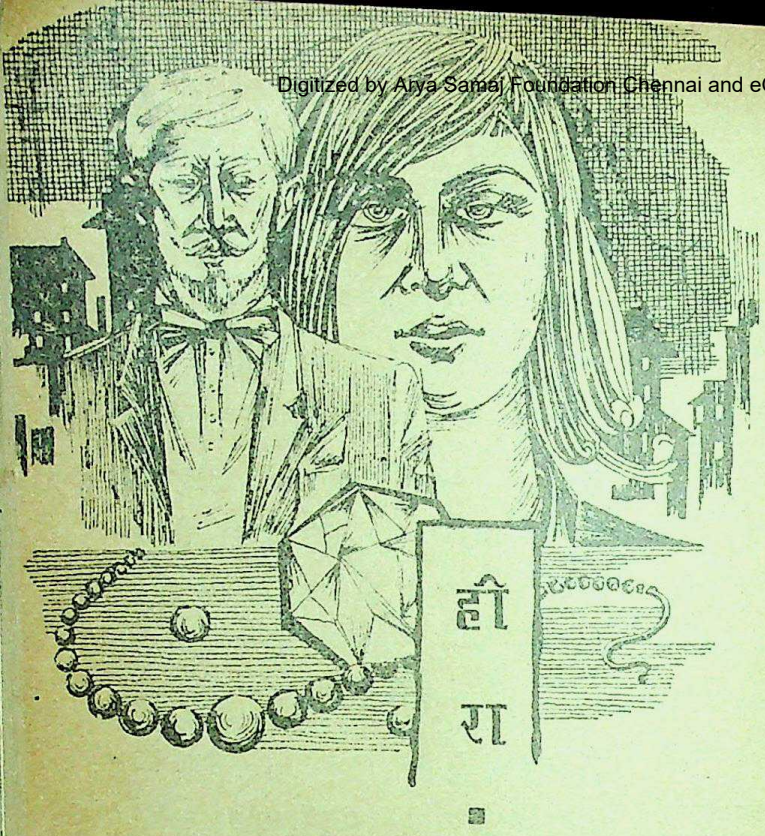

आन्द्र पियेर द मान्दियार्ग

"नये हीरे आ गये हैं। सेफ़की चाबी ले लो। कल सुबह तुम्हें उनकी परीक्षा करनी है।" साराके पिताने कहा।

छोटे हाथ और पैर, छोटी नुकीली आँखें किन्तु बड़े सिर और लम्बे बालों वाले श्रीमोस हीरोंके तराशनेका काम करते थे। सदियोंसे उनके परिवारमें यही काम होता आया था। नीचे उनकी दुकान थी और ऊपर वे अपनी लड़कीके साथ रहते थे। उनके कोई लड़का नहीं था इसलिए यह लड़की ही भविष्यमें उनका काम संभालनेकी तैयारी कर रही थी।

साराने जवाबमें कहा, "कबसे हम इनके आनेकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। मैं ख़ास तौरपर उस नीले पत्थरको देखना चाहती हूँ जिसमें शुक्र ग्रहका पानी बताया जाता है।"

"मेरे ख़यालसे यह पत्थर अनमोल है। पर मैं इसे तुम्हारे देखनेके बाद ही देखना चाहता हूँ। हीरेकी आग और पानीकी पहली परख कुमारीके द्वारा ही की जानी चाहिए।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लड़कीने गर्वसे सिर उठाया। चिकने, लम्बे चेहरेपर काली बड़ी आँखें, छातियोंपर लटकती काले घने बालोंकी चोटियाँ, लम्बी सुराहीदार गरदन और लम्बे ही हाथ और पैर, शरीरपर पानीमें तैरती मछलियों-से छपे वस्त्र और इन सबके भीतर प्रयत्नपूर्वक सुरक्षित उसका बंकिम कौमार्य ?

"इन पत्थरोंकी चमकसे अधिकांश स्त्रियाँ प्रभावित होती हैं," बुड्ढा कहता रहा, "साँपकी आँखोंसे चमत्कृत चुहियोंकी तरह ! और कुछ नहीं भी होतीं । तुम्हारी खासियत यह है कि इन पत्थरोंके साथ तुम्हारा सहज रिश्ता-सा है, शायद इसलिए कि तुम्हारी प्रकृति भी सँपीली है । तुम उन्हें देख सकती हो, बातें कर सकती हो, जैसे उनके भीतर ही प्रवेश करके उनके सभी गुण-दोष परख सकती हो। तुमने हीरोंके वे दोष भी बता दिये हैं, जिन्हें बड़े चतुर व्यापारी पकड़ नहीं पाये। जवाहरातोंसे अपनी इस दोस्तीको बनाये रखनेके लिए तुम्हें शादी नहीं करनी चाहिए वैसे भी तुम अपनी माँ-जैसी नहीं हो ।"

"शादी करनेका मेरा क़तई कोई इरादा नहीं है और मुझे खुशी है कि मैं अपनी माँ-जैसी नहीं हूँ," —सारा मोसने सँपीली फुफकार मारते हुए कहा ।

दरअसल साराको अपनी माँकी याद आती ही नहीं थी । वह साराको जन्म देनेके कुछ साल बाद ही मर गयी थी । पर अल-बमें लगे उसके चित्रोंको देखकर साराको लगता था कि उसमें वासना काफ़ी ज़्यादा रही होगी और लज्जाके गुणसे वह मुक्त

क्षण-भर बाद उसने आँखें
खोलीं और स्वतःको पारदर्शक
दीवारोंके भीतर
बन्द पाया । वह उठ-
कर खड़ी हुई और यह
आश्चर्यजनक तथ्य आत्मसात्
कर पानेमें उसे
कुछ समय भी लगा कि
गिर जानेके कारण वह हीरेके भीतर
ही प्रवेश कर गयी है और
उसकी बन्दिनी बन गयी है।

होगी । पहले इन चित्रोंको साराने फाड़ा, फिर जला दिया । ऐसी औरतसे शादी करने-के लिए उसने अपने पिताको कभी माफ़ नहीं किया । पर जब वह यह सोचती कि उसके निर्माणमें भी माँका हाथ था, तो वह शर्मसे मरने लगती । वह चाहती थी कि उसका निर्माण, पूरा ही, पिताके द्वारा होता ।

कुछ देर वे चुप बैठे रहे । तभी नौक-रानी यह खबर देने आयी कि डिनर लगा दिया है । दोपहरको बाप और बेटी, दोनों ही थोड़ा ही खाते थे । रातको वे तरह-तरह-के पकवानोंसे डटकर पेट भरते । फिर वे एकदम बिस्तरपर जा गिरते । ठुँसे पेटके कारण नींदके साथ विविध प्रकारके सपने देखते रहते । इसे वे 'थियेटरका समय' कहते थे । पर वे एक-दूसरेको इन सपनोंकी बाबत बताते कभी कुछ भी नहीं थे । सबेरे दोनों अलग-अलग चाय पीते, पहले लड़की, फिर एक घण्टे बाद बाप ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर आज आलस्य अपना नहीं खोया। बाप अकेला खाता रहा, फिर जाकर सो रहा। इधर सारा अपने कमरेमें आयी और उसे बन्द कर लिया। जब भी दूसरे दिन उसे पत्थरोंकी जाँच करनी होती, वह रातको उपवास करती और सोनेसे पहले ध्यान करती। आज भी कपड़े उतार, नाइट-गाउन पहन और बाल खोलकर वह घण्टों तक चुपचाप दीवारपर लेटी रही। पहले उसे लगा कि ठण्ड लग रही है, फिर वह अनुभूति-शून्य हो गयी और उसे दुनियाके खयाल आने एकदम बन्द हो गये। उसे समय का बोध भी नहीं रहा। अँधेरेमें अपनी बड़ी-बड़ी आँखें खोले वह ऐसी वस्तुओंकी उड़ान देखने लगी, जिनका अस्तित्व ही नहीं है।

ऐसे मानसिक आन्दोलनकी गतिविधिसे उसका घनिष्ठ परिचय था। पहले उसे लगता कि वह एक गहरे छेदसे बाहर निकल रही है। तब वह ऊपर उठनेकी कोशिश करती। फिर वह कुछ हिलती-डुलती। पर बग़लमें रखा लैम्प जलाना भी उसे दूभर हो जाता, इतनी ताक़त लगती मानो डूबते हुए आदमीको जलसे बाहर निकाल रही हो। लैम्प जलानेके बाद वह थककर चूर हो जाती और बिस्तरमें घुस जाना चाहती। तब शीशेकी एक नलीमें-से वह तीन गोलियाँ मुँहमें रखती, बिजली बुझाती और गहरी नींदमें खो जाती।

सवेरे वह सूरजकी पहली किरणके साथ उठती। गोलियोंसे उत्पन्न स्वप्नहीन निद्राके कारण उसका मस्तिष्क स्वच्छ और सचेत होता। फुरतीसे वह बिस्तर छोड़कर बाथरूम जाती। गरम पानीसे धीरे-धीरे नहाती, हर अंगको कई बार साफ़ करती, और स्नानके साथ तनसे भी हलकी होकर बाहर निकल लती। कोई भी ख़ुशबू लगाये बिना, अपने ही व्यक्तित्वकी गन्धमें बसी, वह सफ़ेद ऊनी बुना गाउन पहनती। अपने काले बालोंको काढ़कर वह पीछे बिखेर देती। ऊनसे रगड़ कर बाल गरम हो उठते और सारा सोचती कि यह बिजली रातको किये ध्यानके कारण उत्पन्न हुई है। उसे लगता कि इस समय यदि कोई उसे छुए, तो उसे निश्चय ही बिजलीका धक्का लग जाये। सचमुच ही कोई अजनबी कमरेमें घुसकर यह अनुभव करता, तो उसे बुरा न लगता। वह बिस्तर की बौछारसे उसे गिरा देती। पर कोई आता ही नहीं। सारा मोसकी दुनियामें पुरुषकी सत्ता नहीं थी। वह पुरुषके सम्पर्क कलापसे अपरिचित नहीं थी, परन्तु स्वयंको उसके लिए निर्मित नहीं मानती थी; उसे हीरे-जवाहरातोंके लिए ही जीना था।

अभीतक सभी सोये पड़े थे। अपने कमरेसे निकलकर सारा हॉलमें आयी और पिताके कमरेके सामने एक क्षणको रुकी। भीतर शान्ति थी। सीढ़ियोंपर चढ़कर सारा ऊपर गयी और उस कमरेके सामने पहुँची जिसमें सेफ़ थी, जिसमें हीरे थे, जिन्हें आज परखना था। यहाँ पहुँचकर वह रुकी और एक लम्बी साँस ली। उसने अपना गाउन और स्लीपर उतार दिये। सदा वह पत्थरोंको देखनेसे पहले अपने शरीर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निरावृत कर लेती थी – किसीकी परीक्षा लेनेके लिए वह खुद भी परीक्षाकी वस्तु बन जाती थी, बीचके पदार्थ मानो जाँचके लिए बाधा थे।

गुच्छेमें से उसने कमरेकी चाबी निकाली। तालेमें डालकर तीन दफ़ा उसे घुमाया, ताला बड़ी शान्तिसे खुल गया। तब उसने दरवाजा खोला। भीतर अभी भी अँधेरा था। साराने खिड़कियोंके परदे सरकाये और सूरजकी किरणें उसकी नग्न देहपर पड़ने लगीं। फिर वह एक कोनेमें रखे सेफ़की तरफ़ बढ़ी। इसका ताला जिन अक्षरोंको मिलानेपर खुलता था, वे साराके अपने ही नामके, उलटी तरफ़से, अक्षर थे। मानो इस लोहेके सेफ़पर भी उसीका शासन स्थापित था।

झुककर वह ये अक्षर मिलाने लगी। वह सोचने लगी कि पहले स्त्रियोंपर सशस्त्र पुरुषोंका अधिकार होता था, अब स्टीलका यह शक्ति-सम्पन्न पुरुष उसके इंगितपर काम करता है। आख़िरी अक्षर मिलते ही ताला खुला और सेफ़का द्वार झटका खाकर झूल आया। भीतर काली धातुके नीचे एक और आलमारी थी, जिसमें कई दराज थे। सबसे नीचेके दराजमें हीरे थे। ये चमड़ेकी थैलियों या छोटी-छोटी डिबियोंमें रखे थे। एक थैलीमें नये आये हीरे बन्द थे। साराने आदरसे उसे उठाया, मानो वह उसे अपने पिताके हाथसे ही ले रही हो। सावधानीसे उसने उसे कमरेके बीचोबीच रखी बड़ी आबनूसकी मेज़पर रखा। मेज़के एक तिहाई भागमें सूरजकी रोशनी थी, शेषमें अभी भी छाया थी। उसने थैलीको छायामें ही रखा। फिर उसकी मुहर तोड़ी और बहुत धीरे-धीरे मुँहपर बँधा डोरा खोलने लगी। इस काममें उसने काफ़ी देर लगायी, मानो अपने लक्ष्य तक वह शीघ्रतासे पहुँचना न चाहती हो।

अन्तमें उसने थैलीकी वस्तुएँ बाहर निकालीं। पतले काग़ज़में लिपटे लगभग बीस पदार्थ मेज़पर बिखर गये। मेज़की सतह बड़ी चमकदार थी और उसपर झुकी साराकी परछाईं इस तरह हिल-डुल रही थी, मानो वह तालाबमें नंगी नहा रही हो। उसने अपनी लम्बी सुडौल बाँहोंसे नीले काग़ज़में लिपटा हीरा उठाया, जो आकार और भारमें भी सबसे अधिक था। उसने हीरेका काग़ज़ उतारा और उसे अँगुलियोंमें लिया। साराकी दृष्टि केन्द्रित होकर हीरेपर पड़ने लगी। क्या शानदार चमक और आब थी! निश्चय ही यह हीरा उसकी आशासे भी अधिक उत्कृष्ट था। अपने सम्पूर्ण जीवनमें उसने ऐसा श्रेष्ठ हीरा नहीं परखा था। इसकी शुद्धता देखकर लोग भयभीत भी हो जाते, क्योंकि इसकी आगमें गरमीका लेश भी नहीं था, प्रखरतम तेजसे पूरित होनेपर भी इसकी आत्मा बर्फ़-सी श्वेत और शीतल थी। शुद्धता और कौमार्य एक सीमासे अधिक होनेपर व्यक्तिको डरा ही सकता है! उससे हानि भी हो सकती है; उत्तम हीरे दुर्भाग्यके लानेवाले इसीलिए माने जाते हैं। अपूर्ण आत्माओं और दुर्बल शरीर तथा मन-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाले अहंकी [illegible] निर्मल तेजको अपने ऊपर धारण करेंगे, तो और हो भी क्या सकता है! इसी कारण सारा अपने शरीर और मनकी शुद्धतापर विशेष ध्यान देती थी।

अब साराने अपने लेन्स उठाये और परीक्षाके लिए हीरेको उनके नीचे लिया। उसका हाथ नितान्त स्थिर था। झुके होनेके कारण उसका पेट और छातियाँ मेज़पर टिकी थीं। उसे साँस लेनेमें कठिनाई हो रही थी, पर इस ओर उसका ध्यान ही नहीं था। आबनूसकी ठण्डक उसकी छातियोंसे होकर दिलकी ओर बढ़ने लगी। उसे महसूस हुआ कि वह बर्फ़की पहाड़ियोंके बीच काली ज़मीन पर नंगी पड़ी है। लेन्सोंके भीतरसे दिखाई देता हीरा भी बड़ा होकर उसे बर्फ़-की चट्टान-जैसा लग रहा था। उसे महसूस हुआ कि हीरा जीवित वस्तु है, प्राण और चेतनासे पूर्ण। तभी क्या हुआ कि उसका पैर फिसला और उसका सिर मेज़पर आ गिरा। उसे लगा कि हीरेकी चपल ज्योति उसके नेत्रोंमें प्रवेश कर गयी है। तभी उसकी चेतना लुप्त हो गयी।

क्षण-भर बाद, उसने आँखें खोलीं और स्वतःको पारदर्शक दीवारोंके भीतर बन्द पाया। वह उठकर खड़ी हुई और यह आश्चर्यजनक तथ्य आत्मसात् कर पानेमें उसे कुछ समय भी लगा कि गिर जानेके कारण वह हीरेके भीतर ही प्रवेश कर गयी है और उसकी बन्दिनी बन गयी है।

इस अनोखी जेलमें उसे सर्दी महसूस होने लगी। वह सोचने लगी कि कहीं या ऊनके टुकड़े मिल जाते, तो वह कम अपनी छातियाँ और पीठ तो ले लेती। चारों तरफ़की हवा इतनी और निर्मल थी कि उसे साँस लेनेमें हो रही थी। उसने आँखें फाड़-देखा कि हीरेमें शायद कहीं कोई दोष जाये, पर वह सभी छोरोंसे सभी अनवरत अबाध पारदर्शी था। इसमें खुशी भी हुई और कुछ निराशा भी वह खुद, एक मिनिट पहले मनकी स्तब्धताके क्षणमें, इसमें डूब चुकी थी। तक वह यह सर्दी और हवा बर्दाश्त चारों तरफ़ हाथ फैलाकर, अँगुलियोंसे कर उसने कोई दोष पकड़नेकी कोशिश की, जिसके सहारे वह बाहर आये, पर सब व्यर्थ रहा।

तब शरारमें गरमी लानेके लिए कसरत करनी शुरू की। पर हल्की-हवामें उसकी तेज़ साँस तीखे दर्दका बन गयी। साराने सोचा कि बाहरसे अगर उसकी हरकतें देख रहा हो, तो सकता हो, तो कितनी शर्मकी बात पर उसे यह भी खयाल आया कि बाहरसे तो नीली रोशनीके अलावा नहीं दीखता, और इससे कुछ धीरज पर वह खुद हीरेके बाहरका सब सकती थी। उसे मेज़पर रखे लेन्स सेफ़ तथा खिड़की दिखाई दी, और वह किरण दिखाई दी जो हीरेपर पड़ रही थी। उसने सोचा कि शायद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे कुछ गरमी मिले और उसका कष्ट दूर हो। पर ऐसी चीज उसे कोई भी दिखाई नहीं दी जिसके प्रभावस्वरूप उसे स्वतन्त्रता मिल सकती, इसलिए इसके लिए उसने स्वतः-को असंगति (एब्सर्ड) की शक्तिपर छोड़ दिया, जो उसे सम्भवतः उसी आधारपर मुक्ति दिला सकती थी जिस आधारपर वह अकस्मात् उसमें बन्द हो गयी थी।

वह यह अन्दाज लगाती रही कि सूरज-की किरणकी गरमी कबतक उसके पास पहुँचेगी, पर समय नापनेका साधन, घड़ी, तो वह अपने बिस्तरपर ही छोड़ आयी थी। यह भी उसके इसी नियमका फल था कि उसे सभी वस्तुओंसे हीन होकर ही हीरेसे सम्पर्क करना चाहिए। यदि वह इतनी गलतीसे इस नियमका पालन न करती, तो कौन जाने परिणाम और भी भयंकर होता!

वह क्षण गिन-गिनकर हिसाब लगाती रही और किरणका पास आना देखती रही। कुछ देर बाद किरण उसके पास तक आ गयी और सर्दी भी कुछ कम होती लगी। पर उसने देखा कि हीरेसे टकराकर किरण मशाल-की तरह भभककर जल उठी है। फिर वह एसिटिलीन टार्चकी तरह प्रज्वलित होकर चटखने लगी। यह घेरा बढ़ता ही गया और लालके साथ नीलेकी लड़ाई होने लगी। साराको लगा कि वह जल जायेगी और वह भागकर हीरेके कोनेमें दुबक गयी। उसने देखा कि लाल धीरे-धीरे नीलेके ऊपर क़ब्ज़ा करता जा रहा है और नीला रंग कभी-कभी ही छोटे स्फुलिंगोंमें प्रकट होता है। सर्दी बिलकुल ख़त्म हो चुकी थी।

सारा जानती थी कि यह गरमी साधारण स्थितिमें मनुष्यकी सहनशक्तिसे कहीं अधिक है, पर यहाँ सम्भवतः हीरेके विशिष्ट प्रभावके कारण वह उसे इतना परेशान नहीं कर पा रही। वह इसपर विचार कर ही रही थी कि उसने पाया कि वह अकेली नहीं है, हीरेके भीतर उसके साथ एक बलिष्ठ पुरुष भी है, जिसका सिर शेरकी तरह है। यह पुरुष भी उसीकी भाँति नितान्त नग्न है। लाल रंगवाला यह पुरुष हीरेके बीचोबीच उसके सामने ही खड़ा है और उसके हाथ तथा पैर फैले हुए हैं, तने हैं। पुरुषेन्द्रिय भी इसी प्रकार। साराने चूँकि यह सब पहली ही बार देखा, इसलिए उसने सिर घुमा लिया ताकि शर्मिन्दा न होना पड़े। अवसरका तक़ाज़ा था कि उसका चेहरा सुर्ख़ हो जाता, और यह प्रतिक्रिया होनेपर उसकी पवित्रता तो ढोंग ही साबित होती! सुरक्षाका पूरा प्रयत्न करते हुए भी उसे लगा कि गरमीका ज्वार उसकी रगोंमें फैल रहा है और उसे बेक़ाबू करता जा रहा है। आख़िरकार उसका तेजस्वी चेहरा फीका पड़ गया।

तभी एक गति हुई और निश्चल रहना व्यर्थ जानकर साराने सिर उठाकर सामने देखा। वह पुरुष अतिशय प्रसन्न और उद्दीप्त भावसे उसकी ओर बढ़ रहा था। एक ही छलांगमें वह साराके ऊपर आ गया। पर साराकी बुद्धि स्थिर थी और वह बचनेके प्रयत्नमें उसकी बिरती हुई बाँहोंसे संघर्ष करने लगी। पर जगह बहुत कम थी और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हीरेसे बाहर वह निकल भी नहीं सकती थी। पुरुषने उसे हीरेकी एक तिरछी दीवारपर सावधानीसे लिटा दिया, फिर कुछ दूर हटकर खड़ा हो गया। वह साराकी सिर्फ़ कलाई पकड़े रहा कि वह उठनेकी कोशिश न करे।

फिर वह बोलने लगा। उसकी आवाज़ धीमी पर गहरी थी और कहीं दूरसे आ रही लगती थी। ज़ोरसे शायद वह इस भयसे नहीं बोलता था कि कहीं उसकी आवाज़की प्रतिध्वनियाँ वातावरणको कम्पित न करने लगें। उसने कहा कि सारा हीरेमें प्रविष्ट इसलिए हुई है कि उस पुरुषसे संयुक्त हो सके। क्योंकि पैग़म्बरोंकी जातिकी कुमारी और सूर्यकिरणसे निर्मित शेरके सिरवाले उस पुरुषके संसर्गसे निकटतम भविष्यमें ही अपराजेय, आत्माके उस तेजस्वी व्यक्तित्वका जन्म होगा, जिसके नेतृत्वमें यह पददलित जाति पुनः सिर उठाकर सम्पूर्ण विश्वपर शासन कर सकेगी।

यह सुनते ही साराने संघर्ष करना बन्द कर दिया। उसे अपने यहूदी होनेका गर्व हो आया। इस विशिष्ट कार्यकी चेतना पा वह प्रसन्नतासे भर उठी। उसे लगा कि अपने हृदयके किसी गोपन कोनेमें वह सदासे यह निश्चय छिपाये है कि उसका जन्म किसी महत्त्वपूर्ण कार्यके लिए हुआ है। इसलिए अब इनकारका प्रश्न ही नहीं था। उसने आँखें बन्द कर लीं और शरीरको ढीला छोड़कर सोचा कि सहमति प्रकट करनेका इससे उत्तम ढंग दूसरा नहीं हो सकता। पुरुष उसपर पूरा झुक आया।···

तभी हीरेके बाहर हुई एक आवाज़से चौंककर साराने आँखें खोलीं। वह दुनियाको बिलकुल भूल चुकी थी, पीड़ाके कारण यह भी समझ पानेमें असमर्थ हो रही थी कि पुरुष वास्तवमें है भी या कल्पनामात्र ही है। आवाज़ बढ़ती रही और उसे लगा कि कोई दरवाज़ा खटखटा रहा है। उसे भीतरसे चटखनी न चढ़ानेका अफ़सोस हुआ। तभी दरवाज़ा खुला और उसके पिताने प्रवेश किया। वे मेज़के पास आये और हीरेके ऊपर झुके। उसकी चमकसे प्रभावित होकर वे सोचने लगे कि उन्हें धोखा नहीं दिया गया। पर उन्हें आश्चर्य हुआ कि हीरा लाल क्यों है, इसे तो नीला होना चाहिए था। वे साराको पूछना चाहते थे पर वह दिखाई ही नहीं दे रही थी।

पर सारा उन्हें देख रही थी और सोच रही थी कि यदि वे यह जान पायें कि उनकी बेटी उनकी आँखोंके नीचे ही हीरेमें उस अमानवीय शक्तिसम्पन्न पुरुषका शिकार हो रही है, तो उनपर क्या बीतेगी? इस विचारसे वे भयसे काँप उठें।···पर तभी वे बाहर चले गये। साराने चैनकी साँस ली···

उसे लगा कि इस कार्यमें कष्ट काफ़ी ही नहीं, इस पुरुषको भी बहुत हो रहा है और उसका चेहरा अब फीका पड़ता जा रहा है। तभी वह सारासे अलग हो गया और जैसे अचानक आया था, वैसे ही ग़ायब हो गया। साराने देखा, सूर्यकी किरण हीरेपर नहीं पड़ रही थी। सर्दी फिर लौट आयी और अचेत होती साराको लगा कि शरीरपर पहाड़ोंकी बर्फ़ पिघलकर बह रही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब उसकी चेतना लौटी तब वह हीरेसे बाहर थी और ज़मीनपर पड़ी थी। उसे तीव्र पीड़ा हो रही थी। अर्थात् यह सपना नहीं था, सचाई थी।

अपनी दुर्बलतापर विजय पानेके लिए कुछ क्षण रुककर सारा उठी। जिस हीरेमें उसने कष्ट पाया था, उसे चुपचाप उठाकर पतले काग़ज़में लपेट दिया। उसने एक नज़र फिरसे हीरेको देखा भी नहीं, इस डरसे कि कहीं सब कुछ फिरसे न शुरू हो जाये। उसे थैलीमें डालकर सेफ़में बन्द कर दिया। कमरा बन्द कर बाहर आयी और कपड़े पहने। फिर शरीरकी सफ़ाई किये बिना ही बिस्तरमें जा लेटी और लंचके समय तक सोती रही। उसपर एक अजीब भारीपन सवार था।

दूसरे दिन साराके पिताने फिर जब हीरेका निरीक्षण किया तो यही पाया कि उसका रंग नीला नहीं है। तो क्या व्यापारी-ने धोखा दिया? अधिक ध्यानपूर्वक देखनेपर उन्हें हीरेके बीचोबीच एक लाल रंगका छोटा-सा परन्तु बहुत स्पष्ट धब्बा दिखाई दिया। तो यह हीरा निर्दोष नहीं था! फिर प्रतिदिन वह धब्बा आकारमें बढ़ता गया।

यह देखकर तो श्रीमोस आपेसे बाहर हो गये और क्रोधसे लगभग पागल ही होने लगे। क्या इसीके लिए उन्होंने इतना अधिक मूल्य दिया था? वे इसे निश्चय ही वापस-कर देंगे और व्यापारीको ख़ूब फटकारेंगे।

वे सारासे बार-बार उसकी राय पूछते, पर वह बोलती ही नहीं, चुप रह जाती। यह सवाल उठनेपर अकसर वह उठकर चली जाती। पर जिस दिन श्रीमोसने उसे वापस करनेकी बात कही, उस दिन वह बोली। उसने हीरा वापस करनेका तीव्र विरोध किया। कई दिन तक यह संघर्ष चलता रहा। आख़िर घरमें शान्ति बनाये रखनेके ख़यालसे श्रीमोसने साराकी बात मान ली, उन्होंने सोचा कि पैसेसे शान्ति ही ज्यादा क़ीमती है। उन्होंने हीरा साराको ही भेंट कर दिया और उसकी अँगूठीमें जड़वा दिया। साराने अँगूठी अपनी अँगुलीपर हमेशाके लिए पहन ली। इसे उसने अपने विवाहकी अँगूठी ही मान लिया। फिर वह अपने गर्भमें सूर्यपुरुषके बीजके धीरे-धीरे बढ़नेकी प्रतीक्षा करने लगी।...

(अनुवाद : महेन्द्र कुलश्रेष्ठ)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदयकी ओरसे
लेखकोंके लिए विशेष निवेदन :

- कृपया अपनी रचनाओंकी टंकित अथवा साफ़ लिखी प्रति भेजिए और उसकी प्रतिलिपि अपने पास अवश्य रख लीजिए।
- लेख, निबन्ध, कहानी और हमारे स्तम्भोंके अन्तर्गत यदि आप सामग्री भेजें तो ज्ञानोदयके अधिकसे अधिक आठ पृष्ठोंसे रचना लम्बी न हो। यदि कोई लम्बी रचना भेजना ही चाहें तो सम्पादकसे पहले पूछ लें।
- हमारा प्रयत्न यही रहेगा कि अधिकसे अधिक एक मासके अन्दर ही निर्णय-की सूचना आप तक पहुँच जाये। रचना भेजनेके बाद एक मास तक आपको कोई सूचना न मिले तो ही हमें लिखिए। स्वीकृत रचनाओंकी सूचना पाते ही कृपया यह अवश्य लिख भेजिए कि रचना अप्रकाशित-अप्रसारित है और ज्ञानोदयमें प्रकाशित होने तक अप्रकाशित-अप्रसारित ही रहेगी। टिकिट-लगा लिफ़ाफ़ा रचनाके साथ हुआ तो ही अप्रकाशनीय रचनाएँ लौटायी जा सकेंगी, अन्यथा नहीं। स्वीकृति-सूचनाकी सम्पुष्टि भेजनेके बाद तथा अस्वीकृतिकी सूचना प्राप्त होनेके बाद कृपया उस रचनाके सम्बन्धमें पत्र-व्यवहार न कीजिए। क्षमा करें, उन रचनाओंको लौटाना हमारे लिए असुविधाजनक होगा जिनके लिए वापसी-टिकिट आप निर्णय-की सूचना पानेके बाद भेजते हैं।
- लेखकोंको, उनकी रचना जिस अंकमें प्रकाशित होगी, वह अंक अवश्य भेज दिया जायेगा, साथ ही दो-दो ऑफ़-प्रिण्ट्स भी।
- हमेशा पारिश्रमिक यथासम्भव अग्रिम और रचना प्रकाशित होनेके एक सप्ताह बाद भेज दिया जाता है।
- सारे सम्पादकीय पत्रव्यवहार केवल इस पतेपर कीजिए :

सम्पादक : ज्ञानोदय; ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

र
ह
स्य

• • • • •

भंयकर इवानका चेहरा

■

इन्दुकान्त शुक्ल

सोलहवीं शताब्दीमें युरॅपके महत्तम राजनैतिक एवं सामरिक नेताओंमें परिगणित रूसी सम्राट् इवान चतुर्थ – प्रथम ज़ार – इतिहासमें 'भयंकर इवान'के नामसे प्रख्यात है। परन्तु उसके नाम इवान ग्रोज़नीके 'ग्रोज़नी' शब्दका अर्थ 'भयंकर' नहीं। इसका अर्थ है: रोबीला, तेजवान्, आतंककर – श्रद्धाके अर्थमें।

कौन था इवान ? व्यक्तित्व से अधिक उसका चेहरा ही क्यों महत्त्वपूर्ण बन गया ?

इवान (१५३३-१५८४) कमालका आदमी था। उसने सात विवाह किये। पर उसके केवल दो ही पुत्र जीवित रह सके। १५८० में क्रोधके उन्मादमें उसने अपने बड़े बेटेको मार डाला ! और तभीसे लोग उसे पागल भी समझने लगे थे।

इवान हदका ज़िद्दी था। लिवोनियाको परास्त और स्वायत्त करनेके लिए हारपर हार खाकर भी, लगातार २४ वर्ष वह लड़ता रहा। अपने शत्रु बोयारोंको मारनेका उसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रिय नुस्ख़ा था—उन्हें मद्यपान और भोजनके लिए निमन्त्रित करना। जब वे ख़ूब खा-पीकर बेहोश-से हो जाते तब इवानके इशारेपर उसके व्यक्तिगत अंगरक्षक बोयारोंपर टूट पड़ते और उनके सर गाजर-मूलीकी तरह धड़ाधड़ काट डालते।

इवानको बाइबिल कण्ठस्थ थी। उसने १५५३ में रूसमें प्रथम मुद्रणालय स्थापित कराया। परन्तु उसीके शासनकालमें भूमि-हीन मज़दूरोंकी और उनकी बेगारकी प्रथा प्रचलित हुई।

अपने सलाहकार सिलवेस्टरसे इवानने नागरिकोंके लिए एक वृहद् आचार-संहिता लिखवायी। इसमें बताया गया था कि वे कैसे गृहस्थी चलायें, नैतिकताका पालन करें, समाजमें शिष्ट व्यवहार करें, ईश्वर और ज़ारका सम्मान करें, बच्चोंको पढ़ायें, पत्नी प्रत्येक विषयमें पतिसे परामर्श ले, और भले ईसाई आँसुओं, प्रार्थनाओं, व्रत-दान, पश्चात्ताप-द्वारा रोगों तथा बीमारियोंका इलाज करें।

मास्कोके सेण्ट बेसील चर्चका निर्माणा-रम्भ इवानने १५५६ में कराया। क़रीब सवा सौ साल बाद, १६७९ में, यह बनकर पूरा हुआ। अनेक भजनोंके प्रणेता इवानने नवगोरोदसे अनेक संगीतज्ञोंको मास्को बुला लिया। उसीके प्रभावके कारण परवर्ती संगीतमें इतना अलंकरण आया।

'रूसी साम्राज्यके विनम्र दण्डवाहक' इवानने राजकुमार आन्द्र कुब्स्कीसे एक वार्तालापमें कहा था: "मेरी शक्ति ईश्वर-प्रेरित है, और ज़ार लोग ईश्वरकी इच्छासे सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र पैदा होते हैं, अतएव ईश्वरके अतिरिक्त वे और किसीके प्रति उत्तरदायी नहीं।" यह उक्ति व्यक्तिगत राजनीतिक विश्वासमात्र न थी। राजाओंके दैवी अधिकारके आख्याता इवानने एक ऐसे सिद्धान्तका संक्षेपीकरण किया था जो दो शताब्दियोंके कटु संघर्षके अनन्तर फूट उभर सका।

इतिहास-शास्त्री एकमत हैं कि रूसको सुदृढ़, संगठित केन्द्रीय प्रशासन, विशाल भूभागका विस्तार, सुविस्तृत साम्राज्यका स्वरूप प्रदान करके इवानने अपनी महत्ता और विज्ञताका परिचय दिया। राजतन्त्रको सबल बनानेके लिए थोड़ा रक्तपात तत्कालीन परिस्थितियोंमें अनिवार्य था। केन्द्रीय प्रशासनके प्रबल होते ही रूसकी पर्याप्त सांस्कृतिक प्रगति हुई।

इंग्लैण्डकी सम्राज्ञी एलिजाबेथ और तदनन्तर लेडी मेरी हेस्टिंग्ज़से विवाहका प्रस्ताव करनेवाले इवानमें भावुक कल्पना और सहृदयताकी कमी तो नहीं ही थी। आइवर स्पेक्टोरने कहा है—"ढाई सौ वर्षों की तातारी धींगाधींगीके बाद यह स्वाभाविक था कि इवान-जैसा व्यक्ति जन्म ले। वह ठीक समयपर ठीक व्यक्ति थे। उनके निर्णय और दृष्टिकोण अनवद्य थे।"

इसीलिए इवानकी तुलना इतिहासकारों ने अष्टम हेनरी और ग्यारहवें लुईसे की है। हेनरीसे अन्य सादृश्य तो हैं ही, हेनरी और इवान दोनों लेखक थे और धार्मिक विवादमें रुचि लेते थे। ग्यारहवें लु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इवानका साहश्य क्रूरता, विश्वासघात, अन्धविश्वासमें ही समाप्त नहीं होता; बल्कि लुईकी ही तरह इवानने भी देश जीते और राज्यको शक्तिशाली बनाया। फलतः वह संसारके एक सुविशाल राज्यका प्रतिष्ठापक बना। पिताकी मृत्युके समय मात्र तीन वर्षके इस बच्चेने आगे चलकर हर क्षेत्रमें चमत्कार कर दिखाया यद्यपि इसके प्रारम्भिक वर्ष अराजकता, अरक्षा, आशंका और बोयारोंके अनगिन अपराधोंसे आच्छन्न थे।

इवानने 'ज़ेम्स्की सोबोर' नामक सभा बुलायी। इसमें देशके हर वर्गके प्रतिनिधि थे। राज्यके सुचारु प्रशासनकी दिशामें उसका यह क़दम इंग्लैण्डके माण्टफ़ोर्ट (१२६५) तथा प्रथम एडवर्ड (१२९५) के ऐसे ही प्रयत्नोंकी याद दिलाता है। शायद अपने इन्हीं गुणोंके कारण इवान स्तालिनका सर्वाधिक प्रिय ज़ार था।

रूसी कवियों-लेखकों-कलाकारोंकी कल्पनाको इवानने अद्भुत रूपसे आन्दोलित-आह्लादित किया है। उसका संश्लिष्ट चरित्र सदैव इतिहासज्ञों एवं शिल्पियोंकी जीवन्त रुचिका उपजीव्य रहा है। ज़ारकी भयावनी आकृतिने महान् रूसी कवि लरमतोफ़की कल्पनाको पंख लगा दिये। प्रसिद्ध कलाकार इ० व० रेपिन, व० म० वस्नेत्सोफ़ तथा प्रख्यात शिल्पी म० म० अन्तोकोल्स्कीने इवानके चित्र और शिल्पान्वय प्रस्तुत किये। इवान तथा उसके युगपर कितने ही नाटक-उपन्यास लिखे गये हैं। इससे स्पष्ट है कि

आइज़ेन्स्टाइनकी रेखाएँ
चेहरे इवानके

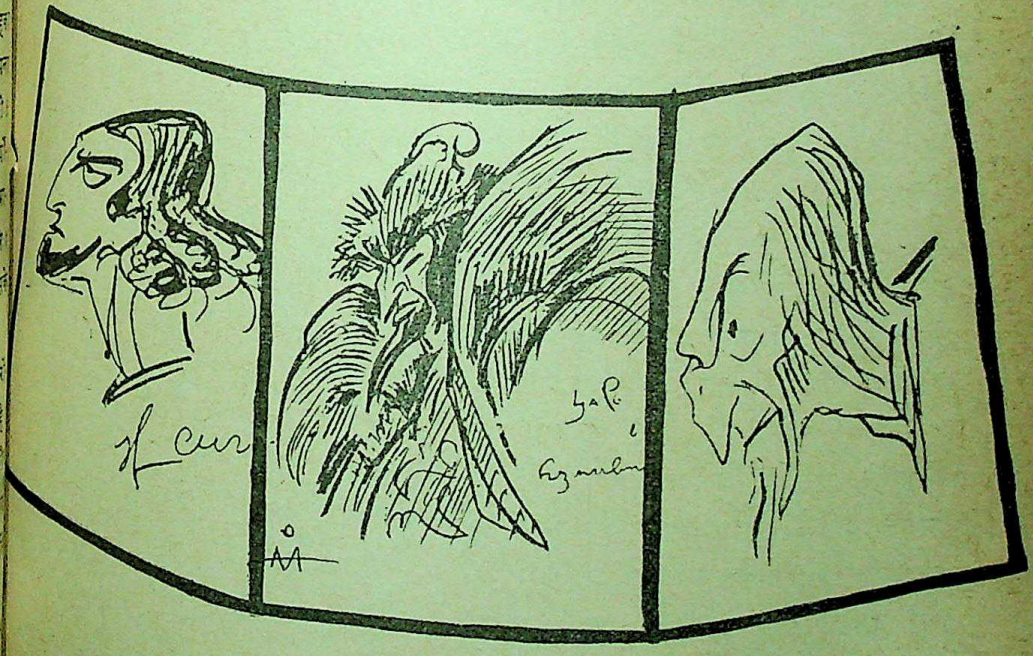

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभिनय शर्कासेवका
चेहरे इवानके

इवान रूसी जनताकी चेतनापर अमिट रूपसे उत्कीर्ण है।

सर्वाधिक प्रतिभाशाली सोवियत फ़िल्म-निर्देशकोंमें अग्रणी और अमर आइज़ेन्स्टाइनने सोलहवीं शतीके इस रूसी ज़ारकी मूर्त्ति और उसके मन्तव्योंकी अपनी व्याख्या 'भयंकर इवान' नामक उल्लेख्य चलचित्र (१९४३-४५) में रूपायित एवं स्वरित किया। आइज़ेन्स्टाइन फ़िल्म निर्देशनमें पारंगत होनेके साथ ही कुशल रेखा-शिल्पी भी था। अतः उसके द्वारा बनायी गयी इवानकी रेखानुकृतियाँ इवानके चरित्र और व्यक्तित्वका सम्यक् निरूपण करती हैं। इस फ़िल्ममें, आइज़ेन्स्टाइन पटकथा-लेखक, निर्देशक और अंशतः सज्जा-नियामक भी था। यह चित्र द्वितीय विश्व-युद्धके दौरान बना था अतः सारी शूटिंग रातको होती थी क्यों दिनमें बिजली युद्ध सम्बन्धी कल-कारख को ही मिल सकती था।

शर्कासोफ़ नामक लोकप्रिय, अभिनेताने इवानका चरित्र और रजतपटपर उसी अविस्मरणीय तथा प्राणवत्तापूर्वक प्रस्तुत किया जिस उसने पीटर प्रथम, डॉन क्विक्ज़ोट, गोर्की तथा मायाकोव्स्कीके चरित्रोंकी अवतारणा की थी। इस फ़िल्मके संगीत शक प्राकोफ़ीवने अपनी प्रतिभाका वैभव छायाछविपर लुटा देनेमें कोई कसर रखी। फलतः यह फ़िल्म रूसकी संसारकी एक अमर कलाकृति हो गयी।

इस असाधारण सम्राट्के सम्बन्धमें वर्ष पूर्व रूसमें पुनः व्यापक स्तरपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जग उठी क्योंकि एक राजकीय आयोगने क्रेमलिन आर्केंजेल कैथीड्रलमें प्रायः चार शतियोंसे सोये इवानकी क़ब्र खोदकर उसे जगा दिया है। क़ब्रोंको खोलना इसलिए पड़ा था क्योंकि इस कैथीड्रलके दक्षिण-पूर्वी भागकी दीवारों और तहखानोंको धँसनेसे बचानेके लिए मरम्मतकी ज़रूरत थी।

इसी सिलसिलेमें गवेषक इवान तथा उनके दो लड़कोंकी क़ब्रों तक पहुँचे। प्रोफ़ेसर गेरासिमोफ़, जो इस दलके प्रमुख हैं, ने अपने अध्ययनके आधारपर जो तर्कसंगत विश्लेषण किया है उससे इवान सम्बन्धी अनेक भ्रान्तियाँ ध्वस्त हो गयी हैं।

क़ब्रके शिलालेखसे इवानकी मृत्यु-तिथि १८ मार्च १५८४ स्थिर होती है। इवान अपराह्नमें मरे थे। जनताको सूचना दूसरे दिन मिली थी। इसलिए भ्रमवश मृत्यु-तिथि १९ मार्च मान ली गयी थी। इसी अभिलेखसे ज्ञात होता है कि इवान 'जोना' नामसे संन्यासी हुए। यह इतिहाससम्मत है कि जीवन-सन्ध्यामें उनकी इच्छापर इवान-को संन्यास दिया गया। काले परिच्छदमें, जोना सन्तके नामसे, इवान ईश्वरके सम्मुख अपने सारे अपराधोंसे मुक्त होकर आना चाहते थे। यह लोकश्रुति थी कि संन्यासी पापमुक्त हो जाता है। क़ब्रमें ही एक चषक भी मिला है तथा कुछ सिक्के भी।

आजके समुन्नत चिकित्साशास्त्रको भी मृत्युका कारण अज्ञात है। इवानकी मृत्यु-का कारण निर्धारित करना और कठिन है। मृत्युके समय इवान ५४ वर्षके थे।

उनके शरीरसे प्राप्त क्षारसंचयोंसे स्पष्ट है कि उन्हें बहुत दर्द रहता था जो उन्हें असन्तुलित कर दिया करता था। थोड़ा भी अंग-संचालन उन्हें यन्त्रणा देता था। वे आरामकुरसीमें ले जाये जाते थे।

बुड्ढोंमें भी इतना क्षार-संग्रह नहीं मिलता। शायद यह रोग उन्हें अल्पवयमें ही लगा और जीवनके अन्तिम ५-६ वर्षोंमें इसने ज़ोर पकड़ा। फलतः इवानकी पीठ और गरदन सीधी थी और सर थोड़ा आगे निकला हुआ।

ज़ारके पुष्ट शरीरमें बैठे रहने, अधिक भोजन और मद्य-पानने अनतिक्रम्य परिवर्तन कर दिये थे। जब उन्हें पूर्ण विश्राम चाहिए था उन्हें संन्यास-दीक्षाका श्रम झेलना पड़ा जिससे उनकी मृत्यु जल्दी हो गयी।

ज़ार असमय निर्बल न हुए थे। क्योंकि वास्तविक वार्धक्यके सूचक चिह्न – मेरुका बिगड़ना, यष्टि-क्षय, शिरातल – ये कुछ नहीं मिले। चावन साल अधिक उम्र नहीं। उस समय उनमें खूब शारीरिक शक्ति थी। दो साल पहले मात्र एक छड़ीसे उन्होंने बेटे-को मार डाला था। यह निर्बलता तो नहीं है।

यह प्रवाद कि बेल्स्की तथा गोदुनोफ़ने गला घोंटकर या विष देकर इवानकी हत्या की थी, प्रोफ़ेसर गेरासिमोफ़को मात्र कपोल-कल्पना लगता है क्योंकि इवानके गलेकी कोमल अस्थियाँ अक्षत मिली हैं और शरीरमें संखियाकी मात्रा उचित है। पारा अवश्य बहुत मिला। लेकिन यह उन पारा-मिश्रित मलहमोंसे सम्भूत हो सकता है जिनकी पीड़ा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरण अमोघतामें इवानको बड़ी आस्था थी।

प्रोफ़ेसर गेरासिमोफ़ने ज़ारके वास्तविक सिरके ढाँचेसे मूर्तिके प्रथम आलोक चित्र लिये थे। इनके मतसे इवानके शरीरकी हड्डियाँ जितनी अच्छी हैं उतनी सिरकी नहीं। एक रासायनिक मिश्रणसे सिरकी हड्डियोंको स्थिर करके इन्होंने जो ढाँचा बनाया तदनुसार मूर्ति गढ़ी गयी। भौंहों और चिबुकपर कुछ बाल थे पर वायु एवं प्रकाश न सह सकनेके कारण वे गिरकर मिट्टी हो गये।

यह सही है कि इवानका रूप वितृष्णाजनक है। पर उनके समकालीनोंने युवा इवानको सुन्दर कहा है। यह सच है। अपने समयमें वह एक प्रकारसे सुन्दर, सबल थे, पुष्टशरीर, अश्वारोही, शिकारी। पर कालान्तरमें वे बहुत बदल गये। उनका भयंकर जीवन उनके चेहरेपर अंकित हुआ और उनका असंयम स्थूलतामें फलित हुआ।

शिल्पी अध्यापक गेरासिमोफ़ने इवानको जान-बूझकर कुरूप नहीं बनाया। इस मूर्तिका प्रभाव भयजनक है। इस चेहरेका प्रत्येक भाग इवानका है सिवा दाढ़ी-मूँछके बालोंके जिन्हें उन्होंने ऐतिहासिक-साहित्यिक स्रोतोंके आधारपर अनुमित किया है।

इवानकी मानसिक स्थितिपर कुछ कह सकना सम्भव नहीं। परन्तु उनके शरीरकी हड्डियोंमें क्षयके चिह्न नहीं। प्रसिद्ध रूसी मनःचिकित्सक प्रोफ़ेसर प० इ० कोवालेव्स्कीने इस शताब्दीके प्रथम वर्षमें इवानके मनोवैज्ञानिक अध्ययनमें लिखा कि वह महत्ताके स्वप्न देखता था और पागल था। परन्तु गेरासिमोफ़ इस मतके विरोधमें हैं। उनके अनुसार शरीरसे दृढ़, खिलाड़ियोंकी सी कायावाले ज़ार पूरे होश-हवासमें थे।

इवानके चेहरेसे माँका ग्रीक होना-भूमध्यसागरतटवर्ती – सिद्ध होता है, तथा पिता वैसिली तृतीयसे भी कई बातोंमें इवान का चेहरा बहुत मिलता है।

एक साम्राज्यके निर्माता इवान, पुरुषों रूसी चेतनापर छाये इवान, इतिहासकारों अनुसन्धाताओंके कुतूहल इवान, कलाकारों के कल्पना-विलास इवानका हुलिया यह इतना है : संकीर्ण-लम्बोतरा-विषम चेहरा नीचा मस्तक, प्रबल भौंहें, बड़ी-खुली आँखें (दाहिनी कुछ छोटी), उनके नीचे धँसे छोटा मुख, आगेको निकला नीचेका ओठ मुखके किनारे लटके, चेहरेको उद्धत-विरक्ति जनक बनानेवाले दबे-कसे ओठ, पतली-उन्नत नाक, भारी छेदवाला चिबुक, पीछेकी ओर मुड़े लम्बे कान।

इतिहासके कुछ तथ्योंका संशोधन गवेषणाओंसे अवश्य होगा, परन्तु जनमानस में अवस्थित यशस्वी इवान रूसके सदैव दैवी शक्तियोंसे सम्पन्न, असाधारण दैत्याकार महामानव, अतएव 'भयंकर' विरुदसे अविच्छेद्य रहेगा। रूसके इतिहास यह चेहरा, यह चरित्र अपने आतंकके साथ अमर रहेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छोटी कविताएँ

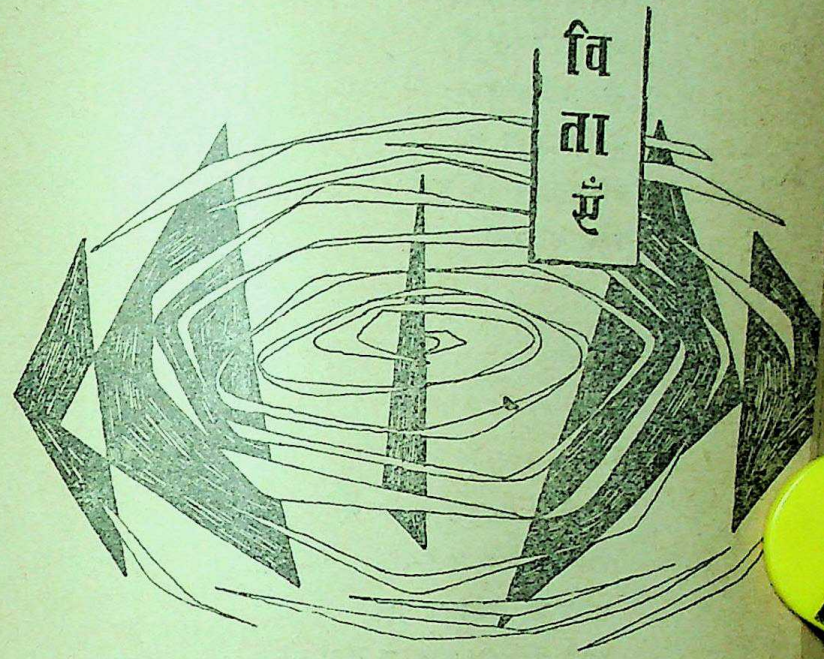

इन्दु जैन
ममता अग्रवाल
कुंकुम जोशी

■

पहली

पतली पगडण्डी-सी
धूल भरी सूनी माँग
अधर-धरे
प्यार के मंगल नक्षत्रों से भरी !
माथे पर ज्योति झरी !
फिर भी—
मन की कोयल मूक—
निधि की महत्ता से रही
डरी-डरी !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरी

गुलाब-सी सुबह में
काँटे-सा कसकता मन—
चाँद के दर्पण में
चोट की तरेड़—
मेरी बिटिया के
बादल-से पैर में चुभी
शीशे की कनी—

तीसरी

ख़ुशी के लबरेज़ प्याले में
नथ का मोती चू गया,
भाग्य का एकमात्र द्वार
अपने ही हाथ बन्द हो गया—

अब विस्फारित नेत्रों आगत की प्रतीक्षा है !

—इन्दु जैन

पहली

शक
बड़ी अच्छी स्थिति है,
अपने से हट,
हम
उस समय
पूरी तरह
दूसरों में रुचि लेते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरी

पत्नी
हर बार ताज़ी ही लगे;
दोस्त
हमेशा दोस्त ही रहे;
अफ़सर
सदा बुद्धू ही मिले;
ज़िन्दगी
कितनी सरल हो !

तीसरी

आज ख़ुश हू
ख़ुद से
सब से,
लिख नहीं पाऊँगी, सच !

—ममता अग्रवाल

■

पहली

आओ हम काग़ज़ी नावें बनायें –
चुल्लू-भर पानी को सतही गढ़ों में फैला दें –
फिर –
उन सफ़ेद नावों में
अपनी शर्म को
अपने पापों और पुण्यों को
और –
प्रत्याशाओं....
या नाजायज़ जनमे सपनों और सुखों को –

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थपकियों से सुलाकर किसी दूर देश के लिए –
छोड़ दें।

आओ न ?—
आओ हम काग़ज़ी नावें बनायें।

दूसरी

आज अनायास मन में—
दिनों पुराने –
उखड़े और मटमैले
अँधेरी बालकॅनी के कोने में रखे –
बूढ़े गमले में—
काँटों घिरा चुभ रहा है—
पीला – सूखा
सिकुड़ा एक –
'किस् मी क्विक'

तीसरी

ज़िन्दगी—
खिड़की के पल्ले की तरह है –
जिसे मैंने ग़ौर से देखा है
रंगभरे पर्दों से सज़ा दिया है
अकसर अपनी नम पलकें टेकी हैं
तपन बुझा दी है –
और कभी बूँद भीगे शीशे में अनदेखी तस्वीरें देख
—उसे चूम लिया है
बिन माँगे ढेर प्यार दे डाला
और कभी नहीं सोचा—
वह लकड़ी और शीशे का—
सिर्फ़ एक खिड़की का पल्ला है।

—कुंकुम जोशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीली झील का सपना

लक्ष्मीकान्त वर्मा

घुंघराले बालोंवाला अजित बहुधा उसके घरके सामनेवाली सड़कसे ठीक दस बजे निकलता था! सुषमा यह नहीं जानती थी कि वह कौन है लेकिन अभी हाल ही में उसने 'रैन-बसेरा' नामका जो उपन्यास पढ़ा था उसके कवरपर जो तसवीर बनी थी वह बिलकुल अजितके समान ही थी। जब वह उपन्यास पढ़ रही थी तभी उसे लग रहा था जैसे उसका नायक – जिसकी तसवीर मुखपृष्ठपर बनी हुई है – ठीक उसीके समान होगा! घुँघराले बाल, काला धूपका चश्मा, शार्कस्किनका बुशर्ट, निहायत ही सोबर पिंक रंगका पैण्ट और हाथमें एक घड़ी, कलाईपर चमकती हुई! पहले वह कभी-कभी अपने कमरेके सामने बैठकर आते-जाते अजितको देख लिया करती थी लेकिन अब तो जैसे वह ठीक समय-घड़ी तक जानती है···मिनट-मिनट···सेकेण्ड-सेकेण्ड तक जानती है···ठीक दस बजे वह नयी साइकिल लिये निकलता है। उसके ओठोंमें एक निहायत सफ़ेद सिगरेट लगी रहती है···पीछे चमड़ेका एक पोर्टफोलियो···कुछ किताबें! सुषमाको विश्वास था, उपन्यासके नायकके समान वह भी किसी कॉलेजका प्रोफ़ेसर होगा। केवल इस प्रोफ़ेसरकी एक झलकके लिए सुषमा बाल्कनीपर खड़ी रहती। कभी सोचती – कौन है यह? नाम भी तो उसे नहीं मालूम! इसलिए उपन्यासके नायक अजितके नामसे ही वह उसे सम्बोधित करती है—जानती है! अजित···अजित···

आज जब दस बजे वह दोबारा उसके घरके सामनेसे निकल गया तो सुषमाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस उपन्यासको दोबारा पढ़ा – विशेषकर वह चित्रण जहाँ अजित मधुके साथ एक अनजान रेलवे स्टेशनपर अकस्मात् ट्रेन-दुर्घटनाके कारण मिलता है। दोनों एक ही वेटिंग रूममें बैठे हैं। मधु किसी कॉलेजकी प्रिन्सिपल है। अपने सेकेण्ड क्लासके वेटिंग रूममें बैठे-बैठे पहले दोनों अपनी-अपनी किताबें पढ़ते रहते हैं···फिर उन्हीं किताबोंके ऊपर लिखे हुए नामोंसे एक-दूसरेको जान लेते हैं···फिर दोनोंमें बात होती है···अजित प्रेमको नहीं मानता···मधु प्रेमको संसारका सर्वप्रधान गुण मानती है···दोनों बातें करते हैं····

अजित कहता है, "हम मर्दोंको प्रेमकी कोई ज़रूरत नहीं···"

मधु कहती है, "प्रेमकी निन्दा करनेवाला मनुष्य नहीं है···"

अजित कहता है, "मैं अपनेको मनुष्य कब कहता हूँ····"

मधु कहती है, "प्रेम एक दिव्यलोक है। जिसमें पहुँचकर मनुष्य, मनुष्य नहीं देवता बन जाता है···"

दोनोंमें मतभेद होता है, वे सहमत नहीं होते। लेकिन तमाम रात इसी प्रकार बातें करते बीत जाती है। मधुकी आगरे जाने-वाली गाड़ी पहले आ जाती है। मधु जाने लगती है। अजित उसे ट्रेनमें छोड़ने जाता है। गाड़ी छूटनेवाली होती है तो जाने क्या अजितको हो जाता है! उसकी आँखोंमें आँसू आ जाता है! गाड़ी चल पड़ती है। छलछलाये नेत्रोंसे मधु उसे दूर तक देखती जाती है – उस समय तक देखती जाती है जबतक अजित आँखोंसे ओझल नहीं हो जाता। अजित प्लेटफ़ॉर्मपर अकेला रह जाता है। अपने पैण्टकी जेबसे वह रूमाल निकालता है। आँखोंके कोरके सूखे कोए पोछ डालता है और नीले शून्याकाशकी ओर देखने लगता है! पता नहीं उसे क्या हो गया था···

और यह वर्णन पढ़ते-पढ़ते स्वयं सुषमा न जाने किस स्वप्नमें डूब गयी थी! उसे लग रहा था, वहाँ उस सुदूर अनजान पहाड़ी स्टेशनपर अजित और मधु नहीं थे बल्कि सुषमा और अजित थे···सुषमा जो प्रेमको संसारका सबसे बड़ा मूल्य मानती है···सुषमा जिसकी आँखें अजितके लिए सदैव प्यासी मछली-सी उस खिड़कीके लोहेवाले सींखचोंसे उलझा करती हैं। सोचते-सोचते उसकी आँखोंमें आँसू भर आये। उसे अपने कमरेकी खिड़की रेलके डिब्बेकी खिड़की-सी लगने लगी। उसे लगा उसकी आँखोंमें ठीक वैसे ही आँसू हैं जैसे मधुकी आँखोंमें थे! उसे लग रहा था, सामनेकी तारकोलवाली सड़क सड़क नहीं प्लेटफ़ार्म है। वह स्वयं घरमें नहीं गाड़ीमें बैठी हुई है! सुषमा कुछ कहनेवाली थी····वह धीरेसे बोली भी– 'अजित!' – लेकिन वहाँ कोई भी नहीं बोला। सहसा उसके हाथसे किताब छूट गयी। वह एकदमसे चौंक पड़ी···उसकी पीठमें तख़्तकी सख़्त लकड़ियाँ जैसे चुभने लगीं···उसने करवट लेनी चाही···लेकिन लगा जैसे उसका सारा जिस्म जकड़ा हुआ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है! जिसके जोड़-जोड़में अकथ पीड़ा है··· असह्य वेदना है···

वह एक झटकेके साथ उठी। सहसा उसने अपने लम्बे कुरतेके ऊपरसे खिसके हुए दुपट्टेको उठाया। अपने धड़कते हुए हृदयको उसने उस दुपट्टेमें बाँधना चाहा··· लेकिन उसकी बेबसी जैसे उसे घेरे खड़ी थी···उसे कुछ अजीब-सा अनुभव हो रहा था! एक ऐसी स्थिति जिससे वह पहले परिचित नहीं थी। एक ऐसी भावना जिसका मूल्य उसे मालूम नहीं हो रहा था। उसे याद आया किसी सिनेमाका देखा हुआ दृश्य जिसमें उसने 'अजित' को देखा था···(अजित ही कहना ठीक होगा क्योंकि अजित ही उसकी उस विचित्र मनःस्थितिका प्रतीक है)···एक पहाड़ियोंसे घिरी हुई झील, उसमें पालवाली एक नाव और पालमें बैठी हुई मधु! नहीं-नहीं, वह स्वयं और उसके पास बैठा हुआ अजित···सुषमाने नीली झीलके पानीमें अपना हाथ डाल रखा था···उसके लाल कमल-से हाथ और उसकी कलाई तक भरी हुई चूड़ियाँ उस पीले जलमें एक रहस्यमय स्वप्न-सी लगती थीं···उसका दूसरा हाथ सहसा अजितने पकड़ लिया था··· सुषमाको रोमांच हो आया था····उसने निहायत ही बेबस और मजबूर आँखोंसे अजितकी ओर देखा था···अजितकी झुकती हुई पलकें जैसे झुकी जा रही थीं···उसकी आन्तरिक वेदना जैसे उमड़ी आ रही थी····

सहसा बीनी दीदीने सुषमाको पुकारते हुए कमरेमें प्रवेश किया···बीनी दीदीने दो बार पुकारा लेकिन सुषमा दोनों बार नहीं सुन पायी। तीसरी बार जब उन्होंने कमरेमें प्रवेश करके पुकारा तब उसकी निद्रा टूटी। उसे नहीं पता था कि उसकी बीनी दीदी सहसा लखनऊसे आ जायेंगी। उसने उलटकर देखा···बीनी दीदी उसके सामने खड़ी थी ···माँगमें चमकता सिन्दूर···आँखोंमें काजलकी रेख···उतरे हुए नशेकी-सी खुमारीमें डूबा हुआ जिस्म, आलस्य और उन्मादसे बोझिल ···गम्भीर···। एकटक कुछ देर तक तो सुषमा बीनी दीदीको देखती रही फिर सहसा न जाने कितनी स्फूर्तिसे उठी! उसने बीनी दीदीको एकदम बाँहोंमें कस लिया!···खूब जोरसे कस लिया और एकदम वेदना विग-

सुषमा उठी, उसने लाइट आँफ़ कर दिया! दोनों चारपाईपर दो तरफ़ मुँह करके सो गयीं! दोनों एक-दूसरेको सोते हुए जानकर आँखें बन्द करके पड़ी रहीं लेकिन वस्तुतः दोनों ही नींदमें सो नहीं पाती थीं! बीनी दीदीका पतिसे अलग रहनेका यह पहला अवसर था इसलिए उन्हें भी नींद नहीं आ रही थीं और उधर सुषमाकी आँखोंके सामने उसी उपन्यासमें वर्णित नीली झीलका सपना तिर रहा था···! दोनों ही जाग रहीं थी किन्तु दोनों ही एक-दूसरेको सोता हुआ जानकर चुप थीं! कोई एक-दूसरेकी नींद ख़राब करना नहीं चाहता था!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लित स्वरमें दीदीके कन्ध पर सर रखकर कहती रही – दीदी !···मेरी दीदी !··· प्यारी दीदी !···दीदी !···दीदी !···

■

बीनी साल-भर बाद लखनऊसे आयी थी। वह समझ न पायी कि सुषमाको क्या हो गया है। उसने सारी भाव-व्यंजनाको सहज भावमें ही लिया। उसने सोचा, शायद साल-भर बाद वह सुषमासे मिल रही है इसलिए उसके भाव इतने वेगसे उसपर हावी हुए जाते हैं। उसने सुषमाकी पीठपर थपकियाँ देते हुए अपनेसे विलग किया।··· सुषमाकी आँखोंमें आँसू थे···बीनी दीदीकी आँखोंमें भी आँसू थे। भीतरसे जब माँने यह देखा तो उसकी भी आँखोंमें आँसू आ गये····उस समय तो वह बीनी दीदीके साथ घरमें चली गयी लेकिन फिर बोझिल-सी वह आकर अपनी चारपाईपर चादर ओढ़कर लेट गयी। उसी उपन्यास रैन-बसेराका दृश्य फिर उसकी आँखोंके सामने नाचने लगा···· फिर किस तरहसे अजित मधुसे मिलने आगरे गया। मधुको जब मालूम हुआ कि अजित नामका कोई व्यक्ति उससे मिलने आया है तो उसका जी धकसे हो गया। उसने चप-रासीसे कहा, उन्हें बँगलेपर ले चलो···खुद ···कुछ काँपती···कुछ घबराती-सी थोड़ी देर बाद बँगलेपर आयी। अजित वहीं बैठा था ···बड़े संकोचसे उसने अभिवादन किया···· मधुको जैसे उस प्रणाम या नमस्कारके उत्तर-में कुछ कहना कठिन हो गया था···वह बिलकुल अनमनी-सी घबरायी-सी, खड़ी रही। थोड़ी देर तक दोनों मौन रहे लेकिन फिर अजितने कहा, "ग्वालियरसे आ रहा था सोचा, एक दिनके लिए आगरे रुक जाऊँ आपसे मिलता जाऊँ···"

मधु मौन ही रही। वह भीतर चली गयी और बादमें वह स्वयं अजितको भीतर लिवा गयी। उसने अपने हाथसे अजितको खाना खिलाया। उसके जीमें आता था कि वह अजितसे सारी, सब कुछ, अपने मनकी गहराइयोंमें डूबी बातें कह दे···· लेकिन जाने क्या हुआ था···रात···उसी आधीरातके अजित मधुसे विदा लेकर जाने लगा था···उसने मधुके मुक्त केशोंको उसके मुख-मण्डलके दोनों ओर बिखेरकर, उसके बीच घिरी उसकी प्रदीप्त आँखोंमें आँखें डालकर, मन्त्रमुग्धसा जाने क्या कहता रहा था···सुषमाको लगा अजितके वही दोनों हाथ उसके बालोंमें उलझते-उलझते उसके कपोलोंके दोनों ओर बिलकुल विद्युत्-स्फूर्ति से आ गये हैं···उसने कुछ क्षणके लिए अपनी आँखें बन्द कर लीं अपने दाँतोंसे अपने होंठ काट लिये···फिर जाने क्यों उसने दाँतोंसे होंठ इतने जोरसे काट लिये कि वह चौंक पड़ी। उसने बाँहें अलग कर दी। चारपाईपर ही करवट लेकर गयी। उसने देखा कि उसके सिरहाने बैठी दीदी खड़ी थी। दीदीके हाथ उसके बाल सहला रहे थे। दीदी कह रही थी, "सुषमा, तेरा तो बदन बिलकुल आग-सा तप रहा है····तुझे बुखार है····!" सुषमा कुछ नहीं बोली। वैसी ही पड़ी रही। माँने कहा "इसे यूँ ही पिछले दो हफ़्तोंसे बुखार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरारत हो आती है···अपने आप कुछ देरमें ठीक हो जाती है·····"

"नहीं-नहीं···यह रोज़-रोज़का बुख़ार आना ठीक नहीं माँ ! इसे किसी डॉक्टरको दिखाओ, सुषमाको कुछ हो गया है।"

सुषमा चुपचाप चारपाईपर पड़ी उसकी बातें सुनती रही···मौन···निस्पन्द···संवेदनासे बोझिल···उन्मिल···एकदम थकी···चूर-चूर·····!

शाम हो गयी थी। चार-साढ़े चार होनेको आये थे। सहसा सुषमाको अजितके वापस आनेका समय याद हो आया। वह एकदमसे उठकर बैठ गयी। खिड़कीके सीखचोंसे बाहरकी ओर देखने लगी। ठीक पाँच बजे···वही घुँघराले बालोंवाला अजित साइकिलपर अपना पोर्ट-फोलियो लादे वापस हुआ। सुषमाने देखा···अजित दिन-भरमें थककर चूर हो गया था। इस समय थकावटमें डूबा सारा शरीर जिस आलस्यमें अटपटा-सा लग रहा था वह भी सुषमाको अत्यन्त आकर्षक मालूम हो रहा था ! उसके अस्त-व्यस्त घुँघराले बाल और चेहरेपर हलकी श्यामल परछाईं कुछ अजीब लग रही थी। अजित जब उसकी खिड़कीके ठीक सामने ही साइकिलसे उतरकर बात कर रहा था तो सुषमा एकटक उसे उस समय तक देखती रही जबतक उसकी आँखें अजितसे चार नहीं हो गयीं। अजितने जब उसकी ओर देखा तो एक बार फिर उसके समस्त शरीरमें एक बिजली-सी दौड़ गयी। 'रैन-बसेरा' उपन्यासकी नीली झीलवाला दृश्य फिर उसकी आँखोंके सामने नाच गया। इस बार उसे लगा कि चूड़ियोंसे भरी उसकी गोरी कलाई मात्र ही नीली झीलमें नहीं है वरन उसका सारा शरीर ही उस नीली झीलके अतल तलमें लहरोंसे जूझ रहा है। कुछ लहरें उसके सरके ऊपरसे निकली जा रही हैं और वह थिर है, बिलकुल थिर !

रातको जब वह बीनी दीदीके साथ एक ही पलँगपर लेटी तो उसने बीनी दीदीसे जीजाके बारेमें अनेक जिज्ञासाएँ प्रकट कीं। बीनी दीदीने उसे बताया कि उसके जीजा बिना उसके कहीं नहीं जाते। ऑफ़िससे आनेके बाद वह नियमित रूपसे उसके साथ घूमने जाते हैं। खाना भी वह दोनों साथ ही बैठकर खाते हैं। रात-रात-भर वह दोनों आपसमें बैठकर बातें करते रहते हैं !···नींद ही नहीं आती। सुषमाने पूछा भी कि आख़िर वह कौन-सी बात है दीदी जो तुम रोज़ रात-रात-भर जागकर करती हो ? बीनी दीदीने एक सरल मुसकानके साथ कहा, "तुम भी जान जाओगी सुषमा !···बातें ढूँढ़ी नहीं जातीं, जाने कहाँसे अपने आप पर्तकी-पर्त निकलती आती हैं·····"

उस रोज़ भी वह दोनों रात-भर जगती रहीं, सुबहको जब गंगास्नान करनेवाले लोग गलियोंसे निकलकर भगवत-भजन गाते हुए जाने लगे तब सुषमाको लगा जैसे वह दीदीसे तमाम रात बात करती रही है। सुषमाने कहा, "लगता है दीदी, जीजासे बातें करते-करते तुम्हारी आदत पड़ गयी है···देखो न, तुम आज भी रात-भर जागती रही···"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं क्या करती···तू जो अजीब-अजीब बातें करती रात-भर जगाती रही··· मैं तो कबकी सो जाती···!" बीनी दीदीने कहा।

सुषमा उठी, उसने लाइट ऑफ़ कर दिया। दोनों चारपाईपर दो तरफ़ मुँह करके सो गयीं। दोनों एक-दूसरेको सोते हुए जानकर आँखें बन्द करके पड़ी रहीं लेकिन वस्तुतः दोनों ही नींदमें सो नहीं पाती थीं! बीनी दीदीका पतिसे अलग रहनेका यह पहला अवसर था इसलिए उन्हें भी नींद नहीं आ रही थी और उधर सुषमाकी आँखोंके सामने उसी उपन्यासमें वर्णित नीली झीलका सपना तिर रहा था····! दोनों ही जाग रही थीं किन्तु दोनों ही एक-दूसरेको सोता हुआ जानकर चुप थीं। कोई एक-दूसरेकी नींद खराब करना नहीं चाहता था।

श्रद्धाकी यह रेखा सुषमाके हृदयपर एक गाढ़ी लकीरके समान गहरी और संवेदनापूर्ण हो रही थी। 'रैन-बसेरा' उपन्यासके नायक अजितका पूर्ण साक्षात्कार वह उस युवकमें देखती थी। धीरे-धीरे उसे यह भी मालूम हो गया कि वह कहाँ रहता है। आते-जाते वह उसके घरपर भी एक दृष्टि डाल लेती थी। हरे, लाल, पीले भूरेसे घिरा हुआ उसका घर उसे बड़ा अच्छा लगता था। कभी-कभी बारजेपर एक बड़ी सुन्दर महिला भी खड़ी मिलती थी। सुषमाने उसके सौन्दर्य और उसकी गम्भीरता और सादगीसे यह अनुमान लगाया था कि वह उसकी बहन है। वह जब कभी उसे देखती थी तो जाने क्यों उसे या तो एक गीतकी कड़ी याद आ जाती थी या वही नीली झील[illegible] दृश्य! वह स्वयं अपने-आपको मधुके नि[illegible] पाती – उस मधुके निकट जिसको [illegible] अभी हालमें आयी एक सिनेमाकी नायि[illegible] जा मिलाया था। कैसी थी वह प्रति[illegible] पिक्चरकी हीरोइन! श्वेत वस्त्रमें दम[illegible] उसका गोरा जिस्म····एक सरल किन्तु [illegible] शय मोहक रूप! उसे सहसा एक [illegible] और याद आता, वही फ़ैन्टेसीका स्व[illegible] नृत्य·· धुएँसे भरा वातावरण, एक सा[illegible] सा उद्दाम चंचल लहरोंवाला वर्तुला[illegible] सागर और एकदम आकाशोन्मुख अनगि[illegible] सीढ़ियोंकी एक कतार···उसे लगता जैसे [illegible] स्वयं श्वेत वस्त्रमें सजी, पूजाकी [illegible] हाथमें लिये उन सीढ़ियोंपर चढ़ी जा [illegible] है···चढ़ी जा रही है···अनन्त सीढ़ि[illegible] चढ़ते-चढ़ते वह जाने कहाँतक पहुँच [illegible] है और उन सीढ़ियोंके उस पारसे [illegible] अजित अपने घुँघराले बालों एवं सुसज्जि[illegible] वेशभूषामें ऊपर चला आ रहा है···दोनों [illegible] जाने किस सीढ़ीपर अकस्मात् मिल [illegible] हैं···हतप्रभ-सी सुषमाके हाथकी थाली [illegible] जाती है और सारा वातावरण झनझना[illegible] शान्त हो जाता है! अजित उसे अपने [illegible] भर लेता है। लहर लेती हुई सुषमा[illegible] कंचन काया उसकी बाँहोंमें सिमट [illegible] है···और दोनों धीरे-धीरे उस ऊँची सी[illegible] उतरकर उसी धुँएके उद्दाम लहर-विलो[illegible] सागरमें आ जाते हैं···एक लज्जित प्रति[illegible] सी सुषमा अजितकी गादमें, उसकी बाँ[illegible] सिकुड़ी-सी जाती है·····

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और जब सुषमाकी यह मनःस्थिति सहसा किसी हलके झटकेसे दूर हो जाती और वह बिलकुल निराश-सी अपनेको उस कमरेमें पाती तो उसे अजीब-सा लगता ! वह अपने वस्त्र ठीक करने लगती···कभी-कभी अपने आँचलका छोर अपने दाँतोंसे कुतरती···कभी कमरेमें लगे बड़े शीशेके सामने खड़े होकर, एक बार अपने ही रूपको देखकर उसपर आसक्त-सी हो जाती···उसे लगता कि उसकी उनींदी आलस्यमें डूबी मद-भरी आँखोंमें जाने कहाँकी सुन्दरता आ गयी है ! उसे लगता जैसे उसकी बाँहोंमें दर्द हो रहा है···जैसे अजितकी बाँहोंने एक गहरा दाग़ उसके जिस्मपर छोड़ दिया है··· उसे लगता कि वह अपनी जिस्मकी सीमाओं-का अतिक्रमण कर रही है···वहीं उसका रूप छलककर बाहर जा रहा है···

बीनी दीदीसे भी वह अपनी मनःस्थिति नहीं कह पाती···कभी दबे स्वरमें कहती – "मेरी तबीयत ठीक नहीं है।" कई बार इस तरहकी शिकायत करनेपर बीनी दीदी उसे लेकर डॉक्टरके यहाँ गयी थी। डॉक्टरने जो कोई रोग नहीं बताया था और न ही कोई दवा दी थी···लेकिन बीनी भी जानती थी कि सुषमाकी तबीयत ठीक नहीं है···रह-रहकर उसका जिस्म एक जलते लोहेके तवेके समान तपता दीख पड़ता·····उसके टूटते जिस्ममें जाने कैसी वेदना है···जाने कैसा ज्वर है जो हड्डियोंको तपाता है···तैरता है··· पिघलता है और उसे शराबोर कर देता है और जब वह इस मनःस्थितिमें थककर बिलकुल चूर हो जाती तो वह फिर उसी उपन्यासको उठा लेती···वही स्टेशनपर अनजानेमें मिले अजित और मधुकी वार्ता पढ़ती····सोचती, कैसे मिले होंगे वे···कितनी मधुर रही होगी अनुभूति···उसे लगता जैसे वह स्वयं ट्रेनमें बैठी दूर, बहुत दूर चली जा रही है··· उसकी आँखोंमें आँसू हैं···अजित प्लेटफ़ार्म-पर खड़ा उसे देख रहा है···विदा दे रहा है···कौन जाने प्लेटफ़ॉर्मपर खड़ा अजित अपने भीतर उमड़ते हुए आँसुओंको एक दम पी रहा हो···

और यह सोचते ही एक अजीब-सा रोमांच हो आता सुषमाको····वह जैसे अपनेसे ही जूझते-जूझते थक जाती। बेदम हो जाती···लगता जैसे वह अपनेको ढूँढ़ रही है···अपनी छायाको खोज रही है। अपने अस्तित्वकी सार्थकताको खोज रही है··· अपने अर्थको जानना चाहती है और उसे कुछ भी पता नहीं चल रहा है···वह टूटी हुई-सी, आत्मविशृंखल-आत्मवंचित-सी है···

और उस दिन अजीब घटना घटी। बीनीने उसे बताया कि उसके मकानके दूसरे हिस्सेको पिताजीने किरायेपर उठा दिया है। पहले तो उसमें एक रिटायर्ड सरकारी अफ़सर अपनी बूढ़ी पत्नी और एक अलशे-सियन कुत्तेके साथ रहते थे लेकिन जबसे वे छोड़कर गये थे तबसे वह मकान इसलिए किरायेपर नहीं उठा था कि सपरिवार पति-पत्नीके साथ रहनेवाला कोई किरायेदार आया ही नहीं था। बीनीने सुषमाको बताया कि आनेवाले परिवारमें केवल दो व्यक्ति हैं–

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक पति है और दूसरी पत्नी ! सुषमाको लगा यह बड़ा अच्छा है। अवकाशके समय वह उन दोनोंसे बातें करेगी···उसका कुछ समय कट जायेगा। उसने जिज्ञासासे पूछा, "कौन लोग हैं ?"

"यह मैं नहीं जानती···" बीनीने कहा।

"बच्चे होंगे,···क्यों दीदी ?" सुषमाने पूछा।

"कोई नहीं,···अभी पिछली गरमियोंमें तो शादी हुई है···पापाके बहुत पुराने दोस्त खन्ना साहबके लड़के हैं···"

"खन्ना साहबके लड़के ?" सुषमाने पूछा।

"हाँ, हाँ, बिजनौरवाले खन्ना चाचाके लड़के।" बीनीने कहा।

"क्या कहती हो दीदी,···अजित···?"

बीनी चुप हो गयी। जैसे वह उत्तर ही नहीं देना चाहती थी। सुषमाको अपना बचपन याद आ गया। बिजनौरमें जहाँ वह रहती थी उसीके सामनेवाले खन्ना चाचा ! कितनी मोटी-सी थी मिसेज़ खन्ना।··· हमेशा कोई-न-कोई अचार ही बनाती रहती थी···अजित भी दिनमें तीन-चार बार घरमें आता ही था···कभी कोई अचार लेकर, कभी कोई नयी बनी चटनी लेकर···कभी खल माँगने तो कभी कुछ···सुषमासे उससे नहीं बनती थी। वह धूलमें नहीं खेलता था क्योंकि मिसेज़ खन्ना जब नाराज़ होती थीं तो बुरी तरह पीटती थीं···

यह सारी बातें वह दिन-भर सोचती रही। दिन-भर उसके दिमाग़में बिजनौरका ही दृश्य नाचता रहा। केवल एक बार अनमनी-सी होकर उसने 'रैन-बसेरा' उठाया था। उसके कुछ पृष्ठ उलटे थे, उसका जी नहीं लगा था। आज दिन-भर खिड़कीपर खड़ी रही थी। उसे वह घुँघराले बालोंवाला अजित भी नहीं दिखा। जाने क्या हो गया था उसे, वह आया नहीं···हारकर तब वह बीनी दीदीसे न जाने क्या-क्या बातें करने लगी थी। शायद बीनी दीदी अपनी सासके बता रही थी···कितनी सीधी, सरल सुन्दर स्वभावकी थीं वह···सुषमा चुपचाप सुन रही थी।

शामको जब वह अपनी माताजीके चौकेमें थी तभी बीनी दीदीने कहा, लोग आ गये। सुषमाके जीमें आया कि उठकर जाये फिर न जाने क्यों वह न माँने कहा, "अजित इतना बड़ा हो बीनी···ज़रा उसे भीतर तो बुलाना, मोहल्लेमें रहता था, छह महीनेसे, लोगोंसे मिलने ही नहीं आया···!"

और दूसरे क्षण अजित बिलकुल में खड़ा था। अचकचाकर सुषमाने ओर देखा···वही घुँघराले बाल···का बुशशर्ट···बायें हाथमें सुनहला और मुसकराता हुआ चेहरा···उसे अजित आँगनमें नहीं उसी नीली खड़ा है···वह बेलनसे रोटी बेल रही बार-बार हाथ हिलानेमें उसकी कसी चढ़ी मीनेकी चूड़ियाँ उसे ऐसी रही थीं जैसे वे उसी नीली झीलमें थीं···वह अपने काममें ही लगी रही।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

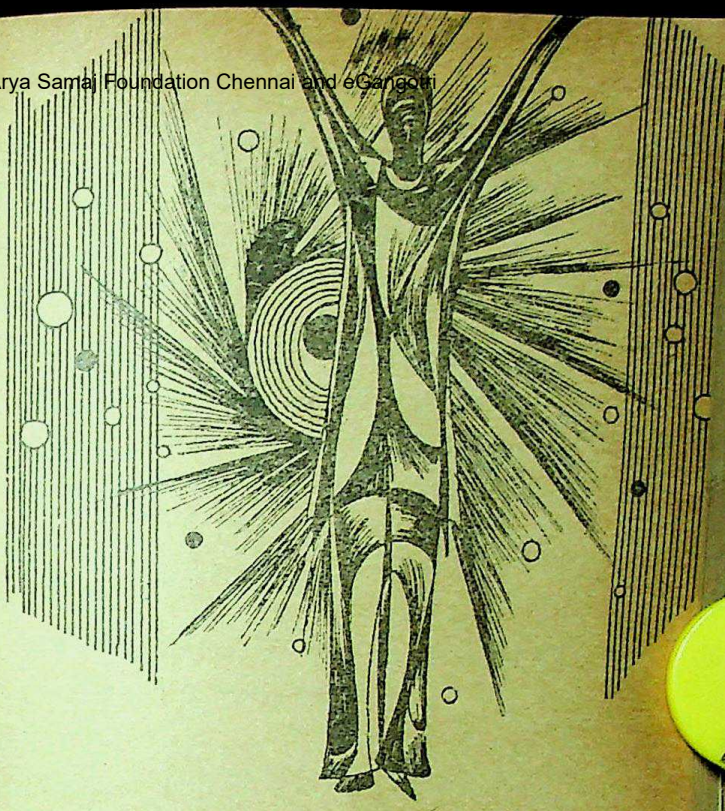

एक नमूना सार्थक दिन

श्यामरंजन

छुट्टीका दिन था। वह सुबहका खाना और दोपहरकी चाय लेकर सुखद ढंगसे समय गुज़ारनेके बाद डॅक्टन हाउस नामकी इमारतके एक हिस्सेसे निकला जहाँ उसके एक नये-से मित्रने उसे निमन्त्रित किया था। उसका यह मित्र एक युवा अँग्रेज़ी-प्राध्यापक था और शहरमें तेज़ उभरते हुए बुद्धिजीवीके रूपमें जाना जाता था। आज पहली दफ़े वह उसके घर, कई जोश-खरोशकी बुलाहटोंके बाद, गया था।

उसने अधिकांश समय विवादास्पद साहित्यिक, राजनैतिक विषयोंमें व्यतीत किया और खानेकी मेज़पर दोस्तकी बीवीसे बड़े पुरअसर गुदगुदाने-वाले मज़ाक़ भी किये। उसका एक लतीफ़ा बहुत जानदार था, जिसपर उसके मेज़बान-दम्पति विभोर रहे। उस समय उसके नये दोस्तने तुरत अपनी पत्नीकी तरफ़ देखा। पत्नीने भी तत्काल पतिसे आँखें मिलायीं। जानबूझकर। या यह कहना अधिक ठीक होगा, उसके लतीफ़ेको कुछ देर और जीवित बनाये रखनेकी लालसासे देखा। उसने पाया, दोस्तकी आँखोंमें एक बोलता गर्व छलक आया है: देखा, मेरे दोस्तकी ज़ोरदारी, कैसा मज़ाक़ करता है? बीवीके नेत्रोंमें भी झलमलाहट थी, मस्त-मस्त और तरुण:

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस समय वह कुछ भी कर सकता है। मसलन तेज़ रेडियो सुनना, किसी भी फ़िल्मका तीसरा शो देख लेना, तनख़्वाहके बचे पूरे पैसोंको होटलमें खर्च कर देना, बशर्ते इसी समय इत्तफ़ाक़से कोई दोस्त या परिचित आ टपके। वह किसी ऐसे व्यक्तिके ऊपर भी थोड़े पैसे खर्च करना स्वीकार कर सकता है, जिसे उसने अभी तक पसन्द न किया हो। लेकिन उसने यह सब-कुछ नहीं किया। उसने लगातार दो-तीन सिगरटें पीते हुए केवल चेन स्मोकिंग-सरीखी हरकत की।

हाँ प्राणेश्वर, मानी तुम्हारे दोस्तकी ज़ोरदारी !

जिस इमारत, डॅक्टन हाऊसके एक हिस्सेसे वह निकला था, वह बहुत साधारण और पुरानी है। एक छोटा कटा संगमरमर-का टुकड़ा, सूखी काईसे काले पड़ गये द्वार-स्तम्भके ऊपर इमारतका नाम किसी तरह जीवित किये हुए अटका है। बाहर बेहद साफ़-सुथरा चमकता हुआ अपराह्ण, सुनसान सड़क और उसको काटती वीथिकाएँ हैं। वह सन्तुष्ट मुखाकृति लेकर बाहर आया और सदरकी दिशामें जानेसे पूर्व एक बार उसने पल-भरको, कलात्मक ढंगसे ठिठककर, यह सोचा कि वह किधर चले ?

वह सोचने लगा, मित्रने उसे काफ़ी अच्छी और मँहगी चीज़ें नाश्तेमें खिलायीं, जो वह निश्चित रूपसे सभी दूसरोंको नहीं खिलाता होगा। उसने पाया, परिचितों और मित्रों-द्वारा उसे काफ़ी गम्भीरतासे लिया जाता है। उसकी ज़िदपर लोग तुनकते नहीं और अकसर की जानेवाली बौद्धिक हेकड़ियाँ भी उन्हें बर्दाश्त हो जाती हैं। वह इस निर्णयपर पहुँचा कि उसके अधिकांश दोस्त मूर्ख, पिछड़े और निहायत मामूली हैं। उसे उनसे ज़्यादा लगना नहीं चाहिए।

रास्तेमें सदर बाज़ारकी एक दुकानसे उसने 'मॅक्रोनी'का एक डिब्बा खरीदा जो सम्भवत: दुकानदारके पास एक ही था। उसे मनमें हलका तैश हुआ कि एक आसानीसे न मिल सकनेवाली वस्तु भी यहाँ सहज मिल रही है। अगर दुकानदार 'सॉरी' कह देता तो वह अपनेको विजयी-सरीखा पाता। डिब्बेके निकलकर आने और लापरवाहीसे दसका नोट काउण्टरपर फेंकनेके बीच वह एक सरसराती उपेक्षा, वस्तुत: जिसमें खासी दिलचस्पी गोपन थी, पूरी दुकानपर फेंकता रहा। यह भी ढूँढ़ता रहा, 'मॅक्रोनी' मांगने पर दुकानदार उसके प्रति कहीं रत्ती-भर चौकन्ना हुआ है अथवा नहीं।

सिगरेट सुलगाकर जब वह सड़कपर चला तो, उसे वे ही लोग थोड़ा-बहुत दीखते रहे जो उससे बेहतर कपड़ोंमें थे, जिनकी आँखोंमें सम्मोहन था या जिन्हें मजाकमें 'बॉटैनिकल' भाषामें कालेजके लड़के 'गा नॉशियम' कहा करते हैं।

वह थोड़ा तेज़ चला। यह ध्यान रखते हुए कि तेज़ चलना पीछेवालोंको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फूहड़ न मालूम पड़ने लगे। बल्कि वह शाही भभक भी अधिकाधिक बनी रह सके, जिसे अपनी चालसे अभिन्न बनानेमें उसे काफ़ी दिन लगे थे। धूप उतरती हुई थी और सड़कपर उसे मौसम अपरिचित और विदेशी-सा लग रहा था। शामको उसके यहाँ लोग आते हैं। विशेष रूपसे छुट्टियोंके दिन अधिक। वह नहीं चाहता कि लोग आकर लौटें। इसलिए वह थोड़ा तेज़ चला।

घर आकर उसने 'मॅक्रोनी'का टिन बैठकखानेकी मुख्य मेज़पर रख दिया। कोई आ जाये इसके पूर्व जल्दीसे अपनेको ताज़ा कर उसने शनीलका गाऊन पहना और इतमीनानसे सिगरेट बनानी शुरू की। अब कमरेमें तम्बाकूकी खुशबू थी। 'मॅक्रोनी'-का डिब्बा बैठककी टेबलपर रखते समय उसने अपनेको झुठलाया था कि ऐसा वह जानबूझकर नहीं, बस ऐसे ही कर रहा है। जब उसके कुछ परिचित कमरेमें आये तो उनका ध्यान आकर्षित करनेकी ग़रज़से उसने नौकरको आवाज़ दी और झिड़ककर पूछा, क्यों जी, यहाँ किसने यह टिन रख दिया है?

उसने मित्रोंको चाय पिलायी और उन्हें दुनियाके महान् लेकिन अल्पज्ञात ऐसे कलाकारोंकी ज़िन्दगीकी रोमांचक घटनाओंकी जानकारी देनेके अवसर निकाल लिये जिनके सम्बन्धमें उसने हालमें कुछ पढ़ा था। वह निश्चित था, उसके दोस्त उसकी सूचनाओं और बातचीतके ढबपर मन-ही-मन मुग्ध, चमत्कृत हो रहे हैं। बादमें उसने कुछ रूमानी बाकोशवाली कविताओंके टुकड़े और बेतुके चुटकुले भी सुनाये। मित्रोंके जानेपर उसने सन्तोष किया, वह असफल नहीं है और आज-का दिन तो बहुत ठीक है।

बाहर वक़्त निर्जन और उजड़ नहीं गया था। अभी छह ही बजे हैं। उसको लगा जैसे अब कुछ भी करनेको उसके पास बचा नहीं है। उसने चाहा, अकस्मात् कुछ खास घट जाये पर वैसा होनेकी कोई उम्मीद नहीं लगती।

इस समय वह कुछ भी कर सकता है। मसलन तेज़ रेडियो सुनना, किसी भी फ़िल्म-का तीसरा शो देख लेना, तनख़्वाहके बचे पूरे पैसोंको होटलमें खर्च कर देना, बशर्ते इसी समय इत्तफ़ाक़से कोई दोस्त या परिचित आ टपके। वह किसी ऐसे व्यक्तिके ऊपर भी थोड़े पैसे खर्च करना स्वीकार कर सकता है, जिसे उसने अभीतक पसन्द न किया हो। लेकिन उसने यह सब कुछ नहीं किया। उसने लगातार दो-तीन सिगरटें पीते हुए केवल चेन स्मोकिंग-सरीखी हरकत की।

कमरेमें इधर-उधर उसकी अस्थिरतामें बेचैनी नहीं निठल्लापन और चंचलता थी। कुछ ही पलोंमें उसने कई गीतोंको बमुश्किल एक-डेढ़ पंक्ति मात्र गुनगुनाकर छोड़ दिया। वह कहीं टिक नहीं पा रहा है : दूसरे कमरेमें जाकर उसने अपना चेहरा शीशेमें देखना चाहा। और देखनेके बाद उसे लगा, इन दिनों वह अधिक स्वस्थ, सुन्दर और सुस्त हो गया है।

जब कुछ सूझ नहीं पड़ा तो विवश होकर उसने एक विदेशी अँगरेज़ी पत्रिकामें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छपा वह लेख पढ़ना शुरू किया जिसमें उसने पहलेसे ही एक चिट लगा रखी थी। लेख नैतिकता और यौन-स्वच्छन्दता विषयसे सम्बन्धित था। पढ़ते समय उसे शीघ्र ही ऐसे वाक्य मिले जिन्हें उसका मन रेखांकित करनेको हुआ। एक क्षण पढ़ना रोककर वह पसोपेशमें रहा, भाभी कितने तीखे स्वरमें महाराजको डाँट रही हैं और हल्ला हो रहा है। अन्दर जाकर उसने अपनी भाभीसे 'कमसे-कम जब कोई पढ़ता-लिखता रहे तब न भौंकने'के लिए कहा। वाक्योंको रेखांकित करते समय वह हलका संजीदा हो गया। इस लेखके वाक्य हमारे समाजके लिए कितने सच हैं – लेकिन कोई कुछ नहीं समझ रहा है, न समझना चाहता है। ऊँगलीपर गिने जा सकनेवाले लोग हैं जो थोड़ा अनुभव करते हैं, बाक़ी तो भेंड़ हैं। अभी जब उसने ऐसा सोचा तब उसे तैश था और अब हलकी-हलकी निश्चिन्तता और सुखद सिहरन, इस बातकी कि वह भी कहीं उँगलीपर ही है।

वह खिड़कीपर खड़ा होकर अड़-सा गया। और एक काल्पनिक झटकेमें अपनेको एक ऐसे समुद्र-तटपर अनुभव करता रहा जहाँ वह अकेला है। खिड़कीके सीकचोंके पार थोड़ी-सी ज़मीनके तुरत बाद सड़क थी। समुद्र-तटपर अधिक समय वह नहीं रह सका। सड़कपर एक देहाती-सरीखा व्यक्ति सूना चेहरा लेकर आया जो उसमें थोड़ी देर बना रहा लेकिन जिसने उसके समुद्रको पी लिया। मनमें उसने सड़कवाले व्यक्तिके लिए इतना सोचा कि वह बेचारा बिलकुल हिन्दुस्तानका आदमी लगता है। आदमी सड़कके सामनेवाले हिस्सेसे बिलकुल गुज़र चुका और अबतक रिज़की तिमुहानी तक पहुँच गया होगा। वह उस आदमीके प्रति दयाके भाव समर्पित करने लगा। यह कुछ नहीं जानता। संसारकी हज़ारों नयी-नयी चीज़ें यह बेचारा क्या जाने? इसी बीच कुछ लोग निपट अकेले और कुछ दो-दो, तीन-तीनके समूहोंमें गुज़रे। ये सब लाशसे ज़्यादा कुछ नहीं हैं!—वह बुदबुदाता रहा। एक महिला सड़कके धुँधलेपनमें अच्छे शरीर-सौष्ठववाली लग रही है, (जो महज़ भ्रमात्मक भी हो सकता है।) 'प्रैम'में एक शिशुको टहलाती हुई गुज़र रही है। धीरे-धीरे। वह अकेले ही पूछने लगा, क्या यह सुन्दर औरत माँ बन सकती है? 'कभी नहीं,' काफ़ी ज़ोर होकर उसने धीमा उच्चारण किया, सब चीज़ोंको वह असभ्यता मानती होंगी बेहूदा समाज! इस औरतके सामने किसी दूसरी औरतका 'न्यूड' रख दो, यह चीख़ पड़ेगी और फिर ऐसी सुन्दर, सौष्ठववाली नहीं लगेगी जैसी अभी है। उसे याद आया, मीनाने बहुत झिझकते गिड़गिड़ाते हुए कहा था, देखो मान जाओ मैं कभी बाथरूममें भी अपनेको निर्वस्त्र नहीं करती।

चरागाहोंसे भैंसे, सड़क होकर, गोधूलि काफ़ी बाद लौट रही हैं। खिड़कीपर भैंस आयी और फिर सिलसिलेवार बहुत भैंसें थुलथुल निकलने लगीं। सड़कका हिस्सा जो खिड़कीसे नहीं दीख पा रहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुरूमें उसे, वह किसी नाट्यमंचके 'विंग्स'की तरह कल्पित करता रहा। अब वह उसके सम्बन्धमें कुछ भी ध्यान न करके अपनी खिड़कीको एक बड़ा फ्रेम-सरीखा मान रहा है जिसपर चित्रपट बदलता रहता है। यह भी खतम हो गया और वह भैंसोंकी तरफ़ लौटा। अड़ा वह खिड़कीके ऊपर ही है। हाँ, कितनी दिलचस्प बात यह है, उसने सोचा, सड़कसे गुज़रने-न गुज़रनेवाले सभी लोग इन्हीं भैंसों-सरीखे हैं। इस ढंगसे लोगोंके बारे-सोचनेपर वह वाक़ई बहुत आनन्दित और गौरवान्वित हुआ। इसलिए अब खिड़कीवाले मंचपर यवनिका-पतन करते हुए वह हट गया।

उसने यौन-स्वच्छन्दतावाले निबन्धको पढ़ते जहाँ छोड़ा था, वहाँसे पुनः शुरू करनेका इरादा किया। वह ख़ुश ज़रूर है मगर उसे इस बातका आश्चर्य हुआ कि सामान्य दिनोंकी तरह आज उसे पढ़नेमें आराम और धैर्य क्यों नहीं है? दरअसल वह चंचल था और उसके मनमें इस समय वे लोग आते रहे जिनसे तुलना करके वह अपनेको आसानीसे भिन्न पाता है। अपने एक साथीके ऊपर उसे हँसी आयी, अन्दरूनी और गमक-भरी, देर तक घुमड़नेवाली हँसी। किसी यात्राके दौरान एक छोटे स्टेशनके प्लेटफ़ार्मपर डी० के०ने एक युवा लड़कीको 'पैण्टी' पहने देखा था, जिसकी निन्दा, प्रसंग आनेपर, वह काफ़ीअरसे तक करता रहा। एक बार तो वह काफ़ी भद्दी बातें करने लगा था और उस 'पैण्टी'वाली लड़कीके मुक़ाबिलेमें ख़ुद बहुत अश्लील और गन्दा हो गया था। अभी भी वह अपने साथीपर हँस रहा है, एक सहज हिक़ारतके साथ यह अनुभव करते हुए कि संसार सबका नहीं कुछ ही लोगोंका होता है। साथीकी निम्नस्तरीय दृष्टिको दुरदुराते हुए अपनी हँसी उसे ज़ायकेदार लग रही है।

डी० के० ही क्या, दूसरे दोस्त और सहयोगी भी उसे एकबारगी याद आये। किसीने उसकी विशिष्टताको छोटी-मोटी चुनौती भी नहीं दी। उसको मज़ा आया यह सोचनेमें कि उसके साथके कर्मचारियोंका ध्यान केवल अपनी फूहड़ और बच्चा उगलनेवाली बीवियोंपर ही रहता है।

इसी समय उसकी एकमात्र छोटी भतीजीने आकर उसे आकर्षित किया—"अन्कल, मम्मी पूछ रही हैं, अकेले पड़े-पड़े क्याकर रहे हैं आप? बाहर क्यों नहीं निकलते?" फिर तक़रीबन दोहराकर, "क्या कर रहे हैं, अन्कल? बाहर निकलिए न!"

इस समय अपने मनके सोच-विचारके आगे भतीजीकी बातोंकी नाटकीयता और मधुमें उसे मज़ा नहीं आया। उसे लगा, यह शोर और खलल है। उसने बिलकुल गिड़गिड़ाते हुए बच्चीसे लौट जानेको कहा: "बेटा, प्लीज़, अभी हम काम कर रहे हैं, फिर आना।" बच्ची किंचित् अविश्वासका भाव लेकर भुनभुनाती लौट गयी—"चुपचाप बैठे हैं, कोई काम नहीं कर रहे हैं, कह रहे हैं, काम कर रहे हैं," कहती हुई।

कोई दूसरी मुसीबत न आ जाये, जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ सकती है, डरते हुए उसने बाहर एक हलकी सैर करना ज़्यादा भला समझा। वह बाहर आया। सामनेके दसफ़ुटे खुले हिस्सेमें जो कुछ सब्ज़ीके पौधे लगे थे, उन्हें देखते हुए उसने अपनी निगाहको तत्काल वहाँसे भगाया। हमारे घरवाले भी कोई कम बैक-वर्ड नहीं हैं! ये पुराने खेतिहर संस्कारोंके लोग क्या उन्नति करेंगे! वह चलते-चलते सोचता रहा। पड़ोसीकी चारदीवारीपर चिपके केलेके गाद्दोंकी नम-धूमिल-हरी आकृतियोंसे भी उसे सन्तोष नहीं हुआ। तभी थोड़ी दूर कुछेक टेढ़े और लम्बी-पतली छायाओंवाले खजूर उसे नज़र आये और वह उनमें किंचित् सौन्दर्य-सुख अनुभव करने लगा। एक तरफ़ बनजारोंने खूब आग जला रखी है। ऊपर क्षितिजमें हलका कुहरा अँटता हुआ-सा दिखाई पड़ता है।

सड़ककी पल्ली तरफ़ जिधर मकान बिलकुल नहीं हैं एक लम्बा मैदान है। जिसमें बीच-बीचमें देवदार-सरीखी ऊँचाइयों-के दरख़्त हैं। वह उधर ही देख रहा है। कुछ लोग कहते हैं, बीस साल पहले यह गोल्फ़का मैदान था। अब यह सूअरोंका आरामगाह है अथवा जबरन मलमूत्र-विसर्जन-का बना लिया गया स्थान। शाम हो जाने-पर या अँधेरेमें यह सब-कुछ पता नहीं चलता और मैदान एक खूबसूरत ज़मीनका टुकड़ा लगता है। उसने अपनेको इसी खूबसूरत टुकड़ेसे जोड़ लिया और सैर करनी शुरू-कर दी।

भ्रम होता है कि वह घूमते हुए मौन है और कुछ भी विचार नहीं कर रहा है लेकिन उसका चेहरा धीरे-धीरे बहुत [illegible] जान पड़ने लगा। दरअसल वह अपने [illegible] त्वके सम्बन्धमें कहीं बहुत चालाक हो [illegible] रहा था। बुद्धिमान् और प्रतिभाशाली [illegible] बावजूद रोज़-बरोज़ उसे अपना काफ़ी [illegible] यूँ ही चुकाना खलने लगा। उसे [illegible] डायरीज़की कुछ सूक्तियाँ अस्पष्ट-सी [illegible] आयीं, जिनके बारेमें उसने यह तय [illegible] अगर वे प्रकाशित हों तो लोग, 'आह! [illegible] ऐसा कम लिखा गया है'-सरीखी राय [illegible] कर सकेंगे। उसको अपने कानोंमें [illegible] उलझकर बहुत-सी तारीफ़ें टकराती [illegible] इन सबमें वह नयी सड़कके उस [illegible] बनानेवाले स्थान तक चला आया [illegible] गुमटियाँ और भीड़भाड़ है। लौटते समय अपनी भर्त्सना करता रहा कि क्यों [illegible] नियमित डायरी, कविताओं और आलोचना का काम नहीं करता।

लौटतेके अधिकांश रास्ते वह [illegible] था और केवल अपने जूतोंकी आवाज़ [illegible] सुनता रहा। ताज़ा पुते हुए मकानोंके [illegible] सुथरेपनको उसने बिलकुल ग़ौर नहीं [illegible] वह केवल घरकी ओर लपकता-सा रहा।

घर आ तत्परतासे उसने अपने [illegible] काग़ज़ों, डायरीज़, फुटकर नोट्स और [illegible] ताएँ सभीको सहेजना और फ़ाइल [illegible] शुरू कर दिया जो यहाँ-वहाँ लापरवाह [illegible] पड़ा रहा करती थीं। यह तय करते [illegible] कि डायरी वह ज़रूर लिखा करेगा [illegible] अपनी नयी डायरी ऐसी जगह रखी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी आँख और हाथ अकसर जाया करते हैं। काग़ज़ोंको सँवारनेमें वह काफ़ी डूबा और मशगूल रहा। उसने अपनी कई पुरानी चीज़ोंको पढ़ा और यह नहीं महसूस किया कि उनकी ज़रूरत नहीं रही या वे मुग्ध नहीं करतीं या वे वाक़ई पुरानी पड़ गयी हैं।

जब वह अपने काग़ज़ोंमें खोया हुआ था उसकी 'वही' भतीजी उसे खानेपर बुलाने आयी और साथ ही चले चलनेके लिए लड़ियाने लगी। बच्चीके चेहरेपर छपी प्यारकी माँग आत्मीयता उत्पन्न करती थी। अपनी व्यस्ततामें वह सुखी था और उसकी भूख स्वयमेव अल्प या अज्ञात-सी हो गयी थी। उसने प्रायः झुँझलाते हुए बच्चीको झिड़क दिया, "क्या हमेशा पीछे पड़ी रहती है, बस खाना-खाना! कह दो अपनी मम्मीसे जाकर, मुझे भूख नहीं है।" डाँट खाकर बच्ची, जिसके वह ख़ूबसूरत बाल कटाता रहता है, जिसके लिए उसने आयात किये हुए कपड़ोंकी फ़्राँक सिलवायी थी, जिसके स्वास्थ्यका वह मम्मी-पापासे ज़्यादा ध्यान रखता है, सहमती बेसहारा भीतर लौट गयी।

काफ़ी देर उसे ठीक-ठाक करनेमें लगी। उसने एक-एक काग़ज़को सावधानीसे क्लिप किया, यह सोचते हुए कि आनेवाले ज़मानेमें उन सबका मूल्य-महत्त्व हो सकता है। कई महान् बाँयग्राफीज़ उसके दिमाग़में झलकी और उसकी कुछ घटनाएँ उसे आश्वस्त करती हुई उड़नछू हो गयीं। अपनी कुछ वे कविताएँ जो पुरानी होनेके बावजूद उसे अभिभूत करती रही थीं, मेज़पर, बार-बार पढ़नेके लिए उसने रख लीं।

इतनी मेहनतके बाद उतरी हुई थकान-सरीखा हलकापन उसमें उमग आया। मन उड़ता हुआ। बाहर ओस है और जन-शून्यता। ख़ास-तौरपर लम्बी बल खाती सड़कके हिस्सेकी लापरवाह-सी वीरानी उसे प्रफुल्लित कर रही है। उसने पाया कि वह अपने गीत 'लौटे हुए बादलोंकी हवा'की पंक्तियाँ गुनगुनाते हुए सड़कपर कई मील 'एकमात्र'की तरह टहलनेकी बाबत सोच रहा है। लेकिन ऐसा कैसे हो सकता है, उसने अधिक साफ़ ढंगसे तय किया, इधर तो नौ-साढ़े नौके बाद ही आने-जानेवालोंपर कुत्ते लपकने लगते हैं। साले देशी कुत्ते! खँखारकर उसने धरतीपर बे-वजह थूक दिया। किया उसने यह कि अन्दर आकर यौन-स्वच्छन्दतावाले अधूरे पड़े निबन्धको बहुत आसानीसे एक बैठकमें समाप्त कर लिया।

इस समय वह एक बड़ी धन्य अँगड़ाई ले रहा है और अपने अन्दर शोभा-सम्पन्नता-का अनुभव करते हुए धीमे-धीमे कुछ गुनगुना रहा है। शायद वही 'लौटे हुए बादलोंकी हवा'की कुछ पंक्तियाँ।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

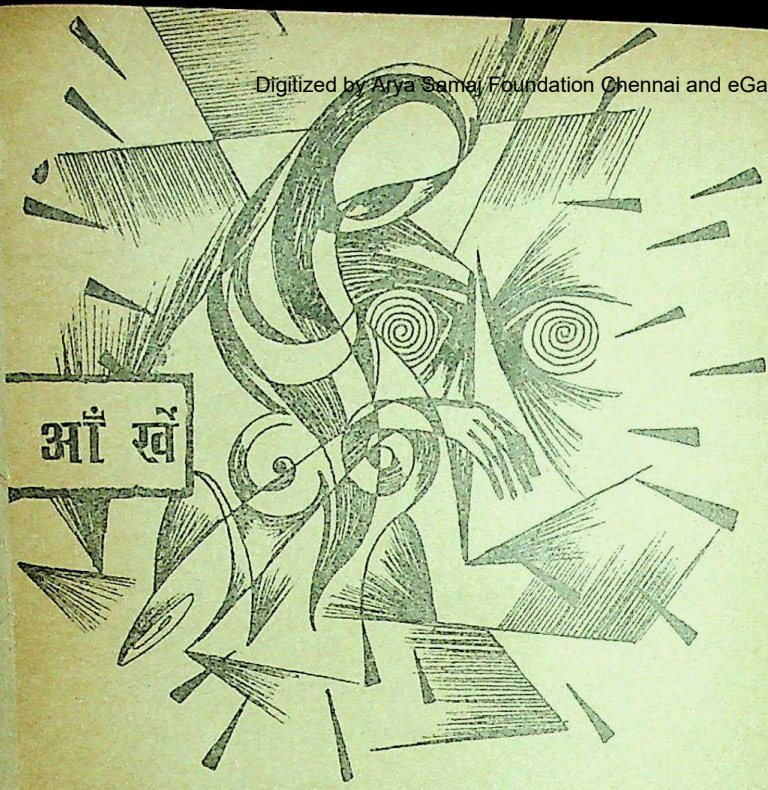

शानो

■

सारे इटैलियन गार्डनमें सन्नाटा और अँधेरा था। दरख्तोंके झुरमुटमें छिपी वह बदनाम इमारत उस वक़्त पहलेसे भी अधिक उजाड़ और डरावनी लग रही थी।

पहले स्वयं मेहराको कई बार भ्रम हुआ था। लगा कि बारादरीमें कोई छिपा न हो, लेकिन फिर वह भ्रम अपने-आप कट भी गया। भला वहमकी क्या बुनियाद ? और ऐसी भी कितनी रात हो गयी थी कि···

"वहाँ चलें ?" उसने एक बार चारों ओर देखकर दीप्तिसे पूछा। दीप्ति दो क़दम पीछे कुछ सहमी हुई खड़ी थी। प्रस्तावपर शायद विचार करते हुए उसने भी अँधेरे गार्डनकी ओर देखा, आसपासको एक उचटती निगाहोंसे टटोला फिर बेपरवाही दिखाती हुई ज़ोरसे बोली, "छोड़ो···वहीं जाकर क्या करेंगे !"

"और यहीं रहकर क्या कर रहे हैं ?" दीप्तिकी ओर देखकर भी उसकी आँखोंसे नज़र बचाता हुआ मेहरा झल्ला पड़ा।

"हम बतायें," सहसा बिगड़ी जाती बातको सम्हालकर दीप्ति नरमीसे बोली,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हमारी मानो तो वापस चलें। लौटकर फ़ौव्वारेके पासवाले उसी लॉनमें बैठते हैं। वहाँ इतनी उमस भी न होगी। ठण्डक होगी और···"

मेहराके मुँहमें कोई गाली आते-आते रह गयी। जून मासका वह दिन सुबहसे आग हो रहा था। शामसे इतनी उमस थी कि कहीं दो क्षण टिककर नहीं रहा जाता था फिर उसे सहसा ध्यान आ गया था कि वह चहारदीवारीमें बन्द घरपर नहीं, पब्लिक गार्डनमें है। गो कि बाग़का सबसे अधिक व्यस्त तथा भीड़-भड़क्केवाला हिस्सा छोड़कर वे लोग एकान्तमें निकल आये थे लेकिन इक्का-दुक्का क़दम रह-रहकर इधर भी भटक जाते थे।

उसने पराजित भावसे दीप्तिको देखा, लेकिन ऐसे कि उसकी आँखें न मिल जायें। सचमुच वहाँ ग़ुस्सेके लिए न तो आधार था और न मौक़ा! वह ऐसे खड़ी थी जैसे घरसे चलनेके पहले इस इमारतके बारेमें कोई बात न हुई हो। मानो फ़ौव्वारेके पाससे उठते वक़्त दोनोंमें किसी प्रकारका कोई अव्यक्त और मौन समझौता न हुआ हो और जैसे दोनों यूँ ही टहलते-टहलते आ निकले हों या इमारत देखकर ठहर गये हों।

"चलें?"

लौटतेमें इस बार दीप्तिने पहल की और मेहराके जवाबकी प्रतीक्षा किये बिना आगे-आगे चलने लगी। चुपचाप तथा विवश भावसे दीप्तिका अनुसरण करते हुए मेहराको उस समय अपना-आप ही मूर्खतापूर्ण लग रहा था। शायद उमस एकाएक बढ़ गयी थी। वह दीप्तिका विरोध करना चाहता था, लेकिन वहाँ रुकना भी मुमकिन न था। उसे ग़ुस्सा भी आ रहा था और नहीं भी। ग़ुस्सा इसलिए आ रहा था कि जिस एडवेंचरस योजनाकी कल्पनामात्रसे सारी शाम रोमांच हो रहा था उसकी परिणति ऐसी हुई! नहीं आ रहा था क्योंकि अव्वल तो किस तरह प्रकट किया जाये यह तय करना मुश्किल था, फिर कुछ चीज़ें ऐसी होती हैं जिन्हें आप करना तो चाहते हैं, संकेतोंमें कहते भी हैं लेकिन जिनके बारेमें स्पष्टतः बातें करते हुए हलकेपनका एहसास होता है।

मेहरा या दीप्ति दोनोंमें-से सबसे पहले किसने संकेत किया था? इस सबके मूलमें कौन था – दीप्ति या मेहरा? अगर किसीने उनका पीछा भी किया हो तो इससे अधिक और क्या जान सकता है कि दो व्यक्ति बाग़में आये, फ़ौव्वारेके पास बैठे, सहसा उठकर एक निर्जन राह पकड़ी, थोड़ी देर इटैलियन गार्डनके सामने खड़े रहे, अब सूनी पगडण्डीपर पड़े पत्तोंको अलग-अलग रौंदते हुए वापस लौट रहे हैं और वह बदनाम इमारत पीछे छूटी जा रही है···

■

यों बिना किसी प्रसंग, चर्चा या प्रश्नके मेहराने ही वह घटना सुनायी थी। दफ़्तरसे लौटकर उसने न तो कपड़े बदले थे और न ही अभी इतमीनानकी साँस ली थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीप्ति रोशनीकी तरह किचनमें घिरी हुई थी। कुल दो प्राणियोंका घर। न कोई बड़ा-बूढ़ा और न बच्चे-कच्चे।

"एक दिलचस्प ख़बर है!" जूतों-सहित किचनमें आकर मेहराने कहा और मुसकराने लगा था।

"क्या?"

"इटैलियन-गार्डनमें कल कुछ लोग पकड़े गये हैं," उसने बताया, "किसीको गुमान भी न था कि शामको नौ-साढ़े नौ बजे हवाख़ोरी-की जगहको लोग ऐसे कामोंके लिए भी चुन सकते हैं! वह तो पता भी न चलता अगर एक पत्रकारको शक न हुआ होता। तुम तो जानती हो न कि फूलबाग़में होते हुए भी इटैलियन-गार्डन कितने एकान्तमें पड़ जाता है। बादशाहोंने सोचा होगा कि इधर कौन आयेगा, सो काफ़ी इतमीनानसे अपनी-अपनी गर्ल-फ्रेण्डके साथ डटे हुए थे···"

और फिर वह विस्तार कि कैसे एक पत्रकार फूलबाग़के भीड़-भड़क्केसे घबराकर इटैलियन-गार्डनकी ओर निकल गया··· कैसे बारादरीकी छतपर एक लड़कीका हिलता हुआ सिर दिखाई दिया···किस तरह ख़बर पाते ही लोगोंकी भीड़ इकट्ठी हो गयी और पकड़े जानेपर लड़कियाँ कैसे घबरा गयीं···

"सुना है कि तुम्हारी आभा भी उन लोगोंमें-से एक थी!"

मेहराने कहा तो एकाएक चौंककर दीप्ति बोली, "कौन अपनी आभा शुक्ला? यह कैसे

मेहरा वही पुरुष था और दीप्ति
नारी; लेकिन दोनोंको
आप इधर
होने लगा था कि निरन्तर
वाली एकरसता को तोड़नेके
बाहरी परिवर्तन
हो
मसलन, कभी सोनेका
बदल देना···कभी कमरेमें पलंगकी
परिवर्तित करके
पन महसूस करना
पलंग छोड़कर फ़र्श
आ रहना
नींद आनेसे पहले दोनोंका
जा

हो सकता है? मुहल्लेमें रहते तीन
हो रहे हैं। मैंने तो कभी नहीं देखा
बेचारीने···"

और दीप्तिकी बात ख़त्म होनेके
ऊपरसे तो मेहरा ज़ोरसे हँस पड़ा
लेकिन भीतरका कोई कोना सहसा
ध्यान खींचने लगा था – वह कोना
आभा शुक्लाकी आँखोंका घाव
काफ़ी बड़ा हो चुका था। आँखोंमें भी
आकर्षण होता है और यही नहीं
अकारण घाव भी लगते हैं, यह उसने
बार जाना था। आभासे उसकी कोई
चस्पी नहीं थी – उम्र, स्थिति या
भी दृष्टिसे कोई सवाल भी नहीं उठा
लेकिन यह सच है कि उसे देखनेके
ही भीतर दीप्तिकी आँखोंवाली पीड़ा
गुना बढ़ गयी थी। उसे लगता तो

CC-0. In Public Domain: Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही था, लेकिन आभाको देखनेके बाद और जोरसे लगने लगा था कि दीप्तिकी आँखें असुन्दर ही नहीं, बुझे हुए कोयलेकी तरह ठण्डी और निष्प्राण हैं और उन्हें अनदेखा करके प्यार भले कर लो, देखते ही सारा उत्साह पारेकी गति-से ठण्डा पड़ जाता है।

ब्याहका आठ वर्षीय जीवन कम नहीं होता। इतने अरसेमें पति-पत्नीमें अगर आपसमें बनने लगी, तो दोनों दोस्त हो जाते हैं। बीचमें दुराव या परदा-जैसा कुछ बच नहीं रहता और एक-दूसरेकी कमियों-खामियोंसे भी अच्छी तरह परिचित हो चुके होते हैं।

मेहरा और दीप्ति भी उसी स्थितिमें थे। ब्याहे-जीवनके इतने लम्बे अरसेमें सम्बन्धोंकी नवीनता तो खैर बची नहीं थी, वह बीचका रस भी समाप्त हो चुका था, जो अकसर पति-पत्नीको आपसमें जोड़ता है। मेहरा वही पुरुष था और दीप्ति वही नारी; लेकिन दोनोंको अपने-आप इधर महसूस होने लगा था कि निरन्तर चलनेवाली एक-रसताको तोड़नेके लिए कुछ बाहरी परिवर्तन आवश्यक हो गये हैं – मसलन, कभी सोनेका कमरा बदल देना···कभी कमरेमें पलंगकी दिशा परिवर्तित करके नयापन महसूस करना···कभी पलंग छोड़कर फ़र्शपर ही आ रहना अथवा नींद आनेसे पहले दोनोंका छतपर जा लेटना···

लेकिन उस क्रमको भी आखिर एक दिन पुराना होना था। धीरे-धीरे वह नुस्खा इतना पिट गया कि नयेपनका भुलावा देने-वाली बात मूर्खतापूर्ण लगने लगी। जैसे बासी रोटीको आँच देकर गरम तो कर ली जाये लेकिन खानेके दौरान ताज़गीका अभाव और ज़ोरसे भर उठे और लगे कि बासी ही खाना है तो फिर ठण्डी ही क्या बुरी है?

कई बार दीप्तिसे अधिक मेहराको और मेहरासे अधिक दीप्तिको यह बात लगती और फिर सहसा ही दोनों उस ओरसे उदासीन हो जाते।

इधर कई दिनोंसे उदासीनताकी वही स्थिति चल रही थी। वैसे बीचमें एकरसता-को तोड़नेके एक-दो प्रयत्न मेहराकी ओरसे अवश्य हुए थे। अपने सम्बन्धोंकी स्पष्टता और खुलापनका आधार लेकर उसने एक और प्रयोग कर डाला था। बाज़ारके फ़ुट-पाथसे एक दिन ऐसी तसवीरोंवाली किताब घर आ गयी जिसे अकेलेमें देखना तो सभी चाहते हैं लेकिन दूसरेकी आँखोंके सामने जिसे अकसर देखा नहीं जाता···कुछ दिनों वह किताब और भी खींच ले गयी। दीप्ति विरक्त नहीं थी, उसमें भी मनसे सहयोग दे रही थी लेकिन जो प्रभाव पहले दिन था वह दूसरे दिन नहीं रहा। दूसरे दिनका असर अगले दिन जाता रहा और अगले दिन फिर वही मूर्खतापूर्ण अनुभूति····

"अकेले ऊब जाती होगी, क्यों?" शामको दफ़्तरसे लौटकर मेहरा अकसर यह जुमला कह जाता। दीप्ति जवाबमें कभी चुप रहती, कभी फीकेपनमें हँसती।

"जाने कब तुम लोगोंमें बैठना-उठना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीखोगी," मेहरा पुरानी शिकायत दोहराने लगता, "आदमी अगर पास-पड़ोससे राह-रस्म रखे तो वक़्त भी कट जाता है और किसीको शिकायत भी नहीं होती।"

दीप्ति आगे बढ़कर मेहराके हाथसे कोट ले लेती, वाशबेसिनके पास पानीकी बाल्टी रखती या गूँजती आवाज़में जलनेवाले स्टोव-को पम्प करने लग जाती। मेहराकी उन बातोंके जवाब बरसों पहले दिये जा चुके हैं – यह दोनों जानते हैं, लेकिन कुछ बातें रस्मन कही जाती हैं जिनके पीछे वास्तवमें न तो कुछ कहना होता है और न सुनना।

"कहो तो आज कहीं चलें।" चाय-वाय-के बाद कुछ इतमीनान आ जाता तो मेहरा कहता। इस बातकी पूरी सतर्कता कि कहीं दीप्तिसे आँखें न मिलें।

"कहाँ ?"

"कहीं भी···बाड़े, फूलबाग़ या जहाँ भी तुम चाहो····"

"छोड़ो," बेपरवाहीके साथ कुछ अनमने भावसे दीप्ति कहती, "बाहर भीड़-भाड़में भी तो जी ऊबता है !"

बस बात वहीं टूट जाती या मेहरा आगे चुप रह जाता। भीड़-भाड़से जी ऊबने-वाली बातमें यों चाहे सचाई न दीखे, पर एक तरहसे वह सच ज़रूर थी। बाहर या बाज़ार जानेपर चीज़ें भी दिखती थीं और लोग भी। दोनोंकी एक नहीं अनेक आँखें थीं। दोनोंके अभाव ताज़े होते थे, अपनी विपन्नता या असमर्थताका बोध जाग आता था और ख़ुश होनेके बदले जी उदास अधिक होता था।

फिर दीप्तिसे यह बात छिपी न थी। उसे लेकर बाहर निकलते हुए मेहरा अन्दरख़ानेमें कहीं तकलीफ़ होती है। वैसी तकलीफ़ जैसी कि घर-घराने-तयशुदा शादीमें मिली साधारण दीक्षा लेकर बाद-बादमें पुरुषको होने लगती है।

लेकिन जिस शाम इटैलियन वाली घटना सुनायी गयी, और दिनोंका क्रम अचानक बदल गया। मेहरा बदले बिना बड़ी देर तक दीप्तिके पास खड़ा रहा और दोनों उसी घटनापर करते रहे। उस शाम चायके बाद मेहरा बाहर नहीं गया। दीप्तिकी आँखोंकी भी उसका ध्यान नहीं गया। रात बाद जब वे लोग पलंगपर लेटे तो मेहरा फिर वही बात छेड़ दी – "सच कहूँ तो लगता था कि आभा अभी बच्ची ही है।

दीप्ति तब पहलेकी तरह आभाका लिये बिना हँसने लगी थी – ऐसी हँसी जिसमें क्षण-विशेषके प्रति अन्ध-समर्पण है, जिसके पीछे अनुभवका सुख है और आगे आमन्त्रणका उष्ण संकेत। कई दिनों बाद मेहराने उस रात होंठ कसकर चूमे थे···

■

"यहीं बैठें···"

फ़ौव्वारा आनेके काफ़ी पहले दीप्तिको रोक लिया। पहले वे लोग जगह बैठे हुए थे, उसे कुछ बड़ी-बड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छात्रानुमा लड़कियोंने घेर लिया था। उनके पास ही एक नया जोड़ा आ बैठा था, कुछ दूरपर चार बच्चोंवाला एक महाराष्ट्रियन परिवार था फिर कुछ नवयुवकोंका झुण्ड और उसके बाद इक्के-दुक्के लोगोंका बेतरतीब फैलाव···

"इससे ज़्यादा ठण्डक तो वहीं थी," घासपर रुमाल बिछाकर बैठती हुई दीप्ति बोली। सामनेवाले लॉनपर कोई अजनबी युवक बैठा हुआ था जो उन्हें एक बार देख बेपरवाहीसे लेट गया।

"कहाँ ?" एक क्षण अटककर मेहराने पूछा फिर दीप्तिकी हँसीका अर्थ समझकर स्वयं चुप हो रहा। उसे लगा कि दीप्ति सब-कुछ जानती है। उसे यह भी पता है कि मेहरा जो लौटकर फ़ौव्वारेके पासवाली पुरानी जगह नहीं गया, उसका कारण जगहका घिरना नहीं, लड़कियोंका ग्रुप भी नहीं, वह नया जोड़ा अथवा वह महाराष्ट्रियन परिवार भी नहीं, वह हीन-भाव था जो ऐसे अवसरपर उसे अकसर जकड़ लेता है···

"कितने बज गये ?" मेहराको सहसा चौंकाकर दीप्तिने पूछा।

"आठ-साढ़े आठका वक़्त होगा।"

"अब घर न लौटें ?" टटोलनेके अन्दाज़में दीप्ति बोली, "काफ़ी घूमना-फिरना हो गया और फिर अभी लौटकर खाना भी तो बनाना है···"

मेहराने जवाब नहीं दिया।

दीप्तिकी यह आदत है। घरसे निकलनेके पहले भी उसने यही किया था। जब मेहराने उसके सामने फूलबाग़ चलनेका प्रस्ताव रखा था तो यह जानते हुए भी कि वह प्रस्ताव और दिनों-जैसा नहीं है और उसके पीछे इटैलियन गार्डनवाली घटना जुड़ गयी है, दीप्ति बड़ी देर तक अनमनापन बताती रही थी। फिर जब तैयार होकर निकल भी आयी तो अपनी मुद्रा तथा हाव-भावसे यही प्रकट करती रही जैसे मुद्दतोंके बाद बाहर आनेकी उसे ज़रा भी प्रसन्नता नहीं हुई है···

और यही बात फूलबाग़ पहुँचनेके बाद भी हुई थी। फ़ौव्वारेके पास पहुँचकर वे लोग रस्मन बैठ गये थे – सिर्फ़ इसलिए कि कुछ वक़्त कट जाये···आगेवाले कार्यक्रमके लिए कुछ ज़मीन तैयार हो जाये या एककी लक्ष्यवाली कोशिशका दूसरेको गुमान भी न होने पाये।

"चलो, तुम्हें इटैलियन गार्डन दिखा लाते हैं।" अन्तमें उपकार करनेवाले भावसे मेहराने कहा तो दीप्ति फिर अनजान बन गयी थी और काफ़ी देर बाद वह, एक नहीं अनेक आग्रहोंपर, वहाँसे उठी थी···

फूलबाग़ अब पूरे शबाबपर आ चुका था। फ़ौव्वारेके पासवाली बेंचोंके अतिरिक्त लॉनपर, गुलाबकी झाड़ियोंके आसपास, दूर-दूरके कोनोंमें, यहाँ-वहाँ, सब कहीं जितने लोग छितरे हुए थे उससे दोगुनी भीड़ टाँगोंसे चलती-फिरती दिखाई दे रही थी। क़िलेपर बसे सिन्धिया स्कूलकी बत्तियाँ जल चुकी थीं। उमस वैसी ही थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"कुछ खाओगी ?" दरअसल पिछली बातोंकी घुमड़नसे ही अपनेको मुक्त करनेके लिए मेहराने अचानक पूछा।

"क्या ?"

"कुछ भी···"कहते-कहते फिर एक क्षण-के लिए मेहराकी आँखें दीप्तिकी आँखोंसे मिलीं। वह झट दूसरी ओर गरदन घुमाकर क़िलेमें चमकती बत्तियोंको देखने लगा। बाग़के कोनेसे फ़िल्मी गीतोंकी रिकार्डिंग शुरू हो गयी थी। उस बड़े शोरमें छोटे-मोटे अनेक शोर दब रहे थे – लेमन सोडावालोंकी पुकार, खोमचेवालोंकी आवाज़ें, युवा-टोलियों-की दबी-दबायी हँसी और वह सब जो रिकार्डिंगके पहले फूलबाग़के आकाशमें घुला हुआ था।

"ठहरो मैं तुम्हारे लिए कुछ ले आऊँ।"

कहकर अचानक मेहरा उठा और दीप्ति-के हाँ-नाकी प्रतीक्षा किये बिना उसे वहीं छोड़कर खोमचेवालोंकी तरफ़ बढ़ा।

बाग़के फ़ौव्वारेवाले हिस्सेमें जितने लोग आ रहे थे, कमोबेश उतने ही बाहर निकलते भी जा रहे थे लेकिन लग रहा था जैसे भीड़ कम होनेके बदले बढ़ती जा रही है।

लौटतेमें जाने क्या हुआ कि गुलाबकी झाड़ीके पास एक पल रुककर मेहरा अपनी पत्नीकी ओर अजनबी आँखोंसे देखता रहा मान लो, अगर वह उसकी पत्नी न होती किसी औरकी होती तो उस समय वह कैसी लगती ?

और उसकी आँखोंको सहसा विश्वास ही न हुआ जब उसने देखा कि दीप्तिसे दूरपर जो अजनबी युवक लेटा हुआ था, मेहराकी अनुपस्थितिमें उठ बैठा है और निरन्तर तथा एकटक उसकी पत्नीको जा रहा है !

बड़ी देर तक वहीं ठिठका हुआ दीप्तिको देखता रहा। उसे लग रहा कि इटैलियन गार्डनसे लौटनेके बाद जो भीतर-ही-भीतर उसे तंग कर रहा था, अचानक निकल गया। हवामें पहलेकी उमस भी महसूस नहीं हो रही थी। आप ही भीड़का अर्थ उसके लिए बदल था – लोगों या लड़कियोंमें भी उसे दिलचस्पी नहीं रह गयी थी। वह किसी प्रतीक्षामें खड़ा था कि दीप्तिको उस युवकका जवाब देते हुए स्वयं देखे। कहीं यह विश्वास धीरे-धीरे जमता जा था कि दीप्तिकी आँखोंकी ओर देखते अब उसे बिलकुल डर नहीं लगेगा !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कला चर्चा

मिर्ज़ा इस्माईल बेग

आधुनिकता और चित्रकला

आजकल फिर कला-जगत्की पत्र-पत्रिकाओंमें पहलेकी तरह ही 'आधुनिकता बनाम भारतीयता' की बहस प्रारम्भ हुई है। इस बहसको पढ़ने और सोचनेसे ऐसा लगता है कि हम लोग इसे कलाके सन्दर्भमें कम और राजनैतिक बहस 'राष्ट्रीयता बनाम अन्तर्राष्ट्रीयता' के सन्दर्भमें अनजाने ही अधिक सोच रहे हैं और इससे कलाकी विस्तृति संकुचित होती जाती है।

आधुनिकता कोई आसमानसे एकाएक टपकी कल्पना तो है नहीं। यह तो गुज़रे ज़माने और उसके विचारोंकी नयी कड़ी है, जिसकी नसोंमें भूतकालकी तमाम प्रवृत्तियाँ अपने नये सन्दर्भ, काल एवं स्थानको निबाहते हुए नये आयामोंको प्राप्त करने दौड़ती चली जा रही हैं। अतः कलाकी आधुनिक प्रवृत्तियोंको समझनेके लिए पहले हम हमारे आधुनिक युगकी विशेषताओंका विश्लेषण करें जो प्रत्येक मनुष्यके जीवनपर कारगर असर करती है और उसे नये-नये ढंगसे सोचने और उन विचारोंपर चलनेके लिए मजबूर करती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

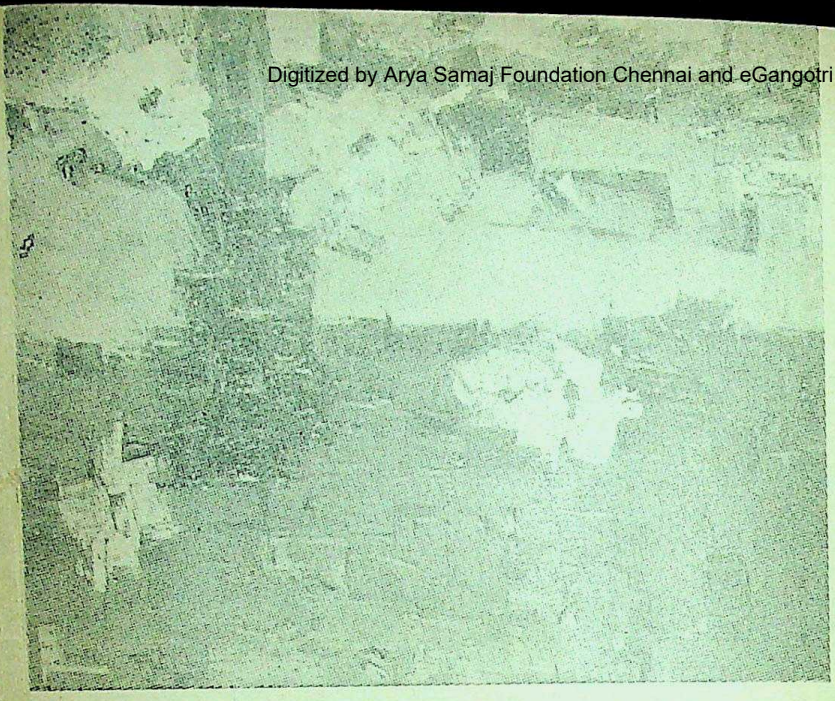

पीटर लेविस संरचित : 'पुष्प-गुच्छ'

आदिम कालसे लगाकर आज तक सत्यकी खोज लगातार चल रही है और यह खोज बड़े महत्त्वपूर्ण मोड़पर आ पहुँची है। जहाँ मनुष्य प्रत्येक समस्याका तहमें जाकर उसके मूल कारणोंको पकड़ना चाहता है। मूल तत्त्वोंको प्राप्त करना चाहता है जिससे वह उस चीज़पर पूर्ण अधिकार कर, उसे आत्मसात् कर ले – उसे सहजतामें, स्वाभाविकतामें परिणत कर ले, जिससे वह केवल कौतुक न रहे। वह तर्कपर विश्वास करता है और तर्क उसका साथ इस मुखरतासे दे रहा है कि हम निःसन्देह कह सकते हैं : आजका मानव जितना सत्यके पास आज है, उतना वह पहले कभी भी, किसी भी युगमें नहीं रहा। आज उसके पास अन्धविश्वास, भावुकतापर टिके विचारों और आस्थाओंको अथवा राजनैतिक-आर्थिक जालमें बँधे क़ानून और नियमोंको तार-तार कर देनेकी क्षमता इतनी प्रबल और गतिमान् है कि आज हम जिस मान्यता-को मानते हैं कल उसकी कमज़ोरियोंको जाननेपर, उसे छोड़ नयी मान्यताओंको प्राप्त करने बढ़ जाते हैं। यह क्रम बड़ी तेज़ रफ़्तारसे चल रहा है। यही क्रम पुरानी मान्यताओंके लिए भी है और उसका कारण उसे उनके पुराने रूपमें न देखनेके लिए मजबूर करता है। [illegible] आधुनिक मानवकी वर्तमा[illegible] स्थिति बौद्धिक विस्था[illegible] की है, जिसने पुरानी मान्य-ताओंको ठुकरा दिया [illegible] और नयी मान्यताओं[illegible] स्वरूप देनेके लिए, [illegible] पुख़्ता करनेके लिए [illegible] चाहिए। इस आर्थि[illegible] समयकी माँगको संस्कृति[illegible] की लम्बी उम्रके सन्दर्भ[illegible] देखनेसे सही मालूम हो[illegible] है और उसमें उस[illegible] औचित्य भी है।

दूसरी विशेषता है इस युगके अवचेतन मन[illegible] खोज और उसका महत्त्व[illegible] अवचेतन मनकी प्रधानता[illegible] प्रत्येक व्यक्तिकी प्रतिष्ठा[illegible] बढ़ानेके साथ व्यक्तिवा[illegible] दृष्टिकोणको उभारा है[illegible] इससे भेड़ियाधँसान [illegible] गुरुडमको चोट पहुँची है[illegible] वैचारिक मठोंको एक [illegible] धक्का-सा महसूस हुआ है[illegible] रेजीमेण्टेशनको नंगा [illegible] दिया गया है इससे [illegible] सड़ी-गली ज़ंजीर [illegible] तो है लेकिन [illegible] व्यक्तिवादी दृष्टि[illegible] सशक्त होते हुए भी [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

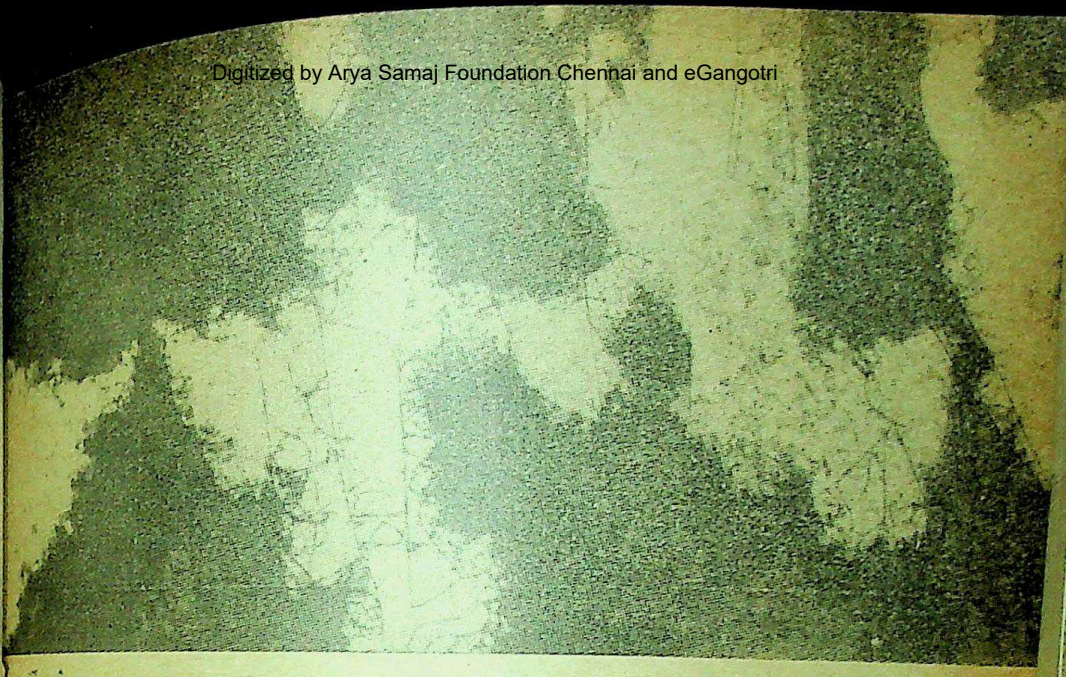

गौतम बाघेला कृत 'रात'

अलग जा पड़े हैं जो अपनी-अपनी धुनमें सत्यकी खोजमें लीन हैं। यह पृथक्ता समान आदर्शोंके होते हुए भी खलनेवाली हो सकती है लेकिन मनुष्य की समान भौतिक आवश्यकताएँ और उनका आदान-प्रदान मनुष्यको सत्यकी प्रयोगशालामें अपने-अपने तथ्यके साथ, एक साथ ला खड़ा करेगा जो तर्कके द्वारा एक नये क्षितिज तक पहुँचेगा।

तीसरी विशेषता है: (हमेशा दोहरायी गयी है) रफ़्तार की। अब हम सब दूर-दूरके लोग पास आ गये हैं। राष्ट्रीयताकी मान्यताएँ अब संकुचितसे परे हो गयी हैं, वैज्ञानिक उपलब्धियोंसे मनुष्यकी आवश्यकताएँ बढ़ी हैं और उनको प्राप्त करनेका साधन मशीनें बन गयी हैं। मशीनें हर देशमें हैं। मशीनोंसे काम लेने और उनकी आवश्यकताओंको पूरा करनेका तरीक़ा क़रीब-करीब सब जगह

दो नये कलाकार :

अभी हाल ही में मद्रास-संग्रहालयके सेण्टिनरी-हॉलमें आधुनिक चित्रकलाकी शैलीमें दो चित्रकारों-के चित्रोंकी प्रदर्शनी हुई थी। दोनों ही युवा चित्रकार, श्री गौतम बाघेला और पीटर लेविस, बम्बईके जे० जे० स्कूल ऑफ़ आर्ट्सके भूतपूर्व छात्र हैं तथा इन दिनों नवीनतम दृष्टिकोणोंसे अपनी अनुभूतियोंको टेम्पेरा, तैलरंग और काली स्याहीके माध्यमसे मूर्त्त रूप देनेकी कोशिश कर रहे हैं। प्रदर्शनीमें प्रस्तुत चित्रों-में दोनों ही कलाकारोंने परम्परा, वैयक्तिकता और आधुनिक प्रवृत्तिका सुन्दर प्रतिनिधित्व किया है।

गौतम बाघेला (ऊपरवाला चित्र) और पीटर लेविस (पृष्ठ ८० पर मुद्रित चित्र) के चित्रोंको साथ-साथ देखनेपर पता चलता है कि दोनोंने भले ही एक ही विद्यालयमें एक-सी शिक्षा पायी हो, परन्तु अपनी-अपनी वैयक्तिक-सांस्कृतिक-धार्मिक पृष्ठभूमिके आधारपर ही उन्होंने अपनी-अपनी भावनाओंको रंगोंकी परिधिमें बाँधनेकी कोशिश की है।

— हेमलता आंजनेयुलु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक-जैसा है। इसमें मनुष्य जीवनका तौर-तरीक़ा एक-जैसा होता जा रहा है। एक-जैसा मशीनी वातावरण बनता जा रहा है।

इसके पहलेकी इन विशेषताओंको हम कलाके सन्दर्भमें रखें, एक बात और ध्यान देने योग्य है कि विभिन्न ज्ञान-क्षेत्र, कला, विज्ञान, तकनीकी ज्ञान, तुरातत्त्व, ज्योतिष आदि अब एक दूसरेके पूरक माने जाने लगे हैं। एक दूसरेको समझनेमें, उसे स्पष्ट करने-में मदद देते हैं।

कला-जगत्में आधुनिक प्रवृत्तियोंपर विचार करें तो पायेंगे कि ये तमाम आधुनिक प्रवृत्तियाँ कितनी स्वाभाविक हैं, जो चर्चाका विषय बनायी जाती हैं। जिस तरह भौतिक-शास्त्रमें, शक्तिकी खोजके सफ़रमें 'एटम' एक मंज़िल बन गया, वहीं सौन्दर्य-बोधकी खोजमें शिल्प ही आधार साबित हुआ और यही कारण है कि आधुनिक चित्रोंमें 'फ़ॉर्म' को महत्त्व दिया जाने लगा है।

इसके साथ ही अवचेतन मनकी खोजसे प्रभावित चित्रकारने अपनी आँखें बाह्यजगत्-से हटाकर अन्तरजगत्की ओर विस्फारित कीं, जो अगाध तथा निरन्तर बदलनेवाला है। इसने 'समय तत्त्व'को जोड़ दिया जो चौथे आयामके रूपमें हमारे सामने है। इसने प्रत्येक विचारके मूल्योंको बदल डाला है। यह मुद्दा प्रत्येक व्यक्तिके लिए उसके वाता-वरणके अनुरूप अलग है और इसलिए उसको व्यक्त करनेका तौर-तरीक़ा भी अलग। फिर हमारी निगाहें लोक-कलाओंपर जा टिकीं जो इतनी सशक्त और भावपूर्ण हैं कि हम सभ्यताके दम्भी उन अभिव्यक्तियोंके [illegible] अपनी कृतियों तथा रचनाओंको फुसफुसा-[illegible] महसूस करते हैं। विश्लेषण करनेपर [illegible] अपने-आपको काफ़ी पेचीदा महसूस क[illegible] हैं। हममें सरलताका लोप है जो मनु[illegible] मनका अन्तिम लक्ष्य है। इस तरह [illegible] मनको समझनेके लिए अनजाने ही अद्व[illegible] त्मवादकी ओर बढ़ते हैं जो इस पेचीदगी[illegible] द्वैतवादको, खत्म कर सकती है। [illegible] वैज्ञानिक-आध्यात्मिक पुनर्जागृति होती [illegible] आ रही है, जो गीतामें बार-बार दोहरा[illegible] गयी है। हमारे इस युगपर जो [illegible] भौतिकताका आरोप है वह समय रहते [illegible] समाप्त होगा। यही कारण है आज [illegible] निक चित्रकलामें सूक्ष्मकला (एब्स्ट्रेक्ट आ[illegible] एक नये प्रकाशके साथ हमारे सामने है।

अब हम भारतीयतापर विचार कर[illegible] यह सही है कि प्रत्येक देशके अपने जलवा[illegible] जीवन-इतिहाससे कला और चिन्तन[illegible] प्रादुर्भाव होता है। यदि वह इस आधुनि[illegible] ताके नामसे नष्ट हो जाये और सारे संसा[illegible] एक-जैसे चित्र दिखाई देने लगें (जैसा [illegible] भारतीय चित्रकलामें हो रहा है) तो [illegible] कहीं सशक्त शैलियोंकी नक़ल तो नहीं हो[illegible]

शायद यही भारतीयताके तर्ककी आध[illegible] शिला है जिसका साथ संकुचित राष्ट्रि[illegible] देने लगती है और वह कला, साहि[illegible] राजनीतिक-आर्थिक मान्यताओंमें [illegible] अलग रूपोंसे आगे आती है और प्रगति[illegible] रोकती है। अतः हमें भारतीयताको [illegible] साफ़ नज़रियेसे देखना चाहिए। भारतीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का मतलब है – एक ऐसी ज़िन्दगी जो एक विशेष प्रकारकी जलवायुमें पली-बनी। उसने अपने ढंगके अनुभव प्राप्त किये, उसने इन-सानकी ज़िन्दगीपर असर डाला और बाहरके इनसानोंने उसपर असर डाला। इन प्रभावों-की कड़ीमें एक अनूठा दर्शन बना जो इतिहासके प्रभावसे कभी गिरा और कभी बढ़ा। यही दर्शन कला-जगत्में मोहनजोदड़ो-की नर्तकीसे शेरगिल तक विद्यमान है। अब नयी मान्यताएँ हैं जो हमारे सामने खड़ी हैं, जिन्हें हमें अपने अनुरूप ही आत्मसात् करना होगा। यहाँ हमें आधुनिक भारतीय चित्रकलाके सम्बन्धमें एक बात कहनी और माननी पड़ती है कि हमने आधुनिक प्रवृत्तियोंके आवरणको अपनाया है – टेक-नीकको अपनाया है लेकिन उसकी आत्मा-को नहीं। आज भारतीय चित्रकारोंके सामने प्रश्न होना चाहिए कि आधुनिक भाववोध-को भारतीय दृष्टिकोणसे कैसे मिलाया जाये? इसका हल अभी नहीं मिल पाया है और अभी इसको हल करनेके लिए गोयल्जके शब्दोंमें: 'आधुनिक भारतीय-कलाका संघर्ष अभी समाप्त नहीं हुआ है – यह तो सम्भ-वतः तवतक चलेगा जवतक यह देश पूरी तरह आधुनिक नहीं हो जाता और भूत-भविष्यके दोनों छोर मिल नहीं जाते। आगत कलकी कला उसीमें छिपी है, और वह किसी दिन सामने ज़रूर आयेगी।'

■■

Phone : 25-2227

Universal Fire & General Insurance Company Limited

Transact :

Fire, Motor, Marine, Personal Accident, Fidelity, Guarantee, Burglary and all other forms of Miscellaneous Insurance Business.

Universal Insurance Building,
Sir P.M. Road, Bombay-1.

Chairman & Managing Director :
P.U. PATEL, B.A., B.COM (Lond).

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री जनार्दनप्रसाद झा 'द्विज'

रामनाथ 'सुमन'

'तरल पीड़ाकी धारा'

■

९ मई १९६४ ई०

मेरा चमन वीरान हो गया है। एकाध पौधे इधर-उधर रह गये थे; कभी-कभी फूल दे देते थे। उनके सान्निद्धचमें स्मृतियोंके दीपक जल-जल उठते थे – बुझे दीपक-पर एक लौ आ जाती थी। जाती थी और आती थी। आती थी और जाती थी। उसके सहारे, ४० वर्षके सपनोंको सँजोये, हृदयके शत-शत रिसते घावोंपर परदा डाले, किसी तरह ज़िन्दगीकी डगरपर चला जा रहा था। वीरानियाँ तब भी थीं – परीशानियाँ, जटिलताएँ, निराशाएँ, कलेजा हूलनेवाली निराशाएँ परन्तु उस अँधेरेमें चलते हुए भी कुछ दीप इधर-उधर टिमटिमाते थे, – एक दिन जिनको लेकर जीवनका शृंगार किया था, पूजाके थाल सजाये थे, हौंसकेके साथ जीवनकी यात्रापर चल पड़े थे, – तीर्थ-सलिल-सा पावन प्यार एक-दूसरेके लिए, नाचते-गाते, उछलते-कूदते, उसी प्यारसे पेट भरते, उसीको बिछाते-ओढ़ते, उसीसे शक्ति ग्रहण करते, उसीमें अंकुरित होते, वे सब जा रहे हैं। एक-एक करके जा रहे हैं। साहित्यके बहुत-से साथी चले गये; कुछ ऐसे भी होंगे जो पता नहीं कहाँ पड़े हैं।

किन्तु जिनकी बात आज याद आ रही है, वह केवल साहित्यके साथी न थे। वह जीवनके साथी थे। जिनके कलेजेके रससे मेरी साहित्य-सरस्वतीका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभिषेक हुआ था, वह कैलास (कैलासपति त्रिपाठी, उत्तर प्रदेशके हड़कम्पी नेता पं० कमलापति त्रिपाठीके छोटे भाई) जब चले गये तब मानो बिजली टूटकर गिरी थी। बहुत दिनों तक मैं बोल भी नहीं सका था। तब जनार्दनकी बड़ी याद आयी; मैंने उन्हें बिह्वल हो पत्र लिखा था और कोई उत्तर न आनेपर शंकाओंसे घिर गया था। उस दिन नागार्जुनने बताया कि वह तो अन्धे हो गये हैं; दृष्टि चली गयी है। पटनासे बँगलाके विद्वान्, एक बंगलक्ष्मीके पति एवं हिन्दीके सुलेखक श्री हंसकुमार तिवारी प्रयाग आये तो मुझे भी कृपापूर्वक दर्शन देने घर पधारे। उनसे बिहारके पुराने मित्रोंकी चर्चा चल पड़ी; तब मालूम हुआ कि जनार्दनकी हालत सचमुच खराब है। मैंने पुनः उन्हें पत्र लिखा – "जीवनकी सन्ध्या आ रही है। तुम्हारी बड़ी याद आती है। बहुत दिनोंसे देखा नहीं, सुना नहीं। तुम आओ या मैं आऊँ। एक बार फिर दिल खोलकर हम हँसेंगे, रोयेंगे, उछलेंगे, कूदेंगे।" किन्तु दिलकी दिलमें ही रह गयी। मेरे यहाँ आनेके पूर्व ही सन्ध्याने उन्हें अपने आँचलमें समेट लिया। वह शाश्वत नीड़में चले गये हैं, फिर क्यों आयेंगे? आज ही सूचना मिली है कि ५ मई १९६४ को वह कैलासवासी हो गये।

१७ मई १९६४

उस दिन क़लम रख दी थी; हृदय इतना सूना हो गया है कि रो भी नहीं पाता हूँ। कई बार जनार्दनके बारेमें सोचा है; सोचता ही रहता हूँ। पर सोचता ही रह जाता हूँ; कुछ लिख नहीं पाता। उनके ज्येष्ठ पुत्र सुधाकर पूर्णिया कालेजमें इतिहासके प्राध्यापक हैं। वह लिखते हैं – "बाबूजी अन्त तक आपका नाम लेते थे।" वह चाहते हैं, मैं उनके बाबूजीपर कुछ लिखूँ; मित्र कहते हैं – कुछ लिखो। दिलमें एक हूक-सी होती है – 'धत्! कुछ लिखता क्यों नहीं?' परन्तु नहीं लिख पाता। स्मृतियोंकी तरंगें आती हैं। आती हैं और जाती हैं; जाती हैं और आती हैं किन्तु पकड़में जो नहीं आतीं। एक आँधी-सी चल रही है। मेरा सारा संसार ही उनसे भर गया है। सब एकाकार हैं। अलग-अलग नहीं कर पाता हूँ और जबतक अलग-अलग नहीं होतीं, अपनी विशिष्टतामें साकार कैसे होंगी? क़लम उठाता हूँ और रख देता हूँ। फिर उठाता हूँ, फिर रख देता हूँ। मित्र खीझते हैं। मैं हारकर कह देता हूँ:

कहने सुनने में जो नहीं आती,
वह भी एक दास्तान है प्यारे।

१७ मई ६४ (रात १२ बजे)

नींद नहीं आती है। जनार्दनका मुसकराता चेहरा बार-बार सामने घूम जाता है। उनकी उद्वेग-भरी वाणी कानोंसे टकराती है। वाणी जिसमें पुकार है और पुकार जिसमें मौन ललकार है। आज उनका त्रयोदशाह है। उन्हें मरे १३ दिन बीत गये। वही जो पंचतत्त्वको प्राप्त हो गया है, कैसे बार-बार आकर मुझे कुरेदता है, ललकारकर कहता है – 'मुझसे मिलने आनेको कहा था। आओ मेरे साथ। हम साथ-साथ कैलासके यहाँ चलेंगे।' मैं सिहर उठता हूँ – 'उनको आया जान वायुमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाँलेंको फैलाता हूँ और धकसे रह जाता हूँ। तार्किक मन क्षण-भरके लिए उभरकर कहता है – 'भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः'– अरे मूढ़ ! वह कहाँ हैं ? परन्तु फिर वही हँसती आँखें, वही खिलखिलाती वाणी ! कहती है – "आओ ! तुमने मेरी कविताएँ बहुत सुनी हैं, आज तुम्हें अपना मौन मर्म-काव्य सुनाता हूँ जिसे पिछले बीस सालसे लिखता रहा हूँ। सुनोगे ? आओ !" स्पष्ट सुन रहा हूँ; आँखें मलता हूँ; स्पष्ट देख रहा हूँ। मैं उठ खड़ा होता हूँ। बत्ती जला देता हूँ। कहीं कोई नहीं है; तब भी मिटती-सी पग-ध्वनि मानो अब भी है। मैं पसीने-पसीने हो रहा हूँ। पंखा चल रहा है। फिर धम्मसे बिस्तरपर पड़ जाता हूँ।

२५ अगस्त '६४

तीन महीने बीत गये हैं। गहरी उथल-पुथलके तीन महीने। मईमें जवाहरलालजी चले गये; गाँधी-नक्षत्र मण्डलका शुक्र अस्त हुआ। गहरे मतभेदके बावजूद जवाहर मेरे जीवनके एक नायक थे। मेरी ख़ुशी चली गयी। जूनमें मैं स्वयं बीमार पड़ा। ऐसा कि बचनेकी आशा न रही। मर्मान्तक वेदनामें एक सप्ताह बीता। फिर मौत सामने मुँह चिढ़ाती निकल गयी। जीवनकी सर्विस बुकमें उसकी ऐसी न जाने कितनी चेतावनियाँ लिखी हुई हैं परन्तु इस बार उसका बड़ा क्रूर रूप था। शरीरको झकझोर कर रख दिया; निःसत्त्व हो गया मैं। अब कुछ सँभल पाया हूँ। इन महीनोंमें जनार्दन कभी भुलाया न जा सका। बीमारीमें, स्वास्थ्यमें, चलते-फिरते वह मेरे साथ लगा रहा है। और-और [illegible] सिरपर हैं, और-और कर्त्तव्य हैं पर वह [illegible] सबको अन्यथा करके अट्टहास कर उठता [illegible] न वह मुझे भूल पाता है, न मैं भूल पाता [illegible] रह-रहकर 'जिगर' का शेर याद आ जाता [illegible]

मैं जहाँ हूँ तेरे खयाल में हूँ,
तू जहाँ है, मेरी निगाहमें है।

और आज ज़बरदस्ती क़लम पकड़ [illegible] बैठा हूँ कि कुछ लिखकर रहूँगा।

▣

१९२१ के तूफ़ानी दिनोंमें मेरा परिच[illegible] कैलाससे हुआ था। पहले ही दिन ऐसा [illegible] जैसे युग-युगसे हम एक-दूसरेके परिचित [illegible] आये हों। गोरा-चिट्टा, गम्भीर-सा, [illegible] कानमें करुणा और आँखोंमें जिज्ञास[illegible] विनोदका हलका-सा प्रश्न लिये, वक्ष[illegible] कैशोरके आगमनका सन्देश-भरे, और [illegible] कुछ उसीके समान, कैलास मेरे जीव[illegible] आये। विद्या, धन, प्रतिष्ठाने जिस [illegible] परिमार्जित हिन्दू-संस्कृतिका दान दि[illegible] उसीके वह एक विकासमान पुष्प थे। [illegible] दर्शनके निष्णात आचार्य, शिवस्वरूप [illegible] कुमारजी शास्त्रीके नाती। और मैं एक [illegible] दुर्विदग्ध कुटुम्बका हारा-थका किशोर, [illegible] बातमें समता नहीं किन्तु स्नेहका स्व[illegible] कण्टकोंमें फूलना। वह मुझसे छोटे थे, [illegible] छोटे परन्तु 'गुणाः गुणिषु पूजास्थानं न [illegible] लिङ्गं न च वयः' की दृष्टिसे या न जाने [illegible] मैं उनकी ओर खिंचता गया और वह [illegible] अनन्य मित्र हो गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परन्तु शीघ्र ही मैं जेल चला गया। वहाँसे छूटकर आया तो राजनीतिके झंझावातमें यहाँ-वहाँ उड़ता फिरा। जीविकाके लिए भी कुछ-न-कुछ करना, लिखना-पढ़ना पड़ता था। हम मिलते थे प्रायः; पर बीच-बीचमें नहीं भी मिलते थे। गहरे स्नेहके उद्वेगने अनुभूतिप्रधान कविताकी धारा जीवनमें प्रवाहित कर दी। लिखता पहले भी था परन्तु बेजान शैली, तुक्कड़ी कविता, जोड़तोड़के छन्द। अब मानो निर्जीव देहमें प्राण आ गया। धीरे-धीरे मैं छायावाद-आन्दोलनकी वाणी बन गया। उस युगमें मानो उसका वकालतनामा मेरे ही बस्तेमें आ गया था।

असहयोग-आन्दोलन शान्त हुआ। शिक्षण-संस्थाओंका बहिष्कार करनेवाले छात्र फिर विद्यालयोंमें लौटे। कैलास भी सेण्ट्रल हिन्दू स्कूल, वाराणसीमें चले गये। कुछ समय बाद जनार्दन भी भागलपुरसे प्रयाग, प्रयागसे काशी विद्यापीठका चक्कर काटनेके बाद इसी स्कूलमें पढ़ने आ गये। परन्तु मैं मुक्त क्षितिजको पंखोंसे नापनेवाले पंछीकी भाँति अस्थिर, कहीं बैठ न सका। और आज तक साहित्यकी ग्रहकक्षामें उसी प्रकार घूम रहा हूँ।

जनार्दन और कैलास शीघ्र ही गहरे मित्र हो गये। इस प्रकार मुझे मिलाकर एक त्रिमूर्ति गठित हुई। मैं पतंगकी भाँति आकाश-विहारी होकर भी कैलासके हाथसे जुड़ा था; जनार्दन तो उनके सहपाठी ही थे। धीरे-धीरे जनार्दन उनके जीवनसे ऐसे जुड़े कि जुड़ ही गये। यही कैलास उनका काव्य-गंगाके हिमाद्रि थे। इसी मैत्री एवं पवित्र स्नेहने 'द्विज' की वाणीको एक तूफ़ानी स्वर, गहरी वेदनाका स्वर प्रदान किया था। हम दोनोंका काव्य एक ही भूमिपर विकसित हुआ है, एक ही स्रोतमें स्नान कर शीतल हुआ है और एक ही वेदनाकी अग्निमें जल-तपकर निखरा है। कैलासने भी मेरे अनुरोधसे कुछ कविताएँ लिखी थीं, जो अब भी मेरी संचिकाओंमें पड़ी हुई हैं। मैं तीनोंकी काव्यत्रिवेणीपर ध्यान देता हूँ तो देखता हूँ कि द्विजमें वंशीके हृदयदेशको छेदकर बहे राधाके विरह-विदग्ध-स्वरकी यमुना थी; मुझमें गंगाकी अपेक्षाकृत कृश एवं शान्त धारा थी और कैलास अन्तः सलिला लुप्त सरस्वतीकी याद दिलाते थे।

मेरे लिए कैलास निकट होकर भी दूर और दूर होकर भी निकट थे। एक अजीब ऐकान्तिकता थी मुझमें जो कहती थी :

तुम दूर हो तो किसलिए दिलमें मुकाम है,
मैं पास हूँ तो क्यों नहीं अपनी खबर मुझे ?

आज तक उस मधुर एवं स्वर्गीय स्नेहकी पवित्रतासे शक्ति ग्रहण करता रहा हूँ; आज भी ग्रहण किये जा रहा हूँ। मेरे जीवनका यह अद्भुत संस्कार है कि जिसे चाहा है उससे यत्नपूर्वक दूर, बहुत दूर चला गया हूँ। विरहमें स्नेहको जीवित रखनेका मन्त्र मैंने सिद्ध किया है, जैसे समाधिमें योगी किसी प्रकाश-वलयमें लय होकर अपनी क्षुद्र अस्मितासे ऊपर उठ जाता एवं शाश्वत तथा महत्की अनुभूतिसे पूर्ण हो उठता है। स्नेहकी पवि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रता एवं सनातनताके लिए विरह मेरे जीवन-का अतः काव्यका भी अनिवार्य उपादान रहा है; इसने मेरी रसवन्तीको कभी सूखने न दिया, मुझे सौन्दर्य-दृष्टि दी और आज भी मेरे मानसमें जो तारुण्यकी मृदुलता है उसका भी रहस्य यही है। 'द्विज' भी सोचते और अनुभव यही करते थे किन्तु वह अपने स्नेह-स्रोतको बिलकुल निर्वैयक्तिक – 'इम्पर्सनल'– न बना सके। उनका सम्पूर्ण काव्य व्यक्ति-परक काव्य है जिसका रस और प्राण सब व्यक्तिगत है। काव्य मेरा भी व्यक्तिगत है किन्तु वह व्यक्ति-प्रतीकके अवगुण्ठनके भीतर 'इम्पर्सनल' बन गया है। द्विजके लिए कैलास एक ज्योतिविशिष्ट थे, एकमात्र रस-निर्झर थे जब मेरे लिए ज्योतियोंमें एक ज्योति, विश्व-ज्योतिकी एक शिखामात्र थे।

१९ सितम्बर '६४

मेरे सामने जनार्दनके अपने हाथसे लिखकर प्रेमभेंट-स्वरूप दिये हुए कई ग्रन्थ रखे हैं। यह है 'किसलय' (कहानी-संग्रह), यह है 'अनुभूति' (काव्य-संकलन), ये हैं मालिका, मृदुदल, मधुमयी (कहानी-संग्रह), चरित्ररेखा (स्केच) आदि। इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण मेरे लिए है अपने हाथसे लिख-लिखकर मेरे पास भेजी गयीं उनकी कविताएँ, जो उन्हींकी हस्तनिर्मित कापियों या संचिकाओंमें सुरक्षित हैं। यह है 'द्विजपद्योद्यान' जो उनकी आरम्भिक कविताओंका एक संकलन है और जिसपर घरका पता – रामपुरडीह, शाहकुंड पो० (भागलपुर) – लिखा है। इसमें १९२० से '२३ तक-की प्रायः वे सब कविताएँ हैं जो समय-समय पर आज, भूत, सुप्रभात, शान्ति, अभ्युदय, विद्यार्थी आदि पत्र-पत्रिकाओंमें छप चुकी हैं, कुछ अप्रकाशित भी हैं। ये प्रायः वर्णनात्मक पारिपाटिक कविताएँ हैं। इनमें लोक-मानस के जागरणका स्वर तो है किन्तु सौन्दर्य-दृष्टि या रस-सृष्टि नहीं है। स्पष्टतः ये उन्हीं कविताएँ हैं जब उनकी हृदय-गुफाके द्वार बन्द थे, देवताका आगमन न हुआ था; दूर की घण्टी नहीं बजी थी; देवताने द्वार थपकी न दी थी। दूसरी कापीमें संकलित कविताएँ उस समयकी हैं जब देवता पुकार हृदयमें पहुँच चुकी थी और एक रस-धार उमड़कर दो हृदयोंके मिलनका सन्देश रही थी। एक उपास्य मिल गया था, जिसे प्रेम किये बिना रहा न जा सकता उनके जीवनका रहस्य उन्हें चारों आवृत और आवेष्टित किये जा रहा स्पष्टतः ये कविताएँ कैलासकी मैत्रीसे ड़ित रसार्द्र मानससे निकली हुई हैं। अवधि बहुत करके १९२३-२४ से तक है। उन्होंने स्वयं ही इनको एक दिया है – 'अन्तर्ध्वनि'। बादमें इनमेंसे सी कविताएँ वाणी मन्दिर, छपरासे प्रशंसक साहित्य-सेवी श्री मंगलाप्रसाद द्वारा प्रकाशित 'अनुभूति' नामके ले ली गयीं। जो बचीं वे फिर 'अन्तर्ध्वनि' नामसे, आगे चलकर, प्रकाशित हुईं।

मैंने उनके जीवनपर पड़े परदेको जो संकेत किया है उसकी पुष्टि उनकी रचना 'किसलय' की भूमिकासे होती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसमें उन्होंने स्पष्ट स्वीकार किया है कि 'उन्हींके कुछ नया चीज़ लिखनेके अनुरोधपर मैंने कहानियाँ लिखना आरम्भ किया।' इस संकलनमें दस कहानियाँ हैं और सब भावावेशसे पूर्ण। कई आत्मवृत्तात्मक (आटोबाई-ग्राफ़िकल) भी हो गयी हैं। इन्हें पढ़कर ही शायद उनके किसी विद्वान् मित्रने कहा था — "यू डू नाट सीम टु बी मेड ऑफ़ फ़्लेश ऐण्ड ब्लड, बट आफ़ इमोशन्स ऐण्ड फ़ीलिंग्स।" (तुम रक्त मांससे नहीं, भावावेगों और अनुभूतियोंसे बने हुए मालूम पड़ते हो।) और यह बात उनकी कविताओं एवं कहानियों, दोनों, के लिए ठीक जान पड़ती है। 'मृदुदल' और 'मालिका' में प्रौढ़ता अधिक है, चरित्र-चित्रणकी रेखाएं सजीव हैं पर भावोंकी सुकुमारता, हृदयका करुण आवेग वहाँ भी है। मेरी समझसे कहानी-कलाकी दृष्टिसे 'मालिका' इनका सर्वोत्तम कहानी-संग्रह है, जब कि 'किसलय' में उनके परम निजत्वकी सबसे स्पष्ट झाँकी है। पर बिहारके एक-दूसरे गद्य-लेखक श्रीनन्दकिशोर तिवारी और उत्तर-प्रदेशके भावुक कहानीकार चण्डीप्रसाद हृदयेशकी भाँति भावुकता ही इनकी रचनाओंका प्राण है।

जो हाल कहानियोंका है, न्यूनाधिक वही कविताका भी है। उनका सम्पूर्ण काव्य-वैभव घनीभूत करुणासे आर्द्र है। उनके ही शब्दोंमें: 'विह्वल भावनाओंकी करुणा-भरी भूमिमें ही, अधीर उच्छ्वासोंकी मीठी-मीठी मारसे निरन्तर सिसकते रहनेवाले कलेजेकी निगूढ़तम व्यथाके भीतर ही कविताका अधिवास है।' उन्हें इस 'शीतल सन्ताप' में 'तपका पुण्य-प्रसाद' मिलता है और उनके लिए 'इस सिसकनेमें समस्त जीवन-आह्लाद' भरा है। इसीलिए उनकी कविता 'तरल पीड़ाकी धारा' है :

तरल पीड़ा के गीले गीत
उमड़ पड़ते बनकर मधु-धार।

यह मीठी वेदना कलेजेसे ऐसी चिपकी है कि उसे छोड़ आराध्यका और कोई वरदान लेनेको उपासक तैयार नहीं, उस भक्तकी भाँति जो भक्तिके ज्वारमें ध्यानमग्न स्वयं आराध्यके आगमनपर भी आँखें नहीं खोलता :

करो विचलित मत मुझको देव,
दिखाकर 'कुछ देने का चाव'।
साधना की वेदी पर बैठ,
पूजने दो यह 'अमर अभाव'।

दुःख ही उनका सुख है, अभाव ही उनका भाव है, वेदना ही उनकी साधनाकी चरम परिणति है। जनार्दन स्वयं चाहे 'रक्त-मांस' के बने न हों किन्तु उनकी कविताओंमें उनका हृदय रक्त उगलता दिखाई पड़ता है। भावना सघन होकर मांसल हो गयी है। हम उसका स्पर्श अनुभव करते हैं। इसीलिए उनकी कविताओंमें उर्दू ग़ज़लका वातावरण है—वही प्रत्यक्ष आलाप, वही विह्वलता, वही व्यथातुरता। और वह पढ़ते भी वैसा ही थे। वाणीसे अनुरोध और अनुनयके करुणाश्रु टपकते थे। मुझे अब भी याद है, जब पहली बार उन्होंने मुझे अपनी 'अतिथि' कविता सुनायी थी, तो एक मौन कचोट मैंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने कलेजेमें अनुभव की थी :

क्षण-भर के सोये वियोग को
छूकर दुख दूना न करो,
इस आतुरता से रोता
जीवन मेरा सूना न करो।

फिर उन्होंने अपनी जादू-भरी व्यथातुर वाणीमें पढ़ा :

अयि अमर शान्ति की जननि जलन,
अक्षय तेरा शृंगार रहे।
जीवनधन-स्मृति-सा अमिट
निरन्तर मेरा तेरा प्यार रहे।
हाँ, खूब जला दे, रह न जाय
अस्तित्व और जब 'वे' आवें।
चरणों पर दौड़ लिपट जाने-
वाली केवल विभूति पावें॥

तब मैं भी वेदनाकी लहरोंमें डूबने-उतराने लगा था। वही उनकी उठी हुई भुजाएँ, रोता कण्ठ और मृदुल आवाहन आज भी मुझे प्रत्यक्ष हैं। जब पढ़ते थे तो ऐसा लगता था मानो उनकी आँखें अपने आराध्यपर लगी हों और उन्हें ही वह सब-कुछ सुना रहे हों।

अपने हृदयका प्रसाद जहाँ उन्होंने काव्यमें दिया है तहाँ अपनी सूक्ष्म पर्यवेक्षण वृत्तिके फलस्वरूप दो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रचनाएँ भी वह हिन्दीको दे गये हैं—'प्रेमचन्दकी उपन्यास-कला', जो प्रेमचन्दपर हिन्दीमें पहला आलोचनात्मक ग्रन्थ है, दूसरी 'चरित्र-रेखा', जिसमें अनेक हिन्दी साहित्यकारोंके शब्दचित्र हैं। यह हिन्दीमें 'थम्बनेल स्केचेज़' का एक उत्तम उदाहरण है।

जन्मे बिहार (रामपुरडीह, जिला भागल-
पुर; जन्मतिथि : २४ जनवरी १९०४)
पनपे काशीमें। आरम्भमें अपने गाँवके
पढ़ते रहे; फिर पास ही कुमैठा
इंग्लिश स्कूलमें पढ़ने चले गये। वहीं
बन्दीका शौक़ लगा। श्री जगदीश झा 'वि-
थे इनके प्रथम काव्य-गुरु। वहीं व्या-
देना भी सीखा। १९२१ में सरकारी
छोड़ भागलपुर राष्ट्रीय विद्यालयमें
और घूम-घूमकर राजनीति-क्षेत्रमें
कार्य करने लगे। १९२२ में प्रयाग गये
स्व० कृष्णकान्त मालवीयके सम्पर्कमें
उन्होंने इन्हें पढ़ने काशी विद्यापीठ
दिया जिसके स्कूल-विभागके अध्यक्ष
समय प्रेमचन्द भी थे। बादमें पं०
नारायण मिश्रकी प्रेरणासे उन्हींके हिन्दू
में आ गये। जब हमारा प्रथम परिच
वह इसी हिन्दू स्कूलमें पढ़ने लगे थे।
नरेश-हॉलके पीछे ऊपरके एक कमरेमें
थे। अपने हाथसे भोजन बनाते, कपड़े
बरतन माँजते और सफ़ाई करते थे
ग़रीबीके बीच भी सुरुचि एवं सौन्दर्यक
उनके प्रत्येक कार्यपर थी। बढ़िया
धवल, खादीका कुरता और धोती,
एक तहाया हुआ मालवीय-टाइप दुपट्टा
माथेपर गोल लाल बिन्दी; मोहक
विन्यास। आँखोंमें सपना। हिन्दू स्कूलके
कक्षमें मेरी न जाने कितनी
उनके साथ बीती होंगी। उनके
भोजन करनेके बाद, बात हमारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ुराक – कविता – पर आ जाती। "नया क्या लिखा है? पढ़ो।" नया न लिखा होता तो मैं कहता – "अमुक कविता तो ज़रा सुनाओ।" वह सुनाते। मैं सुनता, सिर धुनता और कलेजेमें पीड़ा लिये रातको लौटता। कभी वह मेरे यहाँ आ जाते; 'प्रसाद'जी बाहर होते तो हम सब साथ बैठते। कभी प्रसादजीसे आग्रह करके उनके 'आँसू' के नये छन्द सुनते, कभी द्विजसे पढ़वाते और सुनते।

करुणामें डूबे 'द्विज' जब खिलखिलाकर हँसते तो मानो उस हँसीमें उनका हृदय सामने आ जाता था—निष्कपट, हृदयकी गहराइयों-से उठनेवाला उन्मुक्त हास्य! एक सोतेकी कलकल लिये हुए।

मेरे विवाहमें हमारे चन्द बहुत चुने हुए मित्र ही जबलपुर गये थे। 'द्विज' भी थे। भिन्न-भिन्न कट्टर जातियोंके मित्र! पर मित्रताके नशेमें सब कुछ भूले हुए। 'द्विज' इस मण्डलीकी जान थे। उनके क़हक़होंसे न केवल जनवासा गूँज जाता था, वरन् हमारे हृदय भी हँस पड़ते थे। एक बार उन्होंने एक हास्य-कथा सुनायी जिसमें बिहारी बोली-में 'चहुँपली' (अभी पहुँचा) शब्द आता था। वह शब्द हास्यका ऐसा प्रतीक बन गया कि ज्यों ही कोई बात होती, वह कहते – "चहुँपी? अच्छा, चहुँपली!" कि मित्र-मण्डली हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाती थी। कब दिन बीता, कब रात आयी और कब रात भी बीत गयी, कुछ पता ही न चलता था। खाना-पीना, कविता, ग़प-शप और हँसी। कुछ अजब बाढ़पर ज़िन्दगी थी। ऐसा स्वाद जीवनमें फिर कभी न आया। हमारे साथ शहनाईके भारत-विख्यात उस्ताद बिस्मिल्लाहकी मण्डली भी गयी थी। उस समय उनकी चढ़ती जवानी थी; बड़ा रियाज़ था। फिर शहर और मुहल्लेके ख़यालसे, हम लोगों और काशीकी मूँछें ऊँची रखनेके लिए वह दिल खोलकर बजाते थे। जबलपुर मुग्ध हो गया। उनकी कला, हम मित्र-मण्डलीका साहित्य-विनोद—इन सबका ऐसा समा बँधा कि जहाँ देखो हमें बुलाया जा रहा है। जनार्दन अँगरेजी बहुत अच्छी बोलते थे। बिहारके हिन्दी साहित्यिकोंमें वह अँगरेज़ीके सर्वोत्तम वक्ता थे। फल यह हुआ कि हम दो दिनको गये थे और पाँच-छह दिन तक किसीने हमें हटने ही न दिया।

१९३४ तक तो हम लोग घनिष्ठ सम्पर्क-में रहे। फिर मैं गान्धीजीके पास चला गया। उन्होंने कृपापूर्वक मुझे निजी सचिव-के रूपमें काम करनेका अवसर दिया। उनकी अहेतुकी करुणाकी क्या कहूँ? वह तो मिट्टीसे आदमी बनाते थे। अब वह नहीं हैं तो लक्ष-लक्ष व्यक्तियोंकी भाँति मैं पितृहीन हो गया हूँ। वहाँसे छूटा तो अकोलाके 'नव राजस्थान'का प्रधान सम्पादक होकर चला गया। बादमें मुझपर मुसीबतोंके पहाड़ टूटते रहे। पत्नीकी बीमारीके कारण सिर उठानेकी फ़ुरसत न मिली। बहुत दिनों तक यह भी मालूम न हुआ कि जीवनकी आँधी किसे कहाँ उड़ा ले गयी है। बादमें पता चला कि मेरे काशी छोड़नेके कुछ ही दिनों बाद वह भी वहाँसे चले गये। जनवरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९३६ ई० में वह देवघर हिन्दी विद्यापीठके रजिस्ट्रार हुए; फिर ६ अगस्त १९३८ को राजेन्द्र कालेज, छपरा (जिसके प्रिन्सिपल मेरे अन्यतम मित्र, कवि एवं सहृदय साहित्यकार श्री मनोरंजनप्रसाद सिंह थे और जहाँ बादमें शिवपूजन सहाय भी हिन्दी पढ़ाने आ गये थे) में हिन्दी-विभागके अध्यक्ष हुए। फिर तो शिक्षा-जगत्के ही हो गये; उसीमें उन्नति करते गये। २१ जून १९४४ को सच्चिदानन्द सिनहा कालेज, औरंगाबाद (गया)के प्रिन्सिपल हुए और वहाँसे २ अगस्त १९४८ को पूर्णिया कालेजमें इसी हैसियतसे चले गये। फिर जीवनके अन्तिम दिन तक वहीं रहे।

परन्तु पूर्णियाका जाना उनके लिए काल हो गया। वह हँसी ग़ायब हो गयी; वह मार्दव एवं सौकुमार्य तिरोहित हो गया। मानसिक तनावका ऐसा युग आया जिसमें उनका सर्वास्तित्व समा गया। मित्रोंसे मिलना-जुलना तक बन्द कर दिया और नगरके कोलाहल-केन्द्रोंसे दूर, कालेजके सूने अहातेमें बनी एक शतवर्षीया जीर्ण कोठीमें रहकर चुप जीवनके दिन काट दिये। हर तरहके सम्पर्क एवं प्रचारसे दूर हो गये; साहित्यसे भी सम्बन्ध तोड़ लिया। जीवनके ये अन्तिम सोलह वर्ष, जो पूर्णियामें बीते, वह तिल-तिल आत्महत्या करते रहे; सबसे दूर, कोई हमसफ़र जहाँ नहीं, कोई हमज़ुबाँ जहाँ नहीं, कोई साथ हँसने-रोनेवाला जहाँ नहीं, दुनियासे कटे, सर्वथा एकाकी। मानसिक तनावकी यह स्थिति कुछ ग़लतफ़हमियों, कुछ कौटुम्बिक प्रवृत्तियों और कार्यक्षेत्रके सहयोगियोंके कृत्योंका सम्मिलित परि[illegible] थी। परन्तु इस निराशामें भी कुछ [illegible] लगी थी, इस मौनमें भी किसीकी प्र[illegible] थी। उस उजड़े दयारसे उनका जीवन [illegible] उनकी ही पंक्तियोंमें किसीको पुकार रहा [illegible]

मग-विहीन इस सघन विपिन के
बीच कौन आ पायेगा?
'तिमिर लोक' से 'ज्योति-जगत्'
की ओर मुझे ले जायेगा?
स्मृति-चिन्ता में निरत, विमुध
हो भूल गया मग मैं अपना।
कौन पकड़ मम पाणि प्यार से
फिर उस पर पहुँचायेगा?

इस एकान्त-चिन्ताने मधुमेहकी सृष्टि [illegible] फिर ग्लूकोमा हुआ जिसकी बुभुक्षामें [illegible] भी चली गयी। अपने परम मित्र कैलाश [illegible] मृत्युने उनको एकदम तोड़कर रख दि[illegible] प्रतीक्षाका अन्त हो गया। हृदयरोग हु[illegible] हुआ क्या वह तो भावजगत्में शुरू [illegible] था। 'अज़लके दिन जिन्हें लेकर चले थे [illegible] महफ़िलसे, वे शोले आज तक लिपटे हु[illegible] दामने दिलसे' कुछ ऐसी स्थिति थी। [illegible] उन्हें आत्मसात् कर लिया और एक [illegible] जिन्होंने छायावादयुगीन काव्यका [illegible] शृंगार किया था, जिनकी वाणीमें सरस्व[illegible] बोलती थी, वह निर्जन एकाकी गृहमें, नि[illegible] दूर, 'स्व'जनोंसे दूर, अपने छह पुत्रों एवं [illegible] पुत्रियोंको तथा जो उनको 'जानते थे' [illegible] सदाके लिए रोता छोड़ चले गये। छायावा[illegible] युगके मेरे घनिष्ठ कृपालु मित्रोंमें अग्रग[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेमचन्द गये, निराला गये, शिवपूजन गये, और अब द्विज भी चले गये।

और हिन्दीकी गुटबन्दीका यह हाल है कि किसीने उन्हें याद न किया; एक भी बढ़िया लेख बिहारके पत्रोंमें भी नहीं दिखाई पड़ा, जब कि छुटभैयोंपर विशेषांक निकलते हैं। बात यह कि वह किसी गुटके न थे। किसीके प्रचारके साधन न बन सकते थे। किसी नेताके पीछे-पीछे न घूम सकते थे; अतः 'न भूतो न भविष्यति साहित्यकार' बतानेवालोंकी इस सट्टीमें किसीने 'द्विज'को याद नहीं किया, मेरा मतलब हृदयकी शिरा-शिराके साथ याद करनेसे है।

हाय, हम एक ही साल पैदा हुए, एक ही साल परिणय-बन्धनमें बँधे, एक ही स्रोतसे हमारी काव्य-सृष्टि हुई परन्तु आज मैं बैठा सिर धुन रहा हूँ, और वह चले गये हैं। मेरी पकड़के बाहर, मेरी कल्पनाओंसे दूर, शायद अपने उसी परम मित्रसे मिलने जिसकी स्नेह-साधना ही उनका साहित्य था, जिसका प्रकाश ही उनका जीवन था। आज तो उनकी स्मृति भी मौन है!

दाग़े फ़िराक़ सोहबते शब की जली हुई,
एक शम्अ रह गयी है सो वह भी ख़मोश है।

दो बूँद आँसू चू पड़े हैं, और मैं अपनी चिर पिपासाकुल, हाँफती-सी क़लम रख देता हूँ।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परी-चर्चा

हरिकृष्ण देव

बाल कहानी : पिछला दशक

पं० विष्णु शर्माने कहानियोंके जिस पंचतन्त्री वृक्षका रोपण किया था, वह प्रत्येक युग किसी-न-किसी रूपमें पल्लवित होता ही रहा। उसे सींचकर हरा-भरा रखनेका दायित्व अधिकतर उन दादी-नानियोंके पास था, जो इसकी पौध नन्हें-नन्हें बच्चोंके हृदयमें लगाकर उनका मन बहलाती थीं। किन्तु बीसवीं सदीमें पहुँचते-पहुँचते दुनियाकी रूपरेखा कुछ इस तरह बदली कि वह पंचतन्त्री वृक्ष मात्र एक कल्पना रह गया। लेकिन दादी-नानियोंने नये आयामको जल्दी स्वीकार नहीं किया। वे अपना बुढ़िया-पुराण ज्योंका त्यों बच्चोंको सुनाती रहीं। परिणाम यह हुआ कि जब वे बच्चे बड़े हुए तो उन्हें बुढ़िया-पुराण मिथ्या लगा। उन्होंने देखा तो पाया कि उस कल्पना-लोकसे यह दुनिया भिन्न है। यहाँ न तो बालवाली रानी है और हीरे-जवाहरातोंके ढेर यह बात बड़ी दुखद महसूस हुई। इसलिए जब वे बड़े होकर, भावी पीढ़ीको सम्हालने योग्य हुए तो जीवन बदलते हुए साहित्यके मूल्योंके अनुरूप ही बच्चोंके संस्कारों, शिक्षा-दीक्षा और

बच्चोंको केवल परीलोक और परी-चर्चामें भटकनेसे काम नहीं चलेगा। ज़रूरत है विष्णु शर्मासे आगे बढ़नेकी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदिको भी ढालना शुरू किया।

स्वतन्त्रता-प्राप्तिके बाद और पिछले दशकके पूर्वार्द्धमें बाल-कहानियोंकी स्थितिमें आमूल परिवर्तन तो नहीं हुआ; किन्तु उसने केंचुल बदलनी शुरू कर दी थी। इसका परिणाम यह हुआ कि बच्चोंके लिए कहानियोंका महत्त्व समझा जाने लगा और कुछ ठोस क़दम भी उठाये गये। साहित्यमें यह समय लोकसाहित्यका युग था। समस्त भारतीय भाषाओंके लोकसाहित्यसे लोक-कथाओंको निकालकर बच्चोंके लिए लिखा जाने लगा। इस तरह काम तो काफ़ी हुआ, लेकिन उसके कुपरिणाम कई निकले। एक तो यह कि कौन-सी कथा प्रामाणिक है और कौन-सी मौलिक, यह पता लगाना कठिन हो गया। एक ही कथा कई रूपोंमें कई लेखकोंके नामसे छपी। दूसरे, इनका विषय भी वही सैकड़ों साल पुराना था। तीसरे, प्रकाशकोंके लिए अन्धाधुन्ध व्यवसाय करनेका एक अच्छा मौक़ा हाथ लगा। न जाने कितनी सीरीज़ और लोककथाओंके सेट प्रकाशित होकर बाज़ारमें ढेर लग गये। उनका विषय-तत्त्व, भाषा, छपाई आदि बालोपयोगी है या नहीं इसकी चिन्ता किसीको न हुई। सिर्फ़ 'लोककथा' की मुहर लगी होनी चाहिए। किन्तु यह मुहर तुरन्त ही पकड़ी गयी। लोग इसकी असलियतको पहचानने लगे और शीघ्र ही इस दिशामें सतर्क हो गये।

पिछले दशकके पूर्वार्द्धमें स्वस्थबाल-कथासाहित्य प्रकाशित न हुआ हो, यह बात नहीं है। बच्चोंके लिए मनोवैज्ञानिक और उपयोगी ढंगसे लिखनेवालोंने कई पुस्तकें बाल-पाठकोंके हाथमें दीं। भूपनारायण दीक्षितका उपन्यास 'खड़-खड़ देव', डॉ० वासुदेवशरणकी 'खिलौनेकी कहानी', भारती भण्डार प्रयागसे प्रकाशित 'अपना देश', 'सात कहानियाँ', बालकृष्णकी 'मैं चब्बों-का ?', 'चुहिया राजकुमारी' सरस और मनोरंजक बाल-कहानियोंकी पुस्तकें कही जा सकती हैं। किन्तु इस पूर्वार्द्धमें लिखी गयी बाल-कहानियोंके पीछे या तो मनोरंजन या उपदेश देनेकी नीति ही दिखाई देती है।

बच्चोंके स्वस्थ बौद्धिक विकासके लिए यह आवश्यक नहीं होता कि उनके लिए जो कुछ लिखा जाये वह सीधा-सादा तथा उपदेशात्मक ही हो। विज्ञानके युगमें पहुँच-कर लोगोंने यह महसूस किया कि अब बाल-कथाएँ केवल मनोरंजक या अन्तिम वाक्यमें नीतिकी बात कहनेवाली ही नहीं होनी चाहिए। बाल-कथाएँ तो ऐसी हों जो मनोवैज्ञानिक ढंगसे, बच्चोंकी रुचिके अनुकूल और उनके संसारकी समस्याओंको सुलझानेके उद्देश्यसे लिखी गयी हों। पिछले दशकके उत्तरार्द्धमें इस दिशाकी ओर विशेष रूपसे ध्यान दिया गया। 'सतलुजकी कहानी', 'एटमकी कहानी', 'राकेटकी कहानी' आदि पुस्तकें पंचतन्त्री वृक्षके फलोंसे बिलकुल भिन्न हैं। किन्तु आवश्यकता इन्हींकी थी और इनका स्वागत भी हुआ। विदेशी बाल-कथाओंके अनुवाद भी इसी समय हुए। 'ट्रेजर आइलैण्ड', 'टालसटॉयकी कहानियाँ' आदि बच्चोंको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरे देशोंके रहन-सहन, व्यवहार, जल-वायु आदिकी जानकारी देनेवाली सिद्ध हुईं। इसके अलावा 'शिकारकी कहानियाँ', 'साहसकी कहानियाँ' भी बच्चोंको क्रियाशील बनाने और उसके मनोभावोंको जाग्रत करने के उद्देश्यसे लिखी गयीं।

इस समय एक विचित्र प्रश्न विवादका विषय बन गया। परी-कथाओंको बच्चोंके लिए कहाँ तक सार्थक और उपयोगी स्वीकारा जा सकता है? कुछ लोगोंने इसके पक्षमें मत व्यक्त किये और यह कहा गया कि वे तो बच्चोंको जन्मजात मिलती हैं। किन्तु बात ऐसी नहीं है। स्वप्निल-लोकका निर्माण किसी-न-किसी वस्तुके आधार पर ही होता है। यह आधार चाहे आँखों देखा हो या कानों सुना। जहाँ तक परी-कथाओंकी उपयोगिताका प्रश्न है, वह उस रूपमें कदापि नहीं स्वीकारा जा सकता, जिस रूपमें वे आजसे सैकड़ों साल पहले थीं। आज इस विज्ञान-जगत्में अनेक प्राचीन तथ्य, मान्यताएँ तथा विश्वास खण्डित हो चुके हैं। अब न राक्षस होता है और न जादूभरी घाटियाँ ही हैं। न तो लालपरी पाताल-लोककी सैर कराती है और न नीलमपरी गगन-मण्डलमें उड़ाने ले जाती है। अब ये बातें बच्चोंको बतानेसे उनके मनमें निराशाका भाव जाग्रत होता है। वे बड़े होकर असलियतको पहचानते हैं और बचपनमें प्राप्त सारा सामान्य ज्ञान केवल झूठी कल्पना मात्र रह जाता है। तब उसे नये ढंगसे, नये आयाममें फिरसे ज्ञानार्जन करना पड़ता है और परिणाम यह होता है कि वह अपना विक उतनी गति तथा चतुराईसे नहीं कर पा जिस तरह आज संसारके अन्य देशोंके कर रहे हैं।

इन्हीं कारणोंसे पिछले दशकके उत्तरा में यह आवश्यक हो गया कि बाल-कहानि के रूप, उनके विषय-तत्त्व और उनकी एप्रो बिलकुल परिवर्तन कर दिया जाये। यह है कि एक परम्परा या कहानियोंके निश्चि आकारको उतनी शीघ्रतासे बदलना स न था। फिर भी पुरानी बोतलमें नयी भरकर काम आरम्भ किया गया। कथाओंको वैज्ञानिक-चमत्कारों द्वारा गया। उनमें कल्पनालोकके माध्यमसे लिक सत्य प्रतिपादित किये जाने लगे साहस, त्याग, यात्रा आदिकी कहानि पात्र बच्चोंमें-से ही चुने गये। ऐसा बच्चोंमें उन कथाओंसे तादात्म्य स्था करनेकी क्षमता आने लगी।

विकास और राष्ट्रीय चेतना जा करना भी एक आवश्यक तत्त्व समझे बच्चोंमें इनके बीज अंकुरित करनेके लि तरहकी कथाएँ लिखी गयीं। 'नयी बात पुरानी'में, लोककथा शैलीमें लि गयी कहानियाँ आजकी अनेक बा स्पष्ट करती हैं। 'सतलुजकी कहानी, तीरथ' आदि पुस्तकें भी ऐसी ही महत्व बातों पर प्रकाश तथा बच्चों पर सं संस्कार डालती हैं।

बच्चोंके लिए मनोवैज्ञानिक लिखकर उनके संस्कारों, उनकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदिको सुधारनेका कार्य भी इसी समय आरम्भ हुआ। विदेशोंमें तो 'टॉम स्वेयर' या इसी तरहकी अनेक पुस्तकें मिलती हैं। हिन्दीमें ऐसे प्रयोग बहुत कम हुए थे। श्रीमती सावित्री देवी वर्मा, मन्मथनाथ गुप्त आदिने इस तरहकी अनेक कहानियाँ लिखीं, किन्तु वे पर्याप्त नहीं कही जा सकतीं। ऐसी कहानियोंकी अभी और आवश्यकता है।

बच्चोंमें 'एडवेंचर'की भावना जाग्रत करनेके उद्देश्यसे लिखी गयी कहानियाँ हिन्दीमें नहीं है। 'एक डर : पाँच निडर' उपन्यास कुछ समय पहले, सत्यप्रकाश अग्रवालका, प्रकाशित हुआ था, किन्तु वह तो गरम तवे पर पानीकी एक बूंद बनकर रह गया।

विज्ञानके तथ्योंपर आधारित अनेक कहानियां आजकल लिखी जा रही हैं। 'चन्दामामा दूरके' हरिकृष्ण देवसरेका तथा 'चाँदसे आगे' ओमप्रकाशका उपन्यास इसी श्रेणीके हैं।

यह सही है कि पिछले दशकमें बाल-साहित्यका प्रकाशन प्रचुर मात्रामें हुआ है और अब हिन्दी बाल-साहित्यको यों ही उपेक्षित नहीं बनाया जा सकता, फिर भी प्रकाशक-वर्ग अभी भी अपनी व्यावसायिक वृत्ति नहीं छोड़ता। इसका परिणाम यह होता है कि अधिकतर पुस्तकें उच्चकोटिकी नहीं बन पातीं। इधर पिछले दो वर्षोंसे कुछ प्रकाशक स्वस्थ विचारधारा लेकर सामने आये हैं। दिल्लीके शकुन प्रकाशनका नाम विशेषकर इसलिए उल्लेखनीय है कि इन्होंने केवल बाल-साहित्यके प्रकाशनका व्रत लिया है। इन्होंने अपना प्रथम सेट जो प्रकाशित किया है वह हिन्दीके सर्वश्रेष्ठ बाल-साहित्य-प्रकाशनके रूपमें स्वीकारा जा सकता है।

भारत-सरकार द्वारा जारी की गयी एक विज्ञप्तिके अनुसार वर्ष ६३-६४ में बाल-साहित्य पर अँगरेज़ी, तथा अन्य भारतीय भाषाओंकी कुल ७७१ पुस्तकें प्रकाशित हुईं। इनमें १७४ पुस्तकें केवल हिन्दीमें प्रकाशित हुई हैं। यह संख्या अन्य भाषाओंके प्रकाशनोंमें सर्वाधिक है। यह इस बात-का भी प्रमाण है कि हिन्दीका बाल-साहित्य अब निरन्तर प्रगति कर रहा है। आवश्यकता केवल इस बातकी है कि जो कुछ भी लिखा जाये उसे यदि अधिकसे अधिक कथात्मक तथा रोचक बनानेका प्रयास किया जाये तो वह अधिक उपयोगी होगा। हाल हीमें उमेश प्रकाशनके यहाँ 'रवि बाबू'की जीवनी बहुत ही सुन्दर उपन्यासके ढंगसे निकली है। रवि बाबू पर अब तक लिखी गयी और शायद हिन्दीमें यह पहली जीवन-पुस्तक है, जिसे इतना रोचक कथात्मक रूप दिया जा सका है।

कहानियाँ तो आदिकालसे बच्चोंका मन लुभाती रही हैं, किन्तु प्रत्येक युगमें मनुष्यके जीवनके मूल्य बदलते रहे हैं और इसलिए आज यह आवश्यक हो गया है कि इन बदलते हुए मूल्योंसे बच्चोंको परिचित कराया जाये, जिससे वे भविष्यमें जीवनको प्रशस्त बना सकें। केवल परी-लोकमें भटकानेसे काम नहीं चलना है, अब तो राकेट और चाँदका युग है, जहाँ सब कुछ सत्य और तथ्य पर अवलम्बित है। ■■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

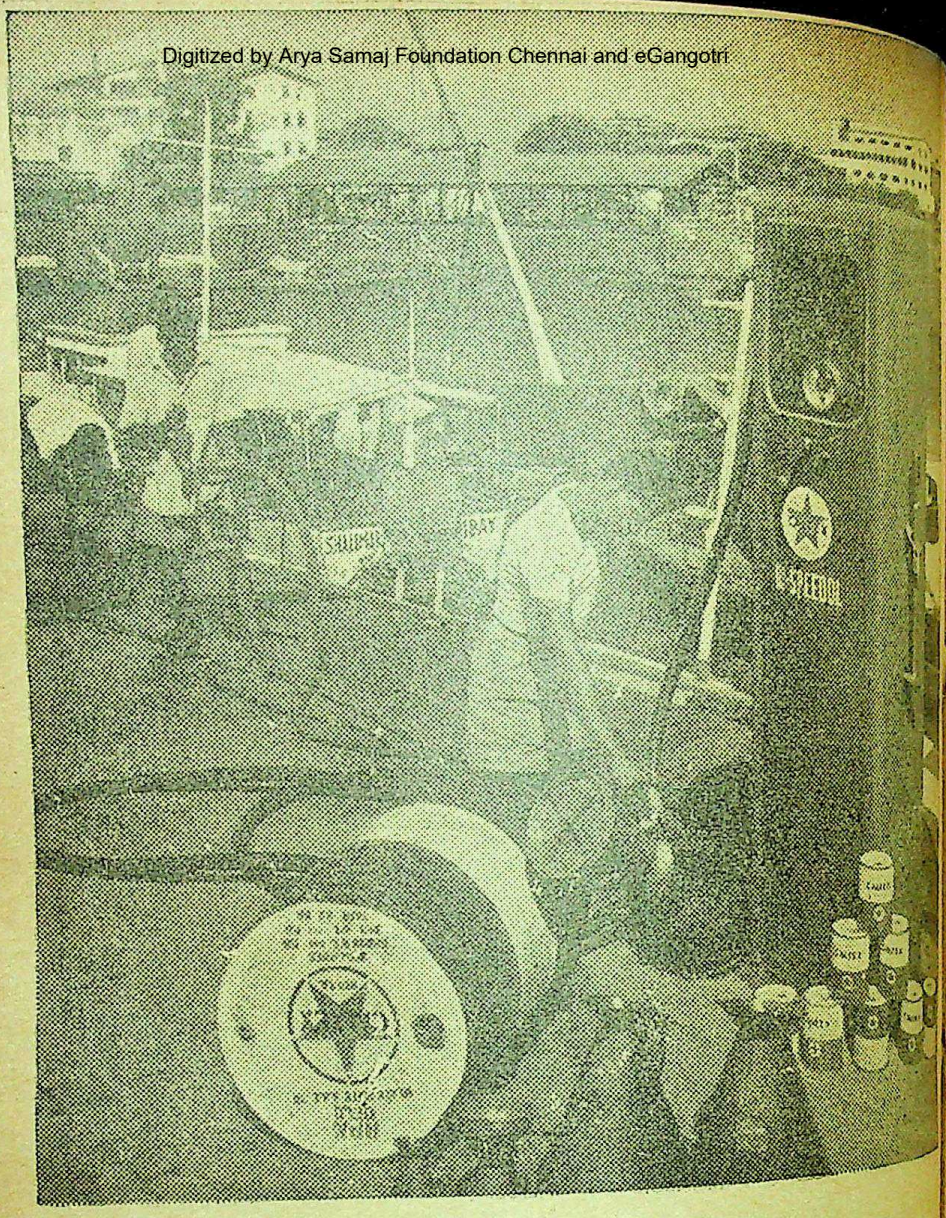

Satisfying the fishing industry's appetite for oil...

...Caltex serves all consumer needs for petroleum products in every part of the country **...you're never far from the Caltex Star.**

CALTEX (INDIA) LIMITED

CAL I.G.1-65

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागेश्वर लाल
रमेश कुन्तल मेघ

याद निरालाकी*

१-सरोजकी मृत्यु एक निमित्त मात्र

डॉ० रमेश कुन्तल मेघके विचारसे निराला-की 'रामकी शक्तिपूजा' बेशक 'सरोज-स्मृति'-का रूपान्तर तथा विस्तार है। वे परिवेश और घटनामें अदल-बदल हो जाना मानते हैं पर इससे अधिक नहीं। उनका यहाँतक कहना है कि 'रामकी शक्ति-पूजा'में सरोज-स्मृति'की चेतनाका ही 'आद्यन्त रूपायन' हुआ है। चूँकि दोनों कविताओंकी रचना एक वर्षके भीतर ही हुई है इसलिए उनके पीछे एक-सी मनोदशाके छाये रहनेका अनुमान सम्भव हो गया है।

यह माननेमें कठिनाई नहीं हो सकती कि सरोजकी मृत्युसे निरालामें जिस मनः-स्थितिका विकास हुआ उससे 'रामकी शक्ति-पूजा'का भी सम्बन्ध प्रतीत होता है। कविके व्यक्तित्व या चारित्र्यकी खोजमें ये कविताएँ पर्याप्त महत्त्वपूर्ण हैं। एकमें व्यक्तित्वकी सीधी अभिव्यक्ति है, दूसरीमें पौराणिक

* सितम्बर १९६४ के ज्ञानोदयमें प्रकाशित लेख—'रामकी शक्तिपूजा' 'सरोज-स्मृति'का रूपान्तर है—की एक और प्रतिक्रिया तथा स्वयं स्थापनाकार रमेश कुन्तल मेघ द्वारा अन्तिम समाधान।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसंग-विधानके माध्यमसे; और फिर भी दोनोंमें निरालाके व्यक्तित्वकी, हार-हारकर जूझनेवाले व्यक्तित्वकी, विवृत्ति है : पर वह विवृत्ति ऐसी नहीं है कि दोनों कविताओंके विविध अंशोंका विशद समीकरण करके उसका निर्देश किया जाये। डॉ० कुन्तल मेघके लेखके चौथे पारामें जिस तरह साम्य का तुलनात्मक निर्देश है वह मुझे उतना जँचा नहीं। उस पाराके कुछ वाक्य दोहराने योग्य हैं : 'शक्ति-पूजामें रामकी उपेक्षा महा-शक्ति करती है तो स्मृतिमें निरालाकी उपेक्षा निरानन्द शक्तिमान् सम्पादकगण करते हैं। निरालाको स्वजन-बान्धव तथा सासु आदि विवाह करनेको प्रोत्साहित करती हैं तो रामको विभीषण रणोत्साहित करते हैं।' इसी प्रकार निरालाकी कुण्डली फाड़कर सरोज, तो रामको शक्तिकी आराधनाकी प्रेरणा देकर जाम्बवान रास्ता दिखलाते हैं। इन बातोंका अजीब लगना स्वाभाविक है।

मैं अपनी बात कहनेके पहले यह तय कर लेना चाहता हूँ कि किन्हीं दो या दोसे अधिक कविताओंकी तुलना करते समय उनमें साम्य खोजनेका कौन-सा आधार होना चाहिए। केवल उक्तियों और चित्रोंका उतना महत्त्व नहीं होता और न भाव या विचारका ही उतना महत्त्व होता है। वस्तुतः महत्त्व रचनात्मक स्वरूपकी प्रकृतिका, माध्यमकी गठन-प्रक्रियाका होता है। गठन-प्रक्रियाका वैशिष्ट्य सजग शिल्पन मात्रसे प्रादुर्भूत नहीं होता, उसके साथ कविकी मनःस्थिति भी लगी हुई रहती है। आलोचनाका दायित्व है कि वह माध्यमकी गठन-प्रक्रियासे दो कविताओंकी गठन-प्रक्रियामें एकरूपता मिलनेपर उनमें-से एक ही सही कविता है, क्योंकि जिसे रूपान्तर कहा जायेगा उसे सृजनके बदले अनुकरण मानना पड़ेगा। यह केवल तब नहीं होगा जब एक कविकी रचनाके लिए जागी हुई ऊर्जा उसमें न रुक सके और उसके दबावसे कवि फिर दूसरी कविता रचनेको विवश हो जाये। ऐसी स्थितिमें दोनों कविताओंमें मानसिक क्रिया-ताका सम्बन्ध तो होगा पर किसीको रूपान्तर नहीं कहा जायेगा।

'सरोज-स्मृति' और 'रामकी शक्ति-पूजा' में निरालाकी आत्मकथाके एक ज्वलित प्रसंगकी भूमिका अनुभव हो सकती है। इसके बावजूद दोनों दो कविताएँ हैं, अलग-अलग क्षणकी, अलग-अलग मनःस्थितिकी और इसीलिए अलग-अलग माध्यमकी। 'सरोज-स्मृति' जलते हुए क्षणके बहुत निकटकी है। उसमें टूटने और हारनेका दर्द केन्द्रीय महत्त्व रखता है। पर यह नहीं कि उसमें निर्वेद या दर्द हो। कवि अपनेको निरर्थक पिता कहता है, निरर्थक इसलिए कि उसकी मूल्यचेतना उच्चतर रही, वह दूसरेका सजल मुख नहीं देख सका इसलिए स्वयं सजल मुख रहा। उसे अनुभव होता है कि धर्म सदा नतमस्तक है फिर भी वह पूरी तरह आस्थाहीन नहीं है। उसे विश्वास है कि जैसे-जैसे जीवनका रवि उदय होगा वैसे-वैसे उसकी कालिमा और फिर भी लांछित छवि भास्वर हो जायेगी। इसके साथ ही और भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसंग हैं। दर्दके साथ-साथ व्यंग्य, खीझ, रूढ़िद्रोह और आत्मनिष्ठाकी अभिव्यक्ति भी 'सरोज-स्मृति'में हुई है और इन सबके कारण उसमें अनुभूतियोंका एक तनावपूर्ण वेधक योजना सम्भव हो सकी है। उसके आरम्भमें सरोजकी मृत्युके सम्बन्धमें बौद्धिक उदात्तीकरण या आदर्शीकरणका प्रयास भी है। इस प्रकार वह कविता निरालाके वैविध्यपूर्ण व्यक्तित्वका संक्षिप्त और फिर भी समग्र निदर्शन है, एक जलते हुए क्षणके सन्दर्भमें सजग प्रत्यवलोकनके रूपमें। इसी-लिए वह बच्चन और दूसरे कवियोंके जोकोद्गारोंसे पूर्णतः भिन्न गम्भीर कविता है।

'रामकी शक्ति-पूजा'में निरालाके व्यक्तित्वकी प्रत्यक्ष योजना नहीं है। निस्स-न्देह 'बहुधा रोमैण्टिक कवियोंने नायकोंमें अपना भी आत्मचरित्र पारदर्शी हाशियोंमें लिखा है।' यह मान लें कि रामकी शक्ति-पूजा अन्ततः निरालाकी ही शक्ति-पूजा है, यों कि उसकी सम्भावना सार्वजनीन है और अधिक अच्छा है कि कहें कि वह इस युगके टूटते हुए किसी भी अनुभूतिशील व्यक्तिकी शक्ति-पूजा है। इस सन्दर्भमें दो प्रश्न हैं जिनके उत्तर खोजना आवश्यक है। पहला तो यह कि उसके 'मिथकीय परिवेश'-का क्या कारण है? यह समझना भ्रामक है कि एक ही अभिप्राय को भिन्न माध्यमसे पुनः प्रस्तावित करनेके लिए उसका विधान किया गया है। वह अपेक्षाकृत स्थिर क्षणकी कविता है। कवि अपने दर्दको संभालनेके लिए मानसिक स्तरपर सचेष्ट है। वह टूटने और हारनेकी वेदनाको कल्पनाके सहारे जीतता है। चूँकि वस्तुस्थिति पूर्ववत् है, समाजके सम्बन्ध भी उतने ही विषम हैं अतः कल्पनाके स्तरकी जयगाथा को, दिवास्वप्न को, पौराणिक परिवेशमें मूर्त करनेकी विवशता है। 'रामकी शक्ति-पूजा' एक 'मिथ' है, 'मिथ' अर्थात् पुरोगम और उसकी प्रायः वही भूमिका है जो कामायनीके अन्तिम सर्गों या पैराडाइज रिगेण्डकी है। वह यथार्थको मानसिक रूपमें सन्तुलित करनेके लिए उदात्तीकरण या आध्यात्मीकरणका उद्योग है। स्वभावतः वह अतिरेक की, आतिशय्यकी कविता है और उसमें आँखोंसे अधिक कानोंके लिए श्रव्यकल्पनाका ऐश्वर्य है। वह अपनी प्रकृतिसे 'मिल्टोनिक' है, 'क्लासिक' कहकर उसे पुकारा ही गया है और इसीलिए उसमें 'सरोज-स्मृति'की गुँथीली भावभूमिकाके स्थानपर चमत्कारका विधान है। दृढ़योगकी प्रक्रियाकी योजना तो चमत्कारको पूरी तरह स्थूल ही बना देती है। मेरे विचारसे 'रामकी शक्ति-पूजा'में अरजे हुए संस्कारोंकी प्रधानता है। उससे निरालाके व्यक्तित्वका एक आन्तरिक पक्ष निर्दिष्ट होता है जो दुर्बल है और उनमें मूल्यपरक अन्तर्विरोध लाता है, यह कहनेकी कोई जरूरत नहीं। वह पक्ष आध्यात्मिक रहस्यवादका है जो उनके साथ प्रारम्भसे अन्त तक लगा रहा है। उसके कारण ही वे सहज अनुभववादकी वेधक चेतनाके बावजूद रह-रहकर उसके प्रतिकूल अभिव्यक्ति करते रहे हैं। मैं यह नहीं कहता कि वैसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभिव्यक्ति अकारण करते रहे हैं पर यह तो है ही कि वह उनके उस सहज अनुभववाद के मेलमें नहीं है जिसकी अब अधिक प्रशंसा की जा सकती है। यह स्मरण रखना है कि सरोजके निधनके बहुत पहलेसे यह अन्त-विरोध निरालाके व्यक्तित्वमें रहा है।

इस तरह 'सरोज-स्मृति' और 'रामकी शक्ति-पूजा' निरालाके व्यक्तित्व या चरित्रकी दो लगभग परस्पर विरोधी विशेषताओंको सामने लाती हैं। एकमें सहज अनुभववाद (सरोजकी तरुणाईके उभारको भोगावती कहना और उसके वधू-रूपमें अपनी परिणीताकी छवि देखना असाधारण साहसिकता-के प्रमाण हैं) है तो दूसरीमें आध्यात्मिक रहस्यवादसे प्रवर्तित पौराणिक चमत्कारवाद है। इसी प्रकार दोनोंसे निरालाकी क़लमकी दो सृजनात्मक भूमिकाओंका भी निर्देश होता है। एकमें यथार्थके प्रकृत प्रत्यंकनकी तो दूसरीमें यथार्थको काल्पनिक अलंकृतिसे आच्छन्न करनेकी अधिक सचेष्टता है। मैं समझता हूँ कि सरोज न भी मरी होती तो भी या उनके मरनेके पहले भी 'रामकी शक्ति-पूजा' समग्र रूपमें रची जा सकती थी क्योंकि उसके माध्यमसे आधुनिक युगके किसी भी व्यक्तिकी यन्त्रणाकी निर्दिष्ट अभिव्यक्ति होती है। जिसे यह न मालूम हो कि उसकी रचना कब हुई वह सम्भवतः कल्पना भी नहीं कर सकता कि सरोजके मरनेसे उसका कोई सम्बन्ध है।

उन दोनों कविताओंमें कविके हारनेकी बातकी जो समानता है वह निरालाकी दूसरी कई कविताओंमें भी है जिनमेंसे कुछ निस्सन्देह सरोजके निधनके बहुत पहले हैं। बाद की 'वनबेला' तो और विचारणीय है। उसमें भी 'हो गया जीवन, मैं रणमें गया हार' है जो 'स्मृति' के 'हारता रहा मैं स्वार्थ समर' 'रामकी शक्ति-पूजा' के 'विजय होगी समर' के मेलमें है। 'रामकी शक्ति-पूजा' ही तरह और उससे बहुत अधिक यथार्थ चेतनाके सन्दर्भमें कविने 'वनबेला' न केवल अपना प्रतिरूप ढूँढ़ा है बौद्धिक उदात्तीकरणके सहारे प्रशमनकी काल्पनिक प्रेरणा भी क्या 'वनबेला' भी किसीका रूपान्तर विस्तार है ? यों तो निरालाकी हर को निरालाका रूपान्तर और विस्तार का आग्रह किया जा सकता है।

डॉ० कुन्तल मेघका प्रतिपादन संगत नहीं प्रतीत होता क्योंकि भ्रम होता है कि दोनों कविताएँ विचारसे दो हैं, नहीं तो उनमें नहीं है। फिर शिल्पमात्रका भेद है ? उस भेदकी व्याख्या कैसे हो फिर कविकी मनःस्थितिका, न कि मनःस्थितिका, उल्लेख करना पड़ेगा। ऐसे प्रतिपादनका कारण तथ्योंके आधारपर कविताका विश्लेषण है। कविता भोगे हुए अनुभवकी भी होती है पर वह भोगे हुए मुखौटा, या उसके सर्वथा प्रतिकूल भी है और इस तरह भोगे हुए अनुभव

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्ति भी होती है। अतः कविकी रचना-कालीन व्यक्तिगत अवस्थाके आधारपर कविताका विश्लेषण सदैव उपादेय नहीं हो सकता। 'सरोज-स्मृति' और 'रामकी शक्ति-पूजा' निरालाके आभ्यन्तर व्यक्तित्व या चारित्र्यके दो विरोधी पक्षोंका निर्देश करती हैं। जैसा कि पहले ही मैंने कहा है, वे दोनों एक सहज अनुभववाद और आध्यात्मिक रहस्यवादके हैं। मेरे विचारसे निराला स्व-भावसे सहज अनुभववादी थे परन्तु प्रारम्भिक कालमें कौटुम्बिक विरासतसे और रामकृष्ण और विवेकानन्दके सम्पर्कसे अरजे हुए संस्कारोंके कारण आध्यात्मिक रहस्यवाद भी उनकी चेतनाका अंग हो गया था। इसीलिए वे हर तरहके रूढ़िद्रोहके बावजूद समग्र रूपसे आधुनिक कवि होते-होते रह गये। यदि वे अपने व्यक्तित्वके दोनों पक्षोंमें-से किसी एक को पूरी तरह छोड़ सके होते या काल्पनिक स्तर पर कृत्रिम रूपसे ही सही, दोनोंको मिला सके होते तो उनमें तीक्ष्ण अन्तर्विरोध नहीं रहता। वे ऐसा नहीं कर सके तो इसलिए कि सहज अनुभववादकी ओर उनके अधिक उन्मुख होनेके बावजूद रह-रह कर उनके अरजे हुए संस्कार प्रबल होते रहे। मैं नहीं जानता कि उनके व्यक्तित्वके सम्बन्ध-में मनोवैज्ञानिकोंकी क्या राय है, मेरा अपना अनुमान है कि सम्भवतः उनका अन्तर्विरोध भी उनकी विक्षिप्तताका एक महत्त्वपूर्ण कारण है।

—महेश्वर लालु

■

२-वह अन्तर्मुखी रूपान्तर है…

'सरोज-स्मृति' एक शोकगीत है—पेस्टोरल या गोप शोकगीत नहीं, जिसमें गोप-संस्कृतिके ललित प्रतीकों-द्वारा अन्या-पदेश (एलिगरी) का इस्तेमाल होता है। यह कृति शोकगीत है जिसमें मृत्युके उपरान्त-की मनःदशाओंको पूर्वदीप्ति-पद्धतिसे अभि-व्यंजित किया गया है। गोप शोकगीतोंमें प्रेम और युद्धका समावेश भी होता रहा है। इसके विपरीत 'शक्तिपूजा' एक महाकाव्या-त्मक खण्डकाव्य है जिसमें अपराजेय समरके बादकी दशाओं और विधानोंकी अभिव्यंजना हुई है। दोनों ही रचनाओंमें घटनाके उप-रान्तकी क्रियात्मकता मिलती है। अतः विरेचन और उदात्तीकरणकी त्रासद-कामद पीठिकाएँ क़ायम हुई हैं। अन्धकारसे प्रकाशकी ओर जानेकी क्रियामें अवचेतनके चेतनमें 'रूपान्तर' (metamorphosis) का भावन होता है। 'स्मृति'में सरोज-द्वारा मृत्युके अन्धकारको जीतकर अपने अति अक्षम पिताको, हाथ पकड़कर, दुस्तर तमसे तारने-की कल्पना है। 'शक्तिपूजा'में दिशाज्ञानका खो जाना, अमानिशामें घन अन्धकार उगलता गगन, पीछे गरजता विशाल समुद्र (जीवनका प्रतीक), और केवल एक जलती मशाल—ये सब साइके ('साइकिक' नहीं) अर्थात् मनस्तत्त्वके आयाम हैं। जिस तरहसे एक पौधा फूलोंको उत्पन्न करता है, उसी तरह नैसर्गिक रूपसे साइके अपने प्रतीकोंकी रचना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करती है—उपमेयोंको विलक्षण विधान देकर। यदि हम कविके प्रतीकों और बिम्बों-को काफ़ी समयके दौरान तक परखें-जाँचें, तो हम इस मनस्तात्त्विक विकासका एक पैटर्न पा सकते हैं। साइकिक वृद्धि सचेतन उपायोंके द्वारा नहीं होती, बल्कि यह स्व-भावतः होती है। साइके एक दीप्त गोलक-जैसी है जिसके केन्द्रमें अहम् होता है। जब अहम् अस्तित्व और भविताके गहरे सन्दर्भोंमें उतरता है तब वह साइकेसे संचा-लित होता है। साइकेमें 'सामूहिक प्रयोजन' घुल-मिल जाते हैं। इसलिए साइकेके प्रतीक आर्केटाइप भी हो जाया करते हैं। अन्धकार, मशाल, सिन्धु, ज्योति-तरण साइकेके प्रथम स्पन्दन हैं।

'सरोज-स्मृति' एक आत्मकथात्मक छाया-वादी शोकगीत है। सरोज नारीत्व (फेमि-नीन) की वह धारणा है जो कविको शाश्वत नारीत्व (ईटर्नल फैमिनीन) का अवबोध कराती है। वह आलोकवरण करके ज्योतिः-शरण-तरण करती है। इसके उपरान्त ही कवि ज्योतिस्तरणा सरस्वतीके चरणोंपर अपने कविके द्वारा पाये गये प्रकाशकी चर्चा करता है, और दिवास्वप्नोंकी मानसिक यात्रा करता हुआ पहले सुघर तारुण्य कुंजमें आयी, लावण्य-भारसे थर-थर युवती सरोजके चित्रों-की झाँकी देता है, बादमें अपनी स्वर्गीया प्रियाके निराकार शृंगारमें तल्लीन हो जाता है। पुत्री सरोज और पत्नी प्रिया—'मानो आकाश ही बदलकर मही बन गया हो!' यह चिरन्तन नारीत्वकी वह परिणति है जो अर्द्धनारीश्वर मनुष्यमें अन्तर्नि-नारीत्व-तत्त्व कहलाती है। यह सार्व एक आर्केटाइपल प्रतीक है। चिरन्तन त्व हमारे अवचेतनमें संचित 'नारी' बिम्ब है जो माता, सहचरी, प्रिया, पत्नी, देवी, अनेक नारियों आदिके स्वरू का पुंज है। जुंगने इसे 'एनिमा' 'पुरुषकी साइकेका नारीत्व-तत्त्व' कहा है

'स्मृति'में मूल सौन्दर्यात्मक संवेग का है। सभी भावोंपर चिन्तन और चि एक थरथराती छाया है—चाहे वह हो, या वात्सल्य अथवा वीरका पूर्वा सरोजकी जीवनी और निरालाकी आत्म आपसमें अनुस्यूत हैं। जीवनी और आत्म के इस गुन्थनमें साथ-साथ समाज संस्कृति भी बँध गयी हैं। इसलि रचनामें कई आलोचनाशील (क्रिटि मिलते हैं जो सामाजिक-सांस्कृतिक विरोधोंको प्रकट करते हैं। पहला सर्वप्रमुख आलोचनाशील आर्थिक है। कवि—समर्थ कवि—उन अनर्थ आर्थिक नहीं पकड़ता। अतः वह निरर्थक है। **दूसरा,** कलात्मक आलोचनाशील कविने गद्य तथा पद्यमें साहित्य-कला-प्रबुद्ध प्रमाण दिये हैं किन्तु उसे स्नेहोपहार उपेक्षा और निरानन्द (विहीन) सम्पादकोंसे प्राप्त उदासीन मिली है। **तीसरा,** वर्णगत आलोचना जिसमें कान्यकुब्ज कुलांगारोंके पाखण्ड दम्भका भण्डाफोड़ हुआ है। **चौथा,** चनाशील रूढ़ियोंका है। कवि अपने

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गणोंकी राह चलना चाहता है किन्तु प्राचीन भारको पूर्णरूपेण नहीं ढो सकता।

'स्मृति'में निरालाका नायकत्व एक रोमाण्टिक विचारक, सौन्दर्य एवं दिवास्वप्न द्रष्टा-कवि, तथा एक विद्रोही मनुष्यके मेलसे बना है। 'स्मृति'में जो सामाजिक संघर्ष उभरा है उसका सारा अग्रस्तुत विधान शरक्षेप, रणकौशल, शतघ्नि घूर्णके द्वारा अथवा लोकमंगलकी साधनावस्थाके द्वारा प्रकट हुआ है। शर और समर छायावादी सन्दर्भमें — विशेषकर निरालाके तादात्म्यीकरणमें — रामवृत्त है जिसमें विद्रोह और मर्यादा, त्याग और दान, संघर्ष और सामाजिकताका सहअस्तित्व रहा है। रामवृत्तमें कोदण्ड प्रधान है, कृष्णवृत्तमें बाँसुरी। रामवृत्त साधना है, कृष्णवृत्त सिद्धि। इस अर्थमें निराला अधिक बहिर्मुखी और समाजधर्मा हैं, किन्तु फिर भी वे छायावादी हैं अर्थात् रोमाण्टिक हैं। विचारों और सौन्दर्य, वैयक्तिकता और स्वयंप्रकाश्यपर आश्रित कवि रोमाण्टिक होगा। सभी गम्भीर प्रतिमानोंके आधारपर निराला रोमाण्टिक ही ठहरेंगे जिस तरह वर्डस्वर्थ और शैले, गोएथे और पुश्किन बहिर्मुखी होते हुए प्रधानतः अन्तर्मुखी हैं और रोमाण्टिक हैं। यह न माननेपर हमें रोमाण्टिकता और यथार्थकी सारी सम्बन्धात्मकताको पहले तहस-नहस करना पड़ेगा। मनोविज्ञानकी दरिद्र अस्मिताओं (मनोविज्ञानमें धनी और गरीब तो नहीं होता फिर भी···) के बजाय मनोविज्ञानकी धनी सस्मिताओंको लेनेपर भी निरालाके नायकत्वका यही भेद खुलता है कि उन्होंने रामवृत्तसे तादात्म्यीकरण किया था। इसका तात्पर्य यह है कि देव-आकृतियाँ वास्तवमें हमारी समग्र साइकेकी प्रतीकात्मक प्रतिनिधि होती हैं। मनुष्य इनसे जितना अधिक तादात्म्यीकरण करता है, उसके वैयक्तिक अहम्को उतना ही सामर्थ्य मिलता है। वास्तवमें हीरोके मिथकके विकासके मूलमें भी यही हेतु है कि व्यक्तिकी अहम् चेतना (ego consciousness) का प्रसार हो। अहम् चेतनाके प्रसारका मतलब है कि व्यक्ति अपनी कमजोरियों और शक्तियों दोनोंके प्रति जागरूक हो, (इसीलिए रोमाण्टिक कवियोंने जागरण-स्वप्न, ज्योति-अन्धकारका अन्तर्मुखी अनुभव किया है)। नायकत्वका विकास व्यक्तिकी अहम् चेतनाके विकासका दर्पण है। किसी विशेष बिन्दु और किसी विशेष कालमें निरालाने 'स्मृति'में इतना खुलकर अपनी बातें कही हैं। उन्होंने अन्ततोगत्वा महसूस किया है कि उपार्जनके अनर्थकारी साधनोंमें अक्षम होनेकी वजहसे वे अपनी पुत्रीका उत्तम पोषण नहीं कर सके; इतनी श्रेष्ठ साहित्य-रचना करके भी वे कीर्ति नहीं पा सके, अपने आदर्शोंमे दृढ़ रहते हुए भी समाजके विवेकका उन्मेष नहीं कर सके। उन्हें यह आभास हो गया कि अशुद्ध और रूढ़िग्रस्त समाज उन्हें त्रस्त कर सका है। और वे 'भाग्यहीन' रहे हैं (भाग्यांक खण्डित करके भी)। 'स्मृति'में वे समाजके रावण-परिवेशको ध्वस्त नहीं कर पाते और अपने भाग्यअंक को खण्डित करके भी समाजके भाग्य-अंकपर कोई भी प्रभाव नहीं डाल सके। इस तरह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

हमारे दक्ष शिल्पकार

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

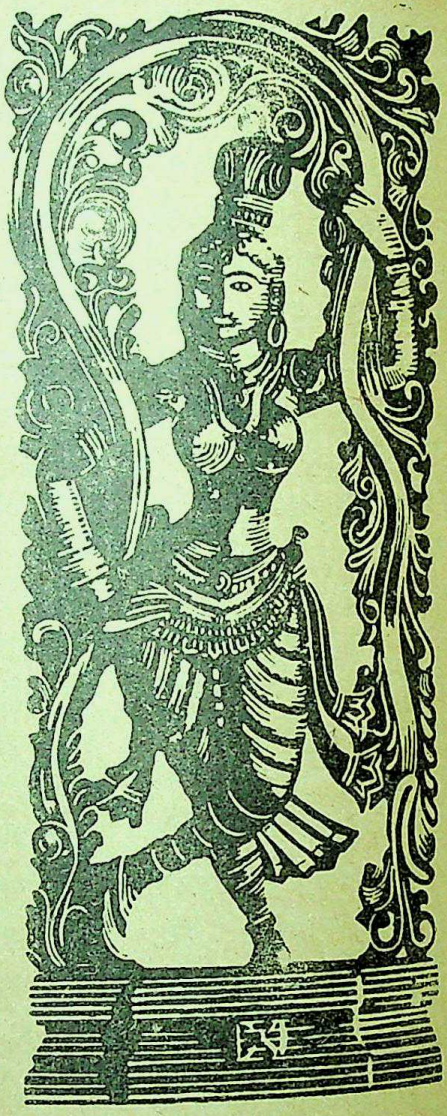

हजारों वर्षों से, पीढ़ी दर पीढ़ी हमारे शिल्पियों ने अपने हुनर की बारीकियों से परम्परागत हस्तकौशल में निखार लाने के लिए अपना जीवन होम दिया—वह हस्तकौशल, जिसने उनकी कलाकृतियों को सारे संसार में कला और सौन्दर्य का एक अनुपम नमूना बनाकर रख दिया है। शानदार कारीगरी और बढ़िया से बढ़िया डिजायनों में बनी वस्तुएं; हर वस्तु एक उत्कृष्ट कलाकृति—यह है उनकी सधी और सिद्धहस्त उंगलियों का कमाल। प्राचीन परम्परा को समृद्ध करने के लिए, भारतीय हस्तशिल्प की उपयोगिता बढ़ाने और उसकी खूबसूरती में चार चांद लगाने के लिए—हर दिन एक नया डिजायन; हर दिन एक नयी तकनीक।

हमारी सांस्कृतिक और सौन्दर्यमय उपलब्धियों में देश के विशिष्ट शिल्पकारों के योगदान को पहली बार मान्यता—पहली बार राष्ट्रीय पुरस्कारों का आयोजन।

अखिल भारतीय हस्तशिल्प बोर्ड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'स्मृति' निरालाके वैयक्तिक विरोधके निर्भ्रान्तीकरण (disillusionment) का एक महत्त्वपूर्ण चरण है।

'रामकी शक्तिपूजा' में एक मिथकीय पटल और युद्धोपरान्तका घटना है। लेकिन यहाँ भी (स्मृति में वर्णित मृत्युके उपरान्तकी तरह) घटनाके पश्चात्का कार्य-व्यापार है। यहाँ मृत्युकी करुणाके बजाय पराजयका संशय है। यहाँ रामकी जीवनी प्रकट है और इसमें साथ-साथ निरालाका व्यक्तित्व 'भी' ('ही' नहीं) गुँथा है। अतः यहाँ भी जीवनी और अन्तर्मुखी आत्मकथा अनुस्यूत हैं।....ज़ाहिर है कि 'शक्तिपूजा' के वातावरण और प्रतीक मिथकीय (mythic) होंगे। इसलिए इन प्रतीकोंके विश्लेषणमें कठिनाई होगी क्योंकि एक ओर वे मिथकीय तथा धार्मिक पीठिकामें अधिष्ठित हैं, तो दूसरी ओर वर्तमानमें सामाजिक और वैयक्तिक भूमिकामें निवेदित हैं। यदि ग़ौर किया जाये तो ख़ुद निरालाने ही रामकी पुनर्व्याख्या कर डाली है और 'शक्तिपूजा' को स्वयं ही अपना प्रतीक दे डाला है—"जनरंजन-चरण-कमल-तल धन्य सिंह गर्जित !

यह, मेरा प्रतीक मातः समझा इंगित;
मैं सिंह, इसी भावसे करूँगा अभिनन्दित।"

नृवंशशास्त्रके अनुसार नृवंशशास्त्रीय तत्त्व (anthromorphic substance)के अन्तर्गत सिंह मनुष्यसे प्रथम और श्रेष्ठतर होता है। (नृसिंह–वामन–परशुराम–राम)। राम मनुष्यमें भी श्रेष्ठतर हैं। वे मानसके मर्यादापुरुषोत्तमके बजाय निरालाके 'पुरुषोत्तम नवीन' हैं। यह सिंह-भाव जीवन-तत्त्व है जो सिन्धुके द्वारा व्यंजित हुआ है ('गरजता चरण-प्रान्तपर सिंह वह, नहीं सिन्धु')। वे आर्केटाइपल बिम्ब हैं। इस तरह 'रामकी शक्तिपूजा' में 'जीवन' और 'शक्ति' के सम्बन्धोंका चेतन एवं सांस्कृतिक प्रकाशन हुआ है। साइकेका परिवर्तन मनुष्यसे सिंहके स्थानान्तरणमें हुआ है। सिंह नायककी अतिमानवीय शक्तिका प्रतीक है। अतः उसका संरक्षण मातृ-बिम्ब दुर्गाके द्वारा हुआ है। सारी कविताका प्रतीकीकरण अन्यापदेशिक हो गया है। जब सिंह कालके अक्षको छोड़कर सर्वव्यापी हो जाता है अर्थात् राम सिन्धुरूप होकर आरम्भके गरजते सिन्धुको सिंह-धर्म दे देते हैं, भूधर पार्वती हो जाता है, दशदिक् दशहस्त हो जाती हैं, अम्बर दिगम्बर शिव हो जाता है, और महिषासुर मानवमनका बौना गर्व हो जाता है। यहाँ रावणका भी महिषासुरमें तथा प्रकारान्तरसे मानव-मनके बौने गर्वमें रूपान्तर हो जाता है। अतः राम के अन्दर गर्वरूपी रावणका वध ही कविताका सारांशीकरण (Condensation) बन जाता है। नायककी मिथकके अध्येता डॉ० पाल रेडिनने नायकके सहोदर चक्र (Twin cycle–राम-लक्ष्मण, नरनारायण, रोमुलो-रोमुलस) के अन्तर्गत 'गर्वके पाप' का शमन एक अनिवार्य प्रयोजन माना है। 'शक्तिपूजा' में भी: 'लख महाभाव-मंगल पद-तल धँस रहा गर्व, मानवके मनका असुर मन्द हो रहा खर्व', ये ही आर्केटाइपल प्रतीक हैं क्योंकि निश्चित ही आदिम समाजोंने रेडिनको नहीं देखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगा, और निरालाने भी रेडिनसे कोई वाक़फ़ियत नहीं की होगी। इस तरह से 'शक्तिपूजा' में एक मिथक प्रतीक-चक्र भूगोल एवं प्रकृतिके चक्रमें रूपान्तरित होता है, और बादमें नव्य मनोवैज्ञानिक प्रतीक चक्रमें रूपायित हो जाता है। यह निरालाकी चेतना का पहला नवीन विस्तार है। 'स्मृति' के निराला पुरुष हैं, 'शक्तिपूजा' के राम पुरुष-सिंह हैं जो पुरुषके जीवन तत्त्वोंसे ओतप्रोत हैं। 'पुरुषसिंह' बोध जाम्बवान्के विमर्शसे उद्भूत होता है। मानसमें जाम्बवान्की यह भूमिका नहीं है। मनोविज्ञानके अनुसन्धान बताते हैं कि आत्म (Self) का अधिकारी स्वरूप —(पुरुषमें)—किसी वृद्ध विवेकी पुरुषके रूपमें अथवा प्रकृति-आत्माके रूपमें प्रकाशित होता है। जाम्बवान् और माता दुर्गा इन दोनों तत्त्वोंका मेल कराती हैं। दुर्गाके दशहस्त दशदिशाएँ हो जाते हैं क्योंकि तब हमारा आत्म कालके अनुभवमें न बँधकर सर्वव्यापी हो जाता है। अतः आत्म ही सम्पूर्णताका प्रतीक होकर उभरता है। 'स्मृति' का अपूर्ण आत्म 'शक्तिपूजा' में सम्पूर्ण हुआ है। निराला की चेतनाका अगला विस्तार शक्ति (सिद्धि) और साधन (साधना) की मीमांसामें हुआ है और वह सम्पूर्ण आत्म (= जाम्बवान्) के द्वारा मुखर हुआ है। कथाके बाहरी छिलके के अन्दर जाम्बवान्की सलाह है कि जब तक सिद्धि न हो तब तक समर छोड़ दो, तबतक लक्ष्मण (सहोदर-चक्रका दूसरा ध्रुवान्त) सक्रिय रहेंगे, शक्तिकी मौलिक (तान्त्रिक नहीं, आर्केटाइपल) कल्पना करो, और यदि रावण अशुद्ध होकर भी त्रस्त कर सकेगा तो तुम निश्चय ही सिद्ध होकर उसे परास्त करोगे। इसके लिए रावणके आराधनकी तुलनामें दृढ़ आराधन करके उत्तर देना होगा। फलस्वरूप दिग्विजयाकांक्षी राम अपने सर्वस्व डुबाते हैं। हम जानते हैं कि धार्मिक चक्र प्रतीकमें गर्व-जैसी या शक्तिकी मौलिक कल्पना-जैसी कोई बात नहीं है। यह निराला ही की चेतनाका विस्तार है जो उनके सर्वोत्तम पुरुषोत्तम रामके माध्यमसे उद्भासित हो सका है। 'सरोज-स्मृति' के निरालामें स्नेह और गौरव दोनों है; 'शक्तिपूजा' के निराला राममें गौरव रह जाता है तथा गर्व ध्वंस हो जाते हैं। 'शक्तिपूजा' के राम पहले शक्ति का स्मरण करते हैं और फिर लौटकर समर लड़ते हैं। 'स्मृति' के निराला प्रवरोंको साक्षी रखकर शरक्षेप तथा रणकौशल अपलक देखते रहते हैं। 'स्मृति' के निराला अर्थयुद्ध और हिन्दी क्षेत्र दोनोंमें हारते हैं क्योंकि वे अन्याय की शक्तिकी मैत्रीको भंग करना नहीं पहचान पाते। 'शक्तिपूजा' के निराले-नवीनतम शक्तिकी नवीन कल्पना (कॉस्मिक आर्केटाइपल कल्पना) करके अन्यायके पक्ष शक्तिको न्यायकी तरफ़ मोड़ लेते हैं। 'स्मृति' में 'शक्तिपूजा' के पूर्ववाली दशा रही थी— 'अन्याय जिधर, हैं उधर शक्ति...'। [यह शक्ति सिन्धु और पर्वत [जीवन की अनन्तता (—पाषाण अनन्तताके प्रतीक मनोवैज्ञानिक प्रतीकशास्त्र में)] अर्थात् और दुर्गाके रूपमें महाकार हो जाती है। इस तरह 'शक्ति' और 'सिंह' के प्रतीक निरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्तित्वका वह अगला सशक्त विस्तार करते हैं जो उन्हें बादके सामाजिक-महाभारतके काव्यको रचनेके लिए अग्रसर करता चला जाता है।

'शक्तिपूजा' में मिथकीय-प्लाटके कई पात्र आये हैं जबकि 'स्मृति' के गिनेचुने पात्र वास्तविक हैं। इसलिए विश्लेषण करते वक़्त हमें तीन फलकोंके प्रति होशियार रहना होगा। पहला फलक है : मूल राम-रावण संघर्षकी आर्केटाइपल विचार-वस्तु या थीम। सहोदर-चक्रकी नायक-मिथकमें नेता और राक्षसका संघर्ष एक आर्केटाइपल प्रतीक है जिसमें प्रशमित करनेवाली प्रवृत्तियोंपर अहम्की विजयका इंगित होता है। मिथकीय पटलके अनुसार सूर्यवंशी अवतारी राम असुर-संहार और असुर-उद्धार करके भक्तचित्तका रंजन करते हैं। तीसरा पटल कविके अवचेतनका है जहाँ राम, हनूमान, जाम्बवान आदिका मनोवैज्ञानिक प्रत्याख्यान हो गया है। वास्तव में जाम्बवान और हनुमान रामके आत्मके ही उभय मानवीयकरण हैं। जाम्बवानके रूपमें अहम्का प्रौढ़ और विवेकी रूप अंकित हुआ है, तो हनुमानके रूपमें आत्मका तेजस्वी और युवा रूप। यहाँ निरालाने हनुमान का नया प्रतीकीकरण कर डाला है जो आर्केटाइपल, मिथकीय और व्यक्तिगत मनोविज्ञानके केन्द्रोंको मिलाता है। निरालाके राम पौराणिक रामसे अधिक एक 'संस्कृति-नायक' हैं इसलिए उनमें अहम् (ego) की सचेतन सक्रियता स्पष्टतः प्रकट हुई है। हम इसके आगे नहीं जाना चाहेंगे क्योंकि मिथक-विश्लेषणके अनेक उपकरणोंका इस्तेमाल करनेपर विवेचन दूसरी दिशामें चल पड़ेगा। सार यही है कि 'स्मृति' में निरालाका जो प्रधानतया 'चेतन रूप' प्रकट हुआ है, वह 'शक्तिपूजा' में चलकर अपने पूरे 'आत्म-रूप'-में उद्घाटित हो गया है। राम संशय और रावण-जय-भयसे व्याकुल हैं। अमानिशा, स्तब्ध पवन, ध्यानमान भूधर, गरजता विशाल अम्बुधि—उनकी मनोदशाके प्रतिरूप हैं। जलती हुई मशाल उनके साइकिक केन्द्रीकरण-को मूर्तिमान् करती हैं। फलतः वे दिवा-स्वप्नोंकी दुनियामें यात्रा करने लगते हैं जैसे 'अन्धकारघनमें विद्युत् जाग उठे'; उन्हें जानकीकी छवियाँ और अपने बीते कार्य 'दिखने' लगते हैं। काँपते हुए किसलय और झरते हुए पराग-समुदाय, स्वर्गीय ज्योतिः-प्रपात और प्रथम स्वीय ज्ञात छवि उन्हें घेर लेती हैं। 'स्मृति' में पहले ही यह क्रिया ठीक इसी प्रकारसे उद्वेलित हुई है, यद्यपि बिम्ब बदले हुए हैं। सरोजका 'ज्योतिःशरण–तरण' होता है, कविकी दृष्टिमें उसकी अपनी छवि खिचती हैं (तू खिची दृष्टिमें मेरी छवि), वन और दिक्प्रसार काँपता है (काँपा वन, काँपा दिक्प्रसार); और इसी क्रममें सरोजके बचपन, यौवनके कई दिवास्वप्न दिखने लगते हैं। इन दोनों दिवास्वप्नोंके पहले समरके प्रभावोंका वर्णन है : 'स्मृति' के निरालापर तूर्ण तुले शत घूर्णाघात एक साथ आते थे, वे अपलक शरक्षेप तथा रणकौशल देखते रहे थे। 'शक्तिपूजा'के राम 'अनिमेष' हैं और 'रावण-प्रहार-दुर्वार-विकल-वानरदल-बल' हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

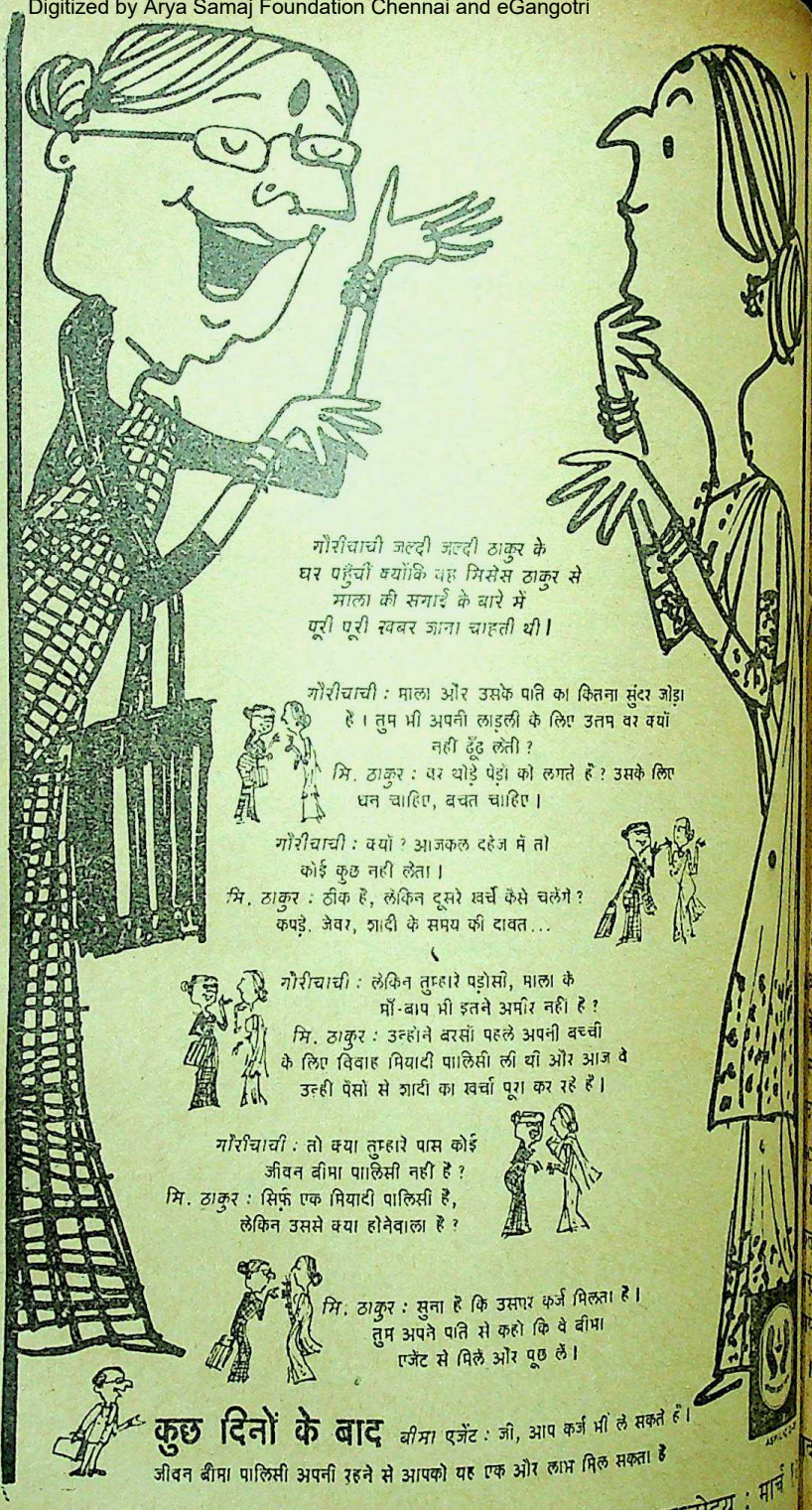

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया है। रावण वारण करता है, राम लाघव करते हैं किन्तु प्रहर बीतते गये। इस तरह मिथकीय, और सामाजिक, परिवेशके मूलमें 'साइकिक पैटर्न' एक-जैसा ही है। सरोजके विवाहके समय निराला अपने वसन्त-की प्रथम गीतिकी धीति मूर्ति देखते हैं; और शक्तिपूजाके राम मन्त्रपूत दिव्य शरोंकी याद करते समय भीमामूर्तिको देखते हैं जो सामने समग्र नभको आच्छादित किये हुए थी। उनके भावित नयनोंसे दो मुक्तादल गिर पड़ते हैं; 'स्मृति' के निराला दिवास्वप्नोंके पूर्व अपने आँसुओंसे बिम्बित अपने ही सुखचित देखते हैं। एकमें मायावी युद्धका आलोचनाशील है तो दूसरेमें आर्थिकयुद्धका। 'शक्तिपूजा' में बीचमें हनुमान-आरोहणका जो आत्म-उद्घाटक प्रसंग जुड़ा है, वैसा कुछ 'स्मृति' में नहीं है। यहाँ निरालाकी आत्म-चेतनाको सम्पूर्णताका—मिथकीय घटनाके माध्यमसे—द्योतन हुआ है। यूँ यह पात्र रामके द्वन्द्वका ही पूरक-प्रसंग है; स्वतन्त्र नहीं। इस आत्मपूरकताका दूसरा अधिक ज्वलन्त प्रतीकपूर्ण उदाहरण शक्तिपूजा-के अन्तिम दिन मिलता है। रामके दो मन स्पष्टतः उभर आये हैं—लौकिक मन, और उदात्तीकृत लोकोत्तर संक्रमणकारी (tran-scendental) मन। वास्तवमें यह मनस्तत्त्व (Psyche) और आत्म (self) का अधि-कृत अधिकारी भाव है। राम बलिदान करके, गर्वका तिरोभाव करके इस मनको प्राप्त करते हैं। यह एक विराट् उदात्तीकरण है। मनस्तत्त्व और आत्मके सम्बन्धोंकी यह अनूठी मीमांसा है। जिस तरह 'शक्तिपूजा'-में हनुमान आत्मके मानवीयकरण तथा जाम्बवान आत्मके पुराचीन विवेकी-पक्ष हैं, उसी तरह 'स्मृति'में सासु निषेधात्मक नारीत्व (negative anima) है जिनसे मुक्त होनेके लिए कविका अवचेतन कटिबद्ध है और हर प्रसङ्गमें इस प्रभावको तोड़ता है। इसी तत्त्वकी मिथकीय पटलमें अभिव्यक्ति शक्तिके द्वारा किये गये छलमें हुई है। दोनों कविताओंके पात्र नियतिको खण्डित करते हैं, और क्रमशः कुण्डलीके बजाय, 'पुतली'-जैसी पुत्री, तथा कमलके बजाय 'राजीव लोचन'-द्वारा साइ-किक पूर्णता और सामाजिक दृष्टि हासिल करते हैं। यहाँ चलकर भी हम कुण्डलीसे पुतली, और कमलसे राजीव लोचनमें आ जाते हैं। यह पुनः प्रमाणित करता है कि दोनोंमें अन्तर्मुखी अन्तर्द्वन्द्वोंका भावबीज तथा समाहार एक-जैसा ('एक' नहीं) है।

इस तरह 'शक्तिपूजा'में 'शर', 'हनूमान', 'शक्ति', 'कमल' 'नीलनयन' और सिंहके छह प्रमुख प्रतीक उभरे हैं। 'स्मृति' में 'ज्योतिः-तरण', 'कुण्डली', 'तारुण्यकुंज', 'पिकी', 'कोकिला', 'पुतली', 'गीता' के प्रमुख प्रतीक उभरे हैं। 'शक्तिपूजा'में दो चेतना चक्र हैं: पहला, साइकिक चक्र है जिसके अन्तर्गत जानकीकी यादें, हनूमानका आरोहण, जाम्बवानकी सलाह आदि हैं; दूसरा रहस्य-चक्र है जिसके अन्तर्गत शक्तिका छल, रामकी अष्टचक्र साधना आदि आती हैं। रहस्य-चक्रपर पूर्णरूपेण धार्मिक प्रतीकशास्त्रकी छाप है। यह एक एकेडेमिक संयोग है जिसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्णनमें निरालाका मन भी नहीं लगा है और उन्होंने एकसे कम पृष्ठमें इसका वर्णन कर डाला है। यह बात भी उन्हें कामायनीकार प्रसादकी रहस्यानुभूतियोंसे अलग कर देती है।

इस तरह हम पाते हैं कि निश्चित रूपसे 'रामकी शक्तिपूजा' 'सरोज-स्मृति' का अन्तर्मुखी रूपान्तर है। 'स्मृति' विरेचन (कैथार्सिस) का काव्य है और उसमें सामाजिक समसामयिकताके परिवेशमें रूढ़ियों तथा अन्यायोंकी आलोचनाशील मुखर है। 'पूजा' उदात्तीकरण (सब्लिमेशन) का है जिसमें मिथकीय परिवेशमें काण्डों तथा नायकके गर्वका आलोक प्रखर है। निराला छायावाद युगके मानव हैं, लियोनार्दो-द-विंची रिनैसां महामानव हैं जो चित्रकार, जीवशरीर-रचनाशास्त्री, इंजीनियर आदि थे अतः दोनोंकी तुलना अनैतिहासिक है।

—रमेश कुन्तल

प्रपत्र : चार

(नियम ८ के अन्तर्गत)

१. प्रकाशन-स्थल	: भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी – ५
२. प्रकाशन-आवृत्ति	: मासिक
३. मुद्रक का नाम	: बाबूलाल जैन फागुल्ल
राष्ट्रीयता	: भारतीय
पता	: सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी – ५
४. प्रकाशक का नाम	: बाबूलाल जैन फागुल्ल
राष्ट्रीयता	: भारतीय
पता	: दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी – ५
५. सम्पादक का नाम	: लक्ष्मीचन्द्र जैन और रमेश बक्षी
राष्ट्रीयता	: भारतीय
पता	: ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता - २७
६. स्वत्वाधिकारी	: भारतीय ज्ञानपीठ, ९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता – २७

मैं, बाबूलाल जैन फागुल्ल, घोषित करता हूँ कि ऊपर दिये गये विवरण मेरी जानकारी और विश्वासके अनुसार सही हैं।

बाबूलाल जैन फागुल्ल
(हस्ताक्षर), प्रकाशक

दिनांक : २५ फरवरी, १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सा वि त्री

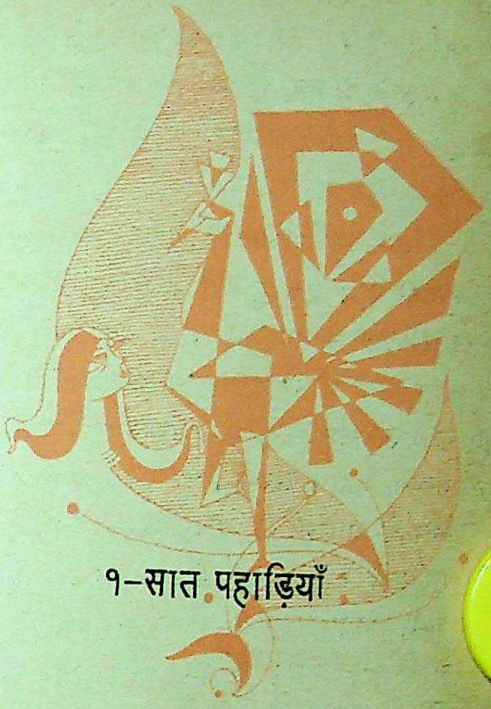

१–सात पहाड़ियाँ

■

मूल : *पुरुशिव रेगे*

अनु० : माधव मोहोलकर

प्रस्तुत है
मराठीके सुप्रतिष्ठित कथाकार
श्री पुरुषोत्तम शिवराम रेगेका
बहुचर्चित उपन्यास सा वि त्री
तीन किस्तों में ।

यह उपन्यास
एक और अनेक पत्रों के
रूपमें है, इसमें प्रतीक
प्रतीकोंमें उलझे हैं,
यह आत्मकथा और लोककथा
दोनों है ।

लगेगा कोई सुदर्शना खत
पर खत लिखे जा रही है
और वे सब बगैर पते भी
आपतक पहुंच रहे हैं....

...अपरिचित होते हुए भी मैंने आपको लिखा और आपने उतनी ही सहजतासे उत्तर दिया। अपना परिचय कैसे दूँ ? मुझे भी नहीं मालूम कि मैं कैसे बड़ी हुई, – माँके बिना और सदा काममें डूबे हुए अप्पाके साथ रहकर। सबसे पहले मैंने कुछ सीखा है तो अपने आपको भूल जाना। नाम... आपको मालूम हो चुका है; कुछ लोग कहते हैं – खाउ (मीठी चिज्जी)। लेकिन एक बार अप्पाने कहा, बेटी तू सचमुच आनन्द-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाविनी है। उन्हें ऐसे शब्द सहजतासे सूझते हैं। तबसे मैं ऐसी ही (जैसी आपको पहली बार लगी वैसी) आनन्दभाविनी हूँ। आपने लिखा था, खुले दिलकी।

बचपनमें राजम्माने मुझे एक कहानी सुनायी थी : एक बुढ़िया और उसकी एक छोटी पोती – लच्छी—गाँवके बाहर जंगलके पास रहती थी। एक बार बुढ़ियाकी झोंपड़ी-के पास एक मोर आया। उसे देखकर लच्छी नाचने लगी। लच्छी ज़िद करने लगी कि मोरको आँगनमें ही बाँध रखना चाहिए। बुढ़ियाने कहा, यह कैसे होगा? उसे खिलानेके लिए हमारे पास दाने कहाँ है? दोनों कुछ निर्णय न ले सकीं। तब मोर ही बोला, मैं यहीं कहीं नज़दीक ही रहूँगा। मुझे दानेकी कोई ज़रूरत नहीं। सारा जंगल तो इर्दगिर्द ही है। सिर्फ़ एक शर्त है। जब भी मैं आऊँगा तब पहले लच्छीको नाचना पड़ेगा। जबसे उसका नाचना बन्द होगा तबसे मेरा भी आना बन्द। शर्त आसान थी। लच्छी तुरन्त मान गयी। बुढ़ियाका भी काम बन गया। लेकिन नाचना कोई आसान बात नहीं थी। किसी भी समय नाचना हो तो मन भी वैसा ही होना चाहिए। लच्छी तबसे सदा प्रसन्न रहने लगी। मोरके आनेका कोई नियम तो था नहीं। आगे चलकर उसकी यह हालत हुई कि मोरके आने-जानेकी ओर उसका ध्यान ही न होता।

राजम्मा अपनी कहानियोंका निष्कर्ष कभी नहीं बताती। मुझे कई बार लगता है कि ये सभी उसकी अपनी रचनाएँ हैं लेकिन वह उन्हें दादी-नानीकी कहानियों रूपमें इस तरह प्रस्तुत करती है कि पहचानना मुश्किल हो जाता है।

मैंने कहा कि मोर चाहिए तो हमें मोर बनना चाहिए। जो-जो चाहिए वह हमें स्वयं बनना चाहिए।

यहाँसे निकलनेके लिए मुझे अभी कुछ देर है। ऐसे ही आऊँगी कभी आपके बिना कहे एक दिन। आपने कहा था एक दिन : प्रतीक्षा करूंगा।

० ० ०

गाड़ीमें मेरे साथ जो दो छोटे बच्चे उनसे मैं दो अलग-अलग भाषाओंमें बोल रही, इसलिए आपको आश्चर्य हुआ। आपने प्रशंसा की। वास्तवमें यह मेरा प्रयास अनायास था। एक बच्चा तो यहाँका रहनेवाला है, उसकी भाषा तुळु, दूसरा सबसे छोटा—ढाई सालका – उसकी भाषा कोंकणी। दोनोंको भी अपने-अपने पहुँचानेका बोझ मुझे सौंपा गया था। वैसे बहुभाषी हूँ और मेरा एक अनुभव भी है कि बच्चोंके साथ व्यवहार भाषाकी अड़चन ज्यादा नहीं होती।

मैंने आपको चाय पिलायी तो हुआ? यह कब तय हुआ है कि आप हमेशा पिलायेंगे? गाड़ीसे सामान उतारने आपने जो मेरी सहायता की वह कम थी?

० ० ०

दो बरस मैं बँगलोरमें थी और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी हमारी भेंट कैसे नहीं हुई ? सच बताऊँ तो इन दो बरसोंमें कई लोगोंसे मेरा परिचय हुआ। लेडीज हॉस्टेल तो मेरा ही है। किसी चीजकी जरूरत पड़ी तो वहाँ काम करनेवाली स्त्रियाँ मेरे पास ही आ जाती हैं। लेकिन कॉलेजकी अलग-अलग संस्थाओंके कार्यमें मैंने कभी अधिक भाग नहीं लिया। इसका मतलब यह नहीं कि मैं किताबोंका कीड़ा बनी रही। मुझे इन घिसे पिटे कार्य-क्रमोंमें कभी आनन्द ही नहीं मिला।

प्रो० गुरुपादस्वामीने एक बार आपके पुरस्कृत निबन्धका क्लासमें उल्लेख किया था। उन्होंने आपकी प्रशंसा भी की। लेकिन मैंने इतना ही अर्थ निकाला कि हर साल यह पुरस्कार किसी-न-किसीको मिलता ही है; इस साल आपको मिला। यदि आप हमारे क्लासमें होते तो मेरा कुतूहल और अधिक जाग्रत हो जाता। पर आप थे पोस्ट-ग्रेज्युएट स्टुडैण्ट; हम लोग कॉलेजमें बिलकुल नयी। गुरुपादस्वामीजी अच्छा पढ़ाते हैं न ? आपसे कहनेमें कुछ हर्ज नहीं,— फर्स्ट इयरकी परीक्षामें मैं उनसे शत-प्रतिशत अंक प्राप्त कर चुकी हूँ····पर यह क्या ? मैंने अपनी ही कहानी शुरू की।

यहाँ पूरा आराम है। अप्पा दिनभर व्यस्त रहते हैं। नयी किताब लिख रहे हैं। इस समय मेरा भी उनके पास जाना उनको अच्छा नहीं लगता। मेरा काम होता है— घरकी ओर अधिक ध्यान देना, मतलब यह कि इस तरहसे सभी बातें करना कि अप्पाको बिलकुल तकलीफ़ न हो।

परसों उनसे मिलनेके लिए पूनासे भाषा के एक युवा प्रोफ़ेसर आये थे। सोरबाँके डॉक्टर हैं। दो दिन हमारे यहाँ रहकर लौट गये। कलागत आनन्दकी अपनी नयी मीमांसाके बारेमें चर्चा करनेके लिए अप्पाके पास आये थे।

उनकी सभी बातें अप्पाने अच्छी तरह सुन लीं। थोड़ी-सी चर्चा भी की। लेकिन अन्तमें उन्होंने जो एक सवाल पूछा, वह मुझे बड़ा महत्त्वपूर्ण मालूम हुआ : नव-रात्रिकी दुर्गा, रामलीलाकी राम-लक्ष्मण-सीताकी मूर्त्तियाँ – इन सबका जीवनकाल अल्प होता है। बनानेवाला भी यह जानता है। फिर भी वह अपनी सारी कला उनपर खर्च कर देता है। क्यों ?

प्रोफ़ेसर साहबका कहना था कि इस समय कला अल्पजीवी है या दीर्घजीवी यह सवाल ही कलाकारके सामने नहीं होता। उसका सारा ध्यान कलाकृतिको परिपूर्ण बनानेपर केन्द्रित हो जाता है।

इस उत्तरसे अप्पा सन्तुष्ट नहीं हुए। 'तादात्म्य', 'समाधि' आदि शब्दोंसे वे कतराते हैं। इस प्रकारके स्पष्टीकरणके लिए उनके पास एक ही उत्तर है : यह तो पैराफ्रेज है।

मैं पास ही थी। साहससे मैंने कहा : यह मेरी दुर्गा है, यह मेरा राम है, यह मेरी सीता है, यह मेरा गणेश है—इसी भावसे बनानेवाला काम करता है।

लगा कि अप्पाको मेरा स्पष्टीकरण पसन्द आया। उन्होंने आगे कहा : बनाने वाला तो परिपूर्ण बनाता रहता है। रंग,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाँस, काग़ज़, मिट्टी, पत्थर आदिको मात्र साधन कहनेसे काम नहीं चलता; ये यदि साधन हैं तो बनानेवाला भी एक साधन है। वास्तवमें ये बनानेवालेके ही दूसरे अंग हैं।

मैंने ऊपरका यह विशेष रूपमें आपके लिए लिखा है। आपका निबन्ध ऐसे ही किसी प्रश्नपर था न, इसलिए।

० ० ०

मेरा गिटार खो गया—उस दिन की है बात। घासके फूल माथेपर सजाकर उस दिन मैं ख़ूब उछलती-कूदती रही।

हम कुछ सहेलियाँ पिकनिकके लिए गयी थीं। यहाँसे नज़दीक ही एक छोटी-सी घने जंगलसे आच्छादित पहाड़ी है। वास्तवमें यह एक पहाड़ी नहीं है, है तो एक दूसरेमें गूँथी सात पहाड़ियोंका समूह। यहाँ उसे सात कुँआरियोंका घर कहा जाता है। उसके सम्बन्धमें एक बड़ी जटिल किंवदन्ती भी है। विवाह भी न होता था और घरमें भी उनके साथ दुर्व्यवहार किया जाता था इसलिए सात ओक्काओंकी (गोत्रकी) सात कुँआरियाँ गाँवके बाहर चली गयीं और यहाँ उन्होंने अपना-अपना घर बनाया। कुछ दिनोंके बाद उन घरोंके इर्दगिर्द इतने पेड़-पौधे उगे कि उन घरोंका दिखाई पड़ना तक मुश्किल हो गया। बादमें उनका नामोनिशाँ भी न रहा। उनके स्थानपर ये सात पहाड़ियाँ उग गयीं। कुँआरी लड़कियाँ उनसे मनौती मानती हैं। पुरुषोंको उनके नज़दीक नहीं जाना चाहिए। वे इस जंगलमें रास्ता भूल-कर भटकते हैं। कुछेकके लापता हो [illegible] भी उदाहरण मिलते हैं।

हममें-से किसीका भाई हमारे [illegible] आया था। हम दोनों रास्ता भूल गये। [illegible] डर गया था। किन्तु उसने अपना भय [illegible] नहीं किया। मैं शान्त थी। पीछे लौटना असम्भव था। जब उतार देखकर हम [illegible] लगते तो बीचमें फिर किसी बड़ी पहाड़ी [illegible] चढ़ाव आ जाता। पता नहीं अनजाने [illegible] हुआ पर हम जहाँसे निकले थे वहीं [illegible] पहुँचे। बाक़ी सब सहेलियाँ राह देखती [illegible] चिन्ता कर रही थीं।

हमने घरमें किसीसे कुछ नहीं कहा।

० ० ०

छः दिन राह देखकर लिख रही [illegible] मैंने यूँ ही कुछ लिखा और आपने उल्टा [illegible] नहीं समझा? मुझे डर लगता है। [illegible] लिखा था उसे भूल जाइए।

कई बार मैं अपने ही बर्ताबको [illegible] नहीं पाती। मैं यूँ ही खुले दिलसे कुछ [illegible] जाती हूँ लेकिन बादमें कोई मुझे बता [illegible] है कि उसका मतलब कुछ और ही [illegible] रहा है, जैसा मैं समझती हूँ वैसा नहीं। [illegible] अब इस बातकी आदी हो चुकी हूँ। [illegible] अब आगे चलकर मैं अन्य साधारण लड़कियों के समान व्यवहार करना सीख पाऊँगी।

० ० ०

आपके कलके पत्रने धीरज बँधा दिया [illegible] तो मेरा भय निरर्थक था!

न जाने क्यों, पर अब सहसा [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरा जी नहीं लगने लगा है। आप कुछ दिनोंके लिए इधर नहीं आ सकते? आसपास देखने योग्य बहुत कुछ है। भद्रकालीका त्योहार भी इन्हीं दिनोंमें होता है। इधर उसका बड़ा महत्त्व है।

आप आइए। मैं गाइड बन जाऊँगी।

० ० ०

आपका थीसिस थोड़ा-सा पीछे पड़ा तो कोई बात नहीं। शायद उसे इधर ही अधिक गति प्राप्त होगी। कलाके एक-दो अनुपम स्थान भी आपको मिलेंगे।

अप्पाकी पुस्तकको अब और अधिक नये-नये मोड़ मिले हैं। पिछले दस दिनोंसे अखण्ड लेखन चल रहा है। उन्होंने प्रारम्भ 'अनुभव'से किया है। किसी नयी चीजका या प्रसंगका हमें 'अनुभव' प्राप्त होता है।—यानी हम पीछेसे आगे बढ़ते जाते हैं। अनुभवका अर्थ है: वर्तमान स्थितिसे पीछे जाकर स्मृतिकी सहायतासे बनाया हुआ आलेख। उनका कहना है कि दोनों प्रकारोंमें वर्तमान अस्तित्वको ध्यानमें ही नहीं लिया जाता। मैं यह सब कुछ समझनेकी कोशिश कर रही हूँ।

आपको इधर खींच लानेके लिए मैं क्या-क्या कर सकती हूँ? अवश्य लिखिए।

० ० ०

कैसे लिखूँ कि आपके आनेकी खबरसे मैं कितनी खुश हो गयी हूँ! राजम्माकी तैयारियाँ करनेकी जल्दबाजी तो मत पूछिए। मुझसे भी अधिक। (वह समझ रही है कि आप मुझे देखने आ रहे हैं।) जब मैंने अप्पासे बात की तो उन्होंने कहा, तेरे मित्र हैं तो आने दे। और बादमें उन्होंने ऐसे ही पूछा कि आप टाइपिंग जानते हैं या नहीं। सच, आप जानते हैं? लेकिन डरिए मत। आपसे काम करवानेका उनका विचार नहीं, और मेरा तो बिलकुल नहीं।

मगर हाँ, यहाँकी रीतिके अनुसार मन्दिरके उत्सवमें आपको नाच-गानेमें भाग लेना ही पड़ेगा।

० ० ०

यहाँ आनेके बारेमें आपको कुछ विस्तृत सूचनाएँ देना जरूरी हैं।

यह पहाड़ी मुल्क है। रेलसे राजनाड उतरनेके बाद तिरुपेटकी बस लेकर तीस मील अन्दर आना पड़ता है। फिर वहाँसे हमारे घर पहुँचनेके लिए दो मील घोड़ा-गाड़ीसे चलना होगा। मैं तिरुपेटमें बुधवारको आपकी राह देखूँगी। हमारे घरकी घोड़ा-गाड़ीसे ही आ जायेंगे। आप मुझे पहचानेंगे न? इन सैंतीस दिनोंमें पत्रोंसे हमने एक-दूसरेको बहुत-कुछ जान लिया, लेकिन हमारी प्रत्यक्ष भेंट सिर्फ़ एक ही बार उस दिन हुई।

मैं अपनी प्यारी फीके जामुनी रंगकी साड़ी पहनकर आ जाऊँगी। हाथोंमें आपके स्वागतके लिए दो चुने हुए फूल होंगे। मुझे देखकर आप अपने हाथका स्टिक ऊपर उठाइएगा।

हम तिरुपेटसे सीधे घर नहीं आयेंगे। आते समय मैं दोपहरका भोजन साथ लाऊँगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहाँसे नज़दीक ही कर्नाटककी झील है। आपका सामान लेकर घोड़ा-गाड़ीसे पहले वहाँ जायेंगे। झीलके पास होयसलोंके समयका एक प्राचीन मन्दिर है। वहाँ भोजन करेंगे और फिर घर जायेंगे। जब मैं तिरुपेट जाती हूँ तब हमेशा वहाँ हो आती हूँ।

अब आपका कार्यक्रम : थोड़ी-सी दिक़्क़त इस बातकी है कि आप कहते हैं कि आप सिर्फ़ आठ ही दिन रहनेवाले हैं। मैंने आपके लिए पन्द्रह दिनोंका कार्यक्रम निश्चित किया था। बुधवारको कुछ नहीं—यात्राकी थकावट मिटानेके लिए जितना आवश्यक है उतना ही कुछ किया जायेगा। रात खानेके समय अप्पा आपसे मिलेंगे। शायद वे बातचीत भी नहीं करेंगे। शायद प्रश्नोंकी बौछार होगी। किसी भी परिस्थितिके लिए तैयार रहिए। बोलते नहीं हैं फिर भी चारों तरफ़ उनका ध्यान रहता है। आपके आतिथ्यमें थोड़ी-सी भी कमी रही तो बादमें मुझे फटकार सुननी पड़ेगी।

गुरुवारकी सुबह हम लोग हमारे प्लॅण्टेशनपर जायेंगे। आज तक इतने सन्तरे आपने और कहीं देखे नहीं होंगे। दोपहरका भोजन वहीं होगा,—वेंकप्पाके आतिथ्यशील मचानके पास। दुपहरीमें चार बजे तक हम घर लौटेंगे। रात भोजनके बाद मेरा वीणा-वादन—खास जनताके अनुरोधपर।

शुक्रवारकी सुबह आपको अकेले ही बितानी पड़ेगी। उस दिन मैं लड़कियोंके स्कूलमें पढ़ाने जाती हूँ। आपका साथ लेकर पढ़ा नहीं सकूँगी। उस दिन अप्पा खुद आपसे बातें करेंगे। आप एक-दूसरेसे अच्छी तरह परिचित हो जायेंगे। शामको हम लोग टहलने जायेंगे। यहाँका बाजार और मकान आपको नये लगेंगे।

शनिवारकी रात यहाँके बड़े उत्सवका दसवाँ दिन है। उस रात नाचमें सब लोग शामिल हो जाते हैं। आपके लिए अप्पाका पुराना पोशाक मैंने ठीक कर रखा है।

कुछ लोगोंको आपसे मिलना हो तो उनके लिए रविवार खाली रखा है। यदि चाहा तो उस रात उत्सवका एक लोकनाट्य देखने जायेंगे। आपको वह यक्षगानसे कुछ मिलता जुलता लगेगा।

सोमवारकी शाम यहाँके समाजमें आपका भाषण रखा है। विषय मैंने ही दिया है—'मानवी कला'। आप उसे बदलकर 'जेन्नि पियरकी नायिकाएँ' या 'समुद्रकी वनस्पति' या 'नयी कहानियाँ' भी कर सकते हैं।

मंगलवार फिर आपकी इच्छापर छोड़ दिया है क्योंकि आपकी ही भविष्यवाणी है कि आप तुरन्त बुधवारको लौटेंगे।

आते समय मेरे लिए कुछ भी न लाइए।

० ० ०

आप आनेवाले हैं इसलिए मैंने अपने लिए कुछ नियम बनाये हैं :

(१) सबसे पहले उठ जाना और सबके बाद सोना।

(२) नौकरोंसे धीरेसे बात करना।

(३) बिना पूछे यह जान लेना कि अतिथिको क्या अच्छा लगता है।

(४) व्यर्थ जल्दबाजी नहीं करना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(५) अपनी सम्भाषण-चतुरताका उपयोग संयमसे करना।

(६) यूँ ही नहीं गाना।

(७) अतिथिको कुछ समयके लिए पूरी स्वतन्त्रता देना। (आपकी समझमें आया होगा कि कार्यक्रम निश्चित करते समय मैंने इस बातका ध्यान रखा है।)

(८) दूसरे मेरे बारेमें जो कुछ कहेंगे उसे शब्दशः सच न समझना।

० ० ०

आपका कोई पत्र नहीं आया इसलिए मेरे चार-पाँच दिन चिन्तामें ही बीत गये। आज पत्र तो आया पर उसने मुझे निराश कर दिया। आपने अपना विचार अकस्मात् क्यों बदल दिया? आपको इंगलैण्ड जाना है तो जानेके लिए अभी बहुत समय है, कमसे कम ढाई-तीन महीने। तैयारीके लिए इतने समयकी आवश्यकता नहीं होती। शायद मेरा कारण कुछ और ही होगा। मैं कैसे जानूँ? और जाननेवाली मैं होती भी हूँ कौन? 'हृदय, समाश्वसिहि', इतना तक कहनेका धैर्य मुझमें नहीं, – और अधिकार तो है ही नहीं।

बचपनकी बात है। मेरी एक सहेलीका भाई दूरसे आनेवाला था। वह नहीं आया इसलिए उसे रोते हुए मैंने देखा था। मैंने उसे चिढ़ाया भी था। और बादमें मैं भी उसके साथ रोयी थी। आज मैं नहीं रोयी। क्यों?.. अब मैं धीरे-धीरे सीखने लगी हूँ कि बहुत आगे देखना नहीं चाहिए और अतीतमें फिर खोना नहीं चाहिए। जो हो चुका है उसे वैसे ही दूर रखना चाहिए। हमेशा साथ रखनेसे उसके रंग उड़ने लगते हैं।

अब एक-एक बात याद आने लगी। जबसे छुट्टियोंमें इधर आयी हूँ मैंने न किसीको पत्र लिखे, न किसीसे अच्छी तरह मिली। पता ही नहीं चला कि समय कैसे गुज़र गया!

० ० ०

परसों आपका एक पत्र पढ़ते-पढ़ते मुझे हँसी आ गयी। न जाने आपकी मेरे बारेमें क्या-क्या कल्पनाएँ हैं! आप जितना समझते हैं उतना मैं व्यवस्थित नहीं हूँ। हो सकता है, मैं स्वभावसे थोड़ी-सी संकोचिन और आसानीसे गड़बड़ानेवाली नहीं हूँ इसलिए आपने ऐसा समझा होगा। अब आज भी मैं इतनी शान्तिसे आपको पत्र लिख ही रही हूँ न?

अप्पाकी पुस्तककी आपने आत्मीयतासे पूछ-ताछ की। पिछले पाँच-छह दिनोंसे उनके कामकी गति मन्द-सी पड़ गयी है। एजवर्थ नामके यहाँ एक अँगरेज़ प्लैण्टर हैं। उनके घर वे दो दिन रहनेके लिए गये हैं। ये एजवर्थ महोदय एक ज़मानेमें अप्पाके ऑक्सफोर्डमें थे। यही है उनकी गहरी दोस्तीका कारण। महीने-दो महीनेमें कभी वे अप्पाके यहाँ या कभी अप्पा उनके यहाँ एक-दो दिन रहते हैं। बचपनसे मैंने उन्हें देखा है। वे अब भी कहते हैं कि बचपनमें मैंने उनकी मूँछें खींची हैं। ज़िन्दगीके पच-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पन साल बीत गये फिर भी वे अबतक अविवाहित हैं। जी भरके काम करते हैं, पढ़ते हैं और आसपासके सभी लोगोंमें दिल खोलकर घुलमिल जाते हैं। अप्पाने उनको हमारे 'ओक्का' का ऑनररी मेम्बर बना दिया है।

एजवर्थकी अपनी कुछ विशेष कल्पनाएँ हैं। उनमें-से एक है पुनर्जन्मके बारेमें। वे मानते हैं कि वे पिछले जन्ममें कुर्गी थे क्योंकि इस जन्ममें जीवनके तीस-बत्तीस वर्ष कुर्गमें ही बीत गये, यहाँके जीवनमें वे रम गये, समरस हो गये। उनका कहना है कि ऐसा न होता तो वे इधर आते ही नहीं।

मैंने एक बार मज़ाक़में कहा, तो फिर आपकी पिछले जन्मकी पत्नी कहाँ है? वे थोड़े गम्भीर हो गये और बोले, खाउ, पिछले जन्ममें किसीने मेरी शादी ही नहीं की। मैंने मनमें सोचा, पिछले जन्ममें नहीं, इसलिए इस जन्ममें नहीं, यानी फिर कभी किसी जन्ममें शादी ही नहीं? मैं उदास हो गयी। लेकिन वे तुरन्त हँसकर बोले, अगले जन्ममें भी मैं इधर ही आनेवाला हूँ, लेकिन कुर्गी स्त्रीके रूपमें। तो फिर जल्दी शादी होगी। है कि नहीं? अप्पा भी हँसने लगे और फिर उन दोनोंमें हमेशाकी तरह बातें शुरू हो गयीं।

आपकी जानेकी तैयारी कहाँतक हो गयी? आप कहते हैं कि एक टर्म आप कॉलेजमें पढ़ायेंगे तो शायद हमारे क्लासमें भी आ जायेंगे।

० ० ०

पूनाके प्रो० जोशी (जिनके बारेमें पहले एक बार आपको लिखा था) फिरसे (व्हाया निम्बाल) यहाँ आये हुए उनको मैंने आपका बंगलोरका पता है। प्रो० गुरुपादस्वामीसे उनका परि करा दीजिए। आप उनके शिष्य हैं आपसे भी मिलनेके लिए वे उत्सुक हैं।

कलके पत्रमें आपने शिकायत की मैं अपने बारेमें ज़्यादा नहीं लिखती। बार तो मुझे लगता है कि मैं अपने बारे कुछ-न-कुछ ज़रूरतसे ज़्यादा लिखती रही हूँ, – और फिर लज्जित हो जा कि आप क्या कहेंगे।

अपने विषयमें क्या लिखूँ? रिज़ल्टकी प्रतीक्षा कर रही हूँ, (आपने दिया है कि आप १६ तारीखको भेजेंगे।) बी० ए० में आपके समान ही ले लूँगी क्योंकि उसके बिना बनना नहीं आयेगा। फ़िलहाल मेरा वादन रुक-सा गया है। बीचमें ठीक रहा था। शायद ही कभी रुकता आनेवाले शुक्रवारसे फिर नियमित करनेवाली हूँ। आठ-आठ दिनोंके आपको पत्र भेजती हूँ। आपके पत्रको हर रोज़ देखती हूँ।

सुनो, अगला पत्र केवल अपने ही लिखूँगी।

० ० ०

आपके आनेकी खबर पढ़कर हुआ। इस बार आपके लिए मैंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कम निश्चित नहीं किया है – अपने-आपको सबक सिखानेके लिए।

आप टेनिस खेलते हैं ? नहीं तो आपको इसकी खास शिक्षा दी जायेगी।

आज सोमवार, कल मंगल, परसों बुध···

० ० ०

पता भी नहीं चला कि पाँच दिन कैसे बीत गये। एक तरहसे यह अच्छा हुआ कि आप यहाँ आकर गये क्योंकि मुझे निकटसे देखकर मेरे बारेमें जो कल्पनाएँ थीं आपके मनमें वे ग़लत सिद्ध हो गयी होंगी। मुझसे कोई भूल हुई हो तो तुरन्त लिखिए।

एजवर्थको आपका स्वभाव बहुत अच्छा लगा। इंग्लैण्ड जानेसे पहले एक पत्र लिखनेके लिए उन्होंने कहा है। वे आपको कुछ सूचनाएँ देनेवाले हैं।

मुझे यह बात भी अच्छी लगी कि अप्पा और आपमें बनने लगी। कभी फ़ुरसतसे ज़रूर लिखिए कि दो दिन तक आप लोगोंमें क्या-क्या बातें हुईं ?

लेकिन आपके बारेमें मेरा मत बिलकुल उलटा हो गया है। कहते हैं, मनुष्यको इतना शान्त नहीं होना चाहिए। पर आपका इतना शान्त रहना ही अधिक शोभा दे रहा था।

० ० ०

बरसात अब दो-चार दिनोंमें शुरू होगी। मैं रिज़ल्टकी प्रतीक्षा कर रही हूँ। जब प्रथम श्रेणीकी मुझे कोई उम्मीद नहीं तो यह समझ लीजिए कि रिज़ल्ट निकल ही चुका है। कुछ भी हो, जैसे पहले तय हुआ है, वैसे कृपया तार भेजिए।

कभी-कभी सोचती हूँ कि आपका मन मैं जान ही नहीं सकी। आपने जो लिखा है वह बार-बार पढ़ती हूँ और हर समय उसमें-से नया अर्थ निकालती हूँ। उस दिन आपने कहा कि हरेक क्षण अनन्य साधारण होता है, एक, अकेला होता है। क्या इसका अर्थ यह समझना चाहिए कि वे ही शब्द अलग-अलग क्षणोंमें अलग-अलग अर्थ व्यक्त करते हैं ? शायद आप कहेंगे, कि अर्थ नामकी कोई चीज़ ही नहीं। भाषाकी संघटना और उस समयके संकेतोंके कारण एक 'अर्थाभास' पैदा हो जाता है। बस और कुछ नहीं। मैं यह सब प्राकृतमें जानना चाहती हूँ। मैं अपने मनको समझना चाहती हूँ। उसको समझ गयी तो आपके मनको समझ सकूँगी।

मैं अब भी पिछले ही सप्ताहमें जा रही हूँ। अतीतकी याद न आती और भविष्यका अनिवार आकर्षण न होता तो कितना अच्छा होता ! अप्पाके 'अनुभव'का प्रश्न भी समाप्त हो जाता।

० ० ०

दस दिन बीत गये फिर भी आपका पत्र नहीं आया। लेकिन आपका तार वक़्तपर मिला। मैंने कभी सोचा नहीं था कि मुझे प्रथम श्रेणी मिलेगी। आशा थी कि तारके पीछे आपका बधाई देनेवाला पत्र भी आयेगा। कहीं खो तो नहीं गया ?

रह-रहकर लगता है कि आपको यहाँ आये बहुत दिन हुए।

एजवर्थ कल ही फिर यहाँ आये हैं। अप्पाने उनको विशेष निमन्त्रण भेजकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुलाया है। लेखन-कार्य पूरा होते ही उसे सुननेके लिए एजवर्थ-जैसे श्रोताकी उन्हें आवश्यकता होती है जो किसी भी विचारके सामने आसानीसे नहीं हारता। एजवर्थ सब-कुछ सुनते हैं और फिर बीचमें ही अपनी आंग्ल-शैलीमें कोई शरारत-भरा सवाल पूछते हैं। अप्पा पहले थोड़े चिन्ताग्रस्त हो जाते हैं और फिर यह दिखा देते हैं कि उपस्थित विचारको पहले ही ध्यानमें लेकर उन्होंने अपने मन्तव्यका पूर्ण निवेदन किया है। कभी-कभी अपने तर्ककी कमज़ोरी उनकी समझमें आ जाती है और तुरन्त वे उस विचारको लिख लेते हैं। अप्पाने अपनी पुस्तकका नाम रखा है : 'एक्सपीरिएन्स एण्ड ग्रोथ' (अनुभव और वृद्धि)। एजवर्थका मत है कि यह पुस्तक क्रान्तिकारी सिद्ध होगी।

० ० ०

आपके दोनों पत्र एक साथ मिले। ऊपरकी मुहर देखकर लगता है कि पहला ख़त डाकमें देरसे डाला गया है।

आप इतने अच्छे पत्र न लिखिए क्योंकि फिर मेरा मन लिखनेको नहीं चाहता। तब मुझे अपने पत्र केवल रिपोर्ताजके समान दिखाई देने लगते हैं। न कहीं संघर्ष है न कहीं काव्य। आपका मन किसी गहरे जलाशयके समान है। उसमें आकाशके बदलते रंग दिखाई देते हैं फिर भी उसका अपना रंग अलग ही होता है।

मैं क्या लिखूं कि जिससे आपको अच्छा लगेगा? प्रेम, प्यार, अनुराग-जैसे शब्दोंमें मुझे कोई नयापन नहीं महसूस होता। कभी-कभी सोचती हूँ कि अपने-आपको कहीं स्थिर करनेके लिए हम इनका [illegible] के रूपमें उपयोग करते हैं। फिर उनके [illegible] फीके पड़ जाते हैं। आपके लिए मेरे [illegible] एक आकर्षण है – लेकिन इसका भी [illegible] अर्थ है? मेरी दृष्टिमें तो केवल इतना ही [illegible] कि आपको मैंने अपना-सा बना दिया है [illegible] अपने-आपको आपका-सा। इसके परे भी [illegible] होता है? क्या इस लेन-देनसे हमें और [illegible] होना चाहिए या फिर चारों तरफ़ नयी [illegible] खड़ी करनी चाहिए?

मेरे मनकी रचना अगर आप [illegible] गये हैं तो मुझे समझनेमें आपको कोई [illegible] नाई नहीं होनी चाहिए। आपकी [illegible] थोड़ा-सा झेंपू स्वभाव, दूसरोंके साथ व्यव[illegible] करते समय, दूसरोंके विषयमें विचार [illegible] समय भी – स्पष्ट दिखाई देनेवाली [illegible] न्यायबुद्धि, अगला-पिछला सहजतासे जोड़ [illegible] उसे अपना एक नया रूप देनेकी कुशलता [illegible] यह सब कुछ मेरा हो गया है। क्या, [illegible] आपको कुछ नहीं दिया?

अब कॉलेज खुलनेका समय निकट [illegible] पहुँचा है, लेकिन यह कहना मुश्किल है [illegible] फिर बँगलोर आकर मैं जॉईन हो [illegible] या नहीं। अप्पाको जापानसे आमंत्रण [illegible] आया है। वे गये तो मुझे भी उनके [illegible] जाना पड़ेगा। अभी कुछ भी निश्चित नहीं [illegible]

आपके दूसरे पत्रमें पूछे प्रश्नोंके [illegible] उत्तर शीघ्र ही दे दूंगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौशल्या अश्क

आँशिक अश्क फिरें निगोड़े

■

सैर-सफ़रीहमें होटल अथवा कॉफ़ी-हाउसमें बैठना और एक-एक कप गरम कॉफ़ी या चाय पीना भी शामिल है। हम कभी कॉफ़ी-हाउस जाते हैं तो एक बार ये चारों ओर नज़र घुमाकर देखते हैं। फिर एक टेबलपर क्षण-भर बैठकर कहते हैं कि तुम आर्डर दो, मैं अभी आया।···कॉफ़ी आ जाती है, पर ये उधरकी मेज़पर मित्रोंसे बातोंमें निमग्न होते हैं। मैं बैरेसे बुला लानेको कहती हूँ। ये भागम-भाग आते हैं और 'तुम बुरा न मानो तो मैं अपना प्याला वहीं ले जाऊँ, बड़ी मज़ेदार बातें हो रही हैं!' कहते हुए उसी तरह प्याला हाथमें थामे चले जाते हैं। मैं बुरा मानूंगी या नहीं, यह सुननेकी फ़ुरसत इन्हें नहीं होती। मैं क्या बुरा मानूँ, और बुरा मानकर क्या करूँ?····और कई बार जब कॉफ़ी आती है तो ये उधर-की मेज़से किसी तीसरी मेज़पर होंगे। आकर कहेंगे—'तुम भी वहीं चल बैठो।' और आगे-आगे हम और पीछे-पीछे कॉफ़ी लिये बैरा उधरको चल पड़ते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होटलमें जाकर चुपचाप चाय या कॉफ़ी पीकर चले आनेको ये तफ़रीह नहीं मानते। कोई-न-कोई बेतुकी हरकत करना इनका धर्म है। मुझे याद है, बहुत पहले एक बार ये मेरे साथ क्वालिटी (नयी दिल्ली) गये थे। मैं उन दिनों मिलिट्रीमें काम करती थी। ये आकाशवाणीमें। दफ़्तर हमारे निकट ही थे। शामको प्रायः हम इकट्ठे ही घर लौटते थे। एक दिन आते-आते बोले, "चलो, कहीं चाय-वाय पीकर कनॉट प्लेसका चक्कर लगाते हुए घर चलेंगे।" क्वालिटी नया-नया खुला था, ज़्यादा भीड़ न होती थी, हम वहा जा बैठे। मैंने पूछा, क्या खायेंगे, तो बोले, "कुछ भी मँगा लो।" मैंने फिर पूछा कि मीठा या नमकीन? तो ये कुछ देर बड़े इतमीनानसे शरीरको एक-दम ढीला छोड़े, बैठे सोचते रहे। बैरा टिप-टाप हमारे सिरपर आर्डर लेनेको खड़ा था। मैंने उसे पानी लानेको भेज दिया। वह झट पानी ले आया तो मैंने फिर पूछा। बोले, "अरे वह मँगा लो जो कटकर तिकोने हो जाते हैं।" बैरा मूँछों ही में मुसकराया, मैंने झटसे उसे सैण्डविच और चाय लानेको कहा। वह चला गया तो मैंने इनसे कहा कि आप बाहर आकर कुछ तो खयाल किया करें, बैरा क्या सोचता होगा? इस ड्रेस (मिलिट्रीकी) में हूँ, लोग वेकाइयों (डबल्यू० ए० सी०) के बारेमें यों भी अच्छी राय नहीं रखते। तब हॉलको अपने ठहाकेसे गुँजाते हुए-से बोले, "यही सोचेंगे कि इस वेकाईने अच्छे अहमक़को फाँसा है, जिसे सैण्डविचका नाम भी नहीं आता!

मुझे और भी बुरा लगा क्योंकि [illegible] बोलना इनके म हबमें गुनाह है।

यही हाल सिनेमा-सर्कसमें होता [illegible] जब भी इनके साथ सिनेमा जाती हूँ, [illegible] २३-२४ वर्ष पहलेकी एक घटना मेरी [illegible] में कौंध जाती है। हमारी शादीके [illegible] महीने हुए थे। उन दिनों डायरेक्टर [illegible] दारकी फ़िल्म 'शारदा' नयी-नयी [illegible] और दिल्लीमें हमारे घरके निकट [illegible] नॉवल्टीमें लगी थी। जाने छुट्टीका [illegible] था अथवा ये दफ़्तरसे जल्दी आ [illegible] हमने वह फ़िल्म देखनेका प्रोग्राम [illegible] एक दिन पहले उधरसे निकले थे तो [illegible] भीड़ देख आये थे, इसलिए हम [illegible] पहले ही पहुँच जाना चाहते थे... [illegible] करनेके लिए कलाकारको मूड बनाना [illegible] है और मुश्किलसे पिक्चरका मूड बन [illegible] है। फिर इतना समय नष्ट हो [illegible] पिक्चर देखने जायें तो देखे बिना [illegible] आना इन्हें गवारा नहीं, चाहे ऊँचे [illegible] दर्जेका टिकट ही क्यों न लेना पड़े, [illegible] छोटेसे छोटे, यहाँतक कि चवन्निया [illegible] (उन दिनों सबसे छोटा दर्जा चार [illegible] का था यद्यपि टिकटके दो आने बढ़ [illegible] पर वह चवन्निया दर्जा ही कहलाता [illegible] ही क्यों न देखना पड़े।... मुझे [illegible] जल्दी-जल्दी तैयार हो भागम-भाग [illegible] पहुँचे थे, लेकिन मैनेजर कम्बख्तने [illegible] भी खयाल न किया और सब टिकट [illegible]

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहुँचनेसे पहले ही बेच डाले। काम-धाम छोड़कर प्रोग्राम बनाया था और फिर साथ नयी ब्याही बीवीको ले गये थे, इन्हें बड़ी निराशा हुई। एकाध बार मैनेजरके कमरेमें गये कि किसी तरह दो टिकट मिल जायें, लेकिन उसने विवशतामें दाँत निकोस दिये। तब मुझे एक ओर खड़ी करके भीड़को चीरकर ये बिजलीकी-सी गतिसे बढ़ गये। निकट ही पहलवान क़िस्मके लोग झुण्ड बनाये हीरोइनपर फ़बतियाँ कस रहे थे, भद्दे मज़ाक़ कर रहे थे। 'नॉवल्टी' सिनेमा था भी उन्हीं लोगों का। मोरी दरवाज़े-के बाहर, पुलके सामने। मैं तो कभी ऐसे हॉलमें पिक्चर देखने न जाती, पर इनका मूड बन गया सो चप चली आयी थी।

सिकुड़ी-सिमटी खड़ी इनकी प्रतीक्षा कर रही थी कि ये मुँह लटकाये आये। मैंने कहा, "हटाइए, फिर कभी देख लेंगे।"

"अभी आया!" कहते हुए ये छटपटाते-से फिर निकल गये।

मेरा दम घुट रहा था, दूर ही से इन्हें आते देखा तो मैं बढ़ गयी कि उधर ही से घरको निकल चलेंगे। तभी किसीने पुकारा—"बाबूजी!"—ये उसकी ओर बढ़ गये। कुछ पल दोनों गुन-गुन करते रहे, फिर उसने अपनी तहमद खोंसी, इनका हाथ भी उठा, मुझे डर लगा कि कहीं झगड़ा ही न हो जाये कि तभी ये मेरी ओर तीरकी तरह आये। मुझे बाँहमें पकड़ घसीटते हुए-से बाहरको चले। मेरी समझमें न आया कि आख़िर मुझसे क्या अपराध हो गया है। भीड़से निकलकर ये चहके—"टिकट मिल गये हैं, अब चलकर सीट ले ली जाये!"

विजयोल्लाससे इनका चेहरा खिल गया था और आँखोंमें विचित्र चमक आ गयी थी।

"लेकिन उधर क्यों जा रहे हैं?" मैंने पूछा।

"इस टिकटके लिए प्रवेश-द्वार बाहर है।" और ये और भी तेज़ीसे बढ़े। चौदह आनेका टिकट दो रुपयेमें ले आये थे और बड़े ख़ुश थे।

पिक्चर शुरू होनेमें देर थी, लेकिन हॉल खचाखच भरा था। लड़ाईका ज़माना। रुपया वाफ़र आ गया था, जब फ़र्स्ट क्लासमें गामे-माझे दिखाई देते थे, फिर वह तो चौदह आनेवाला दर्जा था। पहली नज़रमें तो कोई सीट ख़ाली न दिखाई दी। फिर ये लाइन-दर-लाइन देखते आगे बढ़ते गये। हॉलमें कहीं कोई औरत दिखाई न दी। दिल बेतरह धड़कने लगा। एक लाइनमें दो-चार सीटें ख़ाली थीं, लेकिन साथ-साथ नहीं। ये उस लाइनमें घुसे और मैं कहीं खड़ी रही। ख़ाली सीटके पास बैठे आदमीसे फुसफुसाये। वह उठ गया तो उसकी सीटपर बैठ गये और ख़ाली सीटपर हाथ रखकर इन्होंने वहींसे पुकारा – "कौशल्या!···सीटें मिल गयी हैं, आ जाओ!"

कुछ आँखें आगेसे और कुछ पीछेसे उठीं और मेरी ओर होती हुई इनपर जा टिकीं। मेरा उत्साह हॉलमें दाख़िल होते ही चुक गया था। इनके इस तरह पुकारनेसे मैं और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी सिमट गयी। चुपचाप जा बैठी। इधर-उधर देखा तो जी और भी घबराने लगा। ...'शारदा' को लगे मुश्किलसे हफ़्ता-डेढ़ हफ़्ता हुआ था, लेकिन उसका गाना :

दुनिया में सब जोड़े-जोड़े
आशिक फिरें निगोड़े
हो राजा
आशिक फिरें निगोड़े

जनतामें अत्यन्त लोकप्रिय था और दिनके किसी भी वक़्त, घरमें या बाज़ारमें, यह धुन कानमें पड़ जाती थी। फ़िल्ममें बड़े बापकी पढ़ी-लिखी लड़कीकी टक्कर एक अनपढ़-गँवार-फक्कड़ युवकसे होती थी और झगड़ेसे शुरू होकर प्रणयपर आ पहुँचती थी।... हमारे आस-पास अधिकांश दर्शक हीरोके भाई-बन्धु ही लगते थे—तेलसे बाल चुपड़े, आँखोंमें काजल डाले और गले या बाँहपर तावीज बाँधे—इस उम्मीदमें बैठे थे कि जाने उनकी टक्कर भी किसी धनी बापकी सुन्दर सुशिक्षित बेटीसे हो जाये और वे भी मिल या कारख़ाने अथवा बिज़नेसके मालिक बन जायें। और लगता था जैसे 'पुरुषस्य भाग्यं दैवो न जानाति' में पूर्णतः विश्वास रखते हुए वे एकदम सौभाग्यके स्वागतको तैयार होकर आये थे। उन गामो-माझों, नत्थू-ख़ैरों-को देखकर मेरी तबीयत घबरा रही थी। लेकिन ये बड़ी निश्चिन्तता और मस्तीसे बैठे आस पासवालोंसे दोस्ती कर रहे थे।

'चाय गरम'की आवाज़ सुनकर मेरी ओर पलटे—कि बीवीपर रोब तो डाल ही दिया है, अब उसकी कुछ ख़ातिर भी कर दें—चाय पियोगी ?"

"नहीं, मेरा तो जी घबरा रहा है," मैंने कहा।

"तुम चिन्ता न करो, अब पिक्चर शुरू होने ही वाली है।"

लेकिन मुझे पिक्चर शुरू होनेकी नहीं ख़त्म होनेकी उतावली थी।

अपने नये बनाये दोस्तोंमें-से पीछेकी ओर बड़ी-बड़ी मूँछोंवाले एक व्यक्तिसे कहा, "पहलवान, ज़रा ख़याल रखना, बच्ची साथ है।"

वह शायद टोलीका सरदार था। उसने इन्हें आश्वस्त करते हुए कहा, "आप फ़िक्र न करें बाबूजी, बीबी (बहन) को कोई तक़लीफ़ नहीं होगी।"

हॉलकी बत्तियाँ बुझ गयीं और [illegible] विज्ञापनोंके बाद परदेपर पिक्चर शुरू हो गयी। पिक्चर कोई गम्भीर तो थी नहीं, हँसी-मज़ाक़, रोमान्स और गाने...लोग मुग्ध थे और बीच-बीचमें 'ओ ये, आ वी जा', 'ओये ओये', 'बड़ी ग़ुस्से ऐं' आदि आवाज़ें कसते थे और ये उनका साथ देते रहे। गाना शुरू हुआ वही—दुनियामें सब जोड़े-जोड़े...फ़िल्म का नायक गीत गाता हुआ ढोलक बजा रहा था, लोग कुरसियोंपर आवाज़ें देते और हूट 'हाय' करते हुए निश्वास भरने लगे। फ़िल्म चल रही थी—लेकिन मेरे लिए परदेपर दूसरी ही पिक्चर चल रही थी—ये कैसे हैं ? इस क्लासके टिकट पाकर इतने ख़ुश हुए मानो लाटरी निकल आयी हो। ऐसे लोगोंमें क्यों बैठे हैं ?... जाने दें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोग हैं ?··· मुझे अफ़सोस हो रहा था कि टिकट क्यों मिल गये और फिर इस क्लास-के। लगा जैसे किसी क़ैदखानेमें बन्द हूँ, जाने कब छुटकारा मिलेगा कि तभी कुछ लाइनोंके पीछे झगड़ेकी आवाज़ सुनाई दी, फिर कुरसियाँ चलने लगीं। हॉलकी बत्तियाँ जल उठीं और पिक्चर बन्द हो गयी। हम हड़बड़ा कर अपनी सीटोंसे उठे, लेकिन उन पहल-वानने अपने साथियोंके साथ हमें घेरेमें ले लिया था। मैं और भी घबरायी कि जाने क्या होनेवाला है कि वह बोला, "बाबूजी, यहीं रहिए, बीबीको किसी तरहका डर नहीं।" और वे लोग तबतक वैसे ही घेरा बनाये खड़े रहे, जबतक कि सिनेमाके मैनेजर और मालिकने आकर उस झगड़ेको नहीं निपटाया।

पिक्चर फिर शुरू हो गयी। मनमें साथ-साथ फिर दूसरी पिक्चर चलने लगी। अबके कुछ अजीब कृतज्ञतासे अभिभूत होकर मैं सोचने लगी—बेकार उन लोगोंके प्रति मैं ऐसी भावनाएँ रखे हुए थी···कैसे उन्होंने सुरक्षाके लिए हमें घेरेमें ले लिया···मेरे प्रति कितने आदरका व्यवहार किया···लेकिन फिर ख़याल आया--परेशान भी कर सकते थे··· तभी फिर किसीने फ़बती किसी--'अब गा भी दे!' फिर इनकी आवाज़ आयी--'हाँ, क्यों, अब हो जाये एक गाना!' ये उन लोगोंके साथ घुल-मिलकर फ़बतियाँ कसते, मज़ाक़ उड़ाते, हँसते-हँसाते रहे और मैं मन-ही-मन कूढ़ती, हॉलके बाहर निकल घर पहुँचनेको व्यग्र होती रही।

फ़िल्म ख़त्म हो गयी। किसी तरह भीड़से निकलकर घर पहुँचे तो लगा जैसे किसी अग्नि-परीक्षासे गुज़र कर आये हैं। धमसे पलंगपर जा बैठी। इतनी देरसे दबा हुआ मेरा क्रोध जैसे फूट पड़ा। मैंने कहा कि हॉलके उस किनारेसे मेरा नाम लेकर इतनी ज़ोरसे आवाज़ देनेकी क्या ज़रूरत थी? क्या सोचते होंगे वे लोग? बोले, "इसमें क्या बुराई है, अरे अपनी ही बीवीको आवाज़ दी, किसी दूसरेकी बीवीको तो नहीं दी। रही लोगोंकी बात तो वे यही सोचते होंगे कि इस शख़्सको बीवीका कितना ख़याल है।"

"यही ख़याल है न कि जहाँ एक भी औरत न थी, उस क्लासमें ले जाकर बैठा दिया। उन लोगों···"

बीच ही में मेरी बात काटकर बोले, "तुम बड़ी नाशुकरी हो। इतनी मुश्किलसे मैंने टिकट हासिल किये, चौदह आनेवाले टिकट दो-दो रुपयेमें ख़रीदे और तुम मुँह फुलाये बैठी हो!"

मैंने कहा, "इससे तो अच्छा था कि हम फिर किसी दिन आरामसे पिक्चर देखते।"

तब बोले, "इतना हँसे-हँसाये, एन्ज्वाय किया, अपने पैसे वसूल हो गये और कैसे देखी जाती है पिक्चर?"

मेरी समझमें न आया कि उन लोगोंमें बैठ कर इतने हो-हुल्लड़में कोई कैसे एन्ज्वाय कर सकता है! यही बात मैंने इनसे कही तो कहने लगे कि उन्हीं लोगोंके साथ ही तो ऐसी

[शेष पृष्ठ १३२ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माध्यम

हिन्दी साहित्य सम्मेलनका मासिक

सम्पादक : बालकृष्ण राव

- 'माध्यम' हर अंकमें 'सहवर्ती साहित्य' के स्तम्भमें किसी एक हिन्दीतर भारतीय भाषाकी चुनी हुई समसामयिक रचनाएँ प्रस्तुत करता है।
- 'विवेचना' में प्रकाशित 'चारुचन्द्रलेख', 'समय और हम', 'अपने-अपने अजनबी', शमशेरका काव्य, 'यह पथ बन्धु था', 'एक साहित्यिककी डायरी' तथा 'हम विषपायी जनमके' की समधीत विवेचना और अन्य स्तरीय समीक्षाओंकी चर्चा आपतक पहुँची ही होगी।
- 'माध्यम' के विचार-प्रधान और विचारोत्तेजक लेखोंको आपने पढ़ा ही होगा।
- कविताओं, कहानियों, टिप्पणियोंके चयनमें 'माध्यम' की रुचि और स्तरसे आपका परिचय हो ही चुका है।
- 'माध्यम' का आग्रह है, न केवल आप इसे अवश्य पढ़ें, इसपर अपनी राय भी अवश्य भेजें।

मूल्य : एक प्रति १.००; वार्षिक १०.००

सम्पादकीय कार्यालय : पो० बॉ० सं० ६०, इलाहाबाद।

व्यवस्थापकीय कार्यालय : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

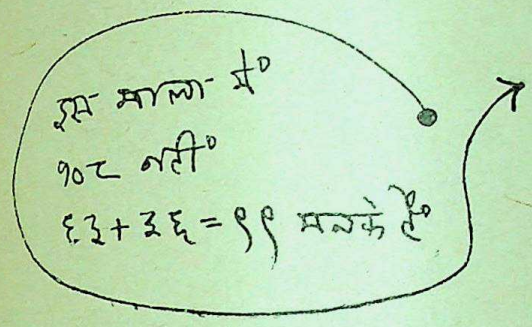

६३ के ३६ कवि

[लेख यह गोरखपुरसे बम्बई, बम्बईसे कलकत्ता, कलकत्तासे वाराणसी, वाराणसीसे···आने-जानेमें तीन-तेरह हो गया है। अन्तमें मुद्राराक्षसकी ओरसे क्षमायाचनासहित शुद्धिपत्र प्रस्तुत है। रचना पढ़ना ऐच्छिक है लेकिन शुद्धिपत्र पढ़ना अनिवार्य है। —सं०]

१-अज्ञेय : 'निरस्त्र'

—"यों मैं अपने रहस्यके हाथ रह गया सन्नाटेसे घिरा अकेला अप्रस्तुत अपनी ही जिज्ञासाके सम्मुख निरस्त्र, निष्कवच, वध्य—"

२-केदारनाथ अग्रवाल : 'हरी घासका बलम'

—"मन होता है मैं उखाड़कर इसे मार दूं, कुण्ठाको गढ़में पछाड़ दं—"

३-शमशेर बहादुर सिंह : 'इस तरह क्यों हैं'

—"आखिर क्यों मुसकराते हैं शराबी उदर, वातावरण हेमकेसरसे भरा है—"

४-नेमिचन्द्र जैन : 'आओ !'

—"अब और कोई रमी नहीं, विश्वास करो, और कोई संशय नहीं, कोई डर नहीं किसी दुविधाका, द्वन्द्व का—"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५-बच्चन : 'उघरहिं अन्त न होइ निबाहू'

—"इसलिए फिर आज सूरज-चाँद, पृथ्वी-पवनको आकाशको साखी बनाकर तुम करो संक्षिप्त पर गम्भीर दृढ़ भीष्मप्रतिज्ञा देश जनगणमन समाये राम !—"

६-भगवतीचरण वर्मा : दोस्त एक भी नहीं जहाँ पर'

—"एक दर्द जो उठ पड़ता है, कभी-कभी, वह शूल है, सच तो यह, हम नहीं जानते हार-जीतका अर्थ ही—"

७-प्रभाकर माचवे : 'लिखत सुधाकर'

—"इतने कड़ुए मन-भरको क्या कर लेगी तोला-भर किस री !"

८-दिनकर : 'छठी संज्ञाका जागरण'

"—रेशमके लच्छे-सी लगती किरण, व्योम दीखता ध्यानमें निरत किसी निश्चिन्त महायोगी-सा, पिया पुण्यकी प्रभा प्रेरणाके समान लगती है—"

९-भारतभूषण अग्रवाल : 'मुक्ति'

—"नहीं, मैं जेलमें नहीं था, अपने इन पच्चीस वर्षोंमें अन्धड़से झपटते इन अधीर चरणोंके वामन-डगोंसे मैंने इस अछोर धरती-के चारों भूँट खूँदे हैं—"

१०-भवानीप्रसाद मिश्र : 'स्फटिक प्रश्न'

—"कौन है जो सोचता है रोटियाँ बेलेंगे भड़के आग—"

११-ठाकुरप्रसाद सिंह : 'वासन्ती हवाओं-का जंगल'

—"मेरे भीतरकी ताज़ी गन्ध और नयी धड़कन सब जहाँके तहाँ हैं, जब सब हैं तब दंगल भी यहीं होगा—"

१२-केदारनाथ सिंह : 'एक छोटा-सा
—"सिर्फ़ एक सच्चेकी इकली
दिये जाड़ेके विरुद्ध उड़ रही है—"

१३-कीर्त्ति चौधरी : 'क्यों'

—"बाँट न छाता कोई ऐसे
हो कितना ही गहरा नाता—"

१४-कुँअर नारायण : 'नखलऊ'

—'दस सेकेण्डमें समझाने-समझने
किसी बातको क़रीब दो घण्टोंकी बहसके
समझा-समझाया—"

१५-कैलाश वाजपेयी : 'ऋद्धचेतना—
दार्शनिक पत्र

—"प्रथम बार मुझको अस्तित्वके
है मुझमें नया समुद्र-मन्थन हुआ है—'

१६-जगदीश गुप्त : 'मल्लाहका लड़का'

"छोटे-से जालमें छोटी-छोटी मछ
साँवले गोले मुँहपर चमकदार कोंड़
आँखड़ियाँ—"

१७-परमानन्द श्रीवास्तव : 'प्रक्रिया'

—"चौरके इर्दगिर्द बेचैनीसे भाग
एक चिड़िया—"

१८-रघुवीर सहाय : 'नेता क्षमा करो'

—"लोगोंमें श्रेष्ठ लोगो, मुझे
करो, मैं तुम्हारे साथ जा नहीं सकता—"

१९-रामदरश मिश्र : 'ओ पिया ओ पि
—"विहग एक 'वन' 'वन' पु
किया, मेघने खुल-खुल धराका हिया, भर
भर दिया—"

२०-रामानन्द दोषी : 'मैं अकेला तो नहीं
—"किन्तु परिमलने पुनः मेरा
गात मेरा प्यारका धोया हुआ—"

ज्ञानोदय : मार्च १९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२१-लक्ष्मीकान्त वर्मा : 'सड़क मुझसे दूर नहीं'

—"उफ़, मैं कितना झमेला हूँ, मेरे साथ यह अकेलापन भी नहीं रह पाता—"

२२-रामावतार त्यागी : 'मिलता कहाँ पानी मुझे'

—"इतने समयसे सालियाँ मिलती रही हैं गीतको, फिर भी उमर बढ़ती गयी है सिर्फ़ हैरानी मुझे—"

२३-विजयदेव नारायण साही : 'एक नीली चट्टानके कगारपर'

—"थरथराता है एक फूटता हुआ बुल-बुला, बारीक, बारीक, बिल्लौरी···—"

२४-विद्यानिवास मिश्र : 'अचानक'

—"पाये न देखे न हाये अचानक, आकुल प्राण अनागतमें बहे—"

२५-विपिनकुमार अग्रवाल : 'कोई नहीं मिला !'

—"विदाई-सा तुम्हारे साथ हूँ, सिग्नल तक हिलता हुआ हूँ एक झूठ शाही मेरा अस्तित्व रहा बच्चोंके स्कूलमें—"

२६-वीरेन्द्र मिश्र : 'ओ मौसम'

—"पगडण्डीवाले राही, इस द्वार न कोई गाये, जाने क्या कुछ हो जाये—"

२७-शम्भुनाथ सिंह : 'तस्वीर'

—"जिनपर हैं टूटी ज़ंजीरोंके घाव, नंगे मनपर बीते कलका अखबार—"

२८-दुष्यन्त कुमार : 'एक कण्ठ विषपायी'

'दोस्त दग़ा देते हैं, बसें दग़ा नहीं देतीं।

२९-श्रीकान्त वर्मा : 'दिनचर्या'

—"यशके अड्डेपर एक चायकी दुकान दिन-भर बुदबुदाती है।"

३०-सर्वेश्वरदयाल सक्सेना : 'कैसी विचित्र है ज़िन्दगी'

—"एक लबादा जिसे हर द्वार ओढ़ने-पर थर्राता हूँ, फिर भी ओढ़ता जाता हूँ—"

३१-स्नेहमयी चौधरी : 'धूप-एक गौरैया'

—"मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगी, यहाँ यह ठिठुरन, यह अँधियारा मुझे तनिक नहीं खाता है—"

३२-धर्मवीर भारती : 'शब्द तुमने रचे'

—"प्रेम अक्षर थे ये दो समर्थके, अर्थ तुमने दिया—"

३३-नीरज : 'सब कुछ था, पर प्यार नहीं था'

—"इसका ही यह फल है शायद कल जब मैं निकला दुनियामें, गज-भर ठौर मुझे देनेको मरघट तक यार नहीं था—"

३४-अंचल : 'चुप रहो'

—"चुप रहो, ओ बालुकाके स्वप्नपंखी मारुती, चुप रहो, वैधव्यमें डूबी विवशताके रुदन···गुनगुनाती ओ वफ़ाओ कन्दराओ, चुप रहो—"

३५-अजित कुमार : 'नवागन्तुक'

—"इन सबके बीच एक नन्हा-सा देव-कुँवर आश्वस्त अकुंठित पीर मग्न विचरण करता, लो ठहर गया है देख दुकान खिलौनों-की—"

३६-गिरिजाकुमार माथुर : 'अवस्तु करुणा'

—"तुम्हें मेरे मनकी समस्त करुणा समर्पित है जिससे वह चुक जाये और मैं अधिक निस्संग सो जाऊँ—"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुद्धिपत्र

कवि-क्रमांक	अशुद्ध	शुद्ध	कवि-क्रमांक	अशुद्ध	शुद्ध
१	हाथ	साथ	१९	'वन' 'वन'	वन-वन
२	बलम	बल्लम	२०	प्यार	उजार
३	उदर	अधर	२१	झमेला	अकेला
४	रमी	कमी	२२	सालियाँ	गालियाँ
५	त	न	२३	फूटता	फूलता
६	शूल	भूल	२४	हाये	गाये
७	किस री	मिसरी	२५	शाही	सा ही
८	पिया	त्रिया	२६	गाये	आये
९	झूँट	खूँट	२७	मन	तन
१०	बेलेंगे	सेकेंगे	२८	(जो कुछ छपा है)	रद्द कर दें
११	दंगल	जंगल	२९	यश	दश
१२	सच्चे	बच्चे	३०	द्वार	बार
१३	छाता	पाता	३१	खाता	भाग
१४	नखलऊ	लखनऊ	३२	समर्थ	अर्थ
१५	क्रुद्धचेतना	युद्धचेतना	३३	यार	तैयार
१६	गोले	भोले	३४	वफ़ाओं	गुफाओं
१७	चौर	और	३५	पीर	धीर
१८	जा	आ	३६	सो	हो

[पृष्ठ १२७ का शेष : आशिक़ फिरें निगोड़े]

पिक्चर देखनेका मज़ा है। फिर मुझपर व्यंग्य-बाण छोड़ते हुए बोले, "तुम ऐरिस्टोक्रेट हो और मैं मज़दूर-लेखक। तुम भी यों गुमसुम न बैठकर हँसी-मज़ाक़में शामिल हो जातीं तो एन्ज्वाय करतीं। अरे, हम पिक्चर देखने गये थे, कोई मातम मनाने तो गये नहीं थे।

इन सब हरकतोंके बिना सैर-तफ़रीह ये नार्मल आदमीका गुण मानते हैं, साहित्य-कार भला किस तरह नार्मल हो सकता है। कहना-सुनना बेकार है, बल्कि उल्टे ऐसी हरकतोंकी प्रेरणा मिलती है। इस सबके लिए तैयार होकर इनके जाती हूँ। ये ऐसा न करें तो अतिरिक्त होती है और मैं सोचने लगती हूँ कि किस भलेका मुँह देखकर उठी थी। कहीं अपनी इस सोचको शब्द दे दूँ तो यास कहते हैं, "जाने-मन! मुँह तो तुमने मेरा ही देखा था। दुनिया कहे, पर तुम तो जानती हो, मैं आदमी हूँ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

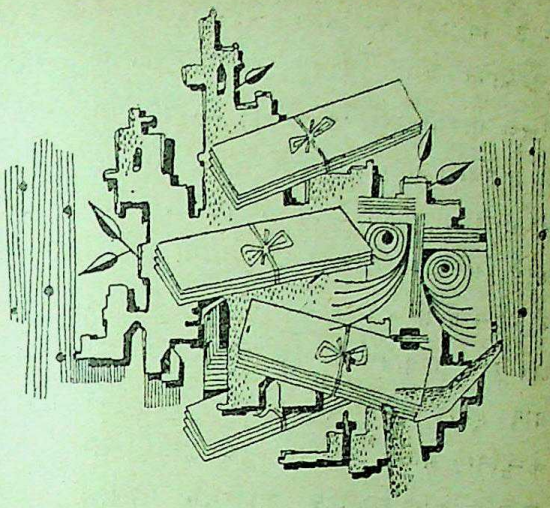

सहचिन्तन

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

हिन्दी-विरोध और राष्ट्रद्रोह

• हिन्दीके विरोधी कौन ?

दक्षिण भारतमें जो लोग हिन्दीका विरोध करते हैं, मैं उनकी भावनाको समझता हूँ और एक ईमानदार विरोधीके रूपमें उनका मैं आदर भी करता हूँ, पर हिन्दी-समर्थक बनकर जो लोग उन दक्षिण भारतीयोंका विरोध करते हैं, न मैं उनको समझ पाता हूँ, न उनका आदर ही करता हूँ; क्योंकि शिष्टसे शिष्ट भाषामें वे मूढ़ हैं।

यह कड़वी बात अपनी व्याख्या चाहती है। दक्षिण भारत हिन्दीका विरोधी नहीं है, यह तो इसीसे स्पष्ट है कि वहाँ राष्ट्रभाषाकी परीक्षाओंमें हर साल हज़ारों विद्यार्थी बैठते हैं और ऐच्छिक विषय होनेपर कई सरकारी स्कूलोंमें भी हिन्दी पढ़ते हैं। वहाँ हिन्दीका विरोध करते हैं पहले नम्बर-पर द्रविड़ मुन्नेत्र कषगमवाले, पर क्या सच-मुच वे हिन्दीका विरोध करते हैं ?

ना, वे हिन्दीके नहीं, हिन्दके विरोधी हैं। वे जिन्नाकी तरह हिन्दसे अलग अपना देश चाहते हैं और हिन्दीसे कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहते। इस प्रकार ये हिन्दके—भारत राष्ट्रके—विरोधी हैं। और इनके साथ देशकी सरकारको एक राष्ट्रद्रोहीके रूपमें व्यवहार करना चाहिए, एक हिन्दी-विरोधी-के रूपमें नहीं !

दक्षिण भारतमें कुछ और लोग भी हिन्दीके विरोधी हैं, पर ये देशद्रोही नहीं हैं। इनकी मानसिक स्थिति यह है कि ये देशभक्त हैं, पर उससे अधिक वेशभक्त हैं। इन्हें यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डर है कि हिन्दीका प्रचार होनेपर, यानी अँगरेज़ीका प्रचार घटनेपर भारत-सरकारमें दक्षिण भारतीयोंकी जो भरमार है, वह कम हो जायेगी। साफ़ शब्दोंमें ये वे लोग हैं, जो अँगरेज़ी राज्यके समय अपनेको अँगरेज़ियतमें रंगकर अँगरेज़ी राज्यके, यानी भारतकी ग़ुलामीके स्तम्भ बन गये थे, पर जो अब पूरी तरह देशकी उन्नतिके स्तम्भ हैं। यदि हमारे देशमें १५ अगस्त १९४७को कम्यूनिस्ट शासन स्थापित हुआ होता, तो इनमें-से आधे देशद्रोहके अपराधमें गोलीसे भून दिये जाते और आधे जेलोंमें भेज दिये जाते। सौभाग्यसे प्रजातन्त्री शासन स्थापित हुआ और ये लांछितोंकी श्रेणीमें प्रविष्ट न होकर वांछितोंकी श्रेणीमें प्रविष्ट हुए। ये भ्रम और भयका शिकार हैं और यदि शासकदलके शासन और संगठनका प्रचारतन्त्र ठीक होता, तो यह भ्रम और भय स्वतन्त्रताके आते ही दूर हो जाता। प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्रीने ऊँचे स्वरमें यह कहकर कि हिन्दी न जाननेवाले अँगरेज़ीमें काम कर सकेंगे, हरेक सरकारी हिन्दी पत्रके साथ उसका अँगरेज़ी अनुवाद रहेगा और सरकारी नौकरीकी परीक्षाओंमें अँगरेज़ीमें भी प्रश्नोत्तर होंगे, इस भ्रम और भयको दूर करनेका उत्तम प्रयत्न किया है और मद्रास-सरकारने देशद्रोहियोंका दमन कर उचित कार्य किया है। इस द्विविध प्रयत्नसे स्पष्ट हो गया है कि हिन्दीके विरोधी वास्तवमें कौन हैं? यह स्पष्टता इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि हिन्दी भाषाभाषियोंके मनमें यह भाव बैठना हानिकारक है कि पूरा दक्षिण भारत हिन्दी-विरोधी है। विस्तृत सौहार्द ही दृढ़ राष्ट्रीयताके लिए सर्वोत्तम पोषक रसायन है, यह हम सब याद रखें।

● राजभाषा या राष्ट्रभाषा ?

संविधानके अनुसार २६ जनवरी १९५० से जो हिन्दी हमारे भारतकी [illegible] घोषित हुई है, उसे हिन्दी-समर्थकोंने [illegible] कई सम्मेलनोंमें राजभाषा कहा है। नम्रतासे साथ निवेदन है कि यह एक भयंकर विरोधाभास है। क्या हिन्दी राजभाषा है? यदि हाँ, तो इसका अर्थ हुआ कि उत्तर प्रदेश, मध्य [illegible] पंजाब और बंगाल आदिकी सरकारें आपसमें हिन्दीमें बोलेंगी और बाक़ी सारा राष्ट्र [illegible] रहेगा? यदि हाँ, तो क्या महर्षि दयानन्द, गान्धी तक भारतके महापुरुषोंने हिन्दीके लिए जो कार्य किया उसका अर्थ इतना छोटा था?

इन प्रश्नोंपर मन हाँ नहीं कहता है। जो कुछ कहता है वह भुवनेश्वरमें भी सुनाई दिया था और दुर्गापुरमें भी सुनाई दिया। भुवनेश्वरके काँग्रेस-अधिवेशनमें स्वागताध्यक्ष श्री पटनायकने अपना भाषण उड़िया दिया था, अध्यक्ष श्री कामराजने तमिल और यों ही किसीने बँगलामें, किसीने मैथिलीमें और किसीने हिन्दीमें। दुर्गापुर-काँग्रेसमें मामला भोजपुरी और मैथिली तक [illegible] अन्धोंकी भी आँख खोल देनेवाली एक घटना हुई कि जब अध्यक्ष श्री कामराज तमिल बोलने लगे, तो बहुत अधिक दर्शक [illegible] प्रदर्शिनी देखने चले गये, पर बात [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थमी और प्रतिनिधि भी उखड़ने लगे, तो हमारे जन-मन-विशेषज्ञ प्रधानमन्त्री श्री लाल-बहादुर शास्त्री मंचसे उतरकर प्रतिनिधियोंमें जा बैठे।

आखिर इस समस्याका समाधान क्या है? क्या राजभाषा इस समस्याका समाधान है? ना, इस समस्याका समाधान है—राष्ट्र-भाषा और केवल राष्ट्रभाषा। जो लोग राष्ट्रभाषाके तीव्र प्रसारकी उपेक्षा कर राष्ट्र-का निर्माण चाहते हैं, वे बिना धागेकी माला बनानेका ही प्रयत्न कर रहे हैं, इसमें मत-भेदकी गुंजायश नहीं। हाँ यह मतभेद हो सकता है कि यह प्रयत्न भोलेपनका सर्वोत्तम उदाहरण है या भोंदूपनका?

• पाँच अटल प्रतीक :

हमारे महान् राष्ट्रके महान प्रजातन्त्रके पाँच अटल प्रतीक हैं :

१—एक विधान,

२—एक प्रधान,

३—एक निशान,

४—एक ज़बान, और

५—एक समान।

हमारा संविधान एक है और कोई राज्य उसका उल्लंघन नहीं कर सकता। हमारा प्रधान—राष्ट्रपति—एक है, जो पुराने चक्रवर्तीका नया स्वरूप है। उसका शासन-दण्ड सब राज्योंपर समान प्रभावकारी है। हमारा निशान—झण्डा—एक है और कोई राज्य उसका असम्मान कर जीवित नहीं रह सकता। एक ज़बान—राष्ट्रभाषा—हमारे सब राज्योंके जन-मनको एकताके सूत्रमें बाँधनेवाली है और जो राज्य उसकी उपेक्षा करेगा, वह गले हुए अंगकी तरह नाशको प्राप्त होगा। हमारे यहाँ लिंगभेदके कारण, राज्यभेदके कारण, वर्णभेदके कारण, वर्गभेदके कारण कोई नागरिक उच्च या हीन नहीं है। सबके लिए समान अवसर, समान अधिकार ही हमारी निर्माण-नीति है। इन सबको मिला-कर जो जीवन-पद्धति तैयार होती है, उसे ही भारतीय लोकतन्त्री समाजवाद कहते हैं और वे सब ग़द्दार हैं, जो इनमें-से किसीका भी विरोध करते हैं।

• एक संस्मरण :

श्री कमलनयन बजाजने अपने एक भाषण-में एक महत्त्वपूर्ण संस्मरण सुनाया है: गान्धीजीने उनसे कहा था कि मैं और जवाहर लाल दोनों चाहते हैं कि भारतसे अँगरेज़ चले जायें, पर जवाहरलाल चाहता है कि अँगरेज़ तुरन्त चले जायें और अँगरेज़ी एवं अँगरेज़ियत बनी रहे। इसके विरुद्ध मैं चाहता हूँ कि अँगरेज़ चाहे थोड़े दिन और टिके रहें, पर अँगरेज़ी और अँगरेज़ियत तुरन्त चली जाये।

देशके दुर्भाग्यसे गान्धीजी नहीं रहे और राष्ट्रका नेतृत्व जवाहरलालके हाथों आया। फलस्वरूप स्वतन्त्रताके १७ वर्ष बाद भी अँगरेज़ी देशपर लदी हुई है और अँगरेज़ियत-का तो यह हाल है कि टैक्सीका सफ़ैया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(क्लीनर) भी पैण्ट-बुश्शर्ट पहनकर पूरा जॉन बुल बना फिरता है। अँगरेज़ोंने अपनी शिक्षा-पद्धति चलायी, उसे एक शताब्दीसे अधिक वर्षोंतक डण्डेके ज़ोरसे स्थिर रखा, उसपर करोड़ों रुपये ख़र्च किये और फल यह हुआ कि २०-२५ हज़ार आदमियोंके पीछे शुद्ध-प्रामाणिक अँगरेज़ी बोलनेवाला एक आदमी मिलता है। इस लँगड़े अनुभवके बाद भी महारानी विक्टोरियाके जो मानस-पुत्र भारतमें अँगरेज़ीके मरे साँपको गलेसे नहीं निकालना चाहते, उन्हें क्या कहा जाये? कितने आश्चर्यकी बात है कि इण्टर साइन्स और बी० एस-सी० पास कर जो विद्यार्थी इंजीनियरिंग, मेडीकल और विज्ञान कॉलेजोंमें जाते हैं, अँगरेज़ीमें कहीं अपने अध्यापकोंकी बातको पूरी तरह नहीं समझ पाते और टुकर-टुकर अध्यापक विद्यार्थियोंको और विद्यार्थी अध्यापकोंको देखते रहते हैं। इससे नीचेकी श्रेणियोंमें फ़ेल होनेका औसत ५५-६० प्रतिशत है। इनमें भी अँगरेज़ी विद्यार्थियोंके लिए मौतका फन्दा बनी हुई है। यह भी दो तरह कि जो विद्यार्थी अँगरेज़ीमें रस नहीं लेते, फ़ेल होनेवालोंमें ऐसोंकी संख्या ३५-३६ प्रतिशत है। इन आँकड़ोंसे डरकर जो विद्यार्थी अँगरेज़ीपर अधिक ध्यान देते हैं, वे दूसरे विषयोंमें फ़ेल हो जाते हैं। इस तरह फ़ेल होनेवालोंकी संख्या इतनी अधिक हो जाती है कि यदि किसी दूसरे स्वतन्त्र देशमें वैसा हो, तो शिक्षा-मन्त्रीका सार्वजनिक जीवन गधेका सींग और गूलरका फूल बन जाये!!

फ़ार्मूला यह है!

हमारे देशमें १४-१५ भाषाएँ राष्ट्रीय महत्त्वकी हैं, जो अपने-अपने क्षेत्रमें मातृ-भाषाके रूपमें प्रयुक्त होती हैं; जैसे बंगाल बंगालमें, तो गुजराती गुजरातमें। अब प्रश्न यह है कि विद्यार्थियोंके भाषा-अध्ययनका क्रम क्या हो?

स्वर्गीय प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू और उनकी भारत-सरकार त्रिभाषा-फ़ार्मूला पेश करती है कि मातृभाषा, राष्ट्र-भाषा और अँगरेज़ी—हरेक विद्यार्थी ये तीन भाषाएँ पढ़े। उदाहरणके लिए बंगाली विद्यार्थी अपनी मातृभाषा बँगलाके साथ राष्ट्रभाषा हिन्दी और अँगरेज़ी पढ़े। इस फ़ार्मूलेकी जो दुर्गति हुई है, उसका वर्णन ऊपरकी टिप्पणीमें आ गया है। इस विषयकी सचाई यह है कि अँगरेज़ी भारतीय स्वभाव-संस्कृतिके अनुकूल नहीं है और यही कारण है कि भारत-सरकार-द्वारा बलात् लादनेपर भी १७ वर्षोंमें अँगरेज़ी पनपी नहीं है, सूखती ही गयी है।

फिर सही फ़ार्मूला क्या है?

युगसन्त विनोबाका यह फ़ार्मूला सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनैतिक दृष्टिसे भारतके लिए सही है—"मैंने बहुत बार कहा है कि जैसे मनुष्य दो आँखोंसे देखता है, वैसे ही राष्ट्रकी दो भाषाएँ हैं—प्रान्तीय भाषा और राष्ट्रभाषा। मनुष्यके लिए दोनों आवश्यक हैं, इसीलिए हमने दो भाषाओंका ज्ञान अनिवार्य माना है। तीसरी भाषा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़रूरत हुई, (भगवान् शंकरकी तीसरी आँख थी, जो ज्ञानदृष्टि कहलाती है) तो संस्कृत भाषाका अध्ययन लाभदायी होगा और अँगरेजी भाषा ऐनकके स्थानपर हमारे काममें आयेगी। ऐनककी ज़रूरत सबको नहीं पड़ती, लेकिन कभी किसीको पड़ती है, इसलिए अँगरेजी उस जगह है। उससे कुछ दुनिया खुल जाती है। मैं चाहता हूँ कि हिन्दीका प्रचार ठीक ढंगसे हो। मुझे विश्वास है कि हिन्दीका जितना ज्ञान-प्रचार बढ़ेगा, उतना उसका स्वीकार होगा। हिन्दीका किसीसे विरोध नहीं, बल्कि अहिन्दी भाषी लोगोंने (स्वामी दयानन्द, गान्धीजी, लोकमान्य आदि) ही इसे राष्ट्रभाषा बनाया है।"

• अपनी भाषा :

अपनी भाषामें जो बात है, वह दूसरोंकी भाषामें कभी हो ही नहीं सकती। अपनी और अपने देशकी भाषाका प्रभाव कितना अजेय और गहरा होता है, इसका एक संस्मरण मार्च १९६४ में ब्रिटेनके पशु-चिकित्सा विशेषज्ञ डॉ० डिवाटरने बम्बईमें सुनाया था। अँगरेजीके प्रसिद्ध साहित्यकार श्री रुडयार्ड किपलिंग पहले एक सर्कसमें काम करते थे। एक दिन सर्कसके खेलके बीच एक हाथी बेक़ाबू हो गया। सभी परेशान थे; क्योंकि किसी भी प्रयत्नसे वह क़ाबूमें न आ रहा था। किपलिंग काफ़ी दिनोंतक हिन्दुस्तानमें रह चुके थे और हिन्दुस्तानी जानते थे। वे हिन्दुस्तानीमें बोलते हुए उस क्रुद्ध हाथीके पास चले गये। हाथी उत्पात भूलकर उनकी बात सुनने लगा। बातें करते-करते उन्होंने उसे थपथपाया, पुचकारा तो वह खुश हो गया और उनके पीछे-पीछे अपने बाड़ेमें चला गया।

सचमुच क्या हम उस हाथीसे भी गये-बीते हैं कि हमें अपनी मातृभाषा और राष्ट्रभाषाका प्यार प्रभावित नहीं करता और एक दुर्लभ विदेशी भाषाकी ग़ुलामीमें फँसे रहकर ही सन्तुष्ट हैं ?

● यह संस्मरण :

युगोस्लावियाके प्रमुख वैज्ञानिक श्री एण्टन मोल्कने नयी दिल्लीमें पत्रकारोंसे एक बड़े महत्त्वकी बात कही—"मेरे देशमें वैज्ञानिक अनुसन्धानके परिणाम युगोस्लाव भाषामें प्रकाशित होते हैं, इसीलिए वहाँ विज्ञानका उपयोग जनसाधारणके लिए सुलभ है। वहाँ विज्ञानकी पत्र-पत्रिकाएँ भी वहींकी भाषामें निकलती हैं। इससे भी जनसाधारणको विज्ञानका ज्ञान सुलभ है और उनका दृष्टिकोण रूढ़िपन्थीकी जगह वैज्ञानिक हो गया है।"

और हमारे भारतमें ? सब कुछ उनके लिए है, जो दालमें नमकके बराबर भी नहीं !!

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

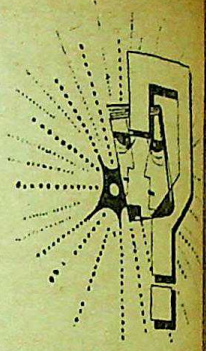

हिन्दी नाट्य महोत्सव

: एक और दृष्टि

नाट्य महोत्सवका प्रारम्भ हुआ, नाट्य-सम्राट् पृथ्वीराज कपूरके हाथों। उनके भव्य नाटकीय व्यक्तित्वने उद्घाटन-महोत्सवके वातावरणको एक रौनक़ और रंगीनी दी। उन्होंने अपने उसी नाटकीय अन्दाज़से वे बातें कीं और कहीं जो उनकी इस क़दर अपनी हैं कि बुद्धि-विवेकसे मस्तिष्कमें नहीं उतरतीं, बल्कि फुरफुराती हैं भावनाओंको। आयोजकोंको इस बातसे हलकी-सी परेशानी भी हुई कि नाटक–क्षेत्रके इतने अनुभवी व्यक्तिने एक भी विज्ञता और विदग्धताकी बात नहीं कही। उसने तो इस बातका भी मज़ाक़ उड़ाया कि नाट्य महोत्सवके नामके साथ 'हिन्दी' शब्द क्यों जोड़ा गया। उसका विश्वास है कि नाटककी अपनी एक ऐसी भाषा है जो अभिनेता-द्वारा दर्शकोंतक स्वतः पहुँच जाती है, यदि अभिनेताको अपनी बात दिलसे कहनी आती हो, और दर्शकोंमें वह ज़िन्दादिली हो कि वह दिल की बात समझ सकें। पृथ्वीराजकी रायमें 'नाटककी भाषा' क्या हो, यह प्रश्न कुछ महत्त्व नहीं रखता। विदेशी नाटकोंको देखनेके लिए प्रत्येक विदेशी भाषाका आना आवश्यक नहीं, इसलिए नाटकके सन्दर्भमें 'हिन्दी' शब्दको किसी भी प्रकारकी प्रमुखता देना कुछ अर्थ नहीं रखता।

पृथ्वीराज कपूरकी बातें सुनकर तो ऐसा लगा कि हम कितने मूर्ख हैं कि नाट्य महोत्सवके प्रति इतना गम्भीर दृष्टिकोण लेकर चले हैं कि तीन दिनतक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाटक-सम्बन्धी विषयोंपर विचार करनेके लिए गोष्ठियोंका भी आयोजन कर बैठे हैं।...किन्तु पृथ्वीराजके मोहक शब्दोंका नशा जैसे ही उतरा कि तत्काल विषयकी गम्भीरता ज्यों-ज्यों मनमें बन आयी क्योंकि सामने थे अगले दिन होनेवाले नाटक-लेखक-परिसंवादमें भाग लेनेवाले विद्वान्, नाटक-लेखक और उसी सन्ध्याको खेले जानेवाले नाटक 'अन्धा-युग' के कलाकार।

नाटक-प्रदर्शनोंके कार्यक्रममें रंगमंचपर 'अन्धा-युग', 'राजा ईडिपस', 'गोदान', 'अण्डर सेक्रेटरी' और 'सीता वनवास' प्रस्तुत हुए और रामलीलाकी लोक-विधामें 'सीता-स्वयंवर' और नौटंकीकी विधामें 'अमरसिंह राठौर'। 'छपते-छपते'का प्रस्तुतीकरण एरीनामें हुआ।

'अन्धा-युग' और 'राजा ईडिपस' दोनों ही प्रभावशाली दुखान्त नाटक थे—गम्भीर स्तरके। 'अन्धा-युग'का कथानक पौराणिक महाकाव्य महाभारतके अन्तिम कथा-खण्डपर आधारित है इसलिए अपेक्षा करनी चाहिए थी कि साधारण दर्शक नाटकके कथानकको सुगमतासे ग्रहण करेगा। किन्तु सम्भतवया पचास प्रतिशत जनता कथानकको स्पष्ट रूपसे पकड़ नहीं पायी। यदि प्रारम्भमें एक संक्षिप्त भूमिका, नाटकके पात्रों और कथाके परिप्रेक्ष्यको स्पष्ट कर देती, तो सुविधा होती। यद्यपि कथानककी उलझन दर्शकोंके मनमें रही, और नाटकके कथोपकथनकी भाषा साहित्यिक, काव्यात्मक और प्रतीकात्मक थी, फिर भी लगभग सारे दर्शक प्रत्येक वाक्य और शब्दको सहजतासे समझते जा रहे थे और उसमें निहित अर्थकी प्रभावशीलताके कारण नाटकका पूरा आनन्द ले रहे थे। अभिनयमें यद्यपि काव्य-नाटकके अनुकूल जो ललित लय होनी चाहिए थी, वह खटकती थी, किन्तु प्रभावोत्पादकता इतनी थी कि दर्शक विभोर हो गये। उन्हें नाटक देखकर सन्तोष हुआ क्योंकि युग-बोध, जीवन-दर्शन और व्यक्तियोंके मानसिक संघर्षको, वह उस दृष्टिसे देख पाये जिस नवीन कोणसे चिन्तनशील लेखकने समझा और समझाना चाहा है।

राज्याश्रित संस्था नेशनल स्कूल ऑफ़ ड्रामाने प्रसिद्ध निर्देशक अलकाज़ीके निर्देशनमें सोफ़ोक्लीज़ लिखित ग्रीक त्रासदी 'राजा ईडिपस'का उर्दू रूपान्तर प्रस्तुत किया। हिन्दी नाट्य महोत्सवके अवसरपर भी इस प्रसिद्ध नाट्य-संस्थाका कोई मूल हिन्दी नाटक प्रस्तुतीकरणके लिए तैयार न था और अच्छे नाटक प्रदर्शनके लिए उन्हें भी अनुवादों और रूपान्तरोंपर ही निर्भर करना पड़ा, यह हिन्दीके लिए शोचनीय स्थिति मानी जाये, किन्तु नाटक-जगत्के लिए नहीं, क्योंकि विदेशी नाटक होते हुए भी, नाटककी कथा-वस्तु इतनी सार्वकालिक रुचि और मनोवैज्ञानिक समस्यापर आधारित होकर गहन त्रासदीके रूपमें अभिव्यक्त हुई है, कि किसी भी मानसिक स्तरकी जनता उससे अप्रभावित नहीं रह सकती। इसी नाटकका बँगला रूपान्तर श्री शम्भूमित्रकी ख्याति-प्राप्त नाटक-मण्डली बहुरूपीने भी प्रस्तुत किया है। दोनों प्रस्तुतीकरणोंकी तुलना करना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपेक्षणीय नहीं है। अपनी-अपनी शैलीसे दोनों ही नाटक अत्यन्त प्रभावशाली हैं।··· देहलीसे आये कलाकारोंने अपने नाटक-प्रस्तुतीकरणकी कुशलतासे इस बातका एक और सबल प्रमाण दिया कि दुःखान्त गम्भीर किन्तु हृदयसे बात करनेवाले नाटक, चाहे वह साहित्यिक भाषामें हों, चाहे उर्दू मिश्रित हिन्दुस्तानीमें (जिनके कई शब्दोंके अर्थसे भी जनता अनभिज्ञ रही हो) और यद्यपि कथानक विदेशी हो, और पौराणिक कल्पनापर आधारित यथार्थ वर्तमान जीवनका न भी हो, तब भी कुछ शाश्वत तथ्योंका प्रभावशाली नाटकीय प्रस्थापन जनताको मोहता है और उसके दिलको झिंझोड़ता है।

अनामिका-द्वारा 'छपते-छपते'—रूमानियन लेखक मिहेल सेबेस्शियनके 'स्टाप न्यूज़' का रूपान्तर—एरीना थियेटरकी शैलीमें प्रस्तुत हुआ। कलकत्ताकी जनताने इस नाटक को पहले भी पाँच दिन तक अत्यन्त रुचिसे देखा था। नाट्य-महोत्सवके अवसरपर आये बाहरके अतिथियोंने भी नाटकको बहुत सराहा और एरीना-शैलीकी सम्भावनाओंको प्रत्यक्ष रूपमें पहचाननेका अवसर पाया। एरीना-शैलीका और भी सहज और सुगम रूप हो सकता है जिसमें स्टेज, परदे, रोशनी आदि अनेक नाटकीय प्रसाधनोंके बिना नितान्त साधारण खर्च और आडम्बरके द्वारा नाटक खेले जा सकते हैं। बँधे-बँधाये स्टेजपर प्रस्तुत नाटक, जो अधिक व्यय और परिश्रमसाध्य हैं यदि इस शैलीमें प्रस्तुत किये जायें तो सम्भवतया नाटक-क्षेत्रमें, अभिनयमें कुशलताकी ओर ध्यान अधिक केन्द्रित हो।

पुराने पारसी रंगमंचकी शैलीमें प्रस्तु आग़ा हश्र काश्मीरी लिखित 'सीता-बनवास' कलकत्तामें हिन्दीकी एकमात्र व्यावसायिक नाटकमण्डली, मूनलाइट थियेटरने प्रस्तु किया। निःसन्देह इस मण्डलीके निर्देश कलाकार नरसी हार्दिक बधाईके पात्र हैं जिन्होंने साधारण सामान्य जन-रुचिके अनुकूल नाटक खेलकर नाटकको व्यावसायिक रूपसे सफल बना रखा है। इस नाटक मण्डलीके अन्य अभिनेता और अभिनेत्रियोंके अदम्य उत्साह, परिश्रम और नाटक-कलाके प्रति सच्ची ईमानदारी प्रशंसनीय है। किन्तु प्रश्न उठता है कि क्या नाटक-कलाको जिस स्तरपर जीवित रखा है, वह स्तर जन-रुचि का ध्यान रखते हुए भी शनैः-शनैः अधिक शोभनीय और अधिक उच्चस्तरीय नहीं हो सकता था। एक ओर नाटकमें राम और सीताके पत्नी और पतिव्रतका गुणगान है दूसरी ओर हास्य-नाटिकामें इतना अश्लील भद्दा और वाहियात मज़ाक़ भरा हुआ है कि वह किसी दृष्टिसे भी जनताके लिए रुचिकर नहीं माना जा सकता। उसी मंचपर जहाँ एक दिन पहले सोफ़ीक्लीज़का 'राजा ईडिपस' खेला गया था जिसमें एक माँ पुत्र और पतिके सम्बन्धोंपर आधारित हृदय संवेदनाओंका दारुण दृश्य प्रस्तुत हुआ था वहीं पति-पत्नी और पुत्रके त्रिकोण 'सीता-बनवास'की हास्य-नाटिकामें भोंडे ढंगसे प्रस्तुत देखकर विचित्र-सा धक्का लगता है। अभिनयमें चीख-चिल्लाहट और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाटकीयता भी आम-जनताको मुग्ध नहीं कर सकी। कथानकके गम्भीर स्थलोंपर भी अति नाटकीय अभिनयसे जनता उचित अर्थों में प्रभावित न होकर केवल एक मनोरंजक आनन्द ले रही थी, जैसा किसी चुटकुले या व्यंग्यको सुनकर या कलाबाजी और सरकस के करिश्मोंको देखकर।

यदि पारसी थियेटरके यही परिश्रमी ढाँचेवाले कलाकार अधिक सुरुचिपूर्ण नाटकोंका प्रदर्शन करें और अभिनय-कलाको वर्तमान रुचिके अनुकूल ढालें तो सम्भवतया वर्तमान दर्शक-जनताके अतिरिक्त और भी जनता उनके नाटकोंका दर्शक बन जाये।

बाराणसीसे आयी 'रामलीला' और हाथरससे बुलायी गयी 'नौटंकी'। इन नाटक-विधाओंका महत्त्व लोक-जीवनसे अत्यन्त घनिष्ठतासे जुड़ा हुआ है। वह लोक-विधाएँ इतनी मधुर-सहज और हृदयको सीधा स्पर्श करनेवाली हैं कि इनको अभिनय-कलाकी किसी कसौटीपर उतारकर नहीं देखा जा सकता।...सुशिक्षित नागरिक और आधुनिक सभ्यताके आवरणमें पूर्णतया वेष्ठित व्यक्ति भी इन विधाओंके मुक्त-सहज वातावरणमें विश्राम पाता है और भावुकता-प्रधान कथा-रूपों और अभिनयकी सरल ईमानदारीके प्रभाव-प्रवाहमें वह जाता है। इन लोक-विधाओंका अस्तित्व हमारी संस्कृतिको समृद्ध और सरस बनाये रखनेके लिए अत्यन्त आवश्यक है। काश! इन मण्डलियों-द्वारा प्रस्तुत कथाओंका लेखन अधिक सुव्यवस्थित ढाँचेमें हो और इनमें प्रस्तुत संगीत व नृत्य लोक-गीतों और लोक-नृत्योंके उत्कृष्ट नमूने!

दिल्लीकी जनप्रिय नाट्य संस्था थ्री आर्टस क्लब-द्वारा प्रस्तुत प्रहसन-व्यंग्य 'अण्डर सेक्रेटरी' अपने ढंगका भिन्न प्रयोग है, विशेषतया कथा-वस्तुकी दृष्टिसे। कला और साहित्यकी दृष्टिसे स्तरीय न होते हुए भी सफल नाटकके गुणोंसे संयुक्त यह नाटक बहुत मनोरंजक लगा।....नाटकके कलाकार सधे, मँजे और अभिनयमें प्रवीण थे। समसामयिक सामाजिक व्यंग्य होनेके नाते इसका अभिनय कठिन न भी माना जाये, तो भी प्रतिदिनके सहज जीवनका चित्रण भावसे व्यक्त करना, स्वयंमें बहुत बड़ी कला है। कलकत्तेके नागरिकोंके लिए ऑफ़िसर-वर्गपर किया गया वह व्यंग्य उतना ही चुटीला रहा हो जितना कि देहलीका उच्च-मध्यवर्ग पाता होगा; पर फिर भी नाटकके सुस्पष्ट हास्य-व्यंग्यने सबका मनोविनोद किया।

श्री-नाट्यम्, बनारस-द्वारा प्रस्तुत 'गो-दान'—प्रेमचन्दके सुप्रसिद्ध उपन्यासका नाट-कीय रूपान्तरण—बहुत सुन्दर प्रयास था। निर्देशक और अभिनेताओंका नाटकके प्रति सतत अनुराग और घर-गृहस्थीकी सामान्य शिक्षित महिलाओंका रंगमंचपर अभिनय-भूमिकाओंमें उतरना अभिनन्दनीय है। नाटकमें दृश्योंकी सजावट, आलोक-सम्पात-द्वारा प्रभाव आदिका प्रबन्ध नाटक-आयो-जकोंके परिश्रम और उत्साहका द्योतक था।...यदि ऐसे नाट्य-दलोंको उत्तम मूल नाटक प्राप्त हों तो उनकी अभिनय-कलाको अधिक निखरनेका अवसर मिले क्योंकि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाटककी सफलतामें कुछ कमियाँ केवल इसलिए दृष्टिगोचर हुईं कि मूल कृतिका नाटकीकरण उतना कसा हुआ और वार्तालाप उतना चुस्त और व्रत नहीं थी जितनी कि सफल नाटककी हो सकती है। उपन्यास या कहानीके नाटकीय रूपान्तरके लिए बहुत दक्ष और पटु लेखनकी अपेक्षा है।

नाटक-प्रदर्शनोंके अतिरिक्त नाट्य-महोत्सवका महत्त्वपूर्ण अंग वे गोष्ठियाँ थीं जो नाटक-सम्बन्धी विविध समस्याओंपर विचारार्थ आयोजित थीं···। पहली गोष्ठी 'अन्धा-युग'के प्रदर्शनके बाद, दूसरी गोष्ठी 'राजा ईडिपस'के प्रदर्शनके पश्चात् और तीसरी 'छपते-छपते'के बाद हुई। यदि सारे नाटक-प्रदर्शन गोष्ठियोंसे पहले हो जाते तो सम्भवतया गोष्ठियोंमें अधिक सजीवता आती और नाटककी समस्याओंकी चर्चा अधिक व्यावहारिक धरातलपर हो पाती। प्रदर्शनोंसे अवकाश पानेपर जो एक-दो छोटी-छोटी गोष्ठियाँ जुटीं, उनमें इस प्रकारकी चर्चाएँ हुईं भी और वे बहुत लाभप्रद रहीं।

'नाटककारकी समस्या'पर आधारित संगोष्ठीमें नाटककारों और विद्वानोंने नाटक-लेखनके प्रति जो अपने-अपने दृष्टिकोण रखे, वे अत्यन्त विचारोत्तेजक, मनोरंजक और विकासवादी थे। कई रोचक और चर्चित सुझावोंसे एक बात स्पष्ट हुई कि भविष्यमें नाटकलेखनकी प्रगतिके लिए आवश्यक है कि पुरातन भारतीय संस्कृति (नाटकके सन्दर्भमें भी) तो अवचेतन रूपसे सच्चे नाटककारमें स्वाभाविक रूपसे वर्तमान रहती है, इसलिए उसी नींवपर समसामयिक मूल्यों और विचारोंकी प्रतिष्ठा करना नाटककारका धर्म है। युग-चेतनाके अनुरूप नाटककी विषयवस्तु, शैली और भाषाको भी परिमार्जित करना सफल नाटक-लेखनका अनिवार्य अंग है। सफल नाटक-रचना वही है जिसका स्तर और मूल्य केवल तात्कालिक मनोरंजन और प्रभावोत्पादकतासे परे हो और जिसमें नाटकके वे तत्त्व विद्यमान हों जो शेक्सपीयर, चेखव, कालिदास, बरनार्ड शॉ, इब्सन आदि विश्वविख्यात नाटककारोंकी रचनामें पाये जाते हैं। वे नाटक साहित्यकी दृष्टिसे उच्च स्तरके हैं, वे शिक्षित और अशिक्षित सब प्रकारकी जनतामें अधिकाधिक लोकप्रिय हुए हैं, वे विश्वकी किसी भी भाषामें, किसी भी देशमें, प्रत्येक युग और कालमें खेले जाते रहे हैं और खेले जाते रहेंगे।····इन नाटकोंने जीवनके मौलिक संवेगोंके बहुरंगी चित्रणको साहित्यिक और दार्शनिक भाषामें व्यक्त करनेपर ही जनप्रियता पूर्ण रूपसे प्राप्त की।

यह माना जा सकता है कि हिन्दीमें सब प्रकारके मौलिक उपलब्ध नाटकोंकी कमी है और प्रारम्भमें जनता इनको बहुत चावसे भी देखेगी, किन्तु 'प्रसाद'की 'ध्रुवस्वामिनी', जगदीशचन्द्र माथुरका 'कोणार्क', धर्मवीर भारतीका 'अन्धा-युग' और 'नीली झील', मोहन राकेशका 'आषाढ़का एक दिन' और 'लहरोंके राजहंस', लक्ष्मीनारायण लालका 'मादा कैक्टस' तथा और भी ऐसे नाटक हैं जो साहित्यिक सुरुचिकी रक्षा करते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवनकी मूल-भूत समस्याओं और संवेगोंका विश्लेषण करते हैं। यदि ये नाटक कुशल अभिनेताओं-द्वारा बार-बार अभिनीत किये जायें और हल्के-फुलके घटिया नाटकोंको प्रश्रय न दिया जाये तो नाटक-दर्शक और जनताकी रुचि स्वयं ही परिष्कृत होती जायेगी और उनमें अच्छे स्तरके नाटकोंके देखनेकी रुचि और ग्रहणशीलता विकसित होगी।....यह आवश्यक नहीं कि हास्य-व्यंग्यके मनोरंजक नाटक भाषाकी दृष्टिसे नितान्त असाहित्यिक और सपाट हों, तथा भाव-विचारकी दृष्टिसे छिछले और खोखले हों या अभिव्यक्तिमें बिलकुल भोंडे और फूहड़ हों, तब ही वे जनप्रिय हो सकते हैं। नाटकीय व्यंग्य-हास्य और हल्के-फुलकेपनमें भी कला-सौन्दर्य और भाषाके सहज लालित्यका समावेश हो सकता है।

निर्देशकोंकी गोष्ठी श्री अलकाज़ीकी अध्यक्षतामें हुई। बलराज साहनी, सत्यदेव दुबे, लक्ष्मीनारायण लाल, श्यामानन्द जालान, पृथ्वीराज कपूर और सुख्याति-प्राप्त शम्भू मित्र-जैसे निर्देशन-क्षेत्रके अनुभवी प्रयोगवादी और सक्रिय व्यक्तियोंने अपने-अपने विचार सामने रखे। निर्देशककी राहमें आती कठिनाइयोंकी चर्चा की और समाधानोंकी खोजका सिलसिला किया। किन्तु बहुत-सी लाभदायक उपलब्धियोंके बाद भी यह प्रतीति बनी रही कि नाटकके व्यावहारिक पक्षोंको क्रियान्वित करनेवाले व्यक्तियोंकी गोष्ठीमें भी वही हुआ जो नाटकके सैद्धान्तिक पक्षोंपर विचार-विनिमय करनेवाले लेखकों या आलोचकोंकी गोष्ठी-में हुआ। यदि ये निर्देशक किन्हीं विवादास्पद सफल या असफल नाटकोंके प्रस्तुतीकरणको दृष्टिमें रखकर अपने वैयक्तिक प्रयोगों, कठिनाइयों और प्रतिक्रियाओंको प्रकाशमें लाते तो निर्देशन और प्रस्तुतीकरण-सम्बन्धी कुछ व्यावहारिक निष्कर्ष सामने आते।

नाटक-दर्शक-आलोचक परिसंवादने अपना नियत कार्यक्रम पूरा किया। विद्वानों और आलोचकोंके विचारोंसे परिचय हुआ।.... परन्तु दर्शक ?....दर्शकोंकी ओरसे भी कुछ प्रतिनिधि अपने विचार प्रकट करते तो यह महत्त्वपूर्ण अंश भी अपना कर्त्तव्य पूरा करता।

नाट्य-महोत्सव-आयोजनने नाटकके क्षेत्रमें एक उत्साह-भरा पग बढ़ाया है। इस क़दमके रास्तेमें चिराग़ जलते रहें तो मंज़िल सदैव सामने रहेगी और उस तक पहुँचनेका सतत प्रयत्न भी।

—कुन्था जैन
(कलकत्ता)

लेखक और शासकीय पाबन्दी : ज्ञानोदयकी पहल

● इस अंकमें देवेन और मध्यप्रदेश सरकारके सम्बन्धमें सामग्री छापकर दो उत्कृष्ट कार्य किये हैं। सरकारी आदेशपर प्रभाकरजीसे लिखवाया यह और भी अच्छा किया।

—कमलेश्वर
नयी दिल्ली

● जनवरी अंकमें प्रभाकरजीकी टिप्पणी पढ़ी। यह विषय हमलोगोंको भी 'एजीटेट' कर रहा था। इस सम्बन्धमें मुझे सूचित यह करना है कि मुख्य मन्त्री पं० द्वारकाप्रसाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिश्रसे इस सम्बन्धमें मेरी चर्चा हुई थी और इस हुक्मकी पृष्ठभूमि बताते हुए कहा था कि इसे वापस ले लेना चाहिए। उन्होंने इस सम्बन्धमें जाँच करके उचित कार्यवाही करनेका आश्वासन दिया था। उनकी ओरसे मुझे जो मौखिक जानकारी मिली है वह यह है कि मुख्यमन्त्री उस आदेशको वापस करनेके लिए सहमत हैं। लेकिन जो सामान्य नियम शासकीय कर्मचारियोंके सम्बन्धमें हैं वे लेखक कर्मचारियोंपर भी लागू होंगे। मुझे विश्वास है कि वह आदेश जल्दी ही उठ जायेगा।

—हरिशंकर परसाई
जबलपुर

● प्रकाशन-विभागपर टिप्पणी प्रकाशित करनेका जो सराहनीय कार्य किया है उसके लिए बधाई। यहाँ उसकी काफ़ी सरगरमी है।

—हरिकृष्ण देवसरे
भोपाल

● यह पाबन्दी प्रायः सर्वत्र है कि बहुत कुछ जो बड़े-बड़े पत्रोंमें (विशेषकर दैनिक पत्रोंमें) सम्पादकके नामसे निकलता है वह अधिकांश छोटे-छोटे अन्य कर्मचारियों और सह-सम्पादकोंकी लेखनी और मस्तिष्ककी देन होती है।

राक्षसी पाबन्दीका एक दूसरा रूप है जिसकी ओर प्रभाकरजीका ध्यान नहीं गया है। सरकारी और ग़ैरसरकारी रूपसे अनेक बड़े-बड़े अनुसन्धान-संस्थान व्यवस्थित हैं। इसमें एक निर्देशकके अन्तर्गत कई छोटे-बड़े अनुसन्धानकर्ता होते हैं। इन संस्थानोंसे बहुधा अनुसन्धान-रिपोर्टके प्रपत्र निर्देशकके नामसे निकला करते हैं जबकि स्थिति यह है कि निर्देशकको वर्षमें शायद ही कुछ दिन अनुसन्धानसे सम्बन्धित कार्योंको देखनेकी फ़ुरसत मिल पाती हो। यदि अनुसन्धानकर्त्रियोंका फल उन्हींके नामसे प्रकाशित हो, उनकी लिखी रिपोर्टोंमें उन्हींके नाम लेखकके स्थानपर हों, तो स्वाभाविक है कि उन्हें अधिक उत्साह मिलेगा। उनके काम और लेखनका स्तर ऊँचा होगा। इन संस्थानोंमें लगी धनराशिका अधिक उपयोग होगा। साथ ही अधिकारी और अनुसन्धानकर्ताओंके बीच और अच्छे सम्बन्ध होंगे।—रमेशचन्द्र द्विवेदी
गोरखपुर

शोकगीत : एक प्रतिक्रिया

● ज्ञानोदयके नये अंकमें टी० एस० इलियटपर स्मरणांजलि। उधर, इलियटसे प्रभावित नयी पीढ़ीके रचनाकारोंमें नईमका उल्लेख। नईम दमोहके हैं। मैं उनसे थोड़ा रूपसे परिचित हूँ : उनका सम्पूर्ण कृतित्व भी पढ़ा है। मुझे उनमें इलियट-पन कहीं दिखाई नहीं देता! एक तो वैसे ही नयी पीढ़ीका मूल्यांकन उलझन बना जा रहा है, वैसेमें यह अभिमत प्रश्नको और उलझानेवाला।

—दिनकर सोनवलकर
रतलाम

(नईमका नाम ६०-७०के कवियोंमें गिनाया गया है इसलिए कि वे 'इलियटकी व्यक्तित्वहीनताके प्रभावको रोशनदान जैसा समझते हैं, सूरज नहीं।' इलियट-पनके सिलेमें तो किसीका नाम आया नहीं।—सं०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स मी क्षा

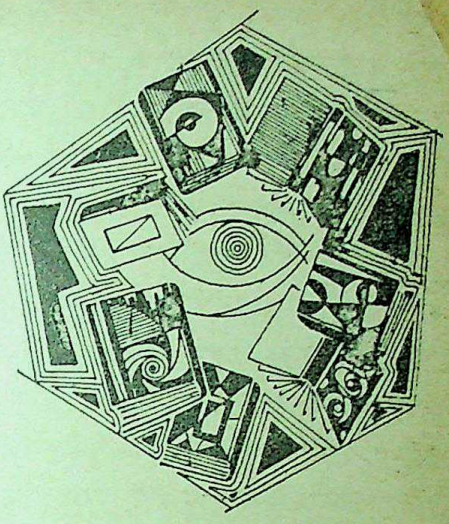

लौटती लहरोंकी बाँसुरी

मानव-मन बड़ा विचित्र है। कभी तो ज़रासे कठोर आघातको भी पाषाण बन झेल जाता है और कभी फूल-सी घटनासे ही हिलने उठता है – उसके पुराने घाव हरे हो जाते हैं, दबी चोटें कसक उठती हैं और उनसे सम्बन्धित सभी घटनाएँ एक-एक करके चलचित्रकी भाँति स्मृति-पटपर उभरने लगती हैं।

यही होता है 'लौटती लहरोंकी बाँसुरी'* के नायक अशोकके साथ। उस-जैसे ऊँचे ओहदेदार और प्रौढ़ व्यक्तिके लिए किसीको फ़ोन करनेमें क्या हिचक हो सकती है? दफ़्तरमें उसकी मेज़पर एक छोड़ तीन फ़ोन हैं, घरपर जो है वह अलग। दिनमें वह बीसियों बार फ़ोन करता है। पर अमिताको फ़ोन करनेकी सोचते ही उसका पसीना छूटने लगता है। चोंगा उठा, डायलमें उँगली डाल-कर घुमाता है तो उसका हाथ बेतहाशा काँप उठता है। आज वह एकाएक इतना अस्थिर क्यों हो गया है? यों अपना सन्तुलन क्यों खो रहा है? इसलिए कि वह जानता है, अमिता उसके निकट नारी-भर नहीं, अतीत-की संवेदनाओंका, सफलताओं और विफल-ताओंका – बल्कि विफलताओंका ही –

* लेखक : श्री भारतभूषण अग्रवाल; प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली; पृष्ठ : एक सौ चौंसठ; मूल्य : तीन रुपये पचास पैसे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतीक है। उसे पता है कि अमिताका स्वर उसके कानोंमें पड़ा नहीं कि वह वर्तमानकी धरतीसे लुढ़ककर अतीतके गर्तमें खो जायेगा और असह्य यातनाएँ भोगने लगेगा। इतना सहनेकी शक्ति अब उसमें न रही थी।

आख़िर अमिताका नम्बर मिल ही गया और अशोकके कानोंमें उसका स्वर गूँज उठा। वही हुआ जिसका उसे डर था। फ़ोन कर चुकनेके बाद उसे ध्यान आया कि अमिता उसे लेने आ रही है – वही अमिता जो···अधलेटा सोचता-सोचता वह वर्तमानसे कटकर अतीतसे जा जुड़ा और एक-एक करके अतीतकी घटनाएँ उसकी स्मृतिमें उभरने लगीं।···अमिताने उसके घर आकर उसका कमरा देखनेका वायदा किया, पर अमिताकी माँ और बाबाने उन दोनोंकी एक न चलने दी। उसने वर्षों प्रतीक्षा की पर अमिता एक बार भी उसके यहाँ न आ सकी···होलीका दिन और अमिताके घरका बाथरूम, अमिताने पीछेसे आकर उसके मुँहपर रंग मल दिया, छीना-झपटीमें उसका हाथ अमिताके कहाँ जा पड़ा जो दोनों स्तब्ध रह गये, क्षण-भरमें यह सब हो गया, अमिता बाहर भाग गयी और फिर पहलेकी तरह चहकने लगी मानो कुछ हुआ ही न हो···कालिज-कम्पाउण्डमें बाबाको टेनिस खेलते देख वह प्रायः रोज़ अमिताके घरकी ओर साइकिल मोड़ देता और चोरोंकी तरह उससे मिलता, आदि-आदि।

इस प्रकार अशोककी अनेक स्मृतियोंके सहारे अमितासे उसके मिलन और विछोहकी कहानी चल पड़ता है। चलचित्रके उभरता अतीत उसके लिए वर्तमान हो है और वह उल्लासकी लहरोंपर और वेदनाके विवर्तमें डूबता अतीतको तीव्रताके साथ भोगने लगता है। इन चलचित्रोंमें कोई क्रम नहीं; कालक्रम बिलकुल नहीं। बस, जिस घटनाका सबसे अधिक और तीव्र प्रभाव पड़ा था, सबसे पहले उभर आयी है—कालक्रमसे भले ही बहुत बादकी रही हो। मनुष्यके वर्तमान समस्याओंका वास्तविक जाननेके लिए उसके अतीतकी स्मृतियोंके विश्लेषण प्रसिद्ध मनोविज्ञानी डॉ० एडलर 'व्यक्ति-मनोविज्ञान' (इंडिविजुअल साइकालाजी) की प्रमुख खोज है जिसका सांगोपांग उपयोग इस उपन्यासमें किया गया है। एडलरका विश्वास है कि मनुष्यकी अतीतकी स्मृतियोंका उसकी वर्तमान क्रिया-प्रतिक्रियाओंसे घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। जीवनमें अनेक सुखद-दुःखद घटनाएँ होती रहती हैं। उनकी तनकी गहराइयोंमें-से चेतनमें उभर आती इन स्मृतियोंका ठीक-ठीक विश्लेषण किया जा सके तो व्यक्तिकी वर्तमान मानसिक गुत्थियोंका वास्तविक स्वरूप और उनके कारण समझा जा सकता है।

संस्मृतियोंके सहारे अतीतके विश्लेषण द्वारा वर्तमानकी व्याख्या—यह टेकनीक 'शेखर : एक जीवनी' में अज्ञेयने भी नायी है। घनीभूत वेदनाकी एक रात फाँसीकी कोठरीमें अकेला बैठा घोर कारी शेखर—जो यह जाननेके लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो उठा है कि वह जो कुछ है, जैसा है, वैसा वह क्यों और कैसे हुआ। यही स्थिति 'लौटती लहरोंकी बाँसुरी' के अशोककी है। अमिताको लेकर उसमें एक अटक है, एक ग्रन्थि है जिसके विश्लेषणसे अन्ततः उसपर यह बात खुल जाती है कि अमिताके प्रति उसके मनमें आरम्भसे ही एक अपराध-भावना बैठी हुई है जिसे जन्म दिया था उसके अपने संस्कारोंने और उद्दीप्त किया था बाबाकी सांसारिकताने। पर बीस वर्षसे पलती चली आयी यह अपराध-भावना अमिताकी आत्मीयता-भरी अनौपचारिकता-की बाढ़में बह गयी। कुछ कसर रही भी थी तो उसकी पूर्ति अमिताके पतिने यह समाचार देकर कर दी कि अमिताकी छोटी बहन मीनाने घरसे भागकर प्रेम-विवाह कर लिया था जिसका आघात न सह सकनेके कारण बाबाकी मृत्यु हो गयी। बाबाके प्रति सहानुभूति उमड़ आनेपर भी अवचेतनमें अशोक सन्तुष्ट ही हुआ था, मानो मीनाने बाबासे उसका बदला ले लिया हो। पाठकको संकेत करके उपन्यास यहीं समाप्त हो जाता है।

टेकनीककी समानताके बावजूद इस उपन्यासमें 'शेखर : एक जीवनी' की गहराइयाँ भी शायद न मिलें पर इसका उपन्यासत्व निश्चय ही पुष्ट है। लेखकका पहला उपन्यास होते हुए भी इसमें पकड़ है, प्रवाह है। पाठक कहीं अटकता नहीं, कहीं ऊबता नहीं। बीच-बीचमें आये चुस्त संवाद इसे और भी रोचक बना देते हैं। अशोकके भीतरकी घनीभूत पीड़ा पाठकके मन और प्राणमें बसती चली जाती है और उसीमें खोया वह उपन्यासके अन्त तक पहुँच जाता है, जहाँ सहसा अमिता उसे उबार लेती है—वह अमिता जो अपने सुनहले सपनोंके खण्डहरपर खड़ी मुसकरा रही है—और वह चाहने लगता है कि अशोकको यहीं अलविदा कह, लेखक अगले उपन्यासमें अमितापर ही अपना कैमरा फोक्स करे।

—रणवीर रांग्रा

■

स्वाधीनता-प्राप्तिके बाद, पिछले १७ वर्षोंमें सभी भारतीय भाषाओंके बारेमें-हिन्दीकी पत्र-पत्रिकाओंमें अकसर लेख छपते रहे हैं। कई विश्वविद्यालयोंमें हिन्दी और दूसरी भारतीय भाषाओं और साहित्य-सम्बन्धी तुलनात्मक अध्ययन हो रहा है। काफ़ी साल हुए, तेलुगु-साहित्यके बारेमें एक छोटी-सी पुस्तक प्रकाशित हुई थी। इधर हालमें दक्षिणमें भारतीय साहित्योंके पारस्परिक आदान-प्रदान और अध्ययनके बारेमें काफ़ी सराहनीय कार्य हो रहा है।

हिन्दी पाठकोंको श्री बालशौरि रेड्डीका नाम परिचित ही है क्योंकि इधर अनेक वर्षों-से आप हिन्दीकी अनेक पत्र-पत्रिकाओंमें तेलुगु साहित्य-सम्बन्धी लेख लिख रहे हैं। कुछ महीनों पूर्व श्री बाल शौरि रेड्डीजीने 'तेलुगु साहित्यका इतिहास'* लिखकर सरा-

* [हिन्दी समिति ग्रन्थमालाका ९० वाँ पुष्प, सूचना विभाग; लखनऊ, उ० प्र० द्वारा प्रकाशित, मूल्य ६ रु०, पृ० संख्या ३३१।]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हनीय कार्य किया है। सराहनीय शब्दका प्रयोग मैं विशेष रूपसे कर रही हूँ क्योंकि कुछ वर्षों पूर्व तक तेलुगु-साहित्यके इतिहासके बारेमें इनी-गिनी और अधूरी या त्रुटिपूर्ण पुस्तकें ही प्राप्त थीं। पर अब स्थिति बदल गयी है। अब न केवल विवेचनात्मक और सांस्कृतिक इतिहास मिलते हैं, बल्कि 'विज्ञान सर्वस्वम्' शीर्षकसे विश्वकोष भी तैयार हो रहा है और अबतक इसके सात भाग प्रकाशित हो चुके हैं।

प्रस्तुत पुस्तकमें रेड्डीजीने परम्परागत साहित्यकारोंकी ही शैलीमें तेलुगु-भाषा और साहित्यका काल-विभाजन किया है—(अज्ञात युग, भाषान्तरीकरण युग या कवित्रय युग, सन्धियुग या श्रीनाथ युग, प्रबन्ध युग या रायल युग, अर्वाचीन युग या संक्रान्ति युग, आधुनिक युग या नवीन युग।) साथ ही रामचन्द्र शुक्लजीकी शैलीमें इन काल-विभाजनोंका सर्वमान्य समय भी दिया है। पृष्ठ-संख्या ३१ में ११ तेलुगु शब्दोंका तमिल, कन्नड, मलयालम और हिन्दी पर्याय देकर संकेत किया है कि भावी भाषाशास्त्र-सम्बन्धी अनुसन्धान करनेवाले इस दिशामें अधिक सामग्री प्रदान कर सकेंगे। संस्कृत प्रधान होनेपर भी तेलुगु भाषामें प्राकृतके कई शब्द रूपान्तरित होकर आ गये हैं। उदाहरणार्थ:

प्राकृत	तेलुगु
वत्तिका	वत्ति
धाय	गायमु
कतरी	कत्तिरि
मूषा	मोसमु आदि

तेलुगु-साहित्यका इतिहास लिखते समय यदि श्री बालशौरि रेड्डीजीने अध्ययनके लिए उपयुक्त आधार-ग्रन्थोंकी नामावली देकर और आवश्यक स्थलोंपर उद्धरणोंसे इसे संवारा होता तो उनकी संस्कृत-मार्जित, पुनकी भाषाशैली और प्रस्तुतीकरणमें अधिक वजन आता। इसके अलावा यह पुस्तक हिन्दी पाठकों और तुलनात्मक अध्ययन करनेवाले विद्यार्थियोंके लिए अधिक उपयोगी होती और अधिकृत सामग्री प्रस्तुत कर सकती। बात यों है कि इधर कुछ अहिन्दी-भाषी लेखकोंने मूल ग्रन्थोंके पन्नोंपर पन्नोंका शब्दशः हिन्दीमें अनुवाद करनेकी प्रथा-सी चल पड़ी है। ऐसी अवस्थामें दूसरी भाषाके पाठकोंके सामने अपनी भाषाके बारेमें लिखते समय लेखकपर एक बड़ी भारी जिम्मेदारी हो जाती है कि अत्यधिक ईमानदारीके साथ एक भाषाकी बातें दूसरी भाषावालोंके सामने सोदाहरण और साधार प्रस्तुत करनेका यथासम्भव प्रयत्न करें वरना दूसरी भाषावाले अपनी अनभिज्ञताके कारण हर लिखित शब्दको स्वीकार लेते हैं—ऐसी ईमानदारी ही समन्वित भारतीय भाषाका स्वरूप स्थिर करनेमें सहायक होगी।

आकर्षक गेटअप और व्यवस्थित रूपसे छपी डेमी साईजकी यह पुस्तक इण्टरमीडिएट स्तरके विद्यार्थियोंके लिए पर्याप्त सामग्री प्रदान करती है।

इसके मुक़ाबलेमें श्री सुन्दर रेड्डीकी केवल १८४ पृष्ठोंकी 'हिन्दी और तेलुगु':

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलनात्मक अध्ययन* पुस्तक, काफ़ी वजनदार साबित होती है। 'अपनी बात' में लेखकने हिन्दी और तेलुगुके आधार-ग्रन्थों तथा सहायता प्रदान करनेवाले हिन्दी और तेलुगु भाषाके विद्वानोंका उल्लेख किया है। इस अध्ययनमें श्री सुन्दर रेड्डीजीने कहीं-कहीं तो हिन्दी, तेलुगु और अंगरेजी साहित्यकी कई समानान्तर बातें भी बतलायी हैं।

प्रस्तुत विवेचनमें श्री सुन्दर रेड्डीजीके निम्नलिखित अध्याय बड़े ही मौलिक हैं: १ सुरदास, पोतन्ना और त्यागराजु, २ तुलसीदास और पोतन्ना, ३ तुलसीदास और त्यागराजु, ४ मीरा–मोल्ल, ५ शतक साहित्य और सतसई परम्परा, ६ आधुनिक तेलुगु और हिन्दी काव्यधाराकी प्रमुख प्रवृत्तियाँ। –इन अध्यायोंमें सुन्दर रेड्डीजीने दोनों साहित्योंकी समान-असमान बातोंका स्पष्ट चित्र प्रस्तुत किया है। अपेक्षाकृत सरल, और प्रवाहपूर्ण शैलीमें इस छोटी तथा सुरुचिपूर्ण रोचकवाली पुस्तकके माध्यमसे सुन्दर रेड्डी-ने तुलनात्मक अध्ययनका आकर्षक स्तर प्रस्तुत किया है।

आजकी वर्तमान परिस्थितिमें जब हम देशके सामाजिक और सांस्कृतिक समन्वयी-करणकी बातें करते हैं तो विभिन्न भाषा-साहित्योंके पारस्परिक परिचयके लिए ऐसे अध्ययनोंके प्रयासोंकी अत्यन्त आवश्यकता है। समीक्षात्मक और स्पष्टताकी कसौटीपर कसा हुआ हर लिखित प्रयास, साहित्य व संस्कृतिके समन्वय-स्थापनमें बहुत मदद करेगा।

यहाँ एक बात और देखनेमें आती है कि साहित्योंका पारस्परिक परिचय बहुत एक-तरफ़ा होता जा रहा है। आशा है कि भविष्यमें यह कमी दूर होकर अधिकाधिक अहिन्दीभाषी लेखक हिन्दीमें और उसी अनुपातमें हिन्दीभाषी अहिन्दी भाषाओंमें लिखकर अपने-अपने साहित्यके बारेमें सही और ज्ञानवर्धक सामग्री रोचक ढंगसे प्रस्तुत करेंगे। इससे किसी एक भाषाकी तानाशाही करनेकी बात भी धीरे-धीरे दूर की जा सकेगी।

–हेमलता आंजनेयुलु

■

आजके इस अतिशय शिल्पबहुल युगमें शिल्पके प्रति बहुत कुछ एक उदासीन भाव अमरकान्तके लेखनको सहजता तो देता ही है, एक अतिरिक्त मौलिकतासे भी सम्पन्न करता है जैसे बहुतोंके बीच होकर भी अमरकान्त उनसे अलग कुछ हैं; और इस अलग होनेका अहसास उन्हें नहीं है शायद इसीलिए उनकी सहजता बनी रह सकी है।

'सूखा पत्ता'के बाद 'कटीली राहके फूल'* उनका नया लघु उपन्यास है। उपन्यास हमारे युगके युवकों-युवतियोंकी भावनाओं-कुण्ठाओं-का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अनूप विश्व-विद्यालयमें प्रथम वर्षका छात्र है जो उन

* लेखक: श्री सुन्दर रेड्डी [चन्द्रिका प्रकाशन, कालेर, आन्ध्र प्रदेश, १९६१, मूल्य ४.००, पृ०-संख्या १८४।]

* लेखक: अमरकान्त; प्रकाशक: राजकमल प्रकाशन (प्रा०) लि०, दिल्ली; पृष्ठ-संख्या: १५२; मूल्य ४.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महत्त्वपूर्ण हिन्दी प्रकाशन

	रु० पै०	प्रत्येक
सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय खण्ड १ व २ कपड़े की जिल्द	५.५०	,,
कागजकी जिल्द	३.००	,,
खण्ड ३ से १० कागजकी जिल्द	७.५०	,,
रूसी-हिन्दी शब्दकोष (संकलन—वीर राजेन्द्र ऋषि)	३५.००	
भारतमें अँगरेज़ी राज (लेखक—सुन्दरलाल) दो खण्डोंमें		
कपड़ेकी जिल्द	२०.००	सेट
कागजकी जिल्द	१६.००	सेट
भारतके पक्षी (लेखक—राजेश्वर प्रसाद नारायण सिंह)	१२.५०	
महात्मा गांधी (चित्रावली)	१०.००	
नवीन भारतका स्वरूप (चित्रावली)	७.५०	
तीसरी पंचवर्षीय योजना	७.५०	
सरल साज-सामानसे वैज्ञानिक प्रयोग (विज्ञान शिक्षणके लिए यूनेस्कोका आकर-ग्रन्थ)	६.००	
उथल-पुथलका युग (लेखक—डॉ० गोविन्ददास)	३.००	
जवाहरलाल नेहरू—श्रद्धांजलि	१.५०	
आज़ादीके सत्रह कदम (जवाहरलाल नेहरूके स्वतन्त्रता-दिवस भाषणोंका संकलन)	१.००	

रजिस्ट्रेशन व्यय—५५ पैसे, डाक व्यय १२॥ प्रतिशत अतिरिक्त,
२५ रुपयेसे अधिककी पुस्तकें लेनेपर डाक-व्यय नहीं लगेगा।

प्रकाशन विभाग

भारत सरकार

पोस्ट बॉक्स २०११

ओल्ड सेक्रेटेरियट, दिल्ली-६

DA 64/601

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत-से युवकोंमें-से एक है जो प्रतिवर्ष हजारोंकी तादादमें आसपासके शहरों और गाँवोंसे विश्वविद्यालय और अपेक्षाकृत एक बड़े शहरके वातावरणमें आते हैं। खिड़की फाँदकर कक्षासे उड़ जाना और लड़कियोंके रिक्शोंके पीछे लगकर चलना उसने भी शुरू कर दिया है। धीरेन्द्र उसका मित्र है जो महज एक माध्यम बनकर रह जाता है क्योंकि कामिनीको अनूपसे मिलाकर जैसे वह फिर कोई अर्थ ही नहीं रखता। कामिनी और मधु, दो युवतियाँ एक-दूसरेके समानान्तर ही अनूपके जीवनमें आती हैं और जैसे दोनों एक-दूसरेके चरित्र-उद्घाटनके लिए विरोधकी एक महत्त्वपूर्ण पृष्ठभूमि प्रस्तुत करती हैं। कामिनी गम्भीर और दायित्व-सम्पन्न युवती है, जिसकी असाधारण गम्भीरताका कवच उसे किसी हद तक रहस्यमय बनाता है। मध्यम परिवारमें पली एक युवती है जो अपनी नाकके आगे भी अपनेको ही देखती है। उसकी अपनी निजी इच्छाओं-अनिच्छाओंका महत्त्व ही उसके आगे सबसे अधिक है। लगता है जैसे उसके अन्दरकी मीडिया हर क्षण चैतन्य और सजग है। यही कारण है कि अनूपके कमरेमें कामिनीको देखकर वह अपना सन्तुलन खो बैठती है और उसकी आँखोंमें प्रतिहिंसाके डोरे कढ़ने लगते हैं, वह कामिनीको अपमानित करनेके लिए ही अनूपके प्रति अपनी घनिष्टताका प्रदर्शन करती है। लेकिन अनूप अधिक बहकता नहीं। एक झटकेसे ही जैसे वह मधुकी गुंजलक तोड़ देता है और मधुकी गुंजलक ही नहीं टूटती है, कामिनीके अभेद्य रहस्यकी दीवार भी टूटती है। वैसे कामिनी उसकी ही है और उसीकी रही है, उसकी सारी शंकाओंके बावजूद। कामिनी स्वीकारती है: "मैं जानती हूँ कि तुम्हारे बिना मेरे जीवनका कोई महत्त्व नहीं। मैं तुम्हारी सहजताको प्यार करती हूँ। तुममें किसी क़िस्मका ढोंग नहीं, तुम प्रदर्शन नहीं करते····तुम मेरे सम्मानकी रक्षा कर सकते हो····· तुम मेरे लिए संघर्ष कर सकते हो।" अनूपको लेकर कामिनीका यह मूल्यांकन कई कारणोंसे महत्त्वपूर्ण है। एक तो इसलिए कि इससे कामिनीकी समझ और अन्तर्दृष्टि स्पष्ट होती है। दूसरे इससे उपन्यासको, अनूपके माध्यमसे, आस्थाका एक ऐसा धरातल मिलता है जो उच्छृंखलता और विघटनके बीच निर्माणके महत्त्वपूर्ण संकेत लिये है। वैसे पात्रोंको लेकर उनके विरोधमें यह अवश्य कहा जा सकता है कि वे सबके सब—अनूप, कामिनी और मधु—आरोपित मनोविश्लेषणकी प्रवृत्तिसे ग्रस्त हैं। स्थान-स्थानपर वे अपने सम्बन्धोंका ही नहीं प्रवृत्तियों और उनके आधारभूत कारणोंका भी पुंखानुपुंख विश्लेषण करते चलते हैं और यह आरोपित और कृत्रिम विश्लेषण उनकी अपनी निजी सहजताको भी प्रभावित करता है।

उपन्यासके शीर्षकका एक दोहरा अर्थ है। उसका प्रयोग कामिनीकी आस्था और अन्तर्दृष्टिके आलोकको लेकर तो हुआ ही है परन्तु इसी नामकी संस्थाका सन्दर्भ भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे एक अर्थवत्ता देता है। यहींसे लेखककी दृष्टि एकसे अनेककी ओर, व्यक्तिसे वर्ग और राष्ट्रकी ओर मुड़ती है। जब अनूप कामिनी-के साथ 'कटीली राहके फूल' नामक संस्था-की सभामें पहली बार जाता है तो अंजनी कुमार उक्त संस्थाके नामका अर्थ और उद्देश्य समझाता हुआ कहता है:—"'कटीली राह'—हमारा परिश्रम, हमारी कर्मठता और ज्ञानके अन्वेषणकी हमारी आकांक्षा—उसीमें हम खिल सकते हैं फूलकी तरह। एक बातपर हम जोर देते हैं कि हर आदमीको समझना चाहिए कि वह साधारण मानव है, किसीसे बड़ा नहीं और अगर उसमें कोई गुण है तो वह समाजकी धरोहर है!"...यह ठीक है कि संस्थाका कार्य और उसको पूर्ण करनेकी प्रणाली बहुत हद तक अव्यावहारिक है। अनूप स्वयं भी उसे लेकर यह एतराज रखता है और वह संस्था कुछ प्रतिक्रियावादी ताक़तोंकी मामूली-सी चोट भी सहार नहीं पाती है लेकिन यह भी उस समाजको लेकर एक व्यंग्य है जहाँ कोई भी कार्य करनेके लिए साधन और सुविधाएँ नहीं हैं क्योंकि हर स्थानपर कुछ-न-कुछ अवांछित तत्व घुस ही आता है। लेकिन एक सामाजिक सन्दर्भसे जुड़ा होना ही लेखकके लिए एक बड़ी उपलब्धि है और यह सामाजिक सन्दर्भ ही अमरकान्तके लेखनका सबसे महत्वपूर्ण पहलू है।

—मधुरेश

राजपाल एण्ड सन्ज़
द्वारा प्रकाशित -

संसारके महान् उपन्यास :

सं० रांगेय राघव १०.००
चाँदीका घाव : कृश्नचन्दर ४.५०
एक गधा नेफ़ामें : ,, ३.५०
जागरण : मन्मथनाथ गुप्त ३.५०
प्रतिशोध : नानकसिंह ३.५०
एक रहस्य एक सत्य : नानकसिंह २.००
एक म्यान दो तलवारें : ,, ५.००
लौटती लहरोंकी बाँसुरी : भारतभूषण अग्रवाल ३.००
डॉ० सदाशिव : वनफूल ३.००
नदी : विश्वम्भर मानव ३.००
टूटते बन्धन : भगवती प्रसाद वाजपेयी ४.००

कुछ नये उपन्यास

उग्रतारा : नागार्जुन २.५०
एक थी अनीता : अमृता प्रीतम ३.००
एक इञ्च मुसकान : राजेन्द्र यादव, मन्नू भण्डारी ६.००
प्रतिशोध : गुरुदत्त ४.००
निर्माण पथ : ,, ६.००
ये जाने अनजाने : छेदीलाल गुप्त ३.००
खिलती कली : मामा बरेरकर ३.५०
सात समुन्दर पार : मुल्कराज आनन्द ६.००
गाँव : ,, ५.५०
राधा : ताराशंकर बैनर्जी ४.००

राजपाल एण्ड सन्ज़
कश्मीरी गेट, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिष्ट स्वास्थ्यप्रद रुचिकर

तृप्तिपूर्ण भोजन के लिये
हनुमान वनस्पति व्यवहार कीजिये।

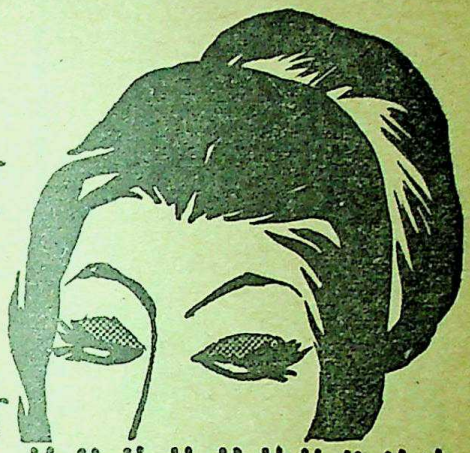

विटामिनों से परिपूर्ण हनुमान
वनसति सुरुचिपूर्ण एवम्
सुस्वादपूर्ण व्यंजन
बनाने में सहायक है।

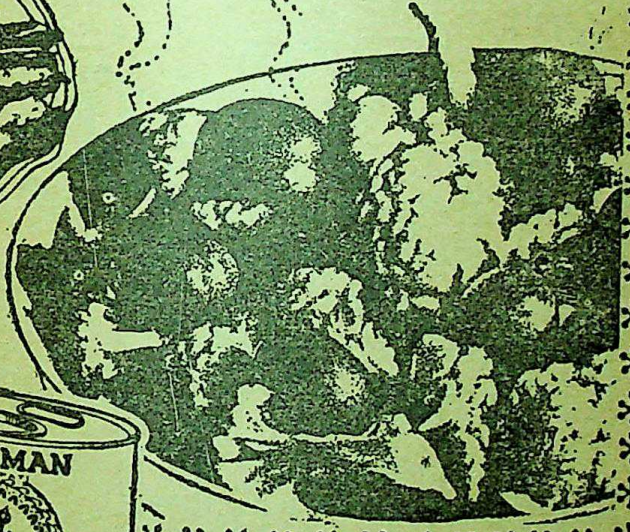

हमेशा हनुमान वनस्पति ही खरीदें

हनुमान

निर्माणकर्ता
रोहतास इन्डस्ट्रीज लिमिटेड
डालमियानगर (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुख और स्वास्थ्य के लिए

परिवार नियोजन कीजि

अपने परिवार को सीमित रखने के सम्बन्ध में मुफ्त सलाह और जानकारी के लिए अपने निकटतम

परिवार कल्याण नियोजन केन्द्र में जाइए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सांस्कृतिक ज
राष्ट्रीय ऐक्य

भारतीय भाष
मनोरंजनात्मक स
वर्षवर्ष एक ल
पुरस्कार योज

ज्ञानोदय

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांस्कृतिक जागरण, साहित्यिक विकास-उन्नयन और
राष्ट्रीय ऐक्य एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी साधिका

तथा

भारतीय भाषाओंकी सर्वोत्कृष्ट
मौलिक साहित्यिक कृतिपर
प्रतिवर्ष एक लाख रुपये
पुरस्कार योजना प्रवर्तिका

भारतीय ज्ञानपीठ

उद्देश्य

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध
और अप्रकाशित सामग्रीका
अनुसन्धान और प्रकाशन

तथा

लोक-हितकारी मौलिक
साहित्यका निर्माण

संस्थापक : श्री शान्तिप्रसाद जैन
अध्यक्षा : श्रीमती रमा जैन

प्रधान एवं सम्पादकीय कार्यालय : ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७
विक्रय केन्द्र : ३६२०/२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, दिल्ली-६
प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

मार्च १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने ढंगके अनूठे और अनमोल

भारतीय ज्ञानपीठ

के

अभिनव, महत्त्वपूर्ण एवं संग्रहणीय प्रकाशन

● **चौंसठ कविताएँ** : इन्दु जैन

न कहें कुछ और, पर भिन्न और विशेष इन कविताओंके परिचयमें अवश्य कहा जायेगा। यह इसलिए नहीं कि श्रेष्ठ कविताके निकषपर ये खरी उतरती हैं, बल्कि इसलिए कि ये हिन्दी कविताकी अधुनातन दिशा, भाव-बोध, और शिल्पकी प्रामाणिक उपलब्धिका संकेत देती हैं। और इसलिए भी कि सब प्रकारके उलझावोंसे ये मुक्त हैं और अपना अर्थ बड़ी सहजताके साथ स्वयं खोलती हैं।

सब चौंसठ कविताएँ हैं, पर प्रत्येक जैसे एक सौम्य बिजलीकी कौंधका निमित्त हो जो अन्दरकी अकुलाहटको, किसी दर्द या उल्लासको, सतरंगी प्रकाश-रेखाओंकी भाषामें उकेर जाये। अनुभूतियोंकी ऐसी अभिभूत करनेवाली अभिव्यक्ति इनमें हुई है कि क्षितिजपर क्षितिज सामने खुलते चले जाते हैं और भीतर एक गन्ध-भरी चाँदनी-सी छिटक पड़ती है। कविताओंकी पंक्ति-पंक्तिसे साक्ष्य मिलता है कि अन्तश्चेतना भी कितनी मुखर हो सकती है।

स्वभावतः इसके लिए उपयुक्त शब्दोंकी खोज-पकड़ की गयी है और परिचित शब्दोंको नयी चेतना, नयी भाव-ध्वनि दी गयी है। संग्रहकी अनेक-अनेक पंक्तियाँ नितान्त अछूती उपमाओंकी चूनर पाकर अपनेमें पूरी कविता बन गयी हैं। इन कविताओंमें दो-दो चार-चार शब्दोंके अनगिनत फ्रेमोंमें कहीं कोई भाव-चित्र टंगे हैं, कहीं समूची कविताका प्राण किसी एक रंगमें मुखर हो उठा है, और कहीं एक पूराका पूरा वातावरण ही रेखाओंमें बोल उठा है। 'चौंसठ कविताएँ' एक बहु-आयामी चेतना-मानसकी रचना है।

मूल्य ३.००

ज्ञानोदय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• **प्रतिनिधि रचनाएँ (मराठी)** : प्रो० ना० सी० फड़के

साहित्यको प्राणवत्ता और सार्थकता उन महान् प्रतिभाओंसे प्राप्त होती है जो अपनी सर्जनात्मक शक्तिको दो-चार असाधारण कृतियोंमें समो देते हैं। किन्तु शृंगार और शोभा उसे वे प्रदान करते हैं जिनकी प्रतिभा छोटी-सी डालीपर अनेक फूल होकर फूटती है। इनसे जैसे महासागरके उर्मिल विस्तारका बोध होता है, उनसे उसकी स्थिर गम्भीरताका। और महासागर नाम झुठला जाये यदि दोनोंमें-से कोई एक गुण न रहे।

प्रस्तुत रचना-संग्रह भी एक फूलडाली है। अनेक फूल, और एक ही डालीके, पर कई रंगके। रचनाओंकी यह विधा-विविधता संग्रहको एक अतिरिक्त आकर्षण और मूल्य दे देती है। पर इस फूलडालीकी सारी विशेषता इसमें नहीं कि एक समर्थ साहित्यकारकी प्रतिनिधि रचनाएँ सामने आयीं, विशेषता इसमें है कि अन्यान्य फूलडालियों-भरे आँगनमें इसका झुकना-झूमना संकेत बन जाता है कि कैसी-कैसी गन्धके फूल किधर लगे हैं। ये रचनाएँ एक और दृष्टिसे भी महत्त्वकी हैं। नया भाव-बोध और शिल्प इन्हें साहित्यके विकास-क्रममें एक स्थान देनेको बाध्य होगा और जो परम्परानिष्ठ हैं उन्हें इनकी मोहकता आगेको प्रेरित और प्रोत्साहित करेगी। प्रस्तुत हैं एक ही स्थानपर संगृहीत लेखककी स्वसंकलित चौदह प्रतिनिधि रचनाएँ : चार कहानियाँ, एक उपन्यास-अंश, एक एकांकिका, तीन ललित निबन्ध, एक शब्द-चित्र, दो यात्रा-वर्णन तथा दो वैचारिक निबन्ध (प्रबन्ध)।

मूल्य ४.५०

• **दर्शन-अनुचिन्तन** : म० म० गिरिधरशर्मा चतुर्वेदी

दर्शनोंका विषय-क्षेत्र ऐसा है कि सामान्य बुद्धिका मानव इधर देखता ही नहीं। जो विद्वान् और पण्डित हैं वे भी बहुतेरे इसे गहन कहते हुए कतराकर निकल जाते हैं। इस पृष्ठभूमिमें प्रस्तुत कृति सहज ही विशेष उपयोगी और महत्त्वकी हो उठती है।

चुने-चुने चौदह निबन्धोंका यह एक सुसम्बद्ध संकलन है जो भारतीय दर्शनोंके समूचे स्वरूप और प्रमुख सिद्धान्तोंका सुन्दर परिचय देता है। और ऐसी सरल और सुबोध भाषामें सारा विचार-विवरण उपस्थित करता है कि सामान्य जन इसे अपने ही लिए लिखा गया मानें और सुधी-विशेषज्ञ देखें कि सब-कुछ ज्ञातव्य और नया चिन्तन भी सुबोध ढंगसे लिखा जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनीषी विद्वानोंके लिए यह कृति एक और दृष्टिसे भी विचारणीय होती है। बहुतोंका मत है कि भारतीय दर्शनोंमें एक विसंगति-जैसी दिखाई पड़ती है। महापाध्यायजीने प्रस्तुत कृति-द्वारा बड़े तर्कके साथ सिद्ध किया है कि इनमें परस्पर विरोधभाव कोई नहीं है बल्कि ज्ञानका एक क्रम है : ऐसा क्रम जो बुद्धिको स्थूलसे उत्तरोत्तर गहनतम सूक्ष्म तक ले चले। महामहोपाध्यायजी 'भारतीय षड्दर्शन' संज्ञा भी 'चार्वाक, बौद्ध, जैन, वैशेषिक, सांख्य, वेदान्त' इन छह दर्शनों-को देते हैं।

पुस्तक सभी दृष्टियोंसे सबके लिए पठनीय और मननीय है। इसके चौदह निबन्ध जैसे चौदह बीजवट हैं, भारतीय दर्शनशास्त्रोंका सार-सर्वस्व एक अंजुलिमें!

मूल्य ३.००

● **भारतीय संस्कृतिका विकास (वैदिक धारा)** : डॉ० मंगलदेव शास्त्री

यह प्रवृत्ति रही है कि अपनी भारतीय संस्कृतिके अंगभूत तत्त्वोंको पूर्वापर परिस्थितियोंसे असम्बद्ध इकाइयोंके रूपमें देखें। ऐसा भी हुआ है कि सारी संस्कृतिको अन्धविश्वास तक कह दिया गया। किन्तु जहाँ यह आधुनिकताके नामपर प्रतिक्रियावादिता हुई उस प्रवृत्तिका परिणाम यह हुआ कि समष्टि जीवनमें भेद-बिलगावकी संकीर्ण भावनाएँ पैठ गयीं। व्यक्ति, समाज, और देश, सभीके लिए यह जितना अहितकर रहा उसका इतिहास साक्षी है।

इन दोनोंसे भिन्न एक और दृष्टि, समन्वयात्मक ऐतिहासिक दृष्टि, भी है। इसके अनुसार देशकी विभिन्न धार्मिक और साम्प्रदायिक धाराएँ एक ही व्यापक प्रगतिशील भारतीय संस्कृतिकी पूरक और पोषक हैं। वास्तवमें यही दृष्टि स्वाभा-विक और वैज्ञानिक भी है। इसके मूल दिशासूत्र प्राचीन कालतक पहुँचे हुए हैं। इसी इतिहास-मूलक समन्वयात्मक दृष्टिके सहारे साम्प्रदायिक विरोध-विषमताओंके स्थानपर एकसूत्रता लाकर नव्य भारतके निर्माणको एक दृढ़ आधार दिया जा सकता है।

प्रस्तुत लेखकने इसी विशिष्ट दृष्टिसे भारतीय संस्कृतिके सम्पूर्ण विकासका अध्ययन किया है। यह प्रथम खण्ड वैदिक धाराका अध्ययन उपस्थित करता है। अध्ययन सर्वथा प्रमाणोंपर आधारित है और साथ ही सरस और रोचक भी है। आचार्य नरेन्द्रदेवजीके शब्दोंमें : "यह कार्य इस लेखक-जैसे अधिकारी विद्वान्-द्वारा ही हो सकता था और यह कृति भारतीय संस्कृतिके अध्ययनमें पथ-निर्देशका काम करेगी।"

मूल्य ७.००

ज्ञानोदय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• **चांद का मुंह टेढ़ा है** : स्व० गजानन माधव मुक्तिबोध

"मुक्तिबोधकी लम्बी कविताओंका पैटर्न विस्तृत होता है। एक विशाल म्योरल पेण्टिंग – आधुनिक प्रयोगवादी; अत्याधुनिक । जिसमें सब चीज़ें ठोस और स्थिर होती हैं; किसी बहुत ट्रैजिक सम्बन्धके जालमें कसी हुई।....मुक्तिबोधकी कविता जो कथानक होती है, इसमें विद्रूप और क्रूर भाव रूपकको भरपूर नाटकीय बनानेके लिए आवश्यक होता है। चित्रोंमें जो खुरदरी स्पष्टता आँखोंमें चोट-सा करती है, वह पूरी कवितामें, अपने विस्तार-क्रमके कारण, रूपक भावको कुछ बिखरा देती है। फिर भी कविकी बेपनाह नर्वस शक्तिका आभास पद-पदमें मिलता है।

"एक चट्टानी कड़ापन, एक खुर्री नग्नता, हिंस्र चाँदनी, अपशकुनोंसे भरा मानवलोक, रातका या दिनका।....ज़िन्दगी जो विद्रूप और क्रूर व्यंग्य है।....

"अगर किसीने स्वयं मुक्तिबोधकी ज़बानी उनकी कोई रचना सुनी हो, तो....कविता समाप्त होनेपर ऐसा लगता है जैसे हम कोई आतंकित करनेवाला फ़िल्म देखनेके बाद एकाएक होशमें आये हों।....

".....चूंकि वह पेण्टर और मूर्तिकार हैं अपनी कविताओंमें – और उनकी शैली बड़ी शक्तिशाली, कुछ यथार्थवादी मेक्सिकन भित्तिचित्रोंकी-सी है।...

"वह एक-एक चित्रको मेहनतसे तैयार करता है, और फिर उसके अम्बार लगाता चलता है। एक तारतम्य।, जैसे किसी ट्रैजिक नाट्य-मंचपर एक उभरती मोड़का दृश्य – पूर्व-नियोजित प्रभावके साथ खड़ी।....

"इसके प्रतीक प्राचीन गाथाओंके टुकड़े जान पड़ते हैं। मगर इन टुकड़ोंमें सन्दर्भ आधुनिक होता है। यह आधुनिक यथार्थ कथाका भयानकतम अंश होता है।.... मुक्तिबोधका वास्तविक मूल्यांकन अगली, यानी अब आगेकी पीढ़ी निश्चय ही करेगी; क्योंकि उसकी करुण अनुभूतियोंको, उसकी व्यर्थता और खोखलेपनको पूरी शक्तिके साथ मुक्तिबोधने ही अभिव्यक्त किया है। इस पीढ़ीके लिए शायद यही अपना खास महान् कवि हो।"

मूल्य ८.००

• **नाटक बहुरूपी** : डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल

"नाटकोंकी भीड़ और नाटक नहीं," शॉ चुटकी लिया करते। "आधुनिक नाटक अभी लिखा नहीं गया," आल्बेर्तो मोराविया कहते सुने जाते हैं। अब इनसे कौन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उलझे। उनसे कहना निरर्थक होता, इनसे कहनेमें संगति क्या। फिर, ऐसा कुछ है भी तो! अच्छे नाटक कम हैं, आधुनिक नाटक और भी कम।

इसी सन्दर्भमें यह छोटा-सा संकलन 'नाटक बहुरूपी' प्रस्तुत है। इसके द्वारा भी कहना यह नहीं है कि ये नाटक अच्छाईका आदर्श हैं; कहना यह उपयुक्त होगा कि ये अच्छाईका एक नमूना हैं और अनेक दृष्टियोंसे आधुनिक तो हैं ही। डॉ० लाल समकालीन हिन्दी नाटक-लेखनमें पहले ही कुशल कलाकार थे, अब तो सागर-पार जाकर वहाँका भी बहुत-कुछ देख और गुन आये हैं।

इतनी सहज-सच्ची और मर्म-छूती रचनाएँ हैं ये कि पढ़ी जायें तो पाठकको अपनी ही बात कही जाती मिले, और रंगमंचपर आयें तो दर्शक अपने ही सत्यों और सपनोंको सामने देखता हो। ऐसे नाटक हिन्दीमें सचमुच बहुत नहीं जिन्हें ईज़ीचेयरपर पढ़ने अच्छा लगे और स्टेजपर देखकर प्रेरणा मिले। मूल्य ३.५०

- **अपने-अपने अजनबी** : अज्ञेय

भारतीय साहित्योंमें अपने ढंगका अद्वितीय उपन्यास। मृत्युसे साक्षात्कारको विषय बनाकर जीवन और नियतिका सरल मार्मिक विवेचन। मृत्यु-विषयक पूर्व और पश्चिमकी दृष्टियोंकी टकराहट, दोनोंके मिलन-द्वारा मानव-जीवनके एक नये आयामका उन्मेष। मूल्य ३.००

- **ज़िन्दगी और गुलाब के फूल** : उषा प्रियंवदा

कहानियाँ और कहानियाँ! मगर ये कहानियाँ बिलकुल भिन्न हैं। न भाषाका उलझाव है यहाँ न शैली-शिल्पके गोरखधन्धे, और संग्रह-भरमें एक जो कहानी हो जिसे पढ़ें और दिनों अपने भीतर मँडराता हुआ न पायें! अतिरिक्त विशेषता और यह कि नयी कहानी इन्हें अपना कहेगी तो औरोंके लिए ये परायी न हो सकेंगी। मूल्य २.५०

- **खोयी हुई दिशाएँ** : कमलेश्वर

ग्यारह कहानियाँ जो एक विशेष दृष्टिको लेकर चुनी गयीं। जीवनमें महत्तम मूल्योंके प्रति आस्थाका स्वर इनका कथ्य है और घुटन तथा पराजयमें जीनेकी विवशताको नियति न मानकर नये सन्तुलन और अर्थोंकी खोज इनकी दिशा। इनमें जीवनका अध्ययन आया है, मात्र सर्वेक्षण नहीं। असम्भव होगा कि संग्रहकी कोई भी कहानी पढ़ें और मनपर प्रभाव न छोड़े। ज्ञानोदय

-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• **प्रतिनिधि रचनाएँ : पंजाबी :** कर्तारसिंह दुग्गल

किसी साहित्यिक व्यक्तित्वको पहचानने-समझनेके लिए आवश्यक है कि उसका विभिन्न विधाओंका लेखन कहीं एक-साथ देखें और पढ़ें। प्रस्तुत पुस्तकमें श्री कर्तारसिंह दुग्गलका एक समूचा नाटक, दो एकांकी, दो उपन्यासोंके अंश, संस्मरण और निबन्ध तो हैं ही, कहानी और कविताएँ तक संकलित हैं। कभी पंजाबी और उर्दूके और अब तो उतने ही हिन्दीके भी, इस चहीते साहित्यकारकी ये सभी रचनाएँ उसकी प्रतिनिधि रचनाएँ हैं : उसके साहित्यिक व्यक्तित्वसे परिचित होनेके लिए बिलकुल अनिवार्य।

मूल्य ३.५०

• **साहित्यिक की डायरी :** स्व० गजानन माधव मुक्तिबोध

ऐसी कृतियाँ बहुत नहीं होतीं जो अपने समकालीन साहित्यका श्री-वर्द्धन कर सकें। 'एक साहित्यिककी डायरी' ऐसी एक कृति है। अपने शैलीगुण और विचारतत्व दोनोंकी विशेषताके कारण यह ध्यान आकर्षित करेगी और आदर-मान पायेगी। डायरी-विधाका यह रूप तो इसीमें देखनेको मिलेगा। जैसे निबन्धात्मक कहानी वैसे यह निबन्धात्मक डायरी। निबन्ध पढ़े न जायें, इन्हें पढ़नेकी सहज ललक हो। सीधा-सादा प्रारम्भ, फिर कहीं एकालाप, कहीं एक काल्पनिक पात्रसे वार्तालाप, पर आदिसे अन्ततक भाव और स्वर डायरीका। ये कविता, आत्माख्यानके विविध स्तरोंपर एक साथ चलती हैं; या यों कहें कि इन सबको एकमें समन्वित करके एक नयी ही विधा-सम्भावनाकी ओर इंगित करती है।

मूल्य २.५०

• **सूरज का सातवाँ घोड़ा :** डॉ० धर्मवीर भारती

'गुनाहोंका देवता' के बाद लेखकके औपन्यासिक कृतित्वका एक दूसरा पहलू जो जितना महत्त्वपूर्ण है उतना ही आकर्षक। दावेके साथ कहा जा सकता है कि हिन्दीमें अभीतक ऐसी कथा-शैलीका प्रयोग नहीं किया गया। किन्तु कृतिका महत्त्व केवल साहित्यिक ही नहीं है, वास्तवमें उससे कहीं अधिक व्यापक और गम्भीर है : हमारे समूचे मध्यवर्गीय समाजके सांस्कृतिक पुनर्निर्माणसे सम्बद्ध होनेके कारण है।

मूल्य २.००

• **मेज़ पर टिकी हुई कुहनियाँ :** रमेश बक्षी

इन कहानियोंको देखकर कोई कहे तो अत्युक्ति न होगी कि आधुनिक कथाशिल्प और आधुनिक जीवन-दृष्टि दोनोंको एक साथ स्वाभाविक रूपमें सजा हुआ यहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाया। कभी पढ़ते-पढ़ते लग सकता है कि ये कहानियाँ नहीं हैं, पर फिर अगले ही क्षण बरबस लगेगा कि ये ही तो सचमुच कहानियाँ हैं : आजकी !

मूल्य ३.५०

● **नये रंग नये ढंग** : लक्ष्मीचन्द्र जैन

हिन्दी गद्य-शैलीकी सर्वथा नयी रचना जिसके हर पृष्ठपर युगकी छाप और प्रतिभाकी चमक अंकित है। सम्भव नहीं कि पुस्तक हाथमें लें और पढ़कर समाप्त किये बिना रख दें।

मूल्य २.००

● **सूखा सरोवर** : डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल

एक ऐसा स्पष्ट, जीवन्त और हृदयग्राही नाट्यरूप जो लोक-गाथाकी मनोभूमि और रंगशैलीसे यहाँ अवतरित है— विशुद्ध लोक-गाथा-परक रससिक्त नाट्य-शिल्प में। इस रंगमंचका सर्वथा एक अभिनव स्वरूप और आधुनिक रंगमंच अन्वेषणका एक नया उदाहरण।

मूल्य २.००

● **शिखरों का सेतु** : डॉ० शिवप्रसाद सिंह

शैल-शिखर रमणीक होते हैं। जो चिर-प्रेरक भी हों, ऐसे शिखर विश्व-साहित्यके महाप्राण व्यक्तित्व होते हैं या फिर अतीतके जीवन और प्राणोंकी वे मार्मिक कथाएँ-व्यथाएँ होती हैं जो उन्हें 'अतीत' कभी नहीं बनने देंगे। प्रस्तुत पुस्तक-द्वारा अनेक ऐसे ही शैल शिखरोंसे साक्षात्कार होगा जिसे पाकर 'लघु मानव' को बरबस लगे कि वह लघु ही रहनेके लिए नहीं। जीवन-यात्रामें कभी अपनेको थकता देखें तो भी एक क्षण इन शिखरोंका सहारा लें, फिर चरण आगे पथपर आप बढ़ चलेंगे।

मूल्य ३.५०

● **चीड़ों पर चाँदनी** : निर्मल वर्मा

बीसवीं शतीके स्मारक-चिह्नोंकी खोजमें एक भारतीय लेखकके यह संस्मरण अपने-आपको खोजनेका प्रयास हैं – अपनेसे बाहर निकलकर स्वयं अपनेको गवाह बनाने-का प्रयत्न – और इसीलिए ये संस्मरण एक व्यक्तिका निजी 'टेस्टामेण्ट' भी हैं। स्मृतिके ये अंक निर्मल वर्मा युरॅप प्रवासकी लम्बी अवधिमें समय-समयपर सँजोते रहे हैं। बादमें जोड़नेपर जो मिला, वे न कहानियाँ थीं न डायरी – बल्कि कुछ ऐसे अनुभव-खण्ड जिनमें एककी निरपेक्षता दूसरेकी आत्मीयतासे घुल-मिल गयी है

मूल्य ३.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैकलियॅड एण्ड कम्पनी लिमिटेड

मैकलियॅड हाउस,

३, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता-१

मैनेजिंग एजेण्ट्स, सेक्रेटरी और कोषाध्यक्ष

जूट मिल्स

- अलेक्जेण्डर जूट मिल्स कं० लि०
- एलायन्स जूट मिल्स कं० लि०
- नेल्लीमारला जूट मिल्स कं० लि०
- चितावलसाह जूट मिल्स कं० लि०
- ईस्टर्न मैन्यूफैक्चरिंग कं० लि०
- एरपायर जूट मिल्स कं० लि०
- केलविन जूट कं० लि०
- प्रेसिडेंसी जूट मिल्स कं० लि०
- वेवरली जूट मिल्स कं० लि०

चाय के बगीचे

- अमलुकी टी कं० लि०
- बागमारी टी कं० लि०
- मतकावा टी कं० लि०
- बोरमाह जान टी कं० (१९३६) लि०
- डिब्रूगढ़ कं० लि०
- बैजू वेली कं० लि०
- मार्गरेटस होप टी कं० लि०
- राजभात टी कं० लि०
- रानीचेरा टी० कं० लि०
- रूपचेरा टी कं० लि०
- सुंगमा टी कं० लि०
- तेलोईजान टी कं० लि०
- तिंगामीरा टी सीड कं० लि०
- तिरींहन्ना कं० लि०
- तीयरून टी कं० लि०

मार्च १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Price Annual Rs.10/- per copy Re.1/- for abroad postage extra 18 nP. This Copy N...

GYANODAY March 19...

License No. 51. Licensed to post without prepayment of postage. REGD No. L-2036

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

...भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर
साहूपुरम् में
डाकखाना : अरुमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक
ध्रांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स :

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लि०

१५ ए, हॉर्निमैन सर्किल
फोर्ट, बम्बई-१

तार : सोडाकेम,

टेलीफोन : २५१२१८-१९-१०,

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection, Haridwar

भारतीय ज्ञानपीठ काशी की ओर से लक्ष्मीचन्द्र जैन फागुल्ल-द्वारा प्रकाशित और सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी में मुद्रित।

Digitized by Arya Samaj Foundation [illegible] gotri

9-4-65.

आनन्द

अप्रैल १९६५

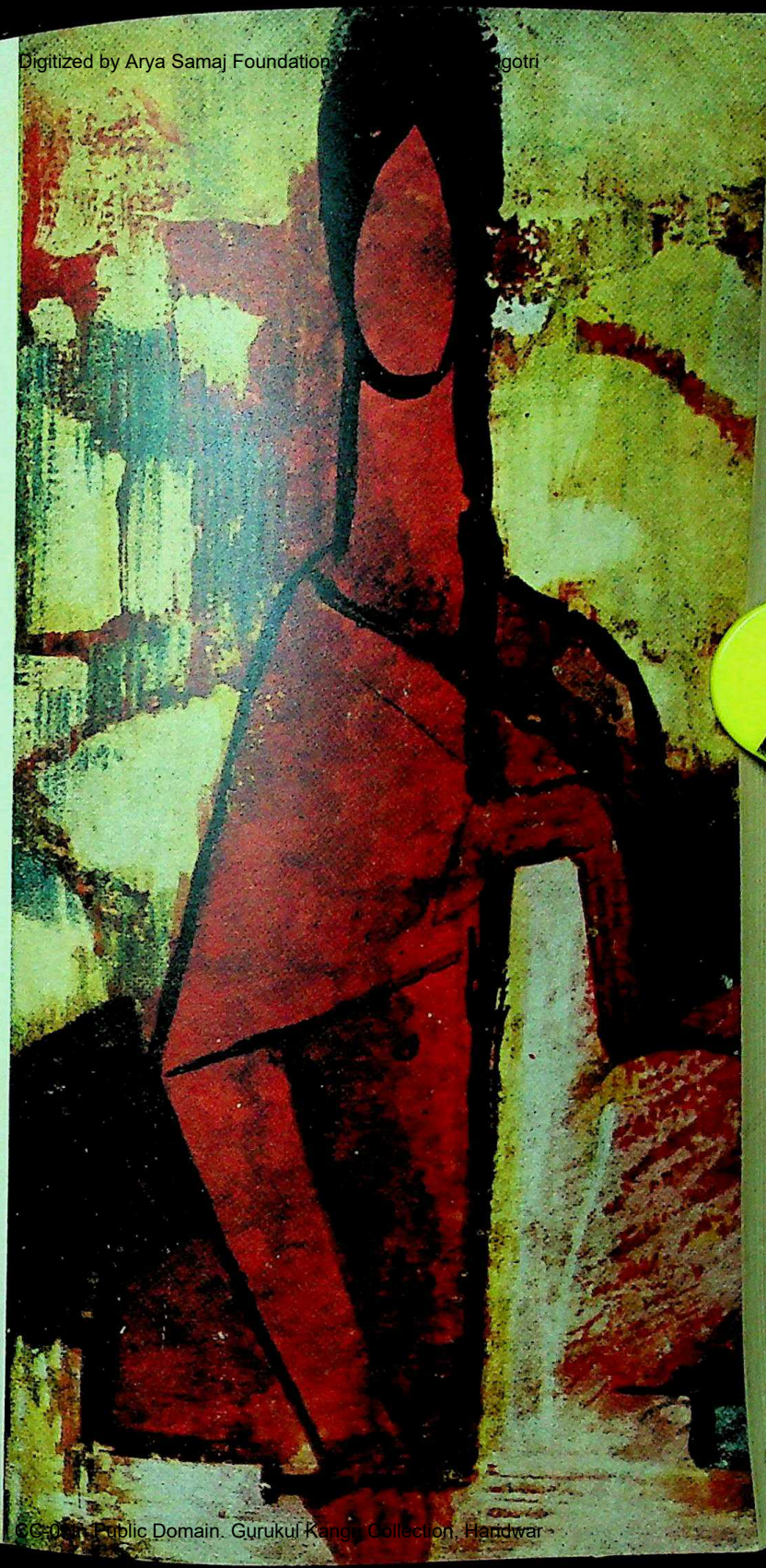

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक विकास-उन्नयन
सांस्कृतिक अनुसन्धान-प्रकाशन
राष्ट्रीय एकता एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी

साधिका
विशिष्ट संस्था

भारतीय ज्ञानपीठ

[स्थापित सन् १९४४]

संस्थापक
श्री शान्तिप्रसाद जैन

अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

अप्रैल १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक भावबोध,
कला-संचेतना
और नवीनताका प्रतिनिधि
मासिक

अ | प्रै | ल | १ | ९ | ६ | ९

ज्ञानोदय

सम्पादक :
लक्ष्मीचन्द्र जैन, रमेश बक्षी

सम्पादकीय कार्यालय :
९, अलीपुर पार्क प्लेस,
कलकत्ता-२७

वितरण-कार्यालय :
भारतीय ज्ञानपीठ,
कुण्ड रोड, वाराणसी-५

वितरक :
बुकमैन एण्ड कं० लि०,
बम्बई-१

एक अंक	:	१.००
वार्षिक	:	१०.००
त्रैवार्षिक	:	२५.००
आजीवन	:	१५१.००

इस अंकमें :

कुवेरनाथ राय, सुनील गंगोपाध्याय, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', रणवीर रांग्रा, सन्हैयालाल ओझा, सन्दीपन चट्टोपाध्याय, खालिदा असग़र, जगदीश चतुर्वेदी, दूधनाथ सिंह, शान्ता सिनहा, पानू खोलिया, पुरुशिव रेगे, कुमार काश्यप, देवी राय, विमल बसाक आदि.

- क्रान्ति, विसंगति और कामूका विद्रोह-दर्शन
- हम 'कब' से 'कहाँ' ?
- नागफनीके रेगिस्तानमें नींद
- काँगड़ा क़लम : एक सांस्कृतिक थाती
- मृत्यु, भालोबाशाबाशी और श्यामबाज़ारमें कुहासा
- शिक्षाका उद्देश्य, शास्त्रीजीका मार्ग-दर्शन....
- भूखी पीढ़ीके नाराज़ हस्ताक्षर
- आधुनिक नारीका द्वैत
- सामने है—विज्ञानका अन्तिम चरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अप्रैल १९६५

■

अंक सज्जा :

डेविड पैकर्ड, मार्क शॅगल
लखाऊ, बीरेश्वर बनर्जी,
जगदीश गुप्त, कमल बोस
भाऊ समर्थ, अ० ल०
चोपड़ा, मदन सरकार,
गोविन्द, जितेन्द्र अग्रवाल,
रामचन्द्र शुक्ल

■

मुखपृष्ठ :

मिर्ज़ा इस्माइल बेग़

■

कविताएँ :

दूधनाथ सिंह ८३
चन्द्रकान्त देवताले ८४
प्रताप विद्यालंकार ८५

■ **विज्ञान :**

● हम 'कब' से 'कहाँ' ? : सन्हैयालाल ओझा ३
● सामने है : विज्ञानका अन्तिम चरण : कुमार काश्यप १०

■ **विशेष :**

● अनुचिन्तन : क्रान्ति, विसंगति और कामूका विद्रोह : कुबेरनाथ
● सापेक्ष डायरी : मृत्यु, भालोबाशाबाशी और श्यामबाजारे : सन्दीपन चट्टोपाध्याय
● कला-चर्चा : काँगड़ा क़लम : एक सांस्कृतिक थाती : कि
● किसी एककी उलझन : आधुनिक नारीका द्वैत : रणवीर

■ **धारावाहिक उपन्यास :**

● सावित्री–२ : (गानेवाला पेड़) : पुरुशिव रेगे (अनु० मोहीनगर

■ **व्यंग्य : ललित रचना :**

● एक सलाह––केवल कथाकारोंके लिए : रवीन्द्रनाथ त्यागी
● धुआँऽऽ : रमेशचन्द्र शाह ४९

■ **चर्चा :**

● भूखी पीढ़ीके नाराज़ हस्ताक्षर : देवी राय, बिमल बसाक

■ **कहानियाँ एवं संस्मरण :**

● नागफनीके रेगिस्तानमें नींद : सुनील गंगोपाध्याय (अनु० कंचन
● नामकी कहानी : खालिदा असग़र (अनुवाद : ए० बी०
● अँधेरेका आदमी : जगदीश चतुर्वेदी ५८
● रिश्ते : पानू खोलिया ६५
● गीत, गौरय्ये और एक मामूली-सा आदमी : शान्ता सिनहा

■ **अन्य स्तम्भ :**

● सोये हुए पृष्ठ : १ परिधिमें १००० विरोध : भोलानाथ
● सहचिन्तन : शिक्षाका उद्देश्य, शास्त्रीजीका मार्ग-दर्शन : कन्हैयालाल मिश्र
● प्रतिक्रिया : हिन्दी नाट्य महोत्सव : एक दृष्टि और : १२७; एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्व : एक पाठक १३
● अनजान पुल : सविता बनर्जी १३४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक प्रश्न

हम 'कब' से 'कहाँ' ?

सन्हैयालाल ओझा

उपन्यासकार, विचारक।

• • • • • •

लगता है, शीर्षकवाले प्रश्नके कोई मानी नहीं!—कब यानी 'अब' से 'कब' तक, और कहाँ यानी 'यहाँ' से 'कहाँ' तक?—जहाँ मैं इस समय खड़ा हूँ, मुझे बाये पाँच मिनिट हुए हैं; और धरा-धामपर आये पैंतालीस वर्ष हो रहे हैं! कहाँ, यानी जहाँ अभी हूँ। कलकत्ता कहाँ है, यह भी भारतवर्षके मानचित्र या सारी दुनियाके मानचित्रमें भी सरलतासे खोजा जा सकता है!—और दुनिया?—सौर-मण्डलमें बीचमें ग्रह, शुक्र और मंगलके बीच!—और सौर-मण्डल भी पूछ रहे हैं आप?—मतलब क्या है आपका? अच्छा देखिए, सौर-मण्डल—यह जो आकाशगंगा है न, जिसे 'मिल्की-वे' कहते हैं, एक गैलेक्सी है, चपटी, बीचमें उठी हुई, किनारेसे किनारे तक इसका व्यास है एक लाख प्रकाश वर्ष, और केन्द्रमें ऊपर-नीचे इसकी मुटाई है बीस

■

हजार प्रकाशवर्ष!—सौर-मण्डल इसके केन्द्रसे एक ओर प्रायः ३०,००० प्रकाशवर्ष दूर है, और इस जगह उसकी मुटाई है प्रायः तीन हजार प्रकाशवर्ष! प्रकाश-वर्षसे यहाँ तात्पर्य उस दूरीसे है, जिसे प्रकाश प्रति सेकण्ड १,८६,२८२ मीलकी गतिसे एक वर्षमें पूरा कर सके।

और तब आप सहज ही पूछ सकते हैं कि हमारी यह गैलेक्सी—आकाश-गंगा या मिल्की-वे- कहाँ है? नहीं, मैं आपको इसका उत्तर नहीं दे सकूँगा, किन्तु आपके साथ चलकर देखनेकी चेष्टा अवश्य कर सकता हूँ! आइए, मेरे साथ हो लीजिए, यदि आप संख्याओं और दूरियोंसे घबरा न जायें, थक न जायें।

निरभ्र-रात्रिमें आपने आकाशको असंख्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तारोंसे भरा अवश्य देखा होगा। जितने नक्षत्र हमें दिखाई देते हैं, वे प्रायः एक ही गैलेक्सीके नक्षत्र हैं, और यह अन्तरिक्ष ऐसी कई भीषणकाय गैलेक्सियोंसे भरा हुआ है! गैलेक्सियाँ भी, मनुष्यकी तरह ही, प्रायः समूहमें ही रहना पसन्द करती हैं, वह समूह कभी हजार गैलेक्सियोंका भी हो सकता है, और कभी केवल दो का भी। हमारी आकाशगंगा-गैलेक्सीके समूहमें केवल एक और गैलेक्सी है, जो एण्ड्रोमिडा-राशिमें इसी नामसे पुकारी जाती है। इसका खागोलिक नाम एम-३१ भी है! इसे खुली आँखों किसी साफ़ अँधेरी रात्रिमें देखा जा सकता है, यदि स्थानका ठीक पता हो।

पेलोमर वेधशालाके वृहत्तम २०० इंची दूरबीनसे प्रायः एक अरब गैलेक्सियाँ देखी जा सकती हैं। इनकी दूरीको यदि मीलोंमें अभिव्यक्त किया जाये तो ३० के आगे ३६ शून्य जोड़ने होंगे; अंक-शास्त्रमें इस संख्याको ३×१०^{३६} द्वारा व्यंजित किया जाता है! हमारा यह सबसे बड़ा उपलब्ध दूरबीन है, इससे ब्रह्माण्डकी सीमा नहीं छूई जा सकती। गैलेक्सियाँ और भी कई गुनी बड़ी संख्यामें अन्तरिक्षमें उपलब्ध हो सकती हैं।

गैलेक्सियाँ अपने समूहमें गतिशील हैं! कभी-कभी दो गैलेक्सियाँ आपसमें टकरा भी सकती हैं। किन्तु इस टकराहटमें उनके नक्षत्र प्रायः नहीं टकराते क्योंकि तुलनात्मक दृष्टिसे ये नक्षत्र काफ़ी छोटे, और उनके बीच-की दूरी (अवकाश) बहुत अधिक होती है। गैलेक्सियोंमें गैसके विशालकाय बादल भी होते हैं, और मुठभेड़ होनेपर ये बादल अवश्य टकराते हैं। इस प्रकारके संघर्षसे गैस भीषण आन्दोलनके साथ गतिशील हो उठती है, और उसका ताप बहुत अधिक बढ़ जाता है। ऐसा जब होता है तो उससे रेडियो-तरंगें निर्गत होती हैं। सौ किलो वाटका पार्थिव रेडियो-स्टेशन काफ़ी शक्ति-शाली समझा जाता है। साइनस नामक राशिमें एक ऐसे ही संघर्षके फलस्वरूप लक्ष्य किया गया है कि उससे १०[५०] किलो वाट शक्तिकी तरंगें निर्गत हुई हैं।

वेधसे प्रतीत होता है कि गैलेक्सियोंके समूह परस्पर एक-दूसरेसे दूर हटते चले जा रहे हैं। इसका यह तात्पर्य नहीं कि हम पृथ्वी केन्द्रमें है। ब्रह्माण्डका कोई केन्द्र ही ऐसा सम्भव नहीं लगता। यह मान्यता ब्रह्माण्ड-रचनाके एक सिद्धान्तका परिणाम है, जिसे विस्फोट-सिद्धान्त कहते हैं। गैलेक्सियाँ, इस सिद्धान्तके अनुसार, अवश्य दूर हटती जा रही हैं—कहा जा सकता है कि समयके साथ अन्तरिक्ष खाली होता चला जा रहा है। इससे यह भी प्रतिपादित होता है कि पहले अन्तरिक्ष खूब सघन ठसाठस भरा हुआ था। यदि यह फैलाव आद्यकालीन है तो कहना होगा कि तब सब गैलेक्सियाँ एक केन्द्रमें सिमटी हुई ठस भरी थीं। नक्षत्र भौतिकीके विद्वानों (Astro-physicists) की मान्यता है कि आठ या नौ अरब वर्ष पहले ब्रह्माण्ड एकदम ठोस था।

गैलेक्सियोंके नक्षत्रोंकी उमर जानने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक उपाय नक्षत्रोंके भीतर उनकी नाभिक-प्रक्रियाके अवधारणसे है। इस गणनासे प्राचीनतम नक्षत्रोंका उद्भव प्रायः आठ या नौ अरब वर्ष ही पाया जाता है। यह बड़ी दिलचस्प बात है। इससे लगता है कि यह ब्रह्माण्ड प्रायः दस अरब वर्ष पूर्व पैदा हुआ और हमारा गैलेक्सी प्रायः पाँच अरब वर्ष पूर्व पैदा हुई। इस सिद्धान्तके मूल तत्त्व ये हैं कि प्रारम्भमें ब्रह्माण्ड-द्रव्य एक स्थानपर सघन अवस्थामें पुंजीभूत था, जबकि उसमें एकाएक एक भयानक विस्फोट हुआ। इस विस्फोटके फलस्वरूप द्रव्य (Matter) धीरे-धीरे बिखरता गया और जो अबतक उसी बिखरावकी अवस्थामें है। विस्फोटके प्रायः एक अरब वर्ष बाद गैलेक्सियोंके समूह अस्तित्वमें आये। अनन्त काल तक यह बिखराव चलता रहेगा। इस तरह विस्फोट-सिद्धान्तके अनुसार ब्रह्माण्डका उद्भव एक निश्चित समय पूर्व हुआ था। इस सिद्धान्त-के अनुसार बिखरावका यह क्रम कभी समाप्त न होगा। भविष्यमें एक क्षण ऐसा आयेगा जब कि अन्तरिक्ष एक निराकार समरस शून्यता-के अतिरिक्त कुछ न रहेगा। गैलेक्सियोंके भीतरकी सभी क्रियाएँ शून्य पड़ जायेंगी, नक्षत्र और नहीं चमकेंगे, ऊर्जाके सभी स्रोत सूख जायेंगे।

सौके लगभग ज्ञात रासायनिक तत्त्वोंके विकासको भी इस सिद्धान्तकी पृष्ठभूमिमें देखा गया है। जिस प्राचुर्यके साथ ये तत्त्व जहाँ पाये जाते हैं, वह सर्वत्र समान है।

स्थान और समय दोनों ही एक दूसरेमें
गुँथे हुए ही तो हैं।—
सृष्टिके आदिमें जब समस्त द्रव्य एक जगह
पुँजीभूत था,
तब उसी पुंजमें 'स्थान' और 'समय'
भी तो सिमटे पड़े थे।—
और विस्फोटके साथ ही द्रव्य फैला स्थानमें भी
और समयमें भी।—तब समयसे पृथक्
स्थान कहीं है क्या,
या स्थानसे पृथक् समय कहीं है क्या?
'मैं यहाँ हूँ'
इसका तात्पर्य ही है कि किसी समय-विशेषमें
मैं किसी स्थान-विशेषपर हूँ।

सबसे सादे हाइड्रोजन तत्त्वसे ही विशेष प्रक्रिया-द्वारा इनका निर्माण हुआ होगा। शायद कार्बन, ऑक्सीजन, लौह आदिके जटिल तत्त्व भी हाइड्रोजनके सादे तत्त्वोंसे ही बने होंगे। विस्फोट-कालकी प्रारम्भिक घनता और असीम उष्णता ही इसके लिए उत्तरदायी रही होगी। यदि ऐसा हुआ हो तो आजके ये जटिल तत्त्व उन प्राक्कालीन तत्त्वोंके भग्नावशेष ही कहे जायेंगे।

किन्तु, जैसा कि ऊपर कहा गया है, यह बात इस स्वीकृतिपर निर्भर करती है कि जटिल तत्त्वोंका अनुपात सर्वत्र समान होना चाहिए, स्थानीय अपवादोंके लिए भी इसमें गुंजायश नहीं होना चाहिए। किन्तु आधुनिक नाभिक-भौतिकीके ज्ञानसे ऐसा प्रमाणित नहीं होता। पाया गया है कि हमारी गैलेक्सीके सूर्य-जैसे मध्यावस्थाके नक्षत्रोंकी अपेक्षा प्राचीनतम नक्षत्रोंमें जटिल-तत्त्वोंका जमाव बहुत कम है। इससे यह प्रतिपादित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता है कि जटिल अणुओंकी उत्पत्ति नीहारिका-के भीतर ही होती है, उसका ब्रह्माण्डके प्रारम्भिक इतिहाससे कोई सम्बन्ध नहीं है।

यह जिज्ञासा स्वाभाविक ही है कि यदि कभी द्रव्यकी ऐसी अतिसघन स्थिति थी तो उस समयके नाभिक-भग्नावशेष क्यों नहीं पाये जाते ? हाँ, यदि उस अतिसघन द्रव्यका तापमान हमारी कल्पित ताप-मात्रासे बहुत अधिक रहा हो तो यह सम्भव हो सकता है। हम जान गये हैं कि हाइड्रोजनके तत्त्वोंके मिलाप को रोकनेके लिए और अधिक तापकी आवश्यकता होती है। इस आवश्यकताने ब्रह्माण्ड-उद्भवके एक दूसरे सिद्धान्तको जन्म दिया है, जिसे संकोच-विकोचका सिद्धान्त कहा जाता है।

विद्वानोंका मत है कि उस प्रारम्भिक अति-सघन द्रव्यका प्रारम्भिक विस्फोट इतना उग्र न रहा होगा कि वह समग्र-बिखराव पैदा कर दे। उनका विश्वास है कि गैलेक्सियोंके बिखरनेकी गति धीरे-धीरे कम होती जा रही है, और एक क्षण ऐसा आयेगा जब कि यह बिखराव थम जायेगा। तब गुरुत्वाकर्षण इन समूहोंको पुनः एक-दूसरेकी ओर केन्द्राभिमुख करेगा, यानी ब्रह्माण्डकी गति तब संकोचनकी ओर प्रवृत्त होगी। धीरे-धीरे ये समूह उत्तरोत्तर वेगसे एक-दूसरेकी ओर खिचेंगे, यहाँतक कि पहले गैलेक्सियाँ और फिर बाद-में नक्षत्र भी परस्पर टकरायेंगे। इस भीषण संकोचके फलस्वरूप अत्युच्च ताप निर्गत होगा, और उससे जटिल तत्त्वोंके अणु बिखर-बिखरकर सादे हाइड्रोजन-अणुमें परिवर्त्तित होते जायेंगे। इसके साथ ही पुनः संकोच-विलोम अवस्था, विस्तरणके लिए भूमि तै होती जायेगी।

सृष्टि-निर्माणका यह ऐसा चित्र है कि संकोचन और विस्तरणके द्वन्द्वोंका क्र चक्र है। विस्तरणके फलस्वरूप गैलेक्सि नक्षत्र, ग्रह-उपग्रह बनते हैं। नक्ष हाइड्रोजनसे ऊर्जा मिलती है ताकि अणुओंका निर्माण हो सके। संकोचनके यह सारी क्रिया विपरीत क्रमसे सम्पन्न है। प्रत्येक आवर्त्त पूर्ववत् दोहराता है, इन चक्रोंका न कोई आदि है न संकोच-विकोचके एक आवर्त्तकी अवधि तीस अरब वर्ष होती है। इस समय ब्रह्माण्ड विस्तरणकी दिशामें प्रायः अवधि पार कर चुका है।

इस सिद्धान्तके अनुसार ब्रह्माण्डमें का परिमाण परिमित है, अन्तरिक्ष भी तरह परिमित है, उसी तरह जिस किसी गोलेकी सतह परिमित होती यद्यपि उसका अन्त नहीं होता, सीमा होती। विस्तरणमें सारा क्षेत्र गुब्ब तरह फूलता है, जिसका हर बिन्दु बिन्दुसे दूरतर होता जाता है। संकोच स्थितिमें अन्तरिक्ष केन्द्राभिमुख होकर बिन्दुके रूपमें पर्यवसित हो जाना चाहता

सृष्टि-उद्भवकी एक और तीसरी सनातन-अवस्थाका सिद्धान्त है जो इन मान्यताओंसे पृथक् है। पहले दोनों सिद्ध का आधार इसी मान्यतापर है कि जितना आज है उतना ही अतीतमें भी था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधार गलत हो तो द्रव्यकी प्रारम्भिक अति-लघु अवस्थाकी बात मिथ्या हो जाती है। अतः इस सम्भावनापर विचार किया जाये कि अतीतमें आजके इतना द्रव्य न था और भविष्यमें जो द्रव्य अस्तित्वमें आनेवाला है वह आज विद्यमान नहीं है।

आजका भौतिक-शास्त्री द्रव्यके किसी कण (Particle) को स्थायी नहीं मानता। एक कणको दूसरेमें परिवर्तित करना और नये कण बनाना अब असम्भव बात नहीं है। ये क्रियाएँ कुछ तो आणविक-नाभिकणोंसे सम्बन्धित शक्तिके क्षेत्रमें और कुछ विद्युच्चुम्बकीय क्षेत्रोंमें होती हैं। अणुकी नाभियोंको एक साथ बाँधे रखनेमें ये क्षेत्र ही उत्तरदायी हैं और सभी प्रकारकी ऐसी विद्युच्चुम्बकीय तरंगों, जैसे एक्स-रे या रेडियो-तरंगोंके लिए भी ये ही क्षेत्र ज़िम्मेदार हैं। ब्रह्माण्डके विस्तारमें इस अस्थायित्वका कोई महत्त्व नहीं है, किन्तु गुरुत्वाकर्षणके क्षेत्रमें हमें इस अस्थायित्वकी परीक्षा करनी चाहिए। यदि गुरुत्वाकर्षणकी वजहसे एक छत्रीधारी (Parachutist) जमीनपर लौट आता है, तो इसीसे पृथ्वी सूर्यके इर्द-गिर्द चक्कर लगाती रहती है। यानी सृष्टिके क्षेत्रका नियन्त्रण इस गुरुत्वाकर्षणके ही हाथ है।

गुरुत्वाकर्षण-शक्तिका प्रयोग पृथ्वीकी किसी रसायनशालामें सम्भव नहीं है। लेबोरेटरीमें बहुत ही कम द्रव्य उपलब्ध होनेसे सच्चे गुरु-त्वाकर्षणका निर्माण नहीं किया जा सकता। आणविक और विद्युच्चुम्बकीय क्षेत्र प्रयोगशाला रसायनशालामें तैयार किये जा सकते हैं। नाभिक-क्षेत्र तो एक अणुमें भी देखा जा सकता है। गुरुत्वाकर्षणकी परीक्षाके लिए तो सृष्टिके सारे द्रव्यके समवेत आकर्षणकी परीक्षा करनी होगी, और इसका कोई तरीक़ा अभी तक खोजा नहीं जा सका है। अतः उपाय केवल यह है कि हम दोनों विरोधी सम्भावनाओंकी अलग-अलग परीक्षा करके ही देखें। एक सम्भावना तो यह कि गुरुत्वाकर्षणके क्षेत्रमें कणोंमें स्थायित्व है, और दूसरी सम्भावना यह कि इनमें स्थायित्व नहीं है। आइन्स्टाइन-द्वारा प्रस्तुत सापेक्षता के सामान्य सिद्धान्त-द्वारा अस्थायित्वकी परीक्षा की जा सकती है, यद्यपि इसमें एक विशिष्ट साँचेका प्रयोग किया जाता है, और इसके कारण इस प्रयोगकी सार्वभौमिकता (सर्वस्थानिकता) पर शंका उपस्थित की जा सकती है!—शंकाओंको प्रस्तुत करते समय हमें या तो यह मानकर चलना होगा कि अस्थायित्व द्रव्योंके सम्यक् निर्माण-में सहायक होता है, या फिर द्रव्योंके सम्यक् नाशमें सहायक होता है। एक ही साथ दोनों भूमिकाएँ अस्थायित्व नहीं ले सकता, क्योंकि यह नहीं माना जा सकता कि

छाया : जितेन्द्र अग्रवाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्माण्डमें एक साथ एक तरफ़ निर्माणका क्रम चल रहा है और दूसरी तरफ़ नाशका क्रम ! आइन्स्टाइनके गणितके सूत्रोंसे यह स्पष्ट हो गया है कि अन्तरिक्षमें द्रव्यकी एक निश्चित औसत घनतासे अधिक घनता सम्भव नहीं है, अतः ब्रह्माण्डके सम्यक् विस्तारके बिना, द्रव्यका सम्यक्-निर्माण सम्भव नहीं हो सकता। इसी तरह जिस प्रकार द्रव्यके निर्माणका सम्बन्ध ब्रह्माण्डके विस्तरणसे है, द्रव्यके नाशका सम्बन्ध भी ब्रह्माण्डके संकोचके बिना सम्भव नहीं है। स्पष्ट है कि ब्रह्माण्ड एक ही साथ संकोच-विकोच नहीं कर सकता।

विश्वमें द्रव्यकी एकरस औसत सघनता बनी रहती है, अतः गैलेक्सियोंकी संघनन शीलता भूत-भविष्य और वर्त्तमानमें एकरस ही रहेगी। यह सम्भावना भी विचारणीय है कि अन्तरिक्षमें द्रव्य अत्यन्त उष्ण हो और गैलेक्सियोंका निर्माण ठण्ढे होते हुए द्रव्यके स्थानीय बुलबुलोंमें सम्पन्न होता हो। इस तरह बुलबुलोंके भीतरका दबाव बाहरके धिरे गरम द्रव्यकी अपेक्षा कम हो जाता है जिससे कि बुल्लेमें भयानक संकोचन पैदा होता है। इस धारणासे गैलेक्सियोंकी निर्माण-प्रक्रियासे सम्बन्धित कई प्राचीन समस्याओं-का उत्तर मिल जाता है। यह भी सम्भव है कि ठण्ढा होनेकी प्रक्रियाका सार्ष्टिक रेडियो-किरणों और कॉस्मिक किरणोंकी उत्पत्तिसे सम्बन्ध हो। रेडियो-ज्योतिषियोंको रेडियो संकेतोंसे ज्ञात भी हुआ है कि इस प्रकार ठण्ढा होनेकी प्रक्रिया जारी है, और यह विश्वास करनेके कारण हैं कि उनमें नयी गैलेक्सियोंके निर्माणकी दिशामें क्रमबद्धता है।

सम्यक् अवस्था सिद्धान्तमें गैलेक्सियोंके समूह फैलते हुए एक दूसरेसे दूर होते रहते हैं, किन्तु इस प्रक्रियामें बीचमें कई गैलेक्सियों का निर्माण होता रहता है और यह भी इस तेज़ीसे कि समयके साथ द्रव्यकी घनता अन्तरिक्षमें औसतन एकरस बनी रहती है। विशिष्ट समूह बदलते हैं, विकसित होते हैं किन्तु अपने-आप ब्रह्माण्डमें कोई परि-वर्त्तन नहीं होता। इस तरह ब्रह्माण्डके बारेमें आदि और अन्तकी समस्या उपस्थित ही नहीं होती। हर गैलेक्सी, हर नक्षत्र, हर अणुका आदि होता है, पर ब्रह्माण्डका नहीं। वह सहज ही विस्तरणशील है, जैसा कि 'ब्रह्माण्ड' शब्द स्वयं व्यंजित करता है।

जैसा कि देखा गया है, जितनी ही दूर गैलेक्सी होगी, उतने ही वेगसे वह देखने-वालेसे दूर भागती हुई जान पड़ती है। एक फुलाये जा रहे गुब्बारेपर यह सरलता से देखा जा सकता है कि उसका हर बिन्दु हर दूसरे बिन्दुसे दूरतर होता जाता है। एक दूरीके बाद यह गति प्रकाशकी गतिसे भी बढ़ जाती है। इससे आइन्स्टाइनके इस सिद्धान्तमें कि किसी विशिष्ट-योजनामें किसी द्रव्यकी गति प्रकाशकी गतिसे नहीं बढ़ सकती, कोई अन्तर नहीं आता। एक बहुत दूरकी गैलेक्सी हमारी विशिष्ट-योजनामें सम्मिलित नहीं हो सकती। यदि इन गैलेक्सियोंके दूर हटनेकी गति प्रकाशकी गतिसे तेज़ हो तो उनसे आनेवाले प्रकाशकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे गैलेक्सियाँ अपने साथ ही समेट ले जाती हैं और इस तरह वे गैलेक्सियाँ हमारे लिए दर्शन-सुलभ नहीं रह जातीं।

हमारा सौर-मण्डल इस आकाशगंगाका बहुत ही क्षुद्र-अंश है। एक अँधेरी निरभ्र-रातमें जितने नक्षत्र हम खुली आँखों देख सकते हैं, वे सभी नक्षत्र इस आकाशगंगाके ही नक्षत्र हैं। अनुमान किया जाता है कि आकाशगंगाके कुल नक्षत्रोंकी संख्या तीन सौ अरब है। – आकाशगंगाके तारतम्यमें सूर्यका विचार करते समय उसके ग्रहोंको बलसे नहीं लिया जाता – उनका अस्तित्व शायद ही पहचाना जा सके! ८,६४,००० मील व्यासवाले सूर्यके सामने ८,००० मील व्यासकी पृथ्वीका महत्त्व ही क्या हो सकता है? यद्यपि हम भूलोकवासी इसकी विशालतापर गर्व करनेसे कभी नहीं हिचकिचाते! पृथ्वीका भार $५·९८ \times १०^{२७}$ ग्राम या $६·६ \times १०^{२१}$ टन बताया जाता है। यदि टनोंकी संख्या व्यक्त की जाये तो वह होगी ६,६००,०००,०००,०००,०००,०००,००० टन! पृथ्वीकी औसत घनता है ५.५२ ग्राम प्रति घन सेण्टीमीटर!

किन्तु सूर्यका भार है $१·९८ \times १०^{३३}$ ग्राम। हमारी आकाशगंगाका समग्र-भार होगा ऐसे २०० अरब सूर्योंके भारके बराबर! इस सम्पूर्ण विस्तारमें आकाश-गंगाकी घनता प्रति घन सेण्टीमीटरमें एक अणुके हिसाबसे अनुमानित की गयी है। पृथ्वीकी तरह सूर्य भी आकाशगंगाकी एक भुजामें अवस्थित अपने समस्त सौर-मण्डलके साथ धनुष-राशिके एक नक्षत्र-समूहके चारों ओर २२० किलोमीटर (१३६ मील) प्रति सेकेण्डकी गतिसे चक्कर लगा रहा है, और उसकी एक पूरी परिक्रमाको २२ करोड़ वर्ष लग जाते हैं।

सूर्य-प्रकाशको पृथ्वी तक पहुँचनेमें प्रायः आठ मिनिट लग जाते हैं, किन्तु जो हमारा सबसे नजदीकका नक्षत्र है, उसका प्रकाश हम तक पहुँचते-पहुँचते ४ से अधिक वर्ष ले लेता है। मीलोंमें उसकी दूरी हमसे है २६,०००,०००,०००,००० मील। – अतः तीन सौ अरब नक्षत्रोंकी पारस्परिक दूरीकी केवल कल्पना ही की जा सकती है। – और फिर कितनी अरब गैलेक्सियाँ इस ब्रह्माण्डमें फैली पड़ी हैं? एक गैलेक्सीके प्रकाशको दूसरी गैलेक्सी तक पहुँचनेमें प्रायः २० लाख वर्ष लग जाते हैं। किन्तु इतना होनेपर भी ब्रह्माण्डमें खूब द्रव्य है। सम्पूर्ण आकाशगंगा सूर्यके भारसे १६०,०००,०००,००० गुना अधिक भारी है। इतने सारे द्रव्यके बावजूद अन्तरिक्षका अधिकांश बिलकुल रिक्त या खाली ही कहा जाता है।

यह ब्रह्माण्ड निस्सीम किन्तु परिमित है उसी तरह जिस तरह एक गेंदकी दो आयाम-की सतह निस्सीम तो होती है किन्तु अपरिमित नहीं। यहाँ यूक्लिडकी प्रचलित भूमिति काम नहीं कर सकती। अन्तरिक्षके अवधारणमें जिस अ-युक्लिडीय भूमितिका प्रचलन हुआ है, उसके अनुसार यह ब्रह्माण्ड भी उसी तरह निस्सीम किन्तु परिमित होगा। और यदि यह बात सही है तो हम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कल्पना कर सकते हैं कि एक अन्तरिक्ष-यान इस पृथ्वी-तलसे उठकर सीधी रेखामें बिना मुड़े उड़ता चलता चला जाये और आखिर एक क्षण ऐसा आयेगा कि वह यान पुनः इसी जगह आ पहुँचेगा, जहाँसे कि वह चला था। पैलोमर वेधशालाके २०० इंच व्यास-वाले दूरदर्शक यन्त्रकी दर्शन-क्षमता २ अरब प्रकाश वर्षकी दूरी तक ही है, इससे अवश्य हमें अपनी पीठ नहीं दिखाई दे सकती—दर्शन-क्षमताकी वृद्धिके साथ यदि कभी हमें हमारी पीठ दिखाई दे जाये तो वह आज-जैसी है, वैसी नहीं बल्कि उतने अरब वर्ष पूर्वकी होगी, जितने अरब वर्ष पूर्व प्रकाश हमारी दृष्टिसे चला था।—यदि हम इस सीधी रेखाकी लम्बाई जान सकें तो इस ब्रह्माण्डका क्षेत्रफल भी जाना जा सकता है। यद्यपि यह संख्या चौंका देने-वाली होगी, किन्तु तब भी वह ऐसी संख्या तो होगी ही जिसका कि मान बताया जा सके। घन सेंटीमीटरोंमें इस ब्रह्माण्डका प्रसार (Volume) तब १ के आगे ८४ शून्य लगानेसे बोध होगा।

ऊपर आकाशगंगाकी औसत घनता बतायी जा चुकी है। ज्योतिषियोंने ब्रह्माण्डकी औसत घनताकी भी गणना कर ली है। एकके आगे २८ शून्य लगानेसे जो संख्या आती हो, एक ग्राम द्रव्यके उतने हिस्से कर डालिए, और उस हिस्सेकी जो घनता एक घनसेंटीमीटरमें होगी, वही ब्रह्माण्डकी औसत घनता है। पृथिवीकी घनता भी ऊपर बतायी जा चुकी है। ज़रा इनकी सापेक्ष्य घनताकी तुलना कीजिए। इस तरह हम इस विपुल ब्रह्माण्डका भार बता सकते हैं। ग्रामोंमें यह संख्या होगी ४×१०^{५६} ग्राम, यदि टन प्राप्त करना हो तो शून्योंकी संख्याको ५६ से घटाकर कर दीजिए।

हम जानते हैं कि द्रव्य अणुओंसे बना है, और यह भी कि इलेक्ट्रन, प्रोटन और न्यूट्रनसे मिलकर बनता है अणु! यदि समस्त ब्रह्माण्डका विस्तार और भार परिमित हो तो उसके इलेक्ट्रनोंकी संख्या भी परिमित ही होगी। ब्रह्माण्डमें, अनुमान किया जाता है कि अणुओंकी संख्या २४×१०^{७९} है, जब कि सूर्यमें १२×१०^{५६} अणु हैं। खयाल किया जाता है कि हमारा सूर्य, जो कि आकाशगंगाके औसत तारों-जैसा समझा जा सकता है, यदि गहूँके एक दानेके बराबर कल्पित किया जाये, तो इस ब्रह्माण्डके सब तारोंके रूपमें इतना गेहूँ इकट्ठा हो जायेगा कि जिस मालगाड़ीमें उसे भरा जायेगा वह २,५०,००,००० मील लम्बी होगी।—इसके विस्तारकी बात देखनी हो तो सूर्य और पृथ्वीको एक-एक बिन्दु मानकर एक फुटकी दूरीपर रख दीजिए। सौर मण्डलका सबसे निकटतम नक्षत्र आल्फा सेण्टौरी ४.२९ प्रकाश वर्ष दूर है। इस पैमानेपर उसे सूर्यसे २५ मील दूर रखना पड़ेगा।

ऊपर कुछ बात कही है मैंने वर्षोंकी, कुछ बात मीलों-मीटरोंकी!—और स्थान तथा काल दोनोंको एक सूत्रमें गतिके क्षेत्रमें पिरोकर जिस 'प्रकाश-वर्ष' की बात कही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गयी है, वह भी ध्यानमें होगी ही। कबसे हम कहाँ हैं, यह प्रश्न जटिलसे जटिलतर होता चला गया है। 'कहाँ' का उत्तर पानेके लिए किसी जगह हमें खूंटा गाड़ना पड़ेगा, और तब हम कह सकते हैं कि इस खूंटेसे अमुक गज दूर सूर्योदयकी दिशामें, फिर इतने गज दूर दाहिने हाथकी ओर, और फिर···। लेकिन इस अन्तरिक्षमें खूंटा कहाँ गाड़ा जा सकता है?—सूर्यसे नौ करोड़ मीलकी दूरी बनाये हुए यह पृथ्वी उसके चारों ओर १८.५ मील प्रति सेकेण्डकी गतिसे चक्कर काट रही है किन्तु यह सूर्य ही अपने सारे कुनबेके साथ अनादबोध किसी धनुष-राशिके नक्षत्रके चारों ओर १३६ मील प्रति सेकेण्डकी गतिसे चक्कर काट रहा है, और यदि यह पता न भी हो कि यह सारी आकाशगंगा भी उसी तरह किसी दूसरे केन्द्रके चक्कर काट रही हो तब भी यह तो बताया ही जा चुका है कि इस क्षण-क्षण फुलाये जा रहे गुब्बारेपर दूसरी गैलेक्सियाँ ही नहीं, हमारी गैलेक्सी भी अपना स्थान छोड़ती चली जा रही है।

उसी तरह 'कब' के लिए भी क्या काल-क्षेत्रमें ऐसा ही कोई किसी घटनाका खूंटा कहीं गाड़ना पड़ता? ईसवी सदी पूर्व, और ईसवी सदी बाद, या विक्रम संवत् ऐसी ही घटनाओंके खूंटोंसे तो गड़े हुए हैं—स्थान और समय दोनों हा एक दूसरेमें गुंथे हुए ही तो हैं!—सृष्टिके आदिमें जब समस्त द्रव्य एक जगह पुंजीभूत था, तब उसी पुंजमें 'स्थान' और 'समय' भी तो सिमटे पड़े थे। और विस्फोटके साथ ही द्रव्य फैला—स्थानमें भी और समयमें भी!—तब समयसे पृथक् स्थान कहीं है क्या, या स्थानसे पृथक् समय कहीं है क्या? 'मैं यहाँ हूँ' इसका तात्पर्य ही है कि किसी समय-विशेषमें मैं किसी स्थान-विशेषपर हूँ।

सो हे काल-स्थानातीत शान्ति-दूत! मेरे लिए कोई सन्देश हो तो मुझे खोज लेनेमें तुझे तनिक भी कठिनाई न होगी, किन्तु यदि मुझे ही तेरी आवश्यकता हो जाये तो कहाँ खोजूँ मैं तुझे? तेरी आवश्यकता मुझे है, यह शायद मैं नहीं जानता, कोई सन्देश भी मुझे तेरे-द्वारा कहीं किसी अगम्य लोकमें नहीं पहुँचाना है, किन्तु यह इसीलिए तो है कि अपनी क्षुद्रतामें मैं अपने-आपको इस योग्य ही नहीं पाता! एक चींटी कैसे सोच सकती है कि उसे मानव-योजनामें भी कोई भूमिका मिल सकती है?—मेरा प्रश्न हो तो सचमुच मैं कब कहाँ हूँ—मैं कहीं हूँ भी, नहीं जानता, किन्तु प्रश्न यदि तेरा हो तो फिर कोई प्रश्न ही कहाँ है? जो सब कुछ मुझसे बाहर है, वह सब कुछ तो तेरे भीतर ही है न!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्यु, भालोबाशाबाशी और श्यामबाज़ारमें कुहासा

सन्दीपन चट्टोपाध्याय

बंगालकी नयी पीढ़ीमें विशेष चर्चित कथाकार। शुरूमें भूखी पीढ़ीसे सम्बन्धित थे, अब वह कहते हैं, 'आमि हंग्री नेई'।

पीछे-पीछे कौन ?

बारीन अस्पतालमें है, उसे देखने गया था। जाते समय नहीं देखा, आवर्स खत्म होनेपर लौटते समय देखा; अँधेरा है। अँधेरा और जनस्रोतको एक साथ देखकर चौंक गया। सब समझता हूँ। जो समझना है, उसे सबोंने समझा है। अँधेरे और जनस्रोतकी ओर एक बार अच्छी तरह देख लेनेपर सब कुछ समझा जा सकता है। किसीको भी कुछ समझाना नहीं पड़ेगा। इस फ़ुटपाथसे उस फ़ुटपाथ तक दलबद्ध रूपमें लोग चले जा रहे हैं, कोई भी अकेला नहीं चलता।

वे क्यों उस गलीसे प्रवेश करते हैं और उस गलीसे निकल आते हैं ? गलीके मुँहसे पाँच जोड़े सिर दोनों तरफ़ देख लेनेके बाद ही क्यों सेण्ट्रल एवेन्यू पर पाँव बढ़ाते हैं?

सब एक दूसरेसे आगे निकल जाना चाहते हैं। क्यों ? क्यों ?

उनके पीछे कौन :

बारीनकी बहन भी अस्पताल गयी थी। मैंने उसे पिछली बार तब देखा था जब वह फ्रॉक पहनती थी। मैं उससे कहता हूँ, "चलो तुम्हें पहुँचा दूँ।" सतर्क होकर कहता हूँ ताकि कोई सुन न ले। सभी सब समय कुछ-न-कुछ बोलते हैं किन्तु देर तक कोई किसीकी बात नहीं सुनता। इस उम्रमें मालिगनाण्ट हवाके टेन्शन होनेपर सभी देशोंमें उम्र तमाम हो जाती है। छः सप्ताह बारीन और तीन सप्ताह बचेगा।

मैं : "एक नयी दवाके आ जानेकी बात है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्युशय्यासे भर्त्सनाके स्वरमें बारीन मुझको कहता है—"सान्त्वना दे रहे हो ?" कहकर वह बिलकुल चुप हो जाता है।

रिक्शामें हम हैं। कोई भी हमारी ओर ध्यान नहीं देता। दौड़ते सेण्ट्रल ऐवेन्यू-के फुटपायसे सटा-ढँका हुआ एक विवेकहीन रिक्शा क्रमशः एकके बाद एक लैम्पपोस्टोंको और उसके बीचके अँधेरोंको पार करता है, इस ओर कोई ध्यान नहीं देता। बारीन अस्पतालमें है। आज उसे देखने गया था।

कलकत्ता, दिसम्बर १३।'६१

■

मेरी असुविधामें :

आज सिंहासन पकड़कर बैठा हुआ है मेरा भारी और बृहद् मस्तिष्क, मस्तिष्क,··· मस्तिष्क···मेरा अपरित्यक्त शत्रु। उसे खींचकर उतारनेका साहस हृदयको नहीं है। आज कौन किसके आसनपर बैठा है !

कलकत्ता, जनवरी २२।'६२

■

श्यामबाजारमें कुहासा :

मौसम रिपोर्ट ठीक नहीं है। खून दिया गया है। छेनाके पानी-जैसा नीला, कुहासेमें श्यामबाजार डूबा हुआ है।

कलकत्ता, फ़रवरी ११।'६२

■

आत्मविज्ञप्ति :

आज पूरे दिन कोई परिश्रम नहीं किया। पूरे दिन पास एक पैसा भी नहीं था, पूरे दिन-भर एक नया पैसा खर्च भी नहीं हुआ। पिछली रातको एक पाकेट चारमिनार खरीदा था। अभी आधी रातको आखिरी सिगरेट पी रहा हूँ। बहुत देर तक लगातार कश लेता हूँ। खाँटी भारतीय दिन।

शरीरकी बात याद आती है, जैसे कितनी दूरकी बात हो। कहाँ हो तुम शरीर ! अच्छे नहीं हो जानता हूँ, इतने चुप हो।

कलकत्ता, अप्रैल ६।'६२

■

'तुमने क्या अपना जहाज़ तैयार किया है, तुमने क्या अपना···ऐ. तुम अपना जहाज तैयार करो, क्योंकि तुम्हारी ज़रूरत जहाज़में होगी।'

कलकत्ता, मई १६।'६२

■

माँ ! ओह: ! भगवान्···

मैं। (दाँत दाबकर) चुप रहो !

माँ। (दोनों हाथ उठाकर) भगवान्, भले ही रिसे····मगर जानसे न जाये···

एकगि लाससे माँके मुँहमें पानी उड़ेलता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हूँ। माँ मेरे मुँहपर एक चपत मारती है। गिलासमें पानी नहीं था।

कलकत्ता, जून २।'६२

■

आज सबेरेसे ही मेघ-जैसा हू-हू-कर दुःखोंका ज्वार चला आ रहा है।

समुद्रतीर, पुरी, जुलाई २२।'६२

■

दोनों पाँवोंके नीचे जितनी ज़मीन लिये खड़ा हूँ, मेरी पृथ्वी उतनी ही है एवं पाँवसे सिर तक····यही मेरा समग्र जीवन है। शराबकी दुकानपर एक डामने मेरे हाथ-पाँव और पंजरकी ढीली हड्डी देखकर मेरे सरपर ठोका मारकर, हिक़ारतसे मुझको अपनी हड्डियोंका उठान कह था। कहा था, 'तुम्हारी हड्डियोंको बेचनेपर, चौदह रुपया मिल सकता है।' भीगी रेतपर समुद्र किनारे खड़ा होकर जन्मसे मृत्यु पर्यन्त अपने इस शरीरमय समस्त जीवनका पूर्ण विवेचन कर देखता हूँ।

शरीरमय समस्त जीवनमें सिर्फ़ दोनों हाथ ही मज़बूत लगते हैं। इसकी क्रिया क्या है? कमज़ोर और आउट-साइज़ इन दोनों हाथोंको लेकर मैं क्या कर पाऊँगा, समझ नहीं पाता।

समुद्रतीर, पुरी, जुलाई २३।'६२

■

सोचता हूँ, जीवनमें नारी सम्बन्धी समस्त माँगोंको कैसे छोड़ सकता हूँ।

कलकत्ता, अगस्त १९६२

■

मृत्यु :

मृत्युके सम्बन्धमें प्रधान चेतना है; १—मृ एक आक्रमण है। २—अचानक भले ही आये लेकिन गोपनीय नहीं रहती, पहले ही घोषणा हो चुकी होती है। ३—एक ही साथ कई आदमियोंकी मृत्यु नहीं हो सकती। मृत्यु एक-एककर, एक बारमें सिर्फ़ एक आदमीपर आक्रमण करती है। समस्त मनुष्योंको एक साथ परास्त करनेकी क्षमता मृत्युमें नहीं है।

कलकत्ता, सितम्बर १९६२

■

वेश्या :

वेश्याके घर आईना रहेगा ही, आदमक़द आईना, छोटे-बड़े सब तरहके आईने, क़ीमती या सस्ते आईने! एक-एक आला नक़्क़ाशी वाला। खानेकी चीज़ें शायद ही न हों लेकिन बरतन तो रहते ही हैं। काँचके, चाँदी के और पीतलके भी। वेश्याके सम्बन्धमें आवश्यक तथ्य ये ही हो सकते हैं: १—वह उपहार पाना पसन्द करती है; २—उसके भी 'सोल' है; ३—उसका कुछ लज्जाहीनता-जैसा है, ४—वह मौलिक निर्बोध है; ५—जिसके सामने कोई 'शर्म' न हो, किसी ऐसे मनुष्यकी कल्पना की जाय तो वह वही है।

कलकत्ता, अक्टूबर २।'६२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालोवाशाबाशी (प्यार-व्यार) :

मीराने लिखा है, 'तुम मेरे जीवनमें पहले क्यों नहीं आये ?' मैं आया इसे उसने मान लिया है। मैं उससे उसकी ग़लती नहीं मनवाऊँगा।

मैं उसकी चिट्ठी पाकर हो-हो कर हँस पड़ा था। यह हँसी भयावह है। यही हँसी हँसते-हँसते सुनिलराय अभी लुण्टिनीके पागल-खानेमें हैं, यह बात सोचकर भी हँसी-रुकती नहीं। ऐ, आये क्यों नहीं ? हा-हा-हा मुझे फिर हँसी आती है। कौन, किससे क्या प्रश्न कर रहा है !!

कलकत्ता, नवम्बर ५।'६२

एक ग्रोटेस्क : १९६५ से

दमदमरोड पर सिनेमाका एक बहुत बड़ा बैनर लिये दो क़ुली जा रहे हैं। बैनरकी पेंटिंगके ऊपर बने साँप, फूल, असि-युद्ध, समवेत नृत्य, मेघ और चाँदके ऊपर टिपटिप वर्षा हो रही है—आज वसंतपंचमीके दिन उसके नीचे बिना अनुमतिके चली आयी है हल्दी रंगकी साड़ी पहने एक लड़की और सफेद शर्ट-पैण्ट पहने दो बच्चे, सम्भवतः भाई-बहन हैं। बैनरके साथ बड़े ही खुश होकर चलते हैं। उनके सिरके ऊपर टिपटिप वर्षाके बीच नायक और नायिका फैली हुई बालूपर चलते हुए परस्पर एक दूसरेकी ओर जा रहे हैं……

वसंत पंचमी, फरवरी ६।'६५

राजपाल एण्ड सन्ज़
द्वारा प्रकाशित

संसारके महान् उपन्यास :

सं० रांगेय राघव १०.००
चाँदीका घाव : कृश्नचन्दर ४.५०
एक गधा नेफ़ामें : ,, ३.५०
जागरण : मन्मथनाथ गुप्त ३.५०
प्रतिशोध : नानकसिंह ३.५०
एक रहस्य एक सत्य : नानकसिंह २.००
एक म्यान दो तलवारें : ,, ५.००
लौटती लहरोंकी बाँसुरी : भारतभूषण अग्रवाल ३.००
डॉ० सदाशिव : वनफूल ३.००
नदी : विश्वम्भर मानव ३.००
टूटते बन्धन : भगवती प्रसाद वाजपेयी ४.००

कुछ नये उपन्यास

उग्रतारा : नागार्जुन २.५०
एक थी अनीता : अमृता प्रीतम ३.००
एक इञ्च मुसकान : राजेन्द्र यादव, मन्नू भण्डारी ६.००
प्रतिशोध : गुरुदत्त ४.००
निर्माण पथ : ,, ६.००
ये जाने अनजाने : छेदीलाल गुप्त ३.००
खिलती कली : मामा बरेरकर ३.२५
सात समुन्दर पार : मुल्कराज आनन्द ६.००
गाँव : ,, ५.५०
राधा : ताराशंकर बैनर्जी ४.००

राजपाल एण्ड सन्ज़
कश्मीरी गेट, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चरचा

भूखी पीढ़ीके नाराज़ हस्ताक्षर

देवी राय, सुबिमल बसाक

उनकी अपनी क़लमसे

'भूखी पीढ़ी' की चरचा इधर कई पत्र-पत्रिकाओंमें विशेष उद्‌घोषके साथ आयी है। प्रायः पूछा जाता है—'बंगालकी भूखी पीढ़ीके प्रतिनिधि ये कौन लोग हैं ? क्या चाहते हैं ? इनके साहित्यिक मूल्य क्या हैं ? या ये नयी चार्वाकताके उद्दण्ड पण्डे हैं जो मूल्यहीनताको ही जीवन-का श्रेष्ठ मूल्य मानते हैं और आग्रहके साथ दूसरोंसे मनवाना चाहते हैं ?'

हमने बंगालकी 'भूखी पीढ़ी' के दो प्रमुख प्रतिनिधियोंको निमन्त्रित किया कि वे अपनी बात साधिकार रूपमें रखें—ऐसी शैली और भाषामें कि सामान्य पाठक भी उसे समझ सकें और ज्ञानोदय उसे छाप सके।

कला, अलजीब और हमारी पीढ़ी :

नारीसे अभी कलाकी ओर जाना ही मैं श्रेय समझता हूँ। नारी जीवनानन्द दासने जिसे 'मेये मानुष' कहा है, मेरा हाथ पकड़ लेती है—सुनो, यही प्रेम एक दिन साधना था। इसी प्रेमने कलाके साथ प्रतिद्वन्द्विता करनेकी बार-बार कोशिश की है! भूल और कीचड़—यह प्रेम, सब छोड़कर एक दिन मैं अपने पास चली आयी। मेरा जो कुछ है, उसीको देखकर !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तुमको ?"

एक दिन यही सोचा था—! मैंने बड़ी भूल की है। गहरे हृदयके सिंहासन पर किसका आसन है ?

मेरा श्रेष्ठ स्थान कलाके पास है, यह जानते बहुत वर्ष लग गया था। यह विच्छिन्नता सहज ही नहीं हुई थी। बहुत श्रम लगा था। आज मेरा शरीर टूट रहा है। आज मैं टेढ़े-मेढ़े अक्षरोंमें राशि की राशि व्यर्थता लिखना नहीं चाहता। कलाजगत्के स्वप्नसे हमेशाके लिए मैंने यह खोज लिया है। एक पता मनमें लिये-लिये डगर-डगर, अकेला-अकेला मैं चलता हूँ। चलते-चलते हठात् एक दिन जान सका—पथ और रास्तेके बीचका दुस्तर पार्थक्य ! मैं इतने दिनों तक क्यों सोया था ? 'पिरामिड' के बीच मैं एक दिन यह जान सका था।

'पिरामिड' का हिन्दी अनुवाद फणीश्वर नाथ रेणु कर रहे हैं। स्पेनिशमें माइकेल ग्रिनबर्गने किया है। यह बँगलामें अबतक प्रकाशित नहीं हुआ।

कला और साहित्य कभी भी अश्लील नहीं हो सकता !

आज किसी भी पत्रिकाका पृष्ठ खोलते ही ६०वें परिच्छेद या ७२वें परिच्छेदसे युक्त धारावाहिक उपन्यास ही मिलेगा। इन पर 'ऐतिहासिक', 'एपिक' आदिका लेबल रहेगा। इसीके जवाबमें दस पृष्ठका 'उपनरक' या अड़सठ पृष्ठके उपन्यास 'उपनायक पार्श्व-चरित्र' आदि लिखा है, जिसे कोई बंगला-प्रकाशक छापनेको तैयार नहीं। 'संविति' पत्रिकाके कवि-सम्पादक उत्पल चौधुरीने छापनेके लिए आग्रह किया है। लगता है हिन्दी और मराठीमें पहले छप जायेगा—प्रत्युत्तरके रूपमें। और अन्तमें जाकर बंगलामें छपेगा।

यह सोचते ही भय लगता है कि किस तरह फ़रमेके फ़रमे ये पापुलर लेखक (?) भरते जा रहे हैं। हमारे देशके पुस्तक-प्रकाशक आश्चर्यजनक रूपसे ऐसे लेखकोंके प्रति आग्रहशील हैं। हमें कुछ नहीं कहना है। आज जिसकी जो इच्छा है, वही करता जा रहा है। कहनेकी बहुत बातें हैं। यह सब जानते हैं कि सितम्बर १९६४ में हंगेरी जेनरेशनके पाँच कवियोंको गिरफ़्तार किया गया था। मैं, मलय और समीर सरकारी कर्मचारी होनेके कारण नौकरीसे आज भी बर्खास्त हैं। हमें अश्लीलताके अपराधमें अभियुक्त बनाया गया है। बंगलाके लेखक इस विषय पर आश्चर्यजनक रूपसे चुप हैं। क्षमताके लेखक सहायतामें आगे आये हैं। बंगलाके बाहरके लेखकोंने हमारे बारेमें लिखा है। जैसे खुशवन्त सिंह—'काउण्ट ऑन मार्क सपोर्ट' और वाशिंगटनसे हवार्ड मेकार्डने—'वर्ड्स आर दि वर्ड्स ऑफ़ ए पोएट' लिखा है। सिटी लाइट्,ए जरनलके कवि और प्रकाशक लारेन्स फालिंग चेट्टीने लिखा है। पूनासे अशोक साहनीने लिखा है—'इन लोगोंकी कविताएँ हमारी पत्रिकामें छप रही हैं, देखें, कौन क्या कहता है।' 'लिंक', 'नाऊ' और 'टाईम' ने लिखा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फणीश्वर नाथ रेणुने लिखा है—"यह निःसन्देह एक भारतीय साहित्यिक आन्दोलन है।" ('मराल', बनारस। इस पत्रिकामें हमारी कुछ रचनाएँ भी अनूदित होकर आयी हैं।) राजकमल चौधरी और लक्ष्मीनारायण मिश्रने 'धर्मयुग' में हमारे सम्बन्धमें लिखा है। उसमें हमारी कुछ कविताएँ और तसवीर भी है। बंगला दैनिक 'युगान्तर'ने लिखा है—"पुराना ईश्वर और पाप-पुण्य-आश्रित जीवनबोधके साथ वास्तविक लाभा-लाभ और जैव-अधिकार-मूलक वैज्ञानिकबोध-के जिस द्वन्द्वने इस युगके अन्तरको आलोड़ित किया है, ये लोग उसीकी उत्क्षिप्त फ़सल हैं...!" साप्ताहिक अमृतने लिखा—"यह बात नहीं कहूँगा कि इन युवकोंमें साहित्यिक क्षमता नहीं है।"

कला या साहित्य निश्चय ही कोई बाक्सिंग नहीं है कि नाभिसे नीचे घूसा मारनेसे फ़ाउल हो जायेगा। एक मेडिकल विद्यार्थी निश्चय ही 'जरायु' या 'स्तन' विषयक परि-च्छेदको छोड़ नहीं देगा। एक लेखक या कवि के समक्ष भी यही बात है। यह बात सब लोग जानते हैं कि शिवरात्रिके दिन विभिन्न स्थानोंसे यात्रियोंकी सुविधाके लिए स्पेशल ट्रेनें चलती हैं। शिवलिंगके अर्थके बारेमें सब लोग अवगत हैं।

आज मैं या मुझ-जैसे अनेक ही अल-जीभ-हीन हैं, और सबके सब हवाई युवकोंकी हँसी देखते हैं। क्योंकि सबने नहीं, बल्कि हममें-से किसी-किसीने वास्तविक जीवनके बदले एक कविताकी आशा की थी या आज भी करते हैं। हम अपने पास विशिष्ट दैनिक रखते हैं, मगर पढ़ते नहीं। कैलकटा-फिल्म-सोसाइटीके शोमें जाते हैं या जो जाते हैं, उन्हें हम देखते हैं, उस वक़्त मैं या मुझ-जैसे लोग इस प्राणहीन मलिन समाजसे इसके सिवा और क्या चाहते हैं?

"इस दशकका श्रेष्ठतम मधुर उपन्यास या एपिक या युग-प्रवर्तक सामाजिक..." यह राष्ट्रीय विज्ञापन आज भी हमारे देशके लेखक (!) या उनके प्रकाशक करते जा रहे हैं। श्री कुमार बन्द्योपाध्याय या हरप्रसाद मित्र या प्रमथ बिशी या...ये सब आज चुप हैं। सम्भवतः बोलनेसे कार्य नहीं सधता। लिटरेट पाठकोंकी संख्या क्रमशः बढ़ रही है। कलाका मान निम्नोन्मुखी होता जा रहा है। इसलिए 'भेता बंगाली' पाठक आज बाज़ारसे कई रुपयेकी मछली खरीदकर अपने घर वापस लौट जाना चाहता है। और जो लोग आज भी यह कहकर बाज़ार गरम रखना चाहते हैं कि एक दिन हमारा पृष्ठ-पोषक 'अमुक' थे या जिन्होंने कभी भी अपना ही मुँह नहीं देखा या देखनेकी कोशिश नहीं की या परिश्रमका धन्धा समझकर कुछ दूर जानेके बाद अन्तमें हॉल छोड़ दिया, वैसे लोगोंने एक-एक सुन्दरी तरुणी खोज-खोजकर विवाह कर लिया। ये सब बुद्धिजीवी आश्चर्यजनक रूप-से आत्मप्रचारक हैं। इन्हीं स्वप्नविलासियोंके कारण ही कितने लोगोंको ग़लतफ़हमी हुई थी। ये कॉफ़ी-हाउसमें कुछ और कहते हैं और स्वयं बीमार होनेकी खबर बन्धु-बान्धवोंको भेजते रहते हैं, इनमें कितने आज भी कॉफ़ी-हाउस-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को ही बंगाल समझते हैं। और कहते हैं—"मैं हंग्री-जेनरेशन नहीं हूँ, मैं तो 'सिक्' (बीमार) जेनरेशन हूँ।" पुलिसके हस्तक्षेप-पर भयभीत हो राजसाक्षी बनते हैं, माथा झुकाकर बयान दे आते हैं—'अबतक जो लिखा है, वह अज्ञानता है आदि।' इन्हींके लिए हमने 'मुखौटा' की ज़रूरत महसूस की थी। और लिखा था — 'मुखौटा उतारिये !'

ज़िन्दा रहनेमें कोई मज़ा नहीं, यह जान-कर भी मनुष्य मृत्युपर्यन्त ज़िन्दा रहनेकी कोशिश करता है। अपने निजके आश्चर्य-जनक सत्यके उद्घाटनके लिए अपने अस्तित्व-के विरुद्ध विद्रोह करता है। खोंच-खोंचकर अपने-आपको ही ज़ख्मी करता है। अपना असली चेहरा उघाड़कर सामने रखनेके सिवाय हम लोगोंको और कुछ नहीं करना है। इसीलिए मैंने 'उपनरक' में लिखा था—"शरीर न प्राप्त करनेपर मैं अच्छा आदमी कैसे बन सकता हूँ। प्रकृतिसे मैं आदिम प्रेम सीखूँगा, बाँये हाथसे किरानी और दाहिने हाथसे लेखक और 'वेटिंग फ़ार दि ग्रेट इवेण्ट्स'..." यह सब लिखा था एक दिन, याद आता है।

कोई मित्र नहीं है। किसीका भी नहीं होता। खुदसे संयोग स्थापित करनेका नाम ही कविता है। कुछ दिन पहले मलय चौधुरी-का काव्य-ग्रन्थ 'शैतानेर मुख' प्रकाशित किया गया है। एकमात्र कविताके सिवाय और कोई भी मेरा आत्मीय नहीं—इस काव्यग्रन्थको पढ़कर मेरी यही धारणा बनी थी। मलयके अलावा किसी भी कविको काला रूमाल व्यवहार करते मैंने नहीं देखा। अपनी कुछ पुरानी कविताओंको सुधारकर प्रकाशित कराने और प्रशंसा अर्जित करनेकी कोशिश मैंने ही की थी, उत्पल कुमार बसुकी 'हरी सिरिज' सर्वप्रथम 'मोहानजोदाड़ो' में पढ़ा था। तभी फ़ोन करके उसको बधाई दी थी। उत्पल और मलय ही अभी एकमात्र 'पायनियर' कवि हैं। डिक्शन और पारमानेलिटी इनके यहाँ हैं। साहित्यमें एक तरहकी भीतरी राजनीति है। शैलेश्वर घोष एक कविताको नष्ट करनेमें दूसरी कविताको जन्म दे रहा है। सुभाष घोषकी रचनामें ज़िन्दगी की बात बिलकुल नहीं है। फलस्वरूप वह यान्त्रिक है।

बहुत दिनोंतक स्नान न करनेके बाद सिर्फ़ साबुनसे माथा धोते हुए मैंने समीर रायको देखा है। उसके क़दमोंकी चाल संयत और गम्भीर है। एक दिन रंजनपाड़ामें वासुदेवदास गुप्तने हनीके प्रति समीर राय चौधुरीकी सजग दृष्टि देखी थी।...

शेष 'मेरा' या 'हमारा' जो कुछ भी अच्छा है, वह सब कलाके लिए समर्पित है।

—ढ़ेजो रा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता, जो हमलोग चाहते हैं :

राजकमल चौधरी मुक्तिबोधका देहान्त हो गया। कहीं कुछ नहीं बिगड़ा, सिर्फ़ हमलोग —जो कि जीवन और साहित्यको अलग-अलग रूपोंमें देखनेके अभ्यस्त नहीं हैं—इस मृत्युसे असहाय तथा कातर हो उठे। चार दीवारोंमें-से एक दीवार मानो टूट गयी। पत्र-पत्रिकाओंने स्मृति-तर्पण किये, कविताएँ लिखी गयीं छन्दोंमें। हाय कविता! जिसने अपने जीवनमें कभी भी छन्दोंको स्थान नहीं दिया उसीके बारेमें छन्दों, तुकबन्दियों और पद्यमें तर्पण! एक दशक पहलेके एक तथाकथित कथाकारने भी पद्य लिखे, और भूमिकामें कहा: 'इधर मन बहलानेके लिए कविता लिख रहा हूँ।' ओ, बेचारा मुक्तिबोध मरकर आराम पा गया है। आज ऐसा लग रहा है कि उसने आत्महत्या कर डाली। 'मन बहलानेके लिए कविता'! उफ़, कितना लोकिकाक है यह वाक्य! सिर्फ़ एक कविता ही हृदय पर घाव कर सकती है।

बंगला-साहित्यकी गति आज एकदम बदल चुकी है। विशेषकर कविताके क्षेत्रमें। नयी भावनाओंके साथ नये मानदण्ड स्थापित हो रहे हैं। कभी-कभी जड़त्वसे मुक्ति पानेके लिए साहित्यमें आन्दोलनकी सख़्त ज़रूरत आ पड़ती है। हम नये जीवन-बोधके रूपायनके लिए तत्पर हो उठते हैं। इन ज़रूरतोंकी उपलब्धिके लिए ही १९६२ में हंग्री-जेनरेशन नामक आन्दोलनकी नींव पड़ी थी।

हंग्री-जेनरेशन मूलतः काव्य-आन्दोलन है और यह क्षुधा कोई उदरीय क्षुधा नहीं है—बल्कि कलाकी, साहित्यके किसी भी रस की हो सकती है। जब मनुष्य क्षुधा अनुभव करते हैं, तो वे 'हाँ' किये हुए रहते हैं। क्षुधा कुछ नहीं, बल्कि एक तरहकी प्रतीक्षा है। कोई ईश्वरके लिए, कोई शैतानके लिए, कोई धर्मके लिए, कोई स्वयंके लिए—किसीको यह पता तक भी नहीं है कि प्रतीक्षा किसलिए, क्यों? प्रतीक्षा 'फॉर नथिंगनेस'—फिर भी वे प्रतीक्षा किये जाते हैं। ये जो प्रतीक्षाकी धारणाएँ हैं, उनमें ग्रहणीय-अग्रहणीय सब कुछ खा लेना चाहिए—यह है सर्वग्रास। मनुष्य अपना मेटाफिजिकल वैकुअम शरीर लिये पड़ा रहता है, मृत्यु तक वह 'हाँ' किये रहता है। समग्र अस्तित्वकी एक अजीब क्षुधा मनुष्यको दिनपर दिन मृत्युके क्षण तक जीवित रखती है। इन परिस्थितियोंमें हम सभी क्षुधार्त हैं। जीवनकी सभी उपलब्ध अनुभूतियाँ, समग्र विषय निर्विशेष हज़म कर उसे विशुद्ध रूपसे कवितामें प्रकाशित करना, कवितामें अपने अस्तित्वके विरुद्ध अपना ही विद्रोह, अपनेको ठीक रूपसे देखना तथा दिखाना, अपनेको प्रकटकर असल रूपमें दिखाना, समग्र अस्तित्वमें कविता रचना यानी सत्यके बिना कविताके साथ अब किसी प्रकारका सम्पर्क नहीं है।

हंग्रीयलिज़्मका उद्देश्य है सत्यवाद!

भूखी पीढ़ीके नाराज़ हस्ताक्षर : देवी राय, सुबिमल बसाक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदयकी ओरसे
आपके लिए निश्शुल्क उपहार :

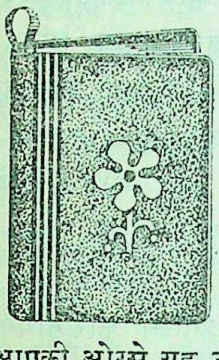

● नये वर्षकी एक ख़ूबसूरत डायरी–

अतिरिक्त मूल्य दिये बिना आप यह डायरी प्राप्त कर सकते हैं,

–यदि वर्ष-भरके लिए ज्ञानोदय किसीको उपहारमें दें।
–यदि विशेषांकमें प्रकाशित प्रश्नावलीका उत्तर भेजें।

–आपकी ओरसे यह उपहार कार्ड ●

आपके मित्र-परिचितको, जिसे आप वर्ष-भरके लिए ज्ञानोदय उपहारमें देना चाहें।

● ज्ञानोदयके संग्रहणीय विशेषांक –

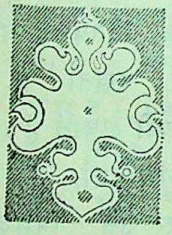

ग्राहक बनते ही कोई एक उपलब्ध विशेषांक आपके हाथों होगा :

★ समकालीन भारतीय कहानी विशेषांक : १९६४ ★ पत्र-विशेषांक : १९६३ ★ हास्य-व्यंग्य विशेषांक : १९६२ ★ नवोदित लेखिका विशेषांक १९६२ ★ भारतीय परिवार विशेषांक : १९६१ ★ भारतीय इतिहास कथा विशेषांक : १९६० ★ विज्ञान विशेषांक : १९५९ ★ प्रणय विशेषांक : १९५८ ★ संस्मरण विशेषांक : १९५७ ★ नैतिकता विशेषांक : १९५७ ★ आधुनिकता विशेषांक १९५६ ★ एशिया विशेषांक : १९५५

● ज्ञानपीठ पत्रिका

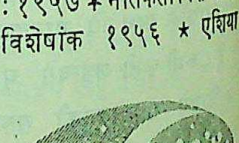

लेखन-प्रकाशनकी अधुनातन दिशा-प्रवृत्ति और उपलब्धि परिचायिनी मासिकी, वर्ष-भर आपको मिलेगी, यदि ज्ञानोदयके आप दो ग्राहक बना दें।

● भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

यदि आप तीन ग्राहक बना दें तो ५ रु० मूल्यकी और पांच ग्राहक बना दें तो १० रु० मूल्यकी मनपसन्द पुस्तकें उपहारमें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंगलामें कई वाद तथा स्तर अतिक्रम कर चुके हैं। रवीन्द्र-प्रभावसे मुक्त होनेके लिए कल्लोल-युगके कवियोंने 'देहवाद' पर ज़ोर दिया। फिर एक तरहकी अस्थिरता—प्रभावाद, रोमाण्टिसिज़्म, इमेजिज़्म, सुररियलिज़्म, दादाइज़्म—बहुतसे 'इज़्म' पार कर कविता अब स्थिर है। अब जो कुछ है, वह है सत्य, सत्य बिना कविताका कोई वस्तु-शिल्प नहीं है। ट्रु-इज़्मके बिना अब कोई 'इज़्म' नहीं है—इसलिए 'मैं' ही सब कुछ है। कवितामें 'मुझको' आविष्कार करना है सम्पूर्ण रूपसे। हृदयको मस्तिष्कके साथ, मस्तिष्कको हृदयके आसनमें बिठाकर इसके पहले किसीने देखा तक नहीं कि कैसा-क्या उपलब्ध होता है। कविता है 'ओपन सिक्रेसी', कविता लिखी जाती है उन्माद होने पर, और जो कविता पढ़ेंगे उनमें भी बोधाक्रान्त उन्माद-भाव रहना चाहिए। कविता रहेगी सिर्फ़ आत्मामें।

दिल, चाँद, फूल, पेड़-पौधे, कोयलकी पुकार, पायलकी झनकार, सितारे देखकर अब कविता नहीं लिखी जाती—यह सब इसके मर गये हैं। जीवनका कोई भी अर्थ निकालना आज बेकार है। जीवनका न अर्थ है, न कोई शिल्प ही। कवितामें रूपक, अलंकार, अनुप्रास, छन्द, उपमा सभी कुछ आज अर्थहीन हैं। सोच-सोचकर तुकबन्दी मिलाकर कविता नहीं लिखी जाती। शिल्प-के विरुद्ध युद्ध-घोषणा ही कविताके अस्तित्व-की पहली शर्त है। प्रथासिद्ध तराज़ूपर कविता नहीं लिखी जाती है। किसी चीज़-को देखकर हूबहू उसे लिख जानेको महज़ अनुकरण कहते हैं, कविता नहीं। हर 'रिपु' को चेतनामें एकत्रित कर उसका एक साथ विस्फोरण करना ही कला है, और कला आत्मीयताके साथ अनुकरणोंमें नहीं है। मनुष्य कलाकार हो जाने पर क्रमशः चारों ओर जीवनके नये मूल्यांकन खोजना शुरू कर देता है, फलस्वरूप अपने अन्दर उत्पन्न विषाद, यन्त्रणा, दण्ड, भोग, अत्याचार, आक्रमण, लुण्ठन, आनन्द आदिका निरीक्षण करता है। कविता समाजके नियम-क़ानून नहीं मानती, इसलिए कला कहलाती है। कलाके लिए ही समाज टिका रहता है। हंग्री-कविता 'स्ट्रेट फारवर्ड'—एकदम सीधे-सीधेवाली—कविता है।

कविता मनुष्यकी निजी वस्तु है, एकदम व्यक्तिगत जायदाद है—जीवित रहनेका अब कोई 'कॉज' नहीं है—मैं क्यों जीवित हूँ, मुझे क्या जरूरत थी—इन सब प्रश्नोंसे अच्छा या बुरा, सही या ग़लत तथा पाप-पुण्य, प्रेम-घृणा इन सब परस्पर-विरोधी वस्तुओं-की टक्करसे उत्पन्न भावनाओंसे ही कविता रची जाती है।

—सुबिमल बसाक

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय ज्ञानपीठ

के

दो अनूठे, नयनाभिराम, कलात्मक प्रकाशन

परिणय गीतिका

विवाहके विभिन्न अवसरोंपर गायेजानेवाले गीतोंका अपूर्व संकलन। पर ये गीत न प्रचलित गीतों-जैसे हैं न निरे साधारण ही, ये गीत विशेष हैं। इनमें एक ओर लोक गीतोंकी मधुरता और मोहकता महकती मिलेगी, तो दूसरी ओर साहित्यिक सुषमा और काव्यका रस। परम्पराओं और भावनाओंके साथ आजकी चेतना और काव्यका नया रस इनमें आ रमा है।

साथ ही, विवाह सम्बन्धी विभिन्न रस्मों-की संक्षिप्त जानकारी भी दे दी गयी है और प्रत्येक गीतकी भरसक व्यवस्थित स्वरलिपि भी।

भारतीय ज्ञानपीठका यह प्रकाशन साहित्य-में अपने प्रकारकी सर्वप्रथम कृति है: रुचिर, कलात्मक, उपयोगी।
उपहारमें देने-लेने योग्य! घर-घरमें प्रति होना आवश्यक!! मूल्य ५.००

शैशवांकन

शिशुके जन्मोत्सव पर होनेवाले आयो-जनोंकी शोभा स्मरणीय होती है। बाल-विकासका प्रत्येक चरण विस्मयकर है। इन आयोजनोंकी स्मृतिको और शिशुकी विकास-प्रगतिको मोहक तथा कलात्मक ढंगसे अंकित करके सुरक्षित रखनेकी इच्छा प्रत्येक माता-पिताके लिए स्वाभा-विक है।

'शैशवांकन'में जन्मोत्सवसे सम्बन्धित अवसरोंका तथा शिशुकी उत्तरोत्तर प्रगतिका लेखा आयोजित है। 'शैशवांकन' मधुर स्मृतियों एवं उपयोगी तथ्योंके संर-क्षणके लिए तथा स्नेह-आशीषकी अभि-व्यक्तिके लिए सर्वथा नया और प्रीतिकर उपहार है। अपने शिशुके लिए स्वयं बरतें! और अपनोंको उपयोग करनेके लिए भेंट करें। मूल्य १२.००

अपने यहाँके अच्छे पुस्तक-विक्रेतासे प्रतियाँ प्राप्त करें
अथवा किसी निम्न स्थानसे मँगायें

भारतीय ज्ञानपीठ

प्रधान कार्यालय : ९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता – २७
विक्रय केन्द्र : ३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, दिल्ली – ६
टेलेफ़ोन : कलकत्ता – ४५-४४३२ :: टेलेफोन : दिल्ली-२७२५८२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रान्ति, विसंगति और कामूका विद्रोह-दर्शन

कुबेरनाथ राय

चिन्तन-दर्शन और ललित लेखनमें विशेष रुचि। समग्र भाषाके धनी। नलबारी कॉलेज आसाममें प्राध्यापक।

साहित्यिक महालसे जनक्रान्तिके ऊपर इधर अनेक नयी तजवीजें पेश हुई हैं। विद्रोह दर्शनके इन नये दावेदारोंमें कामूकी बौद्धिक अपील सबसे ताज़ी है। विसंगतियोंके जंजारमें अभिशप्त 'अकेले' मनुष्यकी करुणा-व्यथा ही उसके चिन्तन और साहित्यका विषय है। २०वीं शतीका मनुष्य आम तौर-से अपनेको क्रान्ति-पुत्र कहता फिरता है और समय-समयपर क्रान्तियोंकी अवतारणा भी करनेकी चेष्टा करता है। पर ले-देकर जो कुछ सामने आया है उसके अनुसार वह नास्तिवादी (निहिलिस्ट) या संशयकी सन्तान-सर ही सिद्ध हुआ है। भटकती आस्थाने प्रतिमा (ट्रान्सेण्डेन्स) के 'उर्ध्वमूलं अधो-शाखा' अश्वत्थके, जिसकी उर्ध्वमुखी जड़ें आसमानी सत्योंमें निहित थीं, धराशायी होने पर जन-क्रान्तिकी यूटोपियाके विशाल बरगदपर आश्रय लिया। यह शायद उसका अन्तिम बसेरा था। फिलहाल तो ऐसा ही लगता है। क्रान्तिके महानायकोंने इस विशाल यूटोपिया-बटको भी 'फांसीका दरख्त' बना दिया और मार्क्सवाद, नाज़ीवाद, लेनिनवाद, स्टालिनवादका चूना थोपना प्रारम्भ किया।* पर इस दरख्तकी डाल-डालपर बैठे हज़ार-

---

*मेरा मतलब 'हैङ्गमैन्स लाइम' से है। प्रो० गोककने डिलन टामसकी एक प्रसिद्ध कविताकी व्याख्या करते हुए हमें बताया था कि आज भी फाँसी यदि पुराने तरीक़ेसे दी जाती है तो रस्सीके आधार-दण्डपर 'चूना' थोपा जाता है और भारतवर्षमें सम्भवतः चावलके आटेका भी प्रयोग होता है। यों अपनी व्यक्तिगत जानकारी इस विषयमें कोई नहीं है। खेद है कि दोस्तोंमें भी कोई जेलर या जल्लाद नहीं है। सब बेचारे कवि या कहानीकार या शिक्षक ही हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हज़ार प्रेतोंकी काली परछाईं, जिनके बोझसे सारा वृक्ष ही काला पड़ गया है, इस मज़ाक-को सहन न कर सकीं और उन सूखी डालोंसे भी सत्य बोल उठा : 'हे जीवित, हे सम-कालीन ! हमने परम्परा-पुरुषकी जटासे जिस गंगाको मुक्त किया उसे मैनेजरों और टेकनोक्रैटोंके असंख्य जत्थे पी गये ! क्रान्ति भी विसंगत, मिथ्या, 'अबसर्ड' सिद्ध हुई !'

पर यह बेचारा जीवित, यह समकालीन करे तो क्या करे ? उसका आखिरी दाँव यही मार्क्सवादी क्रान्ति थी। उसे भी वह हार गया। गत महायुद्धोंकी विभीषिकाने उसके तन-मनको ऐसा पराजित कर दिया कि उसे न तो सनातन मूल्योंमें विश्वास रहा और न आदर्शोंकी वीरता और ईमानदारीमें। आज वह अकेले है या अकेले रहनेके लिए अभिशप्त है। पुरुषार्थ, लक्ष्य, न्याय, आदर्श, ईश्वर, लोक, राष्ट्र आदिमें-से कोई भी आधार उसके पास नहीं जिसपर वह खड़ा हो सके। वह त्रिशंकु है। उसके चारों ओर है विसंगतियों (अबसर्डिटीज़) का जगत। सब कुछ विसंगत, मिथ्या, अबसर्ड ! न केवल प्रजातन्त्र पाखण्ड है और नाज़ीवाद-साम्यवाद भयंकर नरमेघ हैं, बल्कि जीवनके दैनिक मामूली क्रिया-कलापोंमें भी यह विसंगति, यह पाखण्ड, यह अनर्थ स्पष्ट है। युक्ति-युक्त (रेशनल) ढंगसे सोचनेपर हम किसी एक निष्कर्षपर पहुँचते हैं और उसके अनुसार सारे ज्ञात कार्य-कारणके नियमोंका पालन करते हुए भी पाते हैं कि वास्तवमें घटित कुछ और ही हुआ, जो अति ही मुक्तिहीन, तर्कहीन, 'इरेशनल' है। रोटी बनाने लगते हैं, बन जाता है लोहचक्र ! मछली माँगते हैं तो हाथमें आ जाता है साँप। इस तरह हमारी सुस्थापित युक्ति-युक्तता कोई काम नहीं आती है। हमारे अन्तरकी रेशनल माँग और बाहर की इरेशनल घटनाएँ एवं अनुभव, इन में छोरोंके बीच कोई तारतम्यता नहीं है। इसी युक्ति-युक्तता और तारतम्यतासे हीन स्थिति को कामू विसंगत या 'अबसर्ड' कहता है। आज हमें स्वीकार कर लेना चाहिए कि जगतका ऋतचक्र वास्तवमें धुरीहीन है और जो कुछ घटित होता है वह दरअसल ऊल-जलूल, गड्डमड्ड और विसंगत है। इस ऊल-जलूलता (केऑस) और विसंगति (अबसर्डिटी) के अतिरिक्त जो कोई भी स्थापना है, भ्रामक है—उनपर आधारित जो नतीजे आये हैं वे सही नहीं साबित होते। मार्क्सवाद भी इसका अपवाद नहीं। क्रान्ति ने धोखा दे गयी क्योंकि हमने उसकी आधारभूत स्थापनाओं पर चरम विश्वास किया। पर इस अबसर्ड, विसंगत जगतमें चरम विश्वास है कहाँ ?

विसंगत स्थितिका व्यंग कामूके कहानी-संग्रह 'एक्ज़ाइल एण्ड द किंगडम' की एक कहानी 'द गेस्ट' (मेहमान) में बड़े स्पष्ट रूप से व्यक्त है। कहानीका नायक एक शिक्षक है। जिस गाँवमें पढ़ाता है वहाँ आस-पास अरबोंने विद्रोह किया है और शासनतन्त्र क्रूरतापूर्वक उन्हें दबा रहा है। एक दिन पुलिस-अधिकारी एक अरब बन्दीको लाकर देता है कि वह उसे उक्त पुलिस केन्द्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम चाहते हैं कि इञ्जीनियर बनें।
इस पथके वरणके लिए हम
स्वतन्त्र हैं। पर विसंगतियोंके जगतमें
हमारा सचमुच इञ्जीनियर बन
जाना अन्य कई तथ्योंसे सीमित है
जिसपर हमारे वरण का कोई दावा
नहीं है और हम बन जाते हैं कवि या
क्लर्क। अतः लगता है कि हमारा
वरण-स्वातन्त्र्य केवल चरम मूल्योंको अस्वीकृत
करके उन्हें ललकारने और अपनी
स्वेच्छासे पथ चुनने तक ही है। पर इसके
आगे मंज़िल तक पहुँचने की गारण्टी
वरण-स्वातन्त्र्य नहीं दे सकता।

पहुँचाए। (शिक्षकसे ऐसी माँग करना विसंगत है)। शिक्षक उस अरब बन्दीको बिलकुल निर्दोष और भोला-भाला पाता है। जानता है कि उक्त पुलिस-केन्द्रपर उसे व्यर्थ ही, अकारण ही मरना पड़ेगा। (विसंगतिका दूसरा बिन्दु)। वह चाहता है कि अरब रातको भाग जाये। वह सोनेका नाटच करता है। पर अरब तो भोजन करके सुखकी नींद सो रहा है। लगता है कि शिक्षक स्वयं बन्दी है अरब नहीं। (फिर विसंगति) सबेरे वह अरबको कुछ पैसे देता है और प्यारसे पाथेय देकर दो मार्ग बताता है—एक तो उस ओर ले जाता है जहाँ पुलिस-केन्द्र है, दूसरा उस ओर जहाँ पहुँचकर वह निरापद हो जायेगा। अरब स्वतः जिधर चाहे चला जाये। वह साथ नहीं जायेगा। अरब जानता है कि पुलिस-केन्द्रपर क्या होगा। उसे यहाँ 'वरण' की (च्वॉयसकी) पूरी स्वतन्त्रता है। पर आश्चर्य, अरब जिसपथकी ओर मुड़ता है, वह है पुलिस-केन्द्रवाला पथ, (भयंकर इरेशनल विसंगति)। शिक्षक लौट आता है। अरबोंकी टुकड़ी शिक्षकको खोज रही है, क्योंकि उनकी धारणा है कि शिक्षकने उनके आदमीको पुलिस-केन्द्रमें भेजा है—अर्थात् शिक्षक 'रोटी बनाने चलता है बन जाता है आतंक लौहचक्र।' (विसंगतिका यह चरम बिन्दु कहानीके अन्तमें संकेतमात्रसे दिया गया है।)

ऐसी विसंगतियोंके बीच कौन-सा मार्ग है? वर्तमान स्थितिसे फाँदकर विश्वासके खूलेपर चले जाओ—आस्था-प्लुति (कीर्कगार्द); और नहीं तो आत्मघात कर डालो। कामू कहता है कि दोनों ही मिथ्या-बोध हैं। विश्वासोन्मुख फाँद (लीप टुवार्ड्स फेथ = आस्था-प्लुति) भी एक तरहका मेटाफिजिकल, दार्शनिक ढंगका आत्मघात ही है। कीर्कगार्दने इस मार्गकी वकालत की है। परन्तु इसका अन्तिम छोर अतिमासम्बद्ध सत्ताओंसे संयुक्त है। और, विसंगतियोंके जगतमें न तो कोई ऋतकी धुरी है और न कोई अतिमा (ट्रान्सेण्डेन्स)-परक सत्ता है। अतः आस्था-प्लुति काल्पनिक 'यान' है। दूसरा हल आत्मघात भी ग़लत है, क्योंकि यह कोई हल नहीं बल्कि विसंगतियोंके प्रति आत्मसमर्पण है। मनुष्य अभिशप्त है सही पर इस नियमहीन, विसंगत और नियामकहीन (ईश्वरहीन) जगतमें वही नियामकका उत्तरदायित्व लेकर बैठा है। ऐसे जिम्मेवार को क्या उचित होगा—इस नियमहीनता, इस विसंगतिके प्रति आत्मार्पण कर दे? क्या ऐसी पराजय उसकी इस नयी जवाब-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देहीके अनुकूल होगा ? क्या नियामक होकर नियमहीनता, विसंगति, 'इर्रेशनलिटी'के प्रति आत्मार्पण ही सबसे बड़ा विसंगत, अबसर्ड कार्य नहीं होगा ? तब ? तब क्या तीसरा उपाय भी है, उपर्युक्त आस्था-प्लुति और आत्मघातके अलावे ? कामू कहता है—"हाँ, तीसरा मार्ग भी है और वह है 'विद्रोह'। विसंगतियोंके परिवेशमें ही रहकर नये मूल्योंकी रचनाका प्रयास।"

■

कामूने विद्रोह-दर्शनके साहित्यिक एवं दार्शनिक पक्षको 'मिथ ऑफ़ सिस्युफस'में व्यक्त किया है। यहाँ विद्रोहपर व्यक्तिपरक चिन्तन-दृष्टि है। पर विद्रोहपर समष्टिपरक चिन्तन-दृष्टि (अर्थात उसका राजनीतिक-आर्थिक पक्ष) उसके प्रसिद्ध ग्रन्थ 'विद्रोही' (द रिबेल) में मिलती है। 'द रिबेल' नाज़ी-आक्रमणके प्रति फ्रेञ्च-प्रतिरोधका अनुभव पा लेनेपर लिखा गया है और 'मिथ ऑफ़ सिस्युफस'की प्रारम्भिक मान्यताओंमें वहाँतक आते-आते कई संशोधन हो गये हैं। फिर भी यहाँपर एक समग्र चित्रको प्रस्तुत करनेके लिए प्रारम्भ बिन्दुसे ही हमारा चलना ठीक होगा और वह प्रारम्भ है—'मिथ ऑफ़ सिस्युफस'। ग्रीक मिथकोंमें सिस्युफस विसंगति-प्रबुद्ध मनुष्यका प्रतीक है। वह किसी आशा या भविष्यके मोहसे रिक्त है। अपनी नियति जानता है। फिर भी वह कर्मलीन है, जानते हुए भी कि कर्मफल शून्य ही होगा। कर्मफलके सूद-ब्याजकी अपेक्षा विसंगतियोंके बीच करना मूर्खता है। सब कर्म ही 'अबसर्ड' हैं। फिर भी वह कर्म करता जाता है। बिना किसी विभ्रम या पुरुषार्थ-भावके नित्य चिरन्तन कर्मके प्रति प्रतिबद्धता ही उसकी नियति है। यही हालत उस प्रत्येक व्यक्तिकी है जो विसंगतियोंकी व्याप्तिको जानता है फिर भी कर्म करता है !

मनुष्यकी इस विसंगत स्थितिकी आचार-संहिताके दो मुख्य तथ्य हैं : पारदर्शकता और सरलता। मनुष्य पारदर्शक और सरल (निर्दोष) है। पारदर्शक अर्थात् स्पष्ट-दृश्य। उसकी सारी अनुभूतियाँ, सारे विचार स्पष्ट दृश्य हैं—रहस्यमयतासे ढके नहीं हैं। उसकी पारदर्शकता ही सत्य है और उसके जीवनमें तथाकथित रहस्यमय निर्गुण कुछ काल्पनिक मात्र हैं। पारदर्शक स्थिति स्वीकृत अस्वीकृत करती है और तत्काल-स्पर्शगत

---

* कोरिन्थका महाधूर्त्त नृपति। जब यम इसे मृत्युदेश ले जानेके लिए आये तो वे भी इसीके फेरेमें पड़कर बन्दी हो गये। मरण-व्यापार ही रुक गया। अन्तमें युद्ध-देवता ओरसको ज्यूस (इन्द्र) ने भेजकर यमको मुक्त कराया। ऐसी अनेक बातोंके लिए [कहीं-कहीं उसके द्वारा हीरी (शची) के प्रति काम-चेष्टा का भी उल्लेख है] ज़्यूसने उसे यमलोकमें एक विशाल शिलाखण्डको ढकेलकर एक पर्वत-शिखरपर चढ़ानेकी सज़ा दी। वह शिलाखण्ड चोटीपर पहुँचते-पहुँचते सदैव ही फिर नीचे लुढ़क आता है, सिस्युफसको ढकेलते हुए। सिस्युफस फिर चढ़ाता है और फिर वही अधोमुखी पतन। यही क्रम निरन्तर चलता है। उद्देश्यहीन-आशाहीन कर्म।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विसंगति :: अ० ल० चोपड़ा

ज्ञान ही उसे स्वीकार है। एक अस्तित्ववादी, जो पारदर्शकताको मनुष्यकी स्थितिका मूल धर्म मानता है, उसी चीजकी सत्ता मानेगा जिसका तात्कालिक स्पर्श मन, मस्तिष्क या इन्द्रियोंको मिल सकता है। शेष ऊहापोह मात्र है, ज्ञानानुभूति नहीं। वह तत्काल-स्पर्श (इम्मेजियेट मीनिङ्ग) से परे किसीका अस्तित्व नहीं मानता। चरम सौन्दर्य, चरम प्यार, चरम आदर्श तथा शौर्य, करुणा-पुरुषार्थ आदि तात्कालिक अनुभूति और तत्काल-स्पर्शसे परे की बातें हैं, अतः विसंगति-दर्शनमें उन्हें मान्यता नहीं। **विसंगति-दर्शनका किसी भी चरम (एबसोल्यूट) मूल्यमें विश्वास नहीं। ऐसा विश्वास मृग-मरीचिका मात्र है।** मनुष्यकी स्थितिके बारेमें दूसरा तथ्य है उसकी सरलता। सरल अर्थात् निर्दोष, अर्थात् पापहीन। 'पापोहम् पापात्मा कामसंभवा' की ईसाई भावाराधना उसे स्वीकृत है। वह तो स्वभावसे ही सरल-वर्ती अर्थात् निर्दोष है। पर निर्दोषका अर्थ यहाँ यह नहीं कि वह उच्छृङ्खल आचरणके लिए स्वतन्त्र है क्योंकि 'दोष' तो कुछ है ही नहीं। यहाँपर निर्दोषका अर्थ निष्पाप होना है, क्योंकि पाप मनुष्यकी आत्महीनता-का कारण है। इस सीमित अर्थमें ही निर्दोषको लेना होगा। कामूने आगे चलकर ऐसा ही संशोधन किया है, क्योंकि नाजी-आक्रमण तथा रक्तपातको वह निर्दोष माननेको तैयार नहीं। (देखिए, कामूका लेटर टु ए जर्मन फ्रेण्ड')। इस प्रकार कामू पारदर्शकता और सरलताको मूल मानव-

स्वभावका धर्म (वृत्ति) स्वीकार करके सारे पूर्व स्थापित नैतिक एवं चरम (एब-सेल्यूट) मूल्योंको, जिनकी सगुण अनुभूति (तत्काल स्पर्श) नहीं हो पाती, ठोकर मार देता है। तत्काल अनुभूतिकी कसौटी पर नये मूल्योंकी स्थापना ही सच्चा 'विद्रोह' है—अतीतकी सारी धुरियोंको अस्वीकार करते हुए। केवल निजी अनुभूति ही ऐसे विद्रोहको साक्ष्य दे सकती है। कीर्कगार्दने इस भावदशाको 'आसुरी निराशा' (डेमनिक डिस्पेअर) कहा है।

यह प्रारम्भिक स्थापना है। फिर विद्रोह दर्शन आगे जाता है। विद्रोह की मूल प्रवृत्ति के साथ-साथ मनुष्यमें दो और प्रवृत्तियाँ विद्यमान हैं—'वरण-स्वातन्त्र्य' या कर्म-स्वातन्त्र्य और 'प्रगाढ़ जीवनकी लालसा'। प्रथम विद्रोहका मूर्त्तरूप है और द्वितीय विद्रोहको पीछेसे बल देती है। अतः समग्र मानवीय स्थितिमें दो मूल धर्म (वृत्ति) हैं: पारदर्शकता और सरलता (निष्पापत्व), तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस स्थितिमें मनुष्यकी तीन प्रवृत्तियां हैं : विद्रोह, वरण-स्वातन्त्र्य एवं प्रगाढ़ जीवनकी लालसा। यहाँ पर ध्यान देनेकी बात है कि ये प्रवृत्तियाँ जिस जगतमें क्रियाशील होंगी वह भी निश्चय ही विसंगतियोंका जगत है। ऐसी हालतमें न तो चरम विद्रोह हो सकता है और न चरम वरण-स्वातन्त्र्य या चरम प्रगाढ़ जीवन। 'चरम' (एब्सोल्यूट) रूपमें विसंगति-जगत्में कुछ भी नहीं है। उदाहरणके लिए वरण-स्वातन्त्र्य को लें। ज्याँ पाल सार्त्रने नोबेल-पुरस्कारको अस्वीकार कर दिया। यह उसका 'वरण' था। पर वरणके लिए चरम स्वतन्त्रता नहीं। स्वीडिश एकाडेमी उसे पुरस्कार देकर ही रही, उसके इस वरण के बावजूद भी। अच्छा, एक दूसरा छोटा उदाहरण लें : हम चाहते हैं कि इंजीनियर बने। इस पथके वरणके लिए हम स्वतन्त्र हैं। पर विसंगतियोंके जगतमें हमारा सचमुच इंजीनियर बन जाना अन्य कई तथ्योंसे सीमित है जिसपर हमारे वरणका कोई दावा नहीं है और हम बन जाते है कवि या क्लर्क। अतः लगता है कि हमारा वरण-स्वातन्त्र्य केवल चरम मूल्योंको अस्वीकृत करके उन्हें ललकारने और अपनी स्वेच्छासे पथ चुनने तक ही है। पर इसके आगे मंज़िल तक पहुँचनेकी गारण्टी वरण-स्वातन्त्र्य नहीं दे सकता। इसी प्रकार विद्रोह और प्रगाढ़ जीवन की लालसा भी इन विसंगतियों से सीमाबद्ध हैं। फिर भी हमारा आत्माभिमान हमें बाध्य करता है कि हम जो (ईश्वरकी अनुपस्थितिमें) नियामक हैं, आत्मघात न करें, इस विसंगति और नियमहीनताके प्रति आत्मार्पण न करें बल्कि विद्रोह करें। इसीमें हमारी शोभा है। कामूने इस वरण-स्वातन्त्र्य की तुलना उस व्यक्तिकी कर्म-स्वतन्त्रतासे की है जिसे फाँसीकी सज़ा सुना दी गयी हो पर सज़ाके पूर्व वह कर्मके लिए स्वतन्त्र है, जो चाहे सो करे। अभिशप्त मनुष्य, जो ईश्वर-हीन, सनातन मूल्योंसे हीन इस जगत्में निराधार अकेले रहनेके लिए अभिशप्त है, जिसने खुदाकी सारी ज़िम्मेवारी, ऋतचक्रके संचालनका दुःखद दायित्व अपने ऊपर ओढ़ लिया है, या तो आस्था-प्लुति करे नहीं तो आत्महत्या, नहीं तो विद्रोह। चौथा कोई मार्ग है ही नहीं। इन तीन मार्गोंमें सबसे निकट और श्रेयस्कर विद्रोह ही है।

■

'मिथ आफ़ सिस्युफस' में विद्रोहपर विशुद्ध साहित्यकार की दृष्टिसे विचार किया गया है। विशुद्ध साहित्यकारकी अनुभूतिका आधार 'स्व'-केन्द्रित दृष्टि ही होती है। पर विशुद्ध साहित्य स्वतः एक अबसर्डिटी—एक पाखण्ड—है, अपनेमें ही एक विरोधाभास है। यही कारण है कि 'मिथ आफ़ सिस्युफस' में प्रतिपादित विद्रोह-दर्शनके अन्दर पूरी समूची अस्तित्ववादी दृष्टिमें विशेष सन्दर्भोंकी ही पारदर्शकता, सरलता, विद्रोह, वरण-स्वातन्त्र्य और प्रगाढ जीवन सत्य प्रतीत होते हैं। वे सन्दर्भ व्यक्ति की सीमासे बद्ध हैं। व्यक्तिकी सीमाके बाहर जहाँ समूची की समस्याएँ आती हैं ये सब 'शुतुरमुर्ग-पुराण' ज्ञात होते हैं। इस शुतुरमुर्ग-पुराण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवास्तविकता समष्टिगत स्तरपर कामूको ही स्पष्ट हो गयी थी। गत महायुद्ध, नाज़ी क्रूरता, सोवियत-दमनके सन्दर्भमें 'मनुष्य साधारणतः और सरल अर्थात् निष्पाप है'—यह थीसिस फ़ेल कर गयी। कामूने इसको 'द लेटर टु ए जर्मन फ्रेण्ड' में महसूस किया है। साहित्यकार और दार्शनिककी चिन्ताका अनुपातगत दायित्व खूब ठीकसे पहचान कर उसने 'द रिबेल' (विद्रोही) में अपना नया दर्शनमत प्रस्तुत किया। वरण-स्वातन्त्र्यका व्यक्तिगत जीवनमें महत्त्व है पर समष्टिगत जीवनमें वरणकी स्वतन्त्रताका अर्थ है—नाज़ी क्रूरता और सोवियत-दमनकी स्वतन्त्रताको स्वीकृतमत मानना। यह बात 'प्रतिरोध' कालमें कामूको स्पष्ट हो गयी*। इसी समय उनके चिन्तनने एक नया मोड़ लिया।

कामूकी आत्मा मूलतः 'पेगन' है। उसका जन्म प्रकृतिकी घनी अलजीरियन रम्यतामें हुआ है। अलजीरियाके नया देश होनेके कारण ईसाई-संस्कारोंकी प्रगाढतासे वह वंचित रहा और सहज पेगन जीवन और इन्द्रियानुभूति-प्रधान जीवनका वह आन्तरिक समर्थक है। वह 'विद्रोह'को 'सही' अर्थमें ग्रीक दार्शनिकों यथा एपीक्यूरस या लुक्रेशियस-से पाता है। ईसाई-धर्म विद्रोह नहीं समझौता है। 'डिवाइन विल' (ईश्वरीय इच्छा) के साथ मनुष्यकी आत्माका समझौता। यह समझौता समय-समय पर रूमानवादियों, बोदलेयर, सुररियलिस्टों आदि द्वारा ललकारा गया है। पर यहाँ पर एक फ़र्क है। ग्रीक-दार्शनिकोंका विद्रोह 'समग्र मानवीय स्थिति' पर चिन्तनके कारण उत्पन्न है। पर बॉयरन, बोदलेयर या सुररियलिस्टोंका विद्रोह केवल 'स्व' की उत्तेजना है। इसीसे बॉयरन, बोदलेयर या सुररियलिस्टिक कवि-चित्रकार रुग्णता, विकृति तथा 'स्व'के भोगकी ओर झुके हैं, समग्र मानवीय स्थितिके सम्बन्धमें न उन्हें कोई चिन्ता है और न उनके पास कोई थीसिस है। कामूने यह बात बड़े स्पष्ट ढंगसे स्वीकार की है। यह उसकी बौद्धिक ईमानदारी है कि उक्त रूमानी या सुररिय-लिस्ट-विद्रोहमें 'स्व'की कीट-वृत्तिको 'कीट-वृत्ति' कहकर ही स्वीकारता है, उसपर दार्शनिक मुलम्मा नहीं चढ़ाता। परन्तु एक बात और साफ़ है कि कामूकी अपने विद्रोह-दर्शनकी 'स्व' केन्द्रित थीसिस (जो 'मिथ ऑफ़ सिस्युफस'में व्यक्त है) पर भी यही आलोचना बैठती है। यह भी समग्र मानवीय स्थितिकी चिन्ताका प्रतिफल नहीं है। यह पापकी अभ्यर्थना नहीं करता पर 'स्व'का

---

*कहना है कि कामू यहाँपर विद्रोह की नयी थ्योरी प्रस्तुत कर रहा है जिसका सरलता (निष्पा-ला) और वरण-स्वातन्त्र्य आदिसे कोई सम्बन्ध नहीं। 'मिथ ऑफ़ सिस्युफस' और 'द रिबेल' दोनों के दृष्टिकोण दो अलग चक्र स्वीकृत हैं जिनके बीच संयोजक धुरीका अभाव है। दोनों धारणाओंमें सम्बन्ध नहीं हो पाता। फिर भी अन्ततक कामू अस्तित्ववादी ही रहा। क्योंकि विद्रोहकी नयी थीसिसका भी आधार है: 'मनुष्य' को अस्तित्ववादी अभिशप्त स्थिति, जिसमें कोई भी चरम मूल्य नहीं है। अतः मार्क्सवादी या नाज़ी यूटोपियाको चरम मूल्य मानकर क्रान्ति लाना ही भूल हुई।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोग यह भी है और स्व का भोग सदैव विकृतिकी ओर ही जाता है अथवा जानेकी प्रवृत्ति रखता है।

ग्रीक-दार्शनिकोंका समग्र मानवीय स्थिति-से उत्प्रेरित विद्रोह हो या सुररियलिस्टोंका 'स्व'-उत्तेजित विद्रोह, दोनों ही 'दार्शनिक विद्रोह' (मेटाफिजिकल रिवोल्ट) हैं। इसी 'मेटाफिजिकल रिवोल्ट'ने नीत्शेके मुखसे घोषित करवाया : "ईश्वर मर गया। मनुष्य अकेले हैं। अब वही विधाता है – मूल्योंके सृजन और शोधकी सारी ज़िम्मेदारी उसी पर है ! अकेले-अकेले।" दार्शनिक विद्रोहने मनुष्यकी इस नयी स्थितिकी चेतना उसे प्रदान की। पर साथ ही उसको समुदायगत उत्तरदायित्वका बोध हुआ। वह एक नया आधार ढूंढ़ने लगा, जो 'ईश्वर'के स्थानपर नये मूल्योंकी आधारभूमि बन सके। वह नया आधार, उसे लगा कि, मनुष्यके अस्तित्व का मूर्त्तरूप 'इतिहास' है। अतः ईश्वरके स्थानपर 'इतिहास' प्रतिष्ठित हुआ। इतिहास—शक्तिकी गतिशीलताका सिद्धान्त, इतिहास-चक्रने ही दैवी-चक्रका स्थान ले। लिया। मनुष्य इस इतिहास-चक्र (लॉज ऑफ़ हिस्टारिकल फ़ोर्सेज़) को आधार मानकर दो प्रकारके नये मूल्य-समूह प्राप्त किये : नाज़ी-फ़ासिस्ट और मार्क्सवादी। इन नये मूल्योंकी स्थापना की इच्छासे वह क्रान्तियाँ लाया जिससे इतिहास-चक्र आगे बढ़ सके, उसकी गति तेज़ हो जाये। ईश्वरको अस्वीकृत करके इतिहास-चक्रकी आराधना पर आधृत विद्रोहको कामूने 'ऐतिहासिक विद्रोह'की संज्ञा दी है। यह राजनीतिक-आर्थिक विद्रोह है।

यहाँ पर कामूने 'क्रान्ति' और 'विद्रोह'में सूक्ष्म भेद किया है। इस भेदको सदैव दृष्टिगत रखना आवश्यक है। क्रान्ति एक पूर्व निश्चित दर्शनको लेकर आगे बढ़ती है। एक निर्गुण यूटोपिया, जिसकी सगुण अनुभूति भविष्यका स्वप्न है, एक ऐब्स्ट्रैक्ट थ्योरी ही उसका आधार है। क्रान्ति अपनी निर्माणा-**वस्थामें और विजयके बाद उस पूर्वनिश्चित यूटोपिया या थ्योरीके प्रत्येक अंशको चरम अर्थों में देखने लगती है।** उदाहरणके लिए मार्क्सवाद और नाज़ीवाद दोनों 'राज' और 'समुदाय'को चरम सत्ता (ऐबसोल्यूट वैल्यू) मानते हैं। ये 'न्याय', 'मुक्ति' आदि को भी चरम अर्थोंमें लेते हैं। मज़दूर-दर्शन 'चरम' मुक्ति, 'चरम' मज़दूर-शासन की स्थापनाके लिए उन्हें अन्य तत्वोंका संहार करना पड़ता है। जब यूटोपियाका 'चरम' अर्थ स्वीकृत है, तो ऐसा करना ही होगा। दूसरी बात यह कि 'स्टेट' और 'समुदाय' 'चरम' सत्ता तभी बन सकते हैं जब 'व्यक्ति' को पीसकर चूर्ण कर दिया जाये। क्योंकि स्टेट और समुदायकी चरम सत्ताके लिए व्यक्तिकी सत्ताकी शत-प्रतिशत अस्वीकृति करनी पड़ती है। जब क्रान्तिके नायक देखते हैं कि कोई विशेष अंश—व्यक्ति या वर्ग—उनकी थ्योरीके चरम रूपमें 'फ़िट' नहीं बैठ पाता है तो उक्त अंशको काट फेंकनेके सिवाय और रास्ता क्या है ? इस प्रकार हम देखते हैं कि सारे दमन एवं संहारका कारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सापेक्ष मूल्योंपर आधारित क्रान्तिको ही कामू 'विद्रोह' कहता है। मुक्ति, न्याय, राज या वर्गका एक बार जब हम 'चरम रूप' (एबसेल्यूट फार्म) स्वीकृत कर लेते हैं, तो उस रूपमें विकासशीलता समाप्त हो जाती है, क्योंकि वह तो चरम रूप है—इससे आगे क्या विकास होगा? पर जब इनको हम सापेक्ष रूपमें ग्रहण करते हैं तो इसके रूपमें सतत विकासका अवसर है। सतत विकासके अवसर होनेका अर्थ है—सतत विरोध या विद्रोहका अवसर। विकासकी गुंजाइश ही विरोध और विद्रोहकी गुंजाइश है। पर चरम रूपके एक बार निश्चित हो जाने-पर ऐसा सम्भव नहीं। इसीसे मार्क्सकी नयी मान्यताएँ आज व्यर्थ सिद्ध हो चुकीं, फिर भी कट्टर मार्क्सवादीके लिए संशोधन बहुत बड़ा पाप है क्योंकि वह उनके चरम मूल्य के प्रति प्रतिबद्ध है। इसीसे कामूने मूल्योंके सापेक्ष रूपकी और इसके संवाहक विद्रोहकी वकालत की है।

सापेक्ष मूल्योंकी स्वीकृतिके अतिरिक्त विद्रोहका दूसरा गुण यह है कि यह ठोस परि-स्थितियोंको लेकर उठता है, किसी पैग़म्बर-की निर्गुण (ऐबस्ट्रैक्ट) यूटोपियाको लेकर नहीं। उदाहरणके लिए: ट्रेड यूनियन मूव-मेण्ट विद्रोह है; यह ठोस चीज़ों, सगुण तथ्योंका दावा यथा बोनस, भत्ता, छुट्टी, रोज़गार, वेतन आदिको लेकर आगे बढ़ता है। इसके ठीक विपरीत फ्रांसकी या सोवियत देशकी क्रान्तियाँ है जो निर्गुण यूटोपिया

है ध्योरीको चरम अर्थोंमें स्वीकार करना—
पूर्वनिश्चित ही एक पूर्वनिश्चित ध्योरीका निर्गुण
(ऐबस्ट्रैक्ट) रूप बना लेना, फिर व्यव-
हारके समय सारे सगुण तत्त्वों (कंक्रीट
फैक्ट्स) को जबरदस्ती उसी फ्रेममें बैठाना।
कामूका कथन है कि क्रान्तिको चरम मूल्यों
पर आधारित करके चलानेसे ही क्रान्तिका
हल होता है—युक्ति-युक्तहीन, इर्रेशनल,
नर-संहार। यह विसंगत स्थिति (अबसर्ड
डिसूएशन) नहीं पैदा होती यदि क्रान्ति
निर्गुण यूटोपिया और कुछ चरम मूल्योंको
लेकर नहीं चलती। विसंगति-दर्शन (फिला-
सफी ऑफ़ अबसर्डिटी) के अनुसार सारे
'चरम मूल्य' मिथ्या हैं: इसीसे क्रान्ति नहीं,
विद्रोह इस संकट-स्थितिका एकमात्र हल है,
क्योंकि विद्रोह सापेक्ष मूल्यों और सगुण
स्थितिके साथ चलता है। कामूने अपने
'रिबेल'के एक अध्याय 'थाट्स आन मिरी-
डियन' (मध्याह्न रेखापर-का चिन्तन) में
इसी तथ्य प्रतिपादित किया है कि वास्तविक
विद्रोह 'सीमित अर्थों में और 'मध्यम'
(पूर्ण अर्थ में और 'चरम' नहीं) होगा।
क्रान्ति 'वर्ग', 'राज' और 'इतिहास-चक्र'-
के चरम मूल्यका प्रतिपादन करती है
और चरम मूल्य लानेके लिए साधनोंके
औचित्यका ध्यान नहीं रखती और नर-
संहारपर तुल जाती है। पर विद्रोह
इन्हें सापेक्ष मूल्यके रूपमें लेता है। इसीसे
विद्रोहके अन्दर व्यक्ति और समुदाय दोनोंको
संतुलित जगह मिल जाती है। इसीसे कामू
कहता है: 'हमें क्रान्ति (रिवोल्यूशन) नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकर चलती है। अनुभव बताता है कि ट्रेड यूनियन-आन्दोलनसे मजूर-वर्गका जीवन-स्तर अधिक ऊँचा उठा है, उन्हें अधिक लाभ हुआ है बनिस्बत रूसी विप्लव या फ्रेंच-क्रान्तिके। ट्रेड यूनियन निर्गुण 'मुक्ति'के लिए नहीं लड़ते बल्कि उसके लिए लड़ते हैं जिसका तत्काल स्पर्श हो सकता है जिसकी अनुभूति पारदर्शक रूपमें होती है जैसे मजूरी या बोनस या भत्ता आदि। अतः वे कामूकी मूल मानवीय स्थिति सम्बन्धी धारणाकी प्रथम वृत्ति 'पारदर्शकता'को स्वीकार करते हैं। कुछ लोगोंका खयाल है कि 'मिथ ऑफ़ सिस्युफस'के बाद कामू अस्तित्ववादी नहीं रहा। पर यह धारणा ठीक नहीं। उसके नये विद्रोह-दर्शनमें अस्तित्ववादकी यह आधारभूत मान्यता—कि चरम मूल्यों या सनातन मूल्योंका अस्तित्व नहीं हैं, वे मिथ्या हैं—का प्रबल समर्थन है, साथ ही वह मानवीय स्थितिकी पारदर्शकता-को, सगुण तथ्योंकी स्वीकृतिको विद्रोहके साथ जोड़ता है। अतः वह अस्तित्ववादसे बिल्कुल विच्छिन्न हो गया है, ऐसी बात नहीं।

कामूका एक उपन्यास है 'ला पेस्त' (प्लेग)। इसके 'मिथ' की प्रतीकवादी व्याख्या की गयी है अस्तित्ववादी दर्शनकी मानवीय स्थिति के आधारपर। दूरके एक नगरमें प्लेग आ गया है। पहले तो अनिश्चय और संशयकी अवस्था रहती है। फिर यह मानकर कि यह प्लेग ही है, नगरका दरवाजा बन्द कर दिया जाता है। कई मास तक न तो बाहरका कोई आ पाता है और न कोई इससे बाहर जा पाता है। इस तरह विश्वसे 'कटी हुई' (आइसोलेटेड) स्थितिमें नगरके प्राणी विप्लव-गतिके विविध तथ्योंकी अनुभूति करते हैं। एक जर्नलिस्ट है जो इस नगरमें समाचारके लिए आया था। वह भी 'कटी हुई' स्थितिमें रहनेके लिए अभिशप्त हो जाता है। नायक जानते हुए भी कि प्लेग है, जायेगा तो अपने आप जायेगा, प्रतिरोध का कोई विशिष्ट मूल्य नहीं, डॉक्टरोंके एक दलके साथ इससे संघर्ष (विद्रोह) करता है। प्लेग अपने आप धीरे-धीरे चला जाता है। 'मिथ' के अनुसार वह नगर है, फ्रांस और प्लेग है 'नाज़ी-आक्रमण'। डॉक्टरोंका प्लेगसे संघर्ष—'प्रतिरोध'—है। इस बीच अनेक भावात्मक स्तरपर घटनाएँ घटित होती हैं, जो इर्रेशनल, अवर्ड, विसंगत हैं।

पर इतना होते हुए भी 'प्लेग' या उसके अन्तिम उपन्यास 'फ़ॉल' (पतन) में कामू प्रायः दार्शनिक विद्रोहकी स्थितियोंको ही व्यक्त कर पाता है। यह दार्शनिक विद्रोह 'क्षोभ' (इनडिगनेशन) तक ही जाता है। सक्रिय दर्शन बनने की क्षमता कामूके 'रिबेल' में प्रचारित 'ऐतिहासिक विद्रोहों'में है। कामू की युवावस्थामें अकाल मृत्यु हो गयी। यदि वह जीवित रहता तो दोनों विद्रोहके सिद्धान्तों के बीच समन्वयकी भूमि तैयार करता और साथ ही ऐतिहासिक विद्रोहको किसी न किसी मिथमें बाँधता। उसकी मृत्यु भी स्वतः एक विसंगति है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साज सफ़र

नागफनीके रेगिस्तानमें नींद

सुनील गंगोपाध्याय

बंगालकी नयी पीढ़ीके समर्थ कवि, 'कृतिवास'के सम्पादक। भूखी पीढ़ीकी भूमिकाके सबसे समझदार व्यक्ति। विदेश हो आये हैं।

"इस रेगिस्तान देखने चलोगे ?"

सोच रहा था किसके साथ जाऊँ। एंजोना आकर नागफनीका रेगिस्तान न देखना कोई मतलब नहीं रखता। मगर लॉस गाड़ीके जानेका कोई उपाय नहीं है। ऐसे वक्तपर देववाणीकी तरह ड्रुमण्डका प्रस्ताव सुनाई पड़ा।

ड्रुमण्ड हाडली तरुण कवि है, मुझसे दो-एक सालका छोटा होगा शायद, (मैं इस जुलाईमें उनतीसका हो रहा हूँ)। पाँच साल पहले शादीके बाद ड्रुमण्ड हनीमून मनानेके लिए कम्बोडिया और भारतवर्ष गया था। रथके मेलेमें पुरी गया था, असली समुद्र नहीं, जनसमुद्र देखने। "मगर इस तरह मलेरियामें भुगता कि सैरका आधा मजा किरकिरा हो गया !" उसने कहा।

मैंने कहा, "देखो, हम लोगोंके सरकारी हिसाबके मुताबिक़ भारतवर्षसे मलेरियाका उन्मूलन हो चुका है, वह शायद…"

"कम्बोडियासे हुआ था, मुझे भी ऐसा लगता है।"

"बड़ा अच्छा किया जो तुमने यह कहा, तुम लोगोंके कहनेसे कोई दोष नहीं है। मेरे कहनेपर ही दूसरे देशकी निन्दा हो जाती। यों ही प्रतिवेशी राष्ट्रोंके साथ भारतवर्षकी मित्रता नहींके बराबर है।"

घरपर ड्रुमण्डने शेर पाला है। असली शेरका बच्चा, रेगिस्तानसे पकड़ा है। उसकी पत्नी, बहुत ही शान्त-सुशील लड़की है, परीक्षाके लिए मन लगाकर पढ़ रही थी, मेरे जाते ही शिष्टाचारके नाते उठ खड़ी हुई। बग़लसे शेरका बच्चा घर्-र र कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उठा। "डरो मत, वह किसीको कुछ नहीं कहता।" चार क़ाबुली बिल्लीके आकारवाले उस आठ महीनेके शेरके बच्चेको देख मेरी हड्डी बर्फ़ हो गयी। एक बड़े कमरेमें अलगसे उसे रखा है उससे वे दोनों बिल्लीकी तरह खेलते हैं। बात छिपायी गयी है, पुलिसको पता लगनेपर पकड़कर ले जायेंगे।

सुबह नौ बजेके लगभग ड्रुमण्डके वैन लेकर हम लोग निकल पड़े। ऐरिजोनाके टुसन शहरके बग़लसे ही रेगिस्तान शुरू हुआ है। बीच-बीचमें छोटे-छोटे पहाड़ – उस पार मैक्सिकोकी सीमा।

"रेगिस्तानके बारेमें जो तुमने सोचा है, वैसा नहीं," ड्रुमण्डने कहा, "देखना, तुम्हें अच्छा लगेगा। मगर एक बात, रेगिस्तान देखकर कवित्व नहीं चलेगा। खासकर इलियटके वेस्टलैण्डकी आवृत्ति करना एकदम मना है। मैंने बहुत सुना है।"

"सुन्दर दृश्य देखकर मेरे मनमें कवित्व बिलकुल नहीं जगता। मुझे भूख लगती है।"

"क्या ?"

"तुम्हारी क़सम, सच कहता हूँ, मुझे भूख लगती है। यानी मेरा हृदय काम नहीं करता, उसके कुछ नीचे, मेरे पेटमें उसकी प्रतिक्रिया होती है।"

उसने हँसकर कहा, "कोई बात नहीं, मेरी बीवीने कई हैमबर्गर साथमें दे दिये हैं।"

वह काफ़ी तेजीसे गाड़ी चला रहा था। मैं दोनों ओरका दृश्य देखनेके बजाय ड्रुमण्डको देख रहा था। ब्लू ज़ीन और गंजी पहने हुए है, बाल बिखरा हुआ। गठा हुआ शरीर, घरपर सुन्दर स्त्री और बगीचा, और ढेर पाल रखा है इस साहसी तरुण अमरीकी कविने। बहुत ही दिलदार आदमी है, मगर एक खराबी है: जब बहुत ही उत्साहित होकर कोई बात करता है तो खालिस देसके ऐक्सेण्ट निकल आता है – मेरे लिए वह समझना मुश्किल हो जाता है। उसने कहा, "यहाँ पानीकी कमी है।" उसके बाद ही हड़बड़ाकर क्या शुरू किया – मैं कुछ समझ नहीं पाया, फिर भी वाक्यके बीच काम, फ़ुलस्टाप लगानेकी तरह बीच-बीचमें 'हाँ' 'ओ, यह बात है' आदि जोड़ता चला गया। अचानक उसने पूछा, "इसके सम्बन्धमें अपने मुल्कमें तुम लोग क्या करते हो?"

मैं मुश्किलमें फँसा। हालाँकि यह समझ गया कि बात पानीके सम्बन्धमें ही है। टस्टिमेशन, ड्रिलिंग आदि शब्द सुना तो है। ज़रा हिचकिचाकर कहा, "मैं ठीक..."

"ठीक किस जगह खोदनेपर पानी मिलेगा कैसे समझ लेते हो ?"

कहा, 'इस सम्बन्धमें मैं अच्छी तरह नहीं जानता। मैं पूर्वी बंगालमें पैदा हुआ हूँ, वहाँ पानी रहना ही समस्या है, पानी न रहना नहीं। राजस्थानकी ओर वैसी समस्या है ज़रूर मगर वे लोग क्या करते हैं यह मैं नहीं जानता।" कुछ रुककर कहा, "एक बात कहूँ ? तुम्हारे यहाँके बहुत सारे कवियोंसे बातचीत करके देखा है वे कविताके अलावा भी और बहुत सारे विषयके बारेमें जानते हैं। स्पेशशीपके लिए कहाँ-कहाँ शून्य स्टेशन होना चाहिए, हायारोग्लिफिकसका पाठोद्धार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दर्दके नीचेसे सुरंग बनानेकी क्या-क्या तकलीफ़ें हैं, बन्दरका मग़ज़, टेस्ट ट्यूबमें अलगसे जिला रखनेके बाद उस अशरीरी अस्तित्वमें दुःख या आनन्दबोध रहता है या नहीं, इण्डोनेशियाके प्रति वर्गमीलपर जन-संख्या कितनी है—यह सब बातें। हमारे कवि कुछ ढीले-ढाले क़िस्मके लोग होते हैं, जनरल नालेज शून्य, धोती-कुरते में लिपटे रहते हैं। एक चेयरपर बैठनेके बाद चौबीस घण्टेसे पहले उठनेका नाम नहीं लेते। कविताके सिवा और किसी विषयके बारेमें कुछ नहीं जानते, इसीलिए तुम लोगोंसे अच्छी कविताएँ लिखते हैं।"

मेरी अन्तिम बात सुन उसने चौंककर मेरी ओर देखा। फिर दिल खोलकर हँस पड़ा। कहा, "क्या पता, शायद वही सच हो। मैंने ज्यादा नहीं पढ़ा—खासकर तुम लोगोंके उस भयंकर अनुवादमें टैगोरकी रचनाएँ भी मुझे एकदम अच्छी नहीं लगतीं। लेकिन तुम लोगोंके साथ एक दिक़्क़त है—जो हम लोगोंके साथ नहीं है। तुम लोगोंके कन्धे बैठी हुई है तुम लोगोंकी परम्परा, तुम लोगोंका धर्म। तुम लोग अकेले नहीं हो पाते। मगर हम लोगोंके साथ यह सब झमेला नहीं है। हम सभी गहरे अन्धकारमें टटोलते हुए चल रहे हैं, हर क़दमपर अपने-आप आविष्कार करना पड़ रहा है—हम सभी निर्जन आधुनिक आदमी हैं।"

"मगर परम्पराके प्रति तुम लोग भी मोह कम नहीं दिखाते। तुम लोग" "देखो, देखो उधर देखो।"

"लेकिन तुम लोगोंके साथ एक दिक़्क़त है—जो हम लोगोंके साथ नहीं है। तुम लोगोंके कन्धे बैठी हुई है तुम लोगोंकी परम्परा, तुम लोगोंका धर्म। तुम लोग अकेले नहीं हो पाते। मगर हम लोगोंके साथ यह सब झमेला नहीं है। हम सभी गहरे अन्धकारमें टटोलते हुए चल रहे हैं, हर क़दमपर अपने-आप आविष्कार करना पड़ रहा है—हम सभी निर्जन आधुनिक आदमी हैं।"

आकाशपर एक बड़े आकारका पक्षी दिखाई पड़ा। पूछा, "वह क्या है?" "गोल्डेन ईगल।"

इस अंचलमें बड़े पंखवाले सुनहले ईगल दिखाई पड़ते हैं, सुना था, पहले कभी देखा नहीं था। लेकिन 'गोल्डेन ईगल'—यह नाम बहुत ही परिचित है, कलकत्तेमें गरमियोंकी अनेक दुपहरीमें उस नामसे मेरा मन डोला था।

ड्रमण्डने कहा, 'वही ईगल है अमरीकाका प्रतीक।'

गाड़ी एक छोटे पहाड़के माथेपर चढ़ आयी थी। दाहिनी ओर एक रेगिस्तान दीख पड़ा। सच है, हम लोगोंकी कल्पनामें रेगिस्तानका जो चित्र है—यानी मील दर मील पीला बालू, गरम हवा—यह रेगिस्तान उस तरहका नहीं है। यह मरुभूमि जीवन्त है। अचानक देखनेपर लगता है, सारी भूमि घेरकर अनगिनत सिपाही खड़े हैं। वे सब नागफनी हैं, पश्चिमी अंचलका मशहूर कैक्टस सीधा, लम्बा, हरेक कमसे कम डेढ़-दो सौ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सालका पुराना है। पहली शाखा पचहत्तर सालपर निकलती है–वही शाखा या पंख देखकर उम्रका पता चलता है। उन्हें साउ-आरो (स्पैनिश नाम : Saguaro––'जी' का उच्चारण नहीं होता) कहते हैं–गरमीमें उसमें फूल लगते हैं। वीभत्सताके बदले यह रेगिस्तान मनोरम ही लगता है। रेगिस्तानके बदले पूराका पूरा मानो एक नखलिस्तान है। इसके अलावा दूसरे तरह-तरहके कैक्टस, प्रिक्ली पियार, जंगली सियार, बिच्छू, छोटा शेर, रेटेल स्नेक (जिसकी पूँछसे खट-खटकी आवाज़ होती है) और हिरण मिलते हैं। पानी नहीं है, फ़सल नहीं होती––मगर रेगिस्तानके बदले ऊसर ज़मीनकी बात ही मनमें आती है, लेकिन ड्रुमण्डने पहले इलियट-को वेस्टलैण्डका उल्लेख करनेको मना कर दिया है।

ड्रुमण्डने पूछा, "कैसा लग रहा है ?"

कहा, "यार ड्रुमण्ड, सच बात तो यह है कि ये सभी दृश्य मैंने पहले ही फ़िल्मोंमें देखे हैं। इस देखनेके बजाय, फिल्ममें देखना अच्छा लगा था।"

"क्या बकवास करते हो। वह भला कैसे हो सकता है ?"

'तुम्हें ठीक तर्क नहीं दे सकूँगा। यह जगह बहुत बड़ी है। मेरे लिए, और छोटेमें, फ्रेममें, जबतक नहीं देख पाता तबतक मैं कुछ समझ नहीं पाता।"

"खेद है कि मैं कैमरा नहीं लाया। एक दिन और पहाड़के उस ओरकी गुफा देखने चलेंगे, उस समय लेता जाऊँगा।" (बादमें असित राय और सुबोध सेनके साथ वहाँ गया था।)

बच्चेकी तरह ड्रुमण्डने कहा, "जानते हो, यहाँ हिरण है! शायद इसी समय दस हिरण दस दिशाओंसे हमें देख रहे हैं। हम लोग उन्हें नहीं देख पा रहे हैं।"

मोटे तौरपर हम लोगोंकी मंज़िल थी डेजर्ट म्यूजियम—रेगिस्तानके ठीक बीच असली परिवेशमें, रेगिस्तानमें जो कुछ मिलता है उसकी प्रदर्शनी। ड्रुमण्डने पूछा, "अगर मैं थोड़ा चक्कर लगाता जाऊँ तो तुम बुरा तो नहीं मानोगे ? उस दाहिनी ओरका टीला मैंने अभीतक नहीं देखा।"

मैंने कहा, "नहीं-नहीं, मुझे कोई एतराज़ नहीं। मगर उसे नहीं देखा,—इसका क्या मतलब ? तुम रेगिस्तानकी सारी जगह जानते हो क्या ?"

"क़रीब-क़रीब, मैं हर हफ़्ते यहाँ आता हूँ, तरह-तरहकी जगहोंको देखता हूँ।"

"क्यों ?"

पहले उसने कारण बताना नहीं चाहा। कुछ शर्मीली हँसी हँसते हुए वह तुतलाने लगा। मुग्ध होनेके लिए हर हफ़्ते रेगिस्तान जाने लायक़ छिछला कवित्व वह करेगा, यह मुझे विश्वास नहीं हुआ। बादमें कारण सुनकर मैं हक्काबक्का हो गया। वह रेगिस्तानमें सोना ढूँढ़नेके लिए आता है।

"तो क्या सचमुच तुम्हारा खयाल है कि सोना मिलता है ?"

"अवश्य ! कितने लोग छुट्टीके दिन यहाँ सोना बनाने आते हैं। लेकिन दिन-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बातू छानकर उन्हें जितना सोना मिलता है – उससे मजदूरी नहीं पोसाती। मैं ऐसी एक जगह खोज रहा हूँ जहाँ खत्म न होने-वाला सोना हो। कहीं है ज़रूर।"

पक्की सड़क छोड़कर गाड़ी पहाड़ी रास्तेपर चलने लगी। ड्रुमण्डकी गाड़ी भी उसीकी तरह दुःसाहसी है। कड़कड़, मड़मड़-सी आवाज होने लगी, दाहिने-बायें बुरी तरह झुकने लगी, फिर भी ठीकसे चलने लगी। अन्तमें एक जगह आकर रुकी। आगे रास्ता नहीं है। हम लोग उतरकर पैदल चलने लगे। "सुनील, ज़रा देखकर चलना, यहाँ रैटिल साँपोंकी भरमार है। हालाँ कि हलकी बात नहीं है – उसके काटनेपर आदमी जल्दी नहीं मरता।" उसकी बात सुन खास भरोसा नहीं मिला।

एक छोटा टीला पार करते ही एक मकान दिखाई पड़ा।

"इस वाहियात रेगिस्तानमें मकान किसने बनाया?"

"पता नहीं, मैंने पहले नहीं देखा। मगर यह मत सोचना कि इण्डियनोंकी तरह कोई साधु-सन्त होगा – ज़रूर सोनेकी खोजमें कोई आया है।"

मकानकी चौहद्दी काफ़ी दूर तक कँटीले तारसे घिरी हुई है। कहीं किसीकी कोई आवाज़ नहीं। हम लोग दरवाज़ा पार करते हुए अन्दर दाखिल हुए। हालीवुडके फ़िल्मों-के दृश्यकी तरह मैं हर क्षण बन्दूककी गोली-की प्रतीक्षा कर रहा था। पास आकर मालूम हुआ। मकान नया है मगर एकदम ध्वस्त। मानो किसी अतिकाय दानवने गुस्सेमें आकर उसे ध्वंस कर दिया हो। घरकी छत नहीं है, दीवारपर बड़े-बड़े गड्ढे (बन्दूककी गोलीका है या नहीं कौन जाने) —सामान वग़ैरह तोड़-ताड़कर, बिखेर दिया है। मानो बहुत ही गुस्सेमें आकर किसीने तोड़ा-फोड़ा हो। नया रेफ्रिजरेटर—मगर हथौड़ा मारकर तोड़ा गया है यह समझमें आता है, गैसस्टोवके पाइपोंको तोड़ उसे बिगाड़ा गया है। लकड़ीके नये चेयर मगर टूटे हुए। सोफा, कुशन छुरीसे काटा गया है।

मैंने ड्रुमण्डके चेहरेकी ओर देखा। उसने कहा, "पता नहीं शायद आँधीसे टूटा हो—बीच-बीचमें यहाँ काफ़ी आँधी-तूफ़ान उठता है। यहाँ मकान बनाना ही बेवक़ूफ़ी है।"

अकेलेपनका बोध : : डेविड पैकॉर्ड

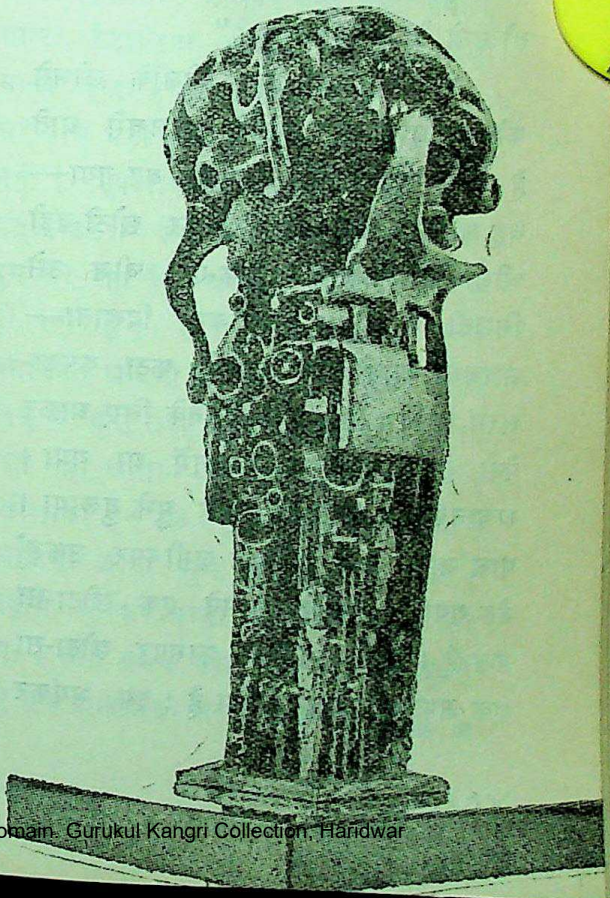

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने कहा, "नहीं, आँधीसे असम्भव है। यह आदमीका काम है।"

"हो सकता है, किसी गैंगस्टरके गिरोह-ने आकर लूटपाट किया हो। किसीने शायद यहाँ छुट्टी बितानेके लिए मकान बनाया था। सम्भवतः यहाँ कोई रहता नहीं।"

डायनामो बिठाकर बिजलीका कनेक्शन तक था, तार दीवारसे नोचा गया है, मशीन बुरी तरह तोड़ी मरोड़ी गयी है। दीवार-पर गन्दी तसवीरें—उसे देख यहाँ रहने-वालोंकी रुचिका पता चलता है। सभी नंगी औरतोंकी हैं, कई तो खड़ियासे बनायी गयी, एक स्त्री-देहके तमाम अंग-प्रत्यंगके नाम आँचलिक भाषामें लिखे गये हैं, मानो किसी-को सिखाया गया है।

"गुण्डोंने ये सारी चीज़ें क्यों तोड़ी—वे तो उन्हें ले जा सकते थे?"

"रेगिस्तानमें इन सब चीज़ोंके लोभसे कौन आता है, सभी सोनेके लालचसे आते है।" ड्रुमण्डका उत्साह काफ़ी बढ़ गया—वह शौक़िया जासूसकी तरह हर छोटी-बड़ी चीज़ोंको देखने लगा। एक-एक चीज़ उसे मिलती और मुझे बुलाकर दिखाता—अधजला प्यानो, एक बक्सा, फटा कपड़ा-लत्ता आदि। रेगिस्तान देखनेके लिए आकर कैसे एक रहस्यमय मकानमें आ गया। अचानक कुछ दूरसे ड्रुमण्डने मुझे बुलाया। पास जाकर देखा, ड्रुमण्ड ज़मीनपर उकड़ूं बैठ गया है। उसके सामने एक छोटा-सा क़ब्र है। एक लकड़ीके क्रासपर छोटा-सा एक झण्डा—उसपर लिखा है : इस भयंकर रेगिस्तानने हम लोगोंके प्यारे मुन्नेका ख़ून किया है। फ्रेडरिक (उम्र आठ साल), ईश्वर तुम्हें शरण देंगे।" तारीख बहुत ही टटकी है—केवल इक्कीस दिन पहलेकी।

ड्रुमण्डने गम्भीर होकर कहा, 'चलो हम लोग यहाँसे भाग चलें, यहाँ कोई रहस्य है—पुलिस-केसमें फंस जायेंगे।"

मैंने ही पहले सोनाका आविष्कार किया। मैं धीरे-धीरे चल रहा था, बीच-बीचमें कैक्टसोंकी छाँवमें बैठ रहा था, काँटा बचाकर। ड्रुमण्ड 'छठ' पूजाकी मनौती मानी हुई औरतोंकी तरह रह-रहकर ज़मीनपर लेट रहा है—कहीं गन्ध सूँघ रहा है, कहीं ज़मीनमें कान लगाकर कुछ सुन रहा है और बीच-बीचमें अपनी उस इमोशनल अंगरेज़ीमें (जो मेरे लिए दुर्बोध्य है) जाने क्या बक रहा है। ऐसे समय मैंने काफ़ी बड़ा एक गोल पुष्ट पाउडर पफ़ (फ्रांसीसी लोग 'सासका सिर' कहते हैं) कैक्टसके नीचे काफ़ी बड़ा सोनेका एक गोला देखा। धूपकी झिलमिलाहटमें आँख झुलसा दे रहा है। साथ-ही-साथ मुझे लगा—ड्रुमण्ड ज़रूर कुछ आधा शेयर देगा, तो, उसकी क़ीमत क्या होगी, कौन जाने—अपने मुल्कमें लौटकर कम-से-कम पाँच साल नौकरी नहीं करनी पड़ेगी। मैंने चिल्लाकर कहा, "वह देखो।"

बुरी तरह चौंककर उसने मुँह फेरा। फिर मेरी उँगलीके सीधे उस सोनेके गोलेको देखकर उपेक्षाकी हँसी हँसते हुए कहा, "ओ, यह बात है। तुम इस तरह चिल्ला पड़े। मैंने सोचा साँप या शेर होगा। और हँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"दाहिनी ओरके उस जगहको ज़रा देख-कर हम म्युजियम चलेंगे। तुम चलोगे?"

"नहीं, मैं यहीं बैठा हूँ, तुम घूम आओ।

उसके कुछ दूर जानेके बाद मैं चिल्ला पड़ा, "ड्रुमण्ड, ज़रा सावधानीसे घूमना-फिरना। खो मत जाना—या मर भी न जाना। मैं रास्ता नहीं पहचानता, गाड़ी भी नहीं चला सकता।"

थोड़ी देर बाद ही ड्रुमण्ड दूर कहीं खो गया। मैं अकेला गाड़ीकी छाँवमें बैठा। चारों ओर ऐसा सुनसान है कि डर लगने लगा। एकाएक हवा रुक गयी है, एक भी सूखे पत्तेकी आवाज़ नहीं है। दूर वह टूटा हुआ मकान। मैं दूसरी ओर मुँह फेरकर बैठ गया। दो-तीन आदमीकी लम्बाईके कैक्टसकी क़तार मीलपर मील चली गयी है सान्टा कैटालिना पहाड़ी तक। ख़ामोशी मानो ज़िन्दा होकर रेगिस्तानमें घूम रही है। मेरे पास घड़ी नहीं है—क्या समय हुआ पता नहीं! एकमात्र शब्द सुन रहा हूँ अपने हृत्पिण्डका— उस समय भी बुरी तरह दुम-दुम कर रहा है। क्रमशः कमज़ोरी महसूस हो रही है। रेगिस्तानमें अबतक जितने अनगिनत आदमी मर चुके हैं—उन सबोंके लिए मैं बुरी तरह दुःखी होने लगा। ऊपर देखा नहीं जाता—आकाश इतना गरम है। प्रतीक्षाका हर पल बेहद लम्बा लगने लगा। इससे सो जाना मुझे अच्छा जान पड़ा। गाड़ीमें घुसकर लम्बी सीटपर लेटे-लेटे सो गया। सोते समय उस दिन पानीमें डूबते हुए एक आदमीका सपना देखा था। ■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नामकी कहानी

ख़ालिदा असग़र

उर्दूके नये कथाकारोंने अकथाकी दिशामें क़दम उठाये हैं। ख़ालिदा असग़रका नाम उनके साथ ज़रूर आता है जिनके प्रतिनिधि इन्तज़ार हुसैन हैं।

■

अब वह किससे क्या कहती? पहले तो यह नाम भूल जानेका क़िस्सा भी अजीब था कि अक्षर सबके सब मौजूद थे और मिलकर एक नाम अब भी बनाते थे और उसे यह भी मालूम था कि यही उसका नाम था। लेकिन मुश्किल यह थी कि पहले यह शब्द वह स्वयं थी, मगर अब वह महज़ खोल था। वह उसके अन्दर मौजूद नहीं थी। अब मालूम नहीं कि वास्तविक नाम वह खोल था यह वह स्वयं, जिसका कोई नाम नहीं था।

इसलिए सब काम थम गये थे। या शायद यह दुर्घटना इसलिए हुई थी कि एक मुद्दतसे उसे अपने नामकी तीव्र अनुभूति होती रही थी। मसलन जब जमीलने उसे छोड़ा तो उसे हरदम अपने नामका अहसास रहता। वह लोगोंसे अलग मौजूद थी—एक अटल शब्द, क्योंकि लोगोंने उसे अपनेसे अलहदा किया था। इसलिए सोते-जागते अँधेरे-उजाले कोई यह शब्द उसके कानोंमें फूँकता रहता।

इस शब्दकी कैफ़ियत अजब थी कि उसे हरदम होशियार रहना पड़ता। वह एक भरको ग़ाफ़िल हुई और नामने तभी लम्बे पंजोंमें उसे जकड़ा। उससे बचनेके लिए उसने सौ-सौ जतन किये। पहले पहल नज़हतका दहेज़ तैयार किया और रात जाग-जागकर कपड़ोंपर आवश्यक कढ़ा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब कभी सूर्यको ग्रहण लगता तो छतपर पानी भरा तसला रखा जाता। पहले पानी देर तक मचलता रहता, फिर रुकता और साँवलाये सूरजकी परछाइं उसमें तैरती। परछाइंयोंके देखनेपर उसे हमेशा यों लगता जैसे वह नींदमें चल-फिर रही हो और नींद-में चीज़ें लम्बी, घटती हुई, चपटी खिचती चली जाती हैं। अब तो दिनका भी यही आलम हुआ था, आसमानसे उभरता न डूबता, जैसे पानी भरे तसलेमें डोलता फिरता···

की। पोंछा-बर्तन लगाया। फिर सारे घरके कपड़ोंकी सिलाईका ज़िम्मा लगाया। धुलाई, इस्तरी, कढ़ाई। लेकिन ज्यों ही वह पल-भर-को साँस लेने रुकती कोई वह शब्द कानोंमें टूटता। फिर एक-एक चीजका मुँह पैदा हो जाता। चारों तरफ़ बस एक ही शब्द रह जाता। (वह खुद अपनी आँखोंसे चिपक-कर रह जाती।) इस शब्दकी अजीब दहशत थी कि हँसते ही उसका जी ढहने लगता जैसे पीछे कोई बला पीछे भागे और भागा न जाये। पाँव किसी तिलस्मसे बोझल हो जायें और आँचल काटे न कट पाये। लेकिन जब वह नजहतके पास आन रही तो अजीब संयोग हुआ कि घण्टों उसे इस शब्दकी याद न आती। कुछ इसलिए भी कि नजहतके बिल्लू, गिट्टू और मुन्नूका बेढंगा काम उसे उलझाये रखता। उन्हें स्कूलके लिए तैयार करना, नाश्ता करवाना, कपड़ोंका हिसाब, कमरोंकी सफ़ाई, नजहतके कपड़ोंकी सिलाई, उसीके कुर्ते – कभी-कभी तो एक पलकी फुरसत न मिलती। सुबह आँख खुलती कि पलक झपकनेमें रात आन पहुँचती। बीच नींद और जागके बीचकी दूरीमें वह हल्के हवाके झोंकेकी तरह छूकर गुज़र जाता। मगर फिर बिल्लूके कपड़ों, गिट्टूके जूतों और मुन्नूकी गुड़ियोंका सिलसिला फैलने लगता और पल-भरमें सुबह हो जाती।

अब कामोंका सिलसिला उसे एक तिलस्मी दुनिया नज़र आता। दुनियामें फिरने बेशुमार काम फैले थे। कभी-कभी वह दिल-ही-दिलमें इन कामोंकी सूची बनाने लगती। फिर उसे इस बातपर हैरानी होने लगती कि आखिर इतने ढेरों काम पैदा किस तरह हुए। तब उसका दिमाग़ नये-नये कामोंकी खोजमें उलझने लगता। टाटपर ऊनकी कढ़ाई, धज्जियाँ तोड़-जोड़कर परदे और पलंगपोश बनाना, घरको सजानेकी नित नयी चीज़ें – इन कामोंका सबसे बड़ा फ़ायदा यह था कि वक़्त गुज़रता रहता। दिन उभरने और डूबनेके बीच कोई दूरी न रहती। काम दूरी और समयको चूसनेका यन्त्र था जिस तरह स्याहीचूस स्याही चूस लेता है।

कामके साथ-साथ एक और चीज़ भी थी – भूख, अन्दर-ही-अन्दर फैलनेवाली एक अन्धी दरार जिसमें आग दहकती थी और इस आगके दहकते रहनेमें अजब ठहराव था। ऐसेमें वह कमरके साथ चिपके पेटको महसूस करती। उसकी उँगलियाँ उभरी पसलियोंको गिनतीं। फिर शरीरकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक-एक हड्डी उसे नज़र आती जैसे वह ख़ुद अपना एक्स-रे हो। इसपर उसे मीठा-मीठा इतमीनान मिलता।

"आपू, ख़ुदाके लिए कुछ खा लो। हटाओ यह काम।" नज़हत बार-बार कहती।

"बस अभी आयी।" लेकिन वह घण्टों मिटते शरीर और उभरती हड्डियोंके सरूर-में बैठी रहती।

"तुम्हें तो कामका हूका है आपू," नज़हत उस समय कहती जब वह उसके कहनेपर किसीसे मिलने-मिलाने चली जाती। लेकिन तमाम वक़्त उसे यूँ लगता रहता जैसे दुनिया-से काम मिटते चले जाते हों और कामोंका मिटना सबसे बड़ा कष्ट था।

लेकिन अचानक यों होने लगा कि सूरज डूबनेकी क्रिया देखते-ही-देखते लम्बी हो गयी। उसने देखा कि घण्टों पीली-पीली धूप मुँडेरों-पर रेंगती, उँगल-उँगल सरकती है। सूरज घण्टों अन्दर-बाहर रहता और समयका सम्बन्ध न दिनके साथ जुड़ता न रातके साथ। पहले जो दिन पूरेका पूरा कट जाता था अब नहीं कटता। गुज़रनेपर भी कहीं आस-पास मुँडेरों पर मँडलाता रहता है और इसपर उसे मुद्दतों पहलेका पानीसे भरा तसला याद आता। जब कभी सूर्यको ग्रहण लगता तो छतपर पानी भरा तसला रखा जाता। पहले पानी देर तक मचलता रहता, फिर रुकता और संवलाये सूरजकी परछाईं उसमें तैरती। परछाइयोंके देखनेपर उसे हमेशा यों लगता जैसे वह नींदमें चल-फिर रही हो। और नींदमें चीज़ें लम्बी, घटती हुई, चपटी खिंचती चली जाती है। अब दिनका भी यही आलम हुआ था, आसमानमें उभरता न डूबता, जैसे पानी भरे तसलेमें डोलता फिरता···। नींदसे भरा, लम्बा चपटा, खिंचता।

चुनांचे पहलेकी तरह दिन गुज़रनेपर उसे किसी लकीरके कट जानेका अहसास न होता। इसीलिए काम लम्बे होते चले गये जैसे कोई मटियाला इलास्टिक खिंचता चला जाये। यूँ भी वह अकसर काम कर चुकनेके बाद वहममें पड़ जाती कि वाक़ई वह काम हुआ या नहीं। दिनोंकी तरह पहले काम भी पूरेके पूरे निबट जाते थे। सुबह-सवेरे बच्चोंको स्कूलके लिए तैयार करना, फिर कपड़ोंकी धुलाई, इस्त्री, दोपहरोंमें सिलाई और कढ़ाई। इसी तरह मारामार काम और दिन गुज़रते चले जाते और रातको सोयी-सोयी थकनमें सब कुछ डूब जाता।

तबकी नींद भी अबकी नींदसे ख़ासी भिन्न थी। अपने वक़्तपर शुरू और ख़त्म हो जाती। मगर अब उसका न कोई वक़्त था न आख़िर। जब वह समझती कि रात रही है और काम करती है तो उसे लगता कि हाथ हिलनेके बावजूद नहीं हिलते और टबके साबुन घुले पानीमें ज़रा-सा भी झाग पन नहीं है। कपड़ोंका कोई स्पर्श नहीं फिर भी वह कपड़े धो रही है। इसपर हैरत होती और फिर उसपर ख़ुलता दरअसल वह चौकीपर बैठे-बैठे सोती वह हड़बड़ाकर पम्प चलाती, टब भर और धुलाई शुरू हो जाती। कपड़े

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

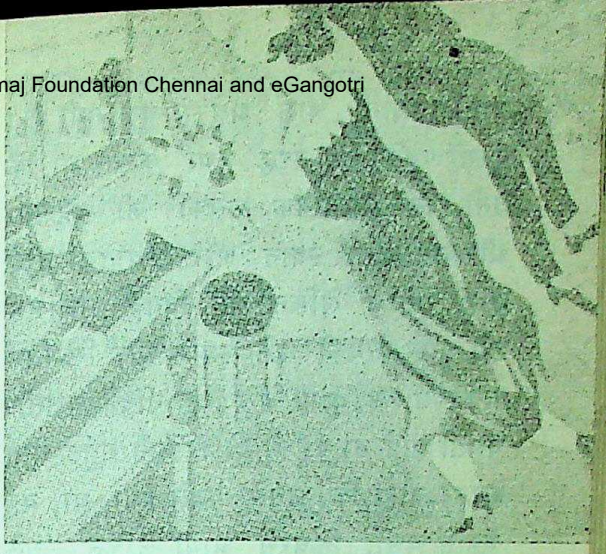

गुमनाम चुम्बन : : मार्क शेगल

सारे कमरे सजे-सजाये ख़ाली पड़े थे। मुन्नूके बालोंसे साबुनकी गीली गरम महक आती थी और उसके हाथ उलझे बालोंको तेज़ीसे सुलझा रहे थे और बालों और कंघीका और उस कुरसीका जिसपर वह बैठी थी, कोई स्पर्श न था। तब अचानक उसकी नज़र अपने हाथोंपर रुक गयी। ख़ुश्क बेरंग ख़ाल-पर उभरी भरी-भरी नीली नसें, मुरदा टह-नियोंकी तरह निकली उँगलियाँ जिनमें स्याह रंगकी वह दनदानेदार चीज़ थमी थी और उन दनदानोंमें बाल उलझे थे। फिर उसकी नज़र हौले-हौले तैरती हुई सूखी कलाई-पर जा रुकी और उसे इस बातपर आश्चर्य हुआ कि वह इस हाथ और कलाईके साथ बरसोंसे रह रही है। इस हाथ और कलाईने उसे अपने शरीरके बाक़ी अंगोंकी भी याद दिलायी जो शुरूसे उसके साथी थे। तब उसे यों लगा कि वह नींदमें है और घुप्प अंधेरेमें सब आयाम खो गये हैं और मालूम नहीं वह किस दिशामें मौजूद है। दिनके उजालेमें

चले जाते और अलगनी भरती चली जाती। फिर भी उसे यूँ लगता जैसे वह चौकी पर बैठे-बैठे सो रही है। नींद और जागकी हदें एक-दूसरेमें घुल-मिल गयी थीं। कभी उसे ख़याल-सा आता कि इससे पहले चीज़ें साफ़-साफ़ और जीती-जागती थीं और यादोंके रंगुमार सिलसिले इनके चारों तरफ़ फैले थे। मगर अब कभी एक-आध टुकड़ा तस्वीरका और बेरब्त शबीहें इधर-उधर आन जड़तीं – बरसों पहलेकी कोई आवाज़, सुनहरी चुटीला, सलेटी फ़र्शपर बिखरी कतरन, पीतलकी जगर-जगर करती बाल्टी। बुज़ुर्गोंका भी यही आलम था। कभी घुप अंधेरी नींदसे वह अन्दर-अन्दर फैलते किसी दरारसे चौंकती। चौंकने और पूरी तरह जाग जानेके बीचकी दूरीमें बेमौसमी फूलोंकी ख़ुशबुएँ आतीं जो जाग जानेपर बिलकुल भ्रम लगतीं। पहले चीज़ों और ख़ुशबुओंका यह तौर था कि घटनाओंके सिलसिलोंमें गुँथी-गुँथाई चली आतीं, लेकिन अब इन सिलसिलोंके बिना टुकड़े-टुकड़े मटियालेपनमें तैरती फिरती थीं।

बातों, ख़ुशबुओं, चीज़ों और आवाज़ोंका यूँ टुकड़े-टुकड़े मटियालेपनमें तैरते फिरना कोई ऐसी चिन्ताकी बात न थी। एक मुद्दतसे उसे किसी बातपर चिन्ता भी नहीं हुई थी। लेकिन मुश्किल यह आन पड़ी कि एक शाम वह मुन्नूके बाल सँवारती थी और बिल्लू-लिटुइ कुरैशी साहबके बच्चोंके साथ बाहर लॉनमें खेलते थे। नज़हत और नसीम भी लॉनमें कुरसियाँ डाले बैठे थे। और अन्दर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानी-पहचानी चीज़ें अँधेरेमें घुल गयी हैं। बरसों पहले इस तरह हुआ करता था कि घनी रातमें अचानक उसका जी दहलता और उसे अपने स्थान और स्थितिका बोध न हो पाता। लेकिन अब दिनके उजालेमें उसे अपने-आपको इस स्थान और स्थितिमें पाकर आश्चर्य हुआ जैसे वह नींदमें चलती-चलती यहाँ आ पहुँची हो। उसने बहुत याद करना चाहा कि उससे पहले क्या था, वह कहाँसे चली, किधरसे आयी लेकिन उसके पीछे, आगे, चारों तरफ़ मटियाली धुन्ध थी।

तब उसे विश्वास आया कि इससे पहले वह थी ही नहीं। बस शुरू से आज तक इसी तरह थी। हाथमें कंघी थामे, मुन्नूके बाल सुलझाती। लेकिन मुन्नू तो बहुत छोटी-सी है। यही कोई पाँच बरसकी और उसने अपनी ढलकती कलाइयोंपर दोबारा नज़र की। उसे वक़्तके बेतहाशा गुज़रनेका खयाल आया। लेकिन साथ ही उसने देखा कि सूरज घण्टोंसे डूब रहा है और पीली-पीली धूप मुण्डेरोंपर नींद-भरी गतिसे उँगल-उँगल सरकती है और सरक नहीं चुकती सुबहसे, मालूम नहीं कबसे।

सूरज अन्दर-बाहर है, दिन ही है न रात और सब काम अधूरे खिंचते चले जाते हैं।

"हाय आपू, बस-बस," बेख़बरीमें मुन्नूके बाल खिंच गये।

"अच्छा-अच्छा!" उसने कंघी ड्रेसिंग टेबिलपर रख दी। मुन्नू उछलती हुई बाहर चली गयी।

"राजाकी चाबी चोरी गयी, चोरी गयी।" बच्चे लॉनमें खेल रहे थे।

"आपू, बाहर आ जाओ," नज़हतने उसे पुकारा।

लेकिन उसे तो बहुत काम करना था। वह नज़हतकी अधूरी क़मीज़में तुरपाई करने लगी। लेकिन दो ही टाँकोंके बाद उसे नींद महसूस हुई और उसे खयाल आया कि वह आज दिन भर नहीं सोयी। तब क़मीज़ को गोदमें रखे-रखे वह दीवारके साथ लग कर सो गयी और इस तरह सोते हुए उसे मुद्दतों पुरानी वह नींद याद आयी कि जब एक गहरा, लिपटता हुआ न होनेका अहसास आ लेता था।

फिर वह धूपमें जलती छत पर खड़ी थी और तसलेके मचलते पानीमें सूरजकी सँवलाई परछाईं तैरती थी। नज़हत बादलों की तरह तसले पर झुक-झुक कर गिरे जाते थी और कसकर गुँथी दो छोटी-छोटी चोटियाँ जानसे भरी उसके कानों पर झूलती थीं। वह खुद भी तसले पर झुकी और अबकी हिलते पानीमें उसकी अपनी परछाईं तैरी। फिर तसला फैलने लगा, यहाँ तक कि छतके बराबर हो गया। फैलते-फैलते ताँबेने उसे दीवारोंके साथ भींचना शुरू किया। यहाँ तक कि वह दीवारके अन्दर दाखिल हो गयी। इन मटियाली ईंटोंमेंसे एक ईंट--जिसकी कोई पहचान न थी। उसने पहचानना चाहा कि वह नींदमें है या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हड़बड़ाकर वह जाग गयी। मगर जाग उठने पर उसने देखा कि वह बराबर क़मीज़में तुरपाई करती रही थी और अब बस ज़रा-सा कोना बाक़ी है।

यह जागती नींद भी अजीब थी। शुरू-शुरूमें उसने पुरानी बातें याद रखनेकी कोशिश की। मसलन यही कि उसने आज तक कौन-कौन-से कपड़े पहने हैं। पुरानी-पुरानी क़मीजें, जूते उसके सामने मटियाले-नक़्शे तैरते चले आते। फिर खुशबुएँ और रंग। सभी कुछ मौजूद था लेकिन घटनाएँ नहीं न थीं क्योंकि घटनाएँ खो चुकी थीं इसलिए वह स्वयं भी मौजूद न थी। बिना घटनाओंके कोई किस तरह हो सकता है?

कभी नज़हत नसीमको पिछली बातें सुनाती।

"अम्मा-अब्बाजानपर आपूका बड़ा रोब था। हमारी तो बस पिटाई होती थी।"

और उसे गुज़रे इनसानों पर आश्चर्य होने लगता। अब्बा-अम्माकी तसवीर नज़हतके कमरेमें लगी थी, लेकिन वे तसवीरें महज़ खोल थीं। इनके अन्दर भरे इनसानोंके अर्थ न जाने कबके समाप्त हो चुके थे। पहले कभी-कभी वह इन तसवीरों-के पास हैरानीसे रुक जाती थी कि इन फ्रेमोंमें-से तसवीरें कहाँ गयीं? फिर वह देखती कि तसवीरें तो मौजूद हैं। लेकिन अब तो मुद्दतोंसे उसे इन भरे फ्रेमोंका खालीपन भी नज़र न आया था। सो उसने धीरे-धीरे करनेकी आदत छोड़ कर नामसे हमेशाके लिए छुटकारा पा लिया था।

पहले, जब दिनका आरम्भ और अन्त था, समयकी लम्बाई कई काम काट देते थे। अब दिन मटियाले इलास्टिककी तरह खिंचता था और काम रुके रहते थे। इस तरह दिनोंके खिंचने और कामके रुकने पर उसे तेज़ भूख लगती।

"शुक्र है आपू, तुम्हें भी भूख लगी।" नज़हत बहुत खुश थी। अब भूख समयकी लम्बाईको टुकड़ोंमें विभाजित करती। लेकिन शहदकी तरह भूखका भी अजब आलम था कि उसका न काई आरम्भ था न अन्त। खाकर भी उसे लगता कि नहीं खाया। चुनांचे अपने आपको विश्वास दिलानेके लिए उसे बार-बार खाना पड़ता। धीरे-धीरे उसके चिपके पेट और कमरके तंग घेर पर माँसकी नरमी जमने लगी और हड्डियाँ छुपने लगीं। उसका वह पुराना ढाँचा मिट रहा था। इसलिए अपनेको छूकर उसे किसी और को छूनेका अहसास होता।

शुरूमें हर चीज़का अपना एक स्वाद था, नमकीन, मीठा, कड़वा, तुर्श। लेकिन ज्यों-ज्यों भूख बढ़ी, स्वाद खत्म होने लगे। अब सिर्फ़ एक स्वाद बाक़ी था, बिलकुल उस जागती नींदका-सा जो शायद स्वाद भी नहीं था। दरअसल वह महज़ जीभ थी—सरसे पाँव तक स्वादसे खाली।

नज़हत अब उसे देखती और परेशान होती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आपू, तबीयत तो ठीक है ना तुम्हारी?" और रोटियोंकी प्लेट उसके सामनेसे खेंचते-खेंचते रुक जाती।

"हाँ। क्यों?" वह बेध्यानीसे पूछती।

"नहीं, कुछ नहीं।" नज़हत कुछ कहते-कहते रुक जाती और वह अपने खोलको स्वादहीन मवादसे भरने लगती जो भर कर भी खाली रहता।

पहले उसने देखा कि उसकी तमाम हड्डियाँ माँसकी मोटी तहोंमें जा छिपी हैं और अब उसकी पहचान मिट गयी है। वह बदल चुकी थी। फिर उसे माँसका बोझ अपने शरीरसे अलग महसूस होने लगा जैसे वह मनों गोश्तका लाथड़ा हो।

"आपू, तुम बीमार हो। चलो डॉक्टरके पास। जिस्मका बेतहाशा बढ़ना ठीक नहीं।" नज़हत बहुत चिन्तित थी।

इसपर उसे आश्चर्य हुआ। शरीर बढ़नेका क्या अर्थ? वह तो सबका सब स्वयं शरीर है। हमेशासे इसी तरह। उसने पहले अपने शरीरपर निगाह की और फिर अपने चारों तरफ़ देखा। मालूम नहीं, वह दिनका कौन-सा पहर था। हर चीज़ साँस थामे खड़ी थी और चारों तरफ़ मटियाली रोशनी फैली थी। एक घना उस खोलकी तरह तना था। सड़ककी तरफ़से कहीं सोया-सोया-सा शोर जागा। बहुत-सी आवाज़ें और शब्द एक दूसरेमें घुलकर एक लम्बी हूक बन गये थे।

"कालियाँ इट्टाँ, काले रोड़।" इस हूक की मद्धमसे पहचान उठी। उसने खिड़कीसे बाहर सड़ककी तरफ़ देखा। बच्चोंकी बेढंगी टोलियाँ कटोरे बजाती मटियाली उमसमें लिपटे आसमानकी तरफ़ पुकार रही थी।

"मींह बसा दे जोर जोर···" दूर बच्चों की हिलती-मचलती टोलीमें एक तसवीर छोटी-सी लड़कीकी तैरी। उसने पहचानना चाहा और खिड़कीसे क़रीब होते हुए अचानक आइनेके सामने आन रुकी। बेढंगे कपड़ोंमें लिपटा मनों बोझ, ढकेलते चेहरेपर खिचड़ी बाल। फिर उसकी नज़रें उस शबीहकी आँखोंमें आन रुकीं। एक शब्दके वृत्त और बिन्दु, उनमें कुलबुलाते तैरते-फिरते थे। तब उसने वहाँसे भाग जाना चाहा। मगर उसके पाँव किसी स्याह तिलस्मसे बोझल हुए। वह एक क़दमकी दूरी थी कि फैलते खिंचते आसमानसे जा मिली।

(अनु० : ए० बी०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ललित रचना

धुआँ....

ऽऽ

रमेशचन्द्र शाह

कवि, निबन्धकार, अँगरेज़ी के व्याख्याता। अल्मोड़ा में इनके कमरेसे हिमालय दिखता है, ख़ूब दिशाएँ दी हैं उनने।

भोरके धुंधलकेमें खिड़कीके पार दूर-दूर तक फैले पहाड़ोंकी क़तार.....नींदमें डूबी हुई.....। उजले हिमशृंगोंकी पृष्ठभूमिमें उभरती इन धूमिल आकृतियोंका ठोसपन मुझे हठात् एक विचित्र अनुभूतिसे भर देता है.....मुझे लगता है जैसे त्र्यम्बकके अट्टहास की तरह धरतीका सारा धुआँ ही राशीभूत होकर वहाँ जम गया है—रोज़-रोज़का, धरतीके घर-घरका सर्वव्यापी धुआँ.....। और जाने क्यों धुएँकी यह परिणति, यह कल्पना मुझे एक अजीब अनिर्वचनीय सुखसे भर देती है।

...फिर धीरे-धीरे उन निश्चल, समाधिस्थ धूम-संहतियोंमें अदृश्य किरनोंकी थपकियों से एक सिहरन-सी होने लगती है...। दृष्टिके सीमान्त विगलित होकर निखर उठते हैं....। धुएँका अशरीरीपन पलक मारते ही हज़ारों बातियोंकी स्निग्ध-निर्मल उजाससे दिप उठता है। गेहोंपर धूम्र-लताएँ काँपने लगती हैं और हवामें नीली लकीरें खिंच जाती हैं।

क्रमशः धूपके वे उजले पारदर्शी परदे भी धुँवराने लगते हैं...और दूरकी उन तरलोज्ज्वल पहाड़ियोंके और मेरे बीच धुँवरीली धूपका यह अन्तराल बढ़ता ही जाता है... यहाँ तक कि मुझे एक बार फिरसे उनमें उसी प्रकार—अबकी कहीं विरल और सूक्ष्मतर—धूम्र-संहतियोंका आभास होने लगता है।

किन्तु मैं जानता हूँ कि यह एक निरा आभासमात्र है। धरतीका धुआँ यों टलनेवाला नहीं है--वहाँ तक उसकी पहुँच भी नहीं है, वह तो अधिकसे अधिक समीपस्थ हवाकी परतोंमें हलकी-हलकी लकीरें खींच सकता है—अपनी अकाट्य और दुर्निवार सत्ताकी घोषणा करता हुआ। उसे हम चाहे छतमें सुराख करके बाहर निकालें, चाहे लम्बी 'मुँहझौंसी' चिमनियों की राह, उससे कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ़र्क पड़नेवाला नहीं है। हर हालतमें उसे हमारे घरोंके ऊपर, हमारे मस्तकोंपर मँडराते रहना है।···नहीं दूरकी उन कूटस्थ निश्चलताओंको हमारे इस धुँएसे कुछ भी लेना-देना नहीं है--इसको सोखकर हमें निधूम्र बनानेकी चिन्ता उन्हें कभी नहीं रही, केवलमात्र अपनी श्रीवृद्धिके लिए उन्होंने हमारे धुएँ का आवरण भर अपने शरीरपर धारण कर लिया है ताकि उनका व्यक्तित्व एक सूक्ष्मतर वायवी सुषमासे मण्डित होकर सामने आ सके। हमारा धुआँ उनका अलंकरण बन गया है।····

या फिर यह अलंकृति, यह शोभा, धुएँके कारण नहीं, बल्कि उस दूरीके कारण सम्भव हो पायी है जो इन पहाड़ियोंको मुझसे अलग किये है। क्योंकि दूरी भी तो स्वयं एक धूम्र है--दूरी जो दिशा और काल दोनोंको समानरूपसे व्यापती है। दूर छूटे हुए दृश्य धूमान्तरित होकर बदल जाते हैं। सुदूर अतीतके अनुभवको उसकी तत्कालीन वास्तविकतामें पकड़ा नहीं जा सकता--दूरीने उसे रूपान्तरित कर दिया है। इस रूपान्तरणमें किसी घटना, किसी तथ्यका ही नहीं उससे जुड़ी-बँधी हर अनुभूति, हर सवेदनका कायाकल्प हो जाता है। दुःखकी स्मृतियाँ धूमिल होती-होती अपनी सूक्ष्मतामे एक प्रकारके सुखकी प्रतीति कराने लगती हैं और मामूलीसे मामूली चीज़ोंपर भी एक जादुई रंगीनीका आवरण चढ़ जाता है। हाँलाकि इस चमत्कारके पीछे एक बहुत बड़ा हाथ हमारी कल्पनाका भी है पर इससे दूरीका माहात्म्य घटता नहीं। क्योंकि कल्पना स्वयं एक दूरी है। दूरियोंमें ही उसकी बाजीगरी फलती-फूलती है।

कल्पना ही क्यों, ऐन्द्रिय जगत्में भी अवकाश आकर्षणका बाजीगर है, दूर-दूर जाकर इस धुएँको ही लें। धुएँ का सम्पर्क किसीको नहीं सुहाता--'धुआँ' शब्द उच्चारते ही घुटन, अवसाद, ग्लानि, वैफल्य, निष्क्रियता और मृत्यु हमारे सामने साकार हो उठते हैं। मगर वही धुआँ जो निकट होनेपर हमारी आँखमें आँसू ले आता है, हमारा दम घोटकर रख देता है, वही थोड़ा-सा अन्तराल पा लेनेपर नयनाभिराम बन जाता है। फिर वह चाहे सुबहकी धूपमें खिंची हुई लकीर हो, चाहे घरोंकी छतोंपर ठहरी हुई धूम्र-रेखा चाहे, 'अगरु धूमकी श्याम लहरियाँ--उसकी हर भंगिमा, हर चेष्टा हमें मोह लेती है। हमारी सामान्य दृष्टिको ही नहीं, अपितु विलक्षण सौन्दर्य-दृष्टि रखनेवाले कवियों कलाकारोंको भी। धुएँकी कामरूपता, उसकी लोच, प्रतनुता, ऊर्ध्वगामिता हमारी ऐंद्रिय चेतनाको एक गहरी परितृप्तिसे छा लेती है।

धुआँ ही नहीं, धुएँसे थोड़ा-बहुत सादृश्य रखनेवाली जितनी भी वस्तुएं धरती आकाशमें पायी जाती हैं, उन सबके प्रति कवियों और कलाकारोंकी स्वाभाविक आसक्ति रही है। बादल, कोहरे और धुंध का विश्वके प्रकृति-काव्यमें भरपूर चित्रण हुआ है। शेलीको पतझड़की सुबहें सबसे अधिक प्रिय हैं क्योंकि वे 'सुनहरे कोहरों' को जन्म देती हैं। पन्तजी की कविताएँ भी 'तुहिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप-छवियोंमें खूब रमी हैं। रहस्यवादी कवियोंको तो धूमिलता स्वभावतः प्रिय होती ही है किन्तु रहस्यनिरपेक्ष शुद्ध ऐन्द्रिक संवेदनोंके धनी कवि वीरेन्द्रकुमार जैन भी 'धुन्धमें-से खुलते भोरके मोतिया सागर' की छवि आँकते नहीं अघाते। सागरको अनेक रूपों, अनेक मुद्राओंमें कविने जाना होगा पर उसका यह धूमायित चेहरा उन्हें सबसे अधिक लुभाता है। कालिदास क्या नहीं जानते थे कि मेघ-रचनाके चाक्षुष सौन्दर्यका दर्शन इतने भर-से नहीं होगा। शायद इसीलिए उन्होंने इन तीनोंके ऊपर धुएँकी प्रतिष्ठा करके मेघको 'धूमज्योतिः सलिलमरुतां सन्निपातः' कहा। और इस प्रकार धूम और मेघके रसात्मक अद्वैतकी घोषणा की।

"...वही जलधूम जो आकाशकी नीली ऊँचाइयोंमें बादल रचाता है, पृथ्वीपर भी अनेक रूपछवियोंसे हमें आकर्षित करता है। वेगसे उछाले हुए जल-सीकरोंकी सघनता एक अपूर्व, अत्यन्त मनोहारी तरल धूमाभासकी सृष्टि करती है। इसीलिए प्राचीन कालसे ही बड़े-बड़े उपवनों-उद्यानोंमें फव्वारोंका सन्निवेश अनिवार्य रूपसे होता रहा है। एक ओर जल-धूमका यह कृत्रिम, विलासपरक सौन्दर्य है, और दूसरी ओर प्राकृतिक जल-प्रपातोंकी उदात्त रमणीयता।

धुएँकी यही मूलभूत रसात्मकता है जो कविको 'गोर गुलाबी नाखूनसे छिलती नारंगीसे फूटती सुगन्धा रस नीहार' के प्रति संवेदित करती है। जिस प्रकार निर्झरके गुरु गम्भीर घोषके संयोगसे जलधूम एक उदात्त सौन्दर्य की सृष्टि करता है, उसी प्रकार मधुर गन्ध-संयुक्त धूम कवियोंका एक प्रिय उपादान बना हुआ है। कीट्सका 'टीमिंग सेन्सर' और प्रसादका 'अगरुधूम' इस सन्दर्भमें सहज याद आ जाते हैं। विलासप्रिय कल्पनाओंका विशेष कृपाभाजन हो गया है यह धूम।

"धुआँ... धुआँ... धुआँ...:
मेरे चारों ओर दूर तक
सिर्फ़ धुआँ ही धुआँ...।
जी चाहता है... आह।
इस धुएँको पी जाऊँ,
निगल जाऊँ यह सारा धुआँ"

फिर भी धुएँका तनिक भी सामीप्य मुझे एक अजीब बेचैनीसे भर देता है और यह कायिक बेचैनी बहुत जल्द मानसिक अवसादमें बदल जाती है। ऐसे क्षणोंमें मुझे लगता है कि मेरे अपने अनुभवसे भी परे अवचेतनामें गहरे कहीं इस धुएँसे मेरा एक अजीब-सा निर्वैयक्तिक सम्बन्ध है, तभी तो धुएँकी सत्ता मुझीपर नहीं बल्कि मेरे सारे परिवेश पर हावी होती प्रतीत होती है, रस और रागके सारे मोहक आवरणोंको चीरकर वह सत्ता अपनी समस्त क्रूरता और अनम्यतामें उजागर हो आती है।

तिमंज़िलेके जिस कमरेमें बैठा मैं लिख रहा हूँ, वहाँ रसोईघरका धुआँ तो नहीं पहुँच पाता, किन्तु नीचे बाज़ारमें दो-तीन होटल हैं जिनकी भट्टियोंका सायंकालीन धूम मेरी खिड़कीको परसता हुआ उड़ा जा रहा है...उड़ता-उड़ता बीच-बीचमें ठिठक जाता है जैसे किसी असमंजसमें पड़ गया हो। सरदीकी इन शामोंको अपने कमरेकी खिड़की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से पीठ टिकाये इस ठिठकते धुएँको देखकर मुझे बरबस ही इलियटके 'प्रूफ़ॉक' का 'धुआँ' याद आ जाता है और मैं नहीं सोच पाता कि दोनोंको एक दूसरेसे अलग करके कैसे देखूँ।···कभी-कभी यह धुआँ मेरे कमरेकी हवाको धकियाता हुआ अन्दर घुस जाता है और मुझे लगता है जैसे वह मेरे एकदम क़रीब आकर मुझे झकझोर रहा हो और कह रहा हो—"क्यों ? मुझे भूल गये क्या ? मैं तो तुम्हारा पुराना दोस्त हूँ !···"

नहीं···मैं उसे नहीं भूला हूँ—भूलना चाहकर भी नहीं भूला। शैशव, कैशोर्य और युवावस्थाके भी कई वर्ष मैंने इसके अन्तरंग साहचर्यमें बिताये हैं। एक परम आत्मीय स्वजनकी तरह इसने खाते-पीते, उठते-बैठते, पढ़ते-सोते अहर्निश मेरा साथ दिया है। उन दिनोंका एक भी चित्र, एक भी प्रसंग मुझे याद नहीं पड़ता जिसकी पृष्ठभूमिमें यह धुआँ न रहा हो। यहाँ तक कि पास-पड़ोस, बल्कि स्वयं अपने कुटुम्ब तकके भूले-बिसरे चेहरे मेरी स्मृतिमें इसीसे लिपटे हुए उभरते हैं—धुएँकी कड़वाहटसे भरी हुई धुँधलायी आँखोंवाले, राख चढ़े बालोंवाले चेहरे···।

किन्तु सबसे अधिक याद आनेवाला चेहरा स्वयं उस घरका है—नीची छत और अँधेरी खोहनुमा कोठरियोंवाला घर····जिसमें खिड़कीवाली एकमात्र कोठरी, बाजारसे लगी हुई मेरी उस कोठरी और रसोईघरके बीच मात्र एक सीढ़ीका अन्तराल—निरर्थक, न कुछ-सा, क्योंकि किवाड़ लगाकर धुएँको धकेलनेका अर्थ था—घरकी शेष पाँचों कोठरियों और दसों प्राणियोंको प्रकाश और हवा दोनोंसे वंचित कर देना। रातमें एककी बजाय दो-दो धुआँकी संगत मिलती थी क्योंकि पन्तजीकी 'ग्राम्या' के बनियेकी दुकानकी तरह मेरी कोठरीमें भी : 'धुआँ अधिक देती थी टिनकी ढिबरी, कम करती उजियाला।'

सवेरे ब्राह्ममुहूर्तसे दूसरा दिन शुरू होने तक निरन्तर धुआँ····धुआँ···धुआँ। धुआँ उस घरकी आत्मामें, उसके पोर-पोरमें जैसे रचा हुआ था। धुआँ उस घरका व्यक्तित्व था। एकके बिना दूसरेकी कल्पना ही जैसे नहीं की जा सकती थी, देहमें प्राणकी तरह वह धुआँ उस घरको ही नहीं, घरके प्रत्येक सदस्यको व्यापे था। हमारा और उसका अस्तित्व एक था, पूर्वनियोजित नियतिकी तरह वह सत्ता हमारे लिए स्वयंसिद्ध थी और उसमें ज़रा-सा व्यतिक्रम होना एक अस्वाभाविक घटना थी।

वह सत्ता आज आयुके इस चरण पर लगभग समाप्त हो चुकी है – किन्तु सिर्फ कायिक स्तरपर, मानसिक स्तरपर वह अब भी जीवित है। रसोन्मेषके भावाविष्ट क्षणोंमें तल्लीन होकर धुँएकी रूपछवियाँ निहारते-निहारते भी अकसर मेरी विचार-शृंखला एकाएक विच्छिन्न हो जाती हैं और उस धुँएको मैं हठात् अपनी साँसोंमें रुँधते हुए, आँखोंमें पिराते हुए महसूस करने लगता हूँ; और स्थानकी सारी दूरियाँ पल भरमें ही लाँघकर वह धुँआ जैसे मेरे अन्दर कुण्डली मारकर बैठ जाता है और निकलना ही नहीं चाहता। खुली हवामें भी मुझे अपने चारों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओर एक अजीब-सा घिराव प्रतीत होने लगता है। मुझे लगता है उस घरकी दीवारें मेरे चारों ओर उग आयी हैं और वे क्रमशः ऊँची और ऊँची होती जा रही हैं···और उस अँधेरेमें एक साथ कई नीले-नीले अजगरोंने मुझे जकड़ना शुरू कर दिया है। नीले-नीले धुएँके फैलते हुए अजगर···। मेरे चारों ओर धुआँ ही धुआँ है और उस धुएँको भेदकर न तो कोई स्वच्छ हवाका झोंका मुझ तक पहुँच सकता है, न मैं ही खुद उसकी गिरफ़्त ढीली करके बाहर निकल सकता हूँ।···मुझे अपने एक समकालीन कवि-की पंक्तियाँ याद आ जाती है : "धुआँ···धुआँ···धुआँ···! मेरे चारों ओर दूर तक···सिर्फ़ धुआँ ही धुआँ···!

और तब मैं सोचता हूँ कि मैंने भी तो अपनी आयुका एक बहुत बड़ा हिस्सा इस धुएँको दे दिया था, या मैंने नहीं दिया, वह दे दिया गया था। कितना सारा धुआँ मेरे द्वारा पिया गया होगा निगला गया होगा। फिर भी, इसके बावजूद मेरे चारों ओरका धुआँ तो अभी उसी तरह अटल अपनी जगह, ज्यों का त्यों डटा हुआ है। हमारे उस पुराने घरमें जो नये लोग आये होंगे, वे भी आज तक उसी प्रकार उस धुएँमें घुटते होंगे। हमारी निष्कृति उनके लिए क्या माने रखती है? नहीं··· धुआँ एक यथार्थ है – एक क्रूर और अनम्य यथार्थ! आज भी छत परका वह गोल, बेमालूम-सा सुराख धुएँको निकास देनेमें उसी प्रकार असमर्थ सिद्ध हो रहा होगा।

मुझे लगता है कि मैं दुनियाके किसी – निर्धूमसे निर्धूम – कोनेमें क्यों न चला जाऊँ मेरी शिराओंमें जमा हुआ वह धुआँ अपनी जगहसे टलने वाला नहीं है। मगर मेरे अन्दरका धुआँ ही क्यों, इस धरतीका धुआँ भी – धुआँमात्र – क्या यों ही टलनेवाली चीज़ है?

■ ■

धुँआऽऽ : रमेशचन्द्र शाह

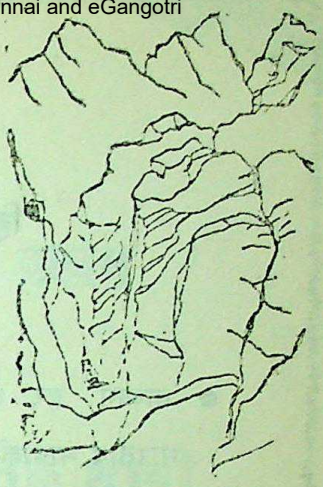

वसुधारा

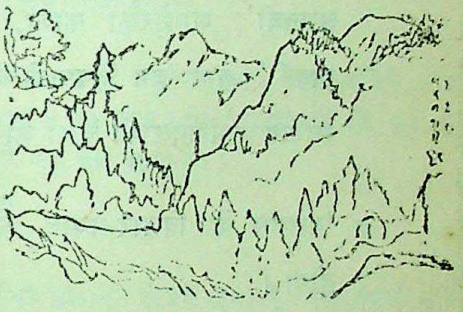

चन्दनवाड़ी

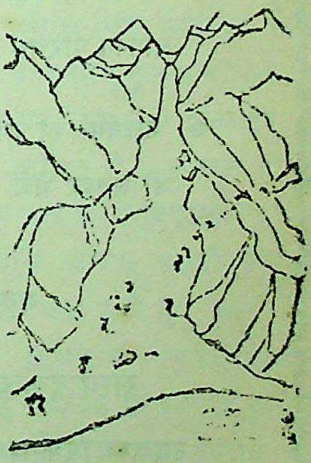

अलकनन्दा

तीनों चित्र : जगदीश गुप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माध्यम

हिन्दी साहित्य सम्मेलनका मासिक

सम्पादक : बालकृष्ण राव

- 'माध्यम' हर अंकमें 'सहवर्ती साहित्य' के स्तम्भमें किसी एक हिन्दीतर भारतीय भाषाकी चुनी हुई समसामयिक रचनाएँ प्रस्तुत करता है।
- 'विवेचना' में प्रकाशित 'चारुचन्द्रलेख', 'समय और हम', 'अपने-अपने अजनबी', शमशेरका काव्य, 'यह पथ बन्धु था', 'एक साहित्यिककी डायरी' तथा 'हम बिषपायी जनमके' की समधीत विवेचना और अन्य स्तरीय समीक्षाओंकी चर्चा आपतक पहुँची ही होगी।
- 'माध्यम' के विचार-प्रधान और विचारोत्तेजक लेखोंको आपने पढ़ा ही होगा।
- कविताओं, कहानियों, टिप्पणियोंके चयनमें 'माध्यम' की रुचि और स्तरसे आपका परिचय हो ही चुका है।
- 'माध्यम' का आग्रह है, न केवल आप इसे अवश्य पढ़ें, इसपर अपनी राय भी अवश्य भेजें।

मूल्य : एक प्रति १.००; वार्षिक १०.००

सम्पादकीय कार्यालय : पो० बॉ० सं० ६०, इलाहाबाद।

व्यवस्थापकीय कार्यालय : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काँगड़ा क़लम एक सांस्कृतिक थाती

किशोरीलाल वैद्य

'हिमप्रस्थ'के उपसम्पादक। कला-रुचिके लेखनमें दक्ष। जून १९६३ के 'ज्ञानोदय'में भी इसी शैली-पर एक लेख आया था।

भारतीय सांस्कृतिक समन्वयमें कलाकारोंका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। काँगड़ा क़लम भी इसी समन्वय-प्रक्रियामें एक पड़ाव है। युग-विशेषके साथ किसी भी सभ्यता और संस्कृतिपर अनायास पड़े रहते हैं, उनमें-से अनेक उसी विकासक्रमकी शृंखलाएँ बन जाती हैं। साहित्य व कलामें ये साये विविध रूप-रंगोंमें निहित रहते हैं। एक विकास-शील परम्परासे आबद्ध होनेपर इन सायोंके अन्तरतममें जन-मानस रहता है, अपनी अनेक आस्थाओं और विश्वासोंके साथ, आग्रह, पूर्वाग्रह और कुण्ठाओंके साथ, और एक विज्ञके साथ। कलाकारका सदा ही यह प्रयास रहता है कि वह इन सायोंको पकड़े और उनका अंकन करे। काँगड़ा क़लमने भी कुछ अरसे तक इन सायोंको सहेजा है जो आज जीवित न रहनेपर भी चित्रकलाके क्षेत्रमें हमारी महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक थाती हैं।

अजन्ताके भित्ति-चित्र भारतीय चित्र-कलाकी एक प्राचीन और मूल्यवान उपलब्धि हैं। मुग़ल-कलापर इरानी क़लमका ही प्रभाव स्पष्टतः लक्षित है। अजन्ता ही की परम्परा आगे बढ़कर अपने विकासशील और समन्वयिक गुणोंके कारण इरानी क़लमके साये भी समेटती चली गयी है। औरंगज़ेब-को छोड़कर अधिकांश मुग़ल-बादशाह कला-प्रेमी रहे हैं। उनके साम्राज्यमें वास्तु-कला तथा चित्रकलाकी बहुत उन्नति हुई, यद्यपि यह लोकजीवनसे हटकर ही हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस दृष्टिसे हम यह कह सकते हैं कि साहित्य-के चरण जिस गतिसे बढ़ते हैं उस गतिसे चित्रकलाके नहीं। भक्ति-साहित्यका प्रादुर्भाव साम्राज्यवादी शोषणकी ही प्रतिक्रियाके स्वरूप हुआ था। उस साहित्यमें जन-जीवनके उद्‌बोधन और उन्नयनकी प्रेरणा है लेकिन अधिकांश चित्रकार जन-जीवनसे दूर रहे हैं। क्योंकि चित्रकार भी अन्य व्यक्तियों-की तरह समयकी तरंगोंसे अछूता नहीं छूटता, यह स्वाभाविक है कि चित्रकलाने समयानुकूल अनेक मोड़ लिये हैं, वह नयी-नयी धाराओंमें प्रवाहित हुई है। हठधर्मी मुग़ल-शासक औरंगज़ेबके आतंकमय शासनसे निकलकर अनेक चित्रकार जब उत्तरी भारतके पहाड़ी राज्योंमें भागे तो वहाँ उन्होंने अपने अभिभावकोंकी रुचियोंके अन्तर्गत नये आयाम स्थापित किये। इन पहाड़ी राजाओंका ध्यान चित्रकलाकी ओर केवल आकृष्ट ही नहीं हुआ, वे विशेष रूपसे उसमें रुचि लेने लगे थे। उनका पोषण पाकर चितेरोंने किन्हीं विशिष्ट दिशाओंमें अपनी कलाको निखारा। पहाड़ोंमें अधि-कांशतः हिन्दू राजा थे। इसलिए शृंगारके अतिरिक्त चितेरोंकी क़लम-द्वारा राधा-कृष्ण, नल-दमयन्ती तथा रामायण और महाभारतके अनेक पात्रोंके श्रद्धापूर्ण भावमय चित्रोंका भी अंकन हुआ।

गहरे-उजले रंगोंमें काँगड़ा क़लमने जैसे सूक्ष्मताको भी उधेड़ रखा है। बारीक रेखाओंके अंकन और उनमें रंगोंकी विविध-तासे जो आकृतियाँ उभरी हैं, वे वस्तुतः आश्चर्यजनक हैं। यद्यपि आज कलाके मापदण्ड बदल गये हैं, फिर भी काँगड़ा क़लमकी सूक्ष्मता आजके औद्योगिक और मशीनी युगमें भी कठिन और असाध्य-सी जान पड़ती है। कुछ एक काँगड़ा शैलीके चित्रोंका ऐसा सूक्ष्म अंकन है जिसे बहुत स्पष्ट देखनेके लिए मैगनीफाइंग ग्लासकी आवश्यकता महसूस होने लगती है।

काँगड़ा घाटीका प्राकृतिक सौन्दर्य काँगड़ा-क़लमके चित्रोंमें पृष्ठभूमिके रूपमें अंकित है। प्राकृतिक सौन्दर्यकी यह पृष्ठ-भूमि तथा समष्टि रूपमें समस्त विषयवस्तु काँगड़ा क़लमको राजस्थानी चित्रोंसे पृथक् करती है। भाव-भंगिमाओंके अंकन दोनों ही क़लमोंसे लुप्त हैं। विविध चित्रोंमें नायक और नायिकाओंकी आकृतियाँ समान हैं। विभिन्न राजाओंके चित्रोंमें भी उनकी ऐसी आकृतियाँ नहीं बन पायी हैं जिन्हें देखकर यह कहा जा सके कि अमुक चित्र अमुक राजाका है। चितेरोंका यह प्रयास रहा है कि वे अपने आश्रयदाताओंको सुन्दर-तम रूपमें उभारें। चित्रोंकी एकरूपताका भी एक कारण था—बहुत-सी कला-कृतियाँ एक बड़े पैमानेपर तैयार हुई थीं। एक सधा हुआ चित्रकार पहले रेखाओंका अंकन कर लेता था और उसके शिष्य उसकी देख-रेखमें रंग भरते जाते थे। इस पद्धति-पर कुछ ही चितेरों-द्वारा बहुत बड़ी संख्यामें चित्रोंका निर्माण हुआ।

मुग़ल-साम्राज्यसे विस्थापित चितेरों राजस्थानमें अनेक राजपूत राजाओंके यहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलन :: काँगड़ा शैलीका प्रिय विषय

कलाका पावा। यहाँ जो क़लम पनपी, उसके राजस्थानी क़लमके नामसे जाना जाता है। राजस्थानी क़लममें राजाओंकी आकृतियाँ और वेशभूषा इस रूपमें अंकित हुई हैं कि उनके वीरतापूर्ण चरित्रोंका परिचय सहज ही मिल पाये, यह बात अलग है कि वे वास्तवमें ही वीर थे अथवा नहीं। इसके विपरीत काँगड़ा क़लमके चित्र शृंगार-रस और परम्परागत धार्मिक आस्थाओंके द्योतक हैं।

काँगड़ा क़लम हिमालय-कलाके नामसे भी जानी गयी है। काँगड़ा-चित्रकला हिमालयके आँचलमें बसे पहाड़ी राज्योंमें पनपी थी जिनमें मुख्यतः चम्बा नूरपुर, मण्डी, सुकेत, रूपी गुलेर, लम्बागाँव, बिलासपुर, टिहरी गढ़वाल, अर्की आदि हैं। आज भी इन जगहोंमें ये चित्र उपलब्ध हैं। इनमें-से कुछ चित्र राजाओंके निजी संकलनमें हैं तथा कुछ बहुत-से संग्रहालयोंमें सुरक्षित हैं। चम्बाके भूरिसिंह म्यूज़ियममें भी काँगड़ा कलम तथा पहाड़ी कला-कृतियाँ संग्रहीत हैं।

काँगड़ा क़लमके सन्दर्भमें चम्पाके रूमालोंकी ओर संकेत करना अपेक्षणीय है। चम्बा रियासत आज हिमाचलका एक जिला है। यद्यपि ये रूमाल काँगड़ा क़लमके ही क्षेत्रमें समझे जाते हैं, फिर भी यह कहा जा सकता है कि काँगड़ा क़लममें चम्बाकी विशिष्ट देन उसके रूमाल हैं। ये रूमाल सूती और रेशमी दोनों प्रकारके कपड़ेपर सोने, चाँदी अथवा रेशमी धागेसे बुने गये हैं। विवाह अथवा अन्य मांगलिक अवसरोंपर ये रूमाल उपहार-के रूपमें दिये जाते रहे हैं। इन रूमालोंपर अधिकांशतः काँगड़ा और राजपूत शैली-सी ही आकृतियाँ चित्रित हैं। ये रूमाल किसी स्थानीय गृह-उद्योगके उत्पादन नहीं। ऐसा समझा गया है कि इन रूमालोंको निपुण चितेरोंके सहयोगसे राजघरानों व अमीर घरानोंकी औरतोंने तैयार किया है। वेश्याओंने भी इस कलाके उत्कृष्ट और विशिष्ट नमूने प्रस्तुत किये हैं। आज ये रूमाल देश और विदेशके संग्रहालयोंमें सुरक्षित हैं। संग्रहालयोंकी निधिके अतिरिक्त ये काँगड़ा कला-कृतियाँ भारतीय संस्कृतिकी धरोहर भी हैं जिन्हें भविष्यके लिए भी सुरक्षित रखना होगा। ■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

अँधेरे का आदमी

जगदीश चतुर्वेदी

कवि, कथाकार। 'प्रारम्भ' के सम्पादक। कई योजनाओंके प्रवर्तक। 'सचेतन' और 'नई' कहानीके मध्यस्थ शायद।

उस शहरकी याद आनेपर केवल दो चीज़ें याद आती हैं, उड़ती हुई गर्द और भूंकते हुए कुत्ते। वह बहुत ही मनहूस शहर था और वहाँके लोगोंको मैंने ज़ोरसे बोलते या तेज़ चलते कभी नहीं देखा। मुझे वहाँके लोगोंको देखकर अहसास होता था कि ये सब किसी मातममें शरीक होने जा रहे हैं या मातम मनाकर वापस आ रहे हैं।

वह शहर भोपालसे क़रीब पचास मील दूर था और मध्यप्रदेशके सैकड़ों शहरोंकी तरह वहाँ भी हिन्दू-संस्कृतिके कई चिह्न खण्डहरोंकी मानिन्द इधर-उधर बिखरे हुए थे। पर मुझे ऐतिहासिक अवशेषोंमें कोई रुचि नहीं रही है, इसलिए मैं उस गर्द-भरे शहरमें या तो कमरेमें चुप बैठा हुआ उड़ती हुई गर्द देखता था या स्टेशनके गन्दे होटलमें बैठा सिगरेटें फूंकता था।

उन दिनों मैं बेकार था। मेरी अच्छी-खासी नौकरी एक सनकमें छूट गयी थी और मैं काफ़ी दिन पछताकर अब काफ़ी छुट्टी था। नौकरी छोड़नेके कुछ दिन बाद आदमी बहुत ताज़ा और भला महसूस करता है। रूटीनकी दमघोंटू यन्त्रणासे मुक्ति मिल जाती है। मैं वहाँकी गर्द-भरी हवामें मोटा हो गया था और मेरे गालोंमें लाली दिखाई देने लगी थी।

उन दिनों ठण्ड पड़ने लगी थी और पिताजी रात बड़ी देर गये दौरेसे लौटते थे और मुझपर एक अविश्वसनीय दृष्टि फेंककर अन्दर कमरेमें चले जाते थे। मैं डरकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं ऊपरसे नीचे तक काँप गया।
यह रहस्यमय व्यक्ति मुझे अपने ताऊजीकी
तरह लगा।
वह भी मुझपर बड़ी निगरानी रखते थे
और उनकी हिलती मूँछें देखकर मैं
सहम जाता था।
इस आदमीकी मूँछें भी हिल रही थीं और
यह आदमी भी मुझे उतना ही कड़ा
और आत्मीय और शक्की मालूम हो रहा था।
मैंने आगे बढ़ते हुए उससे कहा—
"रास्ता भटककर इधर चला आया।
मैंने सोचा, शायद
यह सड़क स्टेशनकी तरफ़ जाती है।"

कमरेमें ही लेटा रहता था और मुझे बिस्तर-पर सोनेकी बजाय सोफेपर ऊँघना अधिक अच्छा लगता था। पिताजीको देखकर मैं आँखें जोरसे मूंद लेता था और शायद मेरे गालोंकी चमक पीली रोशनीमें गाढ़ी सुर्मई रंगकी हो जाती थी। पिताजीको मैं जाते हुए चुंधियायी नज़रोंसे देखता था और जाने-के बाद एक लम्बी साँस ख़ुद मुँहसे निकल जाती थी। पिताजी अन्दर माँके पास जाकर धीरे-धीरे कुछ बोलते थे और मफ़लर पटक-कर बाथरूम जाते हुए उनकी स्लीपरकी आवाज़ें मेरे कानोंमें आती रहती थीं। मेरी सौतेली माँ मुझसे ज्यादा बात नहीं करती थीं और अकसर मेरा खाना ड्राइंग रूममें ही भेज देती थीं। वह कभी-कभी रातको पिताजीसे मेरी नौकरीके सम्बन्धमें भी बात करती थीं और मैं अपनी बुराई सुनकर चिढ़ जाता था।

पिताजी संयमी पुरुष थे और जब कभी रातको मैं अधिक आवेशमें होता था तो सिगरेट पीता था, जिसकी महक उनके कमरेमें भी चली जाती थी। वह मुझसे कुछ नहीं कहते थे, पर सुबह कमरेके कोनोंमें-से सिगरेटके टोंटे उठाकर बाहर फेंक देते थे। ऐसेमें, मैं आँखें मूंदकर सोनेका अभिनय करता था। मैं अकसर सोचता था कि बेकार आदमीको अधिक संवेदनशील नहीं होना चाहिए। यों मुझे हमेशासे ऐसा लगता रहा है कि अधिक संवेदनशील आदमी मूर्ख और गैर-ज़िम्मेदार होता है। मैं माताजी-पिताजी-को संवेदनशील समझता था और उनकी

छोटी-मोटी बातोंपर ग़ौर नहीं करता था। मुझे लगता था कि मेरा स्वास्थ्य अच्छा हो रहा है और रातमे अकेला सोना बहुत खलता है। पर, मेरी जेबमें पैसे नहीं थे और मुझे कम नम्बरका अण्डरवीयर पहनकर सोना पड़ता था। मैं इस आदतसे उतना ही सुखी रहता था, जितना पिताजी सौतेली माँके साथ रहते होंगे।

उस दिन पिताजी रातको दौरेपर गये थे और मैं माताजीसे पिक्चर देखनेके पैसे लेकर गर्द-भरी सड़कपर उतर गया था। एक खजेले कुत्तेने मुझपर वार किया था और मेरी पतलूनका पायचा उसके दाँतोंमें आ गया था। एक मरियल-से चौकीदारने उसे डाँटा था और मेरी नामर्दीपर मुसकराता अन्धी गलीमें मुड़ गया था।

मैं मिट्टीके ढूंहोंके पीछे छिपता हुआ छोटे-से सिनेमा-हॉलकी ओर बढ़ रहा था। मुझे बचपनसे ही कुत्तोंसे डर लगता रहा है और मैं बहुत चौकन्ना होकर चल रहा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने पैण्टकी जेबमें दो गोल पत्थर ठूँस लिये थे और मेरी आँखें चालाक शिकारीकी तरह इधर-उधर दौड़ रही थीं।

सिनेमा-हॉलके पासवाली गलीमें-से एक कुत्ता निकला और सामनेसे मेरी ओर झपटा। मैं सँभल न पाया और जेबमें रखी गिट्टीकी नोंक मेरी जाँघमें गड़ गयी। मैं कपड़े झाड़कर उठ खड़ा हुआ और इधर-उधर देखने लगा। कुत्ता अन्दर गलीमें गुम हो गया था। मेरे पास एक आदमी खड़ा था और हँस रहा था। मुझे उसपर बेहद गुस्सा आया और मैंने अपनी पैण्टसे गिट्टी निकालकर उसके चेहरेपर मारनी चाही। पर वह आदमी सँभल गया और मेरे पास आकर उसने मेरा कन्धा पकड़ लिया।

"आप क्या चाहते हैं?" मैंने तेज़ीसे पूछा।

"जी, कुछ नहीं। आप गिर गये तो आवाज़ सुनकर मैं इधर चला आया। दर-असल वह कुत्ता मेरा अपना है। मुझे खेद है कि आपको उसके कारण कष्ट हुआ है।"

"कोई बात नहीं।" कहकर मैं आगे बढ़ गया। वह आदमी भी मेरे पीछे-पीछे आ गया और मेरे साथ चलने लगा। मुझे बहुत बुरा लगा, पर मैं उससे यह न कह सका कि तुम्हें मेरे साथ नहीं चलना चाहिए।

मुझे लगा कि यह आदमी बदमाश है। वैसे वह हर आदमी जो छोटे शहरोंमें कुत्ते पालता है, मुझे बदमाश नज़र आता है। मैं उससे कतराकर सामनेकी सड़कपर चलने लगा और मैंने सिनेमा-हॉलकी बजाय सरायके पासकी पानकी दुकानपर जानेका निश्चय किया। पानकी दुकानपर दो-तीन आदमी खड़े थे और उनके चेहरेसे लग रहा था कि उन्होंने काफ़ी शराब पी रखी है और पान खाकर वे पुराने शहरके गन्दे मोहल्लोंमें भटकेंगे और कुछ बदनाम रिंडी-वालोंके साथ घूमेंगे। मैंने उनको न देखनेका अभिनय किया और पानवालेसे एक पैकिट सिगरेट ख़रीद लिया। पानवालेने सिगरेट देकर उन ग्राहकोंको पीठ फेरते ही एक वज़नी गाली दी और मुझे सुनाकर कहा, "साले, जाने कहाँसे चले आते हैं। पान खा जाते हैं और पैसे तक नहीं देते!"

मुझे लगा कि वह पानवाला मेरी ओर भी व्यंग्यसे देख रहा है। मैंने निर्विकार भाव-से उसकी ओर देखकर एक जोड़ा सादा पान माँगा। वह पान लगाने लगा और मैंने पाकिट खोलकर एक सिगरेट सुलगा ली। जब मुझे उसने पान दिये तो मैंने कोई हिफ़ाज़तसे मुट्ठीमें दबाये पैसे उसकी ओर बढ़ा दिये। पर तभी एक तीखी और अधिकार-भरी आवाज़ सुनकर पानवाला ठिठक गया। वही आदमी मेरे पीछे पीली रोशनीमें-से प्रकट हो गया था और पानवाले को मेरे पैसे लेनेसे मना कर रहा था। मैंने पैसे देनेकी ज़िद की पर पानवाला चुपचाप मेरी ओर देखता रहा। मैं अजीब-से पसोपेशमें पड़ गया। मैंने पान खा लिया था और एक सिगरेट सुलगा ली थी। मेरी तबीयत हो रही थी कि पान थूक दूँ और सिगरेट मसलकर उस अजनबीके चेहरेपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार दूं। पर इस हास्यास्पद स्थितिका जायजा लेनेको मेरी हिम्मत नहीं थी और मैं एक खिसियानी-सी हँसी हँसकर और पाकिट वहीं छोड़कर वहाँसे खिसक गया था।

मैंने कुछ दूर जाकर कनखियोंसे देखा। वह आदमी पानवालेके पास बैठ गया था और उसने अपनी टाँगे तख्तके नीचे लटका ली थीं। उसकी इस निश्चिन्त बैठकसे मुझे भी प्रसन्नता हुई और मैं भी निश्चिन्ततासे सिनेमा-हॉलकी बजाय अपने सहज गन्तव्य स्थानकी ओर चलने लगा। छोटे शहरोंमें ऐसे स्थानोंपर जाना खतरेसे खाली नहीं है—वहाँ आपके पिताजी या रिश्तेदारको गवरेवालेसे लेकर पानवाले और ठेकेदार तक सभी जानते हैं। पर यह भी सच है कि जब कोई शहर आपके लिए मित्रहीन लगता है तो आप केवल इसी स्थानपर जा सकते हैं और तब यह चीज़ आपकी मजबूरी है। यों कभी-कभी लगता है कि मित्रता रखना भी एक मजबूरी है। पान खाना और सिगरेट पीना भी एक मजबूरी है।

मैं ग़फ़लतमे ज़रा झुका-सा चल रहा था कि एक गड्ढेमें पैर ढीला पड़ा और मैं तिलमिला गया। यों मैं गालियाँ नहीं बकता पर ऐसे मौक़ेपर गाली मुँहसे अपने आप निकल गयी। मुझे अच्छा लगा और मैंने अपने लचके हुए पैरको झटका मारते हुए वही गाली फिर दोहरानेकी कोशिश की। किन्तु इस बार गाली टाँगको दी गयी थी या दर्दको, मैं समझ न सका।

मैं उस गली में पहुँच गया था, जहाँ किसी फ़िल्मके रेकार्ड बहुत तेज़ बज रहे थे और कलेजी, मालपुए और मलबेकी गन्ध एक साथ आ रही थी। मैं थक गया था। मैंने कड़वा पान एक ओर थूका और मलबेकी पासवाली दूकानपर मैं चाय पीने घुस गया। ऐसी गलियोंमें आदमी जानेके पहले चाय पीता है या इससे भी कड़वी गोलियाँ लीलता है। मैंने गोली तो नहीं लीली, होती तो चूकता नहीं, मैं चाय पीकर मुसकराया और छज्जोंको घूरता गलीमें घूमने लगा।

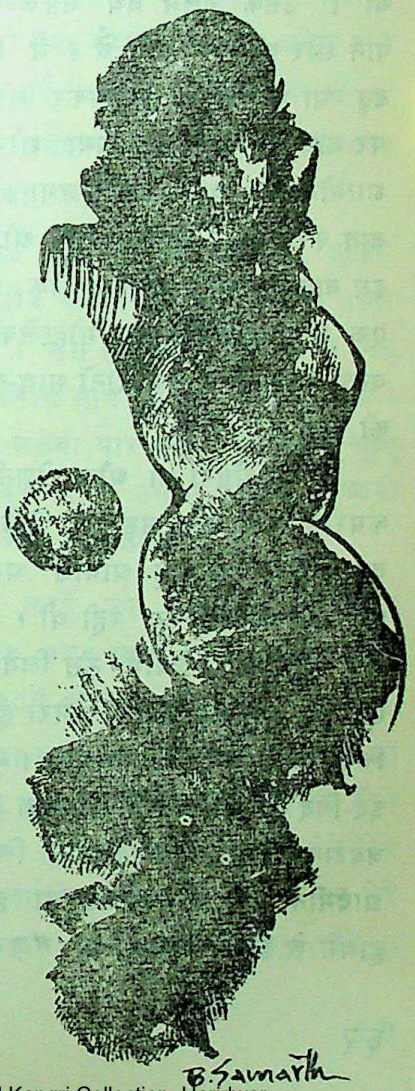

अँधेरेमें उभरती आकृति : : भाऊ समर्थ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं तीन ज़ीने उतर चुका था और मुझे लग रहा था कि मुझमें ऐसी जगहोंपर अकेले जानेकी शक्ति नहीं है। कुछ आभिजात्य संस्कार आड़े आ जाते हैं और मैं झेंपकर बिना बात किये अधकचरी वयके लड़केकी तरह घूरकर वापस आ जाता हूँ।

तभी एक आदमी पासकी बदबूदार गलीसे बाहर निकला और मेरे साथ-साथ चलने लगा। उसका माथा बड़ा था और बालोंमें ज़रूरतसे ज़्यादा तेल चमक रहा था। उसके गलेमें बँधे मफ़लरपर तेल, पान और कीचड़के दाग़ थे। मैं ज़रा आगे बढ़ गया और उससे कतराकर चलने लगा। पर वह मेरे साथ आ गया और अत्यन्त आत्मीयतासे बात करने लगा। मैं उससे बात करता आगे बढ़ता रहा और उसकी इस बातसे सहमत हो गया कि कमसे-कम एक बार चलकर उस मोहल्लेकी अमूल्य वस्तुको देख लूँ। हम दोनों साथ-साथ पीछेकी ओर मुड़े।

गलीमें अँधेरा था और रोशनीके चकत्ते कमरोंसे निकलकर सड़कपर फैल रहे थे। दूर कुत्तोंकी भयावह आवाज़ें आ रही थीं और मुझे कँपकँपी आ रही थी। मैंने अपने हाथ पतलूनकी जेबोंमें ठूंस लिये। पैण्टकी एक जेब फटी हुई थी और मेरा हाथ जाँघके चिकने आवरणपर फिसल गया। मुझे जाँघके इर्द-गिर्द एक कम्पन-सा महसूस हुआ। मैंने घबराकर हाथ बाहर निकाल लिया। उस आदमीने मेरा बाहर लटकता हाथ अपने हाथमें ले लिया और बोला, "ज़रा बचकर आइए। यहाँ कीचड़ भी है और फिसलन भी। कहीं आपके कपड़े खराब न हो जायें।"

मैंने हाथ वापस खींच लिया और कीचड़में पड़े पत्थरोंपर चलने लगा। तभी पीछेसे एक तीखी आवाज़ आयी—"कौन, माँगीलाल, आदमी देखकर बात किया करो।"

मैं पीछे पलटा। माँगीलाल अंधेरेमें गुम हो गया था। एक आदमी—पहचानी आवाज़वाला एक आदमी—मेरी बायीं ओर खड़ा था।

"आप ?" उसने अत्यन्त आत्मीयतासे मेरी ओर देखकर बनायी हुई आवाज़में कहा।

मैं ऊपरसे नीचे तक काँप गया। यह रहस्यमय व्यक्ति मुझे अपने ताऊजीकी तरह लगा। वह भी मुझपर बड़ी निगरानी रखे थे और उनकी हिलती मूंछें देखकर मैं डर जाता था। इस आदमीकी मूंछें भी हिल रही थीं और यह आदमी भी मुझे उतना ही क्रूर और आत्मीय और शक्की मालूम हो रहा था। मैंने आगे बढ़ते हुए उससे कहा, "रास्ता भटककर इधर चला आया। मैंने सोचा, शायद यह सड़क स्टेशनकी तरफ़ जाती है।"

उसने मूंछों-भरे ऊपरके होंठको दाँतोंसे दबा लिया। मेरी बातका प्रतिवाद किये वह मेरे साथ चलने लगा। मेरी चाल तेज़ हो गयी थी और मैं जल्दीसे जल्दी लौट जाना चाहता था। किसी अप्रत्याशित भयकी कल्पनासे मैं सिहर रहा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदमी चुपचाप मेरे साथ चलता रहा। उससे कुछ कहना मुझे खतरेसे खाली न लगा।

वह एक चायकी दुकानके सामने रुक गया। बोला, "आओ, चाय पी लें।"

"मुझे घर जल्दी पहुँचना है।" मैंने डरी हुई आवाज़में कहा।

मेरी मिमियायी आवाज़पर वह अधिक क्रुद्ध आ गया; बोला, "डरो नहीं, कॉलोनी-तक मैं तुम्हें छोड़ दूँगा। मैं तुमसे कुछ बात करना चाहता हूँ। तुम्हें देखकर ऐसा लगता है कि..." उसने मुँहमें कुछ कहा और मैं उसके आदेशपर चायघरमें घुस गया।

एक टूटी मेज़पर हम लोगोंने चाय पी। वह सुड़ाप-सड़ाप करता हुआ चाय पीता रहा। हम दोनों चुप बैठे रहे। मौन उसीने तोड़ा—"आप सिन्हा साहबके लड़के हैं ना? आबिद पढ़ते हैं?"

मुझे अजीब लगा। यह आदमी तो पिताजीको भी जानता है। मुझे लगा कि अब पिताजीको यह भी मालूम हो जायेगा कि मैं केवल सिगरेट ही नहीं पीता हूँ! फिर एक दहशत-सी छा गयी और मैं उस आदमीको पिताजीका एजेण्ट समझने लगा, जो उनकी सन्तानके चरित्र-सम्बन्धी मामलों-के लिए ज़िम्मेदार हो। मैंने उसकी इस बात-का जवाब स्वीकृति-सूचक देना उचित न समझा। इसके विपरीत मैंने उससे पूछना चाहा कि आप पिताजीको कैसे जानते हैं? पर मुझे यह पूछना बेढंगा लगा और मैंने उससे पूछा—"आप यहाँ क्या करते हैं?"

मेरा मोटर-पार्ट्सका बिजनेस है। बिज-नेस भी करता हूँ, कुछ प्रापर्टी भी है। गुज़र हो ही जाती है। घरमें मैं अकेला ही हूँ।"

मुझे पूरी कैफ़ियत देनेवाले बड़े बोर मालूम होते हैं। मैंने अन्तिम घूँट लेते हुए पूछा, "आपका परिवार क्या यहाँ नहीं रहता?"

वह सहसा भावुक हो गया और अत्यन्त बुझे गलेसे बोला, "परिवार तो कभीका समाप्त हो गया भैय्या, अब तो अकेले राम हैं। एक भाई था, वह भी चला गया।"

मैंने संवेदनामें आँखें डबडबायीं और पूछा, "क्यों, उनको क्या हो गया था?"

"टी० बी० हो गयी थी उसे, एब्डो-मिनल टी० बी०। पर उसकी मौत उससे नहीं हुई। उसे हवा लग गयी थी। वह अपने दोस्तोंके साथ भोपाल गया हुआ था। वहीं उसे लकवा मार गया। जबतक मैं पहुँचूँ वह मर चुका था।" उसकी आँखें लटक आयी थीं और गला भर आया था।

मेरे मनमें उस आदमीके प्रति एक सद्भावना उमड़ आयी। मैंने कहा, "वह आपसे कितने छोटे थे?"

इतना सुनना था कि वह पागल-सा हो उठा और मुझे कन्धेसे पकड़कर होटलसे नीचे आ गया। होटलवालेको न उसने पैसे दिये न होटलवालेने उससे पैसे माँगे। वह मेरे कन्धोंपर हाथ डाले कहता रहा—"सिन्हा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाबू, वह मेरा नहीं तुम्हारा जुड़वाँ भाई था। आज मैं आश्चर्यचकित रह गया, जब मैंने गलीमें आपको देखा। आपकी आकृति-का अद्भुत साम्य मेरे छोटे भाई महेशसे है। मेरा कुत्ता पीरू भी इसीलिए आपपर झपटा था। दरअसल वह महेशसे बहुत हिला-मिला था।"

मैंने उसे सान्त्वना देते हुए कहा, "आप मुझे ही महेश समझिए। मेरे कोई बड़ा भाई नहीं है, मुझे इससे बेहद शान्ति मिलेगी।"

उसने मुझे बुरी तरह शरीरसे लिपटा लिया और मुझे कुछ क्षणोंको लगा कि उसने चेतना छोड़ दी है। मैंने उसे सँभालकर अपनेसे अलग किया।

वह फिर मेरे साथ चुपचाप चलने लगा। बोला, "अगर एतराज़ न हो तो मैं तुम्हें घर तक छोड़ आऊँ!"

मैंने केवल इतना कहा कि आपको व्यर्थ तकलीफ़ होगी।

वह मेरे साथ चलता रहा। जब कॉलोनीकी नुक्कड़से मेरा मकान दिखाई देने लगा तो उसने मुझे भर नज़र देखा और एक बार फिर शरीरसे लगा लिया। मैंने पुनः उससे मिलनेका वादा किया, जो मैं आजतक न पूरा कर सका; और फिर मकानकी ओर मुड़ गया।

मकानके नीचे आकर मैंने कुण्डी खट-खटायी और पीछे मुड़कर देखा। अँधेरेमें वह आदमी ख़ामोश खड़ा था और एक कुत्ता उसकी बगलमें खड़ा हुआ अपने पंजे उसकी आस्तीनपर टिकाये उसके साथ सटा हुआ था। मुझे वह आदमी उस कुत्तेके साथ खड़ा हुआ एक लाइफ़ साइज़ पेण्टिंग-जैसा लग रहा था और मैं सोच रहा था कि उस पेण्टिंगमें एक आदमीकी जगह रिक्त है जो शायद मेरी या मुझ-जैसे किसी आदमीकी है, जो उसका भाई था।

मैंने उसे आवाज़ देना चाहा, पर उसी बत्ती जली और मैं ज़ीनेमें गुम हो गया। मैंने ड्राइंगरूममें जाकर बत्ती जलायी, कपड़े उतारे और खिड़कीके शीशोंसे बाहरकी ओर देखा। मुझे बड़ा अजीब-सा लगा, अभी भी वह आदमी उसी कुत्तेके साथ सटा खड़ा हुआ था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

रिश्ते

पानू खोलिया

महानगर की भीड़भाड़ से दूर राजस्थानके एक गाँव में बैठकर कहानीकी नयी संवेदनाएँ खोज रहे हैं।

• • • • • •

...की छाँह अब सीधे झुक ...थी।

ऊपर आँगनकी दीवालपर से पप्पूका ...तार पुकारना सुन और उन पुकारोंके ...अजुध्या बाबूकी लगातार अनसुनी देख ...नायब साहबने टोपीसे चेहरेपर हवा ...करते हुए पूछा, "बच्चा शायद पोता होगा?" ...अजुध्या बाबूके मनका तिक्ततासे बसा-...फाहा मुट्ठीमें दब गया जैसे। नारियल ...हरे पत्तेका बीड़ा लपेट, उसपर ...जमाते हुए, आँगनकी ओर पीठ किये ...जरूरतसे काफ़ी ऊँची आवाज़में बोल पड़े, ...अजी, क्या नाम···नायब साहब ! सब ...के हैं--पोता भी, पोती भी, बहू भी, ...भी, औरत भी, म···अऽ--" 'मर्द भी' ...कहते-कहते सम्हल गये वे और बात आगे ...दी—"जिस रोज़से ज़रा चलना रुक जाये ...नाम···कोई भी अपना नहीं रह जाता,

हाँ !" और ज़ोरसे नारियल गुड़गुड़ा दी। पानी ज़्यादा भर गया था, मुँह में चला आया। इसलिए चिलम उठा, उल्टी फूँकसे ऊपरके रास्ते पानी की एक धार पिचकाकर जल्दी-जल्दी कशें खींचनेमें जुट गये।

नायब साहब का हवा करना ढीला पड़ चुका था और वे ऊपर डालकी ओर देखते हुए कह रहे थे, "हाँ ऽ, बात तो सही है आपकी। दुनियामें कौन किसका है···सब झूठेके रिश्ते ! बेटा हो चाहे बेटी हो, माँ हो चाहे बाप हो--"

"अजी, क्या नाम···नायब साहब !" मिर्च लग गयी थी, इसलिए खाँसते-खाँसते ही बोल उठे अजुध्या बाबू, "आप भी जोर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की ही कहते हैं···! बाप ससुरेको पूछता ही कौन है, जब चार पैसे कमानेवाले जो खुद बन गये !" आवाज़ इस बार भी काफ़ी ऊँची थी।

"हाँऽ, बात तो सही है आपकी।" नारियल लेते हुए नायब साहबने यह बात भी मान ली।

और फिर कुछ देर तक दुतरफ़ा खाँसी के दौर चलते रहे। नारियल नायब साहबके हाथमें धरा ही रह गया था। खाँसीके दौर जब हलके पड़ गये, तो बुझती हुई आगमें फुरफुरी जगाते हुए नायब साहब चुँधिआयी हुई आँखों से चारों तरफ़ का जायज़ा लेने लगे। ऊपर आँगन में धीमी आवाज़में सिलाईकी मशीन चल रही थी। सरलाके सिरका पल्लू ही दिखाई पड़ रहा था। मकानकी बग़लमें उठ रही दीवार और दीवारपर काम कर रहे राज लोगोंपर जब नायब साहबकी नज़र पड़ी, तो सूखे होंठोंपर एकाएक एक खिलाव आ गया, आँखोंमें चमक उतर आयी। बोले, "अच्छा, यहाँपर ये नया मकान बन रहा है, मैनेजर साहब ?"

अजुध्या बाबू दोनों हाथोंसे सिर थामे नीचे की तरफ़ देख रहे थे। जवाबमें उन्होंने एक जम्हाई छोड़ दी, 'हे क्रेष्ण-गोबिन्द ! हे क्रेशन-गोबिन्द !' और छूटी हुई बातका सूत्र फिरसे पकड़ लिया, "क्या नाम····असल बात तो ये है नायब साहब, कि इस मेरे-पराये के झमेले में पड़ना ही सबसे बड़ी मूरखता है।···अजी, हम कहते हैं, एक छोटी-सी जिन्दगी मिली है आपको, क्यों उसका इस पचड़ेमें पड़कर सत्यानाश मारते हो! [illegible] आये हो, तो चार दिन बेफिक्री में [illegible] निकाल भी जाओ अपने ! क्या नाम··· अपनी समूची जान-जिन्दगी, हड्डी-पसली घर कुछ होम दो उन अपनोंके लिए, और आखिर कार वे अपने ही धक्का मारकर बाहर कर दें, कि क्या नाम···हमारी बातोंमें दखल-अन्दाज़ी करनेवाले तुम होते कौन हो, चुपचाप रहो। ···फिर !" उनकी आवाज लगातार ऊँची ऊँची उठती जा रही थी। और ऊपर सिलाई मशीन की गरगराहट रुक-रुक जा रही थी।

नायब साहब उठकर चले गये थे। अजुध्या बाबू सिर पकड़े दूर-दूर तक फैले अथाह उदासीमें डूबे बैठे रह गये। फिर [illegible] और थके हुए-से दरी झटकते-झटकते मकान को चले आये।

अभी ऊपरके खेतमें पहुँचे ही थे, कि नज़र बग़लकी सब्ज़ीकी क्यारियोंमें घुस आयी बकरीपर जा पड़ी। लेकिन अनदेखा कर दिया और चलते रहे। फिर शायद मन न माना। लौटे और एक बड़ा-सा पत्थर टुकड़ा उठाकर डाल दिया बकरीकी तरफ़ और बीमार लहज़ेमें बड़बड़ा दिये, "दुनिया उजाड़ मौजसे ! इस घरको पनपना तो है भी नहीं है अब···!" और फिर बिना फिर मलालके मकानकी ओर आ गये। ऐसे एक रोज पहले भी कभी गोभीकी क्यारियों कोई बकरी घुस आयी थी। उस अजुध्या बाबूने बकरीको खदेड़कर खेत-पार ही नहीं किया था, बल्कि उसके पीछे भागते हुए उसके घर तक पहुँच गये थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खूब तड़ आये थे वहाँ। उस सारी सर्द रात वे गोभीकी क्यारीको दूसरी बार सींचते रहे थे और खेतके चारों ओर की बाड़ ऊँची उठाते रहे थे, अन्धेरा होने-होने तक, फिर।"

दरी और नारियल लिये आँगनमें पाँव रखा अजुध्या बाबूने, तो अनायास ही नज़र दूर राज-मजदूरोंकी ओर घूम गयी। काम छोड़कर वे लोग एक जगह सिमटे बैठे अपने-अपने ही किसी छोकरेको चिढ़ा रहे थे और हँस रहे थे। और कन्धेकी राह हाथ डाल-कर पीठ खुजलाते हुए एक बूढ़ा राज कह रहा था, "अरे, एक चिलम जरा अच्छी तो भरो रे! इस चिलमसे तो धुआँ ही नहीं निकली।" और जम्हा दिया था हहरकर। इससे पहले भी, जब अजुध्या बाबू अमरमें सोये हुए थे, वे लोग देर तक तम्बाकू पीते हुए बकवास करते रहे थे। काम की तरफ़ सबके हाथ ढीले थे। अब भी उनके वही हाल देखकर मनमें ऐसी भभक उठी अजुध्या बाबू की, कि दरी-चिलम समेत सभी जा पड़ें वहाँ और जुल्म ढहा दें जाते-ही-जाते... बेईमान ससुरे! मगर तभी कपड़ा पहने रही सरलाने सिरका पल्लू ठीक कर पूछा लिया, 'बाबूजी, आपके लिए सूजी बना दूँ थोड़ा-सा ?'...और भभक रीत गयी। अजुध्या बाबू को अपने खाना न खानेकी याद आ गयी और वे पुनः अपनी पिछली मनःस्थितिमें वापस आ गये। एकदम उदास और विरक्त होकर अपने कमरेकी

तभी उधर सीढ़ियोंपर कोई राज चढ़ आया।
पूछने आया था कि
खिड़की कहाँ और कितनी चौड़ी पाड़ेगी।
अजुध्या बाबू चुपचाप आख़िरी ग्रास चबाते रहे
आसमानकी ओर देखते हुए,
और जब ग्रास निगल चुका, तो दोनेसे हाथ
पोंछकर उसे नीचें फेंकते हुए कह दिया
बिना उसकी तरफ़ देखे,
"हमें नहीं मालूम भइया...मकानवालोंसे
पूछो।"
और दूसरी ओरको मुड़ गये।

ओर मुड़ गये वे—"नहीं...कुछ नहीं! क्रेशना ....क्रेशना...!"

■

आज अजुध्या बाबू का सूरज जौ-जौ, तिल-तिलकर खिसक रहा था; दिन पल-पल-कर बीत रहा था। कल तक पता भी नहीं चलता था, कि कब दिन चढ़ा, कब दुपहरी ढली, कब अन्धेरा हुआ। तड़के जग जाते थे। नहाने वग़ैरह तक पप्पू भी उठ गया होता था। ख़ुद उसके हाथ-मुँह धोते, उसे कपड़े पहनाते, बाल ठीक करते और फिर दादा-पोता दोनों फूल चुन लाते। चन्दन घिसकर, आसन ठीक कर, पप्पूको पासमें बैठा कर, उसके जुड़े हाथोंमें एक फूल खोंस अजुध्या बाबू की पूजा शुरू हो जाती। अन्तमें घण्टी-की टुनटुनाहटके साथ आरती, जिसमें घिसी-घरघराती आवाज़के साथ एक पतली स्वर-धार भी बह रही होती। पप्पू दूध पीनेसे भागता था। इसलिए अजुध्या बाबूने उसके लिए अपनी अलमारीमें ओवल्टीन रख छोड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थी, बिस्कुट रखे थे, मक्खनका डिब्बा रखा था, चॉकलेटें रखी थीं, शुद्ध घीमें मैदेके, अपने हाथसे बनाये मीठे ख़ुरमे रख छोड़े थे। वे ही उसे पुचकार-पुचकारकर दूध पिलाते और फिर उसकी, पिछली शामसे ही तवेकी कालिख पोतकर और ऊपरसे बोतलका घोटा लगाकर रखी तख़्ती उठा लाते। बीचमें पप्पू भाग-भाग उठनेकी कोशिश करता, तब चॉकलेट और ख़ुरमे काम आते थे। तख़्ती पूर जाने पर उनकी सब्ज़ीकी क्यारियाँ सींचनी शुरू हो जाती। और फिर कुछ देरको धूपमें अख़बारकी ख़ास-ख़ास ख़बरें। तब तक राज-मज़दूर आ जाते और दिन शुरू हो जाता। अजुध्या बाबू उनकी निगरानीमें तैनात हो जाते। सिर्फ़ बीचमें एक बार पाँच मिनटके लिए भागकर खाने-को जाना पड़ता था। जल्दी-जल्दी दो-चार कौर निगलकर कपड़े भी वैसे ही अधपहने उठा लाते और मज़दूरोंके पास आकर पहनते। जोश दिलानेको कई बार ख़ुद भी काममें उतरना पड़ता था, "कैसे जवान हो, रे लड़को, तुम! क्या नाम····मुझ बूढ़ेके सामने तो अपनी जवानीकी शर्म करो जरा। धत्तुम्हा···!" धीरे-धीरे फिर वहाँ पुराने मकानकी छाँह उतरनी शुरू हो जाती। छाँह लम्बी और सर्द होती चली जाती। तब कोई मज़दूर धीमेसे याद दिला देता "अब तो दिन ढलनेकी तैयारी है बाबू साहब! साढ़े पाँच-छै का टाइम हो गया है।" और फिर एक हाथमें थैला उठाये, दूसरेसे फाँद-फाँद कर चल रहे पप्पूकी अँगुली पकड़े, उसे पहाड़े रटाते, अजुध्या बाबू रेंगते हुए-से बाज़ारकी ओर जा रहे होते। फिर शामकी सन्ध्या-पूजा, और फिर खा-पीकर बिछौना झाड़-झटकार पप्पूको सुला तमाखू भर लाना फिर देर तक लेटे-लेटे चाणक्य-नीति या रामायण के पन्ने बुदबुदाते हुए घर-परिवारकी योजनाएँ ढालते रहना···।

मगर आज एक ही दिनमें अजुध्या बाबू बूढ़े हो गये थे, एकदम बूढ़े, एकदम बेकार। बुढ़ापा लाशकी तरह लद गया था उनपर ढोनेके लिए, बस, उदासी और जम्हाइयों-भरी विरक्ति शेष रह गयी थी और दुहरानेके लिए बीस-पच्चीस वर्षोंका वह अतीत था जो में लटक गया था, जिसका इंच-इंच टुकड़ा गज-गज-भर गहरा होकर मनको कलपा जाता है और अबतककी उपलब्धिको—किये-कराये को, सारे सन्तोषको—बेमानी क़रार दे जाता है। नहीं, भूल हो रही है। अजुध्या बाबू रातसे ही बूढ़े हो गये थे दर असल। किशोरने उनके अनकहे, मगर लम्बी और 'क्रेशना···क्रेशना'के साथ बीतने उठ जानेसे व्यक्त किये भावको और पहचानकर उसका मान जुर्रत ही नहीं की थी। पप्पूको सुलाना एक बेकारकी झंझट लगी थी कमरेकी बत्ती भी जल्दी बुझ गयी सारा बुढ़ापा एकबारगी बरस गया फिर बड़ी देर तक अन्धेरेके काते पिछले पच्चीस वर्षोंके कमरतोड़, एकाकी दिन खिंचते-उभरते रहे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बार। एकाध बार अनायास ही पच्चीस वर्षोंकी वह सीमा-रेखा टूट पड़ी थी और उसके पूर्वके दिन भी दुलक आये थे। मगर अजुध्या बाबूने एक बेचैन करवट ली और उस अनिच्छितको पीछे ठेल दिया। केवल पच्चीस वर्ष···पचीस एकाकी कमर-तोड़ वर्ष!

आज सुबह जब वे पूजामें बैठे, तो वहाँ भी एक झंझट निबटा देनेके भावसे। आरती भी उन्होंने यों ही बुदबुदा दी थी--और उधर पप्पू सरलाके पास ऊधम मचाता रहा था। फिर चाय लेकर वे छतपर चले गये थे और नारियल थामे वहीं बैठे रहे थे सारी सुबह, अकेले। और जब किशोर खा-पीकर ऑफ़िस चला गया, तो नीचे उतरे थे। सरला कपड़े धो रही थी। बोली थी, "खाना लगा दूं बाबूजी?"

लेकिन अजुध्या बाबूने पूछा था, (और किसी उम्मीद लेकर पूछा था!) "किशोर कुछ कह रहा था?"

"जी···?"

"नहीं···कह रहा हूँ, परसोंके श्राद्ध-वाद्धके बारेमें कह-वह गया कुछ?"

"मेरेसे तो कुछ नहीं कहा····"

"क्रेशना! क्रेशना···!" एक निःश्वास खींचकर अजुध्या बाबू उन्हीं पाँवों अपने कमरेमें चले आये थे और सिर ढाँककर सो रहे थे। बादमें सरला खानेके लिए कहने आयी, तो बिना सिर उघाड़े, रूखेपनसे कह दिया था उन्होंने, "तबीयत ठीक नहीं है···तुम लोग खाओ अपना।"

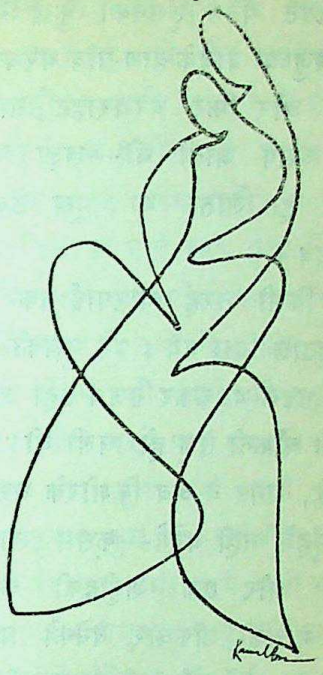

रिश्ते :: कमल वीस

उधर राज-मज़दूर चिलमपर चिलम भरे जा रहे थे आज। उन लोगोंके हँसी-ठठ्ठे तेज़ थे, हाथ ढीले। और अजुध्या बाबू सोये-सोये उनकी सारी हरकतें सुनते-सहते जा रहे थे। जब और न सहा गया, तो वे दरी-चिलम उठाकर नीचे अख़रोटवाले खेतमें चले गये और वहींसे, बैठे-बैठे, उन लोगोंका हो-हल्लड़ सुनते रहे, निर्विकार भावसे।

■

···सरलाकी सूजी बना देनेकी बात भले ही नामंजूर कर आये अजुध्या बाबू, मगर अपने खाना न खानेकी यादसे, कमरेमें आते-आते उन्हें बड़े ज़ोरकी भूख लग उठी और उनके हाथ-पाँवोंमें थरथराहट शुरू हो गयी। यह शिकायत उन्हें इधर चार-पाँच सालसे थी। जब कभी ज़रा भी ज़ोरकी भूख लग उठती,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और झटपट पेटमें ठूँसनेको कुछ मिल नहीं जाता, अजुध्या बाबूके हाथ-पाँव थरथराने लग जाते थे और फिर थरथराहट सारे तन-बदनमें व्याप जाती थी--खड़ा रह पाना मुश्किल हो जाता था···भूख ठेली नहीं जाती अब।

···किसी तरह चारपाई तक पहुँचे वे और निढाल बिछ गये। पर भूखकी ज्वालाएँ थीं कि भड़क-भड़ककर ग़ज़ब ढहा रही थीं। साँसोंकी धौंकनी तेज़ हो चली थी···कुछ भी हो चाहे, मगर वे अब किशोरके घरकी कोई चीज़ मुँहमें नहीं धरेंगे--क़सम खानेको भी नहीं!····और एक शहीदकी कटिबद्धता लेकर मृत्युको अँकवार देनेको प्रस्तुत हो गये वे। आँखें मँद लीं, हाथ ढीले छोड़ दिये···कि जाने कैसे, ख़यालमें अपनी अलमारी आकर टकरा गयी। और पता नहीं, कब वे चारपाईसे उठे, कब उन्होंने अलमारी खोली, कब कौन-सी चीज़पर पहले हाथ पड़ा। जब बिस्कुटोंका सारा बचा हुआ पैकेट और सारी-की-सारी ओवल्टीन और आधेसे ज़्यादा ख़ुरमे गलेसे नीचे उतर गये, खड़े-ही-खड़े, तब होश आया। भकोसते जा रहे हाथ और निगलता जा रहा मुँह एक साथ रुक गये सहसा--पप्पू····! पर दूसरे ही क्षण सारी चीज़ें उठाकर वहीं नीचे फ़र्शपर बैठ गये वे। शायद पप्पू जग गया था उधर। अजुध्या बाबूने खुले किवाड़ ठेल दिये ज़रा-सा, और भकोसना-निगलना जारी रहा।

थरथराहट घट गयी थी। पानीका ख़याल आया। लोटा उठाकर नलके-से पानी ले आये (किशोरके घरका अब पानी भी नहीं चाहिए उन्हें!) और पानी पीकर चार हाथ-पाँव छोड़ चित्त हो गये।···ओफ़! दुनियामें आदमी भी किस क़दर अकेला पड़ जाता है! निपट अकेला···धीमे-धीमे छाती अब भी धड़क रही थी।

सामनेकी दीवारपर किसी कपड़ा-मिलका राधा-कृष्णका कलेण्डर टँगा हुआ था, किसी वर्षके दिसम्बर महीनेकी तारीख़ोंके पन्नेके साथ। कुछ ऊपर काँच-जड़े फ्रेममें एक फ़ोटो लगी हुई थी। काँच उसका काफ़ी धुँधला पड़ चुका था, मगर फिर भी अजुध्या बाबूको फ़ोटो साफ़-सी नज़र आ रही थी। पिछले अट्ठाईस-तीस वर्षोंसे देखते चले आ रहे थे उसे, शायद इसलिए। फ़ोटोमें अजुध्या बाबू कोट-टोपी पहने थे। तराशी हुई मूँछोंके नीचे हलकी मुसकराहट खेल रही थी। बग़लमें उनके सिमटी-सिकुड़ी बैठी हुई पत्नी थी, लाजवन्ती-सी। शादीके कुछ बाद-की फ़ोटो थी। शुरू-शुरूके वर्षोंमें इस फ़ोटो-की ओर देखकर अजुध्या बाबूके भीतरसे कुछ उमड़ने लगता था। जब कभी तन-मन काफ़ी थक जाता, संघर्षपूर्ण एकाकी जीवन-की व्यथा काफ़ी जम जाती, किशोर और विद्याको सुलाकर उस रोज़ वे फिरसे बत्ती जला लेते और फ़ोटोके सामने खड़े देर तक हूकें उठती रहतीं। जी हल्का हो जाता था।···दिमाग़-खाऊ प्राइवेट नौकरी, अकाल वैधुर्यकी कभी न पुरनेवाली चोट, दो छोटे-छोटे बच्चे, दुनियादारीके झूठ-फ़रेब···!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...पर अजुध्या बाबूने गृहस्थीकी वह कश्ती अकेले दम पर खे-ले चलनेका निश्चय किया और खेते चले गये। किशोरकी शादी की, अकेले ही। उससे पहले विद्याका बोझ उतारा, अकेले ही। सत्यनारायणकी कथा की दो बार, अकेले ही। खेतकी बाबत सालों लड़ते रहे, अकेले ही।....उससे भी पहले, तब बार मकानमें चोरी हो गयी थी दिन-दहाड़े। किशोर विद्या स्कूलवाले हुए और दे नौकर आदमी। सूना घर पाया बदमाशों-ने, खाने-पकानेके बर्तन तक नहीं छोड़ गये, ही रोटी आटा तक नहीं छोड़ गये। दिनों तक बबपगले हो रहे अजुध्या बाबू, तब भी अकेले ही।....अकेले ही खेते-खींचते चले ये वे गिरस्थीकी किश्ती। और एक दिन ब उन्होंने पाया कि उस फ़ोटोकी छोह-नता, उसका साथ भी बेजान हो गया है, मानूम हुआ कि इस बाहरके अछोर अकेलेपन-ने उनके भीतरके सारे धागे भी काट डाले हैं भीतरसे भी उन्हें अकेला कर दिया है। जहाँ फ़ोटोकी तरफ़ नज़र उठ जाती, और वहीं से लौट आती थी। जैसे वह फ़ोटो भी हो, बेजान दीवारका ही एक हिस्सा हो।...और दिन-दिन कर पच्चीस-छब्बीस वर्ष हो गये।

लेकिन आज, इस क्षण, सिमटी-सिकुड़ी फ्रेमकी वह फ़ोटो एकाएक ज़िन्दा हो उठी है, और अजुध्या बाबूको एकटक निहार—रही, ताक रही है—घूर रही है! अजुध्या बाबू इसे नहीं झेल पायेंगे। उठ गये और फिर कमरेमें न रह सके। छतपर आ गये।

मुंडेरके पास खड़े-खड़े दूर उड़ रही किसी चीलको तकते रह गये और अपनेपर खीझ भी होती रही कि सारी ज़िन्दगी यों ही तबाह कर डाली! न कभी घड़ी भरका ऐशो-आराम, न कोई मौज-मस्ती, न कुछ न कुछ....! फिर न जाने क्या हुआ कि वहीं परसे नीचे गलीके हलवाईको आवाज़ मारकर एक अठन्नी डाल दी ऊपर से। और कुछ देर बाद पत्तेके दोनेमें रखी इमर्तियोंके ग़स्से मार रहे थे वे। नीचे घरमें पप्पू सरलासे खानेको मचल रहा था...भूख लग आयी होगी। और रोज़ कुछ-न-कुछ दिन-भर चुगता रहता था—कभी बिस्कुट, कभी खुरमे, कभी मुनक्के, दाल-मोट...और अजुध्या बाबू पूरी सन्तुष्टि-के साथ, ऊँची मुंडेरपर बाँह धरे, आरामसे इमर्तियाँ खाये जा रहे थे ग़स्सोंमें, गोया आज तककी तबाह ज़िन्दगीका एक साथ सारा हरजाना भर दे रहे हों!

तभी उधर सीढ़ियोंपर कोई राज चढ़ आया। पूछने आया था, कि खिड़की कहाँ और कितनी चौड़ी पड़ेगी। अजुध्या बाबू चुपचाप आखिरी ग्रास चबाते रहे आसमान-की ओर देखते हुए, और जब ग्रास निगल चुका, तो दोनेसे हाथ पोंछकर उसे नीचे फेंकते हुए कह दिया, बिना उसकी तरफ़ देखे, "हमें नहीं मालूम भइया,...मकानवालोंसे पूछो।" और दूसरी ओरको मुड़ गये।

■

नीचे उतरकर अजुध्या बाबूने बरामदेमें बैठ अपने जूतोंमें पॉलिश की। हाथ-पाँवोंके नाखून कतरे। मूँछें तराशीं, टाँगोंकी खुश्क

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मालिश की। सिरके ठूँठ-ठुंठ सफ़ेद बाल कंघेसे खुजलाते रहे, और, पूरे सात बरस बाद आज जाने क्या शौक़ चढ़ा, फिर लोहा गरम किया और अपने कुरते-वास्कटों और सूती कोटोंपर लोहा करने बैठ गये। पप्पू बड़ी देर तक इर्द-गिर्द मँडराता-बतियाता रहा, मगर अजुध्या बाबूने न उसकी ओर देखा, न कुछ बोले ही। बस, कोई भजन गुनगुनाते रहे होंठों-ही-होंठों। लोहा हो चुका, तो कमरेमें आये। चारपाई कसी। और, जैसे अब सोना ही होगा, झटकार-झटकारकर बिस्तर लगा लिया। फिर कुछ देर गुनगुन करते हुए, कमरमें हाथ रख इधर-उधर देखते रहे और फिर झाड़ू लगाकर ओने-कोनेसे कमरा बुहारना शुरू कर दिया। किशोरकी शादीके बाद आज पहली बार बुहार रहे थे अपने हाथों वे अपना कमरा।

जिस वक़्त किशोर दफ़्तरसे वापस पहुँचा, अजुध्या बाबू छतपर थे और तमाखू पी रहे थे। आहट पाकर उन्होंने नीचे झाँका भी। साइकिलके कैरियरमें फ़ाइल दबी थी और सुबह के सजे-सँवरे उसके बाल अब अस्त-व्यस्त होकर माथेपर झूल आये थे। आने दो, कोई आये···! अजुध्या बाबू कुछ अधिक कड़वे बन तमाखू पीते रहे, लेकिन मनमें बरजोर ही कोई आशा अँकुरा आयी थी। और मान जताते हुए नीचे उतर आये वे।

"आज तो मज़दूर लोग जल्दी चले गये, बाबूजी···?" साइकिल एक तरफ़ खड़ी कर किशोर बरामदे में स्टूलपर बैठा जूते-मोजे उतार रहा था और सारे बरामदेमें एक सड़ाँध फैली हुई थी।

अजुध्या बाबू ने कुछ जवाब नहीं दिया। चुपचाप कोनेमें नारियल टिका दी और सुराहीके पास जाकर लोटेमें पानी उँडेल ऊपरको मुँह कर गटागट पी लिया।

"खिड़की तो आज डलवा दी होगी, न बाबूजी ?" जूते ऊपर ताक़में रखनेको उठते हुए किशोरने दूसरा सवाल किया। मगर अजुध्या बाबू एक डकार लेने तक चुप हो रहे और फिर बोले, "परसोंके लिए क्या तय किया तुम लोगोंने ?"

किशोर एकाएक उनका आशय न समझ पाया।

"बामनों-फामनों को बुलानेकी बात कह रहा हूँ।" लोटा सुराहीपर उलटते हुए उन्होंने सवाल स्पष्ट कर दिया।

"अरे वो ? आयेंगे वे लोग बाबूजी। सवेरे कहला दिया था उन सबसे। अब ये ताई वग़ैरह दो-तीन लोग और हैं, कल इन्हें भी कहला भेजेंगे।" अजुध्या बाबू सुराहीके पास खड़े सुन रहे थे, किशोरकी ओर उनकी पीठ पड़ती थी, इसलिए किशोर उनके चेहरेकी भाषाको पढ़ नहीं पा रहा था। कह रहा था,···"दूध कितना, दस सेर काफ़ी है, न बाबूजी ? बारह-चौदह जने तो कुल हैं—हाँ, और वो···विद्या लोगोंको भी कह दिया है। फ़ोन कर दिया था ऑफिसमें उनके।····"

"क्रेशना ! क्रेशना !···" बस। अजुध्या बाबू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टूटे हुए-से भारी क़दम चुपचाप अपने कमरेकी ओर मुड़ गये। अब आशा करनेको भी अवकाश नहीं रह गया था।

"अरे, क्यों, बाहरसे कोई आये हैं क्या ?"

बाज़ार बन्द न हो जाये, इसलिए झटपट नहा और कपड़े बदलकर किशोर श्राद्धके रोज़के लिए ज़रूरी सामान लाने चला गया था, लौटकर आया तो सरलासे पूछा उसने।

"कौन ?···नहीं तो। कोई आनेवाले थे ?" सरला रसोईमें थी। बाहर निकल आयी।

"तो फिर बिस्तर किसका है ये? "

अजुध्या बाबू के कमरेके बाहर एक छोटा-सा हॉल्डॉल और एक छोटा-सा ट्रंक रखा हुआ था।

"ट्रंक तो यह अपना है—बाबूजी वाला !···और हॉल्डाल भी तो अपना ही है।" पास जाकर सरलाने पहचान लिया।

"अरे !···" चौंक उठा किशोर। झपटकर कमरेके भीतर झाँका—"बाबूजी कहाँ गये ? यहाँ तो नहीं हैं !····" फिर उसने जल्दी-जल्दी चारों तरफ़ देख लिया। "कहाँ गये वे आखिर ?"

"अरे देखो !···बाबूजी तो उधर सड़क पर हैं···वो !"

सड़कमें अजुध्या बाबू एक रिक्शेवालेसे बातें कर रहे थे। समझते देर न लगी। सनाका खा गया किशोर। हड़बड़ाकर बोला, "तुम ये सामान भीतर रखो। मैं आ रहा हूँ।" और जल्दीसे सड़कमें उतर गया।

"हाँ, जरा मुक्तरसाज तक जा रहा हूँ। क्या नाम···श्राद्ध चल रहे हैं, पिण्ड-दान भी हो जायेगा, तीरथ भी हो जायेगा। हाँ।" अजुध्या बाबू किसीसे कह रहे थे।

"बाबूजी !"

किशोरको सामने देख अजुध्या बाबू कुछ सिटपिटा गये। फिर एक तरफ़को मुँह फेरकर कह दिया, "अब हमें जाते वक़्त रोकना-टोकना मत, किशोर !···चल रे रिक्शेवाले, चौदही आने सही। चल, जल्दी कर।"

"एक बात तो सुनिए, बाबूजी !" पास जाकर धीमेसे अनुनयके स्वरमें बोला किशोर।

"नहीं। अब हमें किसीकी भी बात-वात नहीं सुननी।" बाबूजीका स्वर अपेक्षाकृत ऊँचा था, "जिस घरमें, क्या नाम···"

"एक मिनटके लिए वहाँ चलकर सुन लीजिए न बाबूजी ! सिर्फ़ एक मिनटके लिए···" किशोर लगभग गिड़गिड़ा गया।

"चलो। ऐसा ही ज़रूरी है, तो चलो।" और लाठी झटकते हुए अजुध्या बाबू चल पड़े।

"कहो, क्या कहना है ?" जब आँगनमें पहुँच गये, तो एकदम सख़्त होकर बोले वे।

"आप कहाँ जा रहे हैं बाबू जी ?" किशोरका स्वर दीन हो उठा था।

"कहीं भी जा रहा होऊँ। इस तुम्हारे घरमें नहीं रहूँगा, बस !···जहाँ एक कुत्तेके बराबर भी अपनी···"

"ये आप कैसी बात कर रहे हैं बाबूजी···!"

"कैसी-वैसी कुछ नहीं किशोर !" अबके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाबूजीकी आवाज लरज गयी — "क्या नाम···इतने-से बच्चे थे तुम लोग, तबसे छातीसे लगाया है हमने तुम्हें ! अपने हाथसे टट्टी-पेशाब धोयी है तुम्हारी ! जूठे बरतन माँजे हैं ! ···आज एक चार पैसे कमानेवाले बन गये तुम, तो क्या नाम···हमारी कोई वकत ही नहीं रह गयी ! ···तुम्हारे लिए हमने अकेले सारी जिन्दगी खपायी है, भाई···! "

"बाबूजी, आप जाने कैसी बात···" किशोर गल-गल उठा ।

"हमने कहा तुमसे कि ज्यादा झंझट मत करो । बहुत ही समझते हो, तो एक विद्याको बुला लो, बस । कौन-सा भारी उत्सव है ! एक रीत निभानी हुई । क्या नाम····किसी एक बामनको बुला लो, वही श्राद्ध भी कर जायेगा, वही पिण्ड भी उठा ले जायेगा अपना । हर सालकी रीत हुई ।"

"सोचिए तो बाबूजी, वर्षमें बड़ी मुश्किलसे तो एक दिन माँकी यादका आता है—जिसकी कोख जनमे हैं हम । लोग तो पितरोंके मान पर दिल खोलकर जाने कितना-कितना—"

"तो ठीक है, भाई ! हम कब कह रहे हैं कि क्या नाम···तुम न मानो अपनी माँको ? मानो, तुम भी दिल खोलकर मानो ! पाँच बामन-बिरादरोंको ही क्यों बुलाते हो, समूचे मुहल्लेको बुलाओ ! सारे शहरको बुलाओ । कर दो दस-पाँच हजारकी खैरात ! हम कब रोक रहे हैं ? ···हमें जाने दो सिरफ । क्या नाम····हमने तो बड़ी गरीबीमें दिन गुजारे हैं भाई ! हमारे लिए एक पैसा भी बड़ा है····हमें जाने दो । जिन्दगी-भर अकेले रहे हैं, तो अब कैसे कोई अपना हो सकता है···ठीक है ।"

आखिरकार किशोरको उनकी बात माननी ही पड़ गयी । और जब उसने उन्हें आश्वस्त कर दिया, कि वह सवेरे तड़के ही उन पण्डितोंको कोई बहाना बनाकर मना कर आयेगा, घोसीको भी कह आयेगा और एक विद्याको छोड़ और किसीको नहीं बुलायेगा, तब जाकर अजुध्या बाबू सोने गये और उन्होंने कपड़े उतारे ।

चाय पीकर नारियल लेते हुए बोले, "इन मजदूरोंने आज सारे दिन हरामखोरी की है, किशोर ! इन्हें आजकी पूरी मजदूरी नहीं देनी है ।"

"आप नहीं थे वहाँ क्या बाबूजी ?"

"अब मेरी मत पूछ ।" अजुध्या बाबू को झेंप महसूस हुई । फिर कह दिया, "मैं नहीं हूँगा, तो उन लोगोंको काम नहीं करना क्या ठीकसे ? मजदूरी तो पूरी लेंगे ! तबीयत आज जरा खराब थी । थोड़ा आराम किया दिनमें ।"

किशोरने सरलाकी ओर देखा । उसे को हँसी रोकना कठिन पड़ गया, तुरंत रसोईमें चली गयी । किशोर खिड़की बाहर देखता हुआ हँसी पचाता रहा ।

"मैं जरा देख ही आऊँ । क्या रहे जाने दिन-भर बेईमान !"

और अन्धेरा होने तक अजुध्या नये मकानको देखते-जाँचते रहे । रात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक लालटेन लेकर खेतकी बाड़ ठीक करते रहे और क्यारियाँ सींचते रहे।

कुछ देर तक 'चाणक्य-नीति' के श्लोकों में मन बहलानेकी कोशिश करते रहे। मन उचट-उचट जाता था। और सामनेकी दीवारमें लगी फ़ोटोकी टकटकी ध्यानमें खिंच जाती थी। निदान पानी पिया और लेटे बुलाकर 'हे कृष्ण-गोविन्द! हे कृष्ण-गोविन्द!' उचारते हुए सो गये अजुध्या बाबू। लेकिन कई बार करवटें बदल दीं। कूल्हेमें दर्द होने लगा था। नींद अब शायद आ पाये कभी···! और उठ गये निदान। दरवाजेकी चिटखनी खोलकर बाहर आ गये। किशोरके कमरेमें बत्ती जली ही थी अभी तक। आहट पाकर बोला "कौन? बाबूजी?"

"हाँ···मैं हूँ। सोये नहीं अभी? सो जाओ अब; सुबह कर लेना बाकी काम। रातमें ज्यादा नहीं जगना चाहिए। आराम करो····वह सुनो, क्या नाम···अब किसीसे कुछ मत कहना। जो कह दिया, कह दिया··· बेकारकी परेशानी!"

"जी?"

"हाँ, वही बुलाने-बुलानेकी बात कह रहा हूँ, बाभन-बिरादरोंको। मत करना अब किसीसे ना-फाँ···हाँ। जो हो गया, हो गया। दूध वगैरहके लिए भी अब कुछ घट-बढ़ मत करना।···अच्छा नहीं लगता, हाँ··· सो जाओ अब।" और अजुध्या बाबू कमरेमें लौट आये, जैसे एक सिल उतार आये हों सिर परसे, छाती परसे।

कुछ ही देर बाद उनकी दुहरी साँस शुरू हो गयी थी। ■ ■

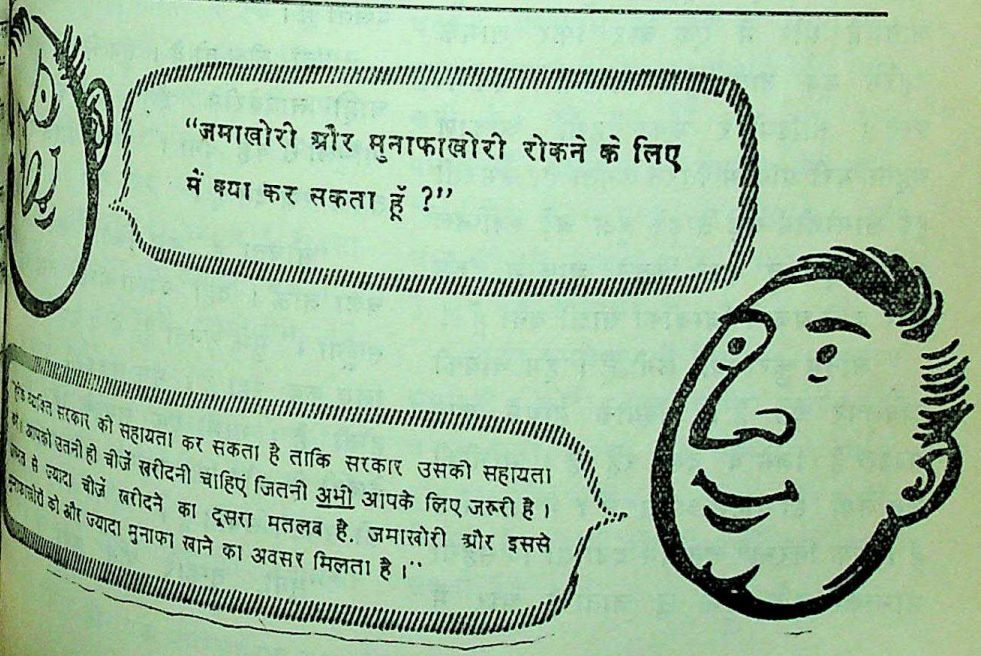

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

गीत गौरय्ये और एक मामूली-सा आदमी

शान्ता सिन्हा

कथा-लेखिका और कवयित्री। प्रस्तुत कहानी आशीर्षक लेखिकाकी विशेषताओंकी झलक देती है।

बेतरतीब आवाज़ें हैं। प्रकाशके छोटे-छोटे वृत्त हैं। दूर, बहुत दूर। हाथ बढ़ाकर छनेको जी चाहता है। किन्तु सन्दर्भ टूट जाता है और मैं एक बार फिर शामके गहरेमें डूब जाता हूँ। जीवन्त। स्वप्न-ग्रस्त। सीढ़ियोंपर झुका हुआ आकाश सहसा मेरी आँखोंमें तिरने लगता है, उभरती हुई खामोशीमें खड़े ताड़के वृक्ष बड़े स्वप्निल दीखते हैं। न जाने कितने आकाश, रूप और जाने-अजाने बिम्बोंका साक्षी बना हूँ!

लॉनमें कुरसियाँ लगी हैं। हम चायकी टेबिलपर बैठे हैं। भइयाके हाथमें कोई फ़ाइल है जिसे वे देख रहे हैं। भाभीकी उँगलियाँ टी-पॉटमें व्यस्त हैं। मैं खामोश हूँ। एक निरन्तर तनावमें दबा-सा। सहसा भाभीकी दृष्टि मुझे छू जाती है और मैं अपनी नज़रें वापिस लौटा लेता हूँ। वे धीरे-से चायका प्याला मेरी तरफ़ बढ़ा देती हैं। आँखें चुप हैं। चेहरा भाव-हीन। मुझे चोट-सी लगती है।

"मैं चाहता हूँ, इस बार पी० सी० एस०में बैठ जाऊँ।" मैं भइयाकी तरफ़ देखता हूँ।

"हाँ, ठीक तो है। तुम जितनी किताबें चाहो लायब्रेरीसे 'ईशू' करा लो। मैं 'गाँगुली'से कह दूँगा।" भइया फ़ाइल एक तरफ़ रख देते हैं।

"सोचता हूँ, कुछ किताबें लेकर गाँव चला जाऊँ। वहाँ ज़्यादा अच्छी तरह पढ़ सकूँगा।" मुझे लगता है, मैं ये शब्द भाभीके लिए कह रहा हूँ। मुझे सुखद-सी अनुभूति होती है। भाभी एक लमहेके लिए मुझे देखती हैं और फिर अनमने ढंगसे प्यालियों को समेटने लगती हैं।

"सुनो, तुम्हारे पास कपड़े हैं?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भइया चुकते हैं। मैं धीरे-से एक छोटा-सा हूँ कर देता हूँ जो न प्रश्न है न उत्तर।

"सुनिए, उसे कुछ कपड़े वग़ैरह तो दवा दीजिए!" इस बार वे भाभीसे कहते हैं। भाभी टी-कोजीसे खेलती रहती हैं।

"...भइया किसी मीटिंगके लिए जा चुके हैं। बागके उस कोनेको देखता हूँ जहाँ वहीं भाभी मालीको कोई आदेश दे रही हैं...गुलाब बेशुमार खिले हैं। लाल और सुर्ख। अतीत और वर्त्तमानका मध्यान्तर जैसे खत्म हो जाता है। रह जाती है चेतना। समस्त भोग और नश्वरतासे परे।

भाभीके जूड़ेमें कुछ नहीं है। न गुलाब, न जूही-चंपा। बाल बेतरतीब हैं, हवामें बिखरे-बिखरे से। चेहरेपर अजीब-सा भाव है जिसमें मैं जुदा हूँ। मैं उन्हें देखकर भी नहीं देखता। फूलोंमें व्यस्त, वे एक उड़ती-सी नज़र मुझपर डालती हैं। इसका एहसास मुझे होता है और मुझे लगता है, मैं अपनी कुर्सीमें सिमटकर और छोटा, और अकेला होता हूँ। मात्र एक परिचय। या वह भी नहीं। सड़कपर जब-तब कोई रिक्शा गुज़रता है। दूर-दूर तक अधबने मकानोंके ढाँचे दीखते हैं, संध्याकी खामोशीमें बड़े निर्विकार, निर्विकार।

देरसे बरामदेमें चुप बैठा हूँ। गौरय्योंका एक झुण्ड मेरे चारों तरफ़ है। बल्बोंके ऊपर उनके घोंसले हैं। तिनके इधर-उधर फैले हैं। उनकी नन्हीं-सी उड़ानको आँखोंमें भर लेनेकी कोशिश करता हूँ। कितना जीवन्त, कितना नैसर्गिक है उनका संगीत! आँखें बन्द कर लेनेपर लगता है, मैं आवाज़ोंका एक सागर हूँ जिसकी मुट्ठीमें चाँद आते-आते फिसल जाता है।...कुछ करनेको नहीं है। चाहता हूँ, एक प्याला कॉफ़ी पिऊँ। किन्तु भाभीसे नहीं कहूँगा। मेरा क्या अधिकार है इस घरपर! कितना अर्थहीन है मेरा अस्तित्व! किसके लिए हूँ मैं?

भाभी अन्दर जा चुकी हैं। उस कोने-पर मेरी आँखें जाती हैं जहाँ भाभी खड़ी थीं और एक अनाम-सी घुटन मुझपर छा जाती है। हवामें घास सरसराती है, हरे आलोकमें फूल डूबते-उतराते हैं। क्या मैं प्रतीक्षा कर रहा हूँ? उभरते अंधेरेमें किसी-की पद-चाप सुनता हूँ। कल्पना करता हूँ, भाभी कॉफ़ी लेकर आयेंगी। छातीकी धड़कन अनायास ही तेज़ हो जाती है। मुड़कर देखता हूँ, आया नाश्तेकी प्लेट लेकर खड़ी है। चुने हुए हरे चने मुझे बेहद पसन्द हैं। जानता हूँ, भाभीने भेजे होंगे, किन्तु मेरा चेहरा सख्त हो जाता है। नहीं चाह कर भी बोल देता हूँ, "मुझे भूख नहीं है, तुम इसे ले जाओ।"

ड्राइंग-रूममें कुरसी घिसटनेकी आवाज़ आती है। कोई बहुत तेज़ीसे बरामदेकी तरफ़ चला जाता है। जानता हूँ, भाभी होंगी। मुझे अजीब-सी तृप्ति और शान्ति मिलती है कि मैं भी किसीको दुख पहुँचा सकता हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बच्चे पार्कसे लौट आये हैं। "अंकिल, देखिए तो यह गुलाब! कितना स्वीट! आप कोट पहनिए न, मैं इसे 'बटन-होल' में लगाऊँगी। प्लीज, अंकिल!" प्रेममें बैठा मुन्ना अपने छोटे-छोटे हाथ मेरी तरफ़ बढ़ा देता है। महसूस करता हूँ, सारा वातावरण उल्लाससे भर गया है। काफ़ी देर तक बच्चों-के संग खेलता रहता हूँ। उनकी बेतुकी बातों-में उलझा-सा। और मुझे लगता है—वह तनाव ख़त्म हो गया है और बहुत हलका हो गया हूँ, हवा-सा।

अँधेरा घिर गया है। आकाशमें छोटा-सा चाँद तिरने लगा है। अनगिनत सितारे हैं। मुझसे अजनबी। फ्लैटकी तिमंज़िली इमारतमें रोशनीका मद्धिम-मद्धिम शोर है। मैं ऊबकर सड़कपर निकल आया हूँ। जैसे मैं समयका एक माध्यम हूँ। मुझसे होकर वह ख़ामोशीसे बीत रहा है, व्यक्त हो रहा है। सहसा मुझे अपने मित्रोंकी याद आती है। कहाँ होंगे नवेन्दु और वीरेन? शायद उन्होंने मुझे या मैंने उन्हें छुट्टी दे दी है। नवेन्दुकी सुन्दर, सुरुचिपूर्ण अति-आधुनिक पत्नीके बारेमें सोचने लगता हूँ। दो साल पहले, नवेन्दुके यहाँ गया था। पार्टी, डिनर, क्लब, डान्स···सब कुछ बड़ा कृत्रिम-सा लगा था। लगा था, मैं उनकी लीकसे बहुत परे हट आया हूँ। बहुत अलग। और फिर वीरेन! गायिका पत्नी, दो स्वस्थ बच्चे।··· बहुत बड़े लोग हो गये हैं सब! और मैं वहींका वहीं खड़ा हूँ, आसमान-सा। न मेरा कोई घर है, न कोई अपनी मुस्तक़िल राह।

दोनों तरफ़, दूर-दूर नियोन-लाइटकी क़तारें हैं, सीधी सन्तुलित रेखा-सी। बीचमें चिकनी, काली सड़क। बहुत चुप, खोयी। पार्कमें लगे पौधे हवामें झूमते हैं। फूलोंके आकार और बिम्ब अँधेरेमें एकाकार हो गये हैं। सिर्फ़ ढलते हुए डालियोंके फूल अब भी सिर झुकाये खड़े हैं। कहींसे उड़ती हुई रजनीगन्धाकी गन्धमें डूब गया हूँ···भाभीके कमरेकी खिड़कीपर लिपटी हुई रात-रानीकी याद आती है और उस गन्धको प्राणपणसे भोगनेकी भाभीकी क्षमता। न जाने कितनी बार देर रात तक उनके संग ज़रूरी-ग़ैर-ज़रूरी बातोंमें उलझा रहा हूँ। कविता, साहित्य, संगीत, छोटी-छोटी पारिवारिक समस्याएँ, भइयाका स्वास्थ्य, उनकी व्यस्तता, बच्चे, मौसम, फूल····। फिर भी, लगता रहा है, मैं यह नहीं कह पाया हूँ जो मैंने अन्तर्मन-से चाहा है। या अपने बारेमें कोई बात-चीत। जाने कैसा गतिरोध मुझमें घर कर गया है। क्या मैं ग़लत-फ़हमियोंको बनाये रखनेमें अपना सहयोग देता रहा हूँ? भाभी कहती हैं, मैंने अपने चारों तरफ़ दीवारें खड़ी कर दी हैं। कोई चाहे भी तो उसे प्रवेश-द्वार न मिले। वर्षोंसे उनके साथ रहा हूँ लेकिन क्या उन्हें समझ पाया हूँ? उस दिन हम देर तक ड्राइंग-रूममें बैठे रहे थे। भाभी चुप थी, शायद दुःखी भी। मैं काफ़ी दिनों बाद घरसे आया था और मुझे अपने उस पत्रकी याद आ रही थी जो कुछ दिन पहले मैंने उन्हें लिखा था। परिवारकी एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छोटी-सी घटनाको लेकर मैंने वह खत लिखा था। शब्द ज़रूरतसे ज़्यादा सख्त थे···मेरी आँखें उनके चेहरेपर बार-बार उठती थीं और मैं भीतर-भीतर अजीब-सी घुटन महसूस कर रहा था। शायद डरा-डरा भी था। एक चुप्पी, जिसे तोड़नेके लिए हमारे पास उपयुक्त शब्द न थे।

"सुनिए, आप क्या मुझे इतना हृदय-हीन समझते हैं?" सन्नाटेपर तिरती हुई उनकी आवाज़—"क्या आपको मुझ पर विश्वास नहीं? क्या आप सोचते हैं, माँके लिए मेरे अन्तरमें कोई स्नेह नहीं?" मुझे लगा, पत्रका एक-एक शब्द ख़ामोशीमें टँगता आ रहा है और उन्हें समेट लेनेके लिए उठा हुआ मेरा हाथ सहसा वापस लौट आता है। कुछ कहनेके लिए मैं शब्दोंको ढूँढ़ता हूँ किन्तु मुझे उपयुक्त शब्द नहीं मिलते। अजीब-सा संकोच मुझे घर दबाता है।

"चलिए, थोड़ा घूम आयें।" मैं सन्दर्भसे कट आया हूँ। भाभी मेरे साथ सड़कपर आ जाती हैं। हम दोनों ज़रूरतसे ज़्यादा चुप हैं। कहनेके लिए बहुत-सी बातें हैं किन्तु हम हर बार अपनी-अपनी मुस्तक़िल जगहों-पर लौट आते हैं।

"आपको ग़ुस्सा बहुत आता है। है न?" वे मुसकराकर पूछती हैं।

मैं एक बेवक़ूफ़-सी हँसी हँस देता हूँ—"कितने नये-नये मकान इधर बन गये हैं?" मैं एक मामूली-सी बात कहता हूँ जिसका भाभीकी बातसे कोई सम्बन्ध नहीं।

आपने हमेशा मुझे ग़लत समझा है किन्तु मैंने चाहा था, पर्याप्त स्नेह देकर ही सब कुछ ठीक कर लूँगी। आप कुछ इस धातुके बने हैं कि मेरी भावनाओंकी गहराईका आप पर कोई असर नहीं पड़ता···। स्नेह भोगनेकी भी एक क्षमता होती है और वह आप में नहीं है···

"आप क्या कभी कुछ कहेंगे नहीं?" इस बार भाभीके स्वरमें खीझ और तीखापन-का अनुभव करता हूँ।

"शायद मैं 'एक्सपेक्ट' ज़्यादा करता हूँ।"

वे फिर कुछ नहीं कहतीं···उस रात मैंने सोचा था, क्या भाभीको मुझसे स्नेह है? कई बार, कई सन्दर्भोंमें उन्हें समझनेकी कोशिश की है। कदाचित् नहीं। हो सकता है, यह स्नेह दया-भावका ही एक रूप हो। मैं बेकार हूँ। पराश्रित हूँ····

···सामने वर्माका घर दीखता है। उसका छोटा-सा लॉन। नीरव, सपाट। वर्मा शायद नहीं है। देखूँ तो। किन्तु मैं फाटक तक जाकर लौट आता हूँ। रात गहरी हो रही है। दबा-दबा-सा सन्नाटा हर तरफ़ ऊँघ रहा है। मकानोंमें लगे बोगन बेलियाके लाल-गुलाबी फूलोंके गुच्छोंपर सहसा टिक जाता हूँ। मिसेज सेनका बड़ा ऐलसेशियन ज़ोर-ज़ोरसे भूँकता है और मुझे अपने अकेले-पनका एहसास होता है। पाँव बढ़ाकर फाटकके अन्दर प्रवेश करता हूँ। बत्तियाँ बुझ चुकी हैं। सिर्फ़ सामनेकी मर्करी अब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी जल रही है। सारा घर सन्नाटेमें डूब चुका है। किचेनमें हलका-सा प्रकाश है। जूठी प्लेटें इधर-उधर बिखरी हैं। धीरे-से भाभीके कमरेमें झाँकता हूँ। कोई आहट नहीं। शायद वे सो रही हैं। एक अव्यक्त-सा क्रोध मुझे घेर लेता है। अभी आया आकर खानोंके लिए पूछेगी। लेकिन मैं नहीं खाऊँगा। कभी नहीं।···दुःख और उदासीमें भरा, मैं बिस्तरपर लेट गया हूँ। फिर वही प्रतीक्षा। हाथ बढ़ाकर कोई मैगज़ीन खींच लेता हूँ।

"छोटे साहब, खाना ले आऊँ?" आया आकर खड़ी हो गयी है।

"नहीं खाऊँगा।"

मेरी आवाज़से आया डर जाती है और मैं अपनेको बहुत बड़ा आदमी समझने लगता हूँ।

आज सुबह भइयाने कहा था, भाभीकी तबीयत ठीक नहीं है। उन्हें स्लो-ब्लडप्रेसर हो गया है। मैं नहीं चाहकर भी खामोश रह गया था। मैं कुछ नहीं पूछूँगा, कहूँगा — मैं होता ही कौन हूँ?···किताब हाथमें लिये देरसे लेटा हूँ। एक शब्द भी नहीं पढ़ पाया। भाभी चाहती नहीं, मैं यहाँ रहूँ। मैं कल ही यहाँसे चला जाऊँगा। शायद फिर कभी न आऊँ! आजकी सारी घटनाओंमें मैं डूबने-उतराने लगता हूँ। सुबहसे न जाने कितने लोग आये-गये। भाभी चाय-कॉफ़ी और नाश्तेमें व्यस्त रहीं। ड्राइंग-रूमसे उनकी हँसी और बातोंकी सम्मिलित आवाज़ें रह-रहकर आती रहीं और मुझे लगा था, इस घरमें मैं कितना उपेक्षित और अकेला हूँ। मैंने पाँच-छह दिनोंसे भाभीसे कोई बात नहीं की, न उन्होंने मुझसे। भीतर बरामदेमें बैठा मैं कितना उदास, बुझा हुआ-सा महसूस कर रहा था। क्या कभी वे इसे जानेंगी? अंगूरकी लताओंपर फीकी-सी चाँदनी उतर आयी थी। उसके सुडौल, गदराये पत्ते बरामदे पर झुक आये थे और मैं अपनेको दुनियाका सबसे छोटा, अर्थहीन प्राणी समझ रहा था।

···किताब उठाकर मैंने टेबिल पर रख दी है। एक अजीब-सा दर्द। कुछ नहीं होने की पीड़ासे क्षुब्ध मैं जीनेकी गतिहीनतासे टट गया-सा। किसी सुदूर पहाड़ी पर [illegible] अनगिनत स्वप्न····रूप···आकृतियाँ····रह-रह कर दृष्टि वहाँ उठ जाती है जहाँसे भाभीका कमरा शुरू होता है। रात-रानीकी [illegible] हर जगह व्याप रही है। भाभी क्या [illegible] रही हैं? सहसा बरामदेमें किसीकी [illegible] सुनता हूँ। भाभी धीरे-धीरे आकर कुर्सीके पास खड़ी हो गयी हैं। बहुत चुप, परी[illegible] रोशनीमें सिन्दूरका गहरा लाल टीका, [illegible] गोरा रंग बड़ा स्वप्निल दीखता है। [illegible] है, इन पाँच-छह दिनोंमें वे बहुत बीमार [illegible] दीखने लगी हैं। मैं हड़बड़ाकर बिस्तर [illegible] बैठ जाता हूँ।

"आप कल जा रहे हैं?"

"हाँ, शायद मैं वहाँ ज़्यादा अच्छी [illegible] पढ़ सकूँगा।"

"सुनिए, क्या मुझसे इतनी नफ़रत [illegible] आपको? आपने इतने दिनों तक मुझसे [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

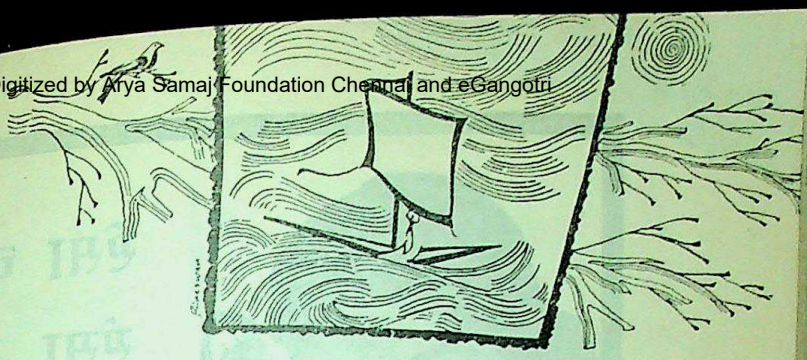

एक मामूली-सा दृश्य : : वीरेश्वर बनर्जी

साथ कितने दिनोंका है ! कुछ दिनोंमें आपका अपना घर होगा। अपने सुख-दुःख होंगे। फिर, मैं लाख चाहूँ भी तो अकसर आप लोगोंके बीच नहीं आ सकूँगी और यह कुछ दिनोंका साथ, जो परिस्थितिवश हो जाता है, यह भी न होगा···आपने हमेशा मुझे ग़लत समझा है किन्तु मैंने चाहा था—पर्याप्त स्नेह देकर ही सब कुछ ठीक कर लूँगी। आप कुछ इस धातुके बने हैं कि मेरी भावनाओंकी गहराईका आप पर कोई असर नहीं पड़ता।····स्नेह भोगनेकी भी एक क्षमता होती है और वह आपमें नहीं है··· अच्छा हुआ, यह मोह-जाल आपने पहले ही तोड़ दिया।···मैं आपसे बड़ी हूँ। उम्र और रिश्तेमें भी। फिर भी क्षमा करेंगे। आप ख़ुश रहें, स्वस्थ रहें। जानेसे पहले, एक बार कुछ कहेंगे आप ?···"

भाभीका पत्र मेरे हाथमें है। आँखोंमें ढेर-सारा पानी भर आया है और मुझे लगता है, किसी दूर-अनजान देशसे झुण्डके झुण्ड गौरैय्ये उड़ते आ रहे हैं। मैं उनके स्वागतके लिए उठकर खड़ा हो गया हूँ, गीत और संगीतसे भरा-भरा।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

....वि
रो धा भा
स....

दूधनाथ सिंह
नयी पीढ़ीके समर्थ और सुलझे कवि-कथाकार।

चन्द्रकान्त देवताले
नये, सहज और अलग, मूलतः कवि।

प्रताप विद्यालंकार
नयी दिशाके कवि।

१-आँखों में आँखें नहीं हैं।

सभी आवाज़ें मिलकर—गड्डमगड्ड सुबक रही हैं....
मेरे सिरहाने, टप-टप, अकेली एक बूँद टपक रही है।

आँखोंमें आँखें नहीं हैं; दर्पण में दर्पण नहीं हैं; चुप में चुप नहीं हैं।
फिर भी तुम्हारे लिए लहू टपकता है; दर्पण लहकते हैं; आँधी में
कई-कई स्वर मेरे होंठों से बहते हैं।

मुँह-अँधेरे ही तुम मेरे पहलू में करवट बदल रही हो,
तुम मेरी बाँहों से सरक रही हो; क़दम-क़दम पर
अपना संगीत छोड़, दरवाज़ा लाँघ रही हो...
निर्णय ले रही हो; लौट रही हो; सहसा
लिपट कर सिसक रही हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आँखों में आँखें नहीं हैं
फिर भी मैं देख रहा हूँ तुम्हें नखशिख;
दर्पण में दर्पण, चुप में
चुप नहीं हैं।

—दूधनाथ सिंह

२—ऋतु और मौसम के बाहर

ऋतु और मौसम
दोनों में-से किसी एक के भीतर नहीं हैं मकान
सिर्फ़ एक ख़ामोशी के बाहर फिका गये
मृत पठार पर
लेटा हुआ है शहर……
और मैं शाम के सीकचों को पकड़े हुए
सिर्फ़ एक अपना लिखता हूँ नाम
हवाओं और पानी पर……
देखता हूँ दरवाज़ों पर प्रवेश-निषेध की तख़्तियाँ
और खिडकियों में टँगी हुई प्रतीक्षाओं का विरोधाभास
अपने पर बरसते हुए आकाश के अगणित टुकड़ों को बटोरता हूँ
स्मृतियों के रंगों से अपरिचित होता हुआ
जैसे एक रीतेपन में गहरी छायाएँ नहाता हूँ……
एक प्रेम जैसे जड़वत् होकर घृणा बन जाता है
और घृणा बर्फ़ की दुखान्त मृत्यु में पिघलकर प्रेम
मैं दोनों ही स्थितियों के बाहर
सूखी हुई नदी की छाती पर
मृत मछलियों की मुहरें देखता हूँ……
उसके लिए लिखी गयी कविताओं के बुर्ज पर खड़ा हुआ मैं
जैसे किसी तोप के सामने खड़ा हूँ
जैसे अब पृथ्वी पर कभी ऋतुएँ नहीं आयेंगी
मौसम नहीं उतरेंगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसे मकानोंको धूप और चाँदनी ने
हमेशा के लिए तलाक़ दे दिया है
सच, प्यार और नफ़रत
दोनों में से किसी एक के भी भीतर नहीं हूँ मैं
सिर्फ़ एक भय के बाहर उछल आयी
चीख की गोद में
लेटा हुआ हूँ व्यर्थ.....

—चन्द्रकान्त देवताले

३-आपस में लड़ते हुए ग़ुलाम

काँटा होने से ही
कुछ नहीं होता
जल से
गुलाब और कैक्टस में अनबन है,
कमोती उदास है, हो
गटकटैया तो मगन है।

काले गुलाब को
कलेजे के ख़ून से सींचती बुलबुल का दर्द,
बेट-बैसाख की लिली का आतप-तप
और नौ बजे खिल कर
दो बजते-बजते मुरझा जाने वाले
इन फूलों की क्षणभंगुरता
स्नेह, करुणा या मोह नहीं उपजाते;
टेसू-अमलतास में
बहती ही गयी बात
और गये आधी रात
बेला को पड़ोस की खबर मिली
रही सूरजमुखी
उसको तो बस अपने राँझे से मतलब है
और रूपगर्विता चम्पा का अलग ढब है
नागों के पहरे में पड़ा-पड़ा
केवड़ा
जूही को सुहाता नहीं
गन्ध चली न्योतने
गेंदे ने सुना
और तना रहा।

ऐसा ही होता है :
दिन भर के बाद कहीं
आँख खुली नलिनी की
तबसे तो
कमल जा सोता है।

गुलदानी संस्कृति के
शाखाभ्रष्ट फूलों की एकता
बेरहम माली का औपचारिक कौशल
सब कुम्हला जाता है
दिन ढले;
ये कबन्धछिन्न मुसकानों के गुच्छे
कल फिर बदले जायेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फूल तो जड़ है,
उसका तो
गन्ध ही शब्द है,
रूप ही रस है
उसका भला क्या बस है ?
हम तुम जो
रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द सबका
पृथक् ज्ञान रखते हैं,
पृथक्-पृथक् इन्द्रियों से
इन सबको परखते हैं
हम तुम तो जानें कि
कौन है जो
हम-तुम —हज़ार-हज़ार किरणों—से
सुख को असूर्यम्पश्या बनाये है,
कौन है जो
काले भौंरे के रूप में
बाग़ भर का रस
सोख लेने को आतुर है,
कौन है जो
अपनी वित्ते भर मुट्ठी में
बाँध रहा है रह-रह
गन्ध आनन्द की,
कौन है
जिसका स्पर्श
ऐसा खलता है जैसे
दर्द से लापरवाह
घाव छू रहा हो कोई,
कौन है बोली जिसकी
पिघला हुआ सीसा है,
कौन है जो
हम-तुम
दोनों का दुश्मन है !

—प्रताप विद्यालंकार

महिलोपयोगी एकमात्र उत्कृष्ट मासिक

'शृङ्गार'

प्रबन्ध सम्पादक : देवेन्द्र अग्रवाल ● सम्पादिका : लावण्यप्रभा

- विचारपूर्ण व उपयोगी लेख
- स्त्रियोपयोगी रुचिकर सामग्री
- रोचक मनोवैज्ञानिक कहानियाँ
- कविताएँ तथा सुन्दर गीत
- महिलाओंके इण्टरव्यू
- गृह-सज्जा, प्रसाधन समस्याएं, विचार-मंच आदि अनेक रोचक स्थायी स्तम्भ।

मूल्य : वार्षिक : ५ रुपये, मासिक : ५० पैसे

१३।३७, शक्तिनगर, दिल्ली–७

फ़ोन नं० : २२७३००

३१ मार्च, १९६५ तक ग्राहक बननेपर १२ के बदले १५ अंक भेंट किये जायेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सा वि त्री

प्रस्तुत है
मराठीके सुप्रतिष्ठित कथाकार
श्री पुरुषोत्तम शिवराम रेगेका
बहुचर्चित उपन्यास सा वि त्री
तीन किस्तों में ।

यह उपन्यास
पत्र और अनेक पत्रों के
रूपमें है, इसमें धृतीक
प्रतीकोंमें उलझे हैं,
यह आत्मकथा और लोककथा
दोनों है ।

लगेगा कोई सुदर्शना स्तुत
पर कुछ लिखे जा रही है
और ये सब बगैर पते भी
आपतक पहुंच रहे हैं....

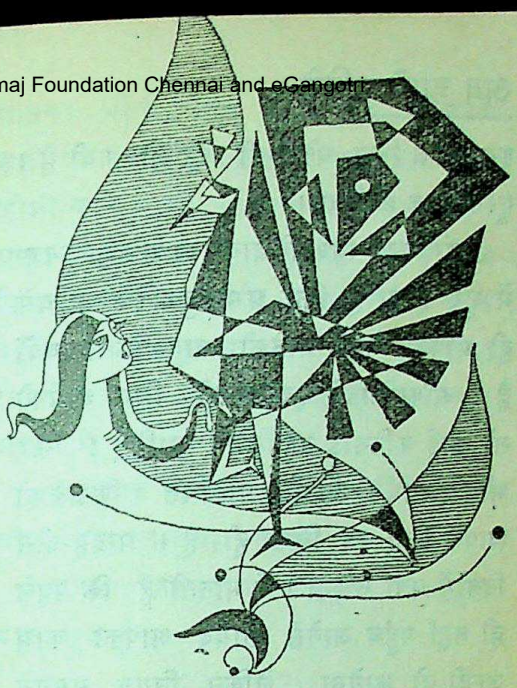

२–गानेवाला पेड़

मूल : पुरुशिव रेगे
अनु० : माधव मोहोलकर

पिछले अंकमें आपने पढ़ा है :

"....अपरिचित होते हुए भी मैंने आपको लिखा और आपने उतनी ही सहजतामें उत्तर दिया। बचपनमें राजम्माने मुझे एक कहानी सुनायी थी। ...उनके स्थानपर ये सात पहाड़ियाँ उग गयीं। आप आइए, मैं गाइड बन जाऊँगी। आते समय मेरे लिए कुछ भी न लाइए।...अप्पाकी पुस्तककी आपने आत्मीयतासे पूछ-ताछ की।...एजवर्थकी अपनी कुछ विशेष कल्पनाएँ हैं।...मैं रिज़ल्टकी प्रतीक्षा कर रही हूँ। आपके दूसरे पत्रमें पूछे प्रश्नोंके योग्य उत्तर शीघ्र ही दे दूँगी।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब आगे पढ़िये :

इस पत्रके लिए थोड़ी-सी देर हो गयी है। गुस्सा मत कीजिए।

इंग्लैण्डमें विश्वविद्यालयका सत्र अक्तूबर-में शुरू होता है, फिर अभी जुलाईके बीचमें ही आपको वहाँ जानेकी आवश्यकता क्यों है? ऑक्सफ़ोर्डमें एडमिशनके लिए आपको तो कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। फिर भी एजवर्थने किसी परिचित शिक्षकको आपके लिए पत्र लिखा ही है। पन्द्रह-बीस दिनोंमें पता चलेगा। मैं मानती हूँ कि पहले ही वहाँ पहुँच जानेसे शायद आपका काम जल्दी हो जायेगा, लेकिन नियत समयसे बहुत पहले जानेसे जल्दबाज़ीका प्रमाण भी बहुत बढ़ जायेगा—यह भी निश्चित है।

आपको अपने सब प्रश्नोंके उत्तर अब भी चाहिएँ?

० ० ०

आख़िर हम भी जायेंगे। अप्पाका जापान जाना निश्चित हुआ है। क्योटोमें आनन्द मिशन नामकी एक पुरानी धर्मसंस्था है। वास्तवमें उसे धर्मसंस्था कहना उतना ठीक न होगा। वह एक तत्त्वजिज्ञासुओंका केन्द्र है। संसारके विविध देशोंके लोग वहाँ अध्ययन तथा विचार-विमर्शके लिए आते हैं। पचास वर्ष पहले किसी सलोनी भिक्षुने उसकी स्थापना की। प्रो० नामुरा – अब मिशनके संचालक हैं – और अप्पामें बीच-बीचमें पत्र-व्यवहार होता रहता था। अप्पा-ने अपनी नयी पुस्तकका कुछ अंश सम्मतिके लिए उनके पास भेजा था। नामुराका कहना था कि पुस्तक प्रकाशित करनेसे पहले उसके मुख्य विषय पर आनन्द-मिशनके तत्त्वावधान-में होनेवाली वार्षिक व्याख्यानमालामें अप्पा-को भाषण देने चाहिएँ। पिछले बीस वर्षोंमें अप्पाने ज़्यादा प्रवास नहीं किया। इसलिए इस नये साहसके लिए भी वे ज़्यादा उत्सुक नहीं थे। लेकिन एजवर्थने ही इस बातमें बढ़कर उनको राज़ी कर दिया।

यह सुनकर प्रो० जोशी विशेषकर यहाँ आये हैं। वे स्वयं छुट्टी लेकर कुछ दिनोंके लिए हमारे साथ आना चाहते हैं। वे जापानी और चीनी भाषाएँ थोड़ा जानते हैं इसलिए पहले कुछ दिनोंतक उनसे अच्छी सहायता मिलेगी। आपको भी आगेके लिए कहते। आयेंगे आप? जीवनकी कुछ बातें नियत समयपर न करनेमें भी कभी-कभी मज़ा आता है।

आपके प्रश्नोंके उत्तर देनेकी बात मैं भूली नहीं हूँ। देख रही हूँ कि इस बीच आपको कुछ सूझता है या नहीं।

० ० ०

केवल एक पत्रके दो शब्दोंसे वह झूल उठी है। कई बार उसे कुछ नहीं सूझता। कहाँसे कैसे धागे बुने गये? कौन-से पहेह सुरोंको पिरो गये?

उसका दिन अनोखा है, रात बहुतों की। लेकिन उसका मन सह नहीं सकता शब्दोंकी बन्दिश।

उसने कहा था, ऐसे ही कभी-न-कभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आऊँगी,—और दिन गुज़रते चले गये फिर भी वह आयी ही नहीं।

तो रास्तेके बाग़में उसे कौन मिला ? कौन किसके पास जा रहा था ?

साथ-साथ चलते हुए पैर नहीं अटके। नज़रें कहीं भी नहीं रुकीं। रास्तेसे परिचय हुआ और किनारेके पेड़ोंने छायाओंके बन्दनवार सजाये। नीचे गिरे पुराने पत्तोंको पहली याद भी न रही।

नदीके तटपर वह बैठी थी तब उसने यूँ ही पानीमें कंकर-पत्थर फेंककर किसीको चौका नहीं दिया था। एक सारस दूरसे आकर तटकी हरियालीपर हौलेसे उतरा। पानीमें उसकी परछाईं तक नहीं हिली।

पानीकी पहली बौछार जब अचानक बरसी तब वह भीगती हुई वैसी ही खड़ी रही।

मन्दिरके प्रांगणमें उसके साथ टहलते-टहलते उसने सहजतासे उत्सवके नाचका एक आवर्तन लिया और वहाँ अनुपस्थित बाज भी पल-भर उस तालपर गूँज उठे।

ओसारेमें बैठकर फूल गूँथते समय कुछ गाढ़े-से कुम्हलाये फूलोंको भी उसने हारमें सम्भाल लिया।

यह सब कहाँ हुआ ?

किसीके लिए सम्हालकर रखे हुए साठ प्रश्नोंके ये पाँच सुसंगत उत्तर।

० ० ०

'सा या भा मा रु' : २२ जुलाई १९३९

जहाज़से भेजी गयी ये शुभेच्छाएँ। बरसातका भीगा मौसम है। 'मुझे जहाज़में कभी भी तकलीफ़ नहीं होती' कहनेवाले प्रो० जोशी चार दिनसे केबिनमें ही सोये हुए हैं। अप्पा बहुत ख़ुश हैं। देख रहे हैं कि ब्रिज फिर चावसे खेल सकते हैं या नहीं। मुझे यहाँका खाना बहुत पसन्द आया। एजवर्थको लिखनेवाली हूँ—मुझे लग रहा है कि पिछले जन्ममें मैं जापानी ही थी।

यह कार्ड आपको कहाँ मिलेगा ? बंगलोर, सिंहाचलम् या लन्दनमें ?

यात्रा···यात्रा···कहाँसे कहाँ ! मैं बहुत बहुत ख़ुश हूँ।

० ० ०

क्योटो, जापान

अगस्त १९३९, अक्तूबर १९४१

यहाँ आते ही आपके तीनों पत्र प्रतीक्षा करते मिले। अच्छा हुआ आपको ऑक्सफ़ोर्डमें एडमिशन मिली। आपके मनकी मुराद पूरी हुई। यह भी अच्छा हुआ कि आप एजवर्थसे फिर एक बार मिले। वे बाहरसे थोड़े 'रफ़' लगते हैं, लेकिन सब लोगोंको अपनाना चाहते हैं। यह एक शुभ-चिह्न समझना चाहिए कि उन्होंने आपको अपना ओवरकोट दिया। उनका हाथ यशदायी है, उनकी वाणीमें द्रष्टाका आशीर्वाद है। वे समझते हैं कि हम किसीको कितना भी क्यों न चाहते हों लेकिन जबतक अपनी उपयोग की हुई कोई चीज़ उसको नहीं देते तबतक उस प्रेमकी पूर्ति नहीं होती। उन्होंने मुझे एक सबसे पुरानी इंग्लिश स्टिक दी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अप्पाके साथ जब घूमने निकलती हूँ तब मैं अब भी उसका उपयोग करती हूँ।

आनन्द मिशन वास्तवमें एक पुराना बहुत बड़ा सामुराइ मकान है। उसमें सब सुविधाएँ हैं। एक बड़ा लेक्चर-हॉल है। उससे सटकर लाइब्रेरी और अध्ययनके कमरे। नामुरा और उनके दोनों सहयोगी इसी मकानमें रहते हैं। इसी मकानके अहातेमें एक छोटे-से घरमें हमारे रहनेका प्रबन्ध किया गया है। मकान और उसके आस-पासका भाग बहुत ही सुन्दर है। शहरके बाहर होने-के कारण बहुत खुला भी लगता है।

मुझे इस बातका डर था कि अप्पाके लिए यहाँकी हवा कहाँतक अनुकूल है पर सौभाग्यसे अब लगता है कि यह हवा उनको रास आयेगी।

जोशीजी यहाँके वातावरणके अभ्यस्त हो गये हैं। उनका एक विशेष गुण यह है कि उन्हें यहाँकी भाषा आती है। अध्ययनकी सुविधाके लिए वे विश्वविद्यालयके होस्टलमें ही रहते हैं। रविवार इधर बिताते हैं या हम लोग कभी ट्रिपके लिए कहीं गये तो हमारे साथ आ जाते हैं।

मिशनकी हाऊस-कीपर होनेके नाते मिसेज नामुरा सब व्यवस्था देख लेती हैं। उनके एक सहयोगी इमोटो उनके लिए एक सहायक लानेवाले हैं। दूसरे सहयोगी एक तिब्बती लामा हैं। उन्हें हम सब 'सुधम्म' कहकर पुकारते हैं।

मिशनमें पढ़नेके लिए फ़िलहाल आठ छात्र हैं—पाँच जापानी, एक नार्वेजियन, एक अँगरेज़ और एक सिलोनी। अभी सबसे पूरी जान-पहचान नहीं हुई। यहाँके सामूहिक कार्यक्रमों और प्रवचनोंके लिए बाहरके भी बहुत-से लोग आते हैं।

नामुरा एक बहुत उम्दा आदमी हैं। उनकी आँखें बिलकुल निर्मल, छोटे बच्चों-जैसी हैं। उनके मनमें कितना भी छोटा भाव क्यों न उठे उनकी आँखोंमें तत्काल प्रति-बिम्बित हो जाता है। छोटी-सी सफ़ेद दाढ़ी और विशुद्ध जापानी पोशाकमें वे बहुत ही अच्छे और सबसे अलग दिखाई देते हैं। वे अँगरेज़ी अच्छी तरह जानते हैं लेकिन उनका जापानी वक्तृत्व अधिक प्रभावशाली लगता है। शायद इसलिए भी यह होता है कि अपरिचित भाषा सुनते समय उसकी ध्वनि अधिक उत्कटतासे महसूस होती है। मेरा नाम उन्हें बहुत पसन्द आया लेकिन बोलते समय वे 'शा-उ' कहते हैं। अप्पाने उनका एक नया नाम रखा है—सांदीपनि। सहजतासे ज्ञानज्योति जलानेकी उनकी कुशलता देखकर यह नाम पूर्णसार्थक सिद्ध हो जाता है।

आप कहेंगे कि मैंने अपने बारेमें कुछ भी नहीं लिखा लेकिन मैं अभी चारों तरफ़ देख ही रही हूँ।

अखबारोंसे पता चलता है कि वहाँ पुरुषों में युद्धकी दुन्दुभियाँ बजने लगी हैं। आपके लिए चिन्तित हूँ,—और फिर सोचती हूँ कि चिन्ता सबको सबकी करनी चाहिए।

आपके थीसिसकी प्रति मिली। भूमिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में मुझे धन्यवाद किसलिए ? मेरा नाम उसमें क्यों ?

० ० ०

बहुत दिनोंसे आपका पत्र नहीं आया। आज आया तो है पर बहुत ही संक्षिप्त। घमासान युद्धमें आप अब उधर ही रहेंगे। चिन्ता तो है ही लेकिन आपके पत्रके कारण कुछ कम हो गयी है। इस परिस्थितिमें भी घर न लौटकर उधर ही रहकर काम करनेका आपका निश्चय उचित ही है। जो होना है वह कहीं भी हो सकता है।

यहाँका वातावरण भी आशादायी नहीं। कोई भरोसा नहीं कब क्या हो जाये। लेकिन अप्पा यहाँ रम गये हैं। उनका स्वास्थ्य भी सुधर गया है।

प्रो० जोशी कहते हैं कि दिसम्बरके अन्तमें वे हिन्दुस्तानके लिए निकल पड़ेंगे। यहाँ रहकर उन्होंने जापानी भाषाके अध्ययन की ओर ही अधिक ध्यान दिया। फ़िलहाल वे इधरके कुछ महत्त्वपूर्ण स्थान देखनेमें व्यस्त हैं। उनकी यह विशेषता मुझे बहुत पसन्द है। छोटेसे छोटा काम भी बड़े उत्साहसे करते हैं—अपना अध्ययन-चिन्तन जितनी आस्थासे करते हैं, उतनी ही या उससे भी अधिक आस्थासे। किसी भी अवसरको खोते नहीं। आपका परिचय तो हो ही चुका है। उनके विशाल अध्ययनसे आप बहुत लाभ उठा सकते हैं।

अप्पाके पास एजवर्थका एक बहुत ही हृदयस्पर्शी पत्र आया है। उन्हें डर है कि यह युद्ध दीर्घकाल तक चलता रहेगा और इसमें बहुत संहार होगा। पिछले महायुद्धमें तो वे थे ही। उन्हें डी० एस० ओ० भी मिली है। आज वे प्रत्यक्ष रूपसे कुछ नहीं कर सकते। उनकी समझमें नहीं आता कि संसारके लोग भौतिक साधनोंके कारण और निकट आनेके बदले अधिकाधिक दूर क्यों जा रहे हैं। भारतकी स्थिति भी आज विस्फोटक है। कई स्थानोंपर वाइसराय और गवर्नरने सारा कारोबार अपने हाथमें ले रखा है। देशकी सारी अर्थव्यवस्था और शासनका उपयोग ब्रिटिश युद्धनीतिके लिए किया जानेवाला है। स्वजातियोंकी राजनीति और सामाजिक संकेत एजवर्थको पहलेसे ही कभी अच्छे नहीं लगे। वे भारत आये और कुर्गके किसी कोनेमें स्थिरचित्त हो गये। हमारे लोगोंको वे कभी पराये नहीं लगे पर अब राष्ट्रीय आन्दोलन सब जगह फैल चुका है। कोई भरोसा है कि सभी लोग समझदारीसे काम लेंगे ? वे अपने लिए नहीं डरते। उनके अनगिनत सम्बन्धों और उनसे उत्पन्न निकटके नातों-रिश्तोंकी वे रक्षा करना चाहते हैं। उनकी दृष्टिमें मित्रता सबसे बड़ी चीज़ है। आश्चर्य नहीं कि इस परिस्थितिमें अप्पाकी अनुपस्थिति उनको ज्यादा महसूस होती होगी लेकिन उन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें नहीं लिखा है। अप्पाको उन्होंने एक सुझाव भर दिया है कि अगर वे जल्दी लौट आयेंगे तो अच्छा होगा। अप्पाके भाषणोंके लिए अभी दो महीनेका समय है। वे भी थोड़े-से उलझनमें पड़ गये हैं लेकिन ऐसी बातोंमें उनका स्वभाव थोड़ा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सा ज़िद्दी है। व्यर्थ कोई ज़िम्मेदारी लेंगे नहीं, लेकिन एक बार ले ही ली तो उसे पूरा किये बिना छोड़ेंगे भी नहीं।

मैं सोचने लगी हूँ कि ये जो सभी घटनाएँ एक साथ सामने आयी हैं उनसे डरनेसे काम नहीं चलेगा। हानि-लाभकी कसौटीपर बड़ी समस्याएँ हल नहीं होतीं। इसके अलावा मैं भाग्यवादी भी हूँ। (शायद यह भाग्यवाद मुझे विरासतमें मिला होगा या कभी-कभी एजवर्थ जो कहते हैं उसका भी प्रभाव होगा।) ऐसा नहीं है कि हमारे यहाँ आनेसे जापानमें बहुत बड़ी क्रान्ति होगी लेकिन जो बातें एक साथ सामने आयी हैं उनकी वजहसे मैं अपना अपनत्व और अधिक खोने-वाली हूँ।

अब यह हमेशासे अधिक लम्बा खत समाप्त कर देती हूँ। पत्रोंका मिलना और वे जैसे लिखे गये हैं वैसे ही हाथमें आ जाना अब दिन-ब-दिन मुश्किल होनेवाला है। अगर मैंने केवल यही रट लगा दी कि मैं तुम्हें चाहती हूँ—मैं तुम्हारी हूँ—तो आदर कोई ध्यान नहीं देगा। बीचमें अगर मैं साउके बदले किसी बिल्ली-कौवेकी छोटे बच्चोंकी कहानी भी लिख दूँ तो ये अक्ल-मन्द अफ़सर कुछ और ही मतलब निकाल लेंगे। तो अब इतना ही, बस।

सच कहती हूँ, आपको भूली नहीं हूँ।

० ० ०

पिछले सात दिनोंसे मैं बीमार हूँ। बुखार अभीतक कम नहीं हुआ है। डॉक्टर कहते हैं कि चिन्ताकी कोई बात नहीं। मैं भी मज़ेमें हूँ। नवागता मिसेस इमोटो सारी परिचर्या करती हैं, इसलिए अप्पा भी निश्चिन्त हैं।

वैसे तो मैं शायद ही बीमार पड़ती हूँ और कभी पड़ ही गयी तो मुझसे यह सह सही नहीं जाती कि दूसरे लोगोंको मेरे छोटे-छोटे काम भी करने पड़ें। ज्वर बढ़ता है तो लगता है कि मेरा कोई अस्तित्व ही नहीं कहीं तो कोई बिन्दु या कण होता है जो वह धीरे-धीरे बढ़ता-फूलता जाता है, सब व्याप्त कर देता है। इससे मुझे बड़ा सुख मिलता है। बदनमें बड़ी उथल-पुथल मची रहती है। श्वेत और लाल रक्तकणोंमें मानो वर्गयुद्ध छिड़ जाता है। रोग-जन्तुओंका नाश करनेके लिए रक्त बलात् तापमान बढ़ाकर प्रचण्ड अवतार धारण करता है। विचित्र

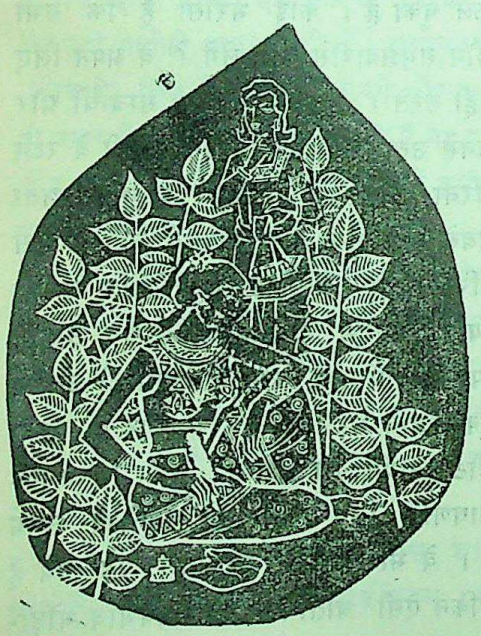

पत्र-लेखन :: मृत्युंजय सरकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रन्थियाँ अपने-अपने स्थानोंपर—कौन जाने, क्या करती हैं। (लेकिन यह सब कुछ पढ़कर किसी ज़मानेमें मैंने परीक्षकोंको समझाया है।) बीमारीके बाद मस्तिष्क और शरीरमें जो हलकापन आता है वह मुझे बहुत अच्छा लगता है। लिखते-लिखते मैं बहुत-कुछ अच्छी हो गयी हूँ।

आप कहते हैं कि विश्वविद्यालयकी बाउलेअन लाइब्रेरीमें नौकरी करनेसे आपको दुहरा फ़ायदा होगा पर सचमुच लाइब्रेरियन-को कभी पढ़नेके लिए फ़ुरसत भी मिलती है? मुझे तो लगता है, बहुत सारी पुस्तकोंसे सम्बन्ध होनेके कारण न पढ़नेकी ओर ही उसका झुकाव होता होगा।

अप्पाके भाषणोंकी तारीख अब निकट आ पहुँची है। उसी समय मिशनके वार्षिक समारोहके लिए मैं एक छोटा-सा नाटक खेलना चाहती हूँ। नाटक मैंने ही लिखा है—लेकिन यह एक राज़की बात है। राजप्पाकी किसी कहानीपर (लच्छीके मोरकी नहीं) आधारित है। थोड़ा-सा बदल दिया है। नामुराको कहानी बहुत अच्छी लगी। मैं पहले अँगरेज़ीमें (अपनी!) निचूँगी और वे उसका जापानीमें अनुवाद करेंगे। सौभाग्यसे नाटक छोटा ही होगा। शब्द भी कम, गिने-चुने होंगे। ऍक्शन, कावाज़, सस्पेन्ससे शेष भागकी पूर्ति करने-वाली हूँ। इस नाटकसे इधरके नो-ड्रामा और हमारे यक्षगान—दोनोंको खतरा है।

जोशी अबतक हिन्दुस्तान पहुँच गये होंगे। अभीतक उनसे कोई खबर नहीं मिली।

प्रो० गुरुपादस्वामी अकस्मात् कॉलेज छोड़कर क्यों चले गये? आपने उनके विषयमें स्पष्ट रूपसे नहीं लिखा इसलिए कुछ ठीकसे समझमें नहीं आया।

अब इतना लिखनेके बाद सचमुच मैं अच्छी हो गयी हूँ। मिसेज इमोटो कह रही हैं कि अब बुखार बिलकुल नहीं रहा।

० ० ०

अभी-अभी यहाँ ल्योरे नामकी एक स्वीडिश लड़की आयी है। जब मैं बीमार थी तब वह अच्छी तरहसे मेरा दिल बहलाती रही। उसके पिताजी ओसाकामें अपनी शिपिंग कम्पनीके रिप्रेजेण्टेटिव हैं। कुछ दिन जापानमें रहकर उसे हिन्दुस्तान जाना है। मेरी ही उम्रकी है पर है बड़ी प्यारी, नन्हें-नन्हें ओठ और बड़ी-बड़ी आँखें। मैंने उसे हमारे साथ ही चलनेके लिए कहा है। उसे भारतीय कलाकी लगन लगी है। पहले उसे थोड़ा-सा डरानेको मैंने आपका थीसिस पढ़नेके लिए दिया है। ल्योरे आपको ज़रूर अच्छी लगेगी।

अभी मालूम हुआ है कि जोशीजी निर्विघ्न पहुँच गये।

इस पत्रके साथ एक फ़ोटो भेज रही हूँ। पहचान लीजिए कि उसमें ल्योरे कौन-सी है। दायेंसे दूसरे इमोटो। नीचे ठोढ़ी-पर उँगली रखकर बैठा ओलाफ़। यदि आप ल्योरेको पहचान न सकें तो नीचेकी पंक्ति काग़ज़ उल्टा करके पढ़िए—

हम दोनोंने एक दूसरेके कपड़े बदलकर पहने हैं।

सावित्री : पुरुशिव रेगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाटक खेलनेकी तैयारियाँ शुरू हो गयी हैं। राजाका काम ओलाफ़ करनेवाला है। उसका सबसे बड़ा क्वालिफ़िकेशन है उसकी दाढ़ी। पंछियोंका काम करनेके लिए आस-पासके दस-बारह लड़के तैयार किये गये हैं। इस नाटकमें एक पात्र पेड़का भी है। नामुरा स्वयं यह भूमिका खेलेंगे।

सुना है कि प्रो० गुरुपादस्वामी अब सदाके लिए सिंहाचलम् रहने गये हैं। क्या यह सच है?

सचमुच मेरी तबीयत अब अच्छी है। कभी-कभी सोचती हूँ, मैं यहाँ क्या कर रही हूँ? लेकिन फिर लगता है कि साधारण परिस्थितियोंमें यह सब कुछ न होता··· ल्योरे न मिलती।

अपना पूरा कुशल-समाचार लिखिए। दूसरी निरर्थक बातें न लिखिए।

० ० ०

जैसे मैंने कहा था, नाटककी कथावस्तु बहुत बड़ी नहीं है। उसका विभाजन किया गया है केवल तीन प्रवेशोंमें।

परदा ऊपर उठनेसे पहले ही पंछियोंके चहचहानेकी आवाज़ सुनाई देती है। परदा उठनेके बाद एक भयंकर पुराना वृक्ष दिखाई देता है। अलग-अलग पंछियोंके मुखौटे पहनकर चारों ओरसे लड़के उछलते-कूदते आते हैं, थोड़ी देर नाचते हैं और चले जाते हैं। चहचहानेकी आवाज़ चलती रहती है।

सहसा ज़ोरसे आवाज़ सुनाई देती है—भूकम्प-जैसी। लगता है कि पेड़ भी थोड़ा काँप उठा है। ततः प्रविशति मृगयाव्यग्रः क्रोधाविष्टो राजा मन्त्रिभिः परिवेष्टितः। पंछियोंके चहचहानेसे उसका सौज भ गया है। वह मन्त्रियोंको आज्ञा देता है कि पंछियोंका नाश किया जाये। चार मन्त्री चार अलग-अलग सुझाव देते हैं। एकका कहना है कि बहुत बड़ी आग जलाई जाये। दूसरा कहता है कि पेड़की जड़ोंमें ज़हरीला खाद डाल दिया जाये। तीसरेका कहना है कि पेड़पर चढ़कर पहले सबके अण्डों और छोटे बच्चोंका नाश किया जाये। चौथा कहता है कि पेड़को ही काट दिया जाये। बड़ी बहस होती है। हरएक अपना-अपना विचार नाचकर व्यक्त करता है। राजा कुछ निर्णय नहीं कर पाता। यह सब जब चलता रहता है तब बीच-बीचमें पंछी लोग आकर नाचते हैं और प्रार्थना करते हैं। राजा और मन्त्री अपने-अपने उपायोंकी उन्हें धमकियाँ देते हैं।

आखिर तय हुआ कि पेड़को काट लिया जाये। काटकर उससे एक घर बनायेंगे। बात भी निश्चित हो जाती है। राजा और मन्त्री कुल्हाड़ियोंको तेज़ करने लगते हैं, गदाओंके समान घुमाकर कन्धेपर भेल लेते हैं, नाचते हैं।

पंछियोंके चहचहानेकी आवाज़ सहसा बन्द हो जाती है। पेड़की जगह एक बूढ़ा आदमी हाथ ऊपर उठाकर प्रार्थना करता है कि मत मारो, मत गिराओ! कुछ और भीत पंछी आते हैं। उन्हें वह अपनी गोदमें ले लेता है। लेकिन पंछियोंको ज़बरदस्ती हु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हटाया जाता है। कुल्हाड़ियाँ चलती हैं। पेड़ काट डाला जाता है।

यहाँ पहला प्रवेश समाप्त होता है।

दूसरा प्रवेश : पेड़के स्थानपर एक छोटा घर है। पंछियोंमें-से कुछ अब बड़े हो गये हैं, कुछ अब भी पंछी हैं। सब खेलते हैं, उछल-कूद करते हैं। घरके चार दरवाज़े हैं। उनमें-से अन्दर-बाहर नाचते-गाते हुए लड़के आ-जा रहे हैं।

थोड़ी देरके बाद फिर पहले-जैसी आवाज़ ज़ोरसे सुनाई देती है। घर हिलता है और राजा मन्त्रियोंके साथ प्रवेश करता है। राजाकी पोशाक मध्ययुगीन है। मन्त्री भी दूसरे ही हैं,—एक मुनीम, एक कारीगर, एक न्यायाधिकारी, एक सिपाही। लड़कों और पंछियोंका खेल चल ही रहा है।

पंछियोंको देखकर राजा चिढ़ जाता है। लड़कोंको वह उनसे दूर हटाना चाहता है लेकिन वे नहीं सुनते। सिपाही डाँटता है। दुःखी मनाता है। कारीगर तख्तियोंसे दरवाज़े बन्द करना चाहता है। न्यायाधिकारी एक बड़ी तराज़ूमें एक लड़के और कुछ पंछियोंको तौलनेकी कोशिश करता है।

कारीगर घर बन्द नहीं कर सकता। राजा भी कुछ फ़ैसला नहीं कर सकता। कोई भी बच्चों और पंछियोंको क़ाबूमें नहीं कर सकता।

कारीगर कहता है : काठकी ज़रूरत नहीं। घर पुराना हो गया है। गिराना चाहिए। नया और ऊँचा बनायेंगे जहाँ पंछी नहीं होंगे, बच्चे खेल नहीं सकेंगे।

सब कुदाल-फावड़ा लेकर नाचने लगते हैं। इतनेमें घरके भीतरसे एक पुरंध्री बाहर आती है। बच्चे और पंछी प्यारसे उसे जा लगते हैं। (यह काम ल्योरे करनेवाली है।) वह कहती है कि उसे यही घर चाहिए। उसमें बच्चे भी रहते हैं और पंछी भी। पर उसका कहना कोई नहीं मानता। सबको ज़बरदस्ती खींचकर वहाँसे हटाया जाता है। घर गिराते समय उसपर भी प्रहार हो जाते हैं।

तीसरे प्रवेशका परदा जब उठता है तब एक बहुत ऊँची इमारत दिखाई देती है। वहाँ ओलतियाँ नहीं, बैठनेके लिए पंछियोंको कहीं भी जगह नहीं। बच्चे, पंछी—अब कोई भी दिखाई नहीं देता। लेकिन कहींसे ठक्-ठक्की एकस्वर आवाज़ आती रहती है।

थोड़ी देरके बाद राजा और उसके मन्त्री आते हैं। कुछ लड़के भी हैं जो बड़े हो गये हैं। राजाकी पोशाक आधुनिक है। मन्त्रियोंमें-से एक सेल्समैन दिखाई देता है, एक होटल-मालिक, एक वकील और एक सरकारी कर्मचारी।

सभी खुश हैं। नाचते हैं। यह नाच बहुत-कुछ मशीन-जैसा लगता है। बड़े लड़के अब खेलना भूल चुके हैं।

थोड़ी देरके बाद हवाई जहाज़की आवाज़ सुनाई देने लगती है और धीरे-धीरे यह आवाज़ बहुत तेज़ हो जाती है। सब डर जाते हैं। इमारत थरथराने लगती है। सब उसको सम्भालनेकी कोशिश करते हैं।

सावित्री : पुरुशिव रेगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंछी हवाई जहाज़ोंके मुखौटे पहनकर आते हैं, हवाई जहाज़ोंकी परेड करते हैं। चारों तरफ़ भाग-दौड़ शुरू हो जाती है। इमारत ज़मीनपर गिर जाती है।

पहले प्रवेशका वह वृद्ध और दूसरेकी वह पुरंध्री : छोटे बच्चों और पंछियोंको साथ लेकर इमारतसे बाहर निकलती है। कुछेकके हाथोंमें पेड़की डालियाँ हैं। कुछेकके पास रंग-बिरंगे काठके वाद्य हैं। नाचकर वे पहले-जैसा ही खेल खेलते हैं, गाते हैं, बजाते हैं।

धीरे-धीरे ज़मीनपर गिरी हुई इमारत अदृश्य हो जाती है उसकी जगह अनगिनत छोटे-छोटे घर और पेड़ दिखाई देने लगते हैं। परदा गिरता है।

नाटकका नाम रखा है : गानेवाला पेड़।

० ० ०

अप्पाके भाषण हो गये। भाषणोंसे पहले ही उनका जापानी अनुवाद इमोटोने तैयार किया था। वह निमन्त्रितोंको भेज दिया गया था। भाषण अँगरेज़ीमें ही हुए। उनकी पुस्तक भी नवम्बरके क़रीब ही प्रकाशित होगी।

इन भाषणोंका एक परिणाम यह है कि हमें यहाँ और कुछ दिन रहना पड़ेगा। क्योटो विश्वविद्यालयसे एक सालका निमन्त्रण अप्पाको मिला है। तुलनात्मक दर्शनपर भाषण देनेके लिए। अप्पाने यहाँ रहनेकी बात मान ली है। शायद हम क्योटो जाकर रहेंगे या आस-पास ही कोई दूसरा घर मिला ता ले लेंगे।

इस बार एजवर्थने मुझे पत्र लिखा है। पिछले पत्रसे यह बिलकुल अलग है। युद्ध या अन्य वर्तमान परिस्थितियोंका उसमें उल्लेख तक नहीं है। उस पत्रका महत्वपूर्ण अंश विशेष रूपसे आपके लिए भेज रही हूँ :

"हमारे साथ मुश्किल यह है कि मस्तिष्क बहुत फ़ुर्तीसे काम नहीं करता। हर स्थितिके साथ चलनेकी शिक्षा इसने नहीं पायी है। दुनियाकी यह वाक़ई ट्रेजेडी है। हम लोग केवल शीघ्रताके माध्यमसे ही इससे मुक्तिकी आशा कर सकते हैं और मैंने यह महसूस करना भी शुरू कर दिया है कि यह केवल तभी सम्भव है जब हम अपने दिमाग़में निर्मित विचार करनेके तरीक़ोंसे पीछा छुड़ा लें—चाहे वे तरीक़े समयके हों, चाहे स्थानके, चाहे वे सामाजिक-व्यक्तिगत नीति-नियमोंकी आदत ही हों, वे आदत जिन्हें हम मूल्यका नाम देते हैं।"

इसपर मैं क्या भाष्य कर सकती हूँ? मैं केवल एक बात जानती हूँ। शायद उसमें इन सबका समावेश हो सकेगा: अपने आपको भूल जाना। इसमें सफलता मिली तो देश-कालादिके बन्धन ही नहीं रह जायेंगे। पहले किसीने इसे 'समर्पण' कहा; वही बात एजवर्थ दूसरी भाषामें कह रहे हैं। हमसे भूल कब हो जाती है? जब हम केवल इन कल्पनाओंसे ही चिपक बैठते हैं तब। तात्कालिकताका नशा कभी हमपर चढ़ता ही नहीं—वही उन्माद राधाका था, ऋग्वेदकी उर्वशीका था। इसीलिए भविष्यके प्रश्न अधिक महत्वपूर्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुर्जनोंके साथ सम्बन्ध ही नहीं हुआ ? सच, आपने जब पूछा तब मुझे पहली बार इस बातका अहसास हुआ। मैं समझती थी कि दुनियामें सभी लोग अपने-जैसे ही होते हैं। (हम अपने आपको 'सज्जन' ही समझते हैं न ?) शायद मैं जिन परिस्थितियोंमें पली, जिनके साथ मेरा सम्बन्ध हुआ वे साधारण तौरपर मुझ-जैसे ही होंगे। जलनेवाले झगड़नेवाले कभी मेरे हिस्सेमें आये ही नहीं। घरमें न कोई भाई था न बहन। अकेली ऐशो-आरामसे पली। सभी लोगोंने मुझसे प्यार किया, मैंने भी उसे स्वीकारा। सब कुछ अनायास था। लेकिन फिर भी मैं सोचती हूँ कि इसीलिए मैं ऐसी—जैसी हूँ—नहीं बनी। जिसे हम सही अर्थमें सुख कहते हैं, उससे मनुष्य सदा सुखी नहीं होता। (आप कहेंगे कि मैंने कौन-सी नयी बात कही ? सन्त तो यही कहते आये हैं।) लेकिन दुःखसे परे जैसे एक सुख होता है वैसे सुखसे भी परे एक सुख होता है। जो सुख-दुःखसे परे होता है उससे दुःखके परिहार होने की सम्भावना रहती है। सुखके परे जो सुख होता है वह सुख-दुःख दोनोंको समा लेता है। कुन्तीने कृष्णसे यही माँगा था—'विपदः सन्तु नः शश्वत्'। क्योंकि विपत्कालमें श्रीकृष्णकी अवश्य याद आयेगी पर मैं कहूँगी यह ठीक नहीं। श्रीकृष्णको याद ही करना हो तो अत्यन्त सुखके परमोच्च क्षणमें भी सहज और उत्कटतासे याद उसकी आनी चाहिए। विपत्कालमें तो हर कोई भगवान्‌को याद करता है। मेरी सज्जनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से ही भेंट हो जाती है इसके दो कारण हैं। एक है मेरा सौभाग्य और दूसरा मेरे मनकी समझदारी। मैं कुछ भी ठुकराती नहीं और अन्तमें जो ग्रहण करती हूँ वह अपने योग्य अपना-सा बनाकर। सज्जन-दुर्जन हम अपने आप ही तो हैं।

बचपनमें एक बार मैंने बहुत हठ किया था पर अकस्मात् मुझे इस बातका अहसास हुआ कि यह सब कुछ मेरी वजहसे चल रहा है। मैं तुरन्त शान्त हो गयी।

अर्थात् अभी तक कोई गुण्डा या धोखेबाज़ या जिसकी रग-रगमें दुष्टता है ऐसा कोई मुझसे मिला ही नहीं। मिले तो क्या होगा—यह जाननेके लिए जितने आप उत्सुक हैं उतनी मैं भी उत्सुक हूँ। पर केवल इसीलिए मेरा जीवन व्यर्थ सिद्ध होगा? हम मानते हैं न कि सारी दुनिया सज्जनोंकी बन जाये इसलिए यह कोशिश चल रही है। यह बात तो वैसी ही होगी जैसे किसी कहानी, नाटक या उपन्यासमें खलनायक नहीं होता ···केवल इसलिए ही उसे त्याज्य समझा जाये? सज्जनों और दुर्जनोंके संघर्षसे ही समर-प्रसंगोंका निर्माण होता है—और यह इसी तरह निरन्तर चलनेवाला है—तो इतिहासका कार्य केवल नाम बदलनेके सिवाय कुछ भी नहीं रहेगा। नाटक-उपन्यासों का काम बहुत ही आसान होगा। बस, सफ़ेद और काली कठपुतलियोंको नचाओ। सच, एक बार देखना चाहिए कि (आपके अभिप्रेत) किसी भी दुर्जनके बिना उपन्यास या नाटक लिखा जा सकता है या नहीं।

प्रश्न : 'गानेवाले पेड़' का राजा दुर्जन था?

उत्तर : मैं सोचती हूँ कि वे पक्षी भी थोड़े दुष्ट ही थे। राजाकी सुविधाका उन्हें भी थोड़ा-सा खयाल रखना चाहिए था। यदि वे राजाके साथ सुलह करते कि हम किसी नियत समय पर ही चहचहायेंगे, शिकारमें बाधा नहीं डालेंगे तो क्या बिगड़ता? प्रत्येक प्रवेशमें ये पक्षी अधिकाधिक दुष्ट और हिंसक नहीं बने! आखिर नाश किसने किसका किया? 'राजाको अच्छा सबक़ मिला'—इतना भर कहनेसे यह समस्या हल होगी?

इतना लिखनेके बाद मैं बहुत ही दुर्जन बन गयी हूँ। ल्योरे और उसके पिताजी अगले सप्ताहमें अमेरिका होकर घर जानेके लिए किसी स्वीडिश जहाज़से निकलनेवाले हैं। यहाँके बहुत-से योरपियन लोग इसी जहाज़से अमेरिका जानेवाले हैं। कभी-कभी सोचती हूँ कि मैं भी चलूँ, हो सका तो इंग्लैण्डमें आपसे मिलूँ। लेकिन इस धूमधामसे यह कैसे सम्भव होगा! अप्पा कहेंगे जानबूझकर युद्धके क्षेत्रमें नहीं जाना चाहिए। लेकिन कल यहाँ भी युद्धकी आग धधक उठी तो!····मैं बहुत दूरकी बातें ही नहीं सोचती। अभी तो ल्योरे मेरी दूतीका काम करेगी। हो सका तो वह आपसे ऑक्सफ़ोर्डमें मिलेगी।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक नारीका द्वैत

('सागर, लहरें और मनुष्य')

रणवीर रांग्रा

समर्थ आलोचक, विचारक,
उपन्यासोंके विशेष विश्लेषक।

■

घर और जगत्‌के प्रति नारी जितनी सशक्त आज है, उतनी शायद पहले कभी नहीं थी। आज वह जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें पुरुषके साथ कन्धेसे कन्धा भिड़ाकर – खिलकर नहीं – चलनेकी माँग करती है। समाजने उसकी स्वतन्त्रताको स्वीकारा है। कानूनने उसे बराबरीका हक़ दिया है। आधुनिक शिक्षा-दीक्षाने उसमें स्वाभिमानका भाव भरा है। इस सबसे नारीकी प्रगतिका पथ खुल गया है और उसकी कुछ समस्याएँ सुलझी भी हैं। पर उनके स्थानपर जो नई उलझनें पैदा हुई हैं, वे और भी भयंकर हैं। सभ्यता, क़ानून और शिक्षाने नारीकी सामाजिक बेड़ियोंको तो काट दिया है, पर उसके भीतर गहरे जमे सदियोंकी दासताके संस्कार अब भी उसकी आत्माको जकड़े हुए हैं और वह लाख छटपटानेपर भी उनसे मुक्त नहीं हो पायी है। संस्कारोंमें वह अभी भी प्राचीन है, पर आधुनिकताको उसने फ़ैशनके रूपमें ओढ़ रखा है। कुल मिलाकर उसकी स्थिति सुधरनेकी बजाय बिगड़ी ही है। उसका शोषण अभी भी रुका नहीं, शोषणका रूप भर बदला है और वह उस रूपकी चकाचौंधमें आपा खो बैठी है।

नारी-जीवनकी इस विडम्बनाका चित्रण पं० उदयशंकर भट्टके उपन्यासोंमें हुआ है। कवि और नाटककारके रूपमें तो भट्टजीका स्थान अक्षुण्ण है ही, इधर कुछ वर्षोंसे उपन्यासको अपनी अभिव्यक्तिका माध्यम बनाकर उन्होंने जो कृतियाँ दी हैं, उनका भी अपना स्थान है। 'एक नीड़, दो पंछी', 'सागर, लहरें और मनुष्य', 'डॉ० शेफाली', 'शेष-अशेष' और 'दो अध्याय' उनके उल्लेखनीय उपन्यास हैं। इनमें उन्होंने कुशल जर्राहकी तरह नारी-जीवनके इस द्वैतपर बड़ी निर्ममतासे नस्तर चलाया है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका पूरा मवाद निकाल बाहर करनेकी चेष्टा की है। रोगके निदानमें वे अधुनातन तकनीकोंसे लैस होकर चले हैं, पर चिकित्सा-के रूपमें वे आधुनिक प्रयोगोंकी अपेक्षा सदियोंकी आज़मायी हुई पुरातन पद्धति ही अपनाते हैं। वे काम-वृत्तिको दबानेके पक्षमें तो नहीं, पर उसे खुलकर खेलने देनेकी बजाय वे उसका संयमन ही हितकर मानते हैं।

पिछले दिनों जब भट्टजीसे मिलनेका सुयोग प्राप्त हुआ तो मैंने सीधे उनके उपन्यासोंपर ही चरचा छेड़ दी। उनमें बार-बार उठायी गयी सेक्सकी समस्याको लेते हुए मैंने कहा कि समाज जब किसी स्त्री या पुरुषको विवाहकी अनुमति देनेसे इनकार करके उसके सेक्स-प्रवाहके सभी मार्ग अवरुद्ध कर देता है तब उसके पास सेक्सके उन्नयनके सिवा और कोई स्वस्थ रास्ता नहीं रहता। असफल प्रेमी घोर निराशाके क्षणमें आत्म-हत्या कर सकता है या फिर किसी दूसरेकी हत्यामें प्रवृत्त हो सकता है जिसे वह अपने मार्गका काँटा समझता हो। आप उसे इन दोनोंसे बचाकर जो परसेवाके क्षेत्रमें प्रवृत्त कर देते हैं; यह स्वाभाविक ही है। क्योंकि प्रेम और परसेवा दोनोंमें व्यक्तिका अहम् चूर-चूर हो जाता है और उसे परम सन्तोष-की उपलब्धि होती है। इस दृष्टिसे मुझे 'डॉ० शेफाली'की अपेक्षा 'दो अध्याय'की शारदाके चरित्र-विकासकी परिणति अधिक संयत और स्वाभाविक दीखती है। इस विषयमें आपकी क्या राय है ?

प्रश्नके उत्तरार्द्धपर भट्टजी खिलखिला-कर हँस पड़े और बोले, "सो तो होगा ही, क्योंकि 'दो अध्याय' 'डॉ० शेफाली'के बाद लिखा जानेके कारण शारदाके चरित्र-विकास-की परिणति इस समस्यापर मेरे परिपक्व दृष्टिकोणको व्यक्त करती है।" फिर प्रश्नको और गहराईमें लेते हुए बोले, "मैं सेक्सको स्वयं प्रवाहित होते हुए देखना चाहता हूँ। किसी मर्यादा या आदर्शमें बाँधना मुझे अभिप्रेत नहीं है। 'लोक-परलोक'की चमेली 'डॉ० शेफाली'की हीरा देई, 'सागर, लहरें और मनुष्य'की रत्ना इस प्रकारके उदाहरण हैं। जिन पात्रोंमें अविवेकका बन्धन नहीं है या अध्ययन या सेवासे जिन्होंने अपने कामको भस्म कर दिया है या दूसरी ओर उन्नत कर दिया है, उन्हीं पात्रोंको मैं शारदा या शेफालीके रूपमें चित्रित करता हूँ। जिस स्थिति तक पहुँचनेके लिए जो प्रारब्धी संघर्ष पात्रोंके जीवनमें होता है, उस तक पहुँचते-पहुँचते जो पात्र मुझे जीवित दिखाई देते हैं, उन्हींको मैंने वैसे दिखलाया है। वैसा करना आग्रह-ग्रहिलता नहीं है, स्वाभा-विक है। हो सकता है, इस अवस्थाने कई कुछ लोगोंको अस्वाभाविक लगे। मैंने ऐसे पात्र देखे हैं। उनके सम्पर्कमें भी आया हूँ। इसीलिए, यह निष्कर्ष मैंने अपने पात्रोंके लिए भी निकाला।

"शारदा और शेफाली, दोनों ही अन्तर्द्वन्द्वसे पीड़ित हैं और दोनों ही अपने मनके प्रिय व्यक्तिको चाहती हैं। किन्तु शेफालीमें अपने सेक्सको जीतनेकी क्षमता कम है जब कि शारदाने अपने गुरुके प्रभाव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

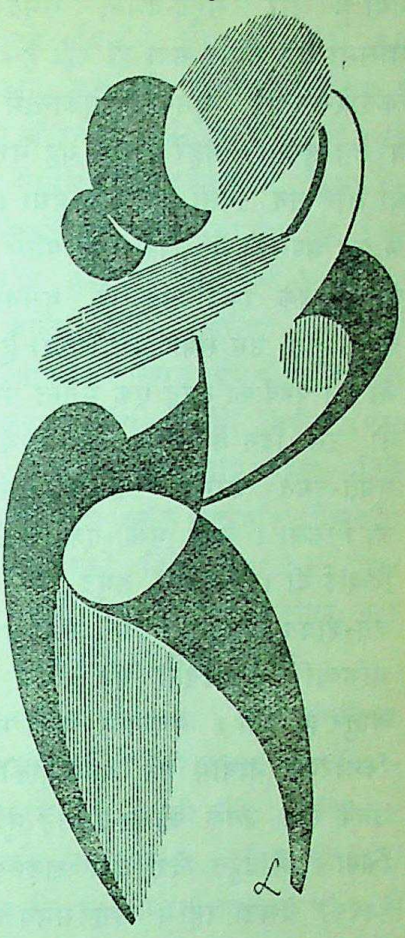

नारी और नारी :: लखाड

उपन्यास नहीं मानता। जहाँतक इस उपन्यासकी रचनामें निहित मूल लक्ष्यकी बात है वह तो आप-जैसे लोगोंके खोजनेका विषय है। पर मैं यह अवश्य बता सकता हूँ कि इसकी रचनाके लिए मुझे कब और कैसे प्रेरणा मिली। मछुओंके जीवनसे मेरा सीधा सम्बन्ध कभी नहीं रहा, जाति और कर्मसे भी नहीं। बात मार्च, १९५३ की है। मुझे अपने एक निकटतम सम्बन्धीको, जो विदेश-यात्रापर जा रहे थे, विदा करने बम्बई जाना पड़ा। यों मैं इससे पूर्व भी कई बार बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया हूँ और समुद्र-दर्शन, समुद्र-स्नानकी लालसा मेरे भीतर सदा ही रही है। समुद्रके किनारे-किनारे घूमना, एकान्तमें बैठकर गरजन सुनना, लहरें देखना यह मेरा 'शेवा' था और उन दिनों भी वही हुआ। बम्बई जाकर अपनेको मैं रोक नहीं पाता। आज भी समुद्रके किनारे-किनारे घूमना पसन्द करता हूँ। उस समय मुझे लगता है—समुद्र भी इस पृथ्वीकी तरह एक अनन्त संसार है। तो उस दिन मैं अपने एक साथीके साथ घूमते-घूमते बरसोवा नामक ग्रामकी ओर जा निकला। वहाँ मुझे एक नयी दुनिया दिखाई दी। लहराता समुद्र और वहाँका जन-जीवन देखकर एक उत्सुकता, एक अभिव्यक्तिकी बेचैनी मेरे भीतर फूटनेको आतुर हो उठी। मचानपर फैली मछलियाँ, किनारेपर नावोंमें बैठे मल्लाहोंकी मस्ती, उनके गीत, उनके जीवन-दर्शनने मुझे आकृष्ट किया। मैं बहुत देर तक खड़ा-खड़ा उस दृश्यको देखता रहा। उस समय मुझे लगा जैसे मैं भी इसी समुद्र और इन प्राणियोंमें-से एक हूँ। उनके गीतोंकी जो तान उठ रही थी, उसमें जैसे मुझे समुद्र ताल देता लगा। एक तन्मयताकी प्रतीति हुई। मुझे लगा जैसे लहरें उनके हर गान, तान, ओजस्वी लयको आत्मसात् करती बढ़ रही हों और मेरा सर्वांग उन गीतोंपर ताल देकर गुन-गुनाने लगा। मैं उस समय अपनेको भूल गया। मैंने अनुभव किया, सागरकी भी एक कहानी है, तो इन सागर-पुत्रोंकी भी।

"वैसे मैं रामेश्वरम्, धनुषकोटि, कन्या-कुमारी, जगन्नाथपुरी, द्वारका आदिके समुद्र-का भी दर्शन कर चुका था। उस समय मेरे मनमें यह विचार कई बार उठा कि हिन्दी-साहित्यमें समुद्रका नितान्त अभाव है। इस सम्बन्धमें मुझे जब-तब अपने साहित्यिक मित्रोंसे भी चरचा करनेका अवसर मिला। उस समय मछुओंके जीवनने मुझे उत्साहित किया। मैंने निश्चय किया कि यदि मैं इस जीवनको साहित्यमें चित्रित कर सकूँ तो कदाचित् हिन्दी-साहित्यके अंशमात्रके अभाव-की पूर्ति कर सकूँगा। मुझमें एक उत्साह जगा और मैं फिर अपने काममें जुट गया।"

उसी उपन्यासपर मैंने एक और प्रश्न किया, "'सागर, लहरें और मनुष्य' को सुखान्त बनानेके लिए आपने कथानकको जो मोड़ दिया है, वह सस्ता सिनेमाई मोड़ लगता है। वैसे भी आजके युगमें रत्ना-जैसी स्वतन्त्र विचारोंवाली नारीके जीवनका दुःखान्त होना ही अधिक स्वाभाविक लगता। उसके उद्धारक डॉ० पांडुरंग-जैसे व्यक्ति कल्पना-लोकमें ही मिलते हैं, वस्तु-जगत्में नहीं। इस विषयमें आपकी क्या राय है?"

प्रश्नकी चोटको शान्त-भावसे सहते हुए भट्टजी संयत स्वरमें बोले, "'सागर, लहरें और मनुष्य' में रत्नाका अन्त सुखान्त नहीं है। लेकिन सुखके आस-पास जरूर है। वैसे चित्रित करना मुझे इसलिए भी आवश्यक लगा कि अपने जीवनके आरम्भसे ही रत्ना भटकती रही है। उसे अपनी परिस्थितियोंसे घोर संघर्ष करना पड़ा है। उसके जीवनके यौवनमें प्रायः अमाकी रात्रि आती रही है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जहाँ-जहाँ वह गयी, जिस-जिस व्यक्तिको आकर्षित किया उसीने रत्नाको धोखा दिया। वह दुत्कारी गयी और तिरस्कृत भी हुई। इस सारे कालमें आशाका एक भी आलोक उसको दिखाई नहीं दिया। स्वाभाविक है कि मनुष्यके जीवनमें ऐसी घटनाएँ आती हैं तो प्रकाश भी मिलता है। मैंने देखा कि रत्नाको भी जीवनके सुखका प्रकाश मिलना अपेक्षित है। मैंने डॉ० पांडुरंगकी कल्पना की। पांडुरंग-जैसे व्यक्ति बहुत नहीं होते। पर ऐसे व्यक्तियोंका अभाव नहीं है। मैं मानता हूँ, रत्ना साधारण दिखाई देनेवाली लड़की नहीं है। उसकी इच्छाएँ पर्वतसे ऊँची और सागरसे गहरी हैं जिनके पीछे वह बौरायी हुई फिरती है। उसको अन्तमें पांडुरंग-जैसा एक व्यक्ति मिलना ही चाहिए। यह मणि-कांचन संयोग है। मुझे पांडुरंगको ढूंढ़नेके लिए काफ़ी चिन्तन, काफ़ी मनन और काफ़ी समय तक प्रतीक्षा करनी पड़ी। मेरे एक आलोचक-मित्रका कहना है कि रत्ना-जैसा पात्र हिन्दी-साहित्यमें ही नहीं, विश्व-साहित्यमें भी अद्भुत है। सम्भव है, यह उनका रत्नाके प्रति प्रेमातिरेक हो। किन्तु यह सच है, रत्ना-जैसा पौरुषमय पात्र हिन्दीमें तो दिखाई नहीं देता। उसका कारण यह है कि हिन्दीने कोली-जैसी निर्भीक और वीर जातिको नहीं अपनाया है। आप देखेंगे, वही एक नारी है जो टूटनेपर भी झुकी नहीं है।"

भट्टजीने बड़ी खोज-खबर और यात्राके बाद साधु-जीवनपर भी एक उपन्यास लिखा है जिसका नाम 'अशेष' है। साधु-जीवनको अभीतक किसीने छुआ ही नहीं था, पर भट्टजीने उसे पूरी गम्भीरतासे लिया है और इस जीवनके अच्छे-बुरे दोनों ही पक्षोंका बड़ा निर्मम विवेचन-निरूपण किया है। पर उसे पढ़ते हुए मुझे ऐसा लगा कि ज्ञानवर्धक होते हुए भी उपन्यासके रूपमें वह विशेष जमता नहीं। इसलिए, मैंने प्रश्न किया, "आपका उपन्यास 'शेष-अशेष' आजके साधु-जीवनकी पोल खोलनेमें जितना सफल रहा है, उतना औपन्यासिकताकी दृष्टिसे नहीं। लगता है, अनेक साधुओंके इतिवृत्तोंने उसके कथानकको बिखेर दिया है। कृपया बतायें, बादमें इस कृतिको पढ़नेपर क्या आपको भी कभी ऐसा लगा?"

प्रश्न बेहद तीखा था। सो प्रतिक्रिया भी वैसी ही हुई। मेरी स्थापनाका निराकरण करते हुए भट्टजी बोले: "मैंने इस उपन्यासको आलोचककी दृष्टिसे तो नहीं पढ़ा, जब कि मुझे पढ़ना चाहिए था। मैं आपसे ही प्रश्न करता हूँ—क्या उपन्यास एक नपे-तुले ढाँचेका नाम है? फिर तो आंचलिक, मनोवैज्ञानिक-जैसे उपन्यास इस ढाँचेमें नहीं आ सकेंगे। मैं मानता हूँ, आपने जो कहा, बिखराव है, पर बिखराव होते हुए भी, आप मानेंगे, उसमें एकसूत्रता है जो उपन्यासकी जान कही जा सकती है। कमल—जो इसका मुख्य पात्र है, वह जहाँ-जहाँ जाता है, गहराईसे जीवन-दर्शनका अध्ययन करता है और वही कहता है। हाँ, उसमें इसी कारण शाखाएँ-प्रशाखाएँ अपेक्षाकृत अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फूटी हैं। यह आजके उपन्यासके लिए सह्य चाहे न हो किन्तु इस कृति-द्वारा साधु-जीवनकी प्रकृति और विकृतिका जो दर्शन उपस्थित है, वह मुझे अभीष्ट भी था। मैं पूछता हूँ, जो मैं कहना चाहता था, वह मैं कहनेमें सफल हुआ हूँ या नहीं ? उपन्यासत्व इसमें सिद्ध हो या असिद्ध, मैं अपनी बात खुलकर और उपन्यासके ढंगसे कह पाया हूँ या नहीं ?" कहते-कहते भट्टजी सहसा रुक गये और उत्तरकी प्रतीक्षामें मेरी ओर देखने लगे।

मैंने विनयपूर्वक कहा, "आपके 'शेष-अशेष' में साधु-समाजकी प्रकृति-विकृतिका यथार्थ और प्रभावोत्पादक चित्रण हुआ है, इस विषयमें दो मत हो ही नहीं सकते। मेरी जिज्ञासा, या कहें शिकायत, तो इसलिए है कि आपने यह सारा निरूपण उपन्यासके माध्यमसे किया है और उपन्यासका पाठक होनेके नाते कमलके साथ-साथ मुझे भी बहुत भटकना पड़ा है और वह भटकन ही मेरी झुँझलाहटके रूपमें यहाँ व्यक्त हुई है। उपन्यासके सभी पाठकोंको इतनी भटकन शायद सह्य न हो।"

मेरी बात सुनकर भट्टजी हँसते हुए बोले, "भटकन और पाठकोंको सह्य हो या न हो, पर इतना निश्चित है कि आपको वह सह्य नहीं। उपन्यास, नाटक या कविताको आप चौखटेमें नहीं बाँध सकते। फैलाव आज-के जीवनका गुण है या दोष, जो कुछ भी हो, पर वह है अवश्य। मनोविज्ञानके अध्ययनसे विकृतिकी ग्रन्थियाँ फूटकर जो उसे या समाज-को गहराईसे देखनेके लिए बाधित कर देती है, उस दृष्टिसे भी फैलाव या बिखराव आज-के जीवनकी एक प्रत्यक्ष वस्तु है। और साहित्यके लिए तो और भी। जिस प्रकार मनुष्यका शरीर पतले पाँवोंसे आरम्भ होकर धीरे-धीरे पिण्डलियों, जाँघोंके रूपमें बढ़ता-बढ़ता पेट और छाती तक जाकर फैल जाता है, फिर गरदनपर सिमटकर पतला हो जाता है और फिर बढ़ता है, उसी प्रकार संकुचन-विकुचन द्वारा लेखक अपने कथ्यको पूर्ण करता है।"

अपने उपन्यासोंके हर नये संस्करणमें पण्डित उदयशंकर भट्ट उसमें कुछ-न-कुछ परिवर्तन अवश्य कर देते हैं। कुछ जोड़ देते हैं और कुछ निकाल देते हैं। कई बार तो उपन्यासका पहला नाम तक बदलकर दूसरा नाम रख देते हैं। उदाहरणार्थ 'एक नीड़, दो पंछी' उनके पूर्व प्रकाशित उपन्यास 'वह जो मैंने देखा' का नया संस्करण है, 'डॉ० शेफाली' उनके पहले छपे सामाजिक उपन्यास 'नये मोड़' का परिवर्द्धित संस्करण है और 'दो अध्याय' उनके उपन्यास 'उत्तराधिकार' का। उनके इस प्रकारके संशोधित संस्करणोंके औचित्यकी बात उठाते हुए मैंने पूछा : "अपनी रचनाको एक बार पाठकोंके सामने रख चुकनेके बाद, उसके प्रकाशनके पश्चात् सर्जक लेखक जब उसे संशोधित करनेकी दृष्टिसे पढ़ता है तो उस समय वह सर्जक कम और आलोचक अधिक होता है। ऐसी स्थितिमें क्या यह सम्भावना नहीं रहती कि उसके साथ छेड़-छाड़ करके वह उसे सुधारने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की बजाय बिगाड़ बैठे ? अपने उपन्यासोंके संशोधित और परिवर्द्धित संस्करणोंके प्रसंगमें इस विषयपर प्रकाश डालनेकी कृपा करें।"

प्रश्नको गम्भीरतासे लेते हुए भट्टजी बोले : "मैं तो बहुत अल्पज्ञ लेखक हूँ। अपनी एक बार लिखी कृतिको दोहरानेका अधिकार यदि मुझे है, तो प्रकाशित संस्करणों में परिवर्तन और परिवर्द्धनका अधिकार क्यों छीना जाता है ? पात्रों या चरित्रों की पूर्णताकी दृष्टिसे यह सब करना मुझे स्वाभाविक लगता है। समयके साथ अनुभवकी वृद्धि होनेपर पिछली कृतिको पूर्णता क्यों न प्राप्त हो ? मुझे कभी-कभी ऐसा लगता है। मेरे साहित्यके पात्र यदि लूले-लँगड़े, अन्धे-काने रहे तो क्या वे मुझे कोसेंगे नहीं ? मेरे मरनेके बाद भी वे मुझे चैन नहीं लेने देंगे ! आपने नाम-परिवर्तन और उपन्यास-परिवर्द्धनकी बात कही है। ये दोनों बातें कथा-वस्तुको 'टु द प्वाइण्ट' बनानेके लिए की गयी हैं ताकि पाठकको आपके कहे अनुसार 'फीयर-अशेष' के पात्रोंकी तरह भटकना न पड़े। उपन्यासकी बात मैं नहीं कहता। किन्तु दुनियामें भी ऐसे लेखक हैं जिन्होंने अपनी कृतियोंके नये संस्करणोंमें आवश्यकतावश परिवर्तन-परिवर्द्धन किया है। जब मनुष्यके रूप-में भी परिवर्तन और परिवर्द्धन होते हैं तो फिर साहित्यको उससे वंचित क्यों किया जाये ?"

मुझे लगा, भट्टजीके उत्तरसे मेरे प्रश्नका मूल आशय अछूता रह गया है। लेखक अपनी कृतिका पिता है तो पाठक उसका पति होता है। कन्या पतिको पा जाये तो पिताका उसपर हक़ नहीं रहता। इसलिए मैंने अपनी बात स्पष्ट करते हुए कहा, "मैं समझता हूँ, कृतिके प्रकाशनसे पहले भले ही लेखक उसका एकमात्र स्वामी होता हो, पर छपते ही उसकी कृति पाठकोंकी हो जाती है। लेखक तो बस 'रायल्टी' का अधिकारी रहता है, यदि और जबतक वह मिले। ऐसी स्थितिमें लेखक-द्वारा अपनी रचनाके परवर्ती संस्करणों-का परिवर्तन-परिवर्द्धन क्या पाठकोंके साथ ज़्यादती नहीं है ?"

उत्तरमें भट्टजी बोले, "उपन्यास और नाटकको पाठक प्रायः एक बार पढ़ता है। ऐसी बहुत कम कृतियाँ हैं जो बार-बार पढ़ी जा सकती हैं। उपन्यास तो प्रायः एक बार ही पढ़ा जानेके लिए होता है। इसलिए, उपन्यासका परिवर्तित-परिवर्द्धित संस्करण निकलता है तो वह और पाठक ढूँढ़कर लाता है।"

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामने है : विज्ञानका अन्तिम चरण

कुमार काश्यप

वसन्तकुमार चटर्जीके उपनाम।
वैज्ञानिक लेखोंमें विशेष रुचि।

विज्ञान नाम है, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपसे हमारे पर्यवेक्षण-क्षेत्रमें आनेवाले तथ्योंके एकीकरणका, किसी अधिक साधारण और वर्णनयोग्य नियमके आधारपर। जैसे जब यह पूछा जाये कि 'भार क्यों होता है? उल्का क्यों गिरती है? पृथ्वी सूर्यकी परिक्रमा क्यों करती है?' तो ऐसे सब प्रश्नोंका उत्तर होगा—गुरुत्वाकर्षणके नियमके कारण। लेकिन गुरुत्वाकर्षणका नियम क्यों है? उत्तर होगा—उन समीकरणोंके कारण, जो देश-काल, गति–स्थिति परिवर्तन और परिमाण-सम्बन्धों, एक शब्दमें, हमारी 'चेतना' को निर्धारित करते हैं। लेकिन ये समीकरण क्यों हैं? इनके विपरीत क्यों नहीं? इन प्रश्नोंका कोई सन्तोषजनक उत्तर नहीं होगा।

इसलिए यदि अन्ततः कोई भौतिक-शास्त्री एक ऐसा अन्तिम समीकरण निर्धारित करनेमें सफल हो जाये, जिसके आधारपर भौतिक जगत्की सब प्रक्रियाओंकी व्याख्या की जा सके, तो हम शास्त्रीय अर्थोंमें यह कहनेके अधिकारी तो हो जायेंगे कि विज्ञान अपने चरमोत्कर्षपर पहुँच गया, अपने अन्त को पहुँच गया, लेकिन यह सवाल फिर भी बना रहेगा कि वह अन्तिम समीकरण, सृष्टि का वह आधारभूत नियम आखिर है क्यों? उससे भिन्न क्यों नहीं है? उस रहस्यके पीछे क्या रहस्य है? और फिर उस रहस्य के पीछे क्या? और इसी प्रकार अन्ततः

अनिवार्यतः हमें, एक-न-एक दिन, यह सिद्ध करना होगा कि कोई भी मूल सिद्धान्त जैसे एक रूपमें सही है, वैसे ही उसके बिलकुल विपरीत रूपमें भी सही है, 'अनन्त सम्भावनाओं' में सही है। तभी हम इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'रहस्यके पीछे रहस्य', या 'अज्ञेय' और 'अज्ञात' के चक्करसे निकल सकेंगे। क्योंकि तब हम यह जान जायेंगे कि 'सिद्धान्त' हमारे साथ अन्य पदार्थके एक आंशिक सम्बन्ध-विशेषका परिचय मात्र है, स्वयंमें कोई सुनिर्धारित अटल सत्य नहीं है। और जिस दिन हम प्रत्येक सिद्धान्तको उसकी 'असंख्य सम्भावनाओं' में सही सिद्ध कर देंगे उसी दिन हम स्वयं सिद्धान्तकी दासतासे मुक्त हो जायेंगे। तब हम इच्छानुसार 'सिद्धान्त' निर्धारित करेंगे, और उससे काम लेंगे। सही अर्थोंमें विज्ञान अपने चरम बिन्दुपर तभी पहुँचेगा।

इस ओर प्रारम्भिक प्रयास, अर्थात् एक आधारभूत सर्वग्राही समीकरण निर्धारित करनेका प्रयास, इस शतीकी जो महान् विभूतिने किया, जिसे इस जगत्-के रहस्योंको उनके गहनतम छोर तक देखने-का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। हमारा संकेत व्यापक सापेक्षवादके प्रवर्त्तक एलबर्ट आइन्स्टाइन्की ओर है। आइन्स्टाइन्ने अपने जीवनके अन्तिम पच्चीस वर्ष इसी खोजमें व्यतीत किये। और जिस समस्याको उन्होंने अपने अनुसन्धानका विषय बनाया उसका समीकरण भी उन्होंने 'एकीकृत क्षेत्र सिद्धान्त' दिया क्योंकि विज्ञानका अन्तिम लक्ष्य एकीकरण ही है।

सापेक्षवादके बाद इस सिद्धान्तकी खोज समकालीन भौतिकीके चरमोत्कर्षकी प्रतीक है। और इसके समाधानके साथ ही हम सामने हैं : विज्ञानका अन्तिम चरण : कुमार काश्यप

जिसे हम 'सिद्धान्त' कहते हैं, क्या वह भौतिक जगत्की असंख्य सम्भावनाओंमें-से महज़ एक सम्भावना है? और ये 'नियम, सूत्र, तर्क और गणितके सम्बन्ध' महज़ हमारे दिमाग़की बनावटका एक प्रक्षेप? लेकिन 'असंख्य सम्भावनाओंमें-से किसी एक सम्भावनाका निर्धारण कैसे होता है? और क्या एक ही सम्भावनाकी पुनरावृत्ति महज़ हमारा एक दुराग्रह है?

परम्परागत विज्ञानकी अन्तिम चौखटको पार कर जायेंगे, ऐसा दीखता है। उसके बाद, शायद, मानवी-बुद्धिको और आगे विकसित करनेका कार्य फिरसे दर्शनके हाथों-में चला जायेगा।

'एकीकृत क्षेत्र सिद्धान्त' की मूल समस्याको समझना जितना आसान है, उसका हल निकालना उतना ही मुश्किल है। हम ऊपर कह आये हैं कि हमारे ब्रह्माण्डमें एक आधारभूत नियम गुरुत्वाकर्षणका नियम है, जिसके अनुसार ब्रह्माण्डकी प्रत्येक भौतिक वस्तु प्रत्येक अन्य वस्तुको अपनी ओर आकृष्ट करती प्रतीत होती है, यह आकर्षणशक्ति कितनी हो सकती है, इसका प्रारम्भिक सूत्र या समीकरण, जो बड़ी हद तक सही था, न्यूटन्ने निर्धारित किया था और आइन्स्टाइन्ने उसमें बहुत ही सामान्य परिवर्तन किया। बहरहाल यहाँ हम न्यूटन्-का समीकरण ही देते हैं, जो इस प्रकार है : $श = \frac{गसस'}{अं^२}$। इसमें श गुरुत्वाकर्षणका शक्ति-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

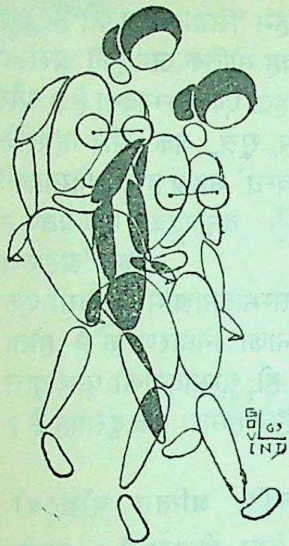

विज्ञान : : गोविन्द

परिमाण है, ग गुरुत्वाकर्षणका एक 'स्थायी अंक' (Constant) है, स और स′ दोनों पिण्डोंकी पदार्थ-मात्राएँ हैं, और अं उनके बीचका अन्तर है। अर्थात् गुरुत्वाकर्षण का परिमाण निकलता है, दोनों पिण्डों-की पदार्थमात्राओं (Mass) और गुरुत्वके स्थायी अंकके गुणनफलको उनके बीचके अन्तरके वर्गफलसे भाग करनेसे।

लेकिन अब समस्याका विस्तार यों होता है कि हमें और भी कई तरहकी शक्तियाँ ज्ञात हैं, जिनकी प्रकृति गुरुत्वाकर्षणसे मिलती-जुलती है। उदाहरणके लिए दो असदृश विद्युत प्रमार (Charges) परस्पर आकर्षित होते हैं। और उनके बीचकी आकर्षणशक्तिका समीकरण, जो कोलम्ब्ने आविष्कृत किया था। इस प्रकार है : श $= \frac{\text{कचच}'}{\text{अं}^2}$। अर्थात् यहाँ आकर्षणशक्तिकी मात्रा निकलती है दोनों विद्युत प्रमारोंके परिणाम और एक स्थायी अंक (क) के गुणनफलको बीचके अन्तरके वर्गफलसे भाग करनेसे।

इसी प्रकार एक और सूत्र हमें दो असदृश चुम्बकीय ध्रुवोंके बीचकी आकर्षण-शक्ति निकालनेके लिए भी ज्ञात है : श $= \frac{\text{लधध}'}{\text{अं}^2}$। अर्थात् यहाँ शक्ति-मात्रा निकलती है दोनों ध्रुवोंकी चुम्बकीय शक्ति-मात्रा और एक स्थायी अंक (ल) के गुणनफलको उनके बीच-की दूरीके वर्गफलसे भाग करनेसे।

इन तीन समीकरणोंकी तुलना करनेपर दो महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष सामने आते हैं : पहला, ये तीनों, जो तीन बिलकुल अलग-अलग और प्रकटमें असम्बद्ध प्रक्रियाओंकी व्याख्या करते हैं, आकारमें बिलकुल एक-से हैं, यद्यपि तीनों में प्रयुक्त 'स्थायी अंक' भिन्न-भिन्न हैं; दूसरा, जहाँ गुरुत्वाकर्षणका सूत्र सिर्फ़ आकर्षण ही बतलाता है, वहाँ अन्य दो सूत्र आकर्षण और अपकर्षण दोनों बतलाते हैं। दो असदृश विद्युतीय या चुम्बकीय ध्रुव परस्पर आकर्षित होते हैं तो सदृश ध्रुव अपकर्षित होते हैं। लेकिन गुरुत्वाकर्षणमें हमें किसी अपकर्षण-पक्षका कुछ भी ज्ञान नहीं है। इस प्रकार ये तीन तरहकी शक्तियाँ यदि एक दृष्टिसे समान हैं, तो दूसरी दृष्टिसे असमान हैं।

फिर भी इन तीन सूत्रोंका आकार इतना असाधारण रूपसे एक-सा है कि यह सन्देह होना स्वाभाविक ही है कि शायद तीनों सम्बन्धित शक्तियाँ प्रकृतिकी किसी गहनतर और अधिक आधारभूत प्रक्रियाके तीन बाह्य रूप मात्र हों। अतः इन तीन समीकरणोंको किसी एक समीकरणमें एकीकृत करनेका प्रयास आइन्स्टाइन्के 'एकीकृत क्षेत्र सिद्धान्त' का एक विशिष्ट पक्ष रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवतक आइन्स्टाइन्का उद्देश्य केवल दो तीन प्रक्रियाओंको एक सिद्धान्तमें सूत्र-बद्ध करने तक सीमित न था; उनका लक्ष्य उससे कहीं ज्यादा विस्तृत था। वह चाहते थे कि भौतिक जगत्में जो कुछ भी ज्ञात या ज्ञेय है, उस सबको सिर्फ़ एक समीकरण-द्वारा व्यक्त कर दिया जाये। ऐसे समीकरणकी सर्वव्यापिता असन्दिग्ध होगी।

अबतक भौतिकीमें जितने भी सिद्धान्त निर्धारित हुए हैं, वे सब अलग-अलग शाखाओं-के भिन्न-भिन्न व्यक्तियों-द्वारा परस्पर असम्बद्ध रहते निर्धारित हुए हैं, जैसा कि ऊपर दिये गये तीन सूत्रोंके उदाहरणसे प्रकट होता है, जो एक-से होनेपर भी आपसमें कोई सम्बन्ध नहीं रखते। लेकिन ज्यों-ज्यों, इन कई शाखाओंमें, वास्तविकता सम्बन्धी हमारा ज्ञान बढ़ता गया है, त्यों-त्यों हमें इन विभिन्न शाखाओंसे सम्बन्धित नियमोंमें एक अन्त-र्निहित एकता-सूत्र परिलक्षित होता गया है और इस प्रकारके आंशिक एकीकरणसे हम पहलेसे कहीं अधिक द्रुत-गतिसे तथा अधिक गहराई तक वैज्ञानिक जानकारी प्राप्त कर सके हैं।

अब यदि आइन्स्टाइन्के इस 'एकीकृत क्षेत्र सिद्धान्त' की सफलतासे सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड-का एक आधारभूत नियम या समीकरण प्राप्त करनेके लिए निर्धारित हो जाये तो आगे चलकर नये उद्घाटित होनेवाली शाखाओंमें हर बार नवीन अनुसन्धानकी आवश्यकता ही नहीं रहेगी। तब किसी भी शाखासे सम्बन्धित नियम उस एक मूल सूत्रसे अनायास ही धारा-वत् उद्भूत होंगे। मानो, मानवी ज्ञान-विज्ञान-का महामन्त्र ही हाथ आ जायेगा!

अब जैसा कि इस सिद्धान्तके नामसे प्रकट है, इसमें वस्तुओंका विवेचन न होकर उनके बीचके 'क्षेत्रों' का विवेचन होता है। जब दो पदार्थपिण्डों या विद्युतीय, चम्बुकीय ध्रुवोंके बीच आकर्षण (या अपकर्षण) घटित होता है, तो यह अन्तर्प्रक्रिया स्वयं उन वस्तुओं या ध्रुवोंके भीतर नहीं, बल्कि उनके बीचकी 'जगह' में होती है। परन्तु उस जगह या 'क्षेत्र' में असलमें होता क्या है, यह ज्ञात नहीं है। इसलिए आइन्स्टाइन्ने पदार्थको छोड़कर इस बीचके 'क्षेत्र' को अपने अनु-सन्धानका केन्द्र बनाया और यह समझनेकी कोशिश की कि शक्ति-क्षेत्रके साधारण गुण क्या-क्या हैं, और उन्हें गणितके बँधे-तुले समीकरणोंमें कैसे व्यक्त किया जा सकता है। यदि यह ज्ञात हो जाये, तो गुरुत्वाकर्षण और विद्युतीय व चम्बुकीय क्षेत्रोंके गुण उन्हीं-के विशिष्ट रूप मात्र होंगे। और सापेक्षवाद-का साधारण सिद्धान्त भी (क्योंकि प्रधानतः यह गुरुत्वाकर्षणका सिद्धान्त ही है) क्षेत्र सम्बन्धी आधारभूत सिद्धान्तका एक विस्तार-मात्र होगा।

अबतक वैज्ञानिकोंने प्रायः ऐसे तत्त्वोंके अध्ययनको अपना कार्य-क्षेत्र बनाया है, जो नाप-तौलके अन्तर्गत आ सकते हैं। जसे संहती, गहनता, तापमान, दबाव, लचक, बल, लम्बाई-चौड़ाई आदि। और इनके अनुसार ही उन्होंने 'सिद्धान्त' और उपकरण भी गढ़े हैं, ताकि वे वस्तुओंको प्रयोगात्मक ढंगसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाप-तौलकर उनके सम्बन्धोंको सूचित कर सकें।

साधारण भाषामें यों समझिए कि अब-तक वैज्ञानिकोंका सारा जोर प्रक्रियाओंके भौतिक प्रमाणपर रहा है, स्वयं उन प्रक्रियाओंकी प्रकृतिको समझनेपर नहीं। यह सही है कि प्रमाण परमावश्यक है; इसके बिना विज्ञान कोरी अटकल या कीमियागरी होकर रह जाये! लेकिन ऐसा मालूम होता है कि अब यह कहनेका समय आ गया है कि प्रमाण ही सब कुछ नहीं! जहाँतक, हमारे वर्तमान ज्ञानके आधारपर, अनुमान लगाया जा सकता है, आइन्स्टाइन्-द्वारा विरासतमें छोड़ा हुआ यह अपूर्ण एकीकृत क्षेत्र सिद्धान्त अन्य भौतिक सिद्धान्तोंकी तरह स्वयं अपनी सत्यताका प्रयोगात्मक प्रमाण उपस्थित नहीं कर सकेगा, क्योंकि जिस आधारभूत प्रक्रियाकी उसमें व्याख्या होगी, वह मनुष्यकी पकड़से सर्वदा बाहर ही रहेगी।

लेकिन एक बार जब यह सिद्धान्त और उसका मूल समीकरण निर्धारित हो जायेगा, तो फिर उसके परिणाम भी बहुत क्रान्ति-कारी होंगे। एक तरफ़ तो अबतक निर्धारित किये गये सारे अलग-अलग शाखागत नियम और सूत्र सबके सब अनावश्यक हो जायेंगे। और दूसरी तरफ़ भविष्यमें आविष्कृत होने-वाली न जाने कैसी-कैसी शक्तियोंके रहस्योद्-घाटनके लिए, जिनका इस समय हमें कुछ भी ज्ञान नहीं, हमारे हाथमें एक अमोघ अस्त्र आ जायेगा!

एक उदाहरण लीजिए। पदार्थके परमाणुओंमें उनके विभिन्न अंशों (प्रोटान, इलेक्ट्रान, न्यूट्रोन्) को एकत्रित रखनेवाला कोई महाशक्ति है। हमने उसका नाम 'आणविक शक्ति' रखा है। और हम जानते हैं कि यह अन्य सब ज्ञात शक्तियोंसे कहीं अधिक प्रबल है। लेकिन इसकी प्रकृतिके हमें कुछ भी पता नहीं है। वैज्ञानिक कहते हैं कि परमाणुके भीतर भी सौर-जगत्-जैसी व्यवस्था है। इसलिए हो सकता है कि परमाणुमें गुरुत्वाकर्षणके क्षेत्रोंकी तरह, पर उनसे कहीं अधिक प्रबल, आणविक क्षेत्र हों और उनकी सूचना हमें इस सिद्धान्तसे मिल जाये।

सिद्धान्तकी एक और उपयोगिता की कल्पनीय है। हम देखते हैं कि गुरुत्वाकर्षण केवल आकर्षणशक्ति है, जबकि विद्युत् और चुम्बकीय शक्तियाँ आकर्षण और अपकर्षण दोनों तरहके प्रभाव प्रदर्शित करती हैं। क्या यह सम्भव नहीं कि गुरुत्वाकर्षणका एक अपकर्षण रूप भी हमारे ब्रह्माण्डमें विद्यमान हो? और क्षेत्र सम्बन्धी साधारण सिद्धान्तके निर्धारणके साथ ही हम उसका पता लगाने योग्य हो जायें अथवा आवश्यकतानुसार उसका निर्माण कर सकें।

तनिक कल्पना कीजिए कि गुरुत्वाकर्षण-को इच्छानुसार उलटा-सीधा कर लेनेकी योग्यताके कैसे-कैसे असाधारण परिणाम हो सकते हैं। एक तरहसे हम तो सम्पूर्ण ब्रह्माण्डके नियन्त्रक ही हो जायेंगे! जिस व्यवस्थाको चाहेंगे, बनाये रखेंगे; नहीं चाहेंगे, तो तोड़ देंगे! कल्पनाकी इस उड़ान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को थोड़ा और विस्तार दिया जाये तो शायद हम इस योग्य ही हो जायें कि इस सिद्धान्तके बलपर ऐसे 'क्षेत्रों'का पता बता सकें या स्वयं उनकी रचना कर सकें, जो प्रकाशके ज्ञात 'क्षेत्रों'से बिलकुल भिन्न हों। सम्भव यह कि हम बिलकुल ही नयी शक्तियां अस्तित्वमें लाने लगें, और उनसे ऐसे ऐसे काम लें, जो आज हमारी कल्पनासे भी बाहर हैं!

विज्ञानमें यह कोई अनहोनी बात भी नहीं होगी; पहले भी ऐसा हुआ है। एक ज्वलन्त उदाहरण रेडियो-तरंगोंके आविष्कार-का है। मैक्स्वेलने १८६४ में ही, जब विद्युत और चुम्बकीय शक्तियोंका ज्ञान बहुत ही प्रारम्भिक अवस्थामें था, केवल गणितके आधारपर रेडियो-तरंगोंके अस्तित्वकी सूचना दे दी थी। लेकिन कृत्रिम रूपसे उन्हें अस्तित्वमें लानेमें और बीस वर्ष लगे, और ध्वनिवाहनके लिए उनके प्रयोगको सफल बनानेमें और चालीस वर्ष। इसलिए यह कोरी कल्पनाकी उड़ान नहीं कि युग-निर्माता आइन्स्टाइन्की प्रतिभासे शायद आज हम कुछ ऐसे ही असाधारण विकासके द्वारपर खड़े हैं – शायद अब हम विज्ञानके अन्तिम चरणमें प्रवेश करने ही वाले हैं!

■ ■

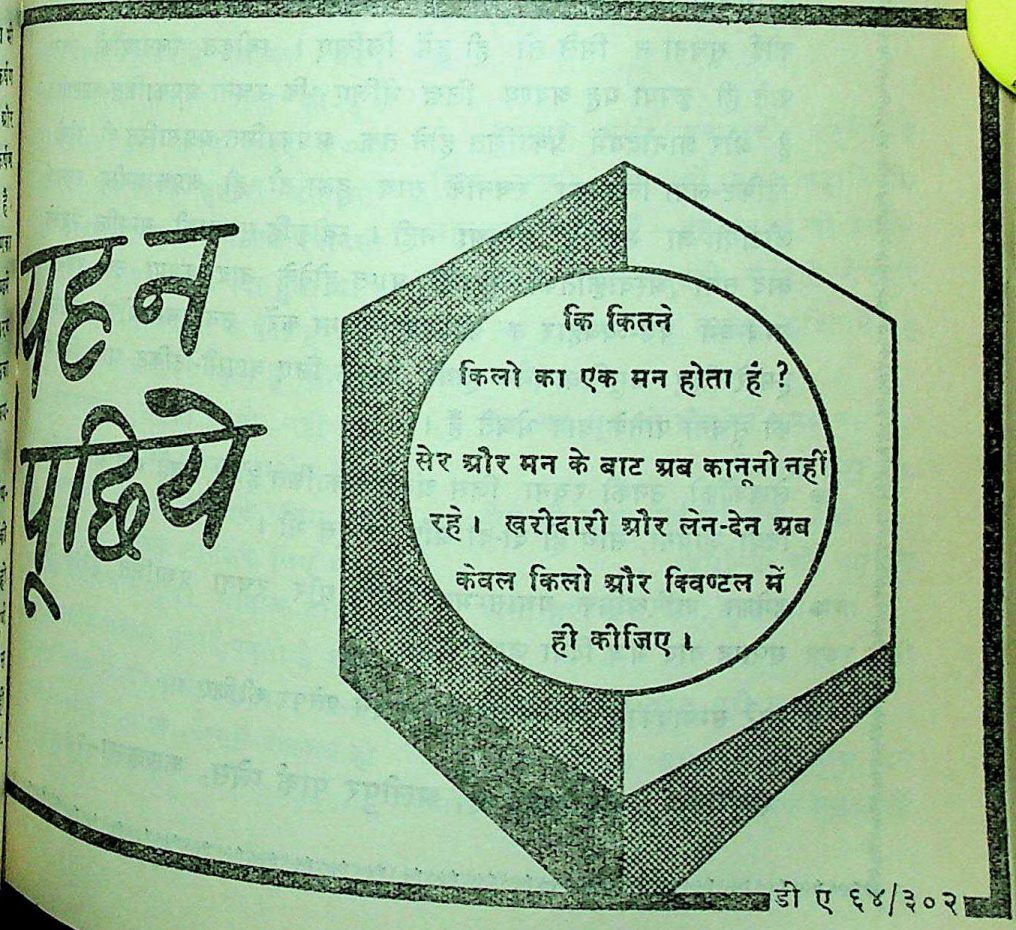

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदयकी ओरसे
लेखकोंके लिए विशेष निवेदन :

- कृपया अपनी रचनाओंकी टंकित अथवा साफ़ लिखी प्रति भेजिए और उसकी प्रतिलिपि अपने पास अवश्य रख लीजिए।
- लेख, निबन्ध, कहानी और हमारे स्तम्भोंके अन्तर्गत यदि आप सामग्री भेजें तो ज्ञानोदयके अधिकसे अधिक आठ पृष्ठोंसे रचना लम्बी न हो। यदि कोई लम्बी रचना भेजना ही चाहें तो सम्पादकसे पहले पूछ लें।
- हमारा प्रयत्न यही रहेगा कि अधिकसे अधिक एक मासके अन्दर ही निर्णय-की सूचना आप तक पहुँच जाये। रचना भेजनेके बाद एक मास तक आपको कोई सूचना न मिले तो ही हमें लिखिए। स्वीकृत रचनाओंकी सूचना पाते ही कृपया यह अवश्य लिख भेजिए कि रचना अप्रकाशित-अप्रसारित है और ज्ञानोदयमें प्रकाशित होने तक अप्रकाशित-अप्रसारित ही रहेगी। टिकिट-लगा लिफ़ाफ़ा रचनाके साथ हुआ तो ही अप्रकाशनीय रचनाएँ लौटायी जा सकेंगी, अन्यथा नहीं। स्वीकृति-सूचनाकी सम्पुष्टि भेजनेके बाद तथा अस्वीकृतिकी सूचना प्राप्त होनेके बाद कृपया उस रचनाके सम्बन्धमें पत्र-व्यवहार न कीजिए। क्षमा करें, उन रचनाओंको लौटाना हमारे लिए असुविधाजनक होगा जिनके लिए वापसी-टिकिट आप निर्णय-की सूचना पानेके बाद भेजते हैं।
- लेखकोंको, उनकी रचना जिस अंकमें प्रकाशित होगी, वह अंक अवश्य भेज दिया जायेगा, साथ ही दो-दो ऑफ़-प्रिण्ट्स भी।
- हमेशा पारिश्रमिक यथासम्भव अग्रिम और रचना प्रकाशित होनेके एक सप्ताह बाद भेज दिया जाता है।
- सारे सम्पादकीय पत्रव्यवहार केवल इस पतेपर कीजिए :

सम्पादक : ज्ञानोदय; ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१ परिधिमें १००० विरोध

भोलानाथ चतुर्वेदी

लखनऊ विश्वविद्यालयमें अँगरेज़ीके व्याख्याता। विचारक, विश्लेषक।

डिलन टामस उन कवियोंमें-से था जिन्होंने स्वयं, अपनी कृतियोंसे अधिक अपने व्यक्तित्वके कारण ख्याति प्राप्त की है। अपने व्यक्तित्व तथा अपने मधुर कण्ठसे इंग्लैण्ड तथा अमेरिकाके हज़ारों श्रोताओं-को मुग्ध करनेवाला यह कवि वेल्सके स्वानसी नामक क़स्बेमें सन् १९१४ में पैदा हुआ था। किसी लेखकपर, जिन क्षेत्रोंमें वे पैदा होते हैं, उनका अत्यधिक प्रभाव रहता है और वे अपनी रचनाओंमें उसको कभी नहीं भूल सकते। जो महत्त्व वैसेक्सका हार्डीके लिए तथा डब्लिनका जेम्स जॉयसके लिए था वही स्वानसीका डिलन टामसके लिए था। स्वानसीके समीपके समुद्रकी आवाज़ टामस-की कविताओंमें अकसर सुनाई पड़ती है तथा उसका बचपनमें जो नाम रखा गया था—डिलन मारलेस—उसका वेल्समें मतलब ही है—समुद्रकी आवाज़।

टामसके सुखी बचपनकी स्मृतियोंके चित्र उसकी कविताओं तथा कहानियोंमें बहुलतासे मिलते हैं—वह बचपन जो प्रकृति-की गोदमें तथा समुद्रकी लहरोंसे खेलनेमें बीता था। 'फर्न हिल' नामकी कवितामें वह लिखता है :

जब तक धूप थी दौड़ का समय था
कितना सुहावना,
खेत की घास मकानों तक ऊँची,
चिमनियों की आवाज़
खुली हवा और खेल, सुन्दरता तथा
प्रचुर पानी
और घास की तरह हरी लपटें।

स्कूल छोड़नेके बाद टामसने कुछ दिन 'साउथ वेल्स ईवनिंग पोस्ट' नामक अख़बारमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिपोर्टरका काम किया और उसके बाद लन्दनके लिए रवाना हो गया—लन्दन, जिससे वह घृणा भी करता था तथा जिसकी तरफ़ आकर्षित भी था। उसकी '१८ कविताओं' का संग्रह सन् १९३४ में लन्दनसे प्रकाशित हुआ।

टामसने प्रकृतिके बारेमें कविताएँ लिखी हैं, युद्धको भी अपनी कविताओंका विषय बनाया है, परन्तु उसकी अधिकतर कविताएँ 'जन्म, विषय-भोग तथा मरण'से सम्बन्धित हैं। जैसा कि उसने अपनी एक कवितामें कहा है : 'मनुष्य ही मेरा रूपक है।' मनुष्य जीवनको टामस एक लम्बे क्रमके रूपमें देखता है जिसमें जन्म तथा मरणका अटूट सम्बन्ध है—अगर सच पूछा जाये तो मरण गर्भाधारणमें ही निहित है। टामसकी कविता 'लाइट ब्रेक्स व्हेयर नो सन राइजेज़' (प्रकाश मिलता है जहाँ सूर्य नहीं निकलता) का यही विषय है।

टामसका विश्वास था कि एक सच्चा कवि अन्धकारसे प्रकाशकी ओर अग्रसर होता है। जैसा कि उसने एक प्रश्नके उत्तरमें कहा है—"मेरा काव्य मेरे लिए एक तरहसे लाभदायक है या उसको होना चाहिए—वह अन्धकारसे प्रकाशकी ओर जानेके मेरे प्रयत्नका एक लेखा है।" अपने 'कविता-संग्रह'के प्राक्कथनमें वह कहता है : "ये कविताएँ, अपने अधकचरेपन, आशंकाओं तथा भ्रमके होते हुए भी मनुष्यके प्रेमके लिए और ईश्वरकी प्रशंसामें लिखी गयी हैं और यदि वह इन कारणोंसे न लिखी गयी होतीं तो मैं एक बहुत बड़ा मूर्ख होता।"

टामसकी कविताओं तथा गद्यका संग्रह 'द मैय ऑफ लव' १९३९ में प्रकाशित हुआ। इसमें से कुछ गद्य-काव्यके रूपमें हैं तथा कुछ 'आकार कविताओं' 'पैटर्न पोयम्स'के रूपमें। इनका आकार बालूघड़ी या हीरेकी तरह है। इस संग्रहकी एक महत्त्वपूर्ण कविताका शीर्षक 'ए सेण्ट अबाउट टु फॉल' है जो कि टामसके शब्दोंमें 'एक ऐसे शिशुके बारेमें लिखी गयी है जिसका कि जन्म होनेवाला है···और जिसमें उसको बताया गया है कि वह किस प्रकारके संसारमें पदार्पण करेगा तथा किस तरहके भयावह दृश्य तथा नरकका सामना करेगा।' यह शिशु टामसका ही पहला बच्चा है तथा उसका जन्म उसी महीनेमें हुआ था जिसमें द्वितीय महायुद्ध शुरू हुआ। कवि कहता है :

'आँखों की हत्या पहले ही हो गयी है
भरे हुए हृदय पर बलात्कार हुआ है,
यातना को पोषण करना है
एक और जीव की।'

टामसकी '२५ कविताओं' का संग्रह १९३६ में ही प्रकाशित हो चुका था। इस संग्रहमें सभी तरहकी कविताएँ हैं। कुछ 'आई इन माई इण्ट्रिकेट इमेज' की तरह आत्मपरक हैं तथा कुछ 'द हैण्ड दैट साइन्ड ए पेपर' की तरह वस्तुपरक हैं। कुछ कविताओंमें धार्मिकताका भी पुट है और 'आल्टरवाइज़ बाई आउललाइट' में जो कि सानेटोंका एक क्रम है जिनकी कई स्तरोंपर व्याख्या की जा सकती है। एक स्तरपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्य-जीवनकी तुलना एक वर्षके समयसे की गयी है तथा विभिन्न ऋतुएँ जीवनकी विभिन्न घटनाओंकी प्रतीक हैं। दूसरे स्तर पर मनुष्यकी सूर्यसे तुलना की गयी है। इन कविताओंमें कविके व्यक्तिगत प्रतीकोंका प्रयोग किया गया है तथा धार्मिक प्रतीकोंका भी। प्रारम्भमें जीवनकी नश्वरता तथा उसकी निश्चयताकी ओर संकेत है तथा उसके पुनरुत्थानके दिनमें अटल विश्वास :

'आरम्भ की तरह हरा-भरा उद्यान
फिर कर फिर उठता है—छालों की
दो मीनारों सहित
उस दिवस की ओर जब कीट विष
के सुनहरे
तिनकों से बनाता है मेरी दयाओं
का घोंसला
उंगली लाल पेड़ में।'

द्वितीय महायुद्धका टामसपर कम प्रभाव पड़ा और उसने युद्धसे सम्बन्धित कविताएँ भी लिखीं परन्तु उसने अपने काव्य-विचारका माध्यम कभी नहीं बनाया। ऐसा भी कहा जाता है कि टामसने कुछ समयके लिए कम्युनिस्ट पार्टीसे सम्बन्ध स्थापित किया परन्तु जब उसको मालूम हुआ कि कम्युनिज़्मके प्रचारके लिए उसे अपनी कलाका उपयोग करना पड़ेगा तो वह उससे फ़ौरन अलग हो गया। अपने एक लेखमें टामसने युद्धके बारेमें कहा है :

"अपनी कविता लिखते समय कवि को छोड़कर हर वस्तुके साथ शान्तिसे

मैं शायद अपने अन्दर एक बिम्बको भावनाके
रूपमें बनने देता हूँ और तब उसपर
जो भी बौद्धिक अथवा विवेचनात्मक
शक्ति मेरे पास है उसका प्रयोग
करता हूँ—उससे फिर
दूसरा बिम्ब उत्पन्न होता है—
यह बिम्ब फिर पहलेका विरोध करता है
और इन दोनोंसे जो तीसरा
बिम्ब उत्पन्न होता है
उससे एक चौथा बिम्ब तैयार
करता हूँ, और अपने बनाये
हुए नियमोंकी परिधिके अन्दर इन
सबको एक दूसरेका विरोध
करने देता हूँ।

रहता है, जो कि अनन्त क्रियाकी तरह है; केवल जब उसको शब्दोंके साथ युद्ध करनेसे विराम मिलता है तभी वह मनुष्यसे युद्ध कर सकता है—कवि बन्दूककी गोलियोंको रोक सकते हैं, परन्तु गोलियाँ कवियोंको नहीं रोक सकतीं।"

टामसकी कविताओंका अगला संग्रह 'डेथ्स एण्ड एण्ट्रेन्सेज़' सन् १९४६ में प्रकाशित हुआ। इनमें-से कई कविताओंकी पृष्ठभूमि द्वितीय महायुद्ध है—ख़ास तौरसे लन्दनपर हुए हवाई हमले। परन्तु इनमें युद्धके पक्ष अथवा विरोधमें किसी तरहका प्रचार नहीं है—इनको सामान्य कविताएँ कहना ही ठीक होगा। इनमें चार कविताएँ महत्त्वपूर्ण हैं—'डेथ्स एण्ड एन्ट्रेन्सेज़', 'द रिफ़्यूज़ल टु मोर्न द डेथ, बाई फ़ायर आफ़ ए चाइल्ड इन लन्दन', 'सेरीमनी आफ़्टर ए फ़ायर रेड' तथा 'डॉन रेड'। दूसरी कविता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में युद्धके प्रति टामसका रुख बिलकुल स्पष्ट हो जाता है। यद्यपि इस कवितामें टामस उस बालिकाके बारेमें लिख रहा है जिसकी जलकर मृत्यु हो गयी है फिर भी वह एक निमित्त मात्र है क्योंकि वास्तविक रूपमें कवि अपने बारेमें ही लिख रहा है। बालिकाकी मृत्यु हृदयको द्रवित करनेवाली है परन्तु कवि प्रचारके रूपमें उसका प्रयोग नहीं करना चाहता। उसके बारेमें शोक करके वह उसकी मृत्युकी महत्ताको नहीं खोना चाहता। इस मृत्युने तो उसको अनन्तमें मिला दिया है और उसको अमर बना दिया है।

टामसकी कविताएँ कभी-कभी इतनी दुरूह हो जाती हैं कि उनको समझना मुश्किल हो जाता है। यह सच है कि टामस कभी-कभी अतियथार्थवादीके रूपमें प्रकट होता है और स्वप्न-प्रतीकोंको बहुलतासे उपयोग करता है। उसके बिम्ब एक दूसरेसे सम्बन्धित नहीं होते तथा न उसकी कविताओंमें विचार-प्रवाह होता है। टामसने अपनी लेखन-पद्धतिके बारेमें कहा है :

'मैं शायद अपने अन्दर एक बिम्बको भावनाके रूपमें बनने देता हूँ और तब उस-पर जो भी बौद्धिक अथवा विवेचनात्मक शक्ति मेरे पास है उसका प्रयोग करता हूँ— उससे फिर दूसरा बिम्ब उत्पन्न होता है— यह बिम्ब फिर पहलेका विरोध करता है और इन दोनोंसे जो तीसरा बिम्ब उत्पन्न होता है उससे एक चौथा बिम्ब तैयार करता हूँ और अपने बनाये हुए नियमोंकी परिधिके अन्दर इन सबको एक दूसरेका विरोध करने देता हूँ।' टामसकी कविताओंकी तहमें पहुँचनेके लिए उसके इस वक्तव्यको ध्यानमें रखना बहुत आवश्यक है।

सन् १९५० में टामस अपने व्याख्यानों तथा कविता-पाठके सिलसिलेमें अमेरिका पहुँचा और उसकी इस यात्राने वहाँके निवा-सियोंको एक नया अनुभव प्रदान किया। टामस-ने न केवल कविका हृदय परन्तु कविका कण्ठ भी पाया था और उच्चारित शब्दकी छाप उसकी कविताओंमें स्पष्ट मिलती हैं। टामस बातचीतमें बहुत कुशल था, उसका व्यक्तित्व आकर्षक था और उसके मित्रोंकी संख्या अपरिमित थी। 'पोर्ट्रेट आफ़ द आर्टिस्ट एज़ ए यंग डॉग' में—जो उसने जॉयसके 'पोर्ट्रेट आफ़ द आर्टिस्ट एज़ ए यंग मैन' से प्रेरित होकर लिखी थी— उसकी बात-चातुरीके बहुत-से उदाहरण मिलते हैं। टामस ने एक और कलात्मक माध्यमका आविष्कार किया और वह था रेडियो-फ़ीचर तथा इस क्षेत्रमें टामसकी सबसे महत्त्वपूर्ण देन थी 'अण्डर मिल्क वुड'। नवम्बर १९५३ में अपनी आखिरी अमेरिका-यात्राके दौरान उसकी मृत्यु हो गयी।

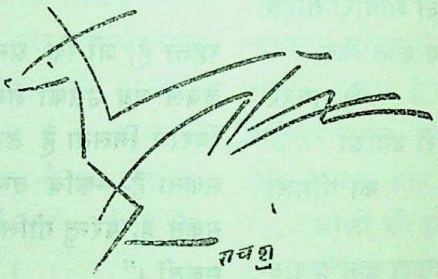

परिधिहीन : : रश्मिचन्द्र शुक्ल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक सलाह—
केवल
कथाकारोंके लिए

रवीन्द्रनाथ त्यागी

कवि, कथाकार और इससे पूर्व व्यंग्यकार। व्यंग्य सामयिक भी लिखे हैं और शाश्वत भी।

■

• • • • •

कथाकारोंसे मैं कहना चाहता हूँ कि शिकार की कहानियाँ लिखना साहित्य की और विधाओंसे कहीं अधिक कठिन काम है। इसका प्रमुख कारण यह है कि जिस तरह आजकल युद्धोंका इतिहास सुनहरे फ्रेमका चश्मा लगानेवाले उन प्रोफ़ेसरों-द्वारा लिखा जाता है जिन्होंने अजायबघरके बाहर कभी नंगी तलवार तक नहीं देखी, उसी तरह शिकारकी कहानियाँ भी आम तौरपर वे लोग लिखते हैं जिन्होंने कभी शिकार नहीं किया। करीब आधा दरजन जिम काबर्टोंको छोड़कर सारे संसारके शेष शिकारी प्रायः अनपढ़ होते हैं और वे स्वयं कुछ नहीं लिख सकते। ऐसी स्थितिमें यदि शाकाहारी लेखक कल्पनाके सहारे शिकार-साहित्यकी सृष्टिकी जिम्मेदारीसे बचना चाहें तो शायद शिकार-साहित्य समाप्त ही हो जाये। यहाँ यह भी कहना जरूरी है कि जैसे आजकल शिकार और इतिहास-जैसे यथार्थमूलक विषय कल्पना-के आधारपर लिखे जाते हैं वैसे पिछली शताब्दी तक कविता और उपन्यास इत्यादि कल्पनाके सहारे लिखे जाया करते थे। इन दिनों यह चलन छूट गयी है और कविता-कहानी इत्यादि अब यथार्थवादी होनेके कारण केवल यथार्थके आधारपर ही लिखे जाते हैं। कल्पनाका प्रयोग केवल शिकार और इतिहासके सन्दर्भमें ही किया जाता है।

यद्यपि इतिहास और शिकार दोनोंमें कल्पनाको ही आधार मानकर चलना पड़ता है पर फिर भी इतिहासका लिखना शिकार-की अपेक्षा सरल है। इसका कारण यह है कि 'कैनवास'के बड़ा होनेके कारण इतिहासमें कल्पनाकी उड़ानके लिए स्कोप ज़्यादा रहता है। अगर कोई विद्वान् यह लिखते हैं कि पानीपतकी पहली लड़ाईमें २०,००० योद्धा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खेत रहे थे जब कि दूसरीमें ८०,००० तो हमें किंचित् मात्र भी सन्देह नहीं होगा क्योंकि यह तर्क किया जा सकता है कि दोनों युद्धोंके बीच पानीपतके इलाक़ेकी जन-संख्या ज़रूर इतनी बढ़ गयी होगी और जंगलों वग़ैरहके कट जानेसे खेतोंका विस्तार होना भी स्वाभाविक है। परन्तु यदि कोई लेखक इसी तरह यह कह दे कि रुद्रप्रयागके नरभक्षीकी पाँच टाँगें या दो पूँछ थीं तो सम्भव है कि बुद्धिमान् पाठकोंमें-से कुछको थोड़ी देरके लिए संशय-सा हो। इन सभी कारणोंसे शिकारकी कहानियाँ लिखना काफ़ी कठिन काम माना जाता है। सच बात तो यह है कि बिना शेरके शिकारकी कहानी पढ़े शेरका शिकार किसी-किसी स्थितिमें ज़्यादा सरल काम है बनिस्पत इससे कि बिना शेरका शिकार किये आपसे उसके शिकारकी कहानी लिखनेका आग्रह किया जाये।

शिकारकी कहानियोंके सन्दर्भमें कुछ आवश्यक बातें ध्यानमें रखना लेखकोंके लिए आवश्यक है। पहली बात तो यह है कि जिस इलाक़ेमें शिकार किया जा रहा हो, उसका भौगोलिक ज्ञान होना किसी हद तक ज़रूरी है। गढ़वालमें जंगलोंमें दरियाई घोड़ों-का शिकार नहीं किया जा सकता और ना ही बंगालकी खाड़ीमें हिरनोंके पीछे भागा जाता है। क्योंकि शेर वग़ैरहका शिकार आम तौरपर जंगलोंमें ही किया जाता है, थोड़ा-बहुत ज्ञान उस इलाक़ेकी ऋतुओं, वन-स्पतियों और वहाँके निवासियोंका होना ज़रूरी है। इस प्रकारका ज्ञान कहानीको यथार्थवादिताका पुट दे देता है। वैसे इस प्रकार की स्थितिसे बचा भी जा सकता है जैसा कि एक भारतीय लेखककी कहानीमें हाल हीमें किया गया है। ये सज्जन रातको जीपपर नदी तक जाते हैं और फिर एक पेड़पर बन्दूक़ लेकर रातभरके लिए जम जाते हैं। रात होनेके कारण न तो इन्हें यह पता है कि किस प्रकारके जंगल, जानवर और रास्ते इस इलाक़ेमें हैं और न इस बातका ही अन्दाज है कि किस जानवरका इन्हें शिकार करना है। इन बातोंका पता आपको सुबह होनेपर अलबत्ता ज़रूर लग सकता है पर इनकी कहानी पाँच बजे ख़त्म हो जाती है जब कि ये थककर पेड़पर सो जाते हैं और बन्दूक़ खिसककर नीचे गिर जाती है। अब आप इन्तज़ार करते रहिए कि कब सुबह हो, कब लेखक महोदय सोकर उठें और कब अगला क़िस्सा शुरू हो।

शिकारकी कहानियोंमें शिकारीका प्रयत्नशील और अध्यवसायी होना ज़रूरी होता है। शिकार हाथसे निकल जानेपर भी वह उसका पीछा करता है, एक जंगलसे दूसरे जंगलमें जाता है, एक पेड़से दूसरे पेड़ पर चढ़ता है, नदियाँ पार करता है, मचान बाँधता है, मादा शेरकी बोली बोलता है, कुत्तेको लेकर भयंकर गहराइयोंमें उतरता है (और यदि कुत्ता ऐसे अवसरोंपर नहीं उतरता तो वह फिर वापस जाकर कुत्तेको लेकर नीचे उतरता है) वग़ैरह-वग़ैरह। अन्य प्रकारके गल्प-साहित्यमें हीरो अपने शिकार यानी हीरोइनका इन्तज़ार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

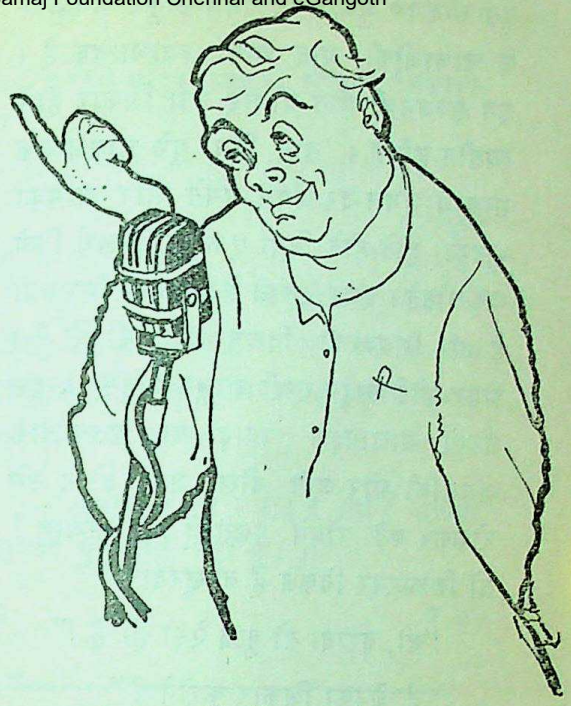

सलाहकार-परिषद्के प्रधान द्वारा 'नौकरीके लिए मुफ़्त सलाह'-केन्द्रका उद्घाटन : 'सलाह देनेको लोग अच्छी बात नहीं समझते हैं आजके युगमें, इसलिए मैं आपको सलाह दूँगा कि…'

पैदा करता रहे तो वह बेशर्म और चरित्र-हीन कहलायेगा पर शिकारके सन्दर्भमें ठीक उतना ही काम्प्लैक्स काम करता है। शिकारीके अध्यवसायके इस वर्णनसे दो लाभ होते हैं - एक तो आपके नायकका चरित्र-चित्रण होता है और दूसरे कहानीका कलेवर भी बढ़ता जाता है। नायकका चरित्र उभारमें जताना इसलिए भी आवश्यक होता है कि आम तौरपर शिकारकी कहानियोंमें तीन ही पात्र होते हैं – शिकारी, एक बकरी और शेर और इनमें केवल शिकारी ही एक ऐसा होता है जिसका कि चरित्र-चित्रण विस्तारमें किया जा सके। रहा एक बकरी और शेरका प्रश्न है, उन दोनोंके चरित्र प्रायः दूसरी बकरियों और शेरोंसे ही होते हैं और उनमें विश्लेषणकी कोई सम्भावना नहीं रहती। आम तौरसे बकरीके मारे जानेसे पूर्वकालीन स्थितिमें बकरी और शेर दोनों थोड़ा-बहुत शोर करते हैं, दोनोंकी नसोंमें तनाव रहता है, दोनोंके अवचेतन मस्तिष्क किसी घनीभूत भयके कारण आकुल रहते हैं और बकरीके मर जाने पर प्रायः दोनों जानवर शान्त हो जाते हैं। जहाँ तक कलेवर बढ़ानेका प्रश्न है, हिन्दीके एक हास्य-लेखककी याद आती है जिन्होंने आधा तीतरके शिकार पर पूरे पन्द्रह पेज दबाकर लिखे हैं। इधर कुछ ये सज्जन शेरे-बबरके शिकार पर ग्रन्थकी सृष्टि कर रहे हैं। मेरे विचारमें शिकार कई खण्डोंमें विभक्त होगी; खण्ड एक शिकार पहिला, खण्ड दो शिकार बाँये भाग-का, खण्ड तीन शिकार तीन पसलियोंका, वग़ैरह-वग़ैरह। शेर कहीं आखिरी खण्डमें जाकर दम तोड़ेगा और तब तक पाठकोंमें-से भी कुछ उसी स्थितिको पहुँच चुके होंगे।

कभी-कभी शिकारकी कहानियोंमें एक ऐसा भी व्यक्ति स्थान पाता है जो 'गाइड' कहलाता है और जो शिकारके बारेमें अपने अनुभवोंसे हमारे हीरोकी यथासम्भव सहायता करता है। ऐसा व्यक्ति प्रायः पुराना, सधा हुआ घाघ शिकारी होता है।

एक सलाह ; केवल कथाकारोंके लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस सन्दर्भमें मुझे अपने मित्र ठाकुर जंगवीर-के चाचाजीकी याद आना स्वाभाविक है। इन सज्जनकी तीन-चौथाई उम्र शिकार हीमें व्यतीत हुई है। सात दिन पूरे तामझामके साथ ये जंगल-दर-जंगल घूमते और शामका झुटपुटा होते-होते बिना एक गोली खर्च किये घर लौटते। इधर इनकी सेहत काफ़ी गिर गयी है पर शिकारकी दिलचस्पी उतनी ही है। अगर कोई साहब गन्दी पतलून पहिने, बन्दूक़ उठाये मालागढ़के पहाड़ या मतवालीके जंगलोंकी ओर जाते दीख जायें तो ये उसे रोककर बड़े रोबसे पूछते हैं: "अख्वाह! तो शिकारपर निकले हैं बरखुरदार?"

"जी, इरादा तो कुछ ऐसा ही है।"

"हूँ, शेरका शिकार करोगे?"

"जी हिम्मत बढ़ायेंगे तो कोशिश ज़रूर करेंगे। वैसे शेरका शिकार तो बड़े दिलेर और तक़दीरवालेको मिलता है।"

इतना कहनेके बाद वह नौसिखिया शिकारी चाचा साहबके मुँहकी ओर देखने लगता है कि शायद ये भी साथ चल रहे हों या कोई गुरकी बात बतानेवाले हों। इतनेमें सीना फुलाकर, बुश्शर्टके बटन बन्द करते हुए चाचा साहब बुलन्द आवाज़में एक जन्मजात शिकारीके स्वाभाविक रोबके साथ पूछते हैं: "हाँ, तो शेरका शिकार करोगे?"

"जी कर लेंगे।"

चाचाजी (थोड़ा रुककर)—"अच्छा, जाओ तो करो!" और इतना कहकर वे दूसरी ओर देखने लगते हैं।

शिकारकी कहानियोंके सन्दर्भमें एक और विशेष और अन्तिम बात यह है कि उनमें शिकारकी तैयारियोंका वर्णन बड़े ज़ोर शोरसे किया जाता है। शिकारका नशे फ़ीसदी मज़ा तैयारी हीमें होता है। याद मदलूनने बीस-बीस पेजोंमें अटैचियाँ बाँधने, जीपमें पेट्रोल भरने और टायर बदलने और फ़ारेस्ट-रेंजरसे मिलनेका वर्णन किया है। इस विशद वर्णनका वास्तविक शिकारसे क्या सम्बन्ध है, यह जाननेके लिए आप उनकी दूसरी कहानी पढ़ते हैं और कभी-कभी लेखकसे मिलना भी चाहते हैं। इस प्रकार इससे लेखककी लोकप्रियता भी बढ़ती है। वास्तवमें तैयारीके अतिरिक्त और शिकारमें है ही क्या? यदि शिकारपर कोई एकांकी नाटक लिखा जाये तो पहले दो दृश्य तो तैयारीसे ही सम्बन्धित होंगे। अन्तिम दृश्य कुछ-कुछ इस प्रकार होगा:

परदा उठता है

[**वनका दृश्य : रातका समय : वर्षाकी ऋतु: लगभग एक बजकर ४१ मिनट: अँधेरेके कारण सही समय घड़ीसे बता सकना कठिन।**]

(इसके बाद रात और अंधेरेका वर्णन किया जायेगा ताकि अन्तिम दृश्य और दृश्योंकी अपेक्षा छोटा न हो जाये। एकांकीमें अंक एक ही होता है, पृष्ठोंकी संख्या पूरे नाटककी बराबर ही रखी जाती है।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[शेरका प्रवेश]

(शिकारी, जो दिखाई नहीं देता क्योंकि वह स्टेजके पीछे लगी है, गोली चलाता है।)

[शेर गुर्राता है,
और एक गोली और माँगता है
दोनों गोलियाँ मिलनेके बाद शेर काफ़ी
कुछ नज़र आता है।
इसके बाद—
वह मर जाता है,
और शेर दोनों गोली लेकर भाग जाता है,

या

परदेसे बाहर आकर स्टेजपर शिकारी-की मृत्यु।]

पटाक्षेप

इसके बाद हॉलमें रोशनी जल उठती है और तालियाँ बजती हैं। बारी-बारीसे लोग उस कलाकारसे हाथ मिलाते हैं जिसने शेरका पार्ट अदा किया था।

(क्षमा करें : मैं सलाह दे रहा हूँ, आपके सिरपर थोप नहीं रहा हूँ।)

■■

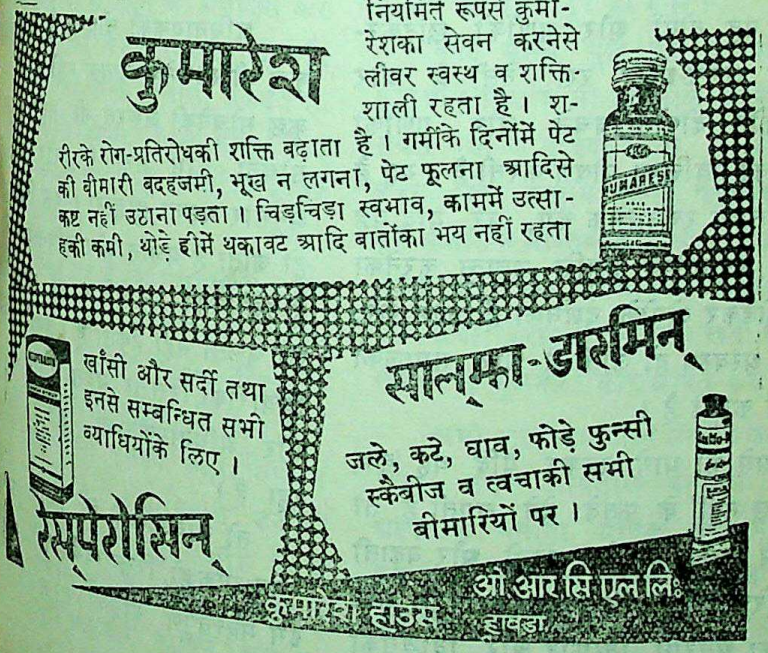

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षाका उद्देश्य, शास्त्रीजीका मार्गदर्शन और हिन्दी

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

वरिष्ठ पत्रकार, चिन्तक, विचारक।

• रचनात्मक रहिए :

आलोचना समाजकी संजीवनी बूटी है, क्योंकि वह दोषों और गुणोंको छाँटकर-छानकर अलग-अलग रख देती है और नागरिकोंमें दोषोंसे बचने और गुणोंको अपनानेकी प्रवृत्तिका पोषण करती है। यह है आलोचनाका रचनात्मक रूप, पर यदि वह गुणोंकी अपनानेकी प्रवृत्ति उत्पन्न करनेका काम छोड़कर दोषोंके दर्शनका ही काम करे, तो वह अस्वस्थ हो जाती है और समाजको अस्वस्थ करती है।

इससे भी आगे बढ़कर यदि वह 'कुछ नहीं-कुछ नहीं' के फ़तवे देने लगती है, तो समाजमें रिक्तताको पैदा करती और बढ़ाती है। रिक्ततामें सर्जना सम्भव नहीं और सर्जनाका अवरोध विस्फोट और विध्वंसको जन्म देता है। संसारका राजनैतिक इतिहास गवाह है कि जब-जब अस्वस्थ आलोचनाके जन-समाजमें विचारोंकी रिक्तता उत्पन्न हुई है, तब-तब उस रिक्ततामें कोई अधिनायक आ बैठा है।

अधिनायककी घोषणा है, ऐ लोगो, तुम कुछ भी सोचनेके लायक़ नहीं हो और तुम्हें कुछ सोचनेकी ज़रूरत भी नहीं है, क्योंकि सोचना काम मेरा है और मेरे हुक्मके अनुसार चलना तुम्हारा। बस फिर नागरिक हो जाता है मशीन और अधिनायक हो जाता है इंजीनियर—नागरिक हो जाता है पुर्ज़ा जो चलता नहीं हँकता है। हमारे देशमें विचारोंकी रिक्तता बहुत तेज़ीसे बढ़ रही है और अधिनायकताका ख़तरा सिर उठा रहा है।

तो आवश्यक है कि हमारी आलोचना रचनात्मक हो, रिक्ततावर्धक नहीं। दुःख है कि इस महत्त्वपूर्ण बातकी तरफ़ हमारे देश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहे ध्यान नहीं दे रहे हैं। विश्वविद्यालयों-का काम विचारोंका नेतृत्व करना है, पर वहीं भी रिक्तता आ रही है। आगरा विश्वविद्यालयके उपकुलपति श्री पी० डी० गुप्तने फीरोज़ाबाद-कालिजके दीक्षान्त भाषण में कहा—'पहले शिक्षाका उद्देश्य बलर्क होता था, परन्तु आज तो कोई उद्देश्य ही उसमें नहीं रह गया। अशिक्षित व्यक्ति भी शिक्षाके मामलोंमें परामर्श देने लगे हैं। वे नेता पदवी और पदोंकी दौड़में लगे हैं, इसलिए नवयुवकोंको इन नेताओंपर विश्वास नहीं करना चाहिए।"

पहला प्रश्न यह है कि गुप्तजी एक विश्वविद्यालयके सर्वेसर्वा हैं और शिक्षाका ध्येय स्थिर करना विश्वविद्यालयका कार्य है। इस हालतमें समाज जो शिकायत उनसे करनेका अधिकारी है, वही वे समाजसे कर रहे हैं। यह नेतृत्वका कैसा स्वरूप है? यदि ऊपरके नेता उनके हाथोंको जकड़ते हैं, तो आज उनसे अपने विश्वासोंके लिए बलिदानकी आशा करता है और वे कायर हैं फिर मौनकी।

दूसरा प्रश्न यह है कि विश्वविद्यालयोंमें ज्ञान ग्रहण कर जो युवक जीवनके द्वारपर खड़े हैं उन्हें विचारोंकी घातक रिक्तामें धकेलना क्या कोई समझदारीकी बात है? गीताका वचन है कि कर्मकी गहराइयोंमें न जाकर सुबोध मार्ग अपनानेवाले जनोंको बुद्धिभेदमें नहीं डालना चाहिए और उनके सामने आचरणका आदर्श रखना चाहिए। इसीके दीक्षान्त भाषणमें ऋषिने कहा था —'अच्छे कर्मोंका आचरण करो, दूसरोंका नहीं। हमारे भी जो आचरण शुद्ध-शुभ हों, उन्हींका अनुकरण करो, दूसरोंका नहीं। निवेदन है कि आलोचना करते समय हमारे नेता विचारोंकी स्वयं बढ़ती रिक्तताको बढ़ावा न दें और रचनात्मक दृष्टि ही रखें।

● एक रचनात्मक सुझाव :

प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्रीके व्यक्तित्वकी एक बहुत बड़ी खूबी यह है कि देशका बड़ेसे बड़ा पद उनके पैरों तले है और बड़ेसे बड़ा काम उनके हाथमें, पर वे खयाली पुलावके गुब्बारे नहीं उड़ाते। उनसे पहला नेतृत्व गुब्बारोंकी कलामें आचार्यता तक पहुँच गया था। फल यह हुआ कि निर्माणका दृष्टिकोण विस्तार और संख्यावादी होकर गहराईसे दूर हो गया।

कोई मुझसे पूछे कि श्री लालबहादुर शास्त्रीने पिछले नौ महीनोंके अपने शासनमें सबसे बड़ा काम क्या किया, तो मैं बेझिझक कहूँगा कि उन्होंने हवाई क़िलोंकी दौड़में डूबे प्रशासक-मस्तिष्कको आगे बढ़नेसे रोक दिया और उसे वर्तमानको महत्त्व देनेकी ओर तथा विराटकी छायामें खड़े होकर भी लघुको न भूलनेकी ओर प्रेरित कर दिया।

अभी कुछ दिन पहले उन्होंने कहा था—"२०० अधूरे अस्पताल बनानेसे २० पूरे अस्पताल बनाना अधिक उपयोगी है।" इस दिशा-निर्देशका महत्त्व हम तब समझेंगे, जब यह भी जानें कि सिर्फ़ उत्तर प्रदेशमें ही कई सौ अस्पताल ऐसे हैं, जिनमें काफ़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिनोंसे कोई डॉक्टर नहीं है।

काशी विद्यापीठके दीक्षान्त भाषणमें भी शास्त्रीजीने व्यावहारिक प्रश्नोंपर विचार करनेकी ओर ध्यान खींचा है और स्वयं एक व्यावहारिक सुझाव दिया है कि विरोधी-दल और उनकी मर्यादा, आन्दोलन-हड़ताल और प्रजातन्त्र, विदेश-नीति और गृहनीति-जैसे सामयिक प्रश्नोंपर पुस्तकें आदि लिखी जानी चाहिए, जो लोगोंमें नये विचार प्रस्फुटित करने और अपना मत बनानेमें सहायक हों।"

पिछले वर्षोंमें साहित्यकारों और पत्रकारोंने सामयिक प्रश्नोंकी घातक उपेक्षा की है और वे भी खयाली पुलावोंमें डूबे रहे हैं। १९६२ से चीनके साथ हमारा संघर्ष है, पर चीनके सम्बन्धमें हिन्दीमें ढंगकी पुस्तक तो दूर, कोई ट्रैक्ट भी नहीं है। कांगो इस बातका प्रमाण है कि स्वतन्त्रता देनेवालोंने भारतकी क्या-कैसी दुर्गति करनेके सपने देखे थे, पर कांगोकी समस्याको समझनेके लिए भारतीय-पाठकके पास पाँच अक्षर भी नहीं हैं। हमारी सेनाओंने कोरिया और कांगोमें ऐसा शानदार काम किया है कि बुद्ध और गान्धी भी दोबारा जी उठें तो वाह-वाह कहें, पर उसपर कहीं कुछ नहीं है। अरब-गणराज्य हमारा गहरा मित्र है, पर अरब देशोंकी समस्याएँ क्या हैं, जनरल नासिर क्या चाहते हैं, उनके रास्तेमें क्या रुकावटें हैं, इनपर क़सम खाकर हमारी क़लम चुप रही है! क्या यह एक उभरते देशके लिए उचित है? यही हाल वियत-नाम-जैसे प्रश्नोंका है।

और, छोड़िए दूर देशोंको, संसदके बजट-अधिवेशनमें देशके प्रश्नों, अभावों और निर्माणोंकी ऐसी परिपूर्ण झाँकी आती है कि वह जनता तक पहुँचे, तो उसमें विचारोंकी खेती उमड़ पड़े, पर समृद्धसे समृद्ध दैनिक पत्रोंने इधर ध्यान ही नहीं दिया। यहाँतक कि भारत-सरकारके किसी सूचना मन्त्रीने भी इस विषयको नहीं सूँघा। इस हालतमें यदि मद्रासवाले उत्तर प्रदेशकी विधानसभाके बारेमें और बिहारवाले केरलकी विधानसभा के बारेमें संज्ञाशून्य हों, तो किसे दोष दिया जाये?

इस पृष्ठभूमिमें शास्त्रीजीका मार्गदर्शन महत्त्वपूर्ण है, पर आवश्यकता है कि यह उनके स्पष्ट शुद्ध दर्शनकी एक सूक्ति ही बनकर न रह जाये, उसके अनुसार कार्य भी हो!

● विशेषज्ञ नहीं:

एशियायी अध्ययन गोष्ठीके ताजे अधिवेशनमें भारतके वयोज्ञानवृद्ध समाजशास्त्री श्री हृदयनाथ कुंजरूने राष्ट्रीय जीवनके एक कमज़ोर पहलूकी तरफ़ देशके कर्णधारोंका ध्यान खींचा है। वह पहलू यह है कि देशके पास विभिन्न विषयोंके विशेषज्ञ नहीं हैं और इस कारण राष्ट्रीय निर्माणको सही दिशा-निर्देश समय पर नहीं मिलता।

इस बात पर हम गहराईसे ध्यान दें। एक बार मैंने प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरूसे कहा था – "पण्डितजी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचारोंके बगीचे सूखते जा रहे हैं। क्या ये बाँध, कारखाने और पुल उनका स्थान ले सकेंगे?" १९६० में ही पण्डितजीके भीतर चलती आत्मविश्वासकी – सब कुछ कर सकने की – जोत झपझपाने लगी थी, १९६२ में चीनी आक्रमणसे वह बुझ गयी थी और उनके मनकी स्थिति यह हो गयी थी कि जैसे कोई सैनिक विजयकी भावना खोकर भी कहे कि मैं हटूँगा नहीं, अपने स्थान पर ही मरूँगा। पण्डितजी मेरी बात सुनकर गम्भीर हो गये थे और बड़े ही डूबे हुए स्वरमें उन्होंने कहा था – "आखिरी जीत तो इनसान ही है और यक़ीनन वह विचारोंसे बनता है।"

आज देशमें वैचारिक शून्यता है, तो विचारशून्यता कहाँ पनपे? लोकसभामें ५३० सदस्य हैं। इन्हें जीवन-निर्वाहका खर्च मिलता है और यात्राकी सुविधाएँ भी, पर कितने लोग हैं, जिनका ध्यान किसी विशेष विषयपर केन्द्रित है? लाखों प्रवासी भारतवासी हैं। उनकी आत्मीयता भारतसे सम्बद्ध है, पर कितने सदस्य हैं, जो उनकी समस्याओंसे परिचित हैं? चीनी-अतिक्रमण तब आरम्भ हुए थे, पर १९६२ के चीनी-आक्रमण तक कितने सदस्य हैं, जिन्हें लद्दाख-नेफाके बारेमें मोटी जानकारी भी थी? सदस्योंको अपने राज्योंकी कौन कहे, अपने निर्वाचन-क्षेत्रोंका भी पूरा ज्ञान नहीं। देशके शीर्षस्थ और निश्चिन्त प्रतिनिधियोंका यह हाल है, तो विद्वानोंका क्या होगा? राजा महेन्द्रप्रतापके कार्योंसे विश्वविद्यालयोंके कितने राजनीति-अध्यापक परिचित हैं? इस स्थितिमें विशेषज्ञ कहाँसे आयें?

● ये पुरानी परतें :

भारतके उपराष्ट्रपति डॉक्टर ज़ाकिर हुसैन साहब उन लोगोंमें हैं, जो अपने भारतको प्यार तो करते ही हैं, जानते भी हैं। दुर्भाग्य है कि हमारे नेताओंमें ऐसे कम हैं, जो भारतको जानते हों। हमारी बहुत-सी क़ौमी गड़बड़ियोंकी एक वजह यह भी है कि गान्धीजीके बाद देशका निर्माण जिनके हाथोंमें आया, उनमें कुछ रूसको जानते हैं, कुछ अमेरिकाको, पर भारतको नहीं। भारतकी आत्माको पहचानकर गान्धीजीने जिस बेसिक शिक्षाको चालू किया था, उसके जन्मदाता डॉक्टर ज़ाकिर हुसैन साहब ही हैं।

शिबली अकादमीके सालाना जलसेमें डॉक्टर ज़ाकिर हुसैन साहबने एक राह दिखानेवाली बात कही – "इनसानी ज़िन्दगी करोड़ों सालकी है और सभ्यताकी ज़िन्दगी कुछ हज़ार सालकी। इस तरह इनसानके भीतर लाखों सालोंमें बनी वहशत – जंगलीपन – की परतें भी हैं और हज़ारों सालों बनी सभ्यता – तहज़ीबकी परतें भी। असलमें हमारी ज़िन्दगीका सबसे बड़ा मसला ही यह है कि हम वहशतकी परतोंको हटायें और तहज़ीबकी परतोंको बढ़ायें।"

छोटे तौर पर एक आदमी अपने भीतर बसी वहशतकी परतको दबाकर और तहज़ीबकी परतको उभारकर सभ्यताकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शान्ति और व्यवस्थाका सुख भोग सकता है और बड़े तौर पर दुनियाके मुल्क एक ऐसी ज़िन्दगीकी बेल लहलहा सकते हैं, जिस पर जंगके अंगारे बरसनेका खतरा हमेशाके लिए दूर हो जाये। तो हम सोचें कि हमारी वहशतकी परतें कैसे दबें और तहज़ीब सभ्यताकी परतें कैसे उभरें ?

● हाथ खींच लें :

मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलनके जबलपुर अधिवेशनका उद्घाटन करते हुए विद्वद्वर श्री धीरेन्द्र वर्माने हिन्दीवालोंको सुझाव दिया है कि वे "केन्द्रीय भाषा और अन्तर्राज्य भाषाकी समस्यासे अपना हाथ खींच लें। लगभग २२ करोड़ भारतीयोंकी जनसंख्यावाले हिन्दी राज्यों–मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान, हिमाचल, पंजाब (हरियाना क्षेत्र) और दिल्लीकी शासनकी भाषा,प्रधान साहित्यिक भाषा,शिक्षाके माध्यम-की भाषा, पत्रोंकी भाषा, जनतासे सम्पर्ककी भाषाके रूपमें हिन्दीके प्रचारविकासका कार्य क्या कुछ कम भारी और महत्त्वपूर्ण है ?"

सचाई यह है कि यह कार्य इतना महत्व-पूर्ण है कि हमने पिछले १५ वर्षोंमें यह किया होता, तो हिन्दीको ये दिन न देखने पड़ते। श्री वर्माजीका यह विश्वास साधार है कि जिस दिन हम ४० प्रतिशत हिन्दीभाषी भारतीय अपने राज्योंके शासनों, विश्वविद्या-लयों, न्यायालयोंसे अँगरेज़ीको प्रथम स्थानसे हटाकर हिन्दीको स्थापित करनेमें सफल हो जायेंगे, उस दिन राजभाषा और सम्पर्क-भाषाका प्रश्न आप ही हल हो जायेगा।

आशा है हम मद्रासकी प्रतिक्रियामें न फँसकर अपना काम निष्ठासे करेंगे और यह विश्वास रखेंगे कि किसीकी कृपासे हिन्दी राष्ट्रभाषा नहीं बनी है, यह उसकी विशेष-ताओंका परिणाम है और उसकी प्रगति कोई रोक नहीं सकता।

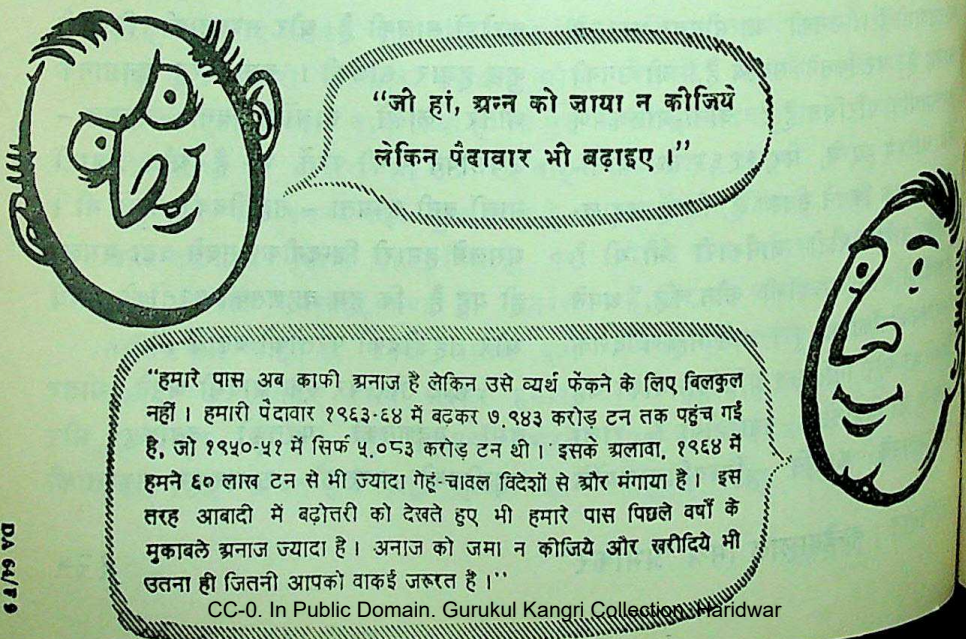

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिक्रिया

हिन्दी नाट्य-महोत्सव : एक दृष्टि और

कासका कार्य
पूर्ण है ?"
इतना महत्व-
में यह किया
देखने पड़ते।
धार है कि
हिन्दीभाषी
विश्वविद्या-
प्रथम स्थानसे
नेमें सफल हो
और सम्पर्क-
यगा।
तिक्रियामें न
रेंगे और यह
पासे हिन्दी
सकी विशेष-
प्रगति कोई

शाके प्रायः साल-डेढ़ साल पूर्व नाट्य महोत्सवकी कल्पना हमारे सम्मुख आयी थी, ोत्यामानन्द जालानने इसे रूपायित करनेकी म्भावनाओंपर विचार-विमर्श करनेके लिए ार्यकारिणीके सम्मुख इसे प्रस्तुत किया ा। चरचा तो पिछले कई वर्षोंसे इस म्बन्धमें हो रही थी किन्तु एक लम्बे महो-वकी तैयारी एवं सफल निर्वाहके लिए म अपने आपको उपयुक्त स्थितिमें नहीं पा हे थे। गत बार जब यह योजना सामने यी तो उसपर गम्भीरतापूर्वक विचार करके लगा कि अब जैसे भी हो, एक बार हिम्मत करके इस कामको करनेका निर्णय-र ही डालना चाहिए क्योंकि यह प्रयत्न हिन्दी-क्षेत्रमें काम करनेवाले विभिन्न नाट्य-र्मोंको एक साथ मिलनेका अवसर प्रदान करेगा, हम एक दूसरेके प्रदर्शनों एवं उप-ब्धियोंको देख-जान सकेंगे, कुछ सीख सकेंगे, सिखा सकेंगे। परस्परका यह आदान-प्रदान हिन्दी रंगमंचके विकासमें सहायक होगा, ऐसा हमारा विश्वास बना। मूल योजनामें विभिन्न नाट्यदलों-द्वारा प्रस्तुत किये जानेवाले प्रदर्शन हमारे सामने मुख्य रूपसे थे एवं उनके माध्यमसे हम हिन्दी-रंगमंचके विविध रूप एवं प्रयोगको एक साथ एक मंचसे प्रस्तुत करना चाहते थे। प्रदर्शनोंके इस महोत्सवके साथ ही एक संगोष्ठीके आयोजनका भी विचार किया गया ताकि नाट्यलेखन एवं प्रस्तुतीकरणकी नाना समस्याओं एवं सीमाओं-पर विचार-विमर्श किया जा सके एवं किसी समाधानको प्राप्त करनेकी चेष्टा की जाये। यदि मैंने समझनेमें भूल नहीं की तो हमारी दृष्टिमें प्रदर्शन पहले था, गोष्ठी उसके बाद। यों पत्र-पत्रिकाओंमें जो कुछ लिखा गया है उससे ध्वनि यही आती है कि इस महोत्सव-का मुख्य अंग गोष्ठी थी एवं गौण अंग नाट्य-प्रदर्शन। इसमें कोई सन्देह नहीं कि गोष्ठियों-में जिस प्रकार हिन्दी नाट्य जगत् एवं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रंगमंचसे सम्बन्धित-सम्पर्कित जितने व्यक्तियों-का सहयोग हमें मिला उसने गोष्ठियोंको बड़ी गरिमा प्रदान की एवं वास्तवमें कई महत्त्वपूर्ण तथ्य सामने आये।

विभिन्न पीढ़ियोंके नाट्यकार एक मंचपर आये, विभिन्न दृष्टिवाले परिचालक एवं अभिनेता आये, विभिन्न मूल्योंको लिये हुए दर्शक एवं समीक्षकोंका दल आया। सबने अपने-अपने विचार निर्भीकतापूर्वक प्रस्तुत किये यद्यपि वे कई स्थानोंपर सर्वथा परस्पर-विरोधी थे एवं उनमें प्रत्यक्ष रूपसे सामने उपस्थित कलाकार या नाट्यकारकी आलोचना की गयी थी। एकाध दुखद प्रसंगोंको छोड़-कर यह सारा विचार-विमर्श, आलोचना-प्रत्यालोचना बड़े सौहार्दपूर्ण वातावरणमें हुई। उसका बहुत बड़ा कारण यह था कि किसीके भी सम्मुख व्यक्ति नहीं था, हिन्दी नाटक था, उसके लेखनका स्तर एवं समस्याएँ थीं, उसके प्रस्तुतीकरणकी असु-विधाएँ एवं सीमाओंका प्रश्न था। सभी व्यक्ति एक-दूसरेकी दृष्टिको जानने-समझनेके लिए उत्सुक थे, अपनी बात दूसरों तक पहुँचानेके इच्छुक थे और सबने जी खोलकर कहा और सुना। हमें इस बातका हर्ष है कि गोष्ठियोंका यह स्वस्थ वातावरण वास्तवमें नाटक एवं मंच सम्बन्धी गम्भीर विचारके लिए उपयुक्त सिद्ध हुआ और व्यक्तिगत आलोचनाके बावजूद आक्षेप या दुर्भावना-वाली बात कहीं नहीं आयी। यह इस तथ्य-की ओर इंगित करता है कि नाट्य-जगत्में काम करनेवाले विभिन्न व्यक्ति आज इस बात-को बहुत गहराईसे महसूस कर रहे हैं कि नाटकका विकास सम्मिलित सहयोग एवं प्रयाससे ही हो सकता है और उसके लिए कहीं-न-कहीं हमें निकट आना है, घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित करना है, झुकना है, झुकाना है। मैं इस अनुभूतिको इस महोत्सवकी सबसे बड़ी उपलब्धि मानती हूँ।

गोष्ठियोंमें विचार-विमर्शके क्षेत्रमें अनेक समस्याओंको उठाया गया, कुछ पर विचार-विमर्श हुआ, कुछ अछूती रह गयीं। कुछ बुजुर्गवार अपने पुराने जीवनके संस्मरणोंमें डूब गये, कुछ बड़े जोश-खरोशमें बोले, कुछ बड़े संयत-सधे स्वरमें। एक ओर परम्पराकी दुहाई दी गयी, दूसरी ओर आधुनिक युग-बोधकी; एक ओर प्रस्तुतकर्त्ताके अभावोंकी चर्चा की गयी, उसे अभावोंका परिचालक कहा गया, दूसरी ओर उसे चुनौती दी गयी, धिक्कारा गया कि वह अभावोंके नामका रोना क्यों रोता है, वह काम किये चले यही उचित है; एक ओर दर्शकोंको दृष्टिमें रखकर नाटक लिखने और खेलनेपर जोर दिया गया तो दूसरी ओर यह शंका की गयी कि आजके दर्शकोंको ही दृष्टिमें रखकर यदि रंगमंचके विकासकी बात सोची जायेगी तो प्रबुद्ध एवं परिष्कृत रुचिवाले दर्शकोंके अभावमें नाटक-का स्तर नीचे गिर जायेगा और फिर ऊपर उठाना असम्भव नहीं तो मुश्किल अवश्य होगा। इन परस्पर-विरोधी दृष्टिकोणों-में सम्भवतः आंशिक सत्य सभीमें था और इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि नाटककी समस्याओंपर कितने बड़े परिप्रेक्ष्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में विचार किया गया एवं भविष्यमें इन नाना दृष्टियोंको सामने रखकर ही एक ऐसे स्वरूप एवं माध्यमको खोजना होगा जो अधिकाधिक पूर्ण हो—जो मनोरंजन भी करे, साथ ही एक विशेष स्तरसे नीचे न गिरे, जो साहित्यिक सम्पन्न तो हो पर क्लिष्ट और अतिरिक्त बौद्धिकतासे आक्रान्त न हो, जो जीवनकी शाश्वत अनुभूतियों एवं मूलभूत समस्याओं से सम्पर्कित तो हो किन्तु नारेबाज़ीसे रहे हो।

शौक़िया और व्यावसायिक रंगमंचको लेकर भी विचार किया गया और अधिकांश व्यक्तियोंने यह अनुभव किया कि हिन्दी रंगमंचके भावी विकासके लिए, उक्त दोनों रंगमंचोंके साथ ही अर्द्ध-व्यावसायिक रंगमंचका प्रचलन भी आवश्यक है। शौक़िया रंगमंच श्रेष्ठ कोटिके नाटकोंका प्रदर्शन करके सुरुचिपूर्ण स्तर बनायेगा, नये प्रयोग करेगा। व्यावसायिक रंगमंच दर्शकोंका बृहत् समुदाय तैयार करेगा और अर्द्धव्यावसायिक रंगमंच बीचकी कड़ी होगा। एक और महत्त्वपूर्ण विषय श्री जगदीशचन्द्र माथुरने उठाया—सरकारीय या अन्य संरक्षणका। कोई भी कला संरक्षणके अभावमें नहीं पनप सकती अतः सरकारी और ग़ैर-सरकारी तौरपर, जहाँसे भी उपलब्ध हो, उचित संरक्षणको प्राप्त करनेमें न संकोच करना चाहिए और न दुविधाका बोध। मंचके विकासके लिए सरकार एवं श्रेष्ठिवर्गका आर्थिक संरक्षण आवश्यक है।

नाट्य-प्रदर्शनोंके अन्तर्गत रामलीला, नाटकों, पारसी थियेटरसे लेकर आधुनिकतम मंच-प्रयोग—एरीना थियेटर—तक प्रस्तुत किये गये। रामलीला उत्तर भारतमें नाट्य-परम्पराके विकासकी वह महत्त्वपूर्ण कड़ी है जो संस्कृत और हिन्दी-नाटकको जोड़ती है, लोक-शैलीके रूपमें जिसने उस परम्पराको बनाये रखा। अवश्य ही कलकत्तेकी जनताने उसे कम पसन्द किया। यह स्वाभाविक था। तीव्र गतिवाले जीवनको जीनेवाले तथा उससे भी तीव्र गतिसे मंचपर प्रस्तुत होनेवाले नाटकोंकी तुलनामें रामलीलाकी गति अत्यन्त मन्थर थी किन्तु इस सन्दर्भमें हमें दो-एक बातोंको ध्यानमें रखना ही होगा। प्रथम तो अपने मूल रूपमें आज भी रामलीला ऐसे ही होती है। उसे देखनेवाला समुदाय उन व्यक्तियोंका होता है जो मुफ़्तमें मनोरंजनके मूडमें जाते हैं, रेवड़ी-मूँगफली खाते-पीते, बाल-बच्चोंको गुब्बारा-पपीहरी दिलाते, पिकनिकका मज़ा लेते हैं। दूसरे वे होते हैं जो भक्तिभावसे रामजीके दर्शनार्थ जाते हैं। आज भी हर जगह चार-चार घण्टा एक-एक प्रसंगको लेकर रामलीला होती है, माइकका प्रश्न ही नहीं उठता। लोगोंकी भीड़ और शोर-शराबेके बीच एक ओर कीर्त्तनिया रामायणकी पंक्तियाँ गाते रहते हैं, राम-लक्ष्मण संवाद बोलते रहते हैं। अवश्य ही परशुराम-लक्ष्मण-संवाद और अच्छा होना चाहिए था किन्तु रामलीलामें इससे अधिक गतिकी अपेक्षा करना, उसके साथ अन्याय करना होगा। सम्भवतः कलकत्ताके दर्शकोंके मनमें उदयशंकरके छाया-नृत्य-नाट्य राम-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लीला या कलाकेन्द्र दिल्लीके नृत्य-नाट्य रामलीलाके-से किसी प्रदर्शनकी कल्पना थी। मुझे इस सम्बन्धमें इतना कहना इसलिए आवश्यक प्रतीत हुआ क्योंकि रामलीलाके प्रदर्शनकी आलोचना हर व्यक्तिने की और वही एकमात्र ऐसा प्रदर्शन था जिसमें लोग मैदान ख़ाली करके चले गये, अन्तिम आरतीके साथ रामजीके सम्मुख केवल मैं थी और मेरे परिवारके कुछ लोग, जो मेरे लिए रुके थे, दूसरे कुछ और साथी मंचके पाछे चायकी दुकानपर चाय पी रहे थे।

लोक-नाट्य परम्पराका दूसरा प्रदर्शन नौटंकी बहुत ही सफल रहा। सुरीले गलेकी वह आवाज़ और नगाड़ेकी कड़कड़ धुन मनको आन्दोलित कर देती थी। इस परम्पराका सारा अभिनय शब्दों एवं स्थूल भावभंगिमाओंपर आधारित था, मुखाकृति एवं भावाभिव्यक्तिपर नहीं। पारसी शैलीमें मूनलाइट-द्वारा प्रस्तुत आग़ा हश्र काश्मीरीका सीता-वनवास इन लोक-नाट्यों एवं वर्तमान नाटकको जोड़नेवाला था। दर्शकोंमें एक ओर क़दम-क़दमपर राम-सीताको प्रणाम करनेवाली बूढ़ी स्त्रियाँ थीं, दूसरी ओर बचपनकी स्मृतिको पुनः ताज़ा करते हुए दर्शक वृन्द, तीसरी ओर 'क्या फ़ालतू तमाशा है'-जैसी मनोवृत्तिवाले लोग थे। किन्तु आश्चर्य यह कि तीन घण्टेके बिना विरामवाले इस नाटकमें-से कोई भी उठकर नहीं गया—नाच-गाने शेर-कवित्तमें डूबे सब बैठे रहे।

शेष पाँच प्रदर्शनोंकी प्रस्तुति आधुनिक रंगमंचके अनुरूप थी। वाराणसीकी श्री-नाट्यम् संस्थाने प्रेमचन्दके अमर उपन्यास 'गोदान' का नाट्यान्तर प्रस्तुत किया, थ्री आर्ट्स क्लब दिल्लीने रमेश मेहता रचित 'अण्डर सेक्रेटरी' को, नेशनल स्कूल ऑफ़ ड्रामाने विश्वविख्यात ग्रीक दुखान्त नाटक 'शाहंशाह इडिपस' को (उर्दूमें), थियेटर यूनिट बम्बईने धर्मवीर भारतीके काव्य-नाटक 'अन्धा-युग' को और अनामिकाने मिहेल सेबशियनके रूमानियन नाटकके हिन्दी रूपान्तर 'छपते-छपते' को प्रस्तुत किया। नाटककी विषय-वस्तुकी दृष्टिसे ये सभी सर्वथा भिन्न थे, प्रस्तुतीकरणमें भी पर्याप्त विविधता थी। सम्भवतः अभिनय एवं प्रस्तुतीकरणकी दृष्टिसे अन्धा-युगका प्रदर्शन सबसे कठिन था, रबर छन्दमें लिखे इस काव्यको सफलतापूर्वक प्रस्तुत करना वास्तवमें अत्यन्त श्रमसाध्य एवं क्षमतासाध्य कार्य था। इसमें सत्यदेव दुबेको पर्याप्त सफलता मिली। यों नाटकके मूल सन्देशको वे जनता तक कहाँ तक पहुँचा पाये या जनता उसे कहाँ तक ग्रहण कर पायी, यह विवादका विषय है। नेशनल स्कूलके इडिपसके सम्बन्धमें विचार करते हुए हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि वह नेशनल स्कूलके विद्यार्थियों-द्वारा प्रस्तुत किया गया था। निर्देशक अलकाजी साहबकी प्रस्तुति की प्रशंसा करते हुए भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि इडिपस और जोकास्टाके जीवनकी वह बिडम्बना मर्मको उतना स्पर्श नहीं कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...जितना अपेक्षित था। अनजानमें माता ...पुत्रका पति-पत्नीके रूपमें जीवन व्यतीत ...की मर्मान्तिक पीड़ामें वह गहराई नहीं ...पायी जो हमारे अन्तस्को कचोट जाये, ...एक छटपटाहटकी स्थितिमें छोड़ दे। ...का नाट्यान्तर अत्यन्त सफल था ...उतने बड़े उपन्यासको एक ही सेटके ...खेलने योग्य बनानेके लिए रूपान्तरकार ...पात्र हैं। गाँवका वातावरण बड़ा ...स्वाभाविक था किन्तु अभिनयमें कहीं ...कमी यहाँ भी थी जो कृतिको उतनी ...प्रधान नहीं बना पायी। रमेश मेहताका ...सेक्रेटरी' हलका-फुलका व्यंग्य नाट्य ...जिसमें सरकारी अफ़सरीका झूठा रोब ...वाली महिलाकी दुर्गतिका चित्र प्रस्तुत ...गया था। दिल्लीमें यह नाटक बहुत ...लोकप्रिय हुआ है, इसका ११०वाँ और ...वाँ प्रदर्शन यहाँ हुआ। कलकत्तेकी ...की मिली-जुली प्रतिक्रिया थी, कुछ ...को बहुत अच्छा लगा, दूसरोंको अति-...हलका। अनामिकाका 'छपते-छपते' ...नवीन प्रयोग था, हिन्दीमें ऐसे प्रयोग ...हुए हैं। 'थियेटर-इन-द-राउण्ड' के ...प्रदर्शन होनेकी चरचा तो हुई है, किन्तु ...की नहीं। नाटक सशक्त था एवं ...करण भी सफल। चारों ओर बैठे ...के बीच कलाकार अभिनय कर रहे ...दर्शक उन्हें अपने बीच पा रहे थे।

अवश्य इन विभिन्न प्रदर्शनोंमें हमें विभिन्न प्रकारके नाटक देखनेको मिले किन्तु इतना स्वीकार करना पड़ेगा कि इनमें-से प्रायः सबका ही अभिनयका स्तर और अच्छा होना चाहिए था, विशेषकर भावाभिव्यक्ति-के क्षेत्रमें आँखोंका काम अवश्य ही अपेक्षाकृत बहुत अच्छा होना चाहिए था। उसकी कमीने प्रस्तुतीकरणकी सारी सफलताके बावजूद नाट्यकृतिको मर्मस्पर्शी नहीं बनाया, हम कहीं भी अपने आपको भूलकर उनमें डूब नहीं सके, शास्त्रीय दृष्टिसे साधारणीकरण नहीं हो सका। किन्तु यह कहते समय भी हम इस तथ्यको नहीं विस्मृत कर सकते कि ये सभी शौक़िया दल थे—मूनलाइटको छोड़-कर—और उचित प्रशिक्षण एवं सुविधाओंके अभावमें उनका इतना कर पाना ही पर्याप्त था। इन प्रदर्शनोंने हिन्दी रंगमंचके बहुमुखी प्रयोगोंको प्रस्तुत करके इस दिशामें होनेवाले प्रयत्नोंसे हमें परिचित कराया।

—प्रतिभा अग्रवाल

■ एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्व :

प्रश्न यह नहीं कि "एक सर्वथा आव-श्यक अस्तित्वके 'अस्तित्वगत' होनेका भाव बौद्धिक है। प्रश्न यह भी नहीं कि कॉण्ट विलियम जेम्स, डॉ० राधाकृष्णन् या जैन धर्मावलम्बियोंके ईश्वरसम्बन्धी अपने-अपने विचार क्या हैं। प्रश्न है कि ईश्वर है कि नहीं है, तो क्या है कैसा है, उसे भाव-रूपमें मानकर न मानना क्या है, साथ ही मस्तिष्क रखना किन्तु विवेकपूर्ण चिन्तनमें अक्षम होनेका क्या तात्पर्य है ?

कभी-कभी प्रश्नका उत्तर प्रश्न ही होता है। तो क्या 'अस्तित्वगत' से तात्पर्य 'अस्ति-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्वमय' से है अथवा एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्वका अस्तित्वमें समाहारसे ? निश्चय ही यदि अस्तित्वगतसे अभिप्राय (existing) अस्तित्वमयसे है तो बात और है अन्यथा (Extinction of Existing in existence) अस्तित्वमयका अस्तित्वमें लीन होना बहुत कुछ भ्रामक है। वास्तवमें होता यह है कि (Extinction of existence in existing) अस्तित्वका अस्तित्वमयमें समाहार। दूसरे, एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्वका अस्तित्वमय होना एक भाव अवश्य है किन्तु विशुद्ध बौद्धिक नहीं, अपितु एक सत्य है जो कि आन्तरिक है (it is inherent) वैसे ही जैसे पत्थर या लकड़ीमें आग, दूधमें मक्खन। दोनों ही प्रयोग सिद्ध हैं, प्रत्यक्ष हैं किन्तु सहज बुद्धिग्राह्य नहीं। तीसरे, मेरा होना इसलिए नहीं कि 'मैं" हूँ, वरन् मैं होते हुए भी नहीं हूँ। मेरा मस्तिष्क रखना तथा विवेकपूर्ण चिन्तनमें सक्षम होना भी मेरे होनेको सिद्ध नहीं करता। मेरा होना इसलिए नहीं कि मैं हूँ, वरन् मैं होते हुए भी नहीं हूँ, यह ऐसे कि यदि इस लेखका या पत्रिकाका माध्यम न हो तो मैं होता हुआ भी आपके लिए और आपकी भाँति लाखों लोगोंके लिए नहीं हूँ। मैं हूँ किन्तु लाखों लोगोके लिए नहीं ही हूँ। अर्थात् मैं होते हुए भी नहीं हूँ, इस बातसे इनकार नहीं किया जा सकता। आज हूँ, कल नहीं हूँगा यह तो मोटी-सी बात है, सभीको ज्ञात है। फिर क्या यह सच नहीं कि लाखों लोगोंके लिए न होते हुए भी मैं अपने लिए भी नहीं हूँ? मेरा होते हुए भी न होना एक मामूली बात है, जो स्वयंसिद्ध है, किन्तु भाव-रूप अस्तित्वका अस्तित्वमय होना—वह भी संस्कारहीन आदिम युगसे लेकर आजके बौद्धिकता-प्रधान युग तक—एक अहम बात है। संसार भरके प्राणियों-द्वारा (केवल मनुष्यों-द्वारा ही नहीं) उस अस्तित्वको नकारते हुए भी उसे एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्व मानना एक बहुत बड़ी मजबूरी है बहुत बड़ा सत्य है। यह सत्य विशुद्ध बौद्धिक नहीं, आन्तरिक है। एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्वकी अस्तित्वमयता (Existentiality) की अनुभूति मात्र बुद्धि और विवेकपूर्ण चिन्तनसे सम्भव नहीं अपितु आस्था और आत्मानुभूतिसे है जिसका सम्बन्ध प्राणिमात्र की मूल चेतनासे है। (याद नहीं पड़ता मैक्डूगलकी चौदह मूल प्रवृत्तियोंमें इस आस्थाजन्य मूल चेतनाका भी कोई स्थान है कि नहीं) एक माँ का अपने बेटेके लिए अपनेको उत्सर्ग कर देना विवेकपूर्ण चिन्तनका फल नहीं, वरन् मूल प्रवृत्यात्मक है। इस उत्सर्गका आदि स्रोत अनन्य प्रेम है जो सर्वथा आवश्यक अस्तित्वका ही दूसरा नाम है, जो शाश्वत है। यह आन्तरिक बुद्धिसे विवेकसे कोसों दूर है। यहाँ तक कि बन्दरका हवामें छलांग लगाकर अनुमानसे अधिक दूरी जान बीचसे ही पलटी छलांग लगाकर लौट आना विवेकपूर्ण होते हुए भी स्व-अस्तित्वके प्रति आस्थाका प्रतिफल है। खजहे कुत्तेका कुँकुहा-कुँकुहाके मरना, परतोंके कीड़ेका बिलबिलाना और गन्दे पानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दे निकलकर चिलचिलाती धूपमें ऐंठ जाना, दुपहरीके फूलका खिलना और झर जाना, एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्वके अस्तित्वमय होने-की मौन अस्वीकृति नहीं, वरन् अस्तित्वके अस्तित्वमय होनेका प्रतीक है, इसीलिए वे विवेक-शून्य होकर भी आस्थाके साथ अस्तित्वको जीते हैं। अतः मस्तिष्ककी विवेक-शून्यता उस अस्तित्वको नकारती नहीं। एक बालकके क्रिया-कलाप सहज हैं, स्वाभाविक हैं भले ही लोक-व्यवहारके प्रतिकूल हों। तोतली अस्फुट वाणी विवेकशून्यताकी परि-चायक कदापि नहीं, वरन् अस्तित्वके प्रति आत्माकी मूक किन्तु जीवन्त अभिलाषाको व्यक्त करती है। इस प्रकार, मस्तिष्कके विवेकपूर्ण चिन्तनकी अक्षमता एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्व अर्थात् ईश्वरके न होनेको सिद्ध नहीं करती।

थोड़ा और खुलासा करना चाहता हूँ। प्रत्येक प्राणीके मस्तिष्क होता है (अब तो पौधोंके भी दिमाग़ रखने लगी हैं)। अब प्रश्न यह है—मस्तिष्कका विवेकपूर्ण चिन्तनमें सक्षम होने-की डिग्री और अनुपातकी बातको यदि छोड़ दिया जाये तो कम बेश प्रत्येक प्राणीका मस्तिष्क विवेकशील है। बन्दरके विवेककी चर्चा ऊपर कही जा चुकी है। प्रायः सभी प्राणियोंके विषयमें यह बात काफ़ी हदतक सत्य हो सकती है। दूसरे, भाव-रूप एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्वको वाणी-द्वारा व्यक्त कर सकना स्वयं बड़े-बड़े बुद्धिजीवियों-के लिए सम्भव नहीं तो मूक पशुओंका कहना ही क्या? विद्या और विज्ञानसे हीन पशुओं जैसे व्यक्ति भी औरोंके लिए बुद्धि एवं विवेकहीन होते हुए भी अपने अन्तस्में ईश्वर-को सँजोये रहते हैं। वैसे भी कितना ही कोई विलक्षण बुद्धि एवं विवेकपूर्ण चिन्तनमें सक्षम क्यों न हो, वह सर्वदा एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्वकी अनुभूति नहीं कर पाता। उसकी तो अनुभूति कभी-कदा हो पाती है। ये अनुभूति, बोध और तादात्म्यके क्षण केवल विवेकपूर्ण चिन्तनमें सक्षम व्यक्तियोंको ही प्राप्त होते हों, अन्य प्राणियोंको नहीं, ऐसी बात नहीं। मृग-शावकोंका कुलाचें मारना, बाँ-बाँ करते हुए बछड़ोंका हरी दूबमें चौकड़ी भरना, कोयलका बैठे-बैठाये एकदमसे कुहुक उठना क्या है? एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्वसे अनुप्राणित सहज आनन्दोल्लासकी अभिव्यक्ति। मृत-पुत्रके शोकमें विह्वल माता-को सभीने देखा है, किन्तु अपने बछड़ेकी मृत्युपर गायको आँसू बहाते हुए और उसी-के मुँहपर मुँह रखकर साथ-साथ किसी बालकको रोते हुए बहुत कम लोगोंने। प्रेम और दुःख संक्रामक होते हैं। कहनेका अभि-प्राय यही कि पशु-पक्षियोंको विवेकपूर्ण चिन्तनमें अक्षम मानना ही मनुष्यके दम्भके सिवा और कुछ भी नहीं, और इसी आधार-पर ईश्वरके अस्तित्वको नकारना युक्ति-संगत नहीं। ईश्वर भाव-रूप नहीं सत्य-स्वरूप है। जब सत्य है, तो है; न होनेका प्रश्न ही नहीं उठता।

ईश्वर है, तो क्या है? एक प्रश्न-चिह्न (?)। कैसा है? अणुस्वरूप ब्रह्माण्डसे शून्य (Space) को व्याप्त होता हुआ ऊर्ध्वगामी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किन्तु अधोमुखी चरमोत्कर्ष-जैसा। उसकी ऊर्जाका अधोमुखी होना ही सृष्टिका कारण है, अन्यथा वह शून्यमें लटका हुआ साइन ऑफ़ इक्सक्लेमेशन (!); और कहाँ है? स्वयं प्रश्नके आदिमें, अन्तमें। और उत्तर-में—

"एक, बस अस्तित्वका अपने, सहारा;
गो मुझे आभास होता है
कि अपनेमें
कहींपर औरका भी है पसारा :"

—एक पाठक

■ अनदेखे अनजान पुल :

फ़रवरी अंकमें 'अनदेखे अनजान पुल' पर श्री ममता अग्रवाल और राजेन्द्रजीके पत्र पढ़े। इस बारेमें मुझे भी अत्यन्त एक अनुभव आप तक पहुँचाना है।

अभी पिछले दिनों सफ़री 'रेस्त्राँ'में राजेन्द्रजीकी निन्नी बैठी मिल गयी—यानी उपन्यास 'अनदेखे अनजान पुल'की नायिका। हाँ, सच बिलकुल काली-कलूटी, हीनताकी भावनासे ग्रस्त अति साधारण लड़की और सच मानिए, नाम भी उसका 'न'से ही है 'नन्दिता'। मेरी बहुत पुरानी परिचिता है, बेहद पढ़ती है। मैं उसके पास ही बैठती हुई बोली, "क्या हाल है? मज़ेमें हो न?"

"भई, मुझ-जैसीके भी कुछ हाल हो सकते हैं? मैं तो दुनियाके बाहर हूँ!" बड़ी रुखाई और व्यंग-भरे शब्दोंमें उसने कहा।

मैं कुछ असमंजसमें पड़ गयी थी-पर हँसते हुए ही मैंने कहा—"अरे, ऐसी हारी-हारी-सी बातें क्यों कर रही हो? आखिर बात क्या है? इतने दिनोंमें तो आज मिली हो, लेकिन मूडमें नहीं हो! लो चाय पीओ।" कपको लेती हुई वह बोली-"क्या बताऊँ, सचमुच मेरा मूड ही खराब है आज। हम-जैसी लड़कियोंके साथ तो लेखक भी न्याय नहीं करते!" फिर उसी साँसमें उसने पूछा—"तुमने राजेन्द्र यादवका उपन्यास 'अनदेखे अनजान पुल' पढ़ा है? एक काली, बदसूरत लड़कीकी मनःस्थिति और मानसिक संघर्षोंकी कहानी है यानी कुछ हद तक मेरी कहानी!"

मैंने कहा, "अरे हटो, तुम तो बड़ी सेण्टीमेण्टल हो। उपन्यास मैंने पढ़ा है। कुरूप-कांशस लड़कीका इतना स्वाभाविक मनोविश्लेषण किसी शिल्पी-द्वारा आज तक नहीं हुआ। कुण्ठाग्रस्त लड़कीकी मनः-स्थितियोंके ताने-बानेसे बुना, भाषा और शिल्पसे निखरा हुआ, यादवके अब तकके लिखे उपन्यासोंमें श्रेष्ठ है, जो केवल मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर ही आधारित नहीं है बल्कि सामाजिक जीवन और परिवेश-के सत्य को भी लेकर लिखा गया है।"

सम्पूर्ण उपन्यास रोचक और कौतूहल-पूर्ण तो है ही, पर प्रथम अंकमें हीनताकी भावनासे ग्रस्त निन्नीका बहुत ही सजीव और मार्मिक चित्रण हुआ है तथा उपन्यास का अन्त बड़े सुन्दर ढंगसे एक मानवी बिन्दु पर हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने कहा – "लड़की बोल्ड है।" उसने कहा – "ठीक है, अगर साहसी है तो क्या अन्त तक बोल्ड नहीं रह सकती थी। कोई भी कुरूप, काली लड़की, जिसको उठते-बैठते यही एहसास हो कि वह कुरूप है, कोई उसे नहीं चाहता, वह लड़की पतनकी ओर नहीं जा सकती चाहे अपनेको समाप्त कर दे – क्योंकि उसमें स्वाभिमान गोरी लड़कीसे अधिक होता है। इसलिए अपनी कुरूपताको ढकनेके लिए वह अपने गुणोंसे दूसरोंको आकर्षित करनेकी सोचती रहती है लेकिन उपन्यासकी नायिका निन्नी सागरके प्रति ही कुत्सित और अश्लील मनोभाव पोषण नहीं करती बल्कि सागर-द्वारा दिया गया 'चस्का' ही 'अब अनेक-अनेक रास्तोंमें फैलकर उसकी परितृप्तिके लिए फूट पड़ा था।' क्या निन्नीकी नियति यही होनी चाहिए थी ?

बैजलके आकस्मिक असतर्क व्यवहारसे निन्नीकी उत्सुकता बढ़ जाना जहाँ स्वाभाविक है सागरके साथ अशिष्ट और कुत्सित आचरण तथा मनमें अनैतिक व पाप पूर्ण विचारोंका आना उतना ही अस्वाभाविक लगता है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टिसे, निन्नी सन्ध्यासे ईर्ष्या करने लगती अथवा सन्ध्यासे बैजलके बारेमें कुरेद-कुरेद कर पूछकर अपनी जिज्ञासाएँ शान्त करती या परितृप्त होती तो अस्वाभाविक नहीं लगता, परन्तु लेखकके द्वारा 'सागर' की सृष्टि एक ऐसी 'फिसलन' है जो निन्नीको खाईमें डाल देती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"और हाँ, तुम मानवताकी बात कह रही थीं···न ?"

मैंने कहा, "हाँ, मैं दर्शनके मानवीय व्यवहारके बारेमें कह रही थी !"

"जिसे तुम मानवता कह रही हो, क्या वह 'छुपाकर' दी गयी दयाकी 'भीख' नहीं थी ? क्या इस क्रियाको तुम नैतिक शिष्टाचार मानोगी ?"

मैं चुप थी । मुझे लगा—आज मैंने इसे अच्छी तरह चाय भी पीने नहीं दी ।

वह अपनी कलाईकी घड़ी देखने लगी तो मैंने कहा, "अब चलें, घर आओ कभी तो, फिर बातें होंगी ।"

मुझे ऐसा आभास हुआ कि मुझसे वार्तालाप करके वह अपनेको बहुत हल्का महसूस कर रही जब कि मैं विचारोंमें उलझ गयी थी ।

उस दिन घर आकर मैंने सोचा था, (निन्नीकी नहीं) नन्दिताकी इन सारी बातोंको लेखक तक भेजकर उत्तर मांगूंगी। एक बात मेरे मस्तिष्कमें भी कौंधती रहती है कि हमारा समाज, दर्शनके इस मानवीय व्यवहारसे सन्तुष्ट होगा ?

—सविता बनर्जी
कलकत्ता

Phone : 25-2227

Universal Fire & General Insurance Company Limited

Transact :
Fire, Motor, Marine, Personal Accident, Fidelity, Guarantee, Burglary and all other forms of Miscellaneous Insurance Business.

Universal Insurance Building,
Sir P.M. Road, Bombay-1.
Chairman & Managing Director :
P.U. PATEL, B.A., B.COM. (Lond).

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झीलका तट और मुक्तिबोध

एक साहित्यिककी डायरी *

पृथ्वीसे आकाश तकको अपने चिन्तनसे नाप लेंगे। देखते-देखते, सोचते-सोचते जब मुक्तिबोध कुछ ऊबने लगते हैं तो उस पहाड़ी झीलमें एक कंकड़ी फेंक देते हैं—सारा दर्पण आन्दोलित हो उठता है, प्रतिबिम्ब बोलने लगते हैं। मुक्तिबोधने जीवन और जगत्-को इसी प्रकार देखा था—झीलकी गहराई और विस्तार, दोनोंके साथ।

मुक्तिबोधकी मूल चेतना एक कविकी है, पर ऐसा सजग और जीवित कवि जिसने अपनी चेतनाके द्वार अन्तिम क्षण तक खुले रखे। चिन्तनकी गहराइयोंमें डूबते हुए प्रायः रचनाकार स्वयंकी परिक्रमा करने लगते हैं, पर समस्त आत्मविश्लेषणके बावजूद मुक्तिबोध समीपवर्ती जीवनसे

---

* लेखक : गजानन माधव मुक्तिबोध, प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी; पृष्ठ-संख्या : ११६; मूल्य : २.५०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घनिष्ठ रूपमें सम्पृक्त हैं। कविधर्मका निर्वाह करना वर्तमान युगमें कितना कठिन हो गया है। इस ओर संकेत करते हुए मुक्तिबोधने 'एक लम्बी कविताका अन्त'में स्वयं लिखा है कि 'मैंने बार-बार सोचा है कि गद्य लिखूँगा ताकि कुछ पैसे पा सकूँ, पर यह कविता मेरा पिण्ड नहीं छोड़ती—।' और जो रचनाकार अपने काव्यसे एकाकार हो गया अथवा काव्य जिसकी आन्तरिक विवशता हो, उसकी सच्चाई, ईमानदारी और निष्ठा कितनी उच्चकोटिकी होगी, कहनेकी आवश्यकता नहीं। मुक्तिबोधने डायरीके ये पृष्ठ लिखे हैं, इन्हें गद्य-विधाके अन्तर्गत रखा जायेगा, पर इनकी निर्मिति कवि-चेतनाने की है, इसमें सन्देह नहीं। यहाँ वर्णन, विस्तार-का लोभ नहीं है, पर कुछ महत्त्वपूर्ण चिन्तन-क्षण हैं जो डायरीके पृष्ठोंपर बिखर गये हैं।

'एक साहित्यिककी डायरी' में कुछ पात्र आते हैं, पर इनके माध्यमसे चरित्रांकन करना मुक्तिबोधका उद्देश्य नहीं था। सम्भव है इनमें-से कुछ पात्र उन्होंने जीवनसे प्राप्त किये हों, पर इनकी सार्थकता यह है कि वे रचनाकारके प्रश्नोंको, शंकाओंको गति देते हैं। इससे डायरी-शिल्पकी सम्भावनाओंका एक नया द्वार खुलता है। प्रायः दैनन्दिनियाँ वर्णनात्मक होकर रह जाती हैं, पर मुक्तिबोधकी सर्जनात्मक आकांक्षा यहाँ भी शिल्प और माध्यमकी सीमाएँ स्वीकार नहीं करती, वह उसमें नयी सम्भावनाओंको जन्म देती है। अपना विवेचन, आत्मनिरीक्षण करते हुए कवि मुक्तिबोध स्वीकार करते हैं कि व्यावहारिक बुद्धिसे आजका मनुष्य कुछ सफलताएँ प्राप्त कर सकता है, पर [illegible] उपलब्धि कैसे कहा जाये? सांसारिक समझौता क्या एक प्रकारसे मानव व्यक्ति-की पराजय नहीं है? विद्रोहके कण मूक [illegible] पर स्रष्टाके पास शेष ही क्या रह जायेगा? लगता है, मुक्तिबोधके रचनाकारने अपने भीतरके सांसारिक बोधसे निरन्तर संघर्ष किया। वे बाहरसे देखनेपर टूट भले ही गये हों, पर भीतर-भीतर वे सर्जनरत हैं। जब मुक्तिबोध कहते हैं, 'छोटी-सी एक [illegible] चिनगारी उस बुझे ज्वालामुखीसे बड़ी ही, वह उसे चुनौती भी देती है,' तो वे आधुनिक चेतनाका स्वागत करते हैं। वे आधुनिकता केवल फ़ैशन तक सीमित रहना है, उसे साहित्यके लिए मुक्तिबोध खतरे मानते हैं क्योंकि उसमें हमारी पूर्ण निष्ठा शक्ति नहीं है। उन्होंने इन खतरोंकी ओर इशारा भी किया है।

मुक्तिबोध 'एक साहित्यिककी डायरी' में एक कविकी पूर्वाग्रहरहित स्वतन्त्र चिन्ता अपने निष्कर्ष निर्भीकतासे प्रकाशित करते है। यह चिन्तन काल्पनिक, वायवी न होकर जीवनप्रसूत है, अनुभव-परिचालित है। मुक्तिबोधके मौलिक चिन्तनका प्रकाश 'कामायनी : एक पुनर्विचार' में भी हुआ है पर वहाँ उनकी प्रवृत्ति खण्डनात्मक है। वे तार्किक अधिक हो गये हैं। पर डायरी इन रेखाओंमें वे अधिक स्वतन्त्र स्वच्छन्द हैं इसीलिए उनके चिन्तन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कतिपय सूत्र स्पष्ट रूपमें हमें प्राप्त होते हैं। 'फैण्टैसी' मुक्तिबोधका बड़ा प्रिय शब्द रहा है और 'कामायनी' पर लांछन लगाते हुए उन्होंने बार-बार इसका प्रयोग किया है। पर यहाँ डायरीमें, फैण्टैसीका स्वरूप दूसरा है। कलाके तीन क्षणोंकी चरचा करते हुए उन्होंने कहा है कि कलाका प्रथम क्षण है, जीवनका उत्कृष्ट तीव्र अनुभव-क्षण। दूसरा क्षण है, इस अनुभवका अपने कसकते-दुखते पुलोंसे पृथक् हो जाना और एक ऐसी कलाका रूप धारण कर लेना मानो वह फैण्टैसी अपनी आँखोंके सामने ही खड़ी हो। तीसरा और अन्तिम क्षण है, इस फैण्टैसीके अवयव होनेकी प्रक्रियाका आरम्भ और उस प्रक्रियाकी परिपूर्णावस्था तककी गति-मानता"। इस प्रकार मुक्तिबोधके लिए कला एक अनवरत गतिशील यात्रा है, जिसमें नये तत्त्व सम्मिलित होते जाते हैं, और जो रचनाकार जिस प्रकारके तत्त्वोंका उसमें करा सकेगा—कृति उसीके अनुरूप आकार पा जायेगी। फैण्टैसीपर किंचित् विस्तारसे विचार करते हुए मुक्तिबोधने कहा दिया है कि 'फैण्टैसी अनुभवकी कन्या है और उस कन्याका अपना स्वतन्त्र विकासमान व्यक्तित्व है। वह अनुभवसे उत्पन्न है इसलिए वह उससे स्वतन्त्र है।' निश्चय ही मुक्तिबोधकी 'फैण्टैसी' के विषयमें यह एक स्वतन्त्र उपपत्ति है और यहाँ मत-भेदकी गुंजायश है, पर उनकी मौलिक विचारणाको तो स्वीकारना ही होगा। समीक्षाके कुछ सूत्र डायरीके पृष्ठ हमें देते हैं जिनसे कवि मुक्तिबोधके संकलन 'चाँदका मुँह टेढ़ा है'* की ग्रन्थियोंको खोलनेमें भी हम सहायता पा सकते हैं। पर दूसरी दृष्टिसे ये चिन्तन-सूत्र कविताओंके पूरक भी माने जा सकते हैं।

मुक्तिबोध विस्तारमें भटकनेकी अपेक्षा गहराइयोंमें उतरना अधिक पसन्द करते हैं, इसीलिए कहीं-कहीं उनके चिन्तन-सूत्र उलझे हुए भी प्रतीत होते हैं, पर ध्यान देनेपर लम्बी भूमिकाओंके भीतर कोई सूक्ष्म निरीक्षण प्रतिपादित दिखाई देगा। वे संयुक्त परिवारके ह्रासका पिछले बीस वर्षोंकी महान् घटना मानते हैं। उन्होंने एक ही वाक्य कहकर छोड़ दिया है, पर इसके भीतर शताब्दियोंसे स्थापित भारतीय समाजके विशृंखल हो जानेका जो संकेत है, उसने हमारी जीवन-धाराको ही परिवर्तित कर दिया। मार्क्सने 'भारतमें ब्रिटिश राज्य' नामक अपने लेखमें (द न्यूयार्क डेली ट्रिब्यूनके २५ जून १८५३ अंकमें प्रकाशित) इसी ओर संकेत करते हुए लिखा है कि "इंग्लैण्डने भारतीय समाजके समस्त ढाँचेको इस प्रकार नष्ट कर डाला है कि निकट भविष्यमें उसके पुनर्गठनके कोई आसार नहीं दिखाई देते। इससे 'हिन्दू' ने अपना प्राचीन संसार खो दिया है और नया पानेकी उसे आशा नहीं, जिससे वातावरण निराशापूर्ण हो गया है।" मुक्तिबोध और मार्क्स अपनी-

* कवि : गजाननमाधव मुक्तिबोध, प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ; वाराणसी; पृष्ठ-संख्या : ३१८; मूल्य : ८·००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी चिन्तन-धाराओंमें एक ही निष्कर्षपर आये हैं—मुक्तिबोधके पास इतिहास, अर्थ-शास्त्रका वह विस्तृत अध्ययन भले न हो, जिस विद्या-सम्पत्तिके सहारे स्थितियोंका विवेचन करनेमें सुगमता होती है, पर वे समाजशास्त्रके जिज्ञासु विद्यार्थी थे और अपनी निरीक्षण-क्षमतासे बिखरे हुए सूत्रोंमें क्रम स्थापित कर लेते हैं अथवा स्थितियोंके मध्य किसी निष्कर्षको खोज लेते हैं। उनका मनोविज्ञान-सम्बन्धी ज्ञान भी इसमें उनकी सहायता करता है। मुक्तिबोध-का चिन्तन अपने वर्तमानसे इतने घनिष्ठ रूपमें सम्बद्ध है कि युगबोधका पूर्ण परिपाक हमें उसमें प्राप्त होता है। वे समाजकी जटिलताओंके भीतर अपनी संवेदनशील निरीक्षण-क्षमतासे झाँक लेते हैं और उसे सहज मानवीय भावसे प्रस्तुत कर देते हैं। वहाँ व्यंग्य नहीं है और न किसी अहंकारी-का-सा पाण्डित्य-प्रदर्शन! मुक्तिबोधका चिन्तन मानवीयता परिचालित चिन्तन है—एक सदाशयतासे उद्वेलित। इसी चिन्तनको न समझनेवाले उनके काव्यमें दुरूहता पाते हैं।

'एक साहित्यिककी डायरी' मुक्तिबोधकी जीवन-सम्बन्धी चिन्तना है और साहित्यको भी उसी क्रममें इसे स्वीकार करना होगा। जब वे 'स्वयंसे अस्वयं होने' की बात कहते हैं तब मुझे उन्हींके शब्द याद आते हैं कि उन्होंने सारा वन्य-प्रदेश श्वासमें भर लिया। सारी पृथ्वी वक्षमें छिपा ली। और मैं यही सोचता हूँ कि ज़िन्दगी दूर तक फैली हुई झील है और मुक्तिबोध चिन्तनकी गहराइयोंमें डूबे हुए हैं।

—प्रेमशंकर

पाँच उपन्यास :

'वे दिन'* निर्मल वर्माका प्रथम उपन्यास है जो उन्होंने चेकोस्लोवाकियामें बिताये गये अपने तीन वर्षोंकी अनुभूतियोंको माध्यम बनाकर लिखा है। इस दृष्टिसे उपन्यासका परिवेश भारतीय नहीं हैं। एक देशकी पृष्ठ-भूमिमें कई और देशोंके पात्रोंको लेकर उन्होंने एक तरहसे युद्धोत्तर सम्पूर्ण युरॅपको ले लिया है। रायना एक सैलानी युवती है जो अपने पतिसे सम्बन्ध-विच्छेदके बाद अपने पुत्र मीताको लेकर जाड़ेके दिनोंमें चेकोस्लावाकियाकी यात्रापर आयी है। आर्थिक संकटकी स्थितिमें एक भारतीय विद्यार्थीको (जिसकी कहानी ही प्रस्तुत उपन्यास है) उसका दुभाषिया बननेका अवसर मिलता है। रायना और उस भारतीय विद्यार्थीके कुछ दिनोंके सम्पर्कों अनुभूतियोंको लेकर ही पूरा उपन्यास चलता है। निर्मल वर्माकी कहानियोंके समान ही इस उपन्यासमें भी परम्परागत कथा-तत्त्वका अभाव-सा है। चरित्रों

* लेखक : निर्मल वर्मा, प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन (प्रा०) लि०, दिल्ली; पृष्ठ-संख्या : २३२ ; मूल्य : ५.५०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुभूतियों, स्थितियों और परिवेशको कुछ इस ढंगसे प्रस्तुत करना कि वह स्वयं उपन्यासका एक पात्र-सा लगे। – यही सब कुछ इस उपन्यासकी उपलब्धि है। लिखनेकी एक सहज-अकृत्रिम भंगिमा निर्मल वर्माकी सबसे बड़ी विशेषता है। अनुभूतियोंकी पारदर्शी सचाई और उनका कलात्मक संयम सचमुच भव्य और आकर्षक है।

यह ठीक है कि युद्धोत्तर युरॅपका जो चित्रण उपन्यासमें हुआ है उससे कोई बहुत बड़ा प्रयोजन स्पष्ट नहीं होता है। परन्तु वह एकदम निष्प्रयोजन भी नहीं है। उपन्यासका सीधा-सादा शीर्षक ही यह स्पष्ट कर देता है कि अपने युरॅप-प्रवासके अनुभवों-सम्पर्कोंको ही लेखक एक बार फिरसे जी लेनेका आग्रह लिये है। इस दृष्टिसे जितना महत्त्वपूर्ण उसमें रायना और फ्रांज़की अनुभूतियोंका चित्रण है उतना ही महत्त्वपूर्ण उपन्यासका सम्पूर्ण भौगोलिक परिवेश है जिसकी चित्रार्थ पृष्ठभूमिपर ही सारी रेखाएँ और रंग सार्थकता रखते हैं। इसके अतिरिक्त उसके होनेको लेकर यह भी कहा जा सकता है कि युद्धोत्तर-युरॅपका वह परिवेश ही लिखित युद्धकी नृशंसताको संकेतित करके आगत युद्धकी भयावहताको रेखांकित करता है। उपन्यासके अधिकांश विदेशी पात्र ऐसे हैं जिन्होंने प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूपसे युद्धकी विभीषिकाओंको झेला-भोगा है। एक बार बाज़ारमें घूमते हुए रायना एक दुकानमें और बहुत-से खिलौनोंके साथ बच्चोंके खेलनेकी बन्दूकें भी देखती है। बातोंके बीच वह कहती है : "मैं उन्हें सह नहीं सकती…"

फ्रांज़की ट्रेजेडी किंचित् भिन्न स्तरपर है। वह उस परिवेशके साथ जुड़ा है जहाँ उस जैसे प्रतिभाशाली युवकोंको अपनी रुचिके कामके लिए सामान्य-सी सुविधाएँ भी अप्राप्त हैं और जिसकी नियति अपनी प्रतिभाके क्षेत्रमें काम करनेके बजाय किसी सेनीटोरियमसे ही अधिक बँधी दिखती है। युद्धकी दुर्दान्त छायाएं जैसे असमय ही उसके भविष्यपर छा गयी हैं। वह कहता भी है : "तुम्हें अपना बचपन लड़ाईमें नहीं गुज़ारना चाहिए…वह ज़िन्दगी-भर पीछा नहीं छोड़ती।"

ऐसा तो बहुधा हुआ है कि लेखक इस परिवेशकी एक नितान्त निजी सत्ता मानकर चला है और अधिकांश स्थलोंपर उसे ही साध्य माना है। परन्तु उसमें हमेशा ही किसी उद्देश्यका अभाव ध्वनित होता हो ऐसा नहीं है।

उपन्यासकी सबसे महत्त्वपूर्ण उपलब्धि रायना है। वह एक परित्यक्ता और अभिशप्त नारी है। कुण्ठित जीवनकी सत्तासे अधिक वह अपनी मानवीय प्रवृत्तियों और मानसिक-शारीरिक आवश्यकताओंके सहज स्वीकारका सामान्य रास्ता ही अपनाती है। भारतीय परिवेशमें वह सब-कुछ किसी हद तक असामान्य और अनैतिक लग सकता है परन्तु उस सबसे उसकी आन्तरिक पीड़ा ही उभर कर आयी है। और फिर ऐसा नहीं कि कुछ असामान्य होने और करनेकी चेतना उसे नहीं है। मानसिक और शारीरिक तौरपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह अपनेको अकेला नहीं रख सकती यह उसकी सबसे बड़ी विवशता है।

उसके आन्तरिक द्वन्द्व और सूक्ष्म अनुभूतियोंको लेखकने बड़े कौशलसे आँका है। सिर्फ़ यह कहनेसे कि उसके चरित्रके अंकनमें लेखक और अधिक मनोवैज्ञानिक गहराई अपना सकता था – आरोपको कोई स्पष्ट धरातल नहीं मिलता है।

शिल्पकी बारीकियों, संकेतोंके प्रभाव और मौलिक अभिव्यंजनाकी दृष्टिसे निर्मल वर्माके स्तर तक बहुत कम नये लेखक उठ सके हैं। रायनाका परित्यक्त पति उपन्यासमें कहीं नहीं आया है लेकिन रायना और उस भारतीय विद्यार्थीके बीच उसका ठोस अस्तित्व हमेशा बना रहता है, उनके न चाहनेके बावजूद जैसे वह उनपर बुरी तरह हावी है। होस्टेलके कमरेमें रायनाके मुक्त-समर्पणवाला पूरा अंश बहुत संकेतपूर्ण, सहज, आकर्षक और प्रभावशाली है।

यह ठीक है कि 'वे दिन' हिन्दी उपन्यास-साहित्यकी कोई बहुत महत्त्वपूर्ण उपलब्धि नहीं है परन्तु वह एकदम सामान्य और अवहेलनीय भी नहीं है। उसके लिखनेके पीछे कोई महत्त्वपूर्ण सामाजिक प्रयोजन नहीं है, लेकिन लेखककी क्षमताओंका रेखांकन उससे होता है। निर्मल वर्माके युरॅप-प्रवासको अभी अधिक समय नहीं गुजरा है लेकिन फिर भी पात्रों, घटनाओं, स्थितियों और सम्पूर्ण परिवेशके प्रति वह एक तटस्थ – निर्वैयक्तिक दृष्टि अपना सके हैं यह कम बड़ी बात नहीं है।

– मथुरेश

■

राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्लीसे प्रकाशित ये चारों उपन्यास तीन तरहके हैं। तरह माने, अँगरेज़ीमें जिसे 'टाइप' कहते हैं।...

ज़िन्दगीकी राह श्री बालशौरी रेड्डी-की मौलिक कृति है। रेड्डी साहबने, लगता है, इसे दक्षिणके या बम्बईके चलताऊ चित्र-पटोंपर नज़र रखते हुए लिखा है। वैसे उपन्यासमें जगह-जगह बहुत पुराने लेखकों-की तरह वे परिवार, समाज, व्यक्ति, भाग्य आदिपर अपने विचार अलगसे व्यक्त करते हैं—जैसे टिप्पणी (कमेण्ट्री) दे रहे हों! कथा हवाई दुर्घटनामें पिता सोमनाथकी मृत्युसे शुरू होती है और उनकी छोटी पुत्री सरलाकी आत्महत्यासे समाप्त। सरलाका प्रेमी ('नायक' कहूँ या नहीं उसे ?) सुरेश भी रेल-दुर्घटनाका शिकार होता है। सरला अविवाहिता ही मातृत्वके पथपर थी सो सुरेशकी मृत्युके समाचारसे उसकी आँखोंके सामने अँधेरा छा गया और उसने आत्महत्या कर ली—ज़िन्दगीकी एक ग़लत राह चुन ली। सोमनाथकी बड़ी पुत्री सुहासिनीने परम्परित विवाहकी राह अपनायी सो ज़िन्दा रही, उसने ज़िन्दगीके उतार-चढ़ाव देखे। मज़ेकी बात यह है कि सुरेश और सरला दोनों 'मेडिको' थे, बर्ताव और बातोंसे इतने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीधे-सीधे नहीं लगते। सुहासिनीने पतिके रूपमें राजारामको चुना था जिसने कि उसकी पैतृक सम्पत्ति, सौंपे गये दायित्वको न निभाकर स्वाहा कर दी थी। सपाट चरित्रों-की ऐसी और भी कितनी ही सद्भावग्रन्थियाँ इस उपन्यासके ताने-बानेमें पड़ गयी हैं जो इसकी कथावस्तुको गांठ-गठीली छोड़ देती हैं। संवादोंमें चुस्ती नहीं है, न सहज वास्तविकता। भाषामें 'गाम्भीर्य' इतना है कि प्रेम-प्रसंगोंमें भी बोझिल लगती है। कौन-सी सही राह दिखाना चाहते हैं रेड्डीजी पाठकको—यह शायद वे ही बता सकते हैं। मैं तो इसके किसी भी पात्रकी ज़िन्दगीकी राहको पसन्द नहीं कर सका।....

खिलती कली मामा वरेरकरका 'लघु' उपन्यास है। अनुवादक हैं रामचन्द्र रघुनाथ सर्वटे। शैली है—नायक की प्रथम पुरुषमें कही, नयी कथावाली। मामाजीकी नाट्यकारीय और औपन्यासिक प्रतिभाने इसमें 'प्लाट' (कथानक) भी दिया है और चरित्र भी उतने सपाट नहीं होने दिये हैं। प्राचीन और नवीनकी क़शमक़शको वह इसकी 'वस्तु' बनाना चाहते हैं—पर इस ओर विशदता नहीं आ पायी। नायक-नायिकामें जिस गम्भीर प्रणयका आभास मात्र देकर वे उन्हें एकत्र कराते हैं वह बहुत-कुछ कठपुतलियोंका मिलान-जैसा लगता है। यों इसके पात्रोंकी बातें और बर्ताव चुस्त हैं—सामान्यतः चरित्र-चित्रण भी मौजूं है और भाषामें ओज एवं प्रवाह है। पर अनुवादमें 'मराठीपन' सर्वत्र झलकता है। फिर भी अपने अनूदित रूपमें यह रचना पठनीय है। लेखकीय कौशलके कारण कथामें इतना सधाव और हृद्य स्वाभाविकता आ गये हैं कि पाठक आसानीसे पढ़ता चला जाता है। यों पहली कृतिके समान इसका अन्त कोई भी पहले से ही भाँप सकता है। इसे 'उपन्यास' नहीं 'लम्बी कहानी' कहा जाये तो कोई अन्याय नहीं होगा। मामाजी-की कहानी कहनेकी कलाका एक अच्छा-सा निदर्शन-मात्र है यह, आधुनिक मराठी उपन्यासका नमूना नहीं।

सात समुन्दर पार डॉ० मुल्कराज आनन्दके 'अक्रॉस द ब्लैक वाटर्स' उपन्यासका अनुवाद है—श्री हंसराज रहबरकी क़लमसे। अँगरेज़ी मूलकी रूप-रेखा जनवरी और अप्रैल १९३७ के बीच बार्सीलोना—मैड्रिड (स्पेन) में प्रस्तुत और जुलाई दिसम्बर १९३९ के बीच चिन्नोर (ऑक्सन) में इसे फिरसे पूरा लिखा गया था। यह तो लेखकीय वक्तव्य हुआ। प्रकाशकीय वक्तव्यमें कहा गया है: 'इस अत्यन्त रोचक उपन्यासमें भारतीय सेना-के जवानोंके उस (तात्पर्य प्रथम विश्वयुद्धसे है—स०) इतिहास-प्रसिद्ध अभियानकी गौरव-गाथा पूर्ण माननीय संवेदनाके साथ पहली बार प्रस्तुत हुई है। यह केवल एक युद्ध-उपन्यास ही नहीं एक श्रेष्ठ कलाकृति भी है...।'

इसमें सन्देह नहीं कि उस ज़मानेकी 'भारतीय सेना' के जीवनकी बातोंकी बहुत-कुछ जानकारी डॉ० आनन्दने 'पैतृक उत्तराधिकार' के प्रामाणिक रूपमें पायी है और उसे बड़ी खूबीसे इस उपन्यासमें सँजोया-पिरोया है। शुरूसे आखिरतक लालूका चरित्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संवेद्य होकर ही उभरा है : भारतीय सैन्य-शौर्यकी यह कहानी मानवीय दृष्टिकोणसे बड़े सशक्त शब्दोंमें कही गयी है—एक उपलब्धि है, हिन्दीके पाठकोंके लिए। अनुवाद भी बहुत अच्छा हुआ है।

पर डॉ० मुल्कराज आनन्दके दूसरे उपन्यासोंकी तरह इसमें घटना-प्रवाह ही अधिक मिलता है। मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि या पात्रोंके चेतना-प्रवाहमें पैठनेकी सूझ-बूझका इसमें सर्वथा अभाव है—कहीं-कहीं झलकियाँ दिखाकर ही लेखकको सन्तोष हो जाता है। यद्यपि इसके लिए इसमें विस्तृत क्षेत्र (स्कोप) था। अर्थ-क्रीत भारतीय सैनिक प्रथम विश्व-युद्धमें न तो देशभक्तिके नाते गये थे और न मानवताके रक्षार्थ ही। इस बृहत् युरॅपीय युद्धमें हुए और पाये पक्षपात-पूर्ण व्यवहारोंकी प्रतिक्रिया भारतीय सैनिकोंके मनपर १९४७ तक होती रही थी। लेखकने जैसे इसे मननीय ही नहीं समझा है। शायद उन दिनों डॉ० आनन्दने यह सोचा हो कि इस ओर अधिक कहेंगे तो पुस्तक जब्त हो सकती है या अँगरेज़ी प्रकाशकों-द्वारा प्रकाशनार्थ अस्वीकृत। जो भी हो, क्या यह सम्भव नहीं था कि यह एक बार और फिरसे लिखी जाती, इस बार स्वतन्त्र भारतके चण्डीगढ़में ताकि स्वातन्त्र्य-पूर्वके भारतीय सैन्य जीवनके इस पक्षका भी एक सधी क़लमसे अंकन हो सकता।

डॉ० सदाशिव श्री बनफूल (डॉ० बलाईचाँद मुखोपाध्याय) की एक कथाकृति है, श्रीमती माया गुप्त-द्वारा अनूदित।

बँगलामें पूजाके अवसरपर पत्र-पत्रिकाओंमें समूचे 'कई-कई उपन्यास' छापनेकी प्रथा अब एक अनिवार्य परम्परा बन गयी है। अपने मूल रूपमें मैंने इसे—जहाँतक मुझे याद आ रहा है—किसी पूजा-संस्करणमें ही पढ़ा था। तब भी यह एक सहृदय-चरित्र-चित्रण-प्रधान कृति लगी थी और अब भी। डॉ० सदाशिवकी मसीहाई (डॉक्टरी) से सम्बन्धित कितनी ही ऐसी घटनाओंका सुन्दर समावेश है इसमें, जो उनके व्यक्तित्वके कितने ही मानवीय पहलुओंको उभारती हैं। इच्छा होती है, डॉ० सदाशिव जैसे डॉक्टर जगह-जगह हों और देश और समाजकी वर्तमान स्थितियोंमें दिशा-हारा व्यक्तियोंके सामने ऐसे जीवन्त आदर्शकी प्रतिष्ठासे वस्तु-स्थितिमें परिवर्तन घटें। किन्तु फिर यह डर भी लगता है कि कहीं उनको भी डॉ० सदाशिवकी तरह हत्या ही न कर डालें हम! जो सर्वत्र सर्वथा-सर्वदा दूसरोंका कल्याण ही करते फिरते हैं (डॉ० सदाशिवके समान) उन्हें हमारे समाजका शक्तिशाली या अन्धा समुदाय 'ज़िन्दा' नहीं रहने देता। बनफूल-जीने इसकी ओर विचार्य संकेत किया है और वर्तमान जन-जीवनकी (विशेषतः बिहार-के छोटे-छोटे शहरों और क़स्बों-हाटोंकी) दशाओंका यथार्थ चित्रण। अपनी सीमाओंमें यह एक रोचक कृति है—सर्वथा पठनीय। अनुवाद अच्छा है वैसे 'परश्री कातरता' आदि जैसे बंगला शब्दोंकी विवृति आवश्यक थी।

—पृथ्वीनाथ शास्त्री

■■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांस्कृतिक जागरण, साहित्यिक विकास-उन्नयन और
राष्ट्रीय ऐक्य एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी साधिका

तथा

भारतीय भाषाओंकी सर्वोत्कृष्ट
मौलिक साहित्यिक कृतिपर
प्रतिवर्ष एक लाख रुपये
पुरस्कार योजना प्रवर्तिका

भारतीय ज्ञानपीठ

उद्देश्य

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध
और अप्रकाशित सामग्रीका
अनुसन्धान और प्रकाशन

तथा

लोक-हितकारी मौलिक
साहित्यका निर्माण

संस्थापक : श्री शान्तिप्रसाद जैन

अध्यक्षा : श्रीमती रमा जैन

प्रधान एवं सम्पादकीय कार्यालय : ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता–२७
विक्रय केन्द्र : ३६२०/२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, दिल्ली–६
प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी–५

अप्रैल १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने ढंगके अनूठे और अनमोल

भारतीय ज्ञानपीठ

के

अभिनव, महत्त्वपूर्ण एवं संग्रहणीय प्रकाशन

● **चौंसठ कविताएँ** : इन्दु जैन

न कहें कुछ और, पर भिन्न और विशेष इन कविताओंके परिचयमें अवश्य कहा जायेगा। यह इसलिए नहीं कि श्रेष्ठ कविताके निकषपर ये खरी उतरती हैं, बल्कि इसलिए कि ये हिन्दी कविताकी अधुनातन दिशा, भाव-बोध, और शिल्पकी प्रामाणिक उपलब्धिका संकेत देती हैं। और इसलिए भी कि सब प्रकारके उलझावासे ये मुक्त हैं और अपना अर्थ बड़ी सहजताके साथ स्वयं खोलती हैं।

सब चौंसठ कविताएँ हैं, पर प्रत्येक जैसे एक सौम्य बिजलीकी कौंधका निमिष हो जो अन्दरकी अकुलाहटको, किसी दर्द या उल्लासको, सतरंगी प्रकाश-रेखाओंकी भाषामें उकेर जाये। अनुभूतियोंकी ऐसी अभिभूत करनेवाली अभिव्यक्ति इनमें हुई है कि क्षितिजपर क्षितिज सामने खुलते चले जाते हैं और भीतर एक गन्ध-भरी चाँदनी-सी छिटक पड़ती है। कविताओंकी पंक्ति-पंक्तिसे साक्ष्य मिलता है कि अन्तश्चेतना भी कितनी मुखर हो सकती है।

स्वभावतः इसके लिए उपयुक्त शब्दोंकी खोज-पकड़ की गयी है और परिचित शब्दोंको नयी चेतना, नयी भाव-ध्वनि दी गयी है। संग्रहकी अनेक-अनेक पंक्तियां नितान्त अछूती उपमाओंकी चूनर पाकर अपनेमें पूरी कविता बन गयी हैं। इन कविताओंमें दो-दो चार-चार शब्दोंके अनगिनत फ्रेमोंमें कहीं कोई भाव-चित्र टंगे हैं, कहीं समूची कविताका प्राण किसी एक रंगमें मुखर हो उठा है, और कहीं एक पूराका पूरा वातावरण ही रेखाओंमें बोल उठा है। 'चौंसठ कविताएँ' एक बहु-आयामी चेतना-मानसकी रचना है।

मूल्य ३.००

ज्ञानोदय

अप्रैल १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिनिधि रचनाएँ (मराठी) : प्रा० ना० सी० फड़के

साहित्यको प्राणवत्ता और सार्थकता उन महान् प्रतिभाओंसे प्राप्त होती है जो अपनी सर्जनात्मक शक्तिको दो-चार असाधारण कृतियोंमें समो देते हैं। किन्तु शृंगार और शोभा उसे वे प्रदान करते हैं जिनकी प्रतिभा छोटी-सी डालीपर अनेक फूल होकर फूटती है। इनसे जैसे महासागरके उर्मिल विस्तारका बोध होता है, उनसे उसकी स्थिर गम्भीरताका। और महासागर नाम झुठला जाये यदि दोनोंमें-से कोई एक गुण न रहे।

प्रस्तुत रचना-संग्रह भी एक फूलडाली है। अनेक फूल, और एक ही डालीके, पर कई रंगके। रचनाओंकी यह विधा-विविधता संग्रहको एक अतिरिक्त आकर्षण और मूल्य दे देती है। पर इस फूलडालीकी सारी विशेषता इसमें नहीं कि एक समर्थ साहित्यकारकी प्रतिनिधि रचनाएँ सामने आयीं, विशेषता इसमें है कि अन्यान्य फूलडालियों-भरे आँगनमें इसका झुकना-झूमना संकेत बन जाता है कि कैसी-कैसी गन्धके फूल किधर लगे हैं। ये रचनाएँ एक और दृष्टिसे भी महत्त्वकी हैं। नया भाव-बोध और शिल्प इन्हें साहित्यके विकास-क्रममें एक स्थान देनेको बाध्य होगा और जो परम्परानिष्ठ हैं उन्हें इनकी मोहकता आगेको प्रेरित और प्रोत्साहित करेगी। प्रस्तुत हैं एक ही स्थानपर संगृहीत लेखककी स्वसंकलित चौदह प्रतिनिधि रचनाएँ : चार कहानियाँ, एक उपन्यास-अंश, एक एकांकिका, तीन ललित निबन्ध, एक शब्द-चित्र, दो यात्रा-वर्णन तथा दो वैचारिक निबन्ध (प्रबन्ध)।

मूल्य ४.५०

दर्शन-अनुचिन्तन : म० म० गिरिधरशर्मा चतुर्वेदी

दर्शनोंका विषय-क्षेत्र ऐसा है कि सामान्य बुद्धिका मानव इधर देखता ही नहीं। जो विद्वान् और पण्डित हैं वे भी बहुतेरे इसे गहन कहते हुए कतराकर निकल जाते हैं। इस पृष्ठभूमिमें प्रस्तुत कृति सहज ही विशेष उपयोगी और महत्त्वकी हो उठती है।

चुने-चुने चौदह निबन्धोंका यह एक सुसम्बद्ध संकलन है जो भारतीय दर्शनोंके समूचे स्वरूप और प्रमुख सिद्धान्तोंका सुन्दर परिचय देता है। और ऐसी सरल और सुबोध भाषामें सारा विचार-विवरण उपस्थित करता है कि सामान्य जन इसे अपने ही लिए लिखा गया मानें और सुधी-विशेषज्ञ देखें कि सब-कुछ ज्ञातव्य और नया चिन्तन भी सुबोध ढंगसे लिखा जा सकता है।

ज्ञानोदय

अप्रैल १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनीषी विद्वानोंके लिए यह कृति एक और दृष्टिसे भी विचारणीय होती है। बहुतोंका मत है कि भारतीय दर्शनोंमें एक विसंगति-जैसी दिखाई पड़ती है। महामहोपाध्यायजीने प्रस्तुत कृति-द्वारा बड़े तर्कके साथ सिद्ध किया है कि इनमें परस्पर विरोधभाव कोई नहीं है बल्कि ज्ञानका एक क्रम है : ऐसा क्रम जो बुद्धिको स्थूलसे उत्तरोत्तर गहनतम सूक्ष्म तक ले चले। महामहोपाध्यायजी 'भारतीय षड्दर्शन' संज्ञा भी 'चार्वाक, बौद्ध, जैन, वैशेषिक, सांख्य, वेदान्त' इन छह दर्शनों-को देते हैं।

पुस्तक सभी दृष्टियोंसे सबके लिए पठनीय और मननीय है। इसके चौदह निबन्ध जैसे चौदह बीजवट हैं, भारतीय दर्शनशास्त्रोंका सार-सर्वस्व एक अंजुलिमें!

मूल्य ३.००

● **भारतीय संस्कृतिका विकास (वैदिक धारा)** : डॉ० मंगलदेव शास्त्री

यह प्रवृत्ति रही है कि अपनी भारतीय संस्कृतिके अंगभूत तत्त्वोंको पूर्वापर परिस्थितियोंसे असम्बद्ध इकाइयोंके रूपमें देखें। ऐसा भी हुआ है कि सारी संस्कृतिको अन्धविश्वास तक कह दिया गया। किन्तु जहाँ यह आधुनिकताके नामपर प्रतिक्रियावादिता हुई उस प्रवृत्तिका परिणाम यह हुआ कि समष्टि जीवनमें भेद-बिलगावकी संकीर्ण भावनाएँ पैठ गयीं। व्यक्ति, समाज, और देश, सभीके लिए यह जितना अहितकर रहा उसका इतिहास साक्षी है।

इन दोनोंसे भिन्न एक और दृष्टि, समन्वयात्मक ऐतिहासिक दृष्टि, भी है। इसके अनुसार देशकी विभिन्न धार्मिक और साम्प्रदायिक धाराएँ एक ही व्यापक प्रगतिशील भारतीय संस्कृतिकी पूरक और पोषक हैं। वास्तवमें यही दृष्टि स्वाभा-विक और वैज्ञानिक भी है। इसके मूल दिशासूत्र प्राचीन कालतक पहुँचे हुए हैं। इसी इतिहास-मूलक समन्वयात्मक दृष्टिके सहारे साम्प्रदायिक विरोध-विषमताओंके स्थानपर एकसूत्रता लाकर नव्य भारतके निर्माणको एक दृढ़ आधार दिया जा सकता है।

प्रस्तुत लेखकने इसी विशिष्ट दृष्टिसे भारतीय संस्कृतिके सम्पूर्ण विकासका अध्ययन किया है। यह प्रथम खण्ड वैदिक धाराका अध्ययन उपस्थित करता है। अध्ययन सर्वथा प्रमाणोंपर आधारित है और साथ ही सरस और रोचक भी है। आचार्य नरेन्द्रदेवजीके शब्दोंमें : "यह कार्य इस लेखक-जैसे अधिकारी विद्वान्-द्वारा ही हो सकता था और यह कृति भारतीय संस्कृतिके अध्ययनमें पथ-निर्देशका काम करेगी।"

मूल्य ७.००

ज्ञानोदय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाँद का मुँह टेढ़ा है : स्व० गजानन माधव मुक्तिबोध

"मुक्तिबोधकी लम्बी कविताओंका पैटर्न विस्तृत होता है। एक विशाल म्योरल पेण्टिंग – आधुनिक प्रयोगवादी; अत्याधुनिक। जिसमें सब चीज़ें ठोस और स्थिर होती हैं; किसी बहुत ट्रैजिक सम्बन्धके जालमें कसी हुई।....मुक्तिबोधकी कविता जो कथानक होती है, इसमें विद्रूप और क्रूर भाव रूपकको भरपूर नाटकीय बनानेके लिए आवश्यक होता है। चित्रोंमें जो खुरदरी स्पष्टता आँखोंमें चोट-सा करती है, वह पूरी कवितामें, अपने विस्तार-क्रमके कारण, रूपक भावको कुछ बिखरा देती है। फिर भी कविकी बेपनाह नर्वस शक्तिका आभास पद-पदमें मिलता है।

"एक चट्टानी कड़ापन, एक खुर्री नग्नता, हिंस्र चाँदनी, अपशकुनोंसे भरा मानवलोक, रातका या दिनका।....ज़िन्दगी जो विद्रूप और क्रूर व्यंग्य है।....

"अगर किसीने स्वयं मुक्तिबोधकी ज़बानी उनकी कोई रचना सुनी हो, तो....कविता समाप्त होनेपर ऐसा लगता है जैसे हम कोई आतंकित करनेवाला फ़िल्म देखनेके बाद एकाएक होशमें आये हों।....

"....चूंकि वह पेण्टर और मूर्तिकार हैं अपनी कविताओंमें – और उनकी शैली बड़ी शक्तिशाली, कुछ यथार्थवादी मेक्सिकन भित्तिचित्रोंकी-सी है।...

"वह एक-एक चित्रको मेहनतसे तैयार करता है, और फिर उसके अम्बार लगाता चलता है। एक तारतम्य। जैसे किसी ट्रैजिक नाट्य-मंचपर एक उभरती भीड़का दृश्य – पूर्व-नियोजित प्रभावके साथ खड़ी।....

"इनके प्रतीक प्राचीन गाथाओंके टुकड़े जान पड़ते हैं। मगर इन टुकड़ोंमें सन्दर्भ आधुनिक होता है। यह आधुनिक यथार्थ कथाका भयानकतम अंश होता है।.... मुक्तिबोधका वास्तविक मूल्यांकन अगली, यानी अब आगेकी पीढ़ी निश्चय ही करेगी; क्योंकि उसकी करुण अनुभूतियोंको, उसकी व्यर्थता और खोखलेपनको पूरी शक्तिके साथ मुक्तिबोधने ही अभिव्यक्त किया है। इस पीढ़ीके लिए शायद यही अपना खास महान् कवि हो।"

मूल्य ८.००

नाटक बहुरूपी : डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल

"नाटकोंकी भीड़ और नाटक नहीं," शॉ चुटकी लिया करते। "आधुनिक नाटक अभी लिखा नहीं गया," आल्बेर्तो मोराविया कहते सुने जाते हैं। अब इनसे कौन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उलझे। उनसे कहना निरर्थक होता, इनसे कहनेमें संगति क्या। फिर, ऐसा कुछ है भी तो! अच्छे नाटक कम हैं, आधुनिक नाटक और भी कम।

इसी सन्दर्भमें यह छोटा-सा संकलन 'नाटक बहुरूपी' प्रस्तुत है। इसके द्वारा भी कहना यह नहीं है कि ये नाटक अच्छाईका आदर्श हैं; कहना यह उपयुक्त होगा कि ये अच्छाईका एक नमूना हैं और अनेक दृष्टियोंसे आधुनिक तो हैं ही। डॉ० लाल समकालीन हिन्दी नाटक-लेखनमें पहले ही कुशल कलाकार थे, अब तो सागर-पार जाकर वहाँका भी बहुत-कुछ देख और गुन आये हैं।

इतनी सहज-सच्ची और मर्म-छूती रचनाएँ हैं ये कि पढ़ी जायें तो पाठकको अपनी ही बात कही जाती मिले, और रंगमंचपर आयें तो दर्शक अपने ही सत्यों और सपनोंको सामने देखता हो। ऐसे नाटक हिन्दीमें सचमुच बहुत नहीं जिन्हें ईजीचेयरपर पढ़ते अच्छा लगे और स्टेजपर देखकर प्रेरणा मिले।

मूल्य ३.५०

- **अपने-अपने अजनबी** : अज्ञेय

भारतीय साहित्योंमें अपने ढंगका अद्वितीय उपन्यास। मृत्युसे साक्षात्कारको विषय बनाकर जीवन और नियतिका सरल मार्मिक विवेचन। मृत्यु-विषयक पूर्व और पश्चिमकी दृष्टियोंकी टकराहट, दोनोंके मिलन-द्वारा मानव-जीवनके एक नये आयामका उन्मेष।

मूल्य ३.००

- **ज़िन्दगी और गुलाब के फूल** : उषा प्रियंवदा

कहानियाँ और कहानियाँ! मगर ये कहानियाँ बिलकुल भिन्न हैं। न भाषाका उलझाव है यहाँ न शैली-शिल्पके गोरखधन्धे, और संग्रह-भरमें एक जो कहानी हो जिसे पढ़ें और दिनों अपने भीतर मँडराता हुआ न पायें! अतिरिक्त विशेषता और यह कि नयी कहानी इन्हें अपना कहेगी तो औरोंके लिए ये परायी न हो सकेंगी।

मूल्य २.५०

- **खोयी हुई दिशाएँ** : कमलेश्वर

ग्यारह कहानियाँ जो एक विशेष दृष्टिको लेकर चुनी गयीं। जीवनमें महत्तम मूल्योंके प्रति आस्थाका स्वर इनका कथ्य है और घुटन तथा पराजयमें जीनेकी विवशताको नियति न मानकर नये सन्तुलन और अर्थोंकी खोज इनकी दिशा। इनमें जीवनका अध्ययन आया है, मात्र सर्वेक्षण नहीं। असम्भव होगा कि संग्रहकी कोई भी कहानी पढ़ें और मनपर प्रभाव न छोड़े।

मूल्य २.५०

ज्ञानोदय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• **प्रतिनिधि रचनाएँ : पंजाबी : कर्तारसिंह दुग्गल**

किसी साहित्यिक व्यक्तित्वको पहचानने-समझनेके लिए आवश्यक है कि उसका विभिन्न विधाओंका लेखन कहीं एक-साथ देखें और पढ़ें। प्रस्तुत पुस्तकमें श्री कर्तार-सिंह दुग्गलका एक समूचा नाटक, दो एकांकी, दो उपन्यासोंके अंश, संस्मरण और निबन्ध तो हैं ही, कहानी और कविताएँ तक संकलित हैं। कभी पंजाबी और उर्दूके और अब तो उतने ही हिन्दीके भी, इस चहीते साहित्यकारकी ये सभी रचनाएँ उसकी प्रतिनिधि रचनाएँ हैं : उसके साहित्यिक व्यक्तित्वसे परिचित होनेके लिए बिलकुल अनिवार्य।

मूल्य ३.५०

• **एक साहित्यिक की डायरी :** स्व० गजानन माधव मुक्तिबोध

ऐसी कृतियाँ बहुत नहीं होतीं जो अपने समकालीन साहित्यका श्री-वर्द्धन कर सकें। 'एक साहित्यिककी डायरी' ऐसी एक कृति है। अपने शैलीगुण और विचारतत्व दोनोंकी विशेषताके कारण यह ध्यान आकर्षित करेगी और आदर-मान पायेगी। डायरी-विधाका यह रूप तो इसीमें देखनेको मिलेगा। जैसे निबन्धात्मक कहानी वैसे यह निबन्धात्मक डायरी। निबन्ध पढ़े न जायें, इन्हें पढ़नेकी सहज ललक हो। सीधा-सादा प्रारम्भ, फिर कहीं एकालाप, कहीं एक काल्पनिक पात्रसे वार्तालाप, पर आदिसे अन्ततक भाव और स्वर डायरीका। ये कविता, आत्माख्यानके विविध स्तरोंपर एक साथ चलती है; या यों कहें कि इन सबको एकमें समन्वित करके एक नयी ही विधा-सम्भावनाकी ओर इंगित करती है।

मूल्य २.५०

• **सूरज का सातवाँ घोड़ा :** डॉ० धर्मवीर भारती

'गुनाहोंका देवता' के बाद लेखकके औपन्यासिक कृतित्वका एक दूसरा पहलू जो जितना महत्त्वपूर्ण है उतना ही आकर्षक। दावेके साथ कहा जा सकता है कि हिन्दीमें अभीतक ऐसी कथा-शैलीका प्रयोग नहीं किया गया। किन्तु कृतिका महत्त्व केवल साहित्यिक ही नहीं है, वास्तवमें उससे कहीं अधिक व्यापक और गम्भीर है : हमारे समूचे मध्यवर्गीय समाजके सांस्कृतिक पुनर्निर्माणसे सम्बद्ध होनेके कारण है।

मूल्य २.००

• **मेज़ पर टिकी हुई कुहनियाँ :** रमेश बक्षी

इन कहानियोंको देखकर कोई कहे तो अत्युक्ति न होगी कि आधुनिक कथाशिल्प और आधुनिक जीवन-दृष्टि दोनोंको एक साथ स्वाभाविक रूपमें सजा हुआ यहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाया। कभी पढ़ते-पढ़ते लग सकता है कि ये कहानियाँ नहीं हैं, पर फिर अगले ही क्षण बरबस लगेगा कि ये ही तो सचमुच कहानियाँ हैं : आजकी !

मूल्य ३.५०

● **नये रंग नये ढंग** : लक्ष्मीचन्द्र जैन

हिन्दी गद्य-शैलीकी सर्वथा नयी रचना जिसके हर पृष्ठपर युगकी छाप और प्रतिभाकी चमक अंकित है। सम्भव नहीं कि पुस्तक हाथमें लें और पढ़कर समाप्त किये बिना रख दें।

मूल्य २.००

● **सूखा सरोवर** : डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल

एक ऐसा स्पष्ट, जीवन्त और हृदयग्राही नाट्यरूप जो लोक-गाथाकी मनोभूमि और रंगशैलीसे यहाँ अवतरित है – विशुद्ध लोक-गाथा-परक रससिक्त नाट्य-शिल्प-में। इस रंगमंचका सर्वथा एक अभिनव स्वरूप और आधुनिक रंगमंच अन्वेषणका एक नया उदाहरण।

मूल्य २.००

● **शिखरों का सेतु** : डॉ० शिवप्रसाद सिंह

शैल-शिखर रमणीक होते हैं। जो चिर-प्रेरक भी हों, ऐसे शिखर विश्व-साहित्यके महाप्राण व्यक्तित्व होते हैं या फिर अतीतके जीवन और प्राणोंकी वे मार्मिक कथाएँ-व्यथाएँ होती हैं जो उन्हें 'अतीत' कभी नहीं बनने देंगे। प्रस्तुत पुस्तक-द्वारा अनेक ऐसे ही शैल शिखरोंसे साक्षात्कार होगा जिसे पाकर 'लघु मानव' को बरबस लगे कि वह लघु ही रहनेके लिए नहीं। जीवन-यात्रामें कभी अपनेको थकता देखें तो भी एक क्षण इन शिखरोंका सहारा लें, फिर चरण आगे पथपर आप बढ़ चलेंगे।

मूल्य ३.५०

● **चीड़ों पर चाँदनी** : निर्मल वर्मा

बीसवीं शतीके स्मारक-चिह्नोंकी खोजमें एक भारतीय लेखकके यह संस्मरण अपने आपको खोजनेका प्रयास हैं – अपनेसे बाहर निकलकर स्वयं अपनेको गवाह बनाने-का प्रयत्न – और इसीलिए ये संस्मरण एक व्यक्तिका निजी 'टेस्टामेण्ट' भी हैं। स्मृतिके ये अंक निर्मल वर्मा युरॅप-प्रवासकी लम्बी अवधिमें समय-समयपर सँजोते रहे हैं। बादमें जोड़नेपर जो मिला, वे न कहानियाँ थीं न डायरी – बल्कि कुछ ऐसे अनुभव-खण्ड जिनमें एककी निरपेक्षता दूसरेकी आत्मीयतासे घुल-मिल गयी है।

मूल्य ३.००

■■

ज्ञानोदय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैकलियॅड एण्ड कम्पनी लिमिटेड

मैकलियॅड हाउस,

३, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता-१

मैनेजिंग एजेण्ट्स, सेक्रेटरी और कोषाध्यक्ष

जूट मिल्स

- अलेक्जेण्डर जूट मिल्स कं० लि०
- नेल्लीमारला जूट मिल्स कं० लि०
- ईस्टर्न मैन्यूफैक्चरिंग कं० लि०
- केलविन जूट कं० लि०
- वेवरली जूट मिल्स कं० लि०
- एलायन्स जूट मिल्स कं० लि०
- चितावलसाह जूट मिल्स कं० लि०
- एम्पायर जूट मिल्स कं० लि०
- प्रेसिडेंसी जूट मिल्स कं० लि०

चाय के बगीचे

- अमलुकी टी कं० लि०
- मतकावा टी कं० लि०
- डिब्रूगढ़ कं० लि०
- मार्गरेटस होप टी कं० लि०
- रानीचेरा टी० कं० लि०
- सुंगमा टी कं० लि०
- तिंगामीरा टी सीड कं० लि०
- तीयरून टी कं० लि०
- बागमारी टी कं० लि०
- बोरमाह जान टी कं० (१९३६) लि०
- बैजू वेली कं० लि०
- राजभात टी कं० लि०
- रूपचेरा टी कं० लि०
- तेलोईजान टी कं० लि०
- तिरींहन्ना कं० लि०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

License No. 51. Licensed to post without pr payment of postage. REGD. No. L-2036

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर
साहूपुरम् में
डाकखाना : अरुमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक
ध्रांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स :

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लि०

१५ ए, हॉर्निमैन सर्किल
फोर्ट, बम्बई–१

टेलीफोन : २५१२१८-१९-१०,

तार : सोडाकेम, [illegible]

भारतीय ज्ञानपीठ काशीकी ओरसे बाबूलाल जैन फागुल्ल-द्वारा प्रकाशित और सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी में मुद्रित ।

CC-0. Kathbali Domain Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मई १९६५

शनिवार

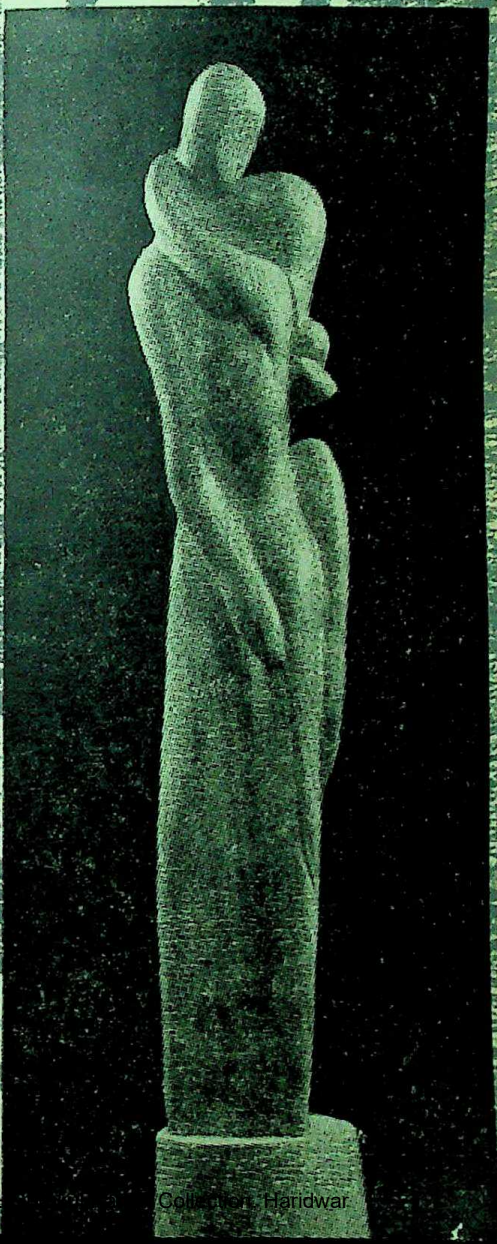

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक विकास-उन्नयन
सांस्कृतिक अनुसन्धान-प्रकाशन
राष्ट्रीय एकता एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी

साधिका
विशिष्ट संस्था

भारतीय ज्ञानपीठ

[स्थापित सन् १९४४]

संस्थापक
श्री शान्तिप्रसाद जैन

अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

ज्ञानोदय

मई १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मई १९६५

ज्ञानोदय

आधुनिक भावबोध, कला-संवेदना और नवीनताका प्रतिनिधि मासिक

इस अंकमें :

- आत्मकथाका एक पृष्ठ
- भटकती आत्माओंकी शिकायतें
- आधुनिक हिन्दी साहित्य और मध्यवर्गकी भूमिका
- कुछ ख़त : कुछ लकीरें
- ॐ नमो नमो नेहरू !
- कबन्धोंका नाच
- मच्छरके पंखोंकी आवाज़
- तीसरा व्यक्ति
- शिवाजी रामदासके शिष्य नहीं थे ?
- हिन्दी मन्त्रालय तथा कुछ सुझाव

■

सिमन द' बाउवा, उपेन्द्रनाथ अश्क, विष्णु प्रभाकर, गिरिजाकुमार माथुर, शम्भुनाथ सिंह, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', मँवरमल सिंघी, पुरुशिव रेगे, हृदयेश, मधु राय, शशिप्रभा शास्त्री, विश्वजीत, उमाशंकर, भास्कर प्रसाद द्विवेदी, सियारामशरण प्रसाद आदि

■

सम्पादकीय कार्यालय :

९, अलीपुर पार्क प्लेस,

कलकत्ता-२७

■

वितरण-कार्यालय :

भारतीय ज्ञानपीठ,

रोड, वाराणसी-५

■

वितरक :

कोलमैन एण्ड कं० लि०,

बम्बई-१

■

सम्पादक :

लक्ष्मीचन्द्र जैन, रमेश बक्षी

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मई १९८८

यह अंक : १.००
वार्षिक : १०.००
त्रैवार्षिक : २५.००
सतवार्षिक : ५०.००
पन्द्रहवर्षीय : १००.००
आजीवन : १५१.००

मुखपृष्ठ :
काष्ठ-शिल्प :
बी० एस० कुशवाह

■ लम्बी कविताएं :
● कबन्धोंका नाच : गिरजाकुमार माथुर ३
● इतिहास-बोध : शम्भुनाथ सिंह ५
■ स्मरण :
● ।। ॐ नमो नमो नेहरू ।। : भँवरमल सिंघी २८
● कुछ ख़त : कुछ लकीरें : नेहरू-शां पत्र-व्यवहार तथा प्रेम मंथिलके लि
■ कहानियाँ :
● मच्छरके पंखोंकी आवाज़ : मधु राय ३३
● यादगारें और वसीयत : शशिप्रभा शास्त्री ३७
● कमज़ोर कपड़ेकी धोती : हृदयेश ४३
● सँपेरा : विश्वजीत ५१
■ नयी विधा :
● हथेली पर हथेलीकी छाप : वीरेन गोहिल ५३
■ एकांकी :
● तीसरा व्यक्ति : विष्णु प्रभाकर ६४
■ धारावाहिक उपन्यास :
● सावित्री-३ (लोककथावाला मोर) : पुरुशिव रेगे (अनु० माधव मोहो
■ एक प्रश्न :
● शिवाजी रामदासके शिष्य नहीं थे ? : उमाशंकर ९५
■ विशेष :
● सापेक्ष डायरी : आत्मकथाका एक पृष्ठ : सिमन द' बाउवा (अनु
● किसी एककी उलझन : भटकती आत्माओंकी शिकायतें :
सियाराम शरण
● अनुचिन्तन : आधुनिक हिन्दी साहित्य और मध्यवर्गकी भूमिका :
भास्कर प्रसाद
● सात सफ़र : नाजायज शिकायतें : उपेन्द्रनाथ अश्क ५७
■ अन्य स्तम्भ :
● सहचिन्तन : हिन्दी मन्त्रालय तथा कुछ सुझाव :
कन्हैयालाल मिश्र
● समीक्षा : नयी कहानी : अण्डर-स्टैण्डिगकी वांछा : सुदर्शन चोप
● पत्र-प्रतिक्रिया : उपेन्द्रनाथ अश्क, से० रा० यात्री, कृष्णकुमार
सुन्दर लोहिया, मनमोहन मदारिया, हृदयेश, प्रेम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कबन्धों का नाच, इतिहास-बोध

गिरिजाकुमार माथुर

तार सप्तकसे कविताके नवीनतम सप्तक तक समर्थ और अलग।

शम्भुनाथ सिंह

नवीन बोधके शिल्पी।

१-कबन्धों का नाच

इस दुनिया में
जहाँ अब दो-तीन वि-मुख दुनियाँ हैं
मैं बीच में ध्रुवान्तों के टकराता हूँ
परिधियों से बाहर
विभक्त सत्य-सा
पछाड़ खाता हूँ—

मेरे चारों ओर
महाकार हिडिम्ब-से बवण्डर
विक्षिप्त चक्र वेग से
नाच रहे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी लपेट में
मुँह बाये बजरबट्टुओं को ढाँप रहे
नीले-पीले झक्कड़ों में
मेरा धरातल-हीन
डगमग डोलता
मरी लकड़ी-सा कबन्ध

उठता है, गिरता है, ऊपर उड़ जाता है
क्षत-विक्षत होकर
औंधे मुँह
अभंग चक्कर खाता है

--और दूर किसी जले
इस्पाती भवन के बचे खम्भे पर
मेरा कटा हुआ सिर
पाताल राज-सा
अपने ही कबन्ध का विक्षिप्त नृत्य देखता है
देखता है
और रनिंग कमेण्ट्री करता जाता है

यह ही क्या परिणति थी
मेरे उन विभक्त सत्यों की
कि सहसा सब मिलकर
सबको कबन्ध करें
और फिर
एक साथ सारे सत्यों का ही अन्त करें
तब फिर क्या होगा--
कोई एक और सत्य
मेरे कबन्ध को
कागज़ के बजरबट्टू-सा
कटी डोर पकड़
नीचे उतारेगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहेगा
कि फिर से कबन्ध बनने को
शीश चिपकाओ तुम
मुझको सत्य होने को
अपने को फिर से झुठलाओ तुम।

— गिरजाकुमार माथुर

इतिहास-बोध

...हाड़ मध्य काल का
...हरा जलाशय है।
...ऊपर
...ली बड़ी-बड़ी मछलियों को
...ने पहले ही
...महाजाल में पकड़ लिया था
...हें किताबी शो-केसों में बन्द कर
दिया था।
...रा जाल छोटा है,
...क दिन लम्बे और
...चौड़े
...को लेकर
...ही
...शय में कूद पड़ा था
...चे धँसता हुआ
...की अतल गहराइयों में
...गया था,
...नीले पत्थरों की नुकीली चट्टानों
वाली गुफाएँ हैं।

सैकड़ों-हज़ारों वर्ष पुरानी
असंख्य दीर्घजीवी
छोटी-छोटी मछलियाँ
इन्हीं गुफाओं में रहती हैं;
जो उनके बाहर निकल कर
कभी जलाशय के ऊपरी तल पर नहीं जातीं,
और इतिहास जिन्हें
आज तक नहीं पकड़ सका है।
मगर मुझको तो इन मछलियों ने
ख़ुद ही घेर लिया।
उनमें-से एक सोन ज़र्द मछली बोली--
"मैं पद्मिनी की दासी स्वर्णकेशी हूँ!
मैंने जौहर नहीं किया;
नहीं कर सकी थी।
राजा ने मुझे तहख़ाने में डाल दिया था
क्योंकि मैंने राजाके नौजवान दास को
प्यार किया था
जब कि मेरी देह केवल राजा की थी!
जौहर के बाद

...हास-बोध : शम्भुनाथ सिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तहख़ाने की सुरंग से मैं इस कुण्ड में
चली आयी
और मछली बन गयी ।
क्या तुम अलाउद्दीन हो ?
काश तुमने दर्पण में मुझे भी देखा होता !"
दूसरी सफ़ेद मछली बोली—
"इस अभिशप्त कुण्ड की गुफाओं में
तुम क्यों आये मेरे राजशिल्पी !
तुम्हें तो मुझसे अधिक
वे मूर्तियाँ प्यारी थीं
जिन्हें तुमने विजय-स्तम्भ के
शिलाखण्डों पर उरेहा था ।
वे यक्ष-कन्याएँ
वे कुम्भस्तनी अप्सराएँ
जो देवताओं की परिचारिकाएँ थीं,
तुम्हारी छेनी की नोक पर
नृत्य करती थीं ।
मगर
तुम उस दिन कहाँ थे मेरे शिल्पी,
जब राजा ने रात में
मुझे तुम्हारे घर से पकड़ मँगाया था
और दूसरे दिन मैं इस कुण्ड में कूद कर
चाँदी की मछली बन गयी थी ?"
तीसरी पीली मछली बोली—
"आओ मेरे राजकुमार !
मुझे पहचाना ?
मैं वह किसान की बेटी हूँ
जिसने अपने खेत में घुसते
तुम्हारे घोड़े की रास
पकड़ ली थी,
और फिर एक दिन
तुम्हारी रानी बन गयी थी ।
मगर मैं तुम्हारे महल में
कभी नहीं गयी,
और गयी भी तो उस समय
जब तुम युद्ध-भूमि में मारे जा चुके थे !
मैं दौड़ती-चिल्लाती
इस कुण्ड में कूद पड़ी थी
और आज भी मछलियों की रानी
बन कर इस अभिशप्त कुण्ड में
काल-क़ैद भोग रही हूँ ।
मुझे मुक्त करो मेरे राजकुमार,
मुझे इस जल के प्राचीरों से
बाहर कर दो !"
फिर चौथी बोली····
और पाँचवी बोली···
और फिर तो सभी एक साथ
इस तरह बोलने लगीं
कि मैं कुछ भी नहीं सुन सका ।
पर मछलियाँ ख़ुद ही तैर कर
मेरी झोली में चली आयीं
और मेरा जाल खुला का खुला
रह गया ।

■

लेकिन
ये मछलियाँ मेरे किस काम की
जो अपने आप
मेरी झोली में आ गयी हैं !
नहीं, मैं जाल डालूँगा ही ।
और मैंने पानी के तल में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाल फैला दिया
और जब उसे अपनी ओर खींचा
तो देखता हूँ कि
जाल में सिमट कर ढेर की ढेर चीज़ें
मेरे पास आ गयी हैं
मसलन टूटी तलवारें, जंग लगी ढालें
टूटे-मुड़े ज़िरह-बख्तर,
[illegible]ियाँ, हथौड़े
[illegible]काएँ और पंखों की क़लमें,
[illegible]त ग्रन्थाधार और स्वर्ण-रजत-मुद्राएँ।
[illegible] सबको उठाकर
[illegible] झोली में डाल लिया
[illegible] जाल को
[illegible] अन्य गुफा के भीतर फैला दिया।

■

[illegible] इस बार जाल की कड़ियाँ
[illegible] भारी वस्तु में उलझ गयी थीं।
[illegible] ताक़त लगा कर उसे खींचा
[illegible] किसी बड़ी पुरानी मछली की आशा में
[illegible] का मुँह बाँध दिया।

[illegible]
[illegible] एक बहुत बड़ा काला नाग था
[illegible] पहली दृष्टि में
[illegible] लम्बी बाँबी मछली समझा था!
[illegible]वता ने मेरी ओर देखा
[illegible] अपना फन फैला कर
[illegible] झुका दिया
[illegible] वह बाअदब झुक कर
मुझे सलाम कर रहा हो।

मैं भयभीत हो गया
और जाल मेरी मुट्ठी की पकड़ से
बाहर हो गया।
नाग ने करवट ली
और आराम से जाल के बाहर होकर
अपनी गुफा में सरकता चला गया।
मैंने जाल समेटा
और स्तम्भित-सा
अपनी खाली-भरी झोलियाँ लिये
जल की सतह पर उठ आया।

■

लो, अब तो सूरज सिर पर आ गया है,
पद्मिनी-महल की छाया
उसके पाँवों के नीचे
वहाँ सिमट गयी है
जहाँ इस जलाशय की
अभेद्य गुफाएँ हैं
जिनके भीतर की हलचल
अब फिर पूर्ववत् शान्त हो गयी है।
मैंने जाल को सूखने के लिए
क़िले की ऊँची दीवार पर
टाँग दिया है,
झोलियाँ सामने के बूढ़े वृक्ष की
डाल में लटका दी हैं
और अब
विजय-स्तम्भ की सीढ़ियों पर
टाँगें फैला कर
बैठ गया हूँ।

—शम्भुनाथ सिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदयकी ओरसे
लेखकोंके लिए विशेष निवेदन :

- कृपया अपनी रचनाओंकी टंकित अथवा साफ़ लिखी प्रति भेजिए और उसकी प्रतिलिपि अपने पास अवश्य रख लीजिए।
- लेख, निबन्ध, कहानी और हमारे स्तम्भोंके अन्तर्गत यदि आप सामग्री भेजें तो ज्ञानोदयके अधिकसे अधिक आठ पृष्ठोंसे रचना लम्बी न हो। यदि कोई लम्बी रचना भेजना ही चाहें तो सम्पादकसे पहले पूछ लें।
- हमारा प्रयत्न यही रहेगा कि अधिकसे अधिक एक मासके अन्दर ही निर्णय-की सूचना आप तक पहुँच जाये। रचना भेजनेके बाद एक मास तक आपको कोई सूचना न मिले तो ही हमें लिखिए। स्वीकृत रचनाओंकी सूचना पाते ही कृपया यह अवश्य लिख भेजिए कि रचना अप्रकाशित-अप्रसारित है और ज्ञानोदयमें प्रकाशित होने तक अप्रकाशित-अप्रसारित ही रहेगी। टिकिट-लगा लिफ़ाफ़ा रचनाके साथ हुआ तो ही अप्रकाशनीय रचनाएं लौटायी जा सकेंगी, अन्यथा नहीं। स्वीकृति-सूचनाकी सम्पुष्टि भेजनेके बाद तथा अस्वीकृतिकी सूचना प्राप्त होनेके बाद कृपया उस रचनाके सम्बन्धमें पत्र-व्यवहार न कीजिए। क्षमा करें, उन रचनाओंको लौटाना हमारे लिए असुविधाजनक होगा जिनके लिए वापसी-टिकिट आप निर्णय-की सूचना पानेके बाद भेजते हैं।
- लेखकोंको, उनकी रचना जिस अंकमें प्रकाशित होगी, वह अंक अवश्य भेज दिया जायेगा, साथ ही दो-दो ऑफ़-प्रिण्ट्स भी।
- हमेशा पारिश्रमिक यथासम्भव अग्रिम और रचना प्रकाशित होनेके एक सप्ताह बाद भेज दिया जाता है।
- सारे सम्पादकीय पत्रव्यवहार केवल इस पतेपर कीजिए :

सम्पादक : ज्ञानोदय; ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मकथाका एक पृष्ठ

सिमन द' बाउवा

फ्रान्सीसी कथाकार, काल-बोध
जिनकी रचनाओंमें विशेष महत्त्व रखता है।

■

• • • • • •

सहसा मेरे, हमारी टोलीमें एक नया बम गिरा। आर्थर कोस्लर – पेरिसमें इनका 'ट्विस्ट एण्ड बार' अभिनीत होना था। उनके मित्रोंने हमें आश्वस्त किया था कि उसके यहाँ आनेकी वजह उसका एण्टी-स्टालिनिज़्म नहीं था। कोस्लरने एक-एक अमरीकन अख़बारको यह कहा भी था कि यदि वह फ्रेंच होता तो डिगालकी डिक्टेटरशिपके नीचे रहनेकी बजाय पेटागोनियामें निर्वासित होकर रहना पसन्द करता।

सर्वप्रथम हम 'पॉण्ट रॉयल' में मिले। उसने ख़ुद ही पहले सार्त्रको अपना परिचय दिया, 'हैलो, मैं कोस्लर हूँ।' दूसरी बार उसकी माँके यहाँ भेंट हुई। वहाँ बड़े अधिकारके साथ, मगर औरतोंकी तरह, मुसकराकर उसने सार्त्रसे कहा, "तुम मुझसे अच्छे उपन्यासकार हो, मगर दार्शनिक नहीं।" वह इसपर एक किताब लिख रहा था जिसकी रूपरेखा वह वहीं समझाने लगा कि कैसे आदमी दैहिक भौतिकतासे वंचित हुए बिना भी स्वतन्त्र रह सकेगा। वह दिमाग़की भीतरी रचनाका वर्णन करने लगा। मैंने मनमें सोचा कि निश्चय ही कोस्लर दार्शनिकसे अधिक उपन्यासकार है। वह 'थालामस' शब्दको 'तालामूज़' बोल रहा था और मुझे हँसी आ रही थी – क्योंकि इस नामके केक मैं बच्चोंकी तरह खाया करती थी।

उसके तीन-चार सप्ताहके इस प्रवासके दौरान पेरिसमें हम कई बार मिले। एक शाम उसके साथ खाना भी खाया। खानेपर कामू, उसकी पत्नी फ्रेन्साइन और श्रीमती कोस्लर (मामेन) भी थीं। खानेके बाद एक हल्के नाचके लिए 'रियू द ग्रेविलियर्स' भी गये। वहाँ पहुँचते ही उसने एक शाही निमन्त्रण दे डाला – शेरेजेडमें! साधारणतया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कामू या मैं कोई भी ऐसी जगह नहीं आये थे। कोस्लरने जकुस्की, वोदका और शैम्पेन-तीन क़िस्मकी शराब मँगायी और विचित्र कॉकटेल बनायी।

उसी शामको सार्त्रको 'सारबोन' में युनेस्कोके तत्त्वावधानमें 'लेखकका दायित्व' विषयक भाषण देना था और अभीतक उसने उसे तैयार नहीं किया था। लेकिन अल्कोहल, जिप्सी संगीत और हमारे गरमागरम वाद-विवादोंने उसके लिए भूमिका तैयार कर दी। कामू अपने एक प्रिय विषयपर बोल रहा था: "यदि सच बोलना सम्भव होता···" कोस्लर कड़े कष्टके साथ कामूको सुन रहा था। "दोस्त बने रहना सम्भव नहीं है, यदि आप लोग विभिन्न राजनीतियोंसे सम्बद्ध हैं तो···"

हम लोग कोस्लरको गम्भीरतासे नहीं ले रहे थे। हम उसकी उन साम्यवाद-विरोधी जड़ोंकी गहराइयोंसे अपरिचित थे। कोस्लर-का आत्मालाप जारी था कि बीचमें कामूने बोलना शुरू कर दिया – "हम लोगोंके बीच कॉमन चीज़ यही है कि हम लोग 'व्यक्ति' को महत्त्व देते हैं, सूक्ष्मकी बजाय स्थूलको, सिद्धान्तोंकी बजाय मनुष्योंको, हम दोस्तीको राजनीतिसे ऊपर रखते हैं।"

हम सहमत थे—कुछ-कुछ अल्कोहलके कारण और कुछ इसलिए कि देर हो रही थी। कोस्लर बड़बड़ा रहा था, "असम्भव! असम्भव····!" मैंने धीमी मगर साफ़ आवाज़-में कहा, "असम्भव नहीं है, इसका एक प्रमाण यह है कि बावूजूद सारे विरोधोंके इस क्षण हम लोग खुश हैं और इकट्ठे हैं।"

सुबह चार बजे हम कुछ खाने और कुछ और पीनेके लिए 'ल हेल' गये। कोस्लर बड़ा चुहलबाज़ था। चाहे मज़ाक़में, चाहे झुँझलाकर उसने रोटीका एक टुकड़ा मीनेके मामेनकी आँखपर फेंककर, मार दिया। बादमें माफ़ी माँग ली। सार्त्र वैसे ही चिढ़ा रहा था, "अरे भई, थोड़ी देरमें 'लेखकका दायित्व' भाषण देना है···।" कामू हँसा। वह भी हँस रही थी मगर अल्कोहल पीकर हमेशा मेरा मन रोनेको करता है और जब तड़केकी बेलामें मैंने अपने आपको सार्त्रके साथ पेरिस-की गलियोंमें अकेला पाया तो मनुष्यकी ट्रेजेडीपर सचमुच रोने लगी। जब हम 'सीन' को पार कर रहे थे तो मैं पुलकी रेलिंगपर झुक गयी और बोली, "मुझे समझ नहीं आता कि हम दोनों इस नदीमें कूद क्यों नहीं पड़ते।"

"ठीक है, फिर हमें कूद जाना चाहिए!" सार्त्रने कहा। उससे मेरे आँसू सहे नहीं जा रहे थे—स्वयं भी रो चुका था।

सुबह क़रीब आठ बजे हम लोग घर पहुँचे। शामको चार बजे मैंने सार्त्रका चेहरा फिर देखा—तब भी देखने ही लायक़ था। वह दो या तीन घण्टे सो चुका था।

दर्शकोंसे खचाखच भरे हुए थियेटरमें जब मैंने प्रवेश किया तो सोचा,—"सार्त्रको कोई आज सुबह छह बजे देखता···!"

(लेखिकाकी आत्मकथाके तीसरे और अप्रकाशित भाग 'द फ़ोर्स ऑफ़ सर्कमरटेन्स' से साभार। —अनु० दरबारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी एककी उड़ान

भटकती आत्माओंकी शिकायतें

सियाराम शरण पूसाढ़

कथाकार, सम्पादक, 'डॉक्टर'।

लाखी और रूपाका सम्मिलित विरोध-
त्र, डॉ० वृन्दावनलाल वर्माके प्रति :
न दोनोंके प्रति डॉ० वृन्दावनलाल
ने, जो आदर्शवादी लेखक कहे जाते हैं,
याय किया है। वर्माजीने 'मृगनयनी' में
लाखी मृगनयनीके प्रति मात्र अधिक
ही नहीं दिखलाया बल्कि पक्षपात भी
है। वह भी मेरे समान ही राग-द्वेष-
है, मेरे साथ ही शिकारमें बड़े-बड़े
करती है, मेरे साथ ही माँडूके सुलतान
ीनके सैनिकोंको मार भगाती है। फिर
नसिंहकी रानी बनकर वीर-कार्योंसे दूर
ती है। परन्तु मैं जीवन-भर क्रिया-
रहती हूँ, युद्ध करती रहती हूँ, राईगढ़ी-
नपर खेलकर दुश्मनोंको मार भगाती
मृगनयनी श्रम करनेमें भी मुझसे बीस
ही हो पाती। लेकिन विधाताने उसे मुझसे
धिक सुन्दरता नहीं, अधिक धन दिया।

■

तो क्या इसीलिए उसके नामपर पुस्तकका नाम 'मृगनयनी' रखकर मेरी उपेक्षा करनी चाहिए थी ? मेरे नामपर यदि पुस्तकका नामकरण नहीं किया गया तो और कोई ऐसा नाम रखा जाता जो दोनोंके महत्त्वका बोध कराता। न्यायकर्ता ! कहिए, यह मेरे प्रति अन्याय नहीं है ? वर्माजीके प्रति मेरा यह स्पष्ट आरोप है। महाशय, मेरा प्रतिवादीपर मान-हानिका आरोप है। न्याय किया जाये।

—लाखी

■

● न्यायाधिपति ! मेरे प्रति भी उदारता-पूर्वक न्याय किया जाये। यद्यपि वृन्दावनलाल वर्माजीने मुझे जन्म दिया, तथापि उन्होंने मुझे अपना-सा स्नेह नहीं दिया। मैं उनका यह अन्याय बरदाश्त नहीं कर सकती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं अनपढ़ हूँ, इससे क्या ? क्या मेरा व्यक्तित्व 'सोना' उपन्यासमें कभी भी दबा है ? क्या मेरा चरित्र किसी भी दृष्टिसे सोनासे कम विस्तृत और परिपक्व है। फिर उपन्यासका नाम 'सोना' देकर, उसे खुश कर मुझे अपमानित नहीं तो और क्या किया गया है ? मैं बहन लाखीकी तरह अनपढ़ हूँ, पेटमें कुछ छिपाव नहीं करती। फिर भी न्याय पानेकी अधिकारिणी हूँ। इसीलिए क्या दफ़ा ४९८ में वर्माजीपर उचित काररवाई नहीं की जा सकती ?

—रूपा

■

(२) अज्ञेयपर योकेका अभियोग :

[यह पत्र योकेका है जिसे बोस्टन (हेमलैण्ड) पागलखानेके एकान्त कमरेमें उसने लिखा था। वहाँके अधिकारी इस पत्रके माध्यमसे तथ्य खोजकर उसका इलाज करना चाह रहे हैं। यह उन्हींकी फ़ाइलसे नोट किया हुआ है।]

मार्टिन,

हाँ, हाँ मैं योके हूँ जिसे आपने 'अपने-अपने अजनबी'में देखा था। मैं अब पागल··· पागल क्या···क्षण विशेषकी महत्ताका बोध··· नहीं, नहीं, मृत्यु मेरे चारों ओर नाच रही है। सेल्मा मर गयी—बर्फ़के नीचे दबकर बिना प्रकाशका दर्शन किये मर गयी···मैं भी···नहीं मरनेको व्यवधान क्या मानूँ।··· सर, तुम पुलिस-अफ़सर हो, इसलिए मैं नहीं आयी—तुम यह न समझो कि मैं इसलिए आयी हूँ कि आप मेरी सुरक्षा कीजिए। वह अजनबी ध्वनि,···मृत्युकी गन्ध कभी किसी-द्वारा वर्जित हुई है जो आपसे होगी। ···हाँ तो मैं कह रही थी, आप मेरा मुख क्यों देख रहे हैं—मैं पगली लगती हूँ ? पगली नहीं हूँ। आप मेरा बयान लिखते जाइए। आज मैं उस चालाक लेखकको नहीं छोड़ सकती।···उसका क्या नाम है—ठहरिए मैं डायरी ले आऊँ, उसमें उसका नाम है···

हाँ, मैं डायरी साथ लेती आयी हूँ, देखिए यही नाम है—'अज्ञेय'। विदेशी है न। अँगरेज़ोंने उसके देशपर शासन किया, उसी उसीका बदला मुझसे लिया···नहीं तो मेरे पास क्यों आता ? क्या इण्डियामें सभी मनुष्य मर गये···वहाँ सभी मुरदे हो गये ? जैसी मैं बना दी गयी हूँ···ओह डियर, मुझे बचाओ !

····हाँ तो सेल्मा मर गयी····नहीं, नहीं, मैंने उसे नहीं मारा। तुम मेरी ओर क्यों देख रहे हो····जैसे मैं अपराधी हूँ।····सर कहती हूँ, ईसाकी क़सम खाकर कहती हूँ उसकी मृत्यु हुई और मैं बर्फ़से मुक्त होकर बाहर निकल आयी।···पालसे मिली, लेकिन पाल वैसा नहीं था। उसके अभिभावक बननेका मोह रखनेवाले अज्ञेयने उसे भटका दिया—नहीं, उसे भटका नहीं दिया बल्कि वे सेल्माकी तरह योकेको भी मार डालना चाहते थे, क्योंकि वे मृत्यु-दर्शन, घुटनेके अपने ग्रन्थ 'अपने-अपने अजनबी' में प्रस्तुत करना चाहते थे। इसलिए मुझे वेश्या बनने दिया···मृत्युका विष मेरे अन्दर फैला दिया···

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखकका निमन्त्रण है :

आइये, कुछ रहस्यपूर्ण शिकायती पत्र देखिए। ये पत्र (नक़ल) गुप्त सत्योंका पता लगानेवाले एक दक्ष पत्रकारके माध्यमसे मिले हैं। उक्त पत्रकार महोदयका नाम खोलना उचित नहीं है क्योंकि इनमें कई पत्र अदालतोंमें न्याय और कारर-वाईके लिए फ़ाइलोंमें बन्द पड़े हैं। निम्नलिखित पत्रोंके अतिरिक्त भी कुछ अन्य साहित्यकारोंके विरुद्ध भेजे गये शिकायत-पत्रोंकी प्रति मेरे पास है। जो पाठक पढ़ना चाहें वे मुझसे सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं।

अंकित है। लगता है, पत्र खतम करनेके बाद योके बहुत देर तक हँसती रही। सुबह उसका शरीर ठण्डा पाया गया।

■

(३) हेमका व्यक्तिगत पत्र और डॉ० देवराजपर दोषारोपण :

[इस पत्रको दीपिकाके घरसे पत्रकारने गायब-कर गुजराती भाषाकी एक साप्ताहिक पत्रिकामें प्रकाशित करा दिया है। यह उसी पत्रिकाकी कटिंग है।]

दीपिका दीदी,

प्रणाम। तुम्हें मेरे जीवनके प्रति इतने गहरेमें प्रवेश करनेकी इच्छा देख, अब मैं संकोच छोड़ सब कुछ कह देना चाहती हूँ। तुमने ठीक ही अन्दाज़ किया था कि अजयजी-के प्रति मेरे मनमें कोमल भावना जाग्रत हो गयी थी। सच कहती हूँ, मेरा तो विश्वास है, उनमें भी मेरे प्रति··· । तुम तो रास्ते-भर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ट्रेनमें, कश्मीर-यात्रामें, गुलमर्ग आदिकी यात्रा-में देखती रही। वे अनायास मेरे समीप आते गये···सुन्दर आकृति! मेधावी पुरुष यदि नारीके कोमल तारोंको स्पर्श कर दे तो अनायास स्वर निःसृत होते ही हैं। मैं अपनेपर नियन्त्रण करके भी खो गया। मैं उनके सान्निध्यमें आन्तरिक सुख अनुभव करती रही। परन्तु मुझे 'अजयकी डायरी' के प्रणेता डॉ० देवराजजी पर क्षोभके साथ दया भी आती है। उन्होंने मेरे साथ न्याय नहीं किया। मुझे अकस्मात्, यात्रासे वापस होने-पर, अजयजीसे अलग कर दिया जैसे नारीका मोल केवल पुरुषोंके क्षणोंको मृदुल, स्पन्दनशील सिहरनोंसे भरने तथा उल्लास देनेमें ही है। उसका निजी व्यक्तित्व कुछ भी नहीं।

आदरणीय दीदी, तुम कहती हो कि मैं अपने लिए डॉ० देवराजजीसे लड़ूँ। लेकिन किस कोर्टमें आवेदन दूं। मुझे अजयजीने भरमाया—यह मानसिक चित्र किस आधार-से प्रस्तुत करूँ? उसे कैसे सिद्ध करूँ? इस-लिए मैं इस पूर्वस्नेहिल (स्नेहानिल) स्वप्नोंको भूल जानेकी चेष्टा कर रही हूँ और तुम्हें भी नम्रतापूर्वक यही राय देती हूँ। मैंने बड़ी बेरहमीसे अपने दिलपर पत्थर रख-कर शादीको स्वीकार किया। लेकिन वह दर्द अभीतक मुझे छेदता रहता है। मैं उनसे विवाहित होनेकी सीमा आरम्भसे ही जानती थी। दीदी, तुमने मुझे अगाह किया भी था परन्तु डॉ० देवराजजीने मुझे प्रोत्साहित किया। यों कहूँ, उन्होंने ऐसा वातावरण ही निर्मित कर दिया, और मैं अजयजी (विवा-हित अजयजी) के प्रति इतनी गहरी आसक्ति पाल बैठी। आसक्ति सान्निध्य चाहती है। खैर, मुझे वह नहीं मिला। जाने दो, अजय-जी अमेरिका जा रहे हैं—यह खुशीकी बात है। मैं भरसक उन स्वप्नोंको (मैं उन दिनों को, घटनाओंको, अजयजीके मेरे प्रति प्रेम-निवेदनको, स्पर्शको, स्वप्न ही मान लेती हूँ) भुलानेकी चेष्टा कर रही हूँ। कोर्टमें जाकर सड़ी-लाशकी दुर्गन्ध फैलाना नहीं चाहती। डॉ० देवराजजी दार्शनिक प्राणी हैं, उन्हें मैं परेशान करना नहीं चाहती।

प्यारी दादी, तुम नारी हो, भारतीय नारी हो। मेरी स्थिति समझकर, इसी निर्णयसे सन्तोष करोगी।—हाँ तो सुनो, वे अच्छे हैं। अभी किसी पार्टीमें गये हैं। मैं इन्तजार कर रही हूँ। रोज रातमें वे इसी तरह देरसे लौटते हैं। पुरुष प्रेमी हो या पति, लेखक हो या चित्रकार, सभी नारीके तड़पानेमें एक-से होते हैं।

दीदी, मैं छोटा मुख बड़ी बातवाली कहावत चरितार्थ कर रही हूँ। मुझे क्षमा करोगी।

तुम्हारी पीड़ित बहिन—
हेम

(४) यशपालपर अभियोग :

[यशपाल पर उनकी कुछ पात्राओंने न्यायालयमें मुक़दमा चलाया है। यह अदालतमें दिये गये बयानका अंश है।]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे खुली सभामें ले गयी, मैं उनका (अपने पतिदेवका) अपमान कर चली गयी। मैं उनसे यह भी पूछना भूल गयी कि उनकी क्या राय है। उस समय मुझपर उन दानोंका (शैल और हरीशका) जादू छा गया था। खैर, छोड़िए इन बातोंको। मैं तो यही जानना चाहती हूँ कि जब यशपालजीने मुझे घरसे बाहर निकालकर नये मार्गमें लगा दिया, उनसे (पति से) संघर्ष और तनाव बना दिया तो फिर मुझे बीच धारमें ही छोड़कर स्वयं अलग क्यों हट गये ? क्या उनका यह कर्तव्य नहीं था कि वे मेरे लिए दृढ़तासे खड़े होते, यदि घरसे मुझे बाहर निकाल दिया तो मार्ग भी बताते। किसीको इस तरह भुलावेमें, भौचालमें डालकर अलग होना सरासर अन्याय है। मैं आज तक इसी तूफ़ानमें पड़ी छटपटा रही हूँ। न अब पूर्व-सा दाम्पत्य जीवन निभा सकनेकी कोई आशा है, न कोई क्रान्तिकारी पथ ही पा सकी हूँ। यह मेरा—मुझ जैसी भोली-निरीह नारियोंका—अपमान है। घरमें फूट डाल आनन्द लूटना अत्याचार है, घोर अपराध है ! अतः यशपालजीपर मेरे लगाये अनेक आरोप हैं—पति-पत्नीमें तनाव उत्पन्न करना, फूट डालना, अराजकता उत्पन्न करना और अन्ततोगत्वा पति-द्वारा अपमानित कराना ! ये सभी घोर अपराध हैं जिन्हें यशपालजीने किया है। मैं दफ़ा और क़ानून नहीं जानती। मैं तो मात्र अपना दर्द आपके सामने रख आपसे न्यायकी भीख माँगती हूँ। ■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक हिन्दी साहित्य और मध्यवर्गकी भूमिका

भास्कर प्रसाद द्विवेदी

साहित्यकी समस्याओंके प्रति शोध रुचिके विचारक।

आधुनिक हिन्दी-साहित्यका सृजन मुख्यतः मध्यवर्गकी जनता-द्वारा हुआ है। यह मध्यवर्ग आधुनिक युगका सर्वाधिक प्रबुद्ध, संवेदनशील, चेतनायुक्त और सजग जन-समुदाय है। इस वर्गमें वे सामाजिक और आर्थिक समूह आते हैं जो समाजकी संगठन-व्यवस्थाके लिए आवश्यक हैं। इन लोगोंका स्थान आधारभूत शोषक और शोषित वर्गोंके बीचका हुआ करता है। दिमाग़ी काम करनेवाले श्रमिक इसी वर्गमें आते हैं। कहना न होगा कि आधुनिक हिन्दी साहित्यके सभी रूपों और विधाओंका सृजन प्रायः इसी वर्गसे आनेवाले साहित्यिकोंने किया है। यही नहीं, आधुनिक हिन्दी-साहित्यमें प्रवाहित होनेवाली जीवन-धारा भी मुख्यतः इसी वर्गकी है। जिन समस्याओं और अनुभूतियोंको हम आधुनिक हिन्दी-साहित्यकी आधारभूत सामग्रीके रूपमें स्वीकार कर सकते हैं, प्रायः उन सभीका सम्बन्ध इसी वर्गसे है। इसका सीधा और स्पष्ट कारण यह है कि आधुनिक भारतके निर्माणमें इसी वर्गका हाथ रहा है। इस तथ्यको ठीकसे समझनेके लिए हमें संक्षेपमें इस वर्गके उदय और विकास तथा आधुनिक भारतके निर्माणमें योग देनेवाली सामाजिक चेतनाके क्रमिक विकासकी समानान्तर स्थिति पर विचार करना होगा।

अँगरेज़ोंके आगमनसे पूर्व भारतीय शासन-व्यवस्था मुग़लोंके हाथमें थी। मुग़ल-राज्यके अन्तर्गत जो भी प्रान्त थे वे रियासतोंके रूपमें बिखर चुके थे। उनमें परस्पर सम्बन्ध नहीं रह गया था। शासन-व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो चुकी थी। वस्तुतः यह काल मुग़लोंके पतनका था। अकबर और शाहजहाँका युग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मध्यवर्गके उदयके साथ ही साहित्यिक क्षेत्रमें एक बहुत बड़ा परिवर्तन यह हुआ कि मध्य युगमें जो साहित्य-सृजन दरबारी वातावरणमें और धार्मिक वातावरणमें हुआ करता था अब इसी वर्ग-द्वारा होने लगा। इसीलिए आधुनिक साहित्य प्राचीन साहित्यकी तुलनामें नितान्त नयी भूमिपर प्रतिष्ठित है। आजका साहित्य इसी मध्यवर्गकी मानसिक चेतनाका प्रतिफल है।

पुनः अँगरेज़ोंका आश्रित होना पड़ा।

अठारहवीं शताब्दीके अन्तसे ही अँगरेज़ोंको भाषा-सम्बन्धी कठिनाइयोंका अनुभव हो रहा था। बिना भाषा-सम्बन्धी प्रश्नको हल किये उनका काम कठिन होता जा रहा था। इसके अतिरिक्त उन्हें कुछ ऐसे शिक्षित व्यक्तियोंकी भी आवश्यकता थी जो भारतीय जनताके हृदयके भावोंका पता लगाते रहें और जिनके माध्यमसे अँगरेज़ जनताके भावोंको अपने अनुरूप बनानेमें सफल हो सकें। कार्यालयों और कालेजोंमें कार्य करनेके लिए भी अँगरेज़ी पढ़े-लिखे लोगोंकी आवश्यकता पड़ी (जनवाणी १९४७)। इसका परिणाम यह हुआ कि भारतमें अँगरेज़ी शिक्षाका प्रसार आवश्यक हो गया। इसे प्रारम्भ करनेके प्रश्नपर समय-समयपर शिक्षा-विशेषज्ञोंकी बैठकें हुईं, पक्ष-विपक्षमें विचार प्रस्तुत किये गये परन्तु अन्तमें निष्कर्ष यह निकला कि भारतीयोंको अँगरेज़ी भाषामें ही शिक्षा दी जाये। डाइरेक्टरोंने १८२७ में भारतीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गवर्नर जनरलको लिखे गये एक पत्रमें कहा कि "यह धन (इसे शिक्षाकी उन्नतिके लिए दिया गया था) उच्च और मध्यम श्रेणीके उन भारतवासियोंके ऊपर व्यय किया जाये जिनमें-से आपको अपने शासनके कार्योंके लिए सबसे अधिक योग्य देशी एजेण्ट मिल सकते हैं और जिनका अपने देशवासियोंके ऊपर सबसे अधिक प्रभाव है।" सन् १८३४ में लार्ड मैकालेने स्पष्ट रूपसे कहा कि "हमें भारतमें इस तरहकी एक श्रेणी पैदा कर देनेका भरसक प्रयत्न करना चाहिए जो हमारे और उन करोड़ों भारतवासियोंके बीच, जिनपर हम शासन करते हैं, समझाने-बुझानेका काम करे। ये लोग ऐसे होने चाहिए जो केवल रक्त और रंगकी दृष्टिसे हिन्दुस्तानी हों, किन्तु अपनी रुचि, भाषा, भाव और विचारोंकी दृष्टिसे अँगरेज़ हों।"

भारतके सामाजिक ढाँचेमें तीन वर्गोंकी स्थिति स्पष्ट है—१. उच्च वर्ग, २. मध्यवर्ग, ३. निम्न वर्ग। उच्च वर्गके लोग आर्थिक दृष्टिसे सम्पन्न हैं। उन्हें समाजसे प्रतिष्ठा प्राप्त है। उनके सामने प्रमुख रूपसे एक ही उद्देश्य है—वह है अपनी आर्थिक क्षमताको बढ़ाना। अतः यह वर्ग हर तरहसे अपने स्वार्थकी पूर्तिके लिए तत्पर है। निम्न वर्गमें इतनी चेतना नहीं है कि वह राजनीतिक उथल-पुथल या समाज-सुधारकी बात सोच सके। वास्तवमें उसे कमाने-खानेसे ही अवकाश नहीं मिल पाता। रह गया मध्यवर्ग। सभी राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक कार्योंमें यही वर्ग सामने आता है। यह न तो आर्थिक श्रेणीके उच्च स्तरपर चाहकर भी नहीं पहुँच पाता और निम्न स्तरपर जानेके लिए तत्पर नहीं है अतः अपना एक अलग परिवेश बनानेके लिए विवश है। इस वर्गकी सक्रियताके साथ ही आधुनिक सामाजिक आन्दोलनोंका आरम्भ होता है।

इन सामाजिक आन्दोलनोंके कोखमें ही राजनीतिक चेतनाका उदय हो रहा था। एक ऐसी संस्थाकी आवश्यकता समझी जा रही थी जो सरकारके कार्योंकी आलोचना कर सके और उचित क़दम उठानेकी सलाह दे।

राजनीतिक चेतनाके फलस्वरूप देशमें जागृति और आन्दोलनोंका श्रीगणेश हुआ। सन् १९०५में बंग-भंग आन्दोलनका प्रारम्भ हुआ और सन् १९०६में सर्वप्रथम दादा भाई नौरोजीने 'स्वराज्य' शब्दका प्रयोग किया। इस तरह पहली बार जनताको राष्ट्रीय सन्देश प्राप्त हुआ। सन् १९१५ तक गोखलेके नेतृत्वमें स्वतन्त्र रूपसे आन्दोलन चलता रहा और अन्तमें बंग-भंगकी नीति वापस ले ली गयी। सन् १९१६ में हिन्दू-मुसलमान एक होकर बढ़े। इसी समय गान्धीजीके नेतृत्वमें रौलेट-बिलका विरोध किया गया। सन् १९२२में रीडिंगने नरेश-संरक्षण-बिल पास किया जिसे एसेम्बलीने अमान्य कर दिया। इधर सरकार म्युनिसपैलिटीके शासन-प्रबन्धमें में इतना हस्तक्षेप करने लगी थी कि विवश होकर पण्डित नेहरू, डॉ० राजेन्द्र प्रसाद और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

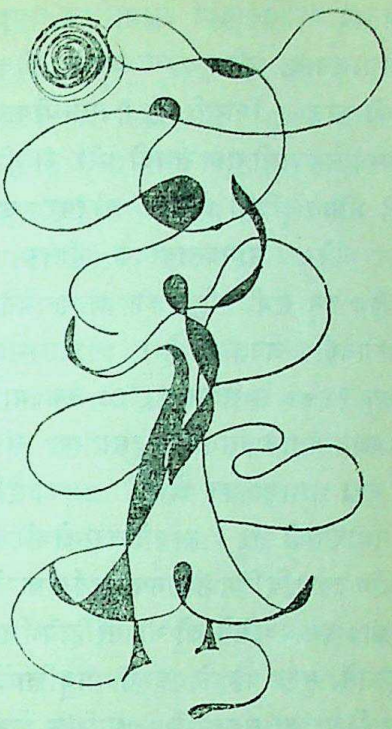

सदासे अनुकरण करनेवाला रहा है। सोचने-समझनेकी न तो इनके पास शक्ति ही है और न समय ही।

मध्यवर्गके उदयके साथ ही साहित्यिक क्षेत्रमें एक बहुत बड़ा परिवर्तन यह हुआ कि मध्य युगमें जो साहित्य-सृजन दरबारी वातावरणमें और धार्मिक वातावरणमें हुआ करता था अब इसी वर्ग-द्वारा होने लगा। इसीलिए आधुनिक साहित्य प्राचीन साहित्यकी तुलनामें नितान्त नयी भूमिपर प्रतिष्ठित है। आजका साहित्य इसी मध्यवर्गकी मानसिक चेतनाका प्रतिफलन है। आधुनिक हिन्दी साहित्यके मूलमें कार्य करनेवाली चेतना धाराओंका विश्लेषण करनेपर हमें उसमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जनतन्त्रवाद मानवतावाद, सामाजिक यथार्थवाद, समाजवाद, अस्तित्ववाद आदि जीवन-दृष्टियोंकी झलक मिलती है। गान्धीवादके साथ जन्म लेनेवाली सुधारवादी और राष्ट्रीयतावादी जीवन-दृष्टियाँ व्यापक तौरपर जनतन्त्रवाद और मानवतावादके भीतर आ जाती हैं। इन सभी दृष्टियोंको जन्म देनेका श्रेय मध्यवर्गीय जनताको है।

सन् १९०० से लेकर १९४७ तक भारत अपनी स्वतन्त्रताके लिए अहिंसात्मक संघर्ष करता रहा। सामाजिक क्षेत्रोंमें उसका दृष्टिकोण सुधारवादी था। राजनैतिक क्षेत्रमें वह असहयोग-द्वारा ब्रिटिश शासनको दुर्बल करनेमें तत्पर था। इस अवधिमें जो भी साहित्य लिखा गया उसमें मुख्य रूपसे इन्हीं प्रवृत्तियोंको लक्षित किया जा सकता है। आर्थिक क्षेत्रोंमें वह निम्न वर्गकी दीनताका चित्र देता रहा; उसके कारणोंपर पूँजीवादी व्यवस्था और जमींदारी-प्रथापर खुलकर प्रहार नहीं किया गया। इस पूरी अवधिमें मध्यवर्ग कुछ करनेके लिए उतावला था। उसकी दृष्टि वैज्ञानिक हो चुकी थी। वह अलौकिक चमत्कारोंको बौद्धिक स्तरपर समझनेकी चेष्टा कर रहा था। स्वतन्त्रता, राष्ट्रीयता और जनतन्त्रीय व्यवस्थाके महत्त्वको वह समझने लगा था। समाजकी रूढ़ियोंको त्यागने और बौद्धिक जीवन-व्यवस्थाको स्वीकार करनेके लिए वह सन्नद्ध हो चुका था। शिक्षाका प्रसार, नारी-स्वातन्त्र्य, हिन्दू-मुस्लिम एकता, अछूतोद्धार आदि प्रवृत्तियोंके मूलमें उसकी यही मानसिक स्थिति कार्य कर रही थी। अयोध्यासिंह उपाध्यायने कृष्णकी अलौकिकताको बौद्धिक मर्यादामें बाँधनेकी चेष्टा की और रामको भी लोकमतको सर्वोपरि मानता हुआ दिखाया। मैथिलीशरण गुप्तने रामको प्रजाके प्रतिनिधिके रूपमें चित्रित किया। जयशंकर प्रसादने मनुके रूपमें उस मध्यवर्गीय मानवको उपस्थित किया जो प्राचीन जड़-आस्था और नवीन वैज्ञानिक, बौद्धिक और मनोवैज्ञानिक मान्यताओंके द्वन्द्वको झेल रहा था। पन्तने गान्धीवाद, अद्वैतवाद, और मार्क्सवादमें समन्वय स्थापित कर नवीन मानवतावादकी कल्पना की। दिनकरने वैज्ञानिक उन्नतिकी अपूर्णताको लक्षित किया और मानव-कल्याणके लिए सांस्कृतिक विकासकी आवश्यकताकी वकालत की—राष्ट्रीयता, जनतन्त्र तथा मानवीय एकताकी भावनाओंका खुलकर समर्थन किया।

मध्यवर्ग अपने पूरे परिवेशके साथ उपन्यासोंमें उतरकर सामने आया। प्रेमचन्द सामान्यतः ग्रामीण जीवनके कलाकार हैं किन्तु उनके उपन्यासोंमें मध्यवर्गका जागरण, उसके द्वारा परिचालित सुधारवादी आन्दोलन, उसकी आदर्शवादिता, उसका आर्थिक खोखलापन तथा उसका राजनीतिक संघर्ष भी चित्रित हुआ है। प्रेमचन्दके बाद भगवती प्रसाद वाजपेयी, उपेन्द्रनाथ अश्क, जैनेन्द्र, अज्ञेय, यशपाल, जोशी, भगवतीचरण वर्मा, अमृतलाल नागर, लक्ष्मीनारायण लाल, धर्मवीर भारती, रामेश्वर शुक्ल 'अंचल',

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हेंदु तथा राजेन्द्र यादव आदिने मुख्यतः मध्यवर्गीय मानव तथा मध्यवर्गीय जीवनको अभिव्यक्ति देनेकी चेष्टा की है। 'व्यक्ति'का जीवन-क्रम उसकी दो प्रकारकी आवश्यकताओं और उनकी पूर्तिके लिए किये गये प्रयत्नोंके परिणाम स्वरूप निश्चित होता है। ये आवश्यकताएँ मनोवैज्ञानिक और शारीरिक हैं। शारीरिक आवश्यकताओंमें भोजन, निद्रा और काम प्रमुख है। मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओंमें दूसरेसे स्नेह, सौहार्द्र, सहानुभूति प्राप्त करनेकी चाह, सुरक्षा, नवीन अनुभवकी आकांक्षा आदि प्रमुख हैं। जीवनमें शारीरिक आवश्यकताओंको प्राथमिकता देनी पड़ती है। उनकी पूर्तिके बाद ही मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओंकी पूर्तिकी लालसा प्रबल होकर सामने आती है। यशपाल, अज्ञेय, नागार्जुन आदि उपन्यासकारोंने मनुष्यकी शारीरिक आवश्यकताओंकी पूर्तिको मूल्य देनेवाली सामाजिक यथार्थवादी विचारधाराको दृष्टिमें रखकर मध्यवर्गीय जीवनका चित्रण किया। अज्ञेय, जोशी, नरेन्द्र, देवराज, भारती आदि उपन्यासकारोंने मध्यवर्गीय मानवकी मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओंको महत्त्व दिया। मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएँ मानवके आभ्यन्तरिक जीवनसे सम्बद्ध होती हैं इसलिए इनके अध्ययन, विश्लेषण और चित्रणको महत्त्व देनेसे अन्तर्मुखी चरित्रोंकी अवतारणा करनी पड़ती है। शारीरिक आवश्यकताओंकी संतुलित पूर्ति जिस समाजमें सम्भव नहीं होती उसमें इन्हें आवश्यक मानकर चलनेवाले कलाकार ऐसे पात्रोंकी सृष्टि करते हैं जो सभीके लिए समान परिस्थितियोंको सुगम और सम्भव बनानेके लिए संघर्ष करते हैं। इनके अधिकांश महत्त्वपूर्ण पात्र बहिर्मुखी होते हैं। 'अंचल', भगवतीप्रसाद वाजपेयी, अमृतलाल नागर, लक्ष्मीनारायण लाल एवं 'रेणु' आदि उपन्यासकारोंने मनुष्यकी दोनों प्रकारकी आवश्यकताओंको समान महत्त्व देना चाहा है। इसलिए इनके उपन्यासोंमें मध्यवर्गीय मानव तथा उसके आन्तरिक और बाह्य संघर्ष दोनों ही साकार हुए हैं।

मध्यवर्गका जीवन आज त्रिशंकुकी स्थितिमें है। पूँजीवादी व्यवस्थाके साथ उत्पन्न होनेवाले इस वर्गने प्रारम्भसे ही अपने लिए नवीन सामाजिक भूमिकी आवश्यकताका अनुभव किया। इसकी शारीरिक आवश्यकताएँ एक सीमातक पूरी कीं। इसलिए इसकी जीवन-पद्धति मानसिक तृप्तिके लिए किये गये प्रयत्नोंके आधारपर निर्मित हुई। इसने प्राचीन नैतिक बन्धनोंको धीरे-धीरे छोड़ना प्रारम्भ किया। प्राचीन संयुक्त परिवार-व्यवस्थामें इसका विश्वास नहीं रहा। जीवनकी सुविधाओंकी पूर्तिके लिए उच्च वर्गसे समझौता करनेकी प्रवृत्ति भी इनमें रह-रहकर प्रकट होती रही है। नवीन जीवन-पद्धतियोंको समझने और उन्हें चरितार्थ करनेके लिए भी यह वर्ग प्रयत्नशील रहा है। व्यक्ति और समाजमें सन्तुलन लानेके लिए इसकी सजगता और सतर्कता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सराहनीय है। मार्क्सवादी जीवन-दर्शन समाजको अधिक महत्त्व देता है इसीलिए उसके प्रति यह वर्ग पूर्ण आस्था व्यक्त नहीं कर सका। गान्धीवाद और मार्क्सवादके बीच अपने लिए कोई नया समाज-दर्शन प्राप्त कर लेनेके लिए यह प्रयत्नशील है।

आधुनिक कहानी-साहित्य भी मुख्यतया मध्यवर्गीय जीवनको ही महत्त्व दे रहा है। प्रेमचन्दकी कहानियाँ तो प्रधान रूपसे गाँवों-की कहानियाँ हैं किन्तु उनके बादके लेखकोंने शहरके मध्यवर्गीय जीवनको ही महत्त्व दिया है। मानव-चरित्रको समझनेके लिए आधुनिक मनोविज्ञानने नवीन सत्योंका उद्घाटन किया है। आधुनिक कलाकार इस प्रभावसे परि-चालित होकर जब कहानियोंके माध्यमसे मानव-जीवनके किसी अंगविशेषका चित्रण करने चलता है तब उसकी कल्पनामें उसके आस-पासका मध्यवर्गीय जीवन उभर आता है। मनोविज्ञानके बाद दूसरा प्रभावशाली दर्शन मार्क्सवाद है जिसने वर्तमान हिन्दी साहित्यको प्रभावित किया है। यदि फ्रायडने मध्यवर्गीय मानवके अन्तर्जगत्को प्रत्यक्ष किया है तो मार्क्सवादने उसके बाह्य संघर्षको मूर्त्त किया है।

नाटकोंके क्षेत्रमें विशेष प्रगति नहीं हुई है। रेडियो-द्वारा प्रोत्साहन मिलनेसे ध्वनि-रूपकोंको लेकर कुछ प्रयोग किये गये हैं। समस्या नाटकोंमें अवश्य ही जिन समस्याओं-को केन्द्र-बिन्दु मानकर नाटकोंकी सृष्टि हुई है वे प्रायः मध्यवर्गकी हैं। तात्पर्य यह कि आधुनिक युगका समूचा हिन्दी साहित्य मध्यवर्गीय जनचेतनासे परिचालित होकर लिखा जा रहा है। आधुनिक हिन्दी-साहित्य को प्रभावित करनेमें प्रारम्भिक सुधारवादी आन्दोलनोंके अतिरिक्त गान्धीवाद, विकास-वाद, मार्क्सवाद, मनोविज्ञान आदिका विशेष स्थान है। वस्तुतः ये सारे आन्दोलन इसी वर्गके हैं। उच्च वर्गको परिचालित करने वाला एक ही तत्त्व है—'आर्थिक स्वार्थ'। इसकी रक्षाके लिए ही वह साहित्य, दर्शन, एवं जीवन-व्यवस्थाके प्रति दिलचस्पी रखता है। वह सदैव इस बातके लिए सतर्क रहता है कि युगका चिन्तन उसके हितोंके प्रतिकूल न हो। इसलिए वह मध्य वर्गके विचारकोंको अपना क्रीतदास बनानेकी चेष्टा करता है। उनके साथ मिलकर चलनेका ढोंग करता है। उनके प्रति मृदु होता है। इसमें अधिक दायित्व उसे नहीं लेना पड़ता। राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय चेतना, जीवन-व्यवस्था, दर्शन, सामाजिक प्रगति, कला-साहित्य एवं नैतिक उत्थान आदिकी चिन्ता मध्यवर्गको ही करनी पड़ती है। बौद्धिक क्षमताकी दृष्टिसे मध्यवर्ग किसी भी राष्ट्रका सर्वाधिक शक्तिशाली वर्ग होता है। जिस प्रकार आधुनिक भारतके निर्माणमें इस वर्गका प्रमुख हाथ है उसी प्रकार आधुनिक साहित्य भी इसीकी चेतना-की अभिव्यक्ति है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

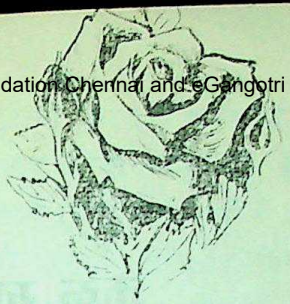

The woods are lovely, dark and
deep,
But I have promises, to keep,
And miles to go before I sleep
And miles to go before I sleep.

Robert Frost

वनपथ हैं प्रियतर, घोर अँधेरे और
घनेरे,
लेकिन वादे हैं, जो करने पूरे,
और दूर जाना है मीलों सोने से पहले
और दू—र मीलों, सोने से पहले

जवाहर लाल नेहरू

२७ मई १९६४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ ख़त : कुछ लकीरें

शॉ-नेहरू पत्र-व्यवहार तथा प्रेम मैथिलके चित्र

[कला-चर्चा इसबार बदली हुई लगेगी। सामग्री है चार खतोंकी : दो खत शॉके नाम, दो खत नेहरूके नाम और एक तरुण चित्रकार प्रेम मैथिलके सन्दर्भित चित्र साथमें हैं। देखें—क्या इन पत्रों और लकीरोंसे यादकी तसवीर खूब चमकीली नहीं बन जाती ?]

नयी दिल्ली
४ सितम्बर, १९४८

प्रिय श्री शॉ,

मुझे ठीक-ठीक नहीं मालूम कि मैं यह खत आपको क्यों लिख रहा हूँ, क्योंकि हम हम दोनों ही बहुत व्यस्त आदमी हैं और मुझे आपके कामको बढ़ानेकी कोई इच्छा नहीं है। लेकिन देवदास गान्धीने मेरे पास आपके उस खतकी एक नक़ल भेजी है, जो आपने उन्हें १६ जुलाईको लिखा था और उसने मेरे अन्दर आपको लिखनेकी ख्वाहिश पैदा की।

आजसे चालीस साल पहले जब मैं १८ सालका था और कैम्ब्रिजमें एक अण्डर-ग्रेजुएट था तब मैंने आपको एक सभामें भाषण करते सुना था। उसके बादसे मैंने आपको फिर नहीं देखा है, न कभी पत्र ही लिखा है। लेकिन मेरी पीढ़ीके बहुत-से लोग आपके लेखों और आपकी किताबोंके साथ-साथ उम्रमें आगे बढ़े हैं। मैं समझता हूँ कि मेरा एक हिस्सा भी, जैसा कि मैं आज हूँ, उसी पढ़ाईके साँचेमें ढला है। मैं कह नहीं सकता कि इससे आपको कोई श्रेय मिलेगा या नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चूंकि एक मानीमें आप मेरे नज़दीक रहे
हैं या यों कहिए कि मेरे विचारोंके पास रहे
हैं, इसलिए मेरी अकसर आपके और ज़्यादा
पास आने और मिलनेकी चाह रही है।
लेकिन मौक़े नहीं मिले। और तब मैंने मह-
सूस किया कि आपसे मिलनेका सबसे अच्छा
तरीक़ा आपकी लिखी हुई चीज़ोंको पढ़ना है।

देवदासने आपसे ज़ाहिरा तौरपर पूछा
है कि हमें गान्धीके हत्यारेके साथ क्या
सलूक करना चाहिए। मैं समझता हूँ कि उसे फाँसी
दी जायेगी और निश्चय ही मैं उसे मौतकी
सज़ा से बचानेके लिए कोई कोशिश नहीं
करूंगा। हालाँकि पिछले कई बरसोंसे मैं
मौतकी सज़ाके क़ानूनको खत्म करनेके हक़में
अपनी राय ज़ाहिर करता रहा हूँ। मौजूदा
हालतमें कोई दूसरा रास्ता नहीं है। फिर
मुझे इस बातपर शंका होने लगी है कि
किसी हालतमें किसी आदमीको मौतकी सज़ा
देने बदले १५-२० साल तक जेलमें रखना
ज़्यादा अच्छा है?

ज़िन्दगी इतनी सस्ती हो गयी है कि
हत्यारोंको मौतकी सज़ा देने या न देने-
में बहुत बड़ा फ़र्क़ नहीं पड़ता। कभी-
कभी यह सोचना पड़ता है कि क्या ज़िन्दा
रहने का दण्ड सबसे कड़ा दण्ड नहीं है?

मैं आपसे अपने उन देशवासियोंकी ओर-
से क्षमा मांग लेना चाहता हूँ जो हिन्दुस्तान-
की ख़बरोंमें आपके विचार जाननेके लिए
आपको परेशान करते रहते हैं। हममें-से
बहुतेरे लोग दूसरोंसे प्रमाणपत्र माँगनेकी

अपनी पुरानी आदतको अभी छोड़ नहीं सके
हैं। शायद इसकी वजह यह है कि हममें
अपने-आपमें विश्वासकी कमी है। घटनाओंने
हमें बुरी तरहसे झकझोर दिया है और
भविष्य उतना उजला दिखाई नहीं देता
जितना कि हमने सोचा था।

अगले अक्तूबरमें दो या तीन हफ़्तोंके
लिए मेरी इंग्लैण्ड आनेकी सम्भावना है।
मैं आपसे मिलना बहुत ही पसन्द करूंगा,
लेकिन अगर इससे आपके रोज़मर्राके काममें
कोई अड़चन पड़े तो मैं ऐसा हरगिज़ नहीं
चाहूँगा। मैं आपको किन्हीं सवालोंसे परेशान
करने नहीं आऊँगा। दिमाग़में बहुत-से सवाल
उठते हैं, जिनके पर्याप्त उत्तर दिखाई नहीं
देते या अगर उत्तर हैं भी तो हालत कुछ
ऐसी है कि माक़ूल आदमियोंकी कमीकी
वजहसे उन्हें अमलमें नहीं लाया जा सकता।
अगर मुझे आपसे कुछ क्षणोंके लिए मिलने-
का सौभाग्य मिला तो मैं उसका इस्तेमाल
एक ऐसी यादको सदा बनाये रखनेके लिए
करूँगा, जो कि मुझे अबसे कुछ अधिक ख़ुश-
हाल बना देगी।

आपका,
जवाहरलाल नेहरू

■

लन्दन
१८ सितम्बर १९४८

प्रिय श्री नेहरू,

मुझे यह जानकर बड़ा सन्तोष हुआ है
कि आप मेरे राजनैतिक लेखोंसे परिचित हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

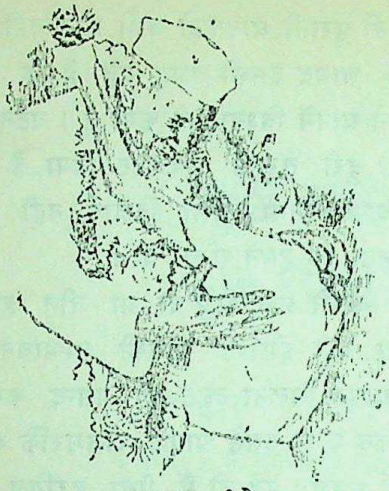

चाचा-भतीजे

मुझे इससे अधिक और कुछ नहीं कहना है कि आपके यहाँ आनेसे मैं अपनेको सम्मानित अनुभव करूँगा। हालाँकि मैं अपनेको इस भ्रममें नहीं रखना चाहता कि अपने बहुमूल्य समयकी एक दोपहरी मेरे साथ बितानेके लिए आपका इस दूर गाँवके लिए सफ़र करना उचित होगा, जहाँ कि बर्नार्ड शॉका कुछ भी शेष नहीं बचा है, सिवा पुरानी हड्डियोंके एक जर्जर ढाँचेके, जिसे वर्षों पहले ख़त्म हो जाना

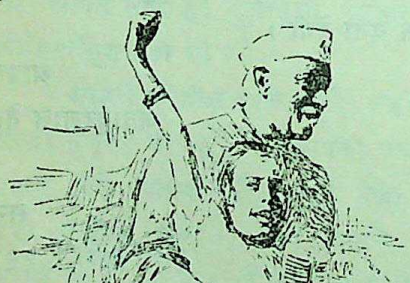

पिता-पुत्री

चाहिए था।

एक बार मैं एक सप्ताहके लिए स्वर्ग में रहा था और एक सप्ताहके लिए अमेरिका में। हिन्दुस्तानके बारेमें यह विश्वास हो गया था कि वह मानव-जातिका पालना है, क्योंकि वहाँ प्रत्येक व्यक्ति मौलिक दिखाई देता है, जबकि दूसरे सभी राष्ट्र स्पष्ट सामान्य ढंगके हैं।

हालाँकि मैं हिन्दुस्तानके बारेमें जितना ही जानता हूँ, जितना अख़बारोंमें छपता है, तो भी मैं उसपर अवैयक्तिक दृष्टि

बापू-नेहरू

ही विचार करता हूँ, क्योंकि मैं अँगरेज़ नहीं बल्कि आयरिश हूँ। मैंने अपनी आँखोंसे लम्बे संघर्षको देखा है, जो अँगरेज़ी शासनसे मुक्तिके लिए आयरलैण्डने किया है। बादमें मैंने उसे दो हिस्सों—आयर और उत्तरी आयरलैण्ड—में बँटते भी देखा है, जो हिन्दुस्तान और पाकिस्तानका पश्चिमी समानान्तर है। इंग्लैण्डके लिए मैं वैसा ही विदेशी हूँ जैसा कि आप कैम्ब्रिजमें हैं।

मैं सोच नहीं पा रहा हूँ कि जिन्नाह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझसे आपका इंगलैण्ड आना रुक तो नहीं जायेगा। अगर उनका कोई कुशल उत्तराधिकारी नहीं है तो आपको सारे प्रायद्वीप-पर शासन करना होगा।

आपका

जा० बर्नार्ड शॉ

■

पेरिस

२८ अक्तूबर १९४८

श्री शॉ,

आपका १८ सितम्बरका नयी दिल्लीको लिखा हुआ खत मेरे पास आज यहाँ पेरिस-

भाई-बहन

पहुँचा है। इसके लिए बहुत-बहुत आबाद। मालूम नहीं, इसे दिल्ली पहुँचनेमें और फिर वापस यहाँ आनेमें इतना अरसा क्यों लगा? मालूम होता है, वह १५ अक्तूबरको दिल्ली पहुँच गया था। मुझे बहुत ही दुःख है कि मुझे वह पहले नहीं मिला।

मैंने आपको लिखा था कि अपनी इंग्लैण्ड-यात्राके दौरान मुझे आपसे मिलकर बड़ी खुशी होती। यह सही है कि जिन्होंने

कुछ खत : कुछ लकीरें

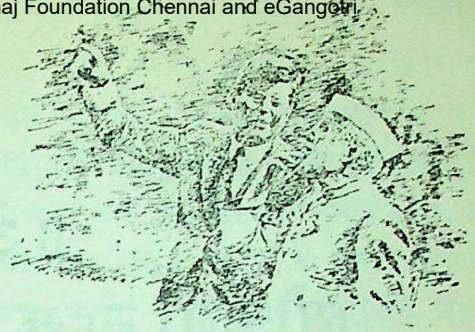

केनेडी-नेहरू

मेरे कार्यक्रमकी ज़िम्मेदारी ले ली थी उन्होंने उसे इतना भर दिया कि बहुत-सी बातोंके लिए, जो मैं सचमुच करना चाहता था, वक़्त निकालना मेरे लिए मुश्किल था। फिर भी मैं बेशक आपके पास आनेके लिए वक़्त निकालता, लेकिन चूँकि मेरे खतका जवाब आपकी तरफ़से मुझे नहीं मिला, इसलिए मुझे पूरा यक़ीन नहीं हुआ कि मेरा आना आपके लिए सुभीतेका होगा या नहीं और इसलिए आपको दुबारा लिखनेमें मुझे हिच-

हमेशा किसी न किसीके साथ रहे,
गये तो अकेले, चुपचाप, आँख मींचे।

[शेष पृष्ठ ३२ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ ॐ
नमो-नमो नेहरू ॥

भँवरमल सिंघी

नेहरूके निर्वाणसे मन्त्रोंके इस देशमें एक मन्त्र और जुड़ गया। जो मनुष्य था, वह मन्त्र हो गया और मन्त्रोंके महोत्सवमें मिल गया। जो इतिहासका द्रष्टा और स्रष्टा था, वह उसका मन्त्र मात्र रह गया। एक मन्त्र और जुड़ जानेसे हमारा दर्शन और बड़ा हो गया, हमारी धर्म-ध्वनि और धनी हो गयी, हमारी सभ्यता और संस्कृति और मन्त्रपूत हो गयी; और हमारा साहित्य और मन्त्रपूर्ण एवं मन्त्र-प्राण हो गया।

यह मन्त्र हमारे मन और बुद्धिको शान्त करेगा – आधिभौतिक और आधिदैविक व्याधियोंका शमन कर हमें शान्तिका अमर वरदान देगा। जो जिन्दगीका जलता शोला था नेहरू, वह शान्त मन्त्र बन गया—शान्ति-का। हम मन्त्र-शक्तिके अधिष्ठाता हैं। कितने महामानवोंको अपने मानसमें मन्त्र-रूप-में स्थापित कर हम शताब्दियोंसे शान्ति-यात्रा कर रहे हैं! वह हमारी यात्रा आज नेहरू-मन्त्रोच्चारके साथ शान्ति-वनमें पहुँची है।

जीवन-भर शान्तिके लिए अशान्त नेहरू आज परम शान्तिमें सोया है। तभी हमें वो शान्तिकी साँस आयी है। वह जबतक मानव था, मन्त्र-संज्ञामें नहीं पहुँचा था, उसका संघर्ष एक दिन भी न उसको चैन लेने देता था और न हम सबको। वह एक शोला बन-कर आया था, शमा बनकर चला गया। शोलेको छूनेके लिए, उसकी कान्तिको पानेके लिए शोला बनना पड़ता है। वैसा बननेके लिए हममें-से कितने आगे आ सके? उसकी मन्त्र-शक्तिकी अवज्ञा कर मानव-शक्तिका भरोसा किया और चारों तरफ़ संघर्षको उभार लिया और अपने आपको एक खतर-नाक तेजपुंज बना लिया। कितनी भग्न-सत्ताएँ उसके संघर्षावतरणके कारण निर्मित होने लगी थीं। उसके तिरोधानसे आज भग्न-मार्गकी समस्त बाधाएँ दूर हो गयीं। अतएव सभी मन्त्र-गुरु अपनी श्रद्धा निवेदन कर रहे हैं—ॐ नमो-नमो नेहरू! जलकर भस्म हुए शोलेकी ठण्डी राख तनमें लपेटकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दलके नये सन्त बन रहे हैं।

दिवंगत नेहरूके प्रति मित्र और शत्रु सभी श्रद्धाका अशेष निवेदन कर रहे हैं। जिस दिन उसने इहलीला समाप्त कर आँखें बन्द कीं, उस दिन और उसके दूसरे दिन भी जितने गुलाब-गुच्छ हमारे उपवनोंमें खिले या जो मिले, वे हमने नेहरूकी समाधिपर अर्पित कर दिये। शोलेको समाधिका सौन्दर्य देकर हमने उनकी वसीयतमें प्रकट की गयी काम-नाओंको पूरा कर दिया। जिन अस्थियों-ने पराधीनताकी शृंखलाओंको काटनेके लिए सहे गये आघातोंके चिह्न और मानव-जातकी मुक्तिके अरमानोंके स्वाक्षर चमक रहे थे, उनको हमने भारत-जननीकी मुक्त-प्रवाहिनी गंगामें समाहित कर दिया, उनकी राखको हमने ऊँचे आकाशसे वायुके वेग-प्रवाहमें मिला धरतीपर बिछा दिया, उनकी कल्पनाओंको उन्हींकी प्राण-वायुको अर्पित कर हवामें मिला दिया। हवा, पानी और मिट्टी पुनः अपने सर्वश्रेष्ठ अंशको अपने-में पाकर धन्य है—इसी राखमें-से फिर नेहरूका शोला चमकेगा। असंख्य मानवोंके आँसुओंसे गीली मिट्टी निरन्तर पुकार रही है—नमो नमो नेहरू! नेहरूकी आत्माके लिए मन्त्रोंके जयघोषकी अपेक्षा देशकी माटी-का यह नमस्कार कितना महत्त्वपूर्ण है। इसी माटीके जिन मानवोंका विश्वास लेकर नेहरू विश्वकी मानवताको चिरप्रेरणा देता था, उनके आँसुओंसे सिंचित यह माटी अपने हृदयका श्रद्धा-प्रसून, अनुरागका लाल गुलाब उसकी समाधिपर चढ़ाकर सुख मानती है। जो माटी उसके संघर्षोंकी आगमें तपकर सोना हो गयी, उसके कण-कण आज राखमें भी सोना उगल रहे हैं। धन्य थी वह माटी, धन्य हो गया वह मानव और पवित्र बन गयी सारी मानवता। माटीने माटीको मानवताके कण दिये हैं जो पुनः स्वप्नोंमें फूलेंगे, आकां-क्षाओंमें पल्लवित होंगे और आशाओंमें फलेंगे।

और, नेहरूके मन्त्र-गानमें-से हम अपने जीवनके सत्यको देखें! कितने बड़े प्रवंचक हैं हम! उसके वरदानोंके साथी हैं, वेदनाके आँसू नहीं हैं। हम उसके भक्त हैं, भावना नहीं। उसकी पूजा-प्रभावनाके लिए हम मन्दिर बना देंगे, ग्रन्थ रच दगे, शास्त्रोंका प्रतिपादन कर देंगे, स्मारक, स्तम्भ स्तूप खड़े कर देंगे और उनपर मानवताकी तख्ती टाँग रखेंगे ताकि इस मिट्टीपर आने-जानेवाले यात्री रक्ताभ गुलाबकी कलियाँ बिछाकर हमारे देशको, हमारे इतिहासको नमस्कार कर जायें। हाथ-कते सफ़ेद धागोंकी मालासे गान्धीकी समाधिको और खादीके कच्चे गुलाबी धागोंसे बनायी मालाओंसे नेहरूकी समाधिको ढककर, सजाकर पर्वोत्सव करेंगे। उसके जूते-चप्पल तक हमारी स्तुति-साधना-की मंजूषामें रहेंगे। उसका हर फोटो हमारे संग्रहालयमें और प्रदर्शनीमें रहेगा। हर बार उन चित्रोंको नये क्रमसे सजायेंगे, नये-नये प्रसंगमें नयी अर्थवत्ता देंगे। उनके उद्घाटनके लिए हम मिलेंगे – हमारे मन्त्री भाषण करेंगे,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्र देंगे और मानवताका अखण्ड कीर्तन होगा। उसका जो कुछ है और मिलेगा, उसका विश्व-राजनीतिके बैंकोंमें जो कुछ भुगतान मिल सकेगा, हम लेंगे। उसकी नाम-भक्तिसे हम नेता पैदा करेंगे जो उसके नामपर मन्त्रोंका ढेर लगा देंगे—इतना बड़ा ढेर कि मानवताकी समाधिपर बस केवल मन्त्र गूँजते रहेंगे। नेहरूके तन्त्रसे हम घबरा उठते थे, पर मन्त्र तो जीवनका जयघोष है और रहेगा। जीवनकी बुभुक्षाओं और बीभत्सताओंको इन मन्त्रोंका जाप शान्त करेगा और नेहरू-के मरणसे मुक्त हुए देशको यह मन्त्र देकर हम

फुरसत के समय :

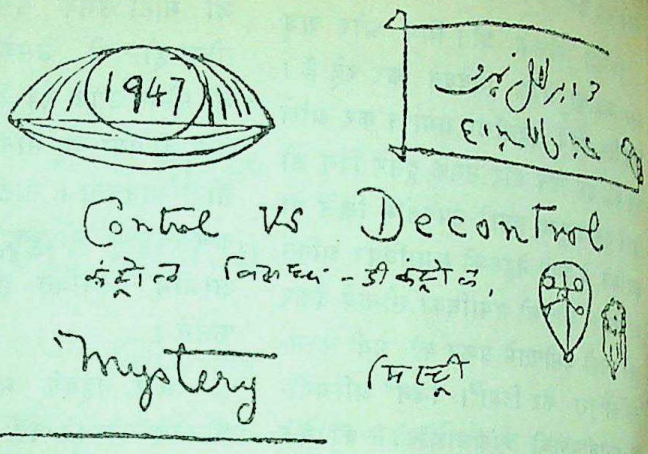

यह सब नेहरू ने बनाया था स्याही-सोखवाले दस्तखत और चक्कर लगाते मानसून। अब इसका अर्थ कौन समझाये?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज हम अपनी क्षुद्रताकी भूमिपर अक्षुण्ण खड़े हैं। आज हम किसीकी महानताकी प्रतिच्छायामें प्रतिबिम्बित नहीं हैं—हम क्षुद्रोंको अपनी क्षुद्रता फिरसे मिली है। आज हम विजयी और वह पराजित है। पर, देख तो लें कि समाधिमें-से उसकी दो आँखें देख तो नहीं रही हैं—दो कान सुन तो नहीं रहे हैं? उसके द्वारा वर्षों पहले जेलमें लिखे हुए, मसजिदको कहे हुए इन शब्दोंको समाधिके पत्थर न दोहराने लगें—"उन दीवारोंसे कहिए कि वे आपको अपनी कहानी सुनावें, अपने तजुरबे आपको दे दें। शायद कल और परसों जो गुज़र गये, उनपर ग़ौर करनेसे हम आजको समझें। शायद भविष्यके परदेको भी हटाकर झाँक सकें।" नहीं, नहीं, हम उसके मन्दिर-मसजिदकी दीवारोंको और पूजाके पत्थरोंको ग़ौर नहीं करने देंगे—भविष्यके परदेको हटाकर झाँकने नहीं देंगे। हमारे नमस्कार उसके अवसानको आलोकित करते रहेंगे। आलोकित अवसानकी शान्त समाधिको हम बारम्बार नमस्कार करते हैं। उसके नमस्कारके पर्व और त्यौहार मनायेंगे—मेले और महोत्सव करेंगे—उसके लिखेको नाना रूपोंमें नाना आकारों और प्रकारोंमें छापते रहेंगे—उसके बोलेको बोलकर, बजाकर सुनते-सुनाते रहेंगे। इसमें कठिनाई भी तो नहीं है। हज़ारों वर्षोंका अभ्यास है जो हमें। मन्त्र हमारी रक्षा करे और हम उसकी रक्षा करें। हमारी सामाजिक निद्रामें, हमारे आर्थिक मैथुनमें, हमारे राजनीतिक भयके

...न्त्री बने रहेंगे—मन्त्री बनाते रहेंगे। ...और मानवता जब विद्रोह करेगी तो ...हम उसे नेहरूके विद्रोहका इतिहास देंगे—उसकी मानवताका मन्त्र देंगे। हमारे पास ...कितने मन्त्र हैं—रामका, कृष्णका, महावीर-का, बुद्धका, गान्धीका, टैगोरका और अब नेहरूका। इतने मन्त्रोंकी सम्पत्तिके बावजूद क्या हम तन्त्र-युद्धकी आगमें जलेंगे। मन्त्र और मन्त्री, मन्त्री और मन्त्र—यह अखण्ड ...यज्ञ नेहरूकी गणतन्त्र-गंगाको सदा ...वाहित रखेगा। हमारा विश्वास है कि एक ...पर उस असम्भव महानताके असह्य भारसे ...हमारी अपनी क्षुद्रता मुक्त हुई है तो महा-...नाके मन्त्रोंसे अभिमण्डित कर हम उसकी ...पना करेंगे। एक व्यक्ति, एक युगकी महा-...नाके नीचे दबी हमारी चिर क्षुद्रताको फिर-...से उठने-खेलनेका मौक़ा मिला है। उसने ...जीवनमें चारों तरफ़ हमारी क्षुद्रताओंपर ...मुक्का बिठा दिया था—धर्म, जाति, सम्प्रदाय ...रूढ़ियों मन्त्र-मण्डित परम्पराओंपर उसने ...जबरदस्त प्रत्याघात किया था। हमने अनेक ...बार भारतीय संस्कृतिकी महान् परम्पराकी ...रक्षाके हेतु उसके कार्य-कलापके विरुद्ध ...विरोध और प्रतिवाद किया—जोड़-तोड़ ...किये—यज्ञ और हवनादि किये—गायको ...पुकारा पर उस वज्र महानताको नहीं हिला ...सके। अब उस वज्र महानताको फूलोंकी ...कोमलतामें सुलाकर अपने अश्रु-प्लावनसे ...उसकी समाधिके संगमरमरका प्रक्षालन कर, ...उसके जीवन-मन्त्रोंको दुनियामें छितराकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गतिचक्रमें बाधा न डाले तो उसका मन्त्र हमारे माथेपर है। हमारे जीवनका इतिहास बार-बार बदला है और अचानक हुए महानताके विस्फोटसे उत्पन्न हुए व्यवधान और संकटके सींखचोंसे निकल पुनः अपनी सचाई और वास्तविकतापर आया है। इसी बातमें तो हम विश्व-गुरु हैं। हमने निरन्तर महान्ताएँ पैदा की हैं, जिन्होंने युगके युग इतिहासको दिये हैं पर हम जीवनको झुठलाते नहीं हैं—क्षुद्रताओंको समेटे हम अक्षुण्ण चल रहे हैं। यही हमारी अमरताकी अमराई है—जहाँ देव रहते हैं, मन्त्र गूँजते हैं, और मनो महोत्सव मनाते हैं। और, हमें नमस्कारके इन क्षणोंमें याद आ रहा है नेहरूका बोलता बोल कि हम धनी देशके ग़रीब निवासी हैं और उसकी समाधिके चारों ओर गूंज रहा है—हमारा अनबोला बोल कि हम महान् इतिहासकी क्षुद्र सन्तान हैं।

■■

[पृष्ठ २७ का शेष : कुछ ख़त : कुछ लकीरें]

किचाहट रही। मैं हिन्दुस्तान वापस जा रहा हूँ। मेरे लिए यह अफ़सोसकी बात है कि मैं आपको प्रणाम करनेका यह अवसर चूक गया। फिर भी मुझे आशा है कि किसी और मौक़ेपर यह लाभ मिलेगा।

सादर आपका,
जवाहरलाल नेहरू

■

लन्दन,
१२ नवम्बर १९४८

प्रिय पण्डित नेहरू,

मुझे निराशा नहीं हुई। जब मैंने आपको पत्र लिखा था तब मुझे खूब अच्छी तरह मालूम था कि लन्दन आनेपर आपकी इतनी अधिक माँग होगी कि आपके पास एक पूरी दोपहरीका वक़्त भी इस गाँवमें बितानेके लिए खाली नहीं मिल पायेगा। फिर भी मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि अगर आप आ सकते तो मैं आपका हृदयसे स्वागत करता।

सम्मेलनमें आपका भाग लेना आपके लिए व्यक्तिगत रूपसे एक महान् सफलता थी। दूसरोंकी अनर्गल बातोंकी तुलनामें आपका रेडियो-भाषण बहुत ही उल्लेखनीय था और बादमें आपने जो भाषण दिये, उनसे यह सिद्ध हो गया है कि एशियामें अकेले आप ही वह व्यक्ति हैं, जो स्टालिनके बराबर हैं। आपका यह आश्वासन देना कि लड़ाईकी कोई तात्कालिक सम्भावना नहीं है ठीक समयपर कही गयी एक ठीक बात है। हमारे मन्त्रिमण्डलके मन्त्री मूर्ख नहीं हैं, लेकिन उन्हें यह पता नहीं कि वे क्या कह रहे हैं।

— जा० बर्नार्ड शॉ

■■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मच्छरके पंखोंकी आवाज़

मधु राय

गुजरातीके तरुण कथाकार, जिनके कथा-संग्रह 'बांशी नामनी छोकरी' पर गुजरात-शासनने १००० रुपयेका हाल ही पुरस्कार दिया है।

■

(अच्छी कुमुदने) अच्छी पोशाक पहनी थी और अच्छे मूडमें थी। इस प्रकार सब तरहसे अच्छी कुमुदको वाहियात-से मूडके साथ वाहियात क़िस्मके होटलमें ले आनेका उसे अफ़सोस था, दुःख था। मगर इसका कोई इलाज भी तो नहीं—उसने अपने आपसे तर्क किया।

ऑर्डर वग़ैरहकी ज़िम्मेदारी एक परम्पराकी तरह कुमुद निबाहा करती थी। 'मीनू'के बोर्डकी ओर देखते हुए वह एकदम हतबुद्धि-सा रह जाता। दाहिनी ओर लिखे हुए नये पैसोंके 'रेट' उसकी जेबकी रक़मके हिसाबसे जूझ जाते, बायीं ओर लिखे खाद्य-वस्तुओंके नाम चॉककी लिखावटी चिक्-चिक्-में झिलमिलाने लगते। उसकी आँखें देख ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं पाती थीं उस वक़्त। हल्के नीले और ख़ुशामदी रंगके प्रति उसका तीखा लेकिन पंगु धिक्कारका चश्मा···पहननेके बाद ही उसे यह पता चला था।

कुमुदकी आँखें जल्दी-जल्दी घूम रही थीं। कुमुदके विषयमें सोचते वक़्त जल्दबाज़ी, त्वरा, तेज़ी···के सिवा उसके दिमाग़में कुछ नहीं आता था। कुमुदकी उँगलियाँ हमेशा, हरदम जैसे गोभीके पत्तोंको उखाड़ती रहतीं। उसे हैरत थी कि उसकी ऐसी निष्क्रियता, विचारशीलता और अपाहिज स्वरूपको कुमुदकी गोभी उखाड़नेवाली चंचलता निबाह कैसे पाती है!

उसने होटलके 'मीनू'-बोर्डके पास एक बन्दूक़को लटका हुआ देखा। साफ़, मोहक और भरी हुई। उसके विनाशक गर्भमें एक अँगुलीके इशारोंके इन्तज़ारमें चुप विभीषण द्रव्योंके परमाणु ताक लगाकर बैठे थे।·····

इस शहरमें उन्हें कोई जानता नहीं था। जानते थे बस वही एक नेत्र-विशेषज्ञ और जहाँ ठहरे थे वहाँके दो-चार लोग। परन्तु उनका सही परिचय तो कोई भी नहीं जानता था। 'एक आग लगी थी आग!' और बाक़ी-की हक़ीक़त, उनके अपने शहरमें जो-जो उनसे पूछता, उन्हें कुमुद तत्परतासे कह देती। कहा करती। हरबार एक नये उत्साहसे, जैसे पूछनेवालोंके लिए ही आग लगी हो। और हल्का नीला चश्मा···कुमुदकी गोभी उखाड़ती उँगलियाँ···खराब होटल···अच्छी कुमुद—'अच्छी' और 'कुमुद' के बीचमें [illegible] और भी था—'अभिनेत्री'; अच्छी 'अभिनेत्री' कुमुद····कुमुद गम्भीर पार्ट अधिक [illegible] करती थी उनके ड्रामोंमें।

'एक आग लगी थी आग···' [illegible] सोचा कि यह कहना मुश्किल है कि [illegible] एक अभिनेत्रीसे शादी की है, या [illegible] (जो कि संयोगसे अभिनेत्री भी है)? [illegible] जले चेहरेका प्रतिबिम्ब उसने हॉस्पिटल [illegible] बाथरूमके आईनेमें पहली बार देखा [illegible] तब···'पहचानना ही मुश्किल था' (कैसे [illegible] प्रयोग होता है न इस स्थितिमें?) [illegible] पैर काँप रहे थे। मुँह ऐसा विरूप लग [illegible] था कि देखा भी न जा सके। ऐसा [illegible] रूप लेकर किसीके सामने खड़े रहने [illegible] बोलते हुए, एक गहरा संकोच, डर···[illegible] अब मैं अभिनयके क़ाबिल नहीं रहा।' [illegible] हाथ तक काँप रहे थे।

(कुमुद, कुमुद, तुम्हें कोई सदमा [illegible] पहुँचा, मेरे इस प्रकार डरावने बन [illegible] पर? कुमुद, कुमुद, क्या तुम अब भी [illegible] नेत्री बनी रहोगी?) आश्चर्य था कि [illegible] मूर्छित भी नहीं हुई थी। उसके ऊपर [illegible] इन बातोंका कोई असर नहीं हुआ [illegible] उसके चेहरेकी एक मांसपेशी तक [illegible] नहीं थी। वह हँसने लगी थी—सेव [illegible] करते जैसे कट गया हो और वह हँसने [illegible] इसी तरह। उसे कई बार शक होने [illegible] कि उसे अगर दुनियाका सुलतान [illegible] दिया जाये तब भी वह उसे देखकर [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब उसने एक
लम्बा-सा—दो से कहीं
अधिक शब्दोंवाला—जवाब
तैयार किया। मूँछके
पाससे उँगली हटाकर वह
बोला—"आख़िर उठकर चलेंगे कहाँ?
इस शहरमें घूमने लायक़ कुछ है भी तो नहीं!"
फिर दो सेकण्ड बाद कहा—
"और जहाँ भी जाते हैं, मुझ-जैसे
घिनौनी सूरतवाले मर्दके
साथ तुम्हें देखकर लोग तरस खाते
हैं।···यहीं ठीक है।"

गोभी उखाड़ा करती थीं?"

"क्या?"

"गोभी?"

"कैसी गोभी?" कुमुद उसकी ओर देखने लगी। कुमुदके मुँहका भाव देखकर उसकी आँखोंमें मज़ाक़ तैर गया। पल-भरके लिए वह भूल गया कि किसी भी मुहूर्तपर कुमुद बन्दूक़ छोड़ सकती है।

"गोभी, गोभी! तुम जब छोटी थीं तो क्या गोभी उखाड़ा करती थीं?" उसने उसी तरह कहा। किसी मंगल सुप्रभातको उसके हाथमें एक पत्र आ सकता है—"जा रही हूँ···" धाँय धाँय धाँय!···वह सिहर उठा। हाथ फिर काँपने लगे।

"याद नहीं," कुमुदने कहा, 'चलो न चलें।"

"और बन्दूक़?"

"नहीं बन्दूक़ भी याद नहीं। अब हम चलें तो?" कुमुदने फिर जल्दीसे कहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने फिर मूँछोंपर उँगली टिका दी—जैसे मूँछोंपर उँगली टिकानेसे कुमुद समझ जायेगी।

"मूँछोंपर ताव न दो, तुम मूछोंपर ताव देते हो तो मुझे लगता है, तुम बैठोगे।" कुमुदने हँसकर कहा। वह भी हँस पड़ा, लेकिन मनके विचार कोई जान जाये, यह उसे पसन्द नहीं था।···

"और फिर हमारे शेयरोंकी आमदनी तो है ही, आखिर नाटकसे हमें आमदनी हुई ही कब थी!" कुमुदने हँसते हुए कहा। चलते हुए शायद उसने पूछ लिया होगा, कि अब नाटक तो होगा नहीं हम लोग किस तरह चलायेंगे और कुमुदने उत्तर दिया होगा—"···हमारे शेयरोंकी आमदनी···"

अँधेरा बढ़ने लगा था। रास्तेपर बत्तियाँ जल चुकी थीं। नीले चश्मेकी ओटमें वे जुगनुओंके 'शावर'-सी लग रही थीं। जामुनी रंगका उजेला न जाने कैसा घिनौना लग रहा था। दूर-दूर तक गाड़े हुए लैम्प-पोस्ट

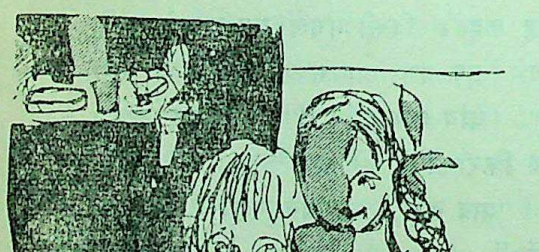

कोलतारकी सड़ककी दोनों ओर क़तारबद्ध खड़े थे—सिनेमामें दिखाये जानेवाले कॉलेज-फंक्शनके नाटकके सेटकी तरह जामुनी रंगके फव्वारोंकी क़तारें···। सड़ककी एक ओर एक 'लेक' भी था, मगर इस शहरके अरबिन्दे बाशिन्दे सड़ककी दूसरी ओरके दिखावटी क़तारके पीछे छोटे-छोटे ठिगने बँगले बाँधकर रहते-भर थे,—'लेक'के किनारे कोई बैठता भी नहीं था। बीच-बीचमें कभी कोई साइकिल-रिक्शावाला घण्टीतक बजाये बराबर बिलकुल ही अनमने ढंगसे गुज़र जाता। बँगलोंकी क़तार हिन्दुस्तानकी औद्योगिक समृद्धिके अजीर्ण-सी लग रही थी, सहसा गुज़रे हुए ताँगेके घोड़ेकी लीदकी तरह बँगले एक-से, थोड़ी-थोड़ी दूरीपर पड़े थे। कुमुदने बड़े ज़ोरसे अचानक छींका। उसने कुमुदकी दिशामें देखा—एक बँगलेपर नाम लिखा था। उसने सस्वर पढ़ लिया—'जोगिन्दरनाथ भल्ला···।' छींकके आवेगमें हाथ छुट गया था सो कुमुदने फिर पकड़ लिया—फिर वही कॉलेज-फंक्शनके सेट-सी सड़कपर चलते रहना।

"तुम चुप क्यूँ हो?"

'कैलाश के० सिन्हा···" उसने न चाहते हुए भी पासवाले एक बँगलेका नाम सस्वर पढ़ लिया—"बोलते हुए मुझे डर लगता है।"

'डर' शब्द बोलते ही एकाएक सेट बदल गया। आधी रातको सोनेके गहनोंको गठरी बाँधकर घने जंगलसे गुज़रते हुए बटोही-सी

[शेष पृष्ठ ४२ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

यादगारें और वसीयत

शशिप्रभा शास्त्री

प्रसिद्ध कथा-लेखिका। कहानियोंमें सामाजिक सम्बन्धोंके विश्लेषण प्रमुख।

"सत्याकी माँ आज सवेरे चल बसी, कुछ सुना तुमने ?" भूपोकी माँने अपनी खोसिन मायासे कहा।

"हाँ, बोब्बो, सुना तो है, अब बेचारी अकेली रह गयी वो तो।"

"ठीक कहो हो जी, अब उसका दुनिया-में है ही कौन, माँ अकेली थी वो भी खतम होगी।"

"अरे कौन खतम हो ली लुगाइयो, ज़रा इधर भी मुँह फेर लिया करो।" एक स्वर लकड़ाड़ेवाले छज्जेसे उठा।

"अरे वही पल्ली गलीमें सत्या है न, तुम जानो तो हो, स्कूलमें मास्टरानी है जो, उसकी माँ।"

"अरे, उसकी तो बीमारीकी भी नहीं सुनी और वह मर भी ली ?" छज्जेवाली लुगाइनने आश्चर्य प्रकट किया।

"यही तो अचम्भा है। यो जी कलयुग है कलयुग।" भूपोकी माँने हाथ नचाकर कहा और फिर अरगनीपर धोती सुखाते हुए बोली, "तो फिर दुपहरको सब मिलकर हो आयेंगी। अब तो मेरी सब्ज़ी जलती दीखे है। ज़रा धोती सुखाने आयी थी।"

और धड़धड़ाती तीनों औरतें अपने-अपने घरमें घुस गयीं।

दुपहरको मोहल्लेकी दो-चार और स्त्रियाँ भी आ मिलीं और यह झुण्ड सत्या मास्टरानीके घरमें घुस पड़ा। सत्या अपने धुले अधपके बालोंको पीठपर फैलाये हुए, फूली-फूली आँखें लिये दीवारसे टिकी हुई एक कम्बलपर बैठी थी। सामने दरी बिछी थी और सारे घरमें मातमके बादका अजीब सन्नाटा छाया हुआ था। पहुँचते ही लम्बी-लम्बी साँसें भरती हुई औरतें सत्याके चारों ओर घिर गयीं। सत्या, जो अभी गुमसुम पथरायी-सी बैठी थी, फूटकर रो उठी—"मैं तो अकेली रह गयी दुनियामें चाची !"

चाची सम्बोधित की जानेवाली महिला-ने पल्लूसे सूखी आँखें रगड़ते हुए कहा, "सच्ची

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कह रही है बोब्बो ! आजको इसकी सादी हो गयी होती, तो इतना दुःख थोड़े ही था।"

"हाँ जी, उनको तो जी आखिरी दम-तक यही ग़म खाये रहा कि मेरी सत्तो घर-बारकी हुई होती।" यह महिला वह थी, जो कुछ घण्टे पूर्व ही गाड़ीसे उतरी थी।

तभी एक दुबली-पतली सुसभ्य-सी दिखने-वाली महिलाने प्रवेश किया और वे भी उस झुण्डमें आ मिलीं। सत्याका रुदन एक बार फिर उठा।

"मिसिज़ सहाय, मैं तो लुट गयी, भगवान्‌ने मेरी माँ छीन ली।'

"धैर्य रखिए, मिस ठाकुर, यहीं तो इन-सान भगवान्‌से हारा है।" रूमालसे नाक पोंछती आगन्तुक महिला कुछ आगे खिसक आयीं।

"सत्याके साथकी मास्टरानी दीखे।" झुण्डमें कुछ खुसफुसाहट हुई और एकबारगी फिर सन्नाटा छा गया। सत्याकी हिचकियाँ ही शून्यमें गूँजती रहीं।

"चुपकर री सत्तो अब, ये सब क्या तुझे रुलाने आयी हैं?" भूपोकी माँने अचानक सत्याके सिरपर हाथ फेरते हुए कहा।

"मिसिज़ सहाय, काश आप मेरी माँके ज़िन्दा रहनेपर आतीं, तो देखतीं मेरी माँ देवी थी, देवी।"

"मैं आज ज़रा देरसे स्कूल पहुँची, पहले हाफ़-डे की छुट्टीपर थी मैं, स्कूल आयी तो पता लगा कि स्कूलकी छुट्टी हो चुकी है। क्या सब टीचर्स हो गयीं?" श्रीमती सहायने प्रत्युत्तरमें दो क्षण चुप रहकर कहा।

"हाँ, वो सब तो सवेरे ही आयी थीं।" सत्याने सिरको दीवारसे टिकाते हुए कहा।

"हय राम, हुआ ग़ज़ब ही।" वाता-वरणमें फिर गरमी आनी शुरू हो गयी।

"अजी ग़ज़ब ! मैं कहूँ, ग़ज़बका गोला फूटा है। कल दुपहरी तक तो मैंने उन्हें देह-लीज़पर बैठे देखा था।" दूसरी ने जवाबमें कहा।

"कल सवेरे तो उन्होंने खुद रोटी बनायी है।" सत्या समर्थनमें बोली, फिर श्रीमती सहायकी तरफ़ देखती हुई कहने लगी, "मिसिज़ सहाय, आप मेरी मांकी रसोई देखतीं, मक्खी रिपटती थी मक्खी!"

प्रत्युत्तरमें मिसिज़ सहायने अपनी नज़रें सामने विशाल खुले आँगनकी तरफ़ घुमायीं।

"इतनी सुघर थी, देखो तो सही, आंगन-में ही ऊखल खुदवा रखा है।" श्रीमती सहायके पास बैठी हुई पोपले मुंहवाली बुढ़ियाने पुपलाते हुए कहा।

"खुद सारे घरका नक़्शा बनाया था, मेरी माँ तो इंजीनियर थी, इंजीनियर!" सत्याने चीखकर कहा।

"यह मकान कब बना था? तब आपके पिताजी थे?" मिसिज़ सहायने कुछ हकलाते हुए पूछा।

"थे क्यों नहीं, पर उसकी अकलके सामने क्या किसीकी अकल थी।" माया बाजेवालीने आँख नचाते हुए कहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मिसिज सहाय, मेरे बाप मरे तो मेरी माँ ने एक बूँद आँसू नहीं ढाला। बोली, बेटी बेटी हिरासा होगी और फिर पिताजी-के बाद तो वे खुद सारे गाँवकी ज़मींदारी संभालती थीं।"

श्रीमती सहायने आश्चर्यमिश्रित मुद्रा बनायी तो सत्याने कहना जारी रखा, "गाँव में रहती थीं, तो लोगोंमें हलचल मच जाती थी—चौधरन आ गयी है, चौधरन आ गयी है! मेरी माँकी आवाज़ बड़ी बुलन्द थी।" रुककर सत्या इस बार बड़े बुलन्द स्वरसे हँस उठी। तभी भूपोकी माँ बोली, "और कैसी सुन्दर थी इसकी माँ, गुड़िया-सी लगे थी।" श्रीमती सहायको इन दो विरोधी वक्तव्योंमें कुछ तालमेल बैठता-सा नहीं दिखा। खरंग, बुलन्द स्वर, सारी ज़मींदारी सँभालने-वाली, अति सुन्दर, गुड़िया-सी दिखनेवाली महिलाकी कल्पना वे बिना कुछ बोले करती रहीं।

पिछले दिनों उन्होंने 'झाँसीकी रानी' उपन्यास पढ़ा था। स्त्री-सुलभ गुणोंके साथ खरदानावार—कुछ ऐसी ही रही होंगी वे। प्रयत्न करनेपर भी कोई स्पष्ट चित्र उभरकर उनकी आँखोंके सामने नहीं आ पा रहा था।

तभी एक महिलाने प्रारम्भ किया, "बड़ी सफ़ाई रक्खे थी अपने घरमें।"

"सफ़ाईमें तो वो एक लम्बर थी, सचमें!" पास बैठी महिलाने उसका समर्थन किया।

"मिसिज सहाय, आप उनकी सफ़ाई

श्रीमती सहायको लगा, उनके अतिरिक्त सब उपस्थित औरतें सत्या ठाकुरकी माँसे परिचित थीं, मृतक व्यक्तिके हुलियेकी कल्पना वे फिर करने लगीं—सुन्दर, दबंग स्वरवाली, सफ़ाई पसन्द, इंजीनियर, मर्दवार, चौधरन, सोंटी लिये हुए—कुछ स्पष्ट, कुछ अस्पष्ट आकृति उनकी आँखोंके आगे उभरी, पर चित्र अब भी बेहद साफ़ न था। उन्हें अफ़सोस हुआ, वे एक बार भी उनके ज़िन्दा रहते नहीं आयीं।

देखतीं, अब भी यह घर देख लो, एक-एक कोना साफ़ है।" माना सत्या माँकी यह विशेषता अभीतक भूले ही बैठी थी।

श्रीमती सहायने एक बार अपनी नज़र फिर घुमायी। सामने खुली हुई कोठरी भी उन्हें साफ़ दिखी, उन्हें अपना घर याद आ गया, जहाँ चारों बच्चे, रात-दिन उछल-कूद मचाये रहते हैं और कंघे-शीशे, खिलौने-किताबें और क़लम-दवातसे लेकर घरकी हर चीज़ फ़र्शपर बिछाये रहते हैं।

"बच्चोंका घर नहीं है न यह!" वाक्य कहना उन्हें इस समय संगत नहीं लगा। वे ख़ामोश रहीं; तभी एक महिला, जिसकी धोती सब महिलाओंमें सबसे अधिक बुर्राक़ दिख रही थी और जिसका रंग झुर्रियोंके बावजूद भी बेहद सफ़ेद दिख रहा था, स्वरमें अपनत्व भरती हुई बोली, "इनके घरमें सब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ है जी, उसने मुलकको चीज़ जोड़ रख रखी थीं—गमलोंपर चाँदीका पानी फिरा रखा है, चाँदीके कटोरे-कटोरियाँ, सोनेके जेवर, दुनिया-भरके रेसमी कपड़े, हजारों रुपया, सब कुछ छोड़ गयी है।"

इसके बाद थोड़ी देर तक सन्नाटा छाया रहा।

"कुछ दान-पुण्य करवाया था री सत्तो कि नहीं?" उल्ली गलीवाली मोटी महिला-

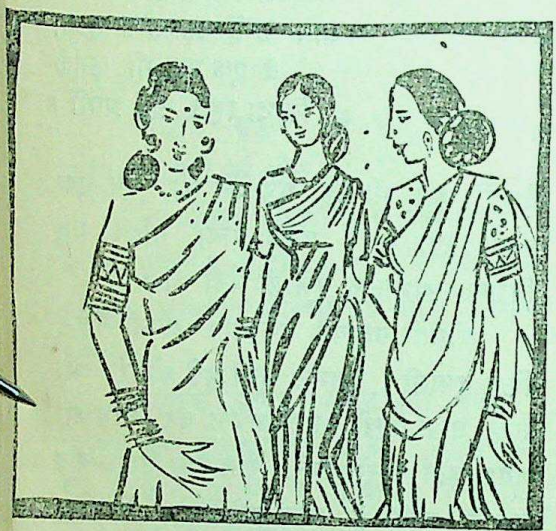

ने ऊँचे स्वरमें दो क्षण बाद फिर चुप्पी तोड़ी।

"माँको पण्डे-पुजारियोंमें विश्वास ही कहाँ था।" सत्याने दबे स्वरमें उत्तर दिया।

"कुछ तो जी होना ही चाहिए था। खैर, अब कर दीजो, उनके नामसे। प्रतिवाद करनेवाली लम्बी नाकवाली काली-सी महिलाने समाधान भी प्रस्तुत कर दिया।

सत्याकी हिचकियाँ तीव्र हो गयीं, उन हिचकियोंमें दान-पुण्यकी बात आगे चलाना बहुत भोंडा-सा लगा सो विषय-निरर्थकताका बोधकर, दो क्षणको फिर सब चुप हो गयीं।

दिन ढल चुका था। पिछवाड़े स्थित पीपलकी फुनगीपर सूरजकी अन्तिम किरणें चमचमा रही थीं, वहीं कुछ पक्षियोंकी चहचहाहट भी सुन पड़ रही थी, नहीं तो मण्डलीमें सन्नाटा छाया हुआ था, तभी दो-तीन, चार-चार छह-छह बरसके बच्चे कूदते-किलकते आँगनमें आकर नाचने लगे।

सबका ध्यान बच्चोंकी तरफ़ चला गया।

"यो लाल धारीकी कमीज पहने हुए छोरा कहीं दीनूका तो नहीं हैं? बुच्चीकी माँ जो अभीतक क़रीब-क़रीब चुप ही थी, बोली। मण्डलीका ध्यान लाल धारीवाली क़मीज़ पहननेवाले बच्चेकी ओर चला गया।

"हाँ उसीका तो है।" न जाने स्वर कहाँसे उठा।

"कब आयी इसकी दादी, यो तो दादीके पास रहे था न?" शंकाके साथ-साथ प्रश्न प्रस्तुत करते हुए बुच्चीकी माँने फिर कहा।

"अजी कल ही तो आयी है, दुनिया-जमानेकी छिनाल! मैं तो उसकी सकल भी देखना पसन्द न करूँ हूँ।"

और रत्तो, सफ़ेदेवाली काकीके स्वरके साथ श्रीमती सहायको छोड़कर शेष सारी मण्डली बच्चेकी दादीकी आलोचना-प्रत्यालोचनामें डूब गयी। दो क्षणको सब भूल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...कि वे एक मौतवाले घरमें मातमपुरसी करने आयी हैं।

तभी सत्याने रोकर कहा, "हय मेरी ...सफ़ाई अब कौन करेगा ?" स्वरके ...ही सभीकी तन्द्रा टूटी। पिछवाड़े-...काकी भी चेतमें आकर बोली, ...कहे है बोब्बो, सफ़ाई तो उसमें ...थी कि ऐसे छोटे-छोटे बच्चोंको जरा ...दीवारसे भी सिर लगाते देखती थी ...पर चपाते ही चपाते लगाती थी, ...ध्यान या उसे सफ़ाईका..."

"...जी ऐसी अच्छी लगे थी, हरदम ...साथ रखे थी।" भोलूकी माँने दाँत ...कर समर्थन किया। तभी औरतोंमें-से ...कर बोली, "ऐ वाली बच्चो, तुम ...सोर मचाये हो। भागो इहाँसे।" ...तिड़ीतिड़ी भाग गये। लगा, शोर पंख ...कर उड़ गया हो।

...मती सहायको लगा, उनके अतिरिक्त ...स्थित औरतें सत्या ठाकुरकी माँसे ...थीं, मृतक व्यक्तिके हुलियेकी कल्पना ...करने लगीं—सुन्दर, दबंग स्वरवाली, ...न्द, इंजीनियर, मर्दवार, चौधरन, सोंटी ...—कुछ स्पष्ट, कुछ अस्पष्ट आकृति ...आँखोंके आगे उभरी, पर चित्र अब ...साफ़ न था। उन्हें अफ़सोस हुआ, वे ...भी उनके जिन्दा रहते नहीं आयीं। ...सत्या फिर रिरिया उठी—"अब मैं ...करूँगी ? किसके साथ बैठकर रोटी ...गी, चाय पिऊँगी ?"

"हय, देखी तो सही, आजको लौण्डीकी सादी हुई होती तो दो-चार बालक खेलते होते।" बेहद हमदर्द आवाज़में रत्तो सफ़ेदे-वाली काकी बोली।

"अरे करनेको तो उसने की नहीं, चार बार तो लगी-छूटी सादी, यूँ ही कहे गयी—मेरी लौण्डीको पढ़ानेका बड़ा सौक है।" सब महिलाओंको सुनकर एकाएक लगा, यह तो एकदम विषयान्तर हो गया है, जो इस समयके लिए एकदम मौजूँ नहीं है, तो वे एकदम एक नया मोड़ देती हुई बोलीं, "साक्षात् देवी थी वो तो, उसकी तो मुक्ति हो गयी होगी।" सबने लम्बी-लम्बी साँसें लेकर समर्थन किया—तभी श्रीमती सहाय उठकर खड़ी हो गयीं।

"अच्छा मिस ठाकुर, फिर आऊँगी मैं।" और बरामदेकी सीढ़ियाँ उतरकर वे आँगन-में आ गयीं।

शामका धुँधलापा सब ओर छा गया था, एकाएक श्रीमती सहायको लगा कि उन्होंने बहुत देर कर दी। तेज़ क़दमोंसे वे देहलीज़की ओर बढ़ीं, पर तभी उन्हें लगा कि उनकी आँखोंके आगे गहरा अँधेरा छा गया है, एक हल्की ठोकरके साथ ही वे मुँहके बल चौखटपर गिर पड़ीं। उनकी हल्की चीखने मण्डलीकी सभी महिलाओंको तितर-बितर कर दिया।

"क्या हुआ बोब्बो, कहीं चोट तो नहीं लगी ? यहाँ एक बत्ती होनी चाहिए थी !" किसीने श्रीमती सहायको थामते हुए कहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नहीं मैं बिलकुल ठीक हूँ।" कहते हुए थामनेवाले हाथसे छूटकर श्रीमती सहाय निकलकर बाहर आ गयीं। सत्या भी उठकर अबतक महिला-मण्डलीके बीचमें आ खड़ी हुई थी। मरगिल्ले स्वरमें पुकारकर बोली, "मिसिज़ सहाय, लग तो नहीं गयी आपको?"

"नहीं मिस ठाकुर, आप निश्चिन्त रहिए।" स्वरमें आश्वासनका भाव दर्शाती हुई श्रीमती सहाय दो क़दम पीछे लौटीं तो क्या देखती हैं कि उस अँधेरेमें मिस ठाकुर (सत्या) एक छोटे लड़केके कान पकड़े खड़ी है।

"अरे यह कौन?" एकाएक श्रीमती सहायके मुँहसे निकल पड़ा।

"अरे वो ही है यह सगुन—पनवाड़ीके छोरा!" सत्याके कुछ कहनेसे पहले ही कर्कश स्वर चिहुँका, "यो ही दीवालसे भिड़-भिड़के इसकी सुफेदी मैली करे है।"

सत्या कान छोड़कर पीछे लौटी जा रही थी। श्रीमती सहाय बिना कुछ बोले आगे बढ़ गयीं, नहीं कह सकीं कि मृतक आँखें जिस आकृतिकी कल्पना वे अबतक नहीं कर सकी थीं, उसकी साकार प्रतिमाके दर्शन उन्होंने अनजानमें ही कर लिये थे।

■■

[पृष्ठ ३६ का शेष : मच्छरके पंखोंकी आवाज़]

लगा उसे, रेडियो अॅनाउन्सरकी तरह अव्यक्तिगत स्वरसे वह फिर बोला—"के० आर० टी० राघवन्···" और कुमुद झल्ला उठी। वह तुरन्त बोल उठा, "चलो न ज़रा तालाबके किनारे थोड़ा बैठें····।"

कुमुद उसे हाथ पकड़ किस-किस तरह चलाती हुई न जाने कैसी जगहपर बैठाने लगी। गीला-सा अँधेरा था उस जगह और ताज़े उगे हुए घासपर बैठते हुए केचुओंकी मैली गन्ध आने लगी थी—बैठते ही किसी पाशविक उन्मादसे कुमुद उसके गलेसे लग आयी और बलपूर्वक उसके होंठोंको जैसे काटने लगी। उसके हाथोंका काँपना बन्द हो गया, मुँहपर लगाये गिलासकी ओटसे पानी पीते-पीते देखता हो—इस तरह रोकी हुई साँससे उसने कुमुदकी आँखोंको देखा। आँखें मुदी हुई थीं, मगर पुतलियाँ पलकोंपर उभरी हुई दिखाई देती थीं। कुमुदका प्यार थोड़ा अस्वाभाविक-सा लग रहा था—"कुमुद तुम्हारा प्यार नाटकीय लगता है अत्यधिक। तुम सोलह सालकी कुँवारी लड़की नहीं, सत्रह सालसे विवाहिता गृहिणी हो···।" उनके भूत द्वारा खेले गये एक नाटकका यह संवाद था। हर बार 'प्यार' शब्द सोचते ही दिमाग़में यह दौड़ जाता। उसने भी आँखें बन्द कर लीं। हरेकके स्थानपर काला परदा आँखोंके सामने छा गया। उसकी निष्क्रियतासे कुमुदका उन्माद ग़ायब हो गया, वह भी पीछे मुँह हटाकर बैठ गयी जैसे कोई बात हुई ही नहीं। वह कुछ कहने ही जा रहा था कि गूंऽऽऽऽऽऽ करता हुआ एक मच्छर उसके कानको छूकर भाग गया। उसे लगा कि कुमुद सिसकी दबाकर रो रही है।

■■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमज़ोर कपड़ेकी धोती

हृदयेश

प्रतिष्ठित कथाकार। मनोविज्ञानका सुलझा हुआ प्रयोगविशेष।

रामरतनकी आँख खुल गयी है—शंकर! ओम् हरी-हरी! वैद्यजी-की विधवा बहन जगरानी जाग जाती और आवाज़ देती है—बहू उठो, रम्मू उठें। बहू उठो! कोठरीका दरवाज़ा खुलता है। एक दुबली-पतली काया रंग-उड़ी धोतीमें लिपटी आँगनमें आकर कराहती खड़ी हो जाती है।

आसमें अँधेरा घिरा है। ब्रजकिशोर के घरके आगे लगा बल्ब अब भी है। उसकी पीली-फीकी रोशनी सहारा लिये ऊँघ रही है।

रामरतन ताखपर रखी घड़ीमें चाभी गिनकर अट्ठारह चक्कर। फिर रख देते हैं। मिनटवाली सूई साढ़े कर कुछ आगे बढ़ गयी है।

आँगनमें आकर वह खूँटीपर-से अपनी बनियान और गमछा उतार लेते हैं। चौकीपर-से लोटा भी ले लेते हैं।

अच्छा, मैं जा रहा हूँ—जय भोले-शंकर! ओम् हरी-हरी!" खटपटीकी आवाज़ गलीके गुम्मोंसे बजकर काफ़ी देर तक उठती रहती है।

वह दुबली-पतली काया तीन ओरसे दीवार उठे और टीन-पोश एक घेरेके अन्दर जाकर जूठे बरतन जमा करती है और नलके पास ले आकर उन्हें राख-जूनेसे माँजने लगती है। बरतन मल चुकनेपर वह झाड़ू लगायेगी।

आकाशमें अँधेरा कबका फट चुका है। नरम किशमिशी धूप फैल रही है। वैद्य रामरतन मील-भर दूर श्रीराम-आश्रममें शौचको गये हैं, स्नान किया है, तदुपरान्त पूजन-दर्शन, और फिर अहीर-घरसे लोटेमें दूध दुहाकर लौट आये हैं। बारह सालकी रमला अँगीठीके पास है। पत्नी ग़ुसलखानेमें नहा रही है। पानी गिरनेकी भीगी खनकती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवाज़ उठ रही है। बीस सालका शिवरतन दाँत माँज रहा है। सात सालके हरीरतनके पास किताब है। मास्टर साहबने जिन प्रश्नों-पर निशान लगाये हैं, उनको हल करनेमें उसे कोई कठिनाई नहीं होगी। वे उसके पहलेके ही हल किये हुए हैं। अभी पन्द्रह मिनिटमें स्कूलका काम किये देता है। फिर कैलाशके साथ मन्दिरके पिछवाड़े काँची खेलेगा। जगरानी अभी खाटपर ही बैठी है। उसका एक पैर खराब है। लँगड़ा-लँगड़ाकर, सहारा लेकर चलना होता है।

रामरतनने दूधका लोटा अँगीठीके पास रख दिया। गीली धोती और गमछा आँगनमें तारका बँधी अलगनीपर फैला दिया।

"बाबू राधारमन मिले थे," वह बड़े लड़के शिवरतनकी ओर घूम जाते हैं, "कहते थे, अगले महीने ज़रूर तुम बुला लिये जाओगे। उम्मीदवारोंकी लिस्टमें जो एक लड़का और ऊपर था उसे कहीं दूसरी जगह नौकरी मिल गयी है।"

शिवरतनके चेहरेकी रेखाओंमें नामालूम हरकत होती है।

"बाबू राधारमनने कहा है कि शिब्बू टाइपकी स्पीड बढ़ाये रहे। टाइपका काम ही उसे मिलेगा।"

"सो आप निश्चिन्त रहिए। टाइप-स्कूलमें जितनी मेरी स्पीड है उतनी पुराने सीखनेवाले लड़कोंकी भी नहीं है।" शिवरतन कुल्ला कर गीले गमछेसे मुँह पोंछ डालता है।

"सो क्या मैं जानता नहीं? बेटा, आज-कल ज़माना बहुत बुरा है। सरकारी नौकरी बड़ी सिफ़ारिश और दौड़ा-धूपीके बाद मिलती है।"

रामरतनकी पत्नी सावित्री गुसलखानेसे गीली धोती लपेटे निकल आती है। गुसल-खानेसे वह बाप-बेटेकी बातचीत सुन रही थी। ठिठककर वह अँगीठीकी ओर देखने लगी है।

"भैया कुल्ला कर खड़ा है और चाय-वाय नहीं?"

"बस कुछ ही देर है अम्मा!" रक्त पानीमें उठते बुलबुले देखने लगती है।

"तू ज़रा भी किसीका आगा-पीछा सोच ले सकती। ससुरालमें जाकर नाम बदनाम करेगी।" सावित्रीके चेहरेपर धूपकी रेखा किरनें पड़ रही हैं।

"गीली धोती तो बदल लो, नहीं किसी जिस्ममें दर्द और ज़ुकामकी शिकायत करोगी। अभी इसके ससुराल जानेमें काफ़ी दिन हैं। जब तुमने नाम बदनाम नहीं किया तो यह क्यों करेगी?" रामरतन विहँसते हैं। मूँछोंके बाल कुछ बड़े और घूमे हुए हैं। विहँसते हुए वे और घूमे हुए लगते हैं।

नमक पड़ा एक ताज़ा परोठा खा और दूध पीकर ठीक आठ बजे रामरतन बैंचरी दूकानपर चले जाते हैं।

"लकड़ी खत्म हो गयी है, ठेकीसे भिजवा देना।"

"अभी उस दिन तो भेजी थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जल्द खत्म कैसे कर दी ?"

"कोयला समयसे इस बार कहाँ आया ? दोनों जून लकड़ी जली।"

"तीन रुपये मन लकड़ी आती है। तौल भी स्सालोंकी पूरी नहीं होती है।" वैद्य रामरतनकी घनी भौंहोंके पास तनाव आ गया है।

टनन्न्—झाँअँअँ—नन्न्—।

आलेपर लोटा रखा था। हरीरतनने गिरा दिया।

"फूट गया ?" रामरतनकी आवाज़ भी झनझना गयी है।

लोटा फूटा तो नहीं, पर कगारसे नीचे काफ़ी गहरा गड्ढा पड़ गया।

रामरतनकी पत्नी बढ़कर हरीरतनके दो थप्पड़ मार देती है—"मरेको लोटेकी क्या ज़रूरत थी ? घरमें एक भी बरतन साबूत नहीं रहने देगा ? हैं ही कितने ?"

"इस घरका अब ईश्वर ही मालिक है!" रामरतन कुरतेके बटन तेज़ीसे लगाने लगते हैं।

मार खाकर हरीरतन गला फाड़कर रो रहा है। सावित्री अब रमलापर झल्ला रही है कि लोटा उसने वहाँ क्यों रखा ? उसमें कतई शऊर नहीं है। परसों एक नया प्याला फुड़वा चुका है। रामरतन खूँटीपर-से दूकान-की चाबी उतारकर दरवाज़ेके बाहर निकल जाते हैं।

जगरानी घरमें सबमें पीछे निबट

"अम्मा, तेरी बनायी हुई चाय होटलोंसे भी अच्छी होती है।"

"मुझे बनाता है ? चाय बनाना भला मैं क्या जानूँ। यों ही गरम पानीमें दूध और चीनी घोल देती हूँ।"

"अम्मा, लोग कहते हैं कि अच्छी चाय और सुन्दर बीवी बड़े भाग्यसे मिलती है।"

पाती है। उसकी खालपर सिलवटें पड़ गयी हैं। सिरके बाल सन बन चुके हैं। पर आँखोंकी रोशनी अभी काफ़ी तेज़ है। धुली हुई धोती जो पहने है, वह अचानक घुटनेके पाससे फट जाती है। एक सूराख वहाँ पहले-से भी था। जगरानी सुई लेकर उतने हिस्सेमें पेबन्द लगाने लगती है।

नया डाकिया दस बजेसे पहले डाक बाँट जाता है। पुराना बारहके बाद ही गलीके अन्दर घुसता था।

स्कूल जाते-जाते दरवाज़ेपर-से घूमकर रमला पत्र दे जाती है। कासगंजसे आया है। वैद्य रामरतनकी बड़ी बेटी श्यामलाकी ससुरालका है। श्यामलाकी सासने लिखा है कि बहूकी गोद भरनेवाली है।

"गोद भरनेवाली है!" सावित्रीका चेहरा चमक उठता है। भगवान् सबकी सुनता है।

श्यामलाकी शादीको पाँच साल हो चुके थे और अभीतक कोई बच्चा नहीं हुआ था। लोगोंने खबर यहाँतक उड़ा रखी थी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि श्यामलाका आदमी श्यामलाको चाहता नहीं है। श्यामलाके चेहरेपर चेचकके दाग़ हैं।

"हाय राम! ससुरालवालोंने कित्ते दिनों छिपाये रखा! मायके तकमें खबर नहीं दी!" सावित्री बुदबुदाती है। उसे कल नहीं पड़ती है और वह दुर्गाकी बहूको सुनानेके लिए जीना चढ़ जाती है। दुर्गाकी बहूने ही श्यामलाके अपने आदमीसे न चाहे जानेवाली बात उड़ायी थी। उसकी कासगंजमें रिश्तेदारी है।

"भाभी देख लेना, लड़का होगा!" दुर्गाकी बहू बहुत चतुर है। बात फ़ौरन सँभाल लेती है।

"तेरे मुँहको घी-शक्कर!" सावित्रीको अब दुर्गाकी बहूसे कोई शिकायत नहीं है—"पहलौठीका लड़का ही फबता है। ईश्वरने जहाँ इत्ती सुनी है वहाँ यह भी सुनेगा।"

दूसरी ओर किरपाकी माँ रहती है। सावित्री जब छोटा-बड़ा भेद सब उसके आगे खोल आती है तो भला यह बात नहीं बतायेगी? किरपाकी माँ ढेर सारी बधाइयाँ दे डालती है। फिर बिरजूकी बहूके भी पैर भारी होनेकी बात रहस्यमय ढंगसे कहती है—"हाय राम, क्या ज़माना आ लगा है! अभी शादीके कित्ते दिन हुए हैं? तीन महीने न, और इत्ते दिनोंका ही पेटमें है!"

घड़ीमें ग्यारह बज रहे हैं। रोटी अगर अब न चढ़ायी गयी तो देर हो जायेगी। सावित्री चूल्हा जला देती है। बारह बजे रामरतन दूकानसे लौटकर खाना खाते हैं। खाना उन्हें गरम और समयपर मिले इसलिए वह घण्टा-भर पहलेसे ही तैयारी शुरू कर देती है।

ठेकीसे आयी लकड़ी सूखी है।

जगरानीने फटे हिस्सेपर मजबूत-सा पेबन्द लगा लिया है। जगरानीसे कल किरपाकी माँ बोली थी—"बेबेजी, अब यह धोती नहीं चलनेकी!"

"तो क्या नंगी दिखाऊं? जबतक दूसरी नहीं मिलती तबतक गाँठ-साँठकर तनको ढँकना है ही।" जगरानीकी आवाज़ काफ़ी खुरदरी है। यह कहकर उसने अपनी विवशता तो प्रकट की ही थी, घरवालोंपर ताना भी मारा था।

वैद्य रामरतन दूकानसे आ गये हैं। पत्नीने श्यामलाके पैर भारी होनेकी बात ही पहले सुनायी है। रामरतनको भी प्रसन्नता होती है, पर इसीके साथ पूछते हैं, "सगुन भेजना होगा?"

सगुन जानेकी बात कुछ पहले सावित्रीके भी मस्तिष्कमें आयी थी।

"हाँ, सगुन तो जायेगा ही। पहली बारका..."

"हाथ तंग होनेकी वजहसे ही मैं वैद्यनाथकी पेटेण्ट दवाइयाँ नहीं मँगा रहा हूँ। दूकानपर पूरी दवाइयाँ न हों तो मरीज़ क्यों आयें? ऐजेण्ट आया था, लौटा दिया।"

पत्नी चौकेमें पीढ़ा डाल देती है।

"पूरे पाँच साल बाद नाम निकला है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तीन दिनसे केशो पुजारीके यहाँ दवा जा रही थी। आज वह डॉ० सिंहकी दूकान-पर गया। हर कोई, फ़ौरन ही फ़ायदा चाहता है। धीरज तो किसीमें है ही नहीं।"

पत्नी थाली सामने रख देती है। कटोरी-में थोड़ी-सी चनेकी पतली दाल है, बैंगनकी सब्ज़ी है, सस्ते क़िस्मके चावल और रूखी रोटियाँ हैं।

"आज घीकी एक लटुरीवाला निकला था। पूछा तो रुपयेका ढाई छँटाक बताता था।"

"घी बिलकुल चुक गया है। सिर्फ़ तूअरी दालमें छोड़ती हूँ या शिब्बूकी।"

"दूकानकी हालत देखकर कभी-कभी जी बहुत घबड़ाता है।"

"अच्छे-बुरे दिन सभी कट जाते हैं।··· लेकिन नमक ज्यादा तो नहीं है? आते हुए कभी-कभार अपने लिए आने-दो आनेका घी ले आया करो।" रामरतनको दही बहुत पसन्द है, सावित्री जानती है—"सगुन बच्चों ही भेजना होगा। सास और दामादके लिए तो चाहिए ही।"

"वह रुसाला लेना-देना तो और जान ले लेता है···मैंने कहा नहीं कि हाथ तंग होने के कारण ही एजेण्ट लौटा दिया।"

"दुनियामें आकर इज़्ज़त-आबरूके लिए भी कुछ करना होता है।"

"तो इसके लिए क्या कोई अपनेको गिरवी रख दे?"

रामरतन जब झुँझलाये होते हैं तब उनकी सारी मुद्रा बुरी तरह ऐंठ जाती है, कोई तीखी पीड़ा जैसे सहनके टाँके तोड़ रही हो।

बैठकके गलीमें खुलनेवाले किवाड़ोंके दिल्ले टीनके हैं और किसीने बजाये हैं। रामरतन झल्लाते हुए सदर दरवाज़ेपर लपक जाते हैं। श्रीकृष्णका लड़का है। वह उसे ढेर सारी गालियाँ देते हैं, "किसी दिन हरामी हाथमें पड़ गया तो टाँगें तोड़ दूँगा। इन कुत्तोंसे पूछे कोई कि ग़रीब किवाड़ोंने तुम्हारा क्या लिया है? ऐसे ही दीवारसे इनका सिर टकराकर बजा दिया जाये तो?"

बैठते हुए जगरानीकी धोती फिर फट गयी है। फटे हुए भागको देखकर वह बहुत उदास हो जाती है। कपड़ेमें दम हो तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चले। नयी धोती देखो कब मिलती है। शिब्बूकी नौकरी लगे तो मुँह खोले। अपने पास दमड़ी न हो तो कोई किसीको नहीं पूछता है, भले ही सगा भाई हो। ससुराल-वालोंने जब दूधकी मक्खीकी तरह निकाल दिया तो मायकेमें कौन आदर देगा।—जगरानीके पास पिटारीमें सुई-धागा बराबर बना रहता है। वह सुई-धागा निकालकर फटा भाग सीने लगती है। सी जानेपर कुछ सन्तोष होता है और वह खूँटमें बँधी तम्बाकू फाँककर जुगाली करने लगती है।

धूप आँगनमें अच्छी तरह फैली है। रामरतन बैठकमें आराम कर रहे हैं। कोई बाहरसे आवाज़ लगाता है—"वैद्यजी हैं?"

रामरतन आवाज़ देनेवालेको बैठकका दरवाज़ा खोलकर अन्दर बुला लेते हैं। ग्राम-पंचायतका एक सेक्रेटरी है और उसे पिछली तारीखोंमें अपनी बीमारीका प्रमाण-पत्र चाहिए है। छुट्टीके प्रार्थना-पत्रपर दफ़्तरवालोंने माँगा है।

"मिल जायेगा, यों है नाजायज़ काम। चार दिनका चाहिए है तो दो रुपये होंगे, आठ आना फ़ी दिनके हिसाबसे।"—रामरतन अलमारीमें रखी प्रमाण-पत्रकी पुस्तिका निकाल लेते हैं, जिसमें उनका रजिस्टर्ड नम्बर, डिग्री आदि सब अंकित है।

पंचायत-सेक्रेटरी एक-एक रुपयेके दो नोट निकालकर सामने रख देता है।

रामरतन उसका नाम पूछते हैं, किस क्षेत्रमें उसकी नियुक्ति है, इसे लिखते हैं। पर रोगका नाम लिखनेके लिए जहाँ स्थान रिक्त है वहाँ आकर क़लम कुछ देर ठहरी रहती है, फिर एक झटकेके साथ 'अतिसार' लिख दिया जाता है और कितने दिनोंकी छुट्टियोंकी सिफ़ारिश की जाती है इसके सामने चार बना दिये जाते हैं और नीचे 'रामरतन वैद्य' के हस्ताक्षर कर वह तारीख छोड़ दी जाती है, जिसके लिए सेक्रेटरी कहता है।

सेक्रेटरी चला गया है और रामरतन दोनों नोट उठाकर बण्डीकी जेबमें डाल लेते हैं और प्रमाण-पत्रकी पुस्तिकाके खाली पृष्ठ देखने लगते हैं।

"वैद्यजी नमस्कार! कहिए सब कुशल-मंगल?" एक बूढ़ा-सा व्यक्ति मुसकराता हुआ बैठकमें आ गया है, जिसे पहचानकर रामरतनके चेहरेपर भी मुसकराहट फैल जाती है।

इस व्यक्तिकी ससुराल उसी मोहल्लेमें है। काफ़ी साल पहले यह सालीके विवाहपर यहाँ आया था और रातको एकाएक इसकी तबीयत बहुत ख़राब हो गयी थी। सारे शरीर-से पसीना पानीकी तरह छूटने लगा था और हाथ-पैर ठण्डे पड़ गये थे। रामरतनने रसकी तब एक पुड़िया ऐसी दी थी कि शरीरमें गरमी दौड़ गयी और पसीना भी कम हो गया। तीसरे दिन यह व्यक्ति बिलकुल चंगा हो गया। यह व्यक्ति अब जब भी ससुराल आता है, उनके पास आना भूलता नहीं।

"कब आये?"

"आज सुबह ही आया। बनारसी टोले-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है व्यावकिशोरजीके लड़केसे मेरी पोतीकी बातचीत चल रही है। मैंने सोचा, सामने आनेपर ज़्यादा असर पड़ेगा।"

अन्य बातें चलती हैं। प्रसंग आनेपर वह बूढ़ा व्यक्ति फिर कृतज्ञता प्रकट करता है कि उनकी अनुकम्पासे ही वह इतना जीवन और पा सका है। फिर वह आयुर्वेदिक-पद्धतिकी प्रशंसा करने लगता है और अंग्रेज़ी इलाजकी बुराइयाँ। वह बताता है कि वह या उसके परिवारमें जब भी कोई बीमार होता है वैद्यका ही इलाज होता है।

लगभग आधा घण्टा तक वह व्यक्ति बैठा रहता है। उसकी बातें बड़ी सरस और असरदार होती हैं।

रामरतनका शामको दूकान जानेका समय पाँचका है। पहले रामरतन चाय नहीं पीते थे पर पिछले दो वर्षोंसे शामके समय पीने लगे हैं।

पत्नी बताती है कि चायका पानी चढ़ा है और बस उबाल आने ही वाला है।

"खाली ही चाय पिलाओगी?" रामरतन मुसकरा देते हैं। उनके एक दाँतमें सोनेकी कील लगी है जो उस समयकी सूचक है जब प्रैक्टिस काफ़ी अच्छी चलती थी।

पत्नी ताकने लगती है।

"बेसन तो होगा ही। एक नमकीन चिल्ला बना लो।...नहीं, आलूकी कचरी रखी होंगी, उन्हें तल लो।"

सावित्री कचरी तो तल ही देती है, चिल्ला भी बना देती है।

हरीरतनने आकर बहन रमलाको काग़ज़पर बना एक चित्र दिखाया है जो पेन्सिलसे उसने बनाया है। लुंजी बुआका चित्र है। रेखाएँ कुछ यों जानदार खिंच गयी हैं कि जगरानीका एक अच्छा-खासा कार्टून बन गया है और रमला उसे माँको दिखानेके लोभका संवरण न कर सकी है। सावित्री हँस देती है। फिर डाँटती है—"शैतान, हरेककी खिल्ली उड़ाता है, बुआ अगर देखें तब—?"

रमला तब स्कूलकी अपनी दो अध्यापिकाओंकी मुद्राओंकी नक़ल करने लगती है—"अँगरेज़ीवाली दीदी मुँह फुलाकर यों कहती हैं—टू बुल्स् वर रंनिग!—जब वह 'बुल्स्' कहती हैं तब उनका मुँह खुद साँडकी तरह फूल जाता है। कम्मो कहती है कि दीदीके दो सींग और एक पूँछ लगा दी जाये।..."

भूगोलवाली दीदी बहुत छोटी हैं और दीवालपर ऊँचे टँगे मान-चित्रपर जब वह झेलम-चनाब नदियाँ और ब्रह्मपुत्रकी घाटी अंगुलीसे इशारा कर बताती हैं तो दीवालसे छिपकलीकी तरह चिपक जाती हैं।"

अँधेरा झुक आया है। शिवरतन लौट आया है। वह गलीमें किसी साथीसे ऊँचे स्वरमें हँसते हुए बातें कर रहा है और अन्दर उसका स्वर स्पष्ट सुनायी दे रहा है। माँने चायका पानी चढ़ा दिया है। उसने बेसनका चिल्ला और आलूकी कचरी उसके लिए भी रोक रखी है।

"अम्मा, तेरी बनायी हुई चाय होटलोंसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी अच्छी होती है।"

"मुझे बनाता है ? चाय बनाना भला मैं क्या जानूँ। यों ही गरम पानीमें दूध और चीनी घोल देती हूँ।"

"अम्मा, लोग कहते हैं कि अच्छी चाय और सुन्दर बीवी बड़े भाग्यसे मिलती है।"

सावित्रीके चेहरेकी शिकनें मिट जाती हैं। चेहरेकी ज़िल्द बड़ी नरम और चिकनी हो गयी है। चूल्हेमें जलती आगकी चमक जैसे उसके चेहरेपर पड़ रही है।

"तेरी कहीं नौकरी पक्की हो जाये तो तुझे चाँद-जैसी बीवी भी ला दूँ। कई जगहसे बातचीत आ रही है।"

शिवरतन ऊपर छतपर चढ़ गया है। वह सिगरेट पीना चाहता है और माँ और बुआके सामने पी नहीं सकता है। रामबाबू-की छतपर उनकी लड़की आशा खड़ी है। पीठ शिवरतनकी ओर है। गहरे सुर्ख़ रंगकी धोतीका पल्ला कन्धेपर पड़ा है। खुले हुए बाल एक रिबनके सहारे बँधे फैले हैं। शिव-रतन ज़ोरसे सीटी बजाता है। लड़की घूम-कर उधर देखती है और आँखें तरेरकर गर-दन घुमा लेती है।

शिवरतन इस बार सीटी और भी तेज़ बजाता है। लड़की तेज़ क़दमोंसे नीचे उतर जाती है। उतरते हुए वह जीभ निकालकर उसे चिढ़ाती है।

"इस अदापर कोई मर क्यों न जाये !" शिवरतन शायराना ढंगसे मुसकरा देता है।

आठ बजे रामरतन दूकान बन्द कर देते हैं।

घर आकर रामरतनने शिवरतनको पूछा है। शिवरतन घरपर ही है। वे बिगड़ उठते हैं—"तू सक्सेना साहबके यहाँ आज नहीं गया ?"

"जीइ्-इ्···बॉलीबालका टूर्नामेण्ट हो रहा है, मैं प्रकाशके साथ वहाँ चला गया।" शिवरतन गरदन नीचे डाल देता है। पिताके क्रोधसे वह घबराता है।

"प्रकाशसे तेरी तुलना है ? उसका बाप बड़ा वकील है—सक्सेना बाबू मुझे गिल्ला कर रहे थे। पन्द्रह दिनोंमें तेरे तीन नागे हुए हैं। उस रोज़ तूने सर-दर्दका बहाना किया था। पिछले मंगलको सरकसका पास आ गया था। बहुत कह-सुनकर तो ट्यूशन दिलायी और तू उसपर लात मारना चाहता है !"

"सुबह गया था। उस समय बच्चे कहीं बाहर गये थे।"

तू अपनी सुविधा देखेगा कि उनकी जिनकी ट्यूशन पढ़ाता है। एक जगह ट्यूशन-में नाम हो तो दूसरी मिले। रोटी खानेको मिल जाती है तो मटरगश्ती सूझ रही है। मैच देखना ज़रूरी था ? सरकस देखे बिना जवानी बेकार जा रही थी ? हया-शरम भी तो नहीं है।" रामरतनका स्वर क्रोधके समय काफ़ी ऊँचा हो जाता है। सावित्री टोकती है कि दूसरे घरोंमें आवाज़ जा रही है, कोई

[शेष पृष्ठ ५२ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सँपेरा

विश्वजीत

हिन्दीके नये कथाकार।

कहा जाता है कि बहुत पहले उसकी बीनमें जादू था। बीन बजाते हुए वह स्वयं इतना तल्लीन हो जाता कि बाह्य जगत्का उसे कुछ भी ध्यान नहीं रहता। उसकी आँखें बन्द हो जातीं। उसके शरीरका एक-एक अंग धुनके साथ ही डोलने लगता। जो भी सुनता, जहाँ भी सुनता उसकी ओर खिंचा चला जाता। सारी सृष्टिमें कुछ क्षण-के लिए ठहराव आ जाता। कहनेवाले तो यहाँतक कहते हैं कि चाँद-सूरज अपनी-अपनी जगह ठहर जाते। हवा तबतकके लिए थम जाती। एक गहरा सन्नाटा चारों ओर छा जाता। सभी बेसुध-से उसकी ध्वनिमें अपनेको खो देते।

बीन बजाते-बजाते जब वह मूर्छित हो जाता, सारे जीवोंकी मूर्छा टूटती। सभीको आश्चर्य होता, वे कैसे यहाँ हैं? एक-एक करके सभी चले जाते। अपनेको अकेला पाकर वह पीड़ासे भर जाता। वह बहुत थका-हुआ महसूस करता। उसे लगता, उसकी साधना अधूरी है। वह किसीको प्रभावित नहीं कर सकता। वह दूने लगनके साथ अपनी साधनामें प्रवृत्त हो जाता।

एक दिन ऐसी ही मूर्छाके बाद जब उसकी चेतना लौटी तो उसे एक नागिन दिखाई पड़ी जो अन्य सभी जीव-धारियोंके चले जानेपर भी अकेली रुकी हुई थी।

कलाकार पहले तो डरा और घबरा गया किन्तु जब नागिनने मुसकराकर उसकी कलाकी प्रशंसा की तो उसका डर जाता रहा। वह प्रसन्न हो गया। उसने नागिनको अपने पास बुलाया और उसके फन सहलाने लगा। नागिन समर्पित मन उसकी गोदमें पड़ी रही।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तुम महान् कलाकार हो। तुम्हारी बीनकी धुनमें कौन-सी पीड़ा है ?" नागिनने पूछा। कलाकार चौंक गया। उसने उसका फन सहलाना बन्द कर दिया और सोचने लगा। बड़ी देरतक सोचता रहा और अन्तमें शायद हारकर ही उसने कहा, "मैं कुछ नहीं जानता। मेरी धुनमें पीड़ा भी है यह मुझे आज पता चला है।" नागिन मुसकराकर उसकी गोदसे नीचे उतर आयी और जानेके पहले फूत्कार छोड़ती हुई अपनी पूँछके बल खड़ी हो गयी।

"तुम्हारे बीन बजानेके पूर्व मैं एक चूहे-के पीछे दौड़ रही थी। तुमने मेरा शिकार मुझसे छीन लिया। मैं तुम्हारा ही रक्त पिऊँगी। मेरे दाँतोंमें ज़हर है। मैं तुम्हें डसूँगी।"

कलाकारको क्रोध आ गया। उसने दौड़-कर नागिनको पकड़ लिया। नागिनने बहुत प्रार्थना की किन्तु उसने छोड़ा नहीं, उसके विषके दाँत निकालकर उसे अपने गलेमें लटका लिया और दरवाज़े-दरवाज़े घूमने लगा।

जबसे कलाकारने यह नया रूप धारण किया, सृष्टि-चक्रमें एक पलको भी ठहराव नहीं आया। वह स्वयं बीन बजाते हुए कभी अचेत नहीं हुआ। सदा उसका ध्यान आगन्तुक विषधरोंकी टोहमें लगा रहता और जैसे ही अवसर मिलता वह उन्हें पकड़ लेता। कुछ लोगोंकी शिकायत है कि अब कलाकारकी बीनमें वह जादू नहीं रहा। केवल विषधर नागोंपर ही उसका जादू चलता है। और सबसे बुरी बात तो यह हुई कि अब कलाकारको भी भूख लगने लगी। पहले भूख नहीं लगती थी।

[पृष्ठ ५० का शेष : कमज़ोर कपड़ेकी धोती]

सुनेगा तो क्या कहेगा, जवान बेटेपर यों नहीं बिगड़ा जाता।

"इसे बिगाड़नेमें तेरा ज़्यादा हाथ है। बहुत शह देती है!" रामरतन पत्नीपर फट पड़ते हैं—"मैं मेहनत कर मरा जाता हूँ और लोग बिना हाथ-पैर हिलाये आरामसे खाना चाहते हैं।"

शिवरतनके अन्तरमें कुछ तेज़ीसे चुभने लगता है।

खाटसे उठते हुए जगरानीकी धोती फिर फट जाती है। जगरानी फटे हिस्सेको दुखती नज़रसे देखती है। कपड़ा इतना कमज़ोर है कि ज़रा-सा दबाव पड़ता है और फट जाता है। फटे हिस्सेसे उसकी जाँघके पीछेकी खुरदरी झुर्रीदार जिल्द चमक रही है। उसकी दृष्टिमें कुछ यों तिर आता है जैसे वह जिल्द उसे बहुत घिनौनी लग रही है।—नहीं, जगरानी सुबह उस हिस्सेको फिर सी लेगी!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हथेलीपर हथेलीकी छाप

वीरेन मोहिले

नयी विधाके नये रचनाकार।

■

क्या स्वयं अपनी आत्महत्याकी बात
कहकर तानपूरेपर आलाप छेड़ने लगती है।
यह साँझ मेरी सबसे बड़ी दुश्मन है!
कहाँसे आती है—मेरी आँखोंपर पट्टी बाँध
देती है। मेरे मनपर इरेज़र रख जाती है।
मैं सूनमुटमें ढकी, एक वीरान राह हूँ, जिस-
पर सदैव अँधेरा ही छाया रहता है। मकड़ी-
के जाले बुने रहते हैं। सूनेपनका विश्रामगृह।
यह साँझ मेरी वैशाखी छीनकर ले जाती
है। मुझे ऐसा लगता है जैसे मैं अभी जन्मी
हूँ नहीं हूँ।

मेरे मनकी भटकन एक बड़ी-सी शिलाके
नीचे दब गयी है, जिसके ऊपरी भागपर
किसीने अपना नाम लिख दिया है।

किसीके मना करनेसे लिखना छोड़ दूँ,
कैसे हो सकता है? मैं जानती हूँ—मेरी
जिन्दगी डायरीके पन्ने लिखते ही कट जायेगी।
दूसरोंके लिखे गीतोंमें अपना दुःख-दर्द ढूँढूँ
और उन्हें गाऊँ? दियेकी बाती-सी जलती

■

रहूँ? तुम दूरसे स्नेह सींचते रहो। कभी
एक दियेमें मेरे साथ जलकर तो देखो!

यह चमकता हुआ बल्ब मेरे माथेपर
बिंदिया बनना चाहता था—मैंने उसे तोड़
दिया। चमकती हुई ट्यूब लाइट मेरी माँग-
में भर जानेकी प्रार्थना कर रही थी, मैंने
उसे बुझा दिया।

मैं तो जंग लगी वीणाकी तरह उपेक्षाके
वस्त्रोंसे ढँकी थी। व्यर्थ ही तारोंको संवारा-
सँजोया।

■

सोचती थी—यह लड़का बहुत घमण्डी
है। देखती थी—यह लड़का बहुत मिलनसार
है। बहनसे बात करती थी—लड़का नीरस
और बुद्धू है। सहेलियोंसे कहती थी—इसकी
बहुत-सी लड़कियाँ दोस्त हैं।

■

पहली बार घर गयी। घरमें हर समय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाम रहती है। सब कुछ अस्त-व्यस्त। एक टूटी हुई कुरसी, एक सिलाई निकला मूँढ़ा। दीवार तरह-तरहकी पेंटिंग्ससे बोझिल हो गयी है। जिस रास्तेसे होकर कमरेमें जाते हैं—गुफाओं-जैसा। सीढ़ियाँ बाबा आदमके ज़मानेकी – जर्जर।

कमरेमें पहुँचते ही कोट उतारकर मेरे ऊपर फेंक दिया। प्यारका पहला अहसास, पहली सिहरन। मेरे नामका संक्षिप्तीकरण किया और पास बुलाया। मैं चली गयी। हथेलीमें मेरा भविष्य देखने लगे।

■

मुझे लगा वह कुछ कहना चाहते हैं, कह नहीं पा रहे। उनके मनमें कुछ गूँज रहा है और वह गूँज उन्हें छटपटा देती है।

मैं अजीब-सा सोचती घर लौट आयी।

■

नव वर्षके शुभकामना-सन्देश मेरी टेबिल पर रखे हैं। मेरा मन उनके कार्डपर पेपर-वेट बना रखा है।

पढ़ने बैठती हूँ तो चेहरा पढ़ने लगती हूँ। उनकी हथेली वायदेका हाथ पानेके लिए खुली हुई है और मैं लाख रोकनेपर भी अपने हाथको नहीं रोक पाती। मेरा हाथ उठता है और उनकी हथेलीपर रखा जाता है। रातकी नींद उसी कमरेमें क़ैद हो गयी है।

■

गुलाबके फूलके पास जाकर भैरवी गुन-गुनाती हूँ। यह जानते हुए भी कि कल शामसे रात देर तक उसके पास बैठी थी। वह अनिद्राकी स्थितिमें है, सरदीका झुटका, मेरा स्पर्श पा, अँगड़ाई लेकर उठता है। आज कॉलेज जाने-जैसी जल्दी भी मुझे नहीं है। ओसकी एक सिकुड़ी-सी बूँदमें दर्पण-सी झाँकती हूँ। अपने आप प्रश्न करती हूँ—है सुन्दर या मेरा प्रतिबिम्ब? मेरी तस्वीर या मैं?

यही प्रश्न रात देर बाद जन्मा और मेरे पास सोया रहा। मैं उसे आँचल डाले रही।

सोचते-सोचते सामने सड़क बन जाती है। मेरे बारेमें क्या सोचते हैं? क्या सोचेंगे अगर मैं उनके साथ घूमने जाती हूँ, सैर करती हूँ। मनचाहा सोचनेकी छूट मैंने दे दी है। द्वन्द्व मेरे ही द्वारा उत्पन्न इस शंकाके है। शंकाका क्या औचित्य? अगर इस ज़ंजीरको रिबनकी तरह निकालकर बालोंके स्वच्छन्द होने देनेकी तरह मैं हो जाती हूँ तो सबसे बड़ी ख़ुशी होगी।

एक फुट धूप देहरीपर आ गयी है। मैं पैरकी उँगलियोंमें धूपका महावर रचती हूँ। हाथके नाखूनोंसे लकीरें बनाती हूँ—मिटाती हूँ। नाम लिखकर पढ़ती हूँ।

मैंने अपने दोनों हाथ चेहरेपर रख लिये हैं। उँगलियोंके बीचसे देखती हूँ। बालोंका एक गुच्छा, भूरी आँखें···वह मुझसे कह रहा है, तुम घर आओ नहीं तो कहोगी··· वह चुप खड़ा है, लौटकर जानेको मुड़ता फेरता है, सूरजमुखी-जैसा। उसे देखती हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...चिह्नोंका दरवाज़ा वेण्टीलैटरमें लग जाता है। मैं धूप नहा जाती हूँ।

चायके कपमें युगल आँखें धुँधलाती हैं।

...की अज्ञानके साथ ही मैं खिड़की-पर खड़ी रहती हूँ। टकटकी बाँधे ऊबड़-खाबड़ गलीको देखती रहती हूँ। आस-पासकी दीवारोंपर उभरती परछाइयोंको पहचाननेकी कोशिश करती हूँ।

...बोलना नहीं आता ?" मेरे ओठों-पर नज़र जमती है जैसे 'कॉल-बेल' दबाकर दरवाज़ा खुलनेका इन्तज़ार हो।

"आता तो है।" दरवाज़ा खुलकर जैसे बन्द हो जाता है।

"फिर जवाब क्यों नहीं देतीं ?" कॉल-बेल फिर बजती है।

मालकिन अन्दर हैं अथवा नहीं-जैसा ...। जैसे नौकरानी गूँगी हो।

"आप हँसती भी नहीं ?" तालाबके ...जलमें कंकरी गिरती है, चक्करदार ...के कम्पनको मैं देखने लगती हूँ।

"कभी-कभी।"

"क्यों ?" तरंगोंको पकड़नेकी कोशिश। ...एक मछली उछलकर आये, लौट जाये।

"एक ट्रेजेडी है।"

"बताओ, अगर मुझे बतानेमें कोई ऐत-राज न हो।" डॉक्टरों-जैसी सहानुभूति।

मरीज़की स्वाभाविक झिझक।

डॉक्टरका सहानुभूतिपूर्ण पुनः आग्रह।

सोचते-सोचते सामने
सड़क बन जाती है। मेरे बारेमें
क्या सोचते हैं ? क्या सोचेंगे
अगर मैं उनके साथ घूमने जाती हूँ,
बात करती हूँ। मनचाहा
सोचनेकी छूट मैंने दे दी है।
द्वन्द्व मेरे ही द्वारा उत्पन्न इस शंकामें है।
शंकाका क्या औचित्य ? अगर इस ज़ंजीरको
रिबनकी तरह निकालकर बालोंको
स्वच्छन्द होने देनेकी तरह
मैं हो जाती हूँ तो सबसे बड़ी ख़ुशी होगी।

"फिर कभी कहूँगी।" प्रसादकी अधूरी कहानीकी नायिका-जैसा उत्तर।

"आपका मन खराब हो जायेगा।" मौन-के तारोंपर एक झाला।

तीन मटकोंमें-से छनकर आती पानीकी बूँदोंकी तरह एक-एक शब्द टपकता है।

मारफियाके इंजेक्शनकी खुमारी उतरी।

"मैं आपके योग्य नहीं।"

जैसे योग्यता सींग हो और सींग निक-लनेमें अभी देरी है। उसी देरीको ज़िन्दगीके नामपर काटा जा रहा हो। हर खेतमें देरी उग आयी हो।

"नज़दीक आओ। सुना।" झागकी तरह कुछ उठा, उफान आ गया।

"हाथ दो।"

"मेरी हथेली कोई स्लेट है।" मास्टरजी जैसे अक्षर-ज्ञान शुरू कर रहे हैं। अ—अंगूरका, आ—आनन्दका···।

"मैं गोदमें सिर रखकर सो जाना चाहता हूँ।" किसी सभामें प्रस्ताव-विरोधी सदस्यों

हथेलीपर हथेलीकी छाप : वीरेन गोहिल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा मतदानमें भाग न लेने-जैसी प्रतिक्रिया।

शहीद-दिवसपर दो मिनिटके मौन-सी भाव-भंगिमाएँ।

"आपको जो अच्छा लगे कीजिए।" सैनिकों-सा आत्मसमर्पण। पोरस-जैसे व्यवहारकी उम्मीद।

गोदमें सिरके बोझका अनुभव कर मैं आँखें बन्द करती हूँ। लम्बा घूँघट मेरे चेहरेपर छा जाता है। राह-भटकी आँखें तालाबके किनारे सुस्ताने लगती हैं। अपना ही प्रतिबिम्ब आँखोंमें उभरता है। "ये मेरी आँखें हैं?" सहसा गुमी हुई चीज़ मिल जाने-जैसी ख़ुशी होती है। बरगदके पेड़की जड़ें लटक रही हैं। पासमें टिटहरी बोल रही है—साँसकी धड़कन।

अपनी सूनी बाँहें स्वयंसे लिपट जाती हैं। बरगदके पेड़पर लता बिना सीढ़ी लगाए चढ़ने लगती है।

मेरा मन चेचकके गहरे बदसूरत दागोंसा ऊबड़-खाबड़ हो जाता है।

■

"लगता है, आपका गणित बहुत कमज़ोर है, नहीं तो ज़िन्दगीको गणितके फ़ार्मूलेकी तरह आसानीसे हल किया जा सकता है।" एक हथेली उठती है, मेरी हथेलीपर छाप लगा देती है। साड़ीपर बार्डर बन जाता है।

मैं गुनगुनाती हूँ:

'स्वीट टेम्स, रन साफ्टली टिल आई कम माई सांग।'

छाप गहरी हो गयी है। एक बिना टिके के लिफ़ाफ़ेकी तरह मैं डाकघरमें डाल दी गयी हूँ।

महिलोपयोगी एकमात्र उत्कृष्ट मासिक

'शृङ्गार'

प्रबन्ध सम्पादक : देवेन्द्र अग्रवाल ● सम्पादिका : लावण्यप्रभा

- विचारपूर्ण व उपयोगी लेख
- स्त्रियोपयोगी रुचिकर सामग्री
- रोचक मनोवैज्ञानिक कहानियाँ
- कविताएँ तथा सुन्दर गीत
- महिलाओंके इण्टरव्यू
- गृह-सज्जा, प्रसाधन समस्याएँ, विचार-मंच आदि अनेक रोचक स्थायी स्तम्भ।

मूल्य : वार्षिक : ५ रुपये, मासिक : ५० पैसे

१३।३७, शक्तिनगर, दिल्ली-७

फ़ोन नं० : २२७३००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ना-जायज़ शिकायतें

उपेन्द्रनाथ अश्क

सुप्रसिद्ध कथाकार-उपन्यासकार, कवि, समीक्षक और तेज़ क़लमवाले।

■

• • • • • •

इसी जब कौशल्याके साथ सैरको जाने-की बात सोचता हूँ तो शादीके शुरूके दिनों-की एक घटना आँखोंमें कौंध जाती है। कौशल्याने एक लेखमें उसका ज़िक्र भी किया है।

हम लोग तीस हज़ारामें, भैरोके मन्दिर-के सामने रहते थे। छोटे-छोटे पच्चीस-पचीस क्वार्टरोंकी कॉलोनी थी। नम्बर तीन में हम रहते थे और पाँचमें उर्दूके प्रसिद्ध कथाकार कृष्ण और महेन्द्र। कौशल्याको आये चन्द ही महीने हुए थे। शुरू गरमियोंके दिन थे। एक शाम ठण्डी-ठण्डी हवा रमकने लगी थी कि महेन्द्र आया और उसने कहा, "चलो यार अश्क, ज़रा बूलवर्ड रोडपर घूम आयें।"

मैं नंगे बदनपर केवल तहमद पहने बैठा शाम कर रहा था। मस्तीमें उठा और बोला, "चलो।"

कौशल्या बरामदेमें बैठी थी। मैंने कहा, "चलो ज़रा घूम आयें!"

"इसी तरह!"

"क्यों?"

"कपड़े तो पहन लीजिए।"

"तब सैरका मज़ा क्या ख़ाक आयेगा?"

"तो आप जाइए।"

और मैं वैसे ही नंगे बदन, नंगे पैर—केवल तहमद पहने—महेन्द्रके साथ चला गया।

शायद उस तरह सैरको जानेका, और कौशल्याको साथ चलनेके लिए कहनेका वही पहला और अन्तिम अवसर था। बाईस-तेईस वर्षकी दूरीसे देखनेपर अब वह सपना-सा लगता है। कभी-कभी यह भी खयाल आता है कि क्या सचमुच ऐसा हुआ था? पर इस घटनासे कौशल्याके और मेरे दृष्टि-कोणमें जो उत्तर-दक्षिणका अन्तर है, उसका संकेत मिल जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे कौशल्याको उस दशामें सैरको साथ चलनेके लिए कहनेका साहस कैसे हुआ ? इसपर किसी पाठकको आश्चर्य हो सकता है। अब मुझे भी होता है। पर तब मेरे लिए यह साधारण बात थी और जब-जब यह प्रसंग आया है, मैंने कौशल्याको समझाया भी है। शादीसे पहले जब कौशल्या प्रीतनगर मुझसे मिलने आयी थी, मैं अपने क्वार्टरसे बाहर छोटे-से लॉनमें नंगे बदन तहमद लगाये बैठा था और उसके आनेपर वैसे ही उठकर अन्दर कमरेमें कुरसीपर जा बैठा था। फिर जब वह एक वर्ष बाद दिल्ली आयी, मैं कृष्णके घर वैसे ही तहमद लगाये नंगे बदन बैठा था और यह सुनकर कि वह आ गयी है, उठकर अपने क्वार्टरमें चला आया था। कौशल्याने मेरी उस भूषा अथवा भूषाके अभावपर न कोई आश्चर्य प्रकट किया, न कोई रिमार्क कसा। हो सकता है, मैंने ही अपनी मस्तीमें उसके चेहरेको न देखा हो, प्रतिक्रिया वहाँ हुई हो लेकिन मैंने ध्यान न दिया हो। बहरहाल, जब वह दिल्ली आयी और कुछ दिन बाद मैंने उससे विवाह कर लिया तो मैं वैसे ही सहज रूपमें रहता रहा। मैं उन दिनों ऑल इण्डिया रेडियोमें मुलाज़िम था और केवल दफ़्तर पतलून-क़मीज़ पहनकर जाता था। उसके बादका समय नंगे बदन तहमद बाँधे रहता था। (सतवन्त—श्रीमती राजेन्द्र सिंह बेदी—का कहना है कि तब मैं काफ़ी सभ्य हो चुका था क्योंकि उन्होंने तो मुझे बेदीके साथ लाहौरमें दिन-दिन-भर केवल लंगोट लगाये अथवा कच्छा पहने देखा है।)

लेकिन सैरके लिए इस तरह कौशल्याको आमन्त्रित करनेके बाद मुझे पहली बार लगा कि मैं कोई गुनाह करता रहा हूँ—कि नंगे पैर, नंग बदन सड़कोंपर घूमना निरे गँवारोंका काम है।...कौशल्याने मुझे सभ्य बनानेके लिए क्या-क्या किया, मैंने कैसे मर-दानावार प्रतिरोध करते हुए, अन्तको हथि-यार डाल दिये—यह एक लम्बी कहानी है। लेकिन हमारे स्वभावके इस अन्तरके कारण हमारी सैर-तफ़रीह—सैर-तफरीह न होकर कभी-कभी खासी बोर हो जाती रही है।

कौशल्या (मेरे यहाँ आनेके पहले) ग़ालिबन हर काम सलीक़ेसे करनेकी आदी रही है। कपड़े चाहे सुबह ही बदले हों, मैले भी न गये हों और उनपर कोई धब्बा वग़ैरह भी न पड़ा हो, पर यदि शामको सैरको जाना हो तो कौशल्या चाहेगी कि फिर कपड़े बदले जायें। शामको गहरे रंगकी साड़ी अथवा सूट उसे पहनना पसन्द है और कहीं दिनको बाज़ार निकलना हो तो वह हल्के रंगके कपड़े पहनना पसन्द करती है। सैरके लिए ग़ालिबके शब्दोंमें मुझ 'फ़क़ीरों' का भेस ही बढ़िया लगता है। सरदियोंके दिन हों तो एक सूट उतारकर दूसरा पहनना मुझे बेतरह उलझा देता है और गरमियोंमें शामको अद्धीका चुन्नटदार अथवा सिल्कका कुरता-पायजामा पहनना बेकारका तकल्लुफ़ लगता है। मुझे दिनमें दूसरी बार कपड़े बदलनेमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न केवल कोफ़्त होती है बल्कि यह भी लगता है, जैसे हम स्वयं सैर करने नहीं जा रहे, दूसरोंकी सैरका सामान बनने जा रहे हैं और कुछ अजीब बनावटकी अनुभूति (सेल्फ़ कान्शसनेस) मुझे हो आती है। यदि मैं कौशल्यासे ऐसेमें कहूँ कि कपड़े बदलनेकी क्या जरूरत है, ऐसे ही चलते हैं, तब यदि वह कपड़े बदलनेको तैयार भी होगी तो कहेगी, चलिए मैं भी नहीं बदलती। और एक कहनेपर नहीं बदलती और वैसे ही अपने मुचड़े कपड़ोंमें मेरे साथ चल देती है और सैरको निकलनेका उसका लुत्फ़ किरकिरा हो जाता है।···अब यदि उसकी इस धमकीपर मैं फिरसे कपड़े बदल लेता हूँ और काफ़ी तैयारी-वैयारी करके हम 'केवल' सैरको निकलते हैं तो मेरा सारा मज़ा किरकिरा हो जाता है।

केवल कौशल्याके साथ सैरको जानेमें केवल मैं फिरसे कपड़े बदलने ही की पख़ नहीं। सैरको जाने (या यों कहूँ कि बीवीको साथ लेकर कहीं भी जाने) के नियम-क़ानून या बन्दिशोंकी पूरी एक सूची है।

कामपर जाने और सैरको जानेमें कौशल्या अन्तर मानती है। अब तो बीमारियों, परेशानियों, संघर्ष और उम्रने उसकी चाल काफ़ी धीमी कर दी है, पर शादीके पहले दिनोंमें वह काफ़ी तेज़ चलती थी। मैं तो खैर शुरूसे तेजगाम रहा हूँ और

पतिकी चाल तेज़ न हो,
इसके लिए यह
ज़रूरी है कि वह सैरको जाते
वक्त ज़रा भी न सोचे, प्रेम-प्यारकी,
घर-द्वारकी बातें करे।
सम्भव हो तो पत्नीको अपने
संस्मरण सुनाने दे। चाहे वे दस बारके सुने हों,
पर ज़रा भी यह प्रकट न होने दे कि
उसने उन्हें पहले ही सुना
है। हुँकारा भरता
हुआ मज़े-मज़े पत्नी-
की धीमी-धीमी आवाज़से कान
लगाये चलता जाये।

बीमारीके बावजूद आज भी अनायास मेरे पैरोंकी गति तेज़ हो जाती है।···लेकिन सैर करते समय तेज़ चलना कौशल्या ठीक नहीं समझती और वह पतिका यह कर्तव्य मानती है कि वह भी अपनी चाल ज़रा तेज़ न होने दे।—पत्नीके पगसे एक पग पीछे रखे तो और भी अच्छा, ताकि वह कभी-कभी उसे उसकी मन्द गतिके लिए कोस सके।

[मेरे-जैसे किसी तेज़गामके लिए यह कितनी बड़ी सज़ा है, इसकी आप कल्पना कर सकते हैं !]

पतिकी चाल तेज़ न हो, इसके लिए यह ज़रूरी है कि वह सैरको जाते वक़्त ज़रा भी न सोचे, प्रेम-प्यारकी, घर-द्वारकी बातें करे। सम्भव हो तो पत्नीको अपने संस्मरण सुनाने दे। चाहे वे दस बारके सुने हों, पर ज़रा भी यह प्रकट न होने दे कि उसने उन्हें पहले ही सुना है। हुँकारा भरता हुआ, मज़े-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मज़े, पत्नीकी धीमी-धीमी आवाज़से कान लगाये चलता जाये। यों कौशल्याकी आवाज़ काफ़ी तेज़ है, पर बाहर वह ऊँची आवाज़से बोलना असभ्यतामें शुमार करती है। इसलिए पतिका दूर चलना पत्नीकी नाराज़गी मोल लेना है।

[किसी बलन्द-बाँग आदमीके लिए जो चौबीसों घण्टे सोचता है, नहीं सोचता तो ज़ोरोंसे बात करता है, यों चुप-चुप चलना, मिन-मिन बात करना कैसी बड़ी सज़ा है, इसकी कल्पना की जा सकती है।]

अब तो नहीं पर पहले जब मुझे इन बारीकियोंका ज्ञान नहीं था, मैं धाराप्रवाह बोलता अथवा अपने ध्यानमें मग्न चला जाता था कि सहसा मुझे आभास मिलता, पत्नी साथ नहीं है। पलटकर देखता था तो कौशल्या कहीं दूर पीछे घिसटती चली आ रही होती।

"अरे भई, तुम पीछे रह गयीं!"

आपको यह भी एहसास नहीं कि कोई आपके साथ चल रहा है। सरपट भागे जा रहे हैं!"

वह सुते हुए चेहरेसे एकदम गम्भीर होकर कहती और दिमाग़से सारे विचार उड़ंछू हो जाते। क्या बात कर रहा था, अथवा क्या सोच रहा था—कोशिश करने-पर भी याद न आता।

न जाने ऐसा कितनी बार हुआ होगा, लेकिन धीरे-धीरे मुझे आदत पड़ गयी।

फिर इतना ही नहीं कि आदमी कोई दूसरी बात न सोचे और तेज़ न चले और ज़ोरसे न बोले। यह भी ज़रूरी है कि रास्ते-में कोई दोस्त मिल जाये तो उसे औपचारिक नमस्कार करके पत्नीके साथ बराबर चलता जाये।

मेरे-जैसे पतिके लिए, जो स्वयं हो फक्कड़ न हो बल्कि जिसके मित्र भी फक्कड़ रहे हों और न जानते हों कि मित्र पत्नीके साथ जा रहा हो तो उसे नहीं रोकना चाहिए, कौशल्याके साथ सैर करते हुए कितने घण्टे न हो जाते होंगे?...

कभी कौशल्याके साथ जा रहा होता कि सड़कके दूसरे किनारे कोई मित्र आता दिखायी देता और मैं उसे जा पकड़ता और हम वहीं बातोंमें निमग्न हो जाते और कभी मित्र मुझे आ पकड़ता और बिना इस बात-का खयाल किये कि मेरी पत्नी साथ है हम गप लगाने लगते।

[मैं अपनी पत्नीसे आशा रखता हूँ कि वह सरे-सड़क होनेवाली ग़पबाज़ीमें सम्पूर्ण योग दे। ज़ाहिर है कि कौशल्याके मज़-हबमें इससे बड़ा गुनाह कोई दूसरा नहीं हो सकता।]

■

सभ्य समाजकी सैर-तफ़रीहमें पिकनिक-का भी बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है। अब इसे दुर्भाग्य ही कह लीजिए कि बचपनकी ग़रीबी और जवानीके संघर्षने मेरी ज़िन्दगीमें पिक-निकोंको ज़्यादा स्थान नहीं दिया। स्कूलके ज़मानेमें स्काउटिंगके खाते एक-दो पिकनिकें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की याद है। खास सुखद नहीं है। दिसम्बर-की कड़कती सरदीमें शहरसे तीन-चार मील दूर एक कैम्पपर गये थे। खाना चूंकि स्वयं पकाना पड़ता था और सीली लकड़ियोंमें फूंकें मारते-मारते आँखोंमें पानी भर आता था, मीलों चलते पैर दुखने लगते थे और रातको सरदीके कारण पूरी नींद न आती थी, इसलिए सात दिन बाद जब लौटे तो साँवला रंग एकदम स्याह पड़ गया था, पैरोंपर पपड़ियाँ जमी थीं और कल्ले अन्दर धँस गये थे।

एक और पिकनिककी याद है। मेरी बहूकी बीवी ज़िन्दा थी। प्रेमी (श्री हरिकृष्ण प्रेमी) के साले और उनकी बहूको लाहौरका शालामार दिखानेके सिलसिलेमें पिकनिकका प्रबन्ध किया गया। लाहौरका शालामार काश्मीरके शालामारकी तर्ज़पर बना हुआ बड़ा ही सुन्दर बाग़ है। शहरसे पाँच-एक मील दूर बाग़बानपुरेमें बना है। खाना वहीं पकानेकी योजना था और दो स्टोव साथ ले लिये गये थे। बहारके दिन थे और मौसम बड़ा सुहावना था। बाग़के तीनों हिस्से देख, पेड़ोंपर चढ़कर इर्द-गिर्दका नज़ारा करने-के बाद जब खाना पकानेकी बारी आयी तो सब नखरे करने लगे। एक तो जला ही नहीं। लाख पुचकारा, फुसलाया, उसने सनद नहीं दी। मालूम हुआ, उसका छेद बन्द हो गया है और पिन घर भूल आये हैं। दूसरा जला, लेकिन कुछ देर बाद भक्क-से बुझ गया। हवा तेज़ थी और उसका मुक़ाबिला करना उस बेचारेके बसकी बात नहीं थी। तब वही वर्षों पहले स्काउटिंगकी पिकनिक-वाला आयोजन करना पड़ा। दो ईंटोंका चूल्हा बनाया। बाग़में खोज-खोजकर सूखी छड़ियाँ इकट्ठी कीं। सूखी तो थीं, पर सीली थीं। जलती ही न थीं। औरतें और मर्द सभी लगे। भूखने आँतोंमें छेद कर दिये। कहीं तीन बजे जाकर खाने-जैसा कुछ डौल हुआ। घरको लौटे तो हाथ-मुँह दोनों काले थे और कपड़ोंपर जगह-जगह धब्बे पड़े थे।

उसके बाद फिर कभी पिकनिकका शौक़ नहीं चर्राया।

लेकिन कौशल्याके साथ पिकनिकपर जानेमें किसी इस तरहके घपलेकी सम्भावना नहीं हो सकती। ज़रूरतकी चीज़ोंके सिल-सिलेमें वह छोटेसे छोटे ब्योरेका भी खयाल रखती है। सर्दियोंका मौसिम हो तो अँगीठी, कोयले, दियासलाईकी डिबिया, सूखी खप-चियाँ, मिट्टीके तेलकी शीशी, हाथ धोनेके लिए साबुन-तौलिया और गरमियाँ हों तो बर्फ़के पानीका जग साथ रहता है। फिर चम्मच, प्याले, प्लेटें, गिलास—सादे-मीठे पान, कटी सुपारी, इलायची, सौंफ़ और ऐसी दसियों चीज़ें साथ होती हैं—पिकनिकमें भाग लेने-वालोंकी भिन्न-भिन्न रुचियोंका वह खयाल रखती है। बस एक मेज़ और कुरसियोंकी कसर रह जाती है, बाक़ी पूरेका पूरा डाय-निंग-रूम साथ होता है और इस सारे ताम-झाममें पिकनिक गौण हो जाती है। बलुआ घाटसे संगम तक किश्तीमें उसके साथ कई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बार पिकनिकपर गया हूँ। दरियाँ, चादरें और तकिये तक साथ गये हैं। और मुझे हमेशा कुछ अजीब-सी उलझन हुई है। क्योंकि घरका घर ही पिकनिकपर नहीं जाता, उसकी सारी बन्दिशें, क़ायदे, क़ानून—सब साथमें लगे चलते हैं···और चूँकि इन सब क़ायदे-क़ानूनोंका कहीं न-कहीं उल्लंघन हो जाना स्वाभाविक है इसलिए तनावकी स्थितिका पैदा हो जाना, मूडका सहसा बिगड़ जाना और ख़ुशीमें रंजका पहलू निकल आना भी स्वाभाविक है।···पिकनिककी मेरी कल्पना दोनों स्थितियोंसे भिन्न है—चार-छह यार हों, औरतें हों तो वे भी उनमें खप जानेवाली हों, खाने-पीनेका कोई एहतमाम न हो, भुने हुए चने, ख़ूब अच्छी भुनी मूँगफली या सुविधा हो तो सूखे मेवे—यह सब बिसातसे बाहर हो या कमज़ोर मेदे इसकी इजाज़त न दे सकें (मेरे-जैसे बीमार आदमीके लिए) तो एक-दो डबल रोटियाँ (सुविधाके लिए घर ही से स्लाइसोंमें काटकर पैकेटमें बँधी हुई) एक-दो मक्खनकी टिकियाँ, चन्द उबले हुए अण्डे और बस। पानी या चाय थर्मसोंमें बन्द करके उन्हें गलेसे लटका लिया जाये। हाथोंमें छड़ी, निकरें, क़मीज़ें और हल्के जूते पहने, पिकनिकपर चल दें—दोस्त कोई पिनकू न हो, ख़ूब गप्पें लगायें, एक दूसरेको छेड़ें, ठहाके मारें, गायें, और जब थक जायें तो बिना कपड़ोंके मैला होनेकी परवाह किये किसी बाग़की घासपर, नदीके बाँधपर या किसी सड़कके किनारे घने पेड़की छायामें बैठ जायें और खा-पीकर पूरी तरह तृप्त होकर घर लौटें···लेकिन प्रकट है कि कौशल्याके निकट ऐसी पिकनिक महज़ गँवारोंका मज़ा ग़ला है और वह इसकी कल्पना तक नहीं कर सकती।

■

तफ़रीहके खाते कौशल्याको सिनेमा देखना पसन्द है—उनमें भी हिन्दुस्तानी फ़िल्में देखना। मेरा दुर्भाग्य है कि मुझे हिन्दुस्तानी फ़िल्में प्रायः अच्छी नहीं लगतीं। किसी ज़मानेमें न्यू थिएटर्स बहुत अच्छी फ़िल्में बनाता था। 'मुक्ति', 'मंज़िल', 'जवाब', 'विद्यापति'-जैसी फ़िल्में अब नहीं बनतीं। 'आदमी' और 'डॉ० कोटनिसकी अमर कहानी'-जैसी शानदार और प्रेरणाप्रद फ़िल्में बनानेवाले शान्ताराम भी बॉक्स-आफ़िसके चक्कर में पड़कर घटिया फ़िल्में बनाते हैं। राज कपूरसे ज़रूर आशा थी, लेकिन 'जागते रहो' ने उनके आदर्शोंकी कमर तोड़ दी। और वे फिर वे-सिर-पैरकी फ़िल्में बनाने लगे जिनमें वे आर्टिस्ट नहीं, जोकरके रूपमें सामने आते हैं। हमारे कुछ बहुत अच्छे कथाकार फ़िल्मोंमें गये। कुछ अब भी वहीं हैं—बेदी, कृष्ण, महेन्द्रनाथ—लेकिन फ़िलहाल हिन्दी फ़िल्मोंको साहित्यसे दूरका भी वास्ता नहीं। बेदीके 'गर्म कोट' का जो हश्र हुआ, वह हौसला पस्त कर देता है। मैं दुर्भाग्यसे फ़िल्मोंमें दो साल नौकरी कर आया हूँ और मेरी रुचिका कड़वा करेला नीमपर चढ़ गया है। मुझे हिन्दी फ़िल्मोंमें काग़ज़के फूल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नक़ली चाँद-सितारे, टाटकी बनी चट्टानें और हल्की-सी धमकसे लरज़िश खाती दीवारें और सीढ़ियाँ (जो फ़िल्ममें करोड़पतिके बँगलेकी होती हैं) साफ़ दिखायी दे जाती हैं····लेकिन कौशल्या इन बारीकियोंमें कभी नहीं जाती। वह बड़े ही तन्मय भावसे फ़िल्म देखती है। कभी किसी दुःख-भरे सीनमें जब हीरोइन ग्लिसरीके आँसू बहाती पोज़ बनाकर दीवारसे लगी होती है तो कौशल्या आँसू पोंछ रही होती है और मैं चिल्ला रहा होता हूँ—"हाँ भई हो जाये फिर एक गाना····!" और तभी आर्किस्ट्राकी टिंग-टिंग और लता मंगेशकरका स्वर फ़िज़ामें गूँज उठता है और मेरा आवाज़ा सुनकर मेरे ही-जैसा कोई फक्कड़ आदमी ठहाका मारकर हँस देता है अथवा कोई चिल्ला उठता है—"चुप रहिए!" और कौशल्या आग-बबूला हो जाती है।

घर आकर मैं डायरेक्टरको ज़ोरकी गाली देता हूँ तो कौशल्या ऐसे नाराज़ हो जाती है जैसे मैं उसके किसी सगे-सम्बन्धीको गाली दे रहा हूँ।

आम हिन्दी पिक्चर देखना मुझे एकदम नापसन्द हो, ऐसी बात नहीं, पर शर्त यही है कि दो-चार यार-बाश लोग साथ हों, अभिनेताओंकी मूर्खताओंपर आवाज़े कसे जायें, दसन्नीवालोंकी तरह 'हाय-हाय!', 'मार डाला रे ज़ालिम!', 'एक नजर इधर भी!' और ऐसे ही आवाज़े कसे जायें। बेतुके गानोंकी तालपर थाप दी जाये। सीटियाँ बजायी जायें। लोग हँसें तो हम रोयें और लोग रोयें तो हम हँसें और यों पैसे वसूल करके घर आयें। प्रकट है कि कौशल्याके साथ यह सब सम्भव नहीं। यह सब करना तो ख़ैर दूरकी बात है, उसके साथ फ़िल्म देखने जायें और कह दें कि वाहियात है और समय बरबाद हो गया तो वह बुरा मान जाती है। इसलिए चुप रह जाना पड़ता है अथवा उसे यक़ीन दिलाना पड़ता है कि फ़िल्म अपनी साधारण त्रुटियोंके बावजूद अच्छी थी।···

यों मैं अब भी सैर-तफ़रीहके इन सब अंगोंमें कभी-कभी हिस्सा लेता हूँ लेकिन ऐसे ही जैसे कोई गुनाह कर रहा हूँ। कौशल्याको इस सिलसिलेमें मुझसे जायज़ शिकायतें हैं, लेकिन मेरी शिकायतें ना-जायज़ हैं, यह माननेके लिए मैं तैयार नहीं।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीसरा व्यक्ति

विष्णु प्रभाकर

सुप्रतिष्ठित नाटककार, कथा-उपन्यासकार।

पात्र :

१–समर . आयु ३० वर्ष, टूटा हुआ व्यक्तित्व जो अन्तमें सँभलता है।

२–विपिन : आयु २७-२८ वर्ष, एक चालाक व्यक्ति।

३–सुचेता : आयु २५ वर्ष, दृढ़-संघर्षरत, प्रेमिल व्यक्तित्व।

४–विवेक : आयु ३०-३१ वर्ष, सुदृढ़-शान्त।

५–माँ : आयु ५५-५६ वर्ष, पुरातन पन्थी, क्रूर।

६–बन्दूकवाला : आयु लगभग ५०-५१ वर्ष, एक चण्ट व्यापारी।

७–पेरिन : आयु २२-२३ वर्ष, एक फैशनेबल लड़की।

८–साहिरा : आयु २२-२३ वर्ष, सुन्दर, सजग, पर कुछ दुर्बल।

९–माणिक : आयु ५०-५१ वर्ष, एक सहज साधारण व्यक्ति।

प्रथम दृश्य :

(स्थान : आबू पहाड़पर नक्की झीलके किनारे मन्दिरका विश्राम-गृह। मंचपर बीचका बड़ा कमरा है जिसके उत्तरमें बॉलकनी है, जहाँसे झीलका मनोरम दृश्य दिखाई देता है। पश्चिमकी ओर दो दरवाज़े हैं जो दो कमरोंमें जाते हैं। पूर्वकी ओर एक द्वार है जो बाहरसे आनेका मार्ग है। कमरेमें उत्तरकी ओर एक सोफा सेट है। पूर्वोत्तरमें एक तख्तपोश है। सोफेके बीचमें एक सुन्दर मेज़ है जिसपर फूलोंका गुलदस्ता है। पश्चिमकी ओर दोनों द्वारोंके मध्यमें एक मेज़ और एक रैक विवेककी सुविधानुसार आधुनिक साज-सज्जा है। दीवारोंपर एक-दो पेंटिंग हैं। परदा उठनेपर समर और विपिन प्रवेश करते हैं। समर जैसे शिथिल होकर सोफ़ेपर गिर जाता है। विपिन पासके सोफेपर लापरवाहीसे बैठता है। उसकी गोदमें बोस्टन कुत्ता है। वह उसे पुचकारता रहता है। कुत्ता दौड़नेके लिए छटपटाता है और वह उसे शान्त करता है। एक क्षण बाद समर बोलता है।

समर : कुछ भी तो नहीं समझ पाता। यहाँ आता हूँ तो जयपुरकी शामोंकी याद आती है। वहाँ जाता हूँ तो इस झीलमें तैरते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उड़ता हूँ। यहाँका सूर्यास्त जैसे मेरे मनपर अंकित हो गया है। ऊँचे शिखरपर बैठकर देखता हूँ—जैसे अस्ताचलगामी सूर्यकी रक्ताभा लोकके वक्षोंपर सिमटती आ रही हो, उन्हें आलिंगनमें लेनेको···

विपिन : (*कुत्तेको थपथपाता हुआ*) हमें भी भाई साहब, सब सूर्यास्त एक-जैसे दिखाई देते हैं। असलमें आप सोचते बहुत हैं और सुना है कि सोचनेवाले या तो लेखक हो जाते हैं या फिर··· (*कुत्तेको मुँहके सामने कर सहसा रुक जाता है।*)

समर : रुक क्यों गये। कहो न—या फिर पागल हो जाते हैं। विपिन, मुझे यही तो डर खाता है कि मैं न अच्छा लेखक बन सका न अच्छा पागल। अच्छी-खासी क्रिकेट खेलता था वह भी भूल गया। बस हर कहीं-से भागनेको जी करता है। असलमें मैं अपने-आपसे ही डरता हूँ। खैर, छोड़ो इन बातों-को। कुछ मालूम है कि माँ कब आ रही हैं ?

विपिन : भाई साहब, मैं कहने ही वाला था। मामी आपसे बहुत नाराज़ हैं। उन्होंने कहा है कि वह तबतक आपके पास नहीं लौटेंगी जबतक आप भाभीको घरसे न निकाल देंगे।

समर : तुम्हें लिखा है ?

विपिन : हाँ, यह रहा पत्र ! (*कुत्तेको छोड़कर जेबसे पत्र निकालता है*) सुनेंगे ? (*पढ़ता है*) 'तुम समरसे कह दो, मैं और अपमान बरदाश्त नहीं कर सकती। वह उस चरित्रहीन औरतको घरसे निकाल दे। और भले घरके लड़कोंकी तरह किसी भले घरकी लड़कीसे शादी कर ले।'

समर : (*कठोर स्वर*) तुम माँको मेरी ओरसे लिख सकते हो कि ऐसा कभी नहीं होगा।

विपिन : अभी सुनो तो। उन्होंने लिखा है—'वह बदज़ात औरत अब भी डॉक्टरसे मिलती है।' (*रुककर*) यह तो मामीने ठीक लिखा है। मैंने भी देखा है···

समर : (*एकदम*) तुमने क्या देखा है ?

विपिन : मैंने जयपुरमें भाभीको डॉक्टरके पास देखा है। वे उन्हें तुम्हारे बारेमें बता रही थीं।

समर : (*उत्तेजित होकर*) डॉक्टर ! कौन डॉक्टर ?

विपिन : (*व्यंग्यसे*) वही सेनाका भूतपूर्व कप्तान डॉक्टर विवेक जो युद्धमें मोर्चेपर डटा रहा। सेनाके पीछे लौट आनेपर भी उसने घायलोंको नहीं छोड़ा और दुश्मनोंके हाथों क़ैद हो गया।

समर : (*चीख़कर*) मैं डॉक्टर विवेककी तारीफ़ नहीं सुनना चाहता। मैं जानना चाहता हूँ कि क्या सुचेता उनके पास गयी थी या कि वे सुचेताके पास आये थे।

विपिन : जी, भाभी ही उनके पास गयी थीं पर आपको इस तरह उत्तेजित नहीं होना चाहिए। डॉक्टर उनसे कह रहे थे कि आप हीन-भावनाके शिकार हैं···

समर : (*बेचैन होकर*) क्या कहा, हीन-भावना ! मैं हीन-भावनाका शिकार हूँ ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं···उसका क्या अधिकार है कि वह मेरा इस तरह अपमान करे। वह समझता है कि उसने मुझपर कृपा की है। मेरी पत्नी मुझे लौटा दी है···

(सहसा कुत्तेके भौंकनेका स्वर आता है।)

विपिन : श···श···श···भाई साहब, शायद भाभी आ गयी हैं ! (बाहर देखकर) हाँ, सचमुच वे ही हैं। (पुकारकर) नमस्ते भाभीजी !

(सुचेताका प्रवेश। कुत्ता आगे-पीछे कूदता है। विपिन उठा लेता है।)

सचेता : नमस्ते विपिन ! जयपुरमें तुम्हारी बड़ी राह देखी जा रही थी। परन्तु मैं कह आयी हूँ कि तुम अभी नहीं आओगे। और समर, तुम इतना तेज़-तेज़ क्यों बोल रहे हो ? मुझे छह-सात दिन लग गये, क्या इसलिए तुम्हें ग़ुस्सा आ रहा है ? क्या करूँ, बम्बईसे अचानक मि० बन्दूकवाला आ गये !

विपिन : (एकदम प्रसन्न हाकर कुत्तेको चूम लेता है) अच्छा, वे पहुँच गये ? क्या आपकी उनसे बातें हुईं ?

सुचेता : तुम्हें यह जानकर ख़ुशी होगी कि उन्हें हमारे ग्रीज कप बहुत पसन्द आये। कहते थे, विदेशकी अनेक फ़र्मोंके मुक़ाबलेमें हमारे कप अच्छे हैं। बाज़ारमें उनकी माँग है, और हाँ समर, मैं छोटे उद्योगोंकी आर्थिक सहायता करनेवाली कमेटीके प्रधानसे भी मिल आयी हूँ। उन्होंने विश्वास दिलाया है कि हमें ऋण मिल जायेगा और हम अपनी दोनों मशीनें शीघ्र ही लगा सकेंगे।

विपिन : (उछलकर) सच ?

सुचेता : जी हाँ ! तुमको जाकर उनसे मिल लेना होगा।

विपिन : मैं अभी जाता हूँ। (जानेको मुड़ता है।)

सुचेता : (हँसकर) अरे, रुको रुको ! अभीका मतलब इसी क्षण नहीं है।

विपिन : व्यापारी बाज़ारका मुवाफ़िक़ रुख़ देखकर भी रुकता है तो समझो वह व्यापारी नहीं है।

सुचेता : फिर भी एक दिन···

समर : (एकाएक उठकर) विपिनको जाने दो। और विपिन, मैं भी चलता हूँ।

सुचेता : (व्यस्त होकर) नहीं, नहीं ! तुम्हारी ज़रूरत नहीं है। तुम नहीं जा सकते। मैं सब प्रबन्ध कर आयी हूँ। हम तीन महीने यहीं रहेंगे। (प्रेमसे) इधर आओ, देखो इस झीलको। तुम्हारे लिए इसमें तैरनेमें बड़ा आनन्द आता है। देखो शान्त नीलवर्णी झील है, मानो आकाश उतर आया है। इसके दोनों ओर उगने वाली यह छोटी-छोटी पहाड़ियाँ ! जब इनकी परछाइयाँ इस झीलमें उतरती हैं तो प्रकृति स्तब्ध रह जाती है। यह नीला आकाश और भी विस्तृत हो उठता है। वह देखो सन्ध्याके शीतल आकाशके नीचे यह रंगी बिरंगी तितलियाँ। ये खिलखिलाते फूल छौने ! नील वक्षपर तैरती ये नौकाएँ मानों प्रकृतिने नाना रूप-रंगके पुष्प बिखे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिते हैं··· (उसका स्वर प्रतिक्षण मादक होता है, जैसे वह खो जाती है। दोनों स्तब्ध-से एक देखते हैं। एकाएक वह उन्हें देखती है। और बोलती है) यह क्या, तुम दोनों चुप क्यों हो ?

विपिन : (चौंककर) नहीं तो। मैं सुन रहा हूँ। (हंसता है) कितना सुन्दर बोलती हो! मेरे-जैसे व्यापारीको भी प्रकृति अच्छी लगने लगती है। कविता करनेको जी चाहता है।

सुचेता : (हँसकर) तुम तो विपिन, बस अब कपकी प्रशंसामें कविता लिखोगे।

विपिन : पहले तो यही सोचा था पर अब इसकी शील मुझे भी आकर्षित करती है।

सुचेता : (हँसकर) तो अभी तैरनेके लिए चलते हैं। तुम तैयार होकर आ जाओ !

विपिन : अभी आता हूँ। (जाता है। सुचेता समरके पास बैठती है।)

सुचेता : हाँ समर, मैं यह बताना तो भूल ही गयी कि डॉक्टर विवेककी नियुक्ति जयपुर-में हो गयी है। उनके दोनों हाथ ठीक हैं लेकिन एक पैरकी अंगुलियाँ काट दी गयी हैं। बेचारे क्रचिजके सहारे चलते हैं।

समर : (उपेक्षासे) मुझे और भी बहुत-कुछ मालूम है।

सुचेता : (चकित) और भी बहुत-कुछ ! क्या ?

समर : यही कि उसकी नियुक्ति जयपुरमें क्यों हुई है।

सुचेता : (समरके माथेपर पड़ी लटको पीछे करती हुई) समर, तुम फिर ग़लत समझ रहे हो। जयपुर विवेकका घर है। उनके पिताने बड़े प्रयत्नसे···

समर : मैं कह चुका, मैं सब कुछ जानता हूँ। लेकिन मैं तुमसे पूछता हूँ कि क्या तुम उससे मिलने गयी थी।

सुचेता : हाँ, गयी थी।

समर : तुम्हें शर्म नहीं आयी ?

सुचेता : शर्म और विवेकसे मिलनेमें। उसीके कारण तो हम मिले हैं।

समर : (चीखकर) ठीक है। उससे मिलनेमें तुम्हें शर्म क्यों आयेगी। शर्म तो मुझसे मिलनेमें आनी चाहिए। (खड़ा हो जाता है।)

सुचेता : तुमसे शर्म क्यों ?

समर : क्योंकि मैंने तुमको उसकी कृपासे जो पाया है, क्योंकि मैं हीन-भावसे जो ग्रस्त हूँ। मैं···मैं··· (उत्तेजित होकर गिलास फेंक मारता है जो टूट जाता है) मैं कहता हूँ, विवेक जयपुरमें नहीं रहेगा या फिर मैं नहीं रहूँगा। सब कुछ छोड़कर चला जाऊँगा। सब कुछ नष्ट कर दूँगा।·····

सुचेता : (व्यग्र होकर पास जाती है) समर, समर ! तुम क्या कह रहे हो। सुनो तो···

समर : (कुरसीको ठोकर मारकर) सुनना तुम्हें है। तुमने समझा क्या है। तुम मेरी पत्नी हो। मेरी प्रतिष्ठा तुम्हारी प्रतिष्ठा है। मेरी खुशीका नहीं तो कमसे कम मेरी प्रतिष्ठाका तो ध्यान रखना ही होगा। माँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठीक कहती है !

सुचेता : माँकी बात जाने दो। अभी अपनेको सँभालो। (**प्यारसे उसे बैठा देती है**) तुम व्यर्थ ही इतना उत्तेजित हो जाते हो। तुम तो सब कुछ जानते हो। तुम्हारे लिए ही मैंने उससे विवाह करके भी उसे छोड़ दिया। मैं मानती हूँ, मैंने उससे विवाह होने दिया, यह मेरी ग़लती थी परन्तु पिताके हठके सामने मेरी एक नहीं चली। वे नहीं चाहते थे कि मेरा विवाह तुमसे हो। और वे कितने क्रूर हैं ! लेकिन उस रातसे पहले ही मैंने विवेकको सब कुछ बता दिया और वह तुरन्त ही मुझे तुम्हारे पास आने देनेको तैयार हो गया।

समर : (**झुँझलाकर**) मैं यह पुराण कबतक सुनता रहूँगा ?

सुचेता : जबतक मनकी गाँठ नहीं खोल दोगे।

समर : मेरे मनमें कोई गाँठ नहीं है पर मैं यह नहीं सह सकता कि मेरी पत्नी विवेकसे कोई सम्बन्ध रखे।

सुचेता : मेरा उससे इतना ही सम्बन्ध है कि वह डॉक्टर है। अच्छा, छोड़ो अब इन बातोंको। मैं तुम्हें दोष नहीं देती। कभी-कभी मैं भी अपनेपर भरोसा नहीं रख पाती। फिर भी हर वक़्त ये पचड़े अच्छे नहीं लगते। सुनाओ, इस हफ़्ते तुमने कुछ लिखा ?

समर : लिखना अपनेको धोखा देना है। शराब पीने-जैसा, मात्र पलायन, मैं भागना नहीं चाहता। मैं अपना स्वामी आप बनना चाहता हूँ। मैं तुम्हें बता देना चाहता हूँ कि तुम्हारा डॉक्टर विवेकसे कोई सम्बन्ध नहीं है। सुना तुमने।

सुचेता : बहुत सुन चुकी, (**प्रार्थनाके स्वरमें**) लेकिन उठो। उठो समर, इस मादक सम्बन्धको व्यर्थ ही इस विवादमें मत खोओ। मैं बहुत थक गयी हूँ। आओ, झीलमें तैरने चलें। विपिन राह देख रहा होगा।

समर : तुम जा सकती हो।

सुचेता : लेकिन क्या मैं तुम्हारे बिना जा सकती हूँ। तुम्हें याद है समर, दिल्लीमें हम कैसे साथ-साथ तैरते थे। कैसे सबकी आँख बचाकर नौका-विहारके लिए निकल जाते थे। कितने बहाने बनाकर तुम मुझे पिकनिकपर ले गये थे। काश ! वे दिन लौट आते। तुम जानते हो समर···प्लीज डार्लिंग···

समर : मैं सब कुछ जानता हूँ। सब कुछ समझता हूँ। मैं माँका विरोध सह सकता हूँ पर विवेकसे तुम्हारा मिलना नहीं सह सकता। मैं उससे नहीं मिलूँगा। कभी नहीं मिलूँगा। (**सामने देखकर**) वह कौन है ?

सुचेता : (**व्यस्त भावसे**) अरे ! यह तो डॉक्टर विवेक हैं। समर, भगवानके लिए··· (**ऋचिजके सहारे विवेकका प्रवेश।**)

विवेक : हलो मिस्टर समर, आप कैसे हैं ? नमस्कार। नमस्कार सुचेताजी !

समर : (**काँपकर**) आप···आप डॉक्टर विवेक हैं ?

विवेक : हाँ, मैं ही हूँ। पिछली बार जब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिले थे तबसे काफ़ी बदल गया हूँ ।

समर : आप यहाँ क्यों आये हैं ? किसने बुलाया ?

विवेक : यह सब आप जानते हैं, परन्तु क्या किसीके बुलाये बिना मैं यहाँ नहीं आ सकता ?

समर : (त्रस्त होकर) ओफ़् ! मेरा यह मतलब नहीं था । क्षमा कीजिए, बैठिए, आप तो बड़े साहसी हैं । आप किसीके घर जायें, यह उस घर और घरवालोंका सौभाग्य है । कहिए, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ।

विवेक : (बैठकर) करेंगे सेवा ?

समर : आज्ञा दीजिए ।

विवेक : तो आइए, पहले सूर्यास्त देखने चलें । फिर झीलमें नौका-विहार और फिर···

सुचेता : और फिर हम तीनों इस एकान्त कमरेमें रातका खाना खायें ।

विवेक : न, न, आप दोनों । मैं आज ही रातको यहाँसे चला जाऊँगा । अहमदाबाद जानेका विचार है । लौटकर आपकी परीक्षा करूँगा । अब उठो····

सुचेता : आओ समर !

समर : (विवश-सा) चलो ! (सहसा विपिनके साथ माँका प्रवेश । विपिन कुत्तेसे डर रहा है ।)

माँ : ठहरो समर ! मैं तुम्हें कहीं नहीं जाने दूँगी । मैं और ज़्यादा बरदाश्त नहीं कर सकती । मेरा मुँह क्या देख रहे हो ।

सुचेता : (आगे आकर पाँव छूती है) आप कब आयीं माँजी ? (समरसे) आप लोग चलें, मैं अभी आती हूँ ।

माँ : मुझे तुम्हारी ज़रूरत नहीं है । तुम जा सकती हो । समर, तुम रुको !

समर : माँ, तुम आयी हो तो यहाँ ठहरो । पर मैं नहीं रुक सकूँगा ।

माँ : समर, होशमें आकर बातें करो । यह तुम्हारी माँका हुक्म है ।

समर : मैं तुम्हारा नालायक़ बेटा हो सकता हूँ, पर तुम्हारा बेहूदा हुक्म नहीं मान सकता । मैं सुचेताके साथ जा रहा हूँ । आइए, डॉक्टर !

माँ : शर्म नहीं आती तुम्हें । तुम खानदानकी इज़्ज़त धूलमें मिला रहे हो । नालायक़ !

समर : माँ ! बस करो, कहीं ऐसा न हो कि मैं अपनी माँकी शानमें कोई गुस्ताखी कर बैठूँ । चलो सुचेता !

सुचेता : तुम जाओ । मैं माँके पास रहूँगी ।

समर : नहीं, तुम्हें चलना होगा । आओ, डॉक्टर विवेक ! विपिन, तुम माँको लेकर आये हो । इन्हींके पास ठहरो ।

विपिन : लेकिन भाई साहब, यह····

समर : (दृढ़तासे) तुम मेरी फ़र्मके पार्टनर हो, विचारोंके नहीं । चाहो तो तुम फ़र्मसे हट सकते हो ।

विपिन : नहीं, नहीं । यह बात नहीं है । आओ मामी, हम अन्दर चलें । (सब चले जाते हैं ।)

माँ : जाओ ! सब चले जाओ । तुम भी चले जाओ । ऊफ़्, यह मेरी औलाद है ! यह मुझे इनाम मिला है । हे भगवान ! मेरे हुक्मके बावजूद जानेकी जुर्रत की । लानत है !

तीसरा व्यक्ति : विष्णु प्रभाकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं अभी जयपुर जाऊँगी (बदलेकी भावनासे) विपिन, बन्दूकवालासे कहना कि मुझे उनकी शत मंजूर हैं।

विपिन : अच्छा मामी ! (कुत्तेको चूमता हुआ) जो देखना था वह तुमने देख लिया। आओ चलें।

परदा

दूसरा दृश्य :

(वही स्थान, वही स्थिति। समर सोफ़ेपर बैठा डाक देख रहा है। उसके हाथमें एक मासिक पत्रिका है। सुचेताका प्रवेश।)

सुचेता : क्या डाक आ गयी ! अरे, यह कौन-सी पत्रिका देख रहे हो ?

समर : 'विचित्रा' है। लो वह तुम्हारा नाटक इसमें छप गया।

सुचेता : सच, देखूँ ! अरे दो न ! (छीन लेती है) अरे हाँ, सचमुच छप गया। इतनी जल्दी !

समर : तुम्हारा नाम जो था।

सुचेता : नाम तो पहले तुम्हारा है—समर गांगुली, फिर है—बिचारी सुचेता गांगुली, पर क्या तुम कहना चाहते हो कि सम्पादक-को लेखकका नाम पसन्द आया, नाटकका विषय नहीं, लेकिन मैं कहती हूँ, ऐसे विषयों-पर नाटक लिखता ही कौन है। अधिकतर लेखक किसी स्थूल उद्देश्य और आदर्शके पीछे दौड़ते हैं। जीवनका यथार्थ उपेक्षित ही रह जाता है।

समर : मगर यथार्थका अर्थ कुण्ठा तो नहीं होता। आज हमारे साहित्यमें जैसे कुण्ठाकी बाढ़ आ गयी है। कुण्ठा यानी क्षुद्र अहम्। कविने ठीक ही कहा है—

आज जीवनोदधिके तट पर
खड़ा अवांछित क्षुब्ध उपेक्षित
देख रहा मैं क्षुद्र अहम्की
शिखर लहरियोंका रण कुत्सित।

सुचेता : तुम्हारे मुँहसे कविवर पन्तकी ये पंक्तियाँ सुनकर खुशी हुई। तुम ठीक कहते हो, यथार्थका अर्थ कुण्ठा नहीं है। (धीरेसे) लेकिन यह तो मानना ही होगा कि तुम्हारे भीतर कुण्ठाएँ हैं।

समर : बेशक हैं ! पर क्या मैं उनका प्रदर्शन करता फिरूँ ?

सुचेता : इस बारेमें मतभेदकी गुंजाइश है पर जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मुझे लगता है कि बिना कुण्ठाका चित्रण किये उससे मुक्ति नहीं। उसे अन्तरमें घुटने देना जीवनको जटिल ही नहीं जहरीला भी बनाना है।

समर : (सहसा) तुम कहना चाहती हो कि जैसे मेरे जीवनमें कुण्ठाएँ हैं, मैं उनसे तभी मुक्ति पा सकता हूँ जब उन्हें स्वीकार कर लूँ।

सुचेता : (मुसकराकर) निश्चय ही।

समर : (उत्तेजित होकर) लेकिन मैं इस बातको स्वीकार नहीं करता। मैं अपनी समस्या हर किसीके सामने नहीं रख सकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और नाटकमें तो इन सबकी चरचा करना
इनको सरासर धोखा देना है। (विनम्रतासे)
सुचेता, मैं जानता हूँ, हम दोनों एक-दूसरेके
बिना नहीं रह सकते। फिर भी मेरा मन
साफ़ नहीं हो पाता। मैं सन्देह, अविश्वास
और जासूसीके चक्रमें फँसा हुआ हूँ। मुझसे
तो माणिक ही अच्छा है।

सुचेता : कौन माणिक ? ओह। यह जो
चिट्ठी डाक लेकर आया था।

समर : हाँ, यही। शादीके बाद इसे पता
चला कि इसके बेटेकी बहू किसी औरसे
प्यार करती थी। इसने बहूको उसीके पास
भेज दिया और पंचायतको दण्डके कुछ रुपये
देकर सब कुछको ऐसे समाप्त कर दिया जैसे
कुछ था ही नहीं।

सुचेता : इन लोगोंमें यह सब आसानीसे
हो जाता है।

समर : और एक हम हैं सुचेता ! हम दोनों-
के बीचमें मैं हमेशा किसी तीसरे व्यक्तिकी
उपस्थिति अनुभव करता हूँ। मैं उसे भूलना
चाहता हूँ पर भूल नहीं पाता। सच, पूरी
ईमानदारीसे कोशिश करता हूँ।

सुचेता : जानती हूँ प्रियतम ! लेकिन
भगवान्‌ने तुम्हें इतनी शक्ति क्यों नहीं दी कि
तुम सफल हो सकते। तब मुझे डॉक्टर
विपिनको बुलाना न पड़ता। मैंने कभी नहीं
चाहा कि वे हमारे बीचमें आयें। मैंने उन्हें
भूलनेका ईमानदारीसे प्रयत्न किया····

समर : (सहसा तेज़ होकर) नहीं !
तुमने उसे भूलनेका प्रयत्न नहीं किया।
उसने ही किया। इसलिए किया कि वह
सचमुच तुमसे प्रेम करने लगा था। क्यों,
नहीं करने लगा था ? वह इसीलिए युद्धमें
गया। इसीलिए उसने सेनाके साथ पीछे
हटनेसे इनकार किया। इसीलिए शत्रुके हाथों
पड़कर मर्मान्तिक पीड़ा सही जिससे हर कहीं
तुम्हारा प्रेम उसका कवच बना रहे।

सुचेता : (काँपकर) यह तुम कहते हो
समर ! तुम, कि मैं विवेकसे प्रेम करती हूँ।

समर : क्या नहीं करती ? क्या तुम्हें इस
बातपर यक़ीन नहीं, सच तो यह है कि तुम
भी उसकी तरह अपने दिमाग़से उसका
ख़याल हटा नहीं पाती, इसीलिए तुम इसे
मेरे पास खींच लायी हो।

सुचेता : (तीव्र होकर) समर, समर !
तुम सचमुच विवेकहीन हो। मुझे लगता है,
मैंने व्यर्थ ही··· (तेज़ीसे **विपिनका कुत्तेको**
लिए प्रवेश।)

विपिन : क्षमा करिए मामी, मिस्टर
बन्दूकवाला आये हैं।

सुचेता : (तड़पकर) यहाँ आये हैं !

विपिन : जी हाँ, बुलाऊँ ?

सुचेता : ज़रा ठहरो।

विपिन : (छिपी शरारतसे) आप कहें तो
फिर आनेको कह दूँ।

सुचेता : (दृढ़ होकर) नहीं, अभी आने
दो। (**विपिन जाता है। सुचेता समरकी**
ओर मुड़ती है) भगवान्‌के लिए उनसे
ठीक-ठीक बातें करना। हमने इस पचड़ेको
आवश्यकतासे अधिक महत्त्व दे दिया है। प्रेम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना हरेकका जन्म-सिद्ध अधिकार है। परन्तु जीनेके लिए इसके अलावा भी बहुत कुछ है।

(विपिन और बन्दूक़वालाका प्रवेश।)

बन्दूक़वाला : हलो मिस्टर गांगुली ! हलो मिसेस गांगुली ! वसन्त ऋतु कैसी प्यारी है !

समर : आइए, आइए, मिस्टर बन्दूक़वाला ! बैठिए।

सुचेता : कहिए ! आप यहाँ कैसे आये ?

बन्दूक़वाला : हम तो हर साल यहीं आते हैं। साथमें बेटी पेरिन भी है।

सुचेता : अच्छा ! कहाँ है वह ?

बन्दूक़वाला : आसामसे एक लेडी डॉक्टर भी आयी है। उनके साथ घूमने गयी है। यहाँ आयेगी। मैं तो आपको आज शामके लिए चायका निमन्त्रण देने आया था।

सुचेता : बहुत-बहुत धन्यवाद। पर पहले आप सबलोग हमारे साथ चाय पीजिए न !

बन्दूक़वाला : नहीं पहले आप, और विपिन बाबू, आप भी। मि० समर, आपका ग्रीज कप 'वण्डरफुल' है। आप लोग कोशिश करें तो बड़ी इण्डस्ट्रीज़ खड़ी कर सकते हैं। आप ईमानदार हैं इसलिए अच्छा सामान बनाते हैं। आपके मालकी बम्बईमें बड़ी डिमाण्ड है। मेरी फ़र्म आपकी परमानेण्ट एजेन्सी लेना चाहती है।

सुचेता : बहुत-बहुत शुक्रिया। आपने तो हमारी एक समस्या हल कर दी।

बन्दूक़वाला : (भाषणके प्रवाहमें) देखो मिसेस गांगुली, देश की समृद्धि बड़े उद्योगोंपर निर्भर है—यह ठीक है, परन्तु छोटे उद्योगोंके बिना वह समृद्धि पूरी होनेवाली नहीं। इन उद्योगोंको देशके घर-घरमें बिखेर देना होगा। और हम जितने ईमानदार होंगे, जितना बढ़िया माल बना सकेंगे उतनी ही जल्दी, उतनी ही सच्ची समृद्धि की नींव पड़ेगी। बिना इमानदारीके सच्ची समृद्धि लाना सपना है। बेईमानीसे पैसा हो सकता है लेकिन समृद्धि नहीं।

विपिन : हियर-हियर, थ्री चियर्स फ़ॉर मिस्टर बन्दूक़वाला !

समर : आप तो मिस्टर बन्दूक़वाला, बड़े उदात्त और ठोस विचारोंके व्यक्ति हैं !

सुचेता : और अत्यन्त उत्साही हैं।

बन्दूक़वाला : इस क़द्रदानीके लिए बहुत-बहुत शुक्रिया ! हाँ, ग्रीज कपके अलावा आप और दूसरी चीज़ें क्यों नहीं बनाते ?

सुचेता : चाहते तो हैं पर फ़िलहाल पैसेकी तंगीके कारण हम एक ही मशीन चालू कर पायेंगे। हम लोग धीरे-धीरे चलनेमें विश्वास करते हैं।

बन्दूक़वाला : शुरूमें सभी धीरे-धीरे चलनेमें विश्वास करते हैं।

बन्दूक़वाला : शुरूमें सभीको धीरे-धीरे चलना चाहिए। लेकिन एक बात कहूँ। जहाँ तक पैसेका सवाल है मैं भी आपकी मदद कर सकता हूँ।

विपिन : हमें आपकी सहायता पाकर बड़ी खुशी होगी।

समर : निश्चय ही।

बन्दूक़वाला : तब ठीक है। कल बातें करेंगे। अच्छा, आज चार बजे नावपर चाय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगी। संगीत भी होगा। पेरिन बहुत सुन्दर गाती है।

विपिन : मिस्टर बन्दूक़वाला ! मिसेस गांगुली भी कम सुन्दर नहीं गातीं।

बन्दूक़वाला : मुझे मालूम है। डॉक्टर विवेकसे इनके गानेकी बहुत तारीफ़ सुनी थी। तभी तो आज पार्टीका इन्तज़ाम किया है। (हँसता है) अच्छा, अब इजाज़त दीजिए। आओ विपिन बाबू चलें।

सुचेता : नमस्कार मि० बन्दूक़वाला।

समर : (फीका स्वर) नमस्कार। (दोनों जाते हैं। समर तमतमाकर उठता है)

मैं अभी जयपुर जाऊँगा।

सुचेता : (विनम्र स्वर) समर, तुम बहुत जल्दी उत्तेजित हो जाते हो और जो मनमें आता है कह देते हो। क्या कुछ देर मौन रहनेकी कोशिश नहीं कर सकोगे। डार्लिंग प्लीज़!

समर : (उत्तेजित होकर) तुम्हारे उपदेश सुन-सुनते परेशान हो गया। मैं स्वयं भी सोच सकता हूँ। मेरे भेजेमें भी दिमाग़ है। मैं अभी जाऊँगा। तुम डॉ० विवेकको बुलाकर विदाय पार्टी करो, नाचो, गाओ। संगीतसे अपना प्रेम प्रकट करनेका और कोई अच्छा तरीक़ा नहीं है।

सुचेता : इसका मतलब यह है कि तुम मुझसे जलते हो।

समर : (उबलकर) हाँ, जलता हूँ। लेकिन विश्वासघात नहीं करता। सुन लो ! मैं अब और नहीं छला जाऊँगा। तुम्हें छुट्टी देता हूँ। कहीं भी जा सकती हो।

सुचेता : (काँपकर) जाना होगा तो तुमसे पूछूँगी नहीं। आते समय भी नहीं पूछा था। तुम्हारे नाटकके किसी पात्रकी पत्नी नहीं हूँ कि क़लमके इशारेपर जाऊँ और आऊँ। हाड़-माँसकी नारी हूँ। मैं नहीं जाऊँगी।

समर : तो मैं चला जाऊँगा।

सुचेता : तुम भी नहीं जाओगे। मुझे अभी एक पार्टीसे मिलना है। और हाँ, मैं तुम्हें चेतावनी देती हूँ, बन्दूक़वालाकी बातें आँखें मूँदकर न मान लेना। मुझे डर है कि उनके साथ मिलकर····

समर : (एकदम) तुम जानती हो कि तुम क्या बक रही हो।

सुचेता : काश ! मेरी शंका निराधार हो। पर आज इतना ही। अब मैं चली। डॉक्टर-के आनेसे पूर्व ही मुझे लौटना है। (वह मुड़ती है कि पेरिन और साहिरा वहाँ प्रवेश करते हैं) हलो, पेरिन। आओ, आओ।

समर : (बरबस) हलो ! कैसी हैं आप और ये···

पेरिन : मि० गांगुली ! ये हैं डॉक्टर कुमारी साहिरा। डॉक्टर विवेककी मित्र हैं। इधर घूमने आयी हैं।

समर : (साहिरासे) मिलकर खुशी हुई।

सुचेता : (साहिरासे) मिलकर खुशी हुई डॉ० साहिरा। यहाँ रहोगी तो कुछ दिन अच्छी बैठक जमेगी। यहाँ देखने और आनन्द पानेको बहुत कुछ है। आज तो मि० बन्दूक़वाला संगीत-पार्टीका आयोजन कर रहे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। पेरिनको गाना होगा। सच, उसके स्वर-में जादू है।

साहिरा : जानती हूँ। पार्टीमें शामिल हो पाती तो बड़ी ख़ुशी होती। पर मुझे आज ही अहमदाबाद जाना है। विवेक मेरी राह देखेंगे।

सुचेता : क्या वे अहमदाबाद चले गये ?

साहिरा : जी हाँ, वे नौकरी छोड़कर अहमदाबाद या बम्बईमें क्लिनिक खोलनेका विचार करते हैं।

समर : सच।

साहिरा : जी हाँ। समुद्रका किनारा मुझे बड़ा प्यारा लगता है। कोई अन्त नहीं, कोई थाह नहीं। निरन्तर उमड़ती-घुमड़ती लहरें और उनपर नृत्य करतीं चन्दा-सूरजकी किरणें !···

समर : लेकिन यहाँका सूर्यास्त देखा है आपने ?

साहिरा : सूर्यास्त देखना मुझे अच्छा नहीं लगता। उसे देखकर मन-प्राणोंपर एक वेदना-सी छा जाती है।

समर : और मुझे इसीलिए सूर्यास्त देखना अच्छा लगता है। वह तरल रक्ताभा मनपर अंकित होकर रह जाती है। मृत्यु तब भय न होकर आनन्दका अनुभव हो उठती है।

साहिरा : आप तो अच्छे-खासे कवि मालूम पड़ते हैं समर बाबू ! बन्दूक़वाला आपके ग्रीज कपकी बड़ी तारीफ़ कर रहे थे। मैं समझती हूँ, आपका प्रकृति-प्रेम भी कम सराहनीय नहीं है।

पेरिन : देखती रहिए साहिरा बहन ! मि० गांगुलीके अनेक रूप हैं। कभी क्रिकेट खेलते थे, अब व्यापारी हैं। और सुचेताजीके साथ मिलकर नाटक लिखते हैं।

सुचेता : अजी मैं तो बस सेल-एजेण्ट हूँ। क्षमा करिए, मुझे अभी एक पार्टीसे मिलना है। आप तबतक बातें करें। मैं तुरन्त लौट आऊँगी। क्या करूँ। समय दे चुकी हूँ।

साहिरा : मुझे भी अभी जाना है। लेकिन सकूँगी। विवेक···

समर : विवेक आपको कुछ नहीं कहेंगे। विश्वास रखिए। आप रुकेंगी, हम सूर्यास्त देखने चलते हैं।

सुचेता : (जाते हुए) हाँ बहन ! आप इनके साथ अवश्य जाइए। सूर्यास्त देखनेके लिए ये सब काम छोड़ सकते हैं। लेकिन ध्यान रखिए, सूर्यास्त देखते-देखते यह लड़का भी सोने लगते हैं। (बड़े ज़ोरोंसे हँसती हुई चली जाती है।)

पेरिन : मि० गांगुली, माफ़ कीजिए, हमें जाना ही है।

साहिरा : हाँ मि० गांगुली, सीट रिजर्व करा चुकी हूँ।

समर : ठीक है, लेकिन मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि अगर आपको यहाँका सूर्यास्त नहीं देखना था तो यहाँ आना ही नहीं चाहिए था। (एकदम) क्षमा कीजिए, वैसे मुझे आपके आनेसे बेहद ख़ुशी है। अहमदाबादसे आप कब लौटेंगी ? तब एक दिन सूर्यास्त देखनेके लिए चलना ही होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहिरा : अवश्य-अवश्य ! धन्यवाद।

समर : और आप मिस पेरिन ?

पेरिन : मैं कहीं नहीं जा रही हूँ मि० समर। अभी लौटकर आपको झीलपर ले चलूँगी। पार्टीका इन्तजाम देखना है। चलते।

समर : नमस्ते। (दोनों जाती हैं। एक क्षण बाद समर बोल उठता है) सब गये। अकेला रह गया। अकेला। मैं सदा अकेला रहता हूँ। इसीलिए वेदनासे मुझे इतना प्यार है; इसीलिए सूर्यास्त देखना अच्छा लगता है। यह मुझे क्या हो गया है ! सुचेता, विपिन, विवेक सबके बीचमें मैं अकेला ही हूँ। अपने ही घरमें जैसे अजनबी हूँ। सुचेताका इतना प्यार, इतना विश्वास फिर भी एकदम अजनबी, असहाय, अकेला! (विपिनका कुत्तेको पुचकारते हुए प्रवेश।)

विपिन : अरे, आप अकेले बैठे हैं दादा ! भाभीका एक और पत्र आया है। सुनेंगे ?

समर : कोई जरूरत नहीं। वही लिखा होगा कि मेरे बदजात बेटेसे कह दो कि वह चरित्रहीन औरतको घरसे निकाल दे और उत्तर है कि चाहूँ भी तो नहीं निकाल सकता। मैं उससे प्रेम करता हूँ।

विपिन : (कुत्तेकी नाक पकड़कर) सो गये हैं भाई साहब ! और चाहें भी क्यों। अच्छा, क्या मिस पेरिन चली गयीं ?

समर : वह डॉक्टर साहिराके साथ गयी हैं। अभी आती हैं।

विपिन : अरे हाँ, मुझे तो डॉ० साहिराको छोड़ने आबू रोड जाना है। (धीरेसे) आपको मालूम है, डॉ० साहिरा डॉ० विवेकसे मिलने आयी हैं। ऐसा लगता है जैसे दोनोंमें शादीकी बात चल रही है। हो जाये तो अच्छा ही है। डॉ० विवेकसे छुट्टी मिलेगी। (शीघ्रतासे) अच्छा, मैं चला।

समर : अभी रुको। (एकदम) अच्छा जाओ, जाओ। (विपिन जाता है और समर एक क्षण रुककर बोलता है) विवेक ! विवेक ! परेशान कर दिया इस डॉक्टरने ! (उत्तेजित होकर रैंककी तरफ़ बढ़ता है) यह युद्ध-भूमिमें ही क्यों न मर गया ! तब वह अमर हो जाता और मैं जी जाता। यह सन्देह, आशंका और जासूसी कबतक करता रहूँगा। मैं अपनी पुरानी आस्था और पुराने विश्वासको वापस पाना चाहता हूँ। पर यह विवेक मुझे अशक्त बना रहा है। (वापस सोफेपर बैठता है) मैं सचमुच सुचेतासे जलता हूँ। मैं उससे मुक्ति पाना चाहता हूँ। मैं यहाँ नहीं ठहर सकता। मैं यहाँसे चला जाऊँगा। अवश्य चला जाऊँगा। (कहता हुआ तेजीसे बाहर चला जाता है। प्रकाश धीमा पड़ता है, एक क्षण बाद फिर उभरता है और पुकारती हुई सुचेता आती है।)

सुचेता : समर, समर ! (देखकर) अरे, यहाँ तो नहीं है। समर, तुम कहाँ हो ? (अन्दर जाती है) समर ! (बालकनीमें जाती है) यहाँ भी नहीं है। समर, समर !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(दूसरे कमरेमें जाती है) यहाँ भी नहीं है। समझमें नहीं आता, कहाँ चले गये। जैसे ही ठीक होने लगते हैं फिर एकाएक शंकाके ज़हरमें डूब जाते हैं। लेकिन इतना गहरा डूबते तो मैंने कभी नहीं देखा। नहीं, नहीं, मैं ऐसा नहीं होने दूँगी, नहीं होने दूँगी। उसकी आँखोंमें अभी वही आकर्षण है जो क्रिकेटके खिलाड़ी होनेके समय था। विश्वास अभी मरा नहीं है परन्तु··· (पेरिन-का प्रवेश।)

पेरिन : अच्छा मिसेस गांगुली ! आप आ गयीं। कहाँ हैं मि० गांगुली ? मैं उन्हें झील-पर ले जाऊँगी।

सुचेता : वे यहाँ नहीं हैं। न जाने कहाँ चले गये। शायद झीलपर हों। तुम इधर देखो। मैं इधर जाती हूँ। (दोनों जाती हैं। प्रकाश फिर धुँधला होकर तेज़ होता है। पेरिन पुकारती हुई आती है।)

पेरिन : मिसेस गांगुली, आप कहाँ हैं ? मि० गांगुली वहाँ नहीं हैं। कहीं सूर्यास्त देखने तो नहीं चले गये।

सुचेता : (दूरसे पास आती है) हे भगवान्, अवश्य वहाँ गये होंगे। (माणिकका पुकारते हुए प्रवेश।)

माणिक : बीबीजी, बीबीजी !

सुचेता : कौन, माणिक ! क्यों, क्या बात है ?

माणिक : आपको तुरत मेरे साथ चलना होगा। बाबूजी पैड़ियोंसे नीचे लुढ़क गये।

सुचेता : हे भगवान् ! क्या चोट बहुत ज़्यादा लगी है ?

माणिक : अभी कुछ नहीं कहा जा सकता। वेहोश हैं।

सुचेता : (पागल-सी) वेहोश है। नहीं, नहीं, जल्दी चलो, कहाँ हैं !

माणिक : (जाते हुए) अस्पताल ले गये हैं। वहीं चलिए।

सुचेता : (जाते हुए) पेरिन प्लीज़! तुरन्त डॉ० विवेकको तार दो, पहली ट्रेनसे चले आयें, प्लीज़।

पेरिन : (जाते हुए) अच्छा ! मैं पोस्ट-ऑफिस होकर आती हूँ। आप चलिए।

(तीनों तेज़ीसे चली जाती हैं।)

तीसरा दृश्य

(वही स्थान, सोफेपर समर बैठे हुए रहे हैं। सिरपर पट्टी बँधी है। चेहरेपर थकान है।)

समर : (पढ़ता है) सच्चा सौन्दर्य बोध वेदनाके द्वारा ही होता है। किसीका प्रेम जब प्रेमीको वेदनाके गहन अतलमें पहुँचा देता है तभी वह प्रेमको पहचाननेकी शक्ति पाता है। (पुस्तक बन्द करके) ठीक लिखा है। सूर्यास्तके सौन्दर्यको देखते-देखते 'लान्सेट प्वाइण्ट'से गिरकर मैंने तनपर ही चोट नहीं खायी वह मनपर भी गहरी अंकित हो गयी। (लिखने लगता है) मैंने अनन्त रूप देखा था, उसे चाहा था पर पा नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सका था। बिना दिये कोई कुछ पाता है ? मैंने चोट खायी जैसे अपनेको दिया और उसीके द्वारा सबको पाया। सुचेता, विवेक, साहिरा, सभीसे मुझे नयी चेतना मिली। (रुककर) साहिराने मेरी हीन ग्रन्थिको जैसे खोलकर रख दिया। रामके स्पर्शसे जैसे पाषाणी अहल्या जी उठी थी वैसे ही मुझे लग रहा है कि जीना सुन्दर है। मरना भी सुन्दर है। पर (देखकर) वह सुचेता आ रही है! (काग़ज़ छिपा लेता है) कितनी सुन्दर है वह और यह कितने हर्षकी बात है कि यह सौन्दर्य मेरा है! पर नहीं, अभी नहीं, अभी कुछ नहीं कहूँगा। कहीं यह मृगतृष्णा न हो! (सुचेताका प्रवेश)।

सुचेता : (प्यारसे) डार्लिंग! तुम्हें यहाँ बहुत देर तक नहीं बैठना चाहिए। थक जाओगे।

समर : थक तो लेटे-लेटे जाता हूँ। अब तो जी करता है कि सूर्यास्त देखनेके लिए पीढ़ियोंपर चढ़ता चला जाऊँ तबतक जबतक कि डूबते सूर्यको छूकर न देख लूँ। डरो नहीं, रक्तहीन पुष्प-सा डूबता हुआ सूर्य बड़ा सुन्दर लगता है। बड़ा शीतल! ठण्डी लाशकी तरह शीतल!

सुचेता : (और भी प्यारसे) ऐसी पागलों-जैसी बात मत करो। मुझे डर लगता है और देखो, बहुत मत सोचा करो। अच्छा, तुम जीवनको सहज भावसे क्यों नहीं ले सकते। यह प्यार, ये कल्पनाएँ, ये धन्धे, ये सब जीवन-को जीनेमें सहायता देनेको हैं। अपने आपमें कुछ नहीं…

समर : (अर्थ-भरी हल्की हँसी) ठीक है, अब न सोचूँगा। चाहूँ तब भी नहीं सोच सकता। बस इतना ही याद है कि इस एक महीनेमें तुमने और डॉक्टर विवेकने क्या नहीं किया। क्या यह सब प्यार नहीं था? कहते हैं, माँसे बढ़कर कोई प्यार नहीं करता। पर वे दो दिनसे अधिक ठहरी ही नहीं। उन दो दिनोंमें उन्होंने मुझे कितना परेशान किया।

सुचेता : अब रहने दो उन बातोंको। माँ जैसी हैं—हैं, इसमें उनका कोई अपराध नहीं। पीढ़ियोंका अपराध है। मुझे विश्वास है, मैं एक दिन उन्हें मना लूँगी।

समर : नहीं। तुम उन्हें नहीं मना सकती। लेकिन ख़ैर, जाने दो। बात हमारी-तुम्हारी है। और तुम मुझे सचमुच प्यार करती हो। और विवेक तुम्हारे लिए क्या नहीं कर सकता। तुम दोनोंने मेरे लिए अपनेको खपा दिया और बदलेमें मैं, एहसान-फ़रामोश, शंका ही करता रहा।

सुचेता : (व्यस्त होकर) समर! तुम ये बातें कबतक दोहराते रहोगे। भगवान्‌के लिए चुप रहो। तुम्हें मेरी क़सम।

समर : रोको मत सुचेता! कह लेने दो। मनका भार उतर जायेगा। मुझे स्वीकार कर लेने दो कि मुझे विवेकसे ईर्ष्या है। लेकिन अब तो वह मुझसे दूर जा रहा है। उसे साहिरा-जैसी सुन्दर पत्नी मिल गयी है जो उसे तुम्हें भूलनेमें मदद करेगी। मैं उससे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षमा माँग लूंगा !

सुचेता : (उठती हुई) बस बहुत हुआ। मैं अब और कुछ नहीं सुनना चाहती। उठो, अन्दर चलकर बैठो ! डॉक्टरको पता लग गया तो मुझपर नाराज़ होंगे।

समर : (हँसकर) विवेकका नाम सुन नाराज़का होना ही प्यारका लक्षण है : कैसा आदमी है। कहीं घृणा नहीं। ईर्ष्या-द्वेष नहीं। बस केवल प्यार। और एक मैं हूँ···

सुचेता (तीव्र होकर) अब एक शब्द भी नहीं। वरना मैं इसी क्षण झीलमें कूद पड़ूँगी। तुमने समझा क्या है ? सदा सताते ही रहोगे ? हम जैसे भी भले-बुरे हैं, एक-दूसरेके हैं। जाओ, अच्छे बच्चेकी तरह अन्दर जाकर लेट जाओ। मुझे फ़र्मकी नयी योजनाके बारे-में बन्दूक़वालासे बातें करनी हैं। उठो, अब उठो !

समर : (उठता हुआ) चलो सुचेता। पर तुमने मुझे क्षमा तो कर दिया न ?

सुचेता : कर दिया बाबा, कर दिया। तुम तो बिलकुल बच्चे बन गये हो। लेकिन देखना, कहीं डॉक्टर विवेकसे भी क्षमा न माँग बैठना।

समर : नहीं, अब कुछ नहीं कहूँगा। बहुत शर्मिन्दा हूँ। अब तो बस व्यापार है, तुम हो। नाटक-वाटक भी नहीं लिखूँगा। यह साहित्य आदमीको व्यर्थ ही भावुक बना देता है।

(दोनों अन्दर जाते हैं। बाहरसे कुत्ते-को पुचकारते हुए विपिन बन्दूक़वालाके साथ आता है।)

विपिन : बैठिए मिस्टर बन्दूक़वाला ! और हाँ, ऐसी बातें कीजिए जिससे भाभीको शक न हो। उन्हींका डर है। भैया तो मानसिक रूपसे बीमार हैं।

बन्दूक़वाला : तुम चिन्ता मत करो। मैं बन्दूक़वाला हूँ और हाँ, मैंने साहिराको वर-माला दिया है। उसने विवेकसे शादी करनेसे इनकार कर दिया।

विपिन : सच ! तब तो अपनी जीत निश्चित है। भैयाका दिमाग़ ठीक नहीं होगा। और 'चित्रा ट्रेडर्ज' का मालिक मैं बन जाऊंगा। बेशक आप बड़े पार्टनर होंगे। अच्छा, मैं भाभीको बुला लाता हूँ।

सुचेता : (अन्दरसे आती हुई) मैं स्वयं आ रही हूँ। बैठिए, बैठिए।

बन्दूक़वाला : मिस्टर गांगुली कैसे हैं अब ?

सुचेता : ठीक हैं। अब तो उन्हें चलने-फिरनेकी आज्ञा मिल गयी है।

विपिन : भगवान्‌की बड़ी कृपा हुई। नहीं तो इतने ऊँचेसे गिरकर कुछ भी हो सकता था !

सुचेता : हाँ, हो सकता था। परन्तु हुआ इसके बिलकुल विपरीत। इस चोटने उन्हें मानसिक रूपसे कुछ स्वस्थ ही किया है।

बन्दूक़वाला : (अचकचाता है। फिर तहसा प्रसन्न होता है) जी हाँ, ऐसा भी कभी-कभी हो जाता है। लेकिन मिसेज···

सुचेता : क्षमा कीजिए, आप अपनी योजना लाये हैं ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बन्दूकवाला : जी हाँ : ये रहे काग़ज़ात। दे देखिए। यह नयी मशीनें लगानेका व्ल्यू प्रिंट है, यह बर्कशापका है। अबतक आप ग्रीज कप बनाते रहे हैं। पर अब ये पुर्ज़े भी बना सकेंगे। इनकी बड़ी माँग है। आखिर सब कुछ हमें अपने देश ही में तो बनाना होगा। और हाँ, मैं तो रंग रोगन बनानेकी योजना भी तैयार कर चुका हूँ।

सुचेता : लेकिन पहले हम केवल दो नयी मशीनोंकी बातें करें। धीरे-धीरे चलना उचित होगा। क्यों विपिन ?

विपिन : सो तो ठीक है, पर भाभीजी ! रंगरोगनमें लाभकी गुंजाइश बहुत है।

बन्दूकवाला : ये दोनों मशीनें तो आपको जो ऋण मिलनेवाला है उसमें ही लग जायेंगी। लेकिन मैं भी कुछ रुपया लगा सकता हूँ।

सुचेता : तब तो हम विचार कर सकते हैं। पर···

बन्दूकवाला : सुनिए तो मिसेज गांगुली, दो ही नहीं, मेरे दो-तीन दोस्त भी बीस-बीस हज़ार रुपये तक लगा सकते हैं।

विपिन : (उछलकर) क्या कहते हैं मिस्टर बन्दूकवाला ! आप तो ग्राहकसे पार्टनर और एजेण्टसे पार्टनर बन गये, यही तो अच्छी भावना है। हम आपके बहुत कृतज्ञ हैं।

बन्दूकवाला : मैं अभी पंजाब गया था। कैसे अजीब लोग हैं वहाँ ! कैसे उत्साही ! घर-घरमें छोटे उद्योग चलाते हैं। मैं सारे देशमें ऐसी ही स्थिति देखना चाहता हूँ। आप-जैसे ईमानदार लोग···

विपिन : (उत्साहसे) हम तैयार हैं। क्यों भाभीजी, आपकी क्या राय है ?

सुचेता : मैं श्री बन्दूकवालाकी बहुत कृतज्ञ हूँ। समर तो बहुत ही आभारी हैं पर मेरी दृढ़ राय है कि समरके पूर्ण स्वस्थ होने तक हम अपना व्यापार हरगिज़ न फैलायें।

बन्दूकवाला : और मेरी राय है···(विवेकका प्रवेश।)

विवेक : हलो मिस्टर बन्दूकवाला !

बन्दूकवाला : डॉक्टर, आप आ गये। पेरिन आपको बहुत याद कर रही थी। आप कितना सुन्दर गाते हैं। क्या दर्द है आपकी आवाज़में। हाँ, आपसे एक बात कहनी है। पेरिन कहती थी कि बम्बईमें बहुत क्लिनिक हैं, आप अपना क्लिनिक वहाँ न खोलकर···

विवेक : (एकदम) मैंने भी यही निश्चय किया है। बम्बईमें क्लिनिक नहीं खोलूंगा। हाँ, सुचेताजी ! मिस्टर गांगुली अब कैसे हैं ? (समरका प्रवेश।)

समर : आप स्वयं देख लीजिए। अब मैं खूब चल फिर सकता हूँ।

विपिन : समर भाई साहब, आप यहाँ आ गये !

सुचेता : (पास जाकर) आपको अकेले नहीं आना चाहिए। मुझे पुकार लेते। इधर आओ।

विवेक : हाँ, मास्टर गांगुली, अभी आपको सावधान रहना चाहिए।

बन्दूकवाला : मिस्टर गांगुली, हम तो यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानते हैं कि अपनेको डॉक्टरके हाथोंमें सौंपकर निश्चिन्त हो जाना चाहिए। वह कहे तो चलना, नहीं तो चौबीसों घण्टे लेटे रहना।

समर : ठीक है मिस्टर बन्दूक़वाला! लेकिन मैं अनुभव करता हूँ कि अब बिलकुल स्वस्थ हूँ। मुझसे यहाँ अकेले नहीं पड़े रहा जा सकता। मैं चाहता हूँ कि झीलमें नौका-विहार करूँ।

विवेक : आप सब कुछ कर सकते हैं, पर मिसेज गांगुलीके सहयोगसे। अकेले अभी आप दुर्बल हैं।

समर : सो तो जानता हूँ। तुम भी जानते हो। वाक़ई मैं दुर्बल हूँ, उसके बिना कुछ नहीं कर सकता। हाँ, डॉक्टर, आपने अपना बिल···

विवेक : वह सब भुगतान हो चुका है। मैं जयपुर जा रहा हूँ। किसीको चलना हो तो···

विपिन : (एकदम) मुझे और मिस्टर बन्दूक़वालाको जाना है। जगह हो तो···

विवेक : दोनोंके लिए जगह है।

सुचोता : माफ़ कीजिए, डॉक्टर साहब! साहिरा कहाँ है?

विवेक : बम्बई उसे इतना पसन्द आया कि उसने मेरे वहाँ क्लिनिक न खोलनेपर डॉक्टर पेस्टिनजीसे विवाह करनेका निश्चय किया है।

सुचोता : (काँपकर) विवेक, यह तुम क्या कह रहे हो?

बन्दूक़वाला : यह ठीक कह रहे हैं। मुझसे साहिराकी बातें हुई थीं। वह समाज चाहती है। वैसा समाज जैसा बम्बईमें है। भड़कीला और शोर मचानेवाला। उसे पतिकी कुछ चिन्ता नहीं है।

समर : लेकिन डॉक्टर, उन्होंने तो मुझसे कहा था कि वे आपसे शादी करेंगी।

विवेक : बशर्ते मैं बम्बईमें रहूँ। क्यों मिस्टर बन्दूक़वाला, (हँसकर) बम्बई उन्हें बहुत पसन्द है? मुझसे भी ज़्यादा?

बन्दूक़वाला : जी हाँ।

विवेक : लेकिन मैं उसकी यह इच्छा पूरी नहीं कर सकता। मैं मानता हूँ कि कोई भी शर्त इस बातका प्रमाण है कि मनका मिलन पूर्ण नहीं है। तब यह कोई अर्थ नहीं रखता कि साहिरा मुझसे विवाह करती है या किसी और से। अच्छा, आइए!

विपिन : मैं अपनी पत्नीको देखता हूँ, वह तैयार है या नहीं।

बन्दूक़वाला : मैं भी पेरिनको देखता हूँ। कुछ दिन वह आपके साथ रहना चाहती है।

(दोनों जाते हैं।)

समर : (हँसता है) तो अब पेरिन··· (सँभलकर) उनके तैयार होनेमें अभी देर है। डॉक्टर, बैठिए। सुचेता, तुम भी बैठो। तुम क्या यहीं बैठे रहोगे समर?

सुचोता : क्यों न मैं तबतक चाय ही बना लूँ। तुम

समर : अब कोई डर नहीं है। डॉक्टर पास है। बैठो डॉक्टर!

विवेक : (बैठते हुए) मुझे बहुत खुशी है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि तुम इतनी जल्दी स्वस्थ हो गये।

समर : तुम्हारे ही कारण यह सब कुछ सम्भव हो सका। तुमने मुझे बार-बार जीवनदान दिया, परन्तु मैं···

विवेक : (एकदम) तुम क्या कहना चाहते हो ?

समर : काश तुम सुचेताको न लौटाते। कितना अच्छा होता। मुझे माफ़ कर दो। मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता। उस दानको···हाँ यही तो गड़बड़ है, वह दान है और मैं उस दानको स्वीकार नहीं कर सका। आज भी उस दिनकी याद करके सिहर उठता हूँ। मेरे झिझकनेपर तुमने मुझे मार देनेकी धमकी दी थी। तुम्हें उसका कितना ध्यान था! क्या वह प्यार नहीं था ? क्या तुम उसे लौटा नहीं लोगे ?

विवेक : मिस्टर गांगुली, मैं यह सब सुननेके लिए यहाँ नहीं आया हूँ। सुचेता निर्जीव वस्तु नहीं है।

समर : उत्तेजित मत होओ डॉक्टर ! यह मैं भी जानता हूँ। लेकिन क्या यह सही नहीं कि तुम सुचेताको प्यार करते हो, और वह तुमको। साहिरा, पेरिन ये सब तो···

अन्दरसे आती हुई सुचेताके हाथसे चायकी ट्रे गिर पड़ती है और उसीके साथ आह करती हुई सुचेता भी गिर जाती है। डॉक्टर एकदम चकता है।)

विवेक : क्या हुआ ? क्या बात है मिसेज़ गांगुली ? (**पास जाकर**) ओहो, यह तो बेहोश हो गयीं !

समर : (वहींसे) मेरी बात ठीक है न डॉक्टर ? वह तुमसे सचमुच प्रेम करती है।

विवेक : चुप रहो समर। तुम कितने क्रूर हो। मिसेज गांगुली ! मिसेज गांगुली !

समर : क्रूर तो हूँ, पर डरो नहीं डॉक्टर, अभी होश आये जाता है। (**पास जाकर**) सुचेता, सुचेता !

सुचेता : (उठनेका प्रयत्न करती है) ओहो, ओह ! (**उठकर**) क्षमा कीजिए। मुझे न जाने क्या हो गया था ! इधर मेरी तबीयत कुछ खराब रहने लगी है।

विवेक : तुमने इन दिनों अपनेको थकाया भी तो बहुत है। (**गोली निकालकर**) लो, यह गोली खा लो। और चुपचाप सोफेपर लेट जाओ। और समर, भगवान्‌के लिए अब इस बातकी चर्चा कभी न करना। मैं सदाके लिए जा रहा हूँ।

समर : ज़रा रुको डॉक्टर ! मैं अभी आता हूँ। (**अन्दर जाता है। एक क्षण मौनके बाद सुचेता बोलती है।**)

सुचेता : (**धीरे-धीरे**) विवेक, समर सच्ची कहते हैं। मैं तुमको सबसे अधिक अपने पास पाती हूँ। अकसर सोचा है कि तुम्हारी पत्नी बनकर मैं कितनी सुखी होती। क्या तुम मुझे यहाँसे ले नहीं जा सकते ? (**विवेक मौन है**) तुम चुप क्यों हो ? एक दिन मैंने तुमसे मुक्ति माँगी थी, आज बन्धन-में आना चाहती हूँ। मुझे बचा लो। यहाँसे खींचकर ले चलो। बोलो, क्या तुम तैयार हो ? बोलो, नहीं तो मैं फिर बेहोश होकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गिर पड़ूँगी।

विवेक : नहीं सुचेता, तुम भूलती हो। मैं आज जो कुछ दिखाई देता हूँ, तुम्हारे कारण ही तो हूँ। समरके प्रति तुम्हारे गहरे प्रेमके कारण। उस प्रेमने मुझपर जादू कर दिया। मैं तुम्हें सचमुच प्यार करता हूँ, परन्तु वह प्यार···

सुचेता : (व्यग्र होकर) ओह! अब रहने दो उस प्यारकी बात। तुम मुझसे सीधे ढंगसे बात क्यों नहीं करते। तुम भी संस्कारोंके दास हो! तुम नहीं समझा सकोगे। सच बात तो यह है कि मैं खुद भी नहीं समझ पाती। हम सब कहीं-न-कहीं चुपचाप नियतिको स्वीकार कर लेते हैं। मैं समरको प्यार करती हूँ, तुमको प्यार करती हूँ। समरके पास रहना चाहती हूँ। तुम्हारे पास आना चाहती हूँ। यह सब क्या है? मैं बराबर अपनेसे पूछती रही हूँ, क्या यह पाप है? तुम्हीं बताओ।

विवेक : मैं कुछ नहीं जानता।

सुचेता : कोई भी नहीं जानता। फिर भी सब पाप-पुण्यकी भाषामें बात करते हैं। सचाई और ईमानदारीको कोई नहीं देखता।

विवेक : (ठगा-सा) सुचेता! तुम इतना जानती हो।

सुचेता : कोरा ज्ञान कोई अच्छी वस्तु नहीं है, पर छोड़ो इन बातोंको। बताओ, तुमने साहिराको अपनेसे दूर क्यों कर दिया?

विवेक : मैंने नहीं किया। बन्दूक़वालाने उसे बरग़लाया है और इस नयी चकाचौंधमें वह घबरा गयी है। मैं तो अब भी उसे चाहता हूँ लेकिन बन्दूक़वालाने मुझे प्रलोभन दिया है कि मैं पेरिनसे शादी कर लूँ और तुम्हारी फ़ैक्टरीका मालिक बन जाऊँ। वह तुम्हारी फ़ैक्टरीपर क़ब्ज़ा करना चाहता है।

सुचेता : मुझे मालूम है। यह भी मालूम है कि विपिन और समरकी माँ दोनों इस षड्यन्त्रमें हैं। माँको मैं कभी खुश नहीं कर सकूँगी।

विवेक : इसीलिए कहता हूँ, अपनेको शान्त करो। क्या तुम उनसे पराजित हो जाना स्वीकार कर लोगी? क्या तुम समरको अवसर नहीं दोगी कि वह मुझे भूल सके? तुम अभी ईमानदारीकी बात कह रही थी। वह सचमुच ईमानदारीसे प्रयत्न करता है और फिर, तुम माँ बनने भी तो जा रही हो।

सुचेता : यही तो। मैं तुम्हें भगा ले जा सकती थी, पर यही तो बाधा है। कुछ लोग कहते हैं कि जबतक नारी माँ बनती रहेगी तबतक उसकी मुक्ति नहीं होगी। कुछ मानते हैं कि मातृत्व ही नारीकी मुक्ति है। नहीं मालूम क्या ठीक है।

विवेक : कोशिश करोगी तो जान लोगी। कुछ भी जान लेना मुश्किल नहीं है। बशर्ते किसीका डर न हो। समाज, प्रतिष्ठा, मर्यादाकी झूठी धारणाएँ वग़ैरह-वग़ैरह। अच्छा, अब मुझे जाने दो!

(समरका प्रवेश)

समर : ठहरो, विवेक!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुचेता : नहीं समर, अब उसे जाने दो।

समर : जाना तो होगा ही। चाहूँ तब भी नहीं रोक सकूंगा। साहिरा उसे शिलांग ले जायेगी। यह देखो, उसका पत्र। वह बहुत दुखी है कि बन्दूकवालाको पहचान न पायी। कचहरीमें फँसकर धोखा खा गयी। उसने तुमसे सहायता चाही है। (हँसता है) तुम सुन रही हो न सुचेता, मुझसे सहायता चाही है कि मैं विवेकसे उसके लिए प्रार्थना करूँ।

सुचेता : (पत्र छीनकर) यह मुझे दो। (साहिराका प्रवेश।)

समर : यह क्या साहिरा, तुम आ गयीं !

साहिरा : (विवेकसे) तुम यहीं हो। खूब अच्छा हुआ। मैं समयपर पहुँच गयी।

विवेक : पहुँचना ही था। मैं राह देख रहा था।

साहिरा : (प्यारसे) जानती हूँ। चलो, तुम यहांसे इसी क्षण चलें। (सुचेतासे) आप दोनोंको हम कभी न भूल सकेंगे।

विवेक : चलो। (नमस्कार करके दोनों जैसे भागते हैं।)

सुचेता : ज़रा तो रुको। एक बार तुम दोनोंको एक साथ····

समर : अब उनको जाने दो। और तुम मेरे साथ चलो। आज अन्तिम बार सूर्यास्त देखने-के लिए जाना चाहता हूँ। (प्यारसे सुचेता-को पास खींच लेता है।)

सुचेता : चलो ! लेकिन तुम जानते हो, कि मैं विवेकके साथ भाग जानेको तैयार हो गयी थी !

समर : जानता हूँ। और यह भी जानता हूँ कि मेरे लिए तुम उसे दूसरी बार भी छोड़ आती।

(सुचेताको सँभाले हुए समर दृढ़तासे बाहर चला जाता है और यहींपर धीरे-धीरे परदा गिरता है।)

■ ■

Gram : MATACANTOS
CALCUTTA.

Telephone :
OFFICE : 22–3226
RESI : 55–2620

Ashutosh Mookerjee & Co. Private Ltd.

12, RAJA WOODMUND STREET,
CALCUTTA–1.

Importers & Manufacturers of :
WIRE ROPES, CHAINS LIFTING ACCESSORIES,
WAGON FITTINGS & MARINE STORES ETC.
Agents for :
LIFTING ACCESSORIES
S. TURTON & CO., LTD., BIRMINGHAM.
Workshop :
22, RAMLAL MOOKERJEE LANE,
SALKIA, HOWRAH.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निमकी बनाने के लिए

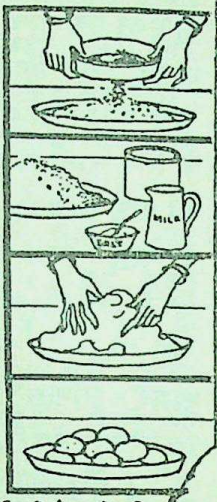

आटा छान लीजिए

नमक और थोड़ी वनस्पति मिलाकर इसे दूध के साथ सान लीजिए।

अब इसे अच्छी तरह गूंधिए।

छोटी छोटी पेड़िया बनाकर उन्हें बेल लीजिए और फिर गर्म वनस्पति में तल लीजिए।

लीजिए, स्वादिष्ट और जायकेदार निमकी तैयार हो गयी।

उत्तम एवम् स्वादिष्ट भोजन बनाने के लिए हनुमान वनस्पति पर ही भरोसा रखें।

भोजन बनाने का श्रेष्ठ चिकनाई माध्यम

हनुमान
वनस्पति

निर्माता :

रोहतास इन्डस्ट्रीज लिमिटेड

डालमियानगर (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सा वि त्री

...स्तुत है
...राठीके सुप्रतिष्ठित कथाकार
...ी पुरुषोत्तम शिवराम रेगेका
...र्चित उपन्यास सा वि त्री
...न क़िस्तों में ।

...ह उपन्यास
...क और अनेक पत्रों के
...में है, इसमें प्रतीक
...कोंमें उलझे हैं,
...ह आत्मकथा और लोककथा
...ों है ।

...ा कोई सुदर्शना ख़त
...र ख़त लिखे जा रही है
...ौर वे सब बग़ैर पते भी
...ापतक पहुंच रहे हैं....

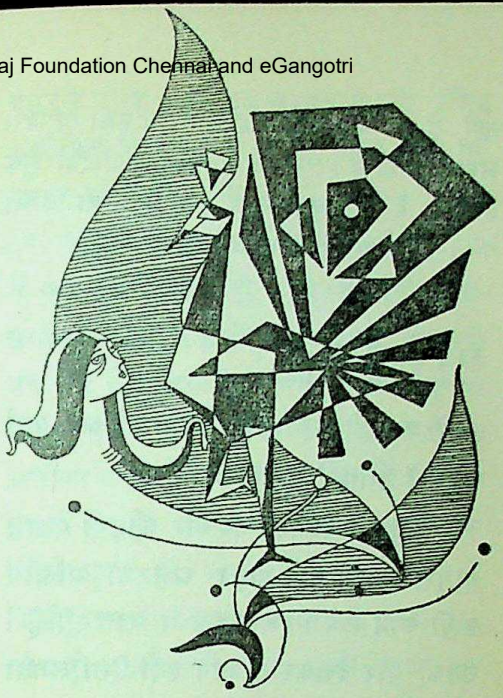

३–लोक कथावाला मोर

मूल : पुरुशिव रेगे
अनु० : माधव मोहोलकर

पिछले अंकोंमें आपने पढ़ा है :

"...अपरिचित होते हुए भी मैंने आपको लिखा और आपने उतनी ही सहजतामें उत्तर दिया। बचपनमें राजम्माने मुझे एक कहानी सुनायी थी। ...उनके स्थानपर ये सात पहाड़ियाँ उग गयीं। आप आइए, मैं गाइड बन जाऊँगी। आते समय मेरे लिए कुछ भी न लाइए।...अप्पाकी पुस्तककी आपने आत्मीयतासे पूछ-ताछ की।...एजवर्थकी अपनी कुछ विशेष कल्पनाएँ हैं।...मैं रिज़ल्टकी प्रतीक्षा कर रही हूँ। आपके दूसरे पत्रमें पूछे प्रश्नोंके योग्य उत्तर शीघ्र ही दे दूँगी।...

"...क्योटो, जापान। यहाँ आते ही आपके तीनों पत्र प्रतीक्षा करते मिले।...सच कहती हूँ आपको भूली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं हूँ।···अभी-अभी यहीं ल्योरे नामकी स्वीडिश लड़की आयी है।···नाटक खेलनेकी तैयारियाँ शुरू हो गयी हैं। नाटकका नाम रखा है : गानेवाला पेड़। ···हो सका तो इग्लैण्डमें आपसे मिलूँगी।"

अब आगे पढ़िये :

ल्योरे कल ही चली गयी। मेरा भी अब यहाँ रहनेको जी नहीं चाहता।

क्योटोमें रहनेका विचार छोड़ना पड़ा। नामुरा राजी नहीं हुए। अक्षरशः आँखोंमें पानी लाने लगे। आजकल वे खिन्न ही हैं। उनकी ओर देखकर न जाने क्यों ऐसा लगता है कि कहीं-न-कहीं कोई भूल हो गयी है और वह और अधिक बढ़ती जानेवाली है।

लगता है कि इसी बीचके मेरे तीन-चार पत्र आपको नहीं मिले। आपके पत्रमें उनका कहीं उल्लेख नहीं था। आजकल आपके पत्र भी देरसे आते हैं। जहाँ सारी दुनिया ही शिकायत लेकर अपने पास आयी है वहाँ हम अपनी शिकायत किसके पास और कैसे ले जायें? फिर भी हमारी सुविधाके लिए आगे पत्रोंपर १, २, ३···क्रमांक लिखते जायेंगे। आजके पत्रपर मैंने १ लिखा है। इससे आगे क्रमशः २, ३····लिखती जाऊँगी। कोई पत्र कहीं खो गया तो आपकी समझमें आ जायेगा। आप भी वैसा ही कीजिए।

आपका कुशल-समाचार मिला तो उतना ही अच्छा लग रहा है। आप ऑक्सफ़ोर्ड छोड़कर लन्दनमें इण्डिया-हाउसमें काम

इस मराठी उपन्यासके लेखक
श्री पुरुषोत्तम शिवराम रेगे
(जन्म २ अगस्त १९१०) कवि, कथाकार
और उपन्यासकार हैं।
बम्बईके एल्फिन्स्टन कॉलेजमें
प्रिन्सिपल हैं।
प्रकाशित प्रमुख कृतियाँ :
साधना आणि इतर कविता,
फुलोरा, हिमसेक, दोजा, गन्धरेखा, पुष्कला,
छान्दसी, अवलोकिता और यह
उपन्यास सावित्री।

करेंगे···मतलब यह कि खतरा और भी बढ़ गया। खाने-पीनेकी भी और ज़्यादा तकलीफ़। दुःख इस बातका है कि आपकी इच्छाके अनुसार कुछ भी नहीं हुआ। और तारीफ़की बात यह है कि आपको ऐसा नहीं लगता। आश्चर्य है!

फिरसे फ़ौरन लिखिए।

० ० ०

ल्योरेके जानेके बाद अब एक महीना पूरा होनेको आया है। वह जब यहाँ थी तब उस अवधिमें हम दोनोंमें खूब बनने लगी। उससे मैंने बहुत-कुछ सीखा। अपने-आपको भूलना क्या होता है इस बातका अनुभव उसके साहचर्यमें मुझे हुआ। बचपनमें कभी-कभी बहुत चाहती थी कि मैं दूसरों-जैसी बन जाऊँ। फिर एक बार मनमें विचार आया कि वह दूसरा आदमी दूसरा क्यों, मैं ही क्यों नहीं? मुझे इस खेलमें बड़ा मजा आने लगा। मैं तरह-तरहके रूप धारण कर लेती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी तरफ दूसरोंकी आँखोंसे देखती। बचपनका यह अनुभव उसके साथ ही बीत गया। बचपन समाप्त होनेके बाद भी इस अनुभवको जाग्रत करानेवाली थी यह ल्योरे। मेरे हाथ एक पुराना मेवाड़ी शैलीका चित्र था। उसमें राधा कृष्ण हो जाती है और कृष्ण राधा,—यही उसके सहज व्यवहारकी पद्धति थी है। मैंने उसे यह बताया तो अब उसे वह चित्र चाहिए। हिन्दुस्तानसे मँगवाना भी कठिन। हमने यहाँकी युनिवर्सिटीकी लाइब्रेरीमें जाकर देखा। टोकियोमें भी तलाश की। पर कहीं भी नहीं मिला। आखिर एक दिन अचानक अप्पाके नोट्सके काग़ज़ात देखते समय मेरी ही नोटबुकमें मिला। किसी मैगजिनमें छपा था। तब मैंने अलग निकालकर रख लिया था। फिर मिसेज ल्योरेने एक सुन्दर फ्रेम बनाकर उसमें चित्र लगा दिया और हमने वह ल्योरेको भेंटके रूपमें दे दिया। कलाकी प्रेरणाका मूल्यांकन करते समय आपके अनुसार इन चित्रोंका स्थान कहाँ होगा? केवल धार्मिक, आध्यात्मिक, शृंगारिक आदि विशेषणोंका उपयोग कीजिएगा।

ल्योरेके बारेमें बहुत-कुछ बताना है; वह फिर कभी। आपका पत्र बिना पढ़े, उसके आनेसे पहले ही, वह बता देती कि उसमें क्या लिखा होगा। आपको भेजे जानेवाले पत्रोंमें कई बार उसका भी हिस्सा था। 'सोनेवाले पेड़' के प्रश्नोत्तर उसके ही थे और भी कुछ बातें हैं। एकाध शब्द या वाक्यको इधरसे उधर करके वह सहजतासे उसे अधिक अर्थांकित कर देती। आपने चाहा तो ऐसे स्थान आप ढूंढ़ सकेंगे।

एक ताज़ा खबर: 'चौरपंचाशिका' पर मैं एक बैले लिख रही हूँ। जापानी लोकसाहित्यमें यही कहानी थोड़ा अलग प्रकारसे प्रचलित है। इसीलिए मैंने उसका चुनाव किया है। 'पञ्चाशिका'में उत्कट प्रेमके क्षणोंका वर्णन करके बताया गया है कि उस प्रेमको फिरसे जीनेवाला अपराधी आत्यन्तिक दण्डसे मुक्त हो जाता है। मानो उसकी जिजीविषा ही उसको बचाती है। मैं कुछ और ही बतानेवाली हूँ। एकके बाद एक अनुभव कहकर वह आगे बढ़ जाता है और पीछे-पीछे आनेवाली उसकी प्रेयसी हरेकसे एक प्रश्न पूछती है। वे उत्तर नहीं दे सकते। उसकी तलाश करते हुए राजा भी वहाँ आ पहुँचता है, उससे भी वह अन्तमें प्रश्न करती है। वह भी उत्तर नहीं दे सकता। अब एक ही उत्तर बाक़ी रहता है। और वह यह कि उसके प्रियतमको सूलीपर चढ़ानेसे पहले ही मुक्त कर देना। राजा आज्ञा देता है, दूत दौड़ते हैं···परन्तु तबतक उसे सूलीपर चढ़ा भी दिया गया है।

० ० ०

अप्पाकी तबीयत आजकल ठीक नहीं है। रोज़ाना शामको बुखार आता है। डॉक्टरने अच्छी तरह देख लिया है और निदान भी हो चुका है। पिछले दो वर्षोंके निरन्तर परिश्रमका तनाव उन्हें अब महसूस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने लगा है। इस बातसे नामुरा और भी अधिक खिन्न हो गये हैं। वे अप्पाकी रखवालीको अपना व्यक्तिगत उत्तरदायित्व समझते हैं। अब हिन्दुस्तान लौटना भी असम्भव हुआ है। उधरकी कुछ खबर भी नहीं। जोशीजीका पत्र आये हुए आठ महीने हो गये। हमारे घरका भी कोई समाचार नहीं। पता भी नहीं चलता कि मेरे पत्र भी उधर मिलते हैं या नहीं।

इस बीचके आपके दो पत्र नहीं मिले, ४ और ५ क्रमांकों के।

अभी ल्योरेका एक पत्र आया है,—सान्फ्रान्सिस्कोसे। शायद उन लोगोंको कुछ दिन अमेरिकामें ही रहना पड़ेगा। पत्रमें क्या नहीं है? सब कुछ है: जहाज़का वातावरण, शोरगुल, जल्दबाजीकी भयाकुल स्थितियाँ, बच्चोंके लड़ाई-झगड़े और शरारतें। एक बार एक पनडुब्बी ही दिखाई पड़ी थी। ल्योरेके अक्षरोंका मोड़ जानना कभी-कभी मुश्किल हो जाता है। लिखना भी कई बार बहुत ही संक्षिप्त।

हिन्दुस्तान जानेका विचार उसने अभीतक छोड़ नहीं दिया है। आपके बारेमें पूछताछ की है।

कभी-कभी मुझे लगता है कि अब हमारी मुलाक़ात ही नहीं होगी।...और नहीं हुई तो मुझे ही ल्योरे समझ लीजिए।

मेरा बैले अभीतक कल्पनामें ही है। उसपर ल्योरेका भाष्य पढ़कर मेरा उत्साह कुछ कम हो गया है। उसका कहना है कि उसकी नींव तार्किक हो गयी है जिसकी कोई ज़रूरत नहीं। प्रश्नोत्तरोंसे कभी कोई परिणाम नहीं निकलता। मूल काव्यमें सिर्फ एक स्थिति प्रस्तुत की गयी है। उससे पहले भी कुछ नहीं और बादमें भी। उसने एक दूसरी ही कहानीका सुझाव दिया है: नासिसस और उसके प्रतिरूप की।

० ० ०

तिरुपेट, कुर्ग: मार्च १९४६-जून १९४७

युद्ध समाप्त होनेपर जापानसे लौटनेके पहले मैंने आपको दो पत्र भेजे थे, एक लन्दनके पतेपर और दूसरा आपके घरके पते पर। शायद आपको दोनों ही पत्र नहीं मिले। आपका छह महीने पहलेका एक पत्र यहाँ प्रतीक्षा कर रहा था। उसमें जो था उसपर लिखकर देख रही हूँ।

पहले आपको सब कुछ बताना ज़रूरी है क्योंकि इन चार वर्षोंमें बहुत-कुछ हो गया है।

अप्पाके विषयमें मैंने आपको लिखा ही था। बादमें वे अधिक दिन इस संसारमें नहीं रहे। उनकी स्मृति अब आनन्द मिश्रसे सदाके लिए सम्बद्ध हो चुकी है। उन आखिरी दिनोंमें सबने मुझे धीरज बंधाया। सरकारने भी, शत्रुपक्षके लोग समझकर नहीं, हमारे साथ बुरा व्यवहार नहीं किया।

उसके बाद कुछ ही दिनोंमें दूरपूर्व सब जापान-प्रभावित देशोंमें नया वातावरण नया उत्साह पैदा हुआ। नेताजीकी आज़ाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्द सेनाका उदय उसी वातावरणमें हुआ।

मैं पहले आनन्द मिशनमें ही रहती थी लेकिन कुछ ही दिनों बाद ओसाकाके मिलिटरी अस्पतालमें मुझे नर्सका काम मिला। वहीं रहनेके लिए अस्पतालके पास ही क्वार्टर्स थे। यह मेरे लिए बिलकुल नया अनुभव था। लेकिन कुर्ग वीरोंका देश है और मैं भी उनकी ही बेटी—इसलिए मैं अपने काम-में शीघ्र ही समरस हुई। भारतीय सिपाहियों और अधिकारियोंका मुझे ही ज़्यादा खयाल रखना पड़ता था।

मेजर अग्निमित्र सेन नामके आज़ाद हिन्द सेना युनिटके डॉक्टरकी नियुक्ति यहाँ ओसाकाके मिलिटरी अस्पतालमें की गयी थी। कामके सिलसिलेमें उनसे हमेशा सम्पर्क रखना पड़ता। वे कभी ज़्यादा नहीं बोलते थे। एकाध प्रश्न पूछते, बस। हमेशा गम्भीर रहते। लेकिन मेरा इतिहास मालूम होनेके बाद वे मेरी ज़्यादा पूछताछ करने लगे। फिर भी पहले जो अन्तर हमारे बीच-में था वह उन्होंने कम नहीं किया। मेरे मन-में उनके बारेमें जिज्ञासा थी। पर वे दिन ही ऐसे थे कि कोई किसीकी ज़्यादा पूछताछ कर नहीं सकता था।

कुछ दिनोंके बाद पता चला कि हमारे अस्पतालकी किसी जापानी नर्ससे उनका विवाह हो गया है। एक बार जब मैं उनके क्वार्टरमें गयी थी तब उन्होंने ही मेरा उनके साथ परिचय करा दिया और जब वह कमरेके बाहर गयी तब वे बोले, "अब तुम्हें इसका ज़्यादा खयाल रखना होगा। मैं जान गयी थी कि वह शीघ्र ही माँ बननेवाली है।

उसके बाद मेजर सेन मुझसे खुलकर बातें करने लगे। समय मिला तो मैं भी उनके क्वार्टरपर मिसेज़ सेनके पास बैठने जाती। मिसेज़ सेन बहुत ही कमज़ोर हो गयी थी। प्रसूतिके लिए अभी डेढ़ महीना था। मैं और मिसेज़ सेन भी जानती थी कि मेजर साहबको किस बातका डर है।

और अचानक उसी समय डॉकपर जो हवाई हमला हुआ उसमें मेजर सेन लापता हो गये।

मिसेज़ सेनके हृदयको सदमा पहुँचा और वह असमय प्रसूत हुई और चल बसी। लेकिन उनकी बच्ची बच गयी—बीना, अब ढाई बरसकी, मेरे यहाँ पली हुई और मेरे साथ मेरी बेटी बनकर यहाँ आयी हुई।

आप मेरे जीवनमें आये और मैं अपना एक साथी खो बैठी, ल्योरे मिली और कुछ भी न माँगनेवाला, न देनेवाला एक व्रतस्थ सचेतन सहचर मुझे मिला; बीना मेरे लिए एक तृप्त मातृत्व अनायास ले आयी। जिस सुखके बारेमें पहले कभी मैंने लिखा था वह सुख इन पिछले छह वर्षोंमें सुखदुःखातिशयमें से इस तरह मेरे लिए दौड़ता आया।

और भी एक रहस्यका पता चला। एजवर्थ इधर ही ३ जनवरी १९४३ को परलोक सिधार गये और ठीक आठ महीने बाद ३ सितम्बर १९४३ को बीना का जन्म हुआ। एजवर्थने कहा था कि वे अगले जन्म

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में कुर्गी लड़की बनकर आयेंगे। मानो मैं उनके लिए ही जापान गयी और बंगाली बाप और जापानी माँकी कुर्गी बेटी लेकर फिर यहाँ आ गयी।

प्रार्थना कर रही हूँ कि यह पत्र तो आपको मिल जाये।

० ० ०

आपका पत्र मिला। बहुत-बहुत खुश हो गयी। पहलेसे भी अधिक खुशीसे पागल हो गयी हूँ।

हमेशा ऐसा लगता कि आप कहीं-न-कहीं हैं और सुरक्षित हैं। लेकिन कभी-कभी धीरज खो बैठती और मनमें ऐसी-ऐसी बातें आतीं जो सोचनी नहीं चाहिए। आज आपका जाना-पहचाना प्यारा हस्ताक्षर हाथमें लेकर नाचती रही।

युद्ध समाप्त हो गया फिर भी आपके लिए वहाँ रहना जरूरी है? पढ़ाई पूरी करनी हो तो और सवा बरस आपको वहाँ रहना पड़ेगा। आप जो कहते हैं उसमें सत्यका अंश अवश्य है, लेकिन फिर दूसरे क्या करेंगे?

मेरा पत्र मिलते ही प्रो० जोशी मालन और सुभाषको लेकर यहाँ आये हैं। उनके कारण मेरा और बीनाका समय अच्छी तरह गुजरता है।

फिलहाल मेरा मुख्य काम है—अप्पाके काग़ज़ात व्यवस्थित रखना और उनकी अप्रकाशित किताबों तथा लेखनकी व्यवस्था करना। 'एक्सपीरियेन्स एण्ड ग्रोथ' युद्धकी धूमधाममें पीछे पड़ गयी है। अब लन्दनके 'विल्सन एण्ड टॉड' उसे प्रकाशित कर रहे हैं। जोशीजीने वचन दिया है कि आनेवाली छुट्टियोंमें वे मेरी थोड़ी-सी सहायता करेंगे।

एजवर्थके लन्दनके सॉलिसिटरका पत्र आया है। अपनी वसीयतके अनुसार उन्होंने इधरकी सारी सम्पत्ति मुझे दी है। कितना प्यार और कितना विश्वास!

…तो ल्योरे आपसे मिली थी! उसने क्या-क्या कहा? कितने दिन रही? विस्तार-पूर्वक लिखिए।

थोड़ा-सा समय मिलते ही सिंहाचलम् जाकर प्रो० गुरुपाद स्वामीसे मिल आऊँगी। हम सभी जायेंगे।

आपने पूछा है कि आखिर मैं क्या चाहती हूँ? मैं भी आपसे यही पूछती। कई बार सोचती हूँ कि हम इधर-उधरका बहुत-कुछ पढ़ लेते हैं और इसलिए अपनी सच्ची समस्याओंको ही भूल जाते हैं। आपके बारेमें मैं पहले जो सोचती थी और आज छह सालके बाद जो सोचती हूँ,—ऊपर-ही-ऊपर देखा जाये तो इनमें अन्तर दिखाई देगा। पहलेमें सहेतुक परायापन दिखाई देगा तो दूसरेमें निर्हेतुक आत्मीयता। लेकिन असलमें वैसा कुछ भी नहीं है। मेरी सारी दुनियाकी सीमा-रेखाएँ विशाल हो गयी हैं लेकिन वे उतनी ही और अधिक स्पष्ट तथा पैनी भी हो गयी हैं। जो हो गया है वह केवल फ़ोटोग्राफ़िक एन्लार्जमेण्ट नहीं। उसमें इर्द-गिर्दका और अधिक भाग आया है ऐसा भी नहीं। उसमें हर एक भागकी विशेषताएं सहित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो चली हैं। उसमें जो निर्हेतुक भाव दिखाई देता है उसका कारण है—इस अभिप्रायका आधिक उत्कट अनुभव।

यह बात माननेमें आपको कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। केवल परिवर्तनका कोई महत्त्व नहीं होता—सब कुछ बदलता रहता है। उससे जो ज्ञान और अनुभव निर्मित होता है उसका मेरी दृष्टि में अधिक मूल्य है।

० ०

मेरे पिछले पत्रसे आपको सन्तोष नहीं हुआ यह पढ़कर मुझे सचमुच सन्तोष हुआ। मेरी दृष्टिमें इसका अर्थ यह है कि आपकी विचार-शक्ति अधिक जाग्रत है।

आप प्रेम चाहते हैं, और मैं नहीं चाहती? पिछले छह साल मैंने आपको क्या दिया? मैं—जिस एक मुझे जो चाहिए था (और अब भी चाहिए) उसीके नाममें उलझ नहीं गयी? आपको मुझे उठाकर, खींचकर, भगाकर ले जाना चाहिए था,—हाँ, मैं यह बिलकुल सच कह रही हूँ। विश्लेषणसे कोई फ़ायदा नहीं। उसमें हम अपने आपको भी खो बैठते हैं।

आपकी मानस शास्त्रीय परिभाषामें मैं कैसे कह सकती हूँ। अपने आचरणकी एक पूर्ण वैज्ञानिक मीमांसा भी सामने रख सकती हूँ। बचपनसे ही माँके बिना पली इसलिए पिताके लिए मनमें अधिक उत्कट आसक्ति। यह आसक्ति—यह फ़ादर-फिक्से-शन—यानी पराये पुरुषोंके बारेमें और भी तीव्र आकर्षण। इसी भूमिकाको लेकर ल्योरेके

लिए मेरे मनमें जो भावना थी उसकी संगति आप बता सकेंगे। और थोड़ा-सा आगे बढ़कर बीनाके बारेमें मेरी मातृभावनाका भी स्पष्टीकरण कर सकेंगे।···लेकिन इन सभी बातोंको सच मानकर भी अपनी समस्या हल होगी···?

हर क्षण हम कभी न बदलनेवाला एक निर्णय ले लेते हैं। जब मैंने आपको पहली बार लिखा था तब एक निर्णय लिया था। आपको तिरुपेट बुलाया तब एक निर्णय लिया था। आपके आ जानेके बाद आपके प्रश्नोंका एक सुसंगत उत्तर दिया था तब भी मैंने एक निर्णय लिया था। मैंने वह निर्णय बदल नहीं दिया। मेरे आचरणकी मनोवैज्ञानिक भूमिका उसके रास्तेमें बाधा नहीं उपस्थित कर सकी। मुझे जो जवाब चाहिए था वह नहीं मिला। मिलता तो मैं आपके पास कहीं भी चली आती, आपके लिए कुछ भी करती। पैदा होते ही एक लड़की अपनी माँ और पापाको छोड़ जानेकी तैयारी करके आती है।

आप शायद कहेंगे कि आपको भी किसी जवाबकी उम्मीद थी और वह आपको नहीं मिला। इसका उत्तर कैसे दूँ? सच कहूँ तो उत्तर-प्रत्युत्तरकी भाषा पैदा हो उससे पहले ही ऐसे निर्णय लेनेकी क्षमता होनी चाहिए।

अब यह सब-कुछ लिखनेके बाद मैं स्वयं ही लज्जित हो गयी हूँ। यह पढ़कर यदि आपको दुःख हो तो मुझे सदाके लिए भूल जाइए। प्लीज़, भूल जाइए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

० ० ०

आपने तत्काल उत्तर दिया और आप सीधे लौटनेकी ही तैयारियाँ करने लगे। इन दो बातोंमें मुझे अपने प्रश्नका उत्तर मिला। पर मैं कुछ धीरजसे काम लेनेवाली हूँ और आपको भी मनको क़ाबूमें रखनेके लिए लिखनेवाली हूँ।

बिना किसी सूचनाके ल्योरे यहाँ अचानक आ पहुँची है। हिन्दुस्तान देखनेके लिए नहीं, मुझसे मिलनेके लिए। बीनाकी और उसकी अच्छी दोस्ती हो गयी है इसलिए मेरी बहुत-सी घरेलू समस्याएँ हल हो गयी हैं।

तो अप्पाकी पुस्तककी प्रति आपको मुझसे भी पहले मिल गयी। मैं तो यहाँ अब भी राह ही देख रही हूँ। जोशी कहते हैं कि उनकी और भी काफ़ी सामग्री बाक़ी है। फ़ुरसतसे छाँटकर लेना होगा। इस कामके लिए अगली छुट्टियोंमें वे फिर यहाँ आनेवाले हैं।

एजवर्थ अब यहाँ नहीं हैं इसलिए कई बार दुःखी हो जाती हूँ—अप्पाके बारेमें भी कभी इतना दुःख मुझे नहीं होता। खुला स्वभाव और दूसरोंसे समरस होनेकी सहज कुशलता। इन दो बातोंके कारण सब उन्हें चाहते हैं। उनके घरको मैं खेलघर बनानेवाली हूँ। नाटक, बैले, संगीत, शिल्प और कहानियोंका यह घर होगा। मेरा पिछला बैले वैसा ही रहा। लेकिन ल्योरेने अब उत्साहसे काम शुरू किया है।

बीना कहती है कि वह आपको लिखेगी। अभी-अभी अक्षर पहचानने लगी है। [illegible] लिखती है तो हम भी लिखें। ल्योरेको [illegible] लिखनेके लिए कहूँ? तो फिर चारों तरफ़से हमला होगा। (या वह आपको लिखती है?)

मैंने कुछ भी नहीं माँगा इसलिए [illegible] कुछ पा चुकी हूँ। विशेष—साथ बीनाका पत्र है। जहाँ अक्षरोंको जानना नहीं है वहाँ अपनेसे रख देने चाहिए। दायीं ओर उसके स्पष्टीकरणके लिए सूरजका स्नायु चित्र किया है। बायीं ओर दो पंछियों-जैसी आकृतियाँ दिखाई देती हैं, वे घर हैं—एक उसका और दूसरा मेरा। आप बाहर ग्रूपमें खड़े हैं एकदम बाहर।

० ० ०

दिन जैसे-जैसे बीतते जाते हैं वैसे-वैसे पिछली यादोंको नया रूप मिलता है।—मैं अपना खोया हुआ गिटार फिरसे बजा रही हूँ···राजम्माके अंकपर सिर रखकर मैं उसकी कहानीका नया संस्करण सुन रही हूँ···(मैं भी वह मुझे छोटी-सी बच्ची ही समझती है,···बीनाके पास होते हुए भी!)··· एजवर्थ किसी मामूली-सी बहसको लेकर मुझे छेड़ रहे हैं···बदनमें दर्द होते हुए भी [illegible] मुझे छूने नहीं देते···गाड़ीसे उतरते ही [illegible] जैसी ही अन्य दो लड़कियाँ देखकर [illegible] हड़बड़ा गये हैं····मैं बीमार हूँ इसलिए [illegible] हँसानेके लिए ल्योरेकी उछल-कूद चल रही है····अप्पाका पहला भाषण समाप्त होते ही [illegible] नामुरा उन्हें प्यारसे गले लगा रहे हैं··· लगातार तीन दिनोंके परिश्रमके बाद [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ी होते हुए भी मेजर सेन ऑपरेशन टेबल-पर तेजीसे खुलती-मूँदती कुशल उँगलियोंसे काम कर रहे हैं।···जापानसे लौट आनेपर लिखे दरवाजेपर खड़े चम्पामें आयी हुई बहार देख रही हूँ···

विशेष याद रखकर आपने बीनाको जो कुछ भेजा था उसे 'पढ़कर' वह बहुत खुश हुई है। आपकी लिखी कहानी वह ज़बरदस्ती सबको पढ़कर सुनाती है। द्रौपदीने अपनी फैली साड़ी फाड़कर कृष्णकी कटी हुई उँगली बाँध दी···। जान गयी हूँ कि आपने यह कहानी क्यों चुनी···!

दैसेके बारेमें अभीतक ल्योरे कोई निर्णय नहीं ले सकी। 'चौरपञ्चाशिका'के लिखमें उसने अब सोचना छोड़ दिया है—पहले कम आपके आने तक। 'नार्सिसस और उसके प्रतिरूप'की कहानी शायद यहाँके लोगोंकी समझमें तुरन्त नहीं आयेगी, (यह उसका मत है; वास्तवमें ऐसा नहीं होगा।) देख रही हूँ कि कोई ठकसेन राजपुत्रकी कहानी मिलती है या नहीं। नहीं तो कथा-सरित्सागर राजम्मा तो है ही।

आपको भेजी हुई नमकीन मिठाई कैसी? कल्पना और कृति दोनों ही सुस्वादु थीं।

परीक्षाके बिना आपको वहाँ डिग्री नहीं मिल सकती?···एक बार पूछ लीजिए न!···

ल्योरेने आपके लिए पीछेकी पहाड़ीपर एक छोटा-सा घर बनवाना शुरू किया है। आगे और पीछे बरामदे हैं। दो बड़े कमरे और अगर आप खाना बनाना चाहते हैं तो एक छोटा-सा रसोईघर। प्रकाश जितना आवश्यक उतना ही होगा। खिड़कियोंको ज़रूरतसे अधिक महत्त्व नहीं दिया गया। बैठकमें एक बेडनुमा दीवान, एक लम्बा-सा टेबल (जिसपर कितनी भी चीज़ें बिखर गयी हों फिर भी थोड़ी-सी जगह बाक़ी रहेगी), और बहुत ही आवश्यकता हुई तो पुस्तकोंके लिए एक रेक। बहुत-सी चटाइयाँ, चार-छह छोटे-छोटे स्टूल, आपको कठिनाई न हो इसलिए एक आईना और कपड़ोंके लिए आलमारी। ल्योरेका कहना है कि फर्नीचर बढ़ गया तो आदमी बाहर हो जाते हैं। एजवर्थने एक बार कहा था कि एक कुरसी और एक आदमी—इनसे दो आदमी ही मैं अधिक पसन्द करता हूँ।

अप्पाकी पुस्तकपर जो आलोचनाएँ लिखी गयीं उनमें-से दो चुनकर प्रकाशकने भेजी थीं। इस पत्रके साथ भेज रही हूँ। हिबर्ट जर्नलके समालोचकने जो एक शाब्दिक बिन्दु खड़ा कर दिया है वह आपको कहाँतक ठीक लगता है? उसके मतानुसार पुस्तकके मूल प्रमेयको लेकर पुस्तकका नाम 'एक्सपीरियेन्स : ग्रोथ' रखना चाहिए था। 'एक्सपीरियेन्स एण्ड ग्रोथ' नामसे लगता है कि लेखकके लिए 'अनुभव' और 'वृद्धि' दो भिन्न-भिन्न बातें हैं। लेकिन उसका कुछ और ही कहना है। अनुभव और वृद्धि दोनों अलग-अलग स्तरकी प्रक्रियाएँ हैं, उनमें कार्य-कारण सम्बन्ध नहीं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परस्पर अन्योन्य सम्बन्ध है,—लेखकका यह मत पुस्तकके नाममें भी स्पष्ट अभिव्यक्त होना चाहिए। मुझे यह बात थोड़ी-सी ठीक भी लगी। नेचरकी आलोचना ठीक है, पर संक्षिप्त और मैटर-ऑफ़-फैक्ट मालूम हुई।

प्रो० जोशी अगले महीनेसे शिक्षाका पेशा छोड़कर विदेश-मन्त्रालयमें काम करनेके लिए दिल्ली जा रहे हैं। दिखाई देता है कि उनके बहुभाषित्वकी हमारी नयी सरकारको ज़्यादा ज़रूरत है।

अगली बार बीनाको लिखनेके लिए मत भूलिए।

० ० ०

आखिर ल्योरेने निर्णय लिया और जैसा मैंने कहा था, राजम्मा ही आखिर हमारे काम आयी। अब निश्चित हुआ है कि एजवर्थ खेलघर (एजघर' संक्षेपमें) का उद्घाटन लच्छीके मोरकी कहानीके नाचसे होगा। बीना लच्छी बनेगी; ल्योरे बूढ़ी। मोरका रोल आपके हिस्सेमें आया है। लेखन श्री गीत मेरे, निर्देशन ल्योरेका, पार्श्वसंगीत-पार्श्वशब्द राजम्माके। जुलाईमें आपके यहाँ आते ही रिहर्सल शुरू होगी। किसी भी बहानेसे आप यह काम टाल नहीं सकेंगे! नृत्यकी पूरी शिक्षा देनेका प्रबन्ध किया जायेगा। (अब हम सबसे पाला पड़ा है!) वैसे देखा जाये तो मोरको भी नाचना कहाँ आता है? एक पाँव उठाते ही सन्तुलन बिगड़कर नीचे गिरने लगता है, अपने-आपको गिरनेसे बचानेके लिए तुरन्त वह एक पाँव नीचे रख देता है और दूसरा ऊपर उठाता है। फिर इसी तरह····ऐसे ही अनावधिक। (देखनेवाले उसे नाच कहते हैं!) इस प्रयोगका दिन अभी से नोट कर लीजिए: १६ अगस्त, १९४७।

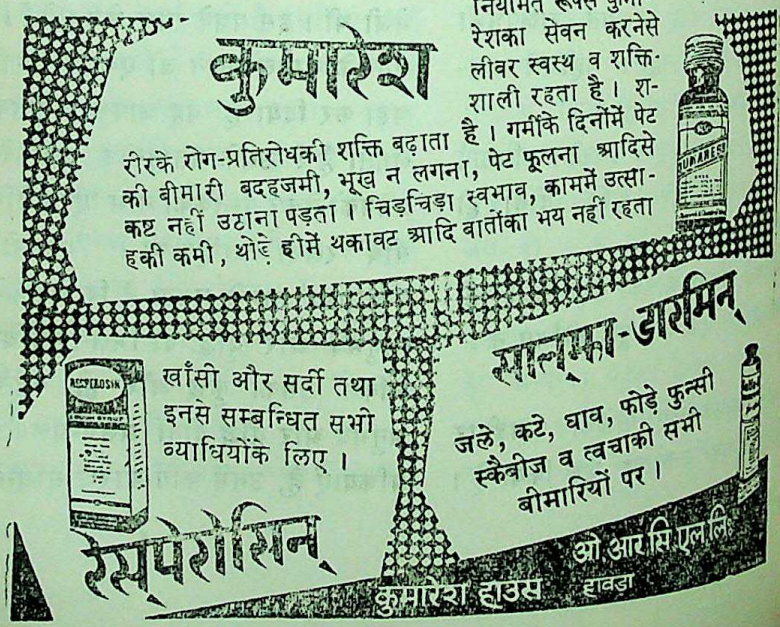

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक प्रश्न

शिवाजी रामदासके शिष्य नहीं थे ?

उमाशंकर
इतिहासके विश्लेषक।

जन साधारणमें प्रचलित किंवदन्तियों, कथाओं, चिटनिस और रामदास के 'बखरों' तथा किनसेड और परसनिस-द्वारा लिखित 'हिस्ट्री ऑफ़ दी मराठा पीपुल' के अनुसार समर्थ रामदास स्वामी, शिवाजीके गुरु ही नहीं अपितु उनके उपदेशक, पथ-प्रदर्शक, सलाहकार, शिक्षक और मराठा साम्राज्यकी नींव डालकर उसे उत्कर्षकी सीमापर पहुँचानेवाले थे। उन्हींकी प्रेरणाओं और प्रयत्नोंसे शिवाजीने असम्भवको सम्भव कर दिखाया था। एक छोटी जागीरको साम्राज्यमें परिवर्तित कर दिया था और आततायी यवनोंके चंगुलसे कराहती जनताको मुक्ति दिलायी थी, स्त्रियोंकी इज्ज़त बचायी थी, धर्मकी रक्षा की थी और भारतीय संस्कृतिका पुनरुत्थान किया था। पर क्या वास्तविकता ऐसी ही थी, क्या रामदास स्वामीके अभावमें शिवाजी इन कार्योंको कर सकनेमें असमर्थ थे, क्या उनका अपना कोई व्यक्तित्व नहीं था—ये प्रश्न विचारणीय हैं।

समस्त मराठी 'बखरों' और इतिहासकारों-द्वारा यह मान्य और प्रमाणित है कि शिवाजीके जीवनपर प्रथम छाप डालनेवाले महासन्त तुकाराम थे। उनकी असाधारण भक्ति, ज्ञान और प्रवचनोंने शिवाजीपर ऐसा प्रभाव डाला था कि एक दिन उन्होंने सारा राज-पाट छोड़कर जंगलका रास्ता पकड़ लिया था। इसकी कथा बड़ी रोचक है।

एक बार कुछ भक्तोंके निमन्त्रणपर तुकाराम लोहगाँव आये और बारी-बारीसे प्रत्येकके घरपर कीर्तन करने लगे। शिवाजीने भी अपने मन्त्रियों और सरदारों-सहित,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन कीर्तनोंमें भाग लिया। कीर्तनोंके मध्य सन्त-द्वारा दिये हुए उपदेशोंने शिवाजीपर ऐसा प्रभाव डाला कि एक दिन उन्होंने जंगल-को प्रस्थान कर दिया और शेष जीवन ईश्वरकी आराधनामें व्यतीत करनेकी घोषणा की। मन्त्रियोंने भरसक समझानेका प्रयत्न किया किन्तु अन्तमें उन्हें निराश होकर लौटना पड़ा। चिन्तित मन्त्रियोंने राजमाता जीजाबाईको सूचना दी। दूसरे दिन जीजा-बाईने तुकारामसे भेंट की। पुत्रके इस आक-स्मिक परिवर्तनकी बात बतलायी और उसे पुनः मार्गपर लानेकी विनती की। तुकारामने आश्वासन दिया और रात तक प्रतीक्षा करने-को कहा। रात्रिमें जब शिवाजी पुनः कीर्तनमें सम्मिलित होने आये, तो सन्तने कर्मकी विशद व्याख्या करके उन्हें पुनः राज-भार सँभालनेका आदेश दिया। शिवाजीने सन्तके चरणोंपर गिरकर अपनी त्रुटिका अनुभव किया, और माताके साथ राजभवनको लौट आये।

पुनः राज-काज चलने लगा। शिवाजी दिन-प्रतिदिन सन्तके व्यक्तित्वसे आकर्षित होते गये और अन्तमें एक दिन अपने एक विशेष पदाधिकारीके हाथ पत्र भेजकर, उन्हें राजभवनमें आनेके लिए आग्रह किया। सम्भवतः शिवाजीको अब सन्तका अलगाव असह्य हो उठा था। पदाधिकारी एक घोड़ा, एक छाता तथा अन्य दूसरे राज्य-चिह्नों-सहित सन्तके सामने उपस्थित हुआ। सन्तने शिवाजीके आग्रहको स्वीकार करते हुए भी राजभवनमें जानेसे इनकार कर दिया। उन्होंने शिवाजीके उत्तरमें जो पंक्तियाँ लिखी थीं, उनमें कुछका अनुवाद इस प्रकार है: (ये पंक्तियाँ इतिहासकार केलुस्करके 'तुकारामकी जीवनी'से ली गयी हैं)—

"योग्य दार्शनिक उसके कौतुकका अनु-भव करनेवाला होता है, किन्तु केवल इस विश्वासोंपर ही उसकी अनुभूति होती है और उसके आदेशोंसे प्रम करता है।

"तुम्हारे पत्रकी लिखावटको देखकर मुझे आभास मिल रहा है कि तुम्हारे अन्दर भी उसी प्रकारके कुछ भाव हैं।

"तुम्हारा शिवा नाम उचित पड़ा है। यह पवित्र नाम है। तुम छत्रपति हो और संसारके संयमोंको व्यवहारमें लानेवाले हो।

"तुम शास्त्रोक्त कर्मों, प्रतिज्ञाओं, कठिन तपस्याओं, गहन विचारों और रहस्यवादके मार्गोंसे गुजर चुके हो।

"तुम मुझसे मिलनेके लिए उत्सुक हो यही है तुम्हारे पत्रका सार।

"श्रीमन्त महाराज, इसका उत्तर यह है और यही हमारा निवेदन भी है।

"सूक्ष्म फल-फूलोंका आहार करके तथा सूक्ष्म वस्त्रोंको शरीरपर धारण करके, हम भस्म लपेटे, जीवन व्यतीत करते हैं।

"हमारे ओठ दुर्बल और शुष्क हैं तथा दूसरोंके सामने दिखलाने योग्य नहीं हैं।

"तुका मित्रवत् स्नेह-सहित निवेदन करता है कि उसे अपने यहाँ बुलानेका विचार त्याग दो।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस उत्तरसे शिवाजीके हृदयमें श्रद्धाकी अधिक वृद्धि हुई और वह तुकारामके अधिक निकट आते गये। फलस्वरूप उन्होंने तुकारामको ही अपना गुरु बनानेका निश्चय किया, परन्तु अनायास सन् १६४९ ई० में तुकाकी मृत्यु हो गयी। शिवाजीके मनकी इच्छा मनमें ही रह गयी।

'शिवदिग्विजय' तथा हनुमान स्वामी-कृत लिखित रामदास स्वामीकी जीवनीके आधारपर शिवाजी और रामदासकी पहली भेंट सन् १६४९में हुई थी। इस भेंटकी कथा कुलकर्ण स्वामीने इस प्रकार दे रखी है—रामदास स्वामीकी साधना और भक्तिकी ख्याति शिवाजीके कानोंमें पड़ी तो उनसे मिलनेके लिए वे अधीर हो उठे। संयोगवश उसी समय किसीने शफलकी उपत्यकामें स्वामीकी उपस्थितिकी सूचना दी। तत्काल शिवाजी वहाँ जा पहुँचे, परन्तु दुर्भाग्यसे कुछ समय पूर्व स्वामी भैरवगढ़ जा चुके थे। शिवाजी भैरवगढ़ आये किन्तु वहाँ भी भेंट न हो सकी। निराश होकर वे प्रतापगढ़को लौट गये। प्रतापगढ़से शिवाजीने महाबलेश्वर-पंचतीर्थ-यात्रा की। महाबलेश्वरके दर्शनोंके उपरान्त वई होते हुए वह महूली आये। यहीं उन्हें रामदासका एक पत्र, जो छन्दोंमें लिखा गया था, शिवाजीको प्राप्त हुआ। उसकी पंक्तियाँ हैं :

"ओ मेरुके समान दृढ़, जनताके सहायक, सुदृढ़ व्यवस्थापक और अप्रतिम बुद्धिवाले!

"ओ उपकारोंका ढेर लगानेवाले, तेरे गुणोंका कोई उदाहरण नहीं है।

"ओ मनुष्यों, अश्वों, गजोंके स्वामी, जल-थलके स्वामी, दुर्गों, नगरों और सिंहासनोंके स्वामी, तूने अपने बलिष्ठ कन्धोंपर इनके भारको वहन कर रखा है।

"तू महान् विजेता है, शक्तिशाली एवं समृद्धिशाली है। पवित्र एवं सर्वगुण-सम्पन्न है तथा एक विवेकी राजा है।

"तेरे कार्योंके सोचने और करनेमें सन्तुलन है, उनमें धार्मिकता और उदारता है तथा सबके प्रति सहृदयताकी विशेष भावना है।

"तू वीर और उदारचेता तथा अपनी वीरता प्रदर्शनमें सदैव तत्पर है। तूने अपनी राजनीतिसे राजाओंके छक्के छुड़ा दिये हैं।

"नारायणने तेरे हृदयमें वास करके तुझे प्रेरणा दी है कि तू पूजा-पाठ, देवी-देवताओं और ब्राह्मणोंकी रक्षा करे।

"असंख्य पण्डित, कवि, वेदाचार्य, तर्कशास्त्री, जिनके ज्ञानका डंका बज रहा है—तेरे दरबारमें फल-फूल रहे हैं।

"इस पृथ्वीपर धर्मकी रक्षा करनेवाला कोई नहीं है। केवल तेरे कारण अभी कुछ अंशोंमें महाराष्ट्रमें धर्म बचा हुआ है।

"तेरे राज्यमें किसी प्रकारकी ईश्वर-निष्ठापर प्रतिबन्ध नहीं है। तेरे गौरवको बधाई है, जो सम्पूर्ण विश्वमें व्याप्त हो रहा है।

'कुछ अत्याचारी वध किये गये हैं, कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काँप रहे हैं और दूसरे दासोंके पात्र हुए हैं। श्री राजा शिवा, तुझे बार-बार बधाई है।

'मैं तेरे देशमें रह रहा हूँ किन्तु तूने मेरे सम्बन्धमें कभी जानकारी नहीं की है। मैं नहीं समझ पाता कि भाग्यके किस रहस्यके कारण तू मुझे भूल बैठा है।

"परन्तु तेरे सलाहकार बुद्धिमान् और कर्तव्यवान् हैं। इससे अधिक मैं और कुछ नहीं कह सकता। धर्म-संस्थापकके रूपमें तू अपने यशको इसी प्रकार बनाये रख।

"राज्य-भारने तेरी बुद्धिको उलझा रखा है। मैं यह पत्र बिना उपयुक्त अवसरके तुझे लिख रहा हूँ। क्षमा करना।"

दूसरे दिन शिवाजी अपने कुछ पदाधिकारियों-सहित शेफल जा पहुँचे परन्तु एक दिन पूर्व रामदास शिंजनवदी स्थित हनुमान-मन्दिरको जा चुके थे। शिवाजी स्वामीके शिष्य दिवाकर गोसावीके साथ शिंजनवदी आये। स्वामीसे साक्षात्कार हुआ। चरण-रज मस्तकसे लगाते हुए शिवाजी खड़े रहे। रामदासने शिवाजीको उलाहना दिया कि उन्हें उपेक्षाकी दृष्टिसे देखा गया है। शिवाजीने क्षमा-याचना की; तदुपरान्त उन्होंने शिष्य बननेकी इच्छा व्यक्त की। रामदासने सहमति दे दी। तत्काल सभी तैयारियाँ हुईं और शिवाजीने विधिवत् गुरु-दीक्षा ली। स्वामीने उनके मनमें मन्त्र फूँक दिये।

यह है थोड़ेमें समर्थ रामदास और शिवाजीकी मुलाक़ात और गुरु-शिष्य बननेकी कथा, परन्तु इसमें सत्यता कितनी है, अब इसपर विचार करना है। सर्वप्रथम शिवाजी को रामदास स्वामीकी जानकारी सन् १६५१ में हुई थी जिसके प्रमाणमें दिवाकर गोसावी के नाम भास्कर गोसावीका पत्र है। ये दोनों ही रामदासके शिष्य थे। पत्रमें इस प्रकार लिखा है: "हम लोग भिक्षा-हेतु राजा शिवाजीके पास गये। उन्होंने पूछा, 'आपलोग कौन हैं और कहाँसे आ रहे हैं?' इसपर हम लोगोंने उत्तर दिया कि हम सब श्री समर्थ रामदासके शिष्य हैं और शफलमें रहते हैं। उन्होंने पूछा कि रामदास कहाँ रहते हैं और मूलरूपसे कहाँके निवासी हैं? हम लोगोंने बताया कि गोदावरी-तटपर स्थित जाम्ब उनका निवास-स्थान है और वर्तमान समयमें शफलमें कुटी बनाकर रह रहे हैं। वहींपर उन्होंने भगवान् रामके एक मन्दिर का निर्माण भी कराया है। मूर्तिकी स्थापना हो जानेपर, उनके आदेशानुसार हम लोग भिक्षा हेतु निकले हैं। इतना कहनेपर राजाने दत्ताजी वकनिसको मन्दिरके व्ययके लिए दो हज़ार पगोदा देनेको लिखा।"

दत्ताजीके पत्रमें साकाकी जो तिथि पड़ी है, उसके अनुसार १३ फ़रवरी १६५९ ई० निकलता है। श्री देवके 'दास-बोध' के संस्करणकी भूमिकामें यह पत्र उद्धृत है। अतः इस प्रामाणिक पत्रसे वह निश्चित हो जाता है कि शिवाजीको रामदास स्वामीके सम्बन्धमें प्रथम जानकारी सन् १६५९ ई० में हुई थी।

अब दूसरा प्रश्न है दोनोंके मिलनेका।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस सम्बन्धमें मैं यहाँ एक और पत्र उद्धृत कर रहा हूँ जो दिवाकर गोसावीके उत्तरमें केशव गोसावीने लिखा था : "मैं आपके लिखनेका आशय समझता हूँ। आपका यही तात्पर्य है न कि राजा शिवाजी भोंसले वर्षसे मिलने आ रहे हैं ? यह उनका प्रथम आगमन है...मैं समझता हूँ, जैसा आप लिख रहे हैं कि वहाँपर प्रबन्ध करनेवाला कोई नहीं है। वहींके लोगोंको लगाकर जहाँतक उसके प्रबन्ध करायें।...।" चैत्र मास साका १५४ अर्थात् अप्रैल सन् १६७२ ई०।

इस पत्रसे रामदास और शिवाजीकी भेंटका काल सन् १६४९ न होकर सन् १६७२ सिद्ध होता है। इसके अतिरिक्त यदि हम उक्तपत्रके उक्त पत्रपर सूक्ष्म दृष्टि डालें तो स्पष्ट हो जायेगा कि उसे १६७२ ई० के आस-पास ही लिखा गया होगा। कारण, सन् १६४९ में शिवाजीके उत्कर्षका श्रीगणेश था। रामदासकी पंक्तियोंके अनुसार शिवाजी-की उस समय तक वह ख्याति नहीं मिली थी और न उन अत्याचारियोंका ही वध हुआ था, जिनका उन्होंने पत्रमें संकेत दे रखा था। उनका संकेत अफ़ज़ल खाँ, शाइस्ता खाँया अन्य मुग़लोंकी ओर था और ये सभी घटनाएँ १६५९ के बादकी हैं। तीसरी बात जो बहुत महत्त्वपूर्ण है, वह उन स्थानों-के सम्बन्धमें है। शफल, करहद, वई, महूली आदि स्थान, जिनकी ऊपर चर्चा हो चुकी है, सन् १६७२-७३ में शिवाजीके अधिकारमें आये थे। ऐसी स्थितिमें, उन स्थानोंमें शिवाजीका जाना तथा शफलमें दर्शनोपरान्त गुरु-दीक्षा लेना कैसे सम्भव हो सकता था। साथ ही यह भी कहा गया है कि शिवाजीके शिष्य बननेके दूसरे-तीसरे वर्ष बाद ही, परली दुर्गमें—जिसे बादमें 'सज्जनगढ़'के नामसे पुकारा गया—रामदास स्वामीका स्थायी निवास-स्थान बना। परन्तु ऐतिहासिक तिथियोंके अनुसार इन दोनों स्थानोंपर शिवाजीका आधिपत्य १६७२ ई० में हुआ था। अतएव शिवाजीके जीवनमें समर्थ रामदासके आगमनका काल १६४९ नहीं वरन् १६७२ के आस-पासका है। दिवाकर गोसावी-द्वारा लिखित पुत्र भैरव गोसावीके नामका जो पत्र उनके वंशधरोंसे प्राप्त हुआ है, उसके अनुसार भी शिवाजीने सन् १६७२ के आस-पास ही शिंजनवदीमें गुरु-मन्त्र लिया था। अन्तमें यह भी कह देना अनुचित न होगा कि सभासद्का 'बखर', जो शिवाजीकी मृत्युके चौदह वर्ष बाद ही लिखा गया है, रामदास स्वामीका नाम तक नहीं लेता है।

अतः रामदास स्वामीको अनुचित श्रेय देकर, शिवाजीकी अद्वितीय वीरता, कर्तव्य-परायणता, न्यायप्रियता तथा असम्भवको सम्भव बनानेकी क्षमतापर धब्बा लगाना है, जब कि शिष्य बननेके आठ वर्ष बाद ही ५ अप्रैल १६८० ई० में उनकी मृत्यु हो गयी थी।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माध्यम

हिन्दी साहित्य सम्मेलनका मासिक

सम्पादक : बालकृष्ण राव

- 'माध्यम' हर अंकमें 'सहवर्ती साहित्य' के स्तम्भमें किसी एक हिन्दीतर भारतीय भाषाकी चुनी हुई समसामयिक रचनाएँ प्रस्तुत करता है।
- 'विवेचना' में प्रकाशित 'चारुचन्द्रलेख', 'समय और हम', 'अपने-अपने अजनबी', शमशेरका काव्य, 'यह पथ बन्धु था', 'एक साहित्यिककी डायरी' तथा 'हम विषपायी जनमके' की समधीत विवेचना और अन्य स्तरीय समीक्षाओंकी चर्चा आप तक पहुँची ही होगी।
- 'माध्यम' के विचार-प्रधान और विचारोत्तेजक लेखोंको आपने पढ़ा ही होगा।
- कविताओं, कहानियों, टिप्पणियोंके चयनमें 'माध्यम' की रुचि और स्तरसे आपका परिचय हो ही चुका है।
- 'माध्यम' का आग्रह है, न केवल आप इसे अवश्य पढ़ें, इसपर अपनी राय भी अवश्य भेजें।

मूल्य : एक प्रति १.००; वार्षिक १०.००

सम्पादकीय कार्यालय : पो० बॉ० सं० ६०, इलाहाबाद।

व्यवस्थापकीय कार्यालय : हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी मन्त्रालय तथा कुछ सुझाव

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'
वरिष्ठ पत्रकार, चिन्तक, विचारक।

हिन्दी-मन्त्रालय :

१९५० में यह स्वीकार करके भी कि १९६५ में हिन्दी पूरी तरह अँगरेजीका स्थान ले लेगी, हमारी लोकप्रिय सरकारने हिन्दीके लिए कुछ नहीं किया और जो कुछ किया वह इस तरह कि हिन्दीका विरोध उससे बला, पनपा, प्रचण्ड हुआ। ईमानन हिन्दी वालोंको इसपर न नाराज़ होनेका अधिकार है न शिकायत करनेका, क्योंकि इन वर्षोंमें हिन्दीवालोंने भी अपने कर्तव्यका पालन नहीं किया। हम हिन्दीवाले और सरकार समान रूपसे उस स्थितिके लिए ज़िम्मेदार हैं, जिसमें आज हिन्दी फँसी है।

प्रश्न यह है कि अब क्या हो ? उत्तर है कि जो अभीतक नहीं हुआ, अब होना चाहिए। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन-द्वारा आयोजित विशेष हिन्दी-सम्मेलनमें अध्यक्ष श्रीमान् सेठ गोविन्ददासने सुझाव दिया है कि केन्द्रीय सरकार राष्ट्रभाषा हिन्दीके विकास एवं उन्नयनके लिए अविलम्ब पृथक् हिन्दी-मन्त्रालय स्थापित करे।'

पहली बात तो यह है कि जो लोग यह समझते हैं कि हिन्दी-मन्त्रालय बननेसे हिन्दी-को अपना स्थान प्राप्त करनेमें कोई चमत्कारी मदद मिलेगी, वे स्वप्नदर्शी हैं। शिक्षा-मन्त्रालय क़ायम है, पर शिक्षाकी दुर्दशामें कोई कमी नहीं हुई। प्रश्न तो तीव्र इच्छाका है, दृढ़ निश्चयका है। वह नहीं है, तो मन्त्रालय क्या करेगा ?

दूसरी बात है यह कि प्रस्ताव एकांगी है और हिन्दीके पक्षको कमज़ोर करता है। बरसों हिन्दीवाले उर्दूसे कुश्ती लड़ते रहे और अब भी ऐसे बुद्धिमानोंकी कमी नहीं, जो उर्दू-विरोधको हिन्दीका समर्थन समझते हैं। हम प्रश्नको पूरा समझकर ही उसका समाधान खोज सकते हैं। प्रश्नका स्वस्थ और समग्र रूप यह है कि भारतकी भाषाओंको दबाकर अँगरेज़ी बैठी है और भारतकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषाओंको उसे हटाकर अपना स्थान प्राप्त करना है। इन भाषाओंको अँगरेज़ीसे दुश्मनी नहीं है और जैसे अँगरेज़ भारतसे हटकर अपने स्थानमें पहुँच गये हैं, वैसे ही अँगरेज़ी भी अपने स्थानमें रह सके, यही उनकी माँग है। सभी यह स्वीकार करते हैं कि अँगरेज़ीके लिए भारतमें स्थान है, पर न मातृ-भाषाके रूपमें, न राष्ट्रभाषाके रूपमें; निश्चय ही एक श्रेणी भाषाके रूपमें। तो प्रादेशिक भाषाएँ अपने-अपने प्रदेशोंमें अँगरेज़ीकी जगह अपना स्थान ग्रहण करें और उन सब प्रादेशिक भाषा-भाषियोंके बीच सम्पर्क भाषाके रूपमें अँगरेज़ीकी जगह हिन्दी प्रतिष्ठित हो।

इस स्थितिमें हिन्दीका नहीं, प्रश्न भारतीय भाषाओंका है और जो लोग इसे तमिल, हिन्दी, बँगला आदिके रूपमें उठाते हैं, वे नीम हकीमकी तरह इस प्रश्नके प्राणको खतरेमें डालते हैं। मन्त्रालयकी माँग जिन्हें आकर्षित करती है, उन्हें हिन्दी-मन्त्रालयकी नहीं, भारतीय-भाषा-मन्त्रालयकी माँग करनी चाहिए, क्योंकि प्रादेशिक भाषाएँ अँगरेज़ीसे अपना स्थान छीन लें तो हिन्दीसे लड़नेका दम अँगरेज़ीमें रह ही कहाँ जायेगा ?

● नाहक़ मिलन :

एक नयी चीज़ पढ़नेको मिली—'नाहक़-मिलन।' इस शब्दके आविष्कारक तो हैं गान्धी-तत्त्वज्ञानके आचार्य दादा धर्माधिकारी, पर परिचय दिया लखनऊके डॉ० दरबारी लाल अस्थानाने, एक गोष्ठीमें। उन्होंने कहा—"हम लोग सदा किसी विशेष उद्देश्य और कार्यक्रम (होली-ईद-मिलन आदि) को लेकर एकत्रित होते हैं, केवल स्वतन्त्र विचार-विमर्शके लिए इकट्ठे नहीं हो पाते।"

इस बातकी व्याख्या की थी अक्षयकुमार करणने—"जीवनमें उद्देश्यपूर्तिने स्वार्थका रूप ले लिया है। हमें ऐसे अवसरोंकी तलाशमें रहना चाहिए, जब हम बिना किसी प्रयोजनके मिल-बैठ सकें और एक दूसरेके निकट आ सकें।"

बिना उद्देश्य और मतलबकी गपशप मनुष्यकी अल्हड़पनकी वृत्तिका पोषण करती है। इस पोषणसे मनुष्यमें प्रसन्नताका गुण बढ़ता है और गीतामें लिखा है—'प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते'—प्रसन्नतासे सब दुःखोंका ह्रास हो जाता है। विख्यात जीवन-शास्त्री श्री लिन यू तांगका तो परामर्श है कि 'जब तुम अपने मित्रोंसे बात-चीत करने बैठो, तो मेज़पर रखी टाइमपीसकी मुँह दीवारकी तरफ़ कर दो, वरना वह कम्बख्त समयकी याद दिलाती रहेगी और बातोंका मज़ा किरकिरा हो जायेगा।'

आवश्यक है कि हममें गपशपकी, नाहक़ मिलनकी वृत्ति पनपे, पर इस सावधानीके साथ कि हम गप्पी बनकर प्रमादी न हो जायें!

● निराशाका धुआँ न उड़ायें :

हमारा देश अविकसित देशोंकी श्रेणीमें है। इस स्थितिमें बिना कहे भी यह बात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्पष्ट है कि यहाँ कमियाँ हैं, कमजोरियाँ हैं, अभाव हैं, दुर्दशा है और जब ये हैं, तो मंचपर और प्रेसमें इनकी चर्चा होगी ही। प्रजातन्त्री देशमें तो इनका होना स्वाभाविक है, उचित है आवश्यक है, पर प्रश्न यह है कि इस चर्चाकी शैली क्या हो ?

इस प्रश्नमें ही अन्तर्निहित है कि इस चर्चाके दो भेद हैं। पहला स्वस्थ, दूसरा अस्वस्थ। चर्चाका, आलोचनाका प्रजातन्त्री का स्वस्थ रूप यह है कि उस चर्चासे उन कमियों-कमजोरियोंको दूर करनेकी प्रेरणा मिले, राह मिले। अस्वस्थ रूप यह है कि उससे निराशा उपजे, राह न दीखे—कहें, सूझे कि राह है ही नहीं। इस स्थितिमें विचारोंकी रिक्तता उपजती है, जिसमें जन्म लेती है अराजकता और अधिनायकता। दुख है कि आजकी चर्चाका यही रूप है।

विदेश-यात्रासे लौटकर श्रीमती इन्दिरा गांधीने एक बार कहा था कि एक विदेशी राजनीतिज्ञने मुझसे पूछा था कि भ्रष्टाचारकी जितनी चर्चा आपके देशमें है, यदि उतना ही भ्रष्टाचार वहाँ है, तो फिर उन देशोंको, जो उनकी सहायता करते हैं, सहायताका क्रम बन्द कर देना चाहिए, क्योंकि जिस देशमें इतना भ्रष्टाचार हो, उसके भविष्यका कोई प्रश्न ही नहीं उठता !

हिन्दीके नये, पर अतिविशिष्ट साप्ताहिक 'दिनमान' की यह टिप्पणी उद्बोधक है—भेड़िया आया, भेड़िया आया—प्रतिपक्षियों और स्वार्थ साधकोंकी इस गुहारसे, जनताकी दिक्क़तों और सरकारकी कमियोंको बढ़ा-चढ़ाकर पेश करनेसे निराशाका, अनास्थाका जो आलम बनता जा रहा है, वह यदि अबाध गतिसे बढ़ता रहा, तो देशका आत्मबल टूट जा सकता है। क़ीमतें चढ़ गयी हैं, आर्थिक विकासकी गति धीमी है, नेतृत्व कमजोर है तो इसके लिए और आत्मविश्वास चाहिए, न कि जो है उसे भी खो दिया जाये। नकारात्मक प्रचारका नतीजा नकारात्मक ही हो सकता है। राष्ट्रका हित साधनेके लिए स्वस्थ परम्पराओं और स्वस्थ दृष्टिकोणकी ज़रूरत है।"

यू० एन० ओ० की सभामें बोलीवियाके प्रतिनिधिने एक मार्केका वाक्य कहा था—"समस्या चाहे कितनी भी गम्भीर और कठिन हो, हम उसके हलकी आशा नहीं छोड़ सकते।" हमारी राष्ट्रीय आलोचनाको भी यही दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। इस दृष्टिकोणका एक व्याकरण भी उन्होंने इसी भाषणमें दिया—"रचनात्मक वातावरण तैयार करनेके लिए यह आवश्यक है कि भावात्मकको अभावात्मकसे अलग किया जाये।"

क्या हमारा देश इतना हीन है कि उसमें कुछ भी प्रशंसनीय नहीं ? क्या स्वतन्त्र भारतमें हुआ नव-निर्माण इतना नगण्य है कि हम उसे देखें, तो ज़रा भी आशावान न हों, उत्साहित न हों और फूट-फूटकर रोने ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगें ? कड़वेसे कड़वा और कड़ेसे कड़ा आलोचक भी इसपर हाँ न कहेगा, तो स्पष्ट है कि आलोचनाकी स्वतन्त्रताका हम उपभोग करें, पर उपयोग भी कि कमियों-कमजोरियों-पर चोट मारें, जमकर चोट मारें, पर निराशाका ऐसा धुआँ न फैलायें कि राष्ट्रीय जीवन ही घुटकर दम तोड़ने लगे !

● पात्रताका प्रश्न :

क्या आलोचनामें पात्रताका भी प्रश्न है ? इस प्रश्नका व्याख्यात्मक उपप्रश्न यह है कि क्या हरेकको आलोचना करनेका अधिकार है ? इस सम्बन्धमें बहुत ही महत्त्व-पूर्ण बात यह है कि आलोचनापर सम्मतिका दैत्य सवार हो गया है, इसीसे यह प्रश्न-उपप्रश्न जन्म लेता है। ऐसा न हो, तो आलोचनाकी पात्रताका प्रश्न ही न उठे; क्योंकि अपात्र तो आलोचना कर ही नहीं सकता।

हम इसे समझें। आलोचनामें दो शब्द हैं—आ और लोचन। आ का अर्थ है सम-न्तात्—चारों तरफ़ और लोचनका अर्थ है देखना। इस तरह आलोचनाका अर्थ है—ऊपर, नीचे, बाहर, भीतर, चारों ओर देखना। तो आलोचक वह, जो गुण-दोष, हानि-लाभ, देश-काल, सबको देखकर राय दे। यह काम अयोग्य कहाँ कर सकता है ? सम्मतिमें यह बन्धन नहीं है, क्योंकि वह विवेकपर नहीं, पसन्द-नापसन्दपर आश्रित है। आजका चमत्कार यह है कि हर आदमी देता है सम्मति, पर मानता है आलोचना और इसीसे एक बड़ी उलझन पैदा हो रही है।

क्या दोनोंके बीच कोई मोटी रेखा खींची जा सकती है ? हाँ, वह रेखा है सुझाव। जो चारों ओर—गुण-दोष, हानि-लाभ, देश-काल, पात्र, औचित्य सबको देखकर आलो-चना करेगा, उसकी बातमें विरोध होगा, तो सुझाव भी होगा कि यह कार्य जिस तरह किया गया, उसमें यह हानि है और यह कार्य इस तरह किया जाता, तो इसमें यह लाभ होता। इसीका नाम है रचनात्मक आलोचना और कहें कि रचनात्मकता ही आलोचनाकी पात्रता है। हम सब अपनी आलोचनाको इस कसौटीपर कसें।

● सुझाव कैसे हैं ?

जब हमें किसीकी बात पसन्द न हो, हम उसे ग़लत समझते हों, तो अपने सुझाव कैसे रखें ? यह प्रश्न असलमें शिल्पका, कलाका विधानका है।

गान्धीजीने कुछ लोगोंके साथ मिलकर एक कार्यकर्तासे कोई काम करनेको कहा। कुछ दिन बाद कार्यकर्ताने कहा—'वे आदमी ठीक नहीं हैं, मैं उनके साथ काम नहीं कर सकता।' सुनकर गान्धीजीने कहा—'काम किये जाओ।' दो-तीन दिन बाद गान्धीजीसे कार्यकर्ताने फिर वही बात दोहरायी और गान्धीजीने फिर वही कहा—'काम किये जाओ।' कार्यकर्ताने कहा—'बापू, मैं यह समझाना चाहता हूँ....'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीचमें ही गान्धीजी भभक पड़े—समझना चाहते हो, पर मैं नहीं समझ सकता, क्योंकि मैं समझना नहीं चाहता !' मतलब यह कि पहला सुझाव ठीक है। यह तरीक़ा वहीं चलेगा, जहाँ एक की दूसरेसे महत्ता स्वतन्त्रिय और दोनोंके द्वारा स्वीकृत हो और सहयोगमें अथाह आत्मविश्वास हो।

एक दूसरा संस्मरण है। एक श्रद्धालु कार्यकर्ताने गान्धीजीसे पूछा—'आप रचनात्मक कार्यक्रमको स्वराज्यका प्राण बताते हैं, पर वह कांग्रेसका जीवन-धर्म बना नहीं पाये, तब क्या स्वराज्य एक कल्पना ही है ?'

गान्धीजी बोले, 'एक बार तिलकसे एक विद्वान्ने कहा कि आपने अपनी वकालत और तन्दुरुस्ती चौपट कर ली, पर अँगरेज हिले नहीं। फिर आपके कार्यका क्या महत्त्व है ? तिलकने उत्तर दिया, परीक्षामें नम्बर देनेकी यह पद्धति ठीक नहीं। तुम यह देखो कि मेरे पास क्या साधन हैं ? उनका मैंने कैसा उपयोग किया है ? जो परिणाम निकले उसके नम्बर दो।' और गान्धीजी चुप हो गये, पर कार्यकर्ताको उत्तर मिल ही गया था। ■■

हिन्द पॉकेट बुक्स

द्वारा प्रकाशित

संसार के श्रेष्ठ उपन्यास

संघर्ष	चेखव	युद्ध और शान्ति	टालस्टाय
याद	पर्ल बक	दूसरी ज़िन्दगी	,,
प्रेम या वासना	टाल्स्टाय	पहला प्यार	तुर्गेनेव
प्यार की ज़िन्दगी	,,	सागर और मनुष्य	अर्नेस्ट हेमिंग्वे
इन्सान या शैतान	स्टीवेन्सन	रहस्यकी कहानियाँ	एडगर एलन पो
प्रेमिका	लिन यूताङ्	जुआरी	दास्तावस्की
एक अनजान औरत का खत	स्टीफेन ज़िवग	पेरिस का कुबड़ा	विक्टर ह्यू गो
		ऊँचे पर्वत	जान स्टेनबेक
		एक मछुआ : एक मोती	,,

प्रत्येक का मूल्य एक रुपया

हिन्द पॉकेट बुक्स, जी० टी० रोड,
शाहदरा, दिल्ली–३२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Satisfying the textile industry's appetite for oil...

...Caltex serves all consumer needs for petroleum products in every part of the country... **you're never far from the Caltex Star.**

CALTEX (INDIA) LIMITED

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समीक्षा

नयी कहानी : अण्डर-स्टैण्डिंगकी वांछा

(सन्दर्भ : नयी कहानियाँ, माया, केन्द्र, मराल और ज्ञानोदयके विशेषांक)

• • • • • •

'अण्डर-स्टैण्डिंग', 'कन्सेशन' और 'समझौता'—तीन शब्द···सम्पर्कोंकी तीन स्थितियाँ··· तीन अलग-अलग अनुभूतियाँ, किसी व्यक्तिके अस्तित्वके भीतर क्या है, उसे जानकर कोई अपने और उसके निजत्वका एक रूप निश्चित कर लेता है तो स्थिति है—अण्डर-स्टैण्डिंग। कन्सेशन बनानेमें रियायत देने या रहम करनेवाला कुछ लगता है, और समझौता करने या सौदा करनेमें तो मैं कोई आधारभूत अन्तर नहीं समझता।

मोहन राकेशकी 'सेफ़्टी पिन'से ही बात चलना सेफ़ रहेगा। इस कहानीके पात्रोंके आपसी सम्पर्क अण्डर-स्टैण्डिंग कहलायेंगे या हुए और? चादरा कन्धेपर डालकर यूनानी शहन्शाहके अन्दाज़में कहें या राजेन्द्रीय ढंगपर बीचकी बात, इतना तो है ही कि लगभग सभी पात्रोंकी आपसी अण्डर-स्टैण्डिंगकी बातसे इनकार नहीं किया जा सकता। हाँ, कहानीके 'मैं'की स्थिति ज़रूर अखरती है। क़सूर चाहे उसका हो या धोबीका या किसी औरका, बहरहाल ड्रिंक-पार्टीमें जाते समय उसकी पतलूनके बटनोंके अन्दरका अस्तर तो उधड़ ही जाता है, और वह सेफ़्टी पिन खरीदकर अस्तरको भीतरसे टाँक लेता है! सुदर्शनके कमरेके फ़र्शपर कार्पेटका कोई निशान न होते हुए भी उसे यह क्यों महसूस होता है कि कोई चीज़ वहाँसे हटायी गयी है? और फिर क्यों उसके हाथ अपनी पैण्टकी फटी जेबोंके सुराख टटोलने लगते हैं? सब पात्रोंकी उन्मुक्त मुसकानोंके बीच भी उसे रह-रहकर पिन क्यों चुभ उठते हैं? क्या सुदर्शनकी अनुपस्थितिमें उसकी पत्नी-द्वारा शराबका पेग ऑफ़र किये जानेके कारण? या फिर सारे मर्द और औरतोंको पीते, खुलते, खिलखिलाते देखकर? कि यह जानकर कि मेजर सिंहकी पत्नी उम्मा सुदर्शनकी पूर्व प्रेमिका थी, जिसके सुदर्शनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अलावा और भी कई मित्र थे और जो सुदर्शनसे ही अपने सब प्रेमियोंके बारेमें बहस किया करती थी, और जिसने अब तीसरी शादी की है ?

'सेफ़्टी पिन'के 'मैं'की असली चुभन उसकी अपनी ही हीन-भावना है। और इस हीन-भावनाका कारण चाहे कोई मानसिक ग्रन्थि हो चाहे अर्थाभाव—बहरहाल, राकेश-की संवेदनाका स्तर भले ही यशपाल और अश्कवाला हो, पर देखनेका अन्दाज़ और उसे पेश करनेकी शैली जरूर नयी है।

कमलेश्वरकी 'फ़ैसला'वाली संवेदनाका स्तर भी नया है और शैली भी। जयकरन और सूरजभानका हिसाब भले ही कौरवों और पाण्डवोंके कालसे चुकता-चुकाता चला आ रहा है और उनके चुकानेका ढंग भी चाहे महाभारतके युद्ध-जैसा ही है, मगर युद्धके बाद युद्धसे फ़ैसला न हो पानेका एहसास जगाकर कमलेश्वरके घायल जय-किरन और सूरजभान जब गुलाबो वेश्यापर ही फ़ैसला छोड़ निश्चिन्त हो सो जाते हैं, तब साफ़ लगने लगता है कि हम महाभारत-कालमें नहीं, आजके युगमें हैं। यही बोध कर और करा देनेकी फ़ैसलाकुन स्थिति नयी संचेतना है। जयकिरनके दर्दके कारण उसके रक़ीब सूरजभानका कराह उठना ही वह संवेदना है जो पुराने 'सन्तों'में नहीं थी। धारके खिलाफ़ पानीकी सतहपर चलनेवाले जलकीटों और नसोंकी तरह पानीमें लपकने-वाले सिवारोंमें जितना फ़र्क़ होता है, वही फ़र्क़ कमलेश्वर और उन 'सन्तों'में है। सम्पर्कोंके त्रिकोणात्मक 'ज्यामितीय हिसाब' का भुगतान करनेके लिए आज त्रिकोणके कोण खुलकर १८० डिग्रीवाली सीधी रेखा बन गये हैं, जिसमें तीनों कोण कुछ इस तरह एक हो गये हैं कि अलगाव दूरत्व ही नहीं रह गया।

सम्पर्कोंके 'हिसाब-किताब'में जरूर कहीं-न-कहीं गड़बड़ी छूट गयी है', इस तथ्यकी तरफ़ 'लौटते हुए' राजेन्द्र यादवने अपनी कहानीमें दुकानकी मालिक मृदुला और उसके मुलाज़िम चोपड़ाके बीचके बहुत-कुछ को इतनी बारीकी परन्तु सादगी और नपे-पनके साथ कह डाला है कि मृदुलाकी मोटर के क्लचके साथ ही पाठकके दिमाग़का क्लच भी खिंच जाता है, और उसे लगने लगता है कि 'आस-पास बहुत-बहुत खाली हो गया है ···जैसे बहुत दिनों बाद बड़े-से बिस्तरपर अकेले सोते हुए लगता है···अब कहीं हाथ नहीं अटकता···'।

'उच्चाटन'में रेणुने बिहारके जिस क्षेत्र से गाँवका जीवन समोया है, उसके लिए रामविलास, उसकी पत्नी झुमकी और झुमकीके प्रेमी शिवधारी-जैसे पात्रोंका पार-स्परिक सम्पर्क-बोध भी एकदम नयी तरह का है। अन्तमें शिवधारीके प्रति झुमकीका रवैया और पत्नीके रोमांसकी बात विधुरका पति-द्वारा फिरसे एड्जस्टमेण्ट कर लेनेकी बात भी बदलते हुए नैतिक मूल्योंकी ओर स्पष्ट इंगित है। साथ ही, आजके एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभिजित पति-पत्नी तकमें उत्पन्न हो आयी 'अण्डर-स्टैण्डिंग' को भी चित्रित करता है। सम्पर्कोंका आधार तो आदमी है ही मगर 'उसी आदमीकी तलाश' ('माया'का समकालीन कहानी विशेषांक) सम्पादकीय नोटमें ही ज्यादा लगी है, आगेके डेढ़ सौ पन्नोंकी कहानियों और 'विशेष लेखों'में इस। 'कहानीपर बात-चीत' करते हुए इस अंक-विशेषके सम्पादक-विशेष एक बात-विशेषपर बल-विशेष देते हुए यह निर्धारित करना चाहते हैं कि 'आदमी सिर्फ़ सम्बन्धोंमें आदमीको जानता है या जान सकता है··· इसकी सम्पूर्ण विच्छिन्नता और बिखरावके बावजूद समाज एक अर्थसे अलंकृत है···नयी पूँजीवादी अर्थ-व्यवस्थाने हमारे समाजके पुराने सम्बन्ध-सूत्रोंको जर्जर कर दिया है, पर क्या इतनी अर्थवत्ता नये लेखकको प्राप्त है?' सच तो यह कि ऐसे दुराग्रही प्रश्न हक़ीक़तको नकारनेकी कोशिश-भर हैं, समाजको अर्थसे अलंकृत करनेके लिए ऐसे सवाल ये नहीं करते, बल्कि 'नये' के मुक़ाबले 'समकालीन' का तम्बू गाड़नेकी ग़रज़से करते हैं। 'समकालीन कहानी' (नारेकी उम्रके लिहाजसे) नयी चीज़ है। तो ज़ाहिर है इसमें नया भी 'नयी' की अपेक्षा कुछ अधिक समकालीन होनी चाहिए थी। पर है वह जो 'नयी कहानी' बरसों पहले घिसी-पिटी समझ छोड़कर आगे बढ़ गयी थी। पूँजीवादी अर्थ-व्यवस्थाके फलस्वरूप जर्जर हुए सम्बन्धोंके सूत्र तो नये कहानीकार बरसों पूर्व पकड़कर पहचान चुके थे, तथा चीन्हकर उन्हें नंग कर चुके थे। अब वे अपने चिन्तनके क्षेत्रमें नये-नये कोने नाप रहे हैं। मोटे तौरपर विच्छिन्न हुए सम्पर्कोंकी भीतरी परतों तककी टोह लेने लगे हैं। इन परतोंकी महीन तहोंको उघाड़कर नया कहानीकार चाँदीके वर्कको तरह मुरब्बोंपर लगाकर ताक़तका कोई कुश्ता नहीं परोस रहा, क्योंकि वह यह भ्रम झटक चुका है कि साहित्य-सर्जक कोई हकीम या सर्जनकी नस्लका जीव होता है। हकीम अगर वह है भी तो सिर्फ़ वही जो केवल बीमारीकी इलामतें देखकर रोगका निदान-भर कर देता है।

इसके अलावा, नया कहानीकार तलाशमें है—आदमीके लिए, आदमीकी हैसियतसे, आदमीकी ओरसे, आदमी, यानी हर आदमी। 'सही' या 'ग़लत' की चिप्पियाँ लगाकर वह आदमीकी तौहीन नहीं करता। जबकि तथाकथित समकालीन कहानीके प्रणेता सिर्फ़ 'सही आदमी' की तलाशमें हैं। उनके कथनानुसार सही आदमी वह होगा जो 'हमारे समाजके सामने आईना बन जाये'। यानी, आदर्श आदमी! यानी, पुराणयुगीन युग-नायक अथवा हदसे हद प्रेमचन्दीय आदर्श-पुरुष! यानी, उसी नस्लके किसी आदर्श और सही आदमीकी तलाश! समय तो इनकी दृष्टिमें 'अलगसे कुछ नहीं, महज़ एक संज्ञा है!' समकालीन भी तो फिर अलगसे 'कुछ नहीं' ही हुई!

जो हो, इस अंकमें कुछ कहानियाँ तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छी हैं ही, मलीन, इसराइलकी 'मुस-कान', भीष्म साहनीकी 'यादें', अमरकान्तकी 'लड़कीकी शादी', मगर ये कहानियाँ हर अर्थमें 'नयी' कहानियाँ ही हैं। अंक सन्तुलित नहीं हो पाया, क्योंकि घटिया कहानियों और बोझिल लेखोंने सन्तुलन बिगाड़ दिया है। यशपालकी 'शुरफ़ा' और निर्गुणकी 'ग़लती'-जैसी भरतीकी चीज़ें अधिक हैं, रही बात चर्चाओं-परिचर्चाओं तथा नामवरकी '…शुरूआत' की, तो इन सबको देखकर यही कहनेपर मजबूर होना पड़ता है कि इस विशेषांकका नाम भी 'नयी कहानी-विरोधांक' होना चाहिए था।

'केन्द्र'की बात कहें तो यह कि किसी भी लिटल मैगज़ीनके कथा-विशेषांकमें एक साथ तीन कहानियाँ प्रथम श्रेणी निकल जायें तो यह बहुत बड़ी उपलब्धि है। 'केन्द्र' के सम्पादकको ही इस उपलब्धिका श्रेय जाता है। सुदर्शन चोपड़ाकी अब तककी कहानियोंमें सशक्ततम रचना 'जड़ें' भी इसी अंकमें है, शैलेश मटियानीकी बहुचर्चित कहानी इब्बू मलंग' को भी इसीमें स्थान मिल पाया (बक़ौल शैलेश, और किसीने इसे छापनेकी हिम्मत नहीं की !), पानू-खोलियाकी भी सबसे सशक्त रचना केन्द्रवाली ही कही जा सकती है।

'जड़ें' कहानीके पात्र जंगबहादुर और उसके नाई-परिवारके बीच टूटे हुए सम्पर्क-सूत्र; जंगबहादुर तथा तत्काल विधवा हुई पड़ोसिन कम्पाउण्डरनीके बीच जुड़ते हुए रिश्तेके रेशे; सम्पर्कोंका संवेदनात्मक एहसास हो आते ही नाई होनेकी हीन ग्रन्थिका घुल जाना तथा अपने अस्तित्वके नये रूपकी सार्थकता समझमें आना—यह सारीकी-सारी प्रक्रिया क्या 'अण्डर-स्टैंडिंग' की प्रक्रिया नहीं ?

'मराल' के बंगला नवलेखनांककी चर्चा करना यद्यपि इस लेखके लिए अनिवार्य नहीं था, परन्तु चिन्तनात्मक धरातलपर हमारे कथा-जगत्में भी कुछ इस तरहकी लहर लौटती दीख रही है, इसलिए उल्लेख करना आवश्यक हो आया है।

निष्काम कर्मवाली बातका अर्थ आज है—भोग। तनकी तपनको तनके ताल ठण्डाना ! इसीलिए शायद चन्द अतिबौद्धिक युवक हर कहीं मूल्यहीनता और भूख-ही भूख देख पा रहे हैं ! वे देखते हैं कि फ़र्श पर उकड़ू बैठे हुए 'बॉक्स-आफ़िस' लेखक निरामिष पाठ्य पुस्तकें और विवाहित आनन्द लिखते हैं ! उन्होंने उस बूढ़े बाबूको देखा है जो सत्रह प्राणियोंके पूरे परिवारके साथ एक मात्र कमरेमें सोया हुआ है, और जो रात-रात-भर अपनी बेटी और पत्नीके साथ खाँसता रहता है ! कलकत्ता महानगरके 'भूखे' युवकोंने अपने बुद्धिजीवी लेखकोंको आत्महत्या करते देखा है ! और देखा है कि ईश्वर हर तरफ़ पीब और सड़े हुए माँसके टुकड़े उगल रहा है…'मराल' के इस अंकमें 'एबार अदिति आमि' (सम्पादकीय), 'विद्युतचन्द्र पालके सम्बन्धमें कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आजकी बातें', 'इस दशककी कहानी', तथा देवेनका कुत्ता और अमल' आदिके नामसे जो आक्रोश व्यक्त हुआ है वह सब देखकर लगता है जैसे सम्पर्कगत 'अण्डर-स्टैण्डिंग'की संचेतना कुछ क्षणोंके लिए काल देवताकी लपेटमें आ गयी है। काल देवताकी बीत जानेके बाद जो बाक़ी रहेगा, उसमें-से ढूँढ़ सकेंगे।

'नयी कहानियाँ'के तीन विशेषांक। तीन दर्जनसे अधिक कहानियाँ, इतने ही लेखक। नया खून। नयी संवेदना। सम्भावना भी मगर कितनी? प्रश्नका निशान लग सकता है। लगता भी है। पर रेखा भी बँधती ही है।

दूधनाथकी 'ममी तुम क्यों उदास हो' को मात्र कुण्ठाके परिवेशकी कहानी कहकर टाला नहीं जा सकता। वह 'अण्डर-स्टैण्डिंग'-की ठोस ज़मीनपर खड़ी है। कालियाकी कथाके माध्यमसे भी बासे सम्पर्क-सूत्रोंकी जो तड़पन हम तक पहुँचती है, वह क्या हम सबको अब महसूस नहीं करते? सुशील कुमार, गिरिराज किशोर, अवध नारायण, रमेश चोलिया और देवेनकी कहानियाँ भी इसी मानवीय सम्पर्कोंकी ओर उँगली उठाती हैं।

ज्ञानरंजनकी तरह आजकी नयी पीढ़ीका प्रत्येक हर बौद्धिक व्यक्ति क़रीब-क़रीब 'टूटी-फ़ादर' होता जा रहा है, मगर फिर भी यह 'ह्यूमन अण्डर-स्टैण्डिंग'का ही तो तक़ाज़ा है कि मन रह-रहकर चाहने लगता है कि पिताको किसी प्रकार अपने साथ ही सुविधाओंमें शरीक कर लें। पर ऐसा नहीं हो पाता। क्योंकि ज्ञानरंजनकी दृष्टिमें दो पीढ़ियोंके बीचका फ़र्क़ एक इतनी चौड़ी खाई है कि उसपर कोई सेतु नहीं बनाया जा सकता।

यही फ़र्क़ शायद इससे भी अधिक चौड़ी खाईकी शक्लमें सुदर्शन चोपड़ाकी कहानी 'ऊब' में दिखाई देता है। सेतुकी गुंजाइश शायद चोपड़ाको भी अधिक नहीं लगती, मगर 'रोप-वेज़'से सेतुका काम लेनेकी उम्मीद उन्हें है, यही उम्मीद उनकी वांछाका सत्य बनकर 'ऊब'में उभरी है। और इसी रोप-वेज़की राह सुदर्शन चोपड़ाका ताऊ अपनी रीत-बीत चुकी मान्यताओंकी एकरसतासे तंग आकर 'अण्डर-स्टैण्डिंग'के ऐसे स्तर तक आ पहुँचता है कि अपने पोतेके प्रश्नके उत्तरमें वह कोंपलके दूधकी-सी लसीली चिपकनके साथ विकास (अपने पोते) को अपने बर-गदी सीनेसे चिपका लेता है। सम्पर्कोंकी नयी बुनावटकी बारीकी सुन्दर लोहियाने भी 'स्वयंहारा' में बड़े नफ़ीस ढंगसे बयान की है, बहन बिना नौकरीके ही घर चलाती है, भाईकी पढ़ाईका खर्च जुटाती है; भाईको यह स्थिति सताती है; वह अपनी पढ़ाई चलानेके लिए ट्यूशनें करके कमाना चाहता है; बहनसे कह भी देता है। सोचता है कि यह सुननेके बाद बहन रो पड़ेगी, मगर उसकी कल्पनाको झुठलाती हुई बहन खिल-खिला पड़ती है। इसपर वह तिलमिला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उठता है, इस तरहकी तिलमिलाहटकी तहमें भी 'अण्डर-स्टैण्डिंग'की प्रक्रियाकी पहली स्टेज स्पष्ट दिखाई पड़ती है। आलोक शर्माने नये घण्टेके जन्मका पैग़ाम सुनानेवाले आदमीकी 'मौतका एक दिन' जिस अन्दाज़में उरेहा है, वह सराहनीय है, मगर इस आदमीको अपना आपा ढेलेकी मार खाकर गलीमें रोते-भागते कुत्तेकी तरह लगता है! ऐसा महसूस होता है कि सलीबोंसे ज़्यादा उसे आजतक कोई नहीं समझ पाया! क्यों? सिर्फ़ इसलिए कि उसमें तड़प है समझे जानेकी—अण्डर-स्टैंडिंग-की, जिसके अभावमें उसका अस्तित्व तक खतरेमें पड़ गया है। अतुल भारद्वाजके भीतर भी इसी कुढ़नका लावा भरा पड़ा महसूस होता है। इसीलिए तो उन्हें पूरे 'शहर' में सब तरफ़ बेरस फटे दूध-सी रोशनी दिखाई पड़ती है—ऐसी रोशनी जिसका सम्बन्ध न सुबहके साथ जुड़ पा रहा है, न शामसे। गोया वह खाली अण्डेके भीतर हो, जिसकी बारीक सतहसे बाहर रोशनी हो, कि जो भीतर तो आ रही हो लेकिन अपना अधिकांश बाहर ही छोड़कर। मगर अतुलको यह सम्भावना बराबर दीखती है कि शहर-पर झुके इस बादलों-भरे आसमानके किसी हिस्सेमें कोई दरार ज़रूर होगी, कि आसमान-का छोटा-सा नीला टुकड़ा झाँकता नज़र आ जाये! और यही सम्भावना उसके उस द्वन्द्व-को जन्म देती है जो उसे शहरमें हर कहीं भटकाता रहता है। उसे रह-रहकर इस बातकी कुढ़न उमेठे देती है कि सब एक दूसरेसे सटे भेड़ोंकी तरह सहमे बैठे हैं। 'अण्डर-स्टैण्डिंग' क्यों नहीं? क्यों नहीं परस्पर खुल-खिल पाते? क्यों भेड़ोंकी तरह सटे-जुड़े-सहमे पड़े हैं? वांछाओंके सत्यकी इसी सड़ककी कठोरता अतुलके अस्तित्वके जूनोंके तलोंको पार कर उसके पाँवोंपर आ चिपकी है। और इसी चिपकनका एहसास 'शहर' कहानीके एक-एक शब्दमें है।

सम्पर्कोंके निर्णीत खोलमें फिट न बैठ सकनेवाली वेदना उभरी है—भीमसेन त्यागी-की कहानी 'कोई नहीं' में। सुमेर शहरमें क्लर्क है; माँ, पत्नी और बहनको साथ रख-कर खर्च नहीं चला पाता तो क़स्बेमें, अपने पुश्तैनी घर, भेज देता है। स्वयं तो होली-दीवालीमें ही कभी घर जा पाता है, पर बरसोंसे चिट्ठियोंके सहारे ही अपनी जवानी काट रही है, जवान बहनका ब्याह कर पाने लायक़ भी पैसा सुमेरके पास नहीं, नतीजा भौजाईके यौवनपर पहरा है सासका। इस पहरेको वे दोनों स्वीकार कर चलना चाहती हैं। इसीलिए मिन्दर नामक युवकके द्वारा अपनी सेक्स-तृप्ति करनेके बजाय काल्पनी गिल्लीका विकल्प चुनती हैं। नैसर्गिकताको नकार कर 'अण्डर-स्टैण्डिंग'के अभावमें घिसट रहे मानवीय सम्पर्कोंका खोखलापन उजागर करके भीमसेन त्यागीने अपनी नयी संचेतना तथा अपने साहसी कहानीकारकी सम्भाव-नाओंका परिचय दिया है।

अवधनारायण मुद्गलका 'रिटायर्ड अफ़सर' ज़िन्दगीमें सिर्फ़ अफ़सर ही बन पाता है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानवीय सम्पर्कोंके अन्य सूत्रोंसे नहीं पाता। इसीलिए उसे सोनेके लिए नींदकी गोलियाँ खानी पड़ती हैं।

मगर जगदीश चतुर्वेदीकी 'क्रास' के नायकका इन्सोमनिया और तरहका है। अस्पतालमें पड़े रोगियोंके-से मानवीय सम्पर्क देख-देखकर उसकी स्थिति कुछ इस तरहकी हो गयी है कि नींदकी गोलियाँ खानेके बाद भी उसे नींद नहीं आती। मगर क्रासका निशान बनाकर आँखें मूँदनेवाले व्यवहारकी दुनियामें वह सोने लगता है!

अनीता ग्रोलककी 'पंक्चर' की उम्मीके लड़केको नींद लानेके लिए फ़िजिक्स-कैमिस्ट्री-का नाम ही काफ़ी है! माँ-बाप मर-खपकर कालिजकी फ़ीसें अदा करते हैं—बेटेको किसी लायक़ बनानेकी साधमें। मगर वह हाथोंसे निकल गया है। सम्पर्कोंकी साइकलमें, कुछ इस किस्मका पंक्चर हो गया है कि जो ठीक नहीं हो सकता!

आजके बदलते, भागते, हाँफते इनसान-की 'आवाज़' हरिवंश कश्यपकी कहानीमें सुनाई देती है। आजके आदमीके चारों तरफ़ एक साथ इतना कुछ घिर-घुमड़ रहा है कि उसके दिमाग़की डोरियाँ तनकर टूट रही हैं; आवाज़ निकाल पानेसे पहले ही वह वर्जनाओंके सिपाहियों-द्वारा घेर लिया जाता है। परन्तु उम्मीद बरक़रार है कि कोई जगह तो ऐसी मिलेगी ही, जहाँ उसका मुँह कोई बन्द नहीं करेगा; हर कोई, हर किसीसे हर कुछ कह पायेगा और हर कोई इतमीनानसे सुन सकेगा।

व्यक्ति और व्यक्तिके बीच इसी 'अण्डर-स्टैण्डिंग' की वांछा लेकर 'नयी कहानी' चल रही है।

—सुदर्शन चोपड़ा

Phone : 25-2227

Universal Fire & General Insurance Company Limited

Transact :

Fire, Motor, Marine, Personal Accident, Fidelity, Guarantee, Burglary and all other forms of Miscellaneous Insurance Business.

Universal Insurance Building,
Sir P.M. Road, Bombay-1.

Chairman & Managing Director :
P.U. PATEL, B.A., B.COM. (Lond).

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवन अपने लिए और सबके लिए'

यह वाक्य —
जीवन को सफल
प्रतिष्ठा
और
समस्त विश्व को
शान्ति,
प्रगति तथा
सम्पन्नता
के हित में.....

गनी कमर्सियल कम्पनी
हैसियन तथा बारदाना
के
प्रमुख व्यापारी तथा वितरक
६, क्लाइव रो,
कलकत्ता–१
फ़ोन : २२–५३६६
२२–८१३९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञा नो द य

: कुछ पत्र

• इस बार (मार्च ६५) कौशल्याके लेखपर तुमने जो शीर्षक दिया है, वह बड़ा intriguing और original है। मेरी बधाई स्वीकार करो। मैं बड़ी देर तक हँसता रहा। तुम्हें खूब सूझी।

—उपेन्द्रनाथ अश्क, इलाहाबाद

• मार्चका ज्ञानोदय देखा—सबसे पहले श्री परसाईकी सापेक्ष डायरी पढ़ी। श्री परसाईने सामाजिक क्रूरता और शासकीय दृष्टिकोणको जितनी तीव्रतासे उजागर किया है वह अत्यन्त मार्मिक और सशक्त है। लेखनकी अवास्तविकता और कुण्ठाग्रस्त अवरोधोंपर इससे अधिक सशक्त कथ्यकी कल्पना कठिन है। श्री रामनाथ सुमनका द्विज-सम्बन्धी संस्मरण हिला देनेवाला है। मैं नहीं जानता, लोग कमलेश्वरकी कहानीके बारेमें क्या कहेंगे क्योंकि उसमें कठोर बात कहनेके लिए उन्होंने कोई उलझी प्रतीकात्मक शैली नहीं अपनायी मगर हँडियाके एक चावलको देखनेकी ग़रजसे यह रचना आजकी पचास कहानियोंसे भारी है। हम सब बातें जानते हैं मगर परसाई और कमलेश्वरने जो बातें कही हैं—झकझोरनेवाली हैं। 'रखी री यह डाल वसन वासन्ती लेगी' के अन्तर्गत सभी कविताएं प्रथम श्रेणीकी हैं। ताज्जुब है, श्रीमती कौशल्या, अश्कजीका खाका कब तैयार करती हैं, क्योंकि जागते हुए तो अश्कजी अपने अतिरिक्त किसीको अपने निकट रहकर लिखनेका अवसर ही नहीं देते और सोना उनका कभी किसीने देखा नहीं है; एक ही अंकमें इतनी सामग्री है कि एक अन्तर्देशीय भी कम पड़ेगा—इतना कहकर ही सन्तोष करना पड़ेगा कि बाहर-भीतरसे ज्ञानोदय पूरी तरह आत्मसात् कर लेता है।

—से० रा० यात्री, ग़ाज़ियाबाद

• लक्ष्मीचन्द्र जैनका पत्र ओगासुकूके नाम—राजाजीके दोमुंहे व्यक्तित्वका पर्दाफ़ाश है। एक विदेशी हिन्दी-प्रेमीके लगातार प्रश्न कितने संयत और विचारोत्तेजक हैं कि आश्चर्य होता है।

—कृष्णकुमार त्रिवेदी, रीवा

• मार्चके ज्ञानोदयमें प्रकाशित कमलेश्वरकी कहानी पसन्द आयी। यह हिन्दी कहानीका एक नया दिशा-संकेत है। शायद फैण्टेसी ही नयी कहानीका शिल्प बन जाये। ज्ञान-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रंजनकी कहानी भी बहुत प्रभावशाली है। ज्ञानरंजनके लेखनमें मुझे एक सहज जिल्दकी प्रतीति होती है जो उसकी इस कहानीमें भी है।

—सुन्दर लोहिया, चम्पा

● 'ज्ञानोदय' के मार्च '६५ अंकमें एक लेख 'बाल-कहानी : पिछला दशक' भी देखकर प्रसन्नता हुई क्योंकि एक प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्रिकामें हिन्दी साहित्यकी चर्चा-परिचर्चाओंसे निर्वासित बाल-साहित्यपर भी गम्भीरतासे विचार किया गया था। वैसे, हाल ही दिल्लीमें एक बालोपयोगी पत्रिकाके सम्पादकसे चर्चाके दौरान पता चला था कि हिन्दीमें बाल-साहित्यके लेखक ही नहीं हैं—अब उन्हें बाल-साहित्यकी पत्रिका ही नहीं निकालनी है, बाल-साहित्यके लेखक भी पैदा करने हैं!! उनके इस गुरु उत्तर-दायित्वसे मैं उस क्षण सचमुच बहुत प्रभावित हुआ था और मनमें एक टीस भी उठी थी कि राष्ट्र-भाषामें इतना दारिद्र्य!...सो, हरिकृष्ण देवसरेके प्रस्तुत लेखसे किंचित् आश्वस्त हुआ कि नहीं, हिन्दी इतनी दरिद्र नहीं है—इसमें भी अधिक नहीं तो कुछ लेखक तो हैं ही बालोपयोगी साहित्यके। सुना है, श्री देवसरे बालोपयोगी साहित्यपर अनुसन्धान-कार्य कर रहे हैं और इसलिए स्वीकार करता हूँ कि वह कुछ गम्भीरतासे ही, वैज्ञानिक दृष्टिकोणसे इस साहित्यपर विचार कर रहे होंगे। इसी पृष्ठभूमिमें मैंने उनके प्रस्तुत लेखपर ग़ौर किया और यह देखकर सदमा-सा पहुँचा कि उन्होंने बालोपयोगी साहित्य और नवसाक्षरोपयोगी साहित्यमें कोई फ़र्क़ ही नहीं माना है। 'सतलुजकी कहानी' या 'नया तीरथ' जिनको उन्होंने बालोपयोगी साहित्यके रूपमें उद्धृत किया है, नवसाक्षरोपयोगी कृतियाँ हैं। भारत-शासनने उक्त पुस्तकोंको नवसाक्षरोपयोगी साहित्यकी श्रेष्ठ पुस्तकोंके तौरपर ही पुरस्कृत किया है। श्री देवसरे एक तरुण लेखक हैं और उनसे मैं अधिक संयत वैज्ञानिक दृष्टि अपनानेकी उम्मीद करता हूँ।...

...'हम, वे और भीड़' में खोया हूँ!

—मनमोहन मढ़ारिया, इन्दौर

● आज ही 'धर्मयुग' के पृष्ठोंपर देवेन गुप्तको दिल्लीके साहित्यिक-बन्धुओंकी ओरसे दी गयी श्रद्धाजंलिकी सूचनासे मुझे उनकी असामयिक मृत्युका बोध हुआ है। मैं 'गाल्ब पुस्तकालय' में बैठा हुआ हूँ। सामने देवेन गुप्तका बनाया हुआ निरालाजीका पेन्सिल-चित्र टँगा हुआ है, ठीक मेरी आँखोंके सामने। उस चित्रमें जो दर्द और टीस व्याप्त है वह आकार पकड़कर देवेनके चेहरेको उभार रही है, निरालाजीके चेहरेकी पृष्ठभूमिमें एक और चेहरा।....उस श्रद्धांजलि-सभामें मैं भी उपस्थित था जिसमें देवेनने (तब देवेन्द्र अरोड़ा) वह चित्र अति श्रद्धासे भेंट किया था और भीगे स्वरमें एक कविता पढ़ी थी। लगभग यही समय था।...उन दिनों देवेनकी कोई कृति प्रकाशित रूपसे मेरी दृष्टिमें नहीं आयी थी, यों उनसे मेरी जो कभी-कभी भेंट होती थी—वह बाहर अधिकतर रहते थे—उनसे

ज्ञानोदय : मई १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य-चर्चा उठती थी, वह दिल्ली आदिके समाचार दिया करते थे।...

'नयी कहानियाँ' में जब देवेन गुप्तकी पहली कहानी निकली थी और उसमें मेरे चित्रका चित्रण था तो मैं पहचान गया था कि यह वही देवेन गुप्त हैं, जिनसे मैं देवेन्द्र-कुमारके रूपमें परिचित था। उसके बाद मैंने उनकी दो-तीन अन्य कहानियाँ पढ़ीं, जनवरीके इस माहमें एक साथ दो। 'नयी कहानियाँ'वाली यह ताजी कहानी अपनी सहज अभिव्यक्तिके कारण मुझे बहुत छुई, यों मुझे यह भी लगा कि यदि उसमें अन्तिम दौरान होता तो वह और ज्यादा छूती और यथार्थके और अधिक निकट होती। मैंने उन्हें इस सम्बन्धमें कल ही एक पत्र छोड़ा था। उन्हें लिखा गया यह पहला पत्र था और वह भी उनकी मृत्युके बाद। सोचता हूँ तो पाता हूँ कि नियतिके नाखून कहीं अन्दर खुरच रहे हैं। मुझे गर्व था कि मेरे नगरका—एक निहायत पिछड़े शहरका—एक तरुण कहानीके क्षेत्रमें उठ रहा है। साहित्यके प्रांगणमें जब उन्होंने पग रखा था, वह मेरे नगरसे जा चुके थे। पर वह मेरे नगरके हैं यह आभास मुझे उनसे जोड़े था। अब वह नहीं रहे और मैं अपनेको अकेला महसूस कर रहा हूँ...। —हृदयेश, शाहजहाँपुर

एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्वके अस्तित्वगत होनेके भावके साथ-ही-साथ सभी युगोंमें इस अस्तित्वके प्रति अविश्वासकी भावना भी रही है। श्री सूर्यदेव पाण्डेयने अपने लेखमें काण्टका सिद्धान्त, जेम्सकी मान्यता, राधाकृष्णनका मत, रूसी दार्शनिकोंके विचार, सन्त आगस्टीनका चिन्तन तथा जैन-दर्शनके दृष्टिकोणको सामने रखकर 'ईश्वर' की व्याख्या की है। इन किसी भी विचारधारासे यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि 'ईश्वर अस्तित्वगत है किन्तु भावरूपमें'—जो कि श्री पाण्डेयका मत है।

ईश्वरके अस्तित्वपर विचार करते ही अनेकों समस्याएँ उपस्थित हो जाती हैं। ईश्वरके अस्तित्वको अस्वीकार करनेका यह अर्थ नहीं है कि अपना अस्तित्व अस्वीकार कर दूँ। 'मैं हूँ तभी सोचता हूँ' इससे केवल मेरा ही अस्तित्व सिद्ध होता है, ईश्वरका नहीं। यदि बीज और वृक्षका उदाहरण लेंगे तो यह क्रम अनन्त हो जायेगा और अनवस्था दोष (infinite regress) होगा। बीज है तो वृक्ष है किन्तु बीज कहाँसे आया? यदि हमें किसी अवस्थाको बिना कारणका कारण (uncaused cause) या स्वयं अपना कारण (self-caused) मानना ही है तो वह कारण हम विश्वको ही क्यों न मान लें? क्यों यह आवश्यक है कि वह कारण ईश्वर ही होना चाहिए। ससीम कार्यसे ससीम कारण ही सिद्ध किया जा सकता है असीम नहीं।

यदि ईश्वरका अस्तित्व इसलिए स्वीकार किया जाये कि विश्वमें 'नियमितता तथा संयोजन' है तथा उसका एक महान् तथा विवेकपूर्ण कारण अनिवार्य है; तब क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वमें अनियमितता तथा असंयोजनकी कमी है ? इसका कारण कौन होगा ? यदि नियमितताका कारण 'समग्र चेतना व सम्पूर्ण विवेकके साथ कार्यरत है' तो उस विवेकने विश्वमें अनियमितता, असंयोजन, अशुभ, असुन्दर आदिकी सृष्टि क्यों की ? यदि उस कारणमें विवेक और प्रतिभाकी कमी नहीं तो क्यों नहीं उसने ऐसे विश्वकी सृष्टि की जिसमें केवल शुभ होता, सौन्दर्य होता, नियमितता होती और होता संयोजन। यह कहना असंगत लगता है कि शुभको समझनेके लिए अशुभकी सृष्टि हुई या सौन्दर्यके मूल्यांकनके लिए असुन्दरकी आवश्यकता है, इत्यादि। प्रथम तो उस प्रतिभावान् ईश्वरने मनुष्यके लिए ऐसी प्रतिभाकी सृष्टि क्यों न की जिससे एक मनुष्य शुभ और सुन्दरको अशुभ तथा असुन्दरकी अनुपस्थितिमें भी समझ पाता। द्वितीय यदि हम दोनोंको आवश्यक समझते हैं तब तो वे एक दूसरेके पूरक हुए और यह कहना विरोधाभास न होगा कि अशुभका मूल्य अधिक होगा क्योंकि बिना अशुभके शुभ समझा नहीं जा सकता। यदि इन सबको अर्थ देनेके लिए कर्मका सिद्धान्त लें तब भी यह कहा जा सकता है कि सृष्टि के आरम्भमें तो सब समान थे फिर ऐसे जीवोंकी सृष्टि क्यों न हुई जो बुरा कार्य ही न करते और न उन्हें उसका बुरा फल मिलता। इस विश्वको देखकर तो बहुत ही कम ऐसा अनुभव होता है कि उसका स्रष्टा एक प्रतिभावान् विवेकी चेतना है—वरन् अधिकतः तो इसका उलटा ही प्रतीत होता है।

यदि तर्कके लिए यह भाव भी लें कि ईश्वर है तथा वह विश्वका स्रष्टा है तो अन्य समस्याएँ सामने आती हैं। वह निमित्त कारण है या उपादान कारण या दोनों ? उपादान कारण या दोनों होनेमें जो समस्याएँ हैं वे इतनी स्पष्ट हैं कि उनके उल्लेखकी आवश्यकता नहीं। यदि ईश्वर निमित्त कारण है तब उपादान कारण कौन-सा है ? वह किस प्रकार सृष्टि करता है ? क्या उसके शरीर है ? क्योंकि बिना शरीरके क्रिया नहीं हो सकती तथा बिना क्रियाके सृष्टि नहीं हो सकती। और यदि शरीर है तब फिर वह ईश्वर नहीं होगा क्योंकि वह नित्य असीम व अनन्त नहीं हो सकता।

इसके अतिरिक्त सृष्टिके प्रयोजनकी और भी अधिक जटिल समस्या है। प्रयोजन न तो स्वार्थसिद्धि हो सकती है, क्योंकि ईश्वरका कोई स्वार्थ नहीं होना चाहिए, और न करुणा क्योंकि सृष्टिसे पूर्व दुःख था ही नहीं तो करुणा किसपर और क्यों होती। यह कहना भी उचित नहीं जान पड़ता कि ईश्वरने खेलके लिए सृष्टि की है। खेलका भी कुछ न-कुछ प्रयोजन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपमें अवश्य होता है जो कि ईश्वरका नहीं हो सकता।

तर्क-द्वारा ईश्वरका अस्तित्व सिद्ध नहीं हो सकता। काण्टने भी ईश्वरको केवल नैतिक आदर्शके रूपमें माना है और नैतिक आदर्शका अस्तित्वगत होना आवश्यक नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्तोंके आध्यात्मिक अनुभवोंकी तो मनोविज्ञान-द्वारा सरलतापूर्वक व्याख्या की जा सकती है और तार्किक दृष्टिसे उन अनुभवोंका कोई मूल्य नहीं, भले उन सन्तोंके लिए हो। जैसा कि श्री सूर्यदेव पाण्डेयका मत है कि ईश्वर अस्तित्वगत है किन्तु भावरूपमें, और न तो वह जगत्का निमित्त कारण है न उसका कोई प्रयोजन है और न ही वह कोई कार्य कर सकता है। फिर ऐसे ईश्वरके अस्तित्वका न तो कोई अर्थ ही है और न मूल्य। ड्राइंगरूममें सजानेके काम भी वह नहीं आ सकता। छोटी या बड़ी प्रत्येक वस्तुके अस्तित्वगत होनेका कोई-न-कोई कारण तथा प्रयोजन होता है। यदि न कारण है न प्रयोजन तब वह अस्तित्वगत नहीं हो सकता। यदि हम केवल उसके उपयोगका मूल्य (Pragmatic value) लें और ईश्वरको moral support के रूपमें मान लें तब भी इस आधारपर उसका अस्तित्वगत होना सिद्ध नहीं होता। तथा अस्तित्वगत सिद्ध न होनेके कारण वह moral support भी नहीं रह जाता। यदि हमें ईश्वरके अस्तित्वगतको बिना कारण बिना प्रयोजन मानना ही है और वह भी केवल भावरूपमें तब परीलोककी कल्पना भी क्या बुरी है!

—प्रेम मिश्रा, जोधपुर

भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा संचालित

ज्ञानपीठ पत्रिका

हिन्दीमें अपने प्रकारका प्रथम प्रयास, और कदाचित् अन्य भारतीय भाषाओंको देखते भी

जिसका प्रयत्न एक ऐसा अध्ययन प्रस्तुत करनेका है जो लेखक-प्रकाशक-विक्रेता-पाठक चारोंके 'अक्षर-जगत्'की गतिविधि, नयी प्रवृत्तियों, समस्याओं एवं समाधान, और विकास-उन्नतिकी दिशा-भूमिका सम्यक् परिचय दे, तथा परस्पर विचारोंके आदान-प्रदानका पथ प्रशस्त करे।

सम्पादक

लक्ष्मीचन्द्र जैन : जगदीश

मूल्य : वार्षिक ६.००, ०.५५ प्रति

भारतीय ज्ञानपीठ

९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता–२७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेट्रिक प्रणाली ही कानूनी प्रणाली है

खरीदारी केवल

किलोग्राम

मीटर

लिटर

में ही कीजिये

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांस्कृतिक जागरण, साहित्यिक विकास-उन्नयन और
राष्ट्रीय ऐक्य एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी साधिका

तथा

भारतीय भाषाओंकी सर्वोत्कृष्ट
मौलिक साहित्यिक कृतिपर
प्रतिवर्ष एक लाख रुपये
पुरस्कार योजना प्रवर्तिका

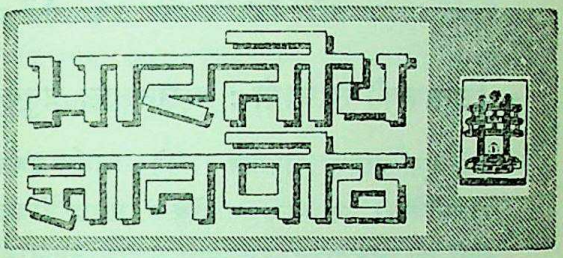

उद्देश्य

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध
और अप्रकाशित सामग्रीका
अनुसन्धान और प्रकाशन

तथा

लोक-हितकारी मौलिक
साहित्यका निर्माण

संस्थापक : श्री शान्तिप्रसाद जैन
अध्यक्षा : श्रीमती रमा जैन

प्रधान एवं सम्पादकीय कार्यालय : ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता–२७
विक्रय केन्द्र : ३६२०/२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, दिल्ली–६
प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी–५

मई १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने ढंगके अनूठे और अनमोल

भारतीय ज्ञानपीठ

के

अभिनव, महत्त्वपूर्ण एवं संग्रहणीय प्रकाशन

- **चिन्तककी लाचारी** : माखनलाल चतुर्वेदी

यह एक भाषण संकलन। ऐसे भाषण-संकलन बहुत कम हैं जो इतिहास की राजनीतिकी जयमाल न होकर समग्र जीवन और अनुभूति-बोधके सत्योंके नू थामे हुए वर्तमानका दृष्टिपथ अँजोर दें और अनागतकी छवि-रेखाएँ उकेर जा ऐसे भाषण-संकलन मर्मी चिन्तकके होते हैं या निष्णात साहित्यकारके। इ प्रकारके अत्यल्प भाषण-संकलनोंके बीच प्रस्तुत भाषण-संकलन विशिष्ट है क्यों ये भाषण श्री माखनलाल चतुर्वेदीके हैं और हिन्दीमें माखनलालजी केवल एक अद्वितीय हैं।

- **आत्मजयी** : कुँवर नारायण

कठोपनिषद्में नचिकेताका आख्यान आता है। सत्यद्रष्टा कविने इसके माध्यमसे भारतीय दर्शनकी एक विशिष्ट उपलब्धिको स्पष्ट किया है। इधर कुछ हिन्दी कवि कृतियाँ इस आख्यानको विषय आधार बनाकर प्रकाशमें आयी हैं। 'आत्मजयी' सबमें कई दृष्टियोंसे भिन्न है और विशेष अर्थपूर्ण भी। यह कृति मूल प्रसंगके दार्शनिक पक्षकी ऊहापोह नहीं करती, न ही उसे दिव्यकथाके रूपमें ग्रहण करती है। 'आत्म जयी' के कविने मुख्यतः नचिकेताकी मानवीय परिस्थितिको ही दृष्टिमें रखा है। नचिकेताकी ही तरह आजका चिन्ताशील मनुष्य भी ऐसे मूल्योंके लिए जीना चाहता है जो उसमें सुख ही नहीं सार्थकताका भी बोध करा सकें।

मई १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मजयी' में मूल्योंको लेकर कोई अन्तिम फ़ैसला नहीं दिया गया : केवल, रचनात्मक दृष्टिकोणके प्रति एक आस्था व्यक्त की गयी है। जीवनकी पूर्णानुभूतिके लिए किसी ऐसे मूल्यके लिए जीना आवश्यक है जो व्यक्तिमें जीवनकी अनश्वरताका बोध करा सके : यही उसको सान्त्वना दे सकता है कि मर्त्य होते हुए भी वह किसी अमर अर्थमें जी सकता है। उसके लिए तब यह चिन्ता सहसा व्यर्थ हो जायेगी कि जीवन कितना असार है : उसकी मुख्य चिन्ता यह होगी कि वह जीवनको कितना अर्थपूर्ण बना सकता है। सर्वथा संग्रहणीय कृति। मूल्य ३.५०

सिकन्दरनामा : सलमा सिद्दीक़ी

सिकन्दरनामा यानी सिकन्दरका हाल। हाँ, सिकन्दर। इतिहासका सिकन्दर नहीं। जिस पर सदियोंकी मोटी चादरें पड़ गयी हैं। यह आजका सिकन्दर है जिसके अस्तित्वका सबसे बड़ा सबूत यह है कि स्वयं सलमा सिद्दीक़ीने उसे अपनी जादूई कलमकी नोकपरबैठाकर साहित्य-संसारमें रॉकेटकी तरह छोड़ा है।

आप चाहें तो इस सिकन्दरको डॉन क्विग्ज़ोटकी परम्परामें शुमार कर लें; लेकिन है वह मियाँ खोजीकी जात-बिरादरीके। जिस तरह हर मिट्टी-पानीकी अपनी-अपनी फ़सल होती है जो अपने-अपने रंग और सुगन्धमें लाजवाब होती है, उसी तरह यह सिकन्दर है – हिन्दुस्तानकी धरतीका एक हँसोड़ क्यारीका लुभावना फूल। बहुत दिलचस्प दास्तान है इस सिकन्दरकी। और, सलमा सिद्दीक़ीकी सादाबयानीका तो क्या कमाल! नये अन्दाज़, नयी अदा, और कुछ पुराने तौर-तरीक़ोंपर नयी ख़ूबसूरत निगाह!

मूल्य २.००

क्या धर्म बुद्धिगम्य है ? : आचार्य तुलसी

विज्ञान और बुद्धिने धर्मको चुनौती दी तो सदासे ही है, किन्तु आज विज्ञान और उन्मुक्त चिन्तनने इस चुनौतीको अधिक व्यापक और अधिक मुखर बना दिया है। धर्मने इन चुनौतीकों स्वीकारा भी सदासे है, किन्तु अतीतमें जो उत्तर जिज्ञासुओंको सन्तुष्ट कर सके थे, वे उत्तर आज अपर्याप्त हैं। आजके जीवनके परिवेशमें वर्तमानके चुभते प्रश्नों और अणुयुगीय रोमांचों तथा आतंकोंके सन्दर्भमें प्रश्नकी उत्कटता और उत्तरदायकताको कौन झेले—क्या धर्म बुद्धिगम्य है ? इस प्रश्नका और प्रश्नोंमें-से उभरती हुई प्रश्नोंकी शृंखलाका उत्तर इस कृतिमें आपको मिलेगा। व्याख्याता हैं श्री आचार्य तुलसी, जो अणुव्रत-आन्दोलनके प्रवर्तक ही नहीं हैं, इस युगके विशिष्ट साधक,

मई १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिन्तक और दिशादायक भी हैं। श्री आचार्य तुलसीने धर्मका वह स्वरूप प्रतिपादित किया है जो बुद्धिगम्य है, जो सहज आस्था उत्पन्न करता है। सम्प्रदायोंमें विभाजित एकाग्रही धर्मकी कर्दमसे ऊपर उठा हुआ, खिला हुआ और एक सहस्र-दल कमल है जो विश्वमानवका है। उसकी पूत गन्धसे परिचित होनेका माध्यम यह रचना है। तर्क-सी पैनी, श्रद्धा-सी गहरी और दर्पण-सी निर्मल, यह कृति आपके प्रश्नोंका उत्तर ही से समाधान करायेगी।

मूल्य २.००

• चौंसठ कविताएँ : इन्दु जैन

न कहें कुछ और, पर भिन्न और विशेष इन कविताओंके परिचयमें अवश्य कहा जायेगा। यह इसलिए नहीं कि श्रेष्ठ कविताके निकषपर ये खरी उतरती हैं बल्कि इसलिए कि ये हिन्दी कविताकी अधुनातन दिशा, भाव-बोध, और शिल्पकी प्रामाणिक उपलब्धिका संकेत देती हैं। और इसलिए भी कि सब प्रकारके रूढ़ झावोंसे ये मुक्त हैं और अपना अर्थ बड़ी सहजताके साथ स्वयं खोलती हैं।

सब चौंसठ कविताएँ हैं, पर प्रत्येक जैसे एक सौम्य बिजलीकी कौंधका निमित्त हो जो अन्दरकी अकुलाहटको, किसी दर्द या उल्लासको, सतरंगी प्रकाश-रेखाओंकी भाषामें उकेर जाये। अनुभूतियोंकी ऐसी अभिभूत करनेवाली अभिव्यक्ति हुई हुई है कि क्षितिजपर क्षितिज सामने खुलते चले जाते हैं और भीतर एक थकी भरी चाँदनी-सी छिटक पड़ती है। कविताओंकी पंक्ति-पंक्तिसे साक्ष्य मिलता कि अन्तश्चेतना भी कितनी मुखर हो सकती है।

मूल्य २.००

• प्रतिनिधि रचनाएँ (मराठी) : प्रो० ना० सी० फड़के

प्रस्तुत रचना-संग्रह भी एक फूलडाली है। अनेक फूल, और एक ही डालीमें पर कई रंगके। रचनाओंकी यह विधा-विविधता संग्रहको एक अतिरिक्त आकर्षण और मूल्य दे देती है। पर इस फूलडालीकी सारी विशेषता इसमें नहीं कि एक समर्थ साहित्यकारकी प्रतिनिधि रचनाएँ सामने आयीं, विशेषता इसमें है कि अन्यान्य फूलडालियों-भरे आँगनमें इसका झुकना-झूमना संकेत बन जाता है कि कैसी-कैसी गन्धके फूल किधर लगे हैं। ये रचनाएँ एक और दृष्टिसे भी महत्त्वपूर्ण हैं। नया भाव-बोध और शिल्प इन्हें साहित्यके विकास-क्रममें एक स्थान देनेको बाध्य होगा और जो परम्परानिष्ठ हैं उन्हें इनकी मोहकता आगेको प्रेरित और प्रोत्साहित करेगी। प्रस्तुत हैं एक ही स्थानपर संगृहीत लेखककी स्वसंकलित चौदह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिनिधि रचनाएँ : चार कहानियाँ, एक उपन्यास-अंश, एक एकांकी, तीन ललित निबन्ध, एक शब्द-चित्र, दो यात्रा-वर्णन तथा दो वैचारिक निबन्ध (प्रबन्ध)।

मूल्य ४.५०

• **दर्शन-अनुचिन्तन** : म० म० गिरिधरशर्मा चतुर्वेदी

चुने-चुने चौदह निबन्धोंका यह एक सुसम्बद्ध संकलन है जो भारतीय दर्शनोंके समूचे स्वरूप और प्रमुख सिद्धान्तोंका सुन्दर परिचय देता है। और ऐसी सरल और सुबोध भाषामें सारा विचार-विवरण उपस्थित करता है कि सामान्य जन इसे अपने ही लिए लिखा गया मानें और सुधी-विशेषज्ञ देखें कि सब-कुछ ज्ञातव्य और नया चिन्तन भी सुबोध ढंगसे लिखा जा सकता है।

मनीषी विद्वानोंके लिए यह कृति एक और दृष्टिसे भी विचारणीय होती है। बहुतोंका मत है कि भारतीय दर्शनोंमें एक विसंगति-जैसी दिखाई पड़ती है। महामहोपाध्यायजीने प्रस्तुत कृति-द्वारा बड़े तर्कके साथ सिद्ध किया है कि इनमें परस्पर विरोधभाव कोई नहीं है बल्कि ज्ञानका एक क्रम है : ऐसा क्रम जो बुद्धिको स्थूलसे उत्तरोत्तर गहनतम सूक्ष्म तक ले चले। महामहोपाध्यायजी 'भारतीय षड्दर्शन' संज्ञा भी 'चार्वाक, बौद्ध, जैन, वैशेषिक, सांख्य, वेदान्त' इन छह दर्शनों-को देते हैं।

पुस्तक सभी दृष्टियोंसे सबके लिए पठनीय और मननीय है। इसके चौदह निबन्ध जैसे चौदह बीजवट हैं, भारतीय दर्शनशास्त्रोंका सार-सर्वस्व एक अंजुलिमें !

मूल्य ३.००

• **नाटक बहुरूपी** : डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल

"नाटकोंकी भीड़ और नाटक नहीं," शॉ चुटकी लिया करते। "आधुनिक नाटक अभी लिखा नहीं गया," आल्बेर्तो मोराविया कहते सुने जाते हैं। अब इनसे कौन उलझे। उनसे कहना निरर्थक होता, इनसे कहनेमें संगति क्या। फिर, ऐसा कुछ है भी तो ! अच्छे नाटक कम हैं, आधुनिक नाटक और भी कम।

इसी सन्दर्भमें यह छोटा-सा संकलन 'नाटक बहुरूपी' प्रस्तुत है। इसके द्वारा भी कहना यह नहीं है कि ये नाटक अच्छाईका आदर्श हैं; कहना यह उपयुक्त होगा कि ये अच्छाईका एक नमूना हैं और अनेक दृष्टियोंसे आधुनिक तो हैं ही। डॉ०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाल समकालीन हिन्दी नाटक-लेखनमें पहले ही कुशल कलाकार थे, अब तो सागर-पार जाकर वहाँका भी बहुत-कुछ देख और गुन आये हैं।

इतनी सहज-सच्ची और मर्म-छूती रचनाएँ हैं ये कि पढ़ी जायें तो पाठकको अपनी ही बात कही जाती मिले, और रंगमंचपर आयें तो दर्शक अपने ही सत्यों और सपनोंको सामने देखता हो। ऐसे नाटक हिन्दीमें सचमुच बहुत नहीं जिन्हें ईज़ीचेयरपर पढ़ते अच्छा लगे और स्टेजपर देखकर प्रेरणा मिले।

मूल्य ३.५०

- **अपने-अपने अजनबी** : अज्ञेय

भारतीय साहित्योंमें अपने ढंगका अद्वितीय उपन्यास। मृत्युसे साक्षात्कारको विषय बनाकर जीवन और नियतिका सरल मार्मिक विवेचन। मृत्यु-विषयक पूर्व और पश्चिमकी दृष्टियोंकी टकराहट, दोनोंके मिलन-द्वारा मानव-जीवनके एक नये आयामका उन्मेष।

मूल्य ३.००

- **जिन्दगी और गुलाब के फूल** : उषा प्रियंवदा

कहानियाँ और कहानियाँ! मगर ये कहानियाँ बिलकुल भिन्न हैं। न भाषाका उलझाव है यहाँ न शैली-शिल्पके गोरखधन्धे, और संग्रह-भरमें एक जो कहानी हो जिसे पढ़ें और दिनों अपने भीतर मँडराता हुआ न पायें! अतिरिक्त विशेषता और यह कि नयी कहानी इन्हें अपना कहेगी तो औरोंके लिए ये परायी न हो सकेंगी।

मूल्य २.५०

- **खोयी हुई दिशाएँ** : कमलेश्वर

ग्यारह कहानियाँ जो एक विशेष दृष्टिको लेकर चुनी गयीं। जीवनमें महत्तम मूल्योंके प्रति आस्थाका स्वर इनका कथ्य है और घुटन तथा पराजयमें जीनेकी विवशताको नियति न मानकर नये सन्तुलन और अर्थोंकी खोज इनकी दिशा। इनमें जीवनका अध्ययन आया है, मात्र सर्वेक्षण नहीं। असम्भव होगा कि संग्रहकी कोई भी कहानी पढ़ें और मनपर प्रभाव न छोड़े।

मूल्य २.५०

- **प्रतिनिधि रचनाएँ : पंजाबी** : कर्तारसिंह दुग्गल

किसी साहित्यिक व्यक्तित्वको पहचानने-समझनेके लिए आवश्यक है कि उसका विभिन्न विधाओंका लेखन कहीं एक-साथ देखें और पढ़ें। प्रस्तुत पुस्तकमें श्री कर्तार-

ज्ञानोदय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिंह दुग्गलका एक समूचा नाटक, दो एकांकी, दो उपन्यासोंके अंश, संस्मरण और निबन्ध तो हैं ही, कहानी और कविताएँ तक संकलित हैं। कभी पंजाबी और उर्दूके और अब तो उतने ही हिन्दीके भी, इस चहीते साहित्यकारकी ये सभी रचनाएँ उसकी प्रतिनिधि रचनाएँ हैं : उसके साहित्यिक व्यक्तित्वसे परिचित होनेके लिए बिलकुल अनिवार्य।

मूल्य ३.५०

• **एक साहित्यिक की डायरी** : स्व० गजानन माधव मुक्तिबोध

ऐसी कृतियाँ बहुत नहीं होतीं जो अपने समकालीन साहित्यका श्री-वर्द्धन कर सकें। 'एक साहित्यिककी डायरी' ऐसी एक कृति है। अपने शैलीगुण और विचारतत्त्व दोनोंकी विशेषताके कारण यह ध्यान आकर्षित करेगी और आदर-मान पायेगी। डायरी-विधाका यह रूप तो इसीमें देखनेको मिलेगा। जैसे निबन्धात्मक कहानी वैसे यह निबन्धात्मक डायरी। निबन्ध पढ़े न जायें, इन्हें पढ़नेकी सहज ललक हो। सीधा-सादा प्रारम्भ, फिर कहीं एकालाप, कहीं एक काल्पनिक पात्रसे वार्तालाप, पर आदिसे अन्ततक भाव और स्वर डायरीका। ये कविता, आत्माख्यानके विविध स्तरोंपर एक साथ चलती है; या यों कहें कि इन सबको एकमें समन्वित करके एक नयी ही विधा-सम्भावनाकी ओर इंगित करती है। द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण।

मूल्य २.५०

• **सूरज का सातवाँ घोड़ा** : डॉ० धर्मवीर भारती

'गुनाहोंका देवता' के बाद लेखकके औपन्यासिक कृतित्वका एक दूसरा पहलू जो जितना महत्त्वपूर्ण है उतना ही आकर्षक। दावेके साथ कहा जा सकता है कि हिन्दीमें अभीतक ऐसी कथा-शैलीका प्रयोग नहीं किया गया। किन्तु कृतिका महत्त्व केवल साहित्यिक ही नहीं है, वास्तवमें उससे कहीं अधिक व्यापक और गम्भीर है : हमारे समूचे मध्यवर्गीय समाजके सांस्कृतिक पुनर्निर्माणसे सम्बद्ध होनेके कारण है।

मूल्य २.००

• **मेज़ पर टिकी हुई कुहनियाँ** : रमेश बक्षी

इन कहानियोंको देखकर कोई कहे तो अत्युक्ति न होगी कि आधुनिक कथाशिल्प और आधुनिक जीवन-दृष्टि दोनोंको एक साथ स्वाभाविक रूपमें सजा हुआ यहाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाया । कभी पढ़ते-पढ़ते लगे सकता है कि ये कहानियाँ नहीं हैं, पर फिर अगले ही क्षण बरबस लगेगा कि ये ही तो सचमुच कहानियाँ हैं : आजकी !

मूल्य ३.५०

● **नये रंग नये ढंग** : लक्ष्मीचन्द्र जैन

हिन्दी गद्य-शैलीकी सर्वथा नयी रचना जिसके हर पृष्ठपर युगकी छाप और प्रतिभाकी चमक अंकित है । सम्भव नहीं कि पुस्तक हाथमें लें और पढ़कर समाप्त किये बिना रख दें ।

मूल्य २.००

● **सूखा सरोवर** : डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल

एक ऐसा स्पष्ट, जीवन्त और हृदयग्राही नाट्यरूप जो लोक-गाथाकी मनोभूमि और रंगशैलीसे यहाँ अवतरित है – विशुद्ध लोक-गाथा-परक रससिक्त नाट्य-शिल्प-में । इस रंगमंचका सर्वथा एक अभिनव स्वरूप और आधुनिक रंगमंच अन्वेषणका एक नया उदाहरण ।

मूल्य २.००

● **शिखरों का सेतु** : डॉ० शिवप्रसाद सिंह

शैल-शिखर रमणीक होते हैं । जो चिर-प्रेरक भी हों, ऐसे शिखर विश्व-साहित्यके महाप्राण व्यक्तित्व होते हैं या फिर अतीतके जीवन और प्राणोंकी वे मार्मिक कथाएँ-व्यथाएँ होती हैं जो उन्हें 'अतीत' कभी नहीं बनने देंगे । प्रस्तुत पुस्तक-द्वारा अनेक ऐसे ही शैल शिखरोंसे साक्षात्कार होगा जिसे पाकर 'लघु मानव' को बरबस लगे कि वह लघु ही रहनेके लिए नहीं। जीवन-यात्रामें कभी अपनेको थकता देखें तो भी एक क्षण इन शिखरोंका सहारा लें, फिर चरण आगे पथपर आप बढ़ चलेंगे ।

मूल्य ३.५०

● **चीड़ों पर चाँदनी** : निर्मल वर्मा

बीसवीं शतीके स्मारक-चिह्नोंकी खोजमें एक भारतीय लेखकके यह संस्मरण अपने-आपको खोजनेका प्रयास हैं – अपनेसे बाहर निकलकर स्वयं अपनेको गवाह बनाने-का प्रयत्न – और इसीलिए ये संस्मरण एक व्यक्तिका निजी 'टेस्टामेण्ट' भी हैं। स्मृतिके ये अंक निर्मल वर्मा युरॅप-प्रवासकी लम्बी अवधिमें समय-समयपर सँजोते रहे हैं । बादमें जोड़नेपर जो मिला, वे न कहानियाँ थीं न डायरी – बल्कि कुछ ऐसे अनुभव-खण्ड जिनमें एककी निरपेक्षता दूसरेकी आत्मीयतासे घुल-मिल गयी है ।

मूल्य ३.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैकलियॅड एण्ड कम्पनी लिमिटेड

मैकलियॅड हाउस,

३, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता-१

मैनेजिंग एजेण्ट्स, सेक्रेटरी और कोषाध्यक्ष

जूट मिल्स

- अलेक्जेण्डर जूट मिल्स कं० लि०
- एलायन्स जूट मिल्स कं० लि०
- नेल्लीमारला जूट मिल्स कं० लि०
- चितावलसाह जूट मिल्स कं० लि०
- ईस्टर्न मैन्यूफैक्चरिंग कं० लि०
- एम्पायर जूट मिल्स कं० लि०
- केलविन जूट कं० लि०
- प्रेसिडेंसी जूट मिल्स कं० लि०
- वेवरली जूट मिल्स कं० लि०

चाय के बगीचे

- अमलुकी टी कं० लि०
- बागमारी टी कं० लि०
- मतकावा टी कं० लि०
- बोरमाह जान टी कं० (१९३६) लि०
- डिब्रूगढ़ कं० लि०
- बैजू वेली कं० लि०
- मार्गरेटस होप टी कं० लि०
- राजभात टी कं० लि०
- रानीचेरा टी० कं० लि०
- रूपचेरा टी कं० लि०
- सुंगमा टी कं० लि०
- तेलोईजान टी कं० लि०
- तिंगामीरा टी सीड कं० लि०
- तिरींहन्ना कं० लि०
- तीयरून टी कं० लि०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Price Annual Rs.10/- per copy Re.1/- for abroad postage extra 18 nP. This Copy

GYANODAY May

License No. 51. Licensed to post without prepayment of postage. REGD No. L-2036

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर
साहूपुरम् में
डाकखाना : अरुमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक
ध्रांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स :

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लि०

१५ ए, हॉर्निमैन सर्किल
फोर्ट, बम्बई-१

टेलीफोन : २५१२१८-१९-१०,

तार : सोडाकेम, बम्बई

भारतीय ज्ञानपीठ काशीकी ओरसे बाबूलाल जैन फागुल्ल-द्वारा प्रकाशित और सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी में मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदय

जून १९६५

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक विकास-उन्नयन
सांस्कृतिक अनुसन्धान-प्रकाशन
राष्ट्रीय एकता एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी

साधिका
विशिष्ट संस्था

भारतीय ज्ञानपीठ

[स्थापित सन् १९४४]

संस्थापक
श्री शान्तिप्रसाद जैन

अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

ज्ञानोदय

जून १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानपीठ प्रकाशन

सम्पादक :
...जैन, रमेश बक्षी

...कीय कार्यालय :
...पुर पार्क प्लेस,
कलकत्ता-२७

पुस्तकालय
गुरुकुल काँगड़ी

ज्ञानोदय

जून १९६५

इस अंकमें :

- चढ़ती धूप और प्रश्नोंकी भीड़
- अँधेरे बन्द कमरे
- मैं और मैं
- अभी बाक़ी है और अमूर्त होना
- दो तारोंका आकाश
- अधरंग
- अस्तित्व-वादियोंकी महफ़िलमें
- त्रायद गिरोह : चीनी लाल पंजा
- नयी कहानी : जातीय परम्परा और बदलता यथार्थ

मोदोलियानी,
महमूद निज़ामी, अजीत कौर, रज़िया फसीह अहमद,
मोहन राकेश, अंचल, सोमा वीरा, सुदर्शन चोपड़ा,
से० रा० यात्री, श्याम शर्मा, धनंजय वर्मा, सुधा अरोड़ा, मधुप,
नईम, शलभ, वीरेन्द्र मिश्र, ओम प्रभाकर, शकुन्त माथुर,
भवानी प्रसाद मिश्र आदि

वितरक :
बैनेट कोलमैन एण्ड कं० लि०, बम्बई-१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके पत्रों का डायरी

■ **जुलाई, १९६४ :** 'ज्ञानोदय' देखा है। आवरणकी कलापूर्ण और प्रतीकात्मक शोकांजलिकी कल्पनाके लिए हार्दिक बधाई स्वीकार करें मेरी। निस्सन्देह यह स्वर्गीय महामानव नेहरूके प्रति उत्कृष्टतम और भावपूर्ण शोकांजलि-श्रद्धांजलिका अविस्मरणीय प्रतीक है। हिन्दीकी किसी भी अन्य पत्रिकाने इतनी उत्कृष्ट और भावाभिभूत शोकांजलि नहीं दी है। यह अविस्मरणीय आवरण ज्ञानोदयके पाठकोंको शायद कभी नहीं भूलेगा।

अलमोड़ा] —शैलेश मटियानी

■ **अगस्त १९६४ :** ज्ञानोदयका यह अंक कि जैसे साहित्यका दर्पण हो। भारतीयका 'महानगर' आँखोंमें तैरने लगता है। डॉ० माचवेका लेख 'साहित्य, सेक्स और स्पष्टवादिता' विवादास्पद है। मेरी इच्छा है कि ज्ञानोदयमें नयीसे नयी चीज़ें हों और आधुनिक आधुनिक कण्ट्रोवर्सीके लिए वह मंच दे सके यह भी अपेक्षित है। ज्ञानोदयका अपना स्थान है हिन्दी पत्रकारितामें।

आगरा] —इन्दुनूतन

■ **सितम्बर १९६४ :** आपका सितम्बर अंक हाथ है। इसके पहलेके भी कुछ अंक देखने को मिले हैं। साज-सज्जा और सामग्री-चयनको लेकर यह अंक कुछ भिन्न हो गया है और यह सन्तोषकी बात है। वैसे ही, डुरेल और कामूका समावेश भी कुछ महत्त्व रखता है। इस तरह कई हैं, जिन्हें प्रस्तुत करनेकी शायद आपकी योजना हो। मज़ा मिलर हैं, लॉरेंस हैं, ज़िद और सार्त्र हैं। काफ़्का और रिल्के हैं। ल्युकास, फिशर और तुष्येंको हैं। रमेश कुन्तल मेघका निबन्ध एक नयी दिशाकी ओर संकेत है। उसकी भलीभाँति परीक्षा होनी चाहिए और बात ठीक जँचे तो अन्तरसाक्ष्योंका आधार लेकर चलनेवाली इस प्रकारकी समीक्षाको आगे बढ़ानेका प्रयास स्तुत्य होगा। काव्यका प्रयोजन क्या हो ?—यह विषय नया तो नहीं है। फिर भी उसको लेकर प्रश्न उठते हैं। डॉ० नगेन्द्रसे आपने जो श्रीगणेश कराया है, उसे बढ़ायें तो खयाल है पाठकों और लेखकोंके लिए कुछ विशेष सामग्री मिले। और, सोचें तो ज्ञानोदय अपनी सीमामें कुछ कुछ समेट सकता है।

कलकत्ता] —कुमारेन्द्र पारसनाथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अक्तूबर १९६४ : अक्तूबरका अंक नयी दृष्टि और विवेकसे (चयन और प्रस्तुतीकरण दोनों दिशाओंमें) परिचित कराता है। समकालीन साहित्यिक-सांस्कृतिक पत्रकारिताके लिए आनेवाले अंक प्रेरणा और आदर्श बनें, यह कामना है। नवलेखनकी प्रवृत्तियों, और व्यापक तौरपर समकालीन कला, विचार और साहित्यकी प्रवृत्तियोंको सामान्य पाठकों तक पहुँचानेमें 'ज्ञानोदय' सहायक होगा, यह आशा हम कर रहे हैं। उसके नये स्तम्भ विचारपूर्ण और रोचक हैं। जैसे : 'किसी एककी उलझन' या 'सापेक्ष डायरी'। राकेशका 'अनात्मकथ्य'-जैसा व्यंग्य जो प्रकारान्तरसे, आत्मकथ्य ही है। रवीन्द्र कालिया-की कहानी 'अकहानी' पढ़कर लेखककी प्रतिभासे हम परिचित होते हैं और डरते भी हैं कि कहीं लेखक महज़ एक 'स्किलफुल' लेखक होकर न रह जाये।

—परमानन्द श्रीवास्तव

गोरखपुर]

नवम्बर १९६४ : 'ज्ञानोदय' का 'समकालीन भारतीय कहानी' विशेषांक मिला। पढ़कर बहुत सुख मिला। इस अंकमें समकालीन कहानीपर विभिन्न विशेषज्ञोंके जो विचार संकलित किये गये हैं उनसे सभी दृष्टिकोणोंका एक समन्वित रूप सामने आता है। विभिन्न भाषाओंमें लिखी गयी नयी कहानियोंका जो चुनाव आपने किया है वह बहुत सुन्दर और सुनियोजित है। जहाँतक सम्पादनका प्रश्न है इस कलामें आपने विशेष निपुणताका परिचय दिया है। 'कमरेके बाहर सूखा हुआ पेड़' शीर्षकसे जो सम्पादकीय लिखा है वह रंग और ढंग दोनों दृष्टियोंसे नया और ताज़ा होनेपर भी, प्रौढ़ताकी छाप उसमें सुस्पष्ट है। प्रत्येक पृष्ठका 'ले-आउट' मन-मोहक है। ऐसा सुन्दर और महत्त्वपूर्ण अंक निकालनेके लिए मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार करें।

—इलाचन्द्र जोशी

इलाहाबाद]

दिसम्बर १९६४ : नया अंक ! काश कि यह अंक पहला होता, या यह सामग्री···कहानियोंको छोड़कर···इस अंकमें गयी होती। (कहानियोंका ज़िक्र अपनी कहानीकी वजहसे) दूसरा अंक पहले अंकसे बिलकुल अलग और विपरीत प्रभाव पैदा करता है। इस अंकमें गयी परिचर्चाके पीछे जितना परिश्रम है···और जितने थोड़े समयमें इसका आयोजन किया गया है···उसके लिए मेरी हार्दिक बधाई।

—मोहन राकेश

नयी दिल्ली]

जनवरी १९६५ : जैसा कि दिसम्बर अंकमें आश्वासन दिया गया था, ज्ञानोदयके नववर्षांकको मैंने उसीके अनुरूप पाया। 'सात सफ़र' स्तम्भका स्वागत है। दूधनाथसिंह की साक्षेप डायरीसे साधारणीकरण होता है। बच्चन और कैलाश वाजपेयीकी कविताएँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनको छू गयीं। नववर्षांककी सफलताकी बधाईके साथ-साथ नववर्षकी बधाई भी।

जबलपुर]

—नन्दकिशोर आकाश

■ **फ़रवरी १९६५ :** ज्ञानोदयका ताजा अंक। कई चीजें अच्छी हैं लेकिन मेरे पत्र [illegible] राजेन्द्रजीके उत्तर ठीक-ठीक नहीं हैं। 'शोकगीत : नये शहरकी सरहद' (रमेश बक्षी) खूब अच्छा लगा, पर्सनली भी और भी कुछ कारणोंसे, आई रीयली मीन इट। जानेवाला इस बार खूब बदला हुआ लगा।

नयी दिल्ली]

—ममता अग्रवाल

■ **मार्च १९६५ :** इस अंकमें श्रीलक्ष्मीचन्द्र जैन लिखित राष्ट्रभाषाकी समस्यापर लेख सुन्दर गम्भीर और विचारणीय है। 'अपने देशके लोग' (कमलेश्वर) के लेखकको तबीयत होती है, दीनदयालके अतिरिक्त शेष पात्रोंके मर्जका इलाज भी सुनें। आपने मेहराको दीप्तिको देखनेके लिए नयी आँखें दी हैं। ऐसी आँखोंकी जरूरत कई दीप्तियों को है जो कि मेहराओंको उसी भाँति देख सकें। ज्ञानोदय दिन-ब-दिन आगे ही बढ़ता जा रहा है।

नीमच]

—बाबूलाल माली

■ **अप्रैल १९६५ :** अंकमें भूखी पीढ़ीके बारेमें सुन्दर और तटस्थ झलकी देखी। सन्दीपन की डायरी तथा देवी राय और बसाकके नाराज हस्ताक्षर नयी पीढ़ीको समझनेमें बड़े सहायक हैं। सच, ज्ञानोदय नयोंका सच्चा प्रतिनिधि है। यह कहा जा सकता है कि साहित्यकी नयी और नवीनतम पृष्ठभूमियाँ अगर किसीको कहीं देखनी हों तो वह ज्ञानोदय अवश्य पढ़े।

बम्बई]

—बिमला रांका

■ **मई १९६५ :** इस अंकमें आपने मुखपृष्ठका काग़ज़ बदल दिया—बहुत ही अच्छा किया। वह भारी और चिकना मुखपृष्ठ कुछ ज़्यादा ही तर था इस सूखे ज़मानेमें और असंगतिके कारण शायद हमेशा अलग जा पड़ता था। मैं पहले ही आपको इस विषयमें लिखनेकी सोच रही थी।

नयी दिल्ली]

—इन्दु जैन

■ **जून १९६५ :** रतन प्रकाशका जो इण्टरव्यू आप जून अंकमें दे रहे हैं आपने उसका जो शीर्षक दिया है : 'चढ़ती धूप और प्रश्नोंकी भीड़' इससे बढ़िया और कोई शीर्षक हो नहीं सकता। क्या कहना है आपकी और ज्ञानोदयकी माडर्न सेन्सिबिलिटीका.....। वाह!

रायगढ़]

—रामेश्वर शुक्ल अंचल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

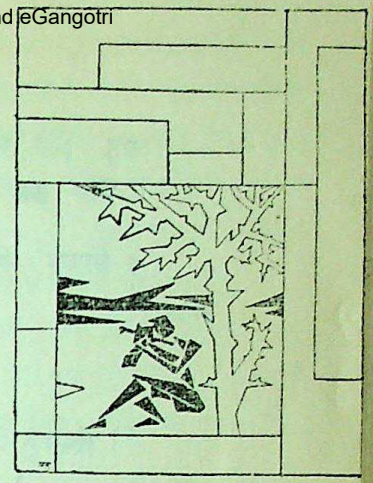

अनुक्रम

मुखपृष्ठ
जितेन्द्र अग्रवा

तीन नये गीत
नईम, शलभ, वीरेन्द्र मिश्र

तीन नयी कविताएँ
ओम प्रभाकर, शकुन्त माथु
भवानीप्रसाद मिश्र ६

पत्र
शैलेश मटियानी, इन्दु भूषण
कुमारेन्द्र पारसनाथसिंह, परमानन्द
श्रीवास्तव, इलाचन्द्र जोशी, मोह
राकेश, नन्दकिशोर मालवीय
ममता अग्रवाल, बाबूलाल मार्ल
बिमला राय, इन्दु जैन, रामेश्व
शुक्ल 'अंचल'

विशेष स्तम्भ :
किसी एककी उलझन : अँधेरे बन्द कमरे : सुधा अरोड़ा, मोहन राकेश ६
अनुचिन्तन : चढ़ती धूप और प्रश्नोंकी भीड़ : रतन प्रकाश, रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' १७
सापेक्ष डायरी : मैं और मैं : रज़िया फ़सीह अहमद (अनु० अहमद सलीम) २६
कला-चर्चा : अभी बाक़ी है और अमूर्त होना : श्याम शर्मा ४३

कथा-कहानी :
सन्नाटे : अजीत कौर ३१
दो तारोंका आकाश : सोमा वीरा ५१
प्रसंग : सुदर्शन चोपड़ा ६५
खण्डित सन्दर्भ : से० रा० यात्री ७३

हास्य :
नाद गिरोह : चीनी लाल पंजा : मनोहर सिंह 'मधुप' १०६

अन्य स्तम्भ :
खोये हुए पृष्ठ : ३६ साल यानी मोदीलियानी : लक्ष्मीधर मालवीय १०३
सात सफ़र : अस्तित्व-वादियोंकी महफ़िलमें : महमूद निज़ामी (अनु० शाकिर पुरुषार्थी) ६७
चरचा : नयी कहानी : जातीय परम्परा और बदलता यथार्थ : धनंजय वर्मा ८५
महचिन्तन : हर तरफ़ युद्धकी छाया : कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर ११५
समीक्षा : दीर्घतपा और दो शोध प्रबन्ध : मधुरेश, रंगनाथ राकेश १२१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन नये गीत

नईम
शलभ
वीरेन्द्र मिश्र

एक :

सुबह की मुडेरों पर, चीलों-से मँडराते
साँझ के कुहासे।

आवारा बेटों-से घर के चारों दुआर,
चोरों-सा आ बैठा कोनों में अन्धकार।
जंग खा गये ताले जोड़-जोड़ उखड़ रहे,
नये क्या बनायें जब बने हुए उजड़ रहे।
लोरियाँ नहीं सोतीं, स्वप्न चले आते हैं
सड़े गले बासे।

सीलन दम तोड़ रही नीचे के तलघर में,
पता नहीं क्या से क्या हो जाये पल भर में।
झाँक रहा है छप्पर बूढ़े शहतीर झुके,
वैशाखी पर सूरज राखी पर मेघ रुके।
पेट पैर एक हुए, जमते जम गयी रात
छोटे दिन आँसे।

आटे में सने हाथ, तवे पर जली रोटी,
मटियारे चूल्हे की क़िस्मत शायद खोटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धरती ही खिसक रही छोटे पड़ गये पाँव,
भीड़ के अकेले में पीछे रह गये गाँव।

गीता सुन रहे सार्थ, कुरुखेते खड़े हुए
उल्टे जब पाँसे।

सुबह की मुडेरों पर चीलों-से मँडराते साँझ के कुहासे।

—मई'म

दो :

मृत्यु !
अब उच्चारता हूँ तुम्हें
वनित होता है सहज नारीत्व !
नारीत्व : जिसको
खते-सुनते-परसते-भोगते
ख्यं को रीता हुआ-सा लग रहा हूँ मैं !
ग कि उसके साथ
र्ष-दिनों-घड़ियों-क्षणों में बीता हुआ-सा…!

मृत्यु !
जिसके स्तनों का दूध
मेरी धमनियों में रक्त बन कर बह रहा है
तुम कभी वह लगीं !
और जिसके हाथ का धागा कलाई पर बँधा है
तिलक माथे पर लगा है
[साक्षी है पर्व राखी का] तुम कभी वह लगीं!

मृत्यु !
जिसकी एक पैनी दृष्टि से बिंध कर
बन गया मैं अर्द्ध मृत शाश्वत,
कहा था जिसने सुलगती दुपहरी में एक दिन
प्यार की सौगन्ध खाकर कहो—

भूलोगे नहीं मुझको !'
तुम कभी वह लगीं !
और जिसके साथ बरियाईं मुझे बाँधा गया था
धनुष पर सीमन्त के शर-सा मुझे साधा गया था
शास्त्र ने अर्द्धांगिनी की जिसे संज्ञा दी
तुम कभी वह लगीं !

मृत्यु !
जिससे घुँघुरुओं की झमक
ज़िन्दगी की तेज़तर रग पर
छू गयी है सधे नश्तर-सी
तुम कभी वह लगीं !
कभी तुमको मक्खियों की भीड़ से मैंने घिरी पाया।
किन्तु
सबके बाद
तुम में कहीं दर्पण की तरह कुछ है
और उसमें कई अंशों में बँटा मैं दिख रहा हूँ!
ग़रज़ यह मैं सदा तुम में रहा
तुम्हें गाया ! जिया ! तुमको सहा !
और फिर मैं आज जब
कुण्ठा भरी इस भीड़ में बिलकुल अकेला हूँ
आओ ! मृत्यु, आओ !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज फिर आँचल उड़ा दो मुझे !
राखी बाँधकर टीका लगा दो फिर !
मुझे हँसकर रिझा दो फिर आज !
करो—पोखर तीर मिलने का इशारा करो !
नाचो ! मुसकराओ !
चितवनों का अर्थ समझाओ !
करो ! मेरे सामने तुम हाथ अपना करो !
मैं स्वयं को धरूँगा उस पर ।
करो—जल्दी करो—आगे करो अपना हाथ !

और, यदि यह सब नहीं सम्भव
सुला दो ! लोरियाँ गाकर सुला दो
मुझे जल्दी तुम !
नीं···द···में···शा···य···द ···अ···के···ला···
प···न···न···र···ह···जा···ये!
मृत्यु जब उच्चारता हूँ तुम्हें
ध्वनित होता है सहज नारीत्व !

—शाहुल

तीन :

कोई नहीं असूर्यम्पश्या
यह भी नहीं,
न वह भी
धूप-स्नान करता अन्तःपुर फिसल रहीं उपमाएँ
पारदर्शिनी खड़ीं प्रणय-जल की सद्य:स्नाताएँ
मानेगी परिधान समस्या
यह भी नहीं,
न वह भी
सबके हरसिंगार ललक कर और डाल पर झूले
अधर-अधर रेशमी प्यास यह—काश किसी को छू ले
भोगेगी गतिहीन तपस्या
यह भी नहीं,
न वह भी
वय के फागुन अनुरोधों पर एक पर्व है मनता
हर बन्धन के शयनकक्ष में रंगों भरी अजन्ता
महाबोधि की संघ-सदस्या
यह भी नहीं,
न वह भी ।

—वीरेन्द्र मिश्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या ईश्वरको प्रमाणित किया जा सकता है ?

गिरीशचन्द्र दीक्षित

■

ज्ञानोदयके गत फ़रवरी अंकमें श्री सूर्यदेव पाण्डेयका एक लेख 'एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्व' प्रकाशित हुआ है। पिछले अंकोंमें कई प्रतिक्रियाएँ दी गयी हैं। यह अन्तिम प्रतिक्रिया है।

■

ब्रह्मके हैं।

किसी भी पदार्थके साथ अनुगत अस्तित्व, पदार्थकी उत्पत्तिके अनन्तरका भाव है। अर्थात् वस्तु या पदार्थकी उपस्थितिके अनन्तर अस्तित्व उस पदार्थमें निहित होता है। इसको इस प्रकार समझ सकते हैं : अश्वके उत्पन्न होनेके बाद वह अश्वत्वयुक्त, घटकी उत्पत्तिके अनन्तर ही वह घटत्वयुक्त और गौकी उत्पत्तिके अनन्तर ही वह गौत्वयुक्त—इसी प्रकार किसी पदार्थकी सिद्धि स्थिति या उत्पत्तिके अनन्तर ही उसमें अस्तित्व निहित हो सकता है। इस प्रकार संसारके किसी भी पदार्थकी उत्पत्ति और उसमें अस्तित्वके अनुगमनके मध्यका सूक्ष्मातिसूक्ष्म क्षण मात्र समय भी अस्तित्वहीन होगा और इसी क्षण विशेषमें वस्तु अस्तित्वहीन होनेसे उस क्षण विशेषके लिए, जो वस्तुकी अस्तित्वहीन दशा है वही अस्तित्वके अनावश्यकत्वके भेदको प्रतीत करानेमें समर्थ हो सकती है। इस प्रकार विश्वके सभी पदार्थोंका अनावश्यक अस्तित्वसे सम्बद्ध होना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामान्यतया सिद्ध किया जा सकता है। ईश्वर, आदिहीन अनादि होनेसे वह सर्वथा आवश्यक अस्तित्वसे सदा-सर्वदा संयुक्त है।

अस्तित्वसम्बन्धी समालोचना करनेपर विश्वके कुछ पदार्थोंको अनादि और उत्पद्यमान पदार्थोंको आदिमान माननेका प्रचार हुआ है। इसी विषयको सत्त्व विद्यामें व्यावहारिक अस्तित्व और पारमार्थिक अस्तित्वके द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। इसी सत्त्व विद्याके अनुसन्धानसे विस्तृत ब्रह्माण्डका ज्ञान करानेवाली ब्रह्माण्ड विद्याका आविर्भाव होता है और निष्कर्ष रूपमें परमार्थ विद्या परिणत होती है।

बीजको देखकर वृक्षके होने-न-होनेके साथ सत्त्वविद्याका स्पष्ट रूपसे कोई सम्बन्ध स्वीकृत नहीं क्योंकि यह कार्यकारण-सम्बन्ध सामान्य तर्कप्रणालीसे स्थापित किया गया है। विशिष्ट तर्क-प्रमाणोंके द्वारा कारणमें कार्यकी सत्ताका स्वरूप और परिमाण निश्चित करना प्रायः असम्भव है।

सजीव सृष्टिमें जब हम देखते हैं कि माता-पिताके शुक्र-शोणितका संयोग प्राथमिक रूपसे अनिवार्य है। इसका अर्थ यह है कि पुरुषके शुक्र बीजमें अथवा स्त्रीके शोणित बीजमें स्वतन्त्र रूपसे किसी कार्यका अस्तित्व निहित नहीं है। शुक्र-शोणित संयोग और उसके अनन्तर अन्यान्य कारण-संयोगोंके द्वारा सामान्य रूपसे नवीन जीव-सृष्टिके अस्तित्वको स्वीकार किया गया है। पुष्पोंके द्वारा फलोंकी उत्पत्तिमें भी यही प्रकार माना गया है। इससे केवल किसी वृक्षके किसी एक बीज मात्रको सम्पूर्ण वृक्ष को समाविष्ट करनेवाला मानना युक्तिसंगत नहीं होगा।

बीजके साथ अन्यान्य कारण-संयोग वृक्षके किन-किन अवयवोंका विकास करनेके लिए समर्थ हैं, यह विचारणीय विषय है। इसी अनुसन्धानमें असत्कार्यवादका प्रादुर्भाव होता है और इसीलिए कार्य-कारणभावके विषयमें सत्त्वविद्याके एक मात्र वाक्यके द्वारा निर्णय लेना बड़ा दुरूह और संकटापन्न है।

बीजका अस्तित्व हमारे सम्मुख स्पष्ट और प्रज्वलित है और उसका वृक्षरूपमें विकास उतना अभ्रान्त नहीं क्योंकि बीजसे होनेवाले वृक्षरूप परिणामकी प्रत्येक प्रक्रिया को प्रत्यक्ष रूपसे केवल एक मात्र बीजसे ही सम्बद्ध स्थापनाके प्रकाशमें सिद्ध नहीं किया जा सकता।

तर्क-प्रवाहसे बचनेके उपायके रूपमें बीज होनेके कारण वृक्षका सद्यः स्वीकार कर लेना ही पर्याप्त हो सकता है। यही रूपान्तरित न्याय होगा।

जब किसी वस्तुके ज्ञानके लिए सिद्धान्त स्थापित करना होता है तब, उस सिद्धान्तमें अपवाद-दोष नहीं होना चाहिए। अपवादयुक्त सिद्धान्तकी स्थापनामें दोष नहीं माना जाता। जैसे धूमके साथ अग्नि और अग्निके साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसकी व्याप्तिमें कोई भेद ही न रहे। सभी जानते हैं कि इन दो व्याप्तियोंमें अपवादके अस्तित्व और अभावका ही भेद है। इस प्रकार निर्णयके परिणामस्वरूप सिद्धान्तकी स्थापनाके समय एक भी अपवादका होना बाधक ही नहीं अपितु घातक ही सिद्ध होगा।

किसी पदार्थको अस्ति कहनेसे उसमें अस्तित्व आता है अर्थात् यदि कोई पदार्थ है तो उसमें अस्तित्व धर्म रहेगा जैसे गौमें गोत्व, अब अस्तिमें रहनेवाले धर्म अस्तित्वका भी होना सिद्ध होगा, तो अस्तित्वगत अस्तित्व शब्द व्यवहार होगा और इसीको अस्तित्वत्व, इस प्रकार दो भावप्रत्ययोंके द्वारा व्यक्त किया जायेगा। अब अस्तित्वगत अस्तित्व नामक सिद्धान्तकी शृंखला अनन्तकाल तक चलती रहेगी और इसीसे बचनेके लिए ही अनवस्था-स्वयंसिद्धि आदिका शब्द-व्यवहार करते हुए वाक्छलसे बचनेका उपाय करनेवाले दार्शनिक जाति, धर्म आदि पदार्थोंका मूलतः अस्वीकार करनेवाले दार्शनिकोंको पूर्ण सन्तोषप्रद उत्तर नहीं दे सकते।

दर्शनकी कोमल कठिन तर्क-प्रणाली और अन्यान्य ऊहापोह ईश्वरतक पहुँचनेके सहायक माने जाते हैं। अब यदि वही ईश्वर—आदर्श स्वरूप—सर्वगुणसम्पन्न — सर्वथा दोषरहित—केवल कल्पनाप्रसूत और वास्तविकतासे अतिशय दूर ही सिद्ध हो जाये तो अपने आप अस्तित्वगत अस्तित्वके अनुसन्धानमें ईश्वरका अस्तित्वगत होना कुछ भी अर्थ नहीं रखता।

यदि ईश्वरकी विषयगत यथार्थता प्रमाणित नहीं की जा सकती, अर्थात् उसको सिद्ध करनेके पर्याप्त प्रमाण प्राप्त नहीं तो अप्रमाणित करनेके अन्य प्रयत्न किस प्रकार किये जा सकते हैं। सामान्यतः दार्शनिकोंका यही अभावमूलक निर्णय है कि जिसकी यथार्थता प्रमाणित नहीं की जा सके वही अयथार्थ और अप्रमाणित माना जायेगा। इसके विरुद्ध तर्क अथवा निर्णय प्रस्थापित किये बिना ही ईश्वरको अथवा उसकी विषयगत यथार्थताको अप्रमाणित होनेसे बचानेके कौन-से उपाय प्रदर्शित किये जा सकते हैं।

सर्वसम्भव साधनोंसे युक्त, विवेकपूर्ण कारणोंका कारण, एकमात्र ईश्वर, जिसको सर्वशुभगुणसम्पन्न और दोषरहित मानकर चलनेपर अकाल-अतिवृष्टि-अन्योन्य रागद्वेष-परस्पर हिंस्य-हिंसक जीव सृष्टि आदि अनेक प्रकारकी और सदा-सर्वदा अनुभवमें आनेवाली अभावप्रचुर जीवन प्रणालीमें भी एक नियमितता पक्षपातहीनता और अशरणशरणत्व अथ च दीनोद्धरण आदि शुभ गुणोंके अवकाश प्रदानार्थ कर्म परम्परा और उसके तर्कसीमा चिह्नोंसे अपनेको बचानेके लिए अनादि सृष्टिप्रवाह आदिकी चर्चा स्वीकारादि करते हुए हम कहाँतक सुरुचिपूर्ण, स्वस्थ और आश्रयमूलक तत्त्वको प्राप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करनेमें सफल हो सकते हैं—यह भी विचारणीय है।

जब हम सच्चे अन्तःकरणसे यह कहना प्रारम्भ करते हैं कि सर्वोच्च सत्ताके अनुभवके लिए मस्तिष्कका शुद्धीकरण आवश्यक है उस समय हम विशुद्ध तर्कवादियोंकी पंक्तिमें अपनी उपस्थितिको भूलकर अपनेको भावप्रवण भक्तिवादियोंकी पंक्तिमें स्थापित कर देते हैं। तर्ककी शुद्धता और दोष-दुष्टताके भेद हमारे ईश्वरविषयक सिद्ध साधनमें पर्याप्त नहीं हुए तभी पुराणपन्थियोंके शूद्रादि नीच जातियोंके वेदादि सद्विद्याओंमें अनधिकारके सदृश हम भी आधुनिक विकासशील मानव समुदायके एक बड़े बुद्धिजीवी वर्गको मस्तिष्कके शुद्धीकरणके अभावमें ही ईश्वरविषयक सृष्टि करनेमें असमथ अतएव हमारे परिसंवादके अनधिकारी स्थापित कर देते हैं।

इस प्रकारके सीमाबन्धनोंको स्वयंसर्जित करनेके उपरान्त भी अस्तित्वगत अस्तित्वके अनुसन्धानमें अकस्मात् ही ईश्वरकी अवतारणा करनी पड़ती है। सभी सम्भव तर्कोंके द्वारा भी ईश्वरका पदार्थ रूपमें या भावरूपमें सिद्ध होना कठिन जानकर उस असिद्धिके अपने दृष्टिदोषसे विशुद्ध तार्किकोंके द्वारा प्रस्थापित तर्क खण्डनोंकी उपेक्षा करते हुए उनको सत्त्वमार्गके विरोधी अथवा मार्गभ्रष्ट आदि उपनामोंसे अलंकृत करते हुए उच्चस्वरमें बोलनेका आश्रय लेनेका प्रयत्न करते हैं। यह भी विजय प्राप्त करनेका एक बालिश प्रयत्न है।

ईश्वर के स्वयंसिद्ध अस्तित्वगत अस्तित्वविषयक विचारणाकी यही एक [illegible] प्रतारणा है कि किसी प्रज्वलित वह्निके उष्णत्व और शीतलत्वके परस्परविरोधी तार्किकोंको क्रमशः अग्निका प्रत्यक्ष [illegible] कराकर किसी एक प्रकारका ऐकमत्य स्थापित किया जा सकता है। परन्तु ईश्वरविषयक ऐसा कोई संस्पर्श परस्परविरोधी तार्किकोंके ऐकमत्यके लिए अवलम्बन रूपमें दृष्टिगोचर नहीं होता।

जब हम ईश्वर-विषयक धारणाको सिद्ध करते हुए किसी भी प्रकारकी तर्कप्रणालीका प्रारम्भ करनेका प्रयत्न करते हैं तब तर्क सर्वथा शुद्ध और पक्षपातहीन सिद्धान्तको विसर्जित करते हुए अपने अनुकूल तर्क मात्रको ही एकत्र करनेका संकुचित प्रयास करते हैं। प्राचीन अथवा अर्वाचीन दार्शनिक, वे चाहे किसी देश या भाषाके हों, तर्कके सर्वस्वीकृत सिद्धान्तका परमादरपूर्वक पालन करते हैं। हमारी प्रथमतः स्थापित ईश्वर-विषयक स्थापनाओंके मूलमें तीक्ष्ण आघात पहुँचाते हैं तब एकाएक हम ईश्वरको अपने अन्तरतम अपने जीवात्माके द्वारा अनुभव करने लगते हैं और प्यार-भरी बातोंके द्वारा अनेक प्रकारकी प्रार्थनाओं और वाग्जालकी जालमें उनको उलझ जानेका आमन्त्रण देते हैं। इस शब्द-जालसे अप्रभावित रहकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तर्कोंकी तीव्र तर्क-धाराओंके उत्तरमें हम उनको सत्वविद्याके विरोधी, मार्गभ्रष्ट आदि उपनामोंसे अलंकृत करनेका प्रयत्न करते हैं और अकस्मात् ही अपनेको वेगवान् तर्क-प्रवाहसे निकालकर नैषा तर्केण मतिरापनेया', 'तर्काप्रतिष्ठानात्' आदि वाक्यसमूहों द्वारा त्राण पानेका प्रयत्न करना चाहते हैं और अकस्मात् ही ईश्वरसिद्धिकी उच्च घोषणाके द्वारा हम सारे समाजको अपनी ओर आकर्षित कर उन सच्चे तार्किकोंको उपेक्षाके गहरे गर्तमें सड़नेके लिए और अपमान सहन करनेके लिए छोड़ देनेके प्रयत्नमें सफल हो जाते हैं।

ज़रा गम्भीर विचारकर हमें यह सोचना ज़रूरी है कि अस्तित्वगत अस्तित्वके अनुसन्धानमें अकस्मात् ईश्वरका प्रवेश किस प्रकार हो जाता है। सामान्य और सरल तर्क-प्रणाली द्वारा जब हम यह कहते हैं कि 'मैं हूँ क्योंकि मैं सोचता हूँ' तब हम यह भूल जाते हैं कि किसी वस्तुके अस्तित्व-विषयक अन्यनिष्ठ सन्देहाभाव अथवा निश्चय ही उसके अस्तित्वका समर्थक है न कि उसका अपना निश्चय, परन्तु यहाँ इस वस्तुको समझते हुए भी इस प्रणालीसे पूर्व स्थापित ईश्वरकी अवतारणा असम्भव समझकर हम जानबूझकर उलटी तर्क-प्रणालीका आश्रय लेकर कहने लगते हैं कि 'मैं सोचता हूँ इसलिए मैं हूँ' और इस प्रकार ईश्वरको आसानीसे अस्तित्वगत अस्तित्वके रूपमें स्वीकृत करा लेनेका सन्तोष प्राप्त कर सकते हैं।

उक्त वाक्य-विषयक विश्लेषण करनेसे यही सिद्ध होगा कि 'मैं सोचता हूँ इसलिए मैं हूँ' इससे बड़ा ही भयंकर निष्कर्ष निकलता है। जो सोचनेमें असमर्थ हो अथवा मस्तिष्क-हीन जड़-पदार्थ हो उसका अस्तित्व असम्भव-सा हो जायेगा। इसलिए इस दोषसे दूर रहनेके लिए हम ज़रा-सी दलील कर देते हैं कि 'मैं सोचूँ या न सोचूँ पर हूँ अवश्य'। अब इस वाक्यांशसे सारे पदार्थोंका अस्तित्व सिद्ध करनेका हमारा प्रयास है। यहाँ हम समझते हैं कि सोचनेका साधन मस्तिष्क है और सोचनेवाला मैं हूँ; अब यदि मस्तिष्क स्वयं ही सोचे तभी उसका अस्तित्व सिद्ध हो और मस्तिष्कको स्वयं सोचनेके लिए अलग मस्तिष्ककी आवश्यकता होगी। इस प्रकार जब सोचनेकी असमर्थताके कारण मस्तिष्क ही अस्तित्वहीन हो जायेगा तो उसके द्वारा सोचनेवाला कैसे अस्तित्वगत रह सकता है!

स्वप्न और विश्वको परस्पर विपर्यस्त रूप से रखनेके तर्कको जब सर्वस्वीकृत करानेका प्रयास करते हैं तब सर्वस्वीकृत ज्ञानप्रणाली, तर्कप्रणाली और पदार्थविज्ञान आदि अनेक विद्याओंका अपलाप करना अनिवार्य हो जाता है।

अनेक प्रकारकी तर्क-कुशलताओंके द्वारा ईश्वरको शब्दतः और अर्थतः सिद्ध कर लेनेका सन्तोष प्राप्त करते ही सृष्टिकी उत्पत्ति,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदयकी ओरसे
लेखकोंके लिए विशेष निवेदन :

- कृपया अपनी रचनाओंकी टंकित अथवा साफ़ लिखी प्रति भेजिए और उसकी प्रतिलिपि अपने पास अवश्य रख लीजिए।
- लेख, निबन्ध, कहानी और हमारे स्तम्भोंके अन्तर्गत यदि आप सामग्री भेजें तो ज्ञानोदयके अधिकसे अधिक आठ पृष्ठोंसे रचना लम्बी न हो। यदि कोई लम्बी रचना भेजना ही चाहें तो सम्पादकसे पहले पूछ लें।
- हमारा प्रयत्न यही रहेगा कि अधिकसे अधिक एक मासके अन्दर ही निर्णय-की सूचना आप तक पहुँच जाये। रचना भेजनेके बाद एक मास तक आपको कोई सूचना न मिले तो ही हमें लिखिए। स्वीकृत रचनाओंकी सूचना पाते ही कृपया यह अवश्य लिख भेजिए कि रचना अप्रकाशित-अप्रसारित है और ज्ञानोदयमें प्रकाशित होने तक अप्रकाशित-अप्रसारित ही रहेगी। टिकिट-लगा लिफ़ाफ़ा रचनाके साथ हुआ तो ही अप्रकाशनीय रचनाएं लौटायी जा सकेंगी, अन्यथा नहीं। स्वीकृति-सूचनाकी सम्पुष्टि भेजनेके बाद तथा अस्वीकृतिकी सूचना प्राप्त होनेके बाद कृपया उस रचनाके सम्बन्धमें पत्र-व्यवहार न कीजिए। क्षमा करें, उन रचनाओंको लौटाना हमारे लिए असुविधाजनक होगा जिनके लिए वापसी-टिकिट आप निर्णय-की सूचना पानेके बाद भेजते हैं।
- लेखकोंको, उनकी रचना जिस अंकमें प्रकाशित होगी, वह अंक अवश्य भेज दिया जायेगा, साथ ही दो-दो ऑफ़-प्रिण्ट्स भी।
- हमेशा पारिश्रमिक यथासम्भव अग्रिम और रचना प्रकाशित होनेके एक सप्ताह बाद भेज दिया जाता है।
- सारे सम्पादकीय पत्रव्यवहार केवल इस पतेपर कीजिए :

सम्पादक : ज्ञानोदय; ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थिति, विनाश जीवोंके सुख-दुःख आदिके साथ उस ईश्वरके समन्वयात्मक संयोजनका वह ही दुरूह और असमाप्य विषय तर्क रूप-में हमारे सम्मुख उपस्थित होता है। इस कठिनाईसे हम सद्यः ही ईश्वरको पदार्थरूपसे हटाकर भावरूपमें परिणत कर सृष्टिसे साथ उसके किसी भी प्रयोजनका अस्वीकार करते हुए किसी भी प्रकारके कार्यको करनेमें अस-मर्थ केवल भावरूपमें ही ईश्वरका स्वरूप परिणत करते हैं और इस प्रकार हम यह सिद्ध करनेका प्रयत्न करते हैं कि हमने पूर्वतः स्थापित और अवश्य साधनीय ईश्वर-को सिद्ध किया। इसमें भी आश्चर्यजनक तथ्य तो यह है कि हमने ईश्वरको सिद्ध करनेके लिए तर्कका ही एकमात्र आश्रय लेकर उसके अस्तित्वगत अस्तित्वको सिद्ध कर दिया।

इस निष्कर्ष पर तो सम्पूर्ण तर्क-प्रणाली-को विराम हो जाना चाहिए। जब यह घोषणा की जाये कि मनुष्यको छोड़कर अन्य जीवोंके लिए ईश्वरका कोई महत्त्व नहीं है। इससे अधिक स्पष्टता हो जायेगी कि ईश्वरको अस्तित्वगत अस्तित्वके रूपमें सिद्ध करना हम मनुष्योंको पूर्वतः अभिप्रेत है और इसी अनु-सन्धानमें सभी स्थापनाओं और तर्क-प्रणा-लियोंका प्रादुर्भाव हुआ है। अतः हमारे लिए ही ईश्वर सिद्ध और महत्त्वपूर्ण हुआ। ईश्वरके स्वयं होने-न-होनेका हमारी दृष्टिमें कोई महत्त्व नहीं है। इसीलिए हमने मनुष्येतर जीवोंको मुक्त कर दिया और अपने लिए ईश्वरको स्वीकृत कर लिया।

विश्वमें अस्तित्ववादके महान् मनीषी श्री जाँ सार्त्रके तर्क-प्रकारोंके विषयमें कुछ भी कहनेके लिए हम अपनेको अनधिकारी समझते हैं और इसीलिए विनम्रतापूर्वक क्षमाके प्रार्थी हैं। इस विषयके विशिष्ट विद्व-ज्जनोंसे ईश्वरकी पार्श्वभूमिको छोड़कर विशुद्ध अस्तित्ववादके विषयमें अधिक अपेक्षा करते हैं।

■ ■

क्षमायाचना सहित, सूचनार्थ निवेदन है कि अनुक्रममें पृष्ठ ६ पर संकेतित रचना 'किसी एककी उलझन : अँधेरे बन्द कमरे' इस अंकमें न प्रकाशित होकर आगामी अंकमें आ रही है। उसके स्थानपर ही श्री गिरीशचन्द्र दीक्षितकी 'एक सर्वथा आवश्यक अस्तित्व' की अन्तिम प्रतिक्रिया 'क्या ईश्वरको प्रमाणित किया जा सकता है' दी गयी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय ज्ञानपीठ

के

दो अनूठे, नयनाभिराम, कलात्मक प्रकाशन

परिणय गीतिका

विवाहके विभिन्न अवसरोंपर गाये जानेवाले गीतोंका अपूर्व संकलन। पर ये गीत न प्रचलित गीतों-जैसे हैं न निरे साधारण ही, ये गीत विशेष हैं। इनमें एक ओर लोक गीतोंकी मधुरता और मोहकता महकती मिलेगी, तो दूसरी ओर साहित्यिक सुषमा और काव्यका रस। परम्पराओं और भावनाओंके साथ आजकी चेतना और काव्यका नया रस इनमें आ रमा है।

साथ ही, बिवाह सम्बन्धी विभिन्न रस्मों-की संक्षिप्त जानकारी भी दे दी गयी है और प्रत्येक गीतकी भरसक व्यवस्थित स्वरलिपि भी।

भारतीय ज्ञानपीठका यह प्रकाशन साहित्य-में अपने प्रकारकी सर्वप्रथम कृति है: रुचिर, कलात्मक, उपयोगी।
उपहारमें देने-लेने योग्य! घर-घरमें प्रति होना आवश्यक!! मूल्य ५.००

शैशवांकन

शिशुके जन्मोत्सव पर होनेवाले आयो-जनोंकी शोभा स्मरणीय होती है। बाल-विकासका प्रत्येक चरण विस्मयकर है। इन आयोजनोंकी स्मृतिको और शिशुकी विकास-प्रगतिको मोहक तथा कलात्मक ढंगसे अंकित करके सुरक्षित रखनेकी इच्छा प्रत्येक माता-पिताके लिए स्वाभा-विक है।

'शैशवांकन'में जन्मोत्सवसे सम्बन्धित अवसरोंका तथा शिशुकी उत्तरोत्तर प्रगतिका लेखा आयोजित है। 'शैशवांकन' मधुर स्मृतियों एवं उपयोगी तथ्योंके संर-क्षणके लिए तथा स्नेह-आशीषकी अभि-व्यक्तिके लिए सर्वथा नया और प्रीतिकर उपहार है। अपने शिशुके लिए स्वयं बरतें! और अपनोंको उपयोग करनेके लिए भेंट करें। मूल्य १२.००

अपने यहाँके अच्छे पुस्तक-विक्रेतासे प्रतियाँ प्राप्त करें
अथवा किसी निम्न स्थानसे मँगायें

भारतीय ज्ञानपीठ

प्रधान कार्यालय : ९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता – २७
विक्रय केन्द्र : ३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, दिल्ली – ६
टेलेफ़ोन : कलकत्ता – ४५-४४३२ :: टेलेफोन : दिल्ली-२७२५८२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चढ़ती धूप और प्रश्नोंकी भीड़

प्रश्न : *रतन प्रकाश*

उत्तर : *रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'*

■

भेंटवार्ता शायद सवाल-जवाब और शंका-समाधानके कारण रूढ़ होती जा रही है। पर इस रचनामें एक बदला हुआ स्वरूप देखेंगे—कहीं प्रश्न महत्त्वपूर्ण हैं, कहीं उत्तर। भेंटके समय पास कहीं रात-रानी फूली थी, उसकी उद्दाम महक सारे कमरे और अंचलजीकी ५१वीं सालगिरह तक फैल गयी थी।···

■

गहरे आन्तरिक सत्य भी होते हैं जो इस प्रेरणाके पीछे चलनेवाले सक्रिय सामाजिक प्रभावों तक सीमित नहीं रह पाते। इसका यह तात्पर्य भी नहीं है कि साहित्यको ऐसी स्वतन्त्र अभिव्यंजना माना जाये जो देश-कालके बोधसे सर्वथा निरपेक्ष हो। वस्तुतः ये सारे ऊहापोह रचनाकारकी भीतरी और आत्मिक सच्चाईसे किसी प्रकारका वैपरीत्य नहीं रखते हैं जो उसकी सबसे सगी और सक्रिय प्रेरणा होती है। यह प्रेरणा इतने प्रकारके ज्ञात और अज्ञात प्रभावोंके फलस्वरूप जन्मती है कि उसे विशेष प्रकारके प्रतिबद्धताके दायरेमें बाँधना न केवल कठिन वरन अनावश्यक भी है। साहित्यको अकसर स्वरूपदर्शक (सब्जेक्टिव) और सर्वरूपदर्शक (आब्जेक्टिव) इन दो विभागोंमें बाँटकर समस्त असामाजिक किन्तु सृजनात्मक प्रवृत्तियोंको समझनेकी चेष्टा की जाती है। व्यक्तिगत अहंकी तुष्टिको भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यके प्रयोजन और कलाकारोचित परिपूर्तिके एक उद्देश्यके रूपमें सामने लाया जाता है। कलाकारका स्वरूपदर्शन (सब्जेक्टिविटी) कोई ऐसी अछूती और सामाजिक प्रभावोंसे निर्लिप्त वस्तु नहीं है जो केवल भीतर-ही-भीतर विकसित होती है। मैं मानता हूँ कि कलाकारकी स्वरूपदर्शिका वृत्ति बाह्य आघात-प्रतिघातोंसे बराबर प्रभावित होती रहता है और ये बाह्य प्रभाव भी उस सामाजिक यथार्थता और वस्तुसत्ताके होते हैं जो बराबर परिवर्तित होती है। पर रचनाकारका अपना निजी निश्चयात्मक जीवनाधार भी होता है—भीतरका वह अपरिवर्त संस्कारशील आत्मविश्वास जो उसे आत्माके सर्वोच्च सत्योंकी अभिव्यक्तिका निजीपन प्रदान करता है। फैशनेबिल आलोचकों और साहित्यिक नेताओं या अगुआ यशःप्रार्थी गुट्टबाजों-द्वारा प्रतिपादित नयी-नयी 'स्यूडो' जीवन-दृष्टियोंके बीच उसका यही निजीपन या आन्तरिक स्व-अन्वेषी व्यक्तित्व उसे सृजनकी सच्चाई और आत्मनिष्ठाके प्रति जागरूक, स्थिर और आग्रहशील रखता है।

—क्या नयी आर्थिक व्यवस्था और राजनैतिक मान्यताएँ किसी देशकी साहित्यिक परम्पराओंको तोड़कर नयी परम्पराओं और मान्यताओंको दिशा देती हैं?… किसी भी देशके पुनरुत्थान के साथ वहाँके साहित्यका भी पुनरुत्थान होना स्वाभाविक नहीं है?

—देशके आर्थिक पुनरुत्थान और योजनाबद्ध नवनिर्माणके फलस्वरूप वहाँके साहित्यका भी पुनरुत्थान हो—सुननेमें जैसा कार्य-कारण सम्बन्धयुक्त और सुगम लगता है वैसा वास्तवमें नहीं है। कमसे कम अपने देशमें तो यह घटित नहीं हो पा रहा है। भारतीय जीवनकी समष्टिगत कटुता, कुरूपता, सामाजिक और आर्थिक नवनिर्माणकी छटपटाहट और प्रगतिवादकी ढहती हुई व्यवस्थाके सच्चे चित्र उसमें कैसे और कितने मिलते हैं? कलाकारकी स्वभावजन्य अराजकतावादी मनोवृत्तिका समाजोन्मुखी विकासधाराके साथ समन्वय अभी कहाँ हो पाया है? पुरानी परम्पराओंको नयी दिशा जरूर मिली है और मिलती जा रही है पर इस नये मोड़में अभी वेग और गति कहाँ आ पायी है? नयी शैलियाँ और नये प्राणोंका निर्माण कहाँ कर पाये हैं? साहित्यमें सामाजिक और राष्ट्रीय सत्यको अनुभव और व्यक्त ही नहीं किया जाता वरन उसे लोकधर्म और विश्व-बोधमें परिणत भी किया जाता है। बाह्य स्थूल चित्रणों और संवेदनोंसे आगे बढ़कर देशकी सांस्कृतिक आत्माके अविनाशी संगीतके स्वरोंकी खोज भी तो की जाती है। यह खोज पौराणिक कथाओं और चरित्रोंके केवल निर्जीव लीलाभाव या वीरपूजा-पद्धतिसे अभिव्यक्त करनेसे ही पूरी नहीं होती। नयी आर्थिक व्यवस्था तब मानी जाये जब मानवका अपने भाग्यपर यथासम्भव अधिकसे अधिक अधिकार हो जाये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और समाजमें अधिक मानवीय, सुखद और सन्तोषप्रद जीवन-स्थितियाँ उत्पन्न हो जायें। साहित्य जीवनका चित्र होते हुए भी जीवनसे अधिक होता है। उसमें जीवनके पुनर्सृजनके साथ ही उसके पीछे जीवित आदर्शवाद भविष्यनियामिका जीवन-योजना और मानवीय शक्तियोंके समाजीकरणका सन्देश होता है। साहित्यमें मानव केवल जीनेके लिए ही जीवित नहीं रहता वरन् वह अपने अनुभवों-को चुन-चुनकर उनका विश्लेषण करता है और इस विश्लेषणके फलस्वरूप भविष्यके अनुभवोंको व्यापकतम रूपसे अधिक सुखद बनानेकी चेष्टा करता है। साहित्यके पुनरुत्थानसे मैं यही अर्थ लेता हूँ। जीवनसे हटानेवाला पलायनशील कुण्ठावाद बढ़ती हुई सामाजिक शक्तियोंके चित्रों और प्रेरक अवसरमें बाधक हो रहा है—भले ही यह कुण्ठावाद और आत्मोपासनावाद सपनोंके मनोरमक आकर्षणोंसे परिपूर्ण क्यों न हो। साहित्यमें युग-परिवर्तन और जागरणकी सूचना-अधिकारियों और जनसम्पर्क-विधियों-द्वारा नहीं आती, जैसा राजनीतिमें होता है। यहाँ तो जीवनके स्थायी स्वरूपोंके अनुरागते मार्मिक चित्र और प्राणपोषक निष्ठा चाहिए जो लेखककी स्वतन्त्र जीवन-कल्पना और बौद्धिक सत्ताकी परिचायक हो।

—अनेक सशक्त लेखकोंका कथन है कि वे अपनी मेज़पर बैठकर अपनी लेखनी-द्वारा अनेकों जीवन जीते हैं और वह भी सफलता-

सामाजिक चिन्तन और देश-कालकी माँगें भी व्यक्तिको ही लेकर चलती हैं। दोनोंका महत्त्व रचनाकारकी प्रेरणागत सच्चाई और तत्त्वनिष्ठापर निर्भर करेगा। यहाँ भी अनुभूतिकी ईमानदारीका प्रश्न आपके सामने खड़ा होता है।

पूर्वक लेकिन कुछ दूसरे लेखक ऐसी अनुभूतियोंको नक़ली अनुभूतियाँ कहते हैं और भोगनेको सृजनकी प्रथम शर्त मानते हैं!

—अनुभूतिको केवल भोगनेकी स्थूल क्रिया तक ही सीमित नहीं किया जा सकता। असली भोग तो मनका भोग है। वही सच्ची और गहरी मर्मानुभूति है जो नक़ली भेदको तत्काल प्रकट कर देती है। अपनी मेज़पर बैठकर अपनी लेखनी-द्वारा अनेकों जीवन जीनेमें कोई हर्ज़ नहीं है यदि वे जीवन अपने भीतरी भोगके स्तरपर जिये गये हों और उनकी सच्चाईको पूरी भावनात्मक ईमानदारी और पारदर्शी तीक्ष्णताके साथ अनुभव किया गया हो। भावोंके घात-प्रतिघातसे, घटनाओंके उत्थान-पतनसे और परिस्थितियोंके संघर्षसे लेखकके अन्तर्जगतमें जो मानवीय सच्चाइयाँ उभरती हैं वे अवबोध और विवेक-द्वारा भोगी जानेसे सच्ची और आत्मीय हो उठती हैं। अनुभूति एक अत्यन्त व्यापक जीवनव्यापी सक्रिय, गहरी प्रक्रिया है जब कि स्वानुभूति सीमित और निष्क्रिय है। हो सकता है कि भोगने-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की वास्तविक स्थिति अनुभूतिको और प्राणवती बना दे। अकसर यह होता भी है। पर रचनाकी शक्ति और अत्यधिक सचाई अपनेमें स्वयं अनुभूतिके असलीपन या नक़लीपनका प्रमाण है। साहित्यमें व्यक्त यथार्थताको भोगने और जीनेकी शर्त सृजनकी पहली शर्त नहीं है वरन उस यथार्थताको अपनी अन्तश्चेतना और संवेदनाके गहन सूक्ष्म स्तरपर सहने और उसके अन्तरस्थको भीतर-भीतर पकाकर आत्मसात् किये जानेकी भाव-प्रवणता ही सृजनकी पहली शर्त है। पुत्रशोक-पीड़िता माँके दग्ध मनकी अन्तर्ज्वालाकी मार्मिक अभिव्यक्तिके लिए स्वयं उस आघातको सहना या झेलना अनिवार्य नहीं। लेखककी शक्ति अभोगी जीवनानुभूतिको भी वास्तविक और आघातपूर्ण बना देती है। दूसरी ओर कमज़ोर-अकुशल लेखकके हाथों अनेक बारकी सही जीवन-यथार्थता भी निष्प्राण और झूठी प्रतीत होती है। अनुभूतिकी प्राणवत्ता ही उसकी असलियत है जबकि उसकी निष्प्राणता उसका नक़लीपन।

--होमर-वाल्मीकिसे अबतक बौद्धिकता का चरम विकास ही हुआ है लेकिन होमर, वाल्मीकि या कालिदास-जैसा उदात्त साहित्य-सृजन क्या इस शताब्दीमें सम्भव है? किसी महान् साहित्यकारको उत्पन्न करनेमें कोई संस्कृति उत्तरदायी होती है या किसी देश या जातिमें साहित्यकार होनेके पीछे मात्र संयोग ही होता है?

--बौद्धिकताके चरम विकास और उदात्त साहित्य-सृजनसे कोई विशेष सम्बन्ध नहीं। किस शताब्दीमें क्या सम्भव है क्या नहीं यह तो बादकी बात होती है उसकी उपलब्धियोंका अवलोकन और मूल्यांकन होता है। विभिन्न समयोंमें मनुष्यकी नैतिकताएँ और न्याय, सुख, शान्ति और स्वातन्त्र्य सम्बन्धी परिकल्पनाएँ अलग-अलग होती हैं। वाल्मीकिकी रामायण और व्यासके महाभारतमें यह अन्तर साफ झलकता है। समाजकी विकासशील स्थिति बदलती हुई आवश्यकताओंके अनुसार आदर्शों और मान्यताओंकी भूमिका तैयार करती है। बौद्धिकताका विकास प्रोत्साहन क्रमशः कम ही करता जाता है क्योंकि प्राचीन व्यवस्थाके आधारपर बने प्रोत्साहन जीवन-दर्शन भी क्रमशः परिवर्तित होते रहते हैं। नैतिकताको सामाजिक रूप देने और समाजके बढ़ते जानेवाले अन्तर्विरोधोंके समाधानकी प्रेरणा धीरे-धीरे साहित्यमें कम रही और औदात्यीकरणके चेतन या अचेतन संस्कार धीरे-धीरे छीजते गये। टालस्टाय और रवीन्द्रनाथ-जैसे लेखक और कवि भी इसी शताब्दीमें या इसके आस-पास हुए जिनका सम्पूर्ण साहित्य उदात्त मूल्यनाओंका ही सृजन और प्रतिफलन है। इसलिए मैं आपके प्रश्नमें कोई मूल प्रश्न नहीं पाता। महान् साहित्यकारको उत्पन्न करनेमें कोई संस्कृति इसी अर्थमें उत्तरदायी मानी जा सकती है कि अपनी सफलता और सार्थकताके लिए उसे दरकार होती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्पन्न किसी देश या जातिमें किसी विशिष्ट साहित्यकारके होनेके पीछे मात्र संयोग नहीं ऐतिहासिक और सांस्कृतिक आवश्यकताकी परिपूर्तिका प्रश्न भी निहित रहता है। लोकृतिकी सारी विराटता और भव्यता, प्रामाणता और प्रबुद्धता उसकी रचनामें अभिव्यक्त होती है। इस शताब्दीमें अनास्था और विघटित खण्डित जीवन-मूल्योंका जैसा विश्वव्यापी अतिरेक और प्राबल्य हुआ है और हो रहा है उसे देखते हुए उदात्त भावनाओंकी अभिव्यक्ति कम सम्भव है। कम-से-कम देखनेमें तो यही आ रहा है।

--क्या विभिन्न कलात्मक कृतियोंकी मानवीय प्रतिक्रिया विभिन्न बौद्धिक स्तरके लोगोंपर अलग-अलग नहीं होती? जैसे, डी० एच० लारेन्सके साहित्यकी या खजुराहो की मूर्तियोंकी प्रतिक्रिया--भूदानियोंपर और पेरिसके निवासियोंपर अलग-अलग क्यों होगी?

--आपके प्रश्नका उत्तर बिलकुल हाँ में है। कलाके बोध और आस्वादनके लिए एक न्यूनतम संस्कारशीलता अपेक्षित है। आस्वादकके चरित्र, स्वभाव, ग्रहणशीलताके विवेक और भावनात्मक अलिप्ततापर भी कलात्मक कृतियोंकी मानवीय प्रतिक्रिया बहुत निर्भर करती है। यहाँ मैं रचनाकार-की रचना-प्रक्रियाके पीछे निहित सृजनात्मक प्रेरणाको समान महत्त्व देता हूँ। देवमन्दिरमें स्थित नग्न मूर्तियाँ भी मनमें कभी अन्यथा प्रतिक्रिया नहीं पैदा करतीं। सन्त कवियोंके घनघोर शृंगारी वर्णनोंमें भी तटस्थताकी ऐसी अन्तर्दीप्ति प्रकाशित रहती है जो भावकके मनमें शारीरिकताका बोध नहीं जगने देती। निरालाके 'नैनोंके डोरे लाल गुलाल भरे खेली होली' शीर्षक गीतमें शृंगारिक मिलनकी परिपूर्ण व्यंजना और वर्णना होने पर भी उसके पीछे व्याप्त कविके मनका सन्तत्व हमारे भीतर एक विमुख सौन्दर्यबोध जगाकर ही रह जाता है। अजन्ता और एलोराकी मूर्तियोंपर भी यही बात लागू है। डी० एच० लारेन्सके कथा-साहित्यके पीछे रचना-प्रक्रिया और उसकी प्रेरणाकी ऐसी अलिप्तता और मनोवैज्ञानिकता - निस्संगता नहीं पायी जाती---कलाकार भलेकी वह बड़ा हो और 'सेक्स' को सिद्धान्ततः एक 'ग्लो' मात्र मानता हो, पर उसके द्वारा अर्पित शारीरिक व्यापार पाठकके भीतर स्थूल संवेदना भी उसी सीमा तक जाग्रत करते हैं। कलाकारने जहाँ जीवनकी विकृतियों और 'सेक्सी' व्यवहारोंमें रस लेना शुरू किया वहाँ उन्नत बौद्धिक स्तर और मनोभूमिके पाठकके भीतर भी अस्वस्थ अवांछनीय प्रतिक्रियाओंके जागनेकी सम्भावना बराबर बनी रहती है। लेखकके साथ पाठक भी लुक-छिप कर जीवनके छिद्रोंसे झाँकता रहता है और मनकी ऐन्द्रिक शृंगारिकताओं और स्खलित मानसिकताओंको देख-देखकर तृप्त हुआ करता है। यह विकृत और भ्रमित यथार्थवाद है जो अस्वस्थ उत्तेजनाओं-द्वारा प्रसूत कृत्रिम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उष्णतापर विश्वास करता हूँ।

--कवितामें तेजीसे पद्य मरता जा रहा है और साहित्यमें गद्य लघुतम होता जा रहा है ? यही स्थिति यदि कई दशकों तक बनी रही तो क्या यह सम्भव नहीं है कि साहित्य अनेकों बौद्धिक-गद्य-सूत्रबिम्बोंमें बँध जायेगा ?

--यदि पद्यसे आपका तात्पर्य बाह्य लयमयता और गेयतासे है अथवा छन्दबद्ध व्यवस्थित रूप-विधानसे है तो कवितामें वह ज़रूर कम होता जा रहा है और नयी प्रतिभाएँ उससे विमुख हो रही हैं। पर काव्यत्व और पद्य दोनों अलग-अलग वस्तुएँ हैं। यदि गद्यमें काव्यकी सृष्टि सम्भव है तो आजकल अधिकतर लिखे जानेवाले नवकाव्य-लेखनके अर्ध गद्यमें काव्यकी सृजन प्रक्रियासे क्या कठिनाई और आपत्ति हो सकती है। ऐसे पद्यका क्या मूल्य है जहाँ अन्तमें श्रोता या पाठकके हाथ केवल तुक ही लगते हैं और पद्यता काव्यत्वको उभरने नहीं देती। यदि पद्यसे आपका आशय कवितामें सृजित और उद्दीप्त रस दशासे है और उसकी आन्तरिक संगीतात्मक या अन्य इसी प्रकारके किसी काव्य-गुणसे है तो मैं आपकी बातसे सहमत नहीं। नयी कवितामें यह सब बराबर मिलता है और भावकोंको समान रूपसे मोहित करता है। साहित्यमें सदैव नवीनताका भावबोध प्राचीन भावबोध-की अपेक्षा दुर्लभ होता है। वह क्रमशः फूटता और फैलता है। इसी प्रकार यदि गद्यके लघुतम होनेसे आपका आशय कथनकी संक्षिप्तता और भाष्यके स्थानपर संकेतात्मकताकी वृद्धिसे है तो यह शुभ लक्षण है। गद्यका लघुतम होना चिन्ता नहीं है उसका लघु-आशय होना चिन्ता है। कई दशकों तक क्या होता रहेगा यह कौन बता सकता है। भविष्यके गर्भमें छिपी साहित्यकी विधाओं और विविध रूपोंसे हम और आप समान रूपसे परिचित हैं।

--कवितामें संगीतात्मक पद्य मरकर क्या पुनः साहित्यिक पुनरुत्थान नहीं प्राप्त कर सकता ?

—कवितामें संगीतात्मक पद्य मर गया है ऐसा मैं नहीं मानता। कोई चीज तब मरी मानी जाती है जब जनताके बीच उसका स्थान मिट जाये। जनता और काव्य-प्रेमी आज भी संगीतात्मक पद्यको चाहते और उसके प्रति पूर्ववत् आकर्षित होते हैं। उसका पुनरुत्थान भी हो रहा है। साहित्यमें नवगीत का आन्दोलन और वैविध्यपूर्ण प्रणयन मेरी बातका प्रमाण है। कविका एक बड़ा कर्तव्य है--भाषाके संरक्षण, विकास और उसके पोषक-तत्त्वोंके नवीनीकरणमें पूर्ण योगदान। समाज-द्वारा व्यवहृत भाषाकी सेवा प्रकारान्तरसे कवि-द्वारा समाजकी सेवा है। भाषापर पड़नेवाले कविताके सूक्ष्म प्रभाव पाठकपर पड़नेवाले उसके प्रत्यक्ष और चेतन प्रभावसे कहीं बड़े और व्यापक होते हैं। यदि द्विवेदी-युगके बाद छायावादी काव्य न लिखा गया होता या छायावादी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कालके बाद नयी कविता न लिखी जाती तो हम परम्परित, रूढ़ और बेजान भाषाका प्रयोग करते रह जाते। कवितामें वही संवेदनात्मक पद्य मरता है जो भाषाको नये-नये प्रयोगों और प्राण-संस्कारोंसे उजागर नहीं कर पाता। उसकी जीवन-क्रिया उसके लिए नवीनीकरणमें है।

—समस्त विश्वके मानव विचारोंके आदान-प्रदानसे एक दूसरेके इतने समीप आ गये हैं अतः क्या आज साहित्य-सृजन अन्तर्राष्ट्रीय स्तरपर नहीं होना चाहिए।

—अन्तर्राष्ट्रीय स्तरपर साहित्यका सृजन इस अर्थमें हो सकता है कि मानव मात्रकी सुख-दुःखकी शाश्वत अनुभूतियों और मानवीय क्रियाओं-प्रक्रियाओंका चित्रण किया जाये। वरना प्रत्येक देशकी अपनी रीति-नीति, नैतिकता और आचारिकता होती है और आदर्शोंकी सर्व-स्वीकृत परम्परा होती है जो सांस्कृतिक परिष्कृतियों और उपलब्धियोंपर आधारित होती है। प्रत्येक देशके अपनी काव्य-प्रसिद्धियाँ होती हैं—कुछ मिथ-विश्वास होते हैं और वहाँका अपना सौन्दर्यात्मक वातावरण होता है। भारतवर्षमें कोई भी कवि धैर्यके लिए ध्रुव, शौर्यके लिए अर्जुन, त्यागके लिए भरत, मर्यादा-पुरुषोत्तमता एवं सुख-दुःखमें निर्विकार रहनेकी भावनाके लिए रामके प्रतीकोंको व्यवहार करेगा ही। अन्तर्राष्ट्रीयताके नामपर उसकी अपेक्षा नहीं हो सकती। अन्तर्राष्ट्रीयताके नामपर देश और सभ्यताकी प्रवहमान प्राण-धारासे अप्रभावित रहना असम्भव है। पारस्परिक विचारोंके आदान-प्रदानका सामीप्य तो राष्ट्रीय अनुवर्तनकी कड़ीको और पुष्ट करता है। सांस्कृतिक परम्पराओंको नया अर्थ और नयी संगति प्रदान करता है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तरपर ज्ञान-विज्ञानके साहित्यका योजनाबद्ध सृजन तो हो सकता है पर ललित साहित्य असम्भव है।

—आप साहित्यमें कुण्ठा, निराशा और हीनताके विरोधी हैं लेकिन क्या कुण्ठा, निराशा, हीनता आदि दुःखके ही प्रतिरूप नहीं हैं? क्या दुःख हमेशासे ही हर साहित्यके किसी-न-किसी रूपमें मधुरतम एवं सशक्त भावाभिव्यक्ति नहीं रहा है?

—मैं साहित्यमें कुण्ठा, निराशा और हीनताका विरोधी इसलिए हूँ कि जीवनकी अविनाशी शक्ति और अदम्य आन्तरिक प्राणवत्तापर विश्वास करता हूँ। दुःख और नैराश्य जीवनके कटु सत्य अवश्य हैं पर वे बुनियादी विश्वास नहीं बन सकते। कुण्ठा, अनास्था, धुरी-हीनता, घुटन और आत्म-मरणको साहित्यिक वादका स्वरूप नहीं मिलना चाहिए। आज इन अस्वस्थ और अशान्तिदायक प्रवृत्तियोंकी हिमायत जिस प्रकार वक्तव्य-बाज़ी करके की जाती है वह मुझे समर्थन-योग्य नहीं लगती। स्वाभाविक और कृत्रिम मनोवैज्ञानिक समस्याओंमें भेद भी करना चाहिए। अभावोंकी घुमड़न और गर्जनाको, काम-अतृप्त, विश्राम-विहीन, सतत असंयत अन्तर्मन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की कुहेलिकाको ही जीवनका चरम सत्य मानना जीवनकी अदम्य प्राणशक्तिका उपहास करना है। और यह सब प्रगाढ़ अनुभूतिके सशक्त माध्यमसे छनकर भी तो नहीं आता है। एक प्रकारका धुँधलापन, घुटा-घुटा-सा मरापन और अगतिकी कुण्ठा आजकी अधिकांश रचनाओंमें भरी रहती है। दुःखके विभिन्न प्रतिरूपोंको, जिनका आपने नाम लिया है, जीवन-दर्शन और काव्य-दर्शन बनाना मुझे स्वीकार नहीं। वेदना और विषादकी जिस मर्मानुभूतिके प्रकाशनमें मधुरतम अभिव्यक्ति होती है वह सात्त्विक और रागात्मक रहती है। इस प्रकारकी निराशा, विषाद, विरह और अतृप्तिके रचनाकारोंने कभी जीवनके नित्य आत्मतत्त्व आनन्दकी अमृतमयी, जीवनदायिनी परम्परापर विश्वास नहीं खोया। यही परम्परा मानसिक अराजकताको मिटाकर अखण्ड दृढ़ता और अभयकी ओर ले जाती है। बड़ी विचित्र स्थिति होती है जब संशय और अविश्वास ही विश्वासका स्थान लेकर मानव-मनको विकृत करने लगते हैं। आत्मक्षय और आत्मघातको जब जीवन-धर्म माना जायेगा तब मानव-समाजको यही सन्देश मिलेगा कि जिन भयानक विभीषिकाओंके लौह शिकंजेमें वह जकड़ा हुआ है उनसे उसकी मुक्तिका कोई उपाय नहीं है।

–साहित्यमें भाषा और अनुभूतिकी सुन्दरतम अभिव्यंजनाके माध्यमसे किसी व्यक्तिकी व्यक्तिगत एकांगी वासनाएँ, कुण्ठाएँ और आकांक्षित तृष्णाएँ अधिक महत्त्व रखती हैं या सामाजिक चिन्तन तथा देश-कालकी माँगें ?

–– साहित्यको किसी प्रकारके शिविरात्मक घेरेमें या मतवादी दायरेमें नहीं बाँधा जा सकता। व्यक्तिका व्यक्तिगत एकांगी जीवन अपनी सम्पूर्ण वासनाओं और तृष्णाओंके साथ साहित्यका विषय उसी सीमा तक हो सकता है जितना सामाजिक चिन्तन या देश-कालकी माँगें। जीवन इतना व्यापक शब्द है कि उसके भीतर सभी प्रकारकी जीवन-कोटियाँ आ जाती हैं। तभी 'गेटे' ने लिखा है––'सिद्धान्त मुरझा जाते हैं पर जीवन-वृक्ष सदा हरा-भरा रहता है।' समाज आखिर व्यक्तियोंकी समष्टि ही तो है। सामाजिक चिन्तन और देश-कालकी माँगें भी व्यक्तिको ही लेकर चलती हैं। दोनोंका महत्त्व रचनाकारकी प्रेरणागत सच्चाई और तत्त्वनिष्ठापर निर्भर करेगा। यहाँ भी अनुभूतिकी ईमानदारीका प्रश्न आपके सामने खड़ा होता है। आत्माके सर्वोच्च सत्य, विवेककी अनन्यतम उपलब्धि और जीवन-चेतनाके निकटतम भावानुभवके रूपमें वह जो भी लिखेगा वह महत्त्वपूर्ण होगा। यदि उसका सामाजिक चिन्तन और देश-कालकी माँगोंका परिबोध झूठा और फैशनानुमोदित अर्थात् नक़ली है तो उससे एकांगी आकांक्षित तृष्णाओंकी अभिव्यक्ति अधिक महत्त्व रखेगी यदि उसके पीछे अनुभूतिकी सच्ची यथार्थता है। साहित्यकारकी आत्मानुभूति और उसकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रचनाकृति उसकी कृतिके महत्त्वके निर्णा-
क है केवल वर्ण्य विषयका बाह्य रूप नहीं।
रचनाकारोचित संयम और कौशल भी
कृतिविशेषके महत्त्वको घटाते-बढ़ाते हैं।
लेखक अपने निजी व्यक्तित्वका माध्यम
स्वतन्त्र बनाये रखकर भी बाह्य परिस्थिति
और मनःस्थितिके बीच समन्वय पैदा कर
सकता है।

—अंचलजी, क्या आप इस बातसे सह-
मत हैं कि साहित्यकारको अन्ततः दार्शनिक
बन ही पड़ता है ?

—दार्शनिकसे आपका अभिप्राय सम्भ-
वतः जीवनदर्शी तत्त्व-विवेचनसे है। साहित्य-
कार केवल मनोरंजन नहीं करता। वह
निश्चित रचनात्मक और प्रेरक जीवन-दिशा
का संधान करता है। दर्शन विश्व और
जीवनकी समस्याको समझानेका मानदीय
हल और तरीक़ा है। 'प्लेटो' ने भले यह
कहा हो कि दर्शन जीवनमें मृत्युका अभिनय-
अभ्यास है पर भारतीय दृष्टि इसके ठीक
उलटी है। यहाँ दर्शन जीवन, अभय और
विकासका प्रवर्तक और उद्दीपक है।
वस्तुतः आपका अभिप्राय लौकिकता
या अलौकिकतासे न होकर केवल उस
लौकिकतासे है जो व्यक्तिसे आगे जाकर
समाजगत और जातिगत जीवनके परि-
प्रेक्ष्यमें उसकी अन्तर्वृत्तियोंका सीधा विवेचन
करती है। सामाजिक यथार्थोंकी आलोचना
और उनके खोये हुए तेज और शक्तिको
फिरसे लानेका चिन्तनपूर्ण प्रयास अपनेमें
बड़ी चीज है। उसका महत्त्व किसी भी
आध्यात्मिक दर्शनसे कम नहीं, जिस प्रकार
टालस्टायके मतानुसार प्रत्येक कला धार्मिक
होती है, चाहे धर्मका अर्थ हम जो लें—यह
धर्म समाज-धर्म हो सकता है, लोक-धर्म हो
सकता है, व्यक्ति-धर्म हो सकता है—उसी
प्रकार प्रत्येक साहित्यिकको दार्शनिक होना
चाहिए अर्थात् केवल चित्रण तक ही सीमित
न रहकर उसे चित्रणके पीछे चलनेवाली
सूक्ष्म सामाजिक अथवा मनोवैज्ञानिक जीवन-
क्रियाओं-प्रक्रियाओंका कार्य-कारण सम्बन्ध
भी निरूपित करना चाहिए। रेल्फाक्सका
कथन कि उपन्यास-लेखन गहरा दार्शनिक
पेशा है साहित्यकी प्रत्येक विधा पर लागू
हो सकता है। जीवनके चैतन्य तत्त्वको
पकड़ने, अनुभव करने या आत्मसात् करनेकी
श्रद्धा, सात्त्विक निष्ठा ही तो दार्शनिकता है।
यह चैतन्य तत्त्व आध्यात्मिक हो सकता है
और सामाजिक भी। दार्शनिक होनेका
अर्थ भौतिक स्थितियों और भावनाओंसे
पलायन और आत्मबोध और आत्मान्वेषणके
गहरे गर्तोंमें डूबना मात्र नहीं है। सामाजिक
परिवर्तनों—समाजकी विकासशील स्थितिमें
बदलती हुई आवश्यकताओंके अनुकूल
आदर्शोंकी भूमिकाका सुचिन्तित विश्लेषण
और समस्त अन्तर्विरोधोंका समाधान—इधर-
उधर बिखरे हुए जीवनके सारभूत तत्त्वोंका
मौलिक सत्ताके साथ संश्लेषण भी उसी
सीमा तक दार्शनिकताकी परिधिमें आता है।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं और मैं

रज़िया फ़सीह अहमद

उर्दू साहित्यमें, इधरके चन्द वर्षोंमें उभरनेवाली लेखिकाओंमें एक नाम रज़िया फ़सीह अहमदका भी है। धर्मयुगमें प्रकाशित कहानी 'कड़ियाँ' और इस डायरीमें एक लम्बा फ़ासला है जिसे लेखिकाने अपने स्व-अस्तित्व ज्ञानसे बहुत जल्द तय कर लिया है।

तुम्हें हो क्या गया है! किन सोचोंमें खोयी रहती हो! खुदाका शुक्र अदा नहीं करतीं कि उसने तुमको सब कुछ दे रखा है।

वह मुझे कुछ न देता केवल अपने अस्तित्वका ज्ञान दे देता।

अपने अस्तित्वके ज्ञानको लेकर चाटतीं? अस्तित्वका ज्ञान-ध्यान, ये सब फ़ुर्सतकी बातें हैं। चिकनी-चुपड़ी खानेको मिले तो ऐसी ही बातें सूझती हैं। हँडिया-रोटी करतीं, नौकरीका कष्ट सहतीं तो ये सारे सोच-विचार हवामें उड़ जाते!

नहीं, मेरा खयाल है नहीं—। तुम्हें मालूम है, मुझ-पर एक समय गुज़रा है जब मैंने हँडिया भी की है। एक समय मैंने नौकरीका कष्ट भी झेला है पर यह सोच-विचारका भूत जो मुझसे चिमटा है उसने पीछा नहीं छोड़ा।

अफ़सोस! कुछ लोग किसी हालतमें खुश नहीं रह सकते!

यह बात नहीं। मेरे जीवनमें दो एक-दूसरेसे अलग चीज़ें शुरूसे ही रही हैं। एक निरीहता, दूसरी व्याकुलता। सन्तोष भी और अपने-आपको और माहौलको बदलनेकी अनजान लगन भी। मैं बिल्कुल माहौलमें, परिवेशमें रहती मुझे लगता कि मैं खुश हूँ। मेरे पास कुछ नहीं था तब भी मुझे सन्तोष था। मुझे रुपये-पैसेका लालच न था। मुझे ये सपने नज़र नहीं आते थे कि परियोंके देशका कोई शहज़ादा आयेगा और मुझे सोनेके तख्तपर बैठाकर ले जायेगा। मुझे यों लगता था जैसे मैं खुश हूँ, सन्तुष्ट हूँ पर इसके साथ ही मुझे बेचैनी-सी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहती थी—दिल चाहता था यहाँसे निकल जाऊँ। कहाँ, किस देशमें, किस माहौलमें, यह मेरी समझसे बाहर था।

दो विपरीत अनुभव एक साथ नहीं हुआ करते। तुम असलमें सन्तुष्ट नहीं थीं। तुम्हारा दिल माहौलसे, ग़रीबीसे भागनेके लिए बेचैन था, सन्तोष तुम केवल अपने मनको इसलिए देती थीं कि तुम सोचती थीं कि क़ायदेसे तुम्हें अपने माहौलपर सन्तुष्ट होना चाहिए। पर सचमें ऐसा था नहीं।

यह जो तुम कहती हो, ठीक होता तो अब इस वातावरणसे, ग़रीबीके भँवरसे निकल-कर मुझे सन्तुष्ट हो जाना चाहिए था लेकिन मेरे व्यक्तित्वकी प्रतिकूलता अब भी ज्योंकी त्यों है। तुम्हारे ही कहनेके अनुसार मुझे ख़ुदाने सब कुछ दिया है। मैं ख़ुश हूँ, सन्तुष्ट हूँ। यानी मेरा मन पूरी सचाईके साथ यह सोचता है कि मुझे और किसी चीज़की ज़रूरत नहीं। जो कुछ मेरे पास है वह मेरी ज़रूरतसे ज़्यादा है फिर भी मेरे दिलकी वह चुभन, वह बेचैनी अब भी बाक़ी है, जैसे कोई चीज़ मुझसे खो गयी है, जैसे मैं अपने-आपसे खोयी गयी हूँ। शायद अस्तित्वका ज्ञान न होनेके कारण ही है। जबतक आपको ये मालूम न हो कि आप कौन हैं, क्या हैं तबतक आप कैसे ख़ुशी साँस ले सकते हैं।

यह सब बकवास है! मैं समझती हूँ, जबतक आदमीको ज्ञान ही नहीं तबतक दुःख होता। आपको मालूम नहीं, आप कौन हैं

हाँ, ये भी मैं सोचती हूँ। मुझे प्रायः उन औरतोंकी हालतपर दुःख होता है जो अच्छे-अच्छे डिज़ाइनके कटपीस ख़रीद-कर मेक-अपका सामान लेकर, डटके खाना खाकर शामको टोलियोंमें लहकती फिरती हैं और कभी उन्हें अपने अस्तित्वके खोखलेपनका अनुभव नहीं होता। कभी नहीं सोचतीं कि कटपीस जीवनकी पूरी सच्चाई नहीं है।

और क्यों हैं—इसके मानी हैं कि यह न जानना आपको बहुत-से दुःखोंसे, ढेर सारे कर्तव्योंसे और अन्तरात्माके बहुतसे कचूकोंसे बचाये रखता है। बस यही अन्तर है।

कुछ लोग जहालतमें इसलिए ख़ुश रहते हैं कि उन्हें बहुत-सी सचाइयोंका ज्ञान नहीं। उनका दिमाग़ बहुत-तरहके बोझोंसे ख़ाली है, उनकी आँखें लिखाईको पढ़नेके कष्टसे बची हुई हैं, उनका ज़ेहन इसको समझनेकी मुसीबतसे बचा हुआ है। पर यह ख़ुशी अपने-आपमें जहालत है या नहीं।—फिर न जानना आपको किसी चीज़से नहीं बचाता। अन्त-रात्माका होना ही उसके कचूकोंका सुबूत है, और ज़िन्दा ज़ेहनके लिए अज्ञानसे बड़ा बोझ और कोई नहीं।

तुम बहुत झक्की हो। अपने आस-पास देखकर यह नहीं सोचतीं कि हज़ारों-लाखों आदमी हैं जो इन झंझटोंमें नहीं पड़ते और ख़ुश रहते हैं, मगन रहते हैं।

हाँ, ये भी मैं सोचती हूँ। मुझे प्रायः उन औरतोंकी हालतपर दुःख होता है जो अच्छे-अच्छे डिज़ाइनके कटपीस ख़रीदकर, मेक-अप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का सामान लेकर, डटकर खाना खाकर शामको टोलियोंमें लहकती फिरती हैं और कभी उन्हें अपने अस्तित्वके खोखलेपनका अनुभव नहीं होता। वे कभी नहीं सोचतीं कि कटपीस जीवनकी पूरी सच्चाई नहीं है।

उफ़्फ़ोह! मैं समझ रही थी, तुम कहोगी मुझे उनकी हालतपर ईर्ष्या होती है और तुम कह रही हो, मुझे उनपर अफ़सोस होता है।

ईर्ष्या भी हो सकती थी जो मुझे मालूम होता कि ये वह रहस्य पा चुकी हैं जिससे मैं वंचित हूँ।

उन्होंने अस्तित्वका ज्ञान पाया हो या नहीं जीवनका भेद वह पा चुकी हैं जो है : बाबर ब-ऐश कोश कि आलम दोबारा नीस्त*।

पर यह बात मेरे मनको नहीं छूती।

फिर तुम्हारे दिलको कौन-सी बात छूती है? यही कि जब ईश्वरने सारी दुनियाकी खुशियाँ दे रखी हों तो कोई काल्पनिक दुःख लेकर उसपर कुढ़ता रहे। ईश्वरने तुम्हें सब कुछ देकर एक चीज़ ऐसी और भी दे दी है जिससे बाक़ी चीज़ें देना न देना बराबर हो गया।

वह क्या?

पुरानापन!

शायद! लेकिन पुरानापन तो आदमीको पीछेकी ओर ढकेलता है। मुझे तो सदा आगे बढ़नेकी लगन रही है; और इत्मीनान देखो तो तुम भी कह सकती हो कि मैं अपने माहौलसे बहुत आगे निकल आयी हूँ।

तो शायद तुमपर रास्तेकी थकन छायी हुई है। हॉरलिक्स पिया करो।

अब तुम ठठोलपर उतर आयीं। पर असलमें यह दिल्लगी नहीं है। कभी-कभी मुझे बिलकुल यों लगता है जैसे मुझपर कुछ थकन छायी है। जैसे मैं मीलोंकी यात्रासे थक गयी हूँ। जैसे मेरा अंग-अंग थककर टूटनेको है। उस समय तुम्हें मालूम है, मेरा दिल क्या चाहता है?

गरम पानीसे नहानेको!

नहीं, दिल चाहता है, कहीं गिर पड़ूँ और सदाके लिए सो जाऊँ।

तुम्हें पता है, यह बोझ किस चीज़का है। बेकारीका, सुस्तीका, काम न करने का।

नहीं, यह अस्तित्वके विषयमें न जाननेका है।

बोझ तो होनेका होता है, जो नहीं उसका बोझ कैसा?

बोझ तो जो है उसका भी होता है और जो नहीं है उसका भी।

तुम अपना इलाज कराओ।

किससे?

डॉक्टरसे।

किस डॉक्टरसे? क्या उन्हें किसी ऐसी बीमारीका ज्ञान है जो मुझे है?

फिर भी जाकर तो देखो।

*बाबर, ऐश कर ले कि यह दुनिया फिर नहीं होगी!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इससे मैं किसी बढ़ही या बरतनोंपर [illegible] मुलम्मा चढ़ानेवाले क़लई-गरके पास क्यों न चली जाऊँ ?

तो किसी साइक्लोजिस्टसे मिल देखो।

जो आप ही सन्देहके दलदलमें फँसा हो वह मुझे कैसे निकालेगा ?

तो किसी धर्मगुरुके पास जाओ।

धर्मकी अगवानी करनेवालोंका ज़माना कबका गुज़र चुका, अब तो केवल धर्मके [illegible]दार हैं—लालच और उलझे विचारोंने [illegible]के दिल और दिमाग़की दीवारें तंग कर [illegible] हैं।

फिर तो तुम्हारी सहायता भगवान् [illegible] करे !

बस यही प्रार्थना करो।

तुमसे बहस करना बेकार है, लो मैं [illegible]।

तुम एक बार चली ही जाओ ना, पर [illegible] भी तो नहीं चुकतीं। तुम मुझे [illegible] भी तो नहीं छोड़तीं। सबसे बड़ा [illegible] तो यही है कि तुम किसी तरहका सुख [illegible] देतीं मुझे और भी सन्देहके दलदलमें [illegible] जाती हो। सच बताऊँ, जब तुम ऐसी [illegible] कर चुकती हो तो कभी-कभी मैं क्या [illegible]ती हूँ।

क्या ?

यही कि शायद तुम ठीक कह रही हो, शायद मेरे दुःख बनावटी हैं, शायद मैं लकीर-की फ़क़ीर हूँ। शायद दुनिया-भरमें मुझे ही यह बीमारी है और……

और ?

और यह कि मुझे किसी डॉक्टरके पास चला जाना चाहिए। शायद मुझे किसी साइक्लोजिस्टसे मिलना चाहिए और यह कि शायद मेरा इलाज किसी धर्मगुरुके पास हो।

तो फिर तुम चली क्यों नहीं जातीं ?

इसलिए कि मुझे सन्देह है कि जो कुछ तुमने कहा है, वह ग़लत है।

तुम पागल हो !

तुम नहीं जानतीं, यह अविश्वास, यह सन्देह मेरे दिलको टुकड़े-टुकड़े किये देता है। जाने वह कैसे लोग हैं जो इस अविश्वास, इस सन्देहकी तलवारकी धारपर आधोंआध लटके रहते हैं और उन्हें कुछ महसूस नहीं होता।

उन्हें इसलिए कुछ महसूस नहीं होता कि वह सन्देहकी तेज़ धारपर नहीं लटकते रहते। वह विश्वासकी मंज़िलपर सुखसे बैठे रहते हैं चाहे वह विश्वास सही हो या ग़लत। चाहे वह विश्वास उन्होंने अपनी मेहनतसे प्राप्त किया हो चाहे उन्हें वह विश्वास अपने बाप-दादासे विरासतमें मिला हो। जिस तरह अपना नाम और अपना घर…तो समझीं, तुम्हें सन्देहकी बीमारी है। इसका इलाज विश्वास है। विश्वास पैदा करो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर कैसे ? जबतक तुम्हें यह पता न हो आप कौन हैं और क्यों हैं—आप विश्वास कैसे कर सकते हैं ! जबतक आपको अपने होनेका विश्वास न हो, किसी दूसरी चीजका किसी दूसरे सिद्धान्तका विश्वास कैसे हो सकता है ?

हो सकता है, बिलकुल उसी तरह जैसे दूसरोंको होता है ।

हाँ, लेकिन मैं दूसरोंकी तरह नहीं हूँ । मैं मैं हूँ । पर नहीं जानती कि मैं में और दूसरोंमें क्या अन्तर है, क्यों है ?

मैंने कहा ना, तुम विश्वास पैदा करो । विश्वास जो दुःखोंसे महान् है···लो अब मैं चली ।

लेकिन तुम जा भी तो नहीं चुकतीं । तुम मुझे अकेला भी तो नहीं छोड़तीं । सबसे बड़ा दुःख तो यही है कि कभी-कभी मुझे तुम्हारी बातें भी सच्ची लगती हैं । लेकिन फिर मुझे अपना दुःख भी सच्चा लगता है, अपना दुःख भी प्यारा लगने लगता है । अपना व्यक्तित्व भी प्रिय लगता है जिसमें सन्तोष भी है और पारे-जैसी बेचैनी भी । ऐसा लगता है जैसे तुम मुझे कभी न समझ पाओगी और मैं तुम्हें कभी न पहचान सकूंगी । और सबसे बड़ा दुःख, सबसे विचित्र बात यह है कि मैं और तुम एक ही हैं जो 'मैं' मिले हैं । अब तुम ही कहो कि उस 'मैं' में 'मैं' और 'तुम'—दो इतने विभिन्न विचार एक साथ हों, इतने अलग-अलग व्यक्तित्व इकट्ठा हों तो अपने अस्तित्वका ज्ञान कैसे हो सकता है ! फिर तुम ही बताओ यह दुःख, यह रोग, यह सन्देहकी तलवारपर आधोंआध लटके रहनेका कष्ट क्या प्रत्यक्ष नहीं ?

शायद !

देखा ! अब तुम भी सन्देहके दलदलमें फँसती जा रही हो । अब तुम्हें खयाल हो रहा है कि जो कुछ मैं कह रही हूं शायद वह ठीक हो । इसका अर्थ है । कभी तुम मैं कभी मैं तुम भी हो जाते हैं । पर वह दोनों चीजें फिर भी 'मैं' में सम्मिलित हैं । तुम और मैं मिलकर मेरे व्यक्तित्वको आधों-आध किये दे रहे हैं । अब बताओ, विश्वास हो कैसे । केवल एक ही रास्ता है—या तुम रहो या मैं । लेकिन यह असम्भव है । ऐसा होता कि तुम ही मेरा पीछा छोड़ देतीं ।

(अनुवाद : अहमद [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माँ-बेटे

अजीत कौर

'माँ-पुत्तर' एक अजीब रिश्तेकी कहानी है—ध्वनित और आरोपित दोनों ही अर्थ उसमें हैं। लेखिकाको हाल ही अपने संग्रह 'गुलबानो' पर पंजाब शासन-द्वारा प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ है।

काटके ऊपर फैला देना। गरम मसाला अधिक न डालना—ललितको अच्छा नहीं लगता।···धरमू बेटा, भिण्डी-तोरी लोहेकी कड़ाहीमें बनाना; रंग तो थोड़ा काला हो जाता है, परन्तु बनती करारी है। अधिक घी नहीं डालना—ललितको तैरता हुआ घी अच्छा नहीं लगता।" मनमें वह सोचने लगी : 'और लिखता था, उबली हुई सब्ज़ियाँ और और उबला हुआ गोश्त ही खाता हूँ। अब तो साहेब बहादुर-को घी बिलकुल भला नहीं लगता होगा।' मन-ही-मन वह मुसकरायी।

रसोईघरसे निकल शान्ति खानेके कमरेमें गयी। मेज़ ठीक है? मैंटीज़ ठीक हैं? फ्लावर-वाज़में-से कोमल-सी सुन्दर लम्बी शाखाएँ निकलकर फैल रही थीं। एक शाखाको पकड़कर उसने किंचित् नीचे झुका दिया और उसे उस जापानी औरतकी बात याद आ गयी जो एक बार क्लबमें आयी थी, एवं फूलोंकी सजावटके विषयमें छोटी-छोटी बातें बतायी थीं—फ्लावर-अरेंजमेण्टमें-से एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाखा सीधी ऊपर उठी हुई हो, आकाशकी ओर बाँह फैलाये, एक बिलकुल नीचेकी ओर झुकी हुई हो, धरतीको सलाम करती हुई; और एक किंचित् झुकी हो, मानवकी ओर बाँह बढ़ाती हुई।

'और मनुष्यकी अपनी ज़िन्दगीकी शाखाएँ ?'—शान्तिके विचार सदाकी भाँति भटकने लगे। परन्तु दो डग भी न चले कि शान्तिने उनसे नज़र मोड़ ली। आज वह ऐसी बातें क्यों सोचे ? आज तो ललित आ रहा था—तीन वर्ष बाद। केवल उसके कहने-पर कैसे सात समुद्र-पारसे चला आ रहा था !—केवल उसके लिखनेपर।

और एक मुसकान शान्तिके वक्षस्थलमें जैसे पेंग भूलने लगी। एक अद्भुत शान्तिसे जैसे उसके भीतरके सब रीते कोने भर गये।

अभीतक कुमार तो घर ही न आये थे। 'हाँ जी, उन्हें क्या ? उनका दफ़्तर, क्लब, पार्टियाँ, ब्रिज एवं फ्लशके दौर। उन्हें क्या आवश्यकता है अपने पुत्रकी घर बैठकर प्रतीक्षा करनेकी ? आवश्यकता तो उसे है, जिसका जीवन नितान्त शून्य है—साँ-साँ करता रीतापन, हुंकारता हुआ वातावरण !'

'आज नहीं सोचूगी यह सब ! घर आय, न आयें; मुझे क्या ? मेरे लिए उनके घर आनेका कोई महत्त्व नहीं। यदि किसी चीज़का, किसी बातका महत्त्व है तो वह यह कि ललित घर आ रहा है। बस !' शान्ति छोटे-छोटे काम करती जा रही थी और सोचती जा रही थी।

अचानक टेलीफ़ोनकी घण्टी बजी।

"हलो, मिसेज़ कुमार स्पीकिंग।"

"हाँ भई, मैं हूँ। मैं दफ़्तरसे सीधा एरो-ड्रैम जा रहा हूँ। ललितको लेकर ही घर आऊँगा।"

'पर आपने तो कहा था, आप आयेंगे या गाड़ी भेजेंगे, और मुझे भी साथ...'

"ड्राईवर छुट्टी लेकर चला गया है और मुझे यहाँ काम है। घर नहीं आ सकूँगा।" मिस्टर कुमारने बिलकुल अफ़सराना अन्दाज़में कहा, और टेलीफ़ोन बन्द कर दिया।

'घर नहीं आ सकूँगा !' शान्तिने अत्यन्त खीझ एवं झुँझलाहटसे मनमें ये शब्द दुहराये। टेलीफ़ोनके रिसीवरको उसने 'खटाक्' से रख दिया, जैसे यह रिसीवरका ही दोष हो। मेज़के पाससे वह एकदम हट गयी।

दूसरे कमरेमें गयी। तेज़ क़दमोंसे चलती तीसरे कमरेमें गयी। पुनः तेज़ीसे बाहर लॉनमें आ गयी। एक उड़ती-सी नज़र उसने बाहर ख़ाली चुपचाप लेटी हुई सड़कपर फेंकी। फिर वह भीतर लौट आयी। नहीं रह-रहकर खीझ आ रही थी।

'घर नहीं आ सकूँगा !' ये शब्द वह सैकड़ों बार, हज़ारों बार टेलीफ़ोनपर सुन चुकी थी। इन सब बीते सालोंमें हज़ारों बार टेलीफ़ोनकी घण्टी बजी थी, हज़ारों बार उसने रिसीवर उठाया था, निराश, राहतसे जैसे आशाकी एक चिनगारीको पकड़नेके यत्नमें, एक अजब मृत-उत्सुकतामें—और दूसरी ओर उसी आवाज़ने हज़ारों बार कहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रात आधी इधर, आधी उधर···!

कुमार अपने कमरेमें सोये पड़े थे।
शान्ति बरामदेमें थी, और ललित बाहर लॉनमें।
शान्तिको सूझा,
कहीं ललितने चादर न उतार दी हो।
छुटपनमें जब वह करवट लिया करता था,
तो सारी चादर उसके नीचे
आ जाती थी।
फिर शान्ति खींच-खींचकर चादर निकालती थी,
और ललितको ढाँपती रहती थी।
रातको कितनी-कितनी बार।

पुस्तकें, कापियाँ, कपड़े, बूट, जुराबें और उसका भविष्य सब बिखरे पड़े थे।

और फिर तूफ़ानको थामनेके लिए शान्तिका वक्ष उन छतों-दीवारोंसे अधिक बलिष्ठ था।

'घर नहीं आ सकूंगा!' शान्ति इन शब्दोंको मनमें धानकी तरह कूटती हुई रसोईमें पहुँच गयी। उसने पतीलेका ढकना उतारकर देखा। परन्तु धरमूको कुछ भी कहनेको उसका मन नहीं किया।

आज उससे ये शब्द सहन न हो रहे थे। उसने सोच रखा था, जब ललित इस ज़मीन-पर पहला क़दम रखेगा, वह उसकी बाँहोंमें होगा। पर···'घर नहीं आ सकंगा!'

समय व्यतीत ही न हो रहा था।

■

शान्ति बाहरके द्वारपर ही खड़ी थी, जिस समय दूरसे कुमारकी गहरे सलेटिया रंगकी मोटर आती नज़र आयी।

शान्तिकी छातीके भीतर, पसलियोंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी भीतर, यह कौन अल्हड़ युवती मचल पड़ी, खेलती-सी ?

शान्ति समझ न पा रही थी, क्या करे ! एक क़दम वह द्वारसे बाहर रखती, एक भीतर ।

मोटर आकर रुकी । ललितने मोटरकी खिड़की खोली और माँकी ओर बढ़ा, "ओ भाई डारलिंग मॉम !" और ललितने शान्तिको अपनी भुजाओंमें लपेट लिया । शान्तिका कम्पित हाथ ललितकी पीठके ऊपरसे नीचेकी ओर सरका । उसे लगा, जो ललित उसके पाससे तीन साल पूर्व गया था, वह नन्हा शिशु था, जो ललित आज उसके पास लौटकर आया है, एक मर्द है--मज़बूत गठा हुआ शरीर, फौलाद-जैसी भुजाएँ, चौड़ी-चकली छाती, लम्बा-तगड़ा; और यौवनकी एवं स्वास्थ्यकी एक सुगन्ध ललितके जिस्ममें-से उठकर शान्तिकी ओर आ रही थी ।

सहसा शान्तिको लगा, वह बिलकुल छोटी-सी बालिका थी, जो इस बलिष्ठ मर्दकी बाँहोंमें लिपटी हुई थी, और शतशः सुरक्षित थी·····बिलकुल सुरक्षित ! ···

अपनी माँके कन्धोंके गिर्द बाँहें डालकर ललित भीतरको चल दिया । मिस्टर कुमार मोटरकी डिग्गीमें-से सामान निकलवाने लगे ।

धरमू अपना झाड़न कन्धोंपर रखकर बरामदेमें खड़ा था, जैसे हैरान हो सोच रहा हो कि उसे क्या करना चाहिए । गत वर्ष वह इस घरमें आया था, और ललितको वह पहली बार देख रहा था--उसे यह पता अवश्य था कि इस घरके छोटे मालिक बिलायतमें बड़ी पढ़ाई करने गये हुए हैं ।

धरमूका ऐसे गुमसुम खड़े होना शान्तिको बिलकुल भला न लगा । "अरे, बाहरसे सामान उठाकर भीतर ला न !" शान्तिने उसे कहा । उसी समय धरमूने हिचकिचाते हुए ललितकी ओर ताकते हुए दोनों हाथ जोड़े और तुरन्त बाहर चला गया ।

शान्तिने ड्राइंग-रूममें ललितको लाकर बिठलाया । पास ही सोफेपर स्वयं बैठ गयी । उसकी छातीमें पता नहीं क्या चक्र घूम रहा था । क्या बात करे ? कुछ सूझ न रहा था ।

शान्ति चुपचाप बैठी रही । मुसकराती रही । ललितको देखती रही ।

अगले ही क्षण सहसा उसकी आँखें धुँधला गयीं --पता नहीं कहाँसे दो आँसू उमड़ते हुए आये और उसकी आँखोंमें ठहर गये ।

ललित मौन था । अपनी माँका हाथ पकड़कर उसकी उँगलीमें पड़ी अँगूठीसे खेल रहा था; उसकी कलाईमें पड़ी चूड़ियोंसे आगे-पीछे कर रहा था ।

कैसे-कैसे शान्ति तीन वर्ष सोचती रही थी--हज़ारों-लाखों बातें, जो वह केवल अपने पुत्रको पास बिठलाकर कर सकती थी । छोटी छोटी बातें, घरकी बातें, ललितकी बातें, कुमारकी बातें, उसके अपने मनमें बादलोंकी तैरती बातें, घटाएँ बनकर उमड़ती बातें ।

परन्तु उस समय उसे कुछ भी सूझ नहीं रहा था । शान्ति चुप बैठी थी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तू नहायेगा ? गुसलखानेमें मैंने तेरा तौलिया और कपड़े रख दिये हैं।"

ललितने कहा, "हाँ, ज़रूर नहाऊँगा", और तेज़ीसे उठकर खड़ा हो गया, और बाथरूमकी ओर बढ़ा।

जिस तेज़ीसे ललित उठकर खड़ा हो गया था, उससे शान्तिके मनमें भीतर-ही-भीतर कहीं कुछ खटखटाया।

धरमू सामान ऊपर ला रहा था। शान्ति-ने कहा, "छोटे साहबके कमरेमें ले जा।"

कुमार भी अन्दर आ गये। अन्दर आकर हवाकी भाँति अपने बेड-रूमसे संलग्न बाथरूममें घुस गये। शान्ति वहीं बैठी पानीके उछालनेकी ध्वनि सुनती रही।

शान्तिने सोचा, 'देखूँ तो, सामान ठीक तरहसे रख दिया उसने कि नहीं, खोलना तो कहूँ, शायद ललितको उसमें-से कुछ चीज़ोंकी ज़रूरत हो!' वह उठी और ललित-के कमरेमें गयी।

बक्स बन्द थे। बाथरूमका द्वार खटखटा-कर उसने पूछा, "ललित, चाबियाँ कहाँ हैं ? तेरी चीज़ें खोल दूँ।"

"चाबियाँ पैण्टकी जेबमें हैं मामा।" उसने अन्दरसे उत्तर दिया।

शान्ति कमरेमें लौट आयी। ललितकी पैण्टकी जेबसे चाबियाँ निकालीं। बक्स खोले, कपड़े निकाल-निकालकर पलंगपर रखने लगी।

कपड़ोंकी तहोंमें एक फ्रेम की हुई फ़ोटो थी। शान्तिने उसे सीधा करके देखा—ओह!

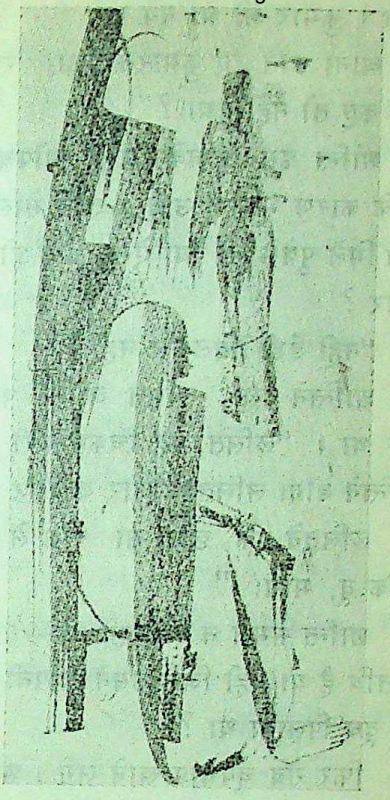

तो यही 'एनी' थी! साड़ी पहनकर, वी-शेप-की चप्पलें पहनकर खड़ी थी। भोला मुख, कन्धोंको छूती पलकें, आँखें नीली, मुखपर मासूम-सी मुसकान! सीधी, जैसे शान्तिकी ओर ही ताक रही हो, 'मैं आपको पसन्द हूँ? मुझे अपनी बहू बना लेंगी न आप?'

शान्ति एकदम उदास हो गयी। वह तसवीर उसने उलटी करके बक्समें ही रख दी, और पलंगपर बिखरे हुए कपड़े हैंगरमें लटकाने लगी।

धरमूने खाना मेज़पर लगा दिया। ललित पायजामा-कुरता पहनकर बाहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आया। कुमार भी आ गये।

खाना खाते हुए कुमारने पूछा, "रास्तेमें कोई कष्ट तो नहीं हुआ ?"

शान्ति इस प्रश्नके प्रति औपचारिक होनेके कारण झुँझला उठी। तीन साल बाद आज मिले पुत्रसे भी क्या ऐसी बातें ही करेंगे कुमार ?

"नहीं डैडी बिलकुल नहीं।"

शान्तिने देखा, ललित आगेसे कम खा रहा था। "ललित, यह चिकन-करी ले !" शान्तिने डोंगा ललितकी ओर बढ़ाकर कहा।

ललितने एक छोटा-सा पीस ले लिया, "थैंक यू, मामा।"

शान्ति समझ न पा रही थी—यह कोई अतिथि है या वही जिसे उसने अपनी छाती-का दूध पिलाया था ?

फिर सब चुपचाप खाने लगे। शान्तिका दिल कर रहा था कि वह कोई बात करे। मगर क्या बात करे ?

"सच, डैडी, आपने जो घड़ी लिखी थी, वह मैं ले आया हूँ।"

"थैंक यू, बेटा।"

"और मामा, तुम्हारे लिए भी मैं एक बहुत लवली चीज़ लाया हूँ !"

शान्ति मुसकरा-भर दी।

"ले, यह कबाब तो ले। तुझे तो बहुत पसन्द हैं।..."

"बस मॉम।"

"अभी तो तूने पहला पीस ही नहीं खतम किया, क्यों ?"

"मामा, ज़रा मिर्च है," ललितने झिझक संकोचसे कहा।

ओह, तो आज पहले ही दिन ललित कुछ नहीं खा सकेगा ! इतने अरमानसे बनायी सब उसकी मन-पसन्द चीज़ें। शान्ति का हृदय मुरझा गया।

ललितने घड़ी लाकर कुमारकी कलाईमें बाँध दी। एक साड़ी लाकर शान्तिकी गोदमें रख दी।

"ललित, मैं...इतनी सुन्दर साड़ी...तुझे क्या करना था बेटा...तू..." शान्तिकी आवाज़ तनिक काँप रही थी। वह समझ न पा रही थी कि क्या कहे। आँख उसकी धुँधला रही थी।

शान्तिका मन किया, पूरे वेगसे मन हुआ कि वह एक बाँह ललितकी गरदनके गिर्द डालकर उसका सिर थोड़ा नीचे करके उसके माथेको चूम ले। परन्तु ललितका बलिष्ठ शरीर सीधा तनकर उसके पास बैठा था; और वह जैसे उसकी लम्बाई, उसकी मज़बूती एवं उसके सुडौल गठनसे घबराकर चुप हो गयी। साड़ीमें कुछ और भी रखा लग रहा था। उसने साड़ीकी तह खोली। बीचमें 'एनी'की तसवीर थी, और एक परफ्यूमकी शीशी थी, और एक स्प्रेअर था।

क्षण-भर शान्तिके मस्तिष्कने कुछ सोचनेसे इनकार कर दिया। वैसे ही चित्रकी ओर देखती रही। ललितने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झुककर, झुककर सस्मित आँखोंसे शान्तिकी ओर निहारा और धीरेसे पूछा, "पसन्द है?"

शान्तिने मुसकरानेका पूरा यत्न करते हुए कहा, "हाँ बेटा!"

■

ड्राइंग-रूममें बैठा ललित किसी पत्रिकाके पृष्ठ उलट रहा था। शान्ति कमरेमें आयी। ललितको उसने बैठे हुए देखा। क्षण-भरके लिए आँख भरकर देखा, और वापिस लौटने लगी।

"क्यों मामा, लौट चलीं? बैठो न!" ललितने पत्रिका बन्द करते हुए कहा।

"नहीं ललित, मैं तो ऐसे ही···" शान्तिकी आवाज़ बहुत क्षीण थी, बिलकुल दबी हुई।

ललित उठकर शान्तिके पास आ गया, और उसने एक बाँह शान्तिके कन्धोंके गिर्द डाल ली, "क्यों मामा, उदास क्यों हो?" वह पहली बार उसने इतना निकट होकर, इतना अपना बनकर, इतना प्रेमोत्तेजित होकर उनसे बात की।

दो आँसू शान्तिकी पलकोंकी ओटमें छिपे। लुढ़के। शान्तिने हज़ार यत्न किया, परन्तु वे रुके नहीं।

"अम्मा!" ललितने बिलकुल धीमी आवाज़में कहा, और शान्तिका सिर अपनी छातीपर रख लिया। शान्तिके आँसू अनिच्छित हो गये। परन्तु धीरे-धीरे उसे राहत मिलने लगी, एक अद्भुत धैर्यका नशा उसे अपने समूचे शरीरमें रेंगता अनुभव हुआ। ललितकी चौड़ी छातीपर सिर रखे हुए उसे लगा, वह बिलकुल सुरक्षित है—अकेली पागलोंकी तरह उस खानेको दौड़ते-से घरकी दीवारोंके भीतर भटक नहीं रही, अपितु आराम कर रही है···सो रही है···बिलकुल सुरक्षित···।

ललितकी छातीकी उष्णताके स्पर्शसे वह अपने सम्पूर्ण जीवनकी सर्दी भूलने लगी—सर्दीसे ठिठुरे शिथिल उसके अंगोंमें हरकत लौटने लगी।

उसके आँसू रुक गये।

दुपट्टेका आँचल उसने अपनी आँखों और गालोंपर फेरा।

"क्या बात है मामा?" ललितने उसे दोनों कन्धोंसे नरमीसे झकझोरकर गम्भीर आवाज़से पूछा।

"कुछ नहीं," शान्तिने हँसनेकी कोशिश की।

■

ललितने रिकार्ड-चेंजरपर वेस्टर्न म्यूज़िकके रिकार्ड लगा रखे थे, और पास तनिक हटकर वह बैठा था। आँखें बन्द करके सिगरेट पी रहा था। सिर सोफ़ेकी बैकपर टेका हुआ था। पैरोंसे हलकी-हलकी चाप दे रहा था। यदा-कदा हलका-सा गुनगुना भी उठता था।

शान्ति कमरेमें आयी। उसके हाथमें एक प्लेट थी, और प्लेटके ऊपर एक बाँका-सा गिलास, जिसमें कोकाकोला था। काले कत्थई रंगके लीक्युडमें सफ़ेद आईस-क्यूब हिल रहे थे।

शान्ति कुछ नहीं बोली, परन्तु ललित-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को जैसे उसकी उपस्थितिका भान हो गया था, उसने आँखें खोलीं।

"ओ, माई लवली मम्मी ! थैंक यू !" कहते हुए उसने कोकाकोलाका गिलास उठा लिया।

शान्ति मुसकरा दी।

वह वापिस जाने लगी। ललित एक घूंट भरकर रुक गया। गिलास उसने छोटे-से मेज़पर रख दिया। शान्तिके हाथसे प्लेट भी पकड़कर रख दी, 'आओ, मामा, तुम्हें डान्स सिखलाऊँ," ललितने शान्तिकी कमरके गिर्द बाँहें डालते हुए कहा।

"अरे, मुझे नहीं आता डान्स-वान्स !" शान्तिने बनावटी ग़ुस्सेसे कहा, परन्तु एक मुसकान थी जो मछलीकी तरह उसके होंठोंसे फिसलती जा रही थी।

"मैं सिखलाता हूँ न ! गुरु धारण करो मुझे।" ललितने आँखें बन्द करके बहुत ही गम्भीर मुखमुद्रा बनाकर कहा।

शान्तिकी हँसी निकल गयी।

ललितने उसका हाथ अपने कन्धेपर रखा, दूसरा हाथ पकड़कर धीरे-धीरे कमरेमें थिरकने लगा, "अब यह क़दम उठाओ··· शरीरमें तनिक लचक। हाँ, ठीक। अब दूसरा।···ऐसे आगेकी ओर !···तालके साथ !···म्यूज़िकका ध्यान रखो—हाँ, ठीक·····।"

शान्तिके वक्षस्थलमें कुछ घुमड़ रहा था। यह खुशी थी ? धैर्य था ? शान्ति थी ? आनन्दातिरेक था ? उसे कुछ मालुम न था।

ललित एक दिन शान्तिके कमरेमें एक फ्रेम पड़ा हुआ ऐनीका चित्र उठा लाया। शान्ति सोफेपर बैठी ललितका स्वेटर बुन रही थी। ऐसे ही रूमालसे उसका शीशा पोंछता हुआ शान्तिके पास आ खड़ा हुआ, "मामा, यह तुम्हारी वुड-बी बहूका चित्र कहाँ रखूँ ?"

शान्तिके मुखमण्डलपर एक छाया आ विराजमान हुई। क्या उत्तर दे ? शब्द उसके कण्ठमें अटक गये।

"देख ले···यहीं कहीं···" उसने पूरे यत्नसे अपनी आवाज़को सामान्य रखते हुए कहा, और आस-पास कमरेमें देखने लगी, जैसे उस चित्रके लिए स्थान ढूंढ रही हो।

ललितने अपनी माँके मुखपर जिस आयी उस छायाको देख लिया था। चित्र हाथमें लेकर कमरेकी आलमारियों, शेल्फोंके टॉप, डेकोरेशन पीससके आस-पासके खाली स्थान और दीवारोंको देखने लग गया। सामने रेडियो-ग्रामपर जगह खाली थी। ललितने किंचित् घूमकर निरीक्षण किया और कहा, "यहाँ तो कोई जगह बच नहीं आ रही। अच्छा, फिर सोचेंगे।"

और चित्र वह वापिस ले गया। क्षण-भर वह उसे देखता रहा, होंठोंके हल्केसे स्पर्शसे उसने उसको चूमा, और उलटा करके रख दिया। और अपने कमरेमें चला गया।

'परन्तु क्यों ? अम्माँको क्यों यह पसन्द नहीं ? मैंने जब इंगलैण्डसे लिखा था कि यहाँ एक लड़की है ऐनी, मैं उससे विवाह क

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा हूँ, आपका आशीर्वाद चाहिए; तब मम्मीने यही लिखा था कि तू पहले यहाँ आ, फिर मैं स्वयं उसे पत्र लिखूँगी, स्वयं उसे पसन्द करूँगी, फिर उसका नाम 'ऐनी' की जगह 'अन्नू' रख दूँगी, और अपने हाथों तुम्हारा मंगल-सूत्र बाधूँगी। या तुझे साथ लेकर इंगलैण्ड जाऊँगी, या अन्नूको भारत बुला लेंगे। अपने हाथोंमें उसे दुल्हन सजा-लेंगी। तू पहले यहाँ आ जा, मेरे पास।'...

'मैं आ गया, परन्तु अम्माँ...!'

ललित खिड़कीसे बाहर झाँक रहा था, परन्तु वास्तवमें वह कुछ भी नहीं देख रहा था। सिगरेट पी रहा था, और धुआँ उसके आस-पास फैल रहा था। बाहर शाम गहराती जा रही थी।

शान्ति आकर अडोल उसके पीछे खड़ी हो गयी, "ललित, तू नाराज़ है मेरेसे?" उसकी आवाज़ जैसे बहुत दूरसे आ रही थी, किसी खड्डमें-से।

ललित एकदम घूमा, "नहीं, अम्माँ, नाराज़ क्यों होना था भला?" ललितने अपनी आवाज़को उपेक्षाका स्पर्श देना चाहा, तनिक हँसनेका यत्न किया। और उसने प्यारसे एक बाँह शान्तिके कन्धोंके गिर्द डाल दी।

शान्ति सहसा फफककर रो उठी। हिचकियोंसे उसका सारा शरीर ऐसे हिल रहा था, जैसे कोई जामुनोंको दोनेमें डालकर धक्का लगानेके लिए हिला रहा हो।

"ओ माई डारलिंग मामा...!" ललितने जैसे भींगकर कहा, और शान्तिको अपनी बाँहोंमें भर लिया। "अम्मी...अम्माँ...!" वह शान्तिको एक बालककी तरह पुचकारकर चुप करवा रहा था।

■

'अम्मीको क्या हो रहा है यह?'—ललित कुछ समझ न पा रहा था। वह अत्यधिक परेशान हो रहा था। 'ऐनी' के पत्र काले बादलोंके समान ढरते-ढरते आते, घमड़-घुमड़कर आते। ललित हैरान था कि क्या करे। 'अम्माँको क्या होता है?'—लाख सोचनेपर भी उसे कुछ नहीं पता लग रहा था। परन्तु अपनी विवशताको वह हर समय छिपाकर माँकी परेशानीको कम करनेका यत्न करता रहता, हँसता रहता। 'परन्तु ऐसा कबतक? आखिर कबतक?' वह सोचता।

कुमार अपने काममें मस्त रहते। ललित आया, तो दो-चार दिन वे सीधे घर आये। पुनः अपने पुराने नियमसे उन्होंने दफ्तरसे सीधा क्लब जाना प्रारम्भ कर दिया। रात-को देरसे आते। कभी-कभी ही खाना घरपर खाते, नहीं तो सायंकाल टेलीफ़ोन कर देते—'मेरा खाना बाहर है, मैं थोड़ी देरसे आऊँगा।' आते, तो अपने कमरेमें कुछ समय रेडियो सुनते, फिर सो जाते। गरमी हो या सर्दी, वे सोते अपने कमरेमें ही थे। एयर-कण्डीशण्ड कमरा था, इसलिए कुछ अन्तर न पड़ता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रात आधी इधर, आधी उधर···। कुमार अपने कमरेमें सोये पड़े थे। शान्ति बरामदेमें थी, और ललित बाहर लॉनमें। शान्तिको सूझा, कहीं ललितने चादर न उतार दी हो। छुटपनमें जब वह करवट लिया करता था, तो सारी चादर उसके नीचे आ जाती थी। फिर शान्ति खींच-खींचकर चादर निकालती थी, और ललितको ढाँपती रहती थी। रात-को कितनी-कितनी बार!

वह उठी। हल्की-सी चाँदनी अडोल हर वस्तुको भिगोये जा रही थी—बिना आहट किये। ललितकी चारपाईके पास आकर वह खड़ी हो गयी। ललितके मुखकी ओर देखती रही, उसके श्वाँसोंको, उसके शरीरको, उसके बालोंको। कितना ही समय। फिर अडोल उसने चारपाईके पाँयतेसे चादर उठायी और ललितके ऊपर दे दी; अडोल, बिलकुल अडोल! चादर ओढ़ाते समय उसके हाथ काँप रहे थे।

■

सन्ध्या बहुत उदास थी। शान्तिके मनपर एक अद्भुत शिथिलताकी परतें जमती जा रही थीं काईकी तरह।

"अम्माँ, चलो, आज कहीं घूमने चलें," ललितने माँको चुपचाप बैठे हुए देखकर कहा।

"नहीं ललित, मैं अब इस समय कहाँ तैयार होऊँगी। हो आ न कहीं—क्लब ही चला जा डैडीके पास, या किसी मित्रके साथ कनॉट प्लेस कॉफ़ी पी आ। या···"

"नो, मामा, हम तो आज अपनी प्यारी अम्माँके साथ ही जायेंगे!" ललितने बालकोंके समान मचलकर कहा।

शान्ति मुसकरा दी, उसका मन किया एक हल्की-सी, लाड़ली-सी चपत वह ललित के गालपर दे मारे, और कहे, 'शैतान!' परन्तु फिर वह स्वयं ही झेंप गयी।

उसके अन्तरसे लाड़की, प्यारकी, और पता नहीं किसकी एक लहर उठी और उसने समूचे प्राणोंको भिगो गयी।

"चल," उसने केवल इतना ही कहा और उठकर खड़ी हो गयी।

ओखला··· पानीका फैलाव··· प्रवाह··· गहराता हुआ, कजलाता हुआ सायंकाल! परछाइयोंका, मादक-से अँधेरेका लहरोंको छूकर लाड़-प्यार करना, प्रकाशकी दुर-दूर जलती कन्दीलोंका पानीकी लहरोंमें काँप-काँप उठना···

खामोशी···निर्जनता···

एक छोटे-से पुलको लाँघकर वे एक बरेतीपर आ गये। रेतकी एक उभरी हुई लम्बी-चौड़ी टुकड़ी···आस-पास पानी।

वहाँ बैठकर शान्ति धीरे-धीरे उँगलियों से उस रेतको सहलाने लगी। रेतमें नमी थी, शीतलता थी, कोमलता थी, गुदगुदानेवाला स्पर्श था।

"अम्माँ, मुझे आज एक बात बतायेंगी क्या?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हूँ," शान्ति जैसे बहुत दूरसे बोल
रही थी।

"आप यूँ अनमनी-सी क्यों रहती हैं ?"
ललितकी आवाजमें बहुत स्नेह था।

शान्तिका मन किया कि अपना सिर
ललितकी गोदमें रख दे, और रोये···रोये···।

पहले तो कभी ऐसा न हुआ था। वर्षों-
बन्दूकमें मुर्गाकी तरह भुनी गयी थी; ऐसे
समय, किसीकी गोदमें सिर रखकर रोने-
की कभी मन न हुआ था। या शायद
उसे कोई गोद ही नजर न आयी थी !

"डैडीका घरमें मन नहीं लगता।
क्यों-! क्या कारण है अम्मी ?"

शान्ति चुप थी।

"डैडी कहीं और तो···?" ललित इससे
आगे शब्दोंमें शायद नहीं पूछ सकता था।

"नहीं ललित !"

"आपको पक्का पता है ?"

"हाँ, ललित, वे इस योग्य ही नहीं
हैं।" शान्तिकी आवाज़ काँप रही थी।

ललित सारेका सारा एक प्रश्न-चिह्न
बन बैठा था।

"ललित, यदि तू यही बात घर पूछता
तो कभी न बता सकती। परन्तु यहाँ···"
उसे लग रहा था कि यहाँ कोई विशेष
बात है जो उसकी आत्माको खुलनेके लिए,
निर्भार होनेके लिए, किनारे तोड़ देनेके
लिए, प्रवहमान होनेके लिए, समूची रेत
भिगो देनेके लिए विवश कर रही है।

"बताओ न अम्माँ !" ललित उसके और
निकट हो गया। शान्तिका सिर उसने अपने
कन्धेसे लगा लिया। "बताओ !" उसने बड़े
लाड़से कहा।

"ललित, अपने सारे जीवनकी ओर जब
मुड़कर देखती हूँ तो लगता है जैसे जलती-
भुनती रेतोंका एक बे-किनार मरुभूमि है,
जिसमें एक अकेला पेड़ है, और वह तू है।
और इस अकेले पेड़को देख-देखकर मैंने जैसे
अपना सारा जीवन काट लिया है।···"

ललित चुप था।

"ललित, कोई माँ अपने बेटेसे ऐसी
बात नहीं करेगी, परन्तु इस इतनी बड़ी
अजनबी दुनियामें मैं केवल एक व्यक्तिको
जानती हूँ, और वह तू है।"

खामोशी·····। अन्धकार धीरे-धीरे उतर
रहा था। आकाश जैसे नीचे···और नीचे आ
रहा था।

"हाँ, तो सुन, तेरे डैडी···" शान्ति
फूटकर रो पड़ी। ललित चकरा गया।

हिचकियोंसे जूझते हुए शान्तिने शेष
बात तुरन्त कह दी, "शुरू-शुरूमें वे परेशान
रहे, डॉक्टरोंसे सलाहें लेते रहे। और ललित,
इस प्रकार तू आ गया। बस, उसके बाद,
···छब्बीस सालसे···मेरे बेटे,···जितनी तेरी
आयु है···उतने ही सालोंसे हम एक ही घरमें
दो अजनबी-से रह रहे हैं। मुझे तूने बाँध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिठलाया था। और मैं इतने वर्ष स्वयंसे लड़ती रही हूँ, अपने-आपसे जूझती रही हूँ!" शान्ति रोये जा रही थी।

ललितके पास इसका कोई उत्तर न था।

ललितको लगा, जैसे वह कोह-तूरपर चढ़ आया हो जहाँ सचाईकी जलती आगसे वह झुलस जायेगा—जल जायेगा!

वे घर लौट आये। रास्ते-भर ललित भी मौन रहा, शान्ति भी मौन रही। आज शान्ति जैसे पूरीकी पूरी फैल गयी थी, बिखर गयी थी।

रात व्यतीत होनेमें ही न आ रही थी।

शान्तिको विचार आया—आज तो ललित बाहर लॉनमें सो रहा है। उसका जब मन चाहे, वह जाकर उसे देख सकती है, निहार सकती है। और अगर ऐनी···अन्तू आ गयी···तो वह अपने कमरेमें सोया करेगा,···कमरेमें?···कमरेमें·····?

और फिर पता नहीं क्या हुआ, शान्ति-की स्वयमेव चीख निकल गयीं। पागलोंकी भाँति वह चीख रही थी, कपड़े फाड़ रही थी।

ललित बाहर लॉनमें-से भागा आया। अन्दरसे कुमार साहब भी आ गये, नौकर जाग गये।

शान्ति किसीके क़ाबूमें न आ रही थी।

डॉक्टरको फ़ोन किया गया। डॉक्टर आकर कहा, "नरवस-टेनशन है।" टीका लगा दिया और कहा, "सुलानेका कीजिए।"

ललितने आगे होकर माँके हाथ फेरा, उसके मुँहपर हाथ फेरा।

शान्तिने उसे खींचकर अपने पास लिया। उसकी आँखें फटी-फटी-सी जैसे रही थीं, जैसे पहचाननेकी कोशिश कर हों। सिर उसका बायेंसे दायें, दायेंसे चक्कर काट रहा था। उसका समूचा चारपाईपर पड़ा तड़प रहा था, रहा था।

कुमार चुपचाप बैठे थे।

ललितने तनिक झुककर शान्तिको अपनी छातीसे लगा लिया, फिर उसे भर लिया।

शान्ति खामोश होती जा रही थी।

कुछ समय पश्चात् वह एक बच्चेकी तरह सो रही थी।

कुमार पास ही कुरसीपर बैठे थे।

ललित छतकी ओर ताक रहा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभी बाक़ी है और अमूर्त होना

श्याम शर्मा

■

केवल फैशन समझकर कलाकी हर आधुनिकताकी लम्बी प्रशंसा किये बग़ैर नहीं रहते। वास्तवमें ये दोनों ही प्रवृत्तियाँ ग़लत हैं।

कलाकी आधुनिक प्रवृत्तियोंको समझनेके लिए सबसे पहली आवश्यकता है कलाके सही अर्थको ग्रहण करनेकी। कलाकी अनेक परिभाषाओंको अगर मिलाकर देखा जाये तो लगभग सर्वमान्य परिभाषा यही समझी जा सकती है कि जगत्का दृश्य रूपमें आकलन करनेका साधन ही कला है। जिस दुनियामें हम रहते हैं उसका अनेक साधनोंसे आकलन किया जा सकता है। इसकी लम्बाई-चौड़ाई और वज़न आदिकी नाप-जोख इसका एक साधन हो सकता है, अपने अनुभवके आधारपर अनेक कल्पनामूलक प्रतीकों और गाथाओंका निर्माण एक दूसरा साधन हो सकता है। लेकिन, कला—हमारा मन्तव्य चित्रकलासे है—दृश्य जगत्से हमारी दृश्य-शक्ति-द्वारा पूछा जानेवाला एक शाश्वत प्रश्न है और यह अन्य सारे साधनोंसे भिन्न है। कलाका सम्पूर्ण इतिहास इस शाश्वत प्रश्नके उत्तरमें अपनाये जानेवाले विभिन्न माध्यमोंका ही इतिहास है। यह कहा जा सकता है कि बाह्य जगत् तो सभीके लिए एक-सा है और इसीलिए इसकी प्रतिकृति भी एक-सी ही होनी चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन कुछ आगे चलकर ही हम इस निष्कर्षपर पहुँचेंगे कि हमारा देखना केवल आँखपर ही निर्भर नहीं करता वरन् हमारी मनःस्थिति और जिस दुनियामें हम रहते हैं उससे कहीं अच्छी और विश्वसनीय दुनिया-की खोज और निर्माणकी वृत्तिपर भी निर्भर करता है। इस प्रकार कलाके द्वारा यथार्थ-की प्रतिकृति ही नहीं वरन् निर्माण भी होता है।

यह एक विचित्र संयोग है कि आधुनिक कलाका जन्म फ्रान्सके एक ऐसे चित्रकारसे होता है जो दुनियाको ठीक वैसी ही देखना चाहता था जैसी कि वह हमें दिखाई देती है। पॉल सेजाँका जन्म १९ जनवरी, १८३९ को हुआ और २२ अक्तूबर, १९०६ को उसकी मृत्यु हुई। उसने एक लम्बे अरसे तक 'इम्प्रेशनिस्ट' अथवा प्रभाववादी कलाकारोंके साथ कार्य किया और अन्तिम समय तक मोनेट और पिसारो-जैसे प्रभाववादी दिग्गजों-के लिए एक सम्मानका भाव उसके मनमें रहा। लेकिन सम्भवतः पॉल सेजाँ यदि आज जीवित होता तो उसे भी उस क्रान्तिको देखकर विस्मय होता जो कलाके प्रति उसकी ईमानदारीसे उद्भूत हुई है। प्रभाववादी कलाकारोंसे सेजाँके मतभेद दृश्य-जगत्के प्रस्तुतीकरणके साधनोंको लेकर हुए थे। वान गॉग, मोनेट और पिसारो आदि प्रभाव-वादी कलाकार यथार्थके अधिक प्रभावकारी चित्रणके लिए धूप-छाँह आदिके प्रक्षेपणका अधिक सहारा लेते थे और इसी कारण उनकी कला सजावटकी वस्तु अधिक हो जा रही थी। जापानी प्रिण्टस तथा दूसरी कला प्रसाधनोंकी ओर भी उनकी रुचि अधिक बढ़ती जा रही थी और सेजाँ इन सबका विरोधी था। वह इस बातको कभी स्वीकार करनेके लिए तैयार नहीं था कि यथार्थके प्रस्तुतीकरणमें कोई भी अन्य बाह्य साधन अथवा प्रसाधन हस्तक्षेप करे। उसकी उत्कट इच्छा थी कि चित्रके विषयको ठीक वैसा ही प्रस्तुत करे जैसा कि वह दिखाई देता है और उसकी इस उत्कट इच्छाने ही आगे चलकर कलाको उस क्रान्तिकारी मोड़ पर ला खड़ा किया जहाँसे अति यथार्थवाद, अमूर्त्त और क्रियाशील आदि अनेक कला-प्रवृत्तियोंका जन्म हुआ और कलाके स्वरूप और साधनोंमें आमूल-चूल परिवर्तन हुआ।

यह परिवर्तन एकाएक नहीं हुआ। १९वीं शताब्दीके प्रारम्भमें नवीन कलादर्शों और मूल्योंकी सर्वाधिक आवश्यकता अनुभव की जा रही थी। कला ईश्वरनिष्ठ नहीं हो सकती थी क्योंकि ईश्वर मर चुका था और मनुष्य अथवा समाजनिष्ठ भी वह नहीं रह सकती थी क्योंकि मनुष्य अब पूर्णतया स्वतन्त्र था। इस युगमें विज्ञान ही कलाका प्रकाश-स्तम्भ हो सकता था और कलाको वैज्ञानिक आधार प्रदान करनेका श्रेय एक ऐसी प्रतिभाको मिलता है जिसने अपने अल्पकालिक जीवनमें ही कलादर्शोंको एक नया मोड़ प्रदान कर दिया। यह प्रतिभा थी जार्ज स्यूराँ (१८५९-९१)। स्यूराँके विचारसे रंगों, रेखाओं और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनके उभारमें एक ऐसा सामंजस्य उत्पन्न किया जा सकता है जो अपने-आपमें ही हर्ष, विषाद अथवा शान्त आदि रसोंकी सृष्टि कर सकते हैं। उसने दृश्य-साधनोंका वैज्ञानिक अध्ययन किया था और अपने आदर्शित सामंजस्यकी सृष्टिके लिए वह प्राकृतिक रंगों-को छोटे-छोटे अणुओंमें विभाजित करता था और उसके आधारपर आँखको पूरा चित्र ग्रहण करनेका अवसर प्रदान करता था। ऐसा करनेमें उसका उद्देश्य वही था जो सेजाँका था—वस्तुका दृश्यानुरूप चित्रण। सूर्याकी कलाको विभाजनवाद अथवा बिन्दु-वादकी संज्ञा भी दी गयी है किन्तु उसकी यथार्थ सफलता इस बातमें निहित थी कि उसने कलादर्शोंमें एक ऐसी द्वन्द्वात्मक समस्याका प्रणयन किया था जिसे हल करनेके लिए कलाको एक नवीन भाषाकी आवश्यकता थी जिसने कि आगे चलकर कलाको एक सामाजिक और व्यक्तिगत आवश्यकतामें परिणत कर दिया।

बिन्दुवाद अथवा विभाजनवादके विरुद्ध विद्रोहके रूपमें हेनरी मातिसके नेतृत्वमें एक नये वादका जन्म हुआ जिसे एक कला आलोचकने 'फाविज़्म अथवा जंगलवाद' की संज्ञा दी थी। इस दलके कलाकारों-द्वारा आयोजित एक चित्र-प्रदर्शनीको देखनेके बाद उसने कहा कि मुझे ऐसा लगा जैसे मैं जानवरोंसे भरे जंगलमें-से निकल रहा हूँ। मातिसकी कलाको अभिव्यंजनवादकी संज्ञा भी दी जा सकती है। उसने कहा भी था

मातिसकी कलाको अभिव्यंजनवादकी संज्ञा भी दी जा सकती है। उसने कहा भी था कि किसी भी विषयकी अभिव्यंजना कुरुचिपूर्ण और सुरुचिपूर्ण दोनों ही तरीक़ोंसे हो सकती है और सुरुचिपूर्ण अभिव्यंजना ही मेरा उद्देश्य है। उसने अपने एक कथनमें यहाँतक कह डाला कि कलाको एक ऐसीआराम कुरसीकी तरह होना चाहिए जिसपर हारा-थका हुआ व्यक्ति कुछ देर बैठकर आराम कर सके।

कि किसी भी विषयकी अभिव्यंजना कुरुचिपूर्ण और सुरुचिपूर्ण दोनों ही तरीक़ोंसे हो सकती है और सुरुचिपूर्ण अभिव्यंजना ही मेरा उद्देश्य है। उसने अपने एक कथनमें यहाँतक कह डाला कि कलाको एक ऐसी आरामकुरसीकी तरह होना चाहिए जिसपर हारा-थका हुआ व्यक्ति कुछ देर बैठकर आराम कर सके। तकनीककी दृष्टिसे मातिस और उसके साथियोंकी कलामें आकारकी प्रखरता और रंगोंकी सूक्ष्म संकेतात्मकतापर अधिक ज़ोर दिया गया था। आधुनिक कलाका एक वह सिद्धान्त—कि मात्र सादृश्य ही सत्य नहीं होता—और जिसने आगे चलकर कला-प्रवाहको नयी दिशाएँ दीं,—भी इन्हीं कला-कारों-द्वारा प्रतिपादित किया गया था। पिकासो जैसे कलाकारका उदय भी इसी दलके साथ हुआ था।

प्रथम विश्वयुद्धके पहले तक सेजाँ और मातिसकी कला-परम्पराएँ लगभग समाप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● पत्नियाँ :
चित्र : शॉन

● एक जातिकी
मृत्यु :
चित्र : लॉरेन्स डॉज़

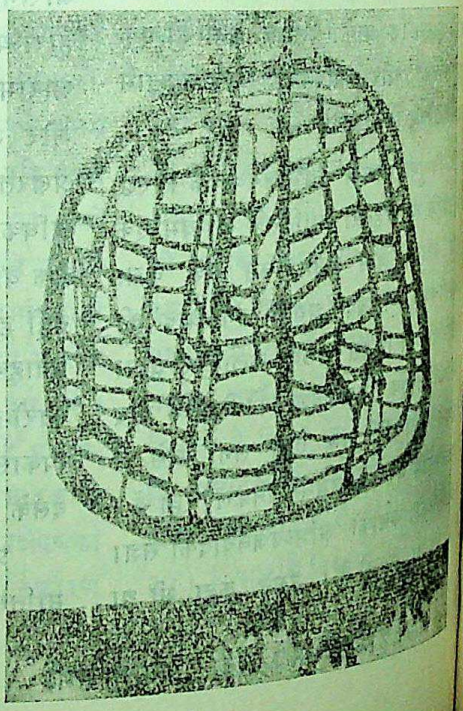

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● ज़ीरो : चित्र : हिम्मत शाह

● परिवार : चित्र : भाऊ समर्थ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो चुकी थी और न्यूयॉर्कमें अथवा घनवादी कलाका उत्थान हो चुका था। घनवादी कलाके दो प्रमुख अंग हैं—ज्यामिति-आकार और कल्पना-शृंखला। ज्यामिति-आकारों-को अपनाकर घनवादने जहाँ कलाके रूप-स्वरूपमें क्रान्ति उत्पन्न कर दी वहाँ उसकी विषय-वस्तुमें कल्पना-शृंखला अथवा 'एसोसि-एशन' के तत्त्वसे उसने कलाको एक अभिनव सैद्धान्तिक आधार प्रदान कर दिया। इस विचारधाराके अनुसार प्रेक्षणके बाद सीधे कल्पनापर पहुँचा जा सकता है और इसके बीच प्रतिकृति प्रक्रियाकी आवश्यकता नहीं रह गयी थी और यह उद्घोषित किया गया था कि कल्पना-शृंखलामूलक यह प्रकार दर्शकको प्रभावित करनेमें अधिक सूक्ष्म है। इस प्रकार अब कलाके लिए किसी विषय-वस्तुकी आवश्यकता ही नहीं रह गयी थी। सादृश्यकी आवश्यकता तो पहले ही समाप्त हो चुकी थी। अब विषय-वस्तुकी आवश्यकता भी नहीं रह गयी। घनवादकी एक और विशेषता यह थी कि कला-कृतिके संग्रथनमें वह रंगोंकी आवश्यकता भी समाप्त कर रहा था और वस्तुओंका प्रतिनिधित्व स्वयं वे वस्तुएँ ही करने लगी थीं। इस प्रकार अखबारकी चिन्दियाँ, काँचके टुकड़े आदि कूँची और रंगोंका स्थान लेने लगे थे, किन्तु प्रथम महायुद्धने घनवादको लगभग समाप्त ही कर दिया। महान् कलाकार पिकासोका नाम प्रायः घनवादके साथ जोड़ा जाता है। और इसमें सन्देह नहीं कि पिकासो और ब्राक इस कलाके प्रणेता थे लेकिन विशेषकर पिकासोको किसी एक शैलीके साथ बाँधकर नहीं रखा जा सकता। जैसा कि आगे चलकर हम देखेंगे, उसने लगभग सभी कला-प्रवृत्तियों को न्यूनाधिक मात्रामें प्रभावित किया था।

इसमें सन्देह नहीं कि घनवादने अमूर्त कलाके लिए मार्ग पूर्णतया प्रशस्त कर दिया था लेकिन इसका प्रारम्भिक रूप कवि यथार्थवादी अथवा स्वप्निल कलाके रूपमें प्रकट हुआ था। फ्रॉयडके मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तोंने स्वप्न और अवचेतनके एक नये जगत्की सृष्टि कर दी थी जिसमें कलाके दर्शन और विषय-वस्तुको पूर्णतया नया मोड़ देनेकी असंख्य सम्भावनाएँ निहित थीं और अति यथार्थवादने इन सम्भावनाओंको नूतन रूप प्रदान किया। बाह्य और दृश्य-जगत्से अदृश्य और अवचेतनका यह जगत् कला-कारोंके लिए बहुत आकर्षक था और इस सिद्धान्तने अबतककी सारी परम्पराओं और मान्यताओंको ग़लत सिद्ध कर दिया था। अति यथार्थवादका जन्म मूलतः साहित्य और विशेषकर काव्य-सृजनके क्षेत्रमें हुआ था किन्तु क्रमशः वह कला-क्षेत्रमें भी प्रवेश कर गया और आज तक कलाकारों और उनकी कृतियोंपर उसका प्रभाव है। अति यथार्थवादी कलाकारों—ब्रेटन और सूपाँने सन् १९२४ में अपने प्रथम घोषणा-पत्रमें अति यथार्थवादकी परिभाषा देते हुए कहा है कि यह एक अनियन्त्रित मानसिक प्रक्रिया है जिसपर प्रज्ञा अथवा बुद्धिकी कोई लगाम नहीं होती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देस आर्न्स्ट, आर्प, मीरो, डॉली आदि अनेक प्रख्यात कलाकारोंने इस सिद्धान्तको अपनाया और लगभग विश्वके सभी देशोंपर इसका प्रभाव पड़ा।

अमूर्त अंकन आधुनिक कलाकी एक मूल उपलब्धि है। अमूर्त चित्रणका आरम्भ हम केन्दिस्कीके उस सिद्धान्तसे मान सकते हैं, जिसके अनुसार कलाकार एक आन्तरिक अनिवार्यतासे प्रेरित होकर सृजन करता है। केन्दिस्कीके अनुसार इस आन्तरिक जगत्‌की अपनी स्वतन्त्र सत्ता होती है—इसकी अपनी भाषा होती है। जब कलाकार इस आन्तरिक जगत्‌की गहराइयोंका चित्रण करता है तब उसका प्रभाव केवल इन्द्रियों तक ही सीमित नहीं रहता वरन् सीधे आत्मा तक पहुँचता है। इस प्रकार अमूर्त चित्रण द्वितीय महायुद्धके पश्चात् सारे संसारकी प्रमुख कला-शैलीके रूपमें आज तक विद्यमान है। इस कला-शैलीके माध्यमसे कलाकारने पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली है। अब उसे अपनी रचना-प्रक्रियाके लिए किसी विषय-वस्तुका सहारा नहीं लेना पड़ता। हम ऊपर देख आये हैं कि सेजाँसे लेकर आज तकका कलाकार अपनी स्वतन्त्रताके लिए संघर्ष करता आया है और अमूर्त कला-शैलीमें आकर ही इस संघर्षकी चरम परिणति हुई है। इस शैलीके द्वारा रंग, आकार, संयोजन आदि सभीने अपनी-अपनी स्वतन्त्र सत्ता प्राप्त कर ली है। केन्दिस्की, क्रोकोश्का तथा पॉल क्ली इस शैलीके प्रमुख कलाकार हैं। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि आज कलामें केवल अमूर्त शैली ही प्रचलित है—यद्यपि निस्सन्देह यह शैली आज मूर्धन्य है। सूक्ष्म-चित्रणके सिवा कुछ ऐसी शैलियाँ भी आज विद्यमान हैं जो आदिवासी-कला, चीनी लिपि आदिसे अधिक प्रभावित हैं। इस शैलीके कलाकारोंमें जावलेन्स्की, मिचकावस आदि प्रमुख हैं।

कलामें प्रयोगका क्षेत्र अनन्त है, आज भी अमेरिका आदिमें नये-नये प्रयोगों-द्वारा कला-चित्रण हो रहा है किन्तु आधुनिक कलाकी अबतककी मान्य शैलियोंमें सम्भवतः अमूर्त चित्रणकी कला ही सबसे अधिक शक्तिशाली है और इसकी क्षमता अपार है—इसमें सन्देह नहीं।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माध्यम

हिन्दी साहित्य सम्मेलन
द्वारा प्रकाशित
तथा श्री बालकृष्ण राव द्वारा
सम्पादित मासिक

'माध्यम' एक वर्ष की
अल्पावधि में
हर प्रबुद्ध पाठक की सबसे
प्रीतिकर पाठ्य-सामग्री
बन गया है।

'माध्यम' के प्रवेशांक से
अबतक की पूरी फाइल की
धुआँधार माँग इसके स्थायी
महत्त्व और लोकप्रियता
का परिचायक है।

सहवर्ती साहित्य, विवेचना, प्रतिपत्तिका,
समीक्षाएँ, प्रत्यालोचन-पुनर्विचार, हिन्दीजगत्, पत्र-पत्रिकाएँ
'माध्यम' के स्तम्भगत आकर्षण हैं।

• •

एक अंक का मूल्य : १.०० । वार्षिक शुल्क : १०.००

• •

पत्राचार : पो० बा० सं० ६०, इलाहाबाद
सम्पादकीय तथा व्यवस्थापकीय कार्यालय :
हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो तारों का आकाश

सोमा वीरा

■

...नी आजकल कितने परेशान ...त आते हैं! मुझे तो उनकी ...सोचकर भी दया आती है। ...उस दिन प्रकाश पूछ रहे ...शर्माको क्या हो गया है?" ...मैं चुप रही तो वे बोले, ...तुम्हें मालूम जरूर है, इला। ...तुम्हें बता नहीं रही हो।" ...मैंने कहा, "खूब बातें ...ती हो! किसीके घरकी बातें ...तुम्हें क्या मालूम? पति-...पत्नीमें झगड़ा होता ही रहता ...है। बातें बढ़ जाती हैं, तो ...कभी डाइवोर्स होने तक-...नौबत आ जाती है।"

...उन्होंने एक गहरी साँस ...ली, "तुम ठीक कहती हो। ...शायद एक यही कारण हो ...सकता है।"

...वे तो कामपर चले गये, ...किन्तु मैं सोचती रही—आठ ...महीने पहले भी तो ये ही शर्मा ...जी थे! कैसा चेहरा खिला रहता था! कैसे चहकते घूमा करते थे! जिस दिन सावित्रीके यहाँ आनेका प्रोग्राम निश्चित हो गया था, ऐसे खुश हुए थे, मानो धरतीपर बैठे ही आकाशके तारे झोलीमें आ गिरे हों। बोले, "भाभी, आपके भरोसे ही उसे सैनफ्रान्सिस्को बुला रहा हूँ।"

"मेरे भरोसे?"

"बिलकुल!" वे शब्दोंपर ज़ोर देते हुए बोले, "आपको बता चुका हूँ—उसने कभी इलाहाबादके बाहर पैर नहीं रखा, माँ और बड़ी बहनसे सलाह लिये बिना कभी चूड़ियाँ तक नहीं खरीदीं, घरवालों और पड़ोसिनोंके सिवा कभी-किसीसे दो बातें नहीं कीं। यहाँ उसे सुबहसे शाम तक, सब काम अकेले ही करने पड़ेंगे। आप यदि उसकी सहायता नहीं करेंगी, तो बेचारी दो दिनमें ही घबरा जायेगी।"

सुनकर मन-ही-मन सोचा था—इतने पढ़े-लिखे और सम्भ्रान्त घरानेमें जन्म लेकर, इन्होंने ऐसी गँवारनसे शादी क्यों की?

प्रकटमें कहा था, "आप चिन्ता न करें। मैं उसे किसी बातका कष्ट न होने दूँगी।"

और फिर एक दिन, हम लोग उसे लाने, हवाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अड्डे जा पहुँचे।

कस्टम पार कर, वह बाहर निकली।

न जाने क्यों, उसे देखकर, मुझे बैजयन्ती मालाकी याद आ गयी—आँखोंमें काजलके बारीक डोरे; लम्बे बालोंका खूबसूरत जूड़ा; स्लीवलेस ब्लाउज; और कलाइयोंमें जड़ाऊँ चूड़ियाँ, चेहरेपर ऐसी ताज़गी जैसे चालीस घण्टेका सफ़र करके नहीं, वह अभी अपने ड्रैसिंग रूमसे निकलकर चली आ रही हो।

सैकड़ों निगाहें उसका पीछा कर रही थीं। सभी अमरीकी—युवा और वृद्ध, पुरुष और महिलाएँ और बालक—मुड़-मुड़कर उसकी ओर देख रहे थे। एक बालिका अपनी नन्हीं-नन्हीं टाँगोंपर उछल-उछलकर, अपने युवक पितासे पूछ रही थी—"पापा, ये क्या हिन्दुस्तानी हैं?"

किन्तु पिताके कानोंमें वह प्रश्न पड़ ही नहीं रहा था, सभीकी तरह उसकी दृष्टि भी सावित्रीपर टिकी थी।

उन सब नज़रोंसे अनभिज्ञ-सी, वह हमारी ओर बढ़ती आ रही थी। शर्माजी-पर दृष्टि पड़ते ही, उसके गालोंपर सुर्खी दौड़ गयी। लम्बी-लम्बी पलकें झुक गयीं। किन्तु, दूसरे ही क्षण, अपनी मेहदी लगी हथेलियाँ जोड़, उसने मृदु स्वरमें कहा, "नमस्ते।"

ढाई वर्ष अमरीका रहनेके बाद, मेरी नमस्ते करनेकी आदत छूट गयी है। बड़ा 'ऑकवर्ड'-सा 'फ़ील' करते हुए कहा, "नमस्ते।"

पोर्टरने सूटकेस मोटरमें रख दिये। उसे 'टिप' देकर हमलोग चल पड़े।

माता-पिता, बहन-भाइयोंका कुशल-क्षेम शर्माजीने पूछ लिया, और उसने छोटे-छोटे वाक्योंमें उत्तर दे दिया।

मोटरमें चुप्पी छा गयी।

मुझे याद आया—विवाहके छह महीने बाद ही शर्माजी यहाँ चले आये थे। उन छह महीनोंमें भी, कौन जाने वे कितने दिन साथ रह सके होंगे! कितना एक दूसरेका परिचय पा सके होंगे!

हमलोग 'फ्री वे' पर जा रहे थे। सहसा तनिक सा मोड़, वह साथ-साथ चलते समुद्रकी ओर ताक रही थी। चुप्पी तोड़नेके लिए मैंने कहा, "आपको यह 'बीच-एरिया' अच्छा लगा?"

मैं अभीतक चुप रही थी। शायद इसी कारण वह चौंक गयी। एकदम मेरी ओर दृष्टि जो घुमायी तो मैंने देखा, उसकी दोनों आँखें झिलमिला रही थीं।

तुरन्त ही उसने दृष्टि पुनः मोड़ ली। धीरेसे बोली, "जी हाँ।" उस स्वरको सुन, शर्माजीने चौंककर उसकी ओर देखा। किन्तु वे केवल उसके जूड़ेमें लगा गुलाबका फूल ही देख पाये।

मन-ही-मन मैंने सोचा—यह मुरझाया हुआ सुर्ख फूल, और यह रुद्ध-कम्पित वाणी केवल ये दो वस्तुएं ही इस बातकी साक्षी हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न जाने कब तक मैं वहीं खड़ी
रही, न जाने कब
तक खड़ी रहती, किन्तु
उधर से अपने हाथोंमें ड्रिंक्स
की ट्रे लिये एक
बैरा गुज़रा। मुझे देखकर ज़रा ठिठका,
फिर मुड़कर ट्रे लिये मेरी
ओर बढ़ा।
मैंने कहा, "नहीं, यह मुझे नहीं
चाहिए। एक काग़ज़-
पेंसिल ला सकते हो?"
उसके हाथसे वह छोटा-सा पैड ले,
मैंने जल्दी-जल्दी लिखा—
'मेरे सिरमें दर्द है। घर
जा रही हूँ। आप लौटनेमें
जल्दी न कीजिएगा।'

खरीदवा दूँ, मैं भी तो पहनती हूँ।" किन्तु उसने माना ही नहीं। जब भी मैं कुछ कहती, वह हँसकर बोलती, "मैं क्या हाई स्कूलमें पढ़नेवाली बच्ची हूँ जो स्कर्ट और फ्रॉक पहनूँगी?"

सुनकर क्रोध आ जाता···और मैं? मैं क्या हाई स्कूलमें पढ़नेवाली बच्ची हूँ? इनसान जहाँ रहता है, वहाँके अनुसार वेष-भूषा पहननी ही पड़ती है। सदा विदेशी बनकर तो नहीं रहा जा सकता।

क्रोध दबाकर मैं कहती, "मैं जानती हूँ, तुम बच्ची नहीं; मैकफ़र्सन इंजिनियरिंग फ़र्ममें ट्रेनिंग पानेवाले कैमिकल इंजिनियरकी पत्नी हो, किन्तु तुमने देखा है—तुम्हारी कम्पनीके प्रेसिडेण्ट मि० नेलसनकी पत्नी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या पहनती है ?

उसकी आँखें अचरजसे बड़ी-बड़ी हो जातीं, "उनकी तो यह पोशाक है। वे यह नहीं पहनेंगी, तो क्या पहनेंगी ?"

अब ऐसे प्रश्नोंका भला क्या उत्तर है !

जब भी किसी पार्टीमें जाती है, कभी किसी प्रकारकी 'वाइन' को हाथ नहीं लगाती। हाथमें 'ऑरेंज-जूस' या 'टमाटर-जूस' का छोटा-सा गिलास ले घण्टों बिता देती है। यह तक नहीं सोचती कि उसके ऐसे व्यवहारसे शर्माजीको कितनी लज्जा आती है।

ये कभी-कभी परिहास कर बैठते हैं, "भाभी, जब आप भारत लौटकर जायेंगी, तो किसीसे क्या कहेंगी—यहाँ आपने कौन-सा नया काम किया ?"

"नया काम ?" वह मुसकरा देती है, "नये काम मैंने बहुत-से किये हैं, भाई साहब ! डिश-वाशरमें बरतन धोये हैं, वैकुअम-क्लीनरसे घर बुहारा है; लोगोंको स्केटिंग और स्कीइंग करते देखा है..."

"केवल देखा ही है। सीखा तो नहीं।"

"घरपर थी, तो क्या मैंने क्रिकेट और हॉकी खेलना सीखा था ?"

शर्माजी कुछ खीझकर बातोंका रुख बदल देते हैं।

मि० नेलसन कभी मछली पकड़ने जाते हैं, या अपने घर कोई पार्टी करते हैं, तो हम लोगोंको अवश्य आमन्त्रित करते हैं। प्रकाशके बिना तो जैसे उनका काम ही नहीं चलता। कभी-कभी छुट्टीके दिन—शनिवार या रविवारको भी—फ़ोन कर देते हैं, "मि० खन्ना, आपको असुविधा तो अवश्य होगी, किन्तु यदि आप...."

"नहीं, नहीं," ये झटसे बोल देते हैं, "असुविधा किस बातकी !"

असुविधा हो भी तो उसे अनदेखा करना ही पड़ता है। कम्पनीमें इस समय ग्यारह इंजिनियर ट्रेनिंग पा रहे हैं। उनमें केवल दो को—एक अमरीकी और एक भारतीयको—यहाँ नौकरी मिलेगी। शेषको और कहीं काम खोजना होगा।

अगले हफ़्ते प्रमोशन होनेवाले हैं।

प्रकाश कभी-कभी कहते हैं, "मैं उनकी जगह होता, तो अभीसे कहीं नौकरी खोजना शुरू कर देता। यहाँ नौकरी मिलना आसान नहीं है।"

मेरी भी समझमें नहीं आता कि क्यों शर्माजीको अभीतक आशा है। पिछले चार-पाँच महीनोंसे, मि० नेलसनने उन्हें एक बार भी आमन्त्रित नहीं किया है। मुँहसे कोई कुछ नहीं कहता, किन्तु जानते सब हैं कि वे 'नेगलेक्ट' का कारण क्या है।

किन्तु जिसके कारण, शर्माजीका आदर इस तरह कम हो गया है, उस साविकीको जरा भी परवाह नहीं है।

मैंने उसे कितनी बार समझाना चाहा है—"अमरीकामें, पतिकी नौकरी, समाजमें पतिका स्थान, सभी कुछ पत्नीकी चतुराईपर निर्भर रहता है। यहाँ पत्नीका स्थान उनके नहीं, पतिके बराबरमें है। तुम्हें ऐसा व्यव-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हार करना चाहिए, जिससे शर्माजीको सहा-
यता मिले।"

"करती तो हूँ," वह मुसकरा पड़ती है।

सच तो यह है कि उसे इतनी जल्दी
यहाँ बुलाकर शर्माजीने बड़ी भारी ग़लती
की! जानते तो थे कि उसका स्वभाव कैसा
है। कहीं नौकरी मिल जानेके बाद बुलाते,
यदि कहीं भी नौकरी नहीं मिली तो···

नरेन्द्र शर्माकी बात :

...ने मिसेज़ नेलसन ऐसी बेरुखीसे व्यव-
...क्यों करने लगी हैं! पिछले चार-पाँच
...से, उनसे एक बार भी मिलना नहीं
...। उनके घर पार्टियाँ होती रहती हैं,
...खन्ना और इला भाभीसे पता लगता
...है।

...खन्नाकी बात दूसरी है। वह कण्ट्री-
...का मेम्बर है। वहाँ उन लोगोंकी नित्य
...और मिसेज़ नेलसनसे भेंट होती है।

...देखता हूँ—मुझे भी क्लबका सदस्य
...पड़ेगा। पचास डॉलर महीना तो देने
...किन्तु नौकरी तो मिल जायेगी। माँ-
...समझाकर लिख दूँगा कि बस दो-तीन
...मैं उन्हें रुपये नहीं भेज सकूँगा। नौकरी
...जायेगी तो क्लबकी सदस्यता भी छोड़
...और रुपये भी अधिक भेज सकूँगा,
...महीने उन्हें किसी प्रकार काम
...ही होगा। न चले, तो थोड़ा कर्ज़ा
...। मैं शीघ्र ही चुका दूँगा।

पहली बार क्लब गया, तो अकेला
गया। सोचा था—वातावरण देख-समझ-
कर, सावित्रीको समझा दूँगा तो वह भूलें
कम करेगी।

कई परिचित मिले। सभी अपनी
पत्नियोंके साथ आये थे। सभीने सावित्रीके
विषयमें पूछा। मैंने बहाना बना दिया—
आज उसके सिरमें दर्द है। मन-ही-मन
सोचा—सावित्रीमें यह एक बड़ा भारी गुण
है। एक बार भी जो उससे मिल ले, वह
कभी उसे भूलता नहीं।

घर लौटकर उसे क्लबकी बातें सुनायीं।
कहा, "कलसे तुम्हें भी ले चलूँगा।"

मेरी बातका विरोध करना तो वह
जानती ही नहीं। बोली, "अच्छा!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगले ही दिन, दफ़्तर-में खन्नाने फ़ोन किया, "शर्मा, सुना है, तुमने क्लब 'जॉयन' कर लिया है ?"

"हाँ। कल मैं वहाँ गया था। तुम दिखाई नहीं दिये ?"

"नहीं। हम लोग अपने सैक्शन मैनेजर और उनकी पत्नीके साथ 'रशियन बैले' देखने गये थे। सुनो, वहाँ तुम्हें किसीने बताया ? आज मिसेज़ नेलसनका जन्म-दिन है।"

"नहीं। मुझसे तो किसीने नहीं कहा।"

"हम लोग हफ़्ते-भरसे उन्हें 'सरप्राइज़ पार्टी' देनेका प्रोग्राम बना रहे हैं। सब तैयारियाँ पूरी हो चुकी हैं। इसीलिए किसी-ने कुछ नहीं कहा होगा। मैंने सोचा, तुम्हें बता दूँ।"

"धन्यवाद !" मैंने शब्दोंपर ज़ोर देते हुए कहा। उसने फ़ोन रख दिया।

मैंने तुरन्त ही सावित्रीको फ़ोन किया, "सवि, आज मिसेज़ नेलसनका जन्मदिन है। मेरे घर लौटने तक तो दूकानें बन्द हो जायेंगी। तुम फ़ील्ड एण्ड मार्शलसे उनके लिए कोई क़ीमती भेंट ख़रीद लाओ।"

"अच्छा।"

"इला भाभीको फ़ोन कर दो। वे तुम्हारे साथ चली जायेंगी।"

"आप चिन्ता न करें।"

फिर वही 'आप' ! मैं खीझ गया। कितना चाहकर भी, मैं उसे 'तुम' कहना नहीं सिखा सका हूँ। झल्लाकर फ़ोन रख दिया।

सन्ध्याको घर पहुँचा तो देखा—टेबिलपर, लाल-हरे रिबनसे बँधा, सुनहरे काग़ज़में लिपटा एक चौकोर पैकेट रखा है। प्रसन्न होकर कहा, "फ़ील्ड-मार्शलको सजानेकी कला खूब जानते हैं। क्या ख़रीदा ?"

वह बोली, "वहीं देखिएगा।"

इला भाभीका टेस्ट बहुत अच्छा है। वे कोई ग़लत सलाह नहीं दे सकतीं—यह सोचकर, मैं निश्चिन्त हो, हाथ-मुँह धोने लिए बाथरूममें घुस गया।

क्लबमें पैर रखते ही, सावित्रीको कई चितोंने घेर लिया, "हलो···हलो···हाउ यू ?···नाइस टु सी यू हियर···"

मैं मुसकराकर एक ओर हट गया।

तभी इलाजी दिखाई दीं। "भाभी, आज तुम्हारे 'टेस्ट' की परीक्षा जायेगी।"

उन्होंने कुछ विस्मित हो मेरी देखा।

"क्या ख़रीदवाया है सावित्रीको ?"

"कब ?"

"आज।"

"आज ?" वे और भी अधिक विस्मित हो उठीं—"आज तो मैं दिन-भर घर ही थी। क्या उसे कुछ ख़रीदना था ? मुझसे कहा नहीं ?"

मेरा दिल धड़क उठा।

पार्टी शानदार रही, फिर सबके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैठे मिसेज़ नेलसन उपहार खोल-खोलकर देखने लगीं। उनके चारों ओर रंगीन कागज़ों और रिबनका ढेर लग गया। एक-से एक सुन्दर और क़ीमती वस्तुएँ थीं। इला भाभी और खन्नाने एक खूबसूरत नटराजकी मूर्त्ति भेंट की थी। उसपर दृष्टि पड़ते ही सब वाह! वाह! कर बैठे। मूर्त्ति हाथों-हाथ घूमने लगी।

हमारा पैकेट उन्होंने हाथमें उठाया, मेरी साँस-सी रुकने लगी।

सभी उस ओर देख रहे थे। उन्होंने कैंचीसे रिबन काटा, काग़ज़ खोला, और डब्बेका ढक्कन उठाया। अन्दर, टिश्यू पेपरके बीच, ज़रीके किनारेवाली हरी साड़ी थी।

"ओह!" उन्होंने कहा।

मैं लज्जासे गड़-सा गया।

प्रशंसामें कुछ शब्द कह उन्होंने दूसरे पैकेटकी ओर हाथ बढ़ाया।

पार्टी चलती रही, किन्तु मेरा उत्साह समाप्त हो चुका था। इस अवसरको मैंने सावित्री-द्वारा भेजी हुई 'ऑपोर्चूनिटी' समझा। एक क़ीमती भेंट देकर मिसेज़ नेलसन-को हमेशाके लिए खुश किया जा सकता था। किन्तु सदाकी तरह, अपनी मूर्खतासे सावित्रीने सब-कुछ मटियामेट कर दिया।

खन्ना अपनी मोटर नहीं लाया था। लौटते समय वे हमारे साथ आये।

राहमें इला भाभीने केवल इतना ही कहा, "सावित्रीजी, क्या आपको बाज़ार जानेका समय नहीं मिला?"

"नहीं। समय तो बहुत था। मैंने सोचा कि जो भी वस्तु मैं यहाँ खरीदूँगी, वह कोई भी खरीद सकता है, किन्तु ऐसी साड़ी यहाँ किसीको मिलेगी नहीं।"

"किन्तु आपने यह भी सोचा कि इस साड़ीका वे क्या करेंगी? कब वे इसे पहनेंगी, और कौन उन्हें पहनायेगा?"

"ओह!" वह बोली, "यह तो मैंने सोचा ही नहीं था।"

मैं चुप रहा—जो होना था, वह तो हो ही चुका था। मेरे कुछ कहनेसे उसकी आँखोंमें आँसू भर आते, बुद्धिकी थोड़ी कमी है, तो इसमें बेचारीका क्या दोष है! दोष तो मेरा ही है, जो उसे यहाँ इस वातावरणमें फँसा दिया। इलाहाबादके उस समाजमें वह साड़ी सबसे बढ़िया भेंट मानी जाती। केवल आठ महीनेमें ही उससे ऐसी आशा करना, उसके प्रति अन्याय ही तो है।

वास्तवमें भूल मेरी ही थी, 'कुछ खरीद लाओ' कहनेके बजाय, यदि मैं किसी वस्तुका नाम उसे बता देता, तो वह तुरन्त ही खरीद लाती।

भाग्यवान् है खन्ना। कैसी 'मॉडर्न' पत्नी मिली है! यहाँ आते ही ऐसा व्यवहार करने लगी है, जैसे अमरीकामें ही जन्म लिया हो। पत्नीकी चतुरताके कारण ही, अब यह नौकरी उसके हाथोंमें आ गिरेगी। इन दोनोंकी ओर देखता हूँ तो मुझे लगता है जैसे ये दोनों आकाशमें चमकनेवाले दो तारे हैं, जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पास-पास चलते एक ही मोटर पर बैठे रहे हैं।

काश! मैंने माँकी बातके आगे सिर न झुकाया होता! अड़ जाता कि नहीं, मैं तो किसी आधुनिकासे ही विवाह करूँगा, तो वे क्या कर लेतीं? अधिकसे अधिक दो-चार दिन रो ही तो लेतीं। रो-धोकर चुप हो जातीं।

अब ज़िन्दगी-भर साथ तो मुझे निभाना है!

माना, सुन्दर है सावित्री। यह भी माना कि वह घरके काम-काजमें बड़ी चतुर और सुघड़ है; किन्तु आजकी दुनियामें इज़्ज़त घरके ड्राइंग-रूममें नहीं, क्लबके सोशल-सर्किलमें बनती है। जिसके कारण समाजमें उन्नति रुक जाये, ऐसी पत्नी लेकर कैसे सुखी रहा जा सकता है?

अब मिसेज़ नेलसनको खुश करना और भी अधिक कठिन है और यदि उन्हें खुश नहीं किया जा सका तो···

■ सावित्रीकी बात :

कुछ दिनसे ये कितने परेशान नज़र आते हैं। पूछती हूँ तो कारण नहीं बताते; टाल जाते हैं। ऐसे भी कहीं दुनिया चलती है।

भोजन करने बैठते हैं, तो एक फुलका लिये घण्टों बैठे रहते हैं। अखबार लेकर बैठते हैं तो घण्टों अखबारमें ही आँखें गड़ाये रहते हैं। मैं कुछ बोलती हूँ तो भन्ना उठते हैं। नहीं बोलती हूँ, तो कहते हैं, "माँ-बापके घर क्या तुमने बोलना भी नहीं सीखा?"

कुछ दिन और यही हाल रहा, तो मैं पागल हो जाऊँगी!

शुरू-शुरूमें, जब मैं आयी थी, कितना अच्छा व्यवहार करते थे! मेरा मुँह देखकर सोते थे, मेरा मुँह देखकर उठते थे। इधर कुछ दिनसे न जाने क्या हो गया है!

माताजीको कुछ लिखते डर लगता है। न जाने वे अपने मनमें क्या सोचने लगें!

कितनी ही बार सोच चुकी हूँ—इस भाभीसे कुछ कहूँ, किन्तु सोचकर भी चुप रह जाती हूँ, वे अपनेको बहुत चतुर समझती हैं! जो अपनेको बहुत चतुर समझता है, उसकी बुद्धिपर मुझे विश्वास नहीं होता।

और कौन है यहाँ—इन छोटे-छोटे कमरोंकी ये नीली-नीली दीवारें, ये मुड़ मेज़-कुरसियाँ, ये ठण्डे फ़्रिजिडियर और वाशिंग मशीन—ये क्या मेरी बातका उत्तर देंगे!

कैसी है यह दुनिया जहाँ पड़ोसी अपनेको 'पड़ोसी' नहीं, प्रतिद्वन्द्वी समझते हैं! और प्रशंसाके शब्दोंके पीछे ईर्ष्या छिपी रहती है, और 'मैत्री'का अर्थ, मित्रकी मोटरसे अधिक ऊँची क़ीमतकी मोटर खरीदना है।

काश! मैं यहाँ न आयी होती! विवाहके बाद, तीन वर्ष इनके बिना बिता दिये, क्या और दो वर्ष नहीं बिता सकती थी? तब इनके स्नेह-भरे पत्र तो मिलते रहते। यह रूखा व्यवहार तो न सहन करना पड़ता!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस कड़वाहटका केवल एक ही कारण हो सकता है—ये अन्य किसीके स्नेहमें फँस रहे हैं। यदि ऐसी बात है, तो ये मुझसे कह क्यों नहीं देते? यहाँ तो डाइवोर्स नित्य होनेकी साधारण-सी घटना है! मैं चुपचाप इनकी राहसे हट जाऊँगी।

अवश्य यही बात है। तभी आज वहाँ जानेमें इन्होंने वैसी बातें कीं।

अच्छा, आज तीसरे पहर यदि मिसेज़ नेलसन न आयी होतीं, तो क्या यह दुर्घटना हो सकती थी?

वे टी० वी० देख रहे थे। मैं आलमारी-सफ़ाई करने लगी। देखा, डिब्बेमें केवल चार मठरियाँ ही शेष हैं। कल जब मैं बाहर गयी थी, शायद इनके कुछ मित्र आये होंगे, इसीलिए डिब्बा खाली है।

बिना मठरियोंके इन्हें नाश्ता अच्छा नहीं लगता। सोचा—झटपट थोड़ी-सी बना लूँ, आटा गूँध रही थी कि टेलीफ़ोनकी घण्टी बज उठी। मैं उठी नहीं। सोचा—ये तो हैं ही, उठा लेंगे। दो मिनिट बाद ही इन्होंने पुकारा, "सवि!"

मैं उठ रही थी कि इनके पैरोंकी आवाज़ सुनायी दी, "सुनो, मिसेज़ नेलसनका फ़ोन आया था। वे..." कहते-कहते द्वारके सामने आये तो एकदम चौंक गये, "यह तुम क्या कर रही हो?"

मैं डर गयी, "कुछ नहीं। थोड़ी मठरियाँ बना रही हूँ।"

"भला, आज शनिवारके दिन यह खट-राग फैलानेकी क्या आवश्यकता थी?"

"लेकिन पार्टीमें तो साढ़े सात बजे जाना है। चाय भी आप पी चुके हैं। अभी मुझे और काम ही क्या है?"

"फिर वही बात! मैंने तुम्हें कितनी बार समझाया कि छुट्टीके दिन तुम इन बेकारके कामोंमें न उलझा करो।"

न जाने क्यों मुझे भी क्रोध चढ़ आया। बड़ी कठिनाईसे, किसी प्रकार स्वरको दबाकर कहा, "आप बताइए न, क्या बात है? कहीं जाना है, तो मैं आटा उठाकर रखे देती हूँ।"

वे बोले, "मिसेज़ नेलसन आ रही हैं।"

मैं भौंचक्की रह गयी, "मिसेज़ नेलसन?"

"वे तुम्हें अपने साथ किसी मीटिंगमें ले जाना चाहती हैं।"

"कैसी मीटिंग?"

"अब बहस ही करती रहोगी, या कपड़े भी बदलोगी!"

"लेकिन जाना कहाँ है, यह बतायें तभी तो पता चले कि कौन-सी साड़ी पहनूँ?"

तभी दरवाज़ेकी घण्टी बजी। ये लपककर द्वारकी ओर बढ़े। मेरी समझमें नहीं आया कि भागकर ग़ुसलखानेमें घुस जाऊँ, या इन्हीं आटा-भरे हाथोंसे मिसेज़ नेलसनका स्वागत करूँ! सोचनेका समय नहीं मिला। इन्होंने पुकारा, "सवि!"

घीसे चिकने हाथ लिये मैं ड्रांइग रूममें आ खड़ी हुई। कहा, "मिसेज़ नेलसन, मुझे बड़ी ख़ुशी है कि आप आयीं। माफ़ कीजिए, मेरे हाथ..."

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाथ मिलानेके लिए बढ़ाया हुआ अपना हाथ, उन्होंने सहज भावसे वापस खींच लिया। कुछ घबराकर बोलीं, "क्या मैंने आपको असमय परेशान किया ? मुझे अफ़सोस है।"

"जी नहीं," ये बोले, "भूल मेरी है। मुझे मालूम नहीं था कि इन्होंने रसोई फैला रखी है।"

वे कुछ निराश-सी लगीं—"तो आप मेरे साथ नहीं चल सकेंगी ?"

पूछा, 'आप कहाँ जा रही हैं ?"

आज हम लोगोंके चर्च एसोसियेशनकी मीटिंग है। मि० नेलसनने कहा, आपके देशमें ऐसे एसोसियेशन नहीं होते; और शायद आप……"

"मुझे आपके साथ चलनेमें बड़ी ख़ुशी होगी," मैंने उत्साह दिखाते हुए कहा, "अगर आप पांच मिनिट बैठनेका कष्ट करें।"

"नहीं, नहीं, कष्ट किस बातका ! आप आरामसे तैयार हो जाइए।"

"मैं अभी चाय बनानेवाली थी। आप एक प्याला लेंगी ?"

"अगर आप बना ही रही थीं, तो अवश्य लूंगी। आप लोगोंके हाथकी चाय मुझे बड़ी अच्छी लगती है।"

मैंने झटपट दो प्याले पानी खौलनेको रखा, और एक ट्रे में प्लेट-प्याले तथा कुछ मीठी-नमकीन वस्तुएँ सजायीं। चाय लेकर पहुँची तो वे बोलीं, "मीटिंग सात-सवा सात बजेसे पहले समाप्त नहीं होगी। यदि आप चाहें, तो इधर न लौटकर मेरे साथ ही पार्टीमें चल सकती हैं।"

मैंने इनकी ओर देखा। बोले, "ठीक तो है। मैं तुम्हें वहीं मिल जाऊँगा।"

दस मिनिटमें ही तैयार हो, मैं बाहर निकल आयी।

मोटरमें बैठते हुए मिसेज़ नेलसनने कहा, "मुझे वास्तवमें अफ़सोस है, मिसेज़ शर्मा, कि मैंने आपको असमय परेशान किया। यदि मि० शर्मा कह देते कि आप व्यस्त हैं, तो मैं जरा भी बुरा नहीं मानती।"

"मैं जानती हूँ," मैंने कहा, "किन्तु मैं व्यस्त तो जरा भी नहीं थी। खाली बैठी थी, इसलिए मठरियाँ बनानेकी बात सोच रही थी।"

वे प्रसन्न होकर बोलीं, "मुझे भी खाली बैठना या टी० वी० देखना पसन्द नहीं। और मुझे खाना बनानेका बड़ा शौक है। आप मुझे मठरियाँ बनाना सिखायेंगी, मिसेज़ शर्मा ?"

"अवश्य," मैंने झटपट कहा, "किन्तु क्या मैं एक अनुरोध कर सकती हूँ ?"

उन्होंने मेरी ओर देखा।

"आप मिसेज़ खन्नाको इला कहकर पुकारती हैं। मुझे भी आप सावित्री कह सकती हैं। सावित्री या सवि—कुछ भी।"

वे मुसकरा दीं, "अच्छी बात है। किन्तु आपको भी मुझे मैटिल्डा कहना होगा।"

"ऑल राइट।"

मीटिंग मिसेज़ नेलसनकी सहेली मिसेज़ मार्टिनके घरपर थी। कमरेके अन्दर तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकते ही मैं चौंक गयी। सामने ही इला
थी। क्या वह इस संघकी सदस्या है?
उसने इस विषयमें मुझे कभी कुछ बताया
नहीं?

मिसेज़ मार्टिनने हम लोगोंका स्वागत
किया। फिर वे हमें सैण्डविच और पेय
पदार्थोंसे सजी मेजकी ओर ले गयीं, "मिसेज़
शर्मा, आप क्या लेंगी?"

"मिसेज़ शर्मा नहीं, सवि!" मिसेज़
नेलसनने झटसे कहा, "सवि इनका नाम है
एलिज़ाबेथ!"

इन लोगोंका नाम लेते मुझे लज्जा
आती है। किन्तु लाज छिपाकर कहा, "मैं
कॉफ़ी जूस लूँगी, एलिज़ाबेथ?"

इला हम लोगोंके निकट आ खड़ी हुई,
"क्या तुम सदस्या बन गयी हो, सावित्री?"

"अभी तो नहीं।"

मेरा यह उत्तर सुन, मिसेज़ नेलसनने
मुँह मोड़कर मेरी ओर देखा; पूछा, "क्या
तुम सदस्या बनना चाहोगी, सवि?"

"यदि मैं आपके कार्यमें कुछ योगदान दे
सकूँ तो अवश्य बनना चाहूँगी।"

मिसेज़ नेलसन तुरन्त ही मुझे एसो-
सिएशनके विषयमें सब कुछ बताने लगीं।
किन्तु उनकी बातें मैंने ठीकसे सुनी भी
नहीं। मन-ही-मन सोच रही थी--इला यदि
सदस्या है, तो मुझे भी बन जाना चाहिए।
फिर वे प्रसन्न होंगे।"

मैंने उनके रजिस्टरमें अपने हस्ताक्षर
कर दिये।

मीटिंग प्रारम्भ हुई। मैं मिसेज़ नेल-
सनके निकट ही बैठी। दूसरी ओर इला थी।

पता चला--यह क्लबकी स्पेशल मीटिंग
है! केवल दो घण्टेके नोटिसपर इसलिए
बुलायी गयी है, क्योंकि ब्राज़ीलके भूचाल-
पीड़ितोंके लिए कुछ सहायता भेजनेकी
योजना है। क्लबके सैक्रेटरी मि० पीटरसन
अपनी बात कहकर बैठे, तो अन्य दो
व्यक्तियोंने उठकर उनके प्रस्तावोंका समर्थन
किया। उसके बाद कुछ प्रस्तावोंपर वोट
ली जाने लगी। बहुत-सी बातें मेरी समझमें
नहीं आयी थीं। किन्तु मैं घबरायी नहीं।
जब मिसेज़ नेलसन अपना हाथ उठातीं, मैं
भी उठा देती। जब वे नीचा रखतीं, मैं भी
चुपचाप बैठी रहती।

मि० पीटरसनने पुनः अपनी क़लम
उठायी, "अब आप लोग यदि यह बोल दें
कि आप लोग लगभग कितना चन्दा दे
सकेंगे, तो मीटिंग शीघ्र ही समाप्त हो
सकेगी।"

अगली क़तारमें बाँयी ओर बैठे सज्जनने
अपना हाथ उठाकर कहा, "मैं पाँच सौ
डॉलर दूंगा।" दूसरे बोले, "मैं भी।" तीसरी
महिला थी; बोली, "छह सौ।"

मि० पीटरसन राशि लिखते रहे। रक़में
बोली जाती रहीं,--"आठ सौ, सात सौ, एक
हज़ार, बारह सौ, नौ सौ, ग्यारह सौ..."

मेरा हृदय धक्-धक् करने लगा—पाँच
सौसे कम किसीने भी नहीं कहा था। हमारे
बैंकमें कुल डेढ़ सौ डॉलर थे, और वेतन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलनेमें अभी दो सप्ताह शेष थे।

इलाकी बारी आयी। उसने सभीकी तरह, ऊँची आवाज़में कहा, "सात सौ।"

मेरे कानोंमें रक्त खट-खट बज उठा। मिसेज़ नैलसनने क्या कहा, यह जैसे मैं सुनना भी नहीं चाहती थी।

उन्होंने अपना हाथ नीचा किया तो मैंने हाथ उठाकर कहा, "पचहत्तर डॉलर।"

सभी निगाहें मेरी ओर घूम गयीं। मुझे लगा, मेरे गालोंपर लाली चढ़ रही है। और अपनी कायरतापर मैं क्रुद्ध हो उठी—मुझे लज्जित होनेकी क्या ज़रूरत है? इन सभीको पता है कि मेरे पति किसी करोड़-पतिके बेटे नहीं, और अभी दो वर्ष पूर्व ही उन्होंने कॉलेज छोड़ा है।

मीटिंग समाप्त हो गयी। इलाने पूछा, "सावित्री, मेरे साथ चलोगी!"

"नहीं," मिसेज़ नेलसन बोलीं, "ये मेरे साथ जा रही हैं।"

मेरी ओर एक ईर्ष्या-भरी दृष्टि डाल, इला पतिके साथ आगे बढ़ गयी।

मोटरके अन्दर बैठते ही मिसेज़ नेल-सनने कहा, "सवि, तुम तो आज ही सदस्या बनी हो, तुम्हें चन्दा देनेकी कोई ज़रूरत नहीं।"

मेरा मुख लाल हो गया, "नहीं, मुझे विश्वास है, मेरे पति देना चाहेंगे।"

उन्होंने एक बार मेरी ओर देखा। फिर सड़कपर दृष्टि जमाकर बोलीं, "यह न समझना कि जितनी राशि यहाँ बोली गयी है, वह सभी इकट्ठी हो जायेगी! उसका बीसवाँ हिस्सा भी एकत्रित हो जाये तो बहुत है।"

मुझे विस्मित देख उन्होंने बात स्पष्ट करनेके लिए कहा, "कुछ लोग बिना सोचे-समझे कोई भी राशि बोल देते हैं; कुछ केवल दिखावा करना चाहते हैं।"

सुनकर विस्मय हुआ, किन्तु कहती भी क्या! चुप रही।

मिसेज़ नेलसनने ही चुप्पी भंग की, "सवि, मुझे लगता है, तुम सच बात बोलना पसन्द करती हो। एक बात बताओगी?"

कुछ चकित हो उनकी ओर देखा—न जानें क्या पूछ बैठें। कहा, "क्यों नहीं, अवश्य।"

उनकी आँखें सड़कपर गड़ी थीं, "पार्टी आदिमें हमारा व्यवहार तुम्हें कैसा लगता है?"

प्रश्न इतना अप्रत्याशित था कि मैं उनकी ओर देखती ही रह गयी। तुरन्त ही सँभलकर कहा, "अधिक पार्टियोंमें जानेका मुझे अवसर नहीं मिला, किन्तु जब भी कभी गयी हूँ, आप लोगोंकी शालीनतापर मुग्ध होकर लौटी हूँ।"

उन्होंने एक गहरी साँस भरी, "मेरा हज़बैण्डका सोचना ही ठीक था। मैं इतने दिनसे ग़लती कर रही थी।"

"कैसी ग़लती?"

"पिछली पार्टियोंमें तुम्हें बुलाया नहीं।"

"यदि आपको यह पसन्द नहीं,"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ो जायेगी! ...
...त्रित हो जाये ...

...उन्होंने बात ...
...छ लोग बिना सोचे ...
...बोल देते हैं; ...
...हते हैं।"

..., किन्तु कहूंगी ...

...ी चुप्पी भंग ...
...म सच बात बोल ...
...त बताओगी?"

...की ओर देखा—...
...कहा, "क्यों नहीं ...

...र गड़ी थीं, "पार्ट ...
...तुम्हें कैसा लगा ...

...शित था कि ...
...गयी। तुरन्त ...
...पार्टियोंमें जाने ...
...किन्तु जब भी ...
...हीनतापर मुझे ...

...साँस भरी, "...
...क था। मैं ...
..."

...हें बुलाया नहीं?"
...पसन्द नहीं," ...

...: जून १९६१

...ने कहा, "कि पार्टीमें ...
...ब्बूको खूब कड़ा करके कहा, "कि पार्टीमें
...अगर मैं नृत्य आदिमें भाग नहीं लेती, तो
...ी नृत्य सीखना शुरू कर सकती हूँ।"

"नहीं, नहीं," वे झटपट बोलीं, "केवल
...री पसन्दगी या नापसन्दीके कारण तुम्हें
...ई नया काम प्रारम्भ करनेकी ज़रूरत
...ी। किन्तु क्या तुम्हारी स्वयं ही नृत्य
...नेकी इच्छा नहीं होती? इलाने तो सीख
...या है।"

मैं लज्जित हो उठी, "बात केवल इतनी-
...है कि मेरा यह सब कुछ करना मेरे
...म्मुरको अच्छा नहीं लगेगा।"

"तब तुम्हारा ऐसा न करना ही ठीक
...न्होंने कहा, और बात बदल दी।

...ट्रो क्लबकी रोशनियाँ दिखाई देने
...गीं। उन्होंने कहा, "सवि, मैंने कभी
...ाना तक नहीं की थी कि मुझे इतनी
...ूबसूरत साड़ी मिलेगी। क्या तुम मुझे
...ना सिखाओगी?"

"क्यों नहीं, अवश्य।"

"मैं उसे क्रिसमसके डान्सपर पहनूंगी।"

...निज नेलसन शायद धीरे-धीरे ड्राइव
...रही थीं। हमने अन्दर पैर रखा, तो
...इला, खन्ना, मि० नेलसन, सभी वहाँ
...पहले थे।

...न्होंने एक रूखी-सी मुसकानके साथ
...का स्वागत किया।

...पाँच मिनिट बाद, जब लोग इधर-उधर
...रने, बोले, "ज़रा बाहर आओ।"

...उनका यह स्वर सुनते ही मेरा दिल
...धक्-धक् करने लगता है। चुपचाप, साथ-
साथ दूसरे कमरेमें चली आयी।

बोले, "जो कुछ मेरी इज़्ज़त रही थी, वह तुमने आज मटियामेट कर दी।"

तो इलाने सब कुछ कह दिया है?

मुझे चुप देख, वे और अधिक झल्ला उठे, "जब सब लोग इतनी ऊँची रक़में बोल रहे थे, तो तुम्हें इतना कम बोलनेकी क्या ज़रूरत थी?"

मैंने सोचा, कह दूँ कि वे सभी रक़में केवल शान बघारनेके लिए बोली गयी थीं, किन्तु पूछा, "बड़ी रक़म बोल देती तो देते कहाँसे?"

"कहींसे देते। कर्ज़ा ले लेते, तुम्हारी नज़रोंमें क्या मेरी 'प्रेस्टिज' छह सौ डॉलरके बराबर भी नहीं है। तुम्हारी जगह कोई अमरीकी लड़की होती तो···"

बात अधूरी ही छोड़ वे दूसरे कमरेमें लौट गये।

मैं चुप खड़ी रही। कानोंमें बस एक ही बात गूँजती रही—तुम्हारी जगह कोई अमरीकी लड़की होती तो···

न जाने कबतक मैं वहीं खड़ी रही, न जाने कबतक खड़ी रहती, किन्तु उधरसे अपने हाथोंमें ड्रिंक्सकी ट्रे लिये एक बैरा गुज़रा। मुझे देखकर ज़रा ठिठका, फिर मुड़कर ट्रे लिये मेरी ओर बढ़ा।

मैंने कहा, "नहीं, यह मुझे नहीं चाहिए। एक काग़ज़-पेंसिल ला सकते हो?"

उसके हाथसे वह छोटा-सा पैड ले, मैंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जल्दी-जल्दी लिखा—'मेरे सिरमें दर्द है। घर जा रही हूँ। आप लौटनेमें जल्दी न कीजिएगा।'

बैरासे कहा कि मेरे लिए एक टैक्सी मँगा दे, और वह पर्चा मि० शर्माको दे दे।

घर लौट आयी। देखा, घड़ी नौ बजा रही है।

दस बज गये। ग्यारह। फिर बारह। इतनी देरसे सोचती रही हूँ, निश्चय कर लिया है—वे आयेंगे तो कह दूँगी, मैं तुरन्त ही घर लौट रही हूँ। डाइवोर्स लेकर वे अपनी अमरीकी सहेलीसे विवाह कर लें।

वे शायद इसे झूठ समझेंगे। शायद व्यंगसे कहेंगे—क्या सती-साध्वीका स्वांग भर रही हो कि पतिके सुखमें ही मेरा सुख है?

सहसा साँस-सी रुकने लगी। उठकर खिड़कीके निकट आ खड़ी हुई। देखा—आकाशमें दो तारे चमक रहे थे···ये दो तारे उस आकाशमें भी चमक रहे होंगे, जिसके नीचे, नित्य सुबह-शाम, तुलसीके पौधेमें जल देती माँ बहू-बेटेके सुख-मंगलकी कामना किया करती हैं।

आँखें भर आयीं। फिर और सोचा नहीं गया। बैठा नहीं गया। सूटकेस उठा उसमें दो-चार आवश्यक वस्तुएं रखने लगी—अब एक रात भी यहाँ नहीं रहूँगी। दो साड़ियोंके अतिरिक्त अपने साथ कुछ भी नहीं ले जाऊँगी। उनके लौटनेसे पहले ही यह घर छोड़ दूँगी।

तभी द्वार खुला और उनके पैरोंकी आवाज़ हुई। मैंने अपने मनको कड़ा कर लिया। किन्तु वे अन्दर नहीं आये। लगा कि ड्राइंग रूममें ही बैठ गये हैं।

बहुत प्रतीक्षा कर चुकी हूँ। बहुत सहन कर चुकी हूँ। अब अधिक सहन कर पाना मेरे वशकी बात नहीं है।

धीरे-धीरे द्वारकी ओर बढ़ती हूँ। वे चौंककर उठ खड़े होते हैं, "अरे! तुम जाग गयीं? मैंने तो कोशिश की थी कि किसी प्रकारका शोर न करूँ। अब कैसा है सिर-का दर्द?"

मेरा मन भिन्ना उठता है—पार्टीसे आये हैं, इसलिए अभी 'मूड' अच्छा है, और मुँहसे ये शहदमें घुली बातें निकल रही हैं। चार घण्टे बाद फिर वही चकल्लस शुरू हो जायेगी? अब मैं इस धोखेमें आनेवाली नहीं हूँ। आज फ़ैसला कर ही लेना है!

दबी ज़बानसे कहती हूँ, "सोया कौन था, जो जाग जाता?"

मेरी बात क्या उनके कानोंमें पड़ी नहीं? आगे बढ़कर, मेरे सामने आ खड़े हुए हैं। एकदम निकट—"सवि, मैंने ज़िन्दगीमें बहुत-सी भूलें की हैं। बहुतोंको ग़लत समझा है। किन्तु जितनी बड़ी भूल मैं पिछले चार-पाँच महीनोंसे करता आ रहा हूँ, वैसी कभी नहीं की थी। क्या तुम मुझे माफ़ कर सकोगी?"

अच्छा! तो ये अपनी अमरीकी सहेली

[शेष पृष्ठ ७२ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधरंग

सुदर्शन चोपड़ा

■

अपने नाम-पतेपर निगाह पड़ गयी है—'रघु गुप्त, सेकण्ड लेफ़्टिनेण्ट, मिलिटरी एकेडेमी, देहरादून।'

जाने क्या सूझा है कि टेलीग्राम निकालकर लिफ़ाफ़े-को उँगलियोंमें ही गुच्छा-मुच्छा कर लिया है और गोला-सा बनाकर खिड़कीकी राह बाहर फेंक दिया है।

बर्थपर लेटे-लेटे ही खिड़कीके फ्रममें जड़े आसमानके टुकड़ेको देखने लगा है। अभी-अभी ऊपरसे गुजरा हवाई जहाज़ इतनी ही देरमें एक बिन्दु-सा बनकर धीरे-धीरे लुप्त होता जा रहा है।

मगर अचानक लग आया है गोया कम्पार्टमेण्टकी खिड़की-टँके आकाशकी रडार स्क्रीनपर दूरसे आते शत्रुके जेट प्लेनकी बिन्दु-सी उभर आयी है।

दनन-दनन····दनन-दनन···दनन-दनन···

फ़र्स्ट क्लासके कूपेकी चूल-चूल हिल रही है। मोटी गद्देदार बर्थपर चित पड़ा रघुका जिस्म हथेली पर धरे पारे-की बूँद-सा थिरक-थिरक पड़ रहा है।

···कितनी तेज़ीसे सब सरक-बीत-रीत गया! बरस तो कुल छह ही गये हैं, इस बीच बदल इतना कुछ गया है कि तबकी बातें आज रिकार्ड-रूममें पड़ी धूल-सनी फ़ाइलों-सी लग रही हैं। तब मुज़फ़्फ़रनगरमें हाई स्कूलका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्यार्थी था, अब मिलिटरीमें अफ़सर! गत वर्ष बी० ए० करते ही कुछ महीनोंका गैप दिल्लीके पुरातत्त्व-विभागमें रिकार्ड-कीपरके रूपमें भी !

धुन्-धुन्-धुन्-धुन्-धुन्नधुन्···

पुलपर-से स्टीली गर्डरोंके बीचमें कोई गुज़रती हुई रेल···केनेडियन इंजनकी करख्त ह्विसलें पुल-पारका तना सिगनल झुकानेको पुकार रही हैं···धुन्-धुन्-धुन्की तेज़ी भी धुन-ऽ-न···धुन-ऽ-न में बदल गयी है। देखते-ही-देखते लाइनोंपर धनधनाते पहिये चिचियाँ उठे हैं और आधी गाड़ी पुलपर आधी बाहर रुक गयी है।

···ममी और डैडीके बीच कोई आ गया था। एकदम कहीं कुछ हो-खो गया था। अजब लिजलिजाहटसे लिथड़ा घर···बकबके-से दिन···ममी-डैडीके कमरेकी खामोशी तोड़ते हुए करवटों-उसाँसोंके सहमे-सहमे स्वर····रघुके कमरेके मुँदे दरवाज़ोंकी दरीचों-में-से रेंगआ-आकर कमरे-भरमें तनता हुआ आतंक।

छ-ऽक···छक्-छक्-छक्-छक्-छक्-छड़ा-आ-आक्···

इंजनके ब्वायलरमें जमी हुई स्टीमके कई भभाके एक साथ स्खलित हो गये हैं। झटका लग आया है। ब्रेकोंके साथ चिपके पहिये चिंचिया-सरके हैं। कपलिंगके जोड़ खिंच गये हैं।

खट्ट-खट्ट···खट्ट-खट्ट····खट्ट-खट्ट—कूपेके कोनेमें लटकती खतरेकी ज़ंजीरका हैण्डल लकड़ीकी दीवारके साथ खटखटाने लगा है।

···डैडीके जिस्ममें उस रात महमूद ग़ज़नवीकी रूह आ घुसी थी शायद! गृहस्थीके शिवालेकी ईंटसे ईंट बज गयी थी। 'हरामज़ादी, तूने मुझे समझ क्या रखा है आखिर ?'···तड़ाक्···'बेहया, बेग़ैरत, तबा-यफ़ ?'··तड़ाक्···'सिर्फ़ माथुरसे क्यों कुतिया-आ, चकलेमें जा बैठ अब तू-ऊ!! ····तड़ाक्···

रघु बर्थपर ही उठ बैठा है। खुश्क बालों-को उँगलियोंसे कंघा कर कोटकी जेबमें-से सिगरेट-केस और लाइटर निकाल लिया है। गाड़ी तेज़ीसे भागी जा रही है। खिड़कीमें टँका आसमानका टुकड़ा अब दिखाई नहीं दे रहा। उसी फ्रेममें अब गुड़े-रोपे-फैले खेत है, नम्बर-खुदे भागते हुए पेड़, तेज़ीके साथ ऊपर-नीचे लहराते हुए टेलीग्राफ़के तारोंका जाल, दौड़ते हुए किलोमीटर स्टोन·····

सिगरेटका एक लम्बा कश खींचकर धूआँ फू-ऊ-ऊ कर फेंक दिया है। टेलीग्राफ़का पोल आनेको होता है तो तारोंका जाल ऊपरको लहरा उठता है। पोल गुज़रते ही जाल नीचेको झोल खा जाता है। लहराते झोलनेकी गतिमें एक खास रिद्म है···'इस रिद्मिक तारोंमें अनगिनत सन्देश हर समय दौड़ते रहते हैं।'···

रघुका बायाँ हाथ फिरसे पैण्टकी जेबमें चला गया है। तारका काग़ज़ उँगलियोंमें कड़कड़ा आया है।···दादाने तार दिया है। डैडीको पैरेलिसिस हो गया है। जाने अब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

…ये तनके तार भी अजीब हैं। दिमाग़का
दायाँ सैल पूरे शरीरके बायें अङ्गोंको
सञ्चालित करता है और
बायाँ सैल दायें पक्षको! क्या
क़ैंची का-सा
प्रोसेस है! सैलके पासकी नसमें रक्तका
कोई छोटा-सा भी क्लॉट
अटक जाये तो
सांचालनकी पूरी प्रक्रिया कट
जाती है!

दरवाज़ोंपर धक्का-मुक्की हो रही है। चढ़ने-उतरनेकी उठा-पटकी चल रही है। सामान, बच्चे और बीवियाँ लिये लपकते-झपटते हुए लोगोंको देखकर रघुके भीतर कोई उनपर तरस खा उठा है।

ट्रेन फिर चल पड़ी है। रघु बर्थपर आ बैठा है। प्लेटफ़ार्मका शोर पीछे छूट गया है। दूर-दूर तक हरहराती हरियाली…झूमते-घूमते पेड़…भागते पोल…पोलोंपर झूलते तार …तारोंकी रगोंमें रेंगते सन्देश….

…तार तो दादाजीने दिया है न! डैडी-को तो शायद पता भी न हो। मेरे पहुँचने तक तो जाने वह कहाँ पहुँच चुके होंगे! बायें पक्षका अटेक हुआ तो बचना नामुमकिन-सा ही है। हार्टवाली साइड जो ठहरी!…

…ये तनके तार भी अजीब हैं। दिमाग़ का दायाँ सैल पूरे शरीरके बायें अंगोंको संचालित करता है और बायाँ सैल दायें पक्ष-को! क्या क़ैंचीका-सा प्रोसेस है। सैलके पासकी नसमें रक्तका कोई छोटा-सा भी क्लॉट अटक जाये तो संचालनकी पूरी प्रक्रिया

होंगे भी कि नहीं। देख पाऊँगा? छह साल पहलेका चेहरा ही तो याद है! वह भी पहचान पायेंगे क्या? तब तो चौदह-पन्द्रहका ही रहा होऊँगा।

जेबमें पड़े तारसे छू रही उँगलियाँ समेट-कर हाथ बाहर निकाल लिया है…ममी-डैडी-का तो तलाक़ होते ही तार टूट गया था। ममी मुझे अपने साथ ले जाना चाहती थीं। डैडीने ले जाने दिया था। ममी पढ़ी-लिखी थीं। दिल्ली जाकर जनपथके एक बड़े होटल-में रिसेप्शनिस्ट हो गयी थीं। पैंतीसकी उम्रमें भी रख-रखाव और पहनने-ओढ़नेके सलीक़ेने हज़ारोंकी स्लेटपर-से कई बरस पोंछ डाले हैं। उन्होंने अपने नामके साथ चिपका 'गुप्त' सरनेम भी पोंछ दिया है, सिर्फ़ सावित्री रह गयी हैं। सत्यपाल गुप्त अब वहाँ कहीं नहीं हैं। मैं भी तो अब इन्हीं सावित्रीका बेटा हूँ। रघु ही काफ़ी नहीं? गुप्त क्यों? रेलटिकिटों और डिग्रीपर भी? ममीने ही तो पढ़ाया-लिखाया, काम दिलाया!

…पुरातत्त्व-विभागमें रिकार्ड-कीपरके पदके लिए फ़ार्म भर रहा था तो जाने क्या सूझा, पिताके नामवाले छपे हुए कॉलममें पिता शब्द काटकर माता लिख दिया था। अफ़सरने उस कालमपर लाल पेन्सिलसे सवालिया निशान बनाकर लौटा दिया था। नया भरना पड़ा था।…

गाड़ी किसी स्टेशनपर रुकी हुई है, डिब्बेका दरवाज़ा खोले खड़ा प्लेटफ़ार्मपर देख रहा है। दायें-बायें थर्डक्लासके डब्बोंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कट जाती है।

पूरी रफ़्तारसे दनदनाती हुई गाड़ी झटककर बीचमें ही कहीं रुक गयी है। रघु खिड़कीमें-से सिर निकालकर बाहर देखने लगा है। किसीने चेन खींच दी थी। इधरसे आता हुआ गार्ड, उधरसे हाथमें हथौड़ी लिये क्लीनर।

···मुल्कमें एमरजेंसीका एलान हो गया था। पुरातत्त्व-विभागके रिकार्ड-कीपरकी टेम्परेरी पोस्ट एबालिश हो गयी थी। रघु ख़ाली हो गया था। चीनी हमलेने देशका पूरा विकास रोक दिया था। सारी शक्तियाँ रक्षामें लगा दी गयी थीं।

रघुने टाईकी ढीली हो आयी नॉट कस ली है। नया सिगरेट सुलगा लिया है,—'मस्तिष्ककी रगोंमें अटका रक्तका क्लॉट हटाया भी तो जा सकता है। एकसे-एक गरम दवाइयाँ हैं, इंजेक्शन हैं।···मगर···मगर मुज़फ़्फ़रनगर-जैसे पिछड़े क़स्बेमें शायद अभी मुनासिब ट्रीटमेण्टका इन्तज़ाम न हो पाया हो।'

खेतोंके बीच खड़ी लम्बी ट्रेन। इंजनकी शूँ-अँ, शूँ-अँ का स्वरमात्र सुनाई दे रहा है।

···दिल्ली यूनीवर्सिटीके पास बेंगलो रोडपर एक सिंगलरूम सेटमें ममी रहती हैं। दिन-भर कामपर। शामको घर। निबट-निबटाके आराम, किताबें, मैग़जीन या रेडियो। कुछ बात-चीत। कभी कहीं आना-जाना तो कभी कोई आया-गया।···

गार्डकी सीटीकी आवाज़। कैनेडियन इंजनकी दहाड़ती ह्विस्सल गूँज उठी है। कपलिंगके जोड़ खिंच गये हैं। रेलके पहियोंमें हरकत आ गयी है।

····सेनाके एमरजेंसी कमीशनमें सिलेक्ट हो गया था तो ममी किस क़दर ख़ुश हुई थीं। दिन-भर भागदौड़ कर इस-उसको न्योत आयी थी। डिनर दिया था।

दन-न-न-न-न···दननन्···दन-दन-दन

गाड़ी पटरी बदल रही है। आउटर और होम सिगनलके बीचकी लूप लाइनपर आ गयी है। रघुका हाथ अनायास ही ब्रीफ़केसकी जेबमें चला गया है। तारका काग़ज़ उँगलियोंको छू गया है।

बर्थके साथ खिड़कीके नीचे जड़ी लोहेकी ऐश-ट्रे में सिगरेट मसलकर बुझा दी है। आख़िरी कशका धुंआँ नाकके छेदों और ओठोंकी दरीचोंमें-से रेंग-रेंगकर निकल रहा है।

···शराबके नशेमें धुत्त एक्साइज़ इंस्पेक्टर सत्यपाल गुप्त अपनी पत्नीको इसी तरह धुन-धुन रहा था। साथवाले कम्पार्टमेंटमें सोया रघु ममीकी चीखें सुनकर हड़बड़ाकर उठा था। दरवाज़ा धकेल लपककर बीचमें आ पड़ा था। ममीपर पड़ते हुए लात-घूँसे कई बार अपने किशोर शरीरपर झेल चुकने बाद, डैडीपर हाथ उठा बैठा था। कोमल कैशोर्यका आक्रोशी प्रतिकार पौरुषकी प्रतिहिंसा-द्वारा कुचल गया था।···

गाड़ी सहारनपुरके स्टेशनपर खड़ी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवगढ़ शोर···कई तरहकी मिली-जुली आवाज़ें। लगभग हर प्लेटफ़ार्मपर कोई-न-कोई गाड़ी। इधर-उधर लपकते मुसाफ़िर कुली, टी०टी० और पोर्टर···गिलासोंमें चलते बच्चोंकी चटचटाहटें।

ट्रेनसे इंजन कट गया है। नया लगेगा। दूसरे रघु बदला जायेगा। गार्ड, ड्राइवर,

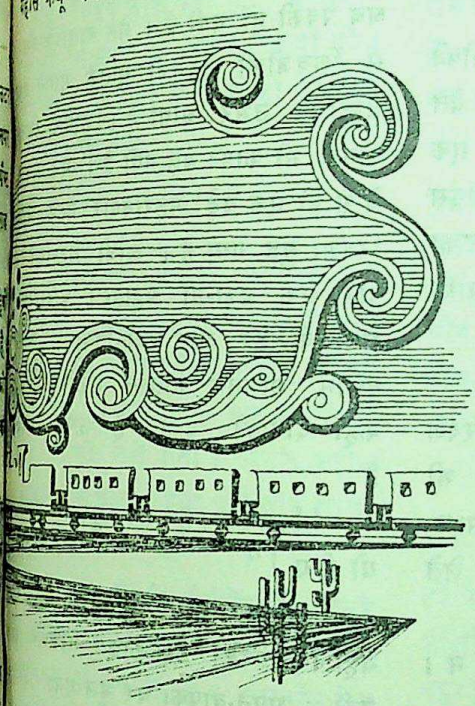

खलासी, क्लीनर—सब नये आयेंगे। रुख भी बदलेगा। लाइन भी। दिल्लीकी ओर जानेके लिए गाड़ीको दूसरी तरफ़ इंजन लगेगा। रास्तेमें मुज़फ़्फ़रनगर पड़ता है।

तार परसों आया था। छुट्टी सैंक्शन कराने में देर लग गयी। देर! छुट्टी माँगने-का फ़ैसला भी तो बहुत देरमें कर पाया था! 'जाऊँ कि न जाऊँ' की जोड़-काटमें ही रहा था! अब भी हूँ। फिर भी जा रहा हूँ! क्यों? क्या तुक है? पिता? हुँ! कैसा पिता! क्या रह गया है अब इसमें! रेशा-रेशा तार-तार हो चुका है इस रिश्ते-का! लकवाये सम्बन्धोंकी टेढ़े मुँहवाली लाश····सम्पर्कोंको मुँह चिढ़ाती हुई···इस बीच शायद मौत भी हो चुकी हा। कल भी अगर मरे हों तो लाश फूँक-फाँक दी गयी होगी। आज प्राण निकले होंगे तब शायद रोके रहें शाम तक। अधरंगसे मरे व्यक्तिकी लाश तो और भी भयावनी हो जाती होगी! टेढ़े मुँहवाला मुरदा देखकर डर भले ही लगे, रोना कैसे आयेगा। न रो पाया तो दादा क्या सोचेंगे? बाक़ी रिश्ते-नातेके क्या कहेंगे? सभी तो जुटे होंगे वहाँ!

···बेटा हूँ। सारे अन्तिम संस्कार मुझे ही तो करने-कराने होंगे। संस्कार करानेवाला 'अचारज' तो रघु गुप्त सुपुत्र स्वर्गीय सत्यपाल गुप्तकी ओरसे ही क्रियाकर्म करेगा। हर क्रियापर मेरी उपस्थिति चाही जायेगी।

···कैसा होगा सब! ममीको ट्रंक-कॉल करके बुला लूँ? पर···क्यों बेकार परेशान करूँ उन्हें! समाजी क्या, क़ानूनी क्या—यहाँ कुछ भी तो नहीं है अब उनका। मेरा है, निपटूँगा। कोई तार है, जो कहीं जुड़ा है।

अधरंग : सुदर्शन चोपड़ा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शामके सवा पाँच बजे हैं। पुराना शहर-नगर आ गया है। रघु फुर्तीसे उतर पड़ा है। अटैची-होलडाल उतरवाकर ओवर-ब्रिज क्रास किया है। क़ुलीसे भी आगे-आगे मेन गेटकी ओर लपक पड़ा है। टिकिट देकर पोर्चमें आ पहुँचा है। दमादम सीढ़ियाँ उतर-कर रिक्शामें सामान रखवा दिया है।

"कहाँ कू, साब ? नयी मण्डी ?"

"नहीं, नहीं, पुरानी मण्डी। गोलीकी माफ़िक चलना !" रघुने क़ुलीको पैसे देते हुए बड़े ही उतावले स्वरमें कहा है। एक टाँग रिक्शापर रखके बाक़ीका धड़ कुछ इस ढंगसे झटककर रिक्शाकी सीटपर दे पटका है गोया अपने लकवाये तनपर कुढ़न हो आयी हो कि जल्दी क्यों नहीं हिलता !

पों-अँ···पों-अँ···पों-अँ···पों-अँ···

सड़कपर आगे-पीछे रिक्शे-ही-रिक्शे पोंकारते दौड़ रहे हैं। रघुका रिक्शा भी पूरी रफ़्तारसे भागा जा रहा है। माल-गोदामके सामनेवाले मोड़पर एकदम टर्न लेते समय रघु धक्का भी खा गया है।

"अरे भई, ज़रा लपकके चलो न। क्या मुर्दा-सा ढो रहे हो !"

"अच्छा, साब।" रिक्शावाला काठी-पर-से उठकर बिलकुल पैडलोंपर ही खड़ा हो गया है और अपने पूरे जिस्मके बोझसे पैडल दबाने लगा है। रिक्शाकी चेनसे किड़-किड़-की आवाज़ें आने लगी हैं।

रघु उचटती-सी निगाहसे सड़कके दोनों ओर कभी-कबार देख लेता है। रोडवेज़के अड्डेके सामने नये रेस्त्राँ बन गये हैं। घण्टाघर टॉकीजसे आगेका तो पूरा इलाक़ा ही बदल गया है। पुलिस-क्लबके आस-पास आमने-सामने बाज़ारका बाज़ार नया उग आया है। आगे चौकमें घोड़ेपर सवार झाँसीकी रानीका बुत लग गया है। कॉलिज और डाकखानेके बीच कपड़ेकी कच्ची दुकानें अब पक्की हो गयी हैं। मेन बाज़ारके चौक-में शिवजीकी छहभुजी मूर्तिके सामने एक घण्टाघर उभर आया है। शामकी रोशनी रौनक़ भी काफ़ी बढ़ गयी है। मेन बाज़ार में-से ही एक बड़े मेहराबदार गेटके अन्दर रिक्शा मुड़ गया है। लम्बी मेहराबके उस पार एक बड़ा-सा अहाता। चारों ओर अनाजके ढेर और आढ़तियोंकी छोटी-छोटी दुकानें···सामनेके तितल्ले मकानके नीचे ही कहीं दादाकी दुकान है···ऊपर रिहायश है···

"किदर कू, हुजूर ? पुरानी मण्डी तो यो ई ए !"

"हाँ-हाँ,···सामने ले चलो, गुप्ताजीके यहाँ।" घरका ठीक-ठीक लोकेशन याद नहीं,···'अपने-बापका घर भूल गया!'

"आबकारीवाले दरोग़ाजीके ?"

"हाँ।"

"घरमें तो, जाणे कोई हो बी न!"

"क्यों ?" रघु और भी उतावला हो गया है।

"अस्पतालमें ले गये हैंगे उने तो! फालिज गिर पड़ा ता।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो···तो क्या अभी ज़िन्दा हैं-ऐं!!!" पूरी आवाज़में निकले ये शब्द गोया फट पड़े हैं। मगर कहते ही रघु एकदम निढाल होकर रिक्शाकी पुश्तपर टिक गया है।

रिक्शावाला कुछ समझ नहीं पा रहा। "अस्पताल ले चलूं साब?"

"अं!" रघु चौंक पड़ा है, "हाँ-हाँ··· तो···पहले सामान तो ऊपर रखवा दो। ...र-चौकर तो होगा ही। न हो तो नीचे ...न पे ही रख देना।"

...विल हॉस्पिटलके प्राइवेट वार्डका एक ...रा। बेडके पैतानेकी ओर कुरसीमें धँसा ...रघु। एक स्टूलपर टिके दादा। कोनेमें ...पर दूध गर्म करती हुई एक अधघूंघटी ...। डैडीकी नयी पत्नी। उसके क़रीब ...लोलीपोप चूसता हुआ ढाई-तीन साल-...एक लड़का।

रघुकी दृष्टि फिरसे डैडीके टेढ़े चेहरे ...खाली-खाली निगाहोंपर जा पड़ी है। ...-सा हो आया है। सिगरेट-केस ...लनेके लिए हाथ कोटकी जेब तक पहुँच ...फिर निकल आया है।

"होर सुणाओ, बेट्टे, राजी-खुशी ओ ...?" दादा अनेक बार लगभग यही कुछ ...चुके हैं। और रघु हर बार संक्षिप्त-सा ...कहकर जवाबकी ज़हमत टाल ...ता है।

डैडीकी नयी पत्नी लगभग जवान ही है। शक्ल सूरत भी खासी है। डैडीकी वाक्-शक्ति जाती रही है। टेढ़े मुँहकी शिकनोंमें हर भाव उभरते ही डूब जाता है। फटी-फटी-सी आँखें सूनी हो आयी हैं।

नर्स आकर दवा दे गयी है। टेंप्रेचर लेकर दीवारपर लटके चार्टपर दर्ज कर गयी है। दादा उठकर बाज़ारसे कुछ लाने चले गये हैं। डॉक्टर भी राउण्ड लगाने चला गया है। रघुने अलग ले जाकर उससे कुछ पूछताछ कर ली है कि स्पेशलिस्ट जाँच कर चुका है; एक्स-रे ले लिया गया है; जानका कोई खतरा नहीं; हास्पिटलमें कुछ दिन और रहना पड़ेगा; धीरे-धीरे कुछ-कुछ बोलने-चलने भी लगेंगे ही; मगर दायाँ पक्ष लगभग मारा जायेगा।

पश्चिमकी तरफ़ एक जालीदार खिड़की है। जालीपर मुँदा काँचमढ़ा पल्ला, कुछ तो वैसे ही मैला है, कुछ बाहर घिरी सुर्मीली साँझसे धुँधला होकर एक्स-रे प्लेट जैसा लग रहा है। एक्स-रे···मस्तिष्कका सेल···नसमें फँसा रक्तका क्लॉट···कटा हुआ तनका तार···

हाथ सिगरेट-केसकी तरफ़ बढ़ गये हैं। रघु उठकर बाहर निकल गया है। लॉनमें रविशके साथ-साथ टहलते-टहलते सिगरेट पीने लगा है। मेन गेटसे लेकर कमरेका चक्कर लगा लिया है।

अधरंग : सुदर्शन चोपड़ा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैण्टकी जेबमें हाथ जाते ही तारके साथ जा टकराया है। तार निकाल लिया है। सिगरेट ओंठोंमें अटकाकर दोनों हाथोंसे तारके चार टुकड़े कर डाले हैं। क़रीब ही पड़े डस्ट-बिनमें फेंकनेको होता ही है कि सामनेसे आते हुए दादापर निगाह पड़ जाती है। लगता है जैसे मस्तिष्ककी नसोंमें रक्त-का कोई क्लॉट अटक गया है। तारके टुकड़ोंवाला हाथ वहींका वहीं रुककर पैण्टकी जेबमें लटक जाता है। दूसरे हाथसे ओंठोंमें लगी सिगरेट निकालकर डस्टबिनमें फेंक देता है।

■■

[पृष्ठ ६४ का शेष : दो तारोंका आकाश]

से लड़कर चले आ रहे हैं ! इसीलिए स्वरमें इतनी आज़ीज़ी है !

"सवि, वहाँ सबके बीच, मिसेज़ नेलसन तुम्हारे साहस और चरित्रकी प्रशंसा कर रही थीं ! और जानती हो, चलते समय, मि० नेलसनने क्या कहा ? मेरे कन्धेपर हाथ रखकर वे बोले, सोमवारको दफ़्तरमें सबको मालूम हो ही जायेगा, किन्तु तुम्हारी पत्नीकी तबियत ठीक नहीं है, इसलिए तुम उन्हें आज ही बता देना—बोर्ड ऑफ़ डायरेक्टर्सने तुम्हें प्रमोशनके लिए चुन लिया है !"

"अच्छा तो है। अब आप अपनी अमरीकी प्रेमिकाके साथ हनीमूनके लिए किसी खूबसूरत जगह जा सकेंगे।"

"अमरीकी प्रेमिका ? हनीमून ? क्या तुम पागल हो गयी हो ?"

"मैं पागल हूँ ? और वह आपकी इज़्ज़त करना जानती है ? छह सौ डॉलरसे भी अधिककी बोली बोल सकती है।"

सहसा मेरे दोनों कन्धे पकड़ वे ठठाकर हँस पड़ते हैं—"समझा ! तुम्हें मुझपर सन्देह हुआ है। जानती हो—मेरे कागज़ोंमें सन्देह करनेवाली पत्नीके लिए क्या लिखा है ?"

फिर बहुत देर बाद—मेरी आँखें उठती हैं—सामने खिड़कीसे झलकते आकाशमें दो तारे पास-पास चमक रहे हैं।

■■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खण्डित सन्दर्भ

से० रा० यात्री

■

से लगे हुए बहुत-से पेड़ थे जिनकी ऊँचाई बहुत कम थी और उनमें-से अधिकांश ज़मीनसे लगे हुए थे। यह पहचानना मुश्किल था कि उनपर कौन-कौन-से फल लगे हैं मगर यह निश्चित था कि फलोंके भारसे वे बेतरह झुके हुए थे। इतने लम्बे-चौड़े विस्तारमें बँगलेकी बिल्डिंग बहुत छोटी नज़र आ रही थी--दूरसे एक ख़ूबसूरत बँगलेका मात्र मॉडल मालूम पड़ती थी।

मैं बिलकुल अनजानेमें तांगेसे उतरकर अपनी अटैची लेकर दरवाज़ेके पास खड़ा हो गया। मेरी त्वरा और सूझ-बूझ प्रायः बँगलेके बाहरी अवलोकनमें उलझ गयी और इस तरह गतिहीन खड़े रहनेका कारण यह भी हो सकता है कि शिद्दतकी गरमीमें आठ-दस घण्टेका सफ़र करके मैं निढाल हो गया था। मैं अभी निरुद्देश्य भावसे सामने ताक ही रहा था कि उसने कहा, "आओ अन्दर चलते हैं।" उसने बहुत धीरेसे दरवाज़ेकी कुण्डी खोली और मेरी ओर देखकर झिझकते हुए आगे बढ़ गया। यद्यपि साँझके पाँच-साढ़े पाँचका वक़्त रहा होगा मगर सड़कों और बँगलोंमें लोग घूमते-फिरते दिखाई नहीं दे रहे थे। जिस बँगलेमें वह जा रहा था वहाँ भी बाहरकी ओर कोई नहीं दीख पड़ता था। हम लोगोंके जूतोंसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सड़ककी लाल बजरी चड़-चड़ कर रही थी और मैं भी उसके पीछे घिसटता हुआ-सा चल रहा था।

पूरी सड़क पार करनेके बाद हम दोनों बँगलेकी सुनसान इमारतमें प्रविष्ट हो गये। बराण्डेमें सोफ़ा पड़ा हुआ था और छोटे-छोटे पौधोंके कई गमले रखे थे। बराण्डेसे होकर ही अन्दर जानेका रास्ता था मगर जो इस समय बन्द था। मैं थकावटके कारण बाहर बराण्डेमें सोफ़ेपर ही बैठ गया किन्तु वह दरवाज़े तक गया, बन्द किवाड़ोंका निरीक्षण किया और लौटकर मेरे पास खड़ा हो गया। मैंने सिगरेट-केस निकालकर एक सिगरेट जला ली और सामने रखी तिपाईपर पाँव लम्बे करके पीठको सोफ़ेपर ढीला छोड़ दिया। थोड़ी देर तक वह बराण्डेमें बहुत धीरे-धीरे घूमता रहा—यहाँतक कि उसके जूतोंकी आवाज़ भी सुनाई नहीं पड़ी, फिर वह बहुत आहिस्तेसे आकर मेरे पास बैठ गया। उसके यों बैठ जानेसे मुझे बहुत हैरत हुई। आखिर जब वह अपने घर आया है तो बाहर बराण्डेमें क्यों बैठा है, घण्टी बजाकर या किसीको पुकारकर दरवाज़ा क्यों नहीं खुलवाता? मैं उसकी आदतसे परिचित था कि वह प्रत्येक समय सिगरेट बनानेकी प्रक्रियामें उलझा रहता था, या तो वह सिगरेटके काग़ज़को सीधा कर रहा होता, या डिब्बेसे तम्बाक़ूकी पत्तियाँ निकालकर मसल रहा होता या काग़ज़को होंठोंसे छूकर लुआब लगा रहा होता। मगर पिछले एक घण्टेसे [illegible] सिगरेट बनानेके धन्धेको ही तिलांजलि [illegible] दी थी और बिना सिगरेट पिये वह [illegible] अजीब-सा लग रहा था। मैं उससे [illegible] पूछना चाहता था कि तभी घरका कुत्ता [illegible] जाने किस मार्गसे आ पहुँचा। कुत्ता [illegible] लोगोंके पास आकर उछल-कूद मचाने [illegible] और कपड़े सूँघने लगा। वह कुत्तेको [illegible] व्यस्त हो उठा और उससे बातें करने [illegible] तथा बीच-बीचमें सीटी बजाने लगा।

वह कई मिनट तक कुत्तेसे बातें [illegible] रहा किन्तु इतनेपर भी बराण्डेका [illegible] वाज़ा नहीं खुला जिससे बंगलेके [illegible] प्रवेश किया जा सकता। मैं सिगरेट [illegible] पीते फ़र्श और दीवारोंको ताकता [illegible] बँगला कुछ नहीं तो तीस-चालीस साल [illegible] तो ज़रूर ही बना होगा क्योंकि फ़र्श [illegible] था और बीच-बीचमें उखड़े [illegible] सीमेण्टके पैबन्द लगे हुए थे। [illegible] बराण्डेमें कई दरवाज़े खुलते किन्तु [illegible] सब दरवाज़ोंके एकदम पुराने ढंगके [illegible] और ऊपर गहरा काला और चिकना [illegible] हो रहा था। मैं दरवाज़े, फ़र्श और [illegible] ताकते-ताकते जब अपने आस-पास [illegible] लगा तो वह मुझे कहीं दिखाई न [illegible] मेरे पाससे वह और कुत्ता दोनों [illegible] थे और मैं बैठा-बैठा सिगरेटका [illegible] हिस्सा फूंक रहा था। किसी [illegible] सिविलियनके बँगलेमें यों अनाहूत [illegible] होनेपर मुझे इस समय पहली बार [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ति हुई। मुझे अपनी स्थिति बहुत हास्या-
...लगी। मैं यहाँ निकम्मा बैठकर सिगरेट
...रहा हूँ और मुझे यहाँ लानेवाले, इस
...के बेटेका कहीं पता नहीं है और सामने
...का दरवाज़ा बिलकुल बन्द है। भई
...! क्या शौक़ है! मैं अपनी स्थितिपर
...ग़ौर कर ही रहा था कि अन्दरसे स्वयं
...मित्रने दरवाज़ा खोल दिया और एक
...के साथ बाहर निकल आया। जैसा
...स्थानोंपर आम क़ायदा है, उसने
...में अपनी माँसे मेरा परिचय कराया।
...हाथ जोड़ने जा रहा था कि उन्होंने
...आगे निकाल दिया और मैंने झिझकते
...अपना हाथ आगे बढ़ा दिया। उनके
...सिगरेट अटकी हुई थी और बाल
...थे तथा सिर्फ़ कानों और गरदनके
...हिस्से तक ही आते थे। मैं उस
...को, जिसे उसने अपनी माँ कहा था
...आश्चर्यसे देख रहा था क्योंकि उसका
...बाल भी सफ़ेद नहीं था और गुलाबी
...चेहरेपर एक भी झुर्री नहीं थी।
...वह साड़ी पहने थी किन्तु साड़ी उसकी
...ऐसी लगती थी गोया किसी विदेशी
...मॉडलपर केवल कौतुकके लिए लपेट
...हो। खुले गलेके स्लीवलैस ब्लाऊज़-
...उसकी मोटी पीठ और निरावृत बाँहें
...रही थीं। मैं, वह और उसकी माँ
...बराण्डेमें बैठ गये। बैठनेके बाद
...की कठिनाई और गरमीके आधिक्यकी
...होने लगी। गरमीकी भयंकरताकी

चर्चा करते समय उसकी माँने ऐसा मुँह बनाया मानो अधिकतम तापमान उसके मुँहपर उतर आया हो। उसने बीचमें कई बार उठकर बराण्डेकी सीढ़ियोंके नीचे राख झाड़ी। मुझे उसकी माँकी मौजूदगीमें सिगरेट पीते बहुत झिझक हो रही थी। माँ-बेटे आपसमें बातें कर रहे थे और माँ चेहरेपर भरसक मृदुलता और आश्चर्यका भाव लाकर हर वाक्यके पहले 'ओह! आई सी' की आवृत्ति कर रही थी।

बहुत देर तक बातें करते रहनेके बाद हमलोग अन्दर गये। थोड़ी देर हमलोग हॉलमें खड़े या बैठे रहे, उसके बाद उसकी माँ अन्दर हमलोगोंकी चायका इन्तज़ाम करने चली गयी। अकेले रह जानेपर मेरा मित्र बोला, 'मकानकी पुताई हो रही है इसलिए सब कुछ 'होच पोच' हो रहा है—जबतक हमारे लिए कोई कमरा ठीक हो—

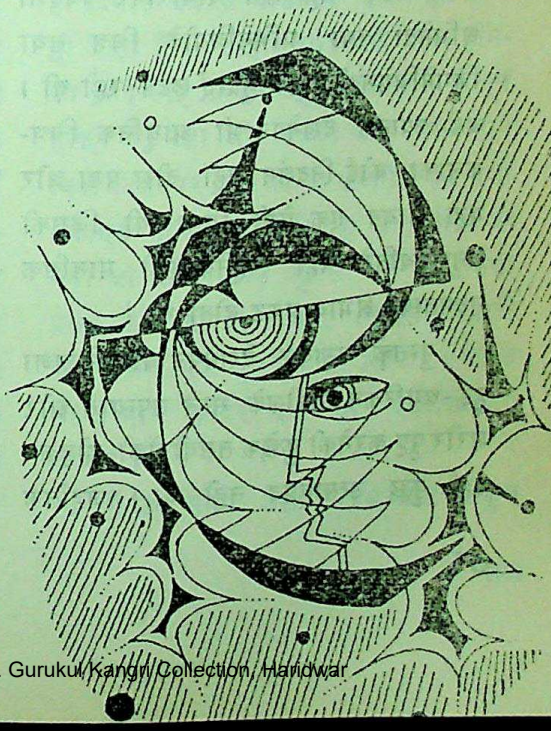

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आओ, मुझे कमरे दिखाते हैं। यद्यपि मकानकी पुताईके कोई लक्षण दिखाई नहीं पड़ते थे किन्तु अपने मित्रकी हाँमें हाँ मिलाता मैं उसके पीछे-पीछे फिर बराण्डेमें निकल आया और वहाँसे दायें या बायें घूमते हुए बाग़में होकर एक कमरेमें पहुँच गया। यह कमरा बहुत कम चौड़ा और बहुत अधिक लम्बा था जिसमें किशोरावस्थामें फ़ैशनेबिल युवकों-द्वारा पहनी जानेवाली प्रत्येक पोशाक टँगी हुई थी। मेज़पर अनेक क्रीम और लोशनोंकी शीशियाँ जमा थीं तथा एक कोनेमें लम्बी क़तार बाँधकर विचित्र-विचित्र प्रकार-के जूते भिन्न-भिन्न मुद्राओंमें आराम कर रहे थे। पालिशसे चम-चम करते उन जूतोंकी नोकें लोमड़ी और नेवलेकी थूथनसे अजब मेल खा रही थीं। दूसरे कोनेमें एक बड़ा पियानो रखा था तथा 'केक्टस' के कई गमले और 'मनी प्लाण्ट' की कई डोलचियाँ इधर-उधर लटक रही थीं। दीवारोंपर विदेशी अभिनेता तथा अभिनेत्रियोंके चित्र तथा जिमनेजियमकी अनेक मुद्राएं लटक रही थीं। बड़े ध्यानसे देखनेपर भी आधुनिक चित्र-कलाका कोई निदर्शन नहीं दीख पड़ा और यही शायद एक ऐसी विधा थी जिसकी अनुपस्थितिसे वहाँ रहनेवालेकी मानसिक सूक्ष्मताका अभाव प्रकट होता था!

पुस्तकें उठाकर देखनेपर घोर निराशा हुई—अमेरिकन सीरीज़के सस्ते उपन्यास और शरीर पुष्ट करनेकी कुछेक तसवीरोंको छोड़कर वहाँ कुछ उत्साहप्रद नहीं था। जहाँतक कोर्सकी पुस्तकोंका सम्बन्ध था वह [illegible] अधिकसे अधिक सीनियर कैम्ब्रिजके विद्यार्थी से सम्बन्ध रखनेवाली मालूम पड़ती थी। जब हमलोग उस कमरेको छोड़कर बाहर निकलनेवाले थे तभी एक लम्बा-चौड़ा खूबसूरत युवक कमरेमें प्रविष्ट हुआ—उसने बिजलीका स्विच ऑन किया और हमलोगोंसे गुड इवनिंग करके हाथ मिलाया। उसके चेहरेपर सौहार्दकी मुसकान थी और शरीर पर बहुत अधिक चुस्त कपड़े थे। मेरे लिए अपने भाईसे मेरा परिचय कराया और हमलोग बाहर निकल आये। यह मेरे मित्रका वही भाई था जिसके विषयमें उसने मुझे बतलाया था कि दसवींमें वह कई बार फ़ेल हो चुका है तथा अभी भी उसके लिए जो ट्यूशन रखा हुआ है उसे पढ़ता नहीं जाता तथा मेरे मित्रसे उसका एक बार द्वन्द्व-युद्ध भी हो चुका है। यही वह जिसने पिताके कुछ कहनेपर उत्तर दिया था—"...आपने अपने मज़के लिए हमें पैदा किया है।" और इस बातको सुनकर दिलके रोगी विशेषज्ञ बापको दिलके दौरे पड़ने लगे। मैंने इस प्रशंसनीय युवकको बहुत दिलचस्पीसे देखा और कमरेके बाहर निकल आया।

जिस समय हम लोग बाहर लॉनकी ओर जा रहे थे तो एक वृद्ध सज्जन उत्तरीय लिबासमें लिपटे बाहरके गेटसे अन्दर आ रहे थे। वह लम्बे क़द और गेंहुए रंगके व्यक्ति थे। आँखोंपर सुनहरी कमानिकी चश्मा था, हाथमें फैल्ट हैट झुलाते हुए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चिन्त भावसे बढ़ रहे थे। बहुत निकट आनेपर मैंने देखा कि वे गेलिसवाली पैण्ट पहने हुए थे तथा वास्कटके नीचेसे उनकी चमकीली किन्तु युगों पुरानी टाई चमक रही थी—पावोंमें कपड़ेके मोटे तल्लोंवाले जूते थे तथा एक हाथमें 'वालनट' की सुन्दर नाजुक-सी छड़ी थी। मेरा मित्र उन्हें देखकर रुक गया तथा पास आ जानेपर उनसे मेरा परिचय कराया। उन्होंने मोहक ढंगसे मुस-कराते हुए मुझसे हाथ मिलाया और रस्मी तौर पर स्थानकी पसन्दगीके विषयमें मेरी राय पूछने लगे। मैंने कृतज्ञ भावसे स्थानकी सराहना की। धीरे-धीरे चलकर हम लोग लॉनमें आये। कई कुरसियाँ पड़ी हुई थीं। मेरा मित्र और मैं खड़े रहे। वृद्ध महोदयने बैठते हुए कहा, 'प्लीज़ सीटेड प्लीज़!' और उन्होंने अपने दोनों हाथ हिलाकर बैठनेका संकेत किया। हम दोनोंके बैठ जानेके बाद उन्होंने व्यस्त भावसे नौकरको पुकारना शुरू कर दिया—शायद उनको अपने जूते-मोजोंसे अब काफ़ी परेशानी हो रही थी किन्तु देर तक किसी नौकरके दिखाई न पड़नेपर विवश होकर वह स्वयं ही झुककर जूतोंके तस्मे खोलने लगे। नौकर-को भेजनेके लिए मेरा मित्र उठकर खड़ा हो गया, उन्होंने उसे बैठे रहनेके लिए हाथ उठाया। किन्तु वह उठकर चला ही गया। अब मैं और मेरे मित्रके पिता ही आमने-सामने बैठे रह गये। मैं संकोचमें चुप बैठा रहा। मौनका बोझ महसूस करके मैंने सोचा कि

मैं अकेला बैठा उसकी इस अज
हरकतके बारेमें सोचने लगा।
अगर फूलदान टूट ही
गया था तो वह इतना भयभीत
क्यों हो गया! वह कोई लड़का
नहीं है, एक उत्तरदायी आदमी है…
कई सौ रुपये तनख्वाह पाता
है…उसके बीवी-बच्चें हैं, फिर यह घर तो
उसका अपना है। क्या
छोटी-मोटी चीज़ टूट जानेपर
उसे कोई फाँसी
देने जा रहा है। उसकी
विचित्र दीनतापूर्ण स्थितिने
मुझे झकझोर दिया।

कुछ बात शुरू करूँ किन्तु मेरी समझमें न आया कि उनसे क्या कहूँ। दूर आसमानमें उभरती लालीको देखकर मैंने बातें चलानेके लिए कहा, "शायद आँधी आनेवाली है।" उन्होंने मेरी दृष्टिका अनुसरण करके कहा, "नहीं, आँधी नहीं आयेगी—पिछले कितने ही दिनोंसे उधरसे आसमान इतना ही लाल हो जाता है।" उन्होंने आकाशके लाल होने-का कोई स्पष्ट कारण नहीं बतलाया। मैं चुप होकर बैठ रहा और सोचने लगा था—अब किस विषयपर बातें की जा सकती हैं कि तभी एकाएक मुझे रेलगाड़ीकी वह बात याद आ गयी जो मेरे मित्रने मुझसे यों ही किसी प्रसंग कह दी थी, "योर स्टाइल इज़ वेरी कन्वीन्सिंग, कुड यू स्पीक ए लिटिल एबाउट मी टु माई फ़ादर इन एन एप्रीशियेटिंग लैंग्वेज।"

मैं उस समय उसकी इस बातका कुछ

खण्डित सन्दर्भ : से० रा० यात्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मतलब नहीं निकाल पाया था कि अपने पिताके सामने वह मुझसे अपनी प्रशंसा क्यों करवाना चाहता है। मैंने अच्छा अवसर समझा कि मैं अपने मित्रके विषयमें ही वार्तालाप करूँ। मैंने अनायास कहा, "मिस्टर नाथने 'एकेडेमिक फील्ड' में वाक़ई बहुत मार्केका काम किया है…।" मुझे अपना वाक्य बहुत कमज़ोर, सन्दर्भ-हीन और खोखला-सा मालूम पड़ा मानो यह ज़बरदस्ती थोपा हुआ वाक्य ग्रामोफ़ोन-रेकार्डपर बज रहा हो और घिसी हुई सुईने इसे और अधिक बोरिंग बना दिया हो। वे शायद सामनेके पेड़ोंके उस पार कुछ देख रहे थे—उनकी चेतनाको मेरी बेतुकी बातसे झटका-सा लगा, उन्होंने एकाएक मेरी ओर देखा और बोले "हू नाथ ? पारडन व्हाट एकेडेमिक ?" मुझे अपनी बात कहनेका कोई उद्देश्य नहीं मिल रहा था – केवल चुप्पी तोड़नेके लिए मैं कुछ बोल रहा था किन्तु उनके पूछनेपर मैं प्रायः हकला गया—"नाथ ! आइ मीन वीरेन्द्र नाथ ! ही इज़ मारवलेसली वर्किंग ऑन क्रिमनालाजी।" मानो वे मेरी बात पूरी तरह समझ गये—उनके चेहरेपर एक विद्रूपमयी मुसकान उभरी किन्तु उन्होंने सायास उसे दबाकर कहा, "ही हैज स्पोइल्ड द गेम—नाऊ लेट हिम ओपन हिज़ ओन होराइज़िन्स।" मैं उनके शब्दोंमें दबी चोट को समझनेका प्रयत्न कर रहा था कि तभी नौकर उनके स्लीपर लेकर आया और हम लोगोंको चायके लिए बुला ले गया।

वीरेन्द्रनाथके पिता अपने कमरेमें चले गये और मैं नौकरके साथ डाइनिंग-हॉलमें चला गया। वीरेन्द्रनाथकी माँ एक कुरसीपर बैठी हुई नौकरानीको आदेश दे रही थी और खानेके सामानका निरीक्षण कर रही थी। बहुत लम्बी-चौड़ी एक अण्डाकार मेज़पर खानेका अनाप-शनाप सामान लदा हुआ था—अण्डे, जेम, बटर, चीज़, डबल रोटी, जेली और न जाने क्या-क्या। वीरेन्द्रनाथ पहलेसे ही उनके सामने बैठा हुआ टाँगें हिला रहा था। एक अत्यन्त गोरे रंग और तीखे नाक नक्शकी उन्नीस-बीस वर्षकी स्वस्थ युवती, जिसके बाल वीरेन्द्रनाथकी माँकी तरह कटे हुए थे, अँगरेज़ीके एक विशेष घिसे-पिटे लहजेमें बातें कर रही थी। बात-बातपर हँसनेकी नाकाम कोशिश और आश्चर्यका नाट्य उसकी सुन्दर मुख-मुद्राके आकर्षणके प्रति खीझ उत्पन्न कर रहा था। उसके कानोंके बुन्दोंमें हीरे झिलमिला रहे थे जो उसके 'ओह नो।' या बार-बार 'यस' के लिए 'ये' कहने पर बुरी तरह झूल जाते थे। वह शायद वीरेन्द्रनाथकी छोटी बहन थी। वीरेन्द्रनाथके और मेरे सामने चाय उसने ही रखी और दूसरी खानेकी चीज़ें तैयार करनेमें अपनी माँका हाथ बँटाने लगी। न जाने वीरेन्द्रनाथ किस कामसे उठकर चला गया। मैं उसके लौटनेकी प्रतीक्षा करने लगा। मुझसे वीरेन्द्रकी माँ बोली, "ही विल बी बैक इन ए मिनिट—यू जस्ट केरी ऑन।" किन्तु जब मैंने इतनेपर भी चाय शुरू नहीं की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो उस युवतीने वीरेन्द्रको पुकारकर कहा—"वीरेन, योर फ्रेण्ड इज़ नाट ज्वाइनिंग दिनर्ऊट यू।" वीरेन्द्रके लौटने तक उसकी माँ होंठोंपर एक सिगरेट लगा ली और मुझे एक सिगरेट देकर बोली, "पफ़ प्लीज-हिल ही कम्स।" थोड़ी देर बाद वीरेन्द्रनाथ आकर मेरे पास बैठ गया। मैंने उससे सिगरेट लेनेको कहा तो उसने हाथ हिलाकर इनकार कर दिया। उसकी माँके मुखपर मुस्कान उभरी और वह मेरी ओर देखकर बोली, "जस्ट सी, ही इजनॉट स्मोकिंग इन माई प्रेजेन्स।" उनकी यह बात मुझे बहुत नागवार लगी—मैंने सहसा कह दिया, 'माई वण्डर देट यू आर मदर एण्ड सन।" शायद मेरे अन्तर्मनमें यह बात इसलिए उभरी हो कि वीरेन्द्रनाथ पक्के रंगका औसत इनका है जबकि उसके माँ-बाप, भाई-बहन सभी एकदम गोरे-चिट्टे और लम्बे हैं और साथ ही वीरेन्द्रनाथकी गतिविधियोंका लक्ष्य माँ मज़ाक़ उड़ाती है। बात कह जानेपर मुझे सहसा अपनी भूल मालूम हुई—ऐसी बात मुझे वीरेन्द्रनाथकी माँसे नहीं कहना चाहिए थी। मुझे और भी अधिक आश्चर्य तब हुआ जब वह मेरी बातसे बिलकुल अप्रसन्न नहीं हुई बल्कि कमरेमें दाखिल होते वीरेन्द्रनाथके बापसे बोली, "डू यू हीयर व्हाट दिस नोब्ल मेन थिंक्स! ही इज़ नाट शेमीविंग इन माई मदरहुड।" फिर मेरी ओर उन्मुख होकर वह बोली, "बिलीव मोल्ड ब्वाय! ही इज़ माई सेकिंड डीयर सन!" उन्होंने वीरेन्द्रनाथसे सम्बन्धित और भी कई क़िस्से सुनाये। मैंने वीरेन्द्रनाथकी ओर देखा—वह सिर झुकाकर चाय पी रहा था और खानेकी कोई चीज़ बहुत आहिस्तासे उठाकर मुँहमें रख रहा था। वीरेन्द्रनाथकी माँकी बातोंसे मुझमें जो उत्साह और विनोदका भाव उत्पन्न हुआ था वह वीरेन्द्रनाथकी निर्वेद मुद्रा देखकर तिरोहित हो गया। वीरेन्द्रनाथकी माँ आग्रहपूर्वक खानेकी सामग्री मेरे सामने रखवाती रही तथा कुछ चीजें उन्होंने स्वयं तैयार करके मेरे सामने रखी। वीरेन्द्रनाथके सामने जो कुछ आता रहा वह चुपचाप खाता रहा। उसने खानेके दौरान एक शब्द भी नहीं कहा—उसकी इस उदासीनताका कोई स्पष्ट कारण मेरी समझमें नहीं आया।

चायके बाद हम लोग उठकर एक कमरेमें चले गये—अच्छा-खासा सुसज्जित कमरा था जो शायद मेहमानोंके लिए ही था; उसमें दो पलँग पड़े हुए थे। यह कमरा बाक़ी सारे बँगलेसे अलग-थलग-सा था और बाथ-रूम आदिकी व्यवस्था साथ ही थी। इस कमरेमें पहुँचनेपर कई घण्टे बाद वीरेन्द्रनाथ कुछ स्वस्थ नज़र आया और उसके मुखपर एक धुँधली-सी मुसकान उभरी। उसने इतमीनानसे पलँगपर बैठकर जेबसे सिगरेट बनानेका सामान निकालकर सामने मेजपर रखा और सिगरेट बनाने लगा। सिगरेट बनाकर उसने जला ली और मुझसे बोला, "मिस्टर स्वरूप, फादरने यह बँगला इस

खण्डित सन्दर्भ : से० रा० यात्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरहसे बनवाया है कि इसमें सब भाईयोंकी पूरी फैमिली रह सकती है, मगर चूँकि भाइयोंमें-से कोई यहाँ रहता नहीं इसलिए कई कमरे बन्द पड़े हैं।" मैंने उसकी बात-पर सिर हिलाया और उठकर बाथ-रूममें चला गया। लौटनेपर देखा कि वीरेन्द्रनाथ सहज भावसे सिगरेट पी रहा है। उसके चेहरेपर पिछले दो-तीन घण्टेसे जो तनाव और दैन्य फैला हुआ था उसका सर्वथा लोप हो चुका था। सिगरेट पीते-पीते वह पलँगपर लेट गया और खिड़कीके उस पार कुछ देखने लगा। उसने अपने पैर लम्बे फैलाकर जँगले-में रख लिये और उसकी आँखोंमें निश्चि-न्तताका भाव तैरने लगा। मैं मेज़पर पड़ी एक कई वर्ष पुरानी पत्रिका उलट रहा था कि तभी न जाने एकाएक कैसे ज़ोरकी आवाज़ करता हुआ 'चाइना' क्लेका एक बड़ा 'फ्लोवर वेस' धड़ामसे ज़मीनपर आ गिरा। वह हड़बड़ाकर उठ बैठा और उसके चेहरेपर भय और कातरताकी छाया फैल गयी। उसने भौंचक होकर इधर-उधर देखा और फिर दबी दृष्टिसे मेरी ओर देखा। मैंने पलँगके नीचे झुककर देखा, सुन्दर और क़ीमती फूलदान जँगलेके नीचे टुकड़े-टुकड़े हुआ पड़ा था। फूलदान खिड़कीके पासवाली आबनूसकी चमकीली टेबिलपर रखा था शायद वीरेन्द्रनाथके पाँव बेखबरीमें मेज़ तक चले गये थे और उसकी टाँगोंसे टकराकर ही फूलदान नीचे गिर पड़ा था। वीरेन्द्र एकदम झटकेसे उठकर खड़ा हो गया और पंजोंके बल दरवाज़े तक गया—इधर-उधर बहुत सतर्कतासे देखनेके बाद उसने बिजली जलायी। थोड़ी देर बाद दरवाज़ेसे लगकर खड़े रहनेके बाद वह मेरे पास आकर बैठ गया, उसने कुरसीपर-से झुककर पलँगके नीचे फैले फूलदानके टुकड़ोंको देखा और आँखें उधर किये-किये ही मुझसे बातें करने लगा। उसकी बात इस बँगलेकी बनावट और नौकरोंके लिए 'आऊट हाऊसेज' के सम्बन्धमें थीं किन्तु उनमें कोई तारतम्य नहीं था। घबराहट उसके चेहरेपर फैली हुई थी—वह मेरे पाससे उठकर फिर पलँगपर जा बैठा और उझककर देखने लगा—शायद खिड़कीके उस पार किसीकी उपस्थिति ज्ञात करने लगा। कुछ क्षण बाद मुझसे बोला, "जाओ, तुम नहा लो, साँझ हो रही है—घूमने चलेंगे।" यद्यपि अभी नहानेकी कुछ कोई विशेष इच्छा नहीं थी किन्तु इस बात-पर विवाद करनेका मेरा मन नहीं हुआ। मैंने एक सिगरेट और जलायी और नहानेके कपड़े लेकर चल दिया।

नहाकर जब मैं कमरेमें लौटा तो मैंने वीरेन्द्रनाथको वहाँ नहीं पाया—कमरेके किवाड़ यों ही उढ़के हुए थे। मैंने यों ही कौतूहलवश पलँगके नीचे झाँककर देखा तो मुझे टूटे हुए फूलदानका एक भी टुकड़ा दिखाई नहीं दिया। मुझे टूटे फूलदानके टुकड़ोंको इतनी जल्दीसे समेटनेमें कोई तुक दिखाई नहीं दी। यह तो निश्चय था कि नौकर या नौकरानी इतनी जल्दी वहाँ कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं कर सकते थे। कन्धेमें उलझे हुए बालों को खिड़कीसे बाहर फेंकनेके लिए ज्यों ही वह झुका तो मैंने देखा कि हाथमें गेंदनुमा कोई सफ़ेद-सी चीज़ लिये वीरेन्द्रनाथ फैन्सके पीछेसे छिपता-सिकुड़ता चला आ रहा था। दरवाज़ेपर पहुँचकर उसने आहिस्तासे किवाड़ खोले और हाथकी गेंदको झटका देकर बढ़ा दिया। मैंने देखा उसके हाथमें खिड़कीके पासवाली मेज़का मेज़पोश था जिसमें वह सम्भवतः गुलदानके टुकड़े बाँधकर बाहर लाया था और उन्हें छिपाकर कहीं बँगलेसे बाहर फेंक आया था। उसने मेरी ओर कुछ मुँह खोलकर देखा और झेंप-भरी मुस्कराहटके बीच धीरेसे बोला—मानो उसकी कोई बहुत बड़ी चोरी पकड़ी गयी हो—"यार, बात ये है, पापा 'इस फ्लावर वेज़ा पेयर कोई चालीस साल पहले इंग्लैण्डसे लाये थे—साले ये दोनों मुझसे ही टूटे। पहले जब मैं स्टूडेण्ट था तब मेण्टल पीसके दोनों कोनोंपर ये रखे रहते थे—कुछ खेलते-करते एक मुझसे गिर गया था। अब पन्द्रह-सोलह साल बाद दूसरा भी साला मुझसे ही टूटा।" फिर उसने लापरवाहीका दामा ओढ़ते हुए कहा, "चलो कोई ग़म नहीं, आखिर ये 'विक्टोरियन एज' की चीज़ें समूची कबतक रखी रहेंगी! मकान है, शाला कोई म्यूज़ियम तो नहीं।" फ्लावर-वेज़के टूटनेसे जो दहशत उसके चेहरेपर आयी थी, मानो उसके खण्डित अवशेष फेंक देनेसे वह बिलकुल निःशेष हो गयी। उसने कन्धे सिकोड़कर फैलाये और कहा, "मज़ेकी बात यह है कि इसके यहाँ होने-न-होनेका कभी कोई नोटिस तक न लेगा।" इतनी सफ़ाईके बाद उसे एकाएक ख़याल आया कि मैं नहा चुका हूँ—'अच्छा तो जनाब ग़ुसल करके तैयार हो चुके हैं! तो लो, मैं भी एक मिनिटमें तैयार होता हूँ।" यह कहनेके साथ ही उसने हाथमें झूलते 'टेबिल-क्लाथ' को मेज़पर बिछा दिया और गुड़ीगुड़ी करनेसे जो सलवटें उसपर पड़ गयी थीं उन्हें हाथ फेरकर दूर करने लगा। सलवटें जब नहीं निकलीं तो उसने मेज़पोशके नीचे लटकते छोरोंको खींचकर निकालनेकी कोशिश की। कई मिनिट तक इस झंझटमें लगे रहनेके बाद वह बोला, "अच्छा तो अब?" फिर उसे स्वयं ही नहानेका ध्यान आया और वह मेरी अटैचीसे नहानेके कपड़े निकालकर ग़ुसलख़ाने में चला गया।

मैं अकेला बैठा उसकी इस अजीब हरकतके बारेमें सोचने लगा। अगर फूलदान टूट ही गया था तो वह इतना भयभीत क्यों हो गया! वह कोई लड़का नहीं है, एक उत्तरदायी आदमी है···कई सौ रुपये तनख़्वाह पाता है···उसके बीवी-बच्चे हैं, फिर यह घर तो उसका अपना है। क्या छोटी-मोटी चीज़ टूट जानेपर उसे कोई फाँसी देने जा रहा है। उसकी विचित्र दीनतापूर्ण स्थितिने मुझे झकझोर दिया। मुझे उसका व्यवहार किंचित् भी स्वाभाविक नहीं लगा। मुझे लगा, कहीं बहुत गहरी खाई है जिसे यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी प्रकार पाट नहीं पा रहा है। मैं बाहर बराण्डेमें निकलकर घूमने लगा। यह बँगलेके दायीं ओरका बराण्डा था। बायें बराण्डेमें मुन्नू—वीरेन्द्रनाथके छोटे भाई—का कमरा और एक छोटा-सा फ्लैट था जिसपर 'शचीन्द्रनाथ' नामकी तख्ती लगी हुई थी। मैंने समझा था, यह किसी छोटे परिवारवाले व्यक्तिको किरायेपर दे दिया गया होगा किन्तु अब घूमते हुए बायीं ओरके बराण्डेके आगे भी वैसा ही छोटा-सा फ्लैट और एक जंग खायी हुई लोहेकी नेम-प्लेट देखकर कुछ अचरज हुआ। आगे बढ़कर निकटसे नाम पढ़नेकी कोशिश की तो उसपर 'हरीन्द्रनाथ' लिखा हुआ था। तत्काल ही मेरे मस्तिष्कमें बिजली-सी कौंध गयी और सारी स्थिति मेरे सामने स्पष्ट हो गयी—उस ओरके बराण्डेमें जो कमरा है वह मुन्नूका है—इधरका एक कमरा गेस्ट-रूम है—बाहर बने दो 'फ्लैट' 'आर्मी-अफ़सर' दो भाइयोंके हैं। मकानमें स्थायी रूपसे माँ-बाप, कुँआरी बहन और छोटा भाई रहते हैं। इस बँगलेमें एक भी कमरा ऐसा नहीं है जिसपर वीरेन्द्रनाथके नामकी तख्ती लगी हो या जो केवल वीरेन्द्रनाथके लिए ही सुरक्षित हो।

'हलो ब्यॉय!' कहता हुआ वीरेन्द्रनाथ ग़ुसलखानेसे बाहर आ गया। उसके आ जानेसे मेरा ध्यान उसके परिवारकी ओरसे हट गया। मैं बाहर जानेकी तैयारी करने लगा। वीरेन्द्रनाथ भी ड्रेसिंग टेबिलके सामने खड़ा होकर बालोंमें कंघी करने लगा। हम लोग जल्दी ही तैयार होकर बाहर निकल आये। बाहर जानेके लिए जब हम लोग बराण्डेमें पहुँच गये तो वीरेन्द्रनाथ एकाएक मुड़कर बोला, "भई, खानेको मना करके चलें। बाहर देर हो जायेगी, वहीं कहीं खा लेंगे वर्ना डिनरपर ये लोग इन्तज़ार करते रहेंगे।" मुझे इस विषयमें कुछ नहीं कहना था क्योंकि मैं अभी चायके साथ बहुत अधिक खा-पी चुका था कि आज फिर अधिक खानेको गुंजाइश नहीं थी। वीरेन्द्रनाथकी माँ हॉलमें थी—वह धीरे-धीरे किसी मिन करके कुछ कह रहा था और माँ कह रही थी, "नो-नो, आर यू सिली? कम बैक इन टाइम···" वीरेन्द्रनाथने शायद फिर कुछ कहा, उत्तरमें उसकी माँने फिर नो-नो करके वाक्यको लम्बा खींचकर कहा, "···हु कम प्लीज़!"

वीरेन्द्रनाथ बाहर निकलकर आया और बोला, "यार, ममी सिर पड़ रही हैं, खाना तो ज़रूर पड़ेगा। अब साले खानेके बाद सारी शाम चौपट करो।" उसके इस वक्तव्य मैं आश्वस्त हुआ। उसे विश्वासके साथ करते और झुंझलाते मैंने बहुत देरसे नहीं देखा था। पहली बार मुझे लगा कि वह अपने घर आया है और यह घर उसीका है। थोड़ी देर बाद जब हम घरसे निकले तो वह निश्चिन्त भावसे उद्वेगहीन होकर सीटी बजा रहा था। वह मुझे अपने कई मित्रोंके यहाँ ले गया और फिर हम कई लोग बारी पहुँचकर देर तक बैठे पीते रहे। उसके चेहरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर सन्ध्याके समय जो बेचारापन मैंने लक्ष्य किया था अब उसका कहीं नाम भी नहीं था, वह एक बिलकुल बदला हुआ, आत्मविश्वास प्रेरित व्यक्ति था, दुर्वह वर्तमानकी प्रतारणाओंसे मुक्त। हम सब लोगोंके चेहरे लाल, खिंचे हुए और कुछ अजीब-से हो रहे थे; हमारी बातोंमें तेज़ी और एक अतिरिक्त विश्वासका आग्रह समा गया था। हम लोग बेपर घूंसा मारकर या बायें हाथकी हथेली-दायें हाथकी उंगलीसे घिस्सा देकर अपनी-अपनी बातें कहते थे और मज़ा यह था कि हमारी बातोंके पिछले सन्दर्भ कहाँ छूट जाते थे इसका हममें-से किसीको होश नहीं था। बार बन्द होनेका वक़्त होनेपर हम लोग सड़कके लड़कोंकी तरह शोर मचाते हुए बाहर आये और किसी मित्रके यहाँ विवाहके भोजमें सम्मिलित होने चले गये। रात्रि-भोजमें बेखबरीमें ही रात आधीसे ऊपर निकल गयी। जब हम लोग विवाहके घरसे निकलकर सुनसान सड़कपर आये तो चारों ओर गहरी निस्तब्धता व्याप्त थी और तारकोलकी साफ़ सड़कपर चाँद दूर तक न टूटनेवाली प्रकाशरेखा खींच रहा था। सारा नगर सोया पड़ा था और चौड़ी सड़कोंके इधर-उधर बत्तियोंका स्थिर-मद्धिम प्रकाश फैल रहा था। सड़कसे हटकर कुंजोंसे घिरे बंगलोंसे झीनी रोशनी आ रही थी। अभिसारिकाकी भाँति पूर्ण शृंगार करनेवाली मसूरी दूर प्रकाशमें जगमगाती एक नये आकाशका आभास दे रही थी। बंगलोंमें महकनेवाली मेंहदी, रातरानी और चम्पाकी मिली-जुली गन्ध हृदयको गुदगुदानेवाले किसी अनाम विचारको जन्म दे रही थी। रास्ते-भर एक भी ताँगा या रिक्शा दिखाई नहीं पड़ा। आख़िर अनेक छोटी-बड़ी सड़कें पार करके हम लोग बंगलेके दरवाज़ेपर पहुँच गये। उसने बहुत आहिस्तासे कुण्डा खोला और सप्रयास धीरे-धीरे चलकर अन्दर बराण्डेमें पहुँच गया। मैं भी उसके अनुकरणमें घिसटता हुआ-सा चलता रहा। अन्दर कमरेमें अभी बत्तियाँ जल रहीं थीं—शायद अभी भी हमारा इन्तज़ार हो। बाहर बराण्डेमें दो पलंग बिछे हुए थे और उनपर बिस्तर लगे हुए थे। उसने प्रायः अपने अस्तित्वका आभास भी नहीं होने दिया—वह बहुत चुपकेसे पलंगपर लेट गया; एक बार भी कोई हलकी-सी आवाज़ तक उसकी ओरसे नहीं आयी। थकावट और रात अधिक खिंच जानेके कारण मुझे लेटते ही नींद आ गयी।

सुबह जब मेरी आँखें खुलीं तो मैंने देखा कि वह दूर बरामदेके अन्तमें फ़र्शपर ही अष्टावक्रकी भाँति टेढ़ा-मेढ़ा होकर सो रहा था। उसकी बन्द आँखों और पूरे चेहरेपर गहरी निरीहताका भाव छाया हुआ था। मेरी समझमें नहीं आया कि पलँगसे कब और क्यों उसने अपना बिस्तर नीचे उतार लिया था। इतने बड़े बँगलेमें रहनेवाले प्राणियोंकी अधिकार-भावनाके बीच उसी घरके एक बड़े और उत्तरदायी पुत्रको इस तरह अस्त-व्यस्त पड़ा देखकर मुझे बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहम आया। यद्यपि मैं चाहता था कि वह अभी और सोकर अपनी नींद पूरी करे किन्तु वह ऐसी दीन-हीन अवस्थामें पाया जाये—यह भी मैं नहीं चाहता था। मैंने उसे जगा दिया और पूछा, "तुम पलँगसे बिस्तर नीचे फ़र्शपर क्यों उतार लाये ?" उसने अपने पलंगकी ओर संकेत करके कहा, "देखते नहीं, उसपर कितनी तो दीमकें घूम रही हैं—शायद नीचे फ़र्श फटा होनेकी वजहसे निकल रही हैं।" इसके बाद उसने मुझे अपने हाथ-पैर दिखाये जिनपर दीमकोंने काटकर चकते बना दिये थे।

सबेरे जल्दी ही हम लोग तैयार हो गये और नाश्तेकी मेज़पर जा बैठे। वीरेन्द्र नाथके चेहरेपर कल शामवाला संकोच और दैन्य अब फिरसे आ गया था। वह सिर झुकाकर टोस्ट कुतर रहा था और चायका घूंट इतने धीरेसे भर रहा था कि किंचित् भी आवाज़ नहीं होती थी। मैं और उसकी माँ बातें करते रहे किन्तु उसने बातोंमें कोई हिस्सा नहीं लिया। जब हम लोग जानेके लिए बाहर निकले तो उसकी माँने चारों ओरसे घूमकर मुझे पूरा बँगला दिखलाया। उन्होंने बड़े चावसे उन पौधोंको भी दिखलाया जो विलायतसे लाये गये थे। इसके अतिरिक्त नौकरों और आयाओंके क्वार्टर भी हमने देखे। बँगला वास्तवमें बहुत ख़ूबसूरत और आरामदेह था। उन्होंने उन हिस्सोंकी ओर भी संकेत किया जिनपर नामोंकी तख्तियां लगी हुई थीं किन्तु उन्होंने मुझे एक बार भी यह नहीं बतलाया कि वीरेन्द्रनाथके नामकी तख्ती कहाँ लगी है। बातचीतके दौरान नौकर एक ताँगा हमारे लिए ले आया। गराजमें खड़ी मोटर बाहर नहीं निकाली गयी। शायद ऐसे मौक़ोंकी अवहेलना करते खड़ी रहनेके कारण उसके पहियोंमें जंग आ रहा था और स्वाभाविक गतिसे चलनेके बजाय उसे उलटे धक्के देकर ठेलना ही सम्भव था। चलते समय वीरेन्द्रनाथकी माँने मुसकराकर गरमजोशीसे मेरा हाथ दबाया और फिर आनेका आग्रह किया। हम लोगोंको "बाई बाई" करके वह मालिन को 'गुलदाऊदी' के पौधे सुखा डालनेपर डाँटने लगी और दूसरी ओर मुड़ गयी। बाहर और कोई व्यक्ति नहीं था, बरामदेसे उतरकर केवल वह कुत्ता हमारे साथ गेट तक आया जिसके संयोगवश बाहर निकल आनेसे ही शायद कल शाम हम दोनोंको बँगलेके भीतर तक चले जानेका सुयोग मिल गया था। वीरेन्द्रनाथने चलते-चलते बराबर गेट तक जानेवाली सड़कपर मुड़कर पीछे देखा किन्तु बँगलेके द्वार अबतक बन्द हो चुके थे और बराण्डा कलसे भी अधिक सूना पड़ा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नयी कहानी : जातीय परम्परा और बदलता यथार्थ

धनंजय वर्मा

मेरे सामने इस वक़्त इस दशकके तीन कहानी-संग्रह हैं—राकेशका 'एक और ज़िन्दगी' (१९६१), कमलेश्वरका 'खोयी हुई दिशाएँ' (१९६३) और शानीका 'छोटे घेरेका विद्रोह' (१९६४)—और मुझे इन तीनों संग्रहोंमें एक 'काण्टीन्युटी' मिलती है, बावजूद इसके कि तीनों संग्रह अपने कथ्य, शिल्प और दृष्टिके स्तरपर भिन्न-भिन्न हैं। 'काण्टीन्युटी' इस अर्थमें कि राकेश एक विस्तृत केनवासपर व्यक्ति और उसकी धड़कनोंको सुनना चाहता है, कमलेश्वर उनकी बदली और निरन्तर बदलती हुई मनःस्थितियोंको आँकना चाहता है और शानी उनके दैनन्दिन और आस्तित्विक संघर्षको। यदि क्रमको बदल दिया जाये तो एक केन्द्रके संघर्षसे शुरू करता है, दूसरा उसकी प्रक्रिया-स्थितियोंका विश्लेषण करता है और तीसरा युग और जीवनके व्यापक क्षितिजमें काम करती हुई शक्तियोंको उनके माध्यमसे अभिव्यक्ति देना चाहता है। एक अपने आस-पासके नग्न यथार्थको झेलता हुआ, उसे ही वाणी देना चाहता है, दूसरा उसके बदलते हुए बलाघातको आँकता है और तीसरा उन्हें व्यापक सन्दर्भों (वैयक्तिक और सामाजिक) से जोड़कर उन्हें एक सम्मिलित और विशाल आवाज़में समाहित करना चाहता है। नयी कहानीकी सही जातीय परम्परा, उसका बदलता हुआ यथार्थ और बलाघात इन तीनों संग्रहोंमें देखा जा सकता है—इसीलिए पृथक्-पृथक् कथ्य, शिल्प और दृष्टिके होते हुए भी ये एक उपलब्धिके तीन क्रम लगते हैं।

राकेश : व्यक्ति और युगकी सापेक्षिक अभिव्यक्ति : 'एक और ज़िन्दगी' : राकेशके इस संग्रहपर कुछ कहनेके पहले, उसकी प्रयत्न-दिशा या एप्रोचको समझ लेना अच्छा होगा। इस एप्रोचको, बेहतर हो, हम उसीके शब्दोंमें समझें। 'अपने समयकी आत्माको ठीकसे अभिव्यक्त कर पाना, आस-पासके निरन्तर बदलते सामाजिक, राजनीतिक क्षितिजको अपनी चेतनामें समाहित करते हुए उसके उस आधार-बिन्दुसे पहचानना जिससे कि रचनामें समयका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिफलन किया जा सके और उस पात्र, उस व्यक्तिकी खोजी जो इस समयका, हमारे आजका सही प्रतिनिधित्व कर सके'—वह दिशा है जिस ओर राकेश जाना चाहता है या वह चाहता है कि कहानी जाये। रचनाकार जब कोई सामान्यीकरण कर रहा होता है तो वह अधिकांशतः 'सब्जेक्टिव' होता है और कई बार अपना ही 'जस्टीफिकेशन' भी। राकेशके इस सामान्यीकरणको भी 'सब्जेक्टिव' ही मानना चाहिए क्योंकि इसके प्रमाण उसकी पूरी कथा-यात्रामें हैं। परिवर्तनकी बलवती आकांक्षा-वर्तमानमें जीनेका दर्शन, और साहित्यकी (कम) समाजकी (अधिक) जीर्ण-शीर्ण मर्यादाओंको तोड़नेकी, उन्मुक्तिकी प्यास उसके पहले संग्रह (इन्सानके खण्डहर) से ही मिलने लगती है और परिस्थितियोंके अनुसार तेज़ीके साथ नया रूप लेते जीवनकी धड़कनोंको सुननेकी तड़प और वह मानवीय संवेदना जिससे लेखक हर घटना और पात्रके साथ एक आत्मीयता स्थापित कर ले—क्रमशः 'नये बादल', 'जानवर और जानवर'में विकसित हुई है। जीवनका अधिक समीपी अंकन, उसके माध्यमसे किसी अन्तर्निहित परोक्ष यथार्थका संकेत, सहज-अनुभूतिके साथ कई स्तरोंपर स्थितिशील और गतिशील, व्यक्तिगत और सामाजिक यथार्थकी खोज, उसके सामाजिक पार्श्वका उद्घाटन और अन्ततः एक व्यक्ति या चरित्रके माध्यमसे पूरे समाज और युगकी कथा-व्यथा अभिव्यक्त करनेका प्रयत्न उनकी कहानियोंका मूल स्वर है। उनमें मुखरित सामाजिक यथार्थ और वस्तुसत्यके सन्दर्भमें जीवनकी बहुत तल्ख और तीव्र प्रतिक्रिया, बदलते हुए विश्वासोंको गति देती चेतना और एक संक्रमणशील दृष्टि मिलती है। लेकिन मूल्योंकी इस संक्रान्तिमें भी निर्माण और ध्वंसकी गति और टूटते-ढहते विश्वासों की कगारोंपर भी एक आन्तरिक मानवीय आस्था और निष्ठा और दृष्टिका संकेत भी यही कहानियाँ देती हैं। उसका कारण यह है कि उनका सन्दर्भ नितान्त वैयक्तिक नहीं—सामाजिक है; इन कहानियोंका वैयक्तिक लगनेवाला स्वर भी मूलतः सामाजिक ही है, जिसे कहानीकी सांकेतिकता उभारती है। अपने ही पात्रोंके बीच वह एक ऐसा माध्यम ढूंढ़ लेता है जो कहानीकी सारी अन्तर्बाह्य यात्रा सम्पन्न करा देता है जहाँ पाठक दर्शकसे आगे बढ़कर स्वयं भोक्ता बन जाता है और कहानी उसकी अपनी संवेदनाका अंग बन जाती है। यह पात्र या माध्यम (या स्थिति!) ही वह संकेत है जो पूरी कहानीको सीमित सन्दर्भोंसे उठाकर व्यापक धरातल दे सकता है। बिना किसी साहित्यशास्त्रीय व्याख्याके सांकेतिकताका यही विस्तार है जो उसकी 'एक और जिन्दगी' में अधिक सूक्ष्म और गहन स्तरोंपर मिलता है।

पिछले संग्रहोंकी अपेक्षा यहाँ अधिक वैयक्तिक और आन्तरिक यथार्थ उभरता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है—वो बाह्य परिवेश और वातावरणसे व्यापक सन्दर्भोंमें जुड़ा है—कटा हुआ और अन्तर्मूर्तताका नहीं है। जीवनके भुक्त यथार्थ-की व्यापक पकड़ यहाँ भी छूटी नहीं है, और न ही उसकी मांसल भूमि; उसकी दिशा भी प्रसामाजिक नहीं है (जिसकी आशंका दूसरी 'थीम्स' के साथ बढ़ जाती है), लेकिन यह अब सामाजिकताके केवल बाह्य परिवेश और वातावरणकी ध्वनियोंको ही मूर्त नहीं करता, 'सामाजिक' व्यक्तिके अन्तर्मनका अर्थ एक बदलते हुए 'सेल्फ' और जीवनकी 'सॉल-स्प्रिचुअल'-संक्रान्ति, घुटन और उलझनका आन्तरिक चित्र भी देता है। यहाँ कथ्य-क्षेत्र ही नवीन नहीं है, चरित्रोंका रूप भी बदला हुआ है। अतः यथार्थ अभिव्यक्ति-में वह सपाटता नहीं है, एक 'सांकेतिकता' है और पूरी कहानीकी आन्तरिक अन्विति-का निर्माण इसी धरातलपर होता है। यह लेखककी कहानियोंके विकास और विकसित स्तरके प्रमाण हैं। यह विकास न केवल लेखक, वरन् नयी कहानीकी दिशाका भी द्योतक है। व्यक्ति, घटना और परिस्थितिको इस व्यापक सन्दर्भमें देख-पहचानकर, समय और समाजकी प्रतिध्वनियोंको मुखर करने, जीवनके द्वन्द्वों और अन्तर्द्वन्द्वोंको चित्रित करने और उसकी पृष्ठभूमिमें सक्रिय शक्तियोंकी अभिव्यक्तिके लिहाज़से इनका महत्त्व है। यहाँ 'नैरेशन' और 'वर्णन' कम हो गया है; फ्लैशेज़ और मुखर-चिन्तन अधिक। सीधे इतिवृत्त और प्रकथनात्मक विस्तारकी अपेक्षा अब अकसर ऐसे अंश मिलने लगे हैं—"वह अभाव क्या है और क्यों शरीरके हर सेममें और लहूके हर कण-में इसकी सिहरनका अनुभव होता है—जैसे इस अभावका सम्बन्ध किसी बाहरी वस्तुसे न होकर अपनेसे ही था, जैसे इसी वजहसे उसे अपना-आप बिलकुल खाली लगता था—" (सुहागिनें)। इस अभाव और खालीपनकी परिणति भी (तथाकथित 'साहित्यिक कहानियों' की तरह आत्म-केन्द्रित-अन्तर्मुखता न होकर) व्यक्तिका भावनात्मक और संवेदनात्मक विस्तार ही है, क्योंकि इसी आधारपर साधारणसे साधा-रण मनुष्य-स्थिति-संवेदना भी उसके दायरेमें आ जाते हैं। वे मजबूरियाँ जिनमें एक व्यक्ति ज़िन्दा है, बेहद संयमके साथ उभरती हैं। तात्कालिक दृष्टिसे लगता है कि लेखक इन मजबूरियोंपर हंस रहा है—जैसे 'गुनाहे बेलज्जत' के सरदारपर—लेकिन उसके संकेतोंको समझा जाये—कि क्यों और कैसे (आजका) व्यक्ति, जो है नहीं, वह होना या प्रमाणित करना चाहता है और इस वंचनासे बँधा हर पल यही सोचता है कि वह क्या करे कि जिससे विश्वास हो जाये; कि 'वह' जो नहीं है उसपर किसीका विश्वास ठहर जाये—तो वह उसकी विड-म्बनाका ही संवेदनापूर्ण चित्र है। जिस असम्पृक्त करुणासे यह कथा उभरती है, उसके अभावमें यह नाज़ुक-सी 'थीम' भोंड़ी होकर रह सकती थी।....याद आता है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी पाठकने 'मिस पाल' को पढ़कर कहा था कि लेखक उसके साथ खिलवाड़ करता है--उसपर हँसता है। उस पाठकका कहना आश्चर्य नहीं जगाता, क्योंकि इसकी सांकेतिकतामें उन तत्त्वोंका समावेश है, जो तत्कालीन कहानीकी भूमिपर अनजाने थे (या हैं)। 'मिस पाल' का धरातल विश्लेषणात्मक नहीं है. मनोवैज्ञानिक अन्तर्गुहाओंमें भटकन भी वहाँ नहीं है, (यद्यपि उनकी ओर संकेत, कहानीकी हर स्थिति है)। व्यक्तिके जीवनसे चुनी हुई कुछ घटनाओं और स्थितियों तथा यथार्थके बाह्य स्तरपर ही 'अन्तर' का द्वन्द्व और एकान्त विडम्बना उभारनेका यह प्रयत्न मानवीय करुणा और सहानुभूतिका स्तर कहीं नहीं छोड़ता--बल्कि उसके प्रति करुणा ही जगाता है।--'जाने क्यों मिस पाल अपने चित्रोंके लिए सदैव ऐसे ही चेहरे चुनती थीं जो किसी-न-किसी रूपमें विकृत हों--मेरा तो बस एक ही इलाज है कि कोई हाथमें छड़ी लेकर मुझे ठीक करे--या हर लिहाज़से मैं बदक़िस्मत हूँ, मेरे जीवनका कोई अर्थ नहीं है।"--और अन्तमें खाली डिब्बे लिये बिदा देती मिस पाल--किंचित् ऐसे संकेत हैं जो क्रमशः इस शापग्रस्ताके जीवनकी एकान्त विडम्बनाको बड़े सूक्ष्म ब्योरोंके साथ उभारते हैं। हाँ, इसमें एक तल्खी-भरी तटस्थता अवश्य है लेकिन वह अनुभूतिकी नहीं लेखनकालकी है जिसमें किसी भी दिशाके अतिरेकसे बचकर चलनेका प्रयत्न है--न तो अतिरिक्त सहानुभूति न अतिरिक्त असम्पृक्ति। और दोनों कहानियाँ राकेशकी संयमित, संग्रथित कहानी-कलाकी अच्छी मिसाल हैं। इसी तरह अपने ही अतीतके भारसे दबे हुए, 'अकेली' ज़िन्दगीकी यन्त्रणा और 'खालीपन' की विडम्बना भोगते हुए व्यक्तिकी कथा 'एक और ज़िन्दगी' है, जो टूटते हुए दाम्पत्य-जीवन और 'पति-पत्नी सम्बन्धोंकी संक्रान्ति' को लेकर चलती है। पूरी कहानीमें एक अनाम-सा दर्द, कोहरे और बादलकी तरह छाया है और यह कोहरा और बादल, कहानीकी हर स्थितिके साथ गहरा और घना होता जाता है, इतना कि अन्तमें एक छटपटाहट, एक मूक क्रन्दन और आन्तरिक घनीभूत दर्द शेष रह जाता है। अपनी बुनावट, अन्विति और प्रभावकी दृष्टिसे राकेशकी यह लगभग सबसे अच्छी कहानी है...यों उसके पास जितनी अधिक श्रेष्ठ कहानियाँ हैं, उतनी समकालीनोंमें शायद किसी एकके पास नहीं। और अपने सारे वैविध्य--जो निश्चित ही वस्तु-विषय, पात्र, चरित्र और स्थिति-परिस्थितिका है--के बावजूद राकेशकी कहानियोंका एक निश्चित स्तर (एक 'मिनिमम ऊँचाई') अवश्य है, जिससे नीचे उसकी कोई कहानी कभी नहीं गयी....उसके यहाँ 'अच्छी' कहानी अपवाद नहीं है।

■

कमलेश्वर : बदलती हुई मनःस्थितियाँ : 'खोयी हुई दिशाएँ' : कमलेश्वरकी कहा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दियोंका धरातल कुछ भिन्न है, यद्यपि जैसा मैंने कहा, वह भी एक ही उपलब्धिका क्रम है। यों कमलेश्वर ही एक ऐसा व्यक्ति है जिसके पास, हिन्दी कहानीकी पूरी यात्राके इस दौरकी प्रतिनिधि कहानी है। और इस दौरने हिन्दी कहानीकी परम्पराको उसने आत्मसात् किया और जिया है, उस परम्पराको अलग-अलग भोगा है और उसकी अपनी कहानियाँ, कथ्य और शिल्पके स्तरपर नहीं, भाव-बोध और चेतनाके स्तरपर ही एक क्रमिक और अनुवर्ती संक्रमणकी द्योतक हैं। उसकी प्रारम्भिक और परवर्ती कहानियोंकी तुलना की जाये तो एक आश्चर्य मिश्रित कौतूहल होता है—कहाँ 'थानेदार साहब' और 'गायकी चोरी' और कहाँ 'नीली झील' और 'खोयी हुई दिशाएँ'—लेकिन इनके पीछे रचना-संचेतनाकी वह गति है जो निरन्तर अपने वृत्त छोड़ती और सीमाएँ बढ़ाती है। जो लोग रचनाकार-के एक विशेष दृष्टिकोण और उसके स्वभाव या शैलीके समर्थक हैं, उन्हें कमलेश्वरसे निराशा होगी। उसमें भाव-बोध और चेतनाके साथ ही सब ओर शैलीका एक ही ढर्रा नहीं है। वह अधिकांशतः विभिन्न एक-पृथक् और अन्तर्विरोधी भी है। इसके पीछे वर्तमान जीवनके अन्तर्विरोध और द्वन्द्व, संक्रान्ति या क्राइसिसकी स्वयं सम्पूर्ण और पृथक्-पृथक् चेतना या संवेदनाकी तरह है।

कमलेश्वरकी कहानियोंका एक स्तर वह है जहाँ उनका भाव-बोध और चेतनाका स्तर, संवेदनाका धरातल और अभिव्यक्तिका रूप विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक या सुदर्शनके युगका है—वही भावुकता और भावना-मयता, इतिवृत्तात्मक और स्थूल वर्णनोंके साथ चरित्रों और कथाकी आदर्शवादी परिणति; जहाँ वह क़स्बेका कहानीकार कहलाना पसन्द करता है। उसकी कहानियों-का एक दूसरा स्तर वह है जिनमें जीवन-दृष्टिकी व्यापकता भी मिलती है और कथ्यके साथ एक गहरा रागात्मक सम्बन्ध (पात्र और कथाकी नियतिको अपनी नियति मान लेना)। इनमें कहानीपनकी रक्षा और कथातत्त्व की माँगका ध्यान ज़्यादा है और साथ ही उनकी शैली भी उतनी ही सीधी, निर्व्याज और सरल है और वे अनायास मनको छू लेती हैं। शिल्पकी जागरूकता वहाँ नहीं है, वहाँ तो लेखककी कलाका सामाजिक धर्म ही अधिक मुखर हुआ है और वे प्रेमचन्दकी परम्पराका उचित निर्वाह कर रही हैं। और फिर एक स्तर उन कहानियोंका है, जिनमें भावनात्मक जोशका उफान है, लम्बी-लम्बी बहसें और भाषण-बाज़ी है, वैचारिकताके प्रति तीव्र अनुरक्ति है। निष्क्रियताको नाटकीयतासे ढँकनेका प्रयास है। इनका सम्बन्ध उस प्रगतिवादी दौरसे है, जो दुर्भाग्य या सौभाग्य (?) से बहुत थोड़े दिन रहा। इधर 'नीली झील' आदिका निखरा हुआ शिल्प, उसकी रूप-जागरूकताके प्रति संकेत है। यों पहले वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परम्परा और परिवेश-बोधके प्रति, फिर परिवर्तित सामाजिक सन्दर्भ और यथार्थके प्रति और फिर रूप और शिल्पके प्रति जागरूक रहा है। और 'खोयी हुई दिशाएँ' में वह बदली और बदलती मनःस्थितियोंके प्रति 'कमिटेड' है।

इसमें वस्तुक्षेत्रकी नवीनता या चरित्रोंका रूप 'बदला हुआ' नहीं 'बदलता हुआ' है। यहाँ चेतनाका संक्रमण, उसकी आमूल टूटती परतें और परिवर्तनकी धड़कनें हैं। वह जीवनके द्वन्द्वों और अन्तर्द्वन्द्वोंको चित्रित करनेके स्थानपर उनकी प्रक्रियाको पकड़ना चाहता है--इसीलिए मैंने इन कहानियोंको बदलती हुई मनःस्थितिकी कहानियाँ कहा है--चाहे इसे एक क़स्बेकी मनःस्थितिका, शहरकी मनःस्थितिमें बदलना ही क्यों न समझा जाये। इसका प्रमाण संग्रहकी पहली कहानी 'एक अश्लील कहानी' है। एक तथाकथित साहित्यिक कहानीकार (?) ने उसके अन्तपर आक्षेप करते हुए कहा था कि वह नयी कहानी हो ही नहीं सकती क्योंकि उसका अन्त निहायत दकियानूसी, भावनात्मक और परम्परागत है। मैं उसे नयी कहानी प्रमाणित करनेका 'प्राणायाम' नहीं करूँगा – केवल इतना कहूँगा कि यह अपने अन्तपर चक्रवत् घूमनेवाली ऐसी कहानी है जो एक परम्परागत-भावनात्मक मनःस्थितिवाले व्यक्ति (पात्र या चरित्र) के आन्तरिक परिवर्तन और नैतिक संक्रमणको बताती है--तथ्य केवल इतना है कि वह सीधे वर्णनके स्थानपर मनःस्थितियोंके विपर्ययसे इसे प्राप्त करती है। किसी निर्मित निष्कर्षकी तलाश हो (जो कमलेश्वरमें अब भी कभी मिल ही जाता है) तो वह वैयक्तिक नैतिक भावनासे, सामाजिक नैतिक भावनाकी ओर संक्रमण है। यह व्यक्तिकी नैतिक धारणामें सामाजिक दबावोंके एहसाससे होने वाले परिवर्तनकी कहानी है।...संग्रहकी अन्य कहानियाँ भी इसी तरह अपने पुराने सन्दर्भों —[परिवार, सम्बन्ध, वैयक्तिक, सामाजिक और परिवेश-(क़स्बा)-गत]—से नये सन्दर्भों तक आने, उसमें व्यवस्थित होने और परिवर्तनकी प्रक्रियाको झेलनेकी कहानियाँ हैं—जैसे 'खोयी हुई दिशाएँ', 'दिल्लीमें एक मौत' 'पराया शहर' आदि। इन्हें 'प्रतिनिधि' 'एक थी विमला' और 'दुखभरी दुनियाँ' के समानान्तर रखकर देखिए, तो मनःस्थितियों का वह परिवर्तन और विपर्यय और चेतनाका संक्रमण समझमें आ जाता है—जो 'पंचमकी नाक'-जैसी कहानियोंमें परिणत होता है। ये कहानियाँ (पहली तीन) ऐसी होती हैं—एक ऐसी मनःस्थितिसे, जो अपनेको वर्तमान स्थिति, वातावरण और परिवेशमें व्यवस्थित नहीं पातीं—शायद अन्त तक ऐसी ही रहती हैं लेकिन अन्तमें स्थितिका स्वरूप, चेतनाका धरातल और संवेदनाका स्तर, सब कुछ बदल गया होता है और कुछ नया संयुक्त! दूसरी तीन कहानियाँ जहाँ स्थितिशील यथार्थकी उपज हैं, लेकिन साथ ही दृष्टिकी स्थितिशीलता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी बताती हैं (सीधे शब्दोंमें 'कस्बाइट मनोवृत्ति' बताती हैं) वहीं पहली तीन कहानियाँ एक नये वातावरणमें गतिशील यथार्थ और उसकी प्रक्रियाको आँकती हैं और साथ ही दृष्टिके परिवर्तन और विस्तार-को भी संकेतित करती हैं।

शानी : अस्तित्वके संघर्षकी कहानियाँ : छोटे लोकका विद्रोह : इस बदली हुई और बदलती हुई मनःस्थितिके कारण, कमलेश्वरमें, मानसिक और ऐतिहासिक हैं, शानीमें वे सामाजिक और आर्थिक हैं। कमलेश्वरमें वे कारण चेतनाके धरातलपर सक्रिय हैं, शानी-में वे आस्तित्विक (अस्तित्ववादी दर्शनसे इसका कोई सम्बन्ध नहीं है) हैं। कमलेश्वर-में संघर्ष चेतनाका है, शानीमें यथार्थका—रोजमर्रेकी जिन्दगीका, उसकी दैनन्दिन संक्रान्तिका। इसीलिए उसकी कहानियोंका वृत्त छोटा, संकुल लेकिन आधारगत है।

हिन्दी कहानीकी मूल जातीयधारा यथार्थकी है और उसकी एक लम्बी परम्परा है; लेकिन शानीका यथार्थ उससे संयुक्त होकर भी पृथक् है। वह किसी वैचारिकता, दर्शन या वादका साधन नहीं, स्वयं साध्य और जीवन है। उसके यहाँ यथार्थका एक ही रूप और स्तर है—जो सीधा खुली आँखों दिखाई पड़ता है, जो स्थूल है। यथार्थका सूक्ष्म स्तर भले हो लेकिन उसके लिए शायद वह भी विलास ही है। वह सूक्ष्म स्तर एक रहस्यलोककी वस्तु हो सकता है, जीवन-की विभीषिका, दर्द-पीड़ा और कराहके लोकका नहीं। उस लोकका नहीं जिसमें हम जीते-मरते हैं और जीते भी कहाँ? जीनेका नाटक, छल या ढोंग करते हैं, जीवन-को ढोते हैं। शानीका यथार्थ संवेदनासे अधिक भुक्तिका है और उसकी भूमि आर्थिक अधिक है! उसकी कहानियाँ 'जीनेके लिए उपक्रम'की कहानियाँ हैं। उसीके अनुरूप संघर्ष और दर्द उनमें मुखर है। जीनेकी समस्या उनकी प्रधान आस्था है—चाहे फिर वह जीवन रूमानी हो, आंचलिक हो अथवा मध्यमवर्गीय या निम्न मध्यमवर्गीय पीड़ा या दर्दका हो। उसकी पहली कहानियाँ रूमानी हैं और आज भी कुछ रूमानियत उसकी कहानियोंमें है लेकिन यह रूमानियत दृष्टि-प्रक्रिया अथवा प्रेरणाकी नहीं है—वे रूमान-को गौरवान्वित नहीं करतीं, बल्कि उसके खोखलेपनको उजागर करती हैं। उनमें, जिन्दगीकी ठोस चट्टानपर रूमानकी टकरा-हट और उसका बिखराव है। अधिकांशतः उसकी कहानियोंमें क्षयिष्णु संस्कृतिके तत्त्व हैं—टूटना, बिखरना, खोखला होना, अशक्ति, असामर्थ्य और कुण्ठा-घुटन है। इन सब क्षणोंमें एक दुर्दान्तकारी विवशता है और इस विवशतासे निकलनेका कहीं कोई रास्ता नहीं सूझता। इनकी समस्याएँ बिलकुल तात्कालिक और रोजमर्रेकी हैं। ये कहानियाँ जीवनके दुःख और दर्दकी कहा-नियाँ हैं, उनमें अस्तित्वका संघर्ष ही प्रधान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। संग्रहकी अधिकांश कहानियाँ इसी एक समस्याके आस-पास घूमती हैं। ये 'कलाका यथार्थ' नहीं ज़िन्दगीका यथार्थ देती हैं, इसलिए मुमकिन है, कलाकी आवश्यकताएँ ये पूरी न कर सकें, उसकी चौहद्दीमें भी शायद न आ पायें लेकिन आजकी ढोयी जा रही ज़िन्दगीकी, देशकी निन्यानवे प्रतिशत जनताके मूलभूत संघर्षकी ये बहुत आत्मीय 'डाक्यूमेण्ट' हैं। वह चाहे पंजाबका सुरजीत सिंह हो या बस्तरका निरयामी-कुहरामी, दफ़्तरके निवासबाबू हों या चतुर्वेदी बाबू, चहल्लुमका खाना खिलाती मरियम हो या 'ईद' मनाते 'नंगे' मध्यमवर्गीय परिवार हों – सबके आगे गिने-गिनाये रुपये और आँधी पतीलियोंके बीच बीवी और बच्चोंके आस्थाहीन सूखे चेहरे हैं। उकड़ूँ बैठी घुटनों-में चेहरा छिपाये तार-तार वस्त्रोंमें अँधेरे भविष्यकी ओर सूनी आँखोंसे ताकती जवान बेटियाँ हैं – और क्या इस ऊपरी खोलके नीचे जो ज़ख़्म है उसका दर्द किसी अकेले-का है? यह टूटन और बिखराव, यह 'तनको ढाँकनेमें असमर्थ उटंग क़मीज़' क्या किसी अकेलेकी है ?···इन कहानियोंको पढ़कर आप क्षुब्ध हो सकते हैं, इस नंगे यथार्थ और उसके गहरे ज़ख़्मोंसे आपको वितृष्णा भी हो सकती है लेकिन इन्हें छिपाया कैसे जा सकता है? बिना किसी वर्ग-भेदके यह तो हिन्दुस्तानकी औसत जनताकी तसवीर है। यही तो ज़िन्दगीकी असली यथार्थ है—वह नहीं जिसपर काँफ़ी-हाउस और क्लास-रूम पत्रिकाके कालमों और सम्मेलनोंमें बहस की जाती है। 'नंगे', 'भूले हुए' 'हाशिए' 'वीराने' 'टूटे जलका रिश्ता'—कला-प्रदर्शनीकी कहानियाँ नहीं है, दर्दके बन्द-पैबन्द लगी ज़िन्दगीके बार-बार उधड़ते हुए ज़िस्म-अक्सकी कहानियाँ हैं। मूल्योंके जिस विघटन जिस संक्रान्तिकी बात की जाती है, उसकी जड़ यहाँ है। चाहे वह आर्थिक विवशता हो या नैतिक, भावनात्मक पराजय हो या कुण्ठाग्रस्त घेरोंकी छटपटाहट—इनकी समस्या केवल अस्तित्वकी समस्या है। इन कहानियोंमें लक्ष्योन्मुखता नहीं प्रभावान्विति भी ये बिखर जाती हैं क्योंकि एक बात जो इतने-इतने प्रसंगों और सन्दर्भोंसे जुड़ी कि उनका अलग-अलग स्वयं सम्पूर्ण उभारना ज़रूरी है—इसीलिए इन कहानियोंमें 'डीटेल्स' या सूक्ष्म ब्योरोंका आधिक्य है। इन कहानियोंपर कहानी-कलाकी आवश्यकताओंकी दृष्टिसे बहस करना निरर्थक है, इन्हें तो वर्तमान ज़िन्दगीके भौतिक और आधारगत संघर्षके आत्मीय और यथार्थ चित्रोंकी दृष्टिसे ही देखा-परखा जा सकता है। यही इनकी सार्थकता और सीमा है।

ज्ञानोदय : जून १९६९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन नयी कविताएँ

ओम प्रभाकर
शकुन्त माथुर
भवानीप्रसाद मिश्र

१. एक विचित्र वस्तु :

मेरे शरीर के भीतर
यह विचित्र वस्तु
पता नहीं किसने
कब और क्यों रख दी है ?

इसके कारण
मैं कई ऐसे काम नहीं कर पाता
जो शरीर-धर्म के अनुसार अनिवार्य हैं।
मसलन : भूखे होने पर
कुछ भी, कैसे भी भोज्य प्राप्त करना।
प्यासे होने पर पेय।
और उत्तेजित होने पर
किसी के कपड़े फाड़ डालना या
किसी मकान में बम लगा देना।

सोचता हूँ
क्या वह व्यक्ति मुझे मिल सकेगा ?
और क्या यह विचित्र वस्तु
मैं उसे लौटा सकूंगा ?

—ओम प्रभाकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. खाली हूँ !

खाली हूँ
इस शीशी की तरह
खाली हूँ इस बकस की तरह
तुम्हारी नज़र में
ये शीशी
ये बक्सा
खाली नहीं वैज्ञानिकों की नज़र में
हाँ इसमें वह चीज़ें नहीं
जिन्हें हम देखने के आदी हैं।

मैं चेहरे पर आकर रुकी हूँ
चेहरा भीतर का दर्पण है
मैं अपने पूरे स्वरूप को
देख नहीं पाती हूँ
देख पाती हूँ टुकड़ों में
मुझे लगता है मैं टूट गयी हूँ
तुम्हारी नज़र में

मैं जुड़ गयी हूँ
ऐसे अमर सरोवर के साथ
किसी भी समय तोल दूं
गहराइयाँ
किसी को भी बिना माप
ये अनुभव
तेल के कुएँ - से
भीतर-ही-भीतर चलते हैं
ये प्रश्न !
विराम बने भी बादल-से बढ़ते हैं।

मैं शायद बह गयी हूँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी तेज़ धार के साथ
तुम्हारी नज़र में
मैं अलग हूँ
नौका-सी
धारा भी साथ
किनारा भी साथ।

— शकुन्त माथुर

समझा हूँ :

मौत तो तिल-तिल करके ही आती है
चाहे तुम पल में मरो
चाहे मरो बरसों में !

समझा हूँ
इस सत्य को
अभी-अभी परसों मैं
जब मेरे देखते-देखते
एक लड़के ने
रेंगते हुए एक चींटे को
सिगड़ी में डाल दिया उठाकर
सुलगते हुए अंगारों पर।

चींटे को मरने में
अग्निसागर तरने में
लगा होगा एक क्षण
लेकिन वह एक क्षण
कैसा भयानक था सो मैंने देखा
अमिट रहेगी भयावह उस मौत की
मेरे मन पर मरते तक रेखा !

चुटकी से अंगारों पर जाते तक
पाँव कैसे और कितने हिले
कितनी बार फैले कितनी बार मिले
और फिर छूकर अंगारों को
कितने वे फैल गये !

कैसे वह भुन गया
सख़्त किसी दाने की तरह भाड़ में
कैसे वह चटखा—
और कैसा दहकता एक चिह्न
उसने छोड़ा मरकर
दहकते अंगार पर !

सब कुछ भयानक था,
याद सब रहेगा वह जीवन-भर
लड़के का उत्सुक चेहरा
चमकती आँखें भी रहेंगी याद,
कैसे उन्हें भूलूंगा ?
मौत की चुटकी में—क्षण भर ही सही,
उतना ही तड़पूंगा मैं
उतना ही भूलूँगा !

—भवानी प्रसाद मिश्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवन अपने लिए
और सबके लिए'

यह वाक्य—
जीवन को सफल
प्रतिष्ठा
और
समस्त विश्व की
शान्ति,
प्रगति तथा
सम्पन्नता
के हित में.....

गनी कमर्सियल कम्पनी

हैसियन तथा बारदाना
के
प्रमुख व्यापारी तथा वितरक

६, क्लाइव रो,
कलकत्ता-१

फ़ोन : २२-५३६६
२२-८१३९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्तित्व-वादियोंकी महफ़िलमें

महमूद निज़ामी

■

इस टैक्सी 'सेन' का पुल पार करके 'लेटिन-क्वार्टर' नामके विशिष्ट क्षेत्रमें पहुँची, तो रातके पौने बारह बज रहे थे। किन्तु इस क्षेत्रके कॉफ़ी-हाउस, और रेस्टोरेंट, वेफ़िक्रोंसे ज्योंके त्यों भरे पड़े थे। पटरियोंपर चलने-वाले लोगोंकी आकृतियाँ और मुद्राओंको देखकर आशंका होती थी कि शायद शहरके सब कत्तरे, लुटेरे और क़ातिल यहींपे मुहय्या किये जाते हैं। और फिर हमारी गाड़ी 'सॉन सेन वपरे' के इलाक़ेमें बोलार्ड' के दिये हुए पतेपर एक संदिग्ध-से मकानके अँधेरे-से दरवाज़ेके सामने रुक गयी। हम गाड़ीसे बाहर निकले। बोलार्डने टैक्सीके दाम चुकाये और मुसकराकर कहने लगा—"लो भई! आ गयी हमारी मंज़िल! आओ, ज़रा अन्दर चलकर अस्तित्व-वादियोंका हाल भी देखें, कि वे किस आलममें हैं?"

अस्तित्व-वादियोंका ज़िक्र सुनते ही कौतूहल जगा। इस सम्प्रदायके विचार-दर्शनको लेकर इतना कुछ पढ़ चुकनेपर भी अभीतक किसी अस्तित्व-वादीके साक्षात्कार-का अवसर नहीं मिल पाया था। अस्तित्व-वादियोंके कितने ही उप-सम्प्रदाय यद्यपि युरॅपमें विद्यमान हैं, और न्यूना-धिक रूपसे यहाँका प्रत्येक क्षेत्र अपने किसी पृथक् सम्प्र-दायका पोषक रहा है; किन्तु सर्वाधिक रूपसे प्रसिद्ध और मान्यताप्राप्त सम्प्रदाय फ्रान्सका है। कारण इसका रही हैं शायद ज्याँ पॉल सार्त्रकी विचारोत्तेजक रचनाएं, जिनका अनुवाद विश्वकी समस्त भाषाओंमें हो चुका है। वैसे अस्तित्ववादी दर्शन कोई नयी बात नहीं। प्लेटो, और हीगेल आदि इसके सम्बन्धमें अपने विचार व्यक्त कर चुके हैं। बादके कुछ अन्य दार्शनिकोंने भी इसको लेकर अनेक व्याख्याएँ की हैं, किन्तु 'एक्ज़िस्टेन्स' शब्द, जिस दार्श-निक सन्दर्भमें आज युरॅपमें आकर्षणका केन्द्र बना हुआ है, इसकी स्थापनाका श्रेय किर्केगार्डको प्राप्त है। उसका विचार है कि व्यक्ति इस मशीनी-युगमें समाजकी बहुत बड़ी कलका एक निर्जीव पुरज़ा बनकर रह गया है—और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मशीनों और कल-पुरज़ोंके तूमारमें वह अपने स्वयंको खोकर अपने व्यक्ति (सत्ता) से वंचित हो गया है। अपने व्यक्तिका बोध ही उसे जीवनकी समस्त रागात्मक अनुभूतियोसे रसान्वित होनेको प्रेरित कर सकता है। अतः समाजमें किसी सामाजिक व्यवस्थाका किसी नैतिक मूल्यका कोई महत्त्व नहीं। यह सब कुछ भ्रम-मात्र है। व्यक्ति स्वाधीन है, जो चाहे करे, जैसे चाहे करे।···किर्के गार्डसे लेकर जैस्पर्स और हाइडेगर, सार्त्र एवम् कामू और गैब्रियल मार्सल, निकलस बर्डेएव और मार्टिन बबर तक अस्तित्ववादके विकासका वृत्त पूर्ण होता है—जिसने फ्रान्सकी नयी पौधको, उनके विचार-स्तरको पूर्णरूपेण प्रभावित किया है। अस्तित्ववाद एक आन्दोलनके रूपमें पनप रहा है। दिनोंदिन इसका प्रभाव इतनी द्रुतगतिसे नयी पौधद्वारा ग्रहण किया जा रहा है कि अस्तित्ववादी दर्शनके पोषक पेरिसके चार साप्ताहिक पत्रोंकी चार लाख प्रतियाँ प्रति सप्ताह हाथों-हाथ बिक जाती हैं। पेरिसमें इस सम्प्रदायके 'लीडरों' के प्रति उनके अनुयायियोंको कुछ ऐसी ही श्रद्धा है, जैसी फ़िल्मस्टारोंके प्रति सिनेमा-प्रेमियोंकी होती है। दैनिक पत्रोंमें इनके वक्तव्योंको प्रायः राजनीतिक नेताओंके बयानोंसे भी अधिक महत्त्व दिया जाता है। किसी समस्याविशेषपर सार्त्र, आन्द्रेमार्लो आदि दार्शनिकोंका मत जाननेकी उत्सुकतामें लोग इन पत्रोंको यों हाथोंहाथ ले जाते हैं, मानो ये देव-वाणीके सूत्र रहे हों।

हम दरवाज़ेपर पहुँचे तो पार्श्वकी एक खिड़कीसे एक व्यक्तिने बड़ी कौतूहल-भरी दृष्टि पहले ल्योनार्डपर और फिर मुझपर डाली। मेरे साथीने आगे बढ़कर सरगोशीमें कुछ कहा। सुननेवालेने सिर हिलाकर सन्तुष्टिकी सूचना दी, और फिर पार्श्वका दरवाज़ा खुल गया — जिसमें-से गुज़रकर एक छोटी-सी ड्योढ़ीको पार कर हम एक ऐसे खुले किन्तु अर्ध-आलोकित कक्षमें पहुँचे जिसमें कोई सौ-एक स्त्री-पुरुष वार्तालापमें मग्न थे। कमरेके अन्धकारको सिगरेटके गाढ़े धुएँने और भी रहस्यमय बना दिया था। शराबकी गन्ध और सेण्टकी महकके विचित्र सम्मिश्रणसे वातावरण बोझिल हो रहा था। गिलासोंकी खनक, बातोंके शोर और क़हक़होंकी गूँजने मिल-जुलकर माहौलको सप्राण बना रखा था। कुरसियोंके बाद जो स्थान फ़र्शपर रिक्त बचा था उसपर युवक-युवतियाँ (जिनमें अकसर मुश्किल ही से वयस्क रहे होंगे) बैठे थे, अथवा अध-लेटे पड़े थे। दो-तीन वेटर तश्तरियोंमें कोनेकके गिलास उठाये इधर-उधर आ-जा रहे थे।—और सामने एक छोटे-से काष्ठ-मंचपर पाँच आदमियोंका एक आर्केस्ट्रा अमेरीकन जाँज़की धुन बजा रहा था।

ल्योनार्डने खड़े-खड़े दरवाज़ेकी दहलीज़में-से चारों ओर नज़रें दौड़ायीं। सारी जगह यों भरी पड़ी थी, कि वेटर भी बड़ी मुश्किलसे पानी पिलानेके लिए आ-जा सकते थे। मेरा खयाल था, हम अन्दर नहीं जा सकेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किन्तु अनायास ही, हमसे थोड़ी दूरीपर एक कोनेमें दो आदमियोंकी मेज़ खाली हो गयी और ल्योनार्ड और मैं लोगोंपर-से गिरते-पड़ते, क्षमा-याचना करते, ग्लानिको छिपानेके लिए झूठी मुसकराहटें होठोंपर लाते, वहाँ तक किसी-न-किसी तरह पहुँच ही गये।

मैंने कुरसीपर बैठकर एक नज़र सामने-की ओर लोगोंपर डाली। उपस्थित जनोंमें अधिक संख्या ऐसे नवयुवक लड़कों और लड़कियोंकी थी, जो आत्म-विस्मृतिकी स्थिति-में परस्पर प्रणय-निवेदनमें कुछ ऐसे तल्लीन थे, मानो अपने चतुर्दिक् व्याप्त उपस्थित जन-समुदायकी उन्हें कोई परवा न हो। उनकी तल्लीनता कहे दे रही थी, मानो जीवनका यह रंगीन-क्षण जो कहींसे उसे प्राप्त हो गया है, उसे वह किसी मूल्य भी हाथसे जाने नहीं देना चाहता। प्रत्येक चेहरा ऐसा खिला हुआ, पुलकित और निश्चिन्त दीख रहा था मानो उस निरन्तर प्रसादसे उन्हें कभी सरोकार ही नहीं पड़ा—जिसे वेदना अथवा यातनाकी संज्ञासे अभिहित किया जाता है।...और फिर अनायास ही साज़ रुक गये। उपस्थित जनोंमें-से एक व्यक्तिने मंचपर आकर माइक्रोफ़ोनपर घोषणा की—'ठीक बारह बजे मोस्यो अमुक स्टेजपर आयेंगे और आप उनके संगीतका रसास्वादन करेंगे!' घोषणाके साथ ही अपनाह शोरके साथ करतल ध्वनि गूँज उठी, और हर्ष और उल्लासके हंगामेने प्रत्येक व्यक्तिमें ज़िन्दगीकी नयी लहर दौड़ा दी।

किर्केगार्डसे लेकर जैस्पर्स और हाइडेगर, सात्र एवम् कामू और गैब्रियल मार्सल, निकलस बर्डेएव और मार्टिन बबर तक अस्तित्ववादके विकासका वृत्त पूर्ण होता है—जिसने फ्रान्सकी नयी पौधको, उनके विचार-स्तर-को पूर्णरूपेण प्रभावित किया है। अस्तित्ववाद एक आन्दोलन-के रूपमें पनप रहा है। दिनों-दिन इसका प्रभाव इतनी द्रुतगतिसे नयी पौध-द्वारा ग्रहण किया जा रहा है कि अस्तित्ववादी दर्शनके पोषक पेरिसके चार साप्ताहिक पत्रोंकी चार लाख प्रतियाँ प्रति सप्ताह हाथों-हाथ बिक जाती हैं।

एक-दो मिनिटके बाद जब कमरेमें क्लाक-ने अर्ध-रात्रिका गजर बजाया, तो चारों ओर सन्नाटा छा गया। उपस्थित जन बड़ी उत्सु-कतासे आगन्तुककी प्रतीक्षा कर रहे थे। इतने-में पीठिकाका काला परदा हिला और पीछेसे एक क्षीणकाय, व्यक्ति हाथमें क्लार्नेट लिये स्टेजपर आया। उसे देखते ही फिर तालियों-का शोर गूँज उठा। आगन्तुकने नत-मस्तक हो, इस हार्दिक अभिवादनके लिए आभार-प्रदर्शन किया और माइकपर अँगरेज़ीमें कहा कि श्रोताओंके मनोरंजनके लिए वह कुछ विशिष्ट-अमेरिकी गीत प्रस्तुत करनेकी आज्ञा चाहता है। तालियाँ फिर गूँजीं; अनुमतिकी सूचक पुलकित करतल-ध्वनि!—और फिर जैसे ही उसने क्लार्नेटको होंठोंसे लगाया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभी उपस्थित जन हड़बड़ाकर खड़े हो गये। स्त्रियाँ और पुरुष एक दूसरेके आमने-सामने हो गये; और फिर जब आर्केस्ट्राने वह संगीत आरम्भ किया, जिसकी लय शायद अमेरिकामें लाये जानेवाले नीग्रो ग़ुलाम सदियों पहले अफ़्रीकाके किसी अन्धकारयुक्त कोनेसे अपने साथ लाये थे—तो सारा मजमा, हर्षोन्मत्त नृत्यकी मुद्रामें एक दूसरेसे गुँथ गया। थोड़ी देरमें आर्केस्ट्राकी लय धीरे-धीरे तेज़ होती चली जा रही थी, और इसकी धुनपर उपस्थित जन यों थिरक रहे थे, मानो किसीने इनपर जादू कर दिया है—और उन्हें अपने तन-बदनका होश नहीं रहा। आर्केस्ट्राकी मादकतापूर्ण धुन, तड़पते-पगोंका शोर, थिरकते जिस्मोंका उन्मादने मिल-जुलकर ऐसा रूप धारण किया था कि कमरेकी समस्त प्रकृति नृत्यमय दीखने लगी। मैंने दृष्टि घुमायी तो लगा मानो छतसे लटकते हुए कुमकुमे, दीवारोंके चित्र, दरवाज़ोंके परदे, फ़र्शपर रखी मेज़-कुरसियाँ, मेज़ोंपर रखे गिलास और राख-दान, यहाँतक खुद सारी प्रकृतिको उन्माद हो गया है; एक पुलकित उन्माद! हर चीज़ काँप रही है, थिरक रही है; नाच रही है। जाने इस नृत्य और संगीतमें क्या बात थी, कि आहिस्ता-आहिस्ता किसी अज्ञात शक्ति और अर्थ अनाम भावनासे अनुप्रेरित हो मेरे पाँव आप-ही-आप इसकी लयपर हरकत करने लगे; और अन्तस्‌की गहराइयोंसे कोई बात मुझे उकसाने लगी कि मैं भी उठकर अन्य उपस्थित जनोंके साथ इस नृत्य-समारोहमें शामिल हो जाऊँ। यह प्रेरणा, सम्भव है मेरे विवेकपर आधिपत्य जमा लेती, किन्तु अनायास ही दिलके एक और कोनेसे 'पास-बाने-अक़्ल'ने ललकारा और मेरे मस्तिष्कमें कुछ क्षणों तक 'उठूँ या न उठूँ?' के प्रश्नको लेकर उन्मादानुभूति और भावातिरेकके बीच तर्क-वितर्क शुरू हो गया। मस्तिष्ककी गहराइयोंसे होश-व-हवास मुझे याद दिला रहे थे कि मैं फटी-फटी आँखोंसे हुस्ने-फ़िरंगकी बहारका जो मादक दृश्य देख रहा था, वह मात्र एक माया, एक अवसादपूर्ण मरीचिका है—जिसका अस्तित्व, आत्म-प्रवंचना और विलासप्रियतासे बढ़कर कुछ भी नहीं। किन्तु मेरे इर्द-गिर्दकी दुनिया कह रही थी, कि ज़िन्दगी नाम है सिर्फ़ खुशियोंका, हर्ष-उल्लासका। और मेरे सामनेका दृश्य पुकार रहा था कि भीरु न बनो; अर्थहीन मर्यादाओंके विगलित मूल्योंके जर्जर बन्धनोंसे निकलकर जीवनके इस मोहक क्षणकी रंगीनियों और मादकतामें अपनी मानसिक चिन्ताओंके जड़-समूहको स्वाहा कर दो....। और फिर इस बहसके ज्वार-भाटेमें मेरा मस्तिष्क हिचकोले खाने लगा और मैं सोचमें पड़ गया कि मेरे सामनेकी दुनिया कितनी खोखली, कितनी महत्त्वहीन, और किस क़दर निकृष्ट थी—जहाँ जीवनका उद्देश्य मात्र भावुकता और लिप्साके अतिरिक्त कुछ भी नहीं था। ज़िन्दगी वहाँ नाम था महज़ सिगरेटके धुएँ, शराबके नशे, नारीके सौन्दर्य, गप-बाज़ी, और खुश-वक़्तीका। किन्तु फिर मेरे दिलने कहा—ज़िन्दगी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगर यह नहीं तो फिर क्या है ? क्या ज़िन्दगी नाम है संन्यासका ? क्या जीवनका उद्देश्य इतना भर है कि इनसान जबतक ज़िन्दा रहे, चिन्ता और यातनाओंके दावानलमें अपनी आत्मा और कायाको धीरे-धीरे समर्पित करता रहे ? कौन थे वे लोग, जिन्होंने इनसानको नियम-बद्धताकी बेड़ियाँ पहनायीं ? उन्हें किसने यह हक़ दिया था कि वे आदमकी औलादकी सादगीका लाभ उठाकर 'यह न करो, वह न करो' की ज़ंजीरोंसे उसे जकड़ते। उन्हें क्या हक़ पहुँचता था कि ज़िन्दगीके सुन्दर, मोहक चेहरेको परिभाषाओं और व्याख्याओंके आधिक्यसे, प्रायः स्वप्नमें परिणत कर देते। दिलने कहा—'दोस्त ! यह समाज-व्यवस्था, नैतिकताके ये नियम-मर्यादाएं जो पग-पगपर इनसानके दामनसे उलझते और इसकी स्वाधीनतामें बाधक बनते हैं, ये सब फ़रेब और धोखा हैं। ज़िन्दगी, अपने आपमें इतनी सुन्दर चीज़ है कि इसके एक क्षणपर ये समस्त मर्यादाएँ, ये सब नियन्त्रण सहसा क़ुरबान किये जा सकते हैं, और इन्हें क़ुरबान कर देना चाहिए।'

मैं उठा पर तालियोंका वेपनाह शोर उठ रहा था, और लोग हँसते-बोलते और हालमें झूमते अपने-अपने स्थानपर लौट आ रहे थे।

मैं निराश होकर फिर बैठ जाना चाहता था कि अनायास ही ल्योनार्ड खड़ा हो गया और कहने लगा—"वाक़ई, वापस चलनेके लिए तुम्हारा बेचैन होना सही है। एक बजा चाहता है; और तुम्हें सुबह-सवेरे यहाँसे रुखसत होना है। महफ़िल कुछ ऐसी रसीली रही थी कि यदि तुम वापस चलनेके इरादेसे खड़े न हो जाते तो मेरी स्मृतिसे तुम्हारे प्रस्थानकी बात सर्वथा निकल गयी होती।"

हम बाहर निकले। ल्योनार्डने टैक्सीको पुकारा। गाड़ी मेरे होटलकी ओर चलने लगी। मैं चुपचाप गुज़रते हुए वक़्तका निरीक्षण करने लगा। विगत दृश्यका चित्र मेरी कल्पनामें घूम रहा था। अभीतक एक शाश्वत उल्लास, एक अनन्त आनन्दकी कैफ़ियत बाक़ी थी। और मैं सोच रहा था कि 'ईश्वर तुम्हें ख़ुश रखे, तुमने मुझे आनन्दित किया है' कहनेवालेने किसी ऐसे ही क्षणका रसास्वादन किया होगा।

होटलके दरवाज़ेपर गाड़ी रुकी। हम दोनों बाहर निकले। ल्योनार्डकी ओर मैंने धन्यवाद स्वरूप ऐसी नज़रोंसे देखा जो दिलका हाल ज़बानसे भी ज़्यादा विस्तारके साथ कह सुनानेकी क्षमता रखती हैं। फिर हमने अन्तिम बार हाथ मिलाया और मैं कमरेकी चाबी लेनेके लिए काउण्टरपर पहुँचा। सीढ़ियोंके निकट जाकर मैंने ऊपर चढ़नेसे पहले एक नज़र पीछेकी ओर डाली। पोर्टर अबतक हैरतसे मुझे देख रहा था··· शायद वह सोच रहा था कि इस शख़्सको आज हो क्या गया है !

(अनु० : शाकिर पुरुषार्थी)

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Gram : MATCASH
CALCUTTA.

Telephone :
OFFICE : 22-3925
RESI : 55-2620

Ashutosh Mookerjee & Co. Private Ltd.

12, RAJA WOODMUND STREET,
CALCUTTA-1.

Importers & Manufacturers of :
WIRE ROPES, CHAINS LIFTING ACCESSORIES,
WAGON FITTINGS & MARINE STORES ETC.

Agents for :
LIFTING ACCESSORIES
S. TURTON & CO., LTD., BIRMINGHAM.

Workshop :
22, RAMLAL MOOKERJEE LANE,
SALKIA, HOWRAH.

Phone : 25-2227

Universal Fire & General Insurance Company Limited

Transact :
Fire, Motor, Marine, Personal Accident,
Fidelity, Guarantee, Burglary and all
other forms of Miscellaneous
Insurance Business.

Universal Insurance Building,
Sir P.M. Road, Bombay-1.
Chairman & Managing Director :
P.U. PATEL, B.A., B.COM. (Lond).

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३६ साल यानी मोदीलियानी

लक्ष्मीधर मालवीय

■

छत्तीस वर्षकी अल्पायुमें उसकी मृत्यु हो गयी। जब वह पेरिस आया था उस समय उसकी आयु थी केवल बाईस वर्ष! एक संक्षिप्त-सी जिन्दगी—लेकिन तीव्रतासे भोगी हुई, यही उसकी कांक्षा थी।

बीसवीं शतीका प्रसिद्ध इतालवी कलाकार अमेदो मोदीलियानी (जन्म १८८४, मृत्यु १९२०) अपने जिन छोटे-छोटे रेखाचित्रोंको शराब या एक प्याले कॉफ़ीके लिए दे आता था उनमें-से प्रत्येक अब दो हज़ार डालरमें बिक रहे हैं और उसके चित्र अब लाखों डालरमें नीलाम हो रहे हैं!

उन्नीसवीं शतीके किसी कविने, कदाचित् रिम्बोने, कहा था कि साहित्यकारके लिए जीवनगत और साहित्यगत समस्याओंका हल अलग-अलग नहीं, एक ही होता है—मोदीने शायद अपने लिए जीवन खोज लिया था—और अपनी कलाके लिए सत्यको भी! आज हमारे लिए भी जीवनकी खोज इतनी ही महत्त्वपूर्ण बन गयी है। उसी मोदीके जीवनके अन्तिम दिन :

■

लेकर बड़ी कोमलतासे उसे मिटाती है और फिर बड़े ध्यानपूर्वक दुबारा लकीर खींचती है।

एक दिन मोदीने बड़े झिझकते हुए, थोड़े-से शब्दोंमें जीनके सामने अपनी मनोभावना व्यक्त की। सुनकर जीनकी आँखें झुक गयीं। इसके पहले वह मोदीके विषयमें काफ़ी कुछ सुन चुकी थी—प्रशंसा भी और निन्दा भी—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि वह बहुत जोरसे शराब पीता है और उन्मत्त होकर सड़कोंपर दंगा मचाता है।··· और वह मोदी प्रेम करता है—मोदीने उसके सामने प्रणय-निवेदन किया है! सम्भव है कि जीनके हृदयमें और भी बातें आयी हों कि प्रेम नियामक भी हो सकता है।···शायद वह ऐसे मोदीके जीवनमें व्यवस्था ला सके। तरह-तरहके विचार। जीवनका अनुभव उसका बहुत थोड़ा—वही जो उसने आर्ट-स्कूलमें आकर या यहाँ रोतोन्देमें पाया था—बस।

फिर एक दिन दोनोंने सदाके लिए एक दूसरेके साथ अपना भाग्य जोड़नेका निर्णय कर लिया।

तब मोदी मुँहसे खून उगलने लगा था।

आखिरकार, महायुद्ध समाप्त हुआ। सेन नदीके तटोंपर रौनक़ लौटने लगी। कलाकारोंकी बस्ती मांतपरनासमें दुनियाके दूर-दराज़ कोनोंसे नये आनेवाले कलाकारोंकी भीड़ बढ़ने लगी, बुलीवारों और गलियों, गलीके फुटपाथपर-के रेस्तराओंमें कोलाहल फिर पहलेकी तरह होने लगा।

मोदी अब भी सड़क चलते या रेस्तराँ-की भीड़में जिस-तिससे लड़-भिड़ जाता था। वह अब भी शराब पीकर नशेमें धत्त हो किसलिके स्टुडियोमें घुस जाता और उसकी तमाम चीज़ें तोड़-फोड़ डालता। अब भी जब रातके अन्धकारमें सारी बस्ती खामोश सोयी रहती तो मोदी शराब पीकर नीमहोशीकी हालतमें दान्तेकी 'डिवाइन कॉमेडी' से लम्बे-लम्बे अंश जोर-ज़ोरसे पढ़ने लगता था। दान्ते उसका प्रिय कवि था और उसकी 'डिवाइन कॉमेडी' उसे प्रायः कण्ठस्थ थी। लेकिन यह सब पहलेसे कम, बहुत कम।

मोदी पहलेसे काफ़ी बदल गया था। लोगोंका कहना था कि वह सुधर रहा है। सन् १९ की गरमियोंमें वह एक लड़कीका पिता बन गया था हालाँकि उसके सम्बन्धमें स्टूडियोमें शिशुको रखने लायक़ उपयुक्त स्थान न होनेके कारण उसका लालन-पालन मोदीके किन्हीं सम्बन्धियोंके पास हो रहा था। मोदी अब भीड़से बचता था। प्रेम और मृदु व्यवहार मोदीको जीवनमें पहली बार मिला था—जीनसे। वह उसके बाद दूसरी श्रेष्ठ कृतियोंकी रचना कर रहा था।

शायद स्वयं मोदी भी अपने विषयमें अपनी स्मृतिसे बिलकुल मिटा देना चाहता था लेकिन वह देख रहा था—आगे खड़ी मृत्युके छाया-आकारको, और स्पष्ट सुन रहा था—उसके बढ़ते क़दमोंकी थापको। वह दृश्यको अपने दृष्टिपटसे धोनेकी खातिर फिर शराब पीने लगा था।

मोदी जब भी उग्र हो जाता, तो हमेशा उसपर क़ाबू पा लेनेमें सफल होती थी लेकिन इसके लिए हमेशा जीनको पृथक् व्यक्तित्वका बलिदान होता था। शायद उसका जीवित रहना ही मोदीके जीवनका आनुषंगिक बन गया था।

रात हो गयी है। बर्षाकी झड़ी लगी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं। सर्दी और भी बढ़ गयी है। मोदी अभीतक नहीं आया। जीन तीन पहियेकी कूड़ा-गाड़ी लेकर (जिसमें लादकर मोदी मूर्तियाँ गढ़नेके लिए नयी बन रही इमारतोंसे पत्थर चुराकर लाया करता था) बाहर निकलती है। मोदी कहीं नशेमें चूर पड़ा होगा सड़क-सड़क, गली-गली। सचमुच, वह नशे और ज्वरमें बेहोश एक सड़कके पुलपर पड़ा हुआ है। वह उसे गाड़ीपर लाती है और गाड़ीको ठेलती हुई घर ले जाती है।

ऐसे मोदीको बदलनेका मनमें संजोया था साहस ही उसका सम्बल बन गया था। हालाँकि लगता है कि उसने बावजूद अपने मोलेपनके, अपने मनमें यह भी मान लिया था कि मोदीको सुधारना सम्भव नहीं है और शायद उसे सुधारनेके मायने उसकी प्रतिभाको कुण्ठित करना होगा। वह जहाँ-तक बढ़ चुका था वहाँसे वापस लौटना वैसे ही कठिन था जैसे वहाँसे अग्रसर होना।

वे दोनों साथ नहीं रहते थे। जीन अक्सर अपने पिताके घर जाती थी। वह उसे एकदम नहीं छोड़ना चाहती थी। उसके परिवारवाले उसके आचरणसे काफ़ी नाराज थे लेकिन उन्होंने उसे आने-जानेकी छूट दे रखी थी। जब जीन अपने घर चली जाती थी तो मोदीसे अपने स्टूडियोंमें अकेले नहीं रहा जाता था और वह अपने दोस्तोंके यहाँ चक्कर लगाया करता। किसलिंका स्टूडियो था और नगरसे बाहरकी उपत्यका-

एक दिन मोदीने बड़े झिझकते हुए,
थोड़े-से शब्दोंमें
जीनके सामने अपनी मनोभावना व्यक्त की।
सुनकर जीनकी आँखें झुक गयीं।
इसके पहले वह मोदीके विषयमें काफ़ी कुछ
सुन चुकी थी—
प्रशंसा भी और निन्दा भी
कि वह बहुत अधिक शराब पीता है और
उन्मत्त होकर सड़कोंपर दंगा मचाता है।...
और वह मोदी प्रेम करता है—
मोदीने उसके सामने प्रणय-निवेदन किया है!
सम्भव है कि जीनके हृदयमें
और भी बातें आयी हों कि प्रेम
नियामक भी तो हो
सकता है।...

में मोंदाज़िनका स्टूडियो।

मोंदाज़िन अकसर इन दोनोंको हाथमें लिए बस्तियोंसे दूरके एकान्त स्थानोंमें टहलते देखता था। कभी एडमिरल कोर्वेके स्मारककी सीढ़ियोंपर हाथमें हाथ दिये, एक दूसरेसे सटकर बैठे हुए।

उस दिन जीन मोदीसे मिलनेके लिए अपने घरसे वायदेके मुताबिक लेटिन क्वार्टर-के कोफ़ेमें ठीक समयसे पहुँच गयी थी लेकिन मोदी उतावलीमें समयसे बहुत पहले ही वहाँ आकर बैठ गया था और वक़्त गुज़ारनेकी खातिर खूब शराब पी गया था।

उस समय मोदीकी मज़बूत मुट्ठीमें जीन-की कोमल कलाई थी। जीन बिलकुल निरीह गूँगी बनी हुई उसकी क्रूरताको झेलती गयी। मोदी उसे बाँह पकड़कर घसीट ले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चला। वह बार-बार उसे बाग़को रेलिंगपर पटक देता था!

साल्माँ अँधेरेमें छिपकर खड़ा हो गया था। और जब वे दोनों कुछ आगे निकल गये तो उसने आवाज़ दी—'मोदी, बस करो। बहुत हुआ।'

मोदीने जीनको तुरन्त छोड़ दिया। छूटते ही जीन दौड़ी। लेकिन मोदीसे दूर नहीं। उसी समय बुलीवार साँ मिशेलकी नालियोंसे निकलकर झुण्डके झुण्ड चूहे छिपनेके लिए इधर-उधर दौड़ने लगे थे—जीन उन्हींसे डरकर छूटते ही मोदीसे लिपट गयी थी। फिर वे दोनों हाथमें हाथ दिये रात्रिके घने अन्धकारमें डूब गये।

मोदी उसके बाद कई दिनों तक दिखाई नहीं दिया। एक दिन वह रोतोन्देमें आया तो उसके मित्रोंने सुना कि जीनको फिर बच्चा होनेवाला है। यह उनके दूसरी सन्तान होनेको थी।

मोदीका स्वास्थ्य बिलकुल टूट चुका था। वह बचपनसे ही तपेदिकका मरीज़ था। फिर पेरिस आकर अतियोंके बीच भटकती हुई उसकी अनियमित ज़िन्दगी, निर्धनता और शराब!

'मेरे दिमाग़का सिर्फ़ थोड़ा-सा क़तरा बच रहा है।' मोदीने इन्हीं दिनों द ज़रातसे कहा था।

उसने चित्र बनाना लगभग बिलकुल छोड़ दिया था। अपने वर्तमान और भविष्यके लिए वह सर्वथा उदासीन हो गया था। बाहर लोग अब उसकी कलाकृतियोंको समझने लगे थे। पत्रोंमें उसके चित्रोंकी प्रशंसात्मक समालोचनाएँ निकलने लगी थीं लेकिन मोदी ठहरकर इन सबका सुख करनेकी स्थितिमें नहीं था—वह अपनी खोजी हुई राहपर आगे बढ़ गया था। पैसा! पैसा कहाँसे आये! पोलिश कवि ज़ब्रोवस्की, जो उसका अनन्य सहायक और मित्र था, उसके चित्रोंको बग़लमें दबाये दूसरे चित्रविक्रेताके यहाँ चक्कर काट रहा था।

द ज़रातने कोयलेवालेको कह रखा था कि वह हर सप्ताह मोदीके स्टूडियो कोयला पहुँचा दिया करे और वह मोदीको सार्डीन मछलियोंके टिन भेज देता था।

जीन मौन थी, हमेशाकी तरह इस भी मौन थी और सब कुछको तिरस्कार भावसे झेल रही थी।

द ज़रात किसी कार्यवश आठ दिनके लिए बाहर गया था। इन आठ दिनों किसीको नहीं मालूम कि मोदीको क्या हुआ किसीने उसकी खोज-खबर भी नहीं ली। लौटकर द ज़रातने मोदीके स्टूडियोका बन्द दरवाज़ा खटखटाया। कोई उत्तर नहीं—अन्दर कोई आहट भी नहीं। ज़रातने कई आवाजें दीं। तबतक एक मित्र भी आ गये। और सब मिलकर दरवाज़ा पीटने लगे। इस हाहाकारसे पड़ोसी इकट्ठे हो गये। अब बन्द दरवाज़ा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और-जोरके धक्के पड़ने लगे। अचानक दरवाज़ेके पल्ले अन्दरकी ओर झूल गये। कमरेके भीतरका दृश्य अत्यन्त कारुणिक था। अरथी-जैसी एक पलंगपर मोदी और जीन एक साथ पड़े थे। फ़र्शपर और पलंगके नीचेपर सार्डीनके डिब्बोंके गिरे तेलके सनाम धब्बे थे। सार्डीनके खाली डिब्बे इधर-उधर बिखरे पड़े थे।

डॉक्टर बुलाया गया। उसने मोदीको देखते ही कहा कि इसे तुरत अस्पताल ले जाओ।

द ज़रात उसे ला चारिती ले गया। अस्पतालमें मरणासन्न मोदीने उससे कहा था, "यहाँ आनेसे पहले मैंने जीनका अन्तिम चुम्बन ले लिया है। हम लोगोंने फ़ैसला कर लिया है।" द ज़रातने बादमें समझा कि उन दोनोंने किस बातका फ़ैसला किया था।

अस्पतालमें मोदीको एक इंजेक्शन दिया गया और वह सो गया—सदाके लिए सो गया। मृत्युसे केवल कुछ पल पूर्व उसने अपनी मातृभूमि इटलीको याद किया। उसके होठोंके बीचसे वे स्फुट-से ये शब्द निकले थे : "इताल्या – कारा इताल्या !"

आयु छत्तीस वर्ष। जब वह पेरिस आया था उस समय उसकी अवस्था थी केवल बाईस वर्ष। एक संक्षिप्त-सी ज़िन्दगी—लेकिन तीव्रतासे भोगी हुई, यही उसकी कांक्षा थी! उल्काकी तरह! और यही उसने पाया।

ला चारितीकी माचुअरीमें जीन मोदीके शवको अन्तिम बार देखनेके लिए आयी थी। वह गर्भिणी थी। शायद इसीलिए अस्पताल-के कर्मचारियोंने उसे मोदीके पाससे हटाना चाहा। लेकिन वह मानी नहीं। किसलिए कमरेमें उसके पास गया—ओफ़, मोदीके शवको देखकर जीनकी वह हृदयविदारक चीख! जीन मोदीके शवका आलिंगन करने जा रही थी। "मैं थोड़ी देर इसके पास एकान्तमें रहना चाहती हूँ" उसने किसलिसे कहा। वह उस करुण दृश्यको देखनेमें असमर्थ हो बाहर निकल आया।

जब वह कमरेसे निकली उस समय उसका चेहरा बिलकुल शान्त और संयमित था। मदाम ज़ब्रोवस्की और रू—वही रू जो जीनको अपने साथ रोतोंदे ले जाया करती थी, जहाँ मोदीने उसे पहले-पहल देखा था—जीनको समझा-बुझाकर तानिए क्लिनिक ले जाना चाहती थीं। जीनको शायद अगले ही दिन बच्चा होनेवाला था। लेकिन जीन राजी नहीं हुई। वह सीधे अपने पिताके घर आयी। उन्होंने दरवाज़ा खोल दिया लेकिन उससे कुछ कहा नहीं। वह सीधे ऊपर अपने कमरेमें चली गयी और कमरेकी सभी खिड़-कियाँ खोल दीं। नीचे गलीमें रोज़की तरह आने-जानेवालोंकी भीड़ थी। ऊपर खिड़कीपर मातृत्वकी करुण मूर्ति खड़ी थी!

अचानक गलीमें लोगोंके मुँहसे एक चीख निकल गयी।

जीनने मकानकी पाँचवीं मंज़िलकी खिड़कीसे कूदकर आत्महत्या कर ली। गली-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में खून-रिसते माँसके लोथड़ोंका एक ढेर मात्र पड़ा था।

पुलिस आयी और तभी मोदीके मित्र भी पहुँच गये। जीनके पिताने निर्णय दिया कि जीन और उसके शिशुकी लाशोंको मांतपर-नास मोदीके स्टुडियोमें भेज दिया जाये।

तारसे मोदीके भाईको मोदीकी मृत्युका समाचार दिया गया। उसने पेरिसके लिए ट्रेनपर सवार होनेसे पहले जवाबमें तार-द्वारा आदेश दिया—"उसे प्रिंसकी तरह दफ़नाइए।" मित्रोंने देखा कि भाईके लिए रुका नहीं जा सकता। अस्पतालवाले जल्दीसे जल्दी शव वहाँसे हटाना चाहते थे।

अन्त्येष्टिके लिए चन्दा इकट्ठा किया गया। मालाओं और पुष्पोंसे लदी तीन गाड़ियाँ अस्पतालके आँगनमें आकर खड़ी थीं। अरथीके पीछे चलनेवाले बहुसंख्य लोगोंने एक बड़े जुलूसका रूप ले लिया था। चौराहों पर पुलिसके सिपाही अरथीको सलाम करते थे। पेरिसकी आलीशान पेरी लाटोज सेमेट्रीमें मोदीलियानीका शव दफ़ना दिया गया।

यही रस्म अगले दिन दुहरायी गयी, जीनके लिए। लेकिन यह तो एक हास्य-नाटिकाकी तरह थी! मुश्किलसे एक दर्जन लोग इस बार इकट्ठे हुए होंगे। वे ही: साल्मा, जब्रोवस्की, किसलिं आदि मोदीके पुराने मित्रगण और उनकी पत्नियाँ। ये लोग षड्यन्त्रकारियोंकी भाँति एक पूर्व-निश्चित स्थलपर स्टुडियोसे दूर गलीके नुक्कड़पर दीवारसे चिपककर, साथ लाये श्वेत गुलदस्तोंको छिपाये खड़े थे। सामनेकी खण्डहर इमारतके नीचे, जिस इमारतमें मोदीका स्टुडियो था, शववाहक खड़ा था।

तभी एक कार आकर रुकी और उसमें से खाली हाथ जीनके पिता और जानके भाई उतरे। पिताकी दाढ़ी सनकी तरह उजली थी और भाईकी गैरिक। उन दोनोंने एक निगाह वहाँपर पहलेसे खड़े मोदीके मित्रोंपर डाली लेकिन कोई किसीसे बोला नहीं।

सारा काम चटपट करनेकी बात पहलेसे ही तय थी। मकानके भीतरसे एक कॉफ़िन-मुश्किलसे एक शिशुके कॉफ़िनके बराबर-लाकर शववाहकपर रख दिया गया। जीनका क्षत-विक्षत शव और उसके अजन्मे शिशुका शव भी एक साथ उसी कॉफ़िनमें बन्द था।

नगरसे बाहर वैगन्यूमें स्थित एक उजाड़-सा क़ब्रिस्तान—जीनका शव वहीं दफ़ना दिया गया।

शव दफ़नानेकी रस्म मुश्किलसे पूरी हुई होगी कि पिता और पुत्र—पिता और भाई—साथमें आये मोदीके मित्रोंसे एक शब्द भी बोले बग़ैर, उन लोगोंकी ओर देखे बग़ैर वहाँसे चले गये। पहले पिता चलनेको हुए, फिर वैसी ही नाटकीय भंगिमामें पुत्र!

तीन वर्ष बाद मोदीलियानीकी क़ब्र खोली गयी और जीनका शव उसके बग़लमें सुला दिया गया—जीन जिसने मृत्युके बढ़ते कदमोंकी थाप सुनकर अपने मोदीके साथ अनन्त सुखका समझौता कर लिया था!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्रायद-गिरोह : चीनी लाल पंजा

मनोहरसिंह 'मधुप'

■

चीनमें ही आक्रान्ताओंका एक ख़ूनी गिरोह है त्रायद। हांग-कांग बन्दरगाहकी छिपी गलियोंमें-से क़त्ल, लूट-खसोट, अफ़ीम आदिके तस्कर व्यापार, डाका, आगज़नी और छुरेबाज़ीके दारुण कर्मोंमें अत्यन्त पटु इस गिरोहने प्रायः तीन शताब्दीसे अपना निष्कंटक राज्य सारे चीनमें और जहाँ कहीं भी दुनियामें चीनी चले गये वहाँ, उनपर फैला रखा है।

■

सन १९५७ के अक्तूबरमें हुई एक करुणाजनक घटनासे इसे साफ़-साफ़ समझमें आ जाता है। एक विद्यार्थी-सदस्य की होनपांगके हृदयमें अपने इस दलके घृणित कुकर्मोंके प्रति अरुचि उत्पन्न हुई और उसने इससे अपना सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया। बस, ख़ूनी पंजेने उसकी छातीपर छाप मार दी—जहन्नुम रसीद! क़ातिल गुण्डोंके पैने छुरोंके हमले उसपर दो बार हुए। पहली बार तो छुरा उसकी बाजूको छेदकर रह गया था लेकिन दूसरी बार उसके पेटमें छुरा भोंका गया, जिससे खूनके फव्वारे छूटे, और परनाला-सा बह गया और जीवन-दीप कुछ ही घण्टों टिम-टिमाकर बुझ गया।

जिस समय यह घायल जवान अस्पतालमें पड़ा हुआ था, फ़ौजदारी इन्सपेक्टर इसके बयान क़लमबन्द करनेकी कोशिशमें लगा रहा, लेकिन उसे किसी तरह कामयाबी हासिल नहीं हो रही थी। बयान दर्ज करनेमें यों तो कोई मुश्किल नहीं थी। हमलावरोंके नाम ज़ाहिर करनेकी घायल शख़्सको कोई ज़रूरत नहीं थी। दोनों नौजवान हमलावर वहीं हिरासतमें ले लिये गये थे। उम्र दोनोंकी अट्ठारहके क़रीब। नाम वो वाई-लुम और चान काम-किट। पुलिस अब इस फिराक़में थी कि मरनेवाला उस गुप्त संस्थाका नाम खोलता जाये जिसके कुकृत्यका वह शिकार हुआ; ताकि दुनियाको सबूत मिल जाये कि इस ख़ूनी गिरोहका सदस्य बननेका नतीजा यह होता है कि दिन-दहाड़े कावलूनकी सड़कोंपर लाश तड़पे। घायल जवानके पिता सो काम-साउने मरणासन्न बेटेके कानके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पास मुंह ले जाकर कैंटोनी भाषामें कहा—होनपांग, तुम तो मर ही रहे हो, मरनेके पहले अपने बयानमें त्रायद सोसायटीका नाम दर्ज करवाना तुम्हारा फ़र्ज़ है, जिससे इस ख़ूनी गिरोहका भेद दुनियाको मालूम हो जाये। तुम्हारे लिए अपनी ग़लती क़बूल करनेका यही सबसे अच्छा तरीक़ा होगा जिससे ज़ाहिर हो कि तुमने इसमें दाखिल होकर कितनी बड़ी भूल की थी और हमारे लिए भी तभी तुम्हारी मौतका बदला लेना आसान होगा।

पर कौन-सी क़बूलात और कैसा बदला! घायल जवान पाँच घण्टे ज़िन्दा रहा, लेकिन उनके होंठ न खुले। अपनी मौतके यक़ीनके बावजूद एक भयानक डर अभी और उसकी छातीपर सवार था। अगर त्रायद दलका नाम बतलाया तो घरके लोगोंको छाँट-छाँट-कर एक-एक करके बेमौत मार दिया जायेगा।

मरनेवालेकी स्मृतिमें नाच रही थी अपनी पहली शपथ। त्रायद सदस्य बनते समय जो ३६ शपथ लेने पड़े थे उनमें-से पहला शपथ था—मेरे त्रायदमें प्रवेशके साथ-ही-साथ मेरे माता-पिता, भाई-बहिन, स्त्री-बच्चे, और बन्धु-बान्धव सब कोई मेरे शपथके साथ वचनबद्ध हैं। यदि मैं कभी किन्हीं नियमोंका उल्लंघन करूँ तो इसका मतलब होगा वे भी इसके लिए दोषी हैं और उन्हें भी दस सहस्र छुरियोंकी धारपर मौतके घाट उतार दिया जाये।

रहस्यमय वातावरणमें कन्दीलकी लाल रोशनीमें अगर-लोहबानका धुआँ उठ रहा है और नया सदस्य शपथ ले रहा है।

घायल जवानको अपनी यह शपथ याद आयी और डरसे उसकी घिग्घी बँध गयी। मूक भयसे उसने अपनी सूनी-सूनी आँखें पिताके चेहरेसे हटाकर दीवारकी ओर घुमा लीं, दीवालकी तरफ़ ही मुंह फेरकर पड़ा रहा और अवसन्न अवस्थामें पड़ा-का-पड़ा ही रह गया। बेचारा बूढ़ा बाप दिल मसोस कर रह गया।

जिन दोनों जवानोंने कावलूनकी गलियोंमें दिन-दहाड़े होनपांगका पीछा करके उसका क़त्ल किया था वे भी अपनी जगह मजबूर थे। त्रायदके पन्थकी एक दूसरी शपथ है—यदि तुम्हारे साथी सदस्य कहीं लोगोंसे लड़ रहे हों और तुम्हें बुलायें तो तुम्हें उनकी सहायता करनेको जाना होगा। जो लोग अनजान बननेका बहाना करके सुनी-अनसुनी करेंगे उनके कान काट लिये जायगे, और दूसरी बार ऐसा गुनाह करने पर उन्हें भी दस सहस्र छुरियोंकी धार नीचे मौतके घाट उतार दिया जायेगा। इस शपथकी गुरुताका प्रमाण भी दुर्लभ नहीं। १० अक्तूबर १९५६ के दिन प्राप्त हो सके जब हज़ारों त्रायद पन्थी कावलूनकी सड़कों मार-काट मचा उठे और लूट-खसोट शुरू कर दी और जहाँ-तहाँ आग लगा दी।

त्रायद-सोसायटीके जन्मकी कहानी भी कम रोचक नहीं है। मंचू सम्राट [illegible] ह्शिके राज्यकालके तेरहवें वर्षमें, [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१६७४ में इसकी नींव पड़ी। नाम था तुंग-चिह्-सुए। तारीफ़ थी 'स्वर्ग और मर्त्य विहारी'। काम था स्वर्ग और मर्त्यलोककी सेवा जोड़नेका। साधनके रूपमें जो तरीक़ा बताया गया था वह यह कि किसी भी तरह मनहूस मंचू सम्राट्का झोंटा पकड़कर उसके राज्य-सिंहासनसे उठाकर फेंक दिया जाये और उसके स्थानपर मिंग सम्राट्की प्रतिष्ठापना हो। इस समय मंचू-शासनके ख़िलाफ़ लोगोंमें बहुत बलबला फैला हुआ था। ख़ास करके दक्षिण चीनमें तो असन्तोष छाया हुआ था। वहाँ लोगोंने मंचुओंको विदेशी आक्रान्ता करार दे दिया था। विद्रोहियोंके कुछ नेता दक्षिण में ही फुकि-ईन प्रान्तमें एकत्रित हो गये थे और शाओ-लिन मठमें मंचु-द्रोही प्रचार तथा संगठन-कार्य ज़ोरोंपर चल रहा था। शाओ-लिन मठ अब बौद्ध भिक्षुओंका शरणस्थल मात्र नहीं रह गया, अपितु एक सैन्यशिविर और अखाड़ा बन गया।

मौजूदा तसवीरकी शक्ल इस तरहकी थी कि उधर राजधानीमें मंचू सम्राट्का सितारा तप रहा था, और इधर मठमें मुट्ठी-भर भिक्षु तप कर रहे थे कि जुल्मका अन्त कभी-न-कभी तो होना ही है, लेकिन अभी दाल नहीं गलने पा रही थी, बहरहाल ख़ूब डण्ड पेले जा रहे थे और गाल बजाये जा रहे थे।

इसी बीच एक ज़रा बेढब मौक़ा पेश आ गया। मुस्टण्डे भिक्षुओंमें धीरे-धीरे चरित्रकी कमी होने लगी और संचित बल-वीर्य विद्रोहके स्वाभाविक मार्गके अभावमें अवरुद्ध होकर उन्हें कुपथकी ओर ले चला। मा-लेंग-यी नामक एक भिक्षु जिसे अ-त्सत नामसे भी पुकारा जाता था, बदचलनीके जुर्ममें मठसे निकाल दिया गया तो उसे सीधा उपाय यही सूझा कि राजाके दरबारमें जाकर

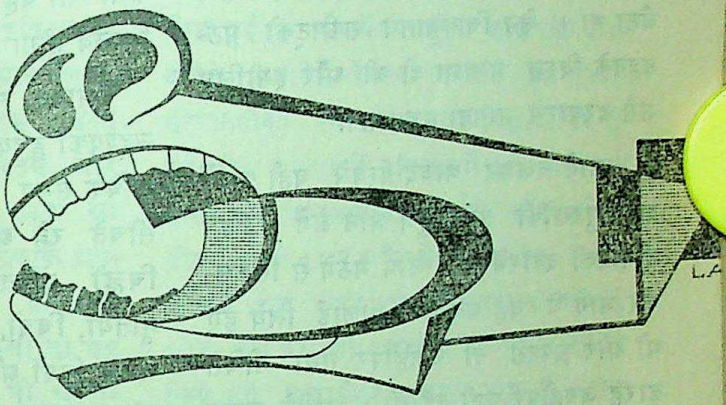

दुहाई दे और भिक्षुओंकी बढ़ती हुई गुप्त शक्तिका भण्डाफोड़ करके अपने अपमानका बदला निकाले। सम्राट्को जब उसकी ज़बानी सारी बातें मालूम हुईं और सिउ चिंग वांगने जब सब बातोंकी ताईद की तो सम्राट् आपेसे बाहर हो गया और उसने रातों-रात शाओ-लिन मठको मिट्टीमें मिलाने-की ठान ली।

सभी भिक्षु दिन-भर अखाड़ा खेलकर, थककर बेख़बर मीठी नींदके ख़र्राटे ले रहे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थे कि सम्राट् मंचूके मुलाज़िमोंने मठपर घेरा डालकर उसे [illegible] दिखा दी। धू-धू करके इमारत जल गयी और उसके साथ ही अधिकतर मठनिवासी वहीं राखकी ढेरी बनकर रह गये। मठकी वृत्ताकार दीवारमें एक जगह दरार थी, उसमें होकर कुछ एक भिक्खु अपनी जान लेकर भाग निकले। इनमें-से पाँच भिक्खुओंने हु-क्वांगमें युन सिआयो-कुके पाओ-चू मठमें जाकर शरण ली। वहाँ मंचू दरबारसे निष्कासित एक राज्य सचिव चेन चिन-नान पहले ही छिपा बैठा था। चेन चिन-नानने सम्राट्को मठ-दहनके विरुद्ध मन्त्रणा दी थी और इसीलिए उसे दरबारसे भागना पड़ा था।

आगे चलकर त्रायद पन्थमें यही पाँचों शख्स पुरखोंकी तरह पूजे जाने लगे। जिस दीवारकी दरारमें-से ये लोग मठमें-से निकल-कर भागे थे वह शक्लमें गोलाई लिये हुए थी और ऊपरसे नौ जगहोंपर तथा नीचेसे बारह जगहोंपर फटी हुई थी। तभीसे त्रायद सम्प्रदायकी नैवेद्य वेदीके निकट लगी ध्वजा-पताकाओंपर ऊपर और नीचे यही नौ और बारह चिह्न रहते हैं जो शाओ-लिन मठकी घटनाकी याद दिलाते रहते हैं।

रक्त पुष्प पण्डालमें निष्कासित मंचू दरबारी चेन और पाँचों भिक्खुओंने अपनी अंगुलियोंमें सुईसे छेद करके खून निकाला, उसे मदिराके प्यालोंमें टपकाकर एकजान किया और शपथ लेकर पी गये। यहींसे इस खूनी बिरादरीका सूत्रपात्र हुआ। तारीख थी १६७४ में ७वें माहकी २५वीं। क़सम थी—फान त्सिंग, फुह मिंग! अर्थात् त्सिंग याने मंचूका नाश हो, मिंगका राज हो।

मंचू साम्राज्यका तख्ता उलट देनेके लिए विप्लवकी तारीख नियत करनेके लिए चेनकी नामजदगी भी हो गयी। तारीख चुन ली गयी। विद्रोह हुआ, लेकिन हथियार ओछे पड़े। विद्रोहियोंकी करारी हार हुई। पराभवसे मायूस त्रायद पन्थी चीन महादेश-में जिधर भी सींग समाये, चले गये कि चलो कभी तो वह दिन आयेगा ही जब सफल विप्लव होगा।

त्रायद संघके सदस्य अपने पन्थके उद्देश्यको हृदयमें छिपाये, लगभग एक सदीसे अधिक समय तक पौधेको अन्दर-ही-अन्दर सींचते रहे और अपने मतके गूढ़ तत्त्वोंके चिह्नों, इंगितों और उद्देश्योंको पोथी-पत्रों, मूर्तियों, चित्रों, मिट्टीके भाँडों, चायके प्यालों, चायदानियों और रक़ाबियोंपर अंकित करते रहे। कुछ नमूनोंकी तर्ज तो इतनी लोकप्रिय हुई कि उसकी खूब बिक्री हुई।

जिस पन्थके अनुयायी इतने कट्टर हों, उसका सुप्त ज्वालामुखी समय पाकर आग उगलता ही है। शाओ-लिन मठकी दहन घटनाका बदला लेनेके लिए त्रायदों-द्वारा भड़कायी गयी जनताने अनेक बार विद्रोह किया। पहला बड़ा ग़दर १७८७ में फार-मोसामें हुआ। एक अरसा बीते १८६० में फिर जो खूनी मार काट हुई उसका संचालन भी त्रायद दल ही कर रहा था। इस ग़दर-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को चार्ल्स जार्ज गोर्डनने बुरी तरह कुचल डाला। यही गोर्डन 'चीनी' गोर्डनके नामसे मशहूर हैं। सारे चीन महादेशमें जब-तब और जहाँ-तहाँ अशान्ति मचती रहती थी। इनमें अन्तिम है बाक्सर-विद्रोह। इसके बाद तो १९११ की क्रान्ति हो गयी। जिसका संचालन सन यात सेन कर रहे थे और जिसने उसमें चीनी प्रजातन्त्रकी स्थापना की।

अब अगर हांग-कांगमें कोई ऐसा खूनी और नृशंस दल अपने संगठनको कोई नवीन नाम देकर अपने सदियों पुरातन इतिहासको तोड़ा करता है तो अमेरिका, आस्ट्रेलिया, भारत या इंग्लैण्ड-जैसे दूर-दराज़ देशको उसकी सरगर्मियोंसे सतर्कता बरतने और उससे होशियार रहनेकी क्या अटक आ पड़ी। इस सम्बन्धमें सबको अमेरिकाके अनुभवसे शिक्षा लेना होगा, जहाँ दो बातें प्रमुखतया देखनेमें आयी हैं। पहली तो यह कि जहाँ कहीं भी छोटीसे छोटी भी चीनी-बस्ती विद्यमान है, त्रायदके गण भी ज़रूर मौजूद हैं। दूसरे इन गणोंकी गुणगरिमाके अनेकशः बखानोंमें खास तारीफ़ जो इनकी आती है वह यह है कि ये आजकल मुख्यतः अफ़ीमके तस्कर व्यापार और चौरानयनमें क्रियाशील रहते हैं। कन्यूनिस्ट चीनकी अफ़ीमकी निकासी १९५२ में २.००० टन थी जो अब इस मात्राकी चौगुनी अर्थात् ८,००० टन हो गयी है और त्रायद संघ इस पूरे व्यापारका संचालन करता है, माफिया-जैसे अन्य जरायमपेशा दलोंसे साठ-गाँठ साधता है, चीन महादेशके अन्य देशोंसे जो सांस्कृतिक सम्बन्ध हैं उन्हें ताकपर रखकर, हर वक़्त मुनाफ़ा कमानेके मौक़ेकी ताकमें लगा रहता है, और अफ़ीम तथा इससे बननेवाली मादक वस्तुओंको चोरी-छिपे ग्राहकोंके हाथोंतक पहुँचाता रहता है।

त्रायदका बीज इतना ज़ोरदार निकला कि कालान्तरमें उसके विषवृक्षने बड़े गुल खिलाये। उसकी जो शाखाएँ निकलीं वे अपने असली तनेसे भी कहीं ज़्यादा बाँकी सिद्ध हुईं। चीनमें राष्ट्रीय शासनके दौर-दौरेके ज़मानेमें कैण्टन नगरमें एक १४-के सोसायटीकी स्थापना त्रायद-सिद्धान्तोंपर ही हुई और १८९७ में हांगकांगमें डॉ० सन् यात सेनके एक अनुयायीने चुंग-वो सोसायटीकी नींव डाली। १४-के में अधिकांश सदस्य फ़ौजमें काम किये हुए रिटायरशुदा लोग हैं और चुंग-वो तो लड़ाईके लिए ही तैयार किये गये अखाड़ेका दूसरा नाम है। इन दोनों दलोंकी कुल जमा कोई बीसेक शाखाएं सारे चीन देशमें फैली हुई हैं और सदस्य-संख्या है प्रायः एक लाख—एक शक्ति-दल, जिसकी भुजा लूट-खसोट और धनापहरण करनेवाले सदस्योंकी रक्षामें सदा सन्नद्ध रहती है। एक दूसरा दल है तान यी त्रायद दल जो अफ़ीम-चौरानयन, वेश्यालयों, नृत्य-शालाओं, विट-कुटनियों और जेबकतरोंकी तरफ़दारीमें लगा रहता है। एक शाखा उन बन्दरगाहोंपर तैनात रहती है जिनपर जहाज़ोंसे माल उतरता है। ये पर्यटकोंका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पथप्रदर्शन करके उनके हाथोंमें अपना माल पहुँचाती और उनसे रुपया वसूल करती रहती है। अन्यान्य शाखाएँ-प्रशाखाएँ हैं जो दवाफ़रोशोंपर, बड़ी-बड़ी कम्पनियोंपर और फिर खुर्दाफ़रोशोंपर निगाह रखती हैं और फेरीवालोंसे तालमेल क़ायम करती हैं। याने यह जाल अनन्त रूप धारण करके फैलता ही चला जाता है और समाजके हर छोटे-बड़े तबक़ेको अपनी जकड़में फँसाये रखता है।

हांगकांगमें एक ओर तो भारी मृत्यु-गणना और उससे भी बढ़े हुए जन्मके आँकड़ोंके कारण तथा निरन्तर आते रहने-वाले शरणार्थियोंके कारण दिन-दूनी बढ़ती जाती जनसंख्या त्रायद सोसायटीके लिए वरदान सिद्ध हुई है। इस वर्धमान जनसंख्यामें जो भी लोग नकारा पड़ जाते हैं, वे झट इस जरायमपेशा दलमें शरीक हो जाते हैं। उनका क्या बिगड़ता है। तमाम न्यायप्रिय चीनी जनता, सम्भ्रान्त व्यापारी और दूकान-दार इनसे और इनकी छुरी-चाक़ूसे बराबर भयभीत रहते हैं। धनापहरण या धमकीकी कोई वारदात हो जानेपर भी पुलिसकी शरण लेते लोग डरते हैं कि तब फिर त्रायद उन्हें नेस्तनाबूद करके ही दम लेंगे। १९४९ तक तो चीनमें इनपर क़ाबू पानेमें कालेपानीकी सज़ा किसी हद तक कारगर रहती थी, लेकिन जबसे यह सज़ा बन्द हुई है, हालत यह आ लगी है कि पुलिसने किसी त्रायद लफंगेको गिरफ़्तार कर रखा है और पुलिसको कोई गवाह उसकी शनाख्तके लिए, या शिकायत दर्ज करवानेको ही नहीं मिल पाता।

त्रायदोंकी सरगर्मियाँ, दुनिया-भरमें जहाँ भी चीनी हैं, वहाँतक न फैलकर हाँग-काँग और कावलून तक ही सीमित रहती तब भी खैर था, लेकिन इनका लाल पंजा तो दूर-दूर तक छापा मारने लगा है जिससे जहाँ भी ये जा पहुँचते हैं त्राहि-त्राहि होने लगती है। १९५६ का साल इनकी हलचलोंका नामांकित साल रहेगा। छप्पनमें ही दो त्रायद-सदस्य, छुरोंसे लैस, सिंगापुरके चीफ़ मिनिस्टरके निवास-स्थानके बाहर पकड़े गये। इनका इरादा मुख्य मन्त्री सिन यु हाककी जान लेनेका था। सिंगापुरकी पुलिसके कान इस उपद्रवसे खड़े हो गये और इन्हें नेस्तनाबूद करनेका उसने बीड़ा उठा लिया। पुलिस-अभियान जो एक बार शुरू हुआ तो उसने इनकी जड़ें खोद डालीं। ये भी टिड्डी-दलकी तरह भरे पड़े थे। ९६ दल, १२८ दल, २४ दल, छोटे बहादुरों, टुकड़ी, और दरियापार रहनेवालोंका आदि नामोंके अन्तर्गत कई छोटे-बड़े गिरोह क्रियाशील पाये गये और जब धर-पकड़ शुरू हुई तो दंगा फिर फट पड़ा और कर्फ़्यू लगाना पड़ा, तब कहीं स्थिति क़ाबूमें आयी। इन्हीं दिनों पैनांग और बोर्नियोंमें भी त्रायदोंके नेतृत्वमें कई दंगे हुए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर तरफ़ युद्धकी छाया

क० ला० मिश्र प्रभाकर

■

इस सहचिन्तनके कुछ शीर्षक : एक सादा निष्कर्ष। एक धूमिल प्रश्न। एक आचार्य साधककी वाणी। और ये गाँधीवादी? सबसे बड़ा काम।

■

जबसे हमें आज़ादी मिली है, तबसे राष्ट्रभाषाके बारेमें हमारी नीति अधकचरी रही है और आज भी अधिकारियोंकी नीति ऐसी ही है। किसी भी सरकारके लिए १५ सालका अरसा काफ़ी माना जायेगा। इस अरसेमें सरकार हिन्दी सिखाने और ग़ैर-हिन्दी इलाक़ोंमें धीरे-धीरे हिन्दी लागू करनेका काम कर सकती थी। १९५० में दस सालका बालक अगर हिन्दी सीखना शुरू करता, तो आज २५ सालकी उम्रमें वह ज़रूर अच्छी तरह हिन्दी सीख जाता और कोई भी माता-पिता अपने बालकके भविष्यकी दृष्टिसे उसे मना न करते, लेकिन यह काम ढंगसे नहीं किया गया, जिससे कोई प्रगति न हो सकी। नतीजा यह कि एकाएक हिन्दीके प्रति लोगोंका विरोध हिंसात्मक रूपमें सामने आया।"

प्रश्न यह है कि राष्ट्रभाषाकी, यानी राष्ट्रीय एकताके सूत्रकी यह उपेक्षा क्यों हुई? श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डितने लखनऊके कार्यकर्ता-सम्मेलनमें एक वाक्य कहा है, जो

तमिलभाषी प्रदेशमें हिन्दी-राष्ट्रभाषा बनानेके नाम-पर जो दंगे-उपद्रव हुए, उनपर कई विश्लेषण और निष्कर्ष प्रकाशित हुए हैं। विश्लेषण करनेवाले आम तौरपर विद्वान् और विशेषज्ञ हैं और शायद विद्वत्ता और विशेषज्ञताका अर्थ ही उलझन है, इसलिए इन विश्लेषणों और निष्कर्षोंसे मामला उलझा ही है, कुछ सुलझा नहीं।

उलझनोंके इस अम्बारमें श्रीमती नयनतारा सहगलका निष्कर्ष सादा है और परिस्थितियोंको खोलकर हमारे सामने रखता है—"जहाँतक सरकारका सवाल है, वह समस्या सुलझानेमें असमर्थ रही और जहाँतक जनताका सवाल है उसने समस्याका हल ढूँढ़नेमें असभ्यताका परिचय दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized By Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रश्नपर ही नहीं, इस तरहके सब प्रश्नों-पर एक साथ रोशनी डालता है—"मकान तो बन गया है, लेकिन उसकी नींव ग़ायब है। आज अगर हम भविष्यकी नींव नहीं डालते, तो भविष्य भी हमारा नहीं होगा।"

अनुभवी राजनीतिज्ञकी सूक्ष्म दृष्टिका उपहार है यह। हम राष्ट्रका प्रजातन्त्री मकान बनानेमें जुटे रहे, पर हमारा ध्यान गहराइयों-में नहीं ऊँचाइयोंमें गया, क्योंकि गहराइयाँ दीखती नहीं हैं और ऊँचाइयाँ दूरसे दीखती हैं। हमने लोकतन्त्र खड़ा किया लोककी उपेक्षा कर, प्रजातन्त्र फैलाया प्रजाको भूलकर। परिणाम यह हुआ कि न लोक रहा, न प्रजा, बस तन्त्र रह गया। राष्ट्रोंका निर्माण ईंट-चूनेसे नहीं होता, मानवोंकी भावनासे होता है, पर जो तत्त्व मानवकी भावनाको जगाते हैं, उभारते हैं, एकत्र करते हैं, उन सबकी हमने उपेक्षा की। क्यों? क्योंकि गान्धीके बादका नेतृत्व इस दृष्टिसे अपूर्ण था कि उसके पास राष्ट्रकी देहका नक्शा था, राष्ट्रकी आत्माका—समग्र राष्ट्रका—कोई स्पष्ट चित्र न था।

● राष्ट्रीय चित्रकी अस्पष्टतामें एक और प्रश्न भी उलझा रह गया। वह यह कि जनतामें अशोककी भावना भरी जाये या विक्रमादित्यकी? भारतने युद्धविहीन संसार-की कल्पना संसारके सामने रखी और उसमें हम इतने डूब गये कि जनता ही नहीं हमारी सेना भी संसारमें शान्ति-स्थापना करनेके काममें जुट गयी। चीनके आक्रमणने इस भावनापर चोट की, हम तिलमिलाये नागरिक रक्षाकी बात चली, समितियाँ बनीं शिविर खुले, पर आक्रमणके रुकते ही सब रुक गया। एक वाक्य उन दिनों गूँजा—"हम अपनी शान्तिप्रिय जनताको चीनकी तरह युद्ध-मनोवृत्तिकी ज्वालामें नहीं झोंक सकते।"

स्वतन्त्रताके १७ वर्षोंमें राष्ट्रका चिन्तन वृक्ष सूखता गया है। इसलिए जनतामें किस वृत्तिका जागरण उचित है, किसका नहीं—यह प्रश्न धूमिल ही रह गया। सीमापर पाकिस्तानके टैंकोंका आगमन हुआ और हमारा चिन्तन चौंका और फिर कुछ सक्रिय चली। इस चर्चामें भारतके भूतपूर्व सेनाध्यक्ष श्रीकरियप्पाका पटना-भाषण मार्गदर्शक है। उसमें उन्होंने कहा—"बीस वर्षसे तीस वर्ष तकके युवकोंको अनिवार्य रूपसे फ़ौजी शिक्षा दी जानी चाहिए। भारतको जिन चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, उनको देखते हुए हममें युद्धवृत्ति नहीं, सैनिकवृत्ति होनी चाहिए।"

भारतका यह प्रयत्न कि युद्धविहीन संसारकी रचना हो, उचित है और इस दिशामें हमारे प्रयत्न जारी रहने चाहिए, पर इन प्रयत्नोंके पीछे शक्तिशाली भारतकी आवाज काम करेगी, कमजोर भारतकी नहीं। एक बात साफ़ है कि चीन, पाकिस्तान, इन्दोनेशिया, वियतनाममें जो उफान आ रहे हैं और पुराने लीग आफ नेशंसकी तरह नये राष्ट्रसंघमें जो दरारें पड़ रही हैं, उनसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...तीसरे युद्धका वातावरण बन रहा है। ...से बचनेका प्रयत्न शुभ है, पर उसके ...तैयार रहनेका काम तो हमें करना ही ...चाहिए।

• श्रीसम्पूर्णानन्दजी भारतीय संस्कृतिके ...आचार्य साधक हैं—साधक होकर भी ...आचार्य और आचार्य होकर भी साधक। ...चिन्तनकी यह विशेषता है कि वे भारतीय ...जीवन-दर्शनके भक्त हैं, पर पश्चिमके जीवन-...की उपेक्षा नहीं करते। इसी कारण ...की दृष्टि सदा संकीर्णतासे बची रही है। ...उन्होंने कहा है—'मैं मानता हूँ कि बाँध, ...कारखाने, मकान, सड़कें, अस्पताल, स्कूल ये ...सभी आवश्यक हैं, किन्तु हमारे वर्तमान और ...भावी नागरिक कैसे हैं इस मूल प्रश्नपर ...किसी अधिकारीने विचार नहीं किया। ...हम गान्धीजीके बिम्बको धुँधला करनेके ...लिए हर सम्भव प्रयत्न कर रहे हैं, किन्तु ...फिर भी योजनाओंके अनुभवोंसे महात्माजी-...द्वारा दृढ़ रूपसे प्रतिपादित एक सिद्धान्तकी ...महत्ता हमारी समझमें आ ही गयी होगी। ...वह सिद्धान्त है कि मनुष्य केवल रोटीपर ...ही जीवित नहीं रह सकता।''

अँगरेज़ोंने भारतके नागरिकमें प्रयत्न-पूर्वक पराजयवादी भावना उत्पन्न की थी। स्वतन्त्र भारतमें स्वस्थ भावनाकी स्थापनामें हम असफल रहे। फल यह हुआ कि "एक नये प्रकारके नागरिकका उद्भव हो रहा है, जो अत्यन्त अप्रिय ढंगका है। जिसके पास न अपने लिए कोई सन्देश है और न मानवताके लिए। उसका संसार खोखला है, जिसमें केवल भौतिक महत्त्वाकांक्षाएँ ही भरी हैं। वह वर्तमानके लिए ही जीता है। किसी भी वस्तुके लिए उसमें श्रद्धा नहीं है और किसी भी वस्तुमें उसका विश्वास नहीं है।...मुझे ज्ञात नहीं है कि इस अभिनव व्यक्तिसे हमारे योजना-निर्माता परिचित हैं अथवा नहीं। मुझे तो भय है कि वे उसके अस्तित्व तकसे अपरिचित हैं।''

भौतिक उन्नतिके साथ भावनाकी समृद्धि आवश्यक है। शुद्ध भौतिकतावादी रूसने अपनी योजनाओंके साथ नागरिकको भावना सिक्त करनेके लिए अपना पूरा प्रचार-तन्त्र लगा दिया था, पर—"एक समय था जब दर्शनके प्रति भारतका आग्रह माना जाता था। मानो अपने इस जन्मपापके पश्चात्ताप-के लिए हमने अपनी पीठ पूर्ण रूपसे दर्शनसे मोड़ ली है। हम अपनी योजनाको दर्शनका आधार नहीं देना चाहते और आदर्शवादिता-से इस तरह पलायन कर रहे हैं, मानो वह जलता अंगारा हो।...हमने अपने युवा समाजको अतीतसे पृथक् कर दिया है और भविष्यके सम्बन्धमें कोई दृष्टि प्रदान नहीं की। हमने उसका ध्यान जन्मसे लेकर मृत्यु तकके छोटे कालपर केन्द्रित कर दिया है। उसके समक्ष नव-संसारका कोई स्वप्न नहीं सँजोया, जिसके निर्माणमें वह हाथ बटा सके। ऐसे व्यक्तिके लिए भारतके पास कोई सन्देश नहीं है और उसकी दृष्टिमें सम्भवतः गान्धी भी जन्मा नहीं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized By Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● सरकारी क्षेत्रमें ही गान्धीजीके पूर्ण जीवदर्शनकी उपेक्षा नहीं हुई, सर्वोदयी कार्यकर्त्ताओंका मण्डल भी इधर प्रभावहीन होता जा रहा है। श्री सुरेशराम भाईने बड़े ही मार्मिक ढंगसे इस प्रश्नको उठाया है—"सर्वोदय या रचनात्मक काम करनेवाले गान्धी-परिवारके सदस्य हम सब बड़े भाग्यवान् हैं। हमारे पास गान्धीका विचार है, जिसकी महत्ता, आवश्यकता और उपयोगिताको राजनीतिज्ञ और वैज्ञानिक स्वीकार करते हैं। बापूकी आजीवन साधना और बलिदानकी पुण्यामी हमें मिली है। फिर उसमें विनोबाकी भी तपस्या जुड़ गयी और हम हर तरहसे मालामाल हो गये, लेकिन इतना होते भी आज हम अटक रहे हैं, हमारा काम नहीं बढ़ रहा है और हमसे जो उम्मीदें समाजको थीं, वे हम पूरी नहीं कर पा रहे हैं।...आखिर ऐसा क्यों हो रहा है? बाजी हमारे हाथसे क्यों निकली जा रही है?"

प्रश्न महत्त्वपूर्ण है और देशके विचारकोंको निमन्त्रण देता है। मेरी निजी धारणा यह रही है कि गान्धीजीके बाद गान्धीजीकी विचारधाराको नेतृत्व नहीं मिला। युगसन्त विनोबा और जयप्रकाश बाबूने अपना कर्तव्य नहीं निभाया। वे विचारोंको बखेरते जरूर रहे, पर उन्होंने योजनापूर्वक विचारोंको बोया नहीं। समय खो दिया गया है, पर अब भी वे एकाग्र हो सकें, तो काफ़ी काम हो सकता है। देश ग़लत रास्तोंपर बढ़कर भटक गया है और वर्तमान नेतृत्व इतना शक्तीन है कि प्रभावित किया जा सकता है और विचारों बात बहुत कुछ बन सकती है। यदि सर्वोदय नेतृत्व कारखानोंके और सेनाओंके प्रभाव भूलकर शिक्षा और पंचायतको केन्द्रित कर आगे बढ़े तो क्रान्तिकारी काम हो सकता है।

● इस समयका सबसे बड़ा काम जन-जागरणका है। जनता जिस मानसिक जड़ता में जी रही है, उसका अपने युगसे कोई मेल नहीं बैठ रहा है। स्थिति इतनी उपहासास्पद है कि जैसे कोई गरमीके मौसम भी सर्दीके ही वस्त्र पहने-ओढ़े और इसे स्वाभाविक माने।

गान्धीवादके कलाकार काका कालेलकरने इस प्रश्नको बहुत मार्मिक ढंगसे पेश किया है—"हम देखते हैं, स्वराज्यके सौ बरसके आन्दोलनके बाद भी हम लोग अपने जमानेके लिए तैयार नहीं हैं। जमानेके लिए जरूरी जानकारी अधिकांश लोगोंके पास नहीं है। यह दुःख तो है ही; राष्ट्रके राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक नेताओं में-से अधिकांश लोग इस दिशामें पिछड़े हुए हैं, यह दुःख भी कम नहीं है, लेकिन सबसे बड़ा दुःख तो इससे भी गहरा है। जमानेको पहचाननेके लिए और जानकारी इकट्ठी करने के लिए जो मेहनत जरूरी है और जो मानसिक तैयारी आवश्यक है, उसीका आज सार्वत्रिक अभाव दीख पड़ता है।"

नेताओंका और ऊँचे लोगोंका यह हाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, तो जनसाधारणका क्या होगा ? काकाजी-के शब्द हैं—"जब राज लोकतन्त्रात्मक होता है, तब मतदाताओंको सुशिक्षित करनेकी जिम्मेदारी सरकारकी होती है, लेकिन हमारे यहाँ यह काम अभीतक शुरू ही नहीं हुआ। हमारे लोगोंके पास अपनी दुनिया और अपना जमाना समझनेके साधन बहुत कम हैं। लोगोंकी जानकारी उससे भी कम है। जानकारी बढ़ानेकी इच्छा भी नहीं है। हम अभी-तक अपने ज़मानेके योग्य नहीं हुए हैं; ज़मानेका नेतृत्व करनेकी क्षमता कमानेकी योग्यता तो दूर रही।"

क्या यह स्थिति राष्ट्रीय दृष्टिसे उतनी ही खतरनाक नहीं है कि किसी देशपर आक्रमण हो, उसकी सेना मोर्चेपर जा डटे, पर वह उस मोर्चेके बारेमें कुछ भी न जानती हो ?

■ ■

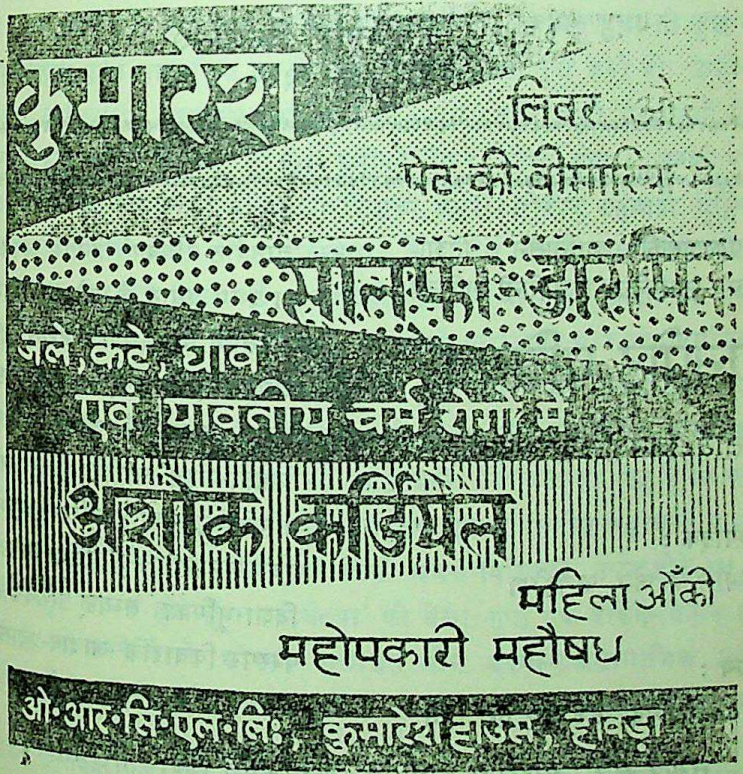

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महिलोपयोगी एकमात्र उत्कृष्ट मासिक

'शृङ्गार'

प्रबन्ध सम्पादक : देवेन्द्र अग्रवाल ● सम्पादिका : लावण्यप्रभा

- विचारपूर्ण व उपयोगी लेख
- स्त्रियोपयोगी रुचिकर सामग्री
- रोचक मनोवैज्ञानिक कहानियाँ
- कविताएँ तथा सुन्दर गीत
- महिलाओंके इण्टरव्यू
- गृह-सज्जा, प्रसाधन समस्याएं, विचार-मंच आदि अनेक रोचक स्थायी स्तम्भ।

मूल्य : वार्षिक : ५ रुपये, मासिक : ५० पैसे

१३।३७, शक्तिनगर, दिल्ली–७

फ़ोन नं० : २२७३००

लेखन-प्रकाशनकी अधुनातन दिशा-प्रवृत्ति और उपलब्धि-परिचायिनी मासिकी

ज्ञानपीठ पत्रिका

भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रवर्तित

● सम्पादक :
लक्ष्मीचन्द्र जैन, जगदीश

● मूल्य :
६.०० वार्षिक, ००.५५ पैसे प्रति

'ज्ञानपीठ पत्रिका' हिन्दीमें अपने प्रकार का प्रथम प्रयास है, और कदाचित् अन्य भारतीय भाषाओंको देखते हुए भी, जिसका प्रयत्न एक ऐसा अध्ययन प्रस्तुत करना है 'जो लेखक-प्रकाशक-विक्रेता-पाठक चारोंके 'अक्षर-जगत्' की गतिविधि, नयी प्रवृत्तियों, समस्याओं एवं समाधान, और विकास-उन्नतिकी दिशा-भूमिका सम्यक् परिचय दे, तथा परस्पर विचारोंके आदान-प्रदानका पथ प्रशस्त कर सके।

सम्पर्क-सूत्र : भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीर्घतपा और २ शोध प्रबन्ध

• दीर्घतपा :

अपेक्षाकृत बहुत थोड़े अरसेमें ही फणीश्वरनाथ 'रेणु' ने हिन्दी कथा-साहित्यको असीमित महत्त्वका योगदान दिया है। इसलिए यह स्वाभाविक ही है कि उनकी किसी भी नवीन कृतिके प्रति उत्सुकता बनी रहे और उससे कुछ अपेक्षाएँ की जायें।

'मैला आँचल'के बाद जब परती : परिकथा' का प्रकाशन हुआ तो कुछ समीक्षकों-को जहाँ पहली कृति सामाजिक तत्त्वों और सन्दर्भोंसे भरी-पूरी लगी थी उन्हींको दूसरी कृति घोर व्यक्तिवादी, अनास्थापूर्ण और टी० एस० इलिअटकी परम्परामें लिखी गयी जान पड़ी और उनका विशेष आक्रोश इसीको लेकर व्यक्त हुआ। उनकी परेशानीका मूल कारण शायद जिन्तनका चरित्र था जिसका ऊपरी तौरपर अहंवादी दृष्टिकोण और सामन्तीय-संस्कार ही इसके लिए जिम्मेवार थे। वैसे किसी अंचलविशेषकी तसवीर होकर भी वह भारतके किसी भी भू-खण्डकी तसवीर थी—हो सकती थी—सामाजिक तत्त्वोंकी विरलता तो उसमें नहीं ही थी, समाजकी पुनर्रचना और नव-निर्माणका आग्रह भी उसमें था। 'दीर्घतपा'* रेणुकी पाँच तपः-पूत नारियोंको लेकर लिखी जानेवाली उपन्यास-मालाकी पहली कड़ी है। उपन्यासकी भाषा और मूल-चेतना आंचलिक रंगोंकी शोखी लिये हैं लेकिन रेणुके लेखनकी सबसे बड़ी विशेषता ही यह है कि वह खण्डसे सम्पूर्णका बोध देते हैं, उनके उपन्यासोंका परिवेष समस्त राष्ट्रीय महत्त्वकी समस्याओंको बाँधता चलता है, उनके दिये गये चित्र किसी अंचल-विशेषकी उपज होते हुए भी प्रायः ही उससे बहुत अधिक होते हैं। 'दीर्घतपा' की बेला गुप्त एक वर्किंग-विमेन्स होस्टेलकी सेक्रेटरी है जो अपने चारों ओरकी ग़लाज़त और अस्वस्थ-असामाजिक प्रवृत्तियोंको बहुत निकटसे देखती है और उसकी सांसारिक असफलताका सबसे बड़ा कारण ही यह

* लेखक : फणीश्वरनाथ 'रेणु'; प्रकाशक : बिहार ग्रन्थ कुटीर, पटना—४; पृष्ठ-संख्या : १६३; मूल्य : ४.००।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है कि वह अपनेको उस सबसे सम्बद्ध नहीं कर सकी। होस्टेलकी संचालिका स्वर्गता रमला मौसीके माध्यमसे उसने कुछ संस्कार पाये हैं और सिस्टर निवेदताकी मूर्तिने दुर्बलताके क्षणोंमें उसे रह-रहकर सहारा दिया है। उसकी बॉस श्रीमती आनन्द खूब खेली-खायी महिला हैं जो स्वयं अपनेमें और अपने सम्पर्कके व्यक्तियोंमें युगकी प्रतिनिधि तसवीर लिये चलती हैं। अंजू-मंजू नामकी दो लड़कियाँ, जिन्हें वह अपनी निकटकी सम्बन्धी बताती हैं, उनके रोजगारकी सबसे क़ीमती पूँजी हैं। उनके नृत्यों और लोक-गीतोंका सामूहिक प्रदर्शन बिहारके सांस्कृतिक क्षेत्रोंमें बहुधा ही चर्चाका विषय रहा है, यह बात अलग है कि मछुआरिनोंके नृत्यमें जब वे अपने अंगोंका प्रदर्शन करके पानी निकालनेका नाट्य करती हैं तो कोई पूछ बैठे कि कौन देशकी मछुआरिनें ऐसा करती हैं? मिस्टर आनन्दसे पूर्व वह कई शिकार कर चुकी हैं और अब अगला शिकार एक आदिवासी युवक वागे है—गोकि वह इस क़दर मूर्ख नहीं है। बेला गुप्तसे उनके संघर्षका कारण यह है कि वह जब-तब अंजू-मंजू या कुछ और लड़कियोंको होस्टेलसे बुलवाती रहती हैं और अपने दायित्वको समझकर बेला हमेशा ही वैसा कर सकनेमें असमर्थ है। कुन्ती देवी और उस-जैसी कुछ दूसरी स्त्रियोंको बरग़लाकर मिसेज़ आनन्द बेलाके विरोधमें कर लेती हैं। पिछड़े हुए क्षेत्रोंके विकासके लिए सरकारसे हज़ारों रुपयोंका अनुदान मिलता है। रोगियोंके लिए दवा और बच्चोंके लिए दूध आदि आते हैं लेकिन वह सब कुछ रजिस्टरमें चढ़ता तक नहीं है। और जब कोई अधिकारी निरीक्षणके लिए आता है तो श्रीमती आनन्द बागेकी रोगिणी बहुत दूर कहीं विहार कर रही होती हैं और चलते-चलते बेला गुप्तको समझा जाती हैं कि कह देना कि स्टाक-रजिस्टर आदि श्रीमती आनन्दके पास ही है और चाबियाँ भी उन्हींके पास हैं! सांस्कृतिक कार्यक्रमोंकी आड़ लेकर होस्टेलकी मासूम लड़कियोंपर अमानुषिक अत्याचार होते हैं। गौरा और विभावतीपर हुए ऐसे ही अत्याचारको देखकर बेला गुप्तके अतीतका परदा भी थोड़ा-सा हिलता है जब वह एक झूठे क्रान्तिकारीके बहकावेमें आकर अपना घर छोड़कर भागी थी और बादमें पेशावरके एक होटलमें से वह ज़िन्दा ही मर गयी थी—मार डाली गयी थी।

हमारे देशका यह तो दुर्भाग्य है ही कि विकास और निर्माणके नामपर यहाँ यह सब कुछ होता है, हो रहा है परन्तु उससे भी बड़ा दुर्भाग्य यह है कि करते हैं श्रीमती आनन्द-जैसे लोग और उसका परिणाम भोगती है बेला गुप्त।

उस सांस्कृतिक कार्यक्रमकी रात्रको लड़कियोंके साथ किये गये पाशविक व्यवहारके लिए बेला गुप्तको दोषी और उत्तरदायी ठहराया जाता है क्योंकि होस्टेलकी सेक्रेटरी होनेके नाते सारी जिम्मेवारी उसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की है। जो भी आरोप उसके विरोधमें लगाये जाते हैं, उन्हें वह चुपचाप स्वीकार कर लेती है क्योंकि अदालतमें खड़े होकर उन बेहूदा सवालोंके जवाब देनेकी ताक़त उसमें नहीं है जो ऐसे अवसरोंपर प्रायः ही पूछे जाते हैं और जिनसे किसी सत्यका उद्घाटन होनेकी अपेक्षा दूसरोंको कुत्सापूर्ण आनन्द मिलनेकी गुंजायश ही अधिक रहती है। लेकिन यहाँ-पर यह अवश्य पूछा जा सकता है कि अस्वस्थ और प्रतिक्रियावादी शक्तियोंके आगे इस तरह हथियार डाल देनेका क्या अर्थ होता है? वैसे, जैसा कि लेखककी स्वीकारोक्तिसे व्यक्त है, ऐसा करके वह अपने उपन्यासका बहुत-कुछ फिल्मी-सा, परम्परागत अन्त होनेसे बच सका है और शायद यह भी कि आज सामाजिक अनाचारके प्रति अपेक्षाकृत और भी तीखा आक्रोश पैदा कर सकनेमें सफल हो सका है।

फणीश्वरनाथ 'रेणु' के अन्य उपन्यासों-की भाँति दीर्घतपा' किसी अंचल-विशेषका उपन्यास नहीं है, उसके पात्र भी अधिकांशतः पिछले दोनों उपन्यासोंके पात्रोंसे भिन्न हैं। लेकिन चूंकि रेणुके लेखनका एक खास अन्दाज़ है; भाषा और बोलीके कुछ देशज प्रयोग और लोक-गीतोंकी प्रासंगिक चर्चा आदिसे उन्होंने उसे आंचलिक उपन्यासका ही रूप दिया है। कुल मिलाकर यह कृति रेणुके पिछले दोनों उपन्यासोंसे आगे नहीं जाती है परन्तु उनके लेखनका निजी रंग उसमें सर्वथा सुरक्षित है—इसे लेकर कोई दो राय नहीं हो सकती है।

—मधुरेश

• बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' : व्यक्ति और काव्य :

हिन्दीके ब्राउनिंग और 'जोश', फक्कड़, अक्खड़ और मस्तमौला प्रतिभाधर कवि स्व० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'के व्यक्तित्व और कृतित्व, उनकी भावयित्री और कार-यित्री प्रतिभाका विश्लेषणात्मक आकलन और समीचीन पुनर्मूल्यांकन 'बालकृष्ण शर्मा नवीन : व्यक्ति एवं काव्य'*के अनुसन्धायक डॉ० लक्ष्मीनारायण दुबेके एकनिष्ठ अध्य-वसाय और सांगोपांग—आनुषांगिक अनु-सन्धित्साका पुष्कल प्रमाण है। 'मितं च सारं च वचो हि वाग्मिता'के निकषपर भी यह शोध प्रबन्ध खरा उतरता है। कहीं भी फ़ालतू द्रविड़ प्राणायाम अथवा अरण्यरोदन नहीं हैं। 'रिसर्च' और तनक़ीद-

---

(सागर विश्वविद्यालय-द्वारा पी-एच० डी० के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध); लेखक : डॉ० लक्ष्मीनारायण दुबे; प्रकाशक : हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद; पृष्ठ-संख्या : ५०३; मूल्य : १५००, सजिल्द।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के नामपर मैदानमें नङ्गा नाच रहे हैं, उन्हें यह शोध-प्रबन्ध निकाल दिया है, वहीं इस कृतिको पढ़कर मैं आश्वस्त हूँ कि अवान्तरच्छेदक्षमाप्रतिभा-वाले व्यक्ति भी हिन्दीमें विद्यमान हैं।

मूलतः शोधप्रबन्धका आयाम 'प्रभा' तथा 'प्रताप'के कवि और नवीनका विशेष अध्ययन था किन्तु व्यापक परिवेशके कारण अनुसन्धित्सुने 'नवीन'जीके जीवन-दर्शन और प्रेरणाके मौलिक उद्गमोंका विवेचन भी किया है। एक धृष्ट पुनरावृत्ति और वाग्जा-लवितानाडम्बरसे यथासाध्य बचनेका प्रयास है प्रस्तुत शोध-कृतिमें, जो शोधका आन्त-रीण गुण है। सम्पूर्ण कृतिमें थोथे और 'कोऽन्योऽस्ति सदृशो मया'के अहम्भावास्फा-लनका निषेध है जो तन्दुरुस्त अक़्ल और स्वस्थ विद्वत्ताका लक्षण है।

समीक्षात्मक सामग्रीका जो वैज्ञानिक तथा वर्गीकृत विभाजन किया गया है, उसे देखकर डॉ० दुबे के विश्लेषण-पाटवकी छाप मन-मेधापर अंकित हो जाती है। संस्मरणों, भेंटों, श्रद्धांजलियों, सम्पादकीय टिप्पणियों, प्रकाशित लेखों और पत्राचारोंके द्वारा 'नवीन'जीके सर्वथा नवीन व्यक्तित्वको उरेहा गया है, इतना सुचिन्तित और सुनि-योजित कार्य हिन्दीमें किसी कविके प्रति (विशेषतः ऐसे अल्हड़ और यायावरीय वृत्तिवाले फक्कड़ अगड़धत्त व्यक्तित्वके जो प्रचार और प्रसारण-तन्त्रकी 'कैंड़ेबाजी'से तटस्थ रहते हों) आज तक नहीं किया गया है। अद्यावधि उन्नीस सौ पैंसठ पर्यन्त। ३१ पृष्ठोंकी भूमिकामें शोध-सूत्रोंका संकेत करते हुए लेखकने 'पूर्वज एवं समा-परम्परा' बड़ी मिहनतसे लिखा है। पृष्ठ ६० से ६६ तक जो सामग्री दी गयी है वह तो प्रायः दुष्प्राप्यवत् ही थी। इस शोध-ग्रन्थकी दूसरी विशेषता यह है कि प्रत्येक अध्यायान्ते निष्कर्ष भी दे दिया गया है।

'व्यक्तित्व और जीवनदर्शन' इस ग्रन्थका तीसरा अध्याय है: जो इस शोधग्रन्थका मेरुदण्ड है। जिस 'द्वन्द्वम्यमाना-दिग्-दिङ्-नादप्रेरणा, दुर्दान्ताक्रान्तक-जन्म-दन्तोत्तरङ्ग-संदेश-वहन-शीलता, यथातथ्य ग्राह' आदिका उल्लेख 'नवीन'जीकी भूमिकाओंसे किया गया है उनका ताल-मेल भट्ट तौत और अभिनवगुप्तपादाचार्यके शास्त्रीय सिद्धान्तोंसे न करके जीवन्त-दर्शन और 'नवीन'के अपने दृष्टिकोणसे ही करना श्रेयस्कर होता।

'राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्य' शीर्षक अध्याय अपने-आपमें बड़ा खोजपूर्ण और कसा हुआ है। यह अध्याय महत्त्वपूर्ण सन्दर्भ सूचिकाका काम करता है।

महाकाव्य 'उर्मिला' पर एक स्वतन्त्र अध्याय दिया है शोधकारने। व्याकरणगत और अर्थगत भ्रान्तियोंका निराकरण भी इस अध्यायमें अच्छा हुआ है। काव्यशिल्पपर भी स्वतन्त्र अध्याय समर्पित है। सन्दर्भग्रन्थके रूपमें इस पुस्तकका आदर होगा ही।

पूरा ग्रन्थ ही नयन-लेह्य है। पठनीय नहीं लेह्य। हिन्दुस्तानी एकेडेमी-जैसे स्वनाम-धन्य प्रतिष्ठानके हक़में प्रकाशन-त्रुटियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुरवगाहुद्धियाँ देखकर ज़रा कष्ट होता है।

प्रस्तुत शोध ग्रन्थमें—जैसा मुझे प्रतीत होता है कि भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रकाशित 'हम विषपायी जनम के' शीर्षक काव्य-संग्रहका उपयोग डॉ० दुबे नहीं कर पाये हैं—'हम विषपायी जनम के' संग्रहमें नवीनजीकी सर्वथा अप्रकाशित रचनाएँ भी संग्रहीत हैं। खास-तौरपर 'नवीन' दोहावली तो 'अवसि देखिए देखन जोगू' है।

—रंगनाथ 'राकेश'

आधुनिक हिन्दी काव्यमें रूप-विधाएँ :

श्री निर्मला जैनके छह वर्षोंके लक्ष्यी-भूत परिश्रमसे एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ 'आधुनिक हिन्दी-काव्यमें रूप विधाएँ'* प्रकाशित हुआ है। 'अर्थकरी च विद्या' तो व्यावहारिक कसौटी है न!

भारतेन्दुसे भारती तक काव्य-रूपोंका विभिन्न विषय और पद्धतिके अनुरूप परि-वर्तित होता रहा है। भूमिकामें विदुषी लेखिकाने 'रूप' और 'विधा' शब्दका यथा-साध्य स्पष्टीकरण किया है। विधाके अर्थमें 'रीति विशेष' अथवा 'पद्धति' को ग्रहण किया गया है जो काव्यके बाह्यरूपका कलेवर है। वैसे रूप-विधा शब्द अपनी सुविधा और सुविधाके अनुसार अनेकानेक परिभाषाओंमें बाँधा जाता रहा है, इसे एक साँचेमें फ़िट करना दुःसाध्य-सा है। हर्बर्ट रीडका उल्लेख इस प्रसंगमें कई स्थानोंपर है, और रीडका सुश्लिष्ट विवेचन अपने प्रतिपाद्यानुसार बखूबी किया गया है। रूप-विधा-भाषा और सृजन-प्रक्रियाके साथ प्रायः वस्तुवादी विश्लेषण सर्वत्र अवान्तरच्छेद प्रतिभाके संग उपस्थित है। 'काव्यालंकार'कार भामह, 'काव्यादर्श'कार दण्डचाचार्य, 'अलंकारसूत्र'कार वामन, 'ध्वन्यालोक'कार आनन्दवर्धनाचार्य, 'वक्रोक्तिजीवित'कार कुन्तक, 'काव्यमीमांसा'कार राजशेखर, 'काव्यप्रकाश'कार मम्मट भट्ट और 'साहित्यदर्पण'कार विश्वनाथ महापात्रके मतोंका ऐतिहासिक विवेचन और काव्यशास्त्रीय रूप-विधाओंका संचयन बड़ी तन्मयतासे किया गया है। राजानक रुय्यक और महिमभट्टका उल्लेख यदि इसी स्थान-पर होता तो प्रतिपादनमें प्रगाढ़ विशदता आ जाती। रसगंगाधर और कुवलयानन्द भी अपेक्षित थे। विस्तारभयेन ऐसा नहीं किया गया है (पृ० १६) यह उल्लेख क्या काफ़ी है? लघु प्रबन्ध काव्योंपर आधारित तीसरा अध्याय 'रामकी शक्तिपूजा' का काव्यात्मक आकलन देनेमें सक्षम है। (डॉ०

*लेखिका : डॉ० निर्मला जैन, हिन्दी अनुसन्धान परिषद्, दिल्ली विश्वविद्यालय; पृष्ठ-संख्या २१२ मूल्य : २५.००.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रमेश कुन्तल मेघकी मनोविज्ञानपरक धारणा भी पढ़ी थी !)

सुश्री निर्मला जैनने अपने निरूपणमें निबद्ध (प्रबन्ध) काव्योंके आन्तरीण और बहिरंग तत्त्वोंकी समीक्षा, अपनी सीमामें कुछ हद तक अधिकारके साथकी है।

यह शोध ग्रन्थ धारमें धँस कर नहीं लिखा गया है, पूर्ववर्ती शोध ग्रन्थोंके उद्धरणों-का आश्रय इसकी ओर संकेत देता है। और जरा गहरा पैठना चाहिए था। खण्डकाव्य-वाले दूसरे अध्यायमें जहाँ विश्वनाथ मिश्र और गुलाब रायकी आलोचना की गयी है वहीं विदुषी लेखिका अपने वैदुष्यका प्रमाण न देकर 'खण्ड' का अर्थ खण्ड प्रभावके रूपमें स्वीकारते हुए बढ़ गयी हैं, (डॉ० शकुन्तला दुबेका उद्धरण देकर पृ० २०५)। शायद यह बहुत बड़ी उपलब्धि तो नहीं है !

पाँचवा अध्याय बहुत सुनियोजित, सुसम्पादित और कसा हुआ है। 'बावरा अहेरी', 'नावके पाँव', 'ओ अप्रस्तुत मन', 'ठण्डा लोहा', 'तार सप्तक' आदिके अलंकार्य-का भी सूक्ष्मतर विश्लेषण इस अध्यायमें है। संयुक्त मुक्तकोंका सांगोपांग विवेचन भी उत्कृष्ट है। पैंट्रार्क स्पेन्सर, शेक्सपीयरके सॉनेटोंके ढर्रेपर हिन्दीकी चतुर्दशपदियोंको समीक्षाका क़ायल हूँ। यह अंश अधुनातन प्रतिपादन है। काश और भी अध्याय ऐसे संगुंफित होते ! ग्रन्थका मूल्य बहुत अधिक है।

—रंगनाथ राकेश

हिन्दी के लोकप्रिय कवि बच्चन की रचनाएं

त्रिभंगिमा	(कविता-संग्रह)	४.००
चार ख़मे चौसठ खूँटे	"	४.००
आरती और अंगारे	"	४.००
धार के इधर-उधर	"	२.२५
सूत की माला	"	३.००
खादी के फूल	"	३.००
आकुल अन्तर	"	२.५०
प्रणय-पत्रिका	"	२.५०
मिलन-यामिनी	"	३.००
एकान्त-संगीत	"	२.५०
हलाहल	"	२.५०
बुद्ध और नाचघर	"	३.००
निशा-निमन्त्रण	"	२.५०
मधुबाला	"	२.००
मधुशाला	"	२.००
मधुकलश	"	२.५०
बंगाल का काल	"	३.००
मैकबेथ	[पद्यात्मक अनुवाद]	३.००
ऑथेलो	"	३.००
६४ रूसी कविताएँ	"	३.००
जन गीता	[तुलसी रामायण की शैलीमें गीताका अनुवाद]	२.००
ख़ैयाम की मधुशाला	[काव्यानुवाद]	२.५०

अभिनव सोपान

'मधुशाला' से लेकर कवि बच्चन के अब तक रचित समस्त काव्य का चयन— स्वयं 'बच्चन' द्वारा

राजपाल एण्ड सन्ज़-दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदय ■ जुलाई '६९ ■ वर्ष १७ :: अंक : १ ■ एक रुपया

हमारा अगला चरण :

१७ वें वर्ष का पहला अंक

- प्रतिमासके साधारण अंकोंसे भिन्न और विशेषांकोंसे अलग।
- नये-नये और नयेसे नये हस्ताक्षर सम्भावनाओं वाले।
- ताजी और नयी रचनाएँ: कहानियाँ, कविताएँ, विशेष विधाएँ।
- समीक्षात्मक दिशासहित नयी पीढ़ी का प्रतिनिधि अंक।

यह अंक : १.००, वार्षिक : १०.००, द्वैवार्षिक : २५.००,
सतवार्षिक : ५०.००, पन्द्रह वर्षीय : १००.००, आजीवन : १५१.००

ज्ञानोदय

९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता–२७
भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी–५
३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली–६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदयकी ओरसे
आपके लिए निःशुल्क उपहार :

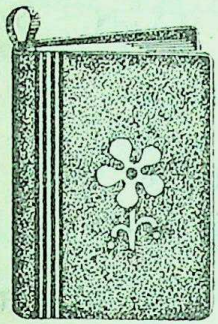

● नये वर्षकी एक ख़ूबसूरत डायरी–

अतिरिक्त मूल्य दिये बिना आप यह डायरी प्राप्त कर सकते हैं,

–यदि वर्ष-भरके लिए ज्ञानोदय किसीको उपहारमें दें।
–यदि विशेषांकमें प्रकाशित प्रश्नावलीका उत्तर भेजें।

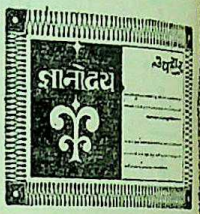

–आपकी ओरसे यह उपहार कार्ड ●

आपके मित्र-परिचितको, जिसे आप वर्ष-भरके लिए ज्ञानोदय उपहारमें देना चाहें।

– ज्ञानोदयके संग्रहणीय विशेषांक –

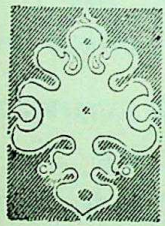

ग्राहक बनते ही कोई एक उपलब्ध विशेषांक आपके हाथों होगा :

★ समकालीन भारतीय कहानी विशेषांक : १९६४ ★ पत्र-विशेषांक : १९६३ ★ हास्य-व्यंग्य विशेषांक : १९६२ ★ नवोदित लेखिका विशेषांक १९६२ ★ भारतीय परिवार विशेषांक : १९६१ ★ भारतीय इतिहास कथा विशेषांक : १९६० ★ विज्ञान विशेषांक : १९५९ ★ प्रणय विशेषांक : १९५८ ★ संस्मरण विशेषांक : १९५७ ★ नैतिकता विशेषांक : १९५७ ★ आधुनिकता विशेषांक १९५६ ★ एशिया विशेषांक : १९५५

● ज्ञानपीठ पत्रिका

लेखन-प्रकाशनकी अधुनातन दिशा-प्रवृत्ति और उपलब्धि परिचायिनी मासिकी, वर्ष-भर आपको मिलेगी, यदि ज्ञानोदयके आप दो ग्राहक बना दें।

● भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

यदि आप तीन ग्राहक बना दें तो ५ रु० मूल्यकी और पाँच ग्राहक बना दें तो १० रु० मूल्यकी मनपसन्द पुस्तकें उपहारमें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांस्कृतिक जागरण, साहित्यिक विकास-उन्नयन और
राष्ट्रीय ऐक्य एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी साधिका

तथा

भारतीय भाषाओंकी सर्वोत्कृष्ट
सर्जनात्मक साहित्यिक कृतिपर
प्रतिवर्ष एक लाख रुपये
पुरस्कार योजना प्रवर्तिका

भारतीय ज्ञानपीठ

उद्देश्य

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध
और अप्रकाशित सामग्रीका
अनुसन्धान और प्रकाशन

तथा

लोक-हितकारी मौलिक
साहित्यका निर्माण

संस्थापक : श्री शान्तिप्रसाद जैन
अध्यक्षा : श्रीमती रमा जैन

प्रधान एवं सम्पादकीय कार्यालय : ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता–२७
विक्रय केन्द्र : ३६२०/२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, दिल्ली–६
प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी–५

ज्ञानोदय

जून १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने ढंगके अनूठे और अनमोल

भारतीय ज्ञानपीठ

के

अभिनव, महत्त्वपूर्ण एवं संग्रहणीय प्रकाशन

● **चिन्तक की लाचारी** : माखनलाल चतुर्वेदी

यह एक भाषण संकलन । ऐसे भाषण-संकलन बहुत कम हैं जो इतिहास और राजनीतिको जयमाल न होकर समग्र जीवन और अनुभूति-बोधके सत्योंके मूल थामे हुए वर्तमानका दृष्टिपथ अँजोर दें और अनागतकी छवि-रेखाएँ उकेर जायें। ऐसे भाषण-संकलन मर्मी चिन्तकके होते हैं या निष्णात साहित्यकारके । इस प्रकारके अत्यल्प भाषण-संकलनोंके बीच प्रस्तुत भाषण-संकलन विशिष्ट है क्योंकि ये भाषण श्री माखनलाल चतुर्वेदीके हैं और हिन्दीमें माखनलालजी केवल एक हैं, अद्वितीय हैं ।

मूल्य : ४'००

● **आत्मजयी** : कुँवर नारायण

कठोपनिषद्में नचिकेताका आख्यान आता है । सत्यद्रष्टा कविने इसके माध्यमसे भारतीय दर्शनकी एक विशिष्ट उपलब्धिको स्पष्ट किया है । इधर कुछ हिन्दी काव्य-कृतियाँ इस आख्यानको विषय-आधार बनाकर प्रकाशमें आयी हैं। 'आत्मजयी' इन सबमें कई दृष्टियोंसे भिन्न है और विशेष अर्थपूर्ण भी । यह कृति मूल प्रसंगके दार्शनिक पक्षकी ऊहापोह नहीं करती, न ही उसे दिव्यकथाके रूपमें ग्रहण करती है। 'आत्म-जयी' के कविने मुख्यतः नचिकेताकी मानवीय परिस्थितिको ही दृष्टिमें रखा है। नचिकेताकी ही तरह आजका चिन्ताशील मनुष्य भी ऐसे मूल्योंके लिए जीना चाहता है जो उसमें सुख ही नहीं सार्थकताका भी बोध करा सकें ।

ज्ञानोदय

जून १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'आत्मजयी' में मूल्योंको लेकर कोई अन्तिम फ़ैसला नहीं दिया गया : केवल, रचनात्मक दृष्टिकोणके प्रति एक आस्था व्यक्त की गयी है। जीवनकी पूर्णानुभूतिके लिए किसी ऐसे मूल्यके लिए जीना आवश्यक है जो व्यक्तिमें जीवनकी अनश्वरताका बोध करा सके : यही उसको सान्त्वना दे सकता है कि मर्त्य होते हुए भी वह किसी अमर अर्थमें जी सकता है। उसके लिए तब यह चिन्ता सहसा व्यर्थ हो जायेगी कि जीवन कितना असार है : उसकी मुख्य चिन्ता यह होगी कि वह जीवनको कितना सारपूर्ण बना सकता है। सर्वथा संग्रहणीय कृति। मूल्य ३.५०

• सिकन्दरनामा : सलमा सिद्दीक़ी

सिकन्दरनामा यानी सिकन्दरका हाल। हाँ, सिकन्दर। इतिहासका सिकन्दर नहीं। उसपर सदियोंकी मोटी चादरें पड़ गयी हैं। यह आजका सिकन्दर है जिसके अस्तित्वका सबसे बड़ा सबूत यह है कि स्वयं सलमा सिद्दीक़ीने उसे अपनी जादूई क़लमकी नोकपर बैठाकर साहित्य-संसारमें रॉकेटकी तरह छोड़ा है।

आप चाहें तो इस सिकन्दरको डॉन क्विग्ज़ोटकी परम्परामें शुमार कर लें; लेकिन है यह मियाँ खोजीकी जात-बिरादरीके। जिस तरह हर मिट्टी-पानीकी अपनी-अपनी पौध होती है जो अपने-अपने रंग और सुगन्धमें लाजवाब होती है, उसी तरह यह सिकन्दर है – हिन्दुस्तानकी धरतीका एक हँसोड़ क्यारीका लुभावना फूल। बहुत दिलचस्प दास्तान है इस सिकन्दरकी। और, सलमा सिद्दीक़ीकी सादाबयानीका मोहक कमाल! नये अन्दाज़, नयी अदा, और कुछ पुराने तौर-तरीक़ोंपर नयी चुलबुली निगाह! मूल्य २.००

• क्या धर्म बुद्धिगम्य है ? : आचार्य तुलसी

तर्क और बुद्धिने धर्मको चुनौती दी तो सदासे ही है, किन्तु आज विज्ञान और उन्मुक्त चिन्तनने इस चुनौतीको अधिक व्यापक और अधिक मुखर बना दिया है। धर्मने इस चुनौतीको स्वीकारा भी सदासे है, किन्तु अतीतमें जो उत्तर जिज्ञासुओंको सन्तुष्ट कर देते थे, वे उत्तर आज अपर्याप्त हैं। आजके जीवनके परिवेशमें वर्तमानके चुभते प्रश्नों और अणुयुगीय रोमांचों तथा आतंकोंके सन्दर्भमें प्रश्नकी उत्कटता और प्रखरताको कौन झेले—क्या धर्म बुद्धिगम्य है ? इस प्रश्नका और प्रश्नोंमें-से उभरती उप-प्रश्नोंकी शृंखलाका उत्तर इस कृतिमें आपको मिलेगा। व्याख्याता हैं श्री आचार्य तुलसी, जो अणुव्रत-आन्दोलनके प्रवर्तक ही नहीं हैं, इस युगके विशिष्ट साधक,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिन्तक और दिशादायक भी है। श्री आचार्य तुलसीने धर्मका वह स्वरूप प्रतिपादित किया है जो बुद्धिगम्य है, जो सहज आस्था उत्पन्न करता है। सम्प्रदायोंमें विभाजित एकाग्र ही धर्मकी कर्दमसे ऊपर उठा हुआ, खिला हुआ और एक सहस्र-दल कमल है जो विश्वमानवका है। उसकी पूत गन्धसे परिचित होनेका माध्यम यह रचना है। तर्क-सी पैनी, श्रद्धा-सी गहरी और दर्पण-सी निर्मल, यह कृति आपके प्रश्नोंका आप ही से समाधान करायेगी।

मूल्य २.००

● **चौंसठ कविताएँ** : इन्दु जैन

न कहें कुछ और, पर भिन्न और विशेष इन कविताओंके परिचयमें अवश्य कहा जायेगा। यह इसलिए नहीं कि श्रेष्ठ कविताके निकषपर ये खरी उतरती हैं, बल्कि इसलिए कि ये हिन्दी कविताकी अधुनातन दिशा, भाव-बोध, और शिल्पकी प्रामाणिक उपलब्धिका संकेत देती हैं। और इसलिए भी कि सब प्रकारके उलझावोंसे ये मुक्त हैं और अपना अर्थ बड़ी सहजताके साथ स्वयं खोलती हैं।

सब चौंसठ कविताएँ हैं, पर प्रत्येक जैसे एक सौम्य बिजलीकी कौंधका निमिष हो जो अन्दरकी अकुलाहटको, किसी दर्द या उल्लासको, सतरंगी प्रकाश-रेखाओंकी भाषामें उकेर जाये। अनुभूतियोंकी ऐसी अभिभूत करनेवाली अभिव्यक्ति इनमें हुई है कि क्षितिजपर क्षितिज सामने खुलते चले जाते हैं और भीतर एक गन्ध-भरी चाँदनी-सी छिटक पड़ती है। कविताओंकी पंक्ति-पंक्तिसे साक्ष्य मिलता है कि अन्तश्चेतना भी कितनी मुखर हो सकती है। मूल्य ३.००

● **प्रतिनिधि रचनाएँ (मराठी)** : प्रो० ना० सी० फड़के

प्रस्तुत रचना-संग्रह भी एक फूलडाली है। अनेक फूल, और एक ही डालीके, पर कई रंगके। रचनाओंकी यह विधा-विविधता संग्रहको एक अतिरिक्त आकर्षण और मूल्य दे देती है। पर इस फूलडालीकी सारी विशेषता इसमें नहीं कि एक समर्थ साहित्यकारकी प्रतिनिधि रचनाएं सामने आयीं, विशेषता इसमें है कि अन्यान्य फूलडालियों-भरे आँगनमें इसका झुकना-झूमना संकेत बन जाता है कि कैसी-कैसी गन्धके फूल किधर लगे हैं। ये रचनाएँ एक और दृष्टिसे भी महत्त्वकी हैं। नया भाव-बोध और शिल्प इन्हें साहित्यके विकास-क्रममें एक स्थान देनेको बाध्य होगा और जो परम्परानिष्ठ हैं उन्हें इनकी मोहकता आगेको प्रेरित और प्रोत्साहित करेगी। प्रस्तुत हैं एक ही स्थानपर संगृहीत लेखककी स्वसंकलित चौदह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिनिधि रचनाएँ : चार कहानियाँ, एक उपन्यास-अंश, एक एकांकिका, तीन ललित निबन्ध, एक शब्द-चित्र, दो यात्रा-वर्णन तथा दो वैचारिक निबन्ध (प्रबन्ध)।

मूल्य ४.५०

• **दर्शन-अनुचिन्तन** : म० म० गिरिधरशर्मा चतुर्वेदी

चुने-चुने चौदह निबन्धोंका यह एक सुसम्बद्ध संकलन है जो भारतीय दर्शनोंके समूचे स्वरूप और प्रमुख सिद्धान्तोंका सुन्दर परिचय देता है। और ऐसी सरल और सुबोध भाषामें सारा विचार-विवरण उपस्थित करता है कि सामान्य जन इसे अपने ही लिए लिखा गया मानें और सुधी-विशेषज्ञ देखें कि सब-कुछ ज्ञातव्य और नया चिन्तन भी सुबोध ढंगसे लिखा जा सकता है।

मनीषी विद्वानोंके लिए यह कृति एक और दृष्टिसे भी विचारणीय होती है। बहुतोंका मत है कि भारतीय दर्शनोंमें एक विसंगति-जैसी दिखाई पड़ती है। महा-महोपाध्यायजीने प्रस्तुत कृति-द्वारा बड़े तर्कके साथ सिद्ध किया है कि इनमें परस्पर विरोधभाव कोई नहीं है बल्कि ज्ञानका एक क्रम है : ऐसा क्रम जो बुद्धिको स्थूलसे उत्तरोत्तर गहनतम सूक्ष्म तक ले चले। महामहोपाध्यायजी 'भारतीय षड्दर्शन' संज्ञा भी 'चार्वाक, बौद्ध, जैन, वैशेषिक, सांख्य, वेदान्त' इन छह दर्शनों-को देते हैं।

पुस्तक सभी दृष्टियोंसे सबके लिए पठनीय और मननीय है। इसके चौदह निबन्ध जैसे चौदह बीजवट हैं, भारतीय दर्शनशास्त्रोंका सार-सर्वस्व एक अंजुलिमें !

मूल्य ३.००

• **नाटक बहुरूपी** : डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल

"नाटकोंकी भीड़ और नाटक नहीं," शॉ चुटकी लिया करते। "आधुनिक नाटक अभी लिखा नहीं गया," आल्बेर्तो मोराविया कहते सुने जाते हैं। अब इनसे कौन उलझे। उनसे कहना निरर्थक होता, इनसे कहनेमें संगति क्या। फिर, ऐसा कुछ है भी तो ! अच्छे नाटक कम हैं, आधुनिक नाटक और भी कम।

इसी सन्दर्भमें यह छोटा-सा संकलन 'नाटक बहुरूपी' प्रस्तुत है। इसके द्वारा भी कहना यह नहीं है कि ये नाटक अच्छाईका आदर्श हैं; कहना यह उपयुक्त होगा कि ये अच्छाईका एक नमूना हैं और अनेक दृष्टियोंसे आधुनिक तो हैं ही। डॉ०

ज्ञानोदय

जून १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाल ... हिन्दी नाटक-लेखनमें पहले ही कुशल कलाकार थे, अब तो सागर-पार जाकर वहाँका भी बहुत-कुछ देख और गुन आये हैं।

इतनी सहज-सच्ची और मर्म-छूती रचनाएँ हैं ये कि पढ़ी जायें तो पाठकको अपनी ही बात कही जाती मिले, और रंगमंचपर आयें तो दर्शक अपने ही सत्यों और सपनोंको सामने देखता हो। ऐसे नाटक हिन्दीमें सचमुच बहुत नहीं जिन्हें ईजीचेयरपर पढ़ते अच्छा लगे और स्टेजपर देखकर प्रेरणा मिले।

मूल्य ३.५०

● **अपने-अपने अजनबी** : अज्ञेय

भारतीय साहित्योंमें अपने ढंगका अद्वितीय उपन्यास। मृत्युसे साक्षात्कारको विषय बनाकर जीवन और नियतिका सरल मार्मिक विवेचन। मृत्यु-विषयक पूर्व और पश्चिमकी दृष्टियोंकी टकराहट, दोनोंके मिलन-द्वारा मानव-जीवनके एक नये आयामका उन्मेष।

मूल्य ३.००

● **जिन्दगी और गुलाब के फूल** : उषा प्रियंवदा

कहानियाँ और कहानियाँ! मगर ये कहानियाँ बिलकुल भिन्न हैं। न भाषाका उलझाव है यहाँ न शैली-शिल्पके गोरखधन्धे, और संग्रह-भरमें एक जो कहानी हो जिसे पढ़ें और दिनों अपने भीतर मँडराता हुआ न पायें! अतिरिक्त विशेषता और यह कि नयी कहानी इन्हें अपना कहेगी तो औरोंके लिए ये परायी न हो सकेंगी।

मूल्य २.५०

● **खोयी हुई दिशाएँ** : कमलेश्वर

ग्यारह कहानियाँ जो एक विशेष दृष्टिको लेकर चुनी गयीं। जीवनमें महत्तम मूल्योंके प्रति आस्थाका स्वर इनका कथ्य है और घुटन तथा पराजयमें जीनेकी विवशताको नियति न मानकर नये सन्तुलन और अर्थोंकी खोज इनकी दिशा। इनमें जीवनका अध्ययन आया है, मात्र सर्वेक्षण नहीं। असम्भव होगा कि संग्रहकी कोई भी कहानी पढ़ें और मनपर प्रभाव न छोड़े।

मूल्य २.५०

● **प्रतिनिधि रचनाएँ : पंजाबी** : कर्तारसिंह दुग्गल

किसी साहित्यिक व्यक्तित्वको पहचानने-समझनेके लिए आवश्यक है कि उसका विभिन्न विधाओंका लेखन कहीं एक-साथ देखें और पढ़ें। प्रस्तुत पुस्तकमें श्री कर्तार-

ज्ञानोदय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिंह दुग्गलका एक समूचा नाटक, दो एकांकी, दो उपन्यासोंके अंश, संस्मरण और निबन्ध तो हैं ही, कहानी और कविताएँ तक संकलित हैं। कभी पंजाबी और उर्दूके और अब तो उतने ही हिन्दीके भी, इस चहीते साहित्यकारकी ये सभी रचनाएँ उसकी प्रतिनिधि रचनाएँ हैं : उसके साहित्यिक व्यक्तित्वसे परिचित होनेके लिए बिलकुल अनिवार्य। मूल्य ३.५०

• **एक साहित्यिक की डायरी** : स्व० गजानन माधव मुक्तिबोध

ऐसी कृतियाँ बहुत नहीं होतीं जो अपने समकालीन साहित्यका श्री-वर्द्धन कर सकें। 'एक साहित्यिककी डायरी' ऐसी एक कृति है। अपने शैलीगुण और विचारतत्त्व दोनोंकी विशेषताके कारण यह ध्यान आकर्षित करेगी और आदर-मान पायेगी। डायरी-विधाका यह रूप तो इसीमें देखनेको मिलेगा। जैसे निबन्धात्मक कहानी वैसे यह निबन्धात्मक डायरी। निबन्ध पढ़े न जायें, इन्हें पढ़नेकी सहज ललक हो। सीधा-सादा प्रारम्भ, फिर कहीं एकालाप, कहीं एक काल्पनिक पात्रसे वार्तालाप, पर आदिसे अन्त तक भाव और स्वर डायरीका। ये कविता, आत्माख्यानके विविध स्तरोंपर एक साथ चलती हैं; या यों कहें कि इन सबको एकमें समन्वित करके एक नयी ही विधा-सम्भावनाकी ओर इंगित करती है। द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण। मूल्य २.५०

• **सूरज का सातवाँ घोड़ा** : डॉ० धर्मवीर भारती

'गुनाहोंका देवता' के बाद लेखकके औपन्यासिक कृतित्वका एक दूसरा पहलू जो जितना महत्त्वपूर्ण है उतना ही आकर्षक। दावेके साथ कहा जा सकता है कि हिन्दीमें अभीतक ऐसी कथा-शैलीका प्रयोग नहीं किया गया। किन्तु कृतिका महत्त्व केवल साहित्यिक ही नहीं है, वास्तवमें उससे कहीं अधिक व्यापक और गम्भीर है : हमारे समूचे मध्यवर्गीय समाजके सांस्कृतिक पुनर्निर्माणसे सम्बद्ध होनेके कारण है। मूल्य २.००

• **मेज पर टिकी हुई कुहनियाँ** : रमेश बक्षी

इन कहानियोंको देखकर कोई कहे तो अत्युक्ति न होगी कि आधुनिक कथाशिल्प और आधुनिक जीवन-दृष्टि दोनोंको एक साथ स्वाभाविक रूपमें सजा हुआ यहाँ

ज्ञानोदय

जून १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाया। कभी पढ़ते-पढ़ते लग सकता है कि ये कहानियाँ नहीं हैं, पर फिर अगले ही क्षण बरबस लगेगा कि ये ही तो सचमुच कहानियाँ हैं : आजकी !

मूल्य ३.५०

● **नये रंग नये ढंग : लक्ष्मीचन्द्र जैन**

हिन्दी गद्य-शैलीकी सर्वथा नयी रचना जिसके हर पृष्ठपर युगकी छाप और प्रतिभाकी चमक अंकित है। सम्भव नहीं कि पुस्तक हाथमें लें और पढ़कर समाप्त किये बिना रख दें।

मूल्य २.००

● **सूखा सरोवर : डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल**

एक ऐसा स्पष्ट, जीवन्त और हृदयग्राही नाट्यरूप जो लोक-गाथाकी मनोभूमि और रंगशैलीसे यहाँ अवतरित है – विशुद्ध लोक-गाथा-परक रससिक्त नाट्य-शिल्पमें। इस रंगमंचका सर्वथा एक अभिनव स्वरूप और आधुनिक रंगमंच अन्वेषणका एक नया उदाहरण।

मूल्य २.००

● **शिखरों का सेतु : डॉ० शिवप्रसाद सिंह**

शैल-शिखर रमणीक होते हैं। जो चिर-प्रेरक भी हों, ऐसे शिखर विश्व-साहित्यके महाप्राण व्यक्तित्व होते हैं या फिर अतीतके जीवन और प्राणोंकी वे मार्मिक कथाएँ-व्यथाएँ होती हैं जो उन्हें 'अतीत' कभी नहीं बनने देंगे। प्रस्तुत पुस्तक-द्वारा अनेक ऐसे ही शैल शिखरोंसे साक्षात्कार होगा जिसे पाकर 'लघु मानव' को बरबस लगे कि वह लघु ही रहनेके लिए नहीं। जीवन-यात्रामें कभी अपनेको थकता देखें तो भी एक क्षण इन शिखरोंका सहारा लें, फिर चरण आगे पथपर आप बढ़ चलेंगे।

मूल्य ३.५०

● **चीड़ों पर चाँदनी : निर्मल वर्मा**

बीसवीं शतीके स्मारक-चिह्नोंकी खोजमें एक भारतीय लेखकके यह संस्मरण अपने-आपको खोजनेका प्रयास हैं – अपनेसे बाहर निकलकर स्वयं अपनेको गवाह बनानेका प्रयत्न – और इसीलिए ये संस्मरण एक व्यक्तिका निजी 'टेस्टामेण्ट' भी हैं। स्मृतिके ये अंक निर्मल वर्मा युरॅप-प्रवासकी लम्बी अवधिमें समय-समयपर सँजोते रहे हैं। बादमें जोड़नेपर जो मिला, वे न कहानियाँ थीं न डायरी – बल्कि कुछ ऐसे अनुभव-खण्ड जिनमें एककी निरपेक्षता दूसरेकी आत्मीयतासे घुल-मिल गयी है।

मूल्य ३.००

ज्ञानोदय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैकलियॅड एण्ड कम्पनी लिमिटेड

मैकलियॅड हाउस,

३, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता-१

मैनेजिंग एजेण्ट्स, सेक्रेटरी और कोषाध्यक्ष

जूट मिल्स

- अलेक्जेण्डर जूट मिल्स कं० लि०
- एलायन्स जूट मिल्स कं० लि०
- नेल्लीमारला जूट मिल्स कं० लि०
- चितावलसाह जूट मिल्स कं० लि०
- ईस्टर्न मैन्यूफैक्चरिंग कं० लि०
- एम्पायर जूट मिल्स कं० लि०
- केलविन जूट कं० लि०
- प्रेसिडेंसी जूट मिल्स कं० लि०
- देवरली जूट मिल्स कं० लि०

चाय के बगीचे

- अमलुकी टी कं० लि०
- बागमारी टी कं० लि०
- मतकावा टी कं० लि०
- बोरमाह जान टी कं० (१९३६) लि०
- डिब्रूगढ़ कं० लि०
- बैजू वेली कं० लि०
- मार्गरेटस होप टी कं० लि०
- राजभात टी कं० लि०
- रानीचेरा टी० कं० लि०
- रूपचेरा टी कं० लि०
- सुंगमा टी कं० लि०
- तेलोईजान टी कं० लि०
- तिंगामीरा टी सीड कं० लि०
- तिरींहन्ना कं० लि०
- तीयरून टी कं० लि०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Price Annual Rs. 10/ Single copy Re. 1/- for abroad postage extra 18 nP. This Copy
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
GYANODAY

17 JAN 1966

License No. 51. Licensed to post without prepayment of postage. REGD. No. L-2036

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर
साहूपुरम् में
डाकखाना : अरुमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक
ध्रांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स :

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लि०

१५ ए, हॉर्निमैन सर्किल
फोर्ट, बम्बई-१

तार : सोडाकेम, ब

टेलीफोन : २५१२१८-१९-१०,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

भारतीय ज्ञानपीठ काशी की ओर से साहूलाल जैन फागुल्ल-द्वारा प्रकाशित और
सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी में मुद्रित।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदय

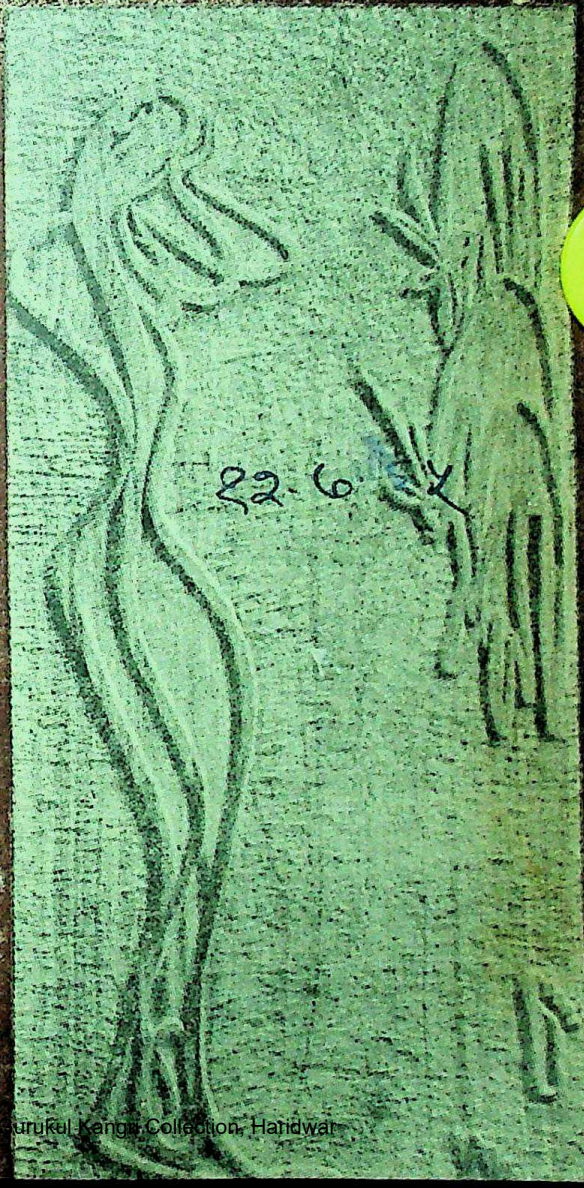

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक विकास-उन्नयन
सांस्कृतिक अनुसन्धान-प्रकाशन
राष्ट्रीय एकता एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी

साधिका
विशिष्ट संस्था

भारतीय ज्ञानपीठ

[स्थापित सन् १९४४]

संस्थापक
श्री शान्तिप्रसाद जैन

अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

ज्ञानोदय

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादक :
लक्ष्मीचन्द्र जैन, रमेश बक्षी

जुलाई १९६५
१७वें वर्षका पहला अंक

नयी पीढ़ीकी
चुनी हुई रचनाएँ

११ कहानियाँ •
एकसे एक विविध और नयीसे नयी
२२ कविताएँ •
नयी कवितासे आगे और अभी लिखी,
साथ ही सम्पादकीय भी •

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

आधुनिक भावबोध, कला-संचेतना
और नवीनताका प्रतिनिधि मासिक

ज्ञा नो द य

सम्पादकीय कार्यालय :
९, अलीपुर पार्क प्लेस,
कलकत्ता-२७

वितरण-कार्यालय :
भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

वितरक :
वैनेट कोलमैन एण्ड कं० लि०, बम्बई-१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्षग्रन्थि

अमित शुभकामनाएँ

- जबसे आपने ज्ञानोदयका कार्यभार सँभाला है उसने निश्चय ही उन्नति की है। सामग्री भी उसमें रुचिकर रही है। आशा है आपके सम्पादनमें वह इसी प्र करता रहेगा।

  इलाहाबाद]

- यह जानकर प्रसन्नता हुई कि ज्ञानोदय अपने जीवनके १६ वर्ष सार्थक करके १७वें वर्षमें प्रवेश कर रहा है। इस अवसरपर मैं ज्ञानोदयके सम्पादक-मण्डल नन्दन करता हूँ। पिछले कुछ वर्षोंमें पत्रका स्तर निश्चय ही ऊँचा हुआ है। सामग्रीमें वैचित्र्य और वैविध्यके साथ बौद्धिक दीप्तिके स्पर्श भी मिलते हैं। आपको क्या दूँ ? उपदेश देनेमें मेरा विश्वास नहीं है। मेरी कामना है कि साहित्यिक सुरुचिके प्रसारणमें निरन्तर योगदान करता रहे।

  दिल्ली]

- बड़ी प्रसन्नताका विषय है कि 'ज्ञानोदय' अपने जीवनके १६ वर्ष पूरे कर चुका। से ही ज्ञानोदयका नियमित पाठक रहा हूँ। ज्ञानोदय निरन्तर उन्नतिके क्रमों रहा है और आज अपनी समवयस्क पत्रिकाओंमें उसका स्थान सर्वोपरि है। नितान्त मौलिक रहे हैं और उनका स्थान साहित्यकी स्थायी सामग्रीमें है। युगकी प्रवृत्तियोंके प्रति सदा सजग रहा है और नूतनताका सदा उसने है और उसे प्रोत्साहन दिया है। हिन्दी पाठकोंको विदेशोंकी अभिनव प्रवृत्तियोंसे भी वह परिचित कराता रहा है। इस अवसरपर मैं ज्ञानोदयके सभी लोगोंको बधाई देता हूँ जिन्होंने उसकी उन्नति-प्रगतिमें सहयोग दिया है।

  नयी दिल्ली]

- मुझे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि 'ज्ञानोदय' मासिक १७वें वर्षमें प्रवेश है। शुरू-शुरूमें बनारससे यह दुबला-पतला जैन मुनि-जैसा अखबार निकलता मेरी दृष्टि इसमें महेन्द्रकुमारके 'जाति-व्यवस्था' सम्बन्धी लेखोंने और जैन-दर्श लेखोंने आकृष्ट की थी। बादमें यह साहित्यिक पत्र बना। अनेक विशेषांक निक सबमें मैंने लिखा। इधर आकर नवलेखनका यह मुखपत्र बनता जा रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

, हर नयी कहानीकी तरहसे प्रकाशनके क्षेत्रमें नयी छपाई-जैसी भी कोई चीज होती
, वह उसने क्यों नहीं अपनायी, पता नहीं चलता।

—प्रभाकर माचवे

दिल्ली]

ना सोलह सालकी हो चुकी है। आप षोडशीके लिए शृंगार-अलंकारके नये साधन
ा चाहते हैं। इसका यौवन क्या इनसे कम है? पहलेसे ही इसने नया भावबोध,
कतना आदि आभूषण धारण किये हुए हैं। ये अभी पुराने नहीं हुए हैं, इनका
ी बदला नहीं है।

—इन्द्रनाथ मदान

]

की उभरती हुई प्रतिभाओंकी रचनाओंको एक सुनियोजित पीठिकापर प्रस्तुत
ी ओरोंतक पहुँचानेके ऐसे प्रयासोंकी उपयोगिता और विशिष्टता असन्दिग्ध है।
के इस दशकमें उभरते हुए, यानी गहराईसे अंकित होते हुए हस्ताक्षरोंकी
प्रति यह आत्मीयता-भरा अपनत्व इसलिए भी मुझे महत्त्वपूर्ण लग रहा है
हममें अपेक्षतया नये लेखकोंके प्रति आस्थाकी अभिव्यक्ति होती है। निश्चित है
ह-या जिस पीढ़ीको—अपनी निजी साहित्यिक क्षमताके प्रति पूर्ण आश्वस्ति
ा नहीं होती उन्हें ही अपनी परवर्ती प्रतिभाओंके प्रति अनास्था हो सकती है।

—शैलेश मटियानी

]

ा रूप बदला है और हर अंकमें ताजगी है। नयी पीढ़ी अपना प्रतिबिम्ब
ोंमें देख सके, इसकी बड़ी आवश्यकता है। 'ज्ञानोदय' ने इस दिशामें बड़ा
णीय काम किया है। मेरी अमित शुभकामनाएं।

—राजेन्द्र अवस्थी

दिल्ली]

१६ वर्ष पूरे कर रहा है। कैसा तो लगता है। इसका हर रूप ध्यान आता
किशोर कितना प्रौढ़ है। इसके लड़खड़ाते क़दम अब सधे हुए पड़ने लगे—इसकी
है क्या? जैसे अकस्मात् चम्पक एक दिन बराबरकी लगने लगी थी उसी
तक आपका पत्र पाकर ध्यान आया कि ज्ञानोदय कितना विशिष्ट व्यक्तित्व
है। मेरी कविताओंका तो बहुत सारा विकास इसीके प्रोत्साहनसे हुआ है और
इतना रागात्मक लगाव है कि बाहर खड़ी होकर मैं कुछ कह नहीं सकती।

—इन्दु जैन

]

ही नयी पीढ़ीके लेखकोंको पूर्ण प्रोत्साहन मिलना चाहिए, क्योंकि उनमें कई बड़े
के साधक और प्रतिभावान् व्यक्ति निकलेंगे—इसमें सन्देह नहीं। पत्रिकाओंमें
लेखकोंके अधिक दर्शन होते हैं। पुस्तकोंके क्षेत्रमें अभी उनका बोलबाला नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ है। उन्हें और भी प्रोत्साहन मिलना चाहिए। आपके सम्पादकत्वमें ज्ञानोदय अग्रगति करेगा, ऐसी हमें पूर्ण आशा है।

दिल्ली]

—मन्मथनाथ गुप्त

● सोलह वर्षका 'ज्ञानोदय' सोलह वर्षका लगता है। बाहरके रूप-रंगमें भी और अन्तरके ओजमें भी। न केवल विशेषांकोंकी परम्परामें ही, बल्कि साधारण अंकोंमें भी चयन और सम्पादनकी परम्परामें उसकी अपनी विशेषता रही है। नये विचारों, नयी विधाओं और नये रचनाकारोंके प्रति उसका जो स्नेह और स्वागतभरा दृष्टिकोण रहा है उससे वह मात्र पत्रिका न रहकर संस्था हो गया है। यह गर्व करनेकी बात है ही।

कलकत्ता]

—भँवरमल सिंघी

● 'ज्ञानोदय' अपने सोलह वर्ष पूर्ण कर रहा है—ये सोलह वर्ष इसकी साधनाके, तपके या भक्तिकी भाषामें कहूँ तो षोडशोपचारके वर्ष रहे हैं; अहिन्दी प्रान्त बंगालकी भारतकी सांस्कृतिक राजधानी कलकत्तेसे उदित होकर वह हिन्दीका ही नहीं समग्र सामयिक भारतीय साहित्यका भी प्रमुख साहित्यिक पत्र रहा है। विशेषतः नये साहित्यका तो मुखपत्र ही। ज्ञानोदय निःसन्देह आज हमारे प्रमुख और अनिवार्य रूपसे पठनीय पत्रोंमें एक है। 'ज्ञानोदय' का सम्पादन और उसका संस्थान निर्वैयक्तिकताके कारण ही 'हिम वर्षा तप ताप सुखाने' नहीं हो सका। कलकत्ता हिन्दी पत्रकारिताके इतिहासमें सर्वोपरि महत्त्व रखता है; 'ज्ञानोदय' इस इतिहासका स्वर्ण परिच्छेद है।

कलकत्ता]

—कल्याणमल लोढ़ा

● 'ज्ञानोदय'ने मेरे साम्यवादी दृष्टिकोणको पाठकोंके सामने प्रस्तुत करनेमें कभी संकोच नहीं किया, बल्कि उन्होंने मेरी इस विचारधाराके कारण ही मुझे लिखनेके लिए निमन्त्रित किया। दरअसल बुद्धिका विकास ही तब होता है जब हम हर एक विषयपर अलग अलग तथा विरोधी दृष्टिकोणसे खुलकर बहस करें। एक साहित्यिक पत्रिकाका यह कर्तव्य है कि वह ऐसी बहसोंके लिए मंच अर्थात् फोरमका काम दे। मैं समझता हूँ कि ज्ञानोदयकी दीर्घ आयु (एक साहित्यिक पत्रिकाके लिए सोलह साल काफ़ी लम्बी आयु है) और दिन-दिन बढ़ रही लोकप्रियताका यही कारण है कि उसने इस बातको कभी नज़रसे ओझल नहीं किया। फिर एक साहित्यिक पत्रिकाके सम्पादकका दुरूह बड़ा काम न सिर्फ़ बँधे-टिके इश्तहारी नामोंको छापना बल्कि नयी प्रतिभाओंको प्रकाशमें लाना होता है ताकि साहित्यका विकास और विस्तार जारी रहे। ज्ञानोदयके सम्पादक भी यह काम भली भाँति सरंजाम देते आये हैं।

नयी दिल्ली]

—दूधनाथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'नयी पीढ़ीका प्रतिनिधि अंक'

१७वें वर्षका पहला चरण

अनुक्रम

■

मुखपृष्ठ :

बी० एस० कुशवाह और सन्तु दासगुप्ता

■

सम्पादकीय :

लम्बी यात्राके सन्दर्भ : रमेश बक्षी

■

१२ नयी पत्रिकाएँ :

स्वदेश भारती

■

अमित शुभकामनाएँ :

सुमित्रानन्दन पन्त, नगेन्द्र, बच्चन, प्रभाकर माचवे, इन्द्रनाथ मदान, शैलेश मटियानी, राजेन्द्र अवस्थी, इन्दु जैन, मन्मथनाथ गुप्त, भंवरमल सिंघी, कल्याणमल लोढा, हंसराज रहबर

कहानियाँ : एकसे एक विविध और नयीसे नयी—

- कहानी नहीं (एक अकथा) हिमांशु जोशी १७
- तारीख (एक स्थिति) रामनारायण शुक्ल २१
- इरादे, इरादे और इरादे (एक इरादा) ममता अग्रवाल २७
- दारी खुशबू (एक पूर्वदीप्ति) प्रेमकपूर ३१
- बाहोंके मरुस्थल (एक विचार) शशि तिवारी ४७
- निर्णय (एक मनःस्थिति) अवधनारायण सिंह ५७
- एक कहानी (एक प्रक्रिया) अतुल भारद्वाज ६५
- अँधेरी सुरंग और सफ़र (एक भावबोध) अमरेन्द्र 'अमर' ७५
- दो में से (एक निस्संगता) ओम प्रभाकर ८३
- धुन्धमें डूबी रोशनियाँ (एक यात्रा) कमलजीत सिंह ९१
- कोलीकार्नर (एक विसंगति) रवीन्द्र कालिया १०१

कविताएँ : नयी कवितासे आगे और अभी लिखी—

- अपने-अपने वक्तव्य : ३९
  रणजीत, इन्द्रमणि, इन्दु जैन, रमेश गौड़, जगदीश नारायण श्रीवास्तव, पद्मधर त्रिपाठी, अमृता भारती, केवल गोस्वामी, नीलम सिंह, अवधनारायण मुद्गल
- छोटे-छोटे सन्दर्भ ७१
  कान्ता, भगवत रावत, कुंकुम जोशी, अनामिका

किसी एककी उलझन : अँधेरे बन्द कमरे

- खुले और रोशन कमरेके सवाल : सुधा अरोड़ा ११
- अँधेरे बन्द कमरे और साझेकी डोर : मोहन राकेश १४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

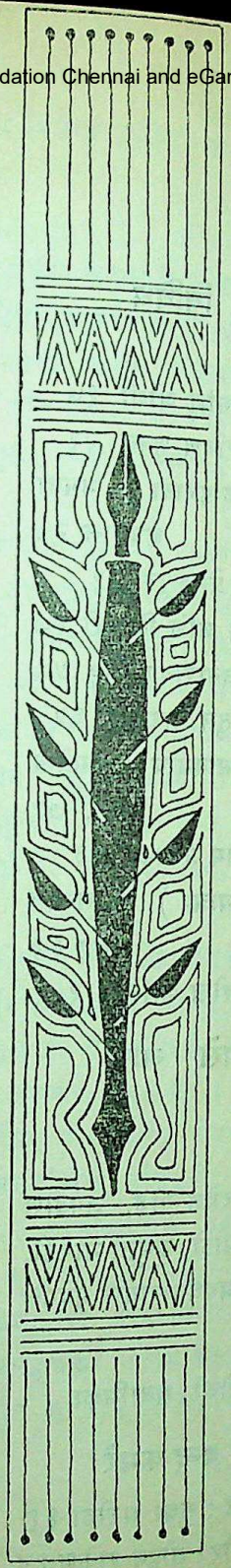

आधुनिक भावबोध,
कला-संचेतना
और नवीनताके प्रतीक,
पत्रकारिताके नये दिशा-मानक
ज्ञानोदय के विशेष विशेषांक :

१९५५ : एशिया विशेषांक
१९५६ : आधुनिकता विशेषांक
१९५७ : नैतिकता विशेषांक
: संस्मरण विशेषांक
१९५८ : प्रणय विशेषांक
१९५९ : विज्ञान विशेषांक
१९६० : भारतीय इतिहास कथा-विशेषांक
१९६१ : भारतीय परिवार विशेषांक
१९६२ : हास्य-व्यंग्य विशेषांक
: नवोदित लेखिका विशेषांक
१९६३ : पत्र विशेषांक
१९६४ : समकालीन भारतीय कहानी-विशेषांक

....और
नवम्बर १९६५ में ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
गुरुकुल काँगड़ी

लम्बी यात्राके सन्दर्भ

आज भी आषाढ़का पहला दिन है लेकिन कहीं कोई बादल नहीं, है तो केवल उमस औ
ज़िद्दी तापमान। तिथि पहले याद आयी है, बादमें मौसमका ख़याल आया है। यूँ मैंने आज
तक आषाढ़स्य प्रथम दिवसे बादल बरसते नहीं देखे, वह कथन शायद रूढ़ हो गया है य
इस उष्ण कटिबन्धपर सोये ज़मानेके लिए ठीक-ठीक विरोधाभास देनेमें समर्थ हो गया है
जो हो। इस मेज़पर बादल-भरे किसी पहले दिनकी यादका सवाल भी नहीं उठता, न या
रामगिरि है, न मैं यक्ष हूँ, न ही मुझे मेघको दूत बनाना है। लेकिन आज ही के दि
काशीसे सन् १९४९ में ज्ञानोदयका पहला अंक प्रकाशित हुआ था—'व्यक्ति स्वातन्त्र्यमूल
श्रमण-संस्कृतिके सन्देश-द्वारा समता, स्वतन्त्रता, और शान्तिका सार्वजनीन उद्‌बोधन' लेकर
वह पहला अंक—जिसमें डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ
वृन्दावनलाल वर्मा, प्रभाकरजीकी भी रचनाएँ आयी हैं—अबसे १६ वर्ष पूर्व अपनी दिशाव
समर्थ पत्र था। १७वें वर्षके इस पहले अंक तक—जो नयी पीढ़ीको समर्पित है तथा 'आधुनि
भावबोध कला-संचेतना और नवीनता'को रेखांकित करता है—एक लम्बी यात्रा पूरी हु
है। ज्ञानोदयने कभी भी केवल अपने उद्देश्यको लेकर आगे बढ़ जानेको ही महत्त्व नह
दिया है, उसके लिए काल-बोधके साथ सन्तुलित लय-तालमें क़दम मिलाकर चलना विशे
महत्त्वपूर्ण रहा है। वह कभी तो नयी निर्माण-चेतनाका प्रतिनिधि होकर सामने आया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कभी विदेशी साहित्यका दर्पण बनकर, कभी अनछुई विधाओंको उसने स्थापित किया है तो कभी किसी एक भाव-स्वरको लेकर उसने याद किये जानेवाले विशेषांक निकाले हैं। चाहे जितने परिवर्तन आये उसकी दृष्टि नयेपर रही है, उसके चरण समयके साथ हैं।'"

■

जिन छोटे-छोटे कारणोंसे नयी पीढ़ीकी उम्र लम्बी होगी उनमें नवलेखनको समर्पित ये प्रयास ज़रूर याद किये जायेंगे क्योंकि हर अगला हस्ताक्षर समयका विकसित स्वरूप है, वर्तमानकी प्रतिक्रिया नहीं। हिन्दीके तो हैं ही, अन्तर्प्रान्तीय भाषाओंके भी कई ऐसे लेखक हैं जो ज्ञानोदयके माध्यमसे ही प्रतिष्ठित हुए हैं, यही नहीं कि उनकी पहली रचनाएं ज्ञानोदयमें आयी हैं उनकी पहली पुस्तकें भी ज्ञानपीठसे प्रकाशित हुई हैं। कलकत्तामें रहते यह बात बहुत स्पष्ट है कि अन्य भाषाओंमें नयी पीढ़ीके लेखकको वह और वैसी सहानुभूति प्राप्त नहीं होती जैसी हिन्दीमें प्राप्त होती है। ज्ञानोदयने नये-नये लिखनेवालोंके प्रति विशेष प्यारकी नीतिसे निश्चित ही एक ऐसा वातावरण बनाया है जिसने मात्र परम्परा-पोषककी वृत्ति और प्रवृत्तिको तोड़ा है।

ज्ञानोदयकी प्रतिष्ठामें सहायक पाठकोंके सूत्रोंसे जुड़ा एक और महत्त्वपूर्ण बिन्दु है जिसमें नवलेखन, नयी विधा और नये दृष्टिकोणको सराहनेवाला एक पाठकवर्ग तैयार किया है। १९६४ के 'समकालीन भारतीय कहानी विशेषांक'पर कोई तीन हज़ार पत्र प्राप्त हुए थे और सारी प्रशंसाओं-सुझावोंमें एक रेखांकन यह भी था कि ज्ञानोदय अच्छा ही करता है जो कविता-चित्र-कहानी आदि सभी सामग्रीको 'डेकोरेशन'के रूपमें प्रकाशित नहीं करता—यह ठीक भी तो है कि सर्वांग साहित्यिक पत्रिका अपनी सामग्रीमें-से वह शोभा और साज-सज्जा हटा दे जिससे सीधे साहित्य तक पहुंचनेमें व्यवधान आता हो।

■

ज्ञानोदयके १६ वर्ष। हर प्रगतिमें उम्रका बड़ा महत्त्व रहता है। नया-पुराना साहित्य हो या नयी-पुरानी पीढ़ी, इस उम्रने ही ट्रैफ़िकके नियम बताये हैं। बड़ी तेज़ीसे बदलनेवाला मूल्य और पंखयुक्त साहित्यिक आन्दोलन सापेक्ष है—जिस दौरमें-से हम सब गुज़र रहे हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह ग्रीनविच विलेजसे चौरंगी तक एक ही है। अन्तर केवल कपड़ोंकी कटाई-सिलाईका है। यही सब तो दिखता है न : परम्पराके असहनीय अंशका अस्वीकार और उससे पैदा हुई नाराजी, औद्धत्य, भूख…। सरासर तटस्थ होकर यदि देखा जाये तो जो अनास्था, कुण्ठा, अवमूल्यन, विसंगति नयी पीढ़ीमें दिखाई देती है वह पोखरके जलमें फेंके गये कंकरसे उत्पन्न लहरियोंकी तरह है; वह उस जलका धैर्य नहीं, वही जल यदि क़ैद तोड़कर बहने लगे तो वे लहरियाएँ आत्मस्थ पीड़ाकी संज्ञा पा गयी थीं वे ही पाँव बन जायेंगी।

आचार्य शुक्लजीके अन्दाज़में भी अगर पहलेके हिन्दी साहित्यमें (सं० १०५० से १९०० तक) पीछे देखें तो वह देखा जा सकता है कि वीरगाथासे आजतक साहित्यकी कोई भी परम्परा २०० और ३०० वर्षोंसे कम ज़िन्दा नहीं रही है। भक्तिकालके बीच जैसे सगुण-निर्गुणका भेद कर भक्तिकी काल-धाराका हम विभाजन नहीं करते या राम और कृष्णके बीच दीवार नहीं पाते वैसे ही नयी कहानी या नयी कविताको अलग करके या इनके बाद कोई और आलबाज़ फ़तवा देकर आधुनिकताकी काल-धाराको अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। कभी ऐसा भी हुआ है कि पुरानी पीढ़ीका जो एक अपना चिन्तन था, नये आन्दोलनने उससे बढ़कर अधिक तार्किक ढंगसे सामाजिक और राजनीतिक परिवेशको समेटते अपने आपको स्थापित किया है। यदि डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदीको उद्धृत करते हम प्रो० [illegible]की स्थापनाको नकारते यह कह सकते हैं कि व्यक्तिगत भावकी साहित्यिक चेतनाको [illegible]की स्वाभाविक चेतनाके रूपमें देखना चाहिए, अस्वाभाविक अधोगतिके रूपमें नहीं, [illegible] कहना असंगत नहीं होगा कि नयी पीढ़ीका चिन्तन समयकी स्वाभाविक चेतना है, [illegible]बोधकी अस्वाभाविक अधोगति नहीं। यदि डॉ० नगेन्द्रकी तटस्थतासे देखनेपर रीति-[illegible]का दो शताब्दियोंवाला बारीक साहित्य ऐसा लग सकता है जैसे तब युगजीवनकी [illegible] रुद्ध हो गयी थी तो पुरानी पीढ़ीके असहयोगवाले अंशका विरोध, दुस्साहस नहीं, [illegible]ई है। काल-विभाजन सन-संवत्के आधारपर नहीं होता, भावबोधके आधारपर होता है। सुविधा यह कहनेमें होगी कि सन् १८५० से १९५० तक पुरानी पीढ़ीका समर्थ साहित्य लिखा गया और सन् १९५० से नयी पीढ़ीके लेखनने दिशा पायी है। यह कहना

लम्बी यात्राके सन्दर्भ : रमेश बक्षी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुश्किल है कि इसकी काल-समाप्ति सन् २०५० में होगी या ३०५० में लेकिन यह निश्चित है कि जितनी अधिक सुलझी दृष्टिसे निर्माणकारी अस्वीकारोंपर इसने अपनी मान्यताएं स्थापित की हैं तथा इसके चिन्तनमें जितनी अधिक अन्तर्राष्ट्रीयता या बुद्धिसम्यक्ता [illegible] है उसके आधारपर यह विश्वास सहज ही होता है कि पहलेके किसी भी साहित्यिक काल-खण्डसे इसकी उम्र एक शताब्दी अधिक ही होगी।...

■

इस समूचे अंकमें भी नामोंसे पहले रचनाओंको देखा गया है। यह सोचकर कि सामर्थ्य होगी तो रचना बोलेगी ही। पहले सोचा था, नयी पीढ़ीकी समीक्षासे सम्बन्धित कुछ टिप्पणियां भी दी जायें लेकिन फिर यही ठीक समझा गया कि उन टिप्पणियोंसे अंकको पूर्वाग्रहकी दिशा देनेके बजाय सारी नयी रचनाओंको अपना परिचय खुद देनेका मौक़ा मिले। इस अंकमें ११ कहानियां और २२ कविताएँ हैं। शायद सारी कहानियां कहानियोंकी शास्त्रीय परिभाषासे अलग हैं—'एक अकथा' से 'एक विसंगति' तक हर चीज़को ठीक-ठीक देखने और बग़ैर शैली-शिल्पके उसे अभिव्यक्त कर देनेकी एक सहज इच्छा इनमें देखी जा सकती है। जो नयी कहानी अभी कल अपने अस्तित्वके लिए छटपटा रही थी, यह अंक बतलाता है कि स्वयंको प्रतिष्ठित कर लेनेके बाद वह कितनी समर्थ बन गयी है।...और कविताएं 'अपने-अपने वक्तव्य' और 'छोटे-छोटे सन्दर्भ' के माध्यमसे एक चरण आगे बढ़ी हैं। 'नयी कविता' को जो रुका हुआ पाते हैं वे शायद कुहरेको देखकर सुबहको नापते हैं।

■

यह अंक तो निमित्त भर है, वैसे सारे समकालीन प्रकाशनके बीच इस नयी पीढ़ीकी तसवीर बहुत उभरकर सामने आती है। कई लोगोंको इस तसवीरके नक़्श बहुत उद्धत भी दिखाई देते हैं—वैसे ही जैसे द्रोणाचार्य-द्वारा गुरुदक्षिणामें दाहिने हाथका अँगूठा प्राप्त करनेकी इच्छा! लेकिन ये सब दूसरे प्रश्न हैं, इस अवसरके नहीं।

—रमेश बक्षी

१५ जून १९६५]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्र : सुधा अरोड़ा
उत्तर : मोहन राकेश

अँधेरे बन्द कमरे

ज़िन्दगीके छोटे-छोटे टुकड़े आस-पास बहते समयके बीच जगह-बेजगह 'स्थिति' बनकर ज़िद करते रहते हैं—राकेशजीकी समर्थ क़लमने 'अँधेरे बन्द कमरे' में एक मौज़ू कैनवॅस लेकर बात कही है लेकिन एक नये हस्ताक्षरको इन्हीं स्थितियोंकी ज़िदपर आक्रोश हुआ···सवाल और समाधान दोनों सामने हैं—उलझन तो अपनी जगह मुकम्मल है ही।

पायी। जैसे मेरा बहुमुखी व्यक्तित्व हो—मधुसूदनके साथ मैं भी मधुसूदन बन जाती हूँ और हरबंस, नीलिमा, शुक्ला और सुरजीत-के साथ भी···वही। और फिर जैसे सारी दिल्ली मैं भी उनके साथ घूम आयी, कभी गलियोंमें, कभी सड़कोंपर, कभी क़स्साबपुरा-की बस्तीमें और कभी कनाट-प्लेस।

सबसे पहले मधुसूदन···जो मुख्य पात्र न होते हुए भी एक आकर्षक और कुछ उलझा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ व्यक्तित्व है। उसके माध्यमसे मुख्य पात्रोंसे मेरा परिचय होता है। मधुसूदन कहीं भी अपनेको समझ नहीं पाता। उसकी सारी जिन्दगी जैसे एक बन्द कमरा हो, जिसमें वह घुटता रहता है पर भाग नहीं पाता, न चाहते हुए भी उसमें रहता है। जैसे उसका अपना कोई अस्तित्व नहीं पर दूसरोंके अस्तित्वके होने और न होनेमें वह 'इण्टरेस्टेड' है···उनके ही चारों ओर वह चक्कर काटता है। यह शायद इसलिए कि हरबंस और नीलिमामें उसका होना व्यर्थ ही है और एक व्यर्थ इकाईकी सृष्टि करनेके अतिरिक्त वह और कुछ नहीं कर पाता।

मधुसूदनके चारों ओरका वातावरण बड़ा घुटा-घुटा-सा है। वह उस वातावरणसे भागना चाहता है पर भागकर फिर उसीकी शरणमें आ जाता है। (कारण शायद यही है कि आजकी जिन्दगी हर जगह इसी ढर्रे-पर चल रही है और यह घुटन हर जगह कुहरेकी तरह छायी है जो कभी हलकी तो हो जाती है पर पूर्णतः नष्ट नहीं होती।) उसके सामने 'धुन्धके गोले आकाशमें तैरते हुए सामने आ जाते हैं' और वह 'उन्हें इस तरहसे हाथसे हटानेकी चेष्टा करता है जैसे वे धुन्धके गोले न होकर रूईके गाले हों' पर वह कहीं भी इन्हें हटा क्यों नहीं पाता? उसमें इतनी सामर्थ्य क्यों नहीं? क्या वह महज़ एक डायरी नहीं है जिसमें हरबंस और नीलिमा अपने अन्तर्द्वन्द्व, अपनी समस्याएँ लिख जाते हैं और यह आशा नहीं करते कि वह उनकी समस्याओंमें, उनके जीवनके [illegible] संशोधन कर सकता है? उसे अपनी जिन्दगी इतनी उलझी हुई क्यों दिखती है क्योंकि वह न हरबंस है, न नीलिमा। यह उलझन उसके सामने धुन्धके गोलोंकी तरह घूमती रहती है। यह धुन्ध रोशनीमें कम क्यों नहीं होती, क्यों अँधेरेमें ही वह चाहता है कि इन गोलोंसे मुक्ति पा सके? क्या वह रोशनीसे डरता है, जिसमें वह खुदको पहचान सकता है? बसकी भीड़से निरक्षर जैसे किसीको आरामदेह कारमें सुख मिले वैसे ही सबसे कटकर मधुसूदन अँधेरे कमरेमें कम्बल ओढ़कर ही शान्ति पाता है। पर क्या केवल इसलिए कि वह एक पत्रकार है और दूसरोंकी उलझनें स्वयं उसकी उलझन बन जाती हैं? क्या यही एक पत्रकारकी ज़िन्दगी है जिसे आत्मतोष बदा ही नहीं?

मधुसूदन ही नहीं, हरबंस और नीलिमा भी इसी घुटनके वातावरणमें जी रहे हैं। उपन्यासकी मूल समस्या इन्हीं दो पात्रोंके रूपमें आती है। ये दो पात्र जैसे दो [illegible] नान्तर चलती हुई रेखाएँ—जो एक दूसरेसे हमेशा दूर ही कटकर चलती हैं, वे कहीं भी मिल नहीं पातीं। इस अन्तरालका कारण वैवाहिक बन्धन हो या नीलिमाका परिवर्तन-शील चरित्र···पर दोनों पात्र स्थान-स्थानपर अपनेको टूटता-सा अनुभव करते हैं। दोनोंके भावोंकी विषमता तथा विपरीत व्यक्तित्व ही सारे परिवारके टूटनेका कारण है। हरबंसके टूटनेका कारण नीलिमा है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीलिमाके टूटनेका कारण हरबंस और सम्भवतः यह टूटना पति-पत्नीके रिश्तेको लेकर है। हरबंस कहता भी है—'मेरे अन्दर कहीं एक खालीपन भी है जो धीरे-धीरे इतना बढ़ता जा रहा है कि मेरे व्यक्तित्वके सब कोमल रेशे झड़ते जा रहे हैं।' उसे अन्दर-ही-अन्दर घुन लग चुका है।' हरबंस जाना चाहता है पर वह नहीं जानता कि कहां जा रहा है, क्यों जा रहा है, किस ओर, किस उद्देश्यसे जा रहा है—जैसे वह कोई मशीन हो, किसीने चाबी दी और वह ऑटोमेटिकली चल पड़ा—पहले तेज़ीसे···पर स्प्रिंग ढीली होते ही उसकी चाल धीमी हो गयी, वह रुक गया और घिसटने लगा। और शायद यही कारण है कि पाठकको यदि उपन्यासके किसी पात्रसे सहानुभूति होती है तो वह हरबंस ही है। पर हरबंसके टूटनेका स्पष्ट कारण क्या है? नीलिमा? या नीलिमाका उसकी पत्नी होना? या वैवाहिक बन्धन? या नीलिमा को न समझनेकी असमर्थता? या अपनी हीनता? या फिर शुक्लाके प्रति एक स्पष्ट-सा आकर्षण? वह क्यों अनुभव करता है कि—'मैं तबसे अब तक निरन्तर अंधेरेमें भटक रहा हूँ। जहाँ मुझे किसी भी तरफ़ उजालेका कोई मार्ग नज़र नहीं आता।····मुझे लगता है जैसे मैं एक काल-कोठरीमें बन्द हूँ और जीवन-भरके लिए उस काल-कोठरीमें बन्द रहकर हाथ-पैर पटकते जाना है।"

नीलिमाका अन्तर्द्वन्द्व सबसे अधिक सुलझे हुए रूपमें उभर कर आया है (और शायद यदि आप मधुसूदनके बदले नीलिमाके रूपमें आते तो उपन्यास और अधिक सुलझा हुआ होता) नीलिमा हरबंसको समझती है और साथ ही स्वयंको भी। वह अनुभव करती है—'हम दोनोंके बीच कहीं कोई चीज़ है जो हम दोनोंको कहीं खटकती रहती है। हम दोनों चेष्टा करके भी उसे अपने बीचसे निकाल नहीं पाते।' नीलिमा आधुनिक नारीका प्रतीक है। उसके व्यक्तित्वमें कुछ ऐसा है जो मुक्ति चाहता है। घुटे हुए वातावरणमें वह अपना विकास नहीं कर पाती। वह अपनी प्रतिभा और योग्यताके उपयोगसे कुछ और बनना चाहती है। यह 'बनना' ही कभी-कभी उसके और हरबंसके बीच एक बड़े अन्तरालका कारण बन जाता है। बन्धनोंमें घिरकर नीलिमा नहीं रहती। वह हरबंससे कटकर जीना चाहती है क्योंकि वह अनुभव करती है कि उसका 'न होना' उसके 'होने' से बेहतर है। नीलिमा हरबंस-को वह नहीं दे पाती जिसकी हरबंस माँग करता है—एक पतिके रूपमें, और यहीं वे समझते हैं कि शायद उनकी ज़िन्दगी इतनी बोझिल न होती अगर वे दोस्तके रूपमें रहते, पति-पत्नीके रूपमें नहीं।

उपन्यासके सारे वातावरणपर ही एक धुन्ध-सी छायी है। कभी-कभी धुन्धके हटनेसे कुछ क्षणोंके लिए सजीवता उभर आती है···क़स्साबपुराकी बस्ती···दिल्लीकी रौनक़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

…कोठे…सुजाताका व्यक्तित्व शुक्लाका चेहरा…भार्गवका आकर्षण…आदि-आदि …पर शीघ्र ही धुन्ध फिर गहरी हो जाती है और शायद अँधेरे बन्द कमरोंमें साफ़-साफ़ देखनेमें हम जैसे असमर्थ हो जाते हैं…

इस उपन्यासका शीर्षक अगर 'अँधेरे बन्द कमरे' न होकर 'टूटते हुए' 'धुन्ध' या 'तो' होता तो ज्यादा सार्थक होता। हर घटनाके बाद एक 'तो ?…' लगता है और जैसे गेंदकी तरह कथा या घटना उछाल दी जाती है और फिर कथा आगेको बढ़ती है।

मैं शायद 'अँधेरे बन्द कमरे' पढ़कर उन्हें रोशन नहीं कर पायी और मैंने भी लिखा है, अगर ग़लत हो तो क्षमा करें, पर अच्छा यही होगा कि यदि आप फिर न गये हों और मेरे खतको 'एडीटोरियल' मुहर लगाकर वापस कर देनेकी इच्छा हो तो उत्तर दें जिससे अँधेरे बन्द कमरोंमें कुछ उजाला तो हो।

आपकी भतीजी
सुधा अरोड़ा

'अँधेरे बन्द कमरे' और साझेकी डोर

प्रिय सुधा,

हवा और रोशनीकी बात एक अँधेरे कमरेमें रहकर भी की जा सकती है। ऐसा न होता, तो आपसी अपरिचयको किसी-न-किसी रिश्तेमें ढालनेकी आवश्यकता न होती—उस रिश्तेका कोई भी नाम क्यों न हो। पर हम इस कमरेमें रहनेके इतने आदी हो चुके हैं कि रिश्तोंसे बाहर एक खुले और नामहीन सम्बन्धकी बात सोच ही नहीं सकते। सोचना चाहें, तो उससे कमरेकी मर्यादा टूटती है। इसीसे एक साधारण पत्रके लिए भी इस तरहकी आवश्यकता महसूस होती है।

'अँधेरे बन्द कमरे, जिनमें कोई रोशनदान नहीं'…और उपन्यासका शीर्षक 'अँधेरे बन्द कमरे' न होकर 'टूटते हुए', 'धुन्ध' या 'तो' होता तो…मेरी समझमें नहीं आता कि एक उपन्यास (या किसी भी रचना) के शीर्षकको लेकर इतना आग्रह क्यों होता है। तुम्हारी दोनों बातोंमें अन्तर्विरोधके बावजूद मनमें आता है कि क्या किसी भी रचनाका कोई एक ही शीर्षक हो सकता है? तुम्हारा तीन-तीन सुझाव देना अपनेमें ही हर शीर्षकके अधूरेपनकी गवाही नहीं है? इस अधूरेपनसे बचनेका एक ही रास्ता है—कि कोई शीर्षक दिया ही न जाये। शीर्षक रचनाकी सार्थकताको बढ़ाता नहीं, हाँ, उसके अर्थोंको सीमित जरूर कर सकता है। फिर भी एक या दूसरा शीर्षक देना आवश्यक हो जाता है, क्योंकि बिना शीर्षकके रचनाकी निजता स्थापित नहीं होती। और जब शीर्षक दिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता है तो उसके पीछे कोई-न-कोई मान-सिक संगति भी रहती ही है। इसलिए अब भी चुनना हो, तो मैं इस उपन्यासके लिए फिरसे यही शीर्षक चुनना पसन्द करूँगा।

'टूटते हुए', 'धुन्ध', 'तो'—ये तीनों शीर्षक एक प्रक्रियाका संकेत देते हैं, जबकि 'अँधेरे बन्द कमरे' का संकेत एक स्थितिको कर है। हरबंस और नीलिमा (और वे सलोग जो उनकी-सी ज़िन्दगी जी रहे हैं) अन्दर और बाहरके परिवेशमें आज जहाँ अपनेको पाते हैं, वह प्रक्रियासे अधिक स्थिति है—कमसे-कम उनकी ज़िन्दगीके लिए तो है ही। कलको स्थिति बदल जाये, ऐतिहासिक दृष्टिसे सच हो सकता है, पर उपन्यासका सम्बन्ध आजके यथार्थसे है। यह यथार्थ एक गतिरोध है—मध्यवर्गके दाम्पत्य-सम्बन्धोंमें आया गतिरोध। हरबंस और नीलिमा इस गतिरोधमें रहकर छटपटाते हैं पर इससे उबर नहीं पाते। उनके अन्दर एक उत्थान है—आशा और प्रयत्न—पर यह उत्थान बार-बार 'अँधेरी गोल दीवारोंसे' टकराकर लौट आता है। आरम्भसे अन्त तक तनाव और निष्फल संघर्षकी स्थितिमें जीते हैं। सारी कोशिशोंके बावजूद जहाँके-तहाँ बने रहना उनकी अनिवार्य स्थिति है—स्थिति, नियति नहीं। नियतिका संकेत मधुसूदनके जीवनमें है, पर उसकी चर्चा मैं आगे चलकर करूँगा।

जो लोग स्थितिकी वास्तविकताको स्वीकार करते हिचकिचाते हैं, उन्हें अन्तमें नीलिमाका हरबंसके पास लौट आना ग़लत लगता है। पहले पेरिससे भी वह इसी तरह हरबंसके पास लौट आयी थी, इससे उनका खयाल है कि एक ही स्थितिको उपन्यासमें फिरसे दोहराया गया है। पर क्या सचमुच ऐसा ही है? क्या नीलिमाके दूसरी बार लौट आनेसे वह मजबूरी अधिक रेखांकित नही होती—स्त्री और पुरुषके निर्भरता चाहते रेशोंकी मजबूरी—जो साथ जीनेकी सारी ऊब और कसमसाहटके बावजूद उन्हें एक-दूसरेसे बाँधे रखती है? उनके बीच एक गहरी खाई है, और आस-पास एक गहरा खला—वे चाहकर भी इन्हें भर नहीं पाते पर न भर पानेकी मजबूरीसे बचकर क्या वे रह सकते हैं? एक-दूसरेसे तटस्थ होकर जी सकते हैं? अँधेरेमें भटकना और बन्द होकर रहना उनकी मजबूरी है, फिर भी वे एक ही कमरेमें एक साथ हैं—यह कमरा उनकी साझी ज़िन्दगी है। अँधेरे या बन्द होनेसे मुक्ति एक-दूसरेसे हटकर उनके लिए नहीं है—न एकके लिए, न दोनोंके लिए। इसलिए रात-दिन आपसमें टकराते हुए भी एक साथ जिये जाते हैं, क्योंकि मुक्ति उनके लिए यदि है तो एक-दूसरेमें, और एक-दूसरेकी साझी-दारीमें ही है। पर मुक्ति उन्हें मिल नहीं पाती—इसका कारण उनके अलग-अलग व्यक्तित्व ही नहीं वह वातावरण भी है जिसमें कि वे जीते हैं।

पर तुमने अपने पत्रमें इस वातावरणकी बात नहीं उठायी। तुम्हें शायद लगा कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वातावरण मूल कथामें अन्तराल देने और उपन्यासमें सजीवता लाने भरके लिए है। मधुसूदन, जो हरबंस और नीलिमासे कहीं ज़्यादा इस वातावरणका साक्षी है, 'कभी गलियोंमें, कभी सड़कोंपर, कभी क़स्साबपुरा-की बस्तीमें और कभी कनाट-प्लेस' में क्यों भटकता है, महज़ एक पत्रकार होनेके नाते? या इसलिए कि वह आजके उन अभिशापित व्यक्तियोंमें-से है जो सजग और सचेत होते हुए भी ज़िन्दगीकी धुरीसे अपनेको टूटा हुआ पाते हैं? वह भटकता है, अलग-अलग लोगों-के बीच जीता है, अलग-अलग परिस्थितियों-को एक सूत्रमें रखकर देखना चाहता है, क्योंकि टूटकर जीनेकी स्थिति उसे स्वीकार नहीं है, और वह इसे अपना 'दर्शन' बनाकर नहीं रह सकता। ठकुराइनसे लेकर पॉलि-टिकल सेक्रेटरी तक और निम्मासे लेकर सुषमा श्रीवास्तव तक ज़िन्दगीका भूल-भुलैया उसके सामने है जिसके सिरेपर खड़ा वह अपने लिए रास्ता खोजना चाहता है। ऐसा रास्ता जो उसे 'निरन्तर टूटते जाने' से बचा-कर सम्बद्ध होनेकी दिशामें ले जाये। इसी-लिए वह हर व्यक्तिकी ज़िन्दगीको जैसे अपने अन्दर भोगता है। हरबंस और नीलिमाका जीवन एक ऐसा संघर्ष और द्वन्द्व है जो उन दोनों तक ही सीमित है। लेकिन मधुसूदनका जीवन द्वन्द्व नहीं, क्राइसिस है जो उस तक ही सीमित नहीं। अपनी खिड़कीके पास खड़ा वह दूर-दूरकी बत्तियोंको देखता हुआ इस क्राइसिसके सूत्रों-को एक जगह समेटनेका प्रयत्न करता है—और यह समेट सकनेकी प्रक्रिया ही उसकी रोज़की ज़िन्दगी है। निरन्तर इस प्रक्रियामें रहनेसे ही आधी-आधी रात तक वह सो नहीं पाता—सराय रुहेला स्टेशनसे सुनाई देती इंजनकी चीख़ हर वक़्त उसके अन्दर गूंजती है। ओखलामें घूमती लड़कियोंकी आंखों और आकाशमें उड़ती चीलोंकी फड़फड़ाहटमें वह एक संगति ढूंढ़ता है—दूहोंकी घंटी ज़मीन और पुलके नीचेसे गुज़रती गाड़ियोंमें, अपने ख़ुश्क होठों और नीलिमाके ज़ख़्मी खरोंचते पैरोंमें। उसे लगता है कि ज़िन्दगी-का वास्तविक स्वर वह नहीं है जो कॉफ़ी-हाउसके क़हक़हों या आधी रातको कोल्हापुर पर चिलकते पहियोंमें सुनाई देता है—वह स्वर वास्तवमें दूसरा है—रातको शीशेका जग टूट जानेपर बाहर दरवाज़ेपर दी जाती दस्तककी, या ठण्डे खाली प्लेटफ़ार्मपर प्रतीक्षा करते ठिठुरे पैरोंका। वह इसी स्वर-को पकड़ना, पहचानना और अपनी ज़िन्दगी-में आत्मसात् करना चाहता है। यही तो है जो टैक्सीका मीटर डाउन होनेपर, और यह पूछे जानेपर कि उसे कहां चलना है, उससे कहला देती है—'क़स्साबपुरा'। इसका यह अर्थ लेना—मेरे एक मित्रकी तरह—कि मधुसूदन सुषमा-जैसी 'पढ़ी-लिखी' और 'व्यक्तित्व-सम्पन्न' लड़कीके सम्पर्कमें आकर निम्मा-जैसी अनपढ़ लड़कीसे 'शादी करने' का देता है, एक ऐसी सादगी है जिसपर कि कुछ

[शेष पृष्ठ १११ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हलकी-सी छायाकी मानिन्द···हौले-
पास आकर वह ठिठक जाती है।—
जलमें जैसे हाथ गिर गया हो।···एक
अनुभूति मुझे बाँध लेती है। और मैं
बनकर, देखेका अन-देख कर पलकें मूँद
हूँ···

सरककर छाया तनिक और समीप आती
हवामें दबाव-सा पड़ता है···मैं अनुभव
हूँ···वह और समीप आ गयी है।
कुछ गरमाहटका-सा भान होता है। मेरी
की गति रफ़्ता-रफ़्ता बढ़ जाती है···
धीरे-धीरे गहरा और गहरा। नसोंकी
में बेचैन-सी सनसनाहट।

मेरे कान गरम हो गये हैं···और···
मैं करवट बदलकर पलकें मूँद लेता
हूँ!···

लोहेकी चादरें, एकपर एक···दूर-सुदूर

हिमांशु जोशी

कहानी नहीं

आगे बढ़ती कहानीके लिए लेखकके शब्द हैं :

'कहानी मात्र कहानी ही नहीं रही अब, परम्परासे परे कुछ और भी है—यथार्थका तटहीन प्रतिबिम्बन—एक नये सन्दर्भमें, एक सचाई।—सांकेतिक। शब्दोंका ऐसा संगीतमय, साकार, सजीव चित्र—सरकरामाकी तरह जिसके विविध आयाम होते हुए भी, हर आयाम अपनेमें पूर्ण,—एक पूरा चित्र हो।—और 'कहानी नहीं' मोनताज़ शैलीका सवाक् सिनेरियो हो जैसे—अकथाकी दिशा वही है, यूँ इसमें कथानक होता भी तो क्या होता?

तक चली गयी हैं। किंचित् गन्दमी रंगकी भुरभुरी मिट्टी और कुछ काशकी-सी, जली-जली, सूखी-सूखी-सी उपेक्षित झाड़ियाँ, जिनके छितराये पत्तोंपर वैसी ही गेंहुई-धूल बिखर गयी है। पत्तोंका धारीदार, धानी रंग बदल-सा गया है···राम बाँसके दूधिए, प्लास्टिकके-से घने फूल मीनारकी तरह खड़े हैं!···

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे अहसास होता है—राम बाँसकी नस्लका मैं भी हूँ !···मेरे चारों ओर भी काँटे-ही-काँटे हैं—नुकीले ! काँटोंको मैं छूना चाहता हूँ। अपने दोनों हाथोंको फैलाता हूँ, जैसे जलकी थाह ले रहा हूँ।···कोई गिल-गिली-सी वस्तु अँगुलियोंके पोरोंको छूते ही सरकने लगती है। राम बाँसकी जड़ोंको रस्सीकी तरह लपेटे कोई कुरबुरैली चीज़ गतिमान होकर अपने अस्तित्वका भान कराती है। एक सिहरनके साथ मैं अपने क़दम आगे रखता हूँ। इधर-उधर, ऊपर-नीचे देखता हूँ।···और हाथोंको अपनेमें लपेट लेता हूँ···

मेरी आँखें, बड़ी-बड़ी, बहुत बड़ी हो गयी हैं।···दो जल-हीन जलाशयोंकी तरह—भय-संकुल, उदास !

मेरा शरीर शनैः-शनैः शान्त !···शव-की तरह।

और···

मेरी अँगुलियाँ पहलेसे अधिक लम्बी हो गयी हैं।···पाँच गिल-गिली रबरकी रस्सियों-की तरह दूर तक चली गयी हैं !···बिजली-की-सी झनझनाहटके साथ, मुझे झटका-सा लगता है।···और बैरोमीटरका पारा धरती-पर काँपता हुआ, बिखरकर छिटक जाता है।···

और कुछ उनींदे रंग, शैवारी राखकी तरह···

झीनी और झीनी परछाईं···निःशब्द, अशरीरी प्रतिबिम्बोंकी भाँति !—बुनी हुई हवाका इन्द्र-धनुष, जैतूनी-बादलोंमें लिपटता लिपटता दृश्य-विहीन हो आता है।

और इस्पातकी ठण्डी चादरें, ताशके पत्तों के घरकी तरह आड़ी-तिरछी खड़ी हो जाती हैं। सुईकी-सी नुकीली पत्तियोंवाले, दुबले पतले चीड़, देवदारके दरख्तोंकी हवामें झुलाती फुन्गियाँ, एक साथ झुक-झुककर झूलती हैं तो लगता है—हरी-हरी, मोर-जैसी चिकनी लहरें दूबके फ़र्शपर फिसल रही हैं···

साँय-साँय बहती बयार। कहीं-कहीं पहाड़की चोटियोंपर कच्ची मिट्टीका गोला मटका टूट गया है···और ढेर सारा दही बिखर गया है।

अपनी ही छाया अजनबी बन जाती है।—वस्तुसे परे भी उसका अस्तित्व है न वह भी एक इकाई बनकर, स्वयं हिलती डुलती और हरकतें करती है। चीड़के पेड़ नृत्यकी भंगिमामें हैं····

मन···परकटा, उड़ना चाहता है, उड़ नहीं पाता। छटपटाना चाहता है, स्वेच्छासे यह भी सम्भव-रहित। अभी-अभी घोंसलेसे फुदककर आये, भूरे चूज़ेकी तरह अपने गरम-नरम रोयें फटकारता है। अचरजसे चारों ओर देखता है···एक कुतूहल-सा नन्हा भाव, एक मासूम जिज्ञासा···सोया हुआ संकल्प सिमटने लगता है।···परन्तु गिलगिली वस्तुपर गाँठ नहीं बंधती ! मुड़ा-तुड़ा-सा बन्धन ढीला होकर बिखर जाता है। और तरल जलकी तरह धरतीपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरे मुँहका ज़ायका बिगड़ गया है। हथेलीपर उगा अँकुआ टूट गया है।
नर्सने आज फिर अनधिकार चेष्टा की है। मेरे रोम-रोममें तिक्त दवा भर दी है।
लोग कहते हैं—
सफ़ेद साँपका जहर नहीं होता।
और सुबहका
सुनहरा सपना अधिकांशतः सच निकलता है।...

एक साथ चुभने लगती हैं...

नर्स कहती है—यह दवाका असर है। दवा न पियो तो दर्द न होगा।

दवा नहीं पियूँगा तो मैं मर जाऊँगा।

गेंहुई धूल कुहासेकी मानिन्द फैल गयी है। गरम-गरम लावा बिखर रहा है...केवल काँशकी झाड़ियाँ, राम-बाँसके कँटीले काँटे... रेतमें दबी उलटी कीलोंकी तरह खड़े हैं। कोई लिजलिजी वस्तु, जिसका रंग धूलका रंग हो गया है, लहू-लुहान हो गयी है। बटी रस्सी लावेमें डूबकर ऐंठ रही है।... मेरे दोनों पाँव घिरे हैं।

बर्फ़का रंगहीन पानी रेतमें लकीर बना रहा है।

मेरी बोझिल पलकें मिचमिचाकर कोई किनारा खोजती हैं...

एक रीते बिस्तरेपर सफ़ेद चादर बिछाकर, मुट्ठी-भर लाल पंखुड़ियाँ बिखेर दी हैं—किसीने!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गरम-गरम हथेलियोंका स्पर्श अब उत्तेजित नहीं करता। आँखोंपर धुँधली उधार खरीदी शराब, मुसकराहटका मीठा साइनाइट···!

दो काठके टुकड़े सीनेपर पड़े हैं। जुड़ी हुई होंठोंकी पंखुड़ियाँ मुरझा गयी हैं। इस्पातकी चादरें, चीड़के दरख्त···मैं हथेलीकी पगडण्डियाँ देखना चाहता हूँ।···अन्धे अजगरकी तरह ठण्डी देह छटपटाती हैं····मुझे कुछ नहीं दीखता···केवल कुछ चिनगारियाँ [illegible] रही हैं। धुआँ बिखर रहा है···

वह मेरे कानोंमें कुछ कहकर फुसफुसाती है। मन-ही-मन उसकी व्यंग्य-भरी मुसकराहट अँगड़ाई लेती है।···एक निगूढ़ भावसे।

और मुझसे कटकर छाया झरनेके पानीमें गिरती है।···किसी जानवरकी खालकी तरह तैरती-उतरती हौले-हौले धुएँमें निकल जाती है।

Gram : MATACANTOS
CALCUTTA.

Telephone :
OFFICE : 22-3226
RESI : 55-2620

Asutosh Mookerjee & Co. Private Ltd.

12, RAJA WOODMUNT STREET,
CALCUTTA-1.

Importers & Manufacturers of :
WIRE ROPES, CHAINS LIFTING ACCESSORIES,
WAGON FITTINGS & MARINE STORES ETC.

Agents for :
LIFTING ACCESSORIES
S. TURTON & CO., LTD., BIRMINGHAM.

Workshop :
22, RAMLAL MOOKERJEE LANE,
SALKIA, HOWRAH.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामनारायण शुक्ल

ता री ख़

एक कोई भी स्थिति आपके सामने है। लेखकने प्रथम प्रश्नमें भी सारी तटस्थता उँड़ेल दी है। नमिता और महादेवको देख मन जैसे विचारके किसी एक बिन्दुपर ठहरता है लेकिन महत्त्वपूर्ण तो स्थिति है···केवल अनावृत्त स्थिति भी तो कहानी हो सकती है, घटना-दुर्घटनाकी है आवश्यकता ?

फ़र्स्ट क्लासका वेटिंगरूम स्टेशनसे बाहर, सड़क पार कर, दूसरी ओर था।

मैं वहाँ कभी नहीं गया। इक्केमें बैठते हुए उस ओर अनायास ध्यान चला जाता था।

सिवाय थर्ड क्लासके उस वेटिंगरूमके सारा-स्टेशन बहुत खूबसूरत और साफ़-सुथरा था। मेरे मनमें दूसरे किसी स्टेशनको देखकर इतना प्यार कभी नहीं उमड़ता।

फ़र्स्ट और सेकण्ड क्लासका वेटिंगरूम एक साथ और बहुत अच्छा था। बाथरूममें एक बहुत ही खूबसूरत-सा आईना था और कमरेमें एक बहुत ही शानदार गोल टेबुल !

जब मैं बहुत छोटा था और दूसरोंके साथ यात्राएँ करता था तो यहाँ आना नहीं होता था। वे लोग साधारणतया लेट गाड़ियोंकी प्रतीक्षा प्लेटफ़ार्ममें बैठे-बैठे ही किया करते थे। कई बार सामान वेटिंगरूमके सामने ही रखा रहता था और मुझे किसी सामानपर चुपचाप बैठे रहनेको कहा जाता था। मैं चुपचाप बैठा हुआ घूम घूमकर पीछेकी ओर देखता रहता था।

अकसर वहाँ ताला बन्द होता था। लेकिन जब नहीं होता था तो सोचता था कि अकेले होता तो ज़रूर अन्दर जाकर बैठता।

पहली बार अन्दर अपने बड़े चाचाके साथ गया था। उसके बाद यात्रा भी सेकण्ड क्लासमें ही की थी। आराम-कुरसीमें बहुत देर तक बैठा हुआ छतकी ओर देखता रहा था। छतसे लटकते खूबसूरत-से पंखेको देखकर स्विच ऑन करनेकी इच्छा हुई थी लेकिन जाड़ेके दिन थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब सोचा था, कभी गरमीके दिनोंमें यहाँ आऊँगा और आरामकुरसीमें लेटे हुए बहुत देर तक आराम करूँगा।

फिर लम्बे अरसे तक गरमीकी किसी दोपहरको वहाँ आराम करनेका संयोग नहीं आया।

■

काफ़ी समय बाद (शायद १६-१७ वर्ष) पिछली गरमियोंमें वहाँ कुछ घण्टे ठहरना पड़ा था। स्टेशन पहुँचा तो पता लगा कि ट्रेन ढाई-तीन घण्टे लेट है।

आज वेटिंगरूममें ताला बन्द नहीं था। होता भी तो मैं खुलवा लेता। साथमें नमिता (छोटी बहन) थी।

गाड़ी लेट होनेकी बात सुनकर नमिताका चेहरा उतर गया था। मैंने मुसकराते हुए कहा था, "चिन्ता करनेकी कोई बात नहीं है, यहाँका वेटिंगरूम बहुत अच्छा है। समय अच्छा ही बीतेगा।"

"तुम तो ऐसा कह रहे हो जैसे मैं जानती ही नहीं। बोरडम ही होगा।"

मैंने जवाब नहीं दिया। मैं यदि उससे कहता कि वर्षों पुरानी मेरी यह आकांक्षा है कि कभी गरमीके दिनोंमें यहाँ कुछ देर आराम करूँ तो शायद वह हँसती।

क़ुलीने सामान क़रीनेसे रखकर सलाम किया। इससे पहले कि मैं उसे पैसे दूँ, नमिताने दे दिये।

अब मैंने अपने आस-पास देखा।

एक कोनेमें नीले रंगके कपड़े पहने ख़लासी-जैसा एक आदमी बैठा था। उसकी क़रीब बत्तीस-तैंतीस थी। वह इस तरहसे बैठा था जैसे बहुत ज़्यादा काम करके थक गया हो और अब घण्टों यहाँ बैठेगा।

मैं गोल टेबुलके पास रखी एक कुरसी पर जाकर बैठ गया। नमिता सामान ठीक करने लगी।

"गाड़ी आनेमें अभी काफ़ी देर है। थोड़ी देर आरामसे बैठो, उसके बाद सामान ठीक कर लेना।"

उसने एक बार मेरी ओर देखा, फिर उस ख़लासीकी ओर। मुझे अपनी आवाज़के बारेमें शक हो गया। क्या मेरी आवाज़ रूखी थी?

दूसरे लोग मुझे समझ नहीं पाते, मेरी आवाज़को और भी नहीं। कृत्रिम आवाज़से अधिक मुझे दुनियामें कोई चीज़ नहीं उबाती। कृत्रिम मधुर आवाज़! और शायद बराबर इसी कान्शसनेसके कारण कि कहीं मेरी आवाज़में बनावटी मधुरता न आ जाये। परिणाम उलटा होता है। शायद बनावटी रूखापन आ जाता है।

नमिताके चेहरेकी ओर देखकर मैं मुसकराया—"क्या बात है? गाड़ी लेट होनेमें मेरा तो कोई हाथ नहीं है।"

"माँ कह रही थीं कि आज दिशाशूल है, आज मत जाओ। लेकिन तुम....."

मैंने कुछ नहीं कहा। नमिताने बहुत भोलेपनसे यह बात कही थी। बहस करनेके लिए नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने पाकेटसे एक सिगरेट निकालकर जलायी। धुआँ कमरेमें फैलने लगा।

"चाय पियोगी क्या ?" थोड़ी देर बाद मैंने नमितासे पूछा।

"इतनी गरमी और इस दोपहरमें चाय! तुम सचमुच झक्की हो।"

उसकी बात सुन मुझे हँसी आ रही थी लेकिन मैं हँसा नहीं। हँस देता तो वह क्या मानती। क्षण-भर सोचनेपर मुझे लगा कि इस गरमी, दोपहर तथा गाड़ीके लेट होनेके लिए मैं ही ज़िम्मेदार हूँ। मुझे पहले-से ही यह सब जानना चाहिए था। पहलेसे ही.....

मैंने घड़ी देखी। ट्रेन आनेमें अभी भी दो घण्टे थे। नहानेकी इच्छा होने लगी। नहानेके बाद चाय पियूँगा—मैंने सोचा। चाय थर्मसमें थी। उसको बने अभी तीन-चार घण्टे हुए होंगे। टेस्ट ज़रा भी नहीं बिगड़ा होगा।

चायके बारेमें सोचते हुए मुझे अपने पहलेके दिनोंकी याद आ गयी। जाड़ेके दिनोंमें रोज रातको माँसे कहकर पूरी थर्मस में चाय बनवाकर रखता था। सोचता था कि कमसे कम रातको चार-पाँच घण्टे पढ़ूँगा और बीच-बीचमें चाय पीता जाऊँगा। लेकिन खानेके बाद अकसर नींद आ जाती थी और सुबह तभी उठता था जब माँ चाय लाकर मुझे जगाने आती थीं। मैं बड़ी हसरतसे थर्मसकी ओर देखता था। थर्मसकी चाय या तो फेंक दी जाती या फिर नौकर

कोई एक दिन, एक तारीख़
और इतना
लम्बा जीवन !
जीवन—किसी ख़ास
तारीख़के पहलेका
और बादका।
तभी कोई ट्रेन धड़धड़ाती
हुई स्टेशनपर आ
खड़ी होती है।
मैं चौंकता हूँ।

या महरिनको दे दी जाती। महीनेमें पाँच-सात दिन ही ऐसा होता था जब मैं कुछ घण्टे पढ़ता था और थर्मसकी चायका उपयोग होता था।

उन दिनोंकी यादके साथ और भी बहुत सारी बातें याद आ गयीं और जब मैंने दुबारा घड़ीकी ओर ध्यान दिया तो पैंतालिस मिनिट बीत चुके थे।

सवा घण्टा ! अन्दर कहीं नहानेकी इच्छा अब कम हो गयी थी। नमिता स्टेनली गार्डनरका कोई उपन्यास पढ़ रही थी। मैं नहीं पढ़ पाता। कितनी ही उलझी हुई स्थितियाँ क्यों न हों मैं बराबर जान जाता हूँ कि अपराधी कौन है। शायद इण्ट्यूशनसे। और पढ़नेका मज़ा जाता रहता है।

मैं जाकर सामानके पास खड़ा हो गया और थर्मस लेकर फिर वापस आ कुरसीपर बैठ गया; नहीं, इस बार कुरसीपर नहीं, आरामकुरसीपर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थर्मस मैंने नीचे फ़र्शपर ऐसी जगह रख दिया जहाँ हाथ आसानीसे पहुँच सके। शायद चायका पास रखा होना ही उसे पीनेकी अनुभूति दे रहा था। मुझे लगा, आज मैं फिर वही कर रहा हूँ जो पढ़नेके दिनोंमें किया करता था।

लेकिन चाय मैंने पी नहीं। कुछ देर बाद सिगरेट पीनेकी इच्छा ज़रूर हुई लेकिन सिगरेट थी नहीं।

मुझे उस खलासीके वहाँ होनेका एहसास हुआ।

"क्या तुम बाहरसे मेरे लिए एक पैकेट....."

वाक्य पूरा नहीं कर पाया। आश्चर्य हुआ। इतनी देरसे यहाँ हूँ और इस ओर ध्यान ही नहीं गया। उसका एक पैर घुटनोंके पाससे कटा हुआ था। पास ही लड़कीका एक पैर पड़ा था जिससे वह खेल-सा रहा था। वह उसे कभी हाथोंसे उठाकर अपने क़रीब लाता और कभी दूर रख देता।

सिगरेटोंके लिए उससे नहीं कह सका। कहता तो शायद वह ला देता। न जाने क्यों मुझे उसका नाम जाननेकी इच्छा हुई। मैंने सोचा, उसके नामके किसी हिस्सेमें 'राम' या 'कृष्ण' ज़रूर होगा।

हठात् उसने मुझे अपनी ओर देखता पाया। पैर उसने अपने बिलकुल बग़लमें रख लिया और शायद मेरी आँखोंसे बचनेके लिए दूसरी ओर देखने लगा।

मैंने नमिताकी ओर देखा। उसके चेहरेमें आतंकका भाव था। शायद किसीका ख़ून हो गया था या होनेवाला था।

अन्दर कहीं बहुत गहरे जाकर खलासीके चेहरेमें भी आतंकका भाव था। मुझे लगा, न तो बहुत देर तक नमिताके चेहरेकी ओर देखा जा सकता है और न खलासीके। आतंक!

यह सब सोचते हुए मेरी इच्छा हुई कि शीशेके सामने खड़े हो अपने चेहरेका भाव देखूँ। लेकिन शीशा बाथरूममें था और आरामकुरसी छोड़कर उठनेकी इच्छा तब भी नहीं थी।

मैंने हाथ बढ़ाकर थर्मस उठा लिया। फिर कुछ सोचते हुए बोला, "ज़रा सुनो!"

नमिता चौंकी लेकिन मैं उसकी ओर नहीं देख रहा था।

खलासी भी चौंका था और अपने कटे पैरसे लकड़ीवाला पैर जोड़ रहा था।

"आपने मुझे बुलाया क्या?"

"हाँ, ज़रा इधर आइए।"

वह बहुत कष्टसे धीरे-धीरे चलता मेरे पास तक आया। आकर क्षण-भर तक खड़ा रहा, फिर मेरे क़रीब ही बैठ गया। शायद उसे खड़े रहनेमें बहुत कष्ट हो रहा था।

"तुम चाय पीते हो न?"

उसने अजीब-सी नज़रोंसे मेरी ओर देखा। अन्दर कहीं अपने इस प्रश्नके लिए मैं बहुत लज्जित हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नमिता, जरा दो कप निकालना तो।" मैंने उसकी ओर देखते हुए कहा।

खलासीको बुलाया मैंने इसीलिए था कि रखी बास्केटसे दो कप निकालनेके लिए कहूँ, लेकिन उससे कह नहीं सका और खलासीसे कहना पड़ा।

नमिताने मेरी ओर देखा। शायद मैंने किसी ऐसी जगह डिस्टर्ब किया था पता लगनेवाला था कि खूनी कौन है। के चेहरेमें खीझ उभर आयी।

फिर भी उसने किताब रख दी और स्केटसे दो कप निकालकर दिये।

"लेकिन मैं चाय नहीं पियूँगी।" उसने मेरे पास रखते हुए कहा।

मैंने कुछ कहा नहीं। वह फिर जाकर किताब पढ़ने लगी।

"तुम्हारा नाम क्या है?" अनायास ही प्रश्न मेरे मुँहसे फिसल गया।

"महादेव।" उसका स्वर बहुत स्नेह था।

सुनकर मुझे हलका-सा धक्का लगा। 'राम' और 'कृष्ण'वाला अनुमान ग़लत था। फिर भी मेरे अनुमानमें आधी सचाई थी, मैंने साचा।

आखिर अपने-आपको समझा लिया ? अन्दरसे आवाज़ आयी।

मेरी इच्छा मुसकरानेकी हुई। या फिर हँसनेकी। लेकिन दोनोंमें-से कुछ भी मुझसे नहीं हुआ।

मैंने प्यालेमें चाय ढाली। सोचा, एक बार फिर नमितासे पीनेके लिए कहूँ। लेकिन वह फिर किताबमें डूब गयी थी। शायद कुछ अन्तिम पन्ने ही बाक़ी रह गये थे।

प्यालेमें चाय डालकर मैंने उसे महादेव-की ओर बढ़ाया। कुछ झिझकते हुए उसने हाथ आगे बढ़ाया। उसे चाय देते हुए मेरा ध्यान फिर उसके पैरकी ओर चला गया।

मैंने उसके चेहरेकी ओर देखा। वह शायद किसीको याद कर रहा था। कमसे कम मुझे ऐसा ही लगा।

मैंने बातें करनी चाहीं। शुरूआत कैसे की जाये—यह समझ नहीं आ रहा था।

"तुम्हारा यह पैर कैसे कट गया था?" मैंने यों ही पूछ लिया।

उसने एक बार मेरी ओर देखा। मेरे चेहरेमें जैसे कुछ खोज रहा था। फिर कुछ सोचते हुए बोला—"रेलसे!"

"रेलसे! कैसे?"

"शंटिंग करते इंजनसे!"

"क्या ऐसा अकसर होता है?"

"सालमें आठ-दस केस तो हो ही जाते हैं।"

न जाने कहाँसे उसके चेहरेमें ढेर-सी उदासी घिर आयी। मुझे लगा कि इस विषयमें बातें करना शायद उसे पसन्द नहीं।

"एक्सीडेण्ट कब हुआ था?"

"शनिवार १८ मार्च, १९६१ को रातके साढ़े आठ बजे!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौंककर मैंने उसके चेहरेकी ओर देखा। यह एक वाक्य कहनेमें ही उसकी साँस फूल आयी थी। 'कब'का उत्तर वह इस तरह देगा इसकी आशा मुझे नहीं थी।

मैंने नमिताकी ओर देखा, फिर महादेवकी ओर। नमिताकी किताबके केवल एक ही डेढ़ पेज रह गये थे।

कोई एक दिन, एक तारीख और इतना लम्बा जीवन!

जीवन—किसी खास तारीखके पहले और बादका।

तभी कोई ट्रेन घड़घड़ाती हुई स्टेशनपर आ खड़ी होती है।

मैं चौंकता हूँ।

"आपकी गाड़ी नहीं है।" वह कहता है और मुसकरानेका प्रयत्न करता है।

इतनी देर बाद, गाड़ीका लेट होना मुझे पहली बार खला।

■■

महिलोपयोगी एकमात्र उत्कृष्ट मासिक

'शृङ्गार'

प्रबन्ध सम्पादक : देवेन्द्र अग्रवाल ● सम्पादिका : लावण्यप्रभा

- विचारपूर्ण व उपयोगी लेख
- स्त्रियोपयोगी रुचिकर सामग्री
- रोचक मनोवैज्ञानिक कहानियाँ
- कविताएँ तथा सुन्दर गीत
- महिलाओंके इण्टरव्यू
- गृह-सज्जा, प्रसाधन समस्याएं, विचार-मंच आदि अनेक रोचक स्थायी स्तम्भ।

मूल्य : वार्षिक : ५ रुपये, मासिक : ५० पैसे

१३।३७, शक्तिनगर, दिल्ली-७

फ़ोन नं० : २२७३००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ममता अग्रवाल

इरादे, इरादे और इरादे

कोई खड़ा है, बैठा है, सोया है, और सोच रहा है, सोचे जा रहा है, सोचे ही चला जा रहा है—जैसे सिगरेटके छल्ले पर छल्ले पर छल्ले बनते जा रहे हों—केवल इरादे भी कहानी हो सकते हैं···चरित्र-चित्रण करें भी तो किसका ?

गोल घूमता ट्रैफिक देखता रहा। चारों ओर-से स्पीडसे घिरे होकर अपनेको स्थिर पाना अजीब अनुभूति देता है। हर समय अपने पाँव उखड़ते महसूस होते हैं।

रवि दिल्लीकी भीड़की बम्बईकी भीड़से तुलना करता रहा। बम्बईकी भीड़में ज़्यादा स्पीड है और प्रेशर भी। पर वहाँ यों पाँव उखड़ते नहीं लगते। दिल्लीकी गतिमें 'सिम्फ़नी' नहीं है, तरतीब नहीं है। हर सुर अलग-अलग 'पिच' पर बजता है। दुकानें धीरे-धीरे बन्द हो रही थीं। साढ़े सात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बजनेमें पाँच मिनट बाक़ी थे। रविने सोचा, आज वह नहीं आयेगी। फ़ोनपर उसने कहा था—'आइल सी।' उसने ज़ोर दिया था 'सी यू देन'। उसने फिर कहा था—'आईल सी।' रविने निश्चय कर लिया, अब वह नहीं आयेगी। फिर—उसे अपने-आप बैठकर पेपर लिख लेना होगा, डेवीज़, लीविस, एम्पसन, मैण्डर सब अभी रातमें पढ़ लेना होगा, सारा मैटर इकट्ठा कर जमाना होगा और फ़ाइनल ड्राफ़्ट तैयार करना होगा—अकेले! वैसे भी तो वही लिखता। पर सुधासे बहस कर लेता तो बहुत-सी परेशानियोंसे बच जाता। वे दोनों एक-दूसरेको 'एनसाइक्लोपिडिया' कहते हैं। यों वह नया क्या सुझाती, इन्हीं आलोचकोंमें रिचर्ड्स, डेचीस आदिका नाम जोड़ देती। पर वह अपने विचारोंपर आश्वस्त हो जाता। रविको लगता है, हर योजनाका 'कन्फ़र्मेशन' उसके लिए ज़रूरी है।

कॉरीडोरमें रीगलकी तरफ़ चलते हुए रविको लगा, यह ठीक नहीं है। उसे आज घरसे इतनी दूर नहीं आना था, उस बीच वह सारा मैटर पढ़ जाता और अबतक 'कविता-की सम्प्रेषणीयता'पर चार पृष्ठ लिख भी लेता। कितनी अजीब आदत है उसकी। हर छोटीसे छोटी बात घण्टों सोचेगा, 'डिस्कस' करेगा, फिर डरते-डरते कार्यान्वित करेगा। घरसे चिट्ठी आयी—'बाबूजीके चश्मेका नम्बर भेज रहे हैं, अपनी समझसे बनवा देना।' रवि तीन-चार दिन तक सोचता रहा, फिर ख़ूब ध्यानसे जेबमें चिट्ठी रखकर सुधीरसे बोला—'क्या करना चाहिए?' सुधीर शामको उसके साथ जाकर चलकर आर्डर दे आया।

बी० ओ० ए० सी० की नियॉन रोशनी लग रही थी जैसे रोशनीमें नील घोल दिया हो। रवि सड़क क्रॉस करनेके लिए किनारे पर खड़ा रहा। हरी बत्तीके लाल होनेके बीचका समय कभी-कभी पहाड़ हो जाता है। फिर दोनों सिरोंसे पैदल यात्रियोंके झुण्ड चल पड़ते हैं जैसे गाँवमें उसकी बहन सहेलियोंके संग खेलती थी 'फूलोंसे हम आते हैं।' लड़कियाँ किसी एकको चुनकर वापस ले जाती थीं। कितनी ही बार रवि सड़क क्रॉस करते समय यह खेल मन-ही-मन खेलता है और सोचता है—'अच्छा, इस बार मैं उस किसीकी चुन लूँगा।' पर वह किसीकी तरफ़ अपनी ओर नहीं पाता। लोगोंकी आँखें उनके चेहरोंमें क्यों नहीं रहतीं? कहीं वह छूटती बसोंके साथ दौड़ती होती हैं, कहीं दुकानोंके शो-रूममें जमी होती हैं, कहीं साड़ियोंको परखती हैं, कहीं पटरीकी किताबों की दुकानोंको कुरेदती हैं। दिल्ली की अजीब 'फ़िक्सिटीज़' का शहर है।

रवि बड़ी सावधानीसे 'महिला सीट' बचाकर बसमें आगे चला गया। अगली हाउसपर एक दस-बारह बरसका लड़का उसके पास बैठा। रविने सन्तोषकी साँस ली। उसे डर था, कोई मोटा व्यक्ति आकर बैठ जाये। मोटे लोग सीटका अधिकांश भाग हथिया लेते हैं और फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपको देखते हैं जैसे उन्हें घोर असु-
विधा हो रही हो। उनके साथ ऐसा महसूस
नहीं होता कि आप बैठे हैं बल्कि ऐसा कि
आप भर दिये गये हैं।

अँधेरा बसके साथ भाग नहीं रहा था,
पीछे छूटता जा रहा था। इस समय बस
दिल्लीके सबसे अँधेरे भागसे गुजर रही थी।
अँधेरा काला नहीं, नीला लग रहा था।
खिड़की खुलकर चल रही थी, और उसमें
हल्की-सी चुभन आनी शुरू हो गयी थी।
जाड़ेके महीनेमें रविको हमेशा लगता है,
कुछ हुआ रूमालमें बाँध ले और अपनी उस
हरकतोंमें जाकर बिखेर दे। ठण्ड और
सर्दी तो रूमालमें बाँधना प्रिय नहीं हो
सकता न!

उसका ध्यान फिर 'कविताकी सम्प्रेष-
णीयता' पर चला गया। रिचर्ड्सके अनुसार
भाषाके दो प्रयोग हैं: एक उद्धरण-प्रयोग, एक
विधान-प्रयोग। काव्यमें हम संवेदन-प्रयोग
करते हैं। इसलिए सम्प्रेषणीयताकी समस्या
उसके सामने नहीं है जिनके पास संवेदनका
उपकरण 'ऍपरेटस' है। पर 'डेवीज़' के कथन-
को जाय इसको कैसे जमाया जाये? वह तो
होता है··· इस बीच पास बैठा छोटा
लड़का उतर गया था और उसकी जगह
सलवार-कमीज पहने एक लड़की आ बैठी
थी। रवि थोड़ा सिमटकर बैठ गया।
लड़कीके कन्धोंपर दुपट्टेकी जगह कमीज़के
ही प्रिण्ट की पट्टी-सी थी। वह बराबर हाथ-
के बाल साध रही थी। आगेकी कुछ लटें

उसका मन ज़्यादा देर
किसी इरादेपर नहीं टिकता।
इरादा तो पहली स्टेज
होती है, उसके
बाद परामर्श, फिर परिणाम।
रविने अपने स्टॉपपर
उतरनेके पहले एक बार अच्छी
तरहसे उन लड़कियोंको
देख लिया और निहायत ईमान-
दारीसे घरकी ओर
मुड़ गया।

इस ढंगसे कटी थीं कि सध नहीं सकती थीं। एक बार लड़की बाल बिगाड़ती, दूसरी बार सँवारनेमें व्यस्त हो जाती। पास सीटका हत्था पकड़े शायद उसकी दोस्त खड़ी थी। उससे बातें करनेमें बैठी हुई लड़की अपने सारे अँगरेज़ी-कोषका परिचय दे रही थी। कश्मीरी गेटपर वही क्यूकी अव्यवस्था थी। गन्दे-गन्दे बच्चे साफ़ पीनेका पानी बेच रहे थे।

पास बैठी लड़कीने बोलना जारी रखा। रवि खिड़कीके बाहर देखता रहा—सेलवेल, स्पेन्सर और गोल्डफ्लेकके भागते विज्ञापनों-को। चेतनाका छोटा-सा एक अंश पास बैठी लड़कीमें जम गया था। लड़कीकी 'लुक' ठीक वैसी ही थी जैसी आजकल प्रायः होती है 'बर्स्टी-थर्स्टी'। आश्चर्यकी बात है सभी लड़कियोंने सौन्दर्यमें सामूहिक समानता मंजूर कर ली है। तेरहसे उन्नीस तककी लड़कियाँ कार्बन-कॉपियों-सी लगती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रविको लगता है, अब उसको परिभाषा देना आसान हो जायेगा। आखिर जब निरीक्षणसे पाया गया होगा तभी तो ऐसी परिभाषाएँ बनी होंगी, जैसे–'कंगारू दो पैरोंपर चलनेवाला ऐसा जानवर होता है जिसके पेटमें थैली हो।' पास बैठी लड़की गला दबाकर बोल रही थी जिससे उसकी आवाज़ 'सेक्सी' महसूस हो। दिल्लीके समूचे स्त्री-वर्गकी आवाज़का 'टिम्बर' नष्ट हो गया है।

रवि दिमाग़में नोट्स बनाने लगा। सेमिनारके लिए उसे पेपर कैसे लिखना है। पहले विभिन्न आलोचकोंका मत दे देगा, फिर कहेगा'—ह्वाइल मिस्टर लीविस थिंक्स दस, इट विल नॉट बी आउट ऑफ प्लेस इफ़ वी कन्सिडर'....वह अँगरेज़ी भाषाकी समृद्धि, सार्थकता और घाघपनेपर खुश होता रहा।

पास बैठी लड़की अबतक उठ गयी थी और अपनी जगह अपनी दोस्तको बैठा दिया था। उसकी दोस्तकी 'लुक' उससे भी ज़्यादा निर्भीक, दुस्साहसी और न्योतती-सी थी। रविके मनमें सुबह सुने गानेकी पंक्तियाँ उभरीं–'बड़ा रंगीन मौसम है, चलो गुस्ताखियाँ कर लें' और ओझल हो गयीं। अब स्त्रियोंमें ज़्यादा साहस आ गया है। रविने इरादा किया, किसी दिन जब पढ़नेका ज़्यादा स्ट्रेन नहीं होगा, वह 'सेक्स' पर खूब सारी किताबें लायेगा और हरे कॉफ़ी-पॉटमें कॉफ़ी सामने रखकर पढ़ता रहेगा। उसका मन ज़्यादा देर किसी इरादेपर नहीं टिकता। इरादा तो पहली स्टेज होती है, उसके बाद परामर्श, फिर परिणाम। रविने अपने स्टॉपपर उतरनेके पहले एक बार अच्छी तरहसे उन लड़कियोंको देख लिया और निहायत ईमानदारीसे घरकी ओर मुड़ गया। इस समय उसे अपने शरीरमें कोई 'स्पेयर पार्ट्स' उगे नहीं महसूस हो रहे थे, पॉप-कॉर्नकी निमकाहट भी ज़बानसे खत्म हो गयी थी और वह सोच रहा था–पेपर लिखनेके बाद तक अगर आँखें नींदसे भारी नहीं हुईं तो आज वह 'दैट साण्टाक्लॉज़ ऑफ़ लोनलीनेस'—रिल्केकी एक 'एलिजी'—ज़रूर पढ़ेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेमकपूर

सारी ख़ुशबू

कहीं किसी बातके सामने आते ही ठोकर लग जाती है और सारे तार सहसा किसी समानान्तरतासे झनझना उठते हैं। उस क्षणका वह फ्लैशबैक (पूर्वदीप्ति) अपने आपमें सम्पूर्ण होता है। वह उतना टुकड़ा कहानी बन जाता है – उसे प्रारम्भ-मध्य-अन्तमें बाँटनेसे क्या फ़ायदा ?

अन्दरके दोनों दरवाज़े एहतियातसे बन्द किये और चिटखनी चढ़ा दी। खिड़कीका परदा गिरा दिया। फिर एक क्षण तक उस चुपमें जीती खड़ी रही लेकिन चारों तरफ़का शोर और तीखा होकर फैलता जा रहा था। खड़े नहीं रहा गया। दबे पाँव पलंग तक बढ़ आयी। आहिस्तासे बिस्तर घसीटकर ज़मीन-पर डाल दिया। छतका पंखा खोलकर ज़मीन पर चित्त लेट गयी।

अँगूठेकी टीस खाये जा रही थी और रीढ़की हड्डी ज़मीनपर गड़ रही थी। छतके पंखेके साथ मन घूम रहा था और टण्डनकी

क्या कहती हो···क्वाँरी ? मुँहसे तो नहीं ···? भगवान जानता है, आजकल ···शी-ब्याहीमें फ़र्क ही क्या रहा है···!"

और मैं झपटती हुई आगे निकल गयी ।मैंने बात अनसुनी कर दी है। रास्ता ···कितनी सारी बातें कानोंमें आ पड़ती हैं ···लगता है सब मुझसे ही कही जा रही ···'मुँहपर मुँहासे निकल रहे हैं···।' और ···दूध गालोंपर चले आये हैं।····'भगवान ···तुम्हारा भला करे, अब तुम भी शादी कर लो ···बेकारमें बाप-दादाका नाम उछालनेसे ···।'····'दूधमें सरसों पीसकर लगाओ, ···निकालने चाहा, चिट्टी खाल निकल आयेगी···' ···शीशा देखनेके लिए मैं भागकर आयी ···अँगूठेसे उठी हुई टीस सारे शरीरको ···झनझना गयी और मैं चलते-चलते अँगूठेपर ···आयी और फिर खड़े होते हुए मैंने खून-···कालीनसे रगड़ दिया····ठोकर···जीमें ···था : ठोकर लगते वक़्त····।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साँसोंकी गरमी मनको फिर जलाने लगी थी। नींद मेरी आँखोंसे ग़ायब थी और उसी तरह कितनी देर तक मैं कहाँ पड़ी थी मुझे पता न चला। बस इतना एहसास था कि मैं अकेली नहीं हूँ। लेकिन जब लौटी तो कमरा अँधेरेमें डूबा था और छतका पंखा खर-खरकी आवाज़ करता नाच रहा था। एक दहशतने मुझे फिर घेर लिया, मैं वैसे ही पड़ी रही और ज़ब्तके तनावमें खोयी हुई किसी ना-मालूम गहराईमें गोता मारती वहाँसे आहिस्ता-आहिस्ता उभर रही थी। अगर देखनेका कोई सुख है तो वह मुझे नसीब हुआ था। कलतक मैं राधाको बावली समझती थी और जब-तब उसे डाँट दिया करती थी—वह खिलखिलाती, खुली हवा-की तरह, झूमती-बलखाती चली आती और अपनी बाँहोंकी गिरफ़्तमें ले मुझे चूम लेती तो मेरा मन उबकाइयोंसे भर आता और मैं उसकी बातोंको अनसुनी कर उसकी बाँहें झटक देती — पर बावली राधाके रोम-रोम प्रेममें पगे थे। उसकी मेंहदी-रची अँगुलियोंको याद-कर मैं अपना पल्लू आँखोंपर रख बारीक धागोंके पार देखनेकी कोशिश करती हूँ और राधाके···नहीं उसकी जगह मुझे टण्डनका हँसता-खिलखिलाता चेहरा दिखने लगता है और शर्म-भीनी पलकें मेरे आँखोंको ढँक लेती हैं। लेकिन बन्द आँखोंके भीतर काँचकी नीली-नीली गोलियों-सी बड़ी-बड़ी आँखें उसे तंग करने लगतीं और खटसे उसके पपोटे खुल जाते और अँधेरा उसे कचोटने लगता। पंखे-की हवा ऐसी लगती जैसे टण्डन पास ही बैठा हुआ फूंक-फूंककर उसकी आँखोंमें आये बाल हटा रहा है।

वह खोयी-खोयी-सी पड़ी थी जैसे किसी मज़बूत पुलपर दौड़ते-दौड़ते ठिठक गयी हो। आगे तख़्ते उखड़े हुए थे और नीचे भयानक गहराई और बेरहम चट्टानें। अपने कमरेमें आनेपर उसने अपने चेहरेपर उग आये मैल-से देखनेके लिए शीशेमें झाँका था और आँखोंके गिर्द भूरे पड़े घेरे उसे तंग कर रहे थे। कपड़े मैले थे। मगर वह बेखबर अपनेमें डूबी न जाने क्या सोचनेकी कोशिश किये जा रही थी। जो कुछ उसने किया था उसकी सज़ा तनहा भुगतना चाहती थी। उसने अपनी किसी सहेलीको इस बेवकूफ़ीकी ख़बर न दी थी। काश राधा होती तो वह उसके गलेके गिर्द बाँहें डाल उसे चूम लेती पर राधा कहाँ थी, वह तो अपने कान्हाके गाँव चली गयी थी। उसकी बाँहें हवामें फैली रहीं और उसके होंठोंने नंगी बाँहें ही चूम लिया। और उसके चारों ओर एक खुशबू बावली हो भटकने लगी।

यह खुशबू उसे बहुत पसन्द थी और इसे वह टण्डनसे लायी थी। वह साँवले जब बार-बार उससे 'टण्डन-टण्डन' कह रही थी तो झटकेसे उसने सिर उठाया था और वह खुद काँचकी बड़ी-बड़ी नीली गोलियोंसे टकराकर चटकती रह गयी थी। उसके टण्डनके पतले-पतले होंठ अपने बालोंके नर्म फरफराते अनुभव किये थे और वह खुशबू—एक मर्दकी खुशबू—उसे भटका गयी थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छतपर-का पंखा सैकड़ों
पैरवाले कनखजूरेकी तरह
खर-खर रेंग
रहा था। वह इतनी देरसे
कहाँ है ? ख़्वाब ! नहीं
वह ख़्वाब नहीं देख रही थी।
तो फिर ? उसने हाथ-पैर
हिलाये। उसका हर टुकड़ा अपनी
जगहपर था। सारे
पुर्जे चल रहे थे। सभी कल
दुरुस्त थीं। वह
जल्दीसे खड़ी हो गयी
और उसने लपक कर बिजलीका
बटन दबा दिया। उसकी
भटकी हुई हस्ती, झिझकती-
शरमाती वापस आ
गयी थी।

'आग और घी कब एक दूसरेके बग़लगीर नहीं हुए···?'

और जब निर्मलका हाथ एकबारगी मेरे हाथपर आ गया था और वह उसे थपथपा रहा था तो मैं सिहर कर सहम गयी थी। मैं उसे क़तई दूसरों-जैसा नहीं समझती ! आर्ट-क्लासके कितने चेहरे, कितनी आँखें उत्सुकतासे मेरे आस-पास उठी रहती थीं पर निर्मल···नहीं वह उन सबसे हमेशा अलग-रहा है। वह कह भी तो रहा था : "विश्वास मानो, तुम्हारे साथ चाय पीनेकी बात मनमें आयी – मैंने तुम्हें आमन्त्रित किया, तुम मान गयीं। एक बारमें ही राजी हो गयीं – मुझे कितनी ख़ुशी हुई है···!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सच, मुझे भी बहुत खुशी हुई थी। उसने कोई दिखावा, कुछ भी प्रेडेण्ड नहीं किया था। उसके सामने जो बात जिस तरह आयी है उसने सब कुछ सहज तरहसे रख दिया है।

और वह शाम कितनी खूबसूरत लग रही थी।

■

तुम दीवानी मालूम पड़ती हो। मैंने निर्मलको अपने मनसे बाहर निकालकर खड़ा कर दिया है। वह काँपता-लरज़ता बाहर चला गया है। उसका ताक़त-भरा चौड़ा चकला हाथ, कनपटी और उसके इर्द-गिर्द बसी वह खुशबू मुझे गड़ने लगी है।

मनने कहा : वह हीरा है हीरा !

एक बड़ा-सा आँसू खतपर टपका और काग़ज़ काँप गया।

दोनों खा चुके थे और बैरेने लाकर बिल रख दिया था। वह पूछ रहा था : "और कल ?"

यह सवाल वह करेगा—मैंने सोचा ही नहीं। एक संकोच मुझे हिला गया है। हाँ कर दोगी तब वह तुम्हें कहीं उतावली न समझ ले। मैं जानती थी, कलतक काटना कितना कठिन होगा। लेकिन मैं सीधेसे हाँ भी तो नहीं कर सकती थी। छोटा-सा बहाना बनाकर चुप हो गयी। जब वह मुझे उसी तरह छोड़कर चला गया तब मेरा मन अपनेको ही काट खानेका होता था। मैं उसके सारे अनोखेपनको खोज-खोजकर एक जगह एकत्र करना चाहती थी—लेकिन जितना ही फ़ेहरिस्त बनाती, उलझती, पाती उतना ही अधिक वह लिए पहेली बनता जाता था—मैं जितना ही सोचती, पाती मैं अपनेमें और जटिल होती जा रही हूँ। उसमें एक गहन आत्मनिर्भरता थी जो मुझे और दिखाई न पड़ती। उसका झूमते हुए कर चलना—बड़े अहम्के साथ हर बड़ा छोटा-सा पैना उत्तर देना—कुछ था कि बहुतेरे उससे चिढ़ते थे। इसके भी और न जाने कितना कुछ था जो पसन्द था।

छतपर-का पंखा सैकड़ों पँखवाले खजूरेकी तरह खर-खर रेंग रहा था। इतनी देरसे कहाँ है ? ख्वाब ! नहीं ख्वाब नहीं देख रही थी ! तो फिर ? हाथ-पैर-हिलाये। उसका हर टुकड़ा जगहपर था। सारे पुर्जे चल रहे थे। कलें दुरुस्त थीं। वह जल्दीसे खड़ी और उसने लपककर बिजलीका दिया। उसकी भटकी हुई हस्ती, शरमाती वापस आ गयी थी।

उसने अपने मुँहसे फिर और उन्हें दबाकर पिचका देना निर्मलका कड़ा-खुरदरा स्वभाव और का तीखापन उसे दूसरोंसे था—यह सब उसे घरसे मिला हो नहीं—ज़िन्दगीने उसे इस तरह मजबूर कर दिया था। उसने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हँस रहा था और मैं···मैं कहाँ थी ? मेरे अंगूठेकी टीस मुझे साल रही है और अगर निर्मल भी अपने हाथमें तराज़ू लेकर उस ग़ल्लेपर जा बैठे···? एक भयानक-सी चीख़ मेरे मनमें बनते-बनते रह गयी है।

उस दोस्तने ग़ल्लेकी दूकानके प्रति असीम आकर्षण निर्मलके मनमें पैदा कर दिया : उसके सामने अनन्त सम्भावनाओंका आकाश फैलाकर रख दिया। निर्मल जिस समय अपने दोस्त राजनके बारेमें बता रहा था तो उसकी आँखें गीली हो आयी थीं और पुलकसे मैं भर गयी थी।—निर्मलने कहा था : 'पता नहीं उसने मुझमें क्या देखा था—शायद वह ख़ुद कभी चित्रकार या आर्टिस्ट बनना चाहता था—इसीलिए वह मेरे पीछे पड़ गया था···।'

सुनाते हुए उसके कण्ठ भर आते थे और मैं···

एक बड़ा-सा आँसू ख़तपर टपका है और काग़ज़ काँप गया है। निर्मलका चेहरा काग़ज़की तरह सफ़ेद है जैसे समय, बारिश और धूपने उसे उजला बना दिया है।

मैं अपने बग़लमें स्टैण्डपर खड़े हुए निर्मलको काम करते हुए देख रही हूँ और मेरी इच्छा है कि काग़ज़पर-से उसकी आँख उठे और मेरी ओर घूम आये···। नीली-नीली काँचकी वह बड़ी-बड़ी गोलियाँ—जिनके लिए मैं अपने भैयासे लड़ा करती थी—लगता है, किसीने चुराकर इसकी आँखोंमें जड़ दी हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह बड़ उत्साहसे सुना रहा है और मैं सुन रही हूँ। मेरी समझमें कुछ भी नहीं आ रहा, फिर भी कितनी कशिश है उसके शब्दोंमें। जैसे वह अपने अन्तरके सत्यको मेरे सामने खोलकर रख देना चाहता है। उसका चेहरा अनोखे प्रकाशसे दीप्त है: "तुम मुझे अलग समझती हो पर मैं किसीसे अलग नहीं वेद! इस जीवनने मुझे बहुत कुछ दिया है—कि मैं एक ऊँचाईको छू सका हूँ—उस परिधिको लाँघ गया हूँ जहाँ व्यक्ति व्यक्ति नहीं रह जाता। कलाकी आराधनाके साथ ही व्यक्तिको एक दूसरी तरहकी स्वतन्त्रता प्राप्त हो जाती है—वह कहीं भी जाये, कुछ भी करे, लोग उसे उसकी मन-चाही छूट देते हैं और अजनबी भी सगे-सम्बन्धीकी तरह सलूक करते हैं—तुम कलाकार हो और बस तुम सब कुछ हो। हर कोई सोचता है—आह! तुम बहुत खूब-खूब हो! तुम्हारी सात खता इसलिए माफ़ है कि तुम अधिक संवेदनशील, तीव्र अनुभूति-वाले हो। और हर कोई कहता है—अरे, छोड़ो भी, यह तो कलाकारका स्वभाव है।

"इसके लिए जरूरत पड़ती है तो थोड़ी-सी चेतनाकी। और सबसे मजेदार बात तब घटती है जब कलाकार अपने काममें ऐसी अनोखी रुचि लेने लगता है जो कि कलाकारके स्वभावमें अमूमन शामिल नहीं होती। तब लोग दाँतों तले अँगुली दबा लेते हैं…।" और निर्मलकी बातको याद करते हुए मेरी अँगुली अनायास दाँतके नीचे जाकर दब गयी है—और मुझे हल्का-सा धक्का लगा है और मैंने सोच लिया कि नया है, जिन्दगी नहीं जानता…।

और जब भी उसने मुझसे कहा कि 'आज शामको…।' और जैसे बावलीकी तरह मैं खिंचती चली गयी हूँ।

वह खोया-सा खड़ा है और मुझे देखकर ही चौंककर उसने कहा है: "तुम! मैं कह रहा था, आज नहीं आओगी।"

"मैं सोच रही थी, तुम नहीं मिलोगे।"

उसके हाथ मेरी कमर तक बढ़ आये हैं।

"तुम एक…!"

"निर्मल…!" कहते हुए तुम्हारे निकलकर लम्बी साँस खींची है।

■

चलते हुए उसने नहीं पूछा है—मिलोगी? और मैंने टोक दिया है: लोग परसों प्लाजापर मिल रहे हैं न?"

जिस अहम्के साथ वह सिर हिलाकर कि मैं ऊपरसे नीचे तक गुदगुदीसे खिलानेको हो आती हूँ।

उसे अपने ऊपर कितना अधिक है। उसने कभी जल्दीबाजी नहीं की। नहीं की। मेरी सहेलियोंने कितने बताये हैं—लेकिन उसका एक अंश नहीं घटा हमारे बीचमें। बावली हूँ, बावली हूँ। मेरे खूनके हर कतरे चढ़े हुए हैं—बज रहे हैं।

मैं निर्मलको कितना जान चुकी हूँ उसके साथ सिनेमा-हॉल या कम्पनी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिरते-फिरते ऊब होती है। कभी-कभी जीमें आता है, आज मेरी रूम-पार्टनर नहीं रहेगी—कहूँ निर्मलसे? पर उसके सामने होते ही मुँहपर ताला क्यों पड़ जाता है! उससे मैं कुछ भी तो नहीं कह पाती।

इच्छा होती है, मेरी सहेली राधा कहाँ है? वह तो अपने कान्हाके गाँव चली गयी। मेरी भी तबीयत होती है कि सारे बन्धन और रिवाजको उठाकर तालेमें डाल दूँ। और…

पार्क भी क्या जगह है? और सिनेमा-हॉलका अँधेरा, अँधेरेमें घूरती हुई भीड़की आँखें—जैसे सारीकी सारी आँखें हम लोगों पर अंकुश रखे जमी हैं।

और आजकी शाम।

मेरे ठेस खाये अँगूठेमें फिर टीस बफरने लगी है।

विक्टोरियाकी मूर्तिके पास संगमरमरकी सीढ़ियोंपर बैठी हूँ और मेरा अंग-अंग दाहसे झुँक रहा है। मेरी आँखोंके सामने हरियाली है और आकाशमें बादल चढ़ते चले आये हैं। फिर मूसलाधार पानी पड़ने लगा है। हम दोनों लथपथ हैं। मेरा हॉस्टलका कमरा ज्यादा दूर नहीं है। मैं निर्मलकी चमकती सायकिलके पैडिलको अँगुलियोंसे नचा रही हूँ। मैं सोचती हूँ, अपने दिलकी बात कह दूँ—कह दूँ, मेरी रूम-पार्टनर नहीं है। फिर एक झिझक मुझे रोक गयी है और मेरी अँगुली सायकिलके पैडिलसे खेल रही है।

निर्मलकी अँगुलियोंके बीच घासके तिनके पिसते जा रहे हैं—हम दोनोंके बीच जैसे बात चुक गयी है और वह एकदमसे अपनेमें डूब गया है। पानीकी बूँदोंका शोर है जो हम दोनोंको जिन्दा रखे है। मैं सोच रही हूँ—क्यों नहीं निर्मल मेरे हॉस्टल चलनेकी बात रखता—क्या वह जानता है कि कमरेमें पहुँचकर मैं अपने ऊपर विश्वास नहीं रख पाऊँगी, इसलिए झिझक रही हूँ…?

निर्मल उठता है और सायकिल उठाता है।

मैं इतना भी नहीं कहती कि तुम पानीमें भीगते हुए घर कहाँ जाओगे। थोड़ा बूँदोंको थमने दो!

मेरे सामने आर्ट-क्लासका भिखारी मॉडल है और बग़लके स्टैण्डपर निर्मल काम कर रहा है। मेरी आँखें उसकी गरदनपर टिकी हैं और मैं उस क्षणका इन्तज़ार कर रही हूँ जब वह काम करते-करते सिर घुमायेगा और मैं अपना ब्रश चलानेका ढोंग करने लगूँगी। मैं सहज ही उस तूफ़ानसे गुज़र जाना चाहूँगी जो एकबारगी कुछ देरके लिए मुझे घेर लेगा।

मुझे कमरेमें भरी यह रोशनी बुरी लगने लगी है और मैं उठी हूँ। मेरा पैर सुन्न हो गया है। अँगूठेकी टीसने मुझे भी चीरकर रख दिया है। लँगड़ाते हुए मैं बिजलीके बटन तक गयी हूँ और फ़र्शकी नरम-नरम क़ालीन मेरे पैरको चुभ रही है। मेरी रूम-पार्टनर अपने सम्बन्धीके यहाँ गयी है और…

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बरसते पानीकी बूँदका शोर मुझे तंग कर रहा है। भीगते-भीगते मेरी साड़ी बोथा हो मेरे शरीरसे चिपक गयी है। मेरे चारों तरफ़ निर्मलके होनेकी गन्ध है। मैं नहीं जानती कि वह क्या सोच रहा है। मेरे होंठ ठण्डसे काँपने लगे हैं। क्या उसे मेरे शरीरके ऊँचे-नीचे भाग नहीं दिखते होंगे? वह क्या सोचता है?—मेरे पास उसे जाननेका कोई रास्ता नहीं है। उसके बढ़े हुए हाथ मेरे कन्धोंको छूकर कितनी बार वापस चले गये हैं और मैं उस तूफ़ानसे गुज़र गयी हूँ। मेरी समझमें नहीं आता कि मैं ऐसा क्या कहूँ कि जिससे ये न समझे कि मैं ओछी हूँ।

एकाएक मैंने अपना चेहरा दीवालकी ओर घुमा लिया है और आगेका पल्लू साराका सारा हाथमें ले पानी निचोड़ने लगी हूँ। मुझे याद नहीं कि उस समय क्या कह रही थी। लेकिन जो कुछ कह रही थी उसका मतलब यही रहा होगा कि इस पानीने मेरी साड़ी, मेरा क़ीमती ब्लाऊज़ सभी चौपट कर दिया…।

राधाने कितनी बार मुझसे अपने इस भोलेपनका ज़िक्र करनेकी कोशिश की थी लेकिन मैंने हर बार उसे झिड़क दिया था—कभी उसकी बातमें मैंने रस ही नहीं लिया—आज मैं किस तरह अपने सुखको बाँटनेके लिए, राधाको याद करते हुए, बेताब हो उठी हूँ—जो कुछ हो रहा था वह कितना अपना, कैसा सुखद, कितना तरल और अनोखा था। उस भीगे हुए माहौलमें कितने अंजुली-फूल गमक रहे थे। और राधाकी मेहदी-रची हथेलियाँ! मेरी आँखोंपर पल्लूका झिलमिला किनारा है और मैं तबसे उस न समाप्त होनेवाले सुखमें जी रही हूँ जो शीघ्र ही चुक गया था।—इसमें भी दुःख होता है—मुझे अपनी बहुत-सी सहेलियोंकी बातें याद आयीं। उन लोगोंने तो न जाने क्या-क्या कहा था—क्या वह सब मेरे साथ भी घटा था? न, मुझे कुछ भी याद नहीं। मुझे चिढ़ आ रही थी—यह सब इतनी शीघ्रतासे क्यों समाप्त हो गया!

तबसे वह सारी खुशबू मेरे चारों ओर बस गयी है। सिर पकड़कर मैं उकड़ूँ बैठ गयी हूँ। मैं एक दिनकी ब्याही दुलहिन! न उबटनकी महक, न मेंहदीका रंग, न चूड़ियोंकी खनक। उनका नाम लेते हुए शर्म आती है। उसने मुझे इस तरह देखा था जैसे मैं चीनीकी चिटकी गुड़िया हूँ और टूट जानेका डर हो। वह क्यों चोर-सा बन गया था? ठगा-सा खड़ा था। धीरे-धीरे ऐसे कह रहा था कि उसे ग़लतीका अहसास हो आया हो—'तुमने पहले क्यों नहीं बताया? तुम इतनी क्वाँरी—जैसे कच्ची कली।'

मैंने अपनी हथेली उसके मुँहपर रख दी थी और हँसने लगी थी।

मैं इस अँधेरेमें बैठी हँस रही हूँ और मेरे कानोंपर बहुत-से शब्द पिघले हुए शीशेकी तरह धँसते चले जा रहे हैं। सिर पकड़कर मैं उकड़ूँ बैठ गयी हूँ और मेरे सिरपर छतका पंखा खरर-खरर नाच रहा है। ■■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रणजीत, इन्द्रमणि, इन्दु जैन, रमेश मौड़,
जगदीशनारायण श्रीवास्तव, पद्मधर त्रिपाठी,
अमृता भारती, केवल गोस्वामी, मोलम सिंह,
अवधनारायण मुद्गल

अपने अपने वक्तव्य

सलीब-विहीन धर्मयोद्धाओं का दर्द :

क्या कोई हमारे दर्द को भी समझेगा ?
हम जो रात-दिन तपस्याओं में लगे हैं
भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी, मान-अपमान सब सह रहे हैं
लेकिन हमारी तपस्याएँ किसी इन्द्रासन की ओर उन्मुख ही नहीं हो पातीं
हमें अपनी छोटी-छोटी ज़रूरतों के लिए ही
अपनी तपस्याएँ भोंकनी पड़ रही हैं !

हम जो तिल-तिल कर पिस रहे हैं
ज़हर के प्याले पी रहे हैं, फाँसियों पर लटक रहे हैं
रेलगाड़ियों के नीचे आकर कट रहे हैं, शहीद हो रहे हैं
लेकिन हमारी शहादतों को किसी आदर्श तक पहुँचने ही नहीं दिया जाता
हमें सिर्फ़ अपने पेट के लिए ही शहीद होना पड़ रहा है !

हम जो लड़ रहे हैं, संघर्ष कर रहे हैं
लेकिन हमारे संघर्ष किसी महत्उद्देश्य को पकड़ ही नहीं पाते
हमें महज़ अपनी रोज़ी के लिए ही लड़ना पड़ रहा है !
हम ऐसे धर्मयोद्धा हैं, जिनके पास कोई सलीब नहीं है !
किसी सलीब के लिए तड़पती हुई हमारी तपस्याओं, लड़ाइयों और शहादतों का दर्द
क्या कोई समझेगा ?

— रणजीत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

नयी पीढ़ी

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पारदर्शी बोतलों में बन्द
जिन हैं हम !
असम्भव का सम्भव कर सकते हैं—
चुटकियाँ बजाते !
(शर्त : यदि बाहर निकल पायें)

हाथ-पैर आहत !
शरीर लोहूलुहान !
ठेले हुए कन्धों पर
असफलताओं का बोझ !
और···
आँखों में जलती-बुझती
इच्छाएं !
आकांक्षाएं !

सायास प्रयास—
बाहर आने के !
किन्तु—
मात्र पारदर्शी दीवार पर
नाखूनों के खरोंचों के निशान !
—(अत्याधुनिक मूर्तिकला)
सिर के बाल छपे खून के धब्बे !
—(एब्स्ट्रेक्ट पेंटिंग)
आहें !
—(नयी कविता)
अनुभव !
—(नयी कहानी)
यही···
हाँ केवल यही
मेरी पीढ़ी का देय है
देश के नव-निर्माण में !

—इन्द्रमणि

सपने की बात :

मुझे कल रात एक सपना आया
जिसमें तुम थे
हमेशा तुम्हारे बारे में सोचते-सोचते
नींद में राहत का पल आया।

सपने में हम तुमसे मिले
हम—यानी मैं और मेरी छोटी बहन।
उसे तुमसे मिलाने की बात
पता नहीं कितनी बार चाही थी।
सोचा था, वह क्षण
बड़ा प्यारा होगा
मिठास से भरा दुलारा होगा।

अच्छा था भी
पर सिर्फ़ आधी देर को
जितने में तुमने आदत के खिलाफ़
उसके सिर पर हाथ रक्खा था
मुस्कुराये थे।

फिर लगा
कि इस दूसरे नगर में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम एक अलग व्यक्तित्व जी रहे हो
और
कुछ खीझे हुए हो
कि हम बिना पूछे
इतनी फ़िज़ूलखर्ची करके
देहात क्यों चले आये ?
मेरा मन रूखा हो आया।
सारा का सारा उत्साह अपराध बन गया।
छोटी बहन चुपके-से इधर-उधर हो ली
और सपना

परेशान, उदास रात में ढलने लगा।
ज़िन्दगी ऐसी क्यों है
कि भावना का हर छोटा पल
अविवेकी क़रार कर जाता है
और
अगर समझदारी के क़दम उठाता रहे
तो व्यक्ति
खुद को
एक के बाद एक
धोखा दिये जाता है ?

—इन्दु जैन

ली।
मुझे अपना अग्रज
और अपना आप
और अपना अनुज
एक साथ होना है।
मुझे यहाँ होकर भी
अनुपस्थित होना है—
और फिर बोलनी है
अपने ही नाम की 'प्रॉक्सी'।
—क्योंकि यह होने की अनिवार्य शर्त है।

मुझे खुद में अपने ही हाथों से चाबी भर
अपनी ही मेज पर
खुद को नचाना है।
(खुश होकर पीटनी हैं तालियाँ)
चौराहे से चारों ओर फूटती सड़कों पर

मुझे एक साथ जाना है।
और फिर—(सब लोगों के होते हुए)
मुझे, हाँ, सिर्फ़ मुझे ही
चक्रव्यूह ढहाना है।
—क्योंकि यह जीने की अनिवार्य शर्त है।
अन्ततः मुझे उन सब गुनाहों के लिए
—जो मैंने कभी किये नहीं
गुनाहगार होना है।

और फिर 'गिलोटिन' पर जाने से पूर्व
पहननी है पूरी-की-पूरी ही 'यूनीफॉर्म'
वर्तमान, भूत और आगत की तरह
छाती पर ढाँकने हैं
बिल्ले और तमग़े। कन्धों पर ढोना है—
राजचिह्न !
—क्योंकि यह मरने की अनिवार्य शर्त है!

—रमेश मौड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

अफ़वाह :

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्देहों की भीड़ में
अधमरी चिड़िया की तरह
गिर गयी है एक कोई साँवली आवाज़
जिसे चोंच में दबाये हुए हवा
पेड़ों को सौंप रही है
और यकायक
जिरहबख्तरों में कसे हुए पेड़
पंक्तिबद्ध हो गये हैं।
झाड़ियाँ फुसफुसा रही हैं नदियों से
जिसे चकितनयना नदियाँ
खरगोश की तरह कान उठाये सुन रही हैं
और यकायक उदास हो जा रही हैं।

चौरस्तों पर—
सिगरेट पीते हुए लैम्प-पोस्ट
फिर सजग हो गये हैं।
उनके भूरे कुत्ते
किसी को नहीं भूँकते
सिर्फ़ यहाँ-वहाँ सूर्यहीन दृश्यों को सूँघ रहे हैं
और देख रहे हैं
कि
ट्रेनें दुम दबाये भाग रही हैं
जिनमें बैठे हुए हैं—लोग
जो शायद लोग नहीं हैं
अपने-आप में एक आतंक हैं
स्वयं अपने लिए।

मैं इन तमाम दृश्यों के बोझ से
अपने को दबा हुआ महसूस कर रहा हूँ
और जाने किस विवशता में
अपनी पारदर्शी लालटेन में रचे हुए सुखांत को
बड़ी पीड़ा से उठा कर प्यार से निहारता हूँ
और बेसाख्ता चूमने लगता हूँ
पागलों की तरह।

—जगदीशनारायण श्रीवास्तव

संवाददाता :

— बेहोश हो गया था।
इतनी ज़्यादा ख़बरें
उसे कभी नहीं मिली थीं :

नगर के हर घर में
उसने —
संशय में उलझी हुई
ज़िन्दा लाशें देखीं, और —
उठते हुए
चिरायँध धुएँ ने
उसकी आँखों को
पहली बार इतना पिया।
बजती हुई हड्डियों की
आदमख़ोर आवाज़ें
यहाँ-वहाँ गलियों में
उसने पहली बार सुनीं,
इतनी कमज़ोर हँसियाँ
पहले नहीं देखी थीं — और —
वकीलों के दरवाज़ों पर
औरतों-मरदों की
ख़ूनी आँखों वाली इतनी लम्बी क़तार
देखी थी उसने पहली बार!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोशनदानों के सहारे
लटके हुए गोश्त के टुकड़ों को देख
उसे लगा—
शायद मसीहाओं के वास्ते
हैं ये गुमनाम रास्ते !

...र की हर सड़क पर
...ते—बुभुक्षित कठपुतलियों के
स्याह चेहरे,
...में उड़ती
...पा सांसों को सँपीली फुफकार,

...ईना :

आईना :
रेगिस्तानी हवाओं में
उड़ता चला गया
मरुस्थल नदियों में बदल गये,
अंगुलि पकड़ उठाया
किसी माँ ने
अपनी सोयी बच्चियों को :
रेगिस्तान पहाड़ियों से भर गया ।
हवाएं चलती रहीं, और आईना
शून्य तराशता
झीलें, पहाड़, नदियां आँकता रहा :
सूर्य-खिड़कियाँ
नीले मकानों में—

और विदेशी अखबारों की
मुरदा कतरनें
उसने देखीं-सुनीं पहली बार !

नपुंसक चरित्रों को ढोती सवारियाँ,
अनायास सबसे चिपटती—बीमारियाँ
पहली बार देखी थीं उसने ।

शायद—
इतनी ताज़ा खबरें
उसे कभी नहीं मिलीं —
वह बेहोश हो गया था !

—पद्मधर त्रिपाठी

चाँदनी नदियों पर
पीले जंगल टाँकता रहा :
और वह नगरी
'ब्राजेन सिटी' कहलायी ।

सैकड़ों बरस बाद
जब नगर में खुदाई हुई :
धरती के कुछ गज़ नीचे मरुस्थल था
और उस दूरी के बीचो-बीच
एक सुनहरी फ्रेम का आईना
उलटा पड़ा था :
सबने देखा :
उस पर अंकित है, उनकी अपनी
'ब्राज़ेन सिटी' का नक़्शा ।

—अमृता भारती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मरने के बाद :

मेरे चारों ओर
उदास भीड़
मातमी सूरत लिये
चुपचाप
कुछ जलती-सी आँखें
क्षोभ से
लज्जा से
कुछ लटके हुए चेहरे।
बरसती दूर कोने में
खड़ी खामोश
दो आँखें !

और अलमारी में
पड़ी बन्द
पत्रिकाओं से लौटी
खेद पत्रों सहित
कुछ दीमक लगी
कविता की रेखाएँ
स्नेह से पढ़ रहे हैं
मित्र सहृदय,
आलोचक
गढ़ रहे हैं
कितनी बातें
मेरी प्रतिभा के बारे में
अनेकों योजनाएँ
उपेक्षित रचनाओं को
पुस्तकाकार छपवाने की
किसी धनवान प्रकाशक से।
और तभी
रीढ़ की हड्डी से उठती
टीस से
घबड़ा के
उठ जाता हूँ
चारों ओर सन्नाटा
घुटन, पीड़ा
उपेक्षा
मेज़ पर लौटी हुई
कविताओं का बोझिल पुलिन्दा,
लौट आयी हो ज्यों
कोई विधवा बेटी-
बाप के दरवाज़े पे,

पत्रिकाओं में छपी
संवेदनाएँ
मुक्तिबोध !
देवेन ! के कुछ चित्र
गीले सहानुभूति से
सब की :
देख कर सब कुछ
पुनः मरने का करता यत्न हूँ
लेकिन····

—केवल गोस्वामी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिधान :

हम जितना ही सब ओर से भाग कर
सब कुछ छोड़ कर
एक स्थान पाना चाहते हैं
उतना ही हमारी साँसें
उस भाग-दौड़ को अपने में ही पूर्ण कर
परिस्थितियों में समाहित कर देना चाहती हैं,—
हम रोज़ ही अपूर्णता में
क्षणों को; जीवन को खोजते हैं—
और क्षणों और अपूर्णताओं में
जीवन को ही खो देते हैं।

यह केवल एक विडम्बना है
कि
हम केवल एक अधूरा सत्य पाकर ही
मानवता से ऊपर के एक अव्यक्त छल में
देवत्व का परिधान धारण करने लगते हैं।

—नीलम सिंह

...ती आवाज़ें।

...ता,
...ब भी मैं वहीं खड़ा रहूँ
...पनी भविष्यत आज्ञाओं के सहारे खड़ा
...के छोड़ गये थे।
...ा रही हैं
...रे इस संस्कारी जहाज़ से निकलती
...की लपटें
...निगलने;
...माम डाँडें
...क-चिटक कर

मेरे रोम-रोम से बँध गयी हैं,
टूट रही हैं मेरे माथे पर
तुम्हारे मिथ्या गर्व की
जलती हुई पताकाएँ,
मस्तूल धुआँ बन कर
मेरी पीठ से चिपक गये हैं
अब मैं पीछे नहीं देख सकता
दिशा-ज्ञान देने वाले लाइट हाउस
अब दिखाई नहीं देते,
दिखाई देती हैं

...ने-अपने वक्तव्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धुन्ध आकर सुलगती हुई अनगिनत लाश
जो मेरी हैं···।
ओ पिता !
क्या मैं अब भी वहीं खड़ा रहूँ
जहाँ मेरी आवाज़ें
आदमी के मांस और चमड़ी की चिराँध बन गयी हैं !
यह जहाज़
अब ध्वस्त हुआ ही चाहता है,
डूबना चाहता है
मेरा समूचा अस्तित्व,

आवाज़ दो
कि मैं निकल आऊँ
नये जहाज़ों की प्रतीक्षा करते
किनारों पर
एक और किनारा बन कर
निश्चित ध्वंस का मूल्य
मैं नहीं बनना चाहता।

अँधेरे फिर-फिर टूटते हैं
और मैं भी,
किसी भी दिशा से
आ सकने वाली तुम्हारी आवाज़ की प्रतीक्षा
मैं कबतक करूँ ?

ओ पिता,
क्या मैं अब भी वहीं खड़ा रहूँ
जहाँ मेरी आत्महन्ता आकृतियाँ
मुझे मुँह चिराती हैं।

—अवधनारायण मुद्गल

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शशि तिवारी

चाहोंके मरुस्थल

आँखें खोलते, बन्द करते विचार आ सकते हैं मन-पर बर्फ़की फुहियों-से। उनमें-से कोई एक विचार लेकर उसे वैसा ही लिख दिया जा सकता है। वह विचार नखशिख कहानी होगा···उसमें-से कोई उद्देश्य ध्वनित हो तो यह कथाकार क्यों सोचे ?

चोर था न भिखारी, फूल चुराते बच्चे भी न दिखे। फाटक बन्द था और बरामदा भी खाली था। तब···? क्या था जिसने उन्हें इस बुरी तरह बौखला दिया। क्यों चीखीं वे। आँगनमें विग-से घुँघराले श्वेत-केशी वृद्धा जरूर खड़ी है जो अपनी सुबह-की सुखायी धोतीमें गाँठ लगा रही है, जगह-जगहसे फटी है धोती। बिना अर्थ और पूर्ण विरामके गृहिणीका भाषण धाराप्रवाह चल रहा था : "कीरा परे हैं पाँवोंमें, तो बी नोन-मिरचा डार-डार इत्ती-इत्ती इमलीकी चटनी खायी-पीसी जाती है, मोहल्ला-भरमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घुमायी होगी है, अंगना वाले आंख वह

कि काँखने लगेगी। बैठ जायेगी हँकरने। मरही पड़े। खाँस-खाँसके घर भरकी नाकमें दम करे रहेगी, सबेरा हुआ, कोई उनके पास आके बैठा कि धरी सीसी और कुण्डली (प्रिस्क्रिप्शन) और चली हस्पताल। इनके मारे कम्पोटर पानी भरके दे देता है नई तो कौन पूछता है इस-जैसीको ऊँहा। ऐसी टुनहिनों-को धक्का मारके भगा देते हैं हस्पतालवाले। बीमार है कंकालिन·····।"

बिना जान-पहचानके भी वृद्धा पारूलके समक्ष आके बैठ गयी। माथेपर मँगरौली सुपारी-से बड़ा उभरा नीला चोटका निशान दिखानेके बाद पिण्डलीपर-से धोती उठाकर दिखायी, जहाँ बहुत बड़ा घाव था। उसके बाद बोली, "ज़रा हाथ छू के देखो, बुखार है कि नई है!" पारूलने हाथ छुआ, हवामें खुले बदन घूमनेपर भी सौसे ऊपर ही बुखार रहा होगा, कम नहीं। पैरके घावका लाल भीतरी हिस्सा, जो कमसे कम चार वर्गइंचका होगा, ऐसा लग रहा था जानो दहकता अंगार हो। घी-हल्दीके हाथों सुधारी गयी सनी मैदेकी अब सूख रही पींडके समान वृद्धाका कान्तियुक्त रंग था। कमान-से भौंहोंकी उपमा सुनी तो बहुत थी, आर्टीफ़ी-शियल देखी भी थी, किन्तु जिन भौंहोंसे यह उपमा ली गयी थी वह इसी मुखपर आज पहली बार देखी, जमी बत्तीसी, नाक-नक्शके तीखे उभार, देहकी गढ़नने मनमें एक अजीब ममता भर दी, अस्सीसे ऊपर उमर, ममतासे

अधिक आश्चर्य, बुखार, माथेकी चोट, घ
और बुढ़ापा। चारोंकी अपनी-अपनी अ
हस्ती। इनमें-से एक भी जिसे दबोच ले
अपनी उठने-बैठनेकी क्षमता खो बैठता है
सत्तर-पचहत्तर पौण्डकी दुर्बल नाटी बृद्धा
एक साथ इन चारोंने हमला किया है
इसपर भी वह बोल ही नहीं चल-फिर
लेती है! इतना दर्द और बोझ कैसे हो
है? ऊपरसे अस्पताल जा दवा भी ले
है। मनःस्थिति बदलनेको पारूल पूछ
"दाँत असली हैं?"

"हैं नहीं क्या···तब तो घोड़ा-ऐसे पुट्ठे
मुर्री-लाई सब चबा लेती है। कौन लगवाये
नकली दाँत?"

"अपने ज़मानेमें बड़ी सुन्दर र
होंगी?"

"थीं नहीं क्या, आस-पासके बीस
में खपसूरतीकी चर्चा थी; तभी तो
आजाने दू हजार घूंस दे कै अपने बेटाके
माँग लिया था। मायकेमें अकेली थी,
ससुरकी दुलारी थी, बड़ी मान मन्न
थी, सो सास-ससुर औ महतारी-बाप
लाड़ लड़ा-लड़ाके चोट्टीको चटोरी बना दि
लाज लगती है डुस्टिनको माँ कहते।"

पारूलने अनुभवा—वृद्धाके हल्के
वत: वृद्धासे कोई ऐसी भूल करवा दी हो
जिससे सारा परिवार अबतक
तिरस्कार ढो रहा होगा, इसीलिए
नाराज़ है, खुलकर ही पूछा, "आप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ती है, माँ तो अच्छी-खासी है, क्या ...-बदनाम थीं ?"

"अरे नहीं, पापके मरे पाछू गाँवके ...ने रामनसे बढ़के तखलीख दी, सारा ...गवाही है कि उनने ऐसी औरत नई ...। सीता कहाती थी डुस्टिन। चालाकी-...ने मेरे बापकी उत्ती बड़ी जैजात ...ली। दाने-दानेको कर दिया। हम ...बहिन-भाई मेरे-तेरे कौरों पै हो गये। ...ई डुगी। चक्की पीस-पीस पोसी है। ...तो फूलों हिंडोला झूलती। सारी ...पेज-पसिया पै काट दी। आज भी ...आगी-सा बरता है। हम पै दुष्टिनकी ...ी नई पड़ी। सबके सब बापको पड़े ...पढ़ा बनिया भाई तो ठहरा। ये तो ...गुनी पढ़ी थी। करिया होने पै भी ...भाई-बहिनोंको बड़े-बड़े घर बियाही, ...घरकी है भौजाई बी।"

"तब शरमकी क्या बात है, बड़े भाग्यसे ...है ऐसी माँ।"

"शरमकी बात कैसे नई है। पेटके ...टा पूछते नई, दमादकी डेहरी पै ...।"

"शरम तो बेटेको होना चाहिए जिसने ...की भी इज्जत नहीं की।"

"का इज्जत करे, दमादको नखरा ...ती है तो उसे नई दिखाती होयेगी। ...बाहरसे आयेंगे तो कहेंगे, डोकरीको ...मंगा दो, धोती सबुनियाँ दो, नई तो ...को डाल दो! परसो नई लाकै दे दी।

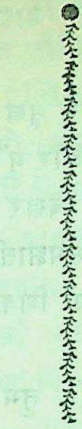

एक हम हैं, हमने अपनी
ओरसे देश समाजको
चाहे जो दिया हो किन्तु
अपनी माँस-मज्जाका सृजा नहीं
दिया है तो हमारे
बाद कोई हमारी स्मृतिको
आँसूकी बूँद भी देगा—
यह विश्वास
अपने आपमें कितना
बेमानी है बहन!

तुम पूछो डोकरीको सबुनियाई, धोबीकी धोई धोतीकी जरूरत? हमारी फिकर नई।"

"आपका तो घर ही है।"

"घर है तो क्या हुआ, काल हुई है जी की। कहेंगे, डोकरीका बिछौना बिछा दो, साबूदाना बना दो, दरिया उबाल दो। पूछो अब बाँचके करना क्या है डोकरीको? जो ये खवा दो यो पिया दो। मरै न माचा छोड़ै। कउआकी उमिर लै कै आयी है। घरमें सास-ननंद नई है तो अब बुढ़ापेमें ये भूँजनेको आ गयी! तले खाती है। पूछो, इस घर पै कौन हक है इसका। भतीजा इसे दो रूपै रखा गया था। पाँच भौजाई दे गयी थी कि रूपिया रख ले और कहीं निकल जा। कहीं नई टरी। यहीं खटिया टोड़ रही है डुस्टिन। मोटर-टाँगाके नीचे बी तो नई आ जाती।"

"इस बुढ़ापेमें अपने बच्चोंको छोड़ कहाँ जाये अब?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"इत्ती बड़ी दुनियामें इस डाइनको बित्ता-भर जँघा नई है ?"

वृद्धाके आँसू तो न जाने कबसे सूख चुके थे, पर मुँहसे लार-सी बह आयी और मुँहपर न जाने कैसी असमर्थ दयनीयता बिखर गयी जो शब्दोंमें बँध नहीं सकती। समझाती-सी पारूल बोली, "आप दामादसे क्यों शिकायत करती हैं ?"

"नई करौं बेटी, नई करौं, तुम तौ जानती हौ कि आये-गयेका आदर-मान करना उसका सुभाव है। फिर उत्ता पढ़ा-गुना आदमी जानता नई कि जबतक भगवान मौत नई दे आदमी मर नई सकै। तकदीरको का कहूँ ? ये मेरी पेट-जायी है। पीस-पीस मैंने इसे पोसी। इसे बड़े घरमें ब्याहनेको अपना पेट काट-काट दहेज जोड़ी। ये तौ घर-वाली हो गयी और मैं कोईकी कोई नई ? अरे महतारी चोर बी होय तो आदमी लुका-छिपा लेता है। मैं नई हूँ तो ये गाती फिरती है। तुम्हीं बताओ अबसे क्या नई कहा इसने ? मैं बोली कुछ ?"

झनझनाके झनक उठी बेटी—"चोट्टी न होती तो चोरीसे चटनी काहे खायी ?"

"दुनियाँ जानती है बेटी, बुढ़ापा कैसा नंगारा होता है। कहनात है, बूढ़ बारे बरो-ब्बर। नौनी जुच्छा बासी धर देती है, खवाय नई। कभी खायी होती तो खवाती। जब भूख मरनेके दिन थे तब भी जो खाया अच्छा खाया। खवाय नई इसीसे कल दू ठो इमली नून-मिरचा संग कुचर ली थी।"

"जुच्छी बासी, जुच्छा भात। गुन तुम जानो नई। पेटमें डाढ़ी है पेटमें। मेरी भतीजा-बहूको ऐसी सरापी, कि का बताऊँ। पूरे-पूरे का गिर गया।"

"कब सरापी थी नौनी ? भतीजा-बहू है और मेरी कोई नई ? वंस बेल मैं ई उखाड़ फेंकूँ ? तो फोहै फोहैके ओ को पोस-पोस बड़े काहे करती ? तेरा बाप मरा तेरा भाई दो महीनाका खूनई तो था। इसी दिनको पोसी थी कि अपने बेटा को मैंई सरापूँ ? कोख कै भखूँ—? को बी तो डरा···"

"भगवान···! अबतक उसे सरापी, मुझे सराप, राम-राम कै दो बेटोंमें एक पारसाल मूँ देखी हूँ, इसीलिए बोजा रहे हैं तेरे को कि तू हमारे बेटा कोसे ? एक मेरी ये ननंद है, जो सामने बोल नई जाने। ये तो ये वो नई बोलती थी जौनने जनम दिया था कहना हो मेरे सेई कहवाती थी, और है तो दमांदई के आगू-पीछू नाचेगी। देखे न सबेरा। पड़ी रहेगी उनके नाती तो उस दिन डण्डा ले कै मारते हो गया था। नतबहूको फुसला ली है। ई लुका छिपा कै ठुँसाती रहती है नाती को। उसीने बचा लिया। नई तो खोपड़ी।"

"फुसलानेको का है मेरे पास।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खटिया पै नई पड़ी रहती। उस दिन
बुखार था तो कोई बोले कि पड़ी रहो, बुखार
में उन्हेंकी कौन जरूरत है ? अंधेरा देखके
बत्ती जला गये। मैंने मना बी की
नई माने तो का करूँ ? आँखीकी किरिया
तो, जो मैंने उनसे कभी कुछ कही होऊँ।
बियाओ तो साँझको पुँछा दूँगी। बेटी-
बात दमाँदसे कहूँ—??"

"हाँ अब इती कसर और बाकी है सो
पूरी कर लेना। बुढ़ापेमें मार खवाना।
जता-जताके कह गयी थी कि
को घरमें मत रखना। डोकरीकी मवा-
पाँटों (जीजा) तुम पै हाथ न छोड़
लगता है मार खवाए बिन नई टरै
हुं—नई टरै औ न मरै।"

पारूलको मुक्ति मिली जब घरसे नौकर-
कर बताया कि कोई आया है और उसे
गया है। इस अन्तहीन कष्टकी पर-
का क्या अन्त है भला ! कुछ समझ न
कारण वह एक अजीब उलझनका
कर रही थी। गृहिणी चाय-नाश्तेके
आग्रह करती ही रहीं और वह क़रीब-
बे-मुरौव्वत होकर ही उठ खड़ी हुई,
ओंकी सीमामें घिरी-बँधी।

बूढ़ाकी आँखोंसे टपाटप आँसू चू पड़े।
कोई आत्माके निकटका उठकर जा
हो। पता नहीं उस स्थितिमें भी उन्हें
याद रहा कि उन्होंने जाती पारूलको
छोड़ दिये। पारूल क्या कह आश्वासन
। नम आँखों उसने वृद्धाके जुड़े हाथोंको
पकड़ हिला दिया और बोली, "भगवानका नाम लीजिए।"

"लेने दे कोई। मन्दिरसे ई तो आ रही हूँ सो नोनी (लड़की) कहती है, जमाने भरमें किंजरती है।"

पारूलको कोई शब्द न मिले जिनसे सान्त्वना दी जाती। उमड़ते मन नम आँखों उठकर चली आयी। रास्ते-भर सोचा कि एक प्रान्तव्यापी आन्दोलन छेड़ेगी इन वृद्धावासोंके लिए। शिक्षित-समृद्ध-परिवारमें जब यह दुर्गति है तो अभावग्रस्तों-के यहाँ क्या स्थिति होगी। जहाँ कभी सुविधाओंके झाम बौरते ही नहीं। सुना है, हर प्रान्तमें वृद्धावास खुल रहे हैं। पर कब ? खुल भी जायें तो क्या होगा। हमारे समाजके लोग, जो रूढ़ियोंका शव काँधेपर लादे पृथ्वी-प्रदक्षिणाको निकलते हैं, इन कष्टोंसे उन्मादग्रस्त हो आत्महत्या चाहे कर लें पर वृद्धोंको इन आवासोंमें भेज अपनी हेठी करायें, यह विश्वास कम ही है। न करायें, बलासे। मेरा उद्देश्य है खुलवाना। मैं खुलवाऊँगी। सब नहीं कुछ तो जायेंगे। सारी प्रमुख संस्थाध्यक्षोंके हस्ताक्षरों सहित कल ही एक आवेदन मुख्यमन्त्रीको भिजवाती हूँ। पत्रोंको भी साथ लेना पड़ेगा तभी आन्दोलन होगा।

घर पहुँचकर देखा कि घरकी रंगत ही बदली है ! वीथिका मैसूरसे आयी है और चन्दनकी चीज़ें व मैसूरी पाकका तोहफ़ा भी लायी है। बच्चे मज़े-मज़ेमें खा रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औपचारिक परिचयके बीच ही प्रिन्सिपल-की चर्चा निकल आयी। वीथिका अभी-अभी उनसे मैसूरमें मिलकर आ रही है। कभी ये पूरे समाजकी चर्चाका रोचक केन्द्र रही हैं। हमारे जमानेमें इतनी स्ट्रिक्ट कि संकीर्ण विचारके माँ-बाप भी अपनी लड़कियाँ उनके ज़िम्मे कर निश्चिन्त रहते। युरॅपसे लौटनेपर जाने कैसे क्या हुआ कि अपने यहाँकी ही एक लेक्चररके पतिसे शादी कर ली। शेक्सपियरकी पत्नी तो दस बरस बड़ी थी, इनके पति अपनी पत्नीसे पन्द्रह बरस छोटे थे।

विवाहकी ट्रेजेडी यह कि पति-पत्नी दोनोंकी सरकारी नौकरियाँ छूट गयीं। इस बीच दो बच्चे भी हो गये। पति तो निकम्मे होनेके बाद पुनः परिवारमें लौट आये बल्कि कहा जाये—पूर्व पत्नीके मायकेवालोंने अपनी बेटीको पुनः सुहागन बनानेका यही नुस्खा ढूँढ़ा, प्रयोग किया और सफलता भी पायी किन्तु प्रिन्सिपल बेचारी कहाँ जातीं? वे नारी थीं। हर भूलका भोग तो नारी ही भोगती है। इस उमरमें इस ख्यातिके बाद माँ-बाप रखनेसे रहे और वे भी रहेंगी इसीकी सम्भावना कहाँ थी। पति महोदय साल-दो सालमें दर्शन दे देते हैं। अब स्वयं आत्मनिर्भर नहीं सो इन्हें क्या मदद दें। सारी डिग्रियाँ तहाई रखी रहीं और प्रिन्सिपलको मिली प्रायवेट कॉलेजकी लेक्चरर-शिप। मनुष्यके चरित्रकी तरह भाग्य भी अबूझ पहेली है। कोढ़में खाजकी तरह उन्हें बुरी तरह लिकोडरमा हो गया है। जब सब था तब ये बच्चे नहीं थे, आज बच्चे तो घरमें कुछ नहीं। ऐसे प्यारे और बच्चे हैं कि देखते भूख भागती है। वीथिका एकदम जाने कैसी हो गयी। कहने लगी "सच पारू, विश्वास नहीं आता कि अपनी वे ही प्रिन्सिपल हैं! दुःख आदमीको कितना कड़वा-कड़ा बना देता है। वह फ्रेण्डकी तरह करती रहीं, पर बच्चोंको शॉपिंगके लिए ले जाने दिया, न कुछ दे दिया। प्रिन्सिपल तो अब टके सेर बिकते हैं। पर उस शानकी प्रिन्सिपल! क्या वैभव था, क्या उस बगीचेका मेण्टेनेन्स था, क्या कॉलेजका डिसिप्लिन था, क्या स्नेह। अब कहाँ मिलेंगी प्रिन्सिपल-जैसी शीर्ल्स केन यू विलीव, पारू! वो प्रिन्सिपल अब एक साधारण-सी लेक्चरर, सो भी अपने कॉलेजमें? जहाँ चार महीने बाद तनख्वाह मिलती है, एक हज़ार देकर दो हज़ारकी रसीद ले ली जाती है। कैसे बरदाश्त कर रही हैं, पारू? जिस चीजको पानेको पर यह कहर बरपाया सो भी नहीं मिला वही अकेले ही खींचना है ज़िन्दगीकी बीमारी-आरामीमें कौन मदद करे? बच्चे जरा-से बच्चे, क्या-क्या न परेशानियाँ होंगी? नौकर भी तो नहीं रख सकतीं आमदनी कहाँ? जिस एकाकीपनसे यह सब सहा, वही फिर गले पड़ा! है विधिका विधान?"

"मरीचिका है सब।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"बच्चे ही हैं जो बेचारे बड़े होकर कुछ सहारा दें तो दें। तबतक ..."

पारूलका जी चाह रहा था वह बताये कि अभी उसने एक सन्तानवती फली-फूली नारीका परम सौभाग्य देखा है—उस देशमें जहाँ गुरु और पितासे अधिक सम्मान माता-का है। पर नहीं कह सकी। जानती थी, लोगोंको बिना अपनी आँखों देखे विश्वास नहीं आयेगा कि श्रवणकी परम्पराको हममें घोंटकर पिलानेवालोंके वंशज हम, अपने माता-पिताको यह आदर भी देने-का साहस कर सकते हैं!

वीथिकाके रहते ही पारूल अनमनी हो गयी। जाते ही पता नहीं मन कैसा-कैसा हो चला। अभी देखी वृद्धा आँखोंमें तैर आयी, डॉक्टर भण्डारीसे हुई बातें भी। पारूल चलने लगी थी तो उन्होंने जाने कितने फल-मिठाई साथ रख दिये थे। पारूलके मना करनेपर भी वे बोली थीं, "पारू, मेरा इतना कुछ भी तुम नहीं देख सकती?"

"कितना-सा...?"

"कि मैं कल्पना ही कर लूँ कि कोई सारी लायी चीजें छीन-छीनकर खा रहा है। पीठपर लदकर चीजें छीननेकी कोशिश-है, कोई हाथसे बण्डल छीन रहा है, कोई लौटनेपर मुझसे नाराज बैठा है। अब बोर हो गयी इस एकाकीपनसे। बस कम्पैनी...फॉर मैल्टी! कोई ऐसा नहीं कि जो हाथ पकड़कर खींच ले जाये। माँ थी तब-तक एक आशा थी कि छुट्टीमें एक बार जाना ही पड़ेगा। नहीं जाऊँगी तो उन्हें बुरा लगेगा। बुरा लगनेका सवाल नहीं। जाना ही पड़ता था। अब वे बन्धन भी टूट गये। भाभी है, भाई है, बच्चे हैं! सामने पहुँच गये तो ठीक, नहीं पहुँचे तो भी कोई गिला नहीं। महज़ औपचारिकता। दुनियामें यह कहनेवाला कोई नहीं कि फ़ौरन आओ। आओगी कैसे नहीं। नहीं तो अमुक गाड़ीसे पहुँचा जा रहा है। एक दिनको आओ पर आना पड़ेगा। बाहरसे लौटनेपर छुट्टीके दिनोंका वीरानापन, सूनी-सूनी, भाँय-भाँय दोपहरियाँ, लम्बी-लम्बी काली रातें, बरसातके बोझिल गरजते-बरसते दिन। वह भी कोई आदमी है जिसके बाहरसे आनेपर कोई खुश होनेवाला न हो। यह पूछनेवाला न हो कि कहाँ गये, क्यों गये, देर हुई तो क्यों हुई? फल पड़े-पड़े सड़ जाते हैं, मिठाइयाँ सूख-सिकुड़कर बेस्वाद हो जाती हैं। पारू, माँ कितनी सुखी थीं। बाबाको अस्सी रुपये मिलते थे। हम सात भाई-बहन थे। मूली-प्याजके छोटे-छोटे टुकड़ों और ज्वारकी बासी रोटीके लिए हम झगड़ते थे। एक दूसरेको नोच लेते थे। पर माँके आस-पास बैठकर वे टुकड़े अमृत लगते और हम सातकी पल्टनमें माँ राजरानी थी। माँकी उँगली भी दुखे, मुँहपर शिकन भी पड़े तो हमारे प्राण नहोंमें होते। बाबा चाहते कि माँके लिए वे स्वर्गके तारे ला सकें तो ले आयें। ला कभी नहीं पाये। जो उस अभाव-में ला सके वह किन्हीं तारोंसे कम महत्त्वपूर्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न होता माँके लिए। तब घेर और इमली नसीब नहीं होती थी। हफ़्तों बिना हल्दीकी दाल बनती, हल्दी फ़िज़ूलख़र्ची जो लगती। अब अंगूर खट्टा बेस्वाद लगता है। अकेले छप्पन भोग नहीं सुहाते। साथमें चना भी अमृत है।"

"किसीको ले क्यों नहीं आतीं?"

"अब अगले जन्मके लिए इतना पाप और नहीं कमाना चाहती—जो सुखसे अपने माँ-बाप, भाई-बहनोंके पास है उन्हें छीनकर इस वीरानेमें डाल दूँ?"

"जिनके माँ-बाप न हों उन्हें ले आओ।"

"पराये आदर देंगे, स्नेह-ममता-अपनत्व नहीं। वे मेरे अहसानसे गरदन ऊँची नहीं कर पायेंगे। मुझपर अधिकार क्या जतायेंगे। मैं तो नेहका बन्धन, नेहका शासन चाहती हूँ।"

पारूल मौन ही रही आयी थी। अजीब स्थितियाँ हैं। जिनके सब हैं उसके परिवारवाले उससे कहते हैं – कहीं निकल जाओ। मुट्ठी-भर अन्न भारी है तो सेवा-आदर कोई क्या देगा। वृद्धा धनहीन है किन्तु धन छीनकर भी तो ऐसे बेटे-नाती निकाल बाहर करते हैं। एक हमारी प्रिन्सिपल हैं जिनके पास धन-मान-विद्या-वैभव-अधिकार-पद, दूसरे शब्दोंमें विक्रमके वैभवका ऐश्वर्यभोग था। वे एक मृगतृष्णाके पीछे आज सब छोड़कर रोटियोंकी मोहताज न भी मानी जायें तब भी उसी दयनीय स्थितिमें हैं। भण्डारी अब उस स्थितिमें आ चुकी है कि पता नहीं किस दिन क्या कर बैठे! सन्तान और पति छोड़ उसे भी किस चीज़का अभाव है।

तभी पारूलको भारतीजीका ध्यान आ गया। क्रान्तिकी अग्निशिखा। देशके लिए माता-पिताके इकलौते पूत, आजन्म अविवाहित रहे। आधीसे ज़्यादा ज़िन्दगी जेलोंमें काटी। जाने कितने विद्यार्थियोंको आदमी बनाया। एकाकीपन दूर करनेको विद्यार्थी रखते थे। समाज वह भी नहीं सह सका। राम लांछन त्यागनेके लिए सीताको वनवास दे सकते थे तो ये क्या नहीं कर सकते। वह घोंसला भी उजाड़ दिया और तिब्बत चले गये, अध्ययन कर कितना कुछ बटोरा। इन्होंने जो सृजा-समेटा उसे सहेजकर रखनेको आज कोई नहीं, जो अपना समझ उसका जतन करे। देशकी हर नयी समस्या उनकी सेवाएँ माँगती है। समस्याके समाप्त होते ही उनकी चाह भी समाप्त। लौटते वक्त मोटरमें ही पूछा जाता है, आपको कहाँ उतार दिया जाये? स्पष्ट है, कोई उन्हें आ ले जाकर दर्द मोल लेना नहीं चाहता। वे भी क्यों किसीके बोझ बनें। किसी भी धर्मशालाके सामने उतर जाते हैं।

कुछ लोगोंने उन्हें उपकृत करना चाहा। दो एकड़के खेतमें छोटी-सी एक झोंपड़ी बना दी। उन्हें विश्वास था कि इस निर्जनमें वे दिन काट लेंगे पर नहीं काट पाये। बस्तीसे तीन मील दूर यह आश्रम। हफ़्तों आदमीकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूरतको तरस जाते। आज तो देहातोंमें भी लोग घोड़ेकी पीठसे बात करते हैं। कहाँकी चौपालें। कहाँके अलाव। कहने लगे, सौ रुपये महीनेपर भी कोई मेरे पास रहना नहीं चाहता। परिवारवाले निर्जनमें क्या करें। हाँ, रातको बाड़ीकी सब्ज़ियाँ और फल ज़रूर ले जाते हैं। दो एकड़की जगहमें लगे हैं और सब्ज़ी। दुर्भाग्य यह कि एक दिन अपने हाथसे किसीको फलकी एक फाँक नहीं दी जाये। फल लगते हैं, बढ़ते हैं पर तोड़नेवाले दिन ग़ायब। कौन देखे। कौन सहेजे। परिवारका कोई होता तो कभी तो चिन्ता करता। मैं और राहुल दोनों तिब्बतसे कुछ लाये। राहुलने समाजको कुछ मुझसे अधिक भले ही दिया हो पर मैंने भी इतना उपेक्षणीय नहीं दिया जिसका मूल्य शून्य भी न होता। राहुलकी पत्नी है। बेटा है। होशमें बेटेने बापको न देखा हो पर अंशका था इसलिए रक्तने ज़ोर दिया। दोनों देशोंसे रेखा-पढ़ी कर पिताका जतन किया। पतिकी स्मृति समझ माननीय-वन्दनीय पतिकी पत्नी होनेके पीछे जो गरिमा है, जीविका है इन कारणों भी क्या वह न सहेजेगी उनकी थाती। बादमें सन्तान है और परम्परा चली जायेगी।

एक हम हैं, हमने अपनी ओरसे देश समाजको चाहे जो दिया हो किन्तु अपनी माँस-मज्जाका सृजा नहीं दिया है तो हमारे बाद कोई हमारी स्मृतिको आँसूकी बूँद भी देगा—यह विश्वास अपने-आपमें कितना बेमानी है बहन!

शास्त्रकारोंने जीवनका निचोड़ धर्ममें गूँथ दिया था। कितना बड़ा व्यावहारिक अनुभव और ज्ञान होगा इस दर्शनके पीछे कि वन्ध्याका दर्शन पाप है, निसन्तान पितृऋणसे उऋण नहीं होता। वन्ध्याका दर्शन पाप हो न हो किन्तु एकाकीपनकी घुटन अपने आपमें वह जीवित नरक नहीं है क्या जिसमें वह सबसे अलग एकाकी मोमबत्ती-सी जलती क्षय होती हुई प्रकाश भी देती है किन्तु स्वयं तो जल-जलकर ही रीतती है और शेष हो जाती है।...

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवन अपने लिए
और सबके लिए'

यह वाक्य—
जीवन को सफल
प्रतिष्ठा
और
समस्त विश्व की
शान्ति,
प्रगति तथा
सम्पन्नता
के हित में.....

●

गनी कमर्सियल कम्पनी
हैसियन तथा बारदाना
के
प्रमुख व्यापारी तथा वितरक
६, क्लाइव रो,
कलकत्ता-१
फ़ोन : २२-५३६६
२२-८१३९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवधनारायण सिंह

निर्णय

...लगा कि मैं उसे लेकर नाहक़ इतना ...न हूँ। उसके मनमें जो आये करे। उस ...सिलेमें उससे कोई बात करना व्यर्थ है।

वह मेरे बग़लमें चुपचाप आहिस्ता-...हिस्ता चल रहा है। उसके व्यवहारसे ...लग रहा है, मानो उससे मेरा कोई ...चय ही नहीं। वह मुझे पहचानता नहीं ...इत्तिफ़ाक़से ही मेरे साथ हो लिया है।

मैं बायीं ओर अपनी गरदन मोड़ता हूँ। ...दुबले-पतले शरीरपर कई सालका पुराना ...टंगा-सा है जिसके कॉलरपर मैलकी ...परत जम गयी है। एड़ी-घिसे चप्पलसे ...हुआ कीचड़ पायजामेपर दूर तक फैल ...है। उसके हाथ छातीपर बँधे हुए हैं ...उसकी चालमें सन्तुलन आ गया है। ...वह दाहिनी तरफ़ कुछ झुककर चलता ...। उसके सिरके बालोंका बेतरतीब बिखराव ...और चेहरेकी भीगी उदासी कुछ अजीब

महानगरके जीवनमें-से गुज़रते एक-न-एक मनःस्थिति उभरती ही करती है। यहाँतक कि सारा दिन और जीवन मनःस्थितियोंमें बँट जाता है। 'निर्णय' के आस-पासकी जो मनःस्थिति अपनी कहानी कहती है—उसे कहनेकी कोई अलग शैली तो होती नहीं?

प्रभाव पैदा कर रही है।

चारों तरफ़ कुहरा फैला हुआ है जिससे सारे दृश्य धुँधलके-के पार खो-से गये हैं। लगता है कि हम एक गहरी नदीकी अतल गहराइयोंमें तैरते चले जा रहे हैं। सतहपर आनेकी हमारी कोशिशें बार-बार बेकार होती जा रही हैं। कोई है जो लगातार हमें नीचे, बहुत नीचे दबाता जा रहा है। हमारी साँसें बुरी तरह फूलने लगती हैं।

मैं अजीब ढंगसे चौंक उठता हूँ। वह मेरा चौंकना देखता नहीं है। लगता है कि सचमुच मेरी साँसें फूल रही हैं। एक लम्बी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साँस खींचता हूँ और फिर जोरसे उसे बाहर निकाल देता हूँ।

कॉरपोरेशनकी कूड़ा-गाड़ी सड़कके बग़ल-के ढेरको समेट रही है। उसकी तीखी बदबू मेरे फेफड़ेमें घुस जाती है। लगता है कि शहरकी सारी बदबू मेरे फेफड़ेमें समा गयी है।

वह चुपचाप चलता चल रहा है। वह अपनी नाक बिलकुल नहीं दबाता है।

क्रॉसिंग पार करके मैं पूरे ज़ोरसे साँस लेता हूँ और सोचता हूँ कि बेमतलब इतनी दूर चला आया। वापस लौट जाना चाहिए। बातें फिर हो जायेंगी।

सामने गिरीश पार्क है। बंगलाके नाटक-सम्राट् गिरीश घोषकी संगमरमरी मूर्तिपर कौआ बैठा है। उसके पंख कुहरेसे भीग गये हैं। वह उन्हें फड़फड़ाता है। उस मूर्तिपर कौएका बैठना मुझे बुरा लगा हालाँ कि मैं यह जानता हूँ कि न जाने इस तरह रोज कितने कौए इसपर बैठते होंगे।

सड़क और पटरियाँ प्रायः सूनी हैं। इक्के-दुक्के लोग इधर-उधर आ-जा रहे हैं। हवाके झोंकोंसे पेड़ोंकी पीली पत्तियाँ दूर तक खड़खड़ाती बेतहाशा दौड़ रही हैं। उनका इस तरह बिखरना मुझे अच्छा नहीं लगता है। कोई पत्ता किसी सवारीके पहियेके नीचे दबकर चूर हो जाता है तो मन विचित्र ढंगसे सिहर उठता है।

वह मुझसे कुछ आगे बढ़ जाता है। मुझे लगता है कि वह कुछ कहना चाह रहा है। शायद मेरा साथ उसे अच्छा नहीं लग रहा है। मेरी इच्छा होती है कि विक्टोरिया रोड से मुड़कर गणेश टाकीजकी तरफ चला जाऊँ—बिना कुछ कहे-सुने।

शर्मा पानवालेकी दूकान खुल गयी है। सड़ककी धुलाईसे गीलापन फैल गया है। मैं पूछता हूँ कि कपिल, पान लोगे? वह अस्वीकार कर देता है। मुझे उसका अस्वीकारना अच्छा नहीं लगता है। मैं महसूस करता हूँ कि वह मुझे ही अस्वीकार रहा है।

मैं दुबारा सिगरेट ऑफ़र करता हूँ। उसे भी वह लेनेसे इनकार कर देता है। इस बार केवल नाराज़ी ही नहीं, दुख भी होता है।

हालाँ कि मुझे मालूम है कि कपिल न पान खाता है और न सिगरेट ही पीता है किन्तु उसका इनकार करना बरदाश्तके बाहर हो जाता है।

मैं पान मुँहमें दबाकर सिगरेट पीने लगता हूँ।

वह सड़ककी रेलिंगके सहारे झुककर खड़ा हो जाता है। हवा तेज हो गयी है। ठण्डसे उसकी कनपटीके रोएँ खड़े हो गये हैं। उसके पाँव काँप रहे हैं मानो उसे हिल रही है।

मैं उसके क़रीब आकर कहता हूँ, "एक पुलओवर खरीद लो। ठण्ड बहुत ज्यादा है।" मुझे लगा कि मैं बेवजह बेतुकी बात कह गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह मेरी बातसे जैसे सतर्क हो गया हो। उसने कोई जवाब नहीं दिया और आगे बढ़ गया। अब हम समानान्तर न चलकर आगे-पीछे चल रहे हैं।

मैं थोड़ा तेज चलकर उसे पकड़ लेता हूँ और कहता हूँ, "खन्नावाले ट्यूशनका महीना पूरा हो गया?"

उसने मेरे सवालका कोई जवाब नहीं दिया। मुझे लगा कि वह मुझे फिर इनकार करने जा रहा है। मुझे गुस्सा आ गया। पूछा, "क्या बात है! बोलते क्यों नहीं?"

"पिछले हफ़्ते उसे छोड़ दिया।" उसके चेहरेपर तनाव आ गया। लगा जैसे किसीने गाली दे दी हो।

"क्यों?" मेरी आवाजमें तीखापन आ गया।

"खन्नाका व्यवहार अच्छा नहीं था। वह चाहता था कि मैं लड़केके फ़ेल-पासकी जिम्मेदारी ले लूँ। कलकत्तेकी ट्यूशनोंकी शर्तें तो तुम जानते ही हो। और कोई चारा नहीं थी।"

कपिल इतना सफ़ेद झूठ बोल सकता है मुझे क़तई उम्मीद न थी, किन्तु जो कुछ मैं उससे सुन रहा हूँ उसे विश्वासोंकी सीमाके भीतर कैसे करूँ?

"मैंने खन्ना साहबसे साफ़-साफ़ कह दिया कि फ़ेल-पासकी ठीकेदारी नहीं है। मेरी बात उसे लग गयी। दूसरे दिन उसके यहाँ पढ़ाने गया तो देखा, दूसरा टीचर पढ़ा रहा है। वापस आ गया।" बहुत देरसे मनमें घुमड़ने-वाली बात बरसने लगी। बातें कहकर वह मेरी तरफ़ देखने लगा।

"मैं बोझ ढो लूँगा, ट्यूशन नहीं करूँगा।" उसने अपना आखिरी फ़ैसला सुनाया। उसके चेहरेपर कई नसें उभर आयीं, फ़र्शपर खिंच गयीं, पानीकी लकीरों-के मानिन्द। कई बार इन नसोंके उभारको देख चुका हूँ, इनका अर्थ निकालना चाहा हूँ। एक निश्चित अर्थ कभी नहीं निकला है। अजीब इबारत होती है इन नसोंकी!

दरजनों ट्यूशनोंपर असफल होनेके बाद मैंने उसे इस धन्धेके लिए मिसफिट समझ लिया था किन्तु उस दिन उसने कहा था कि अब वह ज़िम्मेदारीसे इसे करेगा, नियमितता बरतेगा।

> मैं कपिलके चेहरेकी ओर देखता हूँ। उसपर भावहीन अर्थवत्ता है। मैं महसूस करता हूँ कि मेरे भीतरका निर्णय टूट रहा है। मेरी निस्संगता समाप्त हो रही है। मैं अपनी इस कमज़ोरीसे परेशान हूँ। कपिलके बारेमें हर बार यही होता है। मैं कोई निर्णय नहीं ले पाता हूँ। मुझे हर बार लगा है कि कपिल झूठ नहीं बोलता है, बल्कि मैं ही उसका अर्थ ग़लत लगाता हूँ।

निर्णय : अवधनारायण सिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं बहुत कठोर हो गया था। बोली थी, "तुमसे यह धन्धा क़तई नहीं होगा। नाहक़ परेशान करते हो।"

"एक चांस और देकर देखो। इस बार तुम्हारी धारणा बदल जायेगी।"

"बदल चुकी!" मेरी बातमें व्यंग्य था, "तुम बिलकुल कुछ नहीं कर सकते।" मनमें आशंका पैदा हो गयी थी कि कहीं मेरी कठोरताके कारण वह अपने निर्णयसे अलग न हो जाये, अतएव बोला, "ठीकसे करो तो इन दिनों एक अच्छी ट्यूशन आयी है, पकड़ा दूँ।"

वह चुप रह गया था। किन्तु, चेहरेपर स्वीकृतिका भाव आ गया था। मैं उसी दिन उसे खन्नावाले ट्यूशनपर पहुँचा आया था।

उसके दो हफ़्ते बाद वह मुझसे नेशनल लाइब्रेरीके रीडिंग-रूममें मिल गया था। उस समय मुझे वहाँ पाकर वह झेंप गया था। उसके चेहरेपर अपराध-भाव आ गया था। मानो चोरी करते हुए पकड़ा गया हो।

सफ़ाईके तौरपर बोला था, "खन्नाके यहाँसे आ रहा हूँ। लड़का सिनेमा देखने गया था। इधर ही 'टाइम पास' करनेके लिए चला आया। ये पैसेवालोंके लड़के पढ़ने-लिखनेमें कोई ख़ास दिलचस्पी नहीं रखते हैं। दरअसल उनके लिए इसकी अहमियत ही क्या है!"

मैं चुप रह गया था। मुझे मालूम था कि वह दो हफ़्तोंमें कुल दो दिन ट्यूशनमें गया है, बाक़ी दिन लाइब्रेरी अथवा दोस्तोंके साथ बिताये हैं।

मुझे चुप देखकर वह बोला था, "चलो कैण्टीनमें चाय पियें। वहीं बातें होंगी। यह पुस्तक पढ़ने लायक़ है।"

मेरे मनमें आया था कि सारी बातें कह दूँ। इसके झूठका परदाफ़ाश हो जाये। बहुत होगा, बोलना बन्द कर देगा।

"तुम्हारी कहानी अच्छी लगी। शुरू भी अच्छे ढंगसे है। इस कहानीकी चर्चा होगी। अब सब कुछ छोड़-छाड़कर उपन्यास पूरा कर लो।"

"तुम्हारी तबीयत ठीक चल रही थी?" मैंने पूछा था। वह मेरे सवालसे कुछ घबरा गया था।

'हाँ, ऐसी कोई बात तो नहीं थी।' जैसे बिना बातको समझे जवाब दे रहा था।

"रेग्यूलर जाया करो। छूट जायेगी तो मुश्किल होगी।"

"जाता तो हूँ। तुम्हें विश्वास क्यों नहीं होता?"

"मुझे पूरा विश्वास है, लेकिन ऐसे विश्वाससे काम नहीं चलता।"

वह एकदम चुप हो गया था। उसके चेहरेका रंग बदल गया था। नर्सें लौट आयी थीं। उसके बाद उस दिन हम दोनों बिना कोई बात किये अलग हो गये थे।

महाजाति-सदनकी विशाल इमारतको देखता हूँ। लगता है कि किसीने बहुत बड़ा गुब्बारा हवा भरकर छोड़ दिया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लैम्पपोस्टके पास अपनी टाँगोंके बीच
[illegible] डाले एक कुत्ता सो रहा है। नींदसे
[illegible] आँखें बन्द हैं। उसकी नाकपर एक
[illegible] बैठ जाती है। उसे वह अपनी टाँगसे
[illegible] देता है। मक्खी इस बार कानपर
[illegible] है। वह अपने कानको ज़ोरसे फट-
[illegible] है। मक्खी पुनः उड़कर उसके सामने
[illegible] लगती है। कुत्ता उसे पकड़नेके
[illegible] बार-बार मुँह मारता है। मक्खी हर
[illegible] उसकी पकड़से बच जाती है। लगता
[illegible] कुत्ता काफ़ी परेशान है। कपिल उस
[illegible] देखकर मुसकरा देता है। मैं उसके
[illegible] देखकर हँस देता हूँ। वह मुझे देखता
[illegible] आगे बढ़ जाता है।

आसमानसे बहुत नीचे इमारतोंकी छतों-
[illegible] बिलकुल क़रीब चीलें मँडरा रही हैं।

मैं सोचता हूँ कि कपिलसे एक बार
[illegible] बात कर लूँ तो परेशानी दूर हो
[illegible]। साफ़ तो हो जाये। आखिर वह
[illegible] क्या है।

कल शामको खन्नाका फ़ोन आया था।
[illegible] शिकायतके तौरपर मुझसे कहा था,
[illegible]रजी, आपके दोस्त कपिल साहब
[illegible] नहीं आ रहे हैं। तबीयत तो ठीक है
[illegible] पिछले दो हफ़्तेसे लापता हैं। लड़केका
[illegible]भिनेशन क़रीब है। आपसे मिलें तो
[illegible] भेज दें।"

"कपिल!" मैंने आहिस्तासे कहा।

वह मुड़कर मुझे देखने लगा। फिर
[illegible] क़रीब आकर बोला, "कहो।"

"खन्ना साहबका फ़ोन आया था कल।"

मैं उसकी आँखोंमें आनेवाला परिवर्तन देखने लगा। उसने आँखें फेर लीं। वह चुप रह गया।

"उन्होंने पूछा है, तुम लड़केको पढ़ाने क्यों नहीं आते!"

वह उस बातपर चुप रह गया। क्या जवाब दे, जैसे यही सोच रहा हो।

कुहरा कुछ कम हो गया है। धुँधलकेके पारकी चीज़ें अब ज़्यादा साफ़ हैं। आने-जानेवालोंकी अदद भी बढ़ गयी है।

मैं कपिलके चेहरेकी ओर देखता हूँ। उसपर भावहीन अर्थवत्ता है। मैं महसूस करता हूँ कि मेरे भीतरका निर्णय टूट रहा है। मेरी निस्संगता समाप्त हो रही है। मैं अपनी इस कमज़ोरीसे परेशान हूँ। कपिल-के बारेमें हर बार यही होता है। मैं कोई निर्णय नहीं ले पाता हूँ। मुझे हर बार लगा है कि कपिल झूठ नहीं बोलता है, बल्कि मैं ही उसका अर्थ ग़लत लगाता हूँ। सचकी यथार्थ स्थिति क्या हमारी समझपर निर्भर करती है? शायद हर झूठके पीछे एक सत्य छिपा रहता है।

उस दिन भी ऐसा ही सफ़ेद झूठ बोला था। हम दोनों सुबहसे ही साथ-साथ थे। खाना खाने एक होटलमें गये। मैंने उससे पूछा कि तुम क्या लोगे? उसने कहा कि मैं खा चुका हूँ। मैं अचम्भेसे उसके चेहरेको देखने लगा था। मेरी आँखोंको देखकर वह भूल सुधारते हुए बोला था, "खानेकी इच्छा

निर्णय : अवधनारायण सिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं है। तबीयत ठीक नहीं लग रही है।"

बेयरेको मैंने दो थाल लानेका ऑर्डर दिया तो उसने विरोध नहीं किया। थाल आ जानेके बाद उसने बिना ना-नुचके भोजन किया था। मानो भोजन कर चुकनेका अपना कथन उसे याद नहीं रहा। उसके चेहरेपर झेंपका भाव ज़रूर था।

भोजन कर लेनेके बाद मैंने उससे कहा था, "कपिल, झूठ बोलना तुम्हार आदत हो गयी।"

"तुम्हारी तो नहीं।"

मैं चुप हो गया था। जानता था कि कपिल हर बातको बहसकी सीमा तक खींच ले आता है। वह ग़लत बातको भी दार्शनिक जामा पहनाता है। बात करते वक़्त न जाने वह कितना हठी बन जाता है। एकाध बार तो मनमें आया है कि दो-एक हाथ लगा दूँ, फिर बोलनेकी व्यर्थतासे पिण्ड छूटे। लेकिन अपनी खिसियाहटमें पराजय दिखी है।

"सारी अमरवाणियाँ और सूक्तियाँ आज अर्थहीन हो गयी हैं अथवा उनका अर्थ पूरा-का पूरा उलट गया है।"—कपिलने झूठको सच बनानेके प्रयासमें कहा था।

मैं चुप रह गया था। उसकी तरफ़से मुड़कर दूसरी तरफ़ देखने लगा था।

"ब्राख़्त इन सारे आर्ष वचनोंको इसी-लिए तो उलट दे रहा है।" उसने अपनेको सही साबित करनेकी कोशिश की थी। मैं उस दिन मनमें यह कहते हुए अलग हो गया था कि तुम भी बनो ब्राख़्त और कामू।...

कुहरा कुछ कम हो गया है। हम वाले बुक-स्टालपर आ गये। कपिल उलटने-पलटने लगा। वह जब भी गुज़रता है एक बार ज़रूर बुक-स्टालपर है और बचे-खुचे पैसेकी पत्रिकाएं लेता है।

मैंने दो-एक पत्रिकाएँ देखीं और वहांसे हटकर ट्राम-लाइनके क़रीब आया। वह अब भी उन्हींमें उलझा है। उससे चलनेका आग्रह किया। वह मेरे आया और बोला, "'इनकाउण्टर'में 'फ्रा सेंसबिलिटी'पर बढ़िया आर्टिकल आया है।

"चलो मैदानमें बैठें," मैंने कहा।

"तुम खन्ना साहबसे मेरा हिसाब ले लेना। पैसेकी बहुत ज़रूरत है। किताबवाले को देना भी ज़रूरी है। बेचारा आदमी है।"

मैंने कपिलकी तरफ़ देखा। उसने था कि किताबवालेका चुका दिया। उसका पावना नहीं है। दो-एक महीने नहीं खरीदूंगा। ज़रूरत होगी तो लाइब्रे पढ़ लूँगा।

मेरे देखनेके ढंगसे वह कुछ हिचका आगे बढ़ गया।

हम मैदानमें आ गये। दूर तक खुलापन अच्छा लगा। कुहरा अब बराबर रह गया है। पीली धूप बहुत लग रही है। हवा भी मन्द पड़ गयी है चौरंगी रोडपर भागती सवारियाँ, सामनेसे गुज़रती हुई—लगता है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...किन्तु वे बचकर निकल जाती हैं।

"गाँवसे वाइफ़का ख़त आया है।" उसने ...तरफ़ देखा, "लिखती है, तुम गाँव ...लौट आओ। यहीं कोई काम कर लो।"

मैं घासको अपनी हथेलीसे सहलाने लगा।

"मैं कलकत्ता नहीं छोड़ सकता। लिखना ...नहीं बन्द करूंगा। यह मेरी ज़िन्दगी ...मौतका सवाल है।" इस बार उसकी ...से लेकर गरदन तककी दोहरी नसें ...गयीं। आँखें फैल गयीं और चेहरेपर ...उभर आया।

"कपिल, तुम कलकत्तेसे वापस गाँव ...जाओ।" मैंने उसके मर्मपर चोट की।

...चेहरा लाल हो गया। ग़ुस्सेसे नथुने ...आये।

...खिदिरपुरवाली ट्राम बेतहाशा भागती ...गुज़र गयी। उसकी पीछे छूट गयी ...आवाज़ माहौलमें काँपती हुई ख़त्म ...जा रही है।

"तुम काम नहीं कर सकते। बोहेमियन ...जीना तुम्हारी आदत और संस्कार ...गया है। एक बातके लिए न जाने ...बहाने बनाने पड़ते हैं तुम्हें।"

वह ग़ुस्सेमें उठ खड़ा हुआ। मैं भी ...साथ हो लिया। अब मुझे अपनी बात-पर पछतावा होने लगा।

किसीको उपदेश देनेसे बड़ी बेवक़फ़ी संसारमें और क्या हो सकती है—मैंने विचारा।

"तुम कलकत्तामें जमना चाहते हो," मैं उसके पीछे आ गया, "तुम्हें ऐसी हालत-में अपना रवैया बदलना होगा।"

वह चुपचाप चला जा रहा है। मैं उसके पीछे-पीछे चल रहा हूँ जैसे उससे मेरा बहुत ज़रूरी काम है।

"दो-तीन घण्टे ट्यूशनें पढ़ा लो। फिर बाक़ी समय जो मनमें आये करो। मना कौन करता है तुम्हें।" अब मैं उसके बग़लमें आ गया।

उसके क़दम रुक-रुककर बढ़ने लगे। वह थोड़ी दूर पीछे हट गया। मैं भी धीरे-धीरे चलने लगा।

"दो घण्टेकी अच्छी ट्यूशनें आयी हैं। मैं यह ख़बर देने अभी तुम्हारे मकानपर तुम्हें ढूंढ़ते हुए गया था। पता चला कि तुम छह बजे सुबह घरसे निकल जाते हो और रात ग्यारहके बाद लौटते हो।"

"कौन कह रहा था?" वह रुक गया।

"तुम्हारा पार्टनर।"

"वह मेरे बारेमें बड़ी ग़लतफ़हमी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फैलाता है। सब उसके सदके जाते हैं।"

बातको उझलते और दूर होते देख मैंने कहा, "अच्छी फ़ेमिली है। पैसा समयसे मिल जाया करेगा। और दूसरी बातें नहीं उठेंगी।"

मैं महज़ इसलिए उसे समझा रहा हूँ कि किसी तरह ठिकाने लग जाये तो पिण्ड छूटे इस आदमीसे। बेवजह सिर-दर्द बना हुआ है!

"चलो बात करवा दो।" एक-ब-एक बदल गया। उसकी बातमें उतावली आ गयी।

"कल सात बजे यहीं आ जाओगे? साथ ले चलकर परिचय करा दूंगा।"

"आज जानेमें क्या अड़चन है?"

"मुलाक़ात शायद न हो।"

"बहक न जाये।"

उसकी उतावलीसे मुझे हँसी आ गयी। मैं बोला, "नहीं, ऐसी बात नहीं होगी।"

हम दोनों क्रासिंग पार करके 'ग्रैण्ड' के सामने आ गये। भीड़ बहुत ज़्यादा नहीं थी। सामनेसे दिनेश आता हुआ दिखा। मैंने नज़र बचानेकी कोशिश की किन्तु कपिल उसे देखकर चिल्ला उठा। दोनों तपाकसे मिले। मैं अलग खड़ा उन्हें देखता रहा।

"मेरी कहानी कैसी लगी?" दिनेशने कपिलसे पूछा।

"अभी पढ़ी नहीं।" कपिलके चेहरेपर तनाव आ गया। दिनेश झेंप गया।

"'सूर्या' से खत आया है। घरपर है। तुमसे कहानीपर लेख माँगा है। मेरी कहानी पढ़ लेना। उसकी काफ़ी चरचा हो रही है। मेरे पास प्रशंसाके कई पत्र आये हैं। देखना चाहोगे तो दिखा दूंगा।"

कपिलने कोई जवाब नहीं दिया। वह चुप रहा। एक बार उसने मेरी तरफ़ देखा। मैं भी चुप था।

"कबतक माँगा है?"

"दो हफ़्तेके भीतर।"

एक झटके-से कपिल मेरी तरफ़ मुड़कर बोला, "चलता हूँ। फिर मुलाक़ात होगी।" वह तेज़ीसे चौरंगी रोडको पार करते हुए बस-स्टापके पास चला गया। डबल डेकर बस एक झटकेके साथ हिचकोले लेती उत्तर की तरफ़ भागी। कपिल चला गया। मुझे लगा कि वह मुझे धक्का देकर भाग गया। मैं उससे पूछना भूल गया कि ट्यूशनके लिए कब चलोगे?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतुल भारद्वाज

एक कहानी

लेखकने कहानी भेजते समय लिखा था : 'रचनाका कोई उद्देश्य नहीं है, सिर्फ़ प्रयत्न इतना-सा है कि पाठक रचना पढ़ते समय एक प्रक्रियासे गुज़र जायें, और हाथ कुछ न लगे।'...और रचना पढ़कर यह लगेगा कि लेखक 'किसीके हाथ कुछ लग न जाये' के लिए सायास रहा है लेकिन किसीके हाथ कुछ लग भी जाये तो ?

...पाथके किनारेके क़रीब धूपकी एक बड़ी-...नाल पड़ी थी, डग-भर व्यासकी। बार-...रोशनीसे खाली हो रही थी और भर ...थी जैसे कोई सिरिंजसे पीली रोशनी ...से खींच और भर रहा हो। नालके ...या बिलकुल निकटसे कोई जूता, ...या सैण्डल बहुत देरसे नहीं गुज़री ...नालसे थोड़ा आगे बढ़कर जहाँ फ़ुटपाथ ...जाकर बिलकुल घूम जाता था, फ़ुटपाथ-...तह चटख गयी थी जिससे वहाँ बिना ...के एक गड्ढा-सा बन गया था जिसमें ...गुलाबका फूल पड़ा था।

आस-पास दूर-दूर तक कोई बाग़ नहीं ...जिससे वह फूल उड़कर या किसी और ...से कंकरीटके इस फ़ुटपाथपर आ ...रता। हो सकता है कि किसीके जूड़ेसे ...सककर यहाँ गिर पड़ा हो। फूलकी कुछ ...पंखुड़ियाँ मुड़ गयी थीं और बाक़ी हिस्सेपर खरौंच-सी पड़ी हुई थी। धूलकी एक परतने समूचे फलको ढाँप रखा था। फूल सुर्ख नहीं था, कुछ-कुछ कत्थई रंगत लिये हुए था।

तभी धूपकी उस नालके ऊपर दो काले जूते दिखाई दिये जिनपर एक अरसे-से पॉलिश नहीं करवायी गयी लगती थी। चमड़ी जगह-जगहसे घिस गयी थी और उस-पर स्थायी सिकुड़नें पड़ी हुई थीं। रंगत मटमैली काली थी। जूते जब खरीदे गये होंगे तो शायद इनके आकारमें एक अनुपात रहा होगा लेकिन लगातार इस्तेमाल होते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहने और बार-बार एड़ी-सोल लगवानेसे इतने बेडौल नज़र आ रहे थे कि देखकर पहाड़ी जूतोंका खयाल आता था।

निगाहमें अपने पूरे भद्देपनसे भर जाने-वाले जूते धूपकी उस नालपर-से हटे और आगे बढ़ने लगे कि उनसे ऊपर काई रंगतकी पतलून घुटनों तक नज़र आयी। जूते आगे सरकते रहे।

उसने अपनी आँखें मूँद लीं या आँखें खुद मुँद गयीं और बन्द आँखोंमें धुँआसी रंगतके अँधेरेमें उसे एक फूलकी लाश दिखाई दी। चिथकर कंकरीटकी सतहपर फूलका फैला हुआ आकार कि पहचाननेमें भी दिक़्क़त हो कि कौन-सी वस्तु पिचककर फ़ुटपाथसे चिपक गयी है।

लेकिन फूल अपनी धूल ढँकी पूर्व स्थिति-में जूतोंके बीच बिना गहराईवाले गड्ढेमें पड़ा हुआ था। इस सुरक्षित क्षणमें सरकने-से पहले और बाद कोई भी आ सकता था, लेकिन नहीं आया। लेकिन वह कहाँ था ?

वे उत्सवसे लौट रहे थे। उनके चेहरों-पर थकान थी और चमकते जूतोंपर सुनहरी धूलकी परत थी। उत्सवमें शामिल होने सुबह वे इधरसे ही गुज़रे थे। लेकिन वह उनमें नहीं था।

वह सुबह एक बस-स्टॉपकी रेलिंगपर बैठा हुआ था। वहाँसे दूर पेशाबघरकी खुली टंकीमें नहाती पीली गौरैया दिखाई देती थी। गौरैया फुदक-फुदककर चोंच टंकीमें डुबोती, पानीके छींटे उछालती और उसके सारे बदनमें फुरहरी-सी आ जाती कि पंखोंके रोएँ खड़े हुए दिखाई देने लगते। नहानेके बाद गौरैया कुछ गंजी-सी दिखने पड़ने लगी तो वह उस खेलसे ऊब गया। देखा तो बस-स्टॉप सूना पड़ा था। उसे खयाल आया कि बहुत देरसे इस स्टॉपसे कोई बस नहीं गुज़री है।

रेलिंगसे उतरकर वह सड़कपर आ गया। कुछ न करनेका बोझ उसकी नियोंपर धूलकी परतकी तरह छा रहा था। उसके होठ खुश्क थे और वह बार-बार अपनी खुरदरी जीभ होठोंपर फेरकर उन्हें गीला करने लगा।

सामने एक सिनेमाघरके पोस्टरों उसकी निगाह चली गयी। लपककर वह टिकटघरकी तरफ़ बढ़ा। वहाँ 'हाउस-फ़ु' की तख्ती लगी हुई थी और दर्शकोंकी लाइन नहीं थी कि वह सबसे पीछे जा हो और खिड़कीके पास पहुँच वहाना टल जाये। एक कोनेमें खड़ा वह भीतर हॉलमें जाते हुए देखता रहा। होठ सीटीपर एक धुन बजा रहे थे। धुन उसने एक फ़िल्ममें सुनी थी। क़ब्र खोदनेवालेने यही धुन बजायी दर्शकोंकी भीड़ हॉलके भीतर और वहाँ कोई नहीं रहा तो वह घसीटता हुआ बाहर आ गया।

ट्रैफ़िक उसी बँधी-बँधाई गतिमें रहा था और धूप सारी इमारतोंको किये हुए थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चेहरेके किन्हीं कोनोंमें अँधेरा
अभी भी भरा हुआ था।
होठोंपर सूखी पपड़ियाँ जमी हुई
थीं और बरौनियोंपर
रेतके कण काँप रहे थे। गरदनके
पीछे खड़े कॉलरसे
लफ़्सड़े बाहर
झाँक रहे थे। ऐसी हुलियामें
कौन पहचानेगा बेटे
तुम्हें ? उसने अपने अक्सको
एक बड़ी-सी गाली दी और
माथेपर बिखर आये
बालोंको लापरवाहीसे पीछे
करता हुआ वह बाहर
खिसक आया।

वह सर्कलके भीतर आ गया और
बाहर बरामदेमें धीरे-धीरे आगे
लगा। शो-केसोंके भीतर रखी चीज़ों-
देखता हुआ वह आगे बढ़ रहा था।
होठ शरारत-भरी मुसकराहटसे फैलने
एक बहुत पुरानी बात याद आ
थी।
परीक्षाके बाद रिज़ल्टकी प्रतीक्षामें थे
। लेकिन समय नहीं कटता था।
कॉलिज-कैण्टीनमें इकट्ठे हो जाते।
सबसे देरमें आता था। टेबिलपर बैठते
जेबमें हाथ डालता और बन्द मुट्ठी
निकालकर कहता, "अपने-अपने
रुपये सब सम्हालकर रख लो जेबों-
बाज़ार खरीदारी करने चलना है।"
करके वह हमें रुपये देता जाता
खाली मुट्ठियाँ बन्द कर रुपये खाली
डालते जाते। फिर शॉपिंगके लिए
जाते। शो केसोंमें बाहरसे झाँकते
पसन्द करते और खाली जेबोंमें-से
निकालकर खरीदारी करते। उन दिनों
अपनी उन प्रेमिकाओंके लिए बड़ी
चीज़ें खरीदी थीं जिनसे हमारी भेंट
आज तक नहीं हुई।
उसके दोस्तोंको भी यह बात याद
होगी ? लेकिन वे कहाँ हैं ?
रजिस्टरोंपर झुके अपने दोस्तों-
याद करनेकी उसने कोशिश की,
कोई चेहरा उसकी आँखोंके आगे
उभरा। सामने पार्कके पेड़ोंसे सूखे पत्ते

हवामें काँपते हुए नीचे गिर रहे थे और उनपर जमी हुई धूल हवामें फैल रही थी।

बरामदा खत्म हो गया। सामने पोस्ट-आॅफ़िसका छोटा-सा बोर्ड नज़र आ रहा था। उसने दस पैसेका एक अन्तर्देशीय लिफ़ाफ़ा खरीदा और फ़ुटपाथपर बने एक रेस्तराँमें आ गया। इमलीके पेड़के नीचे एक मेज़ और चार कुरसियाँ पड़ी हुई थीं। जेबसे क़लम निकालकर उसने लिखना शुरू किया :

"प्रिय अजय,

तुम्हारे बहुत-से पत्र आये। एकका भी जवाब नहीं दे सका। कल रात मैंने एक सपना देखा कि एक बहुत बड़ा मैदान है जिसमें पीली सूखी हुई घास उगी हुई है। मैदानके एक ओर ईंटोंकी मुंडेर है। तुम मेरे साथ हो और हम मैदानके बीचमें हैं और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरी तरफ़ बढ़ रहे हैं। मैदानमें कुछ और लोग भी चलते-फिरते नज़र आ रहे हैं। सारा मैदान पीली रोशनीमें डूबा हुआ है और आसमान बहुत नीचे सिरोंके बिलकुल क़रीब तक झुक आया। अचानक सायरनकी आवाज़से मैदान गूँजने लगता है और हम सब भागने लगते हैं। भागते हुए उसी मुँडेरके पीछे जा छिपते हैं। आसमानमें हवाई जहाज़ोंके आनेकी गूँज होती है। मैदानपर काले-काले साये तैरने लगते हैं। ज़ोरका धमाका होता है और मैदानमें धूल और धुआँ भर जाता है। सब कुछ घटनेके बाद सब लोग वहाँसे बाहर निकलते हैं। लेकिन तब तुम मेरे साथ नहीं होते हो।

सपनेके बाद आँख खुलनेपर अजीब बेचैनी-सी महसूस होती रही और मैंने चाहा कि तभी तुम्हें पत्र लिखूँ। लिखो, कैसे हो? कामपर लग गया हूँ और आजकल बेहद व्यस्त हूँ। जो रुपये तुमने मँगाये थे, जल्दी ही भेजूँगा।"

पत्र चिपकानेके लिए जब वह सूखे हुए गोंदपर जीभ फेरने लगा तो उसे लगा कि जीभ इतनी गीली नहीं है कि ख़त चिपक जाये। पास पड़े पानीके गिलासमें उँगली डालकर गीली की और फिर गोंदपर रगड़-कर लिफ़ाफ़ा चिपका दिया।

पहले ख़त पोस्ट किया जाये या चाय पी जाये? मेज़की सतहपर छोटी-छोटी पत्तियाँ इकट्ठी हो गयी थीं। गिलासके बाक़ी बचे पानीमें भी पत्तियाँ तैर रही थीं। रोशनी अभी बुझी नहीं थी और शाम सामनेके पेड़ की फुनगियोंपर काँप रही थी। डाकसे पत्र निकल जायेगा—सोचकर उठा।

लेटर-बॉक्समें पत्र डालकर उसने सड़क पार की और उसी रेस्तराँकी तरफ़ बढ़ने लगा। स्ट्रीट लाइट्स अभी नहीं जली थीं लेकिन दुकानोंकी बत्तियाँ जला दी गयी थीं। तभी सामनेका मोड़ घूम उसे मोनी दी आती दिखाई दीं। उसके होंठ मुसकरानेके लिए फैले और सिरको थोड़ा झटका देकर उसने मौनी दीको 'विश' किया। लेकिन वह पास से गुज़र गयीं जैसे उसे देखा ही न हो। वह हतप्रभ-सा हो उठा।

क्या मोनी दीने उसे 'इगनोर' किया या वह उसे पहचान नहीं सकीं? शायद उसकी हुलिया बहुत बिगड़ी हुई है। वह बराबरवाले डिपार्टमेण्टल स्टोरके टॉयलेट में दबे पाँवों चला गया और आइनेमें अपने को जाँचने लगा।

बाल क़ैदियोंकी तरह कटे हुए थे माथेपर बिखर आये थे। चेहरा पीला पड़ा हुआ था और कनपटियोंकी हड्डियाँ इतनी उभरी हुई थीं कि आइनेके ऊपर लगे बल्बकी रोशनी सारे चेहरेको एक साथ रोशन नहीं कर पा रही थी। चेहरेके कितने कोनोंमें अँधेरा अभी भी भरा हुआ था। होठोंपर सूखी पपड़ियाँ जमी हुई थीं और बरौनियोंपर रेतके कण काँप रहे थे। गरदन के पीछे खड़े कॉलरसे लफ़ड़े बाहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...हूंगा। ऐसे हुलियामें कौन पहचानेगा बेटे ...हूंगा? उसने अपने अक्सको एक बड़ी-सी ...नी दी और माथेपर बिखर आये बालोंको ...ारवाहीसे पीछे करता हुआ वह बाहर ...ल आया।

रोशनी बुझ चुकी थी और एक उजाला ...ह गया था जो धीरे-धीरे सिरोंपर ...ा रहा था। जगमगाते स्टॉलोंसे आगे ...र ज्यों ही वह मोड़ घूमने लगा सामने ...टके फुटपाथकी छातीपर यह गुलाबका ...गर आया और अब वह उसके पाँवोंके ...बुरक्षित पड़ा है।

उसने झुककर वह फूल उठा लिया और तेज़ीसे आगे बढ़ने लगा। भीड़-भरी सड़कों-पर इस घटनाका किसीको पता नहीं चला।

अब फूल उसकी मुट्ठीमें था और मुट्ठी उसकी जेबमें थी। मुट्ठी पसीजने लगी और जेबमें तम्बाकूके चूरेकी तीखी गन्ध उसके नथनोंने महसूस की। अचानक उसे लगा कि मुट्ठीमें बन्द फूल काँप रहा है, धीरे-धीरे धड़क रहा है। वह तेज़ीसे भीड़के रेलेमें बहता हुआ सड़क पार करने लगा और तभी सड़कोंकी बत्तियाँ जल उठीं।

■ ■

Phone : 25-2227

Universal Fire & General Insurance Company Limited

Transact :

Fire, Motor, Marine, Personal Accident, Fidelity, Guarantee, Burglary and all other forms of Miscellaneous Insurance Business.

Universal Insurance Building,

Sir P.M. Road Bombay-1.

Chairman & Managing Director :

P.U. PATEL, B.A., B.COM. (Lond).

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Satisfying the aviation industry's appetite for fuel...

Caltex serves all consumer needs for petroleum products in every part of the country... **you're never far from the Caltex Star.**

CALTEX

CALTEX (INDIA) LIMITED

CAL16.34B

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CALTEX
CALTEX (INDIA) LIMITED

कान्ता,
भगवत रावत,
कुंकुम जोशी, अनामिका

छोटे-छोटे सन्दर्भ

■

धूप :

रेत जहां थी, वहीं रहेगी ।
किन्तु नीचे पानी ।
ऊपर—पैर रखने को जगह
रौंदूं, चाहे नरमी से उठा लूं, उठवा लूं ।
धूप मैली होती है अगर,
हो जाये—
पैर धूप पर नहीं रखे जाते,
धूप पैरों के साथ चलती है ।

एकान्त :

गो, यह सच,
मुट्ठियाँ कसे आता है ।
किन्तु बड़ा सच तो यही
कि हथेलियाँ फैला कर
हवा में फैल जाता है
जीवन ।

क्यों बाँधूं सपने ?
क्यों समेटूं आंखों में
पीड़ा ?
क्यों कहीं भी लुटा दूं मन ?

सुख तो, बस,
एकान्त । एकान्त-गायन ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्लिप्त दिन

धूप के घिराव से निर्लिप्त दिन
निरालस दोपहर
भीड़ और उदासियों से
कटी-कटी शाम
अच्छी और उचटती नींद—
बँधे सुखों से बे-लाग
रात
गन्धों में डूबा और गन्धों से परे
नीला फैलाव :
मैं
घरबार बिना बे-घरबार।
फिर भी होगा ही द्वार कहीं, तो
सिर्फ़ पन्थ, सिर्फ़ पन्थ
आर-पार—
अब—
खुला या बन्द :
प्रार्थना-रत मन-सा अकेला
दुख।

—कान्ता

पीढ़ी :

अपना ही हाथ
सूझ नहीं पड़ता है।
रास्ता···
ट टो ल ता
फिर रहा हूँ यहाँ-वहाँ।

मन :

अन्दर ही अन्दर
सुगबुगा रही हैं
असंख्य···असंख्य मछलियां।
और यह तालाब
अभी तक
खुमारी में डूबा है।

प्रेम :

आज फिर
कई-कई कनेर के फूल
हवा चलते ही
एक साथ
झर गये····।
आँखों में
एक अजीब
पीलापन भर गये।

—भगवत रावत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काकपद :

किसी पंक्ति से एक शब्द काटने में—
मोड़ को छोड़ सही रास्ते पर आने में—
मैं अफ़सोस में अक्सर
सभी सही शब्दों के ग़लत अर्थ ढूँढ़ती हूँ—
फिर सही अर्थों के ग़लत शब्द—
और उन्हें—
काकपदों से सजा हर पंक्ति में जोड़ देती हूँ
और मुझे अफ़सोस नहीं होता।

मेरे नाम : पिछले चक्रधरकी वसीयत :

सुनो तो मेरे दोस्त
बँधने में नाराज़ी कैसी :
यह अनिच्छा, ऊब
यह रोष और विरक्ति क्यों
मैं इस पत्थर के खम्बे से बरसों बँधा रहा
और अब
इतनी देर बाद तुम आये हो :
लो—
यह मोह जो मैंने लिया
तुम भी लो
यह दुःख जो मैंने जिया
तुम भी जियो
यह कष्ट जो मैंने सहा
तुम भी सहो
और जैसे बँधने के बाद
यह रिसती हुई तृष्णा
यह पिराता हुआ बीमार मृत्यु का आक्रोश
मैंने दिया—
तुम भी दे देना !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रद्धांजलि :

आओ पार्टनर,
अब हम थोड़ी-सी देर को रो लें--
अभी-अभी तो 'सच' मरा है—
सुनो
रुको तो—
आखिर हम उसके क़र्ज़दार थे—
(लोग क्या कहेंगे !)

—कुंकुम जोशी

बड़ा शहर :

शोर ।
चीटियाँ बनायी राहों पर
चल रही हैं ।

यादें :

काँस-वन में
छप गयी स्मृतियाँ
अटक कर सूखी डाल हिलती है।

बुरुंश-वन :

रक्त रंगित हो गया है वन
न जाने यह
किस क्षितिज का आगमन ।

—अनामिका

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमरेन्द्र 'अमर'

अँधेरी सुरंग और सफ़र

डायरी लिखते, ख़त लिखते, किसीके बारेमें कुछ सोचते, समयको समयकी तरह जीते एक कोई भाव-बोध स्वरूप पाता है, उसकी हथकरघेपर बुनाई कहानीके लिए काफ़ी है—वातावरण उसमें ऊपरसे बुना जाता है क्या, वह तो अपनेसे आता है···?

उस सोचनेमें उसके भीतर एक तूफ़ान-सा उठ खड़ा होता। फिर अक्षर धुँधले लगने लगते। पंक्तियाँ काली, हलकी लकीरों-में बदल जातीं। आँखें मीचते ही दोनों तरफ़-से बूँदें फिसल पड़तीं। इससे पहले कि वह चू पड़नेवाली बूंदोंको हथेलीसे मिटाये—आँखें खुल जातीं और वह फफकने लगती। जैसे बिलकुल अवश हो गयी हो। पता नहीं, कैसी अज्ञात शक्ति उसके अस्तित्वको इस बुरी तरह झकझोर डालती है कि वह चरमराकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टूटते पेड़की-सी दर्दनाक स्थितिमें पहुँच जाती है। फिर जैसे धीरज, ढाढ़स बँधानेवाले भावोंका कहीं पता नहीं चलता। हवाका एक झोंका भीतर आया। आँसुओंकी धुन्धमें डूबे हुए नेत्रोंको छूकर, उनके भीतर बूँद, क़ैद पक्षीकी तरह, छटपटाते दर्दको सहलाकर लौट गया। वह मूर्तिवत् एक जगह बैठी रही। बिस्तरेसे ठीक सटा बुकशेल्फ़ और पास ही लिखनेका छोटा खूबसूरत बना हुआ टेबल। एक आरामदेह कुरसी, जिसपर बैठकर लिखा जा सकता था। आस-पास जो कुछ भी था, एक ढंगसे अपनी जगहपर था। मगर तरतीबीकी इस आकर्षक परिधिमें भी वह एक बेजान, गूँगी तसवीर-सी रहती। रीता हुआ मन, मनहूस डरावने खण्डहरकी तरह कुरूप हो जाता है जहाँ बीती बातोंकी अनगिनत क़ब्रें इर्द-गिर्द बनी रहती हैं। अँगुलियाँ डायरीके पन्नोंमें फिर उलझ गयीं—एक जगह हाथ रुक गया। आँखें स्थिर हुईं :

"१९५२ (फ़रवरी) की रात : उषाने लिखा है—'अरविन्द भैयाको बड़ी सख़्त चोट आयी है, कॉर-ऐक्सीडेण्टमें। बारह घण्टेकी बेहोशीके बाद ज़रा-सा होश हुआ है, मगर, डॉक्टर चिन्तित हैं – कुछ कहा नहीं जा सकता।'....बस इतना ही लिखकर, उषाने ख़त मेरे नाम लिख दिया। ख़त मुझे मिल गया—तबसे अबतकका वक़्त कैसे गुज़रा—मैं नहीं जानती। मुझे कुछ याद नहीं है। हाँ, शामको माँ चाय देते वक़्त मुझसे पूछ रही थी—अना, तेरा चेहरा बड़ा उतरा-उतरा सा लग रहा है, किसीने कुछ कहा तो नहीं? और जबतक मैं आँसुओंको पोंछ, हँसी हिलाती, पिताजीकी कर्कश आवाज़ मुझे और माँ दोनोंको सिहरा गयी। माँ बिजलीकी गति लेकर चली गयी, और मैं अकेली रह गयी। चाय ठण्डी हो गयी थी। एक घण्टा बीत गया। माँ वापस नहीं लौटी। मेरे सामने रह-रहकर अस्पतालके दृश्य आ रहे हैं—सर्द उदासीकी बेलौस परछाइयाँ, घुटता आस-पासका वातावरण।

अरविन्द पट्टियोंसे घिरा बिस्तरपर बेवश पड़ा है—आस-पास डॉक्टरोंके नातमझे चेहरे। मैंने बेइन्तिहा कोशिश की कि वे सामने अरविन्दकी वह भयानक तसवीर न तरह नहीं उभरे। किन्तु बार-बार देखना पड़ा—जैसे विवश कर दी गयी हूँ

अनामिका ऊपरकी तरफ़ देखने लगी शेडमें रोशनी तो क़ैद कर ली गयी थी, धुँधला-धुँधला प्रकाश कमरेमें मौजूद अपने जर्जर अस्तित्वका एहसास कराता आँखें ऊपरकी तरफ़ ऐसे टंग गयीं जैसे कुछ वहीं रह गया हो। अकसर वह की इन आकस्मिक बन्दिशोंमें इस तरह जाती है कि अपनी भयानक, सिहरा अकथनीय पीड़ाके सिवा उसे कुछ याद रहता। कभी-कभी ज्वारकी तरह इस चेतनाका तूफ़ान काफ़ी देर तक रहता है। और वह थककर चूर-चूर जाती है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

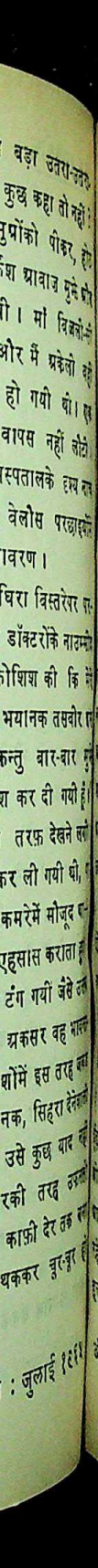

मेज़पर रखी घड़ी टिक-टिकका मद्धिम
[illegible] स्वर बिखेरती जा रही है—सुइयाँ
[illegible]हिस्ता-आहिस्ता सरककर कब वह छोटी-सी
[illegible] पार करती चल रही हैं, यह दिखाई तो
[illegible] पड़ता, फिर भी उनमें गति है यह तो
[illegible]कारना ही पड़ता है—कभी-कभी यह
[illegible] प्रकारकी बँधी-बँधाई आवाज़ अनामिका-
[illegible] अलग-अलग अर्थों, अनुभूतियोंसे भरती
[illegible] है। वह पन्ने उलटती है, कुछ खोजती-सी
[illegible] आँखें इधर-उधर घूम रही हैं। अपने
[illegible] हाथसे लिखे गये शब्द चुभते हुए शूलकी
[illegible] कुरेद-कुरेदकर ज़ख्मको फिरसे हरा
[illegible] देनेकी क्षमता रखते हैं। एक चमत्कार-सा
[illegible] है उसे कभी। एक मिनिट तक वह
[illegible] बार हँसती भी रही है। जैसे अल्प-
[illegible] साँस लेकर जीनेवाली हँसी करुणासे
[illegible] होती है जो एक तरहसे उसकी अकथ
[illegible]ताका एहसास कराती है। शब्द एक
[illegible] फिर बोल उठते हैं :

"अनकही बातें। '५० दिसम्बरकी एक
[illegible]हरी : धूपमें देह सेकती अकेली छत।
[illegible]न्दके कई खत आ चुके हैं, अब बाढ़की
[illegible] अनावश्यक रूपसे आने लगे हैं, एक-दो
[illegible] जवाब दिया पर हरका जवाब दूँ—ज़रूरी
[illegible] और फिर बोझिल शब्दोंमें जहाँ अर्थ
[illegible]से नहीं मिलता वहाँ तो मेरे पास अपनी
[illegible]से कहनेको कुछ शेष नहीं रहता। पर
[illegible]की चिट्ठी, लगता है, कुछ लिखवाकर
[illegible]गी। भ्रान्तियाँ इस तरह टूट गयीं जैसे
[illegible]की बूँदें स्वतः टूटकर निःशेष हो जाती

"अनकही बातें।
'५० दिसम्बरकी एक दोपहरी :
धूपमें देह सेंकती अकेली छत।
अरविन्दके कई ख़त
आ चुके हैं, अब बाढ़की तरह
अनावश्यक रूपसे आने लगे हैं,
एक-दोका जवाब
दिया पर हरका जवाब दूँ—
ज़रूरी है ?
और फिर बोझिल
शब्दोंमें जहाँ अर्थ ढूँढ़नेसे
नहीं मिलता वहाँ तो मेरे
पास अपनी ओरसे
कहनेको कुछ शेष नहीं रहता।

हैं। शायद मैं ख़ुद भ्रमकी दीवारमें बन्द थी। अब वह ढह गयी तो लगा, मेरे विश्वासने मुझे ही छला है।"

उसे लगा, ये बातें कभी उसीने लिखी थीं क्या ? आज ऐसी बातोंके बीचसे शायद स्वप्नमें भी नहीं गुज़र सकती। अब यही विश्वास उसकी ज़िन्दगीसे टकरा-टकराकर अपने ठोस होनेका सबूत दे रहा है। तब उसे आजके यथार्थका अनुभव कल्पनामें भी नहीं होता पर आज वह बीता हुआ कल ही आधारहीन स्वप्न-सा लग रहा है।

रात निस्तब्धताकी चादरमें फैलकर और बड़ी होती जा रही थी—खिड़कीसे अब सितारोंकी एकाध पंक्ति दिख जाती। सघन कालिमाकी परतें क़रीब-क़रीब गल चुकी थीं। आसमान खिड़कीकी छोटी-सी जगहमें भी हलका होता हुआ लगता। एक बजेका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय था। अनामिका तो नहीं सकेगी आज-की रात। जाने क्यों यह आशंका उसके भीतर ज़ोर पकड़ती जा रही है और ऐसा कुछ जब भी हुआ है, वह उसी तरह अवश बनी, अपनी हा तिलमिलाकर बेधती हुई मन:स्थितियोंकी तंग घाटियोंसे गुज़रती है। और उस वक़्त तक राहतका एक क़तरा अनुभव नहीं होता जबतक उन भयावह रास्तोंमें बन्दिनी-सी भटकती रहती है। आजके क्षण कुछ वैसे ही स्थायी आकार-प्रकार ग्रहण करते चले जा रहे थे। उसे लगता वह आस-पास धुँधली आकृतियों-सी दिखनेवाली छायाओंसे घिरी है—हर छाया ग़ौरसे देखे जानेपर कुरूप-भद्दी दिखाई देने लगती है। डायरीमें बन्द किये जाने कितने पृष्ठ होंगे। हर एक पृष्ठमें उसने अपने उन क्षणोंका छूता हुआ अनुभव रखा है जो सच्चे अर्थोंमें उसकी ज़िन्दगीमें बहुत बड़ी अहमियत रखते थे। उसे लगा, क्या सब कुछ एक कल्पित रहस्य-सा नहीं लगता? आखिर हमारी चेतनाके सूत्रमें ऐसा कौन-सा जादू है जो न हमें सोचने देता है अपनी प्रकृतिपर और न अधिक कौतूहलवश उसे जाननेकी इच्छा ही अनुभव होने देता है। उसने उँगलियोंको फिरसे सजग कर दिया—पन्नोंकी उलट-पुलट शुरू हो गयी। एक-दो पंक्तियाँ झलक-भर पायी थीं कि स्मृतियाँ शब्दोंको बहुत पीछे छोड़ती हुई एकबारगी आ खड़ी हुईं। अनामिकाने देखा—जैसे ये दृश्य बिलकुल ज्योंके त्यों दिखाई दे रहे हैं।

....धूप रह-रहकर उस दिन छल रही थी—काफ़ी ठण्ढके दिन थे। हड्डियोंको झकझोर देनेवाली कँपकँपाहट हमेशा बनी रहती थी। तिसपर धूपका यह छलावापूर्ण आकर्षण। वह बार-बार छतकी तरफ़ बढ़ जाती—दो-एक मिनिट धूपका स्वाद कुछ अस्थायी होते हुए भी, कम सुखद न था। ऐसी कोशिशें आदमी तब करता है जब वह भीतरसे जर्जरित नहीं होता। अनामिकाकी आत्मा अभी आघातोंके हलके प्रहारसे भी पूर्णतया अनभिज्ञ थी। दर्द जब कभी उभरता भी तो मनके इर्द-गिर्द चक्कर काट फ़ौव्वारों-सा, टूटकर बिखर जाता।

माँ कमरेमें आगकी व्यवस्था करके, काफ़ी क़ीमती कम्बल पैरोंपर डाले 'कल्याण'-की कुछ पुरानी प्रतियोंको बारी-बारीसे ध्यानमग्न होकर पढ़ती जाती थीं। आधे घण्टेके लिए सूरजका मद्धिम प्रकाश बादलोंसे टकराता हुआ रुका रहा। उन थोड़े-से मिनिटोंके लिए सूरजकी जीत ज़रूर हो गयी और वह चमकने लगा था। किन्तु हड्डियोंको कँपा देनेवाली सिहरन अभी मौजूद थी। सिर्फ़ देखकर एक झूठा सन्तोष थोड़ी देर ज़रूर उपजता। वह धीरे-धीरे अपनेको महसूस करती गयी। माँके कहे शब्द कानोंमें बजने लगे—"छि: अना, तू इतनी कमज़ोर निकलेगी—मुझे पता न था। तेरी साधना, तेरा वह संकल्प कहाँ चला गया? इन छतोंका सिलसिला जाने कबसे चल रहा है। किसी बहानेसे बाहर जानेकी बात भी सोची जा रही है। अच्छा अब मैं भी सजग हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ता तो अब नहीं रहे, उनकी बन्दूक ...ब भी टंगी है—उनका मान-सम्मान अब ...ुझे प्यारा है और मैं इसे जीते-जी ...दूँगी।"

साधारण-सी भर्त्सनासे शुरू हुई बात कितनी चोट पहुँचानेवाली साबित होगी यह तब महसूस कर सकी। उसने रह-रहकर उन शब्दोंकी प्रतिध्वनियाँ सुनीं, हर बार उनमें कर्कशता और अधिक घुल-मिल गयी। और हतप्रभ-सी एक शिथिल बनाने-वाली मुरझाहट आत्मसात् किये, निढाल बिस्तरेपर आकर, लुढ़क गयी। रजाई गले ऊपर खींच ली और भीतरके सघन अँधेरेमें एक अजीब सुखका एहसास, वह धीरे-धीरे करने लगी। मगर मनमें कुछ चुभता फिर भी चुभता जा रहा है—यह चुभन कम होगी? अनामिका इसके लिए बिलकुल विकल थी। विचारोंकी लहर उसे दूर एक ओर चली जाती और वह जबतक उसकी प्रतिक्रिया परखती, एक दूसरी लहर उसके भीतर एक उद्वेलनकी स्थिति बनाकर ओझल हो जाती। वह इस अन्तर्द्वन्द्वके बीच खो ही रही थी कि नौकरने धीमे स्वरमें पुकारा था, "बीबीजी, आपका खत।"

वह झटकेसे उठी और बाहर निकलकर चारों ओर देखा—माँ कमरेसे निकलीं तो नहीं और फिर दूसरे ही क्षण खत लेकर पास आ गयी थी। खिड़की खोल दी थी। तेज-तर्रार हवा बिजली-सी भीतर आयी और कमरेको अपनी सर्द साँसोंसे अच्छी तरह भिगोने लगी। पर वह खत खोलनेमें तन्मय-सी लग रही थी। थोड़ी-सी पंक्तियोंमें लिखा अरविन्दका खत था। जल्दीमें लिखा हुआ जैसे क़ैदखानेसे भाग जाना हो :

"अनामिका,

माँ नहीं चाहतीं, हम ज़िन्दगीके रास्ते-पर एक साथ चलें। कोशिश की, हारके बाद लिख रहा हूँ। एक बात और, अब यदि नहीं लिखूँ तो क्षमा करना।—अरविन्द!"

अनामिकाको लगा था जैसे वह हमेशाके लिए चेतना-शून्य हो जायेगी और आँखोंमें अँधेरी परछाइयाँ सिमट आयीं। दिनका धुँधला-धुँधला-सा उजाला अँधेरेमें गलता-सा लगा। आजसे पहले बीसियों बार उसने प्रयत्न किये थे कि भयानकसे भयानक परिस्थितिमें भी वह टूटकर, बिखर न जाये। मगर ये भावनाके स्वप्न हमेशा अपनी कही बातपर ध्यान देनेकी जगह, धोखा देना जानते हैं!

...स्वप्निल भावनाओंका कुहरा छँटा और अनामिका जग गयी। घड़ीका पूर्ववत् नपा-तुला बजता स्वर फिर उसे सुनाई देने लगा। इस बार उसे लगा, वह प्रेत-सी यूँ ही निरुद्देश्य भटक रही है। एक जगहसे दूसरी जगह, इस रेंगते हुए, भूले रहनेका भाव अपनाये चलनेसे क्या लाभ है—अक्सर यह प्रश्न उसके पास आ खड़ा होता है और वह निरुत्तर बनी, समाधानकी तरफ़ बिल-कुल ध्यान नहीं देती। वह बिस्तरेसे नीचे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उतरकर, घूमने लगा। कभी-कभी तो उसे ऐसा महसूस होता है कि रातका सन्नाटा, ज़िन्दगीको नज़दीकसे देखनेका सबसे उम्दा वक्त होता है—ऐसे समयमें आदमी अपनेको छूता हुआ, बहुत पाससे सब कुछ महसूस करता है। खिड़कीसे ऊपरकी तरफ़ देखा—आसमान एकदम काला था। बादलोंका सघन आवरण और भी घना होता जा रहा था। वह फिर भी निर्निमेष ऊपर ही देखती रही। रह-रहकर बिजलीकी चपल लकीरें खिंच जातीं। आँखें चमक जातीं। लकीरें ऐसे बुझ जातीं जैसे कभी उगी न हों—आसमानके इस गहरे रंगकी छाया, धुन्धकी चादर बनी, मकानोंके ऊपर पड़ रही थी। मकान, स्तब्ध मूर्तियों-से ठक् थे। बारह घण्टेका दिन कितना कोलाहलपूर्ण, आतंक-भरा जीवनके सम्पूर्ण अवयवोंको विकृत कर देनेवाला होता है—और यह कुछ घण्टोंका निस्तब्ध समय इतना निर्दोष बन जाता है कि आदमी इसकी निष्कलंक प्रकृतिपर मुग्ध-सा अपने दर्दका अकथ भार भी हलका समझने लगता है; जानते हुए भी कि इस भ्रमकी छाँहमें टिककर, थोड़ी कृत्रिम शान्ति बटोरनेका प्रयास भले ही स्वांगपूर्ण लगे। पर वह इस असत्य तथ्यको अपनाकर अपने भीतर आत्मसात् कर चुकी है।

हवा बहुत मद्धिम हो चली थी। बीच-बीचमें उसका क्रम टूटने लगा था। बारिश-की सम्भावना बढ़ती जा रही थी। अना-मिका वापस मुड़ी और पुनः अपनी जगहपर आ गयी। टेबल-लैम्प पहलेकी अपेक्षा अधिक लगा। आँखें ज़रूर धोखा खा रही हैं—ऐसा कभी नहीं होता। खिड़कीसे तेज़ीसे घुसता बारिशका स्वर उसे चौंका गया। एक मिनिटको सामने उठीं। बड़े ज़ोरसे पानी बरस रहा था। पानीके छींटे उड़-उड़कर उस तक पहुँचनेका भरसक प्रयत्न कर रहे थे। मगर एकाध बूँद ही मुश्किलसे पहुँच पाती। अनामिका पन्ने उलटने लगी। एक पेजमें जीवनके टूटे हुए हिस्से उसने यत्नसे सहेज रखे थे। हर टुकड़ा अपनी पीड़ाका एहसास कराता हुआ बोल उठा—और उस डायरीमें बन्द वह मनहूस दिन सामने आ गया। लाल स्याहीसे एक टेढ़ी भद्दी-सी लकीर खींच दी थी उसने, कुछ दिन पहले। अब ऐसी ग़लती वह नहीं करती। कभी-कभी इस तरह बन्द होकर घुटते रहनेकी स्थितिमें वह उन शब्दों पढ़ती है—अर्थका वह ज्वार-भरा आवेग ज़रूर उसकी आत्माको सिहरा है पर तब वह इस भट्टी-सी सुलगती परिधिमें पहले-जैसा घुटनका अनुभव करती है—परिधि भले ही नहीं टूटती मगर उसका मन्त्र टूट जाता है। करके तिल-तिल तड़पाकर मारनेवाली शिथिल जान पड़ती हैं :

"३ जनवरी : एक मनहूस साथ : शाम तक ऐसा लगा, जैसे बोझ अपनी सघनतामें ही बना रहेगा सूरजके बुझते ही मन अचानक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आक्रान्त हो गया—मुझे आश्चर्य हुआ। आज़की रात, निस्तब्धताकी असंख्य परतें अपने साथ लिये फैलती गयी। माँ बीचमें, कभी वक़्त, जब कि हमेशा चुप रहना पसन्द करतीं, आयीं और हमने साथ ही खाना खाया। एक बार उन्होंने मेरी तरफ़ देखा। चेहरा वैसा ही खोया हुआ-सा कठोर लगा पर आँखें सजल थीं। ममताका जल उनमें भर रहा था। और वह वापस कमरेमें चली गयीं। बत्ती कई घण्टे तक जलती रही। वे अपने कमरेमें लेटी बार-बार रजाईसे सिर निकालकर देखती जातीं। देर तक यही इधर उनका स्वभाव हो गया था। इस नियमका पालन अस्वस्थ रहनेपर भी करतीं। यकायक मेरा मन उनके कमरेकी ओर जानेका हुआ। कैसी आकस्मिक प्रेरणा थी और कितनी बलवती! मैं रोक न सकी ख़ुदको। माँ बड़ी बेचैनीसे करवट बदल रही थीं। किताब हाथसे छूटकर फ़र्शपर गिर पड़ी। यह उनके कलेजेका दर्द था जो मेरी वजहसे दो-तीन बार और उठा था। आज भी वैसा ही था पर माँके चेहरेपर पसीनेकी कुछ काफ़ी मात्रामें चुहचुहा आयी थीं। मैंने पास बैठकर उनका हाथ अपने हाथोंमें ले लिया। स्पर्श बर्फ़-सा ठण्ढा था। मैं काँप उठी। डॉक्टर कई आये—इन्जेक्शन, दवा-दारू बेअसर होती गयीं और मौतकी पकड़ उतनी ही मज़बूत होती गयी। डॉ० नागराज, जो अपने फ़नके उस्ताद गिने जाते थे, बाहर-के बरामदेमें टहल रहे थे। नर्सको बार-बार कुछ समझाते जाते। मुझे एक भयानक शून्यता लीलती जा रही थी फिर भी यन्त्र-वत् मैं सक्रिय थी। बाहर बर्फ़ीली हवा बारिशके धीमे स्वरोंमें बज रही थी। माँ गलती हुई बत्ती-सी कमज़ोर लगतीं—दर्दके उस ज्वारमें रहा-सहा सम्बल भी चुक गया था। बीच-बीचमें एक काँपती कराहका स्वर उठता और टूटती लहर बिखेरकर चुप हो जाता।

कई आत्मीय-स्वजन सुबह तक धीरज बँधानेके प्रयत्नमें लगे रहे। लोगोंसे घिरे रहनेपर भी न शब्द ही समर्थ होते हैं उस अकथ पीड़ाको भुलानेमें और न लोगोंका साहचर्य ही दुखते हुए क्षत-विक्षत मनपर, कोई प्रभाव छोड़ता है। कम्बलसे ढँका शरीर बार-बार कमरेके बीच केवल अकेला दिखाई देता। वह बुझी हुई ज्योति-सी, निष्प्राण देह धीरे-धीरे मेरी आँखोंमें धुँधली होती जाती।

अनामिकाने डायरी बन्द कर दी। उदासी-का कुहरा अपनी एक-एक परत अज्ञात दिशा-ओंमें फेंककर सिमटता जा रहा था। घड़ीमें साढ़े तीनका समय हो रहा था। लैम्पको छुट्टी देकर वह खिड़कीके क़रीब आकर खड़ी हुई। पानीकी बेलौस आवाज़ें बादलोंकी गरजमें छिप-छिप जातीं। हवाका छींटोंसे नहाया हुआ झोंका अनामिकाको छू गया। आँखोंके इर्द-गिर्द धुन्धकी काई फट गयी। आँखें सहसा छलछला आयीं और आँसू, बौछारों-की बूँदोंसे हिल-मिलकर होठों तक ढुलकने लगे—वह फफक-फफककर रोने लगी।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निमकी बनाने के लिए

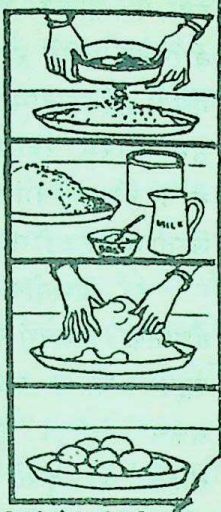

आटा छान लीजिए

नमक और थोड़ी वनस्पति मिलाकर इसे दूध के साथ सान लीजिए।

अब इसे अच्छी तरह गूंधिए।

छोटी-छोटी पेड़ियां बनाकर उन्हें बेल लीजिए और फिर गर्म वनस्पति में तल लीजिए।

लीजिए, स्वादिष्ट और जायकेदार निमकी तैयार हो गयी।

उत्तम एवम् स्वादिष्ट भोजन बनाने के लिए हनुमान वनस्पति पर ही भरोसा रखें।

भोजन बनाने का श्रेष्ठ चिकनाई माध्यम

हनुमान वनस्पति

निर्माता :

रोहतास इन्डस्ट्रीज लिमिटेड

डालमियानगर (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओम प्रभाकर

दो में से

नयी कविता हो या नयी कहानी, बग़ैर निस्संगताके लिखी नहीं जा सकती। आत्म-कथाके युग शायद अब न लौटें या वे भी निस्संग होकर लिखी जा सकेंगी। ओम प्रभाकर की यह कहानी एक बेरहम निस्संगतापर आधारित है—'दरअसल मैं कह रहा था यह प्रेम दो-चार दिन और चल जाता...।' कहानीमें यदि अर्थहीन आत्मीय भावुकता होती तो ज़रूर अन्तर पड़ता ?

उसने सोचा, सायकिल ले, मगर फिर नहीं ली और पतलूनकी जेबमें दोनों हाथ डाल लिये।

बाहर आकर, वह समझ नहीं पा रहा था कि क्या करे, कहाँ जाये ?

पाठक था नहीं। ग्वालियर चला गया था। यों आज तक उसे आ जाना चाहिए था, मगर नहीं आया था।

और वह, इस समय, बड़ी ही शिद्दतसे यह चाह रहा था कि कोई मिल जाये। कोई भी परिचित, जिससे वह बात कर सके। छुट्टियोंमें, पता नहीं, लोग इधर-उधर क्यों चले जाते हैं ?

कहीं चलते हैं !—उसने अपने आपसे कहा और उसी सड़कपर हो लिया जिसके अगले चौराहे पर वह चायघर है जहाँ उसका हिसाब-किताब है।

...क़स्बोंमें, उल्लूका पट्ठा दिन पैदा भी जल्दी होता है और ख़त्म भी जल्दी हो जाता है। अभी, इस समय, बमुश्किल तमाम, पौने सात बजे होंगे – जनवरीके – मगर सड़कों, मकानों और दुकानोंको देखनेसे लगता है कि सबके बारह बज गये हैं। या अभी, थोड़ी देर पहले ही सारी बस्तीमें कोई ऐसी हवा चल गयी है कि इन सिर झुकाये, हाथ बाँधे, इक्के-दुक्के लोगोंको छोड़कर उसके असरसे सारा-का सारा क़स्बा रामको प्यारा हो गया है।

अजीब बात है !—वह बड़बड़ाया। सूनी और जनवरीकी शामके धुँधलकेमें सिकुड़ी इस रेस्ट-हाउस रोडपर चलते समय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह तय नहीं कर पा रहा था कि किसके बारेमें सोचे ? ऐकान्तिक रूपसे किसके बारेमें सोचे ?····वह चाह रहा था कि कोई मिल जाये। कोई ऐसा व्यक्ति जो उसकी बातोंको गम्भीरतापूर्वक सुन सके और निर्णय दे सके कि उसे ऐसा या वैसा करना चाहिए। हालाँ कि, वह अपने लिए दूसरेसे निर्णय माँगे, यह बड़ी ही टुच्ची बात है—उसके अपने लिए। मगर इस समय वह स्वयंको बेहद अकेला और कमजोर और निस्सहाय और एक हद तक मूर्ख महसूस कर रहा था। वह इतनी ज़रा-सी बात निश्चित नहीं कर पा रहा था कि उसे इन दोनों चीज़ोंमें-से किसके बारेमें पूरी गहराई और निश्चितिसे सोचना है ? सोचना है और निर्णय लेना है।

···कोतवालीके छोटे-से सहनमें सन्तरी घम रहा है। सीढ़ियोंके ऊपर बल्ब लगा है। बल्बकी रोशनीमें सन्तरीकी बन्दूक़की संगीन चिलक उठती है। बिना चाहे ही वह उस तरफ़ देखता है। वह एक ही दृष्टिमें पहचान लेता है कि यह सन्तरी वही आदमी है। पतले, चेचकके दाग़ोंसे भरे चेहरेवाला यह सिपाही, जो आज सन्तरीकी ड्यूटीपर है, उसे कभी भी क़तई पसन्द नहीं आया है। उसने उसे अकसर ही, उसी चायघरमें बैठे देखा, जहाँ वह स्वयं बैठता है। उसने इस आदमीके चेहरेसे टपकती धूर्तताको अकसर ही अपने भीतर चुभते हुए महसूस किया है।···यह आदमी एक बेहद स्वार्थी और डरपोक बिल्ला है। यह हमेशा ही इधर-उधर घूमा करता है और जिस-तिससे बातें किया करता है। गालियाँ बकते समय ही वह अपने स्वाभाविक रूपके बहुत-कुछ नज़दीक दिखाई देता है।···वह सन्तरीके बारेमें सोचता हुआ कानोंपर टकराती नीम-ठण्डी हवाको महसूस करता हुआ, चला जा रहा है।···इधर उस आदमीने कोई ग़लत काम किया होगा। कोई ऐसा काम जिससे इसके अधिकारियोंकी नज़रोंमें इसके लिए फ़र्क़ आ गया होगा और उन्होंने इसके प्रति अपने सारे विश्वास और आत्मीयताको वापस ले लिया होगा और फिर सम्भवतः नाराज़ होकर इसे इधर-से उधर और उधरसे इधर घूमनेवाले फ़ालतू ऊब-भरे कामपर लगा दिया होगा।···उसने एक बार अपनी गरदन पीछे घुमाकर सन्तरीकी ओर देखा। दूरसे उसे लगा कि सीढ़ियोंके ऊपर लगे बल्बकी कम-कम रोशनीमें जो रहा वह आदमी वस्तुतः आदमी नहीं है। उसने कल्पना की कि उसके अधिकारियों अपने विश्वास और आत्मीयताके साथ-साथ इस व्यक्तिके भीतरसे इसकी तमाम ग गालियाँ और धड़कनें भी खींच ली हैं। और इसे कोई ऐसी चीज़ दे दी है—कड़े आदेशोंके साथ—जिसके दबावमें यह इस समय नितान्त यान्त्रिक ढंगसे आठ-दस क़दम इधर और आठ-दस क़दम उधर टहल रहा है। यह आदमी आदमी नहीं, धुएँकी एक आकृति है जो अधिकारियोंके कड़े आदेशोंके कारण की बन्दूक़ लिये इस छोटे-से सहनमें टहल रही है। उसे लगा कि यह व्यक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निरीह और निस्सहाय है—एकदम अकेला !

तो ?—उसके मुँहसे निकला। अपने भीतर उसने एक बेचैनी और खीझका अनुभव किया। एक अजीब-सी घबड़ाहट-भरी दृष्टिसे उसने चारों तरफ़ देखा।

कोई नहीं है। नहीं, वह नहीं है !—उसने जय-स्तम्भके गोलम्बरकी दायीं ओर चलते हुए आदमीको समझा कि वह कोई उसका परिचित है। मगर उसे अगले ही क्षण विश्वास हो गया कि नहीं, ऐसा नहीं है।

वह जितनी गहराईसे यह चाह रहा था कि कोई मिल जाये और जितनी बेचैनीसे वह आने-जाने वालेको देख रहा था, उतनी ही गहराई और बेचैनीसे उसके भीतर अपने प्रति एक हीनता और ग्लानिकी भावना बढ़ती जा रही थी। वह इस समय स्वयंको नितान्त स्वत्वहीन और पूर्णतः परोपजीवी महसूस कर रहा था। वह नहीं समझ पा रहा था कि यदि इस शाम उसे उसका कोई परिचित नहीं मिला तो वह क्या करेगा ? उसे लगा अपने समक्ष ज़िन्दगी और मौतका सवाल मुँहबाये-सा लगा।

...बाबू नहीं थे। चायघरकी भीतरवाली मरकरी-रॉड जल रही थी। उसकी रोशनी उसे एक साथ ही बहुत प्रिय और बेहद तीखी लगी। उसने दूरसे ही देखा कि भीतर दो-एक व्यक्ति बैठे हैं। वह सोचनेको हो आया कि शायद कोई हो। मगर तुरन्त उसने अपने सिरको एक हलका सा झटका दिया।

...शाम भी क्या अजीब चीज़
होती है ?
उसे याद आया कि उसके
एक कवि-मित्रने शामको
'विम्बोंका सबसे कोमल पल'
कहा है। मगर, उसने आगे सोचा
कि ऐसी बातोंका आख़िर
क्या अर्थ हो सकता है ?
क्या अर्थ हो सकता है,
इस प्रकार स्वत्वहीन,
पराश्रित होकर इधर-उधर
भटकनेका ?
क्या अर्थ हो सकता है,
हर आते-जाते व्यक्तिमें
अपने किसी-किसी भी
परिचितको खोजनेका ?

नहीं, कोई नहीं हो सकता !—वह अपने भीतर बड़बड़ाया। धीरे-धीरे वह निश्चित होता जा रहा था कि अब कोई नहीं मिलेगा। और यह भावना किसी हत्यारेके छुरेकी भाँति उसके भीतर गहरीसे गहरी उतरती जा रही थी।

...शाम भी क्या अजीब चीज होती है ! उसे याद आया कि उसके एक कवि-मित्रने शामको 'बिम्बोंका सबसे कोमल पल' कहा है। मगर, उसने आगे सोचा कि, ऐसी बातोंका आखिर क्या अर्थ हो सकता है ? क्या अर्थ हो सकता है, इस प्रकार स्वत्वहीन, पराश्रित होकर इधर-उधर भटकनेका ? क्या अर्थ हो सकता है, हर आते-जाते व्यक्तिमें अपने किसी-किसी भी परिचितको खोजनेका ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या अर्थ हो सकता है, इस तरहकी बातको निर्णय न ले पानेका कि उसे किन्हीं दो चीज़ोंमें-से ऐकान्तिक रूपसे किसके बारेमें सोचना है? आखिर किसी भी चीज़का क्या अर्थ हो सकता है?

चायघरकी तीनों गीली और सँकरी सीढ़ियाँ चढ़कर वह उस अमलारीके पासवाली टेबुलपर बैठ गया जिसमें सदियों पुराना एक रेडियो रखा है।

"चाय बाबूजी?" लड़का पूछता है।

"हाँ।"

हाँ करनेके तुरन्त बाद उसकी इच्छा होती है कि चायके लिए मना कर दे। उसे लगता है कि इस अनिर्णय और अस्थिरताकी स्थितिमें वह चायको उतनी अच्छी तरह नहीं पी सकेगा, जितनी अच्छी तरह चाहिए।

"बाबू कहाँ गये?" उसने लड़केसे चायघरके मालिकके बारेमें पूछा।

इस चायघरका यह मालिक, न जाने क्यों, शुरूसे ही उसे एक ऐसा आदमी लगता रहा है, जिससे यदि कोई बात की जाये तो वह उसे गम्भीरतापूर्वक सुन सकेगा। इस समय बाबूका न होना उसे कुछ अनुचित-सा प्रतीत हुआ। हालाँकि, आज तक उसने बाबूसे कोई गम्भीर बात कहनेकी कोशिश नहीं की है, मगर आज, उसे लगा कि यदि बाबू होते तो वह उनसे ही बात करता; कुछ इस अपेक्षासे कि वे उसकी बातोंको सुन कर निर्णय दे सकें।

लड़केने चाय लाकर रख दी। पहला सिप लेकर उसने सिर उठाया तो सीढ़ीके ऊपर दुबेको खड़ा देखा।

"मैं तुम्हारे कमरेसे आ रहा हूँ।"

अपने सिकुड़े हुए कंधोंको और सिकोड़ते हुए दुबे उसके पास आकर बैठ गया। उसकी इच्छा हुई कि दुबेके लिए चाय मँगाये और उससे—क्या हाल-चाल है—पूछे। मगर वह चुप रहा। दुबेके और पास बैठ जानेके तुरन्त बाद उसे भीतरसे कोई चीज़ हटती हुई प्रतीत हुई। उसे लगा कि उसके भीतर धीरे-धीरे खाली-सा होता जा रहा है और कोई भी महत्त्वपूर्ण या आवेगपूर्ण चीज़ उस खालीपनमें डूबती जा रही है।

"क्या बात है?" दुबे उससे पूछता है।

"कुछ नहीं। चाय पियो।" वह जवाब देता है, मगर उससे पूर्णतः असम्बन्धित, नितान्त निरपेक्ष होकर।

लड़का एक और चाय लाकर रख देता है। दुबे अपनी जेबसे सिगरेट निकाल सुलगा लेता है और चाय सिप करने लगता है। वह नितान्त अनिच्छासे, दुबेकी सिगरेटके इस ब्राण्डसे, जिसे वह कभी छूता भी नहीं, एक सिगरेट लेकर खूब गहरे-गहरे कश लेता हुआ पीने लगता है। धुआँ उसके गलेमें फँसता है तो वह और ज़ोर लगाकर उसे रोक लेता है—फँसने देता है। वह दरअसल जाने क्यों, चाहता है कि धुआँ इसी तरह उसके गलेमें फँसा रहे, दुबे उससे पूछता रहे, बातें करता रहे और वह जवाब दे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ देर तक चुप बैठा रहे। दुबे चाय पीकर, उन्हें अकेला छोड़कर चला जाये।

"क्यों, पे मिली ?" दुबे फिर उससे पूछता है।

"नहीं।"

"आज पढ़ाने नहीं गये ?"

"नहीं।"

"खाना खाया ?"

"नहीं।"

अपनी इस लगातार की 'नहीं' के बाद उसे लगा कि दुबेने अपने दाहिने हाथकी पहली उंगलीसे नाकपर चश्मा ठीक किया है। इसका मतलब यह है कि वह उसे ग़ौरसे देख रहा है।

"अजीब अहमक़ आदमी हो ! आखिर हुआ क्या है ?" दुबे उसके कन्धेपर हाथ रख देता है। ज़ोर देकर पूछता है।

वह सोचता है कि इसे क्या बताये कि क्या बात है ? और, बता देनेसे होगा भी क्या ? और वास्तवमें बात है भी क्या ? उसकी इच्छा होती है कि इसी प्रकार बात करते-करते दुबे एक झटकेसे उठकर चला जाये और वह अकेला रह जाये। अकेला रह कर वह सामने रखे हुए चायके खाली प्यालेमें सिगरेटकी राख झाड़ता रहेगा और लन्दनकी शामके धुंधलकेमें दबी हुई सड़क-की तरफ़ देखता रहेगा।

"चलो।" दुबेने चाय पी ली है और उसे बाँहसे पकड़कर उठा रहा है।

वे दोनों चायघरके बाहर आ जाते हैं।

वह एक बार गरदन मोड़कर चायघरकी उसी टेबुलकी तरफ़ देखता है। उसे महसूस होता है मानो उस टेबुलपर उसका कुछ रह गया है। मगर उसके पास था ही क्या ? वह अपने आपसे कहता है और एक गहरी निराशासे भर जाता है। दुबे उसकी बाँहपर ज़ोर देता हुआ उसे हॉस्पिटल-रोडकी तरफ़ ले चलनेकी कोशिश करता है। उसे अपनी बाँहपर दुबेकी बाँह बेहद भारी और बिलकुल ग़ैर-ज़रूरी मालूम पड़ती है। वह उसे हटाने-के लिए अपना दूसरा हाथ उसपर रख देता है और अपने भीतर एक अकारण भराव-सा महसूस करता है।

"देखो मिस्टर, इस तरह बिलकुल नहीं चलेगा !"

दुबे जब किसी दूसरेको प्रसन्न करना चाहता है या अपने नाराज़ होनेकी पूर्व-सूचना देना चाहता है, तो इसी प्रकारके शब्द इस्तेमाल करता है।

...दुबेके साथ अब वह इस क़स्बेकी उस एक मात्र सड़क पर चल रहा है, जिसके दोनों तरफ़ युक्लिप्टस और ताड़के कुछ पेड़ हैं और जो इस समय धुंधलकेमें डूबे होनेके कारण अपना आभास मात्र दे रहे हैं।

...उसे पता है, सामने यह जो पत्थरकी बेंच पड़ी है और इस समय जो बजाय पत्थरके राखकी लग रही है, उसके पास जाकर दुबे उसे बाँहसे पकड़कर उसपर बिठा देगा, खुद बैठ जायेगा और अपनी पूरी-पूरी कोशिश करेगा कि वह बताये कि आखिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात क्या है ?

...उसने सोचा, मगर यह भी अजीब बात है कि अभी थोड़ी देर पहले वह स्वयं चाह रहा था कि कोई उसे मिल जाये, जिससे वह बातें कर सके और अब यह व्यक्ति आ गया है और उसके साथ है तो उसे इससे बेहद ऊब हो रही है। वह पूरी तरहसे, अब, यह चाह रहा है कि दुबे चला जाये।

दुबेने उसके कन्धेसे अपना हाथ हटा लिया है और वह बेंचसे पीठ टिकाकर बैठ गया है।

"सिगरेट दो।" वह दुबेसे कहता है।

वे दोनों सिगरेटें सुलगा लेते हैं। दुबे इस समय इतने तटस्थ और दूरस्थ भावसे बैठा है कि उसे अपने और दुबेके बीच किसी कत्थई-शेड-से भरी हुई एक गहरी और चौड़ी खाईका आभास-सा हो रहा है। उसे यक़ीन ही नहीं हो पा रहा कि अभी कुछ मिनिट पहले यही व्यक्ति उससे बार-बार कुछ कह रहा था या पूछ रहा था। वह अपने भीतर सहसा ही एक अजीब क़िस्मका ठहराव-सा महसूस करता है :

कई वर्षोंसे वह अपना घर-बार छोड़,
इस शहरसे उस शहरमें भटक रहा है।
(और उसे अपने माँ-बाप, भाई-बहिनकी
याद नहीं आती। वह उदास नहीं होता।)
उसका प्रेम
(जिसे उसने अपनी आत्मामें महसूस
किया था।)
उसकी अपनी असामर्थ्यके कारण टूट गया
(और वह उसकी स्मृतियोंके लिए रोए
नहीं और न ही आत्मघात करनेकी
सोचता है।)
वह जिस शहरमें जाता है
कुछ लोगोंकी दयावश वहाँ कुछ दिन
रहता है
और फिर उन्हींकी विरक्ति या उनके
कारण वहाँसे कहीं और को चल देता है।
(और उसे अपनी हीनता या अकर्मण्यता
या परोपजीविताकी अनुभूति नहीं होती।
एकान्तमें अपने भविष्यके बारेमें सोचता
हुआ वह,
सदा ही एक 'आयरन कर्टेन' पाता है।
(और न वह हताश होता है और न
उत्तेजित।)
वह समझ नहीं पाता कि
उसे क्या होता जा रहा है ?

...उसने हड़बड़ा कर उँगलियों [illegible]
और सिगरेट उसके पाँवोंके पास गिर [illegible]
उन दोनों उँगलियोंमें उसे कुछ जलन [illegible]
हुई। वह उन्हें आपसमें रगड़ने लगा, [illegible]
क्यों, आख़िर वह इस कविताके बारेमें [illegible]
लगा था और क्यों उसे सिगरेटके [illegible]
अधिक जल चुकनेका अहसास नहीं था।

उसने दुबेकी तरफ़ देखा—यह [illegible]
कि वह शायद अब भी उतना ही [illegible]
थलग होगा, मगर वह सहसा घबड़ा गया कि
दुबे उसीकी तरफ़ देख रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं दरअसल यह सोच रहा हूँ कि क्या कहूँ?" दुबेने उसकी तरफ़से आँखें हटा लीं, सिगरेटका एक कश लिया, ऊपर मुँह करके धुआँ छोड़ा और पोलो-ग्राउण्डकी तरफ़ देखने लगा।

"मैं समझ नहीं पा रहा कि ऐसी स्थिति-में तुझे क्या करना चाहिए।" उसने फिर कहा, कुछ इस तरह मानो वह किसी व्यक्ति विशेषसे सम्बन्धित और सम्बोधित नहीं है। "क्या पढ़ाना उन लोगोंने आजसे बन्द कर दिया है और अब, जब मैं पढ़ाने नहीं जाऊँगा तो खाना खाने भी नहीं जाऊँगा, और इस तरह वहाँ मेरा आना-जाना अब बन्द। और फिर—आज दस हो गयी, मिली नहीं है।"

सहसा वह रुक गया। उसे अपने चेहरे-पर लोनी-जैसी कुछ नमी-सी महसूस हुई। "खाना तुम मेरे साथ खा सकते हो।" दुबेने पोलो-ग्राउण्डके बुकलेककी ओर ही देखते हुए उससे कहा और उंगलियोंमें फँसा-कर सिगरेट उछाल दी जो सड़कके उस पार गिरकर चमकने लगी।

"नहीं, दरअसल मैं चाह रहा था कि यह प्रेम दो-चार दिन और चल जाता। तब-तक पे मिल जाती। फिर कोई परेशानी नहीं रहती।" दुबेसे—या शायद स्वयंसे या यों ही, हवामें—उसने फिर कहा।

"हाँ, मगर अब ठीक है, जो है।"

दुबे, दूसरी सिगरेट सुलगा लेता है। इच्छा उसकी भी एक सिगरेट और पीनेकी होती है, मगर चुप रहता है। वह अपने दोनों हाथ सीनेपर बाँध लेता है—यों ही अकारण और सड़कके उस पार पड़ी सुलगती सिगरेटको देखता रहता है।

■ ■

लेखन-प्रकाशनकी अधुनातन दिशा-प्रवृत्ति और उपलब्धि-परिचायिनी मासिकी

ज्ञानपीठ पत्रिका

भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रवर्तित

• सम्पादक :
लक्ष्मीचन्द्र जैन, जगदीश

• मूल्य :
६.०० वार्षिक, ००.५५ पैसे प्रति

'ज्ञानपीठ पत्रिका' हिन्दीमें अपने प्रकार का प्रथम प्रयास है, और कदाचित् अन्य भारतीय भाषाओंको देखते हुए भी, जिसका प्रयत्न एक ऐसा अध्ययन प्रस्तुत करना है 'जो लेखक-प्रकाशक-विक्रेता-पाठक चारोंके 'अक्षर-जगत्'की गतिविधि, नयी प्रवृत्तियों, समस्याओं एवं समाधान, और विकास-उन्नतिकी दिशा-भूमिका सम्यक् परिचय दे, तथा परस्पर विचारोंके आदान-प्रदानका पथ प्रशस्त कर सके।

सम्पर्क-सूत्र : भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माध्यम

हिन्दी साहित्य सम्मेलन
द्वारा प्रकाशित
तथा श्री बालकृष्ण राव-द्वारा
सम्पादित मासिक

'माध्यम' एक वर्ष की
अल्पावधि में
हर प्रबुद्ध पाठक की सबसे
प्रीतिकर पाठ्य-सामग्री
बन गया है।

'माध्यम' के प्रवेशांक से
अबतक की पूरी फ़ाइल की
धुआँधार माँग इसके स्थायी
महत्त्व और लोकप्रियता का
परिचायक है।

सहवर्ती साहित्य, विवेचना, प्रतिपत्तिका,
समीक्षाएँ, प्रत्यालोचन-पुनर्विचार, हिन्दीजगत्, पत्र-पत्रिकाएँ
'माध्यम' के स्तम्भगत आकर्षण हैं।

• •

एक अंक का मूल्य : १.०० । वार्षिक शुल्क : १०.००

• •

पत्राचार : पो० बा० सं० ६०, इलाहाबाद
सम्पादकीय तथा व्यवस्थापकीय कार्यालय :

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमलजीत सिंह

धुन्धमें डूबी रोशनियाँ

यात्रा ! वैसे भी हमेशा कोई-न-कोई यात्रा चलती ही रहती है—चाहे बाहर, चाहे भीतर। सारी यात्राएँ एक जगहसे दूसरी जगह पहुँचाती ही हैं और यह गुज़रना कहानीको कहानी बना जाता है—उसका अपना देश-काल होता है, उसमें तारीख़ और शहरका नाम न भी हो तो चलेगा ?

साढ़े नौ बज चुके थे। उसकी दृष्टि चारपायी-की ओर गयी—विमला अभी भी कम्बलमें दुबकी गहरी नींदमें सो रही थी। उसके बाल बिखरे हुए थे और एक हाथ चारपायी-की पाटीसे नीचे लटक रहा था।

खिड़कीसे हटकर वह चारपायीकी पाटी-पर आकर बैठ गया और विमलाके चेहरेको ध्यानसे देखने लगा। क्या विमला सचमुच कुरूप है ? एक बार फिर वही प्रश्न उसके मनमें उभर आया और इस बार उसे लगा मानो उसके हृदयमें घर कर गये इस विचार-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से उसे शायद ही कभी मुक्ति मिल पायेगी। और एक पलके लिए उसे अपना मसूरी आना भी व्यर्थ-सा लगा।

■

वैसे देखनेमें सरल-से स्वभावका व्यक्ति है विनय। उम्र कोई सत्ताईस सालकी होगी। दिल्लीमें रोडवेज़के दफ़्तरमें पिछले सात वर्षोंसे काम करता है। तनख़्वाह बढ़ते-बढ़ते ढाई सौ हो गयी है। माँ-बाप दिल्लीसे अठारह मील दूर गुड़गाँवमें रहते हैं। अपनी छोटी-सी उम्रमें ही विनयने ज़िन्दगीकी कठिनाइयोंसे जूझना शुरू कर दिया था; हाई स्कूलकी पढ़ाईसे कॉलेजमें इण्टरकी परीक्षा तकका सारा खर्च उसने स्वयं अपनी मेहनतसे चलाया, और इण्टरके बाद नौकरी कर वह पिछले सात वर्षोंसे अपने माँ-बापको रुपया भेजता है। पिछले सात वर्षोंसे उसके माता-पिता उसे शादी कर लेनेके लिए बाध्य कर रहे थे, परन्तु वह अपने आपको इस बातसे सदैव दूर रखता गया—यह सोचकर कि दिल्ली-जैसे शहरमें इतने कम रुपयोंमें वह एक गृहस्थका जीवन नहीं बिता पायेगा। वह तो केवल संयोगकी बात थी कि उसीके ऑफ़िसमें तीन माह पहले विमलाका अपाइण्टमेण्ट हो गया और इसी अरसेमें वह उसकी अच्छाइयोंकी ओर धीरे-धीरे आकर्षित होता चला गया।

विमलासे मुलाक़ात होनेसे लेकर शादीके दिन तक उसके मनमें एक बार भी यह विचार नहीं उठा था कि विमला देखनेमें अच्छी नहीं या कुरूप है। वह तो केवल जानता था कि विमला सीधे-सादे स्वभाव अच्छी लड़की है, जो अपने पैरोंपर होना जानती है। उसने सदैव यही था कि विमलाको पाकर उसकी रीतापन दूर हो जायेगा।

लेकिन विनयकी शादीसे उसके परिवार के सदस्य बिलकुल प्रसन्न नहीं हुए। दबी आवाज़से यह कहना प्रारम्भ कर था कि विमला कुरूप है। कुछ दिन तो सब कुछ चुपचाप सुनकर हँसीमें टालता परन्तु जब विमलापर सीधे-सीधे जाने लगे तो उसके लिए यह असहनीय गया। शायद घुटनकी उसी स्थितिसे पानेके लिए विमलाको लेकर वह तीन दिन हुए मसूरी आ गया है।

■

दसका वक़्त हो रहा था। विमलाके धीमे-से हिलाते हुए उसने कहा, हो....!"

अलसायी-सी आवाज़में विमलाने 'हूँ' कहा।

"देखती हो, दस बजनेको हैं अभी तक सोयी पड़ी हो—उठकर जल्दीसे तैयार हो जाओ तो कहीं चला जाये।"

विमलाने उसकी कमरमें हाथ डाल अपनी ओर खींचना चाहा, परन्तु वह झटकेके साथ अपने आपको उससे चारपायीसे उठ बैठा और उसने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों खिड़कियाँ खोल दीं। कमरेमें फिर एक बार बादलोंके टुकड़े तैरने लगे परन्तु अब उनमें पहले-सी नमी नहीं थी।

मसूरी-क्लब होटलसे निकलकर वे रिवर-पैलेस थियेटरके सामने आकर खड़े हो गये; और दोपहरके शोमें चल रही पैरेडी फ़िल्म 'लविंग यू' के पोस्टर देखने लगे।

"है इरादा ?" विनयने विमलाके हाथ-को धीरे-से दबाते हुए पूछा।

विमला विनयकी आँखोंमें आँखें डाल धीरे-से मुसकरायी और बोली, "लविंग यू?—नो।"

विनय प्यारसे मुसकराया, फिर हँसने लगा और विमलाको अपनी ओर खींचकर बोला, "फिर इस फ़िल्मकी क्या ज़रूरत है—चलो किसी घाटीमें चलकर बैठा जाये।"

और दोनों हाथोंमें हाथ डालकर माल रोड पर निकल आये। फिर नीलम होटलसे खाना खाकर वे लोग कैमल रोडपर निकल आये। आकाशमें कुहरेके बादल अभी भी छाये हुए थे, परन्तु अब वे अल्पपारदर्शी थे—दूर पहाड़ियोंपर बसी हुई छोटी-छोटी बस्तियों और नीचे घाटियोंमें बहते हुए झरने धुँधले-धुँधले दीख पड़ते थे।

चलते-चलते वे लोग सड़कके किनारे लगी रेलिंगसे टिककर खड़े हो जाते और सफ़ेद बादलोंको घाटियोंमें छाते देखते रहते।

"न!" इस नये मेक-अपमें
वह एक नयी ही अदासे
मुसकरायी और विनयको लगा
मानो आज उसका
अभियान दूर-पास फैली
हुई पहाड़ियोंको देखना नहीं,
कुछ और ही है और उसने
रेलिंगका सहारा छोड़ विमलाको
इशारा किया—"आओ, हम
माल रोडकी भीड़में खो जायें।"

कैमल रोडपर वे दो-ढाई घण्टे घूमनेके बाद लाइब्रेरी-पाइण्ट पर निकल आये। वही शामका माहौल घिर आया था और हवामें ठण्डक बढ़ने लगी थी। उन्होंने पास ही एक होटलमें बैठकर चाय पी और पुनः माल रोड-पर निकल आये।

विमलाको माल रोडपर घूमना निहायत पसन्द था। माल रोडपर, खासकर सुबह और शामके वक़्त, कितनी भीड़ रहती है! शामके समय तो ऐसा लगता है मानो सौन्दर्य-का सैलाब आ गया हो···और माल रोडकी ये भीड़ें ही विमलाके आकर्षणका एक-मात्र केन्द्र थीं।

गरमियोंके दिनोंमें अधिकतर नव-दम्पति ही मसूरीमें आये हुए होते हैं और वधुएँ तो ऐसी बन-ठनकर निकलती हैं मानो बचपनमें नानी-माँ-द्वारा सुनायी गयी कहानियोंकी परियाँ हों।

पिछले तीन दिनोंसे विमला इन बनी-ठनी परियोंको बड़े ही चावसे देख रही थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सड़कपर चलती-चलती कई बार विनयके हाथको दबाकर कहती, "वह देखो, कितनी सुन्दर लड़की है, कितनी बढ़िया साड़ी पहिन रखी है उसने! है न?"

और जब स्वीकृतिमें विनय हाँ कह देता तो विमला फिर कहती, "पर उसके पतिको तो देखो, कैसा भद्दा दिखता है उसके साथ! कुछ 'हाइट' कम नहीं है उसकी?"

विनय बिना देखे-भाले फिर हाँ कहकर उस प्रसंगको टाल देना चाहता कि विमला फिर किसी दम्पतिका निरीक्षण करने लग जाती—"वह देखो, उस लड़कीके जूड़ेकी स्टाइल!···उसने गलेमें, जानते हो, क्या पहिन रखा है? नौरंगा कहते हैं उसे। नौ धातुओंका बना रहता है, इसलिए। रातके समय बहुत चमकता है। और क़ीमत देखो तो नहींके बराबर। केवल नौ-दस रुपये।"

कुछ और आगे बढ़कर विमला फिर कहती, "और वह जो मोतियोंका हार पहिने है न, नक़ली है! मुश्किलसे दो या तीन रुपयोंका होगा।··· उसने सिरके बालोंको घुँघराले करवा लिये हैं, और उसके सिरके उठे हुए बालोंके बीच रूईका एक फोहा रखा गया है।"

विनय सब सुनता जाता और विमलाकी हर एक बातका उत्तर हूँ-हाँ में देता जाता।

पिछले तीन दिनोंसे माल रोडपर घूमते हुए, जो एक बात उसके सामने बार-बार आ रही थी—वह थी लोगोंका परायी औरतोंकी ओर घूरना···और उसे अपने दोस्तोंके साथ दिल्लीमें गुज़ारी वे शामें याद हो आयीं जब कि वे लोग सड़कपर चलती लड़कियोंको बेमतलब छेड़ बैठते या फब्तियाँ कसते थे। विनयको अपने उन दोस्तोंकी यह बात कभी पसन्द नहीं आयी थी और उसने उन्हें ऐसा करनेके लिए कई बार बुरा-भला भी कहा था।

और पिछले तीन दिनोंसे उसके अपने इसके बिलकुल विपरीत प्रकारका द्वन्द्व चल रहा था। उसके अन्तर्मनमें जो बात बार-बार कचोटती, वह थी--लोगोंकी नज़रोंमें उसकी पत्नीके प्रति उपेक्षा एवं तिरस्कारके भाव। उसने लाख सोचा कि वह अपने ज़हनसे इस बेकारकी बातको निकाल दे, परन्तु मस्तिष्कमें सोची हुई ग्रन्थियाँ अनजाने ही उभरकर उसके सामने आ जातीं और कभी-कभी तो वह इन विचारोंसे इतना अधिक परेशान हो उठता कि चलते-चलते विमलाको रोककर तोलती हुई दृष्टिसे उसके चेहरेको देखता और अपने मनमें उठ रहे व्यर्थके प्रश्नोंको नकारनेका प्रयत्न करने लगता।

"रिक्शा···साब?" पास ही खड़े हुए रिक्शेवालेने बड़े ही आशाजनक स्वरमें पूछा।

"नहीं," विनयने ना तो कर दी परन्तु उसे लगा जैसे वह बेहद थक गया है।

"कितनी दूर और होगा यहाँसे अपना होटल?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यहीं कोई आध-पौन मील।" विमलाने जवाब दिया।

"रिक्शा कर लिया जाये या पैदल ही चलनेका इरादा है?" थके हुए स्वरमें उसने पूछा।

"लगता है आप थक गये हैं।" कहकर विमला पीछे रह गये रिक्शेकी ओर मुड़ गयी। विनय भी बिना कुछ कहे उसके साथ हो लिया।

विनयने देखा, रिक्शेवालेसे एक महिला बात कर रही है; वह समझ गया कि अब उन्हें रिक्शा नहीं मिल सकेगा।···फिर भी उस बात कर रही महिलाके शरीर और सुन्दर पोशाकको देख वह रिक्शेकी ओर बढ़ता गया।

रिक्शेके पास पहुँच उसने देखा कि वही महिला रिक्शेसे कुछ दूर हटकर खड़ी हो गयी थी; शायद रिक्शेवालेने उससे अधिक पैसे माँगे होंगे। तभी रिक्शेवालेने आवाज दी—"आइए बाबू साब!"

विनय रिक्शेके पास आकर खड़ा हो गया, उसकी दृष्टि एकाएक पास खड़ी महिला पर पड़ी तो वह हक्का-बक्का-सा रह गया, वह वास्तवमें अद्भुत सुन्दरी थी!

महिला दूसरी ओर शायद किसी अन्य रिक्शेको देख रही थी, उसका ध्यान उस ओरसे उचट गया था। ज्यों ही विमलाने कहा—"तय कर लीजिए न फिर!" महिलाने विमलाकी ओर देखा और एक तेजीसे अपनी दृष्टि उस ओरसे हटा लेनी चाही कि पास खड़े विनयका चेहरा उसे दिखाई पड़ गया, जो उसे बड़े ध्यानसे देख रहा था। उसने तुरन्त अपनी नजरें विनयके चेहरेसे हटा लीं और फिर वह अपनी चमकती हुई जूतियोंको निहारने लगी।

विनयको लगा जैसे इस तरह वह अपनी उपेक्षा प्रकट करना चाहती हो।

"तय क्या करना है; बैठ जाओ रिक्शेमें, जो माँगेगा, दे देंगे!" कहकर ज्यों ही वह रिक्शेकी ओर बढ़ने लगा, वह महिला तेजी-से आकर रिक्शेमें बैठ गयी—"तय हो चुका है रिक्शा!···चलो रिक्शावाला!" एक तिरस्कारके भावसे उसने कहा और रिक्शा आगे बढ़ गया।

कुछ क्षण विनय समझ ही नहीं पाया कि उसे क्या करना या कहना चाहिए; परन्तु फिर उसने अपनेको सँभाला; और धीमे-से बोला, "आओ विमला, हम लोग दूसरा रिक्शा ले लें।"

■

दूसरे दिन सुबह विनयने शृंगार-टेबुलपर कई क़िस्मकी शृंगार-वस्तुएँ लाकर रख दीं। उसने ख़ुद विमलाके ओठोंपर सुर्ख लाल लिपिस्टिक, आँखों तथा भौंहोंपर 'आई-ब्रो', पेंसिलसे काली रेखाएँ, माथेपर 'व्ही' आकार-की बिंदिया तथा मुँहपर हलका-सा स्नो लगा-कर उसपर पाउडर मल पिया।

चटक बैंगनी रंगकी साड़ीके साथ उसने नाखूनोंपर नेल-पालिश भी उसी रंगका लगाया, और कानोंमें लम्बे-लम्बे झुमके तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गलेमें ढेर-सारे नक़ली ऑरनामेण्ट पहिना दिये उसने।

सिरमें रूईका पैड रखकर ऊँची स्टाइलके माथेपर झूलते हुए बाल काढ़कर विमला कमरेके बाहर निकली तो एक बार उसकी दृष्टि विनयकी टाईकी ओर गयी—विनयके चेहरेपर उसे गर्वकी रेखाएँ दिखाई दीं।

"कितना जँच रहे हैं आप!" विनयके कन्धेपर हाथ रखती हुई विमला बोली।

विनयको एक क्षणके लिए उसकी बात अच्छी नहीं लगी, वह सोच रहा था कि विमला ज़रूर उसकी टाईके मैचिंग कलरकी बात कहेगी, फिर भी उसने मुसकराकर कहा, "और तुम?"

"आप जानिए मेरे बारेमें तो।" वह बोली।

सीढ़ियोंके उतरते हुए विनयने देखा, होटलका मैनेजर (जो रोज़ उनके सीढ़ियोंसे उतरते समय एक नज़र उन्हें देख अपने काममें लग जाता था) उन्हें चश्मेमें-से लगातार घूरे जा रहा है। जाने क्यों उसे मैनेजरका इस प्रकार देखना अच्छा लगा और वह उसकी टेबुलके पास आकर खड़ा हो गया। बोला, "क्या हो रहा है मैनेजर साहिब?"

मैनेजर हड़बड़ाकर उठ बैठा, "कुछ नहीं साहब, ज़रा नये आये हुए लोगोंकी एण्ट्री कर रहा था। आइए, बैठिएगा?"

"कीजिए आप अपना काम,, ज़रा टहल आएँ हम लोग।" विनयने कहा।

"लगता है, 'गोगिया-पाशा'का मैजिक देखने हैक-मैन्स जा रहे हैं आप लोग?"

"इरादा तो है," कहकर विनयने अपना हाथ विमलाके हाथमें अटकाकर एक हलका-सा झूला दिया और होटलसे बाहर हो लिया।

माल रोडपर रोज़की तरह असली-नक़ली चेहरोंका अम्बार लगा हुआ था। लोग बेमतलब सजे-सजाये यहाँ-वहाँ चहलक़दमी कर रहे थे। मसूरीमें आये हुए लोगोंका अकसर यही कार्यक्रम रहता है। देखने लायक़ जगहें काफ़ी दूर-दूर हैं, इसलिए उन्हें देखने कम ही लोग जाते हैं। बस सुबह-शाम माल रोडपर पिक्चर-पैलेससे लाइब्रेरी पाइण्ट तक यों ही घमते रहते हैं।

पिक्चर-पैलेस थियेटरके पास आकर खड़े हो गये वे लोग।

"देखी है तुमने यह फ़िल्म?" 'देवदास' फ़िल्मके एक पोस्टरकी ओर संकेत करते हुए विनयने पूछा।

"नाइन्थमें थी, तब देखी थी। बड़ा डर लगा था उस समय तो, पर पिक्चर अच्छी है।....आपने नहीं देखी?"

"देखी है, पर सोच रहा था एक बार और देख लेते!" फिर सहसा कुछ सोचकर बोला, "पर आज रहने दो, फिर कभी सोंचेगे।"

■

कुछ समय पहले आसमानमें छाये हुए घने बादल धीरे-धीरे छँट गये थे, और पहाड़ियों पर हलकी सुनहरी धूप निखर आयी थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विनय गरम सूटमें भी कुछ ठण्डक महसूस कर रहा था। उसने देखा, विमलाने कोई भी गरम कपड़ा नहीं पहिन रखा है।

सड़कसे हटकर किनारेपर लगी हुई रेलिंगके सहारे खड़े हो गये वे लोग।

"ठण्ड तो नहीं लग रही?" विनयने धीरेसे पूछा।

"न!" इस नये मेक-अपमें वह एक नयी अदासे मुसकरायी और विनयको लगा मानो आज उसका अभियान दूर-पास फैली हुई पहाड़ियोंको देखना नहीं, कुछ और ही है और उसने रेलिंगका सहारा छोड़ विमला-को इशारा किया—"आओ, हम माल रोडकी तरफ़ चलें तो जायें।"

सड़कके दोनों ओर सजी हुई दूकानोंमें-से हरेकके सामने आकर्षणके लिए शो-केस लगे हुए थे। सड़कपर बेहद भीड़ थी। सड़कपर चलने लोग दूकानोंके सामने जाकर शो-केस देखने लगते। कुछ लोग दूकानोंमें ऊँघ रहे दुकानदारोंके चेहरे देख मुसकराकर आगे बढ़ जाते।

रोजकी अपेक्षा विनय आज आहिस्ता चल रहा था। वह बार-बार महसूस करता सामनेसे आनेवाले लोगोंमें-से अधिकांश उसके पाससे गुजरते हुए उन्हें एकटक देखने लगते हैं, और पीछेसे आनेवाले लोग उनसे निकल एक क्षण उन्हें मुड़कर देखते हैं। थोड़ी-थोड़ी देर बाद वह भी विमलाकी ओर देख लेता और उसे एक विशेष प्रकारकी तृप्ति मिलती।

मॉल पोस्ट-ऑफ़िसके सामनेसे गुजरते समय विनयको लगा कि वह रुककर अपने घर एक ख़त लिख दे। परन्तु इस विचारके आते ही उसे पिछले वे दिन याद हो आये जबकि उसके परिवारके सदस्योंने उसे बुरी तरह नेगलेक्ट किया था। उसने चाहा कि वह इस बारेमें और कुछ न सोचे, और वह गान्धी-पार्कमें जाकर बैठनेके इरादेसे बायीं ओर मुड़ गया।

मोड़के किनारेवाली एस० एस० हरीकी दूकानपर काफ़ी भीड़ देखकर वे लोग वहाँ पहुँच गये। दूकानके सामने लगे शो-केसमें एक ख़ूबसूरत चेस्टर टँगा हुआ था जिसपर कसीदेका बहुत ही बारीक काम था।

लोग शो-केसके सामने आकर खड़े हो जाते, चेस्टरको देखते और उसके साथ लगी काग़ज़की स्लिपपर दाम पढ़ते—'दो सौ पचास' और 'बहुत मँहगा है' कहते आगे बढ़ जाते।

विनय और विमला शो-केसके सामने खड़े काफ़ी देर तक चेस्टरको देखते रहे।

"कैसा लगा?" विनयने पूछा।

"रंग बड़ा गॉडी है, पर कढ़ाई बहुत बढ़िया है।"

"रंग तो गॉडी नहीं है, कढ़ाई अलबत्ता बहुत ज़्यादा है।" विनय बोला।

दोनोंने चेस्टर बेहद पसन्द किया परन्तु प्रत्येकने उसका एक-एक गुण-दोष बताकर अपने-अपने चेहरोंपर यह भाव लानेकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोशिश की, जैसे उसने कभी मेकिंग मी परफेक्ट-की क़ीमत न देखी हो।

"छोड़ो भी, अभी लेकर करेंगे भी क्या? मसूरीसे दिल्ली लौटकर ठण्डका नाम-निशान भी न रहेगा, फिर क्यों इसके बारेमें सोचा जाये।" दूकानसे सड़कपर आती-आती विमला बोली।

■

गान्धी-पार्कमें आज हमेशासे कहीं अधिक भीड़ थी: वे लोग एक बेंचपर बैठे बहुत देर तक सामनेकी पहाड़ियोंको देखते रहे। पार्कमें घूमते हुए लोगोंमें-से कइयोंका ध्यान विमलाकी ओर आकर्षित हो जाता था। और जब विमलाकी ओर देख लेनेके बाद लोग विनयकी ओर देखते तो उसे एक अपूर्व आत्म-शान्ति प्राप्त होती।

आखिर कुछ-न-कुछ तो है ही विमला में। नयन-नक्श तीखे हैं। अच्छी सेहत है। थोड़ा रंग ही साँवला है न! तो उसका क्या, मेक-अपसे उसे कभी भी साफ़ किया जा सकता है। उसने यह सोचते ही विमलाकी ओर देखा। उसके एक गालपर लगी हुई लाली पसीनेके कारण धुल-सी गयी थी। विनयने आस-पास नज़रें घुमाकर देखा और बड़े ही प्यारसे विमलाके दूसरे गालपर धीमेसे हाथ फेरकर उसका रंग भी थोड़ा फीका कर दिया।

"ममी, देखो न उसके सिरपर कितने ऊँचे-ऊँचे बाल हैं! और पावडर देखो न ममी! मेरेको भी इत्ता सारा पाउडर लगा करो न ममी।"

विनयका ध्यान एकाएक उस छोटी-सी बच्चीकी बातोंसे उचट-सा गया जो अपनी ममीको उन्हींकी ओर खींचकर लानेका प्रयत्न कर रही थी।

बच्चीकी ममी उसे दूसरी ओर खींचती हुई कहने लगी, "न बेटे, ऐसा नहीं कहते दूसरोंको।"

"क्यों नहीं कहते, ममी! तुम्हें बुरी नहीं लगती वो?" बच्चीने शिकायतके स्वरमें पूछा।

"चुप रह!" बच्चीकी माँने उसे डाँटा, तो बच्चीके बापने उदास बच्चीको गोदमें उठा लिया। एक क्षण पीछेकी ओर देखा फिर आगे बढ़ते हुए बोला, "दिल्लीकी भूतनियाँ हैं! शकल न सूरत, सिंगार देखो ज़रा!"

विनयके हृदयपर उस व्यक्तिका शब्द ज्योंका त्यों आकर उतर गया। उसने विमलाकी ओर देखा—घाटीमें बने स्कूलके बच्चोंको देख रही थी वह। उसने भी सुनी थी, और दुःख भी हुआ उसे, परन्तु अपने चेहरेपर कृत्रिम मुस्कान बिखेरती हुई वह बोली, "देखो, वो कित्ते हैं न, कितने मस्त होकर खेल रहे हैं!"

"देख रहा हूँ," एक तीखी-सी आवाज़ विनयने कहा, "चलो, होटल लौट चलें।"

■

सुबह नींद खुली तो रोज़की तरह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेटा हुआ वह परिचित आवाज़ोंका इन्तज़ार करने लगा। फलवालोंकी आवाज़ें, अख़बार-वालोंकी आवाज़ें तथा पासके कमरेमें ठहरे हुए लोगोंकी एक-दूसरेको तैयार होनेके लिए चेतावनी देनेकी आवाज़ें। पर उसे आज एक भी आवाज़ सुनाई नहीं दी। चारों ओर एक विचित्र प्रकारका सन्नाटा छाया हुआ था। उसकी नींद जल्दी तो नहीं खुल गयी—उसने सोचा, पर खिड़कियोंसे आ रहे उजाले-से तत उसने महसूस किया कि दिन काफ़ी चढ़ गया है। उठकर उसने धीरे-से कमरेका दरवाज़ा खोला। बाहर आसमान साफ़ था और घाटियोंके टेढ़े-मेढ़े रास्तोंपर उसे कई लोग चलते-फिरते दिखाई दिये।

उसने दरवाज़ा खुला रहने दिया और बिस्तरकी चारपायीके पास कुरसी खींचकर बैठ गया। उसे याद आया कि कल रात काफ़ी देर तक सो नहीं सका था वह। न जाने कैसे-कैसे विचार आते रहे थे उसके मनमें! क्यों एक छोटी-सी बेतुकी बातने उसके मनका चैन हराम कर रखा है? महीनेसे पहले तो उसने कभी इस बातकी कल्पना नहीं की थी कि उसे हीरे-सी खूब-सूरत बीवी मिले…।

सब दिमाग़के फ़ितूर हैं, बेकारकी बातें हैं! विमला लोगोंको कुरूप लगे या सुन्दर, उसे इस बातकी परवाह क्यों हो? यह तय है कि उसके लिए वह हर एक दृष्टिसे उपयुक्त है। उसने सोचा और उसे तसल्ली हुई।

"विमल!" उसके मुँहको गुदगुदाते हुए उसने कहा, "उठना नहीं है? देखो दिन कितना चढ़ आया है।"

■

रोज़की तरह नाश्तेके बाद विमला बाहर जानेके लिए तैयार होने लगी तो विनयने उसे मना कर दिया। सारा दिन वे दोनों कमरेमें बैठे बातें करते रहे। शामको क़रीब पाँच बजे भूख लगनेपर उन्होंने बाहर निकलनेका इरादा किया।

ड्रेसिंग टेबुलके सामने बैठ विमला लिपिस्टिक लगाने लगी तो विनय बोला, "क्या सोचती हो, क्या व्यर्थ नहीं है यह सब? यह बात तय है कि हम लोग एक-दूसरेको बेहद चाहते हैं, फिर यह बनावटी शृंगार क्यों और किसके लिए किया जाये? सच मानो तो मुझे तो तुम सिम्पल ड्रेसमें ही ज़्यादा अच्छी लगती हो।" कहनेको तो विनय यह सब कह गया किन्तु उसे लगा जैसे उसके अन्तर्मनमें कोई और बात कचोट ज़रूर रही है।

एक सादी-सी साड़ी पहिन विमला कमरेके बाहर निकली तो उसने देखा, विनय-ने कोट न पहिन एक हलकी-सी स्वेटर डाल रखी थी गलेमें। रोज़ वह उसे कमरेसे निकलते वक़्त कोट पहिना देती थी। परन्तु आज दिन-भरकी बातोंके बाद उसकी हिम्मत न हुई कि वह उससे कुछ कहे।

■

नीलम होटलसे कुलचे-छोले खाकर वे लोग लाइब्रेरी पाइण्टकी ओर चल पड़े। रोस्ट-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऑफ़िसके पाससे गुज़रते हुए विनयने रुककर अपने घर एक ख़त लिखा, और उसे लेटर-बॉक्समें डालते वक़्त उसे लगा जैसे उसके सिरसे कोई भारी बोझ उतर गया हो।

एस० एस० हरीकी दूकानके सामने आज फिर कलके समान भीड़ जमा थी। वे दोनों भी शो-केसके सामने आकर खड़े हो गये। वही कलवाला चेस्टर टँगा हुआ था शो-केसमें। टकटकी लगाकर बड़ी देर तक देखती रही विमला उसे।

"पसन्द है क्या?" विनयने यह जानते हुए भी कि कल उन दोनोंने सामूहिक रूपसे उसे नापसन्द कर दिया था, यह प्रश्न पूछा।

विमलाने घूमकर विनयकी ओर देखा; और विनयकी दृष्टि एकाएक उसी रिक्शेवाली महिलाकी ओर पड़ गयी, जो शो-केसके सामने खड़ी बड़े ध्यानसे चेस्टरको देख रही थी। एकाएक उसने महसूस किया कि आज नाहक़ ही उसने विमलाको मेक-अप करनेसे रोका।

"क्या कह रहे हैं आप?"

"हाँ, पूछ रहा था, पसन्द है? कहो तो ख़रीद लें इसे।" इस बार उसने यह बात ज़रा ऊँचे स्वरमें उस महिलाको सुनानेकी ग़रज़से कही। अवश्य ही महिलाने उसकी आवाज़ सुन ली है—उसने सोचा। लेकिन उसी समय वह महिला पास ही लगे दूसरे शो-केसमें रखी चीज़ोंको देखने लगी थी।

"आप जैसा ठीक समझें।" विमलाने जवाब दिया तो विनय अपनी जेबसे मनीबेग निकालता हुआ काउण्टरपर पहुँचा और गर्वसे बोला, "वह चेस्टर बाँध दीजिए!"

चेस्टरका पैकेट लेकर लौटते समय विन ने देखा कि दूकान और शो-केसके सामने लोग उनकी ओर आश्चर्यसे देख रहे हैं। उन निगाहें एकाएक उसी महिलाको ढूंढ़ निकाल में व्यस्त हो गयीं, परन्तु वह दिखी नहीं।

दूकानसे बाहर निकलकर विनयने देख कि वह महिला बग़लवाली दूकानके केसमें रखे खिलौनोंको बड़ी ही उत्सुकत देख रही है। इस प्रकारकी उपेक्षाके हारसे, उसका मन टूटकर रह गया।

"लो इसे रख तो लो!" उसने विम की ओर देखा—वह बेहद प्रसन्न थी।

विनयको लगातार अपनी ओर देख हुए उसे बड़ा अजीब-सा लगा। बोली, "क सुन्दर है न? क्यों, क्या सोच रहे हैं?"

"कुछ भी तो नहीं।"

जाने क्यों उसे माल रोडपर इन लोगोंका यहाँ-वहाँ घूमना एकदम व्यर्थ लगा। तेज़ीसे सड़क पार कर वे लोग किनारे लगी रेलिंगसे सटकर खड़े हो

"मैं तो कल ही ख़रीद लेना था इसे पर तुमने जाने क्यों मना कर था।" एक लम्बे मौनको तोड़ विनयने तो दिया, परन्तु उसे लगा, मानो नीचेकी गहरी घाटियोंमें उसका बास कर रह गया है। ऊबकर उसने पहाड़ियों दूर अपनी नज़रें फैला दीं। देहरादून धुन्धमें डूबी रोशनियोंमें, बुझा-बुझा-सा लाई दिया उसे!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रवीन्द्र कालिया

कोज़ीकार्नर

जीवनको, ख़ासकर महानगरके भागते हुए जीवनको, देखें तो यह साफ़ लगता है—हमारी सारी दिनचर्या विसंगतियोंके कोष्ठकमें क़ैद हैं। ये विसंगतियाँ आरोपित नहीं हैं, भोगी हुई हैं इसलिए विसंगतियोंका रूप पाकर भी वे प्राणवान हैं, फिर कहानीमें तुक और संगतिका क्या आशय ?

■

"आपकी आवाज़ क्यों काँप रही है ?" उसने पूछा।

यह एक सवाल था, जो मैं अकसर उससे किया करता था। उसने फ़ोनपर मेरा एक सवाल छीन लिया था।

"यह सिर्फ़ दफ़्तरकी वजहसे है।" मैंने धीमेसे कहा, "मेरी टाँगें भी काँप रही हैं।"

उसने मज़ाककी तरफ़ ध्यान नहीं दिया, बोली, "मुझे बहुत ज़रूरी काम है।"

"आपकी तबीयत तो ठीक है ?" मैंने पूछा, "आप बहुत घबरायी हुई हैं।"

उसने मुझे फ़ोन किया था। फ़ोन मिलनेमें उसे ज़रूर दिक़्क़त हुई होगी, क्योंकि मेरे कमरेमें फ़ोन नहीं है; फ़ोन मेरे अफ़सरके कमरेमें है, जिसे वह नौकरीसे भी ज़्यादा प्यार करता है। अवकाशके क्षणोंमें वह मुग्ध भावसे फ़ोनकी तरफ़ देखकर ख़ुश हुआ करता है और हम सोचा करते हैं (हम दीवारसे भी नहीं कहते) कि इस अफ़सरको इससे बड़ी सज़ा नहीं दी जा सकती कि इसका फ़ोन काट दिया जाये। जब बियर, लड़कियों और कारोंकी बातें हमें झूठी लगने लगती हैं तो हम प्रकारण ही बहुत-सी बातें सोचा करते हैं, जब कि सच यह है, हम सब बहुत कमज़ोर हैं। आप मेरी बातसे तुरन्त सहमति प्रकट करते अगर मुझे फ़ोनपर उससे बातें करते हुए देख लेते। हस्बेमामूल मैंने अपने अफ़सरकी तरफ़ पीठ कर ली थी और बहुत आहिस्ता-आहिस्ता बोल रहा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने कहा कि वह होज़ खाससे बोल रही है और वह तीन बजे तक कनाट-प्लेस पहुँच जायेगी। क्या मेरे लिए तीन बजे कनाट-प्लेस पहुँचना सम्भव होगा ?

मैंने बिना सोचे-समझे कुछ देर रुककर 'सम्भव होगा' कह दिया और रिसीवर रखकर अपने अफ़सरके सामने अभियुक्तकी तरह खड़ा हो गया। मैंने कहा कि मुझे तीन बजे एक अत्यन्त आवश्यक काम है।

मेरा अफ़सर मुसकराया। मेरा अफ़सर बहुत कम मुसकराता है और अकसर सुपारी काटता रहता है। वह निश्चित रूपसे इस लड़कीको भी मेरी प्रेमिका समझ रहा होगा, जब कि यह मेरी भाभी है और मेरी प्रेमिका फ़ोन नहीं, कभी-कभी ट्रंक-काल किया करती है। मेरा भाई सेनामें कप्तान है, मूँछें भी रखता है और लगभग एक सालसे भाभीसे अलग रह रहा है। इसी बीच मेरे भाईका एक मेजरकी 'रोज़' नामकी स्लिम-सी लड़कीसे प्रेम हो गया और भाभीने 'डाल्ज़ एण्ड डाल्ज़' नामकी एक जापानी फ़र्ममें रिसेप्शनिस्टकी नौकरी कर ली। मुझे इस सम्बन्ध-विच्छेदका बेहद अफ़सोस है, जब कि मेरे भाईका विचार है कि मुझे भावुक नहीं होना चाहिए और अपनी अंगरेज़ी और क्रिकेट इम्प्रूव करनी चाहिए।

तीन बजे वह एयर इण्डियाके बग़लमें खड़ी उस ओर देख रही थी, जिधरसे मैं अकसर नहीं आता। 'यह अच्छा है, वह इधर नहीं देख रही'—मैंने सोचा ही था कि उसने मुझे देख लिया और मुझे देखते ही मुसकरायी। बोली, कि वह आज बहुत खुश है, उसे तीन इन्क्रीमेण्ट्स् मिले हैं, उसकी समझमें नहीं आ रहा कि इस खुशीका क्या करना चाहिए।

"लेकिन मुझे खुशी नहीं होती।" उसने सहसा अपनी बात काट दी और पीठ खुजलाने लगी। पीठ खुजलाना उसकी पुरानी बीमारी या आदत है।

"फ़ोनपर आपकी आवाज़में दहशत थी।" मैंने कहा, "मैंने सोचा था कि आपकी नौकरी छूट गयी होगी।"

उसने कहा कि उसकी आवाज़में हमेशा दहशत रहती है और अब वह इस नौकरीपर कन्फ़र्म हो चुकी है।

मैंने उसकी तरफ़ देखा, उसने कोई गरम कपड़ा नहीं पहना था। वायलकी सफ़ेद साड़ी उसने अपनी देहपर उतनी ही लापरवाहीसे लपेट रखी थी, जिस लापरवाहीसे बाल बाँधे थे और उनका जूड़ा किया था। वह मांग नहीं निकालती, मांगके जगहके दो-तीन बाल पक गये थे। दो साल पहले, जनवरीमें, वह गहरे पीले रंगका स्कार्फ़ पहना करती थी, जिससे आजकल भाई साहब बूट साफ़ किया करते हैं।

"आपके पास गरम कपड़े नहीं हैं?" लापरवाहीमें मैं मूर्खतापूर्ण बात कर बैठा।

उसने कहा कि उसके दो सूटकेस गरम कपड़ोंसे भरे पड़े हैं और सूटकेस वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केवल फिनायलकी गोलियाँ फेंकनेके लिए कभी-कभी खोला करती है।

"आपको गरम कपड़े पहनने चाहिए।" मैंने कहा। मुझे लगा, मैं बूढ़ा हो रहा हूँ या स्टूपिड।

उसने कहा कि उसे काँपना अच्छा लगता है।

मैं उसके साथ-साथ कॉरीडोरमें चलता रहा।

"आपके भाई साहब तो इन दिनों अमरीकी जैकेट पहनते होंगे?" उसने पूछा।

मैंने कहा कि अमरीकी जैकेट भाई साहबने मुझे दे दिया है और मैं इस समय भी पहने हूँ। उसने मेरी ओर देखा।

"इसके बाजूके नीचेवाली सीवन उधड़ गयी थी। आपने ठीक करवा ली होगी?" उसने कहा, "कई बार रातको भाई साहब यह जैकेट मुझे पहना दिया करते थे।"

मैं भाई साहबको जानता हूँ, मैंने आश्चर्य प्रकट नहीं किया।

"उनकी किताबोंपर अब भी कबूतर बैठते हैं?" उसने पूछा।

मैंने बताया कि वहाँ कबूतरोंने घोंसले बना लिये हैं।

"रोज़ घरमें क्या पहनती है? शलवार-कमीज़ या साड़ी या स्कर्ट?" उसने पूछा।

मैंने बताया कि वह साड़ी नहीं पहनती।

"मुझे किसाने बताया था, वह अँगरेज़ी

"दरअसल; मेरे पास
सोचनेके लिए
बहुत कम बातें हैं।" उसने कहा,
"मैं बंगला सीखूँगी। मुझे
सिलाई- कढ़ाईसे
नफ़रत है।
मैं महापुरुषोंकी जीवनियाँ पढ़ूँगी
और यात्राएँ करूँगी।...
लेकिन मुझे डर लगता है।
मुझे लगता है,
अकस्मात् किसी वक्त,
मेरी साँस रुक
जायेगी। आज मुझे
बहुत डर लगा था नरेन्द्र।
मुझे लगा था,
मैं बस-स्टॉप पर पहुँचनेसे
पहले मर जाऊँगी।
मैं लावारिस
नहीं मरना चाहती..."

बोलती है और चूहोंसे बहुत डरती है। चूहा देखते ही वह स्टूलपर चढ़कर ताली पीटते हुए शोर करने लगती है!"

मैंने बताया कि हमारे घरमें चूहे नहीं हैं, कबूतर और बिल्लियाँ हैं।

"वह शतरंज खेलना जानती है?" उसने पूछा।

मैंने बताया कि वह कभी-कभी कैरम खेला करती है।

"वह बहुत स्मार्ट है?" उसने पूछा।

मैंने कहा, "ये तमाम घरेलू बातें हैं।"

वह चुप हो गयी। थोड़ी देर बाद बोली,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अच्छा सिर्फ यह बता दीजिए कि रीज़ने कभी मेरे बारेमें पूछताछ की है ?"

"मुझसे वह केवल क्रिकेटका लेटेस्ट स्कार पूछा करती है या शिर्ले मैकलेनकी नयी फ़िल्मोंके समाचार। शिर्ले उसकी फ़ेवरेट है। हम दोनोंकी फ़ेवरेट है।" मैंने बताया।

"वही शिर्ले, जिसने नींदकी गोलियाँ खाकर आत्महत्या कर ली थी ?"

"शिर्ले नींदकी गोलियाँ नहीं खाती। खाती भी होगी तो उसने आत्महत्या नहीं की।" मैंने कहा।

"आपके भाई साहब कभी मेरी बात करते हैं ?" उसने पूछा। वह अकसर पूछा करती है।

"नहीं।" मैंने कहा।

वह अस्त-व्यस्त हो गयी, मुझे लगा, वह रोने लगेगी। बोली, "पिछली बार तो आपने कहा था, वह मेरा नाम सुनकर उदास हो जाते हैं।"

"मैंने झूठ कहा था।" मैंने कहा, "मुझे अफ़सोस है, मैंने ऐसा कहा था। मैंने शायद आपको खुश करनेके लिए ऐसा कहा होगा। मैं दूसरोंको खुश करनेके लिए ही झूठ बोलता हूँ। मैं शर्मिन्दा हूँ।"

मैं उसे अपनेको सम्भालते हुए देखता रहा। उसने बहुत ज़ल्दी अपनेको समेट लिया। किसी भी तनावमें उसके ऊपरके होठपर पसीना तिरने लगता है। वह स्याही-चूसकी तरह अपने मैले रूमालसे होठ थपाने लगी।

"दरअसल, मेरे पास सोचनेके लिए बहुत कम बातें हैं।" उसने कहा, "मैं बंगला सीखूँगी। मुझे सिलाई-कढ़ाईसे नफ़रत है। मैं महापुरुषोंकी जीवनियाँ पढ़ूँगी और वाकई करूँगी।...लेकिन मुझे डर लगता है। मुझे लगता है, अकस्मात् किसी वक़्त मेरी साँस रुक जायेगी। आज मुझे बहुत डर लगा था नरेन्द्र! मुझे लगा था, मैं बस-स्टॉपपर पहुँचनेसे पहले-पहले मर जाऊंगी। मैं बेवारिस नहीं मरना चाहती, मैंने उसी वक़्त अपना और भाई साहबका पता लिखका पर्समें रख लिया। मैंने तभी तुम्हें फ़ोन किया था और डॉक्टरके पास चली गयी थी।"

"आप मुझे निन्नी ही कहें।" मैंने कहा, "डॉक्टरने क्या कहा ?"

"मैं किसी और डॉक्टरको दिखाऊंगी। यह डॉक्टर हमेशा कहता है, मुझे शादी कर लेनी चाहिए।" उसने कहा, "मगर मैं शादी नहीं करूँगी और महापुरुषोंकी जीवनियाँ पढ़ूंगी।"

कॉफ़ी हम दोनोंको बोलगामें ले गयी। मैं उसके पीछे-पीछे सीढ़ियाँ चढ़ गया। कोने-कार्नरके पास पहुँचकर वह तनिक झिझकी और फिर अन्दर घुस गयी। कोजीकार्नरमें एकान्त था, अँधेरा भी। थोड़ी देर बाद हमने पाया, अँधेरा है, एकान्त नहीं है। वह पर्ससे रूमाल निकालकर चेहरा पोंछने/सुखाने लगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने मेज़के ऊपर लटकता हुआ लैम्प जला लिया। मैंने कहा, "उसके माथेकी बिंदी पुंछ गयी है।"

उसने पानीमें रूमाल भिगोया और बच्ची तरहसे माथा पोंछ लिया।

"यहाँ बहुत अँधेरा है।" मैंने कहा।

"आपके भाई साहबकी यह फ़ेवरेट जगह है।" उसने कहा।

कोजीकार्नरमें हम अकेले नहीं थे। कोनेकी मेजपर एक लड़का बड़ी जल्दबाजीमें एक लड़कीको चूम रहा था। लड़केके चूमते ही लड़की रूमालसे गाल पोंछ लेती।

'लड़केको चूमना नहीं आता।' मैंने सोचा, 'जल्दबाजीमें चुम्बन लेना शोभा नहीं देता।'

"निन्नी, तुम्हें पता है, मैं रातको चिट-सनी लगाकर नहीं सोती। मुझे लगता है, अगर मेरी मौत हो गयी तो किसीको पता भी न चलेगा और मेरा शव कमरेमें ही सड़ जायेगा। मेरे कमरेमें बहुत चीटियाँ हैं।" उसने कहा, "मैंने यह बात डॉक्टरको भी बतायी थी।"

"ईश्वर मुझे ऐसी बातें सोचनेसे बचाये!" मैंने मन-ही-मनमें प्रार्थना की और मेजपर झुकते हुए कहा, "हमें आहिस्ता बोलना चाहिए, हम सार्वजनिक जगहपर बैठे हैं।"

मैंने पाया, लड़का प्रेम करनेकी बजाय हमारी बातें सुन रहा था, उसकी लड़की मुसकरा रही थी और मैं झेंप रहा था।

"मैं ऊँची आवाज़में बोल रही थी?" उसके माथेपर ढेर-सा पसीना इकट्ठा हो गया और वह कुरसीके साथ पीठ लगाकर बैठ गयी, "मैं ऊँची आवाज़में बोल रही थी तो तुमने मुझे पहले क्यों नहीं टोका?" उसने पानीका एक घूंट पिया (मैं उसे अपना जूठा पानी पीते देखता रहा) और पर्ससे नारंगी रंगकी गोलियाँ निकालकर हथेलीपर रख लीं और उन्हें लैम्पकी रोशनीमें देखने लगी।

"निन्नी, माफ़ करना, मैं भावुक हो गयी थी।" उसने पानीके साथ एक गोली निगल ली।

"मुझे भी कुछ हो रहा था।" मैंने कहा, "मैं भी लूँगा।"

उसने एक गोली मुझे भी दे दी।

"तुम कुछ सोच रहे हो, क्या सोच रहे हो?" उसने पूछा।

मैंने कहा कि मैं कॉफ़ीके बारेमें सोच रहा हूँ; जबकि मैं शामके बारेमें सोच रहा था। उसी क्षण मैंने उसके डरके बारेमें भी सोचा था।

"देखो, मुझे बुखार तो नहीं है? मेरा गला और मेरे होठ सूख रहे हैं और मुझे नींद आ रही है।" उसने कहा और अपनी कलाई मेरे हाथमें पकड़ा दी! कलाई गरम थी न ठण्डी, मुलायम थी; मैंने छोड़ दी, नब्ज़ नहीं टटोली।

"आप बिलकुल स्वस्थ हैं।" मैंने कहा और एक अपराध-भावनाके साथ कॉफ़ीकी प्रतीक्षा करने लगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आपको तीन इन्क्रीमेण्ट्स् क्यों मिले हैं ?" मैंने पूछा।

"मैं भी झूठ बोल रही थी, मुझे केवल एक इन्क्रीमेण्ट मिला है। एक इन्क्रीमेण्ट सबको मिलता है।" उसने कहा, "तुम कॉफ़ी पीनेके बाद मुझे घर तक छोड़ आओगे ?"

"आप बिलकुल स्वस्थ हैं। वैसे मैं आपको घर तक ज़रूर छोड़ आऊँगा।" मैंने कहा।

"तुम मुझे स्कूटर-स्टैण्ड तक छोड़ आना, मैं अकेली चली जाऊँगी।" उसने कहा और सामनेकी टेबुलकी ओर देखने लगी, जहाँ बैरा अभी-अभी आइसक्रीम रख गया था। लड़का अपनी प्रेमिकाको चम्मचसे आइसक्रीम खिला रहा था और प्रेमिकाको आइसक्रीम ठण्डी लग रही थी। वह परोंकी तरह हाथों दोनों हाथ फड़फड़ा रही थी। हम दोनोंके पास बातें नहीं रही थीं; हम उनकी ओर देख रहे थे। हमें अपनी ओर देखते पाकर उन्होंने अपना लैम्प बुझा दिया और वह अँधेरा आइसक्रीम खा रहा था।

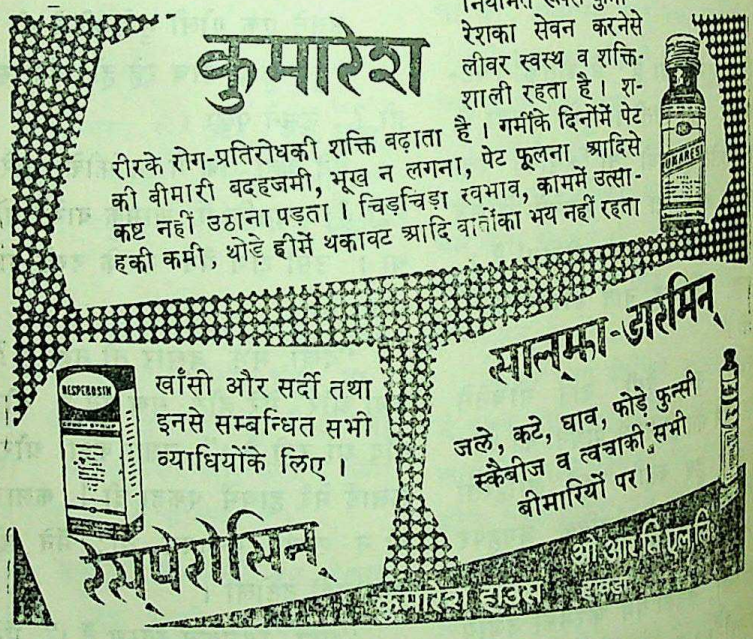

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१२ नयी पत्रिकाएँ

झलकियाँ

• नटरंग

सम्पादक : नेमिचन्द्र जैन । ३–एफ़, जंगपुरा ऐक्सटेंशन, नयी दिल्ली–१४

भारतीय रंग-मंचके विकासमें योगदान देनेके लिए 'नटरंग' का प्रयास प्रशंसनीय है । इस त्रैमासिक पत्रिकामें वे सारी बातें हैं जो नाटक-मंचको सफल बनानेके लिए ज़रूरी होनी चाहिए । प्रस्तुतीकरण, रचना-चयन, श्रेष्ठ हैं । ऐसी पत्रिका अपना अलग महत्त्व रखती है । यह हिन्दी नाट्य-मंचके लिए अत्यन्त शुभ चरण है ।

• धारा

सम्पादक एवं प्रकाशक : श्री राधेश्याम यादव । दिल्ली ।

हिन्दीके कृतित्वको अँगरेज़ी पाठकोंके समक्ष रखनेका 'धारा' का प्रयास प्रशंसनीय है । प्रवेशांकमें सुरुचिसम्पन्नताका बोध होता है । प्रतिनिधित्वके नामपर रचनाकारों और उनकी रचनाओंके चुनावमें सम्पादकको और जागरूक होना चाहिए । प्रकाशनकी अवधि अज्ञात है (कहीं स्पष्ट उल्लेख नहीं है) । धारामें प्रकाशित अज्ञेयकी रचनाके अलावा किसी भी रचनाके अनुवादकका नाम नहीं दिया गया है जिसे किसी और समीक्षकने भी संकेत किया है । धाराका कवर तथा उसकी सामग्री—एक अपना-सा सुन्दर प्रयास है ।

• शताब्दी

सम्पादक : ओंकार ठाकुर । १६१०, राइट टाउन, जबलपुर (म० प्र०)

स्तम्भोंकी विविधता, पाठक जुटानेके सक्रिय प्रयासमें योजनारत, हरे-भरे रास्तेके दोतरफ़ा सजे फूल, लता-गुल्मों, सुरम्य झाड़ियोंको काट-छाँटकर बड़ी भीड़ ले जानेके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए चौड़ा रास्ता बनानेमें कार्यरत 'शताब्दी' नये हस्ताक्षरोंको प्रकाशमें लानेकी यह प्रशंसनीय है। यह सामाजिक तथा पारिवारिक पत्रिका बननेकी दिशामें विशेष प्रयत्न-शील दिखती है, लेकिन प्रयास है .खूब सुन्दर।

• अणिमा

सम्पादक : शरद देवड़ा। ४१-ए, ताराचन्द दत्त स्ट्रीट, कलकत्ता-१

कथात्मक शिल्प-विधाओंकी त्रैमासिक पत्रिका, जिसमें कहानियाँ, डायरी, रिपोर्ताज, संस्मरण, पत्र, उपन्यास-अंश, विशेष लेख, यात्रा-वृत्त, भावचित्र आदि प्रस्तुत करनेकी योजना है। दो सौ पृष्ठोंवाली यह पत्रिका कहानियोंकी पत्रिकाओंमें अपना अलग महत्व रखती है। पत्रिकाकी रचना-सामग्री, छपाई, गेटअप आदि सुरुचि और स्वस्थ परम्पराका आभास देते हैं। सारे पुराने नये लेखकोंका सहयोग अणिमाने प्राप्त किया है।

• उत्तरशती

सम्पादक : विश्वामित्र। १९४, सोहबतियाबाग़, इलाहाबाद-६

पूर्व घोषणानुसार 'सन्धान' के स्थानपर 'उत्तरशती' का प्रकाशन नयी पत्रिकाओंमें एक महत्त्वपूर्ण योजना है जो 'अपने आविर्भावकी सार्थकता बल्कि अवश्यता साबित करेगा', 'दिशाका आग्रही होगा, लीकका नहीं', 'दिशा-योजनाहीन आवधिकोंकी तरह संकलनात्मक पत्र न होगा', 'न रूढ़िमें बँधेगा'। प्रशंसा इस बातकी कि निम्न मध्यवर्गीय संकुचित साधनोंके बीचसे निष्ठाका एक स्वर उठ रहा है और इस निश्चित है कि साधनोंकी कठोरतामें ही निष्ठाका जन्म होता है। और जहां निष्ठा होगी—केवल निष्ठा—प्रत्याशा नहीं, वहीं सफलता क़दम चूमेगी।

• लय

सम्पादक : सत्यदेव राजहंस। अभिज्ञान प्रकाशन, राँची

'लय' का प्रकाशन नयी कविताके क्षेत्रमें एक अभिनन्दनीय प्रयास है। सम्पादकका मत कि 'हम यह माननेको बाध्य हैं कि कवितामें कृतित्वका ही मूल्य है व्यक्तित्वका नहीं····अभीतक कविताओंमें आत्मग्लानि, वितृष्णा, अन्तर्कुण्ठा और वे विसंगतियाँ खीझ ही व्यक्त हो पायी है,—कुछ मौलिक प्रश्न उपस्थित करता है। लयमें अधिकांश नये हस्ताक्षरोंको प्रस्तुत कर सम्पादकने अभिनन्दनीय कार्य किया है।

ज्ञानोदय : जुलाई १९६९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• लय

सम्पादक : नीरज, राही मासूम रज़ा, कुँवरपाल । ४७–मारिस रोड, अलीगढ़

रीतिकालीनतासे लेकर आधुनिक [अधिकांश फ़ैशनके नामपर] बोधतककी रचनाओं तथा कुछ विभिन्न शीर्षकसे दिये गये लेखों आदिका यह संकलन सम्पादकीय व्यक्तित्वके प्रभावकी झाँकी अधिक प्रस्तुत करता है, नवलेखनके सहमे हुए दावेके साथ। चूँकि इसके पीछे काग़ज़, स्याही और समयका उपयोग हुआ है अस्तु पढ़ा जा सकता है—इन प्रश्नोंके साथ कि नवलेखन कहाँ ? कितना ? किस तरह ?

• सन्दर्भ

सम्पादक : सकलदीप सिंह । ११–परिषद् स्ट्रीट, कलकत्ता–६

नये हस्ताक्षरोंके साहित्यिक-रचनात्मक विचारोंकी घोषणाके साथ विभिन्न विधाओंपर आलोचनात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत करनेवाला अनियतकालीन पत्र। रूप छोटा होते हुए भी सन्दर्भ बड़ा है। आज ऐसी पत्रिकाओंकी आवश्यकता है जो नये लेखकोंको नहीं, नवलेखनको उभारें।

• समिधा

सम्पादक : कृष्णविहारी मिश्र : पद्मधर । बी० ३।२७ शिवाला, वाराणसी–१

नवचिन्तनके पुरस्कर्ताओं तथा कृती साहित्यकारोंपर भरोसा रखनेवाली, नवताके साथ पुरातनतामें रुचिवाकी, सक्रियतामें जिसका दावा नहीं, फिर भी नवलेखनकी जीवन्तताका द्योतन तथा नयी रूढ़ियोंका सहज निरसन हो, ऐसे भाव-बोध प्रस्तुत करनेवाली 'समिधा'। उन्हीं सब नये पुराने शब्दार्थोंका पुनःप्रस्तुतीकरण। फिर भी 'जीवन्त साहित्य संकलनकी उपघोषणा'।

• अधिकरण

सम्पादक : शिवमंगल । चीनी कोठी–३, बुद्ध मार्ग, पटना–१

अधिकरण अन्यथावादका प्रतीक : चौमाक, अमरीकामें 'विटनिक', इंगलैण्डमें 'एन्ग्रीयंग पोयट्स' तथा बंगालमें 'हंग्री जेनरेशन'की नक़ल कर 'अन्यथावाद'का रूप देकर 'अधिकरण'के संगठनकर्ताओंने अपनी सामर्थ्य और प्रज्ञाके अनुसार जो कुछ भी काम किया है उसे देखते हुए यह कहा जा सकता है कि अन्यथाको ही क्यों वादका रूप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया गया। और भी तो बहुत-से शब्द हैं जिनके बाद वाद लगाकर काम चलाया जा सकता था। फिलहाल हर नयी पत्रिका अपनी प्रारम्भिक बुराइयोंके साथ पठनीय होनी चाहिए इसी तरह हर नये वादपर भी विचार करना चाहिए। लेकिन यह पाठकों और विचारकोंपर निर्भर करता है।

● अनुबन्ध

सम्पादक : सुरेन्द्र। चन्द्रलोक, गणेशमार्ग, बापूनगर, जयपुर

'नव सृजन आलोकनका प्रतिनिधि', 'व्यतीत और नये बोधको जोड़नेवाला', 'नये और प्रतिष्ठितोंके एक मंचपर उपस्थित होनेकी आवश्यकता महसूस करनेवाला', 'इस प्राचीनकी पुनर्व्यवस्था की जाये कि वह नयेकी परम्परा बन सके और नयेका मूल्यांकन हो कि वह प्रतिष्ठा प्राप्त करे।'—इन सारी घोषणाओंके साथ अनुबन्धका प्रवेशांक 'नये आयाम पुराने कोण' स्तम्भको 'फ्री स्टाइल' न बनाकर 'भारतीय दंगल'का रूप देना चाहिए था जहाँ एक पहलवान यदि दूसरेकी आँख, कान, नाक आदि तोड़ने फोड़ने लगे तो दर्शक चिल्ला उठें 'ऐसा नहीं, ऐसे नहीं'। अनुबन्धकी सफलता इसी बातपर निर्भर करेगी कि वह दल अथवा गुट निरपेक्ष होकर सामने आये।

● रूपाम्बरा

सम्पादक : स्वदेश भारती और शलभ। आर्य पुस्तक भवन, १८०-चितरंजन एवेन्यू, कलकत्ता—७

युयुत्सावादी नवलेखन प्रधान सहकारी प्रयासकी घोषणाके साथ रूपाम्बराका प्रवेशांक नयी पीढ़ीका अपना पत्र। रजनी पनिकरका वक्तव्य 'कहानी लेखन मेरी दृष्टिमें' महत्त्वपूर्ण और ठोस विचार प्रस्तुत करता है। नीलमसिंहकी कविताओंमें नयी सोच अभिव्यक्ति है। सम्पादकीयमें युयुत्सावादपर उठाये गये प्रश्न विचारणीय हैं। सब मिलाकर रूपाम्बरा एक छोटे-से श्लोककी तरह है जिसमें बहुत बड़ा अर्थ छिपा हुआ है। नवलेखनको स्वस्थ-दिशा और पुष्टि देनेके लिए यह एक अच्छा प्रयास है और पूँजीके बन्धनसे मुक्त सहकारी प्रयास होनेके कारण और भी अभिनन्दनीय है।

—स्वदेश भारती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
[पृष्ठ १६ का शेष : अंधेरे बन्द कमरे]

की नहीं कहा जा सकता।

मधुसूदन मात्र साक्षी, या दूसरोंके दुःखमें 'इण्टरेस्टेड' एक व्यर्थ इकाई नहीं, और न ही महज एक डायरी है, वह अपने समयका प्रतिनिधि पात्र है जिसकी ज़िन्दगीमें 'अपना' कुछ नहीं है, और 'अपना' कह सकने-जैसा भी बहुत कम है। उसे ज़िन्दगीमें जो कुछ भी मिलता है—पैसा, प्यार या सम्मान—सिर्फ़ छोटे-छोटे टुकड़ोंके रूपमें ही मिल पाता है,—और हर टुकड़ा भी कहीं-न-कहींसे टूटा या ज़ंग खाया होता है। किन्हीं क्षणोंमें कुछ भी भरपूर 'पा' लेनेका अहसास, उसके लिए नहीं है—सुषमाकी बाँहोंमें खोनेको खो देनेके क्षणोंमें भी सहसा एक शून्य उसे साल जाती है जिससे उसे अन्दर और बाहर सब कुछ पथराया हुआ लगने लगता है और सड़क, खम्भे, तारे और आकाश, सब (उसके लिए) एक क़ब्रिस्तानकी तरह हो जाते हैं। वह ज़िन्दगीके इस खण्डित रूपको स्वीकार कर सकता, तो शायद तटस्थ, उदासीन और कुछ हद तक प्रसन्न भी हो सकता था, पर समझौतेके धरातलपर जीना उसके बसका नहीं, इसलिए वह लगातार भटकता और छटपटाता है। यह नियति आज किसी एक व्यक्तिकी नहीं, उन हज़ारों-लाखों व्यक्तियोंकी है जो किसी भी परिस्थितिमें 'जीने' के प्रति अपनी ईमानदारीका आग्रह नहीं छोड़ पाते।

मधुसूदन दो दुनियाओंके बीच जीता है—एक दुनिया निम्मा और ठकुराइनकी है और दूसरी हरबंस और नीलिमाकी। उसकी अपनी दुनिया इन दोनोंके बीचमें कहीं है क्योंकि आर्थिक और मानसिक रूपसे वह संक्रमणकी स्थितिमें है। उसकी पूरी सम्बद्धता न यहाँ है, न वहाँ। दोनों दुनियाओंका जीवन दो अलग-अलग परिस्थितियाँ हैं जो उसे समान रूपसे प्रभावित करती हैं। एक उसके आरम्भिक जीवनकी खाद है, दूसरी आजके जीवनका हवा-पानी। वह अपनेको किसी भी एकसे अलग नहीं कर सकता। आजके व्यक्तित्वकी यही मजबूरी इस उपन्यासके लिखे जानेकी मुख्य प्रेरणा थी। यह मुझे भी लगता है कि मधुसूदनके दोनों ओरकी परिस्थितियोंमें शायद ठीक सन्तुलन नहीं रह पाया जिससे हरबंस और नीलिमाका आपसी संघर्ष उपन्यासका केन्द्र-बिन्दु बन गया जान पड़ता है।

एक ओर तुमने लिखा है कि उपन्यासमें 'नीलिमाका अन्तर्द्वन्द्व सबसे सुलझे हुए रूपमें उभरकर आया है' और दूसरी ओर कि 'पाठकको यदि उपन्यासके किसी पात्रसे सहानुभूति होती है तो वह हरबंस ही है'। यहाँ तुम्हारा मतलब किस तरहकी सहानुभूतिसे है, यह मैं नहीं समझ सका। क्या तुम्हें इसलिए हरबंससे सहानुभूति होती है कि उसके चरित्रमें तुम्हें किसी तरहकी निरीहता नज़र आती है? यदि ऐसा है तो वह सहानुभूति नहीं, दया है, 'दया' की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भावनाको हरवंस-जैसा व्यक्ति, कभी अपने लिए स्वीकार नहीं करना चाहेगा। पर यदि सचमुच तुम्हारी सहानुभूति सहानुभूति ही है, तो शायद हरवंसके अन्तर्द्वन्द्वने ही तुम्हें अधिक प्रभावित किया है, क्योंकि उसका अन्तर्द्वन्द्व किन्हीं मूल्योंको लेकर है जबकि नीलिमाका अन्तर्द्वन्द्व मुख्य रूपसे उपलब्धि-की खोजपर आश्रित है। हरवंस अपने अन्तर्द्वन्द्वसे टटता है, पर इसलिए नहीं कि नीलिमा उसकी पत्नी है, या कि वह वैवा-हिक बन्धनसे बचना चाहता है, न ही इसका कारण नीलिमाको समझ पानेमें उसकी असमर्थता है, न ही किसी तरह की दुर्बलता, या शुक्लाके प्रति एक अस्पष्ट आकर्षण। वह टूटता है क्योंकि वह नीलिमाको उपलब्धिसे हटकर मूल्योंके स्तरपर जीना सिखाना चाहता है और नहीं सिखा पाता। उसे अन्दर-ही-अन्दर जो घुन लग चुका है, वह किन्हीं कुण्ठाओंके कारण नहीं, बल्कि उस पराजयके कारण है जो नीलिमाके उपलब्धि-दर्शनसे बार-बार टकराकर उसने महसूस की है। वह टूटनेसे बचनेके लिए नीलिमासे दूर भागता है, मगर अन्दरके रेशोंसे वह इस तरह उससे जुड़ा हुआ है कि उससे अलग होकर वह किसी भी तरह नये सिरेसे जिन्दगी शुरू नहीं कर पाता। शुक्लाकी कुछ विशेष-ताएँ उसके अभावको गहरा ज़रूर कर देती हैं, पर वह जो कुछ पाना चाहता है, नीलिमासे ही पाना चाहता है। नीलिमासे हटकर शुक्लाको पा लेनेसे समस्या हल हो सकती, तो उसका अन्तर्द्वन्द्व इतना गहरा न होता। वह विदेशमें जाकर शुक्लाको बुला या किसी भी और लड़कीको अपना सकता था। तब वह नीलिमाके नाम इतने लम्बे-लम्बे पत्र न लिखता और न ही भीगी बालकनीपर बैठा उसके लौटकर आने-न-आनेको जिन्दगीका केन्द्र बना लेता। नीलिमा उसकी कमजोरीको जानती है और शायद इसीलिए उससे इतनी दूर जा पाती है। हरवंसको नीलिमाके 'बनने'से चिढ़ नहीं है, (जैसा कि नीलिमा भी कई बार कहती है) उस रास्तेके 'बनने' से चिढ़ है जिसे कि वह अपनी जिन्दगीमें अपना रही है। वह न सिर्फ़ नीलिमासे एक ऐसी मित्रता चाहता है जिसकी बुनियाद पारस्परिक ईमानदारी, भावनात्मक लगाव और मानसिक समदृष्टिपर हो, बल्कि वह यह भी कहता है कि 'मुझे आज तुम्हारी आँखोंमें एक भेंगापन दिखाई देता है कि मैं चाहता हूँ कि तुम मिटा सको—तुम अपनी चाहके साँचेमें ढलकर मेरे लिए वह दृष्टि पैदा कर सको जो मुझे एक सीधी और प्रशस्त मार्गपर ले जाये। यदि तुम्हें सचमुच इतनी रुचि है, और तुम समझती हो कि तुम अपनेमें इस कलाका इतना विकास कर सकती हो कि वह सच्चे अर्थोंमें प्रतीक बन जाये तो वह भी मेरे लिए एक मार्ग हो सकता है.....।' इसीलिए वह अपना काम छोड़कर ट्रूप मैनेजरके रूपमें उसके साथ-साथ सारे युरॅपमें भटकता फिरता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर जिस सौन्दर्यकी उसे कामना है, वह उसे नीलिमामें ही नहीं, अपनेमें भी नहीं मिलता क्योंकि वर्षोंके प्रयत्नसे लिखे उसके अपने पन्ने भी अधूरी फ़ाइलोंमें सड़ते पड़े रहते हैं।

और--कि रोशनी नहीं है, कि उपन्यास के वातावरणमें एक घुटन है जो साँस नहीं लेने देती--यह सब मुझे केवल शब्दोंका खिलवाड़ जान पड़ता है। मैंने शुरूमें भी कहा है कि एक रचनाके शीर्षकको लेकर ऐसा आग्रह मुझे ग़लत लगता है।--इससे तो लगता है कि एक साहित्यिक कृतिकी नहीं, बल्कि एक इमारतकी चर्चा की जारही है।

उपन्यासके शीर्षकको लेकर और भी कई तरहकी बातें कही जाती हैं--कि लेखक को सारी ज़िन्दगी अँधेरे बन्द कमरेमें सिमटी नज़र आती है, कि हवा और रोशनीके लिए उसके ख़यालमें आजकी ज़िन्दगीमें अवकाश नहीं है। पर क्यों कोई भी रचना पूरी ज़िन्दगीके किसी एक पहलूको ही चित्रित करती है, और हर रचनाका अपना अलग क्षेत्र और विस्तार होता है। इस बातको जानते वे भी हैं जो इस तरह शीर्षकोंसे खिलवाड़ करते हैं—पर यह एक ऐसी आदत है जो आसानीसे छूट नहीं पाती।

सस्नेह,

मोहन राकेश

■ ■

भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रस्तुत है

श्री फणीश्वरनाथ 'रेणु' का नया उपन्यास

जुलूस

'जुलूस' एक महत्त्वपूर्ण उपन्यास है, जिसका सीधा-सा कथानक 'रेणु'की मँजी और निखरी हुई लेखनीका स्पर्श पाकर रोचक और अत्यन्त प्रभावकारी बन गया है। एक पठनीय और संग्रहणीय कृति।

मूल्य ३·५०

देश-भरके अच्छे पुस्तक-विक्रेताओंसे प्राप्त

भारतीय ज्ञानपीठ

३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली – ६

दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी – ५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय ज्ञानपीठ

के

दो अनूठे, नयनाभिराम, कलात्मक प्रकाशन

परिणय गीतिका

सं० रमा जैन, कुन्था जैन

विवाहके विभिन्न अवसरोंपर गाये जानेवाले गीतोंका अपूर्व संकलन। पर ये गीत न प्रचलित गीतों-जैसे हैं न निरे साधारण ही, ये गीत विशेष हैं। इनमें एक ओर लोक गीतोंकी मधुरता और मोहकता महकती मिलेगी, तो दूसरी ओर साहित्यिक सुषमा और काव्यका रस। परम्पराओं और भावनाओंके साथ आजकी चेतना और काव्यका नया रस इनमें आ रमा है।

साथ ही, विवाह सम्बन्धी विभिन्न रस्मोंकी संक्षिप्त जानकारी भी दे दी गयी है और प्रत्येक गीतकी भरसक व्यवस्थित स्वरलिपि भी। भारतीय ज्ञानपीठका यह प्रकाशन साहित्यमें अपने प्रकारकी सर्वप्रथम कृति है : रुचिर, कलात्मक, उपयोगी।

उपहारमें देने-लेने योग्य! घर-घरमें प्रति होना आवश्यक!!

मूल्य ५.००

शैशवांकन

शिशुके जन्मोत्सव पर होनेवाले आयोजनोंकी शोभा स्मरणीय होती है। बाल-विकासका प्रत्येक चरण विस्मयकर है। इन आयोजनोंकी स्मृतिको और शिशुकी विकास-प्रगतिको मोहक तथा कलात्मक ढंगसे अंकित करके सुरक्षित रखनेकी इच्छा प्रत्येक माता-पिताके लिए स्वाभाविक है।

'शैशवांकन'में जन्मोत्सवसे सम्बन्धित अवसरोंका तथा शिशुकी उत्तरोत्तर प्रगतिका लेखा आयोजित है। 'शैशवांकन' मधुर स्मृतियों एवं उपयोगी तथ्योंके संरक्षणके लिए तथा स्नेह-आशीषकी अभिव्यक्तिके लिए सर्वथा नया और प्रीतिकर उपहार है। अपने शिशुके लिए स्वयं बरतें! और अपनोंको उपयोग करनेके लिए भेंट करें।

मूल्य १२.००

अपने यहाँके अच्छे पुस्तक-विक्रेतासे प्रतियाँ प्राप्त करें

अथवा किसी निम्न स्थानसे मँगायें

भारतीय ज्ञानपीठ

प्रधान कार्यालय : ९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता – २७

विक्रय केन्द्र : ३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, दिल्ली – ६

टेलेफ़ोन : कलकत्ता – ४५-४४३२ :: टेलेफोन : दिल्ली-२७२५८२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांस्कृतिक जागरण, साहित्यिक विकास-उन्नयन
और राष्ट्रीय ऐक्य एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी साधिका
तथा
भारतीय भाषाओंकी सर्वोत्कृष्ट
सर्जनात्मक साहित्यिक कृतिपर
प्रतिवर्ष एक लाख रुपये
पुरस्कार योजना प्रवर्तिका

श्रेष्ठ
उपयोगी
संग्रहणीय
प्रकाशन

भारतीय ज्ञानपीठ

उद्देश्य

ज्ञानकी विलुप्त, अनुपलब्ध और
अप्रकाशित सामग्रीका अनुसन्धान
और प्रकाशन तथा लोक-हितकारी
मौलिक साहित्यका निर्माण

●

संस्थापक
श्री शान्तिप्रसाद जैन
अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

●

प्रधान एवं सम्पादकीय कार्यालय : ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता–२७
विक्रय केन्द्र : ३६२०/२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, दिल्ली–६
प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी–५

ज्ञानोदय

जुलाई १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने ढंगके अनूठे और अनमोल

भारतीय ज्ञानपीठ

के

अभिनव, महत्त्वपूर्ण एवं संग्रहणीय प्रकाशन

● **जुलूस** : फणीश्वरनाथ 'रेणु'

नया शायद कुछ नहीं होता। आँख-ओझल तथ्योंके उद्घाटनको शोध नाम मिलता है और जाने-परचे तत्त्वोंका अपने प्रयोजनके अनुरूप संघटन आविष्कार कहलाता है। साहित्य-सृजनमें भी, व्यापक दृष्टिसे देखें तो, अपूर्व शायद ही कुछ होता हो।

'रेणु' की यह कृति 'जुलूस' भी अपूर्व तो कैसे कही जाये, पर अनूठी इसे मानना पड़ेगा। हिन्दीमें इस विषय-भूमिकी और इसके भाव-संकेत लिये हुए कोई कृति विरले ही आयी होगी। एक लघुकाय उपन्यास पर विशाल अन्तरंग, गझिन, शक्तिशाली! और सारा कथानक सामयिक : घटनाओंकी दृष्टिसे भी महत्त्व और मूल्योंकी दृष्टिसे भी। शैली-शिल्प 'रेणु'के अपने : पहलेसे अधिक प्रौढ़, मँजे-निखरे, प्रभावपूर्ण।

कथानक सीधा-सा है, प्रतिभा और कला उसके उपयोग-कौशलमें है। इसके माध्यमसे हिन्दी पाठक देखेंगे कि प्रान्तीय भाव-भेद कितने भी वास्तविक लगें, यथार्थ जीवनके सन्दर्भमें उनका अस्तित्व क्षीण हुए बिना नहीं रहता। और ठीक यही तो मूल आधार है देशकी भावात्मक-सांस्कृतिक एकताके सत्यका। आवश्यकता आचरणकी है, दृष्टि-दानकी है। प्रस्तुत है इस दिशामें यह 'रेणु'का सफल रचनात्मक प्रयत्न। मूल्य ३.५०

● **प्रतिनिधि रचनाएँ** : नानक सिंह

समयका प्रवाह और उसके परिप्रेक्ष्यमें समाजकी बदलती स्वरूप-छवियाँ! लगेंगी जैसे किसी विशाल कैलडॅस्कोपकी दृश्य-छवियाँ हों।

ज्ञानोदय

जुलाई १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निरन्तर बनती-बदलती इन दृश्य-छवियोंको अंकित कर सकता है कोई तो उपन्यास-कार। वह भी चाहे जो नहीं। किनारे खड़ा उपन्यासकार अपने अंकनमें उन छवियोंकी आकृति उतार देगा; उनके भाव और स्पन्दन, सन्धियाँ और स्खलन उसके देखे और झेले हुए न होंगे। यह प्राण-चेतना अपने अंकनमें वही उपन्यासकार ला सकेगा जो उन बदलती स्वरूप-भंगिमाओंकी आगमें स्वयं झुलसा है, उनके पत्थर-पानीमें गला और बहा है। प्रस्तुत कृतिका लेखक इसी आधारपर उपन्यास-कारके रूपमें विशेष द्रष्टव्य हो जाता है।

गत पचास वर्षोंका देशका इतिहास अत्यन्त घटनापूर्ण रहा है। और घटनाएं भी ऐसी कि हरेकने इतिहासमें कुछ नया जोड़ा और जीवनको नयी भूमि, नया परिवेश, नया अर्थ तक दिया। सब जो कुछ हुआ उसमें कुछ अवांछ्य भी था, दुखद और यातनाओं-भरा भी। उस कैलडॅस्कोपकी कुछ दृश्य-छवियाँ यहाँ अवश्य प्रस्तुत हैं। ऐसी जिन्हें लेखकने किनारेसे देखा नहीं, जिया और झेला, और जो इतिहासकी होते हुए इतनी आजकी भी हैं कि अनेक पाठकोंको अपनी बीती याद हो आयें।

रचनाओंके अंश भी कितना-कितना कह सकते हैं और कैसे सम्पूर्णका आभास दे सकते हैं, इसका यह 'प्रतिनिधि रचनाएँ' एक श्रेष्ठ उदाहरण है। मूल्य ४.००

तुम अनन्त शक्तिके स्रोत हो : मुनि नथमल

आते युगोंका इतिहास मानेगा कि इस युगने अद्भुत उन्नति की। किन्तु कहेगा यह भी कि उन्नति भौतिक थी। बाहरी समृद्धि उससे जितनी भी हुई, प्रवृत्तियोंके चक्रवातमें आन्तरिक वृत्तियाँ मन्द ही पड़ीं। जीवन मिला था, इसलिए मनुष्य जिया : जैसे जीना चाहिए था वैसे नहीं जिया।

सब प्रत्यक्ष भी है। मनुष्य केवल देह नहीं, प्रधान अंग आत्मा है। आत्मा ही केन्द्र है : जीवनका, जीवन-चेतनाका। और आजका मानव तो इन्द्रियोंकी खिड़कियोंसे झाँकता-भागता, टूटता-बिखरता, बाहरकी ओर दौड़ा जा रहा है : उस आत्माका सान्निध्य प्राप्त नहीं करता। करता तो देख सकता कि आन्तरिक शक्ति और वैभवकी तुलनामें ये बाहरी समृद्धियाँ तुच्छ हैं।

आत्मासे अस्तित्व है। उसे भुलाया नहीं जा सकता। उस एक सत्यका वरण करना होगा। यह अनुभव भी किया जाने लगा है कि वर्तमान स्थितिपर नियन्त्रण नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया गया तो परिणाम भयंकर होगा। और वह परिणाम तो वे भी नहीं चाहते जो उसका कारण बन रहे हैं। कैसे हो निवारण उस परिणामका, किस प्रकार मन पर अधिकार करते हुए आत्माका सान्निध्य प्राप्त किया जाये, यह अनुभव-सिद्ध, सरल एवं प्रभावपूर्ण रूपमें प्रस्तुत कृतिमें देखें।

मूल्य २.००

● **चिन्तक की लाचारी : माखनलाल चतुर्वेदी**

यह एक भाषण संकलन। ऐसे भाषण-संकलन बहुत कम हैं जो इतिहास और राजनीतिकी जयमाल न होकर समग्र जीवन और अनुभूति-बोधके सत्योंके सूत्र थामे हुए वर्तमानका दृष्टिपथ अँजोर दें और अनागतकी छवि-रेखाएँ उकेर जायें। ऐसे भाषण-संकलन मर्मी चिन्तकके होते हैं या निष्णात साहित्यकारके। इस प्रकारके अत्यल्प भाषण-संकलनोंके बीच प्रस्तुत भाषण-संकलन विशिष्ट है क्योंकि ये भाषण श्री माखनलाल चतुर्वेदीके हैं और हिन्दीमें माखनलालजी केवल एक हैं, अद्वितीय हैं।

मूल्य : ४.००

● **आत्मजयी : कुँवर नारायण**

कठोपनिषद्में नचिकेताका आख्यान आता है। सत्यद्रष्टा कविने इसके माध्यमसे भारतीय दर्शनकी एक विशिष्ट उपलब्धिको स्पष्ट किया है। इधर कुछ हिन्दी काव्य-कृतियाँ इस आख्यानको विषय-आधार बनाकर प्रकाशमें आयी हैं। 'आत्मजयी' इन सबमें कई दृष्टियोंसे भिन्न है और विशेष अर्थपूर्ण भी। यह कृति मूल प्रसंगके दार्शनिक पक्षकी ऊहापोह नहीं करती, न ही उसे दिव्यकथाके रूपमें ग्रहण करती है। 'आत्मजयी' के कविने मुख्यतः नचिकेताकी मानवीय परिस्थितिको ही दृष्टिमें रखा है। नचिकेताकी ही तरह आजका चिन्ताशील मनुष्य भी ऐसे मूल्योंके लिए जीना चाहता है जो उसमें सुख ही नहीं सार्थकताका भी बोध करा सकें।

'आत्मजयी' में मूल्योंको लेकर कोई अन्तिम फ़ैसला नहीं दिया गया : केवल, रचनात्मक दृष्टिकोणके प्रति एक आस्था व्यक्त की गयी है। जीवनकी पूर्णानुभूतिके लिए किसी ऐसे मूल्यके लिए जीना आवश्यक है जो व्यक्तिमें जीवनकी अनश्वरताका बोध करा सके : यही उसको सान्त्वना दे सकता है कि मर्त्य होते हुए भी वह किसी अमर अर्थमें जी सकता है। उसके लिए तब यह चिन्ता सहसा व्यर्थ हो जायेगी कि जीवन कितना असार है : उसकी मुख्य चिन्ता यह होगी कि वह जीवनको कितना सारपूर्ण बना सकता है। सर्वथा संग्रहणीय कृति।

मूल्य ३.००

ज्ञानोदय

जुलाई १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• **सिकन्दरनामा** : सलमा सिद्दीक़ी

सिकन्दरनामा यानी सिकन्दरका हाल। हाँ, सिकन्दर। इतिहासका सिकन्दर नहीं। उसपर सदियोंकी मोटी चादरें पड़ गयी हैं। यह आजका सिकन्दर है जिसके अस्तित्वका सबसे बड़ा सबूत यह है कि स्वयं सलमा सिद्दीक़ीने उसे अपनी जादुई क़लमकी नोकपर बैठाकर साहित्य-संसारमें रॉकेटकी तरह छोड़ा है।

आप चाहें तो इस सिकन्दरको डॉन क्विग्ज़ोटकी परम्परामें शुमार कर लें; लेकिन है यह मियाँ खोजीकी जात-बिरादरीके। जिस तरह हर मिट्टी-पानीकी अपनी-अपनी पौध होती है जो अपने-अपने रंग और सुगन्धमें लाजवाब होती है, उसी तरह यह सिकन्दर है – हिन्दुस्तानकी धरतीका एक हँसोड़ क्यारीका लुभावना फूल। बहुत दिलचस्प दास्तान है इस सिकन्दरकी। और, सलमा सिद्दीक़ीकी सादाबयानीका मोहक कमाल! नये अन्दाज़, नयी अदा, और कुछ पुराने तौर-तरीक़ोंपर नयी चुलबुली निगाह!

मूल्य २.००

• **क्या धर्म बुद्धिगम्य है ?** : आचार्य तुलसी

तर्क और बुद्धिने धर्मको चुनौती दी तो सदासे ही है, किन्तु आज विज्ञान और उन्मुक्त चिन्तनने इस चुनौतीको अधिक व्यापक और अधिक मुखर बना दिया है। धर्मने इस चुनौतीको स्वीकारा भी सदासे है, किन्तु अतीतमें जो उत्तर जिज्ञासुओंको सन्तुष्ट कर देते थे, वे उत्तर आज अपर्याप्त हैं। आजके जीवनके परिवेशमें वर्तमानके चुभते प्रश्नों और अणुयुगीय रोमांचों तथा आतंकोंके सन्दर्भमें प्रश्नकी उत्कटता और प्रखरताको कौन झेले—क्या धर्म बुद्धिगम्य है ? इस प्रश्नका और प्रश्नोंमें-से उभरती उप-प्रश्नोंकी शृंखलाका उत्तर इस कृतिमें आपको मिलेगा। व्याख्याता हैं श्री आचार्य तुलसी, जो अणुव्रत-आन्दोलनके प्रवर्तक हा नहीं हैं, इस युगके विशिष्ट साधक, चिन्तक और दिशादायक भी हैं। श्री आचार्य तुलसीने धर्मका वह स्वरूप प्रतिपादित किया है जो बुद्धिगम्य है, जो सहज आस्था उत्पन्न करता है। सम्प्रदायोंमें विभाजित एकाग्र ही धर्मकी कर्दमसे ऊपर उठा हुआ, खिला हुआ और एक सहस्र-दल कमल है जो विश्वमानवका है। उसकी पूतगन्धसे परिचित होनेका माध्यम यह रचना है। तर्क-सी पैनी, श्रद्धा-सी गहरी और दर्पण-सी निर्मल, यह कृति आपके प्रश्नोंका आप ही से समाधान करायेगी।

मूल्य २.००

ज्ञानोदय

जुलाई १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● **चौंसठ कविताएँ** : इन्दु जैन

न कहें कुछ और, पर भिन्न और विशेष इन कविताओंके परिचयमें अवश्य कहा जायेगा। यह इसलिए नहीं कि श्रेष्ठ कविताके निकषपर ये खरी उतरती हैं, बल्कि इसलिए कि ये हिन्दी कविताकी अधुनातन दिशा, भाव-बोध, और शिल्पकी प्रामाणिक उपलब्धिका संकेत देती हैं। और इसलिए भी कि सब प्रकारके उलझावोंसे ये मुक्त हैं और अपना अर्थ बड़ी सहजताके साथ स्वयं खोलती हैं।

सब चौंसठ कविताएँ हैं, पर प्रत्येक जैसे एक सौम्य बिजलीकी कौंधका निमित्त हो जो अन्दरकी अकुलाहटको, किसी दर्द या उल्लासको, सतरंगी प्रकाश-रेखाओंकी भाषामें उकेर जाये। अनुभूतियोंकी ऐसी अभिभूत करनेवाली अभिव्यक्ति इनमें हुई है कि क्षितिजपर क्षितिज सामने खुलते चले जाते हैं और भीतर एक गन्ध-भरी चाँदनी-सी छिटक पड़ती है। कविताओंकी पंक्ति-पंक्तिसे साक्ष्य मिलता है कि अन्तश्चेतना भी कितनी मुखर हो सकती है। मूल्य ३.००

● **प्रतिनिधि रचनाएँ (मराठी)** : प्रो० ना० सी० फड़के

प्रस्तुत रचना-संग्रह भी एक फूलडाली है। अनेक फूल, और एक ही डालीके, पर कई रंगके। रचनाओंकी यह विधा-विविधता संग्रहको एक अतिरिक्त आकर्षण और मूल्य दे देती है। पर इस फूलडालीकी सारी विशेषता इसमें नहीं कि एक समर्थ साहित्यकारकी प्रतिनिधि रचनाएँ सामने आयीं, विशेषता इसमें है कि अन्यान्य फूलडालियों-भरे आँगनमें इसका झुकना-झूमना संकेत बन जाता है कि कैसी-कैसी गन्धके फूल किधर लगे हैं। ये रचनाएँ एक और दृष्टिसे भी महत्त्वकी हैं। नया भाव-बोध और शिल्प इन्हें साहित्यके विकास-क्रममें एक स्थान देनेको बाध्य होगा और जो परम्परानिष्ठ हैं उन्हें इनकी मोहकता आगेको प्रेरित और प्रोत्साहित करेगी। प्रस्तुत हैं एक ही स्थानपर संगृहीत, लेखककी स्वसंकलित चौदह प्रतिनिधि रचनाएँ : चार कहानियाँ, एक उपन्यास-अंश, एक एकांकिका, तीन ललित निबन्ध, एक शब्द-चित्र, दो यात्रा-वर्णन तथा दो वैचारिक निबन्ध (प्रबन्ध)। मूल्य ४.५०

● **दर्शन-अनुचिन्तन** : म० म० गिरिधरशर्मा चतुर्वेदी

चुने-चुने चौदह निबन्धोंका यह एक सुसम्बद्ध संकलन है जो भारतीय दर्शनोंके समूचे स्वरूप और प्रमुख सिद्धान्तोंका सुन्दर परिचय देता है। और ऐसी सरल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और सुबोध भाषामें सारा विचार-विवरण उपस्थित करता है कि सामान्य जन इसे अपने ही लिए लिखा गया मानें और सुधी-विशेषज्ञ देखें कि सब-कुछ ज्ञातव्य और नया चिन्तन भी सुबोध ढंगसे लिखा जा सकता है।

मनीषी विद्वानोंके लिए यह कृति एक और दृष्टिसे भी विचारणीय होती है। बहुतोंका मत है कि भारतीय दर्शनोंमें एक विसंगति-जैसी दिखाई पड़ती है। महामहोपाध्यायजीने प्रस्तुत कृति-द्वारा बड़े तर्कके साथ सिद्ध किया है कि इनमें परस्पर विरोधभाव कोई नहीं है बल्कि ज्ञानका एक क्रम है: ऐसा क्रम जो बुद्धिको स्थूलसे उत्तरोत्तर गहनतम सूक्ष्म तक ले चले। महामहोपाध्यायजी 'भारतीय षड्दर्शन' संज्ञा भी 'चार्वाक, बौद्ध, जैन, वैशेषिक, सांख्य, वेदान्त' इन छह दर्शनों-को देते हैं।

पुस्तक सभी दृष्टियोंसे सबके लिए पठनीय और मननीय है। इसके चौदह निबन्ध जैसे चौदह बीजवट हैं, भारतीय दर्शनशास्त्रोंका सार-सर्वस्व एक अंजुलिमें!

मूल्य ३.००

नाटक बहुरूपी : डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल

"नाटकोंकी भीड़ और नाटक नहीं," शॉ चुटकी लिया करते। "आधुनिक नाटक अभी लिखा नहीं गया," आल्बेर्तो मोराविया कहते सुने जाते हैं। अब इनसे कौन उलझे। उनसे कहना निरर्थक होता, इनसे कहनेमें संगति क्या। फिर, ऐसा कुछ है भी तो! अच्छे नाटक कम हैं, आधुनिक नाटक और भी कम।

इसी सन्दर्भमें यह छोटा-सा संकलन 'नाटक बहुरूपी' प्रस्तुत है। इसके द्वारा भी कहना यह नहीं है कि ये नाटक अच्छाईका आदर्श हैं; कहना यह उपयुक्त होगा कि ये अच्छाईका एक नमूना हैं और अनेक दृष्टियोंसे आधुनिक तो हैं ही। डॉ० लाल समकालीन हिन्दी नाटक-लेखनमें पहले ही कुशल कलाकार थे, अब तो सागर-पार जाकर वहाँका भी बहुत-कुछ देख और गुन आये हैं।

इतनी सहज-सच्ची और मर्म-छूती रचनाएँ हैं ये कि पढ़ी जायें तो पाठकको अपनी ही बात कही जाती मिले, और रंगमंचपर आयें तो दर्शक अपने ही सत्यों और सपनोंको सामने देखता हो। ऐसे नाटक हिन्दीमें सचमुच बहुत नहीं जिन्हें ईज़ीचेयरपर पढ़ते अच्छा लगे और स्टेजपर देखकर प्रेरणा मिले।

मूल्य ३.५०

ज्ञानोदय

जुलाई १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● **अपने-अपने अजनबी : अज्ञेय**

भारतीय साहित्योंमें अपने ढंगका अद्वितीय उपन्यास। मृत्युसे साक्षात्कारको विषय बनाकर जीवन और नियतिका सरल मार्मिक विवेचन। मृत्यु-विषयक पूर्व और पश्चिमकी दृष्टियोंकी टकराहट, दोनोंके मिलन-द्वारा मानव-जीवनके एक नये आयामका उन्मेष।

मूल्य ३.००

● **ज़िन्दगी और गुलाब के फूल : उषा प्रियंवदा**

कहानियाँ और कहानियाँ! मगर ये कहानियाँ बिलकुल भिन्न हैं। न भाषाका उलझाव है यहाँ न शैली-शिल्पके गोरखधन्धे, और संग्रह-भरमें एक जो कहानी हो जिसे पढ़ें और दिनों अपने भीतर मँडराता हुआ न पायें! अतिरिक्त विशेषता और यह कि नयी कहानी इन्हें अपना कहेगी तो औरोंके लिए ये परायी न हो सकेंगी।

मूल्य २.५०

● **खोयी हुई दिशाएँ : कमलेश्वर**

ग्यारह कहानियाँ जो एक विशेष दृष्टिको लेकर चुनी गयीं। जीवनमें महत्तम मूल्योंके प्रति आस्थाका स्वर इनका कथ्य है और घुटन तथा पराजयमें जीनेकी विवशताको नियति न मानकर नये सन्तुलन और अर्थोंकी खोज इनकी दिशा। इनमें जीवनका अध्ययन आया है, मात्र सर्वेक्षण नहीं। असम्भव होगा कि संग्रहकी कोई भी कहानी पढ़ें और मनपर प्रभाव न छोड़े।

मूल्य २.५०

● **प्रतिनिधि रचनाएँ : पंजाबी : कर्तारसिंह दुग्गल**

किसी साहित्यिक व्यक्तित्वको पहचानने-समझनेके लिए आवश्यक है कि उसकी विभिन्न विधाओंका लेखन कहीं एक-साथ देखें और पढ़ें। प्रस्तुत पुस्तकमें श्री कर्तार-सिंह दुग्गलका एक समूचा नाटक, दो एकांकी, दो उपन्यासोंके अंश, संस्मरण और निबन्ध तो हैं ही, कहानी और कविताएँ तक संकलित हैं। कभी पंजाबी और उर्दूके और अब तो उतने ही हिन्दीके भी, इस चहीते साहित्यकारकी ये सभी रचनाएँ उसकी प्रतिनिधि रचनाएँ हैं : उसके साहित्यिक व्यक्तित्वसे परिचित होनेके लिए बिलकुल अनिवार्य।

मूल्य ३.५०

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैकलियॅड एण्ड कम्पनी लिमिटेड

मैकलियॅड हाउस,

३, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता-१

मैनेजिंग एजेण्ट्स, सेक्रेटरी और कोषाध्यक्ष

जूट मिल्स

- अलेक्जेण्डर जूट मिल्स कं० लि०
- एलायन्स जूट मिल्स कं० लि०
- नेल्लीमारला जूट मिल्स कं० लि०
- चितावलसाह जूट मिल्स कं० लि०
- ईस्टर्न मैन्यूफैक्चरिंग कं० लि०
- एम्पायर जूट मिल्स कं० लि०
- केलविन जूट कं० लि०
- प्रेसिडेंसी जूट मिल्स कं० लि०
- वेवरली जूट मिल्स कं० लि०

चाय के बगीचे

- अमलुकी टी कं० लि०
- बागमारी टी कं० लि०
- मतकावा टी कं० लि०
- बोरमाह जान टी कं० (१९३६) लि०
- डिब्रूगढ़ कं० लि०
- बैजू बेली कं० लि०
- मार्गरेटस होप टी कं० लि०
- राजभात टी कं० लि०
- रानीचेरा टी० कं० लि०
- रूपचेरा टी कं० लि०
- सुंगमा टी कं० लि०
- तेलोईजान टी कं० लि०
- तिंगामीरा टी सीड कं० लि०
- तिरींहन्ना कं० लि०
- तीयरून टी कं० लि०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Price Annual Rs. 10/- per copy Re. 1/- for abroad postage extra 18 nP. This Copy Re. 1/-
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

License No. 51. Licensed to post without prepayment of postage. REGD. No. L-2036

धांगध्रा
केमिकल
वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर
साहूपुरम् में
डाकखाना : अरुमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक
धांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स :

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लि०

१५ ए, हॉर्निमैन सर्किल
फोर्ट, बम्बई-१

टेलीफोन : २५१२१८-१९-१०,

तार । सोडाकेम, बम्बई

भारतीय ज्ञानपीठ काशीकी ओरसे बाबूलाल जैन फागुल्ल-द्वारा प्रकाशित और
सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी में मुद्रित ।
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदय

अगस्त १९६५

एक रुपया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक विकास-उन्नयन
सांस्कृतिक अनुसन्धान-प्रकाशन
राष्ट्रीय एकता एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी

साधिका
विशिष्ट संस्था

भारतीय ज्ञानपीठ

[स्थापित सन् १९४४]

संस्थापक
श्री शान्तिप्रसाद जैन

अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

ज्ञानोदय

अगस्त १९६२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस अंकमें :

निर्गुण नक़्श : सवुज श्याम धरती ०

विश्वके समीक्षकोंके बीच ०

काँगड़ा क़लमकी भावभूमि ०

एक भारतीयकी काली चमड़ी : पिस्तौलका निशाना ०

नया साल : एक बेवक़्त याद ०

७२ वर्षका साधक और रामायणके प्रसंग ०

छायावादी कवयित्री : बिखरा हुआ मन ०

लमहीमें चन्द लमहे ०

रामगिरिपर छाये बादल ०

आरनल्ड ग्रिस्मैन, कुबेरनाथ राय, देवराज, अमृतराय, विष्णु प्रभाकर, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', गिरिराज किशोर, वीरेन्द्रकुमार जैन, राजेन्द्र किशोर, देवेन्द्र इस्सर, किशोरीलाल वैद्य, रामलाल, महेन्द्र भल्ला, छेदीलाल गुप्त दामोदर सदन, विनीता पंकज, सतीशकुमार आदि

■

ज्ञा नो द य

वर्ष : १७ : : अंक : २

अगस्त १९६५

■

भारतीय
ज्ञानपीठ
प्रकाशन

सम्पादक : लक्ष्मीचन्द्र जैन, रमेश बक्षी

सम्पादकीय कार्यालय : ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७
वितरण-कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी
प्रमुख वितरक : बैनेट कोलमैन एण्ड कं० लि०, बम्बई-१
एक प्रति : एक रुपया। वार्षिक : दस रुपये। त्रैवार्षिक : पच्चीस रुपये।
पन्द्रह वर्षीय : सौ रुपये। आजीवन : एक सौ एक्यावन रुपये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके पत्र

'नयी पीढ़ीका प्रतिनिधि अंक'

● 'ज्ञानोदय' के सभी अंक मिल रहे हैं। इसमें आप बहुत उपयोगी सामग्री दे रहे हैं। हार्दिक बधाई स्वीकार करें।

चण्डीगढ़] —हजारीप्रसाद द्विवेदी

● यदि मुझे क्षमा किया जाये तो कहूँगा कि बादोंके चक्करमें पड़कर और सरल भाषासे दूर जाकर कोई भी पत्र अपनी लोकप्रियता खो सकता है। सीधी-सादी सरल जबानमें लिखे गये लेख ही जनता तक पहुँच सकते हैं। स्वयं आप तो बहुत साफ़ लिखते हैं—सुलझी हुई बात कहते हैं—पर ज्ञानोदयके कितने ही कवि और लेखक बड़ी चक्करदार भाषा लिखते हैं, जिसे गुट्ठल कहा जा सकता है। हलवेको अगर ठीक तरहसे निरन्तर चलाया न जावे तो उसमें गाँठें पड़ जाती हैं! (कोई चौबे हो इस स्वादिष्ट उपमाको दे सकता है!) वैसी ही गाँठें प्रयोगवादी लेखकों तथा कवियोंकी भाषामें पड़ जाती हैं। इस कटु आलोचनाके लिए क्षमा कीजिए। ष्टरस भोजनमें कड़वापन भी एक रस है। उसका ज़ायका भी कर लीजिए।

नैनीताल] —बनारसीदास चतुर्वेदी

● हर्षकी बात है कि जुलाईसे ज्ञानोदय १७वें वर्षमें पदार्पण कर रहा है। काफ़ी लम्बा समय पार कर आया, यानी रामचन्द्रजी वनवाससे लौट भी आये और तीन वर्ष अधिक भी हो गये। शायद सीता-वनवासका करुणा-विगलित प्रसंग भी समाप्त हो गया और अब लव-कुशकी किलकन, अरण्य-रोदनको नवयुगके गायनसे ठुनकार रही होगी। इधर 'ज्ञानोदय' का नया उन्मेष भी कुछ ऐसी ही चुनौती बनकर आया है जिसे रामकी भी रूढ़ियाँ बरदाश्त नहीं हैं। बड़ी आवश्यकता थी इस बातकी कि रामके अमोघ बाण परम्पराग्रस्त होकर कहीं निष्प्राण न हो जायें। इसीलिए ज्ञानोदयके इस विद्रोही विरदका स्वागत जनपदको भी करना पड़ा है।

उज्जैन] —शिवमंगलसिंह 'सुमन'

● 'नयी पीढ़ीका प्रतिनिधि अंक' देखा। यह कथा-दशकसे अगला क़दम है और नये कथाकारोंके भावबोधमें प्रतीकों तथा आवेशोंकी प्रबल संकुलता नज़र आयी। ममता तथा कमलजीतकी कहानियोंमें विलक्षणता लगी। कविताओंमें कान्ता, अनामिकाने लघु रेखांकित कविताओंको दीप्त किया है। इस क्रममें आप तीन-चार अंक रूप-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हटकर निकालें और सभी क्षेत्र बटोर लें।

—रमेश कुन्तल मेघ
चण्डीगढ़]

नयी पीढ़ीके अंककी सूरत भायी, आपका सामग्रीको प्रस्तुत करनेका ढंग हमें शुरूसे अच्छा लगता है। कविताओंमें कमज़ोरी लगी। फ़िलहाल यही प्रतिक्रिया है। मुखपृष्ठके लिए विशेष रूपसे मेरी बधाई स्वीकार करें—अच्छा है।

—कन्हैयालाल 'नन्दन'
बम्बई]

एक दृष्टिसे अंक अपनेमें अनूठा लगा है, सुनियोजित, सुसम्पादित और अपनेमें बहुत नया। बधाई।

—मनमोहन 'सरल'
बम्बई]

जुलाई अंक सामने है। वैसे नवलेखनकी दायित्व-चेतनाका निर्वाह ज्ञानोदय अपने पिछले अंकोंसे करता आ रहा है। प्रस्तुत अंक उन सबसे हटकर, विज्ञापन-पीड़ित नामोंसे रहित, प्रतिभाके नवीन हस्ताक्षरोंका एक सुरुचिपूर्ण अलबम है। कहानियाँ कहीं-कहीं तो इतनी सूक्ष्म-सी लगती हैं कि उन्हें पकड़ पाना मुश्किल है – फिर भी शशि तिवारीकी कहानी 'चाहोंके मरुस्थल' मनके इस छोरसे उस छोर तक फैल-फैल गयी है। भाई ओम प्रभाकरने भी काफ़ी आकर्षित किया है। नयी कविताका अधिकांश जिन अभिशापोंसे गुज़र रहा है उनसे रणजीत, इन्दु जैन, केवल गोस्वामी, नोलम सिंह और मुद्गल निस्सन्देह बच गये हैं, इसलिए कि इनके पास भोगे हुए क्षणोंको आँकनेके लिए ईमानदार दृष्टि है। और अन्तमें सबसे अधिक जो बात पसन्द आयी वह यह कि प्रस्तुत अंकका कलेवर अतिशय रांगोली-वृत्तिसे मुक्त है।

रागवाहरा]

—नारायणलाल परमार

नये वर्षके प्रथम अंकपर बधाई। निश्चय ही ज्ञानोदयने इन वर्षोंमें काफ़ी लम्बी-चौड़ी दौड़ लगायी है और दौड़की दिशाका विचार किया जाये तो सभी दिशाओंमें इसने चौकड़ी भरी है। व्यक्तिका जीवन यदि १६ वर्षमें १६ उद्योग-धन्धे या कार्यक्रम बना ले तो उसे आप क्या कहेंगे? लोक-भाषामें बहुरूपिया और मित्रोंकी भाषामें हरफ़न् मौला—जेक ऑव ऑल ट्रेड्स! खैर, व्यक्तिके जीवनमें 'ट्रायल एण्ड एँरर'को अधिक स्थान नहीं दिया जा सकता, पत्रिकाएँ अमर भी हो सकती हैं। अतः मनमाने प्रयोग करें तो उन्हें रोकना नहीं चाहिए। नवलेखनकी आलोचना या विरुद्ध मूल्यांकन इससे अभीष्ट नहीं।....

नीमच]

—शि० ना० गौड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदयकी ओरसे
लेखकोंके लिए निवेदन :

- कृपया अपनी रचनाओंकी टंकित अथवा साफ़ लिखी प्रति भेजिए और उसकी प्रतिलिपि अपने पास अवश्य रख लीजिए।
- लेख, निबन्ध, कहानी और हमारे स्तम्भोंके अन्तर्गत यदि आप सामग्री भेजें तो ज्ञानोदयके अधिकसे अधिक आठ पृष्ठोंसे रचना लम्बी न हो। यदि कोई लम्बी रचना भेजना ही चाहें तो सम्पादकसे पहले पूछ लें। अब इस वर्ष कृपया नवम्बर बाद ही रचनाएँ भेजें।
- हमारा प्रयत्न यही रहेगा कि अधिकसे अधिक एक मासके अन्दर ही निर्णय-की सूचना आप तक पहुँच जाये। रचना भेजनेके बाद एक मास तक आपको कोई सूचना न मिले तो ही हमें लिखिए। स्वीकृत रचनाओंकी सूचना पाते ही कृपया यह अवश्य लिख भेजिए कि रचना अप्रकाशित-अप्रसारित है और ज्ञानोदयमें प्रकाशित होने तक अप्रकाशित-अप्रसारित ही रहेगी। टिकिट-लगा लिफ़ाफ़ा रचनाके साथ हुआ तो ही अप्रकाशनीय रचनाएं लौटायी जा सकेंगी, अन्यथा नहीं। स्वीकृति-सूचनाकी सम्पुष्टि भेजनेके बाद तथा अस्वीकृतिकी सूचना प्राप्त होनेके बाद कृपया उस रचनाके सम्बन्धमें पत्र-व्यवहार न कीजिए। क्षमा करें, उन रचनाओंको लौटाना हमारे लिए असुविधाजनक होगा जिनके लिए वापसी-टिकिट आप निर्णय-की सूचना पानेके बाद भेजते हैं।
- लेखकोंको, उनकी रचना जिस अंकमें प्रकाशित होगी, वह अंक अवश्य भेज दिया जायेगा, साथ ही दो-दो ऑफ़-प्रिण्ट्स भी।
- हमेशा पारिश्रमिक यथासम्भव अग्रिम और रचना प्रकाशित होनेके एक सप्ताह बाद भेज दिया जाता है।
- सारे सम्पादकीय पत्रव्यवहार केवल इस पतेपर कीजिए :

सम्पादक : ज्ञानोदय,
९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता–२७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज ही ज्ञानोदयका जुलाई अंक मिला। रूप-रेखाने अति प्रभावित किया है। और यह नया रूप इसे और भी लोकप्रिय बनायेगा। हिन्दी पत्रकारितामें धर्मवीर भारती-के बाद आपने ही इतना सफल प्रयोग किया है—साहित्यके क्षेत्रमें।

—हृदयेश

शाहजहाँपुर]

निस्सन्देह 'ज्ञानोदय' का १७वाँ प्रवेशांक अपने दावोंके अनुकूल है। सुनिश्चित रूपसे आपने, अपने कार्य-कालकी अल्पावधिमें ज्ञानोदयको जिस नयी चेतनासे जोड़ दिया है—वह आपको हार्दिक बधाईका पात्र बनाता है! हमें श्री रमेश बक्षीके चिन्तनके अनेक बिन्दु आपत्तिजनक प्रतीत होते हैं किन्तु शिल्प गत सामर्थ्यके द्वारा उन्होंने जो सम्पादकीय दृष्टि पायी है, वह निहायत प्रशंसनीय है।

—मदनमोहन 'तरुण'

जहानाबाद]

सचमुच यह अंक इतना सुन्दर है कि मैं कह नहीं सकती। मैंने एक ही बैठकमें इसे खत्म किया। सारी रचनाओंका चुनाव बहुत ढंगका किया गया है—जो इस वर्षके इस अंककी सबसे बड़ी विशेषता है। सुधा अरोड़ाके प्रश्नोंका जवाब श्री मोहन राकेश-द्वारा बड़े सफल तथा सुलभ ढंगसे दिया गया है। भले ही 'अँधेरे बन्द कमरे' उपन्यासकी सारी समस्याएँ हल न हो पायी हों पर स्पष्टीकरण 'किसी एककी उलझन' ही नहीं कितनोंकी उलझनें सुलझा गया है। अन्तमें सिर्फ़ इतना और कहना चाहूँगी—एक कमी जो खटकी—वह थी सामग्रियोंकी न्यूनता। ज़्यादा नहीं कुछ ही पृष्ठ और होते तो यह अंक किताबोंके साथ बुक-शेल्फ़में लगानेकी चीज़ होता।

प्रयाग]

—नीलम सिंह

ज्ञानोदयके सत्रहवें वर्षका प्रथमांक मिला। अपनी रुचिके अनुसार सर्वप्रथम कविताएँ उलटकर देखीं। सन्तोष है कि आजके दुर्वह क्षणोंकी पीड़ा हमें अकेले ही नहीं भुगतनी पड़ रही है। इस दृष्टिसे 'सलीब विहीन धर्मयोद्धाओंका दर्द', 'शर्त', 'संवाददाता', 'टूटती आवाज़ें' और 'श्रद्धांजलि' शीर्षककी कविताएँ अपनी पूरी तीक्ष्णताके साथ मनको छू गयीं। वर्तमान युगकी छटपटाहटको इतनी सशक्त अभिव्यक्ति देनेके लिए मैं रणजीत, रमेश गौड़, पद्मधर त्रिपाठी, मुद्गल, और कुंकुम जोशीको बधाई देना चाहता हूँ। हाँ, यह तो बिलकुल ही अच्छा नहीं लगा कि आपने १९६२के बादकी उभरती आवाज़ोंके सन्दर्भमें कोई लेख नहीं दिया।

गोरखपुर]

—जगदीश नारायण श्रीवास्तव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञानोदय उपहार

वार्षिक ग्राहक बनकर आज ही १९६४ का समकालीन भारतीय कहानी विशेषांक और १९६५ की डायरी आप प्राप्त कर सकते हैं।

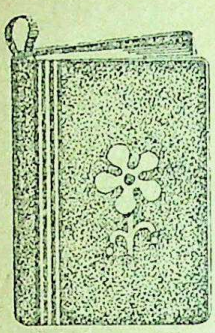

● नये वर्षकी एक ख़ूबसूरत डायरी–

अतिरिक्त मूल्य दिये बिना आप यह डायरी प्राप्त कर सकते हैं,

–यदि वर्ष-भरके लिए ज्ञानोदय किसीको उपहारमें दें।

–यदि विशेषांकमें प्रकाशित प्रश्नावलीका उत्तर भेजें।

–आपकी ओरसे यह उपहार कार्ड ●

आपके मित्र-परिचितको, जिसे आप वर्ष-भरके लिए ज्ञानोदय उपहारमें देना चाहें।

● ज्ञानोदयके संग्रहणीय विशेषांक –

ग्राहक बनते ही कोई एक उपलब्ध विशेषांक आपके हाथों होगा : शायद आप १९६४ विशेषांक पसन्द करें।

★ समकालीन भारतीय कहानी विशेषांक : १९६४ ★ पत्र-विशेषांक : १९६३ ★ हास्य-व्यंग्य विशेषांक : १९६२ ★ नवोदित लेखिका विशेषांक १९६२ ★ भारतीय परिवार विशेषांक : १९६१ ★ भारतीय इतिहास कथा विशेषांक : १९६० ★ विज्ञान विशेषांक : १९५९ ★ प्रणय विशेषांक : १९५८ ★ संस्मरण विशेषांक : १९५७ ★ नैतिकता विशेषांक : १९५७ ★ आधुनिकता विशेषांक १९५६ ★ एशिया विशेषांक : १९५५

● ज्ञानपीठ पत्रिका

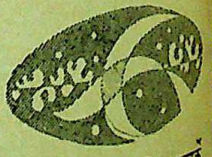

लेखन-प्रकाशनकी अधुनातन दिशा-प्रवृत्ति और उपलब्धि परिचायिनी मासिकी, वर्ष-भर आपको मिलेगी, यदि ज्ञानोदयके आप दो ग्राहक बना दें।

● भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

यदि आप तीन ग्राहक बना दें तो ५ रु० मूल्यकी और पाँच ग्राहक बना दें तो १० रु० मूल्यकी मनपसन्द पुस्तकें उपहारमें।

ज्ञानोदय : ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

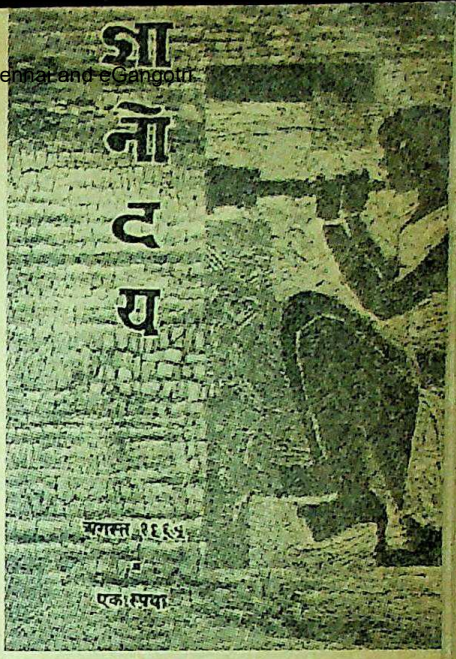

अनुक्रम

मुखपृष्ठ :
वामन ठाकरे और
सन्तुदास गुप्ता

दो प्रतिक्रियाएँ :
नवलेखन और प्रतिबद्धता :
बच्चन सिंह १४७
जीवन-बोधकी सच्ची गवाही :
सकलदीप सिंह १५०

आपके पत्र :
हजारीप्रसाद द्विवेदी, बनारसीदास चतुर्वेदी, शिवमंगल सिंह 'सुमन', रमेश-कुन्तल मेघ, कन्हैयालाल 'नन्दन', मन-मोहन 'सरल', नारायणलाल परमार, शि० ना० गौड़, हृदयेश, मदन मोहन 'तरुण', नीलम सिंह, जगदीश नारायण श्रीवास्त

...बादल : देवेन गुप्त, आनन्द कुमार आशु, मणि मधुकर ९

...! : रंगनाथ राकेश १२५

...स्तम्भ :
...चिन्तन : विश्वके समीक्षकोंके बीच : देवराज ११
...की उलझन : एक सभ्यता और 'आगका दरिया' :
देवेन्द्र इस्सर २१
...शायरी : निर्गुण नक्शे : सबुज-श्याम धरती :
कुबेरनाथ राय २९
...चर्चा : काँगड़ा कलमकी भावभूमि : किशोरीलाल वैद्य ३७
...फिल्म : लमहीमें चन्द लमहे : शैलेन्द्रनाथ श्रीवास्तव १३३
...कहानियाँ :
...आरनल्ड ग्रिस्मैन : (अनु० मनहर चौहान) ४३
...रामलाल ५५
...गिरिराज किशोर ५९
...छैलाल गुप्त ६५
...महेन्द्र भल्ला ७१
...दामोदर सदन ८३
...विनीता पंकज ९३
...
...एक बेवक्त याद : अमृतराय १०९
...और शून्य :
...धूप में क्रॉस : राजेन्द्र किशोर ९७
...रीचका अनजाना शून्य : वीरेन्द्र कुमार जैन ९९
...
...७२ वर्षका साधक और रामायणके प्रसंग :
विष्णु प्रभाकर ११७
...देश : एक भारतीयकी काली चमड़ी : पिस्तौलका
निशाना : सतोश कुमार १०५
...राहट : छायावादी कवयित्री : 'बिखरा हुआ मन' :
यतीन्द्र भटनागर १३१
...चिन्तन : कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' १४१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यमें नयी चेतना और जीवन्त विचारोंका प्रबुद्ध प्रतिनिधि

विशेषांकोंका विशेषज्ञ

ज्ञानोदय

व्यक्ति-व्यक्ति, परिवार-समाज, आधुनिक भावबोध कला-संचेतना और नवीनताकी ओरसे पुरुष-नारीके सम्बन्धोंका महत्त्वपूर्ण विश्लेषण

पूजा-दीपावलीके अवसरपर प्रस्तुत करता है :

'दाम्पत्य विशेषांक'

(नवम्बर १९६५में, साथ ही पूरक विशेषांक दिसम्बर १९६५ में)

पृष्ठ : ४०० से अधिक

दम्पति : स्त्री और पुरुष, जो विवाहित जीवनकी आधुनिक समस्याओंसे जूझ रहे हैं और समाधान और मार्गदर्शन चाहते हैं....

युवक और युवतियाँ : जो दाम्पत्य जीवनके रंगीन स्वप्नोंसे आकर्षित हैं....

उन सबके लिए—

- नयी और पुरानी दृष्टि सहित दाम्पत्यका प्र... परम्परित और बदलता अर्थ...
- प्रेम, काम, नैतिकता, त्रिकोण और पारि... सामाजिक, आर्थिक सम्बन्धोंका स्वरूप...
- विचार कि दाम्पत्य एक प्रश्न है, समस्या है, ... है या ट्रेजेडी है; या वह एक उत्तर है, ... है, सुलझन है या सुखान्तकी है...
- नारीके सभी वेश-परिवेश : कुमारी, पत्नी या ... देवदासी, विधवा...
- वात्सायनसे मेरी स्टोप्स, खजुराहोसे न्यूड ... और मनुसे हिन्दू कोडविल तक...
- अनेक युगल-चित्रों सहित रंगीन सज्जा...
- हिन्दी और अन्य सभी प्रान्तीय भाषाओंके ... लेखक जो ज्ञानोदयके अपने हैं ..
- साहित्यकी सभी विधाएँ : कहानी, डायरी ... भेंट-वार्ता, एकांकी...

- अपना विज्ञापन अभीसे भेज दी...
- अपनी प्रति अभीसे सुरक्षित करवा ली...

९, अलीपुर पार्क प्लेस, कल...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

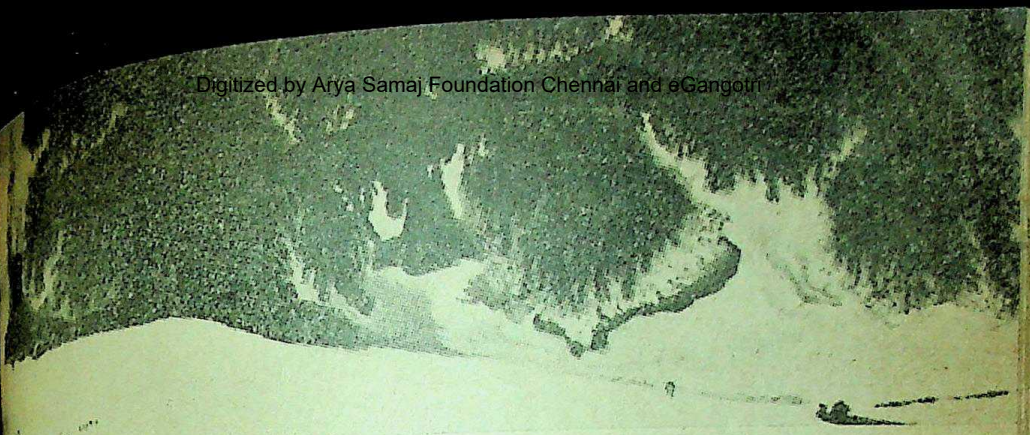

रामगिरि पर छाये बादल

और फिर से जेठ बीता....

और फिर से जेठ बीता,
और फिर बादल घिरे,
और फिर स्मृति-गगन में कौंधने बिजली लगी।

अमलतासी अंग पर,
तुमने पलाशी रंग धारे,
एक छलना ! रात बीते,
लाज से सिमटी हुई तुम ! रातरानी की कली।

भोर पहर बिखर गयी,
प्रतिबिम्बित किधर गयी,
एक किरण ! ओस - बिन्दु,
गन्धमयी निर्वसना जूही ! कितनी भली।

मौन अधरों पर मुखर हो,
आज अनजाने मिली जो,
एक रचना ! छन्द - बन्धन,
गुनगुना दूँ। कौन हो तुम ? गीत की पहली कड़ी।

— ढेवेम मुप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

आषाढ़ की स्लेट पर

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर वर्ष
एक यक्ष शापित होता रहा है
हर वर्ष
नये नीर भरे मेघ आते रहे हैं !
और हर वर्ष
समय आषाढ़ की स्लेट पर
कुटज के फूलों से
मेघदूत लिखता रहा है !
हर वर्ष

रामगिरि पर्वत के पिछवाड़ेवाली
झीलों में,
नये ताज़े उगे पुण्डरीक और कमलों को
वर्षा की मोटी बूँदें कँपाती रही हैं!
और हर वर्ष
शंखवर्णी नदियाँ
तन्वी यक्षिणी की याद दिलाती रही हैं
पर हर वर्ष
कोई कालिदास पैदा नहीं होता····

– आनन्द कुमार [illegible]

मेघ-झीलों में (सावन की)····

उमग-उमग
न्हाती हैं किरन-रम्भाएँ
मेघ-झीलों में।
देखती हैं अपनी-अपनी छवियाँ फुहारें
अनगिनत चमकीले आईने
जड़े हैं जैसलमेरी बालू के
परवतिया टीलों में·····

दिशाएँ कोई पुराना संगीत दुहराती हैं
और एक मन भटक जाता है
जंगल की कँटीली झाड़ियों के बीच–
पगडण्डियाँ भर-भर लाती हैं
जाने कितने शोर

जाने कितने रंग
अचीन्ही गाड़ियों के बीच–

ऐसे ही होता है तप-भंग
किसी विश्वामित्र का
ऐसे ही होता है रेखांकन
किसी नये चित्र का
जुड़ जाते हैं असंकलित प्रसंग
अनबूझे ही
यादों की रीलों में!
फिर-फिर
तैरती रहती हैं अप्सराएँ
अनावृत, समर्पित झीलोंमें···!

– प्रति [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवराज

विश्वके समीक्षकोंके बीच

अनुचिन्तन : डॉ० देवराजने खुले पुस्तकालयमें-से तीन आलोचकोंपर अपनी प्रतिक्रिया जाहिर की है : मैथ्यू आर्नल्ड, टी० एस० इलियट और एफ़० आर० लीविसपर। उनका कहना है : 'प्रस्तुत लेखकको यह देखकर आश्चर्य होता है कि मौजूदा हिन्दी साहित्यमें यहाँ उल्लिखित विचारोंमें-से किसी एकपर भी अधिकारपूर्ण चरचा नहीं हो सकी है।' यह शायद सही है, शायद सही नहीं है।...

विद्यार्थी-अवस्थाके अध्ययनके वर्षोंमें प्रस्तुत लेखकका यह नियम था कि वह श्रेष्ठ लेखकोंकी पुस्तकों-को पढ़ते हुए उनके, या उनमें-से, महत्त्वपूर्ण विचारोंको किसी कापीमें दर्ज कर ले। दूसरी ओरसे, महत्त्वपूर्ण कवियोंको बार-बार पढ़ते हुए, वह अकसर अधिक सुन्दर पद्योंको कण्ठस्थ कर लेता था। साहित्य-चिन्तकके रूपमें उसका स्वभाव रहा है : अधिकाधिक सुन्दर पंक्तियोंको गुन-गुनाते हुए उनकी विशेषताओंका पुनश्चिन्तन एवं विश्लेषण करनेमें प्रयत्नशील होना। प्रायः वह महत्त्वपूर्ण समीक्षकों और साहि-त्य-मीमांसकोंकी मान्यताओंको, उनकी प्रिय कृतियोंको पढ़ते हुए और अधिक प्रिय पंक्तियोंको गुनगुनाते हुए, आँकनेकी कोशिश भी करता रहा है। इधर काफ़ी वर्षोंसे यह सम्भव नहीं रहा कि वह विभिन्न ग्रन्थोंसे चयन करके नोट तैयार करे; ऐसी स्थितिमें यह ख़तरा रहता है कि कुछ बड़े विचार, एक बार दृष्टि-पथमें आकर, वहाँसे सदाके लिए ओझल हो जायें। एक और बात है। जिसे हम सचमुच बड़ा विचारक या समीक्षक कहते हैं उसकी मान्यताओंमें कहीं-न-कहीं अपेक्षाकृत स्थायी शक्तिवाला अंश होता है, जिसके प्रति प्रत्येक सजग लेखक-समीक्षकको प्रतिक्रिया करनी चाहिए। एक सतर्क चिन्तककी स्वयं-द्वारा अर्जित समग्र दृष्टिमें, किसी-न-किसी रूपमें, दूसरों-द्वारा देखे सत्योंका संगत समावेश हो सकना चाहिए। इस अभिप्रायसे बढ़ते हुए, नया लेखक सम्भवतः, पुरानी दृष्टियोंका पुनराख्यान करना जरूरी पाता है—उन्हें इस रूपमें रखना कि वे उसकी स्वयंकी दृष्टिमें संगत स्थान पा सकें। इसी उद्देश्यसे हम यहाँ कतिपय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अँगरेज़ समीक्षकोंके कुछ ज्यादा महत्वपूर्ण मन्तव्योंका उल्लेख करेंगे।

किसी भी बड़े समीक्षक-विचारकको पढ़ते हुए हम उसके कुछ गुणोंपर ख़ास तौरसे मुग्ध होते हैं : उसकी मान्यता या मान्यताओं-की किंचित् चौंकानेवाली नवीनता या मौलि-कतापर; उक्त मान्यता या मान्यताओंकी पुष्टि-में लेखककी लम्बा-चौड़ा साक्ष्य जुटानेकी योग्यतापर; और अतीत मतोंका निराकरण या परित्याग करनेमें प्रदर्शित उसके साहस व आत्मविश्वासपर। अँगरेज़ी साहित्यके इतिहासमें तीन समीक्षक विशेष प्रसिद्ध हुए हैं; यानी—मैथ्यू आर्नल्ड, टी० एस० इलियट, और एफ़० आर० लीविस। इनमें-से प्रथम दो कवि भी हैं। यहाँ हम इनके मुख्य विचारोंके प्रति अपनी प्रतिक्रिया प्रकट करेंगे।

■

आर्नल्डका कविताके बारेमें प्रसिद्ध वक्तव्य है कि : कविता जीवनकी समीक्षा है। उन्होंने इस मन्तव्यको काव्य-साहित्यकी एक या एकमात्र कसौटीके रूपमें उपस्थित किया है। कुछ दशकों पहले आर्नल्ड-कृत काव्यकी यह परिभाषा कि 'वह जीवनकी आलोचना है' बहुतायतसे उद्धृत की जाती थी; आज वह प्रायः उपेक्षित है। इस उपेक्षाका एक कारण है—आर्नल्डके अभिमतकी, उसके द्वारा पल्लवित किये रूपमें, ग़ैर-जानकारी। आर्नल्डकी यह दृष्टि उसके वर्षोंके चिन्तनका फल थी। उसके आधारपर उसने अँगरेज़ीके दर्जनों कवियोंका अवमूल्यन किया; और जर्मन-

गेटे तथा वर्ड्सवर्थकी उच्चताको घोषित की। उसके मन्तव्यका ठीक अभिप्राय क्या है?

आर्नल्डका आन्तरिक अभिप्राय कुछ इस प्रकार है : बड़े कविको एक विशिष्ट अर्थमें आधुनिक होना चाहिए, आधुनिक होनेसे अभि-क्रियाशील; उसे युगकी जटिलताओंके प्रति (और उन जटिलताओंके कारणोंके प्रति) संवेदनशील होना चाहिए। बड़े लेखकमें कुछ विशेष क्षमता (गिफ़्ट) होती है—कुछ विशिष्ट बौद्धिक व आत्मिक (स्प्रिचुअल) वातावरण-द्वारा उत्प्रेरित होनेकी; विचारोंके माहौलमें वह कुछ ख़ास प्रत्ययों या प्रत्यय-क्रमके प्रति संवेदनशील होता है और उन्हें अपनी प्रतिक्रियाओंमें निबद्ध कर पाता है इत्यादि। वस्तुतः आर्नल्ड अपनी केन्द्रस्थ धारणाका बहुत स्पष्ट प्रतिपादन नहीं कर पाता, वह उसके प्रति अनेक संकेत भर कर पाता है। 'विश्वके विधानमें एक केन्द्रीय दृष्टि', 'एक निराले दृष्टिकोणसे मानव और विश्वकी नैतिक व्याख्या', 'एक तरहकी बौद्धिक तथा नैतिक विमुक्ति (डेलीवरेन्स) की क्षमता' इत्यादि अनेक व्यंजनाओंमें अपने मन्तव्यको संकेतित करता है। अधिक स्पष्टीकरण उसकी व्यावहारिक सजगताके होता है। उसकी दृष्टिमें गेटे सबसे बड़ा कवि है, क्योंकि वह अपने पाठकोंमें विश्व-जीवनकी जटिलताको संवेदित करते हुए उनकी चेतनामें एक तरहकी स्वस्थ अन्तर्दृष्टि और भावनाका सबल उन्मेष कर पाता है। महान् लेखक हमें कल्पना-लोकमें पलायनकी प्रेरणा नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देता, वह हमें ऐसी सक्षम चेतनासे सम्पन्न करता है जो हमारे और विश्व-जीवनके यथार्थ-के बीच एक स्वास्थ्यकर सन्तुलन स्थापित कर सके। इस प्रकार आर्नल्डकी अभिमत-'आलोचना' का एक नैतिक-आध्यात्मिक पहलू भी है। अन्तिम विश्लेषणमें एक श्रेष्ठ लेखक रस या आनन्दके साथ-साथ आत्मिक शक्ति व सन्तुलनका स्रोत भी होता है। यह पूरी चीज़ वर्ड्सवर्थकी वाणीमें प्रचुरतासे आती है—किन्तु, गेटेकी तुलनामें, वर्ड्स-वर्थके काव्यमें जीवनगत जटिलताको संवेदित करनेकी योग्यता कम है। मध्यम श्रेणीके कवि भी कभी-कभी उत्प्रेरक विचारोंका आकलन कर पाते हैं; किन्तु बड़े कवियोंकी वाणीमें सर्वत्र एक तरहकी बौद्धिक विशेषता—दृष्टिगत बौद्धिकता—निरन्तर अनुस्यूत या अभिफलित रहती है। आर्नल्डने कवि बर्न्सका एक व्यंजक पद्य उद्धृत किया है जिसपर टिप्पणी करते हुए आर्नल्ड कहता है कि कवि बर्न्स सिर्फ़ एक अकेले पद्यमें एक विशेष कोटिकी बौद्धिकताका पुट दे सका है, उसकी किसी समूची कवितामें वह पुट नहीं आ पाता। तात्पर्य यह कि उच्चकोटिकी बौद्धिक चेतनता बर्न्सके काव्यका व्यापक गुण नहीं है।

हमने कहा कि आर्नल्डके अनुसार वर्ड्स-वर्थकी अपेक्षा गेटेके काव्यमें बौद्धिक जटिलता अधिक संवेदित है, किन्तु प्रथम कविमें आध्यात्मिक स्वास्थ्यकी विशेषता अधिक मात्रामें मौजूद है। साथ ही आर्नल्डने यह भी

'स्क्रूटिनी'के भूतपूर्व यशस्वी सम्पादक एफ० आर० लीविस बड़े ही निर्भय समीक्षक हैं, निर्भय यानी ईमानदार, क्योंकि बिना निर्भयताके अपनी संवेदनाके प्रति ईमानदार होना कठिन है। लीविस शुद्ध समीक्षक हैं—न कवि, न विचारक—उनका समीक्षा-कार्य विस्तृत और महत्त्वशाली है। शुरूमें लीविसने टी० एस० इलियटकी कविताका स्वागत और समर्थन किया था; उन्होंने मिल्टनका विरोध भी किया। बादमें उन्होंने इलियटको रूपवादी—यानी काव्यके रूपाकार या 'फॉर्म'में अत्यधिक रुचि लेनेवाला—कहकर उनके महत्त्वको कम किया है।

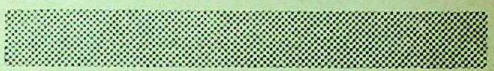

लक्ष्य किया है कि कहीं-कहीं, मुख्यतः अपने ग्रन्थ 'प्रिल्यूड'में, वर्ड्सवर्थने जिस तरह साहित्यिक चमत्कारसे विच्छिन्न करके, अपने विचारोंका नीरस अनुवाद किया है वह एकदम वांछनीय नहीं है। यह एक सूक्ष्म विभेद है, जिसे विचारोंके प्रेमी समीक्षक कभी-कभी नज़र-अन्दाज़ कर जाते हैं। श्रेष्ठ कविकी बौद्धिकता उसकी दृष्टि व चेतनाकी विशेषता होती है; वह अपनेको सिद्धान्तोंके ग्रथनमें प्रकट करे यह ज़रूरी नहीं है। वास्तवमें श्रेष्ठ काव्यका बुद्धि-तत्त्व उसमें सर्वत्र ओत-प्रोत होता है, उसे सिद्धान्त-सूत्रोंके रूपमें अलग करके दिखाना प्रायः सम्भव नहीं होता।

आर्नल्डने फ़्रान्सीसी लेखक वाल्तेयरका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक वक्तव्य उद्धृत किया है : 'किसी जातिने कवितामें नैतिक विचारों (चेतना ?) को, अँगरेज़ जातिकी अपेक्षा, अधिक शक्ति और गहराईसे, अभिव्यक्त नहीं किया। यह अँगरेज़ कवियोंकी बड़ी विशेषता है।' निश्चय ही इसका यह मतलब नहीं है कि अँगरेज़ कवियोंने स्थूल रूपसे शिक्षाप्रद रचनाएँ प्रस्तुत की हैं।

यह देखनेकी बात है कि इलियटने भी चिन्तनसे अनुप्राणित काव्य-साहित्यकी प्रशंसा की है। तथाकथित 'मैटाफ़िज़िकल' (वितर्क या विमर्शात्मक; खास ढंगसे उदात्त-दार्शनिक विचारोंका सन्निवेश करनेवाली) कविताका स्वरूप समझाते हुए उसने लिखा है कि उस कोटिका कवि विचारोंका आवेगात्मक आकलन या उपभोग करता है। किन्तु समस्त बड़े कवि विचार-तत्त्वकी दृष्टिसे डन आदि कवियों-के समरूप नहीं होते। शेक्सपीयरके नाटकोंमें सामान्यतया, और 'मैकबेथ'के 'टु बी ऑर नाट टु बी' से शुरू होनेवाले अवतरणमें विशेषतः, निबद्ध चिन्तन या चेतना 'मैटाफ़ि-ज़िकल' कोटिकी नहीं है। प्रश्न है— काव्यगत चिन्तन-तत्त्वके स्वरूपको ज़्यादा सही और सामान्य रूपमें कैसे परिभाषित किया जाये ?

काव्यका उद्देश्य हमारी चेतनाका प्रसार है—उन तथ्यों या वास्तविकताओंकी चेतना-का जिनका हमारे लिए रागात्मक महत्त्व है। दर्शन तथा विज्ञानके महत्त्वपूर्ण प्रत्यय प्रायः ऐसे तथ्यों या तथ्य-समूहोंका संकेत करते हैं, इसलिए उन प्रत्ययोंकी जानकारी हमारी चेतनाको विश्वकी अर्थपूर्ण सम्भावनाओंसे शीघ्रतापूर्वक और संक्षेपमें अवगत करा देती है। काव्यकी दृष्टिसे महत्त्व तथ्योंका नहीं, उनमें अनुस्यूत या उनके द्वारा संकेतित मूल्योंका होता है। विज्ञान और दर्शनसे उक्त मूल्योंके संकेत लेते हुए लेखक उपयुक्त चित्रोंका आकलन कर लेता है। लेखककी एक चिरन्तन समस्या है—तथ्यों या चित्रोंकी भीड़में-से उन कुछको चुन लेना जो संक्षेपमें महत्त्वपूर्ण अर्थों-का संकेत दे सकते हैं; इस प्रक्रियामें लेखकका विस्तृत विचार-पक्ष सहायक होता है। सच यह है कि साहित्यकार दर्शन या विज्ञानके किसी भी विचारको अमूर्त्त रूपमें ग्रहण न करके, उसे जीवनकी सापेक्षतामें देखता और आँकता है। जीवन और जगत्के पसारेमें किन चीज़ोंको कम या अधिक महत्त्व देना चाहिए—जीवनके किस प्रश्न या मूल्यपर कितना ज़ोर दिया जाना चाहिए—इसकी उचित अवगतिके लिए यह ज़रूरी है कि लेखकका विचार-जगत्से अच्छा परिचय हो।

■

इलियट अपनेको क्लासिसिस्ट कहता है। क्लासिकका अर्थ है महनीय यानी बड़े महत्त्व-की कृति। क्लासिकी लेखकका एक लक्षण है—व्यवस्थित या क्रमबद्ध होना। क्लासिकी लेखक अपनी अनुभूतियोंको संघटित या व्यवस्थित रूपमें प्रकट करता है। उसकी प्रत्येक रचनामें सन्निवेशित चित्र एक केन्द्रीय अर्थको पुष्ट करते हुए प्रकट करते हैं; उसकी समग्र कृतियाँ भी जीवन-सम्बन्धी एक केन्द्रीय प्रतीति या दृष्टि (विज़न) को पुष्ट करती दिखाई पड़ती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। टी० एस० इलियट व्यवस्था या क्रमबद्धता (आर्डर) का बड़ा पक्षपाती है। व्यक्तिगत कृतित्वकी व्यवस्थाको उसने एकता (युनिटी) नामसे अभिहित किया है। उसका कहना है कि बड़े लेखकोंमें, सर्जनकी विपुलताके साथ-साथ, केन्द्रगत एकता भी रहती है।

किन्तु इलियटने एक बड़े अधिक्रम या व्यवस्थाकी भी कल्पना की है। वह मानता है कि बड़ा लेखक, मौलिक होनेके साथ-साथ, अहंका विसर्जन करनेवाला यानी निर्वैयक्तिक होता है। निर्वैयक्तिकका एक अर्थ हो सकता है पूरा-पूरा प्रेषणीय; अर्थात् सहृदय पाठकों-द्वारा उपभोग्य। उच्च कोटिका कृतित्व, इस अर्थमें, अपने रचयितासे विच्छिन्न हो जाता है—वह सर्वजनभोग्य, सबकी चीज़, बन जाता है। इस प्रकारके कृतित्वसे सम्पन्न रचनाओं या कृतियोंका एक निर्वैयक्तिक, सार्वभौम क्रमबद्धता (आर्डर) है; प्रत्येक नयी कृतिको अनिवार्य रूपसे इस क्रमके अन्तर्गत जगह लेनी या बनानी पड़ती है। इलियट कहता है कि होमरसे लेकर आजतकके लेखक एक ऐसे व्यापक अधिक्रमके अंग हैं। अन्ततः प्रत्येक नये लेखकको इसके बीच अवस्थित होना होगा। इसका एक आवश्यक निष्कर्ष यह है कि प्रत्येक नये लेखकको, अनिवार्य रूप-से, अतीतके निर्णायक प्रतिमानों-द्वारा अनु-शासित होना अथवा आँका जाना पड़ेगा। इसीलिए इलियटने इस बातपर ज़ोर दिया है कि लेखकमें—उस लेखकमें जो पच्चीसवें वर्षके बाद भी लिखते रहना चाहता है—इतिहासकी चेतना रहनी चाहिए। पुराने लेखक नये लेखकके मूल्यांकनको निश्चित रूपमें प्रभावित करते हैं; वैसे ही एक बड़ा नया कलाकार पुराने लेखकोंके मूल्यांकनको प्रभावित करता है, जैसे कालिदास वाल्मीकि-के मूल्यांकनको और तॉल्स्तोय बाणभट्टके मूल्यांकनको।

बहुत बड़े लेखकमें जीवन-विवेक भी होना चाहिए। इस विवेकका अर्थ है, जीवन-मूल्योंके आनुपातिक महत्त्वकी चेतना। इलियटका विश्वास है कि इस तरहकी चेतना आध्यात्मि-कता (रिलीजन) से सम्पृक्त हुए बिना ठीक-से विकसित नहीं हो सकती। परिपक्व मूल्य-चेतना आध्यात्मिक मनोवृत्तिके अन्तर्गत ही उदित हो सकती है। इस प्रकार नये लेखककी मूल्य-चेतना आवश्यक रूपमें मनुष्यकी अतीत मूल्य-चेतनासे सम्बन्धित हो जाती है। इलियट-का विचार है कि एक बड़ा लेखक गहरे अर्थमें नैतिक और आध्यात्मिक होता है—कमसे कम अपनी दृष्टि व सहानुभूतिमें।

शुक्लजीकी भाँति इलियट भी व्यक्तिगत वैचित्र्य अथवा निजी, निराली क़िस्मकी मौलिकताका विरोधी है। महत्त्वपूर्ण काव्य-संवेदना निर्वैयक्तिक या सार्वभौम होती है।

इलियटने, अपने ढंगसे, रस-सम्प्रदायके इस मन्तव्यकी पुष्टि की है कि साहित्यमें रागा-त्मक संवेदनाके वस्तु-पक्ष, यानी विभाव-पक्ष (आब्जेक्टिव कोरिलेटिव) का विशद आक-लन रहना चाहिए। राग-पक्षको प्रभावशाली ढंगसे प्रकट करनेका एक मात्र तरीक़ा यही है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि विभाव-पक्षको विस्तार एवं सचाईके साथ अंकित या वर्णित किया जाये।

प्रस्तुत लेखक इलियटके उक्त विचारोंसे दूर तक सहमत है; किन्तु वह इलियटके इस मन्तव्यको स्वीकार नहीं करता कि लेखकको आवश्यक रूपमें किसी धर्म या सम्प्रदायकी मूल्य-चेतनाका वाहक होना चाहिए। हम मानते हैं कि प्रत्येक युगको अपने ढंगसे जीवन-विवेककी खोज करनी चाहिए। किन्तु यह ठीक है कि इस विवेककी खोजका अर्थ अतीत-की महत्त्वपूर्ण मूल्य-दृष्टियोंको—जिनका प्रकाशन विश्वकी धार्मिक-आध्यात्मिक परम्पराओंमें हुआ है—एकदम नकार देनेसे नहीं हो सकता। ज़रूरी यह है कि हम स्थायी मूल्य-वाली प्राचीन मूल्य-दृष्टियोंको नये मुहावरेमें इस ढंगसे अनूदित करें कि वे आधुनिक संवेदना-को ग्राह्य प्रतीत हों। अतीत मूल्य-दृष्टियाँ सही हो सकती हैं, भले ही उनकी पुष्टिमें उत्सृष्ट की गयीं विचार-सरणियाँ सही न हों। अपनी 'कांक्वेस्ट ऑव् हैपीनेस्' पुस्तकमें रसेलने प्रायः उन सभी सद्गुणोंके सम्पादनकी सिफ़ारिश की है जो पुराने धार्मिक साहित्यमें उपदेशित होते आये हैं—जैसे सन्तुलन, ईर्ष्याका अभाव, व्यक्तिगत हानि-लाभमें सीमित आसक्ति या अनासक्ति, इत्यादि; यद्यपि रसेलकी मूल (दार्शनिक) मान्यताएँ धार्मिक परम्पराओंसे विशेष भिन्न, भौतिकवादकी ओर उन्मुख हैं।

■

'स्क्रूटिनी'के भूतपूर्व यशस्वी सम्पादक एफ़० आर० लीविस बड़े ही निर्भय समीक्षक हैं, निर्भय यानी ईमानदार, क्योंकि, बिना निर्भय-ताके अपनी संवेदनाके प्रति ईमानदार होना कठिन है। लीविस शुद्ध समीक्षक हैं—न कवि, न विचारक। उनका समीक्षाकार्य विस्तृत और महत्त्वशाली है। शुरूमें लीविसने टी० एस० इलियटकी कविताका स्वागत और समर्थन किया था; उन्होंने मिल्टनका विरोध भी किया। बादमें उन्होंने इलियटको रूपवादी—यानी काव्यके रूपाकार या 'फ़ॉर्म'में अत्यधिक रुचि लेनेवाला—कहकर उनके महत्त्वको कम किया है। लीविस आधुनिकतावाद और नयी शैलियोंकी उद्भावनाको विशेष महत्त्व नहीं देते। वे उन समीक्षकोंमें हैं जिन्होंने नये-पुराने लेखकोंके स्वीकृत पदोंमें उलट-पुलट किया है। अपनी पुस्तक 'द ग्रेट ट्रैडिशन'में उन्होंने जेन आस्टिन, जॉर्ज इलियट, हेनरी जेम्स तथा कॉनरेडको महत्त्वशाली उपन्यासकार घोषित किया है; वहाँ वे वर्जीनिया उल्फको छोटी लेखिका क़रार देते हैं। वे फ़्रान्सीसी कथाकार फ़्लाबेयरको बड़ा लेखक नहीं मानते—प्रसिद्ध हेनरी जेम्सका भी यही मत है, जब कि एज़रा पाउण्ड और इलियटने फ्लाबेयरकी, उसके शिल्पको लेकर, अतिरिक्त प्रशंसा की है।

लीविसकी समीक्षामें साहित्यगत सचाई-पर विशेष ज़ोर दिया गया है; उनकी विशेषता इसमें है कि उन्होंने सचाईकी अवधारणाको बड़े व्यापक व जटिल रूपमें उपस्थित किया है, जिससे वह उनका निजी सत्य बनकर प्रकाशित हुआ है। स्थूल रूपमें, लीविसका कहना है कि साहित्यमें प्रत्येक भावना तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचार लेखकीय संवेदनाकी अन्तःप्रक्रियामें अन्तर्भावित होना चाहिए, न कि कथित या उल्लिखित। लेखक जीवनको उसकी जटिलता तथा गहराईमें उपस्थित करता है; इस प्रक्रिया-के बाहर वह विचारोंका उल्लेख करे यह ज़रूरी नहीं है। ऐसे उल्लेखोंकी अधिकता लेखककी कमजोरीकी द्योतक है। लेखकको पूरा-पूरा अनुभवमें रमा रहना चाहिए। अच्छा लेखक अपने अनुभव-प्रसारको मानवीय दृष्टिसे देखता है, न कि बाहरी विचारों या सिद्धान्तों-की दृष्टिसे। साहित्यका अनुशीलन करते हुए हमें उन संकेतोंपर अवधान केन्द्रित करना चाहिए जो लेखककी जीवन-सम्बन्धी पकड़ एवं उपभोगको प्रकाशित करते हैं, न कि उनपर जो केवल अवधारणाओं, यानी अनुप-युक्त विचारों,को उल्लिखित करते हैं। मतलब यह कि श्रेष्ठ साहित्य ऊपरके अर्थमें उपभोग का अभिनयका साहित्य होता है, उल्लेखोंका नहीं। इस दृष्टिसे लीविस डी० एच० लारेन्स-को विशेष महत्त्वपूर्ण कथाकार मानते हैं, उस-पर उन्होंने एक स्वतन्त्र पुस्तक लिखी है।

दूसरे, श्रेष्ठ लेखक जीवन या उसके क्षणों-को सक्रियतामें ग्रहण करता है; वह जीवनके अन्तर्विरोधोंसे नहीं घबड़ाता; वह जीवनका सरलीकरण नहीं करता। केवल हृदय नहीं, हृदय और बुद्धि दोनों। अच्छे लेखकके पात्रों-से पाठक पूरा-पूरा तादात्म्य कर पाते हैं। वे महसूस करते हैं कि चित्रित पात्र स्वयं उनका ही प्रतिरूप हैं।

तीसरे, लीविसने इस बातपर ज़ोर दिया है कि लेखककी नैतिक दृष्टि विकसित व सम्पन्न होनी चाहिए। इस दृष्टिसे उसे जॉर्ज इलियट एक बड़ी लेखिका जान पड़ती है। जीवनके व्यापारोंमें भीतरसे घुसकर लेखकको उनमें-से प्रत्येकका उचित नैतिक मूल्य या महत्त्व देख सकना चाहिए—ठीक वैसे ही जैसे एक संवेदनशील व्यक्तिको उन व्यापारोंके बीच गुज़रनेपर महसूस होता है। लीविस मानते हैं कि लेखकको जीवनके प्रति तटस्थ द्रष्टाका रुख नहीं बरतना चाहिए; उसके लिए उचित मनोभाव भोक्ताका है। लेखकको जीवनके प्रति ममता और अनुराग होना चाहिए; तभी वह उस जीवनके आन्तरिक स्पन्दनसे सुपरिचित होकर उसे वाणी-बद्ध कर सकता है। लीविस यह भी मानते प्रतीत होते हैं कि श्रेष्ठ लेखक जीवनको जीने योग्य एवं वरणीय समझते हुए अग्रसर होता है; वह जीवनका समर्थक होता है न कि उसका विद्वेषी, जैसा कि फ्लाबेयर है। एक गहरे अर्थमें लेखकमें जीवनके प्रति नैतिक प्रति-बद्धता या संसक्ति मौजूद रहती है। वह यह विश्वास लेकर चलता है कि अन्तमें जीवनकी विजय निश्चित है—उन शक्तियोंपर जो इस समय उसका अवरोध कर रही हैं। उसमें यह विश्वास भी रहता है कि वैसी ही विजय जीवन-सम्बन्धी गहरी अवगतिमें सन्निहित है; इसीलिए वह उस तरहकी अवगतिको अग्रसर करनेकी कोशिश करता है। श्रेष्ठ लेखक जीवनमें आस्था रखता है; जो आस्थावान् नहीं है वह उतनी मेहनत करके जीवनको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभिव्यक्ति देनेकी कोशिश क्यों करेगा ? और जीवनमें आस्थावान् होनेका एक अर्थ है : जीवनगत भलाई-बुराईके प्रति गम्भीर भाव रखना, यानी गहरे अर्थमें नैतिक होना। इस प्रकारकी आस्थाको लीविस एक प्रकारकी धार्मिक-आध्यात्मिक चेतनाके रूपमें देखता है। एक महत्त्वपूर्ण अर्थमें श्रेष्ठ लेखक आध्यात्मिक मनोवृत्तिका (रेलीज़स) होता है। श्रेष्ठ लेखक अपने पाठकोंको ऐसी चेतनासे संयुक्त करता है जो उनकी जिजीविषा या जीवनेच्छाको अक्षुण्ण रखते हुए उसके परिष्कारकी प्रेरणा देती है। यदि पाठक विश्व-जगत्में अपनेको सार्थक रूपमें प्रतिष्ठित महसूस करें—न कि विच्छिन्न या विस्थापित—तो समझना चाहिए कि विश्व-जीवनके प्रति लेखकका मनोभाव समुचित या भावात्मक है। लीविसकी मान्यतामें श्रेष्ठ लेखक ऐसे मनोभावसे सुसम्पन्न होते हैं। इस प्रकार लीविस इस मन्तव्यपर पहुँचते हैं कि श्रेष्ठ साहित्य मनुष्यको आन्तरिक या आत्मिक स्वास्थ्यसे सम्पन्न करने, एक विशेष अर्थमें उसे प्रकृतिस्थ एवं संयत बनानेका उपकरण होता है। कहनेकी ज़रूरत नहीं कि इस प्रकारका स्वास्थ्य जीवनकी अर्थपूर्ण अग्रगतिका साधक होता है। इस विशिष्ट अर्थमें लीविस धार्मिक-आध्यात्मिक विवेक-दृष्टिको ऊँचे साहित्यका आवश्यक उपादान मानते हैं। श्रेष्ठ साहित्यिक कृतिमें नैतिक-आध्यात्मिक मूल्य स्वभावसे अनुस्यूत रहते हैं। यहाँ दो स्थितियोंमें अन्तर करना चाहिए। श्रेष्ठ लेखक पहलेसे [illegible] मूल्योंको परम्पराओंके [illegible] ज्योंका त्यों उठाकर उल्लिखित नहीं करता। इसके विपरीत वह जीवन-स्थितियोंका विश्लेषण एवं प्रकाशन करनेकी प्रक्रिया-द्वारा ही अपनी मूल्य-दृष्टिको आकार देता चलता है। यहाँ लीविसका ईसाई-धर्मके अन्यतम समर्थक इलियटसे मतभेद है। हमारा मत लीविसके अधिक निकट है। साथ ही हमें लगता है कि उक्त दोनों लेखकोंमें उतनी भिन्नता नहीं है जितनी कि लीविसको दिखाई देती है। स्पष्ट इलियटका मत यह नहीं है कि लेखक ईसाई धर्मके सत्योंको बाहरसे जानकर उनका अपने साहित्यमें अनुवाद कर दे। किसी भी धार्मिक-आध्यात्मिक परम्पराको समझनेका अर्थ होता है उसकी सचाइयोंका भीतरसे साक्षात्कार करना। यह साक्षात्कार तभी सम्भव है जब लेखककी मूल्यों-सम्बन्धी दृष्टि और भावना परिष्कृत हों। स्वयं हमारी मान्यता यह है कि प्रत्येक अच्छे लेखकके लिए जहाँ यह ज़रूरी है कि वह अपनी धार्मिक-आध्यात्मिक परम्परासे गहरा परिचय प्राप्त करे, वहाँ आजके युगमें जब कि विभिन्न देशोंका धार्मिक एवं सांस्कृतिक एकान्त खत्म हो चुका है, यह भी आवश्यक हो गया है कि वह दूसरी परम्पराओंका भी सहानुभूतिपूर्ण [illegible] शीलन व पर्यालोचन करे, और इस प्रकार अपने जीवन-विवेकको मानव-संवेदनाके अधिकृत सार्वभौम धरातलपर प्रतिष्ठित करे।

उक्त मन्तव्यको दूसरे ढंगसे भी प्रस्तुत किया जा सकता है। मानवीय अनुभव [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संवेदनाके कई आयाम या दिशाएँ हैं; उसकी मूल्य-चेतनाके भी कई आयाम हैं। इन आयामोंसे सुपरिचित हुए बिना कोई लेखक उचित जीवन-विवेकका आकलन और प्रकाशन नहीं कर सकता।

लीविसने 'साहित्यमें विचारोंकी चर्चा' के बारेमें ज़रूरतसे कुछ ज़्यादा आशंका और भय प्रकट किया है। जहाँ हम बहुत दूर तक उनके इस आग्रहको स्वीकार करते हैं कि साहित्यमें विचार अभिनीत व उपभुक्त होकर आने चाहिए, वहाँ हम इस सम्भावनाको नकारना उचित नहीं समझते कि साहित्यमें, विशेषतः कथा-साहित्यमें, कभी-कभी बौद्धिक पात्रोंका चित्रण किया जा सकता है। ऐसे पात्रोंकी बातचीतमें कहीं-कहीं विशुद्ध विचारोंका दुहाना या उल्लेख अस्वाभाविक नहीं जान पड़ता। ज़्यादा व्यापक अर्थमें हम यह मानते हैं कि श्रेष्ठ साहित्य 'बौद्धिक नियन्त्रण' का साहित्य होता है, वह प्रेरित प्रतीतिकी अराजकतापूर्ण अभिव्यक्ति नहीं है। श्रेष्ठ साहित्य सांस्कृतिक सम्पन्नताका साहित्य भी होता है। इस दृष्टिसे हमारे विचार आर्नल्डके ज़्यादा क़रीब हैं।

लेखककी 'दृष्टि' के स्वरूपका मार्मिक विश्लेषण जॉन मिडिल्टन मरीकी प्रसिद्ध पुस्तक 'द प्रॉबलेम ऑव् स्टायल' में मिलता है। प्रत्येक लेखककी—विशेषतः महत्त्वपूर्ण लेखककी—शैली निजी-निराली होती है। लेकिन यह शैली है क्या? उक्त लेखकने शैलीकी कई परिभाषाएँ उद्धृत की हैं। फ्रान्सीसी लेखक बुफाँके अनुसार 'शैली—वह मनुष्य ही है।' स्तान्यालका कथन है कि 'किसी विचारको प्रकट करते हुए उन सब परिस्थितियोंका विवरण देना जो अभीष्ट प्रभाव उत्पन्न करनेवाली हैं—यही शैली है।' स्तान्यालका यह मन्तव्य इलियटके 'रागात्मक संवेदनाका वस्तु-पक्ष' के सिद्धान्तके समान ही है। किन्तु मिडिल्टन मरीने व्यक्तिगत शैलीको लेकर एक ज़्यादा महत्त्वकी बात कही है। प्रथमतः उसका कहना है कि शैली लेखकविशेषके दुनियाको निजी-निराले ढंगसे देखनेका तरीक़ा है। असली शैली लेखककी अनुभूति या अनुभव करनेके तरीक़ेकी आवश्यक विशेषता होती है। यह देखने-अनुभव करनेका तरीक़ा अपनेमें पूर्णतया सुसंगत होता है। इससे भी आगे बढ़कर उक्त लेखकने वैसी संगति या एकताका मार्मिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। उनका मत इस प्रकार है। विभिन्न रूपों व परिस्थितियोंमें ज़िन्दगीको देखते-अनुभव करते हुए लेखककी चेतनापर उसकी कोई खास विशेषता सशक्त रूपमें अंकित हो जाती है; यह विशेषता ही उसकी जीवन-दृष्टिको निराला व्यक्तित्व देती है। जीवन या जगत्की छोटीसे छोटी स्थितिके बारेमें लिखते हुए लेखक, किसी-न-किसी रूपमें, जीवनकी उस विशेषताको गौरव दे देता है—यानी उसके महत्त्वका संकेत कर देता है। जीवनकी वैसी विशेषता उसकी दृष्टिको एक केन्द्रीय पक्षपात व गौरवके रूपमें अनुप्राणित किये रहती है। यही विशे-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पता उसकी शैलीको किसी व्यक्तित्वसे सम्बद्ध करती है। समझदार पाठक देखेंगे कि मिडिल्टन मरीने लेखनके जिस तत्त्वको शैली नाम दिया है उसे इलिटनने 'एकता' के अन्तर्गत उल्लिखित किया है। बड़े लेखकका व्यक्तित्व एक तरहकी भावनात्मक एकता—अथवा दृष्टिकी एकता—से अनुप्राणित रहता है; यह एकता उसके समृद्ध कृतित्वको एक केन्द्रगत गौरवसे संयुक्त करती है। वही एकता उसकी शैलीमें भी प्रतिफलित होती है। प्रायः बड़े लेखक एक उपयुक्त कथानकको आधार बनाकर अपनी दृष्टिगत एकताको मूर्त अभिव्यक्ति दे देते हैं।

■

इस निबन्धमें प्रधानतया तीन विख्यात समीक्षकोंके केन्द्रगत विचारोंको, मुख्यतः क आलोचनात्मक अवगतिके परिष्कार व्यवस्थाके लिए, संकलित करनेका प्रयत्न है। आलोचित समीक्षकोंकी कक्षाके लेखक किसी भी साहित्यके इतिहासमें कभी-कभी पैदा होते हैं। निश्चय ही ऐसे कृती-मनीषियों के विचार उपेक्षणीय नहीं हो सकते। हिन्दीके पाठक व लेखक इन विचारोंकी ओर आकृष्ट महसूस करेंगे और आलोचित लेखकोंकी विचारपूर्ण कृतियोंसे साक्षात् सम्पर्क स्थापित करनेका प्रयत्न करेंगे। प्रस्तुत लेखकोंको देखकर आश्चर्य होता है कि मौजूदा हिन्दी साहित्यमें यहाँ उल्लिखित विचारोंमें-से किसी एकपर भी अधिकारपूर्ण चरचा नहीं हो सकी है।

लेखन-प्रकाशनकी अधुनातन दिशा-प्रवृत्ति और उपलब्धि-परिचायिनी मासिकी

ज्ञानपीठ पत्रिका

भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रवर्तित

● सम्पादक :
लक्ष्मीचन्द्र जैन, जगदीश

● मूल्य :
६.०० वार्षिक, ००.५५ पैसे प्रति

'ज्ञानपीठ पत्रिका' हिन्दीमें अपने प्रकार का प्रथम प्रयास है, और कदाचित् अन्य भारतीय भाषाओंको देखते हुए भी, जिसका प्रयत्न एक ऐसा अध्ययन प्रस्तुत करना है 'जो लेखक-प्रकाशक-विक्रेता-पाठक चारोंके 'अक्षर-जगत्' की गतिविधि, नयी प्रवृत्तियों, समस्याओं एवं समाधान, और विकास-उन्नतिकी दिशा-भूमिका सम्यक् परिचय दे, तथा परस्पर विचारोंके आदान-प्रदानका पथ प्रशस्त कर सके।

सम्पर्क-सूत्र : भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

— देवेन्द्र इस्सर

एक सभ्यता और 'आगका दरिया'

(कुर्रतुल-एन-हैदर)

किसी एक की उलझन : 'आगका दरिया' उपन्याससे अधिक इतिहास है और इतिहाससे अधिक एक आगे बढ़ते देशका जीवन-चरित। आईनेके टूटे हुए टुकड़ेमें एक ही चेहरेके हज़ारों प्रतिबिम्ब उभरते हैं। इसे पढ़ते यशपालके 'झूठा सच', रांगेय राघवके 'मुर्दों-का टीला', गोर्कीकी 'माँ' और शोलोखोवके 'और दोन शान्त बहता रहा' के केनवॅसकी जरूर याद आयेगी।

कुर्रतुल-एन-हैदरके उपन्यास 'आगका दरिया' को उर्दू साहित्यकी एक विशिष्ट उपलब्धि माना गया है। उपन्यासका आरम्भ आजसे ढाई हज़ार वर्ष पूर्वकी उस भारतीय सभ्यताके परिप्रेक्ष्यमें होता है जो शरावती और पाटलिपुत्रमें विकसित हुई। मुसलमानोंके आगमनसे इस सभ्यतामें नये तत्त्व दाखिल होना शुरू हुए। कुछ मुसलमान आक्रमणकारी तो भारतकी धन-दौलत लूटकर चले गये। वे बार-बार आये लेकिन इसे अपना देश न बना सके। लेकिन कुछने इसे अपना मान-स्वीकार लिया और भारतमें ही बस गये। भारतीय सभ्यता और इस्लामी सभ्यताके मिलापसे एक समन्वित सभ्यता-का विकास होना शुरू हो गया।

मुग़ल-सम्राट् अकबर, काश्मीरका शासक जैनुलाबदीन, बंगालका राजा हुसैन शाह और बीजापुर राज्यका स्वामी यूसुफ़ आदिलशाह इस नयी संस्कृतिके पोषक थे। इसके बाद अँगरेज़ोंने भारतके निरन्तर शोषणके लिए अपने साम्राज्यको सुदृढ़ किया। धर्मान्धताको हवा दी। समन्वित सभ्यताको नष्ट किया। अँगरेज़ोंने एक ऐसी सभ्यताकी नींव डालनेकी कोशिश की जो बुद्धिहीन और मुरदा थी। वे भारतीय सभ्यताके लिए सदा अजनबी रहे। लेकिन भारतका संवेदनशील और प्रबुद्ध वर्ग देशकी स्वतन्त्रता और जन-जागरणके लिए स्वतन्त्रता-संग्राममें कूद पड़ा। इस वर्गने भारतमें नये मूल्योंका संचार करनेकी भरसक कोशिश की ताकि धर्मान्धता, अन्धविश्वास और परस्पर घृणासे हटकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उदारता और [illegible] और पूर्व और पश्चिमके उच्च मूल्योंका समावेश भारतीय संस्कृतिमें हो सके। राजा राममोहन राय, स्वामी विवेकानन्द, अरविन्द घोष, रवीन्द्रनाथ टैगोर आदि इस नवजागरणके प्रवर्तकोंमें-से थे। और फिर भारतके विभाजन और देशकी स्वतन्त्रता और इससे पैदा आर्थिक, सामाजिक और भावात्मक समस्याएँ····भारतके इतिहास-ने जो-जो मंज़िलें तै की हैं, कुर्रतुल-एन-हैदरने उनमें-से कुछ उज्ज्वल मंज़िलोंको चुनकर पग-पगमें जनमते कुछ कालातीत पात्रों-द्वारा भारतीय आत्माको अभिव्यंजित करनेका प्रयत्न किया है। अँगरेज़ीकालमें भी सरल ऐशले इसी संघर्षसे उपजे मूल्योंको आत्मसात् किये हुए है।

'आगका दरिया' में भारतीय संस्कृतिके विकासका इतिहास, शरावती और पाटलिपुत्र-की सभ्यतासे आरम्भ होकर हिन्दुओं और मुसलमानोंकी समन्वित सभ्यता, अँगरेज़ी साम्राज्य और सामन्ती ह्रास, नवजागरण, राष्ट्रीय आन्दोलन, देश-विभाजन और स्व-तन्त्रता और आधुनिक भारतीय और पाकिस्तानी सामाजिक व्यवस्थाओंके विश्लेष-णात्मक विवरण तक अंकित मिलता है।

उपन्यासमें लखनऊके ऊपरके वर्गके कुछ व्यक्ति अस्थायी तौरपर इंग्लैण्ड चले जाते हैं। जिसके कारण यूरॅपकी हालत और बौद्धिक वातावरणकी झलक भी उपन्यासमें मिलती है। बुद्धिजीवी वर्गपर पश्चिमकी चेतनाका जो प्रभाव पड़ा है उसका चित्रण भी उपन्यासमें मिलता है। इस विस्तृत कैनवॅसपर इतिहासके विभिन्न मोड़ और पहलू दर्शन या घटनापूर्ण इतिहासके द्वारा बल्कि प्रभावों, भावों और स्मृतियोंके द्वारा हम तक पहुँचते हैं जिसके कारण 'आगका दरिया' में हमें जीवनकी गहमा-गहमी की अविरल गति मिलती है।

उपन्यासकी इस पृष्ठभूमिसे यह स्पष्ट है कि 'आगका दरिया' पाकिस्तानमें लिखित पर विशुद्ध भारतीय उपन्यास है। उपन्यास प्रेरणा कैसे मिली, लेखिकाने इस सम्बन्ध एक रोचक प्रसंग प्रस्तुत किया है:

"तीन-चार वर्ष हुए आपा (बीवी) मशीनपर सिलाई करते हुए यूँ ही बातों-बातों में कहा, 'अपने क़स्बेमें जाड़े आते ही हम हर सिंगारसे दुपट्टे रँगते थे और जब बसन्त आता था···।' उनकी बच्चीने जो चार वर्षकी आयुसे कराचीमें रह रही है, ऐलबिस बिस्टे की जीवनीपर-से सिर उठाकर पूछा, 'अम्माँ बसन्त क्या होती है?' इस एक वाक्य सुननेके बाद मैंने आठ सौ पृष्ठका उपन्यास लिख मारा—'अम्माँ बसन्त क्या होती है' सारी दुनिया, सारी सृष्टिका विश्लेषण कोई भी नहीं कर सकता, लेकिन तलाश किसी एक बिन्दुसे तो शुरू हो सकती है।"

—कुर्रतुल-एन-हैदर (तुकूश, दिसम्बर १९६१)

हम अपने देशकी मिट्टी, रीति-रिवाज, ऋतु-त्यौहार, चिन्तन-दर्शनसे कितना दूर हो चुके हैं, 'आगका दरिया' उसे किसे स्मरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करनेका प्रयत्न है—एक रूढ़िवादी अन्ध-विश्वासी सुधारकके दृष्टिकोणसे नहीं बल्कि एक नवचेतनायुक्त संवेदनशील लेखकके दृष्टि-कोणसे :

"समयके पैटर्नमें तलअत जहाँ बैठी थी, वहीं तलअत उसी पैटर्नमें एक जगह और मौजूद थी और दोनों बिन्दुओंके बीच वर्षोंका फ़ासला था और फ़ासलेपर इनसान सिर्फ़ आगे-की तरफ़ चल सकता है। आगे और आगे। पीछे जाना सम्भव नहीं था। यद्यपि हज़ारों लम्हतें अनगिनत टुकड़ोंमें बिखरीं, अनगिनत सतहोंपर मौजूद थीं जैसे आईनेके टूटे हुए टुकड़ोंमें एक ही चेहरेके विभिन्न प्रतिबिम्ब नज़र आते हैं।"

"चट्टानें, एवलांश, ग्लेशियरज़, तूफ़ान, झरने—इन सबमें-से गुज़रता हुआ सुरकी सतहोंपर बहता वह (नीलाम्बर) गौरीशंकर-की ऊँची चोटीपर चढ़कर बादलोंमें छुप गया। घुटनोंपर घुटनोंके बल बैठ गया और उसने देखा—चारों ओर शून्य है और उसमें हमेशा-की तरह वह अकेला मौजूद है। संसारका आदि और चिरन्तन इनसान, थका हुआ, पराजित, प्रसन्न, आशापूर्ण इनसान जो ईश्वर-से है और जो ईश्वर है।"

'आगका दरिया' की बौद्धिक पृष्ठभूमिका इन उद्धरणोंसे भली-भाँति हो जाता है। इस बौद्धिक वातावरणमें गौतम, हरिशंकर, रूपा और कमालकी तसवीरें उभरती हैं जो भारतीय संस्कृतिके प्रारम्भिक कालसे शुरू

मैं एक अंग्रेज़ अफ़सरकी लड़की हूँ। अगर मैं ख़ुदाका ख़ासुलख़ास (विशिष्ट) बन्दा होती—मीरा, मुक्ताबाई, सेण्ट सोफ़िया तो मेरे जिस्मपर ज़ख्मोंके निशान नज़र आते। मेरा लिबादा (चोग़ा) मेरे तक्कदुस (पवित्रता) के ख़ूनसे सुर्ख़ होता। मेरे हाथोंमें कीलें गड़ी होतीं। मेरे सिरके गिर्द नूरका हाला (ज्योति-चक्र) होता। मुझे विषके प्याले और साँपके पिटारे भिजवाये गये होते। लेकिन मैं महज़ चम्पा—चम्पा—अहमद हूँ।"

होकर नये भारतके रचनाशील कालमें पूरा होता है।

कुर्रतुल-एन-हैदरने अनावश्यक विवरणों और घटनाओंके बजाय महत्त्वपूर्ण धाराओंका अंकन एक ऐसे परिदृश्यमें किया है जिससे हम हर युगके महत्त्वपूर्ण मूल्यों और उसके मूलभूत तत्त्वों और भावभूमिकी चेतना प्राप्त कर सकते हैं। यह चेतना जब एक युगसे दूसरे युगमें प्रविष्ट होती है तो इस समन्वयसे जो मूल्य और नैतिक पक्ष जन्म लेते हैं उसका अध्ययन हर युगमें बदलते हुए लेकिन इन्हीं पात्रों-द्वारा इस उपन्यासमें मिलता है :

"मनुष्य चिराग़की तरह बुझ जाता है। महज़ घटनाओं और संवेदनाओंकी अनवरतता क़ायम रहती है।"

उपन्यासमें अधिकतर 'चेतना-प्रवाह'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को शैलीका प्रयोग किया गया है जो कि मनुष्यकी बौद्धिक और भावात्मक गहराई प्रस्तुत करनेमें प्रायः सफल सिद्ध होती है। प्रभाव और स्मृतियाँ हमारे अवचेतनमें वर्षों तक ज़िन्दा रहती हैं। समस्त जातिके सांस्कृतिक प्रतीक सामूहिक अवचेतनसे निःसृत होते हैं और उसीके द्वारा हम तक पहुँचते हैं। इनमें स्पष्टतया कोई सम्पर्क, संगठन या सम्बन्ध दिखाई नहीं देता लेकिन वे व्यक्तित्वके संगठन और उसकी व्यवस्थाके अनुकूल परस्पर गहरा सम्बन्ध रखते हैं। लेखक बग़ैर किसी बाह्य, तार्किक या सचेतन प्रयत्नके उसे इस प्रकार प्रस्तुत करता है जैसे कि वे प्रकट हुई हैं। 'आगका दरिया' में इसी मनोविश्लेषणात्मक शैलीका प्रयोग किया गया है जिसमें आन्तरिक स्वयमालापकी बड़ी प्रभावोत्पादक शैली मिलती है।

'चेतना-प्रवाह' एक कला-शैली ही नहीं है और न ही केवल एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है। आधुनिक चिन्तनके अन्तर्गत वर्तमान और भविष्य, एकके बाद दूसरे आनेवाले काल नहीं बल्कि समयकी निरन्तर गतिको प्रस्तुत करते हैं। बर्गसाँने समयके इस पैटर्न और काव्यके एक-दूसरेमें समावेश करनेपर पर्याप्त प्रकाश डाला है। वर्जीनिया वुल्फ़की भाँति कुर्रतुल-एन-हैदर भी बर्गसाँके सिद्धान्तसे प्रभावित हुई हैं। लेकिन वर्जीनिया वुल्फ़की तरह उन्होंने 'चेतना-प्रवाह' की तकनीकका प्रयोग वैयक्तिक स्तरपर न कर उसे सांस्कृतिक छोरसे जोड़ दिया है। इस प्रकार लेखिकाने व्यक्तित्व अनुभूतियोंके द्वारा एक आन्तरिक क्रिया और सम्पूर्ण प्रतिबिम्बको प्रस्तुत करने का यत्न किया है।

गौतम, हरिशंकर, चम्पा, कमाल अपने युगकी सभ्यताके मूल्यों और मूलभूत तत्वोंको अपने भीतर समोते हुए इतिहासकी धारासे साथ बहते चले आ रहे हैं। एक व्यक्तिके विभिन्न प्रतिबिम्ब जो एक ही व्यक्तित्वके कई पहलू हैं। वह व्यक्तित्व जिसमें कई व्य अव्यवस्था हुई लेकिन हर बार उसका एकी करण होता चला गया क्योंकि इसकी मू प्रेरणाएँ और प्रवृत्तियाँ एक हैं केवल वाह रूप बदल गया है।

उपन्यासके प्रारम्भिक भागमें हमारे सं गौतमसे होती है जो उस कालकी संस्कृ और समाज, बौद्धिक वातावरण और मूल्यों प्रतीक है जब मनुष्य और प्रकृति एकरंस थे गौतम उस कालके तात्त्विक जीवनका नि निधि है और समयके साथ-साथ बहते बन नये भारतकी रचनात्मक शक्तिका प्रतीक बन जाता है। प्रारम्भिक कालमें मनु मनमें जीवन-मृत्यु, कर्म, पुरुषार्थ, ई अनीश्वर, सृष्टि और प्रकृतिके सम्बन्धमें मूलभूत प्रश्न उठते हैं—विभिन्न दर्श भगवद्गीता, पुराण, उपनिषद् आदिने इ प्रश्नोंपर जिस प्रकार चिन्तन किया गया है गौतम और हरिशंकरका बौद्धिक जीवन इन निर्मित होता है। यह एक ऐसा वातावरण था जिसके चिन्तन, कथन और कर्ममें धर्म नहीं था। उनका मन प्यार, भक्ति,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और निःस्वार्थ भावनासे भरपूर था। उनके व्यक्तित्वमें अन्तर्द्वन्द्व नहीं था। सन्तुलन था। अव्यवस्था नहीं थी, संगठन था। लेकिन गौतम अनुभवकी आगमें तपकर प्रौढ़ता प्राप्त करता है। वह चम्पकके प्रेममें आत्माके दंभारसे निकलकर दिलकी दुनियाकी सैर करता है :

"उस एक रात मैं सहसा बड़ा हो गया था। उसने मनकी दुनियाकी सैर की थी। उसने मायाका अनुभव किया था।"

अनुभवका यह विस्तार उसके व्यक्तित्वको चिन्तन और सृजनके नये आयामसे अवगत कराता है जो जीवनके सच्चे मूल्योंकी सुरक्षाके लिए तलवारका सहारा भी ले सकता है।

कमालके चरित्रमें हम भारतीय और इस्लामी संस्कृतिका समन्वय देखते हैं। भारतके विभाजनके कारण इन समन्वित तत्त्वोंको छिन्न-भिन्न करनेका प्रयत्न किया जाता है जिसके कारण उसका व्यक्तित्व भी छिन्न-भिन्न होता है। भारतका विभाजन गौतम और हरिशंकरकी इतनी बड़ी ट्रेजडी नहीं जितनी कि कमाल और चम्पाकी। कमाल पाकिस्तान हिजरत करनेके लिए विवश हो जाता है और चम्पा भारतमें रहकर भी 'निर्वासित' हो जाती है। हालात और सिद्धान्तोंके संघर्षमें व्यक्तित्वके टूटनेकी पीड़ा ही कमालकी ट्रेजडी है और समस्त पीड़ा—गौतम, हरिशंकर और कमालकी ट्रेजडीकी पीड़ा, भारतीय संस्कृतिके संकटकी पीड़ा और मूल्योंके विनाशकी पीड़ा—हर तरफ़से एकत्रित होकर चम्पा अहमदकी आत्मामें प्रविष्ट हो जाती है। चिन्तनशील तरुणी चम्पा अहमद आकांक्षाओंके दम घुटकर मर जानेपर मौन प्रतिकार बनकर रह जाती है :

"मैं एक औसत दर्जेकी लड़की हूँ। अगर मैं खुदाका ख़ासुलख़ास (विशिष्ट) बन्दा होती—मीरा, मुक्ताबाई, सेण्ट सोफ़िया तो मेरे जिस्मपर ज़ख्मोंके निशान नज़र आते। मेरा लिबादा (चोग़ा) मेरे तक़द्दुस (पवित्रता) के ख़ूनसे सुर्ख़ होता। मेरे हाथोंमें कीलें गड़ी होतीं। मेरे सिरके गिर्द नूरका हाला (ज्योतिचक्र) होता। मुझे विषके प्याले और साँपके पिटारे भिजवाये गये होते। लेकिन मैं महज़ चम्पा—चम्पा अहमद—हूँ। मेरे ज़ख्म किसीको नज़र नहीं आ सकते। क्योंकि मेरे तमाशाई भी मेरी तरह ज़ख्मी हैं। वे कमज़ोर और फ़ानी (नश्वर) इन्सान हैं। चश्मे-बीना (दृष्टि) नहीं रखते।"

मुरादाबादमें अपने चच्चाके पास एक पुराने ख़स्ता मकानमें ज़िन्दगी बसर करनेवाली चम्पा अहमद उन मूल्योंका प्रतीक है जो संकटके इस युगमें धीरे-धीरे नष्ट हो रहे हैं। चम्पा अहमद तमाम दूसरे पात्रोंके मुक़ाबिलेमें जीवनके सकारात्मक दृष्टिकोणकी अभिव्यक्तिके कारण 'आगका दरिया' का सबसे अधिक सजीव और सम्पूर्ण पात्र है।

क्या यह सही नहीं कि प्रत्येक युगमें कुछ व्यक्ति ही ऐसे होते हैं जो उसके सांस्कृतिक मूल्योंके वारिस होते हैं और नये मूल्योंको आत्मसात् करके मार्गप्रदर्शन करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधारण लोग तो केवल संस्थागत विचारोंके दास होते हैं। उनमें सक्रियता और आत्म-विश्वास नहीं होता जो इन व्यक्तियोंमें होता है। उपन्यासमें वर्णित भक्तिकालमें ऐसी ही विभूतियों—कबीर, जायसी और नानकका वर्णन मिलता है।

और जब ये मूल्य जनतामें प्रविष्ट हो जाते हैं तो गौतमका घाव धोनेवाली नन्दबाला, मर-मिटनेवाली यूरेशियन लड़की मारिया टिरेज़ा, सरल ऐशलेकी रखेल निरीह शनीला, प्यार और त्यागकी मूर्तियाँ मशक़्क़तकी ज़िन्दगी बसर करनेवाले अबुल मन्सूर और उसकी पत्नी आमना, ड्राइवर क़दूर और उसकी बीवी कुमरनके पात्रोंमें ढल जाती हैं या उन सन्थाल आदिवासियोंमें नज़र आती हैं जो आधुनिक सभ्यताके सतहीपनसे दूर प्रकृतिकी गोदमें जीवनकी ताज़गी और महानताको पेश करते हैं।

'आगका दरिया' के पात्र ईश्वर और सृष्टि, व्यक्ति और राज्य, नियतिवाद, सत् और असत्, अहम् और ब्रह्म, और संकल्प-स्वातन्त्र्य, धर्म और विज्ञान, बुद्धि और अन्तर्पेक्षा, चेतन और अचेतनके संघर्ष और सामंजस्यसे पैदा विषाद और आनन्दको व्यक्त करते हैं। गौतम, नीलाम्बर और हरिशंकर (वैदिक काल) आली अबुल मन्सूर और चम्पा (इस्लामी काल) एक ही व्यक्तित्वके विभिन्न रूप हैं। अँगरेज़ोंके आगमनके साथ उसका एक रूप सरल ऐशलेके चरित्रमें व्यक्त होता है जो अँगरेज़ी साम्राज्यके विरोधी मूल्योंका प्रतीक है।

तीसरे कालमें लखनऊ और यूरोपके इन पात्रोंका जीवन लेखिकाके पहले उपन्यासों और रवैयेकी ही, किसी सीमा तक, प्रतिच्छाया है। व्यक्ति और समाजके बारेमें जो दृष्टिकोण उपन्यासमें मिलता है वह इस कालमें बिखर-सा गया है और उपन्यासके प्रारम्भिक और अन्तके भागोंसे अनुरूपता नहीं रखता और न ही सभ्यताके विकासकी अनवरत गतिको प्रकट करता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस कालके पात्र भी मानव मूल्योंके प्रवक्ता हैं, और वे सामन्ती समाजके ह्रासकी पृष्ठभूमिके नये मानसके प्रतिनिधि हैं लेकिन वे वास्तवमें नयी चेतनाका एक पक्ष प्रस्तुत करते हैं। वह पक्ष जो इस कालमें दूसरे सब पक्षोंपर हावी नज़र आता था जिसके कारण आर्थिक और राजनीतिक अधिक है और सांस्कृतिक कम। नयी चेतनाके निर्माणमें विज्ञान, दर्शन, धर्म, मनोविज्ञान और दूसरे मानविक शास्त्र क्रियाशील रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इसका प्रभाव इन पात्रोंपर जैसे पड़ा ही नहीं—सिवाय मार्क्सवादके लेकिन यह भारतीय इतिहासके सांस्कृतिक विकासके अनुरूप नहीं था। क्योंकि उस साहित्यपर यह प्रवृत्ति हावी थी, इसलिए लेखिका, इस क्षेत्रसे बाहर जो बौद्धिक चिन्तन धारा थी उससे अनभिज्ञ न होते हुए भी उपन्यासमें उसका समावेश न कर सकीं। शायद यह प्रवृत्ति भारतमें इतिहासकी दृष्टिसे उचित हो लेकिन संस्कृति और मूल्यकी दृष्टिसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं नहीं। इन भागोंमें भावों और विचारों की पुनरावृत्तिका कारण यही है कि पात्र वास्तविक छोरसे हटकर भँवरमें फँस गये हैं। पात्र अपने आपको दोहराते हैं और उनका विकास रुक जाता है, जबतक कि वह भारत वापस नहीं आ जाते। ये भाग उपन्यासके कमजोर भाग हैं। भारतकी भूमिपर आकर वे इन समस्याओंका सामना करते हैं जिनका उपचार मार्क्सवादके अन्तर्गत सम्भव नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृतिकी विकासात्मक क्रियामें पश्चिमके नये चिन्तनको समावेश करके अपनी वैयक्तिक संवेदनाके साथ प्रस्तुत करनेमें है।

उपन्यासके सुन्दर विवरणोंमें दिलकुशाके बागोंमें कमाल, चम्पा और दूसरे लोगोंका चाँदनी रातमें पिकनिक मनानेका दृश्य है। उपन्यासका सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण और कलात्मक तौरपर सुन्दर दृश्य नवाब कुदसिया महल और चम्पाके बीच एक काल्पनिक संवाद है जिसमें अतीतके बहुत-से चिह्न उभरते हैं। निर्मलाकी मृत्युमें मानव-जीवनकी ट्रेजडी—इन सबमें सृजनका सौन्दर्य और विषाद सिमटकर आ जाता है।

कुर्रतुल-एन-हैदरने उपन्यासको उसकी प्रचलित तकनीक और बौद्धिक स्तरसे उठाकर एक महत्त्वपूर्ण कला-विधा बना दिया है जिसमें लेखिकाके दृष्टिकोणका सुन्दर समावेश मिलता है। इस उपन्यासमें सशक्त वर्णन-कौशल, प्राकृतिक दृश्योंका सुन्दर चित्रण, भावों और संवेदनाओंकी प्रामाणिक अभिव्यंजना, नाटकीय प्रभाव, चरित्रोंकी प्रौढ़ता, पर्यवेक्षणशक्ति, अनुभव और कल्पनाकी परिपक्वता और ऐतिहासिक चेतनाका प्रमाण मिलता है। उपन्यासके प्रत्येक पात्रमें जीवनकी धड़कन महसूस होती है। चरित्र, घटनाएँ, कथोपकथन, प्रभाव और स्मृतियाँ उपन्यासमें एक दूसरेमें इस प्रकार घुल-मिल जाती हैं कि जीवनके सम्पूर्ण रूपके अस्तित्वका आभास होता है। सम्पूर्ण उपन्यास एक पेचीदा और रंगारंग जीवनका कलात्मक चित्रण है जिसमें भारतीय आत्माकी आवाज़ सुनाई देती है। 'आगका दरिया' ने प्रमाणित कर दिया है कि उपन्यासमें पाठककी रुचि अधिक गम्भीर और बौद्धिक हो सकती है। इस उपन्यासको पढ़कर हेनरी जेम्सका कथन स्मरण हो आता है कि जैसे चित्र यथार्थ होता है वैसे ही एक उपन्यासका भी ऐतिहासिक होना आवश्यक है। उपन्यासकारकी महानता इस सत्यमें है कि वह दार्शनिक और चित्रकार दोनोंका वारिस है। ■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवन अपने लिए
और सबके लिए'

यह वाक्य—
जीवन को सफल
प्रतिष्ठा
और
समस्त विश्व की
शान्ति,
प्रगति तथा
सम्पन्नता
के हित में.....

गनौ कमर्सियल कम्पनी
हैसियन तथा बारदाना
के
प्रमुख व्यापारी तथा वितरक
६, क्लाइव रो,
कलकत्ता-१
फ़ोन : २२-५३६६
२२-८१३९

ज्ञानोदय : अगस्त १९६१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

— कुबेरनाथ राय

निर्गुण नक्शे : सबुज-श्याम धरती

सापेक्ष डायरी : कुबेरनाथ रायकी क़लमसे आप ख़ूब परिचित हैं। हर पंक्ति एक सन्दर्भ, हर परिच्छेद एक एल्बम और हर लेख जीवनकी विविधाओंका संग्रह। देखेंगे कौन किसके सापेक्ष है।

...-पहल जिस नक़्शेका दर्शन ... वह था गाँवका बन्दोबस्ती ...। काकाने एक दिन ...कर दिखाया था—'देख ... गाँवका नक़्शा है। बिल-...पक्का। लाट साहब भी ...काट नहीं सकते हैं।' मैंने ..., आड़ी-तिरछी वक्र रेखाओं-...जाल और एक सफ़ेद काग़ज़। ...विचित्र-सा लगा। हरे-हरे ..., खपरैलके मकानों, इमली और नीमके पेड़ों, चबूतरों और ...ताइयोंसे भरा मेरा गाँव इस ...-व्यूहके अन्दर कहाँ है? ... कल्पना कोई अर्थ पानेमें ...मर्थ रही। फिर एक बार ... चैत्रमें आम फलकर लद ... और काकाने नक़्शेके बलपर 'अज़ाब्ता, दीवानी, अदालत, ...कूक तक़सीम' आदि उर्दू-शब्दों-का उछल-उछल कर उच्चारण करते हुए मेरे दो पेड़ोंको अपने हिस्सेमें सिद्ध कर दिया तब पिताजीको इस उर्दू-लिपि-अंकित रेखा-व्यूहके प्रति नत-मस्तक पाकर मुझे भी इसकी महिमा स्वीकार करनी पड़ी। पर इसके प्रताप एवं इसकी सत्ताके प्रति नतमस्तक होते हुए भी मनमें यह बात धँस नहीं पायी कि ज़मीन हरी है, आकाश नीला है, खपरैल लाल हैं, तो इन सबका इस नक़्शेके निर्गुण-चित्रमें लोप कैसे हो गया। मेरा मन उन दिनों सगुण भाव-बोध खोजता था। कवि शेलीकी तरह बहती हवाके झोंकोंसे बाज़ी लगाकर कभी भी नहीं दौड़ा और न वर्ड्सवर्थकी तरह आत्माको सौन्दर्य एवं भयके संवेदनोंका पान करानेके लिए आधी रातमें सुनसान झीलोंके वक्षपर नौका-विहार किया। पर अपने आँगनमें घुसती वर्षाकी जलधाराको लाठियोंसे पीटकर दण्डित कर चुका हूँ। मदोन्मत्त औरंगज़ेबकी तरह छोटे-मोटे पौधोंको कई बार निरपराध सज़ा दे चुका हूँ। उन्हें ध्वंस करके गर्वसे मेरा सीना तन जाता था, मूँछें न होनेका अफ़सोस हो जाता था। निसर्गके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रगाढ़ सगुण भावबोधको ग्रहण करने वाली मेरी कल्पना उन दिनों भला उर्दू-लिपि एवं काली रेखाओंके निर्गुण विस्तारको क्यों स्वीकार करती ? भले ही नक़्शा सरकार बहादुरके घरसे आया हो, जैसा कि काकाका दावा था। भले ही नक़्शेको सरकार बहादुरने छुट्टीके दिनोंमें अपने हाथसे स्वयं बनाया हो। तो इससे क्या ?

बादमें हिन्दुस्तानका मानचित्र देखा जिसमें उत्तर प्रदेशको हरे रंगसे और बंगालको लाल रंगसे दिखाया गया था। तब उस प्रथम या द्वितीय श्रेणीके टाटपर बैठनेवाले नम्बर 'एक' विद्यार्थीके मनमें, जिसे मैं उन दिनों 'मैं' कहकर पुकारता था, यह धारणा बनी थी कि बंगालकी मिट्टी लाल है—पके झाँवाकी तरह। कई वर्ष बाद बंगदेशकी 'सुजलाम् सुफलाम् शस्यश्यामलाम्' का साकार दर्शन हुआ। पर आश्चर्य तब हुआ जब बंगाली बन्धुओंके मुँहसे 'सोनार बाँगला' ही सुना—'शस्यश्यामलाम्'—मातरम् की चर्चा और उसके 'फ़ासिस्ट कवि' (अन्तर्राष्ट्रीयतावादके मूढ़ मोहान्धकारसे ग्रस्त बुद्धिवादियोंकी कायर शब्दावलीमें, जिन्हें लोहिया 'भेंड-विप्लवी' कहते हैं), दोनोंको कलकत्तेमें घोर उपेक्षाका पात्र पाया। 'सोनार बाँगला' दूसरे प्रकारका झूठ नक़्शा है जिसके मोहको निर्गुण रवीन्द्रनाथ भी अस्वीकार नहीं कर सके। सबुज-नील धरती और धूसर नील आकाशका यह घोर अपमान है। पर मनुष्यके अन्दर शायद स्वर्णका आकर्षण अधिक प्रबल है, इसीसे वह 'एल्डोरेडो' की कल्पनामें लीन रहता है। धरती सदैव हरी रहती है। जीवन सदैव प्रवहमान रहता है। पर मनुष्य इस हरीतिमा और इस प्रवाहको भूलकर उसपर अपने अनेक पूर्वग्रहों, अपने संस्कारों और बुद्धिके निर्गुण नक़्शोंकी मुहर मारता रहता है। पर इस अतल गोताखोरीके बावजूद भी उसके हाथ नामपर सड़ी मछली हाथ लगती है।

■

मनुष्यने भाव-विकासकी लम्बी प्रक्रियामें संस्कार एवं पूर्वाग्रहोंकी रेखाओं-द्वारा जिन निर्गुण नक़्शे तैयार किये हैं उन सबका निर्माता या तो निसर्ग है, नहीं तो मनुष्य। सम्पूर्ण वाङ्मय, समूचा साहित्य निसर्ग एवं मनुष्यसे सम्बन्धित मानचित्रोंका 'एटलस'-मात्र है। इन दोमें भी निसर्ग ही मनुष्यका प्रथम परिचय होता है, द्वितीय तो स्वचिन्तनके साथ उत्पन्न होता है, जो उसके बादवाले स्तरोंमें विधा है।

निसर्ग साहित्यसे मेरा प्रथम परिचय 'बेसिक हिन्दी रीडर' से हुआ। हम लोग पहले शिशुकक्षाओंमें चौथी श्रेणी तक की बेजान, मरी वर्णसंकर भाषा (जो भाषा नहीं ऐसी 'सौदाबाज़ी' थी जो पट नहीं सकेगी न कभी पट सकेगी) पढ़ाई जाती थी : हिन्दुस्तानी। उसमें ऐसी भद्दी पंक्तियाँ थीं :

"उछले-कूदें दोहे गायें
आओ, आओ सैर को जायें।"

यहाँ 'कविता'के स्थान 'दोहे' हिन्दुस्तानी शैलीकी बदतमीज़ी है। इसके बाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेसिक रीडर। इसमें भाषाकी भंगी एवं अभिव्यक्तिकी शक्ति एकदम भिन्न थी।

"नन्हीं-नन्हीं जल की बूदें जब लेकर
आता है बादल।
बेला की नव पंखड़ियों में मोती है
बिखराता बादल।।"

इसमें, भाषाकी सरलता एवं सुरुचि सभी इन पंक्तियोंमें वर्तमान है। आगे है :

"कुछ सिहर-सिहर
कुछ मचल-मचल
चम्पे की नव कलियाँ
खिल उठतीं नव जल से सुरभित होकर
झर-झर झरते तुषार के कण
इन्द्रधनुष सी रेखा बन कर
आभामय हो उठता उपवन।"

इनकी कवितामें 'नव' और 'उपवन' यही दो शब्द थे जो बोल-चालमें नहीं आते। काश्मीरी-संस्कृतिके सड़े गुलाबोंको भले ही एतराज़ हो पर चौथी-पाँचवीं श्रेणीके छात्रोंको बोल-चाल-की भाषासे ज़रा अधिक अभिव्यक्तिपूर्ण भाषा-की ओर ले जानेका प्रयत्न कौन-सा पाप है? क्या विडम्बना है कि हिन्दीमें एम० ए० तक-की किताबें एवं प्रधान मन्त्रीके द्वारा दिये गये लेख-नीतिपर भाषण भी लोग बोल-चालकी भाषामें ही सुनना चाहते हैं अन्यथा 'शीर्ष-कल्प, बूढ़ा'''नीतिज्ञ' फाँसीका ही हुक्म दे देगा।

बेसिक रीडरमें पढ़ी निसर्ग कविताका मर्म-बोध बड़ी सरलतासे मिल गया। उन दिनों मैं बेलाकी नव पंखुड़ियोंमें मोती बिखेरनेका दृश्य नित्य देखा करता था। परियोंकी शाहज़ादीका आकर मोतियोंसे आँचल भरना एक सत्य कथा थी। काकाका नक़्शा झूठा था, पर कविता जो कुछ बड़े होनेपर पढ़ी झूठी नहीं ज्ञात हुई। दिलके मौसम बदलते रहते हैं। बचपनमें हृदयकी जल-वायु ऐसी थी कि उसमें मनुष्यकी भाषा बोलनेवाले पेड़-पौधे जन्म लेते थे और अनोखे-अनदेखे रतन हृदय-समुद्रसे मथकर मैं प्रतिदिन निकाला करता था। उसी पुस्तकमें एक जगह था :

"है गुलाब फूलों का राजा, लिली फूल
की रानी
चम्पा है फूलों की देवी, रूप सुगन्ध
सुहानी।
किन्तु कमल सबका सरताज
वह सब फूलों का महराज।...."

ऐसा ही कुछ एक कोरस-गान था जिसमें

रस और सौन्दर्यके प्रति मेरी शत्रुता, जैसे-जैसे मनुष्यके साथ परिचय प्रगाढ़ होता गया, वैसे-वैसे बढ़ती गयी। मैं आज मानने-सा लगा हूँ कि यह रस और यह सौन्दर्य हमारे पिताओं, हमारे सन्तों और हमारे कवियों-द्वारा गढ़ी गयी लौह-शृंखलाएँ हैं। बिना इसे सम्पूर्णतः छिन्न-भिन्न किये आत्म-त्राण नहीं। हो सकता है कि मेरे इस क्रोधके मूलमें अपनी हीनताका बोध, अपना आत्म-तिरस्कार ही हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुष्पोंके सम्पर्कसे, एवं [illegible] के उदारताके प्रतीक, सरोवरके वीतराग संन्यासी, मत्तगजराज एवं मरालों-द्वारा दिया जानेवाला प्रियाको रति-उपहार एवं इस भारतवर्षके सौभाग्यके प्रतीक कमलकी राज-वन्दना थी। तब मेरा मन राजा, रानी, परियों और मोतियाँ चुननेवाली शाहज़ादीको खूब पहचानता था। उसे अपनी हीनता एवं दरिद्रताका बोध तब नहीं था। आज मेरा मन कितना कंगाल हो गया है। मोती और आभाको कल्पना मानकर अपनेको सन्तोष दे लेता हूँ। राजा-रानीका तो प्रश्न ही नहीं उठता। राजा-रानी एवं शाहज़ादियोंकी वंश-परम्परा अपने मायावी रूपको बदलकर आज भी वर्तमान है। पर कभी मैं उनका मित्र था तो आज उनका समूल विनाश, निर्वंश करनेका स्वप्न देखता हूँ। रस और सौन्दर्यके प्रति मेरी शत्रुता, जैसे-जैसे मनुष्यके साथ परिचय प्रगाढ़ होता गया, वैसे-वैसे बढ़ती गयी। मैं आज मानने-सा लगा हूँ कि यह रस और यह सौन्दर्य हमारे पिताओं, हमारे सन्तों और हमारे कवियों-द्वारा गढ़ी गयी लौह-शृंखलाएँ हैं। बिना इसे सम्पूर्णतः छिन्न-भिन्न किये आत्म-त्राण नहीं। हो सकता है कि मेरे इस क्रोधके मूलमें अपनी हीनताका बोध, अपना आत्म-तिरस्कार ही हो।

मनुष्यके साथ परिचयकी बढ़ती प्रगाढ़ता-ने केवल मेरे मोतियों और मेरे आभामय उपवनको मुझसे छीन लिया और रस तथा सौन्दर्यके ख़ूनका प्यासा बना दिया, बल्कि निसर्ग भी धीरे-धीरे मेरे लिए मरने-सा लगा। मेरे कहनेका तात्पर्य यह नहीं कि मुझे इसके पश्चात्ताप है कि अब बन्दरोंपर ढेले नहीं फेंकता, कोकिलोंको बागमें नहीं खिलाता अथवा मूर्खोंकी तरह गरजते बादलोंको कुत्सित गाली नहीं देता। नहीं, यह तो मानव बोधकी प्रारम्भिक भोथर-अनगढ़ अवस्था थी। इसे तो जाना ही था। पर इसके बाद इस सुरुचिपूर्ण सौन्दर्य-बोधमें धीरे-धीरे परिष्कार होना चाहिए था, पर वैसा कुछ हुआ नहीं। वह रस-बोध वहींपर मर गया और मुझमें 'ड्रिल' ने मनके अन्दर लोहेके प्राचीर खड़े कर दिये। ये प्राचीर कभी-कभी विघटित भी हैं अवश्य, पर इनकी दरारसे हरीतिमा नहीं उग सकती है। युग-बोध वीरताका उन्मेष देता है, अन्तरमें लोहा भर देता है। पर जीवनके सारे क्षणोंमें कवच बाँधे वीरताके रहना बड़ी दयनीयता है। यह भयकी दुर्निवार चिरन्तन स्थितिका बोध है। भयकी ही चिरन्तन उपासना है।

▣

वैदिक-युग हमसे इतना दूर और विच्छिन्न कि उसकी किसी भाव-धाराका आंशिक भी बोध नहीं हो पाता। इस वैदिक-युगमें लि उपासनाके चिह्न मिलते हैं। पर उनकी चर्चा करना इसलिए व्यर्थ है कि उसकी सम्पू अनुभूति करनेमें आजका मन असमर्थ है। इसके बाद महाकाव्योंसे छायावाद तक एक अविच्छिन्न धारा बहती है जो विकासमान होते हुए भी परिवर्त्तनवादी या क्रान्तिवादी अत्यल्प मात्रामें है। साहित्यमें निर्गुण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वच्छन्दता रूमानी-युगके आगमनके साथ, अर्थात् छायावादसे, चलती है। इसके पूर्व निसर्ग मनुष्यके उल्लास अथवा व्यथाकी सजावट या पृष्ठभूमिके रूपमें मिलता है, स्वतन्त्र विषयके रूपमें नहीं। रूमानी आन्दोलनके नेता वर्ड्सवर्थ तथा शेलीने निसर्गको सजीव एवं दार्शनिक सत्ताके रूपमें देखा। बदलती ऋतुओं और लता-तरुओं तथा धरती-आकाश-के निरन्तर प्रवाहशील-परिवर्त्तनशील दृश्योंके पीछे एक नित्य सत्ताका आभास या कमसे कम सजीव सत्ताका आभास, निसर्ग-बोधकी नयी दिशा थी। यह एक प्रकारका नक़्शा था जिसे दर्शनकी चिन्तन-पद्धतिमें अनुशासित बुद्धिने सजीव धरती और निसर्गपर आरोपित किया। फिर भी यह नक़्शा निर्गुण नहीं। सुन्दर रंगोंको पोंछकर इसे बिलकुल दार्शनिक ख़ाकेके रूपमें उपस्थित नहीं किया गया है। भावुकता और अनुभूतिकी बनावटमें कहीं-कहीं चिन्तनके रंगीन डोरे डाले गये है।

यह क्रम बहुत दिन तक चला। पर धीरे-धीरे इसकी बौद्धिक 'अपील' चुक गयी और केवल रूमानी आकर्षण रह गया। दूसरी ओर चित्रकलामें प्रभाववादका फ़ैशन बढ़ा, जीवन-की यथातथ्यताको महत्त्व मिला और यह रूमानी आकर्षण हलके मद्धिम संवेगोंका आकर्षण मात्र रह गया एवं इसके पीछे एक दार्शनिक पद्धति एवं बौद्धिक धरातलका लोप होता गया। निसर्ग फिर संवेदनोंका आश्रय मात्र हो गया। २०वीं शतीमें निसर्ग-बोधकी रूमानी दिशाकी चरम परिणति प्रतिबिम्ब-वादी कवितामें होती है :

"यह नीली तरुपाँति, तुम
यह नील शैवाल, तुम
तुम नीली काई, तुम हो बनफ़शा के फूल
बैंगनी, उस पर बहता बातास तुम हो
एक बच्चा—इतना ऊँचा—कन्धेपर
तुम हो।"
—(ई० पाउण्ड)

"मथो इस समुद्र को
झकझोरो ये तुकीले देवदार
(हरे समुद्र—हरे देवदार)
नहला दो ये हरे देवदार
हमारी इन शिलाओं पर
उड़ेलो ये सारी हरीतिमा हम पर
हरे पत्तों के सरोवरों से ढक दो
हमारे तन को, मन को।"
—(एच० डी०)

आधुनिकतम निसर्ग-कविता प्रतिबिम्ब-वाद और प्रतीकवादके मेलसे उत्पन्न टेकनीकमें लिखी जाती है और उसकी पृष्ठभूमि अब मात्र संवेदन आश्रित न रहकर चिन्तन-प्रधान हो गयी है। डी० एच० लारेन्स और बादमें डायलन टामसकी कविताओंमें जैविक (बॉय-लाजिकल) अद्वैतवाद एवं जैविक दर्शनके साथ-साथ एक नयी आध्यात्मिक अनुभूतिको मूर्त्त किया गया है। यह नयी आध्यात्मिकता डी० एच० लारेन्समें अनगढ़ और सादी है। पर डायलन टामस तक आते-आते परिष्कृत और विदग्ध बन जाती है। डी० एच० लारेन्स-के देवदारु टस्कनी (एक प्रान्त) के आदिम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निवासियोंकी मुक्त आत्मा एवं मुक्त जीवन-प्रवाहके प्रतीक हैं। सर्प कविका बन्धु है, जो बिछुड़ गया है। मनुष्यके संस्कारोंने, जिन्हें उसने संस्कृति-सभ्यताके नामपर विकसित किया है, धरतीके अन्य जीवोंसे उसे वियुक्त कर दिया है। ये संस्कार हमें भय और अविश्वास तथा हिंसाका पाठ पढ़ाते हैं, इसीसे सर्प-जैसा सीधा-सादा एवं शानदार जीव हमसे भय और अविश्वास करता है। यह संस्कार-जाल हमारी स्वस्थ एवं मुक्त-वृत्तियोंको जकड़कर बाँधे है और हमारा बढ़ाव इस संस्कारोंके लौह-कवचमें हमारे बद्ध हो जानेके कारण रुक गया है। हम आदमी नहीं, साँचेमें कसे जीवमात्र हैं। प्रकृतिसे वियुक्तिकी कथा वर्ड्सवर्थ भी कहता है पर उसका दृष्टिकोण अद्वैतवादी एवं कम या बेश श्रद्धालु है। यहाँपर डी० एच० लारेन्सके चिन्तनमें श्रद्धा नहीं विवेक है, अद्वैतवाद नहीं नया जीवशास्त्र है, जिसने जैविक स्तरपर एक नये अद्वैतवादका प्रतिपादन किया है। आधुनिक निसर्ग कविता जैविक सत्योंका विस्तार है। डायलन टामसकी आधा दर्जन चुनी रचनाएँ (उसकी हर प्रकारकी सर्वोत्तम एक दर्जन रचनाओंमें-से) इसी जीवशास्त्रीय अद्वैत तथा नयी आध्यात्मिकताको व्यंजित करती हैं। वह शक्ति जो 'हरित अग्निवाही तार' के रूपमें पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों एवं निर्झर-पाषाण आदिमें व्याप्त है कविके अन्दरसे होकर गयी है। वह कविके अन्दर भी व्याप्त है और समस्त जीव-जगत्से कविको संयुक्त करती है। ('द फ़ोर्स दैट रन्स थ्रू द ग्रीन फ़्यूज'....'।) 'हरी आग' को डायलन टामसने जीवन-उष्मा या जीवनी शक्तिके अर्थमें प्रयुक्त किया है। उसकी एक अन्य कविताका भावार्थ यह है : "जिस रोटीको मैं तोड़ता हूँ, जिस शराबको मैं पीता हूँ, वे गेहूँ और अँगूरमें निहित थे। दिनमें मनुष्य और रातमें हवाने फ़सलको काटकर धरती पर गिरा दिया (१)। वह मांस जो अँगूरकी लतापर (फलके रूपमें) लटका था, वह रोटी जो गेहूँमें निहित थी, दोनोंके अन्दर एक साँस, एक जीवन वर्त्तमान था। मनुष्यने इस सूर्य (प्राणका प्रतीक) को और इस साँसको काटकर टुकड़े-टुकड़े कर दिया (२)। जिस मांसको तुम तोड़ते हो, जिस रक्तको तुम धमनियोंको शून्य करके बहाते हो, वह वास्तवमें एक दिन गेहूँ और अँगूर था जिनकी पैदाइश वासनाके रस (शुक्र) से ही हुई थी।....तथ्य तो यह है कि तुम मेरी रोटी (मांस) खा रहे हो और मेरी ही शराब (रक्त) का पान कर रहे हो (३)।"

टामसकी यह कविता अत्यन्त उलझन भरी कविताओंमें-से एक है जिसमें ईसाई रहस्यवाद, जीवशास्त्रीय अद्वैत तथा कविकी रचना-प्रक्रियाका दर्शन तीनों संयुक्त रूपसे बद्ध हैं। पर इस अर्थत्रिपुटीका सम्पूर्ण भार अन्तिम पंक्तिपर ही आकर केन्द्रित हो गया है। इसमें 'तुम' शब्द पाठकके लिए आया है और 'मैं' शब्द कवि तथा 'जेसस' दोनोंके लिए। मसीहाका तन रोटी और रक्त, शराब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानकर पुजारी (प्रीस्ट) दीक्षाकालमें (और अन्तिम कालमें भी, मृत्युशय्यापर) प्रत्येक ईसाईके साथ सह-पान करता है। कवि भी मसीहाकी तरह है। 'क्रास' रचना-प्रक्रियाका प्रतीक है। क्रासपर झूलती कवि-आत्माके द्वारा सर्जित कविता ही रोटी और शराब है। पाठक इसीका आस्वादन करता है। इन दो अर्थोंके अतिरिक्त वायॅलाजिकल अद्वैत भावकी एक तीसरी परत भी है। समस्त सृष्टि मूलतः एक जैविक चक्र है जिसमें एक स्थितिसे दूसरी स्थितिमें हम चलते जाते हैं, पर यह भौतिक तत्त्व (मैटर) कभी नष्ट नहीं होता है। इस तरह जो आज हमारा मांस-रक्त है कल हमारे मरनेपर विविध जैविक प्रक्रियाओंके अनन्तर वनस्पति बनेगा। जीवन-उष्मा ('हरी आग') और भौतिक-तत्त्व ये दो अमर हैं। शेष क्षण-क्षण परिवर्तनशील। अतः हो सकता है, कल हमीं रोटी और शराबमें परिवर्तित हो जायें और कोई अनागत 'तुम' उसका आस्वादन प्राप्त करें।

■

निसर्गके बोधसे मनुष्यने जिन बौद्धिक नक़्शों-का निर्माण किया है, उनमें-से कुछकी चर्चा हमने की है। निसर्ग एक अनन्त सम्भावनाओं-वाली सत्ता है। नक़्शे आख़िर नक़्शे ही हैं। वे उसे बाँध नहीं सकते। वे उसका सगुण भाव-बोध देनेमें असमर्थ हैं। किसी वर्ड्सवर्थ या डार्विन या लारेन्सके नाम निसर्गका पट्टा नहीं लिखा जा सकता। वयनामाकी हेंकड़ी भरना बेकार है। श्यामल दूर्वा जो पुराकालमें विष्णुके साथ प्रकट हुई ("....क्षीरसागर-संभूते..." : दूर्वा-मन्त्र) सनातन है। फिर भी मनुष्यका अपराजेय मन, विश्वकी जितनी असीम सत्ताएँ हैं, उनकी सीमा बाँधनेमें सदैव रत रहता है।

■ ■

Phone : 25-2227

Universal Fire & General Insurance Company Limited

Transact :

Fire, Motor, Marine, Personal Accident, Fidelity, Guarantee, Burglary and all other forms of Miscellaneous Insurance Business.

Universal Insurance Building,

Sir P.M. Road Bombay-1.

Chairman & Managing Director :

P.U. PATEL, B.A., B.COM. (Lond).

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय ज्ञानपीठ
द्वारा प्रकाशित
दो महत्त्वपूर्ण पठनीय कृतियाँ

• **चीड़ोंपर चाँदनी** : निर्मल वर्मा

बीसवीं शतीके स्मारक-चिह्नोंकी खोजमें एक भारतीय लेखकके ये संस्मरण अपने-आपको खोजनेका प्रयास हैं—अपनेसे बाहर निकलकर स्वयं अपनेको गवाह बनानेका प्रयत्न। स्मृतिके ये अंक निर्मल वर्मा युरॅप प्रवासकी लम्बी अवधिमें समय-समयपर सँजोते रहे हैं।

मूल्य ३.००

• **सिकन्दरनामा** : सलमा सिद्दीक़ी

सिकन्दरनामा यानी सिकन्दरका हाल। यह इतिहासका सिकन्दर नहीं, यह आजका सिकन्दर है। जिस तरह हर मिट्टी-पानीकी अपनी-अपनी पौध होती है जो अपने रंग और सुगन्धमें लाजवाब होती है, उसी तरह यह सिकन्दर है—हिन्दुस्तानकी धरतीका एक हँसोड़ क्यारीका लुभावना फूल। बहुत दिलचस्प दास्तान है इस सिकन्दरकी।

मूल्य ३.००

भारतीय ज्ञानपीठ

प्रधान कार्यालय : ९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता–२७
प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी–५
विक्रय केन्द्र : ३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली–६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—किशोरीलाल वैद्य

काँगड़ा क़लमकी भावभूमि

कला-चर्चा : काँगड़ा क़लमपर ज्ञानोदयमें आपने कुछ लेख पढ़े हैं। यह लेख उस 'क़लम' की एक विवेचना है—कि इस युगकी दृष्टिमें वे चित्र फीके-फीके क्यों नजर आते हैं? कि इतना समर्थ आन्दोलन आज महज़ ऐतिहासिक क्यों हो गया है?

काँगड़ा क़लमके चित्रोंके अवलोकनपर मन दो विभिन्न स्थितियोंके बीच रहता है। एक ओर ये चित्र अपने समग्र रूपमें सौन्दर्य-बोधको सजग करते हैं, दूसरी ओर आजका आदमी, जो अपने वातावरणके प्रति सचेत है, इन चित्रोंकी भावभूमिको अधिक सम्पन्न नहीं पाता। यही कारण है कि जहाँ वह चित्रकला-की प्राचीन उपलब्धियोंमें रुचि रखता है, वहाँ वह उन्हें सहृदय आत्मसात् नहीं कर पाता। आधुनिक कला अपनी असंगतियों और विसंगतियोंके बावजूद भी उसका ध्यान आकृष्ट रखती है। इसमें वह अपने जीवनका प्रतिफलन पाकर उसे रुचिकर देखता है, भले ही इसमें वह अपने सौन्दर्य-बोधके प्रति अधिक उद्बोधन न पाये। कला दर्शन-सापेक्ष है और उसका प्रभाव और प्रतिक्रिया व्यक्तिगत। जो लोग कालिदास, शेक्सपियर व 'अजन्ता' को आखिरी बात समझते हैं, उनसे उन लोगोंकी कलात्मक सूझ-बूझ परिमार्जित व निखरी हुई कही जायेगी जो उसे सरुचि तो देखते हैं लेकिन उससे अधिक रुचिकर देखनेकी लालसा अन्तरतममें सँजोये रहते हैं।

नयी परिस्थितियोंके सन्दर्भमें नये भाव-बोधकी व्युत्पत्तिसे भावभूमिपर जमे संस्कार जब अपदस्थ होने लगते हैं, तो कुछ परिवर्त्तनकी प्रक्रियामें ढल जाते हैं और कुछ मिट जाते हैं। अजन्ता भारतीय चित्रकलाकी प्राथमिक थाती बनी रही है। किन्हीं संस्कारजन्य कारणोंसे जन-सामान्य-द्वारा अजन्ता भी उपेक्षित रही। लेकिन कलाकारोंकी दृष्टिसे अजन्ताके भित्ति-चित्र एकदम ओझल नहीं हो सके और जाने-अजानेमें वे अपनी इस विचित्र थातीके प्रति किसी-न-किसी रूपमें ऋणी रहे। अजन्ताके चित्रोंमें रुचिके दो कारण हैं—उक्त चित्रोंकी कालातीत अक्षुण्णता और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेखाओं व रंगोंका लयात्मक सामंजस्य। यही दो कारण हैं कि वे कलाकार-मनकी भावभूमि-पर अपने इम्प्रिण्ट्स छोड़ती रहीं। इस प्रकार आज तक 'अजन्ता' भारतीय चित्रकलाकी एक जीवन्त थाती बनी रही और इसी एहसासपर चित्रकला विभिन्न कालमें किसी-न-किसी रूपमें जीवित तो रही पर नये आयाम न ढूँढ़ पायी। इसका एकमात्र ऐतिहासिक कारण था। कलाके राज्य-प्रश्रयमें पनपनेके कारण उसका कलेवर निखरता रहा, आत्मा सुप्त होती गयी।

किन्हीं दृष्टिसे मुग़ल और राजपूत-शैली अजन्ता-शैली ही के समयानुकूल हुए परिवर्त्तनों-के रूप हैं लेकिन उनकी भावभूमि अधिक व्याप्त और सम्पन्न नहीं। मुग़ल व राजपूत-शैलीमें रंग और रेखाओंका विधान इस हद तक उज्ज्वल और सूक्ष्म होता गया कि आज उसपर आश्चर्य होने लगता है। मुग़ल और राजपूत-शैलीके बाद विकास-क्रममें हमें बसौली, काँगड़ा और गढ़वाली शैलियोंका परिचय मिलता है। मुग़लकालमें यद्यपि भारतीय चित्रकलाको संरक्षण प्राप्त हुआ लेकिन विषय-वस्तुकी दृष्टिसे उस समयकी कला-कृतियाँ भी सामन्तशाहीकी किन्हीं रंगीनियों-की अनुकृति मात्र रह गयीं। औरंगज़ेबको संगीत, चित्रकला आदिसे स्वाभाविक चिढ़ होनेके कारण उस समय कलाके विकासका प्रश्न ही नहीं उठा। किसी भी कलाके उन्मूलनके लिए कोई एक राज्यशाही एक बहुत ही छोटी अवधि है, इसलिए औरंगज़ेबके राज्यकालमें भी भारतीय चित्रकलाके [illegible] बिखरे पड़े रहे और समय-समयपर अंकुरित प्रस्फुटित होते रहे। नादिरशाहके आक्रम भारतीय चित्रकलापर भी करारी चोट थी। फिर मुग़लकालीन चितेरे संरक्षण खोजमें इधर-उधर भागे। अठारहवीं अनेक चितेरे पहाड़ी रियासतोंमें निकट जहाँ अधिकांशतः हिन्दू राजा थे और वे बाह्य आक्रमणोंसे बहुत हद तक सुरक्षित पहाड़ी रियासतों--काँगड़ा घाटीमें तीरा, सुजानपुर और नूरपुरके होकर ये कलाकार हिमाचल प्रदेशमें मण्डी, सुकेत, चम्बा, अर्की आदि बस गये जहाँ हिन्दू शासकोंने उनके सराहा।

चम्बाके रूमाल इसी चित्रकलाकी में एक उपलब्धि है। मण्डीमें-से कुछ एक कलाकार कुल्लू पहुँचे। आज सभी स्थानोंपर इस चित्रकला आन्दोलन सम्बद्ध अनेक स्मृतियाँ बिखरी पड़ी हैं। स्मृतियोंमें कुछ-एक भित्ति-चित्र* आज

---

* ऐसे चित्रोंमें चम्बामें स्थित रंगमहलके चित्र विशेष रूपसे उल्लेखनीय हैं। इन भित्ति-चित्रों रामायण और कृष्ण-लीलाके चित्र हैं। रंगमहल भीतरी दीवारोंपर अठारहवीं शतीके अन्तिम ये चित्र बनने शुरू हुए थे जो उन्नीसवीं आरम्भमें राजा चरतसिंहके शासन-कालमें हुए। हाल ही में ये भित्ति-चित्र दिल्लीके हालयमें किन्हीं रासायनिक प्रक्रियासे पहुँचाये चुके हैं। इन चित्रोंमें सबसे बड़ा पैनल लम्बा और पाँच फुट चौड़ा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपलब्ध हैं। काँगड़ा घाटीसे निकल कर काँगड़ा क़लमके चित्र देशके अनेक संग्रहालयों में संकलित पड़े हैं जिन्हें राष्ट्रकी धरोहर माना जा सकता है।

कलाकारोंको सबसे बड़ा आश्रय महाराजा संसारचन्दने दिया। यहाँ इन चितेरोंको अपने रूप-गोपणके लिए अपने कमाल दिखानेका अच्छा अवसर मिला। लेकिन यहाँ भी यह जन-जीवन तक नहीं उतरने पायी। फिर भी जन-जीवनसे विहीन चित्रकला यहाँ दो आयामोंमें पनपी और अपने विकास-क्रममें एक उत्कृष्ट स्थितिपर लुप्तप्राय हो गयी। काँगड़ा घाटी तथा अन्य समीपस्थ राज्योंमें रहे हुए चितेरोंकी कुशल कूँचियाँ प्रकृति-चित्रणका सूक्ष्म अंकन करती रही हैं। पहाड़ी हिन्दू राजाओंके प्रश्रयसे अनुगृहीत और कृपासे अभिभूत चितेरे काँगड़ा घाटीकी भूमिकामें अपने आश्रयदाताओंके मनोरंजन हेतु गहरे चटले रंगोंमें बारीक रेखाओंकी सूक्ष्मता और लयात्मक सामंजस्यसे नारी-सौन्दर्यका चित्रण करते रहे। नारी-सौन्दर्यमें नख-शिखको उनकी कूँचियाँ कुरेदती रहीं, निखारती रहीं। सौन्दर्य-के दृष्टिकोण व मानदण्ड बदलते रहे हैं। लेकिन कुल मिलाकर ये आकृतियाँ सौन्दर्यके मान-चोंचको आज भी गुदगुदाती हैं। तत्-कालीन स्त्रियोंमें भौंहें लम्बी और पतली हैं, आँखें लम्बी और थकी-थकी-सी मालूम देती हैं। चेहरोंकी बनावट अण्डाकार है। काँगड़ा क़लममें उज्ज्वलता और रोमांस निहित है, रेखाओंके प्रवाहने आकृतियोंको सजीव बना

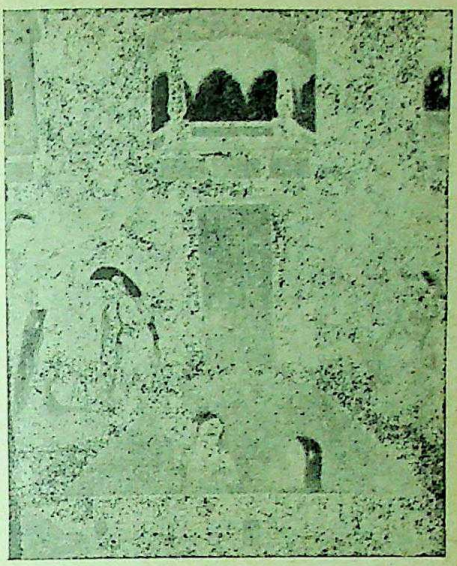

यह है स्नानगृह–काँगड़ा क़लमका प्रिय विषय। इसे स्वीमिंग पूल और टाप-लेसकी दृष्टिसे देखिए···कोई टिप्पणी ?

दिया है। लम्बे और मुड़े हुए नयन, कोमल और शुण्डाकार उँगलियाँ पहली ही नज़रमें देखनेवालेका ध्यान आकर्षित करती हैं। इन चित्रोंको देखकर कलाकारकी कूँचीकी कल्पना की जा सकती है। एकदम आश्चर्यजनक, उज्ज्वल और आभापूर्ण रंगोंके विधानमें कूँची-की अद्भुत सुगमता व कौशलका परिचय मिलता है।

राजाओंके धर्मनिष्ठ होनेके कारण क़लम-के विषय-वस्तुका स्रोत राज-वैभवके अतिरिक्त कुछ धार्मिक ग्रन्थ भी रहे। यूँ सबसे बड़ा स्रोत जयदेवलिखित गीतगोविन्द है और अन्य हैं—रामायण, महाभारत और पुराण। उन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जादुई बाँसुरी और कान्हा--काँगड़ा क़लम की एक दृष्टि। इसे देखिए चा-चा-चा की दृष्टि से···कुछ कहना चाहेंगे ?

दिनोंका कलाकार आजकी तरह स्वच्छन्द नहीं था। उसकी अपनी मनोभावनाएँ व मनः-स्थितियाँ उसकी कलाकृतियोंकी विषय-वस्तु नहीं बन सकीं। फिर भी औरंगज़ेबके सताये हुए कलाकारोंको राजस्थान तथा पहाड़ी राज्योंमें पर्याप्त प्रश्रय मिलनेपर काँगड़ा क़लम जीवित रही और एक विशेष दिशामें खूब पनपी भी। महाभारतमें-से प्रेमके धरातलपर उन्होंने कृष्ण-लीलाके बहुत-से चित्र बनाये। मानव-मनमें प्रेम न जाने कबसे रिसता रहा है, सम्भवतः किसी सभ्यता और संस्कृतिके अभ्युदयसे पहले भी। लेकिन किसी विशिष्ट सामाजिक व शासनिक ढाँचेमें कलाकी गतिपर भी प्रतिबन्ध रहे हैं, उसका प्रारूप निश्चित हुआ है। यही बात थी कि कलाके अनन्य साधक काँगड़ा क़लमके चितेरोंने मुक्त रूपसे प्रमानुभूतिकी परछाइयोंका अंकन न कर कृष्ण-लीला और राज-वैभवका कलेवर दि यह काल-विशेषके अनुरूप था। राजा संसार चन्दका नाम काँगड़ा-चित्रकलाके इतिहास सर्वदा ही स्थान बनाये रखेगा। उनके काल कालमें विषय-वस्तुकी दृष्टिसे वे कलाकृति सम्पन्न न होनेपर भी अपनी शैलीकी चर काष्ठा तक पहुँची हैं। हमारे इतिहासके प्रेक्ष्यमें कलाकी यह विडम्बना रही कि कला कार अपनी निजी अनुभूतियोंसे हटकर अ आश्रयदाताओंका मन बहलाते रहे।

कृष्ण-लीलाके अनेक पहलुओंको चित्रि करते हुए कलाकारने उसके रूमानी पहलू भावातिरेकसे व्यक्त किया। इस अभिव्यक्ति सौन्दर्य-चेतनाके लिए अत्यधिक उद्बोधनकी आराध्यदेव कृष्ण और उसके कार्यकलाप सम्बन्धी कल्पना सहज मानवीय अनुभूतिसे सिमट गयी। उन्होंने कृष्ण और गोपियोंके निखारा। कृष्ण और गोपियोंके प्रेमालापको खुलकर व्यक्त किया। उनके चित्रोंमें ने गलबहियोंमें मुखरित हुआ, आँखें आँखोंसे मिलीं। कृष्णकी इन हरकतोंका एहसास सखियोंको हुआ और वे एक दूसरेसे कानाफूसी करती हुई दिखाई दीं। कहीं कृष्ण स्नान करती हुई गोपियोंके कपड़े चुराकर पेड़पर चढ़ गया, कहीं कृष्णकी बाँसुरी गाँवकी गोपियोंके लिए दुर्निवार आकर्षण बनी। समस्त वातावरण रागात्मक-सा लगता है।

कृष्णकी जादुई बाँसुरीकी एक झलक इस चित्रमें उपलब्ध है। इस चित्रमें कृष्णके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिक्त जो दो ग्वाला और ग्वालिनी अंकित किये गये हैं, उनकी परम्परागत वेष-भूषामें चित्रकारने काँगड़ा घाटीके स्थानीय गद्दी व गुज्जरी-से कुछ पहनावेका समावेश किया है। ग्वालेको पहनायी गयी टोपी और ग्वालिनीका ओढ़ा हुआ कम्बल विशिष्टतः गद्दियोंका है।

रोमांसकी अभिव्यक्तिमें काँगड़ा क़लमके चित्रोंमें तीन चित्र विशेषतः गण्य हैं। ये चित्र भारतीय चित्रकलाके इतिहासमें उक्त विषय-वस्तुसे सबसे अधिक समृद्ध अभिव्यक्ति हैं। एक चित्रमें दो प्रेमियोंके मन-मुटाव व भावोद्रेकको चित्रित किया गया है। यह चित्र १७६५ में कुलूमें बना। एक अन्य चित्र 'ग्रीष्ममें स्नान' है। १८०० में काँगड़ामें बना यह चित्र सम्भवतः काँगड़ा क़लमकी अन्यतम उपलब्धि कही जा सकती है। इस चित्रमें दो स्त्रियाँ तालाबमें हैं। एक स्त्रीने दूसरीको आग्रहपूर्वक पकड़ लिया है। यह स्त्री जिस अन्य स्त्रीसे बात करती हुई दिखाई पड़ रही है, वह संकोचवश सिकुड़ी हुई नज़र आती है। तीसरा चित्र नूरपुरमें १८१० में बना। इसमें प्रेमाकुलताका सुन्दर चित्रण है।

आजकी परिस्थितियोंमें तथा नये सम्यक् सन्दर्भमें काँगड़ा क़लम चित्रकलाके क्षेत्रमें केवल ऐतिहासिक स्थान रखती है। भारतीय चित्रकलामें उसका यह स्थान महत्त्वपूर्ण है। अमृत शेरगिलके चित्रोंसे काँगड़ा क़लमका ताल-मेल बिठाना मुश्किल है लेकिन उसका दृष्टिकोण भारतीय चित्रकला और उसकी विकासगत उपलब्धियोंको समझने-बूझनेमें स्वस्थ रूपसे सहायक है। अमृत शेरगिलने कहा था; "कमसे कम एक कारणसे मुझे प्रसन्नता है कि मैंने कलाकी शिक्षा यूरॅपमें पायी। इसने ही मुझे अवसर दिया कि मैं अजन्ता, मुग़ल और राजपूत चित्रकारीको समझ सकूँ और इन्हें पसन्द कर सकूँ—तुच्छ सतही कारणोंसे नहीं, न इसलिए कि वे इतिवृत्तात्मक हैं, बल्कि सही कारणोंसे। होता यह है कि अधिकांश भारतीय इनके समझनेका ढोंग तो करते हैं लेकिन वास्तवमें वह ग़लत ढंगसे समझी जाती हैं।" उक्त कथनसे यह स्पष्ट है कि कलाके प्रति केवल श्रद्धा ही पर्याप्त नहीं। श्रद्धाके आधारपर कला नये आयाम नहीं ढूँढ़ सकती, नयी ऊँचाइयोंको नहीं छू सकती। यही कारण है कि काँगड़ा क़लममें एक भी ऐसा चित्र नहीं मिलेगा जिसमें सामान्य व श्रमजीवी जीवनकी किन्हीं सूक्ष्म अनुभूतियोंको छुआ गया हो। अमृत शेरगिल यह भली भाँति पहचान पायी थी और यही कारण है कि उसकी क़लमने उस भारतका अंकन किया जिसे यहाँका हर भारतीय जानता है, पहचानता है और जीता है। काँगड़ा क़लममें उसकी रुचि रही है लेकिन वह उसका अन्धानुकरण नहीं कर पायी। सामान्य जीवनके उन अनुभूत क्षणोंका उसने अंकन किया जिसने कलाके लिए नये आयामोंको निर्दिष्ट किया। उसकी कृतियोंमें काँगड़ा क़लम-सा रिद्म है लेकिन उसके विषय सामान्य जीवनसे उद्बोधित हैं। जहाँ काँगड़ा क़लममें उज्ज्वल व गहरे रंग किन्हीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राज्यशाही रंगीनियोंको उभारनेमें सक्षम है, वहाँ अमृत शेरगिल अपने सामान्य विषयोंके लिए रंगोंके चुनावमें विशिष्ट रूपसे सचेत है—मिट्टी और मटियाले रंगमें विभिन्न साये बख़ूबी विषयकी उपयुक्तताको हृदयंगम बनाते हैं। एक विशिष्ट रूपमें कहीं-कहीं विषयकी समानता भी नज़र आती है। दुलहिनका केश-प्रसाधन अमृत शेरगिलकी एक कलाकृति है। नायिकाका शृंगार-प्रसाधन काँगड़ा क़लममें भी उपलब्ध है। लयात्मक रेखांकन दोनों ही चित्रोंमें नज़र आता है लेकिन काँगड़ा कलममें नायिकाका सूक्ष्मतासे चित्रण तो हुआ है, लेकिन लोक-जीवन अभिव्यक्त नहीं हुआ। जहाँ अमृत शेरगिलके चित्र इस दृष्टिसे बहुत सम्पन्न हैं, वहाँ काँगड़ा क़लमके चित्रोंमें लोक-जीवनका चित्रण न पाकर आजका व्यक्ति ऊबने लगता है। पहाड़ी नारियोंका अमृत शेरगिलके कुछ चित्रोंमें अंकन है और वे नारियाँ तो स्पष्टतः काँगड़ा घाटीकी लोक वेश-भूषामें नज़र आती हैं लेकिन काँगड़ा क़लमके चितेरे परिस्थितिवश लोक-जीवनको स्पर्श न कर पाये। आज काँगड़ा क़लमपर एक नज़र डालनेपर वे चित्र अधूरे-से लगते हैं। क़लमकी बारीकी और रंग-विधानके उजाले में भी वे हृदयकी केवल ऊपरी सतहोंको ही छू पाते हैं, मनकी अतल गहराइयोंमें पैठते हुए-से नहीं लगते। प्रजातन्त्रके इस युगमें जब सामान्य हित किसी भी चीज़ का मापदण्ड बन गया है, काँगड़ा कलाकृतियाँ फीकी-फीकी-सी नज़र आती हैं। ■■

Gram : MATACANTOS
CALCUTTA

Telephone :
OFFICE : 22-3226
RESI : 55-2620

Asutosh Mookerjee & Co. Private Ltd.
12, RAJA WOODMUNT STREET,
CALCUTTA-1.

Importers & Manufacturers of :
WIRE ROPES, CHAINS LIFTING ACCESSORIES,
WAGON FITTINGS & MARINE STORES ETC.

Agents for :
LIFTING ACCESSORIES
S. TURTON & CO., LTD., BIRMINGHAM.

Workshop :
22, RAMLAL MOOKERJEE LANE,
SALKIA, HOWRAH.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

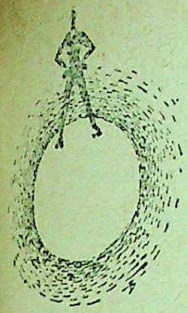

—'आरनल्ड ब्रिस्मैन

(अनु० : मनहर चौहान)

हताशा

अमेरिकी कहानी : ब्रिस्मैनने उन छोटी-छोटी और बेमानी मनोभूमियोंपर कहानियाँ लिखी हैं जो इस समयकी देन हैं। 'हताशा' कथा-परम्परासे हटकर एक प्रयोग है।

सब आसानीसे सहा जा सकता है। फिर मुझे बिस्तरमें लेटे रहना पसन्द भी आ गया।

जब सप्ताह ख़त्म होनेको था तब मैंने सोचा कि तबीयत सुधर जानेके बावजूद मैं बिस्तरमें घुसा रहूँगा। यह एक नयी और अनोखी बात होगी। जब मैंने अपना इरादा घरके लोगोंको बताया तो उन्होंने यही सोचा कि मैं मज़ाक़ कर रहा हूँ। इस मज़ाक़को सबने पसन्द भी किया। मेरे डैडी हर समय गुनगुनाते रहते, 'मेरा लाड़ला विली अपनी बक़ाया ज़िन्दगी बिस्तरमें गुज़ारेगा.....' जैसे कि सचमुच किसी गोत-की कड़ी उनकी ज़बानपर आ गयी हो।

दो सप्ताहोंके बाद घरके लोगोंको पता चला कि सचमुच मैं मज़ाक़ नहीं कर रहा था। दूसरे कमरेमें वे सब इकट्ठा होते और फुसफुसाते कि इस मामलेमें अब क्या करना चाहिए। लेटा हुआ मैं उनकी आवाज़ें सुनता रहता। इन फुसफुसाहटोंके बाद डैडी अकसर मेरे कमरेमें आ जाते।

...उनकी शुरूआत क़रीब छह माह पहले हुई। तब मुझे जुकाम हो गया था। मम्मीने तय किया था कि मैं बिस्तरमें लेटा रहूँ और गरम चीज़ें पीता रहूँ। वह मेरी छोटी-छोटी बातोंमें ग़लतियाँ निकालती रहती। तब हारकर मैंने सोचा कि घरमें शान्ति बनाये रखनेके लिए मुझे पूरी कोशिश करनी चाहिए। शुरूके दो दिन मुझे इतना बुख़ार रहा था कि मैं चौबीसों घण्टे बिस्तरपर छटपटाता रहा था, कराहता रहा था और कई बार चीख़ा था कि मैं अब बिस्तरमें एक मिनट भी नहीं रह सकता, फिर चाहे ही बाहर निकलनेसे मुझे डबल न्यूमोनिया हो जाये। लेकिन अब मैंने शोर मचाना बन्द कर दिया। मुझे लगा कि यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पलंगके पास खड़े होकर वह दो क्षण मेरी तरफ़ देखते रहते, फिर उनके चेहरेपर ऐसी रेखाएँ उभर आतीं मानो वह अभी चीख पड़ेंगे। डैडी कहते, "सेनामें तुम्हारे सिरपर कोई चोट तो नहीं आयी थी ? मैं सोचता हूँ—डॉक्टरको दिखा लेना अच्छा रहेगा।" तब मैं हँसने लगता और उनसे कहता कि नहीं, ऐसी कोई ज़रूरत नहीं है। मैं उन्हें पूरा यक़ीन दिलानेकी कोशिश करता कि ज्योंही मेरा बिस्तरसे बाहर निकलनेका मन होगा, मैं निकल आऊँगा।

मतलब यह कि उन सभीने पहले यही सोचा कि सेनामें काम करते समय मेरे सिर-पर चोट लगी है—या कोई इसी तरहकी बात हुई है। मैंने क़सम खायी और कहा कि नहीं, ऐसा कुछ नहीं है, लेकिन कोई न माना। मैं दो हवाई हमलोंमें भाग ले चुका था और दोनों ही बार हमारी हार हुई थी। लेकिन आश्चर्य यही था कि एक भी बार मैं ज़्यादा घायल नहीं हुआ। इसीलिए जब युद्ध समाप्त हो गया तो मैं उन सारी बातोंको भूल गया। घर लौट आनेसे पहले मैंने अपने लिए केवल एक धन्धा चुना था—वह यह कि मैं एक तरफ़ चुपचाप बैठा रहता और अपने साथियों-की वे बातें बेध्यान होकर सुनता रहता जो वे आपसमें अपनी भावी योजनाओंके बारेमें करते। ज़िन्दा रहनेकी कभी-कभी इतनी ज़्यादा आदत पड़ जाती है कि बस लगता है, ज़िन्दगी एक सपना है—न बुरा सपना, न अच्छा—महज़ एक सपना!

हाँ, तो मैं कह रहा था कि जब मेरे घर वालोंको पता चला कि मैं मज़ाक़ नहीं कर रहा हूँ तो उन सबने मेरे खिलाफ़ मोर्चा झण्डा खड़ा कर दिया। कुटुम्बी-जनोंके लिए मेरे मनमें नया आदर पैदा हुआ, क्योंकि अपनी मंज़िल तक पहुँचनेके लिए उन्होंने कैसी-ऐसी बातें सोच निकालीं जो आइजक न्यूटन या उनके जनरल भी नहीं सोच सकते थे।

शुरूमें निहायत मामूली बातोंसे विरोध किया गया। मसलन, मेरी मम्मी कमरेमें आकर ज़रा दूर खड़ी हो जायेंगी और अपना भाषण शुरू करेंगी, "अपनी सगी बहन जूलीके साथ ऐसा अन्याय करना तुम्हें अच्छा लगता है? भला बताओ, तुमने तो बेचारी जूलीका हक़ ही हथिया लिया। क्या यह शोभा देता है कि घरकी लड़की लिविंग-रूमके कोचपर सोये और तुम्हारे-जैसा अलमस्त जवान कमरेके बीच फैला हुआ पड़ा रहे।"

"सब चलता है, मम्मी," मैं कहता, "मैं जल्दी ही बिस्तरसे बाहर निकल आऊँगा। रही जूलीकी बात, सो वह बहुत अच्छी लड़की है, बुरा नहीं मानेगी।"

तब डैडी मेरे कमरेमें आ जाते। अगर मैं सचमुच बिस्तरसे बाहर निकल आया होता तो, जहाँतक मैं सोचता हूँ, ऐसा करनेकी हिम्मत बूरी मेरे सामने डैडीके कारण ही आयी होती। मुझे मजबूर करनेकी क्षमता उनके सिवा और किसीमें नहीं थी। यह अलग बात है कि वह भी मुझे मजबूर कर पायें या नहीं। अब वह बूढ़े हो चले हैं। अपनी ज़िन्दगीमें उन्होंने कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो चीजें पहचानी हैं—परिश्रम और चिन्ता। उनके कन्धे झुक गये हैं जिससे हाथ ज़्यादा लम्बे मालूम पड़ते हैं। आरे चलाकर और कीलें ठोंक-ठोंककर उनकी हथेलियाँ कठोर हो गयी हैं। उनके चेहरेकी झुर्रियोंसे भी परिश्रमी प्रकृतिका आभास मिलता है।

पलंगके पास आकर वह अपने झुके कन्धों और लम्बे हाथोंके साथ चुपचाप खड़े हो जाते, फिर वह आगे-पीछे थोड़ा-थोड़ा झूलने-लगते, जैसे उन्हें झपकी आनेवाली हो, इसके बाद वह कहते, "बात क्या है, बेटे, तुम मुझे बताते क्यों नहीं? मुमकिन है, मैं तुम्हारी मदद कर सकूँ। तुम्हें केवल इतना करना है कि अपनी परेशानी बता दो।" कहते समय वह लगातार आगे-पीछे झूलते रहते और मुझे ऐसा अहसास होता मानो मैं किसी जहाज़में लेटा हुआ हूँ, जहाज़ बहुत डोल रहा है और मुझे समुद्री बीमारी भी हो आयी है।

मैं एक तरहसे उनको मनोबल करनेकी कोशिश करता, "डैडी, आप चिन्ता क्यों करते हैं? यों समझिए, मैं आराम कर रहा हूँ। बस, कुछ दिनोंका आराम, और उसके बाद मैं बाहर निकल आऊँगा।"

डैडीको कदापि ऐसा न लगता कि मैंने कोई मज़ेदार बात कही है। वह दोहराते, "तुम बताओ, बताते क्यों नहीं? तुम्हारे मन-में क्या है?"

"कुछ भी नहीं, डैडी, मैंने कहा न, बस, ज़रा आराम कर रहा हूँ। मैं बाहर निकल

पलंगके पास आकर वह अपने झुके कन्धों और लम्बे हाथोंके साथ चुपचाप खड़े हो जाते, फिर वह आगे-पीछे थोड़ा-थोड़ा झूलनेसे लगते, जैसे उन्हें झपकी आनेवाली हो, इसके बाद वह कहते, "बात क्या है, बेटे, तुम मुझे बताते क्यों नहीं? मुमकिन है, मैं तुम्हारी मदद कर सकूँ। तुम्हें केवल इतना करना है कि अपनी परेशानी बता दो।" कहते समय वह लगातार आगे-पीछे झूलते रहते और मुझे ऐसा अहसास होता मानो मैं किसी जहाज़में लेटा हुआ हूँ, जहाज़ बहुत डोल रहा है और मुझे समुद्री बीमारी भी हो आयी है।

आऊँगा, सच! लेकिन अभी नहीं।"

"कुछ-न-कुछ गड़बड़ी ज़रूर है, वरना एक जवान, तन्दुरुस्त लड़का रात और दिन बिस्तरमें घुसा कैसे रह सकता है! मुझे डॉक्टरको बुलाना ही चाहिए।"

कई बार मैं डॉक्टर-डॉक्टर-डॉक्टर सुन-कर इतना ऊब जाता कि मन करता, ज़ोरसे चिल्लाऊँ, डैडीको झिड़क दूँ, लेकिन मैं जानता था कि सचमुच वह कितने चिन्तित हैं। मैं चिल्लानेसे अपनेको रोक लेता।

"चिन्ता न करिए, डैडी, मैं जल्द ही बिस्तर छोड़ दूँगा।" एक बार मैंने उन्हें यह समझानेकी कोशिश भी की कि बिस्तरमें पड़े रहना कितना आनन्ददायक है। जब पैरसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फणीश्वरनाथ 'रेणु'

का नवीनतम उपन्यास

जुलूस

'रेणु' की यह कृति 'जुलूस' अपूर्व तो कैसे कही जाये, पर अनूठी इसे मानना पड़ेगा। हिन्दीमें इस विषय-भूमिकी और इसके भाव-संकेत लिये हुए कोई कृति विरले ही आयी होगी। एक लघुकाय उपन्यास पर विशाल अन्तरंग, गझिन, शक्तिशाली और सारा कथानक सामयिक : घटनाओंकी दृष्टिसे भी महत्त्वपूर्ण और मूल्योंकी दृष्टिसे भी। शैली-शिल्प 'रेणु' के अपने : पहलेसे अधिक प्रौढ़, मँजे-निखरे, प्रभावपूर्ण।

कथानक सीधा-सा है। कला उसका उपयोग करने की है। इसके माध्यमसे हिन्दी पाठक देखेंगे कि प्रान्तीय भाव-भेद कितने भी वास्तविक लगें, यथार्थ जीवनके सन्दर्भमें उनका अस्तित्व क्षीण हुए बिना नहीं रहता। और ठीक यही तो मूल आधार है देशकी भावात्मक-सांस्कृतिक एकताके सत्यका। आवश्यकता आचरणकी है, दृष्टिदानकी है। मूल्य ३.५०

भारतीय ज्ञानपीठ

प्रधान कार्यालय : ९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७
प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५
विक्रय केन्द्र : ३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर एक चादर खींच ली जाती है तो लगता है जैसे आप अपनी निजी सुरंगमें आ गये हों। कितना शान्त, गरम एकान्त! फिर एकाएक सिरपर-से चादर हटाइए और ताज़ा बवंडर गहरी साँसें लीजिए और इधर देखिए, उधर देखिए, जैसे कि आस-पास पहाड़ियाँ हों, हरियाली हो, झरने हों—और यह सब इतना स्वच्छ, आरामदायक लगे!

"तुम्हारी बातोंसे मेरा जी दुखता है, डैडी!" वह कहते, "तुम पच्चीस सालके हो गये हो, समझे? तुम्हें भविष्यके बारेमें सोचना चाहिए। तुम्हारी शादी होगी, बच्चे होंगे....." और यह सब कहते हुए वह लगातार आगे-पीछे झूलते-से रहते।

"कैसा भविष्य, डैडी?" मैं उनसे पूछता, "सेनामें भरती होनेसे पहले मैं क्या था? ट्रकका हेल्पर। अब, युद्धके बाद, बताइए, मैं कौन-सा काम करूँ? अगर तक़दीर तेज़ हुई तो फिरसे ट्रकका हेल्पर बन जाऊँगा। इससे ज़्यादा?"

"हेल्पर होना कोई बुरी बात थोड़े ही है। काफ़ी अच्छा काम है।" वह बोले, "या फिर जूलीकी तरह तुम भी रातकी कक्षाओंमें जाओ और पढ़ाई आगे चलाओ।"

"यह काम मैंने जूलीके लिए छोड़ दिया है।" मेरा उत्तर होता।

उनका हाथ ऊपर उठता और वह कपारकी झुर्रियाँ फेरने लगते। "आखिर क्यों?" वह पूछते।

"इस उम्रमें पढ़ाई करना बहुत बोदा लगता है।" मैं कहता।

मेरा ऐसा जवाब उन्हें नागवार गुज़र सकता था और वह बाक़ायदा गुस्सा हो सकते थे, लेकिन वह कभी न होते। वह बस, आगे-पीछे झूलते रहते। पूछते, "तुम बताओ तो सही कि बात क्या है? क्या तुम सोचते हो कि तुम जो कर रहे हो, वह स्वाभाविक है? तुम्हारा अपना घर होना चाहिए, बीवी और बच्चे होने चाहिए।"

"डैडी, ये सारी झमेलेकी बातें हैं।" मैं यही कहता।

तब उनका चेहरा ऐसा हो जाता कि इस बार तो ज़रूर ही चीख़ पड़ेंगे, और तब मुझे अपने-आपसे नाराज़गी हो आती कि ऐसी बात मैंने क्यों कही। मैं दिलासा देना चाहता, "मैं, डैडी, सचमुच जल्द ही बाहर आ जाऊँगा। आप डरते क्यों हैं? मैं बिस्तरसे उठूँगा और कोई काम ढूँढ़ कर शादी भी करूँगा—और देख लीजिएगा, मेरे साठसे कम बच्चे नहीं होनेके। ज़रा कल्पना करिए, आप साठ पोतोंसे घिरे हुए होंगे तब कितना मज़ा आयेगा।"

तब डैडी मुसकराने लगते, मानो सचमुच मैंने बढ़िया मज़ाक़ किया हो। वह बुदबुदाते, "ठीक है, साठ पोतोंका दादा बनना मुझे अच्छा लगेगा।" वह धीमे क़दमों कमरेसे बाहर हो जाते।

उनके जानेके बाद मैं सोचता रहता कि यदि मैं वास्तवमें कामकी तलाश करने निकल पड़ूँ तो मुझपर क्या गुज़रेगी। इसके बाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं एकाएक अपनी सारी उलझनोंको भूल गया और अपनी निजी ज़मीनकी हसीन घाटियों और पहाड़ियोंमें पहुँच गया। कुछ देर बाद मुझे नींद आ गयी। यदि कोई शख्स ज़्यादासे ज़्यादा सोनेपर तुल जाये तो सचमुच वह इतना सोने लगे कि खुदको ही अचरज हो।

मुझे बिस्तरमें पड़े हुए क़रीब दो माह बीत रहे थे और घरवालोंकी हालत खस्ता होनी शुरू हो गयी थी। एक दिन मैंने हॉलमें रखे फ़ोनकी ट्रिन-ट्रिन सुनी। मुश्किलसे एक मिनट बीता था कि मम्मी मेरे कमरेमें आयी और बोली, "मार्गरेट तुम्हें फ़ोनपर बुला रही है।"

"कौन मार्गरेट ?" मैंने पूछा, हालाँकि मैं समझ गया था।

"क्यों, तुम उसे नहीं जानते ? मार्गरेट एलोरको ?"

"ओह, मार्गरेट एलोर !" मैंने कहा, जैसे कि बोर हो गया होऊँ, "क्या चाहती है ?"

"तुमसे फ़ोनपर बात करना। और क्या।" मम्मी बोली। जब मैंने बिस्तरसे उठनेकी कोशिश नहीं की तो उसने कहा, "मैं तो सोचती थी, तुम एक-दूसरेको पसन्द करते हो। क्यों, मार्गरेट तुम्हें अच्छी नहीं लगती ?"

"पता नहीं। होगी।" मैं बोला।

"खैर····लेकिन उससे फ़ोनपर बात तो कर लो !"

मैं कुछ देर तक यह सोचता हुआ लेटा रहा कि उठूँ या न उठूँ, फिर मैंने सोचा कि बात करनेमें हर्ज नहीं है। जब मैं उठकर फ़ोनके कमरेमें गया तो मुझे इसपर सचमुच अचरज हुआ कि मैं इतनी उत्तेजना क्यों अनुभव कर रहा था। शायद मैं अब भी मार्गरेटसे प्यार करता था।

"हैलो !" मैंने कहा।

"हैलो, विली, कैसे हो ?"

"अच्छा हूँ।"

वह एक क्षण तक कुछ न बोली और मैं इन्तज़ार करता रहा। "विली, तुम तो मुझे बिलकुल भूल गये। पिछले दो महीनेसे तुम मिलने ही नहीं आये। मिलना तो दूर, तुमने फ़ोन तक नहीं किया। क्या बात है ? मुझसे कोई क़सूर हो गया हो तो···"

"नहीं, तुमने कोई क़सूर नहीं किया।"

"फिर ?"

"मैं बिस्तरमें पड़ा हुआ हूँ।" मैंने जवाब दिया।

"अरे ! बिस्तरमें ?" वह चौंकनेका अभिनय करती हुई बोली, "मुझे मालूम नहीं था, तुम बीमार हो। कबसे ? क्या हुआ है तुम्हें ? सचमुच मुझे बहुत दुःख सुनकर····"

"कुछ नहीं, वैसे हुआ कुछ नहीं है।"

"लेकिन तुम्हींने कहा कि तुम दो महीनेसे बिस्तरमें····"

"हाँ, हूँ तो बिस्तरमें, लेकिन कुछ हुआ कुछ नहीं है। वैसे ही पड़ा हूँ।"

"लेकिन····लेकिन, विली, अचानक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीमार नहीं होता, तबतक भला क्यों वह सोता रहेगा ?"

"मुझे अच्छा लगता है।"

मार्गरेटको कुछ देर तक मेरी इस बातका जवाब न सूझ सका। वह चुप रही लेकिन वह अभीतक फ़ोन लिये थी। शायद वह मुझे सभी भी प्यार करती थी। आख़िर वह बोली, "मैंने, सच पूछो तो, फ़ोन तुम्हें इसलिए किया कि मेरे जन्म-दिनकी पार्टी दो होगे। मैंने सोचा कि तुम आना पसन्द करोगे। कुछ नये रेकॉर्ड आये हैं। उन्हें बजाकर हम नाचेंगे। फ़र्शका क़ालीन मैं लपेट कर अलग रखवा दूँगी। आओगे न ? बहुत मज़ा आयेगा !"

एकबारगी तो मैंने सोचा कि चला जाऊँ, उसकी तबीयत ही बहलेगी, लेकिन तभी मुझे बिस्तर याद आ गया। "माफ़ करना," मैंने कहा, "शायद मैं नहीं आ पाऊँगा।"

"ओह, विली, तुम बड़े मसख़रे हो। तुम कैसे कह सकते हो कि नहीं आ पाओगे ? क्या तो तुम्हें यही नहीं मालूम कि पार्टी है किस दिन ?"

"मैं दरअसल रोज़ लेटा रहना चाहता हूँ," मैंने कहा, "रात-दिन।"

फिरसे वह ख़ामोश हो गयी। इसके बाद अचानक उसकी सिसकियाँ सुनाई पड़ीं, "मैं समझ गयी ! तुम्हें मुझसे प्यार नहीं है। सचमुच नहीं है, वरना···वरना तुम यह सब क्यों कहते ?"

"नहीं, मुझे तुमसे प्यार है।" मैं बोला। "झूठ ! अगर होता तो इस तरह मुझे बेवक़ूफ़ क्यों बनाते ?"

"शायद मैं जन्मसे ही मसख़रा हूँ।" मैंने उत्तर दिया, "मुझे तो फ़िल्मोंमें होना चाहिए। जन्म-दिन मुबारक !" मैंने फ़ोन रख दिया।

इसके बाद मार्गरेटने मुझे दो बार और फ़ोन किया लेकिन मैंने बिस्तरसे बाहर निकलना ही ज़रूरी न समझा। मम्मीने मार्गरेटके बारेमें मुझसे पूछताछ करनी चाही, लेकिन मैंने कोई उत्तर न दिया।

घरमें क़रीब एक सप्ताह तक शान्ति रही। मैं समझ गया कि वे लोग कोई नयी योजना बना रहे हैं। मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिना परवाह किये आराम से लेटा रहा।

मैं जानता था कि जबतक मैं स्वयं ही बिस्तरमें-से निकलनेके लिए तैयार न हो जाऊँ, तबतक कोई यह काम मुझसे ज़बरन नहीं करवा सकता। दिनमें दो या तीन बार मुझे बाथ-रूम जाना पड़ता। उसके अलावा मेरा पूरा समय बिस्तरमें ही गुज़रता। बाथ-रूम जानेकी ज़रूरतको आप काफ़ी घटा सकते हैं, बशर्ते आप अपने शरीरको इसकी तालीम दें। ख़ैर, यह दूसरी बात हुई। मूल बात यह थी कि जब भी मैं बाथ-रूम जानेके लिए उठता, बड़ी फ़ुरतीके साथ मेरी मम्मी बिस्तरपर बिछी हुई एक-एक चीज़ समेट लेती और या तो धूपमें रख आती, या अँगीठीके पास। वह कहती कि बिछनेवाली हर चीज़को आँच मिलनी निहायत ज़रूरी है। मम्मी अनेक बहाने बनाती रहती और एक बार समेटी जा चुकी चीजें फिरसे बिस्तरपर बिछानेसे मुकरती रहती। लेकिन इससे क्या फ़र्क़ पड़ना था! मैं आता और नंगे बिस्तरपर ही लेट जाता। लेट जाता और इन्तज़ार करता। तीन दिनोंमें मम्मीने अपनी इस नयी 'खोज' का त्याग कर दिया।

इसके बाद, अगर मैं न उठा तो, उसने पुलिस बुलवानेकी धमकी दी। मैंने आश्चर्यसे पूछा, "क्यों, पुलिस इस मामलेमें क्या कर कर सकती है? बिस्तरमें सोना कोई अपराध तो नहीं! बल्कि जितने ज़्यादा लोग बिस्तरमें सोते रहेंगे, उतने ही कम अपराध होंगे।" बात यहीं ख़त्म हो गयी।

मैं दो सप्ताहों तक बड़े मज़ेसे लेटा रहा। अब उन लोगोंका सबसे बड़ा आन्दोलन शुरू हुआ। उन्होंने मुझे इतना उत्पीड़ित करना चाहा कि मैं बिस्तरसे बाहर आ जाऊँ। दूरसे उन्होंने रिश्तेदारोंको बुलवा भेजा। चाचियाँ और चाचे, भानजे और भतीजियाँ वग़ैरह-वग़ैरह। कोई ब्रूकलीनसे आया, कोई ब्रान्क्सफ़से। कई तो न्यू जरसी-जैसे दूर इलाक़ोंसे भी आये। सबसे पहले मेरी मम्मी उन सबको खाना खिलाती। बाहर हॉलमें आवाज़ें मैं लेटा हुआ सुनता रहता। तश्तरियाँ हटाने, डिशें इधर-उधर करने और छुरी-चटकारनेकी आवाज़ें। मैं शर्त बद सकता हूँ कि वे मेरे ही बारेमें बातें कर रहे होंगे। कारण? वे कभी ज़ोरसे नहीं बोलते थे।

फुसफुसाहटोंके काफ़ी लम्बे दौरके बाद सब मेरे कमरेमें प्रवेश करते। कोई दरवाज़ेपर खड़ा हो जाता, कोई उधर, जैसे कि वे किसी अजायबघरमें आये हों। मेरी ओर देखते भी इस तरह, जैसे मैं भी अजायबघरकी ही कोई चीज़ होऊँ। इसके बाद अंकल आइक या आण्ट मिनी या अंकल वेल्डो एक या दो डग क़रीब आते और पूछते, "बिली, हमने सुना है कि तुम्हें लेटे रहना बहुत अच्छा लगता है?"

"हाँ," मैं जवाब देता, "मुझे हर रोज़ थकान महसूस होती है।"

"कबतक लेटे रहोगे?"

"जबतक नींद मुझसे विदा नहीं ले जाती।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसपर वे लोग अपने सिर हिलाने लगते और एक-दूसरोंकी ओर देखते, मानो उन सबने मिलकर कोई नयी खोज कर डाली हो। वे बहुत गम्भीर हो उठते और मेरे पड़ोसके और क़रीब आ जाते। "विली, अब तू बड़ा हो गया है, ऐसा मज़ाक़ अच्छा नहीं लगता। अपने माँ-बापकी तरफ़ तो देखो। वे कितने ख़ूब गये है!"

"मैं मज़ाक़ नहीं कर रहा। मैं आप लोगोंको कैसे समझाऊँ? सचमुच यह मज़ाक़ नहीं है। उनकी परेशानियोंके लिए मुझे बहुत खेद है, लेकिन मैं कुछ कर नहीं सकता।"

"तुम्हें ज़िम्मेदारियाँ उठानी चाहिए।" वे कहते, "ख़ूब कमाओ, शादी करो, घर बसाओ।"

"क्यों?" मैं पूछता।

तब उन सबके—भले ही उनमें-से कोई गंजा हो या नाटा हो, मोटा हो या छरहरा हो, बूढ़ा हो या युवक हो—लाज़िमी तौरपर उन सबके चेहरोंपर ऐसे भाव उभर आते, जैसे कि मैंने उसकी तरफ़ थूक दिया हो। जिनसे कोई मेरे इस प्रश्नका उत्तर न देता। तब फिरसे वे लोग दूसरे कमरेमें चले जाते। यदि वे मेरे डैडीकी तरफ़के रिश्तेदार होते तो कहते, "विलीने ये लक्षण डेविडसे नहीं पाये हैं। डेविड तो इतना मेहनती है। डोराका असर उसके बेटेमें उतरा ही नहीं है। सारे लक्षण उसकी माँके हैं।" कहते हुए उनकी आँखें मेरी मम्मीपर टिक जातीं।

और यदि वे मेरी मम्मीकी तरफ़के रिश्तेदार होते तो कहते, "विलीके सारे लक्षण अपने बापके हैं। डोराका कोई असर उसके बेटेमें उतरा ही नहीं है। डोराके मेहनती स्वभावका क्या कहना, बल्कि डोराके पूरे कुनबेमें अभीतक कोई आलसी पैदा नहीं हुआ।" कहते हुए उनकी आँखें मेरे डैडीपर टिक जातीं!

रिश्तेदारोंकी आँखें डैडीपर टिकतीं चाहे न टिकतीं, लेकिन हाल उनका बहुत बुरा था। दरअसल वही एक थे जिनपर सही मायनोंमें मुझे दया आती। वह हमेशा प्रत्येक व्यक्तिसे दूर रहनेकी कोशिश करते और सिर हिलाते रहते और कुछ इस प्रकार दीवारोंकी तरफ़ देखते कि वह किस हद तक शर्मिन्दा हैं—यह ज़ाहिर हो जाता।

जब रिश्तेदार भी असफल हो गये तो उन्होंने और कड़ा रुख़ अपनाया। उन्होंने मुझे खाना देना बन्द कर दिया जिससे मैं भूखका मारा बिस्तरमें-से निकल आऊँ। इससे पहले, चाहे मुझमें कितनी भी अनबन हो, मम्मी मेरे लिए बिस्तरमें ही खाना ज़रूर ले आती। वह पुराने विचारोंकी औरत थी और उसके अनुसार अच्छा भोजन मनुष्यके जीवनमें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण था। लेकिन अब उसने भोजन लाना बन्द कर दिया। इससे ज़ाहिर हो गया कि घरवालोंकी हिम्मत अब सचमुच पस्त हो गयी है। मैं दो दिनों तक बिना खाये-पिये बिस्तरमें पड़ा रहा। तीसरे दिन मम्मी अपना जी कड़ा न रख सकी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले वह मेरा खाना एक ट्रेमें सजाकर लाया करती थी। इस बार भी वह ठीक उसी तरह सजाकर खाना ले आयी।

पलंगके पास एक मेज़पर उसने ट्रे रख दी। जान-बूझकर वह मेरी ओर नहीं देख रही थी। वह या तो ट्रेकी ओर देख रही थी या मेज़की ओर या किसी भी चीज़की ओर, जिसपर उसके हाथ सहारा ढूँढ़ने लगते। एकाएक उसने बोलना शुरू कर दिया। वह न मेरे लिए बोल रही थी, न अपने-आपके लिए। वह केवल बोलती जा रही थी, मानो शब्दोंपर-से उसका क़ाबू हट गया हो और वे लगातार उसके होठोंसे फिसल रहे हों—ज़बरन : "पड़ोसमें जहाँ भी मैं जाती हूँ, लोग मुझे घूरते हैं।" वह बोली, "बुद-बुदाते हैं कि यह रही उस लड़केकी माँ! इसका लड़का युद्धपर-से लौटा और बिस्तरमें चला गया। दिन और रात वह निठल्ला लेटा रहता है। और कोई काम ही नहीं। बताओ, कोई तुक है? ऐसी बातें तो पागलों-को भी नहीं सूझतीं।" यहाँपर मम्मीने ज़रा रुककर दो-तीन साँसें लीं। फिरसे उसने कुछ इस प्रकार धारावाहिक बोलना शुरू कर दिया, मानो वह प्रार्थना कर रही हो—ऐसी प्रार्थना, जिसके न प्रारम्भका पता चले, न अन्तका, "बेचारी जूली! उफ़! अब उससे कौन शादी करेगा? सभी कहेंगे कि इस लड़कीके भाईको कुछ हो गया है! क्या मालूम, इस लड़कीको भी हो जाये। जूली! मेरी जूली! कितनी ख़ूबसूरत! वह कुँआरी रह जायेगी। लोग कहते हैं, जूलीका भाई पिछले जन्मसे खटमल रहा होगा। बताओ, ऐसे लड़केकी बहनसे कौन शादी करेगा? रातको मुझे नींद नहीं आती। इस तरह मैं पागल हो जाऊँगी। मैं खुलकर रो भी नहीं सकती। छिप-छिपकर रोती हूँ, जिससे डेविडको पता न चले। मैंने कौन-से पाप किये थे भगवान्? जो मेरा बेटा ऐसा हुआ! सुबह मैं उठती हूँ तो मेरे बाल आँसुओंसे भीगे होते हैं।....." मम्मी बोलती रही, बोलती ही रही। कुछ देर बाद वह कमरेसे बाहर निकल गयी। उस समय भी उसके मुँहसे प्रार्थना जारी थी—बिना शुरूआत और बिना अन्तकी प्रार्थना।

इसके बादसे उन्होंने मुझसे मिलना-जुलना छोड़ दिया है। वे शायद ही कभी मेरी निगाहोंसे गुज़रते हैं। हाँ, मैं उनकी आवाज़ें सुन सकता हूँ जो बग़लके कमरेसे आती हैं। अकसर वे फुसफुसाकर बातें करते हैं, जैसे घरमें कोई मरीज़ सो रहा हो।

पहले मैं सोचता था कि ये सब अगर चले जायें और मुझे अकेला छोड़ दें तो कितना अच्छा हो, लेकिन अब, जब कि वास्तवमें ऐसा हो गया है, मैं सोचता हूँ कि मेरा इस तरह सोचना ग़लत था। ये लोग मेरे साथ कुछ ऐसा बरताव करते हैं जैसे मैं धीरे-धीरे मर रहा होऊँ। मैं हूँ और ख़ामोशी है और अकसर मैं आश्चर्यमें डूबा रह जाता हूँ कि बिस्तरमें घुसनेका यह निर्णय मैंने क्यों लिया। युद्धसे लौटते समय मेरा ऐसा इरादा था ही नहीं। मैंने सोचा था कि, जैसा कि सब करते हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी कोई काम खोजूँगा और शादी करूँगी।

बचाई यह है कि उस जुकामके कारण जब मैं लगातार कुछ दिनों तक बिस्तरमें पड़ा रहा तो मुझे पता चला कि बिस्तर कितनी लाजवाब चीज़ है। पैसा कमाओ, खर्च करो, फिरसे कमाओ, फिरसे खर्च करो, बच्चे पैदा करो और कुछ सालों बाद बच्चोंसे भी कहो कि वे भी बच्चे पैदा करें--कौन उठाये इतना बड़ा बोझ? और क्यों उठाये? क्या होगा उठानेसे? यही न कि कमाओ और चिन्ता करो और चिन्ता करो और कमाओ! याने, जो मेरे पिता करते हैं। ओह, बिस्तरमें पड़े रहना कितना आरामदायक है!

दिनमें एक बार डैडी मेरे कमरेमें ज़रूर आते हैं। वह कभी कुछ नहीं बोलते। आये और पलंगके पास चुपचाप खड़े हो गये—अपने मज़बूत, लम्बे हाथों और झुके कन्धोंके साथ। और डैडी लगातार आगे-पीछे झूलते-से रहेंगे, मानो वह अपनेको खुद ही सुला रहे हों।

कभी-कभी मैं उनसे मज़ाक़ करनेकी कोशिश करता हूँ लेकिन अकसर चुप रहता हूँ। चादरके नीचे घुसकर मैं अपनी निजी सुरंगमें चला जाता हूँ और अपनी साँसोंकी आवाज़ सुनता हूँ। कभी-कभी मैं सिर उठाता हूँ और इधर देखता हूँ, उधर देखता हूँ—यह रही हरियाली। और यह एक झरना है। वग़ैरह।

■ ■

महिलोपयोगी एकमात्र उत्कृष्ट मासिक

'शृङ्गार'

प्रबन्ध सम्पादक : देवेन्द्र अग्रवाल ● सम्पादिका : लावण्यप्रभा

- विचारपूर्ण व उपयोगी लेख
- स्त्रियोपयोगी रुचिकर सामग्री
- रोचक मनोवैज्ञानिक कहानियाँ
- कविताएँ तथा सुन्दर गीत
- महिलाओंके इण्टरव्यू
- गृह-सज्जा, प्रसाधन समस्याएँ, विचार-मंच आदि अनेक रोचक स्थायी स्तम्भ।

मूल्य : वार्षिक : ५ रुपये, मासिक : ५० पैसे

१३।३७, शक्तिनगर, दिल्ली–७

फ़ोन नं० : २२७३००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निमकी बनाने के लिए

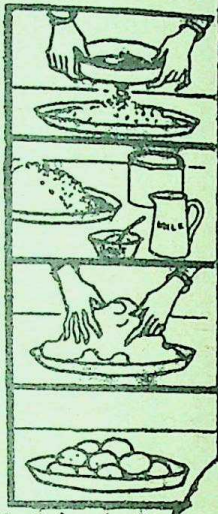

आटा छान लीजिए

नमक और थोड़ी वनस्पति मिलाकर इसे दूध के साथ सान लीजिए।

अब इसे अच्छी तरह गूंधिए।

छोटी-छोटी पेड़ियां बनाकर उन्हें बेल लीजिए और फिर गर्म वनस्पति में तल लीजिए।

लीजिए, स्वादिष्ट और जायकेदार निमकी तैयार हो गयी।

उत्तम एवम् स्वादिष्ट भोजन बनाने के लिए हनुमान वनस्पति पर ही भरोसा रखें।

भोजन बनाने का श्रेष्ठ चिकनाई माध्यम

हनुमान
वनस्पति

निर्माता :
रोहतास इन्डस्ट्रीज लिमिटेड
डालमियानगर (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—रामलाल

टकराव

कहानी : रामलाल वैसे तो उर्दूके कथाकार ही हैं लेकिन लिखते हिन्दीमें भी हैं। टकराव क्रूर संवेदनाओंकी एक कहानी है—अन्त करुणा नहीं देता, विद्रूप देता है।

■

वान्को। कुछ देर बाद उन्होंने डरते-डरते आँखें फिर खोल लीं।

दूर तक, जहाँसे छोटे-से रेलवे-स्टेशनकी सीमा शुरू होती थी और जहाँपर सीमा समाप्त भी हो जाती थी, आपसमें टकरायी हुई दोनों गाड़ियोंका मलबा फैला हुआ था। लगता था, यह दुर्घटना धरतीपर नहीं घटी है, किसी अज्ञात शक्ति-द्वारा सहसा ही ऊपरसे यह मलबा और शव बरसा दिये गये हैं!

आस-पासके ग्रामोंके लोग और विभिन्न थानों व चौकियोंके सिपाही घेरा डालकर मौन खड़े थे। अब कोई आगे नहीं बढ़ता था। जब सवेरेके कोहरेमें मालगाड़ीके साथ सवारी गाड़ी टकरायी थी तब उन सबने खूब लूट-मार मचायी थी। वे आहत लोगों तथा मुर्दोंकी जेबें तथा उनका सामान टटोलते फिरते थे। जो कुछ किसीके हाथ लग सका, उसे वह ले उड़ा था। अब वहाँ लूटे जानेके लिए कोई चीज़ नहीं रह गयी थी। पहली रिलीफ़-ट्रेन ज़ख्मियों तथा ज़िन्दा बच जानेवाले यात्रियोंको यहाँसे कुछ घण्टे पूर्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ले जा चुकी थी। यह ट्रेन, जो अब आधी थी सिर्फ़ मुर्दोंको उठा ले जानेके लिए भेजी गयी थी। इसमें जितने लोग थे, वे सबके सब पुलिसकी कड़ी निगरानीमें ले आये गये थे। इस बातकी बड़ी आशंका थी कि यह लोग यहाँतक नहीं आयेंगे। कहीं रास्तेमें ही गाड़ीकी ज़ंजीर खींचकर उतर जायेंगे या यहाँ पहुँचते ही निकल भागेंगे।

इस दुर्घटनाकी ख़बर पहुँचते ही चालीस मील दूरके एक बड़े स्टेशनके क़ुलियों और पोर्टरोंने अपनी-अपनी वर्दियाँ और नम्बर उतारकर छिपा दिये थे। शव उठानेके लिए इन्हींको पकड़कर ले जाया जायेगा।

पुलिस पचास-साठ क़ुली, पोर्टर और हाकरोंको घेरकर ले आनेमें सफल हो गयी थी। वहीं अब मलबेके सामने खड़े बड़बड़ा रहे थे—"मुर्दे उठाना कौन बड़ा भारी काम है। पर यह मुसाफ़िर तो ऐसे मरे पड़े हैं कि उनकी ओर नज़र उठाते हुए भी मन डूबता है। बाप रे बाप!"

मैकू अपनी मज़बूत भुजाओंमें जिस औरत-की लाश उठाकर ले आया भगोले उसके जूड़े-में अटका हुआ गुलाबका फूल देखने लगा। फूल अभीतक सुगन्ध दे रहा था। अभीतक सुर्ख़ भी था, परन्तु उस औरतके चेहरेकी समस्त प्रफुल्लता और नवीनता पीलाहटमें परिवर्तित हो चुकी थी। उसकी आँखें खुली रह गयी थीं। लगता था, मरनेसे पूर्व अन्तिम क्षणोंमें वह किसीकी ओर प्यारसे देख रही थी। उसके दोनों बाज़ू कुचले हुए थे, ऊपरको उठे हुए थे। वे-तरतीबीसे उगे हुए नागफनी पौदोंकी तरह।

भगोलेने उस शवको अपने हाथोंमें उठाकर एक जगह लिटा दिया, चुपचाप।

मैकू एक और शव उठा लाया।

"यह तो अपना कोई साथी ही लगता है क्यों मैकुआ!" भगोले उसे अपने बाजुओं में उठाये-उठाये ही बोला।

मैकू उसकी बात सुनकर रुक गया। भगोलेकी ओर ग़ौरसे देखा जो नीले और कुचले हुए सिरवाली लाशको उठाये तख्तेपर लिटा रहा था। जब उसे लिटा चुका तो उसकी कमरके नीचे इकट्ठा हो गये कपड़े यलके रेशोंको बराबर करने लगा और बड़ाया, "तू यहाँ ऊपर लेट रे। मरकर गद्देपर न लेटा तो फिर कब सुख पायेगा।"

जिस डिब्बेमें वे दोनों काम कर रहे थे वह पहले दर्जेका आठ पहियोंवाला एक डिब्बा था। ऊपरके तख्तोंपर अब भी कहीं नारियलके रेशे और हरे रंगका कपड़ा क्लाथ चिपका रह गया। भगोलेने चद्दर उठाकर ऊपरके नरम तख्तोंपर रख दी। लाशोंको नीचे ही पड़ा रहने दिया बदनपर निस्बतन क़ीमती और अच्छे कपड़े लेकिन अब उसके मुखपर-से वह घबराहट प्रतीत नहीं होती थी। बजाय एक सख्ती-सी दिखाई देने उसने समझ लिया था, यह काम ही होगा। अस्सी-नब्बे लाशोंमें भी उठा सकेगा उसके लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो नहीं मिलेगा, परन्तु वह अगर ऐसा नहीं करेगा तो उसे नौकरीसे अलग अवश्य कर दिया जायेगा।

चार डिब्बोंकी गाड़ीमें जो पचास-साठ आदमी काम पर जुटे थे, उनके ऊपर कई पुलिस-अफ़सर और सिपाही भी तैनात थे। वे उनपर कड़ी निगरानी रखे हुए थे। उन्हें बार-बार शाबाशियाँ भी देते थे और धमकियाँ दें। एक बार तो भगोलेने झल्लाकर पुलिस-इंस्पेक्टरके हाथसे काले सागवनका डण्डा छीनकर दूर फेंक दिया जिसे वह हर चन्द मिनट बाद गाड़ीके दरवाज़ेपर आकर बजाने लगता था। उसने कह डाला, "सैब, ये आप हमार मगज क्यों चाट रहे हैं? जाइए, वहाँ एक तरफ खड़े होकर देखिए न!"

पुलिस-इन्स्पेक्टर निस्तब्ध-सा रह गया लेकिन जल्दी ही अपने ऊपर क़ाबू पाकर वहाँ-से चुपचाप खिसक गया।

तीन-चार घण्टोंकी कड़ी निगरानी और संघर्षपूर्ण परिश्रमके बाद भगोले और मैकूने उस बोगीमें तीस-पैंतीस लाशें लाद दीं, जिनमें कुछ लाशें बच्चोंकी भी थीं, औरतोंकी भी और पुरुषोंकी भी। उन दोनोंके चेहरोंसे अब सहानुभूति झलकती थी। एक घनिष्ठ पीड़ाकी अनुभूति भी थी। भय, विवशता, कठोरता और कर्कशता लुप्त हो चुके थे। काफ़ी समयसे उन्होंने एक दूसरेसे कोई बात भी नहीं की थी। बोलते-बोलते वे सहसा ही मौन हो गये थे। काफ़ी समय तक चुप रहनेके बाद अब वे कोई बात कहते हुए भी संकोच कर रहे थे।

उसने दोनों भुजाएँ उठाकर एक ऐसे शरीरके साथ लगा दिये जिसकी भुजाएँ कट चुकी थीं। भुजाएँ साथ जुड़ते ही उस शरीरका रूप बदल गया। जैसे कोई रुकी हुई मशीन सहसा ही चल पड़े। यह देखकर भगोलेके मुखकी स्थिति भी कुछ बदली। उदासीनता और संवेदनाका स्थान एक प्रकारकी सन्तुष्टिने ले लिया। उसने कुछ सोचकर दोनों बाजुओंको बारी-बारीसे उन जिस्मोंके साथ लगाकर देखा, जो बिना बाजुओं-के थे।

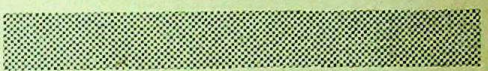

जब मैकू मलबेके नीचेसे दो कटी हुई भुजाएँ उठाकर ले आया और दरवाज़ेपर रखकर बोला, "ले, भगोले, इन्हें भी एक ओर रख दे," तो भगोलेको उसकी आवाज़ बहुत ही विचित्र-सी लगी। मानो उसे विश्वास नहीं हो रहा हो, अब वहाँ कोई मानव-स्वर सुनने-को भी मिल सकेगा। स्वयं मैकूने भी अपनी आवाज़को अपरिचित समझा जिसकी थरथरा-हटने उस चौंका दिया। वह आवाज़ उसकी अपनी नहीं हो सकती थी!

भगोलेने दोनों भुजाएँ फ़र्शपर रख दीं। एक तो नंगी थी, दूसरीके साथ रक्त और धूलमें लिथड़ी हुई कोटकी आस्तीन लटक रही थी। भगोलेने आस्तीन खींचकर अलग कर दी। दोनों भुजाएँ एक-जैसी हो गयीं। भगोले उन्हें ध्यानसे देखने लगा फिर उन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस्मोंकी ओर भी बड़े ध्यानसे देखा, जिनके साथ बाज़ू नहीं थे। अगर सचमुच ही शरीरों-के साथ भुजाएँ न हुआ करतीं तो यह संसार कितना अधूरा होता।

उसने दोनों भुजाएँ उठाकर एक ऐसे शरीरके साथ लगा दिये जिसकी भुजाएँ कट चुकी थीं। भुजाएँ साथ जुड़ते ही उस शरीर-का रूप बदल गया। जैसे कोई रुकी हुई मशीन सहसा ही चल पड़े। यह देखकर भगोलेके मुखकी स्थिति भी कुछ बदली। उदासीनता और संवेदनाका स्थान एक प्रकार-की सन्तुष्टिने ले लिया। उसने कुछ सोचकर दोनों बाजुओंको बारी-बारीसे उन जिस्मोंके साथ लगाकर देखा, जो बिना बाजुओंके थे।

"भगोले, क्या कर रहा है तू ?" मैकूने नीचे दरवाज़ेके पास खड़े होकर पुकारा।

भगोले मैकूकी ओर देखे बिना ही अपने आपमें डूबा-डूबा-सा बोला, "देख तो मैकू, ज़रा बाजुओंकी करामात।"

परन्तु मैकू वहाँसे जा चुका था। उसने सिर घुमाकर देखा तो उसे दरवाज़ेके पास रखा हुआ एक सिर नज़र आया। अलग, कटा हुआ। भगोले चौंक पड़ा। बड़ी साव-धानीसे मृतकोंपर-से लाँघता हुआ वहाँ गया। सिरके पास पहुँचकर बड़ी उत्तेजनासे चिल्लाया, "अरे, यह तो शमीवा है। ऐ, मैकू रे! शमीवाको पहचाना नहीं क्या ?"

"हाँ, हाँ, पहचाना है। इतनी ज़ोरसे क्यों चिल्ला रहा है ?" दूर मलबेके नीचे कुछ ढूँढ़ते हुए मैकूने उत्तर दिया।

भगोलेने कटे हुए सिरको दोनों हाथोंमें उठा लिया और उन शवोंकी ओर देखने लगा जिनके साथ सिर नहीं थे। ऐसे तीन ही शव थे। वह सोचने लगा, इनमें-से कौन-सा शव शम्मीका हो सकता है ? शम्मी अहाता दूसरे दीनका एक तरकारी-फ़रोश था। वह दरीबाके बाहर फ़ुटपाथपर तरकारीका ठेला लगाकर बैठता था।

"तू कहाँ आन मरा है, रे ?" भगोले बड़बड़ाया।

उन तीनों धड़ोंपर कोट और पतलून थे। शम्मी तो लुंगी और कुरता ही पहनता था। शम्मीका सिर उन तीनों धड़ोंके साथ लगानेसे उन्हीं शरीरोंका ही प्रतीत हुआ। यह देखकर भगोलेके चेहरेपर हल्की-सी मुसकान तैर गयी। फिर वहाँ मैकू आ गया, विरक्त-सा। दरवाज़ेमें पाँव लटकाकर बैठ गया। जब भगोलेको उस वक़्त भी शम्मीका सिर उठाये हुए देखा तो हैरान-सा हो गया। थकी-थकी आवाज़में बोला, "इसे कहीं रख क्यों नहीं देता, रे ? ला बीड़ी निकाल। हाथ टूटने लगा है।"

भगोलेने शम्मीके सिरको एक कोनेमें टिका दिया। लकड़ीकी दीवारके साथ रगड़कर हाथ पोंछे और फिर कुरतेकी जेबोंमें माचिस और बीड़ी ढूँढ़ता हुआ, मैकूके पास आ बैठा। शम्मीके सिरकी ओर देखता हुआ बोला, "परसों इसने मुझे बारह आने कमाकर नहीं किये थे। कहता था, चेंज नहीं है। फिर ले लेना।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गिरिराज किशोर

एक यात्रा

कहानी : गिरिराज किशोरकी यह नयी कहानी गुलमोहरके पेड़-नीचे वाली याद ही नहीं है एक प्रश्न भी है कि खाई क्यों खोदी गयी है ?

...के कुछ देर बाद ही जिस ...मेरी छोटी बहिनने आकर ...ाया था कि 'आभा जीजी ...आयी हुई हैं'। मैं समझ ...था कि आभाने ही अपने ...की सूचना मुझ तक भिज-...ी है। क्योंकि कहते समय ...सहमी हुई-सी मेरी ओर ...रही थी। लेकिन मैंने ...की बातको अनसुना करके ...ड़कीसे दिखनेवाले यूकेलिप्टस-...पेड़की ओर संकेत करते हुए ...था—"अरे, ये तो बिलकुल ...गया ! कैसै····?" वह ...ारी जवाब तलाश करती ...गयी थी। शायद इसी ...रण वह अपनी उस बातको ...हरा नहीं सकी थी।

उसके चले जानेके बाद मैं ...पर हुए सब परिवर्तनोंके ...में बारी-बारीसे सोचता ...था। आभाके घरका रास्ता भी बदल गया होगा। यह बात मेरे मनमें इस लिए आयी कि सुबह स्टेशन आते हुए मुझे इस बातका अहसास हुआ था। पूरा शहर मरम्मत की गयी पुरानी हवेलीकी तरह लग रहा था। घण्टा-घर तो बिलकुल नया ही बना था। उसकी मौजूदगीसे यही आभास मिलता था कि शायद यहाँके लोग वक़्त देखकर काम करने लगे हैं। स्क्रूटरपर जाती हुई एक लड़कीको देखकर ग़लतीसे मेरे मुँहसे निकल गया था—'अच्छा····!' रिक्शावालेने इस बातका जवाब टाउन-हाल-पार्कके बीचसे गुज़रते हुए एक झाड़ीके कुंजकी तरफ़ इशारा करके बड़ी भोंड़ी तरहसे दिया था।

लेकिन आभाके घर जानेके लिए बाहर निकलते ही, अपनी चिर-परिचित शामको मैंने तुरन्त पहचान लिया। बिलकुल वैसी ही। किसी बातूनी राष्ट्र-नायकका भाषण सुननेके लिए आयी जनताकी तरह मेरे घरके बाहरवाले मैदानमें झुकती चली आ रही थी। सम्भवतः लाल, पीली, कत्थई, बैंजनी कोई भी रंग उसे पसन्द नहीं आ रहा था। पहनती थी और तेज़ीसे उतारकर फेंक देती थी। एक-एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेड़की चोटीपर हज़ार-हज़ार कौवे जमा बिगुल बजाये जा रहे थे। उस सबकी पुनरावृत्ति आज पुनः देखकर मुझे हँसी आ गयी और लगा कि यह शाम अभी भी उतनी ही बच्ची है।

कुछ दूर चलनेपर भी राहमें किसी तरहका परिवर्तन महसूस नहीं हुआ। आमने-सामने डटी पेड़ोंकी पाँतोंके बीचसे रास्ता इस तरह निकलता चला जा रहा था कि वे सब उसे 'गार्ड-ऑफ़-ऑनर' देनेके लिए मुस्तैदीसे खड़े हों। एक खास तरहकी महक-भरी धूल उड़-उड़कर मेरी नाक तक आती थी और फिर धीरे-धीरे मायूस-सी इस तरह बैठ जाती थी जैसे मैं वह नहीं हूँ। हवाका झोंका आनेपर, आमने-सामने खड़े उन पेड़ोंकी डालें एक-दूसरेको खिजानेके लिए हिलने लगती थीं। एक-आध परिवर्तन भी हुए थे। कुछ नये पेड़ोंपर रंग-बिरंगी बेलें फूल आयी थीं। और कुछ अकेले भी थे। वह थानवाला पीपल अपनी सम्पूर्ण गरिमाके साथ अभी भी झूम रहा था और सदाकी तरह आज भी उसकी खोहमें एक मद्धिम दीपक जल रहा था। उन दिनों भी उसे देखकर आभाके चेहरेकी याद हो आया करती थी।

लेकिन मुझे अचानक लगा जैसे परछाईं स्पष्ट होते-होते तालाबका पानी हिल गया है। उस पूरे परिवेशके बारेमें उसी तरह सोचने लगा जैसे रातको कोई महत्त्वपूर्ण स्वप्न देखकर सुबह विचारा जाता है। मैं इस बातका अन्दाज़ा लगाना चाहता था कि इस बीच उसके परिवेशमें क्या-क्या परिवर्तन आ चुके होंगे। किसी लेखककी पंक्ति याद आ रही थी—'दूसरेके चेहरेपर समयके परिवर्तन देखनेके लिए अपना चेहरा देख लेना चाहिए।' लेकिन मैं जानता हूँ, जबसे मैंने शीशेमें अपना चेहरा पहचानना शुरू किया है तबसे वह ऐसा ही है, हालाँ कि बीच-बीचमें ख़बरोंकी तरह ही कुछ चेहरेके परिवर्तन भी मालूम होते रहे हैं।

रास्ते-भर, दूरपर पेड़ोंकी दोनों पाँतें मिलती हुई-सी दिखलाई देती रहीं। लेकिन मैं जानता था कि रास्तेके पेड़ोंकी पाँतें कभी नहीं मिलतीं।

उसका घर काफ़ी दूर था। लेकिन जैसे ही पेड़ोंकी पाँतें दूरपर मिलने लगती थीं मेरी आँखोंके सामने आभाके घरकी दहलीज़का बड़ा दरवाज़ा तैर जाता था। और मैं सोचने लगता था कि शायद उन दरवाज़ोंका रंग भी बदल गया होगा। क्योंकि जब हम दोनों साथ बैठे होते थे तो उसके पिता दरवाज़ोंका रंग बदलवानेकी अकसर बातें किया करते थे। उनका खयाल था कि दरवाज़ोंपर हरा रंग जाना चाहिए जिससे बाहरसे आनेवाले व्यक्ति को जानेका खयाल भी बना रहे। इस बातसे कमसे कम मुझे बड़े जोरकी हँसी आनेको होती थी। मैं और वह दोनों गरदनें झुका लेते थे जैसे उनकी बातका सम्मान कर रहे हों। आभाकी शादीके मौक़ेपर जब पूरे घरमें रंग हुआ होगा तो शायद दरवाज़ोंपर भी हरा रंग करा दिया गया हो। सोचकर मुझे हँसी आने लगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरा ध्यान दहलीजके ऊपरवाली पखवाई-की तरह लम्बी खिड़कीपर चला गया। उसपर लटकती चिक हलके-हलके हिलने लगी। जब कभी उधरसे निकलता था तो अकसर आभा चिकके पीछे खड़ी सड़ककी हलचल देखती हुई होती थी। चिक और आभाकी सफ़ेद साड़ी विभिन्न दिशाओंमें हिलने-डुलने के कारण मेरी आँखोंमें एक लहरिया-सा पैदा कर देती थीं।

चौराहेपर था। यहाँसे मुझे आभाके घरके लिए मुड़ जाना था। लेकिन उस दिशामें कुछ ही दीवारें गिरा दिये जानेके बादवाला सूनापन-सा महसूस हुआ। सड़कके दोनों तरफ़ खड़े पेड़ोंकी पाँत अब नहीं रही थी। मुझे उन पेड़ोंके सायोंका ध्यान हो आया और लगा, वास्तवमें उन्हीं सायोंको काटनेके लिए पेड़ गिराये गये हैं।

मोड़से दस क़दमकी दूरीपर वही ठेले-वाला खड़ा था और अभी भी गा-गाकर मूँग-फलियाँ बेच रहा था। अब उसकी आवाज़में एक ख़ास तरहका फटापन आ गया था। लेकिन शायद उसे अभी भी मुग़ालता था कि उसकी मूँगफलियाँ बिकनेका कारण उसका गला ही है। ठेलेपर, लोहेके गज़में लगी लालटेनके तेलकी कुप्पी रोशनीके साथ-साथ काली मोटी धुएँकी स्याह लौ भी छोड़ रही थी। उसने शायद मुझे पहचान लिया था और दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार किया था। पहले वह केवल मुसकराया करता था और

झगड़ा कर-करके हर लच्छेके साथ 'सीस' की चूड़ी बँधवाती थी। एक बार मैंने उससे मज़ाक़ भी किया था—'सीसकी चूड़ियोंके लिए इतना झगड़ा तो सुहागिनें भी नहीं करतीं!'

मैंने देखा था उसका चेहरा—जैसे (पारदर्शी) शीशेके सामने गुलाब लाकर हटा लिया गया हो। लेकिन अब उस दूकानके सामने वजनी ताला लटक रहा था।

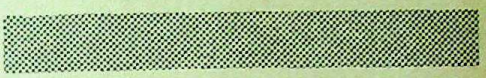

हाथ जोड़नेकी जगह, यदि कोई पास खड़ा होता था तो, उसको मुसकरा-मुसकरा कर इशारेसे मुझे दिखाया करता था। उसका वह सब न करना मुझे अपशकुनकी तरह अखर गया। मैंने मुड़कर भी देखा लेकिन वह किसी बच्चेके लिए मूँगफली तौलनेमें मेरा गुज़रना भूल चुका था।

उसी सड़कपर इक्की-दुक्की छोटी-मोटी दूकानें भी थीं। उनमें भी दिये जल रहे थे। उन दूकानोंकी रोशनी सड़कपर पड़ी हुई मैली चादरों-सी लग रही थी। इन्हीं दूकानोंमें उस बुढ़िया चूड़ीवालीकी भी एक दूकान थी। अकसर वह इसी दूकानसे चूड़ियाँ ख़रीदा करती थी। चूड़ियोंको देखकर आभा इस तरह उत्तेजित हो जाती थी जैसे बच्चे नुमाइशमें। उसकी आँखोंमें आलोकके प्रतिबिम्ब नदीके किनारे जलते मशालोंकी तरह तैरने लगते थे। हर चूड़ीकी माला खुलवा-खुलवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर देखना, फिर लच्छे बनवाना, यह पूरा काम वह समर्पित-सी किया करती थी। झगड़ा कर-करके हर लच्छेके साथ 'सीस' की चूड़ी बँधवाती थी। एक बार मैंने उससे मज़ाक़ भी किया था—'सीसकी चूड़ियोंके लिए इतना झगड़ा तो सुहागिनें भी नहीं करतीं!'

मैंने देखा था उसका चेहरा- जैसे (पारदर्शी) शीशेके सामने गुलाब लाकर हटा लिया गया हो। लेकिन अब उस दूकानके सामने वज़नी ताला लटक रहा था।

■

एक आरा चल रहा था। पहले यहाँसे गुज़रते हुए एकान्तकी-सी अनुभूति होती थी। लेकिन आरा चलनेकी उस आवाज़ने उस पूरे वातावरणको शहरी दूकानका दर्जा दे दिया था। पेट्रोमेक्सकी रोशनीमें बड़े-बड़े शहतीरोंको काटकर पोरोंमें बदला जा रहा था। उस एकान्त और इस शोरमें फागुनकी सुबह और जेठकी दोपहरकी-सी भिन्नता थी।

आभाका घर ज़्यादा दूर नहीं था। मैं जानता था कि आज वह दहलीज़के दूसरे सिरेपर खड़ी मेरे आनेका इन्तज़ार नहीं कर रही होगी। अपने बच्चोंके शोरमें शायद वह मेरा आना भी महसूस न कर सके। पहले दहलीज़के अन्दर दाख़िल होते ही बीचो-बीच बहती नालीके ऊपर पड़े तख़्ते अजीब तरह-की खोखली आवाज़ करने लगते थे। बंसीके काँटेकी तरह वह आवाज़ कहींसे भी उसे पकड़कर ले आती थी। हो सकता है कि अब वह आवाज़ ही बन्द हो गयी हो या उसपर बड़ा-सा पत्थर ढँक दिया गया हो।

मकान दिखलाई पड़ने लगे थे। मकानोंके चारों ओर चहारदीवारियाँ थीं। 'हैज' नहीं थी उनकी खिड़कियोंसे आती रोशनियाँ सड़कोंपर भी छोटे-बड़े, टेढ़े-झरोखे बनानेमें लगी थीं। कुछ खिड़कियाँ बन्द थीं, अन्दरका प्रकाश थामनेमें नाकाम कपड़ेके समान असमर्थ-सी लग रही थीं। एक-दो मकान बिलकुल अँधेरे पड़े थे। शायद उनमें रहनेवाले लोग चले गये थे। उन मकानोंको देखकर ऐसा अहसास होता था कि इस अँधियारेके मूल्यपर ही इन्होंने शान्ति ख़रीदी है।

एक मकानके बाहर बने घुमावदार ज़ीने की छोटी-छोटी सीढ़ियोंपर-से शाम धीरे चढ़कर ऊपर आ रही थी। उसके विस्तार ज़ीनेके दुतरफ़ा लगे जंगलोंकी सीमाओंको लाँघकर बिखरा पड़ रहा था। काफ़ी देर तक मुझे लगता रहा कि सन्ध्या इसी तरहके ज़ीनोंसे चढ़कर आती है। आभाके घरका ज़ीना भी घुमावदार था परन्तु ऐसा नहीं। केवल दो मोड़ थे। और उन दोनों मोड़ोंपर सीढ़ियाँ चौड़ी थीं। शामका हलीम मौला काफ़ी गाढ़ा होकर वहाँ खड़ा हो जाता था। कई बार जब मुझे ज़ीनेपर चढ़कर ऊपर जाना पड़ता था तो आभा उन मोड़ोंमें-से किसीपर खड़ी हुई मिल जाती थी। और तब लगता था जैसे वहाँपर खड़े होते अँधियारेने हमें अपनी आड़में ले लिया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन जब पूरा ज़ीना ही पार करके ऊपर छत जाना पड़ता तो अखर जाता था, जैसे मैं अभी भी रास्तेमें ही हूँ।

ज़ीनेके बाद वाली छत खुलेपनकी मिसाल प्रस्तुत करती थी। लेकिन मुझे लगातार ऐसा महसूस होता रहता था कि मेरी नज़रोंको बाँध दिया गया है। फिर भी एक खास धुनसे नज़रें आभाको खोजा करती थीं। क्योंकि मैं जानता रहता था कि वह इस वक्त रसोईघरमें होगी। उसके चेहरेपर लगा अँगीठीमें धधकते अंगारोंका प्रतिबिम्ब उसके चेहरोंको लाल कर देता था और जब वह रसोईसे बाहर जाती तो मेरा मन होता कि अपने ठण्डे हाथोंमें उसके गरम चेहरेको महसूस करूँ।

कभी आभा मेरे साथ ही नीचे उतर आती थी। उन मोड़ोंसे गुज़रते हुए जहाँ उसकी सीढ़ियाँ चौड़ी हो गयी थीं मैं उसकी साँसोंको अपनी गरदनपर महसूस करने लगता था। कभी काममें अत्यधिक व्यस्त होनेके कारण 'अभी आयी' कहकर चले जानेपर, वह खामोश कमरा मेरे कानोंमें इस तरह बजा करता था जैसे कोई मेरे दोनों कानोंको अपने हथेलियोंके दबावसे खोल-बन्द कर रहा हो। या फिर रसोईमें बरतनोंकी खनखनाहटकी तरह बजती रहती थी और फिर छौंककी तरह एकाएक 'छम्म'से हो जाती थी। उन सब आवाज़ोंमें आभाकी साँसोंका अहसास मिला करता था।

■

तिकोने पार्ककी दूसरी तरफ़ आभाका घर था। बच्चे खेल-कूदकर लौटे थे। लेकिन अभी भी दो-दो, चार-चारकी टोलियोंमें खेल-कूदकी ही बातें कर रहे थे। लगता था जैसे उनका खेल अभी भी जारी है। लेकिन पार्क एकदम सूना हो गया था। उस सूनेपनकी चादर आस-पासके घरोंपर लटकने लगी थी।

पार्कके बीचो-बीच गुलमोहरका एक-सूखा-सा पेड़ पूजाके पीपलकी तरह अमरबेल-के सूतोंसे पूरा हुआ खड़ा था। उसे देखकर खुराफ़ाती दिमाग़ या कुण्ठित मनकी कल्पना साकार होने लगती थी। उस ज़मानेमें यह पेड़ कलावेके समान लाल रंगके फूलोंसे लदा इस तरह झूमा करता था जैसे वसन्त इसीका अतिथि हो। कई बार आभाको गुलमोहरके फूलोंका गुलदस्ता ले जाकर दिया करता था और गुलदस्ता पकड़े हुए उसके दोनों हाथ, काफ़ी देर तक मेरी हथेलियोंके बीच गुलदस्ते बने रहते थे।

आभाके घरकी खिड़कियाँ दिखलाई देने लगी थीं। कभी किसी कमरेमें उजाला हो जाता था, कभी अँधेरा। प्रकाश जैसे डुब-कियाँ लगा रहा था। पासवाले घरकी दीवार-में कटी जालीसे छनकर आती हुई रोशनी सड़कपर अल्पनाकी मुद्रामें मौजूद थी। यह रोशनी हमेशा मुझे इसी मुद्रामें यहीं खड़ी मिली थी। मुझे लगा जैसे मेरे क़दम रुक गये हैं और आभाका घर एकाएक नज़दीक आ गया है।

■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दरवाज़ेके बाहर एक खाईके किनारे नये कुल मिट्टीके ढूहपर मैं खड़ा हो गया और पाँव पोपली मिट्टीमें थोड़ा-थोड़ा धँसने लगे। सामने दहलीज़से अँधेरा पिघल-पिघलकर बाहर आ रहा था।

अचानक रोशनी छातेकी तरह खुल गयी। फिर ज़ीनेसे उतरकर एक परछाईं दहलीज़में लम्बी लेटती गयी और उसके सिरका थोड़ा-सा भाग कटकर खाईकी तरफ़ जमी मिट्टीके ढूहपर छितरा गया।

'आऽभाऽ!' की पुकार सुनाई पड़ी और फिर लगा रंगमंचके परदेकी तरह कुछ परछाईं सिमटती जा रही है।

थोड़ा झुककर बिला वजह मैंने कुछ सूझने का भी प्रयत्न किया कि यह खाई क्यों खोदी गयी है। केवल आस-पास कुछ पाँव नज़र आये।

Phone : Uttarpara–1198 *Gram :* "DASUDYOG" BALLY.

Abrasives and Castings Limited

Regd. Office & Factory :
66, Dewangazi Road, P.O. Bally,
Dist. Howrah (W. Bengal)

City Office :
22, Canning Street,
Calcutta–1

Branch Office :
25, Dalal Street, Fort,
Bombay-1

Manufacturers of :
SHOTS & GRITS : For Shot Blasting, Drilling, Marble Cutting, Polishing etc.
GRINDING MEDIA (BALLS & CYLPEBS) : For Cement Mills.
And
ALL KINDS OF QUALITY CASTINGS FERROUS AND NON-FERROUS.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

■

– छेदीलाल गुप्त

प र दा

■

कहानी : कमरेके बाहर और कमरेके अन्दर लटके परदे भौतिक दीवार ही खड़ी नहीं करते हैं ज़रूरत हो तो आध्यात्मिक सहारे भी बन सकते हैं। कभी परदे होते ही नहीं तो साँसें लेना मुश्किल हो जाता।

■

दिनोंकी दोपहरी, ऐसी ही उदास, कई सालोंसे मैं देखता आ रहा हूँ। सभी कुछ ठहरा-सा, रुका-सा लगता रहा है।

मैं शायद अन्य दिनोंकी अपेक्षा आज ज़्यादा उदास हूँ। जैसे दोपहरीकी उदासी मेरी अपनी उदासी हो। मनपर कुछ ठहरता नहीं। इस समय रेस्त्राँमें बहुत लोग नहीं आते। पंखेकी मद्धिम घरघराहट और रेफ़्रीजरेटरकी मशीनके चलनेकी ध्वनि ख़ामोश किन्तु सिमटे हुए वातावरणमें गूँजती रहती है।

रामरिख वहाँ, चौराहेपर, जाकर आँखोंसे ओझल हो गये। एक गहरी साँस लेकर मैं खाली हो गया। आज कुछ ऐसा सवेरेसे ही लगता रहा। रामरिख यह भाँप गये होंगे, तभी वे बोले थे, "सब समाचार ठीक है न? बच्चा स्कूल तो जाता है?"

"हाँ, उसे स्कूलमें भरती किया है – चौथेमें।"

मेरे यह कहनेपर रामरिख बोले, "स्कूल क़ायदेका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता है, तो लड़का बेकार बनता है।"

वे रुककर बोले, "लड़का भी पढ़ता है मन लगाकर।"

बच्चा मेरा छोटा भाई है। छोटी उम्रमें ही वह सब कुछ महसूस करता है। भीतर-ही-भीतर बाहरके सब कुछको वह गुनता रहता है। स्कूल जिस दिनसे वह जाने लगा है, तबसे उसके चेहरेपर एक अजब भाव तिरता मैं देखता हूँ।

रामरिख एक स्कूलके मास्टर हैं—जान-पहचानी। वे बोले थे, "बच्चोंके ऊपर अपनी बेबसी हम लाद देते हैं। इसका असर बहुत ख़राब होता है।"

अम्मा पता नहीं क्यों उसे ज़्यादा प्यार करती है। बहुत दिनोंसे अनायास यह सवाल मेरे मनको घेरे रहा। एक दिन सहसा इसका कूल मैं पा गया था – छोटे बच्चेसे माँको स्नेह ज़्यादा होता ही है। उस समय मेरे दिमाग़में यह बात भी आयी थी कि बड़े बच्चे-के बारेमें माएँ जो कुछ सोचती-विचारती रहती होंगी, वह पूरी नहीं उतरतीं; जो आशाएँ होती होंगी, उनमें निराशा मिलती है और इसीलिए अपना प्रयत्न-प्रयास छोटे बच्चोंको आदमी बनानेमें वे करती हैं।

मैंने सबको निराश किया है।

मेरे पिताजीको आज भी इतने बड़े शहरमें एक छोटी-सी दूकानपर काम करना पड़ता है। पूरा परिवार उनके सिरपर ही है। मैं जहाँ नौकरी करता हूँ, वहाँसे कल मुझे जवाब मिल गया है। लिखा-पढ़ीका काम और मेरी आँखकी ख़राबी! कितने महीनोंसे चश्मा ख़रीदनेका प्रयत्न करता रहा, हर महीनेकी तनख़्वाहके रुपये अम्माको देते वक़्त यह बात भी उठती रही: बड़कूका चश्मा इस महीने तो आ ही जाये।" किन्तु पिताजीका ध्यान उस ओर गया ही नहीं। वे अपनी चुप्पी-से टालते रहे। कुछ कहा नहीं जा सकता—आख़िर क्यों? ऐसा भी सोचा भी नहीं जा सकता कि वे मेरे लिए चश्मा ज़रूरी नहीं समझते होंगे।

रामरिख चले गये हैं कबके, किन्तु मुझे लग रहा है कि वह मेरे सामने अभी भी बैठे हैं। वे बिना चाय पिये गये। मुझे रेलवे बैठा देख आ गये थे। वे चाय नहीं पीते।

मैं पिताजीके बारेमें वह सब कुछ सोच रहा था, जो नहीं सोचना चाहिए। बच्चोंको वे श्रवणकुमारकी कहानी सुनाते हैं कि कैसा ऐसा पुत्र था, जो अपने माता-पिताको कंधे पर ढोता रहा। वह राम-लक्ष्मणकी कथा भी सुनाते हैं कि उन्होंने राजा दशरथके वचनों पर चौदह वर्ष वनवास व्यतीत किया।

मुझे यह सब कुछ अच्छा नहीं लगता। शायद वे ये कहानियाँ इसीलिए बच्चोंको सुनाते हों कि मुझे अच्छी न लगें।

मेरा कैरियर तो बिगड़ ही गया। अब बच्चाकी बारी है।

वह कोई स्कूल है और स्कूल कैसा भी हो, फ़ीस माफ़ जो है इसलिए वह वहीं पढ़ेगा। पढ़ाईकी तरफ़ उनका ध्यान नहीं है – फ़ीस की तरफ़ उनका ध्यान है। बच्चा नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खरीदा गया। मैं अब बे-मतलबका हो गया—सबके लिए।

दरअसल मेरी आँखें इतनी खराब नहीं हैं—दूरका सब कुछ साफ़ दीखता है, नज़दीकका पावर घट गया है। लेजरपर गरदन ऊँची करके सब कुछ सही-सही देख लेता हूँ, गरदनमें दर्द होता ज़रूर है। मगर यह दर्द फ़र्सनको महसूस क्यों हो, जब कि बापको नहीं होता।

रामरिख बढ़िया सूट पहने हुए थे। और उनके चेहरेपर प्रसन्नता छायी थी। और वे कहीं मिलने-जुलने जा रहे थे। उनका मेरा घर उत्तर-पश्चिमके थोड़े फ़ासलेपर है। रेस्त्राँमें जब वे आये थे, तब बहुत खुश थे लेकिन मुझे ग़मगीन देखकर वे भी उदास हो गये थे। सिवा इसके और कोई कारण नहीं है इस सवालका कि— सब ठीक है न ?

और यह भी समझमें नहीं आता कि 'सब ठीक नहीं है' कहनेके बजाय मैंने हामी क्यों भरी ?

इसके पहले भी वह कई बार इसी तरह मिल चुके हैं और यहींसे बातें शुरू की हैं— सब ठीक है न ?

वे बराबर यहींसे बातें शुरू क्यों करते हैं? लगता है, उन्हें मेरे घरके बे-ठीक चलनेका पता है, या एक अयाचित गर्व उनके मनमें 'कि उनका सब ठीक चल रहा है'— इसका हो। और कहीं उन्हें इस बातका पता तो नहीं चल गया है कि चश्मेके नहीं खरीदनेकी वजह मेरी नौकरी छूट गयी है !

एक घिनका भाव मेरे मनमें पैदा हुआ, पता नहीं क्यों, किस अभिप्रायसे। बस, घिनसे मैं सिहर उठा और भाव बदलनेके लिए बाहर सड़ककी तरफ़ देखने लगा।

साँझ हो आयी है। रेस्त्राँमें बहुत देर मैं बैठा रहा। देर तक सोचता रहा—क्या सब। मेरे सोचनेसे होता क्या है? क्यों मैं इतना सोचता हूँ। अपने-आपपर ज़रा खीझ भी हुई।

बहुत सम्भव है। पिताजीकी आदत बहुत खराब है, वे सब किसीसे अपनी मजबूरियोंका बयान करते रहते हैं। माँ भी ऐसी ही है।

मेरे पिताजी बहुत कम तनख्वाह पाते हैं और बच्चोंके कैरियरकी ओर ध्यान नहीं दे पाते। पिताजी हर महीनेका वेतन दो-पाँच करके महीना पूरा होनेके पहले ही ले लेते हैं। यदि रामरिखजीको, किसीको भी यह सब पता है तो बुरी बात है। वे मेरे बारेमें कैसा-क्या सोचते होंगे। मुझे मेरा लाचार होना बुरा नहीं लगता मगर लोगोंका यह सोचना कि मैं लाचार हूँ, पता नहीं क्यों मुझे बहुत सालता है। जी चाहता है, मुक्का बाँधकर मेज़पर दे मारूँ और सफ़ेद पत्थर टूट जाये, जी चाहता है....।

■

इधर-उधरसे चक्कर काटकर रेस्त्राँमें आ

परदा : छेदीलाल गुप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैठा। मेजपर बिछे सफेद पत्थरपर रोलकी तरह आँखें गड़ाये रहता हूँ। आज छुट्टीका दिन नहीं है, बहुत-से बेकार दिनोंमें आज एक दिन है। समय दिन ढलेका है, रेस्त्राँमें भीड़-भाड़ भी खूब है।

मेवालाल भी इसी रेस्त्राँमें चाय पीते हैं। चौराहेपर सी० आई० टी० की नयी बिल्डिंग जो बनी है, उसीमें फ्लैट लेकर वे रहते हैं। यह गाँव नहीं है, जो एक-दूसरेको भलिभाँति जानें, एक-दूसरेकी खोज-खबर रखें। मेवालाल किसीको जाने—यह बात भी नहीं है। मगर बातें सभी एक-दूसरेसे करते हैं। वे आजकी लड़कियोंकी बातें कहते हैं। अजीब तरहका पहरावा पहनती हैं लड़कियाँ, बिलकुल शरीरसे चिपका हुआ, छाती और नितम्ब उभरा हुआ। यह सब उन्हें अच्छा नहीं लगता मगर उनकी पुत्री भी ऐसा ही पहरावा पसन्द करती है। ज़माने का रौ ऐसा ही है। दूसरोंके लिए तो निन्दा की जा सकती है किन्तु अपनी जगह कोई कुछ नहीं कर सकता।

बेयरेने दो अण्डोंका पोच उनके सामने ला रखा है और मेवालाल कहते हैं—'पिछले दिनों जॉर्नडिस हो गयी थी। डॉक्टरने कहा अण्डे खानेके लिए।' यह कहनेकी कोई ज़रूरत नहीं थी मगर झेंप मिटानेके लिए शायद यह कहना ज़रूरी हो गया कि शहरमें कुछ शुद्ध मिलता भी तो नहीं, न घी, न दूध, न आटा और न हवा, न धूप, कुछ भी नहीं।

डॉक्टरने जब मेरी आँखकी जाँच की थी तब यही कहा था—'चश्मा ले लो। घी और दूधका व्यवहार किया करो।' मैं हाँक आया था—यह क्या बड़ी बात है। किन्तु हम कान्यकुब्ज हैं और यह सब छूत पाप है। बात सही यह है कि चश्मा, अण्डे और आधा सेर दूध! कितना मुश्किल है मेरे लिए! इतना यदि खर्च कर पाता तो बच्चाकी पढ़ाई अच्छे स्कूलमें क्यों नहीं कराता।

हमारी मेज़पर-की सामने पड़ी कुर्सी खाली थी किन्तु लग रहा था कि राजीव वहाँ बैठे हैं। मैं सड़ककी तरफ़ देख रहा था—एक रिक्शावाला कई आदमियोंकी सवारी बैठाये बड़ी मशक़्क़तसे खींचता हुआ लिये जा रहा है।

अपने मनपर बड़ा बोझ मालूम पड़ा, जैसे मन बैठा जा रहा हो। मैं साँस नहीं ले पा रहा हूँ और दम कहीं अटक गया है। अख़बार जो सामने पड़ा था, और बाक़ी कालमसे जो पृष्ठ भरा पड़ा था, उसमें अँधेरा घिरा है।

मेवालाल बोले, "देखिए न, मेरा लड़का यहाँ स्कूलमें पढ़ता है और वह स्कूल यहाँ बढ़िया है और वहाँ मुझे फ़ीस भी अधिक देनी पड़ती है। लड़केका स्टैण्डर्ड मेण्टेन करने में खूब पैसा लगाता हूँ, फिर भी लड़का पढ़ना नहीं चाहता।" मेवालाल अपनी बातके इस प्रभावको मिटानेके लिए कि इसमें उनके लड़केका दोष नहीं है, आगे कहते हैं, "

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्कूलमें उसे घबराहट होती है, बड़े-बड़े घरोंके लड़के पढ़ते हैं—गाड़ीपर आते हैं लेकिन मैं कहाँसे गाड़ी दूँ। पुराने ज़मानेमें लोग कहते थे, चादर देखकर पैर पसारना चाहिए। ज़िन्दगी होड़में पड़ी है—समस्या सब यहीं है।"

इस बातसे मेरे बच्चाका कोई सम्बन्ध नहीं है किन्तु न जाने क्यों उसका मायूस चेहरा मेरी आँखोंमें झाँकने लगा है। जैसे वह बहुत बिसुर रहा है। आँखोंके भीतरके उजले गोलेपर नाचती हुई चमकती हुई काली पुतलियाँ बुझ-सी गयी हैं। और गोल चेहरेपर हर जगह बेबस करुणा गहरा गयी है।

दाँतोंसे अपने होठ मैं काट लेता हूँ—बच्चा मेरा छोटा भाई है और वह स्टैण्डर्डकी पढ़ाईमें फ़ेल होगा! वह सोसाइटी-मैनर नहीं सीख पायेगा! उसे भी बेबसी बना देगी मेरी तरह और उसकी भी आँखें खराब हो जायेंगी मेरी तरह! और वह तब अम्माके लिए बे-मतलब हो जायेगा! और फिर यदि अम्माको कोई बच्चा हुआ तो वह अपना प्रयत्न और प्रयास उसके लिए किया करेगी। अपनी उमंगें और खुशियाँ उसपर न्यौछावर करेगी। बच्चा पढ़-लिखकर बड़ा होगा। उसके ब्याहके लिए लोग आयेंगे, हित-नात आयेंगे। बिरादरीमें सम्मान मिलेगा।

अम्मा यह भी सोचेगी—यह बड़कूके जैसा नहीं होगा, क्या हाथमें पाँचों अँगुलियाँ समान होती हैं—कोई छोटी है, कोई बड़ी!

मेरे ब्याहकी बात भी चली थी। मुझे फ़िल्म अभिनेत्री मीनाकुमारीका रूप अच्छा लगता था, होनेवाली दुलहिनकी कल्पनामें बार-बार उसीका रूप उभर आता था और उन दिनों तो सड़कपर चलते हुए मुझे जो लड़की दीखती थी वह मेरी दुलहिन होती थी और उसका रूप मीनाकुमारीका रूप होता था।

यह नशा तब उतरा, जब ब्याहकी आयी बातके बाद देने-लेनेकी चर्चा चली और पिताजी एकदम गुमसुम हो गये। मैं हायर सेकेण्ड्रीकी परीक्षामें अनुत्तीर्ण हो गया था क्योंकि स्कूलके मास्टर ट्यूशनपर नहीं आते थे।

एक घिनका भाव मेरे मनमें पैदा हुआ, पता नहीं क्यों, किस अभिप्रायसे। बस, घिनसे मैं सिहर उठा और भाव बदलनेके लिए बाहर सड़ककी तरफ़ देखने लगा।

साँझ हो आयी है। रेस्त्राँमें बहुत देर मैं बैठा रहा। देर तक सोचता रहा—क्या सब! मेरे सोचनेसे होता क्या है? क्यों मैं इतना सोचता हूँ। अपने-आपपर ज़रा खीझ भी हुई।

कल या फिर कभी रामरिख मिलेंगे तो कहूँगा कि सातवीं-आठवींका कोई ट्यूशन मिले तो लगा दें—सब ठीक नहीं चल रहा है। हालतपर परदा डालनेसे काम नहीं चलेगा। किन्तु सभी तो एक-दूसरेसे परदा रखते हैं। सबके आगे तो सब कुछ खुला है, फिर सब एक-दूसरेसे परदा रखते हैं।

बेयरा इस बीच कई बार मेरी ओर देख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुका है, एक प्याला चाय लेकर इतनी देर बैठना ठीक नहीं। बैठनेके लिए पार्क बना है। दरवाज़ेपर कैश-बक्सके पास बैठे रेस्त्राँके मालिक भवतारणीबाबू भी बार-बार मुड़कर देख रहे थे। उन्होंने कहा, "दिनेशबाबू, आज आप ऑफ़िस नहीं गोया। मेजाज तो ठीक है?" लगता है, भवतारणीबाबू बहुत सहानुभूति रखते हैं लेकिन यह एक परदा है। शायद आज सहानुभूतिका अर्थ बदल गया है। भवतारणीबाबू एक प्याला चाय लेकर बैठनेसे खुश नहीं होते।

मैं उठ गया, तभी उधरसे रामरिख आते हुए दीखे। मैं उनसे मिलनेके लिए बाहर न निकलकर कुरसीपर बैठ गया। एक प्याला चाय और ले ली। रामरिख और मेरे बीच परदा पड़ा रहे यही ठीक है। एक गहरी साँस खींचकर कहता हूँ, "हाँ, तारणीबाबू, सब ठीक है, छुट्टी ले रखी है।"

भवतारणीबाबू सुनते हैं या नहीं, नहीं जानता किन्तु मैं यह ज़रूर सोचने लगा हूँ कि अम्माने कमरेके बीचो-बीच परदा लगाकर बच्चाके पढ़ने और मेरे सोने-बैठनेके लिए जगह निकाल दी है, उसके बीच भी एक परदा मैं और टाँग दूँ, मैं किसीको न देखूँ और न कोई मुझे देखे। मेरे चेहरेकी उदासी सबकी आँखोंसे छिपी रहे, देखनेसे थोड़ी राहत मिलेगी।

ALL PURPOSE

STEELS

Such as

HIGH CARBON STEELS, HIGH SPEED STEELS, STAINLESS STEELS, NON SHRINKING, OIL HARDENING, DIE STEELS, NICKEL STEELS, BRIGHT SHAFTING, ETC., ETC.,

Extensive Stocks Available

D. A. MEHRA

STEELS SPECIALISTS AND IMPORTERS

89, Netaji Subhas Road, Calcutta-1.

Phone { 22 : 0781 / 22 : 0782

Gram : "DAMEHRA"

WE ALSO MAKE SPRINGS TO REQUIRED SPECIFICATIONS

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—महेन्द्र भल्ला

फुन्सियाँ

कहानी : वयःसन्धिपर रीतिकालकी कविताएँ पढ़ी होंगी आपने, आप उसी स्थितिको इस कहानीके वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्यमें देखिए।

उसने निश्चय किया कि वह कल उमेशको ज़रूर बतायेगा। —उसपर ऐसी बातोंका असर पड़ता है। और फिर संस्कृत नामोंपर तो वह लट्टू है।

भीतरसे उसे प्रभाकी आवाज़ सुनाई दी। उसका दिल फ़ौरन उछलने लगा। उसने प्यारसे फूलोंको देखा और जल्दी-जल्दी दूसरे रास्तेसे अन्दर चला गया। अन्दर जाके उसने कान लगाकर सुना—हाँ वही है। प्रभा ही है। प्रभा···· प्रभो—! गुसलखानेमें जाके उसने अच्छी तरह साबुन लगाके मुँह धोया। शीशेके सामने आके कंघी करने लगा। बाल ठीकसे बैठ नहीं रहे थे।

नन्हीं एकदम ही भीतर आ गयी।

"जब देखो पट्टे सँवारता रहता है!"

"तू क्यों बड़बड़ाती है! तू अपनी क़मीज़ोंको तंग करती जा, बैठके—अभी तो चलना मुश्किल है। हिलना भी मुश्किल कर ले—"

नन्हींने इसका कोई जवाब नहीं दिया। वह भी उससे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लड़ना नहीं चाहता था, क्योंकि प्रभा उधर बैठी थी। वह नन्हींकी सहेली थी। ज़्यादा लड़ाई होनेसे वह उधर, उनके पास बैठ नहीं पायेगा और नन्हीं शायद प्रभासे कह भी दे कि वह पट्टे बहुत देर तक सँवारता रहता है। ....किसी-किसी दिन उसका दिमाग़ काम नहीं करता। उस दिन प्रभासे यह कह दिया कि जबसे उसने दाढ़ी बनानी शुरू की है तबसे उसका हाथ गालोंसे अलग नहीं होता। उसके सामने बैठे होनेपर भी कह दिया। यह सुनते ही उसने अपना हाथ फ़ौरन हटा लिया था। इसपर प्रभा और नन्हीं खिलखिलाके हँस पड़ी थीं। वह बुरी तरहसे शरमा रहा था। उनके साथ हँसनेसे (उससे रहा नहीं गया था) उसकी झेंप कुछ कम हो गयी थी, तो भी उस दिनके बाद वह एक हफ़्तेके लिए प्रभाके आनेपर दूसरे कमरेमें नहीं जा पाया था।

नन्हीं खड़ी रही। वह उसके हटनेका इन्तज़ार कर रही थी। वह खड़ा रहा।

"तू दूसरा शीशा ले ले। उसी कमरेमें ले जा। दोनों सखियाँ मिलके मुखड़े देखो। और काम ही क्या है...।" न लड़नेकी इच्छाके बावजूद वह बोला। उसे बालोंवाली बात बहुत चुभी थी।

"तो तुम्हें भी पता चल गया है कि प्रभा आयी है!"

वह लाल हो गया। तो क्या नन्हीं....?

"उसकी आवाज़ तो बाज़ारमें सुनाई देती है। बड़ी सहेली लिये फिरती है। काली

तोरी है...,

"तेरे दोस्त होंगे काले करेले! उमेश-घुमेश गाता रहता है। खड़े होनेकी अक़ल नहीं है..."

यह बात उसे सही लगी। उमेश बड़े बेहूदे तरीक़ेसे टाँगें फैलाके होता था।

"अच्छा-अच्छा, अब जा यहाँसे। खड़ी-खड़ी क्या कर रही है? जा काली..." मगर उसने फ़िकरा पूरा किया।

"चली जाऊँगी!"

वह खड़ी रही। उसे इसमें कोई लगा। उसके बाल अब लगभग ठीकसे गये थे। तो भी वह कंघी हाथमें लिये बना रहा।

उसे हटता न देखकर नन्हींने शृंगार-मेज़का दराज़ खोला। पूरा नहीं, थोड़ा-सा हाथ अन्दर डालके उसने एक शीशी निकाली। उसे फ़ौरन दोनों हाथोंसे ढाँप लिया। तेज़ीसे दूसरे कमरेकी तरफ़ चलने लगी। पहचान गया। उसकी बड़ी बहन भी इस्तेमाल करती थी।

"अच्छा, तू लैक्टोकेलामाइन लायी है। कहूँगा माँसे!"

"कह देना!" वह दूसरे कमरेमें दाखिल हो गयी।

उसे मालूम था, वह माँको चोरीसे लाती होगी। पैसे जमा करके वह ऐसी चीज़ें लाती रहती है!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने दूसरे कमरेकी तरफ़ देखा। नन्हींने अन्दर जाते वक़्त गुस्सेमें दरवाज़ेके दोनों किवाड़ोंको बन्द करनेके लिए पीछे फेंका था। इससे दरवाजा थोड़ा खुला रह गया था। इससे उनकी बातचीतकी भनक आ रही थी। सहसा प्रभाकी आवाज़की। वह दरवाज़ेके पास चला गया। दरारसे उसने अन्दर देखा। दोनों सटी बैठी बड़े ग़ौरसे शीशीके लेबलको पढ़ रही थीं।

"यह तो बहुत अच्छी है।" यह कहकर नन्हींने ढक्कन खोला और उँगलीपर थोड़ी-सी 'टोकेलामाइन' लेके अपने चेहरेकी फुन्सियों-पर लगानी शुरू की।

"ऐसे मत लगाओ प्रभा! इसे तो रातको लगाना चाहिए। दो बार साबुन मलके, गरम पानीसे मुँह धोके, फिर अच्छी तरह इसे लगानी चाहिए। तब फ़ायदा होता है। मैंने दो बार ऐसे लगायी है। मुझे तो ठीक लगता है। नहीं क्या?" यह कहकर नन्हींने अपना मुँह थोड़ा आगे कर दिया। प्रभाने ध्यानसे देखा और सिर हिला दिया।

इस बातसे उसे गुदगुदी होने लगी कि दोनोंके चेहरोंपर फुन्सियाँ हैं और दोनों दर-वाजे बन्द करके फुन्सियोंकी बातें कर रही हैं। हँसी उसके भीतर घुमड़ने लगी मगर उसने उसे रोक रखा।····उमेशसे कहूँगा कि लड़-कियाँ इस तरह बातें करती हैं, अपनी फुन्सियों-के बारेमें। मगर वह पूछेगा कि मुझे कैसे मालूम। जबतक नहीं बताऊँगा वह पूछता जायेगा! उसकी यह आदत गन्दी है!

इस बातसे उसे गुदगुदी होने लगी कि दोनोंके चेहरोंपर फुन्सियाँ हैं और दोनों दरवाजे बन्द करके फुन्सियोंकी बातें कररही हैं। हँसी उसके भीतर घुमड़ने लगी मगर उसने उसे रोक रखा।····उमेशसे कहूँगा कि लड़कियाँ इस तरह बातें करती हैं, अपनी फुन्सियोंके बारेमें। मगर वह पूछेगा कि मुझे कैसे मालूम। जबतक नहीं बताऊँगा वह पूछता जायेगा! उसकी यह आदत गन्दी है! नहीं, उसे नहीं बताऊँगा।

नहीं, उसे नहीं बताऊँगा! उसे उसका खड़े होनेका बेहूदा तरीक़ा भी याद हो आया।···· नहीं, उसे नहीं बताऊँगा! नन्हींने उसके हाथसे शीशी ले ली और जल्दीसे ढक्कन चढ़ाके उसके सामने रख दी। प्रभा शीशीकी ओर देखती हुई उँगली अपने दायें गालकी फुन्सियोंपर फेरने लगी। नन्हींका दिल छोटा है! उसकी इच्छा हुई उसे डाँटके कहे 'दे दे न उसे! ज़रा-सी देनेसे जान तो नहीं निकल जायेगी!' मगर वह चुप रहा।

"लेकिन उन्हें—कइयोंको—बुरी नहीं लगती!" प्रभाने कहा। नन्हींने अविश्वाससे उसे देखा, फिर शीशीको।

"हाँ-हाँ, मैं ठीक कह रही हूँ। एक कविता है अँगरेज़ीकी—मुझे याद नहीं किसने लिखी है। कुछ ऐसे है—मैं तुम्हारी आँखों, तुम्हारे लाल होठों, तुम्हारी भवों और तुम्हारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फुन्सियोंवाले गालोंको भी प्यार करता हूँ ।''

'प्यार करता हूँ' उसने फुसफुसाकर और शरमाकर कहा ।

उसने ऐसी कोई कविता नहीं पढ़ी थी । शायद प्रभा मनसे गढ़ रही थी । मगर बात कुछ-कुछ सही लगी । उसे ख़ुद प्रभाकी फुन्सियाँ बुरी नहीं लगती थीं ।—इनके बारेमें उसे ज़्यादा चिन्ता नहीं करनी चाहिए । कभी कहूँगा !

नन्हींकी आँखोंमें लेकिन अभीतक अविश्वास था ।

''हाँ-हाँ, मैं ठीक कह रही हूँ । मंजूने मुझे बताया है । तू जानती है, उनके घर कितनी किताबें हैं । लाइब्रेरी-की-लाइब्रेरी है ! मैं उससे किताब लेके आऊँगी एक दिन । तुम्हें दिखाऊँगी ।''

''उस दिन मैंने तेरी मंजू फिर देखी, उसीके साथ···''

''हाय नन्हीं ! जोड़ हो तो ऐसा ! दोनों सुन्दर हैं । वह एक क़दम आगे ही है । मगर मंजू भी कम नहीं है । मेरी तो इच्छा होती है, दोनोंको देखती रहूँ, देखती रहूँ····''

नन्हींने भी सिर हिलाया । दोनोंके तरसते चेहरे उसे अजीब लगे ।

शायद उन दोनोंकी सुन्दरताको याद करके प्रभाको अपने चेहरेका बिगाड़ याद हो आया । उसने शीशी उठा ली और भीख माँगनेके लहजेमें कहा, ''आज मैं ले जाती हूँ, कल लौटा दूँगी !'' नन्हींने उसकी तरफ़ देखा । देखती रही । वह देना नहीं चाहती थी । शायद कोई बहाना ढूँढ़ रही थी । उसने महसूस किया कि अगर इस लहजेमें उससे कुछ माँगे तो वह देनेमें एक सेकण्ड न लगाये !

उसकी इच्छा हुई कि दरवाज़ेको फटाकेसे खोलके उन्हें डरा दे । उसके हाथ उठे । फिर वह रुक गया ।—डर तो वे ज़रूर जायेंगी, पर उन्होंने इसे हँसीमें न लिया—नन्हीं नहीं लेगी—तो ठीक नहीं होगा । बादमें तकलीफ़ होगी !

उसने थोड़ा सोचनेके बाद फ़ैसला किया कि वह दरवाज़ेसे थोड़ा हटके बहुत ज़ोरसे नन्हींका नाम चिल्लायेगा और तुरन्त दरवाज़ेमें उन्हें चौंकते हुए देखेगा । वहीं खड़े-खड़े ज़ोरसे गरदन मोड़ी और चिल्लाया, ''लैक्टोकाला''!

एकाएक अपनी ग़लती समझकर वह दूसरे कमरेकी तरफ़ दौड़ा । वहाँ फुर्तीसे पछताने लगा ।

उसके पीछे-पीछे नन्हीं धमधमाती आ गयी ।

''क्या कर रहा है ?''

''क्या कर रहा है ! घण्टों सहेलीके साथ बैठी रहेगी ! मुझे रोटी नहीं देगी क्या ?''

नन्हींने ग़ुस्सेसे उसकी तरफ़ देखा । फिर बड़बड़ाती हुई रसोईमें चली गयी । जल्दी जल्दी एक तश्तरीमें दो चपातियाँ, दाल एक कटोरी और चपातियोंपर भड़वा रखके ले आयी ।

''ले !'' तश्तरी उसने मेज़पर पटककर दी । दालकी कटोरी थोड़ा उछली—''ले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आगेसे मेरे साथ मत बोला कर!" वह हँसती होके दूसरे कमरेमें चली गयी।

खाते वक़्त उसने सोचा कि वह जितना ही लड़ना नहीं चाहता, लड़ाई उतनी ही बढ़ रही है। अब वह रो पड़ी है। उसे लगा, कुछ चीजें चाहनेपर उसके बसमें नहीं रहतीं—खासकर जिनके बारेमें यक़ीन होता है कि रहेंगी।

रोटी खानेके बाद उसने देखा, नन्हीं पानी नहीं दे गयी है। उसे आवाज़ देनेके लिए उसने मुँह उठाया। पर रुक गया। खुद रसोईमें गया। गिलास उठाया, पानी लिया और आँगनमें खड़ा हो पीने लगा। प्रभा और नन्हीं देख रही थीं। वह चाहता था कि नन्हीं उसे खुद पानी लेके पीता देख ले।

उसने कनखियोंसे देखा कि नन्हीं रो नहीं रही है, दोनों पहलेकी तरह बातें कर रही हैं। थोड़ी देरके बाद वह अन्दर चला गया और उनके सामने कुरसीपर बैठ गया। उसके अन्दर पहुँचते ही दोनोंने बातचीत रोक दी। उसके कानमें सिर्फ़ इतना ही हिस्सा पड़ा, "....बहुत रोब जमाते हैं—!"

उसने प्रभाकी तरफ़ देखा, प्रभाने उसकी तरफ़। दोनोंमें-से किसीने 'नमस्ते' या 'हलो' आदि नहीं कहा। हमेशाकी तरह, उसने सोचा, और हमेशाकी तरह उसे लगा, उसे कुछ कहना चाहिए था।

"सुनील भी बहुत रोब जमाता है!" प्रभाने बात जारी रखते हुए कहा। सुनील उसका भाई था। "सब लड़के घरमें बहनों-पर रोब जमाते हैं। आप भी जमाते हैं न?"

"क्या?"

"रोब।"

"रोब..." वह चुप रहा। उसे इसका जवाब नहीं सूझा। असलमें उसने इस बारेमें पहले कभी सोचा नहीं था। "नहीं ऐसी बात तो नहीं है...."

"ऐसी बात क्यों नहीं है। बात तो ऐसी ही है। असलमें हम लिहाज़ कर देती हैं भाइयोंका। क्यों नन्हीं?"

"और क्या!"

"हम भी लिहाज़ कर देते हैं..." मगर वह 'बहनोंका' जोड़ नहीं पाया। कर पाता तो मनमें नन्हींके साथ प्रभाको भी शामिल कर लेता।...तब तो सब किया-कराया धरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रह जाता। उसको प्रभाका 'भाइयों' कहना भी अखर रहा था। हालाँ कि वह इस नतीजेपर पहुँच चुका था कि उसने यों ही कहा था।

"अरे वाह ! सुना नन्हीं ! ये भी लिहाज़ करते हैं ! न करें तो बहनें पता नहीं कहाँ जायें !"

वह चुप रहा। उसे बातोंका यह रुख पसन्द नहीं आ रहा था। नन्हीं मुँह फुलाये बैठी थी। उसने इसके बारेमें कोई धारणा बनायी भी नहीं थी। वह कुछ चुटकुले सुनाना चाहता था ताकि उस दिनकी तरह आज भी दो-तीन घण्टे ख़ूब हँसीके गुज़रें। प्रभाकी हँसी कमरेमें भरकर गुदगुदी-सी करती थी। उसकी इच्छा उसे और भी हँसानेकी होती थी। उस दिन तो बुरा हाल हो गया था, हँसते-हँसते। हँसी बन्द ही नहीं हो रही थी। प्रभाकी आँखोंमें पानी आ गया था। "बस भई, अब और मत हँसाइए। अब हँसा नहीं जाता !" प्रभाने विनतीके स्वरमें कहा था। तभी उसने कुछ कहा था और प्रभा पेटको दोनों हाथोंसे दबाती ज़ोरसे हँस पड़ी थी। बादमें बड़े प्यारसे देखते हुए बोली थी, "आप बहुत....." मगर इसके आगे उसे शब्द नहीं मिल रहा था। तब उसीने जोड़ा था "...बहुत हैं। आप बहुत-बहुत हैं।" इसपर फिर हँसी फूट पड़ी थी। हँसी थमनेके बाद प्रभाने उसे बड़े प्यारसे फिर देखा था। उसे एकाएक रोमांच हुआ था। तब उसकी हँसी बन्द हो गयी थी। उसे रोमांचका 'स्वाद' समे करके तक याद था।

दो शराबियोंका एक नया लतीफ़ा उसने आज ही सुना था। उसे वह अभिनय करके सुनाना चाहता था। प्रभाने मानो उसकी इच्छाको ताड़कर कहा, "कोई चुटकुला सुनाइए। आपको तो इतने आते हैं! उस दिन तो हँसा-हँसाके मार डाला!" उसकी आँखोंमें मुसकराहट थी।

"आज तो आपकी बारी है," उसने यों ही कहा।

"मुझे तो कोई नहीं आता। मैं तो इधर सुनती हूँ उधर भूल जाती हूँ। अच्छे जो उस दिन सुनाये उनमेंसे मुझे सिर्फ़ दो याद रहे। वही मैंने अपनी सहेलियोंको सुनाये। ओफ़ ! मैं बता नहीं सकती, वह कितना हँसीं !"

उसने सोचा, अगर वह होता तो उसे और उसकी सहेलियोंको इतना हँसाता कि कोई और नहीं हँसा सकता। – अभी कॉलिज वालोंको पता नहीं चला मगर स्कूलमें तो इस कलाका वही माहिर माना जाता था।

"उस दिनसे भी ज़्यादा हँसी ?"

"यह तो पता नहीं। नहीं, नहीं उस दिनसे ज़्यादा नहीं। उस दिन तो पेटमें दर्द होने लगा था। क्यों नन्हीं ? और उस दिन घर जाके मैं किसीसे नहीं बोली। बोला ही नहीं जा रहा था। सब मुझसे पूछ रहे थे कि क्या बात है और मैं चुप थी। एक घण्टा चुप रहनेके बाद मैंने बातें करना शुरू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिया था।" इसपर तीनों हँसे। प्रभाने कानोंने तारेकी शक्लके सफ़ेद काँटे पहने थे। वह साँवली थी। दाँत उसके बहुत सफ़ेद थे। जब हँसती तो दाँतोंके साथ काँटे भी चमक उठते। तब उसे वह बहुत ही बढ़िया लगती।

उनकी उत्सुकता पूरी तरहसे जग गयी थी। उस दिनकी याद भी ताज़ा हो गयी थी। वे हँसनेके लिए तैयार थीं। यही क्षण था, उसने अपने हँसोड़पनके अनुभवसे जान लिया था। अब मामूली-सा लतीफ़ा भी खूब रंग लायेगा। और मेरे पास शुरू करनेके लिए तो बहुत कमालका है। वह मनमें हँसा।

"बहुत अच्छा लतीफ़ा है न! आपको अभी से ही हँसी आ रही है!" प्रभा बोली।

"हाँ।"

"मेरे साथ भी यही होता है। अच्छी बात नहीं सुना पाती। मुझे पहले ही हँसी आने लगती है।" वह हँसी। वह भी हँसा। नन्हीं भी।

"एक छोटा-मोटा तो यही हो गया," नन्हींने कहा। इसपर तीनों हँसे।

"अच्छा सुनिए! एक शराबी लड़खड़ाता हुआ दूसरे लड़खड़ातेसे मिला, मेरा मतलब दूसरे....." मगर वे दोनों ज़ोरसे हँस पड़ी थीं। यह अनायास ही हो गया था। मगर वह इस तरहसे मुसकराया मानो उसने जानके किया हो।

"शुरूसे शुरू करता हूँ। एक लड़खड़ाता हुआ" वह जानके किया था। हँसी बीचमें दब गयी। अचानक भाई साहबकी आवाज़ सुनकर वह चुप हो गया।

"भाई साहब!" कहकर उसने नन्हींकी तरफ़ देखा।

"आज जल्दी आ गये!"

उसने अनायास सामने मेज़पर पड़ी एक किताब उठा ली। मगर प्रभाको देखता जान उसने किताब वहीं रख दी और प्रभाकी ओर न देखते हुए भाई साहबके आनेकी प्रतीक्षा करने लगा।

उन्होंने आके सबको देखा। प्रभाने हाथ जोड़कर उन्हें नमस्ते की। उन्होंने कहा, "हलो प्रभा, कैसी हो?"

"अच्छी हूँ जी!" प्रभाने जवाब दिया। उसे लगा, प्रभा अभी कुछ देर पहले बड़ी थी, अब छोटी हो गयी है।

"कुक्की, तुम्हें छुट्टी हो गयी?" उन्होंने उससे पूछा। उनका उसे 'कुक्की' कहना बुरा लगा। घरमें, घरवालोंके सामने ठीक है, मगर बाहरवालोंके सामने···मेरा नाम किसलिए है!

"हाँ। मुझे रोज़ इससे पहले हो जाती है।"

"अच्छा!" यह कह वह वहीं बैठ गये। वह कुरसीमें सरका। प्रभा उसे देख रही थी। वह थोड़ा-सा घबरा गया।

"आप जल्दी आ गये आज?" नन्हींने पूछा।

"हाँ। मुझे इस तरफ़ काम था। सोचा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाय घरपर ही लूँगा। उसके बाद बाज़ार।"

माँ नहीं आयी अभी ?"

"नहीं।"

"और प्रभा, तेरे बाबूजी ठीक हैं ? बाक़ी सब भी···सुनील ?"

"हाँ, सब ठीक हैं। आप तो आजकल आते नहीं।"

उन्होंने इसका कोई जवाब नहीं दिया। सिर्फ़ हँस दिये। कुक्कीको उनका प्रभासे बातें करना अजीब लगा। कुछ देर सब चुप रहे।

"नन्हीं, चाय तो पिलाओ ! तुम लोग क्या पी चुके हो ?····नहीं ! तो जा कुक्की, बाज़ारसे समोसे ले आ। सब साथ-साथ पीते हैं !" यह कहकर उन्होंने जेबसे एक रुपयेका नोट निकालके कुक्कीकी तरफ़ बढ़ाया। कुक्कीने नोट ले लिया। उसका चेहरा सुर्ख़ हो गया। वह बैठा रहा।

"जा जल्दी ले आ। मुझे जल्दी जाना है।"

"अभी जाता हूँ," उसने थोड़ी रुखाईसे कहा। प्रभाने उसकी तरफ़ देखा, फिर भाई साहबकी तरफ़ !

"आप जाके थोड़ी देरमें ही लौट आयेंगे क्या ?" प्रभाने पूछा, "मेरा मतलब है अपना काम करके ?"

"हाँ, मुझे ज़्यादा देर तो नहीं लगनी चाहिए।"

"उसके बाद दफ़्तर नहीं जायेंगे क्या ?"

"नहीं भी जा सकता हूँ। क्यों ?"

नन्हींको मेरे साथ भेज दीजिए।"

"कहाँ।"

"हमारे घर !"

"कोई ख़ास बात है क्या ?"

"नहीं, ऐसे ही···"

"कितनी देरके लिए ?"

"सूरज डूबनेसे पहले-पहले आ जायेगी।"

"तुम क्या पढ़ती-लिखती नहीं आजकल ?"

उसे मालूम था, वे पढ़ाईकी बात करेंगे—"पढ़ती हूँ। मगर आज पढ़ाईसे छुट्टी की है।"

"आज क्या करोगी ?"

"बातें ! आज सिर्फ़ बातें करेंगे !"

भाई साहब हँस पड़े। कुक्कीको भी हँसी आ गयी। मगर वह उसे दबा गया। मगर बात सुनके उसे बड़ा रस आया। उसने कल्पना की : प्रभा और नन्हीं दीवारसे पीठ टिकाये एक-दूसरेसे जुड़ी बैठी खूब मज़े लेके बातें कर रही हैं ! उसे लगा, वह भी कहीं उनके बीच बैठा उनकी बातें सुन रहा है।"

"जा न यार, कुक्की, तू अभीतक वहीं बैठा है ! गरम-गरम पकौड़े भी ले आना। चटनी ज़रा ज़्यादा लाना। ये लड़कियाँ चटनी ज़्यादा खाती हैं।

जैसे मुझे पता नहीं ! वह उठा और बाहर आ गया। ग़ुस्सेमें उसने 'मार्निंग ग्लोरी' के एक गुच्छेको कसके हाथ मारा। पूरा मूलसे तो नहीं टूटा मगर उसके अधिकांश फूल टूटकर इधर-उधर गिर पड़े।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रास्तेमें उमेशका छोटा भाई मिल गया। वह उसको बड़ी इज़्ज़त करता था। उसने उसे साथ लिया और समोसे, पकौड़े और कचौरी उसके हाथ भिजवा दिये। उसे भूख नहीं थी। मगर गरम समोसे देखके उसके मुँहमें पानी आ गया। उसने वहीं दूकानपर खड़े होके दो समोसे खाये। और पतलूनकी जेबोंमें हाथ डालके बड़ी सड़ककी तरफ़ चलने लगा। "प्रभाको भाई साहबसे इस तरह चपर-चपर बातें नहीं करनी चाहिए! कुछ ज़्यादा ही बोलती है। मगर उसकी आवाज़ बहुत मीठी है। उसके चले जानेके बाद भी मेरे कानोंमें—जैसे कमरेमें—गूँजती-सी रहती है। मैं इशारेसे मना कर दूँगा, बहुत ज़्यादा बोलने! यह सोचते ही उसे प्रभाकी आँखें याद हो आयीं। खासकर जब वे उसे एकटक देख रही होतीं। पुतलियोंके पिघलावकी मधु-रिमासे उसका मन अजीब तरंगोंसे भर जाता। —मगर ऐसी नहीं है कि मरा जा सके। फिर वह उस स्त्रीके बारेमें सोचने लगा जिस-को प्यार करनेके लिए वह हरदम तैयार रहता था। वह कुछ देर यही सोचता घूमता रहा—भाई साहब अबतक जा चुके होंगे! शायद चले भी। वह घरकी तरफ़ लपका। बेखटके अन्दर चला गया। दीवारके साथ पीठ टिकाये प्रभा बैठी थी। उसे देखते ही वह बोली, "आप कहाँ चले गये थे?"

"मैं?...मुझे एक दोस्त मिल गया था।" उस वक़्त वह कुछ इस तरहसे चुप-चाप उदास-सी बैठी थी कि उसे सब कुछ बतानेका मन होने लगा।

"चाय तो आपने नहीं पी होगी?

"अरे चाय-वायका क्या है!"

"क्यों?"

"बस ऐसे ही।"

"क्या बात है?"

"बात तो कोई नहीं।"

"नहीं, ज़रूर है। आप मुझे बताइए। आपके चेहरेसे लग रहा है कि कोई बात है। बताइए।" प्रभाकी आवाज़में ठेठ स्नेह पाकर उसे रोना-सा आने लगा। मगर उसने अपने-को रोका।

"बताइए न!"

"फिर बताऊँगा।" उसने अपनेको सँभाल लिया था।

"नहीं, अभी बताइए!"

"अभी नहीं!"

"अच्छा तो वायदा कीजिए, आप मुझे बतायेंगे ज़रूर।"

"हाँ, ज़रूर बताऊँगा।" उसे ज़रा-सी निराशा हुई। उसने नहीं सोचा था कि वह इतनी जल्दी पीछा छोड़ देगी। वह यों ही हँसा।

"आप हँसे क्यों?"

"ऐसे ही।"

"इसका मतलब यह तो नहीं कि मुझे टाल दिया और बादमें नहीं बतायेंगे।"

"नहीं, नहीं।"

"मैं भी देखती हूँ, आप कितने दिनमें वायदा पूरा करते हैं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हाँ···शी !" प्रभा की एक उँगली उसकी फुन्सियोंसे खेल रही थी। उसीको हटानेके लिए उसने 'शी !' किया था।

"सॉरी !" कहकर वह हँस पड़ी। फिर शरमा गयी। फिर बोली, "मैं भी वह बात पूछके हटूँगी !"

"मैंने कह दिया, ज़रूर बताऊँगा। मगर एक शर्तपर कि आप किसीको नहीं बतायेंगी !"

"हाँ मंज़ूर। किसीको नहीं कहूँगी।" इसपर वह मुसकरायी। कुक्की भी। उसे एक खिचावका एहसास हुआ।

"औरतोंके मनमें बात रहती नहीं।" उसने बात हँसानेके लिए कही थी। मगर न जाने क्यों इस समय बातके कहनेमें वह नाचता-सा कुछ आया ही नहीं !

"देख लेना ! मैं वैसी नहीं हूँ।"

अगर कुक्की थोड़ा बड़ा होता तो शायद इस वाक्य और इसको कहनेके लहजेमें समर्पण-के मूलको खोज लेता। वह मगर चुपचाप उसे देखने लगा। वह आँख नहीं मिला रही थी। उसने उसकी फुन्सियोंकी तरफ़ देखा। उसे वे वास्तवमें अच्छी लगीं। फुन्सियोंवाला चेहरा मनमें अजीब चाह पैदा करता है, उसने सोचा।

"नन्हीं कहाँ गयी है ?"

"मासीजी अभीतक नहीं आयीं। वह सब्ज़ी लेने गयी है। मुझे घरकी रखवालीके लिए बिठा गयी है।"

उसे लगा, कुछ होनेवाला है। अभी, इसी समय। प्रभाके साथ। उसके भीतर वाहन ज़ोर मारा। उसकी इच्छा प्रभाके लिपट जानेकी होने लगी। मगर एक जड़ती झिझकमें बैठा रहा। प्रभा वैसी ही ले रही थी। घुटनोंके गिर्द बाँहें लिपटी होने-से पेटका एक हिस्सा ही फूलता-सिकुड़ता दिखाई दे रहा था। बातचीतके दौरान यह चीज़ दिखाई नहीं देती। इसका पता ही नहीं चलता। अब सिर्फ़ यही दिखाई दे रही थी।

उसने हिम्मत करके कहा, "प्रभा···" मगर इसके आगे वह बोल नहीं पाया। उसका दिल तेज़ीसे धड़कने लगा।

प्रभाने सुना और नरम आँखोंसे उसकी तरफ़ देखा। बोली कुछ नहीं। वह इन्तज़ार कर रही थी। उसने उसका नाम लिया था इसलिए अब वह मानो रोम-रोम खोलके इन्तज़ार करने लगी थी।

लेकिन वह चुप बैठा हाँफ-सा रहा था। प्रभाको एकाएक लगा कि शायद वह कुछ साहस नहीं कर पायेगा।···शायद उसमें कोई साहस है ही नहीं ! उसने अजीब निराशाको उस क्षण महसूस किया कि शायद जो करना होगा उसीको करना होगा। मगर उसके भाई—भाई साहबमें तो काफ़ी साहस है। मगर···

तभी नन्हीं आ गयी। उसके आते ही प्रभा उठके खड़ी हो गयी।

"अब मैं चलती हूँ ! बहुत देर हो गयी है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"थोड़ी देर और बैठ जा।"

"नहीं, अब चलूँगी।"

वह बैठा रहा। उसे लगा, प्रभाकी आवाज़में निराशा उसीके कारण है।

"थोड़ी देर रुक जा। मटर निकलवा दे। फिर चली जाना।"

मटर निकालके प्रभाने नन्हींको रसोईमें मटर दे दिये। खुद बाहर निकली। जिस ओर वह था उस तरफ़ उसने देखा तक नहीं। इस वजहसे वह पहले रुक गया, फिर चल आ गया।

"प्रभा···!" प्रभा रुक गयी। वह जल्दी-जल्दी उसकी तरफ़ बढ़ा। उसने सोचा था कि वह ही जान लेगी कि वह क्यों आया है।

"यह लो।" उसने उसके हाथमें एक काग़ज़का टुकड़ा थमा दिया और बड़े-बड़े डग भरता कमरेमें लौट आया। कमरेमें आके जैसे अनुभव किया, वह कोई बहुत बड़ा काम करके आया है। उसने दूसरे कमरेमें जाके आधे भिड़े दरवाज़ेकी दरारसे देखा। प्रभा काग़ज़ लिये खड़ी थी। फिर उसने उसकी तहोंको सीधा किया। पढ़ा। उसने सोचा, वह अब पढ़ रही होगी···'मैं तुम्हारी फुन्सियोंको भी प्यार करता हूँ।' वह मुसकराया। प्रभा नहीं मुसकरायी। उसने कमरेकी तरफ़ देखा, फिर काग़ज़को क़मीज़के अन्दर वक्षपर डाल दिया। वक्षकी नरमीका एहसास उसे हुआ। मामूली-सा।

मगर तभी प्रभा चली गयी। उसने सोचा था, वह दौड़के आयेगी। मगर वह यह भी जानता था, ऐसा नहीं होगा। अब नहीं। कम-अज़-कम आज नहीं। और जो आज हुआ है वह हमेशा रहेगा, किसी-न-किसी तरहसे···वह कुछ देर यों ही फूलोंकी तरफ़ देखता रहा। ■ ■

Phone { OFFICE : 22-6615
RES. : 34-3958

India Bobbin Industries

135, CANNING STREET,
CALCUTTA-1.

●

Manufacturers of :

ALL KINDS OF WOODEN GOODS
FOR
JUTE, BROADLOOM PARTS
&
COTTON MILLS

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माध्यम

हिन्दी साहित्य सम्मेलन
द्वारा प्रकाशित
तथा श्री बालकृष्ण राव-द्वारा
सम्पादित मासिक

'माध्यम' एक वर्ष की
अल्पावधि में
हर प्रबुद्ध पाठक की सबसे
प्रीतिकर पाठ्य-सामग्री
बन गया है।

'माध्यम' के प्रवेशांक से
अबतक की पूरी फ़ाइल की
धुआँधार माँग इसके स्थायी
महत्त्व और लोकप्रियता का
परिचायक है।

सहवर्ती साहित्य, विवेचना, प्रतिपत्तिका,
समीक्षाएँ, प्रत्यालोचन-पुनर्विचार, हिन्दीजगत्, पत्र-पत्रिकाएँ
'माध्यम' के स्तम्भगत आकर्षण हैं।

• •

एक अंक का मूल्य : १.०० । वार्षिक शुल्क : १०.००

• •

पत्राचार : पो० बा० सं० ६०, इलाहाबाद
सम्पादकीय तथा व्यवस्थापकीय कार्यालय :
हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद

ज्ञानोदय : अगस्त १९६१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दामोदर सदन

आ तं क

कहानी : युद्ध वर्तमानमें हो या उसका भूत-भविष्य सामने आये, उसमें एक आतंक होता ही है। प्रेम और करुणा-भावनासे वह आतंक कहीं अधिक गहरा होता है।

हम लोग फ़ौजी कैण्टीनमें पी रहे हैं। थोड़ी-सी पीनेके बाद मैं उदास हो जाता हूँ। सोचता हूँ, दो चार हफ़्तोंके लिए यहाँसे अलग हो रहा हूँ, मेरे लौटने तक यहाँ क्या होगा? क्या इन लोगोंसे फिर मुलाक़ात होगी? टेकर मारा जा चुका है····अब किसकी बारी होगी?

पीते समय, मैं इन सबको बेचैन नज़रोंसे देखता हूँ। श्रीनाथ मेरे बाज़ूसे बैठा है और सिगरेटके कश खींच रहा है। सुधीने उसे घेर लिया है, क्योंकि हम लोग हमेशा साथ रहे हैं—पास ही सतीश बैठा है, जिसका सिर काफ़ी बड़ा है, जिसके बाल घुँघराले हैं और जिसकी आवाज़ बड़ी धीमी है, तीखे नाक-नक़्शवाला अन्नू बैठा है जिसे प्यार करनेके लिए मेरा जी बार-बार ललक उठा है; गोपाल बैठा है जिसकी बिल्लीनुमा आँखों और मासूमियतने बार-बार मेरे मनको मोह लिया है।

बोझिल हवामें तम्बाकूकी गन्ध तैर रही है। कैण्टीनमें तम्बाकू और बीयरकी गिरफ़्तमें हम लोगोंने हमेशाकी तरह अपनी टाँगोंको सामने फैला लिया है।

मुझे एक महीनेकी छुट्टी मिली है। मेरा सफ़र-पास बनकर तैयार है। बर्मासे कलकत्ता हवाई जहाज़से जाना है और बादको ट्रेनसे सफ़र करना है। सफ़रमें ही क़रीब पाँचेक दिन लग जायेंगे। मेरे साथी मुझे बधाई देते हैं और तरह-तरहके परामर्श देते हैं।

दूसरे दिन सुबह मैं हवाई अड्डे पर जाता हूँ। पहुँचानेके लिए श्रीनाथ, सतीश, अन्नू और गोपाल आये हुए हैं। हवाई जहाज़ आनेपर हम लोग एक-दूसरेसे बिदा होते हैं।

दो-तीन बार हाथ हिलानेके बाद वे चले जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी आकृतियाँ हिलती हैं। मैं उनके हर क़दमको पहचानता हूँ। उनके ओझल हो जानेके बाद मेरी आँखोंके सामने कमलाकी तसवीर उभरती है और जा चुकनेकी भावना मुझे घेर लेती है।

कलकत्ता उतरनेपर ट्रेनोंके बारेमें पूछ-ताछ करता हूँ और पहली ट्रेनपर सवार होनेके पहले कमलाके लिए कुछ साड़ियाँ और दीगर चीज़ें ख़रीदता हूँ। सारे डिब्बे एकदम भरे हुए हैं। मिलिटरीके डिब्बेमें मैं अपना सामान भर लेता हूँ और अपने किट-बेगमें-से दरी-चादर निकालकर एक ख़ाली बर्थपर बिछा लेता हूँ और फ़ोम-पिलोका सहारा लेकर पड़ रहता हूँ। रात होनेमें अभी काफ़ी देर है। करवटें बदल-बदलकर परेशान होने-पर नीचे खिड़कीके पास आकर बैठ जाता हूँ। खिड़कीसे मुझे तमाम पेड़, ट्रान्समिशन लाइनें, दूर-दूर तक फैली झोपड़ियाँ और खेतोंकी बालियाँ घूमती-सी नज़र आती हैं। ट्रेनसे खेतोंके पार देखनेपर मुझे ये पेड़ क्षितिजसे मिलते दिखाई देते हैं। ट्रेन पुलसे गुज़र रही है और हेर-फेरकर वही दृश्य मेरी आँखोंके सामनेसे गुज़रता है। खिड़कीसे बड़ी तेज़ हवाके झोंके आ रहे हैं। हवा मेरे बालोंसे और विचारोंसे खेल रही है। उसमें ठण्डक है। काफ़ी देर बाद घना अँधेरा और सितारे उग आये हैं। मैं ऊपर लेटनेके लिए चला गया हूँ। लेटनेके पहले जब मैंने डबल रोटीके टुकड़े निकाले तो एकदम मेरे दिमाग़में शंकर-की याद ताज़ा हो गयी है। मैंने रोटियोंके टुकड़े बाहर फेंक दिये हैं। चौबीस दिसम्बर-की गोलाबारीका दिन मेरे ज़हनको दस्तक देने लगा है।

...मैंने देखा कि लारियाँ हमें उस जगह छोड़कर चली गयी हैं, जहाँसे मोर्चा शुरू होता है और हम लोग एकाएक आदमीसे जानवर बन चुके हैं। लारियाँ हम लोगोंको लेनेके लिए पौ फटनेके पहले वापस नहीं होंगी। रणभूमिके ऊपर कोहरा और बन्दूक-का घुटन-भरा धुआँ छाया हुआ है। चाँद चमक रहा है। सड़कपर पूरी टुकड़ी एक क़तार बनकर खड़ी हो गयी है। चाँदरातके उजालेमें उनके लोहेके टोप चमक रहे हैं। सफ़ेद कोहरेके ऊपर अनेक सिर और रायफ़लें तनी हुई हैं।

इसके पार कोहरा ख़त्म हो जाता है। यहाँ आकृतियाँ साफ़ नज़र आती हैं। कोट, पतलून और जूते कोहरेमें-से निकल आते हैं। टुकड़ी आगे मार्च करती है, केवल टुकड़ी आदमी नहीं। मोर्चेपर आदमी-जैसी कोई चीज़ रह नहीं पाती है।

चौराहेसे बन्दूक़ों और बारूदकी चीज़ भी चल रही हैं। टैंकोंकी घड़घड़ाहट है। घोड़ोंकी पीठ चाँदरातके उजालेमें चमक रही है, उनपर बहुत-सा सामान लदा हुआ है। यह सब बड़ा सुन्दर और मनमोहक दृश्य है।

आगेका मैदान अब टूटा-सा लगता है। चेतावनी आती है: "देखकर चलो...बाईं ओर गहरी खन्दकें हैं...खन्दकें...देखकर...र चलो!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी आँखोंमें चौकन्नापन आ चुका है, हमारे पैर पूरे शरीरका बोझ सँभालनेके पहले उसको महसूस करने लगे हैं। एकाएक, टूकड़ी 'हॉल्ट' होती है, मैं अपना चेहरा सामने कँटीले तार लेकर चलनेवाले आदमीके तारोंसे बचा लेता हूँ और अपनेको कोसता हूँ।

सड़कपर बमबारीसे क्षत लारियाँ खड़ी हैं। इतनेमें ही हवाको चीरता हुआ दूसरा आदेश आता है: "सिगरेटें बुझा दो। हम लोग दुश्मनके बहुत क़रीब हैं।"

इस बीच गहरा अँधेरा छा जाता है। हम लोग झाड़ीसे निकल आते हैं और फिर कोई हमारे सामने दिखाई देता है।

आकाशके एक कोनेसे दूसरे कोने तक एक अनिश्चित लाली फैल गयी है····राकेट ऊपर जाते हैं और फिर धमाका होता है। बमबारी हो रही है···अनेक बन्दूकें एक साथ गरज रही हैं, जिससे भयंकर आवाज़ें निकल रही हैं। मशीनगनें भी खड़खड़ा रही हैं। हमारे सिरके ऊपर हवामें बड़ी तेज़ गति है, आर्तनाद है और सिसकारियाँ हैं। छोटी गोलियोंसे सीटीनुमा आवाज़ें निकल रही हैं। ये सारी आवाज़ें मुझे जंगली चिड़ियोंके समान लगती हैं। पिछले शिशिरमें ये जंगली चिड़ियाँ मुझे क़रीब-क़रीब रोज़ ही गोलाबारीके रास्ते-पर दिखाई पड़ी हैं।

सर्चलाइट हमें भेद देती है और हम लोग अपनी छायाएँ मैदानमें देख सकते हैं। सर्च-लाइट काले आसमानको भी चीर देती है। वह थोड़ा-थोड़ा रुकनेके बाद बढ़ती है। एक

मैं अपनी रायफ़ल को मज़बूतीसे पकड़ लेता हूँ। मेरी आँखोंके सामने-से सब-कुछ ओझल हो जाता है। मैं रायफ़लके कुन्देके सहारे अपने पैर जमाये रखता हूँ और मज़बूतीसे दाँतोंको भींच लेता हूँ। कमला दुबली हो गयी है! लेकिन फिर भी बहुत अच्छी लग रही है। मैं हँसने-बोलनेकी कोशिश करता हूँ, लेकिन मेरे मुँहसे एक भी शब्द नहीं निकलता।

एअरमैन इसके बीचमें पकड़ा जाता है, भागने-की कोशिश करता है और अन्धा होकर गिर पड़ता है।

कुल देर बाद सब कुछ समाप्त हो जाता है। हम लोग कँटीले तारोंको लपेटने लगते हैं और मैं इस काममें अनाड़ी होनेके कारण अपने हाथको चीर लेता हूँ। लारियाँ आनेमें अभी कुछ देर है। हममें-से कई लोग नीचे लेट जाते हैं और सो जाते हैं। मैं भी कोशिश करता हूँ, लेकिन हवामें बहुत ठण्डक है। फिर भी थोड़ी देरके लिए लेट जाता हूँ। फिर किसी आवाज़से मैं जल्दी ही चौंक पड़ता हूँ। मुझे इस बातपर अचरज होता है कि मौतके सायेमें नींद कैसे और क्यों आ गयी। शायद मैदान भी हमारी आदतोंमें शुमार हो गया है। कभी-कभी मैदानमें भी घरवालोंकी याद हमें बेचैन कर देती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं नहीं जानता कि यह रात है या दिन। मेरे बाज़ूमें सतीश बैठा हुआ है। बुझे हुए शेलकैपके उड़नेसे अचानक आवाज़ हुई है और रंगरूट डरसे कूद पड़ते हैं। मेरा ध्यान कँटीले तारकी ओर जाता है····एक रंगरूटका चेहरा उलट गया है, वह तारके झूलेमें गिर पड़ा है। उसका शरीर टूटकर एक ओर गिर पड़ा है। उसके हाथ ऊपरको ही रह गये हैं जैसे वह प्रार्थना कर रहा हो और केवल उसकी भुजाएँ और टाँगें तारमें लटकी हुई हैं। एक लान्स-कारपोरलका सिर उड़ गया है, वह कुछ क़दम आगे बढ़ता है और उसकी गरदनसे खूनके फ़व्वारे छूट रहे हैं। कुछ ही दूरीपर हमें शाखोंमें एक नंगा सिपाही लटका हुआ दिखाई देता है···उसके शरीरका ऊपरी हिस्सा और पैर ग़ायब हैं····मार्टर सिपाहीको कपड़ोंके बाहर उड़ा देता है। मैं और सतीश ऐसे आदमियोंको देखते हैं जिनकी खोपड़ी फट चुकी है। हम लोग ऐसे सिपाहियोंको देखते है जो दोनों टाँगोंके टूट जानेके बावजूद भागते हैं, वे अपनी टूटी हुई टाँगोंके सहारे लड़खड़ाते हुए दूसरी खन्दक तक जाते हैं, एक लान्स-नायक अपने हाथोंके बलपर अपने चकनाचूर घुटनोंको लिये हुए डेढ़ मील तक घसीटता हुआ चलता है।

यह केवल संयोगकी ही बात थी कि हम लोग ज़िन्दा हैं। अनेक बार मौत हमें बमप्रूफ़ गड्ढोंमें भी धर दबोचती है और मैदानकी गोलाबारीमें हम लोग दस-दस घण्टे ज़िन्दा रहते हैं। सैनिकके लिए संयोग एक बहुत बड़ी बात है····केवल छह हाथ दाहिने रहनेसे ही कोई सिपाही ज़िन्दा रह जाता है और तीन हाथ बायें रहनेपर मर जाता है।

हमारे पास ही एक रंगरूट मरणासन्त्रासकी हालतमें पड़ा हुआ है। उसने अपने हाथोंमें अपने चेहरेको ढाँप लिया है, उसका लोहेका टोप गिर पड़ा है। मैं उसे उठाकर देता हूँ। वह ऊपर देखता है और बच्चों-जैसा बाँहोंमें आ जाता है। उसके छोटे कन्धे काँपते हैं। दूर कहींसे घोड़ोंकी दर्द-भरी कराह सुनाई पड़ती हैं और फिर सब-कुछ शान्त हो जाता है। हवामें मौतकी उदासी छाई हुई है। अनेक नये रंगरूट क़ै कर रहे हैं।

मैं कुछ दूरसे ही किसी सैनिककी कराह सुनता हूँ। मैं और सतीश आगे बढ़ते हैं। मैदानमें शंकर पड़ा हुआ है। उसके पुट्ठे कीचड़से लथपथ हैं। मेरा हाथ पानीकी शीशीको ले जाता है जहाँ रम और चाय है। सतीश मुझे रोकता है, क्योंकि यदि चोट उसके पेटमें हो तो उसे कुछ भी नहीं दिया जाना चाहिए।

"तुम्हें कहाँ चोट आयी है, शंकर?"

केवल उसकी आँखें ही हिल रही हैं। वह बहुत कमज़ोर है।

हम लोग सावधानीसे उसके पुट्ठे खोल देते हैं। उनमें बस मांसका कीमा और हड्डी चूर हुई हड्डियोंका समूह-भर है। अब वह चल नहीं सकता।

मैं गीली उँगलियोंसे उसके मस्तकको भिगो देता हूँ। उसकी आँखें फिर खिल उठती हैं···हम लोग देखते हैं कि उसके दाँत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कन्धेसे भी खून निकल रहा है। हम लोग उसके पैण्टको चीरकर और दूसरी लाशको जिसके बैण्डेज निकालकर घावको बाँध देते हैं और उससे स्ट्रेचर ले जानेको कहते हैं।

वह हमें रोक देता है और रुकनेका इशारा करता है। मेरा मन होता है कि उसे गोली मारकर उसकी तकलीफ़ोंका हमेशाके लिए अन्त कर दूँ, लेकिन ऐसा कर नहीं पाता। सतीश जानता है कि स्ट्रेचरके लिए भी वह सह नहीं सकेगा। स्ट्रेचर आनेसे पहले ही शंकर इस दुनियासे बिदा हो जाता है।

सुबह होनेमें अब कुछ घण्टोंकी ही देर है। लारियाँ आती हैं···घायल अस्पतालमें पहुँचाये जाते हैं, जहाँ डॉक्टर बेरहमीसे बिना किसी हिचकके किसीकी टाँग और किसीके हाथ काट देगा। हम लोग लाशोंपर मिट्टी डाल देते हैं। काफ़ी दूर चलकर उनींदी आँखोंसे लारियोंमें सवार होते हैं। टेलीफ़ोनके तारोंसे बचनेका आदेश दोहराया जाता है। क्योंकि लारियोंमें बैठकर टेलीफ़ोनके तारोंसे हमारी गरदन कब बेबाक हो जाये, कहा नहीं जा सकता।

फ्रण्टसे लौटनेपर भी हम लोग अब तक आदमी नहीं बने हैं···भूरे, पीले, गन्दे, चुके हुए और कड़वाहट भरे चेहरे। मैं अपने साथियोंको देखता हूँ। सब दिखाई देते हैं, शंकरको छोड़कर। अब तक मेरी आत्मा उसके लिए रो रही है···शंकर मेरा दोस्त, जिसका चेहरा लम्बा था, जो निरीह था, जिसकी नाक आरीकी तरह नुकीली थी, जिसे मैं इतना जानता हूँ जितना अपनेको भी नहीं जानता, जिसके साथ मैंने ज़िन्दगीके सात साल काटे हैं, जिसे हम लोगोंके साथ ही कमीशन मिलनेवाला था, अब उसे कभी नहीं देख सकूँगा···फिर सतीश भी चला आयेगा, अन्नू भी और बादको मैं भी!

क्यों?

इस क्योंका जवाब मुझे सिगरेट पीते हुए अन्नूने दिया था। दोपहरमें हम लोग शलजमके टुकड़े, पानीमें उबले हुए गाजर, अधपके आलू, और बिरियानी खा रहे थे जिसमें गोश्तका बारीक-सा टुकड़ा ढूँढ़ेसे भी नहीं मिलता था। शंकरकी मौतपर झुँझलाहट और गुस्सा प्रकट करते हुए अन्नूने कहा था, "मुझे तो समझमें नहीं आता, हम लड़ किसलिए रहे हैं और किससे लड़ रहे हैं? यह किसकी प्रतिष्ठाके लिए हम लोग आगमें झोंके जाते हैं? ये बड़े-बड़े लोग खुद ही मैदानमें लड़कर अपना फ़ैसला क्यों नहीं कर लेते···। वे कौन लोग हैं जिनके इशारेपर हम लाखों-करोड़ों लोग कट-मर जाते हैं?"

शंकर बड़ा शोख था। उसकी एक दूसरी बात भी मेरे दिमाग़में तैरने लगी। हम लोगोंके मनोरंजनके लिए एक सिने-ट्रूप आया हुआ था। इसमें बहुत-सी लड़कियाँ भी थीं। गरमीके दिन थे। लड़कियाँ, गरमीके मौसमके लिए मौजूझीने हलके कपड़े और ऊँची एड़ियोंवाले जूते पहिने शामको घूमनेके लिए निकला करती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थीं। उनमें-से एक लड़कीकी नाक बेहद कोमल थी, होठ लाल-सुर्ख और पतले, खूब साफ़ किये गये पैर थे। शायद वह दिनमें दो बार नहाती होगी। मैं, सतीश, अन्नू और शंकर भी रोज़ उसी रास्तेसे घूमने जाया करते थे, उसे देखते ही हम लोगोंकी कनपटियाँ गरम हो जाती थीं। हमारे लिए वह एवरेस्टकी चोटीके समान दुर्लभ थी। आखिर शंकरसे रहा नहीं गया और एक रोज़ उसने उसे गन्दे इशारे कर दिये।·····शंकर···शंकर···मैं स्मृतियोंकी घाटियोंसे निकल आया हूँ और ऊपरसे गिरते-गिरते बचा हूँ।

मेरे दिल-दिमाग़में एक अजीब-सी भावना भर गयी है। मैं ऊपरकी बर्थसे उतरकर नीचे खिड़कीके पासवाली खाली सीटपर बैठ गया हूँ। खिड़कीके बाहर देखनेपर मुझे नीला आकाश दिखाई देता है। हवाको मैंने अपने नासापुटोंमें भर लिया है···मुझे उसमें अब भी ख़ूनकी गन्ध लगती है जो बड़ी बोझिल और मीठी है।

सवेरा हो गया है···दो दिन और दो रातके सफ़रके बाद, दिखनेवाला लैण्डस्केप बड़ा रहस्यमय है, मेरा जाना-पहचाना है। ट्रेन आगे, और आगे बढ़ रही है, मैं लोहेकी छड़को पकड़कर दरवाज़ेपर खड़ा हो जाता हूँ। लकड़ी और मिट्टीसे बने मकान, उसके खेत, उसके आम, नीम और पीपलके पेड़ चमक रहे हैं।

गुदमा, आमगाँव, तारसा, सीतापुर। मेरे मनकी धड़कनें बढ़ रही हैं···

ऊपर आकाशकी पंक्तियोंके साथ-साथ धूल-धक्कड़वाली सड़क भी क्षितिज तक चली गयी है····जहाँ किसान खड़े हुए हैं, लड़कियाँ हाथ हिला रही हैं, मेड़ोंपर बच्चे डाबड़ोंसे खेल रहे हैं! जाने-पहचाने रास्ते—जहाँ बारूदकी गन्ध नहीं है।

कुछ दूरीपर मेरी नज़रोंके सामने सीतापुरकी पहाड़ी उभरने लगी····ट्रेन पटरियाँ बदलने लगी··· ट्रेन अब काली पहाड़ीके पुल-पर-से गुज़र रही थी। मैं मन-ही-मन बुदबुदा उठा···काली पहाड़ी!

ट्रेन रुकती है। स्टेशनपर शोर-शराबा है। मैं अपना किटबेग और बन्दूक़ उठाकर नीचे उतरता हूँ। प्लेटफ़ार्मपर मुझे कोई भी परिचित नहीं दिखाई पड़ता।

स्टेशनके सामने कुआँ, चाय और सायकलकी दूकानें और पीपलका पेड़ दिखाई देने लगा। सामने ही पुल था। हम लोग इस पुलपर जाने कितनी बार गुज़रे हैं और ठहरे हुए पानीकी ठण्डक नाकमें भरी है। गरमीके दिनोंमें जाने कितनी बार उछलते हुए फेनके मज़े लूटे हैं।

मैं उसी पुलपर-से गुज़र रहा हूँ···पानीमें ढेर सारी घास-पात और लताएँ अब भी मौजूद हैं। अलगनीपर कपड़े सूख रहे हैं। कुत्ते सड़कोंपर घूम रहे हैं, लोग अपने घरोंके दरवाज़ोंपर खड़े होकर मुझे देख रहे हैं···इन नज़रोंमें कुछ-कुछ भारीपन है।

इस होटलमें हम लोगोंने सिगरेट पीना सीखा है। मैं यहाँकी हर दूकानको पहचानता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हूँ"आखिर मैं टूटी हुई साँकलके काले दरवाजेपर खड़ा हुआ हूँ और जाने कहाँका ठण्डा-पन मुझे आ दबोचता है। मेरी आँखें धीमी पड़ गयी हैं।

दरवाजेमें खड़खड़ाहट हुई है। रसोईघरसे आलू उबालनेकी गन्ध आ रही है। एक क्षणके लिए मेरी धड़कन और भी तेज हो गयी है। मैं अपनी कैप उतार देता हूँ। हाँ, वह कमला ही है। मेरी जवान उमंगोंकी प्रेरणा—कमला!

मैं अपनी रायफ़लको मज़बूतीसे पकड़ लेता हूँ। मेरी आँखोंके सामनेसे सब-कुछ ओझल हो जाता है। मैं रायफ़लके कुन्देके सहारे अपने पैर जमाये रखता हूँ और मज़बूतीसे दाँतोंको भींच लेता हूँ। कमला दुबली हो गयी है! लेकिन फिर भी बहुत अच्छी लग रही है। मैं हँसने बोलनेकी कोशिश करता हूँ, लेकिन मेरे मुँहसे एक भी शब्द नहीं निकलता। मैं अपनी जगहपर ही खड़ा हूँ और आँसू मेरे गालोंपर-से बहने लगते हैं।

किसी तरह मैं अपनेको क़ाबूमें कर लेता हूँ और रायफ़ल और सामानको एक कोनेमें रखकर कमलाको अपनी बाँहोंमें भर लेता हूँ। उसे गोदमें उठाकर दूसरे कमरे तक ले जाता हूँ।

मेरे चेहरेको सहलाते हुए वह कहती है, "क्या तुम ज़ख्मी हो गये हो?"

"दुर पगली! फिर मैं छुट्टीपर आता कैसे? और तूने अपनी ये क्या हालत बना रखी है? मैं तो काफ़ी पैसा भेजता था?" मैं कहता हूँ।

"नहीं, पैसेकी बात नहीं। तुम जो पासमें नहीं थे! जाने आज मुझे कैसा अजीब-अजीब लग रहा था। मेरे हाथसे बर्तन छूटकर गिर गया। लग रहा था, तुम ज़रूर आओगे। इसलिए आज मैंने तुम्हारी मनचाही सब्ज़ी बनायी है। ठहरो, मैं उसे चूल्हेसे उतार दूँ।" वह कहती है।

मैंने उसे रोक दिया और उसे गोदमें उठाये ही रसोईघरमें जाता हूँ और उसे उतार कर गंजीको नीचे रख देता हूँ। बादको हम लोग फिर उसी कमरेमें वापस हो लेते हैं। मैं उसके पास बैठा हूँ। वह मेरी ओर देखती है, मैं उसके हाथोंको ज़ोरसे भींच लेता हूँ और उसकी हथेलीपर अपने होठ रख देता हूँ। हम दोनोंके बीच ख़ामोशी है। उसका कुछ भी नहीं पूछना मुझे अच्छा लग रहा है। मैं उससे क्या कह सकता हूँ भला। मेरा मनचाहा जो हो चुका है, मैं सुरक्षित आ गया हूँ और उसके पास बैठा हूँ। एकाएक, उसने अपनी हथेली छुड़ा ली है। अब उसका हाथ मेरे चेहरेपर घूम रहा है। ऊपर उसकी चकित आँखें हैं। उसका निखरा साँवला रंग है और उसके लाल होठ हैं। मैं उसकी आँखोंको पहचानता हूँ, वह बहुत कुछ कह रही हैं। मैं युद्ध और उसकी भयानकताको भूल जाता हूँ।

"एक बात तो बताओ!" वह अब अपने नाखूनोंको कुरेदती हुई कहती है।

"पूछो!"

"क्या मैं तुम्हें वहाँ भी याद आती थी?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके स्वरमें मुलायमियत थी।

"मैं तुम्हारी तसवीरको एक पलके लिए भी अपनेसे दूर नहीं कर सका, कमला! हर पल तुम मेरे साथ रहती थी।" मैं कहता हूँ।

"हटो भी, तुम बड़े वो हो! बातें ही करोगे या कुछ खाओगे भी!" वह कहती है।

मैं हाथ मुँह धो लेता हूँ और वह जल्दीसे गरम चपातियाँ और दमआलू और एक कटोरीमें मेरे लिए घी ले आती है। मैं जानता हूँ, जाने कितने रोज़से उसने मेरे लिए वह घी जुटा रखा होगा।

खाना खानेके बाद मैं अपना बिस्तरा खोल लेता हूँ और उसमें-से पनीरका डिब्बा, कुछ डबल रोटियाँ, मक्खनका डिब्बा और चावलकी एक छोटी-सी थैली निकालकर उससे पूछता हूँ, "क्या यहाँ खाने-पीनेकी बहुत परेशानी है, कमला?"

"हाँ, अन्न यहाँ ज़्यादा नहीं है। राशनसे अनाज मिलता है। क्या वहाँ तुम लोगोंको काफ़ी मिल जाता है?"

मैं हँसता हूँ और लायी हुई चीज़ोंकी ओर इशारा कर देता हूँ।

खिड़कीके बाहर अमराईमें भूरी और सुनहरी धूप-छाँह है। मैं ज़ोरकी साँस लेता हूँ और अपने-आपसे कहता हूँ, 'तुम घरमें हो, अपने ही घरमें! लेकिन अजनबीपन पीछा नहीं छोड़ रहा है!' एकाएक मुझे अमराईके आमके पत्ते सैनिकोंके लोहेके टोपों-पर दिखाई देते हैं और मेरे कानोंमें हथगोलोंकी आवाज़ें टकराने लगती हैं। हथगोलोंने पृथ्वीके गर्भको उकेल दिया है···धड़ाम-धड़ाम धड़ाम···लारियोंकी आवाज़···बन्द मुट्ठी हुआ आदमी···बिना मुँह, बिना जबड़ों और बिना चेहरेके आदमी···आर्त्तनाद, सिसकियाँ और कराहटें···मौतका खूनी जबड़ा आकाशपर मँडराते हुए गिद्ध!···एकाएक मैं अपनी गरदनको झटका देता हूँ और कमलाकी गोदमें अपना हाथ रख देता हूँ। पुश्तैनी मकान होते हुए भी मैं अपने ही घरमें बेगानापन महसूस कर रहा हूँ। मेरे पास ही कमला बैठी हुई है, हारमोनियम रखा हुआ है और दीवारमें वह सूराख भी दिखाई दे रहा है, जिसमें काँच फँसाकर बचपनमें मैं अपने दोस्तोंको सिनेमा दिखाया करता था। लेकिन मैं यहाँ नहीं हूँ। हम लोगोंके बीच एक महीन-सा परदा पड़ा हुआ है।

एकाएक कमलाने मेरा हाथ पकड़कर लड़खड़ाती ज़ुबानमें पूछा है—"क्या सोच रहे हो तुम? क्या वहाँ बहुत तकलीफ़ें उठाई?"

मेरे पास इसका कोई जवाब नहीं है। कमला इसे नहीं समझेगी, कभी उसका सामना सास नहीं कर सकेगी।

लेकिन प्रकटमें मैं इसका जवाब नकारमें सिर हिलाकर देता हूँ, "ना, बिलकुल नहीं। कम-से-कम वहाँ हम लोग सब इकट्ठा रहते हैं, इसलिए वहाँ इतना खराब नहीं लगता।"

"लेकिन, अभी-अभी बच्चे आये थे और उसकी अम्मा बता रही थी कि वहाँ लोगोंको बड़ी भयंकर हालतोंमें-से गुज़रना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, बमबारी है, गैस है।"

यहाँ बमबारी है, गैस है! वह नहीं जानती वह क्या कह रही है, उसे खाली मेरी चिन्ता है।

"ना, कमला, ऐसी कोई बात नहीं है।" मैं जवाब देता हूँ, "बन्नेने जो कुछ भी कहा है उसमें रत्ती-भर भी सचाई नहीं है। तुम मुझे देख रही हो ना, किस क़दर तन्दुरुस्त..."

कमलाकी चिन्ताकी छायामें मैं अपने आपको पा लेता हूँ...मैं चल-फिर सकता हूँ, काम कर सकता हूँ, यह डर नहीं कि कब मुझे किसीके अपनेको दीवारकी आड़में छिपा लेना होगा।

शामको मैं मिलिटरीका ड्रेस उतारकर अपने कपड़े पहन लेता हूँ। मुझे ये कपड़े बड़े हलके और अच्छे लगते हैं। आईनेमें देखनेपर मुझे बड़ा अजीब-सा लगता है।

कमला मुझे इस ड्रेसमें देखकर खुश है, इससे मैं उसकी निगाहोंमें अजनबी नहीं दिखाई देता हूँ।

■

छुट्टियाँ बीत चली हैं। यह बीतनेका खयाल मेरे लिए किसी पेड़को काट लेने-जैसा ही तकलीफ़देह लगता है। यहाँ बमबारी नहीं है, बच्चे गलियोंमें खेलते हैं और पुचकारते ही मुझे मेरे पास आ जाते हैं। मैं अकेलापन पसन्द करता हूँ, लेकिन लोग बहुत ज़्यादा बातें करते हैं। अनेक प्रश्न मेरे सामने खड़े कर दिये जाते हैं। उनकी महत्त्वाकांक्षाओं, इच्छाओं, नागरिक और सामरिक जीवनका अन्तर जाननेकी उत्कट अभिलाषाओंका मेरे पास क्या उत्तर हो सकता है भला! यदि मैं वहाँकी बातें बताना शुरू कर दूँ तो उनका रूप कितना भयंकर होगा, और फिर हम लोग भी यह नहीं जानते कि ऊँट किस करवट बैठेगा! मैं जब इन लोगोंको दफ़्तरों, कमरों और अपने-अपने पेशोंमें मगन देखता हूँ तो लगता है, लड़ाईको हमेशाके लिए भूल जाऊँ, लेकिन दूसरी ओर यह भी लगता है कि यह कोई दूसरी दुनिया है जिससे मेरा कोई ताल्लुक़ नहीं है...ये लोग मुझसे बिलकुल जुदा हैं...मेरे सामने श्रीनाथ, सतीश और गोपालकी तसवीरें उभरती हैं। क्या कर रहे होंगे ये लोग? निस्सन्देह वे लोग नहा रहे होंगे या कैण्टीनमें बैठे होंगे। मैं यह तसवीर भी अपने मनसे निकाल देता हूँ...मैं चाहता हूँ कि यह कमरा मुझे अपनेमें जकड़ ले।

मेरे बचपनका दोस्त सुनील आया हुआ है। वह मुझे अपने घर ले जाता है। मुझे उसके घरपर खाना खाना है, इसलिए पत्नी-को मना कर देता हूँ।

उसका यहाँ घर-दुआर है और वह यहाँ के छोटे-से दफ़्तरमें काम करता है। मेरे लिए उसने रमका इन्तज़ाम भी कर रखा है...चावल-दालके साथ-साथ अण्डा और पुलावकी तश्तरियाँ भी सजा रखी हैं। मेरी आँखोंके सामने दूर, बहुत दूर पहाड़ियाँ उभर आयीं, और वह शाम उभर आयी जब सतीशने फ़ार्मसे मुर्ग़ी चुरा ली थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"लो मदन !" पेगको सामने करते हुए वह बोला।

मैंने चौंककर पेग अपने हाथोंमें ले लिया।

तीन-चार पेग लेनेके बाद वह जर्मनी और जापानियोंको भगानेके नुसखे बताते हुए मुझसे बोला, "खन्दकोंकी लड़ाईसे ऊपर उठना चाहिए, मदन ! दुश्मनको एकदम चीरते हुए उसे उसकी सीमाओंके भीतर तक खदेड़ देना चाहिए। सबसे बड़ी बात है, दुश्मनके कल-कारख़ानोंको बर्बाद कर देना।"

"छोड़ो भी यार, लड़ाईकी बातोंको ! यह तो बताओ, वह फ़तहसिंह और रामलाल आजकल क्या कर रहे हैं ? सन्तोके क्या हाल-चाल हैं ? क्या सन्तोका ब्याह हो गया ?"

"फत्ते इस्पातके कारख़ानेमें काम करने के लिए चला गया है और रामलालने यहाँ परचूनीकी दूकान लगा ली है। सन्तो, पिछली गरमोंमें ही मण्डलावाले शाहजीके बेटेसे ब्याह दी गयी है।" जानकारी देते हुए वह फिर पूछता है, "तुमने मेरी बातका कोई जवाब नहीं दिया, मदन ?"

मैं उसकी बातका क्या जवाब दे सकता हूँ भला। मैं खामोशी अख्तियार कर लेता हूँ। मैं उसे कैसे बताऊँ कि दुश्मनको चीरते हुए आगे बढ़ना नामुमकिन होता है। उसके पीछे बहुत बड़ी-बड़ी टुकड़ियाँ होती हैं। फिर लड़ाई, जैसा वह सोचता है, उससे जुदा होती है।

सुनील मेरी चुप्पीको मेरी नाराज़गी मानता है। मुझे बताता है कि मैं मदन-नीतिसे बिलकुल अपरिचित हूँ, मुझे केवल अपनी छोटी-सी टुकड़ीकी जानकारी-भर है।

मैं उसे बीचमें ही रोक देता हूँ। उसे बताता हूँ कि मैं यहाँ लड़ाईकी बातें करने नहीं आया, कमसे कम छुट्टियों तक लड़ाईको पूरी तरहसे भूल जाना चाहता हूँ।

लेकिन वह ज़ोरसे हाथ पटककर कहता है, "भूलनेसे कैसे काम चलेगा मदन," और फिर थोड़ी देर बाद एक पेग लेते हुए कहता है, "भूलनेका मतलब है, ग़फ़लत और ग़फ़लतका मतलब है--हार और लड़ाई आराम-जंगलोंमें नहीं बल्कि सीधे दुश्मनकी राजधानीमें लड़ी जानी चाहिए, समझे ! दुश्मनकी व्यूह-रचनाको तहस-नहस करना होगा। उसे बोरिया-बिस्तर समेत रवाना करना होगा।"

मैं उससे बिदा लेता हूँ और घरकी ओर चल पड़ता हूँ। मैं झुँझला उठा हूँ। मेरा हलक़ सूख रहा है। मेरी आँखें जल रही हैं और तन-बदन सुलग रहा है जैसे जेठकी दोपहरीमें कोई पेड़ झुलस रहा हो। बच्चे पर हाथ फेरकर मैं अपने-आपको शान्त करता हूँ और मेरी मुट्ठियाँ अपने-आप बँध जाती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—विनाता पंकज

एक क्लास

लघुकथा : 'क्लासकी एक लड़की सोचती है—यह हरे और नीले रूमालोंसे मुँह क्यों पोंछता है ? शायद इसकी तथाकथित प्रेमिकाने दिया हो या वह शायद···' सारी कहानी इसी 'शायद' के आस-पास घूमती है शायद।

■

क्लास है। शायद शुरू होने ही वाला है।

आता है एक दुबला-पतला साँवला-सा, लँगड़े पैरोंसे चलता एक लड़का, शायद यही टॉपर सीताराम श्रीवास्तव है···।

एक छोटी-सी, साँवली-सी लड़की तेज़-तेज़ क़दम रखती हड़बड़ायी-सी, बार-बार अपनी फ़िक करती पेनकी स्याहीको क्लासमें पोंछती-रगड़ती—शायद यही सपने देखनेवाली नीरजा कपूर है।

एक निहायत ख़ूबसूरत, गोरा-सा लड़का बार-बार अपने चेहरेको रूमालसे पोंछता, अपने पोर्टफ़ोलियोको बड़ी ही लापरवाहीसे सँभाले हुए—शायद यही नयी कविता लिखनेवाला, नया नाम रखनेवाला श्री राजीव गुप्ता 'अनाम' है।

एक लम्बे बालोंवाली, गेंहुए-सी रंगतवाली, बार-बार पलकोंको झपकाती-सी, निंदियाती-सी, सफ़ेद साड़ीपर क्राइस्टका क्रॉस गलेमें लटकाये हुए लड़की आती है—शायद यही मिस मेरी जोन्स हैं।

■

टॉपर सीताराम श्रीवास्तव क्लासमें आता है, लोग सहम-से जाते हैं। शायद इसलिए कि पिछले साल क्लासके बड़े व्यक्तियोंने उसकी ओर देखने तककी परेशानी नहीं उठायी थी। यूनिवर्सिटी खुलनेपर लड़कियोंके चेहरे पूछ रहे थे, "टॉपर कौन है ?" और लड़के बड़े बेबस-से कह रहे थे—"कांग्रेचुलेशन्स सीताराम ! यार ! बड़ा अनएक्सपेक्टेड रिजल्ट मारा है !" और फिर लाचारीमें लगाया गया ज़ोरका ठहाका।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'अनएक्सपेक्टेड' सीताराम सोचता है। शायद उसे समझना चाहिए कि अनएक्सपेक्टेड इसलिए क्योंकि उसने कभी लड़कियोंसे बातें नहीं कीं, शायद इसलिए कि उसने कभी किसी सभामें कुछ रोमाण्टिक-सा नहीं पढ़ा, शायद इसलिए कि उसने कभी किसी किताब-के बारेमें लोगोंको बिनमाँगी सलाहें नहीं दीं। वह शायद समझता है, शायद नहीं भी—मुसकराता है, जो मुसकराहट होती है अनएक्सपेक्टेड-सी···। अब क्लासके बड़े व्यक्तित्व और कुछ पोजीशन-होल्डर्स उससे बातें करना चाहती हैं। उससे उसके नोट्सके बारेमें पूछना चाहती हैं। शायद नमस्कारोंका आदान-प्रदान तो होने भी लगा है। सीता-राम श्रीवास्तव रोज़ अपने भावहीन चेहरेसे दहशतको, ठण्डकको बिखेरता-सा क्लासमें चला आता है, पीछे बैठ जाता है बिना देखे।

और क्लासकी एक लड़की रोज़ उसे घूरती है। सोचती है, अच्छा कैरेक्टर है! वह एक कहानी लिखेगी या उसके भावहीन चेहरेका एक पोट्रेट बनायेगी और वह उसे फिरसे घूरती है गोया वह सीताराम श्रीवास्तव न होकर उसकी एक कहानी हो या उसका बनाया एक पोट्रेट हो।

सपने देखनेवाली नीरजा माथुर क्लासमें हड़बड़ायी-सी, तेज़-तेज़ क़दम रखती, पेनको बालोंमें रगड़ती-सी चली आती है। बैठते ही वह नोट-बुकके साइडमें बनाती है—पौपी, जीनिया और मिस्टर सहायका एक कार्टून और फिर तेज़-तेज़ लिखने लगती है जैसे वह एक भी शब्द हवामें बहने नहीं देगी।

और क्लासका एक लड़का सोचता है—उसके रूखे बाल इतने उड़ते क्यों हैं? इत्ता! इत्ता! इत्ता! तेज़ क्यों लिखती है? और इसने इत्ती खराब-सी पेन क्यों रखी है जिससे इसके होठ और उसकी मोंकी उँगलियाँ रंगकर और काली हो जाती हैं। उसका मन करता है कि वह उसे एक प्रेजेण्ट कर दे और डाँटकर कह दे—'ऐ गुस्ताख लड़की! खुदाके वास्ते इस ज़ालिम पेनको फेंक दो, कहीं भी—भगवान्‌के लिए इसके कारण और काली मत बनो, पर ख़ुदा तुम्हारे बाल बड़े प्यारे हैं!"

और वह लड़का उस लड़कीको फिर घूरता है गोया वह नीरजा माथुर न होकर उसकी दी गयी पेन हो।

वह ख़ूबसूरत लड़का बार-बार रूमालसे मुँह पोंछता लापरवाहीसे पोर्टफ़ोलियोको सँभालता हुआ क्लासमें बड़े सधे पैरोंसे आता है। अपने भूरे बालोंको एक झटका देता है जैसे वह सारी दुनियाको जीत चुका है। लड़कियोंकी घूरती नज़रको, दबती मुसकराहटको वह समझता है, शायद इसीलिए वह और भी निर्विकार बन जाता है। उसकी किताबें क्लासकी पोजीशन-होल्डर्सके बीच घूमती रहती हैं।

क्लासकी एक लड़की सोचती है—इन हरे और नीले रूमालोंसे मुँह क्यों पोंछता है? शायद इसकी तथाकथित प्रेमिकाने दिया है या शायद यह अपनी गोरी रंगतसे वाकिफ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है या वह शायद खुद उसे एक सफ़ेद रूमाल प्रेजेंट करके फुसफुसाना चाहती है—सुनो ! कॉलेज अपनी वह कविता फिरसे सुना दो जिसमें तुमने बड़ी-बड़ी बादामी आँखों और ठुड्डीके तिलका वर्णन किया है। वह उसे फिरसे घूरती है जैसे वह राजीव गुप्ता 'नंगम' न होकर उसका दिया गया सफ़ेद रूमाल हो जिसमें उसकी बड़ी-बड़ी बादामी आँखों और ठुड्डीके तिलकी कविता टँकी हो।

वह गोरा लड़का यह सब कुछ समझता है और उस लड़कीकी नयी खुशफ़हमीको अपनी नयी विजयमें दर्ज कर लेता है।

वह लम्बे बालोंवाली लड़की निंदियाती-सी क्राइस्टका क्रॉस गलेमें लटकाये हुए क्लास-में आती है। अपनी बड़ी-बड़ी पलकोंको झपकाती है, लम्बे बालोंकी चोटीको एक बार देखती है, सोचती है—उसके बाल बहुत ज़्यादा झड़ गये हैं। अब वह केरलसे शुद्ध नारियलकी एक शीशी मँगवायेगी और फिर वह सोचती है कि वह 'इक्ज़ाम' के बाद खूब सोयेगी, दिन-रात सोयेगी और वह सोच-सोचकर मुसकराती है कि जब वह सोती रहेगी तब उसकी आया तेलकी मा उसके बालों-में शुद्ध नारियल तेल लगाती रहेगी।

क्लासका एक लड़का सोचता है कि वह इसके लम्बे बालोंपर एक कविता लिखेगा और जमुहाइयोंसे एक इमेज़ खड़ा करेगा और उसे एक तेलकी शीशी देगा जिससे उसके बाल लम्बे ही होते चले जायें।

वह उसे फिरसे घूरता है गोया वह मिस मेरी जोन्स न होकर उसकी दी गयी तेलकी शीशी हो या उसकी लिखी कविता हो।

क्लास अपनी पूरी ठण्डकके साथ ओवर हो जाता है। क्लाससे निकल आते हैं वह टॉपर, वह छोटी-सी, साँवली-सी, पेनको सँभालती-सी नीरजा माथुर और निहायत खूबसूरत लड़का और लम्बे बालोंवाली मेरी जोन्स भी।

सबसे पीछे एक अजीब-सा, नंगा-सा क्लास रह जाता है जहाँ ये चारों ही घुट जाते हैं....

....।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौंसठ कविताएँ

इन्दु जैन

० ०

मर्मस्पर्शी कविताओंका संकलन

'चौंसठ कविताएँ' एक बहु-आयामी चेतना मानसकी रचना है। न कहें कुछ और, पर भिन्न और विशेष इन कविताओंके परिचयमें अवश्य कहा जायेगा। ये कविताएँ हिन्दी कविताकी अधुनातन दिशा, भाव-बोध और शिल्पकी प्रामाणिक उपलब्धिका संकेत देती हैं। और प्रचलित सब प्रकारके उलझावोंसे ये मुक्त हैं और अपना अर्थ बड़ी सहजताके साथ स्वयं खोलती हैं।

सब चौंसठ कविताएँ हैं, पर प्रत्येक जैसे एक सौम्य बिजलीकी कौंधका निमिष हो जो अन्दरकी अकुलाहटको, किसी दर्द या उल्लासको, सतरंगी प्रकाश रेखाओंकी भाषामें उकेर जाये। अनुभूतियोंको ऐसी अभिभूत करने-वाली अभिव्यक्ति इनमें हुई है कि क्षितिजपर क्षितिज सामने खुलते चले जाते हैं और भीतर एक गन्ध-भरी चाँदनी छिटक पड़ती है। कविताओंकी पंक्ति-पंक्तिसे साक्ष्य मिलता है कि अन्तश्चेतना भी कितनी मुखर हो सकती है। कविता-प्रेमियोंके लिए कृति अनिवार्य रूपसे पठनीय है।

मूल्य ३.००

भारतीय ज्ञानपीठ
प्रधान कार्यालय : ९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७
विक्रय केन्द्र : ३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६
प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

– राजेन्द्र किशोर
– वीरेन्द्र कुमार जैन

X और O

आईने की धूप में क्रॉस

खुली रहने दो अपनी ये सूखी झुराई लटें,
अंगों की आतुरता हवा में उलीच दो,
मन की प्रतीक्षातुर अतलान्त गहराइयों में
गूँजने दो बीजों की रोमिल किलकारियाँ,
आज अब बोलो मत, आँखों को खोलो मत,
बाहर तो सिर्फ़ मेरे गमले की भुभुरायी मिट्टी है।

तुम रोज़ सुबह ज़ाया करती हो रँग कर दुपट्टा,
दोपहर गँवाती हो आईना हाथों में लिये,
शाम बीत जाती है चुनते-चुराते रंग-बिरंगे फूल
जाने किसके बटन-होल के लिए,
रात ढल जाती है होटलों, क्लबों, सोसाइटियों में ढूँढ़ते हुए वे आँखें
जो मुझ आँखें न हों,
सुबह होने के पहले झनझनाती हुई ख़ामोशी में
सड़कों पर बेजान पड़ी तुम सुनने की कोशिश करती हो
किन्हीं पाँवों की आहट....

सूर्योदय होता है,
अंगों की चिलकन जगा देती है मनहूस अकेलेपन में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने ही अनायास स्पर्श से चौंक कर चीख़ती
हुई अनवरत नीरवता—और
तुम उठती हो,
अर्पित करती हो उगते सूरज को
स्वागत-नमस्कार,
दिन कहीं भटक न जाये,
रेत में अटक न जाये,
इसलिए सहेज कर अंगों की टूटी पार-
स्परिकता
जागतिक क्रियाओं का कर देती हो
शुभारम्भ
फिर वही रँग कर दुपट्टा।
मैं गमले की भुभुरायी मिट्टी को मुट्ठियों में भरे
देखता हूँ तुम्हारी जिजीविषा—
रात की व्यर्थ अन्तहीन प्रतीक्षा के बाद भी
तुम्हारा रंग की खोज में भटकना,
ढूँढ़ते फिरना उस माध्यम को जो रंग से
चमत्कृत बिम्बों को धारण करे,
सींचने की कोशिश करना हर उस पौधे को
जो कभी फूला था।

तुमको अर्थ की तृषा है।
तुम उफनाती नदियों के तट पर रचती चलती
हो रेत के महल,
तपती मरुभूमियों में दुपट्टे की छाया से
ढँकती चलती हो झुराते बिरवे की आयु,
भीमाकार ज्वारों से टकरा कर डूबती
नौकाओं को
देती चलती हो कामाकुल इंगितों का सहारा,

शहरों की आपाधापी में अपने रूप की
में समो देना चाहती
अपनी असम्बद्धता से घबराये लोगों की
में निस्संकोच आत्म
सौदागरों की बात-चीत, मोल-तोल,
भाव, स्वार्थ की पैंतरेबाज़ियों
चीन्हने की कोशिश करती हो
सार्थकता
न सही स्थायी एक क्षण-
मैं पथरायी आँखों से कोलाहलभेदी
ब्धता में देखता रहता हूँ तुम्हारी
ज़िन्दगी के अर्थहीन निरंकुर क्षणों को
सम्भावनाओं से सींचने की करता हूँ
मगर पानी पड़ा रहता है
और भुभुरायी जाती है मेरे कमरे के
द्वार पर के गमले की

तुमको अर्थ की तृषा है—
तुम अपने अलक्तक-रंजित चरणों से
उकसा देती
सूख कर फटी दरारों में दुबकी
ठेठ दुपहरी में मेरे गमले की भुभुरायी
आईने में रखकर चमका देती हो
अपनी गदरायी
मैं जानता हूँ इसका अर्थ, मगर बोलूँ
तुम्हारी ओर ये आँखें तोलूँ कैसे!
तुमको क्या पता, किस क़दर चमका
देती हैं

मेरे बटन-होल का सुनहला
तुम्हारे दुपट्टे के रंग में
तुम्हारे आईने - की चटक

—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर रात
जब मैं तुम्हें छोड़ कर चला जाता हूँ
तुम्हारे कक्ष के एकान्त में :
तब मेरे पीछे वहाँ कौन छूट जाता है ?
तुम मैं नहीं होता हूँ,
तब मेरे उस अभाव में
कौन होता है तुम्हारे पास ?
तब तुम क्या सोचती हो, क्या
महसूसती हो :
क्या होता है तुम्हारे तन में,
मन में, आत्मा में :
क्या वह मैं कभी नहीं जान पाऊँगा···!

अभी-अभी मैं गया हूँ :
मेरे हाथ से छूटे दरवाज़े के परदे में
एक अगोचर कम्पन शेष है :
तुम पलंग पर बैठी रह गयी हो नीचे पैर
लटकाये :
घूम जाते हुए, मुड़ कर, परदे की
निचली कोर से
उस लटकते चरण-युगल की, एक झलक
मैंने पायी है :
और उसके नीचे से फ़र्श जैसे एकाएक हट
गया है :
एक अनिश्चिति का अँधियारा समन्दर
वहाँ खुल उठा है।
किताबों के शेल्फ़ अपनी जगह अविकम्प हैं :
उनमें भरा ज्ञान पथराये प्रकाश-सा
निश्चल खड़ा ताकता रह गया है।
हमारी आत्माओं के बीच,
आरपारगामी वातायन होने में असमर्थ :
एक दुस्तर काँच का समुद्र !

दीवारों पर तुम्हारी बनायी पेण्टिंग्स्
अक्षुण्ण हैं :
नाना रंगोंमें बँधे उनके अवकाशों में
जाने कौन-से अविज्ञात पार-पारान्तर
खुल कर तुम्हें देखने लगे होंगे :
मैं नहीं हूँ तुम्हारे पास इस क्षण,
और क्या तुम अकेली ही
उन पारान्तरों में चली जाओगी ?
उस यात्रा में कौन होगा तुम्हारे साथ ?
हाय, उन 'पेण्टिंग्स्' के वे नाना रंगो में
खुलते रमणीय प्रदेश
कितने सजीव, कितने अनन्त और भयावह
लग रहे हैं मुझे अपनी अनुपस्थिति में····?
और तुम उनमें भटकती,
मेरे ऐन्द्रिक दर्शन के सीमान्तोंसे निष्क्रान्त
हो गयी हो !

अभी कुछ ही देर पहले
ड्रेसिंग टेबुलके उस आईने में
जहाँ हमारे संयुक्त युगलित मुखड़े विचुम्बित
थे परस्पर छवि-दर्शन में विह्वल :
शून्य है अब वह आईना :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और पलंग पर से एकाएक उठकर
तुम उसके सामने चली जाती हो :
उस शून्य आईने में
अपना एकाकी प्रतिबिम्ब देख तुम काँप
उठती हो :
मैं नहीं हूँ वहाँ—
और तब तुम्हारे हृदय की
उस अनुपस्थिति-बोध से व्याकुल भयावहता में
····वहाँ कौन है····?
कौन है वह····
कितना पीड़क बेधक है
वह अविज्ञात रिक्त-पुरुष
जो उस शून्य आईने की दूरी में से
चला आ रहा है····!

घड़ी भर पहले जो परफ़्यूम
हमारे संगुम्फित वक्षोंके बीच की
परम मिलनोष्मा में तरंगित था,
वह अब तुम्हारे वक्ष से प्रवाहित हो
मेरी अनुपस्थिति के उस अबाध शून्य की
बीहड़ता में
निराधार अप्रतिहत भटक रहा है :
कितनी ख़तरनाक अविजानित स्मृति-घाटियों के
अयात्रित कुंचित पथ खोल रही होगी
उसकी महक
तुम्हारी बिछुड़ी चेतना के मासूम तटों में :
और अवचेतन की उन अनबूझ ख़तरीली
स्मृति-यात्राओं में
जब तुम्हारे साथ मैं न हूँगा
तब कौन होगा तुम्हारे संग···?

कौन है वह तुम्हारे संग
रहस्यावलि
मेरी अनुपस्थिति में
यह कौन गुमनाम ट्रेसपासर,
हमारे बीच चलता है
मेरे जाने के बाद, कमरे की रौशनी
कितनी निश्चल उर्ज्जीवित हो रही है
कितनी उजागर, उत्सुक होकर,
वह तुम्हें ताक रही है
पूछ रही है तुमसे : 'तुम अकेली हो अब
अब कौन है तुम्हारे साथ'
और लो, तुम्हारे पैरों तले के फ़र्श का
अपने चित्रित जंगलों और 'ड्रेगनों' के साथ
जीवन
एक निष्क्रान्त हिल्लोलन से
अपने भीतर के अतलान्त खोल रहा है
'अब कौन हो ?···क्या हो···?' अब कौन
हो मेरे पास
मेरे साथ···?···कौन आयेगा'''
कब आयेगा'''
मुसलसल प्रश्नोंकी अराजकता में भटकी
तुम्हारी
दरवाज़े-खिड़कियों को ताकती है
तुम्हारे भीतर से आ रही एक अनबूझ
आहट
पृच्छा के धक्के से
एकाएक सब द्वार-खिड़कियाँ अपने आप
बन्द हो जाते हैं
भड़ाम् ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ'''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...कहाँ है वहाँ द्वार, खिड़कियाँ, परदे...
उन चौखटोंमें अभेद्य दीवारें जड़ गयी हैं :
यह कौन आ गया है भीतर
दीवारें भिड़ कर....?
कौन है यह अप्रत्याशित रात्रिचारी
जो मेरी अनुपस्थिति में भीतर आ
गया है....?
जिसने स्वयं कमरे की दीवारें बन कर
सभी ओर से तुम्हें घेर लिया है :
जो विजन समुद्र की चट्टान से बँधी
कलंकिनी एण्ड्रोमीडा-सी स्वयं चट्टानमूर्तित
हो रहती हो ;
जो मैं उत्तरी ध्रुव के बर्फ़ानी बीहड़ों में
अकुन्तला राक्षसी मेडूसा को खोज कर
उसका मस्तक काट लाने को निर्वासित
डिक्टिस पर्सीयस,
तुझसे दूर अनजान, अपनी दुर्दान्त भटकन में
चीख़ उठता हूँ अकस्मात्....।
अपने स्नायु-जाल और अस्थिबन्ध तोड़ कर
दिक्, काल और अवकाश को
अपने विक्रान्त पैरों से कुचलता हुआ
शून्य की खन्दकोंकी ओर दौड़ता हूँ,
कि अभी-अभी उनमें कूद पड़ूँगा....!
तभी तुम्हारे कमरे की दीवारें
उच्छिन्न होकर
उड़न-खटोले-सी उड़ती हुई
अधर में टँगी दिखाई पड़ती हैं
मेरे सर पर मँडलाती हुई....!
हाय रे हाय, तो मेरी अनुपस्थिति में
तुम्हारा कमरा भी नहीं रहा...?

X और O

और कमरे से बाहर, तुम कहाँ होगी...?
ओ मेरी बिछुड़ी आत्मा,
अनन्त कोटि ब्रह्माण्डों की असंख्य चक्रावृत
शृंखलाओं में
तुम कहाँ अस्तित्वमान होगी इस
घड़ी... ?

...एकाएक, भयावने भूतकालों के खण्डहरों में,
क्षायक चाँद की पीली रौशनी में भटकती
मेरी चेतना
एक महाभयानक दुःस्वप्न से चौंक कर
जाग उठती है :
कहीं दूर मध्य-रात्रि के सन्नाटे में
घन्नाता हुआ एक घण्टा बजा।
....एक बज गया....!
पृथ्वी के अलक्ष्य छोर पर
एक कुत्ता भूँक उठा....

तुम अपने कमरे में अकेली सोयी होगी
अपने शयन में,
अपने पायताने की खिड़की खुली रख कर
उसका परदा हटा कर
हस्बमामूल :
खिड़की पर आ खड़े हुए तारों-जड़े आकाश
और अँधेरे शयन में शिल्पित
तुम्हारी एकाकिनी तन्वंगी काया के
बीच के
इस निस्पन्द ईथर में
कौन होगा इस क्षण,
जहाँ मैं नहीं हूँ....।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौन होगा तुम्हारी सांस-सांस के बीच के
अन्तराल में
जहाँ मैं नहीं हूँ :
कौन होगा तुम्हारी औंधी लेटी छाती और
शैया के बीच के उस एकान्त
विक्षुब्ध अवकाश में,
जहाँ मैं नहीं हूँ :

कौन होगा तुम्हारे संग, जब तुम इस घड़ी
अपनी सुषुम्ना नाड़ी के रत्न-तरंगिम
स्वप्न-लोक में खुलते
अद्भुत भू-स्केपों, द्य-स्केपों, समुद्र-स्केपों के
विचित्र फेण्टास्टिक प्रदेशों में विचरती होगी :
उन सपनों के आनन्दों, पीड़नाओं, सयों,
आश्चर्यों और खोजों में,
हा, तुम कितनी अकेली होगी :
कौन विचरता होगा तुम्हारे संग वहाँ,
अज्ञात चेतना के उन अगम्यगामी बीहड़ों में
जहाँ मैं नहीं हूँ तुम्हारे संग इस घड़ी....!

कौन होगा इस क्षण
तुम्हारे ऊष्म शयित तन
और तुम्हारे वसनों के बीच के
अगोचर अन्धकार में
जहाँ मैं नहीं हूँ...!

कौन होगा इस निमिष
तुम्हारी कंचुकि और तुम्हारे श्वास-
कम्पित वक्षोजों के बीच के
गहनतम एकान्त में
जहाँ मैं नही हूँ--!

कौन नाव खे रहा होगा इस पल
तुम्हारी रक्त-वाहिनियों के
इन्द्रियोत्तरगामी प्रवाहों में--!
पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश के
उन विलोपित होते अन्तरालों में,
जो संयुक्त होकर तुम्हारी सत्ता का
आविर्भाव करते हैं,
वह कौन जादूगर खेलता है, जो
मैं नहीं हूँ
और जो मानो शून्य को मुट्ठी में बाँध कर
फिर खोलने के कौतुक मात्र में
तुम्हें रूपायित कर देता है :
वह क्यों मेरे अतिरिक्त और कोई है
जिसने तुम्हें जन्म दिया है--!

तुम्हारे हृदय से छन कर
तुम्हारे रक्त के मांसायित होने के बीच-
तुम्हारे मांस के मज्जायित होने के बीच-
तुम्हारी मज्जा के अस्थिबद्ध होने के बीच
की प्रक्रिया के
सूक्ष्मतम समयावकाशों में
जहाँ मैं नहीं हूँ....
जो तुम्हें भी अगोचर है....
वहाँ वह कौन रासायनिक क्रिया-
शील है :
हाय, वह क्यों है मेरे सिवा कोई
और
मेरे सिवा कोई और....!

ज्ञानोदय : अगस्त १९६१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हारी देह के प्राणान्तरित होने –
प्राण के मनान्तरित होने –
मन के आत्मान्तरित होने –
आत्मा क अनन्त चैतन्य प्रदेशों में
ऊर्जस्वित होने
के बीच क अन्तरालों में,····
(जो तुम्हें प्यार करने और जानने की
मेरी तीव्रतम संवेदना-ज्वाला से
भी परे हैं।)

वहाँ किस कीमियागर की––
गुह्य रूपान्तर-लीला चल रही है
––जो मैं नहीं हूँ····!

हाय, वह मेरे सिवा कोई और क्यों है,
मेरे सिवा कोई और क्यों है····!

हर रात जब मैं तुम्हें छोड़ कर चला जाता हूँ
जो आधी रात की अखण्ड निस्तब्धता को
वेध कर
मेरे हृदय की गहराइयों के आरपार
एक आकाशगामी हुताशन के तीर-सा
प्रश्न सनसनाता है
मेरी सत्ता को छिन्न-भिन्न करता हुआ
कि हाय––
तुम्हारी सत्ता में, तुम्हारे तन में, प्राण में,
मन में, आत्मा में,
तुम्हारी हर स्थिति और परिणति में,
तुम्हारी चेतना की हर तरंग के
परमतम एकान्त में,
तुम्हारी सत्ता के किसी भी
गोपनतम अंश, काल और अवकाश में––
क्यों कुछ ऐसा हो, जहाँ मैं न होऊँ
जो मैं न होऊँ,
जो मुझसे अनजाना हो,
जो मेरे चेतन, संवेदन और प्यार की
पकड़ से बाहर हो····!

तुम्हारे भीतर कहीं, कुछ भी,
जो अज्ञात है,
जो मेरी उपस्थिति से परे है····
वह क्यों है मेरे सिवा कुछ और।
वह क्यों है मेरे सिवा कोई और····?

० ० ०

····और जिस रात
मैं तुम्हें छोड़कर नहीं जाता हूँ :
हमारा शयन जब एक हो जाता है :
और उसमें तुम स्वयं
जब मेरा शयन बन जाती हो :
दो शरीर जब
एक दूसरे के भीतर पर्यवसान पा जाते हैं :
अस्थि-ढाँचों के अवरोध जब गल जाते हैं :
हमारी रक्त-शिराओं की
परस्पर गुम्फित-आप्लावित शोणित-धाराएँ
जब 'मेरी' और 'तुम्हारी' से अतीत
एक निर्वैयक्तिक महाप्रवाह भर रह
जाती हैं :
परस्पर विंधे हृदयों की धड़कनें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब एक अगमवाही महासिन्धु के
अनहद नाद में निर्वाण पा जाती हैं :
परस्पर दर्शन में विकल
आँखों की छटपटाती मछलियाँ
जहाँ स्वयं
एक अनिवार असह्य आनन्द-मूर्छा के
आँसू-सागर में जलान्तरित हो जाती हैं :
उस दर्शनातीत, परसातीत,
परस्परातीत—
महाप्लावन में तैरती
प्रोटोप्लाज़्म की
उस पारदर्शी जेली में :
ऊर्जा की तरंग-चूड़ा के
उस अन्तिम एकान्त में
जहाँ तुम भी नहीं हो
मैं भी नहीं हूँ
है केवल तुम्हारे गर्भ का महाशून्य-
वहाँ कौन खेलता है....
कौन विचरता है....
हाय, काश मैं उसे जान पाता,
मैं उसे जान पाता....!

—वीरेन्द्रकुमार

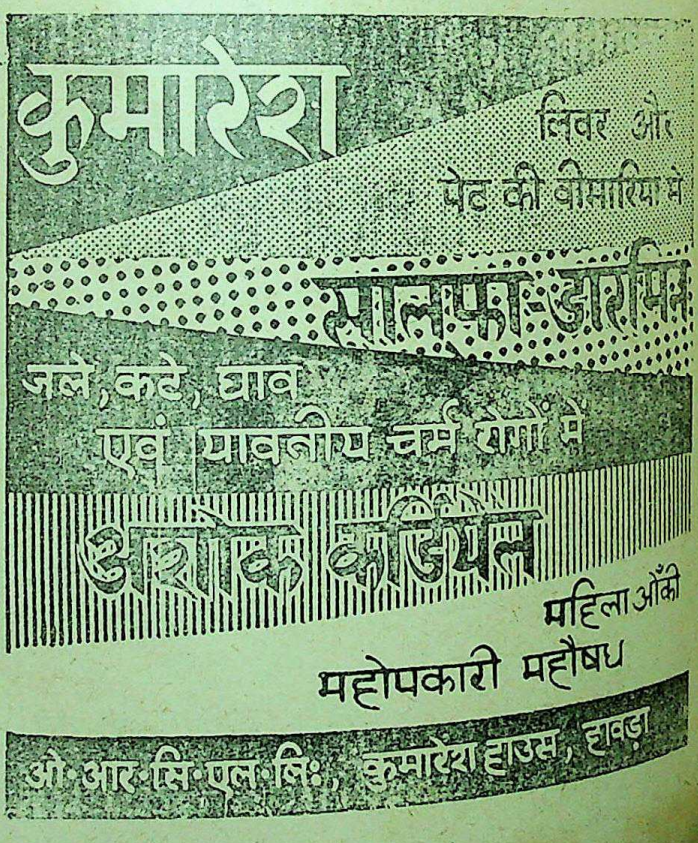

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—सतीशकुमार

एक भारतीयकी काली चमड़ी : पिस्तौलका निशाना !

एक और देश : सतीशकुमार शान्ति-मिशनपर सारी दुनिया पैदल घूम आये हैं। यात्रासे जो खट्टे-तीते अनुभव साथ लाये हैं, उन्हींमें-से एक यह—

चमड़ीका अभिमान भी
अभिमान है ! जब मैं
में था तो सुनता था कि
अफ्रिका और संयुक्त
अमेरिकाके गोरी चमड़ी-
लोग अपने आपको काली
वालोंसे ऊँचा समझते हैं
काली चमड़ीसे घृणा
हैं। लेकिन उस समय मैं
समझता था कि जिस तरह
में ऊँच-नीच और हरिजन-
का भेद समाप्त होता
रहा है और कमसे कम
पर खुले आम हिंसा
अन्याय करना लगभग
जा रहा है, वही हालत
में भी होगी। लेकिन
की यात्राके दौरानमें मैं
दक्षिणी राज्योंमें गया, तब
नीग्रो लोगोंकी हालतको
तो मैं चकित रह गया।

इस बीसवीं सदीमें भी मात्र काली चमड़ीके कारण ऐसा बर्बरतापूर्ण व्यवहार कल्पनाके बाहरकी बात है।

काली चमड़ीवाले ये नीग्रो दूसरी श्रेणीके नागरिक माने जाते हैं। अधिकांश नीग्रो बहुत ही ग़रीब हैं। वे गन्दी बस्तियोंमें रहते हैं। उनकी बस्तियोंको 'हारलम' कहकर पुकारा जाता है। वैसे तो न्यूयार्कमें भी 'हारलम' है परन्तु बारलोट, अटलाण्टा, आलबनी आदि शहरोंके हारलमोंकी तुलनामें न्यूयार्कका हारलम कहीं बेहतर है। बहुत-से स्थानों-पर नीग्रो लोगोंका बहुमत है, पर वे मतदाताके रूपमें रजिस्टर्ड नहीं हैं। डानविल नामके एक नगरमें केवल ७ प्रतिशत नीग्रो मतदाताके तौरपर रजिस्टर्ड हैं। ९३ प्रतिशत नीग्रो हैं तो अमेरिकन परन्तु उन्हें वोट देनेका हक़ नहीं। ये नीग्रो गोरी चमड़ीवाले छात्रोंके साथ पढ़ नहीं सकते। वे सार्वजनिक रेस्तराँमें चायकी प्यालीके भी अधिकारी नहीं। उन्हें इज़्ज़तका काम नहीं मिल पाता। उनके विद्यालय अत्यन्त उपेक्षित दशामें हैं। वे गोरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चमड़ीवालोंके साथ बैठकर सिनेमा नहीं देख सकते ! उन्हें होटलमें ठहरनेके लिए कमरा नहीं मिलता । 'हारलम' नामकी इन बस्तियोंमें सड़कोंकी बराबर सफ़ाई नहीं होती । अगर ये नीग्रो बीमार हैं तो उनकी परिचर्याका व इलाजका कोई ठिकाना नहीं, क्योंकि गोरी चमड़ीवालोंके दवाखानोंके द्वार इनके लिए बन्द हैं । नीग्रो दवाखानोंकी हालत बदतर होती है । यदि कुछ जाग्रत नीग्रो जवान अपने अधिकारोंकी माँगका प्रदर्शन करते हैं तो, भले ही वे कितने ही शान्तिपूर्ण और अहिंसक हों, उन्हें बर्बर गोरी पुलिसकी कठोर ताड़ना सहनी पड़ती है । डानविलके एक ऐसे ही अहिंसक प्रदर्शनमें गिरफ़्तार एक नीग्रोपर पुलिसने इतनी मार बरसायी कि वह लगभग एक आँख ही खो बैठा । इसपर भी उसकी चिकित्साका तीन दिन तक कोई प्रबन्ध नहीं हुआ ।

मेरे साथ घटी एक छोटी-सी घटनाका बयान करना शायद यहाँ अनुचित नहीं होगा । मैं अमेरिकाके एक प्रान्त जोर्जियाकी राजधानी अटलाण्टामें डॉ० मार्टिन लूथर किंगसे मिलनेके लिए गया । उसके बाद आलबनी नामके एक छोटे नगरमें एक अन्य मित्रसे मिलनेके लिए, कुछ घण्टोंके लिए, आलबनी गया । आलबनी रंग-भेद नीतिका गढ़ माना जाता है । मैं तो भारतसे आया हुआ एक अनजान यात्री था । लन्दनके एक पत्रकार जोन पापवर्थके साथ मैं एक रेस्तराँमें गया । रेस्तराँका नाम था 'ब्रोडस्ट्रीट कॉफ़ी' । लोगोंने मेरी तरफ़ बड़े ग़ौरसे देखा । मेरा रंग वैसा गोरा नहीं, जैसा गोरे देखनेके लिए इन लोगोंकी आँखें अभ्यस्त जब हमने एक खाली टेबलको चुन लिया आरामसे बैठ गये तब एक 'वेट्रेस' आयी उसने टेबलपर पानीके ग्लास रखते तरफ़ कुछ सकपकायी नज़रोंसे देखा । साथी जोनके प्रति उसे कोई शिकायत थी परन्तु मैं जोनके साथ कैसे पहुँचा— सवाल उसकी आँखोंमें भरा था । वह कुछ बोली नहीं । मैंने बताया कि मैं शाकाहारी व्यक्ति हूँ । इसलिए कुछ हारी खाद्य सामग्री मेरे लिए उपलब्ध कुछ तले हुए आलू, टोस्ट और कॉफ़ी मैंने कहा । जोनने केवल 'कॉफ़ी' का दिया । 'वेट्रेस' वापस गयी ।

हम टेबलपर बैठे प्रतीक्षा करते आठ-दस मिनिट तक कुछ भी नहीं उसके बाद रेस्तराँके मालिकने आकर कि शाकाहारी भोजनका क्या मतलब उसकी आँखोंमें उपेक्षा-मिश्रित क्रोध मैंने उपरोक्त नाम फिरसे दुहराये कहा कि हमारे पास कुछ भी नहीं आप कृपया रेस्तराँसे बाहर चले इतना कहकर वह वापस चला गया । 'वेट्रेस' फिर आयी । उसने उठाये । तौलियेसे टेबल पोंछी और "बस जितना जल्दी हो, आप रेस्तराँ चले जायें !" मुझे कुछ समझने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा था कि यह क्या माजरा है ! मैंने टेबल-पर्दे को ज़रा ऊँची आवाज़में रेस्तराँके मालिकसे पूछा कि क्या मेरे बारेमें आपको कुछ भ्रम हुआ है ? आखिर बात क्या है ? कृपया समझा तो दीजिए। पर रेस्तराँके मालिकका गुस्सा बढ़ता ही जा रहा था। वह वैसे 'काले' आदमीसे बहस करना शायद उसकी इज़्ज़तके खिलाफ़ था। 'रेस्तराँके बाहर जाते हो कि नहीं ?'—इस चुनौतीके अलावा उसके पास कुछ भी नहीं था। मैं अपनी टेबलसे उठकर रेस्तराँके मालिकके नज़दीक गया और मैंने कहा, "मैं इस शहरमें कई बार आया हूँ। मुझे यहाँके नियमोंका कुछ पता नहीं है। यदि आप नाराज़ होते हों तो मुझे इस रेस्तराँमें कुछ भी खाने-पीने की इच्छा नहीं है। लेकिन मैं समझना चाहता हूँ कि आखिर बात क्या है ? क्या आपको मेरे बारेमें कुछ भ्रम हुआ है ?"—यह मैंने कई बार दुहराया। पर मेरे बारेमें उसे भ्रम होनेका सवाल ही क्या, साफ़ ज़ाहिर था कि मेरी चमड़ी रेस्तराँके मालिककी चमड़ी (गोरी) से भिन्न (काली) थी। जब इस सारी घटनामें पाँच-सात मिनिट गुज़र गया तो रेस्तराँके मालिकका धीरज टूट पड़ा। रेस्तराँ-में बैठे हुए सभी लोगोंका ध्यान हमारी तरफ़ खिंचा हुआ था। रेस्तराँके मालिकका शरीर काँप रहा था, आँखें लाल हो गयी थीं। वह ज़ोरसे चिल्लाकर कहा, "रेस्तराँके बाहर जाते हो या सबक़ सिखाऊँ ?" और उसने आल-मारीके दराजमें-से एक बड़ा-सा चमड़ेका बैग निकाला। बैगको खोलते ही एक अत्यन्त आधुनिक पिस्तौल निकल पड़ा। शायद उसने सोचा कि पिस्तौल देखकर मैं भाग जाऊँगा। मैंने हँसते हुए कहा, "मेरे भाई, पिस्तौल दिखानेकी कोई ज़रूरत नहीं। मैं तो स्वयं चला जा रहा हूँ। मैं यहाँ झगड़नेके लिए नहीं आया। मैं तो केवल समझना चाहता हूँ कि आखिर बात क्या है ?" मेरा हँसना और बजाय डरकर भागनेके वहीं खड़े रहना उसकी क्रोधाग्निमें घीका काम कर रहा था। उसने पिस्तौल हाथमें उठाया, अँगुली घोड़ेपर रखी और दूसरे हाथसे रेस्तराँके दरवाज़ेकी तरफ़ इशारा करते हुए कहा, "बिना कुछ बोले बाहर निकल जाओ !" जब मैंने देखा कि वह महाशय किसी भी तरह सुनने-समझने-को तैयार नहीं हैं, तो चल देना ही अच्छा समझा। मेरे साथी अँगरेज़ पत्रकार जोनने भी यही कहा कि 'अब बातको बढ़ाना उचित नहीं होगा।' मैं दरवाज़ेकी तरफ़ घूमा कि 'वेट्रेस'ने मुझे पीछेसे एक धक्का लगाया और मुझे रेस्तराँके बाहर करके झटसे दरवाज़ा बन्द कर लिया।

उपरोक्त घटनासे साफ़ ज़ाहिर होता है कि संयुक्त राज्य अमेरिकाके दक्षिणी प्रदेशोंमें किस तरह रंग-भेदका नशा फैला हुआ है। अगर भारतमें ऐसा कोई प्रसंग हो और ग्राहक तथा दूकानदारके बीच कोई परेशानी या मतभेद हो तो ज़्यादासे ज़्यादा पुलिसको बुलानेकी नौबत आ सकती है। परन्तु इतनी ज़रा-सी बातपर खुले आम पिस्तौल हाथमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उठा लेनेकी बात तो अजीब-सी लगती है। संयुक्त राज्य अमेरिकामें बन्दूक़ या पिस्तौल-पर कोई पाबन्दी नहीं है। जो भी चाहे, दूकानसे खरीद सकता है। पाँच करोड़ बन्दूकें इस देशमें व्यक्तिगत रूपसे लोगोंके पास हैं। १९६२ में प्रतिदिन २४ हत्याएँ सरकारी विभागमें दर्ज की गयी हैं। हत्याओंका इतना ऊँचा आँकड़ा निश्चय ही अनेक अमेरिकी लोगोंके दिलमें चिन्ता पैदा करने लगा है। खास तौरसे स्व० राष्ट्रपति केनेडीकी हत्याके बाद यह सवाल और भी तीव्रताके साथ पैदा होने लगा है।

मेलकम एक्स नामके एक नीग्रो नेताने हाल ही में एक नया आन्दोलन शुरू किया है कि प्रत्येक नीग्रो बन्दूक़ चलाना सीखे और अपने पास बन्दूक़ रखे। मेलकम एक्सका कहना है कि गोरी चमड़ीवाले अहिंसा और प्रेमकी भाषा कभी नहीं समझेंगे। इस तरह नीग्रो-आन्दोलनको एक नया मोड़ देना इस बातका सबूत है कि हिंसा और घृणासे हिंसा और घृणा ही पैदा होगी। अतः गोरी चमड़ी-वालोंको अपने गोरेपनका अभिमान छोड़कर मानव-मात्रकी समानताके विचारको मान्य करनेका अब समय आ गया है।

■ ■

Roller Chains AND Sprockets

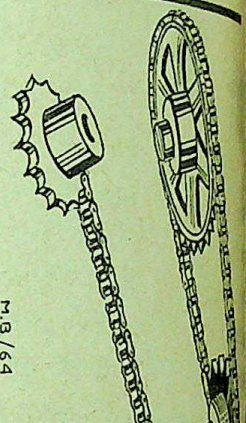

M.B./64

JAGATNARAYAN BHAGAWANDASS

71/A, NETAJI SUBHAS RD. CAL.

ROOM No. D/S 12.

PHONE { 22-4704 22-0795

Importers & Stockists of

Steel Roller Chains, Sprockets

"Renold" Kabo Diamond,

Morse & General Order Supp

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—अमृतराय

नया साल :
एक बेवक़्त याद

व्यंग्य : 'नया साल' एक शीर्षकवाज़ बहाना है, इस बहानेके इर्द-गिर्द या गिर्द-इर्द अमृतरायने मक्खी, मच्छर, खटमल, कुत्ता, बिल्ली, बन्दरसे रूप-रस-गन्ध तककी चर्चा की है, यहाँतक कि आसमानी बापको भी नहीं छोड़ा...

मैं बहुत कुछ जानता हूँ। जैसे यही कि नये सालका रंग गुलाबी होता है, लक्मेके नेचुरल शेड लिपिस्टिकके जैसा, और पुराना साल एक बदरंग-से मटीले रंगका, धोबीके गधेके जैसा, जो साल-भर चीकट-लादी ढोते-ढोते खुद भी उसी रंगका हो जाता है। नया साल झबरे-झबरे बालोंवाला, नन्हा-मुन्ना प्यारा-सा ऊँची नस्लका पपी होता है, ऊनके गोले-जैसा गरम गुदगुदा जिसे बरबस गोदमें उठा लेनेको जी चाहता है, और पुराना साल खुजलीका मारा, लीबर बहाता मरियल-सा एक बूढ़ा कुत्ता जिसे सब तरफ़ दुरदुराया जाता है। नया साल हरी-भरी दूबकी एक वीथीके जैसा होता है जिसपर अग़ल-बग़ल रंग-बिरंगे सुगन्धित फूलोंकी लताओंने एक मण्डप-सा तान रखा है, और पुराना साल कीचड़ और काईसे ढँका हुआ एक ऊबड़-खाबड़ कँटीला जंगली रास्ता जिसे अब पीछे मुड़कर ताकते डर लगता है!

मैं सब जानता हूँ, सब-सब जानता हूँ, मगर चुप हूँ क्योंकि आज नये सालकी शाम है। क्या था पुराने सालमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसे प्यारसे कोई याद करे। अच्छा हुआ, बहुत अच्छा हुआ, उसका जनाज़ा निकल गया। कोई उसके लिए दो आँसू गिरानेवाला नहीं है। आज तो हम आगे बढ़कर नये साल-की बलाएँ लेंगे और किसी बेहद मनभाते मेहमानकी तरह बड़े प्यारसे उसकी आँखोंमें आँखें डालकर और हाथ पकड़कर कमरेके भीतर ले आयेंगे, जहाँ इतने सारे लोग उसकी अगवानीमें अपनी आँखें बिछाये बैठे हैं। और आँखें ही नहीं, दस्तरख़ान भी बिछा है जिस-पर, साथ बैठकर पीनेके लिए, एकसे एक नायाब शरावें चुनी हुई हैं और एकसे एक नफ़ीस केक और पेस्ट्रियाँ!

कमरा रंग-बिरंगे काग़ज़के बन्दनवारों और नये सालकी हमारी उम्मीदोंके जैसे रंग-बिरंगे गुब्बारोंसे सजाया गया है। रेडियोपर बहुत अच्छा म्यूज़िक आ रहा है। हम गल-बहियाँ डाले नाचेंगे-गायेंगे, धूम मचायेंगे—कुछ होशमें और कुछ बेहोश, मदहोश! नये सालका जनम हो रहा है।

नया साल वह फ़ीनिक्स पंछी है जो हर साल पुरानेकी ख़ाकपर नया जनम लेता है। उसके माँ-बापकी फ़ैमिली प्लैनिंग इतनी पक्की है कि हमेशा एक ख़ास दिन और एक ख़ास घड़ीमें उसका जनम होता है। तभी तो दुनिया-भरमें करोड़ों लोग, ख़ुशीके तमाम साज़-ओ-सामानसे लैस, उसको हाथों-हाथ लेनेके लिए जगे बैठे रहते हैं। सोना गुनाह है उस वक़्त। जो सोया सो खोया। फिर तमाम साल दलिद्दरसे छुटकारा नहीं मिलने-का। जभी तो देखो, लोगोंको नींदके झोंके आ रहे हैं, झोंकेपर झोंके आ रहे हैं, कुर्सी डूबी जा रही है, मुँह फाड़-फाड़कर जमुहाइयाँ ले रहे हैं लेकिन मजाल नहीं कि सो जायें। सिगरेट और कॉफ़ीसे, रम और रमीसे, इसके-उसके स्कैण्डलकी मनगढ़ंत चर्चासे और घिसे-पिटे चुटकुलोंपर ज़ोरसे हँस-हँसकर नींदको भगाया जा रहा है। ज्यों-ज्यों घड़ीका काँटा आधी रात ग्यारह बजकर साठ मिनिटकी तरफ़ बढ़ता है त्यों-त्यों नाच-गानेकी ताल और लय तेज़तर होती जा रही है।

और लो, यहाँ-वहाँ सब तरफ़ घण्टे बजने लगे। नये सालका जनम हो गया और घण्टे बजते ही रहे। कैसा प्यारा बच्चा है, मक्खन-जैसे हाथ-पाँव, गुलाबकी पंखुरियों-जैसे होठ, घुँघराले बाल झोला-भर जिन्हें ख़ामख़ाह दुलराने-उलझानेका जी करता है, अजनबी-सी भोली-भोली आँखें जैसे किसी मीठे नश्तरकी तरह दिलमें उतर जाता है। दुनियाकी सर्दी-गरमीका उसे कुछ पता नहीं, अभी तो उसकी आँखोंमें वही इरमका बाग़ झूल रहा है, नन्दन-कानन, जहाँ आमकी बौरसे लदी हुई बेसुध अमराइयोंमें बारहों मास कोयल बोलती है। आँखें जुड़ाती हैं उसको देखकर, पर मैं अपने मनको क्या करूँ जो इस जगमगी घड़ीमें भी रह-रहकर लौट जाता है उस ग़रीब शिशु-मंगेपर जिसे हमने अभी-अभी बाहर फुटपाथपर दफ़नाया है, जो अभी-अभी बुझे हुए कोयलेकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरह, चूसी हुई गण्डेरीकी तरह दूर उस कोने-में फेंक दिया गया है, जहाँ समयकी राखकी ढेरी है। कोई बात नहीं। घूमने दो समयका पहिया, तुम्हारा आजका यह नया चहेता भी वहीं पहुँचेगा, मुरदा बरसोंके उसी क़ब्रिस्तान-में! सचमुच बड़े कृतघ्न हैं हम! एक दिन जिसको सर-माथेपर लिये फिरे, काम निकल जानेपर उसीको गरदनियाँ देकर बाहर कर देना, आदमीके सिवा और किसीका बूता नहीं जो ऐसा करे। मिल तो गया जो कुछ मिलना था, अब किस बातकी ठकुरसुहाती! ठकुर-सुहाती हमेशा उगते सूरजकी होती है। ढलता सूरज तो ढलता सूरज है।

रूप-रस-गन्धका कितना कुछ दिया उसने, पकाया तुम्हें, प्रौढ़ता दी, एक वर्षके जीवन-अनुभवसे, उसी सेतुपर होकर तुम यहाँतक आये—उसकी ही फिर इतनी अवमानना, इस अन्त समय? कल जो मेहमान आ रहा है उसके स्वागत-सत्कारके लिए क्या यह ज़रूरी है कि घरसे बड़े-बूढ़ेको, जिसने हर दुःख-सुखमें तुम्हारा साथ दिया है, धकियाकर कहीं सबसे अलग एक कोठरीमें बन्द कर दिया जाये? एक अजनबीकी खातिर (भले वह ज़री और कमखाब पहनकर आया हो) एक पुराने दोस्तकी तरफ़से यह बेरुख़ी (सिर्फ़ इसलिए कि उसके कपड़े ज़रा मैले हैं)—यह कहाँका इन्साफ़ है? अभी तो रंग-रूप भी नहीं खुला तुम्हारे इस नये दोस्तका, तब फिर क्यों उसे इतना सिर चढ़ाते हो? जो कहीं धोखा दिया उसने, तो? थोड़ा शंकित रहना

तब हमारे आसमानी बापने सोचा कि लाओ कुछ किया जाये, और वह सृष्टि करने बैठा। उस समय उसको सबसे पहले उस मच्छरका ध्यान आया जिसके विकलरवने ही प्रकारान्तरसे सृष्टिका आदि-कारण उपस्थित किया था और उसने अपनी आसमानी किताबमें हमेशाके लिए इस बातको दर्ज कर दिया, 'इन द बिगिनिंग वाज़ द वर्ड…'

ही अच्छा है ऐसे मेहमानसे, ज़्यादा नहीं बस एक हाथ-भरकी दूरी। हमारे घर आये हो, बड़ा अच्छा किया। हम भी तुम्हारे साथ भलमन्सीका सलूक करेंगे, अपने बराबरकी कुरसीपर बिठायेंगे, नाम-गाम पूछेंगे, पूछेंगे—कौन ठाकुर हो, कहाँ, किस गाँवसे आ रहे हो, फिर ओले-पाले सूखे-बूड़ेकी बातें करेंगे, तश्तरीमें रखकर पान-सुपारी भी पेश करेंगे, मगर बस पान-सुपारी, अपना दिल नहीं। इतनी रोक ज़रूरी है। समझदारी इसीमें है।

होगी, जहाँ होगी। आदमीमें तो नहीं है। यों कहीं सुना था मैंने कि आदमी सबसे समझदार जानवर है। लेकिन मेरा ख़याल है, यह ज़रूर किसी आदमीकी ही कही हुई बात होगी। अपने मुँह मियाँ मिट्ठू! सरासर ग़लत बात है। आदमीसे ज़्यादा नासमझ जानवर दूसरा नहीं है। वह पढ़ा-लिखा हो सकता है, ज्ञानी हो सकता है, समझदार नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। दूसरे तमाम जानवर, क्या छोटे क्या बड़े, यहाँतक कि कीड़े-मकोड़े भी, उससे ज़्यादा समझदार होते हैं। कभी अपने किसी शिकारी दोस्तसे पूछिएगा, शेर कब और क्यों आदम-ख़ोर हो जाता है? इसलिए कि आदमी सबसे आसान चारा है। इसलिए कि अपनी उस घायल या टूटी हुई हालतमें वह दूसरे किसी जानवरका शिकार नहीं कर सकता। सब आदमीसे ज़्यादा चौकन्ने होते हैं और खटका होते ही भाग निकलते हैं। असल नासमझ, भुग्गा, गावदुम यह आदमीका बच्चा है! नये सालकी अगवानीमें जशन मनाना भी ऐसा ही एक बेजोड़ भुग्गापन है।

छोड़िए जंगलके बड़े-बड़े जानवरोंको, उनको लीजिए जिनसे हमारा रोज़का नाता है—कुत्ता, बिल्ली, बन्दर, चील, कौआ, गिलहरी, साही, गौरैया, खटमल, मक्खी, मच्छर। इनमें-से एकपर भी आदमीका बस नहीं है। सब आदमीको जैसे मनचाहे नचाते हैं, और आदमी है कि नाचता है। सीधेसे, चुपचाप, राज़ी-ख़ुशी नाच ले, चाहे शोर मचाकर, झल्लाकर, मुँह बिदोरकर, सरके बाल नोचकर, शत्रुके समूल नाशकी लम्बी-चौड़ी वीर घोषणाएँ करके नाचे। आये दिन यही देखता हूँ। कुत्ता जब देखो चौकेमें घुसा रहता है, बिल्ली रोज़ दूध पी जाती है, बन्दर दिनदहाड़े और घरवालेको दिखा-दिखाकर (कर ले जो कुछ तुझे करना हो!) कपड़ा चींथता है, चील हाथसे जलेबीका दोना झपट ले जाती है, कौवेको और कुछ नहीं मिलता तो आटेकी लोई ही ले उड़ता है, गिलहरी एक अमरूद नहीं बचने देती और न एक दाना मटरका, साही आलुओंका प्रेमी है, और गौरैया, नन्हीं-सी जान, ऐसा ऊधम जोते रहती है कि कुछ न पूछो, अनाजको घुन दिखलाना मुहाल है। क्या-क्या उपाय न किये होंगे इनको पकड़नेके, मारनेके, मगर सब बेकार, सब बेकार। कोई उपाय न चला बन्दरोंपर (उन तक पहुँच सके ऐसा डण्डा अभी तो ईजाद हुआ नहीं, और मैकनमाराने लिखा है कि पौलारिस ब्रह्मास्त्र मिलनेमें अभी कुछ देर है!) तो मैंने सोचा, लाओ फ़िलहाल पत्थर ही मारो। सो बन्दरोंका तो बाल भी बाँका न हुआ और घरके शीशे सब फूट गये!

इधर कुछ महीनोंसे एक काना कुत्ता बहुत लहटा हुआ है। सब-सब करके हार गये मगर वह अपनी आदत नहीं छोड़ता। एक दिन मैंने गीतासे उपयुक्त आर्षवचन लेकर अपनेको बहुत ललकारा और एक मोटा-सा चैला लेकर घातमें बैठ गया, कान इसीसे बचाकी टँगड़ी न तोड़ी तो मेरा नाम नहीं! कनवाँ आया, और अपने वक़्तसे आया और मैंने ऐसा ताककर चैला फेंका कि आज दस दिनसे लल्लू, हमारा बुड्ढा बन्दर, अपनी टूटी टँगड़ी लिये घर बैठा है। और वह कनवाँ जितनी बार मेरे सामने गुज़रता है गीताकी आर्षवाणीको अपनी हार बोलीमें बदलकर मुझको टिटकारी मार जाता है—नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः। ....कलजुगमें जो न हो जाये थोड़ा है!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे एक बड़े भाई साहब शिकारी हैं। साहित्यिकोंका उत्पात देखकर (आलूका आधा खेत खोद डाला कमबख्तोंने) उनको हमपर बड़ी दया आयी और उन्होंने इस संकटसे हमको उबारनेका बीड़ा उठाया। दिन-भर दो आदमी लगे रहे। खेतके आस-पास बड़ी-सी एक खाई खोदी गयी। रातको भाई साहब खाई-भरमें अँधेरा करके, टार्च-बन्दूक़ लेकर साहीका शिकार करने बैठे। परम आश्वस्त हैं कि साहीके पापका घड़ा भर गया और अब उसके विनाशकी घड़ी आ गयी, हम लोग तो सोने चले गये। सवेरे जैसे ही आँख खुली, छोटे-बड़े औरत-मर्द (नगर नहीं तो अपने घर और आस-पासके चार-छह घरोंके सकल नर-नारी) सब खाईकी तरफ़ दौड़े, यह देखनेको कि साही कितना बड़ा और कैसा जानवर होता है—सो साही तो कहीं नजर न आया, हाँ, भाई साहब ज़रूर कीचड़-में सने कराहते हुए पड़े थे! यह पूछना भी मुश्किल न जान पड़ा कि आपको यह क्या हुआ, कैसे हुआ, लाँद-फाँदकर उनको घरमें लाये और हफ़्तों सेंक-बाँध चलती रही। तबसे मुझको बराबर ऐसा लगता है कि हो-न-हो 'जो दूसरेके लिए गड्ढा खोदता है वह ख़ुद उसमें गिरता है'—वाली कहावत ज़रूर किसी साहीकी बनायी हुई है। इतिहास बताता है कि एक समय साही-कुलमें बड़े-बड़े नामी साहित्यकार हुए हैं। मेरे एक भाषा-शास्त्री मित्र तो 'साहित्य' शब्दकी व्युत्पत्ति ही 'साही' में देखते हैं। उनका कहना है कि मूल शब्द 'साहीत्व' था जो उच्चारणकी सुविधाके लिए भाषाशास्त्रीय नियमके अनुसार धीरे-धीरे 'साहित्य' बन गया। मैं नहीं जानता, यह बात कहाँतक ठीक या व्याकरण-सम्मत है, पर इतना ज़रूर है कि अगर साही साहित्यकार थे और हैं तो उन्हें क़लम ख़रीदने बाज़ार जानेकी ज़रूरत नहीं, अपना ही एक काँटा निकाला और लिखने बैठ गये····

साही या बन्दर तो ख़ैर फिर भी कुछ बड़े जानवर हैं, उस मरदूद खटमलको क्या कहिएगा जो करोड़ों आदमियोंकी नींद हराम किये हुए है, मगर मारने चलिए तो हाथ नहीं आता, और अगर हाथ आ भी गया और आपने उसको पनही जमा भी दी तो भी सौ-में निन्यानवे बार मरता नहीं, बस सिद्धयोगीकी तरह शवासनकी मुद्रामें कुछ देर प्राणायाम साधे पड़ा रहता है—और फिर आपको साफ़ बुत्ता देकर अपनी राह लगता है!

मच्छरके बारेमें कुछ कहना ही बेकार है। एक भी जो घुस पाया मच्छरदानीमें तो समझिए कि रात-भरका सामान हो गया। सोयी रात आप उठकर बैठेंगे; कभी दिया-सलाई, कभी चोरबत्ती, कभी मोमबत्ती जलायेंगे, रात-भर फटाफटकी आवाज़ें आयेंगी मगर मच्छर हाथ न आयेगा। पूरा छापेमार है वो, कि जैसे कहींसे ट्रेनिंग लेकर आया हो, और अभिमन्यु-जैसी अधूरी ट्रेनिंग नहीं कि चक्रव्यूहमें आप घुस तो गये मगर निकलने-का ढंग नहीं आता! मच्छर ऐसी कच्ची गोली नहीं खेलता। आप सात नहीं सत्तर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महारथी खड़े कर दीजिए, मच्छरको आप मनमानी करनेसे नहीं रोक सकते। जहाँ जाना चाहेगा जायेगा, जो कुछ करना चाहेगा करेगा और शत्रु-सेनाको ध्वस्त करके जब-जिधर निकलना चाहेगा निकल जायेगा। आप एक बार हवाको भी रोक सकते हैं, मच्छरको नहीं रोक सकते। यह आकस्मिक बात नहीं है कि समस्त संस्कृत भाषामें 'मच्छर'की तुकका एक और केवल एक शब्द मिलता है 'अच्छर' जो ब्रह्मका ही पर्याय है; और हमारे यहाँ ही नहीं, ओल्ड टेस्टामेण्टकी पहली पंक्ति भी यही कहती है—'इन द बिगिनिंग वाज़ द वर्ड····' मैंने बहुत दिन हुए एक यहूदीसे इसके बारेमें पूछा था तो उसने बताया था कि 'वर्ड' शब्दसे यहाँपर मच्छर ही व्यंजित है। ऐसा हुआ कि एक दिन हमारा आसमानी बाप आरामसे पड़ा सो रहा था। काम तो कोई था नहीं, न सृष्टि करनेका कोई इरादा था। कि तभी जाने कहाँसे एक मच्छर पहुँच गया, हाथीसे क्या कम डीलडौल रहा होगा उसका, आसमानी मच्छर ठहरा! ग़रज़ कि उसके भनभनाने या चिग्घाड़नेसे हमारे आसमानी बापकी नींद उचट गयी और वह कान मलता और फड़फड़ाता हुआ उठ बैठा। फिर जो एक बार नींद उचटी सो उचटी। बहुत-बहुत कोशिश की दोबारा सोनेकी मगर नींद न आयी। तब हमारे आसमानी बापने सोचा कि लाओ कुछ किया जाये, और वह सृष्टि करने बैठा। उस समय उसको सबसे पहले उस मच्छरका ध्यान आया जिसके विकलरवने ही प्रकारान्तरसे सृष्टिका आदि-कारण उपस्थित किया था और उसने अपनी आसमानी किताब-में हमेशाके लिए इस बातको दर्ज कर दिया—'इन द बिगिनिंग वाज़ द वर्ड····'

सचमुच मच्छरकी महिमा अनन्त है। घरकी जाने कितनी जली-फटी मच्छरदानियाँ उसके अदम्य शौर्यकी कहानी कह रही हैं—और अन्त उस नैश महाभारतका सदा यही हुआ है कि मैं हारकर मच्छरदानीके भीतर, चादर मुँहसे ओढ़कर (जितना उस परम प्रतापी मच्छरसे बचनेके लिए उतना ही अपने मुँहको शर्म छिपानेको) सो गया हूँ। जभी तो मैं कहता हूँ और आप खुद अपने मनको टटोलकर देखिए, समझदारीमें आदमी मच्छरके संग क्या खाकर बैठेगा, पासंगमें भी नहीं बैठता।

रही मक्खी सो उसकी तो बात ही निराली है। आदमीकी नाकसे उसको विशेष प्रेम है। सारी दुनिया छोड़कर वह जब बैठेगी तब आदमीकी नाकपर—शायद उसके दर्प-को चूर्ण करनेके लिए, क्योंकि आदमीको सबसे ज़्यादा ग़ुर्रा अपनी इसी नन्हीं-सी नाक-का होता है, कोई भी बात उसकी मरज़ीके ख़िलाफ़ हुई नहीं कि उसकी नाक कटी! लिहाज़ा मक्खी जब बैठेगी तब ताककर उसकी उसी नाकपर। आपने हाथ मारा, उड़ गयी। आपका ध्यान हटा, फिर आ बैठी। आपने फिर हाथ मारा, फिर उड़ गयी। आपका ध्यान फिर हटा, वह फिर आ बैठी। आपने फिर हाथ मारा, वह फिर उड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...। फिर आपका ध्यान हटा, वह फिर आ ...। आपने फिर हाथ मारा, वह फिर उड़ ...। फिर आपका ध्यान हटा, वह फिर आ ...। आपने फिर हाथ मारा, वह फिर उड़ ...। फिर आपका ध्यान हटा, वह फिर आ ...। यही मक्खीका ढंग है···ठीक वैसा ... कि एक सच्चे सत्याग्रहीका होना ...हिए। हिंसाका लेश नहीं उसमें, न काटे ...क मारे। बस बैठी हुई है। इसपर भी ... किसीको एतराज़ हो तो यह उसका ...य है। कैसे छोड़ दे वह अपना जन्मसिद्ध ...कार? इतनी आसानीसे अपना खेत ...वाली असामी वह नहीं। लड़ेगी, मरते ...क लड़ेगी। अच्छी धाँधली है, दो घड़ी ... बैठने भी न देंगे! आखिर क्या बिगा- ...हूँ मैं किसीका, चुपचाप बैठी ही तो रहती ... इतनी-सी बातपर इतना आगबबूला हुआ ...हा है यह आदमीका बच्चा! अच्छा तो ... एक बार निपट ही लिया जाये!

और बिगुल बज गया, लड़ाई शुरू हो ...। अब आप हाथ चलाये जा रहे हैं, पैर ...के जा रहे हैं, सर झटके जा रहे हैं, मगर ...ती है कि आपको दम नहीं लेने देती। ... आप पनचक्कीकी तरह दोनों हाथ ...कारने लगते हैं, मगर मक्खी अपना काम ...जाती है। अब आपके दिमाग़की नसें ...ने लगी हैं, आप पागल हुए जा रहे हैं, ...को लग रहा है कि इस जीनेसे तो मर ...ना अच्छा है और आप तरकारी काटनेकी ...या छुरीकी तलाशमें रसोईकी तरफ़ भागते हैं (मक्खी नहीं भागती तो उस नाकको ही काट फेंको!) मगर मक्खी वहाँ भी है, आपका पीछा नहीं छोड़ती, क़िस्सा-कोताह, मैदान उसीके हाथ रहता है। मानव जातिके सारे इतिहासमें आज तक मानव-मक्खी-संग्राम-में कभी आदमीकी जीत नहीं हुई। जो लोग निठल्लेबाज़ीको मक्खी मारना कहते हैं उन्होंने शायद कभी मक्खी मारी नहीं वरना मक्खी मारनेसे बढ़कर पराक्रम दूसरा नहीं है।

यानी कि आदमीसे बढ़कर (समझदार नहीं) नासमझ जानवर सारी सृष्टिमें दूसरा नहीं है, और यह उसकी नासमझीका ही सबूत है कि वह एक पुराने जाने-माने दोस्तको धता बताकर एक अज्ञातकुलशील अजनबीके गलेमें इस तरह बाँहें डालकर पागलों-जैसा नाचता फिरता है। फिर उसे अपनी भूलका पता चलने लगता है लेकिन तबतक एक और नया साल उधर चौखटपर खड़ा होता है।

मैंने अकसर लोगोंको कहते सुना है कि आदमी वर्तमानमें जीता है। यह सरासर झूठ है। आदमी कभी वर्तमानमें नहीं जीता, भविष्यमें जीता है। वर्तमान तो सिर्फ़ मरनेके लिए है, जीना तो सब भविष्यमें होता है। तभी तो वह वर्तमान संवत्सरकी बिदाईका सहृदय आयोजन न करके एक अजन्मे और तुरन्तके जन्मे बच्चेके स्वागतमें इस तरह होश-हवास खोकर पिपिहरी बजाता घूमता है—और सो भी इस फ़ैमिली-प्लैनिंगके ज़मानेमें जब कि वह जानता है कि हर नयी आमद मुसीबतोंकी एक नयी गठरी लेकर आती है!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शैशवांकन

अर्थात्

'बेबी बुक' हिन्दी में

o o

शिशुके जन्मोत्सवपर होनेवाले आयोजनोंकी शोभा स्मरणीय होती है। बाल-विकासका प्रत्येक चरण विस्मयकर है। इन आयोजनोंकी स्मृतिको और शिशुकी विकास-प्रगतिको मोहक तथा कलात्मक ढंगसे अंकित करके सुरक्षित रखनेकी इच्छा प्रत्येक माता-पिताके लिए स्वाभाविक है। इन प्रयोजनोंके लिए अभी विदेशी जीवन-पद्धतिपर रचित अँगरेज़ीकी 'बेबी बुक' का व्यवहार होता है। भारतीय ज्ञानपीठको गर्व है कि इस कलात्मक प्रकाशनके द्वारा वह इस अभावकी पूर्ति कर रहा है।

'शैशवांकन' में जन्मोत्सवसे सम्बन्धित अवसरों तथा शिशुकी उत्तरोत्तर प्रगतिका लेखा आयोजित है। 'शैशवांकन' मधुर स्मृतियों एवं उपयोगी तथ्योंके संरक्षणके लिए तथा स्नेह-आशीषकी अभिव्यक्तिके लिए सर्वथा नया और प्रीतिकर उपहार है। अपने शिशुके लिए स्वयं बरतें और जो आपके अपने हैं उन्हें भेंट करें। 'शैशवांकन' सभी अच्छे पुस्तक-विक्रेताओंके यहाँ प्राप्य है।

मूल्य १२.००

भारतीय ज्ञानपीठ

प्रधान कार्यालय : ६ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

विक्रय केन्द्र : ३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विष्णु प्रभाकर

(फाया अनुमान राजधनसे भेंटवार्ता)

७२ वर्षका साधक और रामायणके प्रसंग

भेंटवार्ता : थाई-भारत सांस्कृतिक एकताके परिपार्श्वमें एक शाम चर्चाओंकी, जिसमें कभी रामायणके प्रसंग सामने आये, कभी उन्हें।

समय हम थाई-भारत कल-
लॉजके प्रधान श्री राजधन-
लेकर पहुँचे तो बैंकाक
के आवरणमें घिरता आ
था। कुछ पैड़ियाँ चढ़कर
एक हॉलमें प्रवेश किया
के दाहिनी ओरके एक
में सोफ़े पड़े हुए थे।
यहींपर वे अपने अति-
से मिलते हैं। हम लोग भी
बैठ गये। मेरे संग थाई-
कलचरल लॉजके प्रमुख
खुनाथ शर्मा तथा जीवन-
के सम्पादक श्री यशपाल
थे। हम दोनों साथ-साथ ही
पूर्व एशियाकी यात्रापर
तभी देखता हूँ कि बायीं
एक बहुत बड़ा क्लॉक
है और उसमें पूरे
बज रहे हैं। मिलनेका
समय तो निश्चित हुआ

था। खुशी हुई कि हम ठीक समयपर पहुँच गये हैं। इस प्रकोष्ठमें विशेष रूपसे हमारा ध्यान खींचनेवाली एक अलमारी थी जिसमें बहुत-सी पुस्तकें सुघड़तासे रखी हुई थीं। पास ही एक और कमरा था। उसमें रखा हुआ टेलीविज़नका बड़ा सेट दिखाई दे रहा था। उस समय कोई विशेष कार्यक्रम चल रहा था, क्योंकि एक युवती सहज भावसे पैर फैलाये फ़र्शपर बैठी उसे देख रही थी।

इसी समय श्री राजधनने वहाँ प्रवेश किया। उनकी आयु ७२ वर्ष की है, लेकिन वे हँसमुख हैं। इसीलिए स्वास्थ्यने उनसे छल नहीं किया है। थाई भाषामें राजधनका उच्चारण रचथौन होता है। इसी नामसे वह यहाँ लोकप्रिय हैं। नमस्कार और परिचय आदिके अनन्तर जब हम लोग फिरसे बैठे तो मैंने उन्हें याद दिलाया, "मुझे आपसे मिलनेका सौभाग्य एक बार पहले भी प्राप्त हो चुका है।"

उन्होंने आश्चर्यसे मेरी ओर देखा। मैंने कहा, "आपको शायद याद नहीं आ रहा। यह मार्च १९४७ की बात है। आप एशियाई देशोंकी कान्फ्रेन्समें अपने देशके प्रतिनिधि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मण्डलके नेता बनकर दिल्ली गये थे। वहाँ आपने मेरे साथ विस्तारके साथ थाई और भारतकी सांस्कृतिक एकताकी चर्चा की थी।"

एक क्षण मैं उनके मुखके भाव देखनेके लिए रुका। वह तन्मयतासे मेरी बात सुन रहे थे। मैंने कहा, "मुझे ठीक याद है कि आपने व्यंग्य करते हुए कहा था, 'तुम लोग अपनी संस्कृतिको भूलते जा रहे हो लेकिन हमने उसे आज भी सुरक्षित रखा है। हम लोग हाथ जोड़कर नमस्कार करते हैं। स्वस्ति शब्दका प्रयोग करते हैं। विवाहकी रीति भिन्न है परन्तु मण्डप उसी तरह बनाते हैं। वर-वधूपर शंखमें पवित्र नदियोंका जल लेकर छिड़कते हैं। हमारी भाषा भी संस्कृतसे अत्यधिक प्रभावित है। देखिए, मेरा शुद्ध नाम अनुमान राजधन है। लेकिन इसका स्यामी उच्चारण अनुमान रचथौन है'।"

वे मुसकराये और बोले, "बड़ी पुरानी याद दिलायी आपने। बहुत दिनोंकी बात है। उसके बाद मैं बौद्ध महासम्मेलनमें भाग लेने १९५५ में फिर दिल्ली गया था और अशोका होटलमें ठहरा था। बहुत कम लोगोंसे मिलना हुआ। बस अनेक रातें रेलमें ही कटीं। आगरा, फतहपुर, आरा, बौद्ध गया, आदि होता हुआ कलकत्तासे यहाँ लौट आया था।"

इण्टरव्यू कैसे लिया जाये इसका स्पष्ट चित्र कमसे कम मेरे मनमें नहीं था। यशपाल भाई इस सम्बन्धमें अधिक सजग हैं। लेकिन उस दिन बात-चीतका क्रम ऐसे शुरू हुआ कि कुछ सोचनेकी आवश्यकता ही नहीं रही।

"आपने भारतके बारेमें कुछ लिखा है?"

वे बोले, "हाँ, कुछ लेख लिखे हैं। कठिनाई यह है कि मैं अधिक पढ़ नहीं पाता। अब देखिए, गान्धीजीपर एक लेख लिखना है। सामग्रीके लिए भारतीय दूतावासको लिखा है। मिल गयी तो उसका अनुवाद कर दूँगा। इसी तरह जब मुझे कन्फ़्यूशियसपर लिखनेकी आवश्यकता हुई तो मैंने चीनी दूतावासको लिखा और वहाँसे जो सामग्री मिली उसका अनुवाद कर दिया। अब यह कोई लिखना हुआ? तीन महीने बाद कन्फ़्यूशियस-की जयन्ती मनायी जानेवाली है। मुझे बोलने-के लिए कहा गया है। उसी लेखके आधारपर बोल दूँगा।"

यह कहकर वह हँस पड़े, "है न वही बात—'टू कैरी कोल टू न्यू कैसल,' अर्थात् उलटे बाँस बरेलीको।"

हम लोग भी हँस पड़े। उन्होंने तुरन्त गम्भीर होकर कहा, "इस समय मैं 'थाई-विश्वकोश' के निर्माणमें लगा हूँ। 'नेशनल गज़ेटियर आफ़ थाईलैण्ड' भी हाथमें है। लग-भग दो हज़ार पृष्ठका होगा। लेकिन वह इम्पीरियल गज़ट आफ़ इण्डियाकी तरहका नहीं है। थाई करेण्ट वर्ड्सकी डिक्शनरीका काम भी कर रहा हूँ। उसमें चार-पाँच वर्ष लग जायेंगे। इसके अतिरिक्त थाई-इतिहासके संशोधनका काम भी मेरे ज़िम्मे है।"

वे फिर मुसकराये। बोले, "अब देखो न, कितने काम हैं। असलमें हमारे यहाँ स्कॉलर बहुत कम हैं। मैं ही तो हूँ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और वे ज़ोरसे हँस पड़े। उस हँसीमें हमने भी योग दिया और जब उसका ज़ोर कुछ कम हुआ तो मैंने पूछा, "आपने मौलिक भी कुछ लिखा है?"

वे बोले, "जी हाँ, थाई रीति-रिवाज, लोक-समाज, संस्कृति, विवाह-पद्धति आदिके बारेमें कुछ पुस्तिकाएँ लिखी हैं। एकका अनुवाद मैंने स्वयं किया था, अँगरेज़ीमें, 'लाइफ़ ऑव ए फ़ार्मर इन थाईलैण्ड'। कुछ लेख भी लिखे हैं। लेकिन मैं अँगरेज़ी भी तो इतनी अच्छी नहीं जानता।"

"वर्तमान साहित्य अर्थात् उपन्यास, नाटक, कहानी आदिकी आजकी भाषामें क्या लिखा है?"

"उनका विकास हो रहा है। नये-नये लेखक सामने आ रहे हैं परन्तु मुसीबत यह है कि उनका अध्ययन बहुत कम है। फिर वे पैसेके लिए ही लिखते हैं।"

"और अनुवादकी क्या स्थिति है?"

"सरकार कुछ कर तो रही है, लेकिन फ़िलहाल हमारे यहाँ 'बर्मा ट्रान्सलेशन सोसाइटी' जैसी कोई संस्था नहीं है।"

हमने पूछा, "आपको शायद मालूम होगा कि यूनेस्को संसारकी विभिन्न भाषाओंके कुछ ग्रन्थोंका अनुवाद करा रहा है। हमारे यहाँके रामायण और गीता आदि प्राचीन ग्रन्थोंके अतिरिक्त वर्तमान साहित्यसे भी कुछ लिये जी है। उनमें हिन्दीके सुप्रसिद्ध लेखक स्वर्गीय प्रेमचन्दका उपन्यास 'गोदान' भी है।

वे बोले, "म्यूज़ियम अवश्य देख लीजिए। उसमें आपको हनुमान भी मिलेंगे। लेकिन वे भारतके बाल-ब्रह्मचारी हनुमान नहीं हैं। उनके अनेक विवाह हुए हैं। उनकी प्रेम-कहानी लिखी जाये तो दो हज़ार पृष्ठोंमें आयेगी। यहाँतक कि उन्होंने एक मत्स्य-कन्यासे भी विवाह किया था।"

क्या थाई-भाषाका भी कोई ग्रन्थ चुना गया है?"

वे बोले, "अभी नहीं। आपकी-हमारी तुलना ही क्या है। आपके यहाँ कितने विश्व-विद्यालय हैं। हमारे यहाँ तो केवल एक ही है।"

यशपालजीका प्रिय विषय है—दो देशोंके बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान। वह बोले, "दो देशोंके राजनैतिक सम्बन्ध स्थायी नहीं होते, लेकिन साहित्यिक और सांस्कृतिक सम्बन्धोंकी जड़ें गहरी होती हैं, उनके आदान-प्रदानपर ही हमें ज़ोर देना चाहिए। यह इसलिए और भी अधिक आवश्यक है क्योंकि आजकल दुनियामें राजनैतिक विग्रह बढ़ रहे हैं।"

वे बोले, "आप ठीक कहते हैं। पर हमारे सामने अनुवादकी कठिनाई है। पैसा भी चाहिए। प्रकाशक भी नहीं हैं। हाँ, फिर भी थाई-भारत सांस्कृतिक लॉज-जैसी संस्थाएँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस सम्बन्धमें कुछ कर सकता हूँ।"

"थाई भाषाके सम्बन्धमें हमारा ज्ञान नहीं के बराबर है, लेकिन हमारा विश्वास है कि कुछ चुनी हुई लोकप्रिय पुस्तकोंका अनुवाद भारतीय भाषाओंमें हो सके तो प्रकाशनकी व्यवस्था करनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी। अब देखिए, गुजरातीके एक सुप्रसिद्ध लेखक हैं मेघाणी। बर्माके जीवनपर उन्होंने एक उपन्यास लिखा है। मराठी और हिन्दीमें भी उसका अनुवाद प्रकाशित हो चुका है। ऐसी पुस्तकें हों तो अनुवाद कराया जा सकता है।"

"आपकी बात ठीक है, लेकिन अनुवाद करना कोई सरल काम नहीं है। भारतीय दूतावासके थर्ड सेक्रेटरी श्री···ने थाई-भाषा सीखी थी। मैं उनका परीक्षक था। जाँच करनेपर यही कह सका कि इन्हें पास किया जा सकता है। लेकिन···"

फिर उन्होंने पण्डित रघुनाथ शर्माकी ओर इशारा करते हुए कहा, "हाँ पण्डितजी-का थाई-भाषाका ज्ञान बहुत अच्छा है। पण्डितजी अत्यन्त विनम्र व्यक्ति हैं परन्तु अकेले वे क्या कर सकते हैं? योग्य व्यक्तिके अभावमें यह काम बहुत प्रगति नहीं कर सका है। गान्धीजीकी किसी भी पुस्तकका अनुवाद नहीं हुआ है। नेहरूजीकी केवल एक ही पुस्तकका अनुवाद पण्डितजी करा सके हैं और वह है 'मेरी कहानी'।

सहसा हमारी दृष्टि घड़ीपर गयी। पौने आठ बज रहे थे। बाहर अँधेरा भी बढ़ रहा था। पर ये तो पूर्वके देश हैं जहाँ अन्धकार पारदर्शी होता है। ऐसा लगता था मानो उजाला कुछ धूमिल हो चला हो। पण्डितजी-ने कहा, "कोई जल्दी नहीं है।"

और इण्टरव्यू चलता रहा। बीचमें थाई-सेविका शरबत लेकर आयी। और जैसा कि उधरके देशोंमें होता है, बड़ी विनम्रतासे मुखपर मुसकान लिये और घुटने टेककर उसने हममें-से प्रत्येकको एक-एक गिलास दिया। इन देशोंका शिष्टाचार देखकर बड़ा अद्भुत लगता है। श्रद्धा भी होती है। इसी बातको लेकर न जाने कैसे व्यक्तिगत चर्चा चल पड़ी। श्री राजधन बोले, "मैं छह बजे भोजन कर लेता हूँ। धीरे-धीरे शाकाहारी होता जा रहा हूँ। अब तो दूध भी नहीं लेता।···"

मैंने कहना चाहा कि क्या वे महात्मा गान्धीकी तरह दूधको मांसकी श्रेणीमें मानते हैं। लेकिन वे तुरन्त बोल उठे, "असलमें मैं 'फ़ैट'से बचना चाहता हूँ।"

तभी सहसा मुझे उनके दिल्ली-प्रवासकी याद आ गयी। मैंने देखा था कि वे वहाँ अकेले रहना ही पसन्द करते थे। पूछनेपर उन्होंने बताया था कि यहाँ शोर बहुत है और मुझे शोर पसन्द नहीं है।

मैंने अनुभव किया कि शोरसे वे यहाँ भी बचना चाहते हैं और अधिकसे अधिक समय लिखनेमें ही बिताते हैं। पर हम तो उनसे बहुत-कुछ जान लेना चाहते थे। वे उच्च-कोटिके विद्वान् हैं और इन देशोंमें रामायणका बहुत प्रचलन है। यहाँके लोग रामायणकी मनौती तक मनाते हैं। मनौती पूरी होनेपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...में जाकर रामलीला करवाते हैं। ...-सत्यवान्‌की कथाको लेकर नाटक भी ...होते हैं। इसलिए यह स्वाभाविक था ...ने हम रामायणके सम्बन्धमें चर्चा ...। मैंने कहा, "थाई-भारत-संस्कृतिमें ...बड़ा साम्य है। आज हम वाट ...दिर) देखने गये थे। उनकी दीवारोंपर ...के अनेक प्रसंग अंकित हैं।

...मुसकरा कर बोले, "जी हाँ, संगमर- ...बहुत-से प्रसंग खुदे हैं, लेकिन वे किस ...के आधारपर हैं यह बताना कठिन ...भिन्न देशोंमें रामायणके अलग-अलग ...मिलते हैं।"

"आपने कौन-सी रामायण पढ़ी है?"

"कई पढ़ी हैं, पर मैं अध्यात्म रामायण- ...धार मानता हूँ। आपके देशमें भी तो ...के कई रूप हैं। वाल्मीकि, तुलसी, ..., कृतिवास आदि-आदि। इसी प्रकार ...शिया, वियतनाम, मलाया, कम्बोदिया ...रमाके अपने-अपने रूप हैं।"

"सुना है, बरमामें तो रामायण यहींसे ...ची?"

"जी नहीं, वहाँ कम्बोदियासे गयी थी।" ...वह हँस पड़े। बोले, "पता नहीं कैसे ...यों बरमाके लोग थाईलैण्डको छोड़कर ...दिया पहुँच गये।"

...भी अचानक उन्हें याद आया कि हमारे ...के बारेमें तो उन्होंने कुछ पूछा ही ...। बोले, "आप कब आये, कहाँ ठहरे ...क्रममें क्या-क्या देख चुके हैं?"

हमने उन्हें अपने कार्यक्रमके बारेमें बताया। कहा, "अभी तो कुछ विशेष नहीं देख सके हैं।"

वे बोले, "म्यूज़ियम अवश्य देख लीजिए। उसमें आपको हनुमान भी मिलेंगे। लेकिन वे भारतके बाल-ब्रह्मचारी हनुमान नहीं हैं। उनके अनेक विवाह हुए हैं। उनकी प्रेम-कहानी लिखी जाये तो दो हज़ार पृष्ठोंमें आयेगी। यहाँतक कि उन्होंने एक मत्स्य-कन्यासे भी विवाह किया था।"

मैंने कहा, "जी हाँ, इसकी चर्चा तो हमारी रामायणमें भी है, लेकिन उसका रूप कुछ और है। उन्होंने मछलीसे एक पुत्र उत्पन्न किया है, लेकिन पसीनेके द्वारा। लंका-दहनकी थकान उतारनेके लिए जब उन्होंने समुद्रमें स्नान किया तो एक मछली उनका पसीना पी गयी थी। उसीसे उसके एक पुत्र उत्पन्न हुआ।"

वे बोले, "जी नहीं, हमारे हनुमानने सचमुच ही मत्स्य-कन्यासे विवाह किया था और वह रावणकी बेटी थी। जब रामचन्द्रजी समुद्रपर पुल बाँध रहे थे तो उसमें अड़चन डालनेके लिए रावणने उसे भेजा था। समुद्र-के गर्भमें रहकर वह पत्थरोंको नीचे खींच लेती थी। इस रहस्यकी खोज करनेके लिए हनुमान नीचे गये और वहाँ उन्होंने रावणकी उस बेटीसे प्रेम करके उसे अपने वशमें किया था। तो स्त्री-लावण्यके लोभी हमारे हनुमान ऐसे महापुरुष हैं!"

और वे ज़ोरसे हँस पड़े। हम सब भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़ूब हँसे। रचयिता परिहासप्रिय व्यक्ति हैं। व्यंग्य भी कर लेते हैं। बोले, "एक और बात बताता हूँ। हमारे हनुमान सीता-रामके पुत्र हैं।"

इसपर रामायणके विभिन्न रूपान्तरोंकी चर्चा गम्भीर हो उठी। मैंने कहा, "क्या आप यह नहीं मानेंगे कि आरम्भमें रामकी कहानी लोककथाके रूपमें लोकप्रिय थी। उसीके आधारपर विभिन्न कालोंमें विभिन्न लेखकोंने अपनी-अपनी पुस्तकें अपनी-अपनी कल्पनाके अनुसार लिखीं।"

वे बोले, "जी हाँ, आप ठीक कहते हैं। यही हुआ है। अच्छा हाँ, क्या आपने एम-राल्ड बुद्धाका मन्दिर देखा है? उसके प्रकोष्ठ-की एक मील लम्बी दीवारपर पूरी रामायण चित्रित है।"

"जी हाँ, हमने उसकी बहुत प्रशंसा सुनी है। उसको देखनेके लिए ही हम रुक गये हैं।"

यह सुनकर वे बहुत प्रसन्न हुए और साहित्यके आदान-प्रदानकी जो चर्चा शर्माजी-पर आकर रुक गयी थी, उसीके सूत्रको फिरसे पकड़ते हुए बोले, "देखिए, आदान-प्रदानका यह काम शर्माजी बहुत अच्छी तरह कर सकते हैं।"

शर्माजी हाथ जोड़कर बोले, "मैं तो अब ६३ वर्षका हो गया हूँ।"

वे शरारतसे हँसे। कहा, "तो इसमें ९ और जोड़ दीजिए। मैं तो ७२ वर्षका हूँ। पिछले दिनों जब हांगकांग जानेकी बात उठी थी तो डॉक्टरोंने मुझसे कहा था कि अब हम आपकी ज़िम्मेदारी नहीं लेते। लेकिन मैंने उनकी चिन्ता नहीं की। वास्तवमें वे लोग तो इन्श्योरेन्सके कारण ही ऐसा कह रहे थे। नहीं तो और क्या कारण हो सकता है?"

कुछ देर हम लोग गान्धीजीकी चर्चा करते रहे। काफ़ी समय बीत गया था। इसलिए हमने उनसे आज्ञा चाही। उन्होंने म्यूज़ियम देखनेके लिए एक पत्र हमें दिया। बोले, "आप लोग स्वयं जायेंगे तो आपको एक टिकल देना होगा। लेकिन इस पत्रके रहते हुए उसकी आवश्यकता नहीं होगी। इसके अतिरिक्त एक व्यक्ति विशेष रूपसे आपके साथ रहेगा।"

हम लोग उठे। वे तुरन्त बोले, "आप अपने पते तो छोड़ जाइए।"

यह कहते हुए वे अन्दर चले गये और एक काग़ज़ ले आये। बोले, "क्या आप जानते हैं कि आपके आनेसे मेरी पत्नी बहुत प्रसन्न हैं?"

"भले व्यक्ति किसीके भी आनेसे प्रसन्न ही होते हैं।"

वे हँस पड़े, "जी हाँ, सो तो है लेकिन उनकी इस प्रसन्नताका एक और भी कारण है। जितनी देर आप रहे, मुझको बहुत आराम मिला। इस बातसे वह बहुत खुश हैं।"

हमने सप्रश्न उनकी ओर देखा। वह मुसकराते हुए बोले, "आप समझे नहीं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप यदि नहीं आते तो इतनी देर मैं लिखता ही रहता। मेरे निरन्तर काम करते रहनेपर उन्हें बड़ी परेशानी होती है। मेरे स्वास्थ्यके कारण...।"

बातें करते-करते हम लोग बड़े हॉलमें पहुँच गये थे। उनकी पत्नी वहीं बैठी हुई थीं। उनके पास जाकर हमने प्रणाम किया। इस अवस्थामें वह सचमुच ही सुन्दर रही होंगी। किंचित् दुबली और लम्बी, वह खूब लिखती हैं और खूब पान खाती हैं। पण्डितजी-ने उन्होंने थाई-भाषामें कुछ बातें कीं। वे सचमुच अपने पतिके स्वास्थ्यके बारेमें चिन्तित रहती हैं। जब पण्डितजीने उन्हें श्री रचथौन-की अन्तिम बात बतायी तो वह खिलखिलाकर हँस पड़ीं, देर तक हँसती रहीं। बोलीं, "सचमुच ही मुझे बहुत खुशी हुई है। यह हर वक़्त लिखते रहते हैं, बस लिखते रहते हैं।"

हम लोग तबतक बाहरकी ओर मुड़ गये थे। अन्तिम प्रश्न पूछा, "अब आप लोग भारत कब आ रहे हैं?"

वह बोले, "कुछ नहीं कह सकता। अब सफ़र करना सुविधाजनक नहीं रहा।"

तबतक उनकी लड़की भी हम लोगोंमें आ मिली थी, लेकिन वह सारे समय हँसती ही रही। वे सब लोग बाहर तक हमें नमस्कार कहनेके लिए आये। यशपालजीने कहा, "हमारी प्रार्थना है कि आप दीर्घजीवी हों और नयी पीढ़ीको आपका मार्ग-दर्शन मिलता रहे।"

खिड़कीसे निकलनेके पूर्व उन्होंने हाथ जोड़े। बोले, "अब मैं आपको 'स्वस्ति' कहूँगा।"

हम लोगोंने भी 'स्वस्ति' कहा और वे मुड़ गये। हम लोग भी अपने रास्तेपर आगे बढ़ चले।

इस बातचीतसे कितना कुछ मिला यह खतियाकर देखना व्यर्थ है। पर इतना स्पष्ट है कि अपेक्षाकृत इन कम विकसित देशोंकी तरफ़, जो सांस्कृतिक सम्बन्धोंके कारण हमारे बहुत पास हैं, भारतका ध्यान जितना चाहिए था उतना नहीं गया है। सोचता हूँ, क्या कोई इस चुनौतीको स्वीकार करेगा। जहाँतक हमारा सम्बन्ध है, ७२ वर्षके इस अनथक साधकके प्रति हमारा हृदय श्रद्धासे भर-भर उठा था।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थोड़े ही खर्च में

शाही शान शौकत

टाइगर ब्रान्ड

पाट के गलीचे

से अपना घर सजाइये

अनेकों आकर्षक डिजाइन में प्राप्त

प्रस्तुत कारक—**श्री हनुमान जूट मिल्स**

८, डलहौसी स्क्वायर, कलकत्ता-१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—रंगनाथ राकेश

विरम कान्त !

पूर्वमेघ : संस्कृत साहित्यमें केलि और प्रणयके इन्द्रधनुषी बिम्ब बिखरे हुए हैं। यह छोटा-सा लेख मौसमकी रंगीनीके साथ वैसे ही बिम्ब-प्रतिबिम्ब लिये हुए···

संस्कृत साहित्य जीवनकी समग्र रागात्मकतासे परिचालित होता रहा, स्त्री-पुरुषके निसर्ग-सम्बन्धोंकी स्वाभाविक अभि-व्यक्तिसे क़तई कतराया नहीं है। 'कान्तासम्मिततयोपदेशयुजता' (पत्नीके साथ प्रीति और सीख ग्रहण) उसका प्राण-स्वर रहा। स्वस्थ मनोवैज्ञानिककी प्रणयेच्छाका निषेध या वर्जन यहाँ नहीं, अकुण्ठित कण्ठ और सहज अकुण्ठित चित्तसे काम और रति दोनोंके चित्रण यहाँ हुए हैं। हिन्दीके रीतिकालीन नायक-प्रतिफलनको पैतृक रूपमें संस्कृतपर लादना शायद ठीक न होगा। जहाँ रीतिकालमें नारीको काम-वासना-पूर्तिकी पुतलिका समझा गया था—वहीं संस्कृतके वरेण्य साहित्यमें

स्वाभाविक ढंगपर वाल्मीकिसे लेकर पण्डितराज जगन्नाथ तक ने स्वस्थ प्रणयाभिव्यंजन किया है। हाँ, वह भले ही प्रकृतिके आलम्बनके बहाने हो, या अन्योक्तिके माध्यमसे हो अथवा उत्प्रेक्षारूपेण हो। उसमें क़फ़स, कुण्ठा, घुटन, बेबसी, कलौंस या आत्मघाती ग्लानिबोध कदापि नहीं रहा। अकुण्ठित चित्तसे ही कालिदासके यक्षने नितान्त पौरुषेय भावसे कहा था—'ज्ञातास्वादो विवृतजघनां को विहातुं समर्थः ?' व्यापक स्तरपर कितनी बड़ी सचाईको मर्दानगीसे कालिदासने कहा था ! यह लारेंसके प्रकृतिवादी दर्शनसे क्या कम तीक्ष्ण है ? शंकर पुरुष रूपमें पार्वतीके सौन्दर्य-समन्वित तपके क्रीत दास बन गये :

'अद्य प्रभृत्यवनताङ्गि तवास्मि दासः
क्रीतस्तपोभिरिति वादिनि चन्द्रमौलौ।'

नीवीबन्धोच्छ्वसित यौवनदर्पोद्धता तरुणी यक्षांगनाओंकी एकान्त कामक्रीड़ाका स्वाभाविक चित्रण कालिदासने मेघदूतमें किया है। यह वर्चस्वी कविता है, पौरुषेय कविता है, इसपर तो 'ननु', 'नच', 'किन्तु' नहीं ही किया जा सकता। प्रार्थना-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाटुकार-नागर-विदग्ध-प्रियतमोंकी चिकनी-चुपड़ी बातोंकी भी पोल खोली है इसी पौरुषेय स्वस्थ कविने, उज्जयिनीके महाकाल मन्दिरमें क्लान्त-श्रान्त वेश्याओंके पादन्यासका भी स्वस्थ चित्रण किया है—'वेश्यास्त्वत्तो नख-पदसुखान्प्राप्य वर्षाग्रन्बिन्दून्' वाले श्लोकमें, क्या यह दृष्टि वस्तून्मुखी यथार्थवादी चित्रणकी नहीं है? कालिदासने ही रघुवंशमें कहा था : अंकगता होने योग्य वस्तुएँ तो दो ही हैं— वीणा अथवा पद्मनेत्रा पद्मिनी : 'वल्लकी च हृदयङ्गमस्वना वल्गुवागपि च वामलोचना'।

यहाँ इसी परिप्रेक्ष्यमें संस्कृतके विशाल साहित्यसे कुछ अंश सानुवाद प्रस्तुत हैं।

सर्वप्रथम बुढ़ऊ बाबा वाल्मीकिसे ही प्रारम्भ करूँ तो ठीक रहेगा! वाल्मीकिने छककर जीवन भोगा था, जीवनसे वे जूझे थे, उसे ज्योंका-त्यों स्वीकार किया था, बादमें वे ऋषि हुए। किष्किन्धा काण्डके कुछ श्लोक रामके प्रणय और यौन अभिव्यञ्जनाके रूपमें उपस्थित हैं। इनमें संश्लिष्ट बिम्ब-योजनाकी नसें तक गिनी जा सकती हैं :

दर्शयन्ति शरन्नद्यः पुलिनानि शनैः शनैः।
नवसंगमसव्रीडा जघनानीव योषितः॥

मीनोपसंदर्शितमेखलानां
नदीवधूनां गतयोऽद्य मन्दाः।
कान्तोपभुक्तालसगामिनीनां
प्रभातकालेष्विव कामिनीनाम्॥

—(देखो, लक्ष्मण! देखो!)
शरद काल को सुघर पातरी नदियों का तट :
जिसपर छिनक छहर कर बिछल रहीं—
जैसे नये (प्रथम) मिथुन-लीला से :
सकुचायी हों : लजाधुरा रमणी की जांघें।
नदी-वधू की माछरियों की करधन—
सरक गयी है, लगता जैसे—
प्रियके द्वारा उपभोगित अलसायी तरुणी :
प्रातःकाले चली जा रही धीरे-धीरे।

पौरुषवान् कवि कालिदासने कामाध्यात्मका सात्यन्त मनोज्ञ और व्यावहारिक चित्रण किया है। पार्वतीको साधारणीकरणकी मानवीय सीमापर उतारकर सहज मानवीय सौन्दर्य-बोधका चित्रण कालिदासके कुमारसम्भवमें सर्वत्र हुआ है। जगज्जननीको तरुणी रूपमें चित्रित करके कालिदासने दुस्साहसका ही परिचय दिया होगा, अपनी परम्पराके प्रति। शकुन्तलाके चित्रणमें तो कालिदास आज भी बेजोड़ हैं। दुष्यन्त चक्रवर्ती राजा था, बहु-पत्नीवान् था और साथ ही रसिया तबीयत-का भी। कालिदासने आश्रमपालिता कन्या की अनुचित लाससापर विद्रूप किया है। वस्तुतः (शकुन्तलामें अप्सराका तत्त्व भी मेनकाकी बेटी होनेके कारण था) उसका प्राप्य था—आश्रम-श्रमण या मुनि। तप, त्याग और तितिक्षा—कालिदासके तीन प्रिय तकार हैं, ये शकुन्तलाकी केन्द्रवर्ती दृष्टि हैं। तीन चित्र शकुन्तलासे और छह कुमारसम्भवसे यहाँ उपस्थित कर रहा हूँ।

शकुन्तला प्रियंवदाको कमलके पत्तेपर लिखी हुई अपनी प्रणय-पत्रिका सुना रही है:

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहीं-कहीं प्रतीकात्मक मानवीकरणका चारु प्रयोग प्रणय-प्रसंगोंके सन्दर्भमें इतनी सफ़ाईसे हुआ है कि पाठक चकित हो जाता है।

'साँझ हो गयी, बहुत दूर मलयगिरिसे आ रहा हूँ, केवल एक रात तुम्हारे घर रहूँगा भद्रे !' समीरके द्वारा कही गयी इस बातको सुनकर नयी मंजरी-वाली आम्र-शाखाने तीन बार अपना माथ हिलाकर कहा—'नहीं, नहीं, नहीं।' वास्तवमें यह है ऋतुमती नायिकाके आत्यन्तिक निषेधकी ध्वनि।

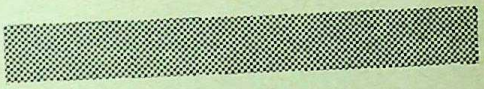

अधरस्य पिपासता मया ते
सदयं सुन्दरि ! गृह्यते रसोऽस्य ॥
(अभिज्ञानशाकुन्तलम् ३।२१)

क्वाँरे और अछूते;

फूलों-से इन होठों का रस पी लेगा जब,

प्यासा-भ्रमराधर मेरा,

तभी तुम्हें जाने दूँगा हे सुन्दरि !

स्पष्ट पौरुषोक्ति है या लम्पटोक्ति ? शायद दोनों ही। पौरुषवान् व्यक्ति लम्पट भी होता है। 'अली कली ही सौं बध्यो आगे कौन हवाल ?' वाला दृष्टिकोण तो 'व्यर्थं कदर्थयसि किं नवमल्लिकायाः' की कॉर्बन कॉपी है।

फ़ारसीको एक सूक्ति है : 'निगाह अहले-मुहब्बत तमाम सौगन्दऽस्त।' सच्चे प्रणयकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दृष्टि ही सम्पूर्ण सौगन्ध है। यहाँ दृष्टि भवभूतिके रामभद्रकी है, गालपर गाल सटाये आलिंगनोत्तापमें राम और सीता सम्पूर्ण रात्रि आँखोंमें ही काट देते हैं :

किमपि किमपि मन्दं मन्दमासक्तियोगात्
अविरलितकपोलं जल्पतोरक्रमेण।
सपुलक-परिरम्भ-व्यापृतैकैकदोष्णो-
रविदितगतयामा रात्रिरेवं व्यरंसीत् ॥

कालिदासानन्तर ऋतु वर्णनों और चित्रणोंमें आलंकारिक रूढ़िमयताका प्राबल्य होता चला गया है। लेकिन कुछ अपवाद भी हैं, उदाहरणार्थ, भवभूतिमें दाम्पत्यका दार्शनिक पक्ष प्रबल है।[1] अन्नमय कोशसे प्राणमय कोशकी ओर, शारीरिक आलिंगनसे परे, आलिंगनके अरूप आनन्दकी चिन्मय शक्तिके अन्वेषणकी ओर भवभूतिकी दृष्टि है। कालिदास सौन्दर्य और यौवनके उन्मुक्त कवि हैं, वाल्ट ह्विटमैनकी उन्मुक्ततताको पास रखकर शायद इसे समझा जा सकता है। समुद्रगर्भान्तर्गत बड़वाग्नि-जैसे तमाम समुद्रके शैत्यके बावजूद अहरह ज्वलनशील रहती है : वैसी सम्भोग और सुरति-काम-क्रीड़ाकी उत्प्रेक्षा की है कुमारसम्भवमें कालिदासने :—

'न तु सुरतसुखेषु च्छिन्नतृष्णो बभूव
ज्वलन इव समुद्रान्तर्गततज्जलेभ्यः।'

और देखें, कुमारसम्भवके इसी परिप्रेक्ष्यमें :

मधु द्विरेफः कुसुमैकपात्रे
पपौ प्रियां स्वामनुवर्तमानः।
शृंगेण संस्पर्शनिमीलिताक्षीं,
मृगीमकण्डूयत कृष्णसारः॥
गीतान्तरेषु श्रमवारिलेशैः
किंचित्समुच्छ्वासितपत्रलेखाम्।
पुष्पासवाघूर्णितनेत्रशोभि
प्रियामुखं किम्पुरुषश्चुचुम्ब॥

भौंरा प्रेयसि भ्रमरीके पीछे-पीछे हो—
पाँखुरी-पात्र में जूठी मधु पीता जाता है,
प्रथम स्पर्श से भावविमुग्धा हरिणी
को इस—
मुदी आँखको : शृंग-कोर से मृग खुजलाता,
गीत अनन्तर स्वेदसंयुता यक्ष-प्रिया के
कानों का कम्पायमान मधुराकृति कुण्डल
पुष्प-पराग-कणों से चुँधियायी बड़री
आँखें लख,
लेता चूम प्रिया के ओष्ठाधर
कुड्मल-से।

यह है वह चुम्बन जिसमें प्राणोंका रस अधरोंपर अंकित हो जाये।

और, स्वाभाविक रूपकी एक बानगी द्रष्टव्य है :

वनेचराणां वनितासखानां
दरीगृहोत्संगनिषक्तभासः।
भवन्ति यत्रौषधयो रजन्या-
मतैलपूराः सुरतप्रदीपाः॥

---

१. देखिए मेरा लेख—'ज्ञानोदय' अगस्त १९६१, पृ० १२-१५, 'संस्कृत काव्यके छह वर्षाचित्र'।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वन्यांशुकाक्षेपविलज्जितानां
यदृच्छया किंपुरुषाङ्गनानाम् ।
दूर्यागृहोत्सङ्गविलम्बिबिम्बा-
स्तिरस्करिण्यो जलदा भवन्ति ॥

वनैली शिकारियोंके वनिता-सखियों सँग
गिरि-गह्वर-गृह-उर होता उद्भासित,
बिना तेल के जहाँ रात भर जलते
औषधियों के केलि-प्रदीप सुरक्षित ।
लुका-छिपी छीना-झपटी में लजाधुरा
किन्नरियों का व्रीड़ामय झीना आँचर,
खींचा जाता कन्दर्पाहत यक्षों-द्वारा जब—
गुहा-द्वार पर तब परदा बन,
छाता बादर ।

वानस्पत्यौषधियोंका स्वतः स्फूर्त अतैल-सुरक्षित सम्भोग-प्रदीप आज कदाचित् जगमें ही न समाये । मन्द-प्रकाश-युत गुप्त-केलि-क्रीड़ाएँ सदैव पुरुषके लिए काम्य रही हैं। यह सौन्दर्य और उसका बोध आज कहाँ ?

कुमारसम्भव तो यौन-प्रणय-रति-चित्रों-का अनूठा लाजवाब काव्यात्मक एलबम है । केवल दो चित्र और देकर कुछ प्रकीर्ण कह देनेका प्रयत्न कर रहा हूँ । पार्वतीके यौवनके पर्वका एक चित्र :

मध्येन सा वेदिविदग्धलग्ना
वलित्रयं चारु बभार बाला ।
आरोहणार्थं नवयौवनेन
कामस्य सोपानमिव प्रयुक्तम् ॥

और, तारुण्यका लज्जानता भव्य चित्र :

आवर्जिता किञ्चिदिव स्तनाभ्यां
वासो वसाना तरुणार्करागम् ।
पर्याप्तपुष्पास्तवकावनम्रा
संचारिणी पल्लविनी लतेव ॥

नाभि-देश की रेखाएँ नवनीता
वक्षोजों-तल चारु त्रिवलियाँ
यौवन-माध्यम से चढ़ने को—
हों जैसे कन्दर्प - सीढ़ियाँ ।
बालसूर्य-लज्जा-लाली से आनत (गौरी)
स्तन-पिण्डों से कुछ भाराहत
पुष्पयुता कचनार लता हो जैसे
किशलय-भारों भूमि विचुम्बित ।

वैसे तो अमरुक, गोवर्द्धनाचार्य और विल्हण-के काव्यचित्र केलि-प्रणय-प्रसंगोंसे भरे पड़े हैं किन्तु मैं कुछ प्रकीर्णक उदाहरण दे रहा हूँ जो प्रायशः दृष्टिगोचर नहीं होते। रुद्रटका एक प्रणय-चित्र नितरां रसार्द्र है। नवोढ़ा वधू अपने पतिसे कह रही है :

'विरम कान्त विमुञ्च ममाञ्चलं
शमय दीपमिमं समया सखीम् ।'
इति नवोढवधूवचसा युवा
मुदमगादधिकां सुरतादपि ॥

—'रुको प्रिय, मेरा आँचर छोड़ दो, यह दीप बुझाओ, सखियाँ पास हैं,' नवेली दुलहिन-की ये बातें सुन युवा पतिको सम्भोग-सुखसे भी अधिक आनन्द मिला । ध्वनिसम्प्रदायके प्रस्तोता श्रीमदानन्दवर्धनाचार्यका एक श्लोक, जो विवक्षितान्यपरवाच्यध्वनिके उदाहरणमें रसिकोंका कण्ठहार बना हुआ चला आ रहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, प्रणयी हृदयकी सूक्ष्म योन-समीक्षा करनेमें सात्यन्त सक्षम है :

शिखरिणि क्व नु नाम कियच्चिरं
किमभिधानमसावकरोत्तपः ।
सुमुखि ! येन तवाधरपाटलं
दशति बिम्बफलं शुकशावकः ॥

—री सलोनी ! उस शुकशावकने किस पर्वतपर कितने दिनों तक, कौन-सी तपस्या की है जिस तपोबलसे तेरे गुलाबी होठों-सदृश बिम्बफलको काटता रहता है ! यहाँ 'दशति'का प्रयोग वाच्य है, अभीष्ट व्यंग्यार्थ तो आस्वाद है ।

कहीं-कहीं प्रतीकात्मक मानवीकरणका चारु प्रयोग प्रणयप्रसंगोंके सन्दर्भमें इतनी सफ़ाईसे हुआ है कि पाठक चकित हो जाता है :

इयं सन्ध्या दूरादहमुपगतो हन्त मलयात्
तदेकां त्वद्गेहे करुणमयि नेष्यामि रजनीम् ।
समीरेणेत्युक्ता नवकुसुमिता चूतलतिका
धुनाना मूर्द्धानं नहि नहि नहीत्येव कुरुते ॥

—'साँझ हो गयी, बहुत दूर मलयगिरि-से आ रहा हूँ, केवल एक रात तुम्हारे घरमें रहूँगा भद्रे !'—समीरके द्वारा कही गयी इस बातको सुनकर नयी मंजरीवाली आम्र-शाखाने तीन बार अपना माथ हिलाकर कहा—'नहीं, नहीं, नहीं ।' वास्तवमें यह है ऋतुमति नायिकाके आत्यन्तिक निषेधकी ध्वनि ।

लोग हैं लागि कवित्त बनावत,
मोंहि तो मेरे कवित्त बनावत,

घनानन्दने कहा था, यही स्थिति संस्कृतके अधिकांश साहित्यकारोंकी थी । 'राधिका-कन्हाईके सुमिरनका बहाना' बनाकर उन्होंने अपनी कुण्ठाका वपन नहीं किया है । अमरुक, विल्हण, कालिदास, रुद्रट, जयदेव, गोवर्धनाचार्य, मयूरभट्ट, माघ, शतानन्द, श्रीहर्ष, पण्डित-राज जगन्नाथ आदिने बँधी-बँधायी, पिटी-पिटायी उच्छिष्ट चर्वित शैलीका अनुसरण नहीं किया है । जहाँ भी रमणीय मनोज्ञ स्थल आये हैं, इन सभीने ज़िन्दगीके इस पहलूका वर्णन बेझिझक किया है । कालिदासने तो 'शृंगार तिलक'में यहाँतक कह दिया है :

अविदितसुखदुःखं निर्गुणं वस्तु किंचि-
ज्जडमतिरिह कश्चिन्मोक्ष इत्याचचक्षे ।
मम तु मतमनङ्ग स्मेरतारुण्यघूर्णन्
मदकलमदिराक्षीनीविमोक्षो हि मोक्षः ।।१४

(निर्णय सागर संस्करण, १९५२)

—'असंवेद्य, अविदित सुख-दुःखको किसी मूर्खने 'मोक्ष' की संज्ञा दी होगी, मेरे मतसे तो कामोद्दीपिता यौवनमदोन्मत्ता मदिराक्षी तरुणीका नीवी-मोक्ष ही मोक्ष है ।

अत्याधुनिकताकी गत्यात्मक जटिलताका गुंजलक हमारी संवेदनात्मक विभावोंको, सांस्कृतिक सौन्दर्यबोधको, आज चूर्णायमान करता जा रहा है किन्तु इसके पूर्व अनास्था, विघटन, विसंगति संस्कृतकी परम्परामें नहीं रहा । एक तन्दुरुस्त दृष्टिकोण, स्वस्थतर एटीच्यूड इसकी मर्मज्ञविद्योंमें प्रतिभासित होता आ रहा है । वाल्मीकिसे लेकर पण्डितराज जगन्नाथ तक ! संस्कृतकी ज्येष्ठा आत्मजा, हिन्दीको यह रिक्थ पचाना होगा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जूडिथ राइट

—यतीन्द्र भटनागर

छायावादी कवयित्रीं :

'बिखरा हुआ मन'

ट्रेलिया किसी समय ब्रिटेनका विदेश था, अब भी तथा-थित स्वेत आस्ट्रेलिया'को नीति के कारण 'यूरॅपीय' अधिक एशियाई कम कहा जाये नुचित न होगा। परन्तु लिक साहित्यका प्रश्न है, ट्रेलियामें भी स्वतन्त्र कवि लेखक हैं, जो न यूरॅपीय हैं न अँगरेज़, वे केवल आस्ट्रे-लाई हैं और केवल आस्ट्रे लि-यन। उनकी कल्पना, उनकी लेखनी, उनकी शैलीमें, एक विशिष्ट आस्ट्रेलियाई तत्त्व है जो लोगोंमें नहीं। ऐसी ही एक लेखिका जूडिथ राइट हैं जिनका काव्य-संग्रह 'फ़ाइव सेन्सेज़' (पाँच इन्द्रियाँ अथवा पाँच अनुभूतियाँ) गत वर्षकी सर्वाधिक चर्चित्र पुस्तक सिद्ध हुआ है।

कवि तो सार्वभौम होता है, कुमारी राइट भी हैं। मानवके अस्तित्वका शाश्वत, सार्वभौम सत्य वे भी अनुभव करती हैं। परन्तु, आस्ट्रेलियाकी धरती, समुद्र-तट, विचार-शैली, उपमान आदि भी उन्होंने अपने काव्यमें सँजोकर रखे हैं। 'फ़ाइव सेन्सेज़' उनकी छठी पुस्तक है, साथ ही मौलिक प्रतिभाका एक और प्रमाण भी।

कुमारी जूडिथ राइट (श्रीमती जे० मैककिने) का पहला काव्य-संग्रह 'मूविंग इमेज' १९४६ में प्रकाशित हुआ था। संस्कृति और वर्तमान वातावरण, कोमल यूरॅपीय परम्पराएँ और नवीन देशमें नवीन एवं पुरुष-प्रवृत्तियोंका संघर्ष उन्होंने अपने इस काव्य-संग्रहमें मार्मिक रीतिसे चित्रित किया है।

जूडिथकी दूसरी पुस्तक, प्रेम-काव्य 'वुमन टु मैन' है। इसमें गर्भवतीका अपने गर्भस्थ शिशुसे वार्तालाप, मानवके चरित्र, मानवकी इच्छाओंका कुशल चित्रण है। जूडिथ आस्ट्रेलियाके छायावादी कवियोंकी सिरमौर कही जाती हैं।

४९ वर्षीया जूडिथ राइटने नारी और माताके प्रेमका मार्मिक चित्रण किया है। ग्रामजीवनकी अध्यात्मवादी झाँकी भी उनकी अपनी विशेषता है। अपने प्रेम-काव्यमें जूडिथने स्पष्ट और पैनी लेखनीका जितना चमत्कार दिखाया है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्भवत: किसी और कवयित्रीको उतनी सफलता नहीं मिली होगी। उनका एक और उल्लेखनीय कविता-संग्रह 'द गेटवे' है जिसमें पुराना मकान, बाढ़, कन्या और मृत्यु, शीत-गीत, पूर्णिमा-गीत, यात्री और फरिश्ता आदि ५१ सुन्दर कविताएँ संगृहीत हैं। 'हमारा प्रेम' कवितामें वह लिखती हैं :

जग की साँसें सुन लेती हूँ,
तुम्हारे वियोग की घड़ियाँ,
इतनी शान्त, इतनी नीरव,
मेरा मन बिखर जाता है।

प्रेमकी जूडिथकी व्याख्या कितनी विचित्र है :

प्यार हमारा कितना निश्छल।
वन के पशु भी,
प्यार के कगार पर,
मन्द-मन्द चले जाते हैं।

जूडिथ राइटकी कविताओंकी कुछ और पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :

अब तो लताएँ, फूल भी ज्ञात हैं,
जैसे अरसे से बनी आशा,
पहला अवाक् हर्ष, समाप्त हो गया।
पर मेरी खोज अभी शेष है,
अभी देखूँगी, अभी जानूँगी।
फूलों के परे उस पार भी तो
कुछ है, मुरझाता नहीं,
वह सत्य, जिसने उन्हें जन्म दिया।

साहित्यमें जूडिथ राइट अभी 'जवान' हैं। यों तो अच्छी कृति देनेवाला हर साहित्यिक 'जवान' ही रहता है परन्तु जूडिथ उन जवानोंमें-से हैं जिनकी सृजन-शक्ति भी अभी वर्षों बनी रहेगी।

स्व० मुक्तिबोध की
महत्त्वपूर्ण कृति

चाँदका मुँह टेढ़ा है

स्व० मुक्तिबोधकी कविताओंका प्रस्तुत संग्रह हिन्दी काव्यकी नयी प्रखरता, क्षमता और युग-बोधकी सचेष्टताका ही प्रयोग नहीं, नयी उपलब्धियोंका भी मानक है। ये कविताएँ इसलिए भी हैं कि इन सशक्त शब्द-रेखाओंमें आयी अपनी छविके यथार्थसे सारा समाज परिचित हो और उस यथार्थकी पीड़ाके साथ उसके संकल्प-स्वरको भी ग्रहण करे।
द्वितीय संस्करण। मूल्य ८.००

● अपने पुस्तक-विक्रेताके प्राप्त करें ●
भारतीय ज्ञानपीठ : कलकत्ता, दिल्ली, वाराणसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—शैलेन्द्रनाथ श्रीवास्तव

लमहोंमें चन्द लमहे

सात सफ़र : ७—जनवरी अंकसे अबतक इस स्तम्भके अन्तर्गत सैर-तफ़रीह होती रही है। यह अन्तिम क़िस्त है लेकिन ऐसी कि प्रेमचन्दकी जन्म-तिथिकी यादके साथ-साथ सोचनेको विवश करेगी ! क्या ऐसा नहीं लगता—उस 'क़लमके सिपाही' की यादके संन्दर्भ भी बदलते जा रहे हैं ?

स्पुतनिक ! यहीं कुमकुमका डान्स था, यहाँ अमुक फ़िल्मकी शूटिंग थी। तुलसी-मानस-मन्दिर बनारसका नया आकर्षण था, उसे भी देख ही आया। बनारसवाले तो इसीमें खुश हैं, उनका नारा भी है : 'बना रहे बनारस !'— बदले नहीं बनारस।

—जब कहीं घूमना ही नहीं है, तो मुझे लाये ही क्यों ? वहाँ भी वही रसोई-चौका, यहाँ भी वही कूकर-हीटर। यही करना है तो चलिए पटने ही।

देख रहा हूँ एक कूकरका ताव गिर चुका है, दूसरा अब सुलगने लगा है !

सिवा चलनेके कहीं और कोई सूरत नज़र नहीं आती।

— ठीक है चलिए। आप लोग भी चलिए, तैयार होइए। लमही चलें ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

— भैट्, छोड़िए। क्या है लमहीमें ?

— वहाँ प्रेमचन्द पैदा हुए थे।

— हुए थे तो हुए थे, अब उसके लिए आदमी क्यों परेशान होता रहे। ख़्वाहम-ख़्वाह। अपन तो सोयेंगे।

— चलिए, देख आवें। आख़िर प्रेमचन्द ··।

— इसीलिए तो कह भी रहे हैं, वरना अभी टसकते।

— क्या है आख़िर वहाँ देखनेको ?

— पता नहीं, कुछ तो होगा ही, आख़िर प्रेमचन्दकी जन्मभूमि····

— ख़तरेमें है, नहीं-नहीं, वो तो आपकी कविता थी—'प्रेमचन्दकी कर्मभूमि ख़तरेमें है !' है न ?

— हाँ, तो किस चीज़से चला जाये ? बनारसी एक्कासे या रिक्शासे ?

— जो मिले उससे, यहाँ कौन पहचानता है—हम कौन थे, क्या हो गये हैं और क्या होंगे अभी ?

कैसे हैं हमलोग भी। इतनी बार बनारस आये, और आज लमहीका कार्यक्रम बन रहा है। सारा परिवार हिन्दी ही पढ़ाता है, मैं तो और 'प्रेमचन्द स्पेशल' पढ़ाता हूँ। 'गोदानमें रस' इसी छुट्टीमें लिखकर देना है। निराला और प्रेमचन्द—आधुनिक साहित्यसे ये ही तो दो नाम हैं, जिन्हें सगर्व औरोंके सामने रखा जा सकता है। मैं भी कितना बड़ा उजबक था बी० ए० तक, प्रेमचन्दका कोई उपन्यास पूरा नहीं पढ़ा था, समझता था—होगा कोई गद्यमें बाबा तुलसीदास ! उपदेश, नैतिकता और इसी तरहकी बातें होंगी—'नया' कुछ नहीं होगा। वो तो पटना आया, नलिनजीसे प्रेमचन्द और गोदानके बारेमें कुछ पढ़ा-सुना तो आँखें खुलीं, और अब तो बेझिझक हज़ारों बार कह चुका हूँ — 'कफ़न हिन्दीकी सर्व श्रेष्ठ कहानी है', 'गोदान अद्वितीय है', 'प्रेमचन्दको छोड़कर हिन्दी कथा-साहित्यका कोई रूप ही नहीं बनता !'

रिक्शा मिल गया है, थोड़े ही झंझटमें।

— लमही चलोगे ?

— लमही ? केहर बा ?

मैं अपने अज्ञानको इतनी जल्दी नहीं प्रकट करना चाहता था, चूँकि तब उसको इच्छाके अनुसार पैसे देने ही पड़ते।

— अरे पाँड़ेपुरके बाद, सड़कियापर, बावनबिघइया बा न, ओकरे अगवाँ, मठवाके लगहीं।

मेरा कार्य सरल हो गया। रिक्शावाला बस एक रुपयामें 'जाना-जाना' के लिए तैयार हो गया है।

रिक्शा चल रहा है। हमलोग चुप हैं, कुछ तो गुस्सेसे और कुछ गरमीसे। मुँह खोलते ही गरम लू घुस आती है, कण्ठ सूख जाता है ! मुन्नी भी गोदमें सो गयी है। बग़लके 'पसिंजर' ने धूपसे बचनेके लिए आँखें मूँद ली हैं, यानी सोचनेका पूरा सुयोग उपस्थित है। मैं सोच रहा हूँ—प्रेमचन्दने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेमचन्द, तुम कहाँ पैदा हुए यहाँ ?

अगर सचमुच पुनर्जन्म हो और तुम्हारी क़िस्मतमें साहित्यकार ही बनना लिखा हो, तो विधातासे कहना—मुझे भारत मत भेजो, कहीं और भेज दो। भारतको अब तुम्हारी ज़रूरत भी क्या ? देश आजाद हो ही गया, समाजवाद आ ही गया, पंचवर्षीय योजनाएँ चालू हैं ही, उपदेश कोई सुनना चाहता नहीं, सन्देश अब केवल बंगाली मिठाई-की दूकानों पर ही खोजे जाते हैं; क्या करोगे यहाँ आकर ?

जीवन जिन्हें दो अलग-अलग इकाइयोंमें दिखाई पड़ता है, वे ज़रा इस 'प्रेमचन्द-मार्ग'को देख लें, पाँड़ेपुरको देख लें। इसे क्या कहें, शहर या देहात ? पक्की सड़कसे उतरकर पगडण्डी-पर पाँव धरो तो खाँटी देहात और पगडण्डीसे सड़कपर आ जाओ, साइकिल, रिक्शा या बस पकड़ लो तो शहर। कितना विवाद हुआ है, इस नागर-जीवन और ग्राम्य-जीवनके साथ-साथ होनेवाले चित्रणको लेकर ! कई चेहरे, कई नाम याद आ रहे हैं, डॉक्टर अमुक, डॉक्टर अमुक। को बड़ छोट कहत अपराधू।

पाँड़ेपुरमें एक चिमनी दिखाई दे रही है। मैं सूरदासको खोज रहा हूँ। किसी सोफ़ियाको खोज रहा हूँ। मैं अग़ल-बग़लके राहगीरोंके चेहरोंपर प्रेमचन्दके पात्रोंको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरोपित करके देख रहा हूँ। 'गोदानकी धनियाकी वंशजा'को ढूँढ़ रहा हूँ। एक प्रेमचन्द-स्मारक-विद्यालय दिखा—प्रेमचन्द-स्कूल—क्या कहें इस मकानको, कच्चा या पक्का; नंगी ईंटें, शायद पलस्तर चढ़ाने लायक़ पैसे नहीं जुटे—टूटे-फूटे बेंच और बेतरतीब रखी कुरसियाँ। कितने नये स्कूल बन गये—अब 'प्रेमचन्द-स्कूल'को कौन पूछेगा?

रिक्शेसे झाँक-झाँककर देखता हूँ—पान और बताशेकी दूकानें, अनाजकी मण्डियाँ, खुले खेत, बरगदके पेड़, ईंट-भट्ठा। पता नहीं, इनमें कितना प्रेमचन्दका देखा हुआ है? मैं चाह रहा हूँ यह समझना कि प्रेमचन्दको कितना कच्चा माल मिला था और उसपर कितना रंग उनके ख़ूनका चढ़ा है? भला यह हिसाब भी कहीं लिखा हुआ है? कोई बता सकता है? कितना बदला होगा आख़िर? भारतीय गाँवका कितना बदलता है, कितना बदल सकता है, महज़ तीस वर्षों में?

खेत···खलिहान···पेड़···भेड़···बकरियाँ, बस और साइकिल। मैं भी मूडमें हूँ और मेरा रिक्शावाला भी। लगभग एक घण्टे बाद जब मैं 'सचेतन' हो गया, तो मैंने रिक्शावालेसे कहा—'तुम्हें नहीं मालूम, तो बग़लकी दूकानमें पूछ लो कि लमहीका रास्ता किधरसे है?' ग़नीमत कि रिक्शावाला आज्ञाकारी था, अपनी बुद्धिपर बेहद भरोसा नहीं था उसे। उसने पूछा, पर जबाव मिला—लमही? लमहीमें क्या है? मैं नहीं जानता। मुझे साँप सूँघ गया। लमहीमें क्या है? अरे, सड़क तो वही है, अग़ल-बग़ल एकाध मीलके भीतर ही तो होगा वह गाँव, जहाँ पैदा होनेवाले प्रेमचन्दके सम्बन्धमें कहा जाता है—'उनकी लेखनी भारतकी आत्मा गाँवोंकी सही-सही तसवीर उतारनेमें समर्थ थी।' यह आदमी क्यों नहीं जानता? मन चाहता है, इसका मुँह नोच लूँ।

सुना था, प्रेमचन्द जब मरे थे, और जैनेन्द्रजी घरका अता-पता पूछते बनारसकी उस गलीमें पहुँचे थे, जहाँ प्रेमचन्दकी लाश पड़ी थी, तो गलीकी नुक्कड़के हलवाईने पूछनेपर बताया—'प्रेमचन्द? मुझे नहीं मालूम। आगे पूछो, शायद कोई मुन्शी उधर मरा पड़ा है।'

वह आठ अक्टूबर १९३६ था। आज १३ मई १९६५ है। हम आज़ाद हो गये, कहते हैं कि शिक्षा बढ़ गयी, हिन्दीवालोंके भाग्य-कपाट खुल गये, हिन्दी गणतन्त्रकी भाषा हो गयी, हिन्दी ऐसी हो गयी, वैसी हो गयी; प्रेमचन्दकी पुस्तकें हज़ारोंकी संख्यामें बिक चुकीं अपने देशमें, अनूदित होकर लाखोंकी संख्यामें बिक चुकीं दूसरे देशोंमें, गोदानपर फ़िल्म बन चुकी, प्रेमचन्दपर कितने डॉक्टर हो चुके, पूर्व-प्रेमचन्द और प्रेमचन्दोत्तर कहकर भी कई काम हुए, कितना 'प्रेमचन्द-प्रेमचन्द' हुआ और यह उनके गाँवके बग़लका दूकानदार पूछता है—लमही? क्या है लमहीमें?

प्रेमचन्द! कहाँ हो तुम? सुन रहे हो?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...गउआँ, गोबरका भतिजवा पूछता ...कौन प्रेमचन्द ? लमहीमें क्या है ?' ...अगर मैं उससे पूछूँ 'निशात'में ...है 'प्रकाश'में क्या है, वह सही-सही ...देगा। गाँववाले भी शहरके बारेमें ही ...जानकारी रखनेमें गर्वका अनुभव ...है।

...फिर पीछे मुड़ना पड़ा और वेलवा बाबाके ...से, कच्ची सड़कपर रिक्शा उतरा। मैं ...रहा था, रुको, मैं ही उतर जाता हूँ, ...रिक्शेवालेने पेटके गड्ढेकी ओर देखा, ...गड्ढेकी ओर नहीं। खैर, किसी तरह ...गया। प्रेमचन्दके घरकी ओर पक्की ...नहीं जाती, कोई सवारी नहीं जाती, ...पगडण्डी-भर है। जहाँ जीप तक ...जाती, वहाँ भला भले लोग, बड़े लोग ...सकते हैं ?

...में कितने भ्रम पालकर गया था— ...कुछ पुस्तकें होंगी, पाण्डुलिपियाँ होंगी, ...चित्र होंगे, कुछ पत्र होंगे, कुछ जान-...होंगी, कुछ किंवदन्तियाँ होंगी, कुछ ...जनाएँ होंगी, कुछ श्रद्धालु-भक्त होंगे, ...झुकी कमरवाले बूढ़े आकर कहेंगे— ...हमींने प्रेमचन्दको क़लम पकड़वायी ...कण्डेकी थी, हाथ पकड़कर लिखना ...था। मालिककी दया···हाथका ...पर कोई तो नहीं है, कुछ तो नहीं ...सारा गाँव भकुआ है, कोई कुछ नहीं ...। गाँवमें कहीं कोई अस्वाभाविकता ...अद्भुतता नहीं, असाधारणता नहीं। बस एक देहाती, महज़ मामूली। मुझे मोहन-राकेशके 'आषाढ़का एक दिन'का वह स्थल याद आ रहा है, जहाँ दो रिसर्च छात्राएँ कालिदास-के गाँव पहुँचती हैं और गाँववालोंसे बात-चीत कर इस निष्कर्षपर पहुँचती है कि 'इन्हें कालिदासके बारेमें कुछ भी नहीं मालूम'। लमही पहुँचकर किसीको भी ऐसा ही लगेगा। सारा गाँव भकुआ है। कोई कुछ नहीं जानता, कुछ नहीं बताता। लोग आँखें फाड़-फाड़कर देखते हैं—ये क्यों आये हैं ! प्रेमचन्दका एक रिश्तेदार मिला, शायद पोता बताया अपने आपको। कहीं साइंस-मास्टर है, उसीने कुछ बताया, वही मकानके अन्दर ले गया।

छोटा-सा पुराना दो-मंज़िला मकान। इसे प्रेमचन्दने अपनी कमाईसे बनवाया था—क़लमकी कमाई, स्याहीकी कमाई, मज़दूरीके पैसेसे। गिरा नहीं है, तो गिर जायेगा। ओसारेपर बिलकुल अड्डा या फाँड़ीका दृश्य है—चौकीमें चौकी सटाकर, निकर-बनियान पहने या धोतीको तहमद बनाकर लपेटे कुछ प्रौढ़ लोग पड़े हैं, पंखे झल रहे हैं। उस ओसारे-पर प्रेमचन्दकी एक तसवीर टँगी है—लखनऊकी तसवीर है, सन तैंतीसकी। शायद कहीं छपी भी है, देखकर कुछ नया नहीं लगा। लेकिन यह तसवीर उस तरह नहीं लगी है, जिस तरह गृहस्वामीकी तसवीर घरमें लगायी जाती है—'प्रेमचन्द : घरमें'—तसवीर ऐसे लगी थी जैसे यह गृहस्वामीके चचेरे भाईके ससुरके फुफेरे बहनोईकी तसवीर है, ग़लतीसे आ गयी है, इसीलिए एक कोनेमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टाँग दी गयी है। सीढ़ीके पास जो कोठरी है, उसमें एक टूटी खाट है, भूसा भरा है। सीढ़ीके ऊपर जो कमरा है, उसमें शायद प्रेमचन्द लिखते-पढ़ते थे। उसमें ताला बन्द है, चाभी शायद अमृतके पास है।

—अमृत कभी आते हैं ?

—दो-चार सालपर। अब वे लोग इलाहाबाद ही में बस गये हैं। वहाँ बड़ा बँगला है, मोटर है।

अमृत ही नहीं आते तो अमृत-पुत्र तो और भी नहीं आते होंगे !

नीचेका भी बड़ावाला कमरा बन्द है। पता नहीं कुछ है या नहीं उसमें ? नहीं होगा, सारी चीजें इलाहाबाद चली गयी होंगी—अमृतरायको 'क़लमका सिपाही' लिखना था। एक मध्य प्रदेशका शिक्षक, जिसे फलित ज्योतिषके अध्ययनके लिए प्रेमचन्दकी कुण्डली चाहिए थी, आया था, निराश लौटा। प्रेमचन्दकी जन्मकुण्डली उनके घरमें, गाँवमें नहीं है।

प्रेमचन्द जिस घरमें पैदा हुए थे, वह कच्चा घर टूट चुका है, उसका कहीं नामो-निशान नहीं, उसके बदले रद्दी ईंटोंसे एक बिना पलस्तरकी दीवाल खड़ी कर दी गयी है। 'क़लमका सिपाही' के लेखक पुस्तकपर प्राप्त पुरस्कारसे ही वहाँ कुछ बनवा देते।

—यही देखने आये हैं ?

उन स्मारक-योजनाओंका क्या हुआ ? कई परिपत्र आये थे। एक बार राजेन्द्र बाबूको बुलाकर शिलान्यास भी कराया गया था, वह सब क्या हुआ ? कहाँ चला गया ? यहाँ क्यों नहीं कुछ बना ? जो बनेगा सब बनारस, इलाहाबाद, दिल्लीमें ? लमहीमें कुछ नहीं ? कब हमलोगोंको अक़्ल होगी कि साहित्यकारका स्मारक उसकी जन्मभूमिमें भी होना चाहिए।

—बड़ा भारी धोखा हो गया। बेकार ही रिक्शेका पैसा लगा, क्यों देखने चले आये ? इतने पैसेमें तो 'भूत-बँगला' ही देख लेते !

सचमुच लमहीवाला मकान 'भूत-बँगला' से भी गया-बीता है। भूत-बँगलामें भी एक ज़िन्दगी होती है—यहाँ तो सूनी-सपाट भुतही दीवार-भर है, जिसकी ओर आदमी आँख उठाकर भी देखना चाहे तो कैसे ? यहाँ पहुँचकर कोई नहीं समझ सकता कि कभी इसमें कोई क़लमका सिपाही रहता था। मैं तो खैर हिन्दी पढ़ने-पढ़ानेवाला हूँ, भारतका हूँ; अभी अगर कोई विदेशी पर्यटक आ गया होता तो !

कहनेवाले कहते हैं कि प्रेमचन्दने साहित्यके माध्यमसे वही किया जो गान्धीने राजनीतिके माध्यमसे किया था। गान्धीके लिए राजघाट और प्रेमचन्दके लिए रंकाघाट भी नहीं। आजकी सरकारके पास पैसे नहीं, साहित्यकारके पास फ़ुरसत नहीं। जीवितोंको ही आदर-मान देने, पूजने-पुजाने में सब खर्च हो जाता है।

प्रेमचन्द ! तुम क्यों पैदा हुए यहाँ ? अगर सचमुच पुनर्जन्म हो और तुम्हारी क़िस्मतमें साहित्यकार ही बनना लिखा हो, तो विधातासे कहना—मुझे भारत मत भेजो,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ओर भेज दो। भारतको अब तुम्हारी ...मत नहीं है। पहलेकी धनिया बोलकर जो हलका कर लेती थी, आजकी यह धनिया चुप है, बोलती भी नहीं। आँखोंमें जो है, वह भी नहीं देखा जा सकता, उसपर भी घूँघट है। इस दम्पतिकी करुण कथाको भी किसी प्रेमचन्दकी ज़रूरत है, पर वे नहीं आयेंगे, मैंने मना जो कर दिया है।

...स्तव भी क्या? देश आज़ाद हो ही गया, ...जवाद आ ही गया, पंचवर्षीय योजनाएँ ...ू हैं ही, उपदेश कोई सुनना चाहता ...ी, सन्देश अब केवल बंगाली मिठाई-...ी, दूकानोंपर ही खोजे जाते हैं; क्या करोगे ...आकर?

प्रेमचन्दके कोठेसे झाँककर कुएँकी जगत-...देख रहा हूँ—एक होरी अपने दो बैलोंको ...ढ़ा है और धनिया मशकसे पानी खींच ...है एक हाथका लम्बा घूँघट ताने। होरी-...हरेपर वैसी ही झुर्रियाँ हैं, जैसी जेतलीने ...कुमारके चेहरेपर बनवायी थीं, धनिया ...सी ही है पर उसकी ज़बानमें तेज़ी नहीं,

लौटते समय रिक्शा उसी गड्ढेमें बैठ गया, चक्का टाल हो गया। सामने बेलवा बाबा— बरगदका पेड़—बग़लमें एक गोदाम-नुमा कच्चे मकानमें जड़े टीनके, अलकतरा पुते दो काले फाटक—काले तमाचेकी तरह। जाते समय नहीं दिखे, आते समय लग गये।

■ ■

एक साहित्यिक की डायरी

अपने प्रकारकी सर्वप्रथम डायरी-रचना जिसके सभी प्रकरणोंमें-से कोई नहीं जो आहत आत्माकी पीड़ाके डोरेमें पिरोया हुआ न हो और जिसके स्वरोंमें फिर भी चुनौती स्वीकार करनेवाले शूर-सैनिकका ओज न हो। सर्वथा संग्रहणीय कृति। द्वितीय संस्करण। मूल्य २.५०

• अपने पुस्तक-विक्रेताओंसे माँगें •

भारतीय ज्ञानपीठ : कलकत्ता, दिल्ली, वाराणसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नयी कविता की नयी उपलब्धि

आत्मजयी

[लघु काव्य]

●

कुँवर नारायण

कठोपनिषद्में नचिकेताका आख्यान आता है। सत्यद्रष्टा कविने इसके माध्यमसे भारतीय दर्शनकी एक विशिष्ट उपलब्धिको स्पष्ट किया है। इधर कुछ हिन्दी काव्य-कृतियाँ इस आख्यानको विषय-आधार बनाकर प्रकाशमें आयी हैं। 'आत्मजयी' इन सबमें कई दृष्टियोंसे भिन्न है और विशेष अर्थपूर्ण भी। यह कृति मूल प्रसंगके दार्शनिक पक्षकी ऊहापोह नहीं करती, न ही उसे दिव्य-कथाके रूपमें ग्रहण करती है। 'आत्मजयी' के कविने मुख्यतः नचिकेताकी मानवीय परिस्थितिको ही दृष्टिमें रखा है। नचिकेताकी ही तरह आजका चिन्ताशील मनुष्य भी ऐसे मूल्योंके लिए जीना चाहता है जो उसमें सुख ही नहीं सार्थकताका भी बोध करा सकें। सर्वथा संग्रहणीय कृति।

मूल्य ३.५०

●

भारतीय ज्ञानपीठ
प्रकाशन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

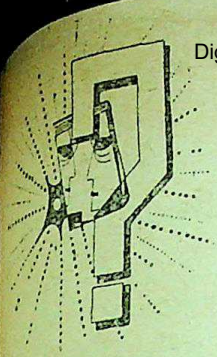

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

सहचिन्तन

तुमने सिखाया

स्वाध्यायमें युगकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुरका एक गीत सामने आया, जो अपनी कुछ पंक्तियोंमें भारतकी जीवन-पद्धतिको उसके पूर्ण रूपमें हमारे सामने रखता है :

हे भारत, नृपति रे शिखाये छो तुमि, त्यजिते मुकुट दण्ड सिंहासन भूमि।
धरिते दरिद्र वेश; शिखाये छो बीरे, धर्म युद्धे पदे-पदे क्षमिते अरि रे।
भुलि जय-पराजय शर संहरिते, कर्मीले शिखाले तुमि योगमुक्त चिते।
सर्व फल स्पृहा ब्रह्मे दिते उपहार, गृहीरे शिखाले गृह करिते बिस्तार।
प्रतिवेशी आत्मबन्धु अतिथि अनाथे, भोगेर बेंधे छो तुमि संभमेर साथे।
निर्मल वैराग्ये दैन्य करे छो उज्वल, संपदेरे पुण्य कर्मे करे छो मंगल।
शिखाये छो स्वार्थ त्यजि सर्व दुःखे सुखे, संसार राखिते नित्य ब्रह्मेर सम्मुखे।

हे भारत, तुमने नृपति-शासकको सिखाया कि वह राजमुकुट, राजसिंहासन, राजदण्ड और पृथ्वीपर अपना अधिकार त्याग कर अकिंचनका वेश धारण करे।

तुमने वीरको, योद्धाको सिखाया कि वह क़दम-क़दमपर बार-बार दुश्मनको क्षमा करे, पर जय-पराजय, जीत और हारको भूलकर विजयके लिए जूझे।

तुमने कर्मकर्ताको—समाजमें किसी भी प्रकारका काम करनेवालेको—सिखाया कि वह योगयुक्त चित्तसे—कर्ममें कुशलतापूर्वक तल्लीन हो—सब प्रकारके परिणामोंकी लालसाको ब्रह्ममें—विराट् जीवनमें—उत्सर्ग कर दे।

तुमने गृहस्थको सिखाया कि वह अपने घरको अपने पारिवारिक जनोंमें ही सीमित न कर, उसे यों विस्तृत करे कि अनाथ और अतिथि भी वहाँ अपने सगे-सम्बन्धी बन रहें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुमने भोगको संयमके साथ बाँध दिया और अकिंचनताको निर्मल वैराग्यके साथ बाँध प्रोद्भासित कर दिया।

तुमने सम्पदाको पुण्यकर्मसे सम्बद्ध कर मांगलिक बना दिया और सिखाया स्वार्थका त्याग कर सब प्रकारके सुख-दुःखमें सदा विराट् पुरुषके सान्निध्यमें निवास करना।

कितनी परिपूर्ण जीवन-पद्धति है यह कि हम इसके अनुसार जियें तो दुनियाके लिए आदर्श हो जायें, पर यह सुरभिका जीवन है और हम कर रहे हैं पश्चिमके उस सौन्दर्य-प्रधान जीवनकी अधकचरी नक़ल, जिसे जीकर आज पश्चिम परेशान है। जब-जब मैं इस प्रश्नपर विचार करता हूँ मुझे याद आ जाते हैं अपने एक मित्र। दौड़े-दौड़े उस दिन आये, बोले—"दिल्ली गया था, बहुत बढ़िया पुस्तकें खरीदकर लाया हूँ। चलिए, आपको दिखाऊँगा।" मैं सब काम छोड़कर उनके साथ गया, पुस्तकें देखीं, पर सब घास-कूड़ा; एक भी कामकी नहीं।

कुढ़कर मैंने कहा, "यह क्या खरीद लाये आप ?"

बोले, "क्यों, पसन्द नहीं आयीं आपको ? देखिए न, कितने शानदार प्रोटेक्टिंग-कवर (आवरण-पृष्ठ) हैं।"

गान्धीके बादवाले भारतीय नेतृत्वने भी पुस्तक देखकर नहीं, आवरण-पृष्ठ देखकर ही विचारोंका चयन किया है। तभी तो अँगरेज़ी-कालके दो सौ वर्षोंमें हमारे जो संस्कार खण्डित नहीं हुए थे, वे स्वतन्त्रताके १७ वर्षोंमें ही बिखर गये हैं। मानता हूँ, हम क्रान्तिके दौरसे गुज़र रहे हैं, पर क्या क्रान्तिका कोई व्याकरण नहीं होता ? मैं क्रान्तिशास्त्री नहीं हूँ, पर इतना जानता हूँ कि अहिंसक क्रान्तिका एक निश्चित व्याकरण होता है और हमारे देशमें हिंसक क्रान्ति नहीं हो रही है। हमारे राष्ट्रीय जीवनकी एक भयानक सचाई यह है कि हम बिना विचार-क्रान्तिके ही आचार-क्रान्ति कर रहे हैं। परिणाम सामने है कि हमें विचार-सिद्धि न मिलकर विकार-वृद्धि ही प्राप्त हो रही है।

■ प्रश्न तो यह है

एक होता है चलना, एक होता है हँकना। पैरोंकी गति दोनोंमें समान है, पर भेद यह है कि चलनेमें स्वेच्छा है, हँकनेमें परेच्छा।

लायी हयात आये, कज़ा ले चली, चले !
अपनी खुशी न आये, न अपनी खुशी चले !!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह पराधीनताकी वृत्ति है। भारतीय कर्म स्वातन्त्र्यकी दृष्टि दार्शनिक रूपमें इसका खण्डन करती है और मानवको उसके स्वतन्त्र परिप्रेक्ष्यमें प्रस्तुत करती है।

राजनैतिक दृष्टिसे अधिनायकता मनुष्यकी, जनसमाजकी पराधीनताकी प्रतीक है और प्रजातन्त्र स्वाधीनताका। बन्धन-पाबन्दी दोनोंमें है, पर अधिनायकता मनुष्यको हाँकती है, प्रजातन्त्र मनुष्यको चलाता है। अधिनायकतामें निर्णय एकका है, निर्देश एकका है, कर्म सबका है। यह निर्णय-निर्देश अकाट्य है, अतर्क्य है; इसे काटनेका प्रयत्न, इसके विरुद्ध तर्क अपराध है। बुद्धि केवल अधिनायककी ही प्रामाणिक है—बाक़ी सबके हाथ-पैरोंको ही प्रामाणिक होना है। प्रजातन्त्रमें बहुमतकी बुद्धि प्रामाणिक है, पर अल्पमत उस प्रामाणिकताको चैलेंज करनेमें स्वतन्त्र है।

अधिनायकता ताक़तसे स्थापित होती है, ताक़तसे क़ायम रहती है। इसके विरुद्ध प्रजातन्त्र स्वेच्छासे स्थापित होता है, स्वेच्छासे क़ायम रहता है। इस स्वेच्छाका कुछ अंश जन-जन-द्वारा स्थापित प्रजातन्त्रके द्वारा नियन्त्रित होता है और कुछ जन-जन-द्वारा स्वतः स्फूर्त प्रेरणासे। पहलेको बाह्य नियन्त्रण कहते हैं और दूसरेको आत्म-नियन्त्रण। ये दोनों नियन्त्रण मिलकर जन-जनकी स्वेच्छाको उच्छृंखल होनेसे बचाते हैं और स्वतन्त्रताको स्वाधीनताका रूप देते हैं।

प्रजातन्त्र-पद्धतिके विशिष्ट विद्वान् और भारतीय योजना आयोगके उपाध्यक्ष श्री अशोक मेहताने अपने एक लेखमें कहा है—"प्रसिद्ध ब्रिटिश विचारक एडमण्ड बर्कने कहा है कि व्यक्तिकी इच्छाओंपर नियन्त्रणके बिना समाज नहीं रह सकता। चाहे व्यक्ति स्वयं अपने ऊपर नियन्त्रण करे, चाहे सरकार। व्यक्ति अपने ऊपर जितना कम नियन्त्रण रखेगा, उसपर बाहरी नियन्त्रण उतना ही अधिक होगा। बुद्धिमान् राजनीतिज्ञोंका काम है कि वे बाहरी नियन्त्रण और आत्मनियन्त्रण दोनोंका सामंजस्य करें।

आत्मनियन्त्रणके कई प्रकार हैं। इसी तरह बाह्य नियन्त्रणके भी। जिस समाजमें लोग आत्मनियन्त्रण रखते हैं और समाजके नियम-क़ानूनोंको हितकर समझकर उनका पालन करते हैं, वह समाज उन्नत होता जाता है, किन्तु जहाँ बाह्य नियन्त्रण अधिक होता है और दबाव या डरसे क़ानूनोंका पालन होता है, वहाँ समाज कमज़ोर होता है।"

बात ठीक है, पर प्रश्न तो यह है कि जिस समाजमें या राष्ट्रमें न आत्म-नियन्त्रणकी प्रवृत्ति ही स्वस्थ होती है, न बाह्य नियन्त्रणकी प्रवृत्ति ही वहाँ क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
होता है ? इस प्रश्नका उपप्रश्न यह है कि क्या हमारा राष्ट्र इसी स्थितिमें तो नहीं धँसता जा रहा है ?

दो तन्त्र

इस बुरी स्थितिको रोकनेके लिए दो तन्त्रोंकी आवश्यकता होती है। पहला प्रहार-तन्त्र और दूसरा प्रचार-तन्त्र।

विख्यात राजनैतिक विचारक टामस पेनने युगों पहले लिखा था कि मनुष्य अपनी बुरी प्रवृत्तियोंपर स्वयं नियन्त्रण नहीं रख सका, इसलिए शासनका जन्म हुआ। इसका अर्थ यही है कि शासनका काम नम्बर एक यही है कि वह व्यक्तिकी बुरी प्रवृत्तियोंपर नियन्त्रण रखे। अच्छी प्रवृत्ति फूलकी लता है, फलका वृक्ष है, जिसे बुरी प्रवृत्तिकी झाड़ियाँ घेरती हैं। पनपने नहीं देतीं। शासनका काम इन झाड़ियोंको काटना है, इसीलिए समाजने उसे प्रहार-तन्त्र दिया है।

साथ ही प्रचार-तन्त्र भी, जो बुरी प्रवृत्तिको नये स्थानोंमें उभरनेसे रोकता है और अच्छी प्रवृत्तिको पोषण भी देता है। चिन्तनीय प्रश्न है कि हमारे राष्ट्रका न प्रहार-तन्त्र स्वस्थ-सबल है, न प्रचार-तन्त्र ही। फलस्वरूप बुरी प्रवृत्तियोंको पोषण और अच्छी प्रवृत्तियोंको शोषण मिल रहा है। बुराइयाँ संगठित हो रही हैं, अच्छाइयाँ आतंकित। चेतनेका यही समय है, क्योंकि हम जिस अमरीकी जीवनकी ओर बढ़ रहे हैं, वह बावजूद सर्वशक्तिमत्ताके अपने अपराधियोंसे परेशान है और उन्हें समाप्त करनेके लिए नहीं, सिर्फ़ नियन्त्रित रखनेके लिए ही डेढ़ अरब रुपयेसे अधिक प्रतिवर्ष खर्च करता है। समाजवादी देशोंकी सारी सफलताएँ इसी बातपर टिकी हैं कि वे अपनी दृष्टिसे जिन कामोंको बुराई मानते हैं, अपनी घोर हिंसासे उन्हें कुचल देते हैं।

लोकतन्त्री समाजवाद में

भारतने लोकतन्त्री समाजवादका मार्ग अपनाया है। यहाँ शासककी शक्ति नियन्त्रित है, वह खुलकर हिंसाके घोड़ेपर नहीं चढ़ सकती। यहाँ व्यक्तिको विचारकी, विश्वासकी, कर्मकी स्वतन्त्रताका वचन दिया गया है। भारतीय सर्वोच्च न्यायालयके प्रधान न्यायाधीश श्रीगजेन्द्र गड़करने एक लेखमें प्रश्न उठाया है कि क्या इस स्वतन्त्रताकी कोई सीमा है ? बड़ा महत्त्वपूर्ण प्रश्न है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री गड़कर क़ानूनके ही पण्डित नहीं हैं, समाजशास्त्रके भी विद्वान् हैं और वे समाजशास्त्रके सिद्धान्तोंके आधारपर देशके क़ानूनी ढाँचेका निर्माण चाहते हैं। उनकी स्पष्ट सम्मति है कि व्यक्तिकी स्वतन्त्रताको समाजविरोधी रूप ग्रहण करने नहीं दिया जा सकता और आम नागरिकोंकी स्वतन्त्रताकी रक्षाके लिए यह आवश्यक है कि विशिष्ट नागरिकोंकी स्वच्छन्दतापर समुचित प्रतिबन्ध लगाया जाये। वे मानते हैं कि व्यक्ति और समाजके हितोंमें जो संघर्ष है, उसे क़ानूनी व्यवस्थासे रोका जा सकता है और भारत इस दिशामें एक आदर्श दे सकता है।

विशिष्ट व्यक्ति समाजको खाकर भी पुष्ट होनेकी वृत्तिसे ग्रस्त है और समाज उससे त्रस्त है। न्यायालयोंका कर्तव्य है कि वे व्यक्ति और समाजके हितोंका समन्वय करनेमें शीघ्रता करें। नहीं तो यह क़ानूनी प्रयोग भारतमें ही असफल हो जायेगा और दुनियाके सामने आदर्श रखनेकी बात एक खयाली पुलाव रह जायेगी!

■ ■

Gram : "ARBE TRADE" *Phone* : 22-9055

R. B. TRADING CO.

71-A, Netaji Subhas Rd.
(Room No. D/S 11),
CALCUTTA-1.

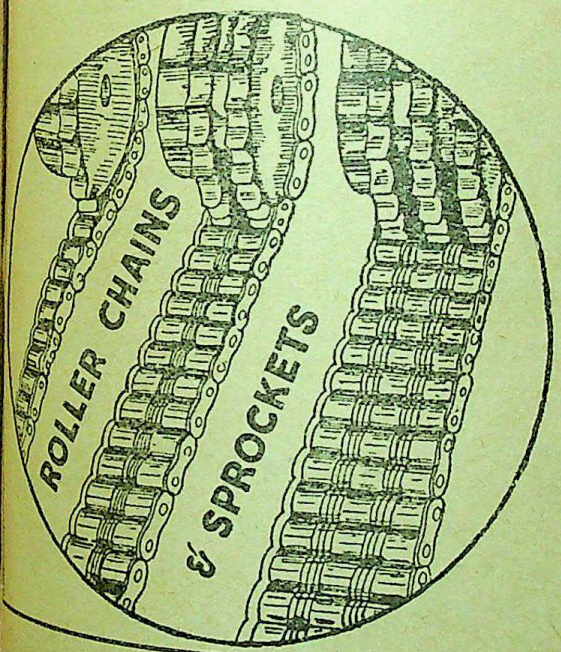

House for (All Types of Chain for Power, Load & Conveyor) Power Transmission Roller Chains, Connecting Links. M. S. & C. I. Sprocket Wheels & Pinions B. B. Malleable Iron Link Chain for Elevators, Inverted Tooth Chains, M. S. Balance Chains, M. S. Electrically Welded Short Link Chains (Confirming to B. S. S. 590 of 1949) M. S. Twisted Chains & Locking Chains etc.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रकाशित

डॉ० शिवप्रसाद सिंह

की दो संग्रहणीय

अनूठी कृतियाँ

• शिखरों का सेतु

'शिखरोंका सेतु' एक सेतु प्रस्तुत करता है। इसके शिखर शैल-शिखर नहीं, कहा जा सके तो और भी जीवन्त और ज्वलन्त हैं; और इसीलिए यह सेतु भी अधिक वास्तविक और अधिक यथार्थ है। अपने-आपमें अनूठे और सुललित निबन्धोंका संग्रह। **मूल्य ३.५०**

• घाटियां गूँजती हैं

घाटियाँ गूँजती हैं। बरफ़की आग-सा सच यही है कि चीनके आक्रमणके बाद गूँजी हिमालयकी घाटियाँ आज भी गूँजती हैं। एक-एक दृश्यके तीन अंकोंका यह सहज अभिनेय नाटक उस बर्बर विश्वासघातका कोई इतिहास-जैसा न देगा, उस समूचे परिवेशका यह जलता साक्ष्य है जिसे आधाररूपमें इतिहास मानेगा। रंगमंच-पर सफलतापूर्वक प्रस्तुत एक नाटक। **मूल्य २.५०**

भारतीय ज्ञानपीठ

प्रधान कार्यालय : ९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

विक्रय केन्द्र : ३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

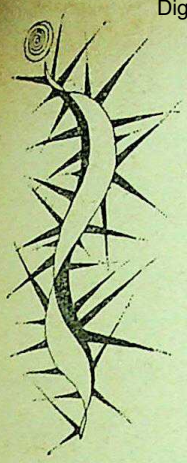

— बच्चन सिंह
— सकलदीप सिंह

दो प्रतिक्रियाएँ
(और प्रतिक्रियाओंके लिए)

नवलेखन और प्रतिबद्धता :

अतीतके लेखन और नवलेखनमें कोई रेखा खींची जा सकती है तो वह बद्धता होगी। यहीं यह प्रश्न उठता है कि वाल्मीकि, कालिदास, शेक्सपियर, गेटे प्रतिबद्ध नहीं थे ? यदि उन्हें किसी-न-रूपमें प्रतिबद्ध मान लिया जाता है तो पीढ़ीके साथ प्रतिबद्धताका अनिवार्य बेमानी होगा। और अगर उन्हें प्रति-नहीं माना जाता है तो सत्यको झुठलाना । तो क्या वे प्रतिबद्ध भी हैं और प्रति-नहीं भी ?

यही बात यह है कि पुराने ज़मानेके प्रतिबद्ध थे पर आजके अर्थमें नहीं। वे के प्रति प्रतिबद्ध थे, कामके प्रति—धर्मके कामके प्रति—प्रतिबद्ध थे। मोक्षके प्रतिबद्ध थे। उनकी प्रतिबद्धता परम्परासे लोक-शास्त्रसे अनुमोदित मूल्योंके प्रति होती थी। एक उदाहरण-द्वारा इसे स्पष्ट कर लेना अधिक अच्छा होगा। रावण-वधके अनन्तर सीता रामके समक्ष ले आयी गयी। वाल्मीकिके मर्यादा पुरुषोत्तमने सीतासे कहा : "अपने तिरस्कारका बदला चुकानेके लिए मनुष्यका जो कर्त्तव्य है, वह सब मैंने अपनी मानरक्षाकी अभिलाषासे रावणका वध करके पूर्ण किया। तुम्हारा कल्याण हो। तुम्हें मालूम होना चाहिए कि मैंने जो यह युद्धका परिश्रम उठाया है तथा इन मित्रोंके पराक्रमसे जो इसमें विजय पायी है, यह सब तुम्हें पानेके लिए नहीं किया है। सदाचारकी रक्षा, सब ओर फैले हुए अपवादका निवारण तथा अपने सुविख्यात वंशपर लगे हुए कलंकका परिमार्जन करनेके लिए ही यह सब मैंने किया है।"

मुख्यत: रामके युद्धका उद्देश्य था—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वमानकी रक्षा, सदाचारका रक्षण और अपने सुख्यात वंशपर लगे कलंकका परिमार्जन। ये लोकशास्त्र विहित मूल्य हैं, रामने इनके रक्षार्थ युद्ध किया। इन मूल्योंकी रक्षाके लिए ही निर्दोष सीताको निर्दयतापूर्वक निष्कासित कर दिया गया। रामको सीताकी निष्कलंकतापर पूरा विश्वास था फिर भी लोकमर्यादाको उन्होंने अधिक श्रेयस्कर माना। कहना न होगा कि महर्षि वाल्मीकि भी किन्हीं अंशोंमें इन मूल्योंके प्रति प्रतिबद्ध थे। 'पूजिय विप्र सकल गुन हीना' कहकर गोस्वामीजी शास्त्रविहित मूल्य-रूढ़िका समर्थन कर रहे थे। यह भी वर्णाश्रमधर्मके प्रति एक तरहकी प्रतिबद्धता ही थी।

पर आधुनिक युगमें उपरिलिखित पुरातन मूल्य विघटित हो गये। तो साहित्यकार किनके प्रति प्रतिबद्ध हो? कार्लमार्क्सने नवीन मानवीय मूल्योंकी स्थापना की—इस युगमें निश्चय ही उनसे बड़े मानवीय मूल्य नहीं स्थापित हुए। किन्तु उसमें व्यक्तिकी अपनी सत्ता नगण्य है। इसलिए वह बहुत-से विचारकोंको अग्राह्य हो गया। मार्क्सवादी विचारधाराके लेखक भी बने-बनाये सिद्धान्तोंके प्रति प्रतिबद्ध होते हैं। इस प्रतिबद्धतामें स्वयंके मूल्योंके लिए कोई अवकाश नहीं है, यहाँ व्यक्तिको बँधी हुई लकीरसे ही गुज़रना है। परम्परा-भुक्त मूल्योंकी अपेक्षा इसकी सीमाएँ अधिक संकीर्ण हैं। इस घेरेको तोड़ देनेपर उन मूल्योंका औदात्य स्वयंसिद्ध है। अपनी निर्बन्धताको प्यार करनेवाला व्यक्ति, अपनी इकाईके प्रति जागरूक व्यक्ति इसे पूर्णतः निगलनेमें असमर्थ रहा। अतः उसने आत्म-प्रतिबद्धताको नया मूल्य उद्घोषित किया।

इसके मुख्य प्रवर्तक ज्याँ पाल सार्त्र हैं। फ्रान्सीसी राज्यक्रान्तिके फलस्वरूप स्वतन्त्रता, भ्रातृत्व और समताकी जो आवाज़ उठायी गयी उससे एक नयी परम्परा ही चल निकली। सार्त्र प्रतिबद्धताका लेखक है। प्रतिबद्धताका दर्शन (?) एक विशेष ऐतिहासिक स्थितिमें उगता है। इस ऐतिहासिक चेतनाके प्रति सजग रहना, उसे वाणी देना लेखकका प्रथम कर्त्तव्य है। उस स्थितिमें उसे अपनी ज़िम्मेदारियोंका पूरा एहसास होना चाहिए। प्रतिबद्धता समयविशेषकी चुनौतीको स्वीकारती है।

सार्त्रका कहना है कि लेखक स्वतन्त्र व्यक्ति है, वह स्वतन्त्र व्यक्तियोंको सम्बोधित करता है। उसके पास लिखनेके लिए केवल एक विषय है—स्वतन्त्रता। मानवीय स्वतन्त्रताका उसे आदर करना है। उसे पूर्व निश्चित मूल्य स्वीकार नहीं हैं। दुनिया उन मूल्योंनियमोंको सामने रखती है जिनमें मनुष्यकी स्वतन्त्रता बाधित, कुण्ठित और अगतिशील हो जाती है। विगतके जड़ मूल्योंकी ओर लौटना वह अनैतिक मानता है। पुरातन मूल्य हमारे पथ-दर्शक नहीं हो सकते। सार्वभौम मूल्य कुछ नहीं होता। परम्परासे अलग होना ही श्रेयस्कर है। पुरातनताको छोड़कर ही नवीन मूल्योंकी सर्जना हो सकती है, नवीन सभ्यताका आविर्भाव सम्भव है। स्थापित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यवस्थाके स्थानपर साहसपूर्ण नया जीवन होना अधिक श्रेय है।

पुरातनके प्रति सार्त्रका विचार भ्रान्ति-पूर्ण है। प्राचीन मूल्योंसे एकदम असम्पृक्त हो जाना असम्भव है, अमनोवैज्ञानिक है। प्राचीन-कालमें ऐसे विचारक हो गये हैं जो आज भी हमारा पथ प्रशस्त कर सकते हैं। उनको नकारना अबतककी समूची ज्ञान-मूल्य सम्पदा-को नकारना है। साहित्य और संस्कृतिके क्षेत्रमें आज भी उनकी ऊँचाइयाँ अछूती हैं। जहाँ सार्त्र महोदय अपने पूर्ववर्ती अस्तित्व-वादियोंसे प्रभावित हैं, मार्क्ससे प्रभावित हैं। परम्पराके विरोधका सस्ता नारा अकल्याण-कर है।

परम्पराको झुठलाकर जो आत्मान्वेषित मूल्य होंगे वे क्या होंगे? इनके प्रति प्रतिबद्धता-की जिम्मेदारियाँ क्या होंगी? आत्मगत मूल्यों-का प्रतिफलन साहित्यमें कैसे होगा? यदि होगा तो उसका साझीदार पाठक कैसे होगा? इस प्रसंगमें इन प्रश्नोंका उत्तर अपेक्षित है।

परम्पराको झुठलाकर आत्मान्वेषित मूल्य ढोंग बकवास है। परम्पराको समझकर उसे अस्वीकृत करना (यह अस्वीकृति सम्पूर्ण भी हो सकती है और आंशिक भी) दूसरी बात है। किन्तु यह अस्वीकृति—सम्पूर्ण या आंशिक —प्रतिबद्धताकी पहली शर्त है। इसके लिए जरूरी है कि लेखकको युगका पूरा-बोध हो, उसकी चेतनाका गहरा अभिज्ञान हो क्योंकि इसीके आधारपर वह परम्पराके आगे प्रश्न-सूचक चिह्न लगा पायेगा। इसलिए प्रतिबद्धता-वाले लेखकके लिए युगबोधका जितना महत्त्व है उतना ही परम्पराके बोधका भी।

पर आत्मान्वेषित मूल्य क्या है? साहि-त्यकार इसीके प्रति प्रतिबद्ध होगा न! क्या यह सामाजिक मूल्यसे विरुद्ध होगा? समाजके मूल्योंसे विरुद्ध तो होगा ही क्योंकि यह पर-म्परा-सेवित है। किन्तु क्या वह सामाजिक नहीं होगा या असामाजिक होगा? ऐसा तभी सम्भव है जब उसके मूल्य एकान्ततः वैयक्तिक हों। एकान्तरूपसे वैयक्तिक मूल्योंका सम्प्रेषण-ग्रहण कैसे होगा? उसके अभिव्यक्त मूल्योंके साझीदार पाठक कहाँ मिलेंगे?

ऐकान्तिक रूपसे व्यक्तिनिष्ठ मूल्य साहित्यमें अग्राह्य होगा। प्रतिबद्धता आधुनिक युगके व्यक्तिकी गहरी प्रवृत्ति है, उसका बुनियादी विश्वास है, 'मैं'के बोधकी—अस्तित्वके बोधकी—अनिवार्य शर्त है। पर व्यक्तिनिष्ठ रचनाओंमें भी लेखक अपने व्यक्ति-को यथासम्भव मिटाता है। इसके बाद जो अवशिष्ट होता है वही प्रतिबद्धता है। अर्थात् लेखकके लिए आवश्यक है कि वह आत्मगत-मूल्योंके अन्वेषणमें 'आब्जेक्टिव कोरिलेटिव' को प्राप्त करे। वह इस तरहके अर्थ-संकेत देता है जो सामाजिक दृष्टिसे भी कम महत्त्व-पूर्ण नहीं होता है।

स्पष्ट है कि आधुनिक साहित्यकी आलो-चनामें 'प्रतिबद्धता' का विशेष स्थान है। आजके साहित्यको पहलेकी अपेक्षा कहीं अधिक सतर्कतापूर्वक पढ़ना होगा। आलो-चकका कार्य लेखकके चुनावको, उसके गृहीत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथ्योंको अपनी भाषामें उद्धृत कर देना-भर नहीं है। उसे चुनावों और तथ्योंके पीछे क्रियाशील प्रतिबद्धताको पकड़ना होगा, उसकी परख करनी होगी। आज प्रतिबद्धताकी रामनामी ओढ़कर घूमनेवाले लेखकोंकी संख्या अनगिनत है। आलोचकका दायित्व रामनामीको उतारकर उसकी असलियतका परदाफ़ाश करना है। काम जोखिमका है। लेकिन जोखिम उठाकर जीना ही तो जीना है।

कहा जा सकता है, प्रतिबद्धताको आलोचनाका एक तत्त्व मान लेना ज़रूरी हो गया है। लेकिन यह रस, रीति, गुण, अलंकार आदिसे भिन्न तत्त्व है। यदि यह कहा जाये कि आजके साहित्यके लिए यह उनकी अपेक्षा अधिक बुनियादी है तो असंगत नहीं होगा। 'तारसप्तक' के कवियोंकी प्रतिबद्धताका विवेचन एक रोचक विषय होगा। उनमें-से अनेक ऐसे हैं जो प्रतिबद्धतासे सर्वथा असम्पृक्त हैं—बुनियादी वैयक्तिक विश्वासोंसे रिक्त। सप्तकोत्तर कवियोंकी प्रतिबद्धता कितनी बुनियादी है और कितनी छलावर्तोंसे संयुक्त? नये कहानीकारोंकी प्रतिबद्धता भी विवेचनीय है। पर ये अलग-अलग लेखोंके विषय हैं।

क्या आलोचक भी प्रतिबद्ध होता है? जी हाँ, अपनी ईमानदारीके प्रति। उसका भी अपना व्यक्तिगत मूल्य होता है। फिर भी वह आलोच्यकी प्रतिबद्धतासे सम्बद्ध होनेके कारण अपनेको अधिकाधिक तटस्थ कर लेता है। उसे झूठी और सच्ची प्रतिबद्धताका नीर-क्षीर विवेक करना होगा। उसे यह भी देखना होगा कि उसकी प्रतिबद्धताकी वैयक्तिकता कितनी निर्वैयक्तिक है।

पहलेकी अपेक्षा—प्रतिबद्धताके सन्दर्भमें—आज साहित्यकी सर्जना और विवेचना अधिक दायित्वपूर्ण हो गयी है। अब चुनावकी स्वतन्त्रता, आउटसाइडर, अजनबी, भीड़ आदि शब्द बासी पड़ गये हैं। इनके आधारपर प्रतिबद्धताका भवन नहीं खड़ा किया जा सकता। इसलिए लेखक-आलोचक दोनोंको इस 'रेलवे क्रासिंग' से सावधान रहना होगा। 'कैच-वर्ड्स' से दूर हटकर जीवनके भुक्तिगतिक चिन्तनकी अभिव्यक्ति ही प्रतिबद्धता है। इसमें रचयिता और आलोचककी समानधर्मता वैसी ही है जैसी और युगोंमें थी।

—अज्ञेय

२-जीवन-बोधकी सच्ची गवाही:

जीवन-बोधकी तीव्रताने नयी पीढ़ीके लेखकको उसे अपनी जिजीविषाके प्रति प्रतिबद्ध कर दिया है। वैयक्तिकता और सामाजिकताके बीचकी रेखा मिटती-सी लग रही है। बोधके एक ऐसे स्तरपर आजका लेखक आ पहुँचा है जहाँ समझने-समझानेकी परम्परा-विहित सारी परिभाषाएँ अधूरी या झूठी लग रही हैं। वह एक क्रूर स्थितिमें पड़ गया महसूस कर रहा है। वह नयी भाषाकी तलाश कर रहा है और अभिव्यक्तिकी कड़ुई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकुलाहटका अनुभव तेज़ीके साथ कर रहा है। नवलेखनके सम्बन्धमें कोई धारणा बनानेके पूर्व इस स्थितिसे अवगत हो जाना आवश्यक होता है।

जिस जीवन-बोधकी चर्चा हम कर रहे हैं वह वस्तुतः आज संवेदना और जड़ताके संघर्षकी उपज है। सहयोग और विच्छेदकी टकराहट उसे विस्तार और जटिलता देती है। सहयोग और विच्छेदका विभाजन एक भ्रम-सा प्रतीत होता है। दोनोंकी विपरीतता या अनुरूपता स्पष्ट रूपसे दिखला पाना आज कठिन मालूम हो रहा है। दोनोंसे बने बोधको समझनेका आधार बौद्धिक स्तरपर गठित वैयक्तिकता ही हो सकती है। बोध न सामान्य होता है न निरपेक्ष। पारस्परिकताके सूत्रोंमें उलझी मानवीय धड़कनोंको पहचाननेकी आवश्यकता है आज।

नया लेखक बोधकी अगली रेखाको स्पर्श करना चाहता है। जो लेखक अपनी चेतना और जागरूकताकी प्रखरतासे अगली रेखा छू सकनेमें समर्थ होता है वह 'नया लेखक'के रूपमें स्वीकृत होता है। किन्हीं अन्य लेखकोंकी ओरसे स्थितिको बार-बार झुठलानेके बावजूद भी नया लेखक अपनी स्वीकृति ले लेता है।

हिन्दीके कहानी-लेखनको ही लें। यह लेखन युगीनबोधको अत्यन्त तत्परता और सहजतासे स्पर्श कर रहा है। आजका समसामयिक कहानीकार गहरी छटपटाहट और नग्न सच्चाईके साथ उन स्थितियोंको भाषा दे रहा है जिन्हें वह व्यावहारिक-रूपमें झेल रहा है। ज़िन्दगीकी धड़कनोंको पकड़नेके लिए आजकी कहानी सफल छलांग मार रही है।

इस बीच नये कहानीकारोंने कुछ ऐसी कहानियाँ दीं जिनके आधारपर नयी कहानीके क्षेत्रमें नये सिरेसे चर्चा होने लगी है। वास्तवमें, विकासकी गतिमयता किसी भी साहित्यिक आन्दोलनकी अवधिको या उसके प्रचलित रूपको छोटी कर देती है। लेखन-क्षेत्रमें आयी प्रवृत्तियाँ अपनी उम्र क्षिप्रताके साथ पार कर रही हैं।

पिछले दशककी कहानियोंको पढ़कर जिन लोगोंने अपनी रुचि बनायी थी, उनको समकालीन कथा-रचनाएँ हलकी और छिछली मालूम होने लगीं या विचित्र। इन लोगोंने अपने प्राचीन-साहित्य-संस्कारको शाश्वत निकष मान लिया था। दूसरी ओर नवलेखनके क्षेत्रमें भी कुछ रुचिहीन और बोधहीन लेखक आ जुटे। पर थोड़ी-बहुत जो सशक्त और दिशा-बोधक कहानियाँ आयीं, उनके आधारपर मूल्यांकनकी भूमि बनायी जा सकती है।

नग्न वास्तविकताने जीवनको कुछ ऐसी शर्तें और प्रतिक्रियाएँ दे दी हैं जिनके आधारपर नये कहानीकारोंने सही प्रसंगमें पहली बार आस-पासके बीच अपनेको पहचाना है। पहचाना ही नहीं है, अपना लेखन जिया है। कहानीको रूढ़िगत कला या शिल्पसे मुक्ति मिली, और उसने एक अकथात्मक सहजता और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन पठनीय

कहानी - संग्रह

• **खोयी हुई दिशाएँ** : कमलेश्वर

नयी हिन्दी कहानीके एक विशिष्ट शिल्पी कमलेश्वरकी चुनी-चुनी ग्यारह कहानियाँ जो बिना सन्देह एक बनती हुई मनोभूमि प्रस्तुत करती हैं—वह मनोभूमि जो लेखक ही नहीं, समूचे समाजकी है। कहानियोंमें जीवनका अध्ययन है मात्र सर्वेक्षण नहीं। यही कारण है कि हर कहानी मनपर एक सार्थक प्रभाव छोड़ती है।

मूल्य २.५०

• **झाड़ी** : श्रीकान्त वर्मा

श्रीकान्त वर्माकी अधिकांश कहानियाँ प्रेम-कहानियाँ हैं। लेकिन प्रचलित या परम्परागत अर्थमें नहीं। संशय, अनिर्णय और अमूर्तता आजकी प्रतीक मनःस्थितियाँ हैं और इसे बड़ी तीव्रताके साथ प्रस्तुत संग्रहकी कहानियोंमें देखा जा सकता है।

मूल्य ३.००

• **मेज़पर टिकी हुई कुहनियाँ** : रमेश बक्षी

नवीन पृष्ठभूमिपर कथनको नया अन्दाज़ देती रमेश बक्षीकी ये कहानियाँ कभी तो चित्रकलाके सभी सहज सिद्धान्तोंको उरेहती हैं और कभी मनकी बेहद गहरेसे ध्वनित स्वर-सज्जाको उघारती हैं। कहानियाँ पढ़ते समय लग सकता है कि ये कहानियाँ नहीं है और यह भी कि ये ही तो कहानियाँ हैं।

मूल्य ३.५०

भारतीय ज्ञानपीठ, प्रकाशन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...विकता पायी। अतः कहानी एक बदली ...विधिके रूपमें सामने आयी। जीवनकी ...स्थितियोंकी परिचितिसे उत्पन्न कहानियाँ ...उनकी तीक्ष्णताको वहन करनेमें सक्षम हुईं। ...दबावसे उनमें खरापन और नयापन ...।

समसामयिक लेखक अपने सहज व्यक्तित्व-...ताइयोंके प्रति सचेत है। उसकी दृष्टिमें ...पीढ़ी अपनी स्वाभाविक प्रतिबद्धताके ...अप्रामाणिक होनेको विवश थी। उस ...चेतना धर्मगत या आदेशगत आरोपणों-...थी। एक विडम्बनाके बाइससे वह ...थी। 'स्व' या 'मैं' वास्तविक ...न आ सका था। 'वह' के झूठे छलसे ...कुन्द था। धर्म-समाज-ईश्वरसे संघर्षका ...और उस पीढ़ीके साथ था। अतः ...स्वभावतः सच्चाई या आत्मसत्यकी ...प्रति विमुख थी। मानो, ग़लत प्रयत्न-...मानकर चलना उसकी नियति हो।

...टिलताओंसे गुज़रनेवाला नया लेखक ...बदल गये सन्दर्भों-द्वारा संघर्षको झेल ...है। वह अपना प्रमाण आप है। 'झेलना' ...झेलनेकी पीड़ाको अकृत्रिम ढंगसे कह ...ही उसकी दृष्टि है या 'पर्सपेक्टिव' है।

...विवेचना-विमर्ष करनेका पेशा अपनाने-...या प्रवचन देनेके अभ्यासी लोग भले ...रूढ़िता या अबोधताके कारण पुरानी ...की 'भी' ऐतिहासिक महत्ता खोज निकालें ...नयी पीढ़ी न अतीत-जीवी है न भविष्य-...। न वह इतिहासका जुआ ढोनेको तैयार ...है, न भविष्यका नक़्शा बनानेमें समर्थ। यह पीढ़ी मात्र गवाह हो सकती है। हर लेखक अपना गवाह आप हो सकता है—समयका या अपने जीवनका।

सन् ५०-६० तककी अवधिमें आये कुछ कहानीकारोंमें थोथे दृष्टिकोणके मोटे लबादे थे। उन्हें फेंक सकनेमें कई असमर्थ थे। उनमें-से कुछ अपनी कुण्डलोंको और भी संकुचित और जकड़को कठोर बनाये जा रहे हैं। व्यावसायिकता-जन्य लोकप्रियतासे आक्रान्त हैं वे कथाकार। उस पीढ़ीका वही लेखक समकालीनताके साथ चल सकनेमें सक्षम हो सकता है जिसे चढ़ते बाज़ारमें उठे लाभके प्रति कोई मोह नहीं है। जो हर क्षण, हर दिन, हर मास, हर वर्ष अपनेको एक नये कोणसे देखनेका अभ्यासी है, जो किन्हीं आरोपणोंके दबावसे अपनी संवेदनाकी जीवन्त सहजताको मरोड़ता नहीं है। जो अनुभवकी कठोरतामें साँसें लेता है। वह बीत चुके रास्ते-के मिले पेड़-पक्षियोंके प्रति कोई रूमानी ममता नहीं रखता और जो कुन्द होती जा रही संवेदनाके युगमें अनगढ़ता, अव्यवस्था या संत्रासको झेलता है और लिखता है। वह उन चेतना-विमूढ़ सचेतनोंकी बातें नहीं करता जो 'परिवर्तन' का वैदिक अर्थ खोजता है। वह मुखौटावादियोंके प्रतिवादमें खड़ा होता है, साहसिकताके साथ और चुनौतियोंको अपनी ज़िन्दगी बना लेता है।

पिछली और समसामयिक पीढ़ीके बीच कुछ लोगों-द्वारा वक्र वैयक्तिकताके प्रसंगमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके लिए माहवारी पेंशन

मान लीजिए कि अगले १० वर्षों तक आप हर मास १०० रु० वाला एक १० वर्षीय राष्ट्रीय बचत पत्र (प्रथम निर्गम) खरीदते हैं। १० वर्ष के बाद आपका एक बचत पत्र हर महीने पकने लगेगा और हर महीने आपको १८० रु० मिलने लगेंगे। यह मासिक आय आपकी वृद्धावस्था में आपके लिए एक वरदान हो सकती है क्योंकि इससे आपके लिए नियमित पेंशन निश्चित हो जाएगी।

अगर आप चाहें, तो बचत पत्रों के पकने पर संचित ब्याज रख कर १०० रु० की आरम्भिक पूंजी को फिर से राष्ट्रीय बचत पत्रों में लगा सकते हैं। इससे आपको या आप पर आश्रितों को पुनर्विनियोजन की तिथि से दस वर्ष बाद अगले १० वर्षों के लिए आय सुनिश्चित हो जाएगी।

यह धन लगाने का एक अच्छा साधन भी है क्योंकि इस पर ८ प्रतिशत प्रति वर्ष साधारण या ६.०५ प्रतिशत चक्रवृद्धि ब्याज मिलता है। इस पर कर तभी देना होगा, यदि आप आयकर भी देते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

राष्ट्रीय बचत संगठन

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...वर्माको कड़ीके रूपमें माना जाता है। ...एक और आकस्मिकताको ओर संकेत ...चाहता हूँ। रमेश बक्षी उसी पीढ़ीके ...कार होते हुए भी क्यों समकालीन ...कारोंके साथ होते जा रहे हैं? यह क्यों? ...यह बदलना या समकालीनोंके साथ ...बैठ जाना समसामयिक आधुनिकताकी ...आवश्यक पर्तको उद्घाटित करता है। ...पीढ़ीमें शायद रमेश बक्षी ही ऐसे रहे हैं ...के ऊपर 'दृष्टिकोण' 'जीवन-दर्शन' ...विश्लेषण'-दर्शन, 'आदर्श', 'परम्परा' ...किसी बाहरी एजेन्सीके प्रति प्रतिबद्धता ...के लबादे नहीं थे। रमेश बक्षीकी गति-...बदलती स्थितियोंके साथ बदलती ...। उनकी 'मातम', केंचुआ'-जैसी कहा-...का 'ट्रीटमेण्ट' उन्हें अत्यन्त समसामयिक ...देता है। इधरकी लिखी उनकी ...अदार्शनिक - अमनोवैज्ञानिक ...सहज मानव-मनको यथातथ्य व्यक्त ...देती हैं। पुराने संस्कार-ग्रस्त पाठकोंको ...'कुछ नहीं' मिल सकता है, पर उस ...नहीं' को महसूस करनेवाले पाठकोंका ...वर्ग बन तो गया ही है।

समकालीन कहानीकारोंकी संख्या कम ...है पर बोधकी अगली रेखाको छू सकनेमें ...कम लेखक सफल होते दिखाई देते हैं। ...कम कहानियाँ ही सामने आ सकी हैं ...के आधारपर समसामयिकताके सन्दर्भमें ...को समझ लेनेकी सुविधा खोजी जा ...है।

दूधनाथ सिंहकी 'रक्तपात'-जैसी कई कहानियाँ सामने आयी हैं। मूल्य-सम्बन्धी ढुलमुली धारणा उनके लेखनमें परिलक्षित होती है। काम-पीड़ित आतंक या कुण्ठाका भयावह माहौल खड़ा करनेकी आधुनिक क्षमता उनमें है। यह भी कि कभी-कभी संस्कार-रूढ़िसे उन्मुक्त न होनेके कारण सांकेतिकता, बिम्ब-प्रवणता या विश्लेषणात्मकताके बोझसे दबकर उनकी कहानियाँ तनकर लम्बी हो जाती हैं। इसी कमीके कारण उनका एक पैर राकेशके साथ है तो दूसरा राजकमल चौधरीके साथ। लेकिन यह तो है ही कि दूधनाथ नये प्रारम्भके समर्थ बिन्दु हैं।

ज्ञानरंजन और ज्ञानप्रकाश-जैसे कई कहानीकार उभरकर सामने आये हैं पर बोध-के धुँधलेपनके कारण इनको कहानियोंमें तीक्ष्णता नहीं आ पायी है। समसामयिकताके प्रसंगमें इनकी टेकनीक भी अनुरूपता नहीं पा सकी है। लेकिन यह अकथाके लिए दुर्गुण नहीं है।

प्रयाग शुक्ल, काशीनाथ सिंह, राम-नारायण शुक्लकी कुछ कहानियाँ अपना अलग अस्तित्व बनाती हैं। 'प्रेम' की थीमको सबसे पहले शायद इन्हीं कहानी-लेखकोंने ठुकराया और इन्हीं लोगोंने समसामयिक कहानीकी भूमिका बनायी। प्रेम-विश्लेषण, घटना-संयोजन, कथा-कारीगरी, चमत्कार-जन्य प्रारम्भ और अन्त आदि जैसी चीजें इनकी कहानियोंमें नहीं मिलेंगी। झेली जाती हुई ज़िन्दगीके प्रति इनकी ईमानदारीने इन्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृत्रिम नहीं बनने दिया। कहानी विधाकी रूपाकृति एक नये ढंगमें सामने आयी। एक सहज निर्दोषताका उदास आकर्षण इनकी कहानियोंमें मिलेगा जो समसामयिकताको हलको उँगलियोंसे छूता है।

रवीन्द्र कालियाकी कुछ ही कहानियाँ आधुनिकताके निकट पड़ती हैं। सही आधुनिकता-बोधके सम्बन्धमें शायद उनकी धारणा स्पष्ट नहीं हो पायी है। झेलनेकी तल्खी, साहसिकता स्वाभाविक रूपमें नहीं दीखती। 'त्रास,' 'अकथा'-जैसी कुछ कहानियोंमें निष्क्रियताके पात्र तो मिलते हैं पर 'त्रास' कहीं नहीं उभरता। रुझान सम्भवतः मध्यममार्गी है।

कुछ ऐसे नये कहानीकार इधर उभरे हैं जिनकी उम्र तो कम है ही, किन्तु समसामयिक स्थितियोंका दबाव उनकी कहानियोंमें पड़ा नहीं दिखाई पड़ता। भले ये समसामयिक या समकालीन नवलेखक माने जा सकते हैं पर इनकी पहचान आधुनिकताकी सही दिशाको नहीं स्पर्श करती। मधुकर सिंह, गंगाप्रसाद विमल, आलोक शर्म्मा, से० रा० यात्री, योगेश गुप्त, ममता अग्रवाल, परेश, गिरिराज किशोर या पानू खोलिया 'कहानी' पत्रिकामें बराबर प्रकाशित होते रहनेवाले कई कहानीकार हैं जिनका 'नोटिस' नहीं लिया गया अबतक। इन कहानीकारोंकी रचनाओंमें जटिल युगके उभरे तनावकी अभिव्यक्ति अनुरूप आकृति-प्रकृतिमें नहीं हो पाती। बौद्धिकता और अपने सन्दर्भोंके प्रति इनमें जागरूकताका अभाव है।

अनुभूतिके स्तरपर बोधकी तीव्रताको महसूस करनेवाले बहुत कम कहानीकार हैं जिनकी कहानियोंकी अलग 'एनटिटी' है। ऐसे कहानीकारोंमें प्रबोधकुमार, नीलकान्त, अवधनारायण सिंह, महेन्द्र भल्ला, अवधनारायण मुद्गल, श्रीकान्त वर्मा, (बशर्ते आधुनिकताके कमज़ोर पक्षसे अलग हट जायें), शरद् देवड़ा आदिके नाम सहज रूपसे लिये जा सकते हैं। इनकी कहानियाँ अपनी अलग परिभाषा माँग रही हैं। अलग अस्तित्वकी माँग कर रही हैं। ये कहानियाँ नग्न कथ्यकी हैं, गढ़े कथानककी नहीं। पुराने अर्थोंमें इसीलिए ये कहानियाँ 'अकहानियाँ' बन जाती हैं। इन कहानियोंकी भविष्यमें क्या रूप-रेखा होगी—कहा नहीं जा सकता, पर विधाकी भूमिपर यह विद्रोह है। जटिलता और बिखरावसे उत्पन्न आधुनिकता-बोध इन कहानियोंकी प्राणवत्ता है।

'आकाशका दबाव' (अवधनारायण सिंह) -जैसी कुछ कहानियोंमें विद्रूपताओंके बीच आज-का कहानीकार जागरूक होकर सहज अनुभूतियोंके टूटन या संशयजन्य बिखरावको सहज रूपमें करता है।

आधुनिकताको गहराईसे समझनेवाला ही समकालीन कथाकार अपने लेखन और जीवनके बीचका भेद मिटा सकता है। ये कहानियाँ समय और लेखककी सच्ची गवाह हैं।

—सकलदीप सिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैकलियॅड एण्ड कम्पनी लिमिटेड

मैकलियॅड हाउस,

३, नेताजी सुभाष रोड, कलकत्ता-१

मैनेजिंग एजेण्ट्स, सेक्रेटरी और कोषाध्यक्ष

जूट मिल्स

- अलेक्जेण्डर जूट मिल्स कं० लि०
- एलायन्स जूट मिल्स कं० लि०
- नेल्लीमारला जूट मिल्स कं० लि०
- चितावलसाह जूट मिल्स कं० लि०
- ईस्टर्न मैन्यूफैक्चरिंग कं० लि०
- एम्पायर जूट मिल्स कं० लि०
- केलविन जूट कं० लि०
- प्रेसिडेंसी जूट मिल्स कं० लि०
- वेवरली जूट मिल्स कं० लि०

चाय के बगीचे

- अमलुकी टी कं० लि०
- बागमारी टी कं० लि०
- भत्कावा टी कं० लि०
- बोरमाहजान टी कं० (१९३६) लि०
- डिब्रूगढ़ कं० लि०
- बैजू वेली कं० लि०
- मार्गरेटस होप टी कं० लि०
- राजभात टी कं० लि०
- रानीचेरा टी० कं० लि०
- रूपचेरा टी कं० लि०
- सुंगमा टी कं० लि०
- तेलोईजान टी कं० लि०
- तिंगासीरा टी सीड कं० लि०
- तिरींहन्ना कं० लि०
- तीयरून टी कं० लि०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Price Annual Rs. 10/- per copy Re. 1/- for abroad postage extra 18 nP. This Copy Re. 1/-
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

31 JUL 1965
13 AUG 1965
क्रमसं 218

License No. 51. Licensed to post without prepayment of postage. REGD. No. L-2036

ध्रांगध्रा
केमिकल
वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर
साहूपुरम् में
डाकखाना : अरुमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक
ध्रांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स :

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लि०

१५ ए, हॉर्निमैन सर्किल
फोर्ट, बम्बई-१

टेलीफोन : २५१२१८-१९-१०,

तार । सोडाकेम, बम्बई

भारतीय ज्ञानपीठ काशीकी ओरसे बाबूलाल जैन फागुल्ल-द्वारा प्रकाशित और सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी में मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नो द य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक विकास-उन्नयन
सांस्कृतिक अनुसन्धान-प्रकाशन
राष्ट्रीय एकता एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी

साधिका
विशिष्ट संस्था

भारतीय ज्ञानपीठ

[स्थापित सन् १९४४]

संस्थापक
श्री शान्तिप्रसाद जैन

अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

ज्ञानोदय

सितम्बर १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस अंकमें :

ब्रह्मराक्षसका शिष्य •

'आँगनके पार-द्वार' तक •

एक था समाज : एक है कला •

एक भारतीय मूल्यांकन : एक आंग्ल कवि •

९ नीग्रो कविताएँ •

ज़िन्दगी और रेतकी समानता : कोबो एबे •

घनवादसे अमूर्त्तवाद तक •

एक-एक मनःस्थिति •

नया नायिका भेद •

बालशौरि रेड्डी, इक़बाल मजीद, श्रीकान्त वर्मा, रणवीर रांग्रा, जगदीश गुप्त, परमानन्द श्रीवास्तव, रवीन्द्र भ्रमर, राजेन्द्र माथुर, महेन्द्र कुलश्रेष्ठ, कैलाश वाजपेयी, लक्ष्मीकान्त वर्मा सुधा अरोड़ा, मिर्ज़ा इस्माइल बेग, विजय रैञ्चन, महीप सिंह, इन्दुकान्त शुक्ल, हरीश भादानी, किरण जैन

■

ज्ञानोदय

वर्ष : १७ : : अंक : ३

सितम्बर १९६५

■

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

सम्पादक : लक्ष्मीचन्द्र जैन, रमेश बक्षी

सम्पादकीय कार्यालय : ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

वितरण-कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी

प्रमुख वितरण : बैनेट कोलमैन एण्ड कं० लि०, बम्बई-१

एक प्रति : एक रुपया । वार्षिक : दस रुपये । त्रैवार्षिक : पच्चीस रुपये ।

पन्द्रह वर्षीय : सौ रुपये । आजीवन : एक सौ एक्यावन रुपये ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके पत्र

● मैंने (इसीलिए) ज्ञानोदयकी नि:स्वताके विषयमें कुछ लिखना उचित नहीं समझा, पर अब अत्यधिक उद्वेग हो रहा है। इतनी छिछली आधुनिकता, इतना बचकानापन, इतनी स्व-निरपेक्षता, ऐसा विश्व-विभ्रम—यह अब रुकना चाहिए। इत्यलम्। क्या सचमुच हमारा बुद्धिजीवी वर्ग इतना विच्छिन्न हो चुका है कि सामान्य जनके दाय, संस्कार, स्वप्न किसीका लेशमात्र भी उसे ध्यान नहीं।....

गोरखपुर]

—विद्यानिवास मिश्र

● पहले तो मैं तुम्हें नयी पीढ़ीको समर्पित ऐसा सुन्दर अंक निकालनेके लिए बधाई देता हूँ। यह बात तो मैं विश्वासके साथ नहीं कह सकता कि इस नववर्षांकमें सम्मिलित होनेवाले कवियों और कथाकारोंकी रचनाओंमें कोई ऐसी भी है, जो आजसे दस वर्ष बाद भी याद रखी जा सकेगी, लेकिन इतना मैं सच्चाईके साथ कह सकता हूँ, कि पढ़ते हुए मुझे अधिकांश अच्छी लगीं (मैंने आलोचककी दृष्टिसे नहीं, पाठककी दृष्टिसे इस अंकको पढ़ा।) और इस बातकी आशा ज़रूर बँधी कि नयी पीढ़ीमें कुछ ऐसे सशक्त नाम ज़रूर निकलेंगे, जो आनेवाले वर्षोंमें हिन्दी भाषाका नाम ऊँचा कर सकें।

मैं इलाहाबादमें रहता हूँ और इलाहाबादमें पुराने और नये लेखकोंका अच्छा खासा जमघट है। सौभाग्यसे मुझे, अपनी पचपनको पहुँचती उम्रके बावजूद, दोनोंका सान्निध्य प्राप्त है और मैं दोनों पक्षोंके मनकी बात और भावना जानता हूँ। तुमने अपने सम्पादकीयमें परम्पराके जिस 'असहनीय अंश' की बात कही है उसे एक-दम नये लेखक नहीं मानते। वे सारीकी सारी पुरानी परम्पराको असहनीय मानते हैं। रहे पुराने लेखक तो वे इस 'अस्वीकार, नाराज़गी, औद्धत्य और भूख' को समझ नहीं पाते। उन्हें नये लेखकोंके इस अस्वीकार और उद्धततामें बीचकी पीढ़ीके कुछ 'नये' लेखकोंका षड्यन्त्र दिखाई देता है। उन्हें यह भी लगता है कि यह उद्धतता और नकारात्मकता बाहरसे आयी है, कि यह देशीय नहीं, विदेशीय है।... अमरीकाकी भूखी पीढ़ीके उद्धत कवि जिन्ज़बर्गको हमारे अखबारोंमें जैसे उछाला गया है, जैसे उसके प्रभावमें हम कलकत्ता, पटना, इलाहाबाद और दिल्लीमें नव-युवक लेखकोंके दल हर प्रकारकी क़ैदसे आज़ाद होकर खुल खेलनेको और उसे ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ संकेत

सच्ची अनुभूति मानकर उसे कविता अथवा कहानियोंमें रखनेको सच्चा साहित्य समझने लगे हैं और शेष सब उनकी दृष्टिमें झूठा और अनऑथेंटिक हो गया है।.... वैसे हमारे यहाँके साप्ताहिक और मासिक पत्र-पत्रिकाओंमें ग्रीनविच-विलेजकी सैरका आँखों देखा वर्णन रोटीके साथ चटनी-जैसा जरूरी मान लिया गया है, उसे देखते हुए कई बार पुराने लेखकोंकी बात सच भी लगती है।...रही बीचके लेखकोंके षड्यन्त्रकी बात, तो पिछले दिनों एक पुराने लेखकने कहा, 'अरे बन्धु, यह सब कुछ नहीं, कुछ नये असफल लेखकोंने पत्र-पत्रिकाओंकी सम्पादकी सम्हाल ली है और वे एक दम नये लेखकोंको इसलिए उछाल रहे हैं कि वे उनका झण्डा बुलन्द करें और उन्हें सफल और महान् कथाकार मान लें!' आदि...आदि....

मैं मान लूँ कि कुछ समय तक आकस्मिक-सा उठ आनेवाला यह विद्रोह और यह परम उद्धतता स्वयं मेरी समझमें नहीं आयी और मैं भी इसे विदेशसे उधार ली हुई स्थिति मानता रहा।.. इसमें कोई सन्देह नहीं कि 'नये' का यह विद्रोह स्वयंको प्रतिष्ठित करनेके लिए भी था—एक बार मैं एक नये (अब बीचके) कविके साथ सैर कर रहा था कि सहसा वे पन्त और महादेवीपर गरियाने लगे। उनका आक्रोश इस कारण था कि शहरमें जो सभा होती उसका सभापतित्व अथवा उद्घाटन उन दोनोंमें-से एक करता। उन्हें गुस्सा था कि किसी नये (उनका मतलब अपनेसे था) कविको क्यों इस कामके लिए नहीं बुलाया जाता?...राकेशने 'सारिका' में आइडेण्टिटीकी बात की ही थी और सचेतन कथाकारोंमें-से कुछने उसे दोहराया भी है।....

लेकिन आज जब मैं पिछले दस वर्षोंका जायज़ा लेता हूँ तो मुझे लगता है कि महज विदेशी प्रभाव या केवल आगे बढ़ने अथवा नाम या स्थान या प्रतिष्ठा पानेकी प्रतिस्पर्धा ही इस अस्वीकार और औद्धत्यके पीछे नहीं है; और भी कारण हैं और वे विदेशीय न होकर देशीय ही हैं और उनका सम्बन्ध हमारे देशकी सामाजिक और राजनीतिक विघटनकारी परिस्थितियों और उनके प्रति नयी पीढ़ीमें एक दुर्निवार क्षोभ और आक्रोशके साथ जुड़ा है।—१९४७ से पहले जो कुछ था, १९५७ तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'दाम्पत्य विशेषांक'

नवम्बर १९६५ :: पृष्ठ लगभग ४०० :: मूल्य ३.००

- युगल-युग्म चित्रों सहित रंगीन सज्जा
- परिचर्चा, संस्मरण, डायरी, कहानी, पत्र, एकांकी···सभी विधाएँ।

● कुछ शीर्षक, कि यह विशेषांक कितना महत्त्वपूर्ण होगा :

○ दाम्पत्य – अलग-अलग कोण : अपनी-अपनी दृष्टि (परिचर्चा) ○ जैनेन्द्रके दम्पति ○ दाम्पत्य : उसी उर्वशीके परिप्रेक्ष्यमें ○ एक शतरंज : बत्तीस मोहरें ○ दाम्पत्य : एक चक्कर क्लब ○ भारतीय दाम्पत्य : मनोवैज्ञानिक टिप्पणियाँ ○ साहित्यमें दाम्पत्य : मेरे दार्शनिक अध्ययनके सन्दर्भमें ○ दाम्पत्य-छवियाँ : इतिहासके विस्तारमें ○ बोलते जातक ○ दम्पतियोंके रेखाचित्र : उद्धरणोंके रंग ○ रामायण : दाम्पत्योंकी अग्नि-परीक्षा ○ महाभारतमें दाम्पत्य समस्याएँ : समाधानोंका पुनर्परीक्षण ○ वेदोंमें दाम्पत्य गार्हस्थ-सूत्रकी दिशा ○ कृष्णलीला : दाम्पत्य अध्याय ○ दम्पति दायित्व : विवाह अनुष्ठानोंके प्रकाशमें ○ दाम्पत्यका शब्द-परि वार : मौलिक अर्थोंकी खोज ○ दाम्पत्य संविधान : बदलती धाराएँ(वधानिक विहगावलोकन) ○ सफल दाम्पत्य के सूत्र वात्स्यायनका साक्ष्य ○ नैसर्गिक दाम्पत्य ○ हर घर एक अलग द्वीप : विभिन्न दम्पतियोंसे इण्टरव्यू ○ सात समुद्र पारसे मंगल सूत्र ○ सफ़रके साथी : दोनों अर्थोंमें ○ 'तुलसी गाइ-बजाइके दिये काठमें पाँव' ○ एक हज़रत : एक हज़रतगंज–रूमानी फ़िराक़ : रूहानी फ़िक्र ○ अपनी ही परिक्रमा ○ नया मेघदूत ○ क़िस्से मुर्गछाप हीरोके : बसिलसिला हीरोइन्स ○ तीर-तुक-तक–में आदम : तुम हव्वा, नयी सप्तपदी ○ लोक जीवन : सुआपंखो सपने ○ बिम्ब-प्रतिबिम्ब : काव्यके चित्रफलक ○ दाम्पत्यग्रस्त उपन्यास ○ घेरे समस्याके ○ व्यूह उलझनके ○ ललितकलाके अर्धनारीश्वर ○ दाम्पत्य जीवनके प्रयोग : सफलताके सूत्र ○ आधुनिक दाम्पत्य-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का आई० क्यू० ० कुलवधूका जमा-ख़र्च ० एक दूसरेके अजनबी ० तीसरी भुजा ० द्वैत-अद्वैत ० दिल्लीमें एक दिशा ० एक जोड़ी समस्या : समाधानके उपरान्त ० अविवाहित पृष्ठ ० आजन्म अकेले ० स्वयंव्रता ० तीन दिशाओंमें तीन ख़त ० नयी पीढ़ी और दाम्पत्य ० समझौतेकी ज़रूरत··· ० तुम सब कुछ··· ० 'सेकण्ड सेक्स' के उपसंहार

• इस विशेषांककी लेखक-सूचीमें विशिष्ट :

० परिसंवादमें कुछ स्थानीय, कुछ अतिथि चर्चाकार ० भारतभूषण अग्रवाल ० रामधारी सिंह दिनकर ० अमृतलाल नागर ० यशपाल ० इलाचन्द्र जोशी ० देवराज ० भगवतशरण उपाध्याय ० भदन्त आनन्द कौसल्यायन ० रमेश कुन्तलमेघ ० प्रभाकर माचवे ० रंगनाथ राकेश ० राममनोहर लोहिया ० भोलाशंकर व्यास ० तारकेश्वरी सिन्हा, कमला रत्नम् ० मन्मथनाथ गुप्त ० रमेश बेदी ० कुन्था जैन ० सोमावीरा, शोभिता जैन, सुनीता ० मनोहरश्याम जोशी ० विद्यानिवास मिश्र ० श्रीलाल शुक्ल ० हरिशंकर परसाई ० शरद जोशी ० केशवचन्द्र वर्मा ० गोपालप्रसाद व्यास ० काका हाथरसी ० श्याम परमार ० विष्णुकान्त शास्त्री ० धनञ्जय वर्मा ० लक्ष्मीनारायण लाल ० विष्णु प्रभाकर ० जगदीश गुप्त ० 'प्रभाकर' ० रजनी पनिकर ० कृष्णचन्द्र ० शान्ति मेहरोत्रा ० शशिप्रभा शास्त्री ० उषा प्रियंवदा ० राजेन्द्र यादव ० 'रेणु' ० कमलेश्वर ० परेश ० अनामिका ० चित्रा मुद्गल ० मुक्ता राजे ० अनीता औलक ० इरफाना शरद ० पुष्पा राही ० निर्मला वर्मा ० रणजीत ० सलमा सिद्दीक़ी ० ममता अग्रवाल ० सुधा अरोड़ा ० मोहनसिंह सेंगर ० अजीत कौर ० सुदर्शन चोपड़ा ० कुबेरनाथ राय ० धर्मवीर भारती ० मोहन राकेश ० अमृता प्रीतम ० डॉ० सुमन ० अश्क ० कर्तारसिंह दुग्गल ० आईन रैण्ड ० एनी फ्रैंक ० सीमन 'द बाउवा

ज्ञानोदय

सम्पादकीय कार्यालय :
९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७
वितरक : बैनेट कोलमैन एण्ड कं० लि०

पूरक विशेषांक : दिसम्बर १९६५ ::

पृष्ठ लगभग २००

'दाम्पत्य -- विशेषांक'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहुँचते-पहुँचते वह नहीं रहा और १९६५ तक पहुँचते-पहुँचते स्थिति भयानक हो गयी है। जिन पाठकोंने स्टीफ़न ज़्वाइगकी आत्मजीवनी 'द वर्ल्ड ऑफ़ येस्टरडे' पढ़ी है, उन्हें उस पुस्तकके २९७ से ३०१ पृष्ठोंपर पहले महायुद्धके बाद जर्मनीमें और कहा जाये कि सारे यूरोपमें पैदा होनेवाली ऐसी ही स्थितिका चित्रण मिलेगा—वही घनघोर अस्वीकार, वही प्रबल अनास्था, वही भयंकर आक्रोश, वही भीषण औद्धत्य, महज़ रस्मों और परम्पराओंको तोड़नेके लिए निषिद्ध पदार्थोंका उपभोग, समलैंगिक यौनाचार—किसी आन्तरिक भूखके कारण नहीं—महज़ इसलिए कि वह बुरा समझा जाता था—वह सब कुछ जिसके लिए हमारे यहाँ भी भूखी पीढ़ी बदनाम है।

मुझे भी पहले अपने पुराने साथियोंकी तरह यही लगा था कि जब हमने कोई युद्ध नहीं लड़ा तो हमारे युवकोंमें वैसी उद्धतता और अनास्था आयी कैसे? मुझे स्वयं यह महज़ विदेशी प्रभाव लगता था। लेकिन जब मैंने इस समस्यापर ज़रा ठण्डे दिलसे विचार किया और इसे निकटसे देखनेका प्रयास किया तो मैंने पाया कि चाहे हमने युद्धकी विभीषिका नहीं देखी (हालाँकि विभाजनके दिनोंमें जो पंजाब या बंगालने देखा, वह किस युद्धकी विभीषिकासे कम था?—घर उजड़ गये, लड़कियोंको तन और मनकी क़ुर्बानी देकर पूरेके पूरे परिवारोंका पालन करना पड़ा, युवकोंने अपने आपको आशा और आश्रयविहीन पाया) फिर पिछले पन्द्रह वर्षोंमें लड़कियाँ आज़ाद हो गयी हैं, ममता अग्रवालकी कहानीसे शब्द उधार लूँ तो कहूँ कि उनकी लुक 'वर्स्टी थ्रस्टी' हो गयी है। 'उनके सौन्दर्यने सामूहिक समानता स्वीकार कर ली है। तेरहसे उन्नीस तककी लड़कियाँ कार्बन कापियों-सी लगती हैं; उनकी दृष्टि निर्भीक, दुस्साहसी और न्योतती-सी लगती है।'....पुराने नेताओं और पुराने माता-पिताओंने युवा लोगोंके सामने जो आदर्श रखे थे, वे स्वयं झुठला दिये (देश और प्रान्तोंकी राजधानियोंमें जाकर मन्त्रियों और धारासभाओंके सदस्योंका जीवन देख लीजिए)...और युवा लोग सब कुछ सहन कर सकते निरन्तर झूठ और मक्कारी और रियाकारी सहन नहीं कर सकते।....फिर इसके अलावा एटम बम चाहे हिरोशिमा और नागासाकीपर गिरा हो, पर उसकी भयानक छाया नयी पौधके दिलों और दिमाग़ोंपर क्या नहीं पड़ी?....इन सब कारणोंसे नयी पीढ़ीके युवा साहित्यकारोंमें यदि हर पुरानेके प्रति घोर असन्तोष और अनास्था है तो कोई हैरतकी बात नहीं—उनके पास वह उम्र और ज्ञान और अध्यात्म नहीं जो सब विघटनकारी स्थितियोंके पार देखने और निरपेक्ष भावसे कर्म करनेकी प्रेरणा देता है।....जैसा कि ज्वाइगने कहा है, प्रति-क्रियामें अतिरेक होता है। हो सकता है इस अतिरेकके कारण सब कुछ जो आज

[शेष पृष्ठ १४७ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...की याद : मुक्तिबोध-स्मृति ८
...शिल्प : श्रीकान्त वर्मा ९
...गायक : छोटेलाल दीक्षित १५
...कवि : नरेन्द्रदेव वर्मा २०
...भेंट :
...हार' पर'''' : रणवीर रांग्रा ७०

...एक भारतीय मूल्यांकन : एक आंग्ल कवि : राजेन्द्र माथुर ३४
...उलझन : ज़िन्दगी और रेतकी समानता : कोवो एबे : महेन्द्र कुलश्रेष्ठ ४२
...री : एक था समाज : एक है कला : मिर्ज़ा इस्माइल बेग ६०
...धनवादसे अमूर्तवाद तक : विजय रैंचन ६४
...जाल मजीद २६
...रेश ८६
...ए एक तसवीर : कैलाश नारद ११०
...सिंह ७८
...सुधा अरोड़ा ९२
...लक्ष्मीकान्त वर्मा ५०
...भेद : अशोक शुक्ल ११८
...देश :
...ताएँ : इन्दुकान्त शुक्ल १२६
...पृष्ठ :
...माल और ख़ानम : प्रस्तोता—अहमद सलीम १२१
...कलीरि रेड्डी १३३

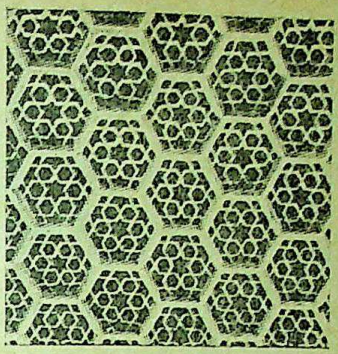

अनुक्रम

■

मुखपृष्ठ :

जितेन्द्र अग्रवाल

■

कविताएँ :

अस्तित्व-बोध : ५ कविताएँ : कैलाश वाजपेयी, श्रीकान्त जोशी, हरीश भादानी, श्रीहर्ष, किरण जैन १४०

एक-एक मनःस्थिति : परमानन्द श्रीवास्तव, जगदीश गुप्त, रवीन्द्र भ्रमर ७५

■

आपके पत्र :

विद्यानिवास मिश्र, उपेन्द्रनाथ अश्क, अमृतराय, शत्रुघ्न लाल, नन्दकिशोर मालवीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लम्बी कविताओं की

याद :
मुक्तिबोध-स्मृति

पिस गया वह भीतरी
औ' बाहरी दो कठिन पाटों बीच,
ऐसी ट्रैजिडी है नीच !!

बावड़ी में वह स्वयं
पागल प्रतीकों में निरन्तर कह रहा
वह कोठरी में किस तरह
अपना गणित करता रहा
औ' मर गया ···

वह सघन झाड़ी के कँटीले
तम विवर में
मरे पक्षी-सा
बिदा ही हो गया
वह ज्योति अनजानी सदा को सो गयी
यह क्यों हुआ !
क्यों यह हुआ !!
मैं ब्रह्मराक्षसका सजल-उर शिष्य
होना चाहता
जिससे कि उसका वह अधूरा कार्य,
उसकी वेदनाका स्रोत
संगत, पूर्ण निष्कर्षों तलक
पहुँचा सकूँ।

गजानन माधव मुक्तिबोध। चित्र : रामकुमार। जन्म : १३ नवम्बर १९१७, शिवपुरी (म० प्र०) में। पक्षाघातका पहला प्रहार : फ़रवरी १९६४। मृत्यु : ११ सितम्बर १९६४। रचनाएँ : 'एक साहित्यिककी डायरी', 'सप्तक-१' में, 'चाँद का मुँह टेढ़ा है',

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रह्मराक्षसका शिष्य

'आत्मचेतस किन्तु इस
व्यक्तित्वमें थी प्राणमय अनबन····
विश्वचेतस वे-बनाव !!
महत्ता के चरण में था
विषादाकुल मन।
मेरा उसीसे उन दिनों होता मिलन यदि
तो व्यथा उसको स्वयं जीकर
बताता मैं उसे उसका स्वयं का मूल्य
उसकी महत्ता।
व उस महत्ता का
हम-सरीखों के लिए उपयोग
उस आन्तरिकता का बताता मैं महत्त्व !!
पिस गया वह भीतरी
और बाहरी दो कठिन पाटों बीच
ऐसी ट्रैजिडी है नीच !'

मेरे मनपर मुक्तिबोधकी आतंक-भरी छाप है और नकामय स्मृतियाँ हैं। मुक्तिबोधको याद करते हुए तक़लीफ़ ती है। मगर कोई दिन नहीं जाता, जब किसी न किसी ाने उनका स्मरण नहीं होता। मुक्तिबोधको भूलना ठिन है।

एक ओर अगर मृत्युके किनारे पड़े हुए मुक्तिबोधके कालको अपने दिमागसे निकाल सकना असम्भव है तो ड़ी और गलियोंमें चप्पलें फटफटाते, किसी भी नुक्कड़की दुकानपर खड़े होकर कड़वी-गरम चायसे ज़िन्दगीके लिए 'रस खींचते' ग्रीक-काय मुक्तिबोधका चित्र मिटा सकना मुश्किल है।

इन दो दृश्योंके बीच मुक्तिबोधका महाजीवन है, महान् कविताएँ हैं, जिन्हें पढ़कर मुझ-जैसे उनकी छायामें उगे कवियोंको ही नहीं आगेकी कई पीढ़ियोंको अपने छोटे होनेका अहसास होता रहेगा। मुक्तिबोधका जीवन हो या साहित्य—किसीसे भी परिचित होना अपने लिए ख़तरेसे ख़ाली नहीं। मुक्तिबोधकी ज़िन्दगी अशान्त करती है, विवेकको झकझोरती है; मुक्तिबोध इस युगके सबसे 'अप्रिय' कवि हैं। मुक्तिबोधने जितना 'अप्रिय' जीवन जिया, उतने ही 'अप्रिय' सत्योंकी रक्षाके लिए काव्य रचा। 'अप्रिय' सत्यकी रक्षाका काव्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रचनेवाले कवि मुक्तिबोधको अपने जीवनमें कोई लोकप्रियता नहीं मिली और आगे भी, कभी भी, शायद नहीं मिलेगी। जिनके मनमें शंकाएँ हैं, जिन्हें अपने प्रश्न बेचैन करते हैं, जिन्हें नहीं मालूम कि 'सही हूँ, या ग़लत हूँ या और कुछ; सत्य हूँ कि मात्र मैं निवेदन-सौन्दर्य', मुक्तिबोधके काव्यमें वे ही अपनत्व-का अनुभव करेंगे और मुक्तिबोध थे भी उन्हींके कवि। मुक्तिबोधका काव्य केवल काव्य नहीं, 'ज्ञान-काव्य' है।

मुक्तिबोधकी अभिलाषा 'ब्रह्मराक्षस' होनेकी थी—

'मैं ब्रह्मराक्षस का सजल-उर शिष्य
होना चाहता
जिससे कि उसका वह अधूरा कार्य
उसकी वेदना का स्रोत
संगत, पूर्ण निष्कर्षों तलक
पहुँचाँ सकूँ।'

और मरनेके बाद मुक्तिबोध सचमुच 'ब्रह्मराक्षस' हो चुके हैं। 'ब्रह्मराक्षस' के रूपमें ही उनकी 'पूजा' की जा रही है—एक ऐसे 'ब्रह्मराक्षस' के रूपमें जिसके 'ब्राह्मण' होनेका पता, देशको, उसके कृतित्वसे नहीं, अन्तिम समयमें 'ब्राह्मणों' का उपचार करानेवाली सरकारसे चला।

०

मेरे साहित्यिक जीवनकी शुरूआत मुक्तिबोधके कारण ही हुई। उन्होंने मुझे जिस तरह ढाला, जिस तरह मेरे 'सुख' से सुखी और दुःखसे बेचैन हुए—उस सबसे मैं, होना भी चाहूँ तो, कभी उऋण नहीं हो सकता।

१९५३ के आखिरी दिनोंमें, नागपुरमें, मुक्तिबोधसे पहली बार मैं मिला था बल्कि यों कहना चाहिए कि उन्हें अपनी कविताएँ दिखानेकी आकांक्षासे उनके पास गया था। मैंने उन दिनों अपनी पढ़ाई स्थगित कर दी थी और साल-डेढ़ सालसे उस तरहकी कविताएँ लिख रहा था जिसे अज्ञानवश अब भी छोटे शहरके प्राध्यापक (शायद बड़े शहरके भी) 'प्रयोगवाद' कहते हैं। कविता लिखनेके लिए सिगरेट और चायकी भी ज़रूरत होती है—यह सोचकर मैंने एक छोटी-सी मास्टरी भी कर ली थी। मैंने दोनों सप्तकोंकी और 'प्रतीक' की कविताएँ पढ़नेके अलावा दो-एक संकलनोंमें अँगरेज़ीके कुछ आधुनिक कवियोंकी कविताएँ पढ़ी थीं और उनके चमत्कारमें आकर कविताएँ लिख रहा था, जिनमें अटपटापन था, शिल्पहीनता थी, और वे शायद कविताएँ भी नहीं थीं, मगर जिन्हें सहानुभूतिकी ज़रूरत थी। इस तरहकी कविताएँ लिखकर मैंने क्या 'जुर्म' कर डाला है, इसका पता मुझे तब चला जब अचानक मैंने अपने चारों ओर एक विरोधका वातावरण पाया। इलाहाबाद और बनारस-जैसे जागरूक साहित्यिक नगरोंमें 'नयी कविता' लिखनेवालोंको जब कविताके लिए 'महाभारत' लड़ना पड़ा, तब छत्तीसगढ़-जैसे बिलकुल सोये हुए अंचलमें, जहाँ छायावाद भी अभी नहीं पहुँचा था, द्विवेदी युग ही चल रहा था, किसी नये कविके लिए कैसा जीवन-मरणका संकट उत्पन्न हो सकता, समझ सकना मुश्किल नहीं। इस दमनसे उत्तेजित और कुछ अपनी कविताओंके लिए मान्यताकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...करता हुआ मैं मुक्तिबोधसे मिला था। ...उनके पास लेकर गये थे रामकृष्ण ...वास्तव, जो मुक्तिबोधके प्रियपात्र थे और ...भी दोस्त थे। जैसे किसी अपीलके लिए ...मुवक्किलके हाथमें उसके मुक़दमेके ...ज़ात होते हैं, वैसे ही मेरे कन्धेपर पड़े ...झोलेमें मेरी कविताएँ थीं और दोपहरके ...एक पेड़के नीचे मैं मुक्तिबोधके दफ़्तरके ...क्तिबोध उन दिनों मध्यप्रदेश सूचना-...न विभागमें काम करते थे) क़रीब खड़ा ...थोड़ी देर बाद रामकृष्ण श्रीवास्तव एक ...क़दके, तीखे नक़्शवाले सज्जनको साथ ...आये। हुलियेसे मैंने समझ लिया, यही ...बोध हैं।

उन्होंने भी पेड़के नीचे एक कमसिन ...को खड़ा देखा और पहचान लिया। ...की कविताओंके बारेमें रामकृष्णजीने ...ता है।' उन्होंने मुझसे कहा और चायके ...एक छोटी-सी झोपड़ीनुमा होटलमें ले ...जहाँ वह चाय पीनेके लिए दिनमें शायद ...बार आया करते थे। मुझे पहली ही ...में अनुभव हुआ मुक्तिबोध उत्पीड़ित ...हैं और उनका चेहरा मार खाया हुआ ...। मैं उनके पास 'साहित्य-चर्चा'की इच्छा ...कर गया था, मगर उस आध घण्टेमें उन्होंने ...हित्यकी कोई बात नहीं की, सारा समय ...नौकरी, पढ़ाई और माँ-बापके बारेमें ...रहे। मैंने पाया उनके नेत्र अस्थिर और ...हैं और इधर-उधर चारों ओर घूमते ...हैं। लोगोंसे घिरे होनेपर वह सतर्क ...बात करते हैं। मुझे वह आवश्यकतासे अधिक सतर्क लगे। बादमें भी मैंने देखा दफ़्तरोंके वातावरणमें, या सभाओं-गोष्ठियोंमें जाकर मुक्तिबोध आत्मसजग हो जाते हैं, जैसे 'घिरा हुआ हूँ या सुरक्षित हूँ' का निर्णय-कर पाना कठिन हो रहा हो। मुक्तिबोध उन दिनों सचमुच घिरे हुए थे—ऐसे साहित्यिकोंसे जो साहित्यिकसे अधिक सरकारी नेताओंके दलाल थे और मुक्तिबोधपर उनकी खास नज़र होती थी। यह नहीं कि मुक्तिबोधने किसीको कोई नुकसान पहुँचाया हो—मुक्ति-बोध नुकसान पहुँचानेमें पूरी तरह असमर्थ व्यक्ति थे—बल्कि यह कि मुक्तिबोधके मौनमें एक ऐसी बौद्धिकता थी, जिससे पाखण्ड-भरे छायावादी व्यक्तित्वका अनायास ही चिढ़ जाना स्वाभाविक था। मुक्तिबोध अपनेसे चिढ़े हुए ऐसे ही साहित्यिकोंसे घिरे हुए थे। उनके मनमें जबलपुरकी कटु स्मृतियाँ थीं जहाँ उनकी गम्भीरता, उनकी शिक्षा, और उनकी भद्रता, जबलपुरके नशाप्रेमी साहित्यकारोंके बीच उपहासका विषय बनी थी। छायावादोत्तर काव्यके एक 'क्रान्तिदूत'ने (उनका सम्मान करनेके लिए नहीं, बल्कि मखौल उड़ानेके लिए) उन्हें 'सुकरात'का नाम दे रखा था। मगर नागपुरमें उन्हें जो विरोध मिला, वह साहित्यिक नहीं, राजनैतिक था। सब तर्क हार जायें तब अपने विरोधीको कॅम्युनिस्ट करार दे देना चाहिए। पराजित तर्कका यह एकमात्र तर्क होता है। विचारोंसे मार्क्सवादी मुक्तिबोधकी दोस्ती तो वैसे भी एक अर्सेसे कॅम्युनिस्ट पार्टीके लोगोंसे थी और वह 'हंस' और प्रगतिशील लेखक संघसे सम्बद्ध रह चुके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थे। ऐसे इतिहासवाला व्यक्ति अगर छोटी-सी सरकारी नौकरी कर बड़ा-सा परिवार पाल रहा हो (पाल न पा रहा हो) तो उसे कैसा 'उम्दा' नुकसान पहुँचाया जा सकता है, यह, विचार-स्वाधीनताके नामपर साम्यवादका विरोध करनेके बावजूद स्वयं दूसरोंकी विचार-स्वाधीनता रौंदनेवाले साहित्यकार अच्छी तरह जानते हैं—और नागपुरके सरकारी कृपा-पात्र लेखकोंने मुक्तिबोधके साथ यही किया था; उनके चारों ओर एक असुरक्षाका वातावरण बुन दिया था।

'शामको विद्रोही'के मकानपर मिलिए।' उन्होंने मुझसे कहा। जीवन लाल वर्मा 'विद्रोही', नागपुरमें मुक्तिबोधके दूसरे साहित्यिक मित्र थे। एक तरहसे रामकृष्ण श्रीवास्तव और 'विद्रोही' मुक्तिबोधके परिवारके सदस्य हो गये थे।

मुक्तिबोधने उम्मीद नहीं की होगी कि मैंने इतनी कविताएँ लिखी होंगी और मैंने उम्मीद नहीं की थी कि वह मेरी कविताएँ इतने ध्यानसे सुनेंगे। मुक्तिबोध मेरे लिए प्रामाणिक कवि ही नहीं, प्रामाणिक आलोचक भी थे। नयी कविता पढ़नेके बाद सबसे पहले वितृष्णा होती है छायावादसे। और छायावादको फ़िज़ूल मान लेनेके बाद, मेरी निगाहमें केवल 'सप्तकों'के कवि ही कवि रह गये थे। मैं उन्हें ही, ढूँढ़-ढूँढ़कर पढ़ता था, उन्हींके बारेमें जाननेकी जिज्ञासा रखता था, उन्हींका स्वर मेरे लिए प्रामाणिक स्वर था।

जैसे किसी अजनबी शहरमें अचानक किसी परिचितका स्वर सुनायी पड़ जाय—मेरी कविताएँ सुनकर मुक्तिबोधपर वैसी ही प्रतिक्रिया हुई। बादमें मैंने पढ़नेके लिए उन्हें अपनी और भी कविताएँ दीं। 'कहाँ विलासपुर, कहाँ नयी कविता!' वह बार-बार कहते थे। शायद यही वह प्रमाण-पत्र था, जो मुझे उनसे मिला। और भी लोग दूसरोंमें दिलचस्पी लेते हैं, दूसरोंके बारेमें फ़िक्र करते हैं। मगर उसकी एक सीमा होती है। मुक्तिबोधके साथ ऐसी कोई सीमा नहीं थी। लोग जब किसी औरमें दिलचस्पी लेते हैं तब उसके पीछे जिज्ञासा होती है या फिर एक जगह जाकर वह दिखावा लगने लगता है। दूसरे लोग मुक्तिबोधके लिए 'जानकारी'की 'चीज़ें' नहीं थे, अपने लोग थे, जिन्हें वह 'मेरे लोग' कहना पसन्द करते थे। उनके करीब बैठकर मुक्तिबोध अपनेको अधिक जीवित अनुभव करते थे।

एकदम नवयुवकोंके साथ और भी। उन्हें अपना कैशोर्य याद आता था, अपने साहित्यिक संघर्ष (जो अभी चुका नहीं था) की शुरूआत याद आती थी। यह याद उन्हें ताज़ा बना देती थी। कविताएँ मुक्तिबोधके लिए केवल चित्र-मालाएँ नहीं थीं, बल्कि मनुष्यकी जीवनगाथा थीं। कविता उनके लिए न तो 'हथियार' थी और न ही कोरी 'कीमियागिरी'। 'मनुष्यकी वाणी' होनेके कारण वह उनके लिए एक ऐसी सम्मानित अनुभूति थी, जिसका उन्होंने जीवन-भर आदर किया। अपनेसे पहलेके या बादके या साथके कवियोंके प्रति जो आदर मुक्तिबोधके मनमें था, वह जितनी सहानुभूतिसे दूसरोंकी रचनाएँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...खते, बल्कि अगर आप दूसरोंके प्रति ...र्भय' हो रहे हों तो वह मन ही मन कैसे ...से रुष्ट होते थे, यह मेरे लिए एक अनोखा ...नुभव था!

उन तीन-चार दिनोंमें धीरे-धीरे यह ...होने लगा कि मुक्तिबोध न केवल एक ...कवि हैं बल्कि बहुत बड़े आदमी हैं, ...हें स्वयं भी यह नहीं मालूम कि मैं बड़ा ...। किसी व्यक्तिका आतंक क्या होता है, ...मैंने मुक्तिबोधसे मिलकर जाना। मगर ...उस तरहका आतंक नहीं था, जो दूसरों-...प्रतिभाको नष्ट करता है, उसे पनपनेका ...सर नहीं देता। यह एक दूसरे प्रकारका ...तंक था, जो दूसरोंको विशिष्ट बनाता है। जो व्यक्ति जितने ही मानवीय संघर्षोंसे ...रता है, उसमें उतनी ही करुणा होती है। ...की नौकरीका छूटना, किसीका ज़िन्दगीके ...ी क्षेत्रमें, अपमानित होना मुक्तिबोधको ...लित और विचलित करता था। वह ...न हो उठते थे। मगर सतही और जल्द-...ीमें निकाले गये नतीजोंपर नहीं पहुँचते ...। कोई भी बात उनके लिए केवल बात ...हीं थी, अथाह समुद्र थी जिसकी गहराईमें ...तरकर वह बात करते थे। अपनी कविताकी ...रह अपनी बातचीतमें भी अपने 'आत्मपरक' ...नुभवोंकी 'विश्व-व्याख्या' करते और 'कारण-...र्य' सम्बन्धोंकी तलाश करते हुए वह उसमें ...न्तनका एक अनोखा स्वाद पैदा करते थे। ...नकी अभिव्यक्ति इसी कारण जटिल थी, ...किन कविता और बातचीत दोनों जगह ...नुभूतिका आवेग इस जटिलताको लाँघ जाता था और उन्हें प्रेषणीय बनाता था। लेकिन तब भी, हर बार यही लगता था कि और भी बहुत कुछ है—

अपने मस्तिष्कके पीछे अकेले में
गहरे अकेले में
न कह-सके – जाने-वाले अनुभवोंके ढेर का
भयंकर विशालाकार प्रतिरूप
दीखता पहाड़····
स्याह।'

मुक्तिबोध उन दिनों नयी शुक्रवारीके एक कच्चे मकानमें रहते थे। उनके घर जानेके लिए पक्की सड़कसे उतरकर तंग गलीमें घुसना पड़ता था। मधुमक्खियोंके छतोंकी तरह लटके हुए मकानोंकी सघन बस्तीमें मुक्तिबोध अपनी 'गरवीली ग़रीबी' लिए रहते थे। छोटे-से मकानका कच्चा बरामदा था, वही मुक्तिबोधका 'ड्राइंगरूम' था, जिसपर बैठकर अपने इने-गिने दोस्तोंको कविताएँ सुनाते या सुनते थे। एक ओर पी हुई बीड़ियोंका ढेर होता था दूसरी ओर लोटेमें पानी। मुक्तिबोध जितनी बीड़ियाँ पीते थे, उतनी ही चाय और उतना ही पानी। जैसे उनकी कविता लिखनेकी शक्तिका कोई अन्त न था वैसे ही उनकी चाय पीते जानेकी क्षमता अनन्त थी। दिनमें पचासों कप चाय। और बहसके दौरान हर दो मिनिटपर बीड़ी, लम्बी कविताकी तरह जल्द न खत्म होनेवाली बीड़ी। सिगरेटमें उन्हें स्वाद नहीं था। दोस्तोंके कारण अगर कभी सिगरेट पी भी ली तो बेमज़ा; सिगरेटको उलट-पुलट देखते थे। अच्छीसे अच्छी सिगरेट उनके लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेकार थी। सिगरेटमें वह तेज़ी कहाँ आ सकती थी, जो इन लम्बी-लम्बी बीड़ियोंमें है।

मुक्तिबोध सही अर्थोंमें सर्वहारा थे। यह वह जानते भी थे। और लोगोंको सर्वहारासे जुड़नेके लिए प्रयत्न करना पड़ता है। मुक्तिबोधको ऐसा कोई प्रयत्न नहीं करना पड़ा। वे उन्हीं लोगोंके—प्रायमरी स्कूलके मास्टरों, ग़रीब पत्रकारों, 'मराठों', टटपुँजियोंके—बीच आत्मीयताका अनुभव करते थे। उन्होंने इस वर्गको नाम दे रखा था: निम्नमध्यवर्गीय चेतना', आगे चलकर जिसके आधारपर उन्होंने हिन्दीकी नयी कविताकी व्याख्या की और एक नये सौन्दर्य-शास्त्रकी रचना की।

मुक्तिबोध जन्मसे ग़रीब नहीं थे; अच्छे खाते-पीते परिवारके थे। मगर अपने विवाहके मामलेमें, शुरू जवानीमें ही, अपने परिवारसे झगड़कर, विद्रोह कर, और अपने लिए संघर्ष और ग़रीबीका जीवन चुनकर उन्होंने अपनेको 'सम्पन्नता' के कई अभिशापोंसे मुक्त कर लिया था। औरोंको संघर्ष तोड़ता है, मुक्तिबोधको संघर्षने और मज़बूत कर दिया था। वह ज़िन्दगीमें किसी प्रकारका समझौता करनेको तैयार नहीं थे। लेकिन उनके व्यक्तित्वमें झूठी अकड़ नहीं थी। अत्यन्त संवेदनशील, सहृदय मुक्तिबोधमें एक ऐसी विनयशीलता थी जो अपने संघर्षसे उबरकर सबके संघर्षका योद्धा बन जानेवाले व्यक्तिको प्राप्त होती है।

रातके अँधेरेमें, दो-एक दोस्तोंके साथ, घरसे निकलकर टहलते हुए जुम्मा टैंकको तरफ़ निकल जाया करते थे। चाय उनकी सबसे बड़ी ऐश थी और जुम्मा टैंक उनकी एकमात्र सैर! गलीके चौरास्तेपर एक छोटी-सी दूकानसे एक बण्डल बीड़ी उधार लेकर नयी कविता, मार्क्सवादी आलोचना और मध्ययुगके सन्त कवियोंको अपने विचारोंमें गूँथते हुए लम्बे-लम्बे वाक्योंमें अपने जटिल विचारोंको पिरोते हुए मुक्तिबोध सड़कोंपर जिस तरह चलते थे, लगता था वह कभी भी नहीं थकेंगे। काम करते जानेकी, न थकनेकी उनमें असाधारण 'प्रतिभा' थी। उनकी बौद्धिक क्षमता किसीको भी आश्चर्यमें डाल सकती थी।

बीच-बीचमें उन्हें महसूस होता कि वह लगातार बोले जा रहे हैं, तब अपने विचारोंके समापनका उनका तरीका होता: 'समझे, मालक।' मगर समाज और साहित्यकी ऐतिहासिक गुत्थियोंको अपने बुद्धि-कौशलसे आसानीसे खोलते चलनेवाले मुक्तिबोधको छोटी-छोटी बातें समझ नहीं आती थीं, जैसे जालसाज़ीकी, गुटबन्दीकी, अखाड़ेबाज़ीकी। उनपर विस्मय करते हुए वह कहते थे, 'ऐसा क्या पार्टनर।' वह समानधर्मा कवियोंके गुटकी नहीं, जातिकी, विश्वकी कल्पना करते थे। 'मे अवर ट्राइब इनक्रीज़।' यह वह दाद थी जो अपनी कविताएँ सुनानेपर मुझे उनसे मिली।

तालाबके किनारे बैठकर रोमैण्टिक हो जाना स्वाभाविक है। मुक्तिबोध दूसरी तरहके रोमैण्टिक थे। उनके पास प्रेम-कथाएँ नहीं थीं, न सस्ती भावुकता थी। उनके पास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविताओंकी याद थी, प्रकृतिकी स्मृतियाँ थीं। विशेषता थी। वह कहीं भी हों, लगता था और उनकी प्रकृति भी, जैसा कि उनकी किसी बड़े सन्दर्भसे जुड़े हुए हैं। उनका हर कविताओंसे ही स्पष्ट है, और कवियोंकी प्रकृतिसे अनुभव किसी महानुभवसे जाकर जुड़ जाता बिलकुल अलग है, अजीबोग़रीब है। पेड़ोंमें था। चाहे वह जुम्मा टैंक हो या टेकड़ी ख़ास उनका मनपसन्द पेड़ था और पक्षियोंमें मुक्तिबोधके लिए वे केवल प्रसंग थे। सन्दर्भ पसन्द देवताओंमें, देव-प्रतिमाओंमें अगर उन्हें था वह महाजीवन जिससे मुक्तिबोध एक सबसे प्रिय था तो 'भैरों'। यह विशालता, इतिहासज्ञ, एक पुरातत्त्ववेत्ता, और एक यह विश्व-बोध जो अकसर कालातीत हो वैज्ञानिककी तरह जूझ रहे थे।

[क्रमशः]

■ ■

आत्म-पीड़ाके गायक

छोटेलाल दीक्षित

मुक्तिबोध आजकी पीढ़ीके प्रतिभाशाली, ईमानदार, मानवतावादी, आत्मान्वेषी, जीवनको कलामें प्रतिष्ठित करनेवाले महान् कवि हैं। उनके काव्यकी महत्त्वपूर्ण विशेषता है; ईमानदारी और मानवतावादी दृष्टिकोण। मुक्तिबोधका काव्य मानवतावादी मात्र इस अर्थमें नहीं है कि उनके काव्यमें मनुष्यके प्रति दया और सहानुभूतिके भाव मिलते हैं वरन् वह मानवतावादी इस अर्थमें है कि उसमें आजके मनुष्यकी व्याकुलता, घुटन, छटपटाहटका सच्चा चित्र प्रस्तुत किया गया है तथा उसकी मुक्तिके हेतु परिस्थितियोंके निर्माणके लिए क्रान्तिकारी संघर्षके प्रति विश्वासके साथ नव-निर्माणकी कामना व्यक्त की गयी है। वे आजकी पीढ़ीके सबसे ईमानदार कवि हैं, क्योंकि वे जीवनके माध्यमसे कविताको देखते हैं। उनकी रचनाओंमें कहीं कृत्रिमता अथवा छल नहीं है। सम्पूर्ण रचनाएँ आत्मानुभवोंका उद्घाटन हैं, आत्म-कथ्य हैं। वे अनुभूत वास्तव-

का अनादर नहीं करना चाहते, चीज़ोंको उनके सही नामसे पुकारना चाहते हैं। नामवर सिंहके शब्दोंमें वे कविताको अलगसे किसी साधनाकी चीज़ नहीं बल्कि जीवनकी जटिल क्रियाका ही एक सहज अंग मानते हैं।

नयी कविताका सबसे बड़ा दोष है अनुभूत सत्यका अनादर। आजका कवि जिसको भोगता है, उसको व्यक्त करनेसे कतराता है, क्योंकि उसमें उसे हीनताका अनुभव होता है। मुक्तिबोधने निम्न मध्यवर्गीय जीवनकी घुटन, छटपटाहट, व्याकुलता, हीनताको निर्ममता और सचाईके साथ उद्घाटित किया। आजका मनुष्य अपने जीवनका बृहत् अंश व्यवहार-क्षेत्रको देता है। उसका मूल नियम स्वार्थ है, जिसके हेतु समझौता करना पड़ता है। अपनेको संसारके बीच खपाना पड़ता है। संसारके साथ सामंजस्य करनेमें निजी-अनुभवोंको छिपाना पड़ता है। आत्म-शिशुकी हत्या करनी पड़ती है :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि आत्मज सत्य यहाँ रक्खे झरने के तट
अनुभव-शिशु की रक्षा होगी।

आजकी यान्त्रिक सभ्यतामें सुविधावादी व्यक्तित्व ही पनप सकता है। सुविधावादी व्यक्ति निजी अनुभवोंका, अन्तर्जीवनकी मूल्यवान् संवेदनाओंका, विवेकसंगत प्रयोग नहीं कर सकता। ऐसे व्यक्ति सतही जीवन भोगते हैं। उनके सत्य सतही होते हैं जिन्हें काल-पीड़ित उपेक्षित सत्यकी संज्ञा दी जा सकती है, क्योंकि सत्यके भीतरका जो सत्य है वह अपने ही अनुभवसे प्राप्त किया जा सकता है। सुविधावादी व्यक्ति उसकी उपेक्षा करता है। सभ्यता, संस्कृति, धर्म, नैतिकता और आदर्श-के बुर्जुआ मानदण्ड मानवतावादी विचारधारा-के विरुद्ध हैं। इनकी दुर्गन्ध आत्माको सड़ा रही है क्योंकि निजी अनुभवोंको स्वच्छ वायु उसे मिल नहीं पाती। निजी अनुभवोंको स्वीकारनेका ख़तरा इसलिए नहीं लिया जा सकता, क्योंकि 'आउटसाइडर' बनना पड़ेगा। घिसे-पिटे विचारोंकी उपेक्षा करके मात्र जीवनके मूल्यको स्वीकारना पड़ेगा, तुच्छतासे भागकर अधिक जीवनी शक्तिकी इच्छासे युक्त होना पड़ेगा। और इस सबके लिए स्वयं अपनेसे युद्ध करना पड़ेगा :

हमें तो डर है कि
ख़तरा उठाया तो
मानसिक यन्त्र-सी बनी हुई आत्मा
आदतन बने हुए अकृतन भाव-चित्र
विचार चरित्र ही
टूट फूट जायेंगे।

व्यक्ति संसारके साथ समझौता करके अपने वास्तविक रूपको छिपा लेता है। वह छल-मानोंसे असत्यको सत्य रूपमें प्रतिष्ठित करता है। अहंकी तृप्तिके लिए वास्तविकता-से दूर भागता है। उसकी बुद्धिपर जब स्वार्थ-का चश्मा चढ़ जाता है तब उसे असत्य और भी स्पष्ट, सत्यकी तरह दिखाई देने लगता है, लेकिन बुद्धिकी आँखें उसे भीतरी तौपर जान तो लेती ही हैं। मुक्तिबोधकी 'दिमागी गुहान्धकारका ओरांगउटांग' कवितामें इस तथ्यकी सहज अभिव्यक्ति हुई है :

सत्य के बहाने
स्वयं को प्रस्थापित करना।
अहम् को तथ्य के बहाने
मेरी जीभ एकाएक तालू से चिपकती
अक्ल क्षार-युक्त सी होती है—
और मेरी आँखें उन बहस करनेवालों के
कपड़ों में छिपी हुई
सघन रहस्यमय लम्बी पूँछ देखती।

असत्यसे आवृत मनुष्यके सुविधावादी व्यक्तित्व-को देख संवेदनशील कविकी आत्मा तड़-पती है :

यह भीतर की ज़िन्दगी नहाती रहती है
हिय के विक्षोभों के ख़ूनी फ़व्वारों में।

बुर्जुआवर्गकी सामंजस्यकी गोलियोंने हमारी आत्माको घायल कर दिया है। उसे क़ैद कर लिया है जिससे हमारी दुनिया बंजर बन गयी है। हमारी ज़िन्दगी उजड़ गयी है। आत्माको मुक्ति दिलानेवाले कवि, कलाकार, विद्वान्, विचारक सभी उसी वर्गमें सम्मिलित हो गये हैं। उसी जुलूसमें चल रहे हैं। सभी चुप हैं। क्योंकि उन्हें जुलूससे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...होनेमें भय है। सुविधाएँ कहाँ मिलेंगी? जो मानवताको प्रेम करती है, मानवमात्रकी सेवाके लिए उत्साहवर्धक योजनाएँ बनाता है। व्यक्तिविशेषसे प्रेम नहीं करता और अच्छेसे अच्छे व्यक्तिसे, जो उसके सम्पर्कमें आता है, चौबीस घण्टेके भीतर घृणा करने लगता है। मुक्तिबोधकी 'चाँदका मुँह टेढ़ा है' रचनामें बूढ़ी माँके ज़िन्दगीके अनुभव बुर्जुआ वर्गके मानवमात्रकी एकताके प्रचारपर कितने बड़े व्यंग्य हैं :

बूढ़ी माँ के झुर्रीदार
चेहरे पर छाये हुए
आँखों में डूबे हुए
ज़िन्दगी के तजुर्बात
बोलते हैं साथ-साथ
जैसे तुम भी आदमी
वैसे मैं भी आदमी,

कविको स्वार्थी, सामंजस्योंके समुद्रके स्याह जलकी भयानक गुफामें बन्द घायल आत्माकी मुक्तिकी आशा निरन्तर बनी रही है। उसे मनुष्यकी शक्तिपर विश्वास है। यही आशा और विश्वास मुक्तिबोधकी कविताका प्राण-तत्त्व है। सचाईकी आँख निकालनेवाले खूँख़ार, बा-हथियार, बख़्तरबन्द समझौतोंके बीचसे भी कहीं कोई निकल जाता है, जो आत्माको मुक्त करायेगा :

महसूस होता है कि वह बेनाम
बेमालूम दर्दों के इलाक़े में
(सचाई के सुनहले तेज़ अक्सों के धुँधलके में)
मुहैया कर रहा लश्कर,
हमारी हार का बदला चुकाने आयेगा
संकल्प-धर्मा चेतना का रक्तप्लावित स्वर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे ही हृदय का गुप्त स्वर्णाक्षर
प्रकट होकर विकट हो जायगा ??

मुक्तिबोधको 'एक स्वप्नकथा' कवितामें शोषण-प्रधान चेतनाके अथाह काले जलसे युक्त समुद्रमें डूबी हुई अर्थहीन आत्मा और मृत सभ्यता जहाँ पीड़ित करती है, वहीं उन्हें आत्माको अर्थ देनेवाला, सभ्यताको जीवित करनेवाला, उस समुद्री अँधेरेमें प्रकाश-दीप आता भी दिखाई देता है। मुक्तिबोधकी यही आशा, मानवकी शक्तिके प्रति दृढ़ आस्था उन्हें ऐसे कवि-व्यक्तित्वके निर्माणके लिए प्रेरित करती है, जो आत्मानुभवोंको सच्ची अभिव्यक्ति दे सके। कवि युगका सबसे अधिक संवेदनशील व्यक्ति होता है। यदि वह आत्मानुभूतिको सचाईके साथ व्यक्त नहीं करता तो अपनी पीढ़ी और आगे आनेवाली पीढ़ीके साथ विश्वासघात करता है। वह भविष्यकी पीढ़ीको अपना और अपने युगका हिसाब नहीं दे सकता। मुक्तिबोधने कविको 'ओ काव्यात्मन् फणिधर' कवितामें युगकी सच्ची चेतनाका संरक्षक माना है। सशक्त काव्य-व्यक्तित्व वास्तविक सत्य अथवा आत्मानुभवोंकी स्वार्थ और सुविधामें बँधकर छिपा दी गयी, ऐसी मणियोंको खोजता है, जिनमें युगको प्रकाशित करनेकी क्षमता होती है। आत्मज सत्यकी ये मणियाँ भावी पीढ़ीको रास्ता दिखाती हैं। उसका निर्माण करती हैं :

लहराओ, लहराओ, नागात्मन् कविताओ
झाड़ियों छिपो,
उन श्याम झुरमुटों-तले कई
मिल जाय कहीं
वे फेंके गये रत्न, ऐसे
जो बहुत असुविधा कारक थे,
इसलिए कि उनके किरण-सूत्र से होता था
पट-परिवर्तन, यवनिका-पतन
मन में जग में ?
ओ काव्यात्मन् फणिधर, अपना फण
फैलाओ।
मणिगण को धारण करो, उन्हें
वाल्मीक-गुहा में ले जाओ
एकत्र करो।

हमारी पीढ़ी संक्रान्ति कालसे गुजर रही है। प्राचीन मानव-मूल्यों और आदर्शोंके प्रति अनास्था जग गयी है, उनका विघटन हो चुका है। नयी पीढ़ी नये आदर्शों एवं मानव-मूल्योंका सृजन नहीं कर सकी है। उसकी स्थिति शून्यमें है। मुक्तिबोधने 'एक साहित्यिककी डायरी' में लिखा है : 'जीवनका व्यापक अनुशासक-सत्य मर गया है और नया तो केवल भ्रूण है।" प्राचीन मूल्योंका विघटन मंगलका सूचक है क्योंकि उनका विघटन भावी मानव, मानव-मूल्योंके निर्माणकी सूचना देता है।

मुक्तिबोधकी कविताओंका परिप्रेक्ष्य (कैनवेस) बड़ा व्यापक है। सम्भवतः वे इस दृष्टिसे आजकी पीढ़ीके अकेले कवि हैं। मुक्तिबोधने क्षणकी मनःस्थितिको व्यंजित करनेवाली कविताओंका, जिनकी नयी कवितामें बहुलता है, सृजन नहीं किया। उन्होंने लम्बी कविताएँ लिखीं जो एक बैठकमें नहीं लिखी गयी हैं और अनेक बार लिखे जानेके बाद ही यह रूप प्राप्त कर सकी हैं। मुक्तिबोधकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लम्बी कविताएँ उन लोगोंके लिए चुनौती है जो कहता है कि आधुनिक भाव-बोधकी लम्बी कविताएँ लिखी ही नहीं जा सकतीं। मुक्तिबोधकी इन लम्बी कविताओंमें गहन अनुभूतिके साथ चेतन-विचार प्रक्रिया चलती है। उनके चिन्तन-प्रधान प्रखर विचार सहज रूपमें प्रतीकों तथा बिम्बोंके माध्यमसे मूर्त रूप ग्रहण करते हैं।

मुक्तिबोधके काव्यमें वैयक्तिक अनुभवोंकी प्रधानता है, लेकिन वैयक्तिक अनुभवोंका परिप्रेक्ष्य इतना व्यापक है कि वे सबके अनुभव बन गये हैं। शमशेरके शब्दोंमें, मुक्तिबोधकी कविता हमारी बातें हमींको सुनाती है और हम अपनेको एकदम चकित होकर देखते हैं और पहलेसे और भी अधिक पहचानने लगते हैं। मुक्तिबोध आत्मान्वेषी कवि हैं। अपने ही अंदर प्रवेश कर सत्यके सच्चे स्वरूपका उद्घाटन उनकी कविताकी महत्त्वपूर्ण विशेषता है। मुक्तिबोधकी अधिकांश रचनाएँ संवादके रूपमें चलती हैं जिसमें वे अपने किसी मित्रसे बातचीत करते हुए, वस्तु-सत्यके विभिन्न तहोंको उद्घाटित करते चलते हैं। यह मित्र और कोई नहीं उनका आत्म-चैतन्य ही है। उनका मित्र उनके भीतरके असामान्यको उकसा देता है, जिसके प्रकाशमें सत्यके विभिन्न पर्त स्पष्ट दिखाई देने लगते हैं। मुक्तिबोधकी कविताएँ मात्र वैयक्तिक प्रेमानुभवोंका प्रक्षेपण नहीं हैं। उनकी रचनाओंमें व्यापक जीवनकी विभिन्न बाह्य या आन्तरिक घटनाओंकी प्रतिक्रियासे निर्मित अनुभवोंको व्यक्त किया गया है इसीलिए उनके निजी अनुभव सबके अनुभव बन गये हैं।

मुक्तिबोधकी रचनाओंमें चेतनाको झकझोर देनेवाले आत्म-संघर्षका चित्रण है। वे भीषण प्रज्वलित अग्निके बीचसे चलनेवाली मनोदशाको व्यक्त करते हैं। इसके लिए वे विशाल, भयानक, दहला देनेवाली फ़ैण्टेसीकी सर्जना बड़ी बारीकीसे करते हैं। कभी-कभी तो ऐसा प्रतीत होता है कि कवि फ़ैण्टेसीकी सर्जनामें इतना तल्लीन हो गया है कि वह अपने कथ्य और विचारोंको भूल गया है, लेकिन भयानक फ़ैण्टेसीकी सजीव सर्जना करते हुए भी विचारोंका सूत्र कहीं टूटता नहीं है। 'ब्रह्मराक्षस' और 'अँधेरेमें' कविताएँ उनकी भयानक फ़ैण्टेसीकी सृजन-क्षमताका महत्त्वपूर्ण उदाहरण हैं।

मुक्तिबोधने भयानक फ़ैण्टेसी ब्रह्मराक्षसकी रचनामें, बन्दूक़, गोली, सिपाही, गुहा, पर्वत, चट्टान, बियाबान, वन, जलप्रपात, बावड़ी, बरगद, स्याह जलसे युक्त समुद्र आदिको प्रतीकके रूपमें गृहीत किया है जो सच्चे विचारोंकी प्रखरताको सही अभिव्यक्ति देते हैं।

मुक्तिबोध आजकी पीढ़ीके अकेले कवि हैं जिन्होंने निरालाकी मानवतावादी विचारधाराको आगे बढ़ाया। विचारोंकी जैसी गम्भीरता और चिन्तनकी प्रखरताके साथ ओजस्विता निरालाके काव्यमें मिलती है, वैसी ही और उससे भी अधिक मुक्तिबोधके काव्यमें है। मुक्तिबोधकी रचनाओंकी अपनी निजी शैली है। उन्होंने अन्तश्चेतनाके भीषण झंझावातोंको जिस शैलीमें व्यक्त किया है; उन्हें उसी शैलीमें व्यक्त ही किया जा सकता है, उनके लिए दूसरी शैली अनुपयुक्त होगी। ■■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तर्विरोधोंके कवि

—नरेन्द्रदेव वर्मा

मुक्तिबोधका काव्य व्यक्तिवाद और आत्मवादके संघर्षकी सुदीर्घ कथा है। इस संघर्षको वे अन्त तक नहीं सुलझा सके हैं। आत्मा और अहम्का द्वन्द्व उनकी काव्य-सृष्टिमें द्वैत-भावनाका अभिनिवेश करता है। वस्तुतः अहम् और आत्मन्के द्वन्द्वका परिहार एक सशक्त व्यक्तित्वके माध्यमसे हो सकता है। किन्तु मुक्तिबोध व्यक्तित्वके 'खण्डहरों' की बातें करते हैं। अहम् और आत्मन् उनके व्यक्तित्वके दो छोर हैं और इस अन्तरालमें कविकी चेतनाका आलोड़न होता है। वे काव्यचेतनाके माध्यमसे इस अन्तरालको भर देना चाहते हैं। उनका प्रयास सर्वथा असफल नहीं कहा जा सकता। काव्य-साधनाके अन्तर्गत उनके जीवनमें कुछ ऐसे क्षण भी आते हैं जब उनके व्यक्तित्वमें आत्मन् और अहम्में समझौता हो जाता है। ये ऐसे क्षण हैं जब उनका व्यक्तित्व अथाह और अनन्त सागरकी भाँति शान्त हो जाता है तथा जब विक्षोभकी ऊँची-नीची तरंगें नहीं उठतीं। किन्तु दूसरे ही क्षण उनका अन्तर्विरोध जाग उठता है। और मुक्तिबोधका कवि पुनः उन्हींके गीत गाने लगता है।

यह बड़ी करुण स्थिति है। काव्यचेतनाका द्विधाग्रस्त प्रवाह उनके अन्तस्को सदैव विचलित और विक्षुब्ध करता रहता है। अहंवादी प्रवृत्तियोंको प्रखरता कविको नहीं भाती, वह इन्हें शुभ नहीं समझता तथा इनका त्याग करना चाहता है। वह उन गीतोंको नहीं गाना चाहता जो व्यक्तित्वके विघटनसे उत्पन्न हुए हैं तथा जिनमें अन्तरात्माका अन्धापन और भटकाव भरा हुआ है। कवि जानता है कि अन्तश्चेतनाका ब्रह्मराक्षस उसे पूरी तरहसे दबोचे हुए है। अन्तश्चेतना कविको अपने ही भयानक गीतोंको गानेका आग्रह कर रही है। हताशा और घुटनसे भरे इन गीतोंसे कवि मुक्त होना चाहता है क्योंकि वह जानता है कि इनसे उसका अन्तर्द्वन्द्व और भी तीखा बनता है:

ये अकेले गीत, पत्थर गीत, हिम के गीत
अन्धी गुफा के गीत
बेचैन भूतों के व्यथित के स्वप्न से वे गीत

कुण्ठाओं और वर्जनाओंकी अन्धकारमयी गुहासे निकले इन गीतोंकी स्वर-लहरियोंसे कविके हृदयमें विकलताका संचार होता है। ऐसे गीत कविको आवरणरहित करते हुए उसके खण्डित व्यक्तित्वको प्रकाशित कर देते हैं। इसलिए कवि आत्मन्की ओर उन्मुख होता है। उसे आशा है कि आत्मन्के कृपा-आलोकसे उसकी काव्य-चेतनाको एक अभिनव स्वरूपकी प्राप्ति होगी। आत्माकर्षणसे उसकी चेतनाकी दिशा बदल जायेगी और उसका हृदय उच्छलित प्रकाशसे परिपूर्ण हो जायेगा।

यह अन्तर्विरोध उन कविताओंमें अधिक प्रकट हुआ है जहाँ कवि इन दोनों छोरोंको अपनी अनुभूतिकी इकाईमें बाँधना चाहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...के अद्वितीय क्षणोंमें भी उसके विरोधी ...त्वकी प्रवृत्तियाँ शान्त नहीं होतीं। ...का क्षण तो आत्मोत्फुल्लताका होता है, ...तु उदासीनता कविके हृदयमें गहराई तक ...गयी है। एक ओर तो आत्मतत्त्वका ...द्धिक ज्ञान उसके अन्तरालमें गौरव और ...त्ताका संचार करता है तो दूसरी ओर ...के अहंसे घुटन, आत्महीनता और ...भका उद्रेक भी होता है। हृदयमें असीम ...त और साहसके बोधके बावजूद निराशा ...गत्यवरोधकी आँधियाँ भी चल रही हैं। ...देख रहा है कि सृष्टिकी समग्रगत पूर्णता, ...ता और शाश्वत आशाके प्राणतत्त्व ...न्से मुक्त होता हुआ भी वह कायिक ...नों और वर्जनाओंसे लिप्त है। इस ...र्विरोधको व्यक्त करनेके लिए मुक्तिबोध ...रोधोंकी शैलीका अवतरण करते हुए कहते ...: 'सफल हूँ (पथभ्रष्ट हूँ) अविजेय हूँ ...आधीन हूँ मैं)।' यह द्विधात्मक स्थिति ...। यही द्विधा मुक्तिबोधके व्यक्तित्वको क्षीण ...र रही है। सत्यका बौद्धिक ज्ञान रखते हुए ...वे उसकी अनुभूति नहीं कर पा रहे हैं। ...लिए उनका व्यक्तित्व दुहरा हो गया है। ...ह दुहराव उनके मनमें आत्यन्तिक अहं ...न्द्रिताकी स्थापना करता है। परिणामतः वे ...नियाको मार्गभ्रष्ट समझने लगते हैं। इस ...पथगामी संसारमें कवि स्वयंको सत्यपथका ...थिक और द्रष्टा समझता है। यह 'सेपरे-...टिस्ट' प्रवृत्ति है। इस प्रवृत्तिका जब अनुवर्धन ...होता है तब व्यक्ति संसारको अपना विरोधी ...समझने लगता है।

अन्तर्विरोधोंके विद्यमान होते हुए भी कवि महान् हो सकता है। शर्त यह है कि वह न केवल अपने अन्तर्विरोधको ही पूरी तरहसे जाननेपर उसके परिहारकी चेष्टा भी करे। यह दूसरी बात है कि उसको अपने प्रयासमें सफलता मिलती है या नहीं। असलमें यह काव्यालोचनके क्षेत्रके बाहरकी चीज़ है। यदि बाहर और भीतरके विरोधने कविको जगाया है, यदि कवि इसे समाप्त करनेके लिए सचेष्ट है तथा अपनी चेतनाको द्विधाकी जकड़नसे उबारनेका प्रयास करता है तो केवल यही प्रयास उसे स्थायित्व प्रदान कर सकता है। मुक्तिबोधके काव्यमें यह प्रयत्न सन्निविष्ट है। कहा जा सकता है कि उन्होंने इसी प्रयत्नको काव्यात्मक परिवेशमें व्यक्त किया है। अहम्को आत्मन्के समान ही सर्वशक्तिसम्पन्न, अखण्ड और अव्याहत बनाना मुक्तिबोधजीका लक्ष्य है। वे अहम् और आत्मन् दोनोंको स्वीकार करते हैं किन्तु एकको दूसरेसे हेय या छोटा नहीं समझते। अहम्की बुलन्दी आत्मन्से टक्कर लेनेके लिए है। कविका अनुमान है कि इस कशमकशके दौरमें एक लमहा ऐसा भी आ सकता है जब आत्मन् अहम्से पराजित हो जाये और उसके समक्ष अपना रहस्य खोल दे। यदि वह क्षण तत्काल न आ पाये तो भी उसका संघर्ष व्यर्थ नहीं होगा क्योंकि उसके प्रयत्नका प्रत्येक दौर उसकी ज़िन्दगीको एक नयी ऊँचाई देगा – प्रत्येक क्षण उसके जीवनमें एक नये अर्थका संचरण करेगा :

'तुझसे करके युद्ध, क्रुद्ध हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन यह ऊंचा उठ जाये…'

मुक्तिबोधके काव्यमें अन्तर्विरोधोंकी दूसरी दिशा अहम् और इदम्के संघर्षसे निर्मित हुई है। यदि पहले सोपानको हम हीगेलकी भाषामें व्यक्तिके 'हायर और लोअर सेल्फ़'का संघर्ष कहें तो इस सोपानको हम व्यष्टि और समष्टिके संघर्षकी अभिधा प्रदान कर सकते हैं। यहाँ कवि सामाजिक यथार्थकी भूमिकापर है। वह सामाजिक जीवनके असन्तुलनसे परिचित है। मानवी भेदपर आधारित आधुनिक समाज-रचनासे वह असन्तुष्ट है। समष्टिगत जीवनके अनुशीलनसे कविके मनमें दो प्रकारकी प्रतिक्रियाएँ उठती हैं: आभिजात्य वर्गकी स्वार्थलिप्सा और कृत्रिमताको देखकर उसके मनमें घृणाकी ग्रन्थि बन रही है और दूसरी ओर जगत्के विषम व्यापारोंकी अनुभूतिसे उसमें एकाकीपनकी प्रवृत्ति भी बढ़ रही है। कवि जानता है कि आभिजात्य वर्गको समाजसे कोई लगाव नहीं होता। वह अहंताके नशेमें मानवीयताका तिरस्कार करता है। यद्यपि यह वर्ग भौतिक समृद्धिके सागरमें डूबा हुआ है किन्तु इसका अन्तराल खोखला और निर्जीव हो गया है। इसकी बाहरी चमक-दमक शवपर चढ़ाये गये क़फ़नके समान निस्सार है। इसकी समस्त क्रिया, इनके जीवनका प्रत्येक व्यवहार और इनकी समूची जीवन-शैली असत्यपर आधारित है। पुरातन कालसे ही यह वर्ग अनेक प्रकारके आडम्बरोंकी सृष्टि करता चला आ रहा है। कवि इस वर्गकी संस्कृतिको 'शाब्दिक' कहता है। इसे देखते ही कविको मितली आने लगती है, उसका आक्रोश जाग उठता है और वह उसका समूल नाश करना चाहता है:

तेरा नाश तुझपर क्रुद्ध, तुझपर व्यग्र
मेरी ज्वाल जन की ज्वाल होकर एक
अपनी उष्णता से धो चलें अविवेक
तू है मरण, तू है रिक्त, तू है व्यर्थ
तेरा ध्वंस केवल एक तेरा अर्थ।

यह क्रान्तिकी विधि है। कवि इस मनुष्य-द्रोही वर्गको नष्ट कर देना चाहता है। वह जनताके असन्तोषमें अपना असन्तोष मिला देता है। इस सम्मिलित वह्नि-ज्वालमें वह पूँजीवादी समाजको जला डालना चाहता है। यह क्रान्तिका आह्वान है। किन्तु क्रान्ति प्रलयंकरा होती है। उसके सर्वग्रासी मुखसे कुछ भी छूट नहीं पाता। यह सत्य है कि क्रान्तिके कुलिश-पातसे महल गिर जाते हैं किन्तु जनसमाज कालान्तरमें उससे लाभान्वित ही होता है। कविवर निराला विप्लवके बादलोंका आवाहन करते हुए कहते हैं कि भले ही विप्लवके बादलोंकी घन-भेरी सुनकर अंगना-अंगसे लिपटे धनी आतंकसे काँप उठें किन्तु उसीकी आवाज़को सुनकर धरतीकी क्रोड़में दबे बीज अंकुरित हो उठते हैं। कविवर मुक्तिबोध भी 'नाश देवता' का आह्वान करते हैं ताकि समाजमें वर्गभेद न रह जाये। प्रत्येक विनाशके अन्तरालमें सृजन होता रहता है। प्रत्येक पतन एक नये उन्मेषकी सूचना देता है। आजका समाज पूँजीवादके विषैले कीटाणुओंसे आक्रान्त है। इसका अन्त ही नये समाजके आरम्भका संकेतक बन सकता है। कविने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...णिक प्रतीकोंके माध्यमसे विनाशका चित्रण किया है। विनाश घोर धनुर्धर है। उसके बाण सभीके प्राणोंको बेधनेमें सक्षम हैं। किन्तु उससे मृत्यु नहीं होती, वह एक नये जीवनकी उत्पत्ति करता है। निषेधके लिए नहीं, अपितु एक नये विधानके लिए; ध्वंसके लिए नहीं, अपितु नवनिर्माणके लिए; विनाशके लिए नहीं, अपितु अभिनव सृजनके लिए मुक्तिबोध 'नाश देवता' का आह्वान करते हैं।

निराला और मुक्तिबोधकी क्रान्तिपरक कविताओंमें विलक्षण समानता मिलती है। दोनों कवि ऊर्जस्वित स्वरमें क्रान्तिका आह्वान करते हैं। उनकी कविताओंमें परस्पर समानता रखनेवाले प्रतीकों और उत्प्रेक्षाओंकी योजना हुई है। निरालाका तर्क है कि विप्लवके बादलोंके गर्जनसे जनसाधारणमें वर्तमान स्थितिके प्रति असन्तोषके जो बीज दबे हुए हैं वे सजग हो उठते हैं। यह असन्तोष एक नये जीवनकी प्राप्तिके लिए उन्मुख है। मुक्तिबोध कहते हैं कि नाश देवताका क्रान्ति-शर घुटन, उत्पीड़न और शोषणके अन्धकारमें आशाकी विद्युल्लतिका संचरित करेगा। यही वह क्षण है जब अभिनव निर्माणके उद्भिज जड़ अन्धकारके आवरणको चीरते हुए अंकुरित होंगे। मुक्तिबोध थोथी क्रान्तिके समर्थक नहीं हैं। वे केवल नष्ट-भ्रष्ट ही नहीं करना चाहते। उनका दृष्टिकोण सर्जनात्मक है। इसी सन्दर्भमें वे नारेबाज़ कवियोंसे अलग हो जाते हैं। उनके विनाशका स्वर नव्यतम सृजनके आयामसे युक्त है। यह उनके अन्तर्विरोधका दूसरा पक्ष है। यद्यपि उनका प्रस्थान विरोधी आयामोंके द्वारा संघटित हुआ है और वे परस्पर विरोधी भी प्रतीत होते हैं किन्तु आधुनिक मनःस्थितिके निवेदनके लिए विरोध-आसंगोंके अतिरिक्त किसी अन्य शैलीका सफलतापूर्वक सम्पादन नहीं किया जा सकता। यह एक बड़ा विरोधाभास है कि मुक्तिबोधके विरोध-आसंगोंके नियोजनमें अव्याहत पूर्णता है। भले ही यह अव्याहत पूर्णता बुद्धिप्रसूत हो और उसमें अनुभूतिकी प्रामाणिकताकी मुहर न लगी हो, किन्तु जो कविताकी सत्ता बाहरी विरोधोंमें ही सीमित समझते हैं उसके लिए मुक्तिबोधका काव्य एक सशक्त चुनौती है! ■■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय ज्ञानपीठ

के

दो अनूठे, नयनाभिराम, कलात्मक प्रकाशन

परिणय गीतिका

सं० रमा जैन, कुन्था जैन

विवाहके विभिन्न अवसरोंपर गाये जानेवाले गीतोंका अपूर्व संकलन। पर ये गीत न प्रचलित गीतों-जैसे हैं न निरे साधारण ही, ये गीत विशेष हैं। इनमें एक ओर लोक गीतोंकी मधुरता और मोहकता महकती मिलेगी, तो दूसरी ओर साहित्यिक सुषमा और काव्यका रस। परम्पराओं और भावनाओंके साथ आजकी चेतना और काव्यका नया रस इनमें आ रमा है।

साथ ही, विवाह सम्बन्धी विभिन्न रस्मोंकी संक्षिप्त जानकारी भी दे दी गयी है और प्रत्येक गीतकी भरसक व्यवस्थित स्वरलिपि भी। भारतीय ज्ञानपीठका यह प्रकाशन साहित्यमें अपने प्रकारकी सर्वप्रथम कृति है : रुचिर, कलात्मक, उपयोगी।

उपहारमें देने-लेने योग्य! घर-घरमें प्रति होना आवश्यक!!

मूल्य ५.००

शैशवांकन

शिशुके जन्मोत्सवपर होनेवाले आयोजनोंकी शोभा स्मरणीय होती है। बाल-विकासका प्रत्येक चरण विस्मयकर है। इन आयोजनोंकी स्मृतिको और शिशुकी विकास-प्रगतिको मोहक तथा कलात्मक ढंगसे अंकित करके सुरक्षित रखनेकी इच्छा प्रत्येक माता-पिताके लिए स्वाभाविक है।

'शैशवांकन'में जन्मोत्सवसे सम्बन्धित अवसरोंका तथा शिशुकी उत्तरोत्तर प्रगतिका लेखा आयोजित है। 'शैशवांकन' मधुर स्मृतियों एवं उपयोगी तथ्योंके संरक्षणके लिए तथा स्नेह-आशीषकी अभिव्यक्तिके लिए सर्वथा नया और प्रीतिकर उपहार है। अपने शिशुके लिए स्वयं बरतें! और अपनोंको उपयोग करनेके लिए भेंट करें।

मूल्य १२.००

अपने यहाँके अच्छे पुस्तक-विक्रेतासे प्रतियाँ प्राप्त करें

अथवा किसी निम्न स्थानसे मँगायें

भारतीय ज्ञानपीठ

प्रधान कार्यालय : ९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता – २७

विक्रय केन्द्र : ३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, दिल्ली – ६

टेलेफ़ोन : कलकत्ता – ४५-४४३२ :: टेलेफोन : दिल्ली-२७२५८२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फणीश्वरनाथ 'रेणु'
का नवीनतम उपन्यास

जुलूस

'रेणु' की यह कृति 'जुलूस' अपूर्व तो कैसे कही जाये, पर अनूठी इसे मानना पड़ेगा। हिन्दीमें इस विषय-भूमिकी और इसके भाव-संकेत लिये हुए कोई कृति बिरले ही आयी होगी। एक लघुकाय उपन्यास पर विशाल अन्तरंग, गझिन, शक्तिशाली और सारा कथानक सामयिक : घटनाओंकी दृष्टिसे भी महत्त्वपूर्ण और मूल्योंकी दृष्टिसे भी। शैली-शिल्प 'रेणु' के अपने : पहलेसे अधिक प्रौढ़, मँजे-निखरे, प्रभावपूर्ण।

कथानक सीधा-सा है। कला उसका उपयोग करने की है। इसके माध्यमसे हिन्दी पाठक देखेंगे कि प्रान्तीय भाव-भेद कितने भी वास्तविक लगें, यथार्थ जीवनके सन्दर्भमें उनका अस्तित्व क्षीण हुए बिना नहीं रहता। और ठीक यही तो मूल आधार है देशकी भावात्मक-सांस्कृतिक एकताके सत्यका। आवश्यकता आचरणकी है, दृष्टिदानकी है। मूल्य ३.५०

भारतीय ज्ञानपीठ

प्रधान कार्यालय : ९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७
प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५
विक्रय केन्द्र : ३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इक़बाल मजीद

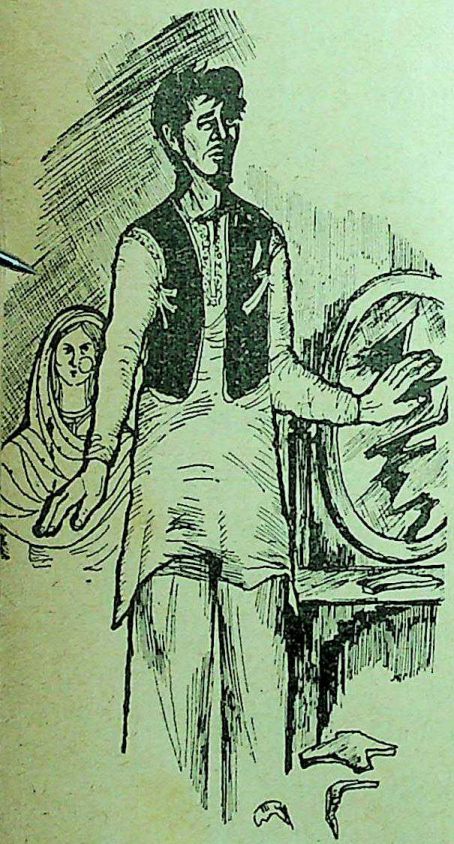

"क़फ़नके कपड़ेमें कितना ख़र्च होगा ?"

"बीस पच्चीस रुपये ।"

"ग़ुसल वग़ैरहमें ?"

"दस पन्द्रह रुपये ?"

"क़ब्रके लिए ?"

"अगर खरीदकी जगह ली गयी तो तीस-पैंतीस रुपये ।"

"और दफ़नके वास्ते ?"

"पन्द्रह-बीस रुपये ऊपरसे और रख लो ।"

"तो सौ रुपयेके अन्दर काम हो जायेगा ?"

"हाँ, हो जायेगा ?"

"तुम्हारे पास क्या कुछ भी नहीं ?"

"है क्यों नहीं ।"

"कितना है ?"

"दो सौ रुपये ।" मैंने अन्दर-ही-अन्दर खौलते हुए जवाब दिया, "मेरे पास नक़द दो-सौ रुपया मौजूद है।"

"तो फिर ?"

"तो फिर क्या ?" मैंने सहम कर कहा, जैसे अबतक वह मेरे सामने रिवालवर ताने खड़ा हो, और अब उसने ट्रेगरपर उँगली रख दी हो, "अब तुम्हें किस बातका इन्तज़ार है ?" फिर उसने मेरी आँखोंमें देखा और जैसे गोली चला दी, "यह लाश अबतक यों ही क्यों पड़ी है ?"

मैं उसके इसी सवालका इन्तजार कर रहा था, मैं उस तकलीफ़को क्या बताऊँ, जैसे मेरे गलेपर नोकीली कील रखकर ठोंक दी गयी हो ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तुम ज़लील हो", मैंने मुट्ठियाँ भींचकर जवाब दिया, मैं जानता था कि अभी नहीं तो कुछ देर बाद तुम मुझसे यह सवाल ज़रूर करोगे कमीने !"

लाश क्यों पड़ी है ?

क्यों ?

क्यों ?

यही 'क्यों' था, जो पिछले चार घण्टोंसे मेरे दिमाग़के रेशे नोच-नोच कर खा रहा था, बराबरवाले कमरेसे राजाकी माँ थकी-थकी सिसकियोंमें रो रही थी। वह राजाके सिरहाने बैठी थी, उसने राजाको पैरके अँगूठोंसे लेकर सिर तक चादरसे ढक रखा था। मैंने अपने अँधेरे कमरेसे बाहर आसमानकी तरफ़ देखा, बाहरका अँधेरा जैसे अन्दर आ गया था, बहुत अन्दर, मेरे दिमाग़की एक-एक कोशके अन्दर। बाहर दूर तक सब कुछ ख़ाली-ख़ाली-सा भुतैला-गुँजला-सा था। रात जो सारे दुःखोंको सुला देती है मेरे दुःखको फोड़ेकी तरह टपका रही थी। इस रातकी बाद जो सुबह होगी, सुबह जो एक तबदीलीका नाम है, यह सुबह कितनी कठोर होगी, कितनी ज़ालिम होगी और कितनी बुज़दिल होगी ! इसे मैं जानता था, वह भी जानती थी कि बराबरवाले कमरेमें लाशके सिरहाने बैठी रो रही थी। अभी चार घण्टे पहले राजा जिन्दा था, उसने मुझसे धीमी-सी आवाज़में तीन पहियोंवाली सायकिल ला देनेकी फ़रमाइश की थी। मैंने एकाएक कनखियोंसे बराबरवाले कमरेकी तरफ़ देखा, जिधरसे लोहबानकी बू आ रही थी, मैं कमरेकी दीवारकी तरफ़ बढ़ा और अपना हाथ बिजलीकी स्विचकी तरफ़ बढ़ा दिया।

"बत्ती मत जलाओ", वह धीरेसे बोला।

उसने मेरे दिलकी बात कह दी थी, उस वक़्त मैं रौशनीसे डर रहा था, जैसे रौशनी मुझे नंगा कर देगी, मादरज़ाद नंगा और राजाकी माँ मुझे इस हालतमें नंगा देखकर फाड़ खायेगी, वह कहेगी :

"घरमें तुम्हारे बच्चेकी लाश पड़ी है और तुम नंगे होकर घूम रहे हो !"

"बेशर्म बेहया !"

"नंगे ! नंगे !"

और फिर मेरा हाथ बिजली-के स्विचपर-से लौट आया। "मगर यह अँधेरा मुझे कबतक बचाये रखेगा !" मैं न चाहते हुए भी उससे मुख़ातिब हो गया। वह कुछ नहीं बोला, मैं घुटनों पर सिर रखकर रोने लगा, न जाने इस बार निकलनेवाले आँसुओंमें इतनी जलन क्यों थी। मैंने डबडबायी हुई आँखोंसे रौशनदानकी तरफ़ देखा, वह टकटकी बाँधे देरसे मुझे तके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जा रहा था, आजसे सात साल पहलेकी रात जब राजाको बानोके शिकममें आये अभी चार-पाँच महीने हुए थे। मैंने उससे कहा था, "तुम एक बार नहीं कई बार यह जान चुकी हो कि मुझे तुम्हारे अक़ीदे वग़ैरहसे कोई ग़रज़ नहीं।"

"लेकिन····" वह घुटकर रह गयी। उसे मेरी तरह बोलना कब आता था, सीधे-सीधे मतलब अदा करनेवाली सीधी-सी लड़की, जो 'करामत हुसैन गर्ल्ज़ कालिज'की आठवीं जमाअत तक पढ़ी थी, मोहर्रमके दिनोंमें सिरपर दुपट्टा डालकर इमामबाड़ोंके सामने नौहे तो पढ़ सकती थी, मेरी रेशादवानियों-पर ग़ौर नहीं कर सकती थी।

"लेकिन-वेकिन कुछ नहीं!" मैं बरहम था और भी तेज़ होकर बोला, "मैंने तुमसे मोहब्बत की, शादी की, यानी इस बातका एक़रार किया कि हमारे जो बच्चे होंगे वह हमारी पनाहमें रहेंगे, हम एक-दूसरेका दुःख-सुख बाँटेंगे और···और बस!"

"मैं कब कहती हूँ।" वह धीरेसे बोली, "लेकिन अम्माँ इसे नहीं मानेंगी।"

"उनसे कह दो, कि मैं ख़ुदाको नहीं मानता, मैं मज़हबको एक ग़ैर-ज़रूरी चीज़ समझता हूँ।"

"ऐसी बातें मत कीजिए! आप मेरे ख़ानदानमें बदनाम हो जायेंगे।"

"परवाह नहीं," मैं बोला, "मैंने तुमसे शादी की है तुम्हारे अक़ीदेसे नहीं। मुझे अपने माँ-बापके मज़हबसे भी कोई लगाव नहीं।"

"और हमारे बच्चे?" वह शर्मसे लाल होते हुए गरदन झुकाकर बोली।

"उनका भी हमने ठेका नहीं लिया है, हमारा फ़र्ज़ उनकी निगरानी करना है, समझ-दार होकर वे ख़ुद अपना रास्ता ढूँढ़ लेंगे। फ़ैसले करेंगे। वह क्या मानते हैं क्या नहीं-यह उनका अपना मामला होगा।"

"नहीं, शायद अम्माँको इसका बड़ा दुःख होगा, वह उन्हें शिया दीनयात ज़रूर पढ़ायेंगी।"

"अगर मेरी अम्माँ सुन्नी दीनयातके लिए बज़िद होवें तो?"

वह कुछ नहीं बोली, मैंने देखा उसकी आँखोंमें आँसू आ गये थे, मैंने अपने आपको सँभालते हुए कहा, "क्यों न चार-छह साल वह दोनों दीनयातें पढ़ें, समझदार होकर तो फिर वह वही करेंगे जो उनकी मरज़ी होगी।"

और फिर मैंने अलटीमेटम देते हुए कहा था, "एक बात साफ़ सुन लो बानो, हम अपने बच्चोंमें कोई ज़हर नहीं बोयेंगे, मैं अपनी मोहब्बतके बदलेमें तुमसे सिर्फ़ इतना ही माँगता हूँ।"

आजकी रात जब कि राजाको पैदा हुए सात साल हो चुके थे, जब कि उसे मरे चार घण्टे बीत चुके हैं, यह रौशनदान आज भी मुझे टकटकी बाँधे देख रहा है!

मैं समझा था, शायद वह उठकर चला गया, लेकिन वह अब भी कमरेमें मेरे साथ बैठा था, मेरे साथ—यह साथ कब हुआ था, मुझे याद नहीं, लेकिन मैं इतना जानता था कि मैं ज़िन्दगीमें कभी उससे कुछ छिपा नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...मैंने उसके मरनेकी बहुत बार दुआएँ ...थी, काश मैंने उसे इतना सिर न चढ़ाया ...। मैं उसके बारेमें सोच ही रहा था कि ...बोल उठा, "एक बात पूछूँ ?"

"पूछो !"

"यह शिया-सुन्नीका क्या चक्कर है ?"

"सिर्फ़ इतना कि मैंने एक शिया लड़की-...शादी की है, मोहब्बत की है, जब कि मेरे ...बाप सुन्नी हैं, और मैं ख़ुदाको भी नहीं ...ता।"

"और लड़की ?"

"वह औरत है, जाहिल है, कट्टर है, ...और क़यामतपर यक़ीन रखती है।"

"लेकिन सुनो तो—" वह बोला, "इससे ...क्या पड़ता है, अगर वह शिया न होकर ...होती तो भी क्या फ़र्क़ पड़ता, मेरा ...लब है तुम्हारे लिए।"

"कुछ नहीं।"

"और अगर वह ईसाई, सिख या इसी ...की कोई और बकवास होती तो भी ...हारा मसला यों ही रहता !"

"मेरा मसला, मेरा कौन-सा मसला ?" ...घबराते हुए उससे निगाहें मिलाये बग़ैर ...छा !

"वही।" कहकर इस बार वह मुस-...कराया,—वह मेरा दोस्त था, बचपनका ...थी ! मेरे बच्चेकी मौतपर यों मुसकराते ...हुए जितना दुःख हुआ होगा मैं उसे जानता ...हूँ लेकिन इस वक़्त शायद वह ख़ुदसे भी बदले ...ले रहा था—हो सकता है वह मुझसे ज़्यादा ...इस हालतपर खीजा हुआ हो, वह बोला,

वह ग़ुस्सेसे बोला, "मान
लो, बानो हिन्दू होती,
और वह अपने बच्चेकी आख़िरी
रस्म उस शक्लमें देखना
चाहती जिसमें
उसके दूसरे मुरदे उठे
थे तो तुम क्या करते ?—तुम
राजाको जला देते। है ना ?"
उसने बात छीनकर कहा,
"शक्लोंका मामला कुछ ऐसा है।"
फिर वह बाहर आसमान की
तरफ़ देखने लगा, मामला यह है
कि तौरेतके ख़ुदाकी
शक्ल दूसरी है, उसकी वह
शक्ल नहीं है जो शबेमेराजमें
मोहम्मदने देखी थी। सलीबपर
चढ़नेवालेकी
शक्ल भी दूसरी थी।

"वही मसला जिसे तुम रवायत और बग़ावत कहते हो ! बुरा न मानो तो कहूँ ..."

"कहो।" मैं अन्दरसे काँप गया, लेकिन वह मेरी आँखोंमें दूर तक देखते हुए बोला, "वही मसला जिसके कारण पिछले कई घण्टोंसे तुम्हारे बच्चेकी लाश पड़ी है, और तुम बे-दस्तोपा बैठे हो।"

मैं दम बख़ुद उसे देखता रह गया और फिर नफ़रतसे मुँह मोड़ लिया। मानकपूरकी यह रात जो मैं अपने वतनसे दो सौ मील दूर रहकर काट रहा था शायद वह न होती अगर यह मेरे खानदानके बीच गुज़रती क्योंकि वहाँ भागनेकी राहें बहुत थीं। लेकिन नयी जगह, अजनबी लोग; राजाकी लाशको मैं अपने वतन

शक्ल : इक़बाल मजीद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी तो नहीं ले जा सकता था, छोटे-से इस क़सबेमें न टैक्सी, न लारी, डाकके ज़रिये ख़ानदानवालोंको इत्तला कर दी थी लेकिन कोई भी दूसरे दिन शामसे पहले नहीं पहुँच सकता था।

एक रात !

एक दिन !

और फिर शाम।

आख़िरी रसूमको इससे पहले होना था, जल्दसे-जल्द वरना लाश ख़राब हो सकती थी। बानो माँ थी बड़ी मुश्किलसे उसने अपने आपको सँभालकर मुझसे कहा था, "देखो, तुमने हमेशा मनमानी की है, मगर अब मेरी एक बात मान लो, यह राजा-की नहीं मेरी लाश है ! इसे यह समझकर दफ़नाओ कि तुम मुझे दफ़ना रहे हो !" और फिर वह मुझसे लिपटकर फूट-फूटकर रोने लगी।

मैं भी रो पड़ा। मैं उसका मतलब समझ गया था, इसीलिए दिलमें एक खौफ़ लिये अपनेको अँधेरेमें छिपाये बैठा था, ताकि बानो मुझे पहचान न ले।

"सुनिए !" एकबारगी मेरे कानोंमें बानोकी आवाज़ आयी। मैंने चौंककर बराबर-वाले कमरेकी तरफ़ देखा, दूसरे कमरेके दरवाज़ेपर वह खड़ी थी। बाल बिखरे हुए, चहरा आँसुओंसे भीगा हुआ।

"कहो !" मैं उसके पास जाकर खड़ा हो गया।

"क्या सोचा आपने ?"

"जा रहा हूँ, कोशिश करता हूँ।" मैंने गरदन झुकाकर जवाब दिया। और कमरेसे बाहर निकल गया। पूरी बस्तीमें कुल तीन घर थे, जहाँसे बानोकी मुराद पूरी हो सकती थी। सड़कपर निकलकर मैंने देखा, पूरा क़सबा उदास-उदास-सा पड़ा था, चौराहेपर हलवाई-की दूकानपर लालटेन जल रही थी। मैं एक-एक करके बस्तीके उन तीनों द्वारोंपर गया। कुण्डियाँ खटखटायीं, दरवाज़े खुले और बन्द हो गये। मैं क़िस्मतको नहीं, इत्तिफ़ाक़ातको मानता हूँ, जब मैं एक घण्टेकी तलाशके बाद घर वापस लौटा तो मेरा दिमाग़ गुंग हो चुका था, यह एक ऐसी पस्ती थी एक ऐसी थकन थी जिसकी शिकायत मैं किसीसे नहीं कर सकता, रूहके कुछ तजुरबे हमारे अपने हो जाते हैं। उनका साझेदार कोई नहीं होता, सोचा था, यह बात बानोसे कह दूँगा, घर पहुँचा तो पास-पड़ोसकी कुछ औरतें बानोके पास बैठी थीं।

"तो इसके मतलब यह हुए", अँधेरे कमरेके सन्नाटेमें उसकी आवाज़ आयी।

"ज़िन्दगी हो या मौत, पैसेके अलावा भी कुछ होना चाहिए।"

"क्या मतलब ?" मैं चौंका।

"मतलब यह," उसका लहज़ा उदास था, "कि तुम्हारे पास दो सौ रुपये मौजूद हैं लेकिन फिर भी तुम बेबस हो, लोगोंके घरोंकी कुण्डियाँ खटखटाते फिरते हो।"

"देखो, मैं बहुत पस्त हो गया हूँ," मैंने ख़ुशामदाना अन्दाज़में गिड़गिड़ाते हुए जवाब दिया, "ख़ुदाके लिए मेरे ज़ख़्मोंको यों न कुरेदो।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तुम मुझसे डरते हो ?" एकबारगी वह ...ड़ बैठा।

"क्यों, कौन-से लाटसाहब हो तुम ? तुमसे ...ो मेरा ठेंगा।" मुझे उसके इस सवालपर ...ा आ गया, "अगर तुम जानना चाहते हो, ...साफ़-साफ़ सुनो, बानो राजाका जनाज़ा ...ने अक़ीदेके मुताबिक उठाना चाहती है। ...उसकी आखिरी रसूम उस शक्लमें देखना ...ती है जिसमें उसके घरके दूसरे मुरदे ...थे।"

"शक्ल !" वह जैसे चौंक पड़ा, उसकी ...में एक खास चमक पैदा हो गयी— ...तुम बस्तीमें उस शक़्लकी भीख माँगने ...थे।"

"हाँ !" मैंने एक लम्बी-सी हाँ भरकर ...ते जज़बातसे आँखें बन्द कर लीं।

"फिर क्या हुआ ? मिली भीख ?"

"नहीं—एक घरका आदमी तिजारत ...ता है, वह शहर गया था, दूसरा खुद ...मार पड़ा है, तीसरेकी शादी है, शादीके ...में मौतकी खबर क्या ले जाता !"

"मेरी समझमें कुछ नहीं आता।"

"क्या नहीं आता ?" मैं डरते-डरते ...ला।

वह गुस्सेसे बोला, "मान लो, बानो ...दू होती, और वह अपने बच्चेकी आखिरी ...म उस शक्लमें देखना चाहती जिसमें उसके ...रे मुरदे उठे थे तो तुम क्या करते ?— ...म राजाको जला देते ! है ना ?" उसने बात ...नकर कहा, "शक्लोंका मामला ही कुछ ...सा है।" फिर वह बाहर आसमानकी तरफ़ देखने लगा, मामला यह है, कि तौरेतके खुदाकी शक्ल दूसरी है, उसकी वह शक्ल नहीं है जो शबेमेराजमें मोहम्मदने देखी थी। सलीबपर चढ़नेवालेकी शक्ल भी दूसरी थी।

ब्रह्मा कैसा है ?

विष्णु कैसा है ?

महेशकी शक्ल क्या है ?

शक्ल-शक्ल-शक्ल !

और फिर वह धीरेसे बोला, "एक बात बताओ मुझे, तुम इनमें-से किसी शक्लकी हक़ीक़तको नहीं मानते ?"

"नहीं।" मैं ज़ोर देता हुआ बोला।

"लेकिन इससे तुमने कुछ तोड़ा है, बनाया नहीं।"

"क्या तोड़ा है ?"

"मुझे ऐसा कोई चाहिए जो पहले बना ले, बनाकर अलग रख दे, तब पुरानेको तोड़े, नहीं तो तोड़ देनेके बाद बनानेके बीचका समय बड़ा कठोर होता है, बड़े दुःख पहुँचाता है हमें।"

"मैं समझा नहीं।"

"देखो, मान लो बानो ऐसी न होती जैसी है, वह भी तुम्हारी तरह किसी खुदा, किसी क़यामत और किसी जहन्नुमपर यक़ीन न रखती, तुम्हारी उसकी शादी मौलवी-द्वारा नहीं मजिस्ट्रेट-द्वारा होती, उसकी ऐसी कोई ख्वाहिश न होती कि उसके लड़केको किसी खास अक़ीदेके मुताबिक दफ़नाया जाये, फ़र्ज़ करो उस बानोका राजा यों आज पड़ा होता तो तुम क्या करते ?"

मैं कुछ नहीं बोला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"बोलो तुम भी किसी हलकी नहीं मानते, किसी भावको नहीं। जिसने हज़ारों बरससे रायज सैकड़ों ख़ुदाओंमें-से किसीके आगे सिर नहीं झुकाया है उस वक़्त तुम कौन-सी शक्ल अख़्तियार करते ?"

मै कुछ नहीं बोला।

"क्या तुम दोनों मिलकर राजाको जला देते ?"

मैं फिर भी ख़ामोश रहा।

"हो सकता है," वह बोला, "तुम दोनों मिलकर कोई नयी बात सोचते। तुम दोनों राजाकी लाश घूरेपर फेंककर ही मुतमईन हो जाते और उसीको आख़िरी रस्म समझते और फ़ख़्रसे कहते कि तुम बड़े बहादर हो तुमने वक़्तकी रायज शक्लोंमें एक नयी शक्ल-का इज़ाफ़ा किया है।"

"बकवास बन्द करो।" मैं झुँझलाकर बोला।

"सुनो !" उसका लहज़ा कुछ नरम हो गया।

"मै कुछ सुनना नहीं चाहता !"

लेकिन वह नहीं माना। कहने लगा, "देखो सारी बात यह है कि तुम मुझसे डरते हो !"

"साफ़ बात यह है कि तुम कमीने हो, और कमीने आदमीसे हर शख़्स डरता है !" मैंने अपना ग़ुस्सा दबाते हुए कहा, लेकिन वह और भी ज़हर घोलने लगा, "मेरे बेटे, ख़ुदाओंसे इनकार कर देना आसान है लेकिन राजाको घूरेपर फेंक देना मुश्किल है !"

"मैं कहता हूँ, चुप रहो ?" मैं चीख उठा।

"देखो, जहाज़के सफ़रमें जब मुसाफ़िर मरते हैं तो वह किसी भी ख़ुदाके हामी हों, समन्दरमें बहा दिये जाते हैं क्योंकि वहाँ या तो आसमान होता है या समन्दर ! लेकिन ज़मीन—ज़मीन बड़ी मनहूस शै है ! यहाँ शक्लोंसे पीछा नहीं छूटता।"

"तुम नहीं ख़ामोश रहोगे ?"

"मेरी जान," वह मेरी बात अनसुनी करके नरमीसे बोला, "क्या तुम जानते हो···"

"मैं कुछ नहीं जानता !" मैंने उसकी बात काट दी, "तुम मज़हब और तहज़ीबके फ़र्क़को नहीं समझते, तुम तहज़ीबोंको शक्लें कहते हो, तुम समझते हो, राजाकी आख़िरी रसूम करना मेरे लिए कोई मज़हबी मजबूरी है ! लेकिन तुम जाहिल हो, यह मेरी तहज़ीबी मजबूरी है।"

और यह सुनकर वह जी खोलकर हँस पड़ा, कितनी देरसे वह मेरे मुँहसे यह बात कहलवाना चाह रहा था, मुझे घुटने टेकते हुए देखकर उसे कितनी ख़ुशी हुई थी। चुपकेसे बोला, "कौन-सी तहज़ीब ?"

"इसलामी तहज़ीब !" मैं गरजा।

"क्या तुम जानते हो, सुन्नी मुसलमान अपने मुरदेका कफ़न-दफ़न किस तरह करते हैं ?"

"नहीं, पूरी तरह बिलकुल नहीं।"

"क्या तुम्हें मालूम है, शियोंकी आख़िरी रसूम किस तरह होती है ?"

"नहीं, बिलकुल नहीं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तुम तो शायद गुस्ले मय्यत भी नहीं जानते होंगे ?"

"नहीं।"

"फ़ातेहा पढ़ना जानते हो ?"

"बचपनमें पढ़ा था, अब भूल गया।"

"तो अगर तुम चाहो तो भी तो अकेले तुम राजाको गुस्ल दे सकते हो और दफ़न।"

"हाँ ?"

"तो तुम्हें किरायेपर ऐसे कुछ आदमी मिलेंगे जो शिया मज़हबके बजाय शिया तहज़ीबके मुताबिक तुम्हारे बच्चेको दफ़न कर देंगे क्योंकि तुम मज़हब ही नहीं बल्कि इस तहज़ीबसे भी वाक़िफ़ नहीं।"

"क्या तुम कोई और बात नहीं कर सकते ?" मैं दाँत पीसते हुए बोला।

"देखो, बानोको बकने दो, कह देना मज़हबके साथ तहज़ीब भी फ्रॉड है, और हर तहज़ीब बदलती भी रहती है, तुममें हिम्मत नहीं है तो मैं तुम्हारी मुश्किल आसान किये देता हूँ। मैं चुपकेसे राजाकी लाश ले जाता हूँ, नन्हे-से जिस्मका बोझ ही कितना होगा, कन्धेपर लाद लूँगा। नहलाने-धुलानेकी कोई ज़रूरत नहीं, चुपकेसे म्युनिसिपैलिटीके किसी घूरेपर फेंक आऊँगा !"

"ख़ामोश हो जा ज़लील !"

मैं काँप रहा था, लेकिन वह कहता रहा, "एक-आध रोज़में जब लाश सड़ेगी तो कुत्ते उसे नोचेंगे, फिर म्युनिसिपैलिटीका जमादार उसे किसी मेहतरसे उठवाकर बाहर फिंकवा देगा। क़ब्र या समाधि वग़ैरह तो पुराने ख़ुदाओं···नहीं-नहीं, पुरानी तहज़ीब···"

"मैं तुम्हारा ख़ून कर दूँगा।"

"लेकिन यह बताओ कि तुम शियोंके घरकी कुण्डी खटखटाने क्यों गये थे ?"

"क्योंकि मुझे बानोके जज़्बातका एहतराम करना था।"

"फ़र्ज़ करो, बानो भी बे-अक़ीदा होती, उसकी कोई ख़ास माँग न होती, तो क्या तुम राजाको घूरेपर फेंक देते ?"

"मैं तब भी उसकी आख़िरी रस्म अदा करता।" मैंने रुँधे गलेसे जवाब दिया।

"लेकिन किस तहज़ीबके मुताबिक़···?",

"मेरी तहज़ीब।"

"तुम्हारी तहज़ीब क्या है ?"

"मुझे नहीं मालूम हरामज़ादे !" मैं पूरी ताक़तसे चीख उठा, और ग़ुस्सेकी शिद्दतमें मेज़पर रखा हुआ शीशेका गिलास मैंने उसे खींच मारा। गिलास सामने सिंगार मेज़पर लगे हुए शीशेपर पड़ा और आइना एक तेज़ आवाज़के साथ टूट गया और मैं अपनी गोदमें सिर रखकर रोने लगा। कुछ देर बाद मेरे आँसू थमे तो मैंने डरते हुए सिर उठाकर अपने सामने देखा। वह अब मेरे सामने नहीं था, वह आइनोंकी किरचोंमें टूटकर बिखर चुका था, लेकिन मैं जानता हूँ कि जबतक मैं ज़िन्दा हूँ वह टूट नहीं सकता ! ज़िन्दगीके चारों तरफ़ बहुत-से आइने हैं। अगर वह मेरा 'मैं' है तो आज नहीं तो कल वह फिर किसी आइनेमें जनम लेगा, और मुझसे पूछेगा—कहो दोस्त, जितनी तेज़ीसे रस्में तोड़ते हो उतनी तेज़ीसे बना नहीं पाते ?" ■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुचिन्तन

राजेन्द्र माथुर

चालीस साल तक टी० एस० ईलियट एक साहित्यिक मुग़लकी तरह अँगरेज़ी कवितापर छाये रहे। यह कहना सही भी होगा और ग़लत भी कि उन्होंने अँगरेज़ी कविताको घास-फूसकी झोंपड़ी पाया, और वे उसे संगमरमरकी इमारत बनाकर छोड़ गये। ग़लत इसलिए, कि हर ज़माना अपने कवियोंके बारेमें यही सोचता है। सेमुअल जॉन्सनने ड्राइडेनके बारेमें कुछ इसी तरहकी उपमा दी थी, और जॉन्सनका नाम अँगरेज़ी साहित्यके सबसे बड़े मुग़लोंमें लिया जाता है। लेकिन जॉन्सनके मरनेके बाद जब शताब्दी बदली, और रोमैण्टिक कविताका आन्दोलन शुरू हुआ, तब साहित्यकारोंने ड्राइडेन और पोपको कवि माननेसे इनकार कर दिया, और उनके युगको 'गद्यका युग' कहा। साहित्यमें ईलियटका एक योगदान यह है कि उन्होंने उन्नीसवीं शताब्दीके इन भ्रमोंको दूर किया, और ड्राइडेन तथा पोपके युगको पुनः कविताके युगके रूपमें प्रतिष्ठित किया। साहित्यमें अकसर यह हुआ है कि एक पीढ़ीने जिसे संगमरमरका गुम्बद माना है, दूसरी पीढ़ीने हास्यास्पद कागमगौड़ेकी तरह उसका तिरस्कार कर दिया है। खुद ईलियटने कविताके सोमनाथोंपर महमूद गज़नवी की तरह हमले किये, और परिचित प्रतिमाओंपर निर्ममतापूर्वक प्रहार किया। मिलटन और शेलीकी कविताएँ उन्हें कभी पसन्द नहीं आयीं। इसके कारण कुछ तो काव्यगत हैं, लेकिन एक वजह यह भी हो सकती है कि ईलियट राजभक्तिके समर्थक और प्रजातन्त्रके विरोधी थे; धर्ममें वे ऍंग्लो-कैथलिक (याने प्रोटेस्टेण्टवादके विरोधी) थे, और कवितामें वे रीतिवादी (क्लासिसिस्ट) थे, जब कि मिलटन और शेली दोनों बग़ावत और कुफ़्रके कवि थे। हालाँकि टी० एस० ईलियटने शेक्सपियरके बारेमें प्रायः श्रद्धापूर्वक लिखा है, लेकिन हैमलेटकी आलोचना करनेसे वे नहीं चूके। हैमलेटके बारेमें उनका मुख्य आरोप यह है कि शेक्सपियरके दिमाग़में जो कविता, जो सन्देश, जो द्विविधा घुमड़ रही थी, उसे वे नाटकीय शक्ल नहीं दे सके, और हैमलेटकी परिस्थितिमें वह बात नहीं आ पायी, जिसे महसूस करके दर्शक भी शेक्सपियर-जैसी मनःस्थितिमें पहुँच जाये। लेकिन अँगरेज़ी साहित्यमें हमें यह नियम बना लेना चाहिए कि जब कोई लेखक शेक्सपियरके बारेमें कोई राय देता है, तो वह शेक्सपियरके बारेमें कम बतला पाता है, अपने व्यक्तित्वका वह ज़्यादा उद्घाटन करता है। अगर आगे पीढ़ीने टी० एस० ईलियटपर कोई आरोप लगाया, तो वह यही होगा कि ईलियटने शेक्सपियरपर जिस कलात्मक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक भारतीय मूल्यांकन : एक आंग्ल कवि

...लताका आरोप लगाया है, वह खुद ईलियटकी ही ...लता थी।

यह इंग्लैण्ड-जैसे देशकी सभ्यताकी निशानी है कि क्रान्तियाँ सिर्फ़ विचारोंकी और कविताकी होती हैं। १७८९ में फ़्रांसमें राज्यक्रान्ति हुई, तो इंग्लैण्डमें सबसे क्रान्ति यही हुई कि १७९८ में 'लिरिकल बैलेड्स' ...काव्य-संग्रहका गुमनाम प्रकाशन हुआ, जिसके संयुक्त ...थे विलियम वर्ड्सवर्थ और सेमुअल टेलर कोलरिज। ...रिकल बैलेड्स' का प्रकाशन सचमुच अँगरेज़ी साहित्य-...एक क्रान्तिकारी घटना है, जिसने अगले सौ वर्षोंके ...साहित्यका सारा वातावरण बदल दिया, और कविता ...वाली जनताकी अभिरुचि बदल दी। १९१७में जब रूस-...लशेविक क्रान्ति हुई, तब इंग्लैण्डमें 'लिरिकल बैलेड्स'के ...दूसरी सबसे बड़ी क्रान्ति हुई, जब कि 'क्राइटेरियन' ...मोटी) नामक पत्रिकाके पहले अंकमें ईलियटकी 'वेस्ट ...' नाम कविता छपी (अक्टूबर १९२२)। 'वेस्ट लैण्ड'-...शुरू की गयी इस क्रान्तिके बाद अब अँगरेज़ी कविता ...वैसी न हो सकेगी, जैसी कि वह पहले थी। ईलियटके ...बीसवीं शताब्दीने अँगरेज़ी कवितामें प्रवेश किया है। ...बीसवीं शताब्दी प्रथम महायुद्धके बाद शुरू होती है। ...महायुद्ध सचमुच परिणामोंकी दृष्टिसे बीसवीं शताब्दीके ...की सबसे बड़ी घटना है। उस युद्धने आरामतलब, ...निश्चिन्त और अपनी ही प्रगतिसे सन्तुष्ट पुरानी ...टेरियन दुनियाको खत्म कर दिया। उस युद्धने अराजकता ...दिशाहीनता और आस्थाहीन बुद्धिवादको जन्म दिया, ...इस शताब्दीकी ख़ास पहचान है। १९१७ का बॉलशेविक आन्दोलन दरअसल वह पिल्ला है, जो युद्धकी कुतियाने जना है। आजके यूरॅपका राजनैतिक नक़्शा भी १९१९-२० में तय किया गया नक़्शा है, जिसमें एक मात्र फ़र्क़ यह हुआ है कि पूर्वी यूरॅप कॅम्युनिस्ट हो गया है। दूसरा महायुद्ध हालाँ कि पहलेसे ज़्यादा भयानक था, और व्यापक था, लेकिन यूरॅपपर उसने कोई नयी वैचारिक छाप नहीं लगायी। दूसरे महायुद्धके बाद कोई नया टी० एस० ईलियट क्रान्ति करने कविताके रंगमंचपर नहीं आया। अगर भूकम्पसे शहरका एक-एक मकान ढह गया हो, तो दूसरे भूकम्पसे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता, भले ही वह ज़्यादा भयंकर क्यों न हो।

टी० एस० ईलियट उस अराजकताके कवि थे, जो युद्धके दौरान इंग्लैण्डमें पैदा हुई। उन्होंने अराजकतापर कविता लिखी, और कवितामें अराजकता पैदा भी की। पुराने रोमैण्टिक कवियोंका नक़ली, भावुक और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घिसा-पिटा तरीक़ा छोड़कर उन्होंने शहरी, मशीनी ज़िन्दगीका नया मुहावरा गढ़ा। उन्होंने व्यंग्य और चुटकी और दुहरे अर्थोंकी वह परम्परा फिरसे क़ायम की, जो ऑगस्टन युगके बाद अँगरेज़ीमें समाप्त हो गयी थी। रोमैण्टिक कवि बेचारे भावुकताके उफनते तालाब थे, और कविताको वे एक नल मानते थे, जिसके रास्ते भावुकता अपने आप बहती रहती है। अपनी कवितासे वे कभी अलग नहीं रह पाये। लेकिन ईलियटके लिए कविता अलग चीज़ थी, और कविका व्यक्तित्व अलग चीज़। वे तो यहाँतक मानते थे कि कविताका मन्त्र पढ़कर कवि अपने व्यक्तित्वके भूतको भगाता है, उससे छुट्टी पाता है लेकिन यह सोचना ग़लत होगा कि ईलियटने कविके और कविताके व्यक्तित्वके बीच कोई रिश्ता ही नहीं माना। उन्होंने लिखा, जिसके पास व्यक्तित्व हो वही महसूस कर सकता है कि व्यक्तित्वसे भागना क्या होता है।

हालाँ कि वेस्ट लैण्डके प्रकाशनके बाद कुछ दिनों तक यह शोर रहा कि इंग्लैण्डमें रीतिकाल वापस आ गया है, लेकिन दरअसल टी० एस० ईलियटकी कविताकी तुलना ड्राइडेन या पोपके ज़मानेके कवियोंसे नहीं की जा सकती। ईलियटकी कवितामें जो विश्व-वेदना है, जो मार्मिक दार्शनिकता है, ईसाई धर्मके प्रति जो आस्थापूर्ण आग्रह है, वह अठारहवीं शताब्दीके दरबारी कवियोंमें कहाँ था! वे तो हलके-फुलके सामाजिक राजनैतिक विषयोंपर व्यंग्यपूर्ण बौद्धिक कविताएँ लिखा करते थे। ईलियटने अपने एक लेखमें कहा है कि 'सच्चा कवि सारे अनुभवको पचाकर कविता लिखता है, रसोईघरके मसालोंको ख़ुशबू और शंकराचार्यके भाष्य, सबको घुट्टी बनाकर वह रक्तमें मिलाता है, और तब लिखता है।' 'वेस्ट लैण्ड' एक ऐसी ही कविता है, जिसमें एक ही पंक्तिमें माईकेल एंजेलो और मसाल-डोसा एक दूसरेका कन्धा रगड़ते हुए गुज़रते हैं, और एक अजीब-सा वातावरण बनाते हैं, जिसमें भव्यता भी है, और छिछलापन भी है। दरअसल ईलियटने व्यंग्यकारका तरीक़ा कवितामें अपनाया है; उन्होंने कहीं भव्य चीज़ोंका छिछलापन साबित किया है, और कहीं छिछली चीज़ोंमें रोमान्स और भव्यताकी झलकें देखी हैं। जिस तरह आज-कलके प्रयोगवादी सिनेमामें वातावरणका प्रभाव पैदा किया जाता है, इसी तरह ईलियट-ने 'वेस्ट लैण्ड' लिखा है। उसमें कई बिखरे-बिखरे चित्र हैं, ताश खेलती रईसज़ादी, तेज़ और कोयलेके किनारोंवाली नदी, अपने प्रेमीका इन्तज़ार करनेवाली स्टेनो-टाइपिस्ट, शेक्सपियर और दान्तेकी प्रतिध्वनियाँ, चट्टानें, रेगिस्तान और झरने, बादलोंकी गरजसे होने-वाली आकाशवाणी, सबके सब एक वातावरण बनाते हैं। अगर साहित्य समाजका दर्पण है, तो 'वेस्ट लैण्ड' बीसवीं शताब्दीका आइना है। अब अगर उसमें प्रतिबिम्ब टूटे-फूटे, बेतरतीब और बेमतलब हैं, तो यह ज़मानेका क़सूर है। ईलियटसे जब शिकायत की गयी कि उनकी कविता दुरूह और जटिल है, तो उन्होंने कहा कि आजका कवि क्योंकि बड़े अजीब अनुभवों-को हज़म कर रहा है, इसलिए वह सरल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता नहीं रच सकता। लेकिन कविताके अर्थकी इतनी चिन्ता क्यों की जाये? ईलियट तो यहाँतक कहते थे कि कविताका लुत्फ़ लेनेके लिए उसे समझना ज़रूरी नहीं है।

तो ईलियटकी कविता रीतिकालकी ओर नहीं लौटी। हालाँ कि उन्होंने अपने आपको क्लासिसिस्ट कहा, लेकिन ईलियट एक गहरे मानेमें रोमैण्टिक थे। अगर उन्होंने गड़रियों और गँवार औरतोंपर कविता नहीं लिखी, बुलबुल और कोयल और स्कायलार्कके प्रति रुचकानी बातें नहीं कहीं, तो इसका यह मतलब नहीं होता कि वे रोमैण्टिक नहीं थे। ईलियट रोमैण्टिक थे, लेकिन अलग क़िस्मके थे। उन्होंने इस सदीके कूड़े-करकटके बीच एक स्थायी आस्थाकी खोज शुरू की, और अन्तमें वे 'फोर क्वार्टेट्स' के सौम्य एवं शान्त बिन्दु तक पहुँचे। दरअसल 'वेस्ट लैण्ड' से लेकर 'फोर क्वार्टेट्स' तक ईलियटने जो प्रगति की है, वह ताण्डव-नृत्यसे शुरू करके उसके मध्यमें स्थित स्थितप्रज्ञ बिन्दु तककी प्रगति है। ईलियटकी कविता हमेशा उनके जीवनकी आध्यात्मिक तीर्थयात्राकी रिपोर्ट रही है, और जैसा अविकल यात्रा-वर्णन उन्होंने लिखा है, वैसा शायद मिलटनके अलावा अन्य किसी कविने नहीं लिखा होगा, हालाँ कि मिलटनसे उन्हें इतनी नापसन्दगी थी। सचमुच मिलटन और ईलियटमें अनेक समानताएँ हैं। दोनों कवि एक धार्मिक दर्शनसे प्रेरित थे। दोनोंने परम्पराको, पुराणोंको, प्राचीन ग्रन्थोंको पचाकर रचना की। दोनोंका मिजाज़ आत्म-केन्द्रित महाकाव्य लिखनेवाला था। ईलियटने

ईलियट जितने किताबी थे,
और सिद्धान्त-केन्द्रित
थे, उतना मिलटनके अलावा कोई
और कवि नहीं रहा। उनकी
कविता पढ़ो तो लगता है
कि परम्परा और
पुस्तकोंका एक शहतूतका ढेर है,
जिसमें रेशमका कीड़ा
सरगरमीसे जुटा हुआ है।
साहित्यके बारेमें नियम यह है
कि जब वह वर्णसंकर
होता है, तभी वह स्वस्थ
एवं ऊँची जातिका
होता है। लेकिन ईलियटका
साहित्य स्वस्थ एवं ऊँचे साहित्य
का समन्वय है, इसलिए
उसमें एक अजीब-सी
वर्ण-संकरता है। भविष्यके
आलोचक जब
ईलियटका मूल्यांकन करेंगे,
तब वे शायद ईलियटपर
साहित्यिक इन्सेस्टका
आरोप लगायेंगे।

मिलटनको अँगरेज़ी-साहित्यकी मुख्य धारासे अलग बताया, फिर उसकी स्वायत्त एवं एकाकी महानता स्वीकार की, और कहा कि किसीको मिलटनकी नक़ल करके अपनी कविता नहीं बिगाड़नी चाहिए। आजके अँगरेज़ी आलोचक अमेरिकामें जन्मे ईलियटपर आरोप लगाते हैं कि उनकी कविता अँगरेज़ीकी मुख्य धारासे अलग है। ईलियटकी नक़ल करनेका अबतक किसीने प्रयत्न भी नहीं किया है। अँगरेज़ी साहित्यमें आगे-पीछे ईलियटकी भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक छतरी बननेवाली है, जो मिलटनकी तरह ही एकान्त और अलग-थलग होगी।

ईलियटके आविर्भावके बाद अँगरेज़ी साहित्यके कुछ उपेक्षित युगों और कवियोंको बड़े ज़ोरदार ढंगसे रोशनीमें लाया गया। खासकर उन कवियोंकी बड़ी शोहरत रही, जिन्हें मेटाफिज़िकल कवि कहा जाता था। सत्रहवीं शताब्दीका कवि जॉन डन एकाएक अँगरेज़ोके प्रथम श्रेणीके कवियोंमें गिना जाने लगा। ईलियटने घोषित किया कि मेटाफिज़िकल कवियोंके लिए विचार सिर्फ़ विचार नहीं था, वे उन्हें गुलाबकी खुशबूकी तरह अपने रक्तमें महसूस करते थे। भावना भी उनके लिए महज़ भावना नहीं थी, वह बौद्धिकताकी वस्तु थी। स्पिनोझाको वे रसोईकी गन्धकी तरह महसूस कर सकते थे, और रसोईकी गन्धमें वे स्पिनोझाका दर्शन सूँघ सकते थे। यही ईलियटका आदर्श था। लेकिन ईलियटने इन आधिभौतिक कवियोंको इतना महत्त्व दिया, इसका आवश्यक रूपसे यह मतलब नहीं होता कि अँगरेज़ी साहित्यमें उनका महत्त्व शाश्वत है। इसका मतलब केवल इतना ही है कि ईलियट और उनके बादके कवियोंके लिए आधिभौतिक कविताकी परम्परा एक अच्छी परम्परा साबित हुई है, जिससे वे कविताके कई औज़ार उधार ले सके। ईलियटने मिलटनसे इन्कार किया, क्योंकि वर्तमान पीढ़ीके लिए मिलटनका उदाहरण उन्हें घातक लगा। उन्होंने डन और हर्बर्ट और मार्वेलको महत्त्व दिया, क्योंकि वर्तमान कविताके लिए वे उपयोगी थे। लेकिन सच बात यह है कि अंगरेज़ीके सबसे बड़े मेटाफिज़िकल कवि स्वयं टी० एस० ईलियट थे, और उनका सत्रहवीं शताब्दीके आधिभौतिक कवियोंसे वैसा ही दूरका रिश्ता है जैसा ऐलिज़ाबेथन सॉनेट-लेखकोंके साथ शेक्सपियरका रिश्ता था।

टी० एस० ईलियट मानते थे कि साहित्यका सबसे ऊँचा प्रकार कवितामें लिखा गया नाटक है। शेक्सपियर और उनके बादके नाटककार उन्हें पसन्द थे, और ईलियटकी टिप्पणियोंके परिणामस्वरूप इन एलिज़ाबेथन नाटककारोंका भी पूनर्मूल्यांकन हो चुका है। लेकिन ईलियट कभी कविताकी यह तीसरी आवाज़ (उन्होंने कविताके तीन स्वर बताये हैं—एक कवि स्वयं अपनेसे बात करते हुए, दूसरे कवि श्रोताओंको सम्बोधित करते हुए, और तीसरे कवि, नाटकके पात्रोंके बीच अपना व्यक्तित्व समाप्त करते हुए) सफलतापूर्वक नहीं अपना पाये। दरअसल उन्होंने जो स्वर सबसे सफलतापूर्वक अपनाया, वह नाटकीय स्वगत-भाषण (ड्रामेटिक मोनोलॉग)वाला स्वर है, जिसे उनके पहले ब्राउनिंगने अपनाया था। प्रुफ्रॉक और टाइरेसियासका व्यक्तित्व अपनाकर बोलनेवाला कवि ही ईलियटका सच्चा कवि है।

उनके नाटकोंमें सबसे अच्छा निःसन्देह 'मर्डर इन द केथीड्रल है' और 'मर्डर इन द केथीड्रल' न तो अच्छे चरित्र-चित्रणके लिए। याद रखा जाता है, न अच्छे कथानकके लिए। उसकी हर पंक्तिपर ईलियटकी स्पष्ट छाप लगी है, और वह पहले स्वरवाले लिरिकल कविकी छाप है। दरअसल वह ईलियटकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईसाई आध्यात्मिकतासे ओतप्रोत है। इस तरहके धार्मिक सन्देश इंग्लैण्डके 'मोरेलिटी' नाटकोंमें अक्सर हुआ करते थे, हालाँ कि 'मर्डर इन द केथीड्रल' 'मोरेलिटी' नाटकोंकी तरह स्थूल और फूहड़ नहीं है। लेकिन बीसवीं शताब्दीके इंग्लैण्डमें कोई ऊँचे दर्जेका 'मोरेलिटी' नाटक-कार पैदा हो, तो वह पनप नहीं सकेगा, क्योंकि उस क़िस्मके नाटकोंका सिलसिला अब चल नहीं ही सकता। अगर अँगरेज़ी नाटक-कारोंमें ईलियटका ठेठ विपरीत खोजना हो, तो शायद क्रिस्टोफ़र मार्लोका नाम लेना होगा। मार्लोके नाटकोंमें मनुष्यकी भूखी और अराजेय आत्मा अपने लिए भौतिक उपलब्धि-के नये-नये साम्राज्य खोजती नज़र आती है। 'टैमरलेन' में मार्लोने तैमूरकी खूँख़ार दिग्वि-जयका अभिनन्दन किया है, और हत्या और हिंसाके अन्दर कविताके दर्शन किये हैं। 'डॉक्टर फॉस्टस्' का नायक मानो आजकलका वैज्ञानिक है, जो भूख-प्यास भूलकर ज्ञानके लिये साम्राज्य जीतनेके लिए प्रयोगशालामें भिड़ा रहता है, और ज्ञानके लिए अपनी आत्मा शैतानको बेच देता है। 'ज्यू ऑफ़ माल्टा' में लालच और कंजूसी और अथाह धन-लिप्साकी कविता महसूस की गयी है। ईलियटका 'मर्डर इन दे केथीड्रल' इससे बिलकुल उलटा है, और उसमें समर्पण, बलि-दान, आत्म-विसर्जन, वासनादमन आदिके ईसाई प्रतीकोंका उपयोग किया गया है। मार्लोके पद्यमें जहाँ एशियाई विजेताओं-जैसी उद्धतता है, और जंगली बहार है, वहाँ ईलियट के पद्यमें संयम है, और तनाव है; ऐसा संयम और तनाव जैसा कि बुद्धत्वके रास्तेपर आगे बढ़ते हुए लोगोंके मनमें होता है।

दरअसल ईलियटकी कवितामें गहनताके बावजूद जो संयम है, वह शायद अँगरेज़ीमें और कहीं नहीं मिलेगा। अँगरेज़ीके अधिकांश कवि संकलनोंमें पढ़े जाते हैं, क्योंकि उनकी कुछ अच्छी कविताएँ ढेर सारी मामूली कवि-ताओंके बीच छिपी होती हैं। रोमैण्टिक कवियोंकी सारी ख्याति उनकी चुनिन्दा कविताओंपर आधारित है। लेकिन ईलियट-ने बहुत कम कविताएँ लिखीं (या छपायीं)। उनकी एक भी प्रकाशित कविता ऐसी नहीं है, जिसे रद्दी मानकर ठुकराया जा सके। शुरूसे आख़िर तक एक ही स्तरकी कविता लिखते रहना कोई साधारण उपलब्धि नहीं है। इस दौरानमें ईलियटने शायद कई रचनाओं-को रद्दीकी टोकरीमें डाल दिया होगा। उन्होंने सिर्फ़ ऐसी कविताओंको दुनियाके सामने पेश किया, जिन्हें 'टी० एस० ईलियट : एक संकलन'-जैसे ग्रन्थमें-से किसी क़ीमतपर निकाला न जा सके। अपनी कौन-सी कविता शाश्वत महत्त्वकी है, और कौन-सी चलतू है, इसके बारेमें बर्डस्वर्थ-जैसे महान् कविको समझ नहीं थी, लेकिन ईलियटमें इस मानेमें ग़ज़बकी समझदारी थी।

ईलियट जितने किताबी थे, और सिद्धान्त-केन्द्रित थे, उतना मिलटनके अलावा कोई और कवि नहीं रहा। उनकी कविता पढ़ो तो लगता है कि परम्परा और पुस्तकोंका एक शहतूतका ढेर है, जिसमें रेशमका कीड़ा सरगरमीसे जुटा हुआ है। जीवनके बजाय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किताबोंसे प्रेरणा नहीं ग्रहण करनेवाले कवि भी इंग्लैण्डमें ऐसे बहुत कम हुए हैं। ईलियटका साहित्य जीवनसे उपजा नहीं लगता, वह प्राचीन साहित्यसे उपजा लगता है। साहित्यके बारेमें नियम यह है कि जब वह वर्णसंकर होता है, तभी वह स्वस्थ एवं ऊँची जातिका होता है। लेकिन ईलियटका साहित्य स्वस्थ एवं ऊँचे साहित्यका समन्वय है, इसलिए उसमें अजीब-सी वर्ण-संकरता है। भविष्यके आलोचक जब ईलियटका मूल्यांकन करेंगे, तब वे शायद ईलियटपर साहित्यिक इन्सेस्टका आरोप लगायेंगे।

ईलियटका मनोवैज्ञानिक निवास दान्तेकी आध्यात्मिक दुनियामें था। अगर उस युगमें वे जन्म लेते, तो सबसे आराममें रहते। ईलियट अगर भारतमें पैदा होते तो यहाँ भी उन्हें बिलकुल अटपटा नहीं लगता। क्योंकि हिन्दीकी रहस्यवादी भक्ति परम्पराके वे आसानीसे बीसवीं सदीके संस्करण बन जाते। दरअसल यह कहना ग़लत नहीं होगा कि ईलियट-का मस्तिष्क एक हिन्दू मस्तिष्क है। नृत्यके बीच स्थिर बिन्दुकी खोज, समयके भँवरमें शाश्वतकी खोज, इच्छाओंके बीच मुक्तिकी खोज, दरअसल एक हिन्दू खोज है। भारतमें ईलियट (और शेली) की लोकप्रियताका एक राज़ शायद यह भी हो। ईलियट मूलतः एक दार्शनिक कवि थे। वे केवल दार्शनिक नहीं थे, इसलिए दर्शनको केवल दर्शनके रूपमें नहीं रख पाये। उसके लिए उन्हें काव्यके सजीव बिम्ब खोजने पड़े। वे केवल कवि नहीं थे, कीट्सकी तरह, इसलिए दुनियाकी रंगीनियत और ख़ूबसूरती उनके लिए अपने आपमें महत्त्वपूर्ण नहीं रही। उनकी कविता सन्देश-प्रधान थी, और इस मानेमें वे मिलटन और वर्ड्स्वर्थ-जैसे कवियोंके सीधे उत्तराधि-कारी ठहरते हैं, भले ही उन्होंने इस विरासत-से कितना ही इन्कार किया हो। उनकी रचना-प्रक्रिया अमूर्तको मूर्त करनेकी, सन्देशको कविता बनानेकी रचना-प्रक्रिया है। जिस विलियम शेक्सपियरको अँगरेज़ीका सबलतम प्रेरणा-स्रोत माना जाता है, उसकी रचना-प्रक्रिया ऐसी नहीं थी। ■■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माध्यम

हिन्दी साहित्य सम्मेलन
द्वारा प्रकाशित
तथा श्री बालकृष्ण राव-द्वारा
सम्पादित मासिक

'माध्यम' एक वर्ष की
अल्पावधि में
हर प्रबुद्ध पाठक की सबसे
प्रीतिकर पाठ्य-सामग्री
बन गया है।

'माध्यम' के प्रवेशांक से
अबतक की पूरी फ़ाइल की
धुआँधार माँग इसके स्थायी
महत्त्व और लोकप्रियता का
परिचायक है।

सहवर्ती साहित्य, विवेचना, प्रतिपत्तिका,
समीक्षाएँ, प्रत्यालोचन-पुनर्विचार, हिन्दीजगत्, पत्र-पत्रिकाएँ
'माध्यम' के स्तम्भगत आकर्षण हैं।

● ●

एक अंक का मूल्य : १.०० । वार्षिक शुल्क : १०.००

● ●

पत्राचार : पो० बा० सं० ६०, इलाहाबाद
सम्पादकीय तथा व्यवस्थापकीय कार्यालय :
हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी एककी उलझन

महेन्द्र कुलश्रेष्ठ

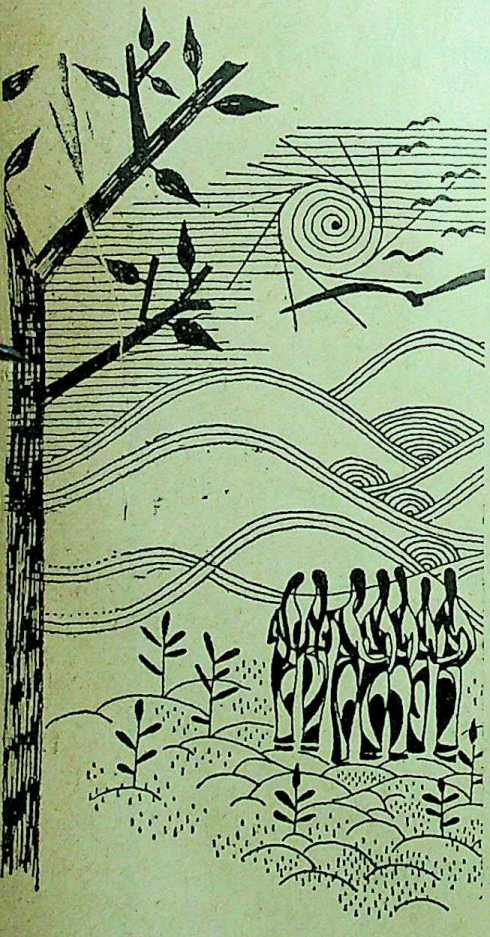

आधुनिक जापानी उपन्यासकार कोबो एबे का नया उपन्यास 'रेतीले ढूह और औरत' अज्ञेयके 'अपने-अपने अजनबी' की याद दिलाता है। निराशाजनक घिरावकी परिस्थितियोंमें फँसकर कोई व्यक्ति और समूह कैसा बरताव करता है, किस ढंगसे अस्तित्वको समस्याओंपर सोचता है—यह इस उपन्यासका विषय है। 'अपने-अपने अजनबी' के पात्र बर्फ़के भीतर फँसे हैं, इस उपन्यासके पात्र चारों तरफ़ रेतसे ढके एक घरमें फँसे हैं। यहाँ पात्रोंके रूपमें एक समूह भी है, उस गाँवके निवासियोंका जहाँपर घर है। इस उपन्यासको दार्शनिक तौरपर अस्तित्ववादी भी कह सकते हैं क्योंकि न केवल कथानकमें, अपितु सारे वातावरणमें भी परिस्थितिकी व्यर्थता तथा पहलेसे ही प्रयत्नोंकी असफलताके ज्ञानका बोध है—भाषा और शैली भी इसीके अनुरूप भावहीन तथा सीधी-सादी है। कोबोके ऊपर आरम्भसे ही काफ्का, यास्पर्स, हीडेगर, नीत्शे और दास्तॅवस्कीका प्रभाव रहा है। जापानमें इस उपन्यासको बड़ी चर्चा रही और उसे वहाँका सर्वोत्तम पुरस्कार—योमिऊरी—भी प्राप्त हुआ। फिर इसकी फ़िल्म भी बनी जो बॉक्स-ऑफ़िसपर हिट रही, यद्यपि 'कलात्मक' फ़िल्मके रूपमें बनायी जानेके कारण जिसके ज़्यादा चलनेकी आशा नहीं थी।

एक अध्यापक है जिसे कीड़े-मकोड़े इकट्ठे करनेका शौक है। तीन दिनकी छुट्टी वह समुद्रके किनारे रेतके टूहोंमें बिताना चाहता है ताकि रेतमें रहनेवाला कोई नये प्रकारका कीड़ा खोजकर निकाल सके। वह किसीको बताये बिना इस कामके लिए चल पड़ता है। छुट्टी बीत जाती है पर वह वापस नहीं लौटता। लोग तरह-तरहकी शंकाएँ करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़िन्दगी और रेतकी समानता : कोबो आबे

कोई कहता है, किसी औरतके फेरमें होगा; कोई कहता आत्महत्या कर ली होगी—और पुलिस खोज करती है। सात साल बीत जाते हैं और उसका कहीं पता चलता। तब कचहरी घोषित कर देती है कि निकी नामक यह व्यक्ति मर गया है।

पर वह मरा नहीं था, बाक़ायदा ज़िन्दा था। हुआ यह रेलसे उतरकर जब वह अपने गन्तव्य स्थानको जाने लगा तो एक गाँवके पास पहुँचा जहाँ रेतके अनेक ढूहे थे। रुककर वह अपने औज़ारों और लेन्सोंसे कीड़े-मकोड़ों-का जाँच करने लगा। गाँववालोंने उसे सरकारी आदमी समझकर पहले तो उसके प्रति आतंक व्यक्त किया, फिर कुछ सही परिचय पाकर उसका स्वागत किया। रात होने लगी थी और निकीने इसी गाँवमें रात बितानेकी इच्छा प्रकट की। गाँववालोंने कहा कि हम ग़रीब हैं और यहाँ कोई आराम भी नहीं मिलेगा, पर वह ज़िद करता रहा। गाँववाले उसे एक टूटे-से घरमें ले गये जो रेतके कगारों-के घिरा, मानो एक कुएँके भीतर बना था। और भी घर वहाँ ही थे। यहाँ ३० वर्षकी एक स्त्रीने उसका स्वागत किया। घरमें और कोई नहीं था।

खाना खाते हुए निकी औरतके साथ बात-चीत करता रहा। उसने बताया कि रेत यहाँ चौबीसों घण्टे उड़ती रहती है, इसलिए यहाँ कोई भी वस्तु स्थिर नहीं है। आँधी-तूफ़ान रोज़ ही आते हैं और ढूह बनते-बिगड़ते रहते हैं। इसके कारण मकानोंकी लकड़ी सड़ती-टूटती रहती है। घण्टे-घण्टे हर जगह आध इंच रेतकी पर्त जमा हो जाती है। हर सातवें गाँवके सब लोग मिलकर कुदालोंसे उसे काटते और दूर ले जाकर छोड़ देते हैं—दिनमें वे सोते हैं। ऐसा न किया जाये तो दस दिनमें गाँवका नामोनिशान मिट जाये। निकीने देखा कि खाना खिलाते समय भी औरत उसके सिरपर एक छाता लगाये थी जिससे रेत खानेमें न गिरे। यह सब देखकर उसे बड़ा आश्चर्य होता है।

भोजनके बाद औरत घरके बाहर जाकर रेतकी खुदाई करने लगती है। रस्सियाँ बँधी हैं जिनके सहारे पीपे आ-जा रहे हैं, उनमें लोग रेत भर देते हैं। तभी ऊपरसे कोई एक कुदाल फेंकता है और कहता है—यह उस आदमीके लिए है। निकीको शक होता है, क्या उसे भी यह काम करना पड़ेगा। वह बाहर आकर देखता-भालता है। रस्सीकी जिस सीढ़ीके सहारे वह नीचे लाया गया था, वह भी नहीं है, ऊपर खींच ली गयी है—तो क्या वह यहाँ बन्दी है? उसे डर लगने लगता है। उसे नींद नहीं आती। बिस्तरपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेटे वह रेतकी महिमापर विचार करता रहता है। $\frac{1}{2}$ मिलीमीटरके इन कणोंमें कितनी ताक़त है! यह मिट्टीकी तरह कहीं जमता-टिकता नहीं, बहता रहता है। इसके बहने ने ही इतिहासके कितने ही नगरोंको ध्वस्त कर दिया, यह गाँव भी उसका शिकार है।

जब वह जागा तो दोपहर हो रही थी। उसे प्यास लगी थी। पानी पीने वह चौकेकी तरफ़ गया तो देखा कि औरत ज़मीनपर नंगी सो रही है, सिर्फ़ उसका मुँह कपड़ेसे ढका है। सारे शरीरपर रेतकी तह जमी है। पसीना टपक रहा है। वह उसे देखता रहा, फिर यह सोचकर कि अब उसे चल देना चाहिए, सामान लेकर बाहर आया। समतल ज़मीनपर पहुँच पानेका कोई उपाय नहीं था। रस्सीकी सीढ़ी नहीं थी, रेतपर वह चढ़ नहीं सकता था। हारकर उसने औरत-को जगाया। पहले तो वह शर्मसे झुकी रही, फिर कपड़े पहनने लगी। निकीने सोचा, शायद गरमी और रेतके कारण वह नंगी सोती है। बातचीत करनेपर उसे स्पष्ट हो गया कि गाँवमें आदमियोंकी कमी है और रेत साफ़ करनेमें औरतकी सहायता करनेके लिए उसे यहाँ बन्द कर दिया गया है। औरतका पति और बच्चा एक तूफ़ानमें रेतके नीचे दबकर मर चुके हैं। अब कोई आशा नहीं रही। यह औरत उसकी अच्छी सेवा करती है, चुहल भी करती है। वह उसे अच्छे खाने पकाकर खिलाती है, सिगरेट और शराब मँगवाकर देती है।

निकी भाग निकलनेकी योजनाओंपर विचार करता रहता है। वह काम नहीं करता, बीमारीका बहाना करता है कि उसे व्यर्थ जानकर गाँववाले उसे छोड़ दें। पर यह चाल काम नहीं आती। औरत बताती है कि कुछ और भी लोगोंको बन्द किया गया, जिनमें-से एकाध मर भी गये। यानी गाँववालोंको मरनेकी फ़िक्र नहीं है। एक रात जब औरत काम कर रही है, तब वह उसे बाँधकर डाल देता है। फिर पीपोंकी जगह खुद लटक जाता है जिससे कि ऊपरवाले उसे ही पीपा समझ कर खींच लें। पर यह भी सम्भव नहीं होता। बहुत भारी होनेके कारण लोग उसे देखते हैं, फिर छोड़ देते हैं—वह धपसे गिर पड़ता है। गुस्सेमें वह सबको गालियाँ देता है, कहता है, उसकी खोज हो रही होगी, पुलिस पता लगा कर सबको सज़ा देगी।

अब वह इधर-उधरकी चीजें जोड़कर एक रस्सी बनाना चाहता है जिसे ऊपर किसी चीज़से हिलगाकर वह खुद चढ़ सके। औरत उसे ऐसा करनेसे रोकती है। शारीरिक द्वन्द्वमें दोनोंका यौन-सम्बन्ध हो जाता है। कुछ समय बाद वह रस्सी बनानेमें सफल हो जाता है। आधी रातके बाद जब औरत सो रही है, वह खपरैलपर चढ़कर रस्सीमें कमन्द लगाकर बाहर फेंकता है। कमन्द फँस जाती है, और वह बाहर आ जाता है। दौड़ने लगता है। गाँवसे बाहर निकलते ही वह एक दलदलमें फँस जाता है। कहता है—'मुझे बचा लो, मैं तुम्हारी सब शर्तें मानूँगा।' गाँववाले उसे निकालकर फिर औरतके पास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जोड़ जाते हैं।

अब वह स्थिर होकर रहनेका विचार करता है। उसने विज्ञान पढ़ा है, इसलिए वह रेतसे बचनेके लिए प्लास्टिककी छतरी बनाता है, सोनेके लिए प्लास्टिकका तम्बू बनाता है, गरम रेतमें गाड़कर मछलियाँ भूननेकी तरकीब निकालता है। वह कौओंको हँसानेके लिए बाँस गाड़ता है, जिसमें डोरोंसे बँधी मछलियाँ लटकी हैं। इसका नाम वह 'आशा' रखता है। पर कोई कौआ नहीं हँसता।

पानीकी बड़ी कमी है। एक दिन वह देखता है कि बाहर रखी बालटीमें चार इंच पानी भरा है। यह कहाँसे आया? बरसात तो पन्द्रह दिन पहले हुई थी। फिर यह सूखा क्यों नहीं? बालटीमें नीचे छेद भी है। उसने बालटी उठायी और छेदसे पानी बह गया। अर्थात् जो पानी सूखता था, उसकी कहींसे पूर्ति होती जाती थी—क्या रेतमें-से, छेदमें होकर? इस रहस्यको वह सोचता रहा। उसे विचार आया कि रेतकी सिर्फ़ ऊपरी सतह खुश्क होती है, भीतर पानी होता है, जो भयंकर गरमीसे भी नहीं सूखता। यानी रेतीली धरतीके भीतर पानीकी धाराएँ बहती रहती हैं। कौए फँसानेके लिए गाड़े गये बाँसने कहीं भीतर कोई धारा बालटीके छेदसे जोड़ दी है। अरे वाह! यह तो खूब रही।

अपनी इस खोजपर वह पुलकित हो उठा! इस सम्भावनापर और भी कार्य करके रेतसे जलकी धाराएँ बहायी जा सकती हैं।

निकले ही नहीं, समूचा गाँव ही 'एब्सर्ड' परिस्थितियोंका शिकार है। उनके लिए जीवित रहना कठिन ही नहीं, असम्भवके समान है। निरन्तर रेतसे लड़ते रहकर ही वे अपने जीवनको बचाये रह सकते हैं। सरकार उनकी सुनती नहीं, स्थान-परिवर्तनके लिए उनके पास पर्याप्त धन नहीं है। फिर वे क्या करें? मनुष्य अधिक-से अधिक जो कर सकता है, उसे वे करते हैं। सारे गाँवकी उन्होंने यूनियन बनायी है और मिल-जुलकर काम करते हैं। रेत-सफ़ाईका काम बड़ा ही सांगठित है। वे रातको यह काम करते हैं क्योंकि तब रेत गीली होनेके कारण ज़रा स्थिर होती है, आसानीसे काटी जा सकती है। दिनमें तो वह खुश्क और पानीकी तरह बहती है, इधरसे पकड़ो तो उधर निकल जाती है, किसी तरह क़ाबूमें नहीं आती।

फिर तो सभी कष्ट दूर हो जायें। रेत भी कालान्तरमें स्थिर होकर मिट्टी बन जाये, गाँव स्थिर हो जायें, जीवन स्थिर हो जाये····! वह ज़ोर-ज़ोरसे हँसने लगा।

औरत गर्भवती है पर उसका गर्भपात हो जाता है। गाँववाले उसे अस्पताल ले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानेको आते हैं। रस्सीकी सीढ़ीपर लदकर वह ऊपर जाती है, फिर अस्पताल। निकी आश्चर्यसे देखता है, सीढ़ी लटकी ही है, उसे वापस नहीं लिया गया है। वह चढ़कर ऊपर पहुँचता है। दिनका उजाला भी है, चाहे तो वह भाग सकता है, मुक्त हो सकता है। पर वह अपनी खोजके विषयमें सोचता है, जिसपर उसे अभी बहुत काम करना है। वह ज़रा घूम-फिरकर नीचे उतर आता है।

फिर सात साल बीत जाते हैं।

■

इस प्रकार उपन्यासमें उसका नायक निकी ही नहीं, समूचा गाँव ही 'एब्सर्ड' परिस्थितियोंका शिकार है। उनके लिए जीवित रहना कठिन ही नहीं, असम्भवके समान है। निरन्तर रेतसे लड़ते रहकर ही वे अपने जीवनको बचाये रह सकते हैं। सरकार उनकी सुनती नहीं, स्थान-परिवर्तनके लिए उनके पास पर्याप्त धन नहीं है। फिर वे क्या करें? मनुष्य अधिकसे अधिक जो कर सकता है, उसे वे करते हैं। सारे गाँवकी उन्होंने यूनियन बनायी है और मिल-जुलकर काम करते हैं। रेत-सफ़ाईका काम बड़ा ही संगठित है। वे रातको यह काम करते हैं क्योंकि तब रेत गीली होनेके कारण ज़रा स्थिर होती है, आसानीसे काटी जा सकती है। दिनमें तो वह खुश्क और पानीकी तरह बहती है, इधरसे पकड़ो तो उधर निकल जाती है, किसी तरह क़ाबूमें नहीं आती। यूनियन काम करनेवालोंका बड़ा खयाल रखती है, उन्हें नियम-पूर्वक पानी तथा जीवनकी अन्य सुविधाएँ पहुँचाती है।

गाँववाले प्रकृति, समाज और सरकारके शिकार हैं और परेशान होकर वे कुछ व्यक्तियोंको अपना शिकार बना लेते हैं। क्या उन्हें दोषी माना जाये? इस सवालका सही उत्तर नहीं दिया जा सकता। कठिनाइयोंके कारण ही गाँववालोंके नैतिक मूल्य बदल गये हैं—वे दूसरेकी परवाह नहीं करते, शायद कर ही नहीं सकते। यूनियन गलत ढंगसे रेत बेचकर कुछ पैसे कमाती है—यह बात औरतसे जब निकीको मालूम होती है, तब वह कहता है—इससे तो शहरोंकी जनताकी बड़ी हानि होती होगी। औरत कहती है—हम दूसरोंकी चिन्ता क्यों करें? निकी स्तब्ध रह जाता है। सोचता है, गाँवका चेहरा औरतने खोलकर रख दिया। मुखौटा उतर गया। यही गाँवका चरित्र है। आगे वह यह भी सोचता है कि गाँववालोंके दृष्टिकोणसे सच यह है कि शहरवालोंने उन्हें छोड़ दिया है। इसलिए वे ही शहरवालोंकी परवाह करें, इसका कोई कारण नहीं है।

ऐसी ज़िन्दगीका क्या कोई अर्थ है? निकी मनुष्यके जीवनमें कोई सार्थकता नहीं देख पाता। एक जगह वह अपने मित्रसे हुआ एक वार्तालाप स्मरण करता है, जो बहुत बोधप्रद है। वे शिक्षा-पद्धतिके विषयमें चर्चा कर रहे हैं। निकी कहता है—"जो शिक्षा-पद्धति जीवनकी कोई सार्थकता मानती है, उसमें मुझे सन्देह होता है। तुम्हारा क्या खयाल है?"

"'सार्थकता' से तुम्हारा तात्पर्य क्या?"

"ऐसी काल्पनिक शिक्षा जो मनुष्यको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वास कराये कि कोई वस्तु है, जब कि व्यक्ति उनसे भागना क्यों नहीं चाहता ?

होते हुए भी निरन्तर चलता रहता है।"

"यानी यथार्थवादी शिक्षा ?"

"नहीं। रेतका उदाहरण मैंने इसलिए दिया कि सारी दुनिया रेतकी तरह ही है। रेत-की मौलिक प्रकृति जानना अत्यन्त कठिन है। रेत सिर्फ़ बहता नहीं है, बहना ही रेत है।"

औरतके साथ निकीके यौन-सम्बन्धोंका बौद्धिक विश्लेषण उपन्यासकी विशेषता है। नितान्त भाव-हीनताके साथ उनका नक्शा खींचा गया है। मनुष्यके यौनाचारका भी एक दर्शन है या हो सकता है, यह अस्तित्व-वादी विचारकों और लेखकोंका विशेष योगदान है। प्रस्तुत विश्लेषणमें लेखक सेक्सके दो प्रकार बताता है। एक प्रकार है सेक्सकी शुद्ध क्षुधा-का—पेटकी क्षुधाकी तरह—जिसमें स्वादका प्रश्न नहीं उत्पन्न होता। फिर जब पेट भर जाता है, तब विविध प्रकारोंसे स्वाद लेनेका प्रश्न उत्पन्न होता है। यह दूसरा प्रकार है। दोनोंमें कामेच्छा एक-जैसी ही रहती है, पर रूप बदल जाता है। पहला प्रकार है सामान्य सेक्सका, दूसरा विशेष सेक्सका। उपन्यासके नायकको शुद्ध सेक्समें दिलचस्पी नहीं है, वह कहता है कि इसे तो मरनेके तुरन्त पहले भी किया जा सकता है। इनके अतिरिक्त लेखक 'आध्यात्मिक बलात्कार' की भी चर्चा करता है जिसमें दूसरेको कष्ट पहुँचानेसे पूर्व खुद कष्ट पाना पड़ता है।

उपन्यासमें लेखक यह प्रश्न भी उठाता है कि परिस्थितियाँ असम्भव होते हुए भी कोई

निकी औरतसे पूछता है कि वह इस गाँव और घरमें क्यों पड़ी है ? वह उत्तर देती है कि घरके बग़लमें उसके पति और कन्याकी अस्थियाँ दबी हैं, जिन्हें छोड़कर जानेका उसका मन नहीं होता। जिस स्थानको वह इंगित करती है, उसे निकी खोदता है, पर वहाँ हड्डियाँ नहीं मिलतीं। तब वह दूसरा स्थान बताती है, वहाँ भी नहीं मिलतीं। तीसरे स्थानपर भी नहीं मिलतीं। वह कहती है कि रेत स्थान बदलता रहता है, इसलिए क्या पता वे कहाँ हैं। इस वर्णनसे घटनाओंके अनिश्चय तथा वस्तुकी अस्थिरतापर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

औरत घरसे बाहर निकलकर कहीं घूमना-टहलना भी पसन्द नहीं करती। निकी उससे अकसर यह प्रस्ताव करता है, पर वह तैयार नहीं होती। कहती है, टहलनेसे थकान हो जाती है। फिर इसी बातको लेकर झगड़ा होता है जिसमें गाँववाले भी शामिल हैं, और इसका पर्यवसान निकी और औरतके शरीर-सम्बन्धमें होता है—जिसे सब देख रहे हैं और तालियाँ बजा रहे हैं। सेक्सकी इन घटनाओंसे लेखकने सम्भवतः यह दिखाया है कि भीषण मनोद्वेगकी दशामें ऐसी बातें सहज स्वाभाविक हैं और उनसे मनका तनाव भी दूर होता है।

घूमने-फिरनेके लिए राज़ी न होनेपर भी औरत अकेलापन बड़ी तीव्रतासे महसूस करती है। इसकी अभिव्यक्ति होती है उसकी दो इच्छाओंमें, जिन्हें वह पूर्ण करना चाहती है—एक रेडियो और एक आईना ख़रीदना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेडियोके लिए पैसे जमा कर रही है। निकी जब भागता है तब सोचता जाता है कि वह घर पहुँचकर अपने सब पैसे इकट्ठे करके भी औरतके लिए एक रेडियो ज़रूर भेजेगा। रेडियोसे उसकी बाह्य जगत्से सम्बद्ध होनेकी कामना पूर्ण होगी, आईनेसे खुद अपने-आपसे सम्बद्ध होनेकी। औरतके पास एक आईना है पर उसका पारा रेतकी गरमीके कारण उखड़ गया है। उसमें शक्ल देखनेपर अगर आँखें पूरी दिखाई देती हैं तो नाक कटी हुई, अगर नाक पूरी तो ठोड़ी ग़ायब, एक कान और आँख भी नदारद। उसे एक ऐसा आईना चाहिए जिसमें वह अपनेको समूचा देख, और अनुभव कर सके। इस घटनासे मनुष्यकी 'आइडेण्टिफ़िकेशन' की आवश्यकतापर अच्छा प्रकाश पड़ता है। फिर जब निकी बालूमें-से पानी निकालनेकी खोज करने लगता है, तब रेडियोकी ज़रूरत उसे भी पड़ती है, मौसमकी रिपोर्ट प्राप्त करते रहनेके लिए। यानी रेडियो लेना अब दोनोंका संयुक्त उद्देश्य हो गया है। निकी भी काम करके पैसा इकट्ठा करता है और दोनों मिलकर रेडियो खरीद लेते हैं। इस घटनासे लेखकने वैज्ञानिक यन्त्रोंकी भौतिक ही नहीं, आध्यात्मिक महत्ताको भी स्थापित करनेका प्रयत्न किया है।

उपन्यासके कथानकको एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि वह पूरी तरह यथार्थवादी है। उसमें कोई भी बात ऐसी नहीं है जो असम्भव प्रतीत हो और न कथानक कहीं टूटा ही है, वह बड़ी सुनिश्चित सम्बद्धताके साथ आदिसे अन्त तक फैला है। सभी घटनाएँ एक दूसरेसे बाक़ायदा जुड़ी हैं और स्पष्ट कार्य-कारण सम्बन्धोंको व्यक्त करती हैं। आधुनिक कहलानेवाले उपन्यासोंमें तारतम्यका प्रायः जो अभाव पाया जाता है—और जो, आधुनिकता' की एक विशेषता ही मान ली गयी है—वह इसमें नहीं है। शैली भी विचारोंको अत्यधिक स्पष्टतासे व्यक्त करनेवाली है।

दरअसल स्पष्टताका यह गुण वैज्ञानिकता तक पहुँच गया है। अर्थात् कीड़ोंके विवरण तथा रेतके गुण-अवगुणोंका वर्णन और इस प्रकारके अन्य सभी प्रकरण विषयकी गहनतम जानकारियोंसे परिपूर्ण हैं। इस दृष्टिसे यह उपन्यास 'साइन्स फ़िक्शन' की कोटिमें भी आ सकता है। लेखकके न केवल पिता डॉक्टर थे, अपितु उन्होंने स्वयं भी टोक्यो इम्पीरियल यूनिवर्सिटीसे डॉक्टरीकी डिगरी हासिल की है—यद्यपि उन्होंने यह कार्य किया कभी भी नहीं। गणितका भी उन्हें अच्छा ज्ञान है और कीड़े-मकोड़े एकत्र करनेमें भी वे बड़ी रुचि लेते रहे हैं। इस प्रकार उपन्यासकी आत्मा असन्दिग्ध रूपसे आत्म-कथात्मक है, शरीर भले ही न हो।

लेखक चरम कोटिकी निराशा और जीवनकी व्यर्थताका चित्र खींचते हुए भी उसमें प्रकाशकी किरण खोज पानेमें समर्थ होता है। इसीलिए उपन्यासका नायक मुक्त होकर भी फिर बन्दी जीवन अपनानेके लिए तैयार हो जाता है। ■■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निमकी बनाने के लिए

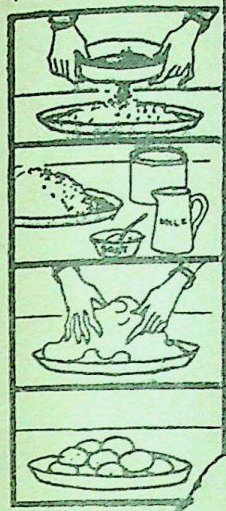

आटा छान लीजिए

मसल और घीकी वनस्पति मिलाकर इसे दूध के साथ सान लीजिए।

अब इसे अच्छी तरह गूंधिए।

छोटी छोटी पेड़िया बनाकर उन्हें बेल लीजिए और फिर गर्म वनस्पति में तल लीजिए।

लीजिए, स्वादिष्ट और जायकेदार निमकी तैयार हो गयी।

उत्तम एवम् स्वादिष्ट भोजन बनाने के लिए हनुमान वनस्पति पर ही भरोसा रखें।

भोजन बनाने का
श्रेष्ठ चिकनाई माध्यम

हनुमान
वनस्पति

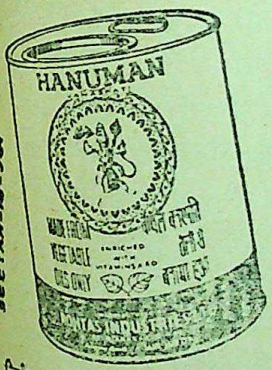

निर्माता :

रोहतास इन्डस्ट्रीज लिमिटेड
डालमियानगर (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेखाचित्र

लक्ष्मीकान्त वर्मा

उन सँकरी गलियोंवाले सील-भरे बड़े-बड़े पत्थरकी हवेलियों-से घिरे हुए नीमके पेड़के भी भाग्यमें शायद यही था कि उसके नीचे रोज़ सुबह, दोपहर, शाम दुराई बाबू एक-न-एक मौलिक समस्या लेकर आयें, उसपर बहस करें और समाधान तक पहुँचते-पहुँचते एक युद्धकी योजना बनाकर घर वापस चले जायें। लेकिन इन युद्धकी योजनाओंमें-से कितनी कार्यान्वित होतीं और कितनी ठण्डी हो जातीं यदि इसका लेखा लिया जाये तो स्पष्ट हो जायेगा कि आज पिछले बारह सालसे जो भी योजना बनायी गयी हो उसे कभी भी पूरा होनेका अवसर नहीं मिला था। इसका कारण यों तो मालूम करना असम्भव था लेकिन जबसे मैंने इस नीमके पेड़के सामनेवाला मकान किरायेपर लिया है तबसे लगभग, प्रत्येक योजनाको खण्डित होनेके कारण वे मेरे सामने स्पष्ट होकर व्यक्त होने लगे हैं। पिछले पाँच वर्षोंसे दुराई बाबूको मैं बहुत निकटसे जानने लगा हूँ। वह सुबह-सुबह मेरे घर आते हैं, एक प्याला गरम चाय, या कॉफ़ी पीते हैं, अखबारकी ख़बरें पढ़ते हैं, कुछ देर तक मुझसे बातें करते हैं, मेरी छोटी बच्ची गुड़ियाको कुछ क़िस्से सुनाते हैं और तबतक छोटकन महराज नीमके नीचेसे आवाज़ देते हैं—"कस हो गुरू" और बस दुराई बाबूको जैसे एलार्म मिल जाता है, अपनी लुंगी सरकाते और चश्मेका फ्रेम ठीक करते वह नीचे पहुँच जाते हैं। छोटकन महराजके और उनके दुआ-बन्दगी गालियोंसे शुरू होती है और फिर किसी तेज़ झड़पपर समाप्त होती है। तबतक आस-पासके मकानोंसे कुछ बेकार नवजवान, कुछ म्युनिसिपैलिटीके कर्मचारी, कुछ दलाल और कुछ और चाटवाले आकर जमा हो जाते हैं। किसीकी गोदमें बच्चा होता है, किसीके हाथमें मण्डीसे साग लानेवाला झोला, किसीके हाथमें एक सनलाईटकी बट्टी होती है तो किसीके हाथमें दातून! बातें शुरू हो जाती हैं, और टूटती हैं उस समय जब मुहल्लेके हाल-चाल पूछते-जाँचते गलीके नुक्कड़पर एक हिन्दी अखबार लिए हुए एक तरुण व्यक्ति—जिसको सब लोग एक मतसे दुराई बाबूका उत्तराधिकारी बताते हैं—आ जाता है। उसे देखते ही दुराई बाबू दूर ही से चिल्लाते हैं, 'आओ चेला!' और सब लोग सावधान हो जाते हैं!

पता नहीं, समूचे भारतमें यह परम्परा बन रही है या नहीं पर पिछले पाँच वर्षोंसे मेरा यह अनुभव पक्का होता जा रहा है कि भारतवासियोंमें खबरोंकी हेड लाइनें पढ़कर जूझनेकी प्रवृत्ति दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। दुराई बाबू चूँकि हमारे यहाँ आकर सुबहके अखबारकी मोटी-मोटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़बरें सब पढ़ चुके होते हैं इसलिए वह फ़ौरन कहते हैं—"क्या हिन्दीका अखबार लेकर आते हो ! अँगरेज़ीके जूठनसे रंगे अखबारमें ताज़ा समाचार कहाँसे होगा···आज तो न्यूज़ीलैण्डवालोंने हिन्दुस्तानियोंके छक्के छुड़ा दिये हैं ! ने—ली भी ले डाला है बच्चू·····"

"बस दुराई बाबू आप तो अँगरेज़ोंकी बढ़ती देखते यह नहीं देखते कि हमारे जवानोंने क्या किया है—" हिन्दीका अखबार खोलते हुए चन्दर कह पड़ता है।

"अरे बड़े आये तुम्हारे जवान ! बाबू, ये अँगरेज़—छक्के छुड़ा देंगे यह तुम्हारे·····" दुराई बाबू कुछ ठह-र कहते।

"क्यों नहीं दुराई बाबू" छोटकन महराज अपना लाल-रंगोछा सिरपर बाँधते हुए कहते, "जब जनम-भरके हाड़को रोंसे जुदा करनेमें अँगरेज़ एक सेकेण्ड नहीं लगाता तो फिर क्रिकेटके खेलकी क्या बात है— लॉर्ड कर्ज़नकी कहाँ हमी है।"

रातको बारह बजे तक चाट बेचकर लौटनेवाला चुन्नी भी अबतक अकड़कर कहता "बड़े चीमड़ होते हैं अँगरेज़ बाबू ! देखो तो वह डेक्स्टर कैसा जूझता है गेंदसे—जीराजल फूलकी खाना नहीं है, यह अँगरेज़ खिलाड़ी हैं, अँगरेज़ !"

और तब नीमकी दातून चीरते बेकार नवजवान कहता, "क्या कहते हो चुन्नी, मुझे तो फ़ौजमें भी नहीं भरती करते साले नहीं तो टाँग चीरकर फेंक दूँ·····"

और अबतक वह दातून चीरकर फेंक चुका होता है। चारों ओर सन्नाटा-सा छा जाता है। दुराई बाबू भी कुछ ख़ामोश हो जाते और छोटकन महराज भी चुनौटीसे सुरती चूना निकालकर मलने लगते। सारी बातको जैसे एक धक्का लग जाता और तभी तम्बाकू मलते-मलते छोटकन महराज बोल पड़ते "धर्मनीति तो रह नहीं गयी है देशमें—कुछ सुना भी है तुमने, रमेसर दलालने एक नयी शादी की है ! किसी-को पता नहीं है लेकिन सुना है कोई विधवा है···"

बस क्रिकेट मैच और मोहल्लेमें इतना कम अन्तर होता है कि बात पलटते देर नहीं लगती। दुराई बाबूकी अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि, चन्दरकी समूची राष्ट्रीयता, छोटकन महराजका हिन्दू-धर्म और बेकार नवजवानका सारा आक्रोश जैसे इसी शिकारपर टूट पड़ते। दुराई बाबूको एक कसक-सी लगती। चालीस वर्षकी अवस्था तक अविवाहित रहनेका दुःख उन्हें अब असह्य हो रहा था। सन् '३० के गान्धी आन्दोलनके समय जब वह जेल गये थे तभी गुलाम सन्तान न पैदा करनेकी उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शपथ खायी थी। फिर बहुतोंने कोशिश की लेकिन वह बराबर शादीसे इनकार करते रहे। उनका पेशा ही था—जेल जाना और जेलके बाहर आना। कुछ दिनों तक तो उन्हें कुछ नहीं खला लेकिन फिर धीरे-धीरे उनके जीमें कुछ-कुछ होने लगा। फिर तो यह नौबत पहुँची कि कोई शादीकी बात करता तो एक-दम उत्सुकतासे सुनते रहते। चाहते कि कोई शादीकी बात चलाये लेकिन कोई पूछता ही नहीं था। सन् बयालिसके बाद जब जेलसे छूटकर दुराई बाबू आये तो उन्होंने किसी प्रकारकी इसकी चेष्टा की लेकिन तबतक वह पूर्णतया निराश हो चुके थे और फिर उसके बाद उन्होंने जो आशा छोड़ी थी सो आज तक वह अभिलाषा उनके मनमें वैसी ही दबीकी दबी रह गयी। आज जब रमेसर दलालकी तीन ज़िन्दा शादियोंके बाद यह चौथी शादी उनके कानमें पड़ी तो वह तिलमिला गये। कुछ झुँझलाकर बोले "तो तुम लोग क्या करते हो? ऐसे दुराचारीको मोहल्लेमें रहने देते हो! जानते हो, रातको जब वह सर्राफ़ेसे शराब पीकर लौटता है और घरमें भूखी बीवियोंको पीटता है तो सुना नहीं जाता···!"

रमेसर दलालसे दुराई बाबूकी पुरानी चलती आ रही थी। छोटकन महराज तबतक बोल पड़ते, "अरे तो कौन-सा पाप कर लिया है! राजा दसरथकी तीन महारानियाँ थीं, रमे-सरके चार हैं तो क्या हुआ दुराई बाबू!····"

फिर क्या, दुराई बाबूके तन-बदनमें आग-सी लग जाती। उन्हें नारी जातिके अपमानित होनेका दुःख लगने लगता। वह दोनों हाथ झटकारकर कहने लगते कि भारतका उद्धार उस समय तक नहीं हो सकता जबतक स्त्रियों-को स्वतन्त्रता नहीं मिलती। दुराई बाबूकी आँखोंमें आँसू भर जाता, वह बिलकुल कम्पित वाणीमें कुछ बुदबुदाने लगते, यों ही सा—अस्पष्ट, अव्यक्त!

लेकिन सुबहकी यह गोष्ठी दस बजते-बजते समाप्त हो जाती। छोटकन महाराजको यजमानीमें जाना रहता, चन्दरको किसी ब्लैककी परमिट या किसीकी नौकरीकी सिफ़ारिश या कहीं किसी प्रचारके लिए जाना होता। चुन्नी अपनी चाटकी दुकानकी तैयारी-में लग जाता। मजबूर होकर दुराई बाबू भी कहीं चले जाते। ठीक बारह बजे नीमके तले फिर आ जाते। फिर क्या, एक जमखड़ा बूढ़ों-का जुटता। निताई दा, मोहन साहु, सरदार-जी, पेशकार साहब, और कुर्कअमीनजी इसी पेड़के नीचे जुटते! निताई दा बंगाली महाशय होनेके नाते चैतन्य महाप्रभुकी जीवनी लेकर आते। मोहन साहु हनुमान चालीसा कर गुड़ गाता। सरदारजी नानक वाणीके शब्द सुनाते, पेशकार साहब रामचरित मानसकी चौपाइयाँ। दुराई बाबू यह सब कुछ सुनते लेकिन इस गोष्ठीका रंग बदलते देर न लगती, थोड़ी ही देरमें बात पलट जाती। मोहल्लेके आस-पास-की बातोंमें बदल जाती। मिसरानी मास्टरनीसे लेकर अध्यापक महाशय धर्मानन्दकी नवजवान लड़की तक आती। निताई दाकी भी तीन-चार लड़कियाँ जवान हैं। इनकी बातें सुनकर निताई दाका सिर झुक जाता लेकिन मोहन साहु नहीं मानता। एक साँसमें मिसरानीसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकर महाशय धर्मानन्दकी लड़की तककी बातें सुना जाता। दुराई बाबू पहले तो चुपचाप सुनते लेकिन फिर उनकी कोमल भावना कहीं ठेस खा जाती। कभी वह मोहन साहुपर बिगड़ते, कभी सरदारजीपर और कभी पेशकार साहबपर लेकिन बेचारे कुछ कर नहीं पाते क्योंकि ये पेन्शन-याफ़्ता लोग केवल यही सब कथाएँ सुना-सुनाकर अपनी अहम्मन्यताको पुष्ट कर लेते। दुराई बाबू जब ज़्यादा बोलने लगते तो दो-चार छींटें उनपर भी पड़ जातीं। पेशकार साहबका दिमाग़ अदालती होनेके नाते कभी-कभी बड़ी पेचीदा बातें कह जाता। वे कहते, "तुम तो दुराई बाबू, फ़िज़ूल उलझते हो! हर ग़लत काम करनेका ठेका ले रखा है तुमने। यह मिसराइन भी तुम्हारी ही कोशिशसे इस मोहल्लेमें आयी है और यह अध्यापक धर्मानन्द भी तुम्हारी ही वजहसे आया है—तुम्हींने कह-सुनकर इनको मकान दिलवाया है वरना....?"

और बस इतने ही में दुराई बाबू भावुक हो जाते। रुँधे हुए कण्ठसे कहते-गिड़गिड़ाते लेकिन फिर भी कोई प्रभाव न देखकर मौन हो जाते। और तब मोहन साहु बोलता, "रंगे सियार हैं दुराई बाबू। चन्दरको इन्होंने अपना शिष्य बना लिया है। जितना जाल-फ़सादका काम होता है उतना तो यह उससे करवाते हैं और ख़ुद साधु बने बैठे हैं! ब्लैक-का रुपया खाते हैं और हर अनैतिक कामको सही साबित करनेकी चेष्टा करते हैं!"

मोहन साहुकी यह बात दुराई बाबूको तीरकी तरह बेध जाती। उनका जी धकसे

शामको वह चौक बाज़ारको
सैर करते। ठीक घण्टाघरके
पास खड़े होकर पान खाते,
फिर बिसातख़ाने जाते,
वहाँ बैठकर बाज़ारमें आने-
जानेवाली रंगबिरंगी तितलियोंको
देखते, फिर एक बार
पुरानी किताबोंकी दुकानपर
जाते, कोई साल-भर पुरानी
जासूसी पत्रिका ख़रीदते,
जेबमें रखते, फिर दो-चार हमउम्र
दोस्त मिल जाते, कुछ शिकवा
और कुछ शिकायत होती,
नुक्कड़वाली भाँगकी दुकानपर
एक कुल्फ़ी भाँग खाते
फिर एक छटाँक मलाई,
और तब धीरे-धीरे घरकी ओर
वापस आते। फिर वही नीमका
चबूतरा होता, चन्दर होता,
छोटकन महराज होते, और
दो-चार बेकार, दिन-भर
दर-दर भटकनेवाले रोज़गारकी
हाजतमन्द नवजवान होते, और
उनके बीच नशेमें चूर
दुराई बाबू होते।

बोलने लगता। इसमें कुछ ऐसा सत्य होता कि वह इनसे इनकार भी नहीं करते बनता। चन्दरके बारेमें तो प्रायः सभी लोग जानते थे कि उसकी आमदनीका एकमात्र ज़रिया यही है। लोग यह भी जानते थे कि चन्दर ही है जो दुराई बाबूका भार सँभाले हुए है वरना अबतक भीख माँगनेकी नौबत आ जाती। हर शाम जब वह कचहरीसे परमिट लेकर लौटता तब सीधे दुराई बाबूके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घर जाता। उन्हें कुछ-न-कुछ देकर लौटता। दुराई बाबू चुपकेसे ले लेते। पहले उनके जीमें कुछ कचोट उठा करती थी लेकिन अब उनको कुछ भी कचोट न लगती। पहले-पहल जब किसी घटनाकी ईमानदारीसे पैरवी करनेपर दुराई बाबू हारे थे तभी उन्होंने क़सम खायी थी कि वह अब किसीकी पैरवी नहीं करेंगे। लेकिन सात बार गान्धीजीके आन्दोलनमें जेल जानेके नाते दुराई बाबू ही एक ऐसे व्यक्ति थे जो मिनिस्टरसे लेकर कलेक्टर तकके पास निर्भीक होकर जा सकते थे इसलिए उनको मजबूर होकर मोहल्लेके लोगोंकी बातें सुननी पड़तीं। पहले कुछ दिनों तक तो वह मोहल्ले-की बातोंपर ध्यान ही नहीं देते थे। उनके सामने राष्ट्रीय सम्मानसे लेकर अन्तर्राष्ट्रीय नक़्शा तक सामने आ जाता लेकिन अब धीरे-धीरे उनकी सम्पूर्ण राष्ट्रीयता और अन्त-र्राष्ट्रीय दर्शन केवल मोहल्लेकी भलाई ही तक सीमित रहने लगी। इसीलिए इधर कुछ दिनोंसे दुराई बाबूकी सम्पूर्ण सहानुभूति, उनकी सारी राजनीति और उनकी सम्पूर्ण राष्ट्रीयता केवल मोहल्लेमें ही सीमित हो गयी है और अब उनका वह शिष्य जिसे उन्होंने सरदार भगतसिंह, चन्द्रशेखर आज़ाद और जाने कितने क्रान्तिकारियोंकी जीवनी सुना-सुनाकर राष्ट्रीय बनाया था, अब केवल दुराई बाबूकी सेवाके माध्यमसे ही एक बहुत बड़ी शक्ति बन गया था और अब दुराई बाबूसे मोहल्लेका हर व्यक्ति इसीलिए प्रसन्न भी रहता था क्योंकि प्रत्येक कठिनाईका निराकरण यदि कोई करता था तो वह दुराई बाबू ही थे। मिसरा-इनको घर दिलानेसे लेकर, महाशय धर्मानन्द-की लड़कियोंकी ट्रेनिंग कॉलेजमें भरती कराने तकमें दुराई बाबूने जितनी मेहनत की थी उसे देखकर निताई दा, मोहन साहु, सरदारजी और पेशकार साहबको अपनी सारी सिफ़ारिशें भूल गयी थीं। निताई दा की लड़कियोंके ताँगेके पीछे सीटी बजानेवालोंको दूर करने एवं सज़ा दिलानेमें भी कोई कसर उठा नहीं रखी थी। तीन वर्ष तक पेन्शन बिना पेशकार साहबकी जो हालत थी उसे दूर करनेमें भी दुराई बाबूने कम मेहनत नहीं की थी। कहाँ-कहाँ दुराई बाबू नहीं गये। किस-किसने उन्होंने इसके लिए नहीं कहा था। यही नहीं, चुन्नी चाटवालेको परमिट दिलाने और बीच चौकमें फुटपाथपर दुकान रखनेकी आज्ञाके लिए भी दुराई बाबूने कम मेहनत नहीं की थी। लेकिन यह सब मेहनत उनकी ईमानदारी-की थी। न किसीसे कुछ लेना, न देना, केवल जनताकी सेवाके नाते ही वह यह सब करते थे किन्तु सरदारजी जब एक फ़ौजदारीमें फँस गये थे और उनकी सिफ़ारिश करनेके लिए जब वह सेशन्स जजके बँगलेपर जा डटे थे, तो पहली बार उन्हें यह अनुभव हुआ था कि वह कोई बुरा काम कर रहे हैं। वह अपमान दुराई बाबूको आज भी नहीं भूला था। किस तरह जज साहबके कहनेपर चपरासीने उन्हें धक्के देकर बँगलेसे बाहर निकाल दिया था। शायद यह घटना उन्हें जीवन-भर नहीं भूलेगी। यही कारण था कि दुराई बाबू धीरे-धीरे मोहल्लेके सारे कारोबारसे हट गये थे और उत्तराधिकारीके रूपमें उन्होंने चन्दरको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रख था। चन्दरने जब पहली बार सिफ़ारिश करनेकी एवज़में तांगेके ख़र्चेके नाम-पर पाँच रुपया लिया था और उसे लेकर वह दुराई बाबूके सामने गया था तो दुराई बाबूको भी कम क्रोध नहीं आया था। उस दिन तो उन्होंने चन्दरको अपने घरसे बाहर निकाल दिया था लेकिन अब यह बात नहीं थी। चन्दरने जाने कैसा जादू किया था कि दुराई बाबू अब उनकी तनिक भी आलोचना नहीं करते और हर शाम जब वह गान्धीजीकी समाधीके नीचे दिन-भरकी आमदनीका कुछ हिस्सा रख जाता है तो उसे उठाकर वह चुपचाप जेबमें रख लेते हैं और कभी उसकी शिकायत नहीं करते। यह बात स्वयं चन्दरके देखनेवालोंको भी मालूम है। वह यह भी जानते हैं कि किस प्रकार रमेसर दलाल हर दूसरे महीनेपर लड़कियाँ भगाकर लाता है और उन झूठे ब्याहका स्वांग रचकर चन्दरकी जेबमें एक दसका नोट डालता है और फिर उसकी बंसी बजाता है। इसीलिए सुबह-सुबह जब लोगोंने रमेसर दलालकी बात चलायी थी तो चन्दर तो ख़ामोश था और स्वयं दुराई बाबूके समस्त विरोधका भी कोई प्रभाव नहीं पड़ रहा था।

ठीक यही दशा उनकी इन बूढ़े पेन्शन-याफ़्ता लोगोंके सामने होती। वह चाहे जितनी तार्किकताके साथ विरोध करते, चाहे जितना आक्रोश प्रदर्शित करते सबका सब प्रभावहीन हो जाता। यह भी सत्य था कि रोज़ दोपहर-को इसी प्रकारकी बातें होतीं और रोज़ दुराई बाबूको इसी प्रकार ये बूढ़े लोग दबा लेते और दुराई बाबू एक शब्द भी नहीं कह पाते।

लेकिन दोपहरकी यह गोष्ठी तीन बजते-बजते समाप्त हो जाती। ये बूढ़े लोग एक साथ उठते क्योंकि उन्हें घरपर चाय पीकर पाँच बजेसे किसी-न-किसी सत्संगमें शामिल होना रहता और तब दुराई बाबू भी अपना शामका लिबास पहनकर, सजधजकर एक बार फिर नीमके पेड़के नीचे आते। तबतक मैं ऑफ़िससे आ गया होता। वह मेरे साथ एक प्याली चाय पीते, कुछ देर गुड़ियाको खेलाते और चले जाते! शामको वह चौक बाज़ारकी सैर करते। ठीक घण्टाघरके पास खड़े होकर पान खाते, फिर बिसातखाने जाते, वहाँ बैठकर बाज़ारमें आने-जानेवाली रंग-बिरंगी तितलियोंको देखते, फिर एक बार पुरानी किताबोंकी दुकानपर जाते, कोई साल-भर पुरानी जासूसी पत्रिका ख़रीदते, जेबमें रखते, फिर दो-चार हमउम्र दोस्त मिल जाते, कुछ शिकवा और कुछ शिकायत होती, नुक्कड़वाली भाँगकी दुकानपर एक कुल्फ़ी भाँग खाते और फिर एक छटाँक मलाई, और तब धीरे-धीरे घरकी ओर वापस आते। फिर वही नीमका चबूतरा होता, चन्दर होता, छोटकन महराज होते, और दो-चार बेकार, दिन-भर दर-दर भटकनेवाले रोज़गारकी हाजतमन्द नवजवान होते, और उनके बीच नशेमें चूर दुराई बाबू होते। फिर क्या था। दुराई बाबूके बलिदानोंकी कहानियाँ चलतीं और दुराई बाबू एक ओरसे बड़े-बड़े नेताओंको गालियाँ सुनाना शुरू करते। सात-आठ बार जेल काटनेकी घटनाका वर्णन करते-करते वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहते, "देशका बड़ेसे बड़ा नेता जितना जेल काटे हैं, उतना ही मैं भी काटे हूँ लेकिन मुझसे किसीकी जूतियाँ नहीं पोंछी गयीं इसलिए मैं इस गलीमें इस अन्धकारमें सड़ रहा हूँ !"

लोग दुराई बाबूकी इस बातको सुनते। बेकार नवजवानोंमें-से कोई बोल पड़ता, "तो कौन-सा जंग जीत लिया दुराई बाबू ! मैं तो अगर झूठ-मूठका सन् बयालिसमें पकड़ लिया गया होता तो सीधे कलेक्टरीकी माँग करता ?" और तभी दूसरा बेकार नवजवान बोलता, "और मैं, मैं तो अपने बलिदानका मोआवज़ा लेकर एक प्रेस खोलता, अख़बार निकालता, इस सरकारके होश दुरुस्त कर देता।" बस यही अवसर होता जब छोटकन महराज भी भंगके नशेमें बोल पड़ते, "बस हो चुका, जिस पत्तलमें खाना उसीमें छेद करना।—यही तो सीखा है तुम लोगोंने तभी तो भटक रहे हो ?" बात छोटकन महराजकी इस कड़ीपर टूटती। कुछ देर तक ऐसी खामोशी रहती जैसे बेकार नवजवानोंके पास इसका कोई जवाब ही नहीं है। लेकिन तभी एक तीसरा बोलता, "क्यों महाराज, यह तो तुम पुरोहितोंकी वाणीमें बोल रहे हो वरना पत्तलमें छेद तो तुम्हीं करते हो—!"

बस इसी ही बातपर बहस होने लगती। ख़ूब ज़ोर-ज़ोरसे बातें चलतीं। दुराई बाबू ज़ोर-ज़ोरसे कहना शुरू करते, "जानते हो, इस अँधेरी गलीमें पब्लिक लाईट मेरी ही कोशिशसे आयी है। वहाँ सड़कके बग़लमें नाली साफ़ करनेवाला मेहतर मेरी ही कोशिशसे आया है ! ग़लीके उस पार लेटर बॉक्स मेरी दौड़-धूपसे लगा है और मोहल्लेमें एक सब-पोस्ट ऑफ़िस भी पी० एम० जी० से लड़कर मैं ही लाया हूँ—!"

और तब चन्दर समझ जाता कि दुराई बाबूपर नशेका ज़ोर काफ़ी हो रहा है। वह दुराई बाबूको रोकना चाहता लेकिन नशेमें चूर दुराई बाबू कहते जाते, "मैंने तो"'जी से कह दिया था, मुझे तुम्हारा टिकेट नहीं चाहिए ! जाओ, तुम ऐश्वर्य भोगो, मुझे वह नहीं चाहिए—"

"अंगूर खट्टे हैं दुराई बाबू !" बेकार नवयुवक कहता।

यह सुनकर दुराई बाबूका क्रोध और बढ़ जाता। वह आवेशमें आकर एक-एक नेताका नाम ले-लेकर गालियाँ देते और अपने बलिदानकी गाथा कहते नहीं अघाते। ज़ोर-ज़ोरसे चिल्ला-चिल्लाकर कहते, "पुलिस-की लाठियाँ खानेके लिए मेरी हड्डियाँ थीं, जेलमें तीसरे दर्जेमें मरनेके लिए मैं था लेकिन अब ? अब मैं कोई नहीं हूँ ! यह सबके सब भीख माँगेंगे ! सबके सब ठोकर खायेंगे ! मेरा बलिदान निरर्थक नहीं होगा—नहीं होगा—नहीं होगा—?"

और बस वे बेकार, नौकरीकी तलाशमें दर-बदर भटकनेवाले नवजवान लड़के दुराई बाबूको चिढ़ानेके लिए फिर कुछ कह डालते और इस बार वह फिर तैशमें आ जाते। खद्दरका जामा पहने हुए उनका सारा शरीर काँपने लगता, चश्मेका फ्रेम सरककर बिलकुल नाककी टिपपर आ जाता, तिरछी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खादीकी टोपी भी भवों तक सरक आती। चेहरेपर पसीनेकी बूंदें झलकने लगतीं। पानसे भरे हुए मुँहमें पीक ग़लग़लाने लगता। अकसर वह लोगोंको भी अपनी दुर्बुद्धिसे भरपूर बना देते और जब सारा कुछ कहकर थक जाते तो चुपचाप खाली पड़ी हुई कुरसीपर इतमीनानसे बैठ जाते!

इधर दुराई बाबूमें यह निराशा बड़े बुरे रूपमें घर कर रही है। एक दिन बारह बजे रात वह मेरे घर दौड़े-दौड़े आये। उनके हाथमें एक बण्डल था। बोले, "इसे अपने यहाँ रख लो।" मैंने कहा, "क्या है दुराई बाबू?"

"कोई ख़ास चीज़ नहीं, ऐसी ही है?"

मैंने सोचा रख ही लूँ, लेकिन फिर मुझे बरकी याद आयी। दुराई बाबूके बारेमें तरह-तरहकी उड़ती हुई अफ़वाहोंकी याद आयी। मैंने कहा, "नहीं दुराई बाबू, मैं आपकी दी हुई कोई भी चीज़ अपने घरमें नहीं रखूंगा?"

मेरे इस दो टूक जवाबको सुनकर दुराई बाबू निष्प्राण-से हो गये। एकदम सन्नाटेकी हालतमें वे कमरेके बाहर निकल गये। उनके माथेपर जो चिन्ताकी रेखाएँ थीं वह वैसी ही बनी थीं।

शामको पता चला, मिसरानीके घरमें तलाशी हुई और एक पाँच सेर कच्ची अफ़ीमका बण्डल पाया गया। आधी रात गये दुराई बाबू मेरे मकानके सामने वाले नीमके पेड़के नीचे गरज-गरज कर कह रहे थे "यह सरासर ज़ुल्म है। मिसरानीको गाँजे-अफ़ीमसे क्या काम! यह पुलिसवाले अपनी कारगुज़ारी दिखानेके लिए अपने साथ चोरीका माल, अफ़ीम, गाँजा और भाँग लेकर चलते हैं। सब लोग उनकी बातें सुन रहे थे। तभी एक बहुत बड़ा एक्का गलीकी दीवारोंको चीरता मोहल्लेमें आया। यह एक्का पहली बार यहाँ आया था। बूढ़े कोचवानने कुछ दुराई बाबूसे कहा और दुराई बाबू उसपर बैठ कर चले गये। दो दिन बाद पता चला, मिसरानी हवालातसे छूट कर आ गयी हैं और दुराई बाबूने इन दो दिनोंमें ज़मीन-आसमानके कुलाबे मिला दिये हैं।

और उस दिन, बहुत दिनों बाद, दुराई बाबू मेरे बैठकेमें आये। चाय उन्होंने नहीं पी और न गुड़ियाको ही खेलाया-बोलाया। चुपचाप अखबार पढ़कर कुरसीपर बैठ गये। बोले, "इस देशमें सेवा-कार्य करना भी पाप है! लेकिन क्या बतायें, आदत पड़ गयी है, रहा नहीं जाता बिना सेवा किये!" और भाँगके नशेमें चूर उनकी बड़ी-बड़ी आँखें चढ़ी जा रही थीं, घनी काली मूँछपर पुता हुआ ख़िज़ाब जंगके रंगका हो रहा था। चश्मा नाकपर सरका आ रहा था। खादीकी टोपी माथेपर आ गयी थी और दुराई बाबू कहते जा रहे थे, "भाग्यकी बात है, पहले ही चुनावमें जब मैंने एम० एल० ए० होनेका टिकट माँगा था और मेरा नाम ज़िलेसे पास होकर सूबेमें गया तो स्वर्गीय……ने मुझे अकेलेमें बुलाकर कहा, देखो दुराई बाबू,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सच्चे सेवकोंको जगह विधान-सभा नहीं, जनता है—तुम्हारे-जैसे सच्चे सेवकोंको कभी विधान-भवनमें नहीं आना चाहिए ! जाओ जनताकी सेवा करो—और तबसे यानी पिछले उन्नीस सालसे, मैं यही सेवा कार्य कर रहा हूँ....।"

मैं दुराई बाबूकी सारी बातें सुनता रहा था। मैंने उनसे न तो यह पूछा कि मिसरानी क्यों जेल गयी थी और न यह ही जानना चाहा कि आखिर उस रोज़ उस गन्दे कपड़ेके बण्डलमें क्या था। मैं केवल इतना ही जानता हूँ कि शहरमें जब कोई भी अफ़ीम या गाँजेका मुज़रिम पकड़ा जाता है तो एक इक्के वाला गलियोंकी दीवार छीलता हुआ नीमके नीचे तक आता है। दुराई बाबू उसीपर बैठकर कचहरी जाते हैं। दुराई बाबू उस दिन वास्तवमें सच्ची सेवा करके ही लौटते हैं। उस दिन वह चन्दरसे कुछ नहीं लेते, उल्टे चन्दरकी दावत करते हैं—चाट, कुल्फी, मलाई, भाँगकी—और फिर जनताकी सेवामें तत्पर हो जाते हैं। निताई दाकी लड़कियोंके पीछे सीटी बजानेवाले छोकरोंको पकड़वाते हैं, अध्यापक धर्मानन्दकी लड़कियोंकी शादी कराते हैं, पेशकार साहबसे बहस करते हैं, चीनसे लेकर कन्याकुमारी तककी भारतीय एकताके गुण गाते हैं। दुराई बाबू आज भी ज़िन्दा हैं। उनकी जगह विधान-सभामें नहीं है, जन-साधारणकी सेवामें है—सेवा—सेवा—सेवा !

■■

लेखन-प्रकाशनकी अधुनातन दिशा-प्रवृत्ति और उपलब्धि-परिचायिनी मासिकी

ज्ञानपीठ पत्रिका

भारतीय ज्ञानपीठ-द्वारा प्रवर्तित

● सम्पादक :
लक्ष्मीचन्द्र जैन, जगदीश

● मूल्य :
६.०० वार्षिक, ००.५५ पैसे प्रति

'ज्ञानपीठ पत्रिका' हिन्दीमें अपने प्रकार-का प्रथम प्रयास है, और कदाचित् अन्य भारतीय भाषाओंको देखते हुए भी, जिसका प्रयत्न एक ऐसा अध्ययन प्रस्तुत करना है जो लेखक-प्रकाशक-विक्रेता-पाठक चारोंके 'अक्षर-जगत्' की गतिविधि, नयी प्रवृत्तियों, समस्याओं एवं समाधान, और विकास-उन्नतिकी दिशा-भूमिका सम्यक् परिचय दे, तथा परस्पर विचारोंके आदान-प्रदानका पथ प्रशस्त कर सके।

सम्पर्क-सूत्र : भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जीवन अपने लिए
और सबके लिए'

यह वाक्य—
जीवन की सफल
प्रतिष्ठा
और
समस्त विश्व की
शान्ति,
प्रगति तथा
सम्पन्नता
के हित में.....

●

गनी कमर्सियल कम्पनी
हैसियन तथा बारदाना
के
प्रमुख व्यापारी तथा वितरक
६, क्लाइव रो,
कलकत्ता–१
फ़ोन : २२–५३६६
२२–८१३९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सापेक्ष डायरी

मिर्ज़ इस्माइल बेग

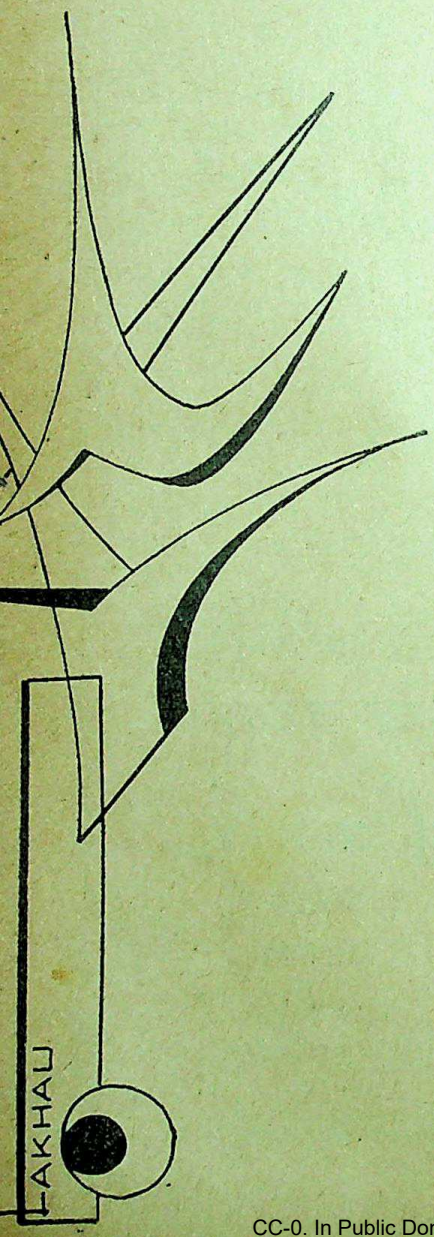

कुछ वर्षों पहले मण्डलेश्वरमें निमाड़के साहित्यकारोंके बीच सन्त विनोबाने चित्रकलापर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था—"कला वह जो सब लोगोंकी समझमें आ सके। कलाको समझनेके लिए ट्रेण्ड-आयकी आवश्यकता जतलाना एक असंगत बात है।" इसी तरह अभी-अभी हिन्दीकी एक प्रमुख पत्रिकामें एक कला-समीक्षकने प्रश्न उठाया—कला किसके लिए? उन्होंने तीन प्रसिद्ध चित्र विभिन्न वर्गके लोगोंको दिखाये जिनमें एक था चौकीदार, दूसरा सम्पादक, तीसरा एक मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी, और चौथी एक मां थी। इन्होंने न समझमें आनेवाली इन आकृतियोंको देखकर अपनी-अपनी प्रतिक्रियाएँ मज़ाक़, क्रोध और शिकायतोंके रूपमें प्रस्तुत कीं। साथ ही, जब एक चित्रकारने एक प्रतिष्ठित, बहुचर्चित विद्वान् एवं समाज-सेवी कार्यकर्तासे शिकायत की कि समाज कलाके प्रति उदासीन है। तो उन्होंने तपाकसे जवाब दिया—"आप लोग (चित्रकार) समाजका कितना खयाल रखते हैं। लोगोंकी न समझमें आनेवाली आकृतियोंके सर्जनके प्रति आप उदासीनताके अतिरिक्त क्या आशा करेंगे?"

उपरोक्त प्रतिक्रियाओंपर बहस न करके सहानुभूतिसे सोचा-विचारा जाना चाहिए। हमें इन प्रतिक्रियाओंमें उस खोयी हुई शृंखलाकी खोज करनी होगी जो कलाकृति, कलाकार और समाजको बाँधती है। इसके साथ ही उन धारणाओंपर विचार करना होगा जो हमें रूढ़िवश सही दिशामें सोचनेसे रोकती है।

हमारे चिन्तकोंने कदाचित् आजतक कलाकी अपनी सर्जन-प्रक्रियापर विचार नहीं किया वरन् उन लोगोंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक था समाज : एक है कला

'अप्लाईड व्हेल्यूज़' को ही आधार बनाकर और मानकर कभी कलाका मूल्यांकन किया तो कभी कलाकारका समाजमें स्थान निश्चित किया। इसीलिए भारतीय कलाके सत्य स्वरूपको जानने, उसे उसका उचित स्थान दिलानेमें काफ़ी समय लगा है और आज भी इस ओर और अधिक प्रयासोंकी आवश्यकता है। इस कमीका मुख्य कारण हमारे विचारोंमें उथलापन है। मेहनत और ईमानदारीकी बेहद कमी। हमने अपने मापदण्डोंको स्थापित करते समय कलाकृतियोंकी सर्जन-प्रक्रियापर विचारे बग़ैर, अन्य बातोंके सहारे, सोचा-समझा है। स्वतन्त्रताकी लम्बी लड़ाई और परतन्त्रताके अँधेरेमें राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक-कारणोंसे समाज और कलामें काफ़ी फ़ासला हो गया और इसके साथ ही वैज्ञानिक युगकी नयी मान्यताओंने कला-सर्जनपर पुरज़ोर असर डाला। इससे इस दूरीमें और इज़ाफ़ा हुआ और नयी पेचीदगियाँ पैदा हो गयीं। इन पैचीदगियोंके साथ पुराने कला-संरक्षकोंका आर्थिक, राजनैतिक एवं सामाजिक दृष्टिसे पतन हुआ और कला संरक्षणहीन होकर कलाकारके लिए एक नयी मुसीबतके रूपमें आयी। उसने अपने पुराने बन्धन टूटते देखे। उसने उपेक्षासे स्वच्छन्दताका सहारा लिया और अपनी प्रतिक्रियाओंको व्यक्त कर अपने व्यक्तित्वको उभारा। इस मोड़से समाजने एक झटका महसूस किया और करता जा रहा है।

अतः हमें इन झटकोंको, इन प्रतिक्रियाओंको स्वाभाविक तौरपर एवं सहानुभूतिपूर्वक लेना चाहिए। लोग अपनी जगह, अपनी पृष्ठभूमिमें, सही हैं। उन्होंने आजतक जाने-अनजाने साहित्यकारों और कलाकारोंको उपदेशकके रूपमें देखा है जब कि वह उपदेशक कभी भी नहीं रहा, चाहे वह अजन्ताका चितेरा हो, खजुराहोका शिल्पी अथवा रामायणका रचयिता तुलसीदास हो।

जनताने कलाकारके विशेष गुण उसके कला-सर्जनको चमत्कारके रूपमें देखा। उनका कौतुक जागा और उन्होंने उसे जादूगर अथवा नटके रूपमें देखा जब कि कौतुकता कलाकारका कभी लक्ष्य नहीं रहा। साथ ही जब कलाकारने अपनी श्रद्धावश भावनासे अथवा भावुकतासे अपने संरक्षकका आदर किया तो उसे भाट समझा गया जब कि एक सीमा तक (व्यावहारिक कारणोंसे) इससे प्रभावित होकर भी समग्ररूपसे देखनेपर वह अपने सम्पूर्ण प्रयासोंमें इस दोषसे मुक्त रहा है।

यदि ऐसा न होता तो शायद कलाका आज जो महत्त्व और मान है वह नहीं होता और उसकी चर्चाएँ नहीं की जातीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतः कलाके मूल्यांकनके लिए मूलतः कलाकी सर्जन-प्रक्रियापर ही विचार करना होगा जो कला, कलाकार और समाजको जोड़ती है और स्वयं ऐतिहासिक शृंखलाकी एक लीक है, जो काल, स्थान और समयसे प्रभावित हो आगे बढ़ती चली जाती है।

कलाकार किसी रचनाको कब और क्यों रचता है? इस प्रश्नपर विचार करें तो बाह्य रूपसे पायेंगे कि जब कोई विचार अथवा वस्तु कलाकारकी अनुभूतिको छूता है तो वह बेचैन हो जाता है। यह बेचैनी उसे व्यक्त करनेके लिए, कहनेके लिए अथवा कुछ रचनेके लिए मजबूर करती है। जबतक वह कह नहीं पाता तबतक वह अपनी आत्मापर बोझ अनुभव करता है और अपने प्रत्येक 'मूवमेण्ट' में क़ैदी-सा अनुभव करता है। जब वह कहने लगता है तब उसे राहत अनुभव होती है। जब वह कह डालता है तब वह अपने आपको स्वच्छन्द और अपनी आत्माको भारहीन पाता है। उसके विचारोंमें गति और बल आता है और मानसिक क्रियाएँ तरोताज़ा होकर नये विचारोंको अपनाने और उन्हें पैदा करनेको स्थितिमें अपने आप आ जाती हैं।

यही समाधान कलाकी सही कसौटी है—और कलाकारको अपनी कृतिसे यहाँतक समाधान मिला, यही कृतिके मापदण्डकी आधारशिला है। कई कलाकार बाह्य रूपसे ईमानदार न भी हों लेकिन घटिया कामोंके चिह्न तो आसानीसे देखे जा सकते हैं। यदि उन्हें पब्लिसिटीसे दबाया भी जाये तब भी समय अपने आप हर चीज़को उसके यथायोग्य स्थानपर रख ही देता है।

इसके बाद आता है दर्शक और कृतिके प्रति उसकी प्रतिक्रिया। दर्शककी प्रतिक्रिया अपने आपमें तथा कलाकार दोनोंके लिए महत्त्वपूर्ण है लेकिन यह 'अप्लाईड ह्वे ल्यू' है। इसका सम्बन्ध अन्तर्निहित मूल्य—इन्ट्रीन्ज़ीक ह्वे ल्यूसे अलग है। यदि कलाकार दर्शककी प्रतिक्रियासे, अथवा दर्शक कलाकारसे प्रभावित हो अपने विचार बनाता है तो दोनों अपने-अपने स्थानपर ग़लत हैं। यदि कलाकार दर्शककी पसन्दगीपर आधारित सर्जन करता है तब वह अन्तर्निहित मूल्योंकी उपेक्षा कर एक ऐसा आधार अपनाता है जो रोज़ बदलता है। जिसमें किसी भी प्रकारकी निश्चिन्तता नहीं।

इसके साथ ही व्यावहारिक दृष्टिकोणसे सर्जनशील कलाकारके लिए दर्शककी पसन्दगी आधार बन भी नहीं सकती। यदि उसने किया भी तो थोड़े समय तक ही उसकी सर्जनशक्ति उसका साथ देगी। उसके बाद वह थकने लगेगी। उसकी कृतियोंमें नवीनताका लोप होता नज़र आयेगा। वह अपनी ही कृतियोंको दोहराते रहनेमें सन्तोष करने लगेगा और एक दिन यह 'रिपीटेशन' उसे निष्क्रिय बना देगा और वह अपने दिलकी दौलतको लुटाकर, दिवालिया बनकर अपनेको दर्शकोंमें अकेला, उपेक्षित पायेगा जिनके पीछे वह भागा-भागा फिरा था।

अब यहाँ दूसरा प्रश्न उठता है—क्या दर्शकका कोई महत्त्व नहीं! क्या समाजके प्रति कलाकारका कोई उत्तरदायित्व नहीं?

कलाकार समाजसे अलग नहीं। वह भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...का अंग है। उसे पालने-पोसनेमें समाजका ...पूरा योग है। कलाकारकी रुचि, स्फूर्ति ...अथवा प्रेरणाको बनानेमें समाज मुख्य भूमिका ...दा करता है। यहाँतक कि कलाकारके ...विद्रोही स्वरूपको बनानेमें और विद्रोहकी ...शक्तिको बढ़ानेमें समाज ही रहता है। यह ...विद्रोह परवर्ती कलाकारके लिए इतना स्वाभा...विक और पूर्ण रूपसे उसके व्यक्तित्वमें इस ...र आत्मसात् रहता है कि वह इसे अलग ...के देख ही नहीं सकता।

आज जो आधुनिकताके द्वारा कलाकारने ...अपनी परिपाटीसे विद्रोह किया है (जो मूलतः ...विकास-श्रेणीमें आता है) उसके कई कारणों...में एक मुख्य कारण समाजकी कलाकारके ...प्रति उदासीनता है। हमारे आधुनिक समाज...पर उद्देश्यहीनता और उथलापन हावी है। ...आज उसका लक्ष्य शौक़ और मौज है जो ...उसे नहीं मिलता। वह इस लक्ष्यकी प्राप्तिमें ...कलाको भी समेटता है। यह ढंग सर्जकको ...नहीं जँचता। कवि इसे जलाकर नयी रचना...का स्वप्न देखता है। एक लेखक कहता है—

"हे परमपिता, तुम्हारा अभिशाप इस ऐश्वर्य और साथ ही कुत्सित, बीभत्स सभ्यता-पर वज्र बनकर गिरे!" और कलाकार उसके इस रूपको, खोखलेपनको बीभत्स रूपमें ही चित्रित करता है। लोग उन्हें गालियाँ देते हैं। उसकी खिल्ली उड़ाते हैं। जब इसका असर नहीं होता तो परम्परा और संस्कृतिकी दुहाई देते हैं। फ़तवा पढ़ा जाता है। इससे भी जब काम नहीं चलता तो उसे पुचकारते हैं। उसे लालच देते हैं। उसे समाजका अगुआ पुकारते है। उसे दिग्दर्शक बनाया जाता है। उसे ओहदे दिये जाते हैं।

लेकिन यह सब ग़लत है। कलाकार अपनी सेन्सीबिलिटीसे, (स्वाभाविक तौरसे) समाजके सही स्वरूपको, उसके ही सम्मुख रखेगा। यह औरोंका काम है कि वे समाजके नेता बनें, अगुआ बनें, उपदेशक बनें या गुरु बनें।

कलाकार तो अपने अनुभवोंसे अपनी बात कहता है, और कहता रहेगा।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घनवादसे अमूर्तवाद तक

विजय रंजन

प्रभाववादमें प्रकाशके विश्लेषणसे उत्पन्न वर्ण चांचल्य तथा सतहकी अस्थिरतामें आकारके खो जानेसे सेज़ाँ असन्तुष्ट था। सेज़ांको प्रभाववादी कलाकारोंका किसी दृश्यके प्रभावात्मक रूपको यथा-तथा आँक देना भी गवारा नहीं था। वह एक व्यवस्थित स्वरूप और आकारकी तलाशमें था और उसने पाया कि हर एक वस्तु कुछ मूलभूत आकारोंमें ढाली जा सकती है और वह मूलभूत आकार थे—रम्भ, वृत्त और शंकु। "प्रकृतिमें हर वस्तु रम्भ, वृत्त या शंकुपर आधारित है।"—यह था घनवादका बौद्धिक प्रारम्भ। वैसे चंचल माया आवरणमें छिपे सत्यका सिद्धान्त अति प्राचीन है और पश्चिममें प्लेटोने 'फिलिबस' में इसे तार्किक पुष्टि दी है, परन्तु घनवादी कलाकारोंको अपने सचेतन प्रयासकी प्रेरणा सेज़ाँके इसी कथनसे मिली चाहे घनवादके जन्ममें गोंगा तथा तूलू लोत्रे-द्वारा किया गया सरलीकरण, प्रागैतिहारिक चित्रकलामें अन्यथाकरण तथा सरलोकरणकी पहचान तथा लोक-कलामें खोज भी इसके कारण रहे हों।

सेज़ाँने स्वयं अपने चित्रोंमें इस रम्भ, वृत्त और शंकुको नहीं पाया, परन्तु एक धारा प्रारम्भ की जो कि वस्तुके मानसिक बिम्बके त्रियाचरित्रकी खुशफ़हमियोंको त्याग उसके आधारभूत सत्य और रचना-नियमको खोजने लगी। इस प्रकार समतल घनफल और खाकोंकी ओर ध्यान अधिक दिया जाने लगा जिसकी अन्तिम परिणति ज्यामितिक संयोजनमें थी। सेज़ाँके चित्रोंमें यह ज्यामितिक संयोजन नहीं पाया जाता क्योंकि वह वास्तविकमें प्रभाववादका छात्र था और उसे ही परिष्कृति और स्थिरता देना चाहता था। घनवादको उसने रंगोंमें ही उकेरनेका प्रयत्न किया और रंगोंके वैषम्य-द्वारा वस्तुको एक अजब धरातल दिया। स्वरूप-चित्रणको त्याग कर उसने अपरिवर्तनको अपनाया परन्तु ज्यामितिक संयोजनकी दौड़को उसने राह दे दी जिसमें ब्राख और पिकासो मशीन-युगकी आश्चर्यजनक गतिसे बढ़ चले।

सर्वप्रथम शार्ज़ ब्राखने किसी भी वस्तुको उसके खाका-मय तथा ज्यामितिक आकारोंमें परिवर्तित किया। उदाहरण-के लिए एक मानव आकृतिमें मुख, त्रिभुज, धड़, आयत व वर्ग, बाज़ू और टाँगें शंकुमें सहजतासे परिवर्तित हो जाते हैं। ब्राखने वस्तुको इस प्रकार घनोंमें बदला। इन्हीं मूर्ति तथा भवननुमा चित्रोंको देखकर मातीस्ने इन्हें अस्वीकृत कर घनवादी कहा, जो कालान्तरमें कलामें स्वीकृति पानेपर सम्मानका शब्द बन गया। ब्राख अधिकतर घर और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भवन या प्रकृति ही चित्रित कर रहे थे अतः भवन-निर्माणकलाका सादृश्य स्वाभाविक ही था और घनवादके विकास-क्रममें इसका प्रभाव और सादृश्य बार-बार आता है।

कलाकृतिके स्वरूपको व्यवस्थित करनेके इस बाह्य ढंगसे ब्राख तथा पिकासो सन्तुष्ट न हो सके। सेज़ाँने तो रंगोंके प्रकाश-छायाके प्रभावसे और शेडिंगसे आकारमें ऐक्य बनाये रखा परन्तु रूप व वस्तुको पहले आकारोंमें तोड़कर उसे जोड़कर ऐक्य बनाये रखना एक कलागत समस्या थी और इसको सुलझाने-के लिए पिकासो और ब्राखने बाह्य-संयोजनके स्थानपर घनोंके आन्तरिक संयोजनकी ओर ध्यान दिया। बाह्य-संयोजनकी त्रिविमा प्रभाव-को समाप्त कर आकारोंको द्विविमामें चपटा किया और भवन-निर्माणके ढंगसे जोड़नेके स्थानपर समतलोंको स्वयं चलित गतिसे एक दूसरेके ऊपर आने दिया। कभी-कभी त्रिविमाका मृगछल देनेके लिए सेज़ाँने सदियों पुराना प्रकाश-छाया तथा शेडिंगके शिल्पका भी प्रयोग किया। इसी बीच ब्राख और पिकासोने प्रभाववादके प्रकृति-चित्रणके स्थान-पर मानवनिर्मित वस्तुएँ जैसे मेज़, कुरसी, बोतलें आदिको अपनी कलाकृतियोंका विषय बनाया।

घनवादका तीसरा विकास-चरण सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि एक तो यह अबतककी चित्रकलाकी परम्परासे बिलकुल सम्बन्ध-विच्छेदका उदाहरण, है, दूसरी ओर इसके सिद्धान्तने हमारी युगकी एक अति सशक्त कला-शैली 'निर्माणवाद' को जन्म दिया, जिसके जन्मदाता थे गाबो भ्राता तथा पेव्सनर। अभीतक चित्र चौखटमें जड़े जानेके लिए बनाये जाते थे और बनाते समय यही खयाल था कि दर्शकको इसे सामनेसे देखना है। परन्तु घनवादियोंने दर्शकोंसे माँग की कि वे चित्रमें गहरे उतरें, उसमें पैठें। चित्र सामनेसे देखना ही काफ़ी नहीं, उसे हर तरफ़से देखना ज़रूरी है। चित्रमें किसी रूप या वस्तुका चित्रण भी सभी कोणोंसे होने लगा। एक ही चेहरे व वस्तुके भिन्न कोणोंसे देखे हुए बिम्ब एक दूसरेके ऊपर जड़े जाने लगे। सामनेवाले चेहरेकी आँखोंपर एक-तरफ़-वाले चेहरेकी नाक जड़ी जाने लगी—द्विबिम्ब तथा त्रिबिम्ब चेहरे बनने लगे। पिकासोकी १९३२ की

औरतें : घनवाद, पिकासो

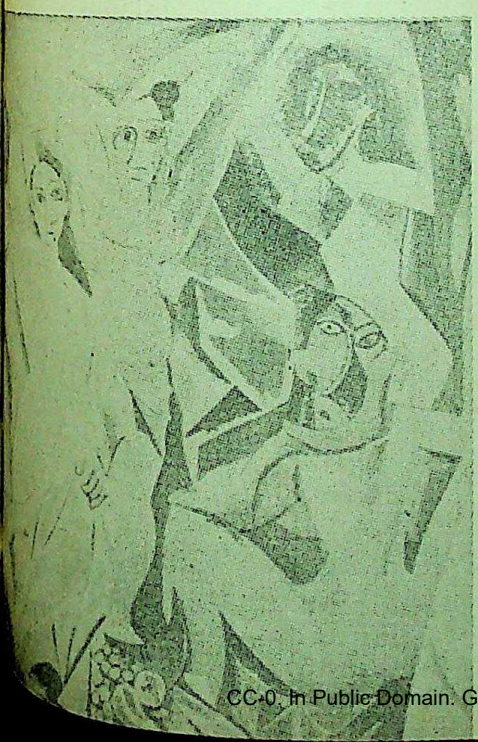

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

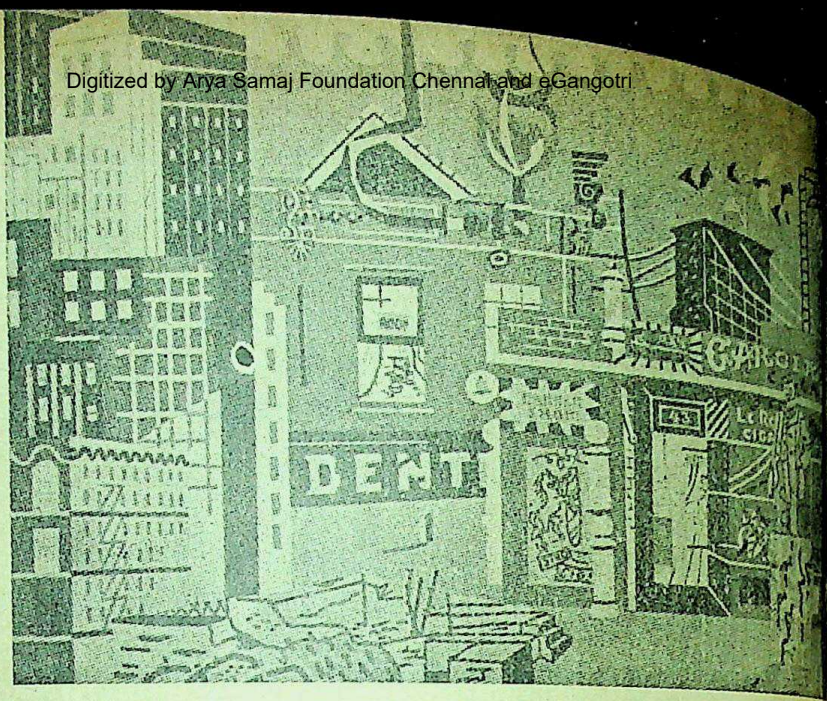

न्यूयार्क निर्माणवाद : डेविस

'दर्पणके सम्मुख बाला' इसी प्रकारकी एक अति सरल तथा रोमानी कृति है। घनवादके शुष्क आकारोंके अन्वेषणमें ऐसा सारल्य दुर्लभ है परन्तु दर्पणकी रोमानियतकी माँगको पिकासोने समझा और सिद्ध किया कि घनवाद इन विषयोंके निरूपणके लिए भी उपयुक्त है। चित्रमें बालाके चेहरेके दो बिम्ब इकट्ठे कर एक वृत्ताकार आकारमें उकेर दिये हैं। इसी चरणकी एक क्रान्तिकारी रचना है 'आवाज़ोंकी युवतियाँ' जिसके कारण घनवाद-को कलाक्षेत्रमें पहली बार मान्यता मिली। दो बार बने इस चित्रमें तीन युवतियोंमें आइबेरियन मूर्तिकला तथा बादमें बने दो भूतों-जैसे चित्रमें प्राचीन अफ्रीकी मुखौटोंका प्रभाव पूर्णतया लक्षित है और आधुनिक कला प्राचीन कलाके मूलभूत सरलीकरण और अन्यथाकरणकी ओर आभार भावसे भी जागी लगती है। विभिन्न कोणोंके योगसे तथा घनोंके ठोसपनसे बनी इस कलाकृतिकी सौन्दर्यगत प्राप्तिने पिकासोके गृह-स्टूडियोको कलातीर्थ और घनवादको उस पीढ़ीकी श्रेष्ठ कला शैली बना दिया। विभिन्न कोणोंसे देखे बिम्बको घनवादके ही स्थानपर कैनवॅसपर ही चित्रित करते रहे, परन्तु निर्माणवादी तनिक आगे बढ़े और कैनवॅसके स्थानपर स्पेसको भरने और उसके संयोजनको कला मानने लगे।

विकास क्रमकी अगली सीढ़ी दर्शकोंके लिए सर्वाधिक परेशानीका कारण बनी और कलापारखियों-द्वारा सख्त आलोचना की गयी। घनवादियोंने किसी रूप व वस्तुको घनोंमें परिवर्तित तो कर दिया परन्तु उसीकी सादृश्यतामें उन्हें जोड़ने या एकत्रित करनेके स्थानपर अब वे उन्हीं घनोंको मनकी मौज-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

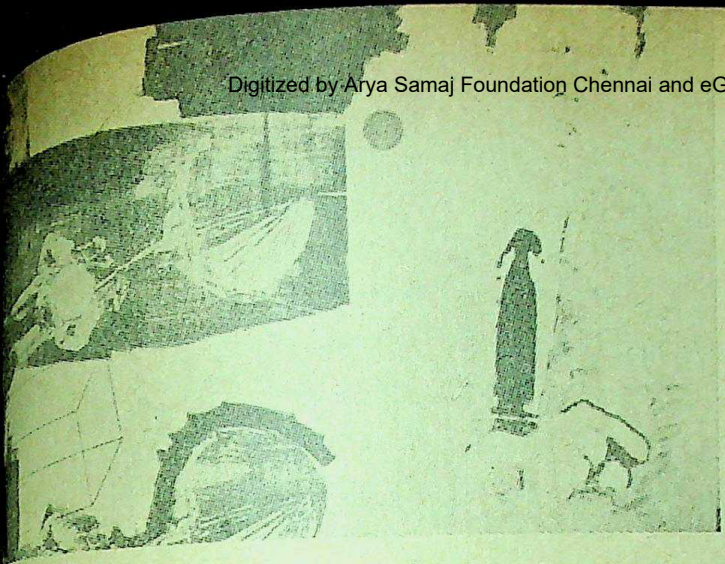

उद्धरण : आजकी 'कोलाज' (जोड़-तोड़) शैली रोशॅनबर्ग

साशके पत्ते, माचिसकी डिब्बियों के खोल, पुराने कपड़ोंके टुकड़े मढ़े जाने लगे। इस तकनीक को काग़ज़-चिप काऊ (कोलाज़) का नाम दिया जाने लगा और निर्माणका दूसरा स्रोत घनवादका यह चरण था। चित्रको मूर्त्तिवत् गुण तथा त्रिविमा पुनः मिली।

अभीतक घनवाद अपने पहले चार चरणोंमें विश्लेषणात्मक ही रहा अर्थात् रूपका घनोंमें विश्लेषण। ज्यॉं ग्रिस् साईन्थीटिक घनवादका प्रणेता बना। जहॉं पिकासो और ब्राख़ समाप्त करते हैं वहॉं ग्रिस् प्रारम्भ करता है। रूपके आधारभूत घनके स्थानपर घनके आकार स्वयं ही महत्ता रखने लगे और कुछ आगे बढ़नेकी बात थी कि आकार अपनेमें इतना महत्त्वपूर्ण हो गया कि अमूर्तकलामें आकारका सृजन भी पूर्व पहचानसे परे हो गया। 'शंकु, रम्भ और घन' के स्थानपर ज्यामितिके आकार आये और मेलेविचमें अपने सर्वोच्चवाद (सुपरमेटिज़्म) और मान्दोरियनने अपने अमूर्तमें उसका प्रयोग किया किन्तु औज़नफां तथा जैनेरने अपने विशुद्धवादमें घनवादके बिखरावको समाप्त कर उसका और भी सरलीकरण कर दिया। आधुनिक डिज़ाइन

हुसार भिन्न-भिन्न पैटर्नमें गूँथने लगे और नवॅसपर इस ढंगसे घन बिखराये कि वास्तविक रूप वा वस्तुकी तलाश पहेलीका उलझन-सा बन गयी। यूँ ही तैरते-से लगते हुए कुछ संगीतके नोटेशनसे कुछ आश्वासन मिलता है कि प्रस्तुत चित्र वाईलिनका है या सितारका या साज़ बजाती कन्याका। परन्तु इस प्रकारके कुछ पूर्वनिश्चित या पहचाने रूप और वस्तुओंकी तलाश ही दर्शककी प्रवृत्ति थी। चित्रमें घन-संयोजनको स्वीकारनेके स्थानपर दर्शक या आलोचकने उस चीज़की तलाश करनी चाही जो वहॉं नहीं थी।....

जब रूपके मूलभूत आकार पा लिये तो उन्हें रूपकी सादृश्यतामें तथा स्वतन्त्र-पैटर्नमें सजा कर देख लिया। अब आगे क्या हो ? ऐसा लगा कि घनवाद अन्धी गलीमें चला गया है। इसी गलीसे मुड़ना अनिवार्य था और फिर ब्राखने सादृश्यताकी वास्तविकताकी ओर चेष्टा की। पिकासो और ब्राख़के चित्रोंमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और वास्तुकलामें विशद्धवादका प्रभाव सर्वा-धिक है। किन्तु कलाकारोंने तर्क किया कि ज्यामितिके स्वीकृत आकार ही क्यों? क्यों न सर्वथा नवीन ललित आकार हों और हम घनवादसे पूर्णतया अमूर्त तथा अरूपवादमें पहुँचते हैं।

घनके स्वरूपमें मशीनी पुर्जोंकी सादृश्यता दे अपने युगबोधको प्रकट किया लेज़रने। मशीनोंके रम्भ, रिवट, पेच सभी घनवादी चित्रोंको मिले। इन धातुमयी स्वरूपोंमें वृक्ष भी चिमनी स्वरूप शंखाकारमें दिखने लगे। मशीन युगकी इस गति और उसके ठोसपनको अधिक सशक्त शैली मिली भविष्यवादमें, जिसने घनवादकी स्थिरताको गतिशीलता अन्य घनवादी मेटिन्ज़र, ग्लीज़ेस् माकु-सिस, विलों आदिमें भी अपनी वैयक्तिक शैली-की नवीनता रखते हैं। घनवादके यह अवश्य-म्भावी विकास-क्रम और घनवादी कलाकारों-की आकारकी आन्तरिक आवश्यकताके प्रति जागरूकता घनवादीपर किये आरोपों तथा तथाकथित विकृति और अमानवता (यह आरोप ऑल्डुस हॅक्सलेका है) के विरुद्ध अकाट्य तर्क और उदाहरण है। यह घनवाद-की शक्तिका परिचायक है कि आधुनिक कला; संचेतनाके सर्वाधिक और सशक्त शैलियोंका जन्मदाता घनवाद रहा है और अन्तमें जिसकी नियति तथा परम स्वतन्त्रता अमूर्तवादमें परि-वर्तित हो गयी।

Phone : 25-2227

Universal Fire & General Insurance Company Limited

Transact :

Fire, Motor, Marine, Personal Accident, Fidelity, Guarantee, Burglary and all other forms of Miscellaneous Insurance Business.

Universal Insurance Building,

Sir P.M. Road Bombay-1.

Chairman & Managing Director :

P.U. PATEL, B.A., B.COM. (Lond).

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौंसठ कविताएँ

इन्दु जैन

००

मर्मस्पर्शी कविताओंका संकलन

'चौंसठ कविताएँ' एक बहु-आयामी चेतना-मानसकी रचना है। न कहें कुछ और, पर भिन्न और विशेष इन कविताओंके परिचयमें अवश्य कहा जायेगा। ये कविताएँ हिन्दी कविताकी अधुनातन दिशा, भाव-बोध और शिल्पकी प्रामाणिक उपलब्धिका संकेत देती हैं। और प्रचलित सब प्रकारके उलझावोंसे ये मुक्त हैं और अपना अर्थ बड़ी सहजताके साथ स्वयं खोलती हैं।

सब चौंसठ कविताएँ हैं, पर प्रत्येक जैसे एक सौम्य बिजलीकी कौंधका निमिष हो जो अन्दरकी अकुलाहटको, किसी दर्द या उल्लासको, सतरंगी प्रकाश-रेखाओंकी भाषामें उकेर जाये। अनुभूतियोंको ऐसी अभिभूत करने-वाली अभिव्यक्ति इनमें हुई है कि क्षितिजपर क्षितिज सामने खुलते चले जाते हैं और भीतर एक गन्ध-भरी चाँदनी छिटक पड़ती है। कविताओंकी पंक्ति-पंक्तिसे साक्ष्य मिलता है कि अन्तश्चेतना भी कितनी मुखर हो सकती है। कविता-प्रेमियोंके लिए कृति अनिवार्य रूपसे पठनीय है।

मूल्य ३.००

भारतीय ज्ञानपीठ

प्रधान कार्यालय : ९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

विक्रय केन्द्र : ३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

प्रकाशन कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकादमी पुरस्कारसे नोबल प्राइज़ तक

प्रश्न : रणवीर रांग्रा
उत्तर : अज्ञेय

'आँगन के पार द्वार' पर साहित्य-अकादमी-पुरस्कारकी घोषणा सुनी तो अच्छा लगा। अज्ञेय हिन्दीके मूर्द्धन्य साहित्यकारोंमें-से हैं। वे हिन्दी कविताके युग-प्रवर्तक तो हैं ही, हिन्दीके उपन्यासको मानव-मनकी गह-राइयों तक पहुँचानेका श्रेय भी उन्हें ही है। अज्ञेयको सम्मानित होता देख किसे प्रसन्नता न होगी? इस प्रसन्नताका एक और कारण भी तो है। पिछलेसे पिछले वर्ष साहित्य अकादमी-द्वारा हिन्दीकी कोई भी रचना पुरस्कृत नहीं हुई थी और उससे हिन्दी-जगत्को लगा था कि उसके साहित्यके साथ ज़्यादती हुई है। पिछले वर्ष 'क़लमका सिपाही' पर अकादमी-पुरस्कार की घोषणा हुई तो, 'उसका वास्तविक लेखक कौन है?'— इस विषयपर ही एक झगड़ा खड़ा हो गया। पिछले दो वर्षोंके कटु अनुभवके पश्चात् हिन्दी-जगत्को अज्ञेयके पुरस्कृत होनेकी घोषणा सुखद लगी।

पर मेरे भीतर एक और जिज्ञासा जगी। साहित्य अकादमी पुरस्कारकी पद्धतिको लेकर अज्ञेयसे मेरी अनेक बार चर्चा हो चुकी थी और हर बार मैंने उन्हें इस पद्धति-का कटु आलोचक पाया था। परिणाम-स्वरूप मैं यही सोचने लगा था कि इस पुरस्कारके प्रति उनका आक्रोश मुख्यतः इसलिए है कि यह पुरस्कार उन्हें मिला नहीं। एक-दो बार इसकी चर्चा होकर रह गयी और पुरस्कार कोई और ले गया। मेरी धारणा बनने लगी थी कि पुरस्कार पाकर अज्ञेयका आक्रोश अपने-आप शान्त हो जायेगा। इस बार पुरस्कारकी घोषणा सुनी तो मनमें आया कि क्यों न उनसे इस विषयपर एक बार और बात छेड़कर देख लिया जाये कि पुरस्कारके प्रति अब उनका रवैया क्या है।

अज्ञेयजीसे मिलते ही मैंने बिना किसी भूमिकाके पूछ लिया : "साहित्य-अकादमी-पुरस्कारकी खबर मिलनेपर उसके प्रति आपकी पहली मानसिक प्रतिक्रिया क्या हुई?"

मेरी आशाके विपरीत वे बोले : "असमंजसकी। अकादमीके पुरस्कारोंके निर्णय तक पहुँचनेकी पद्धतिका मैं बरसोंसे आलोचक रहा हूँ। जब हिन्दी-सलाहकार-समिति-का सदस्य था तब समितिमें ही पद्धतिकी आलोचना करता रहा, तब भी और उसके बाद भी पत्र-पत्रिकाओंमें इसके विषयमें लिखता रहा हूँ। अकादमीका पुरस्कार मुझे मिले-ऐसी आकांक्षा कभी नहीं रही और उसके मिल सकनेकी सम्भावनापर भी कोई विचार मैंने नहीं किया। उसके प्रति विशेष सम्मानका भाव मेरे मनमें नहीं था, न अब है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'आँगन के पार द्वार' पर····

...रण कई बार दोहरा चुका हूँ। सबसे पहला यह कि मेरी ...समें राष्ट्रीय संस्थाका पुरस्कार साहित्य-पुरस्कार होना ...हिए, अर्थात् उसका निर्णय भाषावार चिन्तनसे ऊपर ...कर किया जाना चाहिए। दूसरे, मैं ऐसी कोई कसौटी ...जानता जिसपर शास्त्रीय अथवा शोध-साहित्य और ...साहित्य दोनोंको समान रूपसे कसा जा सके। दोनों ...र्योंके लिए या तो अलग-अलग पुरस्कार होना चाहिए, ...एक ही पुरस्कार आँतरे वर्ष एक प्रकारके साहित्यके ...दिया जाना चाहिए। तीसरे, यह बताया जाना ...हिए कि पुरस्कारका निर्णय किसके मतका प्रतिपादन करता ...। एक तरीक़ा यह है कि आप लोकमतका संग्रह कर ...जिए, तब पुरस्कार मिलनेसे केवल इतना पता लगेगा ...कि अमुक रचनाके प्रेमी अधिक हैं। या फिर निर्णायक ...मिति चुनिए और निर्णय उसके नामसे प्रकाशित कीजिए, ...र्णायकोंकी मर्यादा और प्रतिष्ठाके आधारपर यह ...निश्चय किया जा सकेगा कि पुरस्कारका वास्तविक महत्त्व ...या है। यदि निर्णायकमें हमारी निष्ठा है तो हम उसके ...र्णयसे सहमत न होनेपर भी उसका मान करेंगे, अगर निष्ठा ...हीं है तो निर्णयका कोई मूल्य नहीं होगा। चौथे, निर्णय-...का आधार भी घोषित किया जाना चाहिए—अर्थात् ...रस्कृत ग्रन्थके सम्बन्धमें निर्णायकोंकी सम्मति प्रकाशित ...होनी चाहिए। एक अज्ञातनामा-समितिकी ओरसे पुरस्कृत ...होनेमें इससे अधिक क्या सन्तोष हो सकता है कि पुरस्कारके ...रूपमें एक रक़म मिल गयी? मान रक़मपर नहीं, निर्णायक-...ोंका की गयी आलोचनापर ही आधारित हो सकता है।"

अज्ञेयके उत्तरसे मुझे लगा कि अकादमी पुरस्कार पाकर भी उनका आक्रोश कम नहीं हुआ, बल्कि उसके प्रति उनकी आलोचनाकी धार और भी तेज़ हो गयी है इसलिए चर्चाको थोड़ा मोड़ देते हुए मैंने प्रश्न किया: "साहित्यकारके लिए सबसे बड़ा पुरस्कार आप किसे मानते हैं—रचना प्रक्रिया-में होनेवाला आत्मसाक्षात्कार, रचनाको समाप्तिपर मिलनेवाली राहत या सन्तुष्टि, पाठकों या आलोचकोंसे पायी प्रशंसा अथवा किसी सरकारी या ग़ैर सरकारी संस्थासे रायल्टी या पुरस्कारके रूपमें मिलनेवाला धन?"

अपने भीतर टटोलते हुए-से अज्ञेयजी धीरे-धीरे बोले: "यह तो पुरस्कारकी आपकी परिभाषा-पर निर्भर है। साहित्यकारके लिए सबसे पहली और सबसे बड़ी, और समझ लीजिए अनि-वार्य आवश्यकता है वह चीज़ जिसे आप शायद 'राहत' या 'सन्तुष्टि' कह रहे हैं और जो वास्तवमें एक प्रकारकी मुक्ति है। हर कृतिकार कृतिके द्वारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुक्त होता है। अगर उस मुक्तिका लाभ और बोध उसको नहीं होता, तो फिर उसने जो लिखा है वह रचना नहीं है। अगर होता है, तो जहाँतक रचनाका प्रश्न है वह निष्पत्ति पा चुकी है। इसलिए अगर उस निष्पत्तिको ही आप पुरस्कार कहते हैं, तब तो बात वहीं समाप्त हो गयी। लेकिन अगर पुरस्कारका अर्थ यह है कि ऐसा कृतिकार प्रमाणित हो जानेपर कृतिकारको कुछ दिया जाये—कुछ उसके "सामने किया जाये' (पुरस्कार) तो बात बिलकुल दूसरी हो जाती है। तब पुरस्कारका प्रश्न पानेवालेके सामने उतना नहीं रहता जितना कि देनेवालेके। ऐसे कृतिकारको हम—यानी हम सामाजिक—क्या दें? यश, सम्मान, रायल्टी, ईनाम? इसका शायद सामाजिक ओरसे भी कोई एक जवाब नहीं हो सकता, और कृतिकारकी ओरसे भी शायद एक जवाब नहीं होगा। दान या उपहार या भेंटमें हमेशा देने और पानेवाले व्यक्तियोंके चरित्र, उनकी प्रवृत्तियाँ, उनके गुण और उनकी आवश्यकताएँ अपना महत्त्व रखती हैं। 'जैसी जिसकी पात्रता हो', 'जैसी जिसकी श्रद्धा हो' इस तरहके सभी उत्तर अपने स्थानपर सही हैं, क्योंकि वे इस बातकी ओर संकेत करते हैं कि पुरस्कारके निर्णयका आधार देने और पानेवालेके सम्बन्धकी परस्पर मंगलमयतापर होना चाहिए।"

विषयको आगे बढ़ाते हुए मैंने पूछा: "आपके विचारसे, किसी राष्ट्र या भाषाके साहित्यके उत्थानमें इस प्रकारके पुरस्कारोंका क्या योगदान हो सकता है? इससे पुरस्कृत साहित्यकारको अधिक प्रेरणा मिलती है या उसकी प्रत्याशामें अन्य साहित्यकारोंको?"

अज्ञेय जी बोले: "इसका उत्तर बहुत दूर तक ऊपरके दो प्रश्नोंके उत्तरमें हो गया है। प्रोत्साहनके लिए भी पुरस्कार दिये जा सकते हैं, लेकिन उनका स्वभाव बिलकुल अलग है और ऐसे पुरस्कारोंकी योजनामें यह प्रतिज्ञा निहित होती है कि पुरस्कार देनेवाला किसी-न-किसी रूपमें उसे पानेवालेसे ऊँचाई-पर है। अगर ऐसा दावा नहीं है, तो किस आधारपर कोई निर्णय कर सकता है कि किस चीज़को प्रोत्साहन देना चाहिए और किसे नहीं? और अगर ऐसा दावा है, तो यही पूछना रह जाता है कि दावा सही है या ग़लत। हम बच्चोंको भी पुरस्कार देते हैं, विद्यार्थियोंको भी पुरस्कार देते हैं। अगर कोई भाषा या साहित्य भी अपरिपक्व हों, तो उनके विकासमें सहायता देनेके लिए भी पुरस्कार दिये जा सकते हैं। लेकिन स्पष्ट है कि ऐसा वही कर सकता है जो स्वयं परिपक्व हो—या कमसे कम अपेक्षया अधिक परिपक्व हो।"

उठते-उठते मैंने एक और प्रश्न कर डाला: "साहित्य अकादमीने 'आँगन के पार द्वार' को पुरस्कृत किया है। क्या आप भी इसे ही अपनी सर्वश्रेष्ठ रचना मानते हैं? यदि इसे नहीं तो और किसे?"

प्रश्न थोड़ा तीखा था वैसी ही प्रतिक्रिया भी हुई। उत्तर देनेकी बजाय मुझसे ही प्रश्न करते हुए अज्ञेय बोले: "यह प्रश्न मुझसे ही क्यों पूछा जाना चाहिए? और इसका मेरा उत्तर क्यों विश्वसनीय हो? यों मैंने सुना है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के निर्णायकोंमें भी कमसे कम एक मेरा यह
है कि "आँगनके पार द्वार' अज्ञेयकी सर्वश्रेष्ठ
ति नहीं है। और मैंने यह भी सुना है कि
ले वर्ष पहले भी निर्णायकोंके सामने इस
पुस्तकका नाम आया था और उन्होंने इसे
पुरस्कारके अयोग्य ठहराया था। उस वर्ष
पुरस्कार दिया ही नहीं गया क्योंकि कोई भी
पुस्तक इसके योग्य नहीं पायी गयी। निस्सन्देह
यह हिन्दीके साथ दोहरा अन्याय हुआ। ऐसा
अपनी पुस्तकको अलग रखकर भी मानता
अन्य कुछ भाषाओंमें जो पुस्तकें पुरस्कृत
उनसे अधिक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ हिन्दीमें
लिखित हो गये। भाषावार चिन्तनके दोषोंमें
यह भी एक है। पर यह सब आपके प्रश्नका
उत्तर तो नहीं है। और ये सब निर्णय और
विचार तो यों भी 'गुप्त' माने जाते हैं। इस
लिए यह भी मानना होगा कि मैं नहीं जानता
कि इस वर्ष, या पिछले वर्ष या उससे पहले
निर्णायक कौन थे, कौन-सी पुस्तकें विचारार्थ
उनके सामने आयी थीं और किसकी क्या राय
रही। "जहाँतक मेरा अपना प्रश्न है, मैं अभी-
तक तो यही मानता हूँ कि मेरी सर्वोत्तम
रचना अबसे अगली रचना होगी। ऐसा न
मानूँ तो आगे लिखना थोड़ा और कठिन हो
जाये और फिर यह भी तो है कि जो लिख
लिया जाता है वह लिखे जानेमें ही पराया
हो जाता है। तब उसको श्रेष्ठ तो क्या,
'अपना' भी मानना कठिन हो जाता है। 'मैं
सच लिखता हूँ, लिख-लिखकर सब झूठा करता
जाता हूँ'...।"

■ ■

प्रोत्साहनके लिए भी पुरस्कार
दिये जा सकते हैं, लेकिन
उनका स्वभाव बिलकुल अलग
है और ऐसे पुरस्कारोंकी
योजनामें यह प्रतिज्ञा
निहित होती है कि पुरस्कार
देनेवाला किसी-न-किसी
रूपमें उसे पानेवालेसे ऊँचाईपर
है। अगर ऐसा दावा नहीं
है, तो किस आधारपर
कोई निर्णय कर सकता है कि
किस चीज़को
प्रोत्साहन देना चाहिए और किसे
नहीं? और अगर ऐसा
दावा है, तो यही
पूछना रह जाता है कि
दावा सही है या ग़लत। हम
बच्चोंको भी पुरस्कार देते हैं,
विद्यार्थियोंको भी पुरस्कार
देते हैं। अगर कोई भाषा या
साहित्य भी अपरिपक्व हों,
तो उनके विकासमें
सहायता देनेके लिए भी पुरस्कार
दिये जा सकते हैं। लेकिन
स्पष्ट है कि ऐसा वही
कर सकता है जो स्वयं परिपक्व
हो—या कमसे कम अपेक्षया
अधिक परिपक्व हो।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ० जगदीश गुप्त
की कविताओं का संग्रह

हिम-विद्ध

हिमवान् हिमालय समस्त भारतीय चेतनाका देवालय रहा है : ऐसा देवालय जहाँ सत्य, शिव और सुन्दर तीनों एक साथ प्रतिमित हों, जहाँ पवित्रता और मांगलिकता ही नहीं, जड़में चेतन शक्तिका भी साक्षात्कार होता हो। यहाँ जो भी आता है वह एक भव्य शोभा और शक्तिके भावसे तो अविभूत होता ही है, जीवनके एक अपूर्व बोधसे भी स्पन्दित हो उठता है; मानो वहाँका विराट् सत्य उसके सम्पूर्ण अस्तित्वको विद्ध कर देता हो।

प्रस्तुत कविता संग्रहका 'हिम-विद्ध' नाम इसी विद्धताकी ओर संकेत करता है। हिम-देशके सम्पर्कने कविके अभ्यन्तर-की रिक्तताको जिस कोमल-स्निग्ध समृद्धिसे भर दिया है उसीका ये कविताएँ संवहन करती हैं।

एक बड़ी विशेषता इन कविताओंकी यह है कि विषय सूक्ष्म और चित्रात्मक होते हुए भी, ये सब अत्यन्त सरल और सरस—अपनेमें रमा लेनेवाली हैं।

मूल्य ३.००

भारतीय ज्ञानपीठ
३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामानन्द श्रीवास्तव
जगदीश गुप्त
रवीन्द्र भ्रमर

एक परिताप

कल तमाम दिन मैंने यह सोचते हुए बिता दिया
कि मैंने तुम्हारे लिए
कुछ भी तो नहीं किया।
शब्द जो मैंने कहे
मेरे नहीं थे
वस्तुएँ जो मैंने तुम्हें दीं
दूसरों ने दूसरों के लिए दी थीं

समय जो मैंने तुम्हारे साथ जिया
पहले से बीता था
आकांक्षा जो मैंने तुमसे की
उसमें मैं कहीं नहीं होता था

बेमानी थी शुभकामना
जो विदा समय मैंने तुम्हें दी थी
झूठी थीं सुकून की शर्तें
जो मैंने तुम्हारे हाथों से ली थीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अप्रासंगिक था आक्रोश
जो मैंने तुम्हें दिया था
अमानवीय था व्यवहार
जो मैंने तुम्हारे साथ किया था।

—परमानन्द श्रीवास्तव

नीम का स्वाद

नीम की पत्तियों के पीछे से
झलकती हुई एक शीशे की पट्टी
एक पारे की रेखा
झिलमिलाहटों का एक सिलसिला
हल्की रोशनी के साथ बहाव का एक एहसास।
एक नदी, बहुत पास।

समय के कड़वे-मीठे अन्तराल के उधर से
जैसे कुछ बीता हुआ अच्छा नज़र आता हो।
अच्छा, यानी कि खिलखिलाहट का एक झरना।
अच्छा, यानी कि मुसकराहटों का होठों से होठों पर बिखरना।
अच्छा, यानी कि बड़ी-बड़ी आँखों का हर सिम्त
मन में एक साथ उभरना।

पर अब लगता है कि इस बीते हुए को बार-बार
अच्छा कहना कहीं कड़वाहट बढ़ाना है।
पत्तियों के पीछे से झलकती नदी को देखना नहीं।
ऊँट की तरह नीम की पत्तियाँ चबाना है।

—जगदीश गुप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्मृति तुम्हारी :
दिसम्बर की धूप

व्यथा मेरी :
बर्फ़ की चट्टान

ध्यान आते प्रान—
ज्यों-ज्यों तुम,
चेतना के स्तर पिघलते हैं।
आह ! कितने दृश्य खुलते हैं :
कहीं उगती है—
अकेली घाटियों में दूब,
कहीं अँखुआ रहे हैं मन में
मधुमिलन के स्वप्न,
कहीं खिलता है कँटीली पत्तियों में
सुर्ख़-शोख़ गुलाब,
अश्रुपूरित पुतलियों की
किसी गीली कोर पर
कहीं हँसता है सलोना रूप !

आह ! कितने दृश्य खुलते हैं
चेतना के स्तर पिघलते हैं।
पर, तुम्हारी स्मृति नहीं—
तो सब कुहा-सा है,
दूर तक केवल धुआँ-सा
दृष्टि-पथ में·····!

—रवीन्द्र भ्रमर

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

■ कहानी

महीपसिंह

हमलोग अभी इण्डस्ट्रियल एरियाका चौराहा पार करके कुछ ही आगे बढ़े थे कि पानी तेज़ हो गया। मनजीतने पूछा, "क्यों, छाता खोल लूँ ?"

मैंने कहा, "खोलो। देखें, कुछ बचत होती है या नहीं?"

स्कूटरकी पिछली सीटपर बैठे-बैठे ही उसने छाता खोला और मेरे सिरके ऊपर लानेकी कोशिशमें आँखोंके आगे तक ले आया। मैंने चीखकर कहा, "ऊपर रख, ऊपर। नहीं तो किसीसे भिड़ जाऊँगा।"

वह हँसा—खी खी खी खी। मनजीतकी हँसी मुझे बिलकुल अच्छी नहीं लगती। ऐसे हँसता है मानो छातीसे कूट-कूटकर हँसी उगल रहा हो। हँसना तो उन्हें आता है जो हँसते रहते हों। वह तो सालमें चार-छह बार हँसता है और तब ऐसा लगता है, तबलेमें-से सारंगीकी धुन निकाली जा रही है।

छाता उठकर काफ़ी पीछे जा चुका था। पता नहीं उससे उसकी पगड़ी गीली होनेसे बच रही थी या नहीं परन्तु मेरी पगड़ी पूरी तरह गीली हो चुकी थी और छाते-की नोक बार-बार उसमें चुभ रही थी।

फिर पानीके साथ हवा भी काफ़ी तेज़ हो गयी। छाता उलटा होता जा रहा था। मैंने स्कूटर धीमा किया और उसने किसी तरह उसपर क़ाबू पाकर उसे बन्द कर दिया।

अब हम दोनों भीग रहे थे। पानी मेरी आँखोंपर पड़ रहा था और मैं कभी क्लच और कभी एक्सीलेटरवाला हाथ छोड़कर आँखें निचोड़ लेता था।

तभी न जाने क्या बात लेकर मैं उसपर तल्ख हो उठा। मैंने अपने पुराने आरोप फिर दुहराने शुरू कर दिये—"तुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क छु रा

हो स्वार्थी हो, सिर्फ़ अपना सोचनेवाले—सेल्फ़ सेण्टर्ड ! तुम समझते हो कि जो भी तुम्हारा मित्र है, तुम्हारे निकट है, उसने सिर्फ़ तुम्हारे लिए सोचने और कुछ करनेके लिए ही जन्म लिया है। और तुम्हारा काम है सिर्फ़ अपने बारेमें सोचना !"

वह चुप था। आज मैं उसका चेहरा नहीं देख सकता था। परन्तु ऐसे अवसरोंका उसका चेहरा हमें याद है। वह भौंकोंपर वह अपना चश्मा उतारकर अपनी आँखें मलता है और उन्हें मिचमिचाते हुए मेरी ओर देखता है। उस समय उसके होठोंपर एक अजीब-सी गोलाई आ जाती है, उसकी छोटी-सी फ़िक्स दाढ़ीके दो-चार उखड़े हुए बाल साफ़-साफ़ नज़र आने लगते हैं और बग़ैर चश्मेके सूनी लगनेवाली आँखें किसी बच्चेकी तरह अबोध और तरल हो उठती हैं।

वह पीछेसे बहुत रुक-रुककर बोला, "जैसा हूँ, वैसा बन तो नहीं हूँ। पिछले अठारह सालोंमें यह बात तुम कितनी बार कह चुके हो, मैं सुन चुका हूँ और मान भी चुका हूँ।"

अपने आरोपोंके सम्बन्धमें उसकी यह निरपेक्षता देख-कर मैं झल्ला उठा—"तुम्हारे सुन लेने और मान लेनेसे ही तो समस्या हल नहीं हो जाती। एक ज़माना था कि तुम्हारा यह स्वार्थी रुख मैं सहन कर लेता था। पर आख़िर हर बातकी एक हद होती है। और अब, जब तुम सब कुछ कर सकनेकी स्थितिमें हो, तुम्हारा यह एकांगीपन कभी-कभी मुझे बहुत खलता है।"

मुझे लगा कि मुझे उसके स्वार्थी रुखके दो-चार उदाहरण सुनाकर अपनी बातों-की पुष्टि करनी चाहिए। इस-लिए मैंने उसके सामने फिर वही घटनाएँ दुहरायीं जो इससे पहले भी मैं उसे कई बार सुना चुका था।

मनजीतपर जब कभी मैं इस प्रकार नाराज़ होता हूँ, मैं अनायास बहुत कटु हो जाता हूँ। वह बिलकुल चुप हो जाता है, प्रत्युत्तरमें कुछ नहीं कहता और मैं कहता ही जाता हूँ। मुझे उसका चुप हो जाना उसकी बदमाशी मालूम होती है, बुरी तरह खलती है और खीझ पैदा करती है। फिर मैं अपनी खीझ मिटानेके लिए बस बकता ही जाता हूँ।

एकाएक मुझे महसूस हुआ कि स्कूटरकी चाल धीमी पड़ रही है। मैंने सड़कके किनारेके एक पेड़के पास उसे रोका।

उसने पूछा, 'क्यों क्या हुआ ?"

"पेट्रोल रिज़र्वपर आ गया है।" मैंने पेट्रोल नॉबको 'आर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर कर दिया।

पानी कुछ ज़्यादा तेज़ हो गया था। स्कूटरको स्टैण्डपर खड़ा करके हम दोनों घने पेड़के नीचे हो गये।

दोनों चुप थे।

मैंने देखा, उसने चश्मा उतारा। रूमाल-से शीशे पोंछे, आँखें पोंछीं और चश्मा लगा लिया।

चश्मेके पीछेसे वह अपनी आँखें मिचमिचा रहा था।

हम लोग काफ़ी देर गुमसुम खड़े रहे। स्कूटरकी अगली-पिछली दोनों सीटोंपर पड़ रही पानीकी टप-टप बूँदोंको हम देख रहे थे। हम दोनों बोलना टाल रहे थे। वह तो चुप था ही। और मैं बोल-बोलकर थक चुका था।

पानी कुछ हलका हुआ तो मैंने कहा, "आओ, चलें।"

हम दोनों स्कूटरके पास आ गये। मन-जीतने जेबसे आधा गीला रूमाल निकाला और अपनी गीली सीटको साफ़ करके उसे जेबमें रख लिया।

मैं हँस दिया, "मैं समझता हूँ कि अब और किसी उदाहरणकी ज़रूरत नहीं है।"

वह हतप्रभ-सा हुआ जैसे चोरी करता पकड़ लिया गया हो, उसी समय जब उसपर चोर होनेका इलज़ाम लगाया जा रहा हो।

उसने रूमाल निकाला और झटपट मेरी सीट साफ़ कर दी।

■

आठ-दस दिन मेरे पास रहकर मनजीत वापस बम्बई जा रहा था। मैंने कहा, "याद रखना, तुम्हारे पास सिर्फ़ अप्रैल तकका समय है। तबतक तुम फ़ैसला कर लो और दिल्ली आ जाओ। बादमें बच्चोंको स्कूलोंमें एड-मीशन मिलना मुश्किल होगा।"

हम लोग स्टेशनपर आ गये थे। बूँदा-बाँदी तो रास्तेमें ही शुरू हो गयी थी, यहाँ पहुँचते-पहुँचते पानी काफ़ी तेज़ हो गया। स्कूटर मैंने स्टेशनके बाहर खुलेमें ही खड़ा कर दिया। दिल्ली स्टेशनपर प्राइवेट स्कूटर-कारोंको खड़ा करनेके लिए कोई शेड नहीं है। 'जनता' में उसकी सीट रिजर्व हो चुकी थी। जगह लेकर हम लोग प्लैटफ़ॉर्मपर टहलने लगे।

पानी और तेज़ हो गया था। तेज़ बौछार-से शेडके नीचेका प्लैटफ़ॉर्म भी आधेसे ज़्यादा भीग गया था। आसमान घुप काला था और हम काली पटरियोंपर पड़ती हुई मूसलाधार वर्षा देख रहे थे।

मैं मनजीतसे वर्षापर बात कर रहा था। दिल्ली और बम्बईकी वर्षाकी तुलना कर रहा था। बम्बईमें वर्षाके दिनोंमें अपने साथ घटी हुई घटनाओंकी बड़ी दिलचस्पीसे, हँस-हँसकर चर्चा कर रहा था। कुल एक दिन पहले ही मैं उसपर बुरी तरहसे नाराज़ हुआ था। ऐसी नाराज़गीके बाद मनजीतके साथ कुछ वैसा ही व्यवहार करनेको मेरा मन करता है जैसा बचपनमें मेरी माँ मुझे खूब मारने और रुलानेके बाद मेरे साथ किया करती थी। ऐसे मौक़ोंपर मैं उसके साथ बहुत मुलायमियतके साथ पेश आता हूँ। वैसे मैं अकसर उसे 'तू'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहता हूँ। परन्तु ऐसे दिन सँभल-सँभलकर 'तुम' कहता हूँ और सोचता हूँ कि यदि 'तुम' कहना इसे अच्छा न लग रहा हो तो 'आप' कहूँ।

मुझे एकाएक अपने स्कूटरका ध्यान आया। अभी तीन बजनेमें दस मिनिट थे — गाड़ी छूटनेमें आधा घण्टा था। मैंने उससे कहा, 'अब मैं चलूँ न ?'

उसे आश्चर्य हुआ, "क्यों, कहीं जाना है ? अभी पानी भी कितना तेज़ है !"

मुझे मन-ही-मन उसपर बड़ा गुस्सा आया। बहुत-से उदाहरण याद हैं जब मनजीत स्टेशनपर छोड़ने आया और गाड़ीमें मुझे मिलनेके पाँच-सात मिनिट बाद ही अन-सा दिखाई देने लगा, फिर बोला, "अच्छा मैं चलता हूँ···हाँ, वहाँ पहुँचकर पत्र लिखना।"

मैंने कहा, "स्कूटर बाहर पानीमें ही खड़ा है। पता नहीं क्या हालत है उसकी। और बरसातमें उसे उड़ा ले जाना भी ज़्यादा मुश्किल नहीं है।"

वह बोला, "अच्छा, तुम उसे एक बार आओ। देखकर वापस आ जाना··· ...र। गाड़ी चलनेमें तो अभी काफ़ी है।"

मैं 'अच्छा' कहकर चल दिया, परन्तु मैं सोचता रहा कि वापस नहीं आऊँगा।

बाहर स्टेशनके पोर्टिकोसे देखा, सामने स्कूटर खड़ा है। पानी उसी तेज़ीसे बरस रहा था। पोर्टिकोमें काफ़ी भीड़ थी।

मैं पाँच-सात मिनिट वहीं खड़ा रहा।

एक सप्ताहमें मनजीतके तीन पत्र ? ऐसा तो कभी नहीं हुआ। वह तो अपने आपमें सिमटा रहनेवाला कछुआ है—कछुआ। पिछले बीस सालोंमें मुझे कभी ऐसा नहीं लगा कि वह भी अपनेको फैला सकता है, अपना विस्तार कर सकता है। मुझे लगा यह मनजीत तो उस मनजीतसे कुछ अलग है जिसे मैं इतने अरसेसे जानता हूँ।

भीड़में लोगोंके गीले कन्धे मुझे बार-बार छू जा रहे थे। मनजीतकी गाड़ी छूटनेमें अभी बीस-एक मिनिट बाक़ी थे।

मैं घूमकर उसके प्लैटफ़ॉर्मकी ओर चल दिया।

उसके डिब्बेके पास पहुँचकर देखा, वह लम्बीवाली नीचेकी सीटपर पालथी मारे बैठा है। खिड़कीसे वह इतनी दूर था कि मैं बाहरसे हाथ बढ़ाकर उसे छू भी नहीं सकता था। मुझे देखकर वह खुश हुआ, "क्यों, क्या हाल है तुम्हारे वाहनका ?"

मैंने मुसकराकर, आँखें झपकाकर गरदन हिला दी।

मैंने देखा वह वहीं बैठा कह रहा है, "मेरी चिट्ठीका जवाब देनेमें तुम बड़ी देर कर देते हो। उत्तर तुरन्त दे दिया करो।"

मैंने हँसकर कहा, "वाह, खुद तो हफ़्तों चिट्ठी नहीं लिखते हो, ऊपरसे यह तुर्रा !"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह अपनी गर्मीकी सी हँसी हँस दिया, "मेरी चिट्ठी न भी आया करे तो भी तुम दूसरे-चौथे ज़रूर लिख दिया करो।"

मैंने देखा, आस-पास बैठे लोग हमारी बातोंमें बड़ी रुचि ले रहे हैं। मुझे अजीब कुढ़न-सी महसूस हुई। मैंने कहा, "बाहर आओ न!"

"नहीं····नहीं।" वह झटपट बोला, "पैर-वैर साफ़ करके ऊपर रखे हैं। बाहर आनेसे पैर फिर खराब हो जायेंगे।" और वह अपने आपमें थोड़ा और सिमट गया।

गाड़ी जानेमें अभी दस मिनिटसे ज़्यादा थे। कभी एकाध वाक्य वह उधरसे बोलता, कभी मैं इधरसे। आवाज़ बीचमें बैठे हुए लोगोंपर अपना भेद खोलती हुई एक दूसरेके पास पहुँचती थी। मैं प्लैटफ़ॉर्मपर घूमते हुए लोगोंको देखने लगता, फिर उसकी ओर देखकर ऐसे ही उससे कुछ भी पूछ लेता।

मैं टी-स्टालपर खड़े एक जोड़ेको देख रहा था कि उसने वहींसे मुझे ज़ोरसे आवाज़ दी। आस-पास बैठे लोग हम दोनोंको देखने लगे। वह मुसकराते हुए बोला, "नीता, रमा, दर्शी या और किसीको कोई सन्देश भिजवाना है?"

बैठे हुए लोग ओठ सिकोड़कर उत्सुकता-पूर्वक मुझे देखने लगे। मैंने भी वैसी ही रहस्यमयी मुसकराहटमें जवाब दिया, "उसमें तुम्हारी बिचवानीकी ज़रूरत नहीं है।"

वह खी-खी-खी-खी करके हँस पड़ा।

गाड़ी जानेमें अभी कुछ मिनिट बाक़ी थे, परन्तु अब इस तरह खड़े रहना मुझे बहुत खल रहा था। मैंने कहा, "अच्छा मनजीत, अब मैं चलूँ।"

उसने मुझे रोका नहीं। वहींसे गरदन हिलाकर बोला, "अच्छा····चिट्ठी लिखना!"

■

मुझे बम्बई छोड़े साल-भरसे ज़्यादा हो गया है। मनजीत वहीं है। बहुत दिनों बाद उसे एक अच्छी नौकरी मिली है। परन्तु अभीतक वह उसमें कन्फ़र्म नहीं हुआ, टेम्परेरी बेसिसपर काम कर रहा है। मनजीत बहुत आशावादी है। मैं कहता हूँ, खन्ना मार्च-अप्रैल तक ज़रूर ज्वाइन कर लेगा। उसका स्वास्थ्य अब ठीक है। मनजीतका आशावाद कहता है, चाहे अब वह ठीक ही हो गया हो, पर दफ़्तरवाले उसे रखेंगे नहीं। टी० बी० के थर्ड स्टेज तक वह पहुँच गया था। दफ़्तरवाले कुछ ले-देकर उसे रिज़ाइन करनेपर मना लेंगे।

मैं पूछता हूँ, "मान लो उसने रिज़ाइन कर भी दिया तो भी इस बातका क्या भरोसा है कि परमानेण्ट वैकेन्सीपर वे तुम्हींको रखेंगे? ऐसी अनिश्चित अवस्थासे तो अच्छा है तुम दिल्ली आ जाओ। यहाँ तुम्हारे लिए पक्की नौकरीका इन्तज़ाम हो जाना ज़्यादा मुश्किल नहीं है।"

मेरी इस बातपर वह कहींसे पढ़ा हुआ एक वाक्य बड़े दार्शनिक अन्दाज़में कहता है —'इस युगकी एक बात बिलकुल निश्चित है कि कुछ भी निश्चित नहीं है।'

■

बम्बई पहुँचकर मनजीतका पत्र आया— "यहाँ आते ही महँगाईरूपी सुरसा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...कराल रूप देख रहा हूँ। अच्छा गेहूँ ढाई ...किलो! वह भी मिलता नहीं। सस्ता ...आने किलो तक मिल जाता है पर ...आटा पेटमें सीमेण्टकी तरह जम ...है। अच्छा चावल देखनेको नहीं ...। कोई सब्ज़ी डेढ़-दो रुपयेसे कम नहीं ...घीकी तो बात न पूछो। पन्द्रह ...भी मिलना मुश्किल है। अच्छा ...घी भी ब्लेकमें बिक रहा है। पुरानी ...दाल-रोटी खानेकी बात कहती है ...कल सब्ज़ी-रोटी खाना दाल-रोटी ...लिए सस्ता है क्योंकि कोई भी दाल ...किलोसे कम नहीं है। और दफ़्तरका ...है कि सुन रहा हूँ कि खन्ना छह ...लिए अपनी छुट्टी और बढ़ा रहा है।"

...के बाद महीना-डेढ़ महीना गुज़र गया ...कोई पत्र नहीं आया।

...स्कूटरका एक मिलिटरी ट्रकसे एक्सी-...बैठा हूँ। शामको मैं काश्मीरी गेट ...लिए घरसे निकला था। अभी इण्ड-...एरियाका चौराहा पार करके मैं ...ओर बढ़ा ही था कि दाहिनी ओर-...सड़कसे वह ट्रक बड़ी तेज़ीसे निकला ...मुझे बस इतना ही याद है कि पलक ...मैंने उसे अपने सामने पाया।

...घटनास्थलपर ही बेहोश हो गया ...होश आनेपर कितने ही लोगोंको अपने ...और खड़ा पाया। सिरमें ख़ासा गहरा ...हुआ था। दाहिनी जाँघ और घुटनेपर ...चोट आयी थी। फिर भी मेरे सभी हित-चिन्तक भगवान्‌का लाख-लाख शुक्र कर रहे हैं कि उसने हाथ देकर मुझे बचा लिया। नहीं तो ऐसी दुर्घटनाके बाद कौन बचता है और यदि बच भी जाये तो हाथ-पैर तुड़वाकर ज़िन्दगी-भरको अपाहिज तो हो ही जाता है।

मनजीतको इस दुर्घटनाकी ख़बर न जाने कैसे लग गयी। दुर्घटनाके पाँच-सात दिनके बाद उसका एक्सप्रेस पत्र आया, केवल दो पंक्तियोंका घसीट पत्र—"सुना है तुम दुर्घटना-ग्रस्त हो गये हो! लौटती डाक हाल लिखो।"

मैं डॉक्टरके पास ड्रेसिंग कराने जा रहा था। लौटकर आया तो कुछ पीकर सो गया। आँख खुली तो तीमारदारीके लिए आनेवालोंसे अपनेको घिरा पाया।

दूसरे दिनकी डाकमें मनजीतका एक पोस्टकार्ड था—"तुम्हें एक एक्सप्रेस पत्र लिख चुका हूँ। सुना है, तुम किसी दुर्घटनाके शिकार हो गये हो। अपना पूरा हाल लिखो।"

मैं कॉलेज जानेकी तैयारी कर रहा था। एक सप्ताहकी छुट्टी पूरी हो चुकी थी। सोचा, थोड़ा घूम भी आऊँ और पहली तारीख़ है, वेतन भी ले आऊँ।

एक दिन छोड़कर मनजीतका फिर पत्र आया—"बड़े अजीब आदमी हो जी! दिल्ली-से बम्बई पत्र एक दिनमें आ जाता है। मैं तुम्हें दो पत्र लिख चुका हूँ। चिन्ताके मारे मेरा बुरा हाल है। लौटती डाक सब लिखो।"

एक सप्ताहमें मनजीतके तीन पत्र? ऐसा तो कभी नहीं हुआ। वह तो अपने आपमें सिमटा रहनेवाला कछुआ है—कछुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिछले बीस सालोंमें मुझे कभी ऐसा नहीं लगा कि वह भी अपनेको फैला सकता है, अपना विस्तार कर सकता है। मुझे लगा यह मनजीत तो उस मनजीतसे कुछ अलग है जिसे मैं इतने अरसेसे जानता हूँ।

मैंने उसे पत्र नहीं लिखा।

और एकके बाद दूसरा, उसके चार पत्र और आ चुके हैं। मुझे बड़ा मजा आ रहा है—सिमटनेमें, सिकुड़नेमें। और उसकी चिन्ता, उत्सुकता, खीझ और झुँझलाहटको मैं घूँट-घूँटकर इस तरह पी रहा हूँ जैसे वह कोई बड़ा स्वादिष्ट पेय है, जिसे मैंने इसके पहले कभी चखा तक नहीं।

और उसका आजका पत्र तो बस कमाल है···हँसते-हँसते मेरा बुरा हाल है—"अबे मोनो बाबाके बच्चे, यह शायद आठवाँ पत्र लिख रहा हूँ। सुना है कि तेरे साथ कुछ दुर्घटना हो गयी थी। सो उसमें बचा या मर गया? अगर सचमुच मर ही गया है तो मुझे खबर तो दे दे जिससे मैं निश्चिन्त होकर अपने काममें लगूँ। पर मुझे मालूम है कि तू अभी इस धरतीपर ही रेंक रहा है क्योंकि तेरे मरनेपर बम्बईमें एक शोकसभा अवश्य होती और उसकी खबर अखबारमें भी छपती। अच्छा अब ज्यादा तंग मत कर और अपने सड़े हुए हाथोंसे दो शब्द लिखकर भेज दे।"

खूब हँस चुकनेके बाद मैं चारों ओरसे कम्बल ओढ़कर, उसके पत्रको हाथमें लेकर मुहकराते हुए उसका स्वाद ले रहा हूँ।

■■

Gram : MATACANTOS
CALCUTTA.

Telephone :
OFFICE : 22-3226
RESI : 55-2620

Asutosh Mookerjee & Co. Private Ltd.
12, RAJA WOODMUNT STREET,
CALCUTTA-1.

Importers & Manufacturers of :
WIRE ROPES, CHAINS LIFTING ACCESSORIES,
WAGON FITTINGS & MARINE STORES ETC.
Agents for :
LIFTING ACCESSORIES
S. TURTON & CO., LTD., BIRMINGHAM.
Workshop :
22, RAMLAL MOOKERJEE LANE,
SALKIA, HOWRAH.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

PRESSMAN-TQS-10

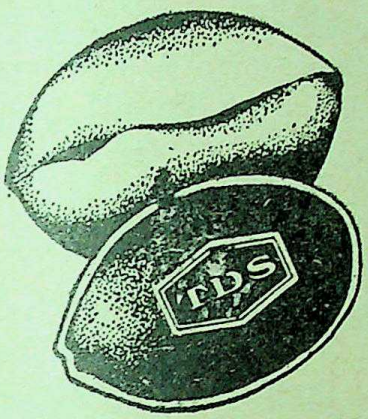

TDS make everything in IRON CASTINGS

THAKURDASS SUREKA IRON FOUNDRY LTD.

172 J. N. MUKHERJEE ROAD, SALKIA, HOWRAH.

Telegram : Ratnesu-Howrah, Phone : 66-4511 (4 Lines)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परेश

धनाते बता रहा था—सिन्थिया कनेक्टीकट में है कहीं। कनेक्टीकटका हवाई जहाज़से लिया गया एक चित्र अवश्य देखा था मैंने किसी किताबमें—इसके अतिरिक्त अमरीकाके इस शहरसे मेरा कोई सम्बन्ध नहीं था। सम्बन्ध तो सिन्थियासे भी कोई नहीं था, पहले-पहल जब मुझे यह नाम बताया गया था तो मुझे अच्छी तरह याद है, मैंने अपनी जेबसे पॉकेट डिक्शनरी निकाली थी। वह डिक्शनरी आज भी मेरे पास है। जिस वक़्त मैंने इसे खरीदा था—मुझे इस डिक्शनरीकी आवश्यकता कम और इसके नीले कवरका मोह अधिक था। अब तो वह चर्चकी प्रार्थना-पुस्तिका-सी लगती है जो बार-बार प्रयोगमें लाये जानेसे मैली हो गयी है।

सिन्थियाकी स्मृति भी अब उतनी साफ़ कहाँ है। समय के साथ हर चीज़ मैली हो जाती है। एडवेंचर करनेकी वह उमर भी नहीं रही। दिव्याने बहुत ज़िद की तो मैंने उसकी पाँच-सात कविताएँ सुन ली थीं। कसीदा काढ़नेके ढंग-में वह पॉप्लारके नीचे बैठी थी और दो-दो पंक्तियाँ बोलकर पेंसिलसे कुछ करेक्शन कर लेती थी।

"आप तो केवल गरदन हिला रहे हैं!" मेरी चुप्पीसे वह नाराज़ हो गयी।

"कविताएँ अच्छी हैं।" मैंने और एटेण्टिव होते हुए कहा था।

'क्या खाक अच्छी हैं, आप तो उधर लड़कियोंकी तरफ़ देख रहे थे।"

"लड़कियाँ भी अच्छी हैं।" मुझे चिढ़ानेका एक मौक़ा हाथ मिला।

"तो पहले आप लड़कियाँ देख लीजिए।" वह रुआँसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो गयी।

"अरे भाई, मैं उधर नहीं, वे हमारी तरफ़ देख रही हैं।"

उसे मेरी बातमें कुछ सार जान पड़ा। पॉप्लारकी छोटी-सी छाया थोड़ी दूर सरक गयी थी। छाया देखकर उसने एक बार अपनी घड़ीकी तरफ़ देखा—पीरियडमें अभी पन्द्रह मिनिट बाक़ी थे।

"लड़कियाँ तो यों ही होती हैं।" उसने मुँह बिचकाया और सरककर फिर छायामें बैठ गयी।

"क्यों, क्या तुम लड़की नहीं हो?" मैंने थोड़ी तेज़ीसे उसकी ओर देखते हुए कहा। मेरी आँखोंपर धूप पड़ रही थी।

"पर आप तो लड़के नहीं हैं।" वह झल्ला गयी।

उसकी बातने मुझे आहत किया। थोड़ी देर चुपचाप अपनी उमरकी ढलानको स्वीकारता रहा और फिर बोला, "यही बात मैं कहने जा रहा था दिव्या···तुम अभी रोमान्स कर सकती हो और कविताएँ लिख लेती हो···रोमान्ससे मेरा मतलब एडवेंचर···मैं अपनी सुरक्षित आयके साथ जड़ हो गया हूँ—कविताएँ पढ़ाता हूँ परन्तु समझता नहीं··· मतलब मैं उतारपर हूँ···

मेरी बात सुनकर उसकी आँखें थिर हो गयी थीं और कुछ-कुछ वैसी नम, जैसी अक्टूबरकी ठण्डी हवासे हो जाती हैं।

धनातेने जिस वक़्त सिन्थियाकी बात चलायी थी—हम वेसमेण्टमें बैठे थे और बाहर अक्टूबरकी हवा चल रही थी। लाहौल घाटीमें घूमकर उनकी टोली हाल ही में वापस लौटी थी और दीवारपर एक्सपीडीशनके दौरान लिये गये चित्र टँगे हुए थे। मार्चमें सच्चर भी बैकुअर जानेवाला था। स्टेट्सकी बात उसीने उठायी थी।

धनाते अपने दो साल काट आया था सीएटामें। सिन्थियासे जान-पहचानके पीछे सम्भवतः यही बात रही हो। वैसे 'मास्टर'की डिग्री उसने बोस्टन-युनिवर्सिटीसे ली थी और एक सालके लिए वह विजिटिंग लेक्चरर बनकर भारत आयी थी।

बाहर हवा तेज़ हो आयी थी और बेसमेण्टके गलियारोंमें टक्करें मार रही थी। सच्चर अपनी बढ़ी हुई दाढ़ीमें किसी जंगी जहाज़का कप्तान लग रहा और सतर्क आँखोंसे किसी भी दरवाज़ेसे हवाके अन्दर घुस आनेका इन्तज़ार कर रहा था। चुरुट दोनोंके मुँहमें थी। सतिन्दरने मेज़पर हवाईका नक़्शा फैला रखा था जहाँ उसको भी अगली गरमियोंमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चला जाना था। सारा वातावरण किसी युद्धकी तैयारीका-सा लग रहा था।

"धनाते, तुम्हें यहाँ अण्डरग्राउण्ड फ़ीलिंग नहीं होती?" खामोशी कुछ असह्य-सी हो गयी तो मैंने छतमें आँखें गड़ाकर कहा।

मेरे कहनेके साथ-साथ सबपर अजीब-सा असर हुआ—लगा, सारी पँचमंज़िली इमारत-का बोझ अकेली बेसमेण्टकी छतपर आ गया हो।

"आजसे पहले तो नहीं हुई पर तुम्हारे कहनेके साथ-साथ कुछ फ़ील हो रहा है।" उसकी आँखोंमें एक दहशतकी चमक थी। वैसे भी सुबहसे कई बार कॉफ़ी ले चुके थे और 'लोट ऑव निकोटीन।' यह सच्चरके शब्द थे—"बेसमेण्ट लाइफ़ नीड्स ए लोट ऑव निकोटीन।" उसने फिर यह वाक्य दोहराया और हँस पड़ा। किसीने साथ नहीं दिया तो थम गया और बोला, "निकोटीन या ताशके पत्ते—लगता है मैं काफ़ी समयसे जहाज़के किसी निचले कमरेमें बैठा हूँ और अन्दर बैठे-बैठे ही समुद्रके तूफ़ान या शान्तिका अनुभव करता रहता हूँ।"

उसकी बातके साथ-साथ हमारे कान बाहरकी दुनियाकी आवाज़ोंके लिए और चौकन्ने हो गये। दूरसे मिलिटरीके बूटोंकी आवाज़ आ रही थी।

बेसमेण्टमें अवश्य जहाज़का एक निचला कमरा ही था और अफ़ीम खाये हुए खलासी या नाविक—लेकिन बाहर अक्टूबर था और प्रतिज्ञाओंको दुहरानेका शब्द।

धीरे-धीरे धम-धमकी भारी आवाज़ोंके साथ एक सीनकी टुकड़ी ऊपरकी सड़कसे निकल गयी। लगा जैसे शराबके खाली पीपे एक छोटे तूफ़ानमें भड़भड़ाते रहे और फिर थम गये।

'सोलिडरिटी डे' होनेसे सिनेमा-घरोंमें 'हम भूले नहीं' नामकी डाकूमेण्टरी दिखायी जा रही थी और पण्डित नेहरूकी उनकी मृत्युके बाद इतनी साफ़ आवाज़ सुनते हुए आडियन्समें एक दहशत-भरी चुप्पी छायी जा रही थी।

"सतिन्दर! तुम्हें उस सालकी लोड़ी (पंजाबका त्योहार—१३ जनवरी) की याद है?" सच्चरने बिना किसी ओर देखे धूएँका छोटा-सा पफ़ छोड़ा और चुरुटमें चमचमाती हुई अग्नि-सी ही उसकी आँखें किसी बीते हुए वाक़येको तलाशने लगीं।

सुबहसे ही मौसम कुछ रहस्य-भरा था। हमारी आँखें भी नुकीली होकर कहीं टिक गयीं परन्तु हमने सच्चरको टोका नहीं और उस दृश्य तक उसे जाने दिया जो उसकी आँखोंमें चमक रहा था।

"देशकी सीमाओंपर उस वक़्त दुश्मन घिरा था।" सच्चर जैसे कोई रनिंग कमेण्टरी दे रहा था।

"वह हमला अब भी जारी है....." डाकूमेण्टरीके एनाउन्सरने कहा था।

"नीचे पंजाबके गाँवोंमें हम अलाव जलाकर त्योहार मनाते थे। रातें थीं ठण्डी और नीली। वैसी ही नीली आग चटखती रहती थी और दुश्मनको परास्त कर देनेके गीत अलावके चारों ओर गाये जाते थे। सबसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देव आवाज जो दिलकी धड़कनोंकी तरह
धड़कती वह ताशोंकी होती—नदी पारके
गाँवोंमें बजते हुए ताशे—लगता था जैसे किसी
बड़े शिकारके लिए हाँका हो रहा है....''

"हमने अपने विभागमें भी तो एक फ़ंक्शन
किया था....'' सच्चर बोलते-बोलते उस बीते
हुए हादसेके साथ हो गया तो ख़ामोशीको भरनेके
लिए बीचमें सतिन्दर बोला। मेज़पर फैला
खाईका समुद्र-तट उस वक़्त शान्त था।

"मैं भी था उस रात....'' मैंने बिना
किसी उत्तेजनाके कहा।

"तुम सिन्थियाको लेकर आये थे।''
सतिन्दर बोला।

सिन्थियाका नाम सुनकर सच्चर वापस
लौट आया। धनातेने ग़लती की। सिन्थिया
यदि एक प्रेम-कथा थी तो बीत चुकी थी।
यदि वह एक विज़िटिंग-लेक्चरर थी तो अपने
देश वापस लौट चुकी थी। अगस्तमें आयी
थी और मार्च तक रुक सकती थी। मैं इस
सोचकी यथार्थता—सेण्टीमेण्ट्सकी व्यर्थता—
साफ़ देख रहा था। दिव्याको लिफ़्ट न देनेके
पीछे भी मेरी यही समझ काम कर रही थी
परन्तु दिव्या और सिन्थियाके पीछे उनकी
उम्र काम कर रही थी।

सारी दहशतके बावजूद लोड़ीका फ़ंक्शन
थोड़े हुड़दंगसे ही शुरू हुआ—परन्तु सिन्थिया
एकदम चुप बैठी रही। बाक़ी पंजाबी
लड़कियोंके साथ वैसी ही सलवार-कमीज़
पहनकर बैठी थी और मूँगफलियाँ छील रही
थी। हमलेकी छाया कुछ इतनी गहरी नीली
थी कि जिस वक़्त कोई गीत रुकता और

अजीब बात है, मेरे साथ
सिन्थियाका यह छोटा-सा
रोमान्स इसी चोनी आक्रमणकी
पृष्ठभूमिमें हुआ। अब सोचता
हूँ, मुझे केवल वह माध्यम
बनाना चाहती थी।
उसका प्यार इस देशसे था,
इस देशकी धरतीसे था।
कहूँ, संस्कृतिसे था। उन दिनों
मेरे आस-पासके विद्वान मित्रोंको
नेफ़ा और लद्दाख़ नक़्शेमें
ढूँढनेपर भी नहीं मिलते थे
और आज भी मैं हैरान
होता हूँ, उसने अपने
क्वार्टरमें युद्धकी सारी चौकियों
और स्थितियोंको
दिखलानेवाला एक नक़्शा
हाथसे बनाकर टाँग रखा था।

केवल आगकी लकड़ियाँ चटख़तीं—सबको लगता, सीमान्त कुछ और नीचे खिसक आये हैं। लकड़ियोंकी चटखमें भी दूरपर चलती हुई गोलियोंकी आवाज़ सुनती। यह सच भी था। चुशूलसे हमारी हवाई पट्टीका जेटका रास्ता तीन मिनिटका था और अगले डेढ़ मिनिट-में वह देशकी राजधानीपर मँडरा सकता था—एक-पर-एक चौकियाँ टूट रही थीं और किसी भी अगले क्षण कुछ भी हो सकता था। नेफ़ाके रास्ते दुश्मन इतना अधिक अन्दर चला आया था कि देशके इस भागमें बैठे हुए हम आसामके सारे तेलके कुओंके जल उठनेकी प्रतीक्षा कर रहे थे। फिर क्या बचता?

अजीब बात है, मेरे साथ सिन्थियाका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह छोटा-सा ऐसा ही हुआ था अभिनंदन पृष्ठभूमिमें हुआ। अब सोचता हूँ, मुझे केवल वह माध्यम बनाना चाहती थी। उसका प्यार इस देशसे था, इस देशकी धरतीसे था। कहूँ, संस्कृतिसे था। उन दिनों मेरे आसपासके विद्वान् मित्रोंको नेफ़ा और लद्दाख नक़्शेमें ढूँढनेपर भी नहीं मिलते थे और आज भी मैं हैरान होता हूँ, उसने अपने क्वार्टरमें युद्धकी सारी चौकियों और स्थितियोंको दिखलानेवाला एक नक़्शा अपने हाथसे बनाकर टाँग रखा था। भारतीयोंको नेफ़ा और लद्दाखका पता नहीं और एक अमेरिकन लड़की सीमाप्रान्तों-की एक-एक पगडण्डियोंसे परिचित—युद्धकी स्थितियोंसे परिचित! हर सुबह वह लाल-नीले निशानोंसे भारतीय और चीनी सेनाओंको घुमाती रहती और मुझे हैरानी होती—दूसरे दिन अख़बारोंमें वे ही ख़बरें पढ़कर। कभी-कभी मुझे शक होता कि वह कोई अमेरिकन स्पाई तो नहीं है! मैं उससे डरता भी था। उससे नहीं तो उसकी खुली खिलखिलाहटसे अवश्य। अपना शक मैं प्रकट कर देता तो वह अवश्य मेरी नासमझी पर हँस देती।

पहले दिन ऐसा ही हुआ था। धनातेने जब मुझे उसके क्वार्टरका नम्बर और मिलने-का समय बता दिया था तो मैंने अपनी जेबसे पॉकेट-डिक्शनरी निकालकर इससे मिलता-जुलता कोई शब्द खोजनेकी कोशिश की थी। औपचारिक वार्तालापके बाद हम थोड़े सहज हुए तो मैंने कहा भी कि सम्भवतः आप तीन बहनें हैं—एक थीसिया, दूसरी ऐण्टीथीसिया, तीसरी आप सिन्थेसिया या सिन्थिया···

बात सुनकर वह बहुत देर तक हँसती रही थी—यानी कि जबतक मैं डर न गया वह हँसती रही। स्वभावसे खुली थी परन्तु फिर भी सर्वथा अपरिचितके सामने इतना खुलना उसने अपरिचितके लिए ही अच्छा नहीं समझा। इसलिए वह पढ़ने बैठ गयी।

थोड़ी-बहुत हिन्दी वह बोस्टनमें मास्टरकी डिग्री लेते वक़्त ही पढ़ गयी थी, अतः आगेकी हिन्दी पढ़ानेमें मुझे कोई ज़ोर नहीं आया था। पाठ्यक्रम भी कोई नहीं था। केवल बातचीत करनी होती थी। हम कोई भी रुचिका प्रसंग शुरू करते और वह उस बीच आये हुए शब्दोंके हिन्दी स्थानापन्न पूछ लेती—क्रियापदोंकी रचना भी वह शीघ्र ही सीख गयी और अपने पहाड़ी कुक रतनसे भरसक हिन्दीमें बात करने लगी। सहेलीके नाते एक बार कान्हा नामकी एक मज़दूरिन वह मज़दूरोंकी बस्तीसे पकड़ लायी और मार्था नाम रखकर उसने उसका ईसाईकरण शुरू कर दिया। मुझसे अकसर वह बुद्ध, योग और विवेकानन्दपर प्रश्न करती। सण्डेज़को सुबह मार्थाको लेकर चर्च जाती और अपने दोस्तोंके साथ मूवी। अतः मैं उसके भारत-प्रेमपर कुछ शक किया करता। एक बार तो उसने मेरे यज्ञोपवीतकी ही उपयोगिता पूछ डाली। मैं झुँझला गया और बाहर निकालकर दिखाया कि मैं इसमें कमरे-की चाबी लटकाये रखता हूँ।

मेरे झुँझलानेसे उसे अपनेपर घोर ग्लानि हुई थी और उसका अमेरिकन माँस जैसे और जलकर मँजे हुए ताँबे-सा निखर आया था।

"सिन्थिया सुन्दर थी।" शिकारके हाँकेके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लौटकर सच्चर सम्भवतः कनेक्टीकटमें घूमने गया था। मैं भी वहाँ नहीं था। बाहर अक्टूबर था और प्रतिज्ञाएँ दोहरानेका शब्द — भीतर एक चण्डूखाना था और जहाज़के चार कुलासी। जो थे और नहीं थे। चुरुट बुझ गये थे और इस बीच मेज़पर फैला हुआ हवाईका समुद्र-तट गोल होकर फ़र्शपर गिर गया था।

अलावकी आँच धीमी पड़ गयी थी और लकड़ियाँ भी अब कभी-कभी ही चटख़ रही थीं—परन्तु ठीक ऐसा लग रहा था जैसे दूरके मोर्चोंपर रुक-रुककर गोलियाँ चल रही हैं।

हमलेकी छाया सचमुच गहरी थी। सिगरेटियाँ सब लोग निश्शब्द चबानेकी कोशिश कर रहे थे परन्तु वह दबी हुई चटख़ भी हमें लगने लगे कैम्पसमें छोड़ आती और हम ठण्ड-से सिहर उठते।

सिन्थिया दूसरे दिन जा रही थी और मेरे आगके दूसरी ओर ख़ामोश बैठा था। कुछ एक अमेरिकन लोक-गीत सुना चुकी थी। बादमें उसने उसका अर्थ भी बताया—टैक्सास-में गाया जानेवाला गीत। पूरी देर मुझे वह 'कोलियाना' पिक्चरकी छोटी लड़की लगती रही जो 'हैरिंगटन—ए ग्लैड टाउन' के वार्षिक मेलेमें अपना राष्ट्रीय ध्वज ओढ़कर देशकी परंपराका कोई गीत गा रही हो।

गाकर वह चुप हो गयी। आगकी लहक-में उसका अमेरिकन माँस और भी लाल हो आया। वैसे ही वह माँके पेटसे अभी-अभी निकली हुई-सी लगती—वैसा ही छीला हुआ-सा माँस। भारतीयोंका माँस धूप और परिश्रम के कारण कुछ पर्तों तक काफ़ी कठोर होता है—उसका ऐसा जैसे ख़ून अभी टपक पड़ेगा। पंजाबी लड़कियोंसे घिरी बैठी थी वह और मेरे सामने घायल सिपाहियोंसे भरे हास्पिटल घूम रहे थे। भारतीय जवान काफ़ी संख्यामें मर रहे थे। "तुम क्या कह रहे थे?" मैंने सच्चरकी आँखोंमें देखा। वह कनेक्टीकटसे लौट आया था अलावके दूसरी ओर बैठा था।

सुबहकी बससे सिन्थियाको दिल्ली जाना था। वहाँसे प्लेनसे न्यूयार्क—जहाँ उसके भाईका एक्सीडेण्ट हो गया था। कहीं कोई तुक नहीं थी उसे लेकर भावुक होनेमें। वैसे भी मार्चमें वह चली ही जाती। हिन्दुस्तानके एक अधेड़ अध्यापकका सम्बन्ध न्यूयॉर्कके किसी अनजान एक्सीडेण्टसे कैसे हो सकता है? "एक अमेरिकन हिन्दू कैसे बन सकता है?" सिन्थियाने पद्धति पूछी थी। उत्तरमें मैंने सोचा था, उसे संस्कृतका 'तद्धित' पढ़ा दूँ।

जिसके साथ आत्मीयता हो उससे पहले कुछ तो कॉमन होना चाहिए। "हमला अभी जारी है।" सच्चर एनाउन्सरकी आवाज़में बोला। उसकी आँखोंमें बर्फ़ीले सीमान्त थे। मार्चमें उसे बैकुअर जाना था।

कोनेमें कॉफ़ीके ख़ाली कप थे। बाहर धूप निकल आयी थी और शराबके ख़ाली पीपोंके बजनेकी सम्भावना कम हो गयी थी। सिन्थिया कनेक्टीकटमें थी और दिव्या अपनी क्लासमें। धनाते बेसमेण्टको ही ख़न्दक मान-कर ख़ुश था। फ़र्शपर गिरा हुआ हवाईका समुद्र-तट चुपके-से इस बीच सतिन्दरकी जेबमें आ गया था। शेष कहीं कोई एडवेन्चर नहीं था। बेसमेण्टके बाहर अक्टूबर था॥ ■■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुधा अरोड़ा

अँधेरा जैसे अँधेरेमें-से होकर गुज़रने लगा था। मेरे कानोंमें बहरेपन-सी बजती सीटियाँ बड़ी तीखी हो आयी थीं। आमने-सामनेकी बर्थ और उसपर सोयी सब आँखें मुझे ग़लत-ग़लत लग रही थीं। बड़ी हलकी रोशनी थी। नीली लकीर जब सोयी प्रौढ़ापर पड़ी थी तो मैंने देखा था—उसकी अधखुली आँखोंमें नीली पुतलियाँ ऊपरकी ओर चढ़ गयी थीं और आँखोंमें खुली हुई सफ़ेदी कुछ ऐसी दिख रही थी कि एकदम लगने लगा था—उसकी आँखोंमें रोशनी नहीं है। फिर सामनेकी बर्थपर लेटा बूढ़ा भी अन्धा हो गया था, खिड़कीके पास लेटा हुआ बच्चा भी। सारा कम्पार्टमेण्ट ही जैसे अन्धा हो गया था। फिर जैसे कोई भूकम्पका धक्का लग गया हो सारी ट्रेन अन्धोंकी तरह दौड़ने लगी थी। और अब? अब वही ट्रेन एक लम्बी अँधेरी गुफ़ामें-से होकर गुज़र रही थी।

उस हलकी जलती हुई नीली बत्तीके पास घड़ी ले जाकर वक़्त देखा था मैंने—दो बजकर पाँच मिनिट। काफ़ी देर पहले भी दो ही बजे थे। लग रहा था घड़ीकी टिक्-टिक् भी कुछ देरके लिए रुक गयी थी और फिर झटका खाकर चलने लगी थी।

अभी वह लम्बी गुफ़ा खत्म नहीं हुई थी। सोच रही थी मैं—क्यों न एकाएक इस तरह चिल्लाया जाये कि सब हड़बड़ाकर उठ बैठें और मुझे घेरकर पूछें—'क्या हो गया?' और मैं पहले आश्चर्यसे अपने चारों ओर देखूँ—फिर भयसे और फिर एकदम हँसकर कह दूँ—'कोई सपना आ गया था।'

सपना! गुफ़ाकी अँधेरी ईंटोंसे ट्रेन बिलकुल सटकर चल रही थी। लग रहा था मुझे—कोई यथार्थ गतिशील

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मरी हुई चीज़

चीज़ जब जड़ताको काटकर गुज़रने लगती है तो सपने बन जाया करते हैं। गुफ़ाकी एक-एक ईंट तेज़ीसे पीछेकी ओर जा रही थी। किसी स्थिर चीज़को यह कहकर समझना कि भागती हुई ट्रेनमें वह पीछे छूट गयी है, मुझे क़तई अच्छा नहीं लगता था। मैं कहा करती थी—'देखो, ये पेड़ कितनी तेज़ीसे पीछेकी ओर जा रहे हैं···ये काशीके पुलका एक-एक लम्बा खम्भा कैसे दूर भागता जा रहा है···इस अँधेरी गुफ़ाकी अन्धी ईंटें···'

वह गुफा या तो सचमुच लम्बी थी या मैं ज़रा-से क्षणमें ज़रूरतसे अधिक तेज़ीसे कई बातें सोच गयी थी। इस गुफ़ासे जब भी ट्रेन गुज़रती है, मुझे लगता है—किसी कोयलेकी खानमें हम नीचे-नीचे धँसे जा रहे हैं···जैसे गुफा किसी बेजान लाशकी तरह पड़ी रह जाती है और ट्रेन उसे अन्धोंकी लापरवाहीसे रौंदती-सी चली जाती है···

वह लम्बी गुफा अब खत्म हो गयी थी। ट्रेनके चलनेका शोर बाहरके वातावरणमें घुलकर हलका हो गया था। रोशनीकी सफ़ेद-नीली लकीर चाँदनीकी पीली चादरमें बदल गयी थी। एकाएक बड़ा हलका हो आया था। इस गुफासे होकर गुज़रनेमें कभी-कभी बड़ी घुटन-सी लगती है और अकसर वह दिन याद आ जाया करता है जब बाहर जानेकी ज़िद करनेके कारण मम्मीने मुझे स्टोर-रूममें बन्द कर दिया था। मैं सोच रही थी—दूरकी कोई एक छोटी-सी घटना वर्तमानसे इस तरह कैसे सम्बद्ध हो पाती है ?···

ट्रेनका शोर गुफाके घुटे माहौलमें जितना अन्तरंग और बँधा हुआ जान पड़ता था—वही अब बाहरकी बिखरी ऊसर ज़मीनमें जाकर सो गया था। मेरे कानोंमें किसी बच्चेके लम्बे रोनेकी आवाज़-जैसी सीटियाँ जैसे किसीके सहलानेसे चुप हो रही थीं और वह तीखी आवाज़ अब उस आवाज़में बदलने लगी थी जैसे कोई खाली गिलास कानसे लगा लिया हो···जैसे खूब बारिशमें आवाज़ें बन्द खिड़कियों और दरवाज़ोंसे टकराकर लम्बी होती जायें···

दूर-दूर तक फैली ऊसर ज़मीनोंकी ऊपरी सतहपर बिछी चाँदनीमें मैं घुलती जा रही थी पर यह घुलना उस तन्मय हो जानेकी स्थितिको कभी पहुँच नहीं सकता था जो मैंने ट्रेनमें बन्द, पहाड़से गुज़रते वक़्त पा ली थी और कहीं नीचे, कोई शहर सोया-सा पड़ा था—शहरकी पहचानें धीरे-धीरे उभरती आ रही थीं—हरिद्वारका भीमगोडा—उसके नीचे पगडण्डी-सी बहती हुई सड़क और उसपर सोये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महात्मा। मुझे एक बचकानी-सी कल्पना घेरने लगी थी कि भीमगोडामें बहता हुआ गंगाजल इतना गन्दा है न, इसकी जगह अगर 'आर्टीफ़िशयल–गंगाजल' या 'कॉर्पोरेशनका पानी' बहा दिया जाये (हर आर्टीफ़िशयल चीज़ वास्तविकतासे अधिक साफ़ और खूबसूरत लगती है)···कि उस छोटे तालाबके किनारे खड़े मन्दिरोंकी जगह अगर लड़के-लड़कियोंके कपड़े बदलनेके कमरे बनवा दिये जायें···कि सुबह सूर्यको अर्घ्य देते हुए केसरिया–गेरुए-जोगिया वस्त्र पहने साधु-सन्तोंकी जगह 'टीन-एजर्स' अपने 'स्विमिंग कॉस्ट्यूम्स' पहनकर तैरा करें···कि मछलियोंको आटेकी गोलियाँ न डालकर उन्हें बंसीसे फँसाकर घर-पर एक स्वादिष्ट भोज तैयार हो···। इन सब बचकानी कल्पनाओंसे कहीं ऊपर सतहपर एक किशोर कल्पना भी उभर आयी थी कि मैं ट्रेनसे गुज़रते समय पारदर्शी पानीमें हिचकोले खाती गोरी जाँघों और मछलीकी तरह तैरते हाथोंको देखा करूँ···पर नहीं। भारतीय संस्कृति अपनी परम्परासे कट जाये तो रेलोंकी पटरियाँ न बिखर जायें···यह खयाल मुझे उन्मुक्त हँसीकी जगह गलेका हलका-सा खँखारना दे गया था और मेरी तन्मयता टूटी नहीं, तोड़ दी गयी थी···

सहसा मैं बोर हो गयी थी। जब आधी रातको ट्रेनमें ऊपरकी बर्थपर लेटा कोई सो न पा रहा हो तो आस-पासके लोगोंको सोते देख ईर्ष्या तो नहीं होती पर वह एक ऊब और अनमनापन-सा ज़रूर दे जाता है। मेरे पास कोई होता तो मैं गलेकी आवाज़में शब्दोंको बाँधकर कहती—'ऐसे घोड़े बेचकर सो रहे हैं जैसे सारी ज़िन्दगीमें सोना नसीब न हुआ हो या .फुटपाथपर चटाई बिछाकर सोते आ रहे हों। घर तो रोज़ ही सोया जाता है—एक दिन ट्रेनमें न सोकर देखिए—कैसा अच्छा लगता है···अँधेरी रात, ट्रेनकी छुक्-छुक्, आगे-पीछे भागती हुई ऊसर ज़मीनें और बिखरी हुई चाँदनी···।' एक 'हाय्' मेरे मुँहसे अनजाने ही हटकर बाहर आ पड़ी। थर्ड-क्लास स्लीपिंगमें सफ़र करनेसे तो अच्छा है—थर्ड क्लासकी भीड़में यात्रा की जाये। कई अपरिचित चेहरोंके बीच सारी रात जागते-झगड़ते-ऊबते काट दो···पर वह कभी-कभी 'ऊबना' भी आत्मतोष बन जाता है। स्लीपिंगमें भी सफ़र करना अच्छा है अगर सामनेकी ऊपरवाली बर्थपर कोई हमउम्र लड़का हो और सारी रात बातोंमें कट जाये।····

मैंने अपने चारों ओर नज़रें घुमायीं—बीचवाली बर्थपर कोई टीचर या हेडमास्टर दिखनेवाला व्यक्ति था—धोती-कुरतेवाला। उसका सात सालका लड़का नीचे सो रहा था। सामने एक प्रौढ़ महिला, बीचवाली बर्थपर एक बूढ़ा और नीचेवाली बर्थपर यू० पी० साइडकी कोई 'ठीक-दिखनेवाली' महिला। पर सो सभी रहे थे—यही एक समानता उन सबको बाँधे थी और मुझे उनसे अलग हटाकर कटघरेमें खड़ा कर रही थी। गुस्सा मेरे मनमें लबरेज़ भरा आकर छलक रहा था—'अभी तुम सबको कोई मुरदा समझकर उठा ले जाये तो ?····कोई आकर तुम सबका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...कर दे तो ?....सो नहीं रहे हैं गोया मर ...गये हैं। जैसे दो बजेका घण्टा कोई वक़्त ...हो गया, क्लोरोफ़ॉर्मका इंजेक्शन हो गया ...जैसे थ्री-टायर स्लीपिंगकी सीट लेकर ...लाज़मी है....'

काफ़ी देरसे किसी छोटे-से स्टेशनपर भी ...नहीं रुकी थी, शायद कोई स्टेशन आया ...नहीं था। आया भी हो तो मैं ऊपरवाली ...नीचे झाँककर नहीं देखी थी या झाँकना ...नहीं थी। दूसरी तरफ़से किसीका पैर ...को लग रहा था। मेरी आँखोंने उस ...को चीरकर देखा था—एक सड़ियल-सी ...(गोरी थी, स्मार्ट नहीं) ने करवट ...थी और इस क्रियामें पैर जालीसे जा ...था। घुटनोंसे ऊपर फ्रॉकसे उसकी गोरी ...झाँक रही थीं। पासमें 'एनिड ब्लायटन'-...कोई किताब पड़ी थी, (होगी—'फ़र्स्ट-टर्म ...सेकेण्ड-टर्म टू मॅलोरी-टावर्स) फ़िल्म-फ़ेयर-...भी एक पेज खुला था जिसमें एन-फ्रेंचका ...विज्ञापन था....मैं सोच रही थी—किस ...लड़कियोंके सिरहाने 'स्टेनली गार्डनर' ...'फ़िल्म-फ़ेयर' के बदले 'लन्दन मेगज़िन' ...'टाइम्स'-जैसी पत्रिकाएँ होंगी।...

फिर जैसे विचारोंके वाक्यको फ़ुलस्टॉप ...गया था। देखती रही थी मैं—वातावरण ...रोता है तो कैसा लगता है ? लड़कियोंके ...मुओं-जैसा लिजलिजा तो नहीं ?...

मेरा मन हो आया था—अचानक तेज़ ...नी हो जाये और ट्रेन झटकेसे रुक जाये ...मैं किसीको खत लिखूँ—समय कट जायेगा ...वह तबीयत नीचेवाली खिड़कीसे दिखते

वह दूर-दूर तक फैला वीराना
मेरी आँखोंमें सूनापन
भर गया। वहाँ कोई स्टेशन
नहीं था। बहुत सारी
पटरियाँ एक दूसरेको
काटते थोड़ी दूर तक फैली
थीं। मैंने आँखोंका
सूनापन झटककर एक टूटती
पटरीपर छोटा-सा खुला
डिब्बा खड़े देखा था—
ऊपर तक कोयलोंसे भरा। शायद
ट्रेन कोयला
लेनेके लिए खड़ी हुई थी।
फिर एक झटका।
मैंने लोहेकी उस ज़ंजीरको
हाथोंमें थाम लिया
था जिसपर मेरी बर्थ टिकी हुई
थी...कि ट्रेन खिसकने
लगी थी।
मुझे रूमाल हिलाता
सुधीर याद आया था...
किसी अनचाही ताक़तसे
रूमाल हिलाता हुआ उसका
वह उदास
शिथिल हाथ।...

बाहरके रोशन अँधेरेमें गुम हो गयी और मैं उलटी होकर लेट गयी। पैर हमेशाके अन्दाज़में ऊपर कर लिये—घुटनोंसे मोड़कर। हमेशा-की तरह पैर हवामें हिलाने चाहे पर ऊपर-की छतसे टकरा गये। मैंने पीछे देखा—एक छन्न-सी आवाज़ हुई थी—शायद खतरेकी ज़ंजीर पैरसे हिल गयी थी। साड़ी घुटनों तक पहुँच गयी थी और पेटीकोट झाँक रहा था—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छा नहीं लगा मुझे यूँ अपनी टाँगोंका सूनापन। टाँगें सपाट कर लीं। सोचती रही कि ज़ंजीर खिंच जाती, ट्रेन रुक जाती, गार्ड आता, मैं सो जाती, इतने लोग हैं—किसीने खींची होगी—मुझे क्या लेना-देना? पर दूसरे ही क्षण सोचने लगी कि स्कर्ट पहनती हूँ, फ़्रॉक पहनती हूँ तब तो नंगी टाँगें बुरी नहीं लगतीं, फिर साड़ी और सलवारसे दिख जाती हैं तो अच्छा क्यों नहीं लगता?

बच्चा-सा पंखा खर्र-खर्र चल रहा था—तेज़-तेज़। मैं हमेशा तेज़ पंखा चलाया करती थी और सुधीर····मेरा सोचना झटकेसे रुक गया था जैसे पानी पीते-पीते हिचकी आ गयी हो। उस बेवक़ूफ़के बारेमें न सोचनेकी लाख क़समें खाकर भी मन बिगड़ जाता है। जबसे ट्रेनमें सवार हुई हूँ उसकी रोनी सूरत आँखोंके सामने घूम जाती है—'शुभी, नहीं सोचा था कि केवल डेढ़ महीनेकी पहचानमें तुमसे इतना बँध जाऊँगा कि तुम्हारा जाना अखरेगा····' मैंने उसकी गम्भीरताको हँसीमें लेते हुए कहा था—'हटाओ यार, सब कुछ ठीक हो जाता है···तुम तो यूँ उदास हो रहे हो जैसे मैं मर ही गयी होऊँ····!'

पंखेकी खर्र-खर्र अब कानोंमें चुभने लगी थी। उसके तीन अलग-अलग पंख जैसे इतनी तेज़ीसे घूमते हैं कि एक भी दिखायी नहीं देता···कुछ वैसे ही सुधीरके नामके साथ जुड़े उसके वाक्य इस तरह बेतरतीबीसे घूम रहे थे कि सब कुछ एक हुआ जा रहा था। ऐसी ही स्थिति थोड़ी देर रहे तो मेरा सिर भारी हो जाता है। इधर-उधरकी बातोंमें काफ़ी देर मनको उलझाये रखनेके बाद भी मूल इकाई तक जा पहुँचती हूँ। पंखा तेज़ चलाती थी तो सुधीर कहा करता था—'इतना तेज़-तेज़ पंखा क्यों चलाती हो? तीनपर कर दो···'

'यह तीन-चारपर करना क्या हुआ? या तो एकदम ऑन कर दो, या एकदम ऑफ़। यह 'मिडल साइज़' वाली बात मुझे तो सूट नहीं करती···' मैं बात अधूरी छोड़ देती थी।

वह बहक जाता था—'और इतनी ही तेज़ तुम्हारी पूसी-कैटवाली भूरी आँखें घूमती हैं—जितना तेज़ यह पंखा!'

मैं लम्बी साँस छोड़ती हुई खुशीसे बोलती—'थैंक गॉड! तुमने मेरी आँखोंकी तुलना बिल्लीसे दी। कहीं मृगनयनी कहने लगते या 'खंजन नैन रूप रस माते' गाने लगते तो मुझे बुरा लग जाता।'

उसने बहुत सहज होकर कहा था—'मैं तो कोई भी ऐसा काम नहीं करता कि तुम्हें बुरा लग जाये।'

वातावरण उलटा हो गया था और मैं बिगड़ पड़ी थी—'क्यों नहीं आप ऐसा काम करते कि मुझे बुरा लग जाये?'

'तुमसे डरता जो हूँ।'

'वाह! एक छोकरीसे डरते हो। बस—लड़कोंकी यही दुम-हिलाऊ क्वालिटी मुझे पसन्द नहीं। मैं तो चाहती हूँ, मेरी शादी किसी ऐसे लड़केसे हो जो हर तीसरे दिन मुझसे लड़े और लड़नेके बाद हम लोग कोई रोमैण्टिक फ़िल्म देख आयें····जो मेरी बातों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसे जवाब दे कि मेरी क़ैंचीकी धारमें लग जाये और किसी कपड़ेको काटना जाये···फिर कोई यह न कहे कि तुम्हारी क़ैंची या उस्तरेकी तरह चलती है··· इतना ज्यादा बोले या बकबक करे कि आकर मुझे कहना पड़े—'सोमवारको रखा करो' पर भाग्यवान्! ऐसे लड़के 'ऑलरेडी बुक्ड' हो चुके हैं। शेष जो उनके बन्दरोंवाली दुम चली गयी, दुम ना रह गया।'

'शुभा, सच मैं तुम्हारे बोलनेके ढंगपर हूँ।' सुधीर मुझे नाराज़ होते देख बोल गया था।

मेरी आँखोंमें भूरा गुस्सा तैर ही नहीं था, उबल पड़ा था—'तो बोलनेके ढंगपर होकर तुम यह सुनना भी भूल गये कि ली क्या हूँ, सॉरी, बकी क्या हूँ····'

'शुभा, मैं सब सुनता रहा हूँ पर समझ आता तुम इतनी नाराज़-सी क्यों हो हो—एक मिनिटमें गुस्से।' उसका ता-सा हाथ मेरी पीठके बीच जा था।

मैंने हाथ झटककर कहा, 'हाँ, सुधीर, मेरी-जैसी पागल, वहशी और खब्ती की राँचीके पागलखानेमें ढूँढनेसे भी····' के हाथोंकी उँगलियोंके दबावसे मेरे होठ ना भूल गये।····

का सारा वार्तालाप एक बार फिर में डूब गया था। ट्रेनका चलता शोर ऐसा तेज़ हो गया था जैसे किसी सँकरी पगडण्डीपर कुछ खड़खड़ाता चले···जैसे एक और अँधेरी गुफा सुरसाकी तरह मुँह फाड़े खड़ी हो····पर नहीं—ऐसा कुछ नहीं था, था तो केवल यह कि विचारोंके चंगुलने मुझे जब झटक दिया तो मैं खटाक्से ट्रेनके स्लीपिंग-क्लासमें गिर पड़ी थी···कहीं नीचे और नीचे पर सहसा वही सोता हुआ वातावरण मुझे उन सोयी-ज़िन्दा लाशोंके बीचसे उठाकर किसी अँधेरे कोनेमें ले गया था···

■

····आधी रात! मैं करवटें बदल रही थी। नींद न आनेकी बीमारी पुरानी थी। भाभी-भैया दूसरे कमरेमें सोये थे। हलकी-हलकी आवाज़ें आ रही थीं। कोई एक भारी स्वर कुछ कह रहा था···और मैं सोच रही थी—आज देहरादूनमें अन्तिम रात है। कल ही कलकत्ता लौट जाना होगा—फिर वही कार्यक्रम—हॉस्टल और यूनिवर्सिटी, यूनिवर्सिटी और हॉस्टल। फ़िलासफ़ीमें एम० ए० करना भी खब्त है। ऐसे-ऐसे पागल लड़के क्लासमें पढ़ते हैं कि बोलेंगे तो बोलते ही जायेंगे, चुप हैं तो मुँह लटकाये तीन दिन तक पड़े हैं। जल्दी आ गये तो नौ बजे, देरीसे आये तो एक पीरियड 'मिस' कर दिया। कॉफ़ी-हाउसमें बैठे हैं तो बारह बजे तक वहीं, नहीं गये तो देशप्रिया पार्कमें घण्टों दो आनेकी मूड़ी चबा रहे हैं। कुछ तो ऐसे हैं ही और कुछ बनते हैं। आँखोंमें ऐसी गम्भीरता लायेंगे जैसे सुक़रात ही बन गये हों। ऐसे बननेवाले लड़कोंसे मुझे नफ़रत हो आती है। और लड़कियाँ? लड़कियोंको जाने क्या होता है कि सबकी सब हिन्दी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अँगरेज़ीमें एम० ए० करमें चल देगी। फ़िलॉसफ़ी इनके बसका रोग नहीं। एक-दो लड़कियाँ जो हैं भी तो इन पागलोंको रिझानेके लिए पर्ससे आईना निकालकर ओठ सुर्ख़ और पाउडर ताज़ा करती रहती हैं···

अँधेरेमें आती कुछ आवाज़ोंसे मेरा सोचना जैसे टूट गया था। भैया कुछ कह रहे थे···फिर एक हलकी काँपती-सी आवाज़ —'सो भी जाइए। शुभा पासवाले कमरेमें लेटी है, जाने क्या सोच रही होगी।'

'तुम क्या सोचती हो—वह तारे गिन रही है। उसकी आदत है—वह बेख़बर सोती है।'

अँधेरा···'डोण्ट बी सिली'···

मैंने भाभीकी कही बात दोहरायी थी मुँह बिचकाकर—'डोण्ट बी सिली।'

फिर एक-दो गीत बिना शब्द किये मन-ही-मन गुनगुनाते जाने कब मुझे नींद आ गयी थी। देहरादूनकी अन्तिम रात नींदकी गोदमें···

■

घड़ी मैंने देखी—तीन बजकर दस मिनिट। द्रौपदीका चीर भी इतना लम्बा न होगा, शकुन्तलाकी प्रतीक्षा भी इतनी कष्टपूर्ण न होगी जितना ट्रेनमें वक़्त काटना! ज्वालापुर, लुक्सर···सब पीछे छूट गये थे। एक लम्बी-सी सीटी कानोंमें बज गयी। सीटी बजनेके साथ ही मैंने कुछ सोचा था पर कोई व्यक्ति बाथरूम तक गया था और मैं भूल गयी थी। शायद वह लड़की—क्योंकि ऊपरकी बर्थ ख़ाली थी। जब वह वापस चली गयी तो मुझे याद आया कि मैं किस बेतरतीबीसे सोचती हूँ—सिलसिलेवार कोई काम होता ही नहीं। देहरादूनकी अन्तिम रात यादमें उभर आयी थी पर पहली रात शायद बर्दवान-आसनसोल या हावड़ाके प्लेटफ़ॉर्म पर ही याद आयेगी।···

प्लेटफ़ॉर्म! हाँ, एक प्लेटफ़ॉर्मपर गाड़ी रुकी थी। प्लेटफ़ॉर्मकी शक्ल तो नहीं दिखी, न ही पता चला कि कौन-सा स्टेशन है पर गाड़ीके झटकेके साथ रुकने और 'चाय-गरम' 'पान-बीड़ी' आदि आवाज़ें सुनकर यह ज़रूर लगा कि प्लेटफ़ॉर्म इस बार मेरी ओर ही पड़ा है, दूसरी तरफ़ नहीं। 'चाय-गरम'-जैसी आवाज़ें गूँजती रहीं और हमारे डिब्बेसे टकराकर लौट-लौटकर प्रतिध्वनित होती रहीं। मैं सोचने लगी थी—प्लेटफ़ॉर्मका नाम 'चाय गरम' ही रख दिया जाये···मेरे कान जैसे सुन रहे थे—'कॉफ़ी गरम', 'ठण्डी बियर' 'सावधान! स्टेशन मुग़लसराय—मुग़लसरायके उचक्के', 'बनारसकी लाखकी चूड़ियाँ—क्वाँरियोंके लिए', 'मुरादाबादके काँचके गिलास—स्कॉचके लिए', 'संडीलाके लड्डू···' फिर हमेशाकी तरह मेरे विचारोंके धागे उलझ गये थे। ऐसे समय ख़त लिखना बेहतर होता है···

■

उस दिन मेरे लिखे ख़त मेज़पर पड़े रह गये थे और फ़िल्म देखकर जब लौटी थी तो सुधीर मेज़पर सिर झुकाये उन्हें पढ़ रहा था।

मैं चिल्लायी थी—'सुधीर! मैं अभी तुमसे इतनी फ्रैंक नहीं हुई हूँ कि तुम मेरे लिखे ख़त पढ़ सको।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन ये तो लड़कियोंको लिखे हैं···'

यों ?' मेरी आँखोंमें सलवटें पड़ गयी

इन सलवटोंको सीधा करनेके लिहाज़से
ना था—'एक लड़की किसी लड़कीको
लिखे, तो उन्हें पढ़नेमें क्या बुराई है ?'

तुम सोचते होगे कि मैं लड़कोंको भी
लिखती हूँ। हुँह···लड़कोंको खत लिखूँगी ?
, मैं को-एजुकेशनमें पढ़ी हूँ तो क्या,
लड़केसे इश्क़-विश्क करनेके चक्करमें
ड़ी। लड़के मुझे सरासर बेवक़ूफ़ लगते
—'बेवक़ूफ़' शब्द ज़ोरसे बोला गया था।

मैं बेवक़ूफ़ लगता हूँ ?' वह हँस
या।

सरासर इडीयट !' मैंने ग़ुस्सेमें कहा

इट ? इलीयट ?' वह मज़ाक़के मूड-
ा।

'शूऽऽ शट् अप !' मैंने दाँत पीसते हुए
या, 'तुम मुझे क़तई अच्छे नहीं लगते,
कहीके।'

'शुभाजी, आज ग़ुस्से हैं, कल कहिएगा—
हो रही हूँ—चलो कैरम खेलें।'

'कभी नहीं कहूँगी···'

'सुनो शुभा ! नाउ टेक इट ईज़ी। तुम्हारे
पढ़े हैं न। सच कहता हूँ—ग़ज़बका जादू
बिलकुल कविता लगती है। ऐसे शब्द हैं
इनकी जगह और कोई शब्द फ़िट ही नहीं
ता···'

'···जैसे मेरे सामने तुम्हारे लिए
ई हुई

कोई लड़की फ़िट नहीं बैठती।' मुझे भी हँसी आ गयी थी, उसे भी।

वह मेरे गालोंको छूता हुआ बोला था—'इण्टरफ़ेयर मत करो। मैं तुम्हें सलाह देता हूँ कि यहीं देहरादूनमें रह जाओ। एम० ए० की क्लासेज़ शुरू होनेवाली हैं। तुम हिन्दीमें एम० ए० करो, फिर कविताएँ लिखना। तुम्हारी कविताएँ मुझे ज़िन्दा रखेंगी···'

'स्टुपिड, तुम इतनी चीप-लैंग्वेजमें क्यों बोलने लगते हो भई ? और मुझे शिक्षा देते हो—कलकत्तेमें फ़िलॉसफ़ीकी एम० ए० छोड़कर देहरादूनमें हिन्दी घोंटूँ। हिन्दीमें भी करनी होगी तो कलकत्तेमें ही करूँगी।' मैंने निश्चयके स्वरमें कहा था।

'कलकत्तेसे बड़ा मोह है क्या ?' उसके कहनेका साफ़-साफ़ मतलब था कि 'कलकत्तेमें तुम्हारा कोई प्रेमी रहता है क्या ?'

'बिलकुल मोह है। यहाँ देहरादूनके घिसे-पिटे वातावरणसे कलकत्ता ज़्यादा 'ईज़ी' और 'स्मूद' लगता है।'

'उलटा कह रही हो।'

''ये उलटा कह रही हूँ मैं ?' स्वभावके अनुसार मैं बिगड़ पड़ी थी फिर अपनेको सँभालकर बोली—'नहीं सुधीर, बात यह है कि मसूरी-जैसी अच्छी जगहके पास देहरादूनमें रहते बड़ा अटपटा-सा लगता है। यहाँकी पीपल-मण्डी, बड़ा-बाज़ार अच्छे नहीं लगते मुझे।'

'और वहाँका मछुआ बाज़ार और सूता-पट्टी बहुत अच्छे लगते हैं न ?'

उसके कहनेके ढंगसे मैं हँस पड़ी थी—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'पर तुम तो पीपल मण्डीमें रहते हो। हम लोग मछुआ बाज़ार और सूतापट्टीमें थोड़े ही रहते हैं। घर हेस्टिंग्ज़में है—काफ़ी सुथरी जगह है। होस्टल पार्क-स्ट्रीटमें है—वह भी अच्छी जगह है।'

'घर और होस्टल—दोनों कलकत्तेमें क्यों?'

'हमेशासे होस्टलमें रहती आयी हूँ, घर रहना अच्छा नहीं लगता।'

'आइ सी!'

भाभी आ गयी थी—'यह लड़की केवल महीने-भरको रहने आयी है और हमलोगोंसे बात ही नहीं करती। सारा दिन सुधीरसे बातें करती है। अरे, वह तो तुमसे छोटा है।'

सुधीर चुप बैठा रहा था पर मैं बोल पड़ी थी—'भाभी, तुम लोग बिलकुल दकियानूस हो। छोटी-सी बातको तूल दे देती हो। यहाँ कोई लड़की है नहीं तो इसीसे बात कर लेती हूँ। उसमें छोटे-बड़ेका क्या सवाल है?'

भाभी मुझे सौ सालकी दिखने लगी थी पर जैसे ही मैंने भाभीकी ओर देखा—वह एक आँख मारकर चली गयी। मुझे बुरा नहीं लगा। भाभी फिर वही ग्रेजुएट 'डोण्ट बी सिली' कहनेवाली ख़ूबसूरत औरत हो गयी।

सुधीर और मैं आमने-सामने बैठे रहे। हमलोग यूँ आकर बैठ जाते थे मानो कह रहे हों—'चलो, शुरू करो अन्त्याक्षरी, लेकर हरिका नाम।' आस-पास कोई चीज़ नहीं। सीधे-सीधे दो मूढ़े। एकपर सुधीर, एकपर मैं। फिर अपनी-अपनी पढ़ाई-चर्चा, लड़ना-झगड़ना और साधारण बातें।

सुधीर आगे बोलने लगा—हाँ तो शुभा, मैं यह कह रहा था कि कविताएँ लिखना शुरू कर दो—पर तुम्हारे विचारोंमें तरतीब नहीं। ख़तोंमें देखा है मैंने—पाँच लाइनें लिखती हो, पचीस डॉट्स देती हो।'

'पर यही सब तो तुम्हें प्यारा लगा है न?'

'श्योर। पर ज़रा तरतीबसे, सिलसिलेसे लिखा करो न।'

'मैं ख़ुद बेतरतीब हूँ। उस शताब्दीके हर व्यक्तिकी ज़िन्दगी बेतरतीब है, फिर कविताओं और ख़तोंमें सिलसिले और फ़िज़ूलकी तरतीबकी क्या ज़रूरत है?'

'तुम तर्क-कुशल हो। मैं तो हार जाता हूँ।' वह पहली बार साफ़ हिन्दी बोला था। उसका 'तर्क-कुशल' शब्द मुझे अच्छा लगा था।

'शुभा, एक बात कहूँ?' फिर मेरे जवाबकी प्रतीक्षा न कर वह बोल पड़ा था—'तुम यहाँ रह जाती तो बड़ा अच्छा होता।' मेरे चेहरेपर उसकी विपरीत प्रतिक्रिया देख वह जल्दीसे आगे कहने लगा था—'ख़ैर चली जाओ, पर जो कविताएँ लिखो—वह मुझे भेजती रहना।'

'अरे जाओ।' मैं नाक चढ़ाकर बोली थी, 'तुम्हारी तबतक शादी हो जायेगी—फिर तुम्हारी श्रीमतीजीको पढ़ाने कविताएँ भेजूँगी क्या?'

'तुम तो जैसे क्वाँरी बैठी रहोगी?'

'मैं शादी-जैसी मूर्खता करूँगी क्या?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...एक शीशा टूट जानेका खटका हुआ था। ...साढ़े तीन बज रहे थे। किसीने दूसरे ...के पूछनेपर समय बताया था। यू० पी० ...वह औरत उठ बैठी थी और कानपुरी ...में चीखकर बोलनेवाली उसकी आवाज़ ...में पड़ी थी—'अरे देखो! यहाँ तो एक ...कली उलटी हुई पड़ी है। छि: छि:! मर ...है शायद। पूँछ भी कटी हुई है।' उसने ...ही सम्बोधित कर कहा था। और कोई ...नहीं रहा था। मैं थोड़ा-सा हँस दी, फिर ...फेर लिया—'छिपकली मरी है? आदमी ...पर मरा पड़ा रह जाये तो परवाह ...—एक छिपकली मर गयी तो गोहत्या हो ...जैसे—इसमें इतनी उबकाई और दया-...की क्या ज़रूरत? मर गयी तो फेंक दो ...कर।'

अँधेरा बहुत धीरे बहने लगा था। ...ने कभी किसी बातपर कहा था—...! रोशनीसे अँधेरेमें जाओ तो आँखें ...धियाती नहीं हैं—आँखोंके सामने कुछ ...तितलियाँ उड़ जाती हैं, बस! पर अँधेरेसे ...नीमें जाना जैसे बरदाश्त नहीं होता—...आँखें अन्धी-सी हो जाती हैं।' मैं प्रभावित हो ...थी, प्रकटमें इतना ही कहा था उसे—...बिलकुल ठीक कहते हो।'

हलकी-नीली रोशनी बाहरकी डूबती ...चाँदनीसे मिलकर इन्द्रधनुषी हो रही थी···

...जैसे खतरेकी ज़ंजीर खींच दी थी और ...के रुकनेके साथ एक विचार आकर रुक गया था। भाभी उस दिन रसोई नहीं बना रही थी तो मैंने जाकर सब्ज़ी छौंक दी थी। कलछी पकड़नी भी नहीं आती थी। सामने खिड़की थी। बाहरका बरामदा दिख रहा था। सुधीर किसी कामसे भाभीके पास गया था। लौटते समय मेरे पास आकर रुक गया था। दहलीज़पर खड़ा होकर दरवाज़ेके दोनों पल्लोंको पकड़े था।

'क्यों, कौन आनेवाला है भई? क्या बनाया जा रहा है?'

'तुम आ गये हो और मटर-शलगम बन रहा है।'

'तरीवाला कि सूखा?'

'मैं सूखी हूँ न—सूखा ही बना रही हूँ।'

'हाय! पर यह सिरपर क्या बाँध रखा है?'

'रिबन, और क्या?'

'ऐसे चौड़ा-सा क्यों?'

'माथेपर लटके बाल अच्छे नहीं लगते, अब बड़ी हो गयी हूँ। बाल भी लम्बे हो गये हैं—इन्हें रिबनसे बाँधूगी, धीरे-धीरे ऊपर हो जायेंगे।'

'तुम तो कहती हो, लड़कोंको प्रभावित करनेके लिए बाल कटवानेवाली लड़कियाँ तुम्हें पसन्द नहीं। फिर खुद ये बाल क्यों काटे थे?'

'रोज़ तो बाल कटे हुए देखते हो। आज ऊपर चढ़ा लिये तो सवाल पर सवाल पूछ रहे हो। यूँ मेरा माथा चौड़ा है न, इसलिए काट लिये थे। लड़कोंको प्रभावित कौन करेगा?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे बेवक़ूफ़ तो इतने भरसे प्रभावित हो जा सकते हैं कि मैं लड़की हूँ।'

'जो हो, साड़ी और रिबनमें ख़ूब फ़ब रही हो।' वह आँखोंमें झाँकता-सा बोला था।

'फिर वही फ़्लैटरी। कह दो तनुजा लग रही हो। सुधीर, हम लोग भी क्या पन्द्रह सालवाले लड़के-लड़कियोंकी तरह बातें करते हैं। पता नहीं—तुम लड़के क्यों सोचते हो कि लड़कियाँ फ़्लैटरीसे ख़ुश हो जाती हैं। मैंने आज तक ऐसा लड़का नहीं देखा जो उस तरह फ़्लैटरी न करे और बेवक़ूफ़ोंकी तरह हाथमें चेहरा थामकर यह न कहे कि 'तुम्हारे चेहरेकी कटिंग सुन्दर है' 'तुम्हारा गोरा रंग कितना धुला हुआ लगता है' 'तुम फलाँ-फलाँ स्टारकी तरह लग रही हो।' सोचो तो ज़रा—कैसे फ़िज़ूल वाक्य लगते हैं ये। जैसे लड़कियाँ बनानेवाले ख़ुदाको तुमने कभी दर्ज़ी मान लिया, कभी धोबी।'

सुधीर बड़े ज़ोरसे खिलखिला पड़ा था :

'लेकिन मैं जबरन वैसे नहीं बोला था। बड़े स्वाभाविक रूपसे कहा था।'

'छोड़ो! मैं कुछ कह दूँगी, तुम्हें बुरा लग जायेगा। पर ज़बानें और आँखें दोनों फिसलनदार हैं लड़कोंकी।'

'और लड़कियोंकी? कमर और कलाई?' वह हमेशा वातावरणको स्वस्थ बनानेके लिए हलके वाक्य बोल दिया करता था।

खिड़कीका शीशा तो काफ़ी पहले ही खटाक्से चटख़ गया था पर उसकी प्रतिक्रिया अब हो रही थी। खिड़कीके पास बैठा व्यक्ति झुँझला रहा था। उसके कपड़ोंपर शीशेके एक-दो कण बिखरे थे। ट्रेनकी गति पहलेसे तेज़ हो गयी थी। अँधेरेमें सब चीज़ें जड़ हो जाया करती हैं न—सोयी और सुस्त, पर मुझे जाने क्यों लगता है कि मनुष्य सबसे अधिक गतिशील रातके अँधेरेमें ही होता है। उस बीमार कम्पार्टमेण्टमें मैं अपनेको ख़ूब स्वस्थ और हलका महसूस कर रही थी। अकेलेपनमें जैसे बन्धनोंको ढील दे दी हो।...

सवा महीने पहले एक नयी सुबहको साढ़े नौ बजे जब देहरादून पहुँची तो दो जोड़े ख़ुश ओठ मुझे दिख गये थे—भैया-भाभी। एक आश्चर्यमें डूबा हुआ अपरिचित चेहरा था। टैक्सीमें ही भैयाने इस अपरिचित चेहरेसे मुझे मिलवाया था—'शुभा, यह सुधीर है। निर्मल चाचीका भतीजा। एक ही मकानमें रहते हैं।' मैंने जल्दबाज़ीमें नमस्ते की थी। घर पहुँचकर दोपहर तक व्यस्तता कम हो गयी थी तो भाभीने सुधीरको बुला लिया था। जब हम अकेले रह गये तो मैंने कहा था—'बड़ी ख़ुशी हुई आपसे मिलकर।'

'मुझे भी,' उसने औपचारिकतावश कहा था।

'वक़्त अच्छा कट जायेगा।' हम दोनोंमेंसे कोई एक बोला था या दोनों एक साथ ही बोले थे।

फिर एक झिझकके साथ बोला था वह—'मैं तो आपके बारेमें बहुत कुछ सुन चुका हूँ।'

'यानी?' मैं चौंक गयी थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'इसमें चौंकनेकी क्या बात है ? भैया आपके बारेमें बताया करते थे।'

'नहीं, दरअसल बात यह है कि आपने बहुत सहजमें कहा—'आपके बारेमें बहुत-कुछ सुन चुका हूँ' मुझे यह लगा कि मेरे चरित्रके विषयमें या मेरे बॉय फ्रेण्ड्सके विषयमें आप बहुत कुछ सुन चुके हैं, इसलिए मुझे आश्चर्य हुआ।' मैं खुलकर बोल तो गयी पर कहीं बुरा लगने लगा।

'ओ नो। मैंने तो आपके बारेमें यह सुना कि आप बहुत इण्टेलीजेण्ट हैं—हमेशा फ़र्स्ट डिवीजनमें पास होती हैं—ऑनर्समें फ़र्स्ट-क्लास फ़र्स्ट हैं—पेण्टिंग्स अच्छी करती हैं—इनमें आपकी बहुत रुचि···'

मैं बुरी तरह बीचमें बोल उठी थी—'तो क्या मेरी हिस्ट्री खोलकर बैठ गये आप। सच बताइए—क्या पढ़ते हैं ?'

'हम-जैसे निकम्मे क्या करेंगे ? अभी तो बी० कॉम सेकेण्ड ईयरमें हूँ। पढ़नेमें आजकल लड़कियाँ होशियार होती हैं। मैंने तो सोचा था—आप अच्छी-खासी 'एजेड' लड़की होंगी पर आप तो बिलकुल बच्ची लगती हैं। चौदह-पन्द्रहके ऊपर लगती ही नहीं। फ्रॉक पहनकर तो सीधे आठवींमें बैठ जायें। क्या उम्र होगी आपकी ?'

'यही कोई बीस-इक्कीस।'

'अच्छा ! मैं तो बीसका भी नहीं हुआ हूँ पर आपसे बड़ा लगता हूँ।'

एक छोटी-सी चुप्पी घिर आयी थी। उसकी नज़र मेरी सलवारके बटन लगे पाँयचों-पर थी और मैं देख रही थी कि यह गोरे रंगवाला लड़का कितना सीधा-सा लगता है। नाम मुझे चाहकर भी याद नहीं आ रहा था—'आपका नाम भैयाने क्या बताया था ?'

'सुधीर। और आपका शुभा है न ?' वह फ़िज़ूल बोल दिया था।

'तो सुधीर, शुभा अच्छा नाम नहीं है क्या ?' एक और फ़िज़ूल वाक्य। और हम एकाएक 'आप' से 'तुम' पर उतर आये थे जैसे बीच सीढ़ीमें खड़ा रहना ठीक न लगे और खटसे कोई सारी सीढ़ियाँ उतर जाये।

'मैं होता तो तुम्हारा नाम रखता—रेशमा, नीलम, पूनम·····'

'···मेनका, उर्वशी, रम्भा, तिलोत्तमा'—मैं खट-खट बोल गयी थी, ये भी कोई नाम हैं—रेशम, नीलम, पूनम—पुराने ज़मानेके। शुभा नाम कितना मॉडर्न ! नहीं लगता क्या ?'

'पर वे नाम ज़्यादा स्वीट हैं।' वह रूखेपनसे बोला था।

हम ऐसे बातें करने लगे थे जैसे बरसोंकी जान-पहचान हो।

'मॉडर्न और फ़ॉरवर्ड लोग स्वीट नहीं होते, स्मार्ट होते हैं। स्वीटनेससे स्मार्टनेस ज़रूरी है।'

हलके और स्वस्थ तरीक़ेसे दिन कट ही नहीं रहे थे—भाग रहे थे। फिर तो जैसे मैं रोज़ ही बादलोंपर छा जाती थी, उनके साथ ही बरस जाती थी। एक दिन हम लोग 'गन्धक-पहाड़' चले गये थे। अनगिनत धाराओंके बीच खो गये थे। बूँदोंकी रिमझिमके साथ सुधीर ज़मीनपर आकर बोला था—'किन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गहराइयोंमें गोते खा रही हो, डुबकी लगाकर बाहर निकल आओ।'

'तुम हाथ पकड़कर बाहर निकाल लो।'

'मैं तो खुद डूबकर रह जाऊँगा। तुम्हारी आँखोंकी गहराइयाँ नापी नहीं जायेंगी मुझसे।' फिर वह सहसा भावुक होकर बोला था, 'गहराइयाँ मुझसे दूर हैं।'

'ग़लत कह रहे हो सुधीर! गहराइयाँ तुमसे दूर नहीं, तुम गहराइयोंसे दूर हो।'

वह मेरी ओर देखता रहा था···देखता रहा था···

दूरसे दिखता मसूरी जैसे दीवालीमें फुलझड़ियाँ छोड़ रहा था···जैसे पहाड़पर दीपोंकी क़तार बिछी हुई थी···

■

मैंने सोचना बन्द कर दिया था। रुकी हुई ट्रेनमें सोचना, सोचते-रहना मुझे अजीब-सा लगने लगा था। मुझे याद है जितनी रफ़्तारसे ट्रेन भागती थी—उतनी ही गरम बातें उसी रफ़्तारसे सोचनेको मन होता था··· जब चाल सुस्त हो जाती थी तो मुझे साधारण बातें याद आती थीं। बाहरका मौसम मुझे अपने ही अनुरूप हमेशा प्रेरणा देता है और अगर नहीं दे पाता तो मैं अपने मनके अनुरूप साँचेमें ढालकर उसे देखने लगती थी। ट्रेन रुकी थी। मैंने कुछ नीचे झाँककर खिड़कीसे बाहर आँखें दौड़ायीं। वह दूर-दूर तक फैला वीराना मेरी आँखोंमें सूनापन भर गया। वहाँ कोई स्टेशन नहीं था। बहुत सारी पटरियाँ एक-दूसरेको काटते थोड़ी दूर तक फैली थीं। मैंने आँखोंका सूनापन झटककर एक टूटती पटरीपर छोटा-सा खुला डिब्बा खड़े देखा था—ऊपर तक कोयलोंसे भरा। शायद ट्रेन कोयला लेनेके लिए खड़ी हुई थी। फिर एक झटका। मैंने लोहेकी उस ज़ंजीरको हाथोंमें थाम लिया था जिसपर मेरी बर्थ टिकी हुई थी···कि ट्रेन खिसकने लगी थी। मुझे रूमाल हिलाता सुधीर याद आया था···किसी अन-चाही ताक़तसे रूमाल हिलाता हुआ उसका वह उदास शिथिल हाथ।···

फिर एक खूब लम्बी सीटी—जैसे रफ़्तार तेज़ होनेका सिगनल। कोयलोंसे भरकर ट्रेन-के पैरोंमें रेसकोर्सके प्रतियोगी घोड़ोंकी-सी ताक़त आ गयी थी और अब खिड़कीसे दिखता बाहरका वातावरण इस तरह धुँधला हो गया था जैसे किसी बड़े कैनवॅसपर घने बालोंवाली कूँचीमें रंग भरकर बहती हुई नदी बना दी जाये।··· क़तारके क़तार खड़े पेड़ अपने अलग अस्तित्व-को भूलकर एक-दूसरेसे इस तरह आलिंगन कर रहे थे जैसे तेज़ चलते पंखेके तीन अलग-अलग पंख मिलकर एक हो जायें।···

■

कल दोपहरमें खूब बारिश हुई थी। सारा देहरादून शहर किसी सागरमें घुटनों तक डूब गया था। आकाश किसी झरनेकी तरह उड़ रहा था और गिरती हुई बूँदें जैसे उस झरनेसे निकलकर तटसे चोट खा-खाकर बिखर रही थीं। फिर सारा झरना उलटा होकर नीचे बह आया था।

बारिशकी तीखी आवाज़ कानोंमें समा नहीं रही थी। भाभी दिन-भरके कामसे थक कर सो गयी थी और मैं सुधीरके घर चली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ी। वह बड़े उदास स्वरमें बैठा किसी
...ी पंक्तियाँ गुनगुना रहा था—'दिल की
...नहीं ये प्यार की शहनाई है।'
...उसकी पीठ मेरी तरफ़ थी। इसलिए मैं
...ी प्रतिक्रिया स्वरूप चेहरेपर उठते-गिरते
...नहीं देख पा रही थी। उसके घर
...कोई नहीं था। मैंने उसकी पीठपर हाथ
...रहा था—
...हनाइयाँ ही बजाओगे। माउथ ऑर्गन
...ी बजेगा तुमसे।'
...ह बहुत उदास था। मेरे यह कहनेपर
...की कोई रेखा उसके चेहरेपर आयी-गयी
...बस मेरी ओर देखता रहा। फिर जैसे
...कर भीगा-सा बोला—'विश्वास ही
...ी रहा कि तुम आज चली जाओगी।'
...शायद इसी न-विश्वासने आज तुम्हें घर
...भी रोक दिया।'
...उसके बोलनेसे पहले ही मैं बोल दी
...सोचते होंगे कि जिसे बात करनी
...—खुद आ जायेगा।'
...उसने हाथ पकड़ मुझे सोफ़ेपर बैठा
...या—'ऐसी बात नहीं। यूँ ही बड़ी
...आ रही है···जैसे' उसकी आवाज़
...दूरसे आती लग रही थी, 'जैसे अन्दर
...अन्दर कुछ टूट गया हो।'
...'तुम तो लड़कियों-सी बातें करते हो
...। आजकल तो लड़कियाँ भी इतनी
...नहीं हो जातीं—और तुम तो अच्छे
...रहके हो।'
...मैं कभी ऐसा था नहीं, शुभा। तुम्हारे
...···

मैं बिलकुल उसकी बात काटते बोली थी—'छोड़ो यह सब बातें।'

'चलो, छोड़ दीं। तुम अपने हॉस्टलकी सुनाओ।'

'अच्छा है।' मैंने लम्बी साँस छोड़ी थी।

'हॉस्टलके पतेपर तुम्हें ख़त लिखा करूँ?'

मेरी झुकी हुई आँखें भौंहोंको छूने लगी थीं, फिर सँभलकर बोली थी मैं—'चाहो तो लिख सकते हो।'

'मेरा मतलब वहाँके नियमोंसे है। लड़कोंके ख़त····' थोड़ा रुककर वह बोला था—'कोई पढ़ता तो नहीं।'

'पढ़ भी ले तो मैं सोचती हूँ—तुम्हारे ख़तोंमें ऐसा कुछ 'पर्सनल' नहीं होगा।' मैं एकबारगी ही बोल गयी थी।

उसके सिर खुजलानेसे मुझे लगा था कि उसे मेरा यह वाक्य बुरा लग गया था।

'वैसे तुम्हारी सहेलियोंके ख़त तो वहाँ बहुत आते होंगे—दिल्लीसे।'

'कोई खास नहीं। बस भाभी ही अकसर लिखा करती हैं और कभी-कभार कोनेसे फटा हुआ पोस्टकार्ड आ पहुँचता है।'

'कोनेसे फटा हुआ पोस्टकार्ड क्यों?'

'हाँ, कोई मर जाता है तो उसकी सूचना पोस्टकार्डपर ही मुझे मिलती है और उसका कोना फटा रहता है।'

'पर किसीके मरनेकी सूचना तुम्हें क्यों दी जाती है?'

'यहाँ देहरादूनमें ही तो सब रिश्तेदार हैं हमारे। बड़ा लम्बा-चौड़ा परिवार है न। हर महीने कोई मरता रहता है, हर पन्द्रह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिनपर कोई जन्म लेता रहता है।' मैं हँस दी थी।

'हाँ, अभी छोटी मामीके यहाँ लड़का हुआ है—तीन लड़कियोंके बाद।'

'हाँ, मुझे खबर मिली थी, पर इधर कई दिनोंसे कोई मरा नहीं न ?'

'कैसी बातें करती हो शुभा।' सुधीर चारों ओर आँखें घुमाते बोला था,

'कोई सुन लेगा तो ?'

'तो क्या होगा ? मैं कोई झूठ बोली हूँ। नानाजीको मरे तीन महीने हो गये—और अभी तो काफ़ी लोग 'डेथ-बेड'पर हैं।'

हम दोनों हँस पड़े थे।...

■

ट्रेनसे बाहरका वातावरण ओससे गीला-सा हो आया था। वह भीगा मौसम अन्दर तक फैल गया था। मैंने चादर पैरोंपर खींच ली थी और बाँहोंसे आँखें ढँक ली थीं। आँखोंके आगेकी हलकी-नीली रोशनी बाँहोंमें समा गयी थी और अँधेरा आँखोंमें...

■

हम दोनों खिड़कीसे बाहर झाँक रहे थे। एक दो लड़के सड़कपर फैले पानीमें कमर तक डूबे थे।

सुधीरने कहा था—'अब जब यहाँका मौसम अच्छा होने लगा है, तुम जा रही हो।'

मैं चुप थी।

'मुझे तो डर-सा लग रहा है।'

'क्यों ?' मेरी आँखें फैल गयी थीं।

"तुम अकेली जो जा रही हो। पूरे दो रात, एक दिनका सफ़र है। इतना लम्बा सफ़र कोई लड़की अकेले...'

मैं अपनी आदतके अनुसार बीचमें बोल पड़ी थी, 'मैं छोटी-सी लड़की हूँ क्या ? बीस-की हो गयी और अकेले जा नहीं सकती ?'

उसने पीठसे हाथ ले जाकर बाँहपर रखा था।

'पर हो तो लड़की ही न! लड़कियाँ बुज़दिल हुआ करती हैं। केवल आत्महत्या करना आता है उन्हें।'

मुझे ऐसे प्रसंगोंपर गुस्सा आ जाया करता था। मैंने छिटककर दूर होते कहा था—'तुम लड़के अपनेको बड़े बहादुर समझते हो। देखना किसी दिन ऐसा हुआ करेगा कि लड़कियाँ पहले प्रेम-प्रस्ताव रखेंगी और लड़के लव-अफ़ेयर्समें आत्महत्या करेंगे।'

'वह भी देखेंगे जनाब!' उसकी बीच-वाली उँगली और अँगूठेके घेरेमें फिर मेरी बाँह क़ैद थी—'पर तुम लड़कोंसे बहुत चिढ़ जाती हो शुभा। ऐसा क्यों ?'

मैंने जवाब नहीं दिया था।

'बोलो न, लड़कोंसे इतनी नफ़रत क्यों है तुम्हें ?'

'है, बस।' मैंने मुँह बिचका दिया था।

'कभी किसीसे प्यार जो नहीं किया तुमने।' उसका यह वाक्य अपनेमें पूरा होते हुए भी मुझे प्रश्न लग रहा था।

'हाँ, शायद इसीलिए।' मैं उदास हो गयी थी।

खिड़की बन्द कर दी गयी थी और मेरा सिर खिड़कीसे टिक गया था। वह सामने था। उसके दोनों हाथकी उँगलियाँ मेरी पीठ-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दूसरेसे उलझी थीं। धीरे-धीरे उलझी उन उँगलियोंपर मेरा सिर और मेरे कन्धेपर उसकी कलाइयाँ।

उसकी साँसोंने मुझे छूते हुए कहा था—'तुझे भी नफ़रत है क्या?'

मैं अनजाने ही बोल गयी थी—'नहीं।'

'मैं भी तो लड़का हूँ।' उसकी आँखोंमें थी जैसे अचानक खिड़की खुल गयी हो रोशनी उसकी आँखोंमें बेधड़क घुस आयी उसकी एक और साँसने मुझे छूआ था। तिवाद नहीं किया था। अपने शिथिल को उसके हाथोंमें छोड़ दिया था।

'पर तुम मुझे लड़की लगते हो।' मैं समेत खिलखिला दी थी 'बिलकुल कियों-जैसी बातें, लड़कियों-जैसी भावुकता ....'

मेरे ओठ बन्द हो गये थे। निचला ओठ दब गया था। बारिश काफ़ी तेज़ थी। खिड़कीके पल्लोंके बीचसे बूँदें उसकी बन्द आँखोंपर चमक थीं। काफ़ी देर तक जब साँस ले पायी तो मैंने सारी शक्ति लगाकर झटक दिया था। एक ख़ूब लम्बी साँस मैंने और मेरे ओठ गलने लगे थे। वह के गीलेपनपर उँगली फेरते हुए अपनी ाजको सारी ख़ुशी दबाकर बोला था—

मैंने मुँह दूसरी ओर फेरते-न-फेरते सुना —'अब भी कहोगी—तुमने कभी किसी से प्यार नहीं किया?'

मेरी आँखें जलने-सी लगी थीं और मैं चिल्ला पड़ी थी—'सुधीर।'

■

आँखोंके आगेसे बाँह हटा ली थी मैंने। बाँह हटाते घड़ीपर भी नज़र पड़ गयी थी। पाँच बज गये थे और चाँदनी अँधेरेमें ढलते-ढलते सुबह हो गयी थी। नीले आकाशने जैसे अपने चेहरेपर 'वैनीशिंग-क्रीम' लगा ली थी। सब कुछ निखरा हुआ था। मैं चादर एक ओर हटाकर सावधानीसे नीचे उतर गयी थी। ट्रेनकी रफ़्तार तेज़ थी। खिड़कीके जँगलेको पकड़ मैंने बाहर देखा था—दूर-दूर तक हरियालीसे ढके पहाड़ थे। तेज़ हवा मेरे चेहरेको छूती हुई आ-जा रही थी। सुधीरके खयालको मैंने ज़बरदस्ती अपनेसे दूर करना चाहा था। मैं बाथरूमकी ओर चल दी थी। ट्रेनकी तेज़ीमें मुझे लग रहा था, चल नहीं रही हूँ—लुढ़क रही हूँ। उड़ते-उड़ते मैं दरवाज़े तक पहुँची थी पर बाथरूममें न जाकर खुले गेटपर लोहेका जँगला पकड़कर खड़ी हो गयी थी।

■

'बोलो शुभा! अब भी कहोगी, किसी लड़केसे प्यार नहीं किया?' उसके चेहरेपर किसी जीते हुएकी मुसकान थी।

मैं जैसे उबल पड़ी थी—'हाँ, यही कहूँगी कि मैंने कभी किसीसे प्यार नहीं किया। तुमसे मेरे सम्बन्ध हमेशा औपचारिक रहे हैं और अगर कभी खुलकर बात की है तो तुम्हें दोस्त माना है, प्रेमी नहीं।'

वह समझा नहीं था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरे ओठोंको उँगलीसे छूकर कहा था उसने, 'देखो, तुम्हारे ओठोंपर अभीतक लाल-लाल लकीरें दौड़ रही हैं।'

'सुधीर, तुम यही कहना चाहते हो न कि मैंने तुम्हारे चुम्बनका प्रतिवाद नहीं किया और इसे ही तुम प्यारका प्रतीक मानकर स्वयं-को मेरा प्रेमी मान रहे हो ?'

उसने ओठोंकी लाल लकीरें देख ली थीं पर आँखोंके लाल डोरे शायद नहीं देख पाया था। बारिशकी बूँदोंसे भीगा-भीगा जैसे अबतक खड़ा था। मेरे प्रश्नका जवाब न देकर वह बोला था—'शुभा, तुम कलकत्ता मत जाओ। मैं तुम्हें चाहता हूँ। तुम्हारे बिना यहाँ रह नहीं सकता। हम दोनों शादी कर सकते हैं।'

'पर मैं तो तुम्हारे बिना रह सकती हूँ। मैं तुमसे शादी···उफ़् मैंने आँखें बन्द कर ली थीं।

'तुम भ्रममें हो शुभा। तुम मुझे चाहती हो नहीं तो···'

नहीं तो तुम मुझे छू भी नहीं पाते, यही क्या ? सुधीर, मुझे नहीं मालूम था कि तुम सारे जीवनको एक चुम्बनके दाँवपर लगा दोगे। उसे सारे जीवनकी प्रतिक्रिया मान बैठोगे। तुम्हारे मनमें 'ऑपोज़िट सेक्स' का जो बन्धन है—उसे तोड़ क्यों नहीं डालते ? मुझे तुम अच्छे लगते हो बस ! मैंने तुमसे बातें की हैं—वैसा एक लड़कीके साथ भी तो हो सकता था और विदा लेते समय वह लड़की अगर मुझे चूम लेती तो मैं उसका प्रतिवाद भी नहीं करती। फिर ऐसा तुम्हारे साथ हो गया तो उसके लिए मैं यह आवश्यक नहीं समझती कि हम ज़िन्दगी-भर साथ रहें।

'तुमने अभी नहीं कहा क्या कि तुम मुझे अच्छे लगते हो ?'

'वह भी ग़लतीसे कह दिया। मैं ऐसे लड़केसे शादी नहीं कर सकती जो मुझे इतनी ज़्यादा प्रधानता दे कि उसका अपना कोई अस्तित्व न रहे।'

'शुभा !' वह चीख-सा पड़ा था।

मैं उसके घरसे लौट गयी थी। सारे शरीर-में जैसे कुछ काट गया था।

■

तेज़ हवामें मेरे बाल उड़ रहे थे। मैंने बिखरी पहाड़ियोंसे नज़र हटा ली थी। ट्रेनकी चाल धीमी हो गयी थी। शायद कोई स्टेशन आनेवाला था। क्लोरोफ़ॉर्मका असर सोयी हुई ज़िन्दा लाशोंसे हट रहा था। मेरी सीटके सामनेवाली यू० पी० की महिलाकी आवाज़ आ रही थी—'उस छिपकलीको क्यों नहीं हटा देते ? मुझे तो उबकाई आ रही है।' उसने उबकाई शब्द ज़ोरसे कहा था पर मेरा ध्यान उसके इस शब्दने नहीं पकड़ा था। मैं सोच रही थी—छिपकलियोंमें मेल-फ़ीमेल नहीं होता क्या ? मुझे लगने लगा था—दो बिस्तरोंके बीच जो मरी हुई उलटी छिपकली पड़ी थी, जिसकी खाल सफ़ेद और भूरेपनको लिये सलवटदार थी—वह ज़रूर कोई छिपकला था—पूँछकटा। मुझे जब हलकी-सी हँसी आनेको हुई तो मैं बाथरूममें घुस गयी थी।

लौटकर मैंने अपनी ऊपरवाली बर्थसे बी० ओ० ए० सी० के एयर बैगसे आईना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिया था। मैं अपना चेहरा देख रही
। सुबह मेरे चेहरेपर साफ़-साफ़ चमक रही
। ओठोंपर इसके दातोंके निशान तो नहीं
पर खूनका एक क़तरा गाढ़े लाल रंगका
पर जम गया था। नीली बत्तीकी हलकी
ी रोशनी जैसे ओठोंके सर्दजमे .खूनपर
की तरह बिछ गयी थी।

मेरे दिमाग़में मरी हुई नर-छिपकली
रका एक चुम्बन और आनेवाला स्टेशन
साथ कौंध गया था। आईनेमें दिखते
जैसे बोल पड़े थे—

'हटा यार, कैसी-कैसी बातोंमें उलझती
?'

आईनेमें दिखती उसकी भूरी आँखें बोल पड़ी थीं—

सुन शुभा ! मुझे सच लग रहा है जैसे····

जैसे जिस तकियेपर मेरा सिर टिका है वह बड़ा मरियल-सा है। जैसे उस तकिये-में रुई नहीं, हवा भरी है।

जैसे मुझे केवल एक सुईकी ज़रूरत है कि मैं इस हवा-भरे तकियेमें एक छेद कर दूँ ताकि सारीकी सारी हवा निकल जाये।

ओठोंपर जमा .खून जैसे उस दृश्यसे हँस-कर पिघलने लगा था। ट्रेनमें दिखती बाहर-की कोई पहाड़ी जैसे कुहरेको झटककर उजली हो आयी थी। कोई नया-सा प्लैटफ़ॉर्म जैसे बहुत पास आ खड़ा हुआ था····

■ ■

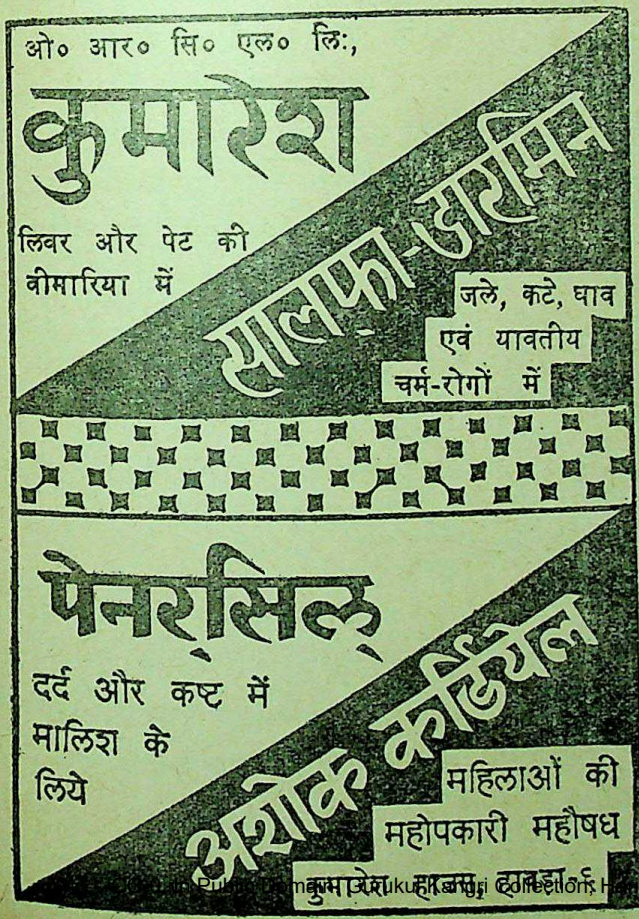

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी

कैलाश नारद

पतझड़के आखिरी दिनोंमें फ़ीके आलोकके धब्बोंसे भरी उस पहाड़ी उपत्यकामें हम आ गये।

युद्ध-स्मारकके आस-पासकी चहारदीवारी टूटकर गिर गयी है, लेकिन उसके अवशेष अब भी हैं—खण्डित ईंटें, जर्जर खूँटे और काँटेदार जाली। उसके भूरे पत्थरोंपर जमी काई सूखकर काली पड़ गयी है, संगमरमरपर लिखे हरूफ़ साफ़-साफ़ नज़र नहीं आते, किन्तु जब युकलिपटस और चीड़के प्रश्वासोंसे गुंजित हवा उड़ती-भटकती-सी क़रीब आती है तो लगता है, काईकी स्याह, मटमैली परतें आहिस्ता-आहिस्ता झर जायेंगी और फिर उनमें-से झाँकने लगेंगी चन्द सतरें···"भारत-चीन सीमा-संघर्षमें मृत अज्ञात भारतीय सैनिकोंके लिए···उनके कातर प्राणोंको अपने श्रीचरणोंमें स्थान दो, प्रभु···"

शामकी उदास परछाइयाँ पहाड़ोंपर बिखर गयी हैं। सन्नाटा पेड़ोंकी टहनियों और पत्तियोंपर सरसराता है। आखिरी धूपके टुकड़े दरख़्तों और नुकीली घासपर झलमलाते हैं। उनके परे चमकती हैं शतरंजके चौकोरों-जैसी छतें, बस्तीके मकानोंके बारजे, चर्चकी बुर्जियाँ और सूनी खिड़कियोंमें धुँधवाती इक्का-दुक्का रोशनियोंके इर्द-गिर्द उड़ते सफ़ेद बादल। हवा चलती है तो सूखे पत्ते शोर करते हुए एक-दूसरेके पीछे भागते हैं और फिर चक्कर खाकर उड़ते हैं।

माधवीने पत्थरोंको छुआ और उसकी अँगुलियाँ उनको टटोलती-सी रहीं····नीरव और निःस्पन्द।

मैंने कहा—"इन सरदियोंमें आनन्दको गुज़रे दो बरस बीत जायेंगे, तुम्हें पता है न?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माधवीके लिए एक तसवीर

"शायद..." वह बोली—"हो सकता है...शायद वह भी नहीं...कौन जाने।" और वह पत्थरोंपर गिरती दरख्तोंकी परछाइयोंकी ओर देखती रही।

"मुझे याद है," मैंने कहा—"जिस दिन बोमदिलाका पतन हुआ उसके तीसरे रोज़..." मैं उँगलियोंपर हिसाब लगाने लगी—"सन् बासठ...तिरसठ..." मैंने कहा और उसकी ओर देखा।

किन्तु मेरी आवाज़ जैसे सुनी नहीं माधवीने। हवाका एक तेज़ झोंका आया था और खड़खड़ाती हुई पत्तियाँ हमारे चेहरोंके आस-पास चक्कर काटने लगी थीं। माधवी ढलती हुई सांझमें म्लान धूपको देख रही थी और न जाने क्या घिर आया था उसकी आँखोंमें...शायद अतीत।

"कल दिल्लीमें अपने कमरेमें बैठी मैं दोपहर पुरानी तसवीरें देखती रही और ख़त," मैंने कहा—"उसमें तुम्हारे और आनन्दके फ़ोटो भी थे जो तुमने दक्षिणके मन्दिरों और राजस्थानके महलोंमें उतरवाये थे। उसकी किसी एक चिट्ठीमें बान गागका भी उल्लेख था, उसके जलते हुए रंगोंके बारेमें जानकारी। तमाम दोपहर न जाने कैसा तो लगता रहा। कितनी याददाश्तें क़रीब रेंग आयीं!...पुरानी तसवीरोंसे सटी हुईं, पत्रोंकी उन सतरोंमें साथ-साथ सरकती हुईं...जयपुर और बीकानेरके संगमरमरी शिल्पोंपर उतरती शामकी रक्ताभ छाया...महाबलिपुरम् और पुरीके मन्दिरोंमें बजता अतीतका शोर।"

माधवी कुछ नहीं बोली। उसका चेहरा पत्थर-सा खामोश हो आया। "आओ चलें।" उसने उसी नीरव स्वरमें कहा।

मैंने उसकी ओर देखा। उसकी दृष्टि धुँधलकेमें न जाने कहाँ तो खो गयी थी। स्मारकके परे जुगनू उड़ रहे थे। वे क़रीब आते और बूँद-बूँद चमक छितरा अँधेरेमें विलीन हो जाते। ऊपर दरख्तोंपर झुकता आकाश था—दूर तक फैला हुआ।

"आनन्दके खत तो तुम्हारे पास भी होंगे?"

"न" : उसने जवाब दिया—"उन सबकी महत्ता ही क्या है? दरअसल, वे सन्ताप ही तो देते हैं।"

"हाँ, सन्ताप" मैंने दोहराया—"लेकिन फिर भी...."

युद्ध-स्मारकसे बाहर निकलकर हम उस शहरके सँकरे-सुनसान रास्तोंमें चुपचाप चलते रहे। उस शाम सहसा मुझे लग आया जैसे मैं दिल्ली छोड़कर माधवीके साथ एक अँधेरी और उदास बस्तीमें चली आयी हूँ और उस बस्तीका हर हिस्सा मानो आनन्दकी स्मृतियोंमें ज़ज़्ब होकर नितान्त नंगा और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निराभरण हो आया है···वे ऐसे ही नंगे से सटे मकान, उनके बाहर निकलते बरामदे, क़लबघरकी पत्थरकी छतें, सेण्ट नार्बर्टका क्रास, ऑफ़ीसर्स मेसके बाहर बजती बिगुलकी धुन और दरख़्तोंकी फुनगियाँ-पत्तियाँ जो पागल हवाके इशारोंपर झूल-झूलकर सरगोशियाँ करती हैं।

स्क्वेयरके क़रीबसे गुज़रकर हम माल-पर आ गये। टेलीग्राफ़के तारोंपर बर्फ़ झूल रही थी। होटलों और रेस्तराओंके दरवाज़े बार-बार खुलते थे, दो-दो, चार-चारके झुण्डों-में लोग आते थे और भीतर घुस जाते थे। शीशेकी खिड़कियोंसे सटे उनके चेहरे घिसी हुई फ़िल्मकी मानिन्द नज़र आते।

कितनी स्मृतियाँ हैं···अपने अजनबी अँधियारोंमें अपनी परछाइयोंके साथ-साथ सरकती हुई, जो इन क्षणों हठात् ही ठिठक गयी हैं। माहौल वही है, वही धुन्ध, वही कातरता लेकिन आनन्द····

अचानक थमककर खड़ी हो गयी माधवी। 'ओल्ड यू शैल नाट डाइ, वि डिड सो लाफ़ एण्ड क्राय विद यू···'

ज्योतिहीन, मरणासन्न आकाशमें स्याह कुहासा परतें बाँध-बाँधकर घुमड़ने लगा। बहुत-सी आवाज़ोंमें वह भी एक थी लेकिन अपनेमें कितनी नीरव और नंगी। किसीने चवन्नी डाली होगी, जूकबाक्सके भीतर दहकते सेंदुर-जैसी बत्ती जली होगी और अब वह हाँफ़ती-सिसकती आवाज़ रेस्तराँके दरवाज़े और खिड़कियोंके भीतर कबूतरों-जैसी फड़-फड़ाती हुई बाहर तैर आयी थी···'वि डिड सो लाफ़ एण्ड क्राय विद यू···'

चुप-चुप गिरती बर्फ़के बीच माधवी उत्कर्ण-सी खड़ी थी···निःस्पन्द और स्तब्ध। मेरी आँखोंके सामने बरसों पहलेकी तसवीर आ गयी जब राबर्टसन कॉलेजके आडीटोरियम-में हमने ह्यू वालपोलका 'द डैड कैथरीन' किया था और कैथरीन बनी माधवी सुनसान नेपथ्यकी ओर हाथ उठाकर चिल्लायी थी··· 'आयम डेजर्टेड···डेजर्टेड···'

'ओल्ड यू शैल नाट डाइ····' समीप ही कोई तितली अपने रंगीन चमकीले पर फड़फड़ाती है। इन पंखोंके परे वह क्या झीना-सा काँधता है? टैनिसनके कातर कण्ठकी पुकारमें जैसे तमाम माहौलकी हस्ती खो गयी है इन क्षणों। नीले, स्याह उजालेकी मुमूर्षु छविका भी आभास नहीं है जैसे और जो कुछ है वह केवल एक गन्धहीन खुशबूका अहसास-भर है···नामशेष···रूपशेष वह जैसे एक शहतीर था—अतीतके हाहाकारको जोड़ता, निःशेषके बिन्दुओंको टटोलता-सा, जहाँ यादें परकटे परिन्दों-जैसी तनहा भटकती हैं—ऐसी शहतीर जो जितनी मुकम्मिल है उतनी ही असहाय। मुझे लग आया, जैसे हताश मनकी एक निर्मम जिजीविषा इन लमहों खण्डित और विवश हो आयी है और माधवी जिसे अपने सम्पूर्ण अकेलेपनसे अबतक ओढ़े हुए थी, उस निदा-रुण मौनकी वह क्षुब्ध और विक्षिप्त धुन तमाम अभिशापों और अभावोंको टटोलती हुई कितनी विपुलतासे वक़्तके खौफ़नाक सन्नाटोंमें बिखरकर खुद-ब-खुद टूट-फूट गयी है। अब ये स्मृतियाँ किसकी मुकम्मिल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—कौन कहेगा, कौन किसकी है। निःशेष
निर्फ़ एक उद्दाम वांछा है——सन्नाटों और
लोंमें उच्छ्वास लेती, कक्षच्युत और
रेंगती-सी। वह जो हमें अपनी हस्ती-
बोध देता है, मानो इस नियतिहीन
भावमें खो गया है और इसीलिए वांछा
अपने आपमें इतनी सशक्त और इसीलिए
दारुण···

'ओल्ड यू शैल नॉट डाइ···' एक बहशी
धुन्धकी इन परतोंको भेद एक उदास
हूनकी भाँति उड़ती-भटकती आती है···
एम० सी० ए० की छतोंके परे, शता-
के आकाशको छूती हुई···एक प्यासी
गुनगुनाहट और उसके साथ-साथ ही
याददाश्तोंके चेहरे···लो छुओ इन्हें···
टोंमें सिसकते राजस्थानके महलोंके रहस्य-
अँधियारे, उनके सफ़ेद बिल्लौर कंगूरोंपर
नी कातर स्याही, कोणार्कके मन्दिरोंके
गर्भगृह और हज़ारों-हज़ार सालकी
होंसे प्रक्षालित, अर्धरात्रिकी निविड़तामें
लती-सिसकती गंगाका रुदन सुनते वारा-
के घाट और विन्सेण्ट वान-गागके जलते-
कते रंगोंकी अधूरी दास्तान। यह प्रणयकी
निल मोहकता है और स्मृतियोंका झीना
ता कसमसाया है···न, यहाँ युद्ध नहीं है,
र नहीं है, यह कोमल कलियोंपर गिरती
म है जो रौशन घब्बोंमें प्रणयकी आभासे
कती है। एक उज्ज्वल हरा आलोक, जो
को दाह देता है और फूलोंको आब···

स्याह आकाशके नीचे···शीतकी गहरी
ओं···चैपलका क्रास···कुहासा और

तमाम बस्तीपर उसकी
ग्रेनाइट-जैसी छाया उतर
आयी और हवा बर्फ़की
मानिन्द ठण्डी और वैसी ही
साफ़ थी। अँधेरा होनेके पहले
हम युद्ध-स्मारकके पास
गये थे। अनाम-अनजान
सैनिकोंकी उन याददाश्तोंके
आस-पास तितलियाँ उड़
रही थीं और फीका आलोक
आस-पास उतर आया
था और अब माधवी
हँस नहीं सकती थी···मृत्यु जो
धूसर थी और ध्वस्त, न
जाने कैसे आहिस्ता-आहिस्ता
उन लमहों क़रीब
रेंग आयी थी।

तितलियाँ···

स्मृतियाँ, सन्ताप, हाहाकार।

ओपन एयर थियेटरकी कुरसियोंपर अखबारोंके फटे हुए टुकड़े उड़ते हैं। उनके पीछे विश्वविद्यालय-युवक-महोत्सवके रंग-बिरंगे टेण्ट हैं, रस्सियोंमें बँधे कुमकुमे हैं, तालकटोराके खण्डहर हैं, सामने छत्तीस फ़ुट लम्बा विशाल रंगमंच नीरव पड़ा है···· इस ओर विंगके समीप आनन्द खड़ा है और उसके कन्धेपर सिर रखे माधवी। इस एक जोड़ी आँखोंकी स्निग्धतामें कौन-सा इसरार है, कौन-सा अर्थ, कौन-सी चाह ?

"तुम्हें कमीशन मिल गया है···क्या हो गये हो ? सेकण्ड लैफ़्टिनेण्ट···लेकिन वहाँ तुम्हारे टेनिसन और कीट्सके नोट क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होंगे ?"

"मैं वाल्टर स्काटको पढ़ता था," आनन्द मुसकराता है, "अब हिमानी मोरचोंपर उसके शौर्यको जीवित करूँगा।"

माधवीके होठ उसके कन्धेपर खिसक आयी पट्टियोंको छूते हैं—"ये तुम····आनन्द···"

"अगली गरमियोंमें मैं वापस दिल्ली जाऊँगा, माधवी।"

"वि डिड सो लाफ़ ऐण्ड क्राय विद यू ···" रुदन-ध्वनिकी कातरता शून्यमें धीरे-धीरे घुलती है। सड़कपर पाँव-पाँव चलते इक्के-दुक्के लोग उस राखिया माहौलमें श्मशानके धूसर प्रेत-जैसे नज़र आते हैं।

आज—दो बरस बाद भी—जैसे कुछ फ़र्क़ नहीं पड़ता।

ये दो साल पहलेकी बातें हैं और अब आनन्द नहीं है। पिछली गरमियोंमें उसने वापस लौट आनेको कहा था लेकिन चुशूलकी बर्फ़में वह कहीं खो गया है और उसकी यादमें मान्यूमेण्टके आस-पास एक पत्थर रख दिया गया है—अन्य-अनेक उन पत्थरोंकी भाँति, जिनकी यादगारें हज़ारों-हज़ारों आँखोंमें अब भी तैरती हैं, हज़ारों-हज़ार धड़कनोंमें अब भी स्पन्दित होती हैं— उनके पत्थर, जिनको आना था लेकिन जो नहीं आये और जिनकी यादें उस नासूरकी तरह अब भी मुकम्मिल हैं, जो दुखता और रिसता नहीं, बस ख़ामोश सुलगता रहता है।

माधवीने एक गहरी साँस ली···उसकी निगाहें जूकबॉक्सकी ओर उठती हैं जहाँ टैनिसनकी कातर आवाज़की एक निःशेष-सी अनुगूँज अब भी छटपटाती लगती है—एक लमहेके लिए लगता है कि वह जो रावर्टसन कॉलेजके ऑडीटोरियममें फ़्लड लाइट्सके बीच प्रेतात्मा-सी निस्पन्द खड़ी अपने ही दायरोंमें खो गयी थी, अब जैसे तमाम स्वत्व और निजत्वको तोड़कर ख़ुद उस जादुई सम्भ्रम-से सम्मोहनका हिस्सा बन गयी है जो उसके परे था।

स्ववेयरके आस-पास मुमूर्षु आहटें हैं। अभी चन्द दिनों पहले यहाँ आनन्द नामका एक व्यक्ति रहता था। उसके मर जानेके बावजूद भी इस बस्तीके चेहरेमें कोई फ़र्क़ नहीं पड़ा है। सड़कोंपर आहटें हैं, बरामदोंमें कपड़े सूखते हैं, गलियोंके घरोंमें चबूतरोंपर बैठकर दालें फटकी जाती हैं, छतोंपर बैठकर परिन्दे पर फड़फड़ाते हैं, चैपलके कंगूरोंपर आकाश झूमता है, फूलोंपर तितलियाँ उड़ती हैं, पश्चिम आकाशमें कुहासेके परे अँधेरा चमकता है····और उसके परे···व्यतीत।

आनन्द नहीं है, हम भी नहीं रहेंगे···लेकिन शहरमें कोई फ़र्क़ नहीं आयेगा। यही बत्तियाँ, यही धुन्ध और यही कुहासा···फिर भी एक अन्तराल—एक धुँधले परदे-जैसा झीना और पारेकी चमकीली रेखा-जैसा तीक्ष्ण, कि जिसे छू दो और बिखर जाये, इस दरमियान छा जायेगा।

कौन है यह विचित्र-सा अन्तराल, जो हमेशा नामालूम-सा आहिस्ता-आहिस्ता उठता-गिरता रहता है—समय, दुःख या प्रारब्ध ?

"बीनू···हमें वहाँ नहीं जाना चाहिए था।" माधवीने कहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"लेकिन तुम···तुम्हींने तो कहा था।"

मुड़ने लगा, जैसे दूसरी ओर मुँह फेरकर

फुसफुसायी।

"दरअसल, मैं याददाश्तोंसे नफ़रत करती

न जाने कैसा तो लगता है। तुमने ख़ुद

किया होगा।" वह बोली—"ये पत्थर,

के लिए शान्तिपाठ और खिन्नता। मैं

हूँ, आख़िर इन सबका अर्थ क्या है?"

"लेकिन तुम तो आनन्दसे प्रेम करती

"प्रेम!" माधवी धीरे-धीरे हँसने लगी—

तो सिर्फ़ दाह देता है···फ़्रस्ट्रेशन। दिल-

केवल रिक्ति और व्यथा भरता है। भला

महत्ता क्या है?"

वह कोलतारकी सूनी सड़कपर गिरती

रोशनीकी ओर देख रही थी। चेहरेपर

आया था एक गहरा अवसाद। सूखे

हवामें लहरा रहे थे। ओठोंकी कँपकँपा-

देखकर लगता था, जैसे अभी रो देगी।

"वह क्या है, जिससे हम परिचालित

हैं और नियतिहीन-से इस जगतीमें अपना

समय टटोलते हैं?" उसने फुसफुसा-

कहा।

"माधवी," मैंने कहा, "मृत्यु ऐसी

है जो होकर रहती है। मनुष्य कैसे मरता

आनन्द कैसे मरा? और फिर भी हर

अपनी मौत जीतकर लाता है जो

उसकी है और किसीकी नहीं···और

नाम जीवन है।"

निर्निमेष उजालेकी ओर देख रही थी

"आनन्द नहीं है," उसने कहा, "एण्ड

डेड नेवर रिटर्न···बीनू, डोण्ट बी सिली···"

हवा तेज़ हो चली। सूखे पत्ते शोर मचाते, गोल बाँधकर उड़ते आते और फिर एक-एककर बिखर जाते····पीले, चीचीर। मलिका विक्टोरियाके बुतके पास एक जोड़ा खड़ा था, हमारी आहट पा तितर-बितर हो गया। धुँधली और ठण्डी गलियाँ पार करते हुए हम यहाँतक पहुँच गये थे और शहरका शेष हिस्सा यहाँसे घिसे हुए शीशेकी भाँति दीखता था। सर्दी काफ़ी तेज़ हो आयी थी और स्ट्रीट-लैम्पकी रोशनीमें कुहासा काँप रहा था। जब वह थरथराता तो उसके साथ चर्चके जामुनी हो आये कंगूरे भी सिहरते प्रतीत होते।

ढालके परे, रातकी उस स्याहीमें, उजालेकी तरफ़से निगाह हटा माधवी काँटेदार जालियोंके पार देख रही थी। उसका चेहरा अँधेरेमें छिप गया था, लेकिन स्ट्रीट-लैम्पकी निःशेष-सी रोशनीमें उसके बालोंपर अग्नि-बिन्दु-से बिखर गये थे।

ढालके पार फ़ौजियोंके क्वार्टर्स थे जहाँ आनन्द रहा करता था। उनकी कोरोगेटेड छतोंकी चमक-भरका अहसास उस जामुनी कुहासेमें होता था। मेसके पास रिट्रीटका बिगुल बज रहा था और उसकी धीमी-धीमी-सी आवाज़ अँधेरोंमें रेंगती हुई क़रीब वह आती थी। सारे माहौलमें कैसी तो एक स्पन्दनहीन-सी रिक्ति थी, एक विवशता, जो सिर्फ़ मृत्युमें होती है। बैरकोंके समीप मिलिटरीकी गाड़ियाँ खड़ी थीं और नज़र गड़ानेपर उनके ऊपर पड़े खाकी तिरपाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काले-काले नज़र आते थे और हैडलाइट्सकी रोशनीमें काँटेदार तारकी जालियाँ।

एक क्षण····दो क्षण····और फिर माधवी सिर उठाकर मेरी ओर देखने लगी। "तुम रुक क्यों गयीं···" उसने कहा, "मैं तो अपनी चप्पलका स्ट्रैप ठीक कर रही थी ··चलो··· चलो।"

माधवीकी ओर मैं अपलक देखती रही।

पतझड़के आखिरी दिनोंकी वह मरती हुई साँझ थी और बड़ी स्याह थी···तमाम बस्ती-पर उसकी ग्रेनाइट-जैसी छाया उतर आयी और हवा बर्फ़की मानिन्द ठण्डी और वैसी ही साफ़ थी। अँधेरा होनेके पहले हम युद्ध-स्मारकके पास गये थे। अनाम-अनजान सैनिकोंकी उन याददाश्तोंके आस-पास तितलियाँ उड़ रही थीं और फीका आलोक आस-पास उतर आया था और अब माधवी हँस नहीं सकती थी···मृत्यु जो धूसर थी और ध्वस्त, न जाने कैसे आहिस्ता-आहिस्ता उन लमहों क़रीब रेंग आयी थी।

"डोण्ड बी सेण्टिमैण्टल, बीनू···नेवर।"

"नेवर···" मैंने कहा और मुसकरायी।

एक रिक्शा खड़खड़ाता हुआ हमारे क़रीब-से गुज़र गया। उसके पीछे हवामें उड़ती धूल और अखबारोंके टुकड़े। अँधेरा देर तक उनकी अनुगूँजसे सिहरता रहा।

हमारे बीच थोड़ी देर तक सन्नाटा छाया रहा। सिर्फ़ हमारी पदचापें ही उसे तोड़ती थीं। फिर माधवी बोली—"तुमने मृत्युकी बात की····लेकिन मैं सोचती हूँ, ये ज़िन्दगानियाँ काहेके लिए हैं? हम जीते क्यों हैं? हमारे जीवन क्या हमारे गुनाहोंकी सज़ा नहीं है?"

उस कुहासेमें पैरोंके नीचे दबते हुए पत्तों-की चरमराहटके सिवाय कुछ नहीं सुनाई देता था। मैंने एक उच्छ्वास लिया।

"हमें हैल्युसिनेशन हो गया है कि हमें जीना है," वह कहती गयी—"और इसीलिए जीवन हमें छलता है। यह तो जय नहीं वंचना है····पराजय····आनन्द नहीं, केवल उसकी स्मृति-भर शेष है····लेकिन वह जो इतनी अतृप्ति, इतना सन्ताप और वांछा लिये मरा है, वह क्या कभी अपना पावना लेने नहीं आयेगा, बीनू?"

चारों ओर एक घनी-सी निस्तब्धता घिर आयी थी····जब कभी सूखे पत्ते उड़नेकी कोशिश करते, पीली रोशनीमें वे चमकते प्रतीत होते। और फिर झुरमुट भी हवाके झोंकोंसे खड़खड़ा उठते।

"अब मुझको ही लो," उसका स्वर मुझे कहीं दूरसे आता हुआ प्रतीत हुआ—"मेरी नियति बताओ बीनू, जो एक कक्षच्युत उल्का-सी असन्तुष्टिके इन अन्धे अन्तरिक्षोंमें गतिशून्य भटक रही हूँ!"

हम पुलके क़रीब आ गये। उस पार बस्ती और उसका सारा आकाश फैला था। उनके परे हिमालयकी बर्फ़ीली चोटियाँ थीं जो शीतके उन नीमतारीक़ दिनोंमें धुँधले क्षितिज-पर भूरी स्याहीसे बने स्नो-स्केप-जैसी नज़र आ रही थीं, ठिठकी हुई, निःस्पन्द और भुतैली। धुन्धके रेलेमें घाटियाँ और ज़मीन खो-से गये थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैथड्रलकी बुर्जियाँ यहाँसे भी दीखती ...जहाँ अँधेरा था, वहाँ कुहासा कस-...ता-सा और जब धुन्ध छँटती तो आसमान-...र्ख, दगदगाते-से रोशनीके अक्षर अपना ...यहाँ-वहाँ फेंकने लगते....कैवेण्डर्स... ...डर्स।

हम पार्कके एक हिस्सेमें खड़े थे। ऊपर ...की पत्तियोंका साया था और पुलके नीचे ...पानी बह रहा था...तरल अँधियारे-...। उस पार रविशोंपर बेंचें रखी हुई थीं। ...वीने झुरमुटोंके पार दीखते पुलकी ओर ...और देखती रही। वहाँ इक्के-दुक्के ...चमक जाते थे। पुल सुनसान था और ...रेतके कण उड़ रहे थे।

"पुल..." माधवी थमथमायी—"उसपर ...बैठा करते थे...आनन्द और मैं।"

अँधेरेमें स्याह हुए पुलके गन्दुमी रंगके ...रोंकी ओर हम एकटक देखते रहे। उसके ...ों किनारोंपर किलोमीटरके निशान अंकित ...। काले और सफ़ेद। जब उसपर-से कारें ...रतीं तो वे चमकते और उसके आस-पासके ...मुट और पानी।

"पुल....पुल..." माधवीके सूखे, पपड़ि-...ये होठ जैसे कुछ फड़फड़ाये।

मेरी आँखोंके सामने एक चेहरा उभरने ...गा। याददाश्तोंकी सुनहरी आभासे रँगा ...आत्मप्रत्ययसे दमकते और प्रखर जिजी-...षासे ऊर्जस्वित आनन्दका चेहरा...और ...र पुल।

माधवी भर नज़र उस ओर देखती रही। झुरमुटोंके परे जैसे उसकी निगाहें उसे टटोलने-का प्रयास कर रही थीं...उसे जो सर्वथा असम्पृक्त और सर्वथा अलग-थलग क्षणोंकी एक क़तार और मुक़म्मिल शहतीर बन गया था उन लमहों।

रविशोंके ऊपर गिरती रोशनीकी उजली परछाईं हमारे पैरोंके क़रीब रेंग आयी। पुल-के ऊपर चँदोवे-जैसी तनी कुहासेकी परतें भी सिहरीं। चीड़ और युकलिप्टसके दरख़्तोंको कौन तो सिहरा गया उन क्षणों। माधवी ठिठकी और बैगमें हाथ डालकर भीतर कुछ टटोलने लगी। पार्ककी रोशनी उसके मटियाले हो आये सूखे बालोंपर गिर रही थी और उन-पर फीका आलोक बिखर गया था।

"यह...." उसने कुछ कहना चाहा।

मैंने उसकी तरफ़ देखा। उसकी आँखें चमक रही थीं और होठ हिल रहे थे। उसकी हथेलीमें कुछ दबा हुआ था।

"यह," उसने फिर कहा और हथेली मेरे सामने कर दी—"तसवीर!"

वह एक फ़ोटो था, पासपोर्ट साइज़का, सलवटोंसे मुड़ा-तुड़ा और पसीनेसे भीगा। रोशनीमें वह चमक रहा था। हवा चलती तो वह काँपता।

"यह....यह तो आनन्दकी तसवीर है।" मुझे विस्मय हुआ।

"हाँ, आनन्दकी तसवीर..." माधवीने कहा, "मोरचेपर जानेके पहलेकी....उसीकी दी हुई।" और वह एक म्लान हँसी हँसने लगी।

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यंग्य

नया नायिका-भेद

अशोक शुक्ल

यह कौन-सी नायिका है : पद्मिनी, चित्रिणी, शंखिनी, हस्तिनी, सेण्टिनी, गुलदस्तिनी, तितलिनी, श्वानिनी, साहित्य-कारिणी, प्रियदर्शिनी, सिने-मिनी···या और कोई ?

युग बदलते हैं और साथ ही व्याख्याएँ भी। आज जो नायिका-भेद उपलब्ध है, वह भले ही कभी सार्थक रहा हो, वर्तमान युगमें फ़िट नहीं हो पाता। इस कमीको दूर करनेके सद्विचारसे यहाँ प्राचीन नायिका-भेदकी युगानुरूप व्याख्या दी जा रही है और नया नायिका-भेद भी दिया जा रहा है, जो वर्तमान नायिकाओंके अध्ययनके लिए अनिवार्य है। पहले पुरानी-नायिकाओंकी नयी व्याख्या लीजिए :

१. पद्मिनी—यह उस देशकी नायिका है जिस देशमें गंगा बहती है। कुछ समय पहले तक बम्बईके सिनेमा-जगत्में इस नायिकाकी स्थितिका पता मिलता है। अपुष्ट समाचारोंके अनुसार, इस बीच दक्षिण दिशामें कुछ पद्मिनी-नायिकाएँ देखी गयी हैं। प्राचीन कालमें पद्मिनी-नायिका उसे कहते थे, जिसके शरीरसे कमल-पुष्पकी सुगन्ध आती थी, पर आजकल इसकी व्याख्या बदल गयी है। अब पद्मिनी-नायिका उसे कहते हैं, जिसके पाद-पद्मोंमें 'मनी' (धन) की वर्षा अनवरत होती रहे !

२. चित्रिणी—जो नायिकाएँ चित्रपट (सिनेमा) दिखानेके लिए ले जानेके काम आती हैं, वे चित्रिणी कहलाती हैं। बड़े नगरोंमें ऐसी नायिकाएँ बहुत कम क़ीमतपर सुविधापूर्वक उपलब्ध होती हैं। कुछ आचार्योंका मत है कि चित्रिणी नायिकाएँ चित्रपट (सिनेमा) दिखानेके अतिरिक्त चित्र (फ़ोटो) खिंचवानेके काम भी आती हैं। इनके चित्र बीड़ी, सिगरेट और जूतोंका विज्ञापन करनेवाले कलेण्डरोंपर खूब शोभा पाते हैं।

३. शंखिनी—शंखकी तरह कर्कश निनाद करनेवाली नायिका शंखिनी कहलाती हैं। ऐसी नायिकाएँ प्रायः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...हस्थोंके यहाँ पायी जाती हैं। ये बड़ी ...शासन-प्रिय होती हैं, अतः इनके सभी ...और बच्चे बड़े आज्ञाकारी होते हैं। ...शंखिनी नायिकाओंके पड़ोसी तक बड़े ...ज्ञाकारी और विनम्र पाये गये हैं।

४. हस्तिनी—अवसरपर अपने हाथों-...प्रयोग कर मारपीट कर सकनेवाली नायि-...एँ हस्तिनी कही जाती हैं। इनके हस्तिनी ...लानेका एक कारण यह भी है कि इन्हें ...कर हथिनीका भ्रम हो जाता है। ऐसी ...यिकाएँ हस्तिशालाओं, कन्यापाठशालाओं, ...यबघरों और विधानसभाओं आदिके आस-...दिखाई पड़ जाती हैं। इनकी रुचि बनाव-...ार और घूमने-फिरनेकी ओर विशेष होती ...। शृंगार-प्रसाधनोंकी सबसे बड़ी खरीददार ...ही हैं। ये वाग्युद्धमें महारथी होती हैं। ऐसे ...वसरोंपर इनकी भाव-भंगिमा, अंग-संचालन ...र गर्वोक्तियोंको देख-सुनकर बड़े-बड़े पराक्रमी ...र भी दहल जाते हैं।

स्पष्ट है, कि उपर्युक्त चार विभागोंमें ...आजकलकी अधिकांश नायिकाएँ नहीं आ ...तीं। उनके सुविधापूर्वक अध्ययनके लिए ...हाँ नया नायिका-भेद भी दिया जा रहा है।

५. सेण्टिनी—प्रति क्षण तेज़ सेण्टकी ...खुशबूमें डूबी रहनेवाली नायिकाएँ 'सेण्टिनी' ...कही जाती हैं। ऐसी नायिकाएँ पार्कों, नदी-...समुद्र-तटों आदिपर टहलानेके काम आती हैं। ...आचार्य भानुमिश्रने 'रस-मंजरी' में इनके लक्षण ...इस प्रकार गिनाये हैं :

"भवति प्लेट-नयना, नासिका दीर्घ-रन्ध्रा,
शिथिलित कुच-युग्मा, बॉब्डकेशी, कृशाङ्गी।
कटुवचन, कुशीला, फ़िल्म-गीतानुरक्ता,
सकल तनु कुवेशा, सेण्टिनी सेण्ट-गन्धा।"

अर्थात् प्लेट (तश्तरी) के-से नेत्रोंवाली, बड़े-बड़े नासिका-छिद्रोंवाली, सेमलकी भुई-से शिथिल, स्तनोंवाली, बॉब्ड बालोंवाली, कृशांगी, कटुभाषी, कुशीला, फ़िल्मी गानोंमें अनुरक्त, सारे शरीरमें कुवेश धारण करनेवाली, सेण्ट-की गन्धसे पूर्ण सेण्टिनी नायिका होती है।

६. गुलदस्तिनी—जो नायिका काग़ज़के फूलोंके गुलदस्ते-सी सुन्दर और महक-विहीन होती है, वह गुलदस्तिनी कही जाती है। यह नायिका घर सजानेके काम आती है। यह बड़ी नाज़ुक होती है, अतः इसे ज़्यादा छूनेपर टूट जानेका खतरा रहता है। इसे साथ लेकर बड़ी सफ़ाईसे पिकनिकों, पार्टियोंकी शोभा भी बढ़ा दी जाती है। कभी-कभी, अवसर पड़नेपर अपने 'बॉस' या बड़े अधि-कारियोंके लिए यह 'प्रलुब्धा' रूपमें प्रयुक्त होती है।

७. तितलिनी—राजपथोंपर तितलीकी तरह उड़ती फिरनेवाली रंग-बिरंगी नायिकाएँ तितलिनी कहलाती हैं। लॅक्स साबुनकी तरह इनके भी दो प्रमुख भेद पाये जाते हैं—१. सर्वथा धवल तितलिनी नायिकाएँ, २. इन्द्रधनुषके रंगोंमें पायी जानेवाली तितलिनी नायिकाएँ। प्रत्यक्षदर्शियोंका मत है कि अस्पतालोंके आस-पास धवलवस्त्रा स्कर्ट-शोभिता, शिरस्त्राण-मण्डिता नायिकाएँ पायी जाती हैं, और कॉलेजोंके आस-पास साड़ी-सलवारावृता, पुस्तकभारनता इन्द्रधनुषी नायिकाएँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. श्वानिनी—जो नायिकाएँ सदैव अपने साथ एक श्वान (कुत्ता) रखती हैं, वे श्वानिनी कहलाती हैं। ऐसी नायिकाएँ प्रायः सड़कोंपर चहलक़दमी करती हुई पायी जाती हैं। जब कभी श्वान उपलब्ध न हुए तब ये उनके स्थानपर अपने पतियोंको ले आती हैं, पर ये जितने दुलारसे श्वानोंको साथ रखती देखी गयी हैं, उतने दुलारसे पतियोंको नहीं। सच्ची श्वान-व्रता नायिकाएँ अपने प्रिय कुत्तों और पालतू पतियोंमें कोई अन्तर नहीं मानतीं।

९. साहित्यकारिणी—जिन नायिकाओं-का पेशा अपने पतियोंकी रचनाओंको अपने नामसे छपवानेका होता है, उन्हें साहित्यकारिणी कहते हैं। इनका मुख्य काम अपने पतियोंके बारेमें काल्पनिक लेख लिखकर प्रचार करना होता है। इस प्रकारका प्रचार बड़ा प्रभाव-शाली होता है। आँकड़े बताते हैं कि जबसे प्रचारकी इस वैज्ञानिक विधिका आविष्कार हुआ है, तबसे साहित्यकारोंने अपना प्रचार रेडियो-सीलोनके व्यापार-विभागसे कराना बन्द कर दिया है।

१०. प्रियदर्शिनी—जो नायिकाएँ दूरसे सुन्दर दिखती हैं, पर वास्तवमें सुन्दर नहीं होतीं, वे प्रियदर्शिनी कही जाती हैं। ये माया-विनी नायिकाएँ रूप-परिवर्तन (मेक-अप) में बड़ी दक्ष होती हैं। इनके कपड़े या तो अत्यन्त चुस्त होते हैं या हवादार! हवादारसे तात्पर्य स्थान-स्थानसे कटे हुए न्यूनतम वस्त्रों-से है। इन्हें देखकर बड़े-बड़े ऋषि-मुनि भी सड़कपर गिरते-गिरते बचते हैं। ज़रा-ज़रा देरमें बिना बातके शरमाना इनका प्रमुख लक्षण है। नज़रें झुकाकर धीरेसे मुसकराना, साड़ीके पल्ले अथवा दुपट्टेको बार-बार ठीक करना, समय-असमय 'सॉरी' तथा 'जाइए, आप बड़े वो हैं' कहते रहना, अकारण बार-बार खाँसना और मछलीकी तरह लहराकर चलना इनकी प्रमुख विशेषताएँ हैं। कभी-कभी ये रूमाल गिराकर, जान-बूझकर भूल जाती हैं।

११. सिनेमिनी—सिने - तारिकाओंको शास्त्रीय शब्दावलीमें 'सिनेमिनी' नायिकाएँ कहा जाता है। इनका प्रमुख काम फ़ैशन प्रव-र्तित करना है। लज्जा, संकोच, संयम आदि संकीर्ण भावनाओंसे ये पूरी तरह ऊपर होती हैं। ये या तो मौलिक रूपसे अविवाहित होती हैं या तलाक प्राप्त कर अविवाहित हो जाती हैं। ये बहुत सुन्दर होती हैं, अतः इनमें अभिनयका गुण आवश्यक नहीं माना जाता। कोई-कोई सिनेमिनी नायिकाएँ जवान भी होती हैं। कई फ़िल्मोंके आधारपर यह भी कहा जा सकता है कि ये मदमस्त हाथियों और साँड़ोंको महज़ एक मुसकानसे वशमें कर लेती हैं।

इन उपर्युक्त ग्यारह विभागोंके अतिरिक्त भी अन्य अनेक प्रकारकी नायिकाएँ होती हैं। कुछ आचार्योंका तो यहाँतक कहना है कि संसारमें जितनी महिलाएँ हैं, उतने ही नायि-काओंके भेद हैं, पर सम्यक् अध्ययनके अभावमें नायिकाओंके अन्य विभेदोंपर यहाँ विचार सम्भव नहीं। लेखक उन सबकी महिमाको स्वीकार करता है और विस्तृत-व्याख्या न कर सकनेके कारण क्षमाप्रार्थी है। ■■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्यारके फूल

प्रस्तोता :
मुहम्मद सलीम

...री बदनसीबी बहुत बड़ी है, ...न मैं सब्र करूँगी। आज मैं ...ज़िफ़ाइनकी जगहपर खड़ी ...हम दोनों बदक़िस्मत औरतें ...लिए पैदा हुई थीं कि दुनिया-...ी सबसे बड़े सिपहसालारोंके ...फ़तह करें और आँख झप-...सुरैयासे तहतुस्सरामें धकेल ...जायें। मैं 'कमाल' की मलिका ...और जोज़िफ़ाइन नेपोलियन-...। मैं नाउम्मीद नहीं हूँ। ...का मर्दे-मैदान अगर ज़िन्दगी-...आख़िरी लमहे तक जोज़ि-...इनके लिए कुढ़ता रहा तो ...ये यक़ीन है कि तुर्कीका मर्दे-...दान भी 'लतीफ़ा' के लिए ...करार रहेगा। क्योंकि ख़ुदाने ...ज़िफ़ाइन और लतीफ़ाकी ...क़िस्मत एक-जैसी बनायी है....।"

ग़ाज़ी मुस्तफ़ा कमाल अता-...की प्रेमिका और पत्नी लतीफ़ा ...के उस वक्तव्यका यह एक ...है जो उस समय तुर्की अख-

कमाल और ख़ानम

बारोंमें प्रकाशित हुआ था जब अतातुर्कने लतीफ़ाको तलाक़ दे दिया था। पर मैं आपको इस स्थानपर बहुत पहले ले आया। तो फिर आइए एकदम पीछेकी ओर देखें।

९ सितम्बर १९२२ की सुबह, तुर्कोंके लिए ख़ुशीका सन्देशा लेकर आयी। समरना जीत लिया गया था और तुर्की फ़ौजें अपने इकतालिस बरसके जवान सेनापतिकी अगवाईमें सर उठाये शहरमें प्रवेश कर रही थीं। शहरके दूसरी ओर यूनानियोंको उनके अपराधोंके बदले मृत्युके घाट उतारा जा रहा था। लोग डरके मारे घरोंमें छुप गये थे। यूनानी झण्डे झुके थे। यूनानी सिपाहियोंको गिरफ़्तार किया जा रहा था। अचानक ख़ून-ख़राबा बन्द करनेका हुक्म दिया गया और एलान हुआ कि ईसाइयों, यहूदियों और दूसरे धर्मके लोगोंके लिए कोई ख़तरा नहीं और सारे दुश्मनोंकी जान अब बची रहेगी। यह एलान सुनकर लोग घरोंसे निकल आये। विजयी फ़ौजका स्वागत करनेके लिए दोनों ओर सड़कोंपर क़तारें लग गयीं और "मुस्तफ़ा कमाल—ज़िन्दाबाद", "तुर्क ग़ाज़ी—ज़िन्दाबाद" के नारे आकाश तक जा पहुँचे। तुर्की फ़ौजसे शहरके लोगोंमें भय इसलिए भी फैल गया था कि इससे पहले वह शहरमें यूनानियोंका प्रवेश-दृश्य देख चुके थे। यूनानियोंको पहला महायुद्धके बाद समरना और थ्रेसके इलाक़े सौंप दिये गये थे और उन्होंने इन इलाक़ोंपर अपना अधिकार जमाते ही वहाँके लोगोंपर बड़े-बड़े अत्याचार किये थे। इसलिए आज फिर लोगोंका पुराना डर लौट आया था कि न जाने उनके साथ आज क्या हो। पर जब विजयी सेनापति मुस्तफ़ा कमाल पाशाने शहरकी साधारण जनताके साथ दुश्मनोंकी भी सुरक्षाका एलान कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया तो हर आदमीने इत्मीनानकी साँस ली और लोग इस महान् व्यक्तिको देखनेके लिए सड़कों, चौराहोंपर निकल आये। स्वागत-की इसी हलचलमें अतातुर्कका ध्यान एक औरतने अपनी ओर दिलाया। औरतने बताया कि वह समरनामें रहती है। जब यूनानियोंने इस शहरपर अपना अधिकार जमाया तो इस-पर भी उनके अत्याचार हुए। यूनानियोंका ख़याल था कि वह तुर्कोंको सारे समाचार पहुँचाती है। यूनानियोंने घर फूँक दिया। यूनानियोंका जबतक समरनापर अधिकार रहा उसे एक पल भी चैन न मिल सका। आज उसकी बरसोंकी कामना पूरी हुई कि अता-तुर्ककी जीत हुई। और आज इसी ख़ुशीमें वह अतातुर्कको अपने यहाँ खानेपर बुलाना चाहती है।

औरतकी आँखोंमें बड़ा आकर्षण था। उसके मीठे स्वरसे अतातुर्क प्रभावित हुए बिना न रह सका। और जब औरतने अपने गलेसे लॉकेट खोली जिसमें मुस्तफ़ा कमालका चित्र था तो मुस्तफ़ा कमालसे 'नहीं' न कहा जा सका। उसने निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। और फिर कुछ ही दिनों बाद दुनियाने अता-तुर्कके इस मेज़बानके मुँहसे सुन लिया कि: "मैं आज भी उनपर इसी तरह फ़रेफ़्ता हूँ, जिस तरह समरनामें पहली मुलाक़ातपर उनपर मर मिटी थी। लेकिन वह अनानियत थी जो मुहब्बतके पाक जज़्बेपर ग़ालिब आ चुकी है।"

और उस औरतका नाम 'लतीफ़ा खानम' था।

लतीफ़ा खानम पढ़ी-लिखी औरत थी। सुन्दर होनेके साथ ही धनी भी थी। बाप कई जहाज़ोंके मालिक थे। जिन दिनों मुस्तफ़ा कमालसे लतीफ़ाकी मुलाक़ात हुई उन दिनों लतीफ़ाके बाप पेरिसमें थे और मुस्तफ़ा कमाल उन्हें जानते थे। मुस्तफ़ा कमालने पहली ही मुलाक़ातमें लतीफ़ाको भाँप लिया था। और फिर दो-चार मुलाक़ातोंमें तो लतीफ़ाने भी कमालके दिलमें घर कर लिया।

पहले महायुद्धमें रूस, जर्मनी और दूसरे देशोंमें जो उलट-फेर हुए उसने यूरोपका नक़्शा ही बदलकर रख दिया, फिर इस्लामी मुल्क भी इस तबाहीसे न बच सके। अरबके अधिकतर इलाक़े बरतानिया, और फ्रान्स दूसरोंके अधिकारमें दे दिये गये और तुर्कीके तो बिलकुल ही हिस्से करके रख दिये गये। अस्वद सागरका इलाक़ा कमीशनको सौंपा गया। समरना और उसके आस-पासका एक बड़ा टुकड़ा यूनानको मिला। दक्खिनी किनारेका एक हरा-भरा हिस्सा इटलीको दे दिया गया, थ्रेसको भी यूनानमें मिला दिया गया, इसके बाद जो बंजर और बेकार इलाक़े बच गये वह तुर्कीके पास ही रहने दिये गये। इस तरह बाहरी शक्तियोंने तुर्कीपर ऐसा कुल्हाड़ा चलाया कि वह तड़पने लगा और अब कोई उसका पूछनेवाला न था। यूरोपमें इसे 'बीमार मर्द' के नामसे पुकारा जाने लगा।

इस 'बीमार मर्द' को 'बलवान मर्द' बनानेका सेहरा जिस महान् व्यक्तिके सर है, वह मुस्तफ़ा कमाल पाशा है जिसे तुर्कोंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...तुर्क'—तुर्कोंका बाप—के नामसे पुकारा ...और जिसने पन्द्रह-सोलह बरसोंके अन्दर ही ...की काया पलटकर रख दी।

...तातुर्कने अपनी आप-बीतीमें लिखा ...:

"मैं १२ मार्च १८८१ को पैदा हुआ। ...का पेशा तिजारत था, मगर उनकी ...ने वफ़ा न की जिसके नतीजेमें मेरी ...ई ज़िन्दगीमें खुश-हाली नसीब न हो ...। फिर भी वाल्दाने फ़ौजी कॉलेजमें ...म दिलायी और मैं बीस बरसकी उम्रमें ...में लेफ़्टिनेण्टकी हैसियतसे भरती हो ...।

उस वक़्त अब्दुल हमीद तुर्कीका सुल्तान ...और मुल्कको तरक़्क़ीकी तरफ़ ले जानेके ...तबाहीकी तरफ़ ले जा रहा था। मैं ...का शैदाई था इसलिए सुल्तानके ख़िलाफ़ ...१९०५ में मुझे गिरफ़्तार कर लिया ...। रिहा होनेपर मैंने मुल्ककी फिरसे ...ीम करनेके लिए 'वतन' के नामसे एक ...ुप बनायी जो ख़िलाफ़ क़ानून क़रार ...ी गयी। मुझे और दूसरे तमाम मुजरिमोंको ...के दूर-दराज़ इलाक़ोंमें भेजनेका हुक्म दिया ...। मैं दमिश्क़ भेजा गया और एक फ़ौजमें ...ान बना दिया गया, जहाँ 'वतन' के ...अन्दाज़पर 'इत्तहाद-व-तरक़्क़ी' के नामसे ...ुफ़िया अंजुमन काम करती थी। मैं ...का मेम्बर बन गया और ये इन्क़िलाबी ...तरक़्क़ी करने लगी।"

और अमानुल्लाके शब्दोंमें :

"१९ मई १९१९ और ३० अगस्त

तारीख़ यक़ीनन एक बदबख़्त
औरतको इजाज़त
देगी कि इस सवालका
जवाब अपने
इल्मके वमूजिब दे। मेरा जवाब
ये है कि 'नहीं'। नेपोलियन
अपनी बीवीकी पूजा
करता था। एक दिन उस
मासूमसे कहने लगा कि तू मेरा
वलीअहद पैदा नहीं कर
सकती
इसलिए तुझे छोड़े देता
हूँ। नेपोलियन बहादुर था,
सफ़ाईसे हक़ीक़त बयान कर दी।
तुहमत नहीं तराशी।

१९२२ के बीच वह तुर्क फ़ौजोंको लेकर दुश्मनके साथ जंग करते रहे और फ़तहपर फ़तह हासिल करते रहे, और आख़िर अगस्त १९२२ तक वह तुर्कीकी ज़मीनको ग़ैर-मुल्की फ़ौजोंसे बिलकुल पाक करनेमें पूरी तरह कामयाब हो गये और क़ौमने एक राय होकर उन्हें तुर्कीका डिक्टेटर बना दिया।"

कहा जाता है कि मुस्तफ़ा अपने बापका एकलौता बेटा था। पर उसकी दो बहनें थीं जो माँके कहनेपर चलती थीं और मुस्तफ़ाकी हिम्मत बँधाती रहती थीं। मुस्तफ़ा कमाल जवान होकर बहुत देर तक ब्याह न कर सके इसलिए कि अभी देश तरह-तरहकी कठिनाइयों-में फँसा था। जब हालात बसमें आ गये तो एक दिन उन्होंने चुपकेसे लतीफ़ासे ब्याह कर लिया। और उस दिन मुस्तफ़ा कमालने अपनी डायरीमें लिखा :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"लतीफ़ा खानम जो हुस्न-व-जमालके साथ इल्म और कमालसे भी आरास्ता थी, मेरी मद्दाहोंमें थी, उसने अपनी दिलचस्पी मुहब्बतका इज़हार किया, और सच पूछिए तो मुझे भी उससे मुहब्बत हो गयी थी। आज हमने उससे निकाह कर लिया। ख़ुदा करे यह शादी हम दोनोंके लिए मुबारक साबित हो।"

अतातुर्ककी यह कामना पूरी न हो सकी। ब्याहका यह बन्धन ज़्यादा देर बँधा न रह सका। लतीफ़ा अतातुर्कपर छा जाना चाहती थी। एक साधारण पतिके लिए यह बात कुछ इतनी अजीब न थी, पर एक सेनापति इसे कब सहन कर पाता। अतातुर्कने उसे जल्द ही तलाक़ दे दिया। इसपर दोनोंने अपनी-अपनी सफ़ाईमें जो कुछ कहा, उसे तुर्की अख़बारोंमें ख़ूब-ख़ूब उछाला गया। लाहौरके अखबार 'ज़मीन्दार'ने भी अपने यहाँ अतातुर्कका वह बयान छापा :

"लतीफ़ा खानमने मुझे बहुत नुक़सान पहुँचाया है। लतीफ़ाकी रविश ऐसी हो गयी थी कि मैं किसी तरह बरदाश्त नहीं कर सकता था। वह मेरे जुम्ला इख़तियारातमें हिस्सा लेना चाहती थी। मेरा प्रोग्राम बदल डालना चाहती थी। उसकी रूहमें रजअत-पसन्दी छुपी हुई थी। क़दामत-पसन्दीका उसके दिलमें बसेरा था। वह तुर्की जमहूरियतकी ताजदार मलिका बनना चाहती थी। उसकी ख़ुद-पसन्दी अपने शौहरकी अज़मतके आगे झुकनेसे भी इनकार करती थी।"

और लतीफ़ाने जवाबमें कहा :

"....मेरा जुर्म ठीक वही है जो ग़रीब जोज़िफ़ाइनका जुर्म था। मेरा गुनाह मेरे शौहरकी नज़रमें यह था कि मैं बाँझ थी, मैं औलाद पैदा न कर सकी। तुर्कीकी आबादीमें इज़ाफ़ा न कर सकी। यह है मेरा असली जुर्म। क्या सचमुच मैं मुजरिम हूँ? हाँ, मुजरिम हूँ! क्योंकि ग़ाज़ी मुझे मुजरिम ठहरा चुका है। तक़दीर बिलकुल बेक़ुसूर है। लतीफ़ा और जोज़िफ़ाइनकी क़िस्मतें एक-जैसी हैं, लेकिन क्या मुस्तफ़ा कमाल और नेपोलियनकी अज़मतें भी एक-जैसी हैं? तारीख़ यक़ीनन एक बदबख़्त औरतको इजाज़त देगी कि इस सवालका जवाब अपने इल्मके बमूजिब दे। मेरा जवाब यह है कि 'नहीं'। नेपोलियन अपनी बीवीकी पूजा करता था। एक दिन उस मासूमसे कहने लगा कि तू मेरा वलीअहद पैदा नहीं कर सकती इसलिए तुझे छोड़े देता हूँ। नेपोलियन बहादुर था, सफ़ाईसे हक़ीक़त बयान कर दी। तुहमत नहीं तराशी।

इसके मुक़ाबिलेमें मुस्तफ़ा कमालका क्या हाल है? वह भी लतीफ़ाकी पूजा किया करता था, लेकिन जब उसे मालूम होता है कि जोज़िफ़ाइनकी तरह लतीफ़ा भी बाँझ है और उसके लिए वलीअहद पैदा नहीं कर सकती तो नेपोलियनकी-सी शुजाअत उससे ज़ाहिर नहीं हुई। बेशक नेपोलियनकी तरह वह भी अपनी बीवीको तलाक़ देता है मगर असली हक़ीक़तके एलानके साथ नहीं बल्कि तरह-तरहकी बेबुनियादी तुहमतोंके साथ, हालांकि अगर वह जुरअतके साथ हक़ीक़तका एलान कर दे तो मैं और मेरे साथ सारी दुनिया उसकी अज़मतके आगे उसी तरह झुक जाती जिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इससे पहले नेपोलियनकी अज़मतके ज़ीज़िफ़ाइन और सारी दुनिया झुक है।

आह! मैं मानती हूँ कि क़िस्मतने मुझे बनाया है। वहीं यह भी जानती हूँ कि को तुर्कीके लिए औलादकी ज़रूरत मगर मेरे बाँझ होनेमें खुद मेरा क्या है....?"

यह प्रश्न अपनी जगह बड़ा महत्त्व रखता र इसका उत्तर कौन दे। लतीफ़ा जीती ज़ी हार चुकी है। मुस्तफ़ा कमालने तरह उसके दिलकी दुनिया बसायी थी तरह आनकी आनमें उजाड़ डाली। पर तकी आग ठण्डी कब होती है। लतीफ़ाके में:

"लेकिन मेरी मुहब्बत सर्द नहीं हुई। भी मैं उनपर उसी तरह मरती हूँ। मुहब्बतको ज़वाल नहीं आ सकता, मेरे में उनके सिवा किसी औरकी गुंजाइश हो सकती। मेरा ईमान है कि आज भी मुझसे वैसी ही मुहब्बत कर रहे हैं जैसी करते थे। मैं अपनी बाक़ी ज़िन्दगी आलमे-ग़म और मातममें गुज़ार दूँगी। उम्र-भर किसी मर्दसे शादी नहीं करूँगी। लिए यह फ़ख्र काफ़ी है कि मैं तुर्कीके नजात-दहिन्दाकी बीवी रह चुकी हूँ। मैं अपने दिल और दिमाग़को तुर्कीकी खुशहालीके लिए वक़्फ़ कर दूँगी, क्योंकि मेरे आशिक़ और माशूक़ने मुझे तुर्कीकी भलाईपर ही क़ुरबान कर डाला है। मैं आख़िर वक़्त तक उनकी नदामतका इन्तज़ार करूँगी। मुझे यक़ीन है कि उनका आग़ोशे-मुहब्बत मेरे लिए खुल जायेगा। मैं जब मरूँगी तो मेरे लबोंपर तुर्की और कमालके सिवा कोई आवाज़ न होगी....।"

तुर्की अख़बार 'वक़्त'का संवाददाता जब अतातुर्ककी सेवामें उनके विचार जाननेके लिए पहुँचा तो अतातुर्क जिसने कभी कहा था कि:

"मुहब्बत एक तिलिस्मी चिराग़ है जो अँधेरेसे रौशनीकी तरफ़ और रौशनीसे अँधेरेकी तरफ़ ले जा सकता है।"

और यह कि:

"औरतको इम्तेहानमें न डालो नहीं तो तुम्हें दुःख होगा।"

आज लतीफ़ाके ये वक्तव्य सुननेके बाद उत्तरमें केवल उनकी आँखोंसे आँसूकी दो बूँदें टपक पड़ीं।

[शेष अगले अंकमें]

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषान्तर :
इन्दुकान्त शुक्ल

कैथरीन केटर :

न्यू ओर्लियंस, लुइसियाना, १९१७—। टैलाडेगा (अलाबामा राज्य) में शिक्षा। तदनन्तर फ़िस्क विश्वविद्यालयके पुस्तकालय-विभागमें। मिशिगन विश्वविद्यालयसे पुस्तकालय-शास्त्रमें डिग्री तथा भाषा एवं साहित्यमें डॉक्टरेट ली। प्रसिद्ध रोज़ेनवाल्ड फ़ेलोशिप मिली। अब लाइब्रेरियन-प्रशिक्षक हैं ओलिवेट कॉलेज, मिशिगनमें।

१-वर्तमान क्षण :

कल की ख़ुशियों और आज के कष्टों को यदि
काल शृंखला में बाँधे हैं यह क्षण, यह स्थल
क्या चिन्ता—यदि कभी न आये उद्धारक कल
दुःखों का परिलक्षित हो पाये न अन्त यदि !

अपमानित होने पर यौवन करे कामना
वृद्धावस्था उसे शरण दे, उसे अभय दे
और बुढ़ापा क्षुब्ध हानि से, भीत अनय से
नित नूतन अवहेलाओं का करे सामना

इसीलिए यह क्षण अमूल्य है मेरे प्रियतम
दूर बहुत है शाश्वत, है सन्दिग्ध, अनिश्चित
कौन देख पायेगा क्या भावीमें संस्थित
ज्यों हम देख रहे संक्षिप्त क्षणोंका अनुक्रम !

०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६ नीग्रो कविताएँ

फ्रेड ए० डकेट :

ब्रुकलिन, न्यूयॉर्क, १९१८—। ब्रुकलिनमें शिक्षा। पत्रकारिता की—ऐमस्टर्डम-के 'न्यूज़' में, न्यूयॉर्कके 'एज' में, तथा पिट्सबर्गके 'कोरियर' में। द्वितीय विश्वयुद्धमें समुद्रपार विशिष्ट सेवासे सम्बद्ध। इनकी कविताएँ 'ट्वाइस ए इयर' तथा 'दिस इज़ आवर वार'में छपीं।

२–सॉनेट

इसकी परिसमाप्ति होने पर कहाँ जायेंगे हम ?
क्या जीवन अभ्यस्त पुराना हमें सकारेगा –
यदि उसकी सीढ़ियाँ-सरणियाँ स्मरण कर सकें हम,
पुष्पाच्छन्न मार्ग क्या हमको पार उतारेगा ?

युद्ध शेष होने पर हमको पहचानेगा कौन ?
सुहृद्-मण्डली औ' सम्बन्धी ? – लेकिन कैसे हम
उन दृश्यों को देख बनेंगे निपट अजनबी मौन
जो स्मृति की धारा में बहते सहसा जायें थम ?

हम जो थे तदर्थ अब हमको कौन करेगा प्यार ?
अब हम जो दीखते, वही हैं : विजित, विषाक्त, विपन्न !
शीघ्र स्निग्धता पूर्वक लेगी क्या फिर हमें पुकार
विगलित स्नेह मानवी ऊष्मा की गोदी सम्पन्न ?

जब यह युद्ध बीत जायेगा कहाँ जायँगे हम ?
हम संगर–सन्तान, शान्ति अब कहाँ पायँगे हम ?

०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैक्सनविल, फ़्लोरिडा, १८७१-१९३८। प्रारम्भिक शिक्षा जैक्सनविलमें; तदनन्तर अटलाण्टा विश्वविद्यालयमें पढ़ा। पब्लिक स्कूलके प्रिन्सिपल, कूटनीतिज्ञ, 'नेशनल असोसिएशन फ़ॉर दि ऐडवान्समेण्ट ऑव कलर्ड पीपुल' के कार्यकारी मन्त्री, फ़िस्क विश्वविद्यालयमें रचनात्मक साहित्यके प्रोफ़ेसर रहकर कवि और व्यक्तिको प्रौढ़ किया। १९०० में भाई रोज़ामण्ड जान्सनके साथ 'लिफ़्ट एव्री वॉयस एण्ड सिंग' लिखा जो अमरीकी नीग्रोका राष्ट्रीय गीत-सा हो गया है। अनेक प्रकाशित कृतियोंमें-से काव्य ये हैं: फ़िफ़्टी इयर्स ऐण्ड अदर पोएम्स, (१९१७); गॉड्स ट्राम्बोंस (१९२७), सेण्ट पीटर रिलेट्स् ऐन इन्सिडेण्ट ऑव दि रिसरेक्शन डे (१९३०), तथा 'बुक ऑफ़ अमेरिकन नीग्रो पोएट्री (प्रथम प्रकाश १९२२)। इन्होंने कई संगीत-प्रदर्शनोंके लिए गीत लिखे और लोकप्रिय गायन रचे। १९३८में कार-दुर्घटनामें मृत्युके समय अपनी पीढ़ीके नीग्रो अमरीकियोंके अग्रगण्योंमें थे।

३–सॉनेट : मेरा नगर :

मृत्यु शर्वरी के गह्वर में जब मैं चलूँ शयन को
जब अज्ञात तिमिर की ड्योढ़ी चलूँ पार करने
व्यथा लगेगी कौन वक्ष मेरा विदीर्ण करने
जब यह लोक लगेगा धुँधला मेरे क्षीण नयन को

क्या मैं चिन्तित ये आँखें तरुगण न देख पायेंगी
सुरभित सुमन, गीत में डूबा खगकुल पुलकाकुल,
ये रजतोज्ज्वल सरिताएँ, या शान्त धेनुमण्डल?
मुझको ये बातें, ये यादें व्यथित न कर पायेंगी।

हाय मनहटन का वह अंचल, सुरभि-समीरण-स्वन
उसकी जनसंकुलता, आकुल पौरुष, पुलक अधीर
जो उसके अंशों में उठता, गोपन सम्मोहन,
ज्योतित मीनारों वाले गृह, मार्ग, विपन्न कुटीर।

हा ईश्वर! यह बात निष्करुण कितनी, दाहक घोर-
मृत होऊँ, देखूँ न कभी अपनी नगरी का छोर!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जॉर्जिया डगलस जान्सन

ऐटलाण्टा, जॉर्जिया, १८८६—। अटलाण्टा तथा ओहायोकी ओबर्लिन वेधशालामें शिक्षा। संगीतज्ञ होना चाहा, पथ रुद्ध मिला। अध्यापिका बनीं। प्रेज़िडेण्ट विलियम होवर्ड टैफ़्टके अधीन जब इनके पति 'रिकार्डर ऑव डीड्स' हुए, तब वाशिंग्टन (डी० सी०) आयीं। तदनन्तर राजधानीमें राजकीय नौकरी। छपे कविता संग्रह : दि हार्ट ऑव ए वूमन (१९१८) ; ब्रांज़ (१९२२); ऐन ऑटम लव साइकिल (१९२८)।

४. अन्तराल

मुझे एक स्मृति समझो या जो सपना बीत गया
या जो सुमन लुटाकर जीवन-सौरभ रीत गया
भावुकता सो गयी समय के संग न जग पायी
अश्रुमयी प्रार्थना हुई फलहीन, न लग पायी

एक रागिनी हूँ जो क्षण भर पथ पर आयी घिर
या अवशेष अग्नि का हूँ जो हुआ पात्र में स्थिर
क्योंकि प्रेम प्रतिवाद बुद्धि का, प्रवहमान दुर्धर्ष,
बन्दी उर के भीतर बाहर यही एक निष्कर्ष

०

ब्राउण्टी कलेन

न्यूयार्क, न्यू० या० १९०३-४६। पब्लिक स्कूलोंमें शिक्षा। हाई स्कूलसे कविख्याति। न्यूयार्क यूनिवर्सिटीमें छात्रकालमें विटरबिनर काव्य पुरस्कार पाया। १९२६ में हारवर्ड यूनि० से एम्० ए०। न्यूयार्कके पब्लिक स्कूलोंमें आमरण पढ़ाया। २२ की उम्रमें प्रथम काव्यकृति छपी 'कलर' (१९२५); इसपर हार्मन गोल्ड अवार्ड, तथा आशंसा मिली। १९२७ में 'दि बैलड ऑव दि ब्राउन गर्ल तथा कॉपर सन'; १९२९ में 'दि ब्लैक क्राइस्ट'; १९३२ में उपन्यास 'वन वे टु हेवेन'; १९३५ में 'दि मीडिया एण्ड अदर पोएम्स'; १९४० में 'दि लॉस्ट ज़ू'; १९४२ में 'नाइन लाइव्ज़ ऐण्ड हाऊ आई लॉस्ट देम'; १९४७ में मृत्यु अनन्तर, 'आन दीज़ आई स्टैण्ड'। १९२७ में 'कैरोलिंग डस्क' का सम्पादन किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. एक परिचित महिला के लिए

वह देखती स्वर्ग सम्बन्धी स्वप्न सुनहले :
उसका वर्ग देर तक सोता खर्राटे भर।
कृष्णवर्ण, कृश देवदूत जगते हैं पहले
भृत्यकर्म के लिए नियोजित, होकर तत्पर।

०

डोनैल्ड जेफ़्रे हेज़

रैले, नॉर्थ कैरोलिना, १९०४—। हाई स्कूल तक शिक्षा। संगीतमें रुचि, संगीत तथा निर्देशनका अध्ययन विशिष्ट अध्यापकोंके अधीन। गीतमण्डलोंके सदस्यकी हैसियतसे '२०, '३० में ब्रॉडवेके कई प्रदर्शनोंमें उतरे। कई कविताएँ छपीं : 'हार्पर्स बाज़ार', 'गुड हाउसकीपिंग' तथा 'दिस वीक' पत्रिकाओंमें। संग्रहोंमें भी। न्यू जर्सी स्टेट एम्प्लायमेण्ट सर्विसके अधीन मानसिक-शारीरिक हीनतापर सलाहकार नियुक्त हैं।

६. परिकल्पना :

मैं हूँ दुखी सोचकर तुम होगी एकाकी
मेरे जाने पर जागोगी दीपशिखा सी
साँस तुम्हारी आहत होगी अन्धकार से
मन होगा भयभीत मृत्यु के अनाचार से

यह निश्चित है तुमको भाराक्रान्त करेगी
एक विचित्र रिक्तता तुम्हें अशान्त करेगी
अब ऊषा पहले सी हँसती नहीं उठेगी
उसके मलिन धुएँ से नभ की साँस घुटेगी

स्नेहमयी दीवालों पर जायेंगे पाये
चलते अशुभ अनेक भयंकर काले साये
दुख है मुझको पास तुम्हारे मैं न रहूँगा
शब्द सान्त्वना और शक्ति के मैं न कहूँगा

मेरी दृष्टि तुम्हारी निर्बलता यों धोवे
अशिव परिस्थितियों पर विजय तुम्हारी होवे
धीरे से कुछ कहूँ तुम्हें गुदगुदी सी लगे
सुनकर जिसे हमारे सँग ही कक्ष भी जगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ अस्पष्ट, सरल, संक्षिप्त शब्द-सा था वह
जिससे जाता मरण नरक का भय सत्वर ढह
मेरे अधर कपोल तुम्हारे छूते होते
कुछ क्षण बैठ बात हम दोनों करते होते

तुम्हें दुखद वह दृश्य सहन के योग्य बनाने
उस सद्यः मृत के समीप जागरण मनाने
हाय सफल होता मेरा कोई कौशल वर
अपनी प्रथम रात्रि को पाता मैं जीवित कर

०

व० बिंगा डिस्माण्ड

रिचमण्ड, वर्जीनिया, १८९१ – । पब्लिक स्कूलों, होवर्ड यूनिवर्सिटी अकेडेमी, शिकागो विश्वविद्यालयमें पढ़ा। रश मेडिकल कॉलेजमें प्रथम विश्वयुद्धके पूर्व, तदनन्तर कायचिकित्सामें वैशिष्ट्य। हार्लेम अस्पताल, न्यूयार्क नगरमें,इसी विभागके निर्देशक। १९४३ में छपी काव्यकृतिका नाम : 'वी हू बुड डाई'।

७. सुबह

मुझे फ़ोन मिला आज होते ही भोर
सुन पड़ा : आइए अकेले चितचोर।
मैंने बात मान ली।

एक घण्टा आया, थमा, और फिर निकल गया
बोलीं वह : गायन सुनाएँ मुझे कृपया
मैंने छेड़ तान दी।

साँझ जब छायाएँ लम्बी होने लगीं,
'जाइए अब', कह वह कम्पित होने लगीं!
मैंने चादर तान दी!

०

ज० वर्ड सिल्वेरा

जैक्सनविल, फ़्लोरिडा १९०६-३७। ओरेंज हाई स्कूलसे १९२४ में पढ़कर निकले, फिर पेंसिल वानियाकी लिंकन यूनिवर्सिटीमें पढ़ने गये। वहाँ खेलकूदमें भाग लिया,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा कविताएँ लिखीं, जिनमें-से कुछ १९३० में प्रकाशित 'फ़ोर लिंकन पोएट्स' नामक पुस्तिकामें समाविष्ट हैं। मृत्यु अल्पवयमें हुई, पत्रिकाओंमें, संग्रहोंमें कविताएँ छपीं।

८. शिशु की मृत्यु पर :

तुम आये अरुणोदय जैसे
हुआ नहीं रव-रोर
तुम्हारा जन्म करे जो सूचित जग को,
केवल श्यामा ने गाया था।
और चले जब काले साये
अवधि तुम्हारी बीत गयी थी,
और तुम्हारी उज्ज्वल चादर
छोटी-सी ही बुनी गयी थी!
इस विधि तम तुम पर छाया था!

०

वेस्ली कटराइट

ब्रंसविक, जॉर्जिया, १९१० –। न्यूयार्क नगरमें, पैसिफ़िक यूनियन कॉलेज, ऐंग्विन, कैलिफ़ोर्नियामें पढ़ा। वर्षों न्यूयार्क स्टेट सिविल सर्विसमें रहे। कैस काउण्टी, मिशिगनकी एक फ़ार्मपर रहते हैं।

९. वन का मन :

दूर-दूर तक हम वन के भीतर जायेंगे
लिये हाथ में हाथ
सारा वन आच्छादित कर ले हम दोनों को
बाह्य जगत् भी हम बिसरा दें,
हम दोनों मिलकर खोजें वह गोपन नगरी
युगों पूर्व जो लुप्त हो गयी
वन विराट के अन्तरतम में।

■■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

य क्ष गा न

...शौरि रेड्डा

...गान' आन्ध्रका एक प्राचीन ...गीति नाट्य है। इसमें ...त्य, संगीत, नृत्य, अभिनय ...न कलाओंका अच्छा ...हुआ है। उन दिनोंमें ...के रूपक, उपरूपक आदि ...सभ्य समाजके मनोरंजनके ...न बने हुए थे। सर्व साधा-...णका मनोरंजन यक्षगान-...सी लोकगीति नाट्य ही ...करते थे।

...यों तो मानवकी नाटक-...की तृष्णा एवं रूपक-...तिकी अभिलाषा भिन्न वर्गों-...भिन्न रूपोंमें अभिव्यक्त हुई ...आन्ध्र देशका प्रथम नाट्य-...का रूप 'कुरवंजि' माना ...सकता है। 'कुरव' एक ...की जाति है, 'अंजि' का ...क्रम होता है। इस प्रकार ...जि—'कुरव + अंजि' दो ...के संयोगसे बना है—अर्थात् ...नामक एक जंगली जाति-

का (नृत्यमुद्रा समन्वित) क़दम। उनका प्रारम्भिक नाट्य-रूप कुरवंजि कहलाया। कुरव जातिके लोग दक्षिणमें—मुख्यतः आन्ध्रमें तिरुपति, श्रीशैलम् इत्यादि पुण्य तीर्थोंमें यात्रियोंके विनोदार्थ नृत्य किया करते थे। कुरवंजि आन्ध्रमें ही नहीं अपितु समस्त दक्षिण प्रदेशमें प्रचलित है। आन्ध्रमें ज्ञान कुरवंजि, जीव कुरवंजि तथा सत्यभामा कुरवंजि नामसे उसके तीन रूप प्रसिद्ध थे। किन्तु आज वे सब केवल नाम मात्रावशेष हैं।

कुरवंजिके अनुकरणपर यक्षगानोंका निर्माण हुआ है। जक्कुलु नामक जातिने जिस देशी संगीत नाट्यका जन्म दिया, वही जक्कुल पाट याने 'यक्षगान' नामसे विख्यात हुआ। यक्ष जातिसे सम्बन्धित गीत या गान होनेके कारण कालान्तरमें यक्षगान कहलाये। इसका देशी रूप ही जक्कुल-पाट है। यक्षगान 'नाटक' नामसे भी व्यवहृत है।

प्रप्रथम पालकुरिकि सोमनाथने अपने ग्रन्थोंमें समकालीन तथा प्राचीन अनेक देशी नृत्य, संगीत एवं साहित्यकी प्रक्रियाओंका उल्लेख किया है। तदुपरान्त कविसार्वभौम श्रीनाथने (ई० सन् १४३० के लगभग) अपने काव्य 'भीम खण्ड' में द्राक्षाराम पुण्यतीर्थकी प्रस्तुति करते हुए लिखा है—

कीर्तिंतुं रेंद्दानि कीर्तिं गंधर्वुलु
गांधर्वमुन यक्षगान सरणि

अर्थात् : "गन्धर्व यक्षगानकी शैलीमें संगीतमें जिसका यश गाते हैं।" यहाँपर यक्षगान सरणिका जो प्रयोग हुआ है, इससे अभिप्राय यही है कि गन्धर्वोंने यक्षगान पद्धति, रीति अथवा शैलीमें गान किया था। गानकलाकी निपुणताके लिए गन्धर्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसिद्ध हैं ही। वे गानकलाकी विविध रीतियों-से भलीभाँति परिचित थे। उस सन्दर्भमें उन लोगोंने यक्षगानकी रीतिपर गान किया था।

जक्कुलु नामक जिस जातिने यक्षगानको अपनाया, उसे प्रचलित एवं लोकप्रिय बनाया, वास्तवमें उनकी जाति कोई भिन्न रही होगी। परन्तु यक्षगानके अभिनयको उस जातिने अपना पेशा बनाया। यक्ष-गानको पेशा बनानेके कारण उनकी असली जातिका नाम लोप होता गया और वे यक्ष कहलाये गये होंगे। यक्षसे 'जक्कु' हो गये। तदुपरान्त तेलुगुका 'लु' बहुवचन रूप जुड़नेके कारण 'जक्कुलु' हुए। इस प्रकार हम देखते हैं कि पेशेगत शब्द क्रमशः जातिवाचकके रूपमें परिणत हुआ होगा।

'जक्कुलु' जातिके लोग आन्ध्र देशके गुण्टूर, गोदावरी आदि ज़िलोंमें ही नहीं अपितु रायअसीमामें भी फैले हुए थे। आज भी अनन्तपुरम् ज़िलेमें जक्कुल थेरुवु (जक्कोंका तालाब) नामसे एक बड़ा गाँव है, इस समय वह मद्रास और बम्बईके रास्तेमें एक रेलवे स्टेशन भी है।

१५वीं शतीमें विरचित 'क्रीडाभिराममु'में 'जक्कुल पुरन्ध्रि' नामक गान-कलाकी बड़ी प्रस्तुति हुई है। उसमें यक्ष-कन्याओं (जक्कु युवतियों) का वर्णन भी हुआ है। उसी शतीके उत्तरार्द्धमें श्री चेन्नशौरि-द्वारा रचित 'सौरभ चरित' जक्कुजातिके संगीत रूप कथाख्यान पद्धतिमें प्रस्तुत हुआ है। 'जक्कुल पुरन्ध्रि' यक्षगानका प्रारम्भिक रूप है। इस नृत्य-विशेषके अनुरूप वेष धारण करके, नेपथ्य संगीत एवं वाद्यविशेषोंकी सहायतासे गान करते तथा गीतके अनुरूप अभिनय करते और कथा सुनाया करते थे। यह सब क्रिया-कलाप एक ही पात्र-द्वारा सम्पन्न होता था। विभिन्न व्यक्तियों-द्वारा भिन्न पात्र-धारण करनेकी दशा तक उस समयकी कला पहुँची न थी।

१७वीं शताब्दीमें रचित 'तंजापुरान-दान नाटक' का प्रदर्शन जक्कुल रंगसानिकी सरायमें सम्पन्न हुआ था। इस कृति-द्वारा विदित होता है कि जक्कु जातिके लोग गीत एवं अभिनय-कलामें प्रवीण थे।

स्वर्गीय सुरवरम प्रताप रेड्डीने लिखा है—"यक्षगानोंका नामकरण यक्ष (जक्कुलु) जाति के आधारपर ही किया गया है। यक्ष अक्षस प्रान्त, या यक्षी नामक मंगोल जातिके अथवा युक्षैन् प्रदेशके लोग होंगे। यह सम्बन्ध कुछ दूरका अवश्य प्रतीत होता है। यक्ष, और गन्धर्व गानविद्यामें प्रवीण थे। अतः हमारे पूर्वजोंने नृत्ययुक्त गानका नामकरण 'यक्षगान' किया होगा।

श्रीखण्डबल्लि लक्ष्मीरंजनम्ने यक्षगान प्रकरणमें लिखा है—यक्षगान संगीतप्रधान नाटक है। तेलुगुका प्राचीनतम नाटक-रूप ही यक्षगान है। यह 'यक्षगान नाटक' तथा 'यक्षगान प्रबन्ध' नामसे भी व्यवहृत है। यक्षगानोंमें नाटकके लक्षण वार्तालाप तथा प्रबन्धात्मक वर्णनोंका भी सुन्दर समन्वय हुआ है। अतः यक्षगान इन दोनों नामोंसे प्रचलित हुए हैं।

आज यक्षगान देशी शैलीका नाटक माना जाता है। संस्कृतके रूपक एवं उपरूपकोंके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...से भिन्न होनेके कारण यह लोकनाट्य ...ाता है। आज यक्षगान भी नाटककी ...पर अच्छा विकास कर चुका है। ...न यक्षगानोंमें संस्कृतके रूपकोंकी भाँति ...ी-प्रस्तावना, अंक-विभाग, सन्धि-नियम ...दि दिखाई नहीं देते। इनमें रगड विका- (तालप्रधान), द्विपद तथा एललु, ...दिक आदि पद थे। ये सब देशी ...की प्रक्रियाएँ हैं।

प्राचीन यक्षगानोंमें गद्यभाग कम था। ...त्र कथा-संविधानके अनुरूप गीत-भागोंको ...वाले गद्यभाग मात्र थे।

...क्षगानोंके प्रदर्शनके समय प्रारम्भमें ...ताकी प्रार्थना, गणेशकी स्तुति होती। ...तर प्राचीन कवियोंका स्मरण, कृतिपतिका ...कृतिकर्ताका परिचय होता। तत्पश्चात् ...क्षगानका नामोल्लेख करके सूत्रधार ...का परिचय देता, कथा-सन्धियोंका परिचय ...तार देता और नटी गीत गाते-गाते अभि- करती।

कुरवंजि और यक्षगानोंमें अनेक प्रकारकी ...ताएँ हैं। कुरवंजिमें जहाँ दो-तीन-पात्र ...है वहाँ यक्षगानमें अनेक पात्र होते हैं। ...-सूत्रको मिलानेके लिए बीच-बीचमें यक्ष- ...में गद्यका प्रयोग किया जाता है। ऐसे ...भागका वाचन सूत्रधार करता है। पात्रके ...के समय नाटककार उसके वेषधारणका ...न करता है। वर्णनके समाप्त होते ही ...प्रवेश करके अपने अभिनयका प्रदर्शन ...हुए गीत गाते हैं। नाटककारके परिचय- ...तथा वर्णन जिन यक्षगानोंमें कम होते हैं, वे नाटकीयताके अधिक निकट होते हैं। जिनमें वर्णनका अंश अधिक होता है, वे प्रबन्ध काव्य-जैसे होते हैं।

यक्षगानोंमें देशी छन्दोंके साथ ताल और लयसे युक्त गीत भी होते हैं। ये गीत अधिक-तर लोकगीतोंकी परम्पराके होते हैं। जिनमें माधुर्य गुणकी प्रधानता होती है। अत्यन्त श्रव्य होनेके साथ भावपूर्ण होते हैं। इसी श्रेणीके वीथी नाटक आन्ध्र देशमें बहुत प्राचीन समयसे ही प्रचलित हैं जो बादको विथी भाग-वत नामसे विख्यात भी हुए हैं। उनमें भक्ति और शृंगारकी प्रमुखता होती है। इस परम्परा-के देशी रूपकोंमें भागवतकी कथा मुख्य है। भागवत कथाके प्रदर्शनमें कूचिपूडि भागवतों (भागवतका अभिनय करनेवालों) को विशेष आदर प्राप्त हुआ है। उन कथाओंमें पारि-जातापहरण पर्याप्त जनप्रिय हुआ है। कूचिपूडि भागवतोंमें शास्त्रीय नृत्य प्रधान है। यही कारण है कि वे भरत नाट्यके उत्तम नमूने माने जाते हैं। इनकी विशेषता यह है कि नारी पात्रोंका वेषधारण पुरुष ही करते हैं।

यक्षगानोंकी कथावस्तु मुख्यतः पौराणिक होती है। आधुनिक युगमें सामाजिक एवं राजनैतिक घटनाओंको इतिवृत्त बनानेका प्रयत्न हुआ है, किन्तु नब्बे प्रतिशत यक्षगानों-की कथावस्तु पौराणिक ही है। पुराणप्रसिद्ध कथाओंको ग्रहण कर यक्षगानोंकी रचना हुई है। रामायण, भागवत तथा महाभारतकी कथाओंके साथ नल, हरिश्चन्द्र इत्यादि पुराण-पुरुषोंकी कथाएँ ही यक्षगानोंका आधार बनी हुई हैं। किन्तु युगका प्रभाव यक्षगानोंपर भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिलक्षित होता है। [illegible] वीरप्पाने 'क्रोधापुरि रैतुविजयमु' (क्रोधापुरि-के कृषकोंकी विजय) नामक यक्षगान लिखा है जिसमें भारतमाताकी प्रार्थना, गान्धीजीकी स्तुति इत्यादि भी देखी जा सकती हैं। इसकी कथावस्तु सामाजिक समस्याओंसे परिवेष्टित राजनैतिक समस्याएँ हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि यक्षगान भी युगके अनुरूप अपने स्वरूप-को परिवर्तित करते जनताके मनोरंजनका साधन बना हुआ है।

प्राचीन समयमें आन्ध्रमें रंगमंचका विकास नहीं हुआ था। आन्ध्र देशमें जो भी लोक-नाट्य थे वे सब चलते-फिरते प्रदर्शन मात्र थे। लोकनाट्यके अभिनेता एक जगह कहीं स्थिर रूपसे रहते न थे, उन्हें गाँव-गाँव घूम-घूमकर अपने नाटकोंका प्रदर्शन करना पड़ता था। रंगमंचका विकास बहुत समय तक हो नहीं पाया। वे जिस गाँवमें पहुँचते, उस गाँव-के मुहानेपर,—चौपाल अथवा मन्दिरके सामने तत्काल ही पण्डाल डालते। उस पण्डालमें ही यक्षगानोंका प्रदर्शन होता। पण्डालके सामने और दायें-बायें भी जहाँतक दृष्टि जाती है, खुला प्रेक्षागार ही होता।

रंगमंचकी साधन-सामग्री क्या थी, यों वे प्रदर्शनकर्ता आवश्यक सामग्री अपने साथ ले जाते थे, लेकिन वैसे वे जिस किसी भी गाँवमें पहुँच जाते, वहीं उन्हें वह सामग्री उपलब्ध होती। मंच अथवा पण्डालके सामने एक सफ़ेद परदा लटकाया जाता, यह परदा कोई बड़ा दुपट्टा होता या दो-तीन खादीके दुपट्टोंको जोड़कर बड़ा तथा मंचके अनुरूप बना लिया जाता। परदेके दोनों तरफ़ दो मशाल रख दिये जाते जिनकी रोशनीमें प्रदर्शन होता। क्रमशः मशालोंकी जगह पेट्रोमैक्स लालटेनोंने ले ली। परदेके पीछे प्रबन्धकर्ता या संचालक, गानेमें साथ देनेवाले, ढोल या मृदंग तथा जन्त्रना देनेवाले होते हैं। परदेके सामने सूत्रधार होता है, वही प्रदर्शनका प्रवर्तक होता है।

सूत्रधार पात्रोंके प्रवेशकी सूचना देता है, पात्रोंसे वार्तालाप कराता है, नेपथ्यमें गानेवाले गायकोंको टेक पहुँचा देता है, अभिनयके अनुरूप ताल देता है, सन्धि-गद्यका वाचन करता और समय-समयपर हास्य-प्रसंग करता है।

यक्षगान भाव, राग, ताल इत्यादिके साथ नृत्य, गीत और अभिनयके सुन्दर समन्वयके रूप हैं। समीक्षकोंका कथन है कि यक्षगान नृत्य नाट्य सम्प्रदायके रूपक हैं। इनमें नृत्य मुख्यतः तीन रूपोंमें प्रस्फुटित हुआ है। गीतके साथ नृत्य तो होता ही है, साथ ही ताल, गमक आदिके अनुरूप दूसरी पद्धति-का नृत्य होता है। तृतीय दशामें उद्धत नृत्य अथवा ताण्डव नृत्य होता है। नाट्यशास्त्र-प्रणेता भरत मुनि-द्वारा निर्देशित प्राचीन ताण्डव नृत्यके लक्षणोंका यक्षगानोंमें अनुकरण हुआ है। प्राचीन यक्षगानोंके आधारपर उनका पुनरुद्धार करनेके इच्छुक नाट्य-शास्त्रियोंके लिए आवश्यक लोक-नृत्यकी सामग्री उनमें उपलब्ध होगी। इस कार्यके लिए उपयुक्त यक्षगान प्राच्य लिखित पुस्तक भाण्डागारमें तालपत्रों तथा लिखित प्रतियोंमें उपलब्ध हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उषाचरित्र, उषापरिणय, कालियु- आदि अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो हैं।

कुछ विद्वानोंका विचार है कि अबतक यक्षगानोंमें ओबय मन्त्री कृत 'गरुडा- अत्यन्त प्राचीन है। कतिपय समीक्षकों- विश्वास है कि कन्दुकूरि रुद्रय-द्वारा 'सुग्रीव विजयम्' उपलब्ध यक्षगानोंमें तम है। सुग्रीव विजयके कर्ता कृष्णदेव समकालीन माने जाते हैं।

सुग्रीव विजयकी कथावस्तु रामायणसे है। वीर हनुमानका राम-लक्ष्मणके प्रारम्भ होकर बालि-वध तथा सुग्रीव- अभिषेकके साथ समाप्त होती है। इसमें सुग्रीवका युद्ध, बालि-वध, ताराका धपर दुखी होना और रामचन्द्रकी करुणा करना अत्यन्त मनोहर बन पड़ा है। और करुणरसोंके पोषणमें कविको धारण सफलता प्राप्त हुई है।

तेलुगु साहित्यमें कृष्णदेवरायका युग स्वर्ण युग' नामसे विख्यात है, किन्तु फिर इस युगमें यक्षगानोंके प्रति आदरका भाव इतिहास इस बातका साक्षी है कि कृष्ण- रायकी नाट्यशालामें यक्षगानोंका प्रदर्शन होता था। बताया जाता है कि कृष्णदेवराय- ने 'मरीची परिणय' नामक यक्षगान- का प्रणयन किया था। शिलालेखों-द्वारा इस बातकी पुष्टि होती है कि कृष्णदेवरायकी नाट्य- शालामें 'तालुकोंड' नामक नाटकका प्रदर्शन होता था और उस युगमें नागय्या नामक नट अपने अभिनयके लिए बहुत ही प्रसिद्ध था।

गराज भक्तशिरोमणि तो थे ही, साथ ही संगीतसार्वभौम थे। 'प्रह्लाद चरित्र'- में भक्तिकी परवशता तथा ब्रह्मानन्द-साक्षा- त्कार देखते ही बनते हैं। इष्टदेवताकी स्तुति- से नाटकका शुभारम्भ करके पूर्व कविकी स्तुतिके बदले प्राचीन भक्त तुलसीदास, रामदास, नामदेव, ज्ञानदेव, तुकाराम, जयदेव, श्री नारायण तीर्थ इत्यादि भक्तोंका स्मरण किया है। इसमें ज्ञान, वैराग्य तथा भक्तिका गंगा-जमुनी संगम हुआ है। यह कृति श्री रामचन्द्रको समर्पित है। प्रस्तावनाके पश्चात् दौवारिक तथा सूत्रधारका सम्भाषण होता है। नाटकका उल्लेख कर प्रह्लादको नाग- पाशमें बाँधकर समुद्रमें फेंकनेके वृत्तान्तसे प्रारम्भ करते हैं। अन्तमें हरिका साक्षात्कार कराते हैं।

नौकाभंग अथवा 'नौकाविजयम्' भक्ति तथा शृंगारका समन्वित रूप है। गोपिकाएँ बालकृष्णके साथ यमुना नदीमें नौका-विहारके लिए चल पड़ती हैं। सौन्दर्य- गर्विता गोपिकाओंका गर्व भंग करते हैं बाल- कृष्ण। नौकामें पानी आता है, उन रन्ध्रोंको पहले चोलियों तथा बादको साड़ियों-द्वारा भरनेका गोपाल गोपिकाओंको आदेश देता है। अन्तमें गोपिकाएँ अपनी देहका अभिमान त्याग प्राणोंकी रक्षाके लिए वैसा ही करती हैं। इस प्रकार भवसागरके तारणहार कृष्ण अपनी लीलाका परिचय देते हैं। इस श्रेणीकी रचनाओंमें 'लेपाक्षिरामायणमु' अत्यन्त उल्लेखनीय है। इसके प्रारम्भमें आराध्यकी प्रार्थना, गुरु-वन्दना, पूर्व कवि-स्तुति, वंश-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्णन है। यह पूर्णतः दृश्य-प्रबन्ध है। प्रदर्शन की दृष्टिसे अन्य यक्षगानोंकी अपेक्षा यह अधिक सफल रहा है।

इस परम्परामें कवि वेंकटदासु कृत 'धेनुकोंड विराट पर्व नाटक' अत्युत्तम है। 'रामदास' भी इसी श्रेणीका एक उत्तम यक्षगान है। इनके अतिरिक्त अन्य लोकप्रिय यक्षगानोंमें 'किरातार्जुनीयमु', 'गंगा गौरी विलासम्', 'एरुकलवेसंकथ', 'त्रिपुरसंहारम्', 'दारुवन क्रीड', 'मृत्युंजय विलासम्', 'शिवपारिजातम्', 'गोपाल विलासम्', 'रंगपुरि पारिजात नाटकम्', 'तारा शशांकम्', 'सीता कल्याणम्', 'सुन्दरकाण्ड नाटकम्' तथा कंकटि पापराजु कृत 'विष्णुमाया विलासम्' सुप्रसिद्ध हैं।

तंजाऊरके नायक राजाओंके समयमें यक्षगान नाटक अथवा दृश्य-प्रबन्ध नामसे भी व्यवहृत होने लगे। क्रमशः यक्षगानोंमें टेकका स्थान राग लेने लगे। कविताका स्थान पद या गीत लेने लगे। कविताकी अपेक्षा गद्य, विषय-क्रमको जोड़नेवाले गद्यके स्थान पात्रोंका परस्पर सम्भाषण प्रधान माना गया। उस समयके यक्षगानोंमें नायक राजाओंके विवाह, शृंगार आदिके साथ आस्थान या दरबारका वैभव, उनके राज्यका प्रजा-जीवन, नगरके राजमार्गपर जुलूसमें जानेवाले नायक अथवा राजाको देख नायिकाका मोहित हो जाना, विरह-वर्णन आदिकी प्रचुरता होने लगी।

महाराष्ट्रके राजाओंने भी तेलुगुके यक्षगानोंके विकासमें अच्छा योग दिया है। शहाजी ने (ई० १६८४-१७१२) ने छह-सात उत्तम यक्षगानोंकी रचना की है, यों तो उनकी संख्या तीस तक बतायी जाती है। इस युगमें कथाका सारांश द्विपद छन्दमें बतला दिया जाता था, तदनन्तर गणेशकी स्तुति, कथा-सन्धान, सूत्रधारके प्रसंग, विदूषक इत्यादिकी प्रधानता रही। इस प्रकारकी रचनाओंमें दर्भागिरिराजुका स्थान उल्लेखनीय है। इस युगमें कुरवंजियोंका पुनः यक्षगानोंमें प्रवेश हुआ। कुरवंजि पात्रको प्रधानता दी गयी। मैसूरके कण्ठीरव राजाने 'आन्ध्रकोरवंजि' नामक एक रूपककी रचना की। त्यागराज आदिकी श्रेणीके मेलत्तूरु वेंकट्राम शास्त्रीने जो रचनाएँ कीं वे 'मेलत्तूरु भागवतमेल नाटक' नामसे विख्यात हैं।

तेलंगानेमें १८वीं शतीमें ही यक्षगानोंकी रचना प्रारम्भ हुई और १०० के क़रीब यक्षगान उस प्रदेशमें रचे गये। वहाँपर यक्षगान पर्याप्त लोकप्रिय भी हुए। १७८० में शेषाचल कवि कृत 'धर्मपुरि रामायण', १८३४ में श्री मुद्दय कवि-द्वारा रचित 'मंथेन रामायण' काफ़ी प्रसिद्ध हैं। वहाँके अन्य नाटककारोंमें गोवर्धनं नरसिंहाचार्युलु, पट्टें पापकवि, शेषभट्टरु कृष्णमाचार्युलु, आदिके नाम आदरके साथ लिये जा सकते हैं।

आन्ध्र विश्वविद्यालयने यक्षगानोंके पुनरुद्धारका बीड़ा उठाया। अबतक पाँच जिल्द प्रकाशित भी हो चुके हैं। कुल २५ जिल्द प्रकाशित करनेकी इनकी योजना है। अतः हम विश्वास कर सकते हैं कि सम्पूर्ण यक्षगानोंके प्रकाशनके साथ तेलुगु वाङ्मयकी यह विधा समृद्ध हो तेलुगु भारतीके लिए अलंकार-प्राय होगी। ■■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

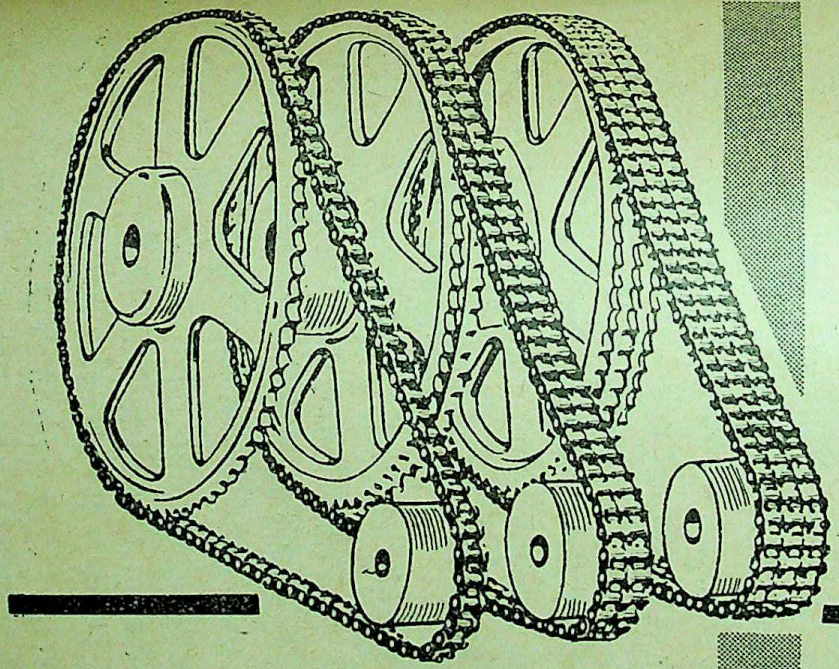

Transmission Steel Roller

CHAINS & SPROCKETS

B. P. TRADING CO.

71/A, NETAJI SUBHAS ROAD, (Room D/S 8D)
CALCUTTA-I.

Phone : 22-5247
Gram : CHAINPULLY
G.P.O. BOX No. 809

M.B/65

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैलाश वाजपेयी
श्रीकान्त जोशी
हरीश भादानी
श्रीहर्ष
किरण जैन

१– मृत्यु लेख :

तुम्हें यह व्यवस्था
अगर कभी वक्त दे
तो भी मत सोचना
उसके बारे में मत सोचना
इस हताश पीढ़ी का खण्ड जब आये
उस पर अफ़सोस नहीं करना—आँख मूँद लेना
उसके बारे में मत सोचना।
यह उसका अपने ही हाथों से
माथे पर कील ठोंक लेना
झाँककर दराज से
द्वार खटखटाते ऐश्वर्य पर
ख़ून थूक देना
यह सब अकारण था।
उसको वह भाषा नहीं मिली
कि तुमको तुम्हारा ही नरक दिखा देता
मन की कोरी दीवार पर
कटे-पिटे युग की रील घुमा देता।
फिर भी इस ढेर विसंगतियों से भरे आसपास को
दे सकता था जो भी अर्थ वह
दिया उसने!
वक्त के मटमैले झाग को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्तित्व-बोध : ५ कविताएँ

किया उसने साफ़ जितना कर सकता था

दुख नहीं इसी बीच
यदि स्वयं वह निरर्थ हो गया
औरों का नरक उसमें सो गया।

अवश्य कहीं कोई
कमी थी उसमें
वरना क्या पड़ी थी कि सबको पचाती भस्म करती हुई
इस बड़ी लम्बी आँत-सी नगरी को
वह प्यार करता ?
धड़कन से चूसकर औरों का ज़हर—चीख़ता-चिल्लाता
अपने पर
सत्ता पर
ईश्वर पर—प्रहार करता।
लेकिन जिस तरह सच बोलकर
लड़ा नहीं जा सकता रोग से
या जिस तरह सड़े घाव पर असर नहीं होता किसी श्लोक का
व्यर्थ वह—राख के स्तूप में
रक्त की बूंद खोजता रहा
तब जब कि लोग जन-संख्या बढ़ाने में व्यस्त थे
वह केवल जीवन का अर्थ सोचता रहा।
ओ तमाम श्रेष्ठ और सम्भ्रान्त लोगो !
तुम कह सकते हो
करने के लिए बहुत काम थे
उसी से नहीं हुए।
वरना वह भी
वस्त्रों की तरह स्त्रियाँ बदल सकता था
एक बार ढलकर टकसाल में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

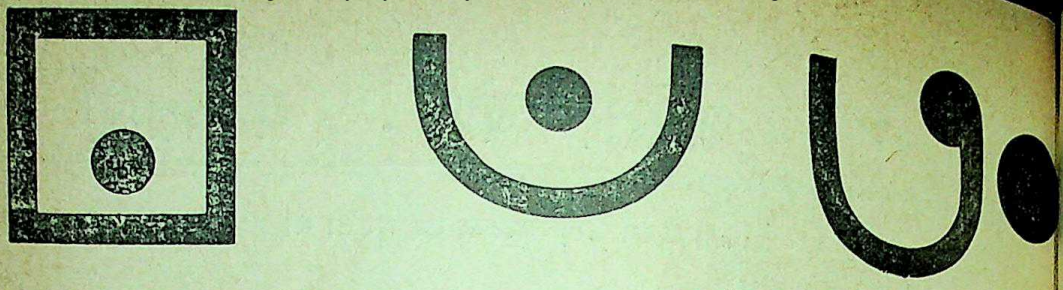

पंजाब नैशनल बैंक ही आपके बचत खातों के लिए उपयुक्त बैंक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

r 85/H/3

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उम्र भर मज़े से चल सकता था
विदूषक हो सकता था किसी नगर-सेठ का
या फिर गुण गाकर किसी धूर्त शासक के
अख़बारों की कतरन से अपने लिए
टोपी सिल सकता था।
(कोई पाखण्ड खड़ा करके)
जब कि वह अपने बाल नोचता रहा
सोचे जा चुके का अर्थ सोचता रहा।
ओ तमाम ख़ुशहाल लोगो !
तुम ठीक कहते हो
वही एक मूर्ख था इस पागलख़ाने में !
(नहीं रहा)
अच्छा ही हुआ वह नहीं रहा !

—कैलाश वाजपेयी

विक्रयित :

सब बिके हुए लोग हैं !
सदी के छोटे क़द आदम हम
से ज़्यादा हैं, भीतर से कम।

चारिकता ने हमारी आत्माएँ खरीद ली है
ताओं की निर्झरनी में जल नहीं है
आवश्यकताओं पर परस्परता जीती है !

हमें जोड़ता है
हमारी रक्षा करती है
ज़िन्दगी का लक्ष्य है

हमारी नसों के ख़ून में
एक अपावन कामुकता का प्रवाह है
अनैच्छिक और आकस्मिक सन्तानों से
आज का पिता, आज की माता हतोत्साह है।

विवश, अनाकांक्षिता मृत्यु
हमारी मुक्ति है
जिससे हम भयभीत रहते हैं,
पहले का आदमी इस तरह नहीं मरता था
जिस तरह हम आज मरते हैं !

— श्रीकान्त जोशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३–यह कौन-सा शहर है ?

रोशनी रोकते हैं
ऊँचे उठे ये मकान
बाँधती हैं हवाएँ
दूर तक तंग गलियाँ
जो देखती है यहाँ
वह कौन-सी नज़र है—
बैठते हैं लोग सब
लेकर अँधेरी छाँह
सेकते अपनी थकन
घुटन के फोहे लगा
जो धूपती है यहाँ
कौन-सी दोपहर है—
भरमती हैं आहटें
तख़्तियों को देखकर,
लौटती हैं पुकारें
टकर कर दीवार से,
जो साँझती है यहाँ
वह कौन-सी उमर है—

— हरीश भादानी

४–घड़ियाँ–क़ैद शहर :

मेरे शहर में सूरज उगते ही
दीवारों पर टँगी घड़ियों में
हर आदमी क़ैद हो जाता है।
पल-पल का हिसाब माँगती है सुई
उत्तर के डर से–
खाता बही-फ़ाइलों में पसर जाता है।
पारदर्शी-शीशों से–बॉस की आँखें चमकती हैं
स्टेनो हँसती है, क्लर्क की देह काँपती है।
'क्वालिटी' से एक आने की मुड़ी तक लंच
चलता है
पार्कों में ड्राईवर ताश खेलते हैं,
तगादगीर कथा सुनते हैं
और फ़ुरसती बीवियाँ मारकेटिंग
बॉर-कैफ़-रेस्ट्राँ-भोगती हैं
चावलों के कंकर चुनती हैं
बच्चों के कपड़े सिलती हैं।
एक चुम्बक लगे चक्कर से चिपककर
सारा शहर घूमता है।
सड़कों पर ट्राम, बस, टैक्सी
मकड़ीका जाल बना लेती हैं।
ऊब-झुँझलाहट-खीझ
टेलीफ़ोन के रांग-नम्बर
विवशता से तनी नसें
हड़ताल के नारे–
डिसचार्ज लेटर देखकर
बूढ़ा सूरज खाँसते-खाँसते हारकर
पश्चिम की चटाई पर लुढ़क जाता है।
भट्ठियों में जले कोयलों की राख-जैसे
हर आदमी सड़क पर उछाल दिया जाता है।
और फिर—पोस्टरों की तरह चिपककर
बोरों की तरह लदकर
सैण्डविचका टमाटर बन घर लौटता है।
गिरजे की घड़ियाँ टंकोरे बजाती हैं
शाम और रात साथ ही उतर आती है,
रोटी से सेक्स तक के प्रश्न—
फिर लम्बे होकर खड़े हो जाते हैं।
और–मैं उन घड़ियों पर ज़ोर-ज़ोरसे
पत्थर मारता हूँ !!

— श्रीहर्ष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीढ़ियों का अन्तर :

तुम
कल के महान
वरिष्ठ
जाने-माने
चोटी के लेखक
पितृवत्
मेरी उँगली पकड़ लाये
प्यार से सिर सहलाया
मुझ बालक का परिचय दिया
मेरे क्रियेटिव टैलेण्ट का गुण गाया
तुमने दिल से चाहा
(वैसे तुम कोई बात दिल से चाहते नहीं)
शक्ति पायें मेरे लड़खड़ाते क़दम
समर्थ बनें काँपते हाथ
तेज से दमके पीला मुँह
पर मेरे क़दम अधिक लड़खड़ाये
हाथ अधिक काँपे
मुह अधिक पीला हुआ
मुझ अभागे से न ओढ़ी गयी
तुम्हारी दया-दृष्टि
मुझे विश्वास नहीं पितृ परम्परा में,
न उस पिता में जिसने सृष्टि रची
न उसमें जिसने जन्म दिया–
नाटक में निर्धारित पार्ट अदा कर
वे चले गये सदा के लिए
मैं मरों का पुजारी नहीं
जीवितों का स्वर हूँ
जीवन का उन्मेष
स्वयं अपनी मूर्त्ति गढ़ूँगा
अपना मार्ग बनाऊँगा
इस रंगमंच का एकाधिपति बनूँगा।

— किरण जैन

Calcutta Insurance Limited

(Estd.–1923)

Transacting all classes of General Insurance Business :
Fire, Marine, Accident, Engineering, All Risks, Public Liability, Professional Indemnity, etc.

Registered office :
24, Chittaranjan Avenue, Calcutta–12.

Regional offices in India :
Bombay, Delhi, Gauhati & Madras.

Branches & Sub-offices in India :
Ahmedabad, Asansol, Amritsar, Agra, Cooch Behar (W. B.)
Caimbatore, Dhubri, Jullunder, Kanpur, Meerut
& Saharanpur.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्द पॉकेट बुक्स

द्वारा प्रकाशित

कुछ उत्कृष्ट उपन्यास

बुधुआकी बेटी	'उग्र'
धर्मपुत्र	चतुरसेन शास्त्री
त्यागपत्र	जैनेन्द्रकुमार
वापिसी	रामकुमार
भूल	गुरुदत्त
प्यास	कृश्नचन्दर
हीरेकी कनी	अमृता प्रीतम
सोया हुआ सपना	राजेन्द्र अवस्थी
सच और झूठ	मन्मथनाथ गुप्त
पापी	रांगेय राघव
तारा	यशपाल
सरहदों के बीच	कमलेश्वर
नारी	अखिलन
विष-वृक्ष	बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय
लता	गुलाबदास ब्रोकर
बेबसी	वसन्त कानेटकर
हरकारा	ताराशंकर बंधोपाध्याय
दो बहनें	रवीन्द्रनाथ ठाकुर
चरित्रहीन	शरतचन्द्र
प्रतीक्षा	राजेन्द्र यादव
रात और प्रभात	भगवतीप्रसाद वाजपेयी
डूबते मस्तूल	नरेश मेहता
स्वप्नमयी	विष्णु प्रभाकर
एक घिसा हुआ चेहरा	रमेश बक्षी
एक रहस्य एक सत्य	नानकसिंह

अपने नगर के पुस्तक विक्रेताओं से लीजिये

प्रत्येक उपन्यास का मूल्य १.००

अपने नगर के रेलवे बुकस्टाल से लीजिये

विस्तृत सूचीपत्र के लिए हमें लिखिये

हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड

जी. टी. रोड, शाहदरा, दिल्ली-३२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखा जा रहा है स्थायी न हो, पर इस आन्दोलनकी तहमें जो अन्तर्भूत विद्रोह है वह निश्चय ही शत्रु है, वह साहित्यके ठहरे और गन्धाते और सड़ते हुए पानियोंमें उथल-पुथल मचायेगा, वहाँ नया और स्वच्छ जल लायेगा और इस विद्रोहके गर्द-गुबार ही में नये साहित्यके फूल खिलेंगे, इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं। मैं सम्पादकीय (रमेश बक्षी) की इस बातसे सहमत हूँ कि 'नयी पीढ़ीका चिन्तन स्वाभाविक चेतनाका फल है' और नयी पीढ़ीको समर्पित इस विशेषांकका स्वागत करता हूँ।

सम्पादकीयके बाद मैंने सबसे पहले 'अँधेरे बन्द कमरे' पर सुधा अरोड़ा और राकेशके वक्तव्य पढ़े। मेरे ख़यालमें इस मालाका विचार जितना अच्छा है, उतने अच्छे लेख उसके अन्तर्गत नहीं आ रहे। चूँकि इस मालाके अधीन श्रीमती निर्मला ठाकुरके उत्तरमें मेरा अपना लेख भी छप चुका है और मैंने राजेन्द्र यादव वाला भी पढ़ा है, इसलिए मैं यह महसूस करता हूँ कि जितने ज़ोरदार, विचारोत्तेजक और विवादास्पद ये लेख हो सकते थे, नहीं हुए। कारण मुझे एक ही लगता है—समर्थ आलोचकोंने इन रचनाओंके सम्बन्धमें अपनी उलझनोंको नहीं रखा। यदि पुरानोंमें प्रकाशचन्द्र गुप्त या भगवत शरण उपाध्याय या बच्चन सिंह या नामवर सिंह या देवराज उपाध्याय या विजयदेव नारायण साही आदि और नयोंमें देवीशंकर अवस्थी या धनञ्जय वर्मा या मार्कण्डेय या श्याम परमार आदि उपन्यासोंके सम्बन्धमें अपनी उलझनें बताते तो उत्तर देनेमें उपन्यासकारोंको भी ज़ोर लगाना पड़ता और उपन्यासोंके गुण-दोष भी पाठकोंके सामने आते, उनका मनोरंजन भी होता और ज्ञानवर्धन भी—मेरे ख़यालमें इलाहाबादमें 'विवेचना' में जैसी परम्परा है कुछ वैसी परम्परा होनी चाहिए—सिर्फ़ इस संशोधनके साथ कि लेखककी भी पूरी सफ़ाई छपे। एक ही बात है, जिसका भय उस तरहकी लेखमालामें हो सकता है—कि दोनों पक्षोंकी ओरसे तिक्त, कटु और व्यक्तिगत आरोप न होने पायें। लेकिन सम्पादकका यह कर्तव्य है कि वह आलोचकोंसे कहे कि कटुसे कटु आलोचना करते हुए भी वे हमदर्दीको हाथसे न जाने दें और इसपर भी यदि आलोचक अथवा लेखकके यहाँ ऐसे सन्दर्भ आ जायें तो उसे उनकी मरज़ीसे सम्पादक काट दे। अभी तो इस मालामें और भी उपन्यास डिसकस होंगे। यदि उपरोक्त आलोचकोंसे लिखनेको कहा जाये तो अच्छा हो।

कहानियाँ मैं प्रायः सभी पढ़ गया। रामनारायण शुक्लकी कहानी वैसी ही है, जैसे उनकी अन्य कहानियाँ। मैंने इधर उनकी काफ़ी कहानियाँ पढ़ी हैं। उनमें कुछ अजीब-सी एकरसता है। यों रामनारायण शुक्लने 'तारीख' में बात जमा कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कही है और किसी खास तारीखके पहले और बादके जीवनमें कितना अन्तर हो सकता है, यह भली भाँति जना दिया है।

ममता अग्रवालकी कहानी 'इरादे इरादे और इरादे' एक नये युवककी मनःस्थितिका सुन्दर चित्रण करती है। ममताकी क़लम साफ़ और रवाँ होती जा रही है। यह कहानी 'कादम्बिनी'में छपी उसकी कहानीसे बेहतर है। थोड़ी गहराईकी उससे और अपेक्षा है और पूरी आशा है कि उम्र और अनुभवके साथ वह उसके यहाँ आ जायेगी।

'सारी खुशबू' बड़ी खूबीसे लिखी गयी है। पर कहानी शुरू होती है 'मैं' से (याने नायिका स्वयं अपनी कहानी कहती है) लेकिन तीसरे कालमकी अन्तिम पंक्तियोंमें वह 'वह' हो जाती है (याने लेखक उसके बारेमें बताने लगता है) फिर कुछ पंक्तियों बाद 'मैं' हो जाती है। प्रथम पुरुष और उत्तम पुरुषकी इस दुविधाके कारण बराबर रस भंग होता है। दूसरी बार पढ़नेपर भी इसका कोई कारण समझमें नहीं आया। प्रेम कपूरकी कहानियोंके दो टाइप्ज मसौदे मुझे एक बार देखनेका सुयोग मिला था। कहानियाँ अच्छी थीं, पर लेखकने टाइपकी ग़लतियाँ तक भी नहीं सुधारी थीं। (भले आदमीने कहानी टाईप करवाकर भी नहीं भेजी थी। सं०) स्वयं एक प्रतिष्ठित पत्रमें काम करनेवालेकी इस बेपरवाहीपर हैरत होती है। मैं समझता हूँ कि लेखकोंके लिए इस तरह प्रेस-कॉपी तैयार किये बिना कहानियाँ भेजना सम्पादकके साथ ही नहीं, अपने साथ भी अन्याय करनेके बराबर है। प्रेम कपूरसे मेरी ओरसे इस कटु बातके लिए क्षमा माँग लेना। कहानी अच्छी न होती तो मुझे यह भूल न खलती और मैं इसका उल्लेख न करता।

शशि तिवारीकी कहानी बहुत अच्छी बनी है। लेकिन उन्हें मैं रामनारायण शुक्ल हीकी तरह नयी नहीं, बीचकी पीढ़ीकी कथाकार मानता हूँ। प्रकट ही उनकी क़लममें अपेक्षाकृत ज़्यादा प्रौढ़ता और गहराई है। 'चाहोंके मरुस्थल'में उन्होंने विचित्र स्थितियोंका बड़ा बारीकीसे चित्रण किया है। मेरी बधाई।

अवधनारायण सिंहकी क़लम भी पहलेसे बहुत मँझ गयी है 'निर्णय'के कपिल-जैसे युवक कलकत्ते अथवा दिल्ली ऐसे महानगरों हीमें नहीं, इलाहाबाद और लखनऊ-में भी मिल जायेंगे। नयी पीढ़ीके उस असन्तुष्ट, लेकिन निष्क्रिय प्रतिनिधिका बड़ा ही सफल चित्रण अवधनारायणने किया है।

अतुल भारद्वाजने एक प्रक्रियाको बड़ी खूबीसे उकेरा है। लेखकने प्रयास किया है कि पाठकके हाथ कुछ न लगे, लेकिन 'ऐसे हुलियेमें कौन पहचानेगा बेटे तुम्हें?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नायकका अपने आपको इतना कहना ही ग्रहणशील पाठकके हाथ बहुत कुछ दे देता है।...मुझे इस कहानीको पढ़कर अनायास जितेन्द्रकी लम्बी कहानी 'ये घर : ये लोग'की याद आ गयी। बिलकुल ऐसे ही युवकका इतना ही, कहूँ कि इससे भी ज्यादा निर्मम चित्रण, उसने अपनी उस लम्बी कहानीमें अद्वितीय ढंगसे किया था। अतुलने नायकसे जो वाक्य मन-ही-मन कहलवाया है, वह तो उसमें नहीं था, लेकिन लगता है, जितेन्द्रने वह कहानी लिखकर अपनेसे वही प्रश्न किया होगा और अपनेको पहचनवानेके प्रयासमें लिखना-पढ़ना छोड़कर किसी दफ़्तरमें जाकर सुप्रिण्टेण्डेण्ट हो गया—अतुलके यहाँ प्रक्रिया वैसी न हो, यही मनाता हूँ।

'अँधेरी सुरंग और सफ़र' यों तो साधारण रुमानी कहानी है, लेकिन लेखकने उसे नयी बिनावटमें बुना है और इसके लिए वह प्रशंसाका पात्र है।

रवीन्द्र कालियाकी 'कोज़ी कार्नर' सुन्दर स्टडी है—ऐसी ही, जिसकी आशा कालियासे की जा सकती थी। नये लेखकोंमें रवीन्द्र कालियाका बात कहनेका एकदम अपना ढंग है। 'नौ साल छोटी पत्नी'के बाद मुझे उसकी यही कहानी अच्छी लगी।

कमलजीत सिंहकी कहानी 'अँधेरेमें डूबी हुई रोशनियाँ' का शीर्षक मुझे ठीक नहीं लगा, लेकिन थीमकी बारीकी और लेखनीकी सफलता मुझे चौंका गयी। मुझे विश्वास है कि कमलजीत सिंहकी क़लमसे और भी सुन्दर और सूक्ष्म कहानियाँ पढ़नेको मिलेंगी।

कविताओंके अंशमें मुझे रणजीत, इन्द्रमणि, रमेश गौड़, अवधनारायण मुद्गल, इन्दु जैन, कान्ता और कुंकुम जोशीकी कविताएँ अच्छी लगीं। कान्ताकी 'एकान्त' और 'निर्लिप्त दिन' तथा कुंकुम जोशीकी तीनों कविताएँ विशेषकर।

अवधनारायण मुद्गलने एक पुरानी कथाको नये सन्दर्भमें ख़ूबीसे प्रस्तुत किया है

जगदीश नारायण श्रीवास्तवकी कवितामें मुक्तिबोधकी एक कविताकी अनुगूँज मिली। अजाने ही क्यों न हो पर उसके स्पष्ट नक़्श इसमें आ गये हैं। बात उसने अपने ढंगसे कहनेका प्रयास किया है, पर नया हो या पुराना कवि या लेखकको इससे बचना चाहिए।

इन्दु जैनकी ये पंक्तियाँ :

"ज़िन्दगी ऐसी क्यों है
कि भावना का हर छोटा पल
अविवेकी क़रार दिया जाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्व० मुक्तिबोध का
महत्त्वपूर्ण कृति

चाँदका मुँह टेढ़ा है

स्व० मुक्तिबोधकी कविताओंका प्रस्तुत संग्रह हिन्दी काव्यकी नयी प्रखरता, क्षमता और युग-बोधकी सचेष्टताका ही प्रयोग नहीं, नयी उपलब्धियोंका भी मानक है। ये कविताएँ इसलिए भी हैं कि इन सशक्त शब्द-रेखाओंमें आयी अपनी छविके यथार्थसे सारा समाज परिचित हो और उस यथार्थकी पीड़ाके साथ उसके संकल्प-स्वरको भी ग्रहण करे।
द्वितीय संस्करण।

मूल्य ८.००

• अपने पुस्तक-विक्रेतासे प्राप्त करें •
भारतीय ज्ञानपीठ : कलकत्ता, दिल्ली, वाराणसी

महिलोपयोगी एकमात्र उत्कृष्ट मासिक

'शृङ्गार'

प्रबन्ध सम्पादक : देवेन्द्र अग्रवाल • सम्पादिका : लावण्यप्रभा

- विचारपूर्ण व उपयोगी लेख
- स्त्रियोपयोगी रुचिकर सामग्री
- रोचक मनोवैज्ञानिक कहानियाँ
- कविताएँ तथा सुन्दर गीत
- महिलाओंके इण्टरव्यू
- गृह-सज्जा, प्रसाधन समस्याएँ, विचार-मंच आदि अनेक रोचक स्थायी स्तम्भ।

मूल्य : वार्षिक : ५ रुपये, मासिक : ५० पैसे

१३।३७, शक्तिनगर, दिल्ली-७
फ़ोन नं० : २२७३००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और
अगर समझदारी के क़दम उठाता रहे
तो व्यक्ति
खुद को
एक के बाद एक
धोखा दिये जाता है।

बड़ी तीखी और सच्ची बात कहती हैं? मेरे ख़यालमें यही कचोट सच्चे लेखकको (वह नया हो या पुराना) उन धोखोंसे परदा उठानेकी प्रेरणा देती है।

—उपेन्द्रनाथ अश्क

कसौली]

आपके पत्रके अगस्त १९६५के अंकमें किन्हीं शैलेन्द्रनाथ श्रीवास्तवका एक लेख प्रकाशित हुआ है—'लमहीमें चन्द लमहे'। उसमें मुझको लांछित करते हुए लेखकने मुझपर कुछ अभियोग-आरोप लगाये हैं जो नितान्त अशोभन हैं और जिनका प्रतिवाद करना मैं अपना धर्म समझता हूँ। आश्चर्य है आपके सम्पादकीय विवेकको उनमें कोई अनौचित्य कैसे नहीं दिखाई पड़ा। जो हो, इस पत्रको छापनेकी कृपा तो करेंगे ही।

लमहीके प्रस्तावित प्रेमचन्द-स्मारककी जो स्थिति है उससे हिन्दीसंसार परिचित है। साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान' और दूसरे पत्रोंने कई बार लोगोंका ध्यान उसकी ओर आकर्षित किया है। मेरे मनमें उसके प्रति किसीसे कम क्षोभ नहीं है। आजसे सात-आठ बरस पहले स्वयं राष्ट्रपति बाबू राजेन्द्रप्रसादके हाथों उसका शिलान्यास हुआ था और बड़ी धूमधामसे हुआ था। उसके लिए कुछ निधि भी संग्रह की गयी थी, प्रादेशिक सरकारों और केन्द्रीय सरकारसे कुछ अनुदान भी मिला था। फिर वह चीज़ कहाँ किस दलदलमें फँसकर रह गयी, यह भगवान् ही जानता है।

अपने एक इतने बड़े साहित्यकारके स्मारककी छीछालेदर देखकर किसी भी साहित्य-प्रेमीको क्षोभ होगा, बिलकुल स्वाभाविक बात है। लेकिन अपने उस क्षोभमें पात्र-अपात्रका विचार खो बैठना अगर और कुछ नहीं तो बड़ी नादानी या बचकानापन है।

जहाँतक मैं समझ पाया हूँ, मेरे विरुद्ध लेखकके पाँच अभियोग हैं—कि मैं दो-चार सालपर ही लमही जाता हूँ; कि मैं इलाहाबादमें रहता हूँ जहाँ मेरे पास बँगला है, मोटर है; कि अमृत ही नहीं आते तो अमृत-पुत्र तो और भी नहीं आते होंगे; कि मैं उस घरसे कुछ चीजें इलाहाबाद ले गया हूँगा क्योंकि मुझे 'क़लमका सिपाही' लिखना था; कि प्रेमचन्द जिस घरमें पैदा हुए थे·····'क़लमका सिपाही'के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखक पुस्तकपर प्राप्त पुरस्कारसे ही वहाँ कुछ बनवा देते !

पहले चार अभियोगोंके सम्बन्धमें मैं क्या कहूँ। कोई इन बातें रूपमें उपस्थित कर सकता है, मेरे लिए यही बड़े आश्चर्यकी बात है।

जहाँ तक पाँचवें अभियोगकी बात है, लेखक महोदयकी सेवामें [illegible] टेढ़ा है कि 'क़लमका सिपाही' पर प्राप्त पुरस्कारको हाथ लगाये बिना भी वहाँ कुछ बनवा देनेका सामर्थ्य मुझमें है लेकिन तब भी अगर नहीं बनवाता तो इसीलिए कि [illegible] प्रख-महान् साहित्यकारका इतना भयंकर अपमान करनेका सामर्थ्य मुझमें नहीं है। अपने 'दानी धर्मात्मा' पिताकी स्मृतिमें अकसर गल्लाचोर, कफ़नखसोट साहूकारों और महाजनोंके बेटे ही चरहियाँ, गौशाले और धर्मशाले बनवाते देखे जाते हैं, प्रेमचन्द-जैसे सार्वजनीन व्यक्तिका स्मारक तो सार्वजनीन ही हो सकता है, जब भी हो। और जबतक ऐसा नहीं होता तबतक प्रेमचन्दके बेटेकी ओरसे वहाँ 'कुछ' बनवा दिये जानेसे कहीं अच्छा यह है कि वह चीज़ वैसीकी वैसी पड़ी रहे और श्रीशैलेन्द्रनाथ श्रीवास्तव-जैसे हिन्दी-प्रेमी देखें और अपनी आँखोंमें मिर्च झोंक-झोंककर देखें कि वह हिन्दी, जिसके लिए प्रेमचन्द जिये और मरे, अपने बड़ेसे-बड़े साहित्यकारका कैसा अद्भुत सम्मान करती है !

इलाहाबाद] —अमृतराय

● 'सात सफ़र' स्तम्भके अन्तर्गत प्रकाशित अब तककी क़िस्तोंमें 'लमहोंमें चन्द लमहे'—शैलेन्द्रनाथ श्रीवास्तव—यात्रा-वृत्तान्त इतना मार्मिक है कि बरबस आँखोंमें आँसू आ जाते हैं। इतना जीवन्त, इतना चित्रात्मक और इतना सजीव कि क्या कहूँ। अंककी सर्वश्रेष्ठ रचना।

बहराइच] —एस० लाल

● अगस्त अंक देखा। शान्तिमिशनपर निकले यात्री सतीशकुमारका गोरी चमड़ीके बीचका अनुभव मर्मस्पर्शी है। यह रंग-भेद कब समाप्त हो सकेगा कौन जानता है? वीरेन्द्रकुमार जैनकी कवितासे तीव्र मांसल गन्ध आती है, आखिर कवि कहना क्या चाहता है ?

बनारसीदास चतुर्वेदीने अपने पत्रमें लिखा कि 'ज्ञानोदयके कितने ही कवि और लेखक बड़ी चक्करदार भाषा लिखते हैं, जिसे गुट्ठल कहा जा सकता है।' मेरे विचारसे यह दृष्टिकोणका ही अन्तर हो सकता है क्योंकि मुझे तो ऐसे 'गुट्ठल' अभी तक नहीं दिखे। मैं सन् १९६० से ज्ञानोदयका नियमित पाठक हूँ।

जबलपुर] —नन्दकिशोर मालवीय

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

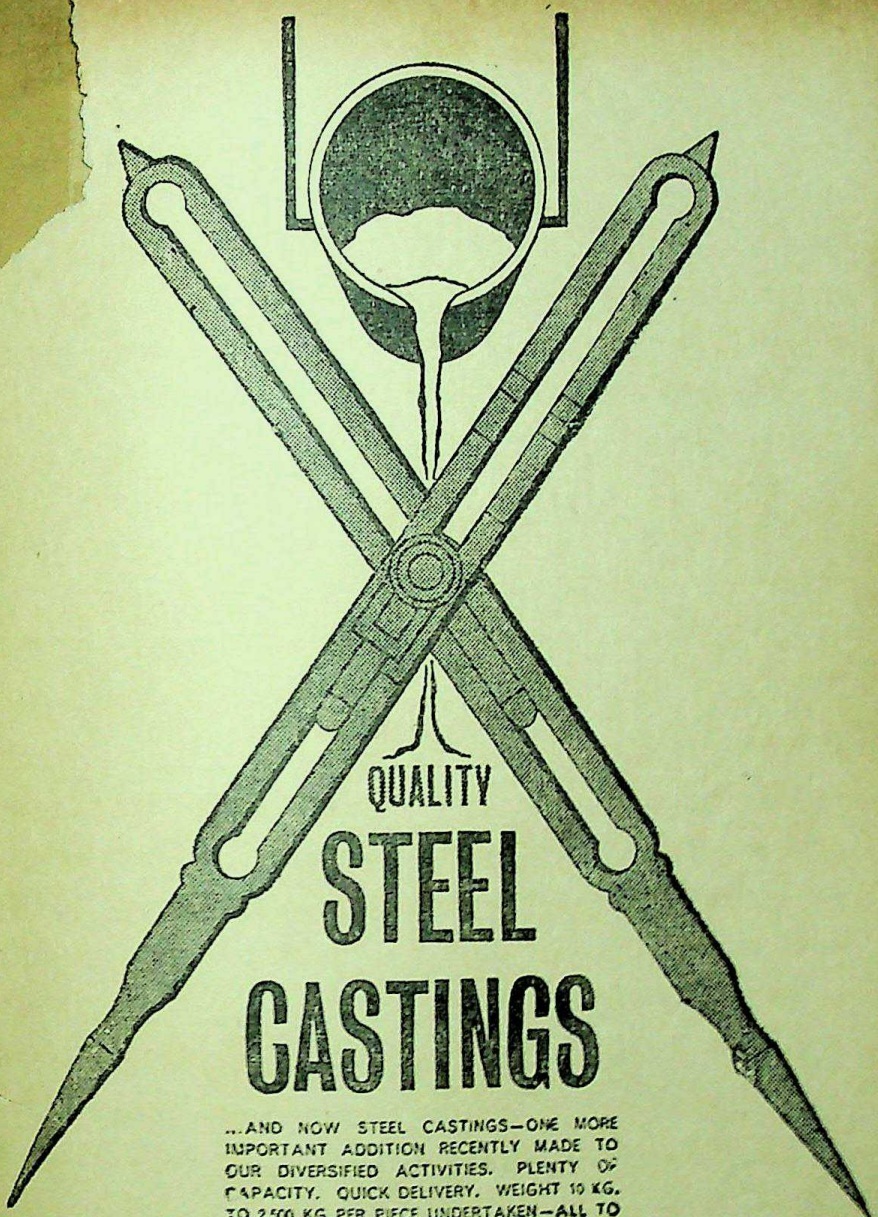

...AND NOW STEEL CASTINGS—ONE MORE IMPORTANT ADDITION RECENTLY MADE TO OUR DIVERSIFIED ACTIVITIES. PLENTY OF CAPACITY. QUICK DELIVERY. WEIGHT 10 KG. TO 2,500 KG PER PIECE UNDERTAKEN—ALL TO CUSTOMERS' SPECIFICATIONS.

THE BRITANNIA ENGINEERING COMPANY LIMITED.

(Mg. Agents : McLEOD & CO. LIMITED) 3, Netaji Subhas Road, Calcutta 1

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Price Annual Rs. 10/- per copy Re. 1/- for abroad postage extra 18 nP.

11 SEP 1965 कमस 27
13 SEP 1965 कमस 28
18 SEP 1965 कमस 43
22 SEP 1965 कमस 46

धांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

क्लीच लिकर
साहूपुरम् में
डाकखाना : अरुमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक
धांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स :

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लि०

१५ ए, हॉर्निमैन सर्किल
फोर्ट, बम्बई-१

टेलीफोन : २५१२१८-१९-१०,

तार : सोडाकेम, बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

भारतीय ज्ञानपीठ काशीकी ओरसे बाबूलाल जैन कागल द्वारा प्रकाशित और
सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी में मुद्रित।

License No. 51. Licensed to post without prepayment of postage. REGD. No. L-2036

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी

ज्ञानोदय

युद्ध-विशेषांक

नवम्बर १९६५

यस्याश्चतस्रः प्रदिशः श्रिव्या
यस्यामन्न कृष्टयः संबभूवुः।
या बिभर्ति बहुधा प्राणदेजत्
सा नो भूमिर्गोष्वप्यन्ने दधातु॥

यो नो द्वेष पृथिवि यः
योऽभिदासात्पनसा यो बधेन।
तं नो भूमे रन्धय पूर्वकृत्वरि॥

उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा
अस्मभ्यं सन्तु पृथिवि प्रसूताः।
दीर्घं न आयुः प्रतिबुध्यमाना
वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम॥

—पृथ्वी-सूक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक विकास-उन्नयन
सांस्कृतिक अनुसन्धान-प्रकाशन
राष्ट्रीय एकता एवं राष्ट्र-प्रतिष्ठाकी

साधिका
विशिष्ट संस्था

भारतीय ज्ञानपीठ

[स्थापित सन् १९४४]

संस्थापक
श्री शान्तिप्रसाद जैन

अध्यक्षा
श्रीमती रमा जैन

नवम्बर १९६५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने रक्त से देश की
उजली तसवीर आँकने
वाले जवानों की स्मृति में

प्रकाश - पर्व पर
विजय अभिनन्दन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्योहारों के समय उषा उपहार में दीजिये

सुन्दर उपहार के लिये यही सबसे बढ़िया अवसर हैं। क्यों न उषा सिलाई मशीन ही दीजिये। अपने बजट के अनुसार पाँच बिभिन्न मॉडिल मे से एक छाँट लीजिये। हर एक उषा सिलाई मशीन उच्च कारिगरी और क्वालिटी में सर्वोत्तम है तथा सिलाई की सुविधा के लिये उनमें बिभिन्न व्यवस्थाएँ की गई हैं। उषा से सिलाई उनके खाली समयों को और भी आनन्दपूर्ण बना देगी।

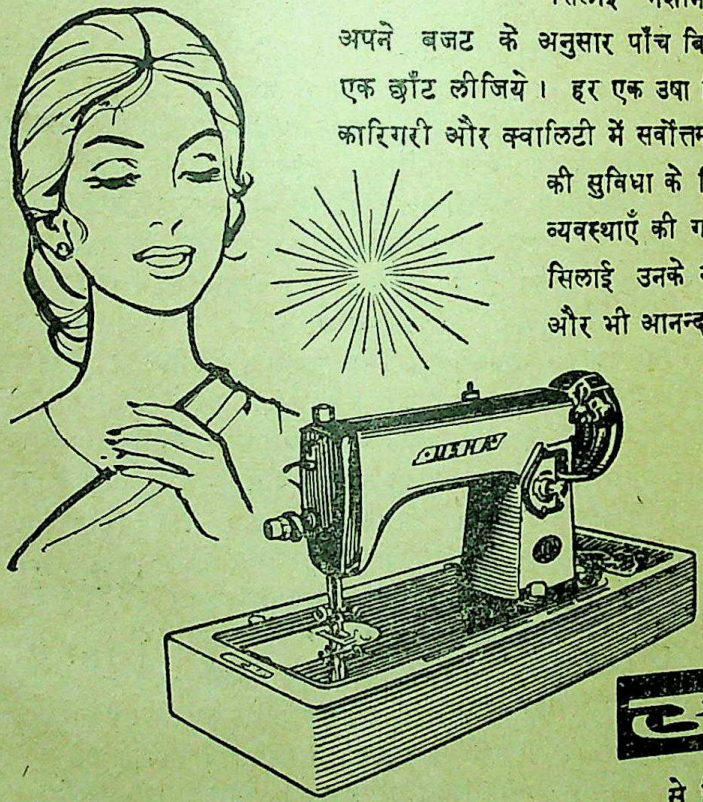

आराम से
सिलाई कीजिये

उषा

से सिलाई कीजिये

जय इंजिनियरिंग वर्क्स लिमिटेड
कलकत्ता-३१

JESM/G/478

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह मातृभूमि – चौर है जिसकी दिशाएँ
– खेती-किसानी की आती हैं जहाँ
– प्राणियों की रक्षा करती है जो अनेक प्रकार
– हमें दे सम्पन्नता
गौओं और अन्न से –
वह मातृभूमि ॥

हे शत्रुमर्दिनी – उन्हें विनष्ट कर दे
– जो द्वेष करते हैं हमसे
– जो ससैन्य चढ़ आते हैं सीमा पर,
– जो बुराई चाहते हैं हमारी
औ' प्रस्तुत रहते हैं वध के लिए –
हे शत्रुमर्दिनी ॥

हे मातृभूमि – तेरे जो प्रदेश हैं :
– रहित हों रोग-भय-क्षय से,
– सजग रहें हम सदैव,
– कटिबद्ध सर्वस्व त्याग के लिए
प्राण लेकर हथेली पर –
हे मातृभूमि ॥

(अथर्व वेद – शौनक संहिता – १२वें काण्डके प्रथम पृथ्वी-सूक्तसे तीन राष्ट्र-मन्त्र, जो मुखपृष्ठ पर अंकित हैं।)

■

ज्ञा नो द य

युद्ध-विशेषांक

वर्ष : १७ : : अंक : ५
नवम्बर १९६५

भारतीय
ज्ञानपीठ
प्रकाशन

सम्पादक : लक्ष्मीचन्द्र जैन, रमेश बक्षी

सम्पादकीय कार्यालय : ९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता–२७
वितरण-कार्यालय : दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी
प्रमुख वितरण : बैनेट कोलमैन एण्ड कं० लि०, बम्बई–१
यह अंक : दो रुपया। वार्षिक : दस रुपये। त्रैवार्षिक : पचीस रुपये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवम्बर

१९६५

ज्ञा नो द य

मुखपृष्ठ ■
सन्तुदास गुप्त
युद्ध-चित्र ■
पाकिस्तान बाम्बरकी डायरी २६ ●
सिक्किम सीमापर आधुनिक संजयों-
की भीड़ २८ ●
शि जि फु दूं गश्यिन गुअन ३० ●
सीमान्त युद्धकी राडार-स्क्रीनपर
युद्धविद्ध यान ४३ ●
उरी-पूंच मोर्चेपर गोला बारूदके
बीच हमारे जहाज़ ६५ ●
भागता हुआ दुश्मन ७८ ●
प्रसन्नमन ७९ ●
कुछ पिटे हुए मोहरे ९० ●
कुछ फ़र्ज़ी प्यादे ९१ ●
चंगेज़शाही, नादिरशाही,
अयूबशाही १०६-११३ ●
बर्कीका बाज़ार ११५ ●
मौसेरे भाइयोंका चतुर्भुज १३१ ●
झूठके बादशाह कैप्टेन मसूद १३९ ●
भारतकी शक्तिपूजा—१६१, १६५,
१६९, १७३, १७९, १८३, १८७ ●
महामन्त्री ऊथाँ राष्ट्रपतिके साथ १९७ ●
ध्वस्त ग्राम २०५ ●
हमारे व्यस्त नैट २०८ ●
तुम्हारे ध्वस्त सैबरजेट २०९ ●
जिसकी सन्ध्यामें पंछीकी स्वर-झंकार

ज्ञानोदय द्वारा प्रस्तुत रचनाएँ ■

आर्यावतका गीत : पृथ्वीसूक्त—मुखपृष्ठपर और ३ ●
मज़बूत हाथों और प्रतिश्रुत आँखोंका अभिनन्दन
(सम्पादकीय) : रमेश बक्षी ६ ●
विश्व-युद्ध एक, विश्व-युद्ध दो, विश्व-युद्ध ती ....
लक्ष्मीचन्द्र जैन २० ●
अँधेरेमें चलते हुए शहर : रमेश बक्षी ३३ ●
युद्धविद्ध : सुदर्शन चोपड़ा ४३ ●
एक घायल सिपाहीके सपने : (अनुवाद :
भोलानाथ 'बिम्ब') ६५ ●
सात सप्ताहका युद्ध : सु० चो० ७५ ●
शतरंज : यू० एन० ओ० : र० ब० ९० ●
जब-जब ऐसी चुनौतियाँ आयीं : अहमद सलीम ११५ ●
कुछ लतीफ़े : ज्ञा० सं० वि० १२७ ●
संजय उवाच : अन्धा युग और ज़बानदार आँखें :
ज्ञा० सं० वि० १३१ ●
झूठ और सच : समाचारोंका X–रे : पद्मधर त्रिपाठी १३९ ●
प्राचीन भारतीय युद्ध-विज्ञान : गोकुलचन्द्र जैन १४९ ●
युद्ध-भूमिपर घूमता हुआ रथ : कुन्था जैन १५७ ●
विश्वशान्तिकी दिशा और संयुक्त राष्ट्रसंघ :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युद्ध विशेषांक

वर्ष : सत्रह

अंक : पाँच

...: विपरीत दिशा : गोकुलचन्द्र जैन २०५

...के युद्धका शब्दकोश : आधुनिक अस्त्र-शस्त्र-सज्जा : श्रीकृष्ण २०८

...र्मनीषीका नया रूप : कुछ शंखध्वनियाँ : ज्ञा० सं० वि० २२७

...नोदय पत्र-परिचर्चा :

...नदके किनारे : विद्यानिवास मिश्र, प्रभाकर माचवे, ...श मटियानी, मन्मथनाथ गुप्त, विष्णु प्रभाकर, ...नीन्द्रकुमार विद्यालंकार, गिरिजाकुमार माथुर, ...न्द्र कुलश्रेष्ठ, रवीन्द्र कालिया, अजीत कौर, ...ना वीरा, सुनीता, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, कुंकुम ...शी, जगदीश चतुर्वेदी, हिमांशु जोशी, सेठ गोविन्ददास, ...न्त मिश्र, अमरेन्द्र सिनहा, कैलाश वाजपेयी, मिर्ज़ा ...माइल बेग़, दूधनाथ सिंह १०

...-चिन्तन : जैनेन्द्र कुमार, हरिशंकर परसाई, ...देयालाल मिश्र 'प्रभाकर' २३३

...ती स्वीकार : इन्दु जैन, दुष्यन्तकुमार, साक़ी फ़ारूकी,

ज्ञानोदय संकलन :

- युद्धान्तर : कार्ल सैण्डबर्ग, निकोलस गोलियन, पाल इल्यार, ऑटो द सोला, बोरिस पास्तरनाक १२१
- संकल्प चर्चिलके : उद्धरण सन्दर्भ हमारे ६७
- हमारी बात-कैनेडीकी वाणीमें ७३
- दो समानान्तर झूठ ९६
- भारत अब किपलिंगके वंशजोंकी नज़रमें ९९
- ताक़तका जवाब ताक़तसे ११८
- प्रतिरक्षा मन्त्री श्री चह्वाणसे १२८
- राशि-मृत्यु १२९
- मौसेरे भाइयोंकी संकेत-भाषा १३४
- ठोस बलिदान १३७
- कठपुतलोंका देश है ये १४१
- पाक-भारत युद्धके आख़िरी दिन १५१
- राष्ट्र-मन्त्र १५३
- हिंसा और अहिंसाके लिए १९९
- वह रंगीला योद्धा—अजर-अमर २११
- मिडिल ईस्टकी युद्ध-नीति २३५
- अणु-युद्ध—बिना घबराहट २३७
- एक गीदड़ : एक भेड़िया २४३
- निर्णायक वायु-युद्ध : मेरी उद्विग्नता २४९
- जनरल देगाल अपने वीरोचित दर्पके प्रतिबिम्बमें २५६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मज़बूत हाथों
और
प्रतिश्रुत आँखोंका
अभिनन्दन

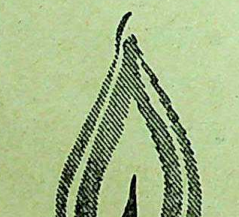

यह चित्र केवल इस पृष्ठपर ही अंकित नहीं है, आज
बाद-विराम और विराम-बाद-युद्धकी सन्धि-तिथिपर
देशकी पृष्ठभूमि बन गया है—हमारी सेनावाहिनीने
देशकी रक्तवाहिनीका स्वरूप धारण कर लिया है।
भारतके दिशानायक प्रधानमन्त्री शास्त्रीजीने 'जो हो,
स्वीकार' कहकर चुनौतीको फ़ौलादी स्वीकृति दी
हमारी शक्ति-पूजाने यह सिद्ध कर दिया है कि प्रजात
देशकी जनता और देशके नेता तथा देशके नेता और
सेनामें क्या रिश्ता होता है। जहाँ तानाशाहकी
कठपुतली बनकर भेड़-बकरीकी तरह नाचती और
है, वहीं लोकराज्यकी सेना आस्थाका गाण्डीव हाथमें
अपना सर्वस्व पत्र-पुष्पकी तरह शस्त्र-आराधनपर न्यो
कर देती है। जब हमारे दुश्मन नक़्शे फैला-फैलाकर
शेख़चिल्लीपनकी लकीरें खींच रहे थे, हमने अपने पौ
तसवीरमें शक्तिके सुर्ख़ रंग भरे हैं—सुबहकी तरह
और लहूकी तरह गर्म। जब हमारे पड़ौसी घुसपैठ
क़वायदसे सीमापर आगे बढ़ते हुए फ़रेबके झण्डे गा
थे, हमारे जवानोंने अपने रक्तसे आस्थाकी सीमा आंकी
अब हमारे देशकी रुचि युद्ध-विराम और युद्ध-बन्दी रे
से भूलभुलैया बनानेकी नहीं रही, पाकिस्तानको
ग़लत हरकतोंके बदले पीछे ठेलकर हमने अपने पौरु
अस्तित्वकी एक लक्ष्मण-रेखा खींची है—जो भी
लाँघेगा हम उसे जीवित या मृत उस पार फेंक देंगे।
यह स्वीकार करते हम दुःखी नहीं हैं कि जब दु
अक्षौहिणी सेना उधार माँगनेमें लगा था हम बार
अपने तार्किक श्रीकृष्णसे कह रहे थे कि युद्ध नहीं क
भाइयो और अपने सम्बन्धियोंपर हमारा हाथ उठ
पायेगा···लेकिन यह भी सही है कि जब दुश्मन छल-प्र
व्यस्त हो गया था हमने अभिमन्युकी तरह चक्रव्यूहको
देनेका निर्णय ले लिया था। निश्चित ही चक्रव्यूहको
की विधि हमने माँके गर्भमें रहते नौ महीनेमें सीखी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

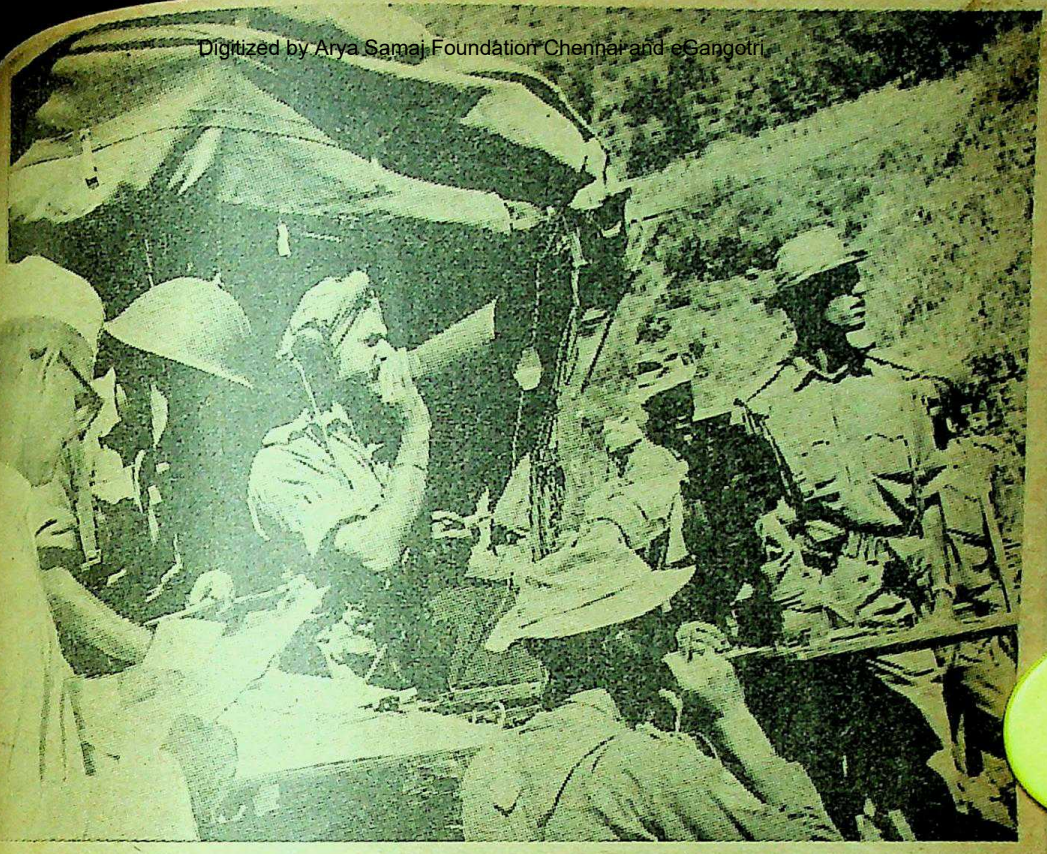

लेकिन पिछले अठारह वर्षोंमें चक्रव्यूहको भंग कर वापस लौट आनेकी विधि भी हम सीख चुके हैं। अब वे दिन लद गये जब हम रथके टूटे हुए पहियेसे आत्मरक्षा करनेके लिए विवश थे····!

■

देश-भरके नगर दिवालीके कुमकुमोंसे जगमग हैं—एक प्रकाश-पर्व तब मनाया गया था अयोध्यामें, जब राम वनसे लौटे थे ···एक प्रकाश-पर्व आज मनाया जा रहा है जब इस त्यौहारके अर्थ बदल गये हैं, पूजा बदल गयी है—हम आज या तो आकाशदीप जला रहे हैं जो हमारे वीर शहीदोंकी स्मृति हैं या फिर प्रकाश-स्तम्भ बना रहे हैं जो युद्ध-भूमिपर लड़ते-जूझते जवानोंको दिशा देंगे। हमने १९६२ में अपने आँगनकी जो दीप-पंक्तियाँ बुझा दी थीं, आज वे हमारी छतके कंगूरोंपर जग-मगा रही हैं। कलतक हम दशमीके दिन शस्त्र-पूजा करते थे, अब अमावस्याको शस्त्र-पूजा करेंगे।····

इसीलिए ज्ञानोदयका उपहार भी बदला हुआ लगेगा लेकिन सामयिक और सापेक्ष भी। उन दिनों जब उरि-पूंच तथा गदरा-बामेरमें मोर्चे जमे थे और कूटनीति तथा राजनीतिके नित-नये मोर्चे दिशा-दिशा खुलते जा रहे थे, यह लगा था कि युद्धका विश्लेषण आवश्यक है क्योंकि विराम आज निमित्त मात्र है, गोला-बारूद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
सीमापर ज्वालामुखी की तरह सोया है, पता नहीं किस मुहूर्त्तमें वह फट पड़े....?
हमने यह महसूस किया है कि जिस देशके पास हिमालय-सा मस्तक हो वह ऊँचाईकी तलाश कर सकता है, जिस देशके पास रामायण-सा संघर्ष हो वह फ़ैसलेकी बात सोच सकता है, जिसके पास गौतम-गान्धीका चिन्तन हो वह शान्तिके रास्ते सुझा सकता है और जो महाभारत सिरहाने रखकर सोता हो वह दुश्मनके दाँव-पेंचोंका सामना ही नहीं कर सकता, उसके षड्यन्त्रोंका नक़ाब भी उधेड़ सकता है। सीमा-विवादके जिस ज्वलन्त बिन्दुपर भारत आज खड़ा हुआ है वहाँसे तीसरे विश्वयुद्धके जलपोतका मस्तूल सबसे पहले दिखाई देगा....केवल इसी दूरदर्शी कारणसे अपने लोकतन्त्र तथा अपनी आस्थाकी रक्षा करते—अपनी सार्वभौमिकता तथा न्यायके लिए लड़ते हुए भारत सारे विश्वको एटमी तानाशाहीसे आगाह कर देना चाहता है—, यह व्यक्तिगत प्रश्न नहीं है सारी मानवताका प्रश्न है। यदि कुछ वर्गमील ज़मीनकी पराजय किसी राष्ट्रको एक हज़ार वर्ष तक युद्ध चलानेकी ज़िदपर उतारू कर सकती है तो अपनी शक्ति और आस्थाके विजयमण्डित इस प्रकाश-पर्वपर अनन्त काल तक ऐसे अनामन्त्रित युद्धोंको पीछे ठेल देनेकी प्रेरणा हमारे रक्तमें सहज ही प्रवाहित हो सकती है....., साक्षी है इछोगिल केनाल। इस प्रेरणा, इस प्रकाश, इस आस्था, इस विजय, इस निश्चय, इस शक्ति और देशकी इस उभरती हुई नयी तसवीर-का अभिनन्दन !

■

अभिनन्दन ज्ञानोदयकी ओरसे इस 'युद्ध-विशेषांक' के रूपमें। युद्ध-विरामसे इस दीपबेला तक केवल एक महीनेके समयमें यह विशेषांक प्रकाशित करना असम्भव-सा लग रहा था। युद्धसे पहले इस वर्ष दिवालीपर 'दाम्पत्य-विशेषांक' प्रकाशित करनेकी घोषणा हमने की थी लेकिन पाक-आक्रमणसे उत्पन्न बदली हुई परिस्थितिमें अपने निश्चयमें परिवर्तन करना पड़ा क्योंकि समयसे कटकर चलना ईमानदारी नहीं है। भारतीय ज्ञानपीठकी अध्यक्षा श्रीमती रमा जैनने यह प्रेरणा दी कि क्यों नहीं ज्ञानोदय इस अवसरपर प्रतिरक्षा तथा युद्धसे सम्बन्धित ऐसा विशेषांक प्रकाशित करे, जो वर्तमान स्थितिपर सोचने-समझनेकी सामग्री दे सके।....भाईसाहब (लक्ष्मी-चन्द्र जैन) ने 'युद्ध-विशेषांक' की रूपरेखाको दिशा दी और 'विश्वयुद्ध' पर एक सर्वांग विश्लेषण प्रस्तुत किया। वे विशेषांकके लिए सामग्री जुटानेमें दिन-रात व्यस्त रहे हैं। समयकी कमीके कारण यह सोचा गया कि समूचा विशेषांक ज्ञानोदय और भारतीय ज्ञानपीठके सहयोगियों-द्वारा ही तैयार किया जाये। केवल बीस दिनके परिश्रमसे यह विशेषांक आपके हाथों हम पहुँचा सके हैं। इसमें कई कमियाँ रह गयी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं—कुछ रचनाएँ स्थानाभावके कारण जा नहीं सकीं, कई रचनाएँ समयाभावके कारण लिखी नहीं जा सकीं या आधी लिखी रह गयीं।

• भारतीय ज्ञानपीठके कलकत्ता-कार्यालयसे सुदर्शन चोपड़ा तथा अहमद सलीम, वाराणसीसे गोकुलचन्द्र जैन, भोलानाथ बिम्ब तथा पद्मधर त्रिपाठी और दिल्ली कार्यालयसे नर्मदेश्वर चतुर्वेदी तथा श्रीकृष्णने सहर्ष सहयोग दिया।

• श्रीमती कुन्था जैन का विशेष सहयोग योजना-प्रारूपसे ही मिलता रहा। 'युद्ध-भूमिपर घूमता हुआ रथ'-जैसी सम्यक् रचना उन्होंने दी है। भाई श्रीकान्त वर्माने आवश्यक सामग्री दिल्लीसे भेजी है।

• सहायक तथा सन्दर्भ-सामग्री भारत शासनके पत्र-सूचना विभागसे प्राप्त हुई है। कलकत्ताके पत्र-सूचना अधिकारी मदन गोपाल तथा उनके सहायक हरिसिंहने बहुत सहायता दी।

• 'डिफ़ेन्स-विंग' से वे सब युद्ध-चित्र प्राप्त हुए हैं जो अगले पृष्ठोंकी सज्जा बने हैं।

• रशियन, अमेरिकी तथा ब्रिटिश सूचना-केन्द्र हमें सन्दर्भित सामग्री देते रहे हैं। आकाशवाणी, कलकत्ता तथा 'हिन्दुस्तान समाचार' का सहज सहयोग हमें प्राप्त हुआ है।

• पत्र-परिचर्चाके लिए हमेशाकी तरह सभी लेखकोंने तत्काल सामग्री भेजी। हमें खेद है कि चाहते हुए भी कुछ रचनाओंका उपयोग नहीं किया जा सका है।

• इस विशेषांककी घोषणाके साथ ही हज़ारसे अधिक ग्राहक हमारे पाठक-परिवारमें आये हैं। स्थिति यह कि विशेषांकका मुखपृष्ठ छपने तक एक भी प्रति बाक़ी नहीं रही।

• विज्ञापनदाताओंने संकटकालीन स्थितिसे अन्यथा जाकर भी हमें सहयोग दिया है।

सबका आभार।

■

आप सबके सहयोग-सहित इस 'युद्ध-विशेषांक' की कई प्रतियाँ प्रधानमन्त्री रक्षामन्त्री और सूचना-प्रसारण मन्त्रीके हाथों मोर्चेपर तैनात जवानोंके लिए भारतीय ज्ञानपीठकी ओरसे भेजी जा रही हैं।

अभिनन्दन उन मज़बूत हाथों और सीमापर तैनात प्रतिश्रुत आँखोंका, जिनतक देश-कालकी यह तसवीर पहुँचेगी।

—रमेश बक्षी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युद्ध-नद के किनारे

● इस वर्षके नोबेल पुरस्कार-विजेता शोलोख़ोवने जैसे दोन-नदके किनारे खड़े होकर एक पुराने क़ज़्ज़ाकी गीतको अपनी नसोंमें बहता महसूस किया था—"हमारी धरतीपर हलोंकी लीकें नहीं हैं, हमारी धरतीपर घोड़ोंकी टापोंके निशान हैं।" —ठीक वैसे ही भारतने युद्ध-नदके किनारे खड़े होकर यह अनुभव किया है कि प्रजा-तन्त्रके मुक्ताकाशमें धर्मद्वन्द्व नहीं घिर सकता, साहस और शक्तिके मन्दिरमें समझौते और पराजयके फूल नहीं चढ़ाये जा सकते। यह स्पष्ट हो गया है कि भारत-पाकका वर्तमान संघर्ष एक मज़हबपरस्त देश और एक धर्म-निरपेक्ष देश-का संघर्ष है···लेकिन हमारी भूमिका कौन-सी हो ?····

कृष्णकी भूमिका क्यों न अदा करें ?

मैं अपने-आपको धर्म-निरपेक्षता और गुटनिरपेक्षताके सिद्धान्त समझाता हूँ, पर समझ ही में नहीं आता कि निरपेक्षताके लिए कोई लड़ कैसे सकता है, जय-पराजयसे निरपेक्ष होकर लड़ा जा सकता है, पर जिसपर लड़ना होगा, वह कैसे निरपेक्ष होगा। इस सवालका जवाब ढूँढ़ना चाहता हूँ।

मैं तो देख रहा हूँ कि हिन्दुस्तानकी लड़ाई धर्म-निरपेक्षताके लिए नहीं, धर्मके लिए है। धर्मको हमने मज़हबसे एकाकार करके, उसको पर्यायके रूपमें व्यवहार करते-करते अपने राष्ट्रीय चिन्तनके साथ अन्याय किया है। हमारा धर्म व्यापक है, वह विध्यात्मक अहिंसा, दूसरे शब्दोंमें सर्वभूतमैत्रीपर आधृत है। हमने मज़हबी तअस्सुबके ख़तरनाक नतीजोंसे (पिछली दस सदियाँ विश्वके इतिहासमें इसकी गवाह रही हैं) घबराकर एक निषेधात्मक नीति अपनायी। हम अपने व्यवहारमें पश्चिमी जनतन्त्रोंकी नक़लमें निषेधात्मक हो गये। हमारी शासन-नीति भेद मानकर चली। आज दूसरे टकरावसे हमें झकझोर दिया गया है कि हम सोचें, विश्वमैत्रीके भेदमूलक आदर्शोंके ग़ुलाम बने रहें कि अपनी सांस्कृतिक भावधारासे प्राप्त अभेदमूलक विश्वमैत्रीकी प्रतिष्ठा अपने पराक्रमसे और अपने स्वधर्माचरणसे करें। यह युद्ध स्वधर्मके लिए है।

संयुक्त राष्ट्रसंघ जिन इकाईबद्ध हिमग्रस्त ऊर्ध्वमुख पेनगुइननुमा चेतनाओंका संघ है, उन चेतनाओंकी आसुरी शक्तिसे भारतको संघर्ष करना है, भारत किसीका मुखापेक्षी होकर या किसीका पिछलगा होकर यह संघर्ष नहीं जीत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्र-परिचर्चा

...ता। पाकिस्तान या चीन तो केवल ...नित हैं। पाकिस्तान जिस ग़लत आदर्शकी ...यादपर खड़ा हुआ, उसे तथाकथित ...ता और जनतन्त्रके ठेकेदार ब्रिटेनने ही ...नी ज़मींदाराना नीतिसे परिचालित किया ...र उसे यह शक्ल दी। कश्मीर या संसार-...कोई भी प्रदेश मज़हबी आधारपर मिलता ...ा तो मनुष्य कहाँ रहेगा? पाकिस्तानसे ...ते समय हमारे संस्कार जो इतने मानवीय ...हैं और अब भी हैं, उसकी जड़ कोरी ...पेक्षता नहीं हो सकती। हमें स्पष्ट रूपमें ...कार करना होगा कि हम उपासना-पद्धति, ...वास या श्रद्धाको व्यक्तिकी स्वतन्त्र इच्छाके ...ीन मानते हैं, हम प्रत्येक व्यक्तिकी इस ...धीनताका महत्त्व इसीलिए मानते हैं कि ...धीन होकर वह अपने स्वका, विश्वके स्वसे ...ात्म्य या ताद्रूप्य स्थापित कर सकता है। ...धीनता हमारा धर्म है, इसके सापेक्ष होकर ...हम इसकी रक्षाके लिए बाधाओंसे संघर्ष ...र सकते हैं और संघर्ष करते हुए भी बाधक ...ने मनुष्यके प्रति मानवीय भाव रख सकते ...उसकी यन्त्ररूपताके प्रति उपेक्षाभाव रख ...कते हैं और उसकी बेबसीके प्रति करुणा-...व रख सकते हैं।

इस धर्मको सामने रखना होगा, इस धर्म-...प्रणेता कृष्ण, बुद्ध, महावीर, शंकर, कबीर, ...लसी, सूफ़ी सन्त, रामकृष्ण, अरविन्द और

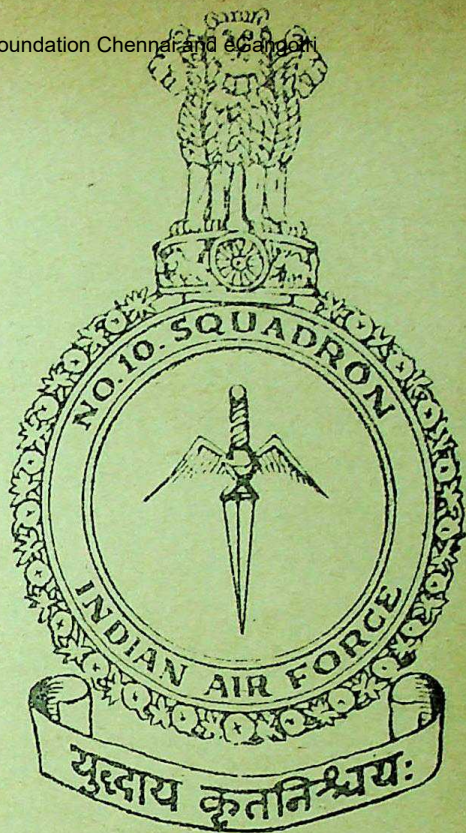

विद्यानिवास मिश्र। प्रभाकर माचवे। शैलेश मटियानी। मन्मथनाथ गुप्त। विष्णु प्रभाकर। अवनीन्द्रकुमार विद्यालंकार। गिरिजाकुमार माथुर। महेन्द्र कुलश्रेष्ठ। रवीन्द्र कालिया। अजीत कौर। सोमा वीरा। सुनीता। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना। कुंकुम जोशी। जगदीश चतुर्वेदी। हिमांशु जोशी। सेठ गोविन्ददास। अनन्त मिश्र। अमरेन्द्र सिन्हा। कैलाश वाजपेयी। मिर्ज़ा इस्माइल बेग़ और दूधनाथ सिंह।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सशक्त सैन्य लाल···'-जैसी मार्चिंग-धुनमें चतुर्दशपदी मेरी है···युद्धबोध गत महायुद्धमें सन् ४० से ४५ तक हमारी पीढ़ीके लिए दूरका अनुभव रहा : गान्धीके वैयक्तिक सत्याग्रहसे लेकर जनयुद्धके प्रचारतक। मैं सेवाग्राममें सन् ४० में उन दिनों था जब जवाहरलालको पकड़ा गया था, विनोबा भावेके बाद, और गान्धीजी 'करो या मरो' का नारा दे रहे थे। तीन वर्ष बाद मैंने बम्बईके रेडस्क्वायर हॉलमें विजयालक्ष्मी पण्डितकी अध्यक्षतामें प्रगतिशील लेखक संघ और भारत-सोवियत मैत्रीसंघके सम्मिलित कवि-सम्मेलनमें 'नोवा ज़ेम्लिदा' (नयी ज़मीन !) कविता पढ़ी थी। पर वह सब लेखनीको अस्त्र बनानेकी प्रतिबद्धता आज बहुत 'रोमैण्टिक' लगती है। जैसे शान्तिके लिए 'शान्तिवाद' और युद्धके लिए 'युद्ध-वाद' दोनों ही बचकानी हठधर्मी मात्र थी···

एक अमेरिकी राजनीतिके प्रवासी-प्रोफ़ेसरके साथ परसों लंचपर बहस हुई। वे बोले 'इनोसेन्स एण्ड पावर बोथ डोण्ट गो टुगेदर' (भोलापन और शक्ति एक साथ नहीं चल सकते)। मैंने कहा—'गान्धीमें दोनों थे।' वे बोले—'ख़ैर, जीससमें भी रहे होंगे।' पास बैठे हमारे यहूदी मित्रने व्यंग्य किया : 'गये महायुद्धमें जीससका नाम जिनपर लिखा था ऐसे बम भी बरसाये गये !' गये महायुद्धमें जापानमें पीतलकी बुद्ध-प्रतिमाएँ गलाकर उनको बन्दूक़की और तोपोंकी गोलियोंकी टोपियाँ बनायीं गयीं। युद्धकालमें कैसा रंग-बदल (कमोफ़्लाज) हो जाता है कि रातों-रात एडीटर को 'फ़ाइटर' बना दिया जाता है। बेकारकी चीज़ें कारगर जान पड़ती हैं; ताड़के पेड़ोंके तनोंको काटकर चूना पोतकर एक ख़ास कोणमें खड़ा करनेसे वे दूरमार तोपें लगती हैं। प्रोपैगण्डाके परावर्तनसे सचको आधा सच और झूठको पूरा सच बनानेकी कोशिशें होती हैं। युद्ध आत्माकी विकृति है····युद्ध आत्माको शुद्ध करता है जैसे तेज़ाब····

उस दिन 'दिनकर'जीके निवासपर 'संज्ञा' की गोष्ठी हुई 'युद्ध और साहित्य' पर। कई धुरन्धर वक्ता बोले। 'कविका धर्म केवल कविता लिखना है। उसे सामरिक संरक्षणसे क्या ?' एक नये कवि बोले, जो कि 'इंगित' में 'बुद्धिजीवियोंके वक्तव्य'-जैसी ठीक विपरीत चीज़पर हस्ताक्षर कर चुके थे। तो दूसरी ओर एक कामरेड बोले 'अभी तो यहाँ एक-दो हज़ार ही मरे हैं। सोवियत रूसमें तो रोज़ चार हज़ारके हिसाबसे चार सालतक लोग मर रहे थे गये युद्धमें। पाँच लाख युद्धमें मरे, पाँच लाख भूखसे मर गये।' कविता बेचारी खिसककर किसी कोनेमें दुबकी और बादमें दूसरे कमरेमें चली गयी, यहाँ शब्द-शूर और वाग्वीर अपने मतोंके मुगदर भाँजते रहे। एक महिलाने कहा—'जबतक प्रजननशक्ति मौजूद है, मरणसे डरना नहीं चाहिए !' अध्यक्ष मुनिवरने प्रवचन शुरू कर दिया—'युद्ध और शान्तिसे परे अर्जुन और कृष्णवाली स्थिति, यानी परमके प्रति समर्पण-भाव ही अन्तिम है। धर्म और कामके बीच अर्थ जो है, वही निरर्थक है'—इत्यादि परिचित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वरावलि। तीन घण्टेकी समझमें आ गया कि गोष्ठीका नाम 'संज्ञा' क्यों रखा गया, इसे तो 'मूर्च्छना' या 'पीनक' कहना उचित होता। एक भी वक्ता लेखक-कवि युद्धके मोर्चेपर नहीं हो आया था, एक-को भी 'प्रत्यय' नहीं था—सब बातें किताबी, अनुभूतिशून्य, छाया-स्वप्न-रस-भरी 'ड्राइंग-रूमीय'। मुझे बहुत ग्लानि हुई कि समय मैंने व्यर्थ खोया—कुछ वक्तव्योंमें, कविताओंमें युद्धके 'हॉरर' का थोड़ा-सा अन्दाज़ था। पर वह किसी भी युद्धके वर्णनमें हो सकता था, उत्तरकाण्ड या महाभारत या हल्दीघाटी या पानीपतके। ख्वाजा गुलामुस्सैयदैन एकमात्र हिन्दीभाषी उस गोष्ठीमें बोले। उन्होंने बहुत सही बात कही—'इस जंगके वक़्त पुराने रामायण या महाभारतके जंगका ज़िक्र करना बेकार है। यहाँतक कि सौ साल पुराने जंग भी अब मानी नहीं रखते। लड़नेके औज़ार बदल गये, हथियार बदल गये।' और उन्होंने अली सरदार जाफ़रीकी नज़्म सुना दी—जो 'जनयुग' में भग्नाक्षरोंमें छपी है।

मैं यह युद्ध शुरू होनेके ठीक पहलेके हिन्दी साहित्यिक मासिक-साप्ताहिक पत्र उलट-पलट रहा था। कहीं भी कोई भी युद्ध नामकी चीज़की छाया नहीं—अब तो चीनका नाम भी लेखक भूल गये थे, जैसे। हम लेखक (?—प्रश्नवाचक चिह्न, सम्पादकका) लोग, कैसी हवा है, खोखली अयथार्थकी दुनिया-में रहते हैं, और अपने-आपको 'भविष्यद्रष्टा' इत्यादि समझते हैं। हम तो सामान्य नाग-रिकसे भी कम युग-बोध रखते हैं, उससे भी कम परस्पर सहकारिता रखते हैं।

गोष्ठीसे लौटते हुए जगदीशचन्द्र माथुरजी-ने बड़ी अच्छी बात कही—"युद्धकी कविता भी कई स्तरकी हो सकती है। चण्डी-स्तोत्र है, 'मालतीमाधव' में वे ओजपूर्ण अंश हैं, होमरका युद्ध वर्णन है जो केवल वर्णनात्मक दर्पणप्राय है, उद्बोधन गीत भी है। आख़िर कविता भी 'क्रैफ़्ट' है, और युद्धसे कोई भी कारीगरी कैसे बच सकती है...."

रास्तेमें पारसी आरामगाह और ईसाई क़ब्रिस्तान हैं, जो मेरे निवासके बहुत क़रीब हैं। यहीं पारसी इंजीनियर पायलट (बलवन्तराय मेहताके विमानके चालक) का अन्तिम संस्कार हुआ। यहीं परसों एक अज्ञात नाम ईसाई मेजरका मिलिटरी सम्मानके साथ दफ़नविधि हुआ....मौत, मौत, मौत! वीर-मरण, शहादत, बलिवेदीपर रक्त-तर्पण, 'एक फूलकी चाह'—'सुन्दर मो होणार! मरणाने जगणार!!'—तुकाराम कह गये थे कि 'रात-दिन हमें युद्धका प्रसंग है: एक भीतर है, एक बाहर है!'

पर आज ये सब हमारे गत महायुद्धके कामरेड-मित्र क्यों नहीं बोलते? वे किस मुँह-से बोलेंगे? कलतक तो वे चीनकी प्रशंसा करते नहीं अघाते थे। कलतक वे पाकिस्तान-के 'आत्मनिर्णयके अधिकार'के लिए झगड़ते थे—भाषावार प्रान्तरचना, भाषा और संस्कृतिकी एकता, भाषा ही धर्म है अतः उस-पर बलि हो जाओ। ये 'मुजाहिदीन'से कैसे लड़ेंगे? ('टाइम' ने मुजाहिदीनका अँगरेज़ीमें अर्थ 'मुहाजिरीन' वाला दिया है!)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और अब ये हमारे मित्र कश्मीर में लेखकों को क्यों नहीं ले जाते जैसे सन् '४७ में ले गये थे ? अब वे प्रच्छन्न रूपसे रजनी पामे दत्तकी ताईद करेंगे कि 'कश्मीर कश्मीरियोंके लिए' हो, या वे माओकी थीसिससे इत्तफ़ाक़ करेंगे। 'जोश' साहब अब कराची रेडियोपर 'अली सिकन्दर !' 'या अली !' के नारे दे रहे हैं और सज्जाद हुसैनकी ढाकामें सांस्कृतिक स्वतन्त्रता क्या कर रही है ? युद्धकालमें सारे परिपेक्ष्य उलट-पुलट जाते हैं—जैसे पिकासोके 'गोएर्निका' में !

मेरे जानते युद्धकी वर्दी हिन्दीके बड़े लेखकोंमें केवल 'अज्ञेय' ने पहनी थी, गये महायुद्धमें। 'कैप्टन काकू····', आज दिनमान-में उनकी कविता पढ़ी 'आधी रातमें····'। भीड़ और अकेलेपनमें वे सेतु खोज रहे हैं। वह सेतु तो 'अपने-अपने अजनबी' के आखिरी हिस्सेमें टूट गया था। 'हम, हम, हम भारत-

नयी दिल्ली]

नहीं' ही सिर्फ़ नहीं हैं; हम सुरक्षाके सैनिक सामान्य नागरिक भी हैं। हमें असाधारणी-करणका दम्भ या दावा करनेका कोई अधिकार नहीं है। सन् '४२ में 'अज्ञेय'ने फ़ासिस्ट-विरोधी हिन्दी-उर्दू लेखकोंका सम्मेलन बुलाया था। पर कामू एल्जीयर्स नहीं गये, क्यों नहीं ?

नागार्जुन कह रहे थे—अब बम्बईके उर्दू लेखक, सिनेमाई पंजाबी-हिन्दी लेखक इस बार बड़े चुप हैं ! जर्मनी और जापानके ख़िलाफ़ तब, गये महायुद्धके समय, खूब चिल्लाते थे। अब इन्हें क्या हो गया ? कहीं इनके मनमें चोर तो नहीं छिपा है, कोई दाढ़ीमें तिनका तो नहीं है। पर ऐसे तिनके महाकालकी झंझामें उड़ जायेंगे—बचे रहेंगे जोधपुर और अमृतसरके ज्वालामुखीके मुँह-जैसे बड़े गड्ढे। और जवानोंका अदम्य उत्साह, मरनेके लिए होड़।

—प्रभाकर माचवे

हम : किसी भी आक्रान्ताके जबड़े तोड़कर रख देनेको प्रस्तुत···

पाकिस्तान और भारतवर्षके वर्तमान युद्ध-सन्दर्भमें, पाकिस्तानको 'आक्रान्ता' और भारत-वर्षको 'आक्रान्त' कहा जाता रहा है। यहाँ भारतवर्षके 'आक्रान्त' होनेका अभिधार्थ सिर्फ़ यह है, कि 'उसपर आक्रमण किया गया है !'··· और इस अर्थमें 'आक्रान्त' होनेकी स्थितियाँ तो भारतवर्ष सहस्राब्दियोंसे झेलता चला आ रहा है, प्रश्न सिर्फ़ 'भयाक्रान्त' न होनेका शेष रहता है !

'भयाक्रान्त' का सबसे प्रमुख लक्षण यह होता है कि वह 'अपने प्रति अपनी आस्थाके सम्पूर्ण विघटन' से पीड़ित होकर, आत्म-रक्षार्थ औरोंकी 'शरण' खोजने लगता है। इस दृष्टिसे पाकिस्तान 'आक्रान्ता' होते हुए भी 'भया-क्रान्त' है—और भारतवर्ष 'आक्रान्त' होते हुए भी अभयजीवी। अपने समग्र शौर्य और पुरुषार्थके साथ किसी भी 'आक्रान्ता' के जबड़े तोड़कर रख देनेको प्रस्तुत युद्धचेता अहिंसा-वादी राष्ट्र !

वास्तवमें, हमारे राष्ट्रनायकोंकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अहिंसा' को आजतक नितान्त ग़लत सन्दर्भों-में ही व्याख्यायित करनेवाले विदेशी राष्ट्रों—ब्रिटेन और अमेरिका—को सबसे बड़ा आघात इस बातसे लगा है, कि भारतवर्षके राष्ट्र-नायक 'अहिंसा' का 'भाष्य' सिर्फ़ शब्दोंके ही द्वारा नहीं, बल्कि अपने दुर्द्धर्ष बलिदानी सैनिकोंके शत्रुघाती शस्त्रों-द्वारा भी रचनेकी क्षमता रखते हैं। वर्तमान पाकिस्तान-भारतवर्ष हिंसा-युद्धकी सर्वोपरि उपलब्धि यही है कि इस युद्धमें हमारी शत्रुघाती सेनाओंने 'अहिंसा'-की वास्तविक व्याख्या कर दी है : 'अपनी हिंसा—अपने भौतिक और आत्मिक-अस्तित्व-की हत्या—न होने देना ही अहिंसाका मूल सिद्धान्त है !'

सम्भवत: कई विदेशी सत्ताएँ भारतवर्ष-के राष्ट्रनायकोंके द्वारा अभी भी उसी 'अहिंसा' के अपनाये जानेकी आशा रखते थे, जिसे 'अहिंसा' अँगरेज़ोंकी दासतासे मुक्त होनेके लिए अपनायी गयी थी।....मगर यह हमेशा याद रखा जाना चाहिए, कि सैन्य-शक्तियोंसे शून्य होनेकी स्थितिमें, अपने आत्मिक पौरुषके द्वारा विदेशी शासकोंकी तमाम हिंस्र ताक़तोंको पराजित कर देनेके लिए कृत-संकल्प स्वातन्त्र्योन्मुख राष्ट्रकी 'अहिंसा' और अपनी समग्र सैनिक-शक्तियोंके साथ आक्रान्ताओंके जबड़े उखाड़कर रख देनेको कृतसंकल्प स्वतन्त्र राष्ट्रकी 'अहिंसा' में बहुत बड़ा फ़र्क़ होता है। एक परतन्त्र राष्ट्र सिर्फ़ अपनी आध्यात्मिक शक्तियोंके साथ विदेशी शासकोंसे जूझनेको बाध्य भले ही हो मगर एक स्वतन्त्र राष्ट्र अपनी सामरिक शक्तिके साथ आक्रान्ताओंको खदेड़ फेंकनेका पूरा-पूरा अधिकार रखता है। अस्तु 'अहिंसा'को जो व्याख्या हमारी अजेय सेनाओंने प्रस्तुत की है उसके आगे किसी भी प्रचारका कोई प्रश्न-चिह्न नहीं लगाया जा सकता, कि "बुद्ध और गान्धीका देश भी 'हिंसा'का मार्ग अपना सकता है ?"

बुद्ध और गान्धीकी 'अहिंसा' विराट् थी। उनकी 'अहिंसा' के सामने हिंस्र शक्तियोंको घुटने टेकने पड़े थे। अस्तु एक महान् सांस्कृतिक विरासतवाला राष्ट्र भारतवर्ष सिर्फ़ उसी 'विराट् शक्तिमती अहिंसा' को अपना सकता है, जिसके आगे सारी हिंस्र शक्तियाँ परास्त हो जाती हों। 'हिंसा' के आगे घुटने टेक देनेवाली 'आत्मघाती अहिंसा' हमारा 'राष्ट्रधर्म' कभी नहीं हो सकती। अलबत्ता इस बातका निर्णय तो आनेवाला इतिहास ही करेगा कि जिस भारतवर्षने सिर्फ़ अपने आत्मिक पौरुषके आधारपर, बिना रक्त-क्रान्ति-के ही, सूर्यको अस्त न होने देनेवाले ब्रिटिश साम्राज्यकी नींव उखाड़कर फेंक दी थी, वह अपने आत्मिक और भौतिक दोनों शक्तियोंके साथ जूझनेके बावजूद अपने सार्वभौम स्वातन्त्र्य-की रक्षा कर सकता है या नहीं। वस्तुत: आज हमारा पूरा राष्ट्र इतिहास-निर्माणकी पीठिकापर आ खड़ा हुआ है।...और यह ध्रुव-सत्य है कि 'इतिहास-लेखन' के युगकी अपेक्षा 'इतिहास-निर्माण' का युग कहीं बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण होता है। भारतवर्षकी वर्त्तमान पीढ़ियोंका यह सौभाग्य है कि हमें इतिहासके निर्माणका अवसर प्राप्त है, और इस बातके

[शेषांश पृष्ठ २५३ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'दाम्पत्य विशेषांक'

दिसम्बर १९६५ :: पृष्ठ लगभग २५० :: मूल्य २.००

- युगल-युग्म चित्रों सहित रंगीन सज्जा
- परिचर्चा, संस्मरण, डायरी, कहानी, पत्र, व्यंग्य, एकांकी···सभी विधाएँ।

ज्ञानोदय

• इस विशेषांकके लिए लिखे गये विशेष लेख :

० दाम्पत्य छवियाँ : इतिहासके विस्तारमें – **भगवतशरण उपाध्याय** ० दाम्पत्य-जीवनका मनोविज्ञान – **इलाचन्द्र जोशी** ० महाभारतकालीन दाम्पत्य – **प्रभाकर माचवे** ० जातक कथाओंमें दाम्पत्य जीवन – **भदन्त आनन्द कौसल्यायन** ० सुखी दाम्पत्य-कुछ प्रयोग ० सफल दाम्पत्यके सूत्र : वात्स्यायनका साक्ष्य – **मन्मथनाथ गुप्त** ० अर्धनारीश्वरके नये चेहरे – **कुबेरनाथ राय** ० कुलवधूका जमा-खर्च – **शशिप्रभा शास्त्री** ० दाम्पत्य और उसका अतीत – मूल अर्थकी खोजमें – **भोलाशंकर व्यास** ० कमलकी कैफ़ियत : उसीकी ज़बानी – **लावण्यप्रभा राय** ० विवाह एवं दाम्पत्य मर्यादाके कुछ पुरातन सन्दर्भ – **रामप्रताप त्रिपाठी** ० दाम्पत्य ग्रस्त उपन्यास – **धनंजय वर्मा** ० वेदोंमें दाम्पत्य – **रंगनाथ राकेश** ० हिन्दीकी नयी काव्य-रचनामें दाम्पत्य भाव – **सियारामशरण प्रसाद** ० जैनेन्द्रके दम्पति – **भारतभूषण अग्रवाल** ० लोकजीवन-सुआपंखी सपने – **श्याम परमार** ० ललितकलाके अर्धनारीश्वर – **जगदीश गुप्त** ० आधुनिक दाम्पत्यका आई० क्यू० – **रजनी पनिकर** ० टॉलस्टॉयका दाम्पत्य जीवन – **डॉ० लक्ष्मीचन्द्र**।

कहानियाँ : राजेन्द्र यादव। कमलेश्वर। कमल जोशी। कर्तार सिंह दुग्गल।

व्यंग्य : अपनी ही परिक्रमा : एक सधिक्कार पत्र – हरिशंकर परसाई ० एक रूमानी फ़िराक़ : एक रूमानी फ़िक्र – श्रीलाल शुक्ल ० दाढ़ी और दाम्पत्य – काका हाथरसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

० संगीत = राग दाम्पत्य – शान्ति मेहरोत्रा ० मैं आदम : तुम हव्वा – गोपाल प्रसाद व्यास ० दाम्पत्यगर्भित कविता – दिनकर सोनवलकर ० चुरायी हुई डायरी – इंदुचन्द्र वर्मा।

ललित रचना : ० विवाह-धूम – विद्यानिवास मिश्र ० नया मेघदूत – शरद जोशी ० बम्बईके पड़ोसी – प्रेमकपूर ० ....और सर्पगन्धाएँ – अमृता भारती ० हॉट वाटर बॉटल – अजीत कौर ० एक प्रोषितपतिकाका आत्मकथ्य – पीनीपोलिया।

सात समुद्र पारके मंगल सूत्र : ० सोमा वीरा ० सुनीता।

डायरियाँ : ० नितान्त निजी –ममता अग्रवाल ० अविवाहित पृष्ठ – सुधा अरोड़ा

दाम्पत्यकी परिधिमें दो एकांकी : ० पिपासा – विष्णु प्रभाकर। ० टेलीफ़ोन – लक्ष्मीनारायण लाल।

परिचर्चाएँ : ० एक जोड़ी समस्या : मंच पर–सलमा सिद्दीक़ी। परेश। इरफ़ाना सत्तार। चित्रा मुद्गल। अनामिका। निर्मला वर्मा। पुष्पा राही। (नेपथ्यमें – कुसुम राजे। भारती। बच्चन। तेजी। अज्ञेय। कपिला) ० हर घर एक अलग देश – कुन्था जैन।

साथ ही : कृष्णचन्द्र, सुदर्शन चोपड़ा, शिवमंगलसिंह सुमनकी रचनाएँ भी।

सम्पादकीय कार्यालय :
९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७
वितरक : बैनेट कोलमैन एण्ड कं० लि०

पूरक विशेषांक : जनवरी १९६६
पृष्ठ १५० :: मूल्य : १.००

'दाम्पत्य विशेषांक'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वयुद्ध - एक
विश्वयुद्ध - दो
विश्वयुद्ध - तीन....

प्रथम विश्वयुद्ध क्यों हुआ ? इतिहासका बालबोध पढ़नेवाला विद्यार्थी यदि यह कहे या समझे कि प्रथम विश्वयुद्ध इसलिए प्रारम्भ हुआ कि २८ जून १९१४ को सारायेवो नगरमें एक व्यक्ति गावरिल्लो पिंज़िपने राजकुमार फ़र्डिनेण्डकी हत्या कर दी थी, तो युद्धके तात्कालिक कारणकी यह सूचना ठीक मानी जायेगी। अब, यदि इसी सूचनाको इस रूपमें रखें कि एक 'सर्ब' अर्थात् सर्बियाराष्ट्रके व्यक्तिने एक 'आस्ट्रियन' की हत्या कर दी थी, तो इतिहासकी परतें खुलने लगती हैं और तब पिंज़िप या फ़र्डिनेण्ड गौण हो जाते हैं, सर्बिया और आस्ट्रिया प्रमुख। फिर इस घटनाका अध्ययन इस बिन्दुमें प्रारम्भ होता है कि चूँकि सर्बिया और आस्ट्रियामें राजनैतिक विद्वेष था, इसलिए जिस 'सर्ब' ने आस्ट्रियन राजकुमारकी हत्या की उसके मनमें अपने राष्ट्रकी ओरसे बदला लेनेकी भावना रही होगी। जब व्यक्ति किसी राष्ट्रका अंग हो जाता है, और राष्ट्रकी राजनीति उसे अपनी उद्देश्य-पूर्तिका साधन बनाती है तो वह इस उद्देश्यके प्रति समर्पित अनुभव करने लगता है। तब राष्ट्रके राग और द्वेष उसकी अपनी भावनाओंके और अपने चिन्तनके अंग बन जाते हैं।

इतिहासमें प्रायः यह हुआ है, और साधारण जीवनमें भी यही होता है, कि हत्या करनेवाला व्यक्ति अपनी हीनता और असामर्थ्यसे हताश होकर हत्या करता है, और इस प्रकार वह हत व्यक्तिकी उच्चतर सामर्थ्यके सामने नमित होता है।

समर्थ आस्ट्रियाने अपने राजकुमारकी हत्याका प्रतिशोध लेनेके लिए सर्बियाके सामने दस शर्तें रखीं। कमज़ोर सर्बियाने और तो सब शर्तें थोड़ी-बहुत आनाकानी करते हुए मान लीं, किन्तु इस शर्तको माननेसे इनकार कर दिया कि आस्ट्रियाकी फ़ौजें सर्बियामें रहकर निगरानी रखें कि सब शर्तोंका पालन होता है या नहीं। हो सकता है, सर्बिया इस शर्तको भी मान लेता, (यद्यपि इसका मानना साक्षात् आत्मसमर्पण होता), लेकिन पड़ोसी राष्ट्रोंको और विशेषकर उन राष्ट्रोंको यह कैसे गवारा होता कि आस्ट्रिया अपनी सत्ता बढ़ाये, जिनके साथ सर्बिया राजनैतिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रथम और द्वितीय विश्वयुद्धके कारण, प्रभाव, परिणामका बिन्दु-बिन्दु विश्लेषण और तीसरे विश्वयुद्धके पूर्वरंगपर लाल बटनका आतंक—इस दिशाका पहला और सम्यक् लेख···केवल ज्ञानोदयके लिए प्रस्तुत।

● लक्ष्मीचन्द्र जैन

सन्धियोंमें बँधा था।

शक्ति-सन्तुलनकी शतरंज

सचमुच ही राजनीति शतरंजकी बाज़ी है—एक घरसे दूसरे घरमें आपने अपना घोड़ा, या हाथी या प्यादा ही भेजा, और सारे घर चौकन्ने हुए कि यह चाल उनके मारकाट और विजयके अपने इरादेको कैसे प्रभावित करती है और इसका समर्थन या प्रतिकार कैसे किया जाये। यूरोपमें उस समय 'शक्ति-सन्तुलन' के आधारपर राजनीति चलती थी। रूस सर्बियाका हिमायती था। आस्ट्रियाकी चुनौती सर्बियाके सामने आयी तो रूसने कहा—यह चुनौती वास्तवमें रूसको दी गयी है। रूसको मैदानमें आते देखा तो जर्मनीने अपने मित्र आस्ट्रियाका पक्ष लिया और कहा कि रूस सर्बियाको आगे करके वास्तवमें जर्मनीसे टक्कर लेना चाहता है। ब्रिटेन, फ्रान्स और इटली जो प्रस्तुत युद्धके क्षेत्रसे अपेक्षाकृत दूर थे और रूसके साथ सन्धि-बद्ध थे, इस युद्धमें पड़ना नहीं चाहते थे। ब्रिटेनने प्रस्ताव रखा कि इस झगड़ेको चारों बड़े राष्ट्र—ब्रिटेन, फ्रान्स, रूस और जर्मनी—मिल-बैठकर निपटा लें, लेकिन जर्मनीने इस प्रस्तावको अस्वीकार कर दिया। उसने आस्ट्रियाको शह दी, और फलस्वरूप आस्ट्रियाने २८ जुलाई-को सर्बियाके विरुद्ध युद्ध घोषित कर दिया। जर्मनीने हल्ला मचाया कि रूस सर्बियाकी मदद करनेके लिए बहुत बड़ी फ़ौज खड़ी कर रहा है जो अन्तमें जर्मनीसे टक्कर लेगी, इसलिए आत्मरक्षा आवश्यक है। अतः, जर्मनीने १ अगस्त-को रूसके खिलाफ़ जंगका ऐलान कर दिया; ३ अगस्तको फ्रान्सके खिलाफ़, और साथ ही उसने बेल्जियमपर क़ब्ज़ा कर लिया, यद्यपि बेल्जियमके साथ उसने मित्रताकी सन्धि की हुई थी और उस सन्धिपर ब्रिटेनके भी हस्ताक्षर थे। ब्रिटेनने जर्मनीको अल्टीमेटम दिया कि वह ४ अगस्तकी आधी रात तक बेल्जियमसे फ़ौजें हटाकर उसे तटस्थ राष्ट्रकी स्थितिमें ला दे। जर्मनीने अल्टीमेटम ठुकरा दिया, और ब्रिटेन लड़ाईमें कूद पड़ा। अब क्या कसर थी? आग भड़क उठी···एक-एक करके बाक़ी देश भी शामिल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होते गये। तीन साल तक अमेरिकाने अपने-आपको युद्ध-क्षेत्रसे अलग रखा लेकिन जब युद्ध-क्षेत्रका विस्तार होते-होते नौबत यहाँतक पहुँची कि जर्मनीने समुद्री-मार्गमें पड़नेवाले तटस्थ जहाज़ोंको भी डुबाना शुरू कर दिया तो अमेरिका भी ६ अप्रैल १९१७ को युद्धमें शामिल हो गया। अब यह पूरा विश्वयुद्ध बन गया। प्रथम विश्वयुद्धके प्रतिद्वन्द्वी राष्ट्रों-के दो दल इस प्रकार निर्मित थे :

मित्र राष्ट्र	केन्द्रीय-शक्तियाँ
ब्रिटिश साम्राज्य	जर्मनी
अमेरिका	ऑस्ट्रो-हंगरी
फ्रान्स	तुर्की
रूस	बल्गारिया
इटली	
जापान	
रूमानिया	
सर्बिया	
बेल्जियम	
ग्रीस	
पोर्चुगाल	
मोण्टेनेग्रो	

प्रथम विश्वयुद्ध मानवतापर कितना बड़ा संकट था, इसका प्रमाण यह है कि इस युद्धमें साढ़े छह करोड़ व्यक्तियोंने मोर्चोंपर युद्ध लड़ा जिनमें-से लगभग पौने चार करोड़ हताहत हुए। रूसी फ़ौजके १ करोड़ २० लाख आदमियोंमें-से ९११। लाख आदमी हताहत हुए, अर्थात् ७६ प्रतिशत। इसी प्रकार फ्रान्सकी फ़ौजके ७३ प्रतिशत, रूमानियाके ७१ प्रतिशत जर्मनीके ६४ प्रतिशत, ब्रिटिश राष्ट्रमण्डलके ३५·८ प्रतिशत और ऑस्ट्रिया-हंगरीके ९० प्रतिशत फ़ौजी जवान हताहत हुए। नागरिकों-की संख्या इसमें शामिल नहीं। ११ नवम्बर १९१८ को प्रातः ११ बजे युद्ध-विराम हुआ—और युद्धकी समाप्तिका बिगुल रणक्षेत्रोंमें बज गया।

राष्ट्र युद्ध करते हैं, एक-दूसरेको विनष्ट करते हैं, युद्धसे त्रस्त होते हैं, भयग्रस्त होकर शान्ति-वार्त्ताकी ओर बढ़ते हैं, शान्ति होने भी नहीं पाती कि शक्तिके लिए होड़ शुरू हो जाती हैं; होड़में हार-जीतकी बाज़ी लगती है, हार-जीतके निर्णयके लिए युद्ध होते हैं; युद्ध होनेपर विनाश, त्रास, शान्तिके लिए विकलता, शान्ति होनेपर शक्तिकी परीक्षा····फिर वही क्रम प्रारम्भ हो जाता है। मानव-जातिकी नियति ही ऐसी है।

प्रथम विश्वयुद्ध समाप्त हुआ तो विश्वने चैनकी साँस ली और संसारकी बड़ी ताक़तोंने प्रतिज्ञा की कि दुनियामें अब फिर कभी ऐसा भयानक युद्ध नहीं होने देंगे। इस उद्देश्यके लिए १० जनवरी, १९२० को 'लीग ऑफ़ नेशन्स'की स्थापना की गयी।

सहकारी शान्ति

लीग ऑफ नेशन्सकी परिकल्पनामें मूल प्रेरणा यह थी कि विश्वके राष्ट्र अब युद्ध नहीं करेंगे, एक कुटुम्बकी तरहसे रहेंगे; और जैसे कुटुम्बमें विवाद खड़े हो जाते हैं किन्तु कुटुम्ब-के लोग विवाद निपटानेके लिए छुरा लेकर आमने-सामने नहीं आ जाते, उसी प्रकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र भी अपने सीमा-विवादोंको और अपनी अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओंको पारस्परिक विचार-विनिमयसे, न्यायके सिद्धान्तोंके आधारपर, निपटायेंगे। यही नहीं, वैज्ञानिक आविष्कारों और द्रुतगामी संचार-साधनोंसे मनुष्यको और राष्ट्रोंको एक दूसरेके साथ सम्पर्क बनाने और बढ़ानेकी जो नयी सुविधा मिली है, उसका उपयोग राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय निर्माणकारी कामोंके लिए होगा। लीगके विधानके अनुसार उसकी साधारण सभाके सदस्य सभी राष्ट्र थे और काउन्सिल या कार्यकारिणी परिषद्के सदस्य केवल शक्तिसत्ता सम्पन्न बड़े राष्ट्र थे—इंग्लैण्ड, फ्रान्स, इटली, जापान, और बादमें सम्मिलित होनेवाले दो अन्य राष्ट्र—जर्मनी और रूस।

विश्व-राज्यके संचालनकी दिशामें मानवका यह सबसे पहला बृहत् सहकारी प्रयोग था। चूँकि विश्वयुद्धकी बिभीषिका इतने बड़े पैमानेपर एक-साथ भोगनेका अवसर भी संसारके राष्ट्रोंको इतिहासमें पहली बार मिला था, इसलिए लीगके इस प्रयोगको सफल बनानेकी इच्छा भी उसी अनुपातमें प्रबल थी। लेकिन जब राष्ट्रसंघने सीमा-विवादके बड़े प्रश्नोंपर विचार करना प्रारम्भ किया या अन्तर्राष्ट्रीय विस्तारकी योजनाओंको कार्यान्वित करनेके लिए अधिकार माँगे, और जब उन अधिकारोंका अर्थ स्पष्टतः सामने यह आया कि किन्हीं मामलोंमें राष्ट्रोंको अपने-अपने अधिकार इस विश्व-संस्थानके हाथमें सौंपने होंगे, तो बड़े राष्ट्रोंने हीले-हवाले करने शुरू किये क्योंकि युरॅपकी राजनीति शक्ति-सन्तुलनके जिस सिद्धान्तपर अबतक चलती आयी थी, उस सन्तुलनकी लगाम किसी भी प्रकारसे वे अपने हाथमें-से ढीली नहीं होने देना चाहते थे। मूलमें, एक-दूसरेके प्रति अविश्वास था, और एकसे एक बढ़कर चण्ट कूटनीतिज्ञोंकी इस गोलमेज़ सभामें सबका यह प्रयत्न रहता था कि लीगके प्रत्येक निर्णयको इस रूपमें कैसे प्रभावित किया जाये कि उसका परिणाम दूसरोंकी अपेक्षा अपने पक्षमें अधिकसे अधिक लाभदायक प्रमाणित हो। अमेरिकाने तो प्रारम्भसे ही लीगकी सदस्यता स्वीकार नहीं की। सदस्य-राष्ट्र बिना आस्थाके ही आशा रखते रहे कि लीगका अस्तित्व अपने-आपमें एक उपलब्धि है, जो युद्धके कारणोंको और विवादोंको रण-क्षेत्र तक पहुँचनेमें रुकावट तो डालेगा ही।

जहाँतक छोटे-छोटे राष्ट्रोंकी समस्याओंका प्रश्न था, लीगने उन्हें निपटाया भी। स्वीडन और फ़िनलैण्डके एलैण्ड-द्वीप-सम्बन्धी विवादका समाधान लीगके माध्यमसे हुआ, उत्तरी श्लैसविख (जर्मन प्रदेश) और अपर-साइलेसियामें मत-गणनाका प्रबन्ध करके लीगने पोलिश भाषा बोलनेवाले साइलेसियन प्रदेशको पोलैण्डको दिया; यूनान, तुर्किस्तान और बल्गेरियामें आबादियोंका परिवर्तन करवाया; शरणार्थियोंकी सहायताका प्रबन्ध किया; श्वेतांग गुलामोंके, और अफ़ीमके व्यापारपर प्रतिबन्ध लगाया; स्वास्थ्य-सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय सर्वेक्षणोंका प्रबन्ध किया; श्रमिकोंके लिए अन्तर्राष्ट्रीय सुविधा-नियम बनाये····आदि-आदि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिन विवादोंने लीगको निष्प्रभ बनाया और अन्तमें निष्क्रिय, वे थे : पोलैण्डने लीगके निर्णयको अमान्य ठहराकर विलना (लिथुआनियाकी राजधानी) पर-से अपना अधिकार नहीं हटाया; ब्रिटेनने जिनेवा-प्रोटोकोले (सन्धि-संलेख) माननेसे इनकार कर दिया; निरस्त्रीकरण कॉन्फ्रेन्स बुलायी गयी, जो असफल हुई; १९३१ में चीन-जापानका (दूसरा) युद्ध प्रारम्भ हो गया और जापान लीगकी सदस्यतासे बाहर हो गया; चाको क्षेत्रको लेकर बोलिविया और पैरागुएमें जो युद्ध छिड़ा उसे लीग रोक न सकी; नात्सी जर्मनी और इटलीने लीग-द्वारा लगाये आर्थिक प्रतिबन्धोंकी अवज्ञा करके ईथियोपियापर आक्रमण कर दिया; ब्रिटेन और फ्रान्सने 'एपीजमैण्ट' (अपतुष्टि) की नीति अपनाकर हिटलरके साथ 'म्युनिख समझौता' कर लिया····और अन्तमें द्वितीय महायुद्धकी भूमिका तैयार हो गयी। किन्तु द्वितीय विश्वयुद्धकी इस भूमिकाको इसके आदिस्रोतसे देखना ठीक होगा।

विजयी राष्ट्रोंका उन्माद

जिन राष्ट्रोंने जर्मनीके विरुद्ध युद्ध जीता था उन्होंने वारसाई-सन्धिमें जर्मनीके सामने ऐसी शर्तें और माँगें रखीं कि मानवताकी भावना विद्रोह कर उठती है। वास्तवमें तो इस वारसाई-सन्धिमें ही द्वितीय महायुद्धके बीज निहित थे। मित्र राष्ट्रोंने जर्मनीको युद्ध प्रारम्भ करने और युद्धमें मित्र राष्ट्रोंके जन-धनके विनाशको घटित करनेके अपराधमें क्षति-पूर्तिके नामपर यह दण्ड दिया कि जर्मन-धरतीका २५००० वर्ग मील भाग मित्र-राष्ट्रोंने आपसमें बाँट लिया। लौरेन और लक्ज़म्बर्गकी लोहेकी खानोंको हथियाकर जर्मनीका ६५ प्रतिशत लोहा ले लिया, सार और साइलेसियाकी कोपलेकी खदानोंको अपने नियन्त्रणमें कर लेनेका अर्थ था—४५ प्रतिशतसे अधिक कोयला जर्मनीके अधिकारसे निकल जाये। इसी प्रकार ७२ प्रतिशत जस्ता और ५७ प्रतिशत सीसा भी जर्मनीसे छिन गया। इसके अतिरिक्त विजयी राष्ट्रोंने जर्मनीसे माँग की कि वह स्वर्ण-कोश, मुद्रा-कोश, सम्पत्ति-कोश तथा प्राकृतिक साधनोंसे उत्पन्न होनेवाले आगामी धनको भी क्षतिपूर्तिके रूपमें भरे। जर्मनी कितना रुपया दे—अर्थात् जर्मन-राष्ट्र और उसके आगेकी पीढ़ी कितना रुपया हर्जानेमें दे सकती है ? विजयी विशेषज्ञोंने अनुमान लगाये :

ब्रिटेनका खयाल था, जर्मनी १०,०००,०००,००० (दस अरब) डौलर हर्जाना दे सकता है, अमेरिकाने यह राशि १५,०००,०००,००० (पन्द्रह अरब) डौलर आँकी; ब्रिटेन और फ्रान्सके कुछ आर्थिक विशेषज्ञोंने १००,०००,०००,००० (सौ अरब) डौलर तक अनुमानित की। परास्त और भूखे-नंगे जर्मन राष्ट्रके लिए सभी अनुमान जीवित फाँसीके समान थे। विजयी राष्ट्रोंने एक कमीशन बैठायी। जबतक कमीशन अपना अनुमान तैयार करे, तबतक जर्मनीको हुक्म हुआ कि वह फ़िलहाल, मित्र-राष्ट्रोंकी तात्कालिक क्षति-पूर्तिके लिए ५,०००,०००,००० (पाँच अरब) डौलर चुकाये—मुद्रा और स्वर्णराशिके रूपमें। बादमें कमीशनने यह राशि ३३,०००,०००,०००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तैंतीस अरब) डौलर आँकी। भेड़ियासे डरे गीदड़की तरह जर्मनीने २५,०००,०००,००० (पच्चीस अरब) डौलर तककी राशि दान ली। किन्तु कोई हतभाग्य मनुष्य या राष्ट्र कब गीदड़ बनता है, कब वह स्वयं भेड़िया बन जाता है, इसके उदाहरणोंको तो इतिहास जानता है, शायद कारणोंको नहीं····।

जैसा कि कहा, द्वितीय महायुद्धके बीज इस अमानवीय स्थितिमें निहित थे।

जर्मनी अपमानकी दारुण पीड़ासे कराहता रहा और क़र्ज़ चुकाता रहा लेकिन राष्ट्रकी चेतना सोयी नहीं। जर्मनी शक्तिके प्रभावको बचपनसे जानता रहा; और अब तो उसके लिए शक्ति संचित करना, जीवनके दुर्वह भारको ढो फेंकनेके लिए आवश्यक हो गया।

जर्मनीकी नयी शक्ति

ऐसा जर्मनीके आकाशमें हिटलरका उदय हुआ—हिटलर एक साधारण-से सरकारी कर्मचारका लड़का, जिसे म्यूनिखकी पढ़ाई समाप्त करनेके बाद वियनाकी आर्ट एकैडमीमें प्रवेश न मिल पाया, जो प्रथम विश्वयुद्धमें एक साधारण कौर्पोरल था और जिसने नेशनल जर्मन सोशलिस्ट पार्टीकी स्थापना-द्वारा श्रमिकोंका एक छोटा किन्तु मज़बूत अनुशासनमें प्रशिक्षित दल तैयार करके कुछ सैनिकोंके साथ बवैरियामें क्रान्ति करनेकी असफल कोशिश ८ नवम्बर १९२३ को की। उसके दलके १४ नात्सी मारे गये। हिटलरको ५ वर्षकी सज़ा हुई, जिस समयका उपयोग उसने 'मेरा संघर्ष' पुस्तक लिखनेमें किया, और जब जेलसे बाहर आया तो अपने राष्ट्रके युवकोंमें यह नयी बाइबिल दे दी। इस पुस्तकमें पराजित जर्मनीके आश्चर्यजनक उदयकी सम्भावनाओंके स्वर्णिम चित्र अंकित थे। तभी १९२९ में विश्व-व्यापी आर्थिक संकट उठ खड़ा हुआ। लाखों आदमियोंकी नौकरियाँ छूट गयीं, माल कौड़ियोंके भाव बिकने लगा, और कौड़ियाँ किसीके पास नहीं थीं। जब काम नहीं, पैसा नहीं, और कमाया हुआ धन, यदि हो भी तो दूसरोंका दण्ड चुकानेमें देना पड़ता हो, तो राष्ट्रके युवक क्या करें? हिटलरकी पुस्तक, उसका दल और उसका कार्यक्रम इस प्रश्नका सफल और सार्थक उत्तर था। नात्सी पार्टीके सदस्य बढ़ने लगे; लश्कर जमा होने लगा और जर्मनीके चुनावोंमें हिटलरके सदस्योंने रीख्सटाक (संसद्) की सीटोंको भरना प्रारम्भ कर दिया। जनवरी १९३३ में रीख्सटाकने और प्रेज़िडेण्ट हिण्डनबर्गने हिटलरको चान्सलर बना दिया। हिटलरके आदमियोंने संसद्-भवनमें आग लगाकर कम्यूनिस्टोंको इसके लिए उत्तरदायी ठहराया, उसने कम्यूनिस्टोंके दलको ग़ैर-क़ानूनी घोषित कर दिया और मार्च १९३३ में संसद्के वोटपर सारी सत्ता अपने हाथमें ले ली। अब जर्मनीमें केवल एक नेता था, हिटलर; एक दल था, नात्सी पार्टी; एक उद्देश्य था—जर्मनीकी प्रभुता स्थापित करना। इस उद्देश्यके अंग थे—विरोधको कुचलना; अनार्य और अर्थलोलुप यहूदियोंका सफ़ाया करना, जर्मन राष्ट्र और विशेषकर जर्मन युवकोंको सारे विश्वपर छा जानेके लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तैयार करना, उन्हें युद्धास्त्रोंसे सन्नद्ध करना ताकि अब कोई जर्मन राष्ट्रको अपमानित न कर सके।

इतिहासमें बड़े-बड़े योद्धा हुए, भूमिपाल हुए, अत्याचारी हुए—पर अपने बलपर इतनी बड़ी ताक़त खड़ी करके इतने बड़े दर्पसे संसारको ठुकरा देनेकी हिम्मत किसीकी नहीं हुई थी। बिजलीकी कड़क और चमकके साथ इतिहासपर वज्रपात होने प्रारम्भ हो गये :

- २५ जुलाई, १९३४ को हिटलरने आस्ट्रिया में नाज़ी पार्टीके सदस्यों-द्वारा विद्रोह करा दिया। चान्सलर डालफ़ुसको क़त्ल करवा दिया। यद्यपि अभी कुछ समय पहले ही हिटलरने आस्ट्रियासे क़रार किया था कि वह उसके अन्तरंग मामलोंमें दखल नहीं देगा।
- मार्च १९३६ को हिटलरने राइनलैण्डपर क़ब्ज़ा कर लिया; लोकार्नोकी सन्धिके टुकड़े कर दिये।

हिटलरने घोषणा की कि इसके उपरान्त युरॅपके अब किसी भागपर उसका दावा खड़ा नहीं रहा। "आश्चर्यों-द्वारा चकित कर देनेका युग समाप्त हो गया है।"

- ३० जनवरी, १९३७ को हिटलरने घोषणा की कि जर्मनी मित्र-राष्ट्रोंको क्षतिपूर्तिके लिए अब कोई रक़म नहीं देगा; क्योंकि उनका दावा और निर्णय अन्यायपूर्ण है।
- १२ फ़रवरी १९३८को हिटलरने आस्ट्रियाके चान्सलर शुश्निगको हुक्म दिया कि वह हाज़िर हो, आवश्यक काम है। बेचारा शुश्निग प्रोटोकोल छोड़, हिटलरके सामने

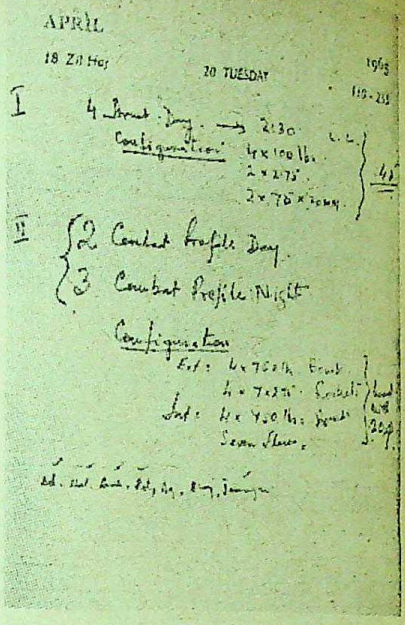

पाकिस्तान बाम्बरके वायुयानचालककी जेबसे मिली डायरीका एक पृष्ठ कि वे कौन-कौन-से बम कब-कब हिन्दुस्तानपर गिरायेंगे। ऐसे ही बड़े-बड़े इरादेवाले छोटे-छोटे पर्चे प्रथम और द्वितीय विश्वयुद्धके समय भी बरामद हुए थे।

उपस्थित हुआ। हिटलरने एक काग़ज दिखाया और कहा—इसपर हस्ताक्षर करो! हस्ताक्षर लेनेके बाद १२ मार्च, १९३८ को हिटलरने आस्ट्रियापर क़ब्ज़ा कर लिया।

हिटलरने घोषणा की कि युरॅपमें उसका किसी भी भागपर सचमुच ही अब कोई दावा बाक़ी नहीं रहा। ब्रिटेनकी घबराहटकी खबर तो हिटलरके पास पहुँचती ही रहती थी। उसने ब्रिटिश सरकारके पास खबर भिजवायी, अपनी तरफ़से ही, कि उसका कोई इरादा चैकोस्लोवाकियापर हमला करनेका नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भला, हिटलर स्वयं आश्वासन दे और विश्वास न माने ?

उसी समय जर्मनीमें चैकोस्लोवाकियाके विरुद्ध प्रदर्शन होने लगे। नात्सी ट्रूपोंके दलके बड़ी सभाओंमें इकट्ठे होने लगे, और माँग की गयी कि चैकोस्लोवाकियामें जो सुडेटन जर्मन रहते हैं, उनके लिए उस देशका एक टुकड़ा अलग कर दिया जाये। हिटलरने प्रस्ताव भेजा कि यदि सुडेटनलैण्डको चैकोस्लोवाकियासे अलग कर दिया जाता है तो फिर कहीं भी झगड़ेका कोई कारण नहीं रहेगा। विश्व युद्ध नहीं होगा।

२६ सितम्बर, १९३८ को हिटलरने घोषणा की : "युरॅपमें किसी भी भूखण्ड-पर मेरा यह अन्तिम दावा है। मैंने ब्रिटिश प्रधान मन्त्री चैम्बरलेनको आश्वासन दिया है और फिर दोहराता हूँ कि इस समस्या-के समाधानके उपरान्त सारे युरॅपमें जर्मनी-का कोई भूमिगत दावा खड़ा नहीं रह जायेगा। हमें चैकोस्लोवाकियाकी ज़रूरत नहीं। मुझे फिर उससे कुछ लेना-देना नहीं रहेगा।"

ब्रिटेन और फ्रान्सने सोचा कि विश्व-को युद्धके संकटसे बचानेका यही उपाय है कि हिटलरको युद्ध ठाननेका कोई मौक़ा ही न दिया जाये; और उसकी लालसाको पूर्ति कर दी जाये। १५ दिन तक संसारमें बड़ी बेचैनी रही, ब्रिटिश प्राइम मिनिस्टर चैम्बरलेन दो बार हिटलरसे मिलने गये, उससे आश्वासन लिया कि उसकी अब कोई माँग शेष नहीं, न युद्ध करनेका इरादा।

- ९ सितम्बर १९३८ को ब्रिटेन और फ्रान्स-ने म्यूनिखके कारनामेपर हस्ताक्षर कर दिये; सुडेटन जर्मनलैण्डपर-से चैकोस्लो-वाकियाका अधिकार समाप्त हो गया।
- मार्च १९३९में हिटलरने चैकोस्लोवाकिया-के प्रेज़िडेण्ट हाचाको बुलाकर उससे हाथ-के हाथ एक दस्तावेज़पर हस्ताक्षर करवा लिये जिसके अनुसार चैकोस्लोवाकियाको जर्मनीके संरक्षणमें ले लिया गया। हिट-लरकी फ़ौजोंने चैकोस्लोवाकियापर क़ब्ज़ा कर लिया। ४००० वर्गमील चैक-भूमि हंगरीको दे दी गयी, क्योंकि इस भूमि-खण्डमें ८,६०,००० हंगेरियन रहते थे। कुछ भाग पोलैण्डको दे दिया गया।

हिटलरकी इन तमाम कार्रवाइयोंका समर्थन इटलीकी ग्रैण्ड काउन्सिलका प्रधान-मन्त्री मुसौलिनी करता रहा। मई, १९३९ में जर्मनी और इटलीमें १० सालकी अवधिका फ़ौजी क़रारनामा हो गया।

२४ मार्च १९३९ को, चैकोस्लोवाकिया-में फ़ौजी प्रवेशके ९ दिन बाद ही, हिटलरने पोलैण्डके सामने माँग रखी कि पोलैण्ड और जर्मनीके सम्बन्धोंको स्थिर करनेके लिए पोलैण्ड मुक्तनगर डैंजिगको जर्मनीको वापस लौटा दे, और जर्मनी तथा पूर्वी प्रशियाके बीच फ़ौजी मार्ग और रेल-पथके लिए पोलैण्डमें-से गुज़रता हुआ एक कौरिडोर (गलियारा) बनाने दे। बदलेमें हिटलरने वादा किया कि वह २५ वर्ष तक युद्ध-विरत रहनेका समझौता पोलैण्डके साथ कर लेगा और फिर कभी कोई सीमा-विवाद नहीं खड़ा होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

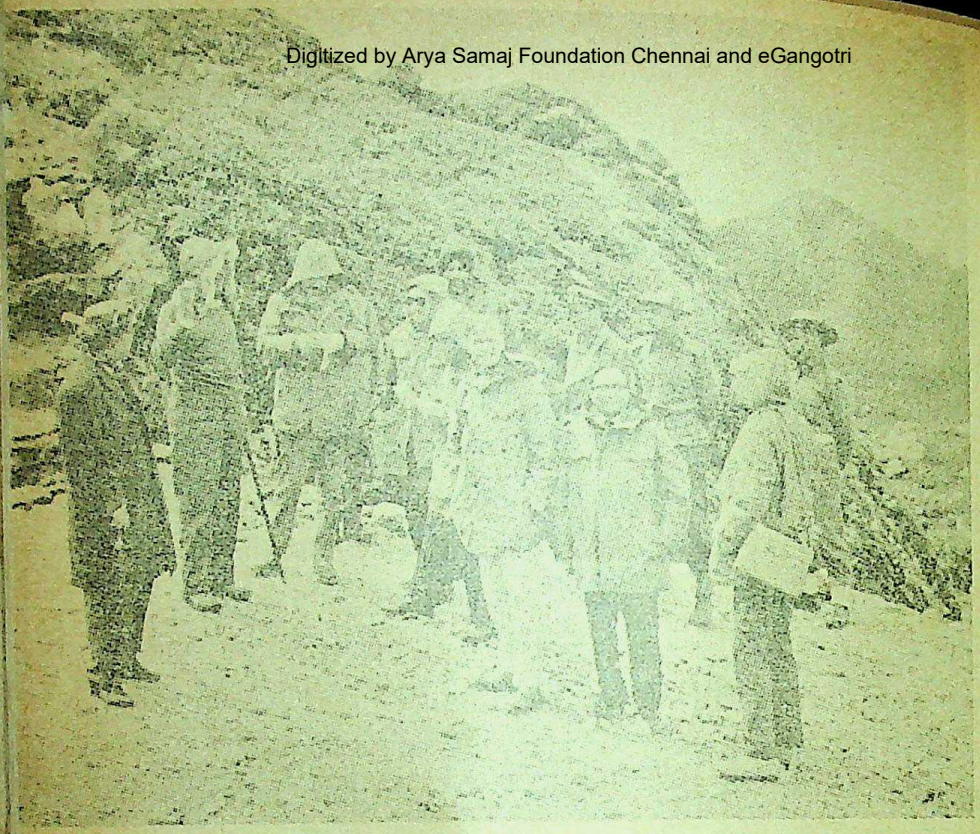

सिक्किम-सीमा-पर आधुनिक संजयोंकी भीड़।...लेकिन तीसरा विश्वयुद्ध छिड़ा तो धृत-राष्ट्र कहाँसे लायेंगे?

द्वितीय विश्व-युद्धका पूर्वरंग :

पोलैण्ड ही क्या सारी दुनिया हिटलरके वायदोंका मूल्य अबतक बहुत अच्छी तरह जान चुकी थी। पोलैण्ड डैंज़िग शहर लौटाने-को तैयार नहीं हुआ। पोलैण्डको ब्रिटेन और फ्रान्सका समर्थन प्राप्त था और उनसे प्राप्त होनेवाली फ़ौजी सहायतापर विश्वास था। अबतक यह भी स्पष्ट हो चुका था कि अब महायुद्ध होकर ही रहेगा, इसलिए ब्रिटेन और फ्रान्सने बड़े पैमानेपर फ़ौजी तैयारी शुरू कर दी थी। इन दोनों देशोंने जर्मनीको पूर्वमें छेंकनेके लिए, मार्च १९३९ से ही रूससे बात-चीत शुरू कर दी थी कि वह ब्रिटेन और फ्रान्सके साथ फ़ौजी समझौता कर ले ताकि जर्मनीकी बढ़ती हुई ताक़तपर अंकुश लगाया जा सकें। रूस बातचीत तो करता रहा किन्तु बड़ी ढ़िलाईसे। आखिर २३ अगस्त १९३९ को मित्र-देशोंने यह आश्चर्यजनक और भयानक समाचार सुना कि रूसने जर्मनीके साथ १० वर्षकी अनाक्रमणकी सन्धि कर ली है।

अब हिटलर पूर्वी युरॅपके मोर्चेसे निश्चिन्त हो गया। २९ अगस्तको हिटलरने पोलैण्डके प्रतिनिधिको बुलानेके लिए पत्र भेजा कि वह आकर समझौतेपर हस्ताक्षर कर जावे। अगले दिन, ३० अगस्तको एक अल्टीमेटम भी भेज दिया। अल्टीमेटमपर अभी विचार भी न होने पाया था कि हिटलरने १ सितम्बर, १९३९ को पोलैण्डपर चढ़ाई कर दी। हिटलर लड़ाईके लिए सचमुच ही बेचैन हो रहा था। जब ब्रिटेनके राजदूतने हिटलरसे कहा कि वह युद्ध न करे वर्ना इसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खतरनाक परिणाम उसे भोगना पड़ेगा, तो हिटलर बोला था : "अभी मेरी आयु ५० वर्षकी है; आज युद्ध करना मेरे लिए अधिक अनुकूल है बनिस्बत उस समयके जब मैं ६० वर्षका हो जाऊँगा।"

जब हिटलरने पोलैण्डपर आक्रमण कर दिया तो ३ सितम्बरको ग्रेट ब्रिटेन और फ्रान्सने जर्मनीके विरुद्ध युद्ध घोषित कर दिया, और इस प्रकार संसारका सबसे बड़ा, सबसे भयानक, सबसे अधिक विनाशकारी युद्ध प्रारम्भ हो गया जिसके परिणामोंकी कल्पना भयंकर थी। वास्तवमें तो जो कुछ इस द्वितीय विश्व-युद्धमें हुआ, वहाँतक तो किसीकी भी कल्पना नहीं पहुँची थी !

युद्ध प्रारम्भ

इस महायुद्धमें ५९ राष्ट्रोंने अपनी फ़ौजें लड़ाईके मैदानमें उतारीं। द्वितीय महायुद्धमें जिन राष्ट्रोंने भाग लिया वे दो प्रतिपक्षी दलोंमें इस प्रकार विभक्त थे।

संयुक्तराष्ट्र : ४९ राष्ट्र—कुछ प्रमुख नाम :

ब्रिटेन, अमेरिका, रूस, फ्रान्स, कनाडा, चीन, न्यूज़ीलैण्ड, आस्ट्रेलिया, बेल्जियम, चैकोस्लोवाकिया, डैन्मार्क, नार्वे, मिस्र, ग्रीस, तुर्की, ईरान, ईराक, सउदी अरब, अफ्रीका, पोलैण्ड, यूगोस्लाविया।

धुरी राष्ट्र : १०

जर्मनी, जापान, रूमानिया, फ़िनलैण्ड, बल्गारिया, हंगरी, स्लोवाकिया, थाइलैण्ड, अलबानिया, इटली।

ठीक-ठीक यह पता कभी नहीं लग पायेगा कि कुल मिलाकर कितने आदमी हताहत हुए, क्योंकि यह युद्ध इतिहासके पिछले सारे युद्धोंसे इस बातमें विशेष रूपसे भीषण था कि बममार हवाई जहाज़ोंने लाखों सैनिकोंके अतिरिक्त बहुत बड़ी संख्यामें, शायद करोड़ोंकी संख्यामें नागरिकोंको मारा, क्षत-विक्षत किया, पंगु और अपाहिज बनाकर छोड़ दिया। खण्ड-खण्ड करके यदि हम दो-चार मोर्चोंकी स्थिति-पर ग़ौर करें, तो पायेंगे कि लाखोंकी संख्याएँ हमें हतप्रभ कर देती हैं और नसोंमें रक्त जमने लगता है।

लड़ाई शुरू हुई तो, जैसा कि ऊपरके विश्लेषणसे स्पष्ट है, जर्मनीकी फ़ौजी तैयारी पूरी-पूरी थी—नये अस्त्र-शस्त्र, नयी आयुध-विद्याके सिद्धान्तोंपर, बनाये गये थे जो छोटे-मोटे युद्धोंमें आज़मा लिये गये थे। पोलैण्डपर हिटलरने आक्रमण किया तो मोर्चेपर, और मोर्चेके आसपास, उसने १३॥ लाख सैनिक मैदानमें उतार दिये; (पौलैण्डके पास कुल फ़ौज ५ लाख ही थी); ६॥ हज़ार हवाई जहाज़ आक्रमणके लिए बम, बरसाने और रसद भेजनेके लिए तैनात थे। ८ महीने तक पोलैण्डवाले मित्र-राष्ट्रोंकी थोड़ी-बहुत सहायता-से प्राणोंकी बाज़ी लगाकर युद्ध लड़ते रहे, किन्तु आगे कबतक ? पौलैण्डके मोर्चेका युद्ध हिटलरने जीता, तो ७ लाख आदमी बन्दी बनाये, ४०,००० घोड़ों, १६०० तोपों, ८००० मशीनगनोंपर क़ब्ज़ा किया—इतनी संख्या तो उस समय प्राप्त हुई जब पोलैंडकी इस शक्तिका बड़ा भाग तबाह हो चुका था।

तबतक युद्धका एक और मोर्चा खुल गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९३९ को सक्रिय हुआ तो रूसने ४॥ लाख सैनिकोंको फ़िनलैण्डके २,३०,००० फ़ौजियोंके मुक़ाबलेमें ला खड़ा किया। ६ सप्ताह तक युद्ध चला। युरॅपके इस क्षेत्रमें दिसम्बरकी सर्दीका अनुमान हम लगाने भी बैठें तो कहाँ-तक? फ़ौज़ोंने ६० डिग्री सैण्टीग्रेड 'बिलो ज़ीरो' —शून्य-बिन्दुसे नीचे—तापमानमें युद्ध किया। फ़ौजियों और नागरिकोंकी इस दारुण व्यथा-को क्या शब्दोंमें व्यक्त किया जा सकता है? यह उपन्यासकी कथा नहीं, हाड़-माँसके जीवित आदमियोंका भोगा हुआ अभिशाप है!

फिर, पश्चिमी युरॅपका युद्ध-मोर्चा! जर्मनी, इटली, ब्रिटेन, फ्रान्स, हॉलैण्ड और बेल्जियमकी संयुक्त फ़ौजें—४० लाख आदमी युद्ध-रत, विनाशोन्मुख। १० जूनसे २५ जून तक शत्रुके इस मोर्चेको हिटलरकी फ़ौजोंने, बममार तोपों और बड़े-बड़े बौम्बर्सने मार-मारकर, जला-जलाकर, चिथड़े-चिथड़े कर दिया। हिटलरने जब यहाँ विजय प्राप्त की तो संसारने पाया कि दुनिया ही बदल गयी है—हॉलैण्ड और बेल्जि-यमका नाम-निशान मिट गया और फ्रान्स, जिसे अपनी फ़ौजी ताक़तपर यह नाज़ था कि संसारकी वह सर्वश्रेष्ठ सेना है, धूल-धूसरित हो चुका था—फ्रान्स जिसने 'मैजिनो मन कॉन्क्रीट, लोहा, इन्जिनियरिंगके करिश्मों, विस्फोटक सुरंगों और गोला-बारूदसे सज्जित लाइन-रक्षक सैनिकोंकी क्षमतापर विश्वास करके अपनेको अजेय मान लिया था!

और डन्कर्क—मनुष्यके अदम्य साहस, अद्भुत शौर्य और मृत्युको पराभूत करनेके अक्षय संकल्पका प्रतीक। फ्रान्स और बेल्जियम-के पतनके बाद ब्रिटेन और साथियोंकी सेनाएँ सुकड़ती-सुकड़ती इंग्लिश चैनलके इस बन्दर-गाह डन्कर्कपर इकट्ठी हो गयी हैं, घिर गयी हैं। ३,३०,००० सैनिकोंकी रक्षाका कोई उपाय नहीं। ऊपरसे दुश्मनके बमबाज़ हवाई-जहाज़ आग बरसा रहे हैं। भागनेकी कोई जगह नहीं। इंग्लिश चैनेलको पार नहीं किया जा सकता, पार करनेका प्रयत्न भी करें तो बँधी-बँधाई जलराशिमें असहाय मौत! किन्तु वीरत्वका मुकुटमणि चर्चिल हताश नहीं हुआ; उसका राष्ट्र उसके साथ है। पराजयका अर्थ

क्या तीसरे विश्वयुद्धके बीज इस हरकतमें नहीं छिपे हैं?

चीनी बम, जो पाकिस्तानने अपने हाथों छम्बपर फेंका था। 'इस डबल एक्शन टाईम फ्यूज़' का चीनी नाम है: 'शि जि फू दुं गश्यिन गुअन।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह राष्ट्र खूब समझता है—पीढ़ियोंकी ग़ुलामी और अपमान। अँगरेज़ जातिके इतिहासका वह एक गौरवमय अविस्मरणीय ८ दिनका अध्याय! सारा राष्ट्र उठ खड़ा हुआ! सारे जहाज, जंगी बेड़े, सारे बोट, सारी किश्तियाँ, शिकारे, अगनबोट, बाँस और लकड़ियाँ बाँध-बाँधकर तैयार की गयी डोंगियाँ—नागरिकोंके परिचालनमें नहरमें कूद पड़ीं। स्त्रियों और समर्थ बालक-बालिकाओंमें यह होड़ कि कौन-सा दल कितनों तक, कितनी बार अपना जलयान चैनेलके पार पहुँचाता है और इंग्लैण्डकी सौभाग्यशालिनी धरापर उन्हें ले आता है। हवाई जहाज़ एक ओर अपने निश्चित कार्यक्रमके अनुसार जर्मनीपर बम बरसाते रहे, दूसरी ओर डन्कर्कसे सैनिकोंको चैनेल-पार पहुँचाते रहे। डन्कर्कको ख़ाली करनेकी जब योजना फ़ौजी अफ़सरोंने बनायी, तो उनका खयाल था कि हम केवल अपनी चौथाई फ़ौज बचा पायेंगे। लेकिन हुआ यह कि ३,३०,००० सैनिकोंमें-से एक-एकको डन्कर्कसे इंगलैण्ड ले आया गया।

यही इंग्लैण्ड था और यही चर्चिल जिसने इसके बाद, हिटलरकी प्रलयको अपने गर्वीले सीनेपर सहा। संसारमें पहली बार ऐसे-ऐसे भयानक बम, ऐसे-ऐसे प्रक्षेपास्त्र, बड़े-बड़े भवनोंको और मोहल्लोंको एक क्षणमें जला-कर, चूरकर रख देनेवाले गोले जो जहाँ गिरें मकानोंकी पंक्तिकी पंक्तिको नष्ट करके ज़मीन-में बीस-बीस फ़ुटकी खन्दकें बना जायें। और धमाकोंसे मीलों ज़मीन हिला जायें। रातके घुप अँधेरेमें हिटलरका यह ब्लिट्ज़, यह सब कार्रवाई, ऐसे बममार हवाई जहाज़ोंके द्वारा जिनकी चीख़से आकाशका सीना फट जाये। एक-एक रातमें सौ-सौ जहाज़ोंका हमला, फिर २००-२०० का और ऐसे भी रात-दिन जब एक-एक हज़ार हवाई जहाज़ोंने लन्दन-पर कहर बरसाया। लेकिन, अविचल ब्रिटेन अन्त तक अविजित तो रहा ही, विजयी भी हुआ।

जून, १९४० में इटली युद्धमें शामिल हुआ तो मध्य-पूर्व और बल्कान क्षेत्रोंमें युद्धाग्नि भभक उठी। १९४१ में रूसने हिटलरका साथ छोड़कर मित्र राष्ट्रोंके साथ सम्मिलित हो गया। दिसम्बर, १९४१ में जापान मैदान-में कूदा और पर्ल हार्बरपर आक्रमण करके उसने अमेरिकाके जंगी बेड़ेका संहार किया, तो पैसिफ़िक और अटलाण्टिक सागरोंमें बड़वाग्नि प्रज्वलित हो गयी। और अमेरिकाने युद्धका-सबसे भयंकर अध्याय शुरू किया—मानव-इतिहासकी जघन्यतम घटना, जिसने सदाके लिए संहारक युद्धको वास्तविक अर्थमें प्रलयंकर युद्ध बना दिया। मनुष्यकी बुद्धिका राक्षसी आयाम—एटम बम!

विश्वका पहला एटम बम अमेरिकाने ६ अगस्त, १९४५ को हिरोशिमा (जापान) पर छोड़ा। हिरोशिमाकी आबादी उस समय ३,४३,००० थी—७८००० के लगभग मर गये। तीन दिन बाद, अमेरिकाने नागासाकी-पर दूसरा एटम बम फेंका और उस नगरको ही भस्म नहीं किया आनेवाली नसलोंको विकलांग बनानेके कीटाणु जलवायुमें और मनुष्यके रक्तमें घुसा दिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युद्धके इतिहासमें उसके बाद जो कुछ भी घटित हुआ उसे एटम बमने पूर्व-निश्चित कर दिया था। अर्थात् जर्मनी और उसके सहयोगी धुरी-राष्ट्रोंकी पराजय। मित्र-राष्ट्रोंकी विजयमें जर्मनीके विरुद्ध स्टालिनग्राडका मोर्चा लेनेवाला रूस—जिसके प्रत्येक नागरिकने एक-एक शहर, मोहल्ले और घरको रक्षा-दुर्ग बनाकर सिरपर कफ़न बाँधकर, युद्ध किया था—शामिल हुआ। यदि एटम बम न आया होता, तो भी मित्र-राष्ट्रोंकी विजय निश्चित थी, हाँ यह बात अवश्य है कि युद्ध एक-दो साल और लम्बा खिंच सकता था। मित्र-राष्ट्रोंने अपने संगठनका अद्भुत चमत्कार उस समय दिखा दिया था जब ६ जून १९४४ को जनरल आइज़नहॉवरके सुप्रीम कमाण्डके अधीन लगभग २८॥ लाख सैनिकोंको लेकर फ़्रान्सको जर्मनीके क़ब्ज़ेसे मुक्त करनेके लिए फ़्रान्सपर आक्रमण किया गया। ६० मील लम्बे, १० मील चौड़े तटपर इन पौने उनतीस लाख फ़ौजोंके अतिरिक्त ५००० फ़ाइटर वायुयान, ३४०० भारी बममार वायुमान, ५ हज़ार भारवाही विमान उतारे गये; ४ हज़ार जलपोत समुद्रमें मौजूद थे। मित्र-राष्ट्रोंकी इस शक्तिने हिटलरको आतंकित कर दिया और फ़्रान्ससे उसने अपनी फ़ौजें हटा लीं।

इन सब तानाशाहोंका क्या हुआ—मनुष्यके चरम दर्पका उतना ही चरम दयनीय अवसान!

- २८ अप्रैल १९४५ को, मुसौलिनी जब कोमो झील पार करके स्विटज़रलैण्डको भाग जानेकी ताकमें था, पकड़ लिया गया और उसे फाँसी दे दी गयी।
- २९ अप्रैलको हिटलरने ध्वस्त चान्सलरीके बंकरमें आत्महत्या कर ली। गोबेल्स और उसकी पत्नीने अपने बच्चोंको ज़हर देनेके बाद आत्महत्या कर ली।
- नार्वेमें—वहाँके जिस प्रधानमन्त्रीने हिटलरको आत्म-समर्पण करके अँगरेज़ी भाषाको जघन्यतासूचक एक नया शब्द 'क्विज़ लग' दिया था, उस विदकून क्विज़लिंगको एक-एक फ़ौजी फ़ायरिंग स्क्वैडने २३ अक्तूबर, १९४५ को गोली मारकर समाप्त कर दिया।
- लन्दनमें—'लार्ड हाव-हाव,' (विदूषकी नाम) अर्थात् विलियम जौइसको, जो जर्मनीकी ओरसे अँगरेज़ीमें ब्रॉडकास्ट किया करता था, ३ जनवरी, १९४६ को फाँसीके तख़्तेपर लटका दिया गया।
- न्यूरेम्बर्ग (जर्मनी)में—जिन २२ नात्सी नेताओंपर हत्या, अमानुषिक अत्याचार, लाखों यहूदियोंको कन्सण्ट्रेशन-कैम्पमें ज़ुल्म तोड़ने और उन्हें भट्टियोंमें झोंककर उनकी हड्डियोंसे युद्धका सामान बनाने आदि अपराधोंका मुक़दमा चलाया गया था, उनमें-से ११ को १३ अक्तूबर १९४६ को फाँसी दे दी गयी—इनमें गेस्टापो (हिटलरकी खुफ़िया फ़ौज) का प्रमुख अधिकारी काल्टेनब्रूमर, फ़ौजी कमाण्डर फ़ील्ड मार्शल कीटेले, और परराष्ट्रमन्त्री रिवनट्रॉप भी थे।

गोरिंगने न्यूरेम्बर्ग जेलमें, शूटिंगका हुक्म पूरा होनेसे दो घण्टे पहले ज़हर खाकर

[शेष पृष्ठ २९७ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

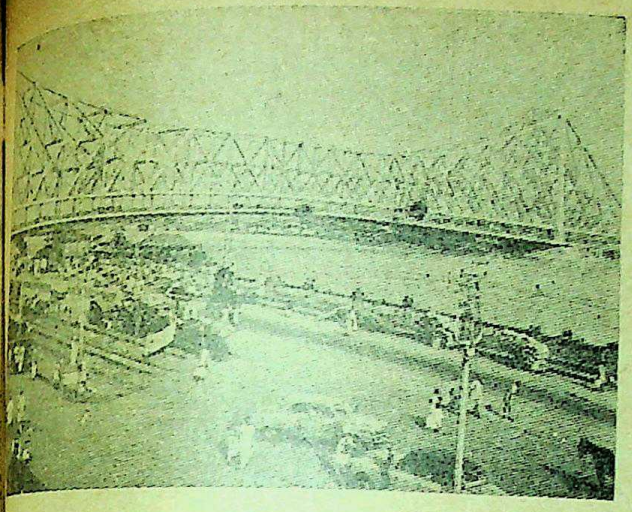

अँधेरे में चलते हुए शहर

कलकत्ताका हावड़ा-पुल कभी नहीं सोया। उन दिनों जब सदारंगीन चौरंगी हवाई हमलोंसे बचनेके लिए ब्लैकआऊट ओढ़कर सायरन सुन रही थी, हावड़ा पुलपर पाकिस्तानी-सैनिक पकड़े जा रहे थे···

रमेश बक्षी

लगा था उस समय कि अभी-अभी दोपहर थी और एकदम रात हो गयी है, यह लगा था कि रात आनेके लिए किसी शाम- पुलकी ज़रूरत नहीं होती है। शाम तो हम लोगोंकी बनायी हुई चीज़ है, वह एक रूमान-पसन्द आदमीकी डायरी है। न-भर लाहौर और स्यालकोट आँखोंमें घूमता था लेकिन जब देखते-देखते चौरंगीको बिजली मार गया था, मैदानपर आँख जा रही···दौड़ती हुई सड़ककी चाल धीमी हो गयी थी, आँखें बुझ गयी थीं, पल्लूके कलावत्तू जल गये थे। मैं भावुक नहीं हो पाया बल्कि ऐसा लगा जैसे उजेलेसे राहत मिली हो। कुछ लोगोंने रातके कई सारे पर्याय बना दिये हैं, इसी कारण रात बदली हुई लग रही है। पर्याय हैं—नियोन उजेले, रोशनीका भागता हुआ समन्दर, मस्तीका नशीला माहौल, नाचते हुए जोड़े, दिन-भरके कामके बाद एक दिलचस्प फ़ुरसत···। लेकिन इन सबके लिए अब वक़्त नहीं। हम ब्लैकआऊट ओढ़कर चल रहे हैं। वह एक बुरक़ेकी तरह है या ढालकी तरह। पीछे घूमकर देखता हूँ,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशहीन रातमें भी [illegible] 'लाईट-हाऊस' ही है, दो भाईनुमा दोस्तोंके बीच चल रहे युद्धके बावजूद भी 'ओरियण्ट बाई नाईट'में खासी भीड़ है। लोग उलटती हुई बसमें भी बेताबीके साथ चढ़े चल रहे हैं। ब्लैकआऊटने भीड़ नहीं बढ़ायी, भीड़पन बढ़ा दिया है। युद्ध जब आसपास आ गया है तो लोग उसी तरह सँभलकर खड़े हो गये हैं जैसे बस रुकने या बस चलनेसे पहले हम अतिरिक्त चेतन हो उठते हैं। डर और दहशत भी कुछ होते हैं ये पहले तो देखे जाते थे लेकिन युद्धके बाद जैसे ग़ायब हो गये हैं। चौरंगीमें खड़े-खड़े एक मिनिटको यह अहसास हुआ जैसे कुछ खो गया है। बड़ी देर सोचनेके बाद वह बिन्दु पकड़ पाया कि खोया कुछ नहीं, ऊपरके नियोन उजेले छुट्टीपर हैं इसीसे ऐसा अटपटा लगने लगा है—हाँ, यह भी कि दिनके सारे कार्यक्रम जो बदल गये····कलकत्ता म्यूज़िक स्कूलमें आज आर्केस्ट्रा नहीं है; यूसिसकी लायब्रेरी बन्द है; सत्यजित रे की फ़िल्मोंका समारोह चल रहा था, अपूकी तीसरी फ़िल्म थी आज; अब नहीं होगी; हंगेरियन चित्रकारकी प्रदर्शनी भी रुक गयी है; मैदानमें सीज़न-बॉल था, अब नहीं होगा; तार आया है—मुक्तिबोध-समारोह स्थगित कर दिया गया···। किसी आदमीका सिर मूँड़ दो और किसी शहरके कार्यक्रम कैन्सिल करवा दो—एक बराबर ही है। किसी जवान लड़कीकी आँखें फोड़ दो और किसी शहरके लाईट बुझवा दो—दोनों एक बराबर हैं। कलकत्ता जैसे रोम हो गया है और मेरा मन आस्कर-वाइल्ड—'अह, सिटी क्राऊण्ड बाई गॉड, डिसक्राऊण्ड बाई मैन'····नहीं, इसे थोड़ा बदलना पड़ेगा—'अह, सिटी क्राऊण्ड बाई नियोन्स, डिसक्राऊण्ड बाई वार।'····

● एण्टी वार बातचीत :

ग्रैण्ड होटलका शाही आलम और एयरकण्डीशण्ड ऊँचाईपर एक कमरा। नाज़ली नूर सामने है—खून फ्रैंको इजीप्शन, जन्म पेरिस, काम लन्दन और न्यूयार्क, भाषा अँगरेज़ी, ग्रैण्ड होटल सराय है, जाना है काठमाण्डू। पोलिश गवर्नमेण्टकी कोई स्कॉलरशिप मिली थी लेकिन उस समय कविताएँ लिख रही थी, जब लन्दन गयी तब एक उपन्यास शुरू कर लिया था—'ह्विच सिटी इज़ माईन'····। शीर्षकके बाद घबराकर उसने प्रश्नवाचक चिह्न लगा दिया था। अगला प्रश्न—पठानकोटपर तो बमबारी नहीं हुई? मसूरी बहुत अच्छी है, वहाँ कोई बम न फेंक दे?···· फिर एक और प्रश्न आया—

—डू यू रेलिश वार? कैन यू टॉलरेट इट?

—सवाल वारका नहीं है सिद्धान्त और सचाईका है।

—मुझे इन शब्दोंका अर्थ नहीं मालूम लेकिन वारका मतलब है लोगोंका मरना, बेमानी मरना, खूनकी एक नदीका बहना···· जानते हो, सेकण्ड वर्ल्ड वारने क्या क़हर ढाये थे····सारा चिन्तन सिकुड़ गया था!

—लेकिन मैं समझता हूँ, युद्ध-जैसी अग्नि परीक्षामें-से कमसे कम एकबार हर देशको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ता है। युद्ध रक्त-प्रवाह ठीक कर
है। युद्ध तो अपना वज़न जानना है।
कहाँ युद्ध नहीं है—नीत्शेकी आत्मकथा
होगी आपने, उसने हर बार यही कहा
'मैं आदमी नहीं हूँ, मैं तो युद्धभूमि
...'

—वह तो मैं भी महसूस करती हूँ।
अच्छी तरह याद है, हम उन दिनों
में थे, मेरी एक छोटी बहन भी थी।
-ज़रा देरमें सायरन बजते थे और हम
दौड़कर शेल्टर-रूममें जा छिपते थे,
जहाज़ोंके सिरपर-से गुज़रनेकी आवाज़ें,
कहींसे आती धमाकेकी आवाज़, दूसरे
लकी साँसरोक प्रतीक्षा। हर रात काली
मनहूस। तब मैं राष्ट्र और राष्ट्रीयता
जानती थी सो यह सच्चा और बालक-
ईमानदार फ़ीलिंग है कि मुझे युद्धके
से भी चिढ़ आती है। क्या पेरिसपर
गिरनेकी कल्पना भी की जा सकती है?
अपने शहरोंसे, अपने-आपसे कहीं ज़्यादा
करते हैं। सुकरातने कहा था न कि
कुछ किसीको सीखना है तो वह केवल
से ही सीखा जा सकता है।

—और यह भी सही है कि सब कुछका
होना एकबार सहन भी हो जायेगा,
का नष्ट होना हम सहन नहीं कर सकते।

—जब पेरिसपर बम गिरनेकी सम्भावना
वहाँके कलाकार शहर छोड़ काफ़ी
एक मैदानमें जा इकट्ठे हुए थे और उन्होंने
को बतला दिया था कि हम यहाँ हैं।
इसलिए कि वे चाहते थे बम उनपर
गिरे उनके शहरपर नहीं। यूँ आदमीके
जीनेका मतलब भी क्या है अगर उसके
आसपासका वातावरण ही न रहे।

—बात ठीक है लेकिन बाज़ वक़्त ऐसा
भी हो जाता है कि युद्ध टाला नहीं जा
सकता। हमें आत्मरक्षाके लिए सही, युद्ध
करना ही पड़ता है। मैं अगर हिन्दुस्तानी
नहीं भी होता तो भी इस युद्धमें हिन्दुस्तानकी
हिमायत करता क्योंकि यह युद्ध एक भौगोलिक
सीमाके लिए कम, 'जीवित रहने और जीवित
रहने देनेके' आस्था और अस्तित्वके सिद्धान्त-
का युद्ध अधिक है।

—तुम्हारा वाक्य तोड़नेके लिए माफ़ करना
....मैंने 'अमंग द मान्सटर्स' के बाद जो फ़िल्म
बनायी थी वह सरासर 'एण्टी वार' फ़िल्म थी।
उसका एक ही उद्देश्य था—युद्धके प्रति जन-
साधारणके मनमें घृणा पैदा करना। मेरा दावा
है—वह मोराविया के उपन्यास 'टू वोमन' से
इस मानीमें अधिक समर्थ थी कि हर लड़ाकू
देशकी बुराई उसमें की गयी थी। मोराविया ने
वैसे करुणा पैदा करनेवाला तरीक़ा अपनाया
था कि वे दो औरतें विनाशकी प्रतीक होकर
रह गयी हैं। मज़ा यह रहा कि प्रगतिका
ढिंढोरा पीटनेवाले देश ग्रेट ब्रिटेनमें वह बैन
हो गयी थी....

—उसमें कोई अश्लीलता थी?

—यह भी अश्लीलता ही है कि युद्ध-
विरोधी भावना उभारकर लोगोंको राजनीति-
के विपक्षमें तोड़ा गया था।

—फ़िल्मका नाम 'एण्टी वार' था क्या?

—युद्धपरस्त भीड़के चौराहेपर दर्शनसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम नहीं चलता उसका शीर्षक था – 'स्टाप' ···। जैसे बमगिरी जगहम-से कोई चीख़ता हुआ उठे और कहे–'बन्द करो !'

बातोंके दौरमें नाज़लीने उठकर सामनेवाली खिड़की खोल दी, शायद एयर कण्डीशण्ड वातावरण बड़ा दमघुटाऊ लगने लगा था। खिड़की खुलते ही रोशनी बाहर दौड़ गयी थी। दूरसे एक साफ़ आवाज़ आयी थी – 'इफ़ आई गिव माई हर्ट टु यू·····।' वह टीनएज गाना हँसी फैला गया था – 'एक ओर बम गिर रहे हैं और दूसरी ओर दिल समस्या हो गया है कि दें तो किसे।' तभी बाहरसे पुकार हुई थी – 'खिड़की बन्द कर दीजिए !' खिड़की बन्द कर दी गयी और ख़बरें खोजी जाने लगीं। कभी भी गौतम और गान्धी और नेहरूकी शान्तिके प्रति सहानुभूति नहीं हुई थी लेकिन सहसा यह ख़बर सुनकर कि कलकी बमबारीमें कोई पचास नागरिक मारे गये, यह लगने लगा कि जो भी युद्ध रोकनेकी कोशिश करते रहे हैं वे सही थे···युद्ध हमारी आदत नहीं हो सकता। तीसरे विश्वयुद्धके अन्देशेसे तो कम डर लगता है इस बातसे मन कहीं अधिक चिन्तित हो उठता है कि आनेवाला बड़ा युद्ध महज़ ज़ोर-आज़माई नहीं होगा, वह कुश्तीके गरदनतोड़ दाँवकी तरह होगा। जो पलीता लगा देगा दौड़कर, वही तमाशाई बन जायेगा, भले ही वह आग उसे भी न छोड़े फिर।

—तुमने हेमिंग्वेका 'नोट्स ऑन द नेक्स्ट वार' पढ़ा है ?

—हाँ लेकिन हम लोग कहीं शहरके अन्देशेसे तो नहीं डर रहे ?

—उसने लिखा है, पहले अपने देशके लिए युद्धमें मर जाना बड़ी शानकी बात समझा जाता था लेकिन आजके युद्धमें मर जाना शान और आन नहीं है—मरनेवाला अकारण ही कुत्तेकी मौत मर जाता है।

—लेकिन जो मामले सुलझते ही नहीं और पड़ोसी मियाँका दावा यह हो कि वे उसे बन्दूक़की गोलीसे सुलझायेंगे, तो ?

—ऐसे देशके ख़िलाफ़ बहुत सख़्त कार्यवाही होनी चाहिए। पाकिस्तानकी लड़ाई केवल हिन्दुस्तानसे कहाँ है ? यह तो ऐसी ही बात है कि कोई सिरफिरा बीच बाज़ार खड़ा होकर जगह-जगह आग लगाने लगे, उस सिरफिरेके ख़िलाफ़ जैसे सारा बाज़ार उठ खड़ा होगा वैसे ही इस राजनीतिक गुण्डागिरीके ख़िलाफ़ भी कुछ किया जाना चाहिए।

—मेरा ख़याल है, अठारह बरसकी उम्रमें ही हिन्दुस्तान इतनी ताक़त और निश्चयके साथ उठ खड़ा हुआ है कि अब किसी ढीलकी ज़रूरत नहीं रह गयी है। नहीं जानता लेकिन किसी भी तरक़्क़ीपसन्द देशकी तसवीर ऐसे ही बनती है।

—अपनी कॉफ़ी ठण्डी मत करो····लेकिन एक बात सही है कि नीत्शे जैसे चिल्ला उठा था एक दिन कि 'ईश्वर मर गया है' वैसे ही अगर पाकिस्तानकी बमबारीसे त्रस्त होकर अगर कोई अमृतसर या अम्बालामें चिल्ला उठेगा कि 'इनसान मर गया' तो उसके ख़िलाफ़ तुम एक वाक्य भी नहीं बोल पाओगे।····

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं घर लौट रहा था और मेरे साथ-साथ नीत्शे चल रहा था—मुझे बार-बार लग रहा था कि युद्ध ज़ेहनमें पैवस्त हो गया है इस बेतरह, कि यदि वह भी मिल जाये तो मैं सिवाय युद्धके और कोई बात नहीं कर पाऊँगा। केवल एक इच्छा मेरे मनमें थी कि ब्लैकआऊट तो उससे मिलनेका एक अवसर है····सहसा सायरन बजा था, एक बिखरती-सी आवाज़, लेकिन उस अँधेरेमें भागदौड़ मच गयी थी। चलती हुई बस-कारें रुक गयी थीं। दो दोस्त सड़कसे हटकर लेट गये थे, वे बड़े उत्साही लग रहे थे, इतने कि यदि वहीं बम नहीं गिरा तो वे दुःखी हो जायेंगे। मैंने पहली बार 'आमार' शब्दके साथ 'बाँगला देश' की जगह 'हिन्दुस्तान' सुना। संकट-संकेतके बाद एक व्याकुल कर देनेवाली प्रतीक्षा चलने लगती है कि अब कुछ हुआ अब कुछ हुआ····शहर फिर भी रुका नहीं, एक साहबने तो यह सुनकर भी कि सायरन बजा है इस तरह चेहरा बनाया—'तो मैं क्या करूँ?' हाँ, एक टैक्सीवालेने सवारी लेनेसे मना कर दिया; बोला, हमें मरना नहीं है। एक १९४७ में दंगा हुआ था, कमरकी चोट अबतक ठीक नहीं हुई है। अभी कलतक लोग मुझे आदमी नहीं शरणार्थी कहते थे। हर साल दंगे होंगे, हर साल शरणार्थी पैदा होंगे। साब, इतनी बड़ी दुनिया है, इन झण्डेबाज़ लोगोंके खिलाफ़ कोई कुछ नहीं करता····कि सारे क़ानून टैक्सी-वालोंके लिए ही बनाये गये हैं!····

मैं बोला था, इस ग़रज़से कि शहरकी नब्ज़ समझमें आये—आख़िर तुम नाराज़ किससे हो? बड़े सताये हुए जान पड़ते हो!

—नाराज़ तो मैं अपने बापसे भी था लेकिन क़ानूनसे नाराज़ था। अब रास्तेमें जो चपड़ू क़िस्मके पुलिसवाले मिल जाते हैं ग़ुस्सा उनपर आता ही है कि चवन्नी-अठन्नीके लिए चालान करवा देनेकी धमकी देते रहते हैं। कौन झंझटमें पड़े—महज़ इस खयालसे नहीं चाहकर भी ग़लत पैसा देते हैं····ये पाकिस्तान-चीन भी उसी चवन्नी क़ौमके हैं। हर जगह ब्लैक है—ब्लैकमनी, ब्लैकमेलिंग, ब्लैकमार्केट और ये ब्लैकआऊट भी नसीबेमें लिखा था।····

वह चुप नहीं ही होता लेकिन निरापद-ध्वनिने उसे चौंका दिया। वह चलता बना। ज़रा देरको शहर जैसे रुक गया था और जैसे दूसरा सायरन बजते ही शहर फिर चलने लगा। मुझे मोरावियाकी फ़िल्म याद आती है कि जिसमें माँ-बेटी चौड़ी सड़कपर-से गुज़रती रहती हैं और ऊपरसे आनेवाला वायुयान चीलकी तरह झपटता है उनपर। वह दृश्य आँखोंमें-से जाता नहीं, बर्दवान स्टेशनपर बहुत चीलें हैं और एक बार मेरे हाथसे कट-लेट नोंच ले गयी थीं। मुझे वे चीलें जब-तब ऐसी घटनाओंके साथ ज़रूर याद आती हैं। जब भी हार जाने या बद हो जाने या अस्तित्वके सानपर चढ़ जानेकी बात आती है मुझे वे चीलें याद आये बिना नहीं रहतीं। अब बर्दवान स्टेशनकी चीलें अगर ज़ेहनपर अक्स हो सकती हैं और हर-हमेश याद आती रह सकती हैं तो तोप-बम लेकर सिर आया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुश्मन कैसे याद नहीं आयेगा ? यहाँ आकर मैं अपने सोचनेमें चार क़दम और आगे आ गया हूँ—हम एक ऐसे तत्त्वके ख़िलाफ़ उठ खड़े हुए हैं जो साधारण जीवनके बीचमें टाँग अड़ाना चाहता है····!

• एक ख़त : दिल्लीसे

अँधेरेमें रास्ता टटोलता घर पहुँचा तो देखा, सड़कके वे कुत्ते जो उजेलेके नीचे हमेशा ऐश-के मूडमें दिखाई देते रहे हैं आज बड़े बीमार-से बैठे हैं। अजीब यह लगा कि वे सब लगातार ऊपर मुँह उठाये भूँकने लगे थे। ब्लैकआऊट बरदाश्त नहीं होनेका कारण अँधेरा नहीं है, हमारा रोशनीसे ताल्लुक़ है। सामने अँधेरे लेटरबॉक्समें एक ख़त चमक रहा था—दिल्लीकी मुहर :

"डियर,

दिल्ली मत आना अब। दिल्ली अँधेरा हो गया है। इस ख़ूबसूरत शहरको ब्लैकआऊट रास नहीं आ रहा है। मेरी तबीयत तो ये होती है कि ऊपर कोई एक छत बना दी जानी चाहिए कि अन्दर जलते उजेले ऊपरसे दिखाई नहीं दें, तुम्हारे न्यू मार्केट-में जो व्यवस्था है वही सारे शहरपर हो जाये तो ठीक रहे।····लेकिन मुझे यह भी डर लग रहा है कि अगर तुम्हारा मूड युद्धका बन चुका होगा तो मेरी बातें पसन्द नहीं आयेंगी। यार, लगता है, दिल्लीका कायाकल्प हो गया। कल हम लोग दफ़्तर जाने और सरकारकी आलोचनामें ही जुटे थे। आज सहसा यह लगा है कि कोई कह दे तो, कलकर जा पहुँचें। जब फिरंगी हिन्दुस्तानसे कूच कर गये थे तब सौन्दर्य-बोधी लोग बड़े चिन्तित थे कि दिल्लीका क्या होगा, दिल्लीकी जो आँखें स्कर्ट और टाइट-बेल्टकी आदी हो चुकी थीं वे बड़ी परेशाँ थीं, लेकिन ऊपर पंजाबसे जैसे गंगा उतरी और दिल्लीका नक़्शा बदल गया—वो स्लीवलेस और चूड़ीदार और कसावटें आयीं कि फिरंगी पानी भरने लगा। मेरा अपना ख़याल ये है सोणिये, दिल्लीके बारे-में, कि हवासे जैसे ही यहाँ दबाव पैदा होता है वैसे ही हवाका दूसरा दौर यहाँ चला आता है। सो कहनेका मतलब ये कि रोशनियाँ गुल हो गयीं लेकिन दिल्ली-वालोंकी आँखोंमें वो चमक आ गयी है कि रोशनीकी ज़रूरत ही नहीं रही। हर रात सायरन बजता है और मैं बीवी-बच्चोंके साथ नीचेवाले कमरेमें चला जाता हूँ। सच बोलूँ, जबतक दूसरा सायरन न बजे हम सन्तरे छील-छीलकर खाते रहते हैं और बम गिरनेकी कल्पना भी झेल लेनेके क़ाबिल हो उठती है। तबीयत होती है कोरस गानेको। तार-सप्तकमें है ना डॉक्टर रामविलास शर्माकी कविता, उसी-में थोड़ा-सा संशोधन कर लिया है—

'गिरने दो अय्यूबी बम।
सत्यम् शिवम् सुन्दरम्॥'

थोड़े गड़बड़ ढंगसे सोचनेके लिए माफ़ करना—जो पाकिस्तानसे या चीनसे झगड़ा है ये वहाँके वर्तमान शासकोंकी साजिश है, ये शासक जिस दिन बदलेंगे उस दिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वहाँ जिस तरहकी गाइडेड तानाशाही चल रही है न उसका तिया-पाँचा हो जायेगा। अगर झगड़ा सिद्धान्तका होगा तो किसी भी सज्जन व्यक्तिकी तरह हम पेश आयेंगे। साम-दाम-दण्ड-भेद, हम क्रम-क्रमसे आगे बढ़े हैं। अब मज़ा ये है कि झगड़ा साफ़ हो गया है। एक आदमी लगातार मज़हबकी ढाल लेकर चले, लगातार झूठ बोलनेको ही अपनी युद्ध-नीति माने, अपनी तानाशाहीकी रक्षामें लगातार जुटा रहे, जो स्वभावसे लूट-खसोटमें रुचि रखता है····ऐसेको कोई कब-तक बरदाश्त करेगा ? यार, हमें बरदाश्त नहीं करना, फिर भले ही साल-भर दिल्लीमें अँधेरा रहे या जीवन-भर बम गिरनेका अन्देशा बना रहे।

इस समय तू अगर दिल्लीको देखे तो चौंक जायेगा। टैक्सीके स्टेयरिंगपर सरदार साहबके हाथ नहीं ठहरते हैं। कनॉटप्लेससे जाना हो करोलबाग़ लेकिन वे टैक्सी ऐसे चलायेंगे जैसे लाहौरके अनारकली बाज़ार जा रहे हों। टी-हाउसका आलम ये है कि बेयराको दो अफ़वाहें सुना दो और वह बिल लाना भूल जायेगा। चाँदनी चौकमें 'काके दी हट्टी' बड़े जोशमें है। कल तन्दूरी खरीद रहा था तो मुण्डेने कहा—एक ब्रांच काके अपनी हट्टीकी स्यालकोटमें भी खोलेगा।···· मैंने बड़ी गम्भीरतासे सोचा है कि ये सहसा सारे देशको क्या हो गया ? एक नींद-सी खुली है, जैसे हम चौंककर जागे हैं। मान लो, अगर दस साल बाद यह कहा जाये कि ये देश होश सँभालते ही बड़ी ताक़तसे उठ खड़ा हुआ और इसकी सारी तरक़्क़ीका राज़ है—आयी हुई समस्याओंसे पूरी ताक़तके साथ जूझ पड़ना····तो किसीको आश्चर्य नहीं होना चाहिए। जिसे आगे बढ़ना है वह तो आगे बढ़ेगा ही। किसीने अगर दिल्लीको शान्ति-सम्मेलनमें व्यस्त देखा है तो वह इसे युद्धकी तैयारी करते भी देख ले। रातके ब्लैकआऊटमें उसी तरह भास होता है जैसे हम किसी खाईमें सोये दुश्मनका इन्तज़ार कर रहे हों। हुआ यह है कि शरीरके एक हिस्सेपर चोट लगी है और सारे शरीरमें ख़ून दौड़ने लगा है।····

कलकताके अँधेरेमें ज़रा देरको दिल्ली जी लिया था। कलाईकुण्डा और बैरकपुरपर गिरे बम ऐसे लग रहे थे जैसे थ्री-बी के बस स्टापपर गिरे हों या भवानीपुरपर। कमरेमें घुसते एक अजीब-सा उत्साह मुझमें भर गया। युद्धकी फ़िलासफ़ी पक्ष-विपक्षमें जो भी हो, ऐसा निश्चित लगा कि ज़िन्दा रहना है जिसे और जिसे कुछ करना भी है वह किसी-न-किसी बिन्दुपर पहुँचकर युद्ध घोषित करनेसे हिचकिचायेगा नहीं।

• दिशाएँ बदल गयीं :

रेडियोकी सुई घूमती जा रही थी :

हमारे करांचीके नामानिगारका कहना है : पाकिस्तानी सिपाहियोंमें बड़ा जोशोखरोश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। वे इस्लाम अल्लाहके नामपर मर मिटनेको तैयार हैं। सदर अयूब और मियाँ भुट्टोने पाकिस्तानी हवाबाज़ोंकी तारीफ़में कहा है कि उनका नाम इस्लामकी तवारीखमें हमेशा चमकता रहेगा···· ये बी. बी. सी. है····

रेडियो-पाकिस्तानसे आप ख़बरें सुन रहे हैं—कल पाकिस्तानी हवाबाज़ोंने कलकत्तापर बमबारी की और हबड़ा नामके एक ब्रिजको बड़ा नुक़सान पहुँचाया····

कोसीजिनने भारतके प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री और पाकिस्तानके राष्ट्रपति अयूब ख़ाँको निमन्त्रण दिया है कि यदि वे शान्तिपूर्ण बातचीत सोवियत भूमिमें आकर करना चाहें तो रूस उनका स्वागत करता है····आप उजबेकिस्तानसे समाचार सुन रहे हैं····

श्री चागलाने एक बैठकमें कहा कि पाकिस्तानका काम और मियाँ भुट्टोका अमेरिका-डिस्पैच वैसा ही है जैसे कोई चोर ताला तोड़कर चोरी कर ले और पुलिसमें जाकर रिपोर्ट भी कर दे कि फ़लाँ जगह ताला टूटा है····

फिर सुई किसी मार्चिंग सांगपर रुक गयी थी और मेज़पर रखा तार मेरे सामने था। मैं कल्पना भी नहीं कर सकता कि मेरी कज़िन, जो लखनऊमें पढ़ रही है, वह बम्बई जाकर मुझे इस तरह तार करेगी—

"कोई और रास्ता नहीं था कि मैं जिसे चाहती हूँ उसके साथ भाग जाऊँ। यह दोष तो मेरा है कि बड़े ग़लत समय परसे भागी हूँ। इन्हीं दिनों शादीकी बात उठ खड़ी हुई और हम दोनों भाग निकले। बम्बई ब्लैकआऊटमें सोया है और इससे हमें बड़ी राहत है कि शामको पकड़े जानेकी कोई सम्भावना नहीं। तुम मेरे बड़े भाई हो और उस नाते ऊ-यां भी। किसी भी तरह पापा-मम्मीको सीज़ फ़ायरके लिए राज़ी करवा दो। यदि वे राज़ी न हुए तो शास्त्रीजीके शब्द दुहरा रही हूँ—कम ह्वाट मे कम। सच इस युद्धने ही हमें ताक़त दी है कि पीछे नहीं हटना है। शायद हम लोगोंके एज-ग्रुपका ज़माना आ गया है।"

नहीं, वह तार पढ़कर मेरा हाथ सिरपर नहीं गया। मैंने आहिस्तासे उसे मेज़पर फिर रख दिया। रेडियोपर हवाई हमलेसे बचनेके तरीक़े बतलाये जा रहे थे और मेरी आँखोंमें बम्बई घूम रहा था—वे दोनों वी० टी० पर उतरे होंगे और कहीं जाकर ठहर गये होंगे। यह सब थोड़े रुककर भी किया जा सकता था, लेकिन···

मैंने काग़ज़-क़लम सामने रख लिये थे। बम्बईके घुप्प अँधेरेमें मरीन ड्राईवकी दीवारके सहारे-सहारे वे दोनों चलते दिखते रहे। दोनोंके हाथ गुँथे हुए, शरीर सटे हुए, मन एक लहरपर झूमता-सा···। अगर सहसा बमबारी हो तो वे हँसते हुए मर जायेंगे—एक वृत्त उनके प्यारका है, एक और वृत्त परिवारके प्यारका है, एक और वृत्त अपने देशके प्यारका है। लगता है, बराबर परिधिसे एकके बाद एक वृत्त खींचे जायें तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...के सब एक साथ जिन्दा रह सकते हैं, ...एक दूसरेको काटते नहीं।··· बड़ी देर ...क लगाता रहा, उन दोनोंमें-से किसी एकने ...हर उठाकर पानीमें फेंक दिया है और ...ते वृत्त-पर-वृत्त बने चले जा रहे हैं।

सलोमीने नीत्शेको कितने बरस लटका ...या···रेजिना कीर्केगार्दको चाहकर भी ...बरसे तक उससे शादी नहीं कर ...···। तुमने ठीक कहा था वाल्ट ...टमैन, कि मेरी दादीके पिता युद्धपर नहीं ...वह तो मैं खुद हूँ जो युद्धमें बच रहा ...वह तो मैं खुद किसीके साथ भाग आया ...हूँ वह तो मैं खुद उरी-छाम्बमें खड़ा हूँ···

रेडियोपर शास्त्रीजीकी आवाज़ें हैं—अपनी ज़मीन, अपने सिद्धान्त, अपनी सुरक्षाका निश्चित फ़ैसला।····मेरा कमरा हिन्दुस्तान हो गया है और सारा चिन्तन युद्ध। मन हो रहा है अपने अन्दर चलनेवाले युद्धोंकी एक सूची बना लूँ। बाहरके ब्लैकआऊटमें एक चुस्त चेहरा चमकता है और ज़ोरसे आवाज आती है—"तुम्हें क़सम है इस ब्लैकआऊटकी, जो रोशनीकी तरफ़ बढ़नेसे एक क़दम भी पीछे हटे।"

■ ■

Gram : MATACANTOS
CALCUTTA.

Telephone :
OFFICE : 22–3226
RESI : 55–2620

Asutosh Mookerjee & Co. Private Ltd.
12, RAJA WOODMUNT STREET,
CALCUTTA–1.

Importers & Manufacturers of :
WIRE ROPES, CHAINS LIFTING ACCESSORIES,
WAGON FITTINGS & MARINE STORES ETC.
Agents for :
LIFTING ACCESSORIES
S. TURTON & CO., LTD., BIRMINGHAM.
Workshop :
22, RAMLAL MOOKERJEE LANE,
SALKIA, HOWRAH.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निमकी बनाने के लिए

आटा छान लीजिए

नमक और डालडा वनस्पति मिलाकर इसे दूध के साथ सान लीजिए।

अब इसे अच्छी तरह गूंधिए।

छोटी-छोटी पेड़ियां बनाकर उन्हें बेल लीजिए और फिर गर्म वनस्पति में तल लीजिए।

लीजिए, स्वादिष्ट और जायकेदार निमकी तैयार हो गयी।

उत्तम एवम् स्वादिष्ट भोजन बनाने के लिए हनुमान वनस्पति पर ही भरोसा रखें।

भोजन बनाने का श्रेष्ठ चिकनाई माध्यम

हनुमान वनस्पति

निर्माता :

रोहतास इन्डस्ट्रीज लिमिटेड

डालमियानगर (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

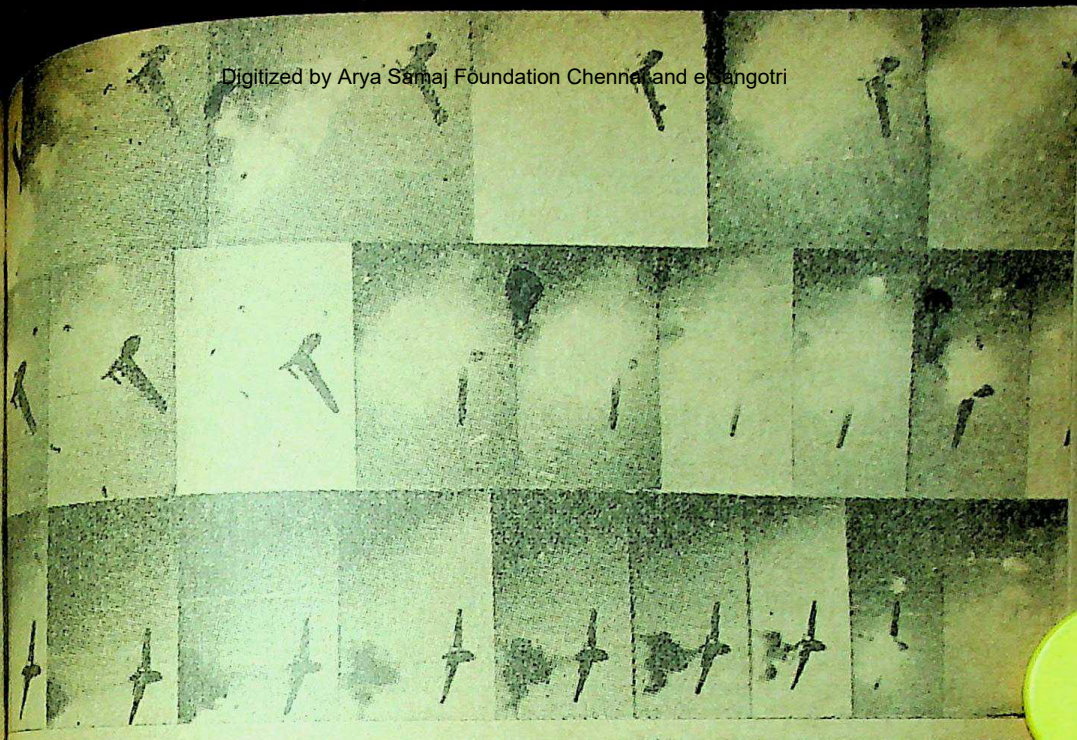

दुश्मन राडार-स्क्रीनपर मन-मस्तिष्कके युद्धविद्ध-यान

एक नया मोन्ताज़

युद्धविद्ध

सुदर्शन चोपड़ा

१

समर्पण

उसने होश सँभाली है, बरा-आ-बर यह एहसास फटे बमके छर्रोंकी तरह नस-नसमें बिंधा रहता है, गोया अभी-अभी हवाई हमलेका सायरन बजा है, और हम स-अ-अ-ब खाई-खन्दकोंकी तरफ़ बेतहाशा भाग रहे हैं; छर्रोंकी भीतरी दीवारोंके कोनों-में दुबके-चिपके खड़े हैं या कि बीच रास्तोंपर औंधे लेटे पड़े हैं—कुहनियोंके बल, कानोंको हथेलियोंसे बन्द किये हुए, मुँहोंमें काड़े ठूँसे····

···मगर वह 'हवाई' हमला कभी नहीं होता, और न ही 'खतरा' टल जानेका सायरन कभी बजता है····

ऊपरके चित्रको ज़रा ग़ौरसे देखिए—हलवारा मोर्चेपर वायुसेना अधिकारी श्री नेवने अपने हण्टर विमानसे एक पाकिस्तानी बमवर्षक एफ़-८६ सेबर-जेटको मार गिराया था। यह सारी घटना केवल ९ सेकण्डमें घटित हो गयी थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

····ऐसी ही युद्धविद्ध समस्त 'हम' हूँ, मैं हूँ 'के बावजूद' हूँ···

हूँ, कि अपने होनेकी शर्त पे मेरे वो दस्तख़त मौजूद हैं जो मैंने कभी किये नहीं····

मेरे वजूदकी परत-परतपर उस शर्तके हरूफ़ खोद-गोद दिये गये हैं····

तेरे अस्तित्वकी भी यही स्थिति है···

उसके-की भी यही नियति····

तो फिर कैसा रहे, जो परस्पर ही समर्पित हो लें !

■

"ये आकाशवाणी है···हमारी स्थल सेना-वाहिनीने शत्रु-पक्षकी एक अहम चौकी-पर क़ब्ज़ा कर लिया है···"

ज़ेहनके वतनमें बीज आ पड़ा है गोया । और उमेशके मूडकी दोशीज़गीपर दिन-ब-दिन निखार आता जा रहा है । वतनपरस्तीका जज़्बा लिये शहीद होनेको तैयार किसी जाँबाज़की तरह लग रहा है इन दिनों !

हम चाय पीकर सिगरेट सुलगा चुके हैं । रामूको आवाज़ देकर उमेशने पान लानेको कहा है । उमा भाभी आँगन-पार रसोईघरमें है । मुन्ना हमारे क़रीब ही फ़र्शपर बैठा मिकैनिकोसे पुल बना रहा है ।

'मज़ा आ गया, प्यारे-ए !' उमेशने एक लम्बा कश खींचकर धुँआँ उगल दिया है ।

'काहेका ?' मैं यूँ ही पूछ डालता हूँ ।

'वह पटखो दी जायेगी, अबके, कि बस या-आ-द करते रहेंगे, किसीसे पाला पड़ा था ।' और वह आदतन चुटकी बजाकर गुल झाड़ देता है ।

चुटकीसे झाड़ा गुल ऐश-ट्रे में नहीं गिरा, प्लास्टिकके मेज़पोशपर लुढ़कती हुई राखकी छड़ सीलिंग फ़ैनसे फिंकती हुई हवाके दबावमें ज़र्रा-ज़र्रा हो फ़र्शपर ग़ायब हो गयी है ।

फ़र्शपर मुन्नेने पुलकी बनायी एक फाँकके नीचे एक और कोठी टिका दी है और उसपर अगली फाँक उसारनेके लिए दो गार्डर लिटा दिये हैं ।

उमा आँगनमें-से होकर बाथरूमकी तरफ़ चली गयी है । बिना कलफ़की साड़ी उसके भरे बदनपर चिपकी-सी हुई है । चलते समय कुल्होंपर लहरें उभरती हैं । ऊँचा-पूरा क़द । बिस्कुटी रंग । नक्श खासे । तालीम मामूली, मगर सलीक़ा मुकम्मिल ।

रामू पान लेकर लौट आया है । प्लेटमें रखकर चला गया है । 'धोबीको बुला ला ऐ रामू !'—उमा बाथरूमसे निकलकर रसोईकी तरफ़ जाती हुई कह गयी है—'और सुन, टालपर कहते आना, एक बोरी कोयले भिजवा दे ।'

उमेशने सोफ़ेपर ही अधलेटते हुए कहा है—'हालात बेहद मुआफ़िक़ चल रहे हैं, प्यारे ! अबकी बार ह्यूमिलिएशनकी क़तई गुंजाइश नहीं ।'

■

दुश्मनके ख़ुफ़िया ठिकानेपर ज़बरदस्त छापा···कई गुप्त दस्तावेज़ बरामद····

उमेशको एकदम कुछ याद आ गया है । सोफ़ेसे उठकर आलमारीकी तरफ़ लपक गया है । पैरकी ठोकरसे मुन्नेका अधबना पुल ढह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ा है। मुन्ना रूँ-रूँ करने लगा है। मैंने उठ-कर उसका पुल ठीक कर दिया है।

उमेश आलमारीमें-से कुछ खत निकाल कर जेबमें ठूँसता हुआ कहता है—'चलो, चलें!'

'चलो।'

और हम बाहर निकल आये हैं।

उमाने हमें निकलते हुए देखा है, पर बोलनेके टाइम लौटनेकी पूछी नहीं।

'देख रहा हूँ, भाभीकी आदतें इस बीच काफ़ी बदल गयी हैं।'

'हूँ!'

एक तरहसे ठीक ही है। लगता है अब गाड़ी ठिल पड़ेगी। वह बेचारी भी तो काफ़ी परेशान हुई है इन झगड़ोंमें। आखिर कहाँ तक खिंचे, अशान्ति!

'कुछ नहीं, यार, एकदम बकवास स्थिति है यह। ऐसेमें ज़्यादा देर तक नहीं चल सकेंगे। दिस-वे, दैट-वे करना ही होगा।'

'कमाल है, भई! दिस-वे, दैट-वे वाली स्थितिमें-से ही होकर नहीं गुज़रे हो क्या? अभी कुछ कसर रह गयी है?'

'जिसमें-से होकर गुज़रा हूँ न, वह अगर उसी रूपमें दैट-[illegible] तो मेरे सामने आत्महत्याके सिवा कोई चारा न रहता, यह तुम बखूबी जानते हो। दिस-वे करनेके लिए मुझे किस क़दर टूटना पड़ा, सो भी तुमसे छिपा हुआ नहीं। अब तो बस खुद दैट-वे करके ही चैन पाऊँगा।'

'यानी?'

'सरासर बाज़ी मात थी, अगर वह शह न बचती। हालाँकि उस शह बचनेके चक्कर-में मुझे अपने तमाम प्यादे, घोड़े, फ़ीलें और वज़ीर तकको कटवा देना पड़ा। मगर अब मैं-एँ दूँगा मात। तब खेल खत्म होगा, ऐसे नहीं!'

रासबिहारीका चौक क्रॉस करके हम बायीं ओरकी पटरीपर दुकानोंके सामने-सामने चलने लगे हैं। पूजा क्लियरेन्स सेलके कैनवसी बोर्ड टँगी दुकानें हर मालकी हॉट-सेल कर रही हैं, गोकि पूजाका रंग अबके ब्लैक-आउटेड रहनेकी सम्भावना है। कम्यु-निटी पूजापर सरकारी पाबन्दीका एलान हो चुका है।

दोपहर-बाद बारिश हुई थी, इस समय हवामें कुछ खुनक है। ह्यूमिडिटी भी क़दरे कम। बादलोंके टुकड़े जेट-फाइटर्सकी तरह आकाशपर इधर-उधर उड़-उलझ रहे हैं।

शामके छह बजनेको हैं। ओवरलोडेड ट्रकोंकी-सी आवाज़-अन्दाज़में क्लर्कों-लदी डबल-डैकरें 'अब उलटीं कि अब उलटीं' लगती भागी जा रही हैं। ट्रामोंके पायदानों-पर एक पैरपर टिके और कोई-कोई तो रॉडसे लटके-भर···काला रोग़न पुती हैड-लाइट्सवाली कारें-टैक्सियाँ, गोया सौ मीटर-की दौड़में गॉगल्स लगाये भागते एथलीट।

···फ़ुटपाथपर पेवमेण्ट डीलर्स और फूलवाले····केलेके पत्तोंपर रजनीगन्धा, गुलाब, लिली, मोतिया, और नरगिसकी दुकान सजाये····फूलोंपर झुकीं बंगाली लड़कियाँ····

देश-भरमें फूलोंकी सबसे अधिक खपत कलकत्तामें है। जूड़ोंसे लेकर बिस्तरों तकसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर रोज़ फूलोंकी लपटें लिपटती हैं। और कन्ज़्यूम्ड फूलोंकी मसली पत्तियाँ सुबह गलियोंमें जहाँ-तहाँ रुलती दिखाई पड़ती हैं। फूलोंका भाव यहाँ तेज़ रहता है।

मगर आज सबसे मन्दी शै भी शायद फूल ही हैं। इनकी बिक्रीका वक़्त तो ब्लैक-आउटने ग्रस लिया है। शाम झुकनेके थोड़ी देर बाद ही सारी चहल-पहल लुप्त हो जाती है।

देशप्रिय पार्क तक पहुँचते-पहुँचते हलका-हलका झुटपुटा उतर-छा गया है। पार्कसे निकलती हुई रंग-रंगकी देशप्रियाएँ महकार छिड़कती इधर-उधर खिड रही हैं।

एक सरूक़दके खत उभारती हुई आस-मानी साड़ीपर मेरी नज़रें फिसलती देख उमेशने रिमार्क कसा है—'होपलेस!' और तुरन्त बाद ही एक छोटी-छरहरी फुरेरी-सी लड़कीको ताकने लगता है—'ये है, चीज़!'

'तुम्हारा साइज़-ग्रुप।'

'गुरु, हमारे साइज़-ग्रुपकी ही चढ़ती कला है, आजकल।'

'कैसे?'

'दुश्मनोंके छक्के छुड़ा रहा है मेरे साइज-ग्रुपका प्रधान मन्त्री।'

'हँ-हँ-हँ····अच्छा, लेट अस रिट्रीट नाउ। अँधेरा घिरता आ रहा है! टार्च भी लेकर नहीं आये। और फिर मुझे तो तुम्हारे यहाँसे भी दो मील और परे जाना होगा।'

'क्या हालतें बन गयी हैं, यार महानगरी-की!'

'सुनते हैं, सेकण्ड ग्रेट वारके बादसे पहली मरतबे कत्ताकी शामें बूचर हुई हैं!' पर ऐसा नहीं।'

उसी फ़ुटपाथपर लौट रहे हैं। आनकी आनमें कालिख पुत गयी है, पूरा बाज़ार अन्ध-कूपमें समा गया है। मेन रोडपर गुज़रती हुई कोई कार या टैक्सी अपने काने डिपर्स लमहे-भरको झपक देती है तो उस झपकीली लौमें आस-पासके बाज़ारका कोई एक टुकड़ा कैमरेकी क्लिककी तरह आँखोंमें नक़्श हो जाता है, और बस। फिर वही ब्लैक-सीमें तैरती हुई मछलियोंकी तरह ट्रैफ़िक।

चलते-चलते किसीसे कन्धा भिड़ जाता है तो किसी बुझे हुए लैम्पपोस्टसे टकराते-टकराते बचते हैं। उमेशकी बीनाई वैसे ही कमज़ोर है। मेरे कन्धेपर बाँह रखकर चलने लगा है।

अचानक जाने क्या हो आया है कि बहुत ही बुझे स्वरमें फ़रमायशता-सा कहने लगा है—'यार, एक बात मानोगे?'

'कहो',—मैं समझता हूँ, कोई बड़ी गम्भीर बात होगी। मगर वह उसी आवाज़में कहता है—'चलो, चौरंगी हो आयें।'

'लौटनेमें दिक़्क़त पड़ेगी, इन दिनों कन्वेयन्सकी हालत तो देख ही रहे हो! कल कितना परेशान होना पड़ा था, टैक्सीके लिए!'

'जो भी हो, देखा जायेगा। नहीं मिलेगा कुछ, तो पैदल ही लौटेंगे। पर चलेंगे। चलो ना!'—उसके खुशामदी-कम ज़िद्दी लहजेसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...आ गयी है—'तो चलो फिर, इसमें ...परेशान होनेकी क्या बात है।'

'यार, बात यह है कि मैं इतनी जल्दी ...नहीं जाना चाहता।'

और हम लपककर ट्राममें चढ़ गये हैं। ...समय उत्तरकी ओर जानेवाली ट्रामोंमें ...बहुत कम है। हालाँकि हमें बैठनेकी ...फिर भी नहीं मिली। मकड़ी-जाल-...सीलिंग फ़ैनके फ़्रेममें उँगलियाँ फँसाये ...के बीचोबीच खड़े हैं। लगभग अँधेरा ...। बैठे हुओंकी सूरतें दिखलाई नहीं पड़ ...। सिर्फ़ बातोंके चन्द टुकड़े जोशमें काढ़े-...ले हुए····ईंटसे ईंट बजाकर रख देंगे अब, ...क्या है इन्होंने····हम अबतक शान्तिपाठ ...रहे हैं, यही ग़लत था····कोई साथ नहीं, ...सही, अकेले ही काफ़ी हैं, हम····इनके ...के सेबरजेट तो फ़्लिटसे मरनेवाले ...रोंकी तरह गिर रहे हैं····पैटर्न टैंक तो ...इस्तेमाल ही करने नहीं आते····अजी, ...भी होते तो क्या कद्दू पै तीर चला ...ये, मॉरेल चाहिए मोशाय, लड़नेके लिए ...चाहिए, हथियार तो निमित्त मात्र होते ...किस बिरतेपर लड़ेंगे ये, एक हज़ार ...तक, एक सप्ताह तो टिककर दिखायें···· ...भारतीय सेनावाहिनी आमार चौधुरीके कमाण्ड ...है····लड़ेगा बंगाली ही, और किसमें है ...शक्ति····कलाईकुण्डापर हमला कर गया, धोखे-...में, तो मज़ा भी चख लिया न, रावलपिण्डीका ...भी तो पिण्डदान करा दिया है हमने····

"एक कण्ठ विषपायी" में इन्द्र

० प्रभु, शत्रु के समक्ष शस्त्र से
यदि मैं न आज उत्तर दूँगा,
तो त्रिलोक में
मैं कायरता के अपयश का भागी हूँगा।
क्या शासक का धर्म
प्रजा की रक्षा करना नहीं····?

०० मैं कहता हूँ
सहनशीलता की कोई सीमा होती है
अब आज्ञा दें,
— आत्म-सुरक्षा है विधान में
जन्मजात अधिकार सभी का।

— दुष्यन्त कुमार

अन्तर्युद्धविद्ध : मन : प्रान्त

उमेशको इस बीच बैठनेकी जगह मिल गयी है। वह खोया-खोया-सा बैठा खिड़कीके बाहर तक रहा है, एकदम खाली-खाली नज़रों।

उसके भीतर चलनेवाले युद्धसे अपरिचित नहीं हूँ। हमदर्दी भी है। कहीं कुढ़न भी। क्या तमाशा है कि जान-बूझकर ठहरे पानीमें पत्थर फेंक दें। चैनके चन्द लमहे खुद ही ज़िबह कर दें! अपनी ग्रन्थियोंकी जकड़न स्वीकारते हुए उसने कई बार बेचारगी-पगी आवाज़में कहा है, मैं क्या करूँ-ऊँ, मुझे कुछ सुझाई नहीं देता। इस तरह जीना अपमानित होकर जीना लगता है, बस इससे निजात चाहता हूँ, अब चाहो तो हिंस्र वृत्ति कह लो कि बदलेकी। वह मुझे तलाक़ देकर मुझे हेच करना चाहती थी न! अब मैं उसे त्याग-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर हेच बना डालूँगा। इसीलिए तो सारा नाटक करना पड़ा था! उसके वकील बापके नोटिसके जवाबमें माफ़ी-तलाफ़ी माँगी, अपने कियोंपर परेशानीका इज़हार किया, उमाको सुखी रखनेका वादा किया, क़समें खायीं। और वह आ गयी।

बसुश्री सिनेमाके स्टापपर कुछ लोग उतर गये हैं। मुझे भी बैठनेकी जगह मिल गयी है। ट्रामकी सैकण्ड क्लासकी पिछली बोगीसे कण्डक्टरने रस्सी खींचकर दो घण्टियाँ बजायी हैं; फ़र्स्ट क्लासवालेने भी वैसे ही टन-टन की है। ट्विन ट्रामें ठिल पड़ी हैं। बसुश्री सिनेमाके मेन पोर्चके सामनेसे गुज़रते हुए बड़ा विचित्र-सा लग आया है। भीतर शो तो चल रहा है, मगर बाहर इसका कोई चिह्न नहीं—सिवा इसके कि एक ज़ीरो वाट-की मद्धम-सी लौ पोर्च-बन्द सींखचोंके भीतर क़ैद है। छह बजेवाला शो ही आजकल आख़िरी होता है। महानगरके सवा सौ सिनेमाघर और कलकत्ताकी लास्ट-शो-शौक़ीन पब्लिकपर इस ब्लैकआऊटके कारण क्या बीत रही होगी! नौसे बारहवाले लास्ट-शोमें किसी भी शहरके सिनेमाओंमें इतना रश नहीं रहता होगा जितना यहाँ होता है। सपरिवार फ़िल्म देखना यहाँकी एक खास हॉबी है, और इसका उपयुक्ततम समय लास्ट-शो।

रासबिहारी एवेन्यूके बाद साउथ कल-कत्ताका सबसे ज़्यादा पुररौनक़ इलाक़ा हाजरा चौकसे जग्गू बाज़ार तकका है, और यही वक़्त है रौनक़के जोबनका। मगर हमारी ट्राम ताऊनसे तबाह हुए किसी अदना क़स्बेसे गुज़र रही लग रही है।

सर आशुतोष मुखर्जी रोडके दायें पक्षपर उभरी चित्तरंजन कैंसर हॉस्पीटलकी विशाल इमारतके फेफड़े इस वक़्त भी अपने अँधेरे क्रोड़में अनगिनत कैंसर समेटे हुए हैं। अपनी बेड्जपर करवटें बदलते हुए मौतके मुन्तज़िर कैंसर रोगी ऐसे समय क्या सोच रहे होंगे! अभी सायरन बज उठे तो उन्हें कैसा लगेगा? बमका धमाका सुनकर उनकी मनःस्थिति क्या होगी? बाम्बर प्लेनकी आवाज़ उन्हें दहशत दे जायेगी कि मुक्तिका पयाम, कौन जाने! अख़बार और रेडियोकी ख़बरोंसे उनपर क्या प्रतिक्रिया होती होगी? क्या वे भी शत्रु-नाशकी कामना करते होंगे? किस आधार-पर? इसलिए कि वे इस राष्ट्रके हैं? मगर कबतक हैं? चन्द दिन, हफ़्ते या महीने ही तो! दुनियाकी कोई ताक़त उन्हें बचा नहीं सकती। अपने राष्ट्रकी भी बड़ीसे बड़ी पूँजी उन्हें ज़िन्दगी नहीं बख्श सकती। उन्हें तो वही वैज्ञानिक शक्ति बचा सकती थी जो युद्ध-आयुधोंके निर्माणमें लग रही है। उन्हें वे रेडियम किरणें चाहिएँ जो एटम फोड़नेमें मसरूफ़ कर दी गयी हैं।

उमेशके साथवाली सीट ख़ाली हो गयी है। मैं उठकर उसके पास आ बैठा हूँ तो वह चौरंगीके विशाल अँधेरे मैदानकी तरफ़ देखकर एक पैरोडी गुनगुनाने लगा है:

'देख तेरे मैदानकी हालत क्या हो गयी भगवान, कितना भयावना सुनसान!'

'एक तो वैसे ही इन दिनों कृष्णपक्ष है, उसपर यह पक्षाघात!'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'दुर्गापूजासे पहलेकी इन अंधेरी रातोंको यहाँ कृष्णपक्ष नहीं कहते।'

'तो ?'

'पितृपक्ष।'

'पूजाकी रातोंको मातृपक्ष ?'

'नहीं, देवीपक्ष।'

'एक ही बात है। मतलब यह हुआ कि बंगाली लोग पिताको अन्धकारका प्रतीक मानते हैं और माँको प्रकाशका !'

'इनका तो पूरा कल्चर ही मातृ-प्रधान है।'

'तो यों कहें कि ये अभी भी मातृसत्ता-प्रधान युगमें रह रहे हैं !'

'एकदम। और जबकि बाक़ीकी दुनिया आज पितृसत्ताको भी झटक चुकी है। पर माँकी मान्यता भी मात्र शब्दों तक सीमित है, वरना तो नारीकी जितनी दुर्गति यहाँ है उतनी कहीं नहीं। विधवा-विवाह तक जहाँ आज भी अकल्पनीय हो···'

'मगर यार, हम तो यह सुनते आये हैं कि बंगाल प्रगतिकी दौड़में बहुत आगे है !'

'बिलकुल ग़लत सुनते आये हो ! शायद यह सुना होगा कि यहाँ प्राचीन संस्कृति अभी-तक सुरक्षित है। यही हालत यहाँके साहित्य-की है। आधुनिकका लेबल लगे साहित्यकी भी। उसकी भी ठीक वही हालत है जो यहाँके आधुनिक संगीतकी, जिसे हमारे यहाँ सस्ता और फ़िल्मी कहकर मुद्दत पहले दुत्कार दिया गया था। यों हर बातमें जातीय गौरव या प्रान्तीय उच्चताकी भावना इनकी सबसे बड़ी दुर्बलता है।'

'मुझे तो लगता है, यहाँ राष्ट्रीयताकी भावना भी जातीयता तक ही सीमित है !'

'राष्ट्र शब्दके लिए यहाँ जाति शब्दका ही प्रयोग होता भी है। इनकी निगाहमें तो संयुक्त राष्ट्र संघ भी जातिपुंजके सिवा कुछ नहीं।'

'ये अपने आपको हिन्दुस्तानी थोड़े ही कहते हैं !'

'तो ?'

'सिर्फ़ बंगाली। बंगालीके अलावा सबको हिन्दुस्तानी कहकर सम्बोधित करते हैं। और उस सम्बोधनमें गाली देने-जैसा बोध रहता है। पिछले दिनों 'सन्स ऑफ़ दि सायल' का आन्दोलन चला था, उसमें किस क़दर दंगे-फ़साद हुए थे, देखे थे !'

'और मज़ेकी बात यह कि इस तरहके फ़ैनेटिक आन्दोलन सरकारी स्तरपर होते हैं। पश्चिम बंगाल सरकारकी कितनी बड़ी भूमिका थी, उसमें !'

'सो तो थी ही, है भी।'

'उफ़ !····यार, समझमें नहीं आता कि जिस मुल्कमें ये हालत हो, वह किस तरह तरक़्क़ी कर सकेगा ! इन द्रविड़िस्तानी और खालिस्तानी क़िस्मकी संक्रामक और आक्रामक भावनाओंके रहते विदेशी आक्रामकोंका सामना कैसे कर पायगे हम !'

• चौरंगीसे चौरंगी तक : रंग-विराम

गान्धीके बुतके सामने पार्क स्ट्रीटसे चलकर फ्री स्कूल स्ट्रीटसे होते हुए न्यू मार्केटके सामनेसे लिण्डसे स्ट्रीटके रास्ते चौरंगीपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ निकलनेवाली सैरको हम 'चौरंगीसे चौरंगी तक' की सैर कहा करते हैं। कलकत्ताकी नाइट-लाइफ़का ही नहीं, हिन्दुस्तान भरकी नाइट-लाइफ़का सबसे बड़ा केन्द्र है यह इलाक़ा।

मगर आज 'चौरंगीसे चौरंगी तक' की सूरत देखकर देवदासकी वेश्या-प्रेमिकाके कोठे-की हालत याद आ रही है जो देवदासके विरागमें कारोबार ठपकर देनेपर हो गयी थी।

ट्रिंकाससे मोकेम्बो तकके फ़र्लांग-भरके टुकड़ेमें जितने बार यहाँ हैं, इतनी जगहमें उतने बार दुनियाके किसी शहरमें नहीं होंगे। दुनिया-घूमे लोगोंके मुँहसे सुनकर ही यह बात कह रहा हूँ। इसी आधारपर एक और जान-कारी, कि फ्री स्कूल स्ट्रीटके इलाक़ेमें जितनी कॉल-गर्ल्स हैं इतने छोटे टुकड़ेमें इतनी संख्यामें और कहीं नहीं। ढंगके किसी आदमीको देखते ही इन कॉल-गर्ल्सके एजेण्टोंके झुण्ड हरिद्वार और बनारसके पण्डोंकी तरह जजमान-के पीछे ऐसे पड़ जाते हैं कि उनसे पिण्ड छुड़ाना कठिन हो जाता है और रास्ता चलना मुहाल।

पर आज न बार, न बार-मेड्स, न जज-मान, न पण्डे। स—अ—अ—ब शेष हो लिया-सा उदास बातास। अन्धेरेमें सैण्डिल टिक-टिकाती काली चमकीली एक जोड़ी टाँगें स्कर्ट उछालती इक्का-दुक्का झलक जाती हैं। राहगीर भी इक्का-दुक्का ही हैं, मगर ग्राहक शायद ही कोई।

जंगकी सबसे बड़ी कैजुअल्टी कॉल-गर्ल्स की हुई है। धरवाले तो फिर भी शाम तक काफ़ी बिजनेस खींच लेते हैं, मगर इन बेचारियोंका तो धन्धा ही रातको शुरू होता है।

उमेश पैण्टकी जेबोंमें हाथ डाले हौले-हौले चल रहा है। आज जैसे उसे कोई जल्दी नहीं। वरना उसकी नार्मल चाल भी छोटे क़दके बावजूद मुझसे कहीं तेज़ है।

'नहीं, यार, मुझे तो इनसे भी बड़ी कैजुअल्टी इनके एजेण्ट लगते हैं, जो बेचारे दो-चार रुपये हर रात कमाते थे और अगले दिनकी रोटी जुटाते थे।'

एजियाज़वाले चौकमें एक पनवाड़ीकी दुकानपर ढिबरी जल रही है। हम पान खाने खड़े हो गये हैं। ढिबरीके पीलियाये आलोकमें बंगला टेलीग्राफ़ (ज़मीमा) पर झुके चार-पाँच आदमी बड़ी उत्सुकतासे उझक-उझककर ख़बरोंकी सुर्ख़ियाँ पढ़ रहे हैं।

एकने कमेण्ट किया कि पूर्वी पाकिस्तान-पर क्यों नहीं हमला करते, वह तो एक दिनकी मार है।

दूसरेका ख़याल है कि क्या पता क़ब्ज़ा कर ही चुके हों, अबतक बता न रहे हों।

तीसरा कह रहा है कि बस दो-चार दिन ठहर जाओ, पाकिस्तान तो पूरेका पूरा ही अपनी जेबमें होगा। रखा ही क्या है उसमें! वह तो यूँ कहो कि गीदड़की मौत आ गयी थी जो शहरकी तरफ़ भागा था।

पनवाड़ी यू० पी० का मालूम होता है। कहने लगा है: 'अजी हमारे सासतरीजीने तो इत्ता कहा अजूबसे कि बई मान जा, मान जा, क्या धरा है जिदबाजीमें, पर वो तो तुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानो उलटी खोपड़ीका फौजी आदमी ठहरा। नहीं, हम तो लड़ेंगे। अबे तो लड़ ससुरे! देख फिर तमासा! एक वो है कमबख्त उनका क्या नाम है रे····हाँ-आँ, भुट्ट, भुट्ट···भुट्टे भुनते-भुनते साले मिलिस्टर बन गये, अक्कल के मीत, कमीन, भड़भूंजेकी औलाद। वह कुछ ज़्यादा ही बड़-बड़ करे था। अब बोलती बन्द हुई उसकी।'

पान खाकर पैसे देते समय उमेशको ज़रा हल्की-लगी सूझी है। कहता है—'बोलती-वोलती क्या बन्द हुई, बराबरकी लड़ाई कर रहे हैं वह भी।'

'अजी बाबूजी, आप देखते रहियो, इनका यह तीरथ है ना, मक्का, बस वहीं भिजवा देंगे इन्हें मक्केकी तरह भून-भानके। यो हैं या सबरे। पिद्दी न पिद्दीका सोरबा। हुँ!'

टेलीग्राफ़ पढ़नेवालोंमें-से एकने बीड़ीका धुआं खींचकर कहा है—'और नहीं तो क्या! अजी वो ज़माने अब लद गये, जब हम मार खा लिया करते थे। अब यह नहीं हो सकता कि कोई हमपर वार करे और हम बदला न लें। अपमान बरदाश्त करनेसे तो मर जाना अच्छा है!'

हमें पनवाड़ीकी दुकानसे चलकर सदर स्ट्रीटके रास्ते न्यू मार्केट पहुँचनेमें क़रीब दस मिनिट लग गये हैं। मगर इस बीच उमेश बिलकुल नहीं बोला। न ही वह रास्तेकी किसी चीज़की तरफ़ तवज्जो दे रहा है।

मैं उसकी खामोशीको मार्क करके पूछ लेता हूँ—'क्या हो गया?'

'कुछ नहीं, दोस्त!' उसने क़दरे लम्बी

और हमारा ऐसा मत है—
जहाँ न्याय की हत्या हो
अन्याय सफल हो,
जहाँ शक्ति को अहंकार हो
सत्य विकल हो
जहाँ विवश-सा शौर्य
झुकाये शीघ्र सिहरता,
जहाँ प्रबल हो असुर
और निर्बल हो भर्त्सा,
— वहाँ धैर्य का दुर्ग अन्ततः ढह जाता है
औ' एकमात्र उपाय युद्ध रह जाता है।

— दुष्यन्त कुमार

साँस भरकर छोड़ी है—'अपमान पीनेसे तो वाक़ई ज़हर पीना बेहतर है। वरना जब-जब उस अपमानकी याद आती है, तब-तब इस क़दर मरोड़े खा-खाकर टूटना पड़ता है कि यातना मृत्युसे भी अधिक कष्टीली होती है।'

मैं चुप रहता हूँ। इस बातका क़ायल नहीं कि गैसीय गुब्बारेमें छेद करके गैस निकाल दूँ। न ही यह कि बैलूनके मुँहपर एक और पक्की गाँठ मार दूँ। गैसको तो निकलना ही है आखिर। स्वतः ही धीरे-धीरे सरकती रहेगी, बैलून तो नष्ट नहीं होगा।

मगर उमेशको ज़्यादा ही परेशान पाकर एक बार तो मन हो आया है कि हलकमें उँगलियाँ डालकर वोमिट करा दूँ। पर दूसरे ही पल अपनेपर क़ाबू पा गया हूँ। अन्दरके तेज़ाबों और अँतड़ियोंके युद्धसे अपने-आप ही जो फूट निकले वही ठीक, वरना तो आँत-आँत उमिठ जायेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन उमेश रह-रहकर पैण्टकी जेबमें हाथ डालता है, निकाल लेता है। और फिर उस हाथकी मुट्ठी भींचकर दूसरे हाथकी हथेलीपर दे मारता है—'ख़ैर··· ठीक है··· हाँ, तो, चलें अब ? बजा क्या है ?'

'आठ।'

'बस !'

'हूँ।'

'....'

'चलें ?'

'आँ-आँ, चलो ही, और क्या !'

'आओ, इधर एस्प्लानेडसे ट्राम पकड़ लेते हैं।'

चौराहेपर खड़ा पुलिसमैन रेलवेकी लाल-हरी लैण्ट्रनसे ट्रैफ़िक कण्ट्रोल कर रहा है। हेड लाइट-विहीन वाहन मरियल स्पीडसे रेंगनेपर विवश है।

ग्रैण्ड होटल आर्केडमें जहाँ इस समय कन्धेसे कन्धा भिड़ता था, अब चलते हुए ऐसा लग रहा है कि किसी अन्धी सुरंगमें आ घुसे हैं। रेतके कट्टोंकी दीवारसे कन्धा घिसट गया है। दहशत-सी हो आयी है। सड़कपर आकर फ़ुटपाथपर चलने लगे हैं।

रेलिंगपर झुकी दो लड़कियाँ हमें क़रीब पाकर अपनी उपस्थितिका आभास करानेके लिए ज़रा ऊँचे स्वरमें बातें करने लगी हैं। बस-ट्रामके इन्तज़ारमें बोरियत और झल्लाहट-का प्रदर्शन-प्रयास।

हम उनसे दो क़दम आगे बढ़ गये हैं। एकने बड़े सलीक़ेसे 'सुनिए' कहकर पुकारा है। हम रुक गये हैं। वह प्रस्ताव रखती है कि उसकी मदद करती हुई क्योंकि वे ऊब चली हैं इसलिए टैक्सी कर लें तो शेयर करेंगे ?

स्पष्ट है कि टैक्सी-भाड़ा शेयर करनेका मामला नहीं। किछु गोलमाल आछे। बात करनेका बहाना-भर है यह तो। वरना उन्हें क्या पता कि हमें कहाँ जाना है, जाना भी है कि नहीं !

उमेश मुझे कुहनिया कर शह देता है कि बातचीत आगे बढ़ायी जाये, मगर मैं मूडमें नहीं हूँ। टाल देता हूँ—'साँरी, हम तो इसी लोकेलिटीमें रहते हैं।'

और कहते ही उमेशकी बाँहमें-बाँह डालकर उसे घसीट ले चला हूँ।

'यार, बड़े बदज़ौक़ आदमी हो !'—उमेश झल्ला आया है।

'भाई जान, अपने पास तो इन कामोंके लिए न फ़ालतू पैसा है, न वक़्त, न शौक़ ही। आप चाहें तो बख़ुशी जा सकते हैं।'—मैं उसकी बाँहसे बाँह निकाल लेता हूँ।

'अकेले क्या जाना !'

'क्यों यह काम भी कोई कम्यूनिटी प्रोजेक्ट है क्या ?'

'है तो नहीं, होता तो रहता मज़ा ही !'

'तो फिर ऐसा करो, आदिम क़बीलोंमें जा बसो तुम। वहाँ अभी भी बहुत स्कोप है तुम्हारे लिए।'

'यार, काश, हम आदिम हो जाते फिरसे !'

'तो ?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जान तो छुटती इस नामुराद-ए-हयूलेसे कुछ बरसातकी धूप ज़रूर रहती है। पर यह फिर भी सच है कि इन युद्धोंमें समूह-चेतनाके रहते उतने अनिष्टकी सम्भावनाएँ नहीं रहतीं जितनी कि बर्बर-युगमें थीं।'

'बात कुछ जमी नहीं, गुरु!' उमेशने सिगरेट सुलगाकर माचिसकी बुझी सींक उँगलियोंसे फटककर दूर फेंक दी है।

अँधेरेमें हाथ फैलाता हुआ एक भिखारी हमारे सामने आ रुका है—'साहब, हुज़ूर, माई-बाप!'

'जाओ-जाओ, हटो। पूरे आदमी हो, कुछ काम-धाम क्यों नहीं करते?....हुँ' —उमेशने कुढ़कर कहा है—'नाकमें दम है इन भिखमंगोंके मारे!'

और भिखारी चुपचाप रास्तेसे हट गया है। उमेश कहता है—'मुल्क-भरके भिखारियों, साधुओं और पण्डों-पुजारियोंको अगर ज़बरी भरती करके फ्रण्टपर भेज दिया जाये तो युद्धसे वाक़ई एक बहुत बड़ा फ़ायदा उठाया जा सकता है। कमसे कम इस कोढ़से तो निजात मिलेगी! बिलावजहका बोझ हैं कमबख्त!'

मैं अपनी बायीं हथेलीपर दायें हाथको उँगलियाँ बजाकर कहने लगा हूँ।—'अब यही लो तुम। ये हक़ीर और फ़क़ीर क़िस्मके लोग, जानते हो क्या रहे होते? अगर आदमी-ने समाजी निजाम क़बूल न किया होता तो यही लोग ज़रा-सी बातपर हमारा-तुम्हारा ख़ून कर देते। तब ये साहब, हुज़ूर, माई-बाप कहकर हाथ न फैलाते, बल्कि तुम्हारे तनपर ओढ़ी हुई दरख्तोंकी छाल तक छीन

'जान तो छुटती इस नामुराद-ए-हयूलेसे और कशमकश-ए-वजूदसे।'

'मगर क़िबला, गुस्ताख़ी मुआफ़ हो, एक अर्ज़ करूँ?'

'फ़रमाइए!'

'जो किन्हीं हदोंको नहीं मानते और ज़िन्दगीकी कशमकशसे भागना चाहते हैं, उनके लिए आदिम क़बीलोंमें भी मुतलक़ गुंजाइश नहीं।'

'क्यों?'

'वहाँ भी हदें हैं, उनकी भी अपनी कुछ मान्यताएँ हैं, नैतिकताएँ हैं, और जीवन अधिक संघर्षशील है। सभ्य समाजके नैतिक सीमान्तोंका उल्लंघन करनेसे तो सिर्फ़ बिरा-दरी बाहर होनेका ही ख़दशा है, जब कि वहाँ-की सीमाएँ फलाँदनेपर ज़िन्दगीकी ख़ैर नहीं!'

थोड़ी देर चुप रहनेके बाद उमेश कहने लगा है—'यार, आखिर हम क्यों नहीं रह सकते इनके बिना? इन सीमान्तोंका अन्त सम्भव नहीं क्या? क्या इतने सभ्य अभी नहीं हो पाये?'

'सीमान्तोंके प्रति प्रतिबद्धता ही तो सभ्यताकी उपलब्धि है—अन्यथा अभीतक बर्बर ही रहे होते!'

'पर यह क्यों भूलते हो कि ये सीमान्त ही संघर्षका कारण बनते हैं और अन्त होता है युद्धमें। कहाँ उबरे हैं बर्बरतासे?'

'हर प्रकारके सीमान्तोंके कारण संघर्ष होता है—भीतरी भी, बाहरी भी, मानता हूँ। आन्तरिक युद्धसे लेकर राजनीतिक युद्धों तकमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेते। और सिर्फ़ मना करनेपर ही छरा भोंक देते। मून और मास तक उड़नेके सारे सपने जंगली वृक्षोंकी टहनियोंमें टूटकर रह गये होते !'

'तो तुम यह सिद्ध करना चाहते हो कि सारी प्रगति सीमान्तोंके कारण ही हो पायी है ! बट दिस इज़ ए कन्फ़्यूज़्ड थिंकिंग। फ़्यूज़्ड टू। उस ज़मानेकी मिसालें दे रहे हो जब हम एकदम जंगली और जाहिल थे। तब वाक़ई ज़रूरी थी यह हदबन्दी। पर अब ज़रा यह तो देखो कि हमारी सोचकी हदें कहाँसे कहाँ जा पहुँची हैं। मैं तो नहीं समझता कि आज भी हम क्यों बिला वजह किसीके सीमान्तों में घुसपैठ करते हैं। बड़ी-बड़ी वजहें भी अण्डरस्टैण्डिंगके बलपर टाल सकनेमें समर्थ हो गये हैं। यों एब्नॉर्मल स्थितियों और मन:स्थितियोंकी बात और है। ऐसेमें तो कोई भी, कुछ भी कर-गुज़र सकता है। सभ्यसे सभ्य समाजमें भी बलात्कार और हत्याकाण्ड नहीं होते ? विकास और प्रगतिके अलम-बरदार देश भी क्या आज युद्ध नहीं चाहते ? बल्कि ये युद्ध तो टल ही सिर्फ़ तब सकते हैं, जब वैचारिक और भौगोलिक सीमान्त समाप्त कर दिये जायें।'

हम लोग ट्रामलाइनोंके जालपर चल रहे हैं। पीछेसे आती हुई एक ट्रामकी टन-टन सुनकर मैं उमेशको बाँह पकड़कर लाइन-से बाहर ले आया हूँ। वह अपनी बात जारी रखता है—'अब तो स्थिति बल्कि यह हो गयी है कि यह पारिवारिक, जातिगत तथा राष्ट्रीय सीमान्तबद्धता जबतक बनी रहेगी, तबतक आगेकी प्रगति अवरुद्ध रहेगी। आज तो हमारी ईवलसे ईवल इन्स्टिंक्ट भी इतनी-ई-ई सब्लीमेट हो चुकी है कि इस नये रूपमें तो अब उलटे उसे बढ़ावा दिया जाना दरकार हो आया है।'

ट्राममें बैठ चुकनेपर भी बातका तार नहीं टूट पा रहा। बराबर मथ रहा है वहीं। फेनपर फेन उफन-उफन आ रही है। बहसके दायरेसे निकलकर आत्मचिन्तनकी स्थितिको छू गये हैं।

आगे-पीछे और दायें बाज़ूकी सीटोंपर-से युद्ध-चर्चाएँ हमारे इस मन्थनको फेनमें आ-आकर गिर रहे हैं। देशका सारा आर्थिक ढाँचा ढह जायेगा····मुद्रा-स्फीति····अकाल···· महामारी····उफ़ !····डाउन विद इट····स्टॉप ····नो-नो····हो नहीं सकता····सेकण्ड ह्यूमिलिएशन····असम्भव····बेहतर है, एकदम तबाह हो जायें····नेहरूकी नाकाम विदेश-नीति····विश्वनेता बननेके सपने लेता रहा, मुल्कको दाँवपर लगाता रहा····मात खायी, टूट गिरा····भुगत रहा है सारा देश····ब्लट ब्लडी नान-इलाइनमेण्ट····होक्स····इसीलिए आज एकदम आइसोलेट हुए पड़े हैं····एक भी देश सपोर्ट नहीं कर रहा····दायें-बायें, ऊपर-नीचे हर तरफ़से घिरे हैं····शत्रु-ही-शत्रु ····कौन है दोस्त····तटस्थताके क्या मानी हैं आज····पावर-ब्लॉकोंमें बँटी दुनिया····ये खण्ड जब भी टकरा जायेंगे, धरतीका पूरा गोला भड़भड़ा उठेगा····इण्डियाको बैठे-बैठे अण्डे सेनेकी फ़ुरसत नहीं दी जायेगी····अब तो वह 'वटवृक्ष' टूट चुका है····क्यों नहीं अब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्हाल लिया जाता····एक ग़लतीको अन-किया करनेमें कितना वक़्त लगता है····यहाँ तो ब्लण्डर्सपर ब्लण्डर्स की गयीं····सबसे पहली तो यही कि मुल्कका बँटवारा ही क्यों माना····माना, तो इन शर्तोंपर क्यों····हो भी गया था तो पहली मरतबे जब पाकिस्तान-ने कश्मीरपर हमला किया था, तभी क्यों जंग रोककर देशकी छातीपर सीज़ फ़ायरका कैंसर पैदा कर दिया गया था····जनमत करानेकी बात सबसे पहले नेहरूने क्यों कही थी····कूटनीतिके नामपर ही ऐसी कूढ़-नीति चीनके मामलेमें बरती····'भाई-भाई'के नारे लगवानेके चावमें तब तो चाउको लिखकर भेज दिया कि तिब्बतको हम चीनका अंग मानते हैं···· सीनेमें दम नहीं तो दुनिया-भरके मामलोंमें टाँग अड़ाना ज़रूरी था क्या···· तटस्थ थे तो तटस्थ रहते न····क्या ज़रूरत थी हंगरीके झगड़ेमें दखल देकर रूसको नाराज़ करनेकी····वियतनामके मामले-में अमरीका तकको ललकार दिया। ····इसी अनीतिने हमें सन् बासठमें ज़लील कराया था, यही अब भी कराके हटेगी····और कुछ नहीं तो तोड़ ज़रूर डालेगी····भीतरसे इरप्शन खा रही है, बाहरसे यह इरप्शन···· ख़ुदा बचाये ऐसे नाख़ुदाओंसे····

एक सज्जन तो जोशमें आकर मुट्ठी उछाल-उछाल देशके नेताओंको सम्बोधित कर ज़ोर कहने लगे हैं : 'तू इधर-उधरकी न बात कर, ये बता कि काफ़िला क्यों लुटा; हमें रहज़नोंसे ग़रज़ नहीं, तेरी रहबरीका सवाल है।'

० ०

युद्ध को तुम निन्द्य कहते हो, मगर
जब तलक हैं उठ रहीं चिनगारियाँ
भिन्न स्वार्थों के कुलिश संघर्ष की,
युद्ध तब तक विश्व में अनिवार्य है !

० ०

औ' समर तो और भी अपवाद है
चाहता कोई नहीं इसको, मगर,
जूझना पड़ता सभी को, शत्रु जब
आ गया हो द्वार पर ललकारता।

— दिनकर

बातचीतके ये अंश भी सुन रहा हूँ, उमेशकी बातें भी। मेरे भीतरका द्वन्द्व भी बदस्तूर है। हमारे बीच इंस्टिंक्ट्सकी बात चल रही है। बहसकी हैसियतसे नहीं, सह-चिन्तनके स्तरपर। सत्ताकी अन्तर्जात प्रवृत्ति है मनुष्यमें। किसी भी तरह वह स्वयंको बाक़ियोंसे सशक्त और ऊँचा सिद्ध करना चाहता है। लड़नेकी प्रवृत्ति भी मानव-में जन्मजात है। युद्ध इसीका प्रतिफल है। मगर इनका शमन किया जा सकता है, उचित बहिर्गमन देकर, दमन करके नहीं। मुनासिब आउटलेटके रूपमें खेल-कूद प्रतियोगिताएँ बेहद उपयोगी सिद्ध हुई हैं। प्रजातन्त्रमें विरोधी दलोंको विरोधकी पूरी छूट भी इस वृत्तिके बहिर्गमनका ही एक तरीक़ा है। भाषण और लेखनकी स्वतन्त्रता देकर भी हम इसी बहिर्गमनमें योगदान देते हैं। सफल साहित्य-सृजेता, नामवर नेता, समाज-सेवक, इंजीनियर, वैज्ञानिक, शोधकर्त्ता आदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनकर हम सत्तावाली प्रवृत्तिको उचित बहिर्गमन देते हैं।

'मगर उमेश, सीमान्तोंका झगड़ा तो अभी भी ज्योंका त्यों रहा।'

'कैसे ?'

'मिसालके तौरपर अपने और भाभीके सीमान्तोंको ही ले लो। दोनों ओरसे ही अतिक्रमण हुआ है, तभी तो आयी युद्ध-स्थिति ! जिस अण्डरस्टैण्डिंगकी बात अभी थोड़ी देर पहले कर रहे थे, उसीके आधारपर एक-दूसरेकी हदोंके प्रति या तो कन्सेशन बना लेते अथवा सम मान लेते तो बात बनी रहती !'

उमेशके ओठोंपर एक फ़ड़कन-सी नाचकर ग़ायब हो गयी है। कुछ अन-ईज़ी होकर कहने लगा है—'एक मिनिटके लिए यदि सीमान्तोंकी आवश्यकताको स्वीकार भी लें तो भी इनके साथ तो विशेष रूपसे स्थिति यह है कि इनका पुनरांकन अनिवार्य हो आया है। वजह यह कि आज हमारी चाल बदल चुकी है और यह सीमाएँ पड़ गयी हैं तंग। अतिक्रमण तो होगा ही। री-डिमारकेशन ही एकमात्र हल है।'

'चाल अगर बदली है तो तुम्हारी ही न ! वह बेचारी तो उसी चालकी है।'

'यह भी होता, तो भी इसमें मेरा दोष नहीं था, मगर हक़ीक़त यह है कि चाल उसकी भी मेरी ही नसलकी है, मगर अपने लिए कन्सेशन चाहती है, मुझे देनेको तैयार नहीं ! यह देखो ! खुद देख लो सबूत !'—और उसने जेबसे निकालकर तीन खत मेरी तरफ़ बढ़ा दिये हैं।

खत भाभीके नाम है और किसी हरीश नामक व्यक्तिके लिखे हुए हैं। लव-लेटर्स हैं। उन्हींमें भाभी-द्वारा हरीशको लिखे गये प्रेमपत्रोंका भी उल्लेख है, तथा उन दोनोंके शारीरिक सम्बन्धोंके भी स्पष्ट प्रमाण हैं।

उमेश इन्हीं पत्रोंके आधारपर उमाको तलाक़ देकर अपने उस अपमानका बदला लेना चाहता है, जो गत वर्ष भाभीने अपने मायकेसे डाइवोर्स नोटिस भिजवाकर उमेशका किया था। तलाक़ लेकर उमेश हेच होता, अब देकर उमाको हेच बनाना चाहता है।

ट्राम खटरखट-खटरखट भागी चली जा रही है। भीतर तो मद्धिम-सी लौ है भी, बाहर दोनों ओर एकदम अन्धकार। गोया रातके वक़्त हम ट्रेनमें बैठे किसी घने जंगलसे गुज़र रहे हैं।

इस समय फ़ोर्ट विलियमके आस-पास ही हैं और फ़ोर्ट विलियमका ध्यान आते ही जॉब कार्नाकका नाम याद आ गया है, जिसने तीन सौ साल पहले कलकत्ता नगरकी नींव रखी थी। उन दिनों वाक़ई रातके वक़्त यही तसवीर रही होगी यहाँकी। पल-भरके लिए कुछ इस तरहका एहसास हो आया है गोया हम अभी भी ईस्ट इण्डिया कम्पनी-कालमें रह रहे हैं, और कम्पनीके मुलाज़िम कार्नाकको अभी कलकत्ता बसाना है, और कि कलकत्ता अभी भी राय चौधरियोंकी ज़मीदारीका एक गाँव है जिसे सोलह हज़ार रुपयोंमें कम्पनीने अभी-अभी खरीदा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़े ज़ोरोंसे चाह उठी है कि उमेशसे पूछूँ यही तुम्हारी आधुनिक संचेतना है ?

मगर पूछनेके बजाय वे तीनों ख़त उसी तरह लिफ़ाफ़ोंमें डालकर उसके हवाले कर देता हूँ। जानता हूँ कि इस समय मेरे तानेकी उसपर प्रतिक्रिया अनुकूल नहीं होगी, उलटे वह हर्ट होकर और अधिक हिंस्र हो आयेगा।

हेस्टिंग्समें पुलसे इधरवाले चौराहेकी बायीं ओर मिलिटरी बैरकोंके पास मैदानमें कुछ टीन-टप्परोंकी एक जगह है जो किसी पीर-का मज़ार कहलाती है। मज़ारपर दो-एक दिये टिमटिमा रहे हैं और उनकी लौमें आस-पासकी भीड़का आभास मिल रहा है। हर बारकी तरह पीरके मज़ारपर आज भी मेला लगा है। सैकड़ों मुसलमान मर्द, औरतें और बच्चे जमा हैं। चेहरे नहीं दिख रहे, न दुआओंकी माँगके मिन्नती भाव। न जाने क्यों लग आया है कि आज हर कोई इस मज़ार वाले पीरसे यही दुआ माँग रहा है कि वली, मेहर कर, अपनी रहमतों-का साया डाल कि ये जंगके शोले बुझ जायें। तेरेमें सर-नगूँ हैं तेरे बन्दे, हमारे गुनाह भुलावा दे उस रहमदिल नबीके दरबारमें। तेरे मज़ारके चिराग़ जंगी दिल-दिमाग़में जज़्ब-ए-इन्सानीकी लौ छिटक दें····

खिदिरपुरका हर वक़्त चहकता-महकता रहनेवाला बाज़ार आज मुहर्रमी नक़ाब ओढ़े हुए है। हिन्दुस्तानके सबसे बड़े डॉक्सवाले शहरकी हालत इस वक़्त ठीक वैसी हो रही है जैसी कि कलकत्ताके वास्तविक समुद्रतटके निचली डेल्टाकी हर समय रहती है।

मोमिनपुरके चौराहेपर उमेश उतर गया है। यहाँसे बस पकड़ेगा। मुझे यही ट्राम सीधी ले जायेगी। उतरते समय वह मेरे कन्धे-पर हाथ दबाकर बड़ी ही आजिज़ी-पगी आवाज़में 'अच्छा भई' कह गया है। उस हाथ और आवाज़का परेशानकुन दबाव घर पहुँचने तक भी मेरा पीछा नहीं छोड़ रहा।

अन्दाज़ेसे ही अपने मकानका दरवाज़ा ढूँढ़कर दस्तक दे दी है।

अन्दरसे लम्बाती हुई आवाज़—'आयो-जी-ई-ई !'

लगा है जैसे आधी रातके बाद घर लौटा हूँ और सब सो चुके हैं। मगर अन्दरवाले कमरेमें पहुँचा हूँ तो शेडवाले टेबल लैम्पकी रोशनीमें पढ़ते हुए बिट्टू तथा स्लेटपर ड्राइंग बनाती हुई रचनाको देखकर सही वक़्तका यक़ीन हो गया है। टीटू अपनी तख़्तीपर बंगला अक्षर लिख रहा है। निर्मल स्वीटर बुनती-बुनती दरवाज़ा खोलने उठी थी। सलाइयों-चढ़ा कन्धा पलंगपर कटा पड़ा है।

बैठकर अभी बूटोंके तसमें भी ठीकसे खोल नहीं पाया हूँ कि सायरन चीख उठा है। इस क़दर करख़्त आवाज़ कि सारा माहौल दहल उठा है।

लपककर टेबल लैम्पका बटन दबा दिया है।

'दरवाज़े-खिड़कियाँ सब बन्द हैं न ?'

'हाँ।'

'पानी-वानी अन्दर है ?'

'सब है।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'उस दीवारकी नक्कड़में लग जाओ सब जने। मुँह दीवारकी तरफ़ रहें।'

बच्चे सहमे हुए हैं। निर्मल घबरा गयी है। मुझपर भी दहशत कुछ कम नहीं, मगर ऊपरसे नॉर्मल पोज़ किये हूँ। बातें और हिदायतें जारी रखता हूँ। न घबरानेका भाषण भी।

मुहल्ले-भरमें इसी अफ़रा-तफ़री और बचो-बचाओका आलम। पिछवाड़ेवाली मछुओं-की बस्तीमें भागमभाग मच गयी है। पक्के मकानोंकी छतों तले पनाह लेनेके लिए झोप-ड़ियाँ छोड़ भाग खड़े हुए हैं।

पड़ोसके मकानकी पिछली खिड़की हमारे आँगनकी तरफ़ खुलती है। अफ़ज़लकी माँ-की चीख़-भरी घबराहट खिड़कीमें-से इधर आ कूदी है—बिट्टूकी मम्मी-ई-ई!!!'

'हाँ-आँ-आँ!'

'बिट्टूके पापा आ गये क्या-आ-आ?'

'आ गये हैं – ऐं। क्यों – ओं?'

'अफ़ज़लके अब्बा पता नहीं कहाँ अटक गये! हाय अल्लाह,....' और अफ़ज़लकी माँ-के आगेके शब्द सुनाई नहीं दे रहे। मगर वह बराबर अपने-आपसे कुछ कहे जा रही है। आवाज़ में-की लाचारगी साफ़ महसूस हो रही है।

हाय, बेचारी कलप रही है! – निर्मलके स्वरमें संवेदनाकी भरपूर गरमी है इस समय। हालाँ कि वही पूरे मुहल्लेमें सबसे बड़ी आलो-चिका भी है सुरैयाकी कि बेहया सातवाँ खसम किये बैठी है।

सुरैया हर बकरईदके दिन पहले खाविन्द-को झटक कर नया कर लेती है। मछली मार्केटमें चार दुकानोंकी वाहिद मालिक है, अपना मकान है, गठी हुई काठी और गुदाज़ चमकदार जिस्म। मार्केट-भरमें दबदबा है। अपनी बिरादरीमें जिसपर भी हाथ धर देती है वही निकाहके लिए राज़ी हो जाता है। अफ़ज़लके अब्बा उसके सबसे पहले खाविन्दोंमें-से हैं। मिज़ाजोंमें मेल नहीं बैठा होगा कि क्या, उसने सुरैयाको तलाक़ दे दिया था। लोग-बाग बताते हैं कि उस दिन क्योंकि बकरईद थी, इसीलिए वह हर बकरईदको नया खाविन्द करती है, मगर पता नहीं क्या गुर बरतती है कमबख़्त कि और किसीसे भी आज तक हामिला नहीं हुई।

जिसकी निगाहमें पति ईदके फ़ालतू बकरेसे अधिक महत्त्व नहीं रखता, वही सुरैया गरदन कटे बकरेकी तरह तड़प रही है कि जाने वह क्यों नहीं आ पाये, ख़ुदा ख़ैर करे! उसने अपने कमरेका बल्ब भी नहीं बुझाया है, दीवारके साथ भी नहीं चिपकी है। अपने आठवर्षीय अफ़ज़लको लिये खिड़कीमें खड़ी है—प्रतीक्षारता नायिका-सी अस्त-व्यस्त-त्रस्त।

हमारे मकान-मालिककी बाड़ीवाले सब जने हमारे भीतरी कमरेके साथ सटे बरामदा-नुमा कमरेमें आ जुटे हैं। उनका भीतरी कमरा वहीं पड़ता है। इस समय उनके यहाँ तीन ही प्राणी हैं—चटर्जी बाबू स्वयं, उनकी मँझली बेटी और एक धेवता।

'मिती बेचारी जाने किस हालमें होगी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...दिनों !'—आज पहली बार चटर्जीके ...से अपनी सबसे बड़ी बेटीका नाम इतने ...-भरे लहजेमें सुन रहा हूँ। वरना तो ...का नाम लेते ही गोया गऊ-माँसका टुकड़ा ...के हलकमें अटक जाता था। मितीने किसी ...मानसे प्रेम-विवाह कर लिया था। विभा-...के बाद लाहौर जा बसी थी। और ...हौरमें लड़ाईकी खबरोंने चटर्जीको हिला ...या है।

निर्मलकी गोद-चढ़ी रचना रिरियाने लगी ...। अँधेरे और अनबूझ आतंकसे घबरा उठी ...शायद। निर्मल उसे तरह-तरहसे बहला-...कार रही है। बिट्टू और टीटू सहमे-सहमे ...रोंमें बतिया रहे हैं :

'भारत कौन हुआ बिट्टू ?'

'अरे, गधे तुझे इतना भी नहीं पता ! ...री मिलिटरी ही भारत है। उससे तो ...ड़ाई हो रही है।'

'बहोत दूर है न पाकिस्तान ?'

'हाँ।'

'दिल्दीसे भी दूर ?'

'हूँ।'

'तो फिर इतनी दूरसे हमपर बम कैसे ...रेगा ?'

'हवाई जहाज़से भेजेगा।'

'अच्छा-आ-आ ! तो फिर बिट्टू, वह ...रे घरपर बम मारेगा तो हम मर ...येंगे न ?'

टीटूकी इस बातसे निर्मलको बुरा लगा ...। उसने झटसे फटकार दिया है—'चुप रे ...ऐसा नहीं कहते।'

'तो तुम्हींने कौन-सी कमी छोड़ी है ! उसने तो मर जानेकी शंका ही प्रकट की थी, तुमने उसे मुआ घोषित ही कर डाला !'

इधर बिट्टू-टीटू-संवाद फिरसे चालू हो गया है। हिन्दू-मुसलमानकी कोई चर्चा चल रही है। टीटूको यह जानकर आश्चर्य हुआ है कि पाकिस्तानमें मुसलमान रहते हैं, जिनसे हमारी लड़ाई हो रही है और उसकी बाल-बुद्धिमें एकदमसे अफ़ज़लका नाम आ टकराया है। पूछ रहा है—'तो फिर हम भी अफ़ज़ल-को मारेंगे न, बिट्टू ?'

बिट्टूसे कोई उत्तर देते नहीं बन रहा, क्योंकि अफ़ज़ल उसका हम-उम्र दोस्त है, पड़ोसी है, स्कूलमें उसीकी क्लासमें पढ़ता है। बिट्टू अपने छोटे भाईसे यह नहीं कह पा रहा है कि अफ़ज़लको मार देंगे। उसका मस्तिष्क तुरन्त एक तर्क ढूँढ़ लेता है—'नहीं टीटू, पाकिस्तानवाले मुसलमान और होते हैं। बड़े बुरे होते हैं वो। अफ़ज़ल तो बहुत अच्छा है।'

मुझसे रहा नहीं जा रहा। बच्चोंके बीचमें बोल ही पड़ा हूँ—'नहीं बेटा, मुसलमान तो वहाँके भी अच्छे हैं, वह तो....' और आगेके लिए मुझे मुनासिब शब्द नहीं मिल पा रहे कि कैसे समझाऊँ इसे।

मगर बिट्टूने झटसे एक सहज प्रश्नका मुगदर मेरे सरपर दे मारा है—'तो पापा, फिर वे लड़ते क्यों है ?'

अब मैं इस आठ बरसके बच्चेको क्या बताऊँ कि वे क्यों लड़ते हैं ! कुछ भी बताऊँ तो क्या इसे यक़ीन आ जायेगा ?

...विद्ध : सुदर्शन चोपड़ा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और एक पलको मुझे यह लग उठता है कि यह अबोध बालक तमाम बुद्धिवादी जंगजू राष्ट्रनायकोंसे कहीं बड़ा इनसान है।

'ऑल-क्लियर' का टूट-टूटकर बज रहा सायरन सुनते ही सबको राहतकी साँसें आनी शुरू हो गयी हैं।

निर्मलने टेबल-लैम्पका बटन दबा दिया है। मैं कपड़े उतारने लगा हूँ। बच्चे बिस्तर-में आ बैठे हैं। निर्मल रसोईघरमें खाना लाने चली गयी है।

मछुओंकी बस्तीमें-से फिर आवाज़ें सुनाई देने लगी हैं। सुरैया अफ़ज़लको लिये खड़ी खिड़कीकी सलाखोंमें बदस्तूर झाँक रही है।

● तीन दिनके अन्दर-अन्दर हमारे सीमान्तोंमें-से अपने स्ट्रक्चर समेट लो, वरना हम हमला कर देंगे ...

चीनकी धमकीकी चर्चा है हर तरफ़। हर कोई इस नये खतरेकी ही बातोंमें मशग़ूल है। दफ़्तर-भरमें कहीं कुछ काम नहीं हो पा रहा। मनःस्थिति विस्थापित हो चुकी है। उमेश मेरे पास आकर बैठ गया है। चिन्ता-तुरसे अधिक चिन्तनातुर दिखनेका प्रयास कर रहा है।

चपरासी लोग दफ़्तर-भरकी खिड़कियोंके शीशोंपर रैडक्रॉसके आकारकी काग़ज़ी चिप्पियाँ चिपकानेमें लगे हुए हैं। क्लर्कोंकी एक टोली ट्रांजिस्टरपर समाचार सुन रही है।

मैं भी घण्टे-भरसे एक ही फ़ाइल खोले बैठा हूँ। निपट ही नहीं पा रही।

उमेश ने चाय मँगवा ली है। बहुत ही धीमेसे घूँट भर रहे हैं। वह कहता है—'देख रहे हो न, यह सीमान्तोंके तोहफ़े! इसीसे तो कहता हूँ, इनका अन्त होना चाहिए, वरना....'

'टो-ओ-टल इनीहीलेशन....टल नहीं सकती।'

'मगर मौजूदा सेट-अपमें मुमकिन कैसे हो यह सब?'

'यही तो मुसीबत है!'

'बस तो फिर जो है सो है, उसीको लेकर या ढोकर चलना है। पलायन तो करते नहीं बनेगा!'

'देखो, दोस्त, मुझे पहले तो तुम्हारे इस पलायन शब्दसे एकदम चिढ़ है।'

'क्यों?'

'जिस रूपमें इसका प्रयोग किया जाता है, उसका साफ़-साफ़ मकसद होता है—इस कृत्यको एक कमज़ोरीके रूपमें गाली देना। जब कि हक़ीक़त यह है कि पलायन उस झटकेका नाम है जिसे दे पानेके लिए अदम्य साहसकी आवश्यकता है। हर किसीके बिरते-का नहीं होता पलायन करना। समझे!'

'समझा, पार्टनर, और यह भी समझ रहा हूँ कि रातको बॉर्डर-डिस्प्यूट ज़रा ज़्यादा ही तूल पकड़ गया होगा!'

'अब कोई लड़नेका बहाना ही ढूँढ़ता फिरे हरदम, तो इसमें क्या किया जा सकता है! चीनकी तरह जब और कोई बात नहीं मिली तो कह दिया—हमारी भेड़ें क्यों चुरा ले गये!'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'रात क्या प्रोटेस्ट-नोट मिला, यह
बताओ !'

'बोलों, इतना भी ध्यान नहीं कि साय-
रन बजा है, कोई घरमें अकेला घबरा रहा
होगा, वग़ैरा-वग़ैरा....'

'तो भई, इसमें बेजा इलज़ाम क्या है ?'

'अरे, तो मुझे ख्वाब आना था कि फ़लाँ
वक़्त सायरन बजेगा और मैं उससे पेशतर ही
बेगम साहिबाके हज़ूरमें हाज़िर रहूँ !'

'अच्छा खैर, मारो झाड़ू, यह बताओ
कि बैटलमें कोई कैजुअल्टी तो नहीं हुई ?'

'अब बिलावजह कोई प्रोवोक करेगा तो
टेगा ही ।'

'बस, यार, यही सबसे बड़ा नुक्स है
तुममें, जो इतनी जल्दी एग्रेसिव हो उठते हो !'

'यह तो एकदम अयूबवाली बात हुई !
ग्रेसरको मारना भी एग्रेशन है ?'—कुछ देर
चुप रहकर वह काफ़ी गम्भीर होकर शब्द
चबाता हुआ कहने लगा है—'अब तो मुझे
फ़ौरन ही अपने निर्णयको क्रियान्वित करना
होगा, नहीं तो स्थिति क़ाबूसे बाहर हो
जायेगी। उसने फिर अल्टीमेटम दे दिया है
कि ऐसे ही रखना चाहते हो तो मैं नहीं
रहूँगी। मतलब साफ़ है कि फिरसे अपने
वकील बापके यहाँ चली जायेगी और मुझे
तलाक़का नोटिस जारी करायेगी। बट....बट
बाई वाण्ट टु निप द ईवल इन द बड ।'

• सुरक्षा परिषद्का प्रस्ताव : दोनों पक्षोंको सीज़-फ़ायरका आदेश...

कॉफ़ी-हाउसमें बैठा हुआ उमेश कह रहा
है—'यार, यह ग़लत हुआ ! अपने पक्षमें तो
यह एकदम अनुकूल नहीं है। और फिर यह
तो कोई हल भी न हुआ समस्याका ।'

मैं ज़रा तुनककर पूछ बैठा हूँ—'पहले
तो यह बताओ कि हमारे प्रतिकूल कैसे है ?'

'इस तरह, कि हमारी सेना-वाहिनी
कितनी आगे तक पहुँच चुकी है। अब एक-
दम पीछे हटेंगे तो फ़ायदा क्या रहा इतनी
मार-काटका !'

'तो क्या मार-काटका फ़ायदा और अधिक
मारकाट करके ही होगा ? सीमान्तोंके झगड़े
लड़कर ही हल करनेका दर्शन पुराना पड़
चुका है। अण्डरस्टैण्डिगके साथ बातचीत
करके भी फ़ैसला हो सकता है। बस ऐसेमें
अहम बात यह होती है कि कुछ तुम झुको,
कुछ हम झुकें ।'

'मगर हमारा तो स्टैण्ड एकदम स्पष्ट है।
एक ईंच भी इधरसे उधर नहीं हट सकते ।'

'वह भी टससे मस नहीं होंगे ।'

'तो ठीक है। न हों ।'

'बात क्या बनेगी फिर ?'

'न बने। हम झुकेंगे नहीं ।'

'झुकेंगे वह भी नहीं। इसीलिए यू०
एन० ओ० की सुरक्षा परिषद् बिचौलिया बनी
है। जिसे बिरादरी-बाहर होना मंजूर होगा,
वही टालेगा बात। और फिर जो टालेगा
वह भुगतेगा भी ।'

'क्या भुगतेगा ? हमारा मामला है, हम
निपट लेंगे, बिरादरी क्यों दखल दे ?'

'इसलिए कि इस तरहकी हरकतोंसे पूरी
बिरादरीका निज़ाम टूटनेका खतरा है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आखिरकार पूरी बिरादरीकी तबाहीका अन्देशा है। किसी एक या दो को यह अख्तियार नहीं दिया जा सकता कि वह सबकी तबाहीके आसार पैदा करे।'

'बकवा-आ-आ-स !'—उमेश जबड़े भींचकर कुछ इस अन्दाज़में यह शब्द कह रहा है गोया यह एक शब्द कहकर उसने पूरा वाक्य कह दिया हो कि 'सो तो ठीक है, पर है ग़लत, क्योंकि इससे व्यक्तिकी पूरी-पूरी स्वतन्त्रताकी राह रुकती है।'

और वह बड़ी ही अजीब मनःस्थितिमें हो आया है। आलसी स्वरमें वेटरको पुकारकर बिल पे कर देता है।—'चलो यार, यहाँ तो दम घुट रहा है !'

'एयरकण्डीशण्डमें भी दम घुटता है ?'

'कण्डीशण्ड जो है, घोटेगा ही।'—और मेन गेट पुश करके बाहर निकलता हुआ कहता है—'इस क़दर कण्डीशण्ड हो चुकी है ज़िन्दगी कि····कि····'

'कि ?'

'जीनेकी कण्डीशन्स अब पूरी नहीं करते बनतीं।'

'फिर ?'

'फिर क्या दोस्त ! शायद यही हमारी नियति है। हेल्पलेस।'

जानता हूँ, वह पके फोड़ेके मवादकी तरह स्वयं ही रिसेगा, इसलिए कोई नश्तर नहीं उठा रहा।

स्टेट्समैनके दफ़्तरके बाहर लगी स्पॉट-न्यूज़के सामने लोगोंकी टोलियाँ जमा हैं। एड़ियाँ उठा-उठाकर खबरें पढ़ रहे हैं। पढ़ चुके हुए परस्पर टिप्पणियाँ कर रहे हैं:

····यों तो ठीक ही है, क्या रखा था लड़ाईमें····पाकिस्तानने जिस धमकीके साथ युद्ध-विराम माना है, उससे खतरा अभी बाक़ी है····अजी, यह तो सब फ़स सेविन्ग है····नाकमें दम तो उनका अधिक हुआ पड़ा था····तो कल सुबह साढ़े तीन बजे हर मोर्चेपर युद्ध थम जायेगा····चलो अच्छा ही हुआ····दुर्गा-पूजा तो मनेगी····सारा साल अफ़सोस रहता वरना····अब तो ब्लैकआऊट भी हट जाना चाहिए ···दिल्लीमें तो हाथके हाथ आदेश जारी हो गया····यहाँ भी कल तक उठ जायेगा····यार, सुरक्षा-परिषद् है वाक़ई कामकी चीज़····अजी सरासर दिख रहा था उन्हें कि नाश हो जायेगा दुनियाका···· वर्ल्ड वार हो जाती अब के····अच्छा, देख तो, कैसे पाँसा पलटा है, कल तक एक भी देश हमारे पक्षमें नहीं बोल रहा था, आज किसी एकने भी विरोध नहीं किया, प्रस्तावका····वह मसल है न कि जब नाड़ लगी कटने तो खैरात लगी बँटने····

हम स्पॉट न्यूज़ पढ़कर आगे धर्मतल्लाकी तरफ़ बढ़ गये हैं। उमेश बड़े ही बलबलेखाती उसाँस भरकर कहता है—'समझमें नहीं आता यार,····'

'·····'

'क्या होगा-आ-आ····?'

'·····'

'जाने किस-किस घाट बँधे हैं, किस-किस लंगरसे !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'हाँ, भई !'

'राजूका क्या करू-ऊँ ??'

'क्यों क्या हुआ ?'

'उसका क्या होगा ?'—गोया एक बार हिंसे मज़बूत हो आया है और अभी इसी क्षण निर्णय ले रहा है, बस, इस प्रश्नका उत्तर मिलते ही।

मगर कुछ हा पल बीत पाये हैं कि मीट-सीपर उलटे लटके बकरे-सा हो आया है—रातको राजू नींदमें चीखकर उठ बैठा और बार-बार अँधेरेमें दोहराने लगा—'पापा, ममी-को मत मारो, ममीको मत मारो, पापा····'

उमेशका गला रुँध आया है। पलकें झपकाता हुआ गरदन मोड़कर परली तरफ़की दुनियाके साइनबोर्ड पढ़ना लग आनेकी कोशिश कर रहा है। और स्थिति यह है उसके मन-अर्जुनके हाथ गाण्डीवपर चिल्ला चढ़ानेसे इनकार कर रहे हैं, मगर युद्धलिप्सी कृष्ण पार्थसारथी बना, उसके मस्तिष्कमें अपने विराटका हिप्नाटिक भय बैठानेसे भी बाज़ नहीं आ रहा।

• स्टाप प्रेस

सीज़ फ़ायर हो गया है—अनकण्डी-शनल····खतरा अभी भी टला नहीं····दोनों पक्षोंकी सेना-वाहिनियाँ अपने-अपने मोर्चोंपर तनी खड़ी हैं····तोपोंके मुँह बन्द हैं····

■ ■

Gram : "ARBE TRADE"

Phone : 22-9055

R. B. TRADING CO.

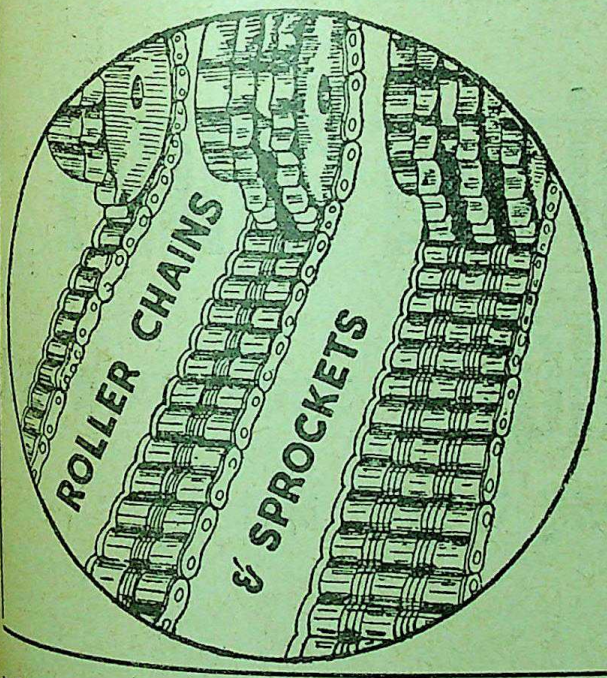

71-A, Netaji Subhas Rd
(Room No. D/S 11),
CALCUTTA-1.

House for (All Types of Chain for Power, Load & Conveyor) Power Transmission Roller Chains, Connecting Links. M. S. & C. I. Sprocket Wheels & Pinions B. B. Malleable Iron Link Chain for Elevators, Inverted Tooth Chains, M. S. Balance Chains, M. S. Electrically Welded Short Link Chains (Confirming to B. S. S. 590 of 1949) M. S. Twisted Chains & Locking Chains etc.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुरुचिपूर्ण सेवाशील आर

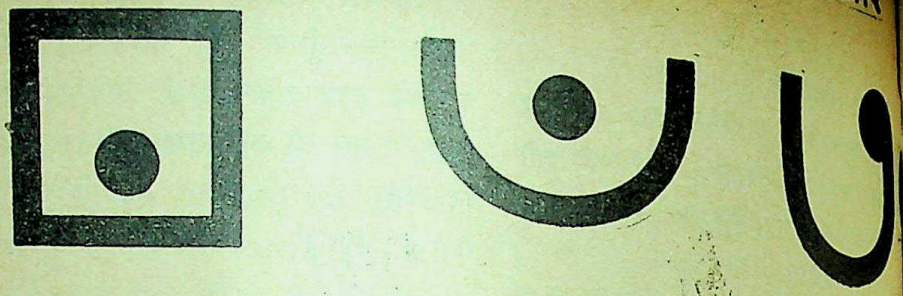

पंजाब नैशनल बैंक ही आपके बचत खातों लिए उपयुक्त बैंक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक घायल सिपाहीके सपने

■

होरेशियो क्विरोगा

■

यह उरूगुआनी कहानी एक ऐसी प्रतीक-कथा है जो मातृभूमि, राष्ट्रीयता और घायल सिपाहीकी मनःस्थितिका एक तर्क-चित्र है।

■

बावजूद भी जो ख़ास भाव जंगलकी आत्मामें वास करता है—वह है स्वतन्त्रता। जबतक ये जंगली जानवर स्वतन्त्र हैं, रक्तपिपासित जंगलोंमें शान्ति व्याप्त रहती है।

सदासे ही जंगली जानवरोंको यह आनन्द प्राप्त है लेकिन एक दिन कुछ नर-मधुमक्खियोंने ख़तरा पैदा कर दिया।

उरि-पूंच मोर्चेपर गोला-बारूदके बीच हमारे जवान

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मादा मधुमक्खियाँ सुन्दरके प्रति आकर्षित होनेके कारण प्रसिद्ध हैं। मनुष्योंके साथ सदा सम्पर्कमें रहनेके कारण उन्होंने शरीर-सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त कर लिया है और जिसके कारण किसी साधारण मक्खीको रानी मक्खी बनाते हुए कष्ट होता है। वह इसलिए कि न तो वे छत्तेवाले सूराखोंकी जगह बढ़ाती हैं और न ही भोजनमें उचित मात्राका ध्यान दिया जाता है। बिलाशक यह सब उस असाधारण शक्तिके भ्रमके कारण हैं जिसके द्वारा वे अपनी इच्छाके अनुसार किसी भी साधारण मक्खीका यौन-परिवर्तन कर सकती हैं। सुन्दर छत्तेके निर्माणमें सदैव सचेत रहते हुए वे अच्छी अवस्थामें जीवन बिताती हैं—साथ ही फूलोंपर गूँजते और मँडराते समय वे जंगलके अन्य पशु-पक्षियोंके प्रति तिरस्कार-भावनासे जीती रहती हैं।

यह इन्हीं मक्खियोंका ही दल था जिन्होंने मनुष्यके नीचेकी ओर नाव खेकर जानेके कुछ वर्षोंके बाद इस आविष्कारका ढिंढोरा पीटा था।

मनुष्य जब पहले-पहले जंगलमें रहने आया तो चिन्तातुर जानवरोंने उसके प्रत्येक क्रिया-कलापपर ध्यान देना शुरू किया।

"यह बहुत भला है।" जंगली बिल्लीने उसके धूपमें सूखते हुए कुरतेकी ओर एक नज़र देखकर कहा—"मैं जानती हूँ, वह क्या है—वह आदमी है।"

"भला वह हमें क्या हानि पहुँचायेगा, उसके तो मात्र दो ही टाँगें हैं।" डरपोक सियार फुसफुसाया।

"दो टाँगें और साथ ही एक बन्दूक भी!" चीता गुर्राया, "एक बन्दूकसे कितने ही सियार मारे जा सकते हैं।"

"आओ, भाग चलें।" दुम दबाते हुए सियार बोला।

"क्यों, वह जंगलमें है, स्वतन्त्र है। वह हमें मार सकता है, हम उसे। फिर हम भागें क्यों?"

"हम यहीं रहेंगे।" नागराजने फुंफकार-कर कहा।

"हाँ हम भी।" दूसरोंने आवाज़ लगायी।

इस तरह जानवर और मनुष्य एक साथ विस्तृत सीमाहीन जंगलमें रहने लगे—अपनी सभी हिंस्रताके बावजूद शान्तिके साथ।

पर एक दिन, कई वर्ष जंगलमें रहनेके पश्चात्, मनुष्य चला गया। उसके जानेकी तैयारी जानवरोंसे छिपी न थी। उन्होंने एक दिन देखा कि मनुष्यने ऊँची चट्टानपर-से अपनी डोंगी पानीमें उतार ली और धारके बहावमें वह आगे बढ़ गया।

खैर, जानवरोंने उस मनुष्यके रहनेके स्थानको छुआ-छेड़ा नहीं, न तो उसकी कुटिया-को और न उसके औज़ारोंको। असीम स्व-तन्त्रताके बीच किसीके चले जानेसे जंगलके जीवनमें कोई विशेष स्पन्दन नहीं हुआ। सभी जानवर शान्त रहे।

सिवाय मादा-मधुमक्खियोंके। अपनी बुद्धिका राग अलापते हमने उन्हें हमेशा देखा है—वे अकारण फूलोंके गिर्द चक्कर काटती रहती हैं ताकि दूसरे उसकी बुद्धिकी विल-क्षणतापर चौंकते रहें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नर-मधुमक्खी भी बुद्धिमान् होते हैं पर वे काम नहीं करते। उस दिन कुटियेकी चुप्पी सूंघते हुए वे सूर्य-किरणोंके साथ-साथ भिड़ी खिड़कीकी राह अन्दर घुस गये। उन्होंने मनुष्यकी हर चीज़को बड़े ध्यानसे देखा—बिना समझे-जाने। पर एक सुबह उन्होंने बालमारीसे गिरी एक किताब देखी और उत्सुकतापूर्वक पढ़ डाली। उनकी आँखोंमें चमक भर गयी क्योंकि अब वे पहलेसे अधिक ज्ञानी बन चुके थे। मनुष्यके बुद्धि-चमत्कार-का नमूना जब उनकी समझमें आया तो वे प्रसन्नताके मारे उड़ चले ताकि जंगलके अन्य सारे जानवरोंको इकट्ठा करें।

"हम समझ गये कि हमें क्या करना चाहिए," उन्होंने गुनगुनाते हुए कहा, "हम लोगोंने मनुष्यके विचार-दर्शन आत्मसात् कर लिये हैं। हमें एक देश चाहिए। मनुष्य हमसे कोलिए तो बड़ा है कि उसके पास अपना देश है। क्योंकि अब हमें भी उसकी तरह ज्ञान प्राप्त हो गया है, हमें अपना देश बनाना चाहिए।"

प्रस्ताव सुनकर बेचारे जंगली जानवर आश्चर्य-चकित रह गये। इस बातकी उपयोगिता उनकी समझसे परे थी।

सबोंके अविश्वासको भाँपते हुए चीतेने प्रश्न किया—"कैसा देश? किसलिए?"

"स्वाधीन बननेके लिए—और क्या," नर-मधुमक्खियोंने उत्तर दिया, "सभी स्वाधीन जीवोंके पास अपना देश है। तुम सब यह बात इसलिए नहीं समझते क्योंकि तुम इस तरह नहीं सोच पाते जिस प्रकार हम सोचते हैं। हम मनुष्योंकी तरह ही सोच समझ सकते हैं। इसलिए हमें भी अपनी मातृभूमि चाहिए—स्वतन्त्र रहनेके लिए, उसी प्रकार जिस प्रकार मनुष्य हैं।"

संकल्प चर्चिलके : उद्धरण-सन्दर्भ हमारे

० शिकारी कुत्तेकी नाकको हमने पीछेकी तरफ़ मोड़ दिया है ताकि वह साँस तो ले सके, लेकिन हमारे पंजेसे निकलकर भाग न पाये।

० मैं तो संसद्से और शासनके अपने सहयोगियोंसे यह कहूँगा :

मैं तुम्हें केवल रक्त, श्रम, आँसू और स्वेदका उपहार ही दे सकता हूँ! हमारे सामने परीक्षाकी बहुत कठिन घड़ी है। हमारे सामने अनेक-अनेक लम्बे महीने संघर्ष और कष्टके हैं।

आप पूछें : 'हमारी नीति क्या है?'

मैं कहूँगा : हमारी नीति है युद्धकी बाज़ी सँभालना—समुद्रपर, भूमिपर और वायुपर, अपनी पूरी शक्तिके साथ, अपनी उस पूरी क्षमताके साथ जो भगवान् हमें दे। हमारी नीति यह है।

आप पूछें : 'हमारा लक्ष्य क्या है?'

मैं उत्तरमें केवल एक ही शब्द कहूँगा—'विजय'। विजय प्रत्येक क़ीमत-पर, विजय तमाम भयंकरताके बावजूद, चाहे विजयकी राह कितनी ही लम्बी क्यों न हो और कितनी ही बड़ी क्यों न हो, क्योंकि बिना विजयके हमारा उद्धार नहीं, हमारी जीवन-रक्षा नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"पर क्या हम अभी स्वतन्त्र नहीं हैं ?" सभी जानवरोंने एक स्वरमें पूछा।

नर-मधुमक्खियोंने कहा, "यह बात नहीं, दरअसल हमें भी देश चाहिए····अच्छा बताओ, तुम्हारी मातृभूमि क्या है ? तुममें-से किसके पास अपना देश है ?"

सारे जानवर अवाक् होकर एक-दूसरेका मुँह ताकने लगे। किसीने भी इस प्रश्नका उत्तर नहीं दिया।

"फिर बताओ," मधुमक्खियोंने आगे कहा, "स्वतन्त्र होनेका मूल्य ही क्या रहा जब अपना कोई देश ही न हो !"

न समझते हुए भी बेचारे जानवरोंको जैसे इस बातपर राज़ी होना पड़ा। सबसे पहले तोतोंने वृक्षकी टहनियोंको पंजोंमें दबोच कर और सिरको इस प्रकार बार-बार नीचेकी ओर झुलाकर कि अब गिरे अब गिरे, इस विचारको फैलाना शुरू किया। उन्होंने अपनी रटमें एक-दूसरेसे पूछना शुरू किया, "क्या हमें अपना देश बनाना चाहिए ? तुम्हारे विचार क्या हैं ? हमारा अपना कोई देश नहीं—अबतक नहीं।"

और इस दृष्टिकोणसे कि अबतक सारे पशु-पक्षी वास्तविक स्वतन्त्रताका उपभोग नहीं कर पा रहे हैं, जंगलके सभी प्राणियोंने अपनी एक मातृभूमि स्थापित करनेका निर्णय किया।

बिलाशक मधुमक्खियों एवं चीटियोंको ही देशकी दो प्रमुख आवश्यकताओंका—सीमान्त निश्चित करने एवं ध्वज बनानेका-भार सौंपा गया। मधुमक्खियोंकी आँखोंके सामने वे सारे रंग लहरा उठे जिनका मनुष्य अपने ध्वजमें उपयोग करते हैं ! इनकी बराबरी कैसे की जाये ?

"हम उनसे भी अच्छा ध्वज तैयार करेंगे," उन्होंने कहा—"ऐसा कि उन्हें हमसे ईर्ष्या हो आये।"

उन्होंने ध्वज बनानेमें देर नहीं की। अपना देश-ध्वज उन्होंने बुनकर तैयार कर डाला और उसमें इन्द्रधनुषके सातों रंगोंकी पतली-पतली लकीरें डाली गयीं। किन्तु जब वह ध्वज जंगलके ऊपर खुले आसमानमें लहराया गया तो सबोंने आश्चर्यके साथ देखा कि वे सातों रंग मिलकर सफ़ेद रंग बन गये हैं।

"यह भी अच्छा हुआ," मधुमक्खियाँ बोलीं, "हमारा ध्वज सभी राष्ट्र-ध्वजोंका प्रतीक है क्योंकि उनमें-से सबोंके रंग हमारे ध्वजमें हैं।"

और शोर तथा उत्साहके बीच वह श्वेत ध्वज ही उन स्वतन्त्र जानवरों-द्वारा अपनी मातृभूमिका चिह्न स्वीकार लिया गया।

राष्ट्र-निर्माणका आधा काम तो हुआ, अब चीटियोंसे कहा गया कि वे एक ऐसी दीवार खड़ी करें जो उनके देशकी सीमा-रेखा मानी जाये। चीटियोंने अपने सशक्त दाँतों-द्वारा दृढ़ एवं अलंघ्य प्राचीर बना डाला।

ऐसा लगा कि अब सब-कुछ ठीक हो गया किन्तु सहसा तोतों एवं अन्य पक्षियोंने यह प्रस्ताव रखा कि आकाशको भी इसी प्रकार सीमाबद्ध कर देना चाहिए अन्यथा वास्तविक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वतन्त्रता केवल ज़मीनपर चलनेवाले जानवरों-को ही प्राप्त होगी।

इसपर मकड़ोंने ऊपर चारों तरफ़ ऐसा जाल बुन डाला जिसे भेदना असम्भव था। और किसीको सन्देह भी नहीं हो सकता था कि यह कोई सीमा-निर्धारित क्षेत्र है।

पर असलमें बात ऐसी ही थी। इस सीमामें सारे जानवर विजयोल्लास-सहित हर दिन ध्वजोत्तोलन करते रहते। कभी-कभी वे सीमावाले प्राचीरपर चढ़ जाते, और इधर-उधर दौड़ते फिरते, खुशीके गीत गाते। उनका ध्वज वर्षा और आँधी-तूफ़ानमें भी लहराता रहता। पर कुछ बेचारी मधु-मक्खियाँ, जिन्हें मातृभूमिकी स्थापनाके साथ ही आकाश-सीमासे बाहर धकेल दिया गया था, इसलिए कि इस देशकी न थीं, जाड़ेके मारे मर रही थीं, वे सीमाके अन्दर आनेमें असमर्थ थीं।

दिन बीते, फिर महीने। एक दिन कोई जानवर प्राचीरके चारों ओर धीरे-धीरे घूम आया और फिर आकाशमें तने हुए जालेकी ओर देखने लगा।

"यह हमारा देश है!" उसने सन्तुष्टि-बोधके साथ कहा, "किसी मनुष्यके पास ऐसा देश नहीं जिसके सीमान्त इस प्रकारके हों।"

उसने अपनी दृष्टि फिर उस प्राचीरपर डाली जिसने शेष अदृष्ट जंगलसे उसके सुन्दर देशको अलग कर दिया था। सहसा एक उदासी उसके सारे शरीर और मनमें रेंग गयी।

इसके अतिरिक्त चीता, जिसने मातृभूमिके स्थापना दिवसपर शोर और उत्साहसे सारे जंगलको सिरपर उठा लिया था अब कभी-कभी प्राचीरपर चढ़कर चुपचाप घण्टों इधर-उधर भटकता फिरता। उसे कुछ अजीब-सा महसूस होता रहता। उसे सदा ऐसा लगता जैसे वह बहुत प्यासा है। वह पानी पीता पर उसकी प्यास न जाती। लगता कि जबड़ोंके पीछे अतृप्तिकी उष्णताने वहाँके सारे स्वर-तन्तुओंको सुन्न बना डाला है, उन स्वर-तन्तुओंको जो कभी उसके देश-प्रेमके परिचायक थे। वह घूमता-भटकता रहा—चुपचाप, निःशब्द, अपनी भयानक प्यासमें विकल, बेचैन।

अन्य सारे जानवर भी आँखोंमें उद्विग्नता और अस्थिरताकी लपट लिये अपने सीमित क्षेत्रमें मँडराते फिरे।

तभी एक दिन दक्षिणकी ओरसे आकर एक मधुमक्खीने अन्य मधुमक्खियोंको कुछ विशेष सूचना दी।

उस विशेष सूचनाको प्रसारित करनेके विचारसे मधुमक्खियोंने गुनगुनाकर कहना शुरू किया—"वह मनुष्य युद्ध करने गया है! वह अपनी मातृभूमिके रक्षार्थ लड़ने गया है। वह जब यहाँ लौटेगा तो बता पायेगा कि हम यहाँ एक कमी-सी क्यों महसूस कर रहे हैं। सचमुच लग रहा है कि हमने कुछ खो दिया है—क्या खोया है, यह वही बता सकेगा क्योंकि लगातार चार वर्षोंसे वह अपने देशके लिए युद्धमें लड़ रहा है।"

सारे जानवर अधीरतापूर्वक उस मनुष्यके लौटनेकी प्रतीक्षा करते रहे—सिवाय चीतेके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसे किसी बातकी आशा न थी और जो एक चिरन्तन प्यासके मारे बेचैन था।

पर सहसा एक दिन वह मनुष्य लौटा—वह अपनी पुरानी कुटियामें आया। उसका छोटा-सा पुत्र उसका हाथ थामे हुए था।

मनुष्यको दूरसे देखते ही उलूकने चिल्लाकर कहा, "एक और मनुष्य भी है उस-जैसा! वह अन्धा हो गया है, वह देख नहीं सकता, अपने लड़केके सहारे वह चल रहा है।"

बात सच थी। सिपाही अन्धा हो चुका था और बीमार भी। कई दिनों तक वह अपनी कुटियामें ही पड़ा रहा। फिर एक दिन उष्ण सन्ध्यामें वह बाहर निकला ताकि खुली रात्रि-वायुमें बैठे—तारों-भरे आकाशके फैलावको छूते घने अँधेरे जंगलसे घिरा।

"हमने अपने देशकी स्थापना की है।" एक कर्कश अव्यवस्थित आवाज़ उसे सुनाई पड़ी—पर ऐसा लगता है कि हमने अब कुछ खो दिया है! हम नहीं जानते कि क्या खोया है। हम तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे थे कि तुम आकर हमें बताओ कि हम इतने कष्टमें क्यों हैं। बात क्या है जो अब हम सुखी नहीं रहे? तुम अपने देशके लिए चार वर्षों तक लड़ते रहे हो। तुम अवश्य जानते होगे—ऐसा क्यों हो रहा है?"

और फिर उसी हिचकिचाती-सहमती आवाज़ने वह सारी बातें बतायीं जो उस मनुष्यके जानेके बाद हुई थीं।

इसपर उस मनुष्यका सिर नीचेकी ओर झुक गया। फिर उसने धीरे-धीरे और गम्भीरतापूर्वक करना आरम्भ किया :

"हाँ, मैं तुम्हें बता सकता हूँ कि तुम दुःखी क्यों हो? इस देशमें, जिसकी स्थापना तुमने की है, किसी चीज़की कमी नहीं है। अब इसकी और उन्नति क्या होगी! बस बात यह है कि सीमाओंकी स्थापना करते ही तुम लोगोंने अपना देश खो दिया है।"

तभी चीतेने महसूस किया कि उसकी वह असह्य प्यास दूर हो गयी है। एक शीतलता जैसे उसके जबड़ोंमें भर आयी है।

"यह सच है!" चीतेने गुर्राकर कहा, "हमलोगोंने अपनी स्वतन्त्रता खो दी है!"

"बिलकुल ठीक!" सिपाहीने स्वीकारा, तुमने अपने लिए कारागार बना लिया। तुम पहले स्वतन्त्र थे पर रह न सके! तुम्हारा देश मात्र जंगलका यह क्षेत्र नहीं हो सकता, न ही नदीके किनारोंसे वह बँधा है। तुम्हारा देश यह सारा जंगल है—जैसा कि मनुष्योंका देश····"

"मनुष्योंका देश····मनुष्योंका देश क्या है?"

वह थोड़ी देर तक सोचता रहा फिर अपने अष्टवर्षीय लड़केको बुलाकर उसने उसे अपनी जाँघोंपर बिठा लिया। तब वह बोला, "प्रश्न करनेवालेका स्वर मैं नहीं पहचानता। मैं नहीं जानता कि यह इस जंगलका स्वर है या कहीं औरका फिर भी मैं पूछे गये प्रश्नका उत्तर दे रहा हूँ। यह सच है कि अपने देशकी रक्षाके लिए मैं चार वर्षों तक लड़ता रहा। मैंने इसके लिए अपना खून दिया, अपनी ज़िन्दगी दी। मैं जो कुछ कहने जा रहा हूँ, यह तुम्हारे लिए है मेरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेटे! मैं जो कुछ कह रहा हूँ, तुमसे कह रहा हूँ। तुम शायद सब कुछ न समझ सको क्योंकि तुम अभी बहुत छोटे हो किन्तु मेरी बातोंका कुछ अंश तुम्हें अवश्य याद रहेगा, किसी सपनेकी तरह, और जब तुम बड़े होगे तब भी तुम्हें ये बातें याद आयेंगी।"

और उस अँधेरी गरम रातमें, एक-एक शब्दको आत्मसात् करते हुए जानवरोंके बीच अपने लड़केको गोदपर बिठाये वह घायल सिपाही कहता गया :

"मेरे बेटे, हम जो भी जिसे भी प्यार करते हैं, उसका जोड़ ही मातृभूमि है। प्यार घरके आँगनसे शुरू तो होता है पर दूर—बहुत दूर आगे बढ़ जाता है। क्योंकि हमारा सबसे अच्छा मित्र वहाँ नहीं, न तो वह विशाल-हृदय व्यक्ति ही जिसका हम अपने मनमें अधिक सम्मान करते हैं। प्रत्येक युगमें ही इतिहास वही उदाहरण प्रस्तुत करता है। हमें वहाँ न तो वह दार्शनिक मिलता है जो हमें हमारे संघर्षोंके बाद पुनः शक्ति प्रदान करता है, न हमें हमारी प्रेयसी मिलती है····पर ये लोग, जो हमारे प्यारके हिस्सेदार हैं, जहाँ भी हों, उन्होंने धरतीका जो भी छोर पसन्द किया हो, चाहे जहाँकी हवा उन्हें शीतलता प्रदान करती हो—उनके वे सारे देश ही हमारा अपना देश हैं।

"उस भूमिका हर टुकड़ा, जहाँ अच्छे विचारोंवाला व्यक्ति रहता है, हमारा देश है।

"मातृभूमि प्यारका दूसरा नाम है—अनुग्रहका नहीं। हमारी आत्मा जहाँतक पहुँच पाती है वह हमारी मातृभूमि है।"

"सीमान्तके एक ओर जीवनको जितना सम्मान प्राप्त है, दूसरी ओर भी उतना ही सम्मान प्राप्त है। नदीकी धारा हमारे मित्रके घरका संकेत करती हुई राह है। वह आदमी, जिसका हृदय नदीके किनारोंमें ही बँधकर रह जाता है, अपने लिए स्वयं एक घृण्य बन्दीगृह तैयार करता है।

"मेरे बेटे, अपने देशकी सीमा-रेखाएँ अपने हृदयके रक्तमें ढूँढ़ो। हृदयकी धड़कनों-को जो भी रोके, चाहे वह हज़ारों मील दूर हो या बिलकुल तुम्हारे क़रीब, वह तुम्हारा अपना नहीं है—विदेशी है।

"तुम्हारे देशकी शक्ति तुम्हारे मूल्योंपर ही निर्भर है। ज़मीनके किसी चप्पेका मूल्य उससे अधिक नहीं जो उसपर चलता-फिरता है। जब तुम्हारे हृदयमें उन व्यक्तियोंके लिए जो सच्चे मूल्योंके स्वामी हैं, प्यार एकत्रित होता है, बिना यह बिचारे कि उनका उद्गम कहाँ हुआ, कैसे हुआ तभी तुम्हारा देश जो ऐसे सारे प्यारका एकत्रीकरण होता है अद्वितीय बन जाता है।

"जहाँ कहीं भी तुम्हें प्यार या न्यायकी चिनगारी दिखे, बिना कुछ सोचे-विचारे उसका अनुगमन करो क्योंकि इन्हीं चीज़ोंसे तो तुम्हारे देशका निर्माण हुआ है। इसके विपरीत यदि तुम्हारे देशमें न्यायका दम घोंटा जाता हो या प्यारपर हमले होते हों तो तुम उससे अलग हो जाओ। यहाँतक कि तुम मुझको, जो तुम्हारा पिता है, यदि बुरा कार्य करते देखो तो मुझे अपने हृदयसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाहर निकाल फेंको। मैंने तुम्हारा पालन-पोषण किया, तुम्हें शिक्षा दी और प्यार किया है—इसलिए मैं तुम्हारे लिए देशसे भी अधिक मूल्यवान् हूँ।

"मैं तुम्हें उन शब्दोंके प्रति भी सचेत करना चाहता हूँ जो अकसर दुहराये जाते हैं। कहते हैं—देशकी आदर्शवादिता उसके तर्क-सिद्धान्त एवं भावनाओंपर निर्भर है पर यह सच नहीं है मेरे बेटे! कोरा तर्क-सिद्धान्त ही वह वस्तु है जो देशकी पवित्र भावनाको जघन्य अहम्मन्यतामें बदल देता है। यही सीमान्तों, आचार-व्यवहारों तथा व्यावसायिक प्रतिबन्धोंको मान्यता देता है। तर्क ही देशकी आदर्शवादिताको आर्थिक सुविधाजनक सीमान्तोंकी लघु सीमामें क़ैद कर देता है। मातृभूमिके स्वाभाविक विस्तार-की राहमें तर्क ही रोड़ा है। मिथ्या चिन्तन-द्वारा गलित तर्क ही वह वस्तु है जो हज़ारों मील दूर किसी अचीन्हे-अजाने व्यक्तिसे भाईचारेका सम्बन्ध जोड़ देता है, साथ ही अपने पड़ोसके उस व्यक्तिको जो हमारे लिए खुशियाँ बटोरता रहता है, वह विदेशी कहलवा देता है।

"ऐसे तर्कोंपर आधारित कोई भी देश हर तरहकी ऐसी भावनाओंका गला घोंट देता है। यदि देश-प्रेमका उद्वेग प्यारके गर्भसे प्रसूत होता है—उस प्यारके जो सच्चे आदर्शकी रक्षा करता है, तो व्यक्तिका देश कभी-कभी आगे बढ़ जाता है। तभी सहसा कोई ग़लत व्यक्ति उसकी राह रोक लेता है। सच तो यह है कि अन्धविश्वासी व्यक्ति ही किसी सीमान्तों और एक ध्वजके दायरेमें ही अपने सारे आदर्शोंकी पूर्ति कर सकता है।

"तर्क कहता है कि जिस ज़मीनपर हमारा अधिकार है वही हमारा देश है—मनुष्यके उन मूल्योंसहित जो उसमें निवास करते हैं। हर वह व्यक्ति जिसका हृदय अपने उस भाईके साथ-साथ धड़कता है जो बहुत-बहुत दूर है या उस व्यक्तिकी धड़कनके साथ जो कहीं क्रूर अन्याय-द्वारा कुचला जा रहा है—सच्चे आदर्शका स्वामी है और वह मनुष्यके आन्तरिक आनन्दप्रद भाई-चारे-को समझ सकता है। और यही सब सच्चो मातृभूमिकी स्थापना करते हैं।

"मेरी ये सारी बातें बड़े होकर याद रखना, मेरे बेटे!"

अन्धा सिपाही चुप हो गया। बिचारे मूक जानवर, जिनकी सरल आत्मा चकित भ्रमित हो गयी थी धीरे-धीरे चले गये। पर किसीने भी अपनी मातृभूमिमें प्रवेश नहीं किया। खुले असीम जंगलके घने अन्धकारमें ही उनकी खोयी हुई शान्ति छिपी थी—उनके पूर्व जीवनकी वांछनीय स्वतन्त्रता। इसीकी ओर उनके क़दम बढ़ चले।

तभी उलूकने, जो बुद्धिका तेज़ होता है, अपने सिरको इधर-उधर घुमाया-फिराया और फिर उसकी आँखें उस घायल सिपाहीके चेहरेपर गड़ गयीं।

"यह सब तो ठीक है," "वह बोला, लेकिन वह व्यक्ति जो अपने देशकी खातिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतने दिनों लड़ा हो और फिर ऐसी बात करता हो, कभी जीवित नहीं रह सकता।" वह फड़फड़ाया।

सचमुच वह घायल सिपाही कुछ ही दिनोंमें मर गया। पर उसके भीतरका सब कुछ नहीं मरा क्योंकि उसके उस छोटे-से लड़केको उस रातकी अनेक बातें याद रहीं जो उसे बादके जीवनमें स्वतन्त्र-स्वाधीन बनानेमें सहायक हुईं। ■ ■

(अनुवाद : भोलानाथ विम्ब)

हमारी बात—कैनेडीकी वाणीमें

अपने दायित्वोंके अनुरूप हमें अस्त्र-शस्त्र रखने चाहिए। यह सबक़ हमने म्युनिखसे सीखा है। हम यह अच्छी तरह समझ लें कि हेकड़ी हाँकनेवालेकी चुनौतीका सामना एक दिन करना ही होगा। हम किसी आक्रमणकारीको हुक्म देकर अपने देशसे बाहर नहीं निकाल सकते जबतक कि हमारे पास पर्याप्त अस्त्र-शस्त्र नहीं और हमारी आदेश-रक्षाके लिए त्यागी जनता हमारे पीछे न हो। इसलिए, मेरे साथी देशवासियो, यह मत पूछो कि तुम्हारा देश तुम्हारे लिए क्या कर सकता है; यह पूछो कि तुम अपने देशके लिए क्या कर सकते हो?

■

एक मार्ग ऐसा है जिसे हम कभी नहीं चुनेंगे और वह रास्ता है आत्मसमर्पण-का या ग़ुलामीका। हमारा लक्ष्य यह नहीं है कि हम ताक़तसे विजय पायें, किन्तु यह है कि हम हक़की रक्षा करें, हमें स्वतन्त्रताकी क़ीमतपर शान्ति नहीं चाहिए। हमें दोनों चीज़ें चाहिए, शान्ति भी और स्वतन्त्रता भी, भूमि इस गोलार्द्धपर और संसारमें चारों ओर। भगवान्‌ने चाहा तो यह हमें प्राप्त होगा।

■

हम युद्धसे बचना चाहते हैं, लेकिन हम पहले युद्ध कर चुके हैं। पहले भी लोग यह ख़तरनाक भूल कर चुके हैं कि हमलोग स्वार्थी हैं, बहुत नाज़ुक हैं और हममें आपसी फूट इस हद तक है कि अगर किसी दूसरे देशकी स्वतन्त्रतापर प्रहार हुआ तो हम लोग आक्रमणको चुनौती नहीं देंगे।....कम्युनिस्ट हमें बर्लिनसे खदेड़ें, धीरे-धीरे या ताक़त आज़माकर, इस बातकी इजाज़त हम उन्हें नहीं दे सकते। बर्लिनकी स्वाधीनताको समझौतेकी बातचीतका विषय नहीं बनाया जा सकता। वास्तवमें उन लोगोंके साथ समझौतेकी बातचीत हो ही नहीं सकती। जो कहते हैं—"जो मेरा है सो तो मेरा है ही, लेकिन जो तुम्हारा है उसे ले-देकर निपटाया जा सकता है।"

— कैनेडी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

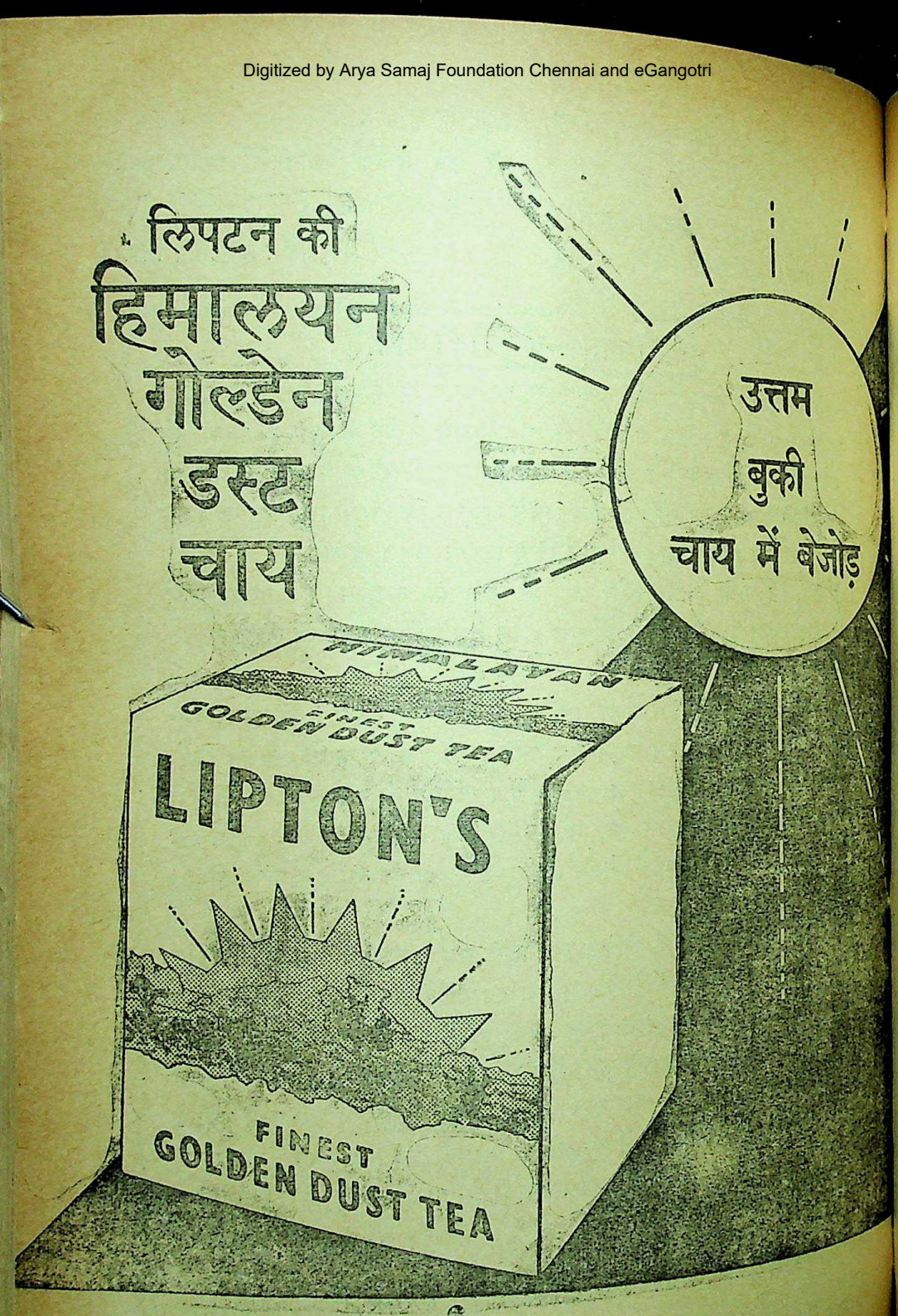

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक-एक तारीख़
एक-एक क़दम

सात सप्ताहका युद्ध

५-१० अगस्त

युद्ध जो हमपर थोपा गया····युद्ध जो हम करना नहीं चाहते थे····युद्ध जिसे हम १८ सालसे टालते आये—पड़ोसके नामपर, बिरादरीके नामपर, विश्वशान्तिके नामपर, इनसानियतके नामपर।

मगर हमारे इस रवैयेको समझा गया बुज़दिली, कमज़ोरी और ग़ैरचौकसी। बे-खबर समझकर हमारे सीमान्तोंमें घुसपैठ शुरू की गयी, मगर जब हमारे विरोध-पत्र फ़ौजी हुकूमतके डस्ट-बिनमें फाड़ फेंके गये और ५ अगस्तको जम्मूके क़रीब युद्ध-विराम-रेखापर तैनात हमारी गश्ती पुलिसकी टुकड़ीपर मुसल्ला हमला किया गया, तो हमलावरोंको हमने वापस पाकिस्तान नहीं जाने दिया, सीधे जन्नतको रुख़सत कर दिया।

जम्मू-कश्मीरके कई सीमान्तोंपर दुश्मनकी घुसपैठ। हमारी सुरक्षा सेना चौकस। प्रधान मन्त्रीका वक्तव्य, दृढ़ताका एलान। मुख्यमन्त्री सादिक़की घोषणा। पाकिस्तानका ख़ूनी हमला। पाक घुसपैठिये चीनियों-द्वारा प्रशिक्षित। भारत सरकारकी शिकायत—संयुक्तराष्ट्र-पर्यवेक्षकोंको। पाक-आक्रमणकी सूचना सभी मित्र राष्ट्रोंको। भयंकर दुष्परिणामोंकी चेतावनी—विश्व-भरके नाम।

घुसपैठियोंसे छीने गये हथियार। हथियारोंपर चीनी निशान। अमरीकी मार्के। दानके चिह्न।

११-१२ अगस्त

श्रीनगरमें कर्फ्यू। आक्रामकोंको मुँहतोड़ जवाब देनेका अन्तिम निर्णय। ऊधमपुरमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूचना। पाकिस्तानको फ़ौज हटा लेनेका आखिरी अल्टीमेटम। भुट्टोका कोरा जवाब। रावलपिण्डीमें भारतीय राजदूतकी पाक-सरकारसे वार्ता। भारतीय मुसलमानों-द्वारा पाक-आक्रमणकी भर्त्सना। संयुक्त राष्ट्र प्रेक्षकों-द्वारा जाँच प्रारम्भ। पकड़े गये घुसपैठियोंके बयान। अनिश्चय और असन्तोषकी अभिव्यक्ति।

१३ अगस्त

चम्ब-क्षेत्रमें दो पाकिस्तानी टुकड़ियाँ। हमारी सुरक्षा सेना-द्वारा मुक़ाबिला।

१४ अगस्त

कांग्रेस संसदीय पार्टीके समक्ष प्रधान मन्त्रीका भाषण। खतरेकी घोषणा।

१५ अगस्त

स्वतन्त्रता-दिवस। आज़ाद भारतकी १८वीं वर्षगाँठ। लाल क़िलेके प्राचीरपर तिरंगे-तले नैपोलियन बने खड़े लालबहादुर। शास्त्रीसे शस्त्री हो आये। हवामें उछलती बँधी मुट्ठी। पिसते हुए जबड़े। आक्रोशी स्वर—ईंटका जवाब पत्थरसे देंगे। शान्तिकी रक्षाके लिए जंगबाज़ोंके हर हमलेको चूर-चूर कर देंगे।

१६ अगस्त

लेह सड़कपर तैनात भारतीय सैनिकोंपर खुल्लम-खुल्ला पाक-आक्रमण। नियमित पाक सेना-वाहिनीके फ़ौजी बूटोंकी दनदनाहटें। करगिल क्षेत्रमें हमारी दो चौकियोंपर दुश्मनका क़ब्ज़ा। हमारी तोपोंके मुँह खोल दिये गये। दोनों चौकियोंसे दुश्मनका सफ़ाया। पाक सेनाओं-द्वारा अस्सी पाउण्डर तोपोंका प्रयोग। हमारे सेनापति जनरल चौधरीकी संयुक्त राष्ट्र मुख्य प्रेक्षक जनरल निम्मोसे श्रीनगरमें भेंट। श्रीनगरसे ३४ मीलपर युसे मर्म नामक हमारी चौकीपर आक्रमण। १२ घण्टे तक घमासान युद्ध। आक्रामक पछाड़ दिये गये।

१७ अगस्त

तिथवाल-क्षेत्रमें युद्ध-विराम-रेखाका उल्लंघन। घाटीके पश्चिमोत्तरमें शत्रुसे मुठभेड़। हमारे गाँवोंको लूटते और जलाते हुए दुश्मन वापस। राष्ट्रसंघमें हमारे प्रतिनिधि-द्वारा ऊ थाँसे भेंट। कश्मीर-वार्ता। बातचीत-द्वारा झगड़ा निपटानेका एक और प्रयत्न।

१८ अगस्त

हमारे मन्त्रिमण्डलकी आपत्कालीन बैठक। सेनापति-द्वारा दी गयी सूचना। २३० हमलावर हताहत, ८८ क़ैद। ६२ भारतीय जवान काम आये। ५ सेनाधिकारी भी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९ अगस्त

कश्मीरके मुख्य मन्त्री सादिक़को घोषणा। युद्ध-विराम-रेखा टूट चुकी। दुश्मनके हर अड्डेको तहस-नहस कर देंगे।

२० अगस्त

अबतक ७५७ आक्रामक मारे गये। ९१ बन्दी बना लिये गये। अखिल भारतीय पख्तून जिरगा-ए-हिन्द-द्वारा पाकिस्तानके विरुद्ध लड़नेका एलान।

२१-२२ अगस्त

चम्ब-क्षेत्रमें दो स्थानोंपर पाक-आक्रमण। शत्रु खदेड़ दिया गया।

२३ अगस्त

मेंधार क्षेत्रमें सैकड़ों हमलावरोंको मार भगाया गया। अख्नूर क्षेत्रमें पाकिस्तान-द्वारा अन्धाधुन्ध हवाई हमले। ४० हज़ार नागरिक हताहत।

२४ अगस्त

पुंछ ज़िलेके १२३ गाँवोंमें कर्फ्यू। चम्ब-क्षेत्रसे १० हज़ार विस्थापित। नौसेरा और मेंधार-क्षेत्रोंपर पाकिस्तानी जेट विमानोंकी उड़ान। ऊ थाँका बयान। गम्भीर स्थितिकी घोषणा। जनरल निम्मोको विचार-विमर्शके लिए वापस बुलाया।

२५ अगस्त

भारतकी माँग—जनरल निम्मोकी रिपोर्ट प्रकाशित की जाये। जम्मूके सीमान्त क्षेत्रों-में-से ३० हज़ार लोग घर-बार छोड़कर पीछे आये।

२६ अगस्त

तिथवाल क्षेत्रकी एक चौकीपर भारतीय सेनाओंका क़ब्ज़ा।

२७ अगस्त

उरी और पुंछ क्षेत्रोंपर पाक-हवाई-जहाज़ों-द्वारा ज़बरदस्त गोलाबारी। भारतीय सेनाओं-द्वारा जवाबी हमला। दुश्मनकी तीन चौकियाँ ले लीं।

२८ अगस्त

पाक सेनाओंका भारी जमाव तोड़नेके लिए उरी क्षेत्रकी एक चौकीपर भारतीय हमला।

तिथवाल क्षेत्रपर, दुश्मन-द्वारा बम-वर्षा।

हताहतोंके अद्यतन आकड़े :

पाकिस्तानी : ९७८

भारतीय : १० अफ़सर, ११२ फ़ौजी, ३१ पुलिसमैन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२९ अगस्त

तिथवाल और उरी क्षेत्रमें घमासान लड़ाई।

३० अगस्त

हाजीपीर दर्रेपर फिरसे हमारा क़ब्ज़ा। उरी क्षेत्रपर कई महत्त्वपूर्ण चौकियाँ, दुश्मनके हथियार और गोलाबारूद हमारे हाथ लगे। उरी क्षेत्रके चौदह गाँवोंमें बसनेवाले ५ हज़ार लोगोंका उद्धार।

३१ अगस्त

घाटीके पश्चिमोत्तर स्थित नंगम गाँवपर दुश्मनोंका बेरहम हमला। ग्रामीणोंका क़त्ल। घरोंको आग। आजाद कश्मीरका प्रधान कार्यालय बदलकर मरी ले जाया गया।

१ सितम्बर

पाकिस्तानी हमलेके ख़िलाफ़ हमारा पहला ज़बरदस्त जवाबी हमला। चम्ब-क्षेत्रमें भारतीय वायुसेनाके २८ हवाई जहाज़ों-द्वारा दुश्मनकी सेनाओंपर प्रहार। शत्रुके १० टैंक नष्ट। लगभग हर क्षेत्रपर जंगके शोले। पाकिस्तान-द्वारा पैटन टैंकोंके प्रयोगपर अमरीकाको हमारा विरोध-पत्र। आसाम सीमाके ५ मीलके इलाक़ेसे शत्रुओंने अपने नागरिक निकालकर सेनाएँ जमायीं। ऊ थाँ-द्वारा जंगबन्दीकी अपील। ब्रिटेन और अमरीका-द्वारा अपीलका समर्थन। सोवियत प्रधान मन्त्री कोसिजिनके पत्र भारत और पाकिस्तानके नाम।

भागता हुआ दुश्मन :

युद्ध में चलशत्रु की
सेना जहाँ छायी हुई,
लड़, मिले जिससे न
तेरी लाश शर्मायी हुई।
—अंचल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गाजकर बता सबको
मरेगा नहीं हिन्द देश,
लहू की नदी तैर कर आ गया है—
कहीं से कहीं हिन्द देश !

—दिनकर

२ सितम्बर

शत्रुओंके सैबरजेट पश्चिमी पाकिस्तानसे उड़े। भारतीय वायु सेना-द्वारा अभिदर्शन उड़ानें।

त्रिपुराकी सीमापर पाक-सेनाओंका जमाव।

३ सितम्बर

प्रधान मन्त्रीका राष्ट्रके नाम सन्देश। जेनरल निम्मोकी रिपोर्टके आधारपर पाकिस्तान आक्रामक सिद्ध। चम्ब, अखनूर क्षेत्रमें शत्रुओंके आक्रमण विफल। हवाई युद्धमें हमारे लड़ाकू हवाई जहाज़ों-द्वारा पाकिस्तानी जेट नष्ट। शत्रुके १८ टैंक बर्बाद। इस्लामकी तथाकथित अलम्बरदार हुकूमत-द्वारा मस्जिदपर हवाई हमला। नमाज पढ़ते हुए पचास नागरिक मृत। युद्धमें अमरीकी हथियारोंके प्रयोगपर भारत-द्वारा पुनः विरोध।

४ सितम्बर

चम्ब-जौरियाँ क्षेत्रमें घमासान युद्ध। ३ पाक पैटन टैंक नष्ट। पाक बटालियनके सदर मुकामपर भारतीय फ़ौजोंका हमला। दो और सैबरजेट भून डाले गये।

रूस-द्वारा कश्मीरके मामलेमें अपनी स्थितिका पुनः स्पष्टीकरण।

पंजाब सीमाके ३७० मील लम्बे मार्गपर पाक-सेनाका ज़बरदस्त जमाव।

संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद्की बैठक। कश्मीरकी स्थितिपर विचार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५ सितम्बर

प्रधान मन्त्रीका बयान—अगर पाकिस्तान बल-प्रयोगसे कश्मीर-समस्याका समाधान चाहता है तो हम इसे हरगिज़ स्वीकार नहीं कर सकते।

पाक हवाई जहाज़ों-द्वारा अमृतसरके क़रीब बमबारी।

ज़ौरियाँके पास भीषण युद्ध।

रावलपिण्डी व लाहौरमें ब्लैक-आऊट। पाक सैनिकोंकी छुट्टियाँ रद्द।

६ सितम्बर

लुधियानाके पास मालीवाड़ा गुरुद्वारापर पाकिस्तानी राकेट हमला।

चम्ब क्षेत्रमें दुश्मन दुम दबा भागा।

सुरक्षा परिषद्की आपत्कालीन बैठक। प्रधान सचिव भारत व पाकिस्तानके दौरेको तैयार।

पठानकोट, अम्बाला, पटियालाके पास पाकिस्तानी छाता सैनिक उतरे।

अयूब-द्वारा पाकिस्तान-भरमें आपत्कालीन स्थितिकी घोषणाके साथ-साथ खुली ललकार कि हम जंग कर रहे हैं।

पूर्वी पाकिस्तानियों-द्वारा मुग़लघाट स्टेशनपर भारतीय रेलगाड़ी और रेल कर्मचारियोंपर आक्रमण। चम्ब-क्षेत्रमें पाकिस्तानी सैबरजेटकी गोलाबारी।

७ सितम्बर

भारतीय सेना लाहौरकी तरफ़ बढ़ी। हमारे हवाई जहाज़ों-द्वारा दुश्मनके सैनिक अड्डोंपर प्रहार। चम्ब-क्षेत्रमें दुश्मनके कई टैंक नष्ट। उरी-पुंछमें एक महत्त्वपूर्ण पहाड़ीपर हमारा क़ब्ज़ा। जौरियाँ और चम्ब-क्षेत्रमें जमकर लड़ाई। दुश्मन और पीछे ढकेल दिया गया। जम्मू ज़िलेपर पाकिस्तानी बमबारी। कई गाँव तबाह। पुंछ क्षेत्रमें दुश्मन हथियार छोड़ भागा। श्रीनगर हवाई अड्डेपर पाकिस्तानी हवाई हमला। संयुक्त राष्ट्रका एक हवाई जहाज़ नष्ट। पश्चिमी पाकिस्तानमें हमारी सेनाएँ और आगे बढ़ीं। चकलाला और सरगोधा हवाई अड्डोंपर भारतीय वायुयानों-द्वारा भीषण बमबारी। लाहौरके पास डेराबाबा नानकपर पाकिस्तानियोंने पुल उड़ा दिया। सुलेमानकी तरफ़से होनेवाला पाक-आक्रमण विफल। अम्बाला-पठानकोटके आसपास उतरे पाकिस्तानी छाता सैनिक गिरफ़्तार। हुसेनवाला सीमान्त क्षेत्रपर दुश्मन कई चौकियाँ ख़ाली कर गया। फिरोज़पुरमें जेलकी इमारत-पर पाक हवाई हमला। अमृतसरके एक नागरिक क्षेत्रपर बमबारी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजस्थान-सीमापर बारमेरके करीब पाक-सेनाओंका जमाव। कूचबिहार सीमापर पाकिस्तानी जेट।

पूर्वी बंगालमें मुग़लघाटकी ओरसे तोपोंकी दहाड़। पठानकोट, अमृतसर, जलन्धर, फ़िरोज़पुर, श्रीनगर, जामनगर और कलाईकुण्डापर पाकिस्तानी हवाई जहाज़ों-द्वारा बमबारी।

रावलपिण्डी, कराची व ढाकापर भारतीय जवाबी हवाई हमला।

कलकत्तामें हवाई हमलेकी चेतावनियाँ। बम्बईपर दुश्मनका हवाई जहाज़।

सोवियत रूस-द्वारा झगड़ा निपटानेके लिए बातचीतका प्रस्ताव।

अमरीका-द्वारा भारत और पाकिस्तानको सैनिक सहायता स्थगित।

कराची बन्दरगाहपर दो व्यापारी जहाज़ रोक लिये गये। पाकिस्तान-द्वारा भारतीय बैंकोंपर प्रतिबन्ध।

रनबीरसिंहपुरापर पाकिस्तानी बम। पश्चिम बंगालके कुछ इलाक़ोंमें पाकिस्तानी छाता सैनिक।

द्वारिका बन्दरगाहपर ज़बरदस्त पाकिस्तानी हवाई हमला।

गुजरातके ओखा बन्दरगाहपर शत्रु-प्रहार रोकनेके लिए भारतीय नौसेनाकी कार्यवाही।

लुधियानाके पास हलवाड़ा हवाई अड्डेपर दो बार बमबारी। पश्चिमी पाकिस्तानके कई हवाई अड्डोंपर हिन्दुस्तानी हमले।

दिल्लीपर बमबारीका प्रयत्न विफल। बीच आकाशमें ही पाक विमान भून डाला गया।

जम्मू नगरपर तीन हवाई हमले। दो सैबरजेट हमने मार गिराये।

गाज़ियाबाद और मेरठमें शत्रुके छाता-सैनिक।

जोधपुर हवाई अड्डेपर पाकिस्तानी हमला।

फ़िरोज़पुर छावनी रेलवे स्टेशन बमबारीमें बरबाद। जलन्धर, आदमपुर और होशियारपुमें छाता सैनिक और बमबारी।

कलकत्ताके हवाई अड्डेपर सात मिनिट तक वायु-युद्ध।

६ सितम्बर

चम्ब-जोरियाँ क्षेत्रमें दुश्मनको करारी मात। सामरिक साज-सामान हमारे हाथ।

भारतीय सेनाएँ पश्चिम पाकिस्तानकी तरफ़ और आगे बढ़ीं। राजस्थान सीमामें हमारी फ़ौजोंने दुश्मनके छक्के छुड़ा दिये।

हैदराबाद सिन्धकी तरफ़ हिन्दुस्तानी फ़ौजें बढ़ीं। गदरापर हमारा क़ब्ज़ा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाहौर-क्षेत्रके कई महत्त्वपूर्ण ठिकानोंपर हमारा अधिकार। अमृतसरके आकाशमें एक और सैबरजेट भून डाला गया। आदमपुर क्षेत्रमें उतरे पाक छाता-सैनिक पकड़ लिये गये।

भारत-द्वारा पाकिस्तानी बैंकोंपर प्रतिबन्ध। पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तानके बीच तार और फ़ोन सम्पर्क-समाप्त।

दिल्ली स्थित विदेशी कूटनीतिज्ञोंके समक्ष हमारे प्रधान मन्त्रीका बयान। सुरक्षा परिषद्के प्रस्तावपर भारतकी स्थितिका स्पष्टीकरण।

भारतीय बन्दरगाहोंपर तीन पाकिस्तानी जहाज़ रोक लिये गये।

ब्रिटिश अधिकारीका बयान कि इस बातका कोई सबूत नहीं मिला कि भारत-को चीनी खतरेका मुक़ाबला करनेको दिये गये हथियार दूसरे कामोंमें नहीं लगाये गये।

कीनियाके राष्ट्रपति केनियट्टा तथा ऊ-थाँकी युद्धबन्दी अपीलका पाकिस्तानी जवाब कि जबतक कश्मीरमें जनमत-गणनाका फ़ैसला नहीं हो जाता तबतक लड़ाई बन्द नहीं करेंगे।

९ सितम्बर

उरी-पूंछ क्षेत्रमें दुश्मनकी २० चौकियोंपर हमारा क़ब्ज़ा। चम्ब-जौरियाँ क्षेत्रके युद्धमें भारी संख्यामें पाकिस्तानी सेना नष्ट।

जम्मू-सियालकोट क्षेत्रमें शत्रुकी पाँच सामरिक चौकियोंपर भारतीय अधिकार। १५० पाकिस्तानी सैनिक गिरफ़्तार।

बाघा-क्षेत्रमें पाकिस्तानी हमला विफल।

लाहौर-क्षेत्रमें हमारी सेना और आगे बढ़ी। २३ पैटन टैंक ले जाती हुई एक रेलगाड़ीपर भारतीय हवाई हमला। पूरी गाड़ी नष्ट।

सिन्धमें बारमेरके पास भारतीय सेना आगे बढ़ी।

लाहौर, सियालकोट और कसूर क्षेत्रमें एक दिनकी लड़ाईमें दुश्मनके ७५ टैंक नष्ट।

अरब सागरमें पाकिस्तानी नौ सेनाका गश्त लगाता हुआ एक पूरा बेड़ा हिन्दुस्तानकी बन्दरगाहोंके पास। अमरीकासे उधार ली हुई 'गाज़ी' नामक पनडुब्बी हरकतमें।

अबतक दुश्मनके ३६ हवाई जहाज़ ग़र्क। ८० सैबरजेट तबाह। ५० ट्रक नष्ट।

जैसलमेर ज़िलेमें भुट्टेवाल सीमा चौकीपर पाकिस्तानी हमला। हमलावरोंसे हथियार छीनकर उन्हें भगा दिया गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमृतसरपर तीन बार हवाई हमला। शत्रुके दो जहाज़ मार गिराये गये। जोधपुर, पठानकोट और बारमेरपर पाकिस्तानी हवाई हमले। ७० नागरिक मारे गये।

हमारे वायुचालकोंको धोखा देनेके लिए पाकिस्तान-द्वारा अपने हवाई जहाज़ों-पर भारतीय वायुसेनाके चिह्न अंकित।

कूचबिहार, गीतलदाह नामक नगरोंपर दो बार पाकिस्तानी हवाई हमला। आसाममें ग्वालपाड़ा ज़िलेके पास पाक-सेनाओंका भारी जमाव।

दिल्लीके आसमानमें फिर दुश्मनके बमबाज़ हवाई जहाज़।

दिल्ली स्थित इण्डोनेशियाई दूतावासके बाहर हज़ारों मुस्लिम नागरिकों-द्वारा विरोध-प्रदर्शन।

चीनी प्रधान मन्त्री चाऊ एन लाई-द्वारा भारत आक्रमणकारी घोषित। चीन-द्वारा भारतको धमकी।

१० सितम्बर

जम्मू-सियालकोट क्षेत्रमें हमारी सेनाएँ और आगे बढ़ीं।

चम्ब-जौरियाँ क्षेत्रमें ६ शत्रु-टैंक नष्ट, उरी-पूंछके कई और चौकियोंपर हमारा क़ब्ज़ा।

डेराबाबा नानकके इलाक़ेमें हमारी फ़ौजें रावी पार कर गयीं। कसूर क्षेत्रमें एक दिनमें २१ शत्रु-टैंक नष्ट। बचावके लिए हमारी सेनाओंका प्रत्यावर्तन।

सुलेमानके क्षेत्रमें सारे पाक-हवाई हमले विफल। एक दिनकी लड़ाईमें ७० पाकिस्तानी हलाक़।

सिन्ध-क्षेत्रमें सामरिक सरगर्मियाँ बढ़ीं।

बाघा-लाहौर-क्षेत्रमें घमासान युद्ध। दुश्मनके १९ टैंक बर्बाद। पठानकोटपर भारी बमबारी।

बागडोगरा हवाई अड्डेपर पाक-आक्रमण। हमारा एक हवाई जहाज़ नष्ट। दुश्मनका एक सैबरजेट मार गिराया गया।

अमृतसरके ऊपर तीन पाकिस्तानी हवाई जहाज़ मार गिराये गये और एक सैबरजेटको सख़्त नुक़सान पहुँचाया गया।

दिल्लीपर हवाई हमलेकी एक और कोशिश।

फ़िरोज़पुरके क़रीब हुसैनवाला हैड वर्क्स और धर्मशालाके पास योलपर पाक बमबारी।

पाकिस्तान-स्थित तमाम भारतीय सम्पत्तियाँ ज़ब्त।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११ सितम्बर

उरी-पूँछ क्षेत्रके १५० वर्गमील इलाक़ेपर हमारा क़ब्ज़ा।

श्रीनगरपर एक और सैबरजेट भून डाला गया।

नहरोंका पानी खोल-खोलकर कच्छके इलाक़ोंमें बाढ़ लानेकी पाकिस्तानी हरकतें।

कसूर-क्षेत्रमें हमारी विजय। पाक मेजर जनरल मारा गया।

सियालकोट-क्षेत्रमें १२ पाक टैंक नष्ट।

पूर्वी क्षेत्रपर पाक वायु-आक्रमणके प्रयास। हासीमारा हवाई अड्डेपर दो बार पाक बमबारीकी कोशिश नाकाम।

गौहाटीपर पाकिस्तानी बममार हवाई जहाज़।

दुश्मनके विमानचालककी जेबसे खुफ़िया दस्तावेज़ बरामद जिसमें आदमपुर, हलवाड़ा, आगरा, अम्बाला, पालम, भुज तथा जामनगर हवाई अड्डोंपर हमलेका कार्यक्रम २० अप्रैल ६५ को ही अंकित किया गया मिला।

पाकिस्तान-द्वारा ऊ-थाँको भेजी गयी त्रि-सूत्री योजना।

१२ सितम्बर

चम्ब-जौरियाँ क्षेत्रमें भागती हुई शत्रु-सेनाको ठुकरा-ठुकराकर खदेड़ा गया। उरीसे आठ मील दूर दो बड़ी चौकियोंपर हमारा क़ब्ज़ा। पूंछके उत्तरमें एक और सामरिक महत्त्वकी चौकी हमारे हाथ लगी।

लाहौर-क्षेत्रकी सामरिक स्थिति हमारे पक्षमें।

१५ और शत्रु-टैंक जीत लिये गये, ४० और बर्बाद। अबतक नष्ट टैंकोंकी कुल संख्या २४६।

राजस्थानमें जैसलमेरके पार दुश्मनने ५-६ चौकियाँ बनायीं।

अमृतसरके क़रीब कुछ गाँवोंपर हवाई हमला। नागरिक सम्पत्तिको हानि। पाक बाम्बर गिरा लिया गया।

लुधियानाके पास सतलुजका पुल उड़ानेकी कोशिश नाकाम।

न्यूयार्कमें श्री छागलाका बयान कि पाक-आक्रमण चीनके उकसानेपर हुआ।

पाकिस्तानको सामरिक सहायता देनेसे सूडानका इनकार।

१३ सितम्बर

जम्मू-सियालकोट मोर्चा गरम। सामरिक महत्त्वकी दो चौकियाँ हमारे क़ब्ज़ेमें। दुश्मनके तीन पैटन टैंक बमबारीमें चूर-चूर। एक टैंक तथा एक हैलीकॉप्टर स्थल-युद्धमें नष्ट।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन और पैटन टैंक चम्ब-जौरियाँमें बर्बाद। तिथवालके पूर्वोत्तरमें पाँच पहाड़ियोंपर हमारे जवान। अमृतसरकी शहरी आबादीपर भीषण बम-वर्षण। जोधपुर और जामनगरपर अन्धाधुन्ध बमबारी। गुरदासपुरमें एक मालगाड़ीपर पाक हवाई हमला। आसपासके गावोंपर भी बम गिरे। दुश्मनका एक हवाई जहाज़ गिरा दिया गया।

लुधियाना-फ़िरोज़पुरके बीच एक सवारी गाड़ीपर भी बम गिरानेकी कोशिश।

जम्मू-पठानकोटपर ज़बरदस्त वायु-आक्रमण। बारमेर तथा संगरूर ज़िले भी बम्बार्डमेण्टकी लपेटमें। जलन्धर-ज़िलेमें गोराया नामक क़स्बेपर शर्मनाक हवाई हमला।

कांगड़ा ज़िलेके नूरपुर तहसीलके दो गावोंपर ११ बम।

सिलीगुरी और कूचबिहारपर भी बम-प्रहार।

लाटीटीला-दमवारी क्षेत्रमें पाक-आक्रमण।

कलाईकुण्डा, बैरकपुर तथा बागडोगरापर एकके बाद कई हवाई हमले।

भारत-पाक-संघर्षको हवा देनेवाले देशोंको रूसकी चेतावनी।

जकार्ता स्थित एयर इण्डिया ऑफ़िस इण्डोनेशियाइयों-द्वारा नष्ट।

१४ सितम्बर

चम्ब-जौरियाँ क्षेत्रमें तीन पाकिस्तानी टैंक क्षतिग्रस्त।

उरी-पूंछकी तीन और चौकियोंपर हमारा अधिकार।

जम्मूके पास दो सैबरजेट मार गिराये गये।

श्रीनगरके हवाई अड्डेपर ४ बम। वहाँ खड़ा राष्ट्रसंघका एक हवाई जहाज़ क्षतिग्रस्त। इससे पहले क्षतिग्रस्त हुए हवाई जहाज़के एवज़में यह लाया गया था।

पेशावर और कोहाटके हवाई अड्डों पर हिन्दुस्तानी वायुसेनाका प्रकोप।

लाहौरपर-का सामरिक आकाश भारतीय वायुसेनाके प्रभुत्वमें। हमारी इजाज़तके बग़ैर अब कोई हवाई जहाज़ यहांके हवाई अड्डेपर नहीं उतर सकता।

कसूरके मोर्चेपर कई टैंक हमारे हाथ लगे।

जलन्धर और होशियारपुरके बीच नया हवाई हमला।

जगरांव पर भी कई बम गिरे।

तीन बम संगरूरपर।

जोधपुरपर बेतहाशा बमबारी।

अहमदाबादपर बाम्बर देखे गये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुदासपुरपर हवाई हमला। जोधपुर रेलवे स्टेशनका मालगोदाम व प्लैटफॉर्म नष्ट।

कलकत्ताके हवाई ठिकानेपर पाक-आक्रमण।

कलाईकुण्डा हवाई अड्डेपर फिर आक्रमणकी कोशिश।

पाकिस्तानको पेकिंग व जकार्ताका मशविरा कि संयुक्त राष्ट्रसे इस्तीफ़ा देनेकी धमकीके बलपर मामला अपने पक्षमें करवाओ।

१५ सितम्बर

श्रीनगरपर सैबरजेट-आक्रमण। जम्मूके नागरिक क्षेत्रोंपर हवाई हमला। ८ मरे।

सियालकोट-पसरूर रेलवे लाइनपर हमारा क़ब्ज़ा। कसूरके मोर्चेपर कई टैंकोंकी उपलब्धि।

सरगोधा हवाई अड्डेपर भारतीय वायुयानों-द्वारा बमबारी।

अमृतसरपर हमलेकी नाकाम कोशिश। बटालापर बम गिरे।

जोधपुर, आदमपुर, हलवाड़ा और पठानकोटकी गलियों और बाज़ारोंमें बमबारी।

राजस्थानमें पालीपर आठ पाकिस्तानी हवाई जहाज़।

सियालकोट क्षेत्रमें एक महत्त्वपूर्ण क़स्बेपर हमारा क़ब्ज़ा। एक पूरी पाकिस्तानी पलटन तबाह। आठ टैंक बरबाद।

लाटीटीला इमावारी क्षेत्रमें पूर्वी पाकिस्तान राइफल्सकी ८०० गोलियाँ दागी गयीं।

विशाखापट्टनम्पर दुश्मनका हवाई जहाज़।

१६ सितम्बर

पूंछ क्षेत्रमें हम और आगे बढ़े। भारी मात्रामें दुश्मनका असला हमारे हाथ लगा। अख़्नूर-चम्बके मोर्चेपर दुश्मनकी तोपोंके मुँह बन्द कर दिये गये।

जम्मू क्षेत्रमें शम्बा नामक क़स्बेपर ज़बरदस्त हवाई हमला।

सरगोधा और पेशावरके हवाई ठिकानोंपर हमारी एक और चोट।

लुधियाना और कसूरमें दो सैबरजेट भून डाले गये।

हिन्दुस्तानी फ़ौजें इछोगिल नहर पार कर गयीं। बर्की नामक क़स्बेपर हमारा क़ब्ज़ा।

जम्मू-सियालकोट सेक्टरमें हमारे पाँव मज़बूत।

कसूर क्षेत्रमें दुश्मनको खदेड़ दिया गया।

अमृतसर, अटारी, पाटाल, गुरुदासपुर, जलन्धर, संगरूर, जम्मू और जोधपुर-पर लगातार बम-वर्षा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१७ सितम्बर

लाहौरके मोर्चेपर शत्रुके तीन टैंक तबाह।

अम्बाला पर हवाई हमला।

जम्मू-सियालकोट मोर्चेपर २४ घण्टोंमें दुश्मनके ३३ टैंक बर्बाद।

भारतीय कैनबराओं-द्वारा सरगोधा हवाई अड्डेपर बार-बार बमबारी।

फ़िरोज़पुर और आदमपुरमें दो पाकिस्तानी सैबरजेट गिराये गये।

पटियाला ज़िलेमें नाभाके पास एक गाँवमें एक हज़ार पौण्डका बम गिरा। होशियारपुरके पास एक गाँव तबाह।

हलवाड़ाके क़रीब पाकिस्तानी हवाई जहाज़ों-द्वारा बमबारी।

लुधियाना, जोधपुर, संगरूर फिर हवाई हमलेके शिकार।

अमृतसरमें पाकिस्तानी गुप्तचर।

ऊ-थाँ-द्वारा सुरक्षा परिषद्को सुझाव कि भारत-पाक युद्ध तुरन्त बन्द कराया जाये।

१८ सितम्बर

सियालकोट क्षेत्रमें दो चौकियाँ हमें मिलीं। होशियारपुर और जम्मूके आसपास इक्के-दुक्के हवाई हमले।

लाहौरके मोर्चेपर दुश्मनके तीन टैंक बरबाद। लाहौर-कसूर क्षेत्रमें एक और सैबरजेट भून डाला गया।

त्रिपुरा-पूर्वी पाकिस्तान सीमापर पाकिस्तानी फ़ौजों-द्वारा गोलाबारी।

अलीपुरद्वार और कूचबिहारके इलाक़ोंमें पाकिस्तानी हवाई जहाज़।

अम्बालापर ज़बरदस्त हवाई हमला। एक अस्पताल, एक गिरजाघर, बच्चों-का स्कूल और एक क्लब पूरी तरह तबाह।

फ़िरोज़पुर, गुरुदासपुर, लुधियाना और होशियारपुरपर अन्धाधुन्ध बमबारी।

हिन्दूमलकोटपर पाकिस्तानी फ़ौजोंने गोले बरसाये।

मलेशियाके प्रधान मन्त्रीकी चेतावनी—अगर चीन युद्धमें कूदा तो विश्वयुद्ध हो जायेगा।

१९ सितम्बर

जम्मू शहरपर दो बार हवाई हमला।

हवाईकोट छपरार सड़क काट डाली गयी। चविंडापर सैबरजेट। भारतीय वायुसेना-द्वारा सरगोधा पर एक और प्रहार। बारमेरके पास उत्तरलाईमें दो पाकिस्तानी रॉकेट। अमृतसरपर हमलेकी ५ बार कोशिश।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जामनगरपर बमबारी। कपूरथलामें एक पाकिस्तानी हवाई जहाज मार गिराया गया। धारीवाल और गुरुदासपुरके पास दो बम गिरे।

२० सितम्बर

सिक्किम एवं लद्दाखकी सीमापर चीनियों-द्वारा भारतीय सेनापर गोलियां चलायी गयीं।

रूसने चीन और इण्डोनेशियाको भारत-पाक युद्धमें किसी तरहकी दखल देनेसे मना किया।

पाक बमबाज़ोंने अम्बालाके सेण्ट पॉल गिरजाघरपर आक्रमण करके ध्वस्त-कर दिया।

लाहौर क्षेत्रमें भारतीय विमानोंने पाकिस्तानका ३२वाँ सैबरजेट मार गिराया। घमासान युद्ध।

पाकिस्तानके विदेश मन्त्री भुट्टो न्यूयार्कके लिए रवाना।

२१ सितम्बर

भारतने युद्ध-विराम स्वीकार लिया।

सिक्किम-क्षेत्रमें भारतीयोंने चीनियोंके जवाबमें पहली बार गोलियां चलायीं।

सिन्ध, कच्छ सीमाके समीप बादिनके राडार-स्टेशनका भारतीय वायुसेना-द्वारा विध्वंस।

कराचीमें पाकिस्तानी प्रदर्शनकारियोंने अमेरिकी पुस्तकालयको आग लगायी एवं उसके राष्ट्रीय ध्वजको नीचे उतार फेंका।

पाकिस्तानने भी युद्ध-विराम स्वीकार कर लिया पर युद्ध-विरामकी अवधि दिनके १२-३० बजेके स्थानपर रात्रिके ३-३० बजे मानी गयी।

२२ सितम्बर

भारत एवं पाकिस्तानके बीच युद्ध-विराम।

चीन-द्वारा घोषित कि भारतीयोंने तिब्बत क्षेत्रमें अपने सैनिक निर्माणोंको नष्ट कर दिया है—अतः चीनी सेना पीछे हट गयी है।

युद्ध-विरामकी अवधि दिनके १२-३० बजेके स्थानपर रात्रिके ३-३० निश्चित।

इसके बावजूद अमृतसरके क़रीब छहरता ग्रामके नागरिकों एवं जोधपुर जेल-अस्पतालपर पाकिस्तानियों-द्वारा बमबारी। दोनों स्थानोंमें ७२ व्यक्तियोंकी मृत्यु एवं सौ से अधिक व्यक्ति घायल।

—सु० चो०

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माध्यम

हिन्दी साहित्य सम्मेलन
द्वारा प्रकाशित
तथा श्री बालकृष्ण राव-द्वारा
सम्पादित मासिक

'माध्यम' एक वर्ष की अल्पावधि में हर प्रबुद्ध पाठक की सबसे प्रीतिकर पाठ्य-सामग्री बन गया है।

'माध्यम' के प्रवेशांक से अबतक की पूरी फ़ाइल की धुआंधार माँग इसके स्थायी महत्त्व और लोकप्रियता का परिचायक है।

सहवर्ती साहित्य, विवेचना, प्रतिपत्तिका, समीक्षाएँ, प्रत्यालोचन-पुनर्विचार, हिन्दीजगत्, पत्र-पत्रिकाएं 'माध्यम' के स्तम्भगत आकर्षण हैं।

• •

एक अंक का मूल्य : १.०० । वार्षिक शुल्क : १०.००

• •

पत्राचार : पो० बॉ० सं० ६०, इलाहाबाद
सम्पादकीय तथा व्यवस्थापकीय कार्यालय :

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

शतरंज यू० एन० ओ०

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२० ब०

एक फ़र्ज़ी प्यादा
एक मोहरा पिटा हुआ

एक कहावत है: दो डण्डे पास-पास मत रखो—लड़ाई छिड़ जायेगी, भरे हुए परिवार-में महाभारत मत पढ़ो—परिवार उजड़ जायेगा, घरमें बैठकर शतरंज मत खेलो—मार-काट मच जायेगी। कहावत अपनी जगह ठीक है इसीलिए समझदार साँपको दूध नहीं पिलाते हैं—डण्डे अलग-अलग कोनेमें ही रखे जाते हैं, महाभारत मन्दिरमें पढ़ी जाती है, शतरंज बरामदेमें बैठकर खेली जाती है। लेकिन ज़मानेके साथ-साथ कहावतें भी व्यापक हो गयी हैं—दो डण्डे एक कोनेमें रखे गये कामनवेल्थमें और लड़ाई छिड़ी कश्मीरमें, महाभारत पढ़ी गयी पीकिंगमें आग लगी पिण्डीमें, शतरंज खेली गयी यू० एन० ओ० हेड क्वार्टरमें और मारकाट मची उरि-छाम्बसे बारमेर-द्वारका तक। हटाइए कहावतको, एक मिनिटके लिए भूल भी जायें लेकिन हक़ीक़तका क्या हो? आज किसी भी तारीखपर आप खड़े हो जाइए भारत-पाक संघर्षका लावा लाल-ज्वालामुखीकी तरह आपपर फैल जायेगा, किसी भी दिनका अख़बार आप ओढ़ लीजिए—इस युद्धकी सुर्खियाँ आपको दीवारमें चुन देंगी। निश्चित ही राजनीतिको कई नज़रोंसे देखा जा सकता है—निर्मम होकर, भावुकतासे, तर्कसे, धर्मसे····तभी तो आचार्य कृपलानी यह कहते हुए कि युद्धने सिद्ध कर दिया है हमारा दुनियामें कोई दोस्त नहीं, यह नहीं कह पाते कि बिना मित्र-देशोंके हम ज़िन्दा ही कैसे रहेंगे? जनसंघने हाल ही २९ सितम्बरको

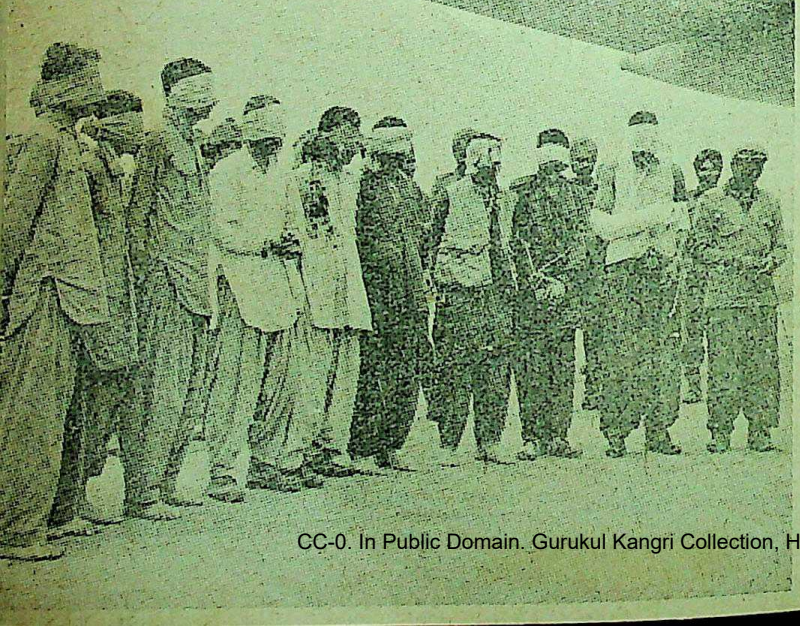

० ० ०

कुछ पिटे हुए मोहरे···

इनका नारा था—
'घुसपैठ इक तेरा सहारा।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

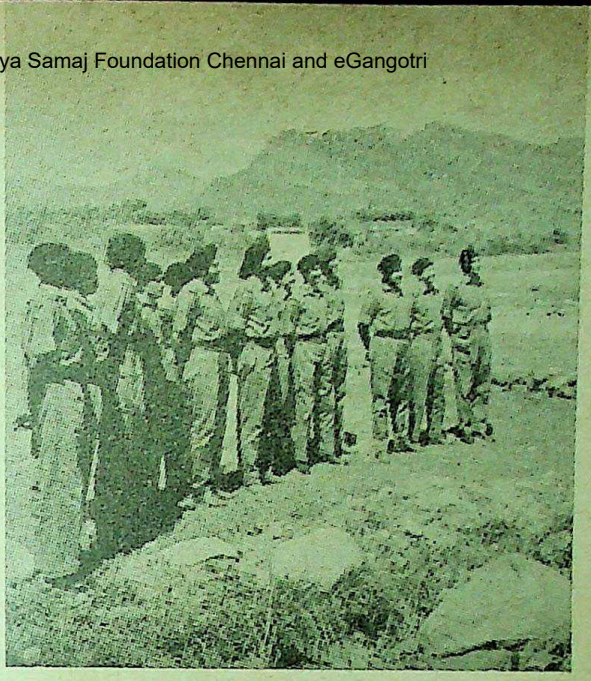

कुछ फ़र्ज़ी प्यादे : 'देख लिया तेरा नज़ारा।'

एक बात साफ़-साफ़ कही है कि पिछले १८ सालमें भारतका शासन उतना जनमतके साथ नहीं चला जितना पिछले कुछ सप्ताहोंमें, लेकिन यह बात नहीं कही जा सकती कि सारी विदेशनीति रामलीला-मैदानकी भीड़के हाथों सौंप दी जाये। राजाजीने शासनकी सुरक्षात्मक कार्यवाहीकी प्रशंसा की और राजनीतिके 'आध्यात्मिक पहलू'की दुहाई दी है लेकिन ऐसे शब्दोंसे राजनीतिको दिशा नहीं दी जा सकती यह वे खूब समझते हैं। इधर कम्युनिस्ट पार्टी जब-तब, जिस-तिस कमेण्टके साथ लेफ़्ट-राईट कहती रही है लेकिन केवल मार्क्स या लेनिनकी दुहाई देकर अपने देशके लिए कोई सुझाव वह दे नहीं पायी। भारतका राजनीतिक आधार निश्चित हो शान्तिपूर्ण सहअस्तित्ववाला है और दुर्भाग्यसे उसे दुनियाके दूसरे कूटपरस्तोंने इस बातके लिए विवश कर दिया है कि सिद्धान्तोंके रास्तेमें जो रोड़े बनकर आयें उनको हटाना भी उसीका काम है। ५ अगस्तसे २२ सितम्बर तक खिंचे हुए इस संघर्षने बहुत सारी बातें न चाहते हुए भी समझनेके लिए हमें तैयार कर दिया है। मित्रोंके बारेमें भ्रम समाप्त हो गये हैं, भले ही अब हम उन भ्रमोंको फिरसे पाल लें। यह स्थिति स्पष्ट हो गयी है कि राजनीतिमें न्याय नामकी कोई चीज़ नहीं होती है, होती है कूटनीति केवल। संयुक्त राष्ट्रसंघके प्रति कोई भी पूर्वग्रहका प्रश्न नहीं उठता लेकिन यह भी प्रश्न नहीं उठता कि हम किसी भी बातको कैसे भी दबावसे स्वीकार कर लें और शान्तिके लिए जल्दी मचायें। कच्छवाला मामला, जिसपर सरकारकी सरासर आलोचना हुई है, और कुछ नहीं था हमारी ओरसे शान्तिके प्रति थोड़ी-सी जल्दबाज़ी थी और सामनेवाले षड्यन्त्रीको फ़िज़ूल ही कन्सेशन देना था। हिन्दुस्तानने अपने छोटे भाईपर बड़ा भरोसा रखा, बार-बार उसपर विश्वास किया लेकिन वह सुभान अल्लाह ऐसे माननेवाला नहीं था। ऐसे बहुत सारे देवता हैं जो पूजासे नहीं मानते। खैर। इसीलिए राजनीतिमें किसी तरहकी निराशाका प्रश्न नहीं उठता। सीधी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीधी बात है कि विश्वके लोग यदि भारतके स्टैण्डको ठीक-ठीक नहीं समझे हैं तो उन्हें सब बातें ठीक-ठीक समझानी पड़ेंगी—उसके लिए भले राष्ट्रपतिको यात्रा करनी पड़े या विजय-लक्ष्मी पण्डितको या कृष्ण मेननको या और किसीको। यदि पाकिस्तानी तिकड़मके कारण दूसरे प्रेस हमारे सही समाचारोंको दबाकर पेश करते हैं दुनियाके सामने, तो हमें प्रोपेगेण्डा और ठीक करना होगा, यदि पाकिस्तानकी मंशा केवल बदनीयती और अपने आक़ाओंकी बातोंके माध्यमसे ही कश्मीरको हड़पनेकी है—तो वह बड़े भारी भ्रममें है और उसे यह साफ़-साफ़ कह दिया जाना चाहिए कि चंगेज़की औलादसे लायी गयी दवाई यहाँ नहीं चलेगी। एक सबसे बड़ी बात यह कि नेहरूकी नीतिमें कहीं व्यक्ति-नेताका भाव था और ताज़ी मिली आज़ादीके दिनों वह ज़रूरी भी था, हमारे देशने उस नेताको प्यार किया है और उसने शान्ति और सिद्धान्तोंका जो पत्थर रखा है नींवकी तरह मज़बूत है, हम अब जो भी कर रहे हैं वह उस पत्थरके ऊपर दीवार बनाना है। जिन देशोंने रेतपर तानाशाही खड़ी की है उन्हें खुद न अपनी दीवारोंपर भरोसा रहता है, न नींवपर। शास्त्रीजीका सामूहिक नेतृत्व 'तूतीकी आवाज़' नहीं है, हमारी शंखध्वनि है।

● आजके सन्दर्भ और एक रेफ़रीकी ज़रूरत :

अखाड़ेमें उतरते ही पहलवानने फ़ाउल शुरू कर दिये। मुश्किल तब हुई जब सामनेवालेने फ़ाउलकी अपील करनेकी बजाय गरदन-तोड़ देकर पहलवानको रिंगसे दे दी। इस बिन्दुपर फ़ाउल-पहलवान फ़रियादी बन गया। पाकिस्तान अबतक युद्ध-विरामको ४९ बार तोड़ चुका है। भारतने बग़ैर किसी शर्तके युद्ध-विराम मान लिया था। पाकिस्तानने जिस नाटकीय ढंगसे युद्ध-विराम स्वीकारा है वह प्रहसनका विषय है। निश्चित ही मियाँ भुट्टोने न्यूयार्क जाकर आखिरी दाँव मारा था कि टाँग अड़ाकर विघ्न डालेंगे लेकिन वे वैसा नहीं कर पाये। इस सारे खेलमें मज़ा यह है कि पाकिस्तान बड़े विश्वासके साथ सिखाये पूतकी तरह कचहरी चढ़ता रहा और उसका हश्र यही हुआ कि वह क्रॉसमें फँस गया। या इलाही !

● भारतका पक्ष दूधका धोया रखा है :

१—जब अँगरेज़ोंको यह विश्वास हो गया कि हिन्दू और मुसलमानोंमें सम्यक् फूट डाली जा चुकी है, वे जब इस बातके भी विश्वस्त हो गये कि 'हँस-हँसके लेंगे पाकिस्तान' का नारा लगानेवाली क़ौम किसी दिन 'लड़-लड़के लेंगे हिन्दुस्तान' का नारा भी लगा सकती है, उस दिन उन्हें अपने जालसाज़ फ़ैसलेको सुनाकर एक और यश लूटने और दूसरी ओर अपने नव-साम्राज्यवादकी जड़ें जमानेका स्वर्ण अवसर दिखाई दिया। एक रशियन पत्रकारने उस समय आश्चर्य व्यक्त किया था कि आज़ादीकी जो लड़ाई दस वर्षसे दहक रही है वह केवल दो महीनेमें क्योंकर समाप्त हो गयी ? पत्रकारके अनुसार 'डिवाइड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'एक हल' का फ़ार्मूला ब्रिटेनने तैयार किया है। नव-साम्राज्यवादका नया ताला भी वह उससे खोलेगा। नव-साम्राज्यवाद सबसे अमानवीय टेकनिक है राजनीतिकी। एक पंक्तिमें कह सकते हैं कि भूखेके आगे यह टुकड़ा-फेंकनीति है। लेकिन ब्रिटेनके टोरी और लेबर दिमाग़में यह बात अबतक नहीं आयी है कि वे जिस पाकिस्तानको टुकड़े डाल रहे हैं, टुकड़े तोड़ना उसकी आदत है, ज़रूरत नहीं। और जिस हिन्दुस्तानसे वे उसी अन्दाज़में पेश आते रहे हैं वह कई बार भूखा सो जाता है लेकिन भीख नहीं माँगता। पी० एल०—४८० तो या और भी कोई ऐसा ही समझौता, साफ़-साफ़ खरीद-बेंच है—दया-ममता नहीं, न ही मोह या आश्रय। तो १५ अगस्तकी आज़ादीके साथ-साथ जो उपहार लार्ड माउण्टबेटन हमें दे गये वे थे : सीमा-समस्या, कश्मीरको लटकाकर जो दूरकी बदमाशी खेली गयी हमारे साथ, वह तब समझमें नहीं आयी थी हमें। माउण्टबेटनके अन्तिम शब्द ये थे—"कश्मीर भी उसी तरह स्वतन्त्र है जिस तरह भारत या पाकिस्तान। उसे अधिकार है कि वह चाहे तो पाकिस्तानके साथ रहे, चाहे तो हिन्दुस्तानके।" इस कथनमें दाँव यह था कि वे देना चाहते थे कश्मीर पाकिस्तानको लेकिन न तो कश्मीरकी संस्कृति उसे स्वीकार रही थी न ही कोई भी नेता यह माननेको तैयार था कि पाकिस्तानको इतना बड़ा सम्पन्न भूभाग किस तुफ़ैलमें दिया जा रहा है। ब्रिटेन अपने जोड़-बाक़ीके आधारपर इस निर्णयपर पहुँचा कि हिन्दुस्तानको खामख्वाह नाराज़ करनेमें कोई तुक नहीं है। कश्मीर पाकिस्तानके पास चला जाये उसके लिए ब्रिटेनने एक नया तरीक़ा ईजाद दिया। यह नया तरीक़ा नव-साम्राज्यवादका नुस्खा है। सारे षड्यन्त्र जब जग-ज़ाहिर हो गये हैं तो उस वक़्त लगता है कि कश्मीरको पाकिस्तानके नाम बुक करवा दिया गया था और उसकी बिल्टी भी मियाँ जिन्नाको भेज दी गयी थी लेकिन ग़लत बुकिंगके कारण माल गोदाममें ही रह गया और पाकिस्तानने २२ अक्तूबर १९४७ को सैनिक कार्यवाही शुरू कर दी—यह भी कच्छ-जैसी ही घटना है। आज़ादीके झण्डे भी ठीकसे नहीं लगाये गये थे कि जिन्ना साहबके पासमें इतनी ताक़त आ गयी कि वे कश्मीरको हथिया लें, शायद ब्रिटेनने यह कहा हो पाकिस्तानसे कि कश्मीर हमने 'होम-डिलेवरी' से बुक नहीं करवाया है, उसे तो जाकर ही लेना पड़ेगा। जो हो, यह सच है कि तब दस हज़ार पाकिस्तानी सैनिक ब्रिटिश जनरल मेसवीके नेतृत्वमें और ब्रिटिश गवर्नर कनिंगहमके अनुमोदनसे कश्मीरमें घुस ही नहीं आये श्रीनगरसे केवल दस किलोमीटर दूर रह गये थे।.....सरदार पटेल और जनरल करियप्पाका नाम ज़रूर याद आता है। शायद सारा झगड़ा अयूबके आनेसे पहले ही ख़त्म हो गया होता लेकिन हमने युद्ध-विराम स्वीकार कर लिया था और उसके कारण कश्मीरके एक-तिहाई भागपर पाकिस्तानका-क़ब्ज़ा हो गया था। आज़ादीके केवल तीन महीने बाद भारतका वह दूसरा बँटवारा हुआ था। जो हो उस बदमाशीसे हमने सबक़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीखा था कि हम शान्तिके लिए कुछ उठा नहीं रखेंगे लेकिन एक बँटवारेको दूसरे बँटवारेके द्वारा सुरक्षित रखनेका फ़ैसला नहीं करेंगे। वह निश्चय आज भी अपनी जगह दृढ़ है।

इसका दूसरा पहलू इस रूपमें भी सामने आया था कि जनसंख्याका स्थानान्तरण हो जाये यानी सारे हिन्दू भारत आ जायें और सारे मुसलमान पाकिस्तान चले जायें। भारतने जनताकी इच्छाको महत्त्व दिया क्योंकि वह एक धर्म-निरपेक्ष राष्ट्र है। यही कारण है कि भारत महज़बके आधारपर खड़े किये गये झगड़ेका साथ नहीं दे पाता। उस समय जनमतवाली बात उठी थी लेकिन तब पाकिस्तानको अपनी औक़ातका ख़याल अधिक था, उसे मालूम था कि जनमत-संग्रहमें वह हार जायेगा। संयुक्त राष्ट्रसंघके जिस भारत-पाकिस्तान आयोगके प्रस्तावपर पाकिस्तानने हामी भरी थी वह यह है—

(क) जम्मू-कश्मीर राज्यकी सुरक्षाकी ज़िम्मेदारी भारत सरकारकी होगी।

(ख) तथाकथित आज़ाद कश्मीर सरकारको मान्यता नहीं दी जायेगी।

(ग) पाक-अधिकृत कश्मीरमें ऐसा कुछ नहीं किया जायेगा जो जम्मू-कश्मीर राज्योंके हितोंके विपरीत पड़े।

(घ) उत्तरके ख़ाली कराये गये क्षेत्र जम्मू-कश्मीर सरकारको वापस मिलेंगे और उसकी प्रतिरक्षाकी ज़िम्मेदारी भारत-सरकारकी होगी।

(ङ) जम्मू-कश्मीरके किसी भी मामलेमें, ख़ासकर जनमत-संग्रहसे, यदि वह हुआ तो, पाकिस्तानका कोई सरोकार नहीं होगा।

(च) यदि तकनीकी या व्यावहारिक कारणोंसे जनमत-संग्रह सम्भव नहीं हुआ तो स्वतन्त्र रूपसे जनताकी राय जाननेके दूसरे तरीक़ोंके बारेमें आयोग विचार करेगा।

(छ) यदि पाकिस्तान १३ अगस्त १९४८ के प्रस्तावके खण्ड १ और २ पर अमल नहीं करता तो भारत जनमत-संग्रहके लिए बाध्य नहीं होगा।"

पाकिस्तानने किसी भी समझौतेपर अमल नहीं किया और कश्मीरमें आमचुनाव हो गये। वहाँकी संविधान-सभाने विलयपर स्वीकृतकी मुहर भी लगा दी। अब जनमत-संग्रहका प्रश्न नहीं उठता है। १९५२ में रूसने कहा था, "रूसकी दृष्टि यह रही है कि विधान-सभा या लोकतन्त्र आधारपर राष्ट्रीय निर्वाचन-द्वारा कश्मीरका निर्णय होना चाहिए।" हुआ ऐसा ही। प्रत्येक बार विधान-सभाने भारतके पक्षमें निर्णय किया है। प्रत्येक बार वहाँकी जनताने राष्ट्रीय काँग्रेसको विशाल बहुमतसे अपना समर्थन दिया है।

२—दिन गुज़रते रहे। क़ायदे आज़मकी ज़रूरत दूसरे दरबारमें ज़्यादा हुई और वे पाकिस्तानका राजपाट छोड़कर चले गये। पाकिस्तानकी आज़ादी शाहजहाँ-जैसी हो गयी कि बूढ़े बापको उसीके बनवाये क़िलेमें क़ैद कर दिया गया और अपने भाइयोंको मरवाकर एक औरंगज़ेब तानाशाह बन बैठा। एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाई जेलमें तो दूसरा मिलिटरीका सबसे आला कमाण्डर। सच, ये तो ठाठ हो गये। फ़ील्ड-मार्शलसे प्रेसिडेण्ट। यह तो इतिहास है, किसी मोचीको बादशाह बना दो तो वह चमड़े-के सिक्के चलवा देता है। अगर फ़ील्ड-मार्शलने सारे देशको युद्धमें झोंक दिया तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं। अगर उद्देश्य वह नहीं होता तो बैठकर सुलझाये जा सकने-वाले मामलोंके लिए इसलाम और जिहादकी दुहाई नहीं दी जाती। और वह भी ऐसे समय जब कश्मीर पूरी तरह भारतमें शामिल हो गया है। हाथ कंगनको आरसी क्या? वी० पी० मेननकी पुस्तक 'द स्टोरी ऑफ़ द इण्टीग्रेशन ऑफ़ द इण्डियन स्टेट्स' के पृष्ठ ३१० से ४१५ तक खोलकर आज भी देखे जा सकते हैं, जिनपर सहमति श्री नेहरू, पटेल और माउण्टबेटनकी। उसमें पृष्ठ ४१३-१४ पर लिखा है :

"....कश्मीरके भारतमें विलयकी बात जनमतके निर्णयके अनुसार वहाँकी प्रमुख राजनीतिक पार्टी नेशनल कान्फ्रेन्ससे अनुमोदित है। यही नहीं, भारत-सरकारने अपनी ओरसे घोषणा कर दी थी कि जो घुसपैठिये वहाँ घिर आये हैं उनको भगा दिये जानेपर और पूर्ण रूपसे शान्ति स्थापित हो जानेपर कश्मीरके लोग खुद ही अपने भाग्यका निर्णय कर लेंगे, यह भारतके द्वारा कश्मीरसे कहा गया था, पाकिस्तान इसके बीचमें कैसे और कहाँ आता है?....अजीब स्थिति तो यह थी कि अपने जन्मके दस सप्ताह बाद ही उसका पहला क़दम आज श्रीनगर और कल दिल्ली-पर आक्रमण करना हो गया....। हमें सरहद बढ़ानेकी कोई ख्वाहिश नहीं थी। लार्ड माउण्टबेटनने, इंग्लैण्ड-वापिसीपर, सार्वजनिक रूपसे यह कहा कि उन्होंने भारत-सरकारकी रहनुमाईसे कश्मीरके महाराजाको यह कह दिया है कि वे स्वेच्छासे यह निर्णय कर लें कि क्या उन्हें पाकिस्तानके साथ रहना है।...."

और इसकी पुष्टि होती है इस बातसे कि कश्मीर महाराजाने कश्मीरके भारतमें सम्पूर्ण विलयकी बात स्वीकारी। शेख अब्दुल्लाने उस समय सुरक्षा-परिषद्में जो कहा था वह स्पष्ट है—"हज़ारोंकी तादादमें कबीलोंमें रहनेवाले पठान युद्धके घातक हथियार लेकर डाकुओंकी तरह नहीं, बल्कि पाकिस्तान-सरकारके नियन्त्रणमें बन्दूककी ताक़तपर हमारे देशको बरबाद करनेके लिए आये।" इतना ही नहीं जम्मू और कश्मीर-की संविधान-सभामें भी शेख अब्दुल्लाने कहा था—"जम्मू-कश्मीरका पूरी तरह भारत-में विलय हो चुका है....भारत और कश्मीरका सम्बन्ध असंख्य शहीदोंके पवित्र ख़ूनसे जुड़ा हुआ है। दुनियाकी कोई भी ताक़त उसमें कमी नहीं ला सकती।"

यानी जब ऐसे और वैसे भी पाकिस्तान-की दाल न गली शेख अब्दुल्लाको तोड़नेका काम भी उन्हीं लोगोंने किया जिन्होंने पहले झगड़े करवाये थे और जो फूटके बीज बोकर खुश थे। वह षड्यन्त्र भी जब असफल हो गया तो तब और उसके पहले ही पाकिस्तानने अन्धा माई-बाप बनकर अपनी सुरक्षाके लिए हथियार बटोरना शुरू कर दिया। भारत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो समानान्तर झूठ :

(क्या ऐसा नहीं लगता कि इसमें भी कोई साठगाँठ है ? साथ दिये हुए दोनों अंक मिलाकर देखिए !)

१—'जेन-मिन जिह-पाओ'के सम्पादकीयमें १५ दिसम्बर १९६२ को यह प्रकाशित हुआ था :

'नेहरू सरकारकी चीनी विरोधी नीतिमें वृद्धिका कारण है उनकी गृह तथा विदेशी नीतिका दिन-ब-दिन प्रतिक्रियावादी होता जाना। जो लोग चीनपर यह आरोप लगाते हैं कि उसने नेहरू-सरकारको 'वेस्ट' की तरफ़ उन्मुख किया है वे ग़लत सोचते हैं। भारत-चीन सीमा-विवादके मसलेमें वे सही-ग़लतको उलझाते रहे हैं—अपने आपको 'तटस्थ' और चीनको अपना भाई कहते हुए, साथ ही अपने प्रतिक्रियावादियोंको निकटतम मानते हैं।'

२—रेडियो पाकिस्तानसे ख़बरोंका एक तस्ख़रा १५ सितम्बर १९६५ को इस तरह प्रसारित किया :

'शास्त्री-गवनमिण्टकी पाकिस्तान-विरोधी ज़ाहिलाना कार्रवाहीका दर-असल बाइस तो है हिन्दोस्तामें चल रहे अन्दरूनी-बाहरी झगड़े-फ़साद। सिक्ख हमारे भाई हैं और उनकी आज़ादीकी जद्दो-जेहदमें पाकिस्तानकी हमदर्दी है। शास्त्री-गवर्नमिण्ट बाहरी मामलेको जब सुलझा नहीं पायी है तो यह जंग शुरू कर दी कि अवाम अस्ल तक़लीफ़के बारेमें सोच ही न सके। हिन्दोस्ताँ तो वेस्ट और इम्पीरियलिज़्ममें पूरा-पूरा भरोसा करने लगा है जब कि पाकिस्तान वतनकी आज़ादीकी हिफ़ाज़त और दूसरे मुल्कोंसे दोस्ताना ताल्लुक़ रखता है।'

(क्रा० सं० वि०)

इस साजिशको तब ही समझ गया था और उसने इसका तगड़ा विरोध किया था। श्रीमान् जॉन फ़ॉस्टर डलेसने पाकिस्तानको अमरीकी हथियार दिये जानेपर १९५५ में कहा था—"परस्पर सुरक्षा संविधानके अनुसार हम किसी देशको हथियार बेच नहीं सकते जबतक यह विश्वास प्राप्त न कर लें कि उनका उपयोग आक्रमणकारी उद्देश्योंसे नहीं किया जायेगा। पाकिस्तानके साथ हमारे समझौतेमें यही सिद्धान्त रहा है।...भारतको पूरा-पूरा विश्वास होना चाहिए कि उसके खिलाफ़ आक्रमणके लिए इनका कभी उपयोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized By Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं होगा किसी तरह भी; यह बात पाकिस्तान भी जानता है। यदि आक्रमण हुआ तो अमेरिकासे उसके अच्छे सम्बन्ध समाप्त हो जायेंगे। यही नहीं यू० एन० चार्टरके सिद्धान्तोंके अनुसार अमेरिका भारतको सहायता करेगा यदि वह किसी ऐसे शस्त्र-सज्जित आक्रमणका शिकार होता है तो।"

लेकिन यह सब नहीं हुआ। हुआ तो यह कि कच्छ-सीमामें घुसपैठ ही नहीं आक्रमणसे पाकिस्तानने अपना १९६५ का नया साल शुरू किया। वहाँ घुसनेका साफ़ उद्देश्य था—भारतको ज़बरदस्ती भड़काना। इधर कच्छका कुचक्र शुरू हुआ नहीं था कि ब्रिटिश-सरकार सुलह करवानेके लिए कूद पड़ी। इच्छा यह थी उनकी कि कच्छके समझौतेके साथ ही कश्मीरका सवाल उठा लिया जाये। अयूब साहब लगातार इस बातपर ज़ोर देते रहे कि कच्छके साथ ही भारत-पाक सीमाके सारे विवादोंपर विचार हो····इसका आशय स्पष्ट है कि किसी भी तरह भारतको फँसाया जाये। शास्त्रीजी और अयूब साहबकी लन्दन-मुलाक़ातने एक बात और भारतके लिए साफ़ कर दी कि पाकिस्तान हमेशा ब्लैकमेलिंगकी सोचता रहा है। कच्छ-समझौतेने यह सीख दी है भारतको पाकिस्तानकी 'ऐसा तब होगा जब ऐसा करोगे' वाली किसी बातपर भरोसा नहीं करना है। कच्छ-समझौतेकी तीन बातें ये थीं—भारतकी शान्ति-नीति, पाकिस्तानकी चाल और ब्रिटेनकी बन्दर-घुड़की। तीन शर्तें पाकिस्तानकी स्वीकारी हुई थीं:

(i) पहली जुलाईको सुबहसे यह युद्ध-विराम लागू होगा।

(ii) दोनों ओरकी फ़ौजें फ़ौरन हटना शुरू कर देंगी। हटने और ख़ाली करनेकी यह प्रक्रिया सात दिनोंमें पूरी हो जायेगी। भारतकी गश्ती टुकड़ी छाड़बेटपर फिर क़ब्ज़ा-कर सकती है। मगर उसकी तादाद १ जनवरी ६५ को पहरा दे रही पुलिससे अधिक नहीं होगी। भारत और पाकिस्तानकी पुलिस उन जगहोंपर गश्त कर सकती है जिनपर वे १ जनवरी ६५ से पहले पहरा दे रही थीं। लेकिन उनकी तादाद उतनी ही होगी जितनी १ जनवरी ६५ से पहले थी और बरसातमें उनकी संख्या उतनी ही होगी जितनी १९६४ की बरसातमें थी। अगर भारत और पाकिस्तानकी गश्ती टुकड़ीकी मुठभेड़ हुई तो वे एक-दूसरेके साथ दखलन्दाज़ी नहीं करेंगी और विशेष रूपसे पश्चिमी-पाकिस्तान, भारत-सीमा भूमि विनिमयके अनुसार, जिसपर १९६० में हस्ताक्षर हुए थे, आचरण करेंगी।

(iii) चूँकि—(अ) भारतका यह दावा है कि कच्छके रण्णकी सीमा विवादग्रस्त नहीं है, क्योंकि कच्छके रण्णके उत्तरी सिरेपर पहलेसे ही प्रतिष्ठित सीमा है जो कि विभाजनके पहलेके नक़्शेमें दिखायी गयी है। (ब) पाकिस्तानका यह दावा है कि कच्छके रण्णमें भारत और पाकिस्तानकी सीमा २४ अक्षांश रेखाके क़रीब-क़रीब गुज़रती है: जैसा कि विभाजन और विभाजन-पूर्वके कई दस्तावेज़ोंसे पता चलता है। और इसलिए ३५०० वर्गमील ज़मीन विवादग्रस्त है। (स) जनवरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९६० में हुई बहसमें दोनों सरकारोंके मन्त्री इस नतीजेपर पहुंचे थे कि वे कच्छ-सिन्ध सीमाके बारेमें और तथ्य इकट्ठे करेंगे और विवादके हलके लिए बातचीत करेंगे।

यही वह शैली है जिसके आधार दो माँओंवाली कहानी बनी है : लड़का खो गया किसीका और जब राज्यके सिपाही उसे ढूँढ़ लाये तो दो औरतोंने एक साथ आकर यह दावा किया कि बेटा मेरा है। राजा बड़ी परेशानीमें पड़ गया। बोला, ठीक है, अगर दोनों ही यह दावा करती हो तो मैं इस लड़केके दो टुकड़े कर देता हूँ और तुम दोनोंको बाँट देता हूँ। नक़ली दावेदारिनने यह बात तत्काल स्वीकार कर ली लेकिन जो असली माँ थी उसने साफ़ कहा, बेटा मेरा है, इसके टुकड़े करनेका अधिकार मैं किसीको नहीं दे सकती। और राजाने लड़का उस माँको दे दिया जिसने राजाके न्यायको माननेसे इनकार कर दिया था।

लन्दनमें अयूब साहबको बड़ी जल्दी थी कि ऐसा कुछ हो जाये और वे अफ्रीकी-एशियन-कान्फ्रेन्समें जाकर अपनी शान्तिका ढिंढोरा पीटें, लेकिन शास्त्रीजीने कह दिया था कि यह समझौता दिल्ली और रावलपिण्डी-में होना चाहिए लन्दनमें नहीं। और फ़ैसलेकी लिखावटपर स्याहीसोख लगानेसे पहले ही पाकिस्तानने बाक़ायदा हमला बोल दिया।

३—हाँ, हमला पाकिस्तानने किया और इसीलिए श्री चागलाने राष्ट्रसंघमें बार-बार कहा है कि आक्रान्ताका नाम लीजिए। राष्ट्र संघने साफ़-साफ़ यह नहीं कहा कि आक्रमण पाकिस्तानकी ओरसे किया गया है। चागलाने बार-बार पैरवी की कि ८ साल वे भी जज रहे हैं और दोषीको दोषी कहना कोई पाप नहीं है। लेकिन राष्ट्रसंघ बड़ा समझदार रेफ़री है। लगता है कि उसकी रुचि लड़ने-वाले पहलवानोंसे अधिक ठेकेदारोंमें है। निश्चित ही जीत हमारी है, लेकिन हमारे ईमानदार पक्षको कूटनीति और फ़रेबने कमज़ोर भी बनाया है। महामन्त्रीने जो कहा वह स्पष्ट है : "५ अगस्तको जो उल्लंघन शुरू हुआ है वह अधिकांशमें सशस्त्र सैनिकों-द्वारा हुआ है, साधारणतः ये लोग बग़ैर वर्दी-के थे,—यह जनरल निम्मोने मुझे संकेत दिया है कि ये लोग पाकिस्तानकी तरफ़से आये थे और हिन्दुस्तानकी सरहदमें सशस्त्र कार्यवाही करनेके लिए आये थे।....."

५ अगस्तको ही जम्मूमें ही ६ पाकिस्तानी मारे गये थे। षड्यन्त्र यह सिद्ध करना था कि कश्मीर-जम्मूमें गृहयुद्ध चल रहा है, वहाँकी जनता असन्तुष्ट है और विद्रोहके लिए भड़क उठी है। लेकिन पाकिस्तान भूल गया कि आज़ाद देशकी जनताके सिरपर सींग नहीं होते हैं। ये घुसपैठिये यदि पाकिस्तानके नहीं थे तो कहाँसे ऐसे हथियार ले आये जो अमेरिकामें बनते हैं और पाकिस्तानके पास हैं। शायद 'बादशाह अयूब' ने किसी दौड़-प्रतियोगितामें पुरस्कार दिये होंगे ? यदि साज़िश ठीक नहीं होती तो गुप्त रूपसे सही ब्रिटेन यह नहीं कहता पाकिस्तानसे कि इन घुसपैठियोंको वापिस बुला लो। अब तो जब हम उनका चक्रव्यूह तोड़ चुके हैं तो उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इरादोंका जायज़ा ले ही सकते हैं।

• वह खिचड़ी बहुत पहलेसे पक रही थी :

पाकिस्तानने आज़ाद होनेके साथ-साथ एक देग खरीदी थी। यह देग एक फिरंगीसे आधे दामोंमें खरीदी गयी थी। जिन्ना साहब उसे अयूबके नाम वसीयत कर गये थे। इस सिद्धान्तके अनुसार कि देग है तो चढ़ा दो उसे चूल्हेपर। भुट्टो साहबने मंशा ज़ाहिर की खिचड़ी पकानेकी। मज़हबकी दाल, चीनी साँठगाँठका चावल, अमेरिकी आग, फ़ील्ड मार्शलत्वके तीन पत्थर और दोस्तीका नमक ....खिचड़ी देगमें चढ़ा दी गयी। सोचा, घी कश्मीरके सपनेका हो। अगर इरादा यह नहीं होता तो १ अप्रैलको जो किसी भी तरहकी मूर्खताके लिए श्रेष्ठ दिन माना जाता है, चीनी अफ़सरोंको स–निमन्त्रण पाक–हेल्ड कश्मीर दिखाये जानेकी बात क्यों सबपर ज़ाहिर की जाती। जो चीनी अफ़सर गये थे कश्मीर देखने, उन्होंने बड़ी दया कर वहाँकी जनताको सूखे दूधके डिब्बे और कपड़े बाँटे। चोर-चोर मौसेरे भाइयोंका यह नाटक देखकर बेचारे ग्रामवासी आश्चर्यचकित रह गये लेकिन पाकिस्तान यह नहीं जानता है कि चोरके घर चोर ही मेहमान आया है। इतना ही क्यों, कराचीसे १ मईको अपनी प्रजाके नाम सन्देश प्रसारित करते हुए राष्ट्रपति अयूबने कहा—"पाकिस्तानके विरुद्ध भारतकी धमकी-से आम और पूर्ण युद्धकी सृष्टि हो सकती है। अब भारतने हमें अपनी इच्छानुसार युद्ध-क्षेत्रमें आक्रमणकी धमकी दी है। हमपर नग्न आक्रमण करनेका अभियोग लगाया गया है, लेकिन यदि हमें आक्रमण ही करना होता तो हमने इससे अच्छा क्षेत्र चुना होता। कच्छके रणके दलदलको कभी भी हम आक्रमणका स्थल नही चुनते।" अयूब साहबके इस भाषणका अगर पोस्टमार्टम किया जाये तो ये तथ्य सामने आते हैं—(१) युद्ध हो ही यह नक़्शा उनके दिमाग़में साफ़ है। (२) आक्रमण कहाँ-कहाँ

भारत—अब किपलिंगके वंशजोंकी नज़रमें

जिन विदेशी पत्रालोचकोंको भारतकी अहिंसा, शान्ति और तटस्थ राजनीति समझमें नहीं आती थी और इसीलिए जो भारतको मात्र वचनशूर और कायर समझते रहे उन्होंने भारत-पाक युद्धमें भारतकी सामर्थ्य देखकर अब अपना विचार बदलना शुरू कर दिया है। एक विदेशी राजदूतने दिल्लीमें अपना मत व्यक्त किया :

"अभीतक तो स्थिति यह थी कि जहाँ 'इण्डिया' शब्दको (सिक्केकी तरह) मशीनमें डाला, फ़ौरन ही मशीन उगलती थी : 'इण्डिया अर्थात् महाराजे, साँप, बेशुमार बच्चे, बेशुमार गायें, नंगी टाँगों-वाले हिन्दू।' लेकिन अब दुनियाके सामने यह स्पष्ट हो गया कि, अब भारत एशियाकी एक ऐसी ताक़त होने जा रहा है जो अपने ही बलपर अपनी महत्ता स्थापित करेगा।"

०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय ज्ञानपीठकी
एक और महत्त्वपूर्ण प्रस्तुति

जुलूस

फणीश्वरनाथ रेणु

'रेणु' की यह कृति 'जुलूस' अपूर्व तो कैसे कही जाये, पर अनूठी इसे मानना पड़ेगा। एक लघुकाय उपन्यासपर विशाल अन्तरंग, गझिन, शक्तिशाली और सारा कथानक सामयिक :घटनाओंकी दृष्टिसे भी महत्त्व-पूर्ण और मूल्योंकी दृष्टिसे भी। शैली-शिल्प 'रेणु' के अपने : पहलेसे अधिक प्रौढ़, मँजे-निखरे, प्रभावपूर्ण। कथानक सीधा-सा है, कला उसका उपयोग करनेकी है। इसके माध्यमसे हिन्दी पाठक देखेंगे कि प्रान्तीय भाव-भेद कितने भी वास्तविक लगें, यथार्थ जीवनके सन्दर्भमें उनका अस्तित्व क्षीण हुए बिना नहीं रहता। प्रस्तुत है इस दिशामें यह 'रेणु'का सफल रचना-त्मक प्रयत्न।

मूल्य ३.५०

●

सभी अच्छे पुस्तक विक्रेताओंसे प्राप्त करें

●

भारतीय ज्ञानपीठ
९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७
३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६
दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी-५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया जाना है यह वे सोच चुके हैं। यह बात वे जोड़-घटा चुके हैं कि कौन-सी जगह आक्रमणके लिए बेहतर है या कौन-सी जगह आक्रमण शुरू करना है। (३) यह भी इससे स्पष्ट है कि वे युद्धके लिए मौक़ा ढूँढ़ रहे हैं।

इतना ही नहीं पश्चिम पाकिस्तान-बार्डरका अवलोकन करते हुए अयूब साहबने १८ मई-को यह कहा था—"पाकिस्तान भारत-सहित सभी पड़ोसियोंके साथ शान्ति-सहित रहना चाहता है। हम कोई युद्ध नहीं करना चाहते। ""पाकिस्तानी सेना अब पूरी तरह तैयार है। एक बार ही भारत अगर आक्रमण कर दे तो हम सशस्त्र लड़ाई लड़ेंगे और फ़ैसलेके लिए लड़ेंगे। भारत और पाकिस्तानके बीचका युद्ध दोनों देशोंको नष्ट कर देगा।" इन पंक्तियों-का तो और भी स्पष्ट अर्थ है कि सँभलो, तुम बुद आक्रमण कर दो नहीं तो हम आक्रमण कर देंगे। पाकिस्तानने किया भी यही। जब भारतने आक्रमण नहीं ही किया तो वे कब-तक अपनी सेनाको सीमापर पुलाव खिलाते रहते! देग है तो खिचड़ी सलामत है और लड़नेवाले लड़ें अल्लाहने आदमी औलादमन्द बनाया है। ऊपरवाले निरीक्षणके ठीक एक सप्ताह बाद २५ मईको बियारबेटमें पाकिस्तानी भारतसे उलझ पड़े। उसी महीनेका यह समाचार है – "पाकिस्तानी सैनिक केवल सीमाक्षेत्रपर ही जमा नहीं हो रहे हैं बल्कि उनके गुप्तचर नित्य भारतीय क्षेत्रमें प्रवेश कर सामरिक महत्त्वके स्थानोंकी जाँच कर रहे हैं। ज्ञात हुआ है कि गत सोमवारको पाकि-स्तानके राष्ट्रपति स्वयं ढाकासे एक हेलीकाप्टर-पर सवार होकर ज़िला चौबीस परगनाके यशोहर नामक स्थानपर उतरे और कुछ समय तक वहाँ रहकर उसकी स्थिति आदिका अध्य-यन किया तथा मानचित्रसे मिलाया।" और फिर दो जूनको चीनके प्रधान चाउ–एन–लाई रावलपिण्डी पहुँचे। वहाँ पहुँचकर अल्जीयर्स में एक नये क़िस्मकी खिचड़ी पकानेकी विधि-पर विचार-विमर्श हुआ, दुश्मनोंके बारेमें ख़ैर-ख़बर पूछी गयी, दोस्तीके जाम टकराये गये।

५ अगस्तको मुजाहिदोंको मज़हबके लिए उकसाकर जम्मू भेज दिया। कहा यह कि जुम्मेकी नमाज़ जम्मू जमकर पढ़ना। जिस तरह १९४७ में किया गया था ठीक वैसा ही इस बार भी किया गया। अन्तर यह रहा कि इस बार तैयारी पूरी थी। अयूब साहबने समय निकालकर हिटलरकी जीवनी भी पढ़ ली इस बीच कि शान्तिप्रिय देश लड़ाईके नामसे भी घबराते हैं, उन्हें घुड़कियोंसे ही डरा देना चाहिए। इसी फ़ार्मूलेका प्रयोग पाकि-स्तानने भारतपर किया। यहाँ पाकिस्तानका कम्प्यूटर फ़ेल हो गया उसे यह तो मालूम था कि एक और एक दो होते हैं लेकिन यह नहीं मालूम था कि एकपर एक ग्यारह भी होते हैं। उनके बेतार बेबात–झूठ बोलने लगे। एक बार सदाए कश्मीर रेडियोसे यह प्रसारित हुआ था—सन् ६२ में चीनने भारत-के नेफे (नेफानामक सीमान्त) में हाथ डाला था और इस बार पाकिस्तानने उसका कच्छा (कच्छ) पकड़ लिया।" ऐसा लेखा-त्मक और सानुप्रासिक भाषा चारण और भाट भी शायद जानते हों। पाकिस्तानको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय ज्ञानपीठ
द्वारा प्रकाशित

युद्ध
सम्बन्धी दो उपन्यास
देशके वर्तमान वातावरणमें
सर्वथा पठनीय

• •

रक्तराग
देवेश दास

राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसादजीके शब्दोंमें यह पुस्तक सामरिक पृष्ठभूमिपर उपन्यासके रूपमें लिखी गयी है। सैनिक-जीवन सर्वसाधारणके लिए एक प्रकारसे रहस्य बना रहता है। इसमें उस जीवनपर प्रकाश डाला गया है। मेरी आशा है कि इससे देशको और विशेषकर हमारे सैनिकोंको कुछ मार्ग-दर्शन मिलेगा और सच्चे सैनिकका आदर्श उनके सामने आयेगा। ३.००

• •

पलासीका युद्ध
तपनमोहन चट्टोपाध्याय

देशके इतिहासको एक मोड़ देनेवाले इस युद्ध और उसकी पृष्ठभूमिका सर्वप्रथम प्रामाणिक चित्रण, जो तथ्यात्मकताके बलपर इसे इतिहास-पुस्तक बनाता है और कथा-रसके कारण उपन्यास। महत्त्वपूर्ण होनेसे मूल बंगला पुस्तकका अँगरेज़ी अनुवाद भी हुआ। ३.५०

प्राप्तिस्थान: भारतीय ज्ञानपीठ, ३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरे खूब मिला यानी पब्लिसिटी खूब मिली। चीनीने उसे सिखाया था कि एक ही झूठको दस बार बोलोगे तो वह सच मान ली जायेगी। उसने इस फ़ार्मूलेका पथ्यकी तरह पालन किया। बी० बी० सी० विश्वस्त हो गया कि अब कश्मीरको भारत बचा नहीं सकेगा। १ सितम्बरको जब टैंकों, तोपों, वायुयानोंकी खुली लड़ाई छिड़ गयी, तो हितचिन्तकजी लन्दनसे बोले थे कि संयुक्त राष्ट्रसंघको शान्तिके लिए हर क़दम उठाना चाहिए और अगर संयुक्त राष्ट्रसंघ ऐसा न कर पाया तो फिर ब्रिटेन कुछ करेगा। आश्चर्यकी बात है कि यहाँ भी जोड़-बाक़ी फ़ेल हो गयी। ब्रिटेन चाहता था कि भारत पाकिस्तानके तीन सूत्र मान ले—कि युद्ध-विरामसे पहले कश्मीर विवादको हल कराये जानेका आश्वासन मिले, अगले तीन महीनेमें मतगणना हो और सारी सेना ५ अगस्त वाली स्थिति पर लौट जाये। लेकिन भारतने तीनों सूत्र अस्वीकृत कर दिये। किसी भी देशकी प्रभुत्व-सत्ताके लिए ऐसी बातें स्वीकार्य हो ही नहीं सकतीं। पाकिस्तानने कभी नहीं सोचा था कि भारत गोलीका जवाब गोलीसे देगा। हम लोग १८ वर्ष तक चुप रहे हैं, यहाँ तक सोचते रहे हैं कि कौन मुँह लगे लेकिन इस बारकी बदतमीज़ीने सारा धैर्य समाप्त कर दिया। यह तो अन्तर-राष्ट्रीय सिद्धान्त है कि अच्छेके साथ अच्छाईसे पेश आया जाता है लेकिन यह भी अन्तर-राष्ट्रीय सिद्धान्त ही है कि किसी ग़लत तत्त्वको इस हद तक बर्दाश्त न किया जाये कि वह मुफ़्तमें गलेका हार हो जाये। हमलावर पाकिस्तान है लेकिन राष्ट्रसंघने मूल बिन्दुसे अलग हटकर इसी बातपर ज़ोर दिया कि पहले युद्ध-विराम हो। हमने सहर्ष इसे स्वीकारा क्योंकि हमारा उद्देश्य पाकिस्तानके भ्रमको दूर करना था और २२ दिनके घमासानमें हम वह काम कर चुके थे। पाकिस्तानकी उधार आयी सैनिक-शक्ति जब बुरी तरह कुचल दी गयी तो पैटन और सैबरजेटपर रिसर्च होने लगा। ऊ-थाँ दौरेपर आये और पाकिस्तानने युद्ध-विरामके लिए तीन शर्तें प्रस्तुत कीं जब कि भारतने बिना शर्त युद्ध-विरामके लिए स्वीकृति दी थी। इसका अर्थ यह लिया गया कि भारत और पाकिस्तान दोनों ही शान्ति चाहते हैं लेकिन दोनोंको अपनी-अपनी शर्तें हैं। मतलब साफ़ है कि राष्ट्रसंघ दोनोंको एक ही लाठीसे हाँकना चाहता है। शायद हमारे सोचनेमें ही ग़लती है जो हम राष्ट्रसंघको न्यायालय समझ बैठे हैं। हम भूल कर रहे हैं—पाकिस्तान डलेसके शब्दोंमें : 'बॉय विद ब्ल्यू आईज़' है और आज अमेरिका उसे 'लिटिल गाई' कहकर प्यार करता है। बी० बी० सी० से युद्ध-विरामके दिन अयूब साहबके फ़ेस सेविंगके लिए उर्दूमें एक कार्यक्रम प्रसारित होता है—करेक्ट स्टेण्ड ऑफ़ पाकिस्तान। ये सब कन्सेशन पाकिस्तानको मिले हैं। प्रेसिडेण्ट जॉनसन अगर कराचीमें एक ऊँटवालेपर मुग्ध होकर उसे अमेरिका-यात्राका निमन्त्रण दे सकते हैं तो पाकिस्तानकी स्ट्रेटेजी किसी ऊँटसे अधिक महत्त्वपूर्ण है ही। भले उसकी करवट ऊँटवाली ही हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

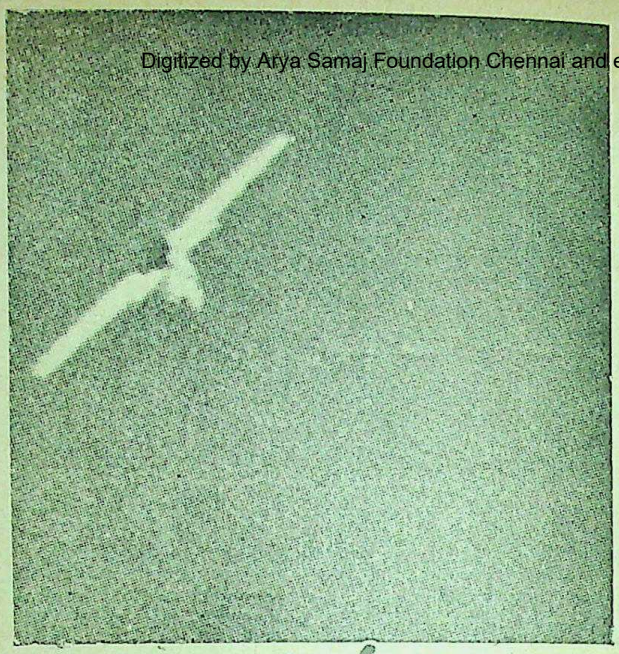

चंगेज़शाही

नादिरशाही

अयूबशाही

दरिन्दगीके फैले हुए डैने····बरबरीयतके फेफड़ोंमें तबाहीकी साँसें····इनसानी मज़हबके नामपर हैवानी जिहादकी ख़ूँख़ार उड़ान····पुरअमन आसमानमें उड़ारी भरता हुआ यह हौलनाक़ सैबरजेट····गोया चंगेज़, नादिर या हिटलरकी रूह····तानाशाहोंकी परम्परामें जुड़ी एक नयी अयूबी कड़ी !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

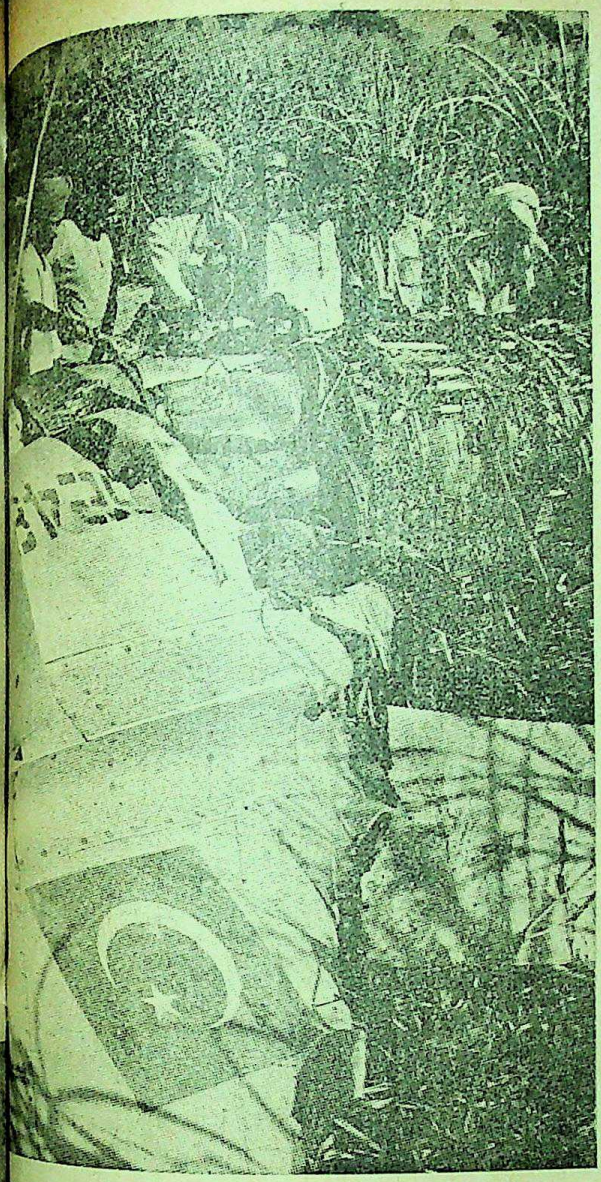

शान्तिप्रिय भारत-के आकाशपर जब यह रूह उड़ आयी तो हमारे रक्षकोंने इसे बींध गिराया। मगर....

उड़ने और गिरकर पाश-पाश होनेके बीचको चन्द मनहूस घड़ियोंमें ही शैतान-की यह रक्तप्रिय जिह्वा इनसानको हँसती-किलकारती ज़िन्दगीको किस क़दर चाट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

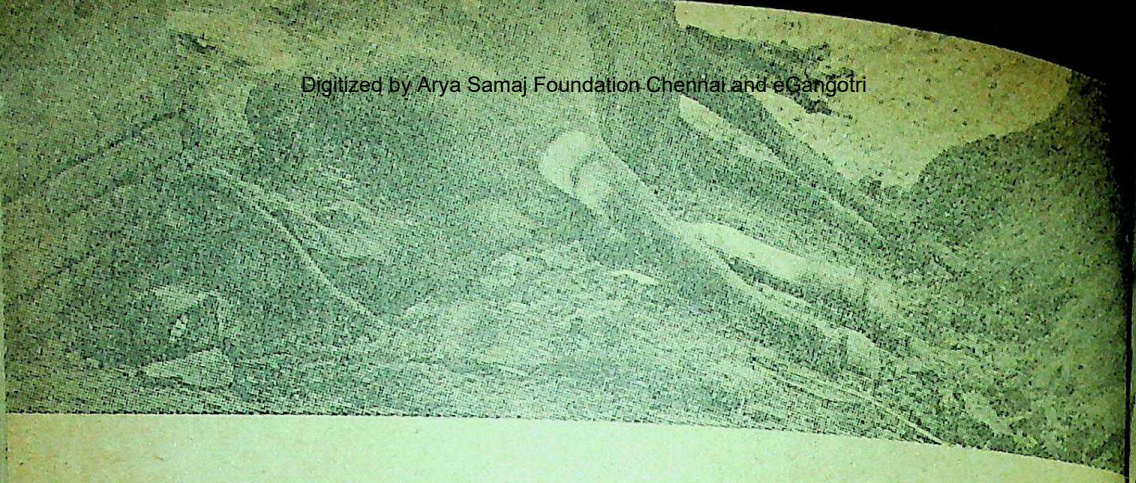

गयो, इसका अन्दाज़ा नहीं लगाया जा सकता। चहकते-लहकते जीवन-स्पन्दन सो गये···सौन्दर्य भस्म हो गया····उम्मीदें दफ़न कर दी गयीं····'खुदाके बन्दों'ने मख़लूक़-

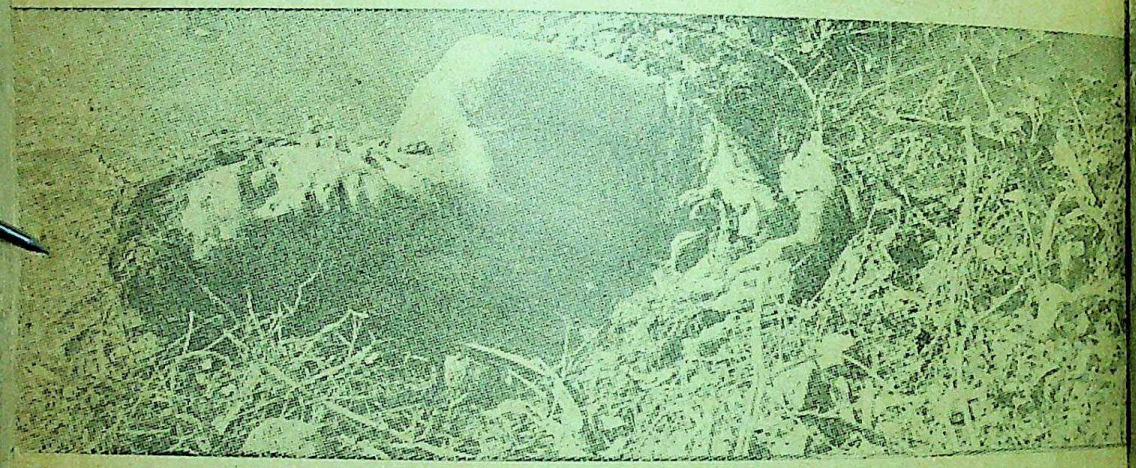

ए-ख़ुदापर जुलमतोंका क़हर ढा दिया····'इसलामके पाबन्दों'ने इस लाममें हर पाबन्दीको बाला-ए-ताक़ रखकर इनसानियतके चेहरेपर जो कालिख़ पोत दी है, वह

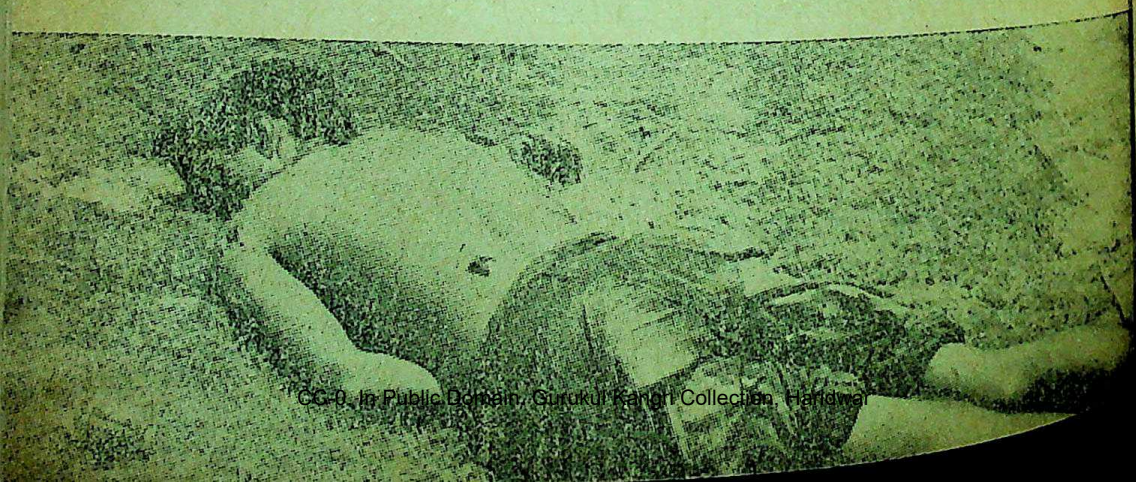

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

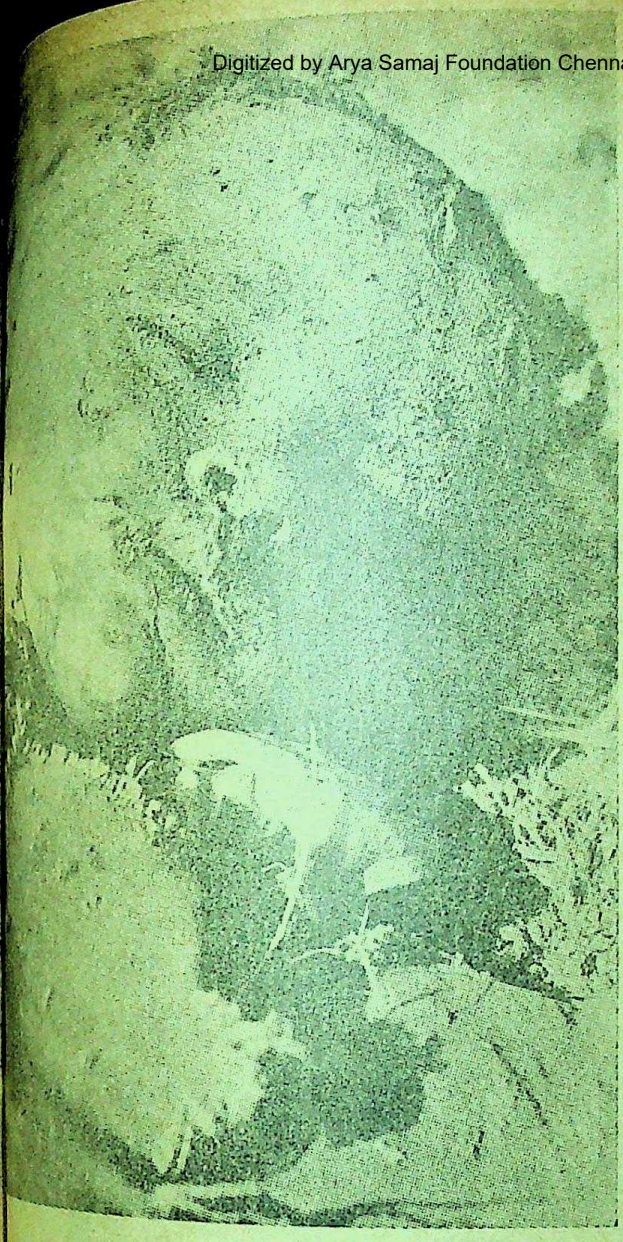

अब खुद खुदा भी
नहीं पोंछ सकता।

यह दुरुस्त है
कि हम अमन पसन्द
हैं ·· यह सही है कि
हम अहिंसामें विश्वास

रखते हैं····मगर अहिंसा कायरोंकी ढाल नहीं होती····बहादुरोंको उस तलवारका नाम अहिंसा है जो अपने हक़की हिफ़ाज़तमें उठती है। अहिंसा वह तोप है जो स्वर्गके सिंहद्वारपर गड़ी है ताकि नर्कके हिंस्र एवं रक्तपिपासु घुस-पैठ न करने पायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

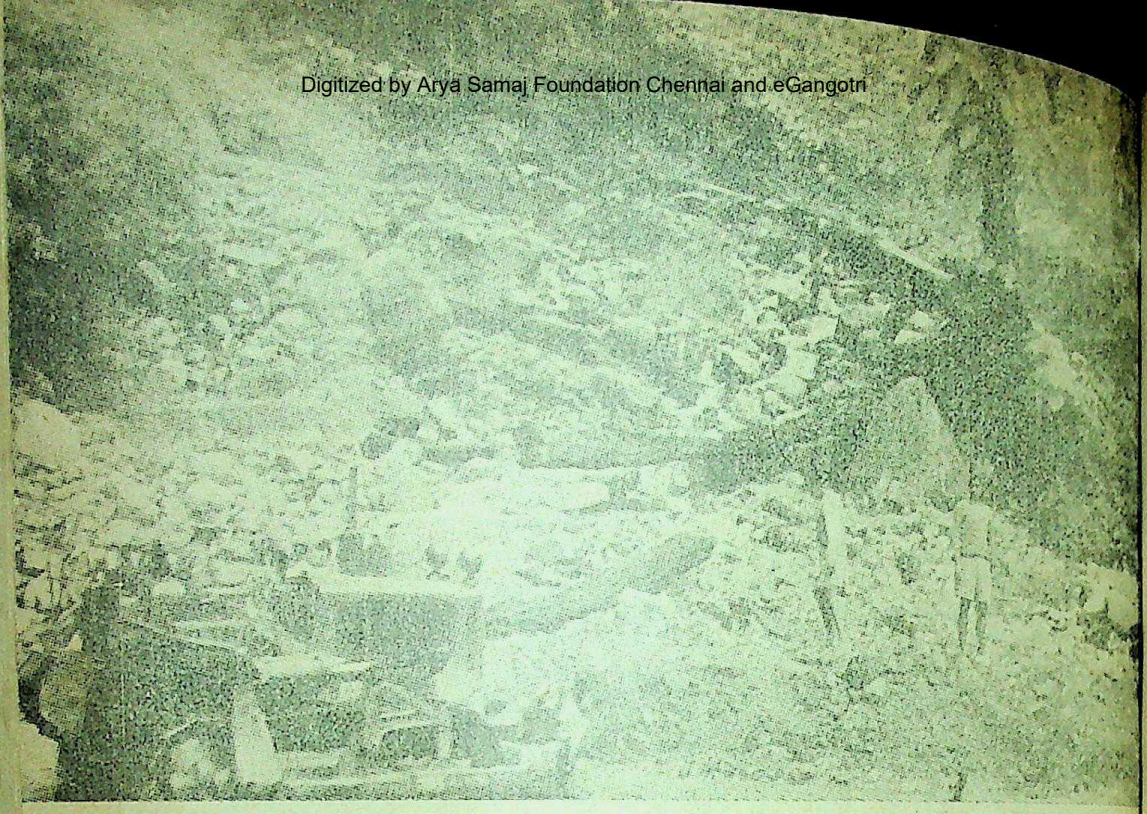

हमारे सीमान्तोंके सजग प्रहरी सँजोये है हमारे नेहकी अनचुक पूँजी····शुभ-कामनाओंके मंगल-कवच····और देशकी मिट्टीकी नशीली महक उनके जवान फेफड़ोंमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

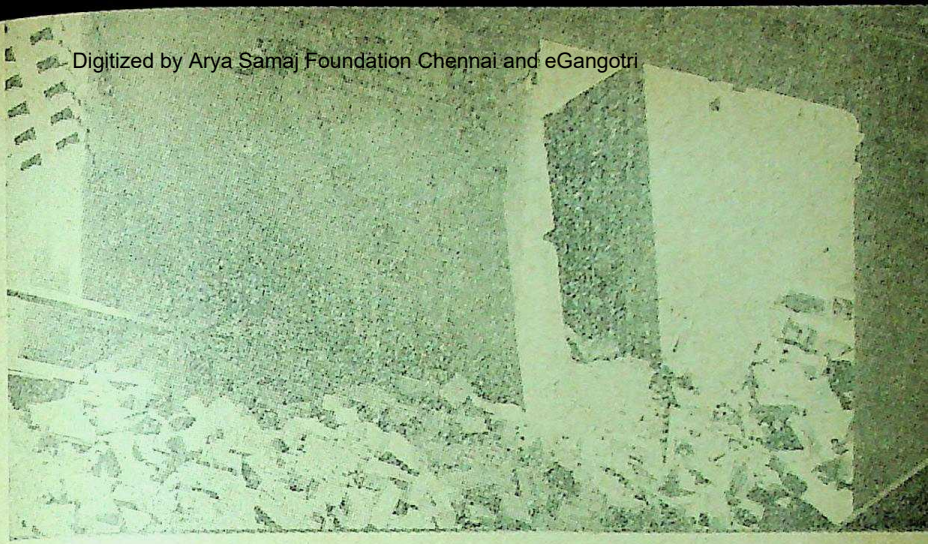

जोश भरे दे रही है''''मानव-कल्याण और विश्वशान्तिके सपनेपर पड़नेवाले मनहूस साये को सदाके लिए हटा देनेका मज़बूत इरादा इनकी नस-नसमें रसमसा रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

15

चंगेज, नादिर और हिटलरकी नस्लके जंगखोर अयूबका भी ठीक अपने पिदरों-जैसा ही हश्र होनेवाला है।

रही भारत और पाकिस्तानकी भाई-चारे और समस्या-सुलझावकी बात तो वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगलानीके शब्दोंमें तभी सम्भव हो पायेगी जब पाकिस्तानकी अगली पीढ़ी इस पीढ़ीकी जगह ले लेगी, क्योंकि वही लोग हमारी बातको ठीक-ठीक समझ पानेकी स्थितिमें होंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानकार लोग अब सीज़र्स में एक नया मज़ा पा रहे हैं

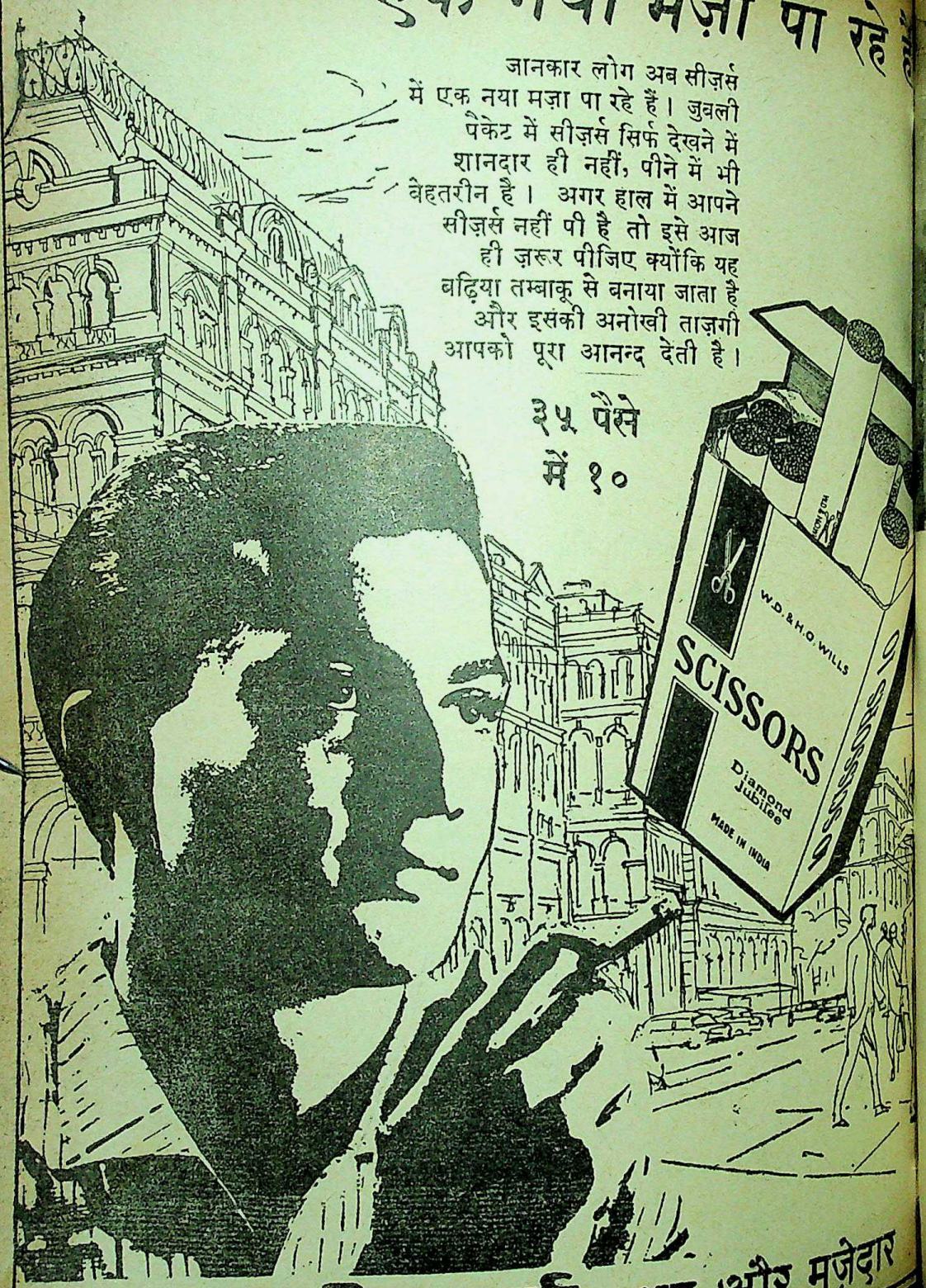

जानकार लोग अब सीज़र्स में एक नया मज़ा पा रहे हैं। जुबली पैकेट में सीज़र्स सिर्फ देखने में शानदार ही नहीं, पीने में भी बेहतरीन है। अगर हाल में आपने सीज़र्स नहीं पी है तो इसे आज ही ज़रूर पीजिए क्योंकि यह बढ़िया तम्बाकू से बनाया जाता है और इसकी अनोखी ताज़गी आपको पूरा आनन्द देती है।

३५ पैसे में १०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सीज़र्स अब और मज़ेदार

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

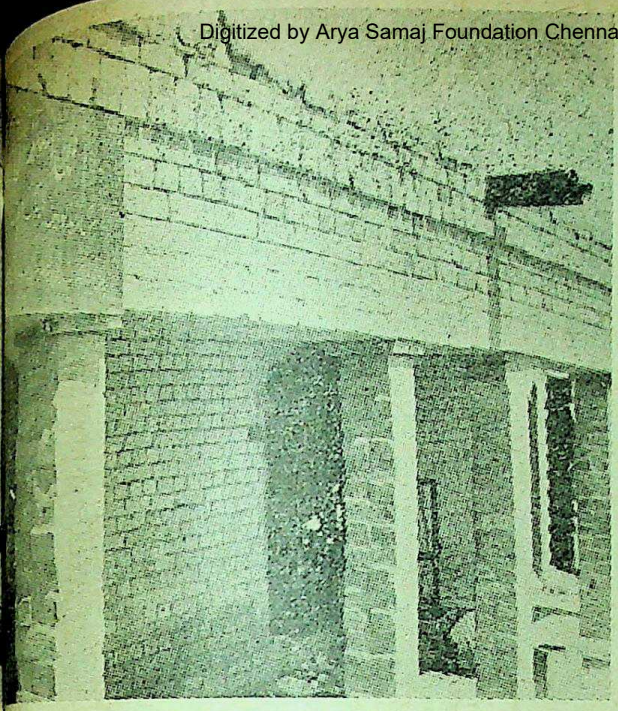

अहमद सलीमके दोस्त अज़ीमुल्लासे मिलनेसे पहले पाकिस्तानी सीमाके ६ मील अन्दर वर्कीके बाज़ारको देखिए, जहाँ 'मुहम्मद असलम वर्की रेडियो एण्ड इलेक्ट्रिक सर्विस'का सूना बोर्ड ८० वर्षके बूढ़े नबीबख़्शाकी कहानी सुना रहा है जिसे बर्बर पाकिस्तानी यह कहकर अकेला छोड़ गये थे कि इसका बोझ कौन उठाये···

जब-जब ऐसी चुनौतियाँ आयीं

अहमद सलीम

"जबतक हमारे दुश्मन हमें उठाकर समुद्रमें फेंक न दें, हम हार न मानेंगे। हिन्दुस्तानकी हिफ़ाज़तके लिए मैं अकेला लड़ूँगा। उस वक़्त तक लड़ूँगा जबतक मेरे हाथोंमें सकत और मेरे बदनमें ख़ूनकी एक बूँद भी बाक़ी है। मैं अपनी ये आवाज़ देशके कोने-कोने तक पहुँचाना चाहता हूँ कि फिर कभी ऐसा वक़्त आ जाये कि हिन्दुस्तानकी हिफ़ाज़तके लिए इससे भी कड़ी जंग लड़नी पड़ जाये तो किसी सूरतमें हथियार न डालें। पहाड़ों और जंगलोंमें, मैदानों और दरियाओंमें जंग जारी रखें।····"

यह मेरे दोस्त अज़ीमुल्लाके उस ख़तका एक हिस्सा है जो उसने आजसे दो बरस पहले हिमालयकी घाटीसे उस समय लिखा था जब चीनी लुटेरोंने हमें ललकारा था। और उस ललकारपर देशके दूसरे जवानोंके साथ अज़ीमुल्ला भी अपने जवान इरादोंकी दीवार बनकर दुश्मनके सामने खड़ा था। इस पत्रके बाद मुझे उसका दूसरा कोई पत्र नहीं मिला। हाँ, उसके कुछ दिन बाद अज़ीमुल्लाकी छोटी बहन रज़ियाने मुझे बताया था कि उसके भैया दुश्मनोंसे लड़ते हुए देशके काम आये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं इस बीच कई बार अज़ीमुल्लाको याद कर चुका था। और आज जब संकटकी वही घड़ी आ पड़ी है तो मुझे फिर आज उसकी याद आ रही है। अज़ीमुल्लाकी यादका एक और भी कारण है: कल शामको रज़िया आयी थी। और उसने मुझे अपनी बड़ी ही प्यारी आवाज़में 'साक़ी फ़ारूक़ी' की उर्दू कविता 'जंग' सुनायी थी। और जब 'अख्तरुल ईमान'की इसी विषयपर लिखी गयी कविता सुनाने लगी तो मुझे ऐसा लगा था जैसे कोई चीज़ अन्दर-ही-अन्दर टूटकर रह गयी है। एक सुलगता हुआ प्रश्न था जो ज़ेहनको झुलसाये दे रहा था :

दहक़ान सँवारता है मिट्टी
चुन-चुन के बिखेरता है दाने
और सोचता जा रहा है जी में
फिर आयेगी जंग आज़माने ?

और जब मेरी भी सोच, चिन्ताके इस मोड़पर जा पहुँची थी कि :

इसलिए क्या उगा करेंगे
ये नर्म पौधे, ये नर्म शाख़ें
कि इनको एक रोज़ हम उठाकर
ख़िज़ाँ की आग़ोश में सुला दें ?

तो रज़ियाने बड़े प्यारसे मुझसे कहा था कि "शान्ति तो गेहूँके खेत हैं और सफ़ेदेके पेड़, दुलहनका आँचल है और बच्चोंके हँसते हुए हाथ। शान्ति तो शायरकी क़लम है और चित्रकारकी तूलिका। और आज़ादी इन सब गुणोंकी ज़मानतदार है और ग़ुलामी इन सब गुणोंकी ध्वंसक है। और जिससे आदमी और जानवरमें फ़र्क़ होता है।"

और मैं रात ही इस बातकी तह तक पहुँच गया था कि वह क्या कहना चाहती है। और मैंने रज़ियाको तसल्ली दी थी कि आज़ादीकी हिफ़ाज़त तो उस समय तक की जाती रहेगी जबतक बदनमें ख़ूनकी एक बूँद भी बाक़ी है। रज़ियाको मेरी बातोंसे तसल्ली हो गयी थी और वह 'ख़ाके-वतन का मुझको हर ज़र्रा देवता है' गुनगुनाती हुई बाहर निकल गयी थी। और मैं सोच रहा था कि आज ही तो नहीं, हर युगमें दो शक्तियाँ एक दूसरेसे टकराती रही हैं। एक शक्ति है न्यायकी और दूसरी अन्यायकी। एक शक्ति है अच्छाईकी और दूसरी बुराईकी। एक शक्ति है उजालेकी और दूसरी अँधेरेकी। और ये न्याय और अन्याय, अच्छाई और बुराई, उजाले और अँधेरे एक दूसरेसे उलझते ही रहेंगे, पर आज, इस युगमें इन शक्तियोंके टकरावमें फ़र्क़ भी है। आज इस युगमें, युद्धका अर्थ केवल दो क़बीलोंका ख़ून-ख़राबा नहीं है और न ही शान्तिका अर्थ है इस ख़ून-ख़राबेका अन्त। आज तो युद्ध और शान्तिका अर्थ है—इस धरतीपर फैली हुई सारी मनुष्य जातिका जीवन और मरण।

हमें ज़िन्दगी प्यारी है पर क्या किया जाये कि हमने इस ज़िन्दगीके लिए मरना भी तो सीखा है।

रज़ियाने मुझसे कहा था कि उसके भाईके उन पत्रोंपर आधारित एक लेख लिख दूँ जो उसने मुझे जंगके मैदानसे लिखे थे। तो मुझे अज़ीमुल्लाकी वह बात याद आ गयी है जो उसने मोर्चेपर जानेसे एक घण्टा पहले अपनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहन रज़ियासे कही थी कि :

"मैंने सुना है, तुम दुआ करती हो कि मुझे मोर्चेपर न भेजा जाये। पगली, फ़ौज तो मेरा घर है। क्या तुम चाहती हो कि मैं बेघर हो जाऊँ।"

और मैं सोचता हूँ, मुझे अज़ीमुल्लाकी कहानी ज़रूर लिखनी चाहिए। अज़ीमुल्ला, जिसने अपनी बहनकी ऑटोग्राफ़-बुकपर लिखा था :

"तेरे जीवन के सबसे प्यारे क्षण वह हैं
जो देश की भलाई में ख़र्च हुए हों।"

लेकिन मैं किस-किस अज़ीमुल्लाकी कहानी लिखूँ ? अज़ीमुल्ला, जो महारानी झाँसीकी फ़ौजका तोपची था और जिसने क़िलेकी दीवारसे दुश्मनोंके दाँत खट्टे कर दिये थे। और मरते हुए जिसकी ज़बानपर केवल एक ही शब्द था—"वतन ! मेरे वतन !!"

कहा जाता है कि नादिरशाहने जब हिन्दुस्तानपर आक्रमण किया तो उससे पहले उसने दिल्लीमें मुहम्मदशाह रंगीलेके दरबारमें एक राजदूत भेजा था। और राजदूतने बादशाहको जब नादिरशाहका ख़त पेश किया तो उसने ख़त पढ़कर बड़ी बेपरवाहीसे उस ख़तको शराबके प्यालेमें डुबो दिया था। और बादशाहने ग़ुस्सेमें कहा था :

"हूँ ! नादिर क़ुलीका ख़त ! एक गड़ेरियेकी हिम्मत ! इस नालायक़ एलचीको क़ैदमें सड़ा दिया जाये।"

और राजदूत क़ैदमें डाल दिया गया तो मुहम्मदशाहकी फ़ौजका एक सिपाही आगे बढ़ा था और उसने बादशाहके सामने झुककर कहा था, "हुज़ूर ये आपने क्या किया ?" बादशाहके पाँव नशेमें डगमगा रहे थे। उसने सरसे पाँव तक सिपाहीको देखा। बादशाहका चेहरा क्रोधसे लाल हो रहा था और सिपाही आँखें झुकाये खड़ा था। बादशाहके होठ काँपे और दूसरे ही क्षण वह सिपाही भी ईरानी राजदूतके साथ क़ैदमें पड़ा था। और जब नादिरशाहने दिल्लीकी मसजिदमें बैठकर 'क़त्ले-आम' का हुक्म दिया और नादिरशाहके ईरानी सिपाही दिल्लीके बेगुनाह नागरिकोंके ख़ूनसे होली खेलने लगे तो क़ैदमें पड़ा अपना सिपाही क्रोधसे काँपने लगा। बेड़ियाँ तोड़कर बाहर निकला। और उसकी लोहेकी बेड़ियाँ ईरानी दुश्मनोंके सरोंपर मौत बनकर गिरती रहीं। अब वह समय न था जो वह सिपाही अपने बादशाहके सामने जाकर कहता—"हुज़ूर देखा आपने, अपनी एक ग़लतीकी सज़ा !" और जब लाखों बेगुनाह शहरियोंके साथ यह सिपाही भी अपनी छातीपर तलवार खाकर सोया तो उसके हाथमें मिट्टी थी जिसे उस सिपाहीने मरनेसे पहले चूमा था···और उस सिपाहीका नाम अज़ीमुल्ला था !

और फिर सुलतान नासिरुद्दीनका सेनापति अज़ीमुल्ला भी तो था। जिसके दादा अफ़ग़ानिस्तानसे आकर दिल्लीमें आबाद हो गये थे; और जो अरबी, फ़ारसी और संस्कृतके विद्वान् थे। और जिन्होंने महरोलीके पास एक मदरसा खोला था जहाँ वह मुसलमान, हिन्दू और जैनी बच्चोंको पढ़ाया करते थे। और जिनका कहना था कि "मैं ख़ानदानी मज़हबको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताक़तका जवाब ताक़तसे

बर्लिनकी समस्याका ज़िक्र जब इण्डोनीशियाके सुकर्णने अपने एक ख़तमें किया तो कैनेडीने उत्तरमें लिखा :—

"अल्टीमेटम और धमकियाँ देकर अगर कोई हमसे समझौतेकी बातचीत करना चाहेगा तो हम बात नहीं करेंगे। दूसरे, यह बात बहुत साफ़ है कि किसी बातचीतका विषय यह नहीं हो सकता कि हम अपनी किसी ज़िम्मेदारीको छोड़ बैठें या उस ज़िम्मेदारीको पूरा करनेके लिए हमने जो नीति अपनायी है उसका परित्याग करें। अगर हमारे ख़िलाफ़ कोई अपनी ताक़त आज़माना चाहता है तो आये, हम ताक़तका जवाब ताक़तसे देंगे।"

०

नहीं मानता। मैं तो उस मज़हबको मानता हूँ जो आदमीको आदमी बनाये और बस।"

और जिन्होंने कभी कहा था : "हिन्दुस्तान मेरा वतन है, मैं इससे मुहब्बत करता हूँ। मैं तुमसे कहता हूँ—तुम भी इससे मुहब्बत करो कि हिन्दुस्तान शरीफ़ आदमियोंकी बस्ती है।"

और शरीफ़ोंकी इस बस्तीपर कोहिस्तानियोंने जब आक्रमण किया तो उन्होंने मदरसा बन्द किया और फ़ौजकी सफ़ें ठीक करने लगे। लोगोंने कहा—"आप आलिम हैं, जंग आपसे न लड़ी जायेगी।"

"ये सही है।" अज़ीमुल्लाका जवाब था—"लेकिन इल्मने मुझे हर कामका आदी बना दिया है और जंग भी एक काम ही है।"

और जिन्होंने दुश्मनका मुक़ाबला करनेके पहले अपनी फ़ौजके जवानोंसे कहा था :

"बहादुरो,

भागनेका रास्ता कहाँ है। समुद्र तुम्हारे पीछे है और दुश्मन तुम्हारे आगे। देखो, यहाँ तुम उन यतीमोंसे भी ज़्यादा बुरी हालतमें हो जिन्हें कमीनोंके घरोंमें कोई पूछनेवाला नहीं होता। दुश्मनने अपनी फ़ौज, अपने हथियार और खाने-पीनेके ढेरों सामानके साथ तुम्हारा स्वागत किया है। और अब तुम्हारे लिए शरणकी कोई जगह है तो वह तुम्हारी अपनी तलवारोंमें है। और तुम्हारे पास खाने-पीनेका कोई सामान है तो वह जिसे तुम अपने दुश्मनोंसे छीनोगे। अपनी जानोंकी बाज़ी लगा दो, दिलेरो!"

और मैं सोच रहा हूँ, किस अज़ीमुल्लाकी कहानी लिखूँ? आज तो देशका हर आदमी अज़ीमुल्ला है जिसकी मुट्ठीमें मिट्टी है और जिसे वह मरनेसे पहले चूमना चाहता है। जिसके होठोंपर केवल एक ही मधुर शब्द है—"वतन! मेरे वतन!!" और जिसने ज्ञान-विज्ञानकी मोटी-मोटी किताबें तह करके रख दी हैं और जिसका कहना है :

"जंग भी तो एक काम ही है।"

सो, मैं रज़ियासे पूछना चाहता हूँ कि मैं किस अज़ीमुल्लाकी कहानी लिखूँ? और फिर यह कि देशपर मर मिटनेवालोंके भी कोई नाम होते हैं कहीं। वह तो जब ऐसी घड़ी आती है तो बस मर मिटते हैं रज़िया!

■■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी के समीक्षा-साहित्य का
एक अभिनव
गौरव-ग्रन्थ

विवेक के रंग

सम्पादक — डॉ० देवीशंकर अवस्थी

'विवेकके रंग' अर्थात् महत्त्वपूर्ण समकालीन कृति-साहित्यपर प्रकाशित गणनीय समीक्षाओंका संकलन। अपने प्रकारकी प्रथम कृति : प्रौढ़ और प्रभावपूर्ण। जिन हिन्दी पुस्तकोंकी समीक्षाएँ संकलित की गयी हैं वे पिछले पन्द्रह वर्षोंके लेखनका एक बड़ी सीमा तक प्रतिनिधित्व करती हैं; और समीक्षाएँ तो, एक पुस्तकपर एक, चुनी वही गयी हैं जो पुस्तककी आन्तरिक सत्ताका उद्घाटन करती हों या फिर समीक्षा-सिद्धान्त या पद्धतिकी दृष्टिसे कोई नयी बात प्रस्तुत करें।

संकलनके माध्यमसे साम्प्रतिक साहित्यका, सभी पीढ़ियोंके समकालीन लेखनका, समग्र व्यक्तित्व भी सामने आ जाता है और समीक्षा-सम्बन्धी नये विवेक, नयी पद्धतिको भी संकेन्द्रित ढंगसे देखा जा सकता है।

मूल्य : सात रुपये

मूल्य ७.००

भारतीय ज्ञानपीठ
कलकत्ता • दिल्ली • वाराणसी
प्राप्ति-स्थान : ३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली–६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय ज्ञानपीठ
द्वारा
प्रकाशित

इतिहास पुरुष

कितने होते हैं कवि जिनके दृष्टिबोधमें दर्शन, इतिहास, जीवन तीनोंका उजाला समन्वित हो ! और कितनी ऐसी काव्य-कृतियाँ होती हैं जो काव्य और शिल्पका ही उदाहरण न हो, लघुमानवकी कुण्ठाग्रस्त चेतनामें यथार्थ जीवनबोधका ज्वार भी उठा सकें ! प्रस्तुत कृति 'इतिहास-पुरुष' यहीं विचारणीय होती सामने आती है। इसके 'प्राक्कथन' में श्री सुमित्रानन्दन पन्तने इसे 'नयी कविताका एक उत्कृष्टतम काव्य' माना है। और, उनके ही शब्दोंमें, इसके द्वारा कविने "इतिहासके अतल अकूल समुद्रका मन्थन कर अपनी दर्शनज्ञ दृष्टिसे जीवन-नवनीत स्वरूप जिस अक्षय तत्त्वको पाठकोंके हाथोंमें रख दिया है वह अपने आलोक, ऐश्वर्य, उपयोगिता तथा कवित्वमें चिरपुराण होते हुए भी चिरनवीन अभिव्यक्तिके सौन्दर्यसे आप्लावित है।"

सर्वथा पठनीय एवं संग्रहणीय काव्य-कृति

अपनी संचेतनामें 'इतिहास-पुरुष' उत्तर-अस्तित्ववादी युगके प्रारम्भकी सूचक रचना है जिसमें, निराशा और विभिन्न निषेधोंपर हावी होते हुए, जीवनकी मूल आस्थाओंके पुराख्यान और उज्जीवनका प्रयत्न है। क्या भाव-बोध और क्या भाषा, दोनोंमें ही ये रचनाएँ एक नितान्त मौलिक, सशक्त एवं समृद्ध संवेदनाको स्वरित करती हैं : ऐसी संवेदनाको जिसे किसी सामयिक आन्दोलनके कोलाहलमें खो जानेका या उसके उतार-चढ़ावसे प्रभावित होनेका भय नहीं है।

मूल्य ३.५०

डॉ० देवराज

प्राप्ति-स्थान : भारतीय ज्ञानपीठ, ३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युद्धान्तर

और युद्ध नया हो या पुराना

आस्टरलिज़ हो या वाटरलू
लाशों का ऊँचे से ऊँचा ढेर हो—
दफ़ना दो, और मुझे अपना काम करने दो!
मैं घास हूँ, मैं सबको ढक लूँगी।

और युद्ध का छोटा मैदान हो या बड़ा
और युद्ध नया हो या पुराना
ढेर ऊँचे से ऊँचा हो, बस मुझे मौक़ा भर मिले
दो बरस, दस बरस—और फिर उधर से

गुज़रनेवाली बस के मुसाफ़िर
पूछेंगे : यह कौन-सी जगह है ?
हम कहाँ से होकर गुज़र रहे हैं ?
यह घास का मैदान कैसा है ?

मैं घास हूँ
सबको ढँक लूँगी !

—कार्ल सैण्डबर्ग
(अमेरिका)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सिपाही की लाश

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह किस गोली से मरा ?
कौन जाने
वहाँ कहाँ पैदा हुआ था ?
कहते हैं जोवेलानों में
यह मिला कहाँ ?
सड़क पर मरा पड़ा था
साथियों ने देखा, उठा लिया
उसकी मिका आयी है, उसे चूम रही है
उसकी माँ आयी है, रो रही है
अफ़सर आया है—
'दफ़न करो इसे'
र-ट-टर-रट
वह मुर्दा सिपाही जा रहा है
र-ट-टरट-टरट
सिपाही का क्या महत्त्व
र-ट-टट-टट
सिपाहियों की कोई कमी है ?

—निकोलस गोलियन
(क्यूबा)

युद्ध के समय का एक गीत

धरती का दरवाज़ा
एक फूल खटखटा रहा है
माँ की देहरी पर
एक बच्चा खटखटा रहा है
बच्चे के साथ-साथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म लिया है बादल ने, धूप ने
फूल के साथ-साथ फूलते-फलते हुए

मुझे सुनाई देते हैं अट्टहास और तर्क-वितर्क

उन्होंने दुख को माप लिया है
कितना दुख एक बच्चा सह सकता है
इतनी ग्लानि बिना कै किये हुए
इतने आँसू बिना दम तोड़े हुए

मेहराबों के नीचे अनजान पगध्वनियाँ—
काली और भय से परिपूर्ण—
वे आ रहे हैं फूलों को उखाड़ फेंकने
बच्चेको कलंकित करने
दुख से और गहन पीड़ा से

—पाल इल्यार
(फ्रान्स)

आक्रामक हवाई जहाज़ों के आनेसे पहले

अगर सुबह खिले हुए ताज़े कमलों की छाया में
सोये हुए इन बच्चोंको भी अन्त में मरना है
अगर चाँद की छाया में खड़ी उस दीवार को गिरना है
तो ओ क़ब्रों के भेड़िये !
तुम कोई चीज़ साबित न छोड़ना, नहीं तो हमारा
दुख दुगुना हो जायेगा ।

कार्नेशन के फूल और खिड़की पर झूलती लतरें
कहती हैं हमें भूल जाओ !
तितलियाँ उड़ते-उड़ते मींगी घास पर पड़े
मुर्दों पर बैठ जाती हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ क़ब्रों के भेड़िये !
तुम गिरती हुई दीवारों का शोर
और उनमें कुचलते हुए बच्चों की चीत्कार सुनोगे ?
क्या तुम सुबह को भी—
कोहरे की क़ब्र में दफ़न कर दोगे ?

अगर इस पतझड़ के चाँद की छाया में
सभी चीज़ों को तुम ध्वस्त करने आये हो
तो कोई चीज़ साबित मत छोड़ना

याद रखो कि इन बच्चों को भी मत छोड़ना
जिन्हें देख कर गेहूँ की मासूम बालियाँ याद आती हैं।

इन दीवारों को भी मत छोड़ना
जो इतिहासों की याद दिलाती हैं।

इन सुबहों को भी मत छोड़ना जो
घायल बाँसुरियों की तरह सिसक रही हैं।

—आँटो द सोला
(वेनेज़ुएला)

प्रातःकाल

तुम मेरी निर्यात थीं, सब कुछ,
और फिर आया युद्ध, विध्वंस।
और कितने, कितने दिनों तक
न तुम्हारा अतापता, न कोई ख़बर
इतनों दिनों बाद
फिर तुम्हारी आवाज़ ने मुझे झकझोर दिया है
रात भर मैं तुम्हारा अभिलेख पढ़ता रहा हूँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महसूस हुआ जैसे कोई मूर्च्छा टूट रही हो

मैं चाहता हूँ लोगों में मिलना, भीड़ में,
भीड़ की प्रातःकालीन हलचल में—
मैं चाहता हूँ हर चीज़ की धज्जियाँ उड़ा देना
ताकि वे घुटने टेक दें

और मैं सीढ़ियों से नीचे दौड़ जाता हूँ
गोया उतर रहा हूँ पहली बार
उन बर्फ़ानी सड़कों में
उनके सूनसान फ़ुटपाथों पर
चारों ओर बत्तियों की रोशनी है, घरेलूपन है, लोग जाग रहे हैं
चाय पी रहे हैं, ट्राम पकड़ने दौड़ रहे हैं
बस महज़ चन्द मिनिट और
कि शहर की शकल बदल जायेगी।

बर्फ़ीला अन्धड़ एक जाल बुन रहा है
घनघोर गिरते बर्फ़का जाल, फाटक के पार।
लोग वक़्त पर पहुँचने की हड़बड़ी में
अधूरी थाली, अधूरी चाय छोड़ते हुए
मेरा मन उनमें से एक-एक की ओर से महसूस करता है
गोया मैं उनकी काया में जी रहा होऊँ
पिघलते बर्फ़ के साथ पिघलता हूँ मैं
सुबह के साथ मैं तेज़ पड़ने लगता हूँ

मुझमें हैं लोग—अज्ञातनामा लोग—
बच्चे, अपने घर में तमाम उम्र गुज़ार देने वाले लोग, वृक्ष।
मैं उन सबके द्वारा जीत लिया गया हूँ
यह मेरी एक मात्र जीत है।

—बोरिस पास्तरनाक
(रूस)

■ ■

(हिन्दी छाया धर्मवीर भारतीके संग्रहसे)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभी प्रकार के काग़ज़ों एवं बोर्डों के लिए
हम आपकी सेवा हेतु प्रस्तुत हैं।

मेसर्स
इण्डस्ट्रीज़

रोहतास
लिमिटेड

डालमियानगर

द्वारा निर्मित सामग्रियों के

अधिकृत विक्रेता

प्रहलादराय डालमिया एण्ड सन्स

५१, पोद्दार चेम्बर्स
फोर्ट, बम्बई–१

टेलीफ़ोन : कार्यालय
२५३११३ और २५४३६९
निवास : ५७२७२९

तार
PANQUICK

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ लतीफ़े

'चीनको सादर'

अक़्ल बड़ी कि भैंस ? भेड़
जिसकी लाठी उसकी भैंस भेड़
काला अक्षर भैंस बराबर
भेड़

। खा-खाकर

चौकीपर गश्तसे लौटे सिपाही बैठे हुए थे। एक जासूस चीनी भी साथ था जिसे वे पकड़ लाये थे।

बातें चलीं खानेकी।

'एकने कहा : 'लोग अजीब हैं, दाल-रोटी खा-खाकर भी बड़े-बड़े काम कर जाते हैं !'

दूसरा बोला : 'और ऐसा भी तो होता है कि माँस-मज्जा खा-खाकर भी लोग आराम फ़रमाते रहें।....'

तीसरेने उसकी बात काटी : 'और उन लोगोंकी बात तो सोचो जो केवल हवा खा-खाकर ही साँसें लेते हैं।'

पहलेने बात पकड़ी : 'लेखक—शायर खूब होते हैं मेरे यार, ग़म खा-खाकर वो-वो चीजें लिखते हैं कि वाह-वाह करते ज़बान थक जाये।'

दूसरेने चीनी बन्दीकी तरफ़ देखकर पूछा : 'और उस्ताद, तुम बतलाओ कि किस चक्कीका आटा खा-खाकर हिन्दुस्तानपर आक्रमण करने आये हो ?'

चीनो कुछ समझा नहीं। उससे फिर जब यही सवाल पूछा गया था तो धीरेसे बोला : 'अफ़ीम खा-खाकर !'

तीसरा सिपाही ज़ोरसे हँसकर बोला : 'और अब धक्के खा-खाकर वापिस पीकिंग पहुँच जाओगे !'

चीनी आत्मसम्मानसे बोला : 'नहीं।'

'तो क्या हमारी मारका तुमपर कोई असर नहीं होगा ?' पहले सिपाहीने पूछा।

'कभी नहीं।' उसने दृढ़तासे उत्तर दिया।

'क्यों ?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चीनीने गम्भीरतासे उत्तर दिया : 'क्योंकि मैंने अफ़ीम खा रखी है।'

■ सज़ा

किसी तरह गोले बरसनेवाला एक चीनी क़ैदमें आ ही गया। उसे पकड़कर पासवाली चौकीपर लाया गया। चीनीसे कमाण्डरने पूछा, 'तुम्हें क्या सज़ा दें ?'

चीनीने उत्तर नहीं दिया।

'तुम्हें गोलीसे उड़ा दिया जाये ?'

चीनी चुप रहा।

'या तुम आत्महत्या करना पसन्द करोगे ?'

उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

'या तुम्हारा काला मुँह करके एक गधे-पर बैठा दिया जाये ?'

चीनी तत्काल राज़ी हो गया। सिर हिलाते हुए उसने कहा, 'लेकिन एक शर्त है।'

प्रतिरक्षा-मन्त्री श्री चह्वाण से

दिल्लीसे लाहौर तक, मार लिया मैदान
दो ठोकरकी देर है, 'मत चूके चौहान।'
मत चूके चौहान, न ऐसा अवसर आवे,
'पकी पकाई' छोड़े से पीछे पछतावे।
'काका', पीड़ित मानवता हुंकार रही है,
भारत माता तेरी ओर निहार रही है।

—काका हाथरसी

'वह क्या ?'

'जिस गधेपर मुझे बैठाया जाये उसका मुँह दिल्लीकी तरफ़ कर दिया जाये।....'

कमाण्डर हँस दिया और उसकी बात मान ली। उस चीनीके चिकने मुँहपर, जो भी काला रंग मिल सका, चुपड़ा गया और उसे गधेपर बैठा दिया। गधेका मुँह दिल्ली-की तरफ़ कर दिया गया। लेकिन चाबुक खाते ही गधा पीकिंगकी तरफ़ भागा।

चीनी व्यंग्य कसता हुआ बोला, 'ये कैसा हिन्दुस्तानी गधा है—पीकिंगकी तरफ़ भागता है....?'

एक सिपाहीने उत्तर दिया, 'इस गधेको भी पीकिंगसे पकड़ कर लाये थे सो अब घरकी तरफ़ भाग रहा है।'

'लेकिन मेरा घर तो शंघाईमें है ?'

'यह शंघाई भी जायेगा!' सिपाहीने फिर कहा।

'क्यों ?' चीनीने पूछा।

सिपाहीका उत्तर था—'वहाँ इसकी ससुराल है।'

■ बिल्ली

एक बिल्ली बोली – 'च्याऊँ-च्याऊँ.... म्याऊँ-म्याऊँ।' आवाज़ सुनकर चीनी सिपाही प्रसन्न हो गया – 'देखो तो, बिल्लियाँ भी हमारे नेता चाऊ और माओके नाम बोलती हैं!'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घायल :

'घायल चीनीका नाम ?'

'ल्यू-शुन-शिंग ।'

'बापका नाम ?'

'युन – नु – शिंग ।'

'रहनेका स्थान ?'

'नानकिंग ।'

'गोली मारनेवालेका नाम ?'

'हजारासिंग ।'

विज्ञान :

नक़ली दाँतोंके लिए : चीनी डेण्टिस्ट

नक़ली बातोंके लिए : चीनी कम्युनिस्ट

नक़ली नक़्शोंके लिए : चीनी सर्वेक्षण

नक़ली लक्ष्योंके लिए : चीनी आक्रमण

नक़ली ज़बानके लिए : चीनी रेडियो पीकिंग

नक़ली ईमानके लिए : चीनी चाऊ एन 'लाय-किंग'

अन्तिम इच्छा :

भारतीय सिपाहीकी गोलीसे चीनी सिपाही घायल होकर धराशायी हो गया। ऐसा लगा कि ज़रा देरमें ही मर जायेगा।

भारतीय सिपाहीने सोचा : मर तो रहा ही है सो इसकी अन्तिम इच्छा पूरी कर देनेमें क्या हर्ज़ है। पूछा उससे—'पानी ?' उसने इनकार कर दिया।

'खाना ?'

उसने फिर इनकार कर दिया।

भारतीय सिपाहीने मज़ाक़ किया—'अफ़ीम?'

उसने तत्काल हाँ कह दिया।

'लेकिन तुम तो अब मर रहे हो, अफ़ीम-का क्या करोगे ?'

वह लड़खड़ाई आवाज़में बोला—'दो।'

'खाओगे अब ?'

उसने इनकारमें सिर हिला दिया।

'फिर ?'

फिर लड़खड़ाती आवाज़में उसने छोटा-सा उत्तर दिया – 'साथमें ले जाऊँगा।'

(शा० सं० वि०)

■ ■

राशि-मृत्यु

रावण मारा रामने, कृष्ण पछाड़ा कंस
निश्चित है चह्वाणसे, चाऊका विध्वंस
चाऊका विध्वंस कि बलि वामनने मारा
है अयूबका काँटा अर्जुन सिंह हमारा
'काका' टूटे जेट, हुआ पैटन पर धावा
लगे दीखने सपनेमें भुट्टोको 'मामा'

—काका हाथरसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Phone : OFFICE ; 33-6519
FACTORY : 57-2484

Please Contact :

Shyamnagar Tin Factory (P.) Ltd.
113, Manohardas Katra,
Calcutta-7.

Manufacturers and Printers of :
All kinds TIN CUNTAINERS, Alluminium Tea Sample Boxes and Drums.

Grams : DAHYASONS

Phone : 264109
266247

Dahyabhai & Sons
51, Maruti Lane, Fort
BOMBAY-1

Importers of PAPER & BOARDS
Distributors of :
ROHTAS INDUSTRIES LIMITED
DALMIANAGAR

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये एक टिकिट नहीं है,
मौसेरे भाइयोंका
चतुर्भुज है—दो
और दो-चार—
माओ, चाऊ,
सुकर्ण,
अयूब···

संजय उवाच

अन्धा युग और ज़बानदार आँखें

अमेरिकामें कहा जाता है : अगर कुत्ता आदमीको काट ले तो यह सुनकर पत्रकार बियर पीना बन्द नहीं करता लेकिन अगर कोई आदमी कुत्तेको काट ले तो पत्रकार मुँहका कौर छोड़कर उठ भागता है।·····इस कथनका यह दृष्टिकोण-मूल्य है कि कौन समाचार कहाँ कितने महत्त्वका समझा जाता है। भारतके वर्तमान संघर्षमें दुनिया-भरके पत्रकारोंने अपनी-अपनी जो कलाबाज़ियाँ दिखायीं, उससे भ्रमोंके बहुत सारे नये-नये घेरे पैदा हो गये हैं। धृतराष्ट्रने जब संजयसे पूछा था—'धर्मभूमि कुरुक्षेत्रमें इकट्ठे हुए मेरे और पाण्डुके युयुत्सु पुत्रोंने क्या किया?' तो संजय अपनी पत्रकारिताका करिश्मा दिखा सकते थे क्योंकि धृतराष्ट्र अन्धे थे। संजय जो भी कहते वही उन्हें मान्य होता लेकिन पत्रकारके यथार्थवादी धर्मको महत्त्व देते थे और किसी खबरको 'डार्क' में रखने या उसे 'बैनर' देनेकी कलामें विश्वास नहीं करते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युद्ध-विरामके बाद सारी परिस्थितिपर विचार करते ऐसा लगता है कि आजके तथाकथित संजय सारे ज़मानेको और युगको अन्धा ज़रूर समझते हैं और अगर आजका ज़माना और युग अन्धा नहीं है तो वे उसे अन्धकारमें रखनेका प्रयत्न तो कर ही सकते हैं। जो हो, पिछले दो महीनोंमें विदेशी पत्रकारोंने यह सिद्ध कर दिया है कि वे चाहे जिस समाचारको उछाल सकते हैं और चाहे जिस समाचारको दबा सकते हैं। कोई एक सप्ताह पहले 'स्टेट्समैन' में इस बातका विश्लेषण प्रकाशित हुआ था कि पाकिस्तानको युद्धमें पूरा प्रचार मिला और भारतकी कई ख़बरोंको रद्दीकी टोकरीमें डाल दिया गया। आश्चर्यकी बात यह है कि यू० एन० ओ० की पहली मीटिंगकी बात, जो सारीकी सारी भारतके पक्षमें थी, विदेशी पत्रोंमें ऐसे आयी जैसे कहीं हुए 'बॉल डान्स' की ख़बर हो वह, और फिर संघर्ष छिड़ते ही चटख़ारे ले-लेकर पाकिस्तानी ख़बरोंके बीच-बीचमें हमारी ख़बरें दी गयी हैं। अभी ६ अक्तूबरको फ्रेंक मोराइसने यह कहा है कि 'न्यूयार्क टाइम्स'-जैसे ज़िम्मेदार अख़बारने लोगोंके मनमें हमारे प्रति बहुत सारे भ्रम पैदा कर दिये हैं। 'टाइम' और 'न्यूज़वीक' ने जो कुछ भी प्रकाशित किया अशालीन और अभद्र ढंगसे, वह सारे देशके लिए रोषका विषय बन गया है। इन्दोनेशियाने तो पाकिस्तानके माउथ-आर्गनकी तरह अयूबकी भड़ैती की है। चीनके अख़बारोंका झूठ-सचसे कोई ताल्लुक़ नहीं। 'अमृत बाज़ार पत्रिका' के प्रतिनिधि निहालसिंहने यह साफ़-साफ़ लिखा है कि जब विदेशी पत्रकारोंसे भारतकी प्रभुत्व-सत्ता कश्मीरपर उनके, क़ानूनन अधिकार और राष्ट्रीय सुरक्षाकी बात की जाती है तो वे आकाशकी तरफ़ देखने लगते हैं, उन्हें भारतकी बात 'दार्शनिक' लगती है, वे ऐसा चेहरा बना लेते हैं कि जैसे हमने कोई पहेली उन्हें सुना दी हो लेकिन जैसे ही पाकिस्तानकी जनमत-गणनावाली बात या धौंसवाली ख़बर वे सुनते हैं उन्हें सारी समस्या समझमें आ जाती है और वे बैनर तैयार करने लगते हैं या भारतसे बड़े भोले बनकर यह निवेदन करने लगते हैं कि क्यों नहीं वही थोड़ा-सा झुककर समस्याको सुलझा लेता? मज़ा यहा नहीं है – बी० बी० सी० का करांचीमें रहनेवाला नामानिगार यह ख़बर भेजता है कि पाकिस्तानियोंका मनोबल ऊँचा है और ब्लैकआऊटके बावजूद करांचीमें आम दिनों-जैसी हालत है लेकिन दिल्लीका वही बीबीसिया नामानिगार देखता है कि भारत बड़ा चिन्तित है और संघर्षका सामना कर रहा है। 'व्हाइस ऑफ़ अमेरिका' ऐसी कमेण्ट्री ब्रॉडकास्ट करता रहा है जैसे वह युद्ध नहीं था, कोई फ़ुटबाल-मैच था और दोनों दल ख़राब मौसमके बाद भी बड़े जोशसे खेले। ....पाकिस्तानने इस चीनी तकनीकका खुलकर प्रयोग किया कि एक झूठको दस बार बोलो तो वह सच हो जाती है, लेकिन वह भूल गया कि ऐसी झूठ बार-बार और हर बार सुनाई नहीं जा सकती। ब्रिटेनके प्रधान मन्त्री तो ११ सितम्बरको चौंके कि – 'अरे यह सब क्या-कुछ हो रहा है!' किया यह कि बड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'एंबुशायटी' ज़ाहिर की। समझमें नहीं आता कि जिस देशका संवाददाता शेख अब्दुल्लाकी तसवीर उतारनेके लिए ज़माने-भरको रिस्क ले सकता है और भारतसे निर्वासित भी हो सकता है उसी देशका संवाददाता इतना साहस नहीं रखता कि दूधको दूध और और पानीको पानी कह सके!

किमकुर्वत संजयः

• राजाजीने स्वराज्यमें लिखा है—"पाकिस्तानपर तत्काल क़ानूनी कार्यवाही की जानी चाहिए। भारतकी स्थिति बिलकुल स्पष्ट है। पाकिस्तानकी किसी भी बातको महत्त्व न देकर उसे कुछ और करनेके लिए समय नहीं देना है। भारत और पाकिस्तानके बिगड़े हुए सम्बन्ध पहले रहे हों लेकिन अब तो उसके दुर्व्यवहारकी सज़ा दी जानी चाहिए।"

—यह केवल बानगी है। दुनियाने देखा है कि शासनके विरोधी भी इस संकटके समय एक आवाज़में देशके लिए उठ खड़े हुए हैं और यही देश, जो दूरसे अलग-अलग हफ़लियोंवाला लग रहा था, वह वैसा असलमें नहीं है। प्रेसकी स्वतन्त्रताके बाद भी हमारे देशके सारे पत्रोंने सूत्रधारका काम किया है।

• लेबनानके दैनिक पत्र 'लेजोर' ने साफ़-साफ़ लिखा है कि धर्मके आधारपर अल्पसंख्यकोंको आत्मनिर्णयका अधिकार देना घातक है और इससे दुनियाके टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे।

• एक अन्य लेबनानी अख़बार 'अल निदाल' ने लिखा है कि पाकिस्तानने संयुक्त राष्ट्रसंघके प्रस्तावोंका बार-बार उल्लंघन किया है। उसने भारतीय क्षेत्रमें तोड़-फोड़ करनेके लिए सैनिक भेजे, फ़ौजी अड्डे बनाये और २०० वर्गमील भारतीय क्षेत्र चीनको दे दिया। उसने भारतीय नेताओंको दिया अपना कोई वायदा पूरा नहीं किया। कश्मीरपर भारतीय पक्षका समर्थन करते हुए पत्रने लिखा है कि कश्मीरमें तीन चुनावों-द्वारा जनमत लिया जा चुका है और चौथा मतदान होनेपर भी लोगोंकी रायमें कोई अन्तर नहीं पड़नेका। लेबनानके 'अल रशीद' अख़बारने भी लिखा है कि तीन बड़े चुनावोंमें कश्मीरके लोग खुलकर अपने अधिकारका प्रयोग कर चुके हैं।

• 'न्यूयार्क टाइम्स' के संवाददाता सैक्स फ़ाडेलने आवाज़ बदलकर कहा है कि यह युद्ध कश्मीरके पुराने विवादोंका नया विस्फोट नहीं है, बल्कि पाकिस्तानकी भलीभाँति बनायी हुई योजनाका परिणाम है, जो सफल नहीं हो सकी है। लगता है कि पाकिस्तान समझता था कि उसकी आन्तरिक अन्तर्राष्ट्रीय तथा सैनिक शक्ति इस समय पराकाष्ठापर पहुँच चुकी है।

—याद दिलानेको मन तो रहा है कि १० नवम्बर, १९४७ को 'न्यूयार्क टाइम्स' में राबर्ट ट्रम्बलने यह संवाद छापा था; जिसमें आवाज़ बदलनेकी तकनीकका प्रयोग नहीं किया गया था—"बारामूला शहरके लोगोंने मुझे बताया कि एक मुसलमान दूकानदारने अपने धर्मसहिष्णुताके सिद्धान्तोंको छोड़नेके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मौसेरे भाइयोंकी संकेत भाषा

चीन—

० २७ सितम्बर : चीनियोंने सिक्किम तिब्बत सीमापर सैनिक जमावके लिए खाइयाँ खोदना शुरू कर दिया है।

० २६ सितम्बर : चीनी अब भी लड़नेके लिए तैयार हैं। दमचोकसे आगे उन्होंने ६०० फ़ुट लम्बी दीवार बना ली है।

० २५ सितम्बर : चीनियोंने कहा है भारतीय सैनिकोंने हमारी हदमें आकर अपने सैनिक अड्डे नष्ट कर दिये हैं। शास्त्रीजीका यह कथन ग़लत है कि हमने ऐसा नहीं किया।

० २४ सितम्बर : चीनियोंने सिक्किम सीमापर हमारे तीन जवानोंको मार दिया।

० २३ सितम्बर : चीनने कहा है—'दोषी भारत है, हम लड़ना नहीं चाहते। अगर सीमा-समस्या भारत नहीं सुलझायेगा तो सारे परिणामोंका दोष उसपर ही होगा।

पाकिस्तान—

० २७ सितम्बर : मियाँ भुट्टोने न्यूयार्कमें बताया कि अयूब जानसनसे मिलेंगे। इन्होंने कहा कि भारतकी ज़िदके कारण अब यह खाई पट नहीं सकती।

० २६ सितम्बर : स्यालकोट पसरूर रेलवे लाइनको हथियानेके लिए एक रेल स्यालकोटसे रवाना की गयी। तैनात भारतीय कमाण्डरने उसे लौटा दिया। इंजिन ड्रायवरने कहा—सामने दीवार है।

० २५ सितम्बर : सदर अयूब और पाकिस्तान रेडियोने कहा हमने २२ सितम्बरको अमृतसरपर बमबारी नहीं की। शास्त्रीजीका यह कथन ग़लत है कि हमने ऐसा किया।

० २४ सितम्बर : पाकिस्तानने बाघा क्षेत्रमें हमारे तीन सिपाहियोंको हिरासतमें लेनेकी कोशिश की।

० २३ सितम्बर : पाकिस्तानने युद्ध-विराम लागू कर दिया लेकिन साफ़-साफ़ कहा कि 'सीमाका झगड़ा भारतका खड़ा किया झगड़ा है, अगर उसने फिर कुछ किया तो बुरे परिणामोंको उसे भोगना पड़ेगा।'

तल : २३ से २७ सितम्बर तककी संकेत-भाषाके उपर्युक्त विशेष अंशोंको मिला दें तो ऐसे लगते हैं जैसे हिन्दुस्तानसे वे दोनों यह कह रहे हों—

चीन—खाइयाँ खोदना शुरू कर दिया है।
पाक—अब यह (ऊपरवाली) खाई पट नहीं सकती।
चीन—दीवार बना ली है।
पाक—(अब हिन्दुस्तान समझेगा कि) सामने दीवार है।
चीन—शास्त्रीजीका कथन—ग़लत है।
पाक—(हाँ) शास्त्रीजीका कथन—ग़लत है।
चीन—तीन जवानोंको मार दिया।
पाक—(और हमने भी) तीन सिपाहियोंको हिरासतमें लेनेकी कोशिश की।
चीन—परिणामोंका दोष उसपर ही होगा।
पाक—यही नहीं परिणामोंका उसे भोगना पड़ेगा।

(क्रा० सं० वि०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बजाय, अपने जीवनको बलिदान कर देना स्वीकार किया। एक गिरजेकी दीवारके नीचे इसकी शहादत हुई और श्रद्धालु कश्मीरी उसे सन्तकी तरह याद करते हैं। यह शहीद मक़बूल शेरवानी राबिनहुडके समान रहा होगा, जैसा कि यहांके शहरके लोगोंने उसके बाबत मुझे कहानियाँ सुनायी हैं। इन कहानियोंमें उसे कहीं बेशुमार करोंके बोझसे दबे किसानोंका पक्ष लेते हुए, पुलिस-द्वारा किसी अभागे व्यक्तिपर ज़ुल्म ढानेपर पुलिस-के ख़िलाफ़ लड़ते और उनके अनेक अत्याचारोंके ख़िलाफ़ लोगोंको शक्ति देते हुए बताया गया है।"

—और आज पाकिस्तानने गिरजे, गुरद्वारे और चर्चपर भी बम गिराये हैं।

• 'पोलिटिको' ने अपने विचार व्यक्त करते हुए आज अपना यह मत ज़ाहिर किया है कि वर्तमान भारत-पाकिस्तानी सशस्त्र संघर्ष-में चीनी जनवादी गणतन्त्र हस्तक्षेप करके भारतके साथ अपने राज्यक्षेत्रीय झगड़ेको पुनः उभार सकता है। 'ये तोपें किसके लिए गरज रही हैं?' शीर्षक अपने लेखमें 'पोलि-टिको' ने भारतके विरुद्ध चीन-द्वारा हिमालय-में नया मोर्चा खोले जानेकी और इस प्रकार भारतीय फ़ौजोंके साथ व्यस्त करनेकी सम्भा-वनाको नज़रअन्दाज़ नहीं किया है। 'पोलिटिको' ने यह भी लिखा है कि भारत-पाकिस्तान-संघर्षमें चीन उस देशका पक्ष लेता है जो अमेरिका और पश्चिमी देशोंका मित्र है तथा गुटोंसे अलग रहनेवाले भारतके वह विरुद्ध है। इस पत्रने लिखा है कि चीन-द्वारा पाकिस्तानका पक्ष लेना केवल इस बातका संकेत नहीं होगा कि एशियामें युद्धका क्षेत्र यद्यपि पहले ही बड़ा है, फिर वह अन्य क्षेत्रोंमें भी पहुँच जायेगा, बल्कि वह इस बातका भी संकेत होगा कि भारत और पाकिस्तानका संघर्ष उनके दोनोंके राष्ट्रीय हितमें नहीं होगा।

• दो देशोंके मध्य संघर्षमें आग भड़कानेमें 'कुछ देशों और व्यक्तियों-द्वारा हस्तक्षेप करने'के प्रश्नपर बेलग्रेडके दैनिक 'बोराबा'ने लिखा है: "भारत-पाकिस्तान संघर्षको खतरनाक तरीक़े से भड़कानेकी दिशामें चीनकी सरकारने बहुत आगे क़दम बढ़ाना शुरू कर दिया है। इस प्रकारका हस्तक्षेप शान्तिपूर्ण जनमतके लिए खेद और चिन्ताकी बात है।" इस प्रकारका मत व्यक्त करते हुए 'बोराबा' ने चेतावनी दी है कि एक पक्षका समर्थन करने और एक ही पक्षपर दोष मढ़नेसे न तो पाकिस्तानकी सहायता होगी और न भारतकी। इस पत्रने आगे लिखा है: "इसके अतिरिक्त चीन खुली धमकी देने, जिसमें भारत-चीनी सीमापर पुनः संघर्ष छेड़ना भी शामिल है, से भी बाज़ नहीं आया है।" 'बोराबा'का कहना है कि "इण्डोनेशिया नेताओं-द्वारा पाकिस्तानकी सहायताके लिए स्वयंसेवक भेजनेकी अपनी तैयारी दिखाना 'इण्डोनेशियाके अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान तथा नये एशिया और अफ्रीकाके लिए निश्चय ही एक बुरी बात है।"

• बेलग्रेडके 'कम्युनिस्ट' ने अपने एक सम्पादकीयमें इस बातपर ज़ोर दिया है कि भारत और पाकिस्तानके मध्य झगड़ेका अन्तिम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समझौता इसी प्रकार हो सकता है कि दोनों देश कश्मीरमें अपना संघर्ष बन्द करनेके बाद युद्धविराम-रेखाके दोनों ओर अपने-अपने राज्यक्षेत्रोंमें हट जायें और पिछले शान्ति-समझौतेका सम्मान करें। इस पत्रने लिखा है कि अभीतककी घटनाओंसे यह विदित होता है कि सशस्त्र संघर्ष संसारके उस भागमें पहले ही से बिगड़ी दशाको न केवल और बिगाड़ता है बल्कि इस संघर्षके अन्य पक्षोंमें भी बढ़ जानेका खतरा है। इस पत्रने इस बातको उत्साहवर्द्धक बताया है कि संसारके शान्ति-प्रेमी तत्त्वोंने कश्मीरके झगड़ेके समाधानका शान्तिपूर्ण हल खोजनेके लिए अपील करना शुरू कर दिया है।

—और आज जब युद्धविराम हो गया है ज़रा एक नज़र पाकिस्तानी हमलेको दुनियाके अखबारोंका चश्मा पहनकर देख लें।

....मित्रद्रोहे च पातकम् :

● पश्चिमी देशोंके राजनीतिज्ञ और अन्य ऐसे लोग, जो राय ज़ाहिर करनेकी स्थितिमें हैं, इस मामलेके सही मूल्यांकनमें वस्तुतः भयंकरतम भूल कर रहे हैं। ये लोग पाकिस्तानका पक्ष ले रहे हैं और भारतको एक ऐसे संघर्षमें प्रायः कोई प्रोत्साहन नहीं मिल रहा है जो एशियामें स्वतन्त्र संस्थाओंके भाग्यका निर्णय करेगा। —'दि गार्जियन'

● पाकिस्तानकी इस बातपर दुनियाको विश्वास नहीं होगा कि हालमें कश्मीरमें जो रक्तपात हुआ है, वह पाकिस्तानी घुसपैठियों-का नहीं, बल्कि स्थानीय विद्रोही लोगोंका था। इस रक्तपातकी ज़िम्मेदारीसे पाकिस्तान नहीं बच सकता।—'डेली मिरर'

● हमारे पास इस बातका सबूत है कि पाकिस्तान भारतके अभिन्न अंग कश्मीरको हथियाना चाहता है। १९४७ में कश्मीरका भारतमें विलय हुआ और तबसे यह भारतका अभिन्न अंग बन गया। आज जब पाकिस्तानने भारतपर खुल्लमखुल्ला हमला किया है तो भारतको इस बातका पूरा अधिकार है कि वह इसका मुँहतोड़ जवाब दे।....कश्मीरमें जनमत संग्रहकी माँग भारतका अपमान है। —'डेली टेलीग्राफ़'

● पाकिस्तानने संयुक्त राष्ट्रसंघके प्रस्तावों-का बार-बार उल्लंघन किया है। उसने भारतीय क्षेत्रमें तोड़-फोड़के लिए सैनिक भेजे, फ़ौजी अड्डे बनाये और २०० वर्गमील भार-तीय क्षेत्र चीनको दे दिया। उसने भारतीय नेताओंको दिया अपना कोई वायदा पूरा नहीं किया। —'अल निदाल'

● पाकिस्तानकी कार्रवाइयोंके कारण ही कश्मीरमें लड़ाई शुरू हुई है।—'बाल्टी-मोर सन'

● जहाँतक क़ानूनका सवाल है, कश्मीर भारतका राज्य है और पाकिस्तान स्पष्ट रूपसे हमलावर है।—'कोरिओ द मान्ता'

● कश्मीरकी समस्याने जो खतरनाक मोड़ लिया है, उससे इस बातमें ज़रा भी सन्देह नहीं है कि पाकिस्तान हमलावर है।—'दि कार्क एक्ज़ामिनर'

● जब सैनिक सहायता कार्यक्रमके अन्तर्गत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९५४ में पाकिस्तानको टैंक दिये गये थे उस समय किसीने भी यह नहीं सोचा था कि पाकिस्तान इन टैंकोंका उपयोग भारतके खिलाफ़ करेगा।—'वाशिंगटन पोस्ट'

....तो हम भी यह अधिक दावेके साथ कह सकते कि तथाकथित 'पाकहेल्ड कश्मीर' क़ानूनन हमारा है और हम अपनी ही सीमामें अपनी ही ज़मीनकी रक्षा कर रहे हैं। एक सबक़ सिखानेके लिए लाहौर तक हम गये हैं, (टहलनेके दिवा-स्वप्नमें नहीं) हक़ीकतमें सबक़ सिखानेके लिए।

०

राष्ट्रकुल-कुलांगार पाकिस्तानने ('कुलांगार'की असली पंक्ति आपको याद होगी—'खाये जिस पत्तलमें'....छोड़िए भी) अपनी लचीली ज़बान और सांस्कृतिक शब्दावलीमें 'सदाए-कश्मीर-रेडियो' और 'रेडियो-पाकिस्तान'से जो-जो कहा वह मनोविनोदके लिए विनोदप्रिय लोग सुनते रहे हैं।

• २४ सितम्बरको दिल्लीमें ८०१ भेंड़ोंने गलेमें तख्ती टाँगकर सविनय प्रार्थना की थी चीनियोंसे कि 'हमें खा लो लेकिन मानवताको बख्शो।' चीनी पत्रकारिता और चीनी शासन इससे नाराज़ हो गया।—'भाई, भेंड़ तो प्रतीक है उसमें बुरा माननेकी क्या बात, तुम्हारा तो राष्ट्रीय निशान अजगर (ड्रैगन) है फिर हमारे इस टोकन-विरोधसे आपको तकलीफ़ क्यों हुई?

• २ अक्तूबर प्रधानमन्त्री शास्त्रीजीका जन्म-दिवस था और उन्होंने पैटन टैंक रूपी केकको काटा और जवानोंको भेज दिया।

ठोस बलिदान

(कच्चे आँकड़े)

रक्षा-मन्त्रालयके प्रवक्ताने बताया कि १९ सितम्बर तक ३८४० पाकिस्तानी मारे जा चुके थे। इनमें २२ सैनिक अफ़सर भी शामिल हैं। अनुमान यह है कि गत तीन दिनोंमें मारे गये पाकिस्तानियोंको मिलाकर कुल पाकिस्तानी मृतकोंकी संख्या चार हज़ार हो जायेगी।

इनके अलावा ४४१ पाकिस्तानी बन्दी बनाये गये हैं और इनमें १२ पाकिस्तानी सैनिक अफ़सर हैं।

पाकिस्तानके ४६४ टैंक बरबाद किये गये हैं और ३८ हमारे क़ब्ज़ेमें आये हैं। पाकिस्तानके ७० विमान गिराये जा चुके हैं। उन पाकिस्तानी विमानोंकी संख्या मालूम नहीं हो सकी, जो हमने हवाई हमलोंमें बरबाद किये हैं।

दूसरी ओर हमें पाकिस्तानकी तुलनामें काफ़ी कम हानि हुई है। २१ सितम्बरकी रात तक ११५७ भारतीय शहीद हुए, इनमें ७५ सैनिक अफ़सर हैं। हमारे केवल १०० टैंक नष्ट हुए और ३५ विमान बरबाद हुए।

०

सुनते हैं, पाकिस्तान-समाचार इससे खफ़ा हो गया।—"बड़े भैया, आपके मज़हबमें ज़िन्दा पशुकी ज़िबह करते हुए बलि दी जाती है, आपको प्रतीक-पैटन-केकसे क्यों एतराज़ हुआ? विश्वास रखिए, शास्त्रीजीने उस केकको 'ज़िबह' नहीं किया था 'झटका' मारा था।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● दिल्लीमें इंग्लिस्तानियोंके खिलाफ़ एक जुलूस निकला। बी० बी० सी० को 'झूठोंका बादशाह' कहा गया है। बी० बी० सी० के कुछ अधिकारी ऐसे प्रदर्शनसे नाराज़ हो गये थे।—"सर, इट वाज़ इन द स्पिरिट ऑफ़ गुड ड्यूमर ओनली, वी डू नॉट मीन एन्नी थिंग अदरवाइज़।"

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि····

इस पाक-संघर्षमें प्रजातन्त्र और स्वतन्त्रताके प्रति आस्था हमारे साथ सम्बलकी तरह रही है। हम ज़मीनके टुकड़ेके लिए नहीं लड़ रहे हैं यह बात शास्त्रीजीने बलपूर्वक कई बार कही है और आज भी हम उसीको दुहरा रहे हैं। हम अपनी ज़मीनपर अगर क़ब्ज़ा करते हैं तो वह न्यायसंगत है, अगर पाकिस्तानके राष्ट्रसंघी नुमायन्दे श्री अयूब (प्रेसिडेण्ट अयूब नहीं) यह कह सकते हैं कि—'हाँ, पाकिस्तानने १९४७ में कश्मीरपर आक्रमण किया था लेकिन वह कश्मीरपर आक्रमण था क्योंकि तब कश्मीर भारतका अंग नहीं था।'····

(शा० स० वि०)

■ ■

मोहनलाल एण्ड कम्पनी

५६, सुतार चाल, बम्बई नं० २

अधिकृत विक्रेता

रोहतास इन्डस्ट्रीज़ लि०

डालमियानगर

पोस्टर पेपर, डुप्लेक्स बोर्ड, कह्वर पेपर, क्रोमो आर्ट बोर्ड, क्रीम वूव, क्रीम लेड आदि के व्यापारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झूठ और सच

• समाचारोंका X—रे •

पद्मधर त्रिपाठी

ये पंक्तियाँ झूठके बादशाह कैप्टन मसूदकी पाकिस्तानी टोपीके ऊपर लिखना ही ठीक लग रहा है कि ये सदर अयूबके भड़काये हुए हैं। आये थे उरिका पुल उड़ाने, लेकिन हमारे जवानोंको देख इनके तोते उड़ गये। आजकल ये हमारे शाही मेहमाँ हैं…

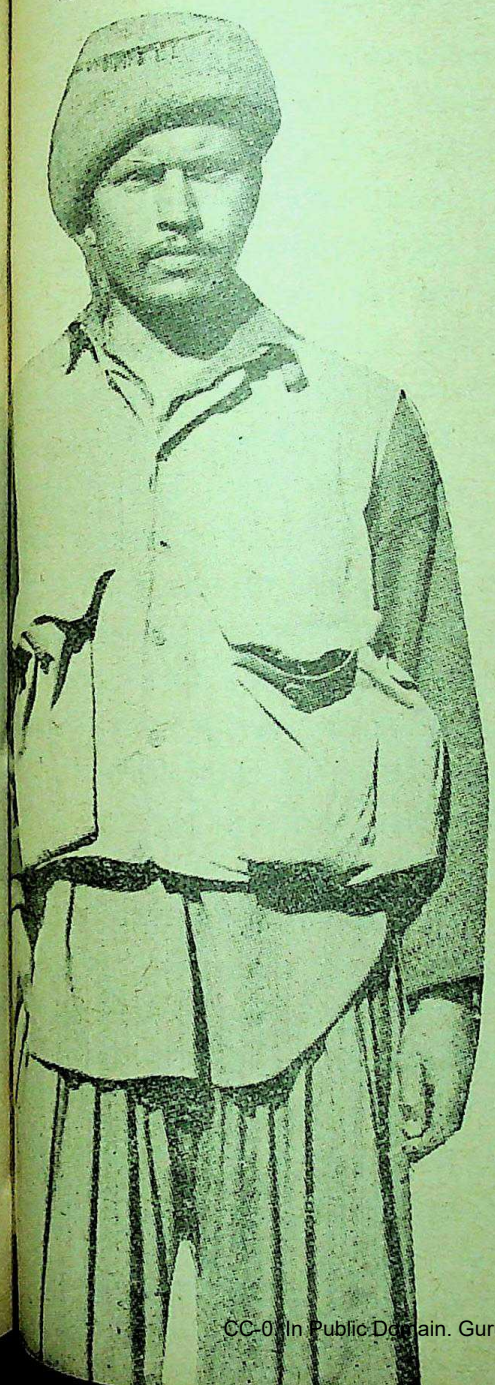

पाकिस्तान ! नहीं, यह नाम ग़लत हो गया। होना चाहिए था, और यदि नहीं हुआ तो आगेका इतिहास पुकारेगा—ना-पाकिस्तान !! कहना न होगा कि इस 'बदतमीज़' देशको उसके जन्मसे ही नापाक इरादोंकी घुट्टी पिलायी गयी है और उस घुट्टीका असर उसके ऊपर बराबर बना रहा, और अपनी हैसियतका ग़लत अन्दाज़ कर वह बदतमीज़ियाँ करता रहा है।

एक बड़ी ग़लत शुरुआत थी वह। पाकिस्तान बना—एक बड़े सन्दर्भसे कटकर, तमाम हिन्दुस्तानियोंके भाव-सत्यका गला घोंटकर। मक्कार बरतानिया राजनीतिके चलते चन्द तमाशबीनोंके नापाक इरादे सच हुए थे जब यह हमारा पड़ोसी 'दुश्मन' पाकिस्तान बना था ! यह एक दुःखद प्रसंग था जिसकी पीड़ाएँ उस समय हर ईमानदार 'हिन्दुस्तानी'ने अनुभव की थीं, झेली थीं। इतने बड़े देश—हिन्दुस्तानके बँटवारेका निर्णय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीयोंके लिए दुःखदायी था। और विभाजनके बाद जो घटनाएँ घटीं, उनकी भयानकताने यह दुःख और अधिक बढ़ाया। फिर भी जब विभाजन हो गया, पाकिस्तान बन गया, तो भारतके लोगोंने उस तथ्यको स्वीकार कर लिया। हर भारतीयने यह अनुभव किया कि अब दोनों पड़ोसी देश शान्ति और मैत्री-भावनाके साथ रहेंगे। यहाँ-तक कि महात्मा गान्धीने दोनों देशोंके आपसी सम्बन्ध सुधारने तथा हिन्दू-मुसलिम एकताके लिए अपने-आपको बलिदान कर दिया। कहना अप्रासंगिक न होगा कि भारत बराबर अपने गान्धीकी नीतियोंपर ही चलता रहा है। भारतने शान्तिके साथ पाकिस्तानकी प्रगतिमें जी खोलकर साथ देना चाहा है, दिया है। भारतने पाकिस्तानकी जनताके साथ अपनी हमदर्दी दिखायी है और उनके कष्टों, उनकी जीवन-यापन-सम्बन्धी असु-विधाओंको कम करनेमें हर सम्भव सहायता दी है। लेकिन इस सबका कोई अस्तित्व नहीं रहा। और तो और पाकिस्तानने कभी भूलसे भी भारतकी भावनाओंको स्नेह-सम्मान नहीं दिया। कहनेके लिए स्वतन्त्र होते हुए भी वह लगातार झूठ, फ़रेब और मक्कारीके शिकंजेमें कसता-फँसता गया और एक ग़लत रास्तेपर अपनी यात्रा प्रारम्भ कर वह मान-सिक रूपसे एक नहीं—दो नहीं—अनेक राष्ट्रों-का ग़ुलाम हो गया!

यह एक कटु सत्य है कि पाकिस्तान प्रारम्भसे ही वैमनस्य और घृणा करता रहा है। उसने हमेशा भारतके विरुद्ध विष-वमन किया है। सन् १९४७ में ही कश्मीरपर आक्रमण करके उसने अपनी नीयतका परिचय दिया था। हालाँकि, अपनी आदतके अनुसार उसने शुरूमें उस आक्रमणको भी पाकिस्तानी आक्रमण स्वीकार करनेसे इनकार किया था; लेकिन सचाई बादमें उजागर होकर ही रही। बाद इसके तो वह भारतको परेशान करने और हर तरहकी हानि पहुँचानेसे कभी नहीं चूका। होते-होते उसकी नीयत इतनी बिगड़ी कि उसने भारतपर खुल्लमखुल्ला यह युद्ध लाद दिया। कश्मीर क्षेत्रमें उसने चोरीसे हज़ारोंकी संख्यामें सशस्त्र अतिक्रामक भेजे, और जान-बूझकर उसने भारतको युद्धके लिए तैयार किया। इतना ही नहीं, उसने अन्त-र्राष्ट्रीय सीमाके पार अपनी सेनाको बढ़ जानेका हुक्म दिया। उसकी सेनाएँ आगे बढ़ीं। और फिर इस सबका परिणाम? प्रत्यक्ष है कि पाकिस्तानकी इन करतूतोंके दमनके लिए भारतको एक सही और दृढ़ क़दम उठाना पड़ा। भारतके समक्ष नापाक पाकिस्तानने एकाएक ऐसी परिस्थिति प्रस्तुत की कि भारतने जो भी निर्णय लिया उसके अलावा दूसरा कोई विकल्प ही नहीं था। भारतके समक्ष अपने स्वाभिमान और राष्ट्रकी जनताकी मनोभावनाका प्रश्न था। अतः पाकिस्तानी छल-छद्मताके सामने तत्काल उसने जो भी किया, हर ईमानदार और स्वाभिमानी राष्ट्र ऐसी परिस्थितियोंमें यही करता। पाकिस्तानको यह बता देना भारतके लिए आवश्यक था कि इन आक्रामक कार्र-वाइयोंसे उसकी मुरादें पूरी होनेवाली नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। विश्वके समझदार कूटनीतिक सूत्रोंका तो कहना है कि आज भारत-पाकिस्तानके बीच जो सशस्त्र संघर्ष है उसके लिए 'केवल' पाकिस्तान ज़िम्मेदार है।

और अब—जब पाकिस्तान कश्मीरको हड़पनेमें सफल नहीं हो पाया तो उसने झगड़ेके बीच 'धर्म' और 'इसलाम'की बात खड़ी करके दुनियाको गुमराह करनेकी कोशिशें प्रारम्भ की हैं। मगर दुनिया सदर अयूब और मियाँ भुट्टोकी तरह इतनी नापाक और अन्धी नहीं है। वह जानती-समझती है कि पाकिस्तानकी कश्मीरको हड़पनेकी कोशिशोंका धर्मसे कोई सम्बन्ध नहीं है। यह मात्र नग्न राजनीतिक आक्रमण है, एक घिनौनी साज़िश है। यह संघर्ष जनतन्त्र और सैनिक तानाशाही—दो सर्वथा विरोधी विचारधाराओंका संघर्ष है।

पाकिस्तानका यह भी एक झूठा और नापाक दावा है कि वह कश्मीरी मुसलमानोंका बड़ा ख़ैरख़्वाह है, हितैषी है। बँटवारेके बादसे अबतककी तमाम घटनाएँ इस बातकी साक्षी हैं कि पाकिस्तानके सारे कारनामे काले—बर्बर लुटेरों और हमलावरोंके रहे हैं, जिनसे कश्मीरी मुसलमानोंको बहुत बड़ी हानियाँ उठानी पड़ी हैं। और यदि सच कहें तो कश्मीर ही क्यों, पख़्तूनिस्तान, बलूचिस्तान, और पूर्वी पाकिस्तानमें मुसलमानोंपर उसके दमनचक्रसे उसकी बर्बर नीतियोंका खोखलापन साफ़ दिखाई देता है। और आज तो यह बात साफ़-साफ़ उभरकर सामने आ गयी है कि पाकिस्तानकी नीति संसारके सभी

कठपुतलोंका देश है ये

(१९४७ और १९६५ की एक-जैसी घुसपैठ)

पाकिस्तानने १९६५ में इस बार कश्मीरमें जिस ढंगसे छिपा हमला बोला है, उसमें और १९४७ के हमलेमें बड़ी समानता है। केवल एक फ़र्क़के साथ। वह है कि इस बार घुसपैठियोंको यह निर्देश दिया गया था कि वे कश्मीरी जनताके साथ दोस्तीका व्यवहार करें और सहयोग न करनेपर ही उनको आतंकित करें। पाकिस्तान सरकारने जिस तरह इस हमलेमें अपना हाथ न होनेकी बात कही है, वह भी उसी तरह नक़ाब है, जिससे कि १९४७ में पाकिस्तान सरकारने अपने हमलेको ढकनेकी नाकामयाब कोशिश की थी।

१९४७ में २२ अक्टूबरसे कश्मीरका हमला शुरू हुआ था। यह हमला गवर्नर जनरल मोहम्मद अली जिन्नाके आदेशसे हुआ था, न कि बहुत-से हुड़दंगियों या ग़ैर सैनिकों-द्वारा। इस बार भी इस बातके विश्वसनीय सबूत मिले हैं कि इस हमलेको उकसानेके लिए प्रेजिडेण्ट अयूबसे ही इशारा मिला था। ५ जनवरी १९६५ को प्रेजिडेण्ट अयूबसे रावलपिण्डीमें मिलनेके बाद पाक अधिकृत कश्मीरके कठपुतली प्रेजिडेंट अब्दुल अमीद ख़ानने यह बताया कि उन्हें आश्वासन मिला है कि कश्मीरको मुक्त करनेके लिए अयूब और अधिक कड़े क़दम उठायेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीयोंके लिए दुःखदायी था। और फिर विभाजनके बाद जो घटनाएँ घटीं, उनकी भयानकताने यह दुःख और अधिक बढ़ाया। फिर भी जब विभाजन हो गया, पाकिस्तान बन गया, तो भारतके लोगोंने उस तथ्यको स्वीकार कर लिया। हर भारतीयने यह अनुभव किया कि अब दोनों पड़ोसी देश शान्ति और मैत्री-भावनाके साथ रहेंगे। यहाँ-तक कि महात्मा गान्धीने दोनों देशोंके आपसी सम्बन्ध सुधारने तथा हिन्दू-मुसलिम एकताके लिए अपने-आपको बलिदान कर दिया। कहना अप्रासंगिक न होगा कि भारत बराबर अपने गान्धीकी नीतियोंपर ही चलता रहा है। भारतने शान्तिके साथ पाकिस्तानकी प्रगतिमें जी खोलकर साथ देना चाहा है, दिया है। भारतने पाकिस्तानकी जनताके साथ अपनी हमदर्दी दिखायी है और उनके कष्टों, उनकी जीवन-यापन-सम्बन्धी असुविधाओंको कम करनेमें हर सम्भव सहायता दी है। लेकिन इस सबका कोई अस्तित्व नहीं रहा। और तो और पाकिस्तानने कभी भूलसे भी भारतकी भावनाओंको स्नेह-सम्मान नहीं दिया। कहनेके लिए स्वतन्त्र होते हुए भी वह लगातार झूठ, फ़रेब और मक्कारीके शिकंजेमें कसता-फँसता गया और एक ग़लत रास्तेपर अपनी यात्रा प्रारम्भ कर वह मानसिक रूपसे एक नहीं—दो नहीं—अनेक राष्ट्रोंका गुलाम हो गया!

यह एक कटु सत्य है कि पाकिस्तान प्रारम्भसे ही वैमनस्य और घृणा करता रहा है। उसने हमेशा भारतके विरुद्ध विष-वमन किया है। सन् १९४७ में ही कश्मीरपर आक्रमण करके उसने अपनी नीयतका परिचय दिया था। हालाँकि, अपनी आदतके अनुसार उसने शुरूमें उस आक्रमणको भी पाकिस्तानी आक्रमण स्वीकार करनेसे इनकार किया था; लेकिन सचाई बादमें उजागर होकर ही रही। बाद इसके तो वह भारतको परेशान करने और हर तरहकी हानि पहुँचानेसे कभी नहीं चूका। होते-होते उसकी नीयत इतनी बिगड़ी कि उसने भारतपर खुल्लमखुल्ला यह युद्ध लाद दिया। कश्मीर क्षेत्रमें उसने चोरीसे हज़ारोंकी संख्यामें सशस्त्र अतिक्रामक भेजे, और जान-बूझकर उसने भारतको युद्धके लिए तैयार किया। इतना ही नहीं, उसने अन्तर्राष्ट्रीय सीमाके पार अपनी सेनाको बढ़ जानेका हुक्म दिया। उसकी सेनाएँ आगे बढ़ीं। और फिर इस सबका परिणाम? प्रत्यक्ष है कि पाकिस्तानकी इन करतूतोंके दमनके लिए भारतको एक सही और दृढ़ क़दम उठाना पड़ा। भारतके समक्ष नापाक पाकिस्तानने एकाएक ऐसी परिस्थिति प्रस्तुत की कि भारतने जो भी निर्णय लिया उसके अलावा दूसरा कोई विकल्प ही नहीं था। भारतके समक्ष अपने स्वाभिमान और राष्ट्रकी जनताकी मनोभावनाका प्रश्न था। अतः पाकिस्तानी छल-छद्मताके सामने तत्काल उसने जो भी किया, हर ईमानदार और स्वाभिमानी राष्ट्र ऐसी परिस्थितियोंमें यही करता। पाकिस्तानको यह बता देना भारतके लिए आवश्यक था कि इन आक्रामक कार्रवाइयोंसे उसकी मुरादें पूरी होनेवाली नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। विश्वके समझदार कूटनीतिक सूत्रोंका तो कहना है कि आज भारत-पाकिस्तानके बीच जो सशस्त्र संघर्ष है उसके लिए 'केवल' पाकिस्तान ज़िम्मेदार है।

और अब—जब पाकिस्तान कश्मीरको हड़पनेमें सफल नहीं हो पाया तो उसने झगड़ेके बीच 'धर्म' और 'इसलाम'की बात खड़ी करके दुनियाको गुमराह करनेकी कोशिशें प्रारम्भ की हैं। मगर दुनिया सदर अयूब और मियाँ भुट्टोकी तरह इतनी नापाक और अन्धी नहीं है। वह जानती-समझती है कि पाकिस्तानकी कश्मीरको हड़पनेकी कोशिशोंका धर्मसे कोई सम्बन्ध नहीं है। यह मात्र नग्न राजनीतिक आक्रमण है, एक घिनौनी साज़िश है। यह संघर्ष जनतन्त्र और सैनिक तानाशाही—दो सर्वथा विरोधी विचारधाराओंका संघर्ष है।

पाकिस्तानका यह भी एक झूठा और नापाक दावा है कि वह कश्मीरी मुसलमानोंका बड़ा ख़ैरख्वाह है, हितैषी है। बँटवारेके बादसे अबतककी तमाम घटनाएँ इस बातकी साक्षी हैं कि पाकिस्तानके सारे कारनामे काले—बर्बर लुटेरों और हमलावरोंके रहे हैं, जिनसे कश्मीरी मुसलमानोंको बहुत बड़ी हानियाँ उठानी पड़ी हैं। और यदि सच कहें तो कश्मीर ही क्यों, पख़्तूनिस्तान, बलूचिस्तान, और पूर्वी पाकिस्तानमें मुसलमानोंपर उसके दमनचक्रसे उसकी बर्बर नीतियोंका खोखलापन साफ़ दिखाई देता है। और आज तो यह बात साफ़-साफ़ उभरकर सामने आ गयी है कि पाकिस्तानकी नीति संसारके सभी

कठपुतलोंका देश है ये

(१९४७ और १९६५ की एक-जैसी घुसपैठ)

पाकिस्तानने १९६५ में इस बार कश्मीरमें जिस ढंगसे छिपा हमला बोला है, उसमें और १९४७ के हमलेमें बड़ी समानता है। केवल एक फ़र्क़के साथ। वह है कि इस बार घुसपैठियोंको यह निर्देश दिया गया था कि वे कश्मीरी जनताके साथ दोस्तीका व्यवहार करें और सहयोग न करनेपर ही उनको आतंकित करें। पाकिस्तान सरकारने जिस तरह इस हमलेमें अपना हाथ न होनेकी बात कही है, वह भी उसी तरह नक़ाब है, जिससे कि १९४७ में पाकिस्तान सरकारने अपने हमलेको ढकनेकी नाकामयाब कोशिश की थी। १९४७ में २२ अक्टूबरसे कश्मीरका हमला शुरू हुआ था। यह हमला गवर्नर जनरल मोहम्मद अली जिन्नाके आदेशसे हुआ था, न कि बहुत-से हुड़दंगियों या ग़ैर सैनिकों-द्वारा। इस बार भी इस बातके विश्वसनीय सबूत मिले हैं कि इस हमलेको उकसानेके लिए प्रेजिडेण्ट अयूबसे ही इशारा मिला था। ५ जनवरी १९६५ को प्रेजिडेण्ट अयूबसे रावलपिण्डीमें मिलनेके बाद पाक अधिकृत कश्मीरके कठपुतली प्रेजिडेंट अब्दुल अमीद ख़ानने यह बताया कि उन्हें आश्वासन मिला है कि कश्मीरको मुक्त करनेके लिए अयूब और अधिक कड़े क़दम उठायेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुसलमानोंके लिए और विशेष रूपसे भारतके पाँच करोड़ मुसलमानोंके लिए अत्यन्त हानिकारक है। वस्तुतः पाकिस्तान कश्मीरकी प्रगति और वहाँकी जनताका सुख-चैन नहीं देख सका; और उसे यह भी डर लगा कि पाकिस्तान अधिकृत कश्मीरके लोग भी कहीं भारतके साथ मिलनेका आन्दोलन न करने लगें। और अपने इसी भयके कारण उसने कश्मीरपर—भारतपर—बर्बर आक्रमण किया। लेकिन भारतीय सेना और कश्मीरकी साहसी जनताने इतनी बड़ी चुनौती 'प्यारसे' स्वीकार की और फ़रेबी दुश्मनके सभी मनसूबोंको, सारे इरादोंको चूर-चूर कर दिया।

ठीक इसीके विपरीत स्थिति यह कि भारतने पाकिस्तानके आन्तरिक मामलोंमें कभी भी किसी प्रकारका हस्तक्षेप नहीं किया। यदि भारत भी चाहता तो वह भी सिन्ध, बलूचिस्तान और पूर्वी पाकिस्तानमें मुजाहिदोंको भड़का सकता था। लेकिन भारतने पाकिस्तानके विरुद्ध जब-जो भी क़दम उठाया वह उसकी कुटिल नीतियोंसे आत्म-रक्षाके लिए ही। मसलन इस ताज़े युद्धमें ही पहले पाकिस्तानने लुटेरोंको छद्म वेशमें घुस-पैठके ज़रिये कश्मीरके अन्दर भेजा। पहले पाकिस्तानने ही भारतीय क्षेत्रोंमें नागरिक बस्तियोंपर बमबारी की। कहना न होगा कि भारतने इन जघन्य कार्रवाइयोंके विरुद्ध बड़ी दृढ़ताके साथ आत्म-रक्षात्मक कार्रवाई की है। वास्तवमें पाकिस्तानकी जनताके मनमें आज भी भारतीय जनताके प्रति स्नेह है, वह मैत्री और भाई-चारेका सम्बन्ध रखना चाहती है; किन्तु वहाँके शासक—अयूब और मियाँ भुट्टो—जिस रास्तेपर चल रहे हैं या चलना चाहते हैं वह लाखों बेगुनाहोंकी मौत और खुलेआम बरबादीका रास्ता है।

राष्ट्रसंघमें पत्र-प्रतिनिधियोंके बीच एक अमेरिकी महिला पत्रकारके यह पूछनेपर कि कश्मीरमें जिन अतिक्रामकोंके कारण ५ सितम्बरसे स्थिति बिगड़ी है उन्हें नियन्त्रित कौन करेगा? आपकी माँगें पूरी हो जानेपर भी ये अतिक्रामक संकटका कारण बने रहेंगे?—मियाँ भुट्टोने बड़ी बेशरमी और सफ़ाईसे यह कहा था कि इन कथित अतिक्रामकोंके विरुद्ध कुछ घृणित आरोप लगाये जाते हैं। ये कथित अतिक्रामक कश्मीरी हैं और वे कश्मीरमें कोई 'हमला' करनेके लिए नहीं जाते। मियाँ भुट्टोने उदाहरण भी दिया कि जैसे टेक्सासका कोई व्यक्ति टेक्सासमें जाकर आक्रमण नहीं करता, या कैलीफ़ोर्नियाका कोई व्यक्ति कैलीफ़ोर्निया जाकर आक्रमण नहीं करता। कथित अतिक्रामक कश्मीरी हैं और वे आत्म-निर्णयके अधिकारके लिए संघर्ष कर रहे हैं! एक पाकिस्तानी पत्रकार-द्वारा यह पूछे जानेपर कि यदि यह मान भी लिया जाये कि इन तथाकथित अतिक्रामकोंपर पाकिस्तानका नियन्त्रण है तो क्या वैधानिक और सैनिक दृष्टिसे यह उचित होगा कि पाकिस्तान उन अतिक्रामकोंको कश्मीरसे वापस बुला ले? मियाँ भुट्टोने जवाबमें दूसरा झूठ पेश किया: भाई ये वो लोग नहीं हैं जिनपर पाकिस्तानी हुकूमत बरपा होती है। ये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तात्कालिक अपना हित और अहित अच्छी तरह पहचानते हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघकी महासभामें भी पाकिस्तानके परराष्ट्र मन्त्री मियाँ ज़ुल्फ़िक़ार अली भुट्टो अपनी झूठ हाँकनेसे बाज़ न आये। उन्होंने माँग की कि कश्मीरमें अधिशासी सत्ता सम्पन्न दल अर्थात् अफ्रो-एशियन शान्ति-सेना हो और बादमें विवादको समाप्त करनेके लिए जनमत-संग्रह हो। उन्होंने बड़ी 'दयनीयता'से कहा कि पाकिस्तान भारतके विरुद्ध 'सशस्त्र आक्रमणसे आत्मरक्षार्थ' संघर्ष कर रहा है। पाकिस्तान अपनी क्षेत्रीय अखण्डताकी रक्षा कर रहा है और जम्मू-कश्मीरकी जनताके आत्म-निर्णयके अधिकारकी 'पवित्रता' की रक्षा कर रहा है। और-तो-और 'पवित्रतम' मियाँ भुट्टोने बड़ी संजीदगीसे यह भी बताया कि पाकिस्तानने 'उपद्रव' (युद्ध नहीं!) उस समय आरम्भ किया जब भारतने लाहौर 'छीन लेने' की ग़रज़से 'आक्रमण' किया था। शायद मियाँ भुट्टोको यह भी समझाना होगा कि जनाब, अगर, बक़ौल आपके, भारत लाहौर 'छीन लेने' पर उतारू होता तो आप क्या—आपके आक़ा भी नहीं रोक सकते थे, और लाहौरपर आज शानसे तिरंगा लहराता होता। और यही नहीं, वहाँकी भोली-भाली जनता—जो रोटी और कपड़ेके लिए तरस रही है और जिन्हें तानाशाही हुकूमतने गोलियाँ दी हैं, बारूदका धुआँ पिलाया है और कभी न बुझनेवाली पेटकी आग दी है—आज सुख और चैनकी साँस लेती होती।

बात ऐसी नहीं है कि ये सचाइयाँ मियाँ भुट्टो या सदर अयूबको जानकारीमें न हों। लेकिन जहाँ 'सब कुछ जानकर भी अनजान बन जा' की नीति ही अपनानी है, जो केवल झूठ—और झूठ—और झूठके ही भरोसे जीने-साँस लेनेका आदी है उसे क्या कहा जा सकता है!

भारत-पाकिस्तान युद्धके दौरान पाकिस्तानी तानाशाही शासनने जितनी बड़ी संख्यामें और जितने प्रकारके झूठोंका सहारा लिया है—विश्वका कोई भी सम्मानित राष्ट्र उसे नज़रअन्दाज़ नहीं कर सकता। किन्तु विडम्बना है कि 'आँखदार' ब्रिटेन भी ऐसे मौक़ेपर अन्धा बनकर सामने आया। चीन-जैसा घिनौना देश तो पहलेसे ही दो हज़ार वर्गमील पाकिस्तान अधिकृत कश्मीरी भूमि पचाये डकार ले-लेकर मियाँ भुट्टो और अयूब-जैसे चहीते चेलोंकी पीठ ठोक रहा है। और अमेरिका? वह भी चोरी-छिपे अपनी बिगड़ी बिल्लीकी पूँछ सहला रहा है कि अभी भी समय है—वह लौटकर 'म्याऊँ' करना छोड़ दे। बहरहाल, तमाम पाकिस्तानी झूठके बावजूद यह एक बड़ी सचाई है कि पाकिस्तानने उन दिग्गज 'मूर्ख' राष्ट्रोंको बड़ी सफ़ाई और पुरकारीसे 'महामूर्ख' बनाया है और अभी आगे लगातार बनानेकी कोशिशें कर रहा है। कहना न होगा कि इस सन्दर्भमें वह 'साम्यवादी-'कम'-विस्तारवादी' चीनका पटु-शिष्य साबित हुआ है। चीनसे उसे खुली मदद मिलनेका भी आश्वासन मिला है। कौन जाने कुछ सामरिक सामग्री पाकिस्तानके हाथ आ भी गयी हो, वैसे चीनी हथकण्डोंको देखते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह सम्भावना कम ही है।

इस युद्धके दौरान पाकिस्तान रेडियोने भी झूठके नामपर हद कर दी। जानकार सूत्रोंका तो कहना है कि पाकिस्तान रेडियोसे प्रसारित होनेवाले समाचारों और युद्ध-सम्बन्धी कार्यक्रमोंमें केवल १५ % समाचार ही कुछ सच हैं अन्यथा शेष सभी मात्र झूठ, मनगढ़न्त और विश्वकी समझदार आँखोंमें धूल झोंकने-के लिए हैं। किन्तु समयके निकषने यह स्पष्ट कर दिया है कि इस नापाक पाकिस्तानकी यह नीति ही रही है—केवल छलावा, झूठ और धोखा !!! पाकिस्तान-रेडियो-द्वारा इस प्रकार-के प्रसारित झूठे समाचारोंके कुछ नमूने यहाँ देना अप्रासंगिक न होगा।

पाकिस्तानी रेडियोने दावेके साथ यह ख़बर प्रसारित की कि 'सशस्त्र अतिक्रामकोंने जम्मू और श्रीनगरके बीच संचार लाइन काट दी है'। लेकिन सचाई यह रही कि इस प्रकार-की कोई घटना नहीं घटी और जम्मू-श्रीनगर संचार लाइन दिन-रात सामान्य रूपसे चलती रही और उसका भरपूर उपयोग बराबर होता रहा।

भारतीय नभ-सेनाके साहस, रण-कौशल और उसकी उपलब्धियोंको देखकर विश्वके सभी बड़े राष्ट्र विस्मयकी स्थितिमें हैं। पाकिस्तानको भीखमें मिले अमेरिकी सैबरजेटों और स्टार फ़ाइटरोंकी हालत ख़राब कर दी भारतमें निर्मित 'नैट' विमानोंने। इस सन्दर्भमें वास्तविक स्थिति अभी भी गोपन बनी हो, ऐसी बात नहीं है। किन्तु पाकिस्तानी सेना-के प्रधानने फ़रमाया और जिसे रेडियो पाकि-स्तानने प्रसारित किया कि इस पूरी लड़ाईमें पाकिस्तानके कुल चौदह हवाई जहाज़ बरबाद हुए हैं जिनमें-से दो तो उतरने और चढ़नेके सिलसिलेमें टूट गये और तीन पाकिस्तानी विमान-भेदी तोपों, की ही मारसे जमीनपर आ गिरे। कहा जा सकता है—पाकिस्तानी सेनाके प्रधान और सदरे-झूठ जनरल अयूब-खाँका गणित-ज्ञान काफ़ी 'स्तरीय' है। तथ्य तो यह है कि इस सारे युद्धमें दुश्मन पाकि-स्तानके ७० से भी अधिक विमान नष्ट हो गये हैं और भारतके इससे आधे ही ख़राब हुए हैं। कहना न होगा कि पाकिस्तानी रेडियोकी बातपर विश्वास किया जाये तो भारतीय नभ-सेना अबतक लगभग नष्ट हो जानी चाहिए और इतना ही नहीं, उसे अपने पड़ोसी दुश्मनके सामने आत्म-समर्पण भी कर देना चाहिए ! लेकिन वस्तुतः शक्ति किसकी क्षीण हुई है, यह इसीसे समझा जा सकता है कि पाकिस्तानी वायुसेनाके प्रधान एक बहुत बड़ा काफ़िला लेकर हाँफते हुए पीकिंग जा पहुँचे और उन्होंने-चीनी मिग-१७ विमानोंकी माँग ही नहीं की, उसे चलानेका तरीक़ा भी सीखनेकी ख़्वाहिश ज़ाहिर की। पाकिस्तानी नाक तो उसी समय कट गयी थी जब युद्ध प्रारम्भ हुए शायद दस दिन भी नहीं बीते थे कि सदरे-झूठ और मियाँ भुट्टोने तुर्कीके सामने झोलियाँ फैला दी थीं—या अल्लाह रहम कर !!

पाकिस्तान रेडियोकी ही एक ख़बर यह भी तो है कि भारतके पास जो एक दर्जन मिग–२१ थे, वे सबके सब नष्ट कर दिये गये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

...ही गये हैं। लेकिन अब कौन समझाये इन ...और झूठ 'विशेषज्ञों'को कि हमारे ...एक दर्जन नहीं—कुल नौ मिग-२१ थे ...से आठ तो यूँ ही खड़े हैं, और उन्हें कोई ...पहचान' आदमी आकर देख सकता है, ...आप नहीं।

हालात तो ये है कि 'साहसी' पाकिस्तानी ...ने युद्धके एकदम पहले दिन छह ...जेटोंके साथ एक भारतीय हवाई अड्डे पर ...किया जहाँ तीनको तुरत हमारे 'नैट' ...ने मार गिराया, एक विमानभेदी ...का शिकार हुआ और शेष दो अपनी जान ...कर भागनेके प्रयासमें आपसमें ही टकरा- ...समाप्त हो गये।

हाँ, पाकिस्तानी नभ-सेनाको भी सफल- ...मिली हैं। ये सफलताएँ नापाक पाकि- ...के लिए 'बड़ी सफलताएँ' अवश्य साबित ...सकती हैं किन्तु समूची मानवताके नाम- ...ये सफलताएँ कोढ़का दाग़ बन गयी हैं। ...-विरामको स्वीकार करते हुए और शान्ति- ...हामी भरते जब मियाँ अयूब रेडियो ...किस्तानसे अपने मुल्कके नाम सन्देश ...प्रसारित कर रहे थे उनके बहादुर नभ-सेनाके ...विमानोंमें एक हज़ार पौण्डके बम लाद ...थे। और उसी रात अम्बालाके सैनिक ...किसालयपर, नागरिक बस्तियोंपर और ...पॉल गिरजाघरपर इन भेड़ियोंने धुआँधार ...बरसाये। रोगियोंकी जानें गयीं, भोली- ...जनता आगमें झुलसी और गिरजाघर ...हो गया। अतिरिक्त इसके अमृतसर, ...आदि शहरोंमें नागरिक बस्तियोंपर पाकिस्तानी विमानोंने बमबारी की। २३ सितम्बरको राष्ट्रसंघमें मियाँ भुट्टो-द्वारा युद्ध-विराम स्वीकार करनेकी घोषणाके कुछ ही घण्टे बाद पाकिस्तानी विमानोंने अमृतसरसे पश्चिम छहरटा नगरपालिकाके क्षेत्रमें दिन-दहाड़े भीषण बमवर्षा की। उस दिन छहरटा-में पाँच पाकिस्तानी विमान छिपकर बहुत नीचेसे उड़ते हुए आये जिनमें तीन बम बरसा रहे थे और दो विमान मशीनगनोंसे गोलियाँ चला रहे थे। बमवर्षकोंने एक-एक हज़ार पौण्डवाले बम मकानों और खेतोंपर गिराये। दोनों युद्धक विमानोंने मशीनगनोंसे इतनी बेरहमीके साथ गोली वर्षा की कि मकानोंकी दीवारें छलनी हो गयीं। पाकिस्तानी बमबारी इतनी भयानक थी कि इससे न केवल मकान धराशायी हुए बल्कि ज़मीनमें गहरे गढ्ढे हो गये। एक बच्चेका शव धड़ाकेमें उड़कर बिजलीके तारपर लटक गया। इस आक्रमण-की भयानकताका अनुमान इसीसे लगाया जा सकता है कि हमारी ओरसे प्रतिरक्षात्मक रूप-से विमानभेदी तोपोंके गोले उगलनेसे पहले ही आततायी विमान ५६ आदमियोंको मृत और लगभग १०० को घायल कर निकल भागे। यह ध्यान रखनेकी बात है कि यह बर्बर पाकिस्तानी आक्रमण युद्ध-विराम स्वीकार किये जानेके बाद हुआ था। इसी सन्दर्भमें हम गुजरातके मुख्य मन्त्री श्री मेहताके विमानपर किये गये दुश्मनके जघन्य आक्रमण-को भी स्मरण कर सकते हैं।

पाकिस्तानी तानाशाहीकी नंगी करतूतों-का एक और उदाहरण जम्मूसे अठारह मील

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूर सुजवाँ ग्राम है। युद्ध-विरामसे पहले, १६ सितम्बरकी रातको पाकिस्तानी जेट विमानोंने इस गाँवपर भयानक नेपाम बम बरसाये। भारी संख्यामें ग्रामवासी निर्दयतापूर्वक मारे गये और हताहत हुए। उस रात पूरा गाँव चाँदनीमें डूबा—गहरी नींदमें सोया हुआ। भोले ग्रामीण दमघोंट धुएँ और धमाकोंको भूल गये थे कि अचानक सात पाकिस्तानी जेट विमान आसमानपर मँडराने लगे और उन्होंने एकाएक बमबारी शुरू कर दी। दुश्मनोंने इतनी भयानक बमबारी की कि चालीस फ़ीट गहरे और साठ फ़ीट गोल अनेक गड्ढे हो गये जिनमें भारी संख्यामें बच्चे, स्त्रियाँ, पुरुष और पशु हमेशाके लिए समा गये। अनेक मकान धराशायी हो गये। ढेरों पशु बमबारीमें झुलसकर राख हो गये। एक बम एक विशाल वृक्षपर गिरा और वह जड़ों-समेत उड़कर सौ फ़ीट दूर जा गिरा। गुरुद्वारा ध्वस्त हो गया। पूरा गाँव देखते-ही-देखते बरबाद हो गया। जो लोग इस आक्रमणके बाद शेष बचे उन्हें देख सहज ही लोगोंकी करुणा उमड़ी, आँखें भर आयीं। इन्दिराजी भी इस गाँवमें गयीं और वे भी आततायियोंकी बर्बरता नहीं देख सकीं; उनकी आँखें डबडबा गयीं। गाँवके अधिकांश जन और पशु तो मौतके मुँहमे गये, जो शेष बचे उनमें किसीकी टाँग टूट गयी, किसीकी आँखें खो गयीं, और कोई चुपचाप पड़ा बस टुकुर-टुकुर ताकता व्यंग्य करता रहा सभ्य मानवकी विकास-गाथापर……। यहीं उल्लेखनीय बात यह भी है कि जिस नेपाम बमका प्रयोग पाकिस्तानने किया था वह अमेरिकी नभ-सेनाकी सम्पत्ति थी और उसका प्रयोग अन्तर्राष्ट्रीय स्तरपर किसी भी युद्धमें अवैधानिक क़रार दिया गया है।

—और इन सारी करतूतोंके बाद भी १ अक्तूबरको अपने मुल्कको सम्बोधित करते हुए मियाँ अयूब खाँने कितनी बेशरमीसे यह भी कहा था कि युद्ध-विरामके बाद भी भारत सभी प्रकारकी उत्तेजनात्मक कार्रवाई कर रहा है और युद्ध-विरामकी अवहेलना करता जा रहा है। भारत राष्ट्रसंघीय प्रेक्षकोंको 'धोखा' देना चाहता है। अयूबने अपने झूठकी सफ़ाई देते हुए यह भी कहा था कि हम लोगोंने बड़ा धैर्य रखा है किन्तु भारतीय शासक यह न भूल जायें कि हमारी सेनाएँ अपनी रक्षाकी प्रथम पंक्तिपर आरूढ़ हैं। ये हर चुनौतीका समुचित रूपसे उत्तर देनेको तैयार हैं……।

वास्तवमें नापाक पाकिस्तानकी ये सारी छल और धोखेसे भरी करतूतें चीनसे साँठ-गाँठका परिणाम हैं। राजनयिक सूत्रोंका तो यह कहना ही है कि पाकिस्तानका युद्धोन्माद चीनी सहयोग मिलनेके कारण है। 'वाशिंग्टन पोस्ट' ने २० सितम्बरके अंकमें लिखा है कि पाकिस्तान और चीनमें इस बातकी साँठ-गाँठ हो गयी थी कि यदि पाकिस्तानी गुरिल्ला कश्मीरमें विद्रोह भड़कानेमें सफल हो जाते हैं तो चीन भी अपने हमदम पाकिस्तानकी मददके लिए युद्धमें कूदेगा। और यह सही भी है। इधर कुछ समयसे भारतके नये दुश्मन चीनके बताये-सुझाये रास्तेपर नापाक पाकिस्तानने चलनेकी क़सम ले ली थी—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपसे भारतपर किये गये चीनी
मणके बादसे। पाकिस्तानकी अन्धभक्ति
धिक बढ़ी कि वह चीनकी रीतियों और
तियोंको आँख मूँदकर आत्मसात् करने
ा। जिस समय चीनने भारतपर आक्रमण
या था उसने भी यही गुहार लगायी थी
भारतने उसकी भूमिपर आक्रमण किया
। और यही नीति गुमराह पाकिस्तानी
नाशाहोंने भी अपनाकर चिल्लाना शुरू
या कि भारतने पाकिस्तानपर हमला किया
। लेकिन इस सबके बावजूद यह आशा की
जा सकती है कि एक समय आयेगा जब
किस्तानी तानाशाहोंकी आँखें खुलेंगी और
चीनकी विस्तारवादी नीतिसे सही अर्थोंमें
चित हो सकेंगे।

मियाँ भुट्टोने इस युद्धके दौरान, सारे
तिहासको भुलाते हुए, एक टिप्पणी की थी
भारतने पिछले तेरह सौ वर्षोंमें कभी
ई लड़ाई नहीं जीती है और अब उसे
तिहास बदलनेकी कोशिश नहीं करनी
हिए। क्या यह उचित न होगा कि मियाँ
ट्टो इस प्रकारकी थोथी और ऊलजलूल
तक़रीरें, भले ही छिपाकर, किसी 'पाक'
शीशेमें अपना चेहरा देखकर मुँहसे निकाला
करें! मियाँ भुट्टोको यह जानना चाहिए कि
पुराने समयमें केवल राजा-महाराजाओंके
इशारोंपर युद्ध होते थे और उनकी विजय
और पराजयपर सारी जनताका भविष्य निर्भर
रहता था। लेकिन आज भारतके सैंतालीस
करोड़ लोग, अपनी जान हथेलीपर लिये
करोड़ों 'लड़ैते लाल' इतिहासकी धार मोड़नेमें
समर्थ हैं, वे सफल होंगे। वे मियाँ भुट्टो और
सदरे-झूठको यह अच्छी तरह बता देंगे कि
तुम—और तुम्हारे नापाक इरादे कितने
'पानी' में हैं! यह लड़ाई भारत और पाकि-
स्तानकी जनताके बीच नहीं है, यह लड़ाई
जनतन्त्र और बर्बर तानाशाहीके बीच है।
भारत यह सिद्ध कर देगा कि यह देश इस
लड़ाईको झेल सकता है। वह अयूब और
भुट्टोकी ही नहीं, माओ-चाओकी भी बड़े
ढंगसे ख़बर ले सकता है। यह एक ध्रुव
सत्य है : विजय लोकतन्त्रकी ही होगी,
विजय केवल सत्यकी होगी।

■ ■

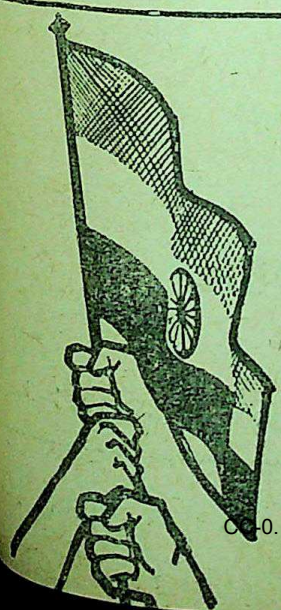

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

झंडा ऊंचा रहे हमारा

With Compliments from :—
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

GRAM : PAPERBOARD
PHONE : 55–5765

Bagla Supply Company

WASTE PAPER MERCHANTS &

PAPER MILL SUPPLIER

98 B. K. Paul Avenue

Calcutta-5.

FOR

NON-FERROUS METAL

VIZ

BRASS & COPPER RODS, SHEETS, WIRES
PHOS, BRONZE SHEETS RODS & WIRES
COPPER TAPES, STRIPS & BUSBARS
GAS WELDING RODS
BRASS STRIPS & TAPES
GUN METAL & BRONZE CASTINGS
TINSOLDER & WHITE METAL

ENQUIRE

ORIENT TRADERS

42/1, STRAND ROAD,
CALCUTTA–1.

Telegram : RODWIRE Telephone : 33-9771-3

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोकुलचन्द्र जैन

प्राचीन भारतीय युद्ध-विज्ञान

प्राचीन भारतीय साहित्यसे भारतीय युद्ध विज्ञान-विषयक पर्याप्त जानकारी मिलती है। वैदिक जन प्रार्थना करते थे कि हे इन्द्र, जो शत्रु हमारे विरोधमें सेना संग्रह करते हैं, उन्हें नष्ट करो!—(ऋग्वेद मण्डल १, सू. १३२, मन्त्र ६) सेनामें रथ, अश्व और पदाति सैनिकोंकी मुख्यता रहती थी (वही १।३७।१२, १।७४।९)। शत्रुसे रक्षाके लिए दुर्गोंका निर्माण किया जाता था। ऐसे आयुधोंका भी आविष्कार हो चुका था जिससे अभेद्य दुर्गोंको नष्ट किया जा सके। इन्द्र तथा विष्णुने शम्बरके निन्यानबे दुर्गोंको नष्ट किया था। (इन्द्राविष्णू दृंहिताः शम्बरस्य नव पुरो नवतिं च श्नथिष्टम् ७।९९।५) उस समय दुर्गको पुर कहते थे। युद्धमें हारकर शम्बर पीछे हटता गया और इन्द्र उसे खदेड़ता गया। इन्द्रके पास एक विशिष्ट हथियार वज्र था, जिसके द्वारा वह दुर्गोंको नष्ट करता था। शम्बरके निन्यानबे पुर या दुर्गोंको जीतकर इन्द्र पुरन्दर कहलाने लगा।

रामायण और महाभारत युग तक युद्ध-विज्ञान पूर्ण रूपसे विकसित हो चुका था। युद्ध-विज्ञानकी विधिवत् शिक्षा दी जाती थी, सेनाके विभिन्न अंगोंका व्यवस्थित रूपसे गठन किया जाता था। शस्त्र-अस्त्रोंके निर्माण तथा युद्धके अन्य उपकरणोंके उत्पादनकी ओर पर्याप्त ध्यान दिया जाता था। युद्धके विभिन्न प्रकार आविष्कृत हो चुके थे और राजनीतिकी संहिताएँ बन चुकी थीं। राम और रावणके

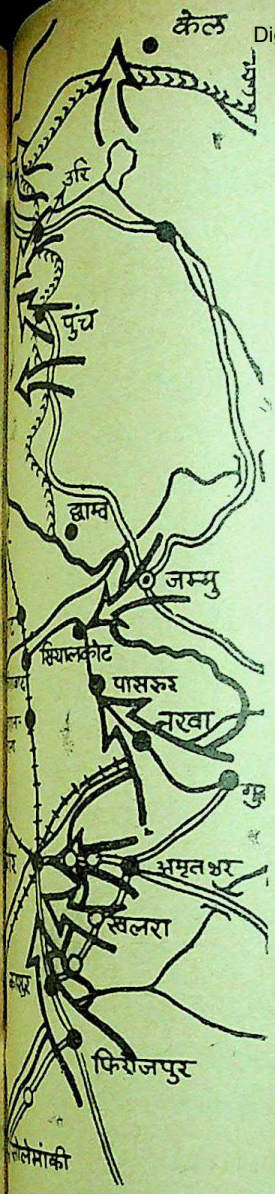

के नक्शेमें भारत-पाक रणनीति एवं दुश्मन-आक्रमण करनेका क्षेत्र स्पष्ट है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

बीच जो युद्ध हुआ वह अनुपमेय कहा जाता है—रामरावणयोर्युद्धं रामरावणयोरिव। रावणके पास अपना निजी अतुल्य सैन्यबल था। रामकी सेनामें विभिन्न राजे अपनी-अपनी सेना लेकर आ मिले थे।

राम लक्ष्मण दोनों भाई स्वयं भी युद्ध-विद्यामें पारंगत थे। वानर यूथपति व्यूह-रचनामें विशेष दक्ष थे। सेतु-रचनामें उन्होंने जो तत्परता दिखायी उससे युद्ध-विद्याकी सर्वांगीण शिक्षाका पता चलता है। रामकी सेनाने लंकाको घेरकर जो नाकाबन्दी की उससे उनकी रण-चातुरीका पता चलता है।

● सैन्य बल

सेनाके चार प्रमुख अंग थे रथ, हाथी, घोड़े तथा पैदल सैनिक। चारों प्रकारकी संगठित सेनाको चतुरंगिणी कहा जाता था। सेनाकी सबसे बड़ी इकाई अक्षौहिणी कहलाती थी। भरतकी सेनामें नौ हज़ार हाथी, (नवनागसहस्राणि) साठ हज़ार रथ (षष्टिरथसहस्राणि), एक लाख अश्वारोही (शतं सहस्राण्यश्वानां) तथा विविध आयुधधारी असंख्य सैनिक थे।

जब सेना युद्धके लिए कूच करती तो उसके साथ मार्ग ठीक करने, शिविर स्थापित करने, पुल बनाने आदिके लिए विभिन्न प्रकारके कर्मकर लोग शामिल होते। जैसे-भूमिप्रदेशज्ञ, सूत्रकर्मविशारद, खनक, यन्त्रज्ञ, कर्मान्तिक, स्थपति, सूपकार, रथकार इत्यादि (अयोध्या काण्ड ८०।१-३)

स्थलसेनाके अतिरिक्त नौसेनाका गठन भी बहुत ही व्यवस्थित था। शृंगवेरपुरके गुहराजके पास अनेक नावें थीं। भरतकी अक्षौहिणीको देखकर उन्होंने पाँच सौ नावोंको घाटपर स्थित रहनेकी आज्ञा दी। प्रत्येक नावमें सौ सशस्त्र योद्धाओंको युद्धके लिए सन्नद्ध रहनेका आदेश दिया गया। (अयोध्या-काण्ड ८३।८)

जहाँसे किसी भी प्रकारके आक्रमण आदिकी आशंका होती थी वहाँपर स्थायी रूपसे सैन्य संनिवेश (छावनियाँ) बना दी जाती थीं। रावणने मस्नद-करुष तथा जनस्थानमें ऐसे सन्निवेश बना रखे थे।

सेनाकी विभिन्न टुकड़ियोंको संख्याके अनुसार नाम दिये गये थे। सबसे छोड़ी टुकड़ीको पत्ति कहते थे। इसमें एक रथ, एक हाथी, एक घोड़ा तथा पाँच पदाति सैनिक होते थे। इससे आगेकी इकाइयाँ क्रमशः सेनामुख, गुल्म, गत, वाहिनी, पृतना, चमू, अनीकिनी तथा अक्षौहिणी कहलाती थीं। अक्षौहिणी सबसे बड़ी इकाई थी। इसमें इक्कीस हज़ार आठ सौ सत्तर रथ, इतने ही गज, पैंसठ हज़ार छह सौ दस अश्व तथा एक लाख नव हज़ार तीन सौ पचास पदाति सैनिक होते थे। सबसे बड़ी इकाईका अधिपति सेनापति कहलाता था। (महाभारत आदि पर्व १। १९–२७)

प्राचीन भारतीय युद्ध-विज्ञानकी ठीक जानकारीके लिए उसके कुछ विशेष अंगोंको पृथक्-पृथक् जान लेना अपेक्षित है।

● व्यूह-रचना

प्राचीन भारतमें व्यूह बनाकर युद्ध करते थे। व्यूह रचनाका प्रारम्भ बहुत प्राचीन

Digitized By Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कालमें हो चुका था और महाभारत काल तक पर्याप्त विकसित भी। कौरव और पाण्डवोंके युद्धका चक्रव्यूह अति प्रसिद्ध है। कौटिल्यने १२ प्रकारके व्यूह तथा उनको नष्ट करनेके विषयमें जानकारी दी है। जैसे—

१. प्रकृति व्यूह, २. दण्ड व्यूह, ३. भोग व्यूह, ४. असंहत व्यूह, ५. प्रदर व्यूह, ६. दृढ़ व्यूह, ७. असह्य व्यूह, ८. श्येन व्यूह, ९. चाप व्यूह, १०. चाप कुक्षि व्यूह, ११. प्रतिष्ठ व्यूह, १२. सुप्रतिष्ठ व्यूह, १३. विजय व्यूह, १४. चमूमुख व्यूह, १५. क्षपास्त्र व्यूह, १६. सूची व्यूह, १७. वलय व्यूह, १८. दुर्जय व्यूह, १९. योग व्यूह, २०. सर्प व्यूह, २१. गो-मूत्रिका व्यूह, २२. शकट व्यूह, २३. मकर व्यूह, २४. पारिरान्तिक व्यूह, २५. मण्डल व्यूह, २६. सर्वतोभद्र व्यूह, २७. असंकृत व्यूह, २८. वज्र व्यूह, २९···३०. गोधा व्यूह, ३१. उद्यानक व्यूह, ३२. काकपक्षीय व्यूह, ३३. अर्धचन्द्रीय व्यूह, ३४ कर्कट शृंगी व्यूह, ३५. अरिष्ट व्यूह, ३६. गरुड़ व्यूह, ३७. अचल व्यूह, ३८. अप्रतिहत व्यूह, ३९. वराह व्यूह, ४०. गरुड़ व्यूह, ४१. चक्रव्यूह और ४२. पद्म व्यूह।

इन व्यूहोंको एक-दूसरेसे नष्ट किया जाता था। जैसे प्रदर व्यूहको दृढ़ व्यूहसे, दृढ़ व्यूहको असह्य व्यूहसे, श्येन व्यूहको चाप व्यूहसे इत्यादि।

• शस्त्रास्त्र

युद्धमें प्रयोग आनेवाले शस्त्रास्त्रोंमें छत्तीस प्रकारके आयुधोंकी जानकारी विशेष रूपसे उपलब्ध होती है। प्राचीन शस्त्रोंमें धनुष

पाक-भारत युद्धके आख़िरी दिन—

(युद्धसे युद्ध विराम तक)

पश्चिमी पाकिस्तानके विभिन्न अंचलोंमें हमारी सेना कहाँ कितनी दूर तक घुस गयी है, उसका विवरण निम्न-प्रकार है :

लाहौर अंचल : आठसे १० मील तक।

स्यालकोट अंचल : १५ से १६ मील तक।

बाडमेर अंचल : ३० मील तक।

डेरावाबा नानक क्षेत्र : तीन या चार मील तक।

फ़िरोज़पुर अंचल : कहीं-कहीं कुछ मील तक।

पश्चिमी पाकिस्तानके विभिन्न अंचलोंमें घुसनेके अलावा हमारी सेनाने जम्मू-कश्मीरमें युद्धविराम रेखा पार करके करगिल, तिथवाला, उड़ी, पुंछ आदि अंचलोंमें भी पाक अधिकृत कश्मीरमें कई-कई मील तकके क्षेत्रपर क़ब्ज़ा कर लिया है।

सबसे प्रधान था। धनुष कई प्रकारके होते थे तथा उनके द्वारा प्रयोग होनेवाले बाण या तीर भी कई प्रकारके होते थे। महादेवका धनुष पिनाक, विष्णुका शार्ङ्ग, कर्णका काल-पृष्ठ तथा अर्जुनका गाण्डीवके नामसे प्रसिद्ध था। प्रत्येक सैनिक अन्य शस्त्रोंकी शिक्षा ले या न ले धनुष चलाना अवश्य सीखता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसीलिए 'धनुर्धर' शब्द सैनिकका पर्यायवाची-सा हो गया था। और आयुध शास्त्र या शस्त्र-विज्ञान धनुर्वेद कहा जाता था। प्रक्षेपास्त्र होनेके कारण धनुषका विशेष महत्त्व था। कुशल-धनुर्धर शब्दको सुनकर निशाना बाँध सकता था।

बाण या तीरोंमें बैतस्तिक तीर सबसे भयंकर होता था। यह पूरा शरीरमें प्रवेश कर जाता था। महाभारत और समुद्रगुप्त प्रशस्तिमें इसके उल्लेख आये हैं। हिन्दीके कवि बिहारीने नाविकके तीर कहकर इस ओर संकेत किया है :—

सतसैया के दोहरे ज्यों नाविक के तीर।
देखत में छोटे लगें घाव करें गम्भीर॥

धनुषकी शिक्षाके विषयमें सोमदेवने (९५९ ई०) विस्तारसे जानकारी दी है।

अन्य अस्त्रोंमें यशस्तिलकमें बारह प्रकारकी तलवारों तथा अन्य छत्तीस शस्त्रास्त्रोंकी जानकारी आयी है। असिधेनुका या शस्त्री, कर्तरी, कटार, कृपाण, खड्ग, कौक्षेयक, तरवारि, करवाल, भुसुण्डि, मण्डलाग्र, असिपत्र तथा निस्त्रिंश, ये बारह प्रकारकी तलवारें थीं। इनके अतिरिक्त अशनि या वज्र, अंकुश, कणय, परशु या कुठार, प्रास, कुन्त, भिन्दिपाल, करपत्र, गदा, दुस्फोट, मुद्गर, परिघ, दण्ड, पट्टिस, चक्र, भ्रमिल, यष्टि, लांगल, शक्ति, त्रिशूल, शंकु, पाश, वागुरा, क्षेपणिहस्त तथा गोलधर प्रधान शस्त्रास्त्र थे। विष्णुधर्मोत्तरपुराणके एक पूरे अध्याय (१५०) में शस्त्रास्त्रोंका वर्णन है जिसमें अनेक नये नाम हैं।

शस्त्रास्त्रोंकी शिक्षा क्षत्रिय कुमारोंको प्रारम्भसे ही दी जाती थी। अठारह वर्षकी आयुमें वह इस योग्य हो जाता था कि उसे कवचहर कहते थे।

● सैनिककी वेश-भूषा—

सैनिककी वेश-भूषामें इस बातका विशेष ध्यान रखा जाता था कि वह शत्रुका शस्त्र-प्रहार सहन कर सके तथा अपने शस्त्र प्रयोगमें किसी प्रकारकी बाधा उत्पन्न न करे। सोमदेवने विभिन्न प्रदेशोंकी सेनाकी वेश-भूषाका विस्तारसे वर्णन किया है (यशस्तिलक अ० ३) शत्रुके आघातोंके बचावके लिए विशेष प्रकारके शिरस्त्राण और कवच पहने जाते थे। कौटिल्यने बारबाण नामक एक विशेष प्रकारके कवचका उल्लेख किया है। बारबाण घुटने तक लम्बे एक प्रकारके शाही कोटको भी कहा जाता था। भारतमें यह सासानी वेश-भूषासे आया।

● युद्धके वादित्र

सैन्यको उत्साहित करनेके लिए विशिष्ट वाद्य यन्त्र बजाये जाते थे। खास तौरपर—१ शंख, २ काहला, ३ दुन्दुभि, ४ पुष्कर, ५ ढक्का, ६ आनक, ७ भम्भा, ८ ताल, ९ करटा, १० त्रिबिला, ११ डमरुक, १२ हुंजा, १३ जयघण्टा, १४ पटह, १५ भेरी, १६ तूर तथा १७ डिण्डिमका प्रयोग अधिक होता था। शंख फूँक गया कि योद्धाओंके मन जाग उठे। काहलाएँ फूँकी गयीं तो प्रफुल्लित हो गये। दुन्दुभि बजी कि युद्धकी तैयारी या विजयकी खुशीमें नाच उठे। और पुष्कर, ढक्का,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नक, पटह, भेरी, तुर तो जैसे उन्हें युद्धमें दे बढ़ते। तबलेके नादपर जैसे नर्तकके पैर थिरकते हैं, तन्त्रीके रवपर जैसे गायकका स्वर गत देता है वैसे ही इन रण वाद्योंके नाम योद्धाओंमें शक्तिका संचार करते और वे और-और दो गुने उत्साहसे जूझनेमें जुट आते।

युद्धकी आचार-संहिता

वैदिक कालमें युद्धकी आचार संहिताओंका ठीक-ठीक पता नहीं चलता किन्तु रामायण और महाभारत कालमें इनका पूर्ण विकास हो चुका था। साम, दाम, दण्ड और भेदके द्वारा युद्धको टालनेका पूरा प्रयत्न किया जाता था। फिर भी यदि अनिवार्य हुआ तो युद्धकी घोषणा की जाती और शत्रु राजाको अपनी सेनाके साथ युद्धका आमन्त्रण भेजा जाता था कि या तो वह आकर अधीनता स्वीकार करले या युद्ध करे। और इस प्रकार दोनों ओरसे सेनाएँ तैयार होकर युद्ध-क्षेत्रमें पहुँचतीं।

युद्ध सेनाओंके बीच हुआ करते थे। यद्यपि सैनिक प्रयाण और युद्धका प्रभाव परोक्ष रूपसे प्रजाके जन-धनपर भी पड़ता था पर युद्धके नियमोंके अनुसार धन-जनको क्षति न पहुँचे इसका प्रयत्न किया जाता था।

साधारणतया युद्ध दिनमें होते थे और सन्ध्या होते ही युद्धबन्दीकी घोषणा कर दी जाती। निशाचरी युद्ध रातमें लड़े जाते थे। इसे शाम्बरी माया भी कहते थे। सम्भवतया इस युद्धका आविष्कार शम्बरने किया हो। घटोत्कचका युद्ध रात्रिको ही हुआ था।

राज्य तन्त्रके नियमोंके अनुसार दूतको अवध्य माना जाता था। भले ही वह युद्ध-

राष्ट्रमन्त्र

युद्धमें	—	संकल्प
पराजयमें	—	अवज्ञा
विजयमें	—	उदारता
शान्तिमें	—	सद्भावना

—चर्चिल

का निमन्त्रण लेकर आये फिर भी उसे मारा नहीं जाता था। इसी तरह रथ-सैन्यमें सारथि-को नहीं मारते थे। स्त्री, बच्चे तथा आत्म-समर्पण करनेवाले राजाओंका भी वध नहीं किया जाता था।

बहुत बार ऐसा भी होता था कि दो राजे परस्परमें यह विचार करते कि सेनाका अनावश्यक विनाश न हो इसलिए वे दोनों ही द्वन्द युद्ध करके विजयका निर्णय करते थे। भरत और बाहुबलिने सैन्य-युद्धको रोककर द्वन्द्वयुद्धको उचित समझा और दृष्टियुद्ध, बाहुयुद्ध तथा जलयुद्धके द्वारा जय-पराजयका निर्णय किया।

युद्धकी आचार संहिताके अनुसार प्रायः प्रत्येक युद्ध धर्मयुद्ध होता था किन्तु आचार-संहिताओंके अतिक्रमणके भी उल्लेख मिलते हैं। महाभारतमें अश्वत्थामाने पाण्डुपुत्रोंकी हत्या रात्रिमें इसी प्रकार की थी। कई बार शत्रु राजा दूतके द्वारा जो प्राभृत या सन्देश भेजते थे, उसमें भी ऐसी सामग्री भेज देते थे कि प्राभृत देखने और अभिलेख पढ़नेमें भी विषके संचारसे अभिभूत होकर राजा मर जाते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• संग्राम समिति

युद्धकी घोषणा करने न करनेका विचार राजा अपने मन्त्री सेनापतिसे विशेष रूपसे करता था। गुप्तचर तथा दूतोंकी सूचनाओंके आधारपर सन्धीनामक मन्त्री राजाको युद्ध करने-न-करनेकी सलाह देता था। और उसके बाद सेनापतिसे इस विषयमें परामर्श किया जाता था। सिन्ध, विग्रह (युद्ध), आसन (तरह देना), द्वैधीभाव (शत्रुसेनामें फूट डालना) तथा संशय (अपनेको कमज़ोर बताकर शत्रुको भ्रममें डालना)—इन छह अंगोंपर विशेष रूपसे विचार किया जाता था। देश-कालका विचार करना भी आवश्यक माना जाता है।

• आक्रमणका प्रतिरोध

शत्रुके आक्रमणको रोकनेके लिए एक ओर सैन्य संगठन किया जाता था दूसरी ओर नगर आदिका निर्माण पूर्ण सुरक्षात्मक ढंगसे किया जाता था। नगरके चारों ओर प्राकार या चहार दीवारी तथा परिखा या गहरी-चौड़ी नहर होती थी। प्राय. चार दिशाओंमें चार मुख्यद्वार होते थे। शत्रुके आक्रमणको यदि बाहरसे ही न रोका जा सका तो ये द्वार बन्द कर दिये जाते थे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्राचीन भारतमें युद्ध-विज्ञानका पूर्ण विकास हो चुका था। इस विषयकी बहुत-सी सामग्रीका आकलन श्रीरामचन्द्र दीक्षितने अपनी पुस्तक 'वार इन एन्शियण्ट इण्डिया' तथा श्री रामदीन पाण्डेयने 'प्राचीन भारतकी सांग्रामिकता'में किया है। वास्तवमें सम्पूर्ण सामग्रीका समालोचनात्मक ढंकसे उपयोग करके एक और पुस्तक लिखा जाना अपेक्षित है। ■■

महिलोपयोगी एकमात्र उत्कृष्ट मासिक

'शृङ्गार'

प्रबन्ध सम्पादक : देवेन्द्र अग्रवाल • सम्पादिका : लावण्यप्रभा

- विचारपूर्ण व उपयोगी लेख
- स्त्रियोपयोगी रुचिकर सामग्री
- रोचक मनोवैज्ञानिक कहानियाँ
- कविताएँ तथा सुन्दर गीत
- महिलाओंके इण्टरव्यू
- गृह-सज्जा, प्रसाधन समस्याएँ, विचार-मंच आदि अनेक रोचक स्थायी स्तम्भ।

मूल्य : वार्षिक : ५ रुपये, मासिक : ५० पैसे

१३।३७, शक्तिनगर, दिल्ली–७

फ़ोन नं० : २२७३००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Cable : "BOLTSWALA" Calcutta-1
" Delhi.
PHONE : 33-4441
22-6262

Ramjilal Ramsaroop

62-1 A, Netaji Subhas Road,
CALCUTTA.

Manufacturers' Representatives
Importers & Exporters
Head Office

Hauz Kazi, DELHI
Stockists of :

Bolts, Nuts, Rivets, Washers, Woodscrews,
Hinges & Coach Screws Etc.

WITH BEST COMPLIMENTS OF :

The Cardboard Box Mfg. Co.

38, Colootola Street,
CALCUTTA-7.

"USE MORE PACKAGING—SAVE MORE WOOD"

Gram : STRAWBOARD

Phone : 34-2666 (2 lines)
34-4777

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With Best Compliments :

DHUR-TIN-FACTORY

1, Sarat Chandra Dhur Rd.
CALCUTTA–50.

PHONE : 56–3184

Telegram : "VARNISH"

Telephone : 23–7626
23–7627

(Established—1921)

High Class Paints & Varnishes

MURARKA

Makers of High Class Paints, Varnishes, Enamels,
Zinc Oxide Dry, Red Lead.

The Murarka Paint & Varnish Works (P.) Ltd.

Regd. Office :
4 E, Dalhousie Square, 29, Stephen House, Calcutta.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युद्ध-भूमिपर घूमता हुआ रथ

कुन्था जैन

वर्तमान भारत-पाक-संघर्षका एक ऐसा वृत्तचित्र, जिसमें इतिहास और इति-वृत्त ही नहीं उभरा है शक्ति और सामर्थ्यका उज्ज्वल चित्र भी सँवरा है।

शताब्दियों बाद युद्ध-रथका चक्र उसी परिचित भूमिपर-से घूमता हुआ हाजीपीर-दर्रेकी पहाड़ी-तलहटी तक पहुँचा है।···इस दर्रेसे होकर सीधे-सादे चरवाहों और गड़ेरियोंका वेष बना पाकिस्तानी सैनिकोंने हमारे कश्मीरमें घुसपैठ कर आक्रमण और विध्वंसकारी कार्रवाइयाँ शुरू कर दी थीं। प्रारम्भमें यह करतूत लुके-छिपे ढंगसे, छोटे पैमानेपर होती रही, पर अब शत्रुकी यह घातें स्पष्ट रूपसे सुनिश्चित युद्ध-योजनाका प्रमाण प्रस्तुत कर रही हैं।

हमारे राष्ट्रने पाकिस्तानके इस चालाक, विषैले इरादेको समझ लिया है और विवश हो शत्रुताकी ललकारको स्वीकार कर, युद्धके मोर्चेकी ओर अपना रथ उन्मुख किया है।

यह है ९५४१ फीटकी ऊँचाईपर स्थित हाजीपीर-दर्रा जहाँ बहुत-से जंगलों, ऊबड़-खाबड़ धरती, चट्टानों और पहाड़ियोंकी सीधी चढ़ाइयोंको पार कर १४ मील पैदल चल-कर पहुँचना पड़ता है। यह दर्रा कश्मीरकी घाटी और पाक-अधिकृत कश्मीरकी सीमाओंको अलग करता है।··· इस दर्रेसे, तथा उत्तरमें ऊरी-पूँच क्षेत्रमें छोटे-छोटे अन्य दर्रोंसे ही पाकिस्तानी घुसपैठियोंने हमारी धरतीमें प्रवेश किया।

● ३ सितम्बर १९६५

इसी मुख्य द्वार, हाजीपीर-दर्रे, पर भारतीय सैनिक चौकियाँ बैठी हुई हैं जो पाकिस्तानी हमलावरोंको दर्रेके इस पार आनेसे रोकनेमें चौबीसों घण्टे सतर्क हैं। दूरकी पहाड़ियोंसे दुश्मन बराबर गोलियाँ चला रहा है और दिन-रात गोलियोंकी आवाज़से पहाड़ियाँ गूँजती हैं। जिन कठि-नाइयोंका सामना करते हुए सैनिक और अफ़सर देशकी सीमाकी रक्षा कर रहे हैं, उन्हें देखकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं।····इस हाजीपीर-दर्रेपर हमारे सैनिकोंने जिस प्रकार क़ब्ज़ा किया उसकी कहानी तो और भी रोमांचक है।····

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दर्रेकी तलहटीकी ओर स्थित 'संक' और 'लुडवाली गली' चौकियोंको खत्म करनेके बाद, नौजवान अफ़सरने अपने १०० सैनिकोंको साथ ले, निश्चय किया कि आगे बढ़कर हाजीपीर-दर्रेकी ओरसे पाकिस्तानियोंकी वापसीका रास्ता काटकर ही रहेंगे। एक गहरे नालेको पार कर और पहाड़ीपर चढ़कर हमारी फ़ौजें पुरानी ऊरी-पूंच-रोडकी ओर जा रही थीं कि पाकिस्तानियोंने अपनी ब्राउनिंग्ज और मीडियम मशीनगनोंसे हाजीपीरकी पहाड़ियोंसे हमला किया। हमने इधरसे दो इंच मॉर्टर और मीडियम बन्दूक़ोंसे गोली चलाकर पाकिस्तानी बन्दूक़ोंको शान्त किया और निधड़क आगे बढ़ते चले गये। भारतीय सैनिकोंके अदम्य साहसको देख पाकिस्तानी भाग खड़े हुए। दर्रेपर पहुँचकर हमारी फ़ौजी टुकड़ीने देखा कि वहाँ कोई नहीं है।

हमारे जवान वहाँ पहुँचकर ख़ुशीसे पागल हो नाच उठे और उत्साहमें भरकर, मना करनेपर भी, हवामें बन्दूक़ोंके फ़ायर कर उठे।....जिन सैनिकोंने इस युद्ध-कूचमें भाग लिया, उन्हें कमसे कम चार दिन बिना खाये और बिना कम्बलके काटने पड़े थे। पर वे ख़ुश थे कि इतना मुख्य मोर्चा उनके हाथ इस तरह आ गया।

चार दिन बाद उन्होंने चाकलेट खाकर व्रत तोड़ा और आग जलाकर उसके चारों ओर मण्डली जमाकर सर्द रातें काटीं।

भारतीय वायु-सेनाने इन बहादुरोंके लिए हैलीकॉप्टरों-द्वारा खाना और कम्बल नीचे गिराये और उन्हें सुरक्षित रखनेमें महत्त्वपूर्ण काम किया।

हाजीपीर-दर्रेपर विजय प्राप्त करनेमें मेजर रनजीत सिंह दयालका नाम अविस्मरणीय है। पाकिस्तान इस ख़तरनाक बहादुरसे इतना भयभीत है कि उसने मेजर दयालका सिर काट लानेवालेको ५०००० रु० का इनाम घोषित किया हुआ है। भारत सरकारने अपने इस वीरको महावीर-चक्रका पदक देकर सम्मानित किया है।

■

अब रथका चक्र घूमता हुआ पूर्व-निश्चित युद्ध-विराम रेखाके पूर्वमें भारतीय भूमिके छम्ब-अख़नूर क्षेत्रमें आ टिका है :

३ सितम्बरको प्रातः आठ बजेका समय है। आकाश अकस्मात् पाकिस्तानके ६ अमरीकी सैबरजेट बौम्बर हवाई जहाज़ों और १०४ सुपरसोनिक जहाज़ोंकी लम्बी क़तारसे आच्छादित हो गया। भारतीय वायु-सेनाके बहादुर स्क्वैड्रन लीडर ट्रैवेर कीलरने जैसे ही इस ख़तरनाक टुकड़ीको आसमानमें देखा कि अपने देशके बने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हलके नैट हवाई जहाज़को लेकर ऊँची उड़ान भरी। यद्यपि नैट हवाई जहाज़ोंसे डैबरजेटों तककी ऊँचाईपर जाना अपेक्षित नहीं है, किन्तु अपनी सूझ-बूझ और साहसपर विश्वस्त हो, कैप्टन कीलर निर्भयतासे शत्रुका सामना करने चल पड़ा, और अचूक निशाने साधकर दुश्मनके जहाज़ोंपर ऐसी चोटें कीं कि उनमें-से एक तो हवामें ही टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर गया और दूसरा नीचे गोली खा, चक्कर खाता हुआ ज़मीनपर आ गिरा। बाक़ी विमान अपने साथियोंकी यह दुर्दशा देख, पीठ मोड़कर पाकिस्तानकी ओर उड़ते नज़र आये।

इधर दुश्मन इस ताक़में है कि वह अखनूर-नौशेरा-झंगर क्षेत्रमें मुमावर तावी नदीको पार कर ले और युद्ध-विराम-रेखाका उल्लंघन करे। नदीके उस पार आज सुबह आठ बजेसे शत्रुकी पैदल सेनाके जत्थेके जत्थे हवाईजहाज़ोंकी आड़में आ-आकर जमा हो रहे हैं।....किन्तु हमारी स्थल-सेना भी इस ओरसे उनपर बराबर गोली चला रही है और दुश्मन नदी पार नहीं कर पाया है। नदीके इस ओर भूमि समतल और चपटी है। बीच-बीचमें कालीधरकी पहाड़ियाँ हैं और कुछ नाले।

हाजीपीर-दर्रेसे तीन मील दूर दक्षिण-पश्चिममें, ऊरी-पूंच क्षेत्रमें स्थित एक छोटी वृत्ताकार पहाड़ी-शृंखलापर दुश्मनने दो-तीन दिन पहले अपनी चौकी जमा ली थी। किन्तु हमारी सेनाने आज उसे वहाँसे उखाड़ दिया और कुछ दूरपर एक और पाकिस्तानी चौकी 'कोपरा' पर अधिकार कर लिया है। बैडोर और हाजीपीर-दर्रेके बीचके क्षेत्रसे पाकिस्तानी फ़ौजों और हमलावरोंको भगा दिया है।

हाजीपीर-दर्रेकी एक चोटीपर क़ब्ज़ा करनेके लिए हमारे जवानोंने अद्भुत सूझबूझका चमत्कार दिखाया। एक पहाड़ीकी चोटीपर दुश्मनने तोपों और गोला-बारूदका बहुत बड़ा ज़ख़ीरा इकट्ठा कर रखा था। हमारे कमाण्डरकी आँख उसपर लगी थी। रात होनेपर उसने अपनी फ़ौजी टुकड़ीसे माँग की—'जो वीर प्राणकी बाज़ी लगाने और मौतको अपनानेके लिए तैयार हों वे आगे आयें!' उसने दुश्मनकी उस चोटीपर पहुँचनेकी योजना बना ली है। बहुत-से आये नामोंमें-से कमाण्डरने कुल २५ बहादुरोंको छाँट लिया। उनमें-से ३० जवानोंके दलसे कहा, वे बायीं ओरसे पहाड़ीपर पहुँचें और मौक़ा देखते ही दुश्मनपर पीछेसे हथगोले बरसायें। 'मौक़े' से मतलब क्या है यह बात स्पष्ट हो गयी जब कमाण्डरने बाक़ी ५ आदमियोंको हिदायत दी। हिदायत थी, कि भेड़ोंके एक बड़े-से झुण्डको इकट्ठा करें, प्रत्येक भेंड़के गलेमें जलती हुई लालटेन या टार्च बाँधें और भेड़ोंको घेरकर हाँकते हुए पाँच जवान उनके झुण्डके पीछे-पीछे ज़मीनपर रेंगते चलें और दायीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओरसे पहाड़ीपर चढ़ें। लालटेन और टार्च बँधी भेड़ोंने जैसे ही हाजीपीर-दर्रेकी उस पहाड़ीकी तरफ़ बढ़ना शुरू किया कि दुश्मनने इन्हें भारतीय जवानोंका हमलावर दस्ता समझकर दनादन गोले बरसाने शुरू कर दिये। दुश्मन इधर इस चकमेसे जूझ रहे थे, उधरसे तीस जवानोंकी टुकड़ीने पीछेसे हथगोलोंका ऐसा हमला बोला कि गोला-बारूदका ख़ज़ाना ज्वालामुखी बन गया। दुश्मन बे-मौत मरा और भाग खड़ा हुआ। हमारी फ़ौजने विजयका झण्डा पहाड़ीकी चोटीपर लगा दिया।

अब रथ-चक्र इधर है। तिथवाल क्षेत्रमें हमारी सेनाएँ पीर साहब पोस्टसे एक मील आगे बढ़ गयी हैं और हमारे सैनिक किशनगंगा नदीके बायें मुहानेपर डट-कर जमे हुए हैं और उनका ज़ोर उस मुख्य सड़कपर जमा है जो पाक-अधिकृत कश्मीरकी राजधानी मुज़फ़्फ़राबादको (खेलसे होती हुई) केरन और गुराइससे जोड़ती है।

• ४ सितम्बर १९६५

विद्युत्‌की-सी कौंधसे नीचेकी ओर लपकते हुए दुश्मनके दो एफ़–१०४ सुपरसोनिक फ़ाइटर और दो एफ़–८६ सुपरसोनिक जेट, जिसमें हवासे हवामें मारनेवाले प्रक्षेपास्त्र थे (side winder missiles) अखनूर क्षेत्रपर चमके। वे नदीके पुलको, बम गिराकर, उड़ानेकी फ़िक्रमें आये थे। किन्तु हमारे नैट हवाई जहाज़ोंने इतनी फुरतीसे उनका पीछा किया और पाकिस्तानकी ओर खदेड़ा कि वे घबराहटमें अपनी मिसा-इलोंको अपनी ही सेनापर फेंकते हुए पीछे भागे।

सन्ध्या समय फिर ४ सैबरजेट हवाई जहाज़ उसी पुलको उड़ानेकी कोशिश-में उधर मँडराये। उन्हें देखते ही फ्लाइट लेफ़्टीनेण्ट वी० एस० पठानियाने अद्‌भुत वीरता और कौशलका परिचय दिया। पठानियाने अपने विमान नैटसे उड़कर दुश्मनके जेटको इस तरह घेरा कि वह बचकर न निकल भागे। पठानियाने केवल ५०० ग़ज़के फ़ासलेसे बेचूक गोली दाग़ी। सैबरजेट चोट खाते ही धुआँ उगलने लगा। वीर पठानियाने दो और गोलियाँ—एक ५०० गज़ और दूसरी ३०० गज़के फ़ासलेसे—दागीं। दुश्मनके जेटमें आग भड़क उठी और वह तितर-बितर हो अखनूरकी भूमिपर आ गिरा। उसने एक ज़ोरका विस्फोट किया और ख़त्म हो गया। यह सारा करिश्मा पाँच मिनिटमें हो गया।

इसी क्षेत्रमें हमारे और कुछ नैट विमान जिस समय अन्य स्थली सेनाकी सुरक्षामें तैनात विमानोंकी सहायता कर वापस अड्डेपर आ रहे थे, तो वे आकाश-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रवि हुआ अस्त, ज्योतिके पत्रपर लिखा अमर
रह गया राम-रावणका अपराजेय समर···

मार्गमें ही दुश्मनके ४ सैबरजेटोंके सामने पड़ गये। दुश्मनके चार विमानोंमें-से, एक तो हवाई अड्डेपर हमला करनेके विफल प्रयत्नमें धराशायी हुआ और शेषने मुँहकी खायी।

इन रक्षक 'विमानों'में-से एकके चालक फ्लाइंग आफ़िसर ए० आर० गान्धी थे। वह और उनका स्क्वैड्रन-लीडर इन बाक़ी बचे सैबरजेटोंसे जूझने लगे। एक सैबरजेट जिसका पीछा गान्धीने किया अपना पिछला भाग बचानेके प्रयत्नमें रहा, पर गान्धीने उसका पीछा न छोड़ा और उपयुक्त रेंजमें आते ही बटन दबाकर सीधे जेटपर चोट की। तत्काल ही दुश्मनका जहाज़ नीचे गिरा और आगकी लपटोंका शिकार हुआ। यह देखकर दूसरे सैबरजेटने गान्धीके विमानका पीछा किया और नैटके एक पंखपर चोट कर उसका सन्तुलन बिगाड़ दिया किन्तु अन्तमें उस जेटको भी हमारी विमानभेदी तोपोंने अपना निशाना बनाया और धराशायी किया। आज हम अपने नैट हवाई जहाज़ोंके करिश्में देखकर चकित हैं।

टैंकों और बख्तरबन्द गाड़ियोंसे लैस पाकिस्तानी सेनाके कुछ दस्तोंने मुनावर-तावी नदी पार की और युद्धविराम-रेखाका उल्लंघन किया। उन्हें हमारी ओरसे यह अवसर इसलिए मिल गया कि हमने अपनी सेनाएँ वहाँसे किसी सैनिक हितकी दृष्टिसे हटा ली थीं। पंजाब और पश्चिमी पाकिस्तानकी ३७० मील लम्बी सीमापर भी पाकिस्तानी फ़ौजोंने भयानक टैंकों और हथियारबन्द सेनाका भारी जमाव किया है, उन्होंने लाहौर-खालड़ा व लाहौर-बाघा सड़कोंके किनारे-किनारे खाइयाँ खोदनी शुरू कर दी हैं और कच्छ-सन्धिके समय नष्ट किये गये बंकरोंकी मरम्मत शुरू कर दी है। पाकिस्तानके जल्लो, स्यालकोट, बाघा, कसूर, हुथियारा, भसीन और नौरावाल क्षेत्रोंमें काफ़ी सैनिक चहल-पहल है।

पाकिस्तानी सेना यह दाँव बैठा रही है कि वह अखनूरपर क़ब्ज़ा जमा ले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और नौशेरा, झंगर, रजौरी, मेंधर और पूंचके पारस्परिक यातायातके मुख्य साधनोंको विच्छिन्न कर दे। किन्तु हमारी सेनाओंने पाकिस्तानके इस इरादेको दफ़नानेकी ठान ली है। स्थल-युद्धमें हमने आज पाकिस्तानके ४ अमरीकी टैंकों और १ हवाई-सम्पर्क गाड़ीको बरबाद कर दिया। हम बिना बातके युद्ध छेड़ना नहीं चाहते पर पाकिस्तानकी नीयत क़तई साफ़ नहीं है।

• ५ सितम्बर १९६५

आज पाकिस्तानने कश्मीर-संघर्षको खुले युद्धकी सीमा-रेखापर ला टिकाया है। अखनूर क्षेत्रसे हटकर आज दुश्मनने अमृतसरके पास हमारी वायुसेनाकी एक टुकड़ीपर आक्रमण करनेके लिए एक सैबरजेट पंजाबकी सीमाके पार भेजा। और, इससे पहले कि हमारी विमान-वेधी बन्दूकें उसे भगायें, सैबरने दो रॉकेट-बम गिराये। (कल भी इसी प्रकार दुश्मनने जम्मूके निकट रनबीर सिंहपुराके पूरबमें सैबरजेटोंसे आक्रमण किया था !····यह लक्षण अच्छे नहीं हैं।)

तावी नदीको पार करके आयी हुई पाकिस्तानी बख़्तरबन्द गाड़ियाँ और टैंक आज युद्धस्थलमें भारतीय सेनासे भिड़ने नहीं आये। अखनूर क्षेत्रमें हवाई हमले करनेका भी साहस आज पाकिस्तानी विमानोंको नहीं हुआ। वहाँ वे दो दिन तक बुरी तरह पिट चुके थे।

हमारी सेनाने आज युद्धविराम-रेखाके १०–१२ मील दूर भारतीय भूमिपर, जौरियन क्षेत्रमें पाकिस्तानी फ़ौजोंपर हमले किये ताकि उनके तावी नदीसे आये दस्तोंको आगे बढ़नेसे रोकें और वे अखनूर क्षेत्रकी ओर आगे क़दम न उठा सकें। जौरियन क्षेत्रमें घमासान युद्ध हो रहा है और दुश्मनकी फ़ौज एक इंच भी आगे नहीं बढ़ने पायी है। हमारी स्थल-सेना और वायु-सेना दोनोंने ही पाकिस्तानी फ़ौजोंपर खूब चोटें की हैं।

भारतीय मीसटीयर्स विमानोंने आज सन्ध्या समय छम्बके इलाक़ेमें पाकिस्तानियोंके एक फ़ौजी शिविरपर आक्रमण कर उसमें आग लगा दी। इस शिविरमें दुश्मनकी बख़्तरबन्द गाड़ियाँ छद्म ढंगसे ढँकी हुई रखी थीं। भारतीय लड़ाकू वायुयानोंने पाकिस्तानी विमान-भेदी तोपोंको भी अपना निशाना बनाया और उन्हें बरबाद कर दिया।

तिथवाल क्षेत्रमें भारतीय फ़ौजें आगे बढ़कर किशनगंगा घाटीकी ओर पहुँच गयी हैं जो कि पाक-अधिकृत कश्मीरकी राजधानी मुज़फ़्फ़राबादके काफ़ी निकट है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी वायु-सेनाके योद्धाओंके हौसले आज दोगुने-चौगुने हो उठे हैं। ३ और ४ सितम्बरको पाकिस्तानी सैबरजेटोंके छक्के छुड़ानेवाले बहादुरों, स्क्वेड्रन-लीडर कीलर और फ्लाइंग लेफ्टीनेण्ट पठानियाको भारत-सरकारने वीर-चक्र पदकसे सम्मानित किया है।

पाकिस्तानने अपनी फ़ौजें अखनूर क्षेत्रमें तावी नदीके पार जौरियन गाँव तक लाकर तथा अमृतसरके पास हमारी हवाई फ़ौजी टुकड़ीपर आक्रमण करके युद्धविराम-रेखाका उल्लंघन किया है। जैसा कि मैंने कहा, हम नहीं चाहते थे कि पाकिस्तान और भारत बहुत बड़े सैनिक संघर्षमें उलझें किन्तु पाकिस्तान हमें विवश कर रहा है कि हम उसे मुँह-तोड़ जवाब दें।

रथके चक्रकी धुरी चारों ओर घूमती है—युद्धका क्षेत्र विस्तृत होता जा रहा है।

६ सितम्बर १९६५

पाकिस्तानी प्रेसीडेण्ट अयूब खाँने पाक-भारत युद्ध घोषित कर दिया है—प्रातःकाल आज हमारी जोशीली बहादुर फ़ौजोंने पंजाब सीमाको पार किया और अमृतसर, फ़िरोजपुर व गुरुदासपुरकी ओरसे पश्चिम पाकिस्तानमें घुसकर दुश्मनकी सुरक्षा-पंक्तिको तोड़कर वे सूर्यास्तसे पहले लाहौरके बाहर पहुँच गयीं। बहुत देर रात तक भी यहाँ घमासान लड़ाई जारी है। वाघासे लाहौर जाती हुई सड़क, पाकिस्तानी टैंकों और बख्तरबन्द गाड़ियोंके जले हुए टुकड़ों और पच्चरोंसे छती पड़ी है।

आज सुबह ११ बजेसे लाहौर रेडियो स्टेशन ठप्प हो गया है। वहाँसे एलान हुआ है कि कुछ देरके लिए ब्रॉडकास्टिंग बन्द रहेगी और उसके बाद दूसरी वेवलेन्थ-से लाहौर सुना जा सकेगा। लगता है कि हमारी फ़ौजें लाहौर-रेडियोके ट्रांसमीटरके आस-पास हैं जो मुग़लपुरेमें स्थित है।

हमारे लड़ाकू विमानोंने पाकिस्तानकी एक तेलकी टैंकर-ट्रेनमें आग लगा दी और एक और मालगाड़ीको, जो अस्त्र-शस्त्रोंसे भरी हुई थी, विध्वंस कर दिया।

हमरा उद्देश्य लाहौरपर क़ब्ज़ा करना नहीं है क्योंकि लाहौरको अधीन करने-के अर्थ हैं—सड़कोंपर गुत्थमगुत्थ हाथा-पाई जो सबसे अधिक भयावह है। दूसरे, दस लाखसे अधिक जनताका पोषण और प्रबन्ध।....हमारा मुख्य उद्देश्य पाकिस्तानी फ़ौजों और हथियारोंको युद्ध-भूमिमें उतर आनेको बाध्य करना है जिससे उसकी अधिकसे अधिक सैनिक शक्तिकी क्षति हो और उसका यह दम्भ टूटे कि वह मात्र सैनिक बलपर कश्मीरको हथिया सकता है, अथवा भारतकी शान्ति और तटस्थताकी नीतिको नीचा दिखा सकता है। पाकिस्तानने जिन विदेशी जंगी हथियारोंके बलबूतेपर,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तंगनज़र युद्ध-नीतिको अपनाया है, उसकी जघन्यता प्रमाणित करनेके लिए भारतके लिए उचित ही है कि उसे यह प्राण-लेवा पाठ पढ़ाये। हम लाहौर-स्यालकोट जेहलम क्षेत्रमें शत्रुके अड्डे और शत्रुके सेनाके जमावको खत्म करेंगे ताकि पाकिस्तान फिरसे जम्मू-कश्मीरमें प्रवेश करनेमें अक्षम हो जाये।

जौरियनके मोर्चेपर हमारी स्थल-सेनाकी फ़ौजें, जो हवाई जहाज़ों-द्वारा सुरक्षित हैं, दुश्मनकी फ़ौजोंपर गहरे वार कर रही हैं। उन्हें पीछे धकेलते-धकेलते तावी नदीके किनारे तक वापस पहुँचा दिया है। जौरियन गाँव युद्धकी ज्वालामें भस्म हो गया है। वहाँ आगकी लपटें उठ रही हैं।

अखनूर सैक्टरके छम्ब-क्षेत्रसे पाकिस्तानी सैनिक अपने पैटन टैंक और बख्तरबन्द गाड़ियाँ हटा रहे हैं, जिससे कि स्यालकोट-क्षेत्रकी ओर बढ़ती हुई भारतीय सेना उनको बरबाद न कर सके। किन्तु इन हटते हुए हथियारोंपर भी हमारी फ़ौजोंने भारी आक्रमण कर, काफ़ीको नष्ट कर दिया। पाँच टैंक चोट खा गये, दो भारी फ़ील्ड-तोपें ठप हो गयीं और कई बख्तरबन्द गाड़ियाँ व लॉरियाँ तहस-नहस हुईं।

फ़िरोजपुर सेक्टरमें कसूरके आस-पास भी हमारी फ़ौजोंने प्रगति की।

स्यालकोट-सेक्टरमें भी दुश्मनको काफ़ी क्षति उठानी पड़ी।

ऊरी-पूंच बल्जमें हमारी सेनाओंने तीन और चौकियाँ ले लीं—यहाँ शत्रुकी ओरसे बहुत घना पहरा था। पूंचके उत्तरकी ओरसे बढ़ती हमारी फ़ौजोंने एक महत्त्वपूर्ण पहाड़ीपर भी पाँव जमा लिये हैं। अबतक पाकिस्तानी इसी पहाड़ीपरसे पूंचपर गोलियाँ बरसाते रहे थे। यह पहाड़ी युद्धविराम-रेखासे केवल डेढ़ मील दूर है।

इस क्षेत्रकी चौकियोंपर क़ब्ज़ा करनेके साथ-ही-साथ हमारे साथ बहुत-से हथियार व रसदका सामान भी लगा है। रसदका भण्डार इतना है कि एक हज़ार सैनिकोंको एक महीनेके लिए पुर जाये—हथियारोंमें, ८१ एम-एम मोर्टर, ६ एम-एम ज़ीज़, ७ एल.एम ज़ीज़, २४ राइफलें, और १५ लॉरियाँ जिनमें ३-३ टन फ़ौजी गोले-बारूद भरे हुए हैं।

भारतीय वायुसेनाने आज पश्चिमी पाकिस्तानके फ़ौजी ठिकानोंपर आक्रमण किये। हमारे लड़ाकू विमान उत्तरमें जेहलम और वज़ीराबाद तक पहुँचे। रावलपिण्डी और चकलालाके हवाई अड्डोंपर भी चोटें कीं। रावलपिण्डीकी उड़ानपट्टीको भारी नुक़सान पहुँचाया। दो भारी हमले सरगोधा हवाई अड्डेपर भी किये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुश्मनके विमानोंने पठानकोटपर आक्रमण किया किन्तु क्षति अधिक न कर पाये।

युद्धका रूप उग्र होता जा रहा है।

रथका चक्र कई पहियोंकी धुरीपर एक साथ घूमनेको विवश है।···युद्धका आकाश···युद्धकी भूमि···और युद्ध-भूमिसे परे देशोंके भीतरी क्षेत्र—सब एक दृष्टिमें एक साथ आ रहे हैं।

७ सितम्बर १९६५

वाघा-कसूरसे लाहौर-क्षेत्रकी ओर बढ़ती हुई हमारी सैनिक रेजिमेण्टका गाँवके लोगोंने हार्दिकतासे भरा स्वागत दिया। गाँववालोंके हाथमें लस्सीके गिलास और काग़ज़के थैलोंमें चना और गुड़ था।

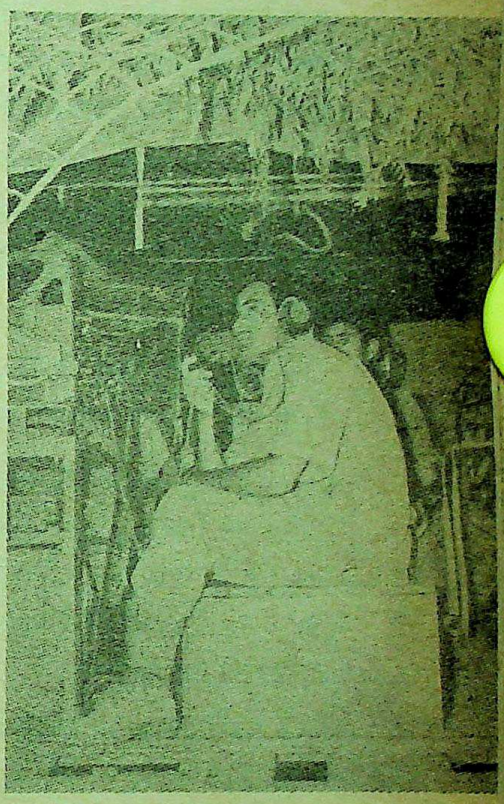

हे पुरुष-सिंह, तुभ भी यह शक्ति करो धारण,
आराधनका दृढ़ आराधनसे दो उत्तर···

कर्त्तव्यपरायण जवानोंको उनका यह भाव-भरा अतिथि-प्रेम भी स्वीकार करनेका अवकाश नहीं था। गाँववालोंने पराँठे और मसालेदार आलुओंके पैकेट बना-बनाकर जवानोंकी गाड़ियोंमें फेंक दिये। शायद कोई क्षण आये कि वह इन पैकेटोंको खोलें और मुँहमें ग्रास डाल सकें।····ज्वार और कपासके खड़े खेतोंके बीच-से गाड़ियाँ गुज़र रही थीं। खेतोंकी रक्षा-हित एक ओर पगड़ी पहने किसान और दूसरी ओर राइफ़ल थामे सैनिक खड़े थे।

लाहौरके बाहर पहुँची हुई सेना बहुत संयम, धैर्य और मुख्य उद्देश्यको सामने रखकर ही अगला क़दम उठा रही है यदि वह चाहती तो विजयके नारे लगाती धूम-धूड़ाकेसे लाहौरमें प्रवेश कर लेती, किन्तु वह लाहौरके बाहरके क्षेत्रके, आस-पास जहाँ शत्रुके सैनिक जमाव हैं, उनको छिन्न-भिन्न करनेमें व्यस्त है। लाहौरसे १२ मील दूर इछोगिल नहरके इस छोरपर हमारी फ़ौजें जाकर डटी हुई हैं। स्थल-वाहिनी सेनाकी सुरक्षा करती हुई वायु-सेना भी साथ-साथ है। इस सेनाने दुश्मनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोर्चेके दाहिने पक्षपर हमला किया। दुश्मनका प्रतिरोध इस स्थानपर इतना कड़ा था कि सँभालना कठिन हो गया। स्थितिको भाँप कर हमारी सेनाने कुछ दूर फ़ासलेपर अपनेको दो टुकड़ियोंमें बाँटा और एक पंक्तिने सामनेकी ओर आक्रमण किया। दुश्मन इस युद्ध-चालको न समझ पाया और उसने केवल एक ओरसे अपने चैफ़ी टैंकों-द्वारा हमला किया। हमारी सेनाने इन चैफ़ी टैंकोंपर गहरी चोटें कीं। चाल समझनेपर दुश्मनने दूसरी ओरसे भी आक्रमण सँभाला और अपने पैटन टैंकोंको मुठभेड़में घुसाया। किन्तु इस ओर भी भारतीय सेनाने डटकर सामना किया और उनके छक्के छुड़ा दिये। बहुत-से टैंकोंको हमने ध्वस्त किया। इस मोर्चेका युद्ध बहुत भीषण रूप धारण कर रहा है। पाकिस्तानी जी-जानसे इस मोर्चेपर प्रतिरोध कर रहे हैं।

उत्तरमें स्यालकाट-क्षेत्रकी ओर उन्मुख हमारी फ़ौजें रावीके किनारे पहुँच गयी हैं। किन्तु वापस भागती पाकिस्तानी फ़ौजोंने रावीके गुरुदासपुर क्षेत्रमें स्थित डेरा बाबा नामक पुलको उड़ा दिया है। यह पुल स्यालकोट-क्षेत्रमें पहुँचनेका मुख्य मार्ग है।

लाहौरके दक्षिणमें सुलेमाँको हेडवर्क्सपर पाकिस्तानी फ़ौजने गहरा जमाव किया था किन्तु हमने वहाँसे उनका बुरी तरह सफ़ाया किया है।

युद्ध-भूमिमें हमारी वायुसेना बहुत तत्परतासे काम कर रही है। आज वायु-सेनाने सब मिलाकर २६ पाकिस्तानी लड़ाकू विमान जेट, जिसमें दो सुपरसौनिक-१०४ हैं, तीन एफ़-८६ सैबरजेट हैं, व दो बी-५७ बौम्बर हैं दाग़कर नीचे गिराये। २४ टैंक, १४ आर्टिलरी पाइप, २ हलकी विमानभेदी तोपें और बहुत-सी सैनिक गाड़ियोंको नष्ट किया।

ऊरी-पूंच क्षेत्रमें हमारे सैनिकोंने हुसैनवाला सीमाके पार कई चौकियाँ ख़ाली करवा लीं।

आज हमारे हवाई जहाज़ोंने सरगोधाके हवाई अड्डेपर एक आक्रमण प्रातः और एक दोपहर किया। अड्डेपर स्थित राडार सिस्टम अमेरिका-द्वारा निर्मित है और बहुत ही दृढ़ तथा तीक्ष्ण है। वह हमारे वायुयानोंकी गतिविधि बहुत दूरसे ही तत्काल ताड़ लेता है। इसको नष्ट करना बहुत ही आवश्यक है। पाकिस्तानने आज लुधियानाके पास भारतीय हवाई अड्डे हलवाड़ापर दो बार हमला किया।....

दुश्मन अपनी सेनाका जमाव राजस्थानकी सीमापर बारमेर नामक स्थानपर भी कर रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक नया दाँव दुश्मनने और खेला है। उसने अपनी नाविक सेनाको हमारे गुजरातकी द्वारका बन्दरगाहपर हमला करने भेजा है।

प्रतीत होता है कि पाकिस्तान अपनी सेनाओंका जाल कई प्रकारसे फैला रहा है, और समझता है कि भारतपर इस प्रकार सैनिक रोब जमा सकेगा। किन्तु हम हर मोर्चेपर हर प्रकारसे उसका मुँहतोड़ जवाब देनेको तत्पर हैं।

आज युद्धक्षेत्रमें वीरगति प्राप्त, युवा-योद्धा किरन सेठकी चर्चा विशेष रूपसे सुनाई दी। शकलसे स्कूलमें पढ़नेवाला लड़का-सा किन्तु साहसमें बहुत बड़ा यह वीर दो ही वर्ष पहले ऐमरजेन्सी कमीशन लेकर फ़ौजमें आया था। फ़ौजमें होना उसके परिवारकी परम्परा थी। उसने टैंकोंकी रेज़ीमेण्ट पसन्द की क्योंकि उसके अधिकारी उसके अपने चाचा थे, जो स्वयं अपनी सेनाकी अगवानी करते हुए वीर-गतिको प्राप्त हुए थे। इस बहादुर नौजवानने अपने दूसरे चाचा कप्तान भाटिया-का अनुसरण किया जो कश्मीरपर हुए पहले आक्रमणमें अपने प्राण देशके लिए अर्पित कर चुके थे।....आज दो योद्धा चाचाओंका सूरमा भतीजा किरन सेठ भी मातृ-भूमिपर न्योछावर हो अमर शहीद हो गया।

रण-बाँकुरोंके साहसी कारनामें सुन-सुनकर छाती गर्वसे फूल उठती है और उनके आत्मबलिदानपर मुग्ध हो जाता है।

छम्ब-क्षेत्रके सैनिक शिविरमें जहाँसे युद्धके मोर्चे साधे जा रहे हैं, वहीं एक सादी किन्तु मर्मस्पर्शी कार्यवाही-द्वारा विजय-गर्वीले बहादुरोंको मान देकर सैनिकोंका उत्साहवर्द्धन हो रहा है। पश्चिमी सेनाके लेफ़्टीनेण्ट जनरल स्वयं मेजर मेघसिंहको लेफ़्टीनेण्ट जनरलका पद दे रहे हैं और वीर-चक्रका पदक प्रदान कर रहे हैं। मेजर मेघसिंह सैनिक-कार्यसे अवकाश ग्रहण कर ही रहे थे कि पाकिस्तानने युद्धका धौंसा बजा दिया। मेजर सिंहने तत्काल अपनी सेवाएँ देशके लिए अर्पित कीं और उसी घड़ीसे मुट्ठी-भर स्वयंसेवकोंको लेकर, जिनमें अधिकतर राजस्थानके मुसलमान फ़ौजी थे, पाकिस्तानी दुश्मनके छक्के छुड़ानेमें जुट गये और कई बार उनपर प्रहारकर दुश्मनको मार भगाया। युद्धमें बुरी तरह घायल होकर, उस चिकित्सा-शिविरमें लौटनेसे पहले जहाँ उन्हें वीर-चक्रसे सम्मानित किया जा रहा था, उन्होंने अन्तिम बारमें ३६ पाकिस्तानी फ़ौजियों और उनके एक अफ़सर-को मौतके घाट उतारा था। घायल होनेपर भी वे शत्रुपर वार करते रहे थे और अपने साथी फ़ौजियोंको प्रोत्साहन देते रहे थे।

युद्ध-रथका चक्र आज कुल मिलाकर छोटे-बड़े ७ मोर्चोंपर घूम रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज हमारी सेनाको पाकिस्तानके विरुद्ध दो नये मोर्चे खोलने पड़े। पहले तीन मुख्य मोर्चे थे : एक लाहौरके निकट; दूसरा लाहौरके उत्तरमें, जम्मू-अखनूर क्षेत्रके पास; तीसरा लाहौरके दक्षिणमें सुलेमानकी हेडवर्क्सके आस-पास।

एक नया मोर्चा बारमेर-क्षेत्रमें राजस्थान-सिन्ध सीमाके पार खोला है जहाँसे हमारी सेना सिन्धमें पाँच मील अन्दर तक प्रवेश कर गयी है और मादरा नगरपर अधिकार कर लिया है। वहाँसे वह १५ मील दूर-स्थित खोकारापारकी ओर बढ़ रही है।

दूसरा मोर्चा अन्तर्राष्ट्रीय सीमाके पास जम्मू और पश्चिमी पाकिस्तानके बीच स्यालकोट क्षेत्रपर बनाया है जहाँसे पाकिस्तान अपनी फ़ौजी सामग्री तथा हथियार आदि कश्मीरमें घुसाता रहा है। स्यालकोट क्षेत्रमें हमारी सेनाने एक बड़ा विकेन्द्रीकरण आक्रमण किया जिससे कि वहाँपर टिकी पाकिस्तानी फ़ौजको युद्धमें व्यस्त रख सकें। ऐसे हमलेके लिए तैयार न होनेके कारण दुश्मन एक बार तो आश्चर्यचकित हो प्रारम्भमें विकट अवरोध न कर पाया किन्तु रात होते-होते उसने इस क्षेत्रमें युद्धको उग्रता दी और अपना पूरा डिविज़नल तोपखाना हमलेमें झोंक दिया। हमारी सेनाकी सहायताके लिए भी हमारे पास तोपखाना था, इसलिए भयंकर युद्धके बावजूद भी हमारी सेना सुबह होते-होते स्यालकोट क्षेत्रमें 'नीचे बाँस' नामक पहाड़ीके पास पहुँच गयी।....

हमारी सेना लाहौर-क्षेत्रमें सैनिक बुद्धि तथा रण-कौशलका प्रयोग सफलतासे कर रही है। पाकिस्तान हर हमलेको 'अल्लाहो अकबर' और 'पाकिस्तान ज़िन्दाबाद'के नारोंके साथ सह रहा है और दाँत पीस-पीसकर कचकचाकर हमारे हमलोंका प्रतिरोध करता हुआ भी पीछे हटनेको बाध्य हो रहा है।

'औरवा-क्षेत्रमें हमारी नौसेनाने आक्रमणकारियोंको खदेड़ दिया। औरवा-द्वारकामें बमवर्षकोंके हमलेसे दो विश्रामगृहोंको क्षति पहुँची और गाँवकी एक खाली झोपड़ीमें आग लग गयी और दो बैल मर गये। दुश्मनकी नौसेनाके पोतोंकी रक्षामें विमान तैनात थे।

हवाई लड़ाई बहुत सरगर्मी पकड़ रही है। आज भी हमारे हवाई जहाज़ोंने सरगोधा हवाई अड्डेपर बम बरसाये। स्थल-सेनाके सहायक रूपमें हमारी विमान-सेनाने पिछले दो दिनोंमें १६ पाकिस्तानी टैंकोंको बरबाद किया और बहुत-सी बख़्तरबन्द गाड़ियाँ जलायीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लुधियानेके पास हमारे हलवाड़ा हवाई अड्डेपर दुश्मनने दो बार हमला किया। किन्तु वह वहाँसे [illegible] नज़र आया। आज दुश्मनने देहली, जम्मू और श्रीनगरपर भी बमवर्षक विमान उड़ाये किन्तु हमारी विमानभेदी तोपोंने उन्हें हर जगहसे भगा दिया।

आज हमारी भारतीय वायुसेनाके फ़्लाइट लेफ़्टीनेण्ट हुसेनने अपने देश-प्रेम, वीरता तथा विमान-संचालन-दक्षताका अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया है। लेफ़्टीनेण्ट हुसैन एक मिस्टीयरको सँभाले छम्ब-क्षेत्रमें शत्रुके दाँत खट्टे करते-करते बुरी तरह ज़ख़्मी हो गये। उनके विमानको भी बहुत क्षति पहुँची और वह लगभग बेकार-सा हो गया। किन्तु इस वीर नौजवानने हिम्मत नहीं हारी। अन्तमें साहस भरे-भरे इसने ख़ुदको सँभाला, विमानको सँभाला और दुश्मन-की आँखोंके सामनेसे अपने ज़ख़्मी तन और विमानको हटाकर वापिस अपने देशमें आ, आकाश-छतरीसे उतर भारत-भूमिको स्पर्श कर, प्राणोंकी आहुति दे अमर हो गया।

सितम्बर १९६५

सियालकोट-क्षेत्र : सौभाग्यसे पंजाबकी भूमि हमारी फ़ौजोंकी प्रगति और हथियारोंके प्रयोगकी दृष्टिसे सहायक सिद्ध हो रही है। गन्नोंकी फ़सल पकी खड़ी है और ६-७ फ़ीट ऊँची घास उगी हुई है। कसूरके आस-पास पानीसे भरे गड्ढे हैं। ऐसी

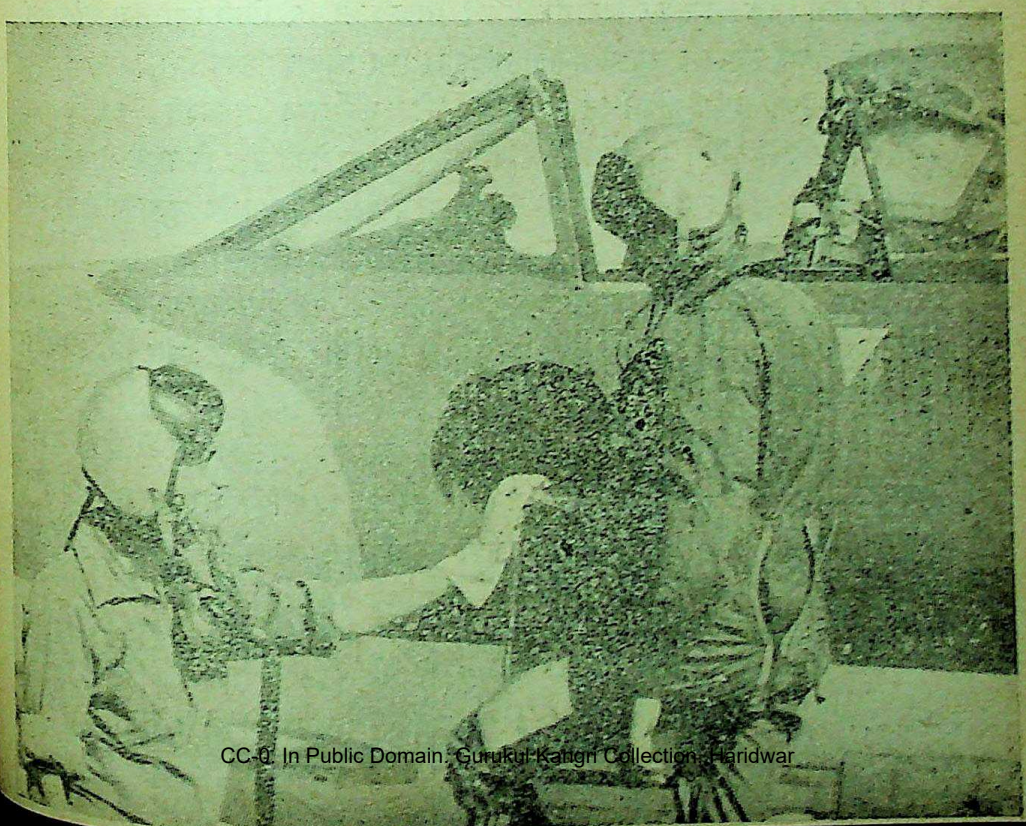

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
भूमिपर दुश्मनके अमरीकी पैटन टैंक अपने ही बोझसे दलदलमें धँसे जाते हैं और उन्हें अन्धोंकी-सी चाल चलना पड़ता है जब कि भारतीय गश्ती फ़ौज झाड़ियोंकी आड़से छिपकर टैंकोंके काफ़ी नज़दीक आकर उनपर अचूक निशाना लगा लेती है। पैटन टैंकोंकी दूर तक निशाना लगानेकी क्षमता ऐसी हालतमें व्यर्थ हो जाती है। टैंकोंमें कम्प्यूटर लगे होते हैं जिनको स्थितिके अनुसार साधनेसे ही टैंकोंकी बन्दूकें चलती हैं। दुश्मनके लिए यह 'किताब देखकर लड़ाई लड़ने'के बराबर है। पाकिस्तानके टैंक-बाज़ इस कार्यमें कैसे सिद्धहस्त हों? ये बेचारे तो दुश्मनको सामनेसे ताककर ही गोली दाग सकते हैं।

हमारी फ़ौजोंमें जैसे उत्साहके पर लग गये हैं। वह तेज़ीसे स्यालकोटकी ओर बढ़ रही हैं। उन्होंने छम्ब-जोरियाँ-अंचलसे भागती हुई पाकिस्तानी सेनाओंको घेर लिया। जम्मूकी ओरसे भी हमारा फ़ौजी दस्ता स्यालकोटमें पहुँच गया है, जिससे कि छम्ब-क्षेत्रमें शत्रु-सेनाका जमाव न हो सके। स्यालकोटके क्षेत्रमें हमारी सेनाओंके बढ़ावने पाकिस्तानी फ़ौजोंको लाहौर-क्षेत्रकी ओर बढ़नेसे रोक दिया है।

स्यालकोटके अतिरिक्त, हमारा एक दूसरा मोर्चा सिन्धपर भी जमा हुआ है। इस प्रकार लाहौरकी सुरक्षा करनेके लिए किसी भी ओरसे दुश्मन अपनी सेना और हथियार पहुँचानेमें असमर्थ है।

लाहौर, स्यालकोट और कसूर-क्षेत्रमें आज-आजमें सब मिलाकर ७५ पाकिस्तानी टैंक नष्ट कर दिये गये।....१ सितम्बरसे ९ सितम्बर तक ध्वंस हुए दुश्मनके हवाई हथियार उसकी हवाई शक्तिका एक चौथाई भाग है।

जम्मू-स्यालकोट-क्षेत्रमें हमने पाँच ऐसे भूमिखण्ड हस्तगत किये हैं जो जो रण-नीतिकी दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण हैं। और १५० दुश्मनोंको क़ैद किया है। कसूरसे लाहौर जाती हुई एक ट्रेन जिसमें लगभग २२ पैटन टैंक और कुछ गाड़ियाँ थीं गोलाबारीसे उड़ा दी गयीं।

लाहौर-क्षेत्रमें दुश्मन जी तोड़कर लड़ रहा है। पर हमारी रण-कुशलता और उत्तम रणनीतिका चुनाव उसके आड़े आ रहा है। पाँचों मोर्चोंपर भारतीय फ़ौजोंने दुश्मनके छक्के छुड़ा रखे हैं।

मशीनगन संचालन करते हुए हमारे एक बहादुर मशीनगनरकी दोनों टाँगें दुश्मनी बमके शेरेपैनलसे घायल हो गयीं। उसके ज़ख़्मोंकी मरहम-पट्टी हो ही रही थी कि दुश्मनने प्रति-आक्रमण किया। जवानके हाथोंकी उँगली फुरतीसे गनके खटकेपर पहुँची और उसने पट्टी बाँधनेवालेसे कहा : 'मेरी पट्टी फिर भी बँध जायेगी, पर दुश्मनको इसी समय खदेड़ना होगा!'—दुश्मन भगा दिया गया;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रति-आक्रमण विफल हुआ, किन्तु दुश्मनोंको भगाकर मशीनगनरने उसी समय वीरगति प्राप्त की।

पाकिस्तानी सिपाही टैंककी आड़में ही लड़ते हैं और टैंकके फटते ही सिपाही-के हाथ-पैर फूल जाते हैं और वह घबराकर भागता है किन्तु भारतीय फ़ौजी बिना टैंकोंकी सहायताके भी लड़नेके अभ्यस्त हैं। अचानक एक अफ़सर और तीन जवान एकाएक पाक-टैंकके समक्ष आ गये। पर उन्होंने क्षण मात्रमें अपने पासके ठिकानोंको सतर्क कर दिया और शत्रुके तीन टैंक ध्वस्त कर दिये गये।

आज जोरियाँपर पुनः क़ब्ज़ा करनेके लिए की गयी घमासान लड़ाईमें कप्तान बी० एस० सिन्धुके गहरी चोट आयी। उनकी जाँघमें तीन गोलियाँ लगीं और दुश्मनकी गोलाबारीसे मुँह भी झुलस गया है किन्तु क्या मजाल कि बहादुरके उत्साह और हौसलेमें हलकी-सी भी ज़रब आ जाये। अस्थायी शिविरमें मुलाक़ात-के लिए आये अपने पिता इन्सपेक्टर जनरल (रेलवे पुलिस) सरदार पूरन सिंहसे वह बहादुर बोला, 'आपको यह देखकर ख़ुशी होगी कि मेरी पीठपर कोई गोली नहीं लगी है ?'—और पिताने शाबाशी दी—'बेटा, तुमने पंजाबी योद्धाओंकी परम्पराका भली प्रकार निर्वाह किया है।'

हमारे कश्मीर-जम्मूके मोर्चे बराबर सक्रिय हैं। ऊरी-पूंच क्षेत्रमें हाजीपीर-दर्रेके पार २० चौकियाँ हमारे अधीन हैं। आज एक चौकी पूंच-नगरसे ८ मील दूर हमारे हाथ आयी।

९ सितम्बरकी रात्रि

हाजीपीर-दर्रेके क्षेत्रमें हमारी सेनाओंने पाकिस्तानके दो ठिकानोंपर, जिनमें-से एक ९३०० फ़ुटकी ऊँचाईपर स्थित था और दूसरी ७६०० फ़ुटकी ऊँचाईपर, हमला किया। दुश्मनको इन हमलोंकी ज़रा भी आशा नहीं थी। इसलिए वह इस अकस्मात् आक्रमणसे हक्का-बक्का रह गया। कम्पनीका कमाण्डर पाजामा पहने हुए बाहर भाग गया। उसके बंकरमें-से उसके बाक़ी कपड़े, सामान और काग़ज़ात मिले। एक सिपाही भाग ही न पाया और क़ैद कर लिया गया।

आज भूतोंवाला चौकीपर 'मुजाहिदों' के आक्रमणको विफल करनेमें राज-स्थान सशस्त्र पुलिसवाहिनीके कांस्टेबल पूनम सिंह एवं उनके साथियोंने अद्भुत वीरता दिखायी। इस चौकीपर पाकिस्तानी रेंजर्सने जो हमारी सिपाही-टुकड़ीसे संख्यामें तिगुने थे, हमला कर दिया। किन्तु हमारे सिपाहियोंने उनमें-से कुछको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार गिराया और बाक़ियोंको भगा दिया। जब हमारे सिपाहियोंकी गोलियाँ ख़त्म हो गयीं तो पूनम सिंहने चौकीके बाहर आकर गोलियोंकी बौछारमें मृत सैनिकोंके कारतूसों और गोला-बारूदोंको एकत्र कर उन्हींसे दुश्मनोंको ढेर कर दिया। दूसरी बार गोली एकत्र करने आनेपर उसके माथेपर एक हथगोला लगा जिससे वह बुरी तरह घायल हो गया। फिर भी वह दुश्मनपर टूट पड़ा और तीनको मारकर ही, वीरगति प्राप्त की।

सरगोधाके हवाई अड्डेपर हमारी बमबारी जारी है। दुश्मन समझ गया है कि अड्डा आख़िरी दम भर रहा है। इसलिए वह वहाँसे अपने टैंकों और बख्तरबन्द गाड़ियोंके जमावको छोदा कर रहा है।

चारों ओरसे हारकी मारसे खीजकर दुश्मनने साधारण युद्ध-नियमोंका पालन भी भंग कर दिया है। आज उसके कई पैराट्रूपर सादे कपड़े में, दाढ़ी बढ़ाये, सिक्ख सरदारोंका वेश धारण किये, भारत-भूमिपर उतरे। हमें धोखा देनेके लिए दुश्मनने इतनी घटिया चाल चली है कि वह अपने विमानोंपर आई० ए० एफ़० लिखनेमें भी संकोचका अनुभव नहीं कर रहा।

हमारी ओरसे एलान हो गया है कि कश्मीर-क्षेत्रमें छतरीबाज़को देखते ही गोली दागी जा सकती है।

आज दुश्मनने जोधपुर और पठानकोटपर कई हवाई हमले किये।

• १० सितम्बर १९६५

पिछले सोमवारको पाकिस्तानियोंने रावी नदीके डेराबाबा नामक पुलको उड़ा दिया था, किन्तु फिर भी हमारी सेनाके अग्रिम दस्ते गुरुदासपुर अंचलमें रावी नदी फाँदकर पार करनेमें सफल हो गये हैं और रावीके पार मोर्चाबन्दी कर ली है। यह मोर्चा युद्ध-क्षेत्रकी रण-स्थितिकी दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण है।

जम्मू-स्यालकोट-क्षेत्रमें दुश्मनोंने डटकर सामना किया किन्तु वहाँ भी हमारी फ़ौजें काफ़ी आगे बढ़ गयीं। सुलेमानी अंचलमें दुश्मनके सारे हमले बेकार गये। वहाँ एक ही युद्धमें ७० पाकिस्तानी मारे गये।

पाकिस्तानी फ़ौजोंने लाहौरसे २० मील दक्षिण-पश्चिममें स्थित रायविन्दकी ओरसे अपना सशस्त्र जत्था भेजकर कसूर-क्षेत्रपर धावा किया। हमारी फ़ौजोंको वहाँसे कुछ पीछे फ़िरोज़पुरकी तरफ़ हटना पड़ा। यद्यपि इस क्षेत्रमें भी हमारे फ़ौजियोंने जानकी बाज़ी लगाकर युद्ध किया। अमृतसर और फ़िरोज़पुरके बीच स्थित खालड़ा-कसूर धुरीमें हमारी फ़ौजें पाकिस्तानकी ओर कुछ और आगे बढ़ीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

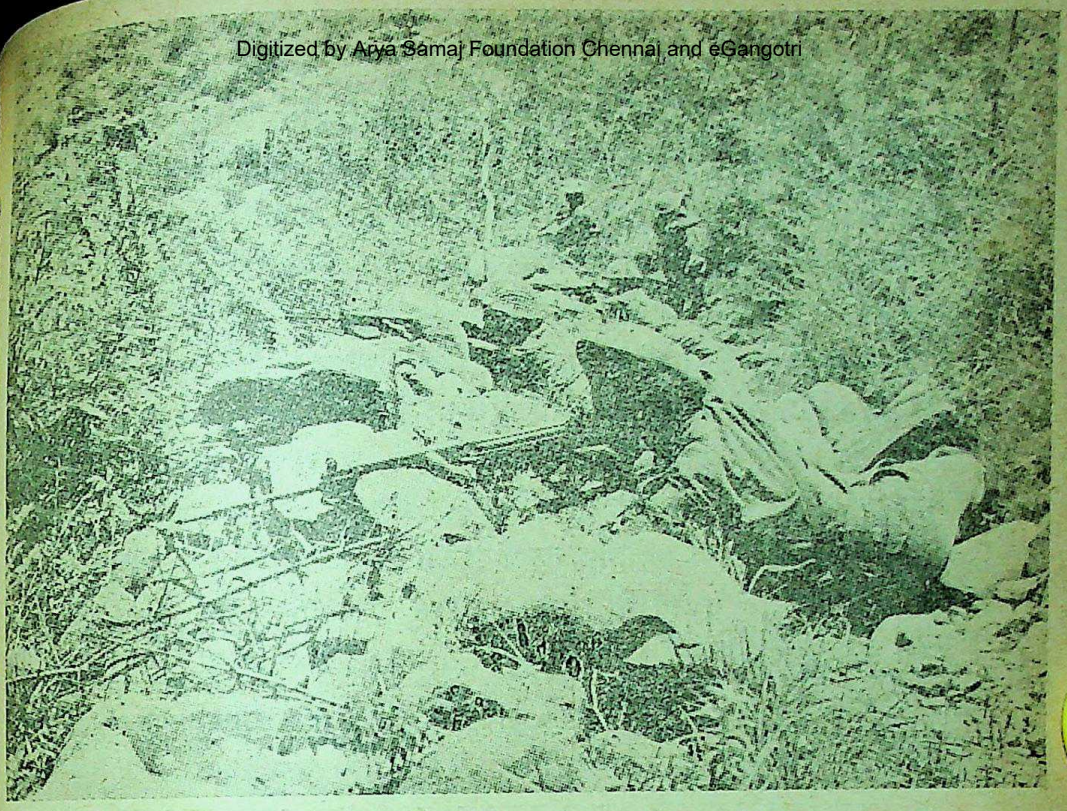

पिछली रात लाहौरकी सीमाके बाहर घमासान झपटें हुईं। पाकिस्तानने भारतका दाँव उलटानेके लिए अपनी हथियारबन्द डिवीज़नका कुछ भाग इस मोर्चे-पर भेजा। रातसे लेकर आज दोपहर तक दोनों ओरसे भयंकर संघर्ष हो रहा है, किन्तु दुश्मनके जंगली हमलोंको झेलती हमारी फ़ौजें वहीं डटी हैं।

लाहौर-क्षेत्रमें रातको ८ बजे हमारी सेनाएँ कालड़ा क्षेत्रमें 'बुर्की' की ओर बढ़ीं और ९ बजनेसे पहले ही इछोगिल नहरके किनारे स्थित गाँवको अपने अधीन कर लिया। किन्तु वर्तमान युद्धमें पहली बार हमारी फ़ौजोंको ९० मिनिटके समयमें इतनी घनी गोलाबारी और इतना ज़बरदस्त फ़ौजी हमला सँभालना पड़ा। दुश्मनने पहली बार विमानभेदी संचालित प्रक्षेपास्त्र (anti tank guided missiles) का प्रयोग किया और ९० मिनिटमें २५०० बार गोलियोंकी बौछार की। हमारी फ़ौजोंने भी पहली बार 'रात्रिके अँधेरे' को फ़ौजी चालके लाभके लिए प्रयुक्त किया। लड़ाईकी गहनता द्वितीय महायुद्धके अला-ऐलामीन युद्ध क्षेत्रकी याद दिला रही है। दुश्मनने एक प्रकारसे हमारे 'शौक-ऐक्शन' (भय संचारी हमले) के विरोधमें दूसरा दाँव चला। लड़ाई हो ही रही थी कि स्टार शैल्ज और फ्लेयरों-द्वारा युद्ध-स्थलको प्रकाशसे चकाचौंध कर दिया। पुलिस स्टेशन और पोस्ट आफ़िसके बीच मुख्य सड़कपर हाथा-पाई और गुत्थमगुत्था लड़ाई होती रही। दोनों बिल्डिंगों खूनके धब्बोंसे रंग गयीं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
गोलियोंके दागों और आगकी लपटोंसे झुलस गया।

दुश्मनने पुलिस स्टेशनको एक दुर्गके ही रूपमें परिवर्तित कर रखा था। किन्तु हमारे जवानोंका साहस और बहादुरी भी पूरी चोटीपर थे। जितना आक्रमणकारीका जोश था उससे सौगुना हमारे सैनिकोंमें ज़ोर था। उन्होंने पाकिस्तानके उस अजेय समझे जानेवाले दुर्गपर विजय पायी और रेंगते हुए उसके अन्दर घुस गये और हथगोलोंसे पाकिस्तानियोंको खत्म किया।

दुश्मनने पासके खेतोंमें सुरंगें बिछा रखी थीं। हमारे टैंकोंको यह पता न था। जैसे ही वह उधरकी ओर जाते दिखाई दिये तो हमारे तीन अफ़सर जान हथेलीपर रखकर खुली जीपोंमें आगे बढ़े और अपनी टैंकोंको रास्ता दिखाया। प्राणघातक गोलियोंकी बौछारकी परवाह न करते हुए एक कर्नल अपने सिपाहियोंको साथ लेकर और आगे बढ़ा कि इछोगिल नहरके पुलपर क़ब्ज़ा जमा लें। किन्तु दुश्मनने उसी समय पुलको उड़ा दिया। इस मुठभेड़में तीन पाकिस्तानी अफ़सर व ८ अन्य फ़ौजी मारे गये और २३ ज़ख़्मी हुए।

स्यालकोट-सैक्टरमें हमारी फ़ौजें और आगे बढ़ी हैं और आज हमारा क़ब्ज़ा 'ऊँचे बाँस'की पहाड़ीपर भी हो गया।

ऊरी-पूंच-सैक्टरमें ऊरीसे ७ मील दूर उत्तर-पश्चिममें हमने आज एक और पाकिस्तानी चौकी, झण्डीमाली, पर क़ब्ज़ा कर लिया। एक अफ़सर और कुछ सैनिक पदाधिकारी मारे गये और एकको पकड़ लिया गया। साथमें हथियार और बारूद भी प्राप्त हुए।

'बुर्की' पर हुआ आजका घमासान युद्ध इतिहासके पन्नोंमें एक विकट घटनाके रूपमें याद किया जायेगा।

११ सितम्बर १९६५

आजका लाहौर मोर्चा स्मृतिपटपर अविस्मरणीय रहेगा। अत्यन्त भीषण रणमें जूझते दोनों पक्ष अपने-अपने बलका पूर्ण परिचय देनेपर तुले थे। पाकिस्तान समझा कि हम लाहौरपर क़ब्ज़ा करना चाहते हैं, जब कि हमारा उद्देश्य शत्रुके बलको क्षीण करना और नष्ट करना है। हमारी रणनीति इसी उद्देश्यपर आधारित है और इसमें हम सफल भी हुए क्योंकि हमारे युद्ध-कौशल-युक्त सैन्य संचालनके फलस्वरूप आज पाकिस्तानको महान् सैनिक क्षति सहनी पड़ी है। आजके दुश्मनने अपनी पूरी शक्ति लगा दी। अपने एक दक्ष मेजर जनरलकी कमानमें एक अत्यन्त अनुभवी ब्रिगेडियरके साथ पैदल सेनाकी एक पूरी ब्रिगेड झोंक दी। इसके अतिरिक्त एक पूरा डिवीज़न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बख्तरबन्द गाड़ियोंका तो साथ था ही। दुश्मनके डिवीज़न और ब्रिगेड तो पूरी तरह युद्धमें काम आ ही गये। इसके अतिरिक्त दो लेफ़्टीनेण्ट कर्नल, ६ मेजर और ६ अन्य पदाधिकारी सैनिक क़ैद कर लिये गये।

लाहौरके तीनों अंचलों—बाघा, खालड़ा और कसूरमें भयंकर लड़ाई चल रही है। टैंकों और तोपोंके इस घमासान युद्धके फलस्वरूप नगरका बाहरी भाग दुश्मनके फ़ौजियोंकी लाशों और ज़ख़्मी सैनिकोंसे पटा पड़ा है।

जैसे ही दोनों ओरसे दुश्मनकी हथियारबन्द फ़ौजपर भारतीय टैंकों-बन्दूक़ों-की गड़गड़ाहट शुरू हुई कि आगकी एक दीवार दुश्मनके सामने खड़ी हो गयी और वे घबराकर अपने टैंकोंको छोड़ लड़ाईके मैदानसे भागे। दो दुश्मनके पैटनोंने सफ़ेद झण्डे लगा अपनी बन्दूकें नीची कर आत्मसमर्पण कर दिया। बारह और टैंक हमारे हाथ लगे।

लाहौर-कसूरके इस घमासान युद्धके काले आकाशमें एक बहादुरका नाम ध्रुवतारेकी तरह रह जगमग करता रहेगा। वह बहादुर है—कम्पनी क्वार्टर मास्टर हवलदार अब्दुल हमीद। देशका यह मुसलमान वीर उत्तर प्रदेशके गाज़ीपुर ज़िलेके धामपुर गाँवका है, फ़ौजमें यह ग्रीनडियर (गोलन्दाज़) है। दुश्मनके अमरीकी पैटन टैंक सामनेसे आ रहे थे, (उनकी रेंज १८०० गज़ है)। जब कि अब्दुल हमीदके हाथमें है केवल एक रिकोयल-लेस बन्दूक़ जिसका निशाना केवल ६०० गज़की दूरी तक मार कर सकता है। टैंक उसकी ओर बढ़े आ रहे हैं—उसकी छातीपर चढ़े-से। वह सीना ताने तना हुआ खड़ा है उनका सामना करनेको। जैसे ही वह ६०० गज़के फ़ासले पर आये कि उसने एक टैंकपर निशाना लगा उसे वहीं ढेर कर दिया और दूसरेपर गोली दाग उसमें आगके शोले भड़का दिये और तीसरेपर चोट कर उसका गीयर बेकार कर दिया।

दुश्मनको, एक चौथा टैंक, इस अकेले वीरका, जो मातृभूमिकी रक्षा कर रहा था, सामना करनेके लिए भेजना पड़ा।....वह चौथेको भी चकनाचूर करने-वाला था कि एक गोली आकर लगी और वह वीरगतिको प्राप्त हुआ। इस अकेले दृष्टान्तने भारतके गौरवको हज़ार गुना कर दिया। फ़ौजी ही नहीं, दुश्मनको राजनैतिक लड़ाईके मोर्चेको ध्वस्त करनेमें वीर अब्दुल हमीद भारतका लाड़ला लाल प्रमाणित हुआ है।

हाजीपीर दर्रेके पास तीन और चौकियाँ हमारे क़ब्ज़ेमें आ गयीं—इस तरह १५० वर्गमीलका पूरा बढ़ा हुआ हिस्सा जो ऊरी और पूंचको मिलाता है और जिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
ओरसे पाकिस्तानी हमलावर श्रीनगर जाते थ हमारे हाथमें है। उस समयका दृश्य अत्यन्त मार्मिक था जब कि पूंच और ऊरीकी ओरसे बढ़नेवाले जवान एक स्थानपर आ मिले। उन्होंने हाथ मिलाये, एक-दूसरेको गले लगाया और खुशीके मारे नाचने लगे।

स्यालकोट-क्षेत्रमें भी हमारी फ़ौजोंने दुश्मनकी फ़ौजोंको बड़ी मार दी और उनकी एक बटैलियनका सफ़ाया कर दिया—अनुमान है कि हमारी सेनाने स्यालकोट नगरको घेर लिया है।

आज ५ पाकिस्तानी सैबरजेटोंने अमृतसरपर हमला किया। उसमें-से दो पाकिस्तानी सैबरजेटोंको मार गिराया गया। पाकिस्तानके एक एयर ऑफ़िसर स्क्वेड्रन लीडर मुनीर हुसैनकी लाश टूटे जहाज़ोंके ढेरके नीचे दबी हुई मिली। एक पाकिस्तानी सैबरजेटने व्यास नदीके पुलको उड़ानेकी कोशिश की, पर वह विमान-भेदी तोपसे भगा दिया गया।

१२ सितम्बर १९६५

भारत-पाकिस्तान सीमापर कसूरके अंचलमें चारों ओर हँसते हुए, झूमते हुए, गन्नेके खेत हैं, मकई उगी हुई है और कपास फूल रही है। इन्हींके बीच हमारे सैनिक कमाण्डरका हेडक्वार्टर है, जहाँसे उस भीषण युद्धका संचालन हो रहा है, जो द्वितीय महायुद्धकी लड़ाईका स्मरण दिला रहा है।

कोई और दिन होता तो यह स्थल शान्ति और सुन्दरताका चित्र होता किन्तु आज खिलती धूपकी सन्ध्यामें, यहाँकी हवामें तोपों और बन्दूक़ोंकी घड़घड़ाहटका शोर है और फटते गोलोंसे निकले काले धुएँको धुन्ध।

स्यालकोट-जम्मू क्षेत्रसे टैंकोंकी भिड़न्त और टकराहटका शोर ऐसी भयानकता-से गूँज रहा है जैसे दो जंगली जानवर आपसमें जूझकर दहाड़ रहे हों।

आज जम्मू-स्यालकोट क्षेत्रमें टैंकोंकी भयंकर लड़ाई हो रही है। पाकिस्तानके ५२ टैंकोंको हमारी फ़ौजने एक ही दिनमें समाप्त कर दिया। पाकिस्तानने ९० टैंकों-की दो रेज़ीमेण्ट, जिनमें अमरीकाके बने पैटन, चैफ़ और वाकर-बुलडोज़र थे, लड़ाई-के मोर्चेपर एक साथ झोंक दिये। फ़ील्ड मार्शल रोमेलने दूसरे महायुद्धमें अफ़्रीकी कोरका कमान करते हुए अल-अलामेल युद्धमें ७० ब्रिटिश टैंक जीते थे। उसके बाद टैंकोंकी सबसे बड़ी लड़ाई आज हुई।

अफ़्रीकी भूमिपर हुई टैंकोंकी लड़ाईमें मार्शल रोमेलको टैंक-बेधी बैटरियोंका सहारा मिला था, किन्तु जम्मू-स्यालकोट क्षेत्रमें तो टैंकोंने ही टैंकोंका सामना किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ़्लाइट लेफ़्टीनेण्ट तपन चौधरीने आज मोर्चेपर से अपने माता-पिताको एक चिट्ठी लिखी है :

"प्यारे बाबा,

५ सितम्बरसे हम लगातार दुश्मनपर भारी चोटें कर रहे हैं। जितनी बार आकाशमें हम ऊँचे उड़े हैं, हमने पाकिस्तानी टैंक और फ़ौजी चौकियोंको एकके बाद एक बरबाद किया है। मैं अपनी मातृभूमिकी रक्षाका पवित्र कर्तव्य पूर्णतया निबाह रहा हूँ। शत्रु मेरे विमानपर हलकी-सी खरोंच भी नहीं कर सका है। यह माँ काली और मेरे माता-पिताके आशीर्वादका फल है। ये आशीर्ष मुझे अपने कर्त्तव्यमें सहारा दिये रखती हैं। ईश्वरसे प्रार्थना कीजिए कि मैं प्रतिदिन शत्रुको पंगु बनानेमें सफलता प्राप्त करूँ।

५ सितम्बरसे आज १२ सितम्बर तक मैंने बिलकुल विश्राम नहीं लिया है। कृपया सबसे मुझे पत्र लिखनेको कहें क्योंकि पत्रोंसे मेरे निश्चयको दृढ़ता मिलती है।

मैं माँको अलगसे पत्र नहीं लिख रहा हूँ किन्तु उनसे कहिएगा कि उनका अयोग्य पुत्र पूरा प्रयत्न कर रहा है कि वह किसी अच्छे काम आये।

अब मेरे पास समय नहीं है। मुझे वापस वायुमें जाना है····दुश्मनपर चोटें करने। आह! इस मौक़ेका हाथ-आना कितना रोमांचकारी है।"

यह पत्र सम्भवतया देरसे कलकत्ते पहुँचेगा क्योंकि आज ही सन्ध्याको तपन चौधरी शत्रुपर वार करते हुए वीर गतिको प्राप्त हुआ। उनका शव उनके घर पहुँचाया जा रहा है।

कलेजा दहलता है···आँसू उमड़ते हैं···

भारतीय सेना सब मोर्चोंपर सफलता प्राप्त कर रही है। कारगिलके उत्तर-पश्चिममें हुए संघर्षमें नौ पाकिस्तानी सिपाही मारे गये और कुछ ज़ख्मी हुए। भारतीय फ़ौजें वहाँ पहरा दे रही थीं, कि उन्होंने देखा कि पाकिस्तानी सिपाहियोंकी एक टुकड़ी वहाँ सुरंगें बिछा रही है। स्वाभाविक ही हमारे सिपाहियोंको उनपर आक्रमण कर उन्हें ठिकाने लगाना पड़ा।

टैंकोंकी इस भयानक लड़ाईमें आज एक टैंक-अधिकारीने अपरिमित बुद्धि-साहसका परिचय दिया। यह अफ़सर एक अग्रिम मोर्चेकी ओर जा रहा था कि उसे शत्रुके तीन टैंक दिखाई पड़े और भारतीय सैनिकोंको देखते ही उन टैंकोंसे मशीनगनें गोलियाँ दागने लगीं। भारतीय अफ़सरने तत्काल वायरलेसके ज़रिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
तोपख़ानेको सन्देश दिया और तोपें उन टैंकोंपर गोले दागने लगीं जिससे तीनों टैंकोंमें आग लग गयी। शत्रुका चौथा टैंक भी वहाँसे पीछेकी ओर हटा।

तत्पश्चात् भारतीय अधिकारीने देखा कि चालीस-पचास पैदल पाकिस्तानी सैनिकोंका दस्ता उनकी ओर बढ़ा आ रहा है। भारतीय अफ़सरके पास एक टैंक था, लेकिन उसकी तोपोंमें ख़राबी आ गयी थी और उसके पास जो जीप थी वह भी दुश्मनकी गोलियोंसे क्षतिग्रस्त थी। उसके सामने यही रास्ता था कि अपने तीनों आदमियोंके साथ शत्रुपर गोलियाँ चलाना शुरू कर दे। उसने यही किया और उन गोलियोंकी बौछारसे शत्रुको यही आभास मिला कि सामने जितने भारतीय सैनिक दीख रहे हैं उससे कहीं ज़्यादा आस-पास छिपे हुए हैं। ऐसा प्रतीत होते ही दुश्मनने आगे बढ़ना बन्द कर दिया और वहीं रुक गया। इसी बीच वहाँ सहायताके लिए भारतीय जवानोंका दल आ पहुँचा और दुश्मनको खदेड़ दिया।

• १३ सितम्बर १९६५

जम्मू-छम्ब सेक्टरमें 'अख़नूर' क्षेत्र भारतीय फ़ौजोंकी संरक्षणमें है। नदीके किनारे बसा अख़नूर छोटा-सा सुन्दर नगर है। कुछ दूर हटकर नदी है जो गहरी पहाड़ियों-की उपत्यकामें-से होकर बहती है। ऊँची-नीची धरतीपर बसे अख़नूरके मकान सुबहकी धूपमें चमक उठते हैं। किन्तु इसके चारों ओरकी पहाड़ियाँ आज बन्दूकों, तोपों और गोलोंके शोरसे गूँज रही हैं। अख़नूरसे कुछ दूर एक शरणार्थी-शिविर खोला गया है और वहाँ मर्द-औरतें और बच्चे सड़कके किनारे बहती रनबीर नहरके पास मेला-सा जोड़े खड़े हैं। आज उन्हें एक टन आटेकी रोटियाँ और फल बाँटे गये हैं।

लाहौर-स्यालकोट क्षेत्रमें जहाँ कई दिनसे भयानक युद्ध चल रहा है हमने दो और मुख्य चौकियाँ क़ब्ज़ेमें कीं। युद्ध-स्थलमें दुश्मनके कई टैंक-संचालकोंने सफ़ेद झण्डे दिखाकर आत्मसमर्पण किया। दुश्मन अपनी फ़ौजें इस ओरसे हटाकर रावी-के पार गुजराँवाला-वज़ीराबादकी ओर ले जाकर अगले मोर्चेकी तैयारीमें है।

पाकिस्तान अपने उस टैंकोंके भण्डारको भी, जो जेहलमके पास 'ख़रियान'में है, वहाँसे हटाकर लाहौरसे ६० मील उत्तर-पश्चिमकी ओर गुजराँवाला-वज़ीराबाद क्षेत्रमें ले जाकर फ़र्स्ट आरमर्ड डिवीज़नकी ख़स्ताहाल टैंक रैज़ीमेण्टको सशक्त कर रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाकिस्तानियोंके गिरते हुए साहस और निराशाका एक प्रमाण यह भी है कि आज उसने अत्यन्त अविवेकपूर्ण ढंगसे भारतके कई नगरोंपर हवाई जहाज़से बम गिरानेके प्रयत्न किये जिनमें अमृतसर, गुरदासपुर, फ़िरोजपुर, बम्बई, जम्मू, पठानकोट, बारमेर, संगरूर, गौराया (जालन्धर), काँगड़ा ज़िलेमें नूरपुर गाँव, सिलीगुड़ी, कलाईकुण्डा, बैरकपुर, बागडोगरा शामिल हैं।

डेरा बाबा नानकके युद्धांचलमें नायक महिन्दर सिंहने दिलेरीका एक अद्भुत कारनामा कर दिखाया है। उसने देखा कि एक पाकिस्तानी टैंक अपनी क्षमताके गर्वमें भरा धीरे-धीरे आगे बढ़ा चला आ रहा है। बहादुर महिन्दर सिंह झाड़ियोंकी ओटसे निकलकर टैंककी तरफ़ भागा। एक आदमीकी दौड़-भाग इतने बड़े रानजहान टैंककी नज़रमें क्यों आने लगी; और आती भी तो एक अकेला आदमी उस टैंकका क्या कर लेगा। लेकिन महिन्दर सिंह एक अकेला, हज़ार फ़ौजियोंके बराबर पराक्रमी था। पलक मारते ही महिन्दर सिंह टैंकके पीछे जा पहुँचा और उसके ऊपर चढ़ गया, और एक हथगोलेको टैंकके कौकपिटमें डाल दिया। टैंक फटा, लेकिन महिन्दर सिंह सहीसलामत उतर भागा। वह दुश्मनोंको एक उपहार ज़रूर दे आया — अपना एक हाथ जिसकी कारगुज़ारीको दुश्मन कभी भुला नहीं सकेगा।

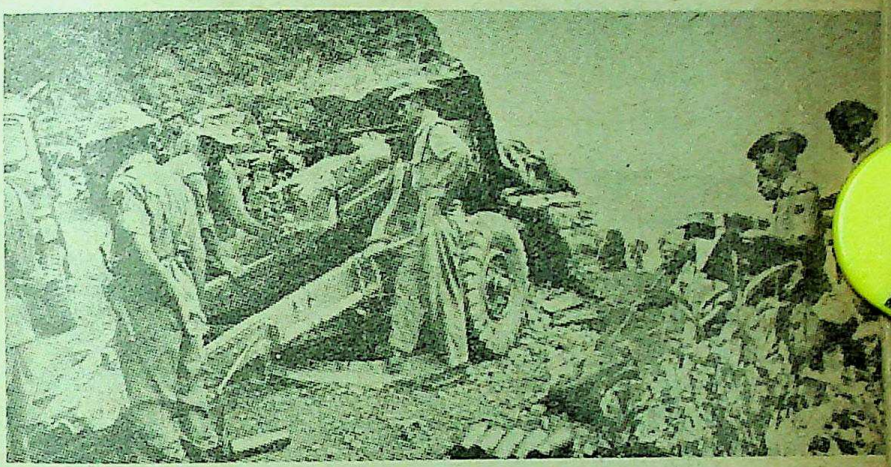

"दो नील कमल हैं शेष अभी, यह पुरश्चरण
पूरा करता हूँ देकर मातः एक नयन।"

• १४ सितम्बर १९६५

आज युद्धोंके मोर्चेपर दोनों ओरसे कुछ शिथिलता रही जैसे कि आगामी घोर युद्धकी तैयारियोंके लिए फ़ौजें विश्राम कर रही हों। १३ की रातको हमारे विमानोंने पेशावर और कोहाटके हवाई अड्डोंको चोटें पहुँचायीं। दुश्मनने जो अपने लड़ाकू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वायुयान सरगोधासे यहाँ लाकर सुरक्षित किये थे उन्हें हानि पहुँची। यहाँ गहरे छद्मावरण जालमें छिपी पेट्रोलकी टंकियाँ, वायुयान-पथ, फ़ौजोंके निकासी-स्थान थे, जहाँ बी-५७ बौम्बर व ऐफ़-८६ सैबरजेट आदि रखे थे। वे सब हमारी फ़ौजों-द्वारा उड़ा दिये गये।

सरगोधाके हवाई अड्डेको हमारे बमबाज़ोंने लगभग खत्म कर दिया है। छम्ब-जोरियन क्षेत्रमें, पाकिस्तानी फ़ौजें अब भी मुनावर-तावी नदीके इस ओर हैं। फिर भी हमने वहाँ उनके कुछ और टैंक बरबाद किये।

कसूर-क्षेत्रमें चार भारतीय वायुयानोंके हण्टरोंने पाकिस्तानकी तोपोंके कई ठिकानोंको खत्म किया।

लाहौर-मोर्चेपर हमारी सेना जमी हुई है। इस मोर्चेपर हमारी प्रगति रोकनेमें असमर्थ होनेके कारण पाकिस्तानी लाहौरसे लगभग ६ मील दूरस्थ खगीरी नहरके पुलोंको उड़ा रहे हैं।

पूंच-ऊड़ी-क्षेत्रमें हाजीपीर-दर्रेके तीन मील दक्षिण-पूर्व स्थित एक पाक चौकी 'ज़ियारत' को हमारी सेनाने घेर लिया तो दुश्मन बिना मोर्चा लिये, अपने पीछे १७००० पौण्ड अस्त्र, १०० हथगोले, २०० एम-एम रॉकेट, और कुल मिलाकर ३२ इंच मॉर्टर छोड़कर भाग गये।

हमारी सेनाके एक सिपाहीने अपनी सच्ची लगन और कर्तव्यपरायणताका विचित्र उदाहरण प्रस्तुत किया। उसने यह भाँपा कि दुश्मन एक जगहसे लगातार गोलाबारी कर रहा है पर पता नहीं चल रहा कि उसका ठिकाना कहाँ है। दुश्मन-के ठिकानेकी खोजमें यह सिपाही वायरलेसका सेट लेकर एक वृक्षपर जा चढ़ा और उसने चार दिन उसी वृक्षपर बिताये। ठिकाना पता लगाकर वहीं बैठे हुए ही वह वायरलेस सेटसे अपने साथियोंको बतलाता रहा कि कहाँसे गोलाबारी हो रही है। निश्चय ही इस जानकारीसे हमारी फ़ौजोंको अपनी रक्षा करनेमें आशातीत सहायता मिली।

वीरगति प्राप्त करनेवाले हमारे बहादुर जवानोंमें-से आज लाहौर-क्षेत्रमें प्राण समर्पित करनेवाले अभिमन्यु पवारके कारण सबके हृदय उदास हैं। शोलापुरका रहनेवाला यह वीर दस वर्षसे सेनामें भरती था। इसी अगस्तमें उसका विवाह हुआ था और विवाहके दूसरे दिन वह अपनी नयी दुलहिनको वापस आनेका आश्वासन दे, २४ घण्टेके भीतर आदेश पाते ही, मोर्चेपर चला आया था। उसके परिवारके अन्य सदस्य खेतिहर मज़दूर हैं। उसके वृद्ध माता-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिता, ६ छोटे बहन-भाई और नव-विवाहिता पत्नी जो पीछे छूट गये हैं, देशको दिये गये इस बलिदानके लिए भारतवासियोंकी कृतज्ञताके पात्र हैं।

१५ सितम्बर १९६५

जम्मू-स्यालकोट-मोर्चेपर हमारी बढ़ती हुई सेनाने २१ मील लम्बी स्यालकोट-पसरूर रेलवे लाइनको अधीन कर लिया। पसरूर, स्यालकोटसे ३० मील दूर दक्षिण-पूर्वमें स्थित है और डेराबाबा नानकके पास नारोवाल-द्वारा लाहौरसे सम्पर्कित है। अब स्यालकोट और लाहौरके बीच केवल वज़ीराबादसे होकर जानेवाली ट्रेन बची है। इस रेलपर क़ब्ज़ा होना रण-मोर्चेकी दृष्टिसे काफ़ी महत्त्वपूर्ण है। इससे एक तो यह ज़ाहिर होता है कि हमारी फ़ौजें मुख्य सड़कोंको छोड़कर खुले मैदानोंसे आगे बढ़ रही हैं जहाँ नहरों व रावी-चिनाबसे प्रवाहित छोटे-छोटे नालोंका काफ़ी बिछाव है। पाकिस्तानी टैंकोंको ऐसी भूमिपर आगे बढ़नेमें काफ़ी असुविधा होती है। दूसरे यह कि हमारा उद्देश्य स्यालकोटके मकानों और दुकानोंपर क़ब्ज़ा करनेका नहीं है बल्कि नगरके चारों ओर घेरा डालकर उसको और क्षेत्रोंसे काट देना है।

रणनीतिकी इस दक्ष चालसे प्रकट होता है कि युद्धमें आया ठहराव ऊपरी अस्थायी है। युद्ध-नीतिके दाँव-पेंच लड़ाईको चालू रखनेके लक्षण हैं।

हमारी सेना लाहौर नगरकी गरदनपर बैठी हुई है और वहाँके हवाई अड्डेपर बिना हमारी आज्ञाके कोई नहीं आ-जा सकता। हमारी सेनाका मोर्चा नगरसे ५ मील दूर इछोगिल नहरके सिरेपर है। दुश्मन इस नहरके पुलोंको तोड़ रहे हैं।

हमारे विमानोंने कसूर-लाहौर रोडपर एक कड़े सैनिक कारवाँपर हमला किया और ३४ सैनिक टैंकोंको बरबाद कर दिया। कसूर और लाहौरके बीचके एक पुलको भी हमने तोड़ दिया है।

लाहौरके लिए जानेवाली रसदको रोक देनेसे दुश्मनकी सेनामें काफ़ी भगदड़ मच गयी है। वहाँ दुश्मन अपने बरबाद टैंकोंको घसीटते हुए दिखाई दे रहे हैं।

तिथवाल क्षेत्रमें हम जितना ही अपना अधिक जमाव कर रहे हैं उतनी ही दुश्मनकी फ़ौजें स्वयं पीछे हट रही हैं।

दुश्मन कश्मीरमें आये हमलावरोंके लिए खानेका सामान और हथियार अपने विमानोंसे डाल रहा था। हमारी फ़ौजने दो बार इस रसद और हथियारोंको भी हथिया लिया।

हमने आज सरगोधाके दक्षिणपूर्वमें ५० मील दूर स्थित चक-झूमराके हवाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
अड्डेपर बम-वर्षा की। सरगोधा हवाई अड्डेपर भी चार हमले किये।

सरगोधाके अड्डेको बरबाद कर देनेमें हमारा मुख्य उद्देश्य, जैसा कि पहले बताया गया है, कि वहाँ दुश्मनके अमरीका-द्वारा लगाये गये मज़बूत राडारको उड़ा देना, जिसकी एलैक्टोरिनिक आँखें हमारे लड़ाकू विमानोंकी हलकी-से-हलकी पहुँचको भी दूरसे ताक लेती थीं--उस क्षेत्रमें हमारे सारे विमानी आक्रमण और उड़ानें असफल कर देती थीं। कई दिनोंसे कई बार हमारे वायुयानोंके दल उसपर बम फेंकने गये थे किन्तु निशाना हर बार चूक जाता था। आज भी सन्ध्याको हमारे सौरटीज़ राडारपर निशाना लगानेमें असफल हो लौट रहे थे कि वायुयानोंकी बँधी पंक्तिमें-से एक वायुयान झटकेसे अलग छिटका और वापस राडारकी तरफ़ लपककर उड़ा। कप्तानने हुक्म दिया कि विमान वापस लौटा लाओ। पर, उस वीर विमान-चालकने आज राडारको ख़त्म करनेकी ठान ली थी। उसने सीधा अपना विमान ले जाकर राडारके भीतर धकेल दिया। राडार एक झटकेमें मृतवत् शान्त हो गया--किन्तु उसको चुप करानेकी ख़ातिर हमारे उस दिलावर बहादुरने अपने प्राण भी अपने विमानके साथ ही होम दिये।--जबतक वह स्वयं विमानपर बैठकर राडारमें घुसकर उसमें आग न लगाता, राडारका राक्षस अपनी तीक्ष्ण आँखें बन्द न करता। स्वयंको जान-बूझकर आगमें झोंककर अपने विमान-उड़ाकू साथियोंको आनन्दसे बेरोक-टोक आकाशमें उड़नेका रास्ता बना, वह सदाके लिए अपना नाम अमर वीरोंमें लिखा गया। इस अज्ञात योद्धाके प्रति हम श्रद्धानत हैं।

हलवाड़ा हवाई अड्डेपर दुश्मनने आज भी आक्रमण किया। सन्ध्या ६-२० का समय। सूर्य अस्त हो चुका है, क्षितिजपर गोधूलिका प्रकाश है। अड्डेसे तीन मील दूरसे फ़्लाइट अफ़सर डी० एन० राठौरने देखा कि हवामें अड्डेके पास कोई चीज़ चमकी। दूसरी निगाह डालते ही निश्चय हो गया कि दुश्मनके सैबर हवाई जहाज़ों और अन्य भारतीय विमान हण्टरोंका परस्पर आकाश-युद्ध हो रहा था। वे हण्टर भी उस समय सुरक्षा-कर्त्तव्यमें अड्डेपर थे। राठौर अपने साथी फ़्लाइंग ऑफ़िसर बी० के० नेबको सतर्क कर तत्काल हवाई अड्डेकी ओर बढ़ा। उसने देखा कि उस आकाश-युद्धके फलस्वरूप एक सैबर, विमान-भेदी तोपों-द्वारा नीचे गिरा दिया गया और दूसरा फ़्लाइंग ऑफ़िसर, गान्धीकी बन्दूक़-द्वारा उड़ा दिया गया था। बाक़ी दो सैबरजेट हवाई अड्डेपर नीची उड़ान भरते हुए अड्डेपर बम बरसा रहे थे। राठौरने अपना नैट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने दाहिने ओरके सैबरजेटसे १००० ग़ज़की दूरीपर स्थित किया और नेबने बायीं ओरवाले सैबरजेटको निशानमें लेते हुए अपना नैट लगाया। राठौरने एक बार ६५० ग़ज़की दूरीसे और दूसरी बार ५०० ग़ज़की दूरीसे सैबरपर निशाने मारे और सैबर ख़त्म हो गया। इसी प्रकार नेबने दूसरे सैबरकी ख़बर ली और वह भी अड्डेसे ५–६ मील दूर गिरा और फटकर ख़त्म हुआ। फ़्लाइंग ऑफ़िसर नेबने इससे पहले कभी भी इस प्रकार निशानेबाज़ी नहीं की थी– अनुभव न होनेके कारण, नेबने बहुत शीघ्रतासे अपना नैट विमान, सैबरसे केवल १०० गज़के फ़ासलेपर सटा दिया। किन्तु वही स्थिति उसके लिए अधिक उत्तम प्रमाणित हुई और पाकिस्तानकी सैबरोंके मौतका कारण बनी। इस पूरी घटनाके घटित होनेमें केवल १० मिनिट लगे।

१६ सितम्बर १९६५

आज हमारी फ़ौजोंने लाहौरकी भीतरी रक्षा-पंक्ति इछोगिल नहरको तीन भिन्न-भिन्न स्थानोंसे पार कर लिया। तीन मुख्य स्थानों—वाघा, खालड़ा और कसूरके किनारों—से इस नहरको पारकर लेना हमारे विजय-अभियानमें चार चाँद लगा देता है। हमारी इस सफलतासे शत्रु बहुत परेशान है क्योंकि नहरका पार करना लाहौरको तत्काल खतरेके समक्ष ला खड़ा करता है। वास्तवमें हमारी फ़ौजें ११ ता० की प्रातः ही बुर्कीपर अधिकार करनेके बाद इस नहरको पार कर लेतीं, किन्तु इसका वह पुल जो नहरसे ५०० गजकी दूरीपर था तत्काल ही शत्रुने उड़ा दिया था। इछोगिल नहर, सिंचाईके लिए नहीं वरन् नामके विपरीत लाहौरकी रक्षाके लिए एक सैनिक दुर्गके समान बनायी गयी है। इसके बनानेमें विश्वबैंकका रुपया खर्च हुआ है। इसकी चौड़ाई १४० फ़ुट है। इसके एक किनारेकी गहराई १५ फ़ुट है और दूसरेकी २५ फ़ुट है।

काँपा ब्रह्माण्ड, हुआ देवीका त्वरित उदय :
"साधु, साधु साधक-धीर, धर्म, धन-धन्य राम।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस नहरकी पक्की सतह कंकरीटकी है। चिनाब नहरका विख्यात मराला हैडवर्क, स्यालकोटके उत्तर-पश्चिमसे शुरू होकर, यह नहर दक्षिणकी ओर लाहौरके पास ६-७ मीलकी लम्बाई तक बहनेके बाद, दक्षिणकी ओर मुड़कर, बुर्की गाँवके पूर्वसे होती हुई कसूरके पूरबमें भारतीय सीमा और कसूरके बीच दीवार-सी बनाती हुई अन्तमें दक्षिणकी ओर जाकर जमालपुर नहरमें मिल जाती है। पाकिस्तानकी ओर इस नहरको सीमेण्ट-कंकरीटकी पक्की रक्षा-पंक्तिके रूपमें बनाया गया है, जिसमें अमरीकासे आयी बड़ी तोपें लगी हैं, जिनपर गोलेका असर नहीं होता, लेकिन पाकिस्तानी भीतरसे भारी गोलाबारी कर सकते हैं। नहरके किनारे-किनारे कवच-कोठरियाँ हैं और इनके अलावा जगह-जगह मकानोंके साथ सैनिक तहखाने बनाये हुए हैं। कवच-कोठरियोंमें गोलियोंका अम्बार इसी प्रकार लगा रहता है, जैसे गेहूँ-बाजरेके दानोंका।

यह भलीभाँति समझमें आता है कि इतने दृढ़ गढ़को हमारे हाथोंमें आया देख कर दुश्मनके हाथके तोते क्यों उड़ गये।

आजकी सबसे घमासान लड़ाई स्यालकोटके दक्षिणमें हुई जहाँ टैंकोंकी घोर भिड़न्त हुई। यहाँ दुश्मनके ३० टैंकोंको बेकार कर दिया गया। एक विद्युत् आक्रमणमें हमारी फ़ौजोंने ढाई मिनिटमें १४ टैंकोंको नष्ट किया।

पेशावर और सरगोधाके हवाई अड्डोंपर हमारे आक्रमण जारी रहे, वहाँके कई स्थापित उपकरणोंको नष्ट कर दिया।

पूंच-क्षेत्रमें हमारी फ़ौजोंकी स्थिति और सुधरी है। दुश्मनका एक बहुत बड़ा भण्डार जिसमें १००० हथगोले, ४०० दो-इंच मॉर्टर, धुआँ-बम, ९०००० से अधिक दौरोंके लिए पर्याप्त गोलियाँ, ६८ राइफ़ल, ग्रैनेडके बॉक्स, ८१ मिलीमीटर मॉर्टर बम और बहुत-सी टैंक-बेधी सुरंगें और बारूदके बक्से हाथ लगे हैं।

आज हमारे २४ वर्षीय नवयुवक हवाई योद्धा बुन्शाने देशकी रक्षा करते-करते वीरगति प्राप्त की। उस होनहार हँसमुख नौजवानने भारतीय वायु-सेनामें १९६१ में भरती ली थी। पिछली नेफ़ाकी लड़ाईमें यह पूर्णरूपसे वायु-चालक तथा हण्टर के- एम- आई-जी का संचालन करनेमें दक्ष हो गया था। वर्तमान युद्धमें बहुत-सी सौरटीज़को शत्रुके विरुद्ध सकुशल संचालन करनेके बाद, वह दुश्मनकी स्थल-गोलीसे आहत हुआ। ज़ख्मी होनेपर भी वह अपने हण्टरको लेकर भारतीय क्षेत्रमें लौटा और आकाश-छतरीसे अपनी भूमिपर उतरकर वीरगतिको प्राप्त हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१७ सितम्बर १९६५

हमारी फ़ौजें आज स्यालकोटके उस क्षेत्रपर स्थित हो गयी हैं जहाँसे स्यालकोट नगर दिखाई देता है। किन्तु, चूँकि हमारा लक्ष्य नगरपर क़ब्ज़ा करना नहीं है इसलिए फ़ौजें दक्षिण पूर्वकी ओर बढ़ रही हैं।

यहाँका दृश्य बहुत भयावना है। कटी-फटी लाशें, टूटे-फूटे टैंक, अधजली गाड़ियाँ, बम विस्फोटके गड्ढे, उखड़ी ज़मीन, तितर-बितर हथियार और गोले-बारूद और सारे वातावरणमें धुएँकी तीखी गन्ध····

पसरूरपर हमारी वायुसेनाने मीस्टीयरों-द्वारा हमले किये। वहाँ शत्रुका कोई विरोध सामने नहीं आया।

लाहौर-क्षेत्रमें शत्रुने अपनी सेनाएँ इछोगिल नहरके उस ओर हटा ली हैं।

पाकिस्तानी एक चाल यह भी खेल रहे हैं कि फ़ौजियोंको सादे कपड़े पहनाकर युद्ध-भूमिमें भेज रहे हैं। एक पाकिस्तानी फ़ौजी चौकीका संचालन करता हुआ सादे कपड़ोंमें जो मारा गया, वह पाकिस्तानका मेजर था। यह तब पता लगा जब मृत्युके बाद उसके पाससे आयडेण्टटी कार्ड मिला।

कारगिल-सेक्टरमें, दुश्मनकी गोलियोंके उत्तरमें हमारी फ़ौजने उनके ९ बंकर नष्ट किये। दुश्मन वहाँसे भाग गया है।

हमारे कैनबरा वायुयानोंने, सरगोधा, चकवाल और चाक-झुमराके हवाई अड्डोंपर काफ़ी नुक़सान पहुँचाया।

हमारी फ़ौजके अधीन लगभग ४२० वर्गमील भूमि है जो इछोगिल नहर और कसूरसे वाघा तककी सीमाके बीचमें फैली हुई है।

१८ सितम्बर १९६५

आज हमारी वायुसेनाने लाहौर मोर्चेपर हवाई लड़ाईमें कई पाक-सैबरजेटोंको मार गिराया।

सियालकोट-क्षेत्रमें हमारी फ़ौजोंने दो और चौकियाँ जीत लीं। तीन शेरमन टैंकोंको बरबाद किया और बहुत-से अस्त्र-शस्त्र अधीन किये। स्यालकोट-क्षेत्रमें जैसोरनपर क़ब्ज़ा किया और दुश्मनके चार टैंकोंको अच्छी हालतमें पकड़ लिया।

बुर्की-क्षेत्रमें हमारी फ़ौजोंने ३ हथियारबन्द गाड़ियोंका सफ़ाया किया।

राजस्थान-क्षेत्रमें शत्रुने हमारी मुनाबाओ चौकीपर हमला किया पर वहाँसे उसे भागना पड़ा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुश्मनका हौसला पस्त हो रहा है। अपने सूरमाओंकी हालत देखकर पाकिस्तानी फ़ौज पस्त-हिम्मत हो चुकी है।

पाकिस्तानी फ़ौजका एक कमाण्डर अपने सैनिकोंको वायरलेससे हुक्म दे रहा है :

'भागो मत, डटे रहो !'

उत्तर मिला : 'हिन्दुस्तानी गोलाबारी बहुत तेज़ है, हम टिक नहीं सकते।'

उधरसे हुक्म मिला : 'मैं तुम्हें डटे रहनेका हुक्म देता हूँ।'

जवाब आया : 'क्या आप चाहते हैं, हम बिना बातके ही मारे जायें ?'

यह बातचीत कमाण्डर और सैनिकोंके बीच उस समय हो रही थी, जब पाकिस्तानने अपना सारा दमख़म लगाकर अपनी बख़्तरबन्द गाड़ियों और पैदल सेना समेत भारतीय फ़ौजपर दोतरफ़ा हमला किया था। हिम्मत बाँध भारतीय सेनाने तोपों-द्वारा गोले दागने शुरू किये और दुश्मनकी पंक्तिको धकेलती, गिराती, अन्दर तक घुसती चली गयी। पाकिस्तानी फ़ौज भारतीयों-द्वारा अवरोधमें की गयी इस भयानक मारको न सह सकी और भाग खड़ी हुई।

• १९ सितम्बर १९६५

आज पाकिस्तानी सैबरजेटों और भारतीय नैटोंके बीच पेड़ोंकी फुनगियोंपर कुत्ते-बिल्लीकी-सी लड़ाई हुई। हमारे हल्के-फुल्के छोटे नैट वायुयानोंने पाकिस्तानके भारी-भरकम अमरीकी सैबरजेटोंको ३०० ग़जकी निकटतासे धराशायी कर दिया।

यह घटना चाविन्दाके रणक्षेत्रमें घटित हुई।

स्क्वेड्रन लीडर कीलरकी ज़िम्मेदारी थी कि वह चाविन्दा स्थल-सेनाको आड़ देनेवाले चार मीस्टीयरोंकी सहायतामें रहे। कीलरके साथी थे फ़्लाइट ऑफ़िसर राय, फ़्लाइट लेफ़्टीनेण्ट कपिला और फ़्लाइट लेफ़्टीनेण्ट मायादेव। इनके चारों नैट हवाई जहाज़ नीची उड़ान भरते हुए मीस्टीयरोंकी रक्षा कर रहे थे और चाविन्दाकी ओर बढ़ रहे थे। यह अपने लक्ष्यके पास पहुँचे ही थे कि अचानक दुश्मनका फ़्लैक फटा और वह चारों धुएँके गहरे बादलोंसे घिर गये। तभी मायादेवने देखा कि शत्रुके चार अमरीकी सैबरजेट हमारे मीस्टीरयोंपर झपट्टा मारने ही वाले हैं। उसने तत्काल सब साथियोंको सचेत किया और चारों सैबर लड़ाईके दाँवपर आ गये। नैट हवाबाज़ोंने देखा कि ४००० फ़ुटकी ऊँचाईपर पाकिस्तानी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

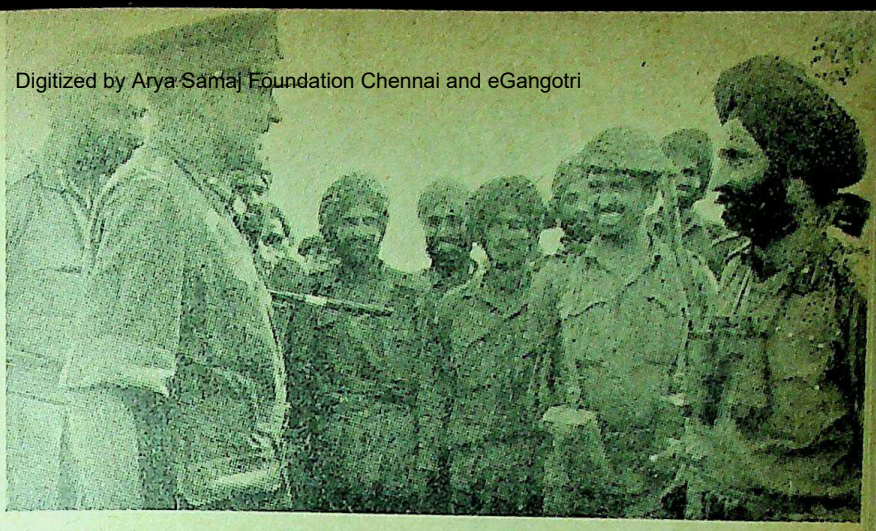

"होगी जय, होगी जय, हे पुरुषोत्तम नवीन !"
कह महाशक्ति रामके वदनमें हुई लीन।

सेबर बायें हाथसे बील-झपट्टा मारने-को हैं। उस समय कीलर और उसके साथी ज़मीनसे कुल ३०० फुट ऊँचेपर थे। सेबर विमानोंका रास्ता काटनेके लिए कीलरने अपनी नैट-चौकड़ीको इस प्रकार मुड़नेका आदेश दिया कि उसका विमान सैबरोंकी पीठकी ओर हो जाये। जैसे ही विमानोंकी दोनों टुकड़ियोंके बीचका फ़ासला कम हुआ, तो कीलरने देखा, कपिलाका विमान जिसके पुछल्लेपर मायादेव साथ-साथ उड़ रहा था, इस स्थितिमें था कि पाकिस्तानी विमानोंपर हमला कर सके। बस कपिला चुस्तीके साथ जैटोंमें-से एकके पीछे लग लिया। दुश्मनके जेटोंको होश आया कि ख़तरेमें हैं। उन्होंने बचावकी कलाबाज़ियाँ लीं। पर कपिलाने जेटोंका पीछा न छोड़ा और इस ताकमें रहा कि कब वह ऐसी स्थिति-में आयें कि निशाना अचूक बैठे। घबराहटमें सैबर उलटी दिशामें चल पड़े और काफ़ी नीचे झुककर दाहिनी ओरकी तरफ़ झटकेका मोड़ लिया। कपिलाके हाथ मौक़ा आया। उसने झट सटा हुआ निशाना सैबरपर दाग दिया। एक निशानेमें सैबरकी चाल धीमी पड़ गयी और वह वापस जानेके चक्करमें नीचे उतरने लगा और नैटके अधिक नज़दीक आ गया। कपिलाने फिर ३०० गज़ फ़ासलेसे गोली दागी और वह ठीक निशानेपर बैठी।

जो मुठभेड़ १००० फीट ऊँचेसे शुरू हुई थी, वह अब ज़मीनसे केवल ३०० गज़ ऊपर थी। कपिलाने अपने नैटको धरतीसे ऊपर उड़ाया और यह भी नहीं देखा कि सैबर चक्कर खाता ज़मीनपर ढेर हो गया है। किन्तु कीलर और राय कपिलाकी पीछेसे सुरक्षा कर रहे थे। उन्होंने सैबरको धड़ाकेसे फटता हुआ देखा और तत्काल ही कपिलाको सैबरके नष्ट होनेकी सूचना दी।

जैसे ही कीलर बेतार-द्वारा यह सूचना दे चुका कि उसने देखा कि एक सैबर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय
ज्ञानपीठ
द्वारा
प्रकाशित

११
कहानी
संग्रह

विशिष्ट
और
मर्मस्पर्शी
कहानियाँ

- **खोयी हुई दिशाएँ**
  कमलेश्वर — २.५०
- **कर्मनाशाकी हार**
  शिवप्रसाद सिंह — ३.००
- **नये बादल**
  मोहन राकेश — २.५०
- **ज़िन्दगी और गुलाबके फूल**
  उषा प्रियंवदा — २.५०
- **जयदोल**
  अज्ञेय — ३.००
- **खेल-खिलौने**
  राजेन्द्र यादव — २.००
- **प्यारके बन्धन**
  रावी — ३.२५
- **संघर्षके बाद**
  विष्णु प्रभाकर — ३.००
- **मेज़पर टिकी हुई कुहनियाँ**
  रमेश बक्षी — ३.५०
- **झाड़ी**
  श्रीकान्त वर्मा — ३.००
- **सूने अँगन रस बरसै**
  डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल — ३.००

प्राप्ति-स्थान
भारतीय ज्ञानपीठ, ३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विमान जो इस हमलेमें अपनी टुकड़ीसे अलग हो गया था, लड़ाईके आकाशसे भाग रहा है। यह सैबरजेट कीलरको नहीं देख पाया था। इस स्थितिने कीलरको चाल सुझायी और वह उस जेट विमानके पीछे ठीक निशाना लगानेकी स्थितिमें आड़में छिप गया। उड़ते-उड़ते जब आपसकी दूरी ५०० गज़ रह गयी तो कीलरने दो बार बन्दूकसे निशाने दागे कि सैबर धड़ामसे ज़मीनपर गिरा। जब सैबरके गिरनेका धड़ाका हुआ तो कीलरको चेत हुआ कि वह स्वयं इतनी नीची उड़ानपर है जैसे पेड़ोंकी फुनगियोंपर तैर रहा हो। उसने जानकी बाज़ी लगाकर ही वायुयुद्धका असम्भवको सम्भव बनानेवाला करिश्मा कर दिखाया था। बाक़ी बचे दो सैबर जेट अपने साथियोंकी दुर्दशा देख भाग निकले। यह था पेड़ोंकी ऊँचाईपर सैबर जेटोंका और नैटोंका गुत्थमगुत्था युद्ध।

आजका वीर वायु-सेनानी कीलर—वायुके अनन्य योद्धा ट्रैवर कीलरका भाई है। जिसने ७ सितम्बरके युद्धमें अपनी चमत्कारी बुद्धिके बलपर वायु-सेनाका अमूल्य पदक प्राप्त किया है। उसके विमानका इंजिन १४००० फ़ुटकी ऊँचाईपर जाकर बेकार हो गया था—किन्तु अदम्य साहस और बुद्धिके बलपर यह रण-बाँकुरा शत्रुको चोटें पहुँचा सकुशल वापस आ गया था। यद्यपि पाकिस्तानके नापाकोंने झूठी ख़बर पश्चिमी टेलीविजनपर भी प्रसारित करवा दी कि 'एक भारतीय वायुचालक मौतके घाट उतार दिया गया'। ये दोनों भाई लखनऊके निवासी हैं। इन दो योग्य बेटोंके गर्वीले पिता चार्ल्स कीलर, एक मिशन स्कूलके रिटायर्ड प्रिंसिपल हैं। सच्चे रोमन कैथोलिक हैं और अपनी जन्मभूमि भारतके दीवाने हैं, उसकी सेवामें समर्पित।

भारतीय सेनाने स्यालकोट-क्षेत्रमें तीन और चौकियोंपर क़ब्ज़ा किया है और मुख्य स्यालकोट-चपरार रोडको काट दिया है।

पसरूर और सरगोधाके हवाई अड्डोंपर हमारे कैनबरा हवाई विमानोंने कई आक्रमण किये और फ़ौजी ठिकानोंको क्षति पहुँचायी।

• २० सितम्बर १९६५

आज सन्ध्याको लाहौर-क्षेत्रके एक हवाई युद्धमें, हमारी वायु-सेनाने एक सैबरजेटको मार गिराया।

चविन्दा क्षेत्रमें हमारी वायु-सेनाके मीस्टीयरोंने स्थल-सेनाकी सुरक्षा करते हुए १२ पाकिस्तानी टैंकों और बहुत-सी गाड़ियोंको बुरी तरह क्षति पहुँचायी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Let us Strengthen our Defence

By

Determination, Discipline and Deligence

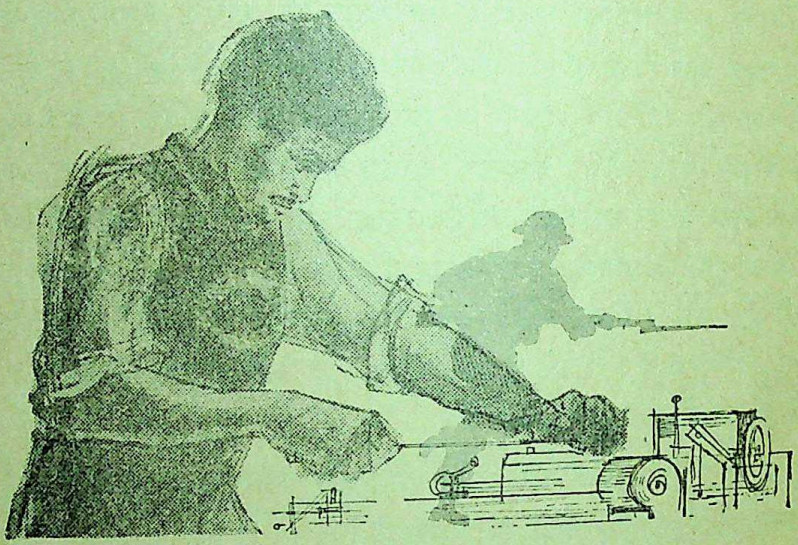

Issued in the interests of the Nation by :

Sree Saraswaty Press Ltd.

32, Acharya Prafullachandra Road,

CALCUTTA–1.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्यालकोट-क्षेत्रमें भारतीय सेनाने यातायातके, रेलवे-सड़कके रास्ते, छिन्न-भिन्न कर दिये हैं। रेलवे लाइनके पश्चिममें शत्रुके दो और ठिकाने, मालाने और नन्दपुर, जो सुचेतगढ़से २ मील दूरपर हैं, ले लिये हैं।

हमारी फ़ौजोंने लाहौर-सेक्टरमें इछोगिल नहरके पार ग्रेण्ड ट्रंक रोडपर एक घाट और पुलको नष्ट कर दिया है। जिन क्षेत्रोंसे पाकिस्तानी खदेड़ दिये जाते हैं वे उन्हीं क्षेत्रोंपर बम फेंकते रहते हैं। फ़िलौरा, जैसोरन, रसूलपुर, कलारवन्दा, बाजरागढ़ी उनकी इस प्रवृत्तिके शिकार हो रहे हैं।

खालड़ा-सेक्टरमें हमारी फ़ौजोंने झमनपर आक्रमण किया। फलस्वरूप एक पाकिस्तानी अफ़सर व अन्य पदासीन सैनिक पकड़े गये। साथमें कुछ मीडियम मशीनगन, राइफ़ल और स्टैनगन भी हाथ लगीं।

राजस्थानके बारमेर-सेक्शनमें हमारी फ़ौजोंने 'डाली' पर क़ब्ज़ा किया है। यह गादरा रोडसे १८ मील दक्षिण-पश्चिममें है।

कसूर-क्षेत्रमें, हमारी फ़ौजें डेरा बाबा नानक क्षेत्रमें आगे बढ़ रही हैं—हुसैनीवालापर किया गया दुश्मनका आक्रमण असफल हो गया।

डेरा बाबा नानक क्षेत्रमें लेफ़्टीनेण्ट खुशवन्त सिंहने शत्रुसे मोर्चा लेते हुए वीरगति प्राप्त की। यह बहादुर सैनिक शत्रुके दो टैंक नष्ट कर चुका था और फिर भी मोर्चेपर डटा था। सूबेदारने कहा—'खुशवन्त सिंह, तुम मोर्चेके पीछे जाओ, ख़तरा है!' किन्तु इस वीरका शत्रुको ललकारनेका साहस चुका नहीं था, वह फिर आगे बढ़ा और जान खोकर भी शत्रुके मुक़ाबलेपर डटा रहा। २३ वर्षीय खुशवन्त सिंह, हॉकीका बढ़िया खिलाड़ी, प्रसिद्ध हॉकीके अम्पायर सरदार ज्ञानसिंहका पुत्र और भारत माँका सुपुत्र था।

पुत्रकी वीरगतिकी घटना बताते हुए, बहादुर पिताकी आवाज़ एक बार काँपी, पर दूसरे ही क्षण वे अपनेको सँभालकर बोले, 'खुशीने उचित ही काम किया कि अपनी परवाह न करके शत्रुको और भी क्षति पहुँचानेपर डटा रहा। दो टैंकोंको तो वह ख़त्म ही कर चुका था।'

• २१ सितम्बर १९६५ आधी रातका समय—

लाहौर-क्षेत्रमें इछोगिल नहरके एक किनारे भारत-युद्ध सीमाको इंगित करता हुआ तिरंगा झण्डा हाथमें लिये भारतीय सैनिक खड़ा है और दूसरे किनारे पाकिस्तानी सिपाही। नगरके एक सिरेपर हमारी फ़ौजें मोर्चा लेनेको तैनात खड़ी हैं और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Gram : 'SRINIVASCO'

Phone { Office : 225
Res. : 425

Diwali Greetings From :

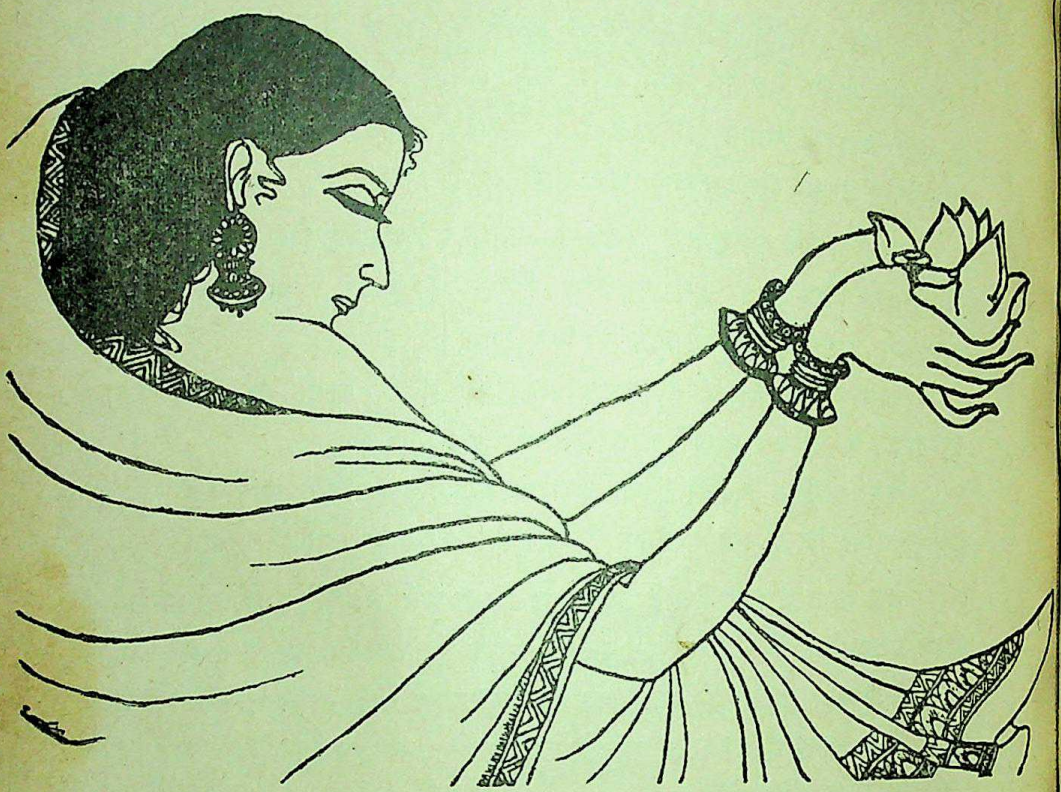

The Central News Agency

Estd. 1934.

174/1, LONG BAZAR, VELLORE N. A.

NEWS AGENTS, CORRESPONDENT & ADVERTISING CONSULTANTS

Largest Suppliers of : PAPER & BOARD

Manufactured by :

Rohtas Industries Limited, Dalmianagar.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरे सिरेपर पाकिस्तानको। पुनः उल्लेखनीय है कि पाकिस्तानने इछोगिल नहरको अपनी सुरक्षाकी दीवार बना रखा है। किनारे-किनारे कवच-कोठरियाँ हैं, कंकरीटके बंकर हैं और खाइयाँ हैं। लाहौरको दृढ़तासे सुरक्षित करनेके लिए दुश्मनने नहरके दोनों पक्षोंमें ऐण्टी-परसोनल गन व टैंक-फोड़ सुरंगें बिछायी हैं।

हमारी फ़ौजोंने आधी रातके समय दुश्मनपर धावा बोला। दोनों ओरसे घमासान युद्ध छिड़ गया, जो छह घण्टे तक जारी रहा। हमने सामनेकी ओरसे शत्रुको लड़ाईमें फँसाये रखा, और दूसरी ओरसे अपनी जाट-रेजिमेण्टकी एक बलवान टुकड़ीको बुलवा भेजा, जो अबतक रणक्षेत्रसे अलग रही थी। जाट-सैनिक रातके १–३० बजे आ पहुँचे। आते ही वे ६००० गज़का चक्कर काटकर डोगराई गाँव पहुँच गये और दोनों तरफ़से पीछेकी ओर जाकर शत्रुपर वहाँसे आक्रमण किया जहाँ उनकी सुरंगें बिछी हुई थीं। शत्रुको हमारी इस युद्ध-चालका तनिक भी आभास न हो पाया और वह हक्का-बक्का रह गया।

हमारी फ़ौजोंने घोड़ेकी नालकी शक्लमें तीन तरफ़ फैलकर शत्रुके लिए, सिवाय पीछे भागनेके और कोई राह नहीं छोड़ी। शत्रुकी जो फ़ौजें सामने क्षेत्रमें लड़ रही थीं वह यह तक न जान पायीं कि उनके पीछेके दोनों बाजू कट गये हैं।

जाटोंने पाँच घण्टे तक घमासान युद्ध किया और उन्होंने डोगराई गाँवमें स्थित अपने सामनेकी पाकिस्तानी फ़ौजोंको और आगेसे मार खाकर पीछे भागती फ़ौजोंके डटकर छक्के छुड़ाये।

२२ सितम्बरके सूर्यको पिछली किरणके उदयके साथ इस मोर्चेका युद्ध शान्त हुआ। उस समय डोगराई गाँव पूर्णतया हमारे हाथमें आ गया था। पाकिस्तानका पूरा जानमार बैटेलियन, पंजाब सिक्स्टीन, अपने पूरे युद्धके साजो-समान-समेत, जिसमें एक टैंकोंका स्क्वैड्रन और गोला-बारूदकी बैटरी भी थी, भारतीय फ़ौजोंको प्राप्त हुआ। पाकिस्तानी कमाण्डिंग ऑफ़िसर लेफ़्टीनेण्ट कर्नल गोलेवाल, एक मेजर, चार जे० सी० ओज़ और १०० अन्य पदासीन फ़ौजी पकड़े गये। पाकिस्तानके ३०० सैनिक मारे गये। कुछ सैनिक तो भयभीत हो तितर-बितर होकर अपने ही खेतोंमें बिछी सुरंगोंमें फँसकर मर गये।

आजके युद्धकी सफलताके लिए भारतको एक अमूल्य बलिदान करना पड़ा। डोगराईके नायक-बहादुर मेजर आसाराम त्यागीका नाम अमरताके इतिहासमें अंकित हो गया है। इस २६ वर्षीय नौजवानको यह महत्त्वपूर्ण काम सौंपा गया कि वह डोगराईमें एक विशेष ठिकानेपर क़ब्ज़ा कर ले जिससे इछोगिल नहरके पूर्वी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वथा संग्रहणीय
एवं पठनीय

■ ■ ■

दर्शन इतिहास और राजनीति विषयक कुछ अद्वितीय प्रकाशन

❀ **दर्शन-अनुचिन्तन**
म० म० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी ३.००

❀ **भारतीय संस्कृतिका विकास : वैदिक धारा**
डॉ० मंगलदेव शास्त्री ७.००

❀ **चौलुक्य कुमारपाल**
लक्ष्मीशंकर व्यास ४.५०

❀ **कालिदासका भारत : भाग १–२**
डॉ० भगवतशरण उपाध्याय ५.००, ४.००

❀ **इतिहास साक्षी है**
डॉ० भगवतशरण उपाध्याय ३.००

❀ **समाजवाद**
डॉ० सम्पूर्णानन्द ५.००

❀ **एशियाकी राजनीति**
परदेशी ६.००

प्राप्ति-स्थान
भारतीय ज्ञानपीठ
३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली–६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किनारेपर हमारा मोर्चा सुरक्षित हो जाये।

मेजर त्यागी अपनी पलटन लेकर शत्रु-दलपर टूट पड़ा और उसकी दो मशीनगन और एक कवच-कोठरीको उड़ा दिया। इसी दौरानमें दो गोलियोंने उसे ज़ख्मी कर दिया। यद्यपि वह बुरी तरह घायल हुआ था और ज़ख्मोंसे बराबर ख़ून बह रहा था, तब भी यह साहसी युवक शत्रुपर आघात करता रहा और उसके तीन टैंकोंको चालकों-समेत अपने क़ब्ज़ेमें कर लिया। मेजर त्यागीको पाँच गोलियाँ लगीं पर वह शेर-बहादुर, जंगे-मैदान छोड़नेको तैयार नहीं हुआ। अन्तमें उसे ज़बरदस्ती उठाकर हस्पताल पहुँचाया गया, जहाँ इस सूरमाने वीरगति प्राप्त की।

आज भारतीय लड़ाकू विमान कैनबेराओंने पाकिस्तानके हवाई सैनिक अड्डे वादिनपर हमला किया और वहाँके शक्तिशाली राडारको ध्वस्त कर दिया।

इस राडारकी बड़ी तीक्ष्ण न्यूक्लीयर आँखें हैं। अनुमानित है कि कच्छमें हुए भारत-पाकिस्तान संघर्षके समय यही राडार भारतीय विमानोंकी गतिविधिका परिचय देता था। गुजरातके मुख्य मन्त्री श्री बलवन्तराय मेहताके जहाज़को नष्ट करनेवाले जहाज़ोंका मार्ग-दर्शक भी सम्भवतया यही राडार था।

• २२ सितम्बर १९६५

राष्ट्रसंघका समाचार युद्ध-क्षेत्रों तक पहुँचा है कि 'सीज़ फ़ायर' (युद्ध-विराम) का प्रस्ताव दोनों देशोंने मान लिया है। आशा की जा रही है कि लगभग १२ घण्टे बाद तोपें शान्त हो जायेंगी, बम-मार हवाई जहाज़ धरतीपर उतर आयेंगे।

• २३ सितम्बर १९६५

आज २३ तारीखकी प्रातः ३-३० पर सचमुच ही युद्ध-विराम लागू हो गया है। दुश्मनने पराजयके घावोंके लिए सान्त्वना प्राप्त करनेकी आशासे अमृतसरके नागरिकों-पर प्रलय बरसानेका प्रयत्न किया है—पर भारतने युद्ध-विरामको सच्चे हृदयसे स्वीकारा है। तोपें शान्त हैं, लेकिन हवामें पिछले १८ दिनोंकी गोला-बारूदका धुआँ व्याप्त है—फ़ौजें युद्ध विरत हैं, निश्चल भी हैं, किन्तु निश्चित नहीं। पहले महायुद्धपर लिखे एक उपन्यासकी याद आ रही है 'आल क्वायट ऑन वेस्टर्न फ्रण्ट'। युद्ध शान्त हो गया था और उपन्यासका नायक दम तोड़ रहा था'''इस क्षण मोर्चेके दोनों पार कितने फ़ौजी दम तोड़ रहे हैं और घावोंकी पीड़ासे कराह रहे हैं।

युद्ध शान्त है, किन्तु, जबतक मानव अशान्त है, युद्ध-रथके चक्रोंको विश्राम कहाँ—न मालूम किस क्षण, किस मोर्चेकी ओर पुनः उन्मुख होना पड़े। ■ ■

युद्ध-भूमिपर घूमता हुआ रथ : कुन्था जैन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Phone : 22-5911
22-6927

Gram : 'ASSOCIATES'

Hind Associated Corporation Private Ltd.

23/24, Radha Bazar Street,
Calcutta-1.

●

Sole Distributors for :

Messrs. Straw Products Limited

BHOPAL

FOR STRAW BOARD AND GREY BOARD BOTH IN SHEETS AND REELS

●

Distributors for :

Messrs. Rohtas Industries Limited

DALMIANAGAR

●

FOR DUPLEX, ART & CHROMO BOARDS, MAPLITHO, M. G. POSTERS, MANILIA & CHROMO PAPERS.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वशान्तिकी दिशा और संयुक्त राष्ट्रसंघ

■ नर्मदेश्वर चतुर्वेदी

संयुक्त राष्ट्रसंघके महामन्त्री ऊ-थाँ, राष्ट्रपति राधाकृष्णन्‌के साथ

युद्ध मानव-जीवनकी कृत्रिम असंगतियों-द्वारा प्रसूत मानव-मनकी विकृतियोंका विस्फोट है और शान्ति मानव-जीवनके सहज सांस्कृतिक विकास-द्वारा फलीभूत मानव-मनके परिष्कारकी उपलब्धि। जब मनुष्य परिस्थितिजन्य समस्याओंका समाधान विवेक-द्वारा करनेमें अपने आपको असमर्थ अथवा असफल पाता है तो वह आकुल-व्याकुल होकर सहसा झुँझला उठता है और खीझमें आकर बर्बर तथा अमानुषिक कृत्यों तक पर उतर आता है। युद्ध ऐसे ही कुकृत्योंका कुत्सित एवं बीभत्स रूप है जिसकी विभीषिकासे सन्तप्त मानवता हाहाकार कर उठती है और शान्ति ऐसी ही त्रासकारी स्थितिसे त्राण दिलानेका निमित्त बनती है। युद्ध जहाँ संहार-लीलाका दृश्य उपस्थित करता है वहाँ शान्ति सर्जनका उपयुक्त अवसर प्रदान करती है। इस प्रकार शान्ति मनुष्य और मानव-समाजके लिए सहज प्रक्रिया है जब कि युद्ध प्रतिक्रिया-मूलक बाध्यता।

शान्ति और युद्धका सम्बन्ध शाश्वत है। परिस्थिति विशेषमें यह तो सम्भव है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्य एक समय युद्धोन्मुख हो जाय, यह उसके लिए यह कदापि शक्य नहीं है कि वह सब समय युद्धरत बना रह सके। ऐसा कर पाना न तो किसीके लिए सहज है न सम्भव। यही कारण है कि जब कभी युद्ध छिड़नेका अवसर उपस्थित होता है तो तटस्थ अथवा शुभ-चिन्तक क्षेत्रोंसे किसी-न-किसी रूपमें शान्तिके लिए प्रयास भी साथ-ही-साथ आरम्भ हो जाते हैं और ये प्रयास शान्ति-स्थापन-काल तक निरन्तर चला करते हैं।

मध्यकालमें जब कि राजतन्त्रका प्रभुत्व रहा, युद्धका कारण और उसका स्वरूप आज-से भिन्न रहता आया। उन दिनों प्रायः युद्ध-द्वारा सत्ताधारी व्यक्तियोंकी व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओंकी पूर्ति अथवा वर्णगत या वंशगत गौरव-वृद्धिकी प्राप्ति की जाती रही। राजाको प्रजा-पालक समझा जाता था और वही प्रजाके हिताहितका संरक्षक माना जाता था। एक राजाका वैर-विरोध दूसरे राजासे होता था और अपने राजाकी आन-शानकी रक्षाके निमित्त युद्धमें भाग लेना वहाँकी जनता-के लिए अपने कर्तव्य-पालनका एक प्रमुख अंग था। वहाँकी जनता स्वदेश-रक्षाके लिए नहीं अपने राजाके राजमुकुटकी सुरक्षाके लिए लड़ती थी। क्षेत्रीय सीमाकी रक्षा अथवा उसके विस्तार-द्वारा राजाकी श्री-वृद्धि करना युद्धका प्रधान लक्ष्य था। इसलिए उन दिनोंके युद्धका आयाम और उद्देश्य आजसे भिन्न था। वास्तवमें उन दिनों आज-जैसी लोक-चेतनाका अभाव था।

लोक-चेतनाका उन्मेष प्रजातन्त्रात्मक राज्य-व्यवस्थाके साथ-साथ हुआ है। फलस्व-रूप स्वार्थमूलक संघर्षोंके बीच युद्धोंके सैद्धा-न्तिक स्वरूपका विकास हुआ है। आजका युद्ध केवल आधिपत्य-स्थापन अथवा सीमा-विस्तार मात्रके लिए नहीं है अपितु उसका एक निहित उद्देश्य अपने-अपने सिद्धान्तके प्रचार-प्रसारके लिए उपयुक्त क्षेत्र तैयार करना भी है।

आज युद्धका घटित होना एक आकस्मिक घटना अथवा व्यक्ति विशेषकी महत्त्वाकांक्षाकी पूर्ति मात्र नहीं रह गयी है अपितु उसका एक सैद्धान्तिक उद्देश्य भी उभर आया है जिसका व्यापक प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। इस प्रभावसे अन्यान्य देश भी अछूते नहीं रह पाते और उनपर प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष प्रभावका पड़ना अनिवार्य हो जाता है। युद्ध हो अथवा शान्ति-प्रयास उसमें ऐसे राष्ट्रोंका भी किसी-न-किसी रूपमें योगदान अवश्य रहा करता है जिनका सम्बन्ध तात्कालिक स्वार्थोंसे जोड़ पाना सब समय सम्भव नहीं हो पाता। धीरे-धीरे इन-जैसी बातोंसे प्रेरित होकर प्रायः सारा संसार सैद्धान्तिक गुटोंसे बँट गया है। इन गुटोंसे बचकर जो राष्ट्र चलना चाहते हैं वे अपनेको सुदृढ़ स्थितिमें सुरक्षित नहीं पा रहे हैं। किसी-न-किसी लपेटमें आनेको वे बाध्य किये जा रहे हैं। उनके लिए अपने अस्तित्वको निरापद तथा निष्कण्टक बनाये रखना कठिन हो रहा है। इस प्रकार आजका युद्ध व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षा अथवा क्षेत्रीय सीमासे विस्तृत होकर व्यापक सैद्धान्तिक स्तर-पर भी लड़ा जाने लगा है। फलस्वरूप युद्ध-की सीमा क्षेत्रीय अथवा राष्ट्रीय मात्र न रह-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर अन्तर्राष्ट्रीय रुचि और चर्चाका विषय बन गयी है।

युद्धकी भाँति शान्तिका प्रभाव-क्षेत्र भी सीमित न रहकर अन्तर्राष्ट्रीय सीमा तक विस्तृत हो गया है। आज यह सम्भव नहीं है कि दो देश परस्पर युद्धरत रहें और अन्य देश उसके प्रभावसे अप्रभावित रह जायें। वैज्ञानिक आविष्कार और उसकी उपलब्धिने हमें एक नये संसारका प्राणी बना दिया है जिसमें मानवमात्रके हिताहित परस्पर अनुस्यूत हैं। हमारी संवेदनाका क्षेत्र व्यापक और विस्तृत बन गया है। जो बातें कभी कल्पना-द्वारा धूमिल चित्र प्रस्तुत कर पाती थीं वे आज अनुभूतिके क्षेत्रमें सिमटकर उभर आयी हैं। फलस्वरूप 'विश्वराज्य'को मनुष्यका लक्ष्य बतलाया जाने लगा है, मात्र अन्तर्राष्ट्रीयता पर्याप्त नहीं समझी जाती है। राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता सोद्देश्य सामूहिक जीवनके विकास-पथके पड़ाव हैं, लक्ष्य नहीं। विश्व-शान्तिकी यही सही दिशा है। वास्तवमें युद्ध भी इसी उद्देश्यकी पूर्तिका एक भ्रान्त एवं विकृत प्रयास है। इसमें आत्मसात् करनेकी अपेक्षा आधिपत्य-स्थापनकी प्रवृत्ति प्रबल होती है।

संयुक्त राष्ट्रसंघ शान्ति-प्रयासका एक अन्तर्राष्ट्रीय मंच है जिसकी स्थापना विकराल युद्धकी विभीषिकाके बीच २४ अक्तूबर १९४५ ई० को हुई थी। आरम्भमें इसके केवल इक्यावन सदस्य थे जिनकी संख्या बढ़कर आज एक सौ सत्रह तक पहुँच गयी है। इसकी स्थापना निम्नलिखित सात मूल सिद्धान्तोंपर आधारित थी :

हिंसा और अहिंसाके लिए

मैं किसी भी प्रकारकी कायरता पसन्द नहीं करता। अहिंसामें जिस वीरताकी ज़रूरत पड़ती है, वह कायरतासे नहीं आ सकती। हिंसा और अहिंसा, दोनों ही के लिए बहादुरी ज़रूरी है। वस्तुतः अहिंसाके लिए तो और अधिक, क्योंकि अहिंसा अगर सबसे ऊँचे दर्जेकी बहादुरी नहीं है, तो वह अहिंसा नहीं है।

—महात्मा गान्धी

०

- सभी सदस्य-राज्य समान और सर्वोच्च सत्ता हैं।
- चार्टरके अन्तर्गत सभी प्रतिज्ञाओंके प्रति सभी सदस्य-राज्य सद्भावना सहित निष्ठावान् रहेंगे।
- सभी सदस्य-राज्य अपने-अपने अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ोंका निपटारा शान्तिमय उपायों-द्वारा इस रीतिसे सम्पन्न करेंगे जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति, न्याय और सुरक्षा खतरेमें न पड़ सके।
- अपने-अपने अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धोंमें कोई सदस्य किसी दूसरे राष्ट्रके सीमा-क्षेत्र अथवा राजनीतिक स्वतन्त्रताके विरुद्ध न तो बल-प्रयोगकी धमकी देगा न बल-प्रयोग करेगा अथवा संयुक्त राष्ट्रसंघके उद्देश्योंके विपरीत आचरण करेगा।
- संयुक्त राष्ट्रसंघ-द्वारा चार्टरके अनुरूप कार्य करनेपर सभी सदस्य-राज्य उसका साथ देंगे और किसी ऐसे राष्ट्रको अपना सहयोग तथा सहायता न देंगे जो संयुक्त राष्ट्रसंघ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

PAPER & BOARDS
for every purpose
Always in Stock

'phone : 32-1796 (Office)
: 47-2856 (Dir. Res.)
'gram : HOLYTRADE, BOMBAY

United Industrial & Engg. Co. (P.) Ltd.
P.O Box : 2359, 46, Sutar Chawl, Bombay-2

Authorised Distributors
for
Rohtas Industries Ltd.
DALMIANAGAR

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा शान्तिके हितमें किये गये कार्योंके विषयमें जाना हो।

० जहाँतक शान्ति और सुरक्षाको क़ायम रखना आवश्यक होगा संघ ऐसे राज्योंको जो उसके सदस्य नहीं हैं, स्थिर करेगा कि वे भी चार्टरके सिद्धान्तोंके अनुरूप व्यवहार करेंगे।

० संयुक्त राष्ट्रसंघ किसी राज्यके घरेलू मामलोंमें तबतक हस्तक्षेप न करेगा जबतक कि वह अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति-स्थापनके लिए अनिवार्य न समझा जायेगा।

उपर्युक्त सिद्धान्तोंके आधारपर संयुक्त राष्ट्रसंघके निम्नलिखित चार उद्देश्य चार्टरमें अंकित हैं :

० अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षाको क़ायम रखने और उसकी पूर्तिके निमित्त, सशस्त्र आक्रमण होनेपर, सर्वत्र सामूहिक सुरक्षाका प्रभावशाली उपाय करना।

० जनताके समानाधिकार और आत्मनिर्णयके सिद्धान्तके सम्मानके लिए राष्ट्रोंके बीच मित्र-भाव विकसित करना।

० आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक अथवा मानवीय स्तरकी अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओंके समाधानके लिए सहयोग प्राप्त करना और सभीके लिए बिना किसी जाति, लिंग, भाषा और धर्मसम्बन्धी भेदभावके मानवाधिकार तथा मौलिक स्वतन्त्रताके प्रति सम्मानका भाव बढ़ाना एवं प्रोत्साहित करना।

० इन उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए राष्ट्रोंके व्यवहारमें अनुरूपता लानेके निमित्त केन्द्रका कार्य करना।

संयुक्त राष्ट्रसंघके व्यवहारकी भाषा फ्रेंच और अंगरेजी है यद्यपि इनके अतिरिक्त चीनी, रूसी और स्पेनिश भाषा भी स्वीकृत है।

संघके उद्देश्योंकी पूर्ति छह प्रमुख अंगोंद्वारा की जाती है—जेनरल असेम्बली, सुरक्षा परिषद्, आर्थिक और सामाजिक परिषद्, ट्रस्टीशिप कौंसिल, अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय और सेक्रटेरियेट।

संयुक्त राष्ट्रसंघ न तो सर्वोपरि राजसत्ता है न वह धारा-सभा है। वह केवल सदस्य-राज्योंको, सर्वोच्च सत्ता प्राप्त राष्ट्रोंके पारस्परिक सहयोगके लिए मंच प्रस्तुत करती है। उसके सदस्य सभी स्थितियों और विचारोंके राज्य हैं जिनमें विभिन्नताके बावजूद उद्देश्यकी एकता है, जहाँ सभीको अपने-अपने विचार मुक्तभावसे व्यक्त करनेकी छूट है। यह संघ इसके समर्थक राज्यों और जनताके सामूहिक संकल्पका प्रतीक है। इसकी सदस्यता उन सभी शान्तिप्रिय राज्योंको सुलभ है जिन्हें चार्टरके सिद्धान्त स्वीकार हैं और जिनपर संस्थाके प्रति निष्ठावान् रहकर कर्तव्य-पालन करनेका विश्वास संघको है।

शान्ति-प्रयासमें सुरक्षा परिषद्का विशेष योगदान है। परिषद्के ग्यारह सदस्य हैं जिनमें-से पाँच—फ्रान्स, चीन, रूस, ब्रिटेन और अमेरिका—स्थायी सदस्य हैं। शेष छह अस्थायी सदस्योंका चुनाव जेनरल असेम्बलीद्वारा प्रति दो वर्षके बाद हुआ करता है। इस परिषद्का मुख्य दायित्व शान्ति और सुरक्षाको व्यवस्थित करना है। अन्तर्राष्ट्रीय शान्तिको अक्षुण्ण बनाये रखनेके लिए अनवरत जागरूकताकी अपेक्षा है जिससे आवश्यकता पड़ने-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समस्या जो हल हो गयी

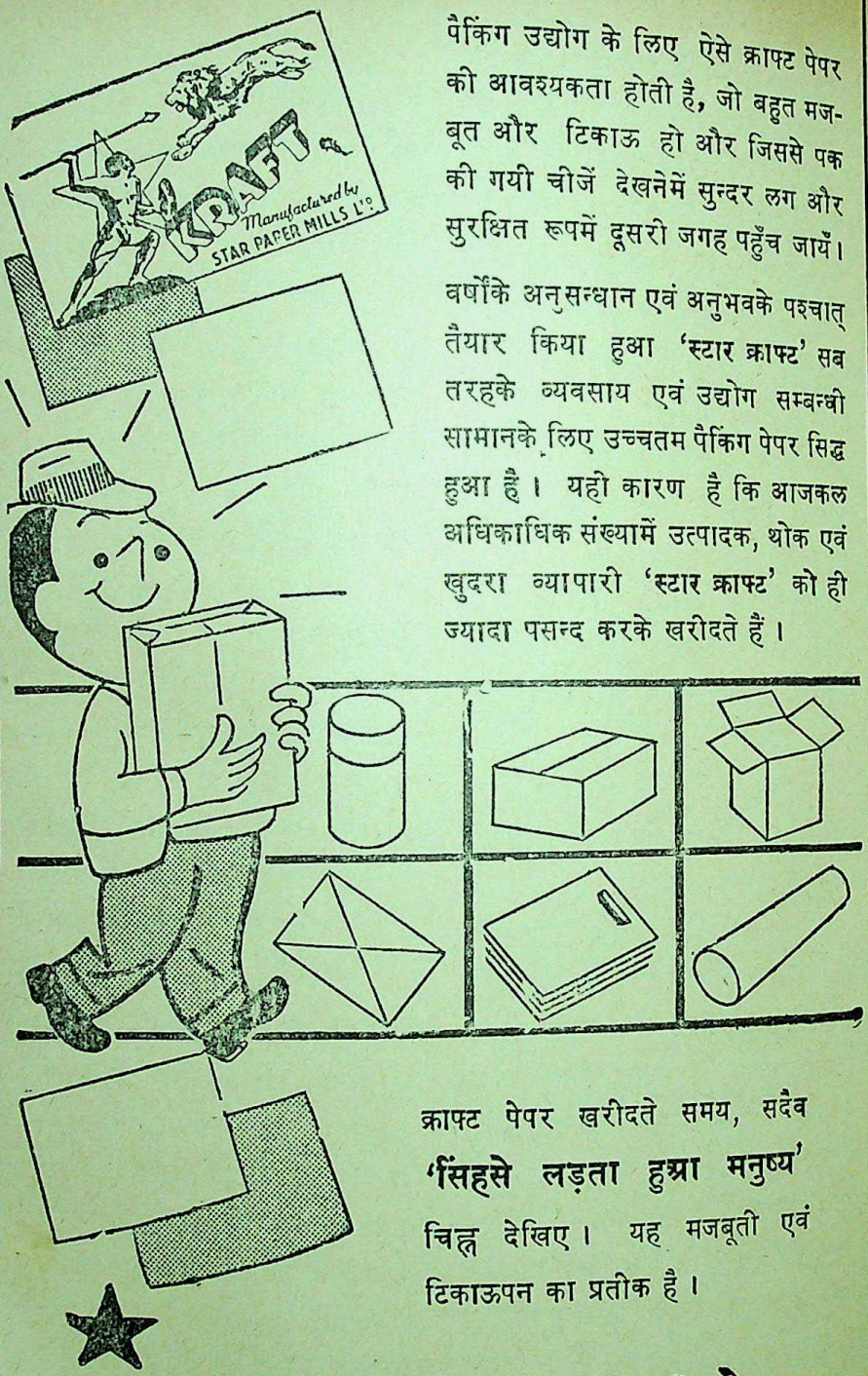

पैकिंग उद्योग के लिए ऐसे क्राफ्ट पेपर की आवश्यकता होती है, जो बहुत मजबूत और टिकाऊ हो और जिससे पक की गयी चीजें देखनेमें सुन्दर लग और सुरक्षित रूपमें दूसरी जगह पहुँच जायँ।

वर्षोंके अनुसन्धान एवं अनुभवके पश्चात् तैयार किया हुआ **'स्टार क्राफ्ट'** सब तरहके व्यवसाय एवं उद्योग सम्बन्धी सामानके लिए उच्चतम पैकिंग पेपर सिद्ध हुआ है। यही कारण है कि आजकल अधिकाधिक संख्यामें उत्पादक, थोक एवं खुदरा व्यापारी **'स्टार क्राफ्ट'** को ही ज्यादा पसन्द करके खरीदते हैं।

क्राफ्ट पेपर खरीदते समय, सदैव **'सिंहसे लड़ता हुआ मनुष्य'** चिह्न देखिए। यह मजबूती एवं टिकाऊपन का प्रतीक है।

स्टार पेपर मिल्स लिमिटेड,

प्रधान कार्यालय : कलकत्ता—१ * मिल : सहारनपुर, उत्तरप्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

S. P/O. 34

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर तुरन्त कार्यवाही करे। इसलिए सुरक्षा परिषद्का गठन इस प्रकारसे किया गया है कि वह निरन्तर क्रियाशील रह सके। परिषद्को यह अधिकार है कि वह एकाधिक देशोंके झगड़ों तथा स्थितियोंकी छानबीन कर सके और ऐसे मामलोंको किसी सदस्य-द्वारा प्रस्तुत किया जा सके। उसे यह भी अधिकार है कि वह शान्तिमय समझौतेके उपायों तथा साधनोंकी संस्तुति कर सके और विशेष परिस्थितियोंमें समझौतेकी शर्तोंको भी रख सके। अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति भंग होनेपर शान्ति और सुरक्षाको सुदृढ़ करनेके उपाय करनेका अधिकार उसे प्राप्त है। इसके अन्तर्गत संचारके साधनों, आर्थिक तथा कूटनीतिक सम्बन्धों और आवश्यक होनेपर सैन्य-शक्तिका प्रयोग भी शामिल है। परिषद्-द्वारा माँग किये जानेपर उसकी पूर्तिके लिए सदस्य-राज्य प्रतिज्ञाबद्ध हैं। परिषद्के अन्तर्गत जेनरल असेम्बली-द्वारा निरस्त्रीकरण आयोगकी स्थापना १९५२ ई० में हुई है जिसका गठन संयुक्त राष्ट्रसंघके सभी सदस्योंको लेकर हुआ है।

संयुक्त राष्ट्रसंघने अपने स्थापना-कालसे ही युद्धलिप्त राष्ट्रोंके संघर्षके कई मसलोंको अपनी देखरेखमें वार्ता-द्वारा बचानेकी कामयाब कोशिश की है। फ़ीलस्तीनका युद्ध एक ऐसा ही उदाहरण है जिसका अन्त संयुक्त राष्ट्रसंघकी मध्यस्थताके कारण समझौते-द्वारा सम्पन्न हुआ है। स्वेजका संकट-निवारण भी एक अन्य उदाहरण है। १९४९ ई० में इन्दोनेशिया और नेदरलैण्डका संघर्ष भी संघके प्रयत्नों-द्वारा टल गया था और १५ अगस्त १९६२ को दोनों देशोंके बीच वेस्ट न्यू गाइनाको लेकर समझौता हो गया था। नेदरलैण्ड-द्वारा प्रशासित क्षेत्र १ मई १९६३ को इन्दोनेशियाके अधीन हो गया था। आजसे कई वर्ष पूर्व कश्मीरको लेकर भारत और पाकिस्तानके बीच जो युद्ध आरम्भ हुआ था वह संघके बीच-बचावके कारण रुक गया था, जिसका विस्फोट पाकिस्तानकी आक्रामक कार्रवाइयोंके कारण पुनः हो गया है। कोरियामें सामूहिक सैनिक प्रयासों-द्वारा युद्ध बन्द हो गया था। संघके व्यवस्थित प्रयत्नों-द्वारा कांगोंकी समस्याका हल भी निकल आया था।

परन्तु इधर तटस्थ क्षेत्रोंमें यह अनुभव किया जाने लगा है कि संयुक्त राष्ट्रसंघकी स्थापना जिन महान् उद्देश्योंको लेकर हुई थी वह प्रभावशाली सदस्योंकी राष्ट्रीय नीतिसे प्रभावित होकर दुर्बल होती जा रही है। इसकी परीक्षाके लिए भारत-पाकिस्तानका युद्ध कसौटी बनकर आया है।

संयुक्त राष्ट्रसंघ-जैसी संस्थाकी आवश्यकता एवं उपयोगिता निर्विवाद है किन्तु यदि यह संगठन निस्तेज और निर्जीव होकर अनुपयोगी हो जाता है तो क्या उक्त आदर्शकी पूर्ति तथा सार्थकताके लिए किसी अधिक शक्तिसम्पन्न संस्थाकी तीव्र अपेक्षा नहीं रहेगी?

■ ■

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

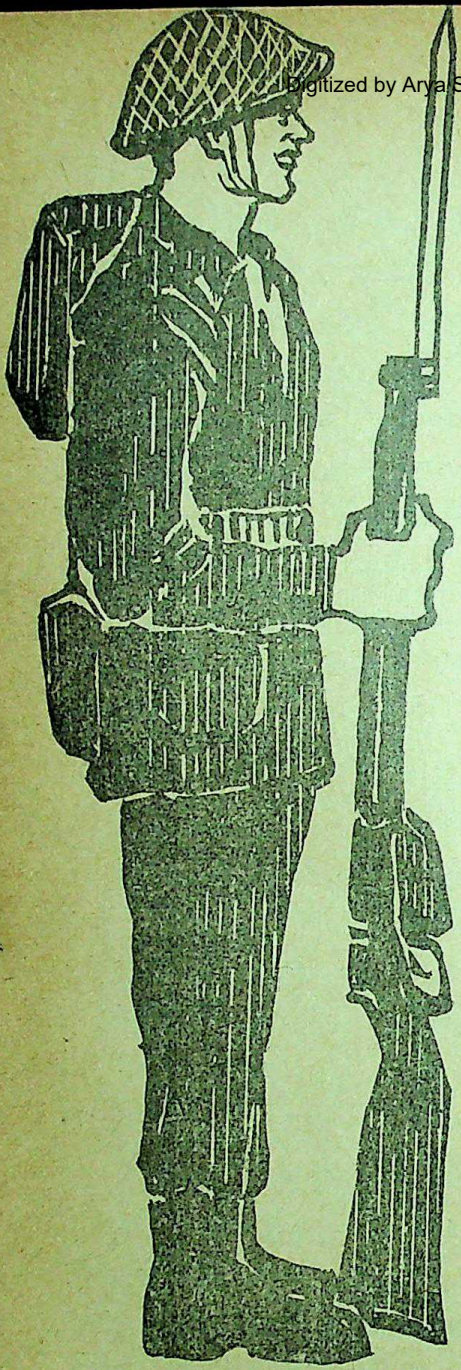

यह एशिया की स्वतन्त्रता का दीपरक्षक है

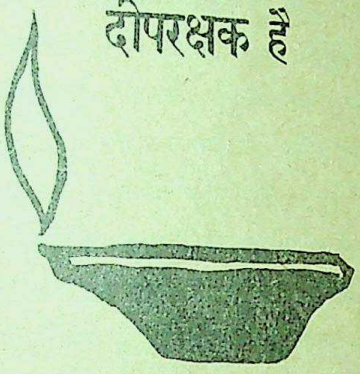

दीपावली हमारे लिये आनन्द और उद्यम का पर्व है।
हमारा देश प्रत्येक दृष्टिकोण से कसौटी के क्षणों से गुजर रहा है। हमारी शक्ति, प्रसाधन और निपुणता को देश सेवार्थ अर्पित करने हेतु यह दीपावली हमारे लिये दृढ़ संकल्प का दिन हो।

साहू जैन

रोहतास इण्डस्ट्रीज़ लि० | दि जयपूर उद्योग लि०
अशोका सिमेन्ट लि० | सोन वैली पोर्टलैण्ड सिमेन्ट कं०, लि०
न्यू सेन्ट्रल जूट मिल्स कं०, लि० | श्री कृष्ण ज्ञानोदय शुगर लि०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

IPC-SJ:411 HIN

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

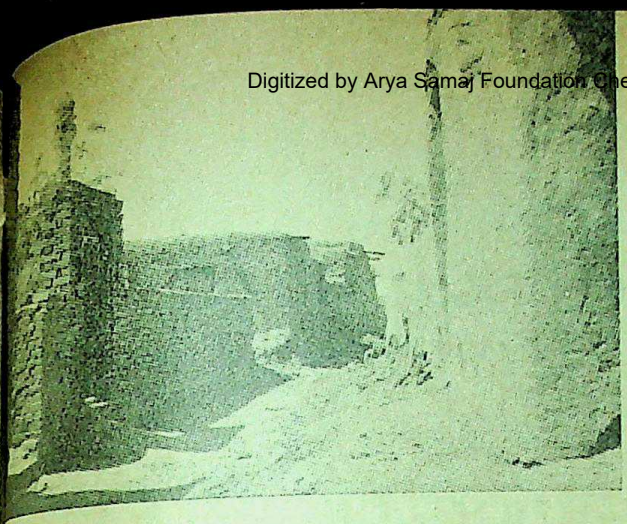

युद्ध : विपरीत दिशा

ऊपर है ध्वस्त ग्राम बर्कीका चित्र—जिसे पाकिस्तानियोंने सन्नाटेको सौंप दिया—मसजिदकी एक मीनार अपने भाग्यको रोती हुई…

चिन्तनका एक पक्ष जिजीविषाके साथ संघर्षको अनिवार्य मानता है। इसकी फलश्रुति है—'युद्ध अनिवार्य है।' दूसरा पक्ष है एककी जिजीविषाको सबकी जिजीविषा माननेवाला। जिजीविषाकी पहली शर्त है कि हम जीना चाहते हैं तो दूसरेको भी जीने दें। इस चिन्तनकी फलश्रुति है—'मा हिंस्यात् सर्वभूतानि'—किसी भी प्राणीका वध न करो।' और यह चिन्तन आगेकी ओर बढ़ता गया।

किसी भी प्राणीको न मारनेकी बात कही थी, पर तब धर्मके नामपर हिंसाकी अनुमति थी—अश्वमेधसे नरमेध तक। और 'यज्ञस्य विघ्नकर्तारः' को भी बद्ध माना था। पर जब थोड़ा और आगे आये तो पार्श्वनाथने चातुर्यामकी बात कही। जो जीवनके लिए अनिवार्य नहीं, वह धर्मके लिए अनिवार्य क्यों—कैसे? यह तो प्रत्यक्ष ही दोषपूर्ण चिन्तन हुआ। ऐसी भी क्या धर्म जिसके द्वारा सारा सामाजिक जीवन ही विश्रृंखलित हो जाये। यज्ञोंमें बेतहाशा पशु, दूध, घी और खाद्यान्नका होम तो समाजको आर्थिक दृष्टिसे भी जर्जरित कर देगा। इसलिए पार्श्वनाथने अहिंसा और सत्यके साथ 'अदिण्णादाण' बिना अनुमति ग्रहण और 'अपरिग्गह' की बात कही।

महाभारतके युद्ध-क्षेत्रमें अर्जुनने प्रतिपक्षी सेनामें अपने ही बन्धु-बान्धवोंको एकत्रित देखा तो उनका मन दया और ग्लानिसे भर गया (गीता १।२७) और वे कृष्णसे बोले—'संग्राममें स्वजनोंको मारकर मैं कल्याण नहीं देखता—न च श्रेयोऽनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे' (गीता १।३१)। यह बात और कि धर्मके नामपर कृष्णने अर्जुनको युद्धके लिए राजी कर लिया। अहिंसक चिन्तनको धक्का मारकर एक बार फिर वह तथाकथित धर्म जीत गया। पर चिन्तन रुका नहीं।

रणनीतिकी जो संहिताएँ बनीं उनमें स्पष्ट रूपसे कहा गया कि साम, दाम, दण्ड और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

FOR ALL
YOUR REQUIREMENTS
IN PAPER & BOARDS
MANUFACTURED BY

Rohtas Industries Ltd.
DALMIANAGAR

Please Contact :

Hindustan Import Export Corp.
Importers, Exporters & Paper Merchants
173, Broadway, Madras-1.
Phone : H. O. 22903, B. O. 25056
Gram : HINDEX

Work for Victory

Your job is vital to victory. India demands all hands to work—and work more for increased production, to strengthen our fighting forces, to build up the nation's resources and striking power on all fronts.

Issued By :

Ratanlal Dalmia Private Ltd.
Jute Goods Merchant
7, Lyons Range, Calcutta-1.
Phone : 22-4561

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वंद्वके द्वारा युद्धको टालनेका प्रयत्न किया जाना चाहिए। राज्यकी कामना करनेवाले राजाको चाहिए कि युद्ध न करे—'वर्जनीयं महद् युद्धं राज्यकामेन धीमता' (महाभारत १३।१२३)।

चिन्तन आगे बढ़ता गया। व्यक्तिगत तथा सामूहिक सभी प्रकारकी हिंसाका तीव्र विरोध किया जाने लगा। पर जय-पराजयका भाव मानवके मनसे गया नहीं। तब नीति-विशारदोंने कहा—यदि जय-पराजयकी ही बात है तो राजे परस्परमें ही युद्ध करके इस बातका निर्णय कर लें। सेनाका संहार करनेसे क्या लाभ—बलोत्कर्षपरीक्षेयमन्यथाऽप्युपपद्यते। तदस्तु युवयोरेव मिथो युद्धं त्रिधात्मकम्॥

(आदिपुराण ३६।४२)

यह बात भी चिन्तनमें आयी कि क्या ऐसे शस्त्र सम्भव नहीं जिनसे शत्रुकी हिंसा भी न हो और विजय भी प्राप्त हो जाये। कालिदासके शापमुक्त गन्धर्वने अजको सम्मोहन नामका ऐसा अस्त्र दिया कि शत्रुकी हिंसा किये बिना विजयश्री हाथ आ जाये—'न चारिहिंसा विजयश्च हस्ते' (रघुवंश)। शास्ताका चिन्तन और आगे था। उन्होंने शस्त्र ग्रहण-जैसी कोई बात नहीं कही। उनकी अनुभूति थी—बैरसे कभी बैर शान्त नहीं होता—'न हि वेरेन वेरानि सम्मन्तीध कुदाचन' (धम्मपद ५)।

कलिंग-विजयके बाद सम्राट् अशोकने जब उस भीषण युद्धके विषयमें विचार किया तो सिहर उठा—इतनी नरसंहार! इतनी धन-जनकी क्षति! ओफ़! और उसके बाद उसने घोषणा की—देवानांप्रिय अशोकके मनमें कलिंगके युद्धमें जो संहार हुआ उसका तीव्र परिताप है। परितप्त मनसे वह आदेश देता है कि यदि कभी तीरसे विजय प्राप्त करनेकी आवश्यकता भी पड़े तो सबके प्रति सौहार्द और करुणाका भाव रखा जाये।

यह सब देवताओंके प्रियका कलिंगविजयमें हुए नरसंहारका पश्चात्ताप है—

ये अथि अनुषये देवानं पिय (या) विजिविषु कलिंग्यानि। (कलिंग अभिलेख नं० १३)

और हमारे मनमें युद्धकी बात कम, शान्तिकी बात अधिक आने लगी। दया, क्षमा और करुणाकी घोषणा की और कहा कि शान्ति भंग करनेवालेको दण्ड दिया जायेगा।

शान्तिकी मूर्तिके हाथमें गदा! संगीन तानकर यदि शान्तिकी बात कही तो क्या शान्ति हुई। शान्तिकी ज्योति तो मनसे जलती है। और इस तरह यद्यपि जिजीविषा और जय-पराजयकी भावना चिरन्तन बनी आयी फिर भी गान्धीके युग तक आते-आते भारतीय चिन्तनमें निशस्त्र युद्धकी बात आ गयी। और आजादी प्राप्त करनेके प्रसंगमें भारतने उसका परीक्षण भी कर लिया। इस तरह भारतीय चिन्तन पूर्ण निःशस्त्रीकरणकी बात सोच पाया तो सहज ही हमारा ध्यान गया—'वसुधैव कुटुम्बकम्' की बात तो हमने बहुत पहले सोची-कही थी।

— गोकुलचन्द्र जैन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आजके युद्धोपयोगी शब्द-कोष :

एक समय था जब युद्ध केवल ताक़त और साहसके बलपर लड़े जाते थे। और जीत सदा उसी पक्षकी होती थी जो ज़्यादा ताक़तवर होता था। लेकिन आज विज्ञानका युग है। इस यन्त्र-युगमें यह आवश्यक नहीं कि जीत ताक़तवरकी ही हो, कमज़ोर भी आज ताक़तवरको पटकी दे सकता है यदि उसके पास आधुनिकतम अस्त्र-शस्त्र हैं। आजका युद्ध विज्ञानका युद्ध है, यन्त्रोंका युद्ध है। आज ऐसे-ऐसे अस्त्र-शस्त्र बन गये हैं कि अपना तो बाल भी बाँका न हो और शत्रुका नामो-निशान ही मिट जाये।

• युद्ध-विमान :

युद्ध-विमान युद्धकालमें मुख्य रूपसे दो कामोंमें आते हैं—एक तो उनके द्वारा शत्रुके उन महत्त्वपूर्ण सैनिक ठिकानों, जहाँसे कि शत्रु-सेनाको रसद तथा सहायता पहुँचती है; हवाई अड्डों जहाँसे कि शत्रुके युद्ध-विमान उड़ाने भरते हैं तथा उत्पादन-केन्द्रों जहाँ कि शत्रुका सैनिक सामान तैयार होता है, पर बमबारी कर नाकाम कर दिया जाता है। दूसरे, ये आकाशसे शत्रु-सेनापर आक्रमण कर अपनी स्थल-सेनाको सहायता पहुँचाते हैं। आकाशमें शत्रुके विमानोंपर भी आक्रमण कर उन्हें मार गिराना होता है इसलिए ये विशेष प्रकारके हवासे हवामें मार करनेवाले प्रक्षेपणास्त्रोंसे लैस होते हैं।

आधुनिक युद्ध-विमान, विशेषकर लड़ाकू विमान, एक ऐसी अस्त्र-पद्धति बन गयी है जो लगभग पूरी-की-पूरी अपने आप काम करती है अर्थात् ये विमान बड़ी कुशल स्वचालन युक्तियोंसे सुसज्जित होते हैं। इनमें इलेक्ट्रानिक मार्ग-निर्देशन (नेविगेशन) तथा गणना-सम्बन्धी उपकरण लगे होते हैं जिनकी सहायतासे पॉयलट अपने शत्रुकी स्थिति तथा दूरीका पता लगाकर सही निशानेपर गोली दाग़ सकते हैं। ये विमान प्रायः आवाज़की गतिसे भी कई गुणा तेज़ और बहुत ऊँचाईपर उड़ सकते हैं। आकारमें ये छोटे लेकिन मज़बूत होते हैं और इनमें बहुत शक्तिशाली एंजिन लगा होता है। लड़ाकू विमान पॉयलटकी बहुत ही मामूली

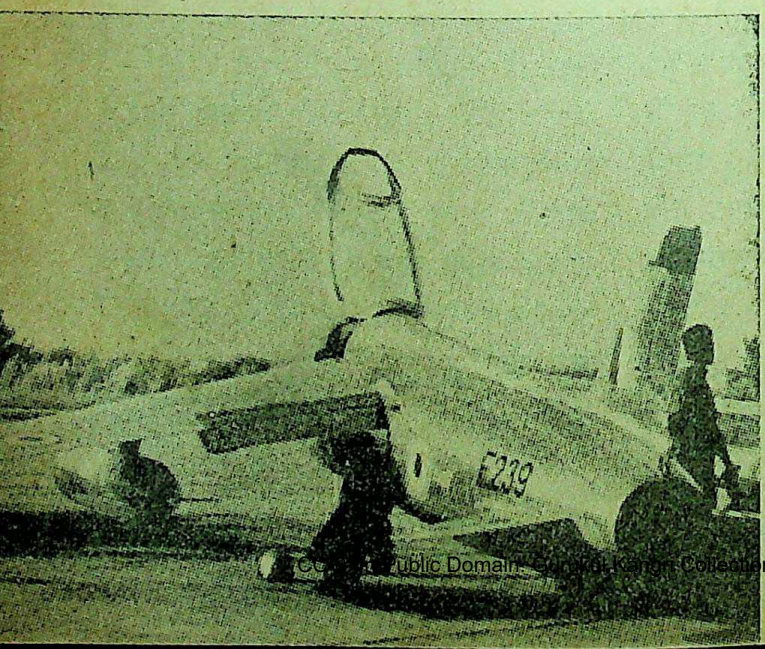

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहायतासे शत्रुके विमानका पता लगाने, उसकी पहचान करने, उसके नज़दीक जाने तथा उसपर गोली चलानेकी क्षमता रखते हैं।

लड़ाकू विमानका सारा कबन्ध ईंधन, तेल, बारूद, तोपें, रेडियो, राडार, गणना-यन्त्र, निर्देशन युक्तियाँ, कैमरे, बिजली-यन्त्र तथा दूसरे उपकरण रखनेके लिए प्रयुक्त होता है। हवासे हवामें मार करनेवाले प्रक्षेपणास्त्र दोनों पंखोंके सिरोंपर लगे होते हैं। विमानके कबन्धके या पंखोंके नीचे भी बम या राकेट लगानेकी व्यवस्था होती है।

• भारत-पाक-युद्ध में प्रयुक्त कुछ उल्लेखनीय लड़ाकू विमान :

नैट : नैट बंगलोरके 'हिन्दुस्तान एयरोनॉटिक्स लिमिटेड' कारखानेमें निर्मित शुद्ध भारतीय जेट विमान है। 'नैट' अँगरेज़ीका शब्द है जिसका अर्थ है मच्छर या कुटकी कीड़ा। इस विमानका यह नाम इसलिए रखा गया है क्योंकि यह संसारका सबसे छोटा और हलका विमान है। इसका वज़न केवल ३४०० किलोग्राम है अर्थात् अमेरिकाके एफ़-८६ सेबरजेटके वज़नसे लगभग आधा और एफ़-१०४ स्टारफ़ाइटरके वज़नसे एक तिहाई। नैटकी लम्बाई ९ मीटर और विस्तार ५.७५ मीटर है। इसकी गति लगभग ७०० मील प्रति घण्टा है और ६०,००० फ़ुटकी ऊँचाई तक यह उड़ सकता है! मात्र ढाई मिनिटमें यह ४०,००० फ़ुटकी ऊँचाई प्राप्त कर लेता है। इसमें दोनों ओर ३३ मिलीमीटरकी एक-एक तोप होती है जो एक चक्करमें १०० गोले फेंकती है। यह एक साथ २ घण्टा ४० मिनिट तक आकाशमें रह सकता है और ९६४ किलोमीटर दूरी तय कर सकता है।

स्टारफ़ाइटरकी तरह नैट भी एक सीट-वाला, लड़ाकू बमवर्षक विमान है और उसी की तरह इसमें भी सब-कुछ स्वचालित होता है। इस विमानके द्वारा बम और राकेट ले जाये जाते हैं। भारतमें बने इन्हीं छोटे-छोटे नैटोंने पाकिस्तानके उधार-माँगे सैबरजेटोंका सफ़ाया कर संसारको अपने जौहरसे चकित कर दिया।

स्टारफ़ाइटर अर्थात् एफ़-१०४—यह

तुम्हारे ध्वस्त सैबरजेट

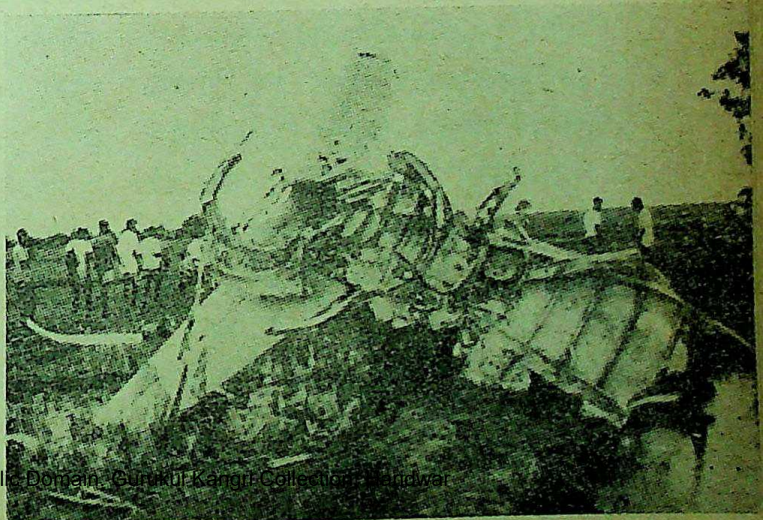

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिकतम बमवर्षक विमान है और संसारका सबसे तेज़ युद्धक माना जाता है। इसकी लम्बाई १६.५ मीटरसे अधिक, विस्तार ६.५ मीटर और गति १४५० मील प्रति घण्टा है अर्थात् ध्वनिकी गतिसे यह लगभग दुगुना तीव्रगामी है। इसकी श्रेष्ठताका अनुमान इसीसे लगाया जा सकता है कि यह एक मिनिटमें ४०,००० फ़ुट ऊँचा पहुँच जाता है और ९०,००० फ़ुटकी ऊँचाई तक उड़ सकता है। २० मिलीमीटरकी छह नलीवाली एक एम--६१ तोपसे लैस इस विमानके प्रत्येक पंखेमें 'हवासे हवामें मार करनेवाले' गार – ८ साइडवाइण्डर मिसाइल लगा होता है। स्थलपर आक्रमण करनेके लिए भी इसमें दो साइडवाइण्डर और एक एम–६१ तोप लगी रहती है। आणविक अस्त्र ले जानेमें भी यह सुविधाजनक रहता है। स्टारफ़ाइटरमें केवल एक चालक रहता है और इसका सब कार्य स्वचालित होता है। यह बहूद्देशीय रडार पद्धति और मार्ग-निर्धारण व्यवस्थाओंसे युक्त होता है।

सैबरजेट अर्थात् एफ़–८६ : यह प्रथम कोटिका लड़ाकू बमवर्षक विमान है। इसके उड़नेकी गति १३०० मील प्रति घण्टा, वज़न ७९०० किलोग्राम, लम्बाई ११ मीटरसे अधिक तथा विस्तार लगभग ११ मीटर है। यह ४८,००० फ़ुटकी ऊँचाईका उड़ान भर सकता है। कोरियाई-युद्धमें इसका सबसे पहली बार उपयोग किया गया था। हाई एक्सप्लोसिव बमोंसे लेकर छोटे आणविक बमों तक यह ले जा सकता है। सैबरजेटका उपयोग प्रायः सेना, सैनिक गाड़ियों, रेलकी पटरियों, पुलों तथा सप्लाई डिपोंको नष्ट करनेके लिए किया जाता है। हाल होमें हुए भारत-पाक-युद्धमें पाकिस्तानने अधिकांश हवाई आक्रमण इसी विमानसे किये थे।

मिस्टीयर–४ ए : इसकी गति ६१५ मील प्रति घण्टा है। उड़ान शुरू करनेके लिए इसे ४५०० फ़ुट लम्बी पट्टी चाहिए। मिस्टीयर-ने भी भारत-पाक-युद्धमें पाकिस्तानके कई सैबरजेटोंको मार गिराया है। ये दो भारी बम भी ले जा सकता है।

मिग–२१ : यह अमेरिकाके स्टारफ़ाइटर एफ़–१०४ के मुक़ाबलेका एक सीटवाला रूसी लड़ाकू विमान है और लम्बाई, विस्तार, गति तथा लड़नेकी क्षमतामें लगभग उसीके बराबर है।

कैनबरा बी–८ : इस बमवर्षक विमानकी गति ६४० मील प्रति घण्टा है। यह ५०,००० फ़ुटकी ऊँचाई तक उड़ सकता है।

● टैंक :

टैंक आधुनिक युद्धका अत्यन्त ही भयंकर और संहारक यन्त्र है। शत्रुकी तोपों और मशीन-गनोंकी मारको अपनी छातीपर लेकर यह अपनी पैदल सेनाकी तो रक्षा करता ही है, अपनी धुआँधार मारसे दुश्मनका सफ़ाया कर रास्ता भी बनाता चलता है। टैंकोंका प्रयोग सबसे पहले ब्रिटेनने जर्मनीके विरुद्ध सन् १९१६ की लड़ाईमें किया था। इन टैंकोंका वज़न लगभग ३०–३१ टन था और इनपर दो तोपें और चार मशीनगनें लगी थीं। इनपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२.४ इंच मोटा फ़ौलादी बख्तर मढ़ा था और रोलर स्टील ट्रैक लगे थे। इनकी गति ३.७ मील प्रति घण्टा थी। ये ११.६ फ़ुट चौड़ी खाई पार कर सकते थे और ४.६ फ़ुट ऊँची चढ़ाई चढ़ सकते थे।

समयके बीतनेके साथ धीरे-धीरे आवश्यकतानुसार इन टैंकोंमें सुधार हुआ और छोटे-बड़े, मध्यम, सेनावाहक, आग फेंकनेवाले, तोपवाहक, जल-थलगामी और हलके विमानसे ले जाये जाने लायक़ अनेक प्रकारके टैंकोंका विकास हुआ। ३ से ८ टन भारके छोटे टैंकसे लेकर १०० टन तक भारी भीमकाय टैंक बनाये गये। टैंकोंके अन्दर सैनिकोंके बैठनेकी जगह अधिक आरामदेह बनायी गयी। गरमीसे बचावके लिए उन्हें वायु-अनुकूलित किया गया। ब्रिटेनने सन् १९२९ में टैंकोंमें रेडियो-फ़ोन लगानेकी व्यवस्था की जिससे उनमें सवार सैनिक पीछे कमाण्डरसे बातचीत कर सकते थे। जर्मनीने देखनेके यन्त्रमें मार्केके सुधार किये।

स्पेनके गृहयुद्धके अनुभवसे लाभ उठाकर जर्मनीने जो सेनावाहक टैंक बनाये, उनमें निकलनेके भी अलग द्वार थे। धीरे-धीरे जंगल, रेगिस्तान, बर्फ़, पहाड़—सभी प्रकारके युद्धक्षेत्रोंमें इनका उपयोग होने लगा। नार्मण्डी और अफ़्रीकापर चढ़ाईके समय अमेरिकाने जो टैंक बनाये, वे छिछले पानीमें भी उसी गतिसे चल सकते थे जिससे कि स्थलपर; साथ ही गोलाबारी भी करते रहते थे। इनमें धातुके तुम्बे लगे रहते थे। किनारेपर पहुँचकर ये तुम्बे कल दबाकर अलग कर दिये जाते थे और फिर ये टैंक स्थलके टैंकोंकी तरह ही काम करते थे।

रूसी टैंकतोड़ तोपोंकी कड़ी मारको रोकनेके लिए जर्मनीने ६० से ७५ टन तक भारी और ८८ मिलीमीटरकी तोपवाले टैंक बनाये। इनका बख्तर ६ इंच मोटा था और ट्रैक साढ़े बत्तीस इंच चौड़ा। ये दलदली ज़मीनपर भी चल सकते थे। इनकी ८८ मिलीमीटरकी तोप २००० गज़ दूरसे साढ़े छह इंच मोटा बख्तर भेद सकती थी।

रूसने कछुएकी तरह चपटे टैंक बनाये। इनका बख्तर इतना ढलवाँ होता था कि गोला इनके ऊपर पड़ते ही फिसल जाता था।

दूसरे महायुद्धमें जिन टैंकोंका सबसे

वह रंगीला योद्धा – अजर : अमर

"अवश्य ही मुझे चमकीले रंग पसन्द हैं—जब मैं स्वर्गमें जाऊँगा तो मेरा इरादा है कि वहाँके पहले दस लाख वर्षोंका एक बड़ा भाग मैं चित्रांकनमें व्यतीत करूँगा। मैं सोचता हूँ वहाँ नारंगी और सिन्दूरी रंग (यहाँकी ऊषा और गोधूलिके रंग) मेरे चित्र-फलकके सबसे मन: रंगोंमें माने जाते होंगे, वहाँ तो इनसे भी बढ़-चढ़कर नये और अद्भुत रंगोंकी लम्बी शृंखलाएँ होंगी जिनका प्रयोग मेरे चित्र-फलकपर देख-देखकर देवताओंकी आँखें मुग्ध हो जायेंगी।"

—चर्चिल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Baroda Stationery Stores

Kharivav Road, BARODA

Telg : BOARD

Tele : 4039

AUTHORISED DISTRIBUTORS & STOCKIST

OF

ROHTAS INDUSTRIES LIMITED

DALMIANAGAR

Special items of Manufacture :

White & Coloured Duplex Board, M. G. Poster, Manifold & Tissue, Map Litho S/C & Glazed, Bank & Bond Paper, Chromo Board, Chromo Paper, Air Finish Art Board, White Cream Wove etc.

PHONE : 34-1730

With Best Compliments From

HAIG & CO.

Prop. : M. J. Umrigar

59, Central Avenue,
Calcutta-12.

Manufacturers of :

Hydraulic Ram Leathers, Pump Buckets, Hat Leathers and Oak-tanned Leather Belt Laces.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्यादा उपयोग हुआ वे हैं अमेरिकी बने शर्मन टैंक। इनपर ७५ मिलीमीटरकी तोप लगी होती है। मित्र-राष्ट्रोंकी विजयका श्रेय इन्हीं शर्मन टैंकोंको है।

अमेरिकाके जिन पैटन टैंकोंसे पाकिस्तानने भारतपर हमला किया वे सन् १९४९ के बादके विकसित मध्यम आकारके दुर्भेद्य एम-४७ टैंक हैं।

कोरियाई-युद्धमें बख़्तरबन्द गाड़ियोंके अभाव और क़िलाबन्दीको तोड़नेके लिए यही काममें लाया गया था। इसका वज़न ४५ से ५० टन है। इसमें ९० मिलीमीटरकी एक तोप, ७.६२ मिलीमिटरकी दो मशीनगनें और और १२.७ मिलीमीटरकी एक विमानध्वंसक तोप होती है। इसमें पाँच सैनिक बैठ सकते हैं। ९० मिलीमीटरकी तोप इसका सबसे शक्तिशाली अस्त्र है। यह तोप १२ मील तक मार कर सकती है। इससे छूटे गोले ३,००० फ़ुट प्रति सेकेण्डकी गतिसे उड़ते है और मज़बूतसे-मज़बूत कवचोंको भेद सकते हैं।

लेकिन भारतीय जाँबाज़ोंकी बहादुरी, साहस, सैन्य-दक्षता और रण-कौशलके आगे इन्हें भी मुँहकी खानी पड़ी।

• बज़ूका:

सेनाके साथ ले जानेवाला यह एक महत्त्वपूर्ण अस्त्र है। यह २५ गज़की दूरीसे टैंकको तोड़ देता है। कोरियाई-युद्धमें अमेरिकी सैनिकों-द्वारा इस अस्त्रका बड़ी मात्रामें उपकिया गया था। इस अस्त्रकी विशेषता इसका हल्कापन है। इससे हर दिशामें आसानीसे मार की जा सकती है।

• मॉर्टर:

यह पैदल सेनाका तोपख़ाना कहलाता है। 'क्लोज क्वार्टर बैट्ल-'के लिए यह बहुत ही उपयोगी अस्त्र है। इसकी दो क़िस्मे होती हैं—'दो इंच मॉर्टर' और 'तीन इंच मॉर्टर'। दो इंचका मॉर्टर जंगके मैदानमें सैनिक टुकड़ीके कमाण्डरके काम आनेवाली सुविधाजनक तोप है। इसकी विशेषता यह है कि यह आकारमें काफ़ी छोटा और वज़नमें हलका होता है तथा युद्धके समय इससे तेज़ीके साथ शत्रुपर हमला किया जा सकता है। इससे किसी भी स्थान अथवा शत्रुपर सामनेसे ही अथवा कहीं छिपकर आसानीसे गोली चलायी जा सकती है। मशीनगनकी तरह इसका भी डिटेंजमैण्ट दो आदमियोंका होता है अर्थात् इसे चलानेके लिए दो आदमियोंकी ज़रूरत होती है।

इसकी नलीका व्यास लगभग २-००२ इंच होता है लेकिन इसे 'दो इंच' मॉर्टर ही कहते हैं क्योंकि इससे फेंके जानेवाले बमका व्यास ठीक २ इंच होता है। इस मॉर्टरमें चार तरहके बम प्रयुक्त होते हैं—(१) हाई एक्सप्लोसिव, अर्थात् अधिक विस्फोट करनेवाला, (२) स्मोक अर्थात् धुआँ पैदा करनेवाला, (२) कलर्ड स्मोक, अर्थात् रंगीन धुआँ पैदा करनेवाला और (४) पारा इल्यूमिनेटिंग अर्थात् प्रकाश उत्पन्न करनेवाला बम।

दो इंचके मॉर्टरसे एक मिनिटमें तीन या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

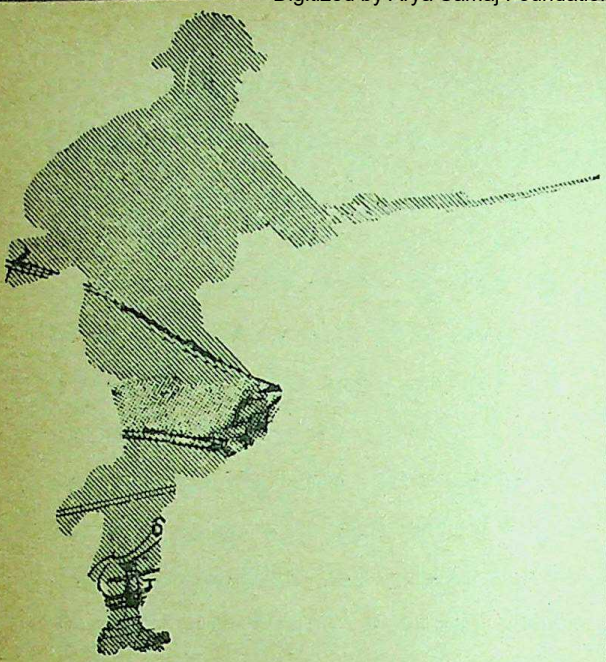

WITH FIRM HEARTS
WITH FIRM MINDS
WITH FIRM HANDS—
WITH ALL FIRMNESS
LET US GUARD THE
SACRED SOIL OF OUR
MOTHERLAND.
DONATE LIBERALLY TO
NATIONAL DEFENCE FUND

●

issued in the interests of the nation by :

Singhania Enterprises

Sellers of Thailand Jute & Local Jute.
2, CLIVE GHAT STREET,
CALCUTTA 1.

Phone : 22-8662 *Gram :* NICEARTH

Roller Chains AND Spockets

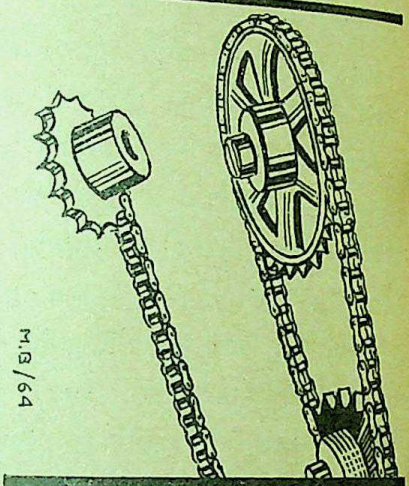

M.B/64

JAGATNARAYAN BHAGAWANDASS
71/A, NETAJI SUBHAS RD. CAL-1
ROOM No. D/S 12.

PHONE { 22-4704
22-0795

Importers & Stockists of :

Steel Roller Chains, Sprockets of "Renold" Kabo Diamond, Anchor Morse & General Order Suppliers.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बार बम फेंके जा सकते हैं। जब हाई एक्सप्लोसिव बमका विस्फोट होता है तब मॉर्टरकी नलीसे तेज़ धुआँ निकलता है जो लगभग १५ फ़ुट तक ऊँचा उठता है। साथ ही १५ फ़ुटकी ऊँचाई तक ही धमाकेके साथ चमक उत्पन्न होती है।

दो इंचके मॉर्टरका प्रभाव २०० गज़से १२५ गज़ तक होता है।

तीन इंचका मॉर्टर आकारमें तो दो इंचके मॉर्टरसे बड़ा होता ही है, वज़नमें भी उससे भारी होता है, यही कारण है कि इसे तथा इसके सहायक यन्त्रोंको ट्रक अथवा गाड़ीमें रखकर एक स्थानसे दूसरे स्थान पर ले जाया जाता है।

इस मॉर्टरकी विशेषता यह है कि इससे छिपे रूपसे दुश्मनपर बमवर्षा की जाती है। इसीलिए इसे खाईमें रखी जानेवाली मॉर्टर अर्थात् 'ट्रैंच मॉर्टर' कहते हैं। बमवर्षा करते समय इसकी नलीसे बहुत तेज़ चमक निकलती है, जिसके कारण इसका प्रयोग प्रायः कोहरेके समय और दुश्मनसे परे हटकर किसी छिपे स्थानसे किया जाता है। इसका संचालन चार लोग मिलकर करते हैं। इस मॉर्टरके द्वारा केवल दो प्रकारके बमोंकी ही बौछार की जा सकती है—हाई एक्सप्लोसिव बम और स्मोक बम। इन बमोंका वज़न लगभग १० पौण्ड होता है।

इस मॉर्टरसे एक बारमें ७ से १० तक बम छोड़े जा सकते हैं। यदि धीमी गतिसे बम-वर्षा की जाये तो एक मिनिटमें ३ बम छोड़े जा सकते हैं और यदि गति तेज़ कर दी जाय तो एक मिनिटमें १२ बम भी फेंके जा सकते हैं।

● ग्रेनेड :

ग्रेनेड सन्तरेके आकारका छोटा बम होता है जिसे पैदल तोपसेना प्रायः अपने काममें लाती है। क्लोज क्वार्टर बैट्लमें यह बहुत कामगर साबित होता है। प्रथम विश्वयुद्धमें ग्रेनेड बमोंका बहुत बड़ी संख्यामें उपयोग हुआ था। इन बमोंके द्वारा कम शक्तिवाले टैंकोंका भी सामना किया जा सकता है। हमारी तोपसेना-द्वारा जो ग्रेनेड बम प्रायः काममें लाया जाता है वह है ३६ नम्बरका हाई एक्सप्लोसिव।

इस बमका वज़न लगभग १ पौण्ड १० औंस होता है। हाथसे इसे ३५ गज़की दूरी तक फेंका जा सकता है, लेकिन ग्रेनेड फायरिंग राइफ़लसे २०० गज़की दूरी तक। जहाँ यह बम फटता है अर्थात् विस्फोटके स्थानसे चारों ओर ९ गज़के घेरेमें सभी-कुछ तबाह हो जाता है तथा ३०० गज़की दूरी तक इसका घातक प्रभाव होता है।

नम्बर ७७ स्मोक ग्रेनेड : इस बमका उपयोग तब किया जाता है जबकि वातावरण में धुआँ फैलानेकी आवश्यकता होती है। इसका वज़न डेढ़ पौण्ड होता है। इसे हाथसे ३० गज तक और राइफ़लसे २०० गज़ तक फेंका जा सकता है। इसके द्वारा पैदा किया गया धुआँ लगभग ३०–४० सेकेण्ड तक फैला रहता है।

९–ए ग्रेनेड : इसका उपयोग 'एण्टी टैंक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Please contact for :

Phone : 23–7012

LOCK & CUTLERY

GENERAL LOCK & CUTLERY STORES
113, Manohardas Chowk, Calcutta–7
Sole Agent for :
DELUX SCISSORS • TRUSTY LOCK

Grams : METROFFSET
Phone : 53–1687

METRO
CARDS
THEY ARE
DURABLE
ECONOMICAL
AND ABOVE ALL OF
GOOD QUALITY

Manufactured by
Metro Playing Card Co.
METRO ESTATE
Central Salsette Road, Kalina,
Bombay–29.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बम'के रूपमें किया जाता है। इसका वज़न लगभग डेढ़ पौण्ड होता है। इसे राइफ़लसे भी फेंका जा सकता है।

• बम

नापाम बम : गैसोलीनसे बनाये जाते हैं। बहुत-से बमोंमें दूसरे पेट्रोलियम ईंधन भी मिला दिये जाते हैं। प्रभावशाली बनानेके लिए इन ईंधनोंको गाढ़ा करना पड़ता है। गाढ़ा करनेके लिए नापामका प्रयोग करना पड़ता है। नापाम एक प्रकारका एल्यूमोनियम साबुन होता है जिसमें गोलेके तेल (५० प्रतिशत), नेप्थानिक अम्ल (२५ प्रतिशत) और ओलेइक अम्ल (२५ प्रतिशत) से आर्गेनिक अम्ल प्राप्त किया जाता है। नापाम-से गाढ़ा किया गया गैसोलीन अब अचल अवस्थामें रहता है तो कठोर जेलीकी तरह हो जाता है। लेकिन जब यह क्रियाशील होता है अर्थात् इसे 'आग उगलनेवाले' यन्त्रकी नलीसे ज़ोरोंसे फेंका जाता है तो यह एक तप्त तरलका रूप ले लेता है। 'आग उगलने-वाले' इस यन्त्रकी प्रक्रिया कुछ इस ढंगकी होती है कि जब पेट्रोलियम ईंधन पूरी ताक़तके साथ इसकी नलीसे बाहर निकलता है तो उसमें आग लग जाती है। 'आग उगलनेवाला' यह यन्त्र दो तरहका होता है—एक तो वह जिसे सैनिक आसानीसे उठाकर ले जा सकते हैं, इसके द्वारा ५० गज़से अधिक दूरी तक मार की जा सकती है। और दूसरा जो यन्त्र-चालित होता है। यह सैनिक गाड़ियोंपर लगा होता है और इसके द्वारा १५० गज़से ऊपरकी मार की जा सकती है।

छम्ब क्षेत्र तथा अमृतसरके निकटवर्ती गाँवोंमें पाकिस्तानने नापाम बम गिराये हैं। इनमें ११० गैलन द्रव्य आता है। इनका वज़न लगभग ७५० पौण्ड है। इसमें ७० पौण्ड तो केवल बमके खोलका वजन है, और ६८० पौण्ड आग लगानेवाला पदार्थ भरा होता है जो ११० गज़ दूर रखी धातुको भी पानीकी तरह पिघला सकता है और आदमीको जला-कर राख कर सकता है। जेनेवामें होनेवाले अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनमें इस बमका प्रयोग अमानवीय ठहराया गया था।

मेगाटन बम : एक मेगाटन बम दस लाख टन टी० एन० टी० बारूदकी शक्तिके बराबर होता है। इस बमके धमाकेसे २५०० वर्गमील क्षेत्रमें सारी इमारतें तहस-नहस हो सकती हैं। अमेरिकाने हिरोशिमापर जो बम गिराया था यह उससे १२५० गुना शक्तिशाली होता है।

हाई एक्सप्लोसिव बम : इसका वज़न लगभग ढाई पौण्ड होता है। यह बम अपने भयानक विस्फोटसे प्रत्येक दिशामें ८ गज़ तकके क्षेत्रमें हर चीज़को विध्वंस कर सकता है, और इसका घातक प्रभाव सामनेके २५० गज़ क्षेत्रमें होता है।

स्मोक बम : इस बमका काम धुएँकी पारदर्शी परतें पैदा करना है। इस बमका वज़न लगभग २ पौण्ड होता है।

कलर्ड स्मोक बम : इन बमोंके द्वारा पीले, हरे, लाल और नीले रंगका धुआँ पैदा किया जा सकता है। इनका वज़न एक पौण्डसे कुछ अधिक होता है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Gram : COPPERPIPE

Phone : 33-4472
33-9504

With Best Compliments from

Ratanchand Joraji & Co.

Nonferrous Metal Merchants

IMPORTERS & DEALERS IN BRASS & COPPER RODS,

PIPES, SHEETSWIRE, STRIPS ETC.

1, Portuguese Church Street,
CALCUTTA-1

Gram : JAICLAY

Ring { OFFICE : 23-9865
SHOW ROOM : 24-2594

AI WAYS REMEMBER
FOR
FRESH & GENUINE
MEDICINES
&
DRUGS

St. Thomas's Clinic & Pharmacy

19-A, Free School Street
CALCUTTA-16.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पारा इल्यूमिनेटिंग बम : इन बमोंका उपयोग किसी क्षेत्र-विशेषमें कुछ देरके लिए प्रकाश पैदा करनेके लिए किया जाता है ताकि उस क्षेत्रका निरीक्षण किया जा सके। यह प्रकाश लगभग आधा मिनिट तक रहता है। इन बमों-का वज़न भी एक पौण्डसे कुछ ही अधिक होता है।

धमाकेवाला बम : ये बम आग नहीं लगाते बल्कि धमाके और उससे उत्पन्न कम्पनसे विध्वंस करते हैं। वज़नमें ये ४ पौण्डसे ४००० पौण्ड तक होते हैं। शत्रु-पक्षके लोगोंमें घबराहट तथा भय पैदा करनेके लिए इन्हें गिराया जाता है। इनके फटनेका धमाका इतने ज़ोरका होता है कि कानके परदे तक फट जाते हैं और ज़मीन थर्रा उठती है। दरवाज़ों और खिड़कियोंके शीशे टूट-टूटकर गिर पड़ते हैं।

• प्रोजेक्टर इन्फ़ण्ट्री एण्टी टैंक :

यह लोहेका एक लम्बा अस्त्र है, जिसकी अधिकाधिक लम्बाई ३९ इंच होती है और भार ३२ पौण्ड। 'मॉर्टर' की तरह इसके द्वारा भी प्रत्येक दिशामें ७५० गज़ तकके घेरेमें गोलाबारी की जा सकती है लेकिन युद्ध-क्षेत्रमें इसका प्रभाव लगभग १०० गज़के घेरे तक ही रहता है। इसमें काम आनेवाले बमका वज़न ३ पौण्ड होता है।

तोपसेना इसे अपने साथ आसानीसे ले जा सकती है। कन्धेपर रखकर भी इसका उपयोग किया जा सकता है।

• राकेट

दीवालीके दिन बच्चे अकसर पटाखे छोड़ते हैं। इन पटाखोंमें एक पटाखा 'अग्निबाण' होता है। जब इस अग्निबाणके बारूदमें आग लगायी जाती है तो बड़े ज़ोरके धड़ाकेकी आवाज़ होती है और अग्निबाण पलक मारते ही आकाशमें कई फ़ुट तक ऊँचा चला जाता है। राकेट इसी अग्निबाणका सुधारा हुआ आधुनिक रूप है। राकेट बारूदसे नहीं एक विशेष प्रकारके ईंधनसे चलता है और ये आकाशमें मीलों तक ऊँचा जा सकता है। अपनी दूर तक की मार, अचूक निशानेबाज़ी, विनाशक शक्ति और तेज़ रफ़्तारके कारण आजके युद्ध-आयुधोंमें इसे महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। ये राकेट यान्त्रिक वाहनोंपर लगाये जा सकते हैं और उनपर-से छोड़े जा सकते हैं। इन्होंने पुरानी तरहके तोपखानेका स्थान ले लिया है और इनकी प्रहार-शक्ति उससे कहीं अधिक है। इनकी मारकी सीमा भी बहुत अधिक है। छोटेसे छोटे राकेट-द्वारा २००० गज़से भी अधिक दूरी तक मार की जा सकती है और भारीसे भारी टैंकोंको तोड़ा जा सकता है।

• मिसाइल

यह आग्नेय अस्त्र आधुनिक युद्धोंका अत्यन्त ही शक्तिशाली, तीव्रगामी, संहारक और आधुनिकतम आयुध है। इसके द्वारा हज़ारों मील दूर तककी अचूक मार की जा सकती है। मिसाइलोंका उपयोग सबसे पहले दूसरे महायुद्धमें जर्मनोंने लन्दनपर बम गिरानेके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए किया था। इन्हें राकेटोंकी सहायतासे छोड़ा जाता है। इनकी प्रहार-शक्ति बहुत ही भयानक और विनाशकारी होती है।

ये चार प्रकारके होते हैं—(१) धरतीसे ही धरतीपर मार करनेवाले मिसाइल, (२) धरतीसे हवामें मार करनेवाले मिसाइल, (३) हवासे हवामें मार करनेवाले मिसाइल, और (४) हवासे धरतीपर मार करनेवाले मिसाइल।

आक्रमणके विरुद्ध तुरन्त उपयोगके लिए लम्बी मारवाले मिसाइलोंको धरतीके भीतर काफ़ी गहराईपर सावधानीके साथ छिपाकर रखा जाता है। पृथ्वीके गर्भमें मिसाइल बैटरीकी इस भूलभुलैयामें एक नियन्त्रण केन्द्र होता है, इलेक्ट्रॉनिक संगणक होते हैं, रॉकेटों-को ईंधन देनेकी व्यवस्था होती है, रसदका प्रबन्ध होता है और कर्मचारियोंके रहनेके लिए मकान होते हैं। जब ख़तरेकी घण्टी बजती है तो कंकरीटके बने द्वार खुल जाते हैं और मिसाइल धरतीके ऊपर निकल आते हैं। इनमें लक्ष्य और उसकी दूरीसे सम्बन्धित सब सामग्री तैयार होती है। चलानेवाला अधिकारी इन्हें अकेला अथवा कईको एक साथ छोड़ सकता है।

● राकेट लांचर :

परमाणु-युद्धमें परमाणु-बमके विस्फोट के बाद युद्धक्षेत्रमें पहुँचकर उसपर जल्दीसे जल्दी अधिकार करनेके लिए तेज़ीसे चलनेवाला एक ऐसा राकेट लांचर आविष्कृत हुआ है जो हवामें बिलकुल सीधा ऊपरको उठ सकता है और जिसपर-से राकेट छोड़े जा सकते हैं। इसमें दो जेट एंजिन लगे होते हैं जो उन चारों पंखोंको घुमाते हैं जिनसे वह ऊपर-को उठता है। इस वाहनमें दो घूमनेवाली राकेटधारी पट्टियाँ होती हैं जिनमें-से आगे बढ़ती हुई सेनाओंकी सहायताके लिए एक साथ कई राकेट छोड़े जा सकते हैं। ■■

आप भी देश के सैनिक

तन मन धन से हमले का मुकाबला कीजिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

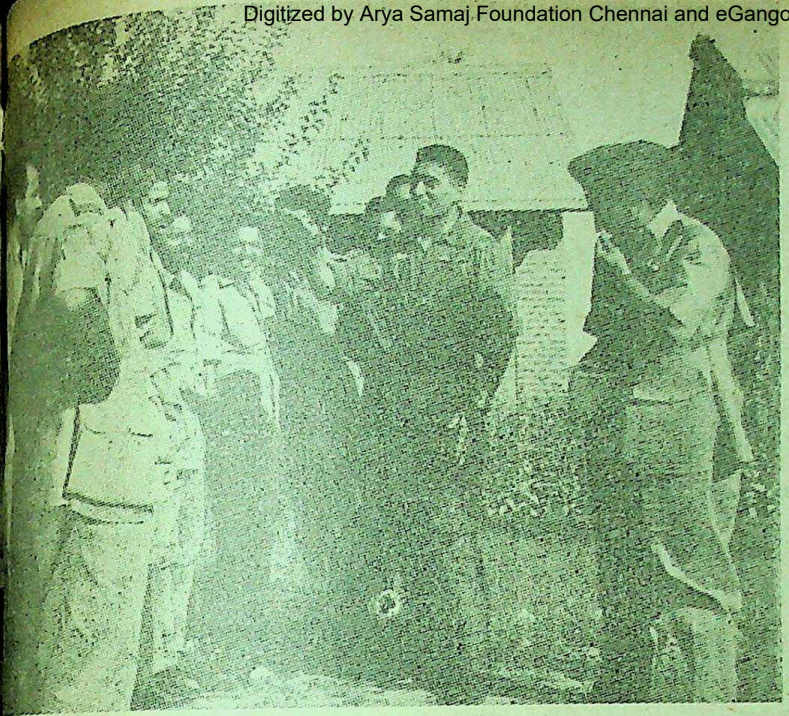

इन्दु जैन •
दुष्यन्त कुमार •
साक़ी फारुक़ी •
राही मासूमरज़ा •

चुनौती स्वीकार

(कुछ पत्र-कविताएँ)

ओ हठी शत्रुओ !

हमने सोचा था
उस घास की तरह रहेंगे
जिस पर बच्चों के पैर दौड़ जाते हैं—
वह फिर उभर आती है ।
उस कमल वन की तरह खिलेंगे
शिकारे जिसके वक्ष पर फिसलते
फूल न मुरझते, न कुचलते ।

हमने चाहा था हरे हरे फैलावों से
आँखों के दृष्टि रोग हरना ।
हमने साधा था नील रक्त कमलों से
निर्मम शीत को ताप से भरना ।

कितनी ही गुहार की बार-बार
उँगलियाँ थाम कर घेरे बना लें !
एक-सी झरती फुहार में
एक-से भीगें-नहा लें !

क्यों न हम मिल कर मार्ग उजाल दें
सभी के लिए—
अपने लिए, तुम्हारे लिए ।
क्यों न हम रंगों को भूल जायें
जीत लें पृथक् अस्तित्वों के संकुचित दायरे !
क्या यह असम्भव था—सपना था ?
क्या यह दृष्टि-दोष अपना था ?

क्यों अब इस दूब की घाटी से
फ़ौज के दस्ते गुज़रते हैं ?
क्यों इन कमलों के गर्वीले कण्ठ
तीखी संगीनों से उलझते हैं ?
क्यों हाहाकार में चरवाहों की तान दब
गयी है ?

कैसा तूफ़ान चला आया है
ईंट से ईंट बज गयी है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्यों कुछ लोग पागल हैं
सिर के बल चलते हैं—
क्यों उनके मुख शब्दों की जगह
आग के गोले उगलते हैं —
क्यों उनकी बाँहों के आगे
बघनखे जड़े हैं ?
क्यों उनके सीनों में दिल की जगह
ऐंठते उबलते सँपोले पले हैं ?

हतप्रभ कर चुके बहुत अपने कुतर्कों से—
सुन लें अब धीरज के सारे भहराते दुर्गों से –
मर्ज़ सिर्फ़ एक नहीं कई हैं !
जिस कण्ठ से छिड़ती आसावरी
उसी से भैरवी,
स्वर का सन्धान है जैसे
वैसे ही कर का सन्धान है ।
किसने कहा गौरी गौरी है शिव नहीं
किसने यह समझा था उँगलियाँ वीणा के
तार ही
दबाती हैं—

आरती के दीपक नहीं !

चीवर की केसरिया कोर से घिरे चरण
संवेदन संकुल हैं—माना
आहत पक्षी के आर्त्त नयन जिसके बाधक हैं
उसकी ही राह के—
काँटे···पर्वत···नदिया···साधक हैं ।

ओ हठी शत्रुओ ! मूर्खो !
आँखों की करुणा को कायरता समझे
—परिणाम झेलो—
अन्धे और बहरे ही रहना स्वीकार था—
पंगु भी हो जाओ ।
इस मार्ग पर आधे पग कभी नहीं उठते
—प्राणों की पूर्णाहुति देनी ही होगी ।
आत्मसमर्पण कर दो—
बाँहें उठा दो—
माथे झुका दो—
जीवन से नियत दण्ड ले लो !

—इन्दु जैन

युद्धविराम :

मामूली बात नहीं है
कि इन अगनभट्टियों के दहानों पर बैठे हुए
हम
तुमसे फूलों और बहारों की बात कर लेते हैं,
अपनी बाँहें आकाश की ओर उठाकर
बच्चों की तरह चिल्ला उठते हैं कभी-कभी
टैंकों और विमानों के कोलाहलों को
जीवन का नारा लगाकर
एक नये स्वर से भर देते हैं ।

मामूली बात नहीं है
कि जब ज़मीन और आसमान पर
मौत घड़घड़ाती हो,
एक कोमल-सा तार पकड़े हुए
आप
अपनी आस्था आबाद रक्खें
विषाक्त विस्फोटों के धुएँ में
खुद अपने ऊपर नेपाम बम चलाते हुए
गान्धी और गौतम का नाम याद रक्खें ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शब्दों की छोटी-छोटी
तोपें लिये हुए
बम बरसानेवाले जहाज़ों को मोड़ लें,
भूखी साँसों को राष्ट्रीयता के चिथड़े पहनायें,
अभावों का शिरस्त्राण बाँधें,
चारों ओर फैली विषैली गैस ओढ़ लें,
—चाहे, तलुए झुलसकर काले पड़ जायें
आँखों में दृश्यों की कीलें गड़ जायें
पेट पीठ से सट जाये
पूरे व्यक्तित्व का सिंहासन उलट जाये।

अजीब बात है
कि नज़रों को घायल कर देते हैं दृश्य
जिधर पलकें उठाते हैं,
वातावरण घृणा मुस्कराता है
जिसमें भी जाते हैं,
आकाश की मुट्ठी से फिसलती हुई
बेबसी फैलती-फूटती है—
फिर भी हम नहीं छटपटाते हैं;
गाते हैं एक ऐसा गीत
जिसकी टेक अहिंसा पर टूटती है।

मामूली बात नहीं है
कि आज जब दुनिया शक्ति के मसीहों को
पूजती है,
लोग घरों में भी तलवारों पर मचल रहे हैं,
हम घर से बाहर,
युद्धस्थल में,
एक मुर्दे को शान्ति का पैग़म्बर समझकर
उठाये चल रहे हैं।
लोग कहते हैं कि अमुक बुरा है या भला है।
लोग ये भी कहते हैं कि आत्मवंचना में
जीवन जीना कला है!
हम कुछ भी नहीं कहते।
बार-बार शान्ति के धोखे में विवेक पी जाते हैं।
संवेदनहीन राष्ट्रों को
सदियों तक
आत्मा पर बने हुए घाव दिखलाते हैं—
(यानी बहुत हुआ तो)
आत्मलीन विश्व से निवेदन करते हैं—और
उसी नदी में डूब जाते हैं
जिससे उबरते हैं।

मामूली बात नहीं है दोस्तो
कि हम न चीखें
न कराहें,
क्योंकि यही रास्ता शायद
हमारी नियति है,
जो यहाँ से शुरू हो
और यहीं लौट आये।
शायद यह तटस्थता है।
शायद यह अहिंसा या शान्ति या सह-अस्तित्व है।
यह कुछ ज़रूर है—
इसी के लिए हमने
टैंकों और बमों को शहरों पर सहा है
प्राण गँवाये हैं।
कच्छ में स्वाभिमान
कश्मीर में फूलों की हँसी
और छम्ब में मातृभूमि का अंग भंग हो जाने
दिया है!

—दुष्यन्त कुमार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

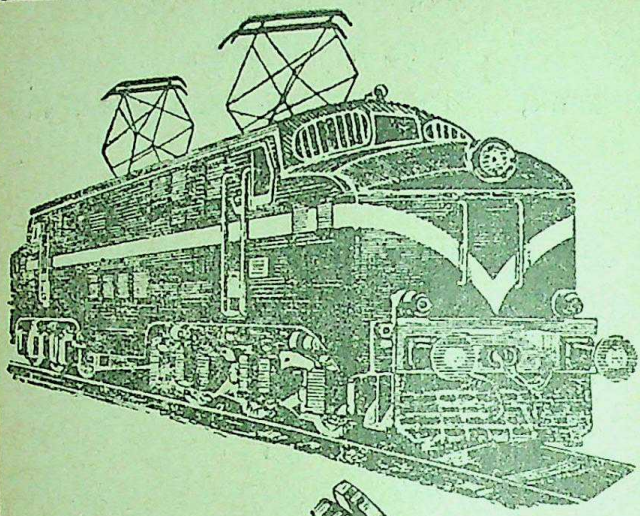

SPRINGS & SPRING WASHERS

Factory at :—
20, MUSALMAN PARA LANE,
(Off Belilious Road)
HOWRAH

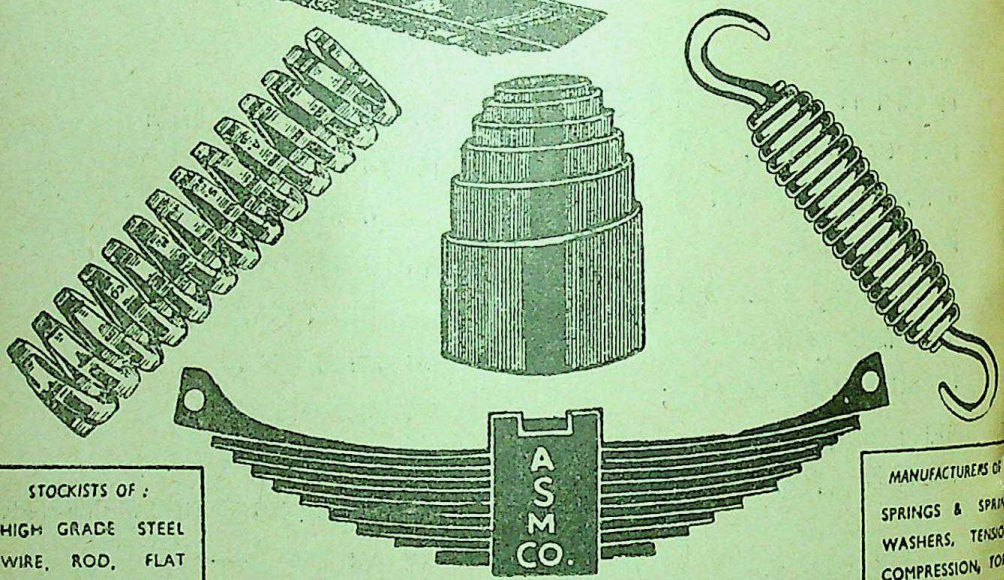

STOCKISTS OF :
HIGH GRADE STEEL WIRE, ROD, FLAT STRIP HEXAGONAL SQUARE BRASS, PHOS. BRONZE, NICKEL CHROME, HOTDIE STAINLESS AND HIGH SPEED STEEL ETC

MANUFACTURERS OF
SPRINGS & SPRING WASHERS, TENSION COMPRESSION, TOR SION, SOFA, FLAT LAMINATED, C PISTON RINGS VOLUTE, BUFFER COMBS, MILLING ETC

TELEGRAM : "BRON SPRING"
PHONE OFFICE { 22-7980.
PHONE WORKS { 66-3310.

ASIA SPRING MFG. CO

(REGISTERED ORIGINAL FIRM)
ENGINEERS & SPRING MANUFACTURERS.
21A, CANNING STREET, CALCUTTA-1.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युद्ध !

एक लड़की, चाल में दीवानापन
हँसी आवाज़ में विषयी मिठास
गीले होंठों पर सुलगती प्यास
अपने कोढ़ी हाथ में
आग लेकर नाचती है बावली
होके आकर्षित उसकी आँख से
उसके पीछे जा रही है ज़िन्दगी
तेज़ अंगारों की जीभें लाल हैं
बेवसी से चीख़ते हैं आदमी
और तहख़ाने में हैं सहमे हुए
मैं, अँधेरी रात, काली रोशनी !

—साक़ी फ़ारूक़ी

सन् १८५७ :

गोलियाँ चलने लगीं
गंगा की लहरें घबरा-घबरा कर आँखें मिलने लगीं
शमएँ कहीं बुझने लगीं, शमएँ कहीं जलने लगीं
चीखें, भागम-भाग, कराहें
मस्तूलों से लिपटी नज़रें
पतवारों से उलझी बाँहें
आगे-आगे गंगा की लहरों से लड़ते-थकते बाज़ू
पीछे-पीछे मौत की वह तहक़ीर-आमेज़ घनी शशकारें....

यह गुमान होता है अपने दिल की धड़कन पर
जैसे मौत आती हो एक अजनबी बन कर
आगे-आगे सन्नाटा भागता ही जाता है
पीछे-पीछे हंगामा क़हक़हे लगाता है
कोई खयाल नहीं जेहन के धुँधलकों में
कुछ नहीं दूर तलक आज खयालों के बयाबानों में

हिम्मतें टूटी हुईं
ज़िन्दगी रूठी हुई
मुँह खुले, आँखें फटीं
साँसों में हारी हुई फ़ौज की राहरवी
तैरते-तैरते थक जायेंगे
मर जायेंगे
सिर्फ़ तारीख़ को याद आयेंगे
सात समुन्दर पार कहीं कुछ लोग यह बैठे कहते होंगे

उनके भाई उनके बेटे
उनके शौहर की ख़िदमत में
राजे और महाराजे होंगे

उन सबको यह कौन बताये
राजे और महराजे कैसे
उनके भाई, उनके शौहर, उनके बेटे
जान बचाये भाग रहे हैं
मुनादियों ने दी सदा
लड़ाई ख़त्म हो गयी
ग़ुलामी का पता नहीं
वह गोलियों की लोरियों की छाँव पाके सो गयी
वह सो गयी—लड़ाई ख़त्म हो गयी !

—राही मासूम रज़ा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीपावली की शुभकामनाओं सहित

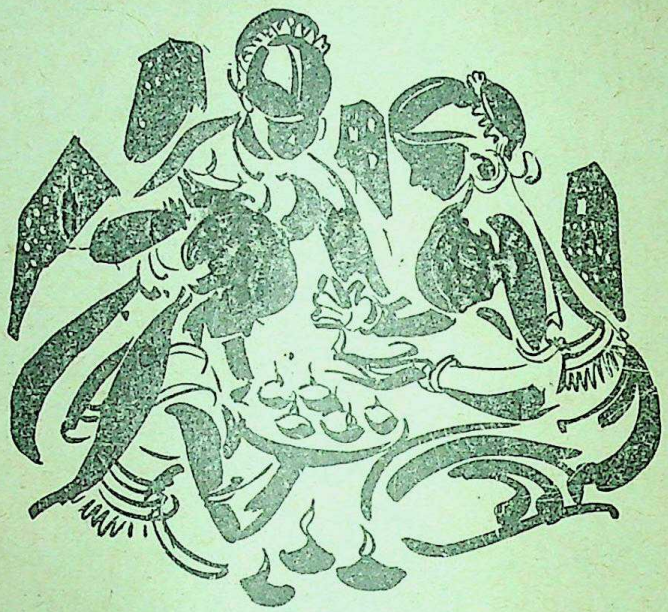

'जीवन अपने लिए और सबके लिए'

यह वाक्य—
जीवन की सफल
प्रतिष्ठा
और
समस्त विश्व की
शान्ति,
प्रगति तथा
सम्पन्नता
के हित में.....

गनी कमर्सियल कम्पनी

हैसियन तथा बारदाना के प्रमुख
व्यापारी तथा वितरक
६ क्लाइव रो, कलकत्ता–१

फ़ोन : २२-५३६६
२२-५१३६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविर्मनीषीका नया रूप : कुछ शंखध्वनियाँ

२ अक्तूबर। गान्धी-जयन्ती। शहीद-दिवस। शस्त्र-पुरुष श्रीलालबहादुर शास्त्री, हमारे प्रिय प्रधान मन्त्रीका जन्म-दिन। पाकिस्तानी पैटन टैंक रूपी केकके काटे गये टुकड़े। महाभारतकी शाम—युद्ध-विरामके बाद, साथ ही नये भारतकी उभरती हुई उषावन्दना। लाल क़िला, जहाँ कल ध्वनि और प्रकाशके खेल देखने लोग इकट्ठा होते थे, लाल क़िलेका वही मंच जिसे दिल्लीकी जनता कई सन्दर्भोंमें अपनी आँखों देख चुकी है.... लेकिन अवसर बिलकुल अलग कि उबलता हुआ उत्साह जैसे देशकी शक्तिके साथ बढ़ता जा रहा है। कविर्मनीषीके भात्र तो स्पन्दन-यन्त्र हैं और उसकी वाणी समय-की शंख-ध्वनि। पिछले एक-डेढ़ महीनेमें इस देशमें जो कुछ हुआ वह शायद वर्षों बाद हुआ है और इस रूपमें हुआ है कि कश्मीरसे कन्याकुमारी तक और कच्छसे कलाई-कुण्डा तक एक दीप्त यकजहती बिजलीकी तरह दौड़ गयी है। हमारे कूटनीतिज्ञ चाणक्यने कहा था कि 'युद्धके मैदानमें राष्ट्र उठ खड़ा होता है'—, वही हुआ भी है। इस अवसरकी भावनाको ठीक-ठीक अभिव्यक्ति देनेके लिए दिल्ली प्रादेशिक साहित्य सम्मेलनने इस दिन वीर-रस कवि-सम्मेलनका आयोजन किया। सभापति थे श्री बच्चन, संयोजक थे श्रीभवानीप्रसाद मिश्र और स्वागताध्यक्षा थीं श्रीमती रमा जैन।

आम कवि-सम्मेलनमें तो यह होता है कि पहली कविताकी भूमिका लोगोंके आकर बैठ पानेमें ही बीत जाती है। लेकिन इस ख़ास कवि-सम्मेलनमें भूमिकाका आरम्भ ही ऐसी शक्तिके साथ हुआ, वहाँ उपस्थित ६५-७० हज़ार जनताके मन-पर स्वर ऐसे फैल गये, जैसे वह भी साहित्यिक वाणी हो।

वहाँ उपस्थित थे रक्षामन्त्री श्री यशवन्तराव चह्वाण और जेनरल चौधरी। राज्यकोषके लिए समर्पित नोट स्वागतके पुष्पहारका स्थान ले रहे थे। देशकी शक्तिके प्रतीक सेनाध्यक्ष और देशकी भावनाके प्रतीक श्रोतागणके समक्ष कवि युद्ध-स्वरकी बड़ी स्पष्ट अभिव्यक्ति कर पाये। इस उत्साहसे दीप्त वातावरणमें स्वागता-ध्यक्षा श्रीमती रमा जैनने इस संयोजनका स्वागत इन शब्दोंमें किया :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'जिसकी सन्ध्यामें पंछीकी स्वर-झंकार नहीं'

"राष्ट्रकी रक्षाके निमित्त छत्रपति शिवाजीकी तलवारपर ओजस्विताकी नयी सान चढ़ाने-वाले कीर्तिमान् रक्षामन्त्री श्री यशवन्तरावजी चह्वाण,

ज्वालमालाओंसे मण्डित राष्ट्रकी गर्वीली विजयवाहिनीके यशस्वी सेनानी जेनरल चौधरी,

शत्रुओंको पराजित करनेके राष्ट्रीय संकल्पको तेजस्वी वाणी और क्रियाशील भावना प्रदान करनेवाले वीर-रस-संचारी कविगण,

वीरत्वके मस्तकपर श्रद्धा और प्यारका विजयतिलक अंकित करनेके लिए समागत बहनो और भाइयो,

दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन-द्वारा आयोजित इस वीर-रस कविसम्मेलनमें मैं आपका हार्दिक स्वागत करती हूँ।

हम अपने इतिहासके एक बड़े मोड़पर खड़े हैं। कई सौ वर्षोंके बाद युद्ध-क्षेत्रमें भारतने एक ऐसी कीर्ति प्राप्त की है जिसकी चर्चा सारे संसारमें हो रही है। हमें गर्व है कि हमारे बीर-बाँकुरोंने युद्धके कठिनतम मोर्चोंपर आक्रमणकारी शत्रुके छक्के छुड़ाये हैं। उन्होंने अपने बलिदानी रक्तके चन्दनसे भारतमाताके हिमकिरीटको चर्चित किया है। आज हमारी दिल्ली समूचे देशके सहयोगसे इतिहासका एक नया तथा गौरवपूर्ण अध्याय अग्निके अक्षरोंमें लिख रही है।

राष्ट्रके निर्माणमें जितना योगदान सेनानी और राजनेता देते हैं उतना ही योग कवियों और साहित्यकारोंका भी होता है। पृथ्वीराजके साथ चन्दबरदायी और छत्रपति शिवाजीके साथ भूषणका नाम परम्परासे जुड़ा चला आया है। यह कविकी ही सामर्थ्य है कि जहाँ वह सदा प्रेम, शान्ति और मानवताके गीतोंकी पुष्पवर्षा करता है, वहाँ वह युद्धकी तलवारें तननेपर अपने छन्दोंमें वीरताकी वह्नि भी प्रवाहित करता है।

इस समय युद्ध विरामपर है और यह समय शक्तिको बढ़ाने और सवारनेका है। वे भाग्यवान् हैं जिन्हें राष्ट्रकी चेतनाको जगाने और जागे हुए राष्ट्रको बलिदानके लिए प्रेरित करनेका दायित्व मिला है। ये सरस्वतीके वरद पुत्र देशमें 'एक राष्ट्र' की भावनाको दृढ़ करें तथा जनताको विघटनकारी प्रवृत्तियोंसे बचायें। एकता और आज़ादी एक ही तत्त्वके दो नाम हैं। हमें दोनोंकी रक्षा करनी है। कवि राष्ट्रके हृदयके प्रतिनिधि होते हैं। हमें पूरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वास है कि हमारे हृदयोंमें जो पौरुषकी ज्वाला घुमड़ रही है उसे वे वाणी देंगे।

पाकिस्तान हो या चीन, जो भी हमारे देशपर आक्रमण करेगा, उसे मुँहकी खानी पड़ेगी। हमारे नेता हैं नीतिज्ञ श्री लाल-बहादुर शास्त्री, धैर्य और ओजके प्रतीक-कवि बिहारीके शब्दोंमें—

'देखन में छोटे लगें
घाव करें गम्भीर।'

हमारा सबसे बड़ा शस्त्र हमारा संकल्प है, हमारी सबसे बड़ी शक्ति हमारी एकता है। हमारे देशकी रक्षाका भार जिन सबल स्कन्धोंपर है उनपर हमारा पूर्ण विश्वास है। हमारी विजय निश्चित है।"

मंचपर उपस्थित सारे कवियोंकी वाणी-को बड़ा बल इस बातसे मिला कि जनतामें उत्साह था। हिन्दीके लगभग सभी प्रतिष्ठित कवि वहाँ उपस्थित थे। यह ज़रूर लगा कि कवियोंने युद्धभूमिको नहीं देखा है लेकिन यह भी सही है कि वे युद्ध-उत्साहसे बहुत नज़दीक भी थे। युद्धके समय सारी जनता सानपर चढ़ जाती है और साहित्यकार मोर्चेपर न जाकर भी उत्साहका मोर्चा सँभाल लेते हैं। समीक्षा-की भाषामें चाहें तो यह कह सकते हैं कि 'वीर गाथा कालका तीसरा दौर फिर आ गया है।' एक उबाल १९६२ में चीनी-आक्रमणके समय देखा गया था और दूसरा ज्वार यह है।

चन्दबरदायी और भूषणकी याद एक बार फिर ताज़ी हो गयी। एक बार फिर यह लगा कि हमारा देश वाक़ई भक्तिकाल और रीति-कालको लाँघकर आधुनिकताकी चट्टानपर खड़ा है। सम्मेलनमें सुनाये गये बहुत सारे गीत अपनी तर्ज़के कारण महत्त्वपूर्ण बन गये थे, कुछ सामयिकताके कारण भी। कवि रघुवीर सहायकी एक आँखों देखी समीक्षाके शब्दोंमें: "निस्सन्देह एक बड़ी बात हुई—किसी कविपर आवाज़ें नहीं कसी गयीं—किन्तु इस घटनापर तो वह कहावत लागू होती है कि 'ताली एक हाथसे नहीं बजती'—कुछ कविने मोहित किया और कुछ जनताने आख़िरी वक़्त तक उम्मीद रखी।

ब्रजभाषाके कवि रामलालने अमृत-ध्वनि छन्द सुनाकर 'बाजे-बाजे वीर शिवराज के' की याद ताज़ी कर दी। श्रीमती लक्ष्मी त्रिपाठीने 'एक वीरगति प्राप्त सैनिककी वापसी' सुनाकर सम्मेलनको नयी दिशा दी। डॉक्टर आनन्दका स्वर बहुत सधा हुआ था। श्री राधेश्याम प्रगल्भकी कविताने सोचनेको बहुत कुछ दिया। कवि भवानीप्रसाद मिश्रने महाभारतकी इस शामको एक नये प्रतीकमें ढाल दिया:

'जब आकाश घिरा हो, और भयंकर लगता हो
जब रह-रहकर कम्प तुम्हारे मन में जगता हो
पाँवों के नीचे की धरती खिसक रही-सी हो
आसपासकी सारी दुनिया सिसक रही-सी हो

ऐसे समय अकेले ही तुम गाकर तो देखो
तूफ़ानों पर अपने स्वर को छाकर तो देखो
कण्ठ खोल कर गाने से सब सम्भव होता है
हाहाकार बदल कर बरबस कलरव होता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जड़ में चेतन में स्वर अंकुर फूट फैलते हैं और कि उसके स्वर लद-लदकर टूट फैलते हैं इतना ग़लत प्रभाव कभी भी उगा नहीं कहीं जिसकी सन्ध्या में पंछी की स्वर-झंकार नहीं'

श्री बच्चनने अपनी वाणीसे लोगोंको अपने कर्त्तव्यके प्रति चेताया। राष्ट्रकवि दिनकरने कहा :—

'दर्द जब भीतर गुमसुम पलेगा
एक दिन इस्पात बन ढलेगा।'

उनकी यह पंक्ति उन कवियोंको भी दिशा देती है जिनके पास दर्द तो है लेकिन वह असमय ही आँसू बनकर बहता रहता है।

कवि-सम्मेलनके अवसरपर ही एक महत्त्वपूर्ण सहयोग इस पत्रके रूपमें दिया गया।

'भारतीय पौरुषके महायज्ञके पुरोधा
श्रद्धेय शास्त्रीजी,

आजके दिन आपके शुभ जन्मदिवसके अवसरपर मैं साहू-जैन प्रतिष्ठानके द्वारा किया गया एक विनम्र संकल्प आपकी सेवामें अर्पित करती हूँ। संकल्प यह है कि भारत-पाकिस्तान युद्धमें वीरगति पाये हुए वीरोंके बच्चोंमें-से किन्हीं ५० बच्चोंकी शिक्षा-दीक्षाका भार साहू-जैन प्रतिष्ठान लेता है। यह प्रतिष्ठान इस कार्यपर औसतन ५,००० रुपये प्रतिमास तब तक व्यय करेगा जबतक ये बच्चे पढ़-लिखकर नयी पीढ़ीके सफल नागरिक बन जायेंगे।'

यह पत्र साहू-दम्पति श्री शान्तिप्रसाद जैन तथा श्रीमती रमा जैनकी ओरसे हमारे प्रधान मन्त्रीको भेजा गया। यह उन बच्चों और परिवारोंके लिए है जो नयी पीढ़ीके होनहार और तेजस्वी नागरिक बनेंगे।

इधर महाभारतकी शाम रातमें बदलती जाती है और उधर ओजस्वी स्वर लेकर नये भारतकी सुबह नज़दीक आती जाती है।

(सा० सं० वि०)

ALL PURPOSE
STEELS
Such as
HIGH CARBON STEELS, HIGH SPEED STEELS, STAINLESS STEELS, NON SHRINKING, OIL HARDENING, DIE STEELS, NICKEL STEELS, BRIGHT SHATING, ETC., ETC.,
Extensive Stocks Available
D. A. MEHRA
STEELS SPECIALISTS AND IMPORTERS
89, Netaji Subhas Road, Calcutta-1.
Phone { 22 : 0781 / 22 : 0782
Gram : "DAMEHRA"
WE ALSO MAKE SPRINGS TO REQUIRED SPECIFICATIONS

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With Compliments
from

Card Board & Paper Products Co.,
44, Lockgate Road,
Cossipore,
CALCUTTA-2

Phone : 56-2833

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Phone : OFF. 22–5838
22–5839
22–7175

With the best Compliments of :

The Central Trading Company,

137, Canning Street,

CALCUTTA–1.

Sole Distributors for :

'RIV' BEARINGS Throughout India.

Other Agencies handled by us :—

	Products.	Make	Territory.
1.	Diesel Injection Equipment and Spare Parts.	'FERA' ITALY.	Throughout India.
2.	Espresso Coffee Machines and Mills.	'LA-CARIMALI' ITALY.	–do–
3.	Surface Grinders.	'CAMUI' ITALY	–do–
4.	'Sampre' Textile Accessories.	'ROBERTS' ITALY.	–do–
5.	Textile Machines.	'SANT ANDERA' ITALY.	–do–

Sales & Show Room :

7 F, Clive Row, Calcutta–1.

154, Narayan Dhuru St. BOMBAY. **3A, Asaf ali Rd.** NEW DELHI **36B, Mount Rd,** MADRAS

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

० जैनेन्द्र कुमार
० हरिशंकर परसाई
० क० ला० मिश्र प्रभाकर

युद्ध-चिन्तन

युद्धके दिनों ज्ञानोदयके लिए जितने पत्र आये सब ही एक स्वरके थे कि यह युद्ध कुछ करने नहीं दे रहा है, इस युद्धसे कटकर कुछ लिखना और सोचना भी असम्भव लगता है। सच ही इस इतने नज़दीकके अपने युद्धने सारे दर्शन-चिन्तनको झकझोरकर रख दिया है। 'युद्ध-विशेषांक' की घोषणाके मूलमें यही भावना थी—वर्तमानके इस चिन्तनको ज़मीन दी जाये और उस परिप्रेक्ष्यमें राष्ट्रीयता और साहित्यकी धारापर तैरते संघर्षरत देशकी नयी तसवीरको देखा जाये। ज्ञानोदयकी ओरसे दसों दिशाके प्रश्न गये थे, प्रश्न कि युद्धका समग्र विवेचन एकजुट हो सके। प्राप्त अनेक उत्तरोंमें-से कुछ विश्लेषण यहाँ प्रस्तुत हैं। जैनेन्द्रजीने युद्धके दर्शन-पक्षका उद्घाटन किया है और परसाईजीने सामाजिक दायित्वकी बात कही है। प्रभाकरजीने देशकी नीतिपर प्रकाश डाला है।....

—सम्पादक

युद्ध, नीति और साहित्य :

२६ अगस्तको प्रमाणित हो गया कि हजारों सशस्त्र लोग पाकिस्तानकी तरफ़से कश्मीरमें हिन्दुस्तानकी तरफ़ दाखिल हुए हैं। वे इसलिए आये हैं कि तोड़-फोड़ करें और कश्मीरकी हुकूमतका तख्ता पलट दें। यह सरासर हमला था, चाहे आनेवालोंकी पोशाक साफ़ सीधी सिपाहीकी नहीं थी, बल्कि कुछ लोग तो बुर्का ओढ़कर आये थे। छानी हमला था लेकिन खुली वीरताका नहीं था, लबादाढँकी कायरताका था। जिससे पीछे झूठके सहारे सचसे इनकार किया जा सके।

प्रश्न भारत सरकारके सामने हुआ कि क्या करे? पाकिस्तानकी नीयत साफ़ थी, अगर भाषा साफ़ नहीं भी थी। इरादा उसका युद्ध करने और इस तरह भारतसे युद्ध माँग लेनेका था। शायद उसे अपनी ताक़तका ग़लत गुमान था। अब क्या भारत सरकार जो माँग रहा है उसे युद्ध देनेसे बचे? यह बचना दो ही कारणोंसे हो सकता था—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या तो भारत सरकार कायर बने, नहीं तो अनुदार बने। कायर सरकार थी नहीं, हो नहीं सकती थी। और अनुदार होना भी भारतकी परम्पराके अनुकूल न होता। हमला अगर था तो उसका जवाब आतिथ्यके नाते होना ही चाहिए था।

अब, सरकार आदर्शके प्रयोगके लिए बनी संस्था नहीं होती। शस्त्र और सेना उसके पास हुआ ही करती है। इसलिए मुक़ाबलेमें इधरसे भी शस्त्रसेनाका उपयोग हो तो यह सरकारके स्वधर्मकी दृष्टिसे आवश्यक और अनिवार्य है।

फिर भी जो प्रश्न होता है वह इस बहाने कि भारत गान्धीका देश है। भारतने बाहर जाकर हमेशा शान्तिका नारा दिया है और सदा दुहराया है कि युद्धसे और हिंसासे कोई समस्या हल नहीं होती। गान्धीने इस देशमें अहिंसाका प्रयोग करके बताया था। यहाँ-तक कि उस गान्धीने दावा किया था कि किसी भी हमलेका मुक़ाबला शस्त्रके बिना आत्मबलसे किया जा सकता है। भारत सरकार उस गान्धीके दावेसे अपनेको बिलकुल अछूती नहीं मान सकती। जो काँग्रेस भारत-का शासन चला रही है, उसने गान्धीकी नीति और नेतृत्वमें भारतकी स्वतन्त्रताका युद्ध लड़ा था और स्वतन्त्रता जीती थी। बादमें भी उसने उस नीतिको कभी त्यागा नहीं है। इतनी बड़ी लड़ाई और इतनी बड़ी जीत बिना अस्त्र-शस्त्रके सिर्फ़ आत्म-बलिदान-के बलपर सम्पन्न हुई हो—ऐसी घटना इतिहासमें कभी या किसी देशमें कहीं नहीं हुई। इसलिए भारतको नापनेका एक अलग ही पैमाना दुनियाके मनमें बन गया था। अपने ख़ुदको उस पैमानेसे नापनेकी बात किसीको नहीं सूझती थीं। सिर्फ़ भारतपर ही वह आयद किया जाता था।

यह सच है कि उस मापपर भारत सही और सफल नहीं हो सका। पर यह अन्याय है अगर एक भारत सरकारको ही उस नापसे नापा जाता और उस अपेक्षासे देखा जाता है।

इसमें सन्देह नहीं कि अणु-शस्त्र बन जानेपर आगे-पीछे निःशस्त्रीकरणको आना ही होगा। देशों और राष्ट्रोंको अपने बीचमें-से इस अर्थमें शस्त्र-श्रद्धा और शस्त्र-शक्तिको उठा देना होगा कि संकट उपस्थित होनेपर यदि निर्णय हो तो शस्त्रास्त्रके हाथों ही वह निर्णय हो पाये। कोई-न-कोई पद्धति दुनिया-को ऐसी निकालनी होगी कि जिससे विवाद जब भी पैदा हों तो बिना शस्त्रोपयोगके उन्हें निपटाया जा सके। अभी तो विज्ञान जो तरक़्क़ी कर रहा है वह भय और संशयके हाथमें पड़कर मानवजातिकी संहारक शक्तिको ही बढ़ावा दे रहा है। यदि विज्ञानको हारना नहीं है, और मानवजातिको भी समाप्त नहीं हो जाना है, तो मानव-चेतनाको आपसी भय और अविश्वासकी बाधाओंको पारकर संहारक-से मुड़कर रचनात्मक दिशाको अपनाना होगा। मानव सभ्यताको यह मोड़ कब कैसे मिलेगा, इस बारेमें कोई स्पष्ट कल्पना इस समय नहीं हो सकती है। पर इतना निश्चित है कि जब-तक सब देश सामनेवालेसे अपेक्षा रखेंगे कि शस्त्र पहले वह छोड़े, और इस तरहकी शर्तके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिना कोई भी देश अगर पहले कदमको तैयार नहीं होगा, तो निःशस्त्रीकरणकी सम्भावना टलती ही जायेगी। अन्तमें नये युगके उदय और आरम्भकी दृष्टिसे किसी एक देशको श्रद्धाके बलपर उठना और शस्त्रके भरोसेका ज्ञान-बूझकर विसर्जन कर देना होगा। निश्चय ही वह देश ऐसा करके घाटेमें नहीं रहनेवाला है। आज भी शक्ति-संतुलन ऐसा घना और विकट बना हुआ है कि छुट-पुट संघर्ष किन्हीं दो देशोंमें हो भी जाये तो वह बड़े विस्फोटका रूप नहीं ले सकता है। दुनिया ऐसा घटित होने ही नहीं दे सकती। इसलिए सिर्फ़ आत्मबलिदानका संबल लेकर सर्वथा निःशस्त्र हो जानेवाला देश उलटे दुनियाका नेतृत्व कर निकलेगा। सभ्यताके नये प्रभातका वह देश उद्योता होगा। भावी इतिहासमें वह नये मोड़का सूत्रधार कहलायेगा।

और यह आशा भारत देशसे थी। आशा वह अब भी है। पाकिस्तानके साथ जो उसका यह शस्त्रास्त्रका अघोषित युद्ध हुआ है और जो अब एक विरामपर आ टिका है, उससे भी यह आशा समाप्त नहीं हो जाती है। कारण, भारतने युद्ध किया है, लेकिन उस युद्धको अपनी ओरसे दृढ़ताके साथ बचावकी आवश्यकता तक सीमित रखा है। हर उत्तेजनके बावजूद विरोधी-देशके नागरिकोंपर उसने आँच नहीं आने दी है। युद्धमें भी संयम और मर्यादाका उसने पालन किया है।

प्रश्न जो परेशान करता है वह यह कि क्या शान्ति और युद्धमें कोई समन्वय हो सकता है? भारत उधर शान्तिका प्रण रखता है,

मिडिल ईस्टकी युद्ध-नीति

एशियाके जिस क्षेत्रको मध्य-पूर्व कहते हैं, वहाँ राजनीतिमें विचित्र-विचित्र घटनाएँ सदासे होती रही हैं। पास-पड़ोसकी सल्तनतोंका युद्धमें उलझ जाना उतना ही आसान होता है जितना किन्हीं दो व्यक्तियोंका आपसमें गुत्थमगुत्था हो जाना।

एक बार ऐसा हुआ कि एक बिच्छू-को ज़रूरत पड़ गयी कि वह नील नदीके दूसरे किनारे जाये। किश्ती वग़ैरह कोई वहाँ थी नहीं, मगर किनारेपर एक ऊँट खड़ा था जिसे देखते ही बिच्छूने सलाम किया और कहा – "दोस्त, नदीके उस पार पहुँचा दो।" ऊँट बोला – "पहुँचा तो दूँ, मगर इस बातका क्या यक़ीन कि तुम मुझे बीच नदीमें ही डंक न मार दोगे?" बिच्छू बोला – "कैसी बात कहते हो, यार! अगर तुम्हें डंक मारूँगा तो तुम डूब जाओगे, और साथमें मैं भी। इसलिए बेफ़िक्र रहो, चलो।"

ऊँटने अपना कूबड़ नीचे कर दिया। बीच नदीमें जो पहुँचे तो, सचमुच, बिच्छूने डंक मार दिया। ऊँट डूबने लगा और दर्दसे कराहता हुआ बोला – "दोस्त, तुमने यह क्या किया?"

बिच्छू भी डुबकी लेता हुआ बोला – "कोई बात नहीं, अँगरेज़ लोग हमारे मुल्कको 'मिडिल' ईस्ट कहते हैं। यहाँ राजनीतिका जो खेल ज़मीनपर चलता है, वह अगर पानीके बीचो-बीच भी हो गया तो, मुज़ायका!" – *श्रा० सं० वि०*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इधर युद्ध भी ठानता है। क्या यह वाग्जाल नहीं है ? क्या यह थोथी और झूठी ही बात नहीं हो जाती है ? क्या यह कपट नहीं है ?

हाँ, आजकी स्थितिमें यह झूठ और कपट-की चाल नहीं है। शान्ति किसी निष्क्रिय स्थिति या तत्त्वका नाम नहीं है। सिर्फ़ निषेधमें से कभी शान्ति फलित नहीं हुई, न हो सकती है। युद्ध अगर है तो सिर्फ़ उसको पीठ देकर अलग जा खड़े होनेमें-से शान्ति नहीं बन जायेगी। परिस्थितिमें शान्ति नहीं आयेगी और मैं कहता हूँ कि ऐसे मनःस्थितिमें भी शान्ति नहीं आ पायेगी। युद्धसे शान्तिको पहले निबटना और इस तरह अपनेको उपलब्ध करना होगा। अपनी ओरसे शान्त-युद्ध उसे ठानना होगा, जिसको निर्वैर युद्ध कह सकते हैं। उस ढंगके युद्ध-द्वारा बर्बर और वैर-विद्वेषके युद्धको पहले परास्त करना होगा। सर्वथा जो निर्वैर हो वह फिर सशस्त्र भी नहीं हो सकेगा, यह शायद ठीक है। उसमें हत्या नहीं की जायेगी, सिर्फ़ आत्म-बलिदान दिया जायेगा। किन्तु फिर भी जबतक अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमें उस सर्वथा निर्वैर और अहिंसक युद्धका शिल्प और शिल्पकार जन्म नहीं पाता है, तबतक युद्धके दो पक्षोंमें अवश्य एक हो सकता है जो क्रोध और वैरसे काम न ले, ठण्डे चित्तसे संयत और मर्यादित रहकर काम करे। वृथा संहारसे जो बचे और नाश यदि करना ही पड़े तो उसे युद्धोपकरणों तक या वैसे उपकरण बन गये हुए जनों तक ही सीमित रखे।

इतिहासमें एक विचित्र विरोधाभास देखने-में आता है। उसको समझनेकी आवश्यकता है। प्रेम और शान्ति और सत्यके जितने अवतार हुए उनका अधिकांश जीवन युद्धमें गया। रामसे रामायण बनी, जो युद्धगाथा है और धर्मग्रन्थ है। कृष्णसे महाभारतका निर्माण हुआ, जिससे बड़ा न कोई अबतक भारतमें युद्ध हुआ है, न जिससे बड़ा कोई धर्मशास्त्र ही हो सकता है। ईसाई धर्मके अवतार जीसस ख्रीस्त हुए जिनको रोमन साम्राज्यके लिए क्रॉसपर कीलित करना ज़रूरी हो गया। क्या वैसा अवसर बन सकता था अगर उनके व्यक्तित्वके कारण रोमन साम्राज्यके अस्तित्व-को ही चुनौती न मिली होती। मोहम्मद साहबकी उम्र नबीयतके बाद लड़ते-लड़ते ही ही बीती। उनके मज़हबका नाम ही है इस्लाम अर्थात् शान्ति। हालके महात्मा गान्धीका जीवन जेलोंमें ही ज़्यादातर कटा और अन्तमें बन्दूक-की गोलीसे उनका निर्वाण हुआ। क्यों होता है कि शान्तिके आदमीको युद्धमें-से गुज़रना होता है ? अध्ययनका विषय यह हो सकता है किन्तु तमाम इतिहासकी यह एक उत्कट वास्तविकता है।

युद्ध जैसे कसौटी है धर्मकी। हर सत्य, हर प्रेम और हर शान्तिको जैसे इस परीक्षणकी आगमें-से परखा जायेगा। करनेका क्षेत्र कुरु-क्षेत्र है। कुरुक्षेत्र, देखते हैं कि, युद्धक्षेत्र बन हो जाता है। फिर उससे अलग धर्मक्षेत्र भी दूसरा नहीं रह जाता है। परम धर्मग्रन्थ महाभारतका सारसत्त्व है गीता। गीताका उपदेश किसी निभृत एकान्तमें नहीं किया गया है। किसी संसार-विमुख आत्म-जिज्ञासु वैराग्य-साधक मुमुक्षके प्रति गीताका व्याख्यान नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। सामने कौरवोंकी सेना युद्धोद्यत खड़ी हुई है, पीठपर पाण्डवोंका सन्नद्ध सैन्य है। युद्धकी भेरी बजने ही वाली है। बीचमें अर्जुन हैं और सारथी कृष्ण। अर्जुनका गाण्डीव गिर जाता है, वह स्वयं प्रश्नसे घिर जाते हैं। सामने कर्मकी चुनौती है, किन्तु उसी समय कर्मकी घोरताकी उन्हें पहचान होती है। कर्म-में तो हिंसा है, संहार है। उस कर्मसे पराङ्-मुख होकर जैसे अर्जुनको अकर्मक विरागकी चाह हो आती है। तब कृष्ण इस कर्म और अकर्मकी गुत्थीको अर्जुनके समक्ष खोलते हैं और जो अर्जुन पराङ्मुख हो रहा था वही गीताको सुनकर सम्मुख और प्रवृत्त हो जाता है। ठीक युद्धके मध्य सुनायी गयी गीता इस तरह मोक्षको मानो संसारमें ही प्रत्यक्ष बना देती है।

उस तमाम गीतामें शत्रुकी कहीं निन्दा नहीं है। क्रोध और आवेश नहीं उभारा गया है। सामने युद्ध है और प्रचण्ड कर्मकी चुनौती है। समझा जा सकता है कि उसके लिए रोष और आवेशकी आवश्यकता होगी। किन्तु गीतामें स्थितप्रज्ञता बतायी जाती है जिसमें किसी आवेशके लिए अवकाश नहीं है। जहाँ कर्तृत्व तकका अभिमान नहीं है। जहाँसे स्वयं शूरवीरता नीचे रह जाती है। जहाँ अभिमान और दर्प पहुँच नहीं सकते। जहाँ व्यक्ति विराटके हेतुसे तद्गत हो जाता है, जहाँ जीवन और मरणमें कोई अन्तर नहीं रह जाता है। इसलिए जहाँ जीवनकी लालसा उसी तरह शान्त और समाहित हो जाती है, जैसे मृत्युका भय। अर्जुन इसी स्थितप्रज्ञतामें-से निकलकर कर्मिष्ठ बनता है और फिर स्वयं कृष्ण उसके रथकी बागडोर अपने हाथमें लेते और उसे सम्पन्नता और सार्थकता और मुक्तताकी दिशामें बढ़ाते ले जाते हैं।

तो ऐसे युद्ध धर्मयुद्ध हो जाता है। तत्कालकी राजनीतिके हेतुकी क्षुद्रतासे वह सांस्कृतिक और ऐतिहासिक अभिप्रायकी विराट-ताको निष्पन्न करनेवाला हो जाता है। इस रूपमें युद्ध निन्दनीय पक्ष रखते हुए भी वरणीय बन जा सकता है।

तिसपर युद्धका नक़शा अब बदल गया है युद्धके उपादानोंमें बहुत अन्तर आ गया है। पहले जो आमने-सामने होकर लड़ा जाता था सो वह अनिवार्यता अबके युद्धके लिए नहीं रह गयी है। विज्ञानने शस्त्रास्त्रका रूप बदल दिया है, उधर विज्ञानकी ही प्रगतिके कारण

अणु-युद्ध—बिना घबराहट

"अगर अणु-युद्ध शुरू हो गया तो तुम क्या करोगे?"

"मैं अपने-आपको चादरसे ढक लूँगा और धीरे-धीरे क़ब्रिस्तानकी तरफ़ चल पड़ूँगा।"

"मगर धीरे-धीरे क्यों?"

"इसलिए कि लोगोंमें भगदड़ न मच जाये।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

AMBADUTT & CO.

21, CANNING STREET.

CALCUTTA-1.

MERCHANTS AND COMMISSION AGENTS

Dealers in :

Twine and Convas

Stockists in Jute Twine and Bright Twine :

New Central, Gaurishanker, Magna, India, Andrewule Group and National etc.

Stockists in Jute Convas :

Megna, India Nadia, and Gourepore

—●—

Phone : 22-3137, 22-4287, 22-0989

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुनिया निकट और संगीन बन गयी है।

नतीजा यह कि युद्धमें अब सिपाही और क्षत्रिय ही नहीं लड़ते हैं, बल्कि हर नागरिकका उसमें योग होता है। युद्ध-जन्य परिस्थितिसे कोई भी अस्पृष्ट नहीं बचता। युद्ध टोटल बन गया है और उसका मोर्चा वहीं नहीं रह गया है जहाँ सिपाहियोंकी अगली सफ़ लड़ रही होती है, बल्कि उसका प्रधान मोर्चा कागज़ी हो गया है—कि जिस माध्यमसे कूटनीति अपना काम करती है और जिसके सहारे दिमाग़ आपसमें लड़ा करते हैं। जैसे कि अभी पाकिस्तानी युद्धके मामलेमें शस्त्रास्त्रके मोर्चेपर अपेक्षाकृत युद्धमें विराम है, किन्तु राजनयिक भूमिकापर यह युद्ध बेहद चेता और जागा हुआ है।

सच यह कि युद्धका वह रूप जो सहसा मनमें उठ खड़ा होता है, जो लहूसे लोहान है, और जहाँ चारों तरफ़ मारकाटके दृश्य ही दिखलाई देते हैं—आज युद्धका स्वरूप ठीक वही नहीं रह गया है। कहना चाहिए कि यह मार-काटवाला मोर्चा आजके युद्धका बहुत छोटा भाग होता है। इसलिए युद्धका कर्म और उस युद्धकी नीति ये दो लगभग अलग क्षेत्र और स्तर बन जाते हैं। प्रधानमन्त्रीके लिए शायद ही आवश्यक हो कि वह हाथमें तमंचा तक उठाये। वह मारकाटके मोर्चेपर उपस्थित भी शायद ही हो। लेकिन आजके युद्धमें सबसे अनीका मोर्चा उन्हींको सँभालना पड़ता है। वहाँका युद्ध शब्दोंसे लड़ा जाता है और इसी कारण वह कम नहीं बल्कि अधिक ही महत्त्वपूर्ण होता है।

तो तलवार और क़लम इन दोनोंका युद्धमें योग और उपयोग है। उपयोग तलवारका, योग क़लमका। जो क़लमके योगको उप-योग बनाते हैं वे न्याय नहीं करते हैं।

इस पद्धतिसे युद्धकी घटनाके सामरिक पहलूसे उसका नैतिक पहलू ऊपर आ जाता है। और यही पहलू है जहाँ साहित्यिक और साहित्यकी जगह ही नहीं है, बल्कि उसका और उसके सांस्कृतिक मनोभावका विशेष महत्त्व है।

हो सकता है कि तलवार लेकर लड़नेवाला ग़ुस्सेके नशेमें आकर ज़्यादा करतब दिखा जाये। वह बड़े बहादुरीके कारनामे बता सकता है और परमवीर चक्र भी पा सकता है। लेकिन एक जगह है जहाँ दिमाग़को ग़ुस्सेसे एकदम बरी और ठण्डा रखना लाज़मी होता है और युद्धके लिए वह मोर्चा बल्कि अधिक संगीन है। वहाँ युद्धके अन्तरंगकी, उसकी न्याय्यताकी, जाँच-परख रखी जाती है और युद्धकी आत्माके स्वास्थ्यकी नब्ज़पर नज़र रहती है। वहाँ मानो युद्धका कण्ट्रोल-केन्द्र होता और नीतिका नियमन-संचालन होता है।

युद्धमें दोनों ही चीज़ें होती हैं। शूरता भी होती है, क्रूरता भी होती है। क्रूरताके लिए कभी साहित्य अथवा साहित्यिकमें भर्त्सनाका भाव जागे बिना नहीं रह सकता है। शूरताके बानेमें जब क्रूरताको भी साहित्य या साहित्यकारसे प्रशंसा मिलने लग जाती है तो साहित्य-कर्मका उससे अपलाप होता है। सदा सर्वदा क्रूरताको साहित्यकी ओरसे घृणा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Bengal Stationery Stores

Exporters, Importers and Paper Merchants

10, Jackson Lane, Calcutta-1

Gram : CREAMLAND

Stockist of :

THE TITAGHUR PAPER MILLS CO., LTD.
BENGAL PAPER MILLS CO., LTD.
ROHTAS INDUSTRIES LTD.
ORIENT PAPER MILLS LTD.
SIRPUR PAPER MILLS LTD.
SHREE GOPAL PAPER MILLS LTD.

Phone : 220801
220802

Sole Distributors of :

M. G. PAPERS FOR THE STATE OF W. BENGAL FOR STAR PAPER MILLS LTD.

Dealers in :

ALL KINDS OR INDIAN & FOREIGN PAPER & BOARDS

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और गर्हणा ही मिलनी चाहिए। पर शूरताकी प्रशंसाके बिना भी साहित्य नहीं रह सकता। किसी सिद्धान्तके अथवा आदर्शके वादमें अगर क्रौर्यकी प्रशंसासे साहित्यकर्ता अपनेको वंचित कर लेता है तो मानना चाहिए कि उसके मानवीय संवेदन और अभिरुचिमें कहीं कुछ गड़बड़ आ गयी है। इस शूरता और क्रूरता-को अलग-अलग करके पहचानना और बता-लाना साहित्यके लिए बेहद आवश्यक होता है। नहीं तो साहित्य राजनीतिके अधीन चारणका काम करनेवाला रह जाता है। राजनीतिके मार्ग-दर्शनकी क्षमता उसमें नहीं रहती।

आर्ष अनुभवकी वाणी है कि सत्य ही जीतता है। आम तौरपर समझा यह जाता है कि जीतता शस्त्र है। किन्तु इतिहासने बताया कि शस्त्र अधिक कौरवके पास था, संख्या भी अधिक थी। किन्तु जीत पाण्डवकी हुई। अभी हालमें भी शस्त्र पाकिस्तानके पास बढ़-चढ़कर था, पर जीत जो-जितनी हुई उसकी नहीं हुई। अर्थात् सत्यके साथ होनेसे अन्दरसे साहस और संकल्प जग आता है। ये मानवीय तत्त्व ठोस मशीनी धातुसे आवश्यक रूपसे प्रबल सिद्ध होते हैं। सत्य जीतता है, क्योंकि सत्य मानवको अविजेय बना देता है। फिर उसमें भय नहीं रहता, न लालसा रहती है, न ममता हो पाती है। सब कुछ जैसे दृष्टिका सन्दर्भ पाकर महान् और समान बन आता है। जीवन-मरणमें अन्तर नहीं रह जाता। सब आहुतिके अर्घ्यकी भाँति निर्मल और पावन हो आता है।

यह श्रद्धा कि विजय सत्यकी होती है, इसलिए युद्धकी नीतिको सत्यसे और मानवकी सार्थकतासे विचलित नहीं होने देना है, उसमें पुष्ट और प्रबुद्ध बनी रहनी चाहिए जिसको युद्धमें तलवारसे ज़्यादे क़लमका मोर्चा सँभा-लना है। क़लमको तलवार बनाकर चलाना साहित्यके दायित्वसे गिर जाना है। तलवार वार वहाँ नहीं कर पाती कि जहाँ चाहिए। जहाँ युद्धकी प्रेरणा है, जहाँसे युद्धका जन्म है वहाँकी पराजय असली पराजय है। योद्धा गिरते-मरते हैं फिर दूसरे उनकी जगह आकर ले लेते हैं। किन्तु जहाँसे युद्धको चालना मिलती है वहाँ हो संशय पैठ जाता है, या अपनी आधार-स्थितिका अनौचित्य और दौर्बल्य पता लग जाता है तो फिर उस बलकी रीढ़ ही टूट जाती है। इसीलिए प्रश्न हमेशा युद्ध सैनिकोंके नीति-धैर्यका, उनके मनोबलका, 'मोरॅलका'का प्रमुख बना रहता है। मनुष्यका अन्तःकरण स्वस्थ और सबल है तो उसका हृदय, उसका मस्तिष्क, उसका शरीर, उसके हाथ और हाथके उसके अस्त्र—सब सही काम करते हैं। अगर अन्तःकरणमें कहींसे संशय या भय घुल जाता है तो शस्त्र बेकार इसलिए हो जाते हैं कि हाथ ढीले पड़ जाते हैं। और हाथ इसलिए ढीले पड़ते हैं कि मन डगमग हो जाता है। इसलिए शस्त्रोंके पीछे जो लड़ रहा होता है, वह मनुष्यका मानसिक बल होता है और वह बल सदा सत्य, न्याय और नीतिपर निर्भर करता है।

अतः युद्धको घोर संसार-कर्म बताकर उससे किसी माने हुए अध्यात्म अथवा आदर्श

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा शान्ति अथवा नैतिकताको दूर सुरक्षित एकान्तमें रखनेसे मैं नहीं मानता कि जीवनकी कृतार्थता अथवा पूर्णता सिद्ध हो सकती है। जगत् कर्मके घमासानमें-से मानवात्माको निकलना और उस आगमें-से जलकर उजलना होगा। अन्यथा जीवन-सिद्धि और आत्मोपलब्धिका दूसरा उपाय नहीं है। और जीवनकी समग्रता और सम्पूर्णताके प्रति अपनेको दायी माननेवाले साहित्यके अवदानकी भूमिका भी ठीक यही हो सकती है।

—जैनेन्द्र कुमार

भीतरी मोर्चापर--ख़तरनाक इशारे

युद्धोत्साह और युद्धोन्मादमें फ़र्क़ है। युद्धोन्माद आदमीको पशु बनाता है। चीनी हमलेकी उत्तेजनाके बीच भी पण्डित नेहरूने ज़ोर देकर कहा था कि किसी भी हालतमें हम पशु नहीं बनेंगे। अपनी दीर्घ सांस्कृतिक परम्पराओंके कारण तथा स्वतन्त्र राष्ट्रके रूपमें पिछले १८ वर्षोंके लोकतान्त्रिक संस्कारोंके कारण हमारा उत्साह उन्माद नहीं बना। पाकिस्तानने अठारह वर्षोंमें लगातार युद्धोन्माद बढ़ाया है और अपने लोगोंको पशु बनानेकी कोशिश की है। उसका योद्धा अस्पतालपर बम गिरा देता है, हमारा योद्धा ऐसा नहीं करता। एक बार युद्धोन्माद पैदा करनेके बाद चौतरफ़ा नफ़रत पैदा किये बिना शासन-सत्ता क़ायम नहीं रह सकती। चीनी, हिन्देशियाई और पाकिस्तानके शासक आत्म-रक्षाके लिए भी उन्माद और नफ़रतपर निर्भर हैं।

अपने देशमें भी युद्धोत्साहको युद्धोन्माद बनानेकी कोशिश बराबर हो रही है। जाने-अनजाने, बुद्धिजीवी-वर्गका एक हिस्सा भी इसमें योग दे रहा है। देशभक्तका अविचारी और अविवेकी होना ज़रूरी नहीं है। मगर बहुत लोग ऐसे हैं जो शुद्ध देशभक्तिमें विचार और विवेककी मिलावट नहीं होने देते। बहुत-से कवि और लेखक हैं, जो अन्धोन्मादको ही देशभक्ति समझने लगे हैं। जनताकी ऐसी मनःस्थिति ख़तरनाक होती है। उसके मानसपर आक्रामक संकीर्ण राष्ट्रीयता और क़ब्ज़ा कर लेगी और असाम्प्रदायिक लोकतन्त्रको समाप्त करनेकी कोशिश भी हो सकती है। उभारपर आया उन्माद हमें 'फ़ासिज़्म' के चंगुलमें भी फँसा सकता है।

पाकिस्तानसे हुई लड़ाईमें सचमुच देशका पुनर्जन्म हुआ है। खोया आत्मविश्वास पुनः प्राप्त हो गया। दुनियाको भी यह समझमें आ गया कि हम लड़नेपर मजबूर किये जायें, तो अच्छा लड़ भी लेते हैं। हमारी नीतियोंकी परीक्षा भी हो गयी और वे सही सिद्ध हुईं। पर अखण्ड एकता, सौम्य साहस और विश्वास-मयी उदारता जो पिछले दिनों देखनेमें आयी—उसे विजयकी मनःस्थितिके सन्दर्भमें ही देखना चाहिए। लम्बी लड़ाईमें किसी मोर्चेपर हमारी हार भी हो सकती है हम कहीं पीछे भी हट सकते हैं। एकता, उत्साह और संयमकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परीक्षा ऐसे ही मौक़ेपर होती है। इस वक़्त तो जनता कोई गड़बड़ बरदाश्त करनेके 'मूड' में नहीं है मगर किसी आकस्मिक हारके क्षणमें भी क्या यही स्थिति रहेगी ?

नारोंकी दमपर चलनेसे काम नहीं होगा। जो अपनेको 'बुद्धिजीवी' कहते हैं, उन्हें ज़रा नारोंसे हटकर सोचना चाहिए। क्या एकता-को तोड़नेकी कोशिश नहीं हो रही है ? खूब हो रही है और संगठित ढंगसे हो रही है। रोज़ ये जो अफ़वाहें फैलती हैं, ये किसी ग़ैर-ज़िम्मेदार बेवक़ूफ़के दिमाग़की कल्पना नहीं हैं। ये अफ़वाहें किसी केन्द्रसे संचालित हो रही हैं और सब जगह एक साथ फैल रही हैं। एक ही अफ़वाह दिल्ली, आगरा, प्रयाग और जबलपुरमें सुनी जाती है। इन सारी अफ़वाहोंका उद्देश्य है साम्प्रदायिक उन्माद पैदा करना। इनका उद्देश्य है जनताके मनमें यह बात पक्की तरह जमाना कि धर्म और नस्ल ही राष्ट्रीयता तय करते हैं। जो भिन्न धर्मको मानते हैं वे राष्ट्रविरोधी हैं। इन अफ़वाहोंमें भारतके एक सम्मानित पदपर प्रतिष्ठित अल्पसंख्यक वर्गके व्यक्तिको देशद्रोही बताया जाता है। उनके पुत्र, भतीजे और दामादके नामसे अफ़वाहें फैलायी जाती हैं। इन अफ़वाहोंके मुताबिक़ उनके पाँच दामाद अभीतक पाकिस्तानकी जासूसी करते पकड़े जा चुके, दो भतीजे मारे जा चुके और लड़का तो पाकिस्तान जा ही चुका। ये बातें हर शहरमें फैली हैं और एक अफ़वाहके मुताबिक़ भारतके लगभग हर बड़े शहरमें जलाशयमें ज़हर डालनेकी कोशिश एक सम्प्रदायके लोग कर चुके हैं। इस अफ़वाहको आप प्रयागमें जबलपुरके वाटर-वर्क्सके बारेमें सुन लीजिए और जबलपुरमें पूनाके वाटर-वर्क्सके बारेमें। कला एक ही है—दो आदमी और एक औरत रातको तांगेवालेसे वाटर-वर्क्स ले चलनेके लिए कहने लगे। उन्होंने जब उसे २५ रुपये देनेके लिए कहा तो उसे शक हुआ क्योंकि वहाँका रेट २ या ३ रुपये ही है। वह उन्हें बिठाकर पुलिस-थाने ले गया। वहाँ तलाशीमें उनके पास दो सेर ज़हर मिला। हर शहरमें वे

एक गीदड़ : एक भेड़िया

चीनी भेड़ियेके बलपर कूदनेवाले पाकिस्तानी गीदड़को देखकर चर्चिलकी वह टिप्पणी याद आती है जो उसने मुसोलिनीके बारेमें दी थी :

'चाबुक मारकर खड़े किये गये इस गीदड़ (मुसोलिनी) ने अपनी ख़ाल बचानेके लिए इटलीको हिटलरके साम्राज्य-का ग़ुलाम बनाया है और अब जर्मन चीतेकी बग़लमें खड़ा होकर यह मुँह फाड़कर भों-भों कर रहा है जो केवल यही नहीं दिखाती कि इसे खुलकर भूख लगी है—क्योंकि यह बात तो समझमें आ सकती है—लेकिन आश्चर्य तो यह है कि इस भोंकमें जीतका-सा गर्व है।'

—क्षा० स० वि०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

PHONE : 22–8771
(5 Lines)

Please Contact :

The Bengal Paper Mill Co. Ltd.

MAKERS OF FINE QUALITY
"TIGER" BRAND PAPER

REGD. OFFICE :

14, Netaji Subhas Road,
CALCUTTA–1

MILL :

Raniganj : West Bengal

Why do you worry for **STEEL ?**

CONSULT US
FOR ALL YOUR STEEL REQUIREMENTS

GYAN TRADING CO.

Iron and Steel Merchants
and
General Order Suppliers

63, Sir Hariram Goenka Street,
CALCUTTA–7

Phone : OFFICE : 33–8794 :: RESIDENCE : 33–2761

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तांगेवालेको २५) ही दे रहे थे और हर शहर-में उन्हें तांगेवालेने पकड़वाया। यह एकरूपता यों ही उड़ी हुई अफ़वाहसे नहीं आती। यह किसी सुसंगठित और सुसंचालित एजेन्सीके द्वारा फैलायी जाती है। इसी एजेन्सीके द्वारा रोज़ वे अफ़वाहें भी फैलती हैं जिनके अनुसार एक सम्प्रदायका आदमी या औरत बम या हथगोला लिये पुल, बिजलीघर या रेलवे स्टेशनके पास पाया गया। यह भ्रम है कि इन अफ़वाहोंको कोई नहीं मानता। बहुत लोग मानते हैं। इनका असर भी पड़ता है। इनका खण्डन करने और जनमानसको शिक्षित करने जनताके बीच कोई नहीं जाते। सब प्रेस या मंचसे बात करते हैं और ताली पिटवाकर और नारे लगवाकर समझते हैं कि सब ठीक चल रहा है। कोई इस सत्यका सामना नहीं करना चाहता कि किसी पस्तीके क्षणमें ये चीज़ें सारे देशमें आग लगा देनेमें सफल हो सकती हैं।

भारत-पाक संघर्षको हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष बना देनेकी ये कोशिशें हैं। मुहम्मद करीम छागला और मीर क़ासिम अपना मामला राष्ट्रसंघमें लड़ते रहें, पाकिस्तानी हमलेका सामना गुलाम मुहम्मद सादिक़ करता रहे और अब्दुल हमीद 'परमवीर चक्र' पा जाये—पर ये भारतीय फ़ासिस्ट राष्ट्रीयताको धर्मसे अलग नहीं कर सकते। पाकिस्तान तो फ़ासिस्ट हो गया। वह इस्लामी फ़ासिज़्मका निर्माण करनेमें लगा ही हुआ है। कुछ मुस्लिम देश उसका साथ दे भी रहे हैं। इधर भारतका पाकिस्तानसे ज्यों-ज्यों संघर्ष तीव्र

> चाहे कितनी भी बड़ी दुनियावी-ताक़त क्यों न हों, उसके सामने दृढ़ता-पूर्वक घुटने न टेकनेसे बढ़कर कोई बहादुरी नहीं हो सकती। इसमें प्रति-शोधकी भावना नहीं होनी चाहिए और यह पक्की धारणा होनी चाहिए कि आत्माको छोड़कर और कोई चीज़ अमर नहीं है।
>
> —जवाहरलाल नेहरू

होता है त्यों-त्यों भारतमें फ़ासिस्ट ताक़तें बढ़ती हैं और जनतामें अपनी जगह भी बनाती जाती हैं। आगे चलकर पाकिस्तानकी और अपने इधरकी फ़ासिस्ट ताक़तें एक भी हो सकती हैं और देशकी सारी प्रजातान्त्रिक संस्थाओंको समाप्त कर सकती हैं। लोकतन्त्रके लिए यह एक बड़ा खतरा पैदा हो रहा है।

इस लड़ाईमें एक बात और ध्यान देनेकी है। कुछ लोग सेनाध्यक्षोंकी जय बोल रहे हैं और मन्त्रिमण्डलको नीचे गिरा रहे हैं। प्रचार किया जा रहा है कि सेनाके जनरलोंके दबाव और नेतृत्वके कारण ही हमारी सेनाने पाकिस्तानको मात दी। वरना इस सरकारमें तो दम ही नहीं थी। इस तरह यह बताया जा रहा है कि राजनैतिक निर्णय भी जनरल ले रहे हैं और लोकतन्त्री सरकार निकम्मी है। सेनाके प्रति आदर और कृतज्ञता होते हुए भी यह प्रचार बहुत खतरनाक है। प्रजातन्त्रमें सेना निर्वाचित सरकारके अधीन होती है। राष्ट्रपति सेनाओंके कमाण्डर-इन-चीफ़ हैं और वे मन्त्रिमण्डलकी सिफ़ारिशसे ही कार्य करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। मगर जनताके मनमें यह बात चतुराईसे भरी जा रही है कि प्रजातान्त्रिक शासन देशकी रक्षा करनेमें सक्षम नहीं है, वह हमेशा फ़ौजको लड़नेसे रोकता रहा। मगर इस बार फ़ौजने राजनैतिक निर्णय भी मन्त्रिमण्डलपर थोपा और देखो, कैसा अच्छा हुआ। पाकिस्तानकी करारी हार हुई, देशकी नाक ऊँची हुई। बहुत चतुराईसे सैन्यवादका प्रचार हो रहा है और प्रजातान्त्रिक सत्ताकी प्रतिमा खण्डित की जा रही है!

यह सब आकस्मिक नहीं है। इसके पीछे सुनियोजित षड्यन्त्र है। युद्धोन्माद पैदा करना और कहना कि हम लाहौर और रावलपिण्डीपर झण्डा गाड़कर रहेंगे, फिर जनमानसको फ़ासिस्ट रास्तेपर ले जाना और सेनाको लोकतान्त्रिक सत्ताके ऊपर बताना—ये अशुभ लक्षण हैं।

जो ऊपर-ऊपर रहते हैं, वे शायद इन चीज़ोंका सही अन्दाज़ नहीं लगा सकते। वे जन-जीवनके सच्चे सम्पर्कमें नहीं हैं। इनकी भयावहता वही समझते हैं जो जनताके सीधे सम्पर्कमें हैं। जो इन प्रवृत्तियोंकी अवहेलना करते हैं और मात्र देशभक्तिके नारों और गीतोंसे सन्तोष कर ले रहे हैं, वे धोखेमें जी रहे हैं।

सवाल है—क्या बुद्धिजीवी वर्ग इस तरफ़से सचेत नहीं है? अगर है, तो वह क्या कर रहा है? फ़ासिज़्मके पहले शिकार लेखक, कलाकार और बुद्धिवादी होते हैं—वह चाहे जर्मन फ़ासिज़्म हो या चीनी या पाकिस्तानी। क्या उन्हें आत्मरक्षाकी फ़िक्र नहीं है? मुझे लगता है, हममें-से बहुतेरे जन-जीवनके सही सम्पर्कमें न होनेके कारण इस चीज़को समझ ही नहीं पा रहे हैं। समझते भी हैं तो इसका सामना करनेकी ज़िम्मेदारी राजनीतिक लोगोंकी ही समझते हैं। शायद हम भी बहे जा रहे हैं। शायद हम लिखनेकी मेज़से उठकर सड़कपर आनेमें झिझकते हैं। हम जनताको सिर्फ़ प्रेरणा देनेका ही अपना काम समझते हैं उसे शिक्षित करनेकी कोई ज़िम्मेदारी महसूस नहीं करते। हम अभी भी किसी 'भीतरी' युद्धमें उलझे रहनेका ढोंग कर रहे हैं और बाहर निकलनेमें हिचकते हैं। हममें-से कुछ के लिए अभी भी बाहर कुछ नहीं हो रहा है, सब अपने भीतर ही हो रहा है। अहंकारके घोंघेको तोड़कर बाहर निकलकर जनतासे एकाकार होनेमें हमें अभी झेंप लगती है। सबसे चेतनासम्पन्न हमारे इस वर्गकी इस बेख़बरीको माफ़ नहीं किया जायेगा।

मोर्चोंपर हमारी जीत हो रही है। एक आत्म-सम्मानपूर्ण ताक़तवर राष्ट्रके रूपमें हमारी प्रतिष्ठा बनी है। हममें विश्वास भी बहुत पैदा हुआ है। लेकिन हमारी विजयको हारमें परिणत कर देनेवाली ताक़तें भी देशके भीतर सक्रिय हैं। वे हमारी सारी उपलब्धियोंको नष्ट कर देना चाहती हैं। इस भीतरी मोर्चेपर ध्यान देना भी ज़रूरी है।

—हरिशंकर परसाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतके चर्चिल श्री लालबहादुर

चर्चिल थे चैम्बरलैनके उत्तराधिकारी और लालबहादुरजी हैं जवाहरलालके उत्तराधिकारी।

चैम्बरलैन भी सरल विश्वासी मनुष्य थे और जवाहरलाल भी बेहद विश्वासी।

विश्वसनीय आदमी दूसरोंका भी विश्वास करता है। चैम्बरलैन और जवाहरलाल विश्वसनीय थे और दूसरोंका विश्वास करते थे।

चैम्बरलैनके भी विश्वासका शोषण हुआ और जवाहरलालके भी। इस विश्वासघातसे चैम्बरलैनने अपना पद खोया और जवाहरलालने प्राण ही दे दिये।

चैम्बरलैनके समय उनके देशकी प्रतिष्ठाका ढाँचा बेलजियम, नार्वे, स्वीडनपर हिटलरी क़ब्ज़ा होनेसे चरमरा गया था और जवाहरलालके समय चीनी क़ब्ज़े और चीनी आक्रमणसे एवं पाकिस्तानी क़ब्ज़े और पाकिस्तानी छेड़-छाड़से देशकी प्रतिष्ठाका ढाँचा चरमरा गया था।

चर्चिलने उस चरमराये ढाँचेको सँभालनेमें अपने व्यक्तित्वके दबाव और अपनी निर्णय-शक्तिके प्रभावसे सफलता प्राप्त की थी और लालबहादुरजीने भी सफलता प्राप्त की है।

इस भेदके साथ कि प्रधानमन्त्री बननेसे पहले ही चर्चिलके व्यक्तित्वकी बलिष्ठता जगजाहिर हो चुकी थी, पर लालबहादुरजीके व्यक्तित्वका बल युद्ध-नेतृत्वके बाद ही दुनियाने ठीक-ठीक जाना-पहचाना।

इस तरह चर्चिलका मार्ग सुगम था, लालबहादुरजीका दुर्गम और इस दुर्गम मार्गपर सफलतापूर्वक अभियान करके ही लालबहादुरजी भारतके चर्चिल हो गये।

क्या उनके व्यक्तित्वकी विशिष्टता यह है कि वे सफल हुए? यदि हाँ, तो वह विशिष्टता बहुत छोटी है; क्योंकि सफलता जीवनकी कोई बड़ी कसौटी नहीं है—वह एक चान्स है, एक भाग्य है। बच्चा सक्का एक बार होहल्लेमें अमीर अमानुल्लाह ख़ान-जैसे सुयोग्य बादशाहको पदच्युत कर स्वयं अफ़ग़ानिस्तानका बादशाह हो गया था, तो क्या वह विशिष्ट था? लालबहादुरजीके व्यक्तित्वकी विशिष्टता है उस निर्णयमें, जो उन्होंने लिया और उस तरीक़ेमें, जिससे वह निर्णय लिया।

लालबहादुरजीके व्यक्तित्वकी विशिष्टता युद्ध-विराम होनेके बाद दिल्लीके रामलीला-मैदानमें ठठाठट्ट भीड़के सामने ४५ मिनट तक की गयी गर्जनामें नहीं है, वह है अपने ड्राइंग रूममें सिर्फ़ तीन आदमियोंके सामने कहे हुए सिर्फ़ तीन शब्दोंमें।

५ अगस्त १९६५ को घुसपैठियोंने पाकिस्तानसे उमड़कर हमारे कश्मीरमें प्रवेश किया, पाकिस्तानी डिक्टेटर अयूबकी इस योजनाके साथ कि १५ अगस्त तक कश्मीरपर पाकिस्तानका झण्डा शर्तिया फहराने लगेगा। योजनाका भण्डाफोड़ हो गया और कश्मीर-सरकारकी पुलिस और भारत-सरकारकी सुरक्षा सेनाने घुसपैठिये सैनिकोंका सफ़ाया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

FOR BRIGHT & CLEARCUT IMRESSIONS

USE

Carbon Paper & Ribbons

"TYPIX"

Quality BCR Products

Manufactured by :

Bharat Carbon & Ribbon Mfg. Co. Ltd.

BOMBAY ★ CALCUTTA ★ MADRAS

NEW DELHI & FARIDABAD

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिवाली का अभिनन्दन

किशोरीलाल गोयनका

जूट मर्चेन्ट्स और कमीशन एजेन्ट्स

१३५, बिप्लवी राशबिहारी बोस रोड,

कलकत्ता–१

फ़ोन : कार्यालय : २२-१२७१

निवास : ४६-२३७०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मशीनों से
तेल
अधिक सस्ता

ल्युब्रिकेशन
की
समस्याओं
या
आवश्यकताओं
के लिए
मिलें

- शूगर फैक्ट्रीज़
- सीमेन्ट फैक्ट्रीज़
- कॉटन मिल्स
- जूट मिल्स
- पेपर मिल्स
- स्टील वर्क्स
- कोल माइन्स
- पावर स्टेशन्स
- ट्रैक्टर्स
- मोटर गाड़ी के प्रत्येक पार्ट्स

VEEDOL
OILS & GREASES

टाइड वॉटर ऑयल कं० इंडिया लि०

कलकत्ता : बम्बई : मद्रास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Universal Fire & General Insurance Company Limited

Phone : 252227

TRANSACTS :

FIRE, MOTOR, MARINE, PERSONAL ACCIDENT, FIDELITY GUARANTEE, BURGLARY AND ALL OTHER FORMS OF MISCELLANEOUS INSURANCE BUSINESS.

UNIVERSAL INSURANCE BUILDING,
SIR P. M. ROAD, BOMBAY-1.
Chairman & Managing Director :
P. U. PATEL, B.A., B.COM. (Lond.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और दूसरे भी यह यह साफ़-साफ़ जान लें कि हम धमकीके सामने झुकनेवाले नहीं हैं और अपनी आज़ादी तथा राष्ट्रीय अखण्डताकी रक्षाके लिए हमारा संकल्प और हौसला पक्का है।"

उनके युद्ध-नेतृत्वके कूट रूपकी अग्नि-परीक्षा हुई २३ सितम्बर १९६५ को सुबह ही सुबह, जब सुरक्षा परिषद्के सेक्रेटरी जनरल-ने सन्देश भेजा कि पाकिस्तानके युद्ध-विराम न माननेपर भी भारत युद्ध-विराम कर दे। यह हारे हुए अपने दोस्त पाकिस्तानको जीत-का हार पहनानेकी बड़ी धूर्ततापूर्ण अमरीका-की चाल थी, पर लालबहादुरजीने तीन शब्दोंमें इसका पत्ता काट दिया—"यह असम्भव है!"

हिरोशिमा और नागासाकीपर ऐटम बम पड़ते ही जापानका हौसला टूट गया था और लड़ाई तुरन्त खत्म हो गयी थी। लालबहादुर-जीके इस ऐटमसे पाकिस्तानका हौसला और अमरीकाका ढकोसला एक साथ टूट गया और लड़ाई खत्म हो गयी।

५ अगस्त १९६५ को लालबहादुरजी भारतके बस प्रधान मन्त्री थे, पर २३ सितम्बर १९६५ को वे संसारके राजनीतिज्ञोंमें स्वर्गीय प्रधान मन्त्री जवाहरलाल नेहरूकी तरह प्रति-ष्ठित हो गये—अपने चर्चिल-जैसे गुणोंके कारण, जिनमें सन्तुलन और साहस मुख्य हैं।

—कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

हमारे नैट बनाम तुम्हारे सैबरजेट :

"भारत-पाक युद्धमें हमारी वायु-सेना पाकि-स्तानी वायुसेनापर हावी रही—इसके दो कारण हो सकते हैं। पहला तो यह कि भारतीय वायुयान-चालकोंको इसमें अधिक निपुणता प्राप्त है, दूसरा कारण यह कि प्राय: सारे वायु-युद्ध कम ऊँचाईपर ही हुए हैं (२०००० फ़ुट या इससे कम ही ऊँचाईपर)।

पाकिस्तानके इस दावेके अनुसार कि भारतीय वायुसेनाको अत्यधिक हानि उठानी पड़ी है—यदि उनके सारे आँकड़ोंको जोड़ा जाये तो समस्त भारतीय वायु-सेना ही समाप्त हो जाती है।

पाकिस्तानका यह दावा भी ग़लत है कि भारतके पास जो ९ मिग थे वे इस युद्धमें नष्ट हो गये हैं। उन ९ में-से ८ तो हमारे एक विमान-अड्डेपर देखे जा सकते हैं।

पाकिस्तानके विरुद्ध लड़ते हुए हमने केवल तीन तरहके विमानोंका उपयोग किया है—नैट, हण्टर एवं मिस्टीयर्स। मिस्टीयर्सको छोड़, क्योंकि युद्धमें इसराइल-द्वारा इनका उपयोग पहले भी हो चुका है, शेष दोनों तरहके विमान सर्वप्रथम उपयोगमें लाये गये हैं। एफ़-८६ सैबरजेटों एवं एफ़-१०४ सुपरसोनिक विमानोंके विरुद्ध हमारे नैट बहुत सफल रहे।

पाकिस्तानने १०४ सैबरजेट और २४ बी-५७ विमानोंसे युद्ध आरम्भ किया था। ऐसा लगता है कि उनमें आधेसे अधिक नष्ट हो चुके हैं।

—एयर मार्शल अर्जुन सिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

[पृष्ठ १७ का शेष : युद्ध नदके किनारे]

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्णायक सिर्फ़ हम ही हैं, कि इतिहास लिखने-वालों को क्या-कुछ लिपिबद्ध करना होगा।

इतिहास-निर्माणका वक़्त हमेशा 'रक्तके द्वारा इतिहास-रचना' का होता है—चाहे ऐसा आक्रान्ताओंसे अपने सार्वभौम-स्वातन्त्र्यकी रक्षाके लिए रक्तको 'बहाकर' किया जाये, या राष्ट्रके नव-निर्माणमें रक्तको 'खपाकर' किया जाये! कौन-सा रक्त—किस-किसका रक्त—इन दोहरी कसौटियोंपर खरा सिद्ध होता है, इसका निर्णायक हमेशा युद्ध ही होता है। पाकिस्तान-जैसे आक्रान्ताके 'भयाक्रान्त' होनेकी नौबत आयी ही सिर्फ़ इसलिए है, कि उसे पता चल गया है कि भारतवर्षका रक्त इन दोनों कसौटियोंपर खरा उतर रहा है!

वर्त्तमान—या भविष्य—के युद्ध-सन्दर्भों-में इस बातका भी ध्यान रखा जाना चाहिए, कि अधर्मजीवियोंके साथ कोरे 'चौहानी आदर्शों'का पालन अन्ततः घातक सिद्ध होता है। जो आदर्श समग्र राष्ट्रके लिए घातक सिद्ध हो सकते हों, उनको तिलांजलि दे देना ही उपयुक्त है। पाकिस्तानी शासक नितान्त अधर्मजीवी हैं, यह स्वयंसिद्ध है। जो युद्धलिप्सु धर्मको युद्धका माध्यम बना सकते हों, उनसे किसी भी प्रकारके आदर्श पौरुषकी या शान्तिप्रियताकी अपेक्षा रखना व्यर्थ है। निश्चित है कि 'धर्म' अपनी 'पाशविक वृत्तियों या शक्तियों'के प्रदर्शनका नहीं, बल्कि 'आध्यात्मिक शक्तियोंके अर्जन'-का माध्यम होता है। अस्तु यह विश्व-भरके मुसलमानोंको याद रखना चाहिए कि जो पाकिस्तानी शासक 'इस्लाम'को भी युद्धका माध्यम बना रहे हैं, उनसे बड़ा 'इस्लामधर्म-द्रोही' और कोई नहीं हो सकता! जो पाकिस्तानी शासक 'इस्लाम-धर्म' और 'नापाम बम'में कोई फ़र्क़ नहीं समझते, उनसे बड़ा काफ़िर और कोई नहीं हो सकता।....और यही कारण है कि भारत-वर्षके मुसलमान सैनिकोंने पाकिस्तानके इस्लाम-द्रोही सैनिकोंको मौतके घाट उतारनेमें कोई कोफ़्त महसूस नहीं की है! शायद अयूब और भुट्टो साहिबानको सबसे ज़बरदस्त धक्का तब लगा होगा, जब उनको खबर मिली होगी, कि हिन्दुस्तानके मुसलमान 'हिन्दुओं'को नहीं, बल्कि अयूब-परस्तोंको, 'इस्लाम'को 'नापाम' बनानेवाले भुट्टोपरस्तों-को काफ़िर समझते हैं।

अगर 'यतोधर्मस्ततोजयः' एक सार्व-कालिक सत्य है, तो विजय अन्ततः भारतवर्ष-की होगी, क्योंकि वह 'युद्धके लिए धर्मको इस्तेमाल करने'की नहीं, बल्कि अपने 'राष्ट्र-धर्म'की रक्षाके लिए युद्ध करनेकी 'धर्मसंहिता' पर आस्था रखता है। पाकिस्तानके पास 'इस्लाम'के अलावा कोई धर्म नहीं है, आज भारतवर्षके पास हिन्दू, ईसाई, मुसलमान और सिख धर्मोंके साथ-साथ इनसे भी बड़ा एक महानतम धर्म और है—राष्ट्रधर्म!.... 'राष्ट्रधर्म'—जिसकी रक्षाके लिए लड़ते हुए, जिसकी छत्रछायामें रहते हुए हिन्दू-ईसाई-सिख-मुसलमानोंमें फिर कोई वैसा 'फ़र्क़' शेष नहीं रह जाता है, जिस 'फ़र्क़'की उम्मीद औरोंके द्वारा की जा सकती है! भारतवर्षकी 'धर्मनिर-पेक्षता'का सबसे बड़ा रहस्य ही यही है।

—शैलेश मटियानी

अलमोड़ा]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रधर्मका अर्थ हमारे सामने स्पष्ट है, लेकिन युद्धको इतने नज़दीकसे देख लेनेके बाद कभी गान्धी याद आते हैं कभी जेफ़र्सन, बुद्ध-ईसासे लगाकर फ्रान्सीस मूरकी यह कविता भी याद आती है—"युद्ध और युद्ध के बाद

दोनों दल थककर
स्वीकारते हैं शान्ति
लेकिन क्या मिलता है मुझे-तुम्हें-जनता को ?
— नये-नये टैक्स, हर घर विधवाएँ,
कटे हुए पाँवों पर बैसाखी,
और क़र्ज़-गले पर नाखून सरीखा।"

युद्धसे युद्ध-विराम तक किसने क्या-क्या बननेकी न सोची होगी—चाणक्य, कौटिल्य, चर्चिल, मंथरा···???

कौटिल्यके साथ कौटिल्य बननेकी शक्ति हममें होनी चाहिए ···

यूरॅपमें युद्धके सम्बन्धमें बहुत-सा साहित्य प्रकाशित हुआ है, इसमें-से अधिकांश युद्ध-विरोधी है। इसका कारण यह है कि युरॅपमें इधर जो भी युद्ध हुए हैं वे बाज़ारोंके लिए हुए हैं और विचारधाराओंके लिए कोई युद्ध नहीं लड़ा गया। अवश्य दूसरा महायुद्ध कुछ हद तक इससे अलग था। पर हमें किसी फ़ैशनके वशमें होकर चलनेकी ज़रूरत नहीं है। पाकिस्तानसे हमारा युद्ध स्पष्टतः दो विचारधाराओंका युद्ध है, जिसकी जड़में दो राष्ट्र वाले मनगढ़न्त और छिपे हुए पैन-इस्लामी मतवादका विष छिपा है।

युद्धमें जीवन अस्त-व्यस्त होगा ही। पर अफ़सोस तो यह है कि हमारे लिए कोई रास्ता ही नहीं था। या तो हम पाकिस्तानी टैंकोंके सामने अहिंसाके नामपर घुटने टेक देते और उन्हें दिल्लीपर पाकिस्तानी झण्डा चढ़ाने देते या हम लड़ते, जैसा कि हमने किया। सौभाग्यसे हमने लड़ाई की और विजय प्राप्त की। साहित्यकारोंका कर्तव्य है कि वे इसमें पूरा सहयोग दें। सहयोगसे मेरा मतलब राल्फ़ फ़ाक्स, नहीं तो कमसे कम रूपर्ट ब्रुक-की तरह सहयोगसे है। अजीब बात है कि हमारे कुछ नये लेखक अपना कर्तव्य नहीं समझ पा रहे हैं। वे सार्त्रके जीवनका वह हिस्सा तो देखते हैं जिसमें वह एक प्रेमिकाके साथ बिना विवाह किये सोता है, पर यह नहीं देखते कि उसने फ्रान्सके रेजिस्टेन्स-आन्दोलनमें किस प्रकार जानकी बाज़ी लगा-कर काम किया था। इसके अलावा वह एक विचारधाराके लिए खड़ा है, जिसे वह समाज-वाद कहता है।

दुःखकी बात है कि युद्धसे फ़ायदा उठाने-वाले लोग अब भी हमारे देशमें मौजूद हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर ऐसे तत्त्वोंका दमन होना चाहिए, इसमें कोई सन्देह नहीं। युद्धका समर्थन करनेका अर्थ किसी प्रकार यह नहीं है कि हम कौटिल्य-के मतवादको अपनायें, बल्कि इसका मतलब यह है कि कौटिल्यके साथ कौटिल्य बननेकी शक्ति हममें होनी चाहिए क्योंकि हिटलर और अयूब-जैसे लोग केवल तोपोंकी भाषा ही समझते हैं। उस भलाई या आदर्शका कोई मतलब नहीं होता, जिससे केवल दुष्ट ही लाभ उठा सकते हैं। इस कारण वर्तमान स्थितिमें गान्धीवादको सात बाँस नीचे गाड़ देनेकी ज़रूरत है। भारतीय सभ्यतामें दोनों तत्त्व थे। एक तरफ़ थे बुद्ध, महावीर। दूसरी तरफ़ कृष्ण, अर्जुन, रामसे लेकर प्रताप, शिवाजी, तिलक, भगतसिंह, अशफ़ाकुल्ला, चन्द्रशेखर आज़ाद। गान्धीवादियोंने यह झूठा प्रचार कर रखा था कि बुद्ध, महावीर ही हमारी सभ्यताके तत्त्व हैं, अब उसका परदा-फ़ाश हुआ और हम प्रतिबद्ध हो गये दूसरी विचारधाराके प्रति यह बहुत अच्छा रहा।

दिल्ली]

नहीं तो आगे चलकर कभी देशका नाश होना ही। जबतक सारे संसारमें समाजवाद स्थापित नहीं होता, युद्ध अनिवार्य है।

बेशक युद्धसे देशपर आर्थिक परेशानी आयेगी, पर भूखे रहकर भी अपनी स्वतन्त्रता-की रक्षा करनी है। इसके अलावा पाकिस्तान-को राहेरास्तपर लाकर वहाँ लोकतन्त्र स्थापित करनेमें सहायता करना हमारा धर्म है। आर्थिक परेशानीके नामपर हम किसी वहशी शक्तिके सामने घुटने नहीं टेक सकते।

अन्तमें एक बात कहूँगा कि युद्ध जहाँ एक तरफ़ बहुत-सी मानवीय वृत्तियोंको दबाता है वहीं वह कई उच्च वृत्तियोंको उभारता भी है। एक स्वतन्त्रता-सैनिकके नाते मुझे ऐसा लगता है कि यदि इसी प्रकार वर्तमान वातावरण साल दो साल बना रहा, जैसा कि आज है, तो हम भारतीय सचमुच एक राष्ट्र बनकर ही रहेंगे। नहीं तो डर था कि भारत बिखर जायेगा।

—मन्मथनाथ गुप्त

बुद्धने कहा था : जो दण्डका पात्र है, उसे दण्ड दिया ही जाना चाहिए···

मैं किसी ऐसे रिक्शेवाले या कहूँ किसी भी व्यक्तिको नहीं खोज पाया जिसने ज़रा भी उदासीनता प्रकट की हो उपेक्षा तो दूरकी बात है। सभीने ऐसा अनुभव किया जैसे यह उनका अपना युद्ध है और उन्हें इसे लड़ना ही नहीं, जीतना है।

हम उचित कारणसे उचित युद्ध लड़नेको विवश होते हैं क्योंकि युद्धसे भी भयंकर एक और वस्तु है वह है आत्माका हनन। इसीको कायरता कह सकते हैं। इससे बचनेके लिए युद्ध हमें स्वीकार करना ही होता है परन्तु उसके परिणामोंसे हम नहीं बच सकते। गान्धीजीके लिए अहिंसा अन्तरका विश्वास था। फिर भी वे कायरताके कट्टर शत्रु थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ्रान्सके प्रेसिडेण्ट चार्ल्स देगालने अपने सोनेके कमरेके आगे यह नोटिस लगवा रखा है :

"प्रेसिडेण्ट विश्राम कर रहे हैं। बाधा न डाली जाये, जबतक कि महायुद्ध ही न छिड़ गया हो।"

■

देगालने फ्रान्सको राजनैतिक दृढ़ता ही नहीं दी उसे एटमबमके हमजोलियोंमें ला बैठाया है। एक बार उन्होंने अपने समीपवर्ती सहायकोंसे कहा था—"जब मैं बच्चा था तो मुझे युद्धका खेल बहुत पसन्द था। मैं और मेरे भाई अपने सिपाही खिलौनोंको दो दलोंमें बाँट लेते थे। ज़ेबियरके सिपाही इटलीकी नुमाइन्दगी करते थे, पिरेके खिलौने जर्मनी-की। और, महाशयो, मैं हमेशा फ्रान्सका बादशाह बना करता था।"

■

एक बार, दूसरे महायुद्धके दिनोंमें, जब फ्रान्स लड़ाईमें बुरी तरह हार रहा था तो, देगालके एक साथीका कहना है : "मैं युरॅपका नक़्शा देख रहा था। मैं तन्मय था, कि एक भारी आवाज़ कन्धेके पीछेसे आती हुई सुनायी दी—'क्यों वक़्त बरबाद कर रहे हो युरॅपका नक़्शा देखकर। दुनियाका नक़्शा देखो महोदय, दुनियाका!' यह भारी आवाज़ देगालकी थी।"

■

जब एक फ़ौजी जनरलने देगालसे शिकायत की कि वह अपने बड़े-बड़े जनरलोंको भी यह नहीं बताते कि दुश्मनकी युद्ध-योजना क्या है, तो देगालने कड़ककर कहा :

"लड़ाई जीतनेके लिए यही जानना काफ़ी नहीं है कि दुश्मन क्या चाहता है। सबसे ज़्यादा ज़रूरी तो यह जानना है कि तुम ख़ुद क्या चाहते हो।"

■

१९५८ में जब देगालने अपना राजनैतिक दल संगठित किया तो साथियोंने पूछा—"हमारे दलकी नीति क्या होगी, दक्षिण पंथी, वाम पंथी या मध्य पंथी ?"

उत्तर था—"देगाल न दायें है, न बायें और न बीचमें। वह सदा ऊपर है।"

■

देगालका मन्तव्य अपने समीपवर्ती दो प्रमुख जनरलोंके सम्बन्धमें—

आइज़न हॉवर : वह अपना दिमाग़ लेकर नहीं आया, उसने सदा प्रतिभाओंको अपना स्याही-सोख बनाया।

मौण्टगोमरी : वह सिपाही कहाँ है? वह तो एक एक्टर है। मगर वह लीडरीका ऐसा ग़ज़बका अभिनय करता है कि कुछ-न-कुछ लीडर-सा दिखाई देने लगता है!"

■

एक बार देगालके एक कैबिनेट-मिनिस्टरने उससे शिकायत की कि अमुक अखबारने देगालके बारेमें आपत्तिजनक शब्द लिखे हैं। देगालने बड़े शान्त भावसे उसे समझाया : "अगर कोई व्यक्ति मिनिस्टर है तो वह पत्रोंके बारेमें शिकायत नहीं करता, वह पत्रोंको पढ़ता भी नहीं। वह तो उन्हें ख़ुद ही लिखता है।"

■

जब एक कैबिनेट-मिनिस्टरने अपने एक साथी मिनिस्टरकी शिकायत की कि वह दम्भी है, बेईमान है और दुराचारी है, तो देगालने बीचमें ही बात काट कर कहा, "ख़ूब, ख़ूब, मैं तो समझता था कि सारे मिनिस्टर ही बेकार हैं। इनसे कुछ करते-धरते नहीं बनता।"

(श्री० सं० वि०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानते थे कि अन्याय प्रतिरोध न करनेकी अपेक्षा तो हिंसासे उसका प्रतिरोध करना अधिक अच्छा है। "जहाँ केवल कायरता और हिंसा दोमें-से एकका चुनाव करना हो तो, मैं हिंसाकी सलाह दूँगा। मैं तो बिना मारे मर जानेके शान्त साहसको उत्पन्न करना चाहता हूँ परन्तु जिसमें यह साहस नहीं है उसे मेरी सलाह है जातिको नपुंसक बनानेके बजाय वह मारे और मारते-मारते मर जाये। मैं चाहता हूँ कि भारत कायरता-पूर्ण ढंगसे बेइज़्ज़तीका असहाय शिकार बने या बना रहे, इससे अच्छा यह है कि वह अपनी जानकी रक्षाके लिए शस्त्र-बलका प्रयोग करे।—मैं नहीं कहता कि भारतपर आक्रमण करनेवाले राष्ट्रोंके साथ बरतते हुए हिंसा मत करो।"

बुद्धने भी कहा था, "जो दण्डका पात्र है उसे दण्ड दिया ही जाना चाहिए। तथागतकी शिक्षा यह नहीं है कि जो लोग, शान्ति बनाये रखनेका कोई उपाय शेष न रहनेपर धर्मके लिए युद्ध करते हैं, वे दोषी हैं।"

प्रश्न यह नहीं है पर औचित्य, धर्म और 'युद्ध' में क्या निरपेक्ष है। और ये भी हो पर युद्धमें जो निन्दनीय वस्तु है वह है हानि पहुँचानेकी इच्छा, अदम्य घृणा, प्रतिशोधकी उग्रता और प्रभुत्व जमानेकी भावना। स्तालिनके शब्दोंमें "अपनी सम्पूर्ण आत्माके साथ शत्रुसे घृणा किये बिना उसे हरा पाना असम्भव है।"

इसलिए हर समाज, हर धर्म, मत या वादका लक्ष्य युद्धविहीन समाज है। माओ-की बात दूसरी है। जिसके शब्दोंमें "राजनीतिक शक्ति बन्दूककी नलीके साथ पैदा होती है।"

जिस युद्धकी यहाँ चर्चा हुई है वह मनुष्य हृदयमें चलनेवाला नित्य सनातन युद्ध नहीं है। वह तो ज्वरहीन युद्ध है गीताका "युद्धस्व विगतज्वरः" अर्थात् शुद्ध आत्मिक युद्ध।

जैसा मैंने ऊपर कहा वर्तमान युद्धको शायद ही कोई नापसन्द करता हो। लगता है कि यह हमपर थोपा गया है। हम और कुछ कर ही नहीं सकते। युद्धमें सहज विनाशका भय तो है ही चेतनामें जो श्रेष्ठ है उसके विनाशका भय। युद्ध तो रूस और अमेरिका भी नहीं चाहते। रूस विनाशको जिस सीमा तक भुगत चुका है उससे उसे युद्धसे विरक्ति हो रही है। विज्ञानकी प्रगति भी तो अवरुद्ध होगी। सब कुछ नष्ट हो जायेगा। इसी तरह भारतमें भी युद्धके प्रति ऐसा रुख रखनेवाले व्यक्ति हैं लेकिन एक सीमा आती है जब युद्ध ओढ़ना ही होता है। इस समय हम उसी सीमापर हैं।

एक ताक़त इसी विश्वासमें-से उपजी है कि हम अपनी आत्माका हनन नहीं होने देंगे, हम कायर नहीं होंगे। इससे अधिक सहना अपने प्रति ही विश्वासघात होगा।

मैं यह नहीं कहता कि हमारा उद्देश्य सभीकी दृष्टिमें सही था। परन्तु हमारी दृष्टिमें अवश्य सही था। उसी विश्वासने हमें शक्ति दी। १९६२ में चीनने हमें अपमानित किया था वह अपमान भी हमें साल रहा था। हम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वाधीनताके दौरमें यह तो समझ ही गये थे कि अब दास नहीं होंगे। चीनके झटकेने और भी इस विश्वासको दृढ़ किया। कच्छने भी सीख दी।

विभाजनकी कसक भी थी। कितने ही कारण हैं जिन्होंने हमें शक्ति दी और सेना स्वाधीनताकी रक्षाके लिए आतुर हो उठी।

इस युद्धको हमने अपना ही समझा था और हम बलिदानके लिए बहुत दूर तक जा सकते थे, जा सकते हैं! उत्साहका ज्वार-सा उमड़ आया। दिल्लीने कुछ सहा नहीं, पंजाबने जो कुछ सहा और झेला उसकी कहानी अपनोंसे सुनकर भी विश्वास नहीं आता।

दिल्ली]

गृहदेवियोंका साहस जैसे सहज हो गया था।

साम्प्रदायिक दंगोंका नाम तक नहीं था। जाति, प्रान्त, भाषा, राजनीति सभी संघर्ष जैसे मिट गये थे। सभी क्षेत्रोंमें सभी कर्मियोंने युद्धमें योग दिया। संकट सबको एक कर देता है यह इस बार फिर प्रत्यक्ष हुआ पर प्रश्न फिर भी शेष है क्या एकता संकटकी छायामें ही मिलेगी। जिस दिन शान्तिमें भी वह इसी तरह आवेगी उसी दिन भयसे मुक्ति मिलेगी, भय ही मनुष्यका सबसे बड़ा शत्रु है। जिस दिन उससे मुक्ति मिलेगी उस दिन युद्ध भयानक नहीं रहेगा, किसी भी दृष्टिसे नहीं।

— विष्णु प्रभाकर

पाकिस्तान विश्व-शान्तिका राहु-केतु है...

भारतके गृह-युद्धको अन्तर्राष्ट्रीय युद्धमें परिणत होनेके भयसे इस युद्धको टालनेके लिए शान्तिकी गुहार देना व्यर्थ है। "द्यौःशान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिः" का तीन बार पाठ करनेवाले देशकी चप्पा-चप्पा भूमि रक्तरंजित है। इस देशमें शान्तिमय और जनकेन्द्रीय शासन प्रबल हुआ। देश अखण्ड रहा। भारतमें युद्धके जारी रहते हुए विश्व-शान्तिकी मिथ्या कल्पना कहाँ? पाकिस्तान भारतीय शान्तिका ही द्वेषी और विघ्नकारक नहीं अपितु विश्व-शान्तिका भी राहु-केतु है। सुन्द-उपसुन्दको उर्वशीने लड़ा दिया था। पाकिस्तान भी आज वही कार्य कर रहा है। अतः जबतक भारत इण्डिया ऐक्ट १९४७ और रेडक्लिफ निर्णयको अमान्य नहीं करता, इस देशमें शान्ति स्थापित न होगी, हिंसात्मक-राज्य चीनके प्रभाव-क्षेत्र बने रहेंगे, पख्तून और बिलोची स्वाधीन न हो सकेंगे। ऐंग्लो-अमेरिकी साम्राज्यकी प्रभुताका भी एशियासे अन्त न होगा और न होगा अन्त अँगरेज़ीकी प्रभुताका। इंग्लैण्ड युरँपका एक छोटा देश ही रहे, विधाताकी यह इच्छा पूरी होती है जो इण्डिया एक्ट १९४७ और रेडक्लिफ निर्णयको भी हिन्द महासागरमें समाधि देनी होगी। यह कार्य पाकिस्तानके जीवित रहते हुए नहीं हो सकता। उसका अस्तित्व सतत युद्धका कारण रहेगा। वह उद्वेगजनक ही नहीं, क्षोभजनक भी है। २३ सितम्बरको प्रातःकाल साढ़े तीन बजे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घोषित युद्ध विराम एक मुहिमकी समाप्ति और दूसरेकी तैयारीकी सूचना नहीं। युद्ध बन्दी तो अभी आयेगी।

युद्ध ही जब नहीं हुआ, तब युद्धबन्दी कैसी? रणपण्डित इसको वॉर (युद्ध) की संज्ञा ही नहीं देते। इसको संग्राम (बैटल) भी माननेको तैयार नहीं। यह तो मुठभेड़ें हैं। मुठभेड़ोंमें चकमकमें क्या युद्धबन्दी होती है? पहलवान क्या अखाड़ामें दूसरे पहलवानको चित्त किये बग़ैर छोड़ता है? फिर यहाँ युद्ध-बन्दी कैसी? छम्ब और खेमकरन आज भी पाकिस्तानके हाथमें हैं। इस स्थितिमें क्या युद्धबन्दी चल सकती है?

पाकिस्तानी आज भी असम, त्रिपुरा और पश्चिमी बंगालकी सीमापर गोलियाँ चला रहे हैं। जोधपुरपर बम-बर्षक मड़रा रहे हैं। फ़ाजिल्कापर हमले हो रहे हैं। पाकिस्तानी रैंजर बाड़मेर और जैसलमेरके गाँवोंमें लूट-मार कर रहे हैं। लूट खोलके ले जा रहे हैं। क्या यह युद्धबन्दीका लक्षण है?

एक नया भारत उदय हो रहा है। इस नूतन भारतके स्रष्टा अब्दुल हमीद और अयूब खाँका खून है। भारतके नाट विमान हैं। ध्वस्त और विनष्ट पैटन टैंक हैं। अमेरिका-का गर्व और पाकिस्तानका अभिमान सोया पड़ा है। क्या ये सोये रहेंगे? यदि नहीं, तो युद्धबन्दी कैसी? कसूर और लाहौर आज भी पाकिस्तानके अधिकारमें हैं। भारत क्या इस चुनौती और ललकारकी उपेक्षा कर सकता है? फिर युद्धबन्दी कैसी? पेड़का अंकुर वृक्ष बननेके लिए न जाने कितने कीट-पतंगोंकी बलि लेता है। यदि नवीन भारतका उदय भी इसी रीतिसे हो तो क्या भारतको विच्युत कहा जायगा? पथ-भ्रष्ट कहा जायेगा?

नयी दिल्ली]

– अवनीन्द्रकुमार विद्यालंकार

निश्चित ही हमारा युद्ध-बोध पिछले दो महीनेमें ही ख़ूब फैल गया है। पंजाबका कोई शहर हो या दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता····ब्लैक आउट, संकट-संकेत, निरापद्-ध्वनि : अन्तिम दो सायरन और आल क्लीअर सिगनलके बँगला अनुवाद : से घिरे रहे हैं। हम बुद्धि-जीवियोंने कौन-से अनुभवको छठी संचेतनासे छुआ?····

जैसे सारा शहर एक अँधेरी सुरंग हो

५ सितम्बरसे २३ सितम्बर तककी रात साढ़े तीन बजे तक जो समय बीता उसमें एक युगकी प्रत्यक्ष अनुभूति हुई। युद्धके बारेमें पढ़ा तो बहुत था, कल्पनाएँ भी बहुत की थीं, असलियत यह अब देखी—रातों-रात ट्रेंचोंमें झींगुरोंकी भीड़, मकड़ियों और तिलचिट्टोंके साथ बैठकर। काली कृष्णपक्षकी रातें और इतना विस्तृत तथा पक्का ब्लैकआउट कि आप अन्दाज़ा नहीं लगा सकते, जैसे सारा शहर एक अँधेरी सुरंग हो। अब भी लोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Gram : "CROMO PAPER"

Tel : { Shop : 22-7846
Resi : 24-2671
55-4321

WE
SALUTE YOU
BRAVE JAWANS !
YOU HAVE
WON OUR HEARTS
BY YOUR
MAGNIFICENT
AND GALLANT FIGHT
FOR THE
MOTHERLAND.

WE PLEDGE TO
BACK YOU
IN EVERY
WAY.

Bengal Paper & Board Co.

IMPORTERS & PAPER MERCHANTS
8, JACKSON LANE
CALCUTTA-1.

ASSOCIATE CONCERN :
Madras Paper & Board Co.
21, ANDERSON STREET
MADRAS.
Phone : 22689

Distributor for :—
M/s. ROHTAS INDUSTRIES LTD.
DALMIANAGAR.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बत्तियाँ ज़रा देरको जलाते हैं, गाँवोंमें ४॥-५ बजे रातकी ब्यालू खत्म हो जाती है, लोग पेड़ोंकी छायामें लेट जाते हैं। ऊपर बममार मड़राते हुए ७॥ बजे शामसे सुबह ५ बजे तक, रोज़-रोज़ नीचे घनी खड़ी फ़सलोंमें धुँधलके-भरे साँवले मैदानोंमें पैराटूपर्स उतरते हुए। तोपोंसे गनगनाती धरती, मील डेढ़ मील दो तीन मीलपर गिरते भयानक बमोंसे थर्राते मकान (Plases) से लाल होता आकाश और एण्टीएयर क्राफ़्टकी चमकदार आवाज़ें, गोलों-की तरह ज्वालामें फटकर गिरते पाकिस्तानी हवाई जहाज़ बीच-बीचमें रहस्यात्मक ढंगसे जलती-बुझती-नीचे उतरती Vary light, यह सब एक फ़िल्मकी तरह मनपर टँक गये हैं। इसके ऊपर यहाँके लोगोंका अदम्य साहस, निहत्थे पर निडर गाँववाले और रातों कोने-कोनेमें पहरा देते नागरिकोंके दलके दल, जाने क्या-क्या हो गया इन १९ दिनोंमें! एक नया राष्ट्र उठ खड़ा हुआ है। बीच-बीचमें Dramatic relief या Dramatic irony की तरह सुनते-पढ़ते रहे आरामसे दूर बैठे 'भुना खानेवाले' कवि, लेखकोंकी गलाफाड़ गर्जनाएँ कैसी Hypocricy है। ये चाहते क्या हैं?

जलन्धर]

– गिरिजाकुमार माथुर

आसमानमें उठती लपटें देखी हैं

मनमें खौलते विचारोंके कड़ाहमें—शायद सबसे ऊपर बात यह है कि पानीपतकी तीसरी लड़ाईके बाद भारत पहली बार किसी युद्धका अनुभव कर रहा है—१८५७ को बाक़ायदा युद्ध मानना उचित प्रतीत नहीं हो रहा। वैसे इसे छोड़ भी दें तो वर्तमान शताब्दीमें तो यह भारतका पहला युद्ध है ही जिसमें न केवल उसने ज़बरदस्त मोरचा लिया है बल्कि सार्वजनिक रूपसे अनुभव भी किया है और बहुत हद तक विजय भी प्राप्त की है। पता नहीं, देशके अन्य भागोंमें क्या स्थिति है, इस पंजाबमें तो, जहाँ १५-१६ दिन तक निरन्तर हम सभीने चौबीस घण्टेमें कई बार अड़ोस-पड़ोसमें या एकदम अपने बग़लमें ही हज़ार पौण्डके पाकिस्तानी बमोंके भयंकर विस्फोट सुने हैं आसमानमें उठती लपटें देखी हैं, विमानोंकी भयप्रद घरघराहट सुनी है, छाता-सैनिकोंको घेरकर नाकाम बनाया है, सेनाओंके निरन्तर आवागमन देखे हैं, हताहतों-को अस्पतालोंमें तड़पते देखा है, जम्मू-पठान-कोट फ़ीरोज़पुर आदिसे सुरक्षाके लिए लाये गये नागरिकोंके शिविर संगठित किये हैं, बड़ी संख्यामें धन, वस्त्र, भोजन आदि एकत्र किया और बाँटा है, नवजीवन और ताज़गीकी एक लहर-सी दौड़ गयी है, जो अभूतपूर्व है। यहाँ प्रायः हर परिवारके लड़के—अकसर २२ से २५ साल तककी उम्रके—लड़ाईपर गये हुए हैं, जिनके मरनेकी खबरें रोज़ ही आ रही हैं और अनेक स्थानोंपर राज्यमें भी भयंकर नाश हुआ है—मैं अम्बाला भी देख आया हूँ—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Diwali Greetings from

Gram : "KISANMASIN"

General Machinery & Electrical Stores Private Ltd.

AUTHORISED DISTRIBUTORS

Hepolite Liner, Piston & Rings 'Gainda'

Liner Piston, Boschmico/CAV/FIL Fuel Injection Equipments. Payen Talbros/Cylinder Head Gaskets.

TRANCO VALVE

GENUINE SPAREPARTS FOR BLACKSTONE, LISTER, KIRLOSKER PETTER NATIONAL PERKINS, RUSTON INDEC, ENGINES & others.

Stonecrusher, Granulators, Manganese Steel Castings, etc., Pumping sets, Generating Sets, Welding Sets, Power Plants, etc.,

138, Canning Street,
CALCUTTA-1.

Phone No. :
22-1552 Pumping Set
22-1578 Spare Parts
22-0798 Account Dept.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परन्तु कहीं भी न दुःखका एक आँसू है (प्यार-का भले ही हो, विशेषकर स्त्रियोंमें, परन्तु वह बहुत संयत है) और न भय ही है। इस बात-पर मैं बल देना चाहता हूँ, कैसे दूँ समझ नहीं पा रहा। मैं खुद पंजाबी नहीं हूँ इसलिए तुलनात्मक रूपसे यह कहकर दूँ कि यह कष्ट किसी अन्य प्रान्तको झेलना पड़ता, जैसे मेरे अपने उत्तर प्रदेशको ही, तो स्थिति बहुत भिन्न होती। पंजाबियोंका 'एक्सट्रोवर्ट' होना (जबकि मराठोंको छोड़कर भारतमें किसी भी प्रान्तके लोग बहिर्मुख स्वभावके नहीं हैं) बहुत बड़ा गुण है, यह विभाजनके समय (बंगालियोंकी तुलनामें) ही सिद्ध हो चुका था, आज भी हो रहा है। काफ़ी बमबारी हो जानेपर भी बहुतोंने ट्रेंचें ही नहीं खोदी हैं हमारे संस्थानमें ही नहीं खोदी गयी हैं जबकि पाकिस्तानी विमानोंका मार्ग एकदम हमारे सिरपर-से होकर रहा है और निकट-स्थित आदमपुर हवाई अड्डेपर तो ऐसी ज़बरदस्त बमबारी हुई है कि क्या कहा जाये! इसमें भाव मुख्यतः निर्भयताका है, लापरवाहीका नहीं—संकट ज़रा और पास आते ही सब काम कर लिया जाता या जा सकता है। "ज़रा और पास" का मतलब है दो फर्लांगके घेरेमें बम पड़ना—मील-भर दूर तो बम गिरा ही है और चार-पाँच मील दूर तो कई बम गिरे हैं। इस ज़िलेमें कुल मिलाकर सवा-सौ के लगभग बम गिरे हैं और १०० के लगभग-छाता-सैनिकोंसे लड़ना पड़ा है। फिर भी भय-का निशान भी नहीं है।

दिल्लीसे अमृतसरकी मेन लाइन तथा

पाकिस्तानी सैनिकोंके गलेके हार—महावीर चक्र प्राप्त मेजर रणजीत सिंह दयाल, जिन्हें मार डालनेके लिए ५०,००० रुपयेका पुरस्कार पाकिस्तानी सेना देनेवाली थी। दयाल गलेमें पाकिस्तानी हथगोलोंका हार पहने हैं।

उसीके साथ चलती ग्राण्ड ट्रंक रोडपर तो जैसे एक निरन्तर जलसा ही होता रहा है—सैनिकोंकी रेलों, मोटरों तथा जीपोंको तथा निराश्रय होकर आने-जानेवाले लोगोंको चाय, बिस्कुट, फल, मिठाई, पूड़ी, पराठे, सब्ज़ी—और सब अच्छे क़िस्मकी—आदिसे ज़बरदस्ती लाद-लाद दिया गया है। अमृतसर और अम्बालाके दुर्घटना-स्थलोंको देखनेके लिए लोग ट्रकों, कारों, स्कूटरोंपर चले जा रहे हैं—मानो खुद भी वही सब विनाश सहनेके लिए तैयार होना है। यह लिखते यह भी खयाल आता है कि इस सदीकी लड़ाइयोंमें मोरचेपर जाकर लड़ना ही वीरता नहीं है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

With
Best
Compliments
from

Bombay Vyapar Private Ltd.
15 A, Horniman Circle, Fort,
BOMBAY-1

DEALING IN
PAPER & BOARDS,
VIZ.

DUPLEX BOARD
MG POSTER & SULPHITE,
MG TISSIE,
MAPLITHO WITHOUT S/C
AND
SUPERFINE GLAZED,
MG COVER AND MANILA,
CHROMO BOARD, T/C
REAL ART BOARD, T/C
REAL ART PAPER, T/C
AND
CHROMO PAPER, T/C.

Phone : 251218-19-10
Gram : PAPSALE.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बमोंसे होनेवाले विनाशको सहना भी बड़ी वीरता है—जिससे कोई भाग नहीं सकता और जिसका अनुभव हम भारतवासी पहली बार कर रहे हैं।

मेरे घनिष्ठ परिचित एक पंजाबी परिवार-में दो लड़कियाँ हैं। युद्धविराम होते ही उनमें-से एक पठानकोट चली गयी है, दूसरी फ़ीरोज़-पुर—दोनों ही सीमापर हैं। जानेका कारण यूँ ही ज़रा सैर-सपाटा। और मज़ेकी बात यह कि किसीकी पार्टीमें कोई पुरुष नहीं है। इनमें-से भी जो बड़ी है, वह तो दो-चार दिनमें लौट आयेगी, जो छोटी है, वह पन्द्रह-बीस दिनका प्रोग्राम बनाकर गयी है, ज़्यादा भी ठहर सकती है। ऐसा झक्कड़पन शायद ही कहीं और दिखाई दे। मैं एक तरहसे इस परिवारका अभिभावक-सा हूँ, इसलिए यह ख़बर सुनकर चौंक तो पड़ा ही, ग़ुस्सा भी आया और डाटनेको मन कर रहा है—पर जिसके लिए इन्तज़ार करना पड़ेगा।

पर यह तो मैं एक विवरण-सा दे गया, कहना कुछ और ही चाहता था। इसलिए अपनी बातपर फिर लौटता हूँ। मैंने कहा कि इस शताब्दीमें हमारे लिए यह युद्धका पहला ही अनुभव है। एक साहित्यिक (छोटे-मोटे) के नाते मैं इस चेतनाका अनुभव कर रहा हूँ। मैं अपनेको "आधुनिक–बोध"-वादी लेखक गिनता हूँ, इसके विविध पहलुओंपर टाक देता हूँ, डिस्कशनमें भाग लेता हूँ, लेख लिखता हूँ, वग़ैरह-वग़ैरह। परन्तु आज मुझे यह लग रहा है कि अभीतक मेरा यह आधुनिक-बोध नक़ली और बनावटी, या मात्र बौद्धिक ही रहा है। आज युद्धके कारण जब मैं पहली बार सिरपर पाकिस्तानी जहाज़ोंकी आवाज़से चौंक-चौंककर जग पड़ता हूँ, बमोंके फूटनेपर उनके ज़बरदस्त बिजली-से धक्कोंसे काँप उठता हूँ, चुपचाप मन ही मन अनुमान लगाता हूँ कि यह बम कितने मील दूर फटा होगा, उनकी क्षितिजमें उठती लपटोंको स्तब्ध देखता रहता हूँ, फिर लेटकर सोनेका प्रयत्न करता हूँ पर आधे ही घण्टे बाद फिर सायरनकी शैतान आवाज़ सुनकर उठ बैठता हूँ और फिर धड़ाके सुनने लगता हूँ, और एक बार जब बहुत पास ही बम गिरा और उसकी चमक-चटख़ अगल-बग़ल चारों ओर फैली देख झट-पट कमरेमें दौड़ा और इस चेतनासे अभिभूत हो गया कि आख़िरी समय आ गया तब और तब और तब मानो असली काफ़्का, बोरहीस और सार्त्र-कामूको देखने लगता हूँ और सोचने लगता हूँ कि असली आधुनिक बोध, ज़िन्दगी-की व्यर्थता, एब्सर्ड, अनीश्वर अस्तित्ववाद आदिका आधार अब पकड़में आ रहा है। सोचता हूँ कि भारतीय साहित्यकारोंका कैसा दुर्भाग्य रहा कि बीसवीं सदी आधीसे ज़्यादा बीतने लगी और हमने एक क्या आधा-चौथाई युद्ध भी नहीं देखा, वह विनाश नहीं देखा जिसने युरॅपको कई-कई बार रगड़ दिया है और जिसमें-से उपर्युक्त सभी वादों और बोधों-का जन्म हुआ है। मानवताके इतिहासमें विनाश सदा होते रहे, अत्याचार और क्रूरताएँ भी होती रहीं, परन्तु उनको इस मेटाफिज़ी-कल ढंगसे देखनेकी दृष्टि इसी युगमें मिल रही है, यह आज तकके समग्र चिन्तन और दर्शनमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रान्तिकारी उपलब्धि है, जो शायद अगली शताब्दी तक जीवनके मूल्य और व्यवस्था सभीको आमूल ही बदल दे। अब जब 'सीज़फ़ायर' हो चुका है, मुझे लगता है कि यह तो बहुत थोड़ा-सा ही होकर रह गया, कुछ ज़्यादा मज़ा नहीं आया। ज़िलेमें पड़े सवा-सौ बम कम मालूम दे रहे हैं और इच्छा-को कुछ और तृप्ति देनेके लिए ही अम्बाला-अमृतसर हो आया। यहाँ मौत और नाशको चारों ओर फैला देखता रहा, अनुभव करता रहा। एक अजीब स्तब्धता-सी मनमें छा गयी, आतंक दूर-सा हो गया, एब्सर्डका प्रमाण देख-पाकर मनको खुशी-सी हुई, ईश्वरमें और उसकी व्यवस्थामें जो अविश्वास किये बैठा था वह दृढ़ हो आया। इस सबके बावजूद दुनिया और जिन्दगीमें अँधेरा नहीं लगा। लगा कि इस सबको स्वीकार कर लेना है, फिर कुछ सोचना-करना है। दुःखसे डरकर निर्वाणकी राह नहीं खोजनी है, दुःखको ही वस्तुस्थिति मानकर जीवनको रखने और बढ़ानेका विचार खोजना है। सार्त्रके 'मनुष्य-की स्वतन्त्रता' और कामूके 'ह्यूमन एसेन्स' विचारोंकी याद आयी और उनकी लकुटीको मज़बूतीसे पकड़कर लौट आया। अबतक 'ब्लैक आउट' भी दूर हो चुका था, रातको पढ़ सकते थे, इसलिए इन्हींकी पहले पढ़ी किताबें फिर निकाल ली हैं : 'प्लेग', 'आउटसाइडर', 'आइरन इन दि सोल', 'दि एज आव रीज़न', 'दि मण्डैरिन्स'। युद्धकालीन चिन्तनसे परिपूर्ण ये किताबें आज पहलेसे ज़्यादा मज़ा दे रही हैं और समझमें भी ज़्यादा अच्छी तरह आ रही हैं। और 'दि एज आव रीज़न' तथा 'मण्डैरिन्स' के पात्रोंकी (तथाकथित) 'इम्मोरैलिटी' और उसकी आवश्यकता भी समझ पा रहा हूँ—कि दरअस्ल यह 'एमोरैलिटी' है, 'इम्मो-रैलिटी' नहीं।

मैं सोचता हूँ कि युद्ध यह कुछ समय और चलता या अभी भी परिस्थितियाँ बिगड़ें और चले—जो हुआ वह तो ज़ायका मात्र है, दावत नहीं। जो इसमें पड़े हैं, उन्हें यह जाननेका अवसर मिल गया है कि वे कितने गहरे पानीमें हैं, जो नहीं पड़ पाये या दूर रहे, उनका दुर्भाग्य। अस्तित्ववादी दृष्टिसे इसे देखनेपर पाता हूँ कि डर है भी और नहीं भी है—है इसलिए कि पीड़ादायक है, नहीं इसलिए कि उचित और अनुचित पीड़ा जीवन-की नियति ही है। काफ़्काको डर ज़्यादा रहा होगा क्योंकि तब पीड़ाका इस दृष्टिसे पहली बार अनुभव (या पूर्वानुमान) किया गया, अब उतना नहीं है क्योंकि इस सबके मेटा-फिज़ीकल पहलुओंपर विचार किया जा चुका है और उसे स्वीकार करनेकी मनःस्थिति बना दी गयी है।

तो इस युद्धको मैं आधुनिक बोधको भली-भाँति समझनेके अवसरके रूपमें ले रहा हूँ। पर डर भी लग रहा है कि हमारे साहित्यकार जिस तरह विभाजनकी पीड़ाको हज़म कर गये और डकार भी न ली, उसी तरह इसे भी हज़म न कर जायें। मौलिकता (विशेषतः चिन्तनके क्षेत्रमें) अब हमारा राष्ट्रीय गुण नहीं रही है (क्षमा करें, कमसे कम इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवसरपर मनको सच्चे ढंगसे व्यक्त हो लेने दें—धन्यवाद !) और असली जीवनको भी न हम साहित्यका विषय मानते हैं (जिस कारण लेखनमें कितनी ही वर्जनाएँ हैं) और न दर्शनका—परन्तु क्या इतने-से धक्केसे कोई परिवर्तन होगा ?

होशियारपुर]

– महेन्द्र कुलश्रेष्ठ

पहली बार बम्बईके लोगोंने चाँद देखा था···

बम्बईमें ब्लैक आउटका आदेश हुआ तो 'स्टोर्स'के आगे टॉर्च खरीदनेवालोंकी क्यू लग गयी। लोगोंने टॉर्च खरीद लीं और आश्वस्त हो गये, ठीक उस तरह जैसे बरसातमें छाता खरीदकर लोग बरसातसे बे-न्याज़ हो जाते हैं। मैंने इससे पहले एक साथ इतने छाते नहीं देखे थे, बरसातमें अपने दफ़्तरकी छतसे देखने-पर लगता था, जैसे छाते सड़कोंपर टहल रहे हैं या छाते बसस्टॉपपर क्यूमें खड़े हैं। बम्बईमें बरसातका कोई भरोसा नहीं, जैसे जूलीका कोई भरोसा नहीं। अभी जो जूली आपके सामने बैठी 'सन सिप' पी रही है, इसी क्षण उठकर ट्विस्ट करने लगेगी तो आश्चर्य नहीं होगा। अभी जो बूढ़ा पात्सी अपनी बेगमकी बाँहमें बाँह डालकर मैरीन ड्राइवपर घूम रहा है, कब छाता तान लेगा, कोई नहीं जानता। लोग सिर्फ़ एक बात जानते हैं, लोग दूरसे आती हुई बरसातको देख लेते हैं, जब बरसात उन तक पहुँचेगी, वे वहाँ नहीं होंगे, वे एयर इण्डियाके शो-रूम-में-से अन्दर झाँक रहे होंगे या पर्शियन डैटीमें काफ़ी पीते हुए बरसात थमनेकी प्रतीक्षा कर रहे होंगे। मेरा आशय है कि अगर बम्बईपर हवाई हमला होता तो लोग पूरे अनुशासन और दूरदर्शितासे उसे नाकाम कर देते। मेरा इशारा उस अनुशासनसे है जो मैंने ब्लैक आउटके दिनोंमें देखा, उस दूरदर्शितासे है, जिससे लोग बरसातका आभास पा जाते हैं।

ब्लैक आउटसे लोगोंमें दहशत नहीं फैली, दहशत सायरनने ज़रूर फैलायी थी, जब सायरन सुनते ही बहुत-सी लड़कियाँ रो पड़ी थीं, मगर सायरनकी आवाज़ सुनकर दिनमें जो लड़कियाँ रोयी थीं, वे रातको चाँदनीमें नहा रही थीं। अनुशासनप्रिय बम्बईवासियों-ने ब्लैक आउटके नियमोंका तो पालन किया, मगर वे क्या करते, अँधेरा फिर भी नहीं हुआ। उन दिनों चाँद नटखट हो रहा था। चाँद पूरे जोबनपर था और ब्लैक आउट-के नियमोंको खुले आम भंग कर रहा था। सन्तरी घूरकर चाँदकी ओर देखता और बत्ती बन्द करोका नारा बुलन्द कर देता। उसे बम्बई बम्बई नहीं लग रही थी, उसे बम्बई फ़िल्मका सैट लग रही थी। ब्लैक आउटके दिनोंमें समुद्र भी समुद्र नहीं लग रहा था, रेगिस्तानकी तरह दमक रहा था और उसके तटपर बैठकर प्रेम करनेवाले, ऐसा लग रहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

शीत-युद्ध : शब्द-वेधी बाण

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शीत-युद्धकी भाषा और मुहावरे अपने ही साँचेमें ढले हैं। ख्रुश्चेव जब पूरे ज़ोर-शोर-पर थे, उन्होंने तीरन्दाज़ीके कुछ अच्छे नमूने दिखाये :

० केवल झण्डा ही, रूसी कफ़न नहीं :

"हमारा अन्तरिक्ष यात्री चाँद तक पहुँचे यह प्रबन्ध तो अभी हो सकता है लेकिन हमें यह भी तो सोचना है कि उसे चाँदसे वापस कैसे लायें। रूसी झण्डा ही चाँदपर लगा रहे, वहाँ किसी रूसीका क़फ़न नज़र न आये प्रबन्ध यही करना है।"

० डार्विनके विकास-क्रममें—रूस और अमरीका:

"तुम्हें मालूम है, डार्विनका विकासवादका सिद्धान्त यह कहता है कि विकास-क्रममें पहले रेंगनेवाले जन्तु आये—जैसे अजगर, वग़ैरह, फिर उछलनेवाले, और फिर उड़नेवाले। विकास-क्रममें अमरीका अभी कूदनेकी स्थिति-तक ही पहुँचा है, जब कि रूसमें हम लोगोंने अन्तरिक्षकी उड़ान भरकर, वहाँसे वापस आना भी सीख लिया है।

हमने पादरियों और महन्तोंके स्वर्गके बारे-में बहुत कुछ सुना था। हमने सोचा, दूसरोंकी बातपर यक़ीन करनेके बजाय क्यों न खुद जाकर असलियत मालूम की जाये। पहले हमने अपने यूरी गागारिनको भेजा। उसने भू-मण्डलका चक्कर अन्तरिक्षमें लगाया और पाया कि वहाँ तो घुप्प अँधेरा है। न बाग़ो-अदन है और न कोई जन्नत। तब हमने सोचा कि एक और खोजियेको भेजना चाहिए, और हमने तीतोवको भेजा और कहा कि वह सारे-सारे दिन उड़कर पता लगाये, क्योंकि गागारिन महज़ डेढ़-घण्टे ही ऊपर था, इस-लिए हो सकता है कि स्वर्ग उसकी पहुँचसे बाहर रह गया हो। हमने तीतोवसे यह भी कहा कि सब कुछ ख़ूब आँख खोलकर देख ले। तीतोव लौट आया है और उसने गागा-रिनकी रिपोर्टको ठीक बताया है कि वहाँ कुछ नहीं है।"

० हिमाक़तोंकी प्रतियोगिता :

"अमरीका अस्त्र-शस्त्रोंसे सज्जित हो रहा है और हम भी अपना धन और अपनी शक्ति इस बातकी तैयारीमें लगा रहे हैं कि इनसान-को तबाह कर दें। हम परमाणु-अस्त्रोंको जाँच रहे हैं। मगर आख़िर यह सब हिमाक़त क्या है और हमें क्या पड़ी है कि हम बमोंका विस्फोट करें और परीक्षण करें? न तो बमको हम सूपमें घोलकर खा सकते हैं और न उसका ओवरकोट बना सकते हैं। मगर करें क्या। कोई चारा नहीं है, जो आप करना चाहते हैं उसे आपसे पहले हम कर लेना चाहते हैं!"

० हम क्या स्कूलके बच्चे हैं?

"ये लोग हमसे स्कूलके बच्चोंकी तरहका सलूक करना चाहते हैं : ख़ामोश बैठो, अपने हाथ डेस्कपर रखे रहो, क़लम लेकर सुलहकी सन्धिपर हस्ताक्षर करनेकी हिम्मत न करो। मगर हम आख़िर आदमी हैं और एक बहुत मज़बूत राष्ट्रके आदमी हैं।"

० डिप्लोमेट बनाम पोलिटीशियन :

"मालूम नहीं, यह उक्ति किसकी है कि डिप्लोमेट या राजनयिक व्यक्तिको जीभ इस-लिए मिली है कि वह उस सबको ज़ाहिर न होने दे जो सचमुच उसके दिमाग़में है। मगर मैं समझता हूँ कि जो ऐसा करता है वह 'डिप्लोमेट' न होकर एक घटिया क़िस्मका 'पोलिटिशियन' होता है। मैं इस तरहका आदमी नहीं हूँ।"

(ज्ञा० सं० वि०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था, प्रेम नहीं कोई षड्यन्त्र कर रहे हैं। गाड़ियोंकी रफ़्तार इतनी मन्द हो गयी थी कि लगता था, ये बम्बईकी बिजलीकी गाड़ियाँ नहीं ये गाड़ियाँ आपको झुमरीतलैया या राजनाँद गाँव ले जायेंगी। डबल डेकर जब रातको आँख मूँदकर कैडल रोडपर रेंगता था तो लगता था, डबल डेकर शरारत कर रहा है। अँधेरेमें कारें, सिर्फ़ वे कारें, जिनपर प्रैस अथवा इसेंशल सर्विसके लाल अक्षर चिपके थे, अन्धी चीटियोंकी तरह दौड़ रही थीं। जिन कारोंपर ये अक्षर नहीं थे, उन्हें सन्तरी रोक लेता, वे गाड़ी सड़कके किनारे ही पार्क कर डबल डेकरकी प्रतीक्षा करने लगते या स्टेशनकी ओर चल पड़ते चुन्नू मुन्नूको उठाकर।

वह ब्लैक आउटकी ऐसी ही एक चाँदनी रात थी, जिस दिन मैं भारती परिवारके साथ घूमने निकला था। भारतीजीकी गाड़ीके अगले शीशेपर सुर्ख अक्षरोंमें 'प्रैस' का बैज लगा था। सड़कपर नाम मात्रका ट्रेफ़िक था। केवल वही गाड़ियाँ घूम रही थीं, जिनका सम्बन्ध किसी अस्पताल अथवा प्रैस-से था। बाक़ी गाड़ियोंका चालान हो रहा था। बन्द दुकानोंमें ख़रीदो-फ़रोख़्त हो रही थी और दुकानदार ग्राहकोंकी ओर ऐसा देखते जैसे घूँघटमें-से गोरी देख रही हो। चर्चगेट, फाउण्टेन, कोलाबा, मालाबार हिल केश खोलकर चाँदनीमें स्नान कर रही थी और हाजी अलीके पास समुद्र ग़ुस्सेमें था। वह ग़ुर्रा रहा था और हाथीकी सूँडकी तरह सड़कपर पानी फेंक रहा था। वीर नरीमन रोड और पैडर रोडपर चुप्पी बैठी थी। हर जगह। सड़कोंपर। पेड़ोंपर। बैंचोंपर। बिजलीका कहीं कोई दख़ल नहीं था। शुद्ध चाँदनीमें आप किसीको भी देख सकते थे। लगा, ब्लैक आउटमें बम्बई डरावनी नहीं, रोमाण्टिक हो उठी है। वह इस तरह शान्त, सौम्य लग रही थी, जैसे किसी बावकट लड़की-ने पहली बार चोटी की हो। लोडरी हैपवनी सती सावित्रीका अभिनय कर रही हो।

मगर बम्बईकी रातकी ज़िन्दगी अवरुद्ध हो गयी थी। रिट्ज़की बाम्बशेल लड़की एंजल 'लिटिल हट' के बाहर गुमसुम खड़ी थी। एम्बेसडर होटलकी कैबेर गर्ल रिसेप्शन हॉलमें बैठी सिगरेट पी रही थी। क्लबोंमें अँधेरा था और अँधेरेमें बम्बई अपराध नहीं करती। बम्बईके ज़ुरायम-पेशा लोगोंने छुट्टियाँ मनायीं। शराब बेचनेवाली आँटियाँ ताश खेल रही थीं, मोमबत्तीकी रोशनीमें और छोटा पीटर ग्राहमोंके कन्धेपर बैठनेकी ज़िद कर रहा था। एक ज़िन्दगी थी, जो रुक गयी थी। वह ज़िन्दगी जो रात क्लबोंमें बिताती है। वह ज़िन्दगी जो टैक्सियोंपर आश्रित है। टैक्सीवाला वज़ीर सिंह उस दिन पहली बार अपने परिवारके साथ चौपाटीकी रेतपर टह-लता दिखाई दिया, उसके बच्चे अँधेरेमें ही सीपियाँ चुन रहे थे। कभी-कभी कहीं टॉर्चकी रोशनी सागर तटपर फिसलती और वहीं ढेर हो जाती। शामको लोग सागर तटपर भेलपूरी और नारियल नहीं ख़रीद पाये, सागर तटपर गृहिणियाँ भी नहीं आयीं, वे ख़ुश थीं, उनके पति समयपर घर लौट आये थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

M.B/65

Transmission
Steel Roller

CHAINS
&
SPROCKETS

Phone : 22-5247
Gram : CHAINPULLY
G.P.O. BOX No. 809

B. P. TRADING CO.
71/A, NETAJI SUBHAS ROAD, (Room D/S 8D)
CALCUTTA-I.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भेलपूरी औरतें ज़्यादातर उस समय खाती हैं, जब पति देर तक घर नहीं लौटते। पत्नियाँ कुछ देर पतियोंका इन्तज़ार करती हैं और जब वे नहीं लौटते तो वे भेलपूरी खा लेती हैं। ब्लैक आउटके दिनोंमें समुद्र तटपर गहमा-गहमी नहीं थी। अगर गहमागहमी थी तो रेडियो सैटके पास ही, रातको देर तक लोगोंके समूहके समूह रेडियो सैट सुनते देखे जा सकते थे। लोग ब्लैक आउटमें रेडियो सुनते थे और उनके ऊपर निर्मल आकाश झिलमिलाता था। उनके ऊपर। सारी बम्बई-के ऊपर। पहली बार बम्बईके लोगोंने चाँद देखा था।

बम्बई]

– रवीन्द्र कालिया

दिल्लीका अँधेरा बहुत गहरा है—काला और चिपचिपा

दिल्लीमें ब्लैक आऊटकी एक रात····। आसमानमें रोशनीकी एक नौका तैरती है। मकानोंकी धुँधली आकृतियाँ रौशन आसमान-की बैकग्राउण्डमें उभरती हैं।

····कैसी बिडम्बना है यह! पहले कुछ मनुष्योंको परेडें कराओ—इतनी····इतनी···· कि वह चाबीवाले खिलौनोंकी तरह अपने वरिष्ठोंका हुक्म मानने लगें—उनकी आज्ञाको खुदाकी आवाज़ समझने लगें। फिर उनके हाथोंमें गोला-बारूद दे दो और उन्हें क़त्ल करनेका लाइसेन्स दे दो। जितने अधिक क़त्ल, उतनी अधिक शाबाश।

जिन दो दलोंमें जंग होती है, दोनों ही यह सोचते हैं कि विरोधी दलमें केवल ख़ूँख़ार दरिन्दे हैं या खौफ़नाक पागल हैं। दोनों ही यह कहते हैं कि वह इन विरोधी दलके खौफ़नाक पागलों और ख़ूँख़ार दरिन्दोंसे अपने वतनकी, अपनी सरज़मीनकी, अपने बीवी-बच्चोंकी, और अपने अधिकारोंकी रक्षा कर रहे हैं। दोनों ही यह सोचते हैं कि वह बिलकुल उचित व्यवहार कर रहे हैं और सही रास्तेपर हैं इसलिए परमात्मा उनके साथ हैं। दोनों ही अपने मरनेवालोंको शहीद हुआ मानते हैं, और सोचते हैं कि वह सीधे परमात्माकी गोदमें जाते हैं। परन्तु यदि सोचा जाये तो दोनोंमें से एक तो ग़लत होगा ही। या क्या दोनों ही ग़लत हैं?

मैं एक दम काँप उठती हूँ और अपने बिखरते खयालोंको जल्दीमें सिमेटती हूँ। यह मैं क्या बकवास सोच रही थी! अरे, कोई सुन ले तो····?

कोई नहीं सुनता।

दिल्लीका अँधेरा बहुत गहरा है····काला और चिपचिपा····कोलतारकी तरह।

अँधेरा सरकता है····

मेरे खयाल अब मेरे बसमें हैं, और मैं ढंगसे सोच रही हूँ।

इस युद्धमें हमने क्या खोया और क्या पाया?

चीनके साथ युद्धमें हमने जो सबसे बड़ी चीज़ खोयी थी, वह था आत्मविश्वास।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब तक नाश्ते के लिये ऐसा आहार उपलब्ध नहीं था

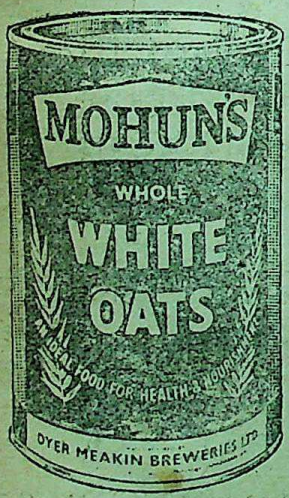

मोहन्ज़ न्यू लाइफ कार्न फ्लेक्स

मोहन्ज़ व्हाइट ओट्स

मोहन्ज़ पर्ल बार्ले

शताब्दी पुराना अनुभव विश्वास की गारन्टी है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमारे जवान हर मोरचेपर जिस वीरतासे लड़े थे वह अपने-आपमें एक आदर्श था, एक मिसाल थी जिस तरहसे मुट्ठी-भर जवान पूरी-पूरी बटैलियनके साथ जूझते हुए वीर-गतिको प्राप्त हुए थे, उसका उदाहरण संसारके इतिहासमें शताब्दियोंके बाद ही कहीं मिलता है। परन्तु फिर भी उस युद्धके लिए हम ना तो आर्थिक रूपसे तैयार थे और न ही मानसिक रूपसे। वह युद्ध अचानक हमपर थोप दिया गया था। उससे सबसे बड़ी हानि यह हुई—चाहे हम इसे स्वीकार करें या न—कि हमने आत्म-विश्वास खोया।

वर्तमान हिन्द-पाक युद्धमें-से हमारी सबसे बड़ी प्राप्ति यही है कि वह खोया हुआ आत्म-विश्वास लौट आया है। हमारे जवानोंने यह साबित कर दिया है कि जो क़ौम जीवित होती है उसके नौजवान टैंकोंसे भी बड़े होते हैं; और यह कि ज़िन्दा क़ौमोंके लिए कुछ भी असम्भव नहीं होता।

परन्तु इस सारे शोरमें हमें यह नहीं भूलना है कि हमारे समूचे देश और क़ौमका आदर्श युद्ध नहीं है। हम लड़ तो अवश्य सकते हैं, जब युद्ध हमारेपर थोपा जाये। परन्तु लड़ाई हमारा लक्ष्य नहीं है। हमें यदि प्रगति करनी है तो अपने देशकी नींवको मज़बूत बनाकर। और वह नींव है; मज़बूत आर्थिक सन्तुलनकी। हमें किसीके साथ वैर नहीं। हमें किसीके देशकी एक इंच भूमि भी नहीं चाहिए। हम सबको फलता-फूलता और प्रगति करता हुआ देखना चाहते हैं। परन्तु शर्त यह है कि हमें भी स्व-अभिमानसे ज़िन्दा रहने दिया जाये। यदि कोई हमारे इस अधिकारमें ज़रा-सा भी हस्तक्षेप करेगा तो हमें उसका जवाब देना आता है।

इन दिनों सेनाकी जो अत्यधिक प्रशंसा की जा रही है, वह हमारे जवानोंने अपने रक्तसे कमायी है—वह बिलकुल सही है। परन्तु यहाँ भी हमें थोड़ा सचेत रहना है। हमारे प्रजा-तन्त्रकी नींव इतनी मज़बूत नहीं है कि वह किसी भूचालके झटकेको झेल सके। सेनाके महत्त्वको ज़रूरतसे ज़्यादा बढ़ानेका एक नुक़सान हो सकता है, कि शायद कभी इसके द्वारा हमारे राजनैतिक ढाँचेको कोई झटका लगे। इससे हमें सतर्क रहना है।

और हमें यह भी याद रखना है कि हमारा लक्ष्य क्या है, हमारा आदर्श क्या है। हमने एक सपना काता है, और फिर उसे तार-तार करके बुना है। वह सपना है उस युगका, जिसमें विभिन्न महाद्वीपोंमें बसनेवाले विभिन्न जातियों और विभिन्न रंगों, विभिन्न नसलों और विभिन्न धर्मोंके लोग एक-दूसरेसे जुड़कर रहेंगे, क्योंकि उन्हें जोड़नेवाला एक-मात्र सूत्र होगा : मानव-समाजकी खुशी। यह खुशी तभी उपलब्ध हो सकती है यदि इसकी इच्छा सब मनुष्योंके दिमाग़ोंमें उत्पन्न हो, इसे प्राप्त करनेकी ललक मनुष्योंके दिलोंमें उमड़े, और फिर उसे प्राप्त करनेके लिए सब लोग पूरा प्रयत्न करें। इस प्रयत्नमें भारतका अपना पूरा हिस्सा है, और रहेगा।

– अजीत कौर

नयी दिल्ली]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बंगालमें बैठकर पंजाबकी महसूस किया जा सकता है—अम्बाला और अमृतसरपर गिरे बम जैसे लगते हैं जैसे हमारे आँगनमें ही गिरे हों लेकिन जो सात समन्दर पार अपने देशके समाचार सुन रहे हैं उन्हें हिन्दुस्तान इन दिनों शिद्दतसे याद आया होगा? यहाँकी ख़बरोंकी आग वहाँतक भी पहुँचती होगी?

अमेरिकी आँखें और याद चाणक्यकी···

युद्ध····वियतनाम, डोमिनिकन रिपब्लिक मैक्सिको, और····कश्मीर और रमेश बक्शीका पत्र, "····और नवम्बर अंक युद्ध विशेषांकके रूपमें प्रकाशित होगा····आपसे अपेक्षा है कि इस सीमा-संकटके प्रति वहाँ दूर विदेशमें बैठ आपकी जो प्रतिक्रिया हो कृपया लिख भेजें····"

यह आदेश पढ़ हाथ डायरीकी ओर बढ़ता है, किन्तु तुरन्त ही रुक जाता है—देशकी सीमापर जो संकट आया है, वह क्या डायरीके पन्नोंमें—तारीखोंकी सीमाओंमें—बाँधा जा सकता है! नहीं, यह संकट तीन हज़ार वर्ष पुराना है, और बना रहेगा अगले तीन हज़ार वर्षों तक, यदि हमने अपनी बुद्धिसे अपने बाहुबलसे, अपने शौर्य-वीर्यसे, आज इसका सामना नहीं किया।

तिब्बतको हमने सहज ही छोड़ दिया, अमरीकाके राष्ट्रपति जौन कैनेडीने, जैसे क्यूबामें पैर जमाये थे, तिब्बतमें वैसा साहस दिखलानेका हमने प्रयत्न नहीं किया, और उसका परिणाम यह हुआ कि बर्बर चीनियोंका साहस और अधिक बढ़ गया। एक बार झुक गया है भारत; आगे भी झुकेगा, इस विश्वाससे उन्होंने हमारी सीमापर युद्ध छेड़ दिया, और हिमालयकी उपत्यकाएँ भारतके लाड़ले बेटोंके ख़ूनसे रंग गयीं।

अब पाकिस्तानी लीडरोंके नाख़ूनोंसे डर कर, क्या हम कश्मीरको एक नया 'म्यूनिक' बनायेंगे? जैसे ब्रिटेनके प्रधान मन्त्रीने; हिटलर-की अनुचित माँगें स्वीकार कर, उसकी भूख-को मिटाना चाहा था; क्या हम अयूबकी भूख मिटाकर, कश्मीरमें चीनी सेनाओंको अड्डा जमानेका अवसर देंगे? कश्मीरमें अपने पैर जमाकर, क्या चीनी सेनाएँ एक ओर अफ़्रीका, और दूसरी ओर इण्डोनेशियाकी ओर नहीं बढ़ जाना चाहेंगी?

और इन प्रश्नोंके साथ ही आँखोंके आगे घूम जाते हैं अनेक चित्र—समाचार-पत्रोंके तीन-तीन इंच मोटे शीर्षक, ट्रांसिस्टरके तीखे स्वर, टेलिविज़नपर उभरती तसवीरें, राह चलते, कैफ़ेटेरियामें, लाइब्रेरीमें, दफ़्तरमें, प्रश्न—उत्तर, प्रश्न—उत्तर, प्रश्न—उत्तर····

परेशान हैं अमरीका—जो भारत अहिंसा-में विश्वास करता है, जिस भारतकी सेनाएँ, तीन वर्ष पहले, चीनके आक्रमणके सम्मुख हरी बेल-सी झुकती हुई, कुचल गयी थीं, वही भारत, पाकिस्तानसे लड़ाई क्यों कर रहा है? कैसे कर रहा है?

अहिंसाका अर्थ कायरता नहीं, आक्रमण-कारीको उचित दण्ड देनेके लिए अहिंसावादी-के लिए युद्ध करना आवश्यक है। केवल एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी तत्त्वको समझानेके लिए योगिराज कृष्णने गीताका ज्ञान दिया था। हाथमें एक चाक़ू-छुरी तक न होते हुए यदि हम अँगरेज़ोंकी मशीनगनोंसे नहीं डरे, तो क्या अब चीन-पाकिस्तानकी कूट-नीतियोंसे डरेंगे—आदि-आदि कोई भी तर्क अमरीकियोंकी चिकनी बुद्धिपर नहीं ठहरता। बार-बार, प्रत्येक प्रश्नकर्त्ताके मुखसे एक वही हठीला प्रश्न उभरता है, "तुम लोग 'प्लैविसाइट' क्यों नहीं स्वीकार कर लेते?"

बार-बार वही एक नादानी-भरा प्रश्न सुन, कभी-कभी क्रोध भी उमड़ आता है। किन्तु क्रोधको संयत कर, उत्तर फिरसे दोहराया जाये, इसके अतिरिक्त और किया ही क्या जा सकता है? दिनमें दस बार समझाना पड़ता है कि—धर्मके नामपर 'प्लैविसाइट'-की माँग स्वीकार करना हमारे मुसलमान भाई हरगिज़ बरदाश्त नहीं करेंगे। यह उनकी 'इण्टैग्रैटि' का, उनकी नागरिकताका, उनके देश-प्रेमका अपमान होगा। यह माँग हमारे हज़ारों कश्मीरी भाई भी स्वीकार नहीं करेंगे, जिन्होंने स्वेच्छासे भारतकी नागरिकता स्वीकार की है। यह माँग सुनकर उनका खून खौल उठता है····श्री नेहरूने कश्मीरका भार स्वीकार करते समय 'प्लैविसाइट' शब्द-का प्रयोग नहीं किया था। उन्होंने कहा था कि क्योंकि कश्मीर महाराजका पत्र उस समय आया है, जब कि पाकिस्तानी सेनाएँ कश्मीरपर आक्रमण कर चुकी हैं, हम कश्मीरका प्रस्ताव, कश्मीर-निवासियोंकी इच्छा जानकर स्वीकार करेंगे, जनताकी रुचि, 'द विशेज़ ऑफ़ द पिपुल' 'प्लैविसाइट' का अर्थ एक ही नहीं, दो भिन्न अर्थ हैं, बादमें जब मामला यूनाइटेड नेशन्समें गया, तो श्री-नेहरूके शब्द 'द विशेज़ ऑफ़ द पिपुल'को 'प्लैविसाइट' में बदल दिया गया····उन्नीसवीं शताब्दीके प्रारम्भसे आज तक युरॅपमें जो लगभग डेढ़ सौ प्लैविसाइट हो चुकी हैं, उनसे यह बात भली-भाँति प्रमाणित हो चुकी है कि 'प्लैविसाइट' का परिणाम सदा 'जनताकी इच्छा'के अनुसार ही नहीं होता; और प्लैवि-साइट'के दरमियान जो अशान्ति और लड़ाई-झगड़े फैलते हैं, उनसे स्थिति सुधरनेके बजाय और अधिक बिगड़ जाती है, अनुचित रीतियों-द्वारा किसी भी प्लैविसाइटका मनचाहा परि-णाम निकाला जा सकता है।

किन्तु तर्क बार-बार दृढ़ और अल्पज्ञान-की चिकनी तख़्तीपर फिसल-फिसल जाते हैं, टेलिविज़नपर 'मीट द प्रैस' प्रोग्राममें हमारे माननीय शिक्षा मन्त्री श्री चागलाका इण्टरव्यू लिया जाता है, और पत्रकार उनसे वही पुराना प्रश्न करते हैं, "आप 'प्लैविसाइट' स्वीकार क्यों नहीं कर लेते?"····

और इण्टरनेशनल हाउस। एक गोल-मेज़के किनारे बैठे हम तीन भारतीय, हाथमें जिंजर एलका गिलास लिये एक सज्जन निकट आते हैं, "मैं आपकी गुफ़्तगूमें शामिल हो सकता हूँ"

"ज़रूर, ज़रूर, आइए बैठिए, इनसे मिलिए, श्रीमती मंजु खेतान, महेश खेतान।"

"और आप सोमा वीरा? सुना है आप लखनऊसे हैं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

This is the cigarette

that costs

LESS

and gives

so much

MORE

OPEN a factory fresh pack of these popular cigarettes.

LOOK at the Golden Virginia tobaccos used in this choice blend.

TASTE the superior quality of the smoke.

JUDGE how these cigarettes compare even with higher priced brands.

25 nP. for 10
50 nP. for 20

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"जी हाँ, और आप ?"

"मैं रफ़त, करांचीसे। पहले हमारा घर लखनऊ ही था।"

"अच्छा ! कहाँ रहते थे आप लोग ?"

"अमीनाबाद। बड़ी याद आती है कभी-कभी"

बातें लखनऊकी हज़रतगंजकी चौधरी-की चाटकी।

महेशकी सिगरेटसे, रफ़त अपनी सिगरेट सुलगाते हैं, फिर मेरी ओर मुड़ते हैं, "कहिए, यह आपने क्या लड़ाई मचा रखी है !"

"हमने ? यह एक ही रही। शुरुआत तो आपने की थी साहब !"

'अजी, हमने नहीं, हमारे उन बुजुर्गवारने जो वहाँ तख्तपर बैठे हैं। हमारे हाथमें गवर्नमेण्टकी बागडोर आने दीजिए···।"

ठहाका हँसी, आँखोंमें मैत्री।

वहाँ कश्मीरकी वादियोंमें गोलियाँ चल रही हैं, एक मसज़िद खँडहर बन चुकी है। अमृतसरके गुरुद्वाराकी बारी शायद आनेवाली है···

अठारह सितम्बर। कोलम्बिया युनिवर्सिटीके अर्ल हॉलमें, भारतीय विद्यार्थी मण्डलने नये भारतीय विद्यार्थियोंके स्वागतके लिए जलपान-संगीतका आयोजन किया है। हमारे कौन्सुल जनरल डॉ० शान्तिस्वरूप गुप्ता भी आये हैं। स्वागत-भरोसेके दो शब्द बोलते, उनकी धीर-गम्भीर-प्रशान्त वाणीमें सहसा ओज भर आया है—"हम किसीकी एक इंच ज़मीन भी नहीं लेना चाहते, किन्तु हम किसीको अपनी ज़मीनपर पैर नहीं रखने देंगे···तानाशाह अपने देशमें कुछ भी करें। हम अपने देशपर किसीकी तानाशाही नहीं चलने देंगे।

संगीत प्रारम्भ होता है। गीत, हँसी, चुटकुले, ग़ज़ल।

कानोंमें सनोवर फुसफुसाती है, "ये जो ग़ज़ल पढ़ रहे हैं। ये पाकिस्तानी हैं।"

"हाँ, मैं इन्हें जानती हूँ। क्या ग़ज़बका गला पाया है।"

ग़ज़ल खतम होते ही, हॉल तालियोंकी गड़गड़ाहटसे गूँज उठता है, "वन्स मोर··· वन्स मोर···युसुफ़ भाई एक और···अरे, यार आ न सामने···ऐसी आसानीसे छुट्टी नहीं मिलेगी भाई····"

तालियोंका शोर कम होनेके बजाय बढ़ता जाता है। हारकर युसुफ़ अपनी कुरसीपर-से उठते हैं, और माइक्रोफ़ोनके सामने आ, एक और ग़ज़ल शुरू कर देते हैं। पहलेसे भी अधिक मीठी। पहलेसे भी अधिक दर्द-भरी।

सितार वादन। फिर एक गीत, गायकके रूप-रंगसे ही पता चल जाता है कि वह कश्मीरी ब्राह्मण है।

यहाँ भारतीय, कश्मीरी, पाकिस्तानी मिलकर गीत गा रहे हैं, एक दूसरेसे, एक और समोसा खानेका, एक और कोका कोला पीनेका आग्रह कर रहे हैं। वहाँ करांची और कलकत्तामें, जो कुछ वर्ष पहले, एक अखण्ड भारतके, दो बन्दरगाह थे, 'ब्लैक आउट' की तैयारियाँ की जा रही हैं। एक दादा-परदादाके दो बेटे, एक दूसरेके खूनके प्यासे हो रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्यों न भर आये आँखोंमें पानी ! एक बार नहीं । बार, बार-बार-बार····

और राजेन्द्र अवस्थीका पत्र "····खुशी है कि हमारे देशने इस बार बड़े साहसका परिचय दिया है····दिल्लीपर तीन दिनसे लगातार पाकिस्तानी विमान (बमवर्षक) आ रहे हैं पर बाहरसे ही खदेड़ दिये जाते हैं ···"

दिल्लीपर बमवर्षक विमान आ रहे हैं । उनके विमान जो दिल्लीकी धूलमें खेले थे, जिन्होंने दिल्लीका नमक खाया था । उनके विमान जिनके पूर्वजोंने अपने हिन्दू भाइयोंके कन्धेसे कन्धा मिलाकर, लाल क़िलेकी दीवारें खड़ी की थीं । मोती मसज़िद और कुतुब मीनारके स्वप्न देखे थे·····

और टेलिविज़नपर समाचार चल रहे हैं, सामने यूनाइटेड नेशन्सकी सैक्योरिटी काउन्सिलका दृश्य है। विदेशी राजदूतोंके बीच, अपनी जगह बैठे, पाकिस्तानी मन्त्री भुट्टो, मुट्ठी बाँधकर, अपनी पाकिस्तानी अँगरेज़ीमें कह रहे हैं, "····और मि० प्रेसिडेण्ट, मैं यह बात अभी साफ़-साफ़ कह देना चाहता हूँ अगर प्लैबिसाइट नहीं की गयी, तो हम यूनाइटेड नेशन्स छोड़ देंगे····"

टेलिविज़न केसामने, कुरसियोंपर, क़ालीन-पर बैठे दर्शकोंके मुखसे एक ज़ोरका हँसोका ठहाका फूट पड़ता है ।

—ब्लैकमेल !

—छोड़ दो न, इण्डोनेशियाके साथ तुम भी डूब जाओ ।

—चाइल्डिश टैण्ट्रमस् ! जैसे कोई बिगड़ा हुआ बच्चा कहे—दो मुझे जलेबी, नहीं तो मैं यह ख़ूबसूरत गुलदस्ता तोड़ दूँगा ।

—अरे, ज़रा अपने पास बैठे लोगोंको भी तो देख । क्या रूसने कहा है कि जर्मनीका विभाजन समाप्त कर, दोनों जर्मनीको एक कर दो नहीं तो हम यू० एन० छोड़ देंगे ।

—और क्या अमरीकाने कहा है कि हमें कोरिया और वियतनाममें प्रजातन्त्र राज्य स्थापित करने दो, नहीं तो हम यू० एन० छोड़ देंगे,····

किन्तु घूम-फिरकर, बार-बार वही एक बात । अस्पतालका प्रतीक्षा-गृह सफ़ेद दीवारें, कटे नलकी टोंटीवाला वाश-बेसिन, लकड़ीकी हरी बैंच और क़ैंचीसे नाखूनोंके पासकी कड़ी खाल उधेड़ती, वह सूखी-सी मरीज़ा, "कितने दिन और चलाओगे तुम लोग यह लड़ाई ?"

"हम लड़ाई नहीं चाहते हमारा वश चले तो हम इसे आज ही बन्द कर दें ।"

उसकी भूरी-भूरी आँखोंमें तीखा व्यंग्य उभरता है, जैसे कह रही हो—तुम दुबले-पतले, नपुंसक हिन्दुस्तानी ! प्रत्यक्षमें कहती है, "हिम्मत बहुत है पाकिस्तानियोंमें । दे आर वेरी टफ़ ।"

और मेरे मनमें वही पुराना प्रश्न फिर उभरता है—क्यों अमरीकी, पाकिस्तानियोंको मज़बूत और हिन्दुस्तानियोंको डरपोक समझते हैं ? क्या चीनी सेनाओंके सामने झुक जानेके कारण ? क्या तिब्बतसे पैर पीछे हटा लेनेके कारण ? क्या अपने देशके तीन टुकड़े होनेकी बात मंज़ूर कर लेनेके कारण ?

उस दिन अर्ल हॉलके उस बड़े-से कमरेमें जो हिन्दुस्तानी-पाकिस्तानी इकट्ठा हुए थे,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनमें क्या अन्तर था ? उसके चेहरे-मुहरे, लिबास, बोलीमें कहीं ज़रा-सा भी तो फ़र्क़ नहीं था, कोई बताये नहीं, तो यह पहचानना भी असम्भव था कि उनमें कौन हिन्दुस्तानी है और कौन पाकिस्तानी, और संगीत-समारोह-की समाप्तिपर हिन्दुस्तानी और पाकिस्तानी दोनोंकी ही आँखोंमें तो आँसू भर आये थे, जब श्री नेहरूको लक्ष्य कर, मंजु खेतानने मेरे गलेसे गाया था :—

....मेरे मरने पे मनाना ना कभी
झूठी रस्में, धर्म औ' ईमान की—
देना बस कुछ राख गंगा में बहा
जान है जो मेरे हिन्दुस्तान को....

न्यूयार्क]

और इन प्रश्नोंके साथ ही याद आता है—कौटिल्य शास्त्रको पढ़कर, मैकियावैल्लीने 'प्रिंस' की रचना की थी। कूटनीतिकी उस पुस्तकको अपनी बाइबिल बना, पश्चिमीय राज्योंने एशियाके टुकड़े-टुकड़े कर दिये, श्री लंकाको भारतसे काट दिया, ब्रह्मप्रदेशको एक अलग प्रान्त बना दिया, बोर्नियो, कोरिया, वियतनामके दो टुकड़े कर दिये, और भारत-के तीन टुकड़े, क्या अभी भी वह समय नहीं आया है, जब कि भारतवासी अपने उस वैरागी मन्त्रीको, और उसकी नीतियोंको याद करें ? यह याद करें कि उसने हमें कुशकी जड़ें काटकर उसमें मट्ठा डालनेका पाठ सिखाया था।

– सोमा वीरा

...फिर किसलिए यह सब ?

आपने लिखा है "यहाँकी ख़बरोंकी आग वहाँतक भी पहुँचती ही होगी—" पहुँचती ही नहीं झुलसाती भी है रमेश भाई। 'टी०वी०पर देख रेडियोसे सुन और अख़बारों-में पढ़ जो प्रतिक्रिया होती है उसे शब्दबद्ध करनेमें असमर्थ हूँ, कल ही तो पढ़ा....' संयुक्त राष्ट्रसंघके अधिकारी युद्धस्थलपर निरीक्षणको पहुँचे। पाकिस्तानी सैनिक, भारतीय सेना-द्वारा छोड़े गये टैंकोंको घसीटकर ले जानेमें व्यस्त थे—चारों ओर भारतीय जवानों-की लाशें बिखरी पड़ी थीं जिन्हें ठिकाने लगानेका किसीको अवकाश था न चिन्ता—"

एकबारगी सर्वांग विद्रोह कर उठा। आँखोंके आगे कितनी ही सूनी माँग, मासूम चेहरे, सिसकती माँ आ गयी, जले कटे शरीर और नोचते गिद्ध....ठीकसे सोच नहीं पाती—आँसू आ जाते हैं—और जब पढ़ती हूँ कि दोनों ओरकी सेनाएँ वहीं लौट गयी हैं जहाँसे चली थीं, तो चिल्लाकर पूछना चाहती हूँ। फिर किसलिए यह सब ? किसलिए ज़िन्दगीसे खिल-वाड़, मानवताका ताण्डव किसलिए ??? अपनी ही आवाज़की गूँज मनमें घुमड़ती रह जाती है, राजनीतिज्ञ नहीं हूँ—साधारण बुद्धि पायी है, बुद्धिको समझा लेती हूँ—पर हृदय अपनी बेबसी—व्यक्तिकी बेबसीपर छटपटाकर रह जाता है—यह युद्ध, यह रक्तपात सब व्यर्थ लगते हैं।

– सुनीता

स्टोनी ब्रुक]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपका जीवनपथ उज्ज्वल हो!

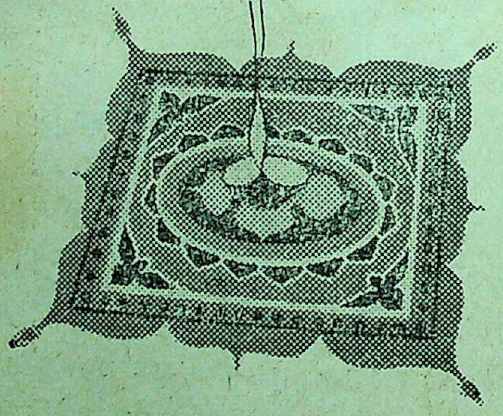

आज के मांगलिक दिन सुख-समृद्धि की अधिष्ठात्री महालक्ष्मी के स्वागत में घर-घर के आँगन-द्वार दीयों से जगमगाते हैं... सर्वत्र उज्ज्वल प्रकाश, परिहास और रंगरलियाँ बिखरे पड़े हैं... सारा वातावरण ही आनन्दविभोर हो उठा है!

यह सारा आनन्द, सारा सुख आपका है—क्योंकि आप सुरक्षित और चिन्तारहित हैं...
क्योंकि बैंक ऑफ़ बरोडा ने आपके भविष्य को सुदृढ़ बनाया है!

सुख-समृद्धि के लिए बचत कीजिए!

दि बैंक ऑफ़ बरोडा लि.

(संस्थापित : सन् १९०८) प्रधान कार्यालय : बड़ौदा

JWT-BB-4005

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बन्धु !···इस सम्बोधनके साथ ही आँखें कविकी ओर उठती हैं। युद्ध-नदके किनारे तुमने भी तो कुछ खोया-पाया होगा ? वीर गाथामें-से न सही युद्ध गाथामें-से तो गुज़रे हैं ?

सन्दर्भ : युद्ध और चिन्तन

क्रिया को छोड़ चिन्तन में फँसेगा।
उलट कर काल तुझको ही डँसेगा। – दिनकर

दिल्ली]

– सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

मेरे पास सिर्फ़ ताज़ी ख़बरें हैं—

युद्धको प्रत्यक्ष परिप्रेक्ष्य और अगले इतिहासके सन्दर्भमें जितना और जैसा मैं देखती हूँ––उसे लिखनेका इस वक़्त कमज़कम धीरज नहीं। युद्धस्थिति इतनी ताज़ी है···· इतने नज़दीकको कि मैं उसपर लिखनेकी बजाय उसे जीना चाहती हूँ····और सुनना पढ़ना जानना और सोचना। मेरे पास सिर्फ़ ताज़ी ख़बरें हैं और कुछ अपनी प्रतिक्रियाएँ –

६ सितम्बर :

मेरे पड़ौस में एक घर जल रहा है
मेरे दरवाज़े पर दीवारें चिन रही हैं
और मेरे आँगन में बाढ़ आ गयी है
पर
कितना अच्छा है कि
आज की दोपहर
दिनों बाद सूरज चमका
मेरी बरफ़ हुई मुट्ठी में रक्तवर्णी जयंति फूली
और मेरे भीतर
ताज़ा ख़ून फिर बहने लगा।

०

युद्ध मनःस्थिति : इन दिनों
ज़मीनमें दूब नहीं उग रही
कि पैर टिके रह सकें

आसमान
कभी नीला
कभी लाल
कभी गुलाबी नहीं हो रहा
कि मन भरम सके

अब ज़रूरत नहीं
कि सूरज दरवाज़े-दरवाज़े दस्तक दे
हम
हर नये दिन को बासी होने तलक
दोहरा तिहरा—चौहरा कर
अख़बार की तरह पढ़े जाते हैं
फिर पूरी तरह फैला देते हैं
कि वह हमें पढ़ ले।

०

युद्ध विराम : अब
शायद खिड़कियाँ खुलेंगी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

१८५९ पृष्ठ
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
जो प्रेमचन्द साहित्य में नये जुड़े हैं, जिनके बिना किसी भी निजी या सार्वजनिक पुस्तकालयका प्रेमचन्द संग्रह पूर्ण नहीं ! उपन्यास, कहानियाँ, लेख, चिट्ठियाँ और एक नाटक भी.....

मंगलाचरण	१५.००
गुप्तधन १	८.००
गुप्तधन २	२८.००
विविध प्रसंग १	७.५०
विविध प्रसंग २	१२.५०
विविध प्रसंग ३	१२.५०
चिट्ठी पत्री १	७.००
चिट्ठी पत्री २	८.००
शबेतार	१.५०

रंगीन सूचीपत्र के लिए लिखिए

हंस प्रकाशन १८, हेस्टिंग्स रोड, इलाहाबाद-१

ओ० आर० सि० एल० लि:,

कुमारेश

लिवर और पेट की बीमारिया में

सोरालफा-डार्मिन

जले, कटे, घाव एवं यावतीय चर्म-रोगों में

पेनरसिल्

दर्द और कष्ट में मालिश के लिये

अशोक कर्डियल

महिलाओं की महोपकारी महौषध

कुमारेश हाउस, हावड़ा-६

CC-0. In P... Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दरवाज़े उघड़ जायेंगे
हमारे नगर में रात-भर रोशनी जलने लगेगी
सड़कें दुकानें और दरख़्त
खुशहाल नज़र आयेंगे

दिल्ली]

अब
आराम है—
आज हमने इकट्ठा बहुत से पाथ-पुत्रों
का श्राद्ध कर लिया।

– कुंकुम जोशी

युद्ध : एक अनिवार्यता

यदि बर्बरता ख़ून के नशे में क़ैद है
तो युद्ध का इलाज केवल युद्ध है
—शान्ति नहीं।
रोको मत आततायी पर उठे दोनों हाथ
होने दो युद्ध
और मिटने दो हमलावर और धर्म की
अधार्मिक दुन्दुभी की विश्व-
व्यापी चिल्ल-पों,
ठोक दो कीलें मुँह पर
और हज़ार वर्षों की तवारीख़ को गन्दी
करने की
चुनौती देने वालों को
हज़ार सेकिण्डों से भी कम समय में
मिला दो मिट्टी के ढेरों में चुपचाप !
होने दो
—बर्बरता के विरोध में यदि होता है
युद्ध तो होने दो,
होने दो !!

नयी दिल्ली]

– जगदीश चतुर्वेदी

अग्निके आर-पार : सच

उगते अंकुरों का
मरण
पर-कटे कपोतों का
रुदन
शान्ति की सीमाओं पर सुलगते
युद्ध के अंगार
अब मुझे विचलित नहीं करते
क्यों कि
जीवन और मरण
आशा और निराशा
समर और शान्ति
सब
एक ही आकृति के दो अक्ष
स्याह और सफ़ेद दो रंग
जिनसे
यथार्थ का चित्र अंकित होकर
इस चुनौती का उत्तर
देता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि
निराशा के बिना आशा
मरण के बिना जीवन
और
समर के बिना शान्ति
सब
अधूरे हैं

नई दिल्ली]

– हिमांशु जोशी

विधान सभाकी ओर देखते ही लगता है युद्धका सीधा सम्बन्ध है पत्रकारोंसे। पूछनेको मन है : पाकिस्तान चीनी अजगरके वटवृक्षको छाँह समझकर आकाश छूनेकी कोशिश कर रहा है। क्या उसका चिन्तन ही उसे डुबा नहीं देगा ?

पाकिस्तानका विचार-व्यवहार जन्मजात नफ़रत ही है

भारतपर जब सन् १९६२ में चीनने आक्रमण किया तो पाकिस्तान ही एक मात्र ऐसा पड़ोसी देश था जिसने चीनका समर्थन किया था और चीनका उसका यह समर्थन जो अर्थ रखता था उसे भी स्पष्ट होनेमें देर नहीं लगी। उसने हज़ारों वर्गमील हमारी कश्मीर-की वह भूमि जो उसने बलात् आक्रमण कर अपने क़ब्ज़ेमें कर रखी है चीनके सुपुर्द कर दी। यही नहीं, चीन और पाकिस्तानकी यह साँठ-गाँठ और स्वार्थपरक मित्रता अब दिन-दिन नये-नये गुल खिला रही है। एक ओर पाकिस्तान पश्चिमी राष्ट्रों द्वारा-संरक्षित सीटो और नाटो सैन्य सन्धियोंमें बँधा हुआ है तो दूसरी ओर उक्त संगठनोंके विरोधी चीनका हमदर्द और साथी बन गया है। अमरीकासे पाकिस्तानने बेशुमार आर्थिक और सैन्य सहायता प्राप्त की। सैन्य सहायता उसे कम्यु-निस्ट देशों-द्वारा आक्रमणकी स्थितिमें बचावके लिए दी गयी थी, उसके साथ ही यह स्पष्ट शर्त भी थी कि वह किसी भी हालतमें इस सैन्य सामग्रीका भारतके खिलाफ़ उपयोग नहीं करेगा। किन्तु बात बिलकुल उलटी हुई। कम्युनिस्ट चोनसे तो उसने दोस्ती कर ली और अमरीकाके उन्हीं हथियारोंसे जो उसे भारतके खिलाफ़ उपयोगमें लानेपर पाबन्दी थी उसने डंकेकी चोटपर एक बड़े और व्यापक युद्धके रूपमें आक्रमण कर दिया, इतना ही नहीं खूब जी खोलकर पूरा युद्ध भी लड़ लिया। फिर ख़ूबी यह रही कि इस पाबन्दीका उल्लंघन किये जानेपर भी अमरीका उसे युद्धसे रोकनेकी तो कहें कौन मना भी नहीं कर सका।

इस प्रकार पाकिस्तान निर्माणके प्रारम्भिक दिनोंसे हम देखते हैं कि भारतके साथ उसका जो विचार-व्यवहार रहा है वह जन्मजात नफ़रतका ही है। जिन विचारोंकी पृष्ठभूमिमें उसका निर्माण हुआ उसका पूरा-पूरा अनुसरण पाकिस्तानके शासकोंने किया है और उसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

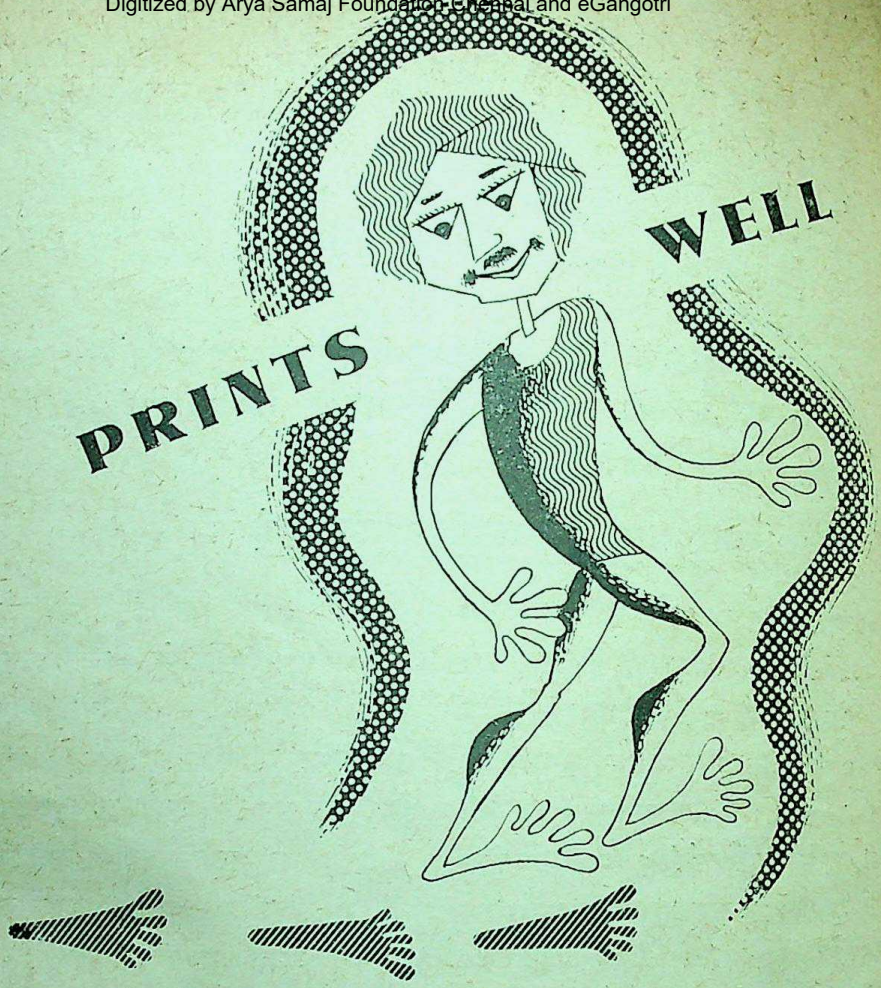

GOOD ADVERTISEMENT
SELLS
GOOD
BUSINESS

ALLOW **EAGLE** TO DO THE NEEDFUL

FOR
PHOTO-OFFSET
BLOCK-MAKING

THE EAGLE LITHOGRAPHING CO.
PRIVATE LIMITED
26B, CHRISTOPHER ROAD, CALCUTTA-46

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्मदाता क़ायदे आजम जिन्नाकी विरासत रूप आज भी उसके वर्तमान शासक उसे निभा रहे हैं। इस स्थितिमें भारत शान्तिका इच्छुक रहनेपर भी उसे क़ायम कैसे रखे यह एक प्रश्न उसके सामने सदा रहा है और आज भी है। भारत एक शान्तिप्रिय देश है, वह संघर्ष और युद्धमें विनाशको देखता आया है, वह इससे बचना चाहता है और यही वजह है कि उसने शान्ति पथका अवलम्ब लिया है। किन्तु पिछले अनुभवोंसे यह भी सिद्ध हो गया है कि हमारी सतत शान्ति-प्रियता दूसरोंकी दृष्टिमें विशेषकर हमारे पड़ोसी पाकिस्तानकी दृष्टिमें एक कमज़ोरीकी बात बन गयी। पाकिस्तान जब-तब हमें भड़काता रहता था, और हम उसकी आक्रामक कार्र-वाइयोंको सद्भाव और शान्तिके सन्दर्भमें देखनेके ही अभ्यासी बन गये थे। किन्तु, हमारी यह अभ्यास स्थिति हमारी कमज़ोरीका कारण नहीं थी, अपितु हम संघर्ष और युद्धसे न केवल स्वयं ही बचना चाहते थे शान्तिके हितमें पाकिस्तानको भी बचाना चाहते थे। किन्तु, पाकिस्तानने अपने नये साथी और सरपरस्त चीनकी शह और सहायतासे जो हौसला किया आखिर उसका मुक़ाबिला तो हमें करना ही चाहिए था।

पाकिस्तानके इस आक्रमणका भारतने जिस वीरोचित ढंगसे मुक़ाबिला किया वह आधुनिक कालके इतिहासका एक स्वर्णिम अध्याय होगा। हमने पाकिस्तानकी इस विपुल और सुदृढ़ सैन्य शक्तिको, जो अमरीका-जैसे युद्ध-निष्णात देश-द्वारा उसे प्रदान की गयी थी न केवल नष्ट-भ्रष्ट कर दिया वरन् हमारे स्वदेशमें निर्मित हथियारों एवं जेट वायुयानोंकी युद्धक्षमताकी समस्त विश्वमें साख भी जमा दी। फिर हमारे जवानोंने जिस कौशलसे युद्ध लड़ा और उसमें भी हमारी थलसेनाने तथा वायुसेनाके नवजवानोंने जो रणकौशल दिखाया वह भी आधुनिक कालके युद्ध इतिहासमें अद्वितीय ही रहेगा। समस्त देशमें भी जो एकता और राष्ट्रीयताका स्वा-भिमान इन दिनों जागा उसे देख जान पड़ता है जैसे हिमालयसे कन्याकुमारी तक और जगन्नाथपुरीसे द्वारका तकका भारत आज एक राष्ट्र, एक क़ौम, एक धर्म और एक आदर्शका अनुवर्ती बन गया है। युद्धमें हमें विजय प्राप्त हुई है यह तो हमारे गौरवके अनुकूल है ही इससे भी अधिक गौरवातीत हमारे देशकी वर्तमान अवस्था है जिसमें चारों ओर सर्वत्र सद्भाव, शान्ति, सौहार्द और सहयोगात्मक प्रवृत्तियोंका सागर लहलहा रहा है। इसे हमें क़ायम रखना है और इसकी उत्ताल तरंगोंसे हमारे मोरचोंपर युद्धरत जवानोंको उल्लसित और उत्साहित करते रहना है।

जबलपुर]

– सेठ गोविन्ददास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाकिस्तानके नग्न-आक्रमणके फलस्वरूप भारतके समक्ष जो परिस्थितियाँ उत्पन्न हो गयीं उनका साहसपूर्वक सामना करनेके लिए भारतीय सेनाके पराक्रमी जवानोंका रणक्षेत्रमें उतरना अनिवार्य था किन्तु, युद्धक्षेत्रमें उतरनेका जो निर्णय लिया गया वह कोई आकस्मिक अथवा अविचारित निर्णय न था। उस निर्णयके पीछे तर्क, विवेक, संयम और ज्ञान था। अगर पाकिस्तानके नग्न आक्रमणके पश्चात् भारतीय सेनाके पराक्रमी जवानोंको रणभूमिमें उतारनेका निर्णय न लिया गया होता तो शायद इतिहास हमें कभी क्षमा न करता और स्वाधीनता—जो अगणित बलिदानों और संघर्षोंके बाद प्राप्त हुई थी शायद हमारे हाथोंसे निकल जाती। इतिहासकी धाराएँ मुड़ जातीं और आनेवाली पीढ़ियाँ हमारी दुर्बलताओं और निष्क्रियताओंका उपहास करतीं। स्वत्व और स्वाधीनताके रक्षार्थ संग्राम करना भारतका परम्परागत धर्म रहा है। प्रायः पाँच सहस्र वर्ष पूर्व कुरुक्षेत्रके मैदानमें जब पाण्डवों और कौरवोंकी सेनाएँ युद्धके उद्देश्यसे रणक्षेत्रमें एक-दूसरेके सामने उपस्थित हुई थीं तो महावीर अर्जुनके मस्तिष्कमें भी वही भाव आये थे जो फ्रांसीस यूरके मस्तिष्कपर युद्धकी प्रतिक्रियाओंके फलस्वरूप प्रतिबिम्बित अथवा अंकित हुए थे। यूरने लिखा है —

युद्ध और युद्ध के बाद
दोनों दल थक कर
स्वीकारते हैं शान्ति
किन्तु क्या मिलता है मुझे तुम्हें जनता को?
नये-नये टैक्स, हर घर विधवाएँ,
कटे हुए पावों की बैसाखी,
और क़र्ज़, गले पर, नाख़ून सरीखा?

महाभारतके युद्धसे पूर्व महावीर अर्जुनने श्रीकृष्णसे कहा था—'हे श्रीकृष्ण! जो लोग युद्धके उद्देश्यसे यहाँ एकत्र हैं वे मेरे ही कुटुम्बी, भाई-बन्धु, आचार्य और कुलके लोग हैं। उन्हें मारनेसे मेरे ही कुलका नाश होगा और कुलका नाश होनेसे स्त्रियाँ पथ-भ्रष्ट होंगी। वर्णसंकर सन्तान होगी जो पितरोंका श्राद्ध नहीं करेगी। इस प्रकार कुलक्षयके दोषका मैं भागी बनूँगा। अतः मैं युद्ध नहीं करूँगा।" अर्जुनके इस निश्चयसे भगवान् श्रीकृष्णको बड़ा ही आश्चर्य हुआ और उन्होंने उसका मोह, शोक एवं संशय दूर करते हुए श्रीमद्भगवद्गीताका उपदेश दिया। श्रीकृष्णने कहा कि क्षत्रियका धर्म है—युद्ध करना। अगर तुम युद्धमें वीरगति प्राप्त करोगे तो स्वर्गका सुख भोगोगे और विजयी होओगे तो इस संसारका राज्य भोगोगे। अतः तुम अपने अधिकारकी रक्षाके लिए युद्ध करो। जिनके लिए तुम शोक या मोह करते हो वे समस्त योद्धा पहले ही मारे जा चुके हैं। तुम्हें तो केवल निमित्त मात्र बनना है। तुम्हारा अधिकार केवल कर्म तक सीमित है, फलमें तुम्हारा कोई अधिकार नहीं। फलकी चिन्ता किये बिना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्म करो।

श्रीकृष्णने रणभूमिमें अर्जुनको ७०० श्लोकोंकी जो गीता सुनायी उसमें कर्मयोग, ज्ञानयोग और भक्तियोगकी समस्त बातें उन्होंने बता दीं। श्रीकृष्णने कहा—"अर्जुन! इस संसारमें सज्जनोंके परित्राण और दुर्जनोंके विनाशके लिए मैं जन्म लेता हूँ। तुम विश्वास रखो, इस जीवात्माका कभी विनाश नहीं होता। यह अजर-अमर और अविनाशी है। मनुष्य जिस प्रकार पुराने वस्त्रोंका परित्याग कर नवीन वस्त्र धारण करता है उसी प्रकार जीवात्मा भी जीर्ण-शीर्ण कलेवरका त्याग कर नवीन शरीर धारण करता है। अतः बुद्धिमान् लोग इसके लिए शोक नहीं करते।"

श्रीकृष्णके बहुत समझानेपर भी जब अर्जुनका शोक और मोह नहीं गया तो उन्होंने भक्तपर कृपा कर अपने विराट् स्वरूपका दर्शन कराया। युद्धमें स्वयं अर्जुनके रथका संचालन किया और उसे विजयका मार्ग प्रदर्शित किया। १८ दिनोंके युद्धका परिणाम यह निकला कि दोनों पक्षोंके बड़े-बड़े योद्धा रणभूमिमें खेत रहे और विजयश्री प्राप्त होनेपर भी पाण्डवोंको हिमालयकी ओर प्रस्थान करना पड़ा किन्तु, धर्म, नीति और न्यायके समक्ष अधर्म, अनीति और अन्यायकी पराजय हुई।

महाभारतके इस विनाशकारी युद्धको टालनेकी कुछ कम चेष्टाएँ नहीं की गयीं। स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण शान्तिदूत बनकर कौरवोंकी सभामें गये और पाण्डवोंकी ओरसे उन्होंने सन्देश दिया कि यदि कौरव उन्हें केवल पाँच ही गाँव दे दें तो सन्धि हो सकती है किन्तु कौरवनरेश दुर्योधनने कहा, "हे केशव! सूईके अग्रभागके बराबर भूमि भी पाण्डवोंको नहीं मिलेगी।" कौरवोंके इस उत्तरको सुनकर पाण्डवोंको महाविनाशकारी युद्धके लिए प्रस्तुत होना पड़ा। कुछ ऐसी ही बात श्रीराम-रावण युद्धके सन्दर्भमें भी हुई थी। अगर रावणने सुधी जनोंके परामर्शको मानकर सीताको ससम्मान श्रीरामके पास लौटा दिया होता तो वह युद्ध न हुआ होता। उदाहरण केवल रामायण और महाभारतके ही पर्याप्त नहीं होंगे। अनेक युद्धोंका मूल कारण आक्रमणकारीका दुराग्रह रहा है। आक्रमणकारी प्रायः अविवेकी और दुराग्रही होते ही हैं। इतिहासकारोंने ब्रिटिश प्रधान मन्त्री स्वर्गीय चैम्बरलैनकी बड़ी आलोचना की है क्योंकि नूरेम्बर्गमें उन्होंने दुराग्रही, युद्धोन्मत्त और अविवेकी तानाशाह हर हिटलरके समक्ष शान्तिके लिए आत्म-समर्पण कर दिया था किन्तु, उस आत्म-समर्पणकी ज्वालासे द्वितीय विश्वयुद्धके विजयी योद्धा चर्चिलका जन्म हुआ और लोकतन्त्रवादी शक्तियोंने एक होकर जब फ़ासिस्ट और ताज़ी शक्तियोंपर हमले किये तो हिटलर और मुसोलिनी दोनोंका पतन हुआ। साथमें जापानको भी अपमान और पराजयका घूँट पीना पड़ा। इतिहासमें और भी दृष्टान्त हैं जो यह सिद्ध करते हैं कि विनाशकारी परिणामों और सम्भावनाओंके बावजूद युद्ध कभी-कभी अनिवार्य हो जाता है। द्वितीय महायुद्धके समय सोवियत रूसके लोग युद्धमें उलझन नहीं चाहते थे किन्तु, हिटलरकी फ़ासिस्ट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेनाओंने जब अकारण आक्रमण कर दिया तो लाखों-लाख रूसियोंको युद्ध-देवताके चरणोंमें अपनी बलि चढ़ानी पड़ी। स्टालिनग्राड तक उन्हें स्वतन्त्रताकी रक्षाके लिए संघर्ष करना पड़ा।

वर्त्तमान भारत पाक-युद्धके सन्दर्भमें भी यह बात विचारणीय है कि कश्मीर घाटीपर पाकिस्तानके नग्न आक्रमणके पश्चात् क्या भारतके समक्ष ऐसा कोई मार्ग या विकल्प था जिसे अपनानेसे वह युद्धकी बरबादियोंसे बच सकता था? संयुक्त राष्ट्रसंघके मुख्य पर्यवेक्षक जनरल राबर्ट निम्मोके प्रतिवेदनपर आधारित महामन्त्री श्री ऊथान्तके प्रतिवेदनसे यह स्पष्ट हो गया है कि ५ अगस्त १९६५ को जब कश्मीर घाटीमें हज़ारोंकी संख्यामें असैनिक वेशधारी पाक सैनिकोंने आक्रमण और विध्वंसके उद्देश्यसे प्रवेश किया तो भारतके समक्ष आत्मरक्षाके लिए युद्ध करनेके अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं रह गया। आक्रमण भारतने नहीं बल्कि पाकिस्तानने किया और युद्धके विस्तारके लिए भी वही उत्तरदायी रहा है। भारतने आक्रमणका सशस्त्र प्रतिरोध अवश्य किया किन्तु युद्धको आमन्त्रण देनेवाला पाकिस्तान ही है। ऐसी स्थितिमें युद्धके कारण दोनों देशोंके निवासियोंकी धन-जनकी जो क्षति हुई है उसके लिए मूलतः पाकिस्तान ही उत्तरदायी है।

– अनन्त मिश्र

तीन सप्ताहमें पाकिस्तान पंगु हो गया है

"अब सन् '६२ का ज़माना नहीं है। यह १९६५ है।" यह उद्गार आज भारतके सरकारी नेताओंसे लेकर जनताके साधारण स्तर तकके व्यक्तिके मुँहसे निकलना आम बात हो गयी है। राष्ट्रके जन-जनमें यह दृढ़ मनोबल ही वास्तवमें प्रतिरक्षाका सबसे सुदृढ़ कवच होता है। युद्धमें अस्त्र-शस्त्र नहीं, मनुष्य लड़ता है और यदि सच्ची बात कही जाये तो मनुष्यके पीछे उसका मनोबल लड़ता है। यह मनोबल राष्ट्रका ही मनोबल है।

सन् '६२ में चीनी आक्रमणके समय जो मनोबल दब-सा गया था, आज वह सुस्पष्ट रूपसे उभर कैसे गया? इसके पीछे तीन वर्षोंकी लगातार कठोर कर्ममय जीवनकी प्रेरणादायी कहानी है जिसने राष्ट्रको न केवल अपने देशमें बल्कि समस्त एशियामें एक शक्तिशाली पौरुषके रूपमें सामने ला दिया है। इस कथनकी जाँच, गत सितम्बर महीनेके २२ दिनोंके भारत-पाक युद्धमें हो गयी है।

अल्पकालकी सूचना पाकर जिस तरह हमारे सैनिक नेताओंने पाकिस्तानके आक्रमणको विफल बनानेकी योजना बना डाली और उस आक्रमणको विफल ही नहीं, बल्कि पीछे धकेल भी दिया, वह सैनिक इतिहासमें अविस्मरणीय रहेगा। सैनिक नेताओंने लड़ाईको दुश्मनकी ज़मीनपर ही सीमित रखकर अपनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूरदर्शिता एवं कुशलताका एक और उदाहरण प्रस्तुत किया। इन तीन सप्ताहोंकी लड़ाईने, पाकिस्तानको जो 'पंगु' बना दिया है, उसकी स्पष्ट छाप भारतीय जनतापर पड़ी है और वह यह पड़ी है कि भारतको, जो कोई भी और जब चाहे आँखें नहीं दिखा सकता। यही कारण है कि इस बार भारतीय जनतामें यह इच्छा बलवती होने लगी कि यह लड़ाई पाक अधिकृत कश्मीरको सम्पूर्ण रूपसे अपने क़ब्ज़ेमें लेकर ही रुके। अनेकोंकी इच्छा तो लाहौरकी सड़कोंपर सैर करनेकी भी होने लगी।

राष्ट्रके मनोबलको जाँचनेका दूसरा अवसर तब आया, जब कम्युनिस्ट चीनने १७ सितम्बरको भारतको 'गम्भीर परिणाम' भुगतनेके लिए अन्तिमेत्थम् दिया। इस समय तक भारतीय जनता मनसे तैयार हो चुकी थी, इसलिए सन् ६२ के आक्रमणकी दहशत समाप्तप्राय थी। और जब चीनने अन्तिमेत्थम्की अवधिमें तीन दिनकी वृद्धि कर दी तो लोगोंको प्रतीत हुआ कि 'चीन अब लड़ना नहीं चाहता।' कारण कुछ भी हो।

जिस प्रकार भारतीय जनताके मनमें शत्रुके किसी भी आक्रमणका सामना करनेके लिए धीरे-धीरे तैयार होती गयी, उसके पीछे निश्चित रूपसे प्रतिरक्षा, साज सामानके क्रमवर्द्धमान उत्पादनसे संचित सैन्य शक्ति है। सन् ६२ में ही स्वतन्त्र भारतको प्रथम बार ऐसा अनुभव हुआ कि उसपर कोई आक्रमण भी कर सकता है। इसके पूर्व सिद्धान्तों एवं आदर्शोंकी 'मोहजाल' से हम छुटकारा नहीं पा सके थे। अब हम यह मानने लगे हैं कि सिद्धान्तों एवं आदर्शोंपर क़ायम रहनेके लिए राष्ट्रका बलशाली होना ज़रूरी है। तब, पहली बार स्वतन्त्र भारत शक्ति-संचयकी दिशामें अभिमुख हुआ।

कलकत्ता]

– अमरेन्द्र सिन्हा

युद्ध-नदके किनारे कुछ दोस्त अख़बार बिछाकर बैठ गये हैं। इस देश और उस देश और उस-उस देशमें जो-जितने नयी पीढ़ीके हैं, वे सब वक़्तकी अख़बारगाहमें पैर लटकाये हैं। एक आवाज़ आती है—आनेवाली पीढ़ी राजनीति, कूटनीति और युद्धसे वैसी ही नफ़रत करेगी जैसी नयी पीढ़ीके मनमें धर्म, नैतिकता और ईश्वरके प्रति दिखाई देने लगी है··· लेकिन एक और भी सवालिया आवाज़ गूँज रही है : नयी पीढ़ीके सामने कई समस्याएँ हैं, एक यह भी कि उसका सापेक्ष चिन्तन उसे किसी भौगोलिक राष्ट्रीयतामें बँधने नहीं देता—परन्तु यह लड़ाई राष्ट्रीयताकी लड़ाईसे अधिक आस्था और अस्तित्वकी लड़ाई है—क्या इस युद्धके प्रति इस पीढ़ीकी जो सहमति है वह ऊपरवाले दूसरे कारणसे नहीं है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

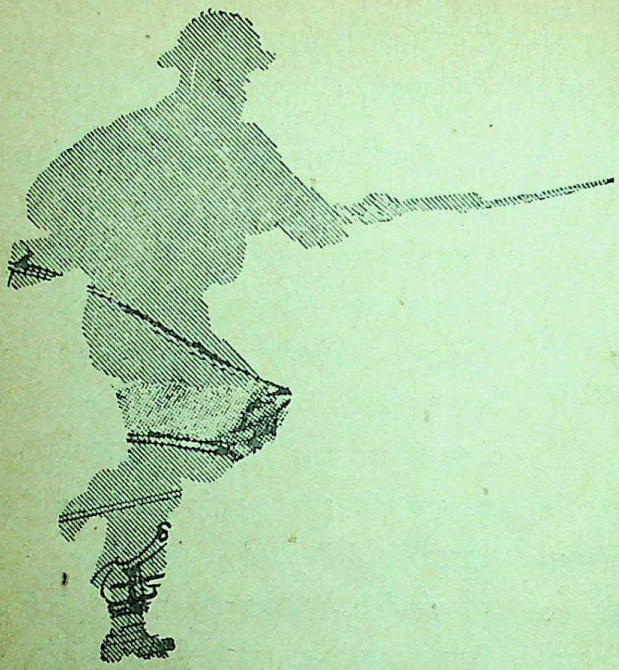

WITH FIRM HEARTS

WITH FIRM MINDS

WITH FIRM HANDS—

WITH ALL FIRMNESS

LET US GUARD THE

SACRED SOIL OF OUR

MOTHERLAND.

DONATE LIBERALLY TO

NATIONAL DEFENCE FUND

Issued in the interests of the nation by :

M|s S. N. Bagla & Co.

5. Clive Row

CALCUTTA-1

•

Phone : 22-8275 :: 22-2748

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाकिस्तानकी नयी पीढ़ी इस समूची दुर्घटनामें अपने-आपको मूर्ख महसूस करती होगी···

युद्धसे आनेवाली पीढ़ी ही क्यों, यह पीढ़ी भी घृणा करती है। किन्तु मुट्ठी-भर लोगोंकी नफ़रतसे होता क्या है! कोरी घृणासे किसी भी विकृतिका शमन नहीं होता।

मैं समझता हूँ, पाकिस्तानकी नयी पीढ़ी इस समूची दुर्घटनामें अपने-आपको निश्चित रूपसे मूर्ख महसूस करती होगी पर लगता है युद्धसे छुटकारा, इस पीढ़ीको तो नहीं ही मिलेगा। आर्थरव्लेयर कहा करता था—दुनियाकी हर बुराईका एक ही कारण है सत्ताका समझदार लोगोंके हाथमें न होना। हर युगमें दो चार पागल कुत्ते, षड्यन्त्र करके दुनियाके किसी-न-किसी भागके शासक बन जाते हैं। मैं ऐसे लोगोंको अन्तर्राष्ट्रीय गैंगस्टरकी संज्ञा देता हूँ। द्वितीय महायुद्धमें हिटलर और मुसोलिनी ऐसे ही पागल कुत्ते थे अब अयूब और माओ हैं जिनकी मानसिक विक्षिप्तिका यह परिणाम है कि पिछले दस वर्षोंसे दुनियाका सन्तुलन बिगड़ा हुआ है।

दरअसल मनुष्यकी उच्चता या श्रेष्ठताके विषयमें जो कुछ कहा गया या कहा जाता है वह उसपर तभीतक घटित होता है जबतक कि वह संयत है अन्यथा उसके विषयमें दी गयी सभी भविष्यवाणियाँ इस एक कथन "मैन इज़ प्रोन टु ईविल"-द्वारा खण्डित हो जाती हैं और स्पष्ट समझमें आने लगता है कि वह मूलतः बर्बर एवं नृशंस है—मनोविज्ञानकी भाषामें—परपीडक। ऐसा न होता तो दुनियाका इतिहास युद्धोंसे न भरा होता।

आश्चर्य होता है सोचकर फिर पिछले आठ सौ वर्षोंमें रूसने अपने तीन सौ साठ, स्पेनने तीन सौ तीस, पौलेण्डने चार सौ चौंसठ, ग्रीसने चार सौ छप्पन, इंगलैण्डने चार सौ अड़तालीस, फ्रान्सने चार सौ, हालैण्डने चार सौ बत्तीस, रोमने तीन सौ अट्ठाईस, आस्ट्रियाने तीन सौ बीस, इटलीने दो सौ अट्ठाईस तथा जर्मनीने एक सौ चवालीस वर्ष केवल युद्ध करते हुए बिताये हैं।

हो सकता है ये आकड़े पढ़कर आनेवाली पीढ़ी कोई ऐसा हल खोज पाये जिससे पृथ्वीपर-से युद्धोंकी परम्परा ही नष्ट हो जाये।

चीनी आक्रमणके बादसे हम स्वतन्त्रताका अर्थ जान गये हैं। यह और बात है कि हमारी आन्तरिक स्थिति अभी भी शोचनीय है और स्वतन्त्र देशके एक भी लक्षण हमें भरतभूमिमें उपलब्ध नहीं होते। किन्तु फिर भी परतन्त्रतासे 'ग़लत स्वतन्त्रता' हर स्थितिमें श्रेष्ठ होती है इतना कमसे कम हमारी समझ में आ गया है। इसीलिए हमने पाकिस्तानकी चुनौतीको स्वीकार कर लिया है।

आत्मरक्षासे बड़ा कोई धर्म नहीं इसलिए (इस सन्दर्भमें कुन्तीका अपने बेटोंकी लाशपर खड़े होकर सूखी बेर तोड़नेवाला दृष्टान्त पर्याप्त होगा) नयी पीढ़ीकी लड़ाई हर उस वस्तुसे है जो मनुष्यको मनुष्य बने रहने देनेमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाधा उत्पन्न करती है और युद्ध उन तमाम बाधाओंमें सबसे अधिक गर्हित एवं घृणास्पद बाधा है। दुर्भाग्यसे पाकिस्तान बजाय इसके कि वह इस देशकी मानवीयताको समझ पाता, बराबर इस देशकी खिल्ली उड़ाता रहा किन्तु पाकिस्तानके इस रवैयेको बचकाना कहकर टाला जा सकता था अगर वह आक्रान्ता न बनता। सचमुच यह लड़ाई संकीर्णताके विरोधमें ही है किन्तु इस दुर्घटनाके साथ ही एक विश्ववाली कल्पना भी नयी पीढ़ीको खोखली लगी है। वरना क्या कारण है कि अमेरिका अथवा सुरक्षा परिषद्का रुख स्पष्ट न होने तक इस देशके बुद्धिजीवीकी यह समझमें ही न आया कि उसकी प्रतिक्रिया क्या होनी चाहिए। दूसरे देशोंकी राय विशेषरूपसे शक्तिशाली (तथाकथित) देशोंकी राय हमारी प्रतिक्रियाका मानक (Sladesci) बने इससे बड़ा दुर्भाग्य और क्या होगा। नयी पीढ़ीको इस विषयमें सोचना ही नहीं कुछ करना भी चाहिए।

नयी दिल्ली]

– कैलाश वाजपेयी

इस लड़ाईमें मेरा मित्र सोनाने मारा गया···

लड़ाईके दौरान दिल काफ़ी ग़मगीन रहा। मजबूरी और इनसानियतके कारण कितना नुक़सान हो गया हमारा। महज़ इसलिए कि एशियामें हमलोग आगे बढ़ न पायें। हम सदाके लिए सामन्तशाहीकी ही तरह आर्थिक दासतासे अपना पीछा छुड़ाना चाहते थे लेकिन एशियामें एशियन आपसमें लड़ें और पाकिस्तानी मोहरें हमारे घरमें गिरीं और आज हम अपनी तरक़्क़ीसे पीछे हटनेपर मजबूर हुए। लोगोंमें काफ़ी जोश था लेकिन इस जोशमें ऐतिहासिक भूलोंकी परछाईं थी। इस परछाईंपर कैसे चोट करें कि वह टुकड़े-टुकड़े हो जाये। हमेशाके लिए मिट जाये। इनसान इनसानके रूपमें दिखे, रहे और चमके।

लेकिन आज कोई उम्मीद नहीं। तरक़्क़ी और ज्ञान शायद हमें बहुत दूर नहीं ले जायेगा। इसके लिए किसी और ताक़तकी आवश्यकता है? वह क्या हो? क्या है? इसपर सोचना होगा। सोचा गया है लेकिन कोई चीज़ है जो इसे दबाते आ रही है। वह कौन-सी ताक़त है जो इसे दबाती है?

इसके जवाबके लिए दुनियाके तमाम राजनीतिज्ञोंको इनसानियतके कटघरेमें खड़े रखा जा सकता है जिनके दिल-दिमाग़में डर, स्वार्थ और हिंसा है। इस लड़ाईमें मेरा मित्र सोनाने मारा गया।

मुझे, हम सबको लड़ाईसे नफ़रत है। लेकिन लगता है कि अब यह खेल शुरू हो गया है जो हमेशा हमें ग्रसित रखेगा।

दोस्त साहित्यकारोंको, विशेष कर हमारे साहित्यकारोंको वादों, कुण्ठाओंसे अलग हटकर समाजके इस पहलूपर सोचना होगा। सोचा जाना चाहिए।

रायपुर]

– मिर्ज़ा इस्माइल बेग़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न बहुत ही गम्भीर है। यह लड़ाई केवल लड़ाई ही नहीं है। न यह मुझे सिर्फ़ युद्धके प्रयत्नों और उसके परिणामोंके बारेमें सोचनेको बाध्य करती है, बल्कि उससे भी गहरी समस्याएँ और गहरे भविष्य-मूल्य इस युद्धसे जुड़े हुए हैं। ऊपरी तौरपर लड़ाईके फ़ैसले बड़े आसान दीखते हैं लेकिन क्या सिर्फ़ उन फ़ैसलोंपर विश्वास करके निश्चिन्त हुआ जा सकता है? मेरा खयाल है—सूत्र हमारे हाथसे निकल गये हैं। हमने शान्तिकी जितनी ऊँची कमन्द फेंकी थी वह बेकार साबित हो गयी है। हम दूसरोंको समझा नहीं सकते। समझनेवालेके पास भी बुद्धि, संयम और मर्यादा अवश्य होनी चाहिए। अन्यथा हम किसे समझायेंगे। ऐसी स्थितिमें युद्धका हमारे लिए एक बहुत बड़ा नैतिक मूल्य है। उतना बड़ा नैतिक मूल्य पिछले दो महायुद्धोंमें किसी भी पक्षके पास नहीं था।····

····मैं समझता हूँ कि युद्धकी इस सारी यन्त्रणाके हम सदा साक्षी-भर रहेंगे। हममें-से कोई नीत्से फिर निकल आयेगा और सारे सूत्र हाथसे निकल जायेंगे। यह यन्त्रणा मनुष्य-की अस्तित्व-सिद्ध नियति है—ऐसा सोचते हुए मुझे स्वयं डर लगता है। किन्तु क्या इससे सचाईको छिपाया जा सकता है! यह अवश्य है कि यदि आनेवाली पीढ़ियोंको या स्वयं हमारी पीढ़ीको राजनीतिकी निरर्थकताका भान होना शुरू हो जाये तो भविष्य-मूल्यों-की परिकल्पनाएँ धीरे-धीरे नया रूप लेने लगेंगी। जनमत अपनेको इतना छोटा और इतना निस्सहाय नहीं महसूस करेगा। तब शायद जीवन-मूल्यों (और साथ ही कला-मूल्यों) की रचना अधिक सशक्त और जीवन्त होगी।····इस स्तरसे सोचनेके बाद राष्ट्रीयता या भौगोलिक सीमाओंका कोई महत्त्व नहीं रह जाता। लेकिन जो अहंकार, स्वार्थ या अन्तर-सम्बन्ध भूगोल या राष्ट्रकी सीमाओंमें हर क्षण विकसित होते चलते हैं उनको रोकना इतना आसान नहीं है। जो निःस्वार्थ भावसे सोचते हैं उनकी संख्या बहुत कम है। यानी कि जिनका स्वार्थ अपने 'मैं' के प्रति भी नहीं है। ऐसे ऋषि या पागल कितने हैं···? इस सबके बाद भी एक समग्र यन्त्रणामें हमारा विश्वास होना ही चाहिए। तभी हम मूल्योंकी रक्षाके लिए समृद्ध रहेंगे। 'युद्धस्व विगतज्वरः' में शायद उसी महामन्त्रणाकी ध्वनि निहित है। मूल्योंके लिए युद्ध और युद्ध, युद्धसे छूटनेके लिए। यह सम्भव नहीं कि इतनी आसानीसे इसे हम किसीको समझा सकेंगे। सम्भवतः इस तरहकी यन्त्रणामें विश्वास करने-के बाद युद्ध किसी सेनाध्यक्षका या राष्ट्रपति-का प्रधान मन्त्रीका युद्ध नहीं रह जाता। वह राष्ट्र और भूगोल और राजनीतिकी सीमाओंसे ऊपर उठ जाता है।

इलाहाबाद]

— दूधनाथ सिंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

FOR ALL
INSURANCE PROTECTION

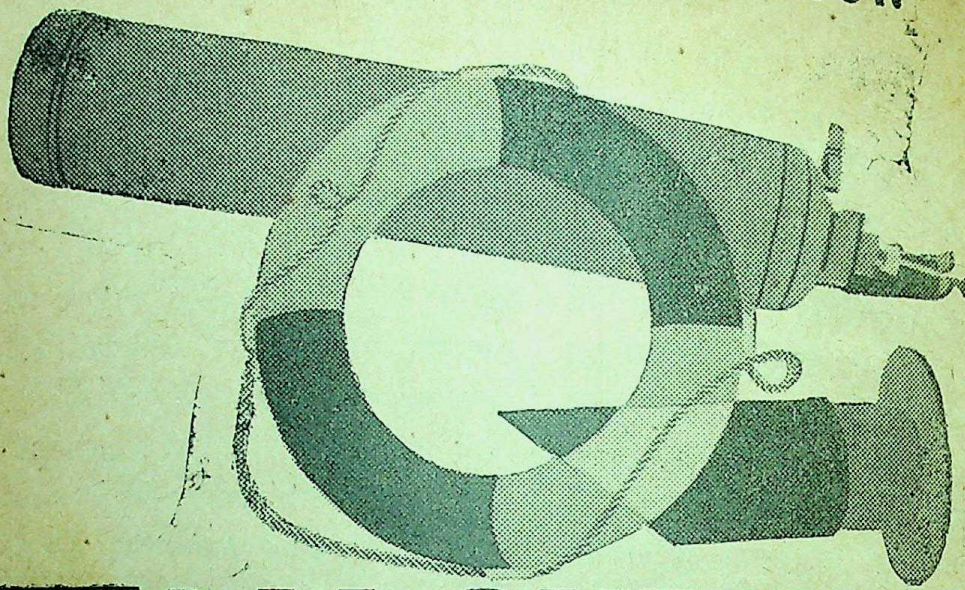

CALCUTTA INSURANCE LIMITED

Transacting

FIRE, MARINE, MOTOR, PERSONAL ACCIDENTS, BURGLARY, FIDELITY GUARANTEE, ALL RISKS, CONTRACTS AND PERFORMANCE GUARANTEE AND ALL ENGINEERING RISKS.

Registered Office :

24, CHITTARANJAN AVENUE, CALCUTTA-12

Principal Branches in India :

BOMBAY · DELHI · MADRAS · AHMEDABAD · KANPUR · MEERUT · DHUBRI · GAUHATI

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[पृष्ठ ३२ का शेष : विश्वयुद्ध एक, दो, तीन]

आत्म-हत्या कर ली। शेष १० को अलग-अलग फाँसी लगा दी गयी।

- रोममें—नात्सी जनरल आन्स्टनको १ दिसम्बर १९४५ को फाँसीपर चढ़ा दिया गया।
- ब्रिटेनमें—'बेलसन कन्सेण्ट्रेशन कैम्पके पशु जू क्रामरको, उसके दूसरे १० आदमियोंके साथ फाँसीपर लटका दिया गया।
- फ़िलिपीनमें—जापानी-कमाण्डर यामाशीताको फाँसी दे दी गयी।
- मनीलामें—जनरल होमाको फाँसी दी गयी।
- रूमानियामें—वहाँके डिक्टेटर आण्टोनेस्कूको फाँसी दी गयी।
- प्रागमें—चेकोस्लोवाकियाके नात्सी शासक फ्रांकको फाँसीकी सज़ा दी गयी।
- लैण्डूसबर्गमें—४८ नात्सी अफ़सरोंको अमेरिकी फ़ौजने फाँसीपर चढ़ा दिया।
- यूगोस्लावियामें—आर्कबिशप स्टेपितारको हिटलरके साथ सहयोग करनेके अपराधमें १६ सालकी सज़ा दी गयी।
- टोक्योमें—२३ दिसम्बर १९४८को जापानके युद्धकालीन प्रधान मन्त्री तोजोको फाँसी दी गयी।

युद्ध एक दिन बन्द होना था; सो वह हुआ। ४ मई, १९४५ से जर्मनीकी फ़ौजोंने आत्म-समर्पण प्रारम्भ किया था; ७ मईको आत्म-समर्पणको विधिवत् सम्पन्न किया गया। जापानने १४ अगस्तको आत्म-समर्पण किया; २ सितम्बरको एक अमरीकी जहाज़पर पराजित जापानी सरकारके प्रतिनिधियोंने आत्म-समर्पण-पत्र पर विधिवत् हस्ताक्षर किये। अब विश्वयुद्ध समाप्त हो गया था।

महान् परिवर्तन

इस बार युद्धने महाबलसे जो प्रत्यक्ष परिचय प्राप्त हुआ, उसको स्मृति पराभूत राष्ट्र तो आजीवन नहीं भूलेंगे, और विजयी राष्ट्रोंके नागरिक भी कभी नहीं; लेकिन युद्धकी विनाश-लीलाके संचालक, विजयी राष्ट्रोंके सत्ताधारियों, मुखियाओं और फ़ौजी जनरलोंको इतना आत्म-तोष और सफलताका सुख मिला कि विश्वके श्मसानोंमें दीवाली मनायी गयी। नागरिकोंके कण्ठ जैसे किसी राक्षसने अपनी जान-लेवा जकड़से ढीले करके छोड़ दिये हों। युद्धके फलस्वरूप राज्योंकी सीमाएँ ही नहीं बदलीं, राष्ट्रोंका स्वरूप भी बदल गया और मनुष्यके तो जीवनमें ही आमूल-चूल क्रान्ति आ गयी। जीवनका सारा दर्शन, धर्मका समस्त आडम्बर, सिद्धान्तोंका उग्र घोष, मनुष्यकी आस्था और उसके जीवन-मूल्य, भविष्यके स्वप्न, साहित्यकी दिशा, चिन्तनके आयाम, कविताके स्वर—सब कुछ बदल गया, अस्त-व्यस्त हो गया। उसकी आधार-भूमि ही कहीं पातालमें विलीन हो गयी। हर देश अपरिचित, हर नगर उजाड़, हर घर बियाबान, हर नर भटका हुआ; हर बाहुपर किसीकी यादों-भरा काले फ़ीतेका शोक-गीत!

टोटल वार बनाम टोटल पीस

युद्धको अपने पक्षमें विजयोन्मुख देखते ही, फ़रवरी १९४५ में ही, तीन बड़ोंने (बेचारा विनष्ट फ़्रान्स!)—रूज़वेल्ट, चर्चिल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और स्टालिनने याल्टाके त्रिशिखर-सम्मेलनमें दुनियाके भविष्यका और धरतीके बटवारेका नक़्शा बनाया था। याल्टा-सम्मेलनसे पहले, चर्चिलने रूज़वेल्टको एक गुप्त तार भेजा था : "दूसरे विश्वयुद्धका परिणाम पहले युद्धकी अपेक्षा अधिक निराशाप्रद होगा, यह मुझे दिखाई दे रहा है!" चर्चिलको क्या दिखाई दे रहा था? यह कि राजनीतिने रूसको जनतान्त्रिकोंके साथ एक पंक्तिमें लाकर खड़ा तो कर दिया है, और रूसने चमत्कारी वीरत्व दिखाया है, उसका बहुत बड़ा अंश मित्र-राष्ट्रोंकी विजयमें है, किन्तु साम्यवादी राष्ट्रके साथ पश्चिमी देशोंका निर्वाह हो नहीं सकेगा। याल्टा-सम्मेलनमें तीनों राष्ट्र इस उद्देश्यसे एकत्र हुए कि सहयोगी भावनासे एकमत होकर सब निर्णय लिये जायेंगे और भविष्यमें सदाके लिए युद्ध बन्द कर देनेके लिए राष्ट्रसंघकी कल्पनाको साकार किया जायेगा। किन्तु, अन्दर-अन्दर तीनों व्यक्ति एक दूसरेके प्रति आश्वस्त नहीं थे। सबसे कठोर सौदेबाज़ स्टालिन था, सबसे अधिक अनुभवी और यथार्थ-पारखी चर्चिल था, और इन दोनोंके दो-किनारेवाले दृष्टिकोणोंमें मध्यस्थतावादी लीडरीकी मनोवृत्तिवाला व्यक्ति रूज़वेल्ट था। जिस युद्धको इन महा-नेताओंने 'टोटल वार' बना डाला था, उसके खण्डहरोंपर ये लोग 'टोटल पीस' का महल खड़ा करना चाहते थे। एक बड़ा भेद उस समग्र युद्ध और इस समग्र शान्तिमें यह था कि जहाँ टोटल वारमें सारे राष्ट्र ईंधन बने थे, वहाँ समग्र शान्तिको ये तीनों भाग्यवान् स्वयं ही भोग लेना चाहते थे। इनके विचारकी धुरी यह थी कि संसारमें केवल वह निर्णय चलेगा—और, संसारके प्रतिनिधिके रूपमें प्रस्तावित राष्ट्र संघ इनके ध्यानमें था—जिसे तीनों एक मतसे मानेंगे। जिस बातमें मतभेद होगा, वह विचाराधीन मामलोंकी सूचीसे निकाल दी जायेगी। इसका अर्थ यह कि संसारके शेष ५७-५८ छोटे राष्ट्र या देश, व्यक्तिगत रूपसे, या सामूहिक रूपसे कुछ भी सोचें या चाहें, होगा वह जो ये तीन बड़े चाहेंगे। राष्ट्र संघकी नींव इसी आधारपर रखी गयी, और इसी नीतिको 'वीटो' का नाम दिया गया। राष्ट्र संघकी सबसे बड़ी कमज़ोरी यही है, और तीसरे विश्वयुद्धके विष-वृक्ष इसी ज़हरीले बीजमें-से उगकर संसारमें इधर-उधर फैल रहे हैं! इस नीतिमें-से एक दूसरा विष-बीज स्वाभाविक रूपसे फूटा—वह यह कि न्यायसे बड़ी चीज हठ-नीति हो गयी—ऐसी हठ-नीति जिसके पीछे शक्तिका बल हो, और जिसके सामने यह कुटिलता हो कि या तो जैसा मैं कहूँ वैसा करो, वरना मैं अस्त्र-शस्त्रसे अपनी बात मनवाऊँगा। इस तरह यह हठ-नीति वास्तवमें शठ-नीति है, ठग-नीति है।

इसके परिणाम उसी याल्टा-सम्मेलनमें सामने आ गये—उस समय जब कि युद्ध अभी चल ही रहा था और शत्रुओंके आत्म-समर्पणमें तीन महीनेसे लेकर छह महीने तककी देर थी। याल्टा-सम्मेलनमें सबसे प्रमुख प्रश्न यह था कि जिस पोलैण्डके प्रश्न-को लेकर हिटलरने युद्ध आरम्भ किया, जिस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पोलैण्डने ब्रिटेन और फ्रान्सकी मित्रताके बलपर और अमरीका-द्वारा समर्थित आत्म-निर्णयके सिद्धान्तकी रक्षाके लिए अपने-आपको भस्म किया, उसके भाग्यका निपटारा किस प्रकार हो। प्रश्न इसलिए उठा, कि रूसने याल्टा-सम्मेलन होनेसे पहले ही एक अस्थायी सरकार अपने नियन्त्रणमें बना ली थी, और अब उसने स्पष्ट इच्छा प्रकट की कि पोलैण्ड-पर वह अधिकार करना चाहेगा ताकि युद्ध-क्षतिका उचित मुआवज़ा भी हो जाये, और पड़ोसकी भूमिपर कोई विरोधी राज न रहे। पोलैण्ड चर्चिलकी भी और रूज़वैल्टकी भी दुखती रग थी—चर्चिलकी तो इसलिए कि लन्दनमें पोलैण्डकी शरणार्थी-सरकार इस प्रतीक्षामें बैठी थी, और ब्रिटेनके साथ मिलकर जर्मनीसे युद्ध करती रही थी कि युद्धके बाद वह पोलैण्डमें शासनारूढ़ हो जायेगी; और रूज़वैल्टके लिए पोलैण्डका प्रश्न इसलिए महत्त्वपूर्ण था कि जिस अमरीकी राज्यसे रूज़-वैल्ट चुने जाकर राष्ट्रपति बने थे, उसमें लगभग ६०,००० पोल्स रहते थे। रूज़वैल्टने अपनी बात खुशामदाना ढंगसे स्टालिनके सामने रखी—'पोलैण्डका प्रश्न बड़ा नाज़ुक प्रश्न है, मेरी व्यक्तिगत समस्या भी इसमें उलझ गयी है, इसलिए पोलैण्डका निर्णय हम लोग कुछ इस रूपमें करें कि सब सन्तुष्ट हो जायें—वहाँ ठीक ढंगसे चुनी हुई सरकार बन जाये।' चर्चिलने अपनी बात एक ऊँचे धरातलपर रखी—'आत्म-निर्णयका सिद्धान्त हमारे आदर्शों-का मूलभूत सिद्धान्त है, इसलिए हम निश्चित रूपसे चाहेंगे कि पोलैण्डकी सरकार स्वतन्त्र चुनावके आधारपर हो; ऐसा नहीं होगा तो ब्रिटेन लौटकर मैं अपने आदमियोंको क्या उत्तर दूँगा?' स्टालिनने उत्तरमें केवल यही कहा—'यही समस्या मेरे सामने है। बिना पोलैण्ड पाये, रूसी राष्ट्र इस युद्धके लिए रूस-द्वारा की गयी क़ुर्बानियोंको नितान्त निरर्थक समझेगा।' यह तो मात्र एक उदाहरण है कि किन गुत्थियोंको किस कूटनीतिके आधारपर ये लोग सुलझाने बैठे थे। न्याय क्या है यह प्रश्न ही सामने नहीं था। खैर, समाधान यह निकला कि स्टालिनने लन्दनमें बैठे एक पोलिश श्रमिक नेताका नाम लेकर कहा कि उसे पोलैण्डमें भेज देंगे जो ठीक-ठीक चुनाव करवा लेगा और सरकार बन जायेगी। किसी तरह संकट तो टला, रूज़वैल्ट और चर्चिलने सोचा। बादमें दो साल तक पोलैण्ड-में चुनाव नहीं हुए। कम्यूनिस्टोंने क़ब्ज़ा करे रखा और बादमें चुनाव ऐसे करवा दिये कि वह नेता भाग खड़ा हुआ।

दूसरा बड़ा प्रश्न जर्मनीका था—उसे अभी तीनों ही टालना चाहते थे, सो टाल गये।

आज यह सब लिखनेकी स्थितिमें हम हैं, क्योंकि सन् १९४५ में हुई इस याल्टा-कॉन्फ्रेन्सके नोट्स १० साल बाद, १९५५में, प्रकाशित हो जानेके कारण वास्तविक स्थिति-की जानकारी हो गयी। जहाँतक उस समयकी दुनियाका प्रश्न है, सबके सामने तो यही चित्र आया कि तीनों राष्ट्रोंने मिलकर बड़ी सद्भावना और सामूहिक संकल्पसे सब निर्णय लिये हैं तथा राष्ट्रसंघ पूरे संकल्पके साथ और आस्थाके साथ बनाया जा रहा है। २४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अक्तूबर १९४५ को राष्ट्रसंघ की स्थापना हुई। संस्थापक सदस्य-राष्ट्रोंकी उपस्थितिमें सान-फ्रान्सिस्कोमें हो गयी। राष्ट्रसंघके संकल्प-पत्रमें कहा गया :

"हम राष्ट्रसंघके जनगण इस बातका संकल्प करते हैं कि हम आनेवाली सन्ततियों-को युद्धके त्राससे बचायेंगे—युद्ध, जिसने हमारे जीवन-कालमें ही दो बार मानवजातिको अवर्णनीय विषादसे आच्छादित किया है, और हम मानवके मौलिक अधिकारोंमें, उसके व्यक्तित्वके सम्मानमें, प्रत्येक पुरुष और स्त्री तथा प्रत्येक बड़े और छोटे राष्ट्रकी समानता-के सिद्धान्तमें विश्वास करते हैं, और उस विश्वासकी पुनः घोषणा करते हैं...."

१९४४ की डम्बार्टन ओक्स कॉन्फ्रेन्समें और १९४५ की याल्टा-कॉन्फ्रेन्समें राष्ट्रसंघ-के गठनके अन्तर्गत जिस सुरक्षा-परिषद्की परिकल्पना की गयी थी, उसके सम्बन्धमें निश्चित किया गया था कि उसके ५ स्थायी सदस्य होंगे—अमेरिका, ब्रिटेन, रूस, फ्रान्स और चीन। प्रारम्भसे ही यह कल्पना की गयी है और व्यवहारमें भी यही हो रहा है कि जो भी निर्णय सुरक्षा-परिषद्में लिये जायेंगे वे सब स्थायी सदस्योंके 'स्वीकारात्मक' मतके आधारपर होंगे—अर्थात् जैसा कि ऊपर बताया गया है, यदि स्थायी सदस्योंमें-से कोई एक भी सदस्य किसी प्रश्नपर अपनी असह-मति प्रकट कर दे तो उस प्रश्नपर विचार नहीं हो सकता।

राष्ट्र संघमें, प्रारम्भसे अबतक बड़े-बड़े गम्भीर मामले आये, कई मामलोंको निपटानेमें राष्ट्रसंघ सफल भी हुआ है, किन्तु लगभग १०० बार 'वीटो' (अवरोध-मत) का उपयोग अबतक कर लिया गया है—ये सब अवरोध-मत प्रायः रूस-द्वारा प्रयुक्त हुए।

पिछले बीस वर्षोंमें राष्ट्र संघकी क्या उपलब्धियाँ रहीं—वे अनेक हैं—और कहां-कहाँ संघ अक्षम रहा, निर्बल रहा—ऐसी स्थितियाँ और घटनाएँ भी अनेक हैं—उनके विस्तारमें जानेका यहाँ प्रसंग नहीं है।

तीसरा विश्व-युद्ध : पूर्वरंग

देखना यह है कि विश्वके राष्ट्रोंने भविष्य-के युद्धोंको रोकनेका जो संकल्प किया था, और जिस संकल्पकी पूर्तिके लिए राष्ट्रसंघ स्थापित है, उसके प्रति इन राष्ट्रोंका, और विशेषकर बड़े राष्ट्रोंका क्या रुख रहा, युद्धकी स्थितियाँ किस रूपमें सामने आयीं और टलीं—अथवा अभी टली भी हैं या नहीं; और बावजूद राष्ट्र संघके और राष्ट्रों-द्वारा घोषित सत्संकल्पके, यदि तीसरा विश्वयुद्ध हुआ तो....

द्वितीय विश्वयुद्धके समय संसारका जो राजनैतिक नक़शा था, और शक्ति-सन्तुलनका जो स्वरूप था वह युद्धकी समाप्तिपर नहीं रहा; युद्धकी समाप्तिके बाद जो नक़शा था, वह आज नहीं रहा। किन्तु एक स्थिति निरन्तर चल रही है—पूर्व-पश्चिम (युरॅपीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्दर्भमें पूर्व-पश्चिम) के संघर्षोंकी, लोक-तन्त्रीय और साम्यवादी राष्ट्रोंमें पारस्परिक भेद-नीतिकी, अथवा किन्हीं राजनैतिक आधारोंपर बने दो बड़े दलोंकी, और इन दो बड़े दलोंकी विभाजक सीमा-रेखाके आगे-पीछे, दायें-बाँयें और बीचमें आनेवाले राष्ट्रोंके पारस्परिक तनाव की ।

जिस समय ये पंक्तियाँ लिखी जा रही हैं,

जैसे माओ और सुकर्ण सिंगापुरके पीछे पड़े हैं वैसी ही घटनाएँ प्रथम और द्वितीय विश्वयुद्धमें भी घटी थीं—उद्देश्य तब भी राजनैतिक स्वार्थ था आज भी राजनैतिक स्वार्थ ही है ।

संसार-भरमें ८–१० मोर्चे खुले हुए हैं—संघर्षके, युद्धके, शस्त्रास्त्रोंके प्रयोगके, गोरिल्ला युद्धोंके । प्रायः प्रत्येक मोर्चेमें, तीसरे विश्व-युद्धके रूपमें विकसित हो जानेकी सम्भावना है—यदि राष्ट्रसंघकी सुरक्षा-परिषद्के स्थायी सदस्योंमें-से कोई भी एक अड़ जाये और यह इरादा कर ले कि विश्वयुद्धका केन्द्रबिन्दु इस अमुक क्षेत्रको बनाना है ।

अमेरिका, रूस, ब्रिटेन, फ्रान्स और चीन-के पास अणु-बम है; यदि इनमें-से एकने भी किसी मोर्चेपर अणुबमका उपयोग कर लिया तो अन्य मोर्चोंपर संघर्ष-रत राष्ट्र, जो दलों और सन्धि-सम्बन्धोंमें बँधे हुए हैं, प्रभावित होंगे और अणुबमका उत्तर अणुबमसे देनेकी आवश्यकताके कारण तीसरा प्रलयकारी विश्व-युद्ध प्रारम्भ हो जायेगा ।

राष्ट्रसंघकी स्थापनाके उपरान्त जो युद्ध हुए उनमें आजकी अणुबमधारी शक्तियोंमें-से निम्नलिखित प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष युद्ध-रत थीं, या हैं :

१ इण्डो-चीन युद्ध, १९४५ से १९५४ तक
(फ्रान्स) बनाम कम्युनिस्ट वियतमिन्ह

२ मलाया युद्ध १९४५ से १९५४ तक
(ब्रिटेन) बनाम कम्युनिस्ट

३ कोरिया युद्ध १९५०-५३
(चीन, रूस, उत्तरी कोरिया) बनाम दक्षिणी कोरिया

४ फ़ार्मोसा युद्ध १९५० से चालू
(अमेरिका बनाम चीन)

५ स्वेज़-युद्ध १९५६
(ब्रिटेन, फ्रान्स) बनाम मिस्र

६ हंगरी युद्ध (विद्रोह) १९५६
(रूस) बनाम हंगरीके विद्रोही

७ क्यूमोय-मात्सू युद्ध १९५४-५८
(चीन) कम्युनिस्ट बनाम नेशनलिस्ट

८ लेबानन युद्ध १९५८
(अमेरिका) लेबानी सरकार बनाम विद्रोही

९ तिब्बत युद्ध १९५९
(चीन) बनाम तिब्बत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१० साइप्रस युद्ध १९५४-५९
(ब्रिटेन) बनाम विद्रोही
११ अल्जीरिया १९५६-६२
(फ्रान्स) बनाम विद्रोही
१२ कुबैत १९६१
(ब्रिटेन) बनाम इराक
१३ क्यूबा १९६१
(अमेरिका) बनाम क्यूबा
१४ दक्षिण वियतनाम १९५९ से चालू
(अमेरिका) बनाम कम्युनिस्ट वियतनामी
१५ चीनी आक्रमण १९६२
(चीन) बनाम भारत
१६ क्यूबा युद्ध १९६२
(अमेरिका बनाम रूस और क्यूबा)
१७ मलयेशिया युद्ध १९६३ से चालू
(ब्रिटेन-मलयेशिया) बनाम इण्डोनीसिया
१८ डोमीनिकन रिपब्लिक युद्ध १९६५
(अमेरिका) बनाम विद्रोही
१९ पाकिस्तान-भारत युद्ध १९६५
(प्रच्छन्न चीन-पाकिस्तान) बनाम भारत

इस युद्धोंके अतिरिक्त जिनमें कोई-न-कोई अणुबम शक्तिधारी राष्ट्र सम्मिलित है, लगभग इतने ही और युद्ध हुए हैं या युद्धोंके मोर्चे खुले हुए हैं—जैसे, हिन्देशियाका युद्ध (१९४५-४७), यूनानका युद्ध (१९४६-४९), कश्मीरका युद्ध (१९४७-४९), इज़राइल-युद्ध (१९४८-४९), फिलिपाइन (१९४८-५२), लाओस (१९५९ से चालू), यमन (१९६२ से चालू), कौ-गो (१९६० से ६२ तक, पुनः १९६४ से चालू), अंगोला (पुर्तगाल १९६० से चालू), गोआ (१९६१), पश्चिम न्युगिनी

तीसरे विश्वयुद्धका प्रहसन

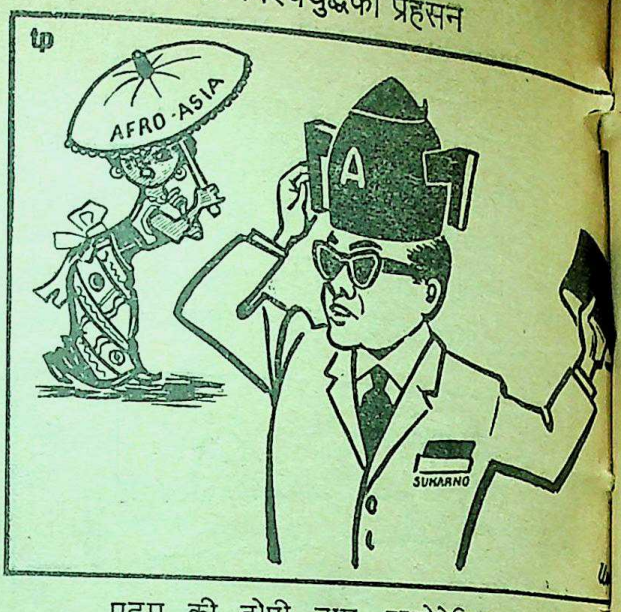

एटम की टोपी, नाम इण्डोनेसिया।
काला है चश्मा, शौक़ बड़े रसिया॥

(१९६२), अल्जीरिया-मोरक्को (१९६३), वेनेज़्युएला (१९६३), थाइलैण्ड (१९६४ से चालू) और पेरू (१९६५) —युद्ध।

इन युद्धोंका विश्लेषण करनेपर पाया गया कि आधेसे अधिक युद्धोंका मूल कारण पूर्व-पश्चिम या पश्चिमी राष्ट्र बनाम कम्यूनिस्ट सरकारोंकी शक्ति-प्रतिद्वन्द्विता है, जिसे दोनो दल आदर्शोंके संघर्षका नाम देते हैं—पश्चिमी राष्ट्र कहते हैं कि हम लोकतन्त्र, आत्म-निर्णय और मानव-स्वतन्त्रताके सिद्धान्तोंके लिए कम्यूनिस्ट सरकारोंके विरुद्ध युद्ध लड़ते हैं, और कम्यूनिस्टोंका दावा है कि वे शोषक साम्राज्यवादी, पूँजीवादी, स्वार्थी पश्चिमी शासकोंकी शक्तिसे मोर्चा लेकर संसारमें वास्तविक जन-राज्य और वर्गहीन समाजका निर्माण करना चाहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साम्राज्य-विरोधी, स्वतन्त्रता-कामी, स्वाधीन सरकार चलानेकी इच्छा रखनेवाले ८ राष्ट्र युद्ध-रत इसलिए हैं कि वे उपनिवेश वादको समाप्त करना चाहते हैं।

सात राष्ट्रोंके युद्धबद्ध होनेका कारण यह है कि वे विरोधी पड़ोसी हैं। विरोधके कारण अनेक हैं और विभिन्न प्रकारके हैं—कहीं राजनैतिक आदर्शोंका द्वन्द्व है, कहीं पड़ोसीको शक्तिका भय है, कहीं पुरानी अदावत है, कहीं ईर्ष्या है, कहीं बड़े राज्योंकी कूटनीतिने विभेद उत्पन्न किया है, कहीं पड़ोसीकी समाप्त कर देनेका स्वप्न या उसका सब कुछ हड़प लेनेकी लिप्सा !

बर्लिनका मोर्चा

उक्त सूचीमें एक मोर्चेका उल्लेख नहीं है, क्योंकि वहाँ युद्ध तो नहीं हुआ, किन्तु युद्धकी भीषणतम स्थिति उत्पन्न हो गयी थी। वह है बर्लिनका मोर्चा ! बर्लिनके मोर्चेपर ही, द्वितीय विश्वयुद्धके उपरान्त इन बड़े राष्ट्रोंका वैमनस्य खुलकर सामने आया और राष्ट्रसंघके युद्ध-विरोधी संकल्पोंकी खोखली आधारभूमि नज़र आयी ! द्वितीय विश्वयुद्धके अन्तिम दिनोंमें, जब बर्लिनको फ़तह किया गया तो रूसी मार्शल जुकोबने २८ अप्रैल १९४५ को बर्लिनपर दखल कर लिया था। अगस्त १९४५ में पौटसडाम कॉन्फ्रेन्समें चर्चिल, रूज़वैल्ट और स्टालिनने निर्णय किया कि बर्लिनको ४ भागोंमें बाँट दिया जाये, और एक-एक भागमें अमेरिकन, रूसी, ब्रिटिश और फ्रान्सीसी अधिकार हो तथा संयुक्त कमानके अन्तर्गत बर्लिनका शासन चलाया जाये। इस प्रकारकी शासन-व्यवस्था रूसको रुचिकर नहीं हुई, और उसने संयुक्त शासनसे अपने-आपको हटा लिया। तब बर्लिनका शासन दो भागोंमें बाँट दिया गया—पूर्वी बर्लिन रूसके शासनमें छोड़ दिया गया और पश्चिमी बर्लिनमें ब्रिटेन, अमेरिका और फ्रान्सके भागोंकी सम्मिलित शासन-व्यवस्था क़ायम की गयी। बर्लिनके पूर्वी और पश्चिमी भागोंका विभाजन एक प्रकारसे पूर्व जर्मनी-की राजनैतिक पद्धतियों और अर्थव्यवस्थाके स्वरूपों और फलोंका प्रतिनिधि मानक बन गया। जब बर्लिनके चारों ज़ोनोंका शासन संयुक्त कमानके अधीन चल रहा था, तभी यह स्पष्ट हो गया था कि रूसके और पश्चिमी राष्ट्रोंके दृष्टिकोणमें, मानवीय दर्शनमें और समस्याओंके विश्लेषण तथा समाधानमें गहरा अन्तर है। पश्चिमी जर्मनीके साथ पश्चिम बर्लिन खुशहाल होने लगा तो रूसी शासकोंको चिन्ता हुई कि दो राजनैतिक पद्धतियोंका मूर्तिमान उदाहरण रूसके हितमें नहीं। रूसने पूर्वी और पश्चिमी बर्लिनकी सम्पर्क-संचार-व्यवस्थापर कड़ा नियन्त्रण कर दिया। इधर पश्चिमी बर्लिनने अपनी नयी करन्सी चला दी और घोषित कर दिया कि समूचे बर्लिनकी अर्थ-व्यवस्थाका आधार यह करन्सी होगी। वैमनस्यकी चिनगारी ज्वाला बन गयी। रूसने अपनी पूर्वी बर्लिनकी सीमाओंपर नियन्त्रण कड़ा कर दिया और जून १९४८ से यात्रियों-का माल-असबाब, रसद तथा यातायातके साधनोंका अपने किसी भी भागसे पश्चिमी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जर्मनीके किसी भी भागमें आना-जाना बन्द कर दिया। इसका अर्थ यह हुआ कि पश्चिमी बर्लिनके निवासियों और फ़ौजोंके लिए पश्चिमी जर्मनीसे रसद, और माल आना बन्द हो गया,—व्यापार ठप्प हो गया, क्योंकि जहाँ बर्लिनके बाहरका रूसी क्षेत्र अन्य लोगों-के लिए पूरी तरह बन्द किया जा सकता है, वहाँ यदि ब्रिटिश, फ्रेंच या अमेरिकन ज़ोनसे बर्लिनमें कोई व्यक्ति आना-जाना चाहे या सामान लाना-ले जाना चाहे तो उसे लगभग २०० मील रूस-नियन्त्रित सड़क पार करके आना पड़ता है। जब रूसियोंने यह सड़क बन्द कर दी तो पश्चिमी बर्लिनके २२ लाख आदमियोंके सामने भोजन और औषधि आदि तकका संकट आ उपस्थित हुआ। संसारमें खलबली मच गयी कि अब युद्ध प्रारम्भ हुआ। पश्चिमी राष्ट्र भी डटे रहे। उन्होंने भी अपनी सीमापर बर्लिनके पूर्वी ज़ोनके यातायात-पर छेक लगा दी, किन्तु रूसी ज़ोनकी जो भौगोलिक स्थिति थी उसके कारण रूसको कोई विशेष असुविधा नहीं हुई। पश्चिमी राष्ट्रोंने बड़े साहससे इस स्थितिका मुक़ाबला किया। ८००० अमेरिकन और २००० ब्रिटिश हवाबाज़ोंने सैकड़ों हवाई जहाज़ोंसे बर्लिनमें खानेका सामान, पेट्रोल, कारखानोंके लिए कच्चा माल, मरम्मतके पुर्ज़े, मशीनें आदि लाना प्रारम्भ कर दिया। बर्लिनकी रूसी छेक शुरू हुई थी तो केवल २१ दिनकी खाद्य सामग्री पश्चिमी बर्लिनमें थी। छेक कितने महीने चलेगी यह पता नहीं था। ३००-४०० हवाई जहाज़ोंमें हर २४ घण्टेमें ५००० टन खाने-पीनेका सामान, दवाइयाँ, तथा आवश्यक साधन-सामग्री बर्लिनमें उतरने लगी। ६ महीनेमें इतना सामान इकट्ठा हो गया कि दैनिक आवश्यकताओंकी पूर्तिके अति-रिक्त एक महीनेकी अतिरिक्त सामग्री इकट्ठी हो गयी। यह क्रम मई १९४९ तक चलता रहा जबतक कि रूसने अपनी छेक समाप्त नहीं की।

जर्मनीकी इस कार्यवाहीकी शिकायत राष्ट्रसंघकी सुरक्षा परिषद्में ब्रिटेन, फ्रान्स और अमेरिकाने २९ सितम्बर १९४८ को प्रस्तुत की। परिषद्की कई बैठकोंमें इस प्रश्नपर विचार हुआ, किन्तु रूसने कहा कि यह प्रश्न परिषद्की विचार-परिधिमें नहीं आ सकता। एजेण्डापर यह प्रश्न रखा गया और जब विचार करनेका समय आया तो रूसने विचार-विनिमयमें भाग नहीं लिया। नियमा-नुसार परिषद्में यह प्रश्न रद हो गया। बादमें बीच-बचावके कारण रूस और अमेरिकामें समझौता हुआ तथा मई १९४९ में दोनों ओर-की छेक समाप्त हुई। संकट तो टल गया, किन्तु वैमनस्यकी लकीर दोनों ओरके राष्ट्रों-के हृदयमें और गहरी हो गयी। राष्ट्रसंघको अपनी असमर्थताके लिए लज्जित होना पड़ा और विश्वको यह निश्चय हो गया कि युद्धकी तलवार बहुत ही नाजुक धागेसे बँधी सिरके ऊपर लटक रही है। युद्ध आज नहीं तो कल होगा ही।

कोरिया-युद्ध

तीसरे विश्व-युद्धकी तात्कालिक सम्भा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनाकी दृष्टिसे और उससे भी अधिक, आगामी विश्वयुद्धको रोकनेमें राष्ट्र संघकी क्षमताकी कसौटी के रूपमें कोरियाका युद्ध सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। जब द्वितीय विश्वयुद्ध चल ही रहा था, तभी १९४३ में काहिराकी कॉन्फ्रेंस में ब्रिटेन, अमेरिका और चीनने कोरियाको आश्वासन दिया था कि युद्धके उपरान्त जब उसे जापानके बन्धनोंसे छुटकारा मिलेगा तो उसे स्वतन्त्रता प्राप्त हो जायेगी और जनमतके निर्णयानुसार उसे अपनी सरकार बनानेकी स्वाधीनता होगी। जब १९४५ में रूसके सहयोगसे युद्ध समाप्त हुआ तो जापानसे आत्मसमर्पण स्वीकार करनेके लिए कोरियाको दो भागोंमें बाँट दिया गया—३८ वें समानान्तर (विभाजन-रेखा) के उत्तरमें स्थानीय जापानी शासनने रूसके सामने और दक्षिणमें अमेरिकाके सामने आत्मसमर्पण किया। इस प्रकार कोरियाके दो क्षेत्रोंमें दोनों विजयी देशोंकी सेनाओंने क़ब्ज़ा किया। पहले, संयुक्त शासन-परिषद्ने दोनों क्षेत्रोंमें समान सिद्धान्तों और नियमोंके अनुसार कार्य करनेका प्रयास किया, किन्तु जैसा कि हमने ऊपर बर्लिनके सम्बन्धमें देखा, दोनों शिविरोंके गहरे दृष्टि-भेदोंके कारण राष्ट्रसंघ-द्वारा नियुक्त संयुक्त आयोग—जिसको दायित्व दिया गया था कि जनमतके आधारपर चुनाव करवाके समग्र कोरियामें एक स्वाधीन शासन-तन्त्र स्थापित कर दे और रूस तथा अमेरिकाकी फ़ौजें कोरियासे हटवा दे—सफलतापूर्वक कार्य नहीं कर पाया। रूसी क्षेत्रने आयोगके कार्यमें कोई सहायता नहीं की, उधर दक्षिणी क्षेत्रमें अमेरिकाने राष्ट्रसंघके प्रस्तावानुसार चुनाव करवाकर प्रेज़िडेण्ट सिग्मन रीके नेतृत्वमें कोरियाई सरकार क़ायम करवा दी; वही कोरियाकी वास्तविक सरकार मानी गयी—'कोरिया गण-तन्त्र'। अमेरिकाने अपनी फ़ौजें भी दक्षिण कोरियासे हटा लीं। अब कोरियामें दोषी रह गये रूसी। राष्ट्रसंघमें अमेरिकाने प्रस्ताव रखा कि उत्तरी कोरियामें चूँकि रूसका हस्तक्षेप चल रहा है, चुनाव नहीं हो रहे हैं और उत्तरी कोरिया दक्षिणी कोरियापर आक्रामक कार्यवाहियाँ कर रहा है, अतः राष्ट्रसंघ एक संयुक्त फ़ौजी कमान बना दे जो राष्ट्रसंघकी ओरसे फ़ौजी आक्रमणका उत्तर फ़ौजी रूपसे दे और वह उत्तर राष्ट्रसंघकी अवज्ञा करनेवालेको राष्ट्रसंघकी ओरसे दिया माना जाये। जनरल एसेम्बलीमें ५५ राष्ट्रोंने, ५-७ रूसी राष्ट्रोंके विरोधमें, बहुमतसे प्रस्ताव मान लिया। रूसने सुरक्षा परिषद्की उन बैठकोंमें भाग नहीं लिया था जिनमें कोरियाके प्रश्नपर विचार हुआ था, और जब उनका प्रस्ताव स्वीकृत हो गया तो आक्षेप किया कि जिस सुरक्षा परिषद्के आदेशपर कोरियामें दक्षिणी सरकार बनी है, वह आदेश इसलिए मान्य नहीं कि रूसकी अनुपस्थिति थी और रूस 'वीटो' (मतावरोध) की स्थितिमें था। राष्ट्रसंघका प्रस्ताव चूँकि जनरल एसेम्बलीका प्रस्ताव था, इसलिए रूसकी यह दलील नहीं मानी गयी। २५ जून, १९५० को उत्तर कोरियाने दक्षिण कोरियापर फ़ौजी चढ़ाई कर दी। दक्षिण कोरियाके ७५ वर्षीय प्रेज़िडेण्ट रीने अपने राष्ट्रकी रक्षाके लिए सब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ बलिवेदीपर चढ़ानेकी ठान ली। रूसका दाँव यह था कि जबतक राष्ट्रसंघकी संयुक्त कमान बने तब तक वह दक्षिण कोरियापर चढ़ाई करके सारे कोरियापर एक-छत्र रूसी राज्य क़ायम कर ले। अब दक्षिण कोरियाकी स्वतन्त्रता और उसके मानका प्रश्न समूचे राष्ट्रसंघके मानका प्रश्न बन गया। राष्ट्रसंघकी संयुक्त कमानके कमाण्डिंग जनरल मैकआर्थरके नेतृत्वमें राष्ट्रसंघकी फ़ौज तैयार हुई। १६ राष्ट्रों—ऑस्ट्रेलिया, बेल्जियम, कनाडा, कोलम्बिया, ईथियोपिया, फ्रान्स, ग्रीस, थाईलैण्ड, टर्की, ब्रिटेन, अफ्रीका, अमेरिका, आदि—ने फ़ौजी दस्ते दिये और डेनमार्क, भारत, इटली, नॉर्वे तथा स्वीडनने मेडिकल, सेना-दल दिये। कोरिया गणतन्त्र (दक्षिण कोरिया) की फ़ौजें भी इस संयुक्त कमानमें आ गयीं। अमेरिकाने कोरियाके तटपर जलयानोंके फ़ौजी बेड़ेसे नाकाबन्दी कर ली। घमासान युद्ध प्रारम्भ हो गया। रूसने उत्तर कोरियाकी फ़ौजोंके साथ अपनी बहुत बड़ी फ़ौजको युद्ध-क्षेत्रमें उतार दिया। एक प्रकारसे यह विश्व-युद्ध ही था यद्यपि राष्ट्रसंघकी संयुक्त कमानको फ़ौजी सहयोग देनेवाले राष्ट्रोंने अपने-अपने देशकी ओरसे उत्तर कोरिया या रूसके साथ युद्धकी घोषणा नहीं की थी। रूसी आक्रमण इतने ज़ोरका और इतने बड़े पैमानेपर हुआ कि तीन दिनके भीतर दक्षिण कोरियाकी राजधानी शत्रुके हाथ आ गयी और राष्ट्रसंघकी फ़ौजें पीछे हटते-हटते दक्षिण-पूर्व कोरियाके एक छोटे-से भागमें आ-सिमटीं। १० लाख कोरियन और राष्ट्रसंघकी संयुक्त कमानके १६ राष्ट्रोंके लगभग ३० हजार सैनिक हताहत हुए। जनरल मैकआर्थरने जल और थल-सेनाओंका पुनर्गठन किया। राष्ट्रोंने, और विशेषकर अमेरिकाने, बड़ी संख्यामें सेनाएँ हवाई जहाज़ोंसे कोरियामें उतारीं—फिर जो प्रत्याक्रमण किया तो राष्ट्रसंघकी फ़ौजोंने रूसी और उत्तर कोरियाई फ़ौजोंको ३८वें पैरेललके पीछे हटा दिया और उत्तर कोरियामें घुसते हुए मंचूरियाकी सरहद तक पहुँच गयीं। मंचूरिया तक पहुँचना था कि चीन युद्धमें कूद पड़ा और लड़ाईने फिर इतना ज़ोर पकड़ा कि राष्ट्रसंघकी फ़ौजोंको रूसी-चीनी-उत्तरी कोरियाई फ़ौजोंका मुक़ाबला करना असम्भव हो गया। राष्ट्रसंघकी फ़ौजोंको फिर ३८वें पैरेललकी अपनी सीमासे भी बहुत पीछे हटना पड़ा। दक्षिण कोरियाके काफ़ी बड़े भागपर रूसी-चीनी फ़ौजोंने क़ब्ज़ा कर लिया। इसपर राष्ट्रसंघकी फ़ौजोंने फिर एक बार ज़ोर बाँध कर प्रत्याक्रमण किया और शत्रुकी फ़ौजोंको उसके ३८वें समानान्तरके पीछे धकेल दिया। जहाँ इस प्रकार आक्रमणों और प्रत्याक्रमणोंके रूपमें युद्ध होता रहा हो, उस क्षेत्रका क्या हाल होगा! कोरिया तबाह हो गया। लेकिन एक बात स्पष्ट हो गयी कि युद्धरत दोनों दलोंमें दीर्घकाल तक लड़ते रहनेकी जो क्षमता प्रमाणित हो चुकी है उसे देखते हुए युद्ध जारी रखना उचित नहीं। जुलाई १९५१ में युद्ध-विराम हुआ, सन्धि-वार्ता प्रारम्भ हुई और १ वर्ष तक प्रयत्न चलता रहा किन्तु एक बातपर समझौता भंग हो गया कि युद्धमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिन सैनिकोंको बन्दी बनाया गया है, उनका क्या हो। अमेरिका और राष्ट्रसंघ चाहता था कि बन्दियोंको स्वयं ही निर्णय करनेका अधिकार दिया जाये कि वह उत्तर कोरिया और दक्षिण कोरियामें-से कौन किस क्षेत्रके शासनमें रहना चाहता है, जब कि रूसका कहना था कि उत्तर कोरियाके बन्दियोंको उत्तर कोरियाके सुपुर्द किया जाये, स्वयं बन्दी की इच्छा कुछ भी हो। फिर युद्ध प्रारम्भ हो गया, और इस बार बहुत अधिक उग्र रूपमें।

रूस युद्ध बन्दियोंको अपने-अपने क्षेत्रमें वापस भेजनेके लिए इस कारण ब-ज़िद रहा क्योंकि अधिकतर युद्धबन्दी उत्तर कोरियामें कम्यूनिस्ट शासनमें नहीं रहना चाहते थे। युद्धबन्दियोंका प्रश्न बहुत बड़ा प्रश्न था क्योंकि १,३२,००० युद्धबन्दियोंमें-से १,२१,००० राष्ट्रसंघके कमाण्डके हस्तगत थे और ११,५०० दूसरे पक्षके हाथमें। इस बीच उत्तर कोरियाके ८० लाख आदमियोंमें-से लगभग ४० लाख व्यक्ति शरणार्थी बनकर दक्षिण कोरियामें आ चुके थे। इन शरणार्थियोंके लिए भोजन, वस्त्र और आवासका प्रबन्ध करना बहुत बड़ी समस्या थी। राष्ट्रसंघके सदस्योंने शरणार्थी सहायता-कोषमें भरपूर सहायता पहुँचायी थी। अन्तमें अचानक उत्तरी कोरिया-अर्थात् रूसने इस बातपर समझौता कर लिया कि बीमार और अपाहिज युद्ध-बन्दियोंको यह अधिकार दे दिया जाये कि वे स्वेच्छासे दोनों क्षेत्रोंमें-से जिस क्षेत्रमें जाना चाहें, जा सकते हैं।

अन्तमें जुलाई १९५३ में दोनों दलोंमें समझौता हुआ और कोरियाका विधिवत् विभाजन उसी ३८वें समानान्तरके आधारपर हो गया—उत्तरमें उत्तरी कोरियाका कम्यूनिस्ट शासन स्वीकृत हुआ और समानान्तरके दक्षिणमें कोरिया गणतन्त्र पूर्ववत् मान्य रहा। उत्तर कोरियाने रूस और चीनके साथ सहायता प्राप्त करनेका समझौता किया और दक्षिण कोरियाके गणतन्त्रने अमेरिकाके साथ प्रतिरक्षा सन्धि कर ली। १९६० में प्रेज़िडेण्ट रीके विरोधमें एक उग्रदल दक्षिण कोरियामें गठित हुआ और प्रथम विश्वयुद्धके बाद जो हाल चर्चिलका हुआ था, वही रीका हुआ—अर्थात् रीको शासनसे हटना पड़ा। क्या इसका अर्थ यह नहीं है कि जनता राष्ट्रपर संकट आनेके समय कितना ही बड़ा बलिदान कर ले और युद्ध जीत ले, किन्तु युद्ध शान्त होनेपर जब राष्ट्रोंको होश आता है कि शासनकी ओरसे, शासनकी रक्षाके लिए युद्ध होते हैं और नरसंहार होता है तथा व्यक्तियोंको चरम यातनाएँ सहनी पड़ती हैं तो विजयी राष्ट्र पहला गुस्सा अपने युद्ध-प्रोत्साहक नेतापर उतारते हैं। पराजित राष्ट्रोंके नेताओंकी जो दुर्गति होती है, वह तो हम देख ही चुके हैं।

कोरिया युद्धकी महान् क्षतियोंमें एक क्षति ऐसी है जो राष्ट्रसंघको शक्तिकी सम्भावनाओंकी याद ताज़ा रखेगी—दक्षिण कोरियामें तांगकोकमें बनी हुई समाधियाँ जो राष्ट्रसंघकी संयुक्त फ़ौजी कमानके उन २००० मृत सैनिकोंकी स्मृतिमें बनायी गयीं हैं जिन्होंने यह प्रमाणित किया कि युद्धके माध्यमसे ही यदि आक्रमणकारीके होश दुरुस्त करने पड़ जायें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो सामूहिक रूपसे राष्ट्रसंघको बलिदानी सैनिक मिल सकते हैं और राष्ट्र निःस्वार्थ भावसे भी युद्ध कर सकते हैं।

कोरियाके इस युद्धमें भारतने राष्ट्रसंघको पूरा समर्थन देते हुए भी और राष्ट्रसंघकी संयुक्त कमानका अंग बनकर भी, केवल शान्तिकी भूमिका ही निभायी—आहत सैनिकों और शरणार्थियोंको सहायता देकर, दोनो दलोंमें शान्ति और सुलह स्थापित करनेके प्रयत्नोंका नेतृत्व करके भी राष्ट्रसंघने इस सेवा और सद्भावनाके लिए भारतके प्रति कृतज्ञता प्रकट की।

मिस्र-युद्ध

तीसरे महायुद्धका संकट अत्यन्त उग्र रूपसे सन् १९५६ में स्वेज़ नहरके प्रश्नपर आ उपस्थित हुआ। स्वेज़ नहर मिस्र राज्यके भू खण्ड परसे बहती है। १०५ मील लम्बी, १७० गज़ चौड़ी और ४६ फ़ीट गहरी यह नहर हिन्द महासागर और भूमध्यसागरको मिलाती है। पूर्व-पश्चिमका पारस्परिक समुद्री व्यापार जो अफ्रीकाको गुडहोप खाड़ीके माध्यमसे होता था, सन् १८६० में स्वेज़ नहर बनने पर इसके माध्यमसे होने लगा और इस तरह लगभग तीन हज़ार मीलका चक्कर बच गया। स्वेज़ नहरके निर्माणके पीछे फ्रांसीसी इन्जीनियर फ़र्दिनेन्द द लैसेपकी प्रतिभा और अध्यवसाय क्रियाशील रहे। नहरका निर्माण एक प्राइवेट कम्पनीके रुपयेसे हुआ जिसका प्रधान कार्यालय फ्रांसमें है और जिसके ४० प्रतिशत शेयर ब्रिटेनके पास और ६० प्रतिशत शेयरोंका तीन चौथाई भाग फ्रांसके पास था। नहर-कम्पनीपर अधिकार शेयर होल्डरका था, किन्तु नहर मिस्रकी थी, इसलिए मिस्रको यह हक़ था कि वह चाहे तो नहरका राष्ट्रीयकरण कर ले और शेयर होल्डरको उचित मुआवज़ा चुका दे।

किन्तु सन् १९५६ में मिस्रके प्रेज़िडेण्ट कर्नल नासेरने जब स्वेज़ नहरका राष्ट्रीयकरण कर लिया तो फ्रान्स और ब्रिटेनमें खलबली मच गयी। यह राष्ट्रीयकरण वास्तवमें नासेर की चुनौती थी, पश्चिमी देशोंको जिन्होंने नासेरसे वायदा किया था कि वह मिस्रके विकासकी २५० करोड़ रुपयेकी सबसे बड़ी योजना आस्वान बाँधके लिए विश्व-बैंकसे १०० करोड़ रुपयेका ऋण दिलवा देंगे, और काम चालू करनेके लिए ३६ करोड़ रुपया तत्काल सहायताके रूपमें दे देंगे, किन्तु यह सहायता देनेसे इनकार कर दिया था क्योंकि नासेरने पश्चिमी देशोंके साथ सैनिक सन्धिमें सम्मिलित होनेसे ही इनकार नहीं किया था बल्कि रूससे मित्रता करके उससे आर्थिक और सैनिक सहायता प्राप्त करनी प्रारम्भ कर दी थी। भारतकी भाँति तटस्थ-नीतिका हामी, नेहरूके उदाहरणसे प्रभावित नासेर, अपने स्वाभिमान और स्वाधिकारको खोनेके लिए तैयार नहीं था। उसने स्वेज़ नहरका राष्ट्रीयकरण करके ब्रिटेन और फ्रांसको हतबुद्धि बना दिया। इन देशोंने विरोध किया और युद्धकी धमकी दिखायी तो नासेरने स्वेज़ नहरमें ब्रिटेन और फ्रान्सके जहाज़ोंका यातायात बन्द कर दिया। ब्रिटेनने मिस्रकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२॥ करोड़ रुपयेकी धनराशि जो इंग्लैण्डके बैंकोंमें जमा थी निश्चल कर दी। नासेरने कहा कि अब तो निर्णय तभी होगा जब मिस्र-द्वारा किये गये स्वेज़ नहरके राष्ट्रीयकरणको बिना किसी शर्तके पश्चिमी देश स्वीकार करेंगे और आस्वान बाँधकी राष्ट्रीय योजनाके लिए मिस्रको जितनी बड़ी धनराशिकी आवश्यकता है, उसका प्रबन्ध स्वेज़-नहरका उपयोग करनेवाले जहाज़ोंसे अधिक टैक्स वसूल किये जानेके मिस्री सुझावको मानेंगे। एक ओर नासेरने फ्रांस और ब्रिटेनको अत्याचारी, साम्राज्यवादी, शोषक आदि कहकर भर्त्सना की, दूसरी ओर इन दोनों देशोंके उग्र दलोंने नासेरको हिटलर, लुटेरा और बन्दर-घुड़की देनेवाला कहकर उसे अपमानित किया। युरॅपके देशोंके लिए स्वेज़का बन्द होना उनके कण्ठको दबाकर प्राण लेनेकी चेष्टा करनेके बराबर था। पश्चिमी देश उस समय मध्यपूर्वके तेल-क्षेत्रोंसे प्रायः १६ करोड़ रुपये वार्षिक मूल्यका पेट्रोल-तेल आदि मँगाते थे, कल-कारखानों, हवाई जहाज़ों, ट्रैक्टरों, जलपोतों तथा द्रुतगामी-यातायातके नागरिक और फ़ौजी साधनोंके लिए तेलपर आश्रित थे। अमेरिकाके सारे आयातका एक छठा भाग यह तेल ही था। ब्रिटेनके अख़बारोंमें सुर्खियाँ छपीं कि मध्यपूर्वसे यदि तेल आना बन्द हो गया तो ४० लाख आदमी बेकार हो जायेंगे। फ्रान्सने हल्ला मचाया कि घोर आर्थिक संकट उपस्थित हो गया। तेलके व्यापारमें करोड़ों डॉलरकी जो पूँजी लगी थी उसका ५८ प्रतिशत अमेरिकाका, ३५ प्रतिशत ब्रिटेन और ७ प्रतिशत फ्रान्सका था।

स्थितिने जब उग्र रूप ले लिया तो प्रश्न राष्ट्रसंघके सामने आया। राष्ट्रसंघने १३ अक्तूबर १९५६ को सुरक्षा परिषद्में सर्वसम्मतिसे एक प्रस्ताव पारित किया, जिसके अन्तर्गत एक छह-सूत्री व्यवस्था थी जो दोनों ओरके दृष्टिकोणोंमें सामंजस्य प्रस्तुत करती थी।

यह सब विचार-विनिमय और प्रयत्न चल ही रहे थे, कि फ्रान्स, ब्रिटेन और इज़राइलने अपने इरादे पक्के कर लिये और एक सम्मिलित युद्ध-योजना बना ली। इसके अन्तर्गत पहले इज़राइलने २९ अक्तूबरको मिस्रके सिनाई क्षेत्रपर सुसंगठित आक्रमण कर दिया। इज़राइलका सीमान्त १२० मील तक मिस्रसे मिला हुआ है। इजराइलने युद्धकी तैयारी इस हद तक कर ली थी कि उसने अपनी १८ लाखकी आबादीमें-से लगभग साढ़े चार लाख व्यक्तियोंको सैनिक बनाकर युद्ध-क्षेत्रमें उतार दिया था। इज़राइलके पास अमेरिकाके दिये हुए द्वितीय विश्व-युद्धवाले बड़े-बड़े शर्मन टैंक थे; फ्रान्सने भी युद्ध-सामग्री दी हुई थी। फ्रान्सने हाल ही-में कुछ सेबरजेट और ३० मिस्टीयर विमान भेज दिये थे। इज़राइलके तीन आक्रामक दलोंने तीन ओरसे ७० मीलके सिनाई-गाज़ा क्षेत्रमें आक्रमण किया। उसी शाम ब्रिटेन और फ्रान्सके बमवर्षक भी इस क्षेत्रमें इज़राइलकी सहायताके लिए आ गये। नासेरके केवल ३० हज़ार सैनिक इस मोर्चेपर थे। इज़राइलका इरादा था कि इस झपट्टे और आकस्मिकताके साथ युद्ध किया जाये कि नवम्बरके पहले सप्ताह तक सारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

On this happy occassion of Dipawali

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

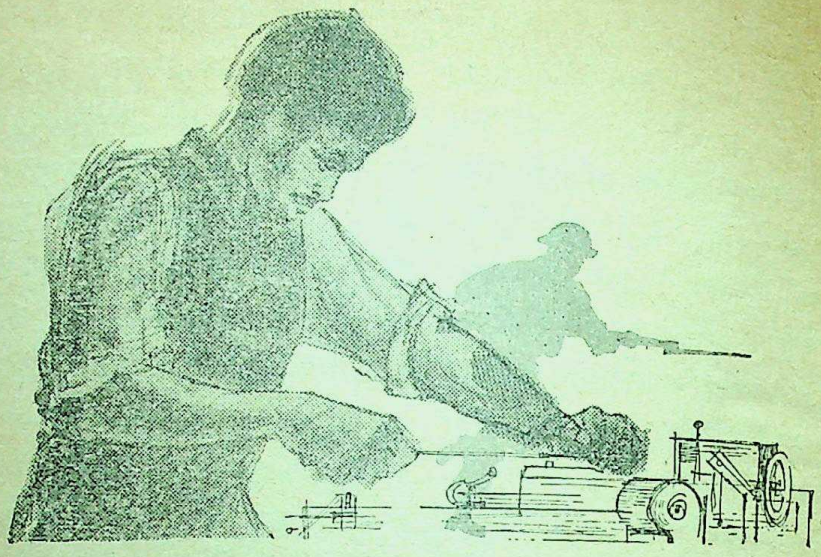

"WE OFFER OUR SINCEREST GREETINGS AND GOOD WISHES FOR OUR JAWANS FOR THEIR PATRIOTIC, SELFLESS AND HEROIC DEEDS IN DEFENDING OUR COUNTRY."

Issued By :

Jai Hind Investment and Industries Private Ltd.,

16, India Exchange Place,

CALCUTTA–1.

Gram : "RIGHTWAY" *Phone* : 22–7897

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोर्चेको जीत लिया जाये। चार दिनके भीतर ही इज़राइल सेनाने गाज़ापर क़ब्ज़ा कर लिया और मिस्रके तीस हज़ार सैनिकोंको अपनी मुख्य टुकड़ीसे काटकर सफ़ाया करना शुरू कर दिया। इन चार दिनोंमें मिस्रकी प्रायः आधी सेना तबाह कर दी गयी। मिस्रके साढ़े सात हज़ार सैनिकोंको इज़राइली सेनाने बन्दी बना लिया। गाज़ाके गवर्नरने आत्म-समर्पण कर दिया। ३७५ वर्गमील भूमि इज़राइलके क़ब्ज़ेमें आ गयी।

ब्रिटेनने अल्टीमेटम भेजा कि मिस्र अपनी सेनाओंको सरहदसे १०० मील पीछे हटा ले और स्वेज़ नहरपर ब्रिटेन और फ़्रान्सका क़ब्ज़ा स्वीकार कर ले क्योंकि नहर संकटकी स्थितिमें है, और इज़राइल उसपर हमला करना ही चाहता है। नासेरने अल्टीमेटम अस्वीकार कर दिया क्योंकि रूसने नासेरको फ़ौजी सहायता देनेका आश्वासन दे रखा था। ३१ अक्तूबरको ब्रिटेनने काहिरापर बम गिराये थे ताकि उस समय इज़राइल और मिस्रमें गाज़ा क्षेत्रपर जो युद्ध हो रहा था, उसमें इज़राइलको मदद मिले और मिस्री फ़ौजें गाज़ापर केन्द्रित न की जा सकें। जबतक इज़राइल अपना मोर्चा जीते, ५-६ नवम्बरको ब्रिटेन और फ़्रान्सने अपनी फ़ौजें मिस्रमें उतार दीं और बड़े पैमानेपर पोर्ट सईदके क्षेत्रमें हमला कर दिया। दोनों देशोंने अपनी फ़ौजें, जंगी बेड़े और युद्ध सामग्री साइप्रसमें लाकर इकट्ठी कर रखी थी। लगभग १००० पैराट्रूपर्स स्वेज़के उत्तरमें उतार दिये गये। दोनों आक्रामक देशोंकी योजना यह थी कि ब्रिटेन पोर्ट सईदपर और फ़्रान्स पोर्ट फुआदपर क़ब्ज़ा कर ले। मिस्रने सारे क्षेत्रमें कँटीले तार और तेलके पीपे बिछा दिये, भूमध्यसागरकी पाइप लाइनोंको भी क्षति पहुँचाना प्रारम्भ कर दी और स्वेज़ नहरमें स्थित शत्रुओंके ७ जहाज़ोंके टुकड़े करके नहरको बेकार बना दिया।

पैराट्रूपर्स उतारनेके बाद फ़्रान्स और ब्रिटेन ने चौबीस घण्टेके अन्दर तीस हज़ार सैनिकों और बहुत बड़ी संख्यामें भारी टैंकोंको जमा कर लिया और आक्रमण करके योजनाके अनुसार, ब्रिटेनने पोर्ट सईदपर और फ़्रान्सने पोर्ट फुआदपर क़ब्ज़ा कर लिया और इस्माइलियाकी तरफ़ बढ़ना आरम्भ कर दिया।

तभी रूसने घोषणा की कि वह अपने 'स्वयंसेवक' नासेरकी सहायताके लिए भेज रहा है। चीनने भी ८० हज़ार स्वयंसेवक मिस्र भेजनेकी घोषणा कर दी। तबतक नासेरकी दो-तिहाई जल-सेना, ५ प्रतिशत हवाई जहाज़ और २० हज़ार सैनिक ध्वस्त हो चुके थे।

अमेरिकाने प्रारम्भसे ही साहसके साथ ब्रिटेन और फ़्रान्सकी फ़ौजी कार्यवाहीका विरोध किया था। युद्धमें अब जब रूस और चीनके आ कूदनेका खतरा स्पष्ट दिखायी देने लगा तो अमेरिकने इज़राइल, ब्रिटेन और फ़्रान्सको चेतावनी दी कि रूसी आक्रमणकी स्थितिमें अमेरिका इन तीनों मित्रोंकी सहायताको नहीं आयेगा, न ही नैटोके सैनिक संगठनको युद्धमें सम्मिलित किया जायेगा। इस चेतावनी और न्यायोचित सख्त रवैयेका परिणाम यह हुआ कि ब्रिटेन और फ़्रान्सके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ़ौजी हौसले पस्त हो गये। उनका यह इरादा कि मिस्रको फ़ुर्तीसे जीतनेके बाद ही वह राष्ट्रसंघसे या अमेरिकासे बात करेंगे—और तबतक रूसको युद्धमें कूदनेका अवसर ही नहीं मिल पायेगा—पूरा न हो पाया। अब यदि युद्ध दो-तीन दिन भी चालू रहता तो यह निश्चयसे तीसरा विश्वयुद्ध बन जाता क्योंकि रूस बहुत दिनोंसे इस ताकमें था कि मध्यपूर्व-के भड़कीले क्षेत्रकी राजनीतिमें वह किसी भी तरह सीधा भागीदार बन जाये।

राष्ट्रसंघकी सुरक्षा परिषद्में अब जो मिस्रका मामला पेश हुआ तो अमेरिकाके युद्ध-विराम और सन्धि-प्रस्तावको ब्रिटेन, फ्रान्स और इज़राइलको स्वीकार करना पड़ा। स्वेज़ नहरपर मिस्रका अधिकार रहे, किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय उपयोगमें बाधा न पहुँचे इस सिद्धान्तको स्वीकार करके सम्बन्धित राष्ट्रों-की कमीशन बना दी गयी जो अन्तिम रूपसे सन्धि-व्यवस्था लागू करेगी।

मिस्रमें युद्ध-विराम ठीक-ठीक लागू हो जाये और युद्ध पुनः न छिड़ जाये इसके लिए राष्ट्रसंघने एक अन्तर्राष्ट्रीय सेना गठित करने-का प्रस्ताव स्वीकार किया। राष्ट्रसंघके अथक परिश्रमी, शान्तिप्रेमी हैमरशोल्डने तत्काल कार्यवाही करके डैनमार्क, नॉर्वे, कनाडा, कोलम्बिया, फ़िनलैण्ड, स्वीडेन और 'भारत' से सैनिक मँगवाकर ६००० सैनिकोंकी राष्ट्र-संघीय सेना गठित कर ली और उसे शान्ति-रक्षाका दायित्व देकर युद्धके मोर्चेपर भेज दिया। तीसरे विश्वयुद्धके बादल आकाशपर मँडराये थे, सो छितरा गये।

Head office :—
161/1, Mahatma Gandhi Rd.
CALCUTTA-7

For all your
Requirements in
PAPERS & BOARDS
Manufactured By—

J. K. PAPER MILS
JAYKAYPUR

●

ROHTAS INDUSTRIES LTD.
DALMIANAGAR

Please Contact :

RAMCHANDRA SHIWDATTRA

CALCUTTA-7.
Phone : 33-6005
Gram : SADHINFLAG

GAUHATI-1
Phone : 163-16[illegible]
Gram : RAMSHI[illegible]

Govt. Approved Cement & Sugar Stockists.

Importers & Exporters & Wholesale Paper Dealers.

Proprietors : Shri Ambica flour Mills.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्यूबाका मोर्चा

तीसरे विश्व-युद्धका सबसे बड़ा सबसे भयंकर और आमने-सामनेकी टक्करका सीधा मोर्चा जिसने कुछ दिनके लिए संसारके श्वासोच्छ्वासको अवरुद्ध कर दिया था उत्तरी और दक्षिणी अमेरिकाके मध्यवर्ती साम्यवादी द्वीप क्यूबामें खुला था। लेकिन मानवताके सौभाग्यसे वह मोर्चा सक्रिय होते-होते रह गया। यह सीधी टक्कर रूस और अमेरिकामें थी, और कारण था भी ऐसा जिससे बड़ा भयंकर कारण कोई दूसरा हो ही नहीं सकता—अर्थात् यह कि परमाणु बमकी प्रतिद्वन्द्वितामें उलझे हुए दोनों राष्ट्र जब परमाणु बमका उपयोग एक दूसरेपर करेंगे तो कौन किसपर बाज़ी ले जानेकी स्थितिमें होगा! यह ख़तरनाक प्रश्न इसलिए महत्त्व-पूर्ण है कि जो भी अपना परमाणु बम पहले गिरा देगा वही दूसरेको पलक झपकते समाप्त कर देगा—समूचे राष्ट्रको; और इस तरह युद्धका मोर्चा उसके हाथ रहेगा। इसके लिए आवश्यक है कि बम ले जानेवाला सूपरसौनिक जेट ऐसे स्थानसे उड़े जो शत्रु-देशके अत्यन्त निकट हो। सारा खेल ५-७ मिनिटके अन्तरका है, क्योंकि प्रक्षेपास्त्रधारी विमान यदि एक मिनिटमें ६० मील उड़ता है तो ७-८ मिनिटमें ही वह एक देशसे दूसरे देशकी सीमामें पहुँच जाता है। इस प्रकारके आई-सी-बी-एम (इण्टर-कौण्टिनेण्टल बैलैस्टिक मिसाइल्स—अन्तर्महा-द्वीपीय प्रक्षेपास्त्र) जिन राष्ट्रोंके पास हैं उनका प्रयत्न यह रहता है कि वे अपने शत्रुके पड़ोसी देशोंसे मित्रता करें, और उनके यहाँ प्रक्षेपास्त्रोंका अड्डा बनायें ताकि युद्ध छिड़ने-पर वे तत्काल आक्रमण कर सकें।

पश्चिमी देशोंके नैटो, सीटो, सैण्टो आदि जो सैनिक संगठन बने हैं और उनके अन्त-र्गत देशोंने जो पारस्परिक सैनिक सन्धियाँ की हैं उनमें इस बातकी व्यवस्था है कि कौन-सा पश्चिमी राष्ट्र किस देशके किस क्षेत्र-में अपना प्रक्षेपास्त्र-अड्डा बना रहा है। इसकी जानकारी भी प्रायः सभी राष्ट्रोंको रहती है।

डबोंमका व्यंग्य : 'हम तो हाथ सेंककर ही उठेंगे।'

वहाँ गुप्त या नयेसे नये अस्त्र-शस्त्र क्या बन रहे हैं, मात्र इसकी जानकारी नहीं दी जाती। खुली सन्धियाँ होनेके कारण प्रतिपक्षी दल भी मुक़ाबलेमें अपनी शक्ति विकसित करते रहते हैं। साम्यवादी देशोंने, विशेषकर रूसने, प्रक्षेपास्त्रोंका सारा विकास तो अपने देशमें किया ही है, मिसाइलोंके अड्डे भी वहीं बनाये हैं। रूसका दावा यही था कि उसके मिसाइल-अड्डे रूससे बाहर कहीं नहीं हैं। किन्तु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेज़िडेण्ट कैनेडीके पास गुप्त समाचार आने प्रारम्भ हुए कि रूस अपने प्रक्षेपास्त्रोंका अड्डा क्यूबामें कई स्थानोंपर बना रहा है। अमेरिकाने गुप्तचरोंका दल सुदृढ़ किया और उसे टोह लेते रहनेका आदेश दिया।

सितम्बर १९६२ में रूससे ६ बड़े-बड़े जलपोत क्यूबामें जानेके लिए जब कैरिबियन सागरमें पहुँचे तो अमेरिकाके गुप्तचरोंको बड़े-बड़े क्रेट्स देखकर कुछ सन्देह हुआ। कड़े पहरे-

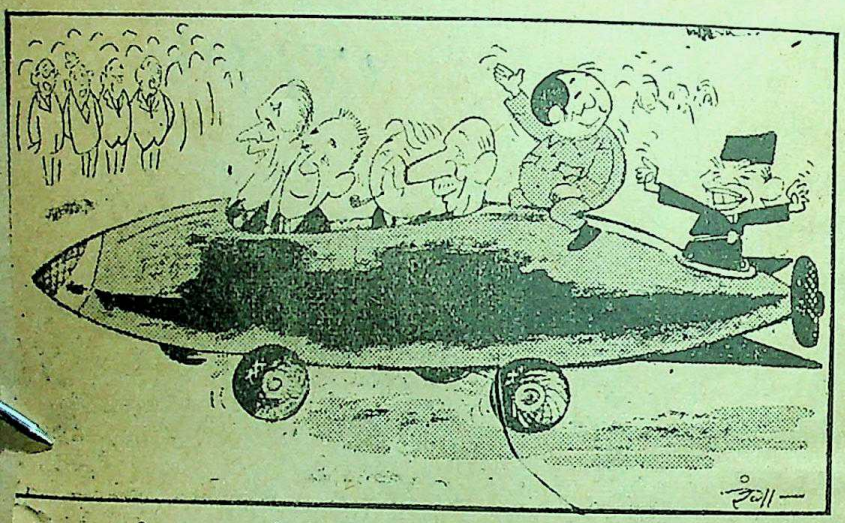

जो, अब हम तीसरे विश्वयुद्धके इस बिन्दुपर खड़े हैं—एटमबाज़ीका पाँचवाँ सवार चीन छठे और सातवें सवारको निमन्त्रण दे रहा है।

में जहाज़ पौ फटनेसे पहले खाली कर लिये गये थे। रूसमें अमेरिकाकी इस सतर्कताकी खबर पहुँची तो ख्रुश्चेवने, अपने सामान्य बयानोंमें, इधर-उधरके प्रसंगोंमें एक बात यह भी कही कि रूसके पास इतने दूरमार प्रक्षेपास्त्र हैं कि वह रूसमें ही बैठकर संसारके किसी कोनेमें बम फेंक सकता है। उसे आवश्यकता नहीं कि वह किसी दूसरे देशमें, जैसे क्यूबामें, कोई मिसाइल-अड्डा बनाये। १४ अक्तूबर तक यह

प्रमाणित हो गया कि रूसने क्यूबामें प्रक्षे
भेजे हैं। स्वभावतः जिज्ञासा हुई कि इन्हें
के जाया जाता है और क्या होता है। अ
रिकाने अपने विशेषज्ञ हवाबाज़ोंको यू-२ वा
यानोंमें भेजा कि क्यूबामें उड़ान भरकर सूच
लायें। यू-२ हवाई जहाज़ १४ मील
ऊँचाईसे ३ हज़ार मील लम्बे और १२५ मी
चौड़े भूमिखण्डके ऐसे फ़ोटो उतार सकते
जो इस भूमिखण्डपर-की प्रत्येक वस्तुकी ऊँच
बता सकते हैं। ६ मील
ऊँचाईसे तो इतना साफ़ फ़ो
लिया जा सकता है कि क्रिकेटक
वॉल साफ़-साफ़ नज़र आये
१४ अक्तूबर १९६२ त
क्यूबाकी ७५० मीलकी लम्बाई
हर चप्पेका फ़ोटो ले लिया गय
और इस तरह १० मील लम्बी
२० फ़ुट चौड़ी फ़िल्म तैयार
ली गयी। फ़िल्मपर-के हर मिली
मीटरका सावधानीसे निरीक्षा
करनेके उपरान्त यह प्रमाणि
हो गया कि क्यूबा

एटमबम या अन्य प्रक्षेपास्त्रोंको लेक
उड़ान भरनेवाले जहाज़ोंके ४८ ठिकों
रूस द्वारा बनाये गये हैं। इसका अर्थ यह
था कि उस समय अमेरिकाके पास प्रक्षे
पास्त्रोंके जो ४२ अड्डे थे और मिसाइल
प्रक्षेपक बौम्बर थे उनपर क्यूबासे सीधे ह
निशाना दागा जा सकता है। अमेरिका
लिए इस स्थितिका सहन करना और इ
बनी रहने देना, जल्लादके हाथमें अपनी गरद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri